सर्वोदय

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

इस अंक में

वर्ष : १७ अंक : १

सोमवार ५ अक्तूबर, '७०

सम्पादक
राममूर्ति

सर्व सेवा संघ
राजघाट वाराणसी-१
फोन : ६४३९१

आजादी प्राप्त करना : विद्यार्थी का सबसे बड़ा हक

ज्ञान के विषय में आज्ञा और हुक्म नहीं चल सकता, और किसी काम के लिए हुक्म हो सकता है और हुक्म का पालन भी हो सकता है। लेकिन कोई एक गोल वस्तु है, तो हम आपको यह आज्ञा नहीं कर सकते कि आप उसको त्रिकोणात्मक समझें। उसमें हमारी आज्ञा काम नहीं करेगी। तो वह जो गोल चीज है, उसका गोल ही ज्ञान होगा।

ज्ञान के विषय में आज्ञा कुंठित होती है, यह समझना चाहिए। मैं यह खास कारणों से कह रहा हूँ। इन दिनों विद्यार्थियों में काफी अनुशासनहीनता का दर्शन कुछ लोगों को होता है। मैंने विशेष ध्यानपूर्वक यह शब्द इस्तेमाल किया है, क्योंकि मुझे विद्यार्थियों की अनुशासनहीनता का अनुभव नहीं आया है। शासनमुक्त समाज की रचना जब कभी दुनिया में होनेवाली हो, तब हो, लेकिन विद्यार्थियों के लिए उसकी रचना जरूर होनी चाहिए। विद्यार्थी का सबसे अधिक कोई हक है, तो वह आजादी प्राप्त करना है।

ऐसी हालत में एक 'स्वयं-अनुशासन की भावना विद्यार्थी में आयेगी, ऐसी अपेक्षा हम जरूर कर सकते हैं। परन्तु किसी कृत्रिम अनुशासन में नयी तालीम के विद्यार्थी रहेंगे, यह हम नहीं मानेंगे। आज की समाज-रचना कृत्रिम है, उसका आधार विषमता पर है। इसीलिए नयी तालीम का जो लड़का पैदा होगा, वह समाज के खिलाफ बागी होगा। जैसे गांधीजी ने कहा था कि वह प्रतिकार जरूर करेगा, लेकिन वह सविनय होगा, इसमें कोई शक नहीं है। परन्तु वह प्रतिकार जरूर करेगा।

जहाँ मैंने 'सविनय' शब्द का इस्तेमाल किया, वहाँ मुझे एक और बात का स्मरण हो आता है। हमारे प्राचीन ग्रंथों में 'शिक्षा' को भी विनय नाम दिया था। संस्कृत में शिक्षण को विनय कहते हैं। जो विद्यार्थी शिक्षण पा चुका है, तो उसको 'विनीत' कहते थे। इसलिए आदर्श शिक्षण का परिणाम विनय में जरूर होना चाहिए, परन्तु वह विनय गुलामी नहीं होगा, बल्कि वह विनय समाज की गलत कल्पनाओं का सामना करने के लिए खड़ा होगा।

सर्वोदयपुरम् (कांचीपुरम्)
३०-५-'५६

अग्रलेख

आचार्यकुल की प्रतिक्रिया

सरकार शिक्षण की समस्या को भी 'शांति और सुव्यवस्था' (ला ऐण्ड आर्डर) की समस्या समझती है और उसे कानून और पुलिस की शक्ति से हल करने की कोशिश करती है। यह सही है कि पिछले कुछ वर्षों में विश्वविद्यालयों तथा महाविद्यालयों में छात्र-संघ जिस तरह संगठित हुए हैं, और उनकी ओर से जो काड हुए हैं उनके कारण शांति और सुव्यवस्था की समस्या पैदा हुई है और सरकार को अपनी दमन-शक्ति का प्रयोग करना पड़ता है। एक बार दमन-चक्र चल जाता है तो वह संयम और विवेक की सीमा में कब तक रहेगा, यह कहना कठिन होता है, खासकर आजकल जब विद्यार्थी और सिपाही दोनों एक-दूसरे को दुश्मन मानकर खुला, निर्मम प्रहार करना सीख गये हैं।

विद्यालयों के तरुण अपने अनिवार्य छात्र-संघों के तत्वावधान में संगठित होकर विद्यालयों के अधिकारियों और सरकार के लिए सिर-दर्द हो गये थे। यह सिर-दर्द बहुत बढ़ जाता है जब छात्र-संघ सरकार के विरोधी राजनैतिक दलों से जुड़े हुए होते हैं। उ० प्र० के विद्यालयों में कई छात्र-संघ एस० एस० पी० और जनसंघ से जुड़े हुए हैं। ये संघ अपने-अपने दल से दलगत राजनीति की सीख प्राप्त करते हैं, और विद्यालय के भीतर कई काम ऐसे करते हैं जो बाहर की राजनीति के रंग में रंगे होते हैं। इससे स्थिति यह हो गयी है कि एक-एक विद्यालय में अलग-अलग दलों के गुट बन गये हैं। इनमें शिक्षक और कार्यालयों के सेवक तक शामिल हैं। उनके माध्यम से राजनैतिक दलों का विद्यालयों के जीवन में प्रवेश होता है, और विद्यालयों में वस्तुतः शीतयुद्ध का वातावरण बना रहता है। राजनैतिक गुटों के अलावा जाति और सम्प्रदाय के गुट तो हैं ही। वर्ग के भी हैं। गुटबन्दी का अंत नहीं है।

संभवतः इस स्थिति को समाप्त करने की नीयत से श्री चरण सिंह की सरकार ने कुछ दिन पहले एक अध्यादेश जारी किया कि छात्र-संघ अनिवार्य न रहकर ऐच्छिक होंगे, और विद्यालयों की ओर से छात्र-संघ की फीस आदि नहीं इकट्ठा की जायगी। जो छात्र चाहें अपना संघ बनायें और धन इकट्ठा करें।

छात्रों ने सरकार के अध्यादेश को युवा-शक्ति पर प्रहार माना, और प्रतिकार किया। कुछ राजनैतिक दलों ने छात्रों का समर्थन किया। कई नेता और छात्र जेल भी गये। अध्यादेश अशान्ति और तनाव का विषय बन गया।

आचार्यकुल ने अध्यादेश तथा छात्र-संघों की अनिवार्यता और वैकल्पिकता के प्रश्न पर विचार करने के लिए वाराणसी में १९, २०, २१ सितम्बर को एक मिली-जुली गोष्ठी और अलग अपनी बैठक बुलायी। गोष्ठी में कई दलों के नेता, छात्र, आचार्य और सामाजिक कार्यकर्ता शरीक हुए, और दो दिन तक विचारों का—परस्पर विरोधी विचारों का—भरपूर मंथन हुआ। आचार्यकुल के सिवाय दूसरे किसी मंच पर ऐसा होना संभव नहीं था।

गोष्ठी के बाद आचार्यकुल ने अपना जो वक्तव्य प्रकाशित किया है उससे उसकी तटस्थता और पक्ष-मुक्ति तो झलकती ही है, साथ ही विद्यालय-सरकार, सरकार-छात्र संघ, शिक्षक-विद्यार्थी आदि के परस्पर-सम्बन्धों पर एक नयी भूमिका मिलती है। हर प्रश्न पर तटस्थ भूमिका प्रस्तुत करना आचार्यकुल का काम है जिसे उसने एक तात्कालिक समस्या के अनुबंध में पूरा किया है।

आचार्यकुल को विद्यालय के जीवन में सुधार की दृष्टि से सरकार का हस्तक्षेप अमान्य है। अगर विद्यालय शिक्षक-शिक्षार्थी-अभिभावक का सम्मिलित उत्तरदायित्व है—निस्सन्देह वह है—तो उन्हें विद्यालय का हर प्रश्न आपस में मिलकर तय करना चाहिए। सब विद्यार्थियों के लिए एक संघ रखना है तो वे आपस में तय करें कि एक संघ रखेंगे, अगर एक से अधिक संघ रखना है तो ऐसा निर्णय करें। किसी भी हालत में विद्यार्थी अपने संघ के लिए सरकार की शक्ति के मुहताज क्यों हों ?

लोकतन्त्र और विज्ञान की दृष्टि से सर्वोदय आन्दोलन ने शिक्षण की स्वायत्तता को अपनी क्रान्ति का एक बुनियादि तत्त्व घोषित किया है। यह स्वायत्तता विद्यालय तक पहुँचकर समाप्त नहीं हो जाती, बल्कि हर शिक्षक और विद्यार्थी तक पहुँचती है। स्वायत्तता आत्मानुशासन की शर्त है। इस शर्त की पूर्ति की अपेक्षा तभी की जा सकती है, जब विद्यालयों में सरकार का हस्तक्षेप और नियंत्रण समाप्त हो। सरकार का ही नहीं, राजनैतिक दलों का भी। राजनैतिक दल विद्यालयों में खुला खेल खेलें, और उनके प्रभाव में विद्यार्थी वहाँ जो चाहे करें, और सरकार स्वायत्तता के नाम में असहाय होकर बाहर खड़ी देखती रहे, यह स्थिति समाज को बर्दाश्त नहीं हो सकती। इसलिए आचार्यकुल ने हर प्रकार के बाहरी हस्तक्षेप के विरुद्ध आवाज उठाकर उचित और आवश्यक काम किया है।

छात्र-संघों के संगठन का प्रश्न शिक्षण-क्षेत्र के अनेक प्रश्नों में से एक है। एक प्रश्न दूसरे प्रश्न के साथ जुड़ा हुआ है। शिक्षण की स्थिति बिगड़ते-बिगड़ते यहाँ तक बिगड़ गयी है कि एक-एक प्रश्न को अलग-अलग हल करना सम्भव नहीं दीखता। पूरे शिक्षण को जड़ से बदलने की जरूरत है। स्वतंत्रता के बाईस वर्ष बीत गये, और शिक्षण वह हो रह गया जो अंग्रेजी राज्य में था, इसे देश-द्रोह भी कहा जाय तो भी थोड़ा है।

हमारे विद्यालय शिक्षण की दृष्टि से चाहे जितने निरर्थक हों, देश के लाखों तरुण और युवक उनमें पढ़े हुए हैं। वे हताशा के शिकार हैं। मैट्रीकुलेशन के बाद विद्यालय के जीवन का हर दिन याद दिलाता है कि विद्यालय से निकलने के बाद समाज में उनके लिए स्थान नहीं है। हमारा विद्यार्थी आज तक इस स्थिति को स्वीकार करता रहा है, लेकिन अब उसके अन्दर से अस्वीकार का स्वर निकलने लगा है। वह परिवर्तन की माँग कर रहा है। वह विद्रोह करने पर उतारू हो रहा है। जब कि 'बड़े' यथास्थिति→

क्या गांधीजी आधुनिक थे ?

❁ जे॰ बी॰ कृपालानी ❁

● धर्म और राजनीति में कई शब्दों का प्रयोग होता है लेकिन प्रयोग करनेवालों के मन में उनके अलग-अलग अर्थ होते हैं। इसके कारण विचारों में उलझन पैदा होती है।

● गांधीजी को आलोचकों ने प्रतिक्रियावादी, पूँजीपतियों और साम्राज्यवादियों का पिट्ठू, या पुरातनवादी (रिवाइवलिस्ट) आदि कहा है। गांधीजी और जवाहरलालजी की तुलना की जाती है और कहा जाता है कि नेहरूजी आधुनिक थे, और गांधीजी पुरातनवादी। आखिर, आधुनिक शब्द का अर्थ क्या होता है? अक्सर हमारे देश में उसे आधुनिक कहते हैं जिसकी जिन्दगी का तर्ज पाश्चात्य हो; चाहे यथास्थित पूँजीवादी पश्चिम का हो, और चाहे साम्यवादी पश्चिम का। सरकार के कई बड़े अधिकारी, या नये धनी लोग पश्चिमी तौर-तरीके से रहते हैं, छुरी-काँटे से खाते हैं, और दूसरी चीजों में, कभी-कभी भोंडे तरीके पर, पश्चिम की नकल करते हैं। हम उन्हें आधुनिक कहेंगे, या उसे जिसका जीवन वैज्ञानिक, लोकतांत्रिक, समतावादी और बुद्धिसंगत है?

● स्पष्ट है कि साहबीयत के अर्थ में गांधीजी आधुनिक नहीं थे। वह धार्मिक व्यक्ति थे। क्या इसीलिए पुरातनवादी थे? सत्य उनके लिए ईश्वर था। वह मानते कि नैतिक तत्त्व (मारल ला) को जीवन की हर क्रिया में प्रकट होना चाहिए। गांधीजी का पर्व-उत्सव का धर्म नहीं था। वह तो नेहरू की तरह होली भी नहीं मनाते थे। उनका भगवान निराकार, निर्विकार था।

क्या ईश्वर-निष्ठा और आधुनिकता में कोई विरोध है? न्यूटन, आइन्सटाइन, जगदीशचन्द्र बोस, रमन आदि ईश्वर-निष्ठा के पक्ष में हैं। वैज्ञानिक सत्य की सत्ता को मानता है, और गांधीजी सत्य को ही ईश्वर मानते थे। वास्तव में महान् वैज्ञानिकों ने किसी ऐसी सत्ता को माना ही है जो उनकी प्रयोगशालाओं से परे है।

● ईश्वर में विश्वास रखते हुए क्या गांधीजी का विज्ञान में विश्वास था? भरपूर था। गांधीजी में अन्ध-विश्वास बिलकुल था ही नहीं। छुआछूत, जाति-पाँति आदि किसी अ-लोकतांत्रिक, अ-वैज्ञानिक प्रथा या संस्था में उनका कतई विश्वास नहीं था।

यह समझना चाहिए कि विज्ञान किसे कहते हैं? एक, विज्ञान सत्य के शोध की पद्धति है। दो, विज्ञान उन नियमों की खोज करता है जिनके अनुसार प्रकृति के व्यापार होते हैं। विज्ञान के दोनों पहलू—पद्धति और नियम या सिद्धान्त—समान रूप से महत्त्वपूर्ण हैं। अगर नियम न हो तो प्रकृति में एक चीज दूसरी से बिलकुल अलग मालूम होगी। तब तो बोरे में भरे हर चावल को अलग-अलग समझना पड़ेगा। विज्ञान का तीसरा पहलू है कि प्राप्त ज्ञान का व्यावहारिक प्रयोजनों के लिए प्रयोग हो। इसे 'टेक्नालॉजी' कहते हैं, जिसकी बदौलत भाप, बिजली या अणुबम आदि चीजें बनती हैं। इस तरह विज्ञान मनुष्य को शक्ति देता है। इस शक्ति का मनुष्य के हित में कैसे प्रयोग होगा, यह एक सामाजिक, नैतिक और आध्यात्मिक प्रश्न है।

● क्या समस्याओं के समाधान में गांधीजी की वैज्ञानिक दृष्टि रहती थी? उनके सामने एक समस्या थी कि भारत के करोड़ों भूखे, नंगे, बेरोजगार या अर्ध-बेरोजगार लोगों को काम कैसे दिया जाय? उनको यह सूझा कि इतना काम करके तथा

→(स्टेटसको) से चिपके रहना चाहते हैं, युवकों का यह विद्रोह-भावना देश के भविष्य के लिए आशा का एक चिह्न है। इस युग-शक्ति और विद्रोह भावना की रक्षा होनी चाहिए। वह राष्ट्र की पूंजी है, जिससे समाज-परिवर्तन की प्रक्रिया शुरू होगी। आचार्य-कुल इस सत्य को स्वीकार करता है, और युवकों से आशा रखता है कि वे देश के जीवन की मुख्य धारा के साथ जुड़ेंगे, और अपना समस्याओं का ध्यान, राष्ट्रीय और मानवीय संदर्भ में देखेंगे। आयु के आधार पर पैदा होनेवाला नये और पुराने के बीच का दुराव भी बहुत कुछ दूर हो जायेगा।

विद्यालयों में जो अनीति होती है उसका विरोध उचित है। अनाचार का प्रतिकार होना ही चाहिए। लेकिन समाज-परिवर्तन के व्यापक संदर्भ में विरोध और विद्रोह में बुनियादी भेद है। हमारे युवक जिस वर्तमान राजनीति से विरोधवाद की प्रेरणा ले रहे हैं उसमें विद्रोह-शक्ति नहीं है। हमारी राजनीति वस्तुतः सत्तावादी और यथास्थितिवादी है। हमें आशा है कि विद्रोही युवक इस भेद को समझेंगे, और समतामय क्रान्ति का सही रास्ता अपनायेंगे।

विद्यालयों में अनेक विषय हैं जिनकी पढ़ाई और परीक्षा होती है—जैसी भी होती हो। कहा जाता है कि छात्र-छात्राओं के लोकतंत्र का शिक्षण-प्रशिक्षण होता है। क्या राजनैतिक तिकड़म ही लोकतंत्र में एक चीज है जो सीखने लायक है? लोकतंत्र की आत्मा इस बात में है कि नागरिक जाने कि वह आत्मानुशासित होते हुए अवसर आने पर विरोध कैसे करेगा, और अगर विरोध करने से काम न चला तो विद्रोह कैसे करेगा। गांधीजी ने देश को सत्याग्रह की दीक्षा दी थी। वह दीक्षा आज किस विश्वविद्यालय और महाविद्यालय में दी जा रही है? लोकतंत्र जिस विद्रोह के लिए अवसर देता है, और विज्ञान जिसकी मांग कर रहा है, उसकी उचित दीक्षा हमारे विद्यालयों के जीवन का अंग न हो तो मानना चाहिए कि ये विद्यालय लोकतंत्र और विज्ञान से कोसों-कोसों दूर हैं। लोकतंत्र और विज्ञान के संदर्भ में समग्र शिक्षा के प्रश्न पर हमारे आचार्यकुल से नये प्रकाश की अपेक्षा है। ●

भूदान-यज्ञ : सोमवार, ४ अक्तूबर, '७०

गृह और ग्रामोद्योगों द्वारा ही दिया जा सकता है। आज की बड़ी मशीन और बड़े कारखानों के मुकाबिले में देखें तो गृह और ग्रामोद्योगों की बात पुरानी मालूम होती है। लेकिन अगर हम यह सोचें कि चरखा भौतिक ही नहीं, करोड़ों के लिए नैतिक, सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक आवश्यकता है, तो वही वैज्ञानिक हो जाता है। और, गांधीजी ने एक लाख रुपये के पारितोषिक की घोषणा की थी, ताकि कोई कारीगर ऐसा चरखा बना दे जिससे ज्यादा सूत निकले, और जो गाँव में बनाया और सुधारा जा सके। गांधीजी के आर्थिक चिन्तन में बिजली, जहाज आदि के लिए पूरा स्थान था; वह सिर्फ यह कहते थे कि जब करोड़ों के पास काम न हो तो मशीन के पीछे पागल नहीं होना चाहिए।

● सामाजिक क्षेत्र में गांधीजी ने छूआछूत, जाति-पाँति, स्त्री-पुरुष-असमता आदि के विरुद्ध आवाज ही नहीं उठायी, बल्कि जिन्दगी भर लड़ते रहे। उन्होंने अपने जीवन को *'सत्य के प्रयोग'* का नाम दिया। आहार-शास्त्र के वह बेहद कायल थे, और बड़े आधुनिक विशेषज्ञों से सलाह लेते थे।

● किसी भी समस्या पर विचार करते समय वह बुद्धिसंगत रहते थे, और बुद्धि के विरुद्ध कोई तर्क या रस्म-रिवाज की बात नहीं स्वीकार करते थे। वह ऐसे शास्त्रों को भी नहीं मानते थे जो हरिजनों, स्त्रियों आदि को हीन स्थान दें। वह अपने साथियों को भी सलाह देते थे कि उनकी बात प्रमाण न मानी जाय, बल्कि प्रयोग किये जायँ और परिणाम देखकर कोई बात स्वीकार या अस्वीकार की जाय। इसलिए अगर सत्य की सत्ता में विश्वास रखना आधुनिक है तो गांधीजी आधुनिक थे। अगर बात का पक्का होना आधुनिक है तो गांधीजी आधुनिक थे। अगर स्वाद नहीं स्वास्थ्य के लिए भोजन करना, श्रम की प्रतिष्ठा मानना, अगर विरोधियों को सम्मान देना, नम्रता, लोकतांत्रिक जीवन-पद्धति, समाज में गिरे हुए लोगों से एक-रस होना, दरिद्रनारायण की सेवा करना, उन्मादों के बीच अडिग रहना, और अंत में यदि ऊँचे आदर्श के लिए आत्मोत्सर्ग करना पड़े तो वैसा करना आधुनिकता है तो गांधीजी आधुनिक थे। हाँ, अगर पाश्चात्य खाना खाना या कपड़ा पहनना, या फैशन करना ही आधुनिकता का लक्षण है तो बेशक गांधीजी आधुनिक नहीं थे। लोग कहते हैं कि आज के जमाने में गांधीजी घुटनों तक धोती पहनते थे। जो लोग 'मिनी-स्कर्ट', 'मिनी-साड़ी' और 'टाप-लेस' पोशाकें पहन रहे हैं, उन्हें गांधीजी की ऊँची धोती से क्या शिकायत होनी चाहिए ?

गांधीजी को आधुनिक या पुरातन कहने के पहले इन शब्दों के अर्थ को तौल लेना चाहिए। यों तो हर बेटा अपने बाप के मुकाबिले 'माडर्न' है, क्योंकि उम्र में नया है। लेकिन 'माडर्न' का अर्थ यह नहीं है; उसका सम्बन्ध गुण से है। आधुनिकता को हम चालू फैशन से न जोड़ें। आधुनिकता का सच्चा सम्बन्ध विचारों और मूल्यों से है। उस दृष्टि से गांधीजी आधुनिकों से भी आधुनिक थे।

[आचार्य कृपालानी की नयी पुस्तक *'गांधी : हिज लाइफ एण्ड थाट'* से।]

तरुणों के नाम एक बहन का पत्र

दहेज : एक सामाजिक रोग

तरुण मित्रो,

२८ सितम्बर के 'भूदान-यज्ञ' में नवगछिया उच्च विद्यालय में १५ से १७ अगस्त तक सम्पन्न तरुण शांति-सेना के शिविर की रिपोर्ट पढ़ने से ज्ञात हुआ है कि कुछ शिविरार्थियों ने दहेज न लेने का संकल्प किया है। इससे मुझे बहुत प्रसन्नता हुई। हमारे देश के तरुणों से मेरी अपेक्षा है कि वे एकत्रित होकर जीवन के सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक व धार्मिक पहलुओं में जहाँ कहीं भी अन्याय, शोषण, दमन, अनीति हो, उसका विरोध करें और उसके लिए आन्दोलन भी करें। लेकिन मुझे दुःख के साथ, अपने अनुभवों के आधार पर कहना पड़ता है कि हमारे नवयुवक ऐसे बुनियादी परिवर्तन करने में रुचि नहीं लेते रहे।

दहेज-प्रथा समाज-जीवन में ऐसा पैठा हुआ रोग है कि उसे सामान्य प्रयत्नों से निकालना सम्भव नहीं है। खासकर उत्तरप्रदेश और बिहार जैसे प्रान्तों में तो इसका जाल इतना फैला हुआ है कि अनपढ़ या पढ़ा-लिखा, कोई इससे बच नहीं पाता। बल्कि जो जितना ही अधिक पढ़ा-लिखा होगा, वह शादी के बाजार में उतना ही अधिक महँगा बिकेगा !

आज के तरुणों को, जो हर क्षेत्र में स्वतंत्रता और स्वमान-रक्षा की माँग करते हैं और उसके लिए लड़ते-झगड़ते भी हैं, खुद की शादी के समय अपने माँ-बापों के हाथों बिकते देखती हूँ तो मुझे कँपकँपी आ जाती है। लड़कियों को हीन दृष्टि से देखनेवाले लोग ही ऐसी कुप्रथा के शिकार हो सकते हैं, साथ-साथ पैसे के पुजारी ही इसको प्रोत्साहन दे सकते हैं। मुझे तो तभी खुशी होगी जब लड़कियाँ भी ऐसा संकल्प करेंगी कि दहेज लेनेवाले लड़के से शादी नहीं करेंगी, चाहे शादी किये बिना ही जीवन क्यों न बिताना पड़े !

जब दोनों का संकल्प एक होगा और पुरुषार्थ भी साथ मिलकर करेंगे, तभी समाज को खोखला बना देनेवाला यह रोग मूल से ही चला जायेगा।

जिन तरुण मित्रों ने दहेज नहीं लेने का संकल्प किया है, उन्हें मैं बहुत बहुत धन्यवाद देती हूँ और उनसे आशा रखती हूँ कि अपने परिवार की प्रतिकूल परिस्थिति में भी वे अपने संकल्प पर अडिग रहेंगे। जिस शादी में दहेज का लेन-देन होता हो उसमें शामिल न हों, चाहे वह शादी अपने ही परिवार में क्यों न हो। यह दोष समाज की जड़ में पैठा हुआ है। उसे दूर करने लिए शक्तिशाली और क्रांतिकारी कदम उठाने की जरूरत है। हमारे तरुण भाई-बहन कृतसंकल्प होकर यह शोषण दूर करें। —वामा, वाराणसी

छात्र-संघ की रूपरेखा

केन्द्रीय आचार्यकुल द्वारा आयोजित प्रथम परिषद

[आचार्यकुल की परिकल्पना प्रस्तुत करते हुए आचार्य विनोबा ने कहा था कि आचार्यकुल देश की बौद्धिक, नैतिक शक्ति बनकर समाज के देखेंगे, उसमें हर प्रकार के मसले पर अपनी तटस्थ राय व्यक्त करेगा, और इस प्रकार देश की चेतना को जागृत करेगा। इसके लिए आचार्यकुल समय-समय पर 'परिषद' आयोजित करेगा।

विनोबा की इस कल्पना की एक परिषद लखनऊ में गत १९, २०, २१ सितम्बर '७० को, आगरा में हुई केन्द्रीय आचार्यकुल की बैठक के निर्णयानुसार उत्तरप्रदेश के वर्तमान उग्र और विवादास्पद सवाल 'छात्र संघ सम्बन्धी सरकारी अध्यादेश' विषय पर आयोजित हुई।

इस परिषद में विश्वविद्यालयों के कुलपतियों, प्राध्यापकों, छात्र-संगठन के नेताओं, दलों के नेताओं, तटस्थ चिन्तकों विचारकों का अद्भुत संगम हुआ। ३ दिन तक खुली चर्चाएँ हुईं। चर्चाएँ केवल छात्र संघ और अध्यादेश तक सीमित नहीं रहीं, जो स्वाभाविक था। एक तरह से शिक्षण के पूरे प्रश्न पर जीवन के समग्र संदर्भ में चर्चाएँ हुईं। मुझे व्यक्तिगत तौर पर यह देखकर बहुत समाधान हुआ कि जितने भी छात्र-नेताओं ने भाषण किया उनमें से अधिकांश ने वर्तमान निकम्मी शिक्षा को व्यर्थ बताते हुए समाज-परिवर्तन की बात कही और छात्र-संगठन को एक उभरती हुई गतिशील शक्ति के रूप में पेश किया।

इस परिषद को आयोजित करने में केन्द्रीय आचार्यकुल समिति के संयोजक श्री वंशीधरजी ने अपनी आवश्यकता के बावजूद जो श्रम किया, वह परिषद की अपूर्व सफलता के रूप में सार्थक हुआ।

"भूदान-यज्ञ" के पाठकों को इस पर पूरी परिषद की जानकारी मिले, इसीलिए हम इस परिचर्चा स्तम्भ में यह महत्वपूर्ण सामग्री प्रकाशित कर रहे हैं। —सं०]

छात्र-संघ-अध्यादेश : उद्देश्य और कारण

राज्य के विश्वविद्यालयों के उपकुलपतियों के सम्मेलनों में अन्य बातों के अतिरिक्त छात्र-संघों के कार्यकलापों के बारे में भी विचार-विमर्श होते रहे हैं। शिक्षाविदों का यह मत है कि विश्वविद्यालयों और डिग्री कालेजों के छात्र-संघ छात्रों के बीच स्वस्थ, संगठित जीवन के समुचित विकास में सहायक नहीं हुए हैं। केन्द्र द्वारा नियुक्त कोठारी आयोग (सन् १९६६) ने भी यह मत प्रकट किया है कि पिछले कुछ वर्षों में अधिकतर छात्र-संघों के कार्यकलाप ने ट्रेड यूनियन का रूप धारण कर लिया है, जिसे दृढ़ता से निरुत्साहित करना आवश्यक है। आयोग ने यह संस्तुति की है कि सारे विश्वविद्यालय अथवा कालेज के एक छात्र-संघ की सदस्यता के लिए छात्रों द्वारा अनिवार्य शुल्क दिये जाने का प्राविधान नहीं होना चाहिए। अतएव छात्र-संघों के संगठन और कार्य-संचालन को उचित आधार देने के लिए यह प्रस्ताव है कि उनके सम्बन्ध में परिनियम बनाने की व्यवस्था की जाय। प्रारम्भ में सीमित अवधि के लिए राज्य-सरकार को यह अधिकार दिया जा रहा है कि वह इस सम्बन्ध में परिनियम बना सके, जिससे कि इस प्रकार बने परिनियम समानुरूप हों। इस प्रयोजन के लिए लखनऊ, इलाहाबाद, आगरा, गोरखपुर, कानपुर तथा मेरठ विश्वविद्यालयों तथा वाराणसेय संस्कृत विश्वविद्यालय से सम्बन्धित अधिनियमितियों में संशोधन करना आवश्यक है।

तदनुसार उत्तरप्रदेशीय विश्वविद्यालय (संशोधन) विधेयक १९७० पुरःस्थापित किया जाता है। —श्रीपति मिश्र

शिक्षा-मन्त्री

इस अधिनियम के प्रारम्भ होने से २ वर्ष की अवधि में राज्य-सरकार जब भी अपेक्षित हो, विश्वविद्यालयों अथवा उसके संघटक या कालेजों या उसके सम्बद्ध कालेजों या सम्बद्ध कालेजों में छात्र-संघों के संगठन तथा कार्यों के सम्बन्ध में, अधिसूचना द्वारा परिनियम बना सकती है।

संख्या क—१।३३०९-ग्र-१५-१४-२१-७०

उत्तरप्रदेश विश्वविद्यालय (संशोधन) अध्यादेश, १९७० उत्तरप्रदेश अध्यादेश संख्या ९, १९७०) की धारा ८ के साथ पठित—विश्वविद्यालय अधिनियम, १९२६ (संयुक्त प्रान्त अधिनियम संख्या ८, १९२६) की धारा २६ के अधीन अधिकारों का प्रयोग करके, राज्यपाल निर्देश देते हैं कि आगरा विश्वविद्यालय की परिनियमावली (स्टैट्यूट्स) में तात्कालिक प्रभाव से निम्नलिखित परिवर्द्धन किया जाय, अर्थात्—

अध्याय १० के पश्चात्, एक नये अध्याय के अन्तर्गत निम्नलिखित परिनियम बढ़ा दिया जाय

"अध्याय १० ए

छात्र-संघ

१—उक्त अधिनियम के अधीन बनाये गये किसी परिनियम या अध्यादेश में निहित किसी प्रतिकूल बात के होते हुए भी, विश्वविद्यालय या किसी सम्बद्ध महाविद्यालय के किसी छात्र-संघ की (चाहे उसे किसी भी नाम से पुकारा जाय)

सदस्यता अनिवार्य नहीं होगी, और तदनुसार, ऐसे संघ को ऐसी सदस्यता के लिए शुल्क या अभिदान के रूप में (चाहे इसे सदस्यता-शुल्क या अभिदान अथवा किसी निधि में अंशदान देना कहा जाय, या किसी भी अन्य नाम से क्यों न पुकारा जाय) दिये जाने के लिए अभिप्रेत कोई धनराशि विश्वविद्यालय या किसी सम्बद्ध महाविद्यालय द्वारा किसी छात्र से वसूल नहीं की जायगी।"

दमन का प्रच्छन्न रूप

—महादेवी वर्मा, कवयित्री

छात्र-संघ छात्र-वर्ग के परस्पर-सहयोग, सद्भाव और समानता की वृद्धि के लिए बने थे और उनका लक्ष्य अपने सदस्यों के सामूहिक हित की रक्षा करना था। उन छात्र-संघों को विघटित करने के उपाय अन्ततः स्वार्थ और अवसरवादिता के आधार पर बने गुटों को जन्म देंगे, जिनसे छात्र-वर्ग की समष्टिगत हानि होगी, ऐसी मेरी धारणा है।

तरुण वर्ग का असंतोष विश्वव्यापी है, परन्तु उसके देशज कारण हैं। जब तक उनकी स्थितियों में परिवर्तन न लाया जाय, असंतोष में परिवर्तन संभव नहीं है। दीर्घ काल तक बना रहनेवाला असंतोष हिंसात्मक उपायों को धारण लेता है। यह सत्य हमारे देश के अनेक भागों में प्रमाणित हो चुका है। छात्र-संघों को विघटित करने से अथवा एक ही संस्था में अनेक संघों के बन जाने से संघर्ष का क्षेत्र समाप्त नहीं होता, बढ़ जाता है। अतः प्रयास असंतोष को समाप्त करना ही होना चाहिए।

हमारे देश में छात्र-वर्ग का असन्तोष बेकारी तथा दूषित शिक्षा-प्रणाली से जुड़ा हुआ है। शिक्षा का लक्ष्य दुहरा होता है। उसका अन्त लक्ष्य मानवीय मूल्यों का बोध और उन मूल्यों में आस्था उत्पन्न करना है, और बाहिर्लक्ष्य मनुष्य को सामाजिक प्राणी के रूप में अपने जीवन-यापन की सुविधा प्रदान करना है। अन्त-लक्ष्य शिक्षा के दर्शन से सम्बन्ध रखता है और बहिर्लक्ष्य उसके विज्ञान से।

हमने स्वतंत्र होने के उपरान्त न शिक्षा के लक्ष्य की चिन्ता की, न लक्ष्य तक पहुँचनेवाली पद्धति की। परिणामतः हमारे देश के तारुण्य की ऊर्जा व्यर्थ जा रही है। लक्ष्यहीन क्रियाशीलता अब ध्वंसात्मक दिशा में बढ़ रही है, जो युग के लिए आत्मघाती प्रवृत्ति सिद्ध होगी। केवल दमन के अस्त्रों से उसे पराजित नहीं किया जा सकता। छात्रसंघ-सम्बन्धी अध्यादेश भी दमन का ही प्रच्छन्न रूप है। अतः इसका परिणाम सम्भवतः विपरीत ही होगा। मार्गतथ्य उपाय और भी हैं, परन्तु उसके लिए चिन्तन और चिन्तन से प्राप्त सत्य के कार्यान्वयन की आवश्यकता है, जिसके लिए हमारे पास अवकाश का अभाव है।

उनकी मानसिक अवस्था का उपचार होना चाहिए

—सुमित्रानन्दन पंत, कवि

छात्र संघ के बारे में मेरी व्यक्तिगत राय यह है कि उसे बन्द नहीं करना चाहिए, बल्कि छात्रों के मन में जो विद्रोह का कारण है उसे समझ लेना चाहिए; और उनके सामने जो कठिनाइयाँ हैं उन्हें मिटाने का प्रयत्न करना चाहिए।

हमारी शिक्षा-पद्धति बहुत ही कृत्रिम और दूषित है। वह अपने देश के जीवन के सन्दर्भ में न छात्रों को शिक्षित ही करती है और न उन्हें इस योग्य बनाती है कि वह अपनी जीविका का ही अर्जन कर सकें, और साथ ही सेवाभाव द्वारा देश की सेवा कर सकें। हमारे मन में जो 'स्टैण्डर्ड' (स्तर) या दृष्टिकोण है वह बिलकुल ही खोखला तथा अंग्रेजों द्वारा प्रतिष्ठित केवल क्लर्कों के जीवन के लिए उपयोगी है। 'स्टैण्डर्ड' का अर्थ होता है मूल्य। उसके दो रूप हैं। एक रूप यह कि छात्र उसे अर्जित कर सकें; और दूसरा यह कि वह समाज के लिए उपयोगी हो। हमारे वर्तमान 'स्टैण्डर्ड' की भावना इन दोनों रूपों से वंचित करती है। हमारी शिक्षा इतनी अनुपयोगी है कि उत्तरप्रदेश के छ-सात विश्वविद्यालयों से प्रतिवर्ष कम-से-कम बीस-पच्चीस हजार बी० ए० तथा एम० ए० उपाधिधारी युवक तैयार किये जाते हैं। अब बीस-पच्चीस हजार युवकों को उत्तरप्रदेश नहीं, पूरा भारत प्रतिवर्ष नौकरी नहीं दे सकता। अतः यह शिक्षा-पद्धति बेकार है।

स्वराज्य के मिलने के बाद जिस प्रकार हमारे देश में कृषि तथा लघु उद्योगों के प्रति उपेक्षा रही है उसीका परिणाम आज नवयुवकों का विद्रोह तथा असंतुलन है। नवयुवकों में जो तोड़-फोड़ की भावना देखने को मिलती हैं, उसे सहानुभूति के साथ देखना चाहिए। क्योंकि हमारे देश की सरकारें इतनी मंद गति से या कभी-कभी अगति से चलती है कि यदि युवकों का मन खौल उठता हो, और विध्वंस का का काम करते हो, तो यह स्वाभाविक ही है।

युवकों के प्रति मेरे मन में पूर्ण सहानुभूति है और मुझे बार-बार लगता है कि उनके प्रति न्याय नहीं किया जा रहा। यदि छात्र-संघ के साथ शिक्षक-वर्ग भी व्यापक दृष्टि से युवा जीवन का संचालन करने का और प्रवृत्त हो और उपर्युक्त असंतोष के कारणों पर सरकार गंभीरता-पूर्वक विचार करने का कष्ट करें तो मुझे पूर्ण विश्वास है कि छात्र-संघ को तोड़ने से नहीं, बल्कि बनाये रखने से छात्रों के जीवन में भविष्य के लिए उपयोगी संगठन, ऐक्य तथा सौहार्द की भावना जाग्रत की जा सकती है।

हमारे देश में आवश्यकता है अधिकाधिक मात्रा में गृह-उद्योगों या लघु-उद्योगों की, और उसी अनुपात में युवकों को माध्यमिक या तकनीकी शिक्षा दी जाय, जिससे वयस्क होने पर वे उन उद्योगों द्वारा देश का कार्य कर सकें और अपनी आर्थिक समस्या सुलझा सकें। जापान की तरह भारी उद्योगों के साथ ही समानान्तर रूप से लघु-उद्योगों को प्रोत्साहन नहीं मिला है और भारी उद्योगों में इने-गिने लोगों को खपाया जा सकता है। इसलिए नवयुवकों के सामने भविष्य केवल अन्धकार ही अन्धकार है, और आत्म-कुंठा से ग्रस्त होकर वे बेकार उत्पात कार्य करने लगते हैं। उनकी इस मानसिक अवस्था का उपचार होना चाहिए, न कि दण्ड मिलना चाहिए। इसमें सन्देह नहीं कि युवक वर्ग ही भावी देश के निर्माता हैं। हमारे ही देश में नहीं, समस्त संसार में आज युवक-मन में जो अशान्ति और विद्रोह की भावना घर कर गयी है उसका कारण आज का अपरिपक्व जीवन-सम्बन्धी हमारा दृष्टिकोण है। वे लोग, जो कि अपने को किसी कारण प्रतिष्ठित कर सके हैं, उनकी दृष्टि आज की अविकसित परिस्थितियों के कारण इतनी सीमित हो गयी है कि नवयुवकों में जो [illegible]-जीवन को आमूल परिवर्तित करने की प्रेरणा काम कर रही है, उसे प्रतिष्ठित वर्ग समझने में असमर्थ है।

अनिवार्यता और शिक्षण का मेल नहीं

—धीरेन्द्र मजमूदार

प्रश्न : उत्तरप्रदेश की सरकार ने एक अध्यादेश द्वारा छात्र-संघ को विद्यार्थियों के लिए ऐच्छिक बना दिया है। पहले छात्र-संघ की सदस्यता अनिवार्य थी। सरकार का यह कदम क्या ठीक है?

धीरेन्द्र भाई : ठीक भी है, और नहीं भी है।

विचार की दृष्टि से यह बिलकुल ठीक है। किसी भी प्रकार के संघ या संगठन को अनिवार्य बनाना भारतीय संविधान के विरुद्ध है। भारतीय संविधान के अनुच्छेद १९-१ (ग) के अनुसार किसी भी प्रकार का संगठन बनाया तो जा सकता है, परन्तु उसे अनिवार्यतापूर्वक लागू नहीं किया जा सकता।

लोकतंत्र ने हमेशा साम्य, मैत्री और स्वतंत्रता का नारा दिया है। आज जब लोकतंत्र की मांग सैनिक-भर्ती की अनिवार्यता तक के खिलाफ है और हर आदमी अनिवार्य रूप से मेम्बर हो, यह मान्यता भी टूट रही है, तो विद्यार्थियों के लिए अमुक यूनियन या संघ की सदस्यता अनिवार्य हो यह बात [illegible] लोकतंत्र-विरोधी है। मुझे आश्चर्य होता है कि जो लड़के इस प्रश्न पर सरकारी आदेश द्वारा अनिवार्य बनाने के सिद्धान्त का विरोध करते हैं, वही लड़के एक विषय पर सरकारी अनिवार्यता हटाने का विरोध क्यों कर रहे हैं? स्पष्ट है कि इसके पीछे राजनैतिक पक्षपात काम कर रहा है। हर क्रिया की प्रतिक्रिया होती है। मुझको लगता है कि अनिवार्यता हटाने के सरकार के इस निर्णय के मूल में राजनैतिक पक्षपात भी रहा है। और उसकी स्वाभाविक प्रतिक्रिया से यह विरोध खड़ा हुआ है। इसीलिए मैंने कहा कि अध्यादेश ठीक भी है और नहीं भी। अगर अध्यादेश की प्रेरणा पक्षमुक्त होती तो सही होता।

प्रश्न : विचार चाहे यथार्थ हो, परन्तु क्या उसका मूल रूप लोकतांत्रिक नहीं है?

धीरेन्द्र भाई : किसी चीज की कृति उसके बाह्य रूप से तय नहीं की जा सकती।

इसके लिए उसकी अन्तर्चेतना को देखना होता है। शासन का जो लोग केवल वैधानिक परिस्थिति देखते हैं, वे ठीक नहीं करते। लोकतंत्र तो समाज की सांस्कृतिक वृत्ति है। इसीलिए लोकतंत्र को कृति से नहीं पहचाना जा सकता, वृत्ति देखनी होती है। अगर अनिवार्य सदस्यता के नियम को हटाने में पक्षपाती प्रेरणा रही है, तो कृति देखने में चाहे जितनी भी लोकतांत्रिक क्यों न हो, उसकी वृत्ति अधिनायकवादी ही है।

प्रश्न : छात्र-संघ की कल्पना छात्रों के लिए "लोकतंत्र में शिक्षण-भूमि" के रूप में की गयी है। इस दृष्टि से उसे लोकतंत्र में अनिवार्य होना चाहिए, जिससे प्रत्येक छात्र का लोकतांत्रिक वृत्ति में शिक्षण हो। आपका इस विषय में क्या विचार है?

धीरेन्द्र भाई : शिक्षण में कानूनन अनिवार्यता के लिए कोई स्थान नहीं है, क्योंकि आरोपित शिक्षण, शिक्षण नहीं प्रशिक्षण होता है—एजुकेशन नहीं, ट्रेनिंग होता है। इसलिए शिक्षण (एजुकेशन) जिज्ञासामूलक ही हो सकता है, आरोपण-मूलक नहीं। आज भी आरोपित शिक्षण की कुछ झलक हमारी दूषित शिक्षा-पद्धति में दिखाई देती है, जहाँ शिक्षार्थी के लिए कुछ विषयों को अनिवार्य रखा गया है। इसलिए हम विद्यालयों में विषय को अनिवार्य बनाने के पक्ष में नहीं हैं। शिक्षार्थियों को विषय चुनने की स्वतंत्रता होनी चाहिए। यद्यपि इतने मात्र से ही शिक्षण-प्रक्रिया का विकास पूरा नहीं होता है, फिर भी इससे रुचि और विकास की स्वतंत्रता तो हो ही जाती है। इस सिद्धान्त के आधार [illegible] का यह तकाजा सिलेबस भी ऐच्छिक होना चाहिए, नहीं तो वह शिक्षण नहीं रहेगा, प्रशिक्षण हो जायगा।

प्रश्न : छात्र-संघ चाहे ऐच्छिक हो या अनिवार्य, यदि दलगत राजनीति उसे अपना साधन बनाती है, तो यूनियन बनाने की मूल-भावना ही समाप्त हो जाती है। क्या आप इससे सहमत हैं?

धीरेन्द्र भाई : इसके लिए छात्र-संघ के हित का [illegible] से विचार करने का कोई मतलब नहीं होता। किसी वस्तु

के किसी एक टुकड़े को लेकर विचार करने का परिणाम भ्रामक होगा। वस्तुस्थिति यह है कि जिस साम्य, मैत्री और स्वतंत्रता के विचार से मनुष्य ने वर्तमान लोकतांत्रिक विधानों को बनाया था, उसमें पक्षगत राजनीति का विचार शामिल कर मूल रूप से लोकतंत्र के उद्देश्य को ही विफल कर दिया है। परिणामस्वरूप जब दलगत राजनीति पूरे समाज के अंग-प्रत्यंग में प्रवेश कर गयी है तो छात्र-समाज उससे अछूता कैसे रहेगा, विशेषकर आज की अनिवार्य शिक्षा की आकांक्षा के जमाने में, जब छात्र-समाज का मतलब है पूरा तरुण-समाज। अतएव दलगत राजनीति को छात्र-समाज से अगर अलग रखना है, तो पूरे समाज के ढांचे से दलगत राजनीति का निराकरण करना होगा। नहीं तो छात्र-संघ को अनिवार्य रखें, ऐच्छिक रखें या पूर्ण रूप से विघटित कर दें, हम छात्र-समाज को दलगत राजनीति से मुक्त नहीं कर सकेंगे। आप लोग इस तरह टुकड़ों पर अपनी चिन्तन-शक्ति का अपव्यय न करके पूरे समाज के ढांचे पर विचार केन्द्रित करें तो अधिक अच्छा होगा।

प्रश्न : जब आप यह मानते हैं कि संघ ऐच्छिक हो या अनिवार्य, वह दलगत राजनीति से मुक्त नहीं हो सकता तो आप यह भी मानेंगे ही कि एक विद्यालय के लिए एक अनिवार्य संघ का रहना अधिक श्रेष्ठ होगा, क्योंकि उस हालत में विद्यालय विभिन्न पार्टियों से प्रभावित अलग-अलग संघों की युद्ध-भूमि होने से बच जायगा ?

धीरेन्द्र भाई : मैं यह नहीं मानता। मैं तो मानता हूँ कि अध्यादेश के कारण एक ही संस्था में अलग-अलग यूनियन बनें या अनिवार्य संघ के रूप में एक ही संघ में अलग-अलग गुट बनें, युद्ध-क्षेत्र की भूमिका में कोई अन्तर नहीं होगा। लेकिन संघ के वैकल्पिक होने से यह लाभ होगा कि उसमें शिक्षण-संस्था का 'इन्वाल्वमेंट' बच सकता है, जब कि अनिवार्यता में इस प्रकार का 'इन्वाल्वमेंट' रुक नहीं सकता। संघ के संस्था की ओर से अनिवार्य होने का एक फलित (कारोलरी) यह होता है कि उस संस्था के शिक्षक भी उसमें 'इन्वाल्व' हो जाते हैं। ऐच्छिक में उनके इससे बचने की गुंजाइश है।

ऐच्छिक संघ का दूसरा लाभ यह है कि काफी तादाद में विद्यार्थी भी उस रणभूमि से बच सकते हैं, जिसकी चर्चा आपने की है, जब कि अनिवार्य संगठनों का स्वधर्म यह है कि संगठन का हर सदस्य उसकी हर प्रवृत्ति में शामिल रहे।

प्रश्न : छात्र-संघ का दोष उसके अनिवार्य अथवा ऐच्छिक होने में उतना नहीं है जितना उसकी संचालन-पद्धति में ? क्या आप यह नहीं मानते हैं कि जिस प्रकार 'डेलिगेट डिमोक्रेसी' के स्थान पर 'पार्टिसिपेटिंग डिमोक्रेसी' लाकर आप राष्ट्र के राजनैतिक ढांचे में परिवर्तन लाने का प्रयास कर रहे हैं, उसी प्रकार संघ की अनिवार्यता को रखते हुए भी उसकी संचालन-पद्धति को 'पार्टिसिपेटिंग' बनाया जाय तो समस्या का अधिक अच्छा समाधान होगा ?

धीरेन्द्र भाई : आप दलगत राजनीति को बदलकर लोकनीति की स्थापना में कानून का आधार नहीं लेते। अनिवार्यता के लिए कानून आवश्यक है। जिस तरह हम राजनीति को सुधारना चाहते हैं, उसी तरह हम छात्र-सभा का भी सुधारना चाहेंगे, लेकिन उसके लिए भी राजनीति में सुधार की हमारी जो प्रक्रिया है, वही प्रक्रिया इसमें लागू होगी। अर्थात् हम कानून की प्रक्रिया को छोड़कर शिक्षण की प्रक्रिया को ही अपनायेंगे और जिस तरह शिक्षण-प्रक्रिया के फलस्वरूप जितने परिवार ग्रामदान में शामिल होते हैं, उन्हींको लेकर सुधार का प्रारम्भ-बिन्दु बनता है, उसी तरह विचार-प्रेरणा से जितने विद्यार्थी शामिल होंगे उन्हींको लेकर हमारी सुधार-यात्रा शुरू होगी। इसी प्रकार हम आचार्यकुल को लेकर भी आगे बढ़ रहे हैं। इस दृष्टि से भी अनिवार्यता के लिए कोई स्थान नहीं है।

प्रश्न : छात्र-संघों को अनिवार्य बनाने के मूल में एक विचार यह भी था कि विश्वविद्यालयों में पढ़नेवाले विभिन्न सम्प्रदायों, सामाजिक एवं सांस्कृतिक स्तरों से आनेवाले और विभिन्न राजनीतिक विचारों में विश्वास रखनेवाले विद्यार्थियों को जब छात्र-संघ का एक अनिवार्य मंच मिलेगा तो पूरी शिक्षा-संस्था एक सूत्र में बंध सकेगी। छात्र-संघों को ऐच्छिक बना देने से एकसूत्रता में बांधने का यह काम क्या समाप्त नहीं हो जायगा ?

धीरेन्द्र भाई : एक-सूत्रता का काम तो उसी दिन खतम हो गया जिस दिन संघों में दलगत राजनीति का प्रवेश हुआ और संघ किसी विशेष दल की राजनीति के प्रकाशन और प्रचार के माध्यम बने। अतः संघों से यह आशा की जाय कि वे विश्वविद्यालय के विभिन्न विचारवाले छात्रों को एक सूत्र में पिरोयेंगे तो उनसे दलगत राजनीति को और गुटबंदी को दूर करना होगा और संघ के प्रत्येक सदस्य को, अर्थात् अनिवार्य होने की स्थिति में पूरी संस्था के छात्रों को यह संकल्प करना होगा कि भले ही वह राजनीति का शैक्षणिक और शास्त्रीय अध्ययन करे, वह किसी राजनैतिक दल का न सदस्य होगा और न उस दल का प्रचार करेगा।

प्रश्न : यह देखा गया है कि दस-ग्यारह प्रतिशत से अधिक विद्यार्थी छात्र-संघ के कार्यक्रमों में भाग नहीं लेते। क्या आप कोई ऐसा सुझाव देंगे, जिससे सब छात्र इन कार्यक्रमों में भाग लें ?

धीरेन्द्र भाई : इसका उत्तर सिवाय इसके और क्या हो सकता है कि आप इस प्रकार के कार्यक्रम बनाइए जिनका सम्बन्ध किसी दलगत, सम्प्रदायगत, भाषागत आग्रह से न हो। तरुण शांति-सेना ने जो कार्यक्रम उठाया है, वह इसी प्रकार का कार्यक्रम है। निरक्षर मजदूर-किसानों की शिक्षा और सेवा का काम भी इस प्रकार का कार्यक्रम है। राष्ट्रीय और सामाजिक समस्याओं पर तटस्थ दृष्टि से विचार करने के लिए गोष्ठियों का आयोजन और राष्ट्रीय एकता के लिए अन्तर्प्रादेशिक सांस्कृतिक यात्राओं का आयोजन भी इसी प्रकार का कार्यक्रम है।●

अध्यादेश : शैक्षिक स्वायत्तता का हनन

—कृष्णनाथ, काशी विद्यापीठ, वाराणसी

११ जुलाई, १९७० को उत्तरप्रदेश विश्वविद्यालय (संशोधन) अध्यादेश १९७०, जारी कर प्रदेश-सरकार ने विश्वविद्यालय छात्र-संघों की अनिवार्य सदस्यता समाप्त कर ऐच्छिक बनाया। यह छात्रों के माने हुए अधिकार का हनन है। आचार्यकुल इस प्रश्न पर परिसंवाद कर रहा है। अगर यह परिसंवाद पहले हुआ होता और इसने सरकारी दमन पर अंकुश लगाने और छात्रों के माने हुए अधिकारों की रक्षा के लिए अपने बहुमूल्य सुझाव दिये होते तो अच्छा होता। देर से ही सही, इस पर विचार हो रहा है, यह ठीक ही है। आचार्यकुल को अगर आचार्यकुल जैसा नाम रखना है तो उसे नागरिक-स्वतंत्रता के अपहरण की ऐसी घटनाओं पर सरकार की निंदा करने का साहस होना चाहिए।

उत्तरप्रदेश के मुख्य मंत्री श्री चरणसिंह ने १० अगस्त को लखनऊ से दिये गये वक्तव्य में कहा है कि छात्र-संघों के लिए एक आदर्श संविधान तैयार किया जा रहा है। यह परस्पर-विरुद्ध बात है। छात्र-संघों का संविधान कैसा हो यह छात्र और और विश्वविद्यालय ही तय कर सकते हैं। छात्र-संघों का निर्माण ही स्वशासन और छात्र-शक्ति की अभिव्यक्ति के लिए होता है। छात्र-संघों के लिए 'आदर्श संविधान' का निर्माण उत्तरप्रदेश सरकार कर कैसे सकती है? हाँ, सरकार अलबत्ता 'आदर्श थाना' बना सकती है। इसकी अधिकारी सरकार है। छात्र-संघों का संविधान बनाने की अधिकारी संस्था सरकार नहीं, छात्र-संघ और विश्वविद्यालय स्वयं है।

उत्तरप्रदेश का शासन उन्नीसवीं सदी के पुलिस राज की मान्यताओं के आधार पर चलाया जा रहा है। सरकार इसके लिए एक के बाद एक अध्यादेश जारी कर रही है। मौजूदा सरकार सँवेरे के सिवाय कुछ नहीं है। गुजरती हुई बीसवीं सदी में विश्वविद्यालय के संचालन और प्रशासन में, यहाँ तक कि विश्वविद्यालय की कल्पना में, छात्रों और छात्र-संघों के महत्त्वपूर्ण रोल को मानकर सारी दुनिया में परिवर्तन के लिए प्रयत्न हो रहे हैं। अकेले श्री चरण सिंह उत्तरप्रदेश में कालचक्र को उल्टा घुमाने की चेष्टा कर रहे हैं। यह चेष्टा स्वतंत्र शिक्षा के आदर्शों, परम्पराओं और रीति-रिवाजों के विपरीत तो है ही, भारत सरकार की मान्य शिक्षानीति के भी प्रतिकूल है।

इस संबंध में भारत सरकार द्वारा नियुक्त शिक्षा-आयोग की रिपोर्ट के छात्र-संघ संबंधी प्रकरण से आवश्यक उद्धरणों से उत्तरप्रदेश सरकार की विपरीत गति सिद्ध होती है। रिपोर्ट के पृष्ठ ३३६ पर कहा गया है "छात्र-संघ एक महत्त्वपूर्ण माध्यम होते हैं, जिनके सहारे छात्र कक्षा के बाहर रहकर भी विश्वविद्यालय के जीवन में भाग ले सकते हैं। अगर उनका सही ढंग से आयोजन किया जाय तो इनसे स्वशासन और आत्मानुशासन में सहायता मिलती है, छात्रों को अपना व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति का सही मार्ग मिल जाता है और उन्हें लोकतांत्रिक पद्धतियों के उपयोग का अच्छा-खासा प्रशिक्षण मिल जाता है।"

जाहिर है, छात्र-संघ किस प्रकार काम करें यह विश्वविद्यालय स्वयं तय करेंगे, सरकारी अध्यादेश नहीं। इस संबंध में भारत सरकार के शिक्षा-आयोग की सम्मति है - "हर विश्वविद्यालय को यह स्वयं तय करना चाहिए कि उसके छात्र-संघ किस प्रकार काम करें।"

शिक्षा-आयोग ने उत्तरप्रदेश सरकार के इस तर्क का खण्डन किया है कि आखिर छात्र-संघ की सदस्यता ऐच्छिक हो इसमें हर्ज क्या है? जिसकी मर्जी होगी वह सदस्य बनेगा, नहीं मर्जी होगी, नहीं बनेगा। यह तर्क ऊपर से जितना मासूम लगता है उतना है नहीं। छात्र संघ की सदस्यता ऐच्छिक हो या न हो, यह भी तो छात्र और विश्वविद्यालय तय कर सकता है। सरकार अध्यादेश लागू कर सदस्यता को ऐच्छिक बनाये, इसमें ऐच्छिक कहाँ है? यह तो विश्वविद्यालय और छात्र-संघों की स्वतंत्रता और आत्म-निर्णय का अपहरण है।

ऐच्छिक सदस्यता और अनिवार्य सदस्यता के बारे में सन् १९४० और '५० की दहाई में बहुत चल चुकी है। फैसला अनिवार्य सदस्यता के पक्ष में हुआ। ऐच्छिक सदस्यता में तीन बड़े दोष हैं १—पैसेवाले छात्र और गुट अपनी ओर से पैसा जमा कर सदस्यता करेंगे और छात्र-संघ पर कब्जा कर लेंगे। २—सभी विद्यार्थियों का कोई प्रतिनिधि-संगठन न होगा। ३—स्वशासन और जनतांत्रिक पद्धतियों का प्रशिक्षण नहीं होगा। इसलिए अगर छात्र-संघों की यह भूमिका है तो सभी छात्रों को इसका सदस्य होना चाहिए।

छात्र-संघों की सदस्यता के बारे में भी शिक्षा-आयोग का स्पष्ट मत है कि छात्र संघों की सदस्यता इस अर्थ में स्वतः सिद्ध होनी चाहिए कि हर छात्र को अपने आप उसका सदस्य समझ लिया जाना चाहिए।

भारत सरकार द्वारा नियुक्त शिक्षा-आयोग छात्र संघ की सदस्यता को 'स्वयं सिद्ध' माने और उत्तरप्रदेश सरकार अध्यादेश से इसे खत्म करना चाहे, ऐसा क्यों है?

इस संबंध में मेरा पहला सुझाव यह है कि शिक्षा-आयोग की संस्तुति के अनुसार छात्र-संघों की सदस्यता को स्वयं सिद्ध मानकर छात्र-संघ कैसे काम करें, इसे तय करने का अधिकार और कर्तव्य विश्वविद्यालय का ही हो। सरकार इसमें जब भी हस्तक्षेप करती है, बुरे के लिए करती है। सन् १९५३ में उत्तरप्रदेश सरकार ने हस्तक्षेप किया, छात्र-संघ की सदस्यता

विद्यार्थियों में जो कमी है, वह वास्तव में अध्यापकों की कमजोरी है। अध्यापक छात्रों को योग्य मार्गदर्शन नहीं कर पाते। आपने कहा कि अध्यापकों को छात्र-संगठनों का भी मार्गदर्शन करना चाहिए। अपने कालेज के छात्र-संघ की प्रायोगिक रूपरेखा का हवाला देते हुए आपने कहा कि विभिन्न प्रकार के छात्र-संगठन बनने और काम करने चाहिए।

वाराणसी के संसोपा नेता श्री आनन्देश्वरी प्रसाद ने छात्र-संघ की अनिवार्यता पर जोर देते हुए काशी विश्वविद्यालय के छात्र संघ सम्बन्धी अपने अनुभव को प्रस्तुत करते हुए यह कहा कि छात्र-संघ की अनिवार्य सदस्यता की बात बहुत पहले ही तय हो चुकी है, इसे दुबारा प्रश्न बनाना राजनीतिक चालबाजी है। आपके मतानुसार अन्य विषयों के अभ्यास की तरह भारत की लोकतान्त्रिक भूमिका के संदर्भ में छात्र-संघ को लोकतन्त्र का एक अभ्यासक्रम मानकर चलना चाहिए। आज की जो स्थिति है, उसमें इस विषय को अनिवार्य शिक्षण के विषय के रूप में ही लेना चाहिए।

श्री सुरेन्द्र प्रताप, काशी विद्यापीठ के छात्र ने कहा कि छात्रों की समस्याएँ अनगिनत हैं, समाधान कहीं दिखाई नहीं देता। शासन छात्रों का विरोध सहन नहीं करना चाहता, इसीलिए अपनी समस्याओं को हल करने की दिशा में प्रयत्नशील छात्र-संघों की ताकत को तोड़ने की कोशिश कर रहा है।

गोष्ठी के दूसरे दिन चर्चा के निश्चित मुद्दों को पेश करते हुए सुप्रसिद्ध विचारक श्री रोहित मेहता ने कहा कि छात्र-संघ की आवश्यकता पर दो रायें नहीं हो सकती हैं। संघों के स्वरूप और कार्यक्रम में विभिन्न शैक्षिक संस्थाओं में फर्क हो सकता है, लेकिन मूल उद्देश्य लोकतंत्र का शिक्षण ही होना चाहिए। आपने कहा कि ऐच्छिक सदस्यता छात्रों की एकता को मजबूत बनाने के लिए एक वरदान ही मानना चाहिए। छात्र-नेताओं का आम छात्रों से सम्पर्क बहुत कम रहता है, ऐच्छिक होने पर उनको हर विद्यार्थी से सम्पर्क करना आवश्यक होगा। आपने कहा कि इस प्रकार छात्र-संघ के उद्देश्यों के प्रति अपेक्षाकृत अधिक सजगता आयेगी। श्री मेहता ने अध्यादेश को विश्वविद्यालयों की स्वायत्तता में हस्तक्षेप मानकर उसे एक गलत कदम बताया।

अ० भा० शांति-सेना मण्डल के मंत्री श्री नारायण देसाई ने कहा कि छात्र-संघ की सदस्यता अनिवार्य हो, लेकिन छात्र-संघ-शुल्क अनिवार्य न किया जाय।

श्री राजाराम शास्त्री, उपकुलपति, काशी विद्यापीठ ने कहा कि इस अध्यादेश के लिए चौधरी चरण सिंह को जिम्मेदार ठहराना और उनकी भर्त्सना करना गलत है। उपकुलपतियों के सम्मेलन में छात्र-संघों के पिछले १०-१२ वर्षों के कार्य-कलापों की हम चर्चा करते हैं। छात्र-संघों में राजनैतिक दलों की घुसपैठ, जातिवाद और सम्प्रदायवाद की दाँव-पेंच शुरू हो चुकी है। छात्र-संघ लोकतान्त्रिक शिक्षण के आधार नहीं रह गये हैं। इनका स्वरूप मजदूर-संगठनों की तरह का हो गया है। जब यही स्वरूप रहनेवाला है तो उसके सम्पूर्ण फलित को स्वीकार करना चाहिए।

इलाहाबाद विश्वविद्यालय के छात्र-नेता श्री बनवारीलाल और अजयशंकर ने इस बात पर जोर दिया कि आज की बदलती परिस्थितियों में छात्र-संघों को नया रूप देना जरूरी है। विश्वविद्यालय के प्रशासन में छात्रों के प्रतिनिधियों की माँग करते हुए श्री अजयशंकर ने कहा कि छात्रों की बातों पर सहानुभूतिपूर्वक विचार नहीं किया जाता, इसीलिए तो आंदोलन होते हैं।

गांधी विद्यासंस्थान के राजनीति विभाग के श्री नागेश्वरप्रसाद ने कहा कि विद्यार्थियों की समस्याओं को व्यापक सन्दर्भ में देखा जाना चाहिए और उन्हें सही मार्गदर्शन मिलना चाहिए। अनिवार्य सदस्यता रहनी चाहिए, इस बात पर जोर देते हुए आपने कहा कि छात्रों को सही दिशा अगर नहीं मिली तो वे गलत दिशा में जा सकते हैं।

सर्व सेवा संघ के श्री रामचन्द्र राही ने कहा कि सत्ता की अनुकूलता और प्रतिकूलता, दोनों ही छात्रों की उभरती हुई क्रान्तिकारी शक्ति को पतित करती है, तोड़ती है। आपने कहा कि छात्र-संघ व्यापक सामाजिक क्रांति की शक्ति बनें और उन ८०-९० प्रतिशत मूक लोगों की व्यथा को भी व्यक्त करें, जो न ऊँची शिक्षा पा रहे हैं, न अपनी बात कह पा रहे हैं।

श्री कामेश्वर प्रसाद बहुगुणा, सर्व सेवा संघ प्रकाशन; ने कहा कि छात्र संघ राजनैतिक दलों के प्रभाव से मुक्त होकर काम करें।

सर्वोदय-विचारक आचार्य राममूर्ति ने कहा कि तरुणों की विद्रोह-शक्ति व्यर्थ नहीं जानी चाहिए, उसे परिवर्तन में लगाना चाहिए। आज आमतौर पर तरुण-शक्ति विरोध के भँवर में फँसकर रह गयी दीखती है। आपने कहा कि छात्रों को सामाजिक समस्याओं के प्रति भी जागरूक रहना चाहिए।

वसंत डिग्री कालेज की प्राचार्या श्रीमती सुभद्रा हैलंग ने कहा कि छात्र-संघ उपयोगी हो सकते हैं, अगर उनको नयी दिशा मिले। आपने छात्र और शिक्षक के बीच के फासले को समाप्त करने की आवश्यकता बताते हुए कहा कि छात्र-संघ तो होने ही चाहिए।

सुप्रसिद्ध साहित्यकार और चिन्तक श्री जैनेन्द्रकुमार ने कहा कि प्रशासन को प्रमाद और परिवर्तन के उन्माद से मुक्त होना आवश्यक है। आपने कहा कि विद्रोह के उन्माद से प्रशासन को हटायेंगे तो वह हटेगा नहीं, और जमेगा। आपने कहा कि छात्रता की आयु अल्प है, इसलिए छात्रता की जगह नागरिकता को आधार बनाकर युवा पीढ़ी अपनी अनास्था की आस्था और अश्रद्धा की श्रद्धा पर ईमानदारी से खड़ी हो, जो कुछ यथास्थिति है

है, उसको छोड़ें। इसमें रहेंगे भी और विरोध भी करते रहेंगे, तो उससे विच्छिन्न व्यक्तित्व का निर्माण होगा। आपने कहा कि उन्माद की शक्ति से जो परिवर्तन होता है, उस पर एक और बड़ा उन्माद हावी हो जाता है। आपने कहा कि अपनी आस्था के साथ जीने के लिए सब कुछ छोड़ने पर भी आप कुछ खोयेंगे नहीं। बुजुर्ग पीढ़ी जिस चक्कर में पड़ गयी है, उससे साफ इन्कार करके छात्र-संघ की प्रवृत्ति को नागरिकता के दायित्व के साथ जोड़ने की सलाह देते हुए आपने कहा कि तभी आपका छात्रत्व सार्थक भूमिका पायेगा।

कानपुर विश्वविद्यालय के उपकुलपति श्री राधाकृष्ण ने, जो इस परिषद के संयोजक भी थे, कहा कि आप सब आचार्यकुल के निमंत्रण पर आये, और हमारी ज्ञानवृद्धि की इसके लिए हम आभारी हैं। आपने अपने भाषण में इस बात पर जोर दिया कि आज की समस्या छात्र-समस्या मात्र नहीं है, और न उसके जिम्मेदार ही सिर्फ छात्र हैं। छात्रों का दोष तो सिर्फ इतना माना जा सकता है कि वे छोटी-छोटी माँगों को लेकर आन्दोलन करते हैं। आपने कहा कि परिवर्तनशील वातावरण के प्रति हमारी उदासीनता हमें पीछे ले जा रही है। आपने छात्र-संघ की सदस्यता को अनिवार्य करने पर जोर देते हुए छात्रों से अपील की, कि वे पठन-पाठन की सुविधाओं का पूरा लाभ अवश्य उठायें।

दूसरे दिन की गोष्ठी की अध्यक्षता आगरा विश्वविद्यालय के उपकुलपति श्री शीतलप्रसादजी ने की थी।

तीसरे दिन की समापन-गोष्ठी में पिछले दो दिनों में व्यक्त विचारों का सार तैयार किया गया, और पत्र-प्रतिनिधियों के साथ चर्चाएँ हुईं। अपने समारोप-भाषण में काशी विद्यापीठ के उपकुलपति श्री राजाराम शास्त्री ने कहा कि गोष्ठी में अनेक समस्याओं पर विचार हुआ। आपने श्री जैनेन्द्र कुमार द्वारा व्यक्त विचारों का समर्थन करते हुए कहा कि विद्यालय की चहारदीवारी के अन्दर की क्रान्ति खण्डित क्रान्ति है, अपूर्ण विद्रोह है। इसमें पूर्णता तभी आयेगी, जब यह सीमा तोड़कर समाज में व्याप्त होगी। यहाँ यह बात भी याद रखनी चाहिए कि विश्वविद्यालय या प्रशासन की ओर से दबाव तब पड़ता है जब आन्दोलन हिंसक रूप लेते हैं। सम्पूर्ण क्रांति के लिए गांधी की अहिंसक पद्धति को अपनाना चाहिए।

अन्त में केन्द्रीय आचार्यकुल समिति के संयोजक श्री वंशीधर ने सबके प्रति आभार व्यक्त किया। •

आचार्यकुल का अभिमत

उत्तरप्रदेश सरकार के छात्र-संघ सम्बन्धी अध्यादेश पर

२२-८-७० को आगरा में आचार्यकुल की बैठक में उत्तरप्रदेश सरकार द्वारा प्रदेश के विश्वविद्यालयों तथा सम्बद्ध महाविद्यालयों में छात्र-संघों के विषय में अध्यादेश की चर्चा चली और इस प्रश्न के महत्व को देखते हुए आचार्यकुल ने तय किया कि अध्यादेश एवं उससे सम्बन्धित प्रश्नों का गहराई से अध्ययन करके आचार्यकुल निष्पक्षतापूर्वक अपना विचार जनता के समक्ष प्रस्तुत करे, ताकि लोगों को एक स्पष्ट दिशा मिल सके।

इसी निर्णय के अनुसार आचार्यकुल के सर्व सेवा संघ, वाराणसी के प्रांगण में १९-२० और २१ सितम्बर १९७० को क्रमशः कानपुर और आगरा विश्वविद्यालयों तथा काशी विद्यापीठ के उपकुलपतियों की अध्यक्षता में एक गोष्ठी का आयोजन किया। इस गोष्ठी में विभिन्न राजनीतिक दलों के सदस्यों, छात्र-प्रतिनिधियों, शिक्षाविदों एवं अनेक सामाजिक कार्यकर्ताओं ने अध्यादेश के कारण उत्पन्न पहलुओं पर अपने विचार व्यक्त किये। गोष्ठी में व्यक्त किये हुए विचारों पर चिन्तन करने के उपरान्त आचार्यकुल निम्नलिखित वक्तव्य दे रहा है

● आचार्यकुल शिक्षा को शिक्षकों, छात्रों एवं अभिभावकों का एक परस्पर दायित्व मानता है। इसलिए सरकार के किसी प्रशासनीय 'आदेश', 'निर्देश', या 'अध्यादेश' के द्वारा शिक्षा-क्षेत्र में किसी भी ऐसे सुधार के प्रयत्न को, जो उसके विभिन्न वर्गों के दैनंदिन जीवन एवं कार्यों को गंभीर रूप से प्रभावित करता है, शिक्षा एवं लोकतंत्र के मूल्यों के विपरीत मानता है और यह भी मानता है कि अन्ततोगत्वा इससे कोई स्थायी लाभ नहीं होगा।

● शिक्षण-संस्थाओं में राजनैतिक प्रयोजन के कारण हुए दलीय प्रवेश से विद्यार्थियों एवं शिक्षकों के बीच शीत-युद्ध का वातावरण बनता है। आचार्यकुल इसको शिक्षा के क्षेत्र में हस्तक्षेप ही नहीं, बल्कि शिक्षा के लिए घातक भी मानता है, क्योंकि इससे तात्कालिक समस्याएँ तो उलझती ही हैं, साथ-साथ शिक्षा के मूल्यों की स्थायी क्षति होती है।

● छात्र-संघ के स्वरूप एवं संरचना के प्रश्न का वास्तविक समाधान शिक्षक एवं छात्रों के सम्मिलित आत्म-निर्णय से ही हो सकता है। इस दिशा में किसी बाह्य आदेश, निर्देश अथवा विधान की आवश्यकता नहीं है। आत्म-निर्धारण के कारण उनके स्वरूपों में विविधता रह सकती है, और रहनी भी चाहिए। इस दिशा में एक से अधिक प्रयोग साध्य ही नहीं, वांछनीय भी हैं। इस दृष्टि से छात्र-संघ की सदस्यता की अनिवार्यता या वैकल्पिकता का प्रश्न ही नहीं उठता, क्योंकि हर व्यक्ति में यह अधिकार निहित है कि वह किसी संघ अथवा संगठन का सदस्य हो या न हो। आचार्यकुल का दृढ़ मत है कि बाहरी शक्ति का प्रयोग आत्मानुशासन के विकास में सहायक नहीं, बाधक होता है। आत्मानुशासन का प्रशिक्षण एवं अभ्यास दायित्व-निर्वाह के अधिकाधिक अवसरों के द्वारा ही सम्भव है। →

मुजफ्फरपुर की डाक

तरुण शान्तिसैनिकों का मौन जुलूस

मुजफ्फरपुर नगर तरुण शान्तिसेना के करीब दो सौ सैनिकों का एक मौन जुलूस ११ सितम्बर को साढ़े तीन बजे शाम को निकला। उजले परिधान में तथा केशरिया स्कार्फ में ये तरुण शान्तिसैनिक मुजफ्फरपुर नगरवासियों के लिए विस्मयकारक थे। तरुण शान्तिसैनिक 'प्ले कार्डस' एवं पर्चों से अपने उद्देश्यों की अभिव्यक्ति कर रहे थे। इनके 'प्ले कार्डस' में "नकली शिक्षा बन्द करो", "समाज बदलना है तो शिक्षा बदलो", "हमें डिग्री की शिक्षा नहीं, जीवन की शिक्षा चाहिए", "जुल्म करो मत, जुल्म सहो मत" आदि नारे अंकित थे।

जुलूस की अगली कतार में एक तरुण एवं एक तरुणी बैनर लिये चल रहे थे। शान्तिसैनिकों का जत्था पीछे-पीछे दो कतारों में चल रहा था। प्रत्येक सैनिक के हाथ में एक 'प्ले कार्ड' था। जुलूस का आरंभ नगर-भवन के मैदान से "हमारा मन्त्र जय जगत्, हमारा तन्त्र ग्रामस्वराज्य' तथा "हमारा लक्ष्य विश्वशान्ति" के उद्घोष के साथ हुआ। गांधी शांति प्रतिष्ठान, नया टोला में जुलूस बैठक के रूप में समाप्त हुआ।

तरुण शांतिसेना की सहायता के लिए 'चैरिटी शो'

१३ सितम्बर रविवार को मुजफ्फरपुर के स्पर्धी विद्यालय में तरुण-शांतिसेना की ओर से नृत्य एवं संगीत का एक 'चैरिटी शो' का आयोजन किया गया था। कार्यक्रम में भाग लेनेवाले आकाशवाणी, पटना के कलाकार तथा कुछ स्थानीय कलाकार थे। कार्यक्रम का मूल उद्देश्य स्वस्थ मनोरंजन प्रस्तुत करना तथा तरुण-शांतिसेना संगठन के लिए कोष इकट्ठा करने का सिलसिला शुरू करना था। साहसी तरुण शांतिसैनिकों ने बहुत ही कम समय में सारा प्रबन्ध किया तथा एक अच्छी धनराशि इकट्ठी कर ली।

ग्रामसभाओं के पदाधिकारियों का शिक्षण-शिविर

मुसहरी प्रखण्ड के मादापुर, बैकटपुर, मोमिनपुर, माधोपुर, धोबहाँ एवं मुरौल प्रखण्ड के दरधा, चोसस ग्रामसभाओं के पदाधिकारियों एवं कार्यसमिति के सदस्यों का एक दिवसीय शिक्षण-शिविर २० सितम्बर को सलहा माध्यमिक विद्यालय के भवन में प्रखण्ड ग्रामस्वराज्य समिति की ओर से आयोजित किया गया। शिविर में ४२ शिविरार्थी शामिल हुए। इनके अलावा इस क्षेत्र में कार्यरत कार्यकर्ताओं में से भी कुछ शामिल थे। शिविर की अध्यक्षता माधोपुर ग्रामसभा के अध्यक्ष श्री अम्बिका तिवारी ने की। बैकटपुर के *ग्राम-शान्तिसैनिक श्री योगेन्द्र महतो* के शान्ति-गीत से शिविर का कार्यारंभ हुआ। शिविर का संचालन श्री कैलाश प्रसाद शर्मा ने किया। शिविर में ग्रामदान की कानूनी पुष्टि, सभा-संचालन की कार्य पद्धति, ग्राम-कोष-संग्रह एवं विनियोग की पद्धति तथा ग्राम-विकास की प्रक्रिया आदि विभिन्न विषयों पर विस्तार से चर्चा हुई। शिविर में प्रातः तथा अपराह्न, दोनों समय श्री जयप्रकाशजी उपस्थित रहे।

शिक्षण-शिविर में बोलते हुए श्री जयप्रकाश नारायण ने ग्राम-सभाओं के पदाधिकारियों एवं सदस्यों को धन्यवाद ज्ञापन किया तथा ग्रामदान पुष्टि-अभियान को अपना काम मानकर संगठित रूप से इसको सम्पन्न करने की अपील की। श्री मंडलेश्वर तिवारी (माधोपुर गाँव की ग्रामसभा के मंत्री) ने अपने गाँव को आदर्श बनाने की चर्चा की थी, जिसका उल्लेख करते हुए जयप्रकाशजी ने कहा कि हर गाँव को उस गाँव के लोग ही आदर्श बना सकते हैं, आवश्यकता है संकल्प-शक्ति की। भाषण-क्रम में उन्होंने बताया कि शोषण, विषमता और अन्याय हिंसा के ही रूप हैं, इनकी समाप्ति अहिंसा है। आशा है, *ग्रामसभा के प्रयास से शोषण, विषमता* एवं अन्याय में उत्तरोत्तर कमी होती जायगी। ग्रामसभा को सबल करना चाहिए कि उनके गाँव में जो भी झगड़े हों, उनका निबटारा ग्रामसभा में या पंच-फैसले से करें। ग्रामसभा अपनी शक्ति के अनुसार विकास की ऐसी योजना बनाये जिसमें छोटे-बड़े गाँवों का विकास निहित हो। सरकार की या बाहर की मदद की माँग अपनी शक्ति के अनुपात में ही करें तो लोकशक्ति उभरकर ऊपर आयेगी, नहीं तो विकास की पुरानी पद्धति के अनुसार कार्य करने से लोकशक्ति क्षीण ही होगी। अन्त में उन्होंने ग्रामसभाओं के प्रतिनिधियों को सलाह दी कि कठिनाइयों से वे घबरायेंगे नहीं, सबके हित की दृष्टि से सोचेंगे और सब से अपना कार्य करते रहेंगे तो वे अवश्य अपने उद्देश्य में सफल होंगे।

मुसहरी प्रखण्ड की विकास-योजना

ग्रामदान-पुष्टि के साथ ग्राम-विकास की दिशा में जयप्रकाशजी प्रयत्नशील हैं। मुसहरी प्रखण्ड की 'कृषि-औद्योगिक विकास-योजना' बनाने के लिए जयप्रकाशजी

→ ● छात्र-संघ छात्रों में सामाजिकता के विकास एवं लोकतंत्र के *अभ्यास का एक* शक्तिशाली माध्यम है। वह शिक्षा का एक अविभाज्य अंग ही है। परन्तु छात्र-संघ का प्रश्न भी शिक्षा के समग्र रूप से जुड़ा हुआ है, इसलिए उसे पृथक् करके कभी नहीं सोचा जा सकता है। अतः आचार्यकुल का मत है कि शिक्षा की सम्पूर्ण संघटना में आमूल एवं तात्कालिक परिवर्तन किया जाय।

• आचार्यकुल युवा-शक्ति का स्वागत *करते हुए आशा करता है कि युवकों की* विद्रोह-भावना सर्जनात्मक दिशा में विकसित एवं विस्तृत होगी और अपनी समस्याओं के समाधान में राष्ट्र एवं मानव-जीवन के व्यापक सन्दर्भ को स्वीकार करेगी।

—वंशीधर श्रीवास्तव
संयोजक
केन्द्रीय आचार्यकुल

ने ग्राम-विकास-कार्यों से सम्बन्धित दिल्ली की एक संस्था 'ग्राम-विकास संगम' (AVARD) के योजना-विशेषज्ञों के एक अध्ययन-दल को आमंत्रित किया है। इस अध्ययन-दल में सर्वश्री अमरेश सेन, गिरधर गोपाल, रणजीत गुप्त तथा एम०वी० शास्त्री शामिल हैं। इस अध्ययन-दल ने पिछले १५ सितम्बर से अपना कार्य प्रारम्भ कर दिया है। अध्ययन-दल विभिन्न गाँवों का सर्वेक्षण कर तथा सम्बन्धित अधिकारियों तथा संस्थाओं से आवश्यक जानकारी प्राप्त कर स्थानीय साधनों एवं सम्भावनाओं की खोज कर रहा है, जिनके आधार पर प्रखण्ड के विकास की एक योजना तैयार की जा सके।

बैंक-प्रतिनिधियों के साथ चर्चा

मुजफ्फरपुर स्थित विभिन्न बैंकों के प्रतिनिधियों की एक चर्चा-गोष्ठी १६ सितम्बर को सायंकाल ५ बजे स्टेट बैंक आफ इण्डिया, मुजफ्फरपुर शाखा के भवन में श्री जयप्रकाश नारायण की उपस्थिति में हुई, जिसमें राष्ट्रीयकृत बैंकों की कृषि-ऋण सम्बन्धी नीति एवं पद्धति के सम्बन्ध में चर्चा हुई। बैठक में १० बैंकों के मैनेजर अथवा एजेन्ट तथा कृषि-ऋण से सम्बन्धित अन्य अधिकारियों ने भाग लिया। कृषि-कार्य के लिए दिये जानेवाले ऋणों के सम्बन्ध में अपनी-अपनी नीति एवं पद्धति पर प्रतिनिधियों ने सर्वप्रथम प्रकाश डाला। चर्चा के सिलसिले में यह ज्ञात हुआ कि सभी बैंकों की पद्धति में कुछ-न-कुछ भिन्नता है, जो उचित नहीं जँचता। सबसे आश्चर्यजनक

यात जो सामने आयी वह यह कि ढाई एकड़ से कम जमीन रखनेवाले किसानों के लिए, जिनकी संख्या ६५ प्रतिशत से भी अधिक है, फसल ऋण को छोड़कर उत्पादन बढ़ाने के लिए—सिंचाई आदि के लिए—किसी प्रकार के ऋण का कोई प्रविधान नहीं है। बैंकों के प्रतिनिधियों ने (स्टेट बैंक आफ इंडिया को छोड़कर) यह महसूस किया कि यदि हर बैंकों के लिए कुछ क्षेत्र निर्धारित कर दिये जायें तो कम स्टाफ रखकर वे सुविधापूर्वक ऋण प्रदान करने का काम कर सकते हैं, क्योंकि सारे जाँच आदि कार्य में उन्हें सहूलियत होगी। सरकारी अधिकारियों द्वारा आवश्यक जानकारी शीघ्र नहीं प्रदान करने के कारण भी उन्हें ऋण की स्वीकृति देने में विलम्ब होता है, ऐसा प्रतिनिधियों ने बताया। जयप्रकाशजी ने किसानों के द्वारा उठायी जानेवाली असुविधाओं एवं परेशानियों की ओर बैंकों का ध्यान आकृष्ट किया तथा कहा कि यदि पद्धति को सरल एवं आसान नहीं बनाया गया तथा छोटे किसानों के लिए सिंचाई हेतु ऋण की व्यवस्था नहीं की गयी तो फिर बैंकों के ऋण का लाभ कृषि-क्षेत्र में अधिक नहीं मिल पायेगा। समय कम रहने के कारण और अधिक चर्चा नहीं हो सकी। अतः सभी बैंकों ने जयप्रकाशजी के सुझाव पर अपने-अपने बैंकों की नीति एवं पद्धति की जानकारी लिखित रूप में देने का आश्वासन दिया, जिसका अध्ययन कर अनुभव के आधार पर जयप्रकाशजी उसमें संशोधन सुझा सकें।

ग्रामसभा का संकल्प-समारोह

सलहा पंचायत के माधोपुर ग्रामदानी गाँव के ग्रामसभा के नवनिर्वाचित पदाधिकारियों एवं सदस्यों का संकल्प-समारोह दिनांक २१ सितम्बर को सायंकाल ५ बजे सम्पन्न हुआ। इस अवसर पर १५ कट्ठा जमीन ५ आदाताओं में वितरित की गयी। ज्ञातव्य है कि इसके पूर्व में ५ बीघा जमीन इस गाँव के भूमिहीनों में बाँटी जा चुकी है। और भी जमीन बाँटने की तैयारी चल रही है। सभी पदाधिकारियों एवं सदस्यों को श्री जयप्रकाश नारायण ने निम्नलिखित संकल्प कराया।

'ईश्वर का स्मरण करते हुए ग्राम-स्वराज्य की स्थापना के लिए हम निम्नलिखित संकल्प करते हैं :

१. हम अपने गाँव के नैतिक, भौतिक एवं सांस्कृतिक विकास के लिए आपस में मिलकर अपनी शक्ति भर प्रयास करेंगे।

२. हम अपने गाँव में शांति बनाये रखेंगे। पहले के जो मामले-मुकदमे होंगे उन्हें सम्बन्धित व्यक्तियों को राजी कराकर अदालत से उठवा लेने और आपसी समझौते अथवा पंचफैसले द्वारा सुलझाने का प्रयत्न करेंगे।

३. भविष्य में गाँव में झगड़े न हों, और हों तो उन्हें भी आपसी समझौते या पंचफैसले से सुलझाने का प्रयत्न करेंगे।

४. हम कोई भी निर्णय सम्प्रदाय, जाति, वर्ग आदि के भेदभाव से प्रभावित होकर नहीं लेंगे, और सभी धर्मों के प्रति समान आदर तथा प्रेमभाव रखेंगे।

५. हम अपने गाँव में शांति-स्थापना और सुरक्षा का स्वयं प्रबन्ध करेंगे और इसके लिए ग्राम-शांतिसेना का गठन करेंगे।

६. हम गाँव के सर्वाङ्गीण विकास के लिए सतत प्रयत्नशील रहेंगे और गाँव में कृषि तथा उद्योग के विकास के लिए गाँव के सहयोग से जो भी सम्भव होगा, करेंगे।

७. हमारे गाँव में अन्याय या अनीति न हो, इसका हम प्रयत्न करेंगे।

८. हमारे गाँव में कोई भूखा, नंगा, बेरोजगार या बेघर न रहने पाये इसके हम यथाशक्ति उपाय करेंगे।

९. गाँव का हर बच्चा भविष्य का अच्छा मनुष्य तथा नागरिक बने, इसके लिए उसे जीवनोपयोगी शिक्षा दिलाने के लिए हम पूरा प्रयत्नशील रहेंगे।

१०. हम ग्रामसभा में हर निर्णय सर्वसम्मति अथवा सर्वानुमति से करेंगे।"

ग्रामदान-पुष्टि सम्बन्धी प्रगति

अभी तक ५ पंचायतों के २७ गाँवों से सम्पर्क हुआ है। ११ गाँवों में ग्रामदान की शर्तें पूरी हुई हैं, जिनमें से ६ में ग्रामसभाएं बन चुकी हैं, ५ में बननी बाकी हैं। कुल ३६ दाताओं द्वारा निकाली गयी बीघा-कट्ठा भूमि का बँटवारा १०१ आदाताओं के बीच हुआ। कुल २३ बीघा ८ कट्ठा १७ धूर बँटी है। कानूनी पुष्टि के लिए ३ गाँवों के कागज दाखिल हैं, १ गाँव पुष्ट हुआ है। इस सम्बन्ध में ज्ञातव्य है कि कानूनी पुष्टि-हेतु कागज तैयार करने में काफी कठिनाई का सामना करना पड़ता है, इसलिए इस काम में प्रगति कम है। इतनी प्रगति भी सम्भव नहीं होती, यदि स्थानीय अंचलाधिकारी महोदय अपने कर्मचारियों को अतिरिक्त शक्ति लगाकर सर्वे-कार्यालय से आवश्यक ब्योरे की जानकारी प्राप्त कर उपलब्ध नहीं कराये होते।

—सुरेन्द्र विक्रम
—कैलाश प्रसाद शर्मा

श्री जयप्रकाशजी का कार्यक्रम
(माह अक्तूबर '७०)

दिनांक	
३-५	वर्धा सर्व सेवा संघ-अधिवेशन में
६-७	दिल्ली
८	इसानी बिरादरी की कार्यकारिणी की बैठक में तथा पटना रवाना
९	पटना पहुँच (शाम को)
१०	लखीसराय
११-३१	मुसहरी

आवश्यक सूचना

सर्व सेवा संघ के सेवाग्राम-अधिवेशन के कारण "भूदान-यज्ञ" का १२ अक्तूबर '७० का अंक नहीं प्रकाशित होगा, १९ अक्तूबर को संयुक्त रूप में प्रकाशित होगा। —सं०

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पै०), विदेश में २२ रु०; या २५ शिलिंग या ३ डालर।
एक प्रति का २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं मनोहर प्रेस, वाराणसी में मुद्रित।

आचार्य विनोबा भावे
७५वीं जन्म-जयन्ती ग्रामस्वराज्य-कोष

समर्पण-पत्र ॐ

पूज्य विनोबाजी,

आपके नेतृत्व में चलाये जा रहे ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य आन्दोलन के हेतु आपकी ७५वीं जन्म-जयन्ती के उपलक्ष में ग्रामस्वराज्य-कोष के लिए भारत के विभिन्न प्रदेशों से नीचे लिखे अनुसार एकत्रित कुल रु० ६२,५६,२८५ (रुपये बासठ लाख, छप्पन हजार, दो सौ पच्चासी) की धन-राशि आपके प्रति हम सबकी हार्दिक श्रद्धा तथा आपके दीर्घायुष्य की शुभ-कामनाओं के साथ सादर समर्पित है :

तमिलनाडु	६६,५८७
केरल	२६,६२८
मैसूर	५,४६,१०५
आन्ध्र प्रदेश	३,१२,२५५
महाराष्ट्र	११,२०,०७५
बम्बई	८,००,०००
गुजरात	७,५०,०००
मध्यप्रदेश	८,२५,०००
उड़ीसा	४७,०००
बंगाल	३,००,०००
आसाम	१,१०,०००
बिहार	४,००,०००
उत्तरप्रदेश	३,५५,२८७
राजस्थान	३,७५,०००
हरियाणा	६२,१०१
पंजाब	७५,१३२
हिमाचल प्रदेश	१५,००५
दिल्ली	४५,८७०
जम्मू-कश्मीर	५००
केन्द्रीय कार्यालय	७,५००
कुल योग :	६२,५६,२८५

गांधी-जयन्ती, २ अक्तूबर, १९७०

सेवाग्राम

जयप्रकाश नारायण

अध्यक्ष

ग्रामस्वराज्य-कोष समिति

ॐ २ अक्तूबर '७० को सेवाग्राम में जयप्रकाश नारायण द्वारा विनोबा को समर्पित

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

वर्ष : १७ अंक : २-३

सोमवार १९ अक्तूबर, '७०

इस अंक में

सम्पादक

राममूर्ति

सर्व सेवा संघ

राजघाट वाराणसी-१

फोन : ६४३६१

शान्तिसेना की क्रान्तिकारी भूमिका

● पिछले आठ-दस वर्षों से यह आशा और आकांक्षा रही है कि आप कहेंगे कि अब तुम्हारी जरूरत नहीं। मैं और 'शाहियों' के विरोध में तो रहा ही हूँ, 'बुजुर्गशाही' के विरोध में भी रहा हूँ। 'भूत का वर्तमान पर प्रभाव पड़ेगा, तो वर्तमान भी भूत बन जायेगा।' इसीलिए आज युवक चाहता है कि हमारे दिमाग में कोई चीज भरी न जाय।

● शान्ति के विषय में एक बात साफ होनी चाहिए कि 'हिंसा में अन्याय के प्रतिकार की जो भूमिका रही है, वह क्या कभी समाप्त होगी?'·· हिंसा से संदर्भ तो बदल सकता है, लेकिन मूल्य-परिवर्तन नहीं होता।

● 'समाज-परिवर्तन की प्रक्रिया में हिंसा की अनिवार्यता का अंत हो सकता है।' जो यह मानता है, वह तरुण है। जो मानता है कि इसका अंत नहीं होगा, क्योंकि अब तक यह हुआ नहीं, वह तरुण नहीं है।

● पश्चिम में जीविका की खोज सम्पन्न हो गयी, जीवन की खोज जारी है।' लेकिन जहाँ जीविका का प्रश्न भी होता है वहाँ हिंसा-अहिंसा का प्रश्न गौण हो जाता है। जठराग्नि में सब कुछ जलकर भस्म हो जाता है।···

● जीवन को क्षीण किये बिना क्या समाज-परिवर्तन हो सकता है? सन्दर्भ और सम्बन्ध-परिवर्तन हों, और सम्बन्ध क्षीण न हो; समाज-परिवर्तन भी हो, और जीवन की सम्पन्नता भी हो, मनुष्य का मनुष्य के साथ सम्बन्ध बना रहे, क्या यह संभव है?—यह शांतिसेना की खोज का विषय है।

● 'अहिंसा गौण है, समाज-परिवर्तन मुख्य है।'—यह शांतिसेना का लक्ष्य होना चाहिए।·· लेकिन समाज-परिवर्तन का अर्थ है कि मनुष्य के सम्बन्ध पहले से अधिक अच्छे हों।·· 'क्रांतिकारी, प्रगतिशील, सजीव शान्ति' ·· कैसे हो?' यह शांतिसेना का दूसरा लक्ष्य होना चाहिए।

● शांतिसेना को इस सड़े-गले समाज की हिंसा का संरक्षक नहीं बनना है।·· सामाजिक प्रतिष्ठा से आवरित हिंसा कोई कम भयंकर हिंसा नहीं है। ·· शांतिसेना को पूँजीपतियों या किसीका अभिभावक नहीं बनना है।

● शांतिसेना में दो मूल्यों का प्रीति-संगम है : सिपाही की वीरता और नागरिक की सभ्यता का। इन दो मूल्यों का संरक्षण उसे करना है।

● शांतिसेना के बारे में यह भ्रम नहीं रखना चाहिए कि यह क्रांतिकारी हिंसा के विरोध में खड़ी है।·· हिंसा से कुछ नहीं होगा, समाज नहीं बदलेगा, साथ ही आज के प्रतिष्ठित अधिष्ठित पूँजीवाद से भी सत्यानाश ही होनेवाला है। यह उसके सामने स्पष्ट है।

● हिंसा ज्यादा आदमी कभी कर नहीं सकते। अगर समाज की अधिक जनसंख्या परिवर्तन के लिए तैयार हो जाय, तो हिंसा निरर्थक हो जाती है।

● मुट्ठीभर लोग क्रांति के ठीकेदार बनकर हिंसक या अहिंसक प्रतिकार करते हैं, तो उससे अधूरी क्रान्ति होती है। जिस तरह हमें प्रातिनिधिक लोकतंत्र अमान्य है, उसी तरह प्रातिनिधिक क्रान्ति भी नहीं चाहिए।·· शान्ति सेना को क्रान्ति की चेतना और प्रेरणा पैदा करने का यह काम करना है।

● उक्त संदर्भ में यह निश्चित है कि नक्सलवादी तरीके से भूमि हड़पी जा सकती है, बाँटी नहीं जा सकती। भूमि का बँटवारा बिना विनोबा की प्रक्रिया के हो नहीं सकता।

[सेवाग्राम, ४ अक्तूबर, '७० के भाषण से।]

—दादा धर्माधिकारी

सेवाग्राम—इंदौर

अगर विनोबा को ६२ लाख का चेक ही देना होता तो डाक से भी भेजा जा सकता था। अगर बापू की कुटिया ही देखकर लौट आना होता तो किसी दूसरे वक्त भी जाया जा सकता था; अपने घर बैठे-बैठे भी २ अक्तूबर को बापू का स्मरण किया जा सकता था। लेकिन इस बार हम लोग सेवाग्राम मन में कुछ दूसरी बातें भी लेकर गये थे। सेवाग्राम जाकर हमें बापू और विनोबा को श्रद्धा तो देनी ही थी, किन्तु चिंता इस बात की कम नहीं थी कि वहाँ से हम क्या लेकर लौटेंगे ? गांधीजी दुनिया में भक्तों की भेंट बटोरने नहीं आये थे, वह आये थे यह प्रश्न लेकर कि हम जिस दुनिया में रहते हैं, उसे क्या रहने लायक नहीं बना सकते ? जिन लोगों के बीच हम रहते हैं उन्हें अपना बनाकर, और खुद उनके बनकर, नहीं रह सकते ? गांधी ने यह जो प्रश्न अपनी जिन्दगी में उठाया उसका उत्तर अभी तक कहाँ मिला ? बल्कि, जो प्रश्न गांधी के जमाने में गांधी का था वह अब सामान्य जन का भी होता जा रहा है। वह प्रश्न सबके मन में है। बात इतनी रह गयी है कि करोड़ो जबानें अभी उस प्रश्न को नहीं पूछ रही हैं, और असंख्य पैर उसका उत्तर ढूंढने के लिए अभी तक निकल नहीं सके हैं। लेकिन जो बात मन में आ गयी वह मन में ही कब तक रहेगी ?

हमने लोगों से जमीनें माँगी, और उन्होंने दी। उनमें से हमने लाखों एकड़ बाँटी भी। जो गरीब कभी दाने-दाने को मुहताज थे, आज उनके खेत लहलहा रहे हैं। ऐसे भूदान-किसानों को कोई भी जाकर देख सकता है। भूमि के बाद हमने लोगों से अपना स्वामित्व छोड़ने को कहा। उन्होंने हस्ताक्षर किया, और कागज हमारे हाथ में रख दिया। हमने अब तक दो बातें कहीं; दोनो लोगों ने मानीं। अब हमें इन दो बातों के आगे भी लोगों से कुछ कहना है, या बस इतना ही कहना था ? सेवाग्राम में हमने सोचा कि असली बात तो अभी कहना बाकी है! वह बात क्या है ? यही कि अपने गाँव या शहर को आजाद कर लो। अभी गुलाम हो, अब इस गुलामी को छोड़ो और मुक्त हो जाओ। अपनी नितदिन की जिन्दगी अपने निर्णय से चलाओ। इस नयी आजादी का पैगाम लेकर हम सेवाग्राम से लौटे हैं। उसे सुनाने के लिए दर्जनों साथी अपने-अपने क्षेत्र में गड़कर बैठने का संकल्प करके गये हैं। वे लोगों को मुक्ति का संदेश सुनायेंगे, दिलों को जोड़ने के लिए बीघे में कट्ठा भूमि बाँटेंगे। और सबके साथ मिलकर ग्रामस्वराज्य का क्रान्तिघोष लगायेंगे। अगले एक-दो महीनों में ऐसे कुछ सौ क्रान्ति-क्षेत्र हमें निकालने हैं। वे निकलेंगे, इसमें संदेह नहीं। अगर क्रान्ति गाँव-गाँव न पहुँची तो मुक्ति कैसे पहुँचेगी ?

सेवाग्राम में विनोबा थे, सर्व सेवा संघ के सदस्य थे तथा अन्य मित्र थे। तरुण कम थे। एक पखवारे के बाद इन्दौर में भारत के विभिन्न राज्यों के तरुण अलग इकट्ठा होंगे। उनके सामने भी वही प्रश्न होगा जो सेवाग्राम में हमारे सामने था : तुम जिस देश में रहते हो, क्या उसे रहने लायक नहीं बना सकते ?

तरुणों को इस बार हाँ-नहीं में यह उत्तर देना है। जिन तरुणों के हाथों में शक्ति और पैरों में गति है, वे नहीं बनायेंगे तो कौन बनायेगा ? क्या कोई तरुण मानता है कि जिस भारत में वह रह रहा है वह रहने लायक है ?

एक समय था जब रोटी का सवाल गरीबों का सवाल था। कहा जाता था कि क्रान्ति गरीबों के लिए चाहिए ताकि उनका पेट भरे, और उन्हें इनसान की हैसियत मिले। लेकिन आज ? क्या आज भी क्रान्ति गरीबों के ही लिए चाहिए ? क्या आज के समाज में स्वयं तरुणों—सुशिक्षित तरुणों—के लिए जगह रह गयी है ? क्या आज के समाज में उनके लिए कोई निश्चित भविष्य है ? अगर गरीबों को रोटी मिल जाय तो वह भविष्य को छोड़ सकता है, लेकिन क्या तरुण भी भविष्य छोड़ देने को तैयार है ?

तरुण इसीलिए तरुण है कि उसके मन में कुछ सपने हैं। तरुण अपने सपनों की एक नयी दुनिया बनाना चाहता है। उसे अपने पुरुषार्थ पर भरोसा है। इसीलिए वह क्रान्ति चाहता है। वह जीविका तो चाहता ही है, साथ ही जीवन भी जीना चाहता है। वह सम्मान की जीविका चाहता है, और समानता का जीवन चाहता है।

आज के समाज में न सम्मान की जीविका है, न समानता का जीवन। है क्या ? है उठा-पटक की राजनीति, और धोखा-धड़ी की व्यवसाय-नीति, और इन्हीं दोनों की सेवा में लगी हुई शिक्षा-नीति। राजनीति मनुष्य को वोटर से ज्यादा कुछ नहीं मानती, और व्यवसाय उसे कस्टमर से ज्यादा कुछ नहीं मानता, और हमारी शिक्षा उसे नौकर से ज्यादा कुछ नहीं बनाती। मनुष्य को मनुष्य न नेता मानता है, न सेठ, और न शिक्षक। जो तरुण क्रान्ति इसलिए चाहता है कि मनुष्य को मनुष्य की हैसियत मिले, उसका ऐसी राजनीति, ऐसे व्यवसाय और ऐसी शिक्षा में क्या स्थान है ? उसका सही स्थान समाज में है, मनुष्यों के बीच है। समाज ही उसकी पाठशाला, क्रान्तिशाला है। वह भटक गया था सत्ता और सरकार की गलियों में। उसने देखा नहीं कि समाज के दरवाजे उसके लिए खुले हुए हैं। सेवाग्राम ने वह दरवाजा प्रौढ़ों के लिए खोल दिया है, क्या इन्दौर तरुणों के लिए खोलेगा ? ●

प्रतिकूलताओं के बावजूद ग्रामस्वराज्य-कोष का काम बहुत सफल

※ कार्यकर्ता गुण और स्नेह वर्द्धन करें ※

—ग्रामस्वराज्य-कोष समर्पण के बाद विनोबाजी के मार्मिक उद्‌गार—

मेरे प्यारे भाइयो,

आज आपका मैं अधिक समय नहीं लूँगा। इन दिनों मानस मौन की तरफ मुड़ा हुआ है, और दूसरी बात—शरीर भी बहुत कमजोर है। मैं तो आशा करता था कि इस बार भगवान मुझे उठा ले, लेकिन उसकी इच्छा दूसरी थी। शायद इस शरीर से वह और कुछ सेवा लेना चाहता है। क्या सेवा लेना चाहता है इसका संकेत तो उसीसे मिलेगा।

अभी आपने जो काम किया है, वह बहुत सफल है, और उसके लिए आप सब लोगों को धन्यवाद है। बहुत 'फैक्टर्स' इसके लिए प्रतिकूल थे। अभी चन्द दिनों पहले बादशाह खाँ के लिए पैसा माँगा गया था। माँगनेवालों में बहुत-से आप ही लोग थे और देनेवाले भी अक्सर वे ही होते हैं। यह सोचते हुए मैं आपको इसके लिए सौ फीसदी मार्क्स देता हूँ। और भी कई पहलू सोचने के हैं। 'तिलक-स्वराज्य फंड' का नाम लिया गया। लोकमान्य तिलक उन दिनों कीर्ति के शिखर पर थे और इस वक्त बाबा अपकीर्ति के शिखर पर हैं। आप लोगों के मन में तो बहुत इज्जत है, और देश में कई लोग हैं जिनके मन में इज्जत तो है, लेकिन बाबा का कुल काम बोगस है, 'बाबा' और 'बोगस' दोनों में 'बो' है। ऐसी इस समय मान्यता है। यह मेरी अपेक्षा से भिन्न नहीं है। मैंने बिहार में कहा था कि भूदान का काम नक्द है, 'डेफिनिट' है। जितना मिला, बाँटा गया। इन दिनों उसीके आधार से बाबा की गिरी हुई प्रतिष्ठा को लोग खड़ा करते हैं, यों कहकर कि १२ लाख एकड़ भूमि बँटी, १५ लाख बँटी। वह भूदान था। ग्रामदान के सिलसिले में मैंने कहा था कि इसमें से अनन्त निकलेगा या शून्य निकलेगा। मुझे मालूम नहीं, बिहार के लोग यहाँ काफी हैं, वहाँ उन्होंने यह सुना है। अनन्त या शून्य—दूसरी चीज इसमें से निकलेगी नहीं। आज तो शून्य ही दिखता है। इसमें से अनन्त निकले, इसके लिए कोशिश जयप्रकाशजी कर रहे हैं, आप लोग कर रहे हैं, और मेरा विश्वास है कि कोशिश सफल होगी। क्योंकि जमाने की यह माँग है।

सौ में एक सौ पाँच अंक

'तिलक-स्वराज्य फण्ड' की तुलना इस (ग्रामस्वराज्य-कोष) के साथ हो नहीं सकती। उन दिनों क्रान्ति की भावना, कामना बहुत तीव्र थी, उस हिसाब से बेचारे ग्रामदान को कौन पूछेगा? शहर-वाले नहीं चाहते हैं कि ग्रामस्वराज्य हो, इसलिए कि उनका चले गाँव में। तो, दोनों की तुलना ही नहीं हो सकती। अलावा इसके, लोकमान्य तिलक की मृत्यु के बाद फण्ड इकट्ठा हुआ। और हिन्दुस्तान में मृत्यु की बड़ी महिमा है। स्त्रियों की सेवा की जरूरत कस्तूरबा की मृत्यु के पहले भी थी, लेकिन कस्तूरबा की मृत्यु के बाद निधि माँगी गयी। उतना उनके जीते जी होता नहीं, और गांधी-स्मारक निधि भी उसी प्रकार एकत्रित हुई। तो यह आप बाबा के जीते जी कर रहे हैं। अगर इस बीच बाबा मर जाता। तो डेढ़ करोड़ हो जाता। यह बहुत बड़ा प्रतिकूल 'फैक्टर' है। उन दिनों उस काम को उठानेवाले गांधीजी थे, आज कोई गांधी तो है नहीं। मैंने कई दफा कहा है कि इसके आगे नेतृत्व की कल्पना छोड़ दीजिए। गणसेवकत्व को बढ़ाइए। आगे का जमाना गणसेवकत्व का है। तो गणसेवकत्व के द्वारा यह काम हुआ है। किसी भी महान नेता में जो शक्ति थी उससे महान् शक्ति गणसेवकत्व में है, ऐसा सिद्ध होगा। लेकिन वह भविष्य के गर्भ में है। आज हमारे गणों की जो ताकत थी तदनुसार यह काम हुआ। इसके अलावा, मैं गणित का प्रेमी, जहाँ तक मुझे स्मरण है—जहाँ तक स्मरण है यानी मैं भूतकाल भूलनेवाला हूँ, तिसपर भी जो स्पष्ट स्मरण होता है, 'सब्जेक्ट टु करेक्शन' मैं बोल रहा हूँ, जहाँ तक मुझे याद है, उस निधि में १२ लाख जो कम पड़ा था आखिर में, तो जमनालालजी दौड़े गये बम्बई में, और चार-पाँच घंटे ताकत लगाकर जो वह १२ लाख कम था, उसे पूरा कर दिया। आज वैसे दौड़े जानेवाले 'कैपिटल' जिनको 'इष्ट' है ऐसे कोई आपके साथ नहीं हैं। ये सारे 'फैक्टर्स' इसके प्रतिकूल हैं। एक ही 'फैक्टर' अनुकूल कहा जा सकता है कि उन दिनों पैसे की कीमत ज्यादा थी, आज पैसे की कीमत गिरी है। आज का एक करोड़ उन दिनों के दस लाख के बराबर हो सकता है, यही 'फैक्टर' आपके लिए अनुकूल है। लेकिन इसके साथ ही मूल्यों का उन्मूलन हुआ है इसलिए वह अनुकूलता घट जाती है, जब हम देखते हैं कि कजूसी भी दसगुना है। तो यह सब देखते हुए अब मेरा विचार थोड़ा बदल रहा है। आपको अब १०० में १०५ मार्क्स दूँगा।

कुछ सुझाव कोष-संग्रह के लिए

लेकिन सोचने की बात है, सिद्धराज-जी ने वह विचार पेश किया है, कि हमको जो काम करने हैं, उसके लिए हर साल पैसे चाहिए। मान लीजिए, हिन्दुस्तान में ५५ करोड़ लोग हैं, तो आपको ५५ लाख रुपये तो जरूर चाहिए। अगर हर व्यक्ति १ पैसा देगा तो ५५ लाख हो जायगा। मैं तो आकांक्षा यही रखूँगा, और अगर ऐसा आप कर सकते

कि हर व्यक्ति साल में १ पैसा देता और ५५ करोड़ का ५५ लाख हो जाता, तब मैं कहता कि भारत का सर्वोदय कुल दुनिया में होगा, न कि सिर्फ भारत में। लेकिन हरेक के हृदय में भावना पैदा करना भगवान की इच्छा पर और उसके आशीर्वाद पर निर्भर है, और जरा आगे की बात है, लेकिन मेरी आकांक्षा वह रहेगी। पर मान लीजिए, यह नहीं हो सकता है अभी। अब दूसरा उपाय, ५।। लाख गाँव हैं। १० रुपये हर गाँव दे, तो भी ५५ लाख होगा। वह भी काफी अच्छा माना जायेगा। यह सब मैं हेतुपूर्वक रख रहा हूँ। सरकार के ५५ लाख नौकर हैं। अगर हरेक नौकर साल में एक रुपया दे, तो काम पूरा हो जाता है। यह मैंने इसलिए कहा कि हम लोगों में छूत-अछूत भेद है। पुराना छूत-अछूत नहीं है, नया है। बिहार में मैंने सरकारी अधिकारियों की मदद लेना शुरू किया ग्रामदान के काम में, तो हमारे कई लोग समझे कि इसका जो क्रांतिकारी स्वरूप था वह निकल गया। लेकिन वह जो आवाहन दिया था सरकारी नौकरों को, अधिकारियों को, उसके पहले भी काफी सोचा था, और आक्षेप आने पर बाद में भी काफी सोचा। लेकिन बाबा को पक्की निष्ठा है कि सरकारी नौकरियों में हिन्दुस्तान का बेस्ट 'टैलेंट' है। एक जमाना था जब अंग्रेजों का राज था, तब भी हमारे राममोहन, रानडे, ऐसे महान लोग सरकारी नौकरी में थे। और अब तो स्वराज्य के बाद सरकारी नौकरी में जाने से लोकसेवा होती है। अगर प्रामाणिकता से वहाँ काम करेगा, तो लोकसेवा होती है यह मानना ही पड़ेगा। इसलिए बुद्धिमान, पढ़े-लिखे लोग सरकारी नौकरी में हैं। इसलिए मैंने जो कहा कि ५५ लाख १–१ रुपया आपको देते हैं, तो सरकार चाहे जिस पार्टी की हो, आपने लोकनीति की स्थापना की, ऐसा मैं मानूँगा। नाममात्र की सरकार किसी पार्टी की दिखेगी, लेकिन जो साक्षात सेवक-वर्ग है उसके हृदय में सर्वोदय अंकित होगा। ऐसा हुआ तो आपकी बहुत बड़ी फतह हो गयी, ऐसा मैं मानता हूँ।

एक और बात रखूं, जो अत्यन्त व्यावहारिक है, ऐसा हमको वैद्यनाथ बाबू ने कहा। वैद्यनाथ बाबू बिहार के हमारे सबसे व्यावहारिक नेता हैं; और हमारा 'प्रपोजल', हमारी सूचनाएँ, अक्सर ऐसी होती हैं, कहते हैं धीरेन् भाई कि विनोबाजी तीन-चार पीढ़ियों का काम दे देते हैं; लेकिन मैंने जो सुझाव दिया उसे वैद्यनाथ बाबू ने व्यावहारिक कहा था। वह यह है कि हर ग्रामदानी गाँव से आपको तीन रुपये पैंसठ पैसे देनेवाले लोग १० निकलें। इस तरह हर गाँव ३६ रुपये ५० पैसे साल दे। उसको हमने सर्वोदय-पात्र नाम दिया था, चाहे वह नाम आप छोड़ दीजिए, और एकमुश्त पैसा दे दे, ऐसे १० मनुष्य मिल जायें हर ग्रामदानी गाँव में। यह बिलकुल सरल, व्यावहारिक है, और १।। लाख आपके गाँव हैं, तो ३६ रुपये ५० पैसे हर गाँव से मिलेंगे तो ५५ लाख रुपये हो गये। मैंने यह भी बताया था कि वह जो ३६ रुपये मिलेंगे गाँव से, उसमें से १२ रुपये का एक अखबार पहुँचाया जाय। आपका एक उत्तम अखबार हो, सांगोपांग जानकारी गाँववालों को मिले, एक-एक अखबार हर गाँव में जाय। १२ रुपये सालाना उसमें जाय, तो १।। लाख ग्रामदानी गाँवों में १।। लाख पत्रिकाएँ जायेंगी फिलहाल। और जैसे-जैसे ग्रामदानी गाँवों की संख्या बढ़ेगी, वैसे-वैसे वह पत्रिका बढ़ेगी। अब बाकी के जो २४ रुपये बचे, उन २४ रुपये में स्थानिक, प्रान्तिक और राष्ट्रिय, जैसा आप आज विभाजन करते हैं वैसा कीजिएगा। खैर, यह तो इसकी प्राप्ति के सिलसिले में जो सुझाव देना था, वह मैंने दिया।

होमियोपैथी जैसा गुणवर्द्धन

अब दो बातें और कहूँगा। एक यह—हमारी जो मण्डली है, जब से आंदोलन शुरू हुआ है–२० साल से–तब से रात-दिन काम कर रही है। लेकिन यह समझने की बात है कि हम अनेक दोषों से भरे हुए हैं। लेकिन दोषों के साथ भगवान ने कुछ गुण भी दिये हैं। बड़े-बड़े महात्मा हैं, उनमें भी भगवान ने दोष रखे हैं। गुण काफी दोष कम, और नीच-से-नीच मनुष्य ऐसा पैदा नहीं हुआ जिसमें एक गुण भी भगवान ने न रखा। यह भगवान की योजना है। सर्वगुणसम्पन्न वह है, और सबमें कुछ दोष, कुछ गुण, मिश्रण है। ऐसी हालत में हमें एक-दूसरों के दोष देखना ही नहीं चाहिए। बल्कि गुण ही देखना चाहिए। वह हम करेंगे तो हमारी शक्ति बढ़ेगी। एक महापुरुष हो गये असम में माधवदेव, ब्रह्मचारी थे। १०७ साल जीये। घर-घर में उनका नाम है, यहाँ पर असम में। दुख है कि हमारे लोग जानते नहीं उनके नाम को। डार्विन और शेली को जानते होंगे, लेकिन माधवदेव को नहीं जानते, ऐसी विपरीत शिक्षा यहाँ है। जिसका नाम असम के हर घर में है, और उनको हुए ५०० वर्ष हो गये, उनका एक वचन है, वह बाबा कभी नहीं भूलता। उन्होंने मनुष्य के चार वर्ग किये :

एक . अधम—जो दूसरों के दोष देखता है,
दो . मध्यम—जो गुण और दोष, दोनों देखता है,
तीन : उत्तम—जो दूसरों के केवल गुण ही देखता है, और
चार : उत्तमोत्तम—जो अल्प गुण का विस्तार करके देखता है।

उत्तमोत्तम पुरुष कौन, जो दूसरों के गुणों का विस्तार करता है, बहुत ही सुन्दर वचन है। 'उत्तमोत्तम अल्प गुण कर विस्तार।' असमिया भाषा हिन्दी के नजदीक ही है। यह जो उत्तमोत्तम लक्षण है दूसरों के गुणों का विस्तार करना, इसकी सर्वोत्तम मिसाल हमारे जमाने में महात्मा गांधीजी हो गये। बाबा के उनके सम्बन्ध हैं। बाबा ने देखा कि बाबा के अल्पगुण को गांधीजी ने शतगुणित करके माना। और शतगुणित करके लोगों के सामने रखा (आँसू···) और→

दुहरे मोर्चे की अनिवार्यता

श्री धीरेन् भाई का पत्र : सर्व सेवा संघ के मंत्री के नाम

इस बार मैं अधिवेशन पहुँच सकूँगा, ऐसा सोचता था, लेकिन स्वास्थ्य खराब होने से अगस्त के अंत में ही वाराणसी आ गया। यहाँ भी कुछ सुधार नहीं हुआ। अब मैं चिकित्सा के लिए साबरमती जा रहा हूँ, इसलिए अब मैं अधिवेशन में आ नहीं सकूँगा। लेकिन इस बार का अधिवेशन बहुत महत्त्व का है, क्योंकि हमारे आंदोलन का द्वितीय अध्याय एक तरह से सफलता के साथ समाप्त होता है, और तृतीय की शुरुआत होती है। अब तो जहाँ कहीं भी जिलादान, प्रदेशदान हुआ है, वहाँ ग्रामस्वराज्य का मार्ग निकालने का प्रयास करना होगा। मुझको यह देखकर बहुत खुशी हुई कि जयप्रकाश बाबू उसी मार्ग के खोजने में, और उसके मार्गदर्शन में लगे हुए हैं। उनका एक प्रखंड में स्थिर हो जाना एक बहुत बड़ा कदम है, जिस पर सबको गम्भीरता से ध्यान देने की जरूरत है।

अब दो प्रदेशदान हो गये। अब कोई बहाना नहीं है कि इसके बाद यह हो जाय तब हम जड़ पर पहुँचकर काम करेंगे। अब हमारी क्रांति की व्यूह-रचना में एकरूपी गतिविधि कुछ मदद नहीं कर सकेगी। जब हमारा काम बिल्कुल अन्धकार के गर्भ में था, लोगों का ध्यान खींचने की शक्ति नहीं थी, तब संसार के ध्यानाकर्षण के लिए तूफानी रफ्तार से एक शंखनाद का कार्यक्रम आवश्यक था। अब वह हो गया है। अब सारे संसार का ध्यान ग्रामदान-आंदोलन की ओर खिंच गया है। कोई उदासीन नहीं है। सब माफिक या विरोध में कुछ-न-कुछ कहते ही हैं। राजगीर-सम्मेलन के समय तक दुनिया की निगाहें इसको कुतूहल से देखने तक ही सीमित थीं। उसके बाद थोड़े समय से मैं देख रहा हूँ कि दुनिया में काफी समझदार लोगों ने यह सोचना आरम्भ कर दिया है कि आज जो 'कन्फ्यूजन' चल रहा है, उसको देखकर लगता है कि ग्रामदान ही सही विकल्प है।

ऐसी परिस्थिति में हमारे सामने बड़ी जिम्मेदारी आ गयी है। अब हमारे काम को केवल अभियानमूलक रखने से काम नहीं चलेगा। अब हमें दो 'फ्रन्ट' में काम करना होगा। अभियान चलता रहे, और तब तक चलता रहे जब तक भारतदान पूरा न हो। लेकिन अब दूसरे 'फ्रन्ट' को काफी संयोजित और ठोस बुनियाद पर अधिष्ठित करना होगा। वह 'फ्रन्ट' है पुष्टि का। पुष्टि का मतलब मैं कानूनी पुष्टि नहीं मानता हूँ। मेरा पुष्टि का अर्थ है, विचार-पुष्टि, संगठन-पुष्टि आदि। इस पुष्टि के काम के लिए भी दो दिशाएँ होंगी, (१) जो काम हम कर रहे हैं, यानी ग्रामस्वराज्य समितियों का संगठन और उसके माध्यम से जिला समिति, प्रखण्ड समिति द्वारा ग्रामसभा संगठित करने का उद्बोधन और संयोजन। (२) लोक-शिक्षण के लिए लोक-यात्राएँ, गोष्ठियों और शिविरों का संगठन। एक तीसरा काम, नये कार्यकर्ता की भर्ती और उनका प्रशिक्षण।

ऊपर के सारे काम के लिए एक नयी प्रवृत्ति, काफी संयोजन और ठोस संगठन के आधार पर शुरू करनी होगी, जिस पर अब तक हमने ध्यान नहीं दिया था, वह है जगह-जगह ठोस केंद्र स्थापित करना, जिसमें दो-चार विचार-निष्ठ कार्यकर्ता रहें और प्रखंडभर में स्थायी रूप से सम्पर्क करें। इन केन्द्रों के अधिष्ठान के लिए सर्व सेवा संघ की एक विशेष समिति बननी चाहिए, जिसका काम यही हो। अब यह नहीं हो सकता है कि कार्यकर्ता ६-६ महीने के बाद क्षेत्र में पहुँचा करें और कोंकणाने जाने आए सब कुछ किया करें। लोक-शिक्षण के लिए इस प्रकार की

→परिणाम क्या हुआ? सचमुच में बाबा के जो स्वरूप गुण थे वे बढ़ गये (आँसू..)। तो यह हमारी छोटी-सी जमात अगर महापुरुष माधवदेव का यह वाक्य कंठ करे, गांधीजी को निशान सामने रखे, और गुण को बखाने जाय दूसरों के, तो शब्दों से शब्द बढ़ता है और गुण बढ़ता है। होमियोपैथी जैसा गुणों का वर्द्धन होता है। दूसरों के गुणों का उच्चारण करते हैं, तो गुण गहरा जाता है। उसकी 'पोटेंसी' बढ़ती है।

कई दफा मेरी आँखों से आँसू बहे हैं

दूसरी बात मुझे कहनी थी कि हम लोगों में परस्पर स्नेह होना चाहिए। अगर दुनिया में हमने बहुत-सा काम किया, लेकिन स्नेह नहीं कमाया तो कुछ नहीं कमाया। हमारे निशान कौन-सी हैं मेरे सामने? उसको निशान इन दिनों मेरे सामने हमेशा आ रही है, इन दो-तीन महीने में। वह निशान है जयप्रकाशजी की। अभी ढाई-तीन महीने पहले की बात—जयप्रकाशजी का शरीर थका हुआ था और लोगों के आग्रह से जरा आराम के लिए वह हिमालय की गोद में पहुँचे थे, और इतने में हमारे दो साथियों को लिखित धमकी दी गयी, नक्सलवादियों की तरफ से, कि तुमको कत्ल किया जायेगा। इसकी जानकारी जयप्रकाशजी को मिली (आँसू..), तो फौरन दौड़े आये। (आँसू..) और जान की बाजी लगायी। कोई कहते हैं क्रांति की दिशा में नया कदम उठाया, कोई कहते हैं ग्रामदान की नयी टेकनीक निकलेगी, कोई कहते हैं सत्याग्रह का पहलू खुल जायेगा। यह सब होगा, अगर ईश्वर ने चाहा होगा। लेकिन इन सब चीजों की कीमत कम है। जो स्नेह है, उसकी कीमत है। बहुत दिनों से मेरी आदत है, अक्सर जल्दी सो जाता हूँ और मध्य रात में जाग जाता हूँ, घंटा-दो-घंटा ध्यान करता हूँ, फिर सो जाता हूँ। पर इन दिनों कई दफा जयप्रकाशजी की निशान याद करके मेरी आँख से आँसू बहे हैं।...इससे ज्यादा मुझे कहना नहीं।

सेवाग्राम। २ अक्तूबर '७०

थान निरन्तर करना ठीक है, लेकिन जब तक लोक-शिक्षण की निष्पत्ति नहीं होती है तब तक शिक्षण-केन्द्रों का संगठन आवश्यक है। यह ठीक है कि हम थोड़े लोग हैं, लेकिन उतने ही में अपने में विभाग-वितरण करके काम करना होगा।

थोड़े लोग हैं तो पहले थोड़े केन्द्र बनेंगे, फिर धीरे-धीरे उनका विस्तार करना होगा।

एक बात और! हमने अपने खादी आदि के कार्यकर्ताओं को एक विशेष ढंग का प्रशिक्षण वर्षों तक दिया है। उन्होंने बहुत बड़ा काम किया। पूरे आन्दोलन का नेतृत्व उन्होंने ही किया, और आज ग्रामदान शब्द को जागतिक-चिंतन के मध्य-स्थल पर स्थापित कर दिया। लेकिन अब जो काम करना होगा वह उनके वश का नहीं है। अब नये नौजवानों को खोज निकालना होगा, और उनके प्रशिक्षण के लिए नये विचार के अनुसार नये केन्द्रों को संगठित करना होगा, तब इस आन्दोलन के लिए 'केडर' खड़ा हो सकेगा। आज देश की आर्थिक तथा मानसिक परिस्थिति ऐसी नहीं है कि नये भावनाशील नौजवान अपने आप आ जायेंगे। उनके लिए बाकायदा अपील करनी होगी, उनके गुजारे के लिए हमारे पास क्या व्यवस्था है वह स्पष्ट रूप से कहना होगा, तब योग्य नौजवान जरूर आयेंगे। लेकिन उन्हें सभालने के लिए हमें नये वातावरण का नया केन्द्र खड़ा करना होगा। वस्तुतः उसी प्रकार के नये केन्द्र के अभाव से जब जीवनदान का चश्मा फूटा था तो हम चूक गये थे। अब नये आवाहन के पहले या साथ-साथ हमें नये केन्द्रों की बात सोचनी होगी। आजादी के आन्दोलन के दिनों में भी, जब स्वराज्य प्रत्येक भारतवासी की चाह की चीज थी, तब भी सन् १९२१ के प्रथम उफान के बाद फिर बहुत कार्यकर्ता अपने आप हमारे पास नहीं आये थे। लेकिन चरखा-संघ के स्थायी केन्द्र के लिए हम अपील करते थे और विज्ञापन भी निकालते थे, और उसमें से चुनाव कर प्रशिक्षण देते थे। लेकिन चूंकि हमारे पास देशभर में विचार के अनुकूल वातावरण के कुछ केन्द्र थे, इसलिए ऐसे विज्ञापन देखकर आये हुए नौजवानों में से बहुत बड़ी संख्या में क्रांति-अभियान में बहुत आगे तक बढ़ गये थे।

आज भी हमको उसी तरह स्थायी केन्द्र तैयार करने होंगे जिनमें पुराने में से कुछ लोगों को अभियान के काम से अपने को समेटकर ऐसे वातावरण के केन्द्र में बैठना होगा।

यह ठीक है कि ये केन्द्र हूबहू वैसे ही नहीं होंगे, जैसे चरखा-संघ के केन्द्र थे। वे हमारे आन्दोलन की आवश्यकता तथा आज की परिस्थिति के अनुसार नये 'पैटर्न' के होंगे। लेकिन जो 'डबल फ्रन्ट' की व्यूह-रचना बापू ने की थी, उसी टेक्निक को हम लोगों को भी अपनाना होगा, नहीं तो विशेष कुछ हाथ नहीं आयेगा।

शुरू में हमारे पास जितनी शक्ति है, उसीके अनुसार भले ही कुछ थोड़े ही पाकेट हों, लेकिन 'डबल फ्रन्ट' की टैकनीक को अब हम टाल नहीं सकते।

मुझको आशा है कि इस बार अधिवेशन में इस दिशा में विशेष ध्यान दिया जायेगा। अधिवेशन में निर्णय करें और उसके बाद कुछ खास-खास साथी आठ-दस दिन बैठकर इस 'डबल फ्रन्ट' की दिशा और रचना क्या हो, उस पर भी सोचें।

—धीरेन्द्र भाई

शिक्षा में क्रान्ति

तरुणों की बगावत का एक अघोषणा-पत्र

[प्रस्तुत लेख के तरुण लेखक संतोष भारतीय ने अभी हाल में ही वर्तमान शिक्षण-पद्धति की व्यर्थता का अनुभव कर अपनी डाक्टरी के तीसरे वर्ष की पढ़ाई का परित्याग कर दिया है, और इस समय तरुण-शान्तिसेना द्वारा 'शिक्षा में क्रान्ति' का मोर्चा बनाने में पूरे उत्साह से लगे हैं। —स०]

पिछले कुछ वर्षों में शिक्षा-नीति के बारे में बड़ी लम्बी बहसें हुई हैं। लक्ष्यहीन शिक्षा का परिणाम आज सारे देश के सामने अपने बीभत्स रूप में उपस्थित हो गया है। गांधी और उनके बाद विनोबा के बार-बार ध्यान दिलाने के बाद भी वर्तमान शिक्षा-प्रणाली के कर्णधारों की आँखें नहीं खुलीं। इस प्रणाली के परिणाम, लक्ष्यहीन युवकों की ध्वंसात्मक क्रियाएँ भी उनका ध्यान सिर्फ 'शिक्षा-आयोगों' तक ही आकर्षित कर पायी हैं।

इस व्यापक असंतोष का कारण

आज बेरोजगार रहने की पीड़ा और खीझ तथा समाज के लिए भार कहे जाने और निरर्थक कहे जाने की सम्भावना ने लाखों तरुणों के मस्तिष्क पर भय की काली छाया डाल दी है, और वह उन्हें घोर निराशा व झुंझलाहट के गड्ढे की तरफ ढकेल रही है। आज हमारे देश के नौकरीपेशा से वंचित लोगों के सामने बढ़ती हुई बेरोजगारी और निर्धनता की जो तस्वीर उभर रही है, वह नौजवानों के बीच व्यापक असंतोष का पर्याप्त कारण बन गयी है।

हमारे देश में बेरोजगारी में भयंकर वृद्धि का बुनियादी कारण क्या है, इसे देश के शासक और राजनीतिक पार्टियों के नेता हमारे तरुणों को साफ साफ नहीं बता रहे हैं। वर्तमान शासन और समाज-व्यवस्था के विरुद्ध तरुणों के जागृत आक्रोश को मोड़ने के इरादे से क्षेत्रीयता और साम्प्रदायिकता का नारा उठाया जा रहा है। इन नारों का उद्देश्य वास्तव में वर्तमान शिक्षा-प्रणाली के विरुद्ध होने-वाली बगावत को रोकना और तरुणों के तूफानी आन्दोलन को दिग्भ्रमित करना है।

देश में फैली बेकारी व असंतुलन वर्तमान लक्ष्यहीन, कृत्रिम तथा दूषित

शिक्षा-प्रणाली का परिणाम है। पिछले २३ वर्षों में हमारे देश के शिक्षा-संचालकों ने जिस शिक्षा-नीति का पालन किया है वह है—'किस्मृत किताबी ज्ञान के द्वारा शिक्षा प्राप्त करना।' वे इस बात से सहमत नहीं हैं कि विद्यार्थी उत्पादक श्रम में भाग लें। किताबी ज्ञान चाहे वह कितना ही व्यापक हो, फिर भी वह थोड़ा तथा अपूर्ण रहता है। शिक्षा को उत्पादक श्रम से अलग रखना ही हमारी शिक्षा-पद्धति का मुख्य दोष रहा है।

परिवर्तन की माँग

भारत के तरुणों को वर्तमान दूषित और यथास्थिति की पोषक शिक्षा-प्रणाली के विरुद्ध खुली बगावत करनी चाहिए। बगावत की घोषणा निम्न माँगों से करनी चाहिए :

- शिक्षण की वर्तमान प्रणाली तुरन्त बन्द हो।
- शिक्षा के साथ उत्पादक श्रम तुरन्त जोड़ा जाय।
- आधा समय पढ़ाई और आधा समय काम करनेवाले स्कूल तुरन्त खोले जायँ।
- सरकारी नौकरी के लिए डिग्री की अनिवार्यता समाप्त हो, शासकीय सेवाओं की भरती परीक्षा हो।
  उच्च शिक्षा पर व्यय कम किया जाय।
- परीक्षा-पद्धति में अविलम्ब परिवर्तन किया जाय।

शिक्षा का उद्देश्य होता है विद्यार्थियों को अपेक्षाकृत सम्पूर्ण ज्ञान प्राप्त करने के योग्य बनाना, न कि एकपक्षीय अपूर्ण ज्ञान प्राप्त कराना। बड़े होने के साथ-साथ उनके तन और मन का स्वस्थ और संतुलित विकास हो। वे एक सुसंस्कृत एवं सर्वहित का दृष्टि रखनेवाले नागरिक बन सकें।

विभिन्न देशों में शिक्षा के नियमों की एक ही प्रकृति है, फिर भी खास स्थानीय विशेषताओं के कारण वे एक-दूसरे से भिन्न भी हैं। अगर हम अपने देश की विशेषताओं को ध्यान में नहीं रखेंगे, तो हम कोरे सिद्धान्तवाद की गलतियाँ दुहरा सकते हैं। हमारे देश की विशेषताएँ क्या हैं? पहली बात तो यह है कि हमारा देश एक बहुजातीय एवं बहुभाषी देश है। दूसरी, इसकी आबादी बहुत ज्यादा है और इसका क्षेत्रफल विशाल है। तीसरी, इसका अर्थतंत्र तथा संस्कृति पिछड़ी हुई है। इन्हीं विशेषताओं को ध्यान में रखकर, और नैतिकता की सार्वभौमिक सच्चाइयों को अपने देश की विशेष परिस्थितियों के साथ मिलाकर अपने शिक्षा-सम्बन्धी सिद्धान्तों, नीतियों, व्यवस्थाओं, तरीकों आदि को निर्धारित करना चाहिए।

शिक्षण और उत्पादक श्रम का योग

उत्पादक श्रम तथा शिक्षा का मेल वर्तमान समाज के रूपान्तरण के लिए सबसे प्रबल साधनों में से एक है। शिक्षा को उत्पादक श्रम से बिना मिलाये अहिंसक क्रांति को पूरा करना असम्भव है।

शिक्षण का परिणाम विकास होता है। विकास का तात्पर्य यह है कि विद्यार्थियों को सम्पूर्ण ज्ञान प्राप्त करना चाहिए और उन्हें सर्वकुशल होना चाहिए। उनमें इतनी क्षमता होनी चाहिए, ताकि वे समाज की आवश्यकताओं के अनुसार या अपने रुझान के अनुसार उत्पादन की एक शाखा से दूसरी शाखा में क्रम से जा सकें। हमारा मत है कि मजदूरों को औद्योगिक उत्पादन में सर्वकुशल होना चाहिए और किसानों को कृषि-उत्पादन में सर्वकुशल होना चाहिए। इसके साथ ही मजदूरों को मजदूर होने के साथ किसान भी होना चाहिए। ये सभी अवधारणाएँ धीरे-धीरे अमल में लायी जा सकती हैं। इस प्रकार के उपाय, जिनसे श्रम का विभाजन तथा काम का परिवर्तन दोनों होता है, समाज की आवश्यकताओं के अनुकूल हैं।

शिक्षा को उत्पादक श्रम से जोड़ने के सिद्धान्त पर अमल शुरू कर देने से, स्कूलों के अपने कारखाने और फार्म कायम करने से, और कारखानों व कृषि सहकारी फार्मों के बड़े स्तर पर अपने स्कूल खोलने से, एक ऐसी अद्भुत स्थिति पैदा हो जायगी, जिसमें कि विद्यार्थी विद्यार्थी होने के साथ मजदूर और किसान भी होगा, और मजदूर व किसान, मजदूर व किसान होने के साथ ही विद्यार्थी भी होगा। इसमें भी ग्रामस्वराज्यमूलक समाज के अंकुर विद्यमान हैं। यह कल्पना की जा सकती है कि जब भारत वर्ग-रहित अहिंसक समाज के युग में प्रवेश करेगा तो हमारे बुनियादी सामाजिक संगठन (ग्रामसभाएँ) आम तौर पर 'सर्वोदय कम्यून्स' होंगे। कुछ अपवादों को छोड़कर प्रत्येक बुनियादी संगठनों में, मजदूर, किसान, व्यापारी, विद्यार्थी और शांतिसेना होगी। शिक्षा के क्षेत्र में प्रत्येक बुनियादी इकाई के पास प्राइमरी और सेकेंडरी स्कूल होंगे, तथा उच्च शिक्षा-संस्थाएँ होंगी। इसके साथ-साथ ही प्रत्येक व्यक्ति के पास, चाहे वह मजदूर हो या बुद्धि-जीवी, शिक्षा प्राप्त करने का पर्याप्त समय होगा।

सम्पूर्ण सम्भावनाएँ

ग्रामसभाएँ कारखाने और खानें, उद्योग-धन्धे और कृषि सहकारी फार्म स्कूल चला सकती हैं। इन स्कूलों के भिन्न-भिन्न रूप हो सकते हैं। वे पूरे समय के स्कूल हो सकते हैं या कुछ काम और कुछ पढ़ाई अथवा अवकाशकालीन स्कूल हो सकते हैं। वे फीस लेनेवाले स्कूल हो सकते हैं या वे निःशुल्क शिक्षा-वाले स्कूल हो सकते हैं। जैसे-जैसे उत्पादन में ज्यादा-से-ज्यादा विकास होता जायगा, और कार्य करने के घंटे कम किये जा सकेंगे, तो अवकाशकालीन स्कूल भी कुछ काम और कुछ पढ़ाईवाले स्कूलों की तरह हो जायँगे। जब उत्पादन में और ज्यादा विकास होगा और सार्वजनिक संचय में बहुत ज्यादा वृद्धि होगी तो फीस लेनेवाले स्कूल भी मुफ्त पढ़ाईवाले स्कूल हो जायँगे। कुछ पूरे समयवाले स्कूल, कुछ काम और कुछ पढ़ाईवाले

(शेष पृष्ठ ४० पर)

मुसलमानों के मन में

[एक संवेदनशील मुसलमान युवक ने अपने मन की बात लिखी है, जो किसी भी कुछ सोचने-समझनेवाले मुसलमान युवक के मन में ये बातें उठती रहती हैं। हम उसे ज्यों कि त्यों पाठकों के सामने रख रहे हैं, ताकि पाठक यह जान सकें कि आमतौर से मुस्लिम के मन में क्या चलता है ?—सं०]

आम मुसलमानों का खयाल है कि साम्प्रदायिकता भारत में एक आन्दोलन बन चुकी है और महात्मा बुद्ध, और महात्मा गांधी के इस देश में भविष्य साम्प्रदायिकता ही है। यहाँ मुसलमानों का वही हाल होगा जो जर्मनी में यहूदियों का हुआ था। क्योंकि यहाँ 'सेक्युलर' और प्रगतिशील शक्तियाँ बहुत कमजोर हैं और इतनी संगठित नहीं हैं कि साम्प्रदायिकता का मुकाबिला कर सकें। मुसलमान यह भी मानते हैं कि गांधी-विचार भारत पर साम्प्रदायिकता के सम्बन्ध में कोई प्रभाव नहीं डाल सका है और बौद्ध मत की तरह गांधी-विचार भी साम्प्रदायिकता के मुकाबिले में मिट जायगा।

मुसलमानों को इस बात का गहरा एहसास है कि साम्प्रदायिक झगड़ों के दमन के लिए कोई ठोस कदम नहीं उठाया जाता। भारत में कोई भी नेता या पार्टी या संस्था ऐसी नहीं है, जो इस समस्या को प्राथमिकता दे। यही कारण है कि अब तक कोई संगठित और प्रभावशाली शक्ति हिन्दू साम्प्रदायिकता के मुकाबिले के लिए नहीं बन सकी है, जब कि अधिकतर हिन्दू इसको बुरा समझते हैं। इस सिल-सिले में सरकारी और गैर-सरकारी स्तर पर दिये जानेवाले बयान, भाषण, और कानफरेन्स में मुसलमानों का विश्वास नहीं रह गया है। वे समझते हैं कि शायद ये साम्प्रदायिक दंगे हिन्दुओं के दिल को इस तरह नहीं छूते जिस तरह मुसलमानों के दिल को छूते हैं।

मुसलमानों का यह भी खयाल है कि इन दंगों को पाकिस्तानी वातावरण की प्रतिक्रिया बताना बोलती हुई हकीकत से इनकार करना है। उनके विचार से ये झगड़े मुसलमानों को परेशान रखने के लिए किये जाते हैं।

मुस्लिम मानस में यह बात भी पायी जाती है कि मुसलमानों को विशिष्टता खतम करके उन पर शासन करने का संगठित प्रयत्न भारत में हो रहा है, और इसीलिए मुसलमानों ने भारत को जो कुछ भी दिया है, उससे इनकार किया जाता है। भारत के आधुनिक इतिहास के लिखने-वाले ताजमहल, कुतुबमीनार, एतमादुद-दौला के रौजे को मुस्लिम मानने से इन-कार करते हैं। उन्हें को मिटाने की पूरी कोशिश की जाती है, और मुस्लिम विश्व-विद्यालय अलीगढ़ की विशेषता को बदलने की भी। उनके कानून, तथा पैतृक सिद्धान्त पर आक्रमण किया जाता है। उन्हें देश का वफादार नहीं माना जाता। मुसलमान यह भी समझते हैं कि पाकिस्तान के बनने में जितना उनका हाथ है, उतना ही हिन्दुओं का भी है। क्योंकि पाकिस्तान सबकी मर्जी से बना है, केवल मुसलमान उसके लिए जिम्मेदार नहीं हैं। मुसलमानों की शिकायत यह है कि उन मुसलमानों का कभी जिक्र नहीं आता, जिन्होंने पाकि-स्तान की मुखालिफत की थी और स्वत-न्त्रता के लिए लड़ाई हिन्दुओं के साथ मिलकर बरतानी साम्राज्य से की थी।

मुसलमान यह भी महसूस करते हैं कि उनका सम्बन्ध गलत तौर से कश्मीर और पाकिस्तान के साथ जोड़ दिया जाता है।

भारत में 'सेक्युलरिज्म' नाम की कोई चीज नहीं है, यह बात आमतौर से मुसलमान कहते हैं, क्योंकि सेक्युलर भारत में सरकारी उत्सव हिन्दू रस्मों से आरम्भ किये जाते हैं। स्कूलों में बच्चों को ऐसी पुस्तकें पढ़ायी जाती हैं जिनमें मुसलमानों के विरुद्ध जहर भरा होता है। बहुत सारे सरकारी विभागों के दरवाजे मुसलमानों के लिए बन्द हैं।

मुसलमान भारतीयकरण के नारे को सबसे बड़ा खतरा मानते हैं, इसका उद्देश्य उनकी समझ से मुसलमानों पर हिन्दू धर्म और संस्कृति लादना है। इन सबके समाधान के लिए एक रास्ते की खोज मुसलमानों की है। चार-पाँच साल पहले मुसलमानों की विचारधारा ४ भागों में बँटी थी—

(१) एक विचार यह था कि धर्मों के आधार पर जनसंघ (मुसलमान जनसंघ की सेक्युलर पार्टी नहीं मानते) से समझौता किया जाय।

(२) दूसरी विचारधारा थी कि वर्ग-संघर्ष तेज किया जाय। जब यह तेज होगा तो साम्प्रदायिकता सुस्त पड़ेगी।

(३) कांग्रेस को छोड़कर किसी और पार्टी को मुसलमानों को वोट देना चाहिए, क्योंकि कांग्रेस साम्प्रदायिकता को मिटा नहीं पायी है।

(४) एक विचारधारा यह भी थी कि मुसलमान जिस पार्टी में भी हो, मुस्लिम समस्या पर उनका एक समान रुख हो और वे अपनी-अपनी पार्टियों पर इसके लिए दबाव डालें।

परन्तु इधर कुछ दिनों से मुसलमानों की विचारधारा एक नया मोड़ ले चुकी है, और वह तीन भागों में बँटी हुई है—

(१) मुसलमान संगठित हों, उनकी अपनी राजनीतिक पार्टी हो, और दूसरे अल्पसंख्यकों और हरिजनों को साथ लेकर वे आगे आयें और भारत की राजनीति पर प्रभाव डालें।

(२) अंतरराष्ट्रीय जनमत जगाया जाय और उसकी सहानुभूति प्राप्त की जाय।

(३) भारतीय जनमत जगाया जाय और उदार, सेक्युलर हिन्दुओं को मुसलमानों की दयनीय हालत समझायी जाय, ताकि देश में एक संगठित शक्ति साम्प्रदायिक समस्या के मुकाबिले खड़ी हो सके।

—सैयद मुस्तफा कमाल

एक देशव्यापी प्रयत्न की पूर्णाहुति

—प्रधान मंत्री का प्रतिवेदन—

८ महीने पहले, मार्च १९७० में सर्व सेवा संघ की प्रबंध समिति की बैठक के समय पूना में हम लोगों ने एक सामूहिक संकल्प किया था। उस शुभ-संकल्प की पूर्ति के लिए किये गये देशव्यापी प्रयत्नों के बाद दूर-दूर से आये हुए सर्वोदय-सेवक तथा सर्वोदय आंदोलन की सफलता चाहनेवाले मित्रगण, बापू-कुटी की छाया में और पू० विनोबाजी की उपस्थिति में मिल रहे हैं, यह एक मंगल प्रसंग है।

सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष और मंत्री हमारे प्रिय साथी श्री जगन्नाथन् तथा श्री बंग ने पूना की सभा में यह विचार रखा था कि पू० विनोबाजी इस वर्ष अपने साधनामय और क्रांतिकारी जीवन के ७५ वर्ष पूर्ण कर रहे हैं, इस अवसर पर ऐसा आयोजन किया जाय जिसके माध्यम से न सिर्फ सीधे उनके नेतृत्व में काम कर रहे हमारे जैसे हजारों सेवकों को, बल्कि इस देश के छोटे बड़े तमाम लोगों को, विनोबा के प्रति श्रद्धा और कृतज्ञता व्यक्त करने तथा उनके महान कार्य में कुछ योगदान करने का अवसर मिले। यों तो विनोबाजी का समूचा जीवन ही गरीबों, शोषितों और दलितों के हित चिंतन तथा उनके त्राण और उत्थान के प्रयोगों और प्रयत्नों में बीता है, पर गांधीजी के चले जाने के बाद पिछले २० वर्ष में खास तौर से अक्षरशः देश के कोने कोने में फैले हुए करोड़ों लोगों ने सीधे उनके दर्शन और उनकी प्रेरणादायी वाणी के श्रवण से धन्यता और प्रकाश महसूस किया है।

ग्रामस्वराज्य-कोष और कांचन-मुक्ति

विनोबा के नेतृत्व में काम कर रहे जन-सेवकों की इस छोटी-सी जमात ने पिछले २० वर्षों में कई सामूहिक संकल्प और पुरुषार्थ किये हैं। पर पूना में हम लोगों ने विनोबाजी की ७५वीं जयन्ती के अवसर पर एक करोड़ रुपये का ग्रामस्वराज्य-कोष एकत्र करने का जो निर्णय किया वह कई दृष्टियों से हमारे पिछले संकल्पों से भिन्न और कठिन भी था। "विनोबा तो कांचन-मुक्ति और निधि-मुक्ति की बात करते हैं, लेकिन उनके ये 'चेले' उनके नाम का फायदा उठाकर धन इकट्ठा करने की कोशिश कर रहे हैं," यह पहला आक्षेप और प्रतिक्रिया थी। हमारे कई साथियों के मन में भी यह दुविधा रही, और बावजूद स्वयं विनोबाजी की स्वीकृति मिल जाने के, और बाद में तो उनके द्वारा यहाँ तक कहे जाने के बावजूद कि हम लोगों को "इधर-उधर के सब ग्रामस्वराज्य-कोष के लक्ष्य की पूर्ति में काम छोड़कर एक बार अपनी पूरी शक्ति लगा देनी चाहिए," यह भावना हममें से बहुतों की पूरी शक्ति कोष के काम में लगने के मार्ग में बाधक बनी रही। विनोबा ने निधि-मुक्ति की जो बात कही थी, उसका अर्थ जहाँ तक मैं समझा हूँ वह तो यह था कि हम अगर पहले से इकट्ठी की हुई किसी निधि पर अपने आन्दोलन का काम चलाने के लिए निर्भर रहेंगे तो हम निस्तेज बनेंगे, आसानी से उपलब्ध धन के कारण कई बुराइयों के शिकार होंगे और जन-शक्ति खड़ी करने का जो हमारा मूल उद्देश्य है उससे भी दूर हटेंगे। उसका यह मतलब तो हर्गिज नहीं था कि आन्दोलन के लिए हमें आर्थिक साधनों की आवश्यकता नहीं है, या कि जैसा हमारे कुछ भोले साथी कहते हैं, और अक्षरशः समझते हैं, पैसे को छूना भी पाप है। आर्थिक साधनों के बिना आज के समाज में व्यवहार नहीं चल सकता, इसका अनुभव तो हमारे इन साथियों को भी होता ही। विनोबाजी ने भी निधि-मुक्ति की बात के साथ इसीलिए हमें यह विकल्प भी सुझाया था कि घर-घर में सर्वोदय-पात्र रखे जायँ, ऐसी कोशिश हमें करनी चाहिए। पर यह तो हमने किया नहीं। सिद्धान्त की बात में क्रान्तिकारी गिने जाने और अपनी निष्क्रियता को पोसने के लिए ऋषि के वचनों का जितना अंश अनुकूल हो उतने की दुहाई देते रहना आसान है। अगर सर्वोदय-पात्र के कार्यक्रम को हम लोगों ने अपना लिया होता तो "ग्रामस्वराज्य-कोष" का भण्डार तो हमारा पहले से ही भरा हुआ होता।

वास्तविकता से दूर या करीब ?

दूसरी प्रतिकूलता यह थी कि हमारे इस संकल्प के तत्काल पहले ही इसी तरह का एक दूसरा देशव्यापी अर्थ-संग्रह का काम हो चुका था और कुछ लोगों के मन में तो उसकी कुछ भिन्न प्रकार की प्रतिक्रिया भी थी। हमारे आदरणीय 'सीमान्त गांधी' खान अब्दुल गफ्फार खाँ को समर्पित करने के लिए ८० लाख रुपये की अपील की गयी थी। उसमें करीब आधी धन-राशि ही एकत्र हुई थी। देश के चोटी के लोगों में से हमारे कुछ हितचिन्तकों ने मीठी चुटकी भी ली कि हमें ऐसे "अन-रियलिस्टिक", वास्तविकता से दूर, लक्ष्य रखने की आदत हो गयी है। उन्होंने हमें आगाह भी किया था कि यह ठीक नहीं है। यह आगाही सद्भावना के साथ, हमारे हित में ही की गयी थी, और हममें से भी बहुतों को इसमें औचित्य मालूम हुआ था। लेकिन आज यहाँ एकत्र लोगों में से कइयों को शायद यह अनुभव हुआ होगा कि एक करोड़ का लक्ष्य अवास्तविक बिलकुल नहीं था। अगर हम लोगों ने थोड़ी-सी शक्ति और समय और लगाया होता तो हम एक करोड़ के लक्ष्य को पार कर गये होते। आलोचना की दृष्टि से नहीं, लेकिन इस अनुभव का लाभ आगे के काम में मिले, इस दृष्टि से यह कहना अप्रासंगिक नहीं होगा कि हमारे पास जो समय और शक्ति थी उसका भी पूरा उपयोग हमने नहीं किया, वरना कुछ मित्रों के मन में आज जो यह पछतावा है कि लक्ष्य की पूर्ति के लिए समय पूरा नहीं मिला, वह नहीं होता। आज जो उपलब्धि

हमारे सामने है उसे देखते हुए यह तो शायद न हममें से कोई कहेगा, न हमारे हितचिंतक मित्र, कि हमने जो लक्ष्य रखा था वह अवास्तविक था। किसी भी बड़े काम के लिए लक्ष्य तो हमेशा ऊँचा ही रखना होता है। मनुष्यों को अपनी शक्ति का अन्दाज पहले से नहीं होता, *क्योंकि हम एकाग्र* होकर अपनी 'पूरी' शक्ति किसी भी काम में लगा सकने के आदी नहीं हैं। इसलिए अगर संकल्प करते समय हम हमारी शक्ति के अपने अन्दाज के अनुसार वास्तविक या 'रियलिस्टिक' लक्ष्य रखें तो कभी बड़े काम शायद संभव ही न हों।

ग्रामस्वराज्य-कोष के संग्रह के काम में एक और प्रतिकूलता यह रही कि शहरों के मित्रों को हमारे काम की जानकारी बहुत कम है। जो है वह भी गलत, अधूरी *या पूर्वाग्रह से युक्त है।* हमारा जो लक्ष्य है उसकी दृष्टि से यह स्वाभाविक था और सही भी कि हमारा काम गाँवों से शुरू हुआ। शहरों में हमारे करने का कुछ नहीं है यह तो हममें से कोई भी नहीं कहता, बल्कि हमारी इस कमी को हम बराबर महसूस करते रहे हैं कि शहरों में हम काम नहीं कर पा रहे हैं। हमारी सीमित शक्ति ही इसका कारण रही है। पर शहर में हमारे कार्यक्रम के अभाव और गाँवों में हम जो कुछ कर रहे हैं या कर पाये हैं उसकी भी सही जानकारी शहरों के मित्रों को न होने के कारण, जब हम उनके पास मदद के लिए जाते हैं तो हमें काफी कठिनाई का सामना करना पड़ता है। इसमें *शक नहीं है कि अगर हमारे काम की सही* जानकारी हमारे नगरनिवासी मित्रों को हो तो हमारे काम में उनकी सहानुभूति और मदद अवश्य पर्याप्त मात्रा में मिलेगी।

उपलब्धि : आशा और अपेक्षा से अधिक

ऊपर बतायी हुई इन सब प्रतिकूलताओं *के बावजूद जो फलश्रुति हमारे सामने है* यह निराशाजनक *या नगण्य नहीं मानी जायगी।* बल्कि जो परिणाम आया है वह हममें से बहुतों की शुरू की आशा और अपेक्षा से अधिक ही होगा। *आज जब* पीछे मुड़कर देखते हैं तो लगता है अगर थोड़ी-सी और तत्परता, थोड़ा-सा और आत्मविश्वास तथा थोड़ी-सी और एकाग्रता इस काम में लगायी होती तो अवश्य ही आज हम एक करोड़ के लक्ष्य को पार कर चुके होते। मार्च के उत्तरार्द्ध में हम लोगों ने ग्रामस्वराज्य-कोष के संग्रह का *निश्चय किया, अप्रैल और मई के महीने* भिन्न-भिन्न प्रदेशों में *प्रारंभिक जानकारी* देने, संग्रह के लिए संगठन खड़े करने, राष्ट्रीय अपील पर देश के प्रमुख लोगों की सम्मति प्राप्त करने तथा कूपन, रसीद बुकें आदि छपवाकर तैयार करने में बीत गये। कूपन आदि प्रान्तों को भेजना जून में शुरू हुआ। जून के अन्त तक *कूपन की पहली किश्त करीब-करीब सब प्रान्तों में पहुँच गयी थी। यह सारा काम* कुछ और जल्दी हो सकता था, होना चाहिए था। ऐसा नहीं हुआ, यह कार्यालय की यानी हमारी कमी और अनुभवहीनता माननी चाहिए। प्रदेशों में भी कई जगह का काम समय पर शुरू नहीं हो सका। लेकिन बावजूद इन कमियों के जो परिणाम हमारे सामने आया है *वह हम लोगों में एक नये आत्मविश्वास* और स्फूर्ति का संचार करनेवाला है। सर्वोदय-आंदोलन में लगे हुए हम लोग अक्सर अपने प्रयत्नों की फलश्रुति से असंतोष व्यक्त किया करते हैं। एक अर्थ में यह अच्छा भी है। लेकिन अगर हम *देश की सारी परिस्थिति और वातावरण को ध्यान में रखें* तो वास्तव में इस जमात के द्वारा जो काम पिछले वर्षों में हुआ है वह उसके सीमित साधन, शक्ति और योग्यता के अनुपात में ज्यादा ही हुआ है।

व्यापक सहयोग

भिन्न-भिन्न प्रदेशों में कई साथी जिस निष्ठा के साथ काम में लगे और जो *प्रेरणादायी अनुभव आये उन सबका उल्लेख करना मुश्किल है।* हमारी सबसे बड़ी पूँजी यह है कि हमारा काम दलगत राजनीति या संकुचित वर्ग-हित से परे होने *के कारण* उसमें सबका सहयोग मिलता है। छोटे से लेकर बड़े *तक,* सरकारी, गैर-सरकारी, विभिन्न दलों के लोग, शिक्षक और विद्यार्थी, मजदूर और व्यापारी, रचनात्मक संस्था और कार्यकर्ता आदि सबका सहयोग इस काम में मिला है। *एक ओर* बड़े उद्योगपतियों की लाखों-हजारों की रकम और दूसरी ओर घर-घर से *एक पैसा रोज के हिसाब से* समूचे वर्ष के ३६५ पैसे, और स्कूल के छोटे-छोटे विद्यार्थियों के १० पैसे, की रकमें इस कोष में सम्मिलित हैं। एक ओर बम्बई-कलकत्ता जैसे शहरों के चंद लोगों से लाखों रुपये इकट्ठे किये गये, तो दूसरी ओर हमारे *कई निष्ठावान साथियों ने गाँव-गाँव घूमकर सैकड़ों-हजारों रुपये* इकट्ठे किये, इस काम का मूल्य कई मानों में पहलेवाले की अपेक्षा अधिक माना जायेगा। सभी लोगों को, जिन्होंने संग्रह के काम में हिस्सा लिया है, ऐसे अनुभव अनेक आये होंगे कि जब बिना माँगे, आगे होकर लोगों ने उदारतापूर्वक दान *दिया। कई कार्यकर्ताओं ने* घूम-घूमकर सैकड़ों-हजारों की तादाद में सर्वोदय-मित्र बनाये। दिल्ली के केन्द्रीय कार्यालय में भी देश के विभिन्न कोनों से एक पैसा रोज के हिसाब से ३६५ पैसा कई मित्रों ने भेजा। हमारे राष्ट्रपति महोदय ने १८ *अप्रैल १९७० को अपने दान द्वारा कोष* का शुभारंभ करते हुए जिस गौरव और सौभाग्य की अनुभूति जाहिर की थी, उसी तरह अनेक दाताओं ने ग्रामस्वराज्य-कोष में अपना योगदान करते समय व्यक्तिगत रूप से विनोबाजी के प्रति *और उनके काम के प्रति गहरी सद्*भावना व्यक्त की। बहुत अल्प वेतन पानेवाले देश के सैकड़ों-हजारों कार्यकर्ताओं ने ने अपना एक दिन का वेतन इस कोष में दिया है। कई प्रदेशों में पंचायतों, नगरपालिकाओं, सहकारी समितियों आदि ने *ग्रामस्वराज्य-कोष में उल्लेखनीय योगदान किया है।* देश के कई प्रमुख बैंकों ने अपनी निःशुल्क सेवाएँ कोष के काम के लिए देकर इसमें मदद पहुँचायी है। उसी

प्रकार आयकर-छूट सम्बन्धी सुविधा के कारण भी काफी सहूलियत हुई।

ग्रामस्वराज्य-कोष का उपयोग

हमने शुरू से ही यह नीति रखी थी कि संग्रह के काम में कम-से-कम खर्च हो। केन्द्रीय कार्यालय तथा देश भर में कोष संग्रह के लिए होनेवाला कुल खर्च लक्ष्यांक के ५%की मर्यादा में हो, यह कोष-समिति ने प्रारम्भ में ही तय कर दिया था। कूपन, रसीद तथा हिन्दी व अंग्रेजी की प्रचार-सामग्री केन्द्रीय कार्यालय से तैयार करवाकर प्रान्तों को भेजी गयी। तमिलनाडु प्रदेश ने अलग कूपन छपवाये थे। विभिन्न प्रान्तों में स्थानीय भाषा में प्रचार-सामग्री भी अलग से प्रकाशित की गयी थी। केन्द्रीय कार्यालय में कूपन, रसीद-बुक तथा प्रचार-सामग्री आदि तैयार कराने और देश भर में उसे यथासंभव कम समय में पहुँचाने में कुल करीब ७५ हजार रुपये व्यय हुए। केन्द्रीय कार्यालय का अन्य खर्च इन छ. महीनों में करीब २० हजार रु० हुआ। प्रदेशों के हिसाब आना अभी बाकी है।

जहाँ तक इस कोष के उपयोग का सवाल है, वह पूज्य विनोबाजी के तथा सर्व सेवा संघ के अधिकार का विषय है। सर्व सेवा के प्रस्ताव और पूज्य विनोबाजी की स्वीकृति के अनुसार इसका उपयोग ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य आंदोलन में होगा। इस बारे में आगे के लिए आवश्यक व्यवस्था करना और नीति-निर्धारण करने का काम सर्व सेवा संघ का है। सर्व सेवा संघ ने शुरू में ही यह निर्णय किया था कि बम्बई-कलकत्ता जैसे सर्वदेशीय नगरों से होने-वाले संग्रह के लिए थोड़ी भिन्न व्यवस्था के अलावा सामान्य तौर पर जिस प्रदेश में जितना संग्रह होगा उसका केवल १०% अखिल भारतीय काम के लिए सर्व सेवा संघ को दिया जायेगा और ९०% प्रदेश में ही खर्च होगा। प्रदेश के अन्तर्गत अधिकांश प्रदेशों ने यही तय किया है कि प्रदेश-स्तर पर भी केवल १०% खर्च हो, शेष ८०% जिले का जिले में ग्राम-दान-ग्रामस्वराज्य के काम में खर्च हो।

एक और निर्णय संघ ने प्रारम्भ में ही लिया था कि इस कोष में संग्रहीत रकम संचित निधि के रूप में रखकर उसके ब्याज आदि से लगातार वर्षों तक खर्च चलाते रहने की अपेक्षा मौजूदा वर्ष समेत अधिक-से-अधिक ३ वर्ष के अन्दर-अन्दर इसका उपयोग हो जाना चाहिए। वास्तव में देश के साढ़े पाँच लाख गाँवों और शहरों की तमाम जनता तक नयी समाज-रचना के विचार को पहुँचाने और उसे प्रारम्भिक चालना देने का काम अपने-आप में इतना बड़ा है कि इसके सिवा अन्य प्रकार से सोचना या करना व्यावहारिक भी नहीं है। एक करोड़ का आँकड़ा सुनने में कुछ बड़ा लगता है, लेकिन वास्तव में ज्यों-ज्यों ग्रामदान का काम बढ़ेगा त्यों-त्यों इतनी रकम तो देश भर में हर साल इस काम में खर्च होगी। केवल गाँव के ही काम का हिसाब लगायें तो एक गाँव के पीछे २० रु० भी नहीं आते।

भविष्य की योजना

अनुभव के आधार पर

ग्रामस्वराज्य-कोष के संग्रह में यह अनुभव आप सब मित्रों को आया होगा कि हमारे काम की जानकारी अगर ठीक ढंग से लोगों को हो और संग्रह की व्यवस्थित योजना हम बनायें तो हर वर्ष इतना संग्रह कर लेना मुश्किल नहीं होना चाहिए। वास्तव में, हर वर्ष ११ सितम्बर, विनोबा-जयन्ती से लेकर २ अक्तूबर गांधी-जयन्ती तक, इन तीन सप्ताहों में आंदोलन के लिए अर्थ-संग्रह और विचार-प्रचार का काम साथ-साथ चल सकता है। हमें आगे के लिए वैसा सोचना और उसकी व्यवस्थित योजना बनानी चाहिए।

ग्रामस्वराज्य-कोष के काम में जो अनुभव आया है उसके आधार पर कुछ सुझाव नीचे दिये हैं, जिन पर सर्व सेवा संघ तथा आप सब साथी विचार करके आवश्यक निर्णय लेंगे ऐसी आशा है —

(१) ग्रामस्वराज्य-कोष के सिल-सिले में, खास तौर से शहरों तथा कस्बों के जिन दाताओं से सम्बन्ध आया है, उनके साथ हमारा संपर्क बराबर रहना चाहिए।

(२) सर्व सेवा संघ के दफ्तर में देश भर के ऐसे हजार-दो-हजार मित्रों की सूची तैयार करनी चाहिए।

(३) ग्रामदान-आंदोलन की प्रगति तथा खासकर के जिन गाँवों में ग्रामदान के बाद ग्राम-सभाओं आदि का काम चल रहा है, उसकी जानकारी देनेवाला ४-६ पेज का एक तिमाही बुलेटिन सर्व सेवा संघ की ओर से इन सब मित्रों को निःशुल्क जाना चाहिए। उन्हें यह पहुँचाने की व्यवस्था शहरों में आसानी से की जा सकती है।

(४) चुने हुए कुछ लोगों को हर वर्ष संघ की दैनंदिनी तथा वार्षिक रिपोर्ट मंत्री अपने पत्र के साथ भेजें।

(५) कई ग्रामदानी गाँवों में अच्छा काम हो रहा है, लेकिन उसकी जानकारी और प्रचार बहुत कम है। स्वयं सर्वोदय-कार्यकर्ताओं को इन चीजों की जानकारी बहुत कम है। संघ को यह व्यवस्था करनी चाहिए कि ग्रामदान के बाद गाँवों में जो काम हो रहा है इसकी जानकारी का अच्छी तरह से संकलन और उसका प्रचार हो।

(६) शहरों में गांधी शांति प्रतिष्ठान और शांतिसेना के केन्द्रों को सक्रिय करने की ओर हम सबको मदद और ध्यान देना चाहिए। ये केन्द्र शहरों में हमारे काम के केन्द्र-बिन्दु और अच्छे साधन हो सकते हैं, और होने चाहिए।

(७) नगरों में सर्वोदय-कार्यक्रम के बारे में सर्व सेवा संघ ने कई बार सोचा, पर अभी तक यह कार्यक्रम आगे नहीं बढ़ा है। इस बारे में गंभीरता से विचार करना चाहिए।

एक सामूहिक संकल्प की पूर्ति के लिए किये गये व्यापक प्रयत्न के बाद जो आत्मविश्वास जागृत हुआ है तथा जो अनुभव मिला है उसका लाभ उठाकर आन्दोलन को आगे बढ़ाने का मौका आया है। आशा है, हम इसका लाभ उठायेंगे।

सेवाग्राम, २८ सितम्बर, १९७०

असम्भव को सम्भव करने का प्रण करें

राजगीर में संघ-अधिवेशन के सम्पन्न हुए अब एक साल हो रहा है। सर्वोदय-*आन्दोलन की दृष्टि से यह वर्ष काफी* महत्वपूर्ण रहा। हमारा ग्रामदान-ग्राम-स्वराज्य का आन्दोलन धीमी गति से ही क्यों न हो, लेकिन आगे बढ़ा है। साथ ही इस अवधि में आन्दोलन की आज की पद्धति की मर्यादाएँ भी सामने आयी हैं। अहिंसा के समक्ष कुछ नयी चुनौतियाँ भी खड़ी हुई हैं। उनका मुकाबला करने का सामर्थ्य भी विकसित हुआ है। इसलिए हम जरा पीछे मुड़कर देखें कि इस वर्ष में क्या हुआ और क्या नहीं हुआ।

इस अवधि में देश में नैतिक ह्रास के कारण अधकार बढ़ा है। *शाही-थैली* (प्रिवी-पर्स) *के नाटकीय ढंग से समाप्त* होने के बावजूद देश में यथास्थिति का ही बोलबाला है। नक्सलवादियों की गति-विधियों में बढ़ोत्तरी हुई है। गांधीजी की प्रतिमाओं को तोड़ने और चित्रों को जलाने आदि के कार्यक्रम उन्होंने कलकत्ता में किये। *निर्मला बहन, बद्री बाबू और* गोपाल बाबू जैसे कार्यकर्ताओं को उनकी हत्या की धमकियाँ मिलीं। नक्सलवादियों को दबाने के नाम पर पुलिस के आतंक में भी जगह-जगह वृद्धि हुई। उत्कल में कोरा-पुट के ग्रामदानी क्षेत्र में एक कार्यकर्त्ता को नृशंसता से पुलिस द्वारा पीटे जाने की *घटना भी सामने आयी है। श्रीमती* मालती देवी चौधरी जैसों को भी पुलिस द्वारा सताया जा रहा है। भिवंडी, जलगाँव, आदि स्थानों में दंगे हुए, एवं उनमें अनेक निरपराध लोगों की हत्याएँ एवं करोड़ों की सम्पत्ति नष्ट हुई। अब राजनीतिक अस्थिरता के कारण राज-*नीतिज्ञों पर से जनता का विश्वास उत्तरो*-त्तर क्षीण होता जा रहा है। प्रश्न है कि क्या हम रिक्तता को भरने का *सामर्थ्य* सर्वोदय-आन्दोलन में, ग्रामस्वराज्य के कार्य-क्रम में है।

प्रगति की गति

आज भी ग्रामदान ही सर्वोदय-आन्दो-लन का केन्द्र-बिंदु है। इस वर्ष आन्दोलन की गति धीमी रही। अपेक्षा यह थी कि पाँच-छः राज्य इस वर्ष राज्यदान हो जायेंगे। लेकिन इतनी गति अभी आयी नहीं है। *रिपोर्ट की अवधि में ३३,००० नये ग्रामदान (अब तक कुल १ लाख ७०* हजार), १८ नये जिलादान (अब तक कुल ३७ जिलादान)–कडप्पा, ठाणा, इंदौर, ग्वालियर, आजमगढ़, फैजाबाद, बीजापुर एवं बीकानेर आदि हुए हैं। *तमिलनाड का प्रदेशदान हुआ है। ये इस* वर्ष की महान उपलब्धियाँ मानी जायेंगी। सैकड़ों की संख्या में नौजवानों का सहयोग लेकर यह कठिन काम तमिलनाड के कार्य-कर्ताओं ने किया, इसलिए वे बधाई के पात्र हैं। आंध्र, मैसूर, राजस्थान एवं महाराष्ट्र, इन प्रदेशों में जिलादान के स्रोत *का उद्गम हुआ है। इधर तीन-चार माह* का समय कोष-संग्रह में लगने के कारण *ग्रामदानी गाँवों की संख्या में पर्याप्त वृद्धि* नहीं हुई है।

ग्रामदान-प्राप्ति की पद्धति में मौलिक परिवर्तन होना अभी बाकी है। राजस्थान के बीकानेर जिले में या तमिलनाड में जनता का सहयोग लेकर यह कार्य सम्पन्न हुआ, यह अपवाद मानना चाहिए। लेकिन *अन्य स्थानों में सरकारी तंत्र के सदस्य* एवं रचनात्मक संस्थाओं के कार्यकर्त्ता ही ग्रामदान-प्राप्ति का प्रमुख वाहन बने हैं। उनका सहयोग छोड़ना नहीं है। लेकिन जनता का सहयोग कैसे प्राप्त हो और ग्रामदान-प्राप्ति के साथ-साथ पुष्टि का काम कैसे हो, पुष्टि का काम करने के लिए एवं ग्रामसभा को सक्रिय रखने के लिए, उसकी सामर्थ्य बढ़ाने के लिए ग्राम-*शान्तिसेना बने, उसका प्रशिक्षण हो,* इत्यादि काम अभी होना बाकी है। ग्राम-दान-प्राप्ति की एवं पुष्टि की समन्वित *पद्धति खोजने का प्रयत्न ८ राज्यों के ४०* साथियों ने महाराष्ट्र के भंडारा जिले में किया। इससे कुछ बातें ध्यान में आयीं एवं कुछ प्रगति हुई। लेकिन इस प्रयोग को जितनी गम्भीरता से सबको लेना चाहिए था, वह न हो सका। इसलिए अपेक्षित उपलब्धि हाथ में नहीं आयी। *प्राप्ति एवं पुष्टि साथ-साथ न चले या* प्राप्ति के फौरन बाद ही पुष्टि का काम न किया जाय, तो प्राप्ति के समय ग्रामदान का विचार मान्य होने पर भी आगे का काम बहुत कठिन हो जाता है और ग्राम-दान केवल कागजी ग्रामदान रह जाता है।

जयप्रकाशजी का संकल्प

इसका प्रत्यक्ष दर्शन बिहार में हो रहा है। मुजफ्फरपुर जिले के मुसहरी प्रखंड में जमींदारों की हत्याएँ हुईं। सर्वोदय के दो प्रमुख कार्यकर्त्ताओं को हत्या की धमकियाँ दी गयीं। पुष्टि का काम राजगीर सम्मे-लन के बाद तीन-चार महीनों से बिहार में चल रहा था, लेकिन गति नहीं आ रही थी। इसलिए पुष्टि का काम करने के लिए एवं ऐसी आतंकवादी चुनौती का मुकाबला करने के लिए हिमालय में विश्राम लेने का इरादा छोड़कर मुसहरी की भट्ठी में जयप्रकाशजी 'करो या मरो' की वृत्ति से उतर पड़े और वहीं डट गये। वैद्यनाथ बाबू, राममूर्ति भाई, निर्मला बहन, कृष्णराज भाई आदि वरिष्ठ कार्यकर्त्ता भी बिहार में पुष्टि के काम में भिड़ गये। इससे पुष्टि का काम अब प्रत्यक्ष होने लगा है। पुष्टि के काम की गति यद्यपि धीमी है, तो भी प्रगतिशील कानूनों पर अमल, अन्याय का निराकरण, ग्राम-शान्तिसेना और तरुण-शान्तिसेना का संगठन, आदि कार्यक्रम पुष्टि के काम में जोड़ दिये जाने के कारण इस कार्य की गुणात्मकता बढ़ी है। बीकानेर (राजस्थान) एवं फैजाबाद (उ० प्र०) जिले में पुष्टि-कार्य का प्रारम्भ हुआ है।

मुसहरी प्रखण्ड के इस प्रयत्न से एक बात स्पष्ट हुई है कि प्राप्ति एवं पुष्टि में अन्तर नहीं होना चाहिए। बल्कि मेरा तो नम्र मत यह है कि पुष्टि दूर बिना

नये ग्रामदान की घोषणा ही नहीं होनी चाहिए। प्रारंभ में आत्मविश्वास जागृत करने के लिए एवं जन-मानस पर प्रभाव डालने के लिए ग्रामदान घोषणा-पत्र पर हस्ताक्षर होते ही शर्तें पूरा होने पर ग्रामदान की घोषणा आवश्यक थी। लेकिन अब वह निरर्थक ही नहीं, अनावश्यक बोझ बढ़ानेवाली सिद्ध हो रही है। लोग पूछते हैं कि इतने ग्रामदान हुए तो जमीन कितनी बँटी, ग्रामसभाएँ कितने गांवों में काम कर रही हैं? आदि। अब प्राप्ति एवं पुष्टि का समन्वित कार्यक्रम चले और पुष्टि होने पर ही घोषणा की जाय। पू० बाबा ने भी इन दिनों कहा है, 'एक जगह हमने कागज का प्रयोग किया, अब कागजवाला प्रयोग दूसरा न हो।' ग्रामदान प्राप्त करने में जो जल्दीबाजी की जाती थी, और जो कच्चापन रह जाता था वह भी दूर होगा और पुष्टि-कार्य को भी हम गंभीरता से लेंगे। प्राप्ति एवं पुष्टि एक ही कार्य के दो हिस्से हैं। दोनों के समान हुए बिना ग्रामदान की घोषणा करने की उतावली क्यों? इस सघ-अधिवेशन में इस पर सोचना है। नये ग्रामदान-प्राप्ति का काम जारी रहना चाहिए, एवं पुराने ग्रामदानी गांवों की पुष्टि का कार्यक्रम सरकार हाथ में लेना चाहिए, पुष्टि के काम को वेगवान बनाना है, और उसे नये तरीके से करना है। जयप्रकाशजी ने उसकी मिसाल पेश की है। अब इस सघ अधिवेशन में कम-से-कम ५० वरिष्ठ साथी ऐसा बीड़ा उठाकर निर्णय करें कि अमुक-अमुक क्षेत्र में हम पुष्टि के ही काम में अगले छह माह तक अन्य सब काम छोड़कर समय देंगे।

क्या प्राप्ति, क्या पुष्टि और क्या अन्य काम; सब काम नयी पद्धति से होना चाहिए और वह नयी पद्धति है—नागरिक अभिक्रम की पद्धति। अब आंदोलन को गुजर बाहर सचिव सस्थाओं के कार्यकर्ता न रहें, जनता में से आये हुए लोग कार्यकर्ता बनें। इससे प्रदेशदान में समय ज्यादा लगेगा, लेकिन देरी भले ही हो काम ठोस बनेगा और आगे का काम करने के लिए कार्यकर्ता-शक्ति होगी। शंकरराव जी ने राजगीर में सुझाया था कि नागरिक ग्रामदान-पत्र पर हस्ताक्षर लेने का काम प्रारम्भ करें। क्या अब भी इस सुझाव को अमल में लाने का समय नहीं आया है? नयी पद्धति का यह एक अंग है।

शांतिसेना के शांति-कार्य

शांतिसेना के काम में प्रगति हो रही है। सन् १९६९ में ७,१४९ शांतिसैनिक थे। अब वह संख्या ७,४४१ हुई है। देश भर में १३४ तरुण शांतिसेना-केन्द्र हैं। प्रगति की गति धीमी है। भिवंडी, जलगांव आदि दंगाग्रस्त क्षेत्रों में दंगे के बाद शांतिसेना ने अच्छा काम किया। लेकिन सवाल यह है कि भिवंडी में हमारा शांतिकेन्द्र था, शांतिसैनिक भी थे, वहाँ कई महीने से तनाव था, फिर भी दंगे के समय शांतिसैनिक कहाँ थे? उनका पता ही नहीं चला। ऐसा क्यों होता है? इस पर सोचने का समय आया है। वडमलनगर (महाराष्ट्र) में २-१०-'६९ से २२-२-'७० तक ५०० हिन्दू-मुसलमानों ने अहमदाबाद के शान्तिपालन के लिए अनशन-सत्र चलाया। यह एक स्तुत्य कार्य किया। इस वर्ष तरुण शांतिसेना का राष्ट्रीय शिविर अहमदाबाद में हुआ और उसका संचालन तरुणों ने ही किया। उन्होंने प्रचलित शिक्षण-विरोधी मौन जुलूस निकाला, जिसका जन-मानस पर अच्छा प्रभाव पड़ा। 'तरुण' पत्रिका के ग्राहक बढ़ रहे हैं। अभी ग्राम-शांतिसेना के काम का ठीक से प्रारम्भ होना बाकी है। बादशाह खान के आगमन का अच्छा प्रभाव देश पर हुआ है। इसी में से 'इन्सानी बिरादरी' का जन्म हुआ। कौमी दंगे कैसे रुकें, इस पर तीव्र चिंतन बादशाह खान के आगमन से शुरू हुआ। सादगी का नया दर्शन उनके आगमन से हुआ, और गांधीजी के जमाने की सादगी की याददाश्त ताजी हुई।

शांतिसैनिकों की सबसे अधिक संख्या उत्कल में है। त्रिपुरा भी उत्कल के कुछ इलाकों में पुलिस का, और नक्सलवादियों का दमन-चक्र जारी है। श्रीमती मालती-देवी गराड़ा में जाकर बैठी हैं। यह बड़ी हिम्मत का काम उन्होंने किया है। क्या यह उड़ीसा के शांतिसैनिकों के लिए चुनौती नहीं है? क्या महाराष्ट्र, क्या उत्कल, सभी प्रदेशों में प्रान्तीय शांतिसेना समितियाँ क्रियाशील कैसे बनें, यह अधिवेशन के समक्ष सोचने का विषय है। केरल में पिछले दिनों 'जन-जागृति' सेना नाम से एक शांतिसेना जैसा ही संगठन शुरू हुआ है। तंजौर एवं केरल को श्री शंकररावजी का मार्ग-दर्शन मिला है। श्री चारुचंद्र भंडारी की ग्रामदान-यात्रा एवं शांति-यात्रा उत्तर बंगाल एवं दक्षिण बंगाल के भय-ग्रस्त इलाकों में जारी है। केरल, बंगाल आदि अशांत क्षेत्रों में परिस्थिति का अध्ययन किया गया और रिपोर्ट पेश की गयी। इन क्षेत्रों में सामाजिक न्याय की स्थापना कैसे हो, एवं जीवन में से भय कैसे मिटे और इसे करने में शांतिसेना क्या 'रोल' अदा करे, ये सब इस अधिवेशन में सोचने के विषय हैं।

पूना-प्रस्ताव के संदर्भ में

सामाजिक न्याय की स्थापना हो एवं अन्यायों का (विशेषतः भूमि-सम्बन्धी या प्रगतिशील कानूनों पर अमल-सम्बन्धी) अहिंसक मुकाबला किया जाय, इसलिए पूना की प्रबंध-समिति में एक प्रस्ताव पारित हुआ था। उसके बाद काम में शक्ति लग जाने के कारण इस पर अमल नहीं हो सका है। थाणा में आदिवासियों में जमीन के प्रश्न को लेकर सत्याग्रह की तैयारियाँ प्रारम्भ हुई थीं। सरकार द्वारा जनता की काफी मांगें मंजूर कर लेने के कारण सत्याग्रह की आवश्यकता नहीं रही। उत्तरप्रदेश में पहाड़ी इलाकों में शराबबन्दी के प्रश्न पर सफल सत्याग्रह हुआ इसलिए उत्तरप्रदेश के साथी बधाई के पात्र हैं। भरूच जिले में अङ्कलेश्वर गांव के जमीन के प्रश्न को लेकर सत्याग्रह चल रहा है। लेकिन अब याद इन्हें मानना चाहिए। अभी पूना के सत्याग्रह के प्रस्ताव पर गम्भीरता से बिना

एवं प्रदेश सर्वोदय-मण्डलों ने ध्यान नहीं दिया है।

खादी का संकट

खादी-जगत् का संकट मौजूद है। ग्रामाभिमुख खादी का प्रारम्भ अभी होना बाकी है। ग्रामदानी गाँवों में खादी या अन्य उद्योगों के विकास की गति धीमी है। अतः नमूने का सनातन प्रश्न जन-मानस में मौजूद है। संदर्भ बदले बिना बहुत बड़ा विकास संभव नहीं, इस शास्त्र-शुद्ध उत्तर से प्रश्नकर्त्ता निरुत्तर हो जाता है, लेकिन उसका समाधान नहीं होता है। विकास-कार्य में से लोक-शक्ति कैसे प्रकट हो और और विकास-कार्य विदेश से आये हुए पैसों के भरोसे न चलकर लोक-शक्ति एवं स्थानीय साधन-स्रोतों द्वारा चले; यह स्थिति अभी नहीं आयी है। क्या विकास-कार्य को यह दिशा -कुछ क्षेत्रों में ही क्यों न हो—नहीं दी जा सकती ? इस बारे में आज नहीं तो कल विचार करना ही पड़ेगा।

विचार की व्यापकता और प्रकाशन-कार्य

इस वर्ष आचार्य तुलसी और विनोबा-जी का मिलन हुआ। इससे अणुव्रत एवं सर्वोदय-आंदोलन में परस्पर निकट सहयोग हो, यह तय हुआ। आचार्यकुल का काम आगे बढ़ रहा है। इस काम में विशाल संभावनाएँ छिपी हुई हैं। लोकयात्री दल की अखंड पदयात्रा लोक-जागरण करती हुई निरंतर चल रही है। उरण (महाराष्ट्र) में सर्वोदय-पात्र में लगे हुए देश भर के कार्यकर्त्ताओं की एक गोष्ठी हुई। पिछले छः माह से कार्यकर्त्ताओं के रिपोर्टों का संकलन कर मासिक-चिट्ठी देश भर के कार्यकर्त्ताओं को भेजी जा रही है। लोक-नीति में इस वर्ष कोई खास प्रगति नहीं हुई है। केवल तमिलनाडु और केरल में चुनाव के पूर्व कुछ प्रचार किया गया। गांधी-जन्म-शताब्दी के संदर्भ में संघ-प्रकाशन ने किताबों के दो नये सेट प्रकाशित कर देश भर में गांधी-विनोबा के विचार पहुँचाने की अच्छी योजना बनायी। लेकिन १० लाख सेटों के बिक्री की योजना बनायी थी; ढाई लाख सेट छपे। उसमें से भी सवा लाख सेट ही बिक पाये हैं। अन्य सवा लाख की बिक्री के लिए सब सर्वोदय-कार्यकर्त्ताओं के सक्रिय सहयोग की आवश्यकता है। 'भूमिपुत्र' को छोड़कर अन्य सभी सर्वोदय-*पत्रिकाओं की ग्राहक-संख्या मर्यादित है।* क्या यह कई गुना बढ़ायी नहीं जा सकती और सामूहिक अध्ययन का प्रयत्न ग्रामदानी गाँवों में नहीं किया जा सकता ?

ग्रामस्वराज्य-कोष की उपलब्धि

इस वर्ष विनोबाजी ने ७५ साल पूरे किये हैं। इस निमित्त से एक करोड़ रुपये का ग्रामस्वराज्य-कोष का संग्रह किया जाय, और यह पू० बाबा को *अर्पित किया जाय, ऐसा तय हुआ।* यद्यपि एक करोड़ तक पहुँचने के लिए *कई राज्यों में अधिक गंभीर एवं* सातत्य-पूर्ण प्रयत्नों की जरूरत थी, तो भी ६२ लाख रुपये से भी अधिक कोष-संग्रह हुआ, यह एक सिद्धि हासिल हुई है, और कार्यकर्त्ताओं का उत्साह बढ़ा है। अब फिलहाल अर्थाभाव हमारे मार्ग में बाधक तत्त्व नहीं रहेगा। लेकिन अर्थ इकट्ठा हो जाने के कारण नयी समस्याएँ एवं नये खतरे भी उपस्थित हो सकते हैं। यह कोष तीन साल की अवधि में ग्राम-स्वराज्य और शांतिसेना के कार्यों में खर्च हो जाय, इसके बारे में योजना बनानी होगी। अन्यथा कई जगह मितव्ययिता के नाम पर पैसा बैंकों में पड़ा रहेगा और व्याज से बढ़ता भी रहेगा, और कई जगह विनियोग के नाम पर फिजूलखर्ची बढ़ेगी। कोष का काम जन-शक्ति द्वारा हो, ऐसा हमने सोचा था। सर्वोदय-मित्र बनाने पर जोर हो और आधी रकम सर्वोदय-मित्र या छोटे-छोटे चंदों से आये, जनता स्वयं-स्फूर्ति से दे रही है, नागरिक इकट्ठा कर रहे हैं यह दृश्य इस प्रयास में से प्रकट हो, यह हमने सोचा था। लेकिन देदीप्यमान कुछ उदाहरणों को छोड़कर, यह मानना पड़ेगा कि मुख्यतः सरकारी तंत्र का, एवं ग्रामदान-कार्यकर्त्ताओं का सहारा लेकर ही यह कोष एकत्रित हुआ है। ऐसा क्यों हुआ ? क्या आगे से बड़ी राशि में किसी एक से चन्दा लेने का प्रयत्न करने के स्थान पर लाखों सर्वोदय-मित्र प्रति वर्ष बनाकर आंदोलन के खर्चे की पूर्ति करने की योजना नहीं बनायी जा सकती ?

जो उपलब्धियाँ इस वर्ष हुई तमिल-नाडु का प्रदेशदान, ग्रामस्वराज्य-कोष, जे० पी० का मुजफ्फरपुर जिले में डट जाना, वे बड़ी हैं। लेकिन उतनी ही कई बड़ी बातें हमारी योजना के मुताबिक नहीं हो पायी हैं। ऐसा क्यों हुआ ? क्योंकि कार्यकर्त्ताओं की संख्या, गुणवत्ता एवं संगठन, तीनों में भारी कमियाँ हैं। यह भूदान-ग्रामदान-आंदोलन का बीसवाँ वर्ष चल रहा है। अब कुछ बुनियादी कमियों की ओर हमारा ध्यान फौरन जाना चाहिए। भविष्य के सारे कामों को जमीन या ग्रामदानी गाँवों के आँकड़े को केन्द्र मानकर नहीं, कार्यकर्त्ताओं को केन्द्र मानकर चलाये बिना यह समस्या दूर नहीं होगी। गाँव-गाँव और नगर-नगर में कार्यकर्त्ता तैयार हों, इनका शिविरों द्वारा पर्याप्त प्रशिक्षण हो, और इनके द्वारा तूफान की गति से लोक-शिक्षण हो, और इन कार्यकर्त्ताओं का एक लचीला संगठन बने, इसके बिना सर्वोदय-आंदोलन अपनी भूमिका अदा नहीं कर सकेगा। शहरों में आर्थिक समता का काम शुरू होना चाहिए।

संगठन और क्रान्ति : कार्यकर्त्ता और गुणवत्ता

'आर्गनाइजेशन इज दी टेस्ट आफ नान-वायलेंस', ऐसा बापू ने कहा था। भूदान-ग्रामदान का यह सौभाग्य है कि इसमें विनोबा, जयप्रकाशजी, शंकररावजी, दादा, धीरेनभाई, जैसे कई देदीप्यमान सितारे जगमगा रहे हैं। किसी भी एक राजनीतिक पक्ष या अन्य संगठन के पास इतना बड़ा तारापुंज उपलब्ध नहीं है। लेकिन इसका *पूरा लाभ उठाने का सामर्थ्य सर्वोदय-संगठनों में नहीं है। यहाँ सबसे महत्त्व* का प्रश्न उपस्थित हो जाता है कार्यकर्त्ताओं की संख्या बढ़ाने, उनके संगठन एवं गुण

असहनीय बुराई

जब इतने अधिक लोग भूखे हैं, जब इतने अधिक परिवार गरीबी से पीड़ित हैं, जब इतने अधिक लोग अज्ञानता में डूबे हैं, जब इतने अधिक स्कूल, अस्पताल और मकान बनने हैं, तब संपत्ति का सभी प्रकार का सार्वजनिक या निजी अपव्यय, राष्ट्रीय या व्यक्तिगत दिखावे की भावना से प्रेरित सभी खर्च, प्रत्येक खर्चीली हथियारों की दौड़ असहनीय बुराई बन जाती है। क्या काफी विलम्ब होने के पहले वे लोग, जो अधिकारी हैं, हमारे शब्दों पर ध्यान देंगे ?

— पोप पॉल षष्टम्

के विकास का। हमारा अध्ययन नगण्य है। आज कुछ जिला एवं प्रदेश सर्वोदय-मण्डलों में मतभेद एवं झगड़े हैं। कहीं कहीं गुट भी बन गये हैं। एकाध प्रदेश में यह भी दिखा कि बैठकों में जातीयता उभर आती है। कुछ इने-गिने अपवादों को छोड़कर कार्यक्षमता का अभाव सर्वत्र है। हिसाब-किताब रखने में दक्षता बरती जाय, कार्यकर्ताओं में टीम-स्पिरिट एवं अनुराग बढ़े, इसकी सख्त जरूरत है। सब प्रदेश के शिविरों में कम-से-कम आधा दिन तो कार्यकर्ताओं के गुण-विकास पर चर्चा हो। कार्यकर्ताओं की पत्नियों के, बच्चों के अलग-अलग शिविर लिये जायं। तरुण-शांतिसेना के ग्रीष्मकालीन शिविरों में कार्यकर्ताओं के लड़के-लड़कियां भाग लें, इसका प्रयत्न हो। कार्यकर्ताओं का 'कोड आफ कांडक्ट' बने। एक या दो पदों से ज्यादा पदों की या कामों की जिम्मेवारी कोई अपने ऊपर न ओढ़े। लगातार दो वर्ष से ज्यादा कोई संगठन-प्रमुख न बने। सादगी एवं मितव्ययिता पर भी पर्याप्त जोर दिया जाय। गुण-विकास किये बिना, एवं संगठन को व्यापक एवं अच्छा बनाये बिना आगे की छलांग मारना मुश्किल है।

सर्व सेवा संघ का स्वरूप

सर्व सेवा संघ को भी नये युग के अनुसार खुद को परिवर्तन करना होगा। आज सर्वोदय मण्डलों के एवं संघ के कार्यालय में काम करनेवाले साथियों को तय करना होगा कि वे आन्दोलन के साथी कार्यकर्ता हैं या वेतनभोगी कार्यकर्ता हैं? दोनों का अन्तर स्पष्ट है। यदि वे साथी हैं तो फिर इन्क्रीमेन्ट, प्राविडेंड फण्ड, छुट्टियों आदि के बारे में फिर से सोचना होगा। सर्व सेवा संघ का स्वरूप जब मिनिस्ट्री-संघ का बना था, तब उसके पास कई अखिल भारत रचनात्मक संस्थाओं की संपत्ति आ गयी थी। अब, जब वे संघ एक-एक करके अलग हो गये हैं, तब केवल लोकमन-परिवर्तन का काम करनेवाला संघ, लोक-शिक्षण द्वारा क्रांति सम्पन्न करने की आकांक्षा रखनेवाला संघ, अपने पास इतनी जमीन, मकान आदि क्यों रखे और अपने सिर पर कर्ज का बोझ क्यों ढोये? और फिर इस संपत्ति के रक्षण एवं संवर्द्धन के लिए कोर्ट-कचहरी में जाना पड़े तो यह कहाँ तक उचित है? 'सबै भूमि गोपाल की' से यह कहाँ तक मेल खाता है? ग्रामदानी गांवों के नागरिक कोर्ट न जायें, यह दिन-रात हम कहें और खुद… । संघ की प्रापर्टी पर ब्याज मिलता रहे, यह शोषण-मुक्त समाज से कहाँ तक मेल खाता है? यह कथनी और करनी का अन्तर शीघ्र मिटना चाहिए। अन्यथा स्वामित्व-विसर्जन का आन्दोलन भारत भर में फैलाने का काम संघ नहीं कर सकेगा। कार्यकर्ता और नेता के बीच खाई न बढ़े, संघ में आर्थिक विषमता कम-से-कम हो, इस ओर भी ध्यान देना होगा। क्या संघ को अपना स्वरूप क्रांति के अनुकूल करने का समय नहीं आया है?

असंभव को संभव बनाने की चुनौती

अगले वर्ष सब ग्रामदानी जिलों में पुष्टि, नये ग्रामदानी गांवों में प्राप्ति के साथ पुष्टि, अन्याय के निराकरण के लिए सत्याग्रह, सशक्त शांतिसेना एवं तरुण शांति-सेना, शहरों में सामाजिक-आर्थिक न्याय के काम का प्रारंभ, लोकनीति, कार्यकर्ताओं की प्राप्ति एवं प्रशिक्षण, भाईचारे पर आधारित सक्षम संगठन एवं कार्यकर्ताओं का गुण-विकास, संघ को अपने स्वरूप को क्रांति के अधिक अनुकूल बनाना, ये सब काम हमें करने हैं। क्या ये सब काम असम्भव हैं? असम्भव माने जानेवाले कई कार्य पिछले वर्षों में सम्पन्न हुए हैं। ४२ लाख एकड़ का भूमिदान, ग्रामदान, जिलादान, प्रदेशदान, बासठ लाख का ग्रामस्वराज्य-कोष, इनमें से कौनसा कार्यक्रम दस-बीस साल पूर्व सम्भव लगता था? ग्रामस्वराज्य कोष का कार्यक्रम छः माह पूर्व तक असम्भव लगता था। बुजुर्ग अनुभवी मित्रों ने चेतावनी दी थी कि बड़ी मात्रा में कोष इकट्ठा नहीं होगा। लेकिन वह भगवान की कृपा से हो ही गया। सैकड़ों कार्यकर्ता आर्थिक संरक्षण एवं ख्याति के बिना भी १५-२० वर्ष लगातार घूमेंगे, क्या यह संभव माना गया था? इतनी बड़ी लोक-सम्पर्क रखनेवाली जमात चुनावों में खड़ी नहीं रहेगी, क्या यह संभव था? ये असंभव काम संभव हुए हैं। अब आगे भी ऐसे ही असंभव काम संभव कर डालने की चुनौती हमारे सामने उपस्थित हुई है। असामान्य नेता के रहनुमाई में गण-सेवकत्व के बल पर अगले दो वर्षों में ये असंभव काम संभव करने का हम प्रण करें।

सेवाग्राम,
२ अक्तूबर, '७०

हमारा आन्दोलन : ग्रामस्वराज्य की दिशा में

यह प्रतिवेदन वस्तुतः निवेदन है, एक सामान्य परिचय है राजगीर के बाद के पुष्टि के कामों का, उसकी समस्याओं और संभावनाओं का। इसमें अधिक उल्लेख स्वभावतः बिहार का है। जो विचार यहाँ प्रकट किये गये हैं, उनमें प्रतिनिधित्व किसी समिति या गोष्ठी का नहीं है, उनकी अपूर्णताओं की जिम्मेदारी पूरी-पूरी लेखक की है।

राजगीर-सम्मेलन में बिहार के राज्य-दान की अनौपचारिक घोषणा हुई। वहाँ से हम लोग यह हौसला लेकर निकले कि एक बड़े राज्य में ग्रामस्वराज्य का सघन प्रयोग करेंगे। विनोबाजी ने पुष्टि के अति-तूफान की बात कहकर अपनी तीव्रता प्रकट की। पूरे सर्वोदय-जगत् की आँखें बिहार की ओर लग गयी।

राजगीर के बाद बिहार के साथियों की पहली बैठक दिसम्बर सन् १९६९ में पटना में हुई। काफी मंथन के बाद कार्यकर्ताओं तथा सहयोगियों को मिलाकर एक राज्य-स्तरीय ग्रामस्वराज्य-समिति गठित की गयी। राज्य समिति के बाद जिलों में भी ग्रामस्वराज्य-समितियाँ बनीं। जिलों के कई ब्लाकों में भी बनायी गयीं। इस आधार पर जगह-जगह पुष्टि का काम शुरू करने की योजना बनी।

जनवरी से मई '७० तक पाँच महीने बीते। कोशिश की गयी कि हर जिले के कम-से-कम एक ब्लाक में काम शुरू हो, तथा कुछ विशेष क्षेत्रों में ज्यादा सघन काम हो। लेकिन अनुभव यह आया कि अधिकांश जिलों में शक्ति ही नहीं थी। प्रेरणा और उत्कटता की भी कमी थी। साधनों का अभाव था। नेतृत्व नहीं था, संकल्प के धनी साथी भी नहीं थे। यह सोचकर कि जे० पी० के घूमने से पुष्टि के लिए वातावरण बनेगा, उनके कई जगह कार्यक्रम बनाये गये। वह गये, हलचल हुई। लेकिन कहीं तेजी नहीं आयी। पाँच महीनों में ऐसा कोई समय नहीं आया जब यह महसूस हुआ हो कि काम में गति आ रही है। बावजूद इसके कि कुछ जगहों में अपने कुछ इने-गिने साथी धैर्य और निष्ठा के साथ कठिनाइयों के बीच आगे बढ़ने की कोशिश कर रहे थे, पुष्टि के तूफान की स्थिति नहीं आयी, अति-तूफान की तो बात ही अलग थी। आमतौर पर शिथिलता और निष्क्रियता बनी रही।

जे० पी० का कदम

जून '७० के प्रारम्भ में नियति जे० पी० को हिमालय से खींचकर मुजफ्फरपुर के मुसहरी प्रखण्ड में ले गयी। वह मन में 'करो या मरो' का आत्यंतिक संकल्प लेकर गये। पुष्टि का काम तेजी से कैसे बढ़े, और उसमें क्या 'रोल' हो, इस प्रश्न को लेकर उनके मन में मंथन पहिले से चल रहा था, और संभवतः वह मुसहरी न जाते तब भी शीघ्र कोई निर्णायक कदम उठाते। किंतु घटना-क्रम ने उन्हें ऐसे क्षेत्र में पहुँचा दिया जिसकी कल्पना पहिले नहीं थी। हमारे काम की दृष्टि से वह क्षेत्र अत्यन्त अनाकर्षक था। जीवन के एक निर्णायक क्षण में वह वहाँ पहुँच गये और उन्होंने अपने को लाकर एक विकट परिस्थिति के बीच में खड़ा कर दिया। भूमिहीन को वास की भूमि का पर्चा, भूदान में मिली भूमि का बँटवारा, भूमिहीनता-निवारण, बीघा-कट्ठा, ग्राम-कोष, ग्रामसभा का गठन, कम मजदूरी, बेदखली, मालिक-मजदूर के सम्बन्ध, गरीब का दुख-दर्द, समर्थ का जोर-जुल्म, छिपी और प्रकट हिंसा, आदि विविध रूपों में पूरा ग्रामीण जीवन अपनी संपूर्ण भयकरता में उनके सामने आ गया, और उन्होंने समस्या को उसकी संपूर्णता में स्वीकार भी कर लिया। समाधान का छोर ग्रामदान के सिवाय दूसरा था नहीं। उस छोर को पकड़कर वह आगे बढ़े। विचार की शक्ति, जे० पी० का व्यक्तित्व, साथियों का सहयोग, इनके मेल से मुसहरी का काम जून के पहले हफ्ते में शुरू हुआ। तब से—जून के—पहले जे० पी० आंदोलन की हवा बनाते थे, अब जे० पी० उसकी जमीन बनाने में लग गये हैं। उनके इस कदम से आंदोलन की धारा में एक नया मोड़ आया है। बिहार के ही नहीं, देश के अन्य भागों के साथियों के सामने भी पुष्टि का महत्व जिस रूप में प्रकट हुआ है, उस रूप में पहले कभी नहीं प्रकट हुआ था। लोगों ने महसूस किया है कि प्राप्ति की सार्थकता पुष्टि में ही है। वस्तुतः प्राप्ति और पुष्टि एक ही प्रक्रिया के अंग हैं। वह प्राप्ति, प्राप्ति नहीं है जिसमें से पुष्टि की शक्ति न निकले।

पिछले चार महीने : बिहार में जे० पी० के कदम के बाद के दौर के चार महीने, जून से सितम्बर तक, बीत चुके हैं। इस बीच हमारे काम के नये आयाम प्रकट हुए हैं, नयी समस्याएँ और *संभावनाएँ सामने आयी हैं।*

एक दृष्टि से बिहार के काम को तीन स्तरों पर समझा जा सकता है—एक, मुसहरी प्रखंड; दो, मुजफ्फरपुर जिला; तीन, अन्य क्षेत्र।

मुसहरी प्रखण्ड का काम प्रत्यक्ष रूप से जे० पी० तथा उनके मुख्य सहयोगियों की देखरेख में चलता है। सोचा गया था कि प्रखण्ड की कुल १७ पंचायतों में साथ-साथ काम हो, लेकिन कार्यकर्ताओं के अभाव में अभी तक ५ पंचायतों में ही काम शुरू हो सका है।

मुसहरी को लेकर मुजफ्फरपुर जिले में कुल ४० प्रखण्ड हैं। हम लोग चाहते थे कि जिले के हर प्रखण्ड में पुष्टि का काम हो, और इस वेग से हो कि पुष्टि के अभियान का "इम्पैक्ट" पड़े। अगर जिले भर में पुष्टि का तूफान होता तो मुसहरी में शायद अति-तूफान दिखाई देता। लेकिन कोशिश करने पर

भी ४० में से ६ से ज्यादा में काम नहीं शुरू हो सका है—वह भी इस तरह नहीं कि उसे तूफान कहा जा सके, अति-तूफान की कौन कहे!

बिहार में कुल १७ जिले हैं। इन १७ जिलों में राजगीर से अब तक की अवधि में कुल एक दर्जन से अधिक क्षेत्र नहीं निकल पाये हैं, जहां अपना कोई समर्थ साथी—जे० पी० और वैद्यनाथ बाबू को लेकर—हो, जो पुष्टि के कार्य में लगा हो। जिन जिलों में ये क्षेत्र हैं वे हैं—पूर्णिया, सहरसा, मुजफ्फरपुर, दरभंगा, भागलपुर, मुंगेर, गया। गया और मुंगेर के तीन क्षेत्रों को छोड़कर अन्य जिलों के ये सब प्रयोग-क्षेत्र उत्तर बिहार में हैं।

बिहार के कुल बारह क्षेत्रों में से ४ क्षेत्रों में मुख्य साथी किसी संस्था के हैं, ८ में अन्य हैं। दो-एक जगहों को छोड़कर संस्थाओं का सहयोग कम या ज्यादा हर जगह उपलब्ध है, किन्तु अपनी जिम्मेदारी मानकर उन्होंने पुष्टि-कार्य की अगुआई अपने हाथ में ली हो, यह स्थिति नहीं है। संस्थाओं की आर्थिक या नैतिक स्थिति भी ऐसी नहीं है कि नेतृत्व ले सकें। आगे की व्यूह-रचना में यह बात हमें सामने रखनी चाहिए।

नये अनुभव : नयी भूमिका

१९ अगस्त को नरसिंहपुर में, जो एक स्थानीय खादी-संस्था का केन्द्र है, कुछ चुने हुए प्रमुख भूमिवानों और भूमिहीन मजदूरों का ४ घंटों का संवाद हुआ। दोनों ने एक-दूसरे के सामने अपनी बातें रखीं। कुछ कटु बातें भी कही गयीं, किन्तु कटुता के साथ नहीं कही गयीं। मजदूरी, सिंचाई, पीने का पानी, आपसी व्यवहार आदि से सम्बन्ध रखनेवाली बातें दिल खोलकर हुईं। कुछ मुद्दों पर दोनों पक्ष चर्चा करके एकमत हुए। तय हुआ कि इन निर्णयों की व्यापक जानकारी करायी जाय, और इस तरह के संवाद अधिक-से-अधिक जगहों में कराये जायँ। इस सिलसिले को जारी रखा जाय, और कोशिश की जाय कि अगस्त के अन्त तक ... हर दो ... करें। इन संवादों से आपस का अविश्वास मिटेगा, ग्रामसभा की व्यावहारिकता में भरोसा पैदा होगा, तथा भूमिवान-भूमिहीन दोनों का ध्यान पुलिस-अदालत और बाहर की शक्तियों की ओर से हटकर गांव की ओर लौटेगा। यह स्पष्ट है कि संवाद की यह प्रक्रिया बड़े पैमाने पर और हर स्तर पर न शुरू हुई तो मुझे नहीं दिखाई देता कि संघर्ष की स्थिति कैसे टाली जा सकेगी, विशेष रूप से ऐसे समय जब संघर्ष नये-नये आकर्षक रूप में प्रकट हो रहा है, और दिनोंदिन लोक-मानस में घर करता जा रहा है।

● जब मुजफ्फरपुर में काम शुरू हुआ तो कुछ लोग कहते थे कि बढ़ती हुई हिंसा के कारण परिस्थिति से विवश होकर भूमि के मालिकों के कान शांति और सद्भावना की बात सुनने के लिए अधिक तैयार मिलेंगे। कहीं-कहीं कुछ भूमिवान ऐसे मिले भी जो सोचते थे कि समस्या का बुनियादी समाधान ढूंढना चाहिए, और मालिक-मजदूर-सम्बन्धों में समय को देखते हुए ऐसे परिवर्तन करने चाहिए जो दोनों के हित में हों। इस वक्त मालिकों में कुछ ऐसे लोग मौजूद हैं जो आगे बढ़ने को तैयार हैं। उनका पूरा लाभ आंदोलन के लिए अभी हम नहीं ले सके हैं। जब से राजनैतिक दलों का भूमि-आन्दोलन हुआ है, स्थिति कुछ बदली हुई मालूम होती है। अपेक्षाकृत मालिक सोचने लगे हैं कि अगर इसी तरह छीना-झपटी होनेवाली हो तो छीननेवालों का क्यों न डटकर मुकाबिला किया जाय? कई जगहों से छिपकर हथियार इकट्ठा किये जाने की खबरें भी मिलती हैं। आत्म-रक्षा के नाम में यह सब किया जा रहा है, और कराया जा रहा है। ग्रामदान से दिलों को संवेदनशील बनाने का जो एक बड़ा काम हुआ था उसे इस तरह के भूमि-आंदोलन से धक्का लगा है। जो मालिक उदार हो रहे थे उनकी उदारता, और जो मजदूर निर्भय हो रहे थे उनकी निर्भयता, दोनों में कमी आयी है। तनाव बढ़ा है। अगर जे० पी० के दिये गये सुझावों के अनुसार आंदोलन चलाया गया होता तो न्याय के पक्ष में जोरदार लोकमत बनता और समस्याओं के जंगल में रास्ता दिखाई देता। दुःख है कि वह सब कुछ नहीं हुआ। एक बार फिर यही सिद्ध हुआ कि समाज में कमजोर कमजोर है और मजबूत मजबूत, और हमारी राजनीति किसी भी प्रश्न पर दल-हित से ऊपर उठने में असमर्थ है। लेकिन यह भी दिखाई देता है कि यह राजनीति चाहे जितनी निन्दित हो, बैकवर्ड और हरिजन लोगों में बंगाल के संयुक्त मोर्चे के अनुभव के बाद राजनीति में नया भरोसा पैदा हुआ है। वे सोचते हैं कि सरकार उनके लोगों के हाथ में आ जाय तो बहुत कुछ हो जायेगा। उन्हें शांति और सद्भावना की बातें कम रुचने लगी हैं। कहीं-कहीं ऐसा भी हो रहा है कि बैकवर्ड लोग हरिजनों से कहते हैं—"सरकार तुम्हें नयी जमीन दे रही है, तुम पुरानी जमीन हमारे हाथ बेच दो।" कानून और आंदोलनों का बिलकुल नीचे जाकर क्या असर होता है इस पर हमारा ध्यान जाना चाहिए। इतना निश्चित है कि भविष्य में गांव में वही शक्ति टिकेगी जो भूमि-भूमिवान-भूमिहीन की त्रिविध समस्या हल कर सकेगी। हमें वह शक्ति बनना चाहिए। भूमि को छोड़कर कोई कार्यक्रम चल नहीं सकता।

■ जहां तक तरुणों और विद्यार्थियों का सम्बन्ध है वे हमारे आंदोलन से अलग-से हैं। यों तो ग्रामदान ही क्या, किसी भी विचार से समाज आंदोलित नहीं है। समाज की चेतना अत्यन्त नीचे स्तर पर काम कर रही है। किसी समुदाय में यह चिन्ता नहीं दिखायी देती कि समस्याएँ शांतिपूर्ण उपायों से हल हों। ग्रामदान में ग्रामस्वराज्य का पहलू लोगों के सामने जैसे आया ही नहीं है। गांव के सवर्ण युवकों में दमनकारी प्रवृत्तियाँ बढ़ रही हैं, तथा हरिजन-मुसलमान-आदिवासी युवकों में प्रतिहिंसा की। "गांव" दोनों के दिल से निकलता जा रहा है, वर्ग और वर्ण की चेतना तीव्र हो रही है।

कुछ विचारणीय मुद्दे

गति : बिहार में आंदोलन की विशेष परिस्थिति है। बिहार बंगाल का पड़ोसी है। देश का पूरा पूर्वांचल अन्दर-अन्दर जिस मंथन की प्रक्रिया से गुजर रहा है उससे बिहार कब तक अछूता रहेगा? राजनैतिक टूट के कारण एक प्रकार की रिक्तता है, जिसे भरने के लिए कई शक्तियाँ दौड़ रही हैं, लेकिन जन-जीवन को एक सुनिश्चित दिशा में ले जानेवाली कोई शक्ति सामने आयी नहीं है। हमारे पास पक्ष है, दिशा है, लेकिन शक्ति नहीं है। हमारे पास समाज के प्रश्नों के जो उत्तर मौजूद हैं उन्हें हम तेजी के साथ प्रस्तुत नहीं कर पा रहे हैं। *मुख्य प्रश्न है "स्पीड" का। हमारे काम में स्पीड कैसे आयेगी?* लेकिन इस बात का भी ध्यान रखना है कि जल्दी करने की जितनी कोशिश करनी है, जल्दबाजी से बचने की उससे कम कोशिश नहीं करनी है।

सहयोगी : बिहारदान की जो स्थिति है, उसमें पुष्टि का अर्थ यह नहीं है कि प्राप्ति अपनी जगह पक्की है। और अब प्राप्ति के बाद के ही काम पर सारी शक्ति केंद्रित करनी है। स्थिति यह है कि प्राप्ति *को भी पक्का करना है। ७५ प्रतिशत*—५१ प्रतिशत को पूरा करते हुए पुष्टि को आगे बढ़ाना है। यह काम संस्था के कुछ कार्यकर्ताओं को गाँव में भेजने से पूरा नहीं होगा। आवश्यकता इस बात की है कि जो प्रयोग-क्षेत्र हम लें उसमें पहले स्थानीय सहयोगी तैयार करें और स्वयं उनके पीछे रहकर काम को आगे बढ़ाने की कोशिश करें। वह कैसे होगा, यह तफसील की बात है, जिस पर अलग विचार करने की जरूरत है।

बीघा-कट्ठा : *ग्रामसभाएँ बनाने की* जल्दी करने से ग्रामसभाएँ जल्दी नहीं बनेंगी। लोकमानस में संस्था और संगठन के प्रति व्यापक शंका और अरुचि है। उसको ध्यान में रखते हुए सबसे पहले इस बात पर जोर देना उचित है कि बीघा-कट्ठा देनेवाले अधिक-से-अधिक लोग सामने आयें। ग्रामदान के धरती पर उतरने के लिए बीघा-कट्ठा की हवा आवश्यक है। बीघा-कट्ठा का महत्व अपने में चाहे जितना सीमित हो, उसके द्वारा जो हवा बनती है वह दूसरे कामों को संभव बनाती है।

ग्रामसभा : ग्रामसभा का गठन तब किया जाय जब बीघा-कट्ठा का वितरण हो जाय और भूमिहीन ग्राम-कोष में शरीक होने के लिए तैयार हो जायँ। कुछ इने-गिने लोगों को लेकर किसी तरह ग्रामसभा की संख्या बढ़ाने की कोशिश हर्गिज न की जाय।

क्षेत्र में मालिक-मजदूर-सवाद का *वातावरण जितना अधिक बनेगा ग्राम*सभा बनाने में उतनी अधिक सुविधा होगी।

भूमिहीन या गरीब अपने छोटे गाँवों की ग्रामसभा बनाना चाहें तो उन्हें प्रोत्साहित करना चाहिए। इससे उनमें आत्म-विश्वास आयेगा, और वे अपने हितों की रक्षा के लिए संगठित प्रयत्न कर सकेंगे।

ग्रामस्वराज्य क्या प्राप्ति और क्या पुष्टि, अब जो भी काम किया जाय उसकी भूमिका "ग्रामस्वराज्य" की रखी *जाय। हमारा जोर "गाँव के लिए ग्राम*दान" से आगे बढ़कर "ग्रामस्वराज्य के लिए ग्रामदान" पर होना चाहिए। जब तक ग्रामस्वराज्य का चित्र लोगों के सामने नहीं आयेगा तब तक ग्रामदान की सार्थकता प्रकट नहीं होगी, और पुरुषार्थ की प्रेरणा भी नहीं मिलेगी। ऊँची प्रेरणा का स्रोत दर्शन में होता है, आंदोलन में होता है, मात्र कार्यक्रम में नहीं होता। ग्रामदान कार्यक्रम है, आंदोलन ग्रामस्वराज्य है, सर्वोदय दर्शन है।

उत्साही व्यक्ति : यह ठीक है कि ७५-५१ की शर्तें पर ही ग्रामदान माना जाय, यद्यपि कुछ मित्र भूमि-सम्बन्धी शर्तें अनावश्यक मानते हैं, फिर भी यह सवाल रह *जाता है कि अगर किसी गाँव में* थोड़े ही लोग ग्रामदान में शरीक होते हैं तो क्या वे ७५-५१ के लिए रुके रहें? वे क्या करें? इस तरह उत्साही व्यक्तियों को छोड़ते जाना आंदोलन की दृष्टि से उचित नहीं मालूम होता।

कुल भूमि का बीसवाँ भाग : इस संबंध में एक बात यह है कि बीघा-कट्ठा का सांकेतिक महत्व चाहे जितना हो—निःसंदेह बहुत है—पर उससे कुछ खास भूमि भूमिवानों के हाथ से निकलकर भूमिहीनों के हाथ में नहीं पहुँचती। बीघा-कट्ठा का महत्व इसमें है कि भूमि एक-एक हाथ से निकले और दूसरे के हाथ में जाय। इस दृष्टि से यह तत्काल सोचने की जरूरत है कि हम जल्द-से-जल्द इस स्थिति में कैसे पहुँचेंगे कि गाँव की कुल खेती योग्य भूमि का बीसवाँ भाग भूमिहीन को मिले। सांकेतिक कार्यक्रमों का समय अगर जा चुका नहीं है, तो तेजी के साथ जा रहा है। अब भूमिहीन संकेतों और संकल्पों से संतुष्ट नहीं होगा, उसे ठोस सिद्धि चाहिए।

भूमि-सम्बन्धी कुछ अन्य व्यावहारिक प्रश्न भी हैं। एक है प्राप्त भूमि का वितरण। दाता को अधिकार है कि वह अपनी भूमि चाहे जिस आदाता को दे, लेकिन क्या इसका यह अर्थ भी है कि दो-दो, चार-चार कट्ठा भूमि इनाम के तौर पर बाँटी जायँ? इस प्रश्न पर हर क्षेत्र की परिस्थिति के अनुसार निर्णय होना चाहिए।

एक प्रश्न दूसरा यह है कि मालिक की जो *भूमि पड़ोस के गाँव में है—कई* बार उसकी अधिकांश भूमि पड़ोस के गाँव में ही होती है—वह कैसे निकले? इस कठिनाई को दूर करने का एक उपाय यह हो सकता है कि भूमि निकालने के लिए गाँव की जगह प्रखंड को इकाई माना जाय।

कुछ सुझाव

(१) जिस किसी राज्य या जिले में पुष्टि का काम हाथ में लिया जाय उसमें प्रयोग-क्षेत्रों को जोड़नेवाली राज्य-स्तरीय एक समिति, *जिसे ग्रामस्वराज्य समिति* कह सकते हैं, बनायी जाय। उसमें प्रमुखता

उनको मिलनी चाहिए जो प्रत्यक्ष रूप से काम में लगे हुए हों। इसी आधार पर जिला और क्षेत्र की समितियाँ भी बनायी जानी चाहिए।

(२) पुष्टि के काम को जिलो पर छोड़ना व्यवहारिक नहीं है। कठिनाई यह है कि ऐसे जिले बहुत कम हैं जिनमें इतनी शक्ति है कि वे पुष्टि का काम संभाल सकें। स्थानीय अभिक्रम और पुरुषार्थ, स्वावलम्बन के विचार को पूरे तौर पर मानते हुए भी, परिस्थिति का तकाजा है कि बिहार में, और उसी तरह सभी जगह कुछ योग्य, प्रशिक्षित, ग्रामस्वराज्य के लिए समर्पित, उद्बुद्ध, साथियो का 'केडर' तैयार किया जाय। ये साथी प्रयोग-क्षेत्रो में समस्याओ के बीच 'ग्रामदान के प्रयोग के लिए तीन वर्ष गड़कर बैठ सकें।' वरिष्ठ व्यक्ति उनके साथ जुड़े और उन्हें अपने अनुभव और प्रभाव का बल दें।

(३) शिविरो और ग्राम-गोष्ठियो का कार्यक्रम तेजी के साथ चलाया जाय। इनमें ग्रामस्वराज्य तथा उसके ६ तत्व अच्छी तरह समझाये जायँ।

(४) तरुण शांतिसेना और आचार्यकुल के काम पर विशेष ध्यान दिया जाय। नया खून इन्हीं स्रोतों से मिलेगा।

(५) ग्रामस्वराज्य का विचार अभी नहीं के बराबर फैला है। तात्कालिक दृष्टि से तथा सामाजिक-आर्थिक-नैतिक समस्याओं के अनुबन्ध में, व्यावहारिक दृष्टि से ग्रामस्वराज्य के विचार को पत्रिका-पैम्फलेट-पुस्तिका के द्वारा प्रस्तुत करने का प्रयत्न बड़े पैमाने पर करने की जरूरत है। हमारे प्रकाशन और पत्रिका की पूरी शक्ति इस दिशा में लगनी चाहिए। इसके अलावा 'सर्वोदय प्रेस सर्विस' को हिन्दी और अंग्रेजी दोनों में खूब मजबूत करना चाहिए ताकि ग्रामस्वराज्य का विचार विविध रूपों में समाज के सामने सतत आता रहे। भूमि, शिक्षण तथा हिंसा, इन तीन समस्याओ का सुव्यवस्थित अध्ययन हो, और इन प्रश्नों पर लोकशिक्षण की योजना बनायी जाय।

(६) बिहार में तथा अन्य राज्यो में भी, देहाती क्षेत्रो में काम करनेवाली कई बड़ी संस्थाएँ और केन्द्र हैं। इनके पास, खेती की भूमि है, कार्यकर्त्ता हैं, साधन हैं। इनको आंदोलन के संदर्भ में अपना 'रोल' तय करना चाहिए। अगर ग्रामदान-मूलक ग्रामस्वराज्य इन्हें स्वीकार हो तो इनका निम्नलिखित 'रोल' हो सकता है

(क) शोषण मुक्त खेती और उद्योग का प्रयोग। एक भाग मजदूर को मिले, इससे शुरुआत की जा सकती है।

(ख) ग्राम-शांतिसेना के युवको की वैचारिक पुष्टि की जाय। इन्हें 'सोशल इंजीनियरिंग' तथा तकनीकी हुनर में प्रशिक्षण दिया जाय। यह काम शिविर-पद्धति से हो।

(ग) खेती-केन्द्रित श्रमशाला, जिसमें गरीब बच्चो की कमाई-पढ़ाई साथ-साथ हो सके। शुरू करने के लिए पूँजी के रूप में बाहरी सहायता आवश्यक होगी।

(घ) सामर्थ्य के अनुसार क्षेत्र की समस्याओ का प्रारंभिक अध्ययन।

(ङ) एक क्षेत्र में पुष्टि का सघन प्रयोग।

बिहार के बाहर : बीकानेर

बिहार के बाहर पुष्टि का कुछ बड़े पैमाने पर सुनियोजित कार्य राजस्थान के बीकानेर जिले के अलावा और कहीं हो रहा है, इसकी सूचना मुझे नहीं है। साधनो के हो जाने से इस अधिवेशन के बाद कई जगह काम शुरू हो सकेगा, ऐसी आशा है। लेकिन यह जरूरी है कि काम शुरू करने से पहले कार्य, कर्ता, कोष— इन तीनों पहलुओं पर अच्छी तरह सोच-विचार कर लिया जाय। प्राप्ति में जो पद्धति अपनायी गयी उससे भिन्न पद्धति पुष्टि में अपनानी पड़ेगी। पुष्टि में काम की मात्रा भले ही कम हो, किन्तु उसका 'इम्पैक्ट' अधिक होना चाहिए। इस वक्त सबसे बड़ा प्रश्न जल्द-से-जल्द लोक-मानस को मोड़ देने का है। अगर वह मुड़ गया तो काम होते देर नहीं लगेगी। लेकिन प्रश्न यह है कि उसे मोड़ कैसे दिया जाय? ४ ब्लाकों और ५२९ गाँवों के बीकानेर जिले में शुरुआत अच्छी हुई है, उसका जिलादान हो चुका है। बाद के काम के लिए कार्यकर्त्ता और सहयोगियो का एक शिविर २४, २५ अगस्त को हुआ था। २६ ता० से टोलियाँ बीकानेर ब्लाक में लगनेवाली थी। अक्तूबर के अंत तक चारो ब्लाको में ग्रामसभाएँ बना लेने का निर्णय शिविर में हुआ था।

अक्तूबर में वहाँ पंचायती राज के चुनाव होने को है। शिविर की राय थी कि सरकार पंचायतो का चुनाव न करावे, और ग्रामसभाओ को काम करने का अवसर दे। अगर चुनाव कराने का सरकारी हठ कायम रहता है तो ग्रामसभाएँ चुनाव में भाग लें। यह शिविर का सुझाव था जिसकी पुष्टि ग्रामसभाएँ बन जाने के बाद उनके ब्लाक-सम्मेलनो में होगी।

बीकानेर में समर्थ और सक्रिय खादी संस्थाएँ हैं। "खादी-मन्दिर" संस्था सतत के साथ ग्रामस्वराज्य के काम में लगी हुई है। जिले में भूदान की १ लाख २६ हजार एकड़ भूमि है। प्राकृतिक और सामाजिक परिवेश को जड़ से बदलनेवाली राजस्थान नहर बीकानेर की रेगिस्तानी धरती में प्रवेश कर चुकी है। वहाँ की कर्मठ जनता ने राज-दरबार की कुचालें तो देखी है, लेकिन नये जमाने की दलीय राजनीति के कुचक्र नहीं देखे हैं। वह ग्रामस्वराज्य की भाषा को समझती है, और आगे बढ़कर कुछ करने को भी तैयार है। नहर का पानी, भूदान की भूमि, ऊन की भेड़, और दूध की गाय, और इनके साथ कुछ समर्पित साथी . इतनी अनुकूलताओं के होते हुए बीकानेर ग्रामस्वराज्य और खेती-औद्योगिक विकास का एक नमूना बन सकता है। ये अनुकूलताएँ पूरे जोधपुर डिविजन में हैं, लेकिन दूसरे क्षेत्रों में अभी ग्रामदान का ठोस काम होना →

बाकी है।

बीकानेर में नहर के साथ-साथ शहरी उपनिवेशवाद गरीबों की जमीन हड़पने के लिए घुस रहा है। ग्रामसभा-प्रखंडसभा-जिलासभा का पहला काम है कि संगठित लोक-शक्ति से इस उपनिवेशवाद का मुकाबिला करे और पानी के प्रसाद को घर-घर पहुँचाने की कोशिश करे। यह प्रश्न तात्कालिक भी है, और ग्रामस्वराज्य की दृढ़ बुनियाद की दृष्टि से स्थायी भी।

अन्य क्षेत्रों में

(१) उ० प्र० में पुष्टि का काम अभी नहीं शुरू हुआ है। बलिया में काम शुरू हुआ था और धीरे-धीरे जड़ भी पकड़ रहा था, लेकिन साथियों के अपनी-अपनी संस्था में वापस चले जाने के कारण रुक गया। बलिया अत्यन्त कठिन जिला है। वहाँ के लोक-मानस में हमारे आंदोलन को जो स्थान मिल चुका था उसका लाभ नहीं लिया जा सका। सारे काम का इस तरह बीच में ही खंडित हो जाना मेरी नजर में एक ट्रेजेडी है। बलिया को पूर्वी उ० प्र० का प्रवेश-द्वार माना गया था, लेकिन दरवाजे तक पहुँचकर हमें वापस आना पड़ा।

देवरिया में आचार्यकुल का जो वातावरण बना है वह पुष्टि के लिए छोर बन सकता है। लेकिन स्थायी कार्यकर्ता के अभाव में बिखरे सूत्रों को जोड़नेवाला कोई माध्यम अभी नहीं बन पाया है।

उत्तरप्रदेश में ग्रामस्वराज्य-समिति के गठन की बात सोची जा रही है। संभवतः शीघ्र गठित हो जायेगी।

(२) राजस्थान में पुष्टि के सम्बन्ध में एक से अधिक गोष्ठियाँ हुई हैं, और एक समिति भी बन गयी है। उसकी पहली बैठक बीकानेर में २४ सितम्बर को हुई थी।

(३) मध्यप्रदेश में पुष्टि का काम शीघ्र शुरू होगा, ऐसी सूचना है। उड़ीसा, महाराष्ट्र, तमिलनाड के मित्र भी अब पुष्टि की योजना बना रहे हैं।

अंत में

मेरा सुझाव है कि पुष्टि के काम को एक पुष्ट अभियान का रूप देने की जरूरत है। नये अनुभवों को सार्वदेशिक स्तर पर "पूल" करने की पद्धति निकालनी चाहिए। कहाँ क्या हो रहा है, इसकी सूचना तक न मिले, जब कि अनेक साथी अपनी-अपनी जगह अपने-अपने ढंग से काम कर रहे हैं, तो इसे आंदोलन के लिए एक संकट ही मानना चाहिए। आंदोलन में अखिल भारतीयता के दर्शन की अपेक्षा है।

पुष्टि का अर्थ इतना ही नहीं है कि ग्रामदान के कागज तैयार हो जायँ, कुछ जमीन बँट जाय, और ग्रामसभा बन जाय। पुष्टि के अन्तर्गत शिक्षण, संगठन और विकास के तीन पहलू हैं। इस दृष्टि से विभिन्न राज्यों में पुष्टि के लिए हम जो प्रयोग-क्षेत्र लें—कम-से-कम १०० क्षेत्र तो लेने ही चाहिए—उनमें खादी-ग्रामोद्योग, ग्राम-शांतिसेना, तरुण-शांतिसेना, आचार्यकुल, खेती-सिंचाई, शिक्षण और संगठन, सबको सामने रखकर समग्र योजना बनायी जा सकती है। कार्यान्वयन के लिए हर स्तर पर ग्रामस्वराज्य-समितियाँ और उसकी उप-समितियाँ गठित की जा सकती हैं। हमारे काम का बाहरी रूप-रंग चाहे जो हो, उसकी एक ही कसौटी है जिसकी घोषणा विनोबाजी ने की है: 'सरकार-मुक्त गाँव, दल-मुक्त सरकार।' यह मंत्र जहाँ चरितार्थ न होता हो, वहाँ ग्रामदानमूलक ग्रामस्वराज्य नहीं है, और चाहे जो हो।

इस मंत्र को चरितार्थ करनेवाले मनुष्य कहाँ हैं? बंगाल को सर्वोदय के शहीद चाहिए, बिहार को सिपाही चाहिए, दूसरी जगहों का काम अभी साथियों से चल जायगा। शहीद हों, सिपाही हों, साथी हों, ग्रामस्वराज्य को सबकी जरूरत है।

सेवाग्राम, —राममूर्ति
२ अक्तूबर, '७०

मुजफ्फरपुर की डाक

रोहुआ एवं प्रह्लादपुर पंचायत में कार्यारम्भ

रोहुआ एवं प्रह्लादपुर पंचायत में क्रमशः २१ एवं २२ सितम्बर को आमसभा में श्री जयप्रकाश नारायण के भाषण से कार्यारम्भ किया गया। इन पंचायतों में, दो टोलियों में बँटकर कार्यकर्ता काम कर रहे हैं। ज्ञातव्य है कि रोहुआ पंचायत में कम्यूनिस्ट पार्टी के द्वारा चलाये जानेवाले भूमि-आन्दोलन के सिलसिले में बराबर तनाव बना रहा है। इसी पंचायत में इस प्रखण्ड के बड़े भूमिपति श्री बैद्यनाथ प्रसाद सिंह हैं, जिनके पास, कहा जाता है कि, करीब दो हजार बीघा जमीन है। नक्सलवादी घटनाओं के सिलसिले में अधिक चर्चा रही है। इसी पंचायत में आज से दो वर्ष पूर्व फसल लूटने तथा एक सिपाही तथा चौकीदार को मारने की घटना घटी। इसके बाद ही, नक्सलवादी घटनाओं का क्रम शुरू हुआ। इस पंचायत के गंगापुर गाँव में स्थानीय नक्सलवादी नेता राजकिशोर सिंह का घर है, जो अभी तक गिरफ्तार नहीं किये जा सके हैं। इनकी गिरफ्तारी के लिए इनाम की भी घोषणा सरकार द्वारा की गयी है। उनके अन्य साथी भी फरार हैं, तथा कितने तो जेलों में हैं। मुसहरी प्रखण्ड जनसंघ के भूतपूर्व अध्यक्ष स्वर्गीय रामगरीब दासजी का भी घर इसी पंचायत के तरौरा गाँव में है, जिनकी हत्या पिछले जुलाई माह में, कहा जाता है कि नक्सलवादियों ने गोली मारकर कर दी थी, तथा इसके पूर्व गंगापुर गाँव के प्रमुख किसान रघुनाथ सिंह की भी हत्या की गयी थी। आज भी इस पंचायत के कई गाँवों में सशस्त्र सिपाही अड्डा जमाये बैठे हैं तथा कइयों को व्यक्तिगत सुरक्षा के लिए सशस्त्र संरक्षक मिले हुए हैं।

ग्रामस्वराज्य-कोष का काम ३१ दिसम्बर, '७० तक बढ़ा

सेवाग्राम में प्रबन्ध समिति का निर्णय

सर्व-अधिवेशन के अवसर पर हुई ग्रामस्वराज्य-कोष समिति और प्रबन्ध-समिति की सम्मिलित बैठक में यह तय किया गया कि चूँकि कई प्रदेशों में अभी काम शुरू ही हुआ है, और वे अपने लक्ष्यांक से काफी पीछे हैं, इसलिए तथा १ करोड़ के लक्ष्य को पूरा करने के लिए ग्रामस्वराज्य-कोष संग्रह का कार्य ३१ दिसम्बर, '७० तक चालू रखा जाय। तब तक कोष-समिति और उसके केन्द्रीय कार्यालय का काम पूर्ववत् चालू रहेगा।

मुसहरी में ग्रामसभा का गठन

२२ सितम्बर को दिन भर के प्रयास के बाद रात में साढ़े सात बजे मुसहरी गाँव में सर्वसम्मत ग्रामसभा का गठन हुआ, जिसकी घोषणा भी जयप्रकाशजी की सभा में की गयी। इस अवसर पर जयप्रकाशजी ने ग्रामसभा के नव-निर्वाचित सभापति से आश्वासन प्राप्त किया कि वे पक्षमुक्त होकर ग्रामसभा का संचालन करेंगे। उन्होंने सर्वप्रथम यथाशीघ्र इस गाँव में बीघा-कट्ठा के वितरण कराने तथा कानूनी पुष्टि की कार्रवाई कराने का सुझाव नव-निर्वाचित ग्रामसभा के समक्ष रखा।

ज्ञातव्य है कि श्री सरयू दास, जो सभापति चुने गये हैं, सर्वोदय से सम्बन्धित हैं। यह गाँव करीब तीन मील में फैला हुआ है। जनसंख्या भी साढ़े तीन हजार की है। पहले कुछ ग्रामीणों का विचार हुआ कि जनसंख्या एवं फैलाव को ध्यान में रखकर इस गाँव में दो ग्रामसभाओं का गठन किया जाय, किन्तु अन्त में कुछ लोगों के विरोध के कारण एक ही ग्रामसभा का गठन किया गया। हालाँकि यह अनुभव प्राप्त करना है कि इतनी बड़ी ग्रामसभा का संचालन ठीक से हो पाता है या नहीं?

इस प्रखण्ड में अब तक मुसहरी, शरीफानगर, माधोपुर, बैरापुर, छोवहीं, मोहिनीपुर एवं मानापुर चौबे गाँव में ग्रामसभाओं का गठन हो चुका है। मानापुर चौबे गाँव की कानूनी पुष्टि भी हो गयी है, अन्य गाँव की पुष्टि की कार्रवाई जारी है।

दलमुक्त नगरपालिका की माँग

तरुण-शान्तिसेना की मुजफ्फरपुर शाखा के सैनिकों ने हाल में हुए नगरपालिका के चुनाव में मतदाता शिक्षण का महत्त्वपूर्ण काम किया। सारे नगर में २२ से २५ सितम्बर तक 'कॉर्नर मीटिंग' करके तथा पर्चे बाँटकर तरुण शान्तिसैनिकों ने मतदाताओं से निवेदन किया कि वे पार्टी, जाति, पंथ या सम्प्रदाय के नाम पर या किसी प्रकार का भय अथवा लोभ दिखाकर वोट न माँगें। मतदाताओं से भी अपील की गयी कि वे किसी लोभ या भय के दबाव में अपना मतदान नहीं करें, बल्कि पार्टी, जाति, सम्प्रदाय का ध्यान किये बिना योग्य उम्मीदवार को ही वोट दें, क्योंकि इसमें उम्मीदवारों का नहीं, उनकी किस्मत का फैसला होनेवाला है। दलमुक्त नगरपालिका ही वास्तव में नागरिक सुविधाओं का सही-सही प्रबन्ध कर सकती है। तरुणों की अपील का प्रभाव नागरिकों पर बहुत ही अच्छा पड़ा। नगर के इतिहास में यह पहला अवसर था कि इस तरह खुलकर किसी जमात ने चुनाव के समय मतदान का सही-सही उपयोग करने के लिए असरदार ढंग से अपनी बात कही। इस काम में तरुण शान्तिसैनिकों का जिला सर्वोदय मंडल, गांधी शान्ति प्रतिष्ठान, आइना राष्ट्रीय मंच, तथा इस विचार को माननेवाले प्रमुख नागरिकों का यथाशक्ति सहयोग मिला।

ग्रामस्वराज्य-कोष

मुजफ्फरपुर नगर में घर-घर जाकर ग्रामस्वराज्य-कोष संग्रह करने की योजना बनी थी, उसके अनुसार जिला सर्वोदय मण्डल के अध्यक्ष श्री बदरी नारायण सिंह के नेतृत्व में जिला भूदान-यज्ञ कार्यालय, जिला सर्वोदय मण्डल कार्यालय के कार्यकर्ता एवं कुछ खादी-कार्यकर्ताओं द्वारा घर-घर जाकर कूपन के द्वारा कोष-संग्रह किया जा रहा है। यह टोली मुसहरी गाँव में जयप्रकाशजी द्वारा किये जा रहे कार्यों से सम्बन्धित पर्चों भी वितरित करती है। कार्यालय में काम करनेवाले कार्यकर्ताओं ने प्रथम बार शहर में चन्दा माँगने का सफलतापूर्वक प्रयास किया है। कोष के लिए सरकारी कार्यालयों से भी सम्पर्क किया जा रहा है। इस कार्य में नगर के सर्वोदय-कार्यकर्ता श्री गयाप्रसाद साहुजी का सहयोग सराहनीय है। बाढ़ एवं सूखा के एकसाथ आक्रमण के कारण जिले के ग्रामीण क्षेत्रों में कोष को अधिक रकम प्राप्त होने की सम्भावना नहीं है, फिर भी अनुमान है कि शहर एवं देहाती क्षेत्र मिलाकर करीब तीस हजार रुपये का कोष-संग्रह अवश्य हो जायगा।

—'जयप्रकाश शिविर समाचार' से

भूल-सुधार

'भूदान-यज्ञ' के दिनांक २१-९-७० के अंक २१ में पृष्ठ ८०७ पर 'मुजफ्फरपुर की डाक' स्तम्भ में प्रकाशित समाचार तरुण शान्तिसेना का मोर्चा की पाँचवीं पंक्ति को इस प्रकार पढ़ें, "मुजफ्फरपुर नगर में तरुण-शान्तिसैनिकों ने स्थानीय लंगट सिंह कालेज शाखा को आर्थिक दृष्टि से आत्मनिर्भर बनाने के लिए ११ सितम्बर को एक 'वेराइटी शो' का आयोजन किया।

सेवाग्राम के सान्निध्य में : अहिंसक क्रांति के संदर्भ का समूह-चिंतन

सेवाग्राम-अधिवेशन को अगर एक वाक्य में व्यक्त करना हो तो मैं कहूँगा कि 'यह आन्दोलन की पुष्टि का अधिवेशन था।' विचार की दृष्टि से अत्यन्त व्यापक, आकार की दृष्टि से अतिशय विशाल ग्रामदान-आन्दोलन अब तक अपुष्ट रहने के कारण ही भारत और दुनिया की नजरों के सामने जिस स्पष्टता के साथ प्रस्तुत होना चाहिए था, वह अभी तक नहीं हो सका है। इसकी चिंता है हमारे मन में, और इसके कारण कुछ क्षोभ है हमारे मित्रों के मन में।

सेवाग्राम-अधिवेशन उस समय हुआ जब हम व्यापकता और विशालता को पुष्ट करने की अनिवार्यता अत्यन्त तीव्रता से महसूस करने लगे थे। आन्दोलन जिस बिन्दु पर पहुँचा है उससे आगे बढ़ने-बढ़ाने के लिए पुष्टि का ठोस कदम उठाना अब टाला नहीं जा सकता था। जे० पी० के क्रान्तिकारी कदम ने आन्दोलन में लगे खिलाड़ियों-साथियों के अन्दर उधर बढ़ने के लिए एक बेचैनी-सी भर दी थी।

इसके साथ ही पूना में प्रबन्ध-समिति द्वारा किये गये निर्णयानुसार ग्रामस्वराज्य-कोष-संग्रह-अभियान की उपलब्धि का समर्पण भी होना था। यह उपलब्धि इस बात का भी इजहार करनेवाली थी कि भारत की जनता इस आन्दोलन को कितना चाहती है, इससे *कितनी आशा और* सहानुभूति रखती है; अपेक्षा का अनुमान तो हमें अक्सर ही लोगों द्वारा व्यक्त आक्रोशों और आरोपों से होता रहता है।

अव्यक्त अनुभूतियाँ

२ अक्तूबर, '७० को प्रत्यक्ष सेवाग्राम कुटी और अप्रत्यक्ष बापू के सान्निध्य में, प्रेरक और स्फूर्तिमय वातावरण में ग्रामस्वराज्य-कोष की *उपलब्धि जे० पी०* द्वारा विनोबा को समर्पित की गयी। करीब ३ हजार लोगों की उपस्थिति में यह समर्पण स्वीकार करने के बाद बाबा ने कार्यकर्ताओं के लिए जो दो संदेश दिये, (पढ़ें : बाबा का पूरा भाषण इसी अंक में) उनके सन्दर्भ-भावों की गम्भीरता को व्यक्त करने में शब्द असमर्थ हो गये थे। बाबा की आँखों से बहनेवाले आँसुओं ने जो अनुभूति वहाँ उपस्थित लोगों में पैदा की; काश, उन अनुभूतियों को पाठकों तक पहुँचा सकने का कोई माध्यम उपलब्ध होता!

कोष के आँकड़े तो अपेक्षा से अधिक थे ही, और उसके लिए बाबा ने १०० में १०५ अंक दिये ही, लेकिन गुजरात के राज्यपाल, मध्यप्रदेश के मुख्यमंत्री, महाराष्ट्र विधान-सभा के अध्यक्ष, कार्यकारी *मुख्य मंत्री जैसे राजसत्ता के प्रतिनिधियों*, सैकड़ों कार्यकर्ताओं और उपस्थित अन्य *हजारों सर्वसामान्य लोगों ने बाबा को* अपनी जो मूक आदरांजलि दी, उसे किन अंकों में समाया जाय? सर्वोदय-परिवार के बुजुर्ग श्री रविशंकर महाराज द्वारा ५ दिनों में कातकर भेजी गयी उन ४५ सूत-गुण्डियों का मूल्य कौन आँक सकता है? और गुजरात के ही साथियों द्वारा एकत्र की गयी ७५०० सूत-गुण्डियों के तार-तार में बाबा के लिए जो प्यार समाहित था, वह भला कैसे मुखर हो सकता है? ...ऐसे ही अवसरों पर शब्द से अधिक अशब्द की शक्ति का बोध होता है!

× × ×

सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष एस० जगन्नाथन् ने बाबा द्वारा कन्याकुमारी में ग्रामस्वराज्य की स्थापना होने तक चलते रहने के संकल्प की याद दिलाते हुए कहा, *'बाबा का संकल्प अब हम सबका संकल्प* बन चुका है।'... निःसंदेह अगर ऐसा नहीं *हुआ होता*, तो इस आन्दोलन ने देश में अपने भविष्य के प्रति एक जन-आशा का *व्यापक संचार कैसे* किया होता? बाबा की सूक्ष्म किन्तु तीव्र गतिशीलता हमारी *स्थूल क्रियाओं में जड़ता नहीं* आने देगी, और हम चलते रहेंगे, चलते रहेंगे, जब *तक कि ग्रामस्वराज्य का तंत्र अपने जय-* जगत् के मंत्र के साथ धरती पर साकार *नहीं होता। श्री जगन्नाथन्‌जी* द्वारा दिलायी गयी उस याद ने हमारे मन में *यह संकल्प-भाव शुरू में ही भर दिया।*

इसीलिए तो इस बार का अधिवेशन किसी औपचारिक *प्रस्ताव से मुक्त* रहकर भी दृढ़ संकल्प के समूह-भाव पैदा कर सका।

'परीक्षा में बैठा हूँ'

२ अक्तूबर को सायं साढ़े तीन बजे सर्वोदय-परिवार के दिवंगत सदस्यों—*श्रीमती आशादेवी आर्यनायकम्*, सुश्री मनुबहन गांधी, श्री छगनलाल गांधी, श्री पारनेरकरजी को *मौन श्रद्धांजलि अर्पित* करने के साथ ही मुख्य अधिवेशन की कार्यवाही शुरू हुई। मंत्री ने अपना निवेदन प्रस्तुत किया (पढ़ें : इसी अंक में पूरा निवेदन)। अध्यक्ष महोदय ने चेतावनी दी कि 'हमें आन्दोलन को गतिमान् भी बनाना है और शक्तिमान् भी। अब ग्रामदान की पुष्टि के बिना हमारा आन्दोलन पुष्ट नहीं होगा।' इसके बाद जे० पी० ने *मुसहरी प्रखण्ड में पुष्टि के लिए बैठने* की अपनी पृष्ठभूमि को स्पष्ट करते हुए अब तक के अनुभवों का विस्तृत विवरण प्रस्तुत किया। आपने कहा कि, 'भाषण देने की प्रेरणा इस समय हो नहीं रही है। *अब तक जो हम कहते आ रहे थे*, उसकी परीक्षा का वक्त आ गया है। आज उस परीक्षा में मैं बैठा हूँ।'...इस आन्दोलन की जो आलोचनाएँ होती हैं, उनको पढ़-सुनकर ऐसा लगता है कि इसकी सही भूमिका लोगों की पकड़ में आती नहीं। 'शायद तब तक न आवे, जब तक उन्हें कुछ कृति का दर्शन न हो।' जे० पी० ने *मुसहरी की महत्ता* को स्पष्ट करते हुए कहा कि 'सर्वोदय के नक्शे पर मुसहरी प्रखण्ड का नाम पहली बार नहीं आया है। वहाँ की जटिल समस्याओं को

लेकर कई बार चर्चाएँ हुई हैं, काफी बातें सामने आयी हैं। इसलिए हमारा 'अप्रोच', जो हिंसावादी कर रहे हैं, उसके विरोध में नहीं है। हमारा काम करने का एक अहिंसक रास्ता है, और उस आधार पर हम वहाँ काम कर रहे हैं।'

गाँव में बैठने के लिए जाने पर अपने मन की पहली प्रतिक्रिया जाहिर करते हुए जे० पी० ने कहा, 'रेडियो में सुनते थे, नेताओं की बातें सुनते थे, अखबारों में पढ़ते थे, लेकिन प्रत्यक्ष देखने पर यह अनुभव हुआ कि वे बातें कितनी बेबुनियादी, कितनी हवाई होती हैं। ·· प्रगतिशील कानूनों की बहुत चर्चा होती है। लेकिन कुछ ही कानून ऐसे हैं जिन पर अगर बहुत सख्ती से कोशिश की जाय तो अमल हो सकता है, लेकिन कुछ तो ऐसे हैं जिन पर अमल हो ही नहीं सकता।'

अब तक के हुए कामों का लेखा-जोखा और उसकी जन-प्रतिक्रिया का जिक्र करते हुए जे० पी० ने कहा, 'कुछ परिवर्तन तो हुआ ही है। हमारे जाने के पहले आमतौर से बस्ल, मालो साल सलाम आदि की चर्चाएँ होती थीं, लेकिन अब चर्चा का विषय बदल गया है। अब चर्चा हमारे काम की होती है—पक्ष में या विपक्ष में।'

'अब तक जो भाषण देते थे, वे कार्य का विवरण पेश कर रहे थे।'... तो इस बदले हुए वातावरण में कोरी भाषणबाजी को अधिक अवसर कैसे मिल पाता? एक सज्जन ने टिप्पणी की, "अहिंसक क्रांति के अग्रिम मोर्चे पर सेनापति लड़ता रहा है।" ···'आज इस सिद्धान्त को प्रत्यक्ष समझने का अवसर मिला।

'राम बोले ना बोले त डोले ना'

अधिवेशन के दूसरे दिन आन्दोलन के हर पहलू पर खुली चर्चाएँ हुईं। आन्दोलन का काम करनेवाले साथियों की अनुभवसिद्ध बातें और ठोस सुझाव, आन्दोलन से अपेक्षा रखनेवाले शुभचिन्तकों, मित्रों की आशा-निराशा और आक्षेपयुक्त टिप्पणियाँ, तरुण साथियों की बौखलाहट, और चुनौतीभरे आक्रोश की फिजाँ दिन-भर बनी रही। आमतौर पर सकोच और झिझक में दबे रहनेवाले मन के असन्तोष को भी इस बार मंच पर मुखरित होने का अवसर मिला। संस्थाओं के वैभव और साथियों को सामान्य-जन से दूर ले जानेवाले परिवेश की टीकाएँ हुईं। गांधी का काम करनेवालों द्वारा गांधी की सादगी और मितव्ययिता को भूल जाने और प्रतिगामी स्वरूप अपना लेने की शिकायतें हुईं।

लेकिन असन्तोष और ऊब के इन स्वरों में सबसे अधिक सशक्त स्वर था आन्दोलन को पुष्ट करने का। वक्ताओं की अभिव्यक्तियों में और जितनी भी भिन्नताएँ रही हों, आन्दोलन को पुष्ट करने के लिए जे० पी० की तरह प्रत्यक्ष समाज में गड़कर ग्रामस्वराज्य के शक्ति-केन्द्र विकसित करने की आवश्यकता पर सबका जोर था। इस पहलू पर सभी स्वर एक थे।

मंच पर जाने पहचाने पुराने चेहरे तो बोलने के लिए आये ही, इस बार कुछ नये चेहरे भी दिखाई दिये। नयों में प्रतिनिधित्व था ग्रामदानी गाँव की ग्रामसभा के एक सभापति का भी, जिनकी भोजपुरी बोली के ये वाक्य आज भी कानों में गूँज रहे हैं 'लड़ाई के मोर्चा अब खुली गईल बा। सोचे के मोका नइखे। परीक्षा के समय आ गइल बा। अब त मैदान में कूदला के जरूरत बा ···राम बोले ना, बोले त डोले ना।' इसी तरह नयी पीढ़ी के तरुणों की आवाज भी प्रतिध्वनित हुई 'ग्रामस्वराज्य की स्थापना के लिए जे० पी० की हड्डी गिरेगी, तो हम भी पीछे नहीं रहनेवाले हैं, हम भी इसके लिए अपने तन का एक-एक कतरा खून गुला डालेंगे।' अगर इस आन्दोलन के लिए समर्पित ऐसे जिन्दा शहीदों की संख्या हजार तक भी पहुँच जाय, तो इस आन्दोलन के 'इवेंट' को परख करनेवालों को कुछ दूसरा नजारा देखने को मिले··· मिलेगा, अब इसमें कोई शक नहीं।

पुष्टि के काम में इस बात पर तो जोर दिया ही गया कि प्रमुख व्यक्ति क्षेत्र में गड़ें, साथ ही इस बात पर भी जोर था कि अब प्राप्ति और पुष्टि को एकसाथ जोड़ा जाय। जिस गाँव का ग्रामदान हो, उसकी घोषणा तभी की जाय, जब गाँव की कुल भूमि के बीसवें भाग का कम-से-कम आधा भूमिहीनों में बँट जाय।

पूरे दिन की चर्चाओं को समेटते हुए आचार्य राममूर्ति ने अपने भाषण में कहा कि पुष्टि के तीन पहलू हैं, १—शिक्षण, २—संगठन, ३—विकास। प्रक्रिया से गाँव को विद्रोही बनाने की आवश्यकता स्पष्ट करते हुए आपने कहा कि 'गाँव को सरकारमुक्त और सरकार को दलमुक्त करने का लक्ष्य सामने रखकर ही हमें पुष्टि का काम करना है।' आपने कहा कि, 'पुष्टि का कार्यक्रम प्रदक्षिणा से शुरू होता है। ·· प्रगतिशील मालिक, चेतनाशील भूमिहीन और भावनाशील युवक, इन तीन शक्तियों को हमें आन्दोलन का वाहक बनाना है, तब हमारी क्रान्ति के लिए उपयुक्त शक्ति प्रकट होगी।'

शाम को बाबा ने इस ओर सबका ध्यान खींचा कि अब तक कही गयी बातों का सारतत्त्व ले लिया जाय, और फिर सर्वसम्मति से राय कायम करके काम किया जाय।

अजेय बनने का मंत्र

कार्यकर्ताओं में अध्ययन की भारी कमी है, इस ओर स्पष्ट संकेत करते हुए उन्होंने अध्ययन के दो विषय सुझाये, (१) भारत का आध्यात्मिक साहित्य, (२) विश्व के आधुनिक विचार, जिन्होंने विज्ञान को अपना आधार बनाया है। बाबा ने कार्यकर्ताओं को अजेय होने के दो मंत्र दिये प्रतिदिन १ घंटा, महीने १ दिन, अनिवार्य १ महीना अध्ययन लगायें तो यह जमात हार नहीं खायेगी अध्ययन में कमी रही तो टिक नहीं सकते।'

श्री जगन्नाथनजी ने कहा, 'विनोबा के सूक्ष्मयोग और जे० पी० के कर्मयोग

का अपूर्व संगम इस आन्दोलन में हुआ है। ये दोनों हमारे शक्तिकेन्द्र (पावर-स्टेशन्स) हैं। इनसे प्रेरणा, शक्ति लेकर हमें काम में जुट जाना है।'

मंत्री श्री बग साहब ने आह्वान किया कि आन्दोलन के अखिल भारतीय मोर्चे बनाने के लिए हम यहाँ से क्षेत्र में गड़ने का संकल्प लेकर लौटें।

आखिरी दिन, यानी ४ अक्तूबर, '७० को, शान्तिसेना, आचार्यकुल और लोकसेवक की निष्ठाओं के सम्बन्ध में चर्चाएँ हुईं।

शान्तिसेना द्वारा देशभर में हुए कार्यों की जानकारी शान्तिसेना मण्डल की ओर से श्री अमरनाथ भाई ने प्रस्तुत की। इसके बाद शान्तिसेना के विभिन्न पहलुओं पर विचार व्यक्त किये गये। रिपोर्टिंग के बाद दादा धर्माधिकारी ने अपने प्रवचन में शान्तिसेना और शान्तिसैनिक की क्रांतिकारी भूमिका स्पष्ट की। (पढ़ें : भाषण के मुद्दे इसी अंक में।)

श्री सुब्बाराव ने तरुण-शान्तिसेना के लिए स्थूल कार्यक्रम के रूप में चम्बल घाटी के बेहड़ों में १० हजार एकड़ भूमि को समतल करने की भारी योजना सरकार से लेने का सुझाव दिया, ताकि देश में हम तरुण-शान्तिसेना को एक रचनात्मक तरुण-शक्ति के रूप में प्रस्तुत कर सकें।

'...तो आन्तरिक जगत् का दारिद्रीकरण होगा'

इस चर्चा का समारोप करते हुए श्री जयप्रकाश नारायण ने कहा, 'समाज-जीवन के रक्त में जहर भर गया है, इसलिए शाखाएँ कतरने से काम नहीं चलेगा, इसे जड़मूल से निकालना पड़ेगा। इसके लिए धैर्य के साथ इसमें जीवन खपाना होगा। 'मेरी हड्डी गिरेगी', यह मेरा अहंकार या गर्वोक्ति नहीं, इस क्रांति की माँग है। लोग कहते हैं कि रक्त-क्रांति जल्दी होती है, लेकिन मैं ऐसा नहीं मानता। हिंसावाले क्रान्ति की दौड़ में हमसे आगे निकल जायेंगे, यह मानना गलत है, भ्रम है।' आपने कहा, 'चाहे पश्चिम के शांतिवादी हों—ईश्वरवादी या अनीश्वरवादी, या पूरब के हों, बिना आध्यात्मिक आधार के कोई क्रांति नहीं नहीं हो सकती। हमें इसके बिना एकात्म का बोध ही नहीं होगा। ... सिर्फ भौतिक प्रेरणा ही रही तो आन्तरिक जगत् का दारिद्रीकरण होगा।'

दोपहर बाद की अंतिम बैठक में आचार्यकुल की रिपोर्ट प्रस्तुत करते हुए केन्द्रीय समिति के संयोजक श्री वंशीधरजी ने बताया कि अब तक आचार्यकुल के १००० सदस्य बन चुके हैं।

लोकसेवकों के निष्ठा-पत्र में व्यापकता की दृष्टि से यह संशोधन लाया गया कि '*अपनी आजीविका के लिए लगनेवाले* समय और चिन्तन को छोड़कर बचा हुआ समय और चिंतन' सर्वोदय-आन्दोलन में लगानेवाला भी लोकसेवक हो सकता है।

अपने आखिरी भाषण में बाबा ने 'विनोदेन समापयेत्' किया।

कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि यह अधिवेशन आन्दोलन का विशेष महत्वपूर्ण अधिवेशन था। जहाँ एक ओर **पुष्टिकार्य के लिए क्षेत्र में गड़ने का सामूहिक स्वर गुंजित हुआ**, वहीं बिहार के सहरसा जिले में पुष्टि के अति-तूफान के प्रयोग का भी निर्णय हुआ। सूक्ष्म में प्रविष्ठ, लेकिन 'तूफान के बीच ज्वालामुखी बनकर बैठने' की आकांक्षा रखनेवाले बाबा को इसके बिना संतोष कैसे होता? पिछले तूफान में झकझोरे गये बिहार के साथियों को आखिर में उन्होंने इसके लिए तैयार करके ही छोड़ा।

उपाधिधारी : निरुपाधिक भूमिका में

अधिवेशनों-सम्मेलनों में 'सर्वोदय में भी नेताओं और कार्यकर्ताओं के बीच की दूरी पर आश्चर्य और दुःख व्यक्त करनेवाले *भावनाशील मित्रों, हितैषियों'* आदि को एक सुखद दर्शन हुआ कि वह दूरी इस बार कहीं नहीं थी। परिवार के उन बुजुर्गों को छोड़कर, जिनके लिए स्वास्थ्य की दृष्टि से *उत्तमोत्तम व्यवस्था करने में* किसीको भी एतराज नहीं होगा, बाकी सब लोग सामान्य साथी की भूमिका में रहे। किसी राज्य के राज्यपाल, मुख्यमंत्री, विधान-सभा के अध्यक्ष आदि विशिष्ट उपाधिधारी लोगों को जिन्होंने लाइन में खड़े होकर भोजनालय की तरफ सरकते या अपने साथ बैठकर साधारण भोजन करते देखा, *सामान्य कार्यकर्ताओं, नागरिकों* के साथ बैठकर अधिवेशन की कार्यवाही में भाग लेते देखा, उन्हें इस बार आयोजकों या सर्वोदयवालों को इस पहलू पर बोलने का अवसर नहीं मिल पाया।

जैसा कि जे० पी० ने शुरू में ही कहा था, 'मैं परीक्षा में बैठा हूँ!' हम अंत में यह भाव व्यक्त करना चाहते हैं कि जे० पी० ही नहीं, अहिंसक क्रांति के लिए *समर्पित 'हम सब लोग परीक्षा में बैठे हैं।* बाबा का 'ग्रामस्वराज्य न होने तक चलते रहने का संकल्प हम सबका संकल्प है ही।'

बापू की स्मृतियों की छाँव में ग्रामस्वराज्य के लिए अपना जीवन खपा देने की जो प्रेरणा हम सबने पायी है, वह जब तक तन में बल है, और हमारे अन्तर में *चेतना है, तब तक क्षीण न हो, यही* हार्दिक अभिलाषा है। —रामचन्द्र राही

(पृष्ठ २३ का शेषांश)

स्कूल तथा अवकाशकालीन स्कूल शिक्षा के स्तर को ऊँचा उठाने की जिम्मेदारी भी ले लेंगे। और साथ ही कुछ काम और कुछ पढ़ाई तथा अवकाशकालीन पाठ्यक्रमों के द्वारा शिक्षा का व्यापक रूप से जनता में प्रचार भी होगा। शिक्षा का लोकप्रचार करनेवाले स्कूल चूँकि कुछ काम और कुछ पढ़ाईवाले स्कूल होंगे, इसलिए वे अपने व्यय का पूरा भाग या एक बड़ा भाग स्वयं वहन कर सकेंगे; और 'हर योग्य व्यक्ति पढ़ा सकता है' के सिद्धान्त के अनुसार स्थानीय अध्यापक भी ढूँढ़ सकेंगे।

शिक्षा तथा श्रम के मेल को अमल में लाये जाने से पहले एक संघर्ष चलाना *पड़ेगा और यह संघर्ष दीर्घकालीन होगा।* क्यों? क्योंकि यह एक ऐसी क्रांति है, जिससे शिक्षा-कार्य की हजारों साल पुरानी परम्पराएँ टूट जायेंगी।—संतोष भारतीय

जयप्रकाश नारायण

आपने अपनी जीवन-यात्रा—क्रान्ति-यात्रा—के ६८ वर्ष ११ अक्तूबर, '७० को पूरे किये। इस अवसर पर अहिंसक-क्रान्ति के हम सिपाहियों का हार्दिक अभिनन्दन स्वीकार करें।

''तो देश में नया जीवन दिखाई देगा'

''आपके यहां जयप्रकाश हैं। उनके विचारों का मूल्य आपको समझ में नहीं आ रहा है। केवल दस हजार सच्चे, तेजस्वी जवान उनकी राह पर चलें, तो देश में नया जीवन दिखाई दे। शायद जयप्रकाश को खोने के बाद देर से ही उनका मूल्य आप लोगों की समझ में आयेगा।'' सुप्रसिद्ध ब्रिटिश पत्रकार जॉन पॉपवर्थ ने अपनी भारत-यात्रा के दौरान बातचीत के सिलसिले में एक भारतीय युवक से ये उद्‌गार व्यक्त किये।

भूदान-यज्ञ १९-१०-'७० लाइसेन्स नं० ए ३४ [पहले से डाक-व्यय दिये बिना भेजने की स्वीकृति प्राप्त] रजिस्टर्ड नं० एल. १६

सर्वोदय-आन्दोलन की सम्भावनाएँ : एक विदेशी की नजर में

[इंग्लैंड के सुप्रसिद्ध दैनिक "दी गार्डियन" में ११ अगस्त को हमारे देश के "भूमि हड़प" आन्दोलन के बारे में एक अग्रलेख लिखा गया था। उसके संदर्भ में एक पाठक डा० ऑस्टर गार्ड ने उस पत्र के संपादक को एक पत्र लिखा था, जो उक्त अखबार के १३ अगस्त के अंक में प्रकाशित किया गया था। वही पत्र हम यहाँ पर दे रहे हैं।

डा० ऑस्टर गार्ड बर्मिंगहम यूनिवर्सिटी में "पालिटिकल साइंस" के व्याख्याता है। इतनी दूर रहनेवाले एक जागरूक विदेशी नागरिक को भारत के सर्वोदय-आन्दोलन के बारे में कितनी जानकारी और समझदारी है, तथा वे इस आन्दोलन से कैसी आशा रखते हैं, यह इस पत्र से प्रकट होगा।—सं०]

संपादकजी,

"दी गार्डियन"

आपने अपने अग्रलेख में लिखा है कि 'भारत के वामपक्षी लोगों ने अभी-अभी जो "जमीन हड़प" आन्दोलन शुरू किया है, वह श्रीमती इन्दिरा गांधी की कांग्रेस-सरकार के लिए एक "चुनौती" के रूप में है। वह तो है ही, परन्तु इसके अलावा वह विनोबा और जयप्रकाश नारायण के नेतृत्व में चलनेवाले-सर्वोदय-आन्दोलन के लिए भी एक चुनौती है।'

सर्वोदय-आन्दोलन सन् १९५१ से शान्ति और प्रेमपूर्ण समझौते के द्वारा भारत के ग्रामीण क्षेत्रों की लगभग पाँचवें हिस्से की आबादी को स्पर्श करनेवाली भूमिहीनता की समस्या का निराकरण करने की कोशिश कर रहा है। चूँकि अभी यह आन्दोलन सम्पूर्ण रूप से सफल हुआ है ऐसा नहीं कह सकते, फिर भी उसकी आलोचना-निंदा करनेवाले बार-बार जैसा कहते रहते हैं, उससे बहुत अधिक व्यावहारिक सिद्धि इस आन्दोलन ने प्राप्त की है। दस लाख एकड़ से भी अधिक भूदान की जमीन को करीब पाँच लाख भूमिहीन किसानों में वितरित किया गया है। इसके अतिरिक्त लगभग डेढ़ लाख गाँवों में भूमि के मालिकों ने ग्रामदान के लिए अपनी सम्मति जाहिर की है। ग्रामदान बहुत हद तक एक मूलग्रामी कार्यक्रम है। उसमें जमीन का ग्रामीकरण (राष्ट्रीयकरण नहीं) होता है।

भारत में जितने भी 'राजनीतिक आन्दोलन चलते हैं, उनमें सर्वोदय-आन्दोलन ने ही अपने समाज-परिवर्तन के कार्यक्रम में भूमि-समस्या के निराकरण को हमेशा केन्द्र-स्थान पर रखा है। उसको सफलता कम मिली है, उसके कई कारण हैं, परन्तु उनमें से एक कारण तो यह है कि दुनिया भर के समाचार-पत्रों में हिंसक क्रांति के समाचार तो बहुत बड़े-बड़े शीर्षकों के साथ दिये जाते हैं, परन्तु अहिंसक क्रांति की ओर उनका खास ध्यान ही नहीं जाता है और उसके सौम्य और शांतिमय समाचारों में उनको कुछ छापने लायक नहीं लगता। आपका 'दी गार्डियन' भी इससे मुक्त नहीं है।

हम ऐसी आशा रख सकते हैं कि भारत के और दुनियाँ भर के जागरूक लोकमत की मदद से सर्वोदय-आन्दोलन नक्सलवादी और उनके जैसे अन्य लोगों के द्वारा दी गयी चुनौतियों का सामना करने के लिए समर्थ बनेगा।
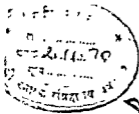
—डा० ऑस्टर गार्ड

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पै०), विदेश में २२ रु०; या २५ शिलिंग या ३ डालर।
इस अंक का मूल्य ४० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं मनोहर प्रेस, वाराणसी में मुद्रित

सभ्यता का गुण

सज्जनता, सदाचरण, विनम्रता इन गुणों पर आज इतना कम जोर दिया जाता है कि हमारे परिवर्तन-रटन में इनका कोई स्थान ही दिखाई नहीं देता।...

विनय और नम्रता अहिंसा की भावना की निशानी है, जबकि अविनय और उद्दण्डता हिंसा की भावना की सूचक है। इसलिए असहयोगी को कभी अविनयी नहीं होना चाहिए। फिर भी असहयोगियों पर लगातार आरोप लगाया जाता है कि वे असभ्य और उद्धत होते हैं। इस आरोप में बहुत कुछ सचाई है। हम मानने लगते हैं कि असहयोगी बनकर हमने मानो कोई बहुत बड़ा काम कर डाला है। यह ऐसे ही है जैसे कोई व्यक्ति अपना कर्ज उतारकर मान बैठे कि वह बदले का अधिकारी है।......

जहाँ अहं है, वहाँ अविनय और उद्धतता है। जहाँ अहं नहीं है, वहाँ हमें सभ्यता के साथ स्वाभिमान की भावना मिलेगी। अहंभाव रखनेवाले को अपने शरीर का बड़ा घमंड होता है। स्वाभिमानी व्यक्ति आत्मा को पहचानता है, उसीका सदा ध्यान रखता है और उसकी उपलब्धि के लिए अपने शरीर का बलिदान करने को तैयार रहता है। जो अपने स्वाभिमान को मूल्यवान मानता है, वह दूसरों के साथ मित्रतापूर्ण व्यवहार करता है, क्योंकि वह दूसरे के स्वाभिमान को उतना ही मूल्यवान समझता है, जितना अपने को। वह सबमें अपने को और अपने में सबको देखता है और अपने को दूसरे के स्थान पर रखता है। अहंकारी अपने को दूसरों से अलग रखता है और बाकी की दुनिया से अपने को ऊँचा मानकर दूसरों का काजी बनता है और उसके ही फलस्वरूप दुनिया को अपने हल्केपन को नापने का अवसर देता है।

अहिंसक असहयोगी को सभ्यता को एक अलग गुण मानकर उसके विकास का प्रयत्न करना चाहिए। इसके महत्त्व में ही व्यक्ति अथवा राष्ट्र की संस्कृति का मानदण्ड है। असहयोगी को साफ-साफ अनुभव कर लेना चाहिए कि असभ्यता पशुता का दूसरा नाम है और उसका पूर्णतया त्याग करना चाहिए।

नवजीवन (गुजराती)
१८ दिसम्बर, १९२१

—मो० क० गांधी

• तरुण बनाम वृद्ध • तरुण शान्ति सेना • मनुष्य का विक्रय

हमारे नेता और हिंसक क्रान्ति

अभी हाल में हमारे तीन बड़े नेताओं ने तीन बड़े स्थानों पर देश की स्थिति पर अपने विचार प्रकट किये हैं। प्रधानमंत्रीजी ने राजस्थान में अपने दल के कार्यकर्ताओं के सामने बोलते हुए कहा है कि अगर विषमता का प्रश्न हल न हुआ, और समाजवाद न आया, तो देश में हिंसक क्रांति टाली नहीं जा सकती। दूसरे बड़े नेता वित्त-मंत्री श्री चह्वाण दक्षिण में बोल रहे थे। वहाँ उन्होंने कहा कि इस वक्त भारत में वही स्थिति है जो महाभारत के समय थी। कौरव और पांडव आमने-सामने खड़े हैं। कौरव कौन हैं? धनी लोग। पांडव कौन हैं? गरीब लोग। अगर पांडवों को न्याय न मिला तो महाभारत होगा। तीसरा भाषण था दिल्ली-सरकार के 'कम्पनी मामलों' के मंत्री का अहमदाबाद में, जिसमें उन्होंने कहा कि आर्थिक सुधार केवल कानून से नहीं किये जा सकते, उनके लिए शक्तिशाली जन-आन्दोलन की जरूरत है। उन्होंने यह नहीं बताया कि उस जन-आंदोलन की प्रेरणाएँ क्या होंगी, उसके मूल्य क्या होंगे, और उसका नेतृत्व कौन करेगा।

ये तीनों भाषण ऐसे लोगों के द्वारा हुए हैं जिनके हाथ में सत्ता है, अधिकार हैं। प्रधानमंत्री के हाथ में अधिकारों की कमी नहीं है, बल्कि यह कहा जा रहा है कि अधिकार जरूरत से ज्यादा हैं। फिर क्या कारण है कि उन्हें और उनके साथी मन्त्रियों को इस तरह की बातें कहनी पड़ रही हैं? ऐसी बातें कहकर हमारे नेता हमें क्या बताना चाहते हैं? क्या वे मात्र वास्तविक परिस्थिति की जानकारी करा रहे हैं? चेतावनी दे रहे हैं? अपने सरकारी कामों के लिए गैर-सरकारी वातावरण बना रहे हैं? या, भय दिखाकर अगले चुनाव में अपने लिए वोट माँग रहे हैं? क्या वे चाहते हैं कि हम मान लें कि सच्चे समाजवादी अकेले वे ही हैं, और अगर हम उन्हें वोट नहीं देंगे तो समाजवाद नहीं आयेगा, और अगर समाजवाद नहीं आयेगा तो खूनी क्रान्ति होगी?

मालूम नहीं हमारे नेताओं के मन में खूनी क्रान्ति की क्या कल्पना है? अगर यह तय हो कि आज के नेतृत्व के विफल हो जाने पर उत्तराधिकार खूनी क्रान्तिकारियों के हाथ में जायगा तो भारत में माओ और माओवाद का नारा लगानेवाले क्या गलत काम कर रहे हैं? उनके बारे में ज्यादा-से-ज्यादा यही कहा जा सकता है कि आज के नेतृत्व को जितना मौका दिया जा चुका उससे ज्यादा मौका वे देने को तैयार नहीं हुए, और 'माओ हमारा चेयरमैन' मानकर उन्होंने अपना काम शुरू कर दिया।

मौजूदा नेतृत्व में भरोसा नक्सालवादियों ने ही नहीं खोया है। देश के अधिकांश लोगों के मन से उनके लिए बचा-बचाया भरोसा निकलता जा रहा है। क्यों न निकले? चुनाव होते हैं, और लोग वोट देने चले जाते हैं, इससे यह सिद्ध नहीं होता कि लोगों को आज के नेतृत्व में, उनकी नीयत और शक्ति में, भरोसा रह गया है। भरोसा नहीं रह गया है। रह गयी है इतनी बात कि सामान्य नागरिक असहाय है। वह खोया हुआ है, उसे रास्ता नहीं सूझ रहा है। वह तेईस वर्षों से देख रहा है कि हमारे ये एम० एल० ए०, एम० पी०, कितने छोटे हैं और देश के सवाल कितने बड़े हैं। वे इतने छोटे हैं कि सरकार की शक्ति को समाज की भलाई के लिए इस्तेमाल भी नहीं करना जानते; शायद चाहते भी नहीं। उन्होंने अपनी भलाई को देश की भलाई और तिकड़म की राजनीति मान लिया है। उनके हाथों में पड़कर सत्ता भी शक्तिहीन हो गयी है। फाइलों की दुनिया बनानेवाली नौकरशाही, और उचित-अनुचित कुछ भी करके कुर्सियों से चिपकनेवाली नेताशाही से कभी समाजवाद आयेगा और हर नागरिक को नया जीवन जीने का अवसर मिलेगा, यह विश्वास अब इस देश के जन-मानस में नहीं रह गया है। जनता जानती है कि एक दल और दूसरे दल में गुणों का अन्तर नहीं है। उसने देख लिया है कि पंचायत के मुखिया से लेकर पार्लियामेण्ट के सदस्य और प्रधानमन्त्री तक सब एक ही साँचे में ढले हुए हैं। कानून बनें या न बनें, नेताओं के लिए कोई कानून नहीं है, और गरीब के लिए कानून का होना-न-होना बराबर है।

इस देश की इससे बढ़कर दूसरी क्या कुसेवा होगी कि हमारे नेता हमसे ऐसी बातें कहें जैसे इस देश में गांधी कभी रहा ही नहीं, और देश में नेताओं और उनके तिकड़मों से अलग जनता की कोई शक्ति बन ही नहीं सकती। जनता की जिस शक्ति से हम स्वतन्त्र हुए थे उसकी हमारे नेता हमें याद भी नहीं दिलाना चाहते, उसे जगाने और संगठित करने की तो बात ही अलग है। उन्होंने मान लिया है, और यह सही भी है, कि उस शक्ति की प्रेरणा देना उनके बस की बात नहीं है। लेकिन हमें चाहिए वही शक्ति। वह शक्ति जनता अपने अंदर से पैदा करेगी। वह जन-आन्दोलन से आयेगी। वह आयेगी तभी आज की राजनीति और उसके सारे काले कारनामे समाप्त होंगे।

लेकिन आज के नेतृत्व का विकल्प खूनी आतंक क्यों हो? आतंक से क्रान्ति कभी होती नहीं। आतंक से कतल की सत्ता हो सकती है, क्रान्ति नहीं। कतल की सत्ता नया समाज नहीं बना सकती। हमें नया समाज चाहिए, न कि एक निकम्मी सत्ता के स्थान पर दूसरी नृशंस सत्ता।

'गांधी या माओ?', यह प्रश्न दिल्ली की चर्चाओं में फैशनेबुल हो रहा है। अभी गांधी-जयंती के अवसर पर एक बड़े अंग्रेजी साप्ताहिक ने मुख पृष्ठ पर गांधी और माओ के चित्र के साथ यह शीर्षक छापा, और अन्दर इसी विषय पर लेख। माओ का नाम लिया जाता है किंतु यह कोशिश नहीं की जाती कि पाठकों को बताया जाय कि गांधी ने भारतीय समस्याओं का क्या भारतीय समाधान सुझाया था, तथा आज की राजनीति भारत की समस्याओं से कितनी दूर है।

हमारे नेता यह तो कह देते हैं : 'हम नहीं तो माओ'। लेकिन वे यह क्यों नहीं कहते : 'हम नहीं तो गांधी'। क्या वे यह कहना चाहते हैं कि वे असफल होंगे तो उनके साथ-साथ गांधी भी→

तरुण तथा वृद्ध-शक्तियों का टकराव नहीं, संयोग की बात सोचनी चाहिए

—विनोबाजी के उद्गार—

बाबा का क्षेत्र-संन्यास

अभी बाबा बोलेगा। प्रथम अपने विषय में। बाबा को अन्दर से आदेश मिला है कि क्षेत्र संन्यास करे। क्षेत्र-संन्यास यानी अपना क्षेत्र सीमित करे। तो मेरे लिए यह हुआ है कि ब्रह्मविद्या मन्दिर का जो क्षेत्र है उतने में ही बाबा रहेगा। यानी सेवाग्राम वगैरह भी नहीं जाऊँगा। अभी महाराष्ट्र वालों का शिविर यहाँ होनेवाला है तो उसके लिए जाऊँगा। लेकिन यह सारा दो-चार दिन का जो मामला है वह समाप्त होने के बाद इस विषय का अमल होगा। यह मैं इसलिए आरम्भ में कह रहा हूँ कि कल भाऊसाहब रानडे आये थे। वह बहुत बड़े कार्यकर्ता हैं। उन्होंने कहा कि इस बार कोरापुट में बहुत अच्छा काम किया है, तो बाबा को कोरापुट जाना चाहिए। तो मैंने कहा कि आपका यह वाक्य मेरी नोटबुक में नोट होगा। तो उससे उन्होंने यह समझा होगा कि आज नहीं तो कल बाबा जरूर वहाँ जायेगा। तो जरूर जायेगा वहाँ, भौतिक तरीके से नहीं जायेगा, आध्यात्मिक तरीके से जायेगा। और बाबा ऐसा मानता है कि आध्यात्मिक तरीके से पहुँचने में अधिक मदद पहुँचेगी उन लोगों को, शारीरिक तौर से मिलने की अपेक्षा। अब यह कब तक के लिए सकता है? यह बाबा का अपना मामला है नहीं। ऐसा अभी बाबा ने कहा कि अन्दर से आदेश मिला, फिर दूसरा आदेश मिलने तक यह चलेगा। बाबा की मनःस्थिति से काम करना हो तो बाबा को अत्यन्त

तीव्रता अगर किसी स्थान की है तो बिहार और बंगाल की है। हरेक प्रान्त में आवश्यकताएँ हैं, हरेक की अपनी-अपनी समस्याएँ हैं और किसी स्थान में बाबा पहुँचेगा तो काम को कुछ-न-कुछ बढ़ावा मिलेगा, इसमें शक नहीं। लेकिन बाबा ने यह छोड़ दिया है और बाबा चाहता है कि समूह-शक्ति से, जनसेवकत्व से ही काम हो। लेकिन अगर उसमें अनवार ही करना हो तो वह बंगाल या बिहार, यह मेरे मन में बैठ गया है।

साथियों को बिहार में कार्य करने का आदेश

निर्मला मेरे पास आयी थी। वह कहती थी कि पत्रकारों की माँग है कि ६-७ दिन निर्मला वहाँ दे, ग्रामदान के हो काम के लिए। तो मैंने कहा कि तुम्हारा उत्साह सब दूर होगा भारत में, इसमें कोई शक नहीं। तुम जहाँ जाओगी वहाँ चेतना आयेगी। लेकिन फिलहाल यहाँ पर दो-चार दिन रहना है और सीधे चली जाओ बिहार। बिहार में अपना पूरा नसीब आजमाओ। कृष्णराज भाई मेरे साथ सतत रहे हुए हैं, मुझसे अत्यन्त परिचित हैं और बहुत सूक्ष्म अध्ययन उन्होंने विचारों का किया है। उनको भी मैंने यहीं कहा है कि अपनी पूरी ताकत सहरसा में लगाओ, और मुशीला दीदी, जो ब्रह्मविद्या मन्दिर में दस साल तक थीं, उनको आदेश दिया गया कि बिहार में जाओ। उन्होंने पूछा कि कब तक के लिए है। मैंने कहा कि

'टु और डाइ' है। वहाँ जाओ और काम पूरा हो तो आ सकती हो वापिस, अगर न पूरा हो तो भगवान-मन्दिर में पहुँच जाओगी। यों कहकर के उनको भेज दिया है। वह ऐसा क्षेत्र है कि उसको चालना देने की जरूरत है।

प्राप्ति-पुष्टि के लिए निर्देश

दूसरी बात। कल भारदे साहब आये थे। वे 'स्पीकर' हैं महाराष्ट्र विधानसभा के। और 'स्पीकर' से बढ़कर बात है कि वह एकनाथ महाराज के वंशज हैं और, सिर्फ वंशज ही नहीं हैं, बल्कि एकनाथ महाराज की वृत्ति उनमें है। वह कहते थे कि प्राप्ति और पुष्टि की जो चर्चा चलती है उस पर आपको अपनी राय बतानी चाहिए, तो मैंने कहा कि कल इस सिलसिले में कुछ कहूँगा। उस बारे में मैं पहले कह चुका हूँ, जो कुछ तय करना है, यहाँ के लोग सर्वसम्मति से तय करेंगे। उसमें इतनी ही गुंजाइश रखें कि भिन्न-भिन्न प्रान्तों की कुछ भिन्न-भिन्न परिस्थिति होती है, तदनुसार कुछ फर्क किया जा सके। और, उस प्रकार का जो सर्वसम्मत निर्णय हो, तदनुसार चलें। इसलिए इससे ज्यादा कुछ कहना नहीं।

बाबा-विश्वास नहीं, आत्म-विश्वास

एक बात पहले गया जिले में, इन्हीं दिनों में, एक अखिल भारत सम्मेलन हुआ था, जिसमें बहुत-से लोग आये थे। ढेबर भाई वगैरह, बहुत सारे सर्वोदय के विचारक आये थे। और दूसरे भी सन्त-महन्त आये थे। उस समय ढेबर भाई

→मयकर माना जायगा? क्या वे और गांधी एक हैं? क्या वे कभी चाहते हैं कि यह दावा करके वे गांधी को जनता से अलग रख रहे हैं और जाने अनजाने उसे मालों की ओर ढकेल रहे हैं! यह, उनका सबसे बड़ा अपराध है कि उन्होंने गांधी को जनता से अलग रखा है— अपने स्वार्थ के लिए। शायद वह दिन दूर नहीं है जब गांधी को लोक-हृदय से दूर रखने के षड्यन्त्र का भंडा फूटेगा, और गांधी विद्रोह बनकर विधायक क्रान्ति के रूप में प्रकट होगा। मालूम नहीं उस दिन जनता आज के नेताओं को क्या कहेगा? कहीं ऐसा तो नहीं है— शायद ऐसा ही है—कि हमारे नेताओं के मन में भावों के मुकाबिले गांधी से अधिक भय हो गया है क्योंकि गांधी की दुनिया में न नेता के लिए स्थान है, न सेठ के लिए, जब कि चेहरा बदलकर दोनों मार्क्स की शरण में बने रह सकते हैं। ●

मैं कहा कि गांधीजी के जमाने में जो हमारे अन्दर आत्मविश्वास था वह दिखता नहीं। मैंने इसके उत्तर में वहाँ कहा कि गांधीजी के जमाने में हम लोगों में गांधी-विश्वास था, आत्मविश्वास नहीं था। आत्मविश्वास है कि नहीं इसकी परीक्षा तो गांधीजी के जाने के बाद हुई। गांधीजी के जाने के बाद यह पाया गया कि सब प्रकार के विश्वास हम खो बैठे! चन्द दिनों के बाद भूदान-ग्रामदान निकला और थोड़ा-थोड़ा आत्मविश्वास आने लगा। जिस विश्वास से गांधी के जमाने में हम जिस स्थिति में थे, उससे आज हम बेहतर स्थिति में हैं, जहाँ तक आत्मविश्वास से ताल्लुक है। फिर आगे क्या हुआ, बाबा की महिमा बढ़ने लगी। अगर आत्म-विश्वास की जगह बाबा-विश्वास आ जाय तो बहुत ही खतरनाक बात होगी। तो बाबा ने चौकन्ना होकर तय किया कि हम यहाँ से हटेंगे। वैसा अगर बापू करते मान लीजिए, (महापुरुषों के बारे में क्या कहना) अगर ऐसा उन्हें करने का मौका मिलता, मेरा ख्याल है, अच्छा होता। ठीक है, उनका तो जो हुआ सो हुआ। परन्तु मैंने उसमें से सावधानता से रहकर तय किया है कि जो भी हो वह गण सेवकत्व से चले। आत्मविश्वास से काम करें, बाबा-विश्वास से नहीं।

गाँव गोकुल बने

इस सिलसिले में इतना ही कहना है कि जो जमीन का मसला है वह बुनियादी तो है, बुनियादी होने पर भी बहुत निमित्तमात्र है। यह समझना चाहिए कि जमीन दान वगैरह देकर के जमीन का कोई मसला हल होनेवाला है नहीं। यह अपने मन में बिलकुल साफ होना चाहिए। यह तो केवल दिलों को जोड़ने के लिए है, *क्योंकि आज जमीन देंगे, कल देते-देते* आबादी दुगुनी हो जायेगी। उस हालत *में हमको केवल जमीन देकर काम बनेगा,* ऐसा विश्वास नहीं करना चाहिए। परन्तु *गाँव में प्रेम, सहयोग बढ़ा सकते हैं।* किसी कारण से गाँव टूटना चाहिए। जिस तरह से गोकुल में भगवान थे; सारा गोकुल एक होकर काम करता था। तो *गाँव गोकुल बने और एक होकर के काम* करे यह देखना चाहिए। पार्टी के नाम से टुकड़े बनते हैं, धर्मों के नाम से टुकड़े पड़ते हैं, पंथ के नाम से टुकड़े बनते हैं। *आज अगर जमीन के नाम से टुकड़े बनने* लगें और हत्या हो, जमीन के लिए सत्या-ग्रह हो, घेराव हो, *वर्ग-संघर्ष की कल्पना* की जाय तो गाँव का टुकड़ा बनेगा और हृदय जुड़ेगा नहीं। भले ही जमीन थोड़ी मिल जाय इस वक्त, लेकिन इससे बहुत कल्याण होगा, ऐसा मानने की जरूरत नहीं। इसलिए जो भी किया जाय, भूदान-ग्राम-दान-प्राप्ति का तरीका अपनाया जाय, उसमें यह ध्यान में रखा जाय कि गाँव पूरा एक दिल रहना चाहिए, उसको भग होना नहीं चाहिए। यह मेरी मुख्य सूचना उस सिलसिले में है।

वृद्ध बनाम तरुण

अन्त में कुछ विनोद करना चाहिए। थोड़ा-सा विनोद करूँगा आखिर में। *अपने यहाँ अन्दर-अन्दर हम लोगों में* शक्तियाँ टकरा रही हैं। एक तरुण-शक्ति, दूसरी वृद्ध-शक्ति। इन दोनों के बीच में टक्कर आ रही है, और तरुणों को लग रहा है कि वृद्ध जोरों से आगे नहीं बढ़ रहे हैं और आगे बढ़ने देते भी नहीं हैं। वृद्ध क्रांति की कल्पना छोड़ करके अपने घर-गृहस्थी में लगे हुए हैं ऐसा उनको लग रहा है। इसका मुझे आश्चर्य नहीं और इसका मुझे दुःख भी नहीं। बल्कि दुःख नहीं, इतना कहना बहुत कम है, इसको मुझे खुशी भी है। मैंने कई दफा कहा कि आगे की जो पीढ़ी होती है, बच्चे हमारे, पिता के कन्धे पर बैठे हुए रहते हैं। इस वास्ते पिता जितनी दूर देखता है उससे बच्चे ज्यादा दूर देखते हैं। लेकिन यह मेरी बात सुनकर हमारे मित्र *गोपालराव, जो अब परलोकवासी हो गये,* बोले, विनोबा आपकी बात तो ठीक है, *अच्छी मिसाल दी आपने और मिसाल* देने में आप प्रवीण भी हैं, लेकिन वह जो बच्चा पिता के कन्धे पर बैठा है, वह अगर अन्धा हो तो क्या देखेगा? वह बच्चा ज्यादा देखेगा यह सही है, बशर्ते वह आँखवाला हो।' इस वास्ते जो तरुण वह हमेशा दूर तक देखता ही है ऐसी बात नहीं। अगर आँखवाला हो तो देखेगा यह जरा सोचना चाहिए। गीता में उत्तम कार्यकर्ता, जिसको उन्होंने सात्विक कर्ता नाम दिया है, उसके दो विशेषण हैं—धृति और उत्साह। उत्तम जो कार्यकर्ता है उसमें धृति चाहिए यानी धीरज चाहिए। धीरज चाहिए और उत्साह चाहिए। *कई जगह गया और देखा 'तरुण उत्साही मण्डल'।* तो वहाँ व्याख्यान देने का जब *मौका आया, बोला कि यह 'तरुण उत्साही मंडल' क्या कहते हो, तरुण तो उत्साही होते ही हैं। इस वास्ते 'तरुण धृति मंडल'* ऐसा बनाओ और 'वृद्ध उत्साही मंडल' *होना चाहिए, वृद्ध कम उत्साही होते हैं।* इस वास्ते वृद्धों के जो मंडल बनें वे उत्साही मंडल हों। तो होश और जोश अपने उद्देश में—तरुणों में होना है जोश और वृद्धों में होता है होश, और दोनों में दोनों चाहिए तब काम बनता है। इस वास्ते जवानों को मैं कहूँगा कि तुम्हारा जो उत्साह है वह मुझे पसन्द है, प्रिय है। लेकिन थोड़ा भी सबरित रखा करो और वृद्धों से जो मिलता है उसे हासिल करके फिर आगे बढ़ो। भूमिति के सिद्धान्त की खोज करने निकले हो तो अच्छी बात है। यूक्लिड ने जितना पहले कर लिया है उतना समझ लो और उसके बाद फिर जो सिद्धान्त खोजना है खोजो। बाकी यूक्लिड को देखे बिना भूमिति की खोज शुरू करेंगे तो ठीक नहीं। इस वास्ते पुराने वृद्धों के पास जो है उसे पहले ले लो, और लेने के बाद फिर आगे बढ़ो।

महाभारत में यह यक्ष प्रश्न है। युधि-ष्ठिर को यक्ष सवाल पूछा है। उन सवालों का जवाब युधिष्ठिर दे रहे हैं। प्रश्न पूछा—'ज्ञान कैसे होता है?' तो *महाराज उत्तर दे रहे हैं, 'ज्ञान कैसे प्राप्त* होता है—ज्ञानन्तु वृद्ध सेवया, वृद्ध की

सेवा से ज्ञान होता है।' इससे थोड़ी वृद्धों की सेवा करना, जितना भी ज्ञान है निकाल लेना, अपने पास कर लेना और फिर आगे उसको बढ़ाना। और फिर वह आगे जाने नहीं देंगे तो उनके सामने स्पष्ट बात करना जैसे लक्ष्मण ने किया है परशुराम के सामने। तुलसीदासजी ने बहुत विस्तार के साथ वर्णन किया है, लक्ष्मण-परशुराम सवाद। खूब लक्ष्मण परशुराम को सुना रहा है। रामजी तटस्थ सुन रहे हैं, चुपचाप बैठे हैं, फिर बीच में पड़कर के उन्होंने लक्ष्मण को जरा रोक लिया है और तब काम बना। परशुराम और लक्ष्मण का सवाद जो इतना विस्तार के साथ, जिसमें बहुत ज्यादा आवेश और परशुराम की कुछ अवहेलना भी है वह सब, तुलसीदासजी ने क्यों कराया? क्योंकि दो पीढ़ियों का जो अन्तर है वह ध्यान में आये। पुरानी पीढ़ी है परशुराम, नयी पीढ़ी है लक्ष्मण। लक्ष्मण तो होता ही है आगे जानेवाला, अच्छी बात है।

परन्तु एक दफे क्या हुआ? महाभारत युद्ध। द्रोणाचार्य खूब सहार कर रहा है पाण्डवों की सेना का। और ये लोग रात में शिविर में बैठे हैं— भगवान कृष्ण बैठे हैं, युधिष्ठिर बैठे हैं, अर्जुन बैठा है - चर्चा करते हैं, क्या हो रहा है, कितना सहार हो रहा है, तो उस मौके पर युधिष्ठिर बोले, 'अरे अर्जुन तेरे गांडीव की क्या कीमत रही, जबकि पांडवों का सहार हो रहा है और तेरा गांडीव कुछ भी नहीं कर पा रहा। क्या तेरे गांडीव की साख?' तो एकदम अर्जुन उनको मारने के लिए उठ खड़ा हुआ। क्यों? क्योंकि उसकी प्रतिज्ञा थी कि जो उसके गांडीव की निन्दा करेगा वह उसकी हत्या करेगा। अब युधिष्ठिर महाराज ने निन्दा की तो उठ खड़ा हो गया। तो भगवान ने हाथ रोक लिया। यह तो बिलकुल बेवकूफ दिखता है, ज्ञान नहीं है, और स्वाभाविक है कि ज्ञान नहीं हो। आश्चर्य की बात नहीं। वृद्धों की सेवा की नहीं, इसलिए बेवकूफ रहा। यह कहकर के उसे रोका, और कहा कि अरे तेरे गांडीव की जो उसने निन्दा की वह तेरा उत्साह जगाने के लिए किया, वह तेरी मानहानि के लिए नहीं किया। तो इस वास्ते जो तेरी प्रतिज्ञा थी, गांडीव-निन्दावाली, वह यहाँ लागू नहीं होती।

अगर तरुण लोग आगे बढ़ना चाहते हैं, तो बाबा उनको कभी रोकता नहीं। एक दफा, हमारे सतीश की बात। सतीश-कुमार और उनके साथी मेनन, दोनों बाबा से मिलने आये, असम में मैं था। वह थोड़ा डरते-डरते आये होंगे, क्योंकि उन्होंने सोचा था दुनिया की पद-यात्रा करना विश्व-शान्ति के लिए। बाबा की इजाजत मांगने आये थे, आशीर्वाद लेने आये थे, सकल्प तो कर ही चुके थे। तो बाबा था अपनी धुन में। ग्रामदान के सिवाय दूसरी बात नहीं। लेकिन उनकी सारी बात सुन ली और तुरन्त कह दिया कि आप लोगों का विचार अच्छा है, आप जरूर जाओ। यह नहीं कहा कि ग्रामदान के काम में लगो। बाबा मनुष्य का विकास देखता है, उसका विकास किस प्रकार से होगा, यह देखता है। लोगों को अपने काम में लगाना यह वृत्ति बाबा की है नहीं।

तरुणों और वृद्धों का सयोग हो

एक बात और मैं समझाऊँ—वृद्धों के आशीर्वाद की। बहुत बड़ी कहानी है। महाभारतीय युद्ध शुरू हो रहा है। पहला दिन। प्रातःकाल में युधिष्ठिर महाराज उठे और पदयात्रा शुरू की उन्होंने। पद-यात्रा करके वे शत्रु के कैम्प में गये भीष्म के पास। प्रणाम किया, साष्टांग दंडवत प्रणाम, और बोले, आशीर्वाद मांगने के लिए आया।' भीष्म बोले, 'धन्य है तू। क्या आशीर्वाद मांगता है?' वे बोले, 'आपसे कुछ जानना चाहता हूँ।' बोले, 'क्या जानना चाहता है?' 'आपकी मृत्यु कैसे होगी, यह जानना चाहता हूँ'। अब आप लोग यह बताइये, दुनिया में कोई ऐसा महाकाव्य मिलेगा, जिसमें इस किस्म की कहानी होगी? यह तो महाभारत ही है। और आश्चर्य की बात, की उन्होंने भी प्रसन्न होकर कहा कि मेरी मृत्यु इसी युक्ति से हो सकती है। यों कहके युक्ति बतायी और आगे देखा गया कि उसी युक्ति से उनकी मृत्यु की जा सकी। बाकी अर्जुन किसी दूसरी युक्ति से उनको नहीं मार सका। कवि ने उपमा दी, दोनों आमने-सामने लड़ रहे हैं। एक तरफ परम वृद्ध भीष्म और दूसरा तरुण-युवा अर्जुन एक-दूसरे के खिलाफ, और बाणवृष्टि चल रही है, अर्जुन फीका पड़ रहा है। और फिर भीष्म ने जो मृत्यु की युक्ति बतायी थी, उसका अमल किया गया और भीष्म की मृत्यु की गयी। तो मैं तरुणों को कहूँगा कि वे चाहते हैं कि सर्व सेवा संघ वाले वृद्ध हैं, उनके पास जायें और उनको नमस्कार करें और पूछें कि उनकी मृत्यु कैसे होगी। अभी सतीश ने पूछा कि सर्व सेवा संघ जमीन क्यों रखता है, वह क्यों न बाँट दे? तो इसके लिए सर्व सेवा सघवालों के पास जाना चाहिए, जनता के पास जाने की आवश्यकता है नहीं। उनको जाकर प्रणाम करना और उनसे पूछना कि क्यों इतनी जमीन रखते हो, उसका हिसाब बताओ। वे हिसाब बतायेंगे। अगर वह जमीन ठीक ही कारण से रखी गयी है तो आप का समाधान हो जायेगा और अगर ठीक कारण नहीं है या कुछ ठीक कारण है कुछ ठीक कारण नहीं तो बात तय करके जमीन बाँटी भी जायेगी। यह मैंने आपके सामने इसलिए रखा कि वृद्ध और तरुणों का किस प्रकार सयोग होना चाहिए।

अन्त में एक वाक्य बताकर मैं समाप्त करूँगा। मुझे तो मालूम नहीं, मैंने सुना है, पार्लियामेंट पर शायद यह वाक्य लिख रखा है। न सा सभा यत्र न सन्ति वृद्धा, जहाँ वृद्ध नहीं हैं, वहाँ सभा ही नहीं है। इसलिए सभा में वृद्धों का होना जरूरी है। तरुणों की सभा हो, तरुणों की चर्चा हो, लेकिन वे ठीक ढंग से चर्चा करें, कुछ नियमन का अंकुश चाहिए तो वह वृद्धों के हाथ में उतना अंकुश रखा गया। जय जगत्।

सेवाग्राम, ४-१०-'७०
संघ अधिवेशन का अन्तिम भाषण

सेवा से ज्ञान होता है।' इससे थोड़ी वृद्धों की सेवा करना, जितना भी ज्ञान है निकाल लेना, अपने हजम कर लेना और फिर आगे उसको बढ़ाना। और फिर वह आगे आने नहीं देंगे तो उनके सामने स्पष्ट बात करना जैसे लक्ष्मण ने किया है परशुराम के सामने। तुलसीदासजी ने बहुत विस्तार के साथ वर्णन किया है, लक्ष्मण-परशुराम संवाद। खूब लक्ष्मण परशुराम को सुना रहा है। रामजी तटस्थ सुन रहे हैं, चुपचाप बैठे हैं, फिर बीच में पड़कर के उन्होंने लक्ष्मण को जरा रोक लिया है और तब काम बना। परशुराम और लक्ष्मण का संवाद जो इतना विस्तार के साथ, जिसमें बहुत ज्यादा आवेश और परशुराम की कुछ अवहेलना भी है वह सब, तुलसीदासजी ने क्यों बताया? क्योंकि दो पीढ़ियों का जो अन्तर है वह ध्यान में आवे। पुरानी पीढ़ी है परशुराम, नयी पीढ़ी है लक्ष्मण। लक्ष्मण तो होना ही है आगे जानेवाला, अच्छी बात है।

परन्तु एक दफे क्या हुआ? महाभारत युद्ध। द्रोणाचार्य खूब संहार कर रहा है पाण्डवों की सेना का। और ये लोग रात में शिविर में बैठे हैं— भगवान कृष्ण बैठे हैं, युधिष्ठिर बैठे हैं, अर्जुन बैठा है - चर्चा करते हैं, क्या हो रहा है, कितना संहार हो रहा है, तो उस मौके पर युधिष्ठिर बोले, 'अरे अर्जुन तेरे गाण्डीव की क्या कीमत रही, जबकि पाण्डवों का संहार हो रहा है और तेरा गाण्डीव कुछ भी नहीं कर पा रहा। क्या तेरे गाण्डीव की साख?' तो एकदम अर्जुन उनको मारने के लिए उठ खड़ा हुआ। क्यों? क्योंकि उसकी प्रतिज्ञा थी कि जो उसके गाण्डीव की निन्दा करेगा वह उसको खत्म करेगा। अब युधिष्ठिर महाराज ने निन्दा की तो उठ खड़ा हो गया। तो भगवान ने हाथ रोक लिया। यह तो बिलकुल बेवकूफ दिखता है, ज्ञान नहीं है, और स्वाभाविक है कि ज्ञान नहीं हो। आश्चर्य की बात नहीं। वृद्धों की सेवा की नहीं, इसलिए बेवकूफ रहा। यह कहकर के उसे रोका, और कहा कि अरे तेरे गाण्डीव की जो उसने निन्दा की वह तेरा उत्साह जगाने के लिए किया, वह तेरी मानहानि के लिए नहीं किया। तो इस वास्ते जो तेरी प्रतिज्ञा थी, गाण्डीव-निन्दावाली, वह यहाँ लागू नहीं होती।

अगर तरुण लोग आगे बढ़ना चाहते हैं, तो बाबा उनको कभी रोकता नहीं। एक दफा, हमारे सतीश की बात। सतीशकुमार और उनके साथी मेनन, दोनों बाबा से मिलने आये, असम में मैं था। वह थोड़ा डरते-डरते आये होंगे, क्योंकि उन्होंने सोचा था दुनिया की पद-यात्रा करना विश्व-शान्ति के लिए। बाबा की इजाजत माँगने आये थे, आशीर्वाद लेने आये थे, संकल्प तो कर ही चुके थे। तो बाबा था अपनी धुन में। ग्रामदान के सिवाय दूसरी बात नहीं। लेकिन उनकी सारी बात सुन ली और तुरन्त कह दिया कि आप लोगों का विचार अच्छा है, आप जरूर जाओ। यह नहीं कहा कि ग्रामदान के काम में लगो। बाबा मनुष्य का विकास देखता है, उसका विकास किस प्रकार से होगा, यह देखता है। लोगों को अपने काम में लगाना यह वृत्ति बाबा की है नहीं।

तरुणों और वृद्धों का संयोग हो

एक बात और मैं समझाऊँ—वृद्धों के आशीर्वाद की। बहुत बड़ी कहानी है। महाभारतीय युद्ध शुरू हो रहा है। पहला दिन। प्रातःकाल में युधिष्ठिर महाराज उठे और पदयात्रा शुरू की उन्होंने। पदयात्रा करके वे शत्रु के कैम्प में गये भीष्म के पास। प्रणाम किया, साष्टांग दण्डवत प्रणाम, और बोले, 'आशीर्वाद माँगने के लिए आया।' भीष्म बोले, 'धन्य है तू। क्या आशीर्वाद माँगता है?' वे बोले, 'आपसे कुछ जानना चाहता हूँ।' बोले, 'क्या जानना चाहता है?' 'आपकी मृत्यु कैसे होगी, यह जानना चाहता हूँ'। अब आप लोग यह बताइये, दुनिया में कोई ऐसा महाकाव्य मिलेगा, जिसमें इस किस्म की कहानी होगी? वह तो महाभारत ही है। और आश्चर्य की बात, की उन्होंने भी प्रसन्न होकर कहा कि मेरी मृत्यु इसी युक्ति से हो सकती है। यों कहके युक्ति बतायी और आगे देखा गया कि उसी युक्ति से उनकी मृत्यु की जा सकी। वरना अर्जुन किसी दूसरी युक्ति से उनको नहीं मार सका। कवि ने उपमा दी, दोनों आमने-सामने खड़े रहे हैं। एक तरफ परम वृद्ध भीष्म और दूसरा तरुण-युवा अर्जुन एक-दूसरे के खिलाफ, और बाणवृष्टि चल रही है, अर्जुन फीका पड़ रहा है। और फिर भीष्म ने जो मृत्यु की युक्ति बतायी थी, उसका अमल किया गया और भीष्म की मृत्यु की गयी। तो मैं तरुणों को कहूँगा कि वे चाहते हैं कि सर्व सेवा संघ वाले वृद्ध हैं, उनके पास जायें और उनको नमस्कार करें और पूछें कि उनकी मृत्यु कैसे होगी। अभी सतीश ने पूछा कि सर्व सेवा संघ जमीन क्यों रखता है, वह क्यों न बाँट दे? तो इसके लिए सर्व सेवा संघवालों के पास जाना चाहिए, जनता के पास जाने की आवश्यकता है नहीं। उनको जाकर प्रणाम करना और उनसे पूछना कि क्यों इतनी जमीन रखते हो, उसका हिसाब बताओ। वे हिसाब बतायेंगे। अगर वह जमीन ठीक ही कारण से रखी गयी है तो आप का समाधान हो जायेगा और अगर ठीक कारण नहीं है या कुछ ठीक कारण है कुछ ठीक कारण नहीं तो बात तय करके जमीन बाँटी भी जायेगी। यह मैंने आपके सामने इसलिए रखा कि वृद्ध और तरुणों का किस प्रकार संयोग होना चाहिए।

अन्त में एक वाक्य बताकर मैं समाप्त करूँगा। मुझे तो मालूम नहीं, मैंने सुना है, पार्लियामेंट पर शायद यह वाक्य लिख रखा है। न सा सभा यत्र न सन्ति वृद्धाः, जहाँ वृद्ध नहीं हैं, वहाँ सभा ही नहीं है। इसलिए सभा में वृद्धों का होना जरूरी है। तरुणों की सभा हो, तरुणों की चर्चा हो, लेकिन वे ठीक ढंग से चर्चा करें, कुछ नियमन का अंकुश चाहिए तो वह वृद्धों के हाथ में उतना अंकुश रखा गया। जय जगत्।

सेवाग्राम, ४-१०-'७०
संघ अधिवेशन का अन्तिम भाषण

मनुष्य का विक्रय : मानव-द्रोह भी, ईश्वर-द्रोह भी

(ईसाई धर्म की साध्वी-दीक्षा देने के लिए केरल की कन्याओं के विक्रय की घटना पर एक नागरिक द्वारा दादा धर्माधिकारी को लिखे गये पत्र का पत्रोत्तर ।)

....

सप्रेम नमस्कार,

आपका कृपा पत्र मिला । इससे पहले इस विषय पर एक मित्र का और भी एक पत्र आया था । मैं धर्माधिकारियों के कुल में पैदा हुआ हूँ, इससे अधिक, धर्म के विषय में मेरा कोई अधिकार नहीं है । किसीको जन्म के कारण कोई विशेष अधिकार प्राप्त नहीं होना चाहिए, यह इस युग की एक विशिष्ट माँग है ।

पिछले दिनों विदेशों में ईसाई धर्म के नाम पर लड़कियों को साध्वी-दीक्षा देने के लिए वस्तुओं की तरह, बेचने की घटना को लेकर जो प्रक्षोभ पैदा हुआ, वह जितना स्वाभाविक था उतना ही उचित भी था । वह घटना अगर वास्तविक हो, तो अत्यन्त शोचनीय और निंदास्पद है । उसका जितना निषेध किया जाय उतना थोड़ा ही है । ऐसी घटनाओं के प्रति उदासीनता न तो धर्म-निरपेक्षता है और न अहिंसा ही है । बल्कि वह मानव-द्रोह है । इस सम्बन्ध में ईश्वर-परायण और खिस्त-परायण ईसाइयों को भी अपना तीव्र विरोध व्यक्त करना चाहिए । मनुष्य का विक्रय तो किसी भी कारण के लिए घोर पाप है । यदि वह विक्रय धर्म के नाम पर होता है, तो उसमें मानव-द्रोह के उपरांत ईश्वर-द्रोह भी है । इस प्रकार की घटनाएँ अन्य धर्मों के नाम पर भी होती होंगी । इसलिए, इस प्रकरण का विरोध 'स्वधर्म' या 'परधर्म' की भूमिका से, अथवा 'स्वदेश' और 'परदेश' की भूमिका से नहीं, प्रत्युत, शुद्ध धार्मिकता और व्यापक मानव-निष्ठा की भूमिका से होना चाहिए । इस कांड की जाँच की भूमिका भी उतनी ही व्यापक होनी चाहिए ।

जो सम्प्रदाय छल-प्रपंच, बल-प्रयोग और आमिष के द्वारा अपने अनुयायियों की संख्या बढ़ाने के लिए प्रवृत्त हो, उसे भी क्या धर्म कहा जा सकता है ? जो संप्रदाय इस प्रकार का दुराचार करता है, वह चाहे स्वदेशी हो या विदेशी, ईश्वरद्रोही और अपराधी है । जो राज्य-व्यवस्था ऐसे अपराधों की उपेक्षा करेगी, वह धर्मनिरपेक्ष होने का दावा तो कर ही नहीं सकती, वरन् लोक-द्रोह की अपराधी होगी ।

इस प्रसंग में और भी कुछ प्रश्नों का विचार करना नितान्त आवश्यक है :

१. क्या कोई हिन्दू समाज भी है ?

२. हिंदुत्व के अभिमानियों को अंतर्मुख होकर गंभीरतापूर्वक यह सोचना चाहिए कि भारत में स्थित सम्प्रदायों में जो नियति हुआ है, वह हिंदुओं में से ही क्यों हुआ ? क्या भय और प्रलोभन दिखाने की क्षमता और वृत्ति हिंदुओं में कम रही है ?

३. पृथक् राज्य की माँग क्या अपने आपको हिंदू कहलानेवालों ने भी नहीं की है ? क्या स्वतंत्र झंडे की माँग का सम्बन्ध किसी सम्प्रदाय-विशेष से है ?

४. क्या धर्म भी 'स्वदेशी' और 'विदेशी' होता है ? पश्चिम के लोगों के लिए ईसाई धर्म क्या 'स्वदेशी' है ? चीन, जापान, और ब्रह्मदेश के लोगों के लिए बौद्ध धर्म क्या 'विदेशी' धर्म है ? क्या पश्चिम के लोग भी, चाहे तो, बौद्ध, सिक्ख या आर्य-समाजी नहीं बन सकते ? क्या उनके लिए ऐसा करना 'स्वदेशी' के प्रतिकूल होगा ?

धर्म-निरपेक्षता और धर्म विरोध दो बिलकुल भिन्न भूमिकाएँ हैं । धर्म-निरपेक्षता में सभी धर्मों के उत्कर्ष के लिए समान अवकाश होता है । परन्तु धार्मिक आक्रमण तो दूर, धार्मिक अतिक्रमण के लिए भी कोई अवसर न होता । मेरी अल्पमति में धर्म-निरपेक्ष समाज में हरेक को अपने-अपने धर्म के प्रतिपादन, निरूपण और उपदेश के लिए तो पूरा-पूरा अवसर रह सकता है ; परन्तु धर्म-परिवर्तन और धर्म की दीक्षा के फलस्वरूप समाज-परिवर्तन पर सम्पूर्ण प्रतिबन्ध होना चाहिए ।

इस युग की माँग तो इससे कहीं आगे की है । संगठित धर्म के दिन अब लद चुके हैं । अब अनेक धर्मों के लिए मानवीय जीवन में अवकाश ही नहीं रहा है । धर्म या तो मानव-व्यापी तथा जीवन-व्यापी होगा, या फिर निष्प्राण और निर्जीव होकर तिरोहित हो जायगा । यदि यह आकांक्षा है कि जीवन के सभी क्षेत्रों में मानवीय सम्बन्धों का आधार धर्म हो, तो मरणोत्तर जीवन और परलोक से सम्बन्ध रखनेवाली उपलब्धियों का उसमें समावेश नहीं हो सकेगा । जीवन एक सर्वांग-सुन्दर, समग्र ईकाई है ; उसके खंड नहीं किये जा सकते । क्या यही अध्यात्म नहीं है ? विज्ञान के युग में इस विश्व-व्यापी अध्यात्म की आवश्यकता है । परन्तु विशिष्ट धर्मों के लिए स्थान नहीं है ।

इस भूमिका के फलस्वरूप सामाजिक नीति में कुछ अनिवार्य परिवर्तनों का संकेत निष्पन्न होता है :

१. जन्मतः किसी बालक का कोई विशिष्ट धर्म नहीं होगा । आगे चलकर बाल्यावस्था के उपरान्त भी, किसी विशिष्ट धर्म की दीक्षा ग्रहण करने का अधिकार उसे नहीं होगा । विशिष्ट उपासना-पद्धति का स्वीकार या अवलंबन करना हरएक का व्यक्तिगत प्रश्न होगा । परन्तु साम्प्रदायिकता के विशिष्ट चिह्न धारण करने का अधिकार अत्यन्त मर्यादित और सीमित होगा । नागरिकता की मर्यादाओं के प्रतिकूल तो इस प्रकार का कोई अधिकार किसीको नहीं होगा ।

सर्वोदय और विज्ञान

❀ कामेश्वर प्रसाद बहुगुणा ❀

आज का मनुष्य न केवल मानवीय आकांक्षाओं और क्षमताओं में परस्पर असंतुलन से उत्पन्न जटिलताओं से पीड़ित है वरन् इस युग की एक बड़ी विशेषता यह भी है कि इसी युग में विज्ञान के अन्तर्विरोध भी खुलकर सामने आ गये हैं।

औद्योगीकरण ने कुछ ऐसी अनपेक्षित समस्याएँ और खतरे पैदा कर दिये हैं कि अब पश्चिम में भी इसके लिए जोश और उत्साह यदि समाप्त नहीं हो गया है तो इसके प्रति एक आशंका, भय, चिंता का भाव तो सर्वत्र व्याप्त हो ही गया है। औद्योगीकरण की इस पद्धति की कुछ विशेषताएँ हैं कि .

यह प्रकृति पर 'आधिपत्य जमाने' के विश्वास पर आधारित है और इसलिए इसका मुख्य रुझान "प्रकृति के अधिकतम शोषण से अधिकतम मनुष्यों का अधिकतम हित" करने की ओर है। पिछले केवल पचास सालों में ही प्रकृति का जितना दोहन किया गया है वह पिछले दस हजार सालों में किये गये दोहन से दो सौ गुना अधिक है और तकनीकी वृद्धि के साथ-साथ इस दोहन की गति बीजगणितीय ढंग से बढ़ रही है।

आधुनिक औद्योगीकरण की—जिसे गांधी जी ने 'उद्योगवाद' नाम दिया है, क्योंकि असल में यह कोई तकनीक के बजाय एक 'मनोवृत्ति' का नाम है—एक दूसरी विशेषता यह भी है, इसके फलस्वरूप प्राकृतिक साधनों में कोई 'वृद्धि' नहीं होती। कृषि की प्रकृति से यह एकदम भिन्न बात है, यद्यपि अब तो कृषि में भी उद्योगवाद आ गया है और उसने भी अब प्रकृति का प्रतिदान करना लगभग बंद कर दिया है। पूँजीवाद ने मनुष्य के शोषण पर अपना भवन खड़ा किया था तो समाजवाद ने उसके स्थान पर प्रकृति को रखने का नारा दिया। किन्तु शोषण की मूल भावना को दोनों ने ही खूब पनपाया है। नतीजा यह है कि आज दोनों में मेल हो गया है शोषण के फल भोगने के लिए।

इस औद्योगीकरण की एक तीसरी विशेषता यह है कि इसके कारण से प्रकृति का भीतरी संतुलन गड़बड़ा गया है। यानी प्रकृति की निर्माण और विनाश की शक्तियों का संतुलन 'डगमगा' होता जा रहा है। आज प्रकृति से इतना काम लिया जाता है कि उसे 'आराम' का वक्त ही नहीं है और इसका नतीजा यह हुआ है कि प्रकृति की जो विधायक या निर्माणात्मक शक्तियाँ, खुद प्रकृति और जीवों की रक्षा करती रहती थीं वे शक्तियाँ कमजोर पड़ गयी हैं और "आज के मनुष्य को अपनी सुरक्षा का अतिरिक्त प्रबन्ध करना पड़ रहा है"।

इसकी चौथी विशेषता यह है कि इसने मनुष्य में सहज अंधविश्वास की शक्तियों को और मजबूत किया है। कहा जाता था कि मध्ययुगीन नवजागरण के कारण ही आधुनिक औद्योगीकरण की वृत्तियों का जन्म हुआ था और उस नव-जागरण के पीछे कहा गया था कि तर्क का बल था। पर अत्यधिक औद्योगिक देशों में आज पहले से कहीं अधिक अंध-विश्वास व्याप्त है। यदि कोई आज अमेरिका या यूरोप में सामान्य जन-जीवन का अध्ययन करे तो यह बात सिद्ध होगी। वहाँ आज भविष्य-वक्ताओं की आय किसी बड़े उद्योगपति से कम नहीं होती और भविष्य के प्रति यह चिन्ता अब एक नये विज्ञान, भविष्य-विज्ञान के नाम से संगठित हो रही है। स्वीडेन के जान गालटुंग नाम के एक वैज्ञानिक के नेतृत्व में यह भविष्य-विज्ञान यह पता लगाने का प्रयास कर रहा है कि सुदूर भविष्य की बात तो छोड़ें, पर सन् २००० में ही क्या होनेवाला है।

अब पश्चिम में भी दर्शन और विज्ञान की एकता का प्राचीन भारतीय विचार धीरे-धीरे स्वीकृत हो रहा है। वे भी कहने लगे हैं कि दर्शन और विज्ञान एक ही सत्य के प्रति दो दृष्टिकोण हैं। जे० ब्रोनोस्की (J Bronowski) नामक एक विद्वान अपनी पुस्तक 'दी आइडेंटिटी आफ मैन' (The Identity of man) में कहता है कि "विज्ञान की शोध के लिए शोधकर्ता तथा जो उसे समझता है, दोनों की कल्पनाशक्ति का सम्मिश्रण होता है। और यही बात कला के क्षेत्र में भी होती है। फिर यद्यपि विज्ञान के निष्कर्ष नीतिशास्त्रीय दृष्टि से निरपेक्ष होते हैं, किन्तु विज्ञान की क्रिया निरपेक्ष नहीं होती और यह कार्य-

---

→ इस प्रकार, मनुष्य के भौतिक जीवन में और आध्यात्मिक जीवन में आज जो अन्तर है, वह उत्तरोत्तर कम होगा और धर्मभेद क्षीण होता जायगा।

२. विशिष्ट भाषा, लिपि या रहन-सहन का किसी विशिष्ट धर्म के साथ कोई सम्बन्ध नहीं होना चाहिए।

३. नागरिकता का और राष्ट्रीयता का अधिष्ठान कोई विशिष्ट पंथ, सम्प्रदाय या उपासना-पद्धति कदापि नहीं होगी।

४. नाम की धर्म, संस्कृति या सम्प्रदाय के द्योतक प्रमाणभूत नहीं होंगे।

५. मनुष्य-मनुष्य के, स्त्री-पुरुष के तथा मनुष्य और मनुष्येतर प्राणियों के सम्बन्धों का प्रत्यक्ष व्यवहार में नियमन किसी विशिष्ट धर्म के अनुशासन के अनुसार नहीं होगा।

सामाजिक नीति में जो क्रांतिकारी परिवर्तन जीवन की सादगी और समग्रता की दृष्टि से आवश्यक होंगे उनके ये कुछ उदाहरण हैं। ये सांकेतिक हैं, सम्पूर्ण नहीं।

केरल की अत्यन्त विषादास्पद घटना के संदर्भ में चित्त में जो विचार जागृत हुए उनको आपकी सेवा में प्रस्तुत किया है। आशा है, इस दिशा में विचार-मंथन को कुछ गति मिलेगी।

जयपुर
२२-९-'७०

विनीत
दादा धर्माधिकारी

कार्यों से मानवीय मूल्यों की माँग करती है।" सन् १८७४ में विज्ञान के विकास की ब्रिटिश संस्था के अध्यक्ष श्री जान टिंडल ने जब पहले पहल यह बात कही थी कि वास्तव में मृत पदार्थ में और जीवित पदार्थ में तत्त्वत: कोई फर्क नहीं है, तब वहाँ के श्रोता आश्चर्य में पड़ गये और एक नागरिक ने तो उस पर ईश्वर को गाली देने के आरोप में सजा देने के लिए अदालत में अर्जी दे डाली। प्रसिद्ध जीव-वैज्ञानिक श्री लो काम्टे डी नोवी ने तो विकास का उद्देश्य ही मानव-मुक्ति (मोक्ष) बताया है। यानी मनुष्य के अपने पशुत्व पर उसके मनुष्यत्व की विजय विकास का उद्देश्य कहा है।

किन्तु पश्चिम में अभी यह चिन्तन आरम्भ ही हुआ है और सामान्यत: तो वहाँ विज्ञान के बारे में वही मध्ययुगीन विचार मान्य है कि जिसका अर्थ है प्रविधि। इसका कारण है। प्रसिद्ध अमरीकी विचारक अल्फ्रेड नार्थ व्हाइटहेड ने कहा है कि वहाँ (पश्चिम में) विज्ञान का आरम्भ दर्शन की कमजोरी से हुआ है। जब दर्शन उन्हें कोई समाधानकारक जवाब न दे पाया तो वे प्रकृति के व्यापारों की ओर झुके और इस प्रक्रिया में मनुष्य गौण हो गया। वहाँ आरम्भ से ही यह विचार बन गया कि कुदरत के नियम मनुष्य या द्रष्टा पर निर्भर नहीं करते और 'उच्छृंखल प्रकृति को वश में करना' वहाँ विज्ञान का अर्थ हो गया। यह मान लिया गया कि विज्ञान का कार्य 'केवल देखना है समझना नहीं।' इससे यह निष्कर्ष भी निकल आया कि विज्ञान 'तथ्यपरक' होता है, 'मूल्यात्मक' नहीं। यदि हम आधुनिक मनोविज्ञान का अध्ययन करें तो यह स्पष्ट होगा कि मनुष्य-मन का अध्ययन भी वहाँ पहले अन्य भौतिक विज्ञानों की ही परिपाटी पर आरम्भ हुआ और जब फ्रायड ने मन की कुछ अभौतिक अवस्थाओं पर नये विचार प्रकट किये तो वहाँ भारी हलचल मच गयी। फ्रायड से पहले वहाँ मनोविज्ञान पर व्यवहारवादियों (जिन्हें भारतीय परिभाषा में 'देहवादी' भी कहा जा सकता है) का असर रहा है और अब भी वह इस असर से पूर्णत: मुक्त नहीं हो सका है। विज्ञान के इसी तरह के विचार के कारण वहाँ डार्विन की कुछ बातों ने हलचल मचा दी थी। किन्तु भारत में जिस सहजता के साथ वेद या उपनिषदें ग्रहण की गयी उसी सहजता के साथ बुद्ध या शंकर भी ग्रहण किये गये। हमारे यहाँ सांख्य, योग और वैशेषिक जैसे दर्शन-ग्रन्थों को असल में विज्ञान के ग्रन्थ कहा जा सकता है किन्तु वे हलचल का कारण नहीं बने। पश्चिमी मन कुछ वैसा ही है, जैसे एक दस वर्षीय बालक का होता है जो नये-नये गाँवों के नये-नये मकानों को देखकर आश्चर्य में पड़ जाता है। पर भारतीय मन तो उस पिता का मन है जो जानता है कि मकान अलग ढंग के है तो क्या, जीवन तो वही है। इन्हीं सब कारणों से पश्चिम में विज्ञान का अर्थ एक खास विषय का, और अब तो एक विषय के भी एक खास अंग का ज्ञान हो गया। यह बात कुछ हद तक सही थी, किन्तु यह विज्ञान का सीमित अर्थ था। इस सीमित अर्थ का ही नतीजा है कि वहाँ पर विज्ञान को सामान्यत: उपकरणों, औजारों और यन्त्रों का पर्याय मान लिया गया। इनके उपयोग का ज्ञान ही विज्ञान है, यह भाव बना। भाषा में यद्यपि आज विज्ञान और प्रौद्योगिकी (Science & Technology) शब्दों का प्रयोग होता है, किन्तु व्यवहार में ये दोनों पर्यायवाची हो गये हैं। अब आइन्स्टाइन के सापेक्षतावाद के आविष्कार के बाद से स्थिति धीरे-धीरे बदल रही है, यद्यपि इस तरह का चिन्तन पहले से भी होने लगा था, जैसे पहले कहा गया है। अब वहाँ दर्शन व विज्ञान का भेद मिटता जा रहा है।

किन्तु भारत की क्या स्थिति है आज? हम आज भी ब्रिटिश असर में रह रहे है और हमारा विज्ञान सम्बन्धी दृष्टिकोण वही है जो १८ वीं सदी के यूरोप का था। हमारे यहाँ कोई छात्र यदि दर्शन, साहित्य, कला या संगीत की शिक्षा ले तो उसे विज्ञान का छात्र नहीं मानते और इस श्रेणी में वही छात्र आते हैं जो भौतिकी या रसायनशास्त्र पढ़ते हैं। कालेज में प्रवेश के समय छात्र को अपनी जाति की तरह यह भी स्पष्ट करना होता है कि वह विज्ञान का छात्र होगा या कला का। वैसे ही, विभिन्न विषयों की पुस्तकों में यह समझाने का प्रयास रहता है कि अमुक विषय कहाँ तक कला है और कहाँ तक विज्ञान है या केवल एक ही है। इस मनोवृत्ति के कारण जैसे अभी हाल ही तक पश्चिम में समाजवैज्ञानिकों में यह बहस चलती रही, वह अभी भी समाप्त नहीं हुई है। उन्हें वैज्ञानिक बनने के लिए कुछ 'दीखनेवाले तथ्य' संग्रह करके दिखाने होंगे और इसीसे समाज-विज्ञानों में अंकशास्त्र की प्रधानता हो गयी है। यही बात भारत में भी है। आजकल का सारा सामाजिक शोध इस प्रकार के तथ्यों का संकलन मात्र होता है और जिसके निष्कर्ष सामान्य अनुभव से परे कभी नहीं जा सके। हम लोग आज भी समाजशास्त्र के क्षेत्र में, उदाहरण के लिए, उस अमूर्त मनुष्य की कल्पना के शिकार हैं, जो पाश्चात्य समाज की धारणा से उद्भूत होता है किन्तु जिसे अब पश्चिमी समाजशास्त्री त्याग रहे हैं। वहाँ तो अब एक 'वस्तुगत समाज' (Objective Society) के लिए सामाजिक क्रिया की शोध चल रही है। और कार्ल मैनहाइम जैसे लोग तो अब वस्तुगत समाज को भी छोड़कर 'प्रत्यक्ष समाज' के प्रत्यक्ष मानव के अध्ययन पर जोर दे रहे हैं। उनका कहना सही है कि समाज असल में अमूर्त सत्ता का बोध कराता है, किन्तु सही सामाजिक निष्कर्षों के लिए अमूर्त समाज से काम नहीं चलेगा; क्योंकि समाज की इस अवधारणा में व्यक्ति भी अमूर्त हो गया है जबकि उसकी मूर्त सत्ता है। अब वहाँ यह मान्यता लगभग त्याग दी गयी है कि विज्ञान मूल्यपरक नहीं होता। इसके उल्टे वहाँ अब यह विचार बन गया है कि मूल्य-विहीन विज्ञान, विज्ञान ही नहीं है। वे लोग अब विज्ञान में मूल्यों की

खोज कर रहे हैं और विज्ञान में तथाकथित तटस्थता (जो वास्तव में कठोर, असम्य सामाजिक अनुत्तरदायित्व ही था) की निन्दा की जा रही है। वे एक 'उद्देश्योन्मुख विज्ञान' के लिए प्रयत्नशील हैं।

सर्वोदय का इस सारे चित्र में क्या स्थान है? सर्वोदय एक विचार है और संयोग से यह अणु-युगीन विचार है। सर्वोदय के साथ गांधीजी का नाम एक पर्याय की तौर पर जुड़ा है। अतः इस विषय पर लोग अक्सर गांधीजी के 'हिन्द स्वराज्य' को उद्धृत करके कहते हैं कि सर्वोदय मध्ययुग का विज्ञान-विरोधी विचार है और अप्रगतिशील विचार है। खासकर साम्यवादियों और समाजवादियों ने यह बात खूब फैलायी है और यहाँ तक कि पं० नेहरू ने तक कहा था कि हम भारतीय सरकार के भावी उद्देश्य के रूप में सर्वोदय के बजाय समाजवाद को इसलिए पसन्द करते हैं क्योंकि समाजवाद के पीछे एक वैज्ञानिक और ऐतिहासिक पृष्ठ-भूमि है। किन्तु क्या गांधीजी विज्ञान-विरोधी थे? यदि हम विज्ञान को उसके सही अर्थ में लें, जैसा उसे ऊपर कहा गया है तो सर्वोदय विज्ञान ही है, क्योंकि वह भी कार्य-कारण के तर्क को स्वीकार करता है और साथ ही ज्ञान के लिए अभ्यास और परीक्षण की प्रणाली मंजूर करता है। फिर हिन्द स्वराज्य में विज्ञान का विरोध नहीं है। उसमें विज्ञान और यंत्र में फर्क किया गया है और यह कहा गया है कि यंत्र पर मनुष्य का प्रभुत्व होना चाहिए, मनुष्य पर यंत्र का नहीं। यदि यंत्र मनुष्य की मदद में आता हो तो वह सर्वोदय को स्वीकार है, किन्तु श्रम बचाने के नाम पर यदि वह मनुष्य को उसकी 'कर्म-शक्ति' से जिसे समाज-विज्ञानवेत्ता थर्स्टन वेब्लन ने मनुष्य की कर्म की सहजात प्रवृत्ति (Instinct of Workmanship) में शामिल किया था और जीववैज्ञानिकों के अनुसार जिसके प्रयोग के कारण ही मनुष्य विकास कर सका है, वंचित करता है तो सर्वोदय को ऐसे यंत्र से विरोध है।

मार्क्स और गांधी में इस मामले में एक बुनियादी फर्क यह है कि मार्क्स यंत्र को एक तटस्थ उपकरण मानता है जबकि गांधीजी उसे मनुष्य के जीवन और चिंतन को प्रभावित करनेवाला तत्त्व मानते हैं। यंत्र और प्रौद्योगिकी का अपना एक स्वभाव होता है जिसे मार्क्स नहीं समझ सके थे, किन्तु गांधी ने उसे देखा था और उससे उन्होंने फिर भावी निष्कर्ष निकाले। गांधी के लिए यह बात एकदम साफ है कि जिस यंत्र और प्रौद्योगिकी ने पूँजीवाद और साम्राज्यवाद को पाला-पोसा और जिसके रहते पूँजीवाद या साम्राज्यवाद हो पनप सकता था, वह चाहे जिस भी समाज में अपनायी जायेगी उससे वही नतीजे निकलेंगे। आज रूस और अमेरिका में तकनीकी और सामाजिक दृष्टि से कोई फर्क नहीं है, इसका कारण यही है कि साम्यवाद ने पूँजीवादी यंत्र और प्रौद्योगिकी को ज्यों-का-त्यों अपना लिया, यद्यपि उसके उद्देश्य पूँजीवाद से विपरीत थे। आधुनिक प्रौद्योगिकी की यह विशेषता है कि उसके लिए एक केन्द्रित व्यवस्था आवश्यक होती है और इस व्यवस्था के संचालन के लिए चन्द लोगों को ही रखना आवश्यक होता है। मार्क्स ने इस बात पर बहुत कम चिंतन किया और जो किया भी वह वे अपने नये साम्यवादी समाज की सुखद कल्पना के जोश में भूल गये।

यही कारण है कि मनुष्य के हित में विज्ञान के उपयोग की दृष्टि से सर्वोदय 'प्रौद्योगिकी के वैज्ञानिकीकरण' करने के पक्ष में है। आज उसका अवैज्ञानिक उपयोग हो रहा है। आज की प्रौद्योगिकी हमें इस विश्व को समझने में जरा भी मदद नहीं करती, क्योंकि वह तो विश्व को ही नष्ट कर रही है। किन्तु विज्ञान तो विश्व को समझना चाहता है। अतः इस दृष्टि से आज की प्रौद्योगिकी को हटाकर सही ढंग की प्रौद्योगिकी का आविष्कार करना ही होगा। पश्चिम में यह खोज आरम्भ हो गयी है और जब गांधीजी ने बहुत पहले चरखे के माध्यम से एक ऐसी प्रौद्योगिकी की बात कही थी जो मनुष्य की पकड़ में और उसके लिए बोध-गम्य हो नहीं हो, वरन् जो मानवीय सम्बन्धों को मजबूत बनाये तो लोगों ने उनको मध्ययुग का आदमी कहकर उनका मजाक किया। किन्तु आज पश्चिम में यह विचार मान्य किया गया है कि ऐसी प्रौद्योगिकी न केवल सम्भव है, वरन् आवश्यक भी है और उत्पादन के तरीके को तदनुसार बदलना ही उचित है। इसे मध्यवर्ती तकनीक का नाम दिया गया है। अणु-शक्ति के विकास ने इस तरह की प्रौद्योगिकी के लिए असीम सम्भावनाएँ पैदा कर दी हैं। इसमें सबसे महत्त्व की बात तो यह है कि अब यंत्र या प्रौद्योगिकी के प्रति सामाजिक चेतना बनी है और यह माना गया है कि इसके सामाजिक फलितार्थों से ही उसकी उपयोगिता नापी जानी चाहिए।

यह सही है कि आज यंत्र स्वयं में एक अस्तित्व (Entity) बन गया है, किन्तु हमें मनुष्य का अस्तित्व कायम करना ही होगा। पहले यह काम दर्शन का था, अब विज्ञान को भी यही करना होगा। प्रो० वैरी कामनर कहते हैं कि यदि आधुनिक यंत्र और प्रौद्योगिकी शक्तियों को वातावरण के ज्ञान के साथ संयुक्त नहीं किया जायगा तो यह धरती मानव के रहने योग्य स्थली नहीं रह जायेगी। संस्कृत की एक पुरानी कहावत है कि यथाकृति तथा वृत्ति। अब पुरानी मध्ययुगीन यांत्रिकी और प्रौद्योगिकी से नये समाज का निर्माण असम्भव है। उसके लिए नयी यांत्रिकी और प्रौद्योगिकी चाहिए। श्री अरविंद ने कहा था कि "मानव-एकता के लिए पहली आवश्यकता ऐसी इकाइयों की है जो स्वाभाविक हों। आज की सामाजिक संरचना तो मानव-स्वभाव के विपरीत है, अतः इसे बदलना ही होगा। एक नयी तकनीक, यांत्रिकी और प्रौद्योगिकी की खोज करनी होगी। नयी मशीन, नयी

दो बड़े कार्यक्रम और इतने कम समय के अन्तर पर ?—तरुण शांति सेना के किशोरों ने फिर अपने उन भाइयों पर दृष्टिपात किया जिनके प्रोत्साहित करने वाले सहकार पर उसे आस्था है। सर्वश्री हलधर भाई, लखन भाई और संतोष भाई ने हमारे आत्म-विश्वास को बढ़ाया। तरुणों को फिर काहे की निराशा ! तय हुआ कि जुलूस निकलेगा और जरूर निकलेगा।

और वानर-सेना के इस जुलूस की सारी सफलता-असफलता का दायित्व अपने ऊपर ले लखन भाई ने 'आराम हराम है' का बिगुल फूंका। बड़े शांतिमय ढंग से मुजफ्फरपुर नगर हलचलों से भर गया। इस कार्यक्रम का दायित्व वहन करते हुए तरुणों के सामने दो समस्याएँ थीं—तरुणों की संख्या और जुलूस के उद्देश्यों के प्रचार के लिए अधिक संख्या में सूचना-फलकों की आवश्यकता। मुट्ठी भर तरुणों की यह शांतिसेना हफ्ते भर में दो सौ लड़के किस तरह जुटा पायेगी ? विभिन्न उद्देश्यों को व्यक्त करनेवाले ५०-६० सूचना-फलक कैसे और कहाँ छपेंगे ? 'लिखावट स्पष्ट और सुन्दर होनी चाहिए। राह चलते लोगों को इसे पढ़ना है। हमारे पास पैसे नहीं'। इस प्रकार की चिंता के बादल तरुण चेहरों पर घनीभूत होने लगे। सभी शांति सेवक अवश्य आयेंगे। उद्घोष किया हलधर भाई, इन्दु दीदी और अध्यापक कपिल ने। छोटी-सी सेना आश्वस्त हुई। पोस्टर्स का क्या होगा ? 'भैया मेरे, क्यों घबड़ाते हो तुम सब' !—संतोष भारतीय की यह विश्वासभरी आवाज गूंजी। फिर क्या था, अनीति और अकर्मण्यता के गढ़ शिक्षण और सामाजिक व्यवस्था, पर 'लंका विजय' करने में तरुण जुट गये।

आपको आश्चर्य होगा कि पूरे हफ्ते भर किस तरह साहसी जवानों की इस सेना ने दिन-रात की सीमा-रेखा मिटा रखी थी। कुमार पार्थसारथी के घर पर रात एक-डेढ़ बजे तक तरुणों की छोटी-सी जमात जगती रहती। किस-किस के नाम गिनाऊँ ? तेजोमय कई चेहरे आँखों के आगे हैं। केवल इतना ही, कि पहली बार इस दौरान पता चला कि समाज ने अपनी विषमता की गुदड़ी में कई अद्भुत लाल छिपा रखे हैं। कुछ भाइयों के तो निजी घर ने छापाखाने का रूप ले लिया था। बड़ी-बड़ी मोटे कागज की तख्तियों पर मोती से अक्षरों में—'छोड़ो आज की शिक्षा, नहीं तो माँगनी होगी भिक्षा, 'हिंसा से होगा बँटवारा, नहीं बनेगा गाँव हमारा', 'हमें डिग्री की भिक्षा नहीं, जीवन की शिक्षा चाहिए', आदि नारे लिखे जा रहे थे। तरुणों ने छोटे-छोटे दलों में बँट कर रात १२ बजे से दीवारों पर लिखने का काम आरम्भ कर दिया। आँखों में नींद नहीं, मन में चैन नहीं। ११ तारीख की उत्कट प्रतीक्षा। जे० पी० अकेले नहीं हैं, हम उनके साथ हैं।

आशंकाओं से भरी तिथि आ गयी। कार्यक्रम था 'नगर-भवन' से निकल कर यह जुलूस बस स्टैण्ड, विश्वविद्यालय होता हुआ शहर की मुख्य सड़कों से गुजरेगा।

जुलूस आगे बढ़ा। अब जरा इसकी सफलता-असफलता पर गौर फरमाइये। मौन जुलूस आम जुलूसों से कई मायनों में भिन्न होता है। अन्य जुलूसों की तरह यहाँ गरज-गरज कर, दिखा कर, पैर पटक कर, वातावरण को अशांत नहीं बनाया जाता। यहाँ तो शांतिपूर्वक चलते तरुणों के हल्के पदचाप ही चुप समाज की जर्जर मान्यताओं को जड़ से हिलाने का काम करते हैं। बड़ा शांत और संयमित होता है यह मौन जुलूस। पंक्तिबद्ध लोग ! शांत चेहरे !! सूचना-फलकों पर लिखी माँगें !! जुलूस में मौन और अनुशासन था। ऐसा समा बँधा कि प्रेसवाले ने एक शांति सैनिक से जुलूस का उद्देश्य पूछा, तो उसने कागज पर लिख दिया, 'मौन'। और मुस्कुरा कर छपी पर्ची आगे कर दी। मुख्य सड़कों पर कुछ और मजेदार अनुभव मिले। दूर से आते जुलूस को देख पहले लोग कान खड़े करते। फिर कानों पर विश्वास नहीं होता कि नारे क्यों नहीं सुनाई पड़ रहे हैं। तरुण शांतिसेना का बैनर न देख सकने वाले कुछ लोग गूँगों की इस जमात के गले में केसरिया रूमाल देख उसके जनसंघी होने का अनुमान लगाते, लेकिन सूचना-फलक पढ़ कर चक्कर में पड़ जाते। कुछ लोगों को कहते सुना गया, 'आर० एस० एस० वाले सब हैं।' 'अरे नहीं पोस्टर्स पढ़ो, कम्युनिस्ट ?' असंभव ! तरुण-शांति-सेना सुनती, मुस्कुराती और पर्चे बाँटती आगे बढ़ती रही।

शांतिसेना का यह जुलूस जिन-जिन जगहों से गुजरा, चुम्बक की तरह लोगों की दृष्टियाँ इससे बँध गयीं। जनता आश्चर्यचकित थी। आश्चर्यजनक उद्देश्य और इतने निष्कंप चेहरे ! अद्भुत ! मंत्र-मुग्ध भीड़ को देखकर लगा हिंसा लोगों को अपने पैरों पर झुकने को बाध्य कर सकती है, लेकिन अहिंसा तो खुद झुके लोगों को उठाती है। चुनौती-भरे हाथों की उपेक्षा आप कर सकते हैं, पर प्यार से फैली बाहों को परे हटाना आदमी से संभव नहीं। पहली बार विश्वास जागा कि ग्राम-स्वराज्य जरूर सफल होगा, यदि नींव में सत्य, अहिंसा और सहिष्णुता रही।

जुलूस मध्यम गति से चलता शहर के एक छोर से दूसरे छोर पर पहुँचा तो चंचल किशोरों के चेहरे मुर्झा चुके थे। जीवन में पहली बार गुपचुप-गुपचुप हाथों में पोस्टर्स और कुदाल लिये वे इतनी दूर आये थे। रास्ते में पानी का नल दिखा, किशोरों की चंचलता बढ़ी। कुछ उधर लपके। पर वाह रे प्रेममय अनुशासन की शक्ति। १५० तरुणों की शांतिमय पंक्तिबद्धता ने किशोरों को चुम्बक की तरह खींचा। वे जैसे सोने से जगे, और पानी के नल के पास से प्यासे लौट आये।

धीमे-धीमे गन्तव्य निकट आ रहा था। ऊपर आकाश में बादल भी घुमड़ आये थे। शायद ऐसे अद्भुत जुलूस की कल्पना उन्हें भी नहीं थी। वे तो गर्जन-तर्जन के सबसे ज्यादा पक्षपाती हैं न ! सो, जब घटाओं से नहीं रहा गया तो बूँदों के रूप में मौन जुलूस का मर्म जानने→

हमारी कमजोरी का बिन्दु

सम्पादकजी,

"भूदान यज्ञ" का २१ वाँ अंक पढ़ा। आम अंकों की भाँति कुछ प्रेरक सामग्रियाँ पढ़ने को मिलीं। पर 'संघ-अधिवेशन के विचारार्थ' और 'परिचर्चा' का जिक्र करना चाहता हूँ। दोनों का संदर्भ एक ही है, आत्म-दर्शन का।

'संघ-अधिवेशन के विचारार्थ' का संदर्भ आत्म-दर्शन होने के बावजूद भी स्वरूप आलोचनात्मक ही लगता है। आलोचना से प्रत्यालोचना का जन्म स्वाभाविक है। आपकी सलाह के अनुसार मैं प्रत्यालोचना में नहीं पड़ता, यदि इनका आधार सैद्धान्तिक न होता। मेरी शंकाएँ मूलभूत हैं, अतः अभिव्यक्त कर रहा हूँ। लेखक का आरोप है कि हम भूदान-आन्दोलन में कूद पड़े, यथास्थितिवाद के सारे सुनहले सपनों से मुँह मोड़कर, पर जो थोड़ी निष्पत्ति हुई उसके गर्व में हम अन्धे हो गये। बोगस निष्पत्ति की निन्दा नहीं हुई, प्रोत्साहन मिला। पर क्या सचमुच हमने यथास्थितिवाद के सारे सुनहले सपनों से मुँह मोड़ा? क्या हमने भूदान को गंगा का प्रवाह माना? क्या हमारी जीवन श्रद्धा थी भूदान-गंगा में? नहीं, हमने ऐसा कभी नहीं माना। हमें यथास्थितिवाद के सपने बाद में भी सुनहले ही दीखते रहे। उसका सपना हममें आज भी जुगुप्सा पैदा नहीं करता। एक वरिष्ठ कार्यकर्ता ने पिछले ही दिनों मुझसे गर्व के साथ अपने दामाद के लखपति होने की चर्चा की, जब कि हमें इस पर शर्म आनी चाहिए थी। भूदान का आन्दोलन पवित्र था, उँगली पर गिने जाने लायक साथियों की नजर में। यथास्थितिवाद के सुनहले सपनों से नफरत थी हमारे चन्द साथियों के दिल में। और ऐसे ही साथियों की बदौलत भूदान-आन्दोलन की कुछ निष्पत्ति हुई और ऐसे साथी हमेशा ही इस निष्पत्ति से असन्तुष्ट रहे, गर्व से चूर होने की बात तो दूर ही। अगर सच पूछिए तो हम अन्धे हुए इस निष्पत्ति के कारण नहीं, बल्कि इसलिए कि हम शुरू से अन्धे ही थे और इसी पूर्वाग्रह के कारण ही हमने बोगस को प्रोत्साहन दिया। हमारा स्वयं का प्रयास बोगस था (थोड़े-से मित्रों को छोड़कर)।

लेखक का दूसरा आरोप है कि बीच में कार्यक्रम की एकदम रिक्तता आ गयी, जिससे हमारे कुछ महत्त्वपूर्ण साथी छूट गये, भटक गये। तो क्या सचमुच कार्यक्रम में रिक्तता आयी थी? क्या हमारा भूदान का कार्यक्रम पूरा हो चुका था? यदि नहीं तो फिर कार्य की रिक्तता कैसी और नये कार्यक्रम का सवाल कैसा? हमारे महत्त्वपूर्ण साथी छूटे, भटक गये, कार्यक्रम की रिक्तता के कारण नहीं बल्कि हमारी आपसी जोड़तोड़ के कारण। हमने अपने आन्दोलन की पवित्रता का न महसूस कर, इसकी क्रान्तिकारिता को न पहचानकर, अपने पदों का संरक्षण व संवर्द्धन करने में ही सुरक्षा का अनुभव किया। लेखक को तीसरी शिकायत है कि ग्रामदान-तूफान गया तो हाथ लगे कागज के कुछ टुकड़े, हस्ताक्षर से हवा बनी नहीं। दुबारा पहुँचने पर भी लोग उठ खड़े नहीं हुए और तूफान के बाद एक नीरवता छा गयी, अति तूफान की बात खयाली निकली। पर मुझे यह शंका है कि क्या ग्रामदान-तूफान आया भी था? हस्ताक्षर सिर्फ कलम की स्याही से था दिल के लहू से नहीं, इसका तो स्वयं लेखक ने सफल प्रतिपादन किया है। तो जब हम पहली बार भी जनता के पास नहीं पहुँचे तो दुबारा पहुँचने का क्या अर्थ? तूफान आया ही नहीं तो तूफान के बाद अति तूफान या नीरवता का मौका ही कहाँ? आगे लेखक स्वयं 'व्यक्तिगत' रूप से अहिंसा पर भरोसे की बात कह रहा है, समूह की बात नहीं। अर्थात् हमने कभी भी अहिंसा पर सामूहिक रूप से विश्वास नहीं किया और यदि हमें व्यक्तिगत रूप से भी अहिंसा पर पूरा भरोसा होता तो हमारी भाषा "यदि हमने सही कदम उठाया " की न होकर "आगे हम सही कदम उठायेंगे ·" की होती।

लेखक के अनुसार उपरोक्त सारी गलतियाँ हुईं, संगठनात्मक भूल के कारण कि हमने कहीं कोई 'कैडर' नहीं खड़ा किया। मेरे विचार से, हो सकता है कुछ संगठनात्मक भूलें रही हों पर उपर्युक्त विश्लेषण से यह स्पष्ट है कि आन्दोलन के संगठनात्मक पहलू में उतना दोष नहीं जितना की मौलिक आधार में है। हममें हमारे सिद्धान्तों के प्रति एकान्तिक निष्ठा नहीं रही है। लोक-शक्ति ही सबसे बड़ी और एकमात्र शक्ति है ऐसा हमने मन से नहीं माना, इसलिए उसके आधार पर आगे बढ़ने की कोशिश हमने नहीं की। हमने बात की जोतभान के प्रति समभाव की, पर आचार में भी ऊँच-नीच का बर्ताव करते रहे।

लेखक के कुछ सुझाव भी हैं, जो उनके अनुभव का परिचय दे रहे हैं। पर सुझाव (१) के अनुसार यदि गाँव के ही तीन-चार साथियों को चुनकर गाँव में ही इकाई बनायी जाय और उनका बौद्धिक

→को किश्त पड़ी। भीगता हुआ यह मौन जुलूस शांति से गन्तव्य को पहुँचा।

पर कार्य अभी ही खत्म नहीं हुआ। सारे सैनिक गांधी-शांति-प्रतिष्ठान में एकत्रित हुए। सबके चेहरे पर अपूर्व उत्साह लिए एक के बाद एक शान्तिमय क्रांति का गीत वे गा रहे थे। रह-रह कर उनके होंठ सूख रहे थे। नहीं रहा गया तो इच्छा हुई कि कहूँ, 'थोड़ा सुस्ता लो, पानी पी लो।' पर आँखों के आगे भागते ही उजाड़ खेत, टूटी झोपड़ियाँ और उन नन्हे मासूमों के चेहरे घूम गये। समय रहते समाज को सावधान नहीं किया गया, टूटी झोपड़ियों को बनाया नहीं गया, तो भविष्य ...? नहीं, शान्तिसेना और आराम? हर्गिज नहीं! जाने कब की पढ़ी पंक्ति मानस-पटल पर उभर आयी—"समय की धारा भूल क्या देखना, किसको तो पड़ी है धरा अधखनी!"

—किशोरी

तरुण शान्तिसेना, मुजफ्फरपुर

वर्ग बनाया जाय तो यह बाकी साथियों के साथ अन्याय होगा। हमें गाँव की इकाई का सदस्य गाँव के सर्व साथियों को बनाना चाहिए और सबका बौद्धिक परिष्कार करना चाहिए। यह कार्यान्वयन की दृष्टि से भी असुविधाजनक नहीं है। अन्यथा ये कुछ मित्र, साथी की गरिमा खोकर चरवाहे बन जायेंगे। गाँव से लेकर जिला-स्तर तक कुछ साथियों का 'कैडर' खड़ा किये जाने की बात भी जँचती नहीं है (सुझाव ४)। 'कैडर' तो स्वयं बन जाता है, बनाया नहीं जाना चाहिए। यदि कहीं 'कैडर' स्वयं बना है तो उसका आधार मजबूत ही होगा, पर यदि हम 'कैडर' बनाने लगेंगे तो अनेक खतरे आयेंगे हमारे सामने, आधार में कई कीड़े आसानी से लग जा सकते हैं। यदि हम नाभिक का निर्माण करेंगे तो वह स्वयं भी विखंडित हो जायगी और यदि नाभिक स्वयं बनेंगे तो वहाँ स्थायी परमाणु का जन्म होगा ही। ८ वाँ सुझाव भी इसी आधार पर सही है कि हम 'कैडर' बनाते हैं या हमारे बनते हैं। हमने अब तक 'कैडर' बनाने की कोशिश की है, इसलिए जो वास्तव में 'कैडर' बन सकते थे वे या तो छिटक गये या दब गये। इसके अपवाद भी 'कैडर' हैं, तो अपवाद नियम को मजबूत बनाते हैं। यही कारण है कि हमारे कुछ महारथियों को भी कुछ कदम रोक लेने पड़े, ताकि वे प्रवाह से अलग न जा पड़ें, यही कारण है कि एक तरुण शांति-सैनिक खादी-संस्था से निकलकर महाविद्यालय का प्राध्यापक बनता है तो उसे तन से भारी मुक्ति महसूस होती है। तरुण-शांतिसेना के कार्य में उसका उत्साह बढ़ता ही है।

अत: मैं समझता हूँ, हमारे सामने संगठन के नये स्वरूप की खोज की नहीं, वरन् अपनी निष्ठाएँ गहरी करने की समस्या है। उन सच्ची निष्ठा पर आधारित संगठन ही अहिंसक, अर्थात् सफल, हो सकेगा, अन्यथा हम कैसा भी संगठन खड़ा कर लें, अहिंसा की दिशा में कुछ नहीं कर सकेंगे।

'परिचर्चा' लगता है बिलकुल तटस्थ भाव का प्रकाशन है। दृष्टि आलोचनात्मक →

ग्रामस्वराज्य कोष के लिए अपील तथा स्पष्टीकरण

प्रिय बंधु,

विनोबा-जन्मशताब्दी-स्वराज्य-कोष समर्पण-समारोह एवं सर्व सेवा संघ का अधिवेशन सफलतापूर्वक सम्पन्न हुआ। आप सब भाई-बहनों एवं अनेक नागरिकों के सहयोग से करीब ९४ लाख रुपयों का कोष एकत्रित हो सका, इसलिए आप सब बधाई के पात्र हैं।

लेकिन अभी कोष की राशि हमारे संकल्प के अनुसार एक करोड़ नहीं हुई। अतएव कोष संग्रह की अवधि ३१ दिसम्बर १९७० तक बढ़ायी गयी है। अतः कोष इस साल के अंत तक खुला है। अब आप अपने जिलों का एवं प्रदेश का लक्ष्यांक पूरा कर सकेंगे। जिन जिलों में या प्रदेशों में लक्ष्यांक पूरे हो गये हैं वहाँ भी आसानी से अधिक रकम इकट्ठा की जा सकती हो तो इस साल के अन्त तक इकट्ठी की जानी चाहिए। इससे एक करोड़ तक पहुँचने में मदद होगी और ग्रामस्वराज्य के काम के लिए साधन उपलब्ध होंगे। कोष की रकम का विनियोग किन कामों में हो, इस विषय में सर्व सेवा संघ की प्रबंध समिति का इसका प्रस्ताव एवं कोष का उद्देश्य स्पष्ट है। इन प्रस्तावों के अनुसार भूदान-ग्रामस्वराज के एवं शान्तिसेना के कामों में यह रकम खर्च होगी। ग्रामदान-प्राप्ति, पुष्टि, शान्ति-सेना शिविर, प्रचार, कार्यकर्ताओं का मानधन, इन मदों में यह खर्च होगा। इस रकम को तीन साल के भीतर समाप्त कर ग्रामस्वराज के काम को आगे बढ़ाना है।

अतः इस रकम को निधि के रूप में रखकर इसके ब्याज पर दस-बीस साल संगठन का खर्च चले और मूल धन ज्यों-का-त्यों रहे, ऐसी योजना ग्रामस्वराज्य-कोष की नहीं है। वैसे ही कार्यालय के लिए मकान बनाना, प्रचार के लिए मोटर, जीप इत्यादि वाहन लेना, आदि लम्बी मियाद के पूँजी के स्वरूप के खर्च इसमें से नहीं करने हैं। कुछ जिले साप्ताहिक या पाक्षिक पत्र प्रचार की दृष्टि से निकालने का सोचते हैं। यह भी नहीं करना है, ऐसा किया तो प्रदेश की पत्रिका को धक्का लगेगा। और एक दो जिलों के अनुभवों पर कोई पत्रिका समृद्ध नहीं हो सकती।

प्रत्येक सर्वोदय मण्डल के पास कोष का १० प्रतिशत रहेगा। प्रदेश एवं जिला सर्वोदय मण्डल के कार्यकर्ता आपस में बैठकर तय करेंगे कि इस ९० प्रतिशत में से प्रदेश के पास कितना हिस्सा रहे एवं जहाँ संगठित जिला सर्वोदय मण्डल हो वहाँ उन्हें कितना दिया जाय, जहाँ प्रदेश सर्वोदय मण्डल न हो वहाँ किसके पास यह रकम रहे और किन्हें खर्च का अधिकार दिया जाय, यह सब प्रदेश के कार्यकर्ताओं की सलाह से तय करेगा।

आपके जिले में एवं प्रदेश में जिन नागरिकों ने या रचनात्मक संस्थाओं के कार्यकर्ताओं ने एवं सरकारी अधिकारियों ने कोष के काम में विशेष मदद की हो, ऐसे हर जिले से ५ व्यक्तियों के नाम पूरे पते के साथ भेजने की कृपा करें। सब उनसे सम्पर्क रखने की योजना बना रहा है। महाराष्ट्र ने एवं अन्य कुछ प्रान्तों ने योजना बनायी है कि ५० रु० से अधिक रकम देनेवाले दाता को वर्ष भर भूदान-पत्रिका भेंट में दी जाय। आप भी ऐसा कुछ करने की कृपा करें।

कोष-संग्रह का अखिरी आँकड़ा हर माह के अंत में ग्रामस्वराज्य-कोष संग्रह समिति, ६ राजघाट कालोनी, नयी दिल्ली-१ को भेजने की कृपा करें।

आप प्रसन्न होंगे।

विनीत

[signature]

मंत्री, सर्व सेवा संघ

—नहीं, परिष्कार की है। इस सम्मेलन के सभी सुझाव मान्य हैं, स्वागत योग्य हैं। कौन सुझाव महत्वपूर्ण है, कहना मुश्किल है। यदि सन् १९७२ तक हमें सचमुच ही ग्रामसभाओं का निर्माण कर लेना है तो सन् १९७१ के उत्तरार्द्ध में ही इन सुझावों की पूर्ति कर लेनी होगी। इसमें या तो हमारे, हमारे सिद्धान्तों पर गहरी निष्ठा का प्रमाण मिल जायेगा या हमारी निष्ठाएँ और गहरी होंगी।

—कुमार शुभमूर्ति

'शान्तिधाम',

सोनपुर, दरभंगा, बिहार।

मुजफ्फरपुर की डाक

ग्रामसभा का गठन

रजवाड़ा पंचायत के मुकुन्दपुर गाँव में ग्रामसभा का चुनाव ३ अक्तूबर को सम्पन्न हुआ। सर्वसम्मति से सर्वश्री नन्दीपत महतो अध्यक्ष एवं बजरंगी सहनी मंत्री चुने गये। ज्ञातव्य है कि इस पंचायत के पोखरी गाँव में भी ग्रामसभा का गठन हो गया है। मुकुन्दपुर गाँव में ग्रामदान-पुष्टि हेतु नोटिस तामिल हो गयी है। इस पंचायत के रजवाड़ा भगवान, रजवाड़ा डीह एवं मानिकपुर गाँवों में प्रयास चल रहा है। कुछ भूमिवानों के हठ के कारण अभी प्रगति रुकी हुई है।

रोहुआ पंचायत में काम प्रगति पर

रोहुआ गाँव के रोहुआ राजाराम, रोहुआ बाबूठ में हस्ताक्षर-अभियान जारी है। भूमिहीनों के साथ-साथ अनेक बड़े भूमिवानों ने उत्साहपूर्वक ग्रामदान-प्रपत्र पर हस्ताक्षर कर दिया है। इस गाँव में श्री वैद्यनाथ प्रसाद सिंह, जो प्रखंड के ही नहीं इस जिला के एक बड़े भूमिवानों में हैं, अभी सम्मिलित नहीं हुए हैं। उनके शामिल करने का प्रयास चल रहा है। इस पंचायत में जे० पी० की अब तक दो सभाएँ हो चुकी हैं। पंचायत के सभी गाँवों में जे० पी० के भाषण का कार्यक्रम तय हो चुका है।

मणिका गाँव में श्रमदान

४ अक्तूबर—सामुदायिक सप्ताह के अवसर पर मणिका गाँव के मुख्य सड़क पर मुसहरी प्रखंड-विकास पदाधिकारी श्री धीरेन्द्र कुमार वर्मा के नेतृत्व में मणिका के साथियों ने श्रमदान किया।

—'जयप्रकाश शिविर समाचार' से

इस अंक में

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पै०), विदेश में २२ रु०; या २५ शिलिंग या ३ डालर।
... द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं मनोहर प्रेस, वाराणसी में मुद्रित

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

सम्पादक
राममूर्ति

वर्ष : १७ सोमवार
अंक : ५-६ ९ नवम्बर, '७०

पत्रिका विभाग
सर्व सेवा संघ, राजघाट, वाराणसी-१
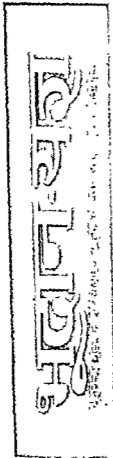
विज्ञान-युग की साधना

प्रश्न—विज्ञान-युग में साधना का स्वरूप क्या होगा ?

उत्तर—यह पूछने की जरूरत नहीं। कारण, विज्ञान से जीवन बनता ही जाता है। आज पानसे का घर यहाँ से आधा फर्लांग भी न होगा, फिर भी उसके बच्चे यहाँ साइकिल से आते हैं। हमारे जमाने में इतनी साइकिलें न थीं। अब तो जगह-जगह साइकिलें दिखाई पड़ती हैं। जीवन का स्वरूप ही बदल गया है। पुराने जमाने में हजामत करने का खतरा न था। इसलिए ऋषि दाढ़ी और सिर के बाल बढ़ाते थे। वे ऋषि आपके सुन्दर चेहरे देखें, तो कहेंगे : "अहा, आप लोग कितने भाग्यवान हैं! विज्ञान से इस तरह जीवन बदलता रहता है। साधना विज्ञान की विरोधी नहीं हो सकती, बल्कि उसके अनुकूल ही रहेगी। विज्ञान के कारण मानव में गम्भीरता विशेष आ गयी है। विज्ञान-युग के सैनिक शान्तिपूर्वक, विचारपूर्वक योजना बनाकर ठीक दिशा में यंत्र बैठाकर लड़ेंगे। पहले विरोधी की परवाह न कर गुस्से में आवेश के साथ द्वेष से, प्रतिशोध की भावना से लड़ते थे। लेकिन अब वैसा करने लगे तो खुद का नाश होगा, इस तरह सैनिकों को सोचना पड़ता है। तात्पर्य, प्राचीन युग आवेश-प्रधान था तो अब योजना-प्रधान, बुद्धि-प्रधान युग है। विज्ञान के कारण युद्ध का स्वरूप बदला, इसी तरह साधना का भी बदलेगा। इसलिए आपको जो कुछ करना हो, विज्ञान का सम्मान करके ही करना होगा।

गोपुरी, वर्धा —विनोबा
४-५-'७०

ग्रामदान और जनप्रमाद

महोदय,

ग्रामदान-अभियान का एक लक्ष्य लोक-शक्ति की साधना और संग्रह है। इस दृष्टि से लोकपौरुष और अभिक्रम को जगाना आवश्यक माना गया है। गाँवों में इस कार्यक्रम को लेकर जाने पर अलग-अलग लोगों के अलग-अलग अनुभव आये हैं। अनेक कार्यकर्ताओं ने बताया कि भूमिवानों में से अधिकांश ने इसे अव्यावहारिक और भावुक कहा। शायद इस कारण भी कि उनसे यह कार्यक्रम कुछ ठोस त्याग की माँग करता है। भूमिहीनों ने हस्ताक्षर देने में कोई आनाकानी नहीं की। आदिवासी क्षेत्रों में संगठित विरोध भी उभरा।

इस तरह कुल मिलाकर ऐसा लगा कि *अन्य कार्यक्रमों की तरह इसके प्रति* भी सामान्य जन ने तटस्थ और निरपेक्ष रुख अपनाया। उसके पौरुष और अभि-क्रम को *जगाने और उत्प्रेरित करने में* यह भी कोई कारगर भूमिका नहीं अदा कर सका। बुद्धिजीवियों के लिए तो यह बड़ा ही निरस रहा है।

दरअसल इस देश के बुद्धिजीवी अभी तक उधार चिन्तन और व्याख्या के इतने शिकार हैं कि अपनी मूल परम्पराओं से जुड़ी मौलिक चिंतनधारा को भी वे क्रांतिकारी मानने को तैयार नहीं हैं। पश्चिम से आनेवाली हर बू और वायु को वे नूतन और अभीष्ट मानने के अभ्यस्त हो गये हैं।

बावजूद इसके, यह भी एक तथ्य है कि सर्वोदय आंदोलन ने अपनी ओर से युक्तिपूर्वक ऐसे प्रयत्न नहीं किये हैं, जिनसे यह यहाँ के बुद्धिजीवियों की मंगेतर बनने में सक्षम हो। इस कमी की ओर आंदोलन के प्रणेताओं का ध्यान जाना ही चाहिए। हम कोई योग-समाधि में नहीं हैं। हम समाज में समरस होकर चलेंगे तभी समाज से तादात्म्य स्थापित होगा और उसके क्रिया-कलापों को नयी दिशा, स्वेच्छित मोड़ दे सकेंगे। समाज-परिवर्तन में बुद्धिजीवियों की भूमिका की उपेक्षा मौजूँ और श्लाघ्य नहीं।

हमें इस ओर भी मुखातिब होना होगा कि क्या कारण है कि ग्रामदान का कार्यक्रम व्यापक जनप्रमाद को तोड़ने में सक्षम सिद्ध नहीं हो रहा है। क्या इस कार्यक्रम में कुछ संशोधन और परिवर्द्धन तो अपेक्षित नहीं ?

एक बात तो स्पष्ट दीखती है कि अनार्थिक जानिवाले किसानों से जमीन *की माँग करना उनके खुद की रोटी के* सवाल को पहेली बना देना है। उनके गले यह बात उतरती भी नहीं। साथ ही जिन्हें *दस-पाँच कट्ठे मिलेंगे उनसे उनकी समस्या* का भी समाधान नहीं होता। उनकी क्षमता हल-बैल-बीज रखने की नहीं *बनती और दान में प्राप्त होने के कारण* उनमें उसके महत्त्व का बोध भी प्रकट नहीं होता। उनके पौरुष और आत्म-सम्मान पर भी इसका प्रतिकूल ही प्रभाव पड़ता है। देश की परम्परा में दान के अधिकारी या तो अपंग और अशक्त रहे हैं या फिर वे ब्राह्मण जो उत्पादन के कार्यों से अलग रहकर समाज को विद्या-दान, ज्ञानदान और आदर्शदान देने में रत रहे हैं। इसलिए समाज के उस बड़े समुदाय को, जो श्रम का महान न्यासी और कर्ता है, दानाश्रित बनाना एक ऐसी प्रवृत्ति को जन्म देना है जिसकी तार्किक परिणति नैतिक पराभव में होती है।

लेकिन इन श्रमिकों का, भूमिहीन खेतिहर मजदूरों का रहन-सहन और सामाजिक प्रतिष्ठा कैसे बढ़े यह प्रश्न ग्रामसभा को हल करना ही होगा। मुझे लगता है कि जो मजदूर जिस किसान से सम्बद्ध हो उस किसान से उसके बागमीन की जमीन के लिए दो से तीन कट्ठे जमीन की माँग करनी होगी। साथ ही प्रति एकड़ प्रति वर्ष औसत उपज की सीमा के बाद की उपज में श्रमिकों को आधे का हिस्सेदार बनाना होगा। इससे एक लाभ यह भी होगा कि श्रमिकों को प्रबन्ध-बोझ के अनावश्यक बोझ से राहत मिल जायगी और किसानों को जो यह शिकायत है कि मजदूर मजदूरी के मुताबिक काम नहीं करते वह भी दूर हो जायगी, क्योंकि तब अधिक उपज के लिए अधिक श्रम करने की प्रेरणा मजदूरों में जगेगी।

इधर पूर्ण सामाजिक स्वामित्ववाले देश, रूस में कुछ ऐसी प्रवृत्तियाँ प्रकट हुई हैं, जिनसे वहाँ की सरकार और प्रबन्धक काफी परेशान हैं। फार्मों, डेअरियों और कारखानों में, जो प्रायः सभी ऐसे प्रतिष्ठानों में मजदूर अब असामान्य रूप से काम से *अनुपस्थित रहने लगे हैं। उनमें शराब-*खोरी की लतें बेहद बढ़ गयी हैं। काम में अरुचि और बहानेबाजियाँ बढ़ गयी हैं। *ये बतौर मिसाल कही गयी।* असल प्रश्न यह है कि ग्रामसभाओं को कैसे अधिक-से-अधिक लोकप्रिय, सक्रिय और व्यावहारिक बनाया जाय।

इस व्यावहारिक शब्द पर आदर्श-वादियों को सदा से आपत्ति रहती आयी है, ठीक उसी तरह जिस तरह यथार्थ-वादियों को आपत्ति आदर्शवादियों पर रही है। दोनों ने एक-दूसरे को सिद्धांत और अमल के नाम पर लांछित और तिरस्कृत किया है। लेकिन ग्रामदान-अभियान में यह भेद कोई समस्या बनकर नहीं प्रकट हुआ है। आगे अमल का क्षितिज खुला है। यदि यह तथ्य मान्य हो कि जनप्रमाद को तोड़ने में हम कारगर नहीं हुए हैं, यदि यह तथ्य स्वीकार हो कि हमारे कार्यक्रम में जनता ने पुरजोर भाग नहीं लिया है तो इसके कारणों पर वैज्ञानिक ढंग से चिन्तन अपेक्षित है। उस पर से यदि अपने कार्यक्रम में कहीं संशोधन करना जरूरी हो तो एक सही क्रांतिकारी और युगद्रष्टा की तरह उसे तुरन्त और साहसपूर्वक करना चाहिए।

यदि उपरोक्त दोनों तथ्यों पर दुविधा और शंका हो, ऐसा लगे कि ये तथ्य नहीं, बल्कि मेरे अभ्यान्तर की कल्पना है तो इस पर मुझे चर्चा करनी चाहिए। मुझे भय है कि ऐसा न होने से पराभव प्रकृत होगा।

—विजयकुमार

हम बुरा क्यों मानें ?

जब पाकिस्तान को किसी दूसरे देश—अमेरिका, रूस, चीन या फ्रान्स—से लड़ाई के अस्त्र-शस्त्र मिलते हैं तो भारत को नाराजगी होती है, और जब भारत को मिलते हैं तो पाकिस्तान को होती है। कौन चाहता है कि उसके दुश्मन की ताकत बढ़े ! गांवों में एक कहावत है कि अरहर की दाल और पड़ोसी जितना ही गले उतना अच्छा।

अभी हाल में पाकिस्तान को अमेरिका से लड़ाई के जो सामान मिले हैं उन्हें लेकर भारत में रोष प्रकट किया गया है। अमेरिका भारत का मित्र है, अमेरिका पाकिस्तान का भी मित्र है। अमेरिका जानता है कि उसने पाकिस्तान को जो अस्त्र-शस्त्र दिये हैं उनका इस्तेमाल अगर कभी होगा तो भारत के ही विरुद्ध होगा। यही हाल रूस से पाकिस्तान को मिले अस्त्र-शस्त्रों का है। पाकिस्तान का एक ही 'शत्रु' है—भारत, लेकिन भारत के दो 'शत्रु' हैं—पाकिस्तान और चीन। इसलिए भारत अपने अस्त्र-शस्त्रों का इस्तेमाल चीन के, जो अमेरिका और रूस दोनों का शत्रु है, खिलाफ भी कर सकता है, लेकिन पाकिस्तान का निशाना सिवाय भारत के दूसरा नहीं है। जो कुछ भी हो, हम कैसे कह सकते हैं कि अमेरिका या रूस पाकिस्तान की मदद न करे और पाकिस्तान कैसे कह सकता है कि वे भारत को मदद न करें ? हम यह भी कैसे कहें कि अमेरिका या रूस करनीयत है, और हम दोनों को लड़ाना चाहते हैं ? बात सच यह है कि जब हम और पाकिस्तान आपस में मित्र बनकर नहीं रह सकते तो कभी भी लड़ाई हो सकती है, और जब लड़ाई का भय है तो लड़ने का सामान चा... सामान तीन ही जगह से मिल सकता है—अपने कारखानों से, खुले बाजार से, मित्र देशों से। पाकिस्तान और भारत दोनों इन सब जगहों से लड़ाई के सामान इकट्ठा कर रहे हैं, और करते रहेंगे। इसके लिए किसी दूसरे को दोष देना बेकार है। हर देश दोस्ती-दुश्मनी, लेन-देन, अपने हित को सामने रखकर करता है। यह सोचना भी बेकार है कि अमेरिका किन्हीं बातों से नाराज होकर पाकिस्तान को अस्त्र दे रहा है। फिर अमेरिका या रूस को दोस्ती ही नहीं देखनी है, अपना व्यापार भी निभाना है। इसलिए अगर हम चाहते हैं कि दूसरों के पक्षपात से बचें तो भारत और पाकिस्तान को पड़ोसी की तरह रहना सीखना पड़ेगा। आज की दुनिया में जितनी शत्रुताएं हैं उनमें अगर सबसे अधिक नादानी से भरी हुई कोई शत्रुता है तो भारत और पाकिस्तान की। दोनों देशों की जनता की रोटी तथा दोनों देशों के विकास और रक्षा के लिए दोनों की परस्पर-मित्रता अनिवार्य है, लेकिन आज इस मोटी बात को भी समझनेवाले कितने हैं ? आयेगा वह दिन, जब जनता इस बात को समझेगी, नेता समझें या न समझें। तब तक जो स्थिति है उसे स्वीकार करना पड़ेगा।

चीन और भारत के बीच जो स्थिति है वह दूसरी है। दक्षिण और दक्षिण-पूर्वी एशिया के संदर्भ में चीन भारत का 'शत्रु' हो सकता है, किन्तु चीन के पास एक ऐसा अस्त्र है जो भारत के पास नहीं है। वह अस्त्र अणु-बम नहीं है जिसका विस्फोट चीन समय-समय पर करता रहता है, बल्कि मुक्ति का वह दर्शन और विचार है जिसके द्वारा चीन एशिया के गरीबों को अपनी ओर आकर्षित कर रहा है। क्या कारण है कि भारत में माओवादियों की संख्या बढ़ रही है ? शायद पाकिस्तान में भी बढ़ रही है। हम अपने करोड़ों-करोड़ गरीबों को माओवादी होने दें, और राज्यों में माओवादी सरकारें बनने दें, और साथ ही चीन को 'शत्रु' मानते रहें, यह स्थिति कब तक चलेगी ? इस स्थिति का जवाब शस्त्रों में नहीं है। जवाब है सामाजिक क्रान्ति में। क्रान्ति हमारी धरती में से आयेगी, अमेरिका या रूस के शस्त्रागारों से नहीं। हमें सोचना चाहिए कि भारत अपनी स्वतंत्रता तभी रख सकता है जब वह अपनी भारतीयता कायम रखे, और अपनी समस्याओं का भारतीय उत्तर ढूंढ़े। अगर हम उत्तर के लिए बाहर देखेंगे, तो हमें बाहर की मर्जी का गुलाम रहना ही पड़ेगा। कभी वह मर्जी हमारे अनुकूल न हुई तो हमें बुरा लगेगा। मुहताज को यह हक कहां है कि वह दाता को बुरा कहे ? ●

चाह कुछ, राह कुछ

दुनिया के इतिहास में बीसवीं शताब्दी से पहले किस शताब्दी में इतना विज्ञान था, इतना शोध और शिक्षण था, इतनी यान्त्रिकी थी ? किस शताब्दी ने चन्द्रलोक की यात्रा देखी थी ? कब विश्व-मैत्री की इतनी विश्व-व्यापी चाह थी ?

किस शताब्दी ने इतना नर-संहार किया था जितना इस बीसवीं शताब्दी ने किया है ? जितना खून पहले की सब शताब्दियों ने मिलकर बहाया था, उतना यह एक शताब्दी अब तक बहा चुकी है। और, अभी तीस वर्ष बचे हैं।

कोई नहीं कहता कि तीसरा विश्व-युद्ध होनेवाला है। जिन देशों के पास संहार के सबसे अधिक साधन हैं वे युद्ध से सबसे अधिक बचना चाहते हैं, फिर भी मनुष्य-जाति युद्ध के भय से मुक्त नहीं है। एक ओर युद्ध से होनेवाले विश्व-संहार का भय है, तो दूसरी ओर यह भय भी है कि अगर जनसंख्या इसी तरह बढ़ती रही तो आदमी के खड़े होने की भी जगह नहीं रह जायगी।

भय युद्ध का नहीं है, युद्ध से कहीं अधिक भय हर देश में बढ़ती हुई हिंसा का है। बड़े युद्ध पर अणुबम ने रोक लगा रखी है। अपने बढ़कर युद्ध छेड़ने का साहस नहीं है, क्योंकि हर एक जानता है कि अणु-युद्ध में हारनेवाला तो खत्म होगा ही, जीतनेवाला भी

खतम होगा ! जब हार-जीत नहीं तो युद्ध का आनंद नहीं। युद्ध से बड़ा प्रश्न यह है कि देश के भीतर जो सवाल पैदा हो रहे हैं उनके हल होने के लिए शान्ति और सलाह के रास्ते बन्द होते चले जा रहे हैं। हर समस्या के समाधान के लिए लोग हिंसा का सहारा ले रहे हैं। अमेरिका में काले-गोरे का सवाल, पश्चिम के देशों में युवक-विद्रोह, अफ्रीका के कबीलों में आपसी झगड़े, भारत जैसे देशों में सम्प्रदायों, अल्पसंख्यकों, तथा विभिन्न क्षेत्रों की एकता, आर्थिक विकास और विषमता, आदि ऐसे प्रश्न हैं जिनके हल होने के शान्तिपूर्ण रास्ते आसानी से दिखायी नहीं देते। आज के समाज में परिस्थिति से विवश होकर अभाव और अन्याय से मुक्ति के लिए लोग हिंसा पर उतारू होते जा रहे हैं। लोग जानते हैं कि हिंसा में बुराई है, यह भी जानते हैं कि हिंसा की शक्ति जनता से कहीं अधिक सरकार के पास है, फिर भी हिंसा आसान लगती है क्योंकि वह परिचित है, जब कि शान्ति और अहिंसा की अच्छाई अभी बहुत-कुछ अपरिचित है। परिचित बुराई अपरिचित अच्छाई से अधिक जल्दी ग्राह्य होती है। लोगों में शान्ति की चाह तो है लेकिन उसकी शक्ति संगठित नहीं है, इसलिए उसकी शक्ति में भरोसा नहीं हो पाता। मन शंका और अनास्था से घिरा रहता है।

जिस संयुक्त-राष्ट्र-संघ की इस समय रजत जयन्ती मनायी जा रही है उसकी रचना पचीस साल पहले नेताओं ने 'सामूहिक सुरक्षा' के लिए की थी। संयुक्त-राष्ट्र-संघ विश्व-मैत्री का प्रतीक बनकर अवतरित हुआ था। इतने दिनों में उसने काफी काम किया है। १२६ राष्ट्रों की सदस्यतावाले यू० एन० ओ० ने छोटे, कमजोर और नव-स्वतंत्र देशों को वाणी दी है। उन्हें एक मंच मिला है जो पहले कभी नहीं मिला था। लेकिन सामूहिक सुरक्षा, विश्व-मैत्री और गरीबी के विरुद्ध लड़ाई का माध्यम संयुक्त-राष्ट्र-संघ नहीं बन सका है। जो राष्ट्र धन और बल में बड़े हैं वे बड़े—और अधिक बड़े—रहना चाहते हैं। जिन देशों के पास अणुबम हैं वे अपनी शक्ति से अपने को सुरक्षित समझते हैं। इसीलिए उन्हें संघ की सामूहिक सुरक्षा की परवाह नहीं है। रूस और अमेरिका के सैनिक अड्डे दुनिया भर में फैले हुए हैं, फैलते जा रहे हैं। दूसरे देश अगर सुरक्षित हैं तो इन्हीं बड़े देशों की छत्रछाया में सुरक्षित हैं, सुरक्षित इसलिए हैं कि रूस और अमेरिका आपस में लड़ते नहीं। लेकिन दोनों के अपने-अपने प्रभाव-क्षेत्र हैं। दोनों ने व्यापार से, हथियार से छोटे देशों को दबा रखा है। तभी तो रूस ने चेकोस्लोवाकिया की हत्या की और अमेरिका चुपचाप देखता रहा। वियतनाम में अमेरिका नर-संहार कर रहा है, लेकिन सिवाय अस्त्र-शस्त्र दे देने के रूस दूसरा कुछ करता नहीं। रूस और अमेरिका ने सह-अस्तित्व सीख लिया है, छोटे देश मिलकर रहना जानते नहीं। सारा योरप 'एक' होने की बात सोच सकता है, लेकिन अरब-इजराइल या भारत-पाकिस्तान नहीं।

जिस मैत्री के लिए संयुक्त-राष्ट्र-संघ बना था वह मैत्री भी कहाँ है ? जो देश शस्त्र, पूँजी और बुद्धि के लिए दूसरे बड़े देशों पर आश्रित हैं उन्हें बराबरी के दर्जे का मित्र कौन मानेगा ? सम्पन्न राष्ट्र यंत्र, विज्ञान, शस्त्र और व्यापार से विभिन्न राष्ट्रों के शोषण द्वारा अपना वैभव बनाये रखने में कमी नहीं करना चाहते। वे एक हाथ से जो कर्ज और सहायता देते हैं उसे दूसरे हाथ से सूद और मुनाफे के रूप में वसूल कर लेते हैं। इतना ही नहीं, सहायता देकर वे सहायता लेनेवाले देशों में अपनी पिट्ठू सरकारें बनाये रखने की कोशिश करते हैं, वे नहीं चाहते कि उनमें कोई बुनियादी समाज-परिवर्तन हो जो उनके सैनिक और व्यापारिक हितों के विपरीत हो। द० वियतनाम में थ्यू की ऐसी ही सरकार है, जिसे आगे करके वहाँ अमेरिका की संहार-लीला चल रही है। हमारे देश की भी राजनीति में विदेशी पैसा और प्रभाव काफी घुस चुका है, और दिनोंदिन बढ़ रहा है। हर गरीब देश में बड़े देशों की कूटनीति का जाल है और स्वयं संयुक्त-राष्ट्र-संघ कूटनीतिज्ञों का ही अखाड़ा बना हुआ है। ये कूटनीतिज्ञ अपने-अपने देश की सेना, शासन, और बिजिनेस की बात बोलते हैं। जनता की बात कौन बोलता है ?

संयुक्त-राष्ट्र-संघ एक और प्रमाण है इस बात का कि मित्रता और शान्ति का प्रश्न—क्या राष्ट्रों के भीतर और क्या अंतरराष्ट्रीय स्तर पर—राजनीति के तरीकों से हल नहीं होगा। किसी भी देश की सरकार अपनी सर्वाधिकार-सम्पन्न सत्ता का कोई अंश विश्व-शान्ति के लिए न तो किसी विश्व-संस्था को देने के लिए तैयार है, और न तो प्रत्यक्ष रूप से अपनी जनता को। हर देश का शासक-वर्ग अपने देश की जनता को विकास का लोभ और आक्रमण का भय दिखाकर अनियंत्रित सत्ता अपने ही हाथ में रखना चाहता है। ऐसे शासक-वर्गों के प्रतिनिधि जहाँ इकट्ठा होंगे वहाँ सिवाय राजनैतिक शतरंज खेलने के दूसरा क्या करेंगे ? संयुक्त-राष्ट्र-संघ में यह खेल भरपूर खेला जा रहा है।

शान्ति का रास्ता साहस का रास्ता है। वह साहस आज दुनिया के किसी देश में दिखायी नहीं देता, लेकिन नियति उसकी ओर संकेत कर रही है। जिस देश की जनता अपनी आंतरिक समस्याओं का शान्तिपूर्ण हल निकालेगी, और जो अपने नित्य के जीवन में अधिक-से-अधिक शासन-मुक्त होगी, उस देश के अंदर से शान्ति और मित्रता की नयी आवाज निकलेगी जो शासकों की आवाज से बहुत भिन्न होगी। ऐसा ही देश यह कहने का साहस भी करेगा कि दुनिया का कोई सवाल शस्त्र से हल नहीं होगा। वह कहेगा ही नहीं, करके दिखायेगा भी। ऐसा देश अपनी स्वतंत्रता के लिए मर मिटने को तैयार रहेगा, और पूर्णत निर्भय रहेगा। वह लोकतंत्र और विकास की नयी पद्धति विकसित करेगा, नयी जीवन-नीति अपनायेगा। यह शक्ति तब आयेगी जब एशिया और अफ्रीका के देश अपनी परम्परा, प्रतिभा और परिस्थिति को पहचानेंगे। पूँजीवाद और साम्यवाद दोनों से अलग हटकर सोचने की जरूरत है। एशिया और अफ्रीका के प्रश्नों का उत्तर, योरप या अमेरिका के पास नहीं है। हम नाहक उनकी चिंताओं को अपनी मानते रहे हैं, और अपने प्रश्नों का उत्तर उनके

गरीबी का विकास

पिछले दो दशकों में भारतीय आर्थिक नियोजन के मुख्य दो लक्ष्य रहे हैं; एक, जनसाधारण की रहन-सहन का स्तर ऊँचा करना और दूसरा, समाजवादी समाज-रचना का एक चित्र प्रस्तुत करना।

परन्तु वास्तव में आर्थिक विकास की दिशा इससे भिन्न है। औसत नागरिक का जीवनमान ऊँचा उठाने में योजनाएँ सफल नहीं हो सकी हैं। समाज के एक वर्ग के पास सम्पन्नता जरूर पहुँची है, परन्तु विशाल जनता आज भी गरीब और दुःखी है। 'नेशनल सैंपल सर्वे' के तत्कालीन (२२वें दौर) सर्वेक्षण के अनुसार सन् १९६७-६८ में ७० प्रतिशत ग्रामीण जनता यानी २८ करोड़ १० लाख लोग भारत के स्टैण्डर्ड से भी घनघोर गरीबी के स्तर पर जीवन व्यतीत कर रही थी। इनमें उपभोग का स्तर प्रतिमाह ४० रु० या १.३३ रु० प्रतिदिन से भी नीचे था। तब से ऐसे लोगों की संख्या बराबर बढ़ रही है। ग्रामीण जनता के आधे से अधिक लोगों का यह हाल है। शहरी क्षेत्रों में गरीबी के सम्बन्ध में प्रामाणिक तथ्य प्राप्य नहीं हैं, फिर भी इतना कहा जा सकता है कि सन् १९६०-६१ की अपेक्षा सन् १९६७-६८ में शहरी बेरोजगारी में वृद्धि हुई है। सन् १९६०-६१ में ७.६ प्रतिशत शहरी आबादी यानी ६० लाख लोग, भयंकर गरीबी के शिकार थे।

व्यय के आँकड़े

व्यय के सम्बन्ध में तथ्य प्रस्तुत करने में अनेक सीमाएँ हैं, फिर भी व्यय के विश्लेषण से अध्ययन की गहराई में जाया जा सकता है और जीवनमान का सही स्वरूप समझा जा सकता है। 'नेशनल सैंपल सर्वे' द्वारा समय-समय पर ग्रामीण एवं शहरी परिवारों में व्यय की दिशा का अध्ययन किया जाता रहा है। इन सर्वेक्षणों से पारिवारिक तथा वैयक्तिक स्तर पर व्यय की जानकारी मिलती है। सारणी संख्या १ एवं २ से सन् १९६०-६१ और १९६७-६८ के बीच गरीबी में विकास की दिशा को देख सकते हैं। इन दो सारणियों से भारतीय नियोजन की कमियों की ओर भी ध्यान जाता है। सन् १९६०-६१ के अनुमान के अनुसार ग्रामीण

सारणी संख्या—१*

गरीबी का स्तर : सन् १९६०-६१

क्रम	व्यय श्रेणी (रु० प्रतिमाह)	अन्न का उपभोग प्रतिव्यक्ति प्रतिदिन (ग्राम में)		पौष्टिक मान, प्रतिव्यक्ति प्रतिदिन (ग्राम में)		पौष्टिकता की कमी (ग्राम में)	
		गाँव	शहर	गाँव	शहर	गाँव	शहर
१.	०—८	२६२	३२९	५१८	४३२	−२५६	−१०३
२.	८—११	३५२	२७७	५१८	४३२	−१६४	−५५
३.	११—१३	४१३	३८८	५१८	४३२	−१०५	−४४
४.	१३—१५	४५४	४१२	५१८	४३२	−६४	−२०
५.	१५—१८	४६१	४१९	५१८	४३२	−५७	−१३
६.	१८—२१	४९८	४४५	५१८	४३२	−२०	+१३
७.	२१—२४	५१९	४८६	५१८	४३२	+१	+५४
८.	२४—२८	५०९	५०६	५१८	४३२	+९	+७४
९.	२८—३४	५७५	४९८	५१८	४३२	+५७	+६६
१०.	३४—४३	६३२	५११	५१८	४३२	+११४	+७९
११.	४३—५५	६५५	५६५	५१८	४३२	+१३८	+१३३
१२.	५५ और उससे अधिक	८३५	५११	५१८	४३२	+३१७	+७९

नोट : चिह्न (−) पौष्टिकता में कमी तथा चिह्न (+) पौष्टिकता के अंक से अधिक को सूचित करता है।

*उद्धृत : रिजर्व बैंक आफ इण्डिया बुलेटिन, जनवरी १९७० से।

→माँगते रहे हैं। कम-से-कम इतने अनुभव के बाद अब तो हमें चेत जाना चाहिए।

विश्व-मैत्री और विश्व-शान्ति का भविष्य देश देश में उभर रही लोक-चेतना से जुड़ा हुआ दीखता है। जब तक यह चेतना संगठित होकर शक्ति नहीं बन जाती तब तक संयुक्त-राष्ट्र-संघ बना रहे, यही बहुत है। कम-से-कम यह यह याद तो दिलाता रहेगा कि आज की दुनिया में मनुष्य का अस्तित्व और विकास उसकी मनुष्यता पर ही निर्भर है। यह मनुष्यता सत्ता के राष्ट्रीय या अंतरराष्ट्रीय संगठनों के पास नहीं है। वह है जनता के पास जो अभी अपनी शक्ति को जानती नहीं। उस शक्ति को जगाना ही नये जमाने की नयी क्रान्ति को मुख्य दिशा होनी चाहिए। लोक-क्रान्ति के इस क्रम में आयेगा एक दिन जब विश्व के मंच पर शासकों की जगह लोक-सेवक इकट्ठा होंगे। अभी तो दुनिया की चाह कुछ है, राह कुछ। ●

नागरिकों का प्रतिव्यक्ति मासिक व्यय शून्य से लेकर १५-१८ रु० था। अन्न की दृष्टि से देखें तो उन्हें न्यूनतम आवश्यक पोषण-तत्त्व से भी कम प्राप्त होता था; यह कमी करीब ४९ प्रतिशत की थी। ० से ८ रु० प्रतिमाह व्यय करनेवालों में कमी करीब ११ प्रतिशत थी। सम्पूर्ण ग्रामीण आबादी की दृष्टि से ५२ प्रतिशत यानी साढ़े पैंतीस करोड़ में साढ़े अठारह करोड़ जनसंख्या घोर गरीबी की स्थिति में जीवन व्यतीत करती थी। सारणी संख्या २ से यह स्पष्ट होता है कि सन् १९६०-६१ के आँकड़ों के अनुसार जिन ५२ प्रतिशत ग्रामीण आबादी की स्थिति न्यूनतम थी, सन् १९६७-६८ में वह ७० प्रतिशत तक पहुँच गयी।

ग्रामीण क्षेत्र

आन्ध्र प्रदेश में ग्रामीण परिवारों में ७३ प्रतिशत की सौ रुपये मासिक से कम की आय है। यह भयकर स्थिति है। मध्यप्रदेश में ६६ प्रतिशत और उड़ीसा में ५७ प्रतिशत परिवार १०० रु० प्रतिमाह की लाइन के नीचे है। मद्रास, महाराष्ट्र, उ० प्र० के भी बहुसंख्यक परिवारों का यही हाल है। पंजाब, मणिपुर, त्रिपुरा में यह स्थिति एक-तिहाई परिवारों की है। *जहाँ तक शहरों का सम्बन्ध है* उत्तरप्रदेश और उड़ीसा के शहरी परिवारों के ४० प्रतिशत से अधिक परिवार १०० रु० प्रतिमाह या उससे भी कम कमाते हैं। मध्यप्रदेश, मद्रास, महाराष्ट्र, मैसूर, पंजाब और प० बंगाल के सिर्फ २० से ३० प्रतिशत परिवार १०० रु० से नीचे खर्च करते हैं। असम, गुजरात, मणिपुर, और त्रिपुरा के शहरी परिवारों की स्थिति उससे कुछ अच्छी है। असम और त्रिपुरा के शहरी परिवार, जो ३०० रु० प्रतिमाह से अधिक खर्च करते हैं, कुल परिवारों के १५ प्रतिशत से अधिक है। *उनका प्रतिशत* मैसूर में ५ प्रतिशत और उ० प्र० में ६ प्रतिशत है। ग्रामीण क्षेत्रों में ३०० रु० से अधिक खर्च करनेवाले परिवार अत्यन्त कम हैं—आंध्र, गुजरात मध्यप्रदेश, मद्रास, महाराष्ट्र, उड़ीसा, उ० प्र०, मणिपुर में ५ प्रतिशत से अधिक नहीं, तथा असम, मैसूर, पंजाब, प० बंगाल और त्रिपुरा में ५ से १० प्रतिशत। ५००.रु० से अधिक प्रतिमाह खर्च करनेवाले परिवार भारत के देहाती क्षेत्रों में कहीं भी ३ प्रतिशत से अधिक नहीं हैं—गुजरात, मद्रास, उड़ीसा, पंजाब के शहरी क्षेत्रों में भी नहीं! असम, महाराष्ट्र मैसूर, प० बंगाल, मणिपुर के शहरी क्षेत्रों में यह प्रतिशत ५ से ८ है।

सारणी सं० १ देखने से मालूम होगा कि सन् १९५१ से १९६३ के बीच ग्रामीण या शहरी जनता में से किसीका भी प्रति व्यक्ति खर्च बढ़ा नहीं है। पहली योजना की अवधि में ग्रामीणों का औसत *खर्च एक-तिहाई और शहर के लोगों का* औसत खर्च एक-चौथाई घटा है।

देश के विभिन्न क्षेत्रों में व्यय में अन्तर पर थोड़ा विस्तार से विचार करने पर कुछ बातें साफ होती हैं। महाराष्ट्र, प० बंगाल और केन्द्रशासित क्षेत्रों में तुलनात्मक दृष्टि से प्रतिव्यक्ति व्यय की राशि अधिक है। इसका मुख्य कारण यह है कि इन क्षेत्रों में कलकत्ता, बम्बई, दिल्ली जैसे बड़े नगर हैं। इसी प्रकार असम में भी व्यय का स्तर ऊँचा है और पंजाब की स्थिति औसत से कुछ अच्छी है। न्यूनतम प्रतिव्यक्ति व्यय की श्रेणी में उत्तरप्रदेश और केरल आते हैं। आंध्र, मद्रास, जम्मू-काश्मीर औसत से नीचे हैं। बिहार, उड़ीसा, मैसूर, राजस्थान की भी यही स्थिति है। केवल ग्रामीण क्षेत्रों में प्रतिव्यक्ति व्यय पर तुलनात्मक दृष्टि से विचार करने पर चित्र अधिक साफ होगा—जम्मू-कश्मीर, पंजाब, राजस्थान, गुजरात, असम तथा केन्द्रशासित क्षेत्रों में ग्रामीण व्यय का औसत अधिक है। आन्ध्र प्रदेश, केरल, महाराष्ट्र तथा उड़ीसा के ग्रामीण निम्नतम स्तर पर व्यय करते हैं, यही स्थिति बिहार, मध्यप्रदेश और मैसूर की भी है। उत्तरप्रदेश तथा प० बंगाल की ग्रामीण जनता औसत दर्जे के इर्द-गिर्द है।

[दैनिक 'इकानामिक टाइम्स', दिनांक १४-१०-'७० के लेख के आधार पर]

सारणी संख्या—२*

गरीबी का स्तर : सन् १९६७–६८ (ग्रामीण)

	व्यय का स्तर-प्रतिव्यक्ति मासिक (रुपयों में)	प्रतिव्यक्ति अन्न का उपभोग प्रतिदिन ग्राम में	पौष्टिकता प्रतिव्यक्ति प्रतिदिन (ग्राम में)	पौष्टिकता की कमी संख्या १ और २ (ग्राम में)
१.	११.८३	२५२	५१८	— २६६
२.	१६.१९	२८७	५१८	— २३१
३.	२०.२५	३३७	५१८	— १८१
४.	२४.४०	३३०	५१८	— १८८
५.	३०.४१	३७९	५१८	— १३९
६.	४०.०२	४१४	५१८	— १०४
७.	४९.९६	४७१	५१८	— ४७
८.	६०.७२ ९०.६३	४८१	५१८	— ३७

* उद्धृत : रिजर्व बैंक आफ इण्डिया बुलेटिन, जनवरी १९७० से।

भूमि-समस्या का हल किसानों के संगठन में है, न कि नक्सलवाद में

✿ श्री अण्णा सहस्रबुद्धे ✿

आज देश में जमीन का मसला हल करने के लिए समाजवादी, कम्युनिस्ट और जिन्हें नक्सलवादी कहा जाता है, उनके साथ-साथ भूदान ग्रामदान के कार्यकर्ता भी लगभग पिछले बीस वर्षों से लगे हुए हैं। फिर भी अभी समस्या का छोर हाथ में नहीं आया है। श्री जयप्रकाश नारायण जैसे नेता भी इस बात का स्वीकार करने लगे हैं कि जिन्होंने ग्रामदान-पत्रों पर हस्ताक्षर किये, आज वे वास्तविक हिस्सा वितरण करने के लिए तैयार नहीं होते। उन्होंने अपने प्रत्यक्ष अनुभव से यह देखा तो उन्हें कुछ निराशा हुई। मैं भी जब इसके पहले ग्रामदानी गाँव मँगरोठ में सन् १९५१ में वितरण के काम से गया था तो मेरा भी ऐसा ही अनुभव आया कि जमीन छोड़ने के लिए मालिक बहुत तैयार नहीं होते। मँगरोठ का ग्रामदान देश का पहला ग्रामदान है, जो १८ वर्ष पहले सन् १९५२ में हुआ था। तब से ग्रामदान आंदोलन प्रखण्डदान, जिलादान और प्रदेशदान तक पहुँचा है। इतनी ऊँचाई पर पहुँचने के बाद [illegible] कहते हैं कि हमें बिहार के जैसा [illegible] प्रदेशदान का प्रयोग अन्य प्रदेशों में नहीं करना चाहिए। प्राप्ति और पुष्टि का काम साथ-साथ चलना चाहिए। इसका कारण यह है कि एक ओर गांधीजी के रास्ते से विनोबाजी के त्याग, तपस्या और सतत यात्रा से देश में एक वायुमंडल बना है और दूसरी तरह से नक्सलवादियों की लूट, हत्या आदि से भी एक वायुमंडल बना है कि जमीन पर गरीब का हक होना चाहिए। लेकिन जिस तरह नक्सलवादी [illegible] होने लगे हैं उस तरह से ग्रामदान का [illegible] न हो, इसलिए इस दिशा में मैं दो पहलू सोचता हूँ।

किसानों और भूमिहीनों का संगठन हो

पहली बात यह है कि गाँवों में काम करनेवाले भूमिहीनों का एक मजबूत संगठन बनना चाहिए। शासन की परिभाषा के अनुसार भूमिहीन वह है जो अपनी जीविका का आधे से अधिक भाग दूसरे की जमीन पर मेहनत करके प्राप्त करता है। इस दृष्टि से देखने पर गाँवों में लगभग ६० से ८० प्रतिशत तक किसान भूमिहीनों की श्रेणी में आ जायेंगे। इनकी 'बारगेनिंग' शक्ति बढ़नी चाहिए। वह हिम्मत करके भूमि-मालिक से कह सकें कि जमीन पर हम काम करते हैं, हमारा भी हक है।

अभी तक भूमि का प्रश्न राज्य-सरकारों के अधीन है। इन राज्यों के बजाय केन्द्र के अधीन लाना होगा, ऐसा कुछ मित्र प्रायः कहा करते हैं। पर सोवियत रूस में इसका अनुभव अच्छा नहीं आया है। उत्पादन बढ़ाने की दृष्टि से यह कतई लाभप्रद नहीं हुआ है। केन्द्र के अधीन जमीन का मसला लेकर राष्ट्रीयकरण का नारा लगाकर [illegible] चुनाव जीता जा सकता है, पर भूमि समस्या का हल नहीं हो सकता।

राष्ट्रीयकरण की तरह ही एक दूसरा नारा [illegible] 'इकनॉमिक होल्डिंग' के बारे में लगाया जाता है। इस कथन के पीछे अर्थशास्त्रियों का तर्क रहता है कि जमीन की एक निश्चित सीमा बाँध दें और उस सम्बन्ध में कानून बना दें। पर अभी तक के जितने भी भूमि सुधार कानून बने हैं उन पर ही यहाँ तक कितना अमल हो सका है, यह हम सबके सामने स्पष्ट है और जहाँ तक 'इकनॉमिक होल्डिंग' का सवाल है, जमीन के बड़े-बड़े मालिक उसे अपने रिश्तेदारों और फर्जी नामों में बाँट करके बच सकते हैं।

अभी देश में 'कंज्यूमर गुड्स इंडस्ट्रीज' कुल ८२ कही जाती हैं, जो कि बड़े-बड़े लोगों के हाथों में हैं। अगर कुछ करना ही है तो इनका राष्ट्रीयकरण कर देना चाहिए और इसमें 'पब्लिक सेक्टर' की अर्थात् सरकार की 'कम्प्लीट मोनोपली' होनी चाहिए।

खेती की भूख आज बड़े-बड़े रईसों, अमीरों और उद्योगपतियों को भी है। उस भूख का हल यही है कि जब गाँव में किसानों का मजबूत संगठन होगा और ये बाहरवाले धनवान लोग शहर में बैठकर उससे अधिक लाभ नहीं कमा सकेंगे तो फिर इस धन्धे में नहीं पड़ेंगे। आज तो दुनिया के दूसरे देशों में खेती से भागने का प्रयास है। अमेरिका में खेती करनेवालों की संख्या घट-घटकर कम होती गयी है। इसी तरह से जापान की स्थिति है। इन देशों में लोग उद्योगों में अधिक लाभ पा जाते हैं, इसलिए खेती की ओर उन्मुख नहीं होते। उन्हें खेती में ज्यादा खट-खट लगती है।

कृषि और उद्योग साथ-साथ

भूदान-ग्रामदानमूलक ग्रामोद्योगप्रधान अहिंसक क्रांति का नारा हमने वर्षों पहले दिया था, पर उसके क्रियान्वयन की प्रक्रिया में हमने बहुत कुछ नहीं किया। हमें खेत पर काम करनेवाले को इज्जत और आर्थिक [illegible], दोनों को मजबूत करना होगा। खेती पनपने के लिए उद्योगों का उपयोग हो और उद्योगों को बढ़ाने के लिए खेती का उत्पादन हो, तभी किसान की हालत अच्छी हो सकती है। हम उद्योगों को खेती से अलग करके चला नहीं सकते और वे चल भी नहीं सकते। अपने देश में ८० फीसदी जमीन वर्षा के पानी पर आधारित है। कुछ नदी नहरों तथा ट्यूब-वेल आदि की सुविधा से यह प्रतिशत कम होकर ७० तक लाया हुआ कहा जा सकता है, पर फिर भी खेती

की उन्नति के लिए ग्रामोद्योगों का सहारा लेना पड़ेगा; जिन दिनों खेती का काम न हो, किसान उद्योग करें ऐसी स्थिति और वातावरण निर्माण करना होगा। आज जापान में जब खेती में धान की रोपाई का समय होता है तो स्कूल-कालेज, फैक्टरी, मिलीटरी, पुलिस, सरकारी कार्यालय आदि सभी सामाजिक उत्तरदायित्व के नाते बंद रहते हैं। और सभी को खेत पर काम करने के लिए जाना पड़ता है। उन्हें उनका वेतन उनके दफ्तरों से मिलता रहता है, पर वे किसानों के यहाँ रहकर उनके साथ भोजन करके १२ से १४ घंटे काम करते हैं। सरकार रेडियो तथा अन्य साधनों से उनके कार्य-स्थलों की घोषणा किया करती है।

अपने देश में भले हो जमीन छोटे-छोटे टुकड़ों में बँटी हो, पर किसान स्वयं ही काम करता रहता है और वह भी एक ऐसे मजदूर के रूप में जिसे वाजिब मजदूरी नहीं मिलती। उसके काम के बारे में अपने देश में सामाजिक दायित्व की भावना का नितान्त अभाव है। खेती ही नहीं, बल्कि छोटे-छोटे ग्रामोद्योगों और कुटीर उद्योगों की भी ऐसी ही स्थिति है। यदि हमें भूदान-ग्रामदानमूलक ग्रामोद्योग-प्रधान अहिंसक समाज-रचना करनी है तो खेती और ग्रामोद्योगों के प्रति सामाजिक दायित्व की भावना को ग्रामदान की मूलभूत कल्पना मानना चाहिए।

ग्रामदान की व्यावहारिक साधना

विनोबाजी ने ग्रामदान-आंदोलन का एक व्यापक रूप देश में खड़ा कर दिया है। उन्होंने उसके बारे में जो भी कहा है वह एक द्रष्टा के नाते उनका दर्शन कहा जायेगा। पर इस स्थिति पर पहुँचने के लिए अथवा यह कहिए कि उन्होंने जो आंदोलन खड़ा किया है वह सतत चलता रहे इसलिए गाँव-गाँव के एक-एक किसान-मजदूर का उससे तादात्म्य स्थापित होना चाहिए। मेरी दृष्टि से इसकी व्यावहारिक साधना के चार चरण हो सकते हैं—

१. ग्रामसभा चाहे भले ही बन जाय, पर वह तब तक शक्तिशाली नहीं होगी जब तक कि गाँव में बड़े काश्तकारों का प्रभाव बना रहेगा। ग्रामदान-संकल्प की तरह से ही ग्रामसभा का गठन भी कागज पर होगा, पर अमल नहीं हो पायेगा। इसके लिए तो जैसा कि मैं ऊपर कह आया हूँ, मजदूर जिनमें कि किसान भी सम्मिलित हैं, संगठित हों और अपनी 'बारगेनिंग' शक्ति को सिद्ध और समृद्ध करें। उनके मन में पक्का विश्वास जगे कि उत्पादक साधनों में उनका उतना ही हिस्सा है जितना जमीन, पूँजी, और अक्ल का है। वर्तमान समय में खेती और उद्योगों के बारे में चार तत्त्व कहे जाते हैं—

(१) कैपिटल, (२) मीन्स आफ प्रोडक्शन, (३) मैनेजीरियल पावर या मैनेजमेंट, (४) लेबर। इनमें लेबर को सबसे नीचे स्थान है और विशेषतः हमारे देश में एग्रीकल्चरल लेबर को।

२. इस शक्ति के खड़े हो जाने के बाद दूसरा प्रश्न आता है सत्याग्रह अथवा नैतिक दबाव का। नैतिक दबाव भी कम-से-कम अहिंसा है। मैं तो यहाँ तक कहना चाहूँगा कि यदि ये बड़े-बड़े जमीन के मालिक सहज रूप से किसान की इस शक्ति और संगठन को स्वीकार नहीं करते तो उन पर नैतिक प्रेशर लाना जरूरी होगा।

जब जहाँ १०० किसान इकट्ठे होंगे तब उनको देखते ही जमीन के मालिक शहर भाग जायेंगे। वे गाँव में रहेंगे ही नहीं। हमारा तो प्रयास यह होगा कि वे किसानों के साथ बैठकर तय करें कि जो उनकी जमीन में लागत है उस पर उनके लगाये हुए धन का ब्याज व मशीनरी आदि का घिसारा निकालने के बाद जो शुद्ध लाभ बचता है उसमें से आधा काम करनेवालों को मिलना चाहिए। और उस आधे का आधा अर्थात् २५ प्रतिशत मजदूर के शेयर के रूप में, उसकी साझेदारी के रूप में जमा होना चाहिए और बाकी का २५ प्रतिशत जमीन के मालिक को मिले। इस तरह के 'एग्रीमेंट' को देखकर एक ओर तो पैसेवालों की जमीन खरीदने की भूख कम होगी और दूसरी ओर किसान की साझेदारी खड़ी होगी। अगर जमीन का मालिक जमीन छोड़कर शहर चला जाता है और बात करने को तैयार नहीं होता तो उसकी जमीन गाँव के किसान जोतकर उसका हिस्सा ग्रामसभा में जमा कर देंगे।

३. इस तरह की प्रक्रिया से कार्यक्षमता भी बढ़ेगी, जमीन का उत्पादन बढ़ेगा और जमीन के मालिकों का अहिंसक समाज-रचना की दिशा में प्रशिक्षण होगा।

४. जहाँ तक बिना जमीन-मालिक के पूँजी लगाने का सवाल है, वहाँ ग्रामदान-एक्ट के अन्तर्गत ग्रामसभाओं को बैंक से धन मिलने की व्यवस्था भी हो रही है और जिला-स्तर के सहयोगी संस्थान, जैसे कोआपरेटिव सोसायटीज व कारपोरेशन्स आदि भी धन देने के लिए तैयार हैं।

हमारे देश की एक परिस्थिति यह भी है कि कई जगह भूमिहीन मजदूरों की संख्या के अनुपात में खेती में पर्याप्त काम उपलब्ध नहीं है। ऐसी स्थिति में उन मजदूरों का संगठन करने में यह खतरा है कि आसानी से उनमें फूट डाली जा सकती है और डाली भी जाती है। उनमें से कुछ लोग निहित स्वार्थों के आसानी से शिकार हो जाते हैं। इसलिए प्रयत्न यह हो कि सामान्यतया ८०% तक किसान-मजदूर जहाँ संगठित होते हैं, वहाँ उनकी शक्ति खड़ी होगी और उनकी 'बारगेनिंग पावर' बन सकेगी।

अन्त में मैं यही कहना चाहूँगा कि भूमि-समस्या का हल न तो नारेबाजी में है और न केवल कोरी भावना में है और न नक्सलवादियों की तरह से लूट-खसोट में है और न बोरे में बटा जमीन के बँटवारा होने मात्र से ही सम्भव है। बल्कि जो भूमि पर काम करते हैं उनके सामूहिक संगठन में है, और उनकी जन-शक्ति में है। उनका संगठन खड़ा करना ही उनकी जन-शक्ति बनाने का एक सहज और सरल तथा कारगर तरीका है।

प्रस्तुतकर्ता : गुरशरण

एवं असफलता का पूरा भान था। इसलिए आवश्यक था कि जनता के मानस, जागरूकता एवं शक्ति के अनुसार तथा उसके अनुकूल कदम उठाया जाय। भूमि-सुधार के जो प्रारम्भिक प्रयास किये गये उससे परम्परागत नेतागीरी तथा पूंजीवादी तत्त्व समाप्त होंगे ऐसी आशा रखी गयी थी। इसमें काफी सफलता भी मिली। परन्तु सन् १९५४-५५ में जब कृषि में सामूहिक जीवन एवं सहकारिता के प्रयोग प्रारम्भ किये तो कुछ कटु अनुभव भी आये। पुराने नेताओं में पुन. उभार आया तथा बड़े किसान सहकारिता से अलग रहने का प्रयास करने लगे। इन्हीं बातों को देखकर ग्रामीण क्षेत्रों में साम्यवादी युवक-संगठनों को मजबूत बनाया जाने लगा। यह मान्यता होती गयी कि सामाजिक क्रान्ति युवक-संगठन से ही संभव है। इसीलिए गांव-गांव में साम्यवादी दल का युवा-संगठन बनाया गया।

सामूहिकरण के चरण

सन् १९५५ का वर्ष साम्यवादी चीन के संगठन के इतिहास में महत्वपूर्ण माना गया है। यह ग्रामीण वर्ग-संघर्ष का वर्ष था। संगठन की दृष्टि से कृषि-उत्पादक सहकारी समितियों का गठन भी इसी वर्ष हुआ। जब यह संगठन एक बार मजबूत हो गया तो इसके विकास में ज्यादा कठिनाई नहीं आयी। प्रारम्भ में कृषि-उत्पादक सहकारी समिति में संपत्ति के अधिकार-सम्बन्धी नियम बहुत कड़े नहीं रखे गये। *प्रायः सीमित संपत्ति-अधिकार को स्वीकार* किया गया। फिर भी विरोध एवं हिंसा का सामना करना पड़ा। समग्र दृष्टि से विचार करें तो स्पष्ट होता है कि सोवियत रूस की अपेक्षा यहाँ इस कार्य में कम विरोध एवं हिंसा का सामना करना पड़ा। कृषि-उत्पादक सहकारी समिति की सदस्यता स्वैच्छिक रखी गयी। बाद के वर्षों में प्राप्त जानकारी के अनुसार कुछ लोगों ने समिति की सदस्यता त्यागी भी है।

सन् १९५५ के अंत में पूरे देश के किसानों में से ६३.३ प्रतिशत किसान किसी-न-किसी प्रकार के सहकारी समिति के सदस्य थे और सन् १९५६ में यह संख्या ८३ प्रतिशत हो गयी। लेकिन सन् १९५७ में कुल सदस्य-संख्या बढ़कर ९७ प्रतिशत तक पहुँच गयी।

यहाँ यह भी याद रखने की चीज है कि यहाँ मात्र संख्यात्मक वृद्धि नहीं हुई, बल्कि गुणात्मक दृष्टि से भी परिवर्तन आया। सन् १९५७ के मध्य तक ९६ प्रतिशत कृषि-उत्पादक सहकारी समितियाँ अपने प्रारम्भिक चरण को पार कर चुकी थीं। ये समितियाँ पूर्णतया उस सामाजिक स्तर तक पहुँच चुकी थीं और तुलनात्मक दृष्टि से सोवियत संघ के कोलखोज की अच्छी स्थिति में पहुँच चुकी थीं। १४ सितम्बर १९५७ को केन्द्रीय कमेटी ने यह घोषणा की थी कि अब तक के अनुभवों से कृषि-उत्पादक सहकारी समितियों ने अनेक सीमाओं के बावजूद ग्राम-स्तर पर सही दिशा में प्रगति की है। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि इन समितियों के माध्यम से न केवल किसानों की संपत्ति का समाजीकरण हुआ है, बल्कि इसका विकास छोटी इकाई से संपूर्ण ग्राम-इकाई की ओर भी हुआ है।

यहाँ यह कहा जा सकता है कि कृषि-उत्पादक सहकारी समिति के प्रारम्भिक स्टेज तथा उच्चतम स्टेज के बीच स्पष्ट विभाजन कर सकना संभव नहीं है, जिसकी कल्पना १९५५ में, इसके प्रारम्भ करते समय, की गयी थी। जो भी हो, कृषि-उत्पादक सहकारी समिति के उच्चतम स्टेज के बारे में विचार अधिक स्पष्ट है। जैसा कि ऊपर कहा गया है, पूर्ण समूहीकरण का तात्पर्य है संपत्ति का समाजीकरण होना और गाँव को एक आर्थिक इकाई में *संगठित करना। उच्चतम स्तरीय कृषि-*उत्पादक सहकारी समिति एक ऐसे संगठन के रूप में विकसित होने का प्रयास करती है जिसमें सभी प्राकृतिक साधन, भूमि (जिसमें पुराने जमींदार की भूमि भी शामिल है) को एक ग्राम-इकाई रूप में माना जाय। इस प्रकार क्षेत्र की इस प्रकार की सभी सहकारी समितियाँ संपूर्ण ग्राम-क्षेत्र के नियोजित विकास का संयोजन करेंगी। यह प्राकृतिक दृष्टि से सामाजिक-आर्थिक संगठन का आधार भी बनेगा, परन्तु राजनीतिक दृष्टि से इसका उत्तर-*दायित्व राज्य के प्रति होगा।* प्रारम्भिक स्तर पर इसका मुख्य कार्य है परम्परागत, रूढ़िगत तथा पुराने नेतृत्व तथा शक्ति को समाप्त करना। यदि वह एक बार टूट जाता है तो आगे हमारे लिए रास्ता साफ हो जाता है।

इन्हीं उद्देश्यों को लेकर चीन में ग्रामीण समाज को पुनर्गठित किया गया।

(नोट – कृषि-उत्पादक सहकारी समिति से कम्यून की ओर किस प्रकार विकास हुआ तथा आज क्या स्थिति है? अगले अंक में।)

('चाइना रिडिंग्स'–३ भागों में प्रकाशित 'कम्यूनिस्ट चाइना' नामक ग्रंथ पर आधारित)

प्रस्तुतकर्ता अवध प्रसाद

श्री ठाकुरदास बंग का उ० प्र० में दौरा

स्थान	पहुँचने की तारीख		
मुरादाबाद	९	,,	,,
अल्मोड़ा	१०-११	,,	,,
कानपुर	१२	,,	,,
इलाहाबाद	१३	,,	,,
मगहर (बस्ती)	१४	,,	,,
वाराणसी	१५-१६	,,	,,
लखनऊ	१७	,,	,,

—अक्षयकुमार करण

ग्रामस्वराज्य-कोष का विनियोग और बचा हुआ काम पूरा करने का अवसर

❀ सिद्धराज ढड्ढा ❀

इस मार्च महीने में जब पू० विनोबाजी की ७५वीं वर्षगाँठ के अवसर पर ग्रामदान-आन्दोलन के लिए एक करोड़ रुपये का "ग्रामस्वराज्य-कोष" एकत्र करके उन्हें भेंट करने का निश्चय किया गया तब कई शुभ-चिन्तकों ने देश की परिस्थिति को देखते हुए इस बात की आगाही की थी कि ऐसा "अनरियलिस्टिक"—वास्तविकता से दूर, लक्ष्य रखना और उसे फिर पूरा न कर सकना ठीक नहीं है। बहुत कम लोगों को आशा थी कि निश्चित अवधि के अन्दर हम ५० लाख तक भी पहुँच सकेंगे।

पर पिछली दो अक्तूबर को, जब देश के विभिन्न प्रदेशों से आये हुए कार्यकर्ता सेवाग्राम में इकट्ठे हुए तो वातावरण में आत्मविश्वास की एक अनुभूति प्रगट हो रही थी। चार बड़े प्रदेशों का लक्ष्यांक न सिर्फ पूरा हो चुका था, बल्कि उससे आगे निकल गया था। दो-चार प्रान्तों को छोड़कर अन्य प्रान्तों के काम की रिपोर्ट भी उत्साहजनक थी। उस समय तक ग्रामस्वराज्य-कोष में इकट्ठे साढ़े बासठ लाख रुपये हम लोग पू० विनोबाजी को समर्पण कर सके, यह एक अच्छी उपलब्धि थी। सर्व सेवा संघ की प्रबन्ध समिति तथा उपस्थित सभी साथियों को लगा कि कुछ समय और लेकर अब एक करोड़ का लक्ष्यांक पूरा कर डालना चाहिए। शुरुआत की तरह अब यह लक्ष्य अवास्तविक या बहुत दूर का नहीं लग रहा था। कुछ प्रान्तों में तो वास्तव में संग्रह का काम १०–१५ दिन पहले ही शुरू हो सका था। अतः सर्वसम्मति से ग्रामस्वराज्य-कोष के संग्रह की अवधि ३१ दिसम्बर १९७० तक बढ़ा दी गयी।

सेवाग्राम के बाद अब फिर जगह-जगह बचे हुए काम को पूरा करने की योजना बनायी जा रही है। राजस्थान, उत्तरप्रदेश, तमिलनाडु, केरल आदि प्रान्तों में सक्रिय रूप से काम जारी है। किसी भी बड़े काम के लिए लक्ष्य तो हमेशा ऊँचा ही रखना होता है। अगर संकल्प करते समय हम हमारी शक्ति के अपने अंदाज के अनुसार 'वास्तविक' या 'रियलिस्टिक' लक्ष्यांक रखें तो बड़ा काम शायद ही कभी संभव हो। लक्ष्य के लिए अगर सच्चाई के साथ शक्ति लगाकर काम किया जाय तो चाहे लक्ष्य की पूर्ति न भी हो, उस प्रयत्न मात्र से काम करनेवालों की शक्ति बढ़ती है। ग्रामस्वराज्य-कोष का आयोजन इस दृष्टि से सर्वोदय-आन्दोलन के लिए एक अनुकूल घटना और अवसर साबित हुआ है। अब ३१ दिसम्बर तक का जो समय हमारे पास है उसमें हम सब बचे हुए काम को पूरा करने में कोई कसर नहीं उठा रखेंगे ऐसी आशा है।

कोष का उपयोग

कई दृष्टियों से संग्रह से भी ज्यादा मुश्किल काम कोष के खर्च और उपयोग का है। आज देश में चारों ओर जैसी परिस्थिति बनी हुई है उसमें कई प्रकार की शंकाओं का उठना स्वाभाविक है। "इकट्ठा किया हुआ पैसा काम करनेवालों में आपसी वैमनस्य का कारण तो नहीं बन जायगा? कोष का उपयोग तो सही ढंग से होगा? काम के लिए इकट्ठी धन-राशि प्राप्त होने से कार्यकर्ताओं की शक्ति मोथरी तो नहीं हो जायगी? कोष के विनियोग का अधिकार चन्द हाथों में केन्द्रित तो नहीं हो जायगा? आदि।"

सौभाग्य से आरम्भ में ही सर्व सेवा संघ ने, जिसके तत्त्वावधान में ग्रामस्वराज्य-कोष के संग्रह का काम आयोजित किया गया है, कोष के विनियोग के सम्बन्ध में कुछ ऐसे निर्णय ले लिये थे जिनके कारण यह आशा की जाती है कि कोष के विनियोग में इस प्रकार की शंकाओं की गुंजाइश कम-से-कम रहेगी। इन निर्णयों को फिर से समझ लेना ठीक होगा।

किस काम में खर्च होगा

(१) पहली बात तो सर्व सेवा संघ ने यह स्पष्ट कर दी है कि इस कोष का उपयोग ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य आन्दोलन के लिए होगा, अन्य इधर-उधर के कामों में नहीं। संग्रह के दौरान कई दाताओं ने पूछा कि क्या उनके दान की रकम से गाँवों में कोई सेवा या निर्माण-कार्य हो सकेंगे। स्पष्ट है कि इस प्रकार के कामों की आवश्यकता और गुंजाइश इतनी अधिक है कि उसके लिए एक करोड़ तो क्या, कई करोड़ों की धन-राशि भी काफी नहीं हो सकती। हिन्दुस्तान के साढ़े ५ लाख गाँवों के लिए एक करोड़ का मतलब एक गाँव के पीछे २० रुपये का भी नहीं हुआ। अतः ग्रामस्वराज्य-कोष का उपयोग केवल ग्रामदान के प्रचार, ग्रामदान प्राप्त करने के काम, प्राप्त ग्रामदानों में ग्राम-सभाओं के निर्माण आदि पुष्टि-कार्य, शान्तिसेना की विविध प्रवृत्तियों व आन्दोलन में लगे हुए कार्यकर्ताओं के निर्वाह, आदि में होगा यह निश्चित कर दिया गया है। वास्तव में यह काम अपने आप में इतना बड़ा है कि ज्यों-ज्यों ग्रामदान आन्दोलन बढ़ेगा त्यों-त्यों एक करोड़ जितनी रकम तो देशभर में हर साल इस काम के लिए लगेगी। अभी भी यह तय है कि ग्रामस्वराज्य-कोष ३ साल के भीतर खर्च हो जाना चाहिए, ताकि उसमें से संचित निधि के दोष पैदा न हों।

विकेन्द्रित उपयोग

(२) दूसरा महत्त्वपूर्ण निर्णय कोष के विनियोग के बारे में यह लिया गया कि जिस

प्रदेश में जितना संग्रह होगा उसका ९० प्रतिशत उसी प्रदेश में खर्च होगा, सिवाय बम्बई, कलकत्ता, दिल्ली जैसे राष्ट्रीय नगरों के संग्रह का केवल १० प्रतिशत अखिल भारतीय काम के लिए सर्व सेवा संघ को दिया जायगा। प्रदेश के अन्तर्गत प्रान्त, जिला, या उससे नीचे ब्लाक तक, किस अनुपात में कोष का उपयोग हो इसका निर्णय प्रान्तवाले स्वयं मिलकर करेंगे। सामान्य तौर पर यह माना गया है कि, नीचे के क्षेत्रों में ही कोष का अधिक-से-अधिक विनियोग हो। आमतौर पर प्रान्तीय काम के लिए भी १० प्रतिशत, या कहीं-कहीं २० प्रतिशत, रखने का तय हुआ है, शेष ७० या ८० प्रतिशत रकम जिस जिले से संग्रह होगी, सामान्य तौर पर उसी जिले में ग्रामदान-ग्राम-स्वराज्य-कोष के काम में खर्च होगी।

खर्च कौन करेंगे

(३) कोष में इकट्ठी हुई धन-राशि का खर्च किनके द्वारा हो यह प्रश्न भी महत्व का है। जिस काम में कोष खर्च होनेवाला है, अर्थात् ग्रामदान-आदोलन में, वह काम आज नये सिरे से शुरू नहीं करना है। पिछले १५-२० वर्षों से ग्रामदान आदोलन का काम कम-ज्यादा सभी प्रदेशों में चल रहा है। अधिकांश प्रान्तों में, और कई जिलों में, प्रान्तीय या जिला सर्वोदय मंडल, या इसी प्रकार की अन्य मान्य संस्थाएँ हैं जो ग्रामदान आदोलन में पहले से लगी हुई हैं। कोष का विनियोग इन्हीं मडलों या संस्थाओं के जरिये होगा। जिन प्रदेशों में, या जिलों में पहले से ऐसी कोई व्यवस्था नहीं होगी वहाँ स्थानीय मित्रों की सलाह से सर्व सेवा संघ ग्रामदान के काम को आगे बढ़ाने के लिए उचित व्यवस्था खड़ी करेगा। इसमें यह भावना बिलकुल नहीं है कि सर्व सेवा संघ अपने हाथ में अधिकार को केन्द्रित करे। लेकिन कोष का उपयोग ठीक से हो इस दृष्टि से जहाँ पहले की कोई व्यवस्था नहीं है, या जहाँ कहीं विवाद हो, वहाँ निर्णय का अधिकार आखिर किसी-न-किसीको सौंपना होगा। चूंकि कोष का आयोजन देशभर में सर्व सेवा संघ के तत्त्वावधान में हुआ है और उसके सदुपयोग की जिम्मेदारी संघ की है, और सर्व सेवा संघ ही देशभर में चल रहे सर्वोदय आदोलन के समन्वय का काम करता आया है, इसलिए यह उचित ही है कि उपरोक्त परिस्थिति में निर्णय का अधिकार सर्व सेवा संघ को हो।

नये मित्रों का सहयोग लें

(४) ग्रामस्वराज्य-कोष के दौरान कई ऐसे नये मित्र सामने आये हैं जो सीधे ग्रामदान या सर्वोदय आदोलन में नहीं लगे हुए हैं लेकिन जिनकी सहानुभूति इस आदोलन के साथ है। कोष के संग्रह में जगह-जगह ऐसे कई मित्रों का हार्दिक सहयोग मिला है। ग्रामदान आदोलन में हम सदा लोगों की शक्ति को जागृत और संगठित करने की बात करते रहे हैं। हमारी सबकी यह भावना है कि आदोलन का काम केवल कुछ कार्यकर्ताओं का काम न रह जाय, बल्कि लोग स्वयं उस काम को उठा लें। आदोलन के काम में नये-नये मित्रों का समावेश होता जाय। अतः संग्रह के दौरान जिन मित्रों से अधिक निकट का सम्पर्क हुआ और सहयोग मिला है वह आगे भी बराबर जारी रहे इसलिए प्रदेश सर्वोदय मडलों, या आदोलन से सम्बन्धित अन्य मान्य संस्थाओं को यह प्रार्थना की गयी है कि वे प्रदेश और जिला-स्तर पर, हर जगह, ऐसे नये मित्रों को बाकायदा अपनी बैठकों और चर्चाओं में शामिल करें, ताकि आदोलन के कार्यक्रम और कोष के विनियोग में उनका सम्पर्क जुड़े और सहयोग सहज ही मिलता रहे। देशभर में अधिक-से-अधिक ऐसे नये मित्रों के साथ सम्पर्क रखने की योजना सर्व सेवा संघ भी बना रहा है।

संकुचित भावना न पनपे

कोष के विनियोग के सम्बन्ध में एक आखिरी बात और। यह तो ठीक है कि कोष का विनियोग केन्द्रित ढंग से नहीं होना चाहिए और सामान्य तौर पर जहाँ संग्रह हुआ है वहीं उसका उपयोग भी होना चाहिए, पर इस बारे में यह सावधानी रखने की आवश्यकता है कि यह वृत्ति संकुचितता में परिणत न हो जाय। 'जहाँ से संग्रह हुआ है वहीं खर्च हो," इसका मतलब अन्ततोगत्वा यहाँ तक जा सकता है कि जिस व्यक्ति ने दान दिया है उसीके लिए वह खर्च हो, और वह स्वयं ही उसका खर्च भी करे। जाहिर है कि इससे कोष-संग्रह का सारा उद्देश्य ही समाप्त हो जाता है। दान-भावना का उद्देश्य यह है कि हम दूसरे के लिए खर्च करें, जिसे उसकी अधिक-से-अधिक आवश्यकता हो। केन्द्रीकरण के दोष को टालने के लिए यह जरूर मान्य किया है कि सामान्य तौर पर कोष का उपयोग उसी क्षेत्र में हो, पर ग्रामदान आदोलन में लगे हुए हम कार्यकर्ताओं को इस बात की सावधानी निरन्तर रखनी है कि इस उद्देश्य में से संकुचित भावना का निर्माण न होने पाये। अतः ब्लाक, जिला या प्रदेश, हर स्तर पर हमें समझबूझकर इस बात की कोशिश करनी चाहिए कि उस-उस स्तर पर विनियोग के लिए उपलब्ध राशि में से आवश्यकतानुसार दूसरे क्षेत्रों के लिए भी उपयोग हो।

विनियोग के बारे में ऊपर बतायी हुई बातें हमारे ध्यान में रहेंगी, और यह सावधानी हम बरतेंगे, तो निश्चय ही ग्राम-स्वराज्य-कोष की यह घटना सर्वोदय-आंदोलन के लिए और देश के लिए मंगलकारी होगी।

पाठकों से

आप 'भूदान-यज्ञ' के पाठक हैं। आपसे निवेदन है कि आप 'भूदान-यज्ञ' के कम-से-कम एक ग्राहक बनाइए और अपने प्रिय पत्र की संख्या बढ़ाइए। आशा है, पाठक इस नम्र निवेदन की ओर ध्यान देने की कृपा करेंगे।

—सम्पादक

मान्यता तथा प्रस्ताव आदि के सम्बन्ध में अपने ढग से लड़ने में नही चूकते थे। बापू की मृत्यु से सारे भारत ने और विश्व के भी कुछ अश ने महसूस किया कि एक महान विभूति-ज्योति ससार से चली गयी। परन्तु जमनालालजी की मृत्यु से भारत के भिन्न-भिन्न भागो में बिखरे हुए हजारो कार्यकर्त्ताओं के परिवार को यह अनुभव हुआ कि हमारे घर का कोई बड़ा बुजुर्ग मार्गदर्शक चला गया। मेरी जान में इससे मिलता-जुलता अनुभव स्व० त्रिवेदई की मृत्यु के समय अलबत्ता लोगों को हुआ था। और सरदार पटेल ने उनकी मृत्यु के बाद ठीक ही कहा था कि हजारो कार्यकर्ताओ को, देश-सेवको को पालने-पोपनेवाला चला गया।

इस समय हम एक विलक्षण, क्षोभ, अशांति और उथल-पुथल की स्थिति से गुजर रहे हैं। राष्ट्र में जो नेता-वर्ग है उनको एक दिशा नही दिखाई देती और बीसों तरह से सर्वसाधारण का बुद्धिभेद होता हुआ नजर आता है। ऐसे समय में गाधी-युग के महान व्यक्तियो का स्मरण स्वाभ हो आता है। मन में बरबस यह ख्याल आता ही रहता है कि आज वह होते तो हम इस प्रकार दुर्दशाग्रस्त नही रह पाते। यह हमारी कमी और कमजोरी हो सकती है। परन्तु जहाँ तक हमारी बुद्धि पहुँचती है और आज भी जो देश के बडे नेता विद्यमान हैं वे भी बराबर यह कहते हैं कि अन्ततोगत्वा हमें गांधीजी के ही रास्ते पर चलना होगा।

जमनालालजी जीवन भर न केवल गाधीजी के ही रास्ते पर चले, बल्कि गांधीजी की प्रत्येक प्रवृत्तियों का भार वहन करने में, चाहे वह राजनैतिक या रचनात्मक हो, सचमुच ही पुत्र की तरह श्रद्धा-भक्ति से अपने पुत्र-धर्म का पालन करते रहे हैं। जमनालालजी का जीवन एक खुली पुस्तक थी और आज स्वत. स्फूर्ति से जो यह समारोह सारे भारत में मनाया जा रहा है यह इंगित करता है कि देश को आज जमनालालजी जैसे देशभक्त नेता की परम आवश्यकता है। यह समय कोई लम्बे लेख या वक्तव्य देने का नही है। जमनालालजी के गुणो, उनकी प्रवृत्तियो को स्मरण करके अपने आपको अनुप्रेरित करने का है। इसलिए उनके सम्बन्ध में सक्षेप में पू० श्री केदारनाथजी ने, जिनके कि व्यक्तित्व और विचारो का आदर स्वयं बापूजी करते थे, बहुत थोडे में और यथार्थ रूप में जमनालालजी के गुणो का जो वर्णन किया है उसे यहाँ उद्धृत किये बिना नही रहा जाता। "जमनालालजी का देश, समाज, राष्ट्र के कार्य का पसारा सारे भारत में फैल गया था। शायद ही कोई होगा उन जैसा धनिक किन्तु निर्लोभी, कृतृत्वशाली किन्तु गर्वरहित, सुखमय स्थिति में बढ़ा हुआ किन्तु परिश्रमी, सर्व-साधन-संपन्न किन्तु सयमी, मान-सम्मान से प्रतिष्ठित किन्तु विनयशील, लाखो-करोडो का मालिक किन्तु सेवा-परायण, द्रव्य कमाने में कुशल किन्तु उसे सत्कार्य में लगाने में और अधिक उदार। वह मिश्र-निष्ठ, राष्ट्रभक्त समद्रष्टा थे। उनमें शौर्य, धैर्य, औदार्य, कर्तृत्व एक-साथ विद्यमान थे, जिससे वह सहज ही प्रतिभावान और इतना सब होते हुए भी श्रेयार्थी बन सके। ऐसा पुरुष भारत में मिलना कठिन है। वह श्रेयार्थी थे इसलिए श्रेय-प्राप्ति के लिए बेचैन थे। वह सत्य-निष्ठ थे इसलिए उनमें दम्भ के लिए तिरस्कार था। उनका ध्येय पवित्र था, कल्याणकारी था, भारत-व्यापी था, इतना ही नही, सारी मानव जाति उसमें समा सके इतना उदात्त और विशाल भी था।"

त्यागी

जमनालालजी ने १७ वर्ष की अवस्था में ही एक प्रसग पर उनको विरासत में मिली हुई सारी संपत्ति त्याग दी थी। परन्तु फिर से उन्हें दादाजी के आग्रह से वह संपत्ति और विरासत स्वीकार करनी पड़ी। परन्तु अन्त तक उनके मन में यह भावना बनी रही कि यह संपत्ति देश-सेवा के काम में लगे। फिर उन्होने सारी संपत्ति का एक ट्रस्ट बनाने का तय किया और इस बारे में गाधीजी से कई बार परामर्श हुआ। परन्तु उसको पूरा करने के पहिले एका-एक उनका स्वर्गवास हो गया। उनकी इस भावना का स्मरण और आदर करके उनके पुत्रो ने उस सारी संपत्ति का एक सार्वजनिक सेवा ट्रस्ट *'जमनालाल बजाज सेवा ट्रस्ट'* कर दिया और उनकी सच्चे अर्थों में सह-धर्मिणी पत्नी जानकी देवी बजाज ने भी उनके लिए पति द्वारा सौंपी गयी सारी संपत्ति गोसेवा के लिए समर्पित कर दी।

बजाज परिवार में इस प्रकार त्याग के क्षेत्र में परस्पर होड़ को देखते हुए इस समय राम और उनके भाइयों के पारस्परिक स्नेह और त्याग का बरबस स्मरण हो आता है। वनवास अकेले राम को मिला था, परन्तु लक्ष्मण और सीता ने भोग को त्यागकर अपने आप त्याग और कष्ट का जीवन स्वीकार किया। भरत के लिए तो उनकी मात कैकेई ने राजगद्दी पर बिठाने का षड्यं ही किया था। फिर भी भरत ने स्वेच्छा से राजपद के वैभव को त्यागकर राम की खड़ाऊ रखकर और साधु जीवन स्वीकार कर अपना जीवन बिताया।

देश के इस महान चिन्तापूर्ण संकट-काल में भगवान हम सबको इसी प्रकार देश और समाज के लिए त्याग, कष्ट-सहन और पारस्परिक स्नेह और आदर रखने की प्रेरणा दें। ●

प्रस्तावित

नयी तालीम समिति का संविधान

सब प्रकार की राष्ट्रीय प्रगति अन्ततोगत्वा उस शिक्षा की संकल्पना, लक्ष्य और पद्धति पर निर्भर करती है, जो किसी राष्ट्र के नागरिक को उपलब्ध होती है। अतः देश की राष्ट्रीय शिक्षण-प्रणाली को नये नींव पर निर्मित करना है। इस विश्वास के साथ भारतीय कांग्रेस कमेटी ने गांधीजी के मार्गदर्शन में एक अखिल भारतीय शिक्षा-परिषद की स्थापना की और तदनुसार सन् १९३८ में डॉ० जाकिर हुसेन की अध्यक्षता में और श्री ई० डब्ल्यू० आर्यनायकम् के संयोजकत्व में हिन्दुस्तानी तालीमी संघ का संगठन हुआ। हिन्दुस्तानी तालीमी संघ निरन्तर २२ वर्षों तक नयी तालीम की नीति, कार्यक्रम और योजना के प्रचार-प्रसार का, अध्यापकों के प्रशिक्षण का, प्रायोगिक स्कूलों को चलाने और उनके मूल्यांकन का और नयी तालीम का वार्षिक अधिवेशन बुलाने का कार्य करता रहा। संघ को गांधीजी के मार्गदर्शन में काम करने का स्वर्ण अवसर प्राप्त हुआ और गांधीजी ने हर कदम पर इसका पथ-निर्देशन किया।

सन् १९५९ का वर्ष हिन्दुस्तानी तालीमी संघ के इतिहास में एक नये मोड़ का वर्ष था। इस समय तक भूदान आन्दोलन अपने पूरे जोर पर था और नयी तालीम उन आर्थिक और सामाजिक परिवर्तन से अलग नहीं रह सकती थी, जो देश में हो रहे थे। अब हिन्दुस्तानी तालीमी संघ ने जब यह अनुभव किया कि देश के रचनात्मक कार्यक्रमों के प्रति एक समन्वयात्मक दृष्टिकोण की जरूरत है, तो उसने प्रस्ताव किया कि अब नयी तालीम के प्रचार और संगठन के लिए एक अलग संगठन की आवश्यकता नहीं है। अतः सन् १९५९ में संघ का सर्व सेवा संघ की मुख्य धारा के साथ विलयन हो गया। इस बीच में भूदान-आन्दोलन ग्रामदान की शक्ल में विकसित हो गया और इसका लक्ष्य हुआ ग्राम स्वराज्य की स्थापना—ग्रामस्वराज्य जिसकी कल्पना गांधीजी ने की थी और विनोबाजी जिसको अमली रूप देने की चेष्टा कर रहे हैं, जो नयी तालीम का भी लक्ष्य रहा है। इसी अवधि में ग्रामदान-तूफान में सर्वोदय के सारे कार्यकर्ताओं और नेताओं का समय और शक्ति लगी रही और इसका परिणाम यह हुआ कि डेढ़ लाख से अधिक ग्रामदान, हजारों प्रखंडदान और सैकड़ों जिलादान और दो राज्यदान भी प्राप्त हुए।

सन् १९६५ में सर्व सेवा संघ ने नयी दिल्ली में नयी तालीम का एक 'कन्वेंशन' (सम्मेलन) बुलाया और सर्वसम्मति से नयी तालीम के लिए पहले की भांति ही अलग स्वतन्त्र संगठन के पुनर्गठन की संस्तुति की। इस प्रस्ताव के आधार पर सर्व सेवा संघ ने एक 'नयी तालीम समिति' की नियुक्ति की, जो उन व्यक्तियों और संस्थाओं से सम्पर्क रखे जो बेसिक शिक्षा के काम में लगे हैं और जो गोष्ठियों, और कान्फ्रेंसों के माध्यम से जनमत का शिक्षण करें। लेकिन ग्रामदान-आन्दोलन की आशातीत सफलता के कारण यह आवश्यक समझा गया कि ग्रामदानी क्षेत्रों में निर्माण-कार्य पर अधिकतर केन्द्रित किया जाय और इसीलिए आवश्यक समझा गया कि

(१) नयी तालीम के विचारों और निर्माण के प्रयोगों के प्रचार-प्रसार के लिए एक विशेष समिति बनायी जाय, जो सर्व सेवा संघ के लक्ष्यों के अनुकूल, उस संस्था के अभिन्न अंग के रूप में, कार्यकारी संगठन का काम करे।

(२) नाम :

इस संगठन का नाम 'नयी तालीम समिति' होगा।

(३) मुख्य कार्यालय :

समिति का कार्यालय सेवाग्राम अथवा उसके स्वीकृत किसी दूसरे स्थान पर होगा।

(४) लक्ष्य :

(क) नयी तालीम की इस संकल्पना का प्रचार करना कि नयी तालीम जीवन के माध्यम से, जीवन के लिए, जीवन भर की शिक्षा है और समुदाय की सेवा और सहयोग पर आधारित शोषणविहीन अहिंसक समाज के माध्यम से, व्यक्ति का सन्तुलित विकास उसका लक्ष्य है।

(ख) शिक्षा-संस्थाओं को इस विचार के कार्यान्वयन में सहायता करना।

(ग) उपर्युक्त लक्ष्यों के संदर्भ में शैक्षिक अभ्यासों का मूल्यांकन।

(५) कार्य :

(क) ग्राम-स्वराज्य की स्थापना के कार्यक्रम में सर्व सेवा संघ की सहायता करना और विशेषतः ग्रामदानी क्षेत्रों के बच्चों, युवकों और प्रौढ़ों को नयी तालीम के लाइन पर शिक्षण देना और इन क्षेत्रों के विकास के अनुकूल शैक्षिक योजना और कार्यक्रमों पर शोध करना।

(ख) नयी तालीम के काम में लगे हुए व्यक्तियों और संस्थाओं से सम्पर्क रखना।

(ग) नयी तालीम-सम्बन्धी सूचनाओं, अनुभवों के प्रचार-प्रसार के लिए 'क्लियरिंग हाउस' का काम करना।

(घ) नयी तालीम से मिलते-जुलते दूसरे शैक्षिक प्रयोगों का गहन अध्ययन।

(ङ) न्यूज लेटर, बुलेटिन और पत्र-पत्रिका द्वारा।

(च) उपर्युक्त लक्ष्य रखनेवाली संस्थाओं से सम्पर्क रखना और पारस्परिक सम्बन्ध को प्रोत्साहन देना।

(छ) नयी तालीम की लाइन पर शिक्षा के लिए 'शिक्षक साहित्य' तैयार करना।

(ज) कान्फ्रेंस, गोष्ठियाँ, वर्कशाप, आदि प्रवृत्तियों के द्वारा नयी तालीम के पक्ष में जनमत तैयार करना।

(झ) नयी तालीम के कार्यकर्ताओं के लिए अग्रगामी योजनाएँ चलाना और नयी तालीम विचारों का मूल्यांकन और नयी खोजों को प्रोत्साहन देना।

(ठ) अध्यापकों और छात्रों की सहायता के उपयोगी साहित्य का प्रकाशन करना और नयी तालीम के विविध क्षेत्रों के गाइड बुक्स—निर्देशिका, संदर्शिका तैयार करना।

(ट) नयी तालीम के सम्बन्ध में जनता का शिक्षण करना, जिससे लोकशक्ति की प्रगति के लिए उपयुक्त वातावरण का सृजन हो सके और जो शिक्षा में क्रान्ति की माँग करे।

६. नयी तालीम समिति का विधान

(१) नयी तालीम समिति में कम-से-कम १५ और अधिक-से-अधिक २१ सदस्य रहेंगे और इसका संगठन पहली बार सर्व सेवा संघ द्वारा होगा।

(२) नयी तालीम समिति के एक-तिहाई सदस्य तीन साल के बाद 'रिटायर' हो जायेंगे और इस प्रकार जो स्थान रिक्त होंगे उसे नयी तालीम समिति भरेगी' 'रिटायर' होनेवाले सदस्यों का पुनर्निर्वाचन हो सकता है।

(३) समिति की बैठक साल में *कम-से-कम दो बार अथवा अध्यक्ष और* मंत्री जब चाहे, अथवा समिति के दस सदस्य जब अध्यक्ष से विशेष बैठक की माँग करें, होगी।

(४) सात सदस्यों से समिति का 'कोरम' पूरा होगा।

(५) मंत्री सदस्यों में कोई भी प्रस्ताव 'सर्कुलेट' करेगा और यदि दो-तिहाई सदस्य उससे सहमत हुए और बाकी सदस्यों का अगर किसी प्रकार का विशेष विरोध नहीं है तो उसे समिति की बैठक में पास हुए प्रस्ताव का ही दर्जा मिलेगा। (विल हैव दी फोर्स)

(६) नयी तालीम के लक्ष्यों को छोड़कर समिति को सर्वसम्मति से विधान के किसी भी प्राविधान को संशोधित करने अथवा परिवर्द्धन करने अथवा परिवर्तन (एड) करने का अधिकार होगा बशर्ते कि उपस्थित सदस्यों की संख्या ११ से कम न हो।

विनोबा की अहिंसा

'गांधी की तरह विनोबा संत और क्रान्तिकारी दोनों हैं। लेकिन गांधी की तरह वह ऐसे क्रान्तिकारी नहीं हैं जो शहादत को आमंत्रण देते चलें। वह चुनौतियों की भाषा नहीं बोलते। जब चुनौती नहीं तो हत्यारे को उत्तेजना कैसे हो! वह शत्रुओं को क्षमा ही नहीं करते बल्कि किसीके लिए असंभव कर देते है कि उनका शत्रु हो। इस तरह का व्यक्ति आज तक हमारे इतिहास में नहीं हुआ है। कई आलोचक हैं जो कहते हैं *कि वह पर्याप्त प्रभावकारी नहीं हैं।* वह खुद इस आलोचना को स्वीकार कर लेंगे। लेकिन शायद वह कहेंगे कि उस तरह प्रभावकारी होना उनका लक्ष्य ही नहीं है। कभी-कभी जिन्होंने दान में भूमि दी उन्होंने उन्हें धोखा दिया। दी हुई भूमि वापस ले ली। उनके साथी नाराज हुए, और ऐसे लोगों के खिलाफ कार्रवाई की माँग की। उन्होंने मुसकरा दिया और यह कहा कि देनेवाले ने अपनी खुशी से भूमि दी, इसलिए उसे हक है कि अपनी दी हुई चीज वापस ले ले।* यह अहिंसा बेमिसाल है। यह *अहिंसा गांधी की अहिंसा से बड़ी है।* विनोबा की अहिंसा गांधी की अहिंसा से बड़ी है। विनोबा की अहिंसा गांधी की अहिंसा से सौम्यतर है। विनोबा की अहिंसा दूसरों में हिंसा नहीं पैदा करती। *गांधी की अहिंसा कभी-कभी दूसरों में* हिंसा पैदा करती थी। दोनों की अहिंसा में यह एक बहुत बड़ा अन्तर है, जिसकी ओर ध्यान देना चाहिए। यह शोध का एक नया और विलक्षण क्षेत्र है। क्या गांधी-शान्ति-प्रतिष्ठान ध्यान देगा!

—'गांधी मार्ग' (अंग्रेजी)

अक्तूबर '७०

श्री जी० रामचन्द्रन के लेख से

* टिप्पणी—अपने दान में दी हुई भूमि से बेदखल करने का अधिकार दाता को है, यह बात विनोबा ने कभी मानी नहीं *कभी कही नहीं। बल्कि ऐसी अन्यायपूर्ण* बेदखली के विरुद्ध 'सत्याग्रह' की बात उन्होंने सबसे पहिले कही। सत्याग्रह हुआ नहीं यह दूसरी बात है। विनोबा किसीसे कोई भी बात मनवाने के लिए सत्याग्रह अमान्य करते हैं, लेकिन अगर कोई मानी हुई, सार्वजनिक तौर पर मानी हुई, अपनी बात का उल्लंघन करता हो *तो प्रतिकार हो सकता है, और होना* चाहिए। अपनी यह स्थिति विनोबा ने कई बार स्पष्ट की है। अलबत्ता सत्याग्रही प्रतिकार का स्वरूप सौम्य से सौम्यतर हो। सत्याग्रह के सौम्य-सौम्यतर-सौम्यतम सिद्धान्त में अनीति या अन्याय की स्वीकृति नहीं है, है यह कोशिश कि अन्याय तो मिटे ही, साथ ही जिसके द्वारा अन्याय हुआ है वह भी अन्याय से मुक्त हो। सत्याग्रह की सफलता इसमें है कि वह 'विपक्षी' को भी ऊँचा उठावे। सत्याग्रह में सत्याग्रही की नीयत जितनी महत्वपूर्ण है उससे कम महत्वपूर्ण सत्याग्रह का परिणाम नहीं है। परिणाम शुभ तब होगा जब अपने आग्रह के साथ साथ 'विपक्षी' का सत्य ग्रहण करने की तैयारी होगी। —संपादक

(७) समिति के हिसाब की प्रतिवर्ष नियमित 'आडिट' होगी।

७. समिति के पदाधिकारी

(१) सर्व सेवा संघ के संगठित होने के बाद समिति एक अध्यक्ष, दो उपाध्यक्षों और एक मंत्री की नियुक्ति करेगी।

(२) सभी पदाधिकारी तीन वर्ष तक अपने पदों पर रहेंगे। 'रिटायर' होनेवाले पदाधिकारियों को पुनर्निर्वाचन का अधिकार होगा।

(३) पदाधिकारियों के रिक्त स्थान की पूर्ति, जो समिति के सदस्यों की मृत्यु, अथवा इस्तीफे के कारण होगी, समिति के सदस्यों में से ही कर ली जायगी। →

—(४) समिति की सभी बैठकों की अध्यक्षता समिति के अध्यक्ष करेंगे, और उनकी अनुपस्थिति में दोनों उपाध्यक्षों में से कोई एक और उनकी अनुपस्थिति में समिति के सदस्यों में से कोई भी अध्यक्षता करेगा।

(५) मंत्री नयी तालीम समिति का प्रमुख एक्जीक्यूटिव आफीसर है। वह कार्यालय का प्रबन्ध करेगा, 'स्टाफ' की नियुक्ति करेगा, सभी प्रकार के पत्र-व्यवहार करेगा, आय-व्यय का हिसाब रखेगा, फाइल आदि कागजों को ढंग से रखेगा, बैठकों की सूचनाएं देगा, 'एजेण्डा' तैयार करके सदस्यों के पास भेजेगा, बैठक की कार्यवाही का लेखा रखेगा। और समिति के प्रस्तावों के कार्यान्वियन के लिए और उसके लक्ष्यों की पूर्ति के लिए आवश्यक कार्यवाही करेगा। वह उचित स्थान पर वार्षिक सम्मेलन करेगा और सम्मेलन के प्रबन्ध के लिए स्थानीय समिति नियुक्त करेगा।

वह समिति की कार्यदक्षता, सम्मान और गौरव के लिए उत्तरदायी होगा। वह सभी प्रकार के चन्दे प्राप्त करेगा और उन्हें किसी समिति के नाम पर शेड्यूल बैंक में रखेगा। खर्च समिति के प्रस्ताव और आदेश के अनुसार किया जायगा।

८—जब आवश्यक होगा, समिति तदर्थ उपसमितियाँ नियुक्त करेगी, और उन्हें आवश्यकतानुसार पावर डेलिगेट कर देगी। किसी विशेष कार्य के लिए व्यक्तियों को इस प्रकार के पावर डेलिगेट किये जा सकते हैं।

९—अर्थ. अपने लक्ष्यों की पूर्ति के लिए नयी तालीम समिति चन्दा, अनुदान, अथवा कर्ज आदि से अर्थ एकत्र कर सकती है।•

पत्र-व्यवहार का पता
संयोजक, आचार्य श्री काकासाहेब कालेलकर सूतांजलि समिति,
सन्निधि, राजघाट, नयी दिल्ली-१

श्री काकासाहेब कालेलकर जन्मदिन पर सूतांजलि

ईश्वर की कृपा से आचार्य श्री काकासाहेब कालेलकर १ दिसम्बर १९७० को ८५ वर्ष पूरा करके ८६वें वर्ष में प्रवेश करेंगे। काकासाहेब महात्मा गांधीजी के सबसे पुराने साथियों में से एक हैं। जब से उन्होंने होश संभाला है तब से आज तक वे देश की अखंड सेवा करते आये हैं। लोकमान्य तिलक के साथ उन्होंने देश-सेवा का प्रारंभ किया और जब गांधीजी दक्षिण अफ्रिका से सन् १९१५ में अपने साथियों के साथ भारत लौटे तब उनके चरणों में काकासाहेब ने अपना जीवन समर्पित किया। राष्ट्रीय शिक्षा और राष्ट्रभाषा-प्रचार के क्षेत्र में उनकी सेवाएँ सारे राष्ट्र को भली भाँति मालूम हैं। सारा भारत एक तरह से उनका घर बन गया है। भारत के सब प्रदेशों के लोग काकासाहेब को अपने प्रदेश के ही समझते हैं। आज भी भारत की संस्कृति के बारे में काकासाहेब के विचार सुनने के लिए भारत के सब प्रांतों के लोग उन्हें अपने यहाँ बुलाते हैं और काकासाहेब भी इस उम्र में, जहाँ बुलाते हैं वहाँ बड़े उत्साह से, जाते हैं। हम चाहते हैं कि काकासाहेब के ८६ वें जन्मदिन पर अपने हाथ से काते हुए सूत की कम-से-कम एक-एक गुंडी (अधिक देना चाहें तो दे सकते हैं) उन्हें देकर उनके प्रति अपनी श्रद्धा और आदर दिखावें और भगवान से प्रार्थना करें कि जनता की सेवा के लिए उन्हें दीर्घ आयु और आरोग्य दें।

निवेदक

उ. न. ढेबर
अध्यक्ष, खादी-ग्रामोद्योग कमीशन

के. अरुणाचलम्
उपाध्यक्ष, खादी-ग्रामोद्योग कमीशन

सोमदत्त विद्यालंकार
मंत्री, खादी-ग्रामोद्योग कमीशन

ध्वजा प्रसाद
अध्यक्ष, बिहार खादी समिति

अक्षयकुमार करण, सेवापुरी, उत्तरप्रदेश

द्वारकानाथ लेले
अध्यक्ष, कुआई सुधार विभाग, सेवाग्राम

वियोगी हरि
अध्यक्ष, हरिजन सेवक संघ, दिल्ली

जीवनलाल
मंत्री, हरिजन सेवक संघ, दिल्ली

पुरुषोत्तम कानजी (काकुभाई)
अध्यक्ष ग्रामोद्योग संघ, बम्बई

गोकुलभाई भट्ट
अध्यक्ष, राजस्थान सेवा संघ, जयपुर

जुगतराम दवे
गांधी विद्यापीठ, वेडछी, गुजरात

नारणदास गांधी
अध्यक्ष, सौराष्ट्र रचनात्मक समिति,

सीताराम सेकसरिया
१६, लार्ड सिन्हा रोड, कलकत्ता-१६

डॉ० मावजराम ठाकरसी
संयोजक, कॉ० का० सू० समिति

रंगनाथ दिवाकर
अध्यक्ष, गांधी स्मारक निधि, गांधी शान्ति प्रतिष्ठान, दिल्ली

देवेन्द्र कुमार गुप्त
मंत्री, गांधी स्मारक निधि, दिल्ली-१

राधाकृष्ण
मंत्री, गांधी शान्ति प्रतिष्ठान, दिल्ली

डॉ० रामचन्द्रन्
डायरेक्टर, गांधीग्राम, मदुराई

ओमप्रकाश त्रिखा
अध्यक्ष, पंजाब, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, गांधी स्मारक निधि

एस० जगन्नाथन्
अध्यक्ष, सर्व सेवा संघ

प्रो० ठाकुरदास बंग
मंत्री, सर्व सेवा संघ, गोपुरी, वर्धा

अण्णासाहेब सहस्रबुद्धे
अध्यक्ष, गांधी सेवा संघ, सेवाग्राम

डॉ० प्रेमलीला ठाकरसी
अध्यक्ष, कस्तूरबा स्मारक ट्रस्ट

रमादेवी चौधरी, कटक

बीबी अमतुस्सलाम
कस्तूरबा सेवामंदिर, राजपुरा

अमृतलाल नाणावटी
संयोजक, आचार्य श्री काकासाहेब कालेलकर सूतांजलि समिति

अ० भा० तरुण शांति-शिविर, इन्दौर

विश्व का तरुण आज बेचैन है। उसे न केवल अपने ही, किन्तु पूरे समाज के प्रश्न बेचैन करते हैं। अमरीका का तरुण वियतनाम के युद्ध के खिलाफ विद्रोह करता है, चेकोस्लोवाकिया का तरुण यह चाहता है कि उसके देश में समाजवाद का वास्तविक कार्यान्वयन हो। क्या भारत का तरुण भी इस प्रकार की बेचैनी अनुभव करता है? क्या उसे भी अपने समाज के प्रश्नों के बारे में कुछ चिन्ता है? यह स्वीकार करना होगा कि भारत का तरुण बेचैन तो है, लेकिन उसकी बेचैनी मुख्यतः अपने ही प्रश्नों के बारे में है। समाज के व्यापक प्रश्नों के बारे में चिंतित रहनेवाले तरुण इस देश में अपेक्षाकृत अल्प संख्या में हैं। किन्तु भारतीय तरुण शांतिसेना का यह अनुभव है कि यदि ठीक दिशा दी जाय तो भारत में भी ऐसे तरुणों की कमी नहीं है, जो अपने समाज के प्रश्नों में रुचि लें और उसके लिए कुछ-न-कुछ करने को तैयार हों। यह अनुभव इन्दौर में हुए ११वें अ० भा० तरुण शांतिसेना-शिविर में एक बार पुनः दृढ़ हुआ।

उक्त शिविर में भारत के निम्न प्रदेशों से कुल १८८ तरुण छात्र-छात्राएँ एकत्रित हुए थे।

असम	१	उत्तरप्रदेश	११
मैसूर	१	बिहार	११
दिल्ली	२	राजस्थान	११
तमिलनाडु	२	गुजरात	२९
केरल	३	महाराष्ट्र	४२
प० बंगाल	४	मध्यप्रदेश	६१
		कुल	१८८

ता० १८ से २२ अक्तूबर, १९७० तक हुए इस शिविर में आनेवाले तरुणों के लिए किसी भी प्रकार का आर्थिक या अन्य कोई लालच नहीं था। सभी तरुणों ने अपने स्थानों से इन्दौर आने का खर्च स्वयं वहन किया। शिविर में पाँच दिनों निम्न विषयों पर व्याख्यान हुए:

(१) मैं क्रांति में कैसे आया — श्री नवकृष्ण चौधरी
(२) समाजवाद — श्री मनोहरसिंह मेहता
(३) तरुण शांतिसेना के मूल्य तथा कार्यक्रम — श्री एम० एल० गुरुवाराव
(४) साम्यवाद — प्रो० राजेन्द्र माथुर
(५) हमारी अर्थनीति — श्री रमेश भट्ट
(६) हमारा नियोजन — श्री महेन्द्र देसाई
(७) माओवाद — श्री सी० बी० आर० राव
(८) भारतीय सांस्कृतिक क्रान्ति — श्री नारायण देसाई

इसके अलावा तरुणों ने स्वयं निम्न विषयों पर गोष्ठियों में तथा सामूहिक रूप से चर्चाओं में भाग लिया:

(१) शिक्षा में क्रान्ति क्यों और कैसे?
(२) राष्ट्रीय एकात्मता में तरुणों का सहयोग।
(३) हमारा जनतंत्र अधिक प्रभावी कैसे हो?
(४) सर्व-धर्म-समभाव
(५) आर्थिक न्याय: समस्याएँ तथा कार्यक्रम
(६) सामाजिक समता: आवश्यकता तथा कार्यक्रम
(७) विश्व-शान्ति की समस्याएँ

शिविरार्थी प्रतिदिन डेढ़ घण्टे श्रमदान करते थे। इन्दौर नगर की एक सड़क बनाने के काम में उन्होंने अपने श्रमदान द्वारा सहायता दी। श्रमदान में मुख्य दृष्टि छात्रों को श्रम का अभ्यास कराने तथा उनको श्रमिकों की समस्याओं के बारे में अधिक सजग कराने की थी। श्रमदान-कार्य में स्थानीय नगरपालिका निगम द्वारा उपलब्ध कराये गये साधनों का सहयोग उल्लेखनीय है।

शिविर में व्यवस्थापकों की ओर से लादा हुआ कोई नियमन नहीं था। आग्रह स्वानुशासन का था। शिविर के अनुशासन तथा समूह-जीवन को देखकर एक निरीक्षक अध्यापक ने यह अभिप्राय प्रकट किया कि, "मैं कई वर्षों से कालेज का अध्यापक हूँ। लेकिन मैंने अपने कालेज में ऐसा अनुशासन नहीं देखा है, जैसा देश के विभिन्न कोनों से आये हुए, इन छात्रों में देखा।"

इस शिविर में अनेक तरुणों ने अपने-अपने क्षेत्रों में समाज-परिवर्तन के लिए रचनात्मक कार्यक्रम उठाने के संकल्प तथा आयोजन किये। १० शिविरार्थियों ने पूरा एक साल राष्ट्र के लिए अपनी सेवाएँ अर्पित करने का संकल्प किया। ●

हमारा लोकतंत्र कितना सस्ता है ?

२५ अक्तूबर के 'दिनमान' ने 'राजनैतिक रोजगार' के सन्दर्भ में हमारे विधान-मडलों तथा ससद के सदस्यों के वेतन व भत्तों के बारे में दिलचस्प (किंतु अधूरी) जानकारी दी है। हमारे अनुमानों के अनुसार इस सारे सन्दर्भ में देश की स्थिति यह है :

	सदस्य	वेतन रु०	सुविधाएं	वार्षिक औसत
१—ससद	७६३	५००) मा० +	अति सस्ता आधुनिक आवास, मुफ्त चिकित्सा तथा यात्रा	लगभग १९००० रु० प्रति वर्ष या १५८३'३३ मा०
[लोकसभा ५२३ राज्यसभा २४०]		५१) दै० भत्ता		

इस प्रकार कुल वेतन + भत्ता आदि = १,४४,९७,००० रु० होता है।
पिछले २० सालों में यह व्यय करीब २८ करोड़, ९९ लाख, ४० हजार रुपये का हुआ है।

२—विधान-सभाएं = ३८९१	वेतन औसत	मुफ्त यात्रा, चिकित्सा	लगभग
विधान परिषदें = ६८५	४५०) रु०		७२०० रु०
कुल = ४५७६	३५) दैनिक भत्ता आदि		प्रति वर्ष

इस प्रकार कुल वेतन + भत्ता आदि = ३२,२९,९२,००० रु०
और पिछले २० सालों में यह व्यय ६,४५,९८,४०,००० रु० हुआ है।
इस तरह पिछले २० सालों में —
ससद + विधान मडल { २८,९९,४०,००० रु० ; ६,४५,९८,४०,००० रु० } याने ६,७४,९७,८०,००० रु० होता है।

इसमें मंत्रियों के वेतन शामिल नहीं है। 'दिनमान' के ही अनुसार इस वक्त देश में कुल ४५५ मंत्री हैं और उन्हें वेतन आदि के रूप में २ करोड़ ७२ लाख रुपये के करीब सालाना मिल रहे हैं। केन्द्रीय मंत्रियों का व्यय इससे कम नहीं है।

इसके अलावा संसद की एक दिन की कार्रवाही पर लगभग १ लाख रुपया तथा विधान मडल की एक दिन की कार्यवाही पर करीब ६० हजार रुपया खर्च होता है। हमारी संसद तथा विधान मंडल सालभर में कुल करीब २५० दिन काम करते हैं। अतः संसद का कुल व्यय २५० लाख तथा १५,००० रु० याने १ करोड़ ५० लाख रुपया, ऐसे कुल ४ करोड़ रुपया सालाना व्यय होता है। पिछले २० साल में यह खर्च ८० करोड़ रु० का होता है।

चुनावों का व्यय—कानून से प्रति विधानसभा सीट पर ७,००० रु० प्रति व्यक्ति तथा ससद की सीट पर २५००० रु० प्रति व्यक्ति व्यय की सीमा है। एक सीट के लिए सभी दलीय तथा निर्दलीय मिलाकर औसतन ५ व्यक्ति चुनाव लड़ते हैं। इस प्रकार से —

लोकसभा की ५०० सीटों पर कुल ५००×५ = २५०० व्यक्ति, (बाकी पर नामजदगी होती है।) तथा

विधानसभाओं की ३८९१ सीटों पर कुल ३८९१ × ५ = १९,४५५ व्यक्ति चुनाव लड़ते हैं।

ऐसे ही राज्यसभा की २४० सीटों पर २४०×५ = १२०० लोग और विधान परिषदों की ६८५ सीटों पर ६८५×५ = ३४२५ लोग चुनाव लड़ते हैं। अब यदि प्रत्येक उम्मीदवार कानून का पालन करके सीमा में ही खर्च करता है (यद्यपि वास्तविक व्यय कई गुना अधिक होता है) तो—

लोकसभा के चुनाव में २,५००×२५,००० = ६,२५,००,००० रु०
विधानपरिषदों ,, ३,४२५×२५,००० = ८,५६,२५,००० रु०
राज्यसभा में ,, १,२००×२५,००० = ३,००,००,००० रु०
विधानसभाओं में ,, १९,४५५×७,००० = १३,६१,८५,००० रु०
कुल = ३१,४२,१०,००० रु०

यह एक बड़े चुनाव का व्यय है, जो सीधे जनता के जेब से होता है, इसके अलावा प्रति आम चुनाव राजकीय कोष से करीब १० करोड़ रुपया व्यय होता है। इस प्रकार एक बड़े चुनाव पर देश का कुल व्यय ४१ करोड़, ४२ लाख, १० हजार हुआ। हम अब तक साढ़े चार आमचुनाव कर चुके हैं, अतः यह व्यय कुल १ अरब ८६ करोड़, ४३ लाख, ९५ हजार रु० होता है। इसमें समय समय पर होने-वाले उपचुनाव तथा चुनावों से उत्पन्न मुकदमेबाजी आदि का व्यय शामिल नहीं है।

इस प्रकार हम चुनावों तथा विधा-यकों और ससद-सदस्यों के वेतन-भत्तों आदि पर कुल—

वेतन + भत्ता = ६,७४,९७,८०,०००
ससद की कार्रवाई पर = ८०,००,००,०००
तथा चुनावों पर = १,८६,४३,९५,०००
याने कुल = ९,४१,४१,७५,०००
९ अरब, ४१ करोड़, ४१ लाख, ७५ हजार रुपया व्यय कर चुके हैं।

किन्तु क्या हमारे देश की आर्थिक हालत ऐसी है कि हम यह सब व्यय कर सकें, जब कि राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण कार्या-लय की सूचना के अनुसार देश में आधी से ज्यादा जनसंख्या केवल १ रुपया ३३ पैसे रोज पर गुजर कर रही है। किन्तु यह आंकड़ा भुलाने में डालनेवाला है, क्योंकि अभी कुछ दिन पूर्व डा० लोहिया के ३ आना रोज के जवाब में पं० नेहरू ने पता लगाकर बताया था कि हमारी आधी से ज्यादा आबादी ५ आने रोज पर गुजारा कर रही है।

एक बात और। यह खर्च किसकी आय है? ६५% तेल-कम्पनियों की, २५% कागज के कारखानेवालों की और बाकी १०% छोटे-छोटे पेशों, प्रकाशकों आदि की, याने इस लोकतन्त्र से सबसे अधिक लाभ पूँजीपतियों का हो है।

प्रस्तुतकर्ता . कामेश्वर प्रसाद बहुगुणा

भूदान-यज्ञ : सोमवार, ९ नवम्बर, '७०

सहरसा जिले में जिलास्तरीय पुष्टि-अभियान

ब्रह्मविद्या मंदिर, पवनार के भरत-राम भेंट मंदिर में ४ अक्तूबर '७० को बिहार के मित्र पूज्य बाबा से मिलने गये। जिले-जिले से आये कार्यकर्ताओं की सूची और भिन्न-भिन्न जिलों में प्रखण्ड-स्तर पर चल रहे और चलाये जानेवाले पुष्टि-कार्य की जानकारी लिखित रूप से बाबा को दी गयी। बाबा ने उस कागज को उठाकर एक तरफ रख दिया और कहा कि बिहार में पुष्टि का काम जिले के नीचे की सोचना ही नहीं चाहिए। बिहार खादी-ग्रामोद्योग संघ एवं बि० ग्रा० स्व० समिति के अध्यक्ष श्री गजानन बाबू की ओर देखते हुए कहा, "कार्यारम्भे गजानन।" सब लोग हँस पड़े। बाबा ने फिर महेन्द्र नारायणजी को बुलाया और पूछा, "सहरसा जिला पुष्टि हो सकेगा न?" उन्होंने कहा, "बाबा का आशीर्वाद है तो अवश्य होगा।"

बाबा ने श्री गजानन बाबू से पूछा कि कोई भी कार्यकर्ता इस काम के लिए भार दे सकेंगे? उन्होंने प्रसन्नता के साथ स्वीकृति दी। कोष के लिए बाबा ने जयप्रकाशजी की ओर इशारा किया और कहा— "इसकी पूर्ति ये करेंगे।" उन्होंने भी इसे शिरोधार्य किया। अन्य सब लोग मौन थे, यानी मौन सम्मति लक्षणम्।

अभियान की तैयारी

दिनांक १६ एवं १७ अक्तूबर को बिहार ग्रामस्वराज्य-समिति की बैठक सर्वोदयग्राम, मुजफ्फरपुर में श्री जयप्रकाश नारायण की उपस्थिति में सहरसा जिला के पुष्टि-अभियान की योजना पर चर्चा हुई। बैठक में कुछ साथियों ने आज की परिस्थिति में जिला-स्तर के पुष्टि-अभियान के कुछ व्यावहारिक पहलू की ओर ध्यान आकृष्ट करते हुए किसी भी जिला-स्तरीय अभियान की सफलता के प्रति कठिनाइयों की चर्चा की। इसे स्पष्ट करते हुए जे० पी० ने बतलाया कि बाबा आन्दोलन के सर्वोच्च नेता हैं, उनकी दूर-दृष्टि है, बिहार की सारी स्थिति से वे पूर्ण परिचित भी हैं। अतः उनका निर्देश मानकर सहरसा में शक्ति लगानी चाहिए।

तय हुआ कि सहरसा में जिला-स्तरीय अभियान बिहार ग्रामस्वराज्य समिति की देखरेख में चले। इसके लिए बिहार ग्रामस्वराज्य समिति जिला समिति से परामर्श करके कार्यकर्ता एवं अर्थ का संयोजन करें। सर्वश्री कृष्णराज भाई एवं निर्मला देशपाण्डे सहरसा के अभियान में अपना समय देंगे ऐसा उन लोगों ने बैठक में बताया। बैठक में यह भी निर्णय लिया गया कि मुसहरी में जे० पी० अपने जिन साथियों के साथ काम कर रहे हैं, पूर्ववत् करते रहेंगे। आवश्यकतानुसार बिहार खादी-ग्रामोद्योग संघ से दस और साथियों की माँग इस क्षेत्र के लिए की गयी है। इसके अलावा बिहार के बाहर के करीब आठ मित्र इस क्षेत्र में पहुँचनेवाले हैं। बीहपुर की बैठक में पूर्णिया, भागलपुर एवं मुंगेर के सहरसा जिला की सीमा से लगे जिन प्रखण्डों में सघन रूप से काम करने का निर्णय लिया गया था, उस विषय पर भी विचार किया गया और तय हुआ कि इन क्षेत्रों में भी काम जारी रहे।

ता० २३, २४ अक्तूबर को सहरसा में जिला ग्रामस्वराज्य समिति एवं जिला सर्वोदय मण्डल की कार्यसमिति की बैठक सर्वश्री गोपालजी झा शास्त्री, कृष्णराज भाई, निर्मला देशपाण्डे, सुशीला बहन एवं विद्यासागर भाई की उपस्थिति में हुई। जिले के विभिन्न भागों से करीब १०० प्रतिनिधि उपस्थित थे। इस काम को ३१ दिसम्बर '७० तक पूरा करने का सर्वसम्मति से स्वीकार किया गया।

अभियान का कार्यक्रम

(१) इस काम की व्यूह रचना के बारे में तय हुआ कि जिला ग्रामस्वराज्य समिति का विस्तार हो। हर ग्रामदानी गाँव के अध्यक्ष, मंत्री, कोषाध्यक्ष और शान्तिसेना-नायक जिला ग्रामस्वराज्य समिति के सदस्य बनाये जायँ। ग्राम-स्वराज्य की स्थापना के लिए जो स्वयंसेवक बनें और प्रशिक्षित होकर इस काम में लगें वे भी इस समिति के सदस्य बनाये जायँ।

(२) अभियान के भिन्न-भिन्न कामों को अंजाम देने के लिए आवश्यक समितियाँ बनायी जायँ। जिनको कार्य-समिति में लेना आवश्यक हो उन्हें मनोनीत किया जाय।

(३) अति तूफान के काम को युद्ध-स्तर पर चलाने के लिए एक संचालन समिति बनायी गयी, जो समय-समय पर आवश्यक फैसला लेने, निर्देशन देने और अभियान को सफल बनाने का निर्णय करे।

(४) हर प्रखण्ड में पुष्टि का अभियान प्रारम्भ करने के लिए एक-एक संयोजक नियुक्त हुए।

गाँव-गाँव के ग्रामदान की पुष्टि की दृष्टि से नीचे लिखा कार्यक्रम देने का तय हुआ :

(१) ग्रामसभा का गठन करना, (२) बीघा-कट्ठा का वितरण करना, दखल दिलाना और आदाता को प्रमाण-पत्र दिलाना, (३) ग्राम-शान्तिसेना का गठन करना।

पुष्टि के उपर्युक्त तीन कार्य प्रशिक्षित स्वयंसेवकों, लोक-शिक्षकों और कार्य-कर्ताओं के सहयोग से पूरा करना और निम्न तीन कार्य ग्रामसभा के द्वारा पूरा करवाना :

(१) बासगीत की जमीन का पर्चा दिलवाना एवं जहाँ आवश्यक हो, दुरुस्त करवाना। (२) भू-दान की अवितरित जमीन का वितरण करवाना। (३) गाँव में 'सर्वोदय-मित्र' बनाना जो प्रति वर्ष १ रु० ६५ पैसा दें।

गाँव के 'सर्वोदय-मित्रों' की योजना से गाँव-गाँव में विचार-सम्पर्क और चेतन-सम्पर्क का आयोजन हो ऐसी दृष्टि है। हर गाँव में सर्वोदय-पत्रिका, सर्वोदय-साहित्य

सेट और ग्रामस्वराज्य-साहित्य सेट पहुँचे। शेष रकम से हर प्रखण्ड में दो-चार परिव्राजक कार्यकर्ता खड़े हों, जो घूम-घूमकर सतत ग्रामसभाओं का सम्पर्क रखें और उन्हें आवश्यक सलाह देते रहें।

अभियान की योजना

(१) हर प्रखण्ड में प्रबुद्ध नागरिकों, शिक्षकों, भूमिवानों आदि की गोष्ठी की जाय, परिस्थिति की चुनौती और गम्भीरता के साथ ग्रामस्वराज्य की अनिवार्यता उन्हें समझायी जाय। उनकी शंकाओं का निरसन हो। उनकी अनुकूलता प्राप्त होने पर प्रखण्ड ग्रामस्वराज्य समिति का गठन हो, जो प्रखण्ड के सब गाँवों में पुष्टि का काम पूरा कराने का जिम्मा लें और क्षेत्रों के लोगों के नाम अपील करें।

(२) हर प्रखण्ड में एक आम सभा की जाय। उसमें आज के विज्ञान के युग में जहाँ दुनिया निकट आयी है, वहाँ दिल को निकट लाने का, दिल जोड़ने का तथा देश और दुनिया को बचाने का ग्रामदान और ग्रामस्वराज्य का विचार और कार्यक्रम जनता को समझाया जाय। भूदान, ग्रामदान, ग्रामस्वराज्य-आरोहण की निष्पत्तियों से जनता को अवगत कराया जाय। इस अहिंसक शान्तिमय क्रान्ति के लिए स्वयंसेवकों को आगे आने के लिए आवाहन किया जाय। हर प्रखण्ड में औसत २०० और जिले भर में करीब पाँच हजार ऐसे स्वयंसेवकों की आवश्यकता, उनके प्रशिक्षण तथा उनके द्वारा होनेवाली व्यापक लोक-शिक्षण की प्रक्रिया की ओर ध्यान खींचा जाय।

(३) पुष्टि-अभियान के लिए इन स्वयंसेवकों और लोकशिक्षकों को एक दिन में दीक्षित और प्रशिक्षित किया जाय और अभियान का आवश्यक साहित्य और साधन देकर अपने-अपने क्षेत्र में भेजा जाय। हर गाँव में दो साथी पुष्टि का कार्य पूरा करने के लिए जायें और घोषित तथा सूचित पद्धति के अनुसार उस काम को पूरा करके यथास्थान इसकी लिखित सूचना दें।

(४) ग्रामसभाओं के पदाधिकारियों के प्रशिक्षण-शिविर हों, जिनमें उन्हें ग्रामस्वराज्य के भिन्न-भिन्न कदमों और पहलुओं की जानकारी दी जाय। उन्हें ग्रामस्वराज्य की दिशा में बढ़ने के कार्यक्रम सुझाये जायँ। इस विचार का अध्ययन करने की दिशा समझायी जाय। गाँव-गाँव में ग्रामकोष-संग्रह करने, उसकी मदद से ग्रामस्वराज्य भण्डार—ग्राम की दूकान—खड़ा करने एवं गाँव के लिए खादी शुरू करने की योजना की जाय।

(५) ग्राम-शान्तिसेना का प्रशिक्षण दिया जाय। गाँव-गाँव में शान्ति, सेवा और सांस्कृतिक कार्यक्रम संयोजित हों। सर्व-धर्म-समन्वय की दृष्टि से सर्व-धर्म-प्रार्थना की जाय। जगह-जगह कीर्तन आदि का भी संगठन हो, जिससे कि गाँव में भक्ति और प्रेम का वातावरण बने।

(६) शिक्षकों में आचार्यकुल का विचार फैलाया जाय, जिससे कि शिक्षकों की निष्पक्ष और निर्भीक जमात खड़ी हो, समाज में उनकी प्रतिष्ठा बनी रहे और समय-समय पर उनका तटस्थ और सर्व-सम्मत मार्ग-दर्शन समाज को मिलता रहे।

(७) देश में, गाँव-गाँव में स्त्री-शक्ति का जागरण हो, महिला मण्डल बनें, उनके सत्-संग खुलें, जिससे स्त्री-शक्ति समाज की तारक-शक्ति बने।

अभियान प्रारम्भ

२३ अक्तूबर के अपराह्न में सदर अनुमण्डल के सहरसा प्रखण्ड के करीब ३०० शिक्षकों ने पुष्टि-अभियान गोष्ठी में भाग लिया। कृष्णराज भाई ने जिलादान-पुष्टि की व्यूहरचना उनके सामने रखी।

निर्मला बहन ने उन्हें बताया कि वे वैचारिक क्रान्ति के अग्रणी हो सकते हैं और इस अभियान में लगने का आवाहन किया। उन लोगों ने अपनी शक्ति भर सहयोग देने का आश्वासन दिया।

२४-१० को मधेपुरा में अनुमण्डलीय गोष्ठी हुई। निर्मला बहन के उत्साहवर्द्धक और प्रेरणादायक आह्वान पर उपस्थित मित्रों ने अपने-अपने प्रखण्ड में तन-मन से लगने की इच्छा जाहिर की। २१-१० को सोमनाथ बाबू के आग्रह पर सुश्री सुशीला बहन और विद्यासागर भाई बिहारीगंज—मधेपुरा अनुमण्डल—गये। वहाँ मानस-सत्संग का आयोजन था। दोनों मित्रों ने उस सत्संग में भक्ति के माध्यम से सर्वोदय और ग्रामस्वराज्य का विचार रखा। उससे श्रोताओं में एक नयी प्रेरणा जगी। क्षेत्र में पुष्टि-अभियान के लिए अनुकूलता का निर्माण हुआ।

२५ अक्तूबर को सुपौल नगर के प्रमुख और प्रबुद्ध नागरिकों की गोष्ठी सुपौल के व्यापार-संघ के सभा-भवन में हुई। गोष्ठी का प्रारम्भ और विषय-प्रवेश श्री कृष्णराज मेहता ने किया। सुश्री निर्मला बहन ने बुद्धि और हृदय को स्पर्श करनेवाली शैली में तथा विज्ञान और आत्मज्ञान के सन्दर्भ में ग्राम-स्वराज्य के विचार एवं उसके भिन्न-भिन्न पहलुओं को समझाया। फिर आपसी चर्चा और शंका-समाधान के बाद उपस्थित श्रोताओं ने महसूस किया कि हम सबको मिलकर ग्रामस्वराज्य के इस विचार को अब सर-जमीन पर शीघ्र उतारना चाहिए। सारे अनुमण्डल में व्यापक वातावरण और पुष्टि-अभियान के साथ मरौना प्रखण्ड में सघन रूप से ग्रामस्वराज्य का चित्र खड़ा करने का प्रयास किया जाय। शाम को नगर के गांधी मैदान में आमसभा हुई। आमसभा में ही ३६ व्यक्तियों ने इस कार्यक्रम में अपनी सेवा देने की घोषणा की।

२५ अक्तूबर की सुबह को गोष्ठी में नगर के प्रमुख व्यापारियों की ओर से राधा बाबू ने इस अभियान में हार्दिक सहयोग देने का वचन दिया। नगर-पालिका के अध्यक्ष मदन बाबू, जो इस शहर के अग्रणी वकीलों में हैं, ने भी पूर्ण सहयोग का आश्वासन दिया। सप्ताह में एक दिन रविवार को तो उन्होंने गाँवों में जाकर पुष्टि-कार्य में प्रत्यक्ष सहयोग करने का संकल्प जाहिर किया। जिले के एक प्रगतिशील किसान

एवं प्रमुख सार्वजनिक कार्यकर्ता श्री लखन चौधरी ने अभियान में शामिल होने का आश्वासन दिया। सुपौल बहुउद्देशीय विद्यालय के प्राचार्य श्री गुनानन्द पाठक, सुपौल कालेज के प्राचार्य श्री भगवान प्रसाद सिंह एवं सुपौल अनुमण्डल पदाधिकारी श्री राधाकान्त राय ने इस काम को सफल बनाने में अपना पूर्ण सहयोग देने तथा योजनाबद्ध ढंग से काम करने-कराने का विश्वास दिलाया। जिला सर्वोदय मण्डल के संयोजक श्री तपेश्वर भाई तो तन-मन से अनुमण्डल के अभियान के संयोजन में लग गये हैं।

२५ अक्तूबर को शाम को निर्मला बहन के सान्निध्य में नगर के बहनों का एक सत्संग हुआ।

१२ से २२ नवम्बर के बीच अनुमण्डल के हर प्रखण्ड में गोष्ठी एव आमसभा कराने का कार्यक्रम तय किया गया है।

ब्रह्मविद्या मन्दिर, पवनार में सहरसा जिले की पुष्टि का निर्देश देते हुए पूज्य विनोबाजी ने बिहार के दो वयोवृद्ध नेता, श्री गोपालजी झा शास्त्री एव श्री राजेन्द्र प्रसादजी मिश्र का स्मरण किया था और अपेक्षा व्यक्त की थी कि इन लोगो का पूरा समय और सहयोग तो मिलेगा ही। शास्त्रीजी तो २३ अक्तूबर को ही सहरसा आ गये, परन्तु राजा बाबू इधर कई महीनो से निवृत्त होकर घर पर ही रह रहे थे। २६ अक्तूबर को श्री कृष्णराज भाई ने उनसे सहरसा में भेंट की। उन्हें पूज्य बाबा का सन्देश और अपेक्षा सुनायी। बाबा के निर्देश पर प्रारम्भ किये जिला पुष्टि-अभियान की कार्ययोजना से उन्हें अवगत किया। बाबा के सन्देश को सुन वे गद्गद् हो गये। और अपनी स्वीकृति देते हुए उन्हें लिखा—

'परम पूज्य बाबा,

श्री कृष्णराज भाई से आज भेंट होने का सौभाग्य मिला। बाबा ने मेरे जैसे का स्मरण किया, यह मैं अपना भाग्य मानता हूँ। ईश्वर शक्ति दें कि बाबा के काम में कुछ कर सकूँ।

मेरा सादर प्रणाम स्वीकार हो।

सहरसा, २६-१०-७०   —राजेन्द्र मिश्र''

मुजफ्फरपुर की डाक

मणिका कैम्प पर जयप्रकाश-जयन्ती

जयप्रकाशजी की उनहत्तरवीं वर्षगांठ ११ अक्तूबर को मणिका कैम्प पर बड़ी ही सादगी, से किन्तु सोल्लासपूर्ण वातावरण में मनायी गयी। उनके निकट रहनेवाले सभी मित्रों को यह ज्ञात ही है कि वे अपने जन्म-दिवस पर किसी प्रकार का कोई समारोह बिलकुल पसन्द नही करते। कभी भी इस प्रकार के आयोजन का प्रोत्साहन उनसे नहीं मिलता, इसलिए कैम्प की ओर से कोई समारोह का आयोजन किया ही नही गया था। किन्तु सबेरे से ही मुजफ्फरपुर नगर से उनके प्रशंसकों की भीड़ शुभकामना प्रकट करने के लिए इकट्ठी होने लगी। पहुँचनेवालों में राजनैतिक दल के नेता, सर्वोदय-कार्यकर्ता, सरकारी अधिकारी, नागरिक एव तरुण-शांतिसैनिक आदि सभी प्रकार के लोग थे। जब गाँववालो को यह जानकारी हुई कि आज जे० पी० का जन्म-दिवस है, साधारणत अन्य गाँवो से एव मुख्यत उन गाँवो से जिन गाँवो से उनका संपर्क अब तक हुआ है, काफी संख्या में ग्रामीण उनकी दीर्घ जीवन की शुभकामना प्रकट करने तथा आज के शुभ दिन पर अपने नेता का दर्शन करने को उपस्थित होने लगे। कई ग्रामदानी गाँवों के लोग जुलूस में ग्रामस्वराज्य का नारा लगाते हुए कैम्प पर पहुँचे। जे० पी० मालाओ से उस समय लद गये, जब बेदौलिया तथा मुसहरी ग्रामदानी गाँवों के लोगो ने लम्बी कतार में लगकर माला पहनाना प्रारम्भ किया। उस कतार में सात साल का बच्चा भी था और सत्तर साल का कमर झुकाये लाठी टेकता बूढ़ा भी चल रहा था। साफ-सुथरा पहने किसान भी थे और मैले-कुचैले फटे वस्त्रो में अपने उमंग को छिपाये मजदूर भी थे। भारतीय संस्कृति का वह दृश्य तो भुलाया ही नही जा सकता, जब मणिका गाँव की कुछ बहनें पहुँचकर सोहर गाने लगी। इस अवसर पर तरुण-शांतिसैनिक एवं ग्राम-शांति-सैनिको ने श्रमदान का कार्य सम्पन्न किया। मणिका गाँव में जानेवाली सड़क की सबसे खराब स्थल की मरम्मत उन लोगो ने की।

बेदौलिया गाँव की कीर्तन मडली ने इस शुभ अवसर पर कीर्तन का जो कार्यक्रम हुआ वह अत्यन्त सम्मोहक रहा।

सैकडो की संख्या में गाँवो के किसान मजदूर की उपस्थिति यह स्पष्ट बता रही थी कि जे० पी० ने इतने कम समय में अन्दर-ही-अन्दर कितने निकट से ग्रामीणो के हृदय को छू लिया है और कितनी आत्मीयता उन्होने इन धरती के बेटों की प्राप्त की है।

उपस्थित भीड को सबोधित करते हुए जे० पी० ने सबकी शुभकामनाओ के लिए कृतज्ञता प्रकट की और कहा कि उन लोगो की यह शुभकामना गांधी एवं विनोबा के विचार तथा कार्यक्रम के प्रति उनके समर्थन एव सहानुभूति का द्योतक है, जिससे हमसे और हमारे साथियो में उत्साह का संचार हुआ है।

बिहार रिलीफ कमिटी द्वारा अन्न-वितरण

रजवाड़ा पंचायत के मुकुन्दपुर गाँवों में बिहार रिलीफ कमिटी ने जयप्रकाशजी के अनुरोध पर कृपापूर्वक करीब २० मन मरई का वितरण किया है। गडक नदी के बाढ़ से तीन-तीन बार फसल के डूब जाने से इस गाँव की बड़ी ही तबाही हुई है।

गरीब परिवारों के सामने भुखमरी की स्थिति पैदा हो गयी थी। सरकार से कोई रिलीफ नहीं पहुँच पाया था। गाँव

की स्थिति भी ऐसी है कि एक तरह से नदी के पेट में ही गांव बसा हुआ है। बाढ़ के समय हर घर अपने में टापू बन जाता है। बिहार रिलीफ कमिटी ने ५०० रुपया दिया था। गांव की ग्रामसभा ने उस उस रुपये की मकई खरीदकर ऐसे परिवारों में वितरण किया, जिन्हें अत्यधिक आवश्यकता थी।

रोहुआ में जमीन-प्राप्ति एवं सभा

१५ अक्तूबर को रोहुआ ग्राम में वहां के समृद्ध किसान श्री बमाली सिंह के मकान के प्रांगण में जे० पी० की सभा का आयोजन हुआ। इस सभा के पूर्व जे० पी० वहां के सबसे बड़े किसान श्री वैद्यनाथ बाबू से भी मिले। प्रथम किश्त के रूप में श्री वैद्यनाथ बाबू ने जे० पी० को ८·७७ एकड़ जमीन का अपने भूमिहीनों के बीच वितरण करने के निमित्त प्रदान किया और दूसरे किश्त में शेष भूमि के कागजात शीघ्र तैयार करवाकर देने का वचन दिया। उन्होंने बातों के क्रम में बताया कि उनके परिवार के पास कुल करीब ६०० बीघे जमीन है। बीघा-कट्ठा के हिसाब से वे जे० पी० को ३० बीघे जमीन शीघ्र पूरा करके अर्पित कर देंगे। बातों के क्रम में उन्होंने यह भी बताया कि इस ६०० बीघे के अतिरिक्त उनके पास न तो कोई बेनामी जमीन है और न गैरमजरुआ ही। अगर बाद में कोई ऐसी जमीन उनके पास प्रमाणित होगी तो वे स्वयं उसमें से भी बीघा-कट्ठा निकालने को तैयार रहेंगे। वैद्यनाथ बाबू से कई बातों और आश्वासन की चर्चा करते हुए जे० पी० ने सभा में उपस्थित अन्य किसानों को भी भूमि-वितरण के लिए प्रोत्साहित करते हुए विस्तार से ग्रामस्वराज्य के दर्शन एवं कार्यक्रम पर प्रकाश डाला। वैद्यनाथ बाबू द्वारा इस ३० बीघे जमीन देने की बात से इस क्षेत्र के बड़े किसानों के मानस पर अनुकूल प्रतिक्रिया होगी, ऐसी आशा है। रोहुआ के अधिकांश बड़े किसानों का हस्ताक्षर प्राप्त हो चुका है और बीघा-कट्ठा निकालने की तैयारी चल रही है।

जे० पी० कैम्प का स्थानान्तरण

पिछले ४ अगस्त '७० से जयप्रकाश बाबू का कैम्प मणिका से उठकर प्रह्लादपुर पंचायत में आ गया है। प्रह्लादपुर पंचायत मुसहरी प्रखंड का वह गांव है, जहां से नक्सालवादी कार्यक्रम का संगठन और प्रारम्भ इस जिले में हुआ। प्रसिद्ध नक्सालवादी श्री राजकिशोर सिंह का घर इसी पंचायत में है, जो इस क्षेत्र के मुख्य संगठक और नेता बताये जाते हैं।

पड़ोसी वैशाली प्रखंड का कार्य

वैशाली में बीघा-कट्ठा वितरण, ग्रामसभा का गठन तथा अन्य शर्तों की पूर्ति का लक्ष्य पूरा करने की पूर्वतैयारी की दृष्टि से दो कार्यक्रम चल रहे हैं अन्न और नकद कोष-संग्रह तथा स्थानीय कार्यकर्ताओं की तैयारी। कोष-संग्रह का काम अब तक जिस प्रकार चला उससे काम करनेवालों का उत्साह बढ़ा है तथा तेजी से लक्ष्य-पूर्ति का प्रयास चल रहा है। यह कार्य १५ नवम्बर तक पूरा होने की आशा है। कार्यकर्ताओं की तैयारी के लिए तरुण शान्तिसेना में दाखिल युवकों का एक शिविर करने का तय किया गया है। तुरन्त बाद क्षेत्र के अलग-अलग स्थानों पर स्थानीय युवक कार्यकर्ताओं की गोष्ठियाँ आयोजित करने का निश्चय किया गया है।

निकटस्थ सकरा, कुरौल में कार्य

मुसहरी प्रखंड के पड़ोस के सकरा एवं कुरौल प्रखंड में पिछले महीने में ग्रामस्वराज्य-कोष संग्रह का काम होता रहा है। इस प्रखंड में अब तक २,२१० रु० का संग्रह हो सका है।

नशाबन्दी परिषद की बैठक

१८ अक्तूबर को गांधी-शान्ति-प्रतिष्ठान केन्द्र, मुजफ्फरपुर के कार्यालय में बिहार नशाबन्दी परिषद के कार्यसमिति की बैठक हुई, जिसमें जयप्रकाशजी एवं प्रभावती जी ने भाग लिया। बैठक की अध्यक्षता परिषद के अध्यक्ष श्री मोतीलाल केजरीवाल ने की। मुजफ्फरपुर नगर के भी नागरिकों ने इसमें भाग लिया। निर्णय लिया गया कि रचनात्मक कार्यकर्ताओं, नागरिकों एवं तरुण शान्ति-सैनिकों के द्वारा यथाशक्ति हस्ताक्षर-अभियान चलाकर नशाबन्दी के पक्ष में समर्थ लोकमत तैयार किया जाय। यह भी तय हुआ कि राज्य-सरकार से इस सम्बन्ध में जो वार्ता चल रही है, उसे और आगे बढ़ाया जाय तथा सरकार पर हस्ताक्षर-अभियान द्वारा भी दबाव डाला जाय।

कथित नक्सालवादी गढ़ प्रह्लादपुर में जे० पी० प्रभावतीजी एवं सर्वोदय-कार्यकर्ता

जे० पी० का कैम्प दिनांक १८ अक्तूबर से मणिका पंचायत से उठकर प्रह्लादपुर पंचायत में आ गया है। इस पंचायत में आने के बाद पंचायत के हर गांव में जे० पी० की सभा का आयोजन किया जा चुका है। इसके अतिरिक्त जे० पी०, श्रीमती प्रभावतीजी एवं सर्वोदय-कार्यकर्ता मुख्य रूप से उन परिवारों में गये, जिन परिवारों के सदस्य कथित नक्सालवादी नेता या कार्यकर्ता बताये जाते हैं और इन्होंने उन परिवारों से भी मुलाकातें कीं, जिन परिवारों के लोग आज जेल में हैं।

हर जगह दुःख की गहरी काली छाया ने उन परिवारों के आँसुओं की बाढ़ फूटकर जे० पी०, प्रभावतीजी एवं अन्य कार्यकर्ताओं के दिल को भर दिया। शायद इस दुश्चक्र के शिकार होने के बाद पहली बार किसीने उनके दुःख-दर्द की कहानी सहानुभूति और करुणाभरे हृदय से सुनी थी। अतः वे अपने को रोक न सके। खेद, निराशा और विषाद की भावना प्रायः उन सभी परिवारों के अन्दर से प्रकट हो रही थी, जिनको वे शब्द देने में असमर्थ होने के कारण आँसू से अभिव्यक्त कर रहे थे। युग-युग से उत्पीड़ित ये गरीब और सुख-साधन की सुविधा के बोध के ये सम्पन्न परिवार आज समान रूप से दुःखी और असहाय

जैसे लग रहे थे। काश, हिंसाजन्य परिवर्तन की आशंकावाले गरीबों के हितैषी और शोषणजन्य धन के आवासी ये बड़े लोग इस दुःखद सत्य को पहचानने और समझने का कष्ट उठा पाते तो शायद दोनों के आँसू सार्थक हो जाते!

ग्रामसभाओं का गठन

नरौली सेन

१८ अक्तूबर '७० को श्री कृष्णराज भाई एवं श्री कामेश्वर ठाकुर की उपस्थिति में नरौली सेन की ग्रामसभा का गठन-कार्य सर्वसम्मति से सम्पन्न हुआ। ज्ञातव्य है कि इस गाँव में पूर्व में ही प्राप्त जमीन के प्रथम किश्त का वितरण हो चुका है। ग्रामसभा का गठन अभी तक नहीं हुआ था। नरौली पंचायत में यह प्रथम ग्रामसभा का गठन हुआ है।

सलहा

दिनांक २१ अक्तूबर को श्री उमेशचन्द्र त्रिवेदी के लम्बे प्रयत्न के फलस्वरूप सलहा ग्रामसभा का सर्वसम्मत गठन-कार्य सपन्न हुआ। ज्ञातव्य है कि सलहा ग्राम मुसहरी प्रखंड में जे० पी० का प्रथम पड़ाव था और वे वहाँ ९ जून '७० को ही पहुँच गये थे। ग्राम का भूमि-वितरण-कार्य पहले ही जे० पी० द्वारा सपन्न कराया जा चुका था, मगर ग्रामसभा का गठन नहीं हो सका था। यह आशा थी कि स्थानीय बड़े भू-पति श्री जलधर ठाकुर, जिन्होंने अपना बीघा-कट्ठा भी दिया और जे० पी० के कैम्प के साथ पूर्ण सद्भाव प्रकट किया, ग्रामसभा में शामिल हो सकेंगे। मगर अब तक हम उन्हें ग्रामसभा में शामिल कराने में असमर्थ रहे। फलत. उन्हें छोड़कर ग्रामसभा का गठन करना पड़ा। अभी भी यह आशा है कि वे ग्रामसभा के सदस्य बनकर गाँव के सुख-दुःख के साझीदार बनेंगे। सलहा पंचायत में ५ गाँव हैं. जिनमें से ४ में अब तक ग्रामसभा का गठन हो चुका है।

विशुनपुर मनोहर

श्री हितेश्वर झा के प्रयत्नस्वरूप दिनांक २४ अक्तूबर को संध्या ८ बजे विशुनपुर मनोहर ग्रामसभा की बैठक श्री बवलू प्रसाद सिंह की अध्यक्षता में हुई। बैठक में ग्रामदान की शर्तें पूरी हो जाने के बाद ग्रामसभा-गठन पर विचार हुआ और ग्रामसभा का गठन किया गया। सर्वसम्मति से श्री शिवन पासवान अध्यक्ष, श्री बबलू प्रसाद सिंह मंत्री, श्री बद्री मियाँ उपमंत्री, और श्री चुल्हाई मियाँ कोषाध्यक्ष मनोनीत हुए।

११ व्यक्तियों के कार्यकारिणी का गठन सर्वसम्मति से किया गया। मणिका पंचायत में अब तक दो गाँवों में ग्रामसभा का गठन हो चुका है।

भूदान में प्राप्त एवं वितरित जमीन का पुनर्निरीक्षण

जे० पी० जब से मुसहरी प्रखड में ग्रामस्वराज्य-स्थापनार्थ काम में लगे, हैं उनके साथ-साथ भूदान-भूमि के पुनर्निरीक्षण हेतु भूदान-कमिटी के अमीन भी काम कर रहे हैं। अब तक कार्यकर्ताओं ने २४ गाँवों में प्राप्त भूदान-भूमि का सर्वेक्षण किया है। इन २४ गाँवों में ३०० दाताओं से १८१ बीघा ५ कट्ठा साढ़े बारह धूर जमीन प्राप्त हुई है, जिसमें १६० बीघा साढ़े उन्नीस धूर जमीन का ब्योरा प्राप्त है और २० बीघा १० कट्ठा ८ धूर का ब्योरा (अर्थात् किस खाते-खेसरा नम्बर की जमीन दाताओं ने दान दी है) प्राप्त नहीं है। ब्योरा प्राप्त भूमि में से २२४ आदाताओं में १०९ बीघा जमीन वितरित हुई है।

प्रह्लादपुर पंचायत में काम की गति अच्छी

प्रह्लादपुर पंचायत की स्थिति को देखते हुए कार्यकर्ता एवं ग्रामीण जनों के मन में यहाँ के काम के बारे में सहज चिंता थी। मगर खुशी की बात है कि इस पंचायत ने प्रेम, करुणा और शांति के इस विचार को सुना है और क्रमश. समझ भी रहा है। मात्र ४-५ दिनों के प्रयास के बाद पाया गया है कि लगभग ४० प्रतिशत काम पूरा हो चुका है और जनमानस क्रमशः अनुकूल होता जा रहा है। यद्यपि अभी कार्यकर्ता-शक्ति यहाँ कम है और पंचायत बड़ी है, फिर जो निष्पत्ति है उसे देखते हुए यह आशा है कि यहाँ काम की स्थिति अच्छी रहेगी।

मणिका कैम्प पर शिविर-गोष्ठी

मुसहरी प्रखण्ड के विभिन्न कैम्पों पर अभियान का काम कर रहे कार्यकर्ताओं की बैठक श्री जयप्रकाश नारायण की उपस्थिति में दिनांक २६ अक्तूबर को संध्या ७ बजे शुरू हुई। बैठक में विभिन्न पंचायतों में चल रहे कार्यों की उपलब्धि और कठिनाई पर विचार किया गया। ऐसा अनुभव हुआ कि मुख्य कैम्प के स्थानान्तरण के बाद भी उस कैम्प पर अगर २-३ सक्षम कार्यकर्ता काम में लगे रहते हैं तो काम क्रमश आगे बढ़ता है और गाँववाले आन्दोलन के कार्य और विचार से जुड़े रहते हैं।

मादापुर ग्रामसभा की बैठक

मुसहरी प्रखण्ड के मादापुर ग्रामसभा की बैठक दिनांक २५ अक्तूबर को संध्या ७ बजे से श्री जगन्नाथ पाण्डेय की अध्यक्षता में हुई। ज्ञातव्य है कि यह ग्रामसभा कुछ समय पूर्व से ही गठित एवं क्रियाशील है। बैठक में सर्वसम्मति से निर्णय लिया गया कि छठ-पर्व के पुण्य अवसर पर गाँव के १२ गरीब निराश्रित हरिजनों को साड़ी, ब्लाउज, एवं प्रति परिवार दो किलो गेहूँ ग्रामकोष से दिया जाय, जिससे पर्व की घड़ी में किसी को इस गाँव में भूखे या नंगे रहने का अवसर न रहे। एक गरीब हरिजन के मृत्यु-संस्कार-कार्य के लिए ग्रामसभा ने तीस रुपये खर्च करने का निर्णय लिया।

ग्रामसभा ने कृषि-विकास के लिए (बोरिंग कराने के पूर्व निर्णयानुसार इस मद में) ४२५ रुपये अग्रिम ग्रामीण किसानों से स्वीकार किये और बोरिंग का काम शीघ्र पूरा कराने का निश्चय किया। —'जयप्रकाश शिविर समाचार' से

लोग दंगा क्यों करते हैं ?

आज दंगे मानव-जीवन का अंग बन गये हैं। सैकड़ों लोग मरते हैं, और घर जलकर राख होते हैं। यह सब कोई नहीं चाहता, फिर भी यह होता है। क्यों होता है ?

इतिहास के जाननेवालों का कहना है कि यह एक ऐतिहासिक अनिवार्यता है। समाजशास्त्रियों का मत है कि मनुष्यों से भरी हुई दुनिया में अस्तित्व के लिए यह एक प्रकार का संघर्ष है, जिसके द्वारा मनुष्य बलपूर्वक अपनी पसन्द की चीज प्राप्त करने की कोशिश करता है। राजनीतिक विचारकों के अनुसार यह राजनीति की उस पद्धति की विकृति का परिणाम है, जो मनुष्य को अपने विचारों को प्रकट करने की बुनियादी स्वतन्त्रता देता है। मनोवैज्ञानिकों का कहना है कि हिंसा मनुष्य की प्रकृति का अंग है। वह दबी रहती है, और दंगों में फूट पड़ती है।

सचाई जो भी हो, लेकिन इतना कह देने से सामाजिक मनुष्य के भविष्य के बारे में चिंता कम नहीं होती। इस बड़े पैमाने पर हिंसा पहले कभी नहीं हुई थी। अगर हिंसा किसी बात के विरुद्ध आवाज उठाने का तरीका है तो किस बात के विरुद्ध आवाज उठायी जाती है ? गरीबी के विरुद्ध ? दमन के विरुद्ध ? पुराने पड़ गये राजनीतिक विचारों के विरुद्ध ? क्या आवाज उठानेवाले सदा ऐसे अन्याय के शिकार रहे हैं, जो किसी तरह टाला जा सकता था ? क्या गरीबी के ही कारण हिंसा होती है ? सामूहिक हिंसा तो उन देशों में भी होती है जहाँ इस प्रकार की कोई समस्या नहीं है, जैसे हालैण्ड में। क्या यह समझा जाय कि दंगा एक मनोवैज्ञानिक स्थिति है जिसके कारण दंगे होते ही हैं, कारण हो या न हो ? डाक्टर एन० डब्लू० स्मिट ने हालैण्ड के दंगों के बारे में कहा है : 'हमारे दंगे समाज की प्रचलित व्यवस्था के विरुद्ध आवाज है। दंगा करनेवाले सोचते हैं कि परम्परागत समाज को बदलना चाहिए, और समाज परिवर्तन की प्रक्रिया शुरू करने के लिए अधिक-से-अधिक तोड़-फोड़ करना जरूरी है।' दंगे बढ़कर किसी समय विद्रोह भी बन जाते हैं। विद्रोह को इतिहास का समर्थन प्राप्त होता है। डा० स्मिट ने प्रतिकार को विधायक भी बताया है। हो सकता है ऐसा हो। १९वीं शताब्दी तक संसार में दो प्रकार के लोग थे—एक 'हीरो' प्रकार के लोग, और दूसरे, उनके उपासक लोग। वह युग था जब मनुष्य अपने हीरो को पहचान सकता था। अब आज के युग में वह केवल अपने को प्रस्तुत करना चाहता है। और, वह ऐसा प्रचलित समाज को चुनौती देकर ही कर सकता है। दंगों के द्वारा मनुष्य अपने क्रोध को बाहर निकालता है। वह किसी एक नहीं, हर चीज के विरुद्ध आवाज उठाता है। इस प्रकार प्रचलित समाज के विरुद्ध 'प्रोटेस्ट' अपने आप में एक उद्देश्य बन जाता है। एक बार जब दंगा शुरू हो जाता है तो उस वक्त तक चलता रहता है जब तक दंगा करनेवालों का पेट न भर जाय।

आधुनिक युग में कोई हीरो नहीं है और न कोई पुजारी। शासक कानून बनाकर शक्ति का प्रदर्शन करते हैं और आम लोग तबाही मचाकर, उसके विरुद्ध आवाज उठाकर, समाज का अपनी ओर ध्यान आकर्षित करते हैं। वे अपने कार्य में सामूहिक साहस का अनुभव करते हैं, और सोचते हैं कि साहस से शक्ति (पावर) प्राप्त होती है।

दंगों को अपने भीतर का जमा हुआ क्रोध और आक्रमण की शक्ति निकालने के लिए एक अनिवार्य बुराई के रूप में मान लेना समस्या का समाधान नहीं है। हिटलर के जर्मनी में हिंसा एक गुण था। समाज हिंसा करनेवालों को सम्मान और प्रतिष्ठा देता था। विश्व-युद्ध में जर्मनी के हार के बाद जब लोगों से पूछा जाता था कि वह भयंकर हिंसा क्यों करते थे, तो उनका केवल एक उत्तर मिलता था : "मैं आज्ञा का पालन कर रहा था।" क्या इस सीमा तक आज्ञा का पालन भी किया जा सकता है ? उत्तर है—हाँ।

हिंसा हमारे चारों ओर है, हमारे भीतर है। सामूहिक जीवन में पैदा होनेवाले तत्त्वों के प्रति प्रतिक्रिया का यह अभिन्न अंग है। आधुनिक शोध से पता चलता है कि हिंसा अपने आप को परिस्थिति के अनुकूल बनाने का एक प्रयत्न है। इस युग में अनुकूलन के दूसरे विकल्पों की आवश्यकता है, क्योंकि अस्तित्व की दृष्टि से आक्रमणशीलता का मूल्य और महत्त्व घट रहा है। अनुकूलन मनुष्य के सामूहिक जीवन का मनोवैज्ञानिक रहस्य है। यह शारीरिक और सांस्कृतिक उन्नति के परस्पर घात-प्रतिघात का परिणाम है। शरीर में मस्तिष्क के विकास से भाषा मिलती है, और बुद्धि तेज होती है, तथा सांस्कृतिक उन्नति से हम उस संयम को सीखते हैं जो समूहजीवन के लिए अनिवार्य है। करोड़ो-करोड़ो मनुष्यों का—स्वभाव में भिन्न मनुष्यों का—समूह में रहना वास्तव में एक कौतुक है। जब तक मनुष्य की यह स्थिति थी कि उसे वातावरण को जीतना पड़ता था तब तक अनुकूलन बहुत कठिन नहीं था। परन्तु आज उसकी अनुकूलनशीलता तकनीकी विकास के साथ नहीं चल पा रही है। इसका परिणाम यह है कि तनाव के पैदा होते ही मान्य संयम की सीमाएँ टूटने लगती हैं।

आक्रमण कहाँ समाप्त है और अनुकूलन कहाँ शुरू होता है ? विकास के क्रम में आक्रमण ने मनुष्य को जीवित रहने में मदद की है। हिंसा आक्रमण का परिणाम नहीं है, उसका एक रूप है।

मनोवैज्ञानिकों ने आक्रमण के सम्बन्ध में तीन दृष्टिकोण पेश किये हैं :

(१) जैविकीय (बायलाजिकल) दृष्टिकोण

इसके अनुसार मनुष्य जन्म से आक्रमणकारी है। यह उसके अस्तित्व का साधन

है। यह मनुष्य के सभी उद्देश्यपूर्ण कार्यों में छिपा रहता है और उसे काम करने के लिए प्रेरित करता है। 'आक्रमण' के अन्तर्गत बहुत सारे आचरण हैं जो रचनात्मक हैं, जैसे कुतूहल या कुछ नया करने की वृत्ति। आक्रमण अपने तीव्रतम रूप में विध्वंसक कार्यों में प्रकट होता है, आत्महत्या में वह अपना ही विरोधी हो जाता है।

(२) हताशा का दृष्टिकोण

इसके अनुसार जब मनुष्य की किसी उद्देश्यपूर्ण क्रिया में बाधा पड़ती है तो वह आक्रमण करता है। जब उसकी बुनियादी आवश्यकताएँ पूरी नहीं होतीं और उसकी आशा टूट जाती है तो वह आक्रमण करता है। हताशा (फस्ट्रेशन) के कारण जो आक्रमण होता है वह जन्मजात नहीं होता है। आक्रमण से हताशा दूर हो जाती है।

(३) समाज से सीखने का दृष्टिकोण

इसके अनुसार मनुष्य समाज से आक्रमण सीखता है। जिस समाज में आत्म-निर्भरता या निजी सफलता को महत्व दिया जाता है वहाँ आक्रमण एक प्रकार का गुण माना जाता है। जब माता-पिता बच्चों को सजा देते हैं तो बच्चे यह सीखते हैं कि किस स्थिति में कितनी हिंसा करनी चाहिए।

इस प्रकार हिंसा कभी अंतिम हथियार होती है, कभी जीवित रहने की 'टेकनीक' होती है जिसे सांस्कृतिक वातावरण का समर्थन प्राप्त होता है। आज के समाज की राजनीतिक आवश्यकताएँ भी कुछ प्रकार की हिंसा को उचित बनाती हैं, जैसे युद्ध, पुलिस की कार्रवाई, फाँसी की सजा इत्यादि, तो फिर जब लोग कानून, न्याय, नैतिक कर्तव्य आदि के रूप में हिंसा होती देखते हैं तो स्वयं भी अपनी समस्याओं का समाधान करने के लिए हिंसा करने लगते हैं। लोग सरकारी अधिकारियों की तरह यह मानने लगते हैं कि अगर शिकायत उचित है और उद्देश्य सही है तो असीमित शक्ति का प्रयोग किया जा सकता है।

दंगों की सामाजिक, मनोवैज्ञानिक प्रेरणाएँ क्या हैं? इसके चार कारण बताये गये हैं :—

(क) बहुसंख्यक और अल्पसंख्यक समूहों के बीच मूल्यों का टकराव।

(ख) पीड़ित समुदाय का विरोधी विश्वास।

(ग) पीड़ित और दमनकारी समुदायों के बीच सम्पर्क और संवाद का न होना।

(घ) सामाजिक नियंत्रण का टूटना—अतिशय नियंत्रण या आवश्यकता से कम नियंत्रण के कारण।

आधुनिक पीढ़ी इतनी हिंसावादी क्यों है, इसका उत्तर समाज से सीखने के दृष्टिकोण में मिलता है। दूसरा कारण प्रचार के व्यापक साधन हैं जो हिंसा को मानव-जीवन के अंग के रूप में दिखाते हैं। इनका प्रभाव बच्चों पर अधिक होता है, यद्यपि यह अस्थायी होता है। पर इनका लगातार प्रदर्शन बच्चों को आक्रमणकारी बना देता है।

फिल्मों के द्वारा दिखायी गयी हिंसा लोगों को अपनी ओर अधिक खींचती है। एक गरीब देश में भूखे, अशिक्षित और बेकार लोग हिंसा के लिए तैयार सामग्री के समान हैं।

क्या हिंसा को समझकर उसका समाधान ढूँढ़ा जा सकता है? स्पष्ट हिंसा का है, आक्रमण का नहीं। जब तक आक्रमण रचनात्मक है उसे बढ़ावा मिलना चाहिए, किन्तु काबू से बाहर होने पर वह एक घातक हथियार बन जाता है।

आक्रमण जन्मजात विशेषता हो, या हताशा का प्रोग्राम, या समाज से सीखी हुई विशेषता—इससे छुटकारा पाया जा सकता है और पाया जाना चाहिए। हताशा के कारण कम किये जा सकते हैं, और समाज के सांस्कृतिक मूल्य, जो हिंसा को मान्य करते हैं, बदले जा सकते हैं। यह सामाजिक मनोविज्ञान का उत्तरदायित्व है।

('साइन्स टुडे' के एक लेख के आधार पर)

रचनात्मक कार्यकर्ता परिचय-पुस्तिका के लिए परिचय भेजें

प्रिय बन्धु,

आप जानते होंगे कि देशभर के रचनात्मक कार्यकर्ताओं में परस्पर-परिचय तथा भाईचारा स्थापित करने में सहायक होने की दृष्टि से गांधी-शताब्दी-वर्ष में एक परिचय-पुस्तिका (Directory) प्रकाशित करने का हमने विचार किया था और उसके लिए देश भर के रचनात्मक कार्यकर्ताओं का परिचय एकत्रित करने के प्रारम्भिक कार्य में हमें श्री नरेन्द्र भाई की सहायता मिली। पर अभी भी बहुत लोगों के परिचय एकत्र करने बाकी हैं। अतएव इस काम के महत्व और व्यापकता को देखते हुए निधि ने इसके लिए एक स्वतंत्र विभाग खोलना तय किया है और इसका कार्यभार श्री ति० न० आत्रेय को सौंपा गया है।

परिचय-पत्र का फार्म यदि पहले आपके पास पहुँचा होगा और आपने स्वयं भरकर, तथा अपने साथियों से भरवाकर भेजा होगा, तो वह हमारे पास सुरक्षित है। पर यदि अब तक नहीं भेजा हो तो हमें सूचित करें, हम भिजवा देंगे।

सारी सामग्री प्रेस में जल्दी देनी है और उससे पहले संपादन, वर्गीकरण आदि काम निपटा लेना है। इसलिए आपसे अनुरोध है कि आप फार्म तुरन्त भरकर, फोटो सहित, भेजने की कृपा करें।

—देवेन्द्रकुमार गुप्त
मंत्री, गांधी स्मारक निधि, सूचना केन्द्र,
राजघाट, नयी दिल्ली—१

कश्मीर में लोकयात्रा के सात माह

हर विचार का अपना एक असर होता है। अच्छे विचार का अच्छा असर होता है और बुरे विचार का बुरा। मगर जितनी तेजी से लोगों के पास हम जैसा विचार पहुँचा सकेंगे, लोगों पर उसका उतना ही असर होगा। सन् १९५९ में विनोबाजी कश्मीर आये और जम्मू-कश्मीर की यात्रा की। उस समय यहाँ के लोग गांधी-विनोबा के विचार से वाकिफ नहीं थे। और यहाँ कोई ऐसी सामाजिक संस्था भी नहीं थी जो इस विचार से लोगों को वाकिफ करवा सके, लिहाजा उस समय विनोबाजी की सारी यात्रा का इन्तजाम सरकार ने करवाया। मगर विनोबा सन्त हैं और क्रान्तिकारी सन्त हैं, इसलिए सरकार का इन्तजाम होते हुए भी जनता पर विनोबाजी का एक सन्त की हैसियत से असर पड़ा। लोग उन्हें सन्त की निगाह से देखते हैं। विनोबाजी की यात्रा से उनके सत्य, प्रेम, करुणा पर आधारित विचार का लोगों के मनों पर असर हुआ, मगर उसे आगे बढ़ाने का काम यहाँ किसीने उठाया नहीं। विनोबाजी जहाँ भी गये, जिस भी प्रान्त में गये वहाँ के स्थानीय लोगों ने उस काम को उठा लिया है और यथाशक्ति उसे आगे बढ़ा रहे हैं। मगर यहाँ किसीने जिम्मेदारी उठायी नहीं है। इसलिए चाहते हुए भी अभिक्रम जगानेवाले व्यक्ति के अभाव में यहाँ के लोग काम को आगे नहीं बढ़ा सके। अखिल भारतीय लोक-यात्रा जब जम्मू-कश्मीर में आयी उस समय जनता में प्रवेश करने के लिए सरकारी एजेन्सियों की मदद लेनी पड़ी। जनता सब जिम्मेदारी सम्भाल लेती है, मगर उस तक पहुँचने के लिए साधन की जरूरत है। वह काम सरकारी एजेन्सियों ने किया है।

१४ मार्च १९७० को लखनपुर में यात्रा-टोली शामिल हुई और वहाँ से श्रीनगर तक गांधी-स्मारक-निधि, गांधी-सेवा-सदन और खादी-बोर्ड की मदद से पहुँच गयी। मगर जब टोली श्रीनगर पहुँची तो उस समय वहाँ चारों तरफ आग की दुर्घटनाएँ हो रही थीं। काफी तनाव का वातावरण था, इसलिए करीब एक माह वहाँ रुककर फिर टोली आगे बढ़ी। श्रीनगर से आगे कश्मीर घाटी और जम्मू क्षेत्र में सरकारी, गैरसरकारी, हर वर्ग के लोगों की मदद मिली। श्रीनगर के बाद की यात्रा की जिम्मेदारी थी गांधी आश्रम ने सम्भाली। नैतिक जिम्मेदारी थी गांधी आश्रम की रही, मगर सारा भार जनता ने उठाया। टोली के सामान आदि के लिए सरकार की तरफ से एक जीप मिली हुई थी, मगर पेट्रोल आदि का खर्च जनता ने उठाया। दूसरे भी सारे खर्च जनता ने ही उठाये।

हर प्रान्त की अपनी परिस्थितियाँ और अपनी समस्याएँ होती हैं, लेकिन जम्मू-कश्मीर की विशेष परिस्थिति मानी जाती है। यह प्रान्त सांस्कृतिक व प्राकृतिक दृष्टि से तीन हिस्सों में बँटा हुआ है। लद्दाख में हम गये नहीं, इसलिए वहाँ की खास जानकारी हम दे नहीं पायेंगे। जम्मू में डोगरी बोली जाती है, जब कि कश्मीर में कश्मीरी। कश्मीर में फिरन (एक खास किस्म का पहनावा) पहनी जाती है, जब कि जम्मू में बिलकुल आधुनिक पहनावा। जम्मू में ऊँचे नीचे पहाड़ हैं, तो कश्मीर ८० मील लम्बी एक सुन्दर घाटी में बसा हुआ है। इतनी भिन्नताओं के बावजूद यह एक ही प्रान्त है। यहाँ का इन्सान बाकी इन्सानों की तरह अपनी समस्याओं के बारे में सोचता है, वह मिलकर रहने में आनन्द अनुभव करता है। देश की दूसरी सियासी पार्टियाँ अपनी स्वार्थ-सिद्धि के लिए जैसे विभिन्न प्रान्तों के जनमत के टुकड़े-टुकड़े कर रही हैं वैसे यहाँ भी सियासी पार्टियों द्वारा लोगों को भटकाया जाता है। फिर भी लोग गांधी-विनोबा के सत्य-प्रेम-करुणा के विचार को ध्यान से सुनते हैं और उसके लिए हमदर्दी जाहिर करते हैं। यह इस बात का प्रमाण है कि लोग मिलकर रहना चाहते हैं और इस काम को आगे बढ़ाना चाहते हैं। हिन्दुस्तान में यही एक प्रान्त है, जहाँ की राजधानी ६ मास जम्मू और ६ मास श्रीनगर में रहती है। तालीम मुफ्त है। यहाँ ४० पैसे किलो आटा और ३५ पैसे किलो चावल है। पीर पांचाल पर्वत पर दोनों क्षेत्रों को जोड़ने के लिए पौने दो मील लम्बी सुरंग बनायी गयी है। यही एक प्रान्त है, जहाँ की परिस्थितियाँ विशेष मानकर विशेष सुविधाएँ प्रदान की गयी हैं।

१४ मार्च १९७० को टोली ने लखनपुर में प्रवेश किया था और १६ अक्तूबर १९७० को लखनपुर से ही जम्मू-कश्मीर छोड़ रही है। इस ७ माह २ दिन के अर्से में टोली ने १६२ मील की पदयात्रा की। हम हर वर्ग के लोगों से मिल सके और गांधी-विनोबा-विचार से परिचय करवा सके, इसके लिए हर वर्ग के लोगों की सभाएँ हुईं। सरकारी मुलाजमों की सभाएँ, स्कूल, कालेज की सभाएँ, महिला-सभाएँ, आम सभाएँ, विचार गोष्ठियाँ हुईं। किश्तवाड़ और भद्रवाह में सभी पार्टियों की एकसाथ मीटिंग हुई, जिसका विषय था—

"आज के सामाजिक ढाँचे को बदलने के लिए गांधी-विनोबा का रास्ता अगर बेहतरीन रास्ता है तो उसे अमली रूप कैसे दे सकते हैं और अगर इससे कोई बेहतरीन रास्ता है तो वह क्या हो सकता है।"

हर विषय पर लोगों ने खूब चर्चाएँ की। अब यात्रा जम्मू-कश्मीर से पंजाब में प्रवेश कर चुकी है। लोग गांधी-विनोबा के पदचिह्नों पर चलकर अपनी तथा मानव-समाज की समस्याएँ हल करना चाहते हैं और इसलिए आगे पुष्टि-कार्य करनेवाले लोगों को सीधी-सीधी मदद जनता से मिलेगी, ऐसी हमारी उम्मीद है।

लोकयात्रा
१७-१०-'७०

—हेमा भराली
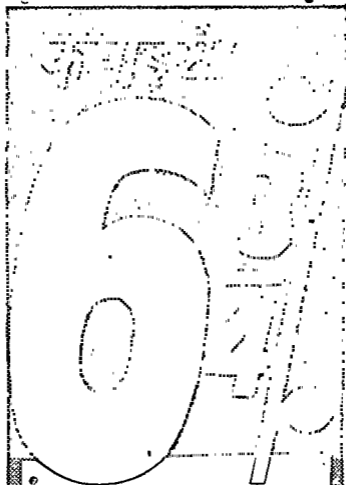
5-वर्षीय
डाकघर सावधि जमाओं पर
इसी प्रकार
3 वर्षीय जमाओं पर 6¼% 1 वर्षीय जमाओं पर 5½%
ब्याज प्राप्त कीजिये
एक वर्ष मे 3,000 रु. के ब्याज सहित आयकर योग्य सिक्यूरिटियो तथा जमाओं के ब्याज पर आयकर नहीं लगता।
अधिक जानकारी के लिये पास के डाकघर से सम्पर्क कीजिये।
राष्ट्रीय बचत संगठन
davp 70/370

आजाद बनो

लेखक : महात्मा भगवानदीन
प्रकाशक : सस्ता साहित्य मण्डल, नयी दिल्ली
पृष्ठ-संख्या : ९६, मूल्य : दो रुपये

एक बार विनोबाजी से किसी कार्यकर्ता ने कहा कि "मैं किसीके अधीन रहना नहीं चाहता, स्वतंत्र रहकर काम करना चाहता हूँ।"

उसके विचार-दोष पर प्रकाश डालते हुए विनोबाजी ने पूछा कि, "स्वतंत्र का मतलब यही है न कि अपने मनोनुकूल काम ही करना चाहते हो? तब तो मनस्तंत्र बनोगे, स्वतंत्र नहीं। मन तो हमारा नौकर है।"

यह छोटा-सा संवाद मुझे उस समय याद आया, जब मैं महात्मा भगवानदीन की "आजाद बनो" पुस्तक का पहला ही प्रकरण पढ़ रहा था। पूरी पुस्तक पढ़ लेने के बाद तो मुझे महसूस हुआ कि विनोबाजी के स्वतंत्रता-सम्बन्धी उपरोक्त विचार को इस पुस्तक में अधिक-से-अधिक स्पष्टता, सरलता व गहराई के साथ और भी पुष्ट किया गया है।

मोक्ष-प्राप्ति का विचार हमारे देश का बहुत पुराना विचार है, इतना ही नहीं, बल्कि मोक्ष-प्राप्ति मनुष्य का अंतिम ध्येय माना गया है। हमारे देश के ऋषि-मुनि, संत-महात्मा, भक्त तथा साधक, सबने अपनी-अपनी दृष्टि से मोक्ष का अर्थ स्पष्ट किया है। करीब-करीब सबके मोक्ष-सम्बन्धी यही विचार सुनने-पढ़ने में आये हैं कि राग-द्वेष, काम-क्रोध, मद-मत्सर, लोभ-लालच, माया-ममता और भय आदि जीवन की उन्नति में बाधक तत्व हैं, ऐसे सभी तत्त्वों से मुक्त होना ही मोक्ष-प्राप्ति है।

लेकिन महात्मा भगवानदीन ने 'मोक्ष' जैसे शब्दों का इस्तेमाल करके अपनी विचारधारा को धार्मिकता का जामा पहनाने की कोई चेष्टा नहीं की, बल्कि जीवन की उन्नति में बाधक तत्त्वों से मुक्त होने की बात भी बिलकुल नये संदर्भ में अपने क्रांतिकारी व मौलिक दृष्टिकोण के साथ नयी भाषा में व्यक्त की। उन्होंने कहा, 'आजाद बनो'। क्योंकि मनुष्य के रूप में जीवन जीने के लिए, मनुष्य की यह एक अनिवार्य आवश्यकता है। हमारे संतों ने मोक्ष-प्राप्ति के लिए निषेधात्मक चिंतन किया और 'इसको छोड़ो, उसको छोड़ो' की बात कही परन्तु महात्मा भगवानदीन ने अपनी पुस्तक में विधायक चिंतन प्रस्तुत किया और कहा कि आजाद बनने के लिए स्वावलंबी, साहसी, सत्यप्रिय, निःशंक, न्यायप्रिय, आदि गुणों से युक्त बनो। जैसे सूरज के निकलने से अंधेरा अपने आप चला जाता है, वैसे ही इन सब तत्त्वों के रहते हुए जीवन के दूषण भी दूर हो जायेंगे और आदमी आजाद बन जायेगा।

आजादी एक विशालकाय पवित्र वट-वृक्ष के समान है, जिसकी छाँव में बैठनेवाला कोई गुलाम नहीं हो सकता, हर व्यक्ति आजादी को ही महसूस करता है। इस विशाल वट-वृक्ष की अनेक डालियाँ हैं, जिनके द्वारा ही हम वृक्ष का परिचय पाते हैं। ये जो आजादी रूपी वट-वृक्ष की अनेक डालियाँ हैं, वेही आजादी को प्राप्त करानेवाले गुण हैं, जिन गुणों का विस्तृत और विशद वर्णन मुझे महात्मा भगवानदीन की इस पुस्तक में मिला। उनकी पुस्तक का पूरा एक प्रकरण एक गुण की स्पष्टता विस्तार एवं गहराई के साथ करता है। ऐसे १७ प्रकरणों की यह छोटी-सी पुस्तक है, परन्तु हर प्रकरण 'आजाद बनो' की प्रेरणा देनेवाला है। पढ़ते-पढ़ते ऐसा लगता है कि हमारे दिल, दिमाग और आँखों के परदे हटते जा रहे हैं। जो स्वयं आजाद हो गया है वह दूसरों की गुलामी कैसे सह सकता है? महात्मा भगवानदीन लिखते हैं, "आजादी 'पूरी आजादी' का नाम कभी नहीं पा सकती, जब तक वह आजाद करना और कराना न सीख ले। हमारा आजाद होना निकम्मा और अधूरा है, अगर हमारे आसपास का वातावरण मुक्त नहीं। पड़ोसी की पराधीनता हमारी स्वाधीनता को घुन लगा देगी, खतरे में डाल देगी।" उनके संकेत उसी प्रकार के हैं, जैसे एक साहसी पिता अपने लड़के को नदी पार करने के लिए किसी नाव के इन्तजार में किनारे पर खड़ा पाकर कहता है कि नदी में कूद पड़ो और तैरकर नदी पार कर लो। ऐसा करने में जान को जोखिम में भी डालना होता है और उसकी आत्मविश्वास तथा साहस की कसौटी भी होती है। लेकिन जो लोग संरक्षण, परावलंबन, पराधीनता में सुख-चैन और आराम का अनुभव करते हैं, वे आजादी के आनन्द को लेने के लिए खतरा कैसे उठायेंगे?

हमारे देश में मनस्तंत्रता या स्वच्छंदता को ही स्वतंत्रता मान लिया गया है। इस परिस्थिति में आजादी क्या चीज है, इसका सही संकेत इस पुस्तक में मिलता है।

सूक्ष्म और गहरे विचारों को भी लेखक ने बहुत सरल, स्पष्ट और रोचक भाषा तथा शैली के द्वारा समझाया है। इसके लिए उन्होंने छोटे-छोटे विचारों को पुष्ट करनेवाली कहानियों, उदाहरणों का सहारा लिया है जिससे पुस्तक प्रभावोत्पादक, रोचक और विचार-प्रेरक बन गयी है।

जो आजादी की राह का राही है उसे इस पुस्तक के पढ़ने पर सही दिशा प्राप्त होगी, ऐसी आशा सहज ही इस पुस्तक को पढ़कर मन में पैदा होती है।

—इरा

क्षमा-याचना

'भूदान-यज्ञ' के २ नवम्बर '७० के अंक को बिना सूचना के ही हम ९ नवम्बर के अंक के साथ दे रहे हैं, क्योंकि प्रेस में बिजली की गड़बड़ी तथा दीपावली की चार दिन की छुट्टी रही। पाठकों को जो परेशानी हुई हो, उसके लिए वे हमें क्षमा करेंगे।

—सम्पादक

ग्रामस्वराज्य विद्यालय, घाटेड़ा

[३१ मार्च '७० से ३० सितम्बर '७० तक का विवरण व अनुभव]

कर्तव्य और पुरुषार्थ की प्रेरणा को भय और लालच से मुक्त करने की साधना और प्रयास व्यक्तिगत जीवन में विशिष्ट जनों द्वारा दुनिया के किसी-न-किसी कोने में सतत होता रहा है। परन्तु अब समय आ गया है कि यह प्रयास सामान्य जनों द्वारा सर्वत्र शुरू हो, इसी चिन्तन और प्रेरणा में से ग्रामस्वराज्य जंगम विद्यालय की शुरूआत हुई। जिस विज्ञापन द्वारा युवकों का आवाहन किया गया था, उसमें लिखा गया था कि जो साथी दण्ड-शक्ति से भिन्न हिंसा-शक्ति के विरोधी स्वतंत्र लोक-शक्ति के शिक्षण और संयोजन के काम में अपने को लगाने के लिए तैयार हों, वे ही आवेदन करें। ये साथी किसी संस्था, सरकार या दण्डविधान पर आधारित किसी भी संगठन और संस्थान के निर्देशों पर कार्य नहीं करेंगे, जो कार्य करेंगे स्वत. स्फूर्त-प्रेरणा से ही करेंगे। यह सब जानते हैं कि समाज में बने-बनाये ऐसे व्यक्ति हैं ही नहीं, सामान्य जन में [illegible] सामान्य जनों को इस दिशा में शिक्षित करना होगा।

विद्यालय की शुरुआत ३१ मार्च से घाटेड़ा (सहारनपुर, उ० प्र०) में हुई। जिन साथियों को शिक्षण के लिए चुना गया वे समाज के करीब-करीब हर स्तर का प्रतिनिधित्व करनेवाले हैं। इनमें से १ जूनियर हाईस्कूल, ७ इन्टरमीडिएट, ८ बी० ए०, १ एम० ए० तक पढ़े हैं। ये २२ साथी उत्तरप्रदेश के ८ जिलों के हैं, भिन्न आर्थिक स्तर और भिन्न जातियों के हैं। भय और लालच ही कर्तव्य की प्रेरणा है, ऐसा अभ्यास और विश्वास इनको संस्कारवश मिला है।

संस्कारगत अभ्यासों और विश्वासों को बदलकर एक नयी प्रेरणा पैदा करने के शिक्षण का यह अभिनव प्रयोग स्थावर विद्यालय के रूप में हो सकेगा, इसकी मुझे शंका थी। अतः इसका रूप जंगम ही रहे ऐसा सोचा गया। २२ व्यक्तियों को लेकर जंगम विद्यालय चलाने में आर्थिक संयोजन एक बहुत बड़ा प्रश्न था। इस विद्यालय के संचालन का सारा श्रेय श्री राजाराम भाई, मंत्री श्री गांधी आश्रम, को ही देना होगा। क्योंकि वे यदि विद्यालय का खर्च उठाने की हिम्मत न करते तो शुरुआत ही न होती। श्री राजाराम भाई ने गांधी आश्रम के ग्रामदान-कोष से ६ माह तक प्रतिछात्र ५० रुपया प्रतिमाह देना शुरू किया। भ्रमण-काल में भोजन-आवास आदि की व्यवस्था स्थानीय सहयोग से होती रही, प्रवास-व्यय छात्रवृत्ति के ५० रुपयों से निकलता रहा। प्रवास-खर्च में ५०० रु० की मदद गांधी स्मारक निधि, राजघाट, दिल्ली से प्राप्त हुई। इस प्रकार से सबके सहयोग से आर्थिक संयोजन बहुत ही आसानी से हो गया।

प्रथम दो माह तक विद्यालय श्री गांधी आश्रम, घाटेड़ा, सहारनपुर में चला। इन दो माह में विशेष रूप से भय और लालच के परिणामस्वरूप पैदा हुई स्थिति समस्याओं तथा हिंसा और दण्ड-शक्ति के इतिहास का अध्ययन हुआ। इस अध्ययन में शासन और शोषण के दुष्परिणामों के भी हल्के से दर्शन हुए। इस दर्शन से स्वावलम्बी अर्थ-व्यवस्था तथा स्वावलम्बी ग्रामव्यवस्था अर्थात् ग्रामस्वराज्य की अनिवार्यता का भान हुआ। तीसरे और चौथे महीने में श्रमसाधना से अर्थ-स्वावलम्बन तथा सहचिन्तन सर्व-सम्मति से व्यवस्था-स्वावलम्बन के अनेक प्रयोग और अभ्यास वनवासी सेवाश्रम, गोविन्दपुर तथा मित्रमंडल केन्द्र, रसूलिया में हुए। पाँचवें महीने के प्रथम दो सप्ताह गांधीजी की पुण्यभूमि तथा विनोबाजी के सान्निध्य में गोपुरी, वर्धा, परमधाम, पवनार तथा सेवाग्राम में बिताये। विनोबाजी ने भय और लालच से मुक्ति तथा दण्ड-शक्ति से भिन्न हिंसा-शक्ति के विरोधी तीसरी शक्ति (लोकशक्ति) के संगठन, शिक्षण और संयोजन की व्यावहारिक योजनाओं पर विस्तार से चर्चा की तथा उस दिशा में अग्रसर होने के लिए सभी साथियों को प्रेरित किया। पाँचवें महीने के शेष दो सप्ताह तथा छठे महीने के प्रथम दो सप्ताहों में आगरा शहर तथा चम्बल के बागी क्षेत्र में शहर और गाँव के लोगों से विचार की सम्मति के लिए जनसहयोग तथा लोक-सम्मति प्राप्त करके लोक-शिक्षण की प्रत्यक्ष प्रक्रिया का शिक्षण और अभ्यास हुआ। छठे माह के तीसरे सप्ताह में मथुरा व दिल्ली के दर्शनीय स्थानों का भ्रमण हुआ, तथा विचार-चिन्तन में सहयोगी अनेक व्यक्ति का सहवास मिला। इसी सप्ताह हरियाणा प्रान्त के एक गाँव में गाँव की परिस्थिति का अध्ययन करके लोक-शक्ति के शिक्षण और संगठन का प्रत्यक्ष अभ्यास हुआ। छठे महीने के अन्तिम सप्ताह में विद्यालय के सभी छात्रों सहित हम लोग फिर श्री गांधी आश्रम, घाटेड़ा आ गये तथा इस एक सप्ताह में ६ माह के अध्ययन, अभ्यास और शिक्षण का मूल्यांकन किया गया।

स्वत प्रेरणा का जिसमें, जितना विकास हुआ, इसका आकलन सबने मिलकर किया है। मूल्यांकन में हरेक की अपनी राय ही प्रमुख है। मूल्यांकन निम्न आधारों पर किया गया है

(१) विचार-ग्रहण-शक्ति, (२) विचार-प्रचार की शक्ति, (३) व्यवस्था-स्वावलम्बन, अर्थ-स्वावलम्बन, (५) सहकार शक्ति, (६) संगठन-शक्ति, (७) योजना-शक्ति और (८) जिम्मेदारी व आत्मनिर्भरता।

२९ सितम्बर को दीक्षान्त-समारोह के साथ ही छात्रों को उनकी रुचि के अनुसार कार्य की शुरुआत करने के लिए सहारनपुर, आगरा, अलीगढ़, मथुरा जिलों के ४ ब्लाकों में बाँट दिया गया है। इस प्रकार से ग्रामस्वराज्य की स्थापना की दिशा में यह एक नया अध्याय शुरू हुआ है। हर एक ब्लाक में लोक-शिक्षण की एक योजना स्थानीय मित्रों के सहयोग से बनेगी, उस आधार पर कार्य की शुरुआत होगी।

—नरेन्द्र भाई

आन्दोलन के समाचार

दिल्ली नगर-यात्रा की फलश्रुति

एक महीने की नगर-यात्रा में व्यापक लोक सम्पर्क हुआ और राजधानी के विभिन्न ३० क्षेत्रों के हजारों विद्यार्थियों, बहनों और नागरिकों तक सर्वोदय का संदेश फैलाया।

यात्रा में कुल ८ भाई और ४ बहनें थीं। ३ व्यक्ति छोड़कर बाकी सब नये व्यक्ति थे।

इस एक महीने की यात्रा के दरम्यान ३५ हायर सेकेण्डरी स्कूल और पांच कालेजों के छात्रों तथा अध्यापकों तक सर्वोदय-संदेश पहुँचाया। १९ सार्वजनिक सभाओं के द्वारा नागरिकों तक और १० महिला सभाओं द्वारा बहनों तक पहुँचे। सात धार्मिक संस्थाओं में कार्यक्रम रहे और १२ जगह कार्यकर्ता और युवकों के साथ गोष्ठियाँ हुई। यात्रा में मुख्य ध्यान विचार-प्रचार पर था, फिर भी ५,००० रुपये ग्रामस्वराज्य-कोष में इकट्ठे हुए। यह रकम छात्रों से और सामान्य घरों में जाकर इकट्ठी की हुई है। १० लोकसेवक बने। ६० सर्वोदय-मित्र बने। ६५० रुपये की साहित्य-बिक्री हुई। कुल ४०० परिवारों से सम्पर्क हुआ। अभी प्रयत्न जारी रहेंगे। अब तक दिल्ली में कुल ८७,००० रुपये इकट्ठा हुए हैं। लोगों ने यात्रा का अच्छा स्वागत किया और अपने घरों में खिलाया पिलाया और ठहराया। —बसंत व्यास

तरुण शांतिसेना शिविर

गांधी-शांति-प्रतिष्ठान एवं तरुण शांति-सेना भागलपुर के सम्मिलित तत्वावधान में भागलपुर शहर के छात्रों एवं नौजवानों का एक शिविर स्थानीय मारवाड़ी पाठशाला में दिनांक २८-९-'७० से ३०-९-'७० तक आयोजित किया गया। शिविर बहुत हद तक स्वावलम्बी था। प्रत्येक शिविरार्थी ने तीन दिन के भोजन के लिए ६-६ रुपये नगद दिये थे। अन्य खर्चों के लिए स्थानीय सज्जनों एवं गांधी-शांति-प्रतिष्ठान केन्द्र ने उदारतापूर्वक दान दिये।

शिविरार्थियों की कुल संख्या ४० थी। मुख्य अतिथि के रूप में प्रो० रामेश्वर सारस्वत, फादर जेम्स, जनाब शाह मरफ़े आलम ने क्रमशः हिन्दू, क्रिश्चन एवं इस्लाम धर्मों की बुनियादी बातों पर अत्यंत ही वैज्ञानिक अभिमत प्रकट किये। सभी धर्मों पर प्रकट किये गये अभिमतों के समन्वय की समीक्षा डा० रामजी सिंह द्वारा की गयी।

अंतिम दिन शहर के सभी विद्यालयों के शिक्षक-शिक्षिकाओं को आचार्यकुल पर विचार के लिए आमंत्रित किया गया था। आचार्यकुल की विचार-गोष्ठी में हमारे विशेष मार्गदर्शक श्री उमाप्रसाद सिंह उप-शिक्षानिदेशक, भागलपुर प्रमंडल, श्री अतुल प्रसाद सिंह जिला शिक्षा-पदाधिकारी एवं डा० रामजी सिंह द्वारा—विद्वान् एवं युवान शक्ति को एकसाथ मिलाकर समाज-परिवर्तन में एक नया मोड़ दिया जाय—प्रकाश डाला गया। साथ ही साथ आये हुए आचार्यों द्वारा ११ व्यक्तियों की एक समिति बनायी गयी जो निकट भविष्य में अपना कार्यक्रम निश्चित करेगी।

गोष्ठी की रिपोर्ट से निम्नलिखित बातें सामने आयीं स्वावलम्बी बनने, व्यसन-मुक्त होने, दहेज न लेने, साप्ताहिक-मिलन कार्यक्रम, तरुण-शांति-सेना का दस्ता-निर्माण, सत्साहित्य का अध्ययन, गांधी-विचार का प्रचार, नियमित श्रमदान, शिक्षा में आमूल परिवर्तन एवं शांतिमय क्रांति द्वारा समाज-परिवर्तन के लिए हर संभव प्रयास करना।

शिविर में कुल आमदनी ६२५ रुपये हुई और कुल खर्च ६२३ रु० १२ पैसे हुआ। बचत १ रु० ८८ पैसे रही।

—केदार प्रसाद चौरसिया

उत्तरप्रदेश में ग्रामस्वराज्य-कोष की योजना

उत्तरप्रदेश ग्रामस्वराज्य-कोष की कार्य-कारिणी समिति की बैठक लखनऊ में १४, कैसर रोड स्थित कार्यालय में श्री विचित्र-नारायण शर्मा की अध्यक्षता में हुई। इस बैठक में सर्व सेवा संघ के महामंत्री श्री ठाकुरदास बंग तथा केन्द्रीय ग्रामस्वराज्य-कोष के प्रधान मंत्री श्री सिद्धराज ढड्ढा भी उपस्थित थे।

समिति ने तय किया है कि जिन जिलों में कोष-संग्रह के कार्य में सक्रिय लोग नहीं हैं, वहाँ क्रियाशील लोगों की तलाश होनी चाहिए। सर्व सेवा संघ के वरिष्ठ लोगों का समय प्रदेश में कोष-संग्रह के लिए माँगा गया, जिसे श्री ठाकुरदास बंग ने स्वीकार किया। समिति ने सर्वसम्मति से तय किया है कि अब तक जिलों में ग्रामस्व-राज्य-कोष की जो धनराशि मान्य संस्थाओं के पास जमा है, वह केन्द्रीय ग्रामस्वराज्य-कोष द्वारा मान्य बैंकों, सेण्ट्रल बैंक आफ इण्डिया, बैंक आफ इण्डिया, पंजाब नेशनल बैंक तथा यूनाइटेड कमर्शियल बैंक में 'ग्राम-स्वराज्य-कोष' खाते में ही जमा की जाय और आगे भी जो कोष इकट्ठा हो वह भी इन्हीं बैंकों के 'ग्रामस्वराज्य-कोष' के नाम से 'नानआपरेटिंग एकाउण्ट' में जमा किया जाय। जिन संस्थाओं के पास अब तक के कोष की राशि हो और आगे भी जो एकत्र हो वह सब रकमें उपर्युक्त बैंकों में जमा होती रहनी चाहिए।

संघ के महामंत्री श्री ठाकुरदास बंग ने उत्तरप्रदेश में ६ नवम्बर से १७ नवम्बर तक का समय दिया है। इस अवधि में झांसी, आगरा, मेरठ, मुरादाबाद, अलमोड़ा, कानपुर, इलाहाबाद, मगहर, वाराणसी, और फैजाबाद में कमिश्नरी के कार्यकर्ताओं से परिचय प्राप्त करेंगे और उनकी बैठकों में ग्रामस्व-राज्य की अहिंसक क्रांति की अनिवार्यता पर विस्तार से चर्चा करेंगे। जिला समि-तियों से अनुरोध किया जा रहा है कि उनके आगमन पर जिला ग्रामस्वराज्य-समितियों की बैठक भी बुला लें।

—कपिल अवस्थी

लोक यात्रा का पता

द्वारा—श्री रामसुमेर भाई, श्री गांधी आश्रम, क्वीन्स रोड, अमृतसर (पंजाब)

भूदान-यज्ञ ९-११-'७० लाइसेन्स नं० ए ३४ [पहले से डाक-व्यय दिये बिना भेजने को स्वीकृति प्राप्त] रजिस्टर्ड नं० एल. ३५४

कुढ़नी में भूमि-वितरण : जयप्रकाशजी द्वारा सम्पन्न

मुसहरी प्रखंड से जयप्रकाश बाबू के कार्यों की ज्योति निकट के अन्य प्रखडो पर भी पड़ी है। फलस्वरूप सकरा, मुरौल और वैशाली के कामो को गति मिली है। दिनांक २६ अक्तूबर को पड़ोसी प्रखड कुढ़नी के मुख्यालय तुर्की में भी भूमि-वितरण-समारोह का आयोजन किया गया। तुर्की के महन्थजी ने बीघा-कट्ठा के रूप में ७ बीघा जमीन का दान दिया, जिसका वितरण जे० पी० के द्वारा स-समारोह संपन्न हुआ। ज्ञातव्य है कि इन्होंने इसके पूर्व भी १० बीघे का दान भूदान में दिया था, जिसका वितरण बाबा की उपस्थिति में हुआ था। समारोह में तुर्की कबीर आश्रम की ओर से जे० पी० का मानपत्र के साथ अभिनन्दन किया गया। अपने भाषण में जयप्रकाश बाबू ने हिंसा एवं आतंक के द्वारा समाज-परिवर्तन करने की चेष्टा को गरीब और अमीर दोनों के लिए विनाशकारी बताते हुए कहा कि अभी तक इस हिंसक-पद्धति से या सीलिंग कानून से यहाँ एक धूर भी जमीन न तो बाँटी गयी है और न किसीकी भूमिहीनता का निवारण हुआ है। उन्होंने कहा कि इस देश में प्रेम और करुणा के द्वारा उच्च मानवीय भावों को जागृत करके शान्तिपूर्ण साधनों से ही शांति लायी जा सकती है; अन्यथा समाज में न तो किसीका भला होगा और न नयी सामाजिक व्यवस्था ही बन पायेगी। आपने विस्तारपूर्वक समझाया कि कानून या हिंसक अस्त्र-शस्त्र हमारी समस्याओं के निदान करने में सर्वथा असमर्थ हैं।

मुसहरी प्रखंड अभियान की प्रगति

(१) पंचायत जिनमें काम हुआ या हो रहा है—७; (२) गाँव जिनमें काम हुआ या हो रहा है—४३; (३) गाँव जहाँ ग्रामदान की शर्तें पूरी हैं—१४, (४) गाँव जहाँ सिर्फ जनसंख्या पूरी हो गयी है—६; (५) गाँव शर्त-पूर्ति के बाद गठित ग्राम-सभा—१०; (६) ग्रामदान पर आयोजित जे० पी० की सभाएँ—५ ; (७) शिविर का आयोजन—२ ; (८) कानूनी पुष्टि के लिए दाखिल गाँव—४।

मुसहरी प्रखण्ड में तरुण शान्तिसेना द्वारा श्रम एवं शिक्षण-कार्य

तरुण शांतिसेना के तत्वावधान में स्थापित सर्वोदय विद्यालय मोमीनपुर एवं सर्वोदय विद्यालय बैकटपुर में दिनांक १४ अक्तूबर से निर्देशन एवं शिक्षण-कार्य प्रारम्भ हुआ। दिनांक १८ अक्तूबर के प्रातःकाल मोमीनपुर के छात्रों द्वारा गाँव के सड़कों की सफाई की गयी। इसी दिन अपराह्न में ३ बजे से ५ बजे तक बैकटपुर के छात्रों द्वारा स्थानीय विद्यालय एवं मुख्य सड़क के बीच की खाई को भरकर रास्ते का निर्माण किया गया। लोगों से सम्पर्क एवं शिक्षा की महत्ता के प्रचार के परिणामस्वरूप माधोपुर ग्राम में स्थानीय शान्ति-सैनिकों की सहायता से सर्वोदय बाल विद्यालय, ग्रामोदय बाल-विद्यालय एवं प्रौढ़ शिक्षा-केन्द्र नामक तीन शिक्षण-संस्थाओं की स्थापना की गयी। नयी तालीम के कार्यान्वयन के प्रयास-स्वरूप दिनांक २२ अक्तूबर से मोमीनपुर, बैकटपुर एवं माधोपुर के विद्यालयों में ग्रामोद्योग का कार्य प्रारम्भ हुआ, जिसमें टोकरी, चटाई, कताई, रस्सी, मिट्टी के सामान, लकड़ी के सामान, ताल के पंखे आदि के कार्य मुख्य रूप से सम्मिलित हैं। लड़कों की उम्र के अनुसार उद्योग के कार्य हैं। मोमीनपुर ग्रामसभा के मंत्री श्री सहदेव राय ने ७ कट्ठे गैर-मजरुआ जमीन जिसे कब्जा कर वे कृषि-कार्य में ला रहे थे, निवेदन करने पर विद्यालय के कृषि-कार्य के लिए दी है। उसी दिन उन्हींके हल-बैल के डेढ़ कट्ठे जमीन को आलू की खेती के लिए तैयार किया गया। बैकटपुर में भी पाँच कट्ठे जमीन जो एक किसान के अधीन थी, विद्यालय की खेती के लिए दी गयी। २६ अक्तूबर को मोमीनपुर के छात्रों द्वारा स्थानीय सड़क की सामूहिक सफाई की गयी। इसी तिथि को मध्याह्न में छात्रों के सामूहिक श्रम से पौने चार कट्ठा जमीन गोभी लगाने के लिए तैयार की गयी। लोगों से सम्पर्क के फलस्वरूप बैकटपुर के छात्रों की संख्या ३० से ७५ हो गयी है। मोमीनपुर एवं माधोपुर के विद्यालयों में भी छात्रों की संख्या बढ़ रही है। इन सभी कार्यों का मुख्य श्रेय श्री रामनरेश सिंह 'तरुण' को है, जो पूरी निष्ठा एवं मेहनत से इन सभी कार्यों में यहाँ निरंतर लगे रहते हैं। ●

इस अंक में

वार्षिक शुल्क। १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, यह अंक ५० पै०), विदेश में २२ रु०; या २५ शिलिंग या ३ डालर।
इस अंक का मूल्य ४० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं मनोहर प्रेस, वाराणसी में मुद्रित

सम्पादक
राममूर्ति
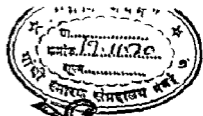
वर्ष : १७ सोमवार
अंक : ७ १६ नवम्बर, '७०

पत्रिका विभाग
सर्व सेवा संघ, राजघाट, वाराणसी-१
फोन : ६४३९१ तार : सर्वसेवा

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र
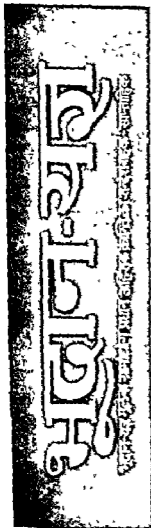
आर्थिक उन्नति

ईश्वर और माया, दोनों की एकसाथ साधना नहीं कर सकते। यह एक अत्यन्त मूल्यवान आर्थिक सत्य है। इन दोनों में से हमें एक को चुनना होगा। आज पश्चिमी राष्ट्र भौतिकवाद के राक्षस के पैरों तले कराह रहे हैं। उनकी नैतिक उन्नति कुण्ठित हो गयी है। वे अपनी उन्नति को रुपये, आने, पैसे में आँकते हैं। अमेरीका की दौलत उनका मानदण्ड बन गयी है। अन्य राष्ट्र भी धनाढ्य बनने के इच्छुक हैं। मैंने अपने देश के बहुत-से लोगों को यह कहते सुना है कि हम अमरीका की भाँति धनवान तो बनेंगे, पर उनके तौर-तरीके नहीं अपनायेंगे। मेरा मानना है कि इस प्रकार का प्रयत्न किया गया तो वह असफल हुए बिना नहीं रहेगा। हम एक ही समय में 'बुद्धिमान, संयमी और क्रूर' नहीं हो सकते। मैं अपने नेताओं से अपेक्षा करूँगा कि वे हमें सिखायें कि हम संसार के सबसे अधिक नीतिवान बनें।...

हमारा राष्ट्र सच्चे अर्थों में उसी दिन आध्यात्मिक राष्ट्र बनेगा, जब हम सोने की अपेक्षा सत्य को अधिक दिखा सकेंगे, सत्ता और सम्पत्ति के आडम्बर की अपेक्षा हममें निडरता अधिक होगी और अपने प्रति प्रेम की निस्बत दूसरों के प्रति उदारता अधिक बरतेंगे। यदि हम अपने घरों, अपने महलों और अपने मन्दिरों में धन के आडम्बर को प्रविष्ट न होने देकर, उनमें नैतिकता का वातावरण उत्पन्न करें, तो हम बिना सेना के भारी बोझ को उठाये विरोधी शक्तियों से मोर्चा ले सकते हैं।

'कलेक्टेड वर्क्स ऑफ महात्मा गांधी,'
खण्ड-१३, दिसम्बर २२, सन् १९१६

—मो० क० गांधी

• अमेरिका का चुनाव • तकनीकी की सामाजिक दिशाएँ • बेचैनी और खोज

सहरसा के संदर्भ में

गत १६-१७ अक्तूबर को बिहार ग्रामस्वराज्य समिति की बैठक सर्वोदय-ग्राम मुजफ्फरपुर में हुई। इस पत्र के द्वारा बिहार के मित्रों का ध्यान सहरसा जिलादान-पुष्टि के निर्णय की तरफ खींच रहा हूँ। मैं बैठक में मौजूद था, लेकिन समयाभाव के कारण इस एजेण्डा पर उपस्थित मित्रों को जितना कहना था, उतना कहने का अवसर नहीं मिला। बाबा के नाम के दबाव से मानो उन्होंने इसे स्वीकार लिया। बातचीत का समय रहा होता तो पक्ष-विपक्ष में बोलनेवाले मित्र अपनी-अपनी बात रखे होते, और यदि सहरसा-पुष्टि के निर्णय पर बाबा के नाम का वजन डाले बिना मुहर लगी होती, तो बात अधिक खूबसूरत होती।

मैं सर्व सेवा संघ-अधिवेशन, सेवाग्राम में नहीं जा सका था। विनोबाजी ने पुष्टि के लिए सहरसा जिले को ही क्यों चुना, इसके संदर्भ की उनकी बातें मुझे ठीक-ठीक मालूम नहीं, किन्तु बिहार में इस जिले की महत्ता के लिए मेरे मन में जो तर्क है, वह साथियों के सामने सह-चिन्तन के लिए रख रहा हूँ।

पुष्टि-कार्य चाहे जितना भी कठिन क्यों न हो, आज जब असरकारवालों की कृपा से एवं पूर्वसंस्कार से हिंसात्मक शक्ति की ओर जन-मानस आकर्षित हो रहा है, तब ग्रामस्वराज्य की शक्ति एक जिले से कम के पैमाने पर प्रगट करने की यदि कोशिश की जायगी, और वह यदि सफल भी हो जायगी तो जन-मानस पर उसका प्रभाव नहीं पड़ेगा। बिहार में सहरसा से अधिक छोटा कोई दूसरा ग्रामीण जिला है नहीं। पूरे जिले में शहर जैसा कुछ है नहीं।

चन्द्रमा पर मात्र दो आदमियों को उतारने के लिए बहुत वजनदार और खर्चीला यान बनाया गया था। समाज में अहिंसा की शक्ति प्रगट करने के लिए सर्वोदय-कार्यकर्ताओं को उसी तरह की वैज्ञानिक भूमिका में सोचना है, अपनी-अपनी पतंग अलग-अलग चन्द्रमा पर उतारने की कोशिश बेकार होगी।

विनोबाजी सिर्फ पवनार के 'बाबा' के साथ ही शतरंज नहीं खेल रहे हैं, बिहार के जवानों के साथ भी खेल रहे हैं। बिहार के चेस-बोर्ड पर उन्होंने अपना मोहर (नर्द) आगे बढ़ा दिया है। विभिन्न जिलों में अपने-अपने चौखटे में बैठे साथी यदि वहाँ से हिलते-डुलते नहीं, तो अभी ही सर्वोदय-जगत के चेस-बोर्ड पर से कट जानेवाले हैं। अगर बिहार के सर्वोदय-साथी सहरसा में लगने से कतराये और जिले की पुष्टि अगले दो-तीन महीने में नहीं कर पाये, तो वे एक बड़ी पराजय के जिम्मेदार बनेंगे।

अभी समय है। बिहार के बोर्ड पर सहरसा के आसपास सोलह नर्दें (जिले) हैं। उन्होंने अपने को यदि इस तरह सजाया कि एक की ताकत अनेक तरह से दूसरे को, और सबकी ताकत सहरसा को मिले, तो वे अवश्य जीतेंगे। यदि किसी कारण बाबा के नर्द की चाल को वे नहीं समझ पाये तो एक के बाद एक बोर्ड पर से वे सब-के-सब हटेंगे। तब मात्र सहरसा की ही हार नहीं होगी, बिहार हारेगा। और जब बिहार हारेगा, तो सिर्फ ग्रामदान के कागज ही कूड़े में नहीं फेंके जायेंगे, उनके साथ सब सर्वोदय-आश्रम, खादी-भंडार और सर्वोदय-नेता कूड़े में फेंक दिये जायेंगे।

यदि हमने समय को पहचान लिया, सब जिले के लोगों ने मिलकर सहरसा की पुष्टि कर ली तो फिर हिंसक शक्तियों पर 'शह' लगेगा।

मैंने विनोबाजी के सहरसा-निर्णय को इसी भूमिका में समझा है। बाबा-वचन पर जितनी श्रद्धा है, उनके प्रति सब तरह का आदर मन में रखते हुए मैं कहना यह चाहता हूँ कि आगे से बैठकों में बाबा को हौआ न बनाया जाय, उनकी बात की 'रेशनलिटी' भी नासमझों को समझायी जाय।

आपका,

हेमनाथ सिंह

ग्रामस्वराज्य-कोष

भूदान-किसानों से ग्रामस्वराज्य-कोष-संग्रह की योजना

दिनांक २०-१०-'७० को जिला ग्रामस्वराज्य-समिति में यह निर्णय किया गया कि पूर्णिया जिले भर में कुल अठारह हजार भूदान-किसान हैं। सभी भूदान-किसानों, जिन्हें एक एकड़ से अधिक जमीन मिली है, से तीन रुपये पैसठ पैसे ग्रामस्वराज्य-कोष के लिए चन्दा प्राप्त किया जाय। इस प्रकार कुल भूदान-किसानों से चालीस हजार रुपये प्राप्त होने की संभावना है। जिला भूदान-कार्यालय के द्वारा सभी भूदान-किसानों के नाम पत्र भेजने की तैयारी की जा रही है तथा कोष-संग्रह में कार्यालय के सभी कार्यकर्ता प्रयत्नशील हैं।

—सूर्यनारायण शर्मा

रीवाँ में ग्रामस्वराज्य-कोष

रीवाँ ग्रामस्वराज्य-कोष में रीवाँ के बान्धवेश महाराजा श्री मार्तण्ड सिंह जू देव ने दो हजार एक रुपये का चेक सम्भागीय ग्रामस्वराज्य-कोष के संयोजक श्री कुँवर रणबहादुर सिंह द्वारा रीवाँ ग्रामस्वराज्य-कोष की बैठक में प्रदान किया।

रीवाँ जिला से ग्रामस्वराज्य-कोष में अब तक संग्रहीत राशि २१ हजार ६० तक हो गयी है।

सैनिक-स्कूल रीवाँ के छोटे-छोटे बच्चों ने विनोबाजी के प्रति श्रद्धा व्यक्त करने के लिए एक-एक रुपया इकट्ठा कर रु० ३५४.४५ ग्रामस्वराज्य-कोष में दिये।

—इन्द्रलाल

अमेरिका का चुनाव

अमेरिका का हर चुनाव बड़ी धूम धाम से होता है। लेकिन कहते हैं कि यह मध्यावधि चुनाव हमेशा से भी अधिक धूम-धाम से हुआ है। जिस देश में फूँकने के लिए पैसे की कमी नहीं, और जहाँ एक दल के जीतने और दूसरे के हारने का सामान्य जीवन पर कोई असर नहीं, वहाँ की जनता के लिए चुनाव भी एक तमाशा है जिसे वह धूम धाम से मनाती है।

राष्ट्रपति निक्सन स्वयं रिपब्लिकन हैं, और दोनों सदनों में जीत हुई है डेमोक्रेटों की। राज्यों के गवर्नरों के चुनाव में भी रिपब्लिकनों ने भरपूर पछाड़ खायी है। कई लोगों ने डेमोक्रेटों की इस जीत में निक्सन और उसकी नीतियों की हार देखी है। यह भी कहा जा रहा है कि सन् १९७२ में राष्ट्रपति-पद के लिए होनेवाले अगले चुनाव में निक्सन दोबारा खड़ा होने के पहिले दो बार सोचेगा। लेकिन मजा तो यह है कि इस चुनाव में डेमोक्रेट और रिपब्लिकन दोनों अपनी जीत देख रहे हैं—डेमोक्रेट इसलिए कि वे जीते हैं, और रिपब्लिकन इसलिए कि अमेरिका विचार से अनुदारता की ओर बढ़ रहा है। कई बड़े "रेडिकल-लिबरल" (चुनाव में डेमोक्रेट इस नाम से पुकारे गये) हारे भी, लेकिन कैलिफोर्निया और फ्लोरिडा के महत्वपूर्ण क्षेत्रों में उनकी जबरदस्त जीत हुई।

क्या सचमुच ऐसी बात है कि अमेरिका की जनता निक्सन-सरकार की नीति-रीति को नहीं पसंद कर रही है? ये रेडिकल-लिबरल कौन हैं जो निक्सन का इतना जबरदस्त मुकाबिला कर रहे हैं? अपने देश से तुलना करें तो अमेरिका के ये लिबरल उसी तरह के हैं जो किसी समय हमारे यहाँ नरम दल के लोग थे—बल्कि उनसे भी ज्यादा नरम। वे चाहते क्या हैं? वे वियतनाम के युद्ध में 'अमेरिकन ब्लाक' की आहुति नहीं चाहते, वे काले लोगों को भी किसी हद तक आदमी मान लेते हैं, और चाहते हैं कि शहरी जीवन की बढ़ती हुई कठिनाइयों की ओर सरकार अधिक ध्यान दे। लेकिन वे भी निजी उद्योग और निजी स्वामित्व में उसी तरह विश्वास करते हैं जैसे रिपब्लिकन। वे भी अमेरिका की शक्ति और प्रभुत्व नहीं घटाना चाहते, इतना ही चाहते हैं कि प्रतिरक्षा का खर्च कुछ कम हो जाय। निक्सन ने इस चुनाव में सिद्ध कर दिया कि वह इतना भी उदार नहीं है। उदार वह कभी नहीं था। यह बात जानने की है कि पाक को अस्त्र-शस्त्रों से सुसज्जित करने और दक्षिण एशिया में तनाव बनाये रखने की नीति का समर्थक निक्सन सदा से रहा है—जब वह उपराष्ट्रपति था तब भी, और आज जब राष्ट्रपति है तब भी। वास्तव में वह अमेरिका की नयी चेतना का प्रतिनिधि नहीं है, प्रतिनिधि है अमेरिकी बन्दूक और अमेरिकी सन्दूक का। उसकी और उसके उपराष्ट्रपति ऐग्न्यू की नजर में 'रेडिकल' वह है जो उनके नेतृत्व से बाहर हो।

इस बार के चुनाव में अमेरिका में जिस तरह पैसा खर्च किया गया है, और जिस तरह कीचड़ उछाला गया है, उससे लोकतंत्र के किसी भी प्रेमी को चिंता होनी चाहिए। करोड़पतियों और व्यावसायिक हितों ने दिल खोलकर पैसा बहाया है। उन्होंने ऐसा यह सोचकर किया है कि वे किसी दिन भारी लाभ के साथ वसूल करेंगे। यह दिखाई देता है कि अब इस तरह का लोकतंत्र इन्हीं सन्दूकवालों का सेवक रहेगा, और असत्य और हिंसा के बल पर जीयेगा। केनेडी और मार्टिन लूथर किंग की हत्या के बाद भी अमेरिका की आँखें नहीं खुल रही हैं। बन्दूक रखने पर किसी तरह का कन्ट्रोल हो, इसका अमेरिका में जबरदस्त विरोध है। अमेरिका के लोकमानस को हिंसा अस्वीकार नहीं है—घर में भी नहीं, बाहर भी नहीं। वस्तुतः हिंसा उनकी सभ्यता का अंग बन गयी है।

यह सही है कि वियतनाम के युद्ध को लेकर अमेरिका में मंथन हुआ है। अति-वैभव के कृत्रिम जीवन से युवा-मन ऊबा है। फैलती हिंसा और शहरों के दूषित वातावरण से नागरिक परेशान हैं। कई दिशाओं से अमेरिका की पूरी सभ्यता में कड़वाहट घुस गयी है, जो उसे खोखली कर रही है। इतना होते हुए भी अमेरिका का मन काले लोगों को स्वीकार नहीं करता, अपने डालर के अहंकार को नहीं छोड़ता, दुनिया को साम्यवाद से बचाने की अपनी जिम्मेदारी मानने के दंभ से अलग नहीं हो पाता। अस्त्र-शस्त्र से उसकी बहुत बड़ी कमाई है। सेक्स, शराब और हिंसा से उसके मन में गुदगुदी होती है। डालर से किसी भी चीज या व्यक्ति को खरीद लेने में उसे विश्वास है। अमेरिका अभी "मजबूत सरकार" चाहता है। निक्सन उसे वही देने की कोशिश कर रहा है। ●

एक तरुण का पत्र

झिरी, धनबाद के ग्रामोद्योगी सत्याग्रह से एक छात्र ने सम्पादक के नाम एक पत्र लिखा है। पत्र लम्बा है, लेकिन मुख्य बातें ये हैं:

(१) भूदान में मिली भूमि का जैसा हिसाब रहना चाहिए था नहीं रहा। किसको जमीन मिला, कहाँ बँटना है, किसको मिलना है, हल-बैल की क्या व्यवस्था होगी, जिसे मिलेगी वह जोतेगा या नहीं, जमीन कहीं फिर दाता तो नहीं छीन लेगा, आदि का हिसाब नहीं रहा। जमीन लेने के बाद कितने वर्षों तक उस गाँव से कुछ सम्पर्क हो न रहा। बहुत-सारे मजदूर-किसानों ने खा-पीकर, कर्ज के कारण, या और किसी तरह जमीन गँवा दी। उनका नेतृत्व करनेवाला कोई न रहा।

(२) किसी आन्दोलन की सफलता उसके कार्यकर्ताओं के आचरण, चरित्र, जीवन-पद्धति पर बहुत-कुछ निर्भर करती है। आन्दोलन के नेताओं ने कार्यकर्ताओं के आचरण और उनके

'व्यक्तिगत जीवन से कोई सम्बन्ध न रखा। वह क्या खाता है, कैसे रहता है, उसके घर के लोग कैसे हैं, इसकी चिंता नहीं की गयी। फिर, अन्य लोग इस काम के बारे में, कार्यकर्ताओं के बारे में, आन्दोलन और इसकी पद्धति के बारे में क्या सोचते हैं, इसकी जानकारी नहीं की गयी। *कार्यकर्ता जनता में घुलमिल न पाये।*

(३) आन्दोलन ने अपने को गांवों तक ही सीमित रखा, शहरों, बुद्धिजीवियों, विद्यार्थियों, शहर के मजदूरों की उपेक्षा की।

(४) युवकों को आन्दोलन की जानकारी नहीं करायी गयी। *यह बात नहीं है कि लोगों को अहिंसक विचारों में अरुचि है, या* नवयुवक सिर्फ हिंसा चाहता है। वह चाहता है परिवर्तन, क्रियाशीलता और कुछ काम।

इस पत्र का तरुण लेखक 'भूदान-यज्ञ' का नियमित पाठक है। उसे आन्दोलन में रुचि है। खुशी की बात है कि उसने आन्दोलन के गुण-दोष परखने की कोशिश की है, और अपने विचार निर्भीकतापूर्वक लिखे हैं।

आन्दोलन के सम्बन्ध में इस प्रकार के पत्र कई दूसरे मित्रों के भी आते रहते हैं। युवकों के ही नहीं, आन्दोलन में बरसों से काम करनेवाले कार्यकर्ता साथियों के भी आते हैं। उल्लेख सबमें किन्हीं दोषों का होता है, या अपने कुछ विचार होते हैं, लेकिन प्रेरणा सबमें आन्दोलन के हित की ही होती है।

इन पत्रों में उठाये गये प्रश्नों पर हम और अधिक विस्तारपूर्वक विचार 'भूदान-यज्ञ' के किन्हीं अगले अंकों में करेंगे। अभी यहाँ सिर्फ दो-एक बातों की ओर अपने मित्रों का ध्यान खींचना चाहेंगे।

पहली बात यह है कि हमारे साथियों और शुभचिन्तकों को भी आन्दोलन के बारे में प्रामाणिक जानकारी बहुत कम रहती है। *दिल्ली के तरुण को भी भूदान के बारे में जानकारी 'दिनमान' के* हाल के एक अंक से मिली है, जब कि उसमें लिखी हुई सारी बातें सही भी नहीं हैं, और पूरी भी नहीं। कठिनाई यह है कि हमारे बड़े-से-बड़े दैनिक या साप्ताहिक पत्रों के लेखक और संवाददाता भी चीजों को अपनी आँखों से देखने या अपने दिमाग से सोचने समझने की कोशिश नहीं करते। भूदान, ग्रामदान-आन्दोलन उनके *अज्ञान और उपेक्षा का शुरू से शिकार रहा है।*

भूदान में बँटी हुई भूमि पर आज भी लाखों भूमिहीन बसे *हुए हैं, और अपनी मेहनत से कमा-खा रहे हैं। कोई भी जाकर* देख सकता है। लगभग ८० प्रतिशत भूदान-किसानों का अपनी भूमि पर कब्जा है। जो बेदखल हुए हैं उनमें सब दाताओं की जबरदस्ती के ही कारण नहीं, बल्कि सरकार की ढिलाई के कारण भी। सरकार के कार्यालयों में समय पर आवश्यक कानूनी कार्रवाई नहीं हो पाती। लगान दाताओं पर लगती रहती है। इतने पर भी कोशिश करने पर कई जगह बेदखल करनेवाले दाताओं ने आदाताओं को भूमि वापस कर दी है। विशुद्ध जबरदस्ती की बेदखली जितना हम सोचते हैं उससे कहीं कम हुई है।

यह सही है कि कुछ मिसालें ऐसी भी मिली हैं जिनमें भूमि के बँटवारे में कुछ निन्दनीय कार्रवाइयाँ हुई हैं। *पूरा लिया गया* है; जमीन को बिकी हुई है, एक ही भूमि एक से अधिक लोगों को दे दी गयी है; ऐसे लोगों को दी गयी है जो किसी भी तरह पाने के अधिकारी नहीं थे; तथा भूमि का अनुचित इस्तेमाल भी हुआ है। दुख है कि गलती मालूम हो जाने पर भी जिम्मेदार *व्यक्तियों की ओर से सुधार की कार्रवाई नहीं की गयी है।* इसके कारण आन्दोलन की प्रतिष्ठा को बहुत गहरा धक्का लगा है। ऐसा भ्रष्ट लोगों के कारण हुआ है। लेकिन ऐसे उदाहरण अधिक नहीं हैं। कुछ काले धब्बों को लेकर पूरे आन्दोलन को झाड़ू से पीटने की भूल से हमेशा बचना चाहिए। बुराई की ओर से आँख मूँदना *उतना ही बुरा है जितना अच्छाई को अस्वीकार करना।*

भूमिहीनों के मोर्चे पर हमारी मुख्य असफलता दूसरी रही है। हमें भूदान-किसानों के शिक्षण और संगठन पर ध्यान देना चाहिए था; हमने नहीं दिया। हम उन्हें आन्दोलन के सिपाही बना सकते थे; हमने नहीं बनाया। हम उन्हें संगठित करके मालिक-मजदूर *के नये सम्बन्ध प्रस्तुत कर सकते थे, हमने नहीं किया। यह* असफलता इतनी जबरदस्त हुई है कि उसके दुष्परिणामों से हमारा आन्दोलन आज तक मुक्त नहीं हुआ है।

दूसरी बात है कार्यकर्ताओं का चरित्र, जीवन-पद्धति आदि। किसी भी आन्दोलन में ये महत्वपूर्ण पहलू हैं, कहीं ज्यादा हमारे *आन्दोलन में हैं। सर्वोदय-आन्दोलन के कुछ मूलभूत मूल्य हैं;* निष्ठाएँ हैं। हम उन मूल्यों पर आधारित एक नयी समाज-व्यवस्था के लिए लड़ रहे हैं। व्यवस्था के बदलने में देर लग सकती है, लेकिन समाज हम कार्यकर्ताओं को उन मूल्यों और निष्ठाओं की कसौटी में कसने में देर नहीं करेगा। उसे ऐसा करने *का पूरा हक है। हमने बार-बार कहा है कि हम क्रान्ति के वाहन* हैं। हमें यह दावा सिद्ध करना है। कार्यकर्ताओं-पदाधिकारियों में वेतन और सुख-सुविधा में एक निर्धारित सीमा के बाहर विषमता, हमारे कहने-करने में बहुत अन्तर, हमारे आपसी तथा संस्था और उसके सेवकों में स्नेह, सौहार्दपूर्ण सम्बन्धों का अभाव, आदि कई *ऐसी बातें हैं जो लोगों को खटकती हैं। एक कठिनाई यह है कि* तरह-तरह की संस्थाओं को, कार्यकर्ताओं को, वे चाहे सेवा, उद्योग या आन्दोलन का काम करते हों, लोग सर्वोदय की एक ही तराजू में रखकर तौलते हैं। लोग नहीं जानते कि सबकी अलग-अलग वैचारिक स्थितियाँ हैं, और मर्यादाएँ हैं। जिस दिन सर्वोदय की *गंगा की मुख्य धारा अपने वेग के कारण दोनों किनारों के पानी* से अलग दिखायी देने लग जायगी उस दिन बहुत-सा भ्रम अपने-आप दूर हो जायगा। सर्वोदय 'सर्व' का है। उसमें सब तरह के लोग हैं। इस कारण भी भ्रम का होना अस्वाभाविक नहीं है। सर्वोदय की मुख्य धारा सहायक धाराओं से अलग तब दिखायी देगी जब *लोकशक्ति का लोकक्रान्ति के माध्यम के रूप में दर्शन* होने लगेगा। तब तक कुछ मिली-जुली स्थिति रहेगी। फिर भी→

नयी शक्ति के लिए अध्ययन और ध्यान आवश्यक

— कार्यकर्त्ताओं के लिए विनोबा की महत्त्वपूर्ण सलाह —

सुबह और अभी जो कुछ कहा गया, उसकी जानकारी मुझे यहां दी गयी तो मालूम हुआ कि लोगों ने अपने-अपने भिन्न-भिन्न ख्याल रखे। कुछ लोगों ने आवेश के साथ कहा, कुछ लोगों ने नम्रतापूर्वक कहा। लेकिन वह आवेश और नम्रता, दोनों उन-उन व्यक्तियों की अपनी स्वभाव की विशेषता थी। उसको अलग करके कथन में जितना सार है, वह सार लिया जाय और फिर सर्वसम्मति से कुछ फैसला करके काम किया जाय।

अध्ययन की कमी बाधक होगी

वैसे आज खास बोलने की मेरी वृत्ति नहीं थी, न मानसिक तैयारी थी। यहां कुछ तमिल लड़के लड़कियां आयी हैं, ७०-८० के करीब। तो उनके बीच ३० मिनट रहा। मुझे बड़ा ही आनन्द आया, और उनको भी बहुत प्रसन्नता मालूम हुई। उन तमिल लड़कियों को और लड़कों को कुछ बातें मैंने तमिल में कहीं। और मेरा तो तमिल ऐसा है, जिससे कि लोगों में हास्य-रस पैदा हो सकता है। लेकिन मैंने यह देखा कि तमिल के उत्तम-से-उत्तम साहित्य के जो अंश मैंने उनके सामने रखे, वह उनको मालूम नहीं। इसलिए तमिल का उत्तम ज्ञाता मैं ही साबित हुआ। वे तमिल उत्तम बोलते हैं, वैसा मैं नहीं बोल सकता। लेकिन तमिल का जो आध्यात्मिक साहित्य है, वह मैं घूंट-घूंट कर पी गया हूं। और यह काम कई सालों से मैं करता आया हूं। तो मुझे कहना यह है कि हम लोगों में अध्ययन की बहुत कमी है। कल मैंने गुण-विकास की बात रखी थी, गुणगान करना, गुण-वर्द्धन करना, बार-बार गुण को दोहराते जाना, अपने साथियों के दोष तो होते ही हैं, तो उसकी तरफ ध्यान न देना। दूसरी बात स्नेह की बतायी। आज एक तीसरी बात आपके सामने रख रहा हूं कि अध्ययन की कमी हमारे कार्य के लिए बाधक होगी। अध्ययन एक तो आध्यात्मिक—प्राचीन भारत का, मध्ययुगीन भारत का, आधुनिक भारत का, और भारत के बाहर का। असंख्य आध्यात्मिक चिन्तन करनेवाले हो गये। साक्रेटीस से लेकर और जीसस क्राइस्ट से लेकर के आधुनिक मार्क्सवाद तक, उन सबको मैं आध्यात्मिक कहता हूं, जिन्होंने अपना ध्यान विज्ञान पर रखा। तो उनका अध्ययन हमको करना होगा। सर्वोदय-विचार का अध्ययन हमको करना होगा। मुझे याद आ रहा है एक वाक्य कुरान में है। कुरान में पैगम्बर ने कहा है कि सब लोग जेहाद बोलो और जहाँ धर्म पर खतरा है वहाँ जाकर मर मिटो, और समर-भूमि में जाकर छाती खोलकर सामना करो। आगे लिखा है—'चन्द लोगों को अलग रखो, जिनको अध्ययन करना चाहिए, और बारीकी में, सूक्ष्म में जा करके सोचना चाहिए। साथ ही जो रणभूमि में हैं, वे जब वापिस आयेंगे, तो उनको जरा बुद्धिदान दिया जायेगा।' इस प्रकार का जो वाक्य कुरान में आया है, उसको मैंने लिख रखा है डायरी में। तो अध्ययन का यह काम सबको करना है, यह मैं महसूस कर रहा हूं।

प्रतिदिन एक घंटा निकालें। चाहे जिस किसी काम में लगे हों, एक घंटा दें, महीने में एक दिन और प्रतिवर्ष एक महीना, तो यह जो जमात है, वह जमात हार नहीं खायेगी। अध्ययन की अगर कमी रही, तो विचार में हम मुकाबिला नहीं कर सकते। लोग मुझसे तरह-तरह के सवाल पूछते हैं, और उनको लगता है बहुत-सी बातों में बाबा अप टु-डेट है। जितना प्राप्त कर सकता हूं, एक जगह बैठ करके, ज्ञान प्राप्त करता हूं। अनेक लोग जो मिलने आते हैं, उनसे भी बातें करके ज्ञान प्राप्त कर लेता हूं। इस तरह बटोरता रहता हूं चारों तरफ से। तो यह हम लोगों को सीखना चाहिए। इसके बिना हमारा काम आगे बढ़ेगा नहीं। कम्यूनिस्ट होंगे तो कम्यूनिज्म के अलावा और कोई अध्ययन करेंगे नहीं। कुरान के जो होंगे वे कुरान के सिवाय कुछ पढ़ेंगे नहीं। एक भाई था कुरान का बड़ा अभ्यासी। उसको पूछा, 'बाइबिल देखा, गीता देखा?' इस तरह के दो-तीन नाम पूछा। उसने कहा—'कुछ देखा नहीं।' मैंने पूछा, 'क्यों नहीं देखा?' बोला—'कुरान में लिखा रहमाने रहीम, ब से शुरू होते हैं, और आखिर में है अल्लाह बस। 'स' से

—आन्दोलन का चारित्र्य बढ़ाने के लिए अधिक से-अधिक जो किया जा सके जरूर करना चाहिए।

तीसरी बात। अब तरुण-शान्तिसेना और आचार्यकुल के बारे किसीको यह शिकायत नहीं होनी चाहिए कि तरुणों और बुद्धिवादियों की उपेक्षा की जा रही है। तरुण-शान्तिसेना क्रान्ति के लिए तरुण शक्ति का आवाहन है, और आचार्यकुल विद्-शक्ति का। प्रतीक्षा है इन शक्तियों के आगे आने की।

शहरों के लिए कार्यक्रम की रूपरेखा मौजूद है। काम शुरू करना है। ग्रामदान या ग्रामदान के क्षेत्रों में तो पुष्टि के अन्तर्गत शहरों में सघन कार्य अनिवार्य है। क्रान्ति की दृष्टि से गांव के विशेष महत्व को समझना चाहिए।

हम सलाह देंगे कि हमारा यह तरुण साथी, जिसने पत्र लिखा है, तथा उसकी तरह के दूसरे तरुण, इस क्रान्ति के अर्थ, महत्त्व, आयाम और दिशा को अच्छी तरह समझें। सर्वोदय की क्रान्ति में गांव और शहर, वृद्ध और युवक, संस्था और कार्यकर्ता, समाज और सरकार का अपना-अपना रोल है जिसे वे अलग-अलग ढंग से अदा करते हैं। हम विचार चाहे जो रखें, लेकिन बुनियादी बातों की अस्पष्टता के कारण धारणाएं न बनने दें। ●

तकनीकी की सामाजिक दिशाएँ

❀ कामेश्वर प्रसाद बहुगुणा ❀

सामाजिक परिवर्तन में विचार और औजार, इन दो साधनों का निर्णायक हाथ रहा है। मनुष्य का जैविक विकास भी उसकी शारीरिक क्रियाओं से प्रभावित हुआ है। उदाहरण के लिए हाथों के उपयोग के अभाव में मनुष्य शायद पूँछ-युक्त मानव ही रहता। बिना हाथ के प्रयोग के उसकी बुद्धि का विकास भी संभव नहीं था। इसका अर्थ है कि औजार यदि एक तरफ मनुष्य में शारीरिक (भौतिक) परिवर्तन करता है तो दूसरी तरफ वह उसमें मानसिक परिवर्तन भी करता है। समाज-वैज्ञानिकों ने 'औजार की इस प्रकृति' पर काफी गहराई से विचार किया है और कभी-कभी तो औजार की इस प्रकृति को सभ्यताओं के उत्थान और पतन की प्रक्रिया से भी जोड़ दिया गया है।

मानव बनाम यंत्रवाद

औजार वह उपकरण, भौतिक या अभौतिक, है जिसकी सहायता से मनुष्य अपनी जीने की प्रक्रिया सम्पन्न करता है। किन्तु समय की गति के साथ-साथ औजार क्रमशः मशीन तथा यंत्र में बदलता गया है। इस क्रम में पुनः उसकी परिवर्तन करने की शक्ति में भी परिवर्तन होता गया है, और अब औजार की परिवर्तन की शक्ति में परिवर्तन की यह प्रक्रिया यहाँ तक आ पहुँची है कि यह कहा जाने लगा है कि मनुष्य की 'इच्छा' आदि का सवाल अब 'गौण' हो गया है और उसे अपना व्यवहार 'यंत्र के अनुसार' करना चाहिए। अभी हाल ही में ऐसे यंत्रों का आविष्कार हुआ है जो मनुष्य से अधिक 'बुद्धिमान' बताए जाते हैं और उनके बारे में यह भी कहा जाता है कि ये यंत्र समाज को 'मनुष्य की भूल करने की आदत' से होनेवाली हानि से भी मुक्त कर देंगे। अब निर्णय यंत्र को करना होगा और उस निर्णय का क्रियान्वयन मनुष्य को करना होगा। वह नहीं करेगा तो यंत्र ही वह क्रियान्वयन भी कर सकेगा। उदाहरण के लिए संगणकों (कम्प्यूटर्स) को ले सकते हैं, जो गिनती करने से लेकर विचार करने तक की जैसी क्रियाएँ मनुष्य से कहीं अधिक 'सक्षम' और 'निष्पक्ष' ढंग से कर सकता है। मशीन के खिलाफ मनुष्य और मनुष्य के खिलाफ मशीन, यद्यपि यह प्रक्रिया तो औद्योगिक क्रान्ति के साथ साथ ही आरम्भ हो गयी थी और आदमी ने उसी समय से मशीन के विरुद्ध युद्ध आरम्भ कर दिया था, जिसे उस वक्त 'लुडाइट आन्दोलन' कहा गया, किन्तु अब आदमी और मशीन की इस लड़ाई में आदमी हारता जा रहा है।

अमेरिका जैसे देशों में तो संगणकों ने प्राचीन ज्योतिषियों का-सा स्थान ले लिया है और इस नयी परिस्थिति ने वहाँ 'भविष्य विज्ञान' (फ्यूचरालोजी) नामक एक नये शोध-विज्ञान को ही जन्म दे दिया है। इसके माध्यम से अब वहाँ आगे के २०-२५ साल से लेकर अरबों-खरबों साल तक की भविष्यवाणियाँ की जाने लगी हैं। बहुत पहले आरवेल (Orwell) ने '१९८४' नामक एक पुस्तक लिखी थी और बाद को हक्सले ने 'बहादुर नयी दुनिया' (ब्रेव न्यू वर्ल्ड) लिखी थी, किन्तु इन लेखकों की भविष्य-वाणियाँ उनकी 'अपनी प्रतिभा' के 'अनुमान' थे जब कि अब नये भविष्यवादी लोग अपने इन्हीं 'यंत्रों के अनुमानों' के आधार पर भविष्यवाणियाँ कर रहे हैं। विवाह सफल होगा या नहीं, भारत के पोथी-पत्रावाले पंडितों की ही तरह अमेरिका तथा योरोप में ऐसे यंत्र ही इस तरह के विषयों का फैसला कर रहे हैं।

और, अभी यह आरम्भ ही है। इस स्थिति का वहाँ तेजी से विकास हो रहा है। सन् १९१५ में मौरिस अर्नस्ट नामक एक विद्वान ने एक पुस्तक '१९७६ एक स्वप्नलोक' (यूटोपिया, १९७६) लिखी थी, किन्तु इसके केवल चार साल बाद ही १९५९ में अलेन बेकन नामक एक अन्य विद्वान ने, जो संगीत का अध्यापक था, 'मनुष्य के आगामी अरबों साल' (मैन्स नेक्स्ट बिलियन इयर्स) नामक पुस्तक लिख डाली। स्वीडेन, अमेरिका, फ्रान्स आदि देशों में तो, वैज्ञानिकों का एक संगठन ही भविष्य के अध्ययन के लिए बन गया है।

धरती का भविष्य

कहा जाता है कि भावी समाज का रूप अत्यधिक तकनीकी होगा और वैज्ञानिक उसे 'टेक्नोक्रेटिक समाज' का नाम दे रहे हैं। इसमें वैज्ञानिक तज्ञ, जिनकी संख्या अत्यन्त कम होगी, सारे 'समाज के लिए चिंतन' करेंगे। उनका चिंतन निस्संदेह उनके 'यंत्रों की सलाह के अनुसार' होगा और बाकी समाज-वैज्ञानिक जिन्हें आजकल, 'ह्यूमनिस्ट' या सामाजिक अभियंता (सोशल इंजिनियर) कहा जाता है वे, जैसा कि प्रख्यात भविष्य-वैज्ञानिक जेबिग्न्यू ब्रेजिन्स्की ने कहा है, बेकार हो जायेंगे। जेबिग्न्यू ने भावी समाज का यह दिलचस्प चित्रण किया है। इसे हम किंकर्तव्य-विमूढ़ता की स्थिति नहीं कहेंगे, क्योंकि किंकर्तव्यविमूढ़ता में तो मानस में अनेक कर्तव्यों में से 'चुनाव' की समस्या रहती है, किन्तु 'दुष्कार्यवाद' में ऐसी कोई समस्या नहीं होती। यह तो एक तरह से नितान्त मूल्यविहीन अवस्था है। एक अन्य प्रसिद्ध वैज्ञानिक हर्मन कान्ह, जिसके आग्नेयास्त्रीय युद्धविज्ञान का विश्वव्यापी उपयोग हुआ है, ने कहा है कि आगामी युद्ध अत्यधिक आग्नेयास्त्रीय होंगे, जिनसे धरती पर करोड़ों लोग समाप्त हो जायेंगे और तब एक ऐसी प्रौद्योगिक सभ्यता जन्म लेगी जहाँ मनुष्य का मनुष्य से सम्पर्क अनावश्यक होगा। जेबिग्न्यू के अनुसार इस सभ्यता में नियंत्रक (कंट्रोलर) आवेगों का नियमन करेंगे और समाज के लिए 'योग्यतम' का चुनाव करेंगे। इस

समाज में वैज्ञानिकों के अनुसार अधिकांश मनुष्यों की कोई आवश्यकता नहीं रहेगी, क्योंकि उस समय के लिए आवश्यक प्रज्ञा तथा विशेषज्ञता का उनमें नितान्त अभाव रहेगा। इस प्रक्रिया का आरम्भ तो यों हो ही चुका है, जब कि आज हम अपने दैनिक जीवन में आनेवाली अधिकांश बातों के बारे में बुनियादी ज्ञान से अनभिज्ञ होने लगे हैं, और चाहे जितनी शिक्षा का प्रसार किया जाय, इसमें कोई अन्तर आनेवाला नहीं है। अतः आज जिन्हें हम आदर्श, विचार, मूल्य आदि कहते हैं, भावी समाज में इस तरह की बातों का कोई स्थान नहीं होगा। यह समाज या तो देवताओं का ही हो सकता है या फिर पशुओं का ही हो सकता है किन्तु मनुष्य का नहीं। मनुष्य तो मूल्य-प्रधान प्राणी है, पर भावी समाज में मूल्यों के लिए स्थान को गुंजाइश नहीं है।

कहा जा रहा है कि इन सब परिस्थितियों में मनुष्य की जैविक प्रकृति (नस्ल) पर भी प्रभाव पड़ेगा और भावी मानव आज के मानव से अनेक अर्थों में भिन्न होगा। उदाहरण के लिए उसमें स्त्रियों और पुरुषों के शारीरिक भेद बहुत कम हो जायेंगे। पुरुषों में दाढ़ी तथा मूछों का अभाव होगा। सिर गंजे और शरीर के मान से बड़े होंगे। शरीर की लम्बाई भी कम होगी और मनुष्य २ या २॥ फीट से अधिक लम्बा नहीं होगा। उसे चूँकि हाथ और दिमाग से काम करने का अवसर बहुत कम होगा, अतः उसकी हाथ की उंगुलियाँ एकदम छोटी या बिलकुल नहीं होंगी। सबसे बड़ा फर्क तो यह होगा कि तब अच्छाई और बुराई जैसी कोई भावना नहीं होगी, क्योंकि यंत्र अ-नैतिक (ए-मारल) होते हैं।

यांत्रिक नियंत्रण और 'स्वतंत्रता'

सामाजिक संगठन की प्रक्रियाएँ भी बदल जायेंगी। आज हम समता, स्वतन्त्रता, तथा बंधुत्व के आदर्शों के अनुसार समाजवाद, लोकतंत्र आदि की बात करते हैं। ये सब बातें उस वक्त बेमतलब हो जायेंगी। समाज का संचालन पूर्णतः यंत्रों के हाथ में होगा, जो उन चन्द आदमियों के माध्यम से काम करेंगे जो यंत्र-विशेषज्ञ होंगे। केन्द्रित निर्देशन और नियंत्रण अत्यधिक जटिल होगा। इस अवस्था में समता या लोकतंत्र अथवा बंधुत्व जैसी भावनाओं का सम्पूर्ण ह्रास हो जायेगा। ये सब बातें 'पिछड़ेपन' और 'आदिम अवस्था' की द्योतक मानी जायेंगी। आज के साम्यवादी चीन में इसकी कुछ झलक मिलती है।

हमें यह समझना होगा कि इस तरह की समाज-व्यवस्था को हम चींटी या दीमकों का समाज, जिसे समाज-वैज्ञानिकों ने 'झुण्ड समाज' नाम दिया है, नहीं कह सकते, क्योंकि यद्यपि इस समाज में भी केन्द्रित व्यवस्था रहती है किन्तु उसमें भी व्यक्तिगत 'पहल' की गुंजाइश रहती है। यह समाज अनिवार्यतः श्रम पर आधारित समाज होता है और श्रम निजी गुण होता है। व्यक्तिगत पहल, चिंतन और श्रम की इस व्यवस्था में भी एक दायरे में व्यक्ति की अपनी स्वतन्त्रता का एक 'रोल' रहता है जिसके ही आधार पर इसमें दोष अथवा अपराध के लिए सजा आदि का एक ढाँचा रहता है। किन्तु भावी समाज में चूँकि स्वतन्त्रता जैसी कोई चीज नहीं होगी, अतः उसमें सजा आदि जैसी बातें भी नहीं होंगी। जो लोग व्यवस्था में नहीं खप पायेंगे उनके लिए वहाँ स्थान ही नहीं है। यह समाज-विज्ञान के लिए चिंतन की एकदम नयी स्थिति है।

उस अवस्था को क्या कहेंगे ?

यहाँ पर एक दिलचस्प प्रश्न पैदा होता है। पश्चिम में जो भी लोग इस भविष्य की शोध या घोषणा कर रहे हैं वे सब, और मैं इसमें श्री जॉन गाल्टुंग और उनके साथियों को भी शामिल करता हूँ, इस बात में सहमत हैं या इसे एक स्थापना मानकर चल रहे हैं कि तकनीकी की वर्तमान गति तथा प्रकृति को बदला नहीं जा सकता। वे यह भी मानने लगते हैं कि तकनीकी की दिशा नहीं बदली जा सकती। इसमें हम यद्यपि कुछ लोगों को, जैसे कि प्रसिद्ध अमरीकन राजनीति विज्ञानवेत्ता हान्स मोर्जेन्थ, फिर रेन्होल्ड नेबुर (Rienhold Nebuhr), जैसे सिद्धान्तशास्त्रियों को, अपवाद मान सकते हैं जो कहते हैं कि अच्छे या बुरे की समस्या मनुष्य में स्थायी होती है और सत्ता के लिए लालच, जिसे 'पशु-भाव' कहा गया है, प्रबल होती है। हम इसे समाप्त नहीं कर सकते, केवल इसके हम पर प्रभुत्व जमाने के अवसरों तथा शक्ति को कुछ कम कर सकते हैं। किन्तु इस सन्दर्भ में वे लोग भी मनुष्य की चिंतना (Reason) की प्रकृति को भूल जाते हैं। चिंतना तो उस औजार की तरह होती है जिसके प्रयोग में न आने से वह जंग लगकर नष्ट हो जाता है। आधुनिक तकनीकी की सबसे बड़ी विशेषता यह है, और तकनीकी जटिलता के विकास के साथ-साथ उसकी यह विशेषता और बढ़ेगी, कि उसमें चिंतना के लिए काम करने का अवसर ही नहीं होता। परिस्थितियों में चुनाव करने की प्रक्रिया में से चिंतना पनपती है, किन्तु अब यह काम यंत्र से ले लिया है या वह भविष्य में इस काम को पूर्णतया अपने हाथ में ले लेगा। तब चिंतन का प्रश्न भी समाप्त हो जाता है। अभी तो रूस तथा अमेरिका में कुछ दवाइयों के माध्यम से मानव-चिंतना पर काबू करने का प्रयास हो रहा है, किन्तु भावी समाज में इस तरह की दवाई की भी आवश्यकता नहीं रहेगी। पुनः इस समाज-व्यवस्था को हम 'दासता की अवस्था' भी नहीं कह सकते, क्योंकि दासता भी एक चिंतना है। इसे तो हम केवल एक ऐसी अवस्था कह सकते हैं जिसमें मनुष्य को मनुष्य के अभी तक ज्ञात गुणों का कोई भान ही नहीं है। निस्संदेह इस समाज में व्यवस्था रखना अत्यन्त सरल काम होगा।

क्या यह समाज हमारा आदर्श होगा या हो सकता है ? इस सवाल का जवाब लोकतंत्र या साम्यवाद, किसीके पास नहीं है। जहाँ तक लोकतंत्र का प्रश्न है वह केवल वर्तमान की परिधि में बँधा है और→

सर्वोदय और परिस्थिति

❀ त्रिपुरारि शरण ❀

सर्वोदय-आन्दोलन ने पिछले १९ वर्षों में दस लाख एकड़ भूमि का बँटवारा किया है और भूमि के व्यक्तिगत स्वामित्व के विसर्जन की दृष्टि से हजारों गाँवों का ग्रामदान हुआ है। इसके साथ ही साम्प्रदायिक दंगों के निवारणार्थ शान्ति-सेना का गठन हुआ है। इस स्थिति से ऐसा लगता है कि इस देश में एक बहुत बड़ा क्रान्तिकारी काम हुआ। लेकिन इस स्थिति की तुलना में समस्या बेहद बढ़ती गयी है। इसलिए कई तरह के लोग, जिनमें इसके कार्यकर्ता भी हैं, कहते हैं—"सर्वोदय एक अव्यावहारिक विचार है।" इससे दो बातें स्पष्ट होती हैं -

(१) जनता ने इसे शक्तिशाली आन्दोलन के रूप में स्वीकार नहीं किया है।

(२) इस आन्दोलन में गत्यवरोध आ गया है।

किन्तु आज तक के इतिहास में यह नहीं मिला है कि किसी शक्तिशाली मानवीय क्रान्ति के विचार को लोगों ने प्रारम्भ में व्यावहारिक कहा है। जो हो, सर्वोदय के कार्यकर्ताओं को क्रान्ति की शक्तियों की समझ होनी चाहिए और उन्हें समय पर उपयुक्त और ठोस कदम उठाना चाहिए।

सर्वकल्याण और सर्वसम्मति का उद्देश्य

समाज के सभी सदस्यों का सर्वोदय कल्याण चाहता है। सबके कल्याण का क्या अर्थ है? सभी वर्गों का कल्याण नहीं, वह तो वर्गहीन समाज की स्थापना चाहता है। जब तक वर्ग रहेंगे तब तक शोषक अपने स्वार्थ की पूर्ति के लिए प्रयत्नशील रहेंगे। कल्याण के हकदार तो शोषित ही हैं। लेकिन जब दोनों उत्पादन के साधनों के समाजीकरण के कारण सत्ता, अर्थ और संस्कृति की दृष्टियों से एक स्तर पर आ जायँगे तो उसी समय सबके कल्याण और सर्वसम्मति की कल्पना सार्थक होगी। शोषक की मदद का क्या अर्थ है? ज्ञात-अज्ञात और प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष तरीकों से शोषण में मदद हो सकती है। पूँजीवादी व्यवस्था के नियमों में रहना शोषण का सहकार है। सर्वोदय का जीवन जीना उसके साथ असहकार है। मतलब कि इच्छानिरत भावी समानता के आधार पर जीवन का व्यवहार पूँजीवादी व्यवस्था के साथ विद्रोह है। मानवीय सम्बन्ध को पैसे से जोड़ना पूँजीवाद के साथ सहकार है।

जब सर्वकल्याण पर आधारित समाज-व्यवस्था स्थापित होगी तब सर्व-सम्मति का उद्देश्य पूरा होगा। सर्व-सम्मति का उद्देश्य है सबके मन और जीवन का ऐसा कल्याण जिसमें सभी लोग परस्पर के सुख-दुःख में शामिल होते हुए अपनी विशेषताओं के अनुरूप विकसित हों।

जिन लोगों ने शोषितों के दुःख से करुणा की स्थिति में आकर इस आन्दोलन को महज इसलिए सहयोग किया है कि दुखियों की सहायता करना एक पुण्य कार्य है, उन्हें यह स्पष्ट हो जाना चाहिए कि वर्तमान व्यवस्था को कायम रखते हुए दयावश दान देने की प्रवृत्ति पूँजीवादी व्यवस्था को कायम रखता है।

महाजन पूँजी देंगे, मजदूर श्रम और भूमिवान भूमि देंगे। तीनों मिलकर चलेंगे, यह सर्वोदय का विचार नहीं हो सकता। पूँजी, भूमि और श्रम, सब समाज का है। इन तीनों का अलग-अलग अस्तित्व मानकर चलने से समाज का आधार अव्यवस्थित रहेगा। इसमें कोई शक नहीं कि मृगतृष्णा की तरह इससे कुछ क्षणों के लिए परस्पर का सहकार नजर आयेगा। इसका यह अर्थ कदापि नहीं कि उत्पादन के साधनों पर सामाजिक स्वामित्व के कारण व्यक्ति की स्वतन्त्रता समाप्त हो जायगी।

मानव-इतिहास बराबर से शोषक और शोषितों के बीच का संघर्ष है। ऐसे ही संघर्षों से समाज कुछ-न-कुछ बदलता रहा है। आज उत्पादन के साधनों, सत्ता एवं संस्कृति पर पूँजीवाद का आधिपत्य है। करोड़ों छोटे-छोटे स्वामी साधनहीन हो रहे हैं और चन्द लोगों के हाथों में उत्पादन के साधन सिमटते जा रहे हैं। बड़े-बड़े कारखानों और स्वचालित यंत्रों का उपयोग बड़े पैमाने पर हो रहा है और हरित क्रान्ति के नाम पर चन्द किसानों के पास धन, ज्ञान और पूँजी सिमटती जा रही है। आबादी की गति बड़ी तेज है और नौकरशाही एवं पूँजीवादी शिक्षा तकनीकी ज्ञान-रहित बेरोजगार लोगों की संख्या बढ़ा रही है, जो वर्तमान उत्पादन-व्यवस्था के कच्चे माल हैं। अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार द्वारा चन्द देशों के हाथों में विज्ञान, सत्ता, संस्कृति और आर्थिक समृद्धि केन्द्रित हो रही है। इस प्रकार शोषण और उत्पीड़न तीव्र गति से बढ़ता जा रहा है।

→भावी पर सोचने की अब उसमें प्रतिभा नहीं रह गयी है। साम्यवाद ने अवश्य भावी पर सोचा था, किन्तु वह उसकी 'कल्पना' मात्र है, कोई तथ्य नहीं है। 'तकनीकी के स्वभाव' को समझने में साम्यवाद भी पूरी तरह असफल हुआ है। वह यद्यपि विश्व-परिवर्तन के उत्साह को लेकर चला था, किन्तु अब तो वह भी 'वर्तमान में ही सुख खोजने' में अमेरिका का साथी हो गया है। अब उसमें प्रश्न उठाने और उनका जवाब देने की प्रतिभा चुक गयी है। तब इस सवाल का उत्तर क्या हो सकता है? क्या हमारे समय में किसी बुद्धिमान व्यक्ति ने इस प्रश्न का उत्तर दिया है? इस सन्दर्भ में हमें गांधीजी पर विचार करना ही होगा, क्योंकि आज के या किसी भविष्य के भी समाज पर गांधी को छोड़कर विचार किया ही नहीं जा सकता है। गांधीजी ने आधुनिक तकनीकी को ही एक चुनौती दी है, जो अब तक का कोई चिन्तक नहीं दे सका। गांधीजी की इस चुनौती को समझना ही होगा। ■

आज पूँजीवाद ने मनुष्य को अपने परिवार से भी अलग कर पैसे का दास बना दिया है। इस व्यवस्था के कारण मनुष्य इस प्रकार स्वार्थी बन गया है कि वह अपने माता-पिता और भाई-बहन के सम्बन्धों को भी पैसे से तौलता है।

पूँजीवाद ने अपने बचाव के लिए ही कल्याणकारी राज्य का एक घपला खड़ा किया है। इससे लोग इस भ्रम में पड़ गये हैं कि पूँजीवाद का स्वभाव बदल रहा है। उसने तो अपनी व्यवस्था में शान्ति कायम रखने के लिए ही ऐसा किया है। सहृदय व्यक्तियों को भी उसने हृदयहीन बना दिया है। समाज के नैतिक जीवन को उसने इतना बीभत्स और पाशविक बना दिया है कि इसे देखकर निर्लज्जता भी शरमा जायगी।

राजनैतिक कलाबाज सत्ता पर इसलिए कब्जा कर रहे हैं कि वे भी बड़े पूँजीपति बनें, आलीशान भवनों में रहें और उन्हें आधुनिकतम सुविधाएँ प्राप्त होती रहें। ये पूँजीवाद के पोषक सत्ता के हरेक जोड़ पर इस प्रकार बैठ गये हैं कि सारा समाज भ्रष्टाचार और चोर-बाजारी से त्रस्त हो रहा है। आज किसी भी मनुष्य के लिए यह असंभव हो गया है कि वर्तमान व्यवस्था में यह पवित्र जिन्दगी जीने की कल्पना भी करे।

पूँजीवादी व्यवस्था में लोकतंत्र और समाजवाद पर आधारित मिश्रित अर्थ व्यवस्था पूँजीवाद को शक्ति ही प्रदान करती है। पूँजीवादी मन और संस्कार सामाजीकरण किये गये उद्योगधन्धों को किसी भी प्रकार जिन्दा रहने नहीं दे सकते। ऐसी परिस्थिति में राष्ट्रीयकरण पूँजीवादी अजगर का मुख्य आहार है।

शोषक और सर्वोदय

मनुष्य मानवीय और पाशविक, दोनों प्रवृत्तियों का योग है। जैसी समाज-व्यवस्था होती है, सामान्यतः वैसा ही मनुष्य का आचरण होता है। इसलिए शोषकों को मार डालना मानवता का दिवालियापन है। लेकिन शोषक रात-दिन शोषण के काम में लगा रहता है और वह जोंक की तरह इन्सान का खून निकालता रहता है। इससे बढ़कर और क्या हिंसा हो सकती है? चन्द लोग मिहनतकश को साधनहीन बनाकर अपना उल्लू सीधा करें, इससे बढ़कर और क्या अन्याय हो सकता है? समझाने पर भी वे नहीं समझते हैं। अगर मिहनतकश अपने हक के लिए संघर्ष करता है तो उसे गोली का भी निशाना बना दिया जाता है। तो, शोषक से बढ़कर समाज में हत्यारा तथा अपराधी और कौन हो सकता है? इसलिए सहज भाव में मनुष्य पर यही प्रतिक्रिया होती है कि शोषकों का गला दबा दिया जाय। लेकिन इस प्रतिशोध का अन्त कहाँ होगा? इसलिए जनबल से उसकी व्यवस्था ही उलट दी जाय और उसके अन्याय एवं शोषण के चक्के चकनाचूर कर दिये जायँ। लेकिन उसकी हत्या नहीं की जाय। क्योंकि वह भी एक मनुष्य है और समाज की परिस्थिति इसके लिए कम जिम्मेदार नहीं है। शोषक का परिवर्तन हो सकता है, समझदारी अथवा जन-शक्ति के प्रभाव से। कानून के दाव-पेंच में वह जीत जाता है।

हिंसक और अहिंसक क्रान्ति की गति

जब अहिंसक क्रान्तिवाले यह कहते हैं कि उनकी पद्धति से क्रान्ति का आधार स्थायी होगा तो कानून और हिंसक पद्धतिवाले, क्रान्ति की प्रक्रिया शीघ्र पूरी होगी, ऐसी दलील देते हैं। आखिर ये दोनों करना क्या चाहते हैं? जनजीवन की दृष्टि और आचार में समाजवादी समाज की स्थापना। प्रश्न है कि यह कैसे होगा? सत्ता पर कब्जा करने से अथवा प्रशिक्षित और संगठित जनता द्वारा राजनैतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक संगठनों के परिवर्तन और उस पर अधिकार करने से? येन-केन प्रकारेण सत्ता पर अधिकार करने से समाजवाद की स्थापना नहीं हो सकती। इसलिए कि सत्ता पर हिंसक वृत्तिवाले लोगों का ही आधिपत्य होगा जिनके द्वारा मार्क्स के मानवतावादी समाज की स्थापना नहीं हो सकती। हम यह भी मानते हैं कि सत्ता पर जब तक समाजवादी शक्ति का आधिपत्य नहीं होगा तब तक वर्तमान व्यवस्था को बदलना असंभव है। लेकिन इस पर आधिपत्य तो समाजवादी जनता के सच्चे प्रतिनिधियों का होगा। इसलिए समाज के भिन्न-भिन्न स्तरों पर समाजवादी अथवा सर्वोदयी जनता का मोर्चा अनिवार्य है। यह मोर्चा तो उनका होगा जो सचमुच समाजवादी जीवन जीना चाहते हैं और उनका जीवन उस दिशा की यात्रा के पथ पर है। अन्यथा चीन की सांस्कृतिक क्रान्ति-जैसी पुनर्क्रान्ति करनी होगी, जिसमें यह कहना मुश्किल होगा कि वैर-भाव प्रकट हो रहा है या सच्ची क्रान्ति। माओ प्रतिक्रियावादी हैं या लाओत्से ची? हिंसक क्रान्ति के ऐसे बहुत सारे उदाहरण सामने हैं। क्या यह सही है कि समाजवादी क्रान्ति में हिंसा की प्रक्रिया शीघ्र समाजवाद लाती है? क्या यह सही नहीं है कि रूसी क्रान्ति के लिए सन् १८४८ में मार्क्स ने कम्यूनिस्ट मैनिफेस्टो तैयार किया था, जिसके पूर्व से ही समाजवादी क्रान्ति का अभियान जारी था? क्या यह सही है नहीं है कि रूसी क्रान्ति के १७ वर्षों बाद तक समाजवादी समाज के लिए हिंसक संघर्ष चलता रहा? इसके बावजूद सर्वहारा की तानाशाही अब तक कायम है जो समाजवाद के उद्देश्यों से दूर है।

भारत के समक्ष समाजवादी समाज की स्थापना के लिए तीन समस्याएँ खड़ी थीं—साम्राज्यवाद, सामन्तवाद और सामन्ती पूँजीवाद, जब कि रूस और चीन के समक्ष साम्राज्यवाद भी नहीं था। तब यह कहा जायगा कि भारत में सामन्तवाद और सामन्ती पूँजीवाद के अन्त के लिए ठोस संग्राम १५ अगस्त १९४७ से आरम्भ हुआ। रूसी क्रान्ति के लिए ७९ वर्ष लगातार प्रयत्न होते रहे। उस समय सत्ता की शक्ति कमजोर थी, क्योंकि वह परम्परागत अस्त्र-शस्त्र का इस्तेमाल करती थी, जिसका उपयोग

जनता भी कर सकती थी। लेकिन आज आधुनिक अस्त्र-शस्त्रों का उपयोग सामान्य लोग नहीं कर सकते, क्योंकि उनका ज्ञान और उसकी उपलब्धि अत्यन्त कठिन है। हिंसक आन्दोलन में मिलीटरी की जीत होती है जो समाजवाद से दूर रहती है। और, अन्तिम बात यह कि जनता जिस हद तक समाजवाद के विचार और आचार को अपनायेगी उसी हद तक समाजवाद की स्थापना होगी। इसलिए मार्क्स एवं गांधी के साध्य और गांधी के साधन से ही समाजवाद अथवा सर्वोदय के लक्ष्य की पूर्ति हो सकती है। इसलिए मार्क्स ने भी कहा था "जिस साध्य की प्राप्ति के लिए अन्यायपूर्ण साधनों की जरूरत पड़ती है वह साध्य न्यायपूर्ण नहीं हो सकता।"

सर्वोदय के कार्यक्रम

यह समझ लेना चाहिए कि समाज की रचना तभी हो सकती है जब वर्तमान व्यवस्था का अन्त हो जाय। इसकी पहचान उसी समय होगी जब जनता इस व्यवस्था को उलट देने के लिए संगठित, आचारकुशल और क्रियाशील हो जायेगी। हम यह नहीं समझ लें कि हमारी जिन्दगी में सर्वोदय की स्थापना नहीं हुई तो अब होगी ही नहीं। समाज-परिवर्तन की अपनी गति है। हममें यही होगा कि हम क्रान्ति की गति को तेज कर दें और उसकी राह पक्की करें। इसलिए हम अपनी बुद्धि एवं विवेक से पूरी शक्ति लगाकर अपना फर्ज अदा करते जायें। मौजूदा स्थिति में निम्नांकित कार्यक्रम जरूरी हैं -

(१) हम शोषितों को उनकी दैनिक समस्याओं के हल के क्रम में नयी दृष्टि से संगठित करें।

(२) हमने जो कुछ भी भूदान, ग्रामदान, शान्तिसेना, खादी-ग्रामोद्योग आदि का काम किया है उन्हें विचार-आधारित करें और आचरण द्वारा उन्हें ठोस करें। इस क्रम में हम यह भी कहना चाहते हैं कि ग्रामदान की ग्रामसभा अगले कई वर्षों तक सामान्यतः क्रान्तिकारी नहीं बन सकेगी, इसलिए संक्रमण में उन गाँवों में अलग से कार्यकर्ताओं का संगठन करें।

(३) हम परिस्थिति को समझने-समझाने, सत्याग्रह और असहयोग के तरीकों को आवश्यकतानुसार उपयोग करने में कभी नहीं चूकें। इससे हमें लक्ष्य पर पहुँचने के लिए बड़े-से-बड़े अनुभव मिलेंगे तथा हम ठोस बनेंगे।

(४) यह भी हो सकता है कि किसी कारखाने अथवा फार्म के सभी कार्यकर्ता समाजवादी प्रबन्ध का ठोस नियम बनाकर कब्जा करें और बिना किसी प्रकार की क्षति पहुँचाये उसका काम आरम्भ कर दें।

(५) यह निर्विवाद है कि साहित्य का प्रचार किसी भी संगठन का अनिवार्य अंग है। इसलिए जनता के बीच पत्रिकाओं और ठोस साहित्य का व्यापक प्रचार होना चाहिए। साथ ही ठोस साहित्य का निर्माण होना चाहिये। यह भी स्पष्ट होना चाहिये कि साहित्य-निर्माण और उसका शोध नौकरी-वृत्तिवाले विद्वानों से नहीं हो सकता। आज तक के इतिहास में ऐसे शोधों से कभी क्रान्ति नहीं हुई।

(६) नये समाज की रचना का काम जनता के सच्चे सामूहिक पुरुषार्थ के आधार पर होना चाहिए। इसके लिए वास्तविक रूप से इच्छुक जनता को सहयोग देना चाहिए, और क्रान्ति की प्रक्रिया को तेज करने में अपनी शक्ति लगानी चाहिए।

(७) व्यापक रूप से कार्यकर्ताओं का शिक्षण-प्रशिक्षण और विचार-विनिमय होना चाहिए। अन्यथा क्रान्तिकारिता कुण्ठित हो जाती है।

(८) सर्वोदय समाज की रचना के कामों में भी विरोधी तत्त्वों का शामिल होना स्वाभाविक है। लेकिन ऐसे तत्त्वों का या तो परिवर्तन हो जाय या वे संगठन से अलग हो जायें। हम सबके उदय के नाम पर किसी भूलभुलैया में नहीं पड़ें।

(९) सर्वोदय समाज की स्थापना के लिए हम निर्भीक और शक्तिवान होकर वर्तमान समाज-व्यवस्था को समाप्त करने में लग जायें और समाजवादी शक्तियों की एकता के लिए सतत प्रयत्नशील रहें। ●

आक्रामक हिंसा : बहादुर की अहिंसा

हिंसा, आतंक और भय से ग्रस्त पश्चिम बंगाल के बांकुड़ा नगर की एक घटना है।

नगर में नक्सलवादियों की हरकतें बढ़ रही थीं। 'चेयरमैन माओ : लाल सलाम' जैसे वचनों से दीवालें रंगी जा रही थीं, जहाँ-तहाँ बम फूट रहे थे, कहीं किसीको छूरा मारा, तो कहीं गोली चली ! शिक्षा-संस्थाओं पर हमले हो रहे थे, दफ्तरों के कागज जलाये जा रहे थे, भारत के विभूतियों की मूर्तियाँ तोड़ी जा रही थीं। हिंसावादियों के आक्रमण का प्रधान लक्ष्य था गांधी-प्रतिमा।

"आप गांधी की प्रतिमाओं को क्यों तोड़ते हैं ?"—बांकुड़ा के गांधी-शांति-प्रतिष्ठान के संचालक श्री शिशिर सन्याल ने कुछ किशोरों से पूछा। "इसलिए कि गांधीजी का जन-मानस में जो स्थान है, उसे हटाये बगैर हमारी क्रान्ति नहीं होगी।"—किशोरों के मुख से सहज सत्य निकला। जब तक देश में गांधी जिन्दा रहेगा तब तक खूनी क्रान्ति नहीं हो सकती थी।

आतंक फैलानेवाले थे केवल चन्द किशोर तथा युवक। लेकिन नगर के हजारों नागरिक भयभीत होकर अपने को असहाय पा रहे थे। शांति को चाहते हुए भी अशांति के शिकार बन रहे थे। शिशिर भाई ने सोचा कि शांति की शक्ति खड़ी करनी होगी। उन्होंने 'आक्रामक शांति' (पीस ओफेन्सिव) का कार्यक्रम उठाने का तय किया। बरसों की सेवा के द्वारा उस नगर के नागरिकों के दिलों में उन्होंने स्थान पा लिया था। नगर के कई किशोर तथा युवक शांति-प्रतिष्ठान के पुस्तकालय में जाकर अध्ययन करते थे, प्रतिष्ठान के द्वारा चलाये गये होस्टल में अच्छे संस्कार पाते थे। शिशिर भाई के साथ वे गरीबों की बस्ती में रात्रि-पाठशाला चलाते थे। छुट्टियों के दिनों में पड़ोस के ग्रामदानी गाँवों में जाकर श्रमदान करते थे। नगर की सेवा की पूँजी के बल पर शिशिर भाई ने नागरिकों का आवाहन किया। नगर के अठारह मुहल्लों में अट्ठाईस सभाएँ आयोजित की गयीं, जिनमें शिक्षक, अभिभावक तथा छात्रों ने एक मंच पर आकर अपनी समस्याओं की चर्चा की। सभाओं में छात्रों से कहा गया कि बेरोजगारी पैदा करनेवाली आज की उद्देश्यहीन शिक्षा-पद्धति को आप बदलना चाहते हो तो दूसरा तरीका अपना लो। हिंसा के तरीके से सबका नुकसान होगा। अभिभावकों से कहा गया कि आप अपने बच्चों को समझाइए। आपका बच्चा दीवालों को 'माओ की जय' से रंगने के लिए रात के दो बजे चला जाता है और आपको पता भी नहीं चलता है। क्या यह वांछनीय है ? शिक्षकों से कहा गया कि जब कि अधिकतर शिक्षक शान्ति चाहते हैं तो गुण्डागर्दी को क्यों नहीं रोक पाते ? क्यों खामोश रहकर अपने को डरपोक साबित करते हैं ?

सारे नगर में आक्रामक शांति की फिजा बनती गयी। १२ सितम्बर को एक बड़ी सभा हुई जिसमें शिक्षक, अभिभावक तथा छात्रों का आवाहन करते हुए हिंसा का प्रतिकार करने का प्रस्ताव पास हुआ। १३ सितम्बर को शाम को शिशिर भाई शांति प्रतिष्ठान के पुस्तकालय में बैठकर उसी प्रस्ताव को लिख रहे थे, तब अचानक लाइट बुझ गयी और उन्होंने देखा कि मुँह पर पट्टी बाँधे हुए युवकों का दल हाकी स्टिक, लाठी आदि लिये खड़ा है और किताबों की आलमारी के शीशे तोड़ने जा रहा है। शिशिर भाई ने उन्हें समझाया, "अरे तुम्हें क्रान्ति करनी हो तो उसके लिए भी अध्ययन करना होगा। यह तो पढ़ने की जगह है। इसे क्यों तोड़ते हो ?" उनकी बात सुनकर स्थानीय किशोर कुछ रुक गये। लेकिन बाहर से आये हुए एक युवक ने शिशिर भाई पर हमला किया। उनका सिर फट गया, खून बहने लगा। उन्होंने सिर को बचाने के लिए कुर्सी उठायी, तो लड़के भागने लगे। उनको पकड़ने के लिए शिशिर भाई ने उनका पीछा किया। नागरिकों की मीटिंग में यह तय हुआ था कि ऐसे लड़कों को पकड़कर रखा जाय। इतने में बम फूटा, शिशिर भाई फौरन बैठ गये और बच गये। बम की आवाज से मुहल्लेवाले दौड़े आये तो आक्रामक भाग गये।

"मेरा खून गिरा, लेकिन उससे बड़ा काम बना।"—शिशिर भाई ने कहा। उनके कपाल पर चोट का निशान था जो बता रहा था कि अकेले निहत्थे शांति-सैनिक ने हमलावरों का बहादुरी से मुकाबिला किया था।

सारे नगर में क्षोभ पैदा हुआ। शिशिर भाई के पास मिलनेवालों का ताँता लग गया। नगर के सब पक्षों के, सब तबकों के लोग सहानुभूति प्रकट करने के लिए आये। हर एक के हाथ में फल थे। उनका कमरा फलों से भर गया। मार्क्सवादी कम्यूनिस्ट पार्टी के नेता भी फल लेकर आये और इस आक्रमण का उन्होंने तीव्र शब्दों में निषेध किया। जगह-जगह स्वयंस्फूर्ति से सभाएँ हुईं, जिनमें इस घटना का निषेध किया गया और हिंसा का प्रतिकार करने के लिए जनशक्ति, शांति की शक्ति संगठित करने के लिए आवाहन किया गया और नगर में आतंकवादी हरकतें बन्द हो गयीं।

स्वामी विवेकानन्द अपने जीवन की एक दिलचस्प घटना अक्सर सुनाते थे—"मैं आठ साल का था तब वाराणसी में एक बार दूकान से मिठाई लेकर घर जा रहा था। तीन बन्दरों ने हमला किया। मैं भागने लगा तो बन्दर भी पीछे दौड़ने लगे। फिर मैंने सोचा कि मुझे डरना नहीं चाहिए। मैं रुक गया और एक बन्दर की ओर बढ़ा तो वह भी पीछे हट गया। दूसरे की ओर बढ़ा तो वह भी पीछे हट गया और तीसरे की ओर बढ़ा तो तीनों बन्दर भाग गये और पेड़ पर चढ़ गये।"

—निर्मला देशपांडे

बेचैनी और खोज

इतिहास में युवा-पीढ़ी ने सदा ही एक निर्णायक रोल अदा किया है। सामाजिक गतिशीलता, यानी परिवर्तन में युवकों का सबसे अधिक हाथ रहता है, और इससे मानव-प्रगति में योगदान ही मिला है। किन्तु इधर पिछले एक दशक से सारे संसार में युवा-जगत् में एक ऐसी हलचल ने जन्म लिया है जो परम्परागत आशाओं से नितान्त भिन्न तथा भ्रम में डालनेवाली है। चूँकि हमारे इस युग पर पश्चिम का ही सर्वाधिक प्रभाव है, अतः इस हलचल का आरम्भ भी वहीं से हुआ है। अमेरिका से इस नयी हलचल का आरम्भ हुआ कहा जा सकता है, जहाँ एक नयी युवा-संस्कृति ने ही जन्म ले लिया है।

परम्परागत अथवा प्रचलित जीवन-प्रणाली से अरुचि तथा घृणा इस संस्कृति की एक बड़ी विशेषता है। युवा लोग अपने नेता, अपने प्रतीक तथा 'मुक्ति' की माँग करते हैं, अपने मामलों में बुजुर्गों या संरक्षकों का कोई हस्तक्षेप उन्हें सह्य नहीं है, और इस क्रम में कभी वे बड़े-बूढ़ों के लिए 'घातक' भी बन जाते हैं, किन्तु कुल मिलाकर वे 'हानि-रहित' हैं। आज का युवक प्रसिद्ध गिटारवादक बाब डाइलन के शब्दों में—"माता-पिताओ। जिसे आप नहीं समझते, उसकी निंदा या आलोचना मत करो, आपके बेटे-बेटियाँ अब आपके हाथ (आदेश-निर्देश) की पहुँच से परे हैं!"—के गीत गा रहा है।

नव-वामपंथ

युवकों में इस नयी लहर को पितृ-मूल्यों (पेरेन्टल वेल्यूज) की अस्वीकृति (रिजेक्शन), आत्मत्व (सेल्फहुड) की स्वीकृति (रिकग्नेशन) की माँग, पीढ़ियों का संघर्ष (जनरेशनल कन्फ्लिक्ट), या फिर गिबन के शब्दों में युवकों में तीव्र बदतमीजी के नाम से पुकारा जाता है। इस लहर के युवा-नेता स्वयं को नव-वामपंथी (न्यू-लेफ्ट) भी कहा करते हैं। चूँकि क्यूबा के फिडल कॅस्ट्रो, लेटिन अमेरिका के चेग्वारा, ट्राट्स्की, माओ तथा मार्क्स और लेनिन को ये लोग अपना नेता, प्रेरक या मार्गदर्शक कहते हैं। किन्तु युवकों का यह आन्दोलन इन लोगों से या इनकी विचारधाराओं से बंधा नहीं है। यह भी कहा जाता है कि यह नवीन युवा-धारा हरबर्ट मार्क्यूज, रॉबर्ट फॅान तथा रगिस डेब्रे जैसे विचारकों को 'अपना दार्शनिक' मानती है। परम्परागत या प्रचलित नीति, धर्म, शिक्षा, शासन, फैशन या वेशभूषा, और यहाँ तक कि यौन-संगठन को यह नवीन धारा पूर्णतः अस्वीकार करती है, और चूँकि बड़े-बूढ़े लोग, चाहे वे किसी भी पद पर या स्थिति में हों, इन परम्परागत या प्रचलित मूल्यों से सम्बद्ध हैं, अतः इन युवकों का यह 'मूल्यात्मक आक्रोश' उन पर भी टूट पड़ता है, और प्रचलित शिक्षा तथा शासन से लेकर व प्रचलित संगीत, नृत्य, वेशभूषा तथा मूल्यों का विरोध करते हैं। इस विरोध में उन्होंने एक तरफ तो नशीले पदार्थों का अतिसेवन और दूसरी ओर प्रच्छन्न पौरुषिक रहस्यवाद का जैसा रूप ले लिया है। इन सबमें एक प्रवृत्ति सामान्य देखी जा सकती है कि अब इनमें संगीत, वेशभूषा आदि के आधार पर सामाजिक श्रेणियों का लोप हो गया है। इस नये युवा-आन्दोलन में फायड तथा मार्क्स का अजीब मिश्रण हुआ है, क्योंकि ये दोनों अपने-अपने ढंग से विद्रोही ही रहे हैं।

नाजीवादी प्रवृत्ति ?

किन्तु यह युवा-आन्दोलन स्वतः अनेक तरह से विभक्त है। जिसे 'नव-वामपंथी' कहा जाता है, वह इसका अत्यल्प भाग ही है। ब्रिटेन में चुनाव-पूर्व की सर्वेक्षण साधनाओं से पता चला कि यद्यपि इस नये युवा-आन्दोलन से १८ से ३० वर्ष के अधिकांश युवक-युवतियाँ प्रभावित हैं, फिर भी उनमें आधे से अधिक युवक 'कन्जरवेटिव' दल के पक्ष में हैं। उसी तरह से संयुक्त राज्य अमेरिका में कुछ समय पहले तक पितृ-मूल्यों के इन विरोधियों में हिटलर तथा नाजीवाद के प्रति आकर्षण था और वे यद्यपि नाजीवाद की विचारधारा के अनुयायी नहीं थे, किन्तु फिर भी जर्मन-गणवेश (यूनिफार्म) पहनते थे और हिटलर के चित्रों के आगे सलाम करते थे। उसी प्रकार से माओ, कॅस्ट्रो या मार्क्स के नारे लगाने के साथ-साथ अनेक युवक-युवतियाँ अत्यधिक नशीले पदार्थों के सेवन, व्यभिचार या ऐसी ही अन्य बातों की तरफ मुड़े हैं, जिनका माओ या मार्क्स आदि से कोई सम्बन्ध ही नहीं है। दूसरी तरफ वेशभूषा और संगीत के क्षेत्र में भी यह आन्दोलन विभक्त है। बिटल तथा हिप्पियों की वेशभूषा तथा जीवनयापन काफी खर्चीला होता है और बिना 'पितृ-सहायता' के यह चलना कठिन होता है। ब्रिटेन में मध्य-पश्चिमी लंदन में सैकड़ों-हजारों हिप्पी, जो बिना काम या आय के पड़े रहते हैं, वे सब माता-पिता की सहायता पर जी रहे हैं। किन्तु जिन्हें ऐसी पितृ-सहायता प्राप्त नहीं है उनकी स्थिति और भी नाजुक है और वे शीघ्र ही विवाह कर लेते हैं, ताकि दोनों काम करके जी सकें, किन्तु कोई जिम्मेदारी न आये। इसके विपरीत दूसरे धनाढ्य हिप्पी देर से विवाह करते हैं। सब गरीब हिप्पियों का नारा है—'हम विश्व बदलना चाहते हैं और अभी बदलना चाहते हैं।' किन्तु इस नारे में सारा युवा-आन्दोलन शामिल नहीं है। इस तरह के लोगों ने एक और बुनियादी फर्क पैदा कर दिया है कि 'हिंसा' के मामले में भी यह आन्दोलन विभक्त है। जिन्हें पर्याप्त पितृ-मदद प्राप्त है, वे हिंसा पर कम उतारू होते हैं जब कि दूसरे लोग हिंसा के सहारे ही जीने का अभ्यास करते हैं। इस तरह से इस आन्दोलन का एक अत्यल्प भाग ही अपने देश तथा समाज की यथास्थिति (राजनैतिक या अन्य) पर कोई बुनियादी

मुजफ्फरपुर की डाक

नये पड़ाव पर विरोध की बातें

प्रह्लादपुर पंचायत में जे० पी० का कैंप १८ अक्तूबर को आया। प्रारंभिक दिनों में काम की गति अच्छी रही और पंचायत के ३ गांवों में काम प्राय. पूरा हो गया। मगर जैसे-जैसे काम आगे बढ़ा, पाया गया कि गाँव का अन्तर्विरोध भीतर-भीतर क्रियाशील हो गया है और दबे-छिपे कुछ तत्त्व ग्रामदान के विरोध में निराधार और भ्रामक बातें फैलाने का काम कर रहे हैं।

पहले कुछ लोगों की ऐसी आशंका थी कि इस पंचायत में ग्रामदान के प्रतिकूल शायद तथाकथित उग्रपंथी लोग होंगे, मगर यह धारणा गलत साबित हुई। पंचायत के गरीब लोग ग्रामदान के पक्ष में हैं, समय का संकेत पहचाननेवाले अमीर भी। मगर कुछ लोगों को यह विचार अपने स्वार्थ के प्रतिकूल दीख पड़ता है और वे छिपकर गरीबों एवं मजदूरों पर दबाव डालते हैं या उन्हें गलत बातें कहकर बरगला रहे हैं।

एक गरीब भाई जब दस रुपये कर्ज के लिए किसी संपन्न भूपति के पास गये तो उसने इन्हें यह कहकर लौटा दिया कि तुमने तो अपना सब कुछ ग्रामदान में दान दे दिया है, अब किस बुनियाद पर तुम्हें कर्ज दें। एक दूसरे गरीब को कहा गया कि तुम कहो कि मुझे ग्रामदान की पूरी बात बिना समझाये ठगकर हस्ताक्षर कराया गया है। जब इस बात की जाँच निर्मल बाबू, कैलाश बाबू, योगेन्द्रजी एवं रामसेवक ठाकुर करने गये तो उसके अन्य तीन भाइयों एवं चार पड़ोसी परिवारों ने कहा कि हमने तो समझ-बूझकर ही हस्ताक्षर किये हैं, मगर मेरा यह भाई कुछ लोगों के दबाव में गलत बात कहने को राजी हो गया। सबने विस्तार से बताया कि किस प्रकार गाँव के २-४ व्यक्ति सारे गाँव के गरीबों को विभिन्न प्रकार के दबावों में रखे रहते हैं, और भरमाते रहते हैं। आरोप लगानेवाले व्यक्ति ने कहा कि, 'बाबू लोगों के कारण हमने यह कहा कि हमसे गलत प्रकार से हस्ताक्षर कराया गया है। गरीब, कमजोर और नासमझ होने के कारण ही हमें कभी-कभी ऐसा करना पड़ता है। अब ऐसा नहीं करेंगे, आप मेरा हस्ताक्षर फिर से ले लें।'

दूसरे टोले का एक अधेड़ ग्रामीण जिसे अपने गाँव का यह सारा गंदा कच्चा चिट्ठा ज्ञात था, चिल्लाकर बोला, 'बाबूजी, आप लोगों ने आकर बदल दिया, नहीं तो हम पर जुल्म करनेवालों ने इतने जुल्म किये हैं कि एक नहीं, दस राजकिशोर (स्थानीय नक्सलवादी तरुण, जिसका आतंक जिले में फैला है) यहाँ पैदा होते।

धीरे-धीरे वह सारी सड़ाँध शालीनता का पर्दा फाड़कर अब यहाँ प्रकट हो रही है, जिसने यहाँ आतंक, हिंसा, लूट और हत्या के रूप में आकार ग्रहण किया और लोग उसे "नक्सलवादी" कहकर टालने या दबाने का प्रयास करने लगे। निदान का पहला प्रयत्न जे० पी० के नेतृत्व में यहाँ चल रहा है और दृढ़ विश्वास है—सफलता मिलेगी; गाँव में स्नेह, सौहार्द्र और सच्ची शान्ति की स्थापना होगी।

—'जयप्रकाश शिविर समाचार' से

इस अंक में

वार्षिक शुल्क। १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पै०), विदेश में २२ रु०; या २५ शिलिंग या ३ डालर। एक प्रति का मूल्य २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं मनोहर प्रेस, वाराणसी में मुद्रित

सम्पादक
राममूर्ति

वर्ष : १७ सोमवार
अंक : ८ २३ नवम्बर, '७०
पत्रिका विभाग
सर्व सेवा संघ, राजघाट, वाराणसी-१
फोन : ६४३९१ तार : सर्वसेवा

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

आनन्द का रहस्य

परमेश्वर तो उत्तम कलावान है। वह कभी रद्दी तसवीर खींच नहीं सकता। उत्तम कारीगर के अलावा वह हमारा परम पिता भी है। तो क्या कोई बाप अपने बच्चे के लिए दुःखमय सृष्टि पैदा करेगा? मामूली बाप भी वैसा नहीं करता, तो परमपिता प्रभु कैसे करेगा? उन्होंने तो हमारे लिए आनन्दमय सृष्टि निर्माण की, लेकिन हमारा सामर्थ्य अद्भुत है, हम आनंद में से दुःख निर्माण करते हैं, इससे अधिक बहादुरी और कौशल्य कौनसा गिना जायेगा?

सामने यह आनन्दमय वृक्ष डोल रहा है। उसका सारा आनन्द देने में है। फूल, फल, पत्ती, छाया। और कोई काटने के लिए आये तो अंग भी काटकर दे देगा। वह सदा-सर्वदा त्याग करता है। परिणामस्वरूप लोग प्रेम-पूर्वक वृक्ष बोते हैं। उसको पालने के लिए चेष्टा करते हैं। आनंद का रहस्य इसीमें है कि देते रहो। देते रहो, तो मिलता रहेगा। सृष्टि उदार है। वह गणित भी जानती है। एक बीज बोओगे, तो हजार बीज देगी। लेकिन शून्य बोओगे, तो उसका सहस्र गुना शून्य ही होगा। थोड़ा भी त्याग करने के लिए राजी नहीं रहेंगे, तो सृष्टि के आनन्द का अनुभव कैसे आयेगा?

१७-४-'६३ —विनोबा

राजनीति से आशा रखनेवाले सूखी हड्डी चूस रहे हैं!

राजनीति से आशा रखनेवाले सूखी हड्डी चूस रहे हैं !

मैं आशा का मादक घूँट आज भी पीता हूँ

—जयप्रकाश नारायण

[ता० ८ नवम्बर को संगीत कला मन्दिर, कलकत्ता के रजत-जयन्ती समारोह के अवसर पर प्रधान-अतिथि पद से श्री जयप्रकाश नारायण ने अपने भाषण के सिलसिले में कहा था कि आज की राजनीति से वे निराश हो उठे हैं। इसका स्पष्टीकरण करते हुए जयप्रकाश बाबू ने एक वक्तव्य में कहा—]

देश की वर्तमान राजनीति से मैं कोई आशा नही रखता उसके ये मानी नही हैं कि मैं निराशावादी हूँ। राजनीति छोड़े मुझे १६ वर्ष हो चुके और उस समय मैं बूढा भी नही हुआ था। राजनीति से निराश हुआ उसका अर्थ यह है कि मेरे खयाल से उससे कुछ होनेवाला नही है, या तो यदि कुछ बनेगा तो वह वानर बनेगा, विनायक नही। यह मुझे भरोसा है कि विनायक बनेगा और जरूर बनेगा। उसे हम और आप बनायेंगे, इस देश की जनता बनायेगी, भारत के तरुण बनायेंगे। यदि आशा की यह मादक घूँट मैं नित प्रति पीता न होता तो ६८ वर्ष की उम्र में भी आज रणभूमि में खड़ा न रहता, भाग के कहीं आराम से बैठ गया होता।

वर्तमान राजनीति से आज भी जो लोग आशा रखते हैं वे तो सूखी हड्डी चूस रहे हैं और अपने ही रक्त का आस्वादन कर तृप्त हो रहे हैं। यह राजनीति तो गिर रही है, और भी गिरेगी। टूट रही है, और भी टूटेगी। फूटेगी, छिन्न-भिन्न हो जायेगी। तब इसके मलबे के ऊपर एक नयी बुनियाद से नयी राजनीति जनमेगी, जो इससे सर्वथा भिन्न होगी। नाम भी उसका भिन्न होगा। वह लोकनीति होगी, राजनीति नही। वह ऊपर से नही बनेगी, नीचे से बनेगी। दिल्ली से नही, गाँव-गाँव से, मुहल्ले-मुहल्ले से। उसके लिए एक नूतनतम पार्टी का साइन-बोर्ड टाँग देना काफी नही होगा। और न काफी होगा राजनीति के रंगमंच पर एक नूतनतम नेता का अवतरण। वह तो जनशक्ति के गर्भ से पैदा होगी। उस लोकनीति के बीज आज भारत की मिट्टी मे घोर तप मे लवलीन हैं। उन बीजों को पैदा किया था गांधी ने और भारत की धरती को अपनी पदयात्रा द्वारा बार-बार जोतकर के उन्हें बोया है विनोबा ने। और हजारों अज्ञात सेवकों की सेवा उनका सिंचन कर रही है। काश ! इस देश के वाणी-पुत्र उन बीजो के गान गाते ! पर गीत तो गाये जाते हैं पल्लवों के, फूलो के, और फल तो गाने के नही खाने के होते हैं।

बात रही बुढ़ापे और अध्यात्म की। इस देश का अध्यात्म बूढ़ों की वस्तु नहीं, जवानों की रही है। जब हृषिकेश ने जीवन के कुरुक्षेत्र में अपने अपूर्व अध्यात्म का पाञ्चजन्य फूँका था तब वह वृद्ध नही, युवा थे और वह थे सारथी भारत की उत्कृष्ट तरुणाई के रथ के। जब अपनी प्रिया की गोद में नवजात राहुल को सोया छोड़ सिद्धार्थ अपनी अद्वितीय सांस्कृतिक क्रांति के पथ पर चल पड़े थे तो वह वृद्ध नही, युवा थे। अद्वैत के अनन्यतम शोधक शंकर ने जब अपनी दिग्विजय-यात्रा की थी तब वह वृद्ध नही, युवा थे। विवेकानन्द ने शिकागो के रंगमंच पर जब वेदान्त के सार्वभौम धर्म का उद्घोष किया था तब वह वृद्ध नहीं, युवा थे। गांधी ने दक्षिण अफ्रीका में रंगभेद के दावानल में कूद जब अध्यात्म का आग्नेय प्रयोग किया था तब वह वृद्ध नही, युवा थे। नही मित्रो ! अध्यात्म बुढ़ापे की बुढ़भस नहीं है, तरुणाई की उत्तुङ्गतम उड़ान है।

मैंने जिस सांस्कृतिक क्रांति की ओर इंगित किया है उसके सैनिक और सेनापति तो तरुण ही हो सकते हैं। मैं कहना चाहता हूँ कि देश के कलाकार तथा कवि उस क्रांति के द्रष्टा बनें और उसके मंत्रो और गीतो के स्रष्टा बनें, उसे गायें, नाचें, अंकित और मूर्त करें।

जिस सांस्कृतिक क्रान्ति के बिना भारत का एवं भारतीयता का बचना दुष्कर प्रतीत हो रहा है, वह मानवीय क्रान्ति होगी, आन्तरिक क्रान्ति होगी—ऐसी क्रान्ति होगी जिसमें भारत का अध्यात्म व्यक्ति-व्यक्ति के जीवन में उतर जायेगा। तब व्यक्ति अपने हितो का दर्शन समूह के हितों में करने लगेगा और वैसा ही जीवन जीने लगेगा। उस क्रान्ति के बिना न समाजवाद बन सकेगा, न साम्यवाद। सर्वोदय तो उसी क्रान्ति का दूसरा नाम ही है।

व्यक्ति समूह के लिए जीये और समूह व्यक्ति के लिए, यह एक दिन में नहीं होगा। कोई भी क्रान्ति एक दिन में नहीं होती। विध्वंस एक दिन में हो सकता है, नवनिर्माण नही। इसीलिए हमारी सांस्कृतिक क्रान्ति आरोहण की एक प्रक्रिया होगी। इस कठिन चढ़ाई में तरुण ही तो आगे होंगे, पर उनके सहारे बूढ़े भी चढ़ सकेंगे। कवियों से कहना इतना ही है कि इस आरोहण की मंगलवेला में वे अपना शंख फूँकें, और जय-गान करें। ●

सम्पादकीय

बेकारी-बेरोजगारी

अभी हाल में हमारे वित्त-मंत्री श्री चव्हाण ने कहा कि बेरोजगारी की समस्या विस्फोटक होती जा रही है। ठीक है, अगर किसी देश में ऐसी स्थिति पैदा हो जाय कि देश में रहनेवालों को काम न मिले, रोटी न मिले, इज्जत की जिन्दगी न मिले, तो स्थिति विस्फोटक नहीं तो और क्या होगी? लेकिन एक बेरोजगारी ही नहीं, दूसरे भी कई सवाल हैं, जैसे खाद्य, शिक्षा, शांति और सुरक्षा, भ्रष्टाचार, अलगाववाद, और अब फैलती हुई हिंसा, जो सब एक-से-एक बढ़कर विस्फोटक हो गये हैं। और, ये सवाल हल क्यों, नेताओं की स्वार्थप्रियता और सरकार की असमर्थता, क्या कम विस्फोटक है?

ये सारी विस्फोटक स्थितियाँ भयंकर हैं, फिर भी यह मानना पड़ेगा कि देश के युवकों का बेकार-बेरोजगार रहना इन सबमें सबसे अधिक भयंकर है। लेकिन शायद सबसे अधिक भयंकर तो यह है कि देश के शासकों और विद्वानों को यह मालूम ही नहीं है कि सचमुच बेरोजगार लोगों की संख्या क्या है! बरसों से बेरोजगारी की चर्चा चल रही है, कितने अध्ययन-मंडल बनाये जा चुके, कितनी कमेटियाँ बैठ चुकीं, किन्तु बेरोजगारों का पता न चला। कितने लोग ऐसे हैं जिनके पास साल में एक दिन का भी काम नहीं है, कितने ऐसे हैं जिनके पास थोड़े दिन का काम है, कितने ऐसे हैं जिनके पास काम तो रोज का है, लेकिन पूरे समय का काम नहीं है, कितने ऐसे हैं जिनके पास काम है, लेकिन पूरी-पूरी कमाई नहीं है, और, कितने ऐसे हैं जिनके पास कमाई तो पूरी है, लेकिन काम बहुत गलत है, समाज-विरोधी है—इन सब बातों का पता लगाने के लिए, आँकड़े इकट्ठा करने के लिए, एक के बाद दूसरी समिति बनायी जाती है, किन्तु हर अध्ययन के अन्त में यही कहा जाता है कि अभी और अधिक अध्ययन की जरूरत है। अभी-अभी प्रकाशित दांतवाला-समिति की रपट में भी यही कहा गया है। इसका नतीजा यह होता है कि अध्ययन भी चलता रहता है और बेरोजगारी भी बढ़ती रहती है। कई लोगों का कहना है कि बढ़ते-बढ़ते १० करोड़ तक पहुँच गयी है।

आँकड़े चाहे जो हों, लेकिन क्या स्थिति को बदलने के लिए इतने काफी नहीं हैं, और आँखों से देखकर समस्या के समाधान की दृष्टि से कुछ बुनियादी बातें तय करने के लिए दिमाग काफी नहीं है? क्या हम देख नहीं रहे हैं कि बढ़ती हुई जनसंख्या के लिए गाँवों में खेती के सिवाय दूसरे कोई धंधे नहीं रह गये हैं? क्या हमने इतने बरसों में जान नहीं लिया है कि करोड़ों की पूँजी और नयी-से-नयी मशीनें लगाकर खड़े किये जानेवाले कारखानों में मजदूर कम लगते हैं, तथा केन्द्रित उद्योगों में दिनोंदिन ऐसे ही यंत्रों का आविष्कार होता जा रहा है जिनमें श्रमिकों की संख्या घटती जा रही है? क्या यह बताने के लिए किन्हीं नये आँकड़ों और तथ्यों की जरूरत है कि हमारी शिक्षण-पद्धति ऐसी है जो न केवल बेरोजगारी बढ़ा रही है बल्कि ऐसे युवक और युवतियाँ बना रही है, जो बेकार हैं—इस अर्थ में कि उनके पास कोई ऐसा हुनर नहीं है जिसके लिए उन्हें कोई काम दिया जा सके। जो देश उत्पादन के लिए भूखा हो, उसमें अनुत्पादक और उत्पादन के लिए सर्वथा अयोग्य युवक-युवती तैयार करने का काम हमारी शिक्षण-पद्धति कर रही है। जब हमने अच्छी तरह देख लिया, समझ लिया, कि हमारी पंच-वर्षीय योजनाएँ रोजगार न बढ़ाकर विषमता और बेरोजगारी बढ़ा रही हैं, तो क्या अब जोर-जोर से चिल्लाकर यह कहने का समय नहीं आ गया है कि हमारी विकास-नीति बदलनी चाहिए, बदलनी चाहिए? यह कहने के लिए किन आँकड़ों की जरूरत है? सच बात तो यह है कि सवाल आँकड़ों का नहीं, नीयत का है। आँकड़ों के अभाव की दुहाई देकर हम सही काम करने से बचना चाहते हैं। फिर क्या आश्चर्य कि कमी दूसरी किसी चीज का नहीं है, है सिर्फ नीयत की।

पटना में कांग्रेस के सरकारी दल की ओर से घोषणा हुई कि हर साल ५ लाख लोगों को रोजगार देने की गुंजाइश निकाली जायगी। कैसे निकाली जायगी? ५ लाख नये लोगों को रोजगार देने के क्या उपाय किये जायेंगे? जब तक शिक्षण-पद्धति, खेती, विकास और उद्योगों की मौजूदा नीति रीति चलती रहेगी तब तक कौनसा कौतुक होगा कि आज की स्थिति बदलेगी? कहाँ इन चीजों में कोई परिवर्तन हो रहा है कि आगे के लिए भरोसा हो? कैसे भरोसा हो? बार-बार यह माँग की जाती है कि भूमि-व्यवस्था बदली जाय, रोज के इस्तेमाल की चीजों का उत्पादन बड़े उद्योगों से लेकर ग्रामीण तथा छोटे उद्योगों के लिए सुरक्षित किया जाय, तथा शिक्षण में बाईं तरफाई जायगी उत्पादक-क्रिया अनिवार्य की जाय, लेकिन इनमें से एक काम की ओर भी ध्यान नहीं दिया गया। अब भी नहीं दिया जा रहा है। क्या हमारा नेतृत्व इतना स्वार्थी और हमारी नौकरशाही इतनी निर्मम हो गयी है कि देश उनके लिए जैसे कुछ रह ही नहीं गया? क्या कारण है कि कोई भी समस्या हो उसके रवैये और उनकी रफ्तार में कोई फर्क नहीं पड़ता? बेरोजगारी के आँकड़े होते भी तो क्या हो जाता? जब कुछ करने की नीयत नहीं है तो बहाने हजार निकल सकते हैं। सवाल इतना ही है कि आखिर कब तक निकलेंगे? ●

शोक-समवेदना

पूर्व पाकिस्तान में आये दुर्भाग्यपूर्ण प्रलयंकारी तूफान में लगभग ५ लाख लोग काल की चपेट में आ गये। इसीसे अनुमान लग सकता है कि इससे कितनी तबाही हुई है। एकसाथ इतनी बड़ी संख्या में मानव-बन्धुओं की असामयिक मृत्यु पर हम गहरा शोक और पीड़ित लोगों के प्रति समवेदना व्यक्त करते हैं।

वाराणसी में तरुण शान्ति-सैनिक तूफान-पीड़ितों की सहायता के लिए लोगों से आर्थिक मदद माँगकर वहाँ भेज रहे हैं।

हमारी कमजोरी का बिन्दु

'भूदान-यज्ञ' के २६ अक्तूबर, '७० के पत्र-स्तम्भ में "हमारी कमजोरी का बिन्दु" शीर्षक पढ़ा।

अब तक की आन्दोलन की उपलब्धियों का यदि अध्ययन करें, तो स्पष्ट है कि साधन-शुद्धि की ओर हमने ध्यान नहीं दिया है। भूदान, ग्रामदान से कूद-कर हम राज्यदान तक पहुँचे, फिर भी प्रतिफल कुछ न आये, यह आश्चर्यजनक बात है। जब कि, ग्रामस्वराज्य-आन्दोलन में लगे प्रखर विचारको, नेताओं, तपस्वियों को यदि देखें, तो स्पष्ट है कि भारत के अन्य संगठनो और संस्थाओं में इतने कुशल, त्यागी सेवक नही हैं, फिर क्यों ग्राम-स्वराज्य-आन्दोलन अब तक जन-प्रिय नही बन पाया है? क्योंकि इस आन्दोलन के वाहक इसके योग्य नही रहे हैं।

यह सौभाग्य की बात है कि गांधीजी के चले जाने के पश्चात् विनोबाजी ने ग्रामदान से राज्यदान तक किसी तरह पहुँचकर ग्रामस्वराज्य के ताले को खोल दिया है, और भली भांति दिखाई पड़ने लगा है कि ग्रामस्वराज्य की व्यवस्था ही आज की समस्याओं का एकमात्र विकल्प है।

लेकिन ग्रामदान-आन्दोलन में रचनात्मक संस्थाओ का मुख्य योगदान रहा है। सन् १९३०वाली संस्थाओ से यह आशा नही की जा सकती थी कि इनका सम्बन्ध कभी शासन-सत्ता से होगा। कल्पना तो यह थी कि ये संस्थाएँ शासन की भागीदार न होकर शासन-सत्ता पर हावी होंगी। दिन-प्रतिदिन शासन का अन्त करने में अपने को खपा देंगी, परन्तु ऐसा नहीं हुआ। संस्थाओं ने अपने को ऐसा उलझा लिया है, कि शासन का सहारा प्राप्त करना ही एकमात्र उनका काम रह गया है।

सन् १९४२ तक संस्थाओं ने क्रांतिकारी सैनिक तैयार करके भारतीय जीवन को उज्ज्वल बनाया था। और 'करो या मरो' की भूमिका में काम किया था। आज फिर संस्थाओ को 'करो या मरो' क भूमिका अपनानी चाहिए। अन्यथा वे स्वयं शून्य बन जायेंगी। अब जनता से दूर हटकर संस्था और सरकार जीवित नही रह सकती। अब खादी के मुनाफे पर संस्थाएँ नही टिकेंगी। यदि संस्थाएँ पुन. जीवन चाहती हैं, तो उनके लिए एक ही मार्ग है कि ग्रामस्वराज्य या ग्रामसेवा द्वारा समाज-परिवर्तन का बीड़ा उठा लें; ताकि गाधीजी की कल्पना और विनोबाजी की कोशिश एवं तपस्या सफल हो।

—सीताराम भाई,
बरहूपुर, चौरे बाजार,
फैजाबाद (उ० प्र०)

× × ×

'हमारी कमजोरी का बिन्दु' शीर्षक से श्री कुमार शुभमूर्ति की प्रतिक्रिया पढ़-कर ऐसा लगा, मानो वे सागर में गिर पड़े हैं और हिलकोरे ले रहे हैं। उनके अनुसार "आन्दोलन के सगठनात्मक पहलू मे उतना दोष नहीं, जितना कि मौलिक आधार में है।" जितनी मुझे जानकारी है, उस पर से मुझे भी कुछ कहना है। सर्वोदय-आन्दोलन के प्रारम्भिक काल की ओर थोड़ा ध्यान कुमार शुभमूर्ति का खीचूंगा। उस समय जो निष्ठावान कार्यकर्ता थे, उनमें से दो-चार ही अब हैं, उन्होंने कभी भी सगठन का जिम्मा नही लिया। वे प्रत्येक व्यक्ति को समग्र रूप में देखते थे और उसके विकास के लिए मात्र दिशा देते थे। सर्वोदय-निष्ठ साधकों ने अपनी व्यक्तिगत सिद्धान्त-निष्ठा से इस आन्दोलन को गौरवान्वित ही किया है।

इस आन्दोलन की बढ़ती हुई परिधि में उन लोगो ने भी घुसपैठ कर ली, जिनकी श्रद्धा सर्वोदय-आन्दोलन की क्रांतिकारिता में नही, निर्माण के बहाने अपनी अपेक्षाओं पर थी। दुर्भाग्य से ही सही, ऐसे लोगो का ही सगठन में बोलबाला हो गया। सस्ती लोकप्रियता एवं आत्मतुष्टि का रोग उन्हे था। ऐसे लोगो ने सर्वोदय की निष्कलंक "इमेज" को धक्का लगाकर अपने मन का "सर्वोदय" प्रतिष्ठित करने की कोशिश की। फलस्वरूप जनता की पकड़ से सर्वोदय का असली रूप छूट गया। लेकिन नकली रूप भी धोखा नही दे पाया। अच्छा ही हुआ कि दिल से सर्वोदय से भिन्न मूल्यों के प्रति वफादार लोग जल्दी ही प्रकाश में आ गये। अब इस आन्दोलन को सही दिशा में ले चलने की इच्छावाले लोग भुलावे में तो नही आयेंगे!

—कपिल अवस्थी, लखनऊ

कम्यून की आवश्यकता, स्थापना और परिवर्तन

[चीन और भारत की ग्रामीण स्थिति बहुत कुछ मिलती-जुलती है। चीन की क्रांति की प्रमुख शक्ति मुख्य रूप से ग्रामीण जनता रही है। क्रांति के बाद चीन में नयी रचना का जो आन्दोलन चल रहा है, सहज ही उसका मुख्य क्षेत्र गाँवों का है। इस आन्दोलन का ही एक स्वरूप 'कम्यून' के रूप में विकसित हुआ और हो रहा है। यद्यपि बुनियादी तौर पर 'चालक शक्ति' के प्रश्न पर ग्रामस्वराज्य का आन्दोलन चीन के क्रान्तिकारी आन्दोलन से भिन्न है, लेकिन परिस्थिति के मिलते-जुलते होने के कारण उसके अनुभवों का लाभ हम उठा सकते हैं, इसलिए यह जानकारी प्रस्तुत है। हमें खेद है कि पूर्वघोषणा के अनुसार हम इसका प्रकाशन अंक ७ से नहीं कर सके। —सं०]

सन् १९५७ में चीन में दो प्रभावशाली परिवर्तन, नीति-निर्धारण के सम्बन्ध में हुए, जिसने ग्रामीण जीवन को प्रभावित किया। इनमें एक था 'एन्टी राइटिस्ट (दक्षिणपंथ के विरुद्ध) आन्दोलन और दूसरा था विकेन्द्रीकरण। 'एन्टीराइटिस्ट' आन्दोलन ने ग्रामीण जीवन को दो प्रकार से प्रभावित किया। एक, समाजवादी शिक्षण आन्दोलन, जिसमें जमींदार एवं पूँजीवादी तत्त्वों पर आक्रमण किया जा रहा था। दो, हजारों शहरी बुद्धिजीवियों को गाँवों में भेजा गया। इन दोनों आन्दोलनों ने ग्रामीण क्षेत्र में लाल क्रांति को मजबूत किया।

सितम्बर १९५७ में एक नयी नीति-निर्धारित की गयी, जिसके माध्यम से जल की सुविधा प्रदान करने की योजना बनी। इसी वर्ष के अन्तिम दिनों में एक राष्ट्रव्यापी आन्दोलन चला, जिसमें ६ करोड़ लोग लगे और राष्ट्रव्यापी जलपूर्ति योजनाओं को पूरा किया गया। सन् १९५५-५६ के दौरान राष्ट्रव्यापी सिंचाई एवं जलदाय योजना को बड़े पैमाने पर सफलतापूर्वक चलाया गया। यहाँ छोटी छोटी जलदाय योजनाओं पर अधिक जोर दिया गया। इस निर्धारित कार्यक्रम में इस बात का ध्यान रखा गया कि स्थानीय स्तर पर विकेन्द्रित रूप से कार्य का संचालन किया जाय। इस कार्य के लिए कृषि उत्पादक सहकारी समिति को माध्यम बनाया गया और इस प्रकार सिंचाई-योजना कृषि-उत्पादक सहकारी समिति के कार्य का अंग बन गयी। इस कार्य को राज्य का पर्याप्त सहयोग मिला।

ग्रामीण विकास के प्रयत्न

सन् १९५८ में प्रयोग के तौर पर कम्यून स्थापित करने का निर्णय किया गया और कुछ क्षेत्रों में इसका प्रयोग भी प्रारम्भ हुआ। इसी प्रयोग के क्रम में 'जलदाय ब्रिगेड' का संगठन किया गया और 'उत्पादन ब्रिगेड' को भी मजबूत किया गया। इन दोनों संगठनों को कम्यून के साथ जोड़ा गया।

जुलाई १९५८ में एक लेख प्रकाशित हुआ, जिसमें उस समय चल रही ग्राम्य विकास की योजनाओं में विरोधाभास का उल्लेख था। प्रथम, कृषि-कार्य तथा निर्माणाधीन छोटे पैमाने के उद्योगों के बीच—जिसकी रचना कृषि सेवा के लिए की गयी थी—एक प्रकार का विरोधाभास उत्पन्न हो गया। दूसरा, कृषि में तुलनात्मक दृष्टि से तीव्र विकास के लिए जिस प्रकार के मौलिक श्रम-विभाजन की आवश्यकता थी वह सम्भव नहीं हो सका। तीसरा, उत्पादन की तकनीक दीर्घकालीन दृष्टि से उपयुक्त नहीं थी। चौथा, श्रम की कमी के कारणों से खास तौर पर विरोध का विकास हुआ। इन बातों पर गम्भीरतापूर्वक विचार करने के बाद यह निश्चय किया गया कि तीव्र विकास के लिए आवश्यक है कि भविष्य में संगठनात्मक दृष्टि से परिवर्तन किया जाय।

कम्युनिस्ट पार्टी की पोलिट ब्यूरो की १५ दिनों की लगातार बैठक में कम्यून की संरचना पर विचार किया गया। इस बैठक के बाद कम्यून के व्यापक प्रसार की घोषणा की गयी। इस घोषणा के बाद चीन की ग्रामीण व्यवस्था में कम्यून-स्थापना की गति तीव्र की गयी। अगस्त १९५८ तक ८,७३० कम्यूनों की स्थापना की जा चुकी थी, जिसका विस्तार-क्षेत्र कुल ग्रामीण आबादी का ३०.४ प्रतिशत भाग में था। इसके व्यापक प्रसार का अनुमान इसीसे लगाया जा सकता है कि सितम्बर के आखिर तक कुल कम्यूनों की संख्या २६,४२५ हो गयी, जिसमें कुल ग्रामीण आबादी का ९८ प्रतिशत भाग शामिल हो गया। कम्यूनीकरण का वैचारिक आधार आदर्शवादी था। इस बात का व्यापक प्रचार किया गया कि साम्यवाद का अंतिम लक्ष्य शीघ्र आनेवाला है, तीन वर्ष के कष्ट एवं त्याग से हजारों वर्षों से चला आ रहा कष्ट दूर हो सकता है। इस प्रकार कम्यून का सुहाना चित्र प्रस्तुत किया गया।

कम्यून क्या है ?

क्या कम्यून एक सामाजिक संगठन है ? यह विचारणीय प्रश्न है। विभिन्न क्षेत्रों में कम्यून का विभिन्न स्वरूप था। सभी में पूर्ण एकरूपता की खोज करना कठिन है। फिर भी संगठनात्मक दृष्टि से पूरे देश के कम्यूनों में संगठन की एकरूपता देख सकते हैं। कुछ क्षेत्रों में कृषि-उत्पादक सहकारी समिति को पूर्णरूपेण बदल दिया गया था तो कुछ क्षेत्रों में नाममात्र का परिवर्तन किया गया था। कम्यून के माध्यम से इस बात का प्रयास किया गया कि स्थानीय नेतृत्व के जरिये स्थानीय कार्यकर्ताओं का निर्माण हो, जिससे कि नयी समाज-रचना की ओर तेजी से कदम बढ़ सकें।

कम्यून के संगठन के पीछे व्यापक दृष्टि रही है। पिछले प्रयोगों के अनुभव

पर से ऐसा महसूस किया गया कि सम्पूर्ण ग्रामीण व्यवस्था में व्यापक रूप से लाल-क्रान्ति का प्रसार करना आवश्यक है। कम्यून का आदर्श सम्पूर्ण कृषि-कार्य में पूर्ण क्रान्ति करना रहा है। कम्यून की विचारधारा के अनुसार 'गतिशीलता' भिन्न-भिन्न गाँवों में भिन्न-भिन्न हो सकती है, लेकिन कुल मिलाकर ग्रामीण जीवन में गतिशीलता होनी चाहिए।

कम्यून क्यों ?

कम्यून की स्थापना के पूर्व गांव की सामाजिक, आर्थिक व्यवस्था इस प्रकार थी कि उसका समग्र विकास सभव नहीं था। गाँव की इकाई इतनी छोटी थी कि उसमें व्यापक सामूहिकता का विकास सम्भव नहीं था। भूमि की जोत इतनी छोटी थी कि उसमें नयी तकनीक का उपयोग करना कठिन था। इस समय अनेक जीवनोपयोगी प्राकृतिक साधनों पर निजी स्वामित्व था। जंगल, फल के वृक्ष, मकान, भूमि के छोटे जोत आदि निजी क्षेत्र में थे। इस स्थिति में यह असम्भव था कि समग्र विकास की दृष्टि से इकाई के रूप में ग्राम्य योजना *तैयार की जाय। कुछ क्षेत्रों में निजी* स्वामित्व तथा कुछ क्षेत्रों में सामूहिक स्वामित्व होने के कारण विकास की तीव्र गति में बाधा आना स्वाभाविक था। इसीलिए जन-कम्यून की स्थापना ही सारी समस्याओं को सुलझाने का उत्तम रास्ता माना गया।

कम्यून-स्थापना के कुछ महीनों में ही सारी व्यवस्था में बड़ा परिवर्तन आ गया। सामूहिक कार्य-पद्धति के माध्यम से कृषि-कार्यों को पूरा किया जाने लगा। दो-दो सौ से अधिक किसान, जो कि पहाड़ों पर रहते थे, एकसाथ फसल-कटाई तथा अन्य कार्य करने को निकल पड़े। जो कार्य २० दिनों में पूरा किया जाता था, उसे पाँच दिन में पूरा किया जाने लगा।

शीघ्र ही उद्योग, कृषि, निर्माण के अन्य कार्य, श्रमविभाजन आदि के लिए पृथक्-पृथक् ब्रिगेडों का गठन किया गया। जंगली क्षेत्रों में खास समस्याएँ थी, उसे वहाँ के कम्यून ने स्वयं हल करने का रास्ता ढूँढना प्रारंभ किया। कच्चे लोहे का निर्माण, सड़क, दवा तथा दुकान, विद्यालय, भोजनालय, सिलाई आदि कार्य कम्यून में सफलतापूर्वक किये जाने लगे।

स्वामित्व

वैसे चीन में स्वामित्व अंततः राज्य में निहित है, लेकिन कम्यून की स्थापना में स्वामित्व का स्वरूप दूसरे ढग का हुआ। इसमें स्वामित्व की इकाई कम्यून *ब्रिगेड मानी गयी। यहाँ स्वामित्व तथा* उपयोग के अधिकार में भेद किया गया। व्यावहारिक दृष्टि से कम्यून को उपयोग का पूर्ण अधिकार दिया गया। कम्यून को भूमि, पशु, औजार, तकनीक और श्रम के उपयोग का पूर्ण अधिकार दिया गया। इस प्रकार कम्यून विकास एवं व्यवस्था *की प्रारम्भिक इकाई बनी। सम्पूर्ण आर्थिक* व्यवस्था में सामूहिकता का प्रवेश हो, इसका अभ्यास कम्यून में प्रारंभ किया गया।

यहाँ यह उल्लेख करना आवश्यक है कि कम्यून-स्थापना के प्रारंभिक चरण में संपूर्ण व्यवस्था में सैनिक-नियंत्रण का बोलबाला रहा। सारा कार्य सैनिक व्यवस्थानुरूप किया जाता था। परन्तु इस बीच कई अनुभव आये, जिसके आधार पर *कम्यून की संरचना में परिवर्तन* आवश्यक समझा गया। सन् १९६०-६१ में इसमें परिवर्तन प्रारंभ हुए। ऐसा महसूस किया गया कि तानाशाही की पद्धति में परिवर्तन आवश्यक है। सन् १९६१ में कम्यून में स्वतंत्र समितियों की मात्रा बढ़ायी गयी। व्यवस्थागत प्रतिबन्ध में ढिलाई की गयी, जिससे बाजार की स्वतंत्रता में वृद्धि हुई। इसी प्रकार बड़े तथा छोटे उद्योगों की व्यवस्था में भी परिवर्तन किया गया, जिससे किसानों को उपभोक्ता-सम्बन्धी पदार्थों की सुलभता हो सके। इसी प्रकार भूमि के साथ *सामाजिक लगाव में भी परिवर्तन किया* और कृषि-क्षेत्र में पूँजी विनियोग की मात्रा भी बढ़ायी गयी। इन परिवर्तनों के बाद भोज्य पदार्थों की सुलभता में वृद्धि हुई, शहरों में भी भोज्य पदार्थों की सुलभता बढ़ी। किसानों का जीवन-स्तर तथा आय में भी वृद्धि हुई। शहर एवं औद्योगिक क्षेत्रों के बीच समीपता आयी। कृषि के उत्पादकता में विशेष वृद्धि हुई।

समाजवादी शिक्षण-आन्दोलन

सन् १९६२ के गर्मी के दिनों में एक नया समाजवादी शिक्षण-आन्दोलन प्रारंभ किया गया। इस आन्दोलन के माध्यम से पूँजीवादी तत्त्वों तथा व्यक्तिवादी प्रवृत्तियों पर आक्रमण प्रारंभ किया गया। लेकिन ऐसा अनुभव आया कि इसका प्रत्यक्ष प्रभाव सामान्य-जन पर कम पड़ा। यहाँ *भी आदर्श एवं व्यावहारिक संगठन के* बीच के अन्तर में वृद्धि हुई।

इस बदलती परिस्थिति में सामाजिक संगठन का स्वरूप भी बदला। चीन में *सामाजिक संगठन की इकाई में* २० से ३० परिवारों को शामिल किया गया। ये परिवार अधिक-से-अधिक सहयोगी ढग से रहें, इसका अभ्यास किया जाता है। *पूरी इकाई एक परिवार के ढंग का जीवन* बिताये, इस बात पर विशेष जोर दिया जाता है। इस प्रकार की कई इकाइयाँ एक गाँव में होती है और सभी इकाइयाँ सम्पूर्ण गाँव की योजना एव व्यवस्था से सम्बद्ध होती हैं।

कम्यून-व्यवस्था में परिवर्तन के साथ-साथ ग्रामीण जीवन में स्वतंत्रता तथा व्यक्तिगत साहस की मात्रा में वृद्धि की गयी। किसानों को व्यक्तिगत स्तर पर उत्पादन करने की कुछ सीमा तक छूट दी गयी। सरकार इनके उत्पादन को उचित मूल्य पर खरीद का प्रबन्ध करती है। इस प्रकार किसानों की आय में वृद्धि हुई है। सामूहिक उत्पादन पद्धति से उत्पन्न वस्तुएँ खुले बाजार के माध्यम से उपभोक्ताओं तक पहुँचती हैं। सभी कम्यून अपना माल बाजार *में बेचते हैं। इस प्रकार हाल के वर्षों में* व्यक्तिगत स्वतंत्रता की मात्रा-आर्थिक तथा सामाजिक दोनों क्षेत्रों में-बढ़ी है।→

बिहार में मैंने क्या देखा ?

• नेता जेल गये, लेकिन जमीन नहीं बंटी • लाल झण्डे और ग्रामसभा • संशय और अविश्वास के बादल छंट रहे हैं • क्या कोई दल एक धुर भी जमीन बांट सका ? क्रान्ति, शान्ति और विकास की समग्र योजना • नक्सलपंथी नेता के परिवार से मुलाकात : क्रान्ति और करुणा • जे० पी० के जीवन की सादगी : प्रेरक मिसाल

—ठाकुरदास बंग

पिछले चार-पांच महीनों में पुष्टि का काम करने के लिए जयप्रकाशजी मुजफ्फरपुर जिले के मुसहरी प्रखंड में, श्री कैलाश प्रसाद शर्मा एवं श्री राममूर्ति भाई वैशाली प्रखंड में, सुश्री निर्मला देशपाण्डे दरभंगा जिले के लदनियाँ प्रखंड में एवं श्री वैद्यनाथ प्रसाद चौधरी पूर्णिया जिले के रुपौली प्रखंड में गड़ गये हैं। सहरसा जिले में भी जिला-स्तर पर पुष्टि का अभियान चलाने की तैयारी चल रही है। इस समूचे काम का अध्ययन करने का विचार कई दिनों से मन में था। लेकिन ग्रामस्वराज्य-कोष के कार्य से २ अक्तूबर तक तो अपने को छुड़ा पाना मुश्किल था। अब अक्तूबर के अन्त में मैं एक सप्ताह के लिए केवल मुसहरी एवं रुपौली प्रखंडों में जा सका। वहां मैंने क्या देखा ?

पूर्णिया जिले में ३८ प्रखंड हैं, जिनमें से रुपौली प्रखंड में १५८ गांव हैं। श्री वैद्यनाथ बाबू ने जुलाई से इस प्रखंड में धुर को करीब-करीब गाड़ ही लिया है। इस वृद्धावस्था में वे यात्रा पैदल एवं बैलगाड़ी से पचायत-पचायत घूम रहे हैं। एक पंचायत में वे पांच से दस दिनों का पड़ाव करते हैं। ३० कार्यकर्ता इस काम में मदद के लिए जुटाये गये हैं। ये कार्यकर्ता दो-दो, तीन-तीन की टोलियाँ बनाकर घूमते हैं, परिवारों की सूची बनाते हैं। साथ साथ यह सूची तैयार करने के फौरन बाद, ग्रामदान-संकल्प-पत्र पर जिनके हस्ताक्षर ग्रामदान-तूफान अभियान में समय नहीं हो पाये थे, उनके हस्ताक्षर प्राप्त करते हैं। १७ अक्तूबर तक कुल २१ गांवों में काम हुआ था, जिनमें ७२१ भूमिवान एवं ११६० भूमिहीनों के हस्ताक्षर प्राप्त हुए थे। (तूफान-अभियान के समय कुल ७१६६ परिवारों में से ८११ भूमिवानों के हस्ताक्षर पहले ही हो चुके थे।) इसके बाद ग्रामसभा का गठन एवं पदाधिकारियों का सर्वसम्मति से निर्वाचन होता है, और ग्रामसभा की कार्यकारिणी पर बीघा-कट्ठा वितरण की जिम्मेवारी डाली जाती है। इससे ग्रामसभा के पदाधिकारी भी कुछ हलचल करने लगते हैं। अपनी जमीन का बीसवां हिस्सा निकालने की प्रक्रिया प्रारम्भ होती है, एवं बाद में गांव को तैयार कर समारोहपूर्वक भूमि-वितरण वैद्यनाथ बाबू के करकमलों द्वारा करवाया जाता है। बीस गांवों में ग्रामसभाओं का गठन हुआ है, और इनमें से ८ गांवों में अब तक ६८ दाताओं ने ८३ आदाताओं का २० एकड़ ३१½ डिसमल जमीन बांटी है। सात गांवों के कानूनी सम्पुष्टि के कागज तैयार हुए हैं। बासगीत की जमीन के परचे जगह-जगह दिलवाये जा रहे हैं। कराना एवं तेलडिहा गांव में मैं गया था। तेलडिहा गांव में ग्रामसभा का गठन हुआ। ग्रामसभा के अध्यक्ष, मंत्री, कोषाध्यक्ष एवं ग्राम शान्तिसेना के संगठक का निर्वाचन सर्वसम्मति से हुआ।

रुपौली प्रखंड नेपाल से लगा हुआ है। यहां पहुंचने के लिए मुझे जीप पर, बैलगाड़ी पर, नाव पर एवं पैदल यात्राएं करनी पड़ी। ऐसे दुर्गम प्रदेश में श्री वैद्यनाथ बाबू इस उम्र में तपस्या कर रहे हैं। तरह-तरह की शिकायतें चौधरीजी के पड़ाव पर आती रहती हैं। एक

—संघर्ष जारी है

चीन में प्राप्त साहित्य के अध्ययन से इस बात की पुष्टि होती है कि आज भी पुराने ग्रामीण, जो कि परम्परागत व्यवस्था में विश्वास करते हैं, उनके तथा नये साम्यवादी कैडरों के बीच वैचारिक मत-भेद एवं संघर्ष कायम है। पुराने ग्रामीण नेता अपना प्रभाव बढ़ाने के प्रयत्न में रहे हैं। ये लोग प्रायः नये साम्यवादी संगठनों के सक्रिय कार्यों में नहीं रखे जाते। आज भी सार्वजनिक प्रशासन में साम्यवादी लहर कायम रखने के लिए सैनिक साधनों का पूरा उपयोग किया जाता है, और ग्रामीण जीवन के सारे कार्य सेना एवं पार्टी के कैडरों के माध्यम से किया जाता है।

चीन में साम्यवादी के क्रान्तिवाद ग्रामीण जीवन में विकास के लिए कई प्रयोग किये गये। किसानों के सामाजिक-आर्थिक जीवन में साम्यवाद का प्रवेश किस प्रकार हो, यही लक्ष्य वहां के नियोजकों के सम्मुख रहा। यही कारण है कि वहां के नियोजन में प्रयोग एवं व्यावहारिक शिक्षा का प्रमुख स्थान रहा। उपरोक्त अध्ययन से स्पष्ट होता है कि चीन में नियोजन का लक्ष्य मात्र भौतिक विकास कभी नहीं रहा। आर्थिक विकास के साथ-साथ मनुष्य के जीवन-पद्धति में साम्यवाद कैसे फले, इसका प्रयास रहा। (समाप्त)

—अवध प्रसाद

['चाइना रिडिस्ट', ३ भागों में प्रकाशित, 'कम्यूनिस्ट चाइना' नामक ग्रंथ पर आधारित]

श्री वैद्यनाथ बाबू

मुसलमान ने भूदान की जमीन की बेदखली की शिकायत की। लेकिन तहकीकात करने पर पता चला कि उसने भी कुछ जमीन बँटाई पर दे दी थी, और लगान नहीं भरा था। दूसरे ने कहा, 'हमारे भाई का नुकसान हो गया (मर गया), तब उसे जबानी दी हुई भूदान की जमीन छीनी जा रही है।' ऐसे सब मामलों का निपटारा करने का प्रयत्न वैद्यनाथ बाबू करते हैं। संसपा नेता श्री एस० एम० जोशी द्वारा भूमि-हथियाओ आन्दोलन के सिलसिले में चार माह पूर्व इसी क्षेत्र में सत्याग्रह हुआ था। उनकी गिरफ्तारी हुई थी। लेकिन चूँकि राज्यवर्तीओं को उनके मत की *लोकसभा में आवश्यकता पड़ी*, इसलिए उन्हें रिहा कर दिल्ली भेजा गया। इस सत्याग्रह के कारण यहाँ जमीन नहीं बँटी। एक जगह तो भूमिहीनों का सत्याग्रही नेता जेल से छूटते ही मालिकों के पक्ष में जा मिला। भभुआ डाँड़ा गाँव में लूट-पाट से फसल की रक्षा करने के लिए रोज रात को १० बजे से सवेरे ४ बजे तक बारी-बारी से गाँव के सब नौजवान पहरा देते हैं, और पूरे गाँव के २१ साल के ऊपर की उम्र के नौजवान ग्राम-शांतिसेना बनाकर हर रोज सवेरे ४ बजे ड्रिल, खेल आदि नियमित रूप से कर रहे हैं। ग्राम-शांतिसेना यहाँ बढ़ रही है, और उनके संगठकों के प्रशिक्षण के लिए अ० भा० शांतिसेना मंडल प्रशिक्षक को भेजें, ऐसी माँग की गयी है। उनकी माँग के अनुसार १५ दिनों के लिए एक प्रशिक्षक को भेजा जा रहा है। कम्यूनिस्टों से प्रभावित एक गाँव के एक टोले में ग्रामसभा का गठन न किया जाय, ऐसा पार्टी का आदेश *ऊपर से गाँववालों को मिला था।* लेकिन कार्यकर्ता वहाँ गये। हर घर में लाल झंडे लहरा रहे थे, तो भी उस गाँव में ग्रामसभा का गठन सर्वसम्मति से हो गया। इसे देखने के लिए अन्य सब टोलों के ग्रामीण आ पहुँचे थे। यह देखकर उनमें ऐसा उत्साह आया कि उस गाँव के ६ अन्य टोलों में ग्रामसभाएँ गठित हो गयीं।

मुसहरी प्रखंड में . क्रान्ति के साकार होते सपने

मुसहरी प्रखंड में मैं पहुँचा तब उस प्रखंड के प्रह्लादपुर गाँव में जयप्रकाशजी का पड़ाव था। उसके पूर्व सलहा, मणिका, इत्यादि पंचायतों में पन्द्रह दिन या उससे भी अधिक दिनों तक उनका पड़ाव इन दोनों पंचायतों में रह चुका था। पुष्टि-कार्य का प्रत्यक्ष प्रारम्भ करने के लिए जून से वे इस प्रखंड में डटे हुए हैं। उनके इस प्रयत्न से वातावरण में निर्भयता का संचार हुआ है, एवं शांति स्थापित हुई है। जयप्रकाशजी के आगमन के पूर्व शाम के बाद घर से बाहर कोई नहीं निकलता था। अब वह स्थिति नहीं रही है। अखिल भारत शांतिसेना मंडल के अध्यक्ष के नाते शांति-स्थापना का यह महत्त्वपूर्ण कार्य उनके द्वारा सम्पन्न हुआ है।

प्रथम एक महीने में जयप्रकाशजी की ग्रामस्वराज्य की बातों पर मालिकों को भरोसा ही नहीं होता था। उनके भाषण अच्छे लगते थे, लेकिन उसके पूर्व इस प्रखंड में जो खून हत्याएँ हुई थीं, उस कारण वातावरण इतना आतंकपूर्ण एवं अविश्वासपूर्ण हो गया था कि भाषणों में कही हुई अच्छी बातें साकार रूप लेंगी, इस पर भरोसा ही नहीं होता था। शुरू में १ माह उनकी सभाओं में भूमिहीन ही अधिक रहते थे। धीरे-धीरे सद्विचार के तूफान से संशय एवं अविश्वास के काले बादल छँटने लगे, और कुछ दिनों के बाद भूमिवान भी सभाओं में आने लगे। शुरू में भूमिहीन ही बड़ी संख्या में ग्रामदान-घोषणापत्र पर हस्ताक्षर करते थे। पंद्रह-बीस दिन इस प्रकार बीते। ग्रामसभा के गठन पर प्रारम्भ के दिनों में जोर था। पहली बार बीघा-कट्ठा बाँटने के लिए एक भूमि-मालिक को तैयार होने में एक माह लगा। एक-दो माह तक छोटे एवं मध्यम भूमिवान ही शामिल हुए, और भूमि-वितरण का श्रीगणेश हुआ। अब भूमि-वितरण एवं ग्रामसभा का गठन, दोनों पर समान जोर आया है। बल्कि भूमि-वितरण के लिए तैयार न हों, तो ग्रामसभा के गठन की बात तब तक के लिए स्थगित की जाय, यह स्थिति पैदा हुई है। अब कुछ बड़े भूमि-मालिक भी सामने आये हैं, एवं भू-वितरण के लिए तैयार हुए हैं। हालाँकि अभी कई बड़े भूमि-मालिकों को स्वामित्व-विसर्जन करने एवं ग्रामसभा में शामिल होने में डर लगता है। लेकिन विचार स्पष्ट हुआ है और भूमिवान एवं भूमिहीन, दोनों का हम हित चाहते हैं, ऐसा विश्वास पैदा हुआ है। इस बदले हुए वातावरण के परिणामस्वरूप सलहा पंचायत के सात-आठ स्थानीय कार्यकर्ता इस काम को करने के लिए आगे आये हैं।

मूक लोगों की जुबानें खुलने लगी हैं

काम का स्वरूप क्या है? ग्रामसभा का गठन, बीघा-कट्ठा वितरण, यह तो है ही; और इसे ही प्राथमिकता दी गयी है। साथ-साथ गाँव के प्रश्नों का समग्र दर्शन जयप्रकाशजी को हो रहा है। स्व-राज्य के बाद इतने लम्बे समय तक गाँवों में रहने का योग जयप्रकाशजी के लिए प्रथम बार आया है। इसलिए गाँवों की समस्याओं का प्रत्यक्ष दर्शन और उनके निराकरण के लिए चिन्तन एवं प्रयत्न करने में वे मशगूल हैं। निरक्षर प्रौढ़ों से एवं जहाँ पाठशाला नहीं है, ऐसे गाँवों से साक्षरता की माँग आयी है। उनकी

पूर्ति में कुछ सामाजिक-वर्ग चलाये जा रहे हैं। वासगीत की जमीन एवं उसके कानूनी पर्चे भूमिहीनों को सरकारी कर्मचारियों द्वारा दिलवाने का काम बड़े पैमाने पर किया जा रहा है। लोगों को पूरा काम मिले, इसलिए कहीं-कहीं चरखे बाँटे जा रहे हैं। ग्रामसभाएँ कागज पर ही न रहें, वे सक्रिय हों, ऐसा प्रयत्न किया जा रहा है। मजदूर ग्रामसभाओं में बोलने लगे हैं।

इस ग्रामीण क्षेत्र में मजदूरी बहुत ही कम, यानी १ से १॥ रुपया है। इस मजदूरी के दर पर भी बारहों महीना काम नहीं मिलता है। जमालाबाद गाँव में मैंने बातचीत करके पाया कि ६० से ७० प्रतिशत लोग एक समय ही पूरा भोजन कर पाते हैं। शाम को अलुआ (शकरकंद) खाकर इन लोगों को जैसे-तैसे जिन्दगी गुजारनी पड़ती है। पहनने का कपड़ा भी एक ही है। यह भी देखा गया कि अमीर लोग वेतन कम देते हैं, इनके मुकाबिले में मध्यम या छोटा किसान मजदूरों को अधिक देता है। चूँकि मध्यम किसान या छोटा किसान खुद अपने खेत में काम करता है, इसलिए मजदूर को उसके साथ-साथ अमीर मालिक के खेत के मुकाबले में अधिक काम करना पड़ता है। इस क्षेत्र में कानूनन न्यूनतम मजदूरी की दर साढ़े तीन रुपया रखी गयी है। आज तक इस पर अमल किसीने नहीं किया। अब इस कानून के सन्दर्भ में, और मानवता के सन्दर्भ में, यह सवाल जे० पी० के प्रयत्नों से उठ रहा है, मालिक-मजदूर मिलकर इसकी चर्चा कर रहे हैं, और मजदूरी के दरों में सर्वत्र वृद्धि हो रही है। वासगीत के पर्चे मिलने से, बीघा-कट्ठा में जमीन मिलने से, मजदूरी की दर में वृद्धि होने से और ग्रामसभा में बराबरी का सम्मानपूर्ण स्थान मिलने से मजदूरों में चेतना आ रही है।

भूदान-ग्रामदान के अलावा किसी तरह जमीन नहीं बँटी

जमालाबाद आश्रम के संस्थापक श्री बद्रीनारायण सिंह, जो यहाँ के जिला सर्वोदय-मंडल के अध्यक्ष भी हैं, और जिन्हें हत्या की धमकी दी गयी थी, के प्रयत्नों से जमालाबाद गाँव में ८२ बीघा गैरमजरुआ जमीन इस साल बाँटी गयी है। यह उपलब्धि अपने आप में कम नहीं है। और, इसका महत्त्व और भी बढ़ जाता है, जब कि हम यह देखते हैं कि कम्युनिस्टों ने, नक्सलवादियों ने, या अन्य किसी भी दलवालों ने एक बीघा तो क्या, एक धूर भी जमीन नहीं बँटवायी। यहाँ आबादी की तुलना में जमीन बहुत कम है। प्रति व्यक्ति ३० सेंट (डेसिमल) जमीन आती है। जमीन बहुत उपजाऊ है, और जमीन की कीमत पाँच हजार से दस हजार रुपया प्रति एकड़ है। जिन्हें

श्री जयप्रकाश नारायण

भूदान की जमीन मिली थी, लेकिन जो उस जमीन से बेदखल किये गये, उन्हें फिर से जमीन का कब्जा दिलवाया जा रहा है। इसकी जाँच-पड़ताल करने के लिए भूदान-कमेटी की ओर से कई अमीन जे० पी० के कैम्प के साथ घूमते हैं। मुशरी के महन्त ने अपनी इच्छा से ५½ एकड़ जमीन दी, जो सात भूमिहीनों में समारोह बाँटी गयी। इस समारोह में मैं भी हाजिर था। ऐसे वितरण समारोह जगह-जगह हो रहे हैं। गाँव के मजदूर-मालिक के, या अन्य पुराने या नये झगड़े जे० पी० की मध्यस्थता से मिट रहे हैं।

लेकिन थोड़ी-सी जमीन से गरीबी कम हो सकती है, गरीबी मिट नहीं सकती, और यह जमीन भी सबको कैसे मिल सकती है? इसलिए जमीन की उपज बढ़े और गाँव में उद्योग-धन्धे चलें, इस प्रश्न को भी जे० पी० ने हाथ में लिया है। खेती की मुख्य समस्या जल एवं कर्ज की है। पानी के लिए बिजली चाहिए। नरौली नाम के एक गाँव में जे० पी० के प्रयत्नों से बिजली आयी। गाँव के सभी छोटे-बड़े किसान आनन्द-विभोर हो उठे। मुसहरी ब्लाक में उत्पादक कार्यों के लिए दीर्घ एवं मध्यम अवधि के ऋण कैसे मिलें, इसका प्रयत्न भी जे० पी० ने प्रारम्भ कर दिया है। जे० पी० के पड़ाव पर इस कार्य के लिए विशेषज्ञ आ रहे हैं, और सलाह-मशविरा कर रहे हैं, यह दृश्य कई बार पाँच दिनों में मुझे देखने को मिला। बिहार ग्रामदान-कानून में भी उचित सुधार करने के प्रश्न पर चर्चाएँ चल रही हैं। प्रगतिशील कानूनों पर अमल हो, इसका भी प्रयत्न यत्र-तत्र चल रहा है। सरकारी कर्मचारी सर्वत्र सहायता कर रहे हैं।

स्थानीय शक्ति का उद्भव

जे० पी० के साथ २५ कार्यकर्ता काम कर रहे हैं। बिहार खादी-ग्रामोद्योग संघ, ग्राम इकाई योजना, जिला सर्वोदय-मण्डल आदि से कई कार्यकर्ता चुनकर इस काम में लगाये गये हैं। सोखोदेवरा आश्रम से भी कुछ कार्यकर्ता आये हैं। बिहार खादी-ग्रामोद्योग संघ के वरिष्ठ कार्यकर्ता श्री कामेश्वर बाबू, बिहार ग्राम-स्वराज्य-समिति के मंत्री श्री कैलाश प्रसाद शर्मा जे० पी० के दाहिने-बाएँ हाथ बनकर पूरी मुस्तैदी के साथ काम कर रहे हैं। श्री सुरेन्द्र विक्रम जे० पी० के सचिव का काम पूरी क्षमता से कर रहे हैं, और प्रभावती दीदी का काम तो वे ही कर सकती हैं, अन्यों के बस की वह बात नहीं। कुछ स्थानीय कार्यकर्ता भी मिले हैं। ग्रामसभा में ग्राम-शान्तिसेना एवं कई स्थानों पर तरुण-शान्तिसेना खड़ी की गयी है। इनके शिविर किये जा रहे

हैं। फिर ये शांति-सैनिक जे० पी० के पंचायत से चले जाने के बाद आगे का काम करते हैं। जैसे, मायबपुर में दो ग्रामीण युवकों ने सारा विरोधी गांव अनुकूल बनाया। शांति-सेना धीरे-धीरे विकसित हो रही है, और वह आन्दोलन की स्थानीय शक्ति के रूप में खड़ी हो रही है।

शान्तिमय क्रान्ति की साधना

जयप्रकाशजी की कार्य-पद्धति देखने योग्य है। ग्रामदान की शर्तों पर अमल के साथ-साथ इतने सारे काम कर रहे हैं। क्योंकि वे केवल विशिष्ट ग्रामदान-कार्यकर्ता ही नहीं हैं, शान्तिसेना-मंडल के वे ही प्रमुख हैं, और ग्रामविकास संस्थानों के अध्यक्ष भी। अतएव क्रान्ति, शान्ति, विकास, राहत सबका मधुर सम्मिश्रण जे० पी० के कार्यों में देखने को मिलता है। जीवन के टुकड़े नहीं हो सकते। शांति, क्रांति, विकास-तीनों का जीवन में स्थान है। और सिफत तो यह है कि जे० पी० इतना सब काम करते-करवाते हुए भी इनमें फँसे नहीं हैं। काम दूसरों के करवाने की, और दूसरों की बातें धीरज अभी से सुनने की उनकी शक्ति अद्भुत है। ग्रामदान-प्राप्ति, पुष्टि, निर्माण एवं शांति-सेना, इन सबका सुन्दर समन्वय इस क्षेत्र में सध रहा है, और समग्रता का ढांचा निखर रहा है। भारत के सारे ग्रामदान-कार्यकर्ताओं के लिए यह अध्ययन एवं अनुकरण के योग्य है।

नक्सालपंथी के घर जे० पी० : मानवीय संस्पर्श

मुसहरी में जे० पी० के रूप में करुणा मूर्तिमान हुई है। जे० पी० नक्सालपंथी नेता श्री रामकिशोर बाबू के वृद्ध पिताजी से मिले। ३ बीघे का मालिक यह नवयुवक वामपन्थी कम्युनिस्ट पार्टी का सदस्य था। बाद में नक्सालपन्थी हुआ। दो वर्षों से यह घर से लापता है। उसके घर में और श्री गोविन्दराव देशपाण्डे दोनों गये। टूटा हुआ घर था। घर के कमाऊ नौजवान बेटे के चले जाने से घर के दारिद्र्य का हिसाब नहीं है। जे० पी० ने बिहार रिलीफ कमेटी से इन्हें सहायता पहुँचायी है। गंगापुर के रघुवंश शरणजी बड़े जमीन-मालिक थे। इनकी पिछले दिनों हत्या, कहते हैं, नक्सालपन्थियों द्वारा हुई। ऐसी कई हत्याएँ इन्होंने की, ऐसा कहा जाता है; लेकिन तो भी एक इन्च जमीन ये नक्सालपन्थी बाँट नहीं पाये। जिनकी हत्याएँ हुईं, उनके उत्तराधिकारियों के पास ही सारी जमीन है। रघुवंश शरणजी के भाई से जे० पी० मिले। उनकी मानसिक तैयारी अभी ग्रामदान में सम्मिलित होने की नहीं हुई है। अभी इनका हृदय पिघलना बाकी है। कहीं जे० पी० मिलने जाते हैं तो बड़े जमीन-मालिक अन्तर्धान हो जाते हैं। लेकिन जे० पी० के मन के दरवाजे सबके लिए खुले हैं।

जे०पी०का ग्राम्य जीवन: अन्त:करण की विशालता

काम की गति यद्यपि तेज हो रही है, तो भी अभी तूफान की गति आना बाकी है। काम नया है, ग्रामीण जीवन में वैसे ही गति का सर्वथा अभाव है, फिर इस नये अनोखे काम में गति कैसे आये? जे० पी० ने स्वयं ही आठ समर्थ सहायकों की सेवाग्राम-अधिवेशन में माँग की थी। अभी वह माँग पूरी होना बाकी है। जे० पी० के जीवन में इन दिनों अजीब सादगी आयी है। साठ सत्तर पैसे में मिलनेवाली दो-चार ग्रामीण चटाइयाँ जे० पी० के कैंप के लिए खरीदी गयी हैं। यही कालीन थी, जिस पर जे० पी० और हम सब बैठे थे। एक कमरे में जे० पी० का सारा काम चलता है। वही बेडरूम, वही ड्राइंग रूम और वही स्टडी रूम। समग्र-कार्य का एक नया आयाम उनके काम से पैदा हो रहा है। भारत के पूरे सर्वोदय-आन्दोलन को एक नया मोड़ इससे मिलेगा। उनके अपने जीवन में तो एक नया मोड़ आया ही है। वे कहते ही हैं कि सिताबदियारा एवं सोखोदेवरा की भाँति मुसहरी ब्लाक मेरा घर हो गया है। और, अपने परिवारवालों का जीवन रामयोचित बनाने में यह अन्तरराष्ट्रीय ख्याति का चिर-तरुण प्राणों की बाजी लगाकर इस ग्रामीण मोर्चे पर डटा हुआ है। अभी सब बाधाएँ पार नहीं हुई हैं। इन सब बाधाओं को पार करने के प्रयत्न में नयी-नयी उपलब्धियाँ होंगी, और वे न केवल ग्रामदान-आन्दोलन को, बल्कि समूचे ग्रामीण भारत को नया जीवन प्रदान करने में दीप-स्तम्भ की भाँति पथ-प्रदर्शन का काम करेंगी। ●

इन्दौर में तरुण शान्ति-सेना का शिविर-सम्मेलन

तरुण-विद्रोह की नयी आवाज

—श्रवणकुमार गर्ग

तरुणों की शक्ति अहिंसक, विधायक कार्यों की ओर प्रवृत्त हो, क्रान्ति हो मगर बिना हिंसा के हो, बिना किसी जनहानि के हो, जिस परिवर्तन के लिए क्रान्ति की जा रही है, और क्रान्ति के बाद जिन मूल्यों की स्थापना करनी है, इसका एक स्पष्ट मानचित्र तरुणों के पास हो, इन विचारों के आधार पर भारत में तरुणों के एक अखिल भारत संगठन का निर्माण कुछ वर्षों पूर्व हुआ था। सन् १९६३ में सबसे पहले जब संगठन का गठन हुआ तब उसका नाम किशोर-शान्ति दल रखा गया था, जो आज तरुण शान्तिसेना के रूप में देशभर में कार्य कर रहा है।

युवकों के स्वस्थ संस्कारों का जागरण होकर उन्हें स्वावलम्बन तथा सामुदायिक प्रयत्नों के कार्यक्रम उपलब्ध हों, उनमें राष्ट्रीय पुनर्रचना के कामों के प्रति उत्तरोत्तर रुचि उत्पन्न हो और वे उनमें प्रत्यक्ष भाग लेने के लिए आगे आयें, उनके द्वारा ऐसी वृत्तियों तथा दृष्टिकोण के निर्माण के प्रशिक्षण का प्रयास हो, जिससे देश और दुनिया में शान्ति स्थापित हो, तथा शिक्षा-प्रणाली के दोषों को शान्तिपूर्ण तरीकों से दूर किया जा सके।

उक्त उद्देश्यों के साथ लोकतन्त्र, राष्ट्रीय एकता, सर्वधर्म-समभाव, विश्व-शान्ति एवं आर्थिक न्याय तथा सामाजिक समता जैसे मूल्यों की स्थापना के लिए तरुणों का यह संगठन अपना चिन्तन प्रकट कर रहा है। शिविरों और सम्मेलनों के माध्यम से देशभर के तरुण एक मंच पर एकत्र होते हैं। अपने किये गये कार्यों का लेखा-जोखा करते हैं, और आगे के कामों की योजना बनाकर पुनः अपने-अपने क्षेत्रों में लौट जाते हैं और नव दिये गये कार्यक्रमों के क्रिया-न्वयन हेतु यथासम्भव प्रयास करते हैं।

अखिल भारतीय शिविरों की शृंखला का ११वां शिविर एवं दूसरा राष्ट्रीय सम्मेलन इस बार मध्यप्रदेश के प्रसिद्ध औद्योगिक एवं सांस्कृतिक नगर इन्दौर में आयोजित हुआ। १८ अक्तूबर से २२ अक्तूबर, १९७० तक शिविर एवं २३ से २५ अक्तूबर १९७० तक सम्मेलन आयोजित हुआ। शिविर में देश भर से १८८ तरुणों ने भाग लिया, जब कि सम्मेलन में २५० तरुणों ने। शिविर का स्वरूप जैसा कि अखिल भारतीय था, भाग लेनेवाले तरुण भी देश के लगभग सभी प्रमुख प्रान्तों से आए थे। जैसा कि स्वाभाविक भी था, सबसे ज्यादा (६१) तरुण मध्यप्रदेश के ही थे। शेष प्रान्तों में आसाम से १, मैसूर से १, दिल्ली से २, तमिलनाडु से २, केरल से ३, पश्चिम बंगाल से ४, उत्तर-प्रदेश से ११, बिहार से ११, राजस्थान से ११, गुजरात से २९ और महाराष्ट्र से ५२ तरुण शिविर में भाग लेने हेतु आये थे।

स्वानुशासन की मिसाल

पूरे शिविर का प्रातः ५ बजे से रात्रि १० बजे तक का बँधा-बँधाया कार्य-क्रम था, जिसमें कहीं कोई ऊब नहीं थी, जिसके पालन हेतु आयोजकों की ओर से कोई नियमन नहीं था। सारे कार्य स्वानुशासन से सम्पन्न होते थे। शिविर के अनुशीलन तथा समूह-जीवन को देखकर एक निरीक्षक-अध्यापक ने यह अभिप्राय प्रकट किया "मैं कई वर्षों से कालेज का अध्यापक हूँ, लेकिन मैंने अपने कालेज में ऐसा अनुशासन नहीं देखा है, जैसा देश के विभिन्न कोनों से आए हुए इन छात्रों में देखा।"

प्रातः ६ से ६-३० तक का वर्ग अखिल भारत शान्तिसेना मण्डल के मंत्री श्री नारायणभाई देसाई लेते थे। पूरे शिविर-काल में वे एक विषय पर बोले और विषय का इतना सुन्दर विश्लेषण किया कि शिविरार्थियों का यह आग्रह रहा कि सम्मेलन के दिनों में भी वे कुछ समय निकालकर चल रहे विषय पर बोलें। विषय का नाम ही अपने आप में रोचक है भारतीय सांस्कृतिक क्रांति।

देश के युवकों को श्रम का अभ्यास हो तथा वे श्रमिकों की समस्याओं के प्रति सजग हो सकें; इस दृष्टि से शिविर-स्थल

तरुणों द्वारा विद्यालय क्रांति का आह्वान

के निकट ही एक श्रमदान-कार्यक्रम का स्थान चुना गया। शिविरार्थी प्रतिदिन डेढ़ घंटे श्रमदान करते थे। एक सडक बनाने के काम में तरुणों ने अपने श्रमदान द्वारा सहायता दी। इन्दौर नगर के प्रशासक स्वयं श्रमदान-स्थल पर निरीक्षण हेतु गये और सराहना की। श्रमदान-कार्य में इन्दौर नगरनिगम का उल्लेखनीय योगदान भी रहा। कतारबद्ध तरुण जब गीत गाते हुए श्रमदान हेतु जाते और आते तब मार्ग के दोनों ओर के मकानों की छतों तथा खिड़कियों से लोगों की आँखें उत्सुकता और आनन्द से कुदाली-फावड़ा कन्धे पर उठाये तरुणों को देखती। उनके लिए यह नया अनुभव था। अभी तक उन्होंने तरुणों का कोई दूसरा ही रूप देखा था।

बौद्धिक और शास्त्रीय चर्चाएँ

शिविर के प्रथम दिन परिचय के बाद चर्चा के अन्तर्गत अपने विचार प्रकट करते हुए श्री नारायणभाई देसाई ने कहा, "आज वाद एक पद्धति (सिस्टम) बन गया है। वह एक बना-बनाया चौखटा, चहार-दीवारी है। आदमी को उसमें बैठाकर विचार किया जाता है। टोपी के नाप का सिर बनाने की प्रक्रिया का नाम 'वाद' है। आज दुनिया में हर जगह यही हो रहा है। अलग-अलग 'वाद' वाले मनुष्यों के सिर टोपी के नाप के बनाये जा रहे हैं। आदर्श को जब एक पद्धति बनाया जाता है, तब वाद का जन्म होता है। कार्यक्रम का जड़ रूप में ग्रहण करना वाद है। अच्छी चीज का भी अब वाद बनाया जाता है, तो उसमें बुराइयाँ पैदा होने की सम्भावनाएँ उत्पन्न हो जाती हैं।

"मनुष्य के व्यक्तिगत और सामाजिक प्रश्नों को हल करने के तरीके 'स्टेटिक' नहीं होने चाहिए। अन्यथा क्रांति की सम्भावना ही खत्म होजायेगी। 'डायनेमिक' (गतिशील) होंगे, तो जीवन के साथ-साथ उसके विकास में भी परिवर्तन होंगे।"

"मैं क्रांति में कैसे आया" इस विषय पर बोलते हुए *श्री नवकृष्ण* चौधरी ने कहा कि अंग्रेजी में एक कहावत है कि, "घोड़े को पानी तक ले जा सकते हैं, लेकिन पानी पीने को मजबूर नहीं कर सकते। सारी दुनिया में आज जो तरुणों का व्यवहार चल रहा है, हम उसकी उपेक्षा नहीं कर सकते। हमें उन्हें कोई-न-कोई दिशा अवश्य देनी होगी। उस दिशा में वे चलें या न चलें यह दूसरी बात है।" देश की वर्तमान परिस्थिति की चर्चा करते हुए श्री चौधरी ने कहा कि "गांधीजी ऐसी आजादी के लिए नहीं लड़े थे। इस देश ने गांधीजी की घोर उपेक्षा की है और उसी का यह परिणाम है कि देश की हालत इतनी खराब हो गयी है।"

समाजवाद पर बोलते हुए श्री मनोहर सिंह मेहता ने कहा कि, "यूरोप में औद्योगिक क्रान्ति के बाद पूँजीवाद का उदय हुआ और समाज में दो वर्ग हो गये। एक वर्ग, जिसके हाथ में उत्पादन के सारे साधन केन्द्रित हो गये, और दूसरा उसके नीचे कार्य करनेवाला। इसके कारण पूँजीवाद का उदय हुआ। पूँजीवाद की प्रतिक्रिया के फलस्वरूप यह विचार आया कि एक ऐसी पद्धति का, जिसमें हजारों लोगों के मालिक कुछ लोग हो जायें और शोषण करें, विरोध होना चाहिए। समाज में रहनेवाली हर इकाई समान है, सबको बराबर का अधिकार प्राप्त हो। यही विचार आगे चलकर समाजवाद और कालान्तर में उसकी शाखाओं-उपशाखाओं के रूप में विकसित हुआ।" आपने यह भी कहा कि, "समाजवाद की बातें आज वे ही लोग अधिक करते हैं जिनके पास सत्ता है। समाजवाद को स्वीकार तो सब करते हैं, परन्तु उसके लिए तरीके अलग-अलग अपनाते हैं। भारत में सच्चा समाजवाद आर्थिक और राजनीतिक सत्ता के विकेन्द्रीकरण द्वारा ही लाया जा सकता है।"

अहमदाबाद के एक महाविद्यालय के आचार्य एवं प्रसिद्ध अर्थशास्त्री श्री रमेश-भट्ट ने 'हमारी अर्थनीति' पर बोलते हुए कहा कि, "स्वतंत्र हुए तब दो बातें मुख्यतः सामने आयीं। आर्थिक ढाँचा इस प्रकार बने कि भविष्य में देश की रक्षा कर सकें, इतनी ताकत हो। और दूसरे, सैनिक-दृष्टि से हम ताकतवर हों। सैनिक-ताकत की बुनियाद भी आर्थिक ढाँचे पर ही निर्भर थी। हम आत्मनिर्भर लश्करी और आर्थिक, दोनों दृष्टियों से होना चाहते थे। विकास इस प्रकार करना चाहते थे कि हिन्दुस्तान का आर्थिक विकास जल्द-से-जल्द हो। जल्द-से-जल्द गरीबी का निवारण हो सके। यही बात ध्यान में रखकर हमने पंचवर्षीय योजनाएँ बनायीं। सन् १९५० से ५५ तक की योजना में हमने अनाज के मामले में आत्मनिर्भर होने की कोशिश की। दूसरी योजना के दौरान यह सोचा गया कि अगर विकास करना हो, तो यंत्र-सामग्री पर्याप्त होनी चाहिए। स्टील के निर्माण हेतु तीन बड़े कारखाने खड़े कर हमने उद्योगीकरण की बुनियाद डाली। तीसरी योजना के कार्यकाल में देश को दो युद्ध देखने पड़े। लश्करी खर्च ३०० से १००० करोड़ हो गया। सन् १९६२ से आज तक हमारा ४५ प्रतिशत लश्करी ताकत बढ़ाने पर खर्च हो रहा है। सन् '६५ से '६९ तक पंचवर्षीय योजना नहीं बनी। सारांश यह है कि तीन तीन योजनाओं के बाद भी देश की हालत नहीं सुधरी। यह नहीं कहा जा सकता कि देश में गरीबी, भुखमरी और बेकारी मिट चुकी है। लोकशाही में जनता अगर अपनी हालत नहीं बदल सकती, तो सरकार बदल सकती है।"

देश के प्रसिद्ध अर्थशास्त्री श्री महेन्द्र देसाई ने "हमारा नियोजन" चर्चा के अन्तर्गत अपने विचार रखे। आपने कहा, "योजना-आयोग दिल्ली में बैठकर पूरे देश की समस्याओं को नहीं जान सकता, क्योंकि अलग-अलग क्षेत्रों की समस्याएँ अलग-अलग होती हैं। एक नीति सभी जगह के लिए मान्य नहीं होगी। इसके लिए आवश्यक है कि स्थानीय अभिक्रम जागृत हो। लोग स्वयं अपने क्षेत्र की समस्याओं को समझें और ऊपर तक

पहुँचायें। कोई ऊपर से आकर समस्या सुलझा पायेगा यह आशा रखना व्यर्थ है। ऊपर से मदद की आशा अवश्य की जा सकती है। योजना का उद्देश्य यही रहता है कि लोगों को उन्नति के ज्यादा-से-ज्यादा अवसर प्राप्त हों। छोटे आदमी को भी ज्यादा सुविधाएँ मिलें। अच्छी योजना का तो मतलब ही यही है कि गलतियों को समझने की योग्यता हो और उन्हें दूर करने की सामर्थ्य हो। चौथी योजना के उद्देश्यों में हम यह भी कोशिश कर रहे हैं कि पुरानी सभी भूलों से यह योजना मुक्त हो।"

दैनिक 'नयी दुनिया' के सम्पादक-लेखक श्री राजेन्द्र माथुर ने शिविरार्थियों से "साम्यवाद" विषय पर चर्चा की। शिविरार्थियों से प्रश्न और उत्तर के रूप में पूरी चर्चा चली। साम्यवाद क्या है? इसका उदय किस प्रकार हुआ? मार्क्स की कल्पना का साम्यवाद किस प्रकार का था? आदि प्रश्नों पर शिविरार्थियों का समाधान किया। एक महत्वपूर्ण चीज जो उन्होंने कही एवं जिस पर शिविरार्थियों के साथ बहस हुई एवं मतभेद भी रहा, वह थी मूल्यों की शाश्वतता पर। श्री माथुर के अनुसार कोई भी मूल्य शाश्वत नहीं होता। मूल्य हमेशा बदलते रहते हैं। सत्य भी एक शाश्वत मूल्य नहीं है। उनका कहना था कि जो मेरे लिए सत्य है, सम्भव है, वह आपके लिए न हो। अत. यह कोई सर्वमान्य नियम नहीं हो सकता। शिविरार्थियों में कुछ के अनुसार कोई चीज अगर मूल्य है तो वह शाश्वत ही हो सकती है।

नक्सालवाद का असली रूप

नक्सालवाद और माओवाद आजकल चर्चा का प्रमुख विषय है। 'रिलेवन्स आफ नक्सलिज्म एण्ड माओइज्म' पर बोलने दिल्ली से श्री सी॰ आर॰ एम॰ राव आये थे। श्री राव वहाँ 'कामना स्टडी सेन्टर' से सम्बद्ध हैं और 'कामना रिपोर्ट' नामक पत्रिका के सम्पादक भी हैं। श्री राव ने अपने विचार प्रकट करते हुए कहा कि, "इसमें कोई शक नहीं कि माओ ने चीन में जो कार्य किया है वह प्रशंसनीय है और माओ के नेतृत्व में चीन आगे भी बढ़ा है। पर प्रश्न यह उठता है कि माओ ने जब अपने देश में आन्दोलन किया था तब वहाँ के, और आज माओ का नाम लेकर भारत में नक्सालवादी जो आन्दोलन कर रहे हैं, उसमें कुछ अन्तर है या नहीं? जब विचार करता हूँ तो एक निर्णय पर पहुँचता हूँ कि जो अपने को नक्सालवादी कहते हैं वे माओ को ठीक से समझे नहीं हैं। युवकों से मैं कहता हूँ कि वे तो आदर्शवादी हैं, माओवादी और साम्यवादी नहीं, और उनके जो लीडर हैं वे न तो अच्छे भारतीय हैं और न अच्छे माओवादी। माओ एक राष्ट्रवादी भी है और साम्यवादी भी। माओ अपने देश की चिन्ता करनेवाला और चीन की समस्याओं को हल करनेवाला राष्ट्रवादी पुरुष रहा है। हमारे यहाँ के नक्सालवादी कम्युनिस्ट पार्टी से टूटे हुए वे लोग हैं, जो सत्ता के प्रश्न पर नेतृत्व की फूट और आपसी कलह के कारण अलग हुए हैं।"

ऊपर मैंने उन कुछ विचारकों द्वारा कही हुई बातों के अंश दिये जिनका मार्ग-दर्शन शिविरार्थियों को प्राप्त हुआ। इसके अतिरिक्त भी बहुत कुछ ऐसा है, जिसे शिविर की बौद्धिक उपलब्धि में गिना जा सकता है। शिविर में प्रात एवं अपराह्न के दोनों वर्गों में एक व्याख्यान का होता था, दूसरा 'ग्रुप डिस्कशन्स' का होता था। व्याख्यानों के बाद शिविरार्थी अलग-अलग वर्गों में बैठकर चर्चाएं करते थे।

शिविर-हेतु एक पब्लिक स्कूल (मन्हार आश्रम) का जो स्थान चुना गया वहाँ एक बहुत बड़ा मैदान है। शाम को खेल के वक्त जब दो सौ लोग वहाँ इकट्ठा होते और खेल खेलते तो ऐसा लगता कि तरुणाई तरुणों के मन से ही नहीं, शरीर से भी बोल रही है।

रात्रि को मनोरंजन-कार्यक्रम में देश भर से आये तरुण अपने-अपने प्रान्त की बोली में, वेशभूषा में सांस्कृतिक कार्यक्रम करते। उस समय लगता, कि पूरे भारत का दर्शन मानो इसी एक स्थान पर हो रहा है।

तरुण नेतृत्व

२२ अक्तूबर को सम्मेलन का प्रारंभ हुआ। सम्मेलन की अध्यक्षता की अहमदाबाद की क्रान्तिकारी कु॰ मन्दाकिनी दवे ने अहमदाबाद में पिछले वर्ष हुए साम्प्रदायिक दंगों के वक्त कु॰ दवे ने अपनी जान की परवाह छोड़कर दौड़-दौड़कर जिस तरह लोगों की सेवा की वह अपने आप में एक इतिहास है। तरुणों ने कु॰ दवे को अपनी अध्यक्षा के रूप में पाकर गौरवान्वित अनुभव किया।

कु॰ मन्दाकिनी दवे ने अपने उद्बोधन में कहा कि हम तरुणों को अपने आज तक के अनुभवों के आदान-प्रदान द्वारा समाज में व्याप्त स्वार्थ, अन्याय और अनैतिकता से उत्पन्न जड़ता एवं स्थिति-स्थापकता को दूर करने के लिए त्वरित एवं निश्चित दिशा में परिवर्तन करने के प्रयास करने हैं। जिस प्रकार एक शिल्पी अपनी कल्पना को साकार करने के लिए निष्ठापूर्ण प्रयत्न में लगा रहता है, उसी प्रकार हमें भी अपने लक्ष्य की प्राप्ति के लिए प्रयत्न करना है।

अहिंसक क्रान्ति के प्रवक्ता और सर्वोदय-विचारक आचार्य राममूर्ति ने सम्मेलन का उद्घाटन करते हुए कहा कि "तरुण बुद्धि की सत्ता में ही विश्वास रखें, और किसी सत्ता में नहीं। आज का युवक बहुत जल्दी किसीकी बात मान लेता है, इसीलिए हिटलर जैसे फासिस्ट-वादियों का जन्म हुआ। कोई भी हिटलर खड़ा हो जाता है और तरुण उसके पीछे चल पड़ता है। वह भी इस विज्ञान के जमाने में, जो विज्ञान बुद्धि की सत्ता में विश्वास करता है। क्योंकि आज जो सत्य है वह कल असत्य भी हो सकता है। जिस प्रकार विज्ञान कोरे हुए सत्य से बँधता नहीं, तरुण भी अपने को वैसा बनायें।" उद्घाटन के बाद सम्मेलन में आये हुए लगभग २२० तरुण अपनी-अपनी रुचि के अनुसार सम्मेलन में चर्चा हेतु

निर्धारित विषयों पर भाग लेने अलग-अलग ग्रुप्स में बँट गये, और खुलकर आपस में चर्चाएँ कीं। और कुछ निष्कर्ष निकाले, जिन्हें सम्मेलन के अन्तिम दिन पढ़कर सुनाया गया। सम्मेलन की ओर से एक निवेदन भी तैयार कर इसी दिन सुनाया गया। गोष्ठियों के निष्कर्ष इस छोटे-से लेख में देना संभव नहीं है। पर सम्बन्धित विषयों पर तरुणों ने जिस स्तर पर अधिकार के साथ चर्चा की उसके निष्कर्ष भी चौंकानेवाले हों, तो आश्चर्य नहीं।

सम्मेलन में संयुक्त राष्ट्र-संघ दिवस

२४ अक्तूबर यानी सम्मेलन के दूसरे दिन 'संयुक्त राष्ट्र-संघ दिवस' था। संयुक्त राष्ट्र-संघ ने इस दिन अपने जीवन के २५ वर्ष पूर्ण किये थे। तरुण शान्ति-सेना के पाँच मूल्यों में एक मूल्य विश्व-शान्ति भी है। अतः शान्ति-सैनिकों के लिए इस दिन का यों भी महत्व कम न था। शिविर-स्थल से शाम को ५ बजे एक मौन शान्ति-जुलूस निकला। तीन-तीन की कतार में एवं अपने हाथों में विविध प्रकार के पोस्टर लिये लगभग ५०० लोगों का मौन जुलूस इन्दौर के नगरवासियों के लिए एक अनोखी मिसाल थी।

रात्रि को नगर के एक प्रसिद्ध सभास्थल (जूना राजवाड़ा स्थित गणेश-हाल प्रांगण) पर एक आमसभा हुई, जिसकी अध्यक्षता सर्वोदय-दर्शन के प्रसिद्ध भाष्यकार एवं विचारक आचार्य दादा धर्माधिकारी ने की। मुख्य वक्ता आचार्य राममूर्ति थे। बिहार, तमिलनाडु, दिल्ली, कलकत्ता, महाराष्ट्र के तरुण प्रतिनिधियों ने भी अपने विचार प्रकट किये।

प्रमुख वक्ता के रूप में बोलते हुए आचार्य राममूर्ति ने कहा कि, "दुनिया को जितना डर आज अपने एटम से नहीं है, उतना तरुण से है, बम को तो सम्हालकर रखा जाता है कि कहीं फूट न जाये। पर यह बम आज घर-घर में है, जो बहुत ही 'एक्सप्लोसिव' (विस्फोटक) है।

"अपने देश में भी आज तरुण से हर किसीको भय है। दुकानदार को भय है, गन्ने के खेतवाले को भय है, ये सारे भय समाज को तरुणों से है और तरुण का कसूर इतना है कि वह आज के समाज को साहस करके अस्वीकार कर रहा है। सम्पूर्ण जीवन-नीति को अस्वीकार कर एक नयी दुनिया बनाना चाहता है। आज शान्ति की चाह तो चारों तरफ है, शान्ति कहीं नहीं दिखाई देती, क्योंकि लड़ाई लोगों के दिलों और दिमागों में है। चाँद पर पहुँचने-वाले विज्ञान के इस युग की शताब्दी सबसे अधिक खूनी शताब्दी है। इस शताब्दी में सबसे ज्यादा हत्याएँ खून-खराबी, दंगा-फसाद, युद्ध और महा-युद्ध हुए हैं। जितनी जानें इस शताब्दी में ली गयीं, उतनी कभी नहीं ली गयीं। हत्या की प्रक्रिया भी रंजन का विषय है। टेलीविजन पर युद्ध में मरते हुए लोगों का दिखाया जाता है। हत्या आज तक कभी दुनिया में ड्राइंगरूम का विषय नहीं बनी थी। आज हत्या ड्राइंगरूम का विषय बन गयी है। क्योंकि हिंसा के अंकुर हमारे दिमाग से नहीं निकल पाये।"

अध्यक्ष-पद से बोलते हुए आचार्य दादा धर्माधिकारी ने कहा कि, "मैं यहाँ तरुणों को देखने आया हूँ। मनुष्य के पास उम्र भूलने का यही एक तरीका है कि वह तरुणों को देखे।" दादा ने आगे कहा कि, "आज सवाल हिंसा और अहिंसा का नहीं। मनुष्य जब शेर की हत्या करता है तब वह वीर कहलाता है। और जब शेर मनुष्य की हत्या करता है तब क्रूर। हमें हिंसा-अहिंसा की परिभाषा में नहीं जाना है। चाहते क्या है, यही सोचना है। आज मनुष्य का अस्तित्व ही उसकी मानवता, बौद्धिकता और सहृदयता पर निर्भर है। दूसरा उपाय नहीं है। चिन्ता न हो, कि मार्ग मृत्यु का है, या जीवन का, पर मार्ग सहजीवन का हो या सहमृत्यु का हो। यह निश्चय मन में हो कि हम सब हिम्मत के साथ और प्रसन्नता के साथ चलेंगे। अगर स्वर्ग में नहीं जायेंगे तो नरक में जायेंगे, पर हाथ में हाथ होगा।"

आखिरी दिन

२५ अक्तूबर सम्मेलन का अन्तिम दिन था। ६ दिन के शिविर और ३ दिन के सम्मेलन के बाद सब तरुण समापन-समा-रोह के बाद लौटनेवाले थे। एक अजीब-सी अनुभूति से सबके दिल भरे हुए थे। ८ दिन के सामूहिक जीवन में तो हर तरुण एक-दूसरे का मित्र हो गया था। सुबह से ही एक-दूसरे के पते लेने का और अपने नगर में आने के लिए आमंत्रण देने का सिल-सिला चला। प्रतिनिधि अपने कार्यक्रमों से कुछ-न-कुछ समय इस कार्य के लिए निकाल ही लेते थे। समापन अपराह्न में होनेवाला था। ९-३० बजे सब तरुणों ने एकत्र होकर गोष्ठियों के उन निष्कर्षों को सुना जिन विषयों पर उन्होंने चर्चा की थी। यह निष्कर्ष वे कार्यक्रम थे जिन पर तरुणों को अपने-अपने क्षेत्रों में लौटकर प्रयोग की कसौटी पर कसना था।

सम्मेलन का समापन करते हुए दादा ने कहा कि, "मुझे आपकी आँखों में क्रान्ति की ज्योति नहीं दिखाई दी। आँखों में असन्तोष है, विद्रोह है, पर क्रान्ति की रोशनी अभी मैं नहीं देख पाया। क्रान्तिकारी वह है जो आज के समाज में रहते हुए इनकार करना चाहता है, एक नये समाज का निर्माण करना चाहता है। अब यह प्रश्न मतवादों और विचारों का नहीं रह गया है। प्रश्न जीवन का है। अब कोई आदमी पुराना मार्गदर्शन नहीं कर सकता। क्योंकि दिमाग भी पुराना है और दिल भी पुराना है। दोनों में डाल दिया गया है। मैं पहला कदम यह कहिए कि बड़ी-बड़ी बातों को छोड़ देंगे—चाहे सशस्त्र प्रतिकार का हो या अहिंसक प्रतिकार का हो। आज जरूरत है ऐसे तरुणों की, जो नयी पगडंडियाँ बनायें, और ऐसी स्थिति उत्पन्न कर दें कि समाज-परिवर्तन में शस्त्र या शस्त्र-प्रयोग की आवश्यकता ही नहीं रहे। यह मानना कि हिंसा समाज में बद्धमूल है, भ्रम है। आज भी समाज में शान्ति बहुत है, अशान्ति कम। हिंसावादी क्रान्तिकारी नहीं हो सकता। आज जरूरत इस बात की है कि क्रान्ति हो, लेकिन मनुष्य की हानि न हो।"

अमेरिका का मध्यावधि चुनाव

कुछ अखबारों की प्रतिक्रियाएँ

'इंडियन एक्सप्रेस' के संवाददाता' के अनुसार अमेरिका के दोनों राजनीतिक दलों के लिए यह चुनाव आश्चर्य का कारण बना है। पश्चिमी देशों की कुछ पत्रिकाओं ने इसे निक्सन की हार कहा है, और कुछ ने अनुदारतावाद की ओर झुकाव। उनका यह भी विचार है कि चुनाव का परिणाम यह बताता है कि निक्सन और कांग्रेस के सम्बन्ध पहले से अधिक अच्छे न हो सकेंगे, और देश में निक्सन के नेतृत्व की आधारशिला आर्थिक सम्पन्नता ही होगी, क्योंकि मतदाताओं ने अपनी 'पाकेट बुक' में अधिक दिलचस्पी दिखाई है।

'इंडियन एक्सप्रेस' का विचार है कि वास्तव में निक्सन के लिए सन्तोष का कोई कारण नहीं है, क्योंकि वह अपने उद्देश्य—'डेमोक्रेटिक' पार्टी का 'कांग्रेस' पर अधिकार समाप्त करना—में असफल रहे हैं, और कांग्रेस 'सिनेट' दलों और विदेशी नीति पर निक्सन का बहुत दूर तक साथ नहीं दे सकेगी। उनका यह भी विचार है कि सन् १९७२ के राष्ट्रपति के चुनाव के सम्बन्ध में इस चुनाव के परिणाम को देखकर कुछ नहीं कहा जा सकता।

'पायनियर' का भी विचार इसी तरह का है। उनका कहना है कि निक्सन के लिए 'ह्वाईट हाउस' पर अपना अधिकार रखना अनिवार्य हो गया है। रूसी पत्रिकाओं ने चुनाव के परिणाम को निक्सन और उनकी पार्टी की हार बताया है।

'हिन्दुस्तान टाइम्स' का विचार है कि अधिकतर राज्यों में गवर्नर के पद पर 'डेमोक्रेटिक पार्टी' के लोगों के चुनाव ने 'रिपब्लिकन पार्टी' की इजारेदारी तोड़ दी है, और सन् १९७२ के राष्ट्रपति के चुनाव पर इसका प्रभाव पड़ेगा। 'हिन्दुस्तान टाइम्स' के संवाददाता का कहना है कि चुनाव के परिणाम ने डेमोक्रेटिक पार्टी के हाथों को मजबूत किया है। और, ११ राज्यों में गवर्नर के पदों के लिए उनके लोगों का चुनाव निक्सन के लिए एक बड़ी चुनौती है।

'पेट्रियाट' ने चुनाव के परिणाम को शासन के प्रति विश्वास की कमी और निक्सन की हार बताया है। उसका विचार है कि वियतनाम की समस्या का हल न होने के कारण भी चुनाव पर ऐसा प्रभाव पड़ा है।

'टाइम्स आफ इंडिया' का विचार है कि सन् १९७२ तक वियतनाम का कोई हल न निकला तो निक्सन के जीतने की आशा कम हो जायेगी। क्योंकि अमेरिकी जनता अपनी फौजों को वियतनाम में मरने के लिए रहने देने को तैयार नहीं है। साइगोन में दक्षिणी वियतनाम के विदेश मंत्री ने कहा है कि वियतनाम की स्वतंत्रता और शान्ति की खोज पर चुनाव के परिणाम का कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा।

—प्रस्तुतकर्ता सैयद मुस्तफा कमाल

—प्राणहानि के बिना क्रान्ति हो, क्योंकि मनुष्य अब अपनी मानवता के सहारे ही जीवित रह सकता है, और किसी के सहारे नहीं।"

शिविर और सम्मेलन समाप्त हो गया है। सारे तरुण अपने-अपने घरों को लौट गये हैं। एक उत्सुकता के साथ वे शिविर-सम्मेलन में आये और एक तृप्ति के साथ लौट गये। अपने साथ वे आशा-भरी दीपों में सहयोग की बाती और घी का तेल लेकर आये थे। शिविर सम्मेलन से उन्हें आशा की रोशनी दी, क्रान्ति की रोशनी दी। शिविर-सम्मेलन से उन्हें रोशनी मिली।

१०-११ तरुणों द्वारा तो अपना पूरा एक वर्ष ही तरुण शान्तिसेना के कार्य और समाज-परिवर्तन में अपनी शक्ति लगाने के हेतु शिविर-सम्मेलन में घोषणा की गयी। पर देश भर से आये कई सौ-सौ तरुण दीये अपने साथ एक ऐसी रोशनी लेकर लौटे हैं जो कई सैकड़ों-हजारों-लाखों बुझे पड़े दीपों को जलायेंगी और इस देश में अहिंसक क्रान्ति की सम्भावना को प्रकट करेगी। ●

उत्तरप्रदेश ग्रामदान-शान्ति समिति

उत्तरप्रदेश ग्रामदान-शान्ति समिति, कैसर बाग, लखनऊ-१ के संयोजक श्री कपिलभाई अपने स्वास्थ्य-सुधार के लिए २१ नवम्बर को ३ माह के लिए उरुलीकांचन (पूना) गये। ५ अक्तूबर को श्री कपिल भाई विनोबाजी से पवनार आश्रम में मिलने गये थे, तभी उन्होंने कहा, "अब आप ३-४ महीने के लिए कार्यभार से मुक्त हो जायें और शीघ्र-से-शीघ्र निसर्गोपचार आश्रम में दाखिल हो जायें। ३ माह के विश्राम के बाद अधिक शक्ति से भिड़ना होगा।" इस चर्चा के पूर्व ही १० नवम्बर तक श्री ठाकुरदास बंग का उत्तरप्रदेश का कार्यक्रम तय हुआ था, अतः उस कार्यक्रम को पूरा कराके श्री कपिलभाई २१ नवम्बर को उरुलीकांचन के लिए रवाना हो गये। श्री कपिलभाई की गैरहाजिरी तक उ० प्र० ग्रामदान-शान्ति समिति के संयोजक श्री विश्वनाथ शर्मा रहेंगे। पता उपर्युक्त ही रहेगा।

—कपिल अवस्थी

ग्राम-शांतिसेना शिविर

ग्रामस्वराज्य संघ, मसदई द्वारा ग्राम शान्ति-सैनिकों का एक प्रशिक्षण शिविर २३ नवम्बर को आयोजित किया जा रहा है, जिसमें क्षेत्र के ग्राम-शान्तिसैनिकों को प्रशिक्षित किया जायगा।

लोकयात्रियों का पता
c/o श्री बनारसीदास सोनर,
मकान नं० १, गली नं० २, टैगोरबस्ती
फिरोजपुर छावनी (पंजाब)

भूदान-यज्ञ २-११-'७० लाइसेंस नं० ए २४ [पहले से डाक-व्यय दिये बिना भेजने की स्वीकृति प्राप्त] रजिस्टर्ड नं० एल. ३१४

मंत्री का पत्र

सेवाग्राम-अधिवेशन के महत्वपूर्ण निर्णय

प्रिय बन्धु,

सेवाग्राम संघ-अधिवेशन में चार महत्वपूर्ण निर्णय लिये गये। उन्हें मैं आपकी जानकारी एवं अविलम्ब उचित कार्रवाई के लिए यह पत्र लिख रहा हूँ।

१. ग्रामस्वराज्य-कोष—(इसके बारे में २६-१०-'७० के 'भूदान-यज्ञ' में पृष्ठ ९५ पर एक पत्र प्रकाशित हो चुका है।)

२. जिलादान या प्रखण्डदान हो गये हैं, वहाँ अविलम्ब पुष्टि का काम अपने हाथ में लिया जाय। ऐसे ज्यादा-से-ज्यादा प्रखंड चुने जायँ और कौन कार्यकर्ता वहाँ बैठ रहे हैं, इसकी जानकारी यहाँ भेजी जाय।

३. ग्रामदान-प्राप्ति की घोषणा—यह तय हुआ कि ग्रामदान-घोषणापत्र पर हस्ताक्षर हो जाने के बाद तुरन्त ग्रामदान की घोषणा नहीं करनी है। ग्रामदान-घोषणापत्र पर हस्ताक्षरकर्ताओं की जितनी जमीन गाँव में है उसमें से जितनी जमीन पाँच प्रतिशत के रूप में एक हाथ से दूसरे हाथ में हस्तांतरित की जानी है, उस जमीन का खासा बड़ा भाग—कम-से-कम ५० प्रतिशत—का प्रत्यक्ष हस्तांतरण हो जाना चाहिए। ग्रामसभा बनाकर ग्रामसभा में ग्रामदान की घोषणा के साथ-साथ ऐसे हस्तांतरण की भी घोषणा कर देनी चाहिए एवं आदाता को जमीन पर कब्जा दिला देना चाहिए। इतना काम हो जाने पर ही ग्रामदान की घोषणा करनी है, इसके पूर्व कदापि नहीं।

४. लोक-सेवक—इस समय संघ को व्यापक बनाने के लिए संघ की लोक-सेवक की शर्तें में से पाँचवीं निष्ठा में से 'पूरा समय एवं मुख्य चिंतन' इन शब्दों को हटाकर उनके स्थान पर 'अपनी आजीविका के लिए लगनेवाले समय एवं चिंतन को छोड़कर बचे हुए समय एवं चिंतन का मुख्य अंश' ये शब्द रखे हैं। इससे अब अन्य निष्ठाओं का पालन करनेवाले, एवं आजीविका के लिए आवश्यक समय छोड़कर बचा हुआ समय भूदानयज्ञमूलक ग्रामोद्योग-प्रधान अहिंसक क्रांति में लगानेवाले व्यक्ति लोक-सेवक बन सकेंगे। ऐसे अधिक-से-अधिक व्यक्तियों को लोकसेवक बनाकर आप स्थानीय सर्वोदय-मंडलों को व्यापक एवं सशक्त बनायें, ऐसी मेरी आपसे प्रार्थना है।

आप इन सब मुद्दों पर क्या कार्रवाई कर रहे हैं, सो मुझे सूचित करने की कृपा करें।

विनीत,

ठाकुरदास बंग

मंत्री, सर्व सेवा संघ

गोपुरी, वर्धा

इस अंक में

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पै०), विदेश में २२ रु०; या २५ शिलिंग या ३ डालर। एक प्रति का मूल्य २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं मनोहर प्रेस, वाराणसी में मुद्रित

सम्पादक
राममूर्ति
वर्ष : १७ सोमवार
अंक : ९ ३० नवम्बर, '७०
पत्रिका विभाग
सर्व सेवा संघ, राजघाट वाराणसी-१
फोन : ६४३९१ तार : सर्वसेवा

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

प्रत्यक्ष ज्ञान : परोक्ष ज्ञान

यद्यपि हम बहुत विद्वान हैं, तो भी विद्या की बहुत कीमत नहीं है, यह समझने की अक्ल हममें आयी है। और हम कबूल करते हैं कि आज हमको बहुत प्रतिष्ठा नाहक हमारी विद्वत्ता के कारण मिलती है, क्योंकि आज के समाज ने इस विद्वत्ता को प्रतिष्ठा दे रखी है। हम यह नहीं कहते कि विद्वत्ता की कोई कीमत नहीं है। पर बिलकुल 'आउट आफ प्रपोरशन' (बेहिसाब) उसको कीमत देते हैं, तो काम नहीं चलेगा। इस वास्ते हमारे विद्यार्थी हमसे आगे बढ़े हुए हैं, या नहीं बढ़े हुए हैं, इसकी कसौटी, आचरण में वह हमसे अधिक कारगर साबित होते हैं या नहीं, गुणों में श्रेष्ठ हैं या नहीं, इस पर निर्भर है। हमारी विद्या का एक परिणाम यह है कि अपनी आँखों से नहीं, दूसरे की आँखों से देखते हैं। हम दूसरे देशों में जाने की हिम्मत नहीं करेंगे, अपनी आँखों से वहाँ का ज्ञान हासिल करने की हिम्मत करेंगे, और दूसरे देशों का वर्णन करनेवाली एक अंग्रेजी किताब पढ़ लेंगे, और घर बैठे हमको ज्ञान हुआ, ऐसा मान लेंगे। इसका मतलब दूसरे की आँखों से हम देखते हैं और जो कुछ ज्ञान हम हासिल करेंगे, उसके बल पर से हम कहे जायेंगे विद्वान। तो इस तरह की जो विद्या है, उसमें प्रत्यक्ष ज्ञान नहीं, परोक्ष ज्ञान है।

ज्ञान तो उसको कहेंगे जहाँ साक्षात्कार है, जहाँ साक्षात् अनुभव है। तो इस प्रकार की विद्वत्ता हममें नहीं है। यानी जिसको अनुभव कहा जाता है, ऐसी विद्या हमारे पास नहीं है। इस हालत में हमारी विद्या तेजस्वी नहीं बनाती है, वीर्यवान् नहीं बनाती है। इस दृष्टि से हमको नयी तालीम की ओर देखना चाहिए और नयी तालीम का सारा इन्तजाम समग्र दृष्टि से करना चाहिए।

कांचीपुरम ३१-५-५६

—विनोबा

• आचार्यकुल : विद्वान और जवान की शक्तियों का संगम •

वैशाली में दूसरा मोर्चा

"१५ अगस्त सन् १९६९ के दिन शाम को चार बजे पहली बार मुसहरी प्रखण्ड में नेर्भीक नक्सलवादियों का खुला प्रदर्शन हुआ था। करीब दो-ढाई सौ रिवाल्वर से लेकर लाठी तक से लैस लोग सड़कों पर '१५ अगस्त मुर्दाबाद; साथी भाइयो, लाल सलाम' का नारा लगाते हुए घूमे थे। तब से इलाके में नक्सलपंथियों का आतंक छाया हुआ था। कुछ दिनों बाद तो हालत ऐसी हो गयी थी कि गोधूलि होते-होते कोई भी घर के बाहर कदम नहीं रखता था! लेकिन अब, जयप्रकाशजी के आने के बाद, लोग ११ बजे रात को भी निर्भय होकर मुजफ्फरपुर से अपने गाँव लौट आते हैं। अब नक्सलवादी रिवाल्वर का वह डर नहीं रहा।" मुजफ्फरपुर जिले के वैशाली प्रखण्ड में मौना माध्यमिक विद्यालय में आयोजित शिविर के एक शिविरार्थी, मुसहरी प्रखण्ड से आये श्री पाठकजी, ने अपना अनुभव सुनाते हुए उक्त बातें बतायी। गत २०, २१, २२ नवम्बर को ग्रामस्वराज्य-आन्दोलन के स्थानीय सहयोगियों और साथियों के इस शिविर में आन्दोलन की उभरती नागरिक-शक्ति की एक झलक मिली।

यद्यपि जिले के उत्साही कार्यकर्ता भी शिविर में शरीक थे, लेकिन मुख्य रूप से यह शिविर स्थानीय अभिक्रम को संयोजित और प्रशिक्षित करने के लिए ही था।

शिविर में विस्तार से सर्वोदय-ग्राम-स्वराज्य की चर्चाएँ तो हुईं ही, जे० पी० सहित और भी कई लोगों ने अपने अनुभव भी सुनाये, लेकिन सबसे महत्व का जो काम हुआ, वह यह कि वैशाली को मुसहरी के बाद दूसरे नम्बर का मोर्चा बनाया गया। अभी तक यहाँ अनुकूल हवा बनाने का काम स्थानीय बिखरी हुई शक्तियों द्वारा हो रहा था। अब जे० पी० के इस सुझाव पर, कि 'पुष्टि का काम बिखरकर नहीं, जुटकर, सुसंगठित और सुसंयोजित ढंग से ही होगा' वैशाली क्षेत्र के लगभग ५० आंशिक समय देनेवाले, १५ पूरा समय देनेवाले, तथा शिविर में अपना समय ग्रामस्वराज्य के आन्दोलन में लगाने का संकल्प किये १५ तरुणों की शक्ति को एकसाथ संयोजित कर दो-तीन पंचायतों में लगाने का निर्णय हुआ, जिसकी विस्तृत योजना स्थानीय लोग मिलकर बनायेंगे।

मुसहरी की तरह सघन, लेकिन अपेक्षाकृत अनुकूल परिस्थितियों और स्थानीय शक्तियों के सहयोग से वैशाली में ग्रामस्वराज्य की लोकशक्ति पैदा होगी, यह आशा की जा सकती है। —राही

प्रथम अ० भा० ग्राम-शांतिसेना विचार-गोष्ठी

यद्यपि ग्राम-शान्तिसेना का विचार पिछले दो वर्षों से सर्व सेवा संघ की प्रबन्ध समिति तथा अ० भा० शान्तिसेना मण्डल की बैठकों में आ चुका है, और देशभर में जगह-जगह ग्राम-शान्तिसेना के थोड़े-बहुत कार्य का आरम्भ भी हुआ है, लेकिन फिर भी इस विषय पर समग्रता से विचार करने के लिए प्रथम गोष्ठी गत १३,१४,१५ अक्तूबर '७० को हुई।

ग्राम-शान्तिसेना की यह पहली बैठक उड़ीसा में रखी गयी, क्योंकि उड़ीसा में ही ग्राम-शान्तिसेना के कुछ शिविर हुए हैं, एवं ग्राम-शान्तिसेना का प्रत्यक्ष कार्य भी वहीं हुआ है। इस बैठक में कुछ संगठन की दृष्टि से और कुछ परिस्थिति की दृष्टि से ग्राम-शान्तिसेना के विभिन्न प्रदेशों के अनुभव सुनने को मिले और बाद में विचार-विमर्श के बाद भावी कार्य के लिए कुछ महत्त्वपूर्ण निर्णय लिये गये:

१—राजनैतिक दलों से अलग प्रभावित व्यक्ति भी ग्राम-शान्तिसेना के सदस्य बन सकते हैं, अगर वे निष्ठा-पत्र पर समझकर हस्ताक्षर करें।

२—प्रायोगिक रूप में ग्रामदानी गाँवों में ही ग्राम-शान्तिसेना का कार्य सीमित रहे, लेकिन वैसा सैद्धान्तिक बंधन न रहे।

३—जहाँ ग्रामसभा है, वहाँ ग्रामसभा के अधीन संगठन हो, और जहाँ ग्रामसभा नहीं बनी है, वहाँ ग्राम-शान्तिसेना, ग्रामदान-प्राप्ति और पुष्टि का काम कर सकती है।

४—ग्राम-शान्तिसेना ग्रामसभा के मातहत काम करेगी, लेकिन जरूरत पड़ने पर गाँव के प्रश्नों को लेकर अहिंसक प्रतिकार के लिए उसे स्वतन्त्रता रहेगी।

५—सदस्यता के लिए कम-से-कम उम्र की मर्यादा १६ साल की रखी जाय। ऊपर की मर्यादा न रखी जाय।

६—सुझाये गये विविध कार्यक्रमों में से क्षेत्र, परिस्थिति के अनुसार कोई एक या अधिक कार्यक्रम लेकर उस पर अपनी शक्ति केन्द्रित की जाय, ताकि ग्राम-शान्तिसेना की शक्ति का दर्शन हो सके।

(क) प्रशिक्षण के लिए प्रथम प्रशिक्षकों का शिविर होगा। प्रथम शिविर महाराष्ट्र में जनवरी, १९७१ में होगा।

(ख) प्रशिक्षकों के लिए पाठ्य-पुस्तक भी निश्चित किये जायेंगे।

(ग) पाठ्यक्रम की तैयारी के तौर पर शिविरार्थियों को पुस्तकों की सूची भेजी जायगी, ताकि शिविर में आने से पहले वे उन्हें पढ़ लें।

(घ) १५ दिन के शिविर के बाद प्रत्येक शिविरार्थी अपने अपने प्रदेश में पाँच या सात दिन के शिविर चलायेंगे। फिर एक स्थान पर मिलकर मूल्यांकन करेंगे। इस प्रकार प्रत्येक प्रदेश में दो माह की अवधि में प्रशिक्षक तैयार हो जायेंगे।

इन शिविरों को चलाने का दायित्व श्री मनमोहन चौधरी ने लिया है।

—सदमिता देसाई

आचार्यकुल

इसी महीने की २९-३० तारीखों को वाराणसी में उ० प्र० के आचार्यकुल का राज्य-स्तरीय सम्मेलन हो रहा है। अगले महीने के अंतिम सप्ताह में बिहार का सम्मेलन होनेवाला है। अभी १६-१७ नवम्बर को दरभंगा जिले के आचार्यकुल ने पुसौलीनगर में अपनी दो दिन की गोष्ठी की थी, जिसमें तीन विद्यालयों के आचार्य-कुल ने तय किया कि वे अपने-अपने विद्यालय में तरुण-शान्तिसेना की स्थापना करेंगे और तीनों मिलकर विद्यालय के दो मील की सीमा में पड़नेवाले गाँवों का प्रयोग-क्षेत्र बनायेंगे, जहाँ व अपनी सम्मिलित शक्ति से ग्रामदान-मूलक शिक्षण और संगठन का काम करेंगे।

आचार्यकुल के सम्बन्ध में इन खबरों से यह स्पष्ट होता है कि आचार्यकुल शिक्षक-समुदाय की कल्पना को स्पर्श करने लगा है, यद्यपि कुछ ऐसे शिक्षक भी हैं जो मानते रहे हैं कि उनके पेशे की जो स्थिति है उसके अलावा उनकी एक और स्थिति भी है—वह है नागरिक की। और, वह स्थिति सामान्य नागरिक की नहीं है। शिक्षक की स्थिति में एक विशिष्टता है। वह 'सत्य' का आदर करता है, और उसीके माध्यम से नयी पीढ़ी को सत्य का दर्शन होता है, समाज को सत्य का प्रकाश मिलता है। वह वास्तव में विचार की शक्ति का प्रतिनिधि है, ठीक जैसे सिपाही बन्दूक की शक्ति का प्रतिनिधि होता है। यह प्रतीति कुछ शिक्षक-मित्रों में जगने लगी है। जो बच गये हैं उनमें भी जगेगी, क्योंकि शिक्षक की वास्तविक स्थिति यही है। 'आचार्य' का, और सारे आचार्यों का, चाहे वे छोटे विद्यालय में हों, महा-विद्यालय या विश्वविद्यालय में हों, एक समान, सम्मानित, परिवार है। अगर उनकी कोई जाति है तो एक ही—आचार्य की। आचार्य वह है जिसका विचार की शक्ति में विश्वास हो। इस नाते शिक्षक, साहित्यकार, कलाकार, पत्रकार, समाज-सेवक, सभी, अगर वे विचार की शक्ति में विश्वास रखते हैं, तो आचार्य कहलाने के अधिकारी हैं, और आचार्यकुल का सदस्य बनने के। पेशे के हितों की रक्षा के लिए हर एक के अलग-अलग संगठन और सदस्यता हो सकती है, लेकिन आचार्यकुल में हर एक की एक ही भूमिका है—आचार्य की।

आचार्यकुल विज्ञान और लोकतंत्र का प्रतिनिधि है। विज्ञान विचार की सत्ता को मानता है, और लोकतंत्र तो खड़ा ही है इस आधार पर कि मनुष्य विचार से बनता है, बदलता है। भले ही आज दुनिया में विज्ञान और लोकतंत्र का बोलबाला दिखायी देता हो, लेकिन अन्दर देखने पर मालूम होता है कि विद्यालयों और मतदाताओं, दोनों का विचार की शक्ति पर से भरोसा उठ रहा है, नहीं तो विज्ञान इस तरह सत्ता और पूँजी की शक्तियों के हाथ पंगु दिखायी देता, और लोकतंत्र के 'लोक' के सोने पर 'तंत्र' सवार हो जाता!

अपने देश में स्थिति अत्यन्त गंभीर है। हमारे विद्यालय, महाविद्यालय और विश्वविद्यालय दोहरे प्रहार के शिकार हो रहे हैं। एक ओर 'विद्रोही' का प्रहार है, दूसरी ओर पुलिस का दबाव। दोनों के हाथ में एक ही हथियार है—बन्दूक। विद्यालय का नाश बन्दूक से किया जा सकता है, लेकिन बन्दूक से क्या विद्यालय की रक्षा कब तक होगी, और होकर भी क्या करेगी, अगर 'अन्दर-अंतर' से आगे को सुरक्षित रखने में वह असमर्थ हो चुका हो?

अगर बन्दूक का शक्ति से आज के प्रतिष्ठानों की रक्षा हो, और बन्दूक की ही शक्ति से समाज के परिवर्तन का प्रयास हो तो भूलकर बन्दूक की सत्ता को स्वीकार करना चाहिए। विवश होकर उसकी सत्ता स्वीकार करनी पड़े यह स्थिति क्यों आये? आज सम्यता विचार बनाम बन्दूक के 'युद्ध' में पड़ी हुई है। किसकी विजय होती है इस पर आगे की कई सदियों का विकास निर्भर करेगा। इस 'युद्ध' में आचार्य पहली पंक्ति का सिपाही है।

भारत में विचार-शक्ति से समाज-परिवर्तन का अभियान शुरू हो चुका है। जनता अपने निर्णय और संकल्प से समाज-परिवर्तन का क्रम शुरू करे, यह संदेश ग्रामदान गाँवों में पहुँच रहा है, अनेक गाँवों में पहुँच चुका है। ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य आन्दोलन ने विचार-शक्ति की जो संभावनाएँ प्रकट की हैं वे सब आचार्यकुल के शोध और प्रयोग के लिए खुली हुई हैं। ये प्रयोग रोचक और रोमांचक हैं। आचार्यकुल इन्हें समझे, परखे, और अपना 'रोल' अदा करे।

सर्वोदय आन्दोलन को ही नहीं, देश को आचार्यकुल से नेतृत्व की अपेक्षा है। आचार्यकुल सत्ता की वाणी है, दल की नहीं, लोक की वाणी है, तंत्र की नहीं, विज्ञान की वाणी है, मतवाद की नहीं। अब समय आ गया है कि हर छोटे-बड़े विद्यालय में आचार्यकुल और तरुण शान्तिसेना का गठन हो और हर कोने से एकसाथ शिक्षा और विद्रोह का स्वर सुनायी दे। ●

सी० वी० रमन

२१ नवम्बर '७० को श्री सी०वी० रमन की मृत्यु के साथ भारत में विज्ञान का एक युग समाप्त हो गया। उनकी मृत्यु से भारत और संसार के वैज्ञानिक क्षेत्र में भारी नुकसान हुआ है। उनसे देश के बहुत-से वैज्ञानिकों को प्रोत्साहन मिला था। उनकी शिक्षा पूर्णतः भारत में ही हुई थी, जो विज्ञान में पिछड़ा हुआ देश माना जाता है। परन्तु उन्होंने नोबेल पुरस्कार प्राप्त किया था।

उन्होंने अपनी बयासीवीं वर्षगाँठ के अवसर [७ नवम्बर] पर कहा था : 'विज्ञान मेरा धर्म है, और मैं इसका पालन आखिरी साँस तक करता रहूँगा।'

कौन कहता है कि उन्होंने ऐसा नहीं किया!

मानसिक और जीवन-क्रान्ति के चार क्षेत्र

❀ काका कालेलकर ❀

मानसिक क्रान्ति और साथ-साथ जीवन-क्रान्ति भी चार क्षेत्रों में तुरन्त, यानी बिलकुल तुरन्त, होनी ही चाहिए। इस क्रान्ति के बिना सार्वजनिक, सामाजिक जीवन टूट जायेगा। उसमें से या तो अराजक पैदा होगा अथवा छोटे-छोटे गुण्डाराज स्थापित होंगे। और वे भी कुछ पाये बिना बदलते जायेंगे। अगर ऐसा हुआ तो लोगों को न खाने को मिलेगा, न किसीकी जान सलामत रहेगी।

जिनके पास मजदूरों से काम लेने जितनी बड़ी खेती है ऐसे लोग, कल-कारखानों के मालिक, उद्योग-हुनर चलानेवाले धनपति आदि सब लोग अपने को मालिक न समझें और मजदूरों को अपना नौकर न समझें। जमीन के, या कल-कारखाने के मालिक, पूर्ण मालिक नहीं है। उनके वहाँ काम करनेवाले स्थायी या अस्थायी मजदूर भी सहयोगी हैं। कुल मालिकी हक या तो सम्पूर्ण समाज का है या भगवान का है। आज जो लोग अपने को मालिक मानते हैं वे केवल निधिप यानी ट्रस्टी हैं। मजदूरों के सहयोग के बिना धान्योत्पत्ति, धनोत्पत्ति और उपयोगी वस्तुओं की उत्पत्ति हो नहीं सकती। मालिक, व्यवस्थापक और मजदूर के सहयोग से ही उत्पत्ति हो सकती है। 'तीनों की प्रतिष्ठा एक-सी हो, तीनों के अधिकारों की पूरी कदर हो', इतना मानस-परिवर्तन होना ही चाहिए।

यह हो गयी औद्योगिक क्षेत्र की आवश्यकता। सामाजिक क्षेत्र में धर्म-भावना का भी समावेश करना चाहिए। उच्च शिक्षा प्राप्त करके जो लोग सामाजिक जीवन के नेता अथवा व्यवस्थापक बनते आये हैं वे आज तक उच्च-जाति के बनिया, कायस्थ, ब्राह्मण आदि लोग ही होते थे। जिन देशों में जाति-व्यवस्था नहीं है ऐसे देशों में भी चंद उच्च खानदानों के पास ही उच्च शिक्षा, व्यवस्था-कौशल्य और पूँजी की सहूलियत रहती थी। ऐसे लोगों को हमारी परिभाषा में उच्चवर्णी कह सकते हैं। ऐसे लोगों का खान-पान, पहनावा, रहने के मकान, आदि का ढंग ही अलग। तनख्वाह और अधिकार भी उनके लिए विशेष। यह बड़ा भेद अब टिक नहीं सकेगा। इसलिए जैसे भी जल्दी हो, रहन-सहन में 'उच्च लोग' और 'लाचार लोग' का भेद जल्दी-से-जल्दी कम करना ही चाहिए। निचले लोगों की तनख्वाह धीरे-धीरे या तेजी से बढ़ाकर यह सवाल हल होने का नहीं। ऊपर के प्रतिष्ठाप्राप्त लोगों को अपना वेतन कुछ कम करना चाहिए। वेतन का तथा प्रतिष्ठा का फर्क जैसा हो सके, राजी-खुशी से और जल्दी-से-जल्दी कम करके समानता की ओर ले जाना चाहिए।

सबसे कठिन काम है तीसरे यानी सरकारी कर्मचारियों के क्षेत्र का।

इसमें सबसे ऊपर के स्तर की तनख्वाह और सबसे नीचे के स्तर की तनख्वाह, दोनों में जमीन-आसमान का फर्क है, नीचे के क्लर्क बाबू की तनख्वाह बढ़ाने से यह सवाल हल नहीं होगा। ऊपर के लोगों को अपनी प्राप्ति की मर्यादा समझनी चाहिए। कहा जाता है कि सरकारी लोगों की आमदनी कम करने से घूसखोरी बढ़ती है। बात सही है। लेकिन ऊपर के लोगों की तनख्वाह कम करने से देश का वायुमंडल बदल जायेगा। *यह सबसे बड़ा लाभ है।* घूसखोरी का सच्चा या पूरा इलाज ऊपर के लोगों की बड़ी-बड़ी तनख्वाह देने से हो नहीं सकता। घूसखोरी का इलाज, समाज का नैतिक स्तर ऊँचा उठाने से ही हो सकता है। *समाज के नेताओं* को चाहिए कि वे अपने जीवन को सुधारें। और घूसखोरी के खिलाफ एक जबरदस्त नैतिक आंदोलन चलायें। वह तो ऐसे ही लोग चला सकते हैं जिनका समाज पर नैतिक प्रभाव है।

चौथे क्षेत्र का निर्देश पाठकों को शायद आश्चर्यचकित करेगा।

यह है शिक्षा का क्षेत्र। इस क्षेत्र में पुराना गुरु-शिष्य सम्बन्धवाला अपना वायुमंडल आज तक कमोबेश चलता रहा। 'गुरु की भक्ति करो, उसकी सेवा करो, तभी गुरु का ज्ञान और गुरु की *विद्या आपको मिल सकेगी,'* यह उपदेश सारे समाज को मिलता था। एक जगह पर यहाँ तक लिखा है कि 'विद्या-प्रा[illegible] के हेतु गुरु के पास जाते हो और गुरु घर में रहते हो, लेकिन वहाँ पर गुरु[illegible] सेवा, यही तुम्हारा प्रधान धर्म है। [illegible] की सेवा करते अगर कुछ समय बच जा[illegible] तो वह होगा तुम्हारी पढ़ाई के लिए अन्यथा गुरु-घर की सेवा करते जाओ, [illegible] वायुमंडल में गुरु की विद्या आप[illegible] मिलेगी ही। उसीसे संतोष मानो, तुम्हारा कल्याण होगा।'

अध्यात्म के क्षेत्र में यह बात शायद सही होगी। हस्त-उद्योग और कला में गुरु के साथ बैठकर उनके काम में शरीक होने से कला-कौशल आप ही आ जाता है। काम बिगड़ गया तो गुरु सहन नहीं करेंगे। सही तरीका वे जरूर बतायेंगे।

लेकिन अब वह वातावरण नहीं रहा। हरएक विषय का साहित्य चाहे जितना मिलता है। अब गुरु की आवश्यकता पहले के जैसी है नहीं।

और गुरु भी चारित्र्य में और शिष्य-वात्सल्य में पहले के जैसे कहाँ रहे हैं?

जो हो, अध्यापक और विद्यार्थियों का सम्बन्ध अब बिलकुल नये ढंग का हुआ है। नये जमाने को कहना कि 'गुरु पुराने जमाने के प्रतिनिधि हैं, उनके प्रति आदरभक्ति दिखाना तुम्हारा कर्तव्य है,' अब चलेगा नहीं।

अब शिक्षक भी नये जमाने के बन गये हैं। हमने सुना कि ऐसे भी प्रोफेसर हैं जो अपने घर पर मिलने आने [illegible]

जिन्हें लोग प्यार से 'संतजी' कहा करते हैं, की प्रेरणा और उनके साथी कार्यकर्ताओं के प्रयास से यहाँ कई गाँवों में पुष्टि-कार्य सम्पन्न किया गया है। चासार चौसा विकास-खण्ड क्षेत्र में पंचायतों में सर्वसम्मत चुनाव कराने का लोकनीति का महत्त्वपूर्ण कार्य हुआ है। कई झगड़ों का स्थानीय फैसला कराया गया है। सुपौल नगर में तो वहीं के कुछ प्रबुद्ध नागरिकों के उत्साह तथा श्री कृष्णराज भाई की प्रेरणा से 'नगर स्वराज्य समिति' और नगर-शांतिसेना का भी गठन हुआ है। शान्तिसेना-कार्य का नेतृत्व एक युवक दिनेश कुमार कर रहे हैं, जिन्हें लोग पहले 'दादा' कहते थे, क्योंकि वे आजकल के प्रचलित ढंग पर युवकों के कई उथल-पुथल के भागीदार रह चुके हैं। किन्तु सर्वोदय-विचार ने उनके हृदय में अब ऐसा स्थान बनाया है कि जब नगर-शान्तिसेना का नायक बनने पर लोग उन्हें कहने लगे कि वे किस फेर में पड़ गये हैं, तो उन्होंने जवाब दिया, 'फेर में तो अब तक था, अब तो उससे बाहर आ चुका हूँ।'

छातापुर क्षेत्र के बाबू देवनन्दनजी मण्डल, जो वहाँ के बहुत बड़े जमींदार हैं, और जो पहले अपने परिवार में लगभग २२ एकड़ भूमि स्वयं भूमिहीनों में बाँट चुके हैं, अब २४ एकड़ के करीब (बीघा-कट्ठा के हिसाब से) भूमि और भी बाँटना चाहते हैं। वे दो-तीन बार जिला ग्राम-स्वराज्य समिति के कार्यालय में आये कि लोग उनके यहाँ चल भूमि बाँटने चलेंगे। अभी निर्मला बहन वहाँ जानेवाली हैं, उस दिन वे भूमि का वितरण करेंगी। गाँव के दूसरे लोगों ने, जिन्होंने ग्रामदान-प्रतिज्ञा-पत्र भरा है, उन्हें भी वे भूमि बाँटने के लिए तैयार कर रहे हैं।

मैं सहरसा से करीब १२ मील दूर कोसी क्षेत्र में तेघरा नामक एक गाँव में था। यहाँ एक साल पूर्व ही ग्रामदान होकर बीघा-कट्ठा बँट चुका है, ग्रामसभा बन चुकी है। गाँव में ४० युवक 'ग्राम-शान्ति-सेना' के सदस्य हैं और १० मन से अधिक अनाज उनके कोष में जमा है। किन्तु गाँव की आधी के करीब भूमि महिषी-निवासी एक बड़े जमींदार के कब्जे में है। उन्हें जब गाँव में हमारे आने की खबर लगी तो वे सुबह आकर कहने लगे, "विनोबा का यह विचार उत्तम है, पर यह हो नहीं सकता, इसकी असफलता अवश्यंभावी है क्योंकि कोई जमीन छोड़ने को तैयार नहीं है।" पर जब उन्हें देव-नन्दन मण्डल जैसे उदाहरण बताये गये तो वे भी असमंजस में पड़ गये और 'देखें क्या होता है' कहते चलते बने। उनके चेहरे पर चिंता, जिज्ञासा तथा आशा के भाव स्पष्ट थे, क्योंकि अब क्षेत्र में धान-कटनी आरम्भ हो गयी है और जगह-जगह 'धान लूटो' अभियान की नक्सली ट्रेनिंग दी जाने के समाचार हवा में फैले हैं। यह भी हो रहा है कि नक्सली लोग स्थानीय सर्वोदय-नेताओं के नाम से पर्चे बाँटते हैं कि अमुक स्थान पर सभा होगी, उसमें अमुक सर्वोदय-नेता भी आवेंगे। एक ग्राम-दानी गाँव के कुछ युवकों ने मुझसे कहा कि यदि ग्रामकोष के लिए हम गैरमजरुआ भूमि का धान काट लें तो क्या हर्ज है? भूमिपति जमींदार भी इसके लिए राजी हैं। इस पर से हवा के रुख का पता लगता है। साथ ही यह भी चेतावनी मिलती है कि हमें कितना सावधान रहना है।

सोचा यह गया है कि आगामी दिसम्बर-जनवरी तक सारे जिले में पुष्टि-कार्य सम्पन्न हो जाय। इसके लिए बिहार खादी-ग्रामोद्योग संघ ने २५० कार्यकर्ता देने का तय किया। किन्तु अभी तक उसके केवल १०-१५ कार्यकर्ता ही आ सके थे। उसे इसमें तीव्र गति लानी ही होगी, क्योंकि अब तो उसकी प्रतिष्ठा तथा सुरक्षा दोनों ही दाँव पर हैं। सुपौल की एक जन-सभा में ३६ देहात के कार्य-कर्ताओं ने इस काम के लिए समय दिया है। ऐसे ही अन्य देहाती तथा शहरी युवक आगे आयें तो काम शीघ्र हो सकेगा। इस दृष्टि से यह भी सोचा गया है कि जिले में शीघ्र ही ग्राम-शांतिसेना तथा तरुण-शांतिसेना और आचार्यकुल का संगठन किया जाय। इसके लिए प्रयास आरम्भ हो गये हैं। अभी सुपौल प्रखंड में प्रखंड-स्तरीय आचार्यकुल समिति का गठन हुआ, और एक अन्य डिग्री कालेज से सम्पर्क किया गया है। दिसम्बर में भागलपुर जिले में बिहार आचार्यकुल का एक सम्मेलन करने का विचार चल रहा है। तब तक सारे सहरसा जिले में आचार्यकुल का गठन हो जाय यह सोचा गया है। इस कार्य के लिए कामेश्वर प्रसाद बहुगुणा वहाँ रहेंगे, यह तय हुआ है। शांतिसेना के गठन को वेग देने के लिए शीघ्र ही सहरसा में अ० भा० शांति-सेना मंडल के मंत्री नारायण देसाई की यात्रा होनेवाली है। जिले के लोग जे० पी० की भावी यात्रा के सन्दर्भ में भी काम पर जुट गये हैं। उन्होंने हर प्रखंड में एक प्रखंड-प्रभारी की नियुक्ति की है, जो प्रखंड समिति के गठन तक कार्य करेगा। बिहार ग्रामस्वराज्य समिति का कार्यालय विद्यासागर भाई के साथ ही सहरसा आ गया है।

जे० पी० ने कहा है कि मुसहरी में वे परीक्षा में बैठे हैं। किन्तु वास्तव में वे ही नहीं, सारा सर्वोदय-विचार तथा आन्दोलन ही परीक्षा में बैठा है। इसका फैसला ही भारत में वास्तविक क्रांति का फैसला करेगा। नक्सलवादियों की हिंसा की आजकल अखबारों तथा सरकारी क्षेत्रों में बड़ी चर्चा है, और इससे नक्सल-वाद अपने आकार तथा शक्ति से कहीं अधिक बड़े रूप में लोगों तथा देश पर असर कर रहा है, किन्तु सर्वोदय-कार्य-कर्ता के लिए इससे भी बड़ी हिंसा सरकार-वादियों तथा यथास्थितिवादियों की वह हिंसा है जो कानून तथा व्यवस्था के नाम से गांधीजी की नाम माला के साथ पिछले २२-२३ सालों से इस देश में चल रही है। ग्रामस्वराज्य को नक्सली तथा यथा-स्थितिवादी दोनों प्रकार की हिंसा का न केवल मुकाबिला करना है, वरन् उसका विकल्प भी देना है।

—कामेश्वर प्रसाद बहुगुणा

आचार्यकुल : विद्वान और जवान की शक्तियों का संगम

विशिष्टजन की दृष्टि से नहीं, सर्वजन की दृष्टि से देखें तो हमारे देश का पिछले तेईस वर्षों का इतिहास विविध विफलता का इतिहास है।

इस लम्बी अवधि में कुछ-न-कुछ अनेक अच्छे काम हुए, एक के बाद दूसरी राष्ट्रीय योजनाएँ चलीं, विविध मतवादों के नाम से अनेक राजनैतिक दल बने, सरकार और संस्थाओं का भरपूर विस्तार हुआ, लेकिन सर्वजन को दो प्रारम्भिक चीजें आज तक नहीं मिल सकीं—एक, समाज का समान संरक्षण, दूसरी, तुल्य पारिश्रमिक। विशिष्टजन से आगे बढ़कर स्वतन्त्रता अभी तक सर्वजन के जीवन में नहीं पहुँची। जन-जन के जीवन में स्वतन्त्रता को चरितार्थ करने में लोक-कल्याण की शासन-नीति विफल हुई है, विरोधवाद की राजनीति विफल हुई है, सेठ की सेठ-नीति विफल हुई है। यह त्रिविध विफलता देश को एक-एक चाल में हलाल रही है। जैसे-जैसे दिन बीत रहे हैं, यह त्रिविध विफलता घनी होती जा रही है, यहाँ तक कि समाज अपनी बुनियादी समस्याओं की प्रतीति भी खोता जा रहा है, उनके शान्तिपूर्ण समाधान के सब रास्ते बंद होते जा रहे हैं। सत्ता की राजनीति विरोधवाद, विरोधवाद के बाद संघर्षवाद की मंजिलें पार करती हुई संहारवाद के बिन्दु तक पहुँच गयी है। लोकतंत्र का 'लोक' दल के अखाड़े में फँसकर खो गया है। लोकतंत्र वस्तुतः दलतंत्र होकर रह गया है। सरकारवाद को ही समाजवाद का नाम दिया जा रहा है। सेना सत्ता की दासी हो गयी है, और सत्ता स्वयं शस्त्र और सम्पत्ति के साथ जुड़ गयी है। ऐसी स्थिति में शासक-सेठ-सिपाही की सत्ता के नीचे नागरिक की बची-खुची सत्ता भी समाप्त होती दिखायी दे, तो आश्चर्य क्या है?

साइनबोर्ड सर्वजन का संचालक विशिष्टजन

इस त्रिविध विफलता के कारण क्या हैं? कारणों की विस्तार के साथ, विभिन्न दृष्टियों से, छान-बीन की जा सकती है, और उनके बारे में ईमानदारी के साथ मतभेद भी हो सकते हैं, लेकिन एक बात साफ है वह यह कि स्वतंत्र भारत के निर्माण में देश के 'लोक' की शक्ति जान-बूझकर अलग रखी गयी। जिन शक्तियों से शासक, सेठ और सिपाही काम करते हैं, यानी कानून, पूँजी और शस्त्र, वे 'लोक' की शक्तियाँ नहीं हैं। हमारी राजनीति ने पिछले तेईस वर्षों में इन्हीं शक्तियों का इस्तेमाल किया। दूसरी शक्तियाँ नहीं उभरीं। लोक की शक्ति के प्रकट होने के दो ही माध्यम हैं—बुद्धि और श्रम। दूसरी कोई शक्ति नहीं। निर्भीक, सत्यनिष्ठ बुद्धि के प्रकाश तथा कुशल उँगलियों के क्रियात्मक पुरुषार्थ के मेल से ही कोई पिछड़ा, गरीब, कमजोर समाज बदलता है, बनता है, बढ़ता है। हमने दूसरा बहुत कुछ किया, किन्तु इन शक्तियों की ओर ध्यान भी नहीं दिया, उल्टे हमने अंग्रेजी राज की ही छोड़ी हुई बुनियादों पर एक विशाल पुराना-नया मिलाकर प्रतिष्ठान (इस्टेब्लिशमेंट) खड़ा कर दिया। इस राजनैतिक, आर्थिक और शैक्षणिक प्रतिष्ठान ने साइनबोर्ड तो सर्वजन का लगाया, लेकिन यह चलाया गया विशिष्टजन द्वारा, विशिष्टजन के लिए। इतने वर्षों के बाद वह भी अब टूट रहा है—अपने बोझ से, अन्तर्विरोध से। वह खुद भी टूट रहा है और समाज को भी तोड़ रहा है। जिस प्रतिष्ठान की जड़ें देश की परम्परा में, प्रतिभा में और परिस्थिति में न हों, वह कितने दिन तक चलेगा?

होश और जोशयुक्त नये शक्ति-स्रोत

प्रश्न है : इस स्थिति में से निकलने का कोई उपाय है? क्या राजनीति के पास कोई उपाय है? व्यवसाय के पास है? सेना के पास है? विशेषज्ञों और विद्वानों के पास है? दिखायी नहीं देता कि इनके पास है। तो किसके पास है? हम कुछ भी कहें, उपाय विशिष्टजन के पास नहीं है, है सामान्यजन के पास, लेकिन उन्हें मालूम नहीं है कि उनके पास है। वे खुद इसी भ्रम में पड़े हुए हैं कि उनके प्रश्नों का उत्तर विशिष्टजन के पास है। इस भ्रम के कारण जो कुछ चल रहा है, उसे वे अस्वीकार नहीं कर पा रहे हैं, और जो होना चाहिए उसे समझ नहीं पा रहे हैं। इस व्यापक भ्रम और प्रमाद को कौन तोड़ेगा? जिसमें होश होगा वही दूसरों में होश पैदा करेगा। नयी लोक-चेतना के आधार पर नयी लोक-शक्ति का संगठन कौन करेगा? जिसमें जोश होगा, वह करेगा।

इस चिंतन में से आचार्यकुल का जन्म हुआ है। होश की तलाश में आचार्यकुल मिला है, और जोश की तलाश में तरुण-शान्तिसेना मिली है। दोनों एक ही सिक्के के दो पहलू हैं, परस्पर पूरक हैं। ये सिक्के हमारे विद्यालयों में भरे पड़े हैं। हमारे विद्यालयों में शिक्षा का चाहे जितना स्तर होता हो, फिर भी उनमें ऐसे लोग हैं जिनके पास होश भी है, जोश भी है। वे अगर सामने निकल आयें तो देखते-देखते हवा बदल जायगी। प्रचलित प्रतिष्ठान का—उसकी राजनीति, उसकी अर्थनीति और उसकी शिक्षण-नीति, तीनों की—जड़ें हिल चुकी हैं। प्रतिष्ठान प्रतिष्ठा खो चुका है। परिस्थिति में परिवर्तन की माँग है, लोक-मानस में एक बेचैनी है, जो प्रकट होना चाहती है, कुछ करना चाहती है। अगर परिस्थिति में परिवर्तन आ सकता है तो लोक-मानस में परिवर्तन की रुझान है। हाँ, लोगों के सामने परिवर्तन का चित्र अभी स्पष्ट नहीं है। स्पष्ट हो भी कैसे? दलों के अपने-अपने 'वादों' के कोलाहल में दल-मुक्त, वाद-मुक्त स्वर—की वाणी बोलता कौन है? विज्ञान और लोकतंत्र के इस युग

में अगर सत्य पक्ष और आग्रह से मुक्त न हो, और अगर वह सत्य 'सर्व' का न हो, तो उसकी शक्ति क्या होगी, और उसका मूल्य क्या होगा ?

क्या आचार्यकुल मतवादों और पक्षों के 'सत्य' से ऊपर उठकर विज्ञान के सत्य की वाणी बन सकेगा ? क्या वह अपने सीमित दायरे से निकलकर सर्व की बात कह सकेगा ? विज्ञान और लोकतंत्र के मूल्यों को माननेवाली वाणी दूसरी क्या बात कहेगी ?

विनोबा ने आचार्यकुल से यही अपेक्षा रखी है। आचार्यकुल और तरुण-शांति-सेना में उन्होंने विद्वान और जवान की शक्तियों का मेल देखा है। अगर ये शक्तियाँ सामान्यजन की शक्ति के साथ जुड़ जायँ तो 'सर्व' के उदय का रास्ता खुल जायेगा। सर्वोदय-आन्दोलन ने ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य की योजना इसी दृष्टि से देश के सामने प्रस्तुत की है।

लोकशक्ति का स्वधर्म

लोक-शक्ति का काम शिक्षण और संगठन का है, दलबन्दी और संघर्ष का नहीं। लोक-शिक्षण और लोक-संगठन के क्रम में अन्याय और अनीति का प्रतिकार हो सकता है, और होना भी चाहिए। किन्तु लोक-शक्ति और सत्ता के संघर्ष में मेल नहीं है। अगर लोकतंत्र में दलों की सत्ता से आगे जाकर लोकसत्ता कायम करनी हो तो लोक-जीवन को दलों से मुक्त कर उसे स्वायत्त, सहकारी इकाइयों में संगठित करने के सिवाय दूसरा रास्ता नहीं है। यदि लोक-शिक्षण द्वारा यह स्थिति पैदा करनी हो तो स्वभावतः स्वयं शिक्षण को अपनी लक्ष्मण-रेखा से बाहर निकलना पड़ेगा। तभी शिक्षण एक सामाजिक शक्ति (सोशल फोर्स) बन सकेगा। आज शिक्षण 'स्टेटसक्वो' (यथा-स्थिति) का अंग है; वह राजनीति और व्यवसाय की शिक्षण-विरोधी शक्तियों का पिछलग्गू बना हुआ है।

शिक्षण को सामाजिक शक्ति के रूप में देखा जाय तो उसके तीन आयाम प्रस्तुत होते हैं :

एक, समाज-परिवर्तन की गत्यात्मकता (डाइनेमिक्स आव सोशल चेंज);

दो, निर्माण की प्रक्रिया (प्रोसेस आव डेवलपमेन्ट);

तीन, क्रमिक पाठन की पद्धति (मेथड आव टीचिंग)।

हमें इन तीनों आयामों को सामने रखकर सोचने की जरूरत है। तीसरे आयाम पर गांधीजी के जमाने से लेकर आज तक काफी नया चिंतन, शोध और प्रयोग हुआ है, लेकिन पहले और दूसरे आयाम अछूते पड़े हुए हैं। जब राजनीति अपनी गत्यात्मकता खो चुकी हो तो शिक्षण की गत्यात्मकता का शोध और प्रयोग समाज के विकास के लिए अत्यंत और तत्काल आवश्यक है। विचार को पक्ष और आग्रह से मुक्त कर उसकी शक्ति प्रकट करने का प्रयास, हितों के संघर्ष के धरातल से ऊपर उठाकर समान हित की भूमिका का विकास, संघर्षों के शान्तिपूर्ण हल के मार्गों की शोध, व्यावसायिकता से अलग हर व्यक्ति की नागरिकता की प्रतिष्ठा, आदि प्रश्न शिक्षण को 'डाइनेमिक्स' के अन्तर्गत हैं। इसके अन्तर्गत तरुणों का विद्रोह-शिक्षण भी है। विधायक विद्रोह का पूरा शास्त्र और उसकी कार्य-पद्धति विकसित करने की जरूरत है, नहीं तो जिस तरह विज्ञान शास्त्र में, लोकतंत्र दल में, समाजवाद सरकार में उलझकर रह गया है, उसी तरह विद्रोह-भावना भी गुस्से, प्रहार और निष्प्रयोजन संघर्ष में खत्म हो जायगी, जब कि जरूरत यह है कि विद्रोह-भावना को नव-निर्माण की रचनात्मक शक्ति के रूप में विकसित किया जाय। यह काम शिक्षण ही कर सकता है। आज दुनिया के विद्रोही युवकों की माँग भी है कि उन्हें ऐसा शिक्षण नहीं चाहिए जो राजनीति और व्यवसाय का गुलाम हो।

चिन्तन के नये आयाम

देश में निर्माण के कार्यों की कमी नहीं है, लेकिन निर्माण की कोई क्रिया शैक्षणिक ढंग से नहीं चलायी जाती। अगर शैक्षणिक ढंग से चलायी जाय तो काम अच्छा हो, युवक श्रमिक का कौशल बढ़े। उसकी बुद्धि जगे, उसका सांस्कृतिक स्तर ऊँचा हो, और उसमें अन्दर सम्मानपूर्ण नागरिक बनने की आकांक्षा पैदा हो। इस भूमिका में एक पूरे गाँव को विद्यालय मानकर शिक्षण का सर्वांग सम्पूर्ण प्रयोग किया जा सकता है। निर्माण के किसी कार्य को शिक्षण का 'प्रोजेक्ट' तो माना ही जा सकता है।

शिक्षण के नये आयामों को सामने रखने से शिक्षक की अपने व्यवसाय के प्रति सारी दृष्टि बदल जाती है। शिक्षण और विद्यार्थी, शिक्षण और समाज, तथा शिक्षण और सरकार के बीच सम्बन्धों की भूमिका भी बदल जाती है। विद्यालय किसी बाहरी शक्ति द्वारा संचालित होने-वाला मात्र 'विभाग' नहीं रह जाता, बल्कि शिक्षक-शिक्षार्थी-अभिभावक के अभिक्रम और निर्णय से चलनेवाला एक 'ज्वाइंट इन्टरप्राइज' बन जाता है। साधनों की सहायता समाज और सरकार दोनों से प्राप्त हो, लेकिन समाज की 'कन्फर्मिटी' और सरकार के हुक्म के अनुसार चलने की पाबंदी क्यों हो ? ये सभी आयाम हैं, जो आचार्यकुल के चिंतन के विषय बन सकते हैं, बनने चाहिए भी। शुरुआत स्थानीय या राष्ट्रीय महत्व के प्रश्नों पर पक्षमुक्त, वस्तुनिष्ठ, अभिमत से की जा सकती है। —राममूर्ति

(उत्तरप्रदेशीय आचार्यकुल सम्मेलन में प्रस्तुत निबन्ध)

बगावत विद्यालय : एक नया पैगाम

आज हिन्दुस्तान की युवापीढ़ी को देखकर ऐसा महसूस होता है कि तरुण थक गये हैं, उन्होंने परिस्थिति से समझौता कर लिया है, और पुरानी पीढ़ी की कोसना अपना पेशा बना लिया है। यह स्थिति वास्तव में विषम है। आचार्य राममूर्तिजी एक दिन कह रहे थे, "पीढ़ी जरूर नयी है लेकिन पैगाम पुराना है। जो तरीका आज तुम सब अपना रहे हो, जिस भाषा का प्रयोग तुम सब आज कर रहे हो, उन तरीकों और वैसी भाषा का प्रयोग हम आज से ३० साल पहले कर चुके हैं। फिर कहाँ हैं नया पीढ़ी और कहाँ रहा उसका नया पैगाम ?" यह द्वन्द्व सिर्फ द्वन्द्व ही नहीं है, सच्चाई है। यक्ष प्रश्न है जिसका उत्तर ढूँढ़ना है—क्या निराश दिमाग क्रान्ति का दिमाग हो सकता है ? क्रान्ति तो हमेशा प्राथमिकता की वस्तु रही है, निराशा की नहीं। फिर वह तरुण, जो हताश होकर प्रतिक्रिया में उपद्रव करता है, क्रान्ति का वाहक बन सकता है ? वर्तमान युवा आन्दोलनों में, जिनके ऊपर स्पष्ट ही वर्तमान गन्दी और घृणित दलगत राजनीति की छाप है, क्या भविष्य के भारत की कोई आशा देखी जा सकती है ?

ऐसे बहुत-से अनुत्तरित प्रश्न हैं जिनका उत्तर भारत के तरुणों को ढूँढ़ना है। इसकी एक कोशिश पिछले दिनों अक्तूबर में तरुण-शान्तिसेना के राष्ट्रीय सम्मेलन में हुई। देश के सुदूर अंचलों से आये हुए तरुणों ने इन्दौर में तटस्थ दृष्टिकोण से देश के सामने उपस्थित शैक्षणिक, आर्थिक, सामाजिक और राजनैतिक समस्याओं के ऊपर विधायक विचार किया। इस देश में, जहाँ मौत, बीमारी, गरीबी की कोई सीमा नहीं है, हमें परिवर्तन लाना है। नौजवानों ने यह महसूस किया कि उनके सामने जीतने के लिए बहुत-से मोर्चे खुले हुए हैं, और खाली पड़े हैं। मैंने तरुणों के वर्तमान मानस के बारे में जो सच्चाई शुरू में प्रकट की है, उससे भिन्न दृश्य इन्दौर का था। सम्मेलन में आये युवकों में एक अजीब उत्साह था, और समाज-परिवर्तन के लिए तीव्र आकांक्षा थी। मुझे ऐसा महसूस हुआ कि आज का तरुण अब पुरानी राजनीति, पुरानी शिक्षा और पुरानी अर्थनीति को स्वीकार नहीं करेगा। इस देश के नौजवानों ने गांधी के तथाकथित शिष्यों की सत्ता द्वारा समाज-परिवर्तन करने की कामना देख ली, मजदूरों और किसानों को समाजवाद के सब्जबाग दिखानेवाले राजनैतिक दलों के करतब देख लिये और साथ ही देख लिया कुछ क्रान्तिकारियों का शस्त्रों के बल पर क्रान्ति करने का दिवा-स्वप्न। समाज के, गरीब के शोषण में लगी कम्पनियों के शेयरहोल्डर्स में वृद्धि हो गयी, शोषण सीमाहीन हो गया, तब भी क्रान्ति का स्वप्न काफी-हाउसों में ही देखा जा रहा है। आज जीवन की परिस्थिति से ज्यादातर लोग निराश हैं। सारी-की-सारी व्यवस्था को अस्वीकार करने की स्थिति आ गयी है और भारत के तरुणों ने इसे अस्वीकार करने का साहस दिखलाया है।

इन्दौर में सम्मेलन की अध्यक्षा कुमारी मदाकिनी दवे ने स्पष्ट रूप से घोषणा की, "हम इसी क्षण से क्रान्ति के लिए कार्य करने का संकल्प करते हैं। शिक्षा, राजनीति और अर्थनीति में आमूल परिवर्तन हमारा लक्ष्य है। अब छोटे-छोटे सुधारों को स्वीकार नहीं किया जा सकता। आमूलाग्र सामाजिक क्रान्ति के लिए हमारी भीष्म-प्रतिज्ञा है। भविष्य निश्चय ही हमारे हाथ में है, लेकिन उसके लिए हमें आज से ही कार्य प्रारम्भ कर देना होगा।"

यह खुली बगावत का ऐलान था। यथास्थिति को समाप्त करने का निश्चय था और था नये मानव के लिए नये समाज का निर्माण करने का दृढ़ संकल्प। वर्तमान शिक्षा-प्रणाली की व्यर्थता को महसूस कर तरुणों ने अपनी पढ़ाई छोड़ने का निर्णय लिया। नौ तरुणों ने सामाजिक क्रान्ति के लिए अपना एक वर्ष लगाने का निर्णय लिया।

इन बागी नौजवानों ने क्रान्ति की दिशा में अपने पहले कदम की घोषणा 'बगावत विद्यालय' की स्थापना करके की है। इसके विद्यार्थी हैं नरेश बदनोरे, सन्तोष भारतीय, नचिकेता देसाई, सुरेश अवस्थी, विजय भाई और तात्या भाई। यह विद्यालय बागियों का दीक्षा-स्थल बन गया है। हर आदमी में क्रान्ति की सम्भावना है, सिर्फ उसे जगाने की आवश्यकता है। वह इस बदलने की प्रक्रिया में अपना कोई-न-कोई भाग अवश्य अदा कर सकता है। वैचारिक क्रान्ति ही सारे क्रान्ति के शास्त्रों का आधार है। सारी पुरानी धारणाएँ निर्मूल सिद्ध हो गयी हैं। अगर एक का दिमाग बदल सकता है, तो दूसरे का दिमाग भी बदल सकता है। पुरानी लीक से हटकर, रूढ़िवादी मान्यताएँ समाप्त कर, जनता द्वारा समाज-परिवर्तन और समाज द्वारा सत्ता-परिवर्तन की मुख्य धारा से स्वयं को जोड़ना लक्ष्य है। अब यदि प्रचलित राजनीति, अर्थनीति और शिक्षा को सिर्फ कोसते रहेंगे तो नया कुछ नहीं मिलनेवाला है, तब हमें सिर्फ अमेरिका, योरप की जूठन ही चाटनी पड़ेगी।

आज तो जिन लोगों का शोषण हो रहा है उनके दिमाग सोये पड़े हैं। अमीरों के पास अपनी अमीरी को टिकाये रखने की ताकत नहीं है और शासन बेबस है। आज जिन्दादिल लोगों को समाज में पहुँचने की आवश्यकता है, जिससे समाज में जीवन पैदा हो सके, उसमें अन्याय के प्रतिकार की वज्र शक्ति आ सके। आज क्रान्ति के लिए शस्त्र की आवश्यकता नहीं है, क्रान्ति के लिए स्पष्ट अवधारणा की जरूरत है। बगावत विद्यालय के लिए यही अध्ययन और शोध का विषय और पाठ्यक्रम के आधारभूत सिद्धान्त हैं।

↓

हम एक ही नाता जानते हैं : मैत्री का

आवाज और शासन में पात्र पूरा भरकर वेग से बहनेवाली, कभी नटखट बनकर पुल पर चढ़कर रास्ता रोकनेवाली, गांधी-स्तम्भ को पेट में छिपाकर अपनी मर्यादा छोड़कर रास्ते पर आनेवाली धाम नदी अब शान्त है, सौम्य हो गयी है।

बाबा का स्थानकवास

अक्तूबर की ६ तारीख। दोपहर का समय। सेवाग्राम में श्री जमनालाल भाई की झोपड़ी में अण्णासाहब, अक्का धोत्रे वगैरह लोग बैठे है। बाबा को सुन रहे हैं—"आज मैं यहाँ इसलिए आया कि कल से मैं स्थानकवासी बननेवाला हूँ। जैनों में एक आचार है—स्थानकवास। अनेक वस्तुओं का त्याग करते है, अनेक क्षेत्रों का भी त्याग करते हैं। आज अक्तूबर की छ. तारीख। हर एक दिन पवित्र होता है, लेकिन कल का दिन मेरे लिए विशेष महत्त्व का है। चालीस साल पहले सात अक्तूबर को मैने 'गीताई' लिखना आरम्भ किया था। इसलिए कल से हम 'डिटेन्शन कैंप' में प्रवेश करेंगे। जैनों की भाषा में यह हमारा स्थानकवास, हिन्दुओं की भाषा में क्षेत्र-सन्यास, आधुनिक भाषा में 'डिटेन्शन कैंप' है। जब मनुष्य अपने को - इस तरह से रोक लेता है, तब सबको सुविधा होती है। आज पंढरपुर अपने स्थान में स्थिर है, अगर वह कल सोलापुर जिले से उठकर हिन्दुस्तान के दूसरे प्रान्त में चला जाय, परसों और कहीं, और ऐसा घूमने लगे, तो असुविधा होगी। द्वारका घूमने लगेगी, तो लोगों को सुविधा नहीं होगी। आज द्वारका अपनी जगह पर कायम है, इसलिए सुविधा है। कल से हम यहाँ आ नहीं पायेंगे, लेकिन हमारा शुभसंकल्प आप लोगों के साथ रहेगा। अब इस (ब्रह्मविद्या मंदिर) जगह से मैं हटूँगा नहीं। यह मेरा अपना विचार नहीं है। अन्दर से ही आवाज आयी, उसे मैंने 'आदेश' नाम दिया। कब तक यहाँ रहूँगा? दूसरा आदेश मिलने तक। तब आप मेरे पास आते जाइए, कुछ पूछना हो तो पूछिए, या सहज मैत्री के लिए आइए, शतरंज खेलने के लिए भी आ सकते हैं।"

उसके बाद बाबा बापू-कुटी में गये। वहाँ थोड़ा ध्यान किया और फिर अधिवेशन-मंडप में चले गये।

सेवाग्राम में सर्व सेवा संघ का अधिवेशन व महाराष्ट्र सर्वोदय-मंडल का अधिवेशन था। सबका बहुत आग्रह था कि सात दिन के लिए बाबा सेवाग्राम में ही रहें। लेकिन बाबा ने नहीं माना, यहीं से रोज सेवाग्राम जाना पसन्द किया। रोज दो घंटे दिये गये थे। अधिवेशन के लिए आये हुए अखिल भारती के मित्र बाबा से मिलने ब्रह्मविद्या मंदिर आते थे। सेवाग्राम से पवनार आने में, उनको वाहन की असुविधा के कारण कष्ट भी होता था। पंजाब के दादा गणेशीलाल-जी जैसे बुजुर्गों को दस के लिए काफी देर तक धूप में खड़ा रहना पड़ा।

साथियों का स्मरण : विष्णुसहस्रनाम

आर० टी० पी० सुब्रमण्यम्‌जी तमिलनाडु के कर्मठ कार्यकर्ता, बहुत श्रद्धावान, उन्होंने बाबा से पूछा, "आप कार्यकर्ताओं के फोटो चाहते है, क्या यह सूक्ष्म-प्रवेश के लिए अनुकूल है?"

बाबा—"मैं ध्यान में भारत के हमारे साथियों का स्मरण करता हूँ। लगभग १२-१३ सौ नाम होते हैं। विष्णु-सहस्रनाम हो जाता है। कुछ नामों के साथ रूप याद नहीं आता, तो कुछ रूपों के साथ नाम याद नहीं आते। रूप और नाम, दोनों साथ रहे, तो उनके साथ आध्यात्मिक सम्बन्ध रहेगा। बहुत-से लोग ऐसे है, जिनके रूप और नाम, दोनों का स्मरण है। ऐसे लोगों के फोटो की जरूरत नहीं होती है। यह सूक्ष्म-प्रवेश के अनुकूल ही है।"

सुब्रमण्यम्‌जी—"आपका सूक्ष्म-प्रवेश आप सन् १९७२ तक बन्द रखें। तब तक पुष्टि-कार्य में सहयोग देंगे, तो भारत की ताकत बढ़ेगी।"

बाबा—"बाबा अभी बिहार जायेगा, तो इसमें कोई शक नहीं कि हजारों गाँवों की पुष्टि हो जायेगी। लेकिन वह तो बाबा का पराक्रम होगा। इसीलिए जयप्रकाशजी ने हमको बिहार जाने से रोका। उन्होंने भी माना है कि बाबा अब प्रत्यक्ष कार्य में ध्यान न दें, तो अच्छा है।"

सुब्रमण्यम्‌जी—"ठीक है, आप अपना सूक्ष्म-प्रवेश न छोड़ें। लेकिन जैसे हिन्दी के लिए आपने उपवास किया था, वैसे अगर भारत में कहीं हिंसा फूट निकलेगी, तो आप उपवास कर सकते हैं कि नहीं?"

→"बगावत विद्यालय" के विद्यार्थियों का दैनिक जीवन, और एक क्षण भी व्यर्थ न करने का संकल्प इनके ऊपर अविश्वास उत्पन्न करने नहीं देता। उत्पादक श्रम से युक्त नयी शिक्षा-प्रणाली के ये समर्थक हैं, और इन्होंने इसे अपनाया है। आज क्रान्ति कारखानों से शुरू नहीं होगी। यह खेतों और स्कूलों से शुरू होगी। विद्यालय ने दोनों मोर्चों के लिए सिपाही तैयार करने का काम भी शुरू किया है। अब प्रतिष्ठानों की जागीरदारी बर्दाश्त नहीं की जा सकती। जनता के नाम पर जनता का शोषण, यथास्थिति बनाये रखने की निहित स्वार्थों की कोशिश और इन सबके ऊपर अपना वरदहस्त रखे फासिस्ट मुखौटे असह्य है। इतिहास द्वारा निर्धारित भूमिका भारत के तरुणों को निबाहनी है। हमें एक ऐसी व्यवस्था कायम करनी है जिसमें मनुष्य मनुष्य बनकर रह सके। मनुष्य के नाते मनुष्य की जिन्दगी हर मानव जी सके, यही 'बगावत विद्यालय' का नया पैगाम है। —स० मा०

बाबा—"योग्य प्रश्न है। विशेष मौके पर उपवास करना सूक्ष्म-प्रवेश में बैठता है। परन्तु इसका उत्तर अभी मेरे पास नहीं है। मौका आने पर देखा जायेगा। इस वक्त मैं सोचूँगा नहीं। क्योंकि इसमें मेरा अपना चिंतन काम नहीं आयेगा। ऊपर से जो आदेश आयेगा वैसा करूँगा।"

सुब्रमण्यम्‌जी विदा लेकर जाने लगे, तो बाबा उनका हाथ पकड़कर चलने लगे, कहा—"सज्जनों के साथ सात कदम चलते हैं, तो उनसे सख्य हो जाता है।"

रमाकान्तभाई बम्बई से निकलनेवाली "सर्वोदय-साधना" मराठी साप्ताहिक के सम्पादक हैं। वे जब विदाई का प्रणाम करने आये, तब एक-दो क्षण बाबा उनको निहारते रहे और फिर कहने लगे—"सोचता है, तुम कम खाते हो। ज्ञानदेव महाराज ने शिष्य का वर्णन किया है। शिष्य कैसा होना चाहिए? कहते हैं—'गुरुदास्ये कृश, गुरुकृपे स्नेप।'—गुरु की सेवा से कृश और गुरु-कृपा से पुष्ट। मनु महाराज ने तो लिखा है, 'अक्षिण्वन् योगेन तनुम् सर्वान् अर्थान् समाचरेत्'—योग से तनु को क्षीण न करते हुए सब अर्थ साधना चाहिए। मजबूत बनो। पत्र लिखते रहो, समझ....."

अस्तित्वमात्र प्रेरणादायी

दक्षिण कोरिया के भारत-स्थित राजदूत आरयान बाबा से मिलने आये थे। उन्होंने बाबा को भारतीय ढंग से प्रणाम किया। बाबा ने पूछा, "क्या कोरिया में भी इस तरह नमस्कार करने की पद्धति है?"

राजदूत—"जी हाँ। जितने भी बौद्ध देश हैं, सब जगहों में ऐसी ही पद्धति है।"

बाबा—"उत्तर कोरिया के लोग सुखी हैं कि दक्षिण कोरिया के?"

राजदूत—"अर्थात् दक्षिण कोरिया के। क्योंकि वहाँ गणतंत्र है। हमारे यहाँ आपके देश के जैसे ही मन्दिर और आश्रम हैं। उत्तर कोरिया में नहीं हैं। मन्दिरों को वहाँ म्यूजियम बना दिया है।"

बाबा—"उत्तर और दक्षिण कोरिया एक ही वंश (रेस) के हैं?"

राजदूत—"जी हाँ। यूनो की कोशिश तो है दोनों को एक करने की। हम मानते हैं कि कम्युनिज्म बुनियाद से ही मनुष्य-स्वभाव के प्रतिकूल है। हम लोग यह सिद्ध करने की कोशिश कर रहे हैं कि गणतंत्र साम्यवाद से कई गुना अच्छा है। हमारे देश में भी आपके जैसे महापुरुष हो गये। आपका अस्तित्वमात्र हमारे लिए प्रेरणादायी है।"

बातचीत समाप्त होने पर उन्होंने बाबा के साथ फोटो खींचवाने की इच्छा प्रकट की। बाबा ने उन्हें अपनी खटिया पर बिठा लिया और फोटो के लिए तैयार हो गये।

गुरुकृपा और भगवत्‌कृपा

कलकत्ता के एक व्यापारी। पत्नी गुजर गयी। दो बच्चे हैं। पत्नी के वियोग से वैराग्य की भावना आयी। दो-ढाई साल पहले घर-बार छोड़ने का विचार कर बाबा से मिलने आये थे। बाबा ने उनको वापस भेजा था। अभी फिर से मिलने आये थे। उन्होंने कहा—"मैंने आपसे प्रार्थना की थी कि मेरा आप शिष्य के नाते स्वीकार करें। मैं आपको गुरु मानता हूँ। तब आपने कहा था, 'हम सबको मित्र ही मानते हैं।' लेकिन मेरे मन से वह बात जाती नहीं। जब आपको मुझमें योग्यता नजर आयेगी तब आप मेरा स्वीकार करियेगा। तब तक मैं इन्तजार करूँगा। 'ज्ञानदेव चिन्तनिका' में आपने स्वयं गुरुकृपा की महिमा गायी है। हम पापी क्यों न हों, लेकिन गुरु कृपा से हम पावन और योग्य हो सकते हैं।"

बाबा ने उन्हें कहा—"हम एक ही नाता जानते हैं—मैत्री का। महात्मा गांधी इतने महान थे, लेकिन हमने उनको गुरु नहीं माना था, परम मित्र माना था। जन्मभरस्वामी रागद्वेषरहित, काम-क्रोध-रहित थे। बहुत बड़े आदमी थे। लेकिन उनको भी हमने शिष्य नहीं माना, परम मित्र माना। गुरु आदेश देता है, मित्र सलाह देता है। हम आपको सलाह देते रहेंगे। उसे आदेश मानना हो तो मानें, हमें उज्र नहीं। लेकिन हमारी ओर से हम सलाह ही देंगे। ज्ञानेश्वर महाराज को उनके बड़े भाई निवृत्तिनाथ, सहज ही मिल गये। उन्होंने ज्ञानेश्वर महाराज ने गुरु माना। निवृत्तिनाथ ने ज्ञानेश्वर महाराज को पूर्ण ज्ञान दिया था। ज्ञानेश्वर महाराज के मन में गुरु के सिवा और कुछ भी नहीं था, जैसे विवेकानन्द के मन में रामकृष्ण के सिवा और कुछ नहीं था।

"पापी गुरुकृपा का पात्र नहीं होता। वह तो परमात्मा की कृपा का पात्र होता है। गुरुकृपा का पात्र तो वह है, जो अत्यन्त स्वच्छ, निर्मल है। गुरु पापी का उद्धार नहीं करता। शिष्य के लिए स्वच्छ, शुद्ध व्यक्ति चाहिए। रामकृष्ण ने विवेकानन्द को पापी मानकर शिष्य नहीं बनाया, बल्कि उत्तम शिष्य देखकर ही उनका स्वीकार किया। गुरुकृपा और परमात्मा कृपा में यह फर्क है। परमात्मा ऐसा है, जो पापी का उद्धार करता है।"

दशहरे के दिन महादेवीताई का जन्म-दिन था। ताईजी ने ६१वें वर्ष में पदार्पण किया। दोपहर में बाबा ने कहा, "आज महादेवी का जन्मदिन है, आज उपनिषद् पढ़ेंगे।" बृहदारण्यक उपनिषद् के कुछ श्लोकों का अर्थ समझाया।

बाबा का स्वास्थ्य ठीक है। लेकिन फिर से उनका सफाई-अभियान शुरू हो गया है। हाथ में हँसिया लेकर सुबह ही सफाई के लिए निकलते हैं। घास निकालना, सूखा पत्तो उठाना, वह तो दिन भर चलता ही रहता है। सफेद बंगले के सामने नदी की तरफ एक लम्बा ओटा बनाया जा रहा है। बांध-काम की देखभाल गौतमभाई कर रहे हैं। उसका गड्ढा भरने का काम चल रहा है। बाबा ने भी एक टोकनी उठायी और 'गौतमस्य महायज्ञे विनोबा आहुतिं ददौ,' कहते हुए कांड-पत्थर गड्ढे में डाले। लोग अनुरोध करते हैं 'इतनी मेहनत मत करिए' तो आवाज देते हैं—'यह मेरा ध्यान-योग है।'

('मैत्री' से साभार)

—कुसुम

ग्रामशक्ति प्रकट होने लगी

डुमरी ग्रामसभा-गठन में अभूतपूर्व उत्साह

दिनांक १७ नवम्बर '७० को ५ बजे संध्या में डुमरी ग्रामसभा का गठन बहुत ही आशा, उत्साह और सौजन्य के साथ सम्पन्न हुआ। डुमरी ग्राम मुसहरी प्रखंड के एक सम्पन्न और सुदृढ़ स्थिति के उन गांवों में से है जिसके बारे में सामान्यतः माना जाता था कि वहां वर्तमान स्थिति में बदलाव लाना कठिन है और प्रारम्भ में यह कठिन रहा भी। जयप्रकाश बाबू की चार सभाएँ यहाँ आयोजित हुईं और लगभग चार महीने तक श्री रामेश्वर ठाकुर और श्री किशोरी भाई, ये दो कार्यकर्ता यहाँ धीरज और विश्वास के साथ काम में लगे रहे। सहयोग के लिए समय-समय पर अन्य लोग तो आते-जाते ही थे। प्रारम्भ में समझने-समझाने की प्रक्रिया चली—सभा के रूप में भी और व्यक्तिगत चर्चाओं के द्वारा भी। धीरे-धीरे लोग समझते गये और हस्ताक्षर करते गये। जिन्होंने समझा उन्होंने हस्ताक्षर किये और अपना बीघा-कट्ठा भी तुरन्त निकाल दिया। इसका असर गरीब एवं सम्पन्न, दोनों प्रकार के लोगों पर तत्काल पड़ा। ३ सितम्बर को सात भूमिवानों द्वारा २१ भूमिहीनों में ४ बीघा १८ कट्ठा १८ धूर जमीन का वितरण जे० पी० के हाथों सम्पन्न हुआ। इसके एक महीना पूर्व भी ५ बीघा ५ कट्ठा जमीन का वितरण इस गांव में कराया गया था।

इस प्रकार विचार-परिवर्तन के साथ-साथ स्थिति-परिवर्तन के व्यावहारिक कार्य ने यहाँ अपना प्रभाव प्रकट किया और जन-मानस में विश्वास तथा आशा पैदा की। बड़े लोगों के इस बड़े गांव में पेचीदगियाँ भी बड़ी-बड़ी थी। जमीन सम्बन्धी ऐसे मुकदमे थे, जो सन् १९१५ से चल रहे थे। आपस की ऐसी उलझनें थी, जो एकता और विकास के मार्ग में बाधक थी। गांव गांव नहीं गुटों का गढ़ था, जहाँ एकमत की कल्पना भी कठिन थी।

मगर ग्रामदान के विचार, जे० पी० की वाणी और कार्यकर्ता मित्रों के प्रयास से आज यहाँ जैसी अनुकूलता दीख रही है, वह प्रेरक है। ग्रामसभा-गठन के उद्देश्य से आयोजित सभा में ग्रामीण स्नेह-भावना का वह स्रोत उमड़ा कि केरल के भाई श्री शंकर अय्यर ने उस दृश्य को देखकर भाव भरे शब्दों में कहा—"आज मुसहरी प्रखंड के इस डुमरी गांव में मैं ग्रामभावना, प्रेम और एकता का जो चमत्कार देख रहा हूँ, वह देखकर आज पूज्य गांधीजी की, तृप्त होती होगी आत्मा और काश, अगर विनोबा आज यहाँ होते तो यह दृश्य देखकर प्रेमाश्रु से गद्‌गद हो जाते!"

सभा के प्रारम्भ में श्री कैलाश बाबू ने बड़े ही सुन्दर और ओजस्वी ढंग से ग्रामदान के विचार और ग्रामसभा के कर्तव्यों पर प्रकाश डाला और उस महान कार्य के संपादन के लिए कार्यसमिति का गठन सर्वसम्मति से करने का निवेदन किया। ग्रामीण जनों ने बड़ी कुशलता और उदारता से सर्वसम्मति का सुन्दर उदाहरण प्रस्तुत करते हुए श्री अश्विनी कुमार ठाकुर को अध्यक्ष, श्री नवलकिशोर ठाकुर को मंत्री, श्री जलेश्वर ठाकुर को स० मंत्री और श्री रघुनाथ प्रसाद सिंह को कोषाध्यक्ष बनाया। इसके अतिरिक्त एक ग्राम-अदालत की भी स्थापना की गयी, जिसके सरपंच श्री देवनन्दन ठाकुर बनाये गये।

आशा है, वे गांव और वे लोग, जो गांव की प्रगति, परिवर्तन, समता और शांति की वाणी को अनसुनी और अन-समझी करके अपने को बहला रहे हैं, वे इस डुमरी गांव की भावना से प्रभावित होंगे। काल की चुनौती की अवहेलना कब तक की जा सकेगी?

मुसहरी प्रखंड के ग्रामसभाओं के पदाधिकारियों की बैठक

दिनांक १६ नवम्बर की संध्या में जे० पी० के मार्गदर्शन में मुसहरी प्रखंड के ग्रामसभाओं के पदाधिकारियों की बैठक हुई। यह बैठक क्षेत्र में काम के संदर्भ में आ रहे अनुभवों के आधार पर आयोजित की गयी थी और इसका मुख्य विषय नवगठित ग्रामसभाओं के समक्ष उपस्थित नयी-नयी दैनिक व्यवहारगत समस्याएँ थी, जैसे ग्रामसभा अपनी बैठक, निर्णय या कार्यकलाप का रेकार्ड कैसे रखे? बैठक कैसे नियमित हो? भू-वितरण एवं भू-प्राप्ति के शेष कार्य कैसे पूरे कराये जायें? बाकी परिवार किस प्रकार ग्राम-सभा के सदस्य बनें? कानूनी पुष्टि के लिए क्या किया जाय? रोजी-रोटी, वस्त्र, शिक्षा आदि समस्याओं को ये नव-गठित ग्रामसभाएँ किस प्रकार सुलझाने में पहल करें, आदि। जे० पी० ने अपने साथियों एवं ग्रामसभाओं के सदस्यों के साथ इन प्रश्नों पर बातचीत की और तत्काल नवगठित ग्रामसभाओं को इस प्रारम्भिक स्थिति में क्या-क्या करना चाहिए इसका निर्देश दिया। ग्रामसभाओं के पदाधिकारियों के लिए इस तरह की बैठक बहुत ही उपयोगी और मार्गदर्शक होगी, ऐसा इस बैठक में अनुभव आया। नये प्रकार के इस नये कार्य की समस्याएँ भी नयी हैं, और उनका समाधान पुराने फार्मूले से कतई नहीं होगा। अब हमें सतत मिलकर, बैठकर सोचते रहना है।

जेल में मिलन : प्रह्लादपुर के लोगों से

प्रह्लादपुर के 'कथित नक्सलवादी गढ़' और "पेचीदगी" से भरी स्थिति-वाली पंचायत में बड़ी तादाद में गरीब

और अमीर तबकों के शिकार हुए हैं। दोनों ओर आँसू हैं। अनेक लोग जेलों में पड़े हैं। डकैती, कुर्की और शान्ति-व्यवस्था के अन्य दौर चल चुके हैं। जे० पी०, प्रभावतीजी एवं अन्य साथी प्रायः गरीब-अमीर हर प्रकार के सताये गये लोगों से मिल चुके हैं, मगर जेल में पड़े भाइयों से अब तक मिलना नहीं हो सका था। दिनांक १२ नवम्बर '७० को श्री वैद्यनाथ बाबू और श्री योगेन्द्रजी मुजफ्फरपुर-जेल में जाकर श्री चकधर शाही एवं अन्य व्यक्तियों से मिले और उनसे बातें कीं। वे अपने को उग्रवादी तरह या नक्सलवादी नहीं मानते। उनका कहना है कि मुशहरी में बड़े लोगों के जुल्म और अत्याचार के शिकार न होकर मात्र वे गरीबों के हिमायती हैं और इसीलिए वे अपराधी करार दिये गये हैं। डकैती या हत्याएँ, जो वहाँ हुईं उनमें वे फँसाये गये हैं, ऐसा उनका कहना है। उन लोगों ने बताया कि हम दोषी हैं या निर्दोष हैं, इसका फैसला न्यायालय में होगा, तब सजा होगी, मगर यहाँ तो इस न्याय और फैसले के पूर्व ही उन्हें बेइन्तहा वर्षों से जेल की यातना सहनी पड़ रही है, घर बरबाद हुए हैं, जमीन-कुर्की हुई है, और परिवार अनाथ बन गये हैं। न्याय और शासन-व्यवस्था का यह तकाजा था कि उन पर मुकदमा चलाये और उन्हें दोषी या निर्दोषी प्रमाणित होने का अवसर दे। न्याय के मार्ग को इस देरी से वे दुखी थे। उन्होंने जे० पी० द्वारा चलाये जा रहे अभियान की प्रशंसा की, और यह आशा व्यक्त की कि जे० पी० एवं उनके साथियों के कारण गाँव के गरीब-अमीर के बीच विश्वास की भावना बढ़नी चाहिए और गरीबों के मन से यह भय दूर होना चाहिए कि अगर वे मालिक लोगों की इच्छा के विरुद्ध होंगे तो उन्हें भी उग्रवादी तत्त्व के नाम पर फँसाकर तबाह कर दिया जायगा। उन्होंने जे० पी० से यह निवेदन पहुँचाने की प्रार्थना की कि वे लोगों के मन से आतंक को दूर करें।

इसके अतिरिक्त उन्होंने कहा कि हमें यदा-कदा जे० पी० द्वारा चल रहे कार्यों के बारे में गलत-सही जानकारी मिलती है, मगर मैं चाहता हूँ कि पूरी इस बारे में पूरी प्रामाणिक सूचना यथासम्भव प्राप्त हो।

ग्राम-शान्तिसेना-शिविर एवं ग्रामसभा की बैठक

मोमीनपुर ग्रामसभा को गठन हुए लगभग चार महीने हो चुके, किन्तु इस अवधि में ग्राम-निर्माण के लिए सर्वसम्मति से योजनाकरण का अवसर लोगों को प्राप्त नहीं हुआ था। अस्तु, ८ नवम्बर को ग्रामसभा के कार्यकारिणी के सदस्यों ने तय किया कि ९ नवम्बर की संध्या में ग्राम-शान्तिसैनिकों की एक गोष्ठी बुलायी जाय, जिसमें उनका एक दिवसीय शिविर करने का निर्णय लिया जाय। तदनुसार दिनांक ९ नवम्बर को संध्या ६ बजे मोमीनपुर ग्राम में श्री विश्वनाथ सिंह की अध्यक्षता में शान्तिसैनिकों की एक गोष्ठी हुई। श्री रामनरेश सिंह ने विषय-प्रवेश कराते हुए गाँव में एकता, अस्पृश्यता-निवारण तथा शान्तिमय वातावरण बनाये रखने की ओर उनका ध्यान आकृष्ट करते हुए शिविर के आयोजन पर प्रकाश डाला। गोष्ठी में उपस्थित सभी सदस्यों ने सर्व-सम्मति से १५ नवम्बर को शिविर के आयोजन का निर्णय लिया।

दिनांक १५ नवम्बर को ६ बजे सुबह मोमीनपुर सर्वोदय बाल-विद्यालय के प्रांगण में ग्रामसभा के मंत्री, श्री महेश्वर राय की उपस्थिति में शिविर का कार्यक्रम प्रारम्भ हुआ। शिविर का उद्घाटन श्री किशोरी रमणजी के द्वारा किया गया। कार्यक्रम की शुरुआत लखन साह के द्वारा प्रार्थना एवं शान्ति-गीत से हुई। शिविर में मोमीन-पुर एवं सुधनगर के शान्तिसैनिकों के अतिरिक्त विद्यालय के छात्रों ने भी भाग लिया।

शिविर में लखनजी एवं श्री रामनरेश सिंह ने गाँव के विकास पर प्रकाश डाला। ५ बजे से शान्तिसैनिकों एवं छात्रों ने गाँव के घर-घर जाकर ग्रामीणों से सम्पर्क स्थापित कर ग्रामसभा की बैठक के लिए लोगों को एकत्रित किया। ६ बजे तक ग्रामसभा के सदस्य उपस्थित हो गये। मोमीनपुर ग्रामसभा के उपाध्यक्ष श्री राम-धारी भगत की अध्यक्षता में ग्रामसभा की बैठक हुई जिसमें ग्राम-विकास के विभिन्न पहलुओं पर विचार-विमर्श किया गया।

माधोपुर में श्रमदान से सड़क का निर्माण

दिनांक ९ नवम्बर को सबेरे साढ़े चार बजे हर्षोल्लास के वातावरण में माधो-पुर के ग्रामसभा के ग्रामीणों की ओर से श्रमदान के द्वारा गाँव की सबसे खराब सड़क का, जिस सड़क पर बरसात के दिनों में गाँव के लोगों का आना-जाना बन्द हो जाता था, निर्माण-कार्य प्रारम्भ किया गया। गाँव के वयोवृद्ध श्री हरवंश तिवारीजी के द्वारा पहला छो मारकर कार्य का श्रीगणेश किया गया। गाँव के सभी वर्गों के लोग उत्साह के साथ श्रमदान में योगदान कर रहे हैं।

श्रमदान का संचालन बड़े लगन एवं उत्साह के साथ श्री कपिलेश्वर तिवारीजी कर रहे हैं। दिनांक १५ नवम्बर तक श्रमदान-कार्य में १२५ व्यक्तियों ने भाग लिया। कार्य की प्रगति को देखकर जो व्यक्ति अभी तक ग्रामदान में सम्मिलित नहीं हुए हैं, वे व्यक्ति भी आर्थिक सहयोग देकर कार्य को बढ़ाने में योगदान कर रहे हैं।

जे० पी० शिविर का स्थानान्तरण

प्रह्लादपुर पंचायत से अब जे० पी० का शिविर दिनांक १९ नवम्बर को सध्या समय छपरा पंचायत में पहुँचा। छपरा-शिविर प्रह्लादपुर-शिविर से दो मील दक्षिण-पूरब है, और सिलौट स्टेशन, नेशनल हाई वे तथा मुजफ्फरपुर-दरभंगा रोड के मध्य में है। जे० पी० का पता पूर्ववत् है

मारफत—जिला सर्वोदय मण्डल, नया टोला,
मुजफ्फरपुर, फोन २२९८
या बिहार खादी-ग्रामोद्योग संघ,
मनोनयाम, मुजफ्फरपुर,
फोन २७२४

—'जयप्रकाश शिविर-समाचार' से

पुस्तक-परिचय

१. बापू सूरज के दोस्त

२. बापू को दस अंजलियाँ

लेखक : श्री अमृतलाल वेगड

प्रकाशक : दर्शनाचार्य गुलाबचन्द जैन,
प्रो० मदनलाल जनरल स्टोर्स
राइट टाउन, जबलपुर-२

प्रत्येक की पृष्ठसंख्या ६; मूल्य रु० १.००

कुछ रचनाएँ ऐसी होती हैं कि जिनका रूप-स्वरूप मन में तो होता है, लेकिन प्रायः दिखाई नहीं देता। जब कभी अपने मन की, मनमानी ऐसी कृतियाँ उपलब्ध हो जाती हैं तो लगता है कि अब मन की तृप्ति हुई। श्री वेगडजी की ये कृतियाँ महाप्राण विश्ववंद्य बापू पर अत्यन्त लघुकाय ही कही जायेंगी, लेकिन लघुकाय होने पर भी इनमें बापू अपने समग्र व्यक्तित्व के साथ विराजमान हैं। एक उत्तुङ्ग प्राण-प्रतिष्ठित और श्रद्धेय प्रतिमा को जैसे एक भक्त अपनी छोटी-छोटी नयन-प्टोरियों में समेट लेता और अपने को धन्य समझता है, शायद यही स्थिति इन रचनाओं के साथ है।

गांधीजी अथवा राष्ट्रपिता पर इधर शताब्दी-अवधि में सैकड़ों रचनाएँ लिखी गयीं, प्रकाशित हुईं। जितना साहित्य गांधी पर लिखा गया, उतना शायद ही किसी पर इधर लिखा गया होगा।

लेकिन वेगड़जी जैसे शिल्पी की कलम ने बापू को बिलकुल अनोखे ढंग से चित्रित किया है। ये रचनाएँ जहाँ बालकों का आकर्षित करती हैं, वहाँ साहित्य-साधकों को भी कम मोहित नहीं करतीं।

पहली पुस्तक 'बापू सूरज के दोस्त' में १५ प्रकरण या कथाएँ हैं। इनमें विशेषता यह है कि बापू के जीवन की कोई एक विशेष घटना अथवा प्रसंग को लेकर लेखक ने उसके आधार पर बापू-जीवन के समग्र गुण-उत्कर्ष का, गुण-विकास का दर्शन कराया है। सूरज उजाले का, अस्पष्ट का प्रतीक है। बापू ने अपने बालजीवन में छिपकर, अंधेरे में जो कुछ गलतियाँ कीं, वे सब सूरज के समक्ष स्वीकार कीं और सत्य का व्रत लिया। अब जो कुछ करेंगे, सूरज के सामने करेंगे, यानी उजाले में करेंगे। और फिर सूरज स्वास्थ्य का, ताजगी का, उत्पादन का भी आधार है। बापू इस तरह सूरज के दोस्त बन जाते हैं। ऐसी ही सब कहानियाँ प्रतीकमूलक हैं।

दूसरी पुस्तक में दस पाठ हैं, जिनमें प्रत्येक पाठ की संख्या के हिसाब से बापू की विशेषताओं का वर्णन है। जैसे, बापू का एक ध्रुवतारा, बापू की दो आशाएँ, बापू के तीन नाम, बापू के चार स्नेहपात्र, छह सत्याग्रह, सात रूप, नवरत्न, दस आदेश। काकासाहब कालेलकर के शब्दों में—"आँकड़ों का क्रम बढ़ाते-बढ़ाते दस आदेश तक पहुँच जाना इस निबन्ध-माला की काव्यात्मकता है।"

लेखक ने बापू-जीवन की कोई नयी बात नहीं कही है, बल्कि एक अन्तर्मुखी चिंतन की दिशा दी है कि बापू के जीवन की छोटी से-छोटी घटना का महत्व समग्र मानव-जाति को स्पर्श करने जितना है और उसका स्पर्श होना आवश्यक भी है। शब्दों में माधुर्य, शैली में भीनापन, दृष्टि में झीनापन और श्रद्धास्नात लिये हुए शिल्पी वेगडजी ने बापू की सूझ का अनुपम और पवित्र परिचय दिया है।

ये दोनों पुस्तकें हर किशोर और युवक के हाथों में पहुँचनी चाहिए, ऐसी अपेक्षा रखना अतिशयोक्ति नहीं है।

वेगडजी निश्चय ही इन कृतियों को प्रस्तुत कर अपनी साधना में सफल हुए हैं।

खिस्त धर्म सार

सम्पादक : आचार्य विनोबा भावे
पृष्ठ १६४, मूल्य : रु० २-००
प्रकाशक : सर्व सेवा संघ प्रकाशन,
राजघाट, वाराणसी-१

संत विनोबा का सम्पूर्ण जीवन अध्यात्म-प्रवण रहा है और उन्होंने जीवन का अधिकांश विविध धर्मों के अध्ययन में तथा उनकी विशेषताओं को आत्मसात करने में लगाया है। विशाल और व्यापक वैदिक हिन्दू धर्म का सभी शाखाओं के तो वे निष्णात तत्त्वज्ञ हैं ही, उन्होंने बाइबिल, धम्मपद, जपुजी, कुरान आदि धर्मग्रन्थों का भी सूक्ष्मता से मन्थन किया है। यह सब उन्होंने धर्म-समन्वय अथवा सर्वधर्म-समभाव की भावना से प्रेरित होकर किया है। इसके बिना राष्ट्रीय अथवा जागतिक एकता का निर्माण होना कठिन है।

'खिस्त धर्म सार' पुस्तक में बाइबिल के 'न्यू टेस्टामेंट' का सार-सर्वस्व प्रस्तुत किया गया है। इस किताब को ७ खंड तथा ५० अध्यायों में विभाजित कर बाइबिल की प्रमुख बातें, घटनाएँ और तत्त्वज्ञान का गागर में सागर की भाँति रख दिया गया है।

अध्यायों की तालिका के लिए विनोबाजी ने संस्कृत शब्द बना दिये हैं।

इस तरह यह पुस्तक उन सबके काम की हो गयी है, जो बाइबिल जैसा बड़ा ग्रन्थ पढ़ने का समय नहीं निकाल पाते और ईसाई धर्म को जानना-समझना भी चाहते हैं।

सर्व सेवा संघ ऐसी उपयोगी पुस्तकें प्रकाशित कर धर्मों के समन्वय का और राष्ट्रभाषा हिन्दी का बड़ा कार्य कर रहा है।

—जमनालाल जैन

कार्यकर्ता-गोष्ठी

आगामी ४ दिसम्बर '७० से ६ दिसम्बर '७० तक मधुबन, ईसरी बाजार, से १० मील दूर जिला हजारीबाग में बिहार के कार्यकर्ताओं की एक गोष्ठी आयोजित की जा रही है, जिसमें आन्दोलन को और गतिशील बनाने के लिए विचारविमर्श होगा। —श्यामप्रकाश सिंह

विहार प्रान्तीय तरुण-शांतिसेना शिविर तथा सम्मेलन का आयोजन

नवगछिया (भागलपुर) में बिहार प्रान्तीय तरुण-शान्तिसेना द्वारा बड़े दिन की छुट्टियों में, यानी २४ दिसम्बर से २७ दिसम्बर '७० तक शिविर और २८ व २९ दिसम्बर को सम्मेलन आयोजित हो रहा है। राष्ट्रीय एकता, सर्वधर्म-समभाव, प्रजातंत्र, सामाजिक समता, आर्थिक न्याय एवं विश्व-शांति में निष्ठा रखनेवाले बिहार के युवक-युवतियों को उक्त शिविर में भाग लेने का आमंत्रण है।

शिविर व सम्मेलन में प्रेरणा एवं उद्बोधन श्री जयप्रकाश नारायण, दादा धर्माधिकारी, आचार्य राममूर्ति, पं० रामनन्दन मिश्र, सुश्री निर्मला देशपांडे, श्री नारायण देसाई और डा० रामजी सिंह जैसे लोगों के प्राप्त होंगे तथा वर्तमान प्रमुख सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक एवं शैक्षिक धाराओं एवं समस्याओं पर मुक्त चर्चाएँ भी होंगी।

आवश्यक सूचनाएँ

१. शिविर या सम्मेलन में जो भाग लेना चाहें वे अपना नाम, पता, उम्र, शिक्षा, तरुण-शांतिसेना कार्य के अपने अनुभव, स्वयंसेवक-प्रशिक्षण के अनुभवादि के साथ अपना आवेदन-पत्र ५ दिसम्बर १९७० तक 'तरुण-शान्ति-सेना, ३, पटल बाबू रोड, भागलपुर-१' को जरूर भेज दें। शिविर-सम्मेलन सम्बन्धी पत्र-व्यवहार भी इसी पते पर करें।

२. शिविर में चूँकि ६० लोग ही लिये जायेंगे, अत. चुनाव होने पर उन्हें सूचित किया जायेगा, लेकिन सम्मेलन में जो भी तरुण-शान्तिसैनिक या सहयोगी भाग लेना चाहें, उनका सहर्ष स्वागत है।

३. शिविर और सम्मेलन में भाग लेने के लिए शिक्षण-संस्थाओं से रेलवे-कन्सेशन प्राप्त करें। हमें विश्वास है कि शिक्षण-संस्थाओं के प्रधान ऐसी सुविधा जरूर दे देंगे।

४. शिविर और सम्मेलन में आने के लिए मार्ग-व्यय स्वयं वहन करना होगा। शिविर में चुनाव होने पर केवल ५ रु० शिविर-शुल्क लिया जायेगा, एवं उन्हें २४ से २९ तक भोजनादि नि:शुल्क मिलेगा, किन्तु सम्मेलन में भाग लेनेवालों को दो दिनों के भोजन, जलपानादि के लिए ६ रु. आते ही देने होंगे। निवास की व्यवस्था नि:शुल्क रहेगी।

५. शिविर में ऐसे लोगों को भेजा जाय, जो शिविर से वापस होने पर अपना अधिक समय तरुण-शान्तिसेना के स्थानीय संगठन में दे सकें। जो पूरा समय दे सकें, वे आवेदन-पत्र पर लिख दें।

६. शिविर एवं सम्मेलन में बहनों, आदिवासी, हरिजन, मुसलमान, ईसाई तथा सिक्ख मित्रों को लाने पर विशेष जोर दिया जाय।

७ शिविर-सम्मेलन में आनेवाले जाड़े का ओढ़ना-बिछावन, जलपात्र, दैनिक उपयोग की वस्तुएँ और एक नोटबुक अवश्य लायें।

८. शिविर और सम्मेलन का स्वागत-कार्यालय नवगछिया रेलवेस्टेशन पर तथा नेशनल हाई वे नं० ३१ पर स्थित नवगछिया बसस्टैण्ड के पास खादी भण्डार में रहेगा, जहाँ से आपके निवास आदि की निश्चित सूचना मिलेगी। ●

इस अंक में

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पै०), विदेश में २२ रु०; या २५ शिलिंग या ३ डालर।
एक प्रति का मूल्य २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं मनोहर प्रेस, वाराणसी में मुद्रित

सम्पादक
राममूर्ति

वर्ष : १७ सोमवार
अंक : १० ७ दिसम्बर, '७०

पत्रिका विभाग
सर्व सेवा संघ, राजघाट, वाराणसी-१
फोन : ६४३९१ तार : सर्वसेवा

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

लोकतंत्र और दलवाद

हमारा मुख्य कार्य राजनीति को लोकनीति में रूपांतरित करना है। 'लोकतंत्र' में यह माना गया है कि एक सत्ताधारी पक्ष चाहिए और दूसरा अच्छा बलवान् विरोधी पक्ष। विरोधी पक्ष का होना 'लोकतंत्र' के लिए जरूर है। उसीसे 'लोकतंत्र' टिकता है, क्योंकि वह 'करेक्टिव' होता है। हम पूछना चाहते हैं कि आज के सत्ताधारी पक्ष के सामने वह ऐसा कौनसा पक्ष खड़ा है, जो कि 'करेक्टिव' बन सके? आप सारी हालत देख ही रहे हैं। जो सत्ताभिलाषी पक्ष है, वह 'करेक्टिव' नहीं हो सकता, वह उतना ही 'रोग' हो सकता है, जितना कि सत्ताधारी पक्ष होता, क्योंकि वह आगे सत्ता में आने की इच्छा रखता है। इसलिए जिस तरह वह विरोधी पक्ष के गुणों को चूस लेता है उसी तरह दोषों को भी चूस लेता है। परिणाम यह होता है कि जो सत्ताभिलाषी पक्ष बाहर रहते हैं, उनके विचार की भी वही सीमा बनती है, जो सत्ताधारी पक्ष की होती है। वे भी जाल में फँसे हुए होते हैं, इसलिए 'करेक्टिव' तो वही होगा, जो सब तरह से सत्ता से बाहर है, परन्तु राजनीति का चिंतन करता है।

जो राजनीति का चिंतन नहीं करते हैं और केवल आध्यात्मिक चिंतन करते हैं, वे शान्ति के लिए कुछ काम करेंगे, परन्तु 'करेक्टिव' के लिए राजनीतिक चिंतन करनेवाला और अलग रहनेवाला पक्ष चाहिए। सर्वोदय समाज केवल एक निर्दोष समाज ही नहीं है, वह गुणवान् है, 'करेक्टिव' है। आज जो राजनीति चलती है, वह जब तक चलती रहेगी तब तक उसे शुद्ध करने में वह मदद करेगा और एक दिन राजनीति को तोड़कर लोकनीति की स्थापना करेगा।

सर्वोदयपुरम् (कांचीपुरम्) —विनोबा
२९-५-'५६

• इतिहास की पुनरावृत्ति नहीं होती •

नया कैम्प : छपरा पंचायत में

१९ नवम्बर '७० की संध्या में जयप्रकाश बाबू ने अपने नये कैम्प छपरा में प्रवेश किया। ग्रामवासियों ने बड़े उत्साह और प्रेम से जे० पी०, प्रभावतीजी एवं अन्य मित्रों का स्वागत इस पंचायत-प्रवेश के अवसर पर किया। पंचायत के नागरिक श्री चन्द्रशेखर सिंह और मुखिया श्री रामसागर सिंह उत्साही व्यक्ति हैं तथा गाँव में लोकप्रिय भी। उनके नेतृत्व में ही पंचायत में जे० पी० के आगमन पर स्वागत की तैयारी, सभा तथा कैम्प की व्यवस्था की गयी थी। सभा में अच्छी संख्या में ग्रामवासी उपस्थित हुए और उन्होंने धीरज के साथ ध्यानपूर्वक जे० पी० का विचार सुना। विस्तार से ग्रामदान के कार्य, ग्रामस्वराज्य की प्रक्रिया और ग्राम-अभिक्रम की बातें जे० पी० ने ग्रामवासियों को बतायीं। इस उत्साहपूर्ण प्रवेश से यह सहज आशा है कि काम में भी ग्रामवासी अपना उत्साह दिखायेंगे। यों, यह पंचायत आपसी वैमनस्य, मुकदमेबाजी और स्थानीय उलझनों से जकड़ा हुआ है। मजदूरी की दर कम है और बासगीत जमीन के पर्चे गरीबों को बहुत ही कम मिले हैं, ऐसा बताया जाता है।

इंजीनियर युवकों का प्रेरक अभिक्रम

१७ नवम्बर '७० को इंजीनियरिंग कालेज, सिन्दरी के वे चारों युवक छात्र, जिन्होंने ग्राम-सेवा का व्रत लिया है, अपने नये कार्य-केन्द्र की स्थापना के लिए जे० पी० के कैम्प से विदा हुए। ज्ञातव्य है कि ये छात्र पिछले कुछ दिनों से जे० पी० के कैम्प पर रहकर जे० पी० के सान्निध्य में सेवा की आत्म-शक्ति अर्जित कर रहे थे। इन चारों भाइयों ने अपने कार्य-क्षेत्र के लिए हजारीबाग में चौपारन के पास बेहरा नामक स्थान का चुनाव किया है। व्यक्तिगत जीवन के प्राप्त भोगों के प्रति वैराग्यवान् और समाज-सेवा के पुण्य-संकल्पी इन इंजीनियर किशोर छात्रों के नाम हैं : सतीश कुमार, गिरिजानन्दन, रामपदार्थ और प्रभुनाथ शर्मा। युवा पीढ़ी के आशंकित अन्धकारमय भविष्य को त्याग, विश्वास और रचनात्मक कर्म-निष्ठा के बल पर ये ग्रामाभिमुख होकर प्रकाशित करेंगे, ऐसी श्रद्धा है।

तरुण-शांति-सेना के कार्य

२० नवम्बर '७० को उच्च विद्यालय, रोहुआ में छात्रों और पंचायत के तरुणों की गोष्ठी 'क्रांति और हिंसा' नामक विषय पर आयोजित की गयी। २१ नवम्बर को बैकुण्ठपुर में हो ग्रामीणों की आमसभा हुई जिसमें गाँव में श्रमदान, निरक्षरता-निवारण, सुरक्षा तथा शांति स्थापना आदि कार्यों के लिए लोगों को प्रेरित किया गया।

पहली दिसम्बर से १५ दिसम्बर '७० तक मुसहरी प्रखंड के ग्राम-शान्तिसैनिकों के चार स्वावलंबी शिविर आयोजित करने का निश्चय किया गया है, जिसकी तैयारी में तरुणगण लगे हुए हैं।

एक प्रसंग

'मैं ग्रामदान-फार्म पर हस्ताक्षर नहीं करूँगा, यह मेरा निश्चय है। आप लोग बेकार क्यों मेरे पास आये हैं ?'—दरवाजे पर पहुँचते ही इसी वाक्य से स्वागत हुआ।

'हम लोग बात करना चाहते हैं।' एक मित्र ने कहा।

'बात भी तो आप ग्रामदान की ही करेंगे। मैंने अपना निश्चय बता दिया। फिर बेकार अपना और मेरा समय क्यों बर्बाद करना चाहते हैं ?' उन्होंने कहा।

'ग्रामदान के लिए हस्ताक्षर करने को हम नहीं कहेंगे, इतना विश्वास दिलाते हैं। किन्तु कुछ देर क्या दरवाजे पर बैठने की इजाजत नहीं मिलेगी ?'

'ठीक है बैठिए। किन्तु ग्रामदान की बात नहीं करें।' हम लोग दरवाजे पर कुर्सी और चौकी पर बैठ गये। खेतीबाड़ी, उनके परिवार आदि की बातें शुरू हुईं। फिर कहा, 'ग्रामदान पर हस्ताक्षर न करने के निश्चय के सम्बन्ध में तो पता चला। किन्तु, हम एक बात जानना चाहते हैं कि ग्रामदान से कौनसा ऐसा खतरा आप देखते हैं ? इसकी जानकारी आपसे मिल जाय तो उसमें सुधार की बात भी जाय या हम भी सोचेंगे कि इसमें लगे रहना चाहिए या नहीं ?' बस, चर्चा प्रारम्भ हो गयी और जब वहाँ से चलने लगे तो उन्होंने कहा कि जब सारा गाँव हस्ताक्षर कर देगा तो हम भी कर देंगे।

हमने कहा, 'आपका यह आश्वासन ही हमारे लिए काफी है।' गाँव में बीघा-कट्ठा का वितरण दो बार हो चुका था। अधिकांश प्रमुख लोगों ने हस्ताक्षर भी कर दिये थे। किन्तु, कुछ भूस्वामियों के परिवार बाकी थे। महीने भर प्रतीक्षा के बाद एक रोज गाँव के जिन प्रमुख लोगों ने हस्ताक्षर किया था, उन्होंने एकसाथ बाकी लोगों के दरवाजे पर घूमना शुरू किया, और सर्वप्रथम उक्त सज्जन के यहाँ ही पहुँचे। उन्होंने सुनाया कि, 'मैं तो अपना संकल्प बता चुका हूँ हस्ताक्षर नहीं करने का।' गाँव के प्रमुख लोगों ने कहा, 'आपका संकल्प अपने स्थान पर है, किन्तु गाँव का सम्बन्ध भी तो अपनी जगह है। आपको गाँव के साथ चलना है।' और उन्होंने हस्ताक्षर कर दिया।

—'जयप्रकाश शिविर समाचार' से

ग्राम-शान्तिसेना के आकर्षक पोस्टर

ग्राम-शान्तिसेना के कार्यक्रम में गति लाने और उसके लिए आवश्यक लोक-शिक्षण करने हेतु बहुत कम पढ़े-लिखे या अपढ़ लोगों की समझ में आने लायक पोस्टर आकर्षक चित्रों में तैयार हो रहे हैं। कुल १० पोस्टरों के पूरे सेट की कीमत एक रुपये पचास पैसे है। कृपया जितने सेट मँगाने हों, उतने की अग्रिम लागत (कीमत) भेजकर पोस्टर्स मँगा लें।

मंत्री,
अ० भा० शान्तिसेना मंडल
राजघाट, वाराणसी–१

व्यावहारिकता का एक थोथा दर्शन

आजकल एक अजीब चीज दिखायी देती है। पद प्रतिष्ठा, अधिकार, शिक्षा या धन के कारण जो लोग समाज में बड़े माने जाते हैं, उनके सामने देश की, दुनिया की, समाज-निर्माण की, या समता और शोषण-मुक्ति आदि की बातें कीजिए तो वे सुन तो लेते हैं, लेकिन अन्त में यह कह देते हैं "बातें बहुत अच्छी हैं, ऊँची हैं, लेकिन दूर की हैं। कुछ व्यावहारिक बातें कीजिए। कुछ ठोस होना चाहिए, ठोस!" उनकी इन बातों को सुनकर कुछ ऐसा लगता है, जैसे उनको इन बातों में रुचि ही नहीं है। लेकिन दूसरी ओर सामान्य लोगों के सामने ऐसी बातें कीजिए तो उन्हें बहुत आनन्द आता है। मालिक-मजदूर की समता की चर्चा में मजदूर को, शिक्षक-विद्यार्थी की समता की चर्चा में विद्यार्थी को, सवर्ण-अवर्ण की समता में अवर्ण को, धनी-गरीब की समता में गरीब को बेहद आनन्द आता है। इन चर्चाओं को सुनने से ही उनकी आँखों में जैसे रोशनी-सी आ जाती है। आज तक छोटे लोग अपनी छोटी बातों में फँसे हुए थे और बड़े लोग बड़ी बातें करते थे, करते कराते नहीं थे, लेकिन अब, अब छोटे लोगों ने कुछ बड़ी बातें करना शुरू किया है तो, बड़े लोगों में उन बातों से, जो उन्हींकी सिखायी हुई हैं, अरुचि पैदा होने लगी है। सोचने की बात है कि ऐसा क्यों हो रहा है? व्यावहारिकता और ठोस काम की पुकार क्यों लगायी जा रही है? उसके पीछे मतलब क्या है? न्याय, समता, समाज का समान संरक्षण, तुच्छ पारिश्रमिक, ईमान और इज्जत की जिन्दगी, आदि की सामान्य माँग बड़े लोगों को अचानक इतनी अव्यावहारिक क्यों मालूम होने लगी है? आखिर, छोटे लोगों को ये बातें किसने सिखायीं? सिखानेवाले तो बड़े ही लोग हैं, लेकिन शायद वे यह नहीं जानते थे कि उनकी ही बतायी हुई बातें किसी समय जनता की माँग और चुनौती बनकर उनके पास लौट आयेंगी।

आज के समाज की पूरी व्यवस्था बड़े लोगों के हाथ में है। इस व्यवस्था और सामान्य लोगों की चेतना में बहुत बड़ा अन्तर पड़ गया है। मनुष्य की भीतरी चेतना और समाज की बाहरी व्यवस्था में अन्तर हमेशा रहा है, और कुछ-न-कुछ शायद हमेशा रहेगा, लेकिन आज का अन्तर असह्य हो गया है। असह्य दोनों तरफ से है। एक ओर बड़े लोग अपनी व्यवस्था को चलाने और कायम रखने में असमर्थ हो रहे हैं, और दूसरी ओर छोटे लोग उस भार को ज्यादा सहन करने में असमर्थ हो रहे हैं। इस व्यवस्था को बदलने में दोनों का हित है।

जब बड़े लोग मानते हैं कि वर्तमान व्यवस्था का चलना सम्भव नहीं है—उचित तो है ही नहीं—तो वे इसे बदलने के लिए स्वयं क्यों नहीं उठते? वे व्यावहारिकता की आड़ में अपनी जिम्मेदारी से भागते क्यों हैं, या उसे दूसरों पर टालते क्यों हैं? वे यह क्यों कहते हैं "समस्या बहुत बड़ी है, हम चाहें तो भी क्या कर सकते हैं? हममें शक्ति कहाँ है?" क्या वे यह नहीं सोचते कि उनकी इन बातों का छोटे लोगों पर क्या असर होता है? छोटे लोगों को यह सन्देह होता है कि सचमुच बड़े लोग कुछ करना नहीं चाहते। उन्हें परिवर्तन से भय है—भय इसलिए कि कहीं उनके निहित स्वार्थों में कमी न पड़ जाय। उन्होंने अपने स्वार्थों की रक्षा के लिए व्यावहारिकता का एक थोथा दर्शन-सा बना लिया है। बड़ी बातें केवल कहने के लिए हैं।

बड़ों के इस रुख और रवैये की क्या प्रतिक्रिया हो रही है? एक प्रतिक्रिया यह है कि हताश होकर लोग अपने को समाज और जीवन के प्रश्नों से अलग करते जा रहे हैं और कोशिश कर रहे हैं कल्पना की, अपनी एक नकली दुनिया में रहने की। वह दुनिया कल्पना से बने, सेक्स, शराब या गाँजे से बने, लेकिन है वह मन से भागकर छिपने की जगह। अपने विश्वविद्यालयों में ऐसे युवकों-युवतियों की संख्या तेजी के साथ बढ़ रही है, जो गाँजे से या शराब से अपनी एक अलग मन की दुनिया बनाने और उसमें रहने की कोशिश कर रहे हैं। वे जीवन जीने की शक्ति खोते जा रहे हैं, थक गये हैं, ऊब चुके हैं, हार रहे हैं। दूसरी ओर वे युवक हैं जो बड़ों के प्रभाव और 'व्यवहारवाद' का उत्तर केवल प्रहार में देख रहे हैं। बन्दूक को मुक्ति का वे अकेला साधन मानते हैं। वे विचार की उस शक्ति को अस्वीकार करते हैं, जो चेतना को जगाकर आचरण को प्रभावित करती है, वे बन्दूक की उस शक्ति के कायल हैं जो चेतना को कुंठित कर, मन को आतंकित कर, भय को जगाकर कुछ करने, या न करने को, विवश करती है।

व्यवहार, हार, और प्रहार के इस तनावपूर्ण वातावरण में हम लोग रह रहे हैं। व्यवहार में अत्यधिक सकुचित स्वार्थ छिपा हुआ है, हार में विवेक और संकल्प का पूर्ण अभाव है, प्रहार में अनिसाहसिकता के सिवाय दूसरा कुछ नहीं है। इनमें से किसी में परिवर्तन की शक्ति नहीं है। इसलिए जरूरत इस बात की है कि ये सारे व्यक्ति जो व्यवहार, हार और प्रहार, तीनों से ऊपर उठकर समस्याओं से जूझने के लिए तैयार हों—अलग-अलग नहीं, मिलकर, एक होकर। वे यह कहना छोड़ें कि कुछ करना तो चाहिए लेकिन कुछ हो नहीं सकता। वे यह कहें कि कुछ करना है, उन्हें करना है, जल्द करना है।

समाज-परिवर्तन चाहनेवालों को व्यवहारवाद से उतना ही बचना चाहिए जितना तमूलवाद से। एक हमें स्वार्थों में फँसाता है, और दूसरा इधर-उधर के कल्याणकारी कामों में। दोनों अन्त में यथास्थितिवादी होकर रह जाते हैं। अगर क्रान्तिकारी और कुछ नहीं कर सकेगा तो उसे इतने से सन्तोष मान लेना होगा कि अत्याचारी के साथ क्रान्ति का सन्देश उसने हर कानों तक पहुँचा दिया। कान तक पहुँची बातें दिल तक पहुँचकर रहेंगी हम चाहें या न चाहें, परिस्थितियाँ हमें अब आज की स्थिति में ज्यादा दिन तक रहने नहीं देंगी। अगर यह बात सही हो तो परिवर्तन के बड़े काम के लिए बड़ों की प्रतीक्षा क्यों? ●

इतिहास की पुनरावृत्ति चाहनेवाले क्रान्तिकारी नहीं, लकीर के फकीर
तरुण नया इतिहास बनाने का पराक्रम करें

— आचार्य दादा धर्माधिकारी का आह्वान —

इस देश में जहाँ-जहाँ तरुणों के बीच गया हूँ, मैंने दो तरह के तरुण देखे हैं। एक वे तरुण हैं, जिनको शिकायत है, जिनका धीरज टूट गया है। दूसरे वे तरुण हैं, जो सन्तप्त हैं, क्रोधित हैं। लेकिन इन सबको शिकायत यह है कि आज के समाज में इन्हें कोई स्थान नहीं है। इन तरुणों को मैं असन्तुष्ट तरुण कहता हूँ, रुष्ट तरुण कहता हूँ। ऐसे तरुण, जो क्रुद्ध हैं, जिनके मन में गुस्सा है, लेकिन वे क्रान्तिकारी नहीं हैं। क्रान्तिकारी तरुण वह है, जो आज के समाज में रहने से इनकार करता है। मेरा मतलब है, 'साइकॉलॉजिकली' जो इस समाज में रहना नहीं चाहता है और इसकी जगह एक नये समाज का निर्माण करना चाहता है। इसलिए अब यह प्रश्न मतवादों का, सिद्धान्तों का, अथवा विचारों का नहीं रह गया। प्रश्न जीवन का है।

वे कभी क्रान्ति नहीं कर सकेंगे !

आज के बहुत बड़े समाजशास्त्रियों ने हमारे सामने दो प्रश्न खड़े किये हैं। एक ने पूछा : 'शैल मैन सर्वाइव ?' और दूसरे ने पूछा : "शैल मैन प्रिवेल ?' एक ने यह पूछा कि क्या मनुष्य अब जीवित रहेगा ? दूसरे ने कहा कि जीवित रहने से मेरा मतलब पूरा नहीं होता। क्या मनुष्य अब समाज में प्रभावी रूप से, प्रभावशाली रूप से, जीवित रहेगा ? क्या मनुष्य की सत्ता रहेगी ? यह हमारी प्रधान समस्या है और हमें इसका उत्तर खोजना है। बना-बनाया उत्तर कहीं नहीं है। आज तक जितने उत्तर दिये गये हैं, वे सारे-के-सारे अधूरे उत्तर हैं। हमें उन उत्तरों से आगे बढ़ना है, असल उत्तर की खोज करनी है।

इसलिए जो पहली बात मुझे आप तरुणों से निवेदन करनी है, वह यह करनी है कि आप मार्गदर्शन किसीसे न चाहें। अब कोई पुराना आदमी मार्गदर्शन नहीं कर सकता। उसका दिमाग भी पुराना है। उसका दिल भी पुराना है। उसके दिल की अपनी एक बनावट है। उसका दिमाग भी एक ढाँचे में ढाल दिया गया है। वह कितना ही उससे बाहर निकलना क्यों न चाहे, फिर भी वह आपका मार्गदर्शन नहीं कर सकेगा। इसलिए आप पहला संकल्प यह कीजिए कि आप बनी-बनायी लीकों को छोड़ देंगे। चाहे लीक सशस्त्र प्रतिकार की हो, और चाहे लीक अहिंसक प्रतिकार की। मैंने जान-बूझकर 'हिंसा' नहीं कहा, सशस्त्र प्रतिकार कहा।

आपको जो विकल्प खोजना है, वह सशस्त्र प्रतिकार का विकल्प है। हिंसा का विकल्प दुनिया में कोई नहीं खोज सकता। और यह जो हमने मान लिया है कि समाज में, मानवीय जीवन में, हिंसा बद्धमूल हो गयी है, उसने जड़ पकड़ ली है, यह भ्रम है। आज भी समाज में शान्ति अधिक है, अशान्ति कम। दुनिया में हिंसावादी कोई है ही नहीं। और जो हिंसावादी हैं, वे कभी क्रान्तिकारी हो नहीं सकते। इसलिए इन दो को तो आप 'राइट ऑफ' यानी बातिल कर दीजिए— हिंसावादी और आतंकवादी। जिनका विश्वास ही हिंसा में है और जो दूसरों को डराकर ही क्रान्ति कराना चाहते हैं, वे कभी क्रान्ति कर नहीं सकेंगे। चाहे वह क्रान्ति वैज्ञानिक क्रान्ति हो, चाहे सैद्धान्तिक क्रान्ति। कोई भी क्रान्ति इस तरह से हो नहीं सकती।

क्रान्ति का सच्चा माध्यम

पहले यह विवेक कर लीजिए कि हम चाहते क्या हैं ? हम चाहते हैं, इस समाज को बदल देना, वर्तमान समाज की बुनियादों को बदलना। इसका मतलब यह नहीं है कि हम दूसरी हिंसाओं का मुकाबला नहीं करेंगे, या उनको रोकने की कोशिश नहीं करेंगे, लेकिन यह हमारा मुख्य काम नहीं है। समाज-परिवर्तन की प्रक्रिया में हिंसा का, शस्त्र-प्रयोग का, बल-प्रयोग का जितना स्थान है, क्या उसकी जगह हम किसी दूसरी प्रक्रिया की खोज कर सकते हैं ? अगर आपका दायरा इतना सीमित, मर्यादित और निश्चित नहीं होगा, तो क्रान्ति की तरफ आपका ध्यान नहीं रह सकेगा। ध्यान बँट जायेगा। विनोबा अपनी पद्धति से बार-बार यही बात कहते आये हैं। इसका मतलब यह नहीं है कि कहीं आग लग गयी है, तो आप उसे बुझाने नहीं जायेंगे। इसका मतलब यह भी नहीं है कि कहीं दो आदमी लड़ रहे हैं, तो आप उनमें बीच-बचाव करने नहीं जायेंगे। लेकिन यह हमारा मुख्य काम नहीं होगा। इसे आप खूब समझ लीजिए कि आज सारी दुनिया में जीवनव्यापी हिंसा है— 'सॅडिस्टिक' हिंसा। 'सॅडिस्टिक' हिंसा से मतलब ऐसी हिंसा है, जो हिंसा अब हमारे सांस्कृतिक कार्यक्रमों में सम्मिलित हो गयी है। सांडों को लड़ाने की, 'बुलफाइटिंग' की, जो हिंसा थी, या शेर के सामने गुलामों को छोड़कर मजा देखने की जो हिंसा थी, उससे कहीं भयानक हिंसा यह है, जिसमें जीवन के लिए किसी भी प्रकार का कोई आदर नहीं, जिसमें जीवन का कोई मूल्य ही नहीं रह गया है, जो निर्गुण है, 'वैनल' है। इसीका नाम 'सॅडिस्टिक' हिंसा है। इसका प्रतिकार सशस्त्र-शान्ति-सेना नहीं कर सकेगी। इसका प्रतिकार तो व्यापक शिक्षण के द्वारा ही करना होगा। अब तो धीरे-धीरे शायद हम इस परिणाम पर ही पहुँचेंगे कि क्रान्ति का सच्चा माध्यम, वास्तविक माध्यम शिक्षण ही है।

दूसरी हिंसा है, साम्प्रदायिक, जो अलग अलग गिरोहों में हो जाती है। हम इस हिंसा की रोकथाम भी पूरी तरह से नहीं कर सकेंगे। समाज में शोषण और हिंसा की जितनी घटनाएँ होती हैं, उन सारी घटनाओं के मूल में आज की समाज-रचना है। इसलिए जब तक आप इस समाज को नहीं बदलेंगे तब तक हिंसा का निर्मूलन हो नहीं सकेगा।

आज समाज में तरह-तरह की हिंसाएँ प्रचलित हैं। 'सैडिस्टिक' अथवा 'कल्चरल वॉयलेन्स' की अर्थात् निघृ'ण सांस्कृतिक हिंसा की बात हम कर चुके। दूसरी एक हिंसा है, जिसे अंग्रेजी में 'प्रोफिलैक्टिक' अर्थात् असंगठित हिंसा कहते हैं। दंगों को रोकने के लिए जो बल-प्रयोग और शस्त्र प्रयोग होता है, उससे मेरा मतलब है। पुलिस और फौज के सिपाहियों ने सैनिक-क्षेत्र में इसका नाम प्रतिबन्धक हिंसा यानी 'डिटरण्ट वॉयलेन्स' रखा है। लेकिन असल में यह हिंसा नहीं है। यह बल-प्रयोग है, शस्त्र-प्रयोग है। इन दो में बहुत बड़ा अन्तर है। हिंसा में किसी प्रकार का नियमन नहीं होता, कोई मर्यादा नहीं होती। तीसरी एक हिंसा होती है, जिसे 'थेराप्युटिक' हिंसा कहा जाता है। जब हिंसा फूट निकलती है, तो उसके प्रतिकार के लिए जो संयत, सीमित, मर्यादित शस्त्र-प्रयोग और बल-प्रयोग किया जाता है, उसीको यह नाम दिया गया है। अब इन हिंसाओं की जगह आप कोई दूसरा विकल्प प्रस्तुत कर सकते हैं? यह है समस्या। इसे चैलेंज या चुनौती मत समझिए।

शस्त्र-प्रयोग बिना समाज-परिवर्तन की खोज

क्या अहिंसा का कोई ऐसा स्वरूप हो सकता है, क्या अहिंसा की कोई ऐसी प्रक्रिया हो सकती है, जो हिंसा को रोक सके? यह होगी प्रतिबन्धक अहिंसा। समाज में आपको इसकी खोज करनी होगी। यह इसका विधायक पहलू है। इसका एक दूसरा प्रतिकारात्मक पहलू भी है। जब-जब शस्त्र-प्रयोग और बल-प्रयोग की घटनाएँ घटित होती हैं, तब-तब उनका प्रतिकार करने की कोई पद्धति आपके पास है? यह बनी-बनायी तो होगी नहीं। गांधी के पास भी इसकी कोई बनी-बनायी प्रक्रिया नहीं थी, न कोई पद्धति ही थी। विनोबा के पास भी कोई प्रक्रिया नहीं रही। ये सब 'एक्सप्लोरर्स' हैं, 'पॉयोनियर्स' हैं। यानी खोज करनेवाले और नये रास्ते पर चलनेवाले हैं। यह खोज इन्होंने की। इसमें इनका पुरुषार्थ रहा। आपको भी इसकी खोज करनी होगी। अगर आप यह कहेंगे कि हमको तो रास्ता दिखाया ही नहीं गया, तो सोचिए कि जहाँ था नहीं, वहाँ दिखाया क्या जाता? पहला आदमी जो एवरेस्ट की चोटी पर चढ़ा होगा, उसे किसने रास्ता दिखाया होगा? ऐसे आदमियों की जरूरत है, जो नयी पगडंडियाँ बनायें। इसलिए जब आप कहते हैं कि हमको हिंसा का प्रतिकार करना है, तो आप उसको इस तरह सीमित कर लीजिए कि प्रतिकार हिंसा का नहीं करना है बल्कि समाज-परिवर्तन के लिए बल-प्रयोग और शस्त्र-प्रयोग की आवश्यकता का अन्त करना है। समाज-परिवर्तन के लिए शस्त्र-प्रयोग और बल-प्रयोग की आवश्यकता न रहे, इसके लिए तरुणों में वीरवृत्ति का विकास करना होगा। अब तक वीरवृत्ति शस्त्र प्रयोग के साथ जुड़ी हुई है। शस्त्र को ही मनुष्य ने अन्तिम आधार मान लिया है।

'रिचर्ड दि थर्ड' ने अपने साथियों से कहा था कि डरपोक लोग ही अन्तरात्मा की बात करते हैं। हमारा बाहुबल ही हमारी अन्तरात्मा है और तलवार ही हमारा भाग्य। यह हिंसा है। इसमें न सिपाहियन है, न सैनिकता। जो कहता है कि हमारी तलवार ही हमारा कानून होगा, और हमारा बाहुबल ही हमारी अन्तरात्मा की और हमारे विवेक की जगह लेगा, वह हिंसावादी है। वह न तो सिपाही है, और न बहादुर ही। जो किसी महान् उद्देश्य से शस्त्र-प्रयोग करता है और उसमें अपनी जान की बाजी लगा देता है, वह सैनिक कहलाता है। सैनिकता में हिंसा कम होती है, वीरता अधिक होती है। जहाँ हिंसा अधिक होगी, वहाँ वीरता कम रहेगी। लेकिन जहाँ वीरता या बहादुरी अधिक होगी, वहाँ हिंसा कम पायी जायेगी। इसे खूब अच्छी तरह समझ लेने की आवश्यकता है। जब मैं यह कहता हूँ कि हिंसा का कोई सांस्कृतिक या सामाजिक मूल्य नहीं हो सकता, तो हमें इसके मर्म को समझ लेना होगा।

सशस्त्र-प्रतिकार, सशस्त्र क्रान्ति और युद्ध के अपने कुछ सामाजिक मूल्य थे। इसलिए थे कि ये वीरता का विकास करने के लिए हिंसा को कम करते थे। अतएव मानवीय जीवन के विकास में युद्ध का अपना स्थान रहा। इसीलिए मानवीय जीवन के विकास में शस्त्रास्त्रों का भी एक स्थान रहा। लेकिन अब हमारी खोज क्या है? अब हमें एक कदम आगे बढ़ना है, अर्थात् शस्त्र-प्रयोग के बिना वीरता का विकास करना है। शस्त्र-प्रयोग के बिना समाज परिवर्तन सिद्ध करना है। यह खोज है, इसे आप चुनौती न समझें। दुनिया भर के तरुणों की आज यही खोज है।

क्रान्तिकारी या लकीर के फकीर?

इस प्रसंग में हम कुछ बातों पर विचार कर लें। कम्यूनिज्म या साम्यवाद को छोड़ दीजिए। क्योंकि अब कम्यूनिज्म एक ऐसी चीज हो गया है कि जिसकी अपनी कोई सूरत-शक्ल रही नहीं। लास्की ने कहा था कि समाजवाद बहुत-कुछ उस टोपी की तरह है, जिसका अपना कोई आकार नहीं, क्योंकि सब कोई उसे पहनते हैं। टोपी है, लेकिन हर कोई उसे लगाने लगे, तो उसका कोई आकार नहीं रह जाता। इसलिए कम्यूनिज्म को छोड़ दीजिए। लेनिनिज्म को लीजिए। लेनिन ने एक बात कही, जो बार-बार दोहराई जाती है कि जिस पुराने समाज के गर्भ में नया समाज आ जाता है, उसके लिए हिंसा मस का या धाय का काम करती है। जब लेनिन ने यह बात कह दी, तो

यह ब्रह्मवाक्य-सी बन गयी। इसलिए मैंने कहा था कि ये सब लकीर के फकीर हैं। क्रान्तिकारी कभी लकीर का फकीर नहीं हो सकता। लेकिन कम्यूनिस्टों ने लेनिन की इस बात को मान लिया। दुनियाभर के कम्यूनिस्टों ने माना और कहा कि एक 'ओरेकल' अर्थात् भविष्य-वक्ता आ गया, एक 'प्रोफेट' आ गया। और उनके लिए लेनिन का यह वाक्य, ब्रह्मवाक्य अथवा वेदवाक्य बन गया। लेकिन अगर लेनिन पहली बार ऐसी बात कह सकता था, तो दूसरी बार हमें यह कहना चाहिए कि किसी भी जन्म के लिए हिंसा कभी भी धाय नहीं बन सकती। जन्म तो किसीका हिंसक नहीं होता। कोई 'सिजेरियन ऑपरेशन' भी होगा, तब भी उसमें हिंसा नहीं होती। 'सिजेरियन ऑपरेशन' की खूबी यह है कि उसके कारण बच्चा भी जीवित रहता है और उसकी माता भी जीवित रहती है। क्रान्ति हो, लेकिन मनुष्य की हानि नहीं हो और मनुष्य के जीवन की भी हानि न हो। अर्थात्, प्राण-हानि के बिना क्रान्ति हो। लोग हमेशा 'ऑपरेशन' की मिसाल देते हैं। 'ऑपरेशन' तो रोगी को बचाने के लिए होता है, मारने के लिए नहीं होता। हमें मनुष्य को बचाना है। इसमें हम मनुष्य-मनुष्य के बीच किसी प्रकार का कोई अन्तर या भेद नहीं करेंगे। मनुष्य के गुण-दोषों में भेद होगा, फिर भी मनुष्य तो मनुष्य ही रहेगा। यही हमारी भूमिका होनी चाहिए।

'रूसी' और 'चीनी'

दुनिया के इतिहास में पहली बार अब वह शुभ अवसर आया है, जब मनुष्य अपनी मनुष्यता के ही भरोसे जीवित रह सकता है। अब दूसरा कोई आधार उसके लिए रहा नहीं।

लेनिन ने अपने जमाने में यह एक चीज कही और हमारे लोगों ने उसे उठा लिया। लेनिन के बाद ख्रुश्चेव आया। हमारे कुछ कम्यूनिस्ट नेता उससे मिलने गये। उसने उनसे दो बातें कहीं। पहली बात तो उसने यह कही कि तुम तेलंगाना में यह क्या आन्दोलन चला रहे हो? तेलंगाना तो तुम्हारे देश के बहुत भीतरी हिस्से में है। वहाँ यह आन्दोलन क्यों कर रहे हो? तुम तो क्रान्ति की प्रक्रिया नहीं जानते, उसकी 'स्ट्रैटेजी' को या पैंतरे को नहीं समझते। क्रान्ति के पैंतरे में एक आवश्यक चीज यह है कि आन्दोलन वहाँ करो, जहाँ समाजवादी देश की सीमा से तुम्हारी सीमा लगी हो। वह प्रदेश ऐसा होना चाहिए जिसकी सीमा समाजवादी राज्य की सीमा के नजदीक हो। अगर एक ही न हो, तो कम-से-कम उसके नजदीक तो हो। यह एक बात कही।

दूसरी बात यह कही कि अब तो यूरोप में समाज-परिवर्तन दूसरे तरीकों से ही हो सकता है। अब वहाँ सशस्त्र क्रान्ति की आवश्यकता नहीं रही। यहीं से दो रास्ते हो गये। एक 'रूसी' का रास्ता और दूसरा 'चीनी' का रास्ता। 'रूसी' से मतलब है, रूसवादी कम्यूनिस्ट और 'चीनी' से मतलब है चीनवादी कम्यूनिस्ट। ये दो रास्ते हो गये। जब ख्रुश्चेव ने शान्तिपूर्ण सह-अस्तित्व की बात कही, तो वह एक वेदवाक्य बन गयी। तब से इस देश के साम्यवादी मित्रों के मन में लगातार यह चीज रही कि कोई ऐसा क्षेत्र चुना जाय, जो किसी साम्यवादी राष्ट्र की सीमा के पास का क्षेत्र हो। ऐसे किसी क्षेत्र में कोई-न-कोई आन्दोलन खड़ा करने की बात सोची जाने लगी।

नक्सलवादी या चीनवादी ?

इसके बाद जब पेकिंग में चीन की कम्यूनिस्ट पार्टी का दसवाँ सम्मेलन हुआ, तो उसमें हमारे देश के तीन प्रमुख कम्यूनिस्ट नेता सम्मिलित हुए। उनमें एक श्री शंकरन् नम्बूद्रीपाद भी थे। वहाँ माओ ने उनसे कहा : "जो देश अविकसित हैं, अर्थात् जहाँ यन्त्रीकरण और औद्योगीकरण बहुत नहीं हुआ है, उन देशों में वहाँ का गरीब किसान क्रान्ति करेगा। अगर तुम किसान को क्रान्ति की प्रक्रिया में सम्मिलित नहीं करते हो, तो समझ लो कि तुम क्रान्ति से ही इनकार कर रहे हो।" इतना कहने के बाद माओ ने आगे कहा : "अगर तुम्हें सत्ता अपने हाथ में लेनी है, तो अपने देश में जाकर पहले किसानों को संगठित करो और किसानों के भरोसे सत्ता हस्तगत करो।" यहाँ लौटे। किसानों को संगठित करने की कोशिश की और नक्सलवादी-जैसा क्षेत्र चुना, जो चीन के पड़ोस में है। यानी ख्रुश्चेव की बात भी आ गयी और माओ की बात भी आ गयी।

लेकिन उसके बाद में क्या हुआ? कुछ नक्सलवादियों ने, नहीं, कुछ चीनवादी कम्यूनिस्टों ने, अर्थात् 'चीनी' लोगों ने सोचा कि हम चुनाव के द्वारा राज्य अपने हाथ में लेंगे। यानी सत्ता हथिया लेंगे। मतभेद हुआ। ये जो कनु सान्याल, चारु मजूमदार वगैरह हैं, इनसे मतभेद हुआ, क्योंकि 'ओरेकल' ने दो बातें कही थीं, किसानों का संगठन करो और लोकतान्त्रिक सत्ता का तिरस्कार करो—ये जितनी लोकतान्त्रिक संस्थाएँ हैं, पार्लियामेण्टरी और वैधानिक, उनका कोई उपयोग नहीं है। इनका तो विरोध करना ही चाहिए। लेकिन ये तो चुनाव में खड़े हो गये, इसलिए गद्दार कहलाये। इस पर इनके साथियों ने अपना एक स्वतन्त्र गिरोह बनाया। किन लोगों ने बनाया? यहाँ यह बात ध्यान में रखने की है कि ऐसा हमेशा हुआ है। जो क्रान्तिकारी होता है, वह प्रायः उस वर्ग में से नहीं आता, जिसे क्रान्ति की आवश्यकता होती है। क्रान्ति की आवश्यकता किसान और मजदूर को है। लेकिन मार्क्स किसान भी नहीं था, मजदूर भी नहीं था। और, उससे पहले यूरोपियन सोशियलिज्म का प्रवर्तक 'ओवेन' और ऐसे अन्य लोगों में से भी न कोई किसान था, न मजदूर। जिन्हें आज आप नक्सलपन्थी या नक्सलवादी कहते हैं, उनमें से भी बहुत कम ऐसे हैं, जो किसान या मजदूर हों। अधिकतर मध्यमवित्त या मध्यमश्रेणी के हैं। अब

पाठकों से

आप 'भूदान-यज्ञ' के पाठक हैं, इतना ही नहीं, एक महान अहिंसक क्रान्ति के अभियान में इस तरह एक भागीदार भी हैं। इसलिए इस क्रान्ति-विचार को और व्यापक बनाने के लिए, कम-से-कम एक और साथी तो ऐसा बनाइए, जो इस विचार-वाहक पत्रिका को पढ़ें। —स पादक

इन लोगों के सामने आज सबसे अन्तिम प्रश्न है वह यह है कि क्रान्ति लोगों की अपनी क्रान्ति होगी अथवा लोगों के लिए क्रान्ति होगी? यह आज की अन्तिम समस्या है। आज की क्रान्ति की प्रक्रिया में अन्तिम समस्या।

लोकक्रान्ति के ये अल्पसंख्यक क्रान्तिकारी

आन्डीबोलें नाम का एक लड़का है। 'रिफ्लेक्शन्स ऑन दि रिवोल्यूशन इन फ्रान्स' नाम की उसकी एक छोटी-सी किताब अभी निकली है। पहले भी फ्रान्स की क्रान्ति पर बहुत बड़ी-बड़ी किताबें निकल चुकी हैं। सब इसी नाम से निकली हैं। अब यह किताब फिर निकली है। इन सब लेखकों का एक ही नारा है, और वह यह है कि आगे जो क्रान्ति होगी, वह लोक-क्रान्ति होगी। अब क्रान्ति लोगों के लिए नहीं होगी। लेकिन शस्त्र-प्रयोग और बल-प्रयोग में लोगों का स्थान नहीं रह सकता। यहाँ लेनिन का एक वाक्य याद आता है। उसने कहा था कि जिन लोगों की राय है कि जब सारा समाज क्रान्तिकारी बन जायेगा, तब क्रान्ति होगी, उन्हें दुनिया के अन्त तक इन्तजार करना होगा। यह लेनिन का वाक्य है और शस्त्र-प्रयोग के लिए यह वाक्य बिलकुल वास्तविक है। तब क्या हो?

यहाँ आते हैं, ये ग्वेवारा, फिडल कास्ट्रो, हो ची मिन्ह। इन लोगों का अपना एक पूरा सम्प्रदाय है। इनका कहना है कि क्रान्ति जनता की होनी चाहिए, लोगों की होनी चाहिए, इसे हम सब स्वीकार करते हैं, लेकिन हम करें क्या? लोगों में क्रान्ति की निष्ठा नहीं है और क्रान्ति की आकांक्षा भी नहीं है। लोग तो सुख चाहते हैं, क्रान्ति नहीं चाहते। इस कारण ये चारु मजूमदार जैसे लोग माओ की तरफ से थोड़े ग्वेवारा की तरफ मुड़े। अब तक तो इनका नारा था माओ का दर्शन, माओ का तत्त्वज्ञान और चीनी कम्युनिस्ट पार्टी का नेतृत्व। मैंने आपसे कहा था न कि ये चीनवादी हैं। ये केवल माओवादी नहीं। अर्थात्, चीनी कम्युनिस्ट पार्टी का नेतृत्व होगा और माओ का दर्शन तथा तत्त्वज्ञान होगा। यहाँ तक ये लोग पहले पहुँचे थे। अब ये क्या कहने लगे? लोगों के लिए हम ठहर नहीं सकते। फैसला आम लोग नहीं करेंगे, फैसला वे अल्पसंख्यक करेंगे, जो क्रान्ति के लिए कृतनिश्चय हैं। अर्थात् जिन्होंने प्रतिज्ञा की है, जिन्होंने प्रण कर लिया है, ऐसे कुछ अल्पसंख्यक लोग क्रान्ति करते हैं। निर्णय उन्हीं का होता है। लोग निर्णय नहीं कर सकते।

अब सवाल यह है कि ये नक्सलवादी कौन हैं? कहाँ से आये? इनमें कौन-कौन हिस्सा लेते हैं? इनमें आतंकवाद कितना है? हिंसा की प्रवृत्ति कितनी है? अनियन्त्रित हिंसा कितनी है? ये सारी समस्याएँ हैं। मैं इन सब समस्याओं का विचार यहाँ नहीं कर सकता। लेकिन आप इतना तो इस बात को समझ लीजिए कि इसके पीछे समाज-परिवर्तन की एक पूरी-की-पूरी प्रक्रिया है। और इस प्रक्रिया का आद्य-प्रवर्तक (ओरेकल) माओ है। इस प्रक्रिया को कार्यान्वित करने का प्रयास ग्वेवारा वगैरह आधुनिक तरुणों ने किया है।

इतिहास की पुनरावृत्ति नहीं होती

अब हमारे सामने सवाल यह है कि क्या हम भी यही कहेंगे कि लोक-क्रान्ति असम्भव है? इन लोगों ने क्या कहा? अब इनसे कहा गया कि शस्त्र-प्रयोग और बल-प्रयोग असम्भव है, तो इन्होंने कहा कि शस्त्र-प्रयोग का एक ऐसा तरीका है, जिसे 'गुरिल्ला वॉरफेअर' यानी छापामार लड़ाई कहा जाता है। यह सम्भव है। नारायण देसाई ने मुझे एक छोटी-सी पुस्तक पढ़ने को दी थी। उसका लेखक एक लड़का है। उसने पुस्तक के अन्त में क्या लिखा है? जिसे आप असम्भव कह रहे थे, वह हमारी पकड़ में आ रहा है। और, हमारे देश का तरुण क्या कहता है? इतिहास में जो अब तक सम्भव नहीं हुआ, वह कभी हो नहीं सकता। अर्थात् हमारे देश के तरुण के लिए तो इतिहास रेलवे का टाइम-टेबल है। इसलिए वह कहता है कि जो कल हुआ, वही आज होगा। उसका पहला सवाल वह यह पूछता है कि ऐसा कहाँ हुआ है? वह यह नहीं कहता कि अब तक यह कहीं नहीं हुआ, इसलिए मेरे देश में होगा। लेकिन इन लड़कों ने यह कहा कि जो अब तक फ्रान्स में नहीं हुआ, रूस में नहीं हुआ, चीन में नहीं हुआ, वह लैटिन अमेरिका में होगा, वह वियतनाम में होगा और वह अफ्रीका में भी होगा। लेकिन हमने तो अब तक सिर्फ यही कहा कि जो आज तक नहीं हुआ, वह आगे भी नहीं होगा!

इसलिए मैं कहता हूँ कि तरुणाई का अपना एक दर्शन होना चाहिए। वह दर्शन यह है कि जो इतिहास में कल नहीं हुआ, वह आज होता है और जो आज नहीं हुआ, वह कल होता है। यही इतिहास है। आप नया इतिहास बनायेंगे। पुराने इतिहास के अध्ययन से प्रेरणा मिलेगा, लेकिन उसका अनुकरण नहीं होगा। इतिहास की पुनरावृत्ति नहीं होनी चाहिए। होती भी नहीं है। लेकिन हमने यह मान लिया है कि इतिहास की पुनरावृत्ति होती है। ●

भारतीय व्यवसायियों की बिगड़ती तस्वीर

प्राचीन भारत में व्यवसाय करनेवाले वर्ग को वैश्य कहते थे। यह बड़ी जातियों में तीसरे नम्बर पर थे। उस समय ये दूसरी जातियों की तरह अपने कर्तव्य से पहचाने जाते थे, आज की तरह अपने जन्म से नहीं। यह समझा गया था कि लोग अपनी रुचि और योग्यता के अनुसार अपने कार्यों को करेंगे। इसीको सामने रखकर उन्हें जातियों में बाँटा गया था। अर्थात् किसी अमुक जाति का अर्थ था कि वे अमुक लोग अपने कार्यों को पूरी योग्यता के साथ कर सकते हैं। परन्तु, कुछ दिनों बाद जाति का सम्बन्ध जन्म से हो गया, और जाति-प्रथा अपरिवर्तनीय हो गयी।

उस समय से वैश्य जाति के लोग व्यवसाय में सबसे आगे हैं। और भारत के आर्थिक जीवन में स्वतंत्र व्यवसाय उनका मुख्य पेशा है। आर्थिक जीवन के सभी विभागों में व्यापार, उद्योग, बैंकिंग, बीमा आदि पर वैश्यों का आधिपत्य हो गया है। वैश्य लोग आमतौर से बनिया कहे जाते हैं। ये "व्यापारी राजकुमार" अधिकतर राजस्थान और गुजरात के बनिया होते हैं। तमिलनाडु के बनिया लोगों को "चेटियार" कहते हैं।

इन लोगों को कुछ मुख्य सुविधाएँ प्राप्त थीं, जिनके कारण ये बहुत बड़े-बड़े आदमी बन गये। राजकुमारों की तरह पहले ये लोग भी अच्छे काम करते थे, जैसे मंदिर बनवाना, शिक्षण-संस्थाएँ बनवाना, जनता के लिए अस्पताल तथा सराय बनवाना, और दुर्भिक्ष के समय जनता को राहत पहुँचाना। इसके कारण ये जिस स्थान पर रहते थे, वहाँ के नेता भी बन जाते थे।

अब बनिया, मारवाड़ी, या चेटियार शब्द सुनते ही मन में एक ऐसे व्यक्ति का चित्र उभरता है जो बहुत चालाक, कट्टर, निष्ठुर और सौदेबाज होता है।

यही कारण है कि यद्यपि इनका सम्बन्ध प्रत्येक से रहता है, किन्तु किसीका स्नेह उन्हें नहीं मिलता। युद्ध से पहले व्यापारी आमतौर से राजनीतिक स्वतंत्रता के आन्दोलन को आर्थिक सहायता देते थे। इससे उनके प्रति लोगों की भावनाएँ अच्छी रहती थीं। परन्तु जब युद्ध में इन लोगों ने तस्कर-व्यापार के द्वारा खूब पैसे कमाने शुरू किये, तो इससे जनता का विश्वास खतम हो गया। लोग इनको ही महँगाई का कारण मानने लगे। सन् १९४३ में बंगाल में जो दुर्भिक्ष हुआ था और जिसमें १८ लाख ७३ हजार ७ सौ ४९ व्यक्ति मरे थे; इसका एकमात्र कारण यह था कि बनियों ने गल्ला अपने गोदामों में छिपा रखा था। इसीलिए समाजवादी लोग बराबर कहते हैं कि गल्ले के व्यापार का राष्ट्रीयकरण कर दिया जाय।

सन् १९५४ से संसद में समाजवादियों तथा साम्यवादियों की स्थिति मजबूत रही है। इससे व्यवसायिकों की स्थिति कमजोर हुई है। क्योंकि ये लोग बराबर उन पर आक्रमण करते रहते हैं।

भारत की राजनैतिक पार्टियों में केवल स्वतंत्र पार्टी ही है, जो स्वतंत्र व्यापार की समर्थक है। निम्नलिखित कथनों से ज्ञात होगा कि व्यवसायियों का वास्तविक रूप क्या है।

(१) स्वतंत्र पार्टी की नवम्बर सन् १९४९ की रिपोर्ट में लिखा गया है कि 'दुर्भाग्यवश भारतीय व्यापारियों के बड़े हिस्से ने स्वतंत्र व्यापार को क्षति पहुँचायी है; और राज्य के समाजवाद के शिकार हो गये हैं—केवल परमिट और लाइसेन्स के लिए।'

(२) सर्वोदय नेता श्री जयप्रकाश नारायण ने अपने भाषण में एक स्थान पर कहा था कि 'बहुत ही कम व्यापारी ऐसे हैं, जो व्यवसायिक नैतिकता से कोई सरोकार रखते हैं।'

(३) स्वतंत्र पार्टी के अध्यक्ष श्री एम० आर० मसानी ने कोहेनूर में सन् १९६८ में प्रजातंत्र और प्रगति विषयक छठे अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन में कहा था कि 'अब भारत में एक नया वर्ग उत्पन्न हुआ है। इसके तीन भाग हैं—भ्रष्ट राजनीतिज्ञ, भ्रष्ट सरकारी मुलाजिम और भ्रष्ट व्यापारी। ये तीनों साथ मिलकर काम करते हैं।'

धीरे-धीरे इस तरह के आक्रमण बहुत बढ़ गये। महालनोबिस कमेटी और के० सी० दासगुप्ता कमेटी और एस० दत्त कमिटी ने स्वतंत्र व्यवसाय को अधिक उत्साह देने का समर्थन नहीं किया। अभी भारत के व्यापार का ७० प्रतिशत भाग जनता के हाथ में है। १५ प्रतिशत का राष्ट्रीयकरण हो गया है। इसके अतिरिक्त सभी बीमा कम्पनियाँ, टेलीफोन, सहकारिता, रेलवे और बहुत-से दूसरे बड़े-बड़े व्यापार सरकार के आधिपत्य में हैं।

यह सब होने पर भी व्यापारियों ने सरकारी केन्द्रीयकरण का समर्थन किया है। इसका कारण यह है कि ऐसा होने से इनकी परिस्थिति में और उन्नति हुई है। इसलिए उन्हें इसमें कोई आपत्ति नहीं है।

आज व्यवसाय करनेवालों के विरुद्ध जो विचार पाये जाते हैं, वे केवल समाजवादियों के प्रचार के परिणाम नहीं हैं। बल्कि इनके दो और मुख्य कारण भी हैं। एक तो व्यापारियों के द्वारा कर का चुराया जाना, और दूसरे आयकर नहीं देना। और यही कारण है कि महँगाई और प्रतिबन्ध होते हुए भी आयकर से प्राप्त होनेवाली सरकारी आमदनी बढ़ी नहीं। बैंक के खातों से भी इसका पता लगता है कि कर की चोरी करने और अदायगी नहीं करने का भारत में आम रिवाज है। यद्यपि कानून इस समस्या का समाधान नहीं कर सका है, लेकिन एक ऐसी आम बात बहुत दिनों तक छिपी नहीं रह सकती है।

व्यापारियों और उद्योगपतियों के

राष्ट्रीय उत्पादन के स्तर से अधिक ऊँचे रहन-सहन से भी इनका पता लगता है। इन कारणों से पिछले आठ वर्षों में १५०-२० करोड़ रुपये सरकारी खजाने में जाने के बदले इन व्यापारियों के खजाने में चले गये। यह भारत के लिए एक बड़ी समस्या है। इसका प्रभाव जनता के रहन-सहन पर पड़ता है और आम लोगों का स्तर ऊँचा नहीं हो पाता। अमीर और गरीब के बीच की खाई बढ़ती जाती है, जिसके कारण आम लोगों का जीवन कठोर और दुःखों से भरा होता है, और थोड़े-से लोग मौज करते हैं। परिणाम यह है कि समाज में तनाव, बेचैनी और राजनीतिक अस्थिरता पैदा हो गयी है।

व्यवसाय करनेवालों का दूसरों की आमदनी पर सुखी जीवन बिताना और आम लोगों का आर्थिक जीवन दयनीय होना भी व्यवसाय करनेवालों के विरुद्ध पाये जानेवाली धारणा का महत्त्वपूर्ण कारण है। बड़े-बड़े व्यापारियों के कथन से यह पता लगता है कि लोगों का उनके बारे में क्या विचार है, इसका उन्हें पता है। अन्तरराष्ट्रीय चेंबर आफ कामर्स के अध्यक्ष श्री भरत राम ने १२ अप्रैल, '७० को नयी दिल्ली में गल्ला बेचनेवाले व्यापारियों के राष्ट्रीय अधिवेशन में गल्ले के राष्ट्रीयकरण का विरोध करते हुए कहा था कि, 'कारण जो भी हो, आज देश में व्यापारियों के विरुद्ध राग-द्वेष पाया जाता है, और इसका कारण राजनीतिक प्रचार नहीं है, बल्कि वे स्वयं हैं।' व्यापारियों के सामाजिक उत्तरदायित्व पर पिछले कुछ वर्षों में कई राष्ट्रीय परिचर्चाएँ हो चुकी हैं। इनसे भारत में व्यवसाय करनेवालों का चरित्र सामने आता है।

व्यापार और व्यवसाय की व्यवस्था में सुधार लाने का प्रयत्न हुआ, लेकिन पूरे तौर पर सुधार नहीं आया है। इसका उत्तरदायित्व सरकारी नीति बनानेवाले पर भी है, जिसके कारण महँगाई बढ़ता है, एकाधिकार की परिस्थिति उत्पन्न होती है।

इस सबका परिणाम केवल यही नहीं है कि व्यापारियों की तस्वीर बिगड़ती है, बल्कि आधुनिक प्रजातांत्रिक पद्धति और समाज-व्यवस्था पर भी चोट पड़ती है। जब तक नीति नहीं बदलती है, तब तक इस परिस्थिति में सुधार की सम्भावना नहीं है। —डा० वी० आर० शेनॉय

डायरेक्टर, इकोनॉमिक रिसर्च सेंटर, नयी दिल्ली

['इकोनॉमिक टाइम्स' से प्रकाशित अंग्रेजी लेख से]

तरुण शांति-सेना : एक परिचय

"हमें चोर-डाकुओं का डर नहीं लगता। पुलिस से भी हम नहीं डरते, लेकिन जब छात्रों का हुजूम सड़कों पर दिखायी पड़ता है, तो अपनी दुकानों के दरवाजे बन्द करके हम भाग जाते हैं।" चर्चाओं के दौरान उस दुकानदार ने अपनी यह प्रतिक्रिया आज के युवकों के बारे में व्यक्त की। इसी प्रकार छात्रों की एक सभा में भाषण देकर आने के बाद एक नेताजी ने अपने उद्‌गार प्रकट किये, "इन नवजवानों के मुँह पर तो इन्हें खुश रखने के लिए हम चाहे जितनी प्रशंसा इनकी कर लें लेकिन घर में घर के ही चिराग से आग लग रही है।" "आज के युवकों के मन में समाज में विद्यमान, यथास्थिति और प्रतिष्ठान के प्रति कोई आक्रोश या विद्रोह की भावना नहीं है, वरन् उनकी सारी नाराजगी इस बात की रहती है कि पद, प्रतिष्ठा और पैसेवाले आज के ढाँचे में कहीं जम जाने की जगह उन्हें भी क्यों नहीं मिल जाती!" यह कहना थी एक समाज-चिन्तक की।

युवा वर्ग की स्तुति और निन्दा के बीच उस नवजवान मित्र का यह प्रश्न भी कुछ कम महत्त्व नहीं रखता, "आखिर हम किससे प्रेरणा लें? भ्रष्ट प्रशासन, सत्ता की कुर्सी को ही एकमात्र इष्टदेवी मानकर उसके लिए दल बदल तक करनेवाला नेता, पेशेवर शिक्षक, बच्चों के संस्कारों के प्रति बेखबर रहनेवाला अभिभावक, आज हमारे सामने कौनसे आदर्श पेश कर रहे हैं?"

उपरोक्त परस्पर विरोधी स्वरों में गम्भीरतापूर्वक विचार करने पर कुछ तथ्य अवश्य दिखेगा, लेकिन हम तरुणों को अब इस शिकवा-शिकायत में अपनी शक्ति का क्षय न करके वर्तमान समाज के ढाँचे को ही जड़-मूल से बदलने में अपनी पूरी शक्ति से जुट जाना चाहिए। हमें अपनी आस्था और पुरुषार्थ की प्रेरणा इन बुनियादी मूल्यों से प्राप्त करनी होगी कि आज समाज में चाहे जितनी बुराइयाँ दीखती हों, लेकिन समाज को आधारशिला तो कुछ शाश्वत मूल्य ही हैं। अच्छाइयाँ कम भले ही दीखती हों, लेकिन समाज को टिकाये हुए तो वे ही हैं। भारत-भूमि की उदात्त संस्कृति, उज्ज्वल परम्पराओं तथा यहाँ की महान् विभूतियों की तपस्याओं से सजाये-सँवारे गये कुछ शाश्वत-मूल्य हमारे खून में घुल-मिलकर आज भी हमारी धमनियों में प्रवाहित हो रहे हैं। विज्ञान के परिणामस्वरूप वसुधैव कुटुम्बकम् का नारा आज साकार हो गया है, अतः विश्व के महापुरुषों के चिंतन का नवनीत भी हमारे लिए सुलभ है। आइए, मानव जाति को प्राप्त इस युग के दो वरदानों—लोकतंत्र और विज्ञान—के साथ इन मूल्यों का समन्वय कर आज की सिसकती-कराहती मानवता को त्राण दिलाने में हम कटिबद्ध होकर लग जायें।

इस काम को पूरा करने के लिए सर्वप्रथम हमें स्वयं में चरित्र-निर्माण, सही नेतृत्व, सहकारी वृत्ति, मैत्री-भावना, आदि स्वस्थ मूल्यों का समावेश कर आत्म-विकास के प्रयास में लगना होगा। साथ ही संगठित होकर अपने पुरुषार्थ को सार्थक करने के लिए रचनात्मक दृष्टिकोण रखते हुए राष्ट्र-निर्माण की सही दिशा ढूँढनी होगी। इस प्रकार के कार्य अब हमें आवश्यकता महसूस होगी युवकों के एक सदस्य मंच की। इस आवश्यकता की पूर्ति में ही हमारे समक्ष खड़ी है—तरुण-शांतिसेना।

तरुण-शांतिसेना का जन्म सन् १९६७ में बिहार प्रदेश के भयंकर अकाल के समय

विद्यार्थी-अकाल-शिविर के लगभग ७०० छात्रों द्वारा किये गये प्रत्यक्ष राहत-कार्य के सन्दर्भ में आये उत्साह-प्रद तथा प्रेरणादायक अनुभवों के परिणामस्वरूप हुआ। अखिल भारत शान्तिसेना मण्डल द्वारा सन् १९६४ से चल रहे किशोर शांतिदल का रूपांतरण तरुण-शांतिसेना के रूप में हुआ।

तरुण-शांतिसेना के उद्देश्य

१. लोकतंत्र, २. राष्ट्रीय एकता, ३. सर्वधर्म-समभाव, ४. सामाजिक न्याय, ५. आर्थिक समता, ६. विश्व-शांति।

संगठन

उपरोक्त उद्देश्यों में विश्वास रखनेवाले १४ से २२ वर्ष तक की उम्र के युवक या युवती १ रु० वार्षिक सदस्यता-शुल्क देकर तरुण-शान्तिसेना का सदस्यता-फार्म भर सकते हैं। ऐसे दो सदस्य जहाँ हों, वहाँ तरुण-शांतिसेना केन्द्र की स्थापना होती है। सर्व-सम्मति से एक निश्चित अवधि के लिए संयोजक तथा सह-संयोजक का चुनाव भी केन्द्र में होता है। १० सदस्यों के हो जाने पर एक दस्ता तथा ३० सदस्यों के होने पर एक जत्था गठित होता है। एक केन्द्र में कई जत्थे हो सकते हैं। दस्ता-नायक और जत्था-नायक भी होता है। केन्द्र-संयोजक अपने केन्द्र का त्रैमासिक रिपोर्ट अखिल भारतीय तथा प्रांतीय कार्यालय को भेजता है। संगठन की दृष्टि से सामान्य तौर पर यह सोचा गया है कि सबसे बुनियादी इकाई तरुण-शांतिसेना केन्द्र, जिला तरुण-शांतिसेना समिति, तथा अखिल भारतीय तरुण-शांतिसेना समिति होगी। अभी व्यवस्थित रूप से संगठन का वह स्वरूप नहीं जम सका है। बुनियादी तरुण शांतिसेना-केन्द्र देशभर में गठित हो रहे हैं। उनका सम्बन्ध मुख्यतया अखिल भारत शांतिसेना मण्डल से आज रहता है। प्रांतीय शांतिसेना समितियाँ भी अपने प्रदेशों में इन केन्द्रों का मार्गदर्शन करती हैं। बिहार प्रदेश में विधिवत् तरुण-शांतिसेना समिति प्रदेश-स्तर पर गठित हुई है। प्रयास है कि तरुण-शांतिसेना का पूरा संगठन प्रत्यक्ष रूप से तरुणों पर ही आधारित हो।

कार्यक्रम

तरुण-शांतिसेना के तीन अनुशासन हैं (१) श्रम, (२) सेवा, (३) और स्वाध्याय। अतः इसके कार्यक्रम भी श्रम, सेवा, स्वाध्यायकेन्द्रित हैं। तरुण-शांतिसेवक अपने स्वयं के जीवन में परिवर्तन आरम्भ करने में आस्था रखता है, इसीलिए समग्र व्यक्तित्व के विकास की दृष्टि से उसके शरीर, हृदय तथा मस्तिष्क का विकास आवश्यक है—शरीर के लिए श्रम, हृदय के लिए सेवा, और मस्तिष्क के लिए स्वाध्याय। व्यक्तियों का समूह ही समाज है। अतः इसके माध्यम से समाज के ढांचे में आमूल परिवर्तन किया जा सकेगा। उपरोक्त तीन शीर्षकों के अन्तर्गत कार्यक्रमों की एक लम्बी सूची बनी हुई है। स्थानीय परिस्थिति के अनुसार आवश्यक कार्यक्रमों को प्राथमिकतानुसार उठाया जा सकता है। प्रत्यक्ष काम की दृष्टि से सप्ताहान्त शिविरों का आयोजन मुख्य अंग है।

प्रति वर्ष होनेवाले अखिल भारतीय, प्रांतीय, अथवा स्थानीय शिविरों में कुछ एक माह का समय तरुण-शांतिसेवक देते हैं। अपनी पढ़ाई पूरी करने के बाद राष्ट्रीय सेवा के लिए एक वर्ष देने की योजना भी तरुण-शांतिसेना के अन्तर्गत है। इस एक साल का विस्तृत पाठ्यक्रम आदि बना हुआ है। इस अवधि में उनके आर्थिक निर्वाह की जिम्मेदारी संस्था की ओर से उठायी जायगी।

६ अगस्त 'हिरोशिमा' दिवस को 'तरुण-शांतिसेना दिवस' के रूप में विशेष कार्यक्रम के तौर पर तरुण शांतिसेना-केन्द्रों पर मनाया जाता है। ३० जनवरी 'शांति-दिवस' के रूप में मनाते हैं।

गणवेश

तरुण-शांतिसेना का अपना गणवेश भी है। भाइयों के लिए सफेद हाफ कमीज, सफेद हाफ पैण्ट तथा बहनों के लिए सफेद स्कर्ट-ब्लाउज सलवार-कमीज, साड़ी (जहाँ जो पहना जाता हो) होगी। दोनों के लिए केसरिया रंग की खादी की २॥ इंच चौड़ी कमरपट्टी (बेल्ट) तथा खादी का केसरिया रंग का स्कार्फ गले में होगा। तरुण-शांतिसेना लिखा हुआ एक पदक सीने पर होगा।

प्रशिक्षण

तरुण-शांतिसैनिकों के प्रशिक्षण की दृष्टि से कुछ छोटी पुस्तिकाएँ आदि बनी हुई हैं। समय-समय पर अखिल भारत शांतिसेना-मण्डल की ओर से कुछ सामग्रियाँ तथा उपयोगी जानकारी भेजी जाती रहती है। इसके अलावा समय-समय पर देश भर में स्थानीय, क्षेत्रीय स्तर पर तरुण-शांतिसेना शिविरों के आयोजन होते हैं। प्रति वर्ष अखिल भारतीय स्तर के दो शिविर होते हैं, जिनमें देश भर के युवक-युवतियाँ भाग लेते हैं। इन शिविरों में देश के कुछ चुने हुए विद्वान वक्ताओं के व्याख्यान, गोष्ठियाँ, श्रम, सफाई, सांस्कृतिक कार्यक्रम, खेल-कूद, प्रार्थना, योगासन तथा समूह-जीवन आदि का अभ्यास होता है। सहज ही युवकों का दल व्यापी मैत्री-सम्बन्ध इन शिविरों में बन जाता है। फिर वह पत्र-व्यवहार आदि के माध्यम से बढ़ और प्रगाढ़ होता रहता है। अतः राष्ट्रीय एकता की दिशा में ये शिविर बहुत अच्छे माध्यम सिद्ध होते हैं। शिविरों से वापस जाने के बाद पुराने मित्र अपने केन्द्रों को और अधिक सक्रिय करने में तथा नये मित्र अपने स्थान पर नये केन्द्र खोलने में लग जाते हैं। सन् १९६९ से प्रति वर्ष एक अखिल भारतीय तरुण-शांतिसेना सम्मेलन भी होता है।

समाज में व्याप्त शांति के प्रतीक तरुण हिंसा-शक्ति की व्यर्थता के परिणामस्वरूप शांति के माध्यम से सामूहिक पुरुषार्थ के लिए सेना के रूप में संगठित होकर शान्तिमय क्रान्ति के लिए आज कटिबद्ध हो रहे हैं। और इस नयी क्रान्ति के लिए नये साथियों का आवाहन करते हैं। कृपया शीघ्र ही इसके लिए अखिल भारत शांतिसेना मण्डल, राजघाट, वाराणसी-१ (उ० प्र०) से सम्पर्क स्थापित करें। —अमरनाथ

ग्रामस्वराज्य-कोष के अनुभव और आगे के कदम

❀ सिद्धराज ढड्ढा ❀

इस वर्ष पू० विनोबाजी की ७५वीं जन्म-जयन्ती के विशेष निमित्त को लेकर ग्रामस्वराज्य-कोष के संग्रह का जो एक देशव्यापी प्रयत्न हम लोगों ने किया, वह अब पूरा हो रहा है। कोष संग्रह अपने आप में साध्य नहीं था। बाबा के प्रति अपनी श्रद्धा प्रगट करने के साथ-साथ आंदोलन के लिए आवश्यक साधन जुटाने के लिए हमने यह काम हाथ में लिया था। अब इस सिलसिले में आये हुए अनुभवों के आधार पर आंदोलन की दृष्टि से आगे के लिए कुछ विचार कर लेना आवश्यक है।

अर्थ-संग्रह

आर्थिक साधन जुटाने का प्रश्न सर्वोदय-आंदोलन में हमारे लिए हमेशा महत्त्वपूर्ण रहा है, और ज्यों-ज्यों आंदोलन बढ़ेगा त्यों-त्यों उसकी अहमियत बढ़ती जायगी। ग्रामस्वराज्य-कोष के निमित्त से इकट्ठी की गयी धन-राशि तो २-३ वर्ष में समाप्त हो जायगी, पर आंदोलन के बढ़ने के साथ-साथ उसके लिए आर्थिक साधन जुटाने का प्रश्न बराबर बना रहेगा। बार-बार इस तरह चंदा इकट्ठा करना न तो संभव है, न उचित। इससे हमारी कुछ-न-कुछ तेजो-हानि ही होती है।

शायद इसी बात को ध्यान में रखते हुए, ग्रामस्वराज्य-कोष के समर्पण-समारोह के समय २ अक्तूबर को सेवाग्राम की सभा में विनोबाजी ने कुछ ऐसे सुझाव हमारे सामने रखे थे जिनको अमल में लाया जाय तो आंदोलन के लिए धन जुटाने के काम को चंदे का नहीं, बल्कि लोक-शिक्षण का रूप दिया जा सकता है। आज की स्थिति में मोटे तौर पर आंदोलन के काम के लिए हर साल देशभर में ५०-५५ लाख रुपये की आवश्यकता होगी, ऐसा मानकर पू० विनोबाजी ने उस समय कुछ सुझाव दिये थे -

(१) हिन्दुस्तान में ५५ करोड़ लोग हैं। अगर हर व्यक्ति एक पैसा दे तो ५५ लाख रुपये इकट्ठे हो सकते हैं। पर इस प्रकार के संग्रह की कठिनाई को ध्यान में रखते हुए विनोबाजी ने स्वयं कहा था कि उनकी आकांक्षा यह जरूर है, पर है यह "जरा आगे की बात"।

(२) दूसरा उपाय विनोबाजी ने यह सुझाया था कि देश में साढ़े पाँच लाख गाँव हैं, हर गाँव १० रुपये दे तो ५५ लाख रुपये हो सकते हैं।

(३) तीसरा विकल्प विनोबाजी ने यह बताया था कि इस देश में ५५ लाख सरकारी नौकर हैं। अगर हर एक सरकारी कर्मचारी साल में एक रुपया दे तो काम पूरा हो जाता है। विनोबाजी ने कहा कि अगर ऐसा हो जाता है तो हमारी बहुत बड़ी फतह होगी। उनके खुद के शब्दों में, 'फिर सरकार चाहे जिस पार्टी की हो, आपने लोकनीति की स्थापना की, ऐसा मैं मानूंगा।'

(४) चौथी बात यह कि देशभर में डेढ़ लाख ग्रामदान हुए हैं। हर ग्रामदानी गाँव से ३ रुपये ६५ पैसे देनेवाले १० लोग निकलें तो प्रति गाँव ३६ रुपये ५० पैसे के हिसाब से डेढ़ लाख गाँवों से ५५ लाख रुपये प्राप्त हो सकते हैं। हर ग्रामदानी गाँव में ऐसे १० लोगों का मिलना मुश्किल नहीं होना चाहिए। इस विकल्प की तफसील में विनोबाजी ने यह भी बताया कि हर गाँव से जो ३६ रुपये मिलें उसमें से १२ रुपये लेकर हमारी एक उत्तम पत्रिका वहाँ पहुँचायी जाय। बाकी २४ रुपये का आज की तरह स्थानीय, प्रान्तीय और राष्ट्रीय विभाजन कर सकते हैं।

थोड़े-से धन-पतियों से बड़ी-बड़ी रकमें माँग लेने के बजाय आंदोलन के लिए आवश्यक धन के साथ-साथ ज्यादा-से-ज्यादा लोगों की सहानुभूति भी किस प्रकार प्राप्त की जा सकती है, इसी दृष्टि से विनोबाजी ने उपरोक्त सुझाव दिये थे, ऐसा मैं समझा हूँ। इस प्रकार के और भी कुछ तरीके हो सकते हैं। उदाहरण के लिए (१) देश में शिक्षकों की एक बहुत बड़ी जमात है। हमारा आंदोलन विचार-क्रांति पर आधारित है, इसलिए शिक्षक-वर्ग का उससे घनिष्ठ सम्बन्ध तो भी आना ही चाहिए। हर शिक्षक हर साल सर्वोदय की विचार-क्रांति के लिए कुछ दे, ऐसी योजना करनी चाहिए। (२) इसी प्रकार संगठित मजदूरों से भी संग्रह किया जा सकता है, जैसा कि ग्रामस्वराज्य-कोष के सिलसिले में कहीं-कहीं हुआ है। (३) ग्रामस्वराज्य-कोष के संग्रह के सिलसिले में यह अनुभव आया है कि शहरों में बुद्धिजीवी और धनी मित्रों में अनेक ऐसे हैं जो सर्वोदय-आंदोलन के प्रति सहानुभूति रखते हैं और अगर उनसे बराबर संपर्क रखा जाय और आंदोलन की गतिविधि से उन्हें परिचित रखा जाय तो हर वर्ष उनसे अच्छी मात्रा में सहायता आसानी से मिल सकती है। (४) रचनात्मक कार्यकर्ताओं की भी एक बड़ी जमात देश में है। उनसे हर वर्ष एक दिन का वेतन प्राप्त करने का एक व्यवस्थित कार्यक्रम बनाया जा सकता है। (५) घर-घर सर्वोदय-पात्र का कार्यक्रम तो विनोबाजी ने बहुत पहले सुझाया था और आंदोलन की दृष्टि से वह महत्त्वपूर्ण भी है।

इस तरह धन-संग्रह के साथ साथ आंदोलन के लिए व्यापक पैमाने पर लोगों की सहानुभूति प्राप्त करने के कई तरीके हो सकते हैं। कोई एक निश्चित तरीका लागू किया जा सके तो अच्छा ही है, लेकिन भिन्न-भिन्न स्थानों में, जहाँ जैसी अनुकूलता और शक्ति हो, ऊपर बताये हुए प्रकारों में से एक या एक से अधिक प्रकारों में शक्ति लगायी जा सकती है। इस वर्ष तो कोष के संग्रह में कई महीनों तक हम सबकी शक्ति लगी, पर भविष्य में ऐसी योजना होनी चाहिए कि एक-दो सप्ताह की अवधि में ही संग्रह का सघन

अभियान चलाकर उसे पूरा कर लिया जाय। बल्कि अगर किसी एक निश्चित दिन यह काम हो सके तो और भी अच्छा। अगले २-४ वर्ष में अलग-अलग जगह इस प्रकार अलग-अलग प्रयोग हो तो उससे हमें इस काम में आनेवाली व्यावहारिक कठिनाइयों का भी पता चलेगा और अनुभव भी होगा।

हमारा देश इतना विशाल है और उसमें परिस्थितियाँ इतनी भिन्न हैं कि किसी एक केन्द्र से आयोजन करने के बजाय शायद प्रदेश-स्तर पर ही अर्थ-संग्रह का चिंतन और समायोजन उपयोगी होगा। फिर भी, अखिल भारतीय स्तर पर इस बारे में अगर कोई बात उपयोगी और संभव मानी जाय तो इस बारे में सर्व सेवा संघ में सोचकर कुछ तय किया जा सकता है। देश के विभिन्न स्थानों में अर्थ-संग्रह के लिए ऊपर लिखे अनुसार जो प्रयोग हो या हुए हो उनकी जानकारी का संकलन और आदान-प्रदान, यह काम शायद केन्द्र का हो सकता है। इसी तरह विभिन्न प्रकार के कार्यक्रमों के लिए आवश्यक साहित्य तथा योजना के सुझाव केन्द्र की ओर से तैयार किये जा सकते हैं। आगे के लिए अर्थ-संग्रह की योजना पर हमें अब गंभीरता से सोच लेना चाहिए।

आंदोलन की जानकारी का संकलन और प्रसार

ग्रामस्वराज्य-कोष के संग्रह के सिलसिले में एक अनुभव बार-बार हुआ कि हमारे आंदोलन के काम की जानकारी लोगों को नहीं है। इस कमी का भान सबको हुआ होगा। पू० विनोबाजी आंदोलन की जानकारी के अच्छे प्रसार और प्रचार पर बराबर जोर देते रहे हैं। उन्होंने कई बार कहा है कि हमारा काम इस तरह चल रहा है जैसे दीपक जलाकर उसको ढाँक दिया जाय। सर्वोदय-आंदोलन में जगह-जगह छोटे-मोटे दीपक जल रहे हैं, लेकिन वे ढँके हुए हैं। उनकी जानकारी लोगों को नहीं होने से, अंधेरा सा नजर आता है। जगह-जगह, लोग हमसे पूछते हैं कि इतने ग्रामदान हुए उससे वहाँ क्या फरक हुआ, तो हम खुद निरुत्तर-से हो जाते हैं। हमें खुद को इस बात की जानकारी नहीं होने से हम इन सवालों का जवाब ठीक से नहीं दे पाते। हमारे अपने कार्यक्षेत्र में जो कुछ हो रहा हो उसकी जानकारी हमें हो तब भी अन्य जगहों की जानकारी के अभाव में वह चीज हमें इतनी नगण्य और छोटी मालूम होती है कि हम उसका भी बयान करते हिचकते हैं। आंदोलन में जगह-जगह क्या हो रहा है, खासकर कई ग्रामदानी गांवों में ग्रामदान के बाद जो कुछ हो रहा है, उसकी व्यवस्थित और अच्छी तरह संकलित की हुई जानकारी प्रकाशित होती रहे तो हमें खुद को शायद आश्चर्य होगा कि आंदोलन के द्वारा कितना काम हो रहा है। तब हमारी अपनी मायूसी भी दूर होगी और लोगों की सहानुभूति तथा उनसे आर्थिक साधन प्राप्त करना भी ज्यादा आसान होगा।

आन्दोलन में जगह-जगह जो कुछ हो रहा है उसकी जानकारी के नियमित संकलन और प्रकाशन की व्यवस्था के साथ-साथ उसे लोगों तक पहुँचाने और उनके ध्यान में उसे लाने की भी एक सुनिश्चित 'योजना हमें बनानी चाहिए। जानकारी को केवल हमारी पत्रिकाओं में या पर्चों-पुस्तिकाओं के रूप में छाप देना बहुत उपयोगी या काफी नहीं होगा। आज देश में जो विषम परिस्थिति चल रही है उसके कारण सर्वोदय-आन्दोलन के प्रति लोगों के मन पहले की अपेक्षा ज्यादा अनुकूल हुए हैं, ऐसा कोष-संग्रह के सिलसिले में कई जगह अनुभव आया। अब सर्वोदय-आंदोलन के प्रति पहले की-सी उपेक्षा नहीं है, बल्कि यह जानने की उत्सुकता है कि आन्दोलन में क्या हो रहा है। हर छोटे शहर से सौ-पचास तथा बंबई, कलकत्ता से कम-से-कम हजार-पाँच सौ ऐसे लोगों की सूची हमारे पास होनी चाहिए जो आन्दोलन से सहानुभूति रखते हैं, और ऐसी योजना करनी चाहिए कि वहाँ के हमारे शांति-केन्द्रों, शांति-प्रतिष्ठान-केन्द्रों के जरिये आन्दोलन की जानकारी समय-समय पर व्यक्तिगत संपर्क द्वारा इन लोगों को पहुँचायी जा सके।

संगठन

अर्थ-संग्रह और आन्दोलन के काम की जानकारी का प्रचार आंदोलन की गति बढ़ाने के लिए आवश्यक है, पर सबसे जरूरी चीज संगठन है। संगठन चुस्त और मजबूत न हो तो आर्थिक साधनों का या वातावरण का उपयोग हम नहीं कर पायेंगे। ग्राम-स्वराज्य-कोष के काम से कार्यकर्ताओं में आत्मविश्वास की भावना जागृत हुई है। आर्थिक साधन भी उपलब्ध हुए हैं। इस समय अगर हम संगठन को भी मजबूत कर सके तो इन चीजों का फायदा हम ठीक से उठा सकेंगे और ग्रामस्वराज्य-कोष का यह अभियान हमारे आन्दोलन के लिए एक अच्छा मोड़ साबित हो सकेगा। सौभाग्य से अभी सेवाग्राम के संघ-अधिवेशन में लोक-सेवक के निष्ठापत्र और नियमों में भी बहुत सामयिक और स्वागत-योग्य परिवर्तन किया गया है। "पूरा समय और सर्वस्व चिंतन" की शर्त के कारण बहुत-से निष्ठावान मित्र, जिन्हें आजीविका के लिए दूसरे कामों का सहारा लेना पड़ता था, लोकसेवक नहीं बन सकते थे। दूसरी ओर, ऐसे बहुत-से लोग थे जो विचार में शायद उतनी निष्ठा नहीं रखते हो लेकिन किसी रचनात्मक प्रवृत्ति में लगे हुए होने के कारण स्वत: ही लोकसेवकों की गिनती में आ जाते थे। ये दोनों प्रकार की कमियाँ नये नियमों में दूर कर दी गयी हैं, इसलिए अब वास्तव में सर्व सेवा संघ के लिए निष्ठावान व्यक्तियों का संगठन बनने का मौका आया है। नियमों में इस परिवर्तन का और ग्रामस्वराज्य-कोष के काम से पैदा हुई आत्मविश्वास की भावना का फायदा उठाकर हमें जिलों-जिलों में संगठन को मजबूत और दृढ़ करने की ओर तुरन्त ध्यान देना चाहिए। सर्व सेवा संघ के कुछ प्रमुख साथियों को खासतौर से यह→

शिक्षा में आमूल क्रान्ति अनिवार्य

आचार्यकुल वर्तमान जड़ता को तोड़ने में पहल करे

उत्तरप्रदेश आचार्यकुल सम्मेलन का महत्त्वपूर्ण संदेश

प्रथम उत्तरप्रदेशीय आचार्यकुल के द्विदिवसीय सम्मेलन में शैक्षिक क्रान्ति की तत्काल और अनिवार्य आवश्यकता को अत्यन्त गम्भीरता से महसूस किया गया, और इसके लिए एक शैक्षिक क्रान्ति का उद्घोषणा-पत्र तैयार करने का निर्णय किया गया। काशी विश्वविद्यालय में गत २९, ३० नवम्बर '७० को आयोजित इस सम्मेलन के अंतिम दिन सुप्रसिद्ध साहित्यकार आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी ने अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए कहा, "ऐसा लगता है कि इस सम्मेलन में बूढ़ों का विद्रोह प्रकट हुआ है।"

सम्मेलन में प्रदेश भर से लगभग १०० प्रतिनिधियों ने भाग लिया, जिसमें लगभग ५० व्यक्ति वाराणसी की शिक्षण-संस्थाओं के प्रतिनिधि थे। सम्मेलन का उद्घाटन हिन्दी की सुप्रसिद्ध कवयित्री श्रीमती महादेवी वर्मा ने किया। सम्मेलन की सभाओं की अध्यक्षता क्रमशः सर्वश्री डा० कालूलालजी श्रीमाली, उपकुलपति, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय तथा अध्यक्ष, उ० प्र० आचार्यकुल, श्रीनिवास प्रसाद उपकुलपति आगरा विश्वविद्यालय तथा संयोजक उ० प्र० आचार्यकुल, प्रो० राजाराम शास्त्री, उपकुलपति काशी विद्यापीठ ने की।

सम्मेलन में सर्वोदय-विचारक आचार्य राममूर्ति द्वारा आचार्यकुल की सम्भावना तथा मार्गदर्शन, और प्रसिद्ध शिक्षक श्री रोहित मेहता द्वारा शैक्षिक क्रान्ति, इन दो विषयों पर विद्वत्तापूर्ण प्रबन्ध प्रस्तुत किये गये, जिनमें उठाये गये मुद्दों पर प्रतिनिधियों ने अपने विचार प्रकट किये। सम्मेलन के प्रतिनिधि मुख्य वक्ताओं द्वारा पेश की गयी इन स्थापनाओं से आमतौर पर सहमत थे कि राष्ट्रपति तथा प्रधानमंत्री से लेकर सामान्य नागरिक तक मौजूदा शिक्षण-पद्धति की भर्त्सना ही किया करते आये हैं, और सरकार ने इसमें सुधार के लिए अनेक आयोग भी गठित किये हैं, किन्तु स्थिति में कोई सुधार नहीं हुआ है, और अब स्थिति विस्फोटक बन गयी है।

देश में व्याप्त युवा-आक्रोश तथा छात्र-असंतोष कोई कानून-व्यवस्था की समस्या नहीं है, वह मूलतः शिक्षा और संस्कृति की समस्या है। स्वतंत्रता के बाद देश को जिस प्रकार की शिक्षा की आवश्यकता थी, उसको विकसित करने की ओर ध्यान ही नहीं दिया गया। यहाँ तक कि विभिन्न आयोगों ने भी जो थोड़े-बहुत सुधार के सुझाव इस बारे में दिये, वे यथास्थितिवाद के घेरे को तोड़ने के बजाय उसे बनाये रखनेवाले ही रहे। इसके कारण देश में व्यापक दिशाभ्रम पैदा हुआ।

एक तरफ परिवर्तन की माँगें की जाती रही हैं, और ये माँगें सरकारी स्तर पर भी उठी हैं, किन्तु दूसरी तरफ यथास्थितिवाद को पोषण मिलता रहा है। नतीजा यह हुआ है कि देश और नागरिक का व्यक्तित्व विभाजित होता गया है। आज के छात्र-आक्रोश का कारण यही व्यक्तित्व का विभाजन है।

शैक्षिक क्रान्ति का आह्वान

आचार्य राममूर्तिजी ने शिक्षा को सामाजिक परिवर्तन की आवश्यकता और सामाजिक निर्माण की प्रक्रिया से संयुक्त करने पर बल दिया। श्री रोहित मेहता ने कहा कि 'आज कुछ किया जाना चाहिए' के मनोभाव के साथ ही, बल्कि अधिक प्रबल रूप में, 'कुछ नहीं किया जा सकता' का मनोभाव समाज, और खासकर बुद्धिजीवी वर्ग में, व्याप्त है। आचार्यकुल का काम शिक्षकों और बुद्धिजीवियों में व्याप्त इस नैराश्य को समाप्त करना है। इसके लिए उन्होंने एक चार-सूत्रीय कार्यक्रम दिया

१. शिक्षा में अनय द्वारा अनुशासन की प्रक्रिया पर जोर दिया जाना चाहिए।

२. शिक्षा में अध्यापक तथा छात्र का सहकार्य होना चाहिए।

३. शिक्षकों का चरित्र दृढ़ और उज्ज्वल होना चाहिए।

४. शिक्षण में 'अध्यापक पीछे, और छात्र आगे' की प्रक्रिया का विकास करना चाहिए।

—काम होता जाना चाहिए, ताकि वे प्रान्त-प्रान्त में जाकर संगठन को मजबूत करें। यह काम नहीं किया गया तो ग्रामस्वराज्य-कोष में सम्पूर्ण रकम का उपयोग भी जगह-जगह ठीक से नहीं हो सकेगा, और अगर ऐसा हुआ तो आगे के लिए हमारी साख बहुत कम रह जायगी। अतः संगठन का प्रश्न इस समय बहुत महत्त्व का है। उसकी तरफ हमें गम्भीरता से ध्यान देना चाहिए।

शहरों में काम

शहरों में सर्वोदय-विचार के प्रचार और कार्यक्रम के बारे में अभी तक हम पूरा ध्यान नहीं दे पाये हैं। ग्रामस्वराज्य-कोष के काम से इस बार शहरों के लोगों से हमारा व्यापक सम्पर्क आया है। कई दाताओं ने यह इच्छा भी जाहिर की है कि शहरों में हमारा काम होना चाहिए। बंगाल परिस्थिति के कारण इसके लिए वातावरण भी अनुकूल हुआ है। अब शहरों में अब हमारी गतिविधि बढ़नी चाहिए। शहर का नागरिक आज अपने आपको असहाय तथा असुरक्षित महसूस कर रहा है। हमें उनकी सेवा करनी चाहिए। शहर के लोगों के पास हम बार-बार केवल दान लेने के लिए जायें यह हमारे लिए न उचित है, न बहुत अधिकर या हितकर। सभी दृष्टियों से अब अवसर आया है कि शहरों के काम के बारे में हमें गम्भीरता से सोचना चाहिए और इस कमी को पूरा करना चाहिए। •

५. शिक्षकों में प्राथमिक स्तर से लेकर विश्वविद्यालय स्तर तक परस्पर समान भाव होना चाहिए।

६. पाठ्यक्रम को जीवन से संयुक्त करना चाहिए। शिक्षण-संस्थाओं को सामाजिक न्याय और कल्याण के लिए प्रत्यक्ष कार्य करना चाहिए, और उन्हें सामाजिक स्वतंत्रता के केन्द्रीय शक्ति बनना चाहिए।

७. परीक्षा-पद्धति को त्याग करके छात्र तथा अध्यापक दोनों के लिए आत्म-समीक्षा की प्रणाली का विकास होना चाहिए।

८. शिक्षकों को शासन से मुक्ति या स्वायत्तता प्राप्त होनी चाहिए।

इन सारे सन्दर्भों को ध्यान में रखते हुए भारत के सन्दर्भ में शैक्षिक क्रान्ति के लिए एक घोषणा - पत्र का प्रारूप तैयार करने हेतु सम्मेलन द्वारा ११ शिक्षाविदों, चिंतकों, विद्वानों की एक समिति बनायी गयी, जिसके सदस्य हैं - सर्वश्री राजारामजी शास्त्री, शीतल प्रसादजी, डा० हजारी प्रसादजी द्विवेदी, केशवचन्द्र मिश्र, डा० सीतारामजी जायसवाल, शिवकुमार मिश्र, आचार्य राममूर्ति, श्री रोहित मेहता, वशीधर श्रीवास्तव, व्रजनन्दन स्वरूप, डा० पी० के० जेना। श्री वशीधर श्रीवास्तव इस समिति के संयोजक बनाये गये। यह समिति शीघ्र ही विचार करके शिक्षा का एक घोषणा-पत्र तैयार करेगी और आचार्यकुल के संविधान को आवश्यक शाब्दिक संशोधनों के साथ सम्मेलन की ओर से स्वीकृति देगी।

संगठन सम्बन्धी स्पष्टताएँ

सम्मेलन में आचार्यकुल की संरचना के लिए एक मसविदा पेश किया गया, जिसमें बुद्धिजीवी, अध्यापक, पत्रकार, सामाजिक कार्यकर्ता आदि को भी शामिल करने का प्रस्ताव है। सदस्यता के लिए निम्न निष्ठाओं का संकल्प प्रस्तावित है, जो उपर्युक्त समिति के निर्णयाधीन है :

१. सत्ता की राजनीति से अलग रहना,
२. हर प्रकार की गुटबन्दी से पृथक् रहना,
३. किसी भी समस्या के समाधान में हिंसा नहीं, विचार के माध्यम में विश्वास रखना,
४. लोक-सेवा और लोक-शिक्षण का कुछ-न-कुछ प्रत्यक्ष कार्य करना,
५. अधिकार की जगह कर्तव्य को जीवन में महत्व देना,
६. आचार्यकुल के संचालन के निमित्त एक पैसा रोज के हिसाब से तीन रुपये पैंसठ पैसे वार्षिक या एक दिन की आय देना।

'आचार्यकुल का संगठन प्राथमिक स्तर से अखिल भारतीय स्तर तक रहे, और प्रत्येक निचली इकाई के सदस्य ऊपर की इकाइयों के सदस्यों का चयन करें। आचार्यकुल के सभी निर्णय सर्वसम्मति से हों। उसमें पदाधिकारी एक वर्ष के लिए हों (वे दोबारा चुने जा सकेंगे)। सदस्यता-शुल्क का विनियोग इस प्रकार हो—५ प्रतिशत केन्द्रीय संगठन को, १० प्रतिशत प्रान्तीय संगठन को, और शेष ८५ प्रतिशत का बँटवारा जनपद संगठन की सलाह पर, जनपद और स्थानीय इकाइयों में किया जाय।' संगठन सम्बन्धी ये बातें भी तय हुईं, जिनको उपसमिति द्वारा निश्चित रूप दिया जायगा।

अन्य शिक्षक-संगठनों से सम्बन्ध के प्रश्न पर सम्मेलन द्वारा स्पष्ट किया गया कि आचार्यकुल शिक्षकों के उचित प्रयासों के संदर्भ में उनके वर्तमान संगठनों का पूरक है। यद्यपि अभी तक के शिक्षक-संगठन ट्रेड यूनियनों की भावना पर चलते रहे हैं, किन्तु इससे शिक्षकों और शिक्षा दोनों के हितों की हानि हुई है। आवश्यकता इस बात की है कि शिक्षा को व्यापक सामाजिक हितों से सम्बद्ध कर दिया जाय, और उसमें शिक्षक, छात्र, तथा अभिभावकों का सहकार्य हो। आचार्यकुल एक ऐसा ही मंच है, जो इस सहकार्य के लिए प्रेरणा और कार्यक्रम प्रस्तुत करता है।

सम्मेलन के खर्च का इंतजाम काशी विश्वविद्यालय और काशी विद्यापीठ के प्रमुख व्यक्तियों ने किया था। सम्मेलन की सारी व्यवस्था काशी विश्वविद्यालय के धातुकी विभाग के प्राध्यापकों और छात्रों ने मिलकर की थी। ●

(हमारे विशेष प्रतिनिधि द्वारा)

मध्यप्रदेश में व्यापक साहित्य-प्रचार के सम्बन्ध में विनोबाजी के सुझाव

गत ५ अक्तूबर, '७० को मध्यप्रदेश के साथी विनोबाजी से परधाम आश्रम, पवनार में मिले थे।

प्रान्तदान की चर्चा के बाद विनोबाजी ने पूछा, "गत वर्ष मध्यप्रदेश में साहित्य-कितना बिका ?"

गांधी-शताब्दी सेटों की तथा 'सर्वोदय साहित्य भंडार' इन्दौर की मार्फत एवं अन्य पूरे प्रान्त में बिके कुल साहित्य का अन्दाज जब ७ लाख रुपये बताया गया, तो तत्काल विनोबाजी ने अपनी एक उंगली सामने दिखाकर कहा—"एक करोड़"।

"यह कैसे हो सकता है ?" पूछने पर अगले दिन विनोबाजी ने जगवन्तराय भाईजी को अपने पास बुलाया तथा इस बारे में विस्तार से अपने विचार बतलाये

१ मध्यप्रदेश में जितने ग्राम हैं, जिले हैं तथा छोटे-बड़े नगर हैं, उन सबको ध्यान में रखकर साहित्य-प्रचार की योजना बनानी चाहिए।

२. इस दिशा में शिक्षकों से विशेष मदद मिले, ऐसा प्रयत्न करें।

३. साहित्य-प्रचार में लगे कार्यकर्ताओं को साहित्य से प्राप्त अधिकतम कमीशन देना चाहिए।

४. सामान्यतया सभी कार्यकर्ता साहित्य-प्रचार का कार्य करें, परन्तु साहित्य के आवागमन, स्टाक व हिसाब-किताब आदि की दृष्टि से कुछ कुशल कार्यकर्ता अलग से रहें, जो पूरा समय इस कार्य में दें।

५. बिक्री के लिए "गीता-प्रवचन" कार्यकर्ताओं को लागत कीमत पर दी जाय। परन्तु कार्यकर्ताओं से लेन देन नकद का रखा जाय।

६. अपने क्षेत्र के सम्पन्न सर्वोदय-प्रेमियों की मदद से हमारी कुछ विशेष पुस्तकें कम कीमत में जनता में बेचने की व्यवस्था की जाय। ●

मध्यप्रदेश में भूमि-वितरण

मध्यप्रदेश भूदान-यज्ञ बोर्ड के कार्यालय से प्राप्त सूचनानुसार भूदान में प्राप्त १६६.०४ एकड़ कृषियोग्य भूमि का वितरण पिछले अक्तूबर, '७० महीने में ८२ परिवारों में किया गया। ज्ञातव्य है कि इस महीने में ३.३८ एकड़ का नया भूदान भी जबलपुर और गुना जिले में प्राप्त हुआ। मध्यप्रदेश में अब तक भूदान में प्राप्त १,७९,९४८.९६ एकड़ भूमि का वितरण १७,७३५ भूमिहीन परिवारों में हो चुका है, और ये परिवार प्राप्त भूमि पर अच्छी तरह खेती कर जीवन-यापन कर रहे हैं।

पुस्तक-परिचय

साम्प्रदायिकता

प्रकाशक राष्ट्रीय एकता समिति एवं युवक कल्याण और सांस्कृतिक परिषद, सागर विश्वविद्यालय, सागर।

"साम्प्रदायिकता" एक छोटी-सी पुस्तक है। लेकिन पढ़ने से पता लगता है कि 'दरिया को कूजे में' बन्द कर दिया गया है। यह साम्प्रदायिकता की समस्या को समझने की दिशा में एक बड़ी कोशिश है। इसमें ठोस बातें कही गयी हैं। उदाहरणत —'साम्प्रदायिक दंगे पहले से सोची-समझी योजना के अनुसार होते हैं।··· साम्प्रदायिकता को बढ़ाने के लिए फासिस्ट हथियार अपनाये जाते हैं। इतिहास को तोड़-मोड़कर पेश किया जाता है।···राजनीतिज्ञ लोग साम्प्रदायिकता को घटाने के बदले बढ़ाते हैं।' साम्प्रदायिक दंगों के शिकार गरीब, निहत्थे, कमजोर और मासूम लोग होते हैं, तथा मुख्य रूप से नारियाँ। दंगों को दबाने में पुलिस और शासन चुस्ती से काम नहीं करता। साम्प्रदायिकता अंग्रेजों की देन है।' इत्यादि।

इस बात पर जोर दिया गया है कि साम्प्रदायिकता एक राष्ट्रीय समस्या है और इसका हल खोजना अनिवार्य है। यह हमारी लोकतंत्र और धर्मनिरपेक्ष राज्य को घुन की तरह खाये जा रही है। इस पुस्तक में आम आदमी को ललकारा गया है कि साम्प्रदायिकता को दूर करने में भाग ले। साम्प्रदायिकता के विरुद्ध गांधीजी के आदर्श और विचार के प्रकाश में सभी मानव-समुदाय का एक मोर्चा बनना चाहिए।

सागर विश्वविद्यालय के उन नवयुवकों का, जिनके दिल में मानवता सर्वोच्च है, और जिन्होंने क्षुद्र सीमाओं में घिरे इन्सानों के हैवानी कारनामों को निकट से देखा है, यह सम्मिलित प्रयास निश्चय ही सराहनीय है।

—कमाल

भूदान-यज्ञ : ७-१२-'७० लाइसेन्स नं० ए ३४ [पहले से डाक-व्यय दिये बिना भेजने की स्वीकृति प्राप्त] रजिस्टर्ड नं० एल. ३२४

१७ दिसम्बर '७० को प्रथम ग्रामदानी प्रखण्ड-सभा का जयप्रकाश नारायण द्वारा उद्घाटन

आगामी १७ दिसम्बर '७० को बिहार के मुंगेर जिले के झाझा प्रखण्ड में प्रथम प्रखण्ड-स्तरीय ग्रामदानी प्रखण्ड-सभा का उद्घाटन श्री जयप्रकाश नारायण द्वारा होने जा रहा है। ज्ञातव्य है कि झाझा प्रखण्ड में छोटे-बड़े कुल मिलाकर १८१ गाँव हैं, जिनमें से १६१ गाँवों का ग्रामदान हुआ है। अभी तक ८८ गाँवों में ग्रामसभाएँ बन चुकी हैं, जिनमें से ५९ गाँवों के लोगों ने बीघा-कट्ठा जमीन भी भूमिहीनों में वितरित कर दी है। पड़ोसी चकाई प्रखण्ड में भी २७ गाँवों में ग्रामसभाएँ बीघा-कट्ठा के वितरण सहित बन चुकी हैं। झाझा में १०० ग्रामसभाएँ संगठित करने का प्रयत्न चल रहा है। आशा है, १७ दिसम्बर से पहले ही लक्ष्य पूरा हो जायेगा। ग्रामदानी ग्राम-सभाओं के प्रतिनिधियों की प्रस्तावित प्रखण्ड-सभा प्रखण्ड में विकास और पुनर्रचना का काम करेगी। ग्रामसभाओं के ग्रामकोष एवं अन्य स्रोतों से ५० हजार रु० का कोष भी संग्रह करने की योजना है। साथ ही झाझा-चकाई मिलाकर कम-से-कम ५०० ग्राम-शान्तिसैनिक भी तैयार करने की कोशिश चल रही है।

—शिवानन्द भाई

लखीमपुरखीरी में जिला तरुण-शान्तिसेना तथा आचार्यकुल शिविर

युवराजदत्त डिग्री कालेज के उत्साही प्राध्यापक डा० राघवेन्द्रनाथ मिश्र द्वारा गत २२ से २३ नवम्बर को लखीमपुर-खीरी का प्रथम जिला तरुण-शान्तिसेना एवं आचार्यकुल-शिविर सोत्साह सम्पन्न हुआ। शिविरार्थियों में माध्यमिक, स्नातक तथा स्नातकोत्तर स्तर के १६ शिक्षक तथा युवराजदत्त कालेज, गर्ल्स डिग्री कालेज और गोला कालेज के १८ छात्र और ९ छात्राओं ने भाग लिया। शिविर में सतीशकुमार तथा विनय भाई ने विचार-शिक्षण का काम किया।

शिविर का आर्थिक भार युवराजदत्त कालेज तथा शिविर में शामिल संस्थाओं तथा शिविरार्थियों ने स्वयं वहन किया।●

गांधी शान्ति प्रतिष्ठान केन्द्र जमशेदपुर पर नक्सली हमला

जमशेदपुर, ३० नवम्बर। कल संध्या समय ६ बजे के लगभग, नक्सलपंथियों ने गांधी शान्ति प्रतिष्ठान केन्द्र के वाचनालय तथा पुस्तकालय के कमरे पर धावा किया। कमरे में उस समय केवल दो व्यक्ति थे, जिन्हें छुरे के बल पर कोने में खड़ा करके उन लोगों ने कुर्सी से आलमारियों के शीशे तोड़ दिये। मेज पर जो पत्र-पत्रिकाएँ थीं उन पर तेल छिड़क-कर आग लगा दी और उस पर कुर्सियाँ रखकर भाग गये। उनके पीछे जब स्थानीय व्यक्ति भी बाहर निकले तो नक्सलपंथियों ने उन पर एक बम फेंका। वह बम फटा नहीं। सबके सब इधर-उधर भाग खड़े हुए।

पुस्तकालय की पुस्तकों को कोई क्षति नहीं पहुँची है। किसीको चोट-चपेट भी नहीं लगी है। ज्ञातव्य है कि नक्सलपंथियों का इस केन्द्र पर यह दूसरा हमला था। पहला हमला १ मई '७० को हुआ था।—दृढ़भान

इस अंक में

जिला सर्वोदय-मण्डल का पुनर्गठन

कानपुर जिला सर्वोदय-मण्डल के संगठन एवं ग्रामस्वराज्य-कोष-संग्रह कार्य-क्रम पर विचार करने हेतु जिले के लोक-सेवकों की एक बैठक स्वराज्य आश्रम, सर्वोदयनगर, कानपुर में श्री वसन्त बोवटकर, मंत्री महाराष्ट्र सर्वोदय-मंडल के सान्निध्य में सम्पन्न हुई, जिसमें जिला सर्वोदय-मण्डल का चुनाव सर्वसम्मति से सम्पन्न हुआ।

श्री लाभचन्द्र वर्मा, अध्यक्ष; श्री रामजीवन शुक्ल, उपाध्यक्ष; श्री सूर्यप्रसाद द्विवेदी, मंत्री; श्री एम० जी० वर्मा, कोषा-ध्यक्ष एवं श्री ज्ञानस्वरूप गुप्त, जिला-प्रतिनिधि चुने गये।

ग्रामस्वराज्य-कोष संग्रह के लिए हर तहसील में एक संयोजक मनोनीत करने का अधिकार जिला सर्वोदय-मंडल कार्यकारिणी को प्रदान किया गया। कानपुर जिला सर्वोदय-मंडल का कार्यालय ए।२३, शान्तिनगर, कानपुर-४ में स्थापित किया गया है।

—मंत्री, कानपुर जिला सर्वोदय-मंडल

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पै०), विदेश में २२ रु०; या २५ शिलिंग या ३ डालर। एक प्रति का मूल्य २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं मनोहर प्रेस, वाराणसी में मुद्रित

सम्पादक
राममूर्ति

वर्ष : १७
अंक : ११ सोमवार १४ दिसम्बर, '७०

पत्रिका विभाग
सर्व सेवा संघ, राजघाट, वाराणसी-१
फोन : ६४३९१ तार : सर्वसेवा
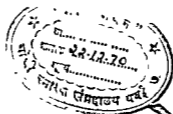
सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

जीवन की सांध्य वेला में

अगर मैंने कुछ किया और वह लोगों को अच्छा लगा और लोगों ने उसकी प्रशंसा की तो मैं समझ सकता हूँ। मेरी कोई किताब लोगों को लाभदायक मालूम हुई और लोगों ने उसका स्वागत किया तो मुझे अच्छा लगेगा। लेकिन मैंने ८५ वर्ष पूरे किये, इसमें मैंने क्या किया? जैसे सिर के बाल उगते हैं, उँगली के नख बढ़ते हैं, वैसी ही आयु बढ़ती है। सिर के बाल को अगर तेल दिया तो शायद वे जोरों से बढ़ेंगे। आयु का ऐसा भी कुछ नहीं है। मनुष्य जन्म लेता है, उसकी उम्र बढ़ती है। बुढ़ापे में शक्ति क्षीण होती है, ऐसे समय पर अगर कोई मुझे सांत्वना अथवा दिलासा दे तो मैं समझ सकता हूँ। लेकिन मैंने अपनी ईश्वर की दी हुई आयु में से ८५ वर्ष पूरे किये, इसमें मेरी बहादुरी कौनसी? मैं समझ नहीं सकता। आया हुआ दिन जाता ही है। वर्ष के पीछे वर्ष चले जाते हैं, और आयु मात्र बढ़ती है। सबके लिए यह प्रक्रिया एक-सी है। किसीकी आयु जोरों से बढ़े, किसीकी धीरे-धीरे बढ़े, ऐसा अगर हो सकता तो वह बात अभिनन्दन के लिए या सांत्वना के लिए योग्य हो सकती। मैंने ८५ साल पूरे किये इसका एक ही अभिनन्दन है, इसके पहले मैं नहीं मरा यही गनीमत। इसी भाव को शायद वर्धापन कहते होंगे। संस्कृत में अभिनन्दन कहते हैं 'दिष्ट्या वर्धसे'। मैं उसका पूरा भाव समझ नहीं सका। तो भी आयु बढ़ने पर मैं 'दिष्ट्या वर्धसे' कहकर उसका अभिनन्दन करता हूँ, और खुशी भी व्यक्त करता हूँ।

अब मैं मानता हूँ कि अगर भारत-भाग्यविधाता को मुझसे कुछ सेवा लेनी है तो अब मैं विश्व-समन्वय के काम को करनेवाले व्यक्तियों को तैयार करने की कोशिश करूँगा।

अगर दुनिया के लिए कोई उज्ज्वल भविष्य है तो सर्वव्यापी विश्व-समन्वय का ही वायुमण्डल फैल जाना चाहिए। उसका प्रचार करते-करते, उसे अमल में लाते-लाते उसीके वायुमण्डल में विलीन हो जाना, इसीमें जीवन का परम कल्याण है, और विश्व का सार्थक्य है।

(१ दिसम्बर '७० को आयु के ८५ वर्ष पूरे होने पर)

—काका कालेलकर

• 'लड़ाई' नहीं, अहिंसक शक्ति की 'शोध' का संकल्प •

"....इसलिए हम धड़ाके से व्याख्यान दे सकते हैं !"

❀ विनोबा ❀
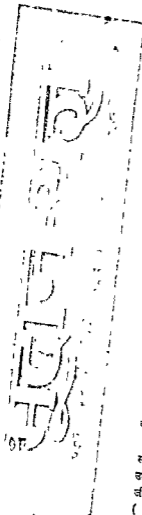
सूक्ष्म-प्रवेश के बाद ऐसे स्थूल कार्यक्रम* में हम समय दें ऐसी अपेक्षा नहीं हो सकती। लेकिन फिर भी हमने अपवाद-स्वरूप यह कबूल किया, क्योंकि जमनालालजी के साथ मेरा एक विशेष स्नेह-सम्बन्ध था।

अभी कोई व्याख्यान का तो समय नहीं है, एक समारम्भ है। सरकार को सूझी कुछ अवल और उन्होंने जमनालालजी के नाम से टिकट जाहिर किया। अब इसमें से किसका क्या भला बननेवाला है, मालूम नहीं। टिकट की कीमत तो जो है सो है। लोग एकदम खरीद लेंगे, मतलब बाद में कम खरीदेंगे। कुल मिलाकर लोगों पर भार कम आयेगा।

इस प्रकार के कार्यक्रम सरकार बीच-बीच में किया करती है।

जमनालालजी के दो गुण मुझे याद आते हैं, जो उन्हीं के शब्दों में मुझे सूचित किये थे। मनुष्य में तो अनेक गुण होते हैं और अनेक दोष भी। कोई भी मनुष्य गुणहीन नहीं होता और कोई भी दोषहीन नहीं होता। उत्तम-से-उत्तम मनुष्य में भी कुछ-न-कुछ दोष होता ही है। बिलकुल सर्वाधम गिने हुए मनुष्य में भी कुछ-न-कुछ गुण होते ही हैं। जो भी गुण मनुष्य में होता है वह भगवान के गुण का अंश होता है। इसलिए हमेशा गुण-स्मरण करना चाहिए, किसी भी मनुष्य के स्मरण के निमित्त।

जमनालालजी को दो गुण प्राप्त हुए थे, दो महापुरुषों के कारण। एक थे तुकाराम महाराज। उनके एक वचन की जमनालालजी को हमेशा याद आती थी: "बोले तैसा चाले, त्याची वंदावी पाउले।" एक दफा माताजी (जानकीदेवी) मुझे सुनाती थी कि "जमनालालजी उत्तम व्याख्यान दे नहीं सकते। क्योंकि हम जो बोलते, वैसा कर नहीं पाते, यह चिंता उनको रहती है। इसलिए वे धीरे-धीरे रुक-रुककर बोलते हैं। और हमारे पीछे ऐसी कोई चिंता नहीं रहती इसलिए हम धड़ाके से व्याख्यान दे सकते हैं।" यह जब मैंने सुना तब ध्यान में आया कि यह बात गांधीजी को भी लागू होती है। गांधीजी भी बहुत बड़े वक्ता नहीं थे। धीरे-धीरे रुक-रुककर बोलते थे। उनके पीछे भी यही चिंता लगी रहती थी।

दूसरा उनका गुण था, कबीर के वचन का उन पर परिणाम हुआ था। धोराड में एक सत्पुरुष थे, केजाजी महाराज। जमनालालजी, बिलकुल बचपन में, १३-१४ साल की उम्र में केजाजी महाराज का कीर्तन सुनने के लिए जाया करते थे। जमनालालजी ने स्वयं मुझे यह कहानी कही। केजाजी महाराज ने एक दिन कीर्तन में कबीर का वचन बताया 'अरे! हीरा तो मदा तेरा कचड़े मे'—सबसे बड़ी संपत्ति को तेरा नरदेह, वह तो तेरा व्यर्थ जा रहा है, उसके तरफ तो तुम ध्यान नहीं दे रहे हो...." जमनालालजी ने कहा, "तब से मुझ पर परिणाम हुआ और ध्यान में आया कि हमारे हाथ में जो धन है, वह एक बला है। उससे जितना छुटकारा पा सकते हैं उतना अच्छा। छुटकारा तो ऐसे धन फेंकने से होता नहीं। व्यर्थ दान देना ठीक नहीं। योग्य मनुष्य को देना चाहिए, तब उसका कुछ उपयोग भी हो सकेगा। और उन्होंने वैसा ही किया। योग्य पुरुषों को ढूँढ़ते भी थे। योग्य व्यक्ति ढूँढ़कर उसे संपत्ति का हिस्सा देने में चरितार्थ मानते थे। और उनका उपकार समझते थे, जो उनसे दान लेता था।

मनु महाराज ने लिख रखा है—"दानमेकं कलौयुगे"। जैसे बैल के चार पाँव होते हैं वैसे धर्म के चार पाँव होते हैं। सत्ययुग के धर्म के चार गुण होते हैं, त्रेतायुग के तीन गुण होते हैं, द्वापर में दो गुण (पाँव यानी गुण), कलियुग में केवल एक ही गुण होता है—मनु कहते हैं, "दानमेकं कलौयुगे"—कलियुग में केवल दान ही एक धर्म है। जैसे नित्य खाते जाते हैं, वैसे नित्य दिया करें। यह केवल श्रीमानों को लागू नहीं होता। सबको लागू होता है जो खाते हैं, उन्हें। थोड़ा अंश दिया करें। तो हम जो खाते हैं उस पाप का प्रायश्चित्त उस दान से होगा।

उनके ये दो गुण उनके मुँह से ही मैंने सुने।

समाप्तम्! सबको प्रणाम। जय जगत्!

[*जमनालाल बजाज की ८१वीं जन्म-जयंती डाकटिकट के उद्घाटन-समारोह के अवसर पर। ब्रह्मविद्या मंदिर, पवनार, वर्धा: ४ नवम्बर, '७०]

लोकतंत्र, लोकतांत्रिक दल और मोर्चा

अभी-अभी लखनऊ में संगठन-कांग्रेस का सम्मेलन हुआ है। कुछ दिन बाद वाराणसी में जनसंघ-कांग्रेस का होगा। लखनऊ में लोकतंत्र की जोरदार पुकार लगायी गयी, और समान विचारवाले दलों को मिलाकर अगले चुनाव में—वह जब कभी हो—एक लोकतांत्रिक मोर्चा बनाने की बात तय की गयी। यह निश्चित है कि जो कुछ लखनऊ में हुआ है लगभग वही वाराणसी में भी होगा। लोकतंत्र की वहाँ पुकार लगायी जायगी, अपने को लोकतांत्रिक सिद्ध करने का वहाँ प्रयत्न होगा, और दूसरे दलों को मिलाकर मोर्चा बनाने की वही घोषणा की जायगी। ये बातें ऐसी हैं जो आजकल प्रायः सभी राजनैतिक सम्मेलनों में कही जा रही हैं।

अब राजनीति किसी एक दल के वश की नहीं रह गयी है तो मोर्चा बनाने के सिवाय दूसरा उपाय ही क्या है? लेकिन यह भी तय है कि अलग-अलग राज्यों में मोर्चे अलग-अलग रूप और रंग के होंगे, जैसे इस वक्त हो रहे हैं। यहाँ का दोस्त वहाँ का दुश्मन, या वहाँ का दुश्मन यहाँ का दोस्त होगा। जब सत्ता के सिवाय दूसरा लक्ष्य नहीं है, तो जिसकी भी मदद से सत्ता मिले वह दोस्त और जिसके कारण मिली हुई सत्ता निकल जाय वह दुश्मन हो जाता है। दोस्तों को दुश्मन और दुश्मनों को दोस्त बनते हम रोज देख रहे हैं। ऐसे मोर्चों के बनने से देश की राजनीति में कोई नया मोड़ आयेगा, या मोर्चों का देश भर में कोई एक नमूना होगा, इसका नतीजा कोई गुंजाइश नहीं दिखायी देती। बल्कि मोर्चों के राजनीति की टूट जारी रहेगी। अब न राजनीति अखिल भारतीय रह गयी है, न राजनैतिक दल, दोनों प्रांतीय हो गये हैं।

पिछले चुनाव में जब कांग्रेस टूटी तो लोगों ने कहा कि अब राजनीति में निखार आयेगा। राजनीति 'राइट' और 'लेफ्ट' में बँटेगी, और देश के लिए आसान होगा कि वह दोनों में से अपने चुन ले। लेकिन आज वोटर है वह कैसे समझे कि कौन है 'राइट' और कौन है 'लेफ्ट'? उसकी पहचान क्या है? वह दलों का घोषणा-पत्र देखता है तो हर घोषणा-पत्र में लगभग एक-सी बातें पाता है। एक-दूसरे में अन्तर बहुत कम है, सबके वादे एक, नारे एक, इसलिए एक-सब कुछ एक-सा ही है। एक दल की सरकार हो, कई दलों की सरकार हो, राष्ट्रपति का शासन हो, कुछ भी हो वोटर अपने जीवन में अन्तर नहीं पाता। वह समाचार सुनता है, नये-नये नारे देखता है, किन्तु कहीं भी उस बुनियादी परिवर्तन की झलक नहीं देखता जो उसे विवशताओं से मुक्त करे। जहाँ तक जन-जीवन का सम्बन्ध है 'राइट' 'लेफ्ट' की बातें निरर्थक हैं। जरूरत 'राइट' और 'लेफ्ट' की नहीं है, सही रास्ते पर चलने की है, लेकिन उसकी तैयारी दिखायी नहीं देती।

यह कौनसा तर्क है जिससे मानकर एक दल को लोकतांत्रिक कहें, दूसरे को नहीं? चुनाव लड़ना, विधान-सभा, या संसद में में बैठना और सरकार बनाने-बिगाड़ने के खेल में शरीक होना; अगर लोकतंत्र इतने में ही सिमट गया है तो मान लेना चाहिए कि सभी दल लोकतांत्रिक हैं, और चाहे जिन दलों का मोर्चा बने वह लोकतांत्रिक ही होगा, दूसरा क्या होगा? लखनऊ में जिस लोकतांत्रिक मोर्चे की बात हुई वह इन्दिरा-विरोधी और कम्युनिस्ट विरोधी था, वाराणसी में जिस मोर्चे की बात होगी वह संगठन-कांग्रेस-मार्क्सवादी कम्युनिस्ट-जनसंघ-विरोधी होगा। इसी तरह मार्क्सवादी मोर्चा बनेगा, संयुक्त समाजवादी मोर्चा बनेगा, दूसरे मोर्चे बनेंगे। ये मोर्चे एक-दूसरे को खत्म करने के लिए बनेंगे। वोटर पूछता है कि कोई मोर्चा गरीबी, बेकारी, विषमता के खिलाफ क्यों नहीं बनता? आज की शिक्षा को सुधारने के लिए क्यों नहीं बनता? अगर इनके लिए मोर्चे नहीं बन सकते तो मोर्चे बनकर ही क्या करेंगे? लगता है राजनीति भी एक प्रकार की विकृत वर्ण-व्यवस्था बन गयी है जिसमें अपने को ब्राह्मण और बाकी सबको शूद्र समझने की चिन्ता अधिक है, दूसरी कोई चिन्ता नहीं है। अगर होती तो अब तक एक सर्वदलीय राष्ट्रीय मोर्चा बन गया होता।

कठिनाई यह है कि अभी तक हमारे लोकतंत्र का स्वरूप ही स्थिर नहीं हुआ है। हमें ऐसा लोकतंत्र चाहिए जिसमें सत्ता सीधे जनता के हाथ में रहे। ऐसे लोकतन्त्र में सत्ता और जनता के बीच दलों का स्थायी हस्तक्षेप नहीं स्वीकार किया जा सकता। आज सचमुच लोकसत्ता के स्थान पर दलसत्ता स्थापित है। यही सारी कठिनाइयों की जड़ है। इसका परिणाम यह होगा कि चाहे जिन दलों के मोर्चे बनाये जायँ, वे सब लोक-विरोधी ही सिद्ध होंगे। लोक-विरोधी मोर्चे कभी समाज-परिवर्तन के माध्यम नहीं बन सकते। इसलिए जरूरत इस बात की है कि दलों की सत्ता के मुकाबिले गाँव-गाँव और नगर-नगर में जनता के मोर्चे संगठित किये जायँ। चाहे जिन दलों का मोर्चा हो, और उसका चाहे जो नाम हो, जिस मोर्चे में 'लोक' नहीं वह लोकतांत्रिक कैसे होगा?

आज देश में जो राजनैतिक दल हैं उनमें से कितने की उस लोकतंत्र में विश्वास है जिसमें सत्ता दल के हाथ में न होकर स्वयं जनता के हाथ में हो? साम्यवादी—चाहे वह किसी नाम का साम्यवादी हो—अपने दल की सत्ता में विश्वास करता है, और उसीको लोकसत्ता मानता है। उसके लिए 'दल' 'समाज' के बराबर है, इसलिए साम्यवादी दल की सत्ता के लिए चेष्टा करता है, वह चुनाव से प्राप्त हो या हिंसा से। दूसरे दल भी अपनी ही सत्ता को जनता की सत्ता मानते हैं। कोई दल ऐसा नहीं है जो दलों से मुक्त लोकसत्ता की कल्पना करता है।

जिस दिन हम समझ पायेंगे कि लोकतंत्र का अर्थ है लोकसत्ता उस दिन देश में एक नयी शक्ति दिखायी देगी। दलों की शक्ति के दिन लद चुके, लोकशक्ति के दिन आने चाहिए। भारतीय लोकतंत्र का विकास दलसत्ता बनाम लोकसत्ता के प्रश्न के निर्णय पर निर्भर है।●

भूदान-यज्ञ : सोमवार, १४ सितम्बर, '७०

'लड़ाई' नहीं, अहिंसक शक्ति की 'शोध' का संकल्प

—जयप्रकाश नारायण

[उत्तर बिहार के अन्तर्गत मुजफ्फरपुर जिले में एक सामुदायिक विकास प्रखण्ड है मुसहरी, जहाँ विगत जून महीने से श्री जयप्रकाश नारायण बैठे हैं। ६ जून के बाद इस क्षेत्र के बाहर केवल पूर्वनिश्चित कार्यक्रमों के लिए ही वे गये। जब तक अपना कार्य वे समाप्त नहीं कर लेते, तब तक उसी क्षेत्र में जमे रहने का निश्चय उन्होंने किया है। मुसहरी प्रखण्ड उत्तर बिहार के उन क्षेत्रों में है जहाँ नक्सलवादी तत्व सक्रिय रहे हैं। प्रस्तुत है चार अंकों में प्रकाश्य, स्वयं श्री जयप्रकाश नारायण द्वारा लिखित, उनकी शांति-मिशन की कहानी—दिल और दिमाग को झकझोरनेवाला अहिंसक क्रान्ति का एक नवीनतम प्रयोग !—सं०]

'या तो यह काम पूरा होगा, या मेरी हड्डी गिरेगी'
—जयप्रकाश नारायण

पिछले जून के शुरू की यह घटना है। अचानक अपनी उत्तराखण्ड की यात्रा समाप्त कर मैं अपनी पत्नी के साथ मुजफ्फरपुर दौड़ गया और वहाँ पहुँचकर उस जिले के मुसहरी प्रखण्ड में जम जाने का निश्चय घोषित किया, जहाँ नक्सलवादी लोग सक्रिय रहे थे, और उन्होंने चार हत्याएँ तथा कम-से-कम एक सशस्त्र डकैती की थी, और हमारे दो प्रमुख कार्यकर्ताओं को मृत्यु का परवाना दिया था।

मेरा संकल्प और अखबारी प्रतिक्रियाएँ

मेरी उस घोषणा को समाचारपत्रों ने तथा रेडियो ने सहज ही नाटकीय रूप दे दिया और यह खबर प्रसारित की कि मैंने नक्सलवादियों की "चुनौती" स्वीकार कर ली है और उनसे "लड़ने" का फैसला किया है। वस्तुत: समाचारपत्रों को मेरी घोषणा में ऐसी तीव्र नाटकीयता और सनसनी का आभास मिला था कि मुजफ्फरपुर पहुँचने के तीन दिन बाद ही जब मुसहरी गाँव में एक हत्या हुई तो फौरन उन्हें इस घटना में 'जयप्रकाश नारायण का उत्तर' दिखायी दिया, और एक समाचारपत्र ने तो यहाँ तक कहा गया कि मृत व्यक्ति सर्वोदय-कार्यकर्ता है! फिर जब कुछ सप्ताह बाद मैं एक कार यात्रा कर रहा था, तो रास्ते में एक मामूली दुर्घटना हो गयी। लेकिन समाचारपत्रों को उसमें जानबूझकर मेरी हत्या करने की कोशिश का संकेत मिल गया। सच्चाई यह है कि उस दुर्घटना का राजनीति से कोई दूर का भी सम्बन्ध नहीं था; न उस मृत व्यक्ति का सर्वोदय से कोई ताल्लुक था; और सामान्यत उस क्षेत्र के लोगों के विश्वास के अनुसार उस हत्या के पीछे कोई राजनीतिक उद्देश्य भी नहीं था।

इन खबरों ने समाचारपत्रों में बड़े-बड़े शीर्षकों का रूप अवश्य ले लिया। लेकिन इससे न तो मेरे कार्य के साथ न्याय हुआ, और न जनता को नक्सलवाद के कारणों तथा उनके रचनात्मक निदानों के बारे में कोई रोशनी मिली।

निस्सन्देह मानवोचित अहं-भावना कुछ मेरे हिस्से भी पड़ी है। लेकिन मैं सामतौर से एक अहंकारी व्यक्ति हूँ, ऐसा नहीं। जब मैं राजनीति में था और तरुण था, उन दिनों भी राजनीतिक विरोधियों को चुनौती देने या उनके विरुद्ध युद्ध घोषित करने की आदत मेरी नहीं थी। नक्सलवादियों से लड़ने के लिए न तो मेरे पास कोई सेना है; कोई अहिंसक सेना भी नहीं है; और न मैं जो कुछ कर रहा हूँ वह किसीके विरुद्ध लड़ाई है, बल्कि सामाजिक एवं आर्थिक न्याय के लिए लड़ाई है। सच तो यह है कि मेरे कार्य के बारे में जो कुछ कहा गया है, उसके बिलकुल विपरीत, अत्यन्त नम्रतापूर्वक और प्रार्थनापूर्वक मैंने वर्तमान कार्य उठाया है। मेरे इस कार्यक्रम को "क्रान्तिकारी" भी नहीं कहा जा सकता है, यद्यपि कुछ सर्वोदय-पत्रिकाओं ने इस रूप में उसका चित्रण किया है। हाँ, अगर यह कार्यक्रम सफल होता है तो एक शांतिमय तथा विधायक सामाजिक क्रान्ति की दिशा में एक छोटा-सा कदम यह सिद्ध हो सकता है। इस विषय में फिर बाद में चर्चा करूँगा।

मैंने इसे ईश्वरीय वरदान माना

अपनी उत्तराखण्ड की यात्रा के दौरान पौड़ी नामक स्थान में मुझे बिहार से एक पत्र मिला और उससे मालूम हुआ कि मुजफ्फरपुर के नक्सलवादियों ने जिला सर्वोदय-मण्डल के अध्यक्ष श्री बद्रीनारायण सिंह और मंत्री श्री गोपालजी मिश्र को मृत्यु का परवाना दिया है। प्राप्त सूचना के अनुसार उनकी हत्या की तारीखें क्रमश: ५ और ७ जून निश्चित की गयी थीं।

इस समाचार से मुझे धक्का लगा और साथ-साथ खुशी भी हुई। धक्का

इसलिए लगा कि मेरे सहयोगियों का जीवन संकट में पड़ा था, और दुखी होने के कारण निम्नलिखित थे इन मृत्यु-धमकियों से पता लगा कि नक्सलवादियों की कार्य-पद्धति में एक बड़ा परिवर्तन हुआ है; और यह भान हुआ कि देश के महान नेताओं—जैसे रामकृष्ण परमहंस देव, स्वामी विवेकानन्द, गुरुदेव रवीन्द्रनाथ, महात्मा गांधी, नेताजी सुभाषचन्द्र बोस आदि—की मूर्तियों, चित्रों और पुस्तकों जैसी निर्जीव वस्तुओं पर प्रहार करना छोड़ उन्होंने अब उन नेताओं के जीवित अनुयायियों और प्रशंसकों को अपने प्रहार का लक्ष्य बनाया है।

हम सर्वोदय-कार्यकर्ताओं के जीवन पर उपस्थित इस संकट को मैंने ईश्वरीय वरदान माना। इधर कुछ वर्षों से मैं महसूस कर रहा था कि हमारे आन्दोलन की धार ठंडी हो रही है और इससे हम कार्यकर्तागण निस्तेज और निष्प्राण हो रहे हैं। इसका एक कारण यह मालूम होता था कि हमारे काम का रूप कुछ इतना सौम्य है कि उसमें हमारे व्यक्तिगत जीवन पर कोई खतरा नहीं उपस्थित होता, और न उसमें किसी बड़े बलिदान की माँग हमसे की जाती है।

विगत मई के आरंभ में गांधी शांति प्रतिष्ठान के कार्यकर्ताओं की मधुबनी के पास समस्तीपुर केन्द्र पर नक्सलवादी आक्रमण के बारे में मुझे एक पत्र लिखा था और इस आक्रमण के दौरान बम-विस्फोट होने तथा गांधीजी की मूर्ति पर प्रहार और उसके तोड़े जाने की सूचना दी थी। मैंने उसका जो उत्तर दिया था, उसका एक अंश मैं उद्धृत कर रहा हूँ :

"यदि हिंसावादियों ने गांधीजी को अपना दुश्मन माना है तो इसमें आश्चर्य क्या है? बल्कि मुझे तो इस बात पर खुशी महसूस हो रही है कि रक्त-क्रान्ति-वाले गांधीजी के विचारों में इतनी शक्ति पाते हैं और उनसे इतना भय खाते हैं कि गांधीजी का नामोनिशां मिटाने पर उतारू हो गये हैं। लेकिन ये बड़े नादान लोग हैं। सत्य को कभी मिटाया नहीं जा सकता। उसको मिटाने की जितनी कोशिश होगी, उतना ही अधिक वह निखरेगा और चमकेगा।

"मुझे इस परिस्थिति में एक और बात से खुशी हो रही है। हम गांधीवाले धीरे-धीरे निस्तेज होते जा रहे थे, और अपने सुरक्षित स्थानों में पैठते जा रहे थे। कारण यह था कि हमें किसी विरोध का, किसी खतरे का मुकाबिला नहीं करना पड़ता था। लेकिन अब, जब कि अपनी जान को जोखिम में डालकर हमें अपना काम करना पड़ेगा, हमारा भी परिष्कार होगा, और और और अधिक शक्ति होगी और हमारा तेज प्रकट होगा।"

एक तलाश : भीतर से

मुसहरी से जो समाचार मिला, उससे मेरी यह आंतरिक अनुभूति और भी स्पष्ट हो गयी तथा हृदय और मस्तिष्क दोनों ने असाधारण रूप से एकमत होकर व्यक्तिगत कुछ करने के लिए प्रेरित किया। हृदय ने, हर भावुक हृदय की भाँति, आदेश दिया कि जिन्हें मृत्यु की धमकी दी गयी है, मैं उनके बीच फौरन पहुँच जाऊँ और उनके संकट में भागीदार बनूँ। मस्तिष्क ने बार-बार कहा कि नक्सलवादियों की धमकी यह सिद्ध कर दिखाने के लिए एक स्वर्ण-अवसर है कि किस प्रकार हिंसा की चुनौती का उपयोग ठोस कार्य द्वारा, जिन्दगियों के ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य आन्दोलन के रूप में शुरू की गयी अहिंसक समाज-परिवर्तन एवं पुनर्निर्माण की प्रक्रिया को तेज करके, किया जा सकता है। इस प्रकार स्थान की तलाश थी, एक छोटा सा कार्यक्रम लेकर, मैं इस काम में इस संकल्प के साथ आया हूँ कि 'या तो यह काम पूरा होगा या मेरी हड्डी मिलेगी।'

अखबारवाले मेरे इस कार्यक्रम को "लड़ाई" की संज्ञा देना चाहें तो दें। लेकिन मैं तो इस दृष्टि से अपने इस कार्य को नहीं देखता हूँ। मेरा यह कोई निषेधात्मक कार्य नहीं, बल्कि एक भावात्मक, विधायक कार्य है।

मेरे ये विचार "लड़ाई" करने की पूर्व स्थिति से पलायन के द्योतक कोई उत्तर-चिन्तन नहीं हैं, यह बात मेरे उस वक्तव्य से स्पष्ट हो जाती है जो मैंने गत ८ जून को मुजफ्फरपुर से अपने प्रथम ग्रामीण पड़ाव की ओर प्रस्थान करने के पूर्व जिले के राजनीतिक नेताओं की बैठक में वितरित किया था। वह वक्तव्य समाचार पत्रों को भी प्रकाशनार्थ दिया गया था। इस संक्षिप्त वक्तव्य को देखने से यह प्रकट हो जायगा कि मेरी दृष्टि में नक्सलवाद, पहले एक सामाजिक, आर्थिक राजनीतिक एवं प्रशासनिक समस्या है, और उसके बाद ही कानून और व्यवस्था का प्रश्न है, और यह कि इस समस्या को केवल पारम्परिक पहलुओं की दृष्टि से हल करने के लिए इन नेताओं से तथा उनके दलों से सहयोग मैंने चाहा था। उसी वक्तव्य में मैंने यह भी संकेत किया था कि मेरी कार्य-पद्धति क्या होगी।

जहाँ तक नक्सलवाद के कानून और व्यवस्था विषयक पहलू का सम्बन्ध है, मेरा मत है कि यह कार्य केवल सरकार का होना चाहिए, क्योंकि नागरिकों के जीवन और सम्पत्ति की रक्षा करने का अधिकार और कर्तव्य उसीका है, और इसके लिए आवश्यक साधन भी उसके ही पास हैं। मैं मानता हूँ कि, खासकर एक कमजोर शासन के संदर्भ में, यदि नक्सलवाद के विरुद्ध संगठित गैरसरकारी सशस्त्र प्रतिकार को प्रोत्साहित किया गया तो खतरा यह है कि अंत में वह बढ़कर गृहयुद्ध का रूप ले सकता है। लेकिन, सरकार को अपना कर्तव्य करना ही चाहिए। साथ ही हमें यह नहीं भूलना चाहिए, कि चाहे कितनी ही गिरफ्तारियाँ हों और गोलियाँ चलें, नक्सलवादी हिंसा या अन्य प्रकार की क्रान्तिकारी हिंसा तब तक नहीं दबायी जा सकती, जब तक कि जड़ से रोग दूर करने का उपाय भी साथ-साथ नहीं होगा।

इस पिछले प्रकार के प्रयास में सरकार, राजनीतिक दल, सामाजिक और गांधी-निष्ठ कार्यकर्ता आदि सभी महत्वपूर्ण योगदान कर सकते हैं।

सर्वोदय-आन्दोलन में नया मोड़

अन्य सभी स्थानों और कार्यक्षेत्रों से खिंचकर एक प्रखण्ड में ही शक्ति केन्द्रित करने के मेरे निर्णय से देश भर के सर्वोदय-कार्यकर्ताओं के बीच गंभीर चिंतन शुरू हो गया। बिहार में, इस निर्णय से, सारे राज्य के लिए काम का रूप तय हो गया। और, केवल बिहार में ही नहीं, सारे देश में आन्दोलन को एक नया मोड़ देने के लिए, यानी आन्दोलन के व्यापक एवं विस्तारशील रूप को सघन और गहन बनाने तथा कागज पर ग्रामदान के संकल्प-संग्रह से जमीन पर उनकी कार्यान्विति एवं पुष्टि की दिशा में कदम बढ़ाने के लिए, स्थिति भी परिपक्व हो चुकी थी। तदनुसार मुसहरी में मेरे द्वारा अपनायी गयी पद्धति से सघन कार्य करने के लिए बिहार के अधिकांश हिस्सों में अनेक प्रखण्ड या प्रखण्ड-समूह चुने गये। मुजफ्फरपुर में मुसहरी के अलावा तीन ऐसे प्रखण्ड चुने गये हैं।

अब कुछ बातें मुसहरी में अपने कार्यक्रम के बारे में कहना चाहूँगा। जैसा कि मैंने ऊपर कहा है, यह एक बहुत छोटा-सा विनम्र कार्यक्रम है; लेकिन इतना मैं अवश्य मानता हूँ कि यदि यह कार्यक्रम कार्यान्वित होता है तो इस प्रखण्ड के गाँवों की लम्बे अर्से से जकड़ी हुई समस्याओं को हल करने की दिशा में बहुत दूर तक मदद मिलेगी; साथ ही सारे राज्य के लिए यह संकेत मिलेगा कि आगे कौनसा मार्ग अपनाना चाहिए।

मेरे कार्यक्रम के दो हिस्से हैं, और मैंने अपने इस अभियान का आरंभ करते समय मुजफ्फरपुर में आयोजित नेताओं की बैठक में उसकी रूपरेखा बतायी थी। उसका एक हिस्सा पूर्व-प्राप्त ग्रामदान के संकल्पों की कार्यान्विति के सम्बन्ध में था, जो निम्न प्रकार हैं :

१. ग्रामसभा की स्थापना;

२. ग्रामदान में शामिल बीघा-कट्ठा भूमि का पुनर्वितरण;

३. ग्रामकोष की स्थापना; तथा

४. ग्राम-शांतिसेना का संगठन।

अब हम लोगों ने उसमें एक पाँचवीं बात जोड़ी है, और यह है ग्रामवार आवश्यक कागजात तैयार कर ग्रामदान की कानूनी पुष्टि के लिए उन्हें ग्रामदान-पुष्टि पदाधिकारी के पास दाखिल करना।

दूसरा हिस्सा इस प्रकार था :

१. अवितरित भूदान की भूमि का वितरण करना और पूर्व-वितरित भूमि के सम्बन्ध में कुछ गलतियों या गड़बड़ियों को दुरुस्त करना;

२. यह देखना कि "हर विशेषाधिकार प्राप्त" व्यक्ति को उसकी वासभूमि का पर्चा अवश्य मिल जाय, तथा पूर्व-वितरित पर्चों के बारे में हुई अनियमितताओं एवं गड़बड़ियों को ठीक करना;

३. भूमिहीन मजदूरों की समस्याओं की तह में जाना तथा उनके लिए यथा आवश्यक कुछ करने का प्रयास करना,

४. मेरे ध्यान में लाये गये अन्याय एवं उत्पीड़न के खास-खास मामले हाथ में लेना और उनके समाधान में सहायक होना।

उपर्युक्त कार्यक्रमों के महत्व को समझने के लिए ग्रामदान-आन्दोलन के बारे में तथा बिहार के भूमि-सम्बन्धों एवं परिस्थितियों के विषय में कुछ जानकारी प्राप्त कर लेना जरूरी है। लेकिन, स्थानाभाव के कारण यहाँ इन बातों के सम्बन्ध में विस्तार से कुछ कहना संभव नहीं है। फिर भी, अपनी कहानी जारी रखते हुए मैं पाठकों को उनके बारे में कुछ बताने का प्रयास करूँगा।

क्षेत्र-परिचय

मुसहरी मुजफ्फरपुर जिले के ४० प्रखण्डों में से एक है। इस प्रखण्ड का कुल क्षेत्रफल ४३,९८३ एकड़ है जिसमें से ३६,३९८ एकड़ पर खेती होती है। यहाँ की अनुमानित जनसंख्या (ग्रामीण) १,१८,७३७ है। इस प्रकार भूमि-मनुष्य का अनुपात (केवल खेती की भूमि को लेते हुए) प्रति व्यक्ति ३० डिसमिल है। अगर हम पूरे क्षेत्रफल को लें तो यह अनुपात प्रति व्यक्ति ३७ डिसमिल होगा। इस प्रखण्ड में १७ ग्राम-पंचायतें और १२१ राजस्व गाँव हैं।

इस जिले के दूसरे प्रखण्डों के मुकाबले, मुसहरी में खेतिहर मजदूरों की आबादी का प्रतिशत सापेक्षतः ऊँचा है। जहाँ पूरे जिले का औसत केवल ३३.३ है, इस प्रखण्ड की खेतिहर-मजदूर आबादी अपने आश्रितों को लेकर पूरी ग्रामीण आबादी का ३९.२ प्रतिशत है। (मुजफ्फरपुर नगर मुसहरी प्रखण्ड का शहरी हिस्सा है।) अगर हम इस संख्या में, शहर में जाकर रोटी कमानेवाले भूमिहीन मजदूरों की संख्या जोड़ दें, तो अपने आश्रितों के साथ भूमिहीन मजदूरों का अनुपात कुल ग्रामीण आबादी के ४५ प्रतिशत से कम नहीं होगा। भूमि-मनुष्य के अनुपात के साथ-साथ यह जो स्थिति है, उसके कारण भूमिवान परिवारों का यहाँ असाधारण प्रभुत्व है; मजदूरी की दर, खासकर 'सलग्न' मजदूरों (कमियों) की मजदूरी अपवादरूपेण बहुत ही कम है; घोर बेकारी है, तथा खेतिहर-मजदूरों में हद दर्जे की गरीबी और व्यापक असंतोष का वातावरण है। यह स्थिति शायद इस प्रखण्ड के सामान्य पिछड़ेपन के लिए भी जिम्मेवार है, चाहे वह पिछड़ापन शिक्षा के क्षेत्र में हो, कृषि-विकास के क्षेत्र में हो, या राजनीतिक चेतना की दृष्टि से हो, बावजूद इसके कि यह क्षेत्र जिला-स्तर के नगर से सटा हुआ है। इस क्षेत्र के बारे में एक मार्के की बात यह है कि शहर के निकट होने का कोई विधायक प्रभाव इस क्षेत्र पर नहीं पड़ा है, लेकिन उसका निषेधात्मक प्रभाव—मुकदमेबाजी, शराबखोरी, सामान्य सामुदायिक जीवन में ह्रास आदि के रूप में—बिल्कुल स्पष्ट है। (क्रमशः)

अगले अंक में

ग्रामीण जीवन की वास्तविकताएँ और त्रिशंकु जैसी अधर में लटकी योजनाएँ

शिक्षक जीवन के मूल्यों का आत्मशोधन-मंथन करें

शिक्षण की स्वायत्तता और शिक्षक का वर्चस्व अखण्डित रखना आचार्यकुल का उद्देश्य

—उ० प्र० आचार्यकुल-सम्मेलन में महान् कवयित्री श्रीमती महादेवी वर्मा का उद्घाटन-भाषण—

शाश्वत शास्त्रपीठ और मोक्षदायिनी काशी नगरी में स्थित महामना की इस तपोभूमि में हम आज मानसिक मुक्ति के चिंतन के लिए एकत्र हुए हैं। हमारी संस्कृति सदा से ही शासन और समाज, दोनों की मार्गदर्शिका रही है। किन्तु पिछले २०० सालों से, जब से शासकों ने शिक्षा पर काबू करने का प्रयोग किया, तब से हमारा मनोबल गिरने लगा, और शिक्षा शासनात्मक बनती गयी। आज हमारे देश में एक दिशाभ्रम की स्थिति है। किसीको कुछ सूझ नहीं रहा है कि किधर जायें और क्या करें। जीवन के हर क्षेत्र में, और शिक्षा में भी, राष्ट्रीयकरण का नारा व्याप्त है, किन्तु इस राष्ट्रीयकरण का अर्थ केवल "सरकारीकरण" है। यह शाश्वत दासता की माँग है। जब बन्दी खुद ही कहने लगे कि मेरे पैरों में बेड़ियाँ डाल दो, तब उसका उद्धार कौन कर सकता है?

सूखी धरती की दरारें

हम आज भी अंग्रेजों के द्वारा चालू की गयी शिक्षा-पद्धति को चला रहे हैं। स्वतंत्रता के बाद शिक्षा नहीं बदली। पुराना ढाँचा आज भी कायम है। नतीजा यह हुआ कि आज स्वतंत्र भारत का तरुण इससे कुछ प्राप्त नहीं कर पा रहा है। वह बुद्धि से बौना और जीवन के स्पन्दन से वंचित होता जा रहा है। जिन युगों में 'ज्ञान' 'मुक्त' रहा है, उन दिनों मानव भी 'मुक्त' रहा है। हमारी प्राचीन शिक्षा-पद्धति न शासनपरक थी, न समाजपरक थी। वह तटस्थ रहकर दोनों को मूल्य प्रदान करती थी, और दोनों का मार्गदर्शन करती थी। हमारी परम्परा में गुरु तथा शिष्य दोनों का लक्ष्य आत्मशोधन के लिए शिक्षा देना तथा शिक्षा प्राप्त करना था, और यही कारण था कि उस युग का तरुण आत्म-विश्वास से भरा होता था। वह ऐसा जमाना था जब 'सर्टिफिकेट' की जरूरत नहीं पड़ती थी। गुरुओं का नाम ही प्रमाण होता था। वशिष्ठ के आश्रम का विद्यार्थी हूँ, उनका शिष्य हूँ, इतना बताने पर विद्यार्थी कितनी क्षमतावाला होगा यह जाना जाता था।

आज का तरुण विक्षुब्ध है। उससे सबसे अधिक खतरा आज स्वयं शिक्षक को ही है, क्योंकि वह उसे कुछ नहीं दे पाता, जिसके लिए छात्र उसके पास आता है। वह अपने जीवन की रिक्तता को भरने आता है, लेकिन शिक्षक के आने से, जाने से, उसके होने से, या न होने से विद्यार्थी के जीवन पर कोई असर नहीं पड़ता। वह पास से गुजरता है तो रिक्तता भरती नहीं है, बल्कि उस सूखी धरती में जैसे दरारें पड़ जाती हैं। आज तरुण प्यार और सम्वेदना का प्यासा है, उस अमृत के लिए प्यासा है, जिसे केवल आचार्य ही दे सकता है। हम मेघ बनकर बरस जायें, सब दरारें, सब विषमताएँ पाट दें। समस्याओं का समाधान अगर नहीं हुआ तो प्रलय होगा। और तब, नयी पीढ़ी हमें क्षमा नहीं करेगी।

राजनीति : एक विक्षिप्तों का मेला

यदि आज का छात्र विध्वंस के मार्ग पर जाता है तो उसका दायित्व हम शिक्षकों पर है। तरुण के आवेश को विवेक की शक्ति देकर उसका सर्जनात्मक विकास करना शिक्षकों का कर्तव्य है। आज की समस्याएँ विद्यार्थियों की नहीं, शिक्षकों की हैं, लेकिन इस ओर शिक्षकों का ध्यान नहीं गया है। उनके संगठन अधिक वेतन तथा ग्रेड आदि की माँग तक सीमित हैं। समस्याओं का समाधान हो, शिक्षा सरकार से मुक्त हो, शिक्षकों का वर्चस्व अखण्डित रहे, ऐसी माँग कोई नहीं करता। विनोबाजी ने जब आचार्यकुल का विचार सुझाया तो उनके मन में शिक्षा की स्वायत्तता और शिक्षकों के अखण्डित वर्चस्व की ही बात थी। आचार्यकुल का काम आत्मशोधन तथा आत्ममंथन की प्रेरणा देना है। अपने मनोबल और तपस्या के द्वारा नागरिक तथा समाज के वर्चस्व को कायम रखना तथा नयी पीढ़ी के मार्ग को आलोकित करना हम शिक्षकों का कर्तव्य होना चाहिए। यह हम तभी कर सकेंगे जब हमारा चरित्र उज्ज्वल हो, भावनाएँ उदात्त हों, और हम आज के राजनैतिक दलदल से बचे रहें। हमारी राजनीति तो विक्षिप्तों का एक मेला है। विक्षिप्तों के इस मेले में, जहाँ छोटे-बड़े सत्ता के लिए दल-बदल होता है, कुर्सियाँ खींची और उलटी जाती हैं, कोई यह नहीं जानता कि कल क्या होगा? इस राजनीति ने शिक्षकों का मनोबल दुर्बल किया है, और समाज को तोड़ा है। इस राजनीति के फेर में पड़कर आज के वृद्ध और तरुण दोनों ही विक्षिप्त हो गये हैं।

प्रतिदान नहीं, आत्मदान का सौदा

और, हम शिक्षकों ने तो छात्र को वात्सल्य तथा ज्ञान देने के बजाय उसे उत्तर-पुस्तिकाओं में बंद कर लिया है। ये उत्तर-पुस्तिकाएँ ही उसके लिए कैवल्य-दायिनी बन गयी हैं। शिक्षक एक जड़-यंत्र-जैसे बन गये हैं। इतने बड़े समृद्ध ज्ञान के इस समृद्ध देश में शिक्षक क्या यंत्र बनकर ही रह जाना चाहते हैं? वास्तव में ज्ञान के संप्रेषण में ही हम अपनी कीमत बना सकते हैं। शिक्षकों का काम प्रतिदान का नहीं, आत्मदान का सौदा है। हमें याद रखना चाहिए कि अधिकार माँगने से नहीं मिलता है।

लेकिन कर्तव्य करने से जो अधिकार मिलता है उसको इन्कार कोई नहीं कर सकता। वह कर्तव्य से स्वत: प्राप्त हो जाता है। दीपक जब जलने लगता है, तो अपने आप अँधेरे पर अपना अधिकार जमा लेता है। उसके जलने से ही एक प्रभामंडल पैदा हो जाता है। वैसे ही बगिया में फूल खिलने का कर्तव्य करता है, तो उसकी खुशबू को तोल-तोलकर बाँटने की जरूरत नहीं रहती है। खिलने से ही फैल जाने का अधिकार उसको प्राप्त हो जाता है।

आज पश्चिम की दुनिया में साधनों का वैभव है, बुद्धि का वैभव है, लेकिन अन्तर से वे खाली हैं। जब बुद्धि का वैभव अपनी मर्यादा छोड़ देता है, तब जीवन का सौन्दर्य नष्ट हो जाता है। सागर का वैभव अपार है, लेकिन वह अपनी मर्यादा नहीं तोड़ता; अगर वह अपनी मर्यादा तोड़ दे, तो धरती का सौन्दर्य ही नष्ट हो जाय। हमारे आदर्श और मूल्य पुरातत्त्व विभाग की कौतूहल-वाली वस्तुएँ नहीं हैं। हर युग में यथार्थ तो बदलता है, लेकिन सत्य नहीं बदलता, जीवन के तथ्य तो बदलते हैं, लेकिन तत्त्व नहीं बदलते। हमारी संस्कृति के कुछ तत्त्व शाश्वत हैं। इस देश के चिंतन में कुछ ऐसे मूल्य हैं, जो सनातन हैं। जो सत्य और तत्त्व हमें उत्तराधिकार में मिले हैं, उन्हें सुरक्षित रखना और विकसित करना आचार्यकुल का कर्तव्य है। मनुष्य मनुष्य कैसे रहे, यह काम शिक्षकों का करना है।

ये आँधी और झंझावात गुजर जायेंगे

हम यहाँ विचार करने बैठे हैं। विचार एक यज्ञ है, संकल्प भी एक यज्ञ है। लेकिन इतने से काम नहीं चलेगा। अँधेरे में बैठकर दीपक की माला जपने से प्रकाश नहीं आयेगा, उसके लिए तो दीपक ही जलाना पड़ेगा। आचार्यकुल का हर सदस्य संकल्प करे, और स्वयं दीपक बनकर जले, तभी वह नयी पीढ़ी को और समाज को आलोकित कर सकेगा।

आज एक आँधी आयी है, और इतिहास में आँधियाँ आती ही रहती हैं। परन्तु कोई ऐसी आँधी नहीं, जो जीवन की साँस बन सके। अगर आचार्यकुल तरुणों को, समाज को, प्राणदायिनी साँस दे सके, तो आँधी और झंझावात गुजर जायेंगे, लेकिन जीवन कायम रहेगा। जीवन की ऋतु में पतझड़ भी आते हैं, लेकिन पतझड़ पत्तों और टहनियों में आता है, वृक्ष की जड़ में नहीं आता। अगर जड़ में भी पतझड़ आ जाय तो वृक्ष का जीवन ही समाप्त हो जाय। शिक्षकों का स्थान समाजरूपी वृक्ष की जड़ों में है। इसीलिए शिक्षकों को शाश्वत मूल्यों और तत्त्वों से युक्त होना है।

विनोबा ने आचार्यकुल की स्थापना इसलिए की, कि शिक्षक भौतिक और आर्थिक स्तर पर ही संघर्ष न करे, वह जीवन के मूल्यों के लिए आत्म-शोधन- मंथन करे। यदि शिक्षक आत्म-शोधन में लगे, तो वह परमुखापेक्षी नहीं रहेगा। उसका वर्चस्व, उसकी स्वायत्तता अखण्डित रहेगी। वह जीवन की इस ऋतु को बदल देगा।

हम विनोबा के इस स्वप्न को सार्थक कर दें, अपने आपको सार्थक कर दें! 'जीवन' को सार्थक कर दें। यदि हम मनोबल के साथ खड़े हों तो ऐसा कर सकते हैं। वह शिक्षक भी क्या है जो तने और धरती में दरारें पड़ जायें। हम मेघ की तरह उमड़ें, और बरस जायें, धरती को तृप्त कर दें। आसमान को थामें जायें, और धरती पर पाँव धरकर चलें! ●

तरुण के सवाल : तरुणों से

[मुजफ्फरपुर की तरुण-शान्तिसेना ने छात्रों से सघन सम्पर्क और विचार-विमर्श के लिए ३ दिसम्बर '७० से छात्रालय-छात्रालय में तरुण-यात्रा आयोजित की है। इस आयोजन के पीछे उनका दृष्टिकोण क्या है, इसके स्पष्टीकरण में उन्होंने लिखा है :]

विश्व के नक्शे को सामने फैलाकर क्या आपने कभी विचार किया है? खतरे के रक्त-बिन्दुओं की भरमार के बीच आपने अपनी भूमिका ढूँढ़ी है? जिस संसार में हम जी रहे हैं उसकी *समस्याएँ*, जिज्ञासाएँ और भविष्य की बात आपने सोची है?

आज इन्हीं सवालों के साथ हम आपके पास आये हैं। विद्यार्थी विद्यार्थी के पास आया है। जरा इन समाचारों पर गौर कीजिए – फ्रांस में विद्यार्थी समाज में आमूल सुधार की माँग करता है, स्कैंडनेविया का विद्यार्थी विश्वविद्यालय-प्रशासन में साझेदारी के लिए आन्दोलन करता है, चिली में विद्यार्थी वियतनाम-युद्ध के विरोध में प्रदर्शन करते हैं, जापान के छात्र देश में अमेरिका का वर्चस्व समाप्त करने के लिए पुलिस की लाठी का सामना करते हैं, अमेरिका में विद्यार्थी अनिवार्य फौजी भर्ती के आदेश *की होली जलाते हैं, पाकिस्तान में तानाशाही* के खिलाफ छात्रों की आवाज उठती है और हिन्देशिया में सुकर्ण की सत्ता पलटते हैं छात्र। क्या आपको नहीं लगता, कि कहीं कोई सूत्र है, जो इन सबको नयी अर्थवत्ता देता है? ये सभी वर्तमान सामाजिक व्यवस्था से उब के लक्षण हैं। 'बदलो, बदलो' की चीख-चिल्लाहट सब ओर है, पर बदलाव कैसे? इसी 'कैसे' का उत्तर खोजने हम निकले हैं।

भारतीय तरुण का अटकाव

हम आपसे पूछना चाहते हैं कि आपकी तरुणाई विशेषता है या विवशता? अगर आपकी तरुणाई का कोई गुणात्मक मूल्य भी है तो अब दर्शक बने रहने का वक्त नहीं है। जिन्होंने *तमाशा* खड़ा किया है वे तमाशा देखें। हमारी तरुणाई भाड़े पर खरीदी बाजीगरी नहीं है और न हम पंगु दर्शक।

जिस समाज में हम रह रहे हैं, *उसमें पग-पग पर अत्याचार है, शोषण है,*

विषमता है, और यह सच है; क्योंकि यह सारा हम सह रहे हैं। इन सारी कुरीतियों के मध्य भारतीय युवक अटका कहाँ है…? भारत की युवा-शक्ति कहाँ लगी जहाँ आदमी-आदमी का खून पी रहा था रांची, अहमदाबाद, कश्मीर, भिवण्डी, जलगाँव के साम्प्रदायिक उपद्रवों में; तमिलनाडु आदि में अंग्रेजी के समर्थन में, असम में गैर-असमियों के विरुद्ध आग लगायी जा रही थी उसमें, महाराष्ट्र में शिव-सेना के अ-शिव कारनामे हो रहे थे उसमें। इन सारे राजनैतिक दाँव-पेंचों के लिए सभी दलों ने विद्यार्थियों को अपनी तोप का बारूद बनाया, और विद्यार्थियों ने कठपुतलियों से ज्यादा महत्त्व की भूमिका निभायी भी नहीं।

और, स्थिति में आज भी परिवर्तन कहाँ हुआ है? संसार के अन्य देशों का युवा मस्तिष्क भले चाँद पर चल रहा हो, भारतीय युवक आजादी प्राप्ति जाड़ने में, परीक्षा की 'विशेष' तैयारी में—कुंजी खरीदकर एक पौरुषहीन सुरक्षा की चाह में—लगा है। सबसे दयनीय स्थिति तो यह है कि युवा वर्ग ने, जो हमेशा से नवीनता का वाहक रहा है, सड़े-गले मस्तिष्क से समझौता कर लिया है, यथा-स्थिति को बनाये रखने के षड्यन्त्र के आगे घुटने टेक दिये हैं। कैसी बहादुरी है इसमें? कैसी तरुणाई है? कायरता से भरे इस हृदय में कोई बहादुरी खोजें भी तो क्या?

तरुण तन पर बूढ़ा मन क्यों?

बंगाल का उदाहरण सामने है। बिहार की वहशतें तात्कालिक हैं। हमारे कुछ साथियों ने समझौते की भाषा अस्वीकार कर दी है और हिंसा की भाषा से समाज-परिवर्तन की बात करने लगे हैं। बंगाल में सड़कों पर आदमी आदमी की हिंसक प्रवृत्तियों को सींच कर रहा है। कई लोग असमय काल-कवलित हुए हैं। निराशा और दैन्य की आग में जलते युवकों ने चीन के अध्यक्ष को अपना अध्यक्ष घोषित कर दिया है। तरुण-मस्तिष्क का यह कैसा पतन है जो चीख-चीखकर देश पर किसी विदेशी के वर्चस्व के सपने देख रहा है! क्या उनकी नजर में भारत का कोई नेतृत्वकारी ऐसा नहीं जो भारत का अध्यक्ष बन सके? अगर हमारे पास आज कोई संस्कृति नहीं है—टूटी-फूटी, भ्रष्ट, दुर्बल, पंगु, दुर्बल चाहे कैसी भी वह हो, अगर हम उसीको अपने प्राणों के बल से नहीं जीवंत और गतिमान कर सकते—तो क्या इन दूर के साम्राज्यों से हम संस्कृति (और व्यक्ति) लाकर यहाँ बैठा सकेंगे? हमें खेद है कि यह युवा-वर्ग न तो सच्चा माओवादी है, और न सच्चा भारतीय ही है।

'भारतीय विद्यार्थी का मस्तिष्क अभी भी १६वीं शताब्दी का है'—अगर इस आरोप का खण्डन करना है तो कार्य में इसका प्रमाण देना होगा। सोचना होगा कि विभिन्न राजनीतिक दलों के जो युवक-संगठन चल रहे हैं वे समाज की रूढ़ियों को तोड़ने में क्या भूमिका अदा कर रहे हैं।

तरुणाई गैर-जिम्मेदारी का नहीं, ज्यादा-से-ज्यादा जिम्मेदारी को बहादुरी से वहन करने का नाम है। 'हम आजाद हैं' इस वाक्य की अगर कोई कीमत है तो आजादी हमेशा अधिक जिम्मेदारी माँगती है। अगर आपमें युवा-चेतना है, तड़प है, तो सकारात्मक से ऊपर उठकर तिलमिलाइए समाज के उन अनैतिक समझौतों पर, जिसने हमारा जीना असम्भव कर रखा है, जिसने हमारे तरुण शरीर पर बूढ़ा मस्तिष्क रख दिया है।

आपकी भूमिका?

जो लोग बदलाव चाहते हैं, परिवर्तन के लिए बेचैन हैं, उनके लिए हम स्पष्ट करना चाहते हैं कि संसार में कोई भी और कैसा भी परिवर्तन टुकड़ों में नहीं हुआ है। क्रान्ति सम्पूर्ण व्यवस्था में होती है और चूँकि सम्पूर्ण होती है, अतः सम्पूर्ण समाज माँगती है। शिक्षा में अलग, राजनीति में अलग, अर्थ-व्यवस्था में अलग, इस तरह विभाजित क्रान्ति, भ्रान्ति के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। क्रान्ति होगी—जड़ से होगी—एक साथ सभी मोर्चों पर होगी।

संसार के अन्य छात्र-आन्दोलनों के चरित्र की यही विशेषता रही है कि उन्होंने सारी व्यवस्था के खिलाफ स्वयं की संगठन-शक्ति से ही आन्दोलन किया है—चाहे जैसे और जितना भी हो। पर भारतीय छात्र ने राजनीतिक दलों के पिछलग्गू बनकर घोषणा कर दी—इसी पहले राजनीतिक शतरंज की मोहरें हैं, बाद में छात्र और सबसे आखिर में आदमी।

सन् १९७० का वर्ष समाप्त हो रहा है। नया वर्ष आना ही चाहता है। दूसरे शब्दों में हमारी लज्जाजनक उदासीनता और गैर-जिम्मेदारी के इतिहास में एक वर्ष और जुड़ गया है। नये वर्ष की नयी चुनौती है। वह पूछ रहा है कि आपकी भूमिका क्या होगी? बहादुरी या दर्शक, या तीसरी कुछ??? उन समस्याओं का सामना आप कैसे करेंगे, जिनके सामने राजनीतिक दलों ने हार मान ली है? क्या छात्र भाषा, प्रान्त आदि के लिए लड़ मरेंगे या छात्र-आन्दोलन राजनीतिक मोहरों को तोड़कर, परिवर्तन का एक नया मंच तैयार करेगा? युवा-वर्ग स्वयं गूँगा दर्शक रहेगा या देश के पचास करोड़ लोगों की वाणी बनकर गूँजेगा?

नये वर्ष के साथ उभर आये इतने सारे प्रश्नों के बीच आपकी भूमिका क्या होगी, हम यही जानने और सुनने आपके बीच आये हैं।

—तरुण यात्री,

तरुण-शान्तिसेना, मुजफ्फरपुर

पाकिस्तान का चुनाव और भारत-पाक सम्बन्धों का भविष्य

पिछले दिनों पूर्वी पाकिस्तान में भयंकर तूफान आया। लाखों जानें गयीं। जो बचे, उनकी हालत ऐसी हुई कि उन्हें मुर्दों से ईर्ष्या हो। सारी दुनिया गम में डूब गयी। जगह-जगह से राहत पहुँचाने के सामान तूफान-पीड़ित लोगों के लिए भेजे गये। भारत ने भी बड़ी सहायता की। हेलिकोप्टर और चलते-फिरते अस्पताल देने चाहे, परन्तु पाकिस्तान ने उन्हें लेने से इन्कार कर दिया। बड़ा दुख होता है, जब यह दिखाई पड़ता है कि पाकिस्तान की सरकार मानवीय संकट की घड़ी में भी कूटनीति की छोटी-छोटी बातों से आगे नहीं सोच पाती।

चन्द वर्षों पहले तक भारत और पाकिस्तान एक ही देश थे। दोनों में बसनेवाले भी एक थे। वैसे तो उनकी परम्पराएँ भिन्न थीं, उनके रीति-रिवाज अलग थे, उनके नैतिक मूल्य जुदागाना थे, परन्तु उनके अनुभव, विचार और आदर्श पारम्परिक थे।

भारत समन्वय का देश है। यहाँ की प्रकृति ने समन्वय के विविध उदाहरण प्रस्तुत किये हैं। गंगा और यमुना के संगम में प्रकृति का जो इशारा है, उसे यहाँ के लोगों ने समझा था, इसीलिए अकबर ने सभी बड़े धर्मों के पारम्परिक और स्थायी सिद्धान्तों को इकट्ठा करके मानव-इतिहास में पहली बार धर्मों के समन्वय का प्रयत्न किया था, और नानक ने हिन्दू और मुसलमान धर्मों के भेद को मिटाने के लिए दोनों को एक लड़ी में पिरोने की कोशिश की थी। परन्तु प्रकृति व मनुष्य की ये कोशिशें अंग्रेजी साम्राज्य के कूटनीतिज्ञों के षड्यन्त्रों का शिकार हो गयीं। वरना आज भारत का इतिहास कुछ और होता। समन्वय की वह धारा बहुत आगे जा चुकी होती।

बँटवारे के बाद

देश बँटा, और भारत के लोगों को इसकी बहुत बड़ी कीमत अदा करनी पड़ी। शायद इसका प्रभाव शताब्दियों तक पड़ता रहेगा। आनेवाला इतिहास अगर उसे संसार की बीसवीं सदी की सबसे बड़ी दुखांत घटना कहे, तो कोई ताज्जुब नहीं।

देश तो बँटा ही, इन्सान और उसकी इन्सानियत का भी मजाक उड़ा। हिन्दू और मुसलमान धर्मों के मिलन से भारत की सभ्यता और संस्कृति में जो अमूल्य तत्व आये थे, वे खून की बहती हुई नदियों में डूब गये। हमने क्या खोया, कितना खोया, इसका अन्दाजा लगाना मुश्किल है। इन्सान पहले ही से कई खानों बँटा हुआ था, पाकिस्तान नाम का एक खाना और बढ़ गया।

स्वतंत्र भारत व पाकिस्तान के जन्म लेते ही दोनों देशों के बीच शीत-युद्ध आरम्भ हुआ। तीन बार रक्तपात हुआ। सन् १९४८ में काश्मीर में, सन् १९६५ में कच्छ में और फिर उसी साल सितम्बर में २२ दिन का युद्ध। इन सबने दोनों देशों की आर्थिक परिस्थिति बिगाड़ दी। एक ओर देश की सुरक्षा पर असीमित खर्च बढ़ा और दूसरी ओर दोनों के व्यापारिक सम्बन्ध टूटे रहने से अपार क्षति हुई। फलतः आर्थिक उन्नति दोनों देशों की पिछड़ गयी।

बिगड़े सम्बन्धों के दुष्परिणाम

संसार के बाजार में दोनों देशों ने अपने-अपने माल का मुकाबला भी शुरू कर रखा है, जिससे दोनों घाटे में हैं। पाकिस्तान ने जब भारत को जूट देना बन्द किया, तो भारत को अन्न पैदा करनेवाले खेतों में जूट की खेती करनी पड़ी। ऐसा करने से पाकिस्तान को भी कोई लाभ न हुआ। वहाँ के कृषि-मंत्री के अनुसार सन् १९४७ में पाकिस्तान में जूट का उत्पादन संसार के उत्पादन का ८० प्रतिशत था, परन्तु सन् १९७० में ३० प्रतिशत रह गया है। 'टाइम्स' के संवाददाता को शेख मुजीबुर रहमान ने कहा था कि "२०० साल पहले जब अंग्रेज आये थे, तब बंगाल का एक सौदागर पूरे लन्दन को खरीद सकता था, अब देखो, मेरा सुन्दर देश कितना गरीब है!"

अगर दोनों देशों में आर्थिक गठन हो जाय तो दोनों की आर्थिक स्थिति सुधर जाय। यह केवल भौगोलिक कारणों से ही नहीं, बल्कि ठोस आर्थिक दृष्टिकोण से भी अनिवार्य है। क्योंकि बहुत सारी आवश्यक चीजें एक-दूसरे के पास उपलब्ध हैं, जिन्हें वे एक-दूसरे से न लेकर दूर-दूर के देशों से मंगाते हैं, और घाटे में रहते हैं।

भारत और पाकिस्तान की विदेश-नीतियाँ भी आपसी सम्बन्धों से प्रभावित हुई हैं। यह एक हकीकत है कि संसार में दोनों देशों की कोई साख नहीं रह गयी है। दोनों मिलकर या स्वतन्त्र रूप से अगर चाहते तो संसार के राष्ट्रों के बीच उनका स्थान होता, परन्तु आज कोई भी देश भारत का मित्र नहीं रहा है, और पाकिस्तान की परिस्थिति तो ऐसी है कि जिसके सभी अपने हैं, लेकिन वास्तव में कोई भी अपना नहीं। इन दोनों देशों के बिगड़े सम्बन्धों से लाभ अगर किन्हीं को हुआ तो वह पश्चिमी देशों का; जिन्होंने सैनिक-सन्तुलन की बात करके खूब हथियार बेचे और पैसे कमाये। इस एक ही तीर से दूसरा शिकार यह हुआ कि शस्त्र प्रतिस्पर्धा की होड़ में भारत उलझकर रह गया और संसार से उसका प्रभाव धीरे-धीरे मिट गया।

भारत के साम्प्रदायिक दंगे भी इन दोनों देशों के बिगड़े सम्बन्धों के परिणाम हैं। क्योंकि दोनों देशों के अल्पसंख्यक अपने देशों भाइयों का विश्वास खो चुके हैं।

आम चुनाव की सम्भावनाएँ

अभी पाकिस्तान में आम-चुनाव हो रहा है। चुनाव के बाद प्रजातन्त्र स्थापित होगा। अगर ऐसा हो सका तो, हम वहाँ की जनता की आवाज सुन सकेंगे, और उनके विचार और भावनाओं को जान सकेंगे।

चुनाव के बाद वहाँ के शासक कौन होंगे? कौन-कौनसी राजनैतिक पार्टियाँ भिन्न-भिन्न प्रांतों में चुनकर आयेंगी? केन्द्र और प्रांतों के सम्बन्धित कैसे रहेंगे? इन सबका उत्तर तो समय ही देगा। लेकिन यहाँ एक सवाल उठता है कि क्या चुनाव के बाद पाकिस्तान की स्थिति भारत से अधिक दयनीय होनेवाली है? क्योंकि दोनों देशों में एक ही जैसी शक्तियाँ काम कर रही हैं। वहाँ भी भाषा-भेद और प्रांत-भेद जोरों पर है। सिंध में अस्लाम एलेकुम के बदले 'जय सिंध' की आवाज सुनाई देती है। यू० पी० के रहनेवाले उर्दू के प्रसिद्ध कवि जोश मलीहाबादी को यह देखकर बड़ा दुःख होता है कि उर्दू के दूसरे प्रसिद्ध कवि फैज अहमद फैज और हफीज जालन्धरी उर्दू के कवि होते हुए प्रांतीय भावनाओं की वकालत करते हैं, और उनके समर्थन में निकलनेवाले जुलूसों में सम्मिलित होते हैं। सीमाप्रान्त प्रदेश के पठान तो अपनी अधीनता बहुत दिनों से महसूस कर रहे हैं। पूर्वी बंगाल अपने गरीब लोगों की दयनीय परिस्थिति को सुधारने के लिए स्थानीय स्वायत्तता की माँग कर रहा है। इन सब बातों का सही उत्तर और पाकिस्तान का सही चित्र महीनों, या शायद बरसों बाद सामने आयेगा। अभी तो पाकिस्तान की केन्द्रीय सरकार फौज के बल पर टिकी हुई है, और समस्याएँ दबी हुई हैं। पाकिस्तान में चुनाव के बाद पूर्वी पाकिस्तान को १६२ जगह मिलेंगी। आशा की जाती है कि ज्यादा से ज्यादा जगह शेख मुजीबुर रहमान की अवामी लीग के प्रतिनिधियों को प्राप्त होंगी। (आखिरी खबरों के मुताबिक इस लेख को प्रेस भेजने समय तक १६१ स्थान प्राप्त हो चुके हैं।) यह बात महत्वपूर्ण है कि पूर्वी बंगाल में ऐसी शक्ति उभर रही है जो भारत के साथ मित्रता की इच्छुक है।

पूर्वी पाकिस्तान के नेता शेख मुजीबुर रहमान बार-बार भारत और पाकिस्तान के बीच व्यापारिक सम्बन्ध स्थापित करने पर जोर देते रहे हैं। उन्होंने अभी कुछ दिनों पहले ही फिर कहा था कि दोनों देशों के व्यापारिक सम्बन्ध अनिवार्य हैं, क्योंकि पाकिस्तान को भारत के कोयले की आवश्यकता है, और भारत को पाकिस्तान के जूट की जरूरत है। पाकिस्तान जर्मनी और चीन से जो कोयला मँगाता है, वह उसे काफी महँगा पड़ता है।

हमें आशा करनी चाहिए कि और भी ऐसी शक्तियाँ उभरेंगी, जो भारत-पाक मैत्री की जरूरत को महसूस करती हैं, ताकि दोनों देशों के व्यापारिक, सांस्कृतिक, राजनैतिक आदि सभी स्तरों पर सम्बन्ध सुधर सकें।

सम्बन्ध-सुधार के लिए

अगर पाकिस्तान में प्रजातन्त्र स्थापित हो जाय, तो सम्बन्ध-सुधार के लिए कम-से-कम निम्नलिखित प्रयत्न होने चाहिए :

(१) दोनों देशों के विश्वविद्यालयों के शिक्षकों और विद्यार्थियों तथा साहित्य-कारों, कवियों, संगीतज्ञों, पत्रकारों और सामाजिक कार्यकर्ताओं का एक-दूसरे के यहाँ आना-जाना हो।

(२) दोनों देशों की एक दूसरे से सम्बन्धित समस्याओं के समाधान के लिए संयुक्त राष्ट्रसंघ के विशेषज्ञों की सहायता से एक समिति बने, जो समस्याओं के समाधान की कोशिशें करे।

(३) पाकिस्तान में एक 'कन्सोलिडेशन बुर्ड' स्थापित हो, जैसा कि भारत में है।

— सैयद मुस्तफा कमाल

मुजफ्फरपुरकी डाक

मुसहरी प्रखंड और मुजफ्फरपुर शहर में शान्तिसेना के कार्य

पिछले तीन-चार महीने से जे० पी० के ग्रामस्वराज्य अभियान के साथ ही गाँव-गाँव में शान्तिसेना के गठन का प्रयास श्री नवलकिशोर सिंह, मन्त्री, बिहार तरुण-शान्तिसेना के द्वारा चल रहा है। इस सिलसिले में मुजफ्फरपुर शहर एवं मुसहरी प्रखण्ड के गाँवों में यह कार्य जारी है। कुछ दिनों पूर्व मुजफ्फरपुर शहर में कुछ जगहों पर बम-विस्फोट एवं अन्य प्रकार की ऐसी घटनाएँ घटी हैं जिन्हें नक्सल-वादी कहा जा रहा है। दुर्भाग्य से ये घटनाएँ शिक्षण-संस्थाओं में घटित हुई हैं। अतः बम-विस्फोट के बाद तरुण शान्ति-सेना द्वारा नगर में 'पुण्य मार्च' (तरुण-यात्रा) का कार्यक्रम बना, जिसका प्रारम्भ ३ दिसम्बर से हो गया। इसके अन्तर्गत स्कूल, कालेज के जो तरुण मित्र हैं, एक लॉज से दूसरे लॉज जाकर सम्पर्क करेंगे तथा समस्याओं के सम्बन्ध में चर्चा कर संगठन को मजबूत करने की दृष्टि से नये-नये मित्रों की भर्ती करेंगे, उन्हें प्रेम और शांति का पैगाम देंगे।

तरुण शान्तिसेना की एक सांस्कृतिक टुकड़ी भी बनी है, जो गाँव गाँव में जाकर ग्राम स्वराज्य के संदर्भ में अभिनय प्रस्तुत करेगी। ग्रामस्वराज्य की दृष्टि से अभि-नय की नयी-नयी पुस्तकें लिखने का प्रयास चल रहा है। उन गाँवों में, जहाँ ग्रामस्वराज्य का कार्य चल रहा है, 'ग्राम-शान्तिसेना' की स्थापना का कार्य भी साथ-साथ चल रहा है। अब ऐसा तय किया गया है कि प्रत्येक पंचायत में उस पंचायत के ग्राम-शान्तिसैनिकों के ४-५ दिनों के शिविर आयोजित किये जायें

और उन्हें समुचित व्यावहारिक एवं वैचारिक प्रशिक्षण दिया जाय। ऐसा एक शिविर दिनांक १ दिसम्बर '७० से, सलहा में प्रारम्भ हो गया है, जिसका उद्घाटन श्री जयप्रकाश बाबू ने किया है। श्री नवल बाबू के अतिरिक्त इन कार्यों में श्री रामनरेश एवं श्री लक्षणजी उत्साहपूर्वक लगे हुए हैं।

रामदयालु सिंह कालेज की सभा में जे० पी०

२८ नवम्बर '७० को संध्या ४ बजे रामदयालु सिंह कालेज की सभा में मुख्य अतिथि के रूप में श्री जयप्रकाश नारायण ने भाग लिया। सभा की अध्यक्षता श्री रामनवमी बाबू, एडवोकेट ने की। स्वातन्त्र्य-संग्राम के सेनानी तथा बिहार विधान सभा के प्रथम अध्यक्ष स्वर्गीय रामदयालु बाबू की पुण्यस्मृति में आयोजित रामदयालु सिंह कालेज की सभा में विद्यार्थियों और प्राध्यापकों को सम्बोधित करते हुए जे० पी० ने कहा कि यदि आज विनोबा नहीं होते तो भारत गांधी को और भी भूल जाता! संभव था, सौ साल बाद विदेशों से होकर उनका विचार फिर से इस देश में आता। देश में फैल रही हिंसा और प्रतिहिंसा की जड़ में विदेशी तत्त्वों का हाथ है, सिर्फ हम यदि यही मानते हों तो हमारी भूल होगी। सूखी जमीन पर बीज नहीं उगता। समाज में हिंसा प्रकट होती है तो उसके लिए कोई-न-कोई कारण अवश्य है। यह भी मानना गलत है कि यह सब सिर्फ गरीबी के कारण होता है। गरीबी एक कारण अवश्य है। मगर पेरिस में जो विद्यार्थियों की क्रान्ति हुई, अमेरिका में जो असंतोष समय-समय पर उभरकर सामने आता है, उनके कारणों में गरीबी नहीं है। मनुष्य एक रिक्तता का अनुभव करता है। इस रिक्तता की पूर्ति शस्त्र और सत्ता से नहीं हो सकती। इसके लिए तीसरी शक्ति प्रकट करनी होगी। वह है- लोकशक्ति। इस शक्ति के लिए शिक्षा में आमूल परिवर्तन करना होगा। शिक्षकों और विद्यार्थियों को सत्य, प्रेम और करुणा के आधार पर नये समाज के निर्माण में मार्ग की शोध करनी होगी।

मुसहरी प्रखंड की पूर्ण रोजगारी के लिए समग्र विकास-योजना

'एवार्ड' की ओर कुछ समय पूर्व कतिपय पदाधिकारी जे० पी० से मिले थे और *मुसहरी प्रखंड के साधन एवं शक्ति* के आधार पर यहाँ के लिए समग्र विकास-योजना तैयार करने का निश्चय हुआ था। तदनुसार दिनांक ३० नवम्बर '७० को श्री ए० सी० सेन, श्री गिरधर गोपाल, श्री एम० वी० शास्त्री और श्री शंकर अय्यर जे० पी० से मिले और दिनांक १ दिसम्बर '७० को उन्होंने विस्तारपूर्वक यहाँ की योजना पर जे० पी० से बातें की।

जे० पी० के निर्देशानुसार विकास के प्रथम चरण में सिंचाई का 'मास्टर प्लान' तैयार हो गया है जिसके अन्तर्गत ३० हजार एकड़ प्रखंड की पूर्ण सिंचाई होगी। योजना पर कुल मिलाकर लगभग १ करोड़ ६९ लाख रुपये का व्यय होगा। सिंचाई के माध्यम तालाब, कुआँ, बाँध, ट्यूबवेल, रहट और हाथपम्प होंगे।

दूसरे चरण में प्रखंड की औद्योगिक योजना बनेगी जिसमें ग्रामोद्योग, लघुउद्योग और बड़े उद्योग, तीनों को स्थान होगा। उद्योग की योजना प्राप्त होने के बाद उन उद्योगों के संचालन के लिए आवश्यकतानुसार *इस प्रखंड के नवयुवकों के* प्रशिक्षण के सम्बन्ध में सोचा जायेगा। ये सब योजनाएँ नवनिर्मित ग्रामदानी ग्रामसभा के माध्यम से गाँवों में कार्यान्वित होंगी।

इन योजनाओं को कार्यान्वित करने के लिए वित्तीय साधनों के सम्बन्ध में चर्चा चल रही है। ग्रामसभा के ग्रामकोष एवं स्थानीय अन्य सम्पत्ति का लाभ इस योजना को मिलेगा, ऐसी आशा है। व गाँव इस योजना का पूरा लाभ उठा सकेंगे जहाँ की ग्रामसभा सक्षम होगी, ग्रामकोष तथा अन्य स्थानीय साधन तत्परता से उपलब्ध होंगे।

राजनीति का कुपरिणाम

मुसहरी प्रखंड के पड़ोसी प्रखंडों में एक प्रखंड है—मीनापुर। पिछले दिनों इस प्रखंड में कुछ स्थानों पर हत्या तथा डाकाजनी की घटनाएँ नक्सलवादी ढंग से हुईं। सामान्य लोगों की ऐसी धारणा है कि इन काण्डों का मूल कारण आपसी वैमनस्य और पिछले आम चुनावों का कुप्रभाव है, जिससे हारने-जीतनेवाले नहीं, उनका झंडा लेकर लड़नेवाले तबाह और बर्बाद हो रहे हैं। कुढ़नी प्रखण्ड स्थित सिलौत-ग्रामवासी श्री कपिल देव प्रसाद सिंह, भूतपूर्व एम० एल० ए० ने जे० पी० से इस विषय पर चर्चा की और उनसे वहाँ की चिंतनीय स्थिति को नियंत्रित करने के लिए प्रयत्न करने का अनुरोध किया। तदनुसार जे० पी० वहाँ के राजनीतिक दलों के दो प्रमुख उम्मीदवार श्री जनक सिंह, एम० एल० ए० और भूतपूर्व मंत्री, महन्थ रामकिशोर दास से अलग-अलग मिले और उपर्युक्त संदर्भ में उनसे शान्ति-स्थापना तथा विरोधी वातावरण दूर करने के लिए अपील की।

बात की गम्भीरता और सच्चाई से सब परिचित और चिन्तित हैं। मगर वर्तमान राजनीति के घिनौने वातावरण में और गाँव गाँव एवं व्यक्ति-व्यक्ति में अलगाव तथा द्वेष पैदा करने की राजनीति के कठिन व्यूहजाल में अब सद्भाव, प्रेम और एकता कैसे कायम हो, यह एक अहम सवाल है।

ग्रामसभा का पुरुषार्थ

मुसहरी प्रखण्ड के शिक्षित और सम्पन्न गाँवों में, एक प्रमुख गाँव माधोपुर में ग्रामसभा का गठन हुए अभी कुछ ही समय बीते हैं, मगर इस अवधि में वहाँ की ग्रामसभा ने जिस उपक्रम का परिचय दिया है, वह सराहनीय है :

(१) बीघा-कट्ठा निकाला गया है,

और वितरण हुआ है। (२) 'मत-पेटी' निकाला जा रहा है, 'ग्राम-कोष' की स्थापना हो चुकी है, और उससे सहायता एवं विकास-कार्य प्रारम्भ भी हो गया है। (३) पूरे गाँव के श्रमदान का आयोजन करके गाँव की सड़कें सुधारी और बनायी गयी हैं। (४) गाँव की ग्राम-शांतिसेना गठित हुई है। (५) ग्रामसभा के पदाधिकारियों का शिविर में प्रशिक्षण हुआ है।

यह सब हुआ है, मगर इन सबसे बढ़कर गाँव के पुराने झगड़े और मुकदमे मिटाने तथा प्रेम और सद्भाव लाने के के लिए प्रयत्न हुए हैं वे बहुत प्रेरक हैं।

गत दिनांक ३० नवम्बर '७० की सन्ध्या ७ बजे ग्रामीण सज्जनों की एक सामूहिक बैठक श्री राम सेवक सिंह बनाम श्री सूर्य देव तिवारी वगैरह के बीच जो जमीन-सम्बन्धी झगड़ा वर्षों से चला आ रहा है, उसको निपटारे के लिए हुई, जिसमें तर्क-वितर्क के बाद एक मत से निर्णय हुआ कि—(१) जमीन के और की पूर्ववत् स्थिति कायम की जाय। (२) दोनों पक्षों की ओर से वैधानिक तौर पर पंचों को मान्यता दी जाय कि उनका निर्णय दोनों और अधिकारी को स्वीकार होगा। (३) आज का निर्णय सामूहिक रूप से अधिकारी को कल प्रातः १ दिसम्बर '७० को ज्ञात कराया जाय एवं उस पर अमल करने का आग्रह किया जाय। उनके नहीं मानने पर सामूहिक सत्याग्रह किया जाय।

इस विचार को सर्वसम्मति से ग्रामसभा के अध्यक्ष श्री अम्बिका तिवारीजी की अध्यक्षता में श्री रामतारण शर्मा के हस्ताक्षर पर मान्यता दी गयी।

भूदान-कार्य की प्रगति

भूदान-जमीन की बेदखली-निवारण एवं प्राप्त अवितरित जमीन के वितरण की व्यवस्था हेतु भूदान समिति के निरीक्षक श्री त्रिवेणीकान्त दत्त ने भूदान के अमीन के साथ हरिरत्नानगर, नरौली, डुमरी, कुशनगरा जगन्नाथ, कुशनगरा राघो, मणिकपुर, कुशनगरा तथा घोबही गाँवों का भ्रमण किया। हरिरत्नानगर के एक दाता ने सात कट्ठा जमीन से आदाता को बेदखल कर जमीन दूसरों के हाथ बन्दोबस्त कर दी थी। उन्होंने वादा किया कि १० नवम्बर '७० को वे उस जमीन के बदले दूसरी जमीन देंगे। मौजे डुमरी में अवितरित चार कट्ठे जमीन का वितरण हुआ। मौजे कुशनगरा के तीन दाताओं ने आदाता को जमीन से बेदखल कर दिया था। उनसे बात होने पर पता चला कि आदाता को आज तक जमीन पर दखल ही नहीं मिला था। उन्होंने वचन दिया कि १०-११-७० को वे आपस में बात करके आदाता को जमीन पर दखल दिला देंगे। मौजे कुशनगरा राघो, कुशनगरा जगन्नाथ तथा मणिकपुर का दान एक ही मौजे में सम्मिलित है। तीनों गाँवों में मिलाकर कुल १८ बीघा ७ कट्ठा १४ धूर अवितरित जमीन है। दाता से मिलकर जमीन की स्थिति का पता लगाने तथा वितरण करने के लिए भूदान के अमीन वहाँ काम कर रहे हैं। मौजे घोबही में ८ कट्ठा अवितरित जमीन का वितरण हुआ तथा एक आदाता भागवत पासवान, जो जमीन छोड़कर ५-७ वर्ष पूर्व कहीं भाग गये, उनका प्रमाणपत्र रद्द कर बटेदार श्री विशेश्वर पासवान को, जिसका घर उस जमीन पर है, प्रमाण-पत्र देने का निर्णय लिया गया।

भूदान-निरीक्षक ने अंचल कार्यालय में जाकर भूदान किसानों के लगान विभाजन की कार्रवाई जानने का प्रयास किया। भूदान किसानों के लगान-निर्धारण और विभाजन के लिए जो सूची दाखिल की गयी है, वह बिना किसी कार्रवाई के अब तक थी। खोजने पर कुल २९५ भूदान-किसानों की सूची मिली, जिनमें से अब तक मात्र ४० भूदान-किसानों को लगान विभाजन के लिए अंचल कार्यालय ने स्वीकृति दी है। बाकी २५५ भूदान-किसानों का लगान-निर्धारण या विभाजन नहीं हुआ है। अंचलाधिकारी महोदय ने आश्वासन दिया है कि एक सप्ताह में वे सारे सम्बन्धित मामले का निपटारा करेंगे।

मुसहरी प्रखंड-अभियान की प्रगति

(१) पंचायतें, जहाँ काम चल रहा है—९, (२) गाँव जहाँ काम चल रहा है—५२, (३) परिवारों की संख्या, जिनके इस अभियान अवधि में हस्ताक्षर प्राप्त हुए हैं—३५०९, (४) बासगीत जमीन के पर्चे जो सुधारे गये हैं—१०५, (५) बासगीत जमीन का पर्चा जिन्हें नहीं मिला था, नया बनवाया गया है—३३२, (६) अभियान अवधि में वितरित बीघा-कट्ठा—८, जमीन—२४ बीघा ११ कट्ठा १५ धूर, (७) व्यक्तियों में—११२, (८) जमीन प्राप्त, जो वितरित होनेवाली है—१४ बीघा १२ कट्ठा १८ धूर, (८) ग्रामसभा का गठन—१३, (९) ग्रामदान पर आयोजित प्रखंड के गाँवों में जे० पी० के सभाओं की संख्या—६५।

भूदान-किसानों की सभा

३० नवम्बर को ११ बजे दिन में मुसहरी प्रखंड के भूदान-किसानों की बैठक जे० पी० एवं निर्मल बाबू की उपस्थिति में हुई। किसानों ने अपनी कठिनाई और अपनी स्थिति की जानकारी दी। बेदखली, लगानबंदी, प्राप्त भूमि की नापी, आदि कामों का भूदान समिति की ओर से सर्वेक्षण का काम शुरू कर दिया गया है।

'जयप्रकाश शिविर समाचार' से

बंगाल में साहित्य-प्रचार

बंगाल के साथियों ने मिलकर साहित्य-प्रचार की एक योजना बनायी है। योजना के तीन अंग हैं (१) साहित्य-प्रचार, (२) ग्रामदान-अभियान, (३) कार्यकर्ता-प्रशिक्षण।

कलकत्ता शहर में पाँच केन्द्र बनाकर साहित्य-प्रचार का कार्य होगा। स्टाल भी रहेंगे और घर-घर जाकर प्रचार भी किया जायेगा। बंगाल में नक्सलवादी लोग गांधी-साहित्य के स्टालों पर बम आदि फेंकते हैं, अतः कार्यकर्ताओं को हिम्मत से काम करना होगा। कार्यकर्ताओं का हौसला ऊँचा है।

(सुश्री निर्मला देशपांडे के पत्र से)

दो साथियों के दो पत्र

[यहाँ हम अपने दो साथियों के पत्र प्रकाशित कर रहे हैं। 'भूदान-यज्ञ' के पाठक इन पत्रों के लेखकों से परिचित हैं। अपनी तरफ से बिना किसी टिप्पणी के ये पत्र प्रकाशित कर हम आशा करते हैं कि पाठक साथी अपनी प्रतिक्रियाएँ भेजेंगे। —सं०]

पहला पत्र

"निर्मला को मौत की धमकी दी गयी है, सुना आपने ?"

"बहुत अच्छी खबर है। अब आप लोगों की ताकत बढ़ रही है, बधाई।" दादा धर्माधिकारी के सुपुत्र एडवोकेट चन्द्रशेखर ने टेलीफोन पर मुझसे कहा। क्रान्ति की छः 'स्टेजेज' धीरेनभाई बतलाते हैं : उदासीनता, उपेक्षा, उपहास, विरोध, दमन और अंत में अनुसरण। इस अर्थ में अगर हमारा विरोध होता है, तो उसका स्वागत है। जैसे, बिहार के सब राजनीतिक दल केवल हाँ-हाँ करते रहते हैं, इससे क्या फायदा ? न तो निहित स्वार्थवाले वर्ग ने इससे खतरा महसूस किया, न गरीबों ने बचाव। "आप भले लोग हैं, क्रान्तिकारी नहीं," अक्सर यह आक्षेप हम पर था। हम अहिंसक क्रान्ति कर रहे हैं यह हम कहते हैं, समाज नहीं। हमारी शक्ति बढ़ेगी तो हमारा दमन होगा ही, और यह शुभ चिह्न है।

नागपुर के एक कम्युनिस्ट मित्र की आमतौर पर बातें घर घर बात हो रही थी। हम दोनों इस निष्कर्ष पर पहुँचे, कि हम एक-दूसरे के पूरक बनें, बाधक नहीं। वे हमारी कमी पूरी करें, हम उनकी। हमारा गांधीवादी संस्कार है, हम हिंसक बन नहीं सकते। श्री यशवंतराव चव्हाण से संसद में श्री भूपेश गुप्त ने पूछा, "आप भी तो पहले मार्क्सिस्ट थे न !"

चव्हाण ने क्या खूब उत्तर दिया, "जो जवान मार्क्सिस्ट नहीं, वह जवान नहीं। लेकिन तीस वर्ष की आयु के बाद भी वह मार्क्सिस्ट बना रहे, तो उसका दिमाग खराब है।"

हमारे जयप्रकाशजी भी तो युवावस्था में मार्क्सिस्ट थे। क्या मुजफ्फरपुर में आकर उन्होंने क्रांति को रोका नहीं ? खून बहता, भूमि हड़पी जाती, फसल लूटी जाती (जो हो भी रहा है)—किसकी ? जो सदियों से खून चूसता रहा है, भूमि हड़पता रहा है, लूटता रहा है, उसकी कुछ जमीन अगर गरीब हड़प ले तो क्या हर्ज है ? कब तक वह सब्र करेगा ? हमारे आने से धनी का बचाव होता है, क्योंकि हम कहते हैं, कि हिंसा मत करो भाई ! सुभाषचन्द्र बोस का वह प्रसिद्ध वाक्य, "तुम मुझे खून दो, मैं तुम्हें आजादी दूँगा," ग्रामस्वराज की क्रान्ति भी हमसे खून माँगती है।

दो दिसम्बर सन् अड़सठ को चम्पारन के नरकटियागंज नामक स्थान पर जिलाधीश ने भूमिवानों को फटकारा था : "बाबा के नाम का बड़े मालिक विरोध कर रहे हैं, लेकिन बाबा को सिर्फ दिखाकर 'ब्राइबिंग,' (घूस) दे रहे हैं। बाबा बेवकूफ नहीं, अगर बाबा को ठगने का प्रयत्न करते हो। बाबा जिस किसी घर में खाता है, बाबा समझता है कि वह भगवान का खाता है। जिस किसी घर में रहता है, समझता है कि अपने ही घर में रहता है। मनु महाराज ने कहा है, 'स्वमेव ब्राह्मणो भुक्ते, स्वंवस्ते, स्वददाति च'—ब्राह्मण दावा करता है कि वह अपना ही खाता है, अपना ही पहनता है, अपने ही घर में रहता है, और जिस किसी को चीज उठाकर देगा तो कहेगा, मेरा ही मैंने दिया। आज की हालत भारत में रहेगी तो बाबा पसंद करेगा कि मालिकों के सिर कटें, गरीबों को जमीन मिले।"

१६ नवम्बर '७० को मैं दरभंगा जिले के आतंकवादी रामपट्टी गाँव में था, जहाँ के महंतजी की बारह बीघा जमीन से गरीबों ने धान काट लिया है। महंत मनमोहनदास, जो सोलह सौ बीघे के मालिक हैं, रामपट्टी में तीन सौ बीघे के, डर के मारे दरभंगा शहर में रहते हैं। गाँव में उनके मैनेजर से मैंने कहा, "आपको याद होगा कि सात बरस पहले मैंने आपको ग्रामदान में शामिल होने के लिए हस्ताक्षर देने को कहा था। आप उस समय शामिल हुए होते तो यह नौबत नहीं होती।"

लहेरा के बीच में, गौरव से ग्राम-पुरी पर मालिश करवाते हुए मैनेजर ने जोर से कहा, 'अजी ये कम्युनिस्ट डाकू

है, पेट इन्ट है। इनका उपाय है बंदूक, पुलिस, ताकत।"

"पुलिस आपको कब तक बचा पायेगी, आखिर तो आपको इन्हीं गाँव-वालों के साथ रहना है, इनका विश्वास प्राप्त करने के लिए ग्रामसभा में आइए।" मेरी बात सुनी अनसुनी कर दी। इधर कम्युनिस्ट अपनी जिद पर अड़े हैं, महन्त की जमीन पर लाल झंडे गाड़ दिये हैं। सारा गाँव रणग्राम बना हुआ है। पार्टी के लोगों पर पुलिस का वारंट है, सभी फरार हैं, रात को गाँव आते हैं। उनमें ग्रामसभा के जवान अध्यक्ष सीताराम पांडे, एम० ए०, भी हैं। गाँव की जनसंख्या तीन सौ, जिनमें से केवल दस के पास कुल मिलाकर तीस एकड़ जमीन है। शेष भूमिहीन हैं, कोल्हू चलाते हैं, रस्सी बँटते हैं, बँटाई या मजदूरी करते हैं। रटे हुए तोते की तरह मैं उन्हें अहिंसा का पाठ पढ़ाता हूँ, तो एक युवक कह उठता है, "आपके विनोबा भी तो तीन ताकतें बतलाते हैं—करुणा, कानून और कत्ल। ग्रामदान की करुणा देख ली। कानून तो है धनवानों का।"

इन्हें कैसे दोष दें, बताइए। आखिर धैर्य की भी तो सीमा होती है। सैकड़ों ग्रामसभाएँ हमने बनायी थीं, वे प्रायः निष्क्रिय हैं। अब हमारा कार्यकर्ता ग्रामदान की पुष्टि करता है। ग्रामदान कागज पर हुए, फिर ग्रामसभा कागज पर रह गयी, अब पुष्टि कागज पर। बार-बार हम वही गलती दोहराते जाते हैं। जाने हम पिछली गलती से सबक क्यों नहीं सीखते? ऐसी हालत में, राम-टोलावाले धीरज खो बैठे तो क्या आश्चर्य। वे कुछ तो कर रहे हैं, गाँव में कुछ हलचल तो हुई। मैं मन ही मन उन्हें आशीर्वाद दे आया।

क्या आप नहीं देंगे?

—जगदीश बदामी

दूसरा पत्र

इधर कई वर्षों के कुछ ऐसे मित्रों से, सर्वोदयी (!), जनसंघी तथा अन्य, जिनकी मान्यता है कि पूर्ण अहिंसा सबसे बड़ी ताकत है और यह हिंसा का मुकाबिला कर सकती है, पर जब तक हमारी अहिंसा पूर्ण नहीं है तब तक हिंसा का मुकाबिला हिंसा से करना होगा एवं इसकी तैयारी भी करनी होगी। देश की रक्षा के लिए फौज खड़ी करनी होगी। अन्यथा हमारी हार होगी और हम अर्जित अहिंसा से भी हाथ धो बैठेंगे।

इस आधार पर बहुत कुछ निर्णय लिये जा सकते हैं पर यहाँ कुछ दूसरी शंकाएँ व मान्यताएँ भी हैं। क्या हिंसा का मुकाबला हिंसा से सम्भव है? उत्तर है, नहीं। जिस प्रकार दूसरे का झूठ झूठ है और मेरा झूठ भी झूठ है, उसी प्रकार दूसरे की हिंसा हिंसा है और मेरी हिंसा भी हिंसा ही है। दूसरे की हिंसा का मुकाबिला हिंसा से, उससे बड़ी हिंसा द्वारा ही सम्भव है। इस प्रकार एक छोटी हिंसा की जगह पर एक बड़ी हिंसा प्रतिष्ठित होती है। फिर हिंसा का मुकाबला हुआ कहाँ? क्या हिंसा का परिवर्धन नहीं हुआ? अतः हिंसा का मुकाबिला अहिंसा ही कर सकती है। थोड़ी अहिंसा हिंसा को थोड़ा समाप्त करेगी, पूर्ण अहिंसा हिंसा को पूरा समाप्त करेगी। हम दूसरे की हिंसा द्वारा विजित हो अपनी अहिंसा भी खो देते हैं यह मान्यता भी गलत है। अंग्रेजों की गुलामी स्वीकार की थी हमने। अंग्रेजों के अत्याधिकांश अमले हमारे बीच के ही थे। डायर की "जमला भी तत्कालीन कुछ भारतीय दारोगों के सामने फीकी थी। हम स्वयं अंग्रेजों के तलवे चाटते थे, और अपने ही भाइयों को नीचा समझने में गर्व का अनुभव करते थे। निहित स्वार्थों के कारण, सती-प्रथा को, ऊँच-नीच के भेदभाव को धर्म से जोड़ रखा था हमने। हम स्वयं ही अत्याचारों के सामने सिर झुकाते थे, जमींदारों का प्रभुत्व कायम रखते थे। अंग्रेजों के आने से हम कमजोर हुए, इससे अधिक सत्यांश इस मान्यता में है कि हमारे कमजोर होने से अंग्रेज आये। हम अत्याचारी थे, कायर थे, ईर्ष्यालु थे, जिसका अंग्रेजों ने पूरा लाभ उठाया। इसी लाभ के प्रत्यक्ष दर्शन से हम लगा कि हम कमजोर हो गये, पर वास्तव में हम कमजोर थे ही।

यही बात पाकिस्तान और चीन के सन्दर्भ में भी कही जा सकती है। भारत भी शस्त्रों की होड़ में दौड़ लगा रहा है, पर आज प्रत्यक्ष ही साम्प्रदायिकता और भाषावाद का नारा कहाँ नहीं लग रहा है? स्पष्ट है कि मूल्यों की रक्षा फौज से नहीं हो सकती। युद्धों के परिणाम के बीच हम इन नारों को न सोचें। विकृति किसी बाहरी आक्रमण का परिणाम नहीं हो सकती, वह आपसी टकरावों के कारण →

कर्नाटक में पुष्टि-कार्य प्रारम्भ

सर्व सेवा संघ के सेवाग्राम-अधिवेशन के बाद धारवाड़, बेलगाँव, विजापुर, कारवार और शिमोगा जिले के कार्यकर्ताओं का एक द्विदिवसीय सम्मेलन बडोनी में सम्पन्न हुआ। सम्मेलन में पुष्टि-कार्य प्रारम्भ करने का निर्णय लिया गया, जिसके अनुसार बेलहोंगल और बेलगाँव तहसीलों में पुष्टि कार्य प्रारम्भ हो चुका है। गत २५ नवम्बर को ग्रामदानी गाँव मुगबलव में आचार्य दादा धर्माधिकारी और श्री गोविन्दराव देशपांडे की उपस्थिति में [illegible] भूमिवानों द्वारा बीघा-कट्ठा में प्राप्त ७ एकड़ भूमि का वितरण ४ भूमिहीनों में किया गया। गाँव में कुल ९ भूमिहीन हैं। गाँव के लोगों ने शेष ५ भूमिहीनों को भी अपने-अपने हिस्से का बीघा-कट्ठा निकालकर शीघ्र ही वितरित करने का वचन दिया है। बची हुई भूमि का उपयोग ग्रामसभा द्वारा ग्रामविकास-कार्य के लिए किया जायगा।

ज्ञातव्य है कि गाँव के कुल ९ भूमिहीनों ने ही उक्त ७ एकड़ भूमि को वितरित करने के लिए अपने बीच के ४ सबसे गरीब लोगों को चुना था। गाँव की ग्रामसभा के अध्यक्ष ने स्वयं आसपास के १० गाँवों में पुष्टि-कार्य करने की जिम्मेदारी ली है। —नारायण पवार

→आती है। तात्पर्य यह है कि हम कमजोर बनते हैं हारने से नहीं, वरन् इसलिए कि कमजोरी की जड़ हमारे भीतर कहीं पोषित होती रहती है। चीन से या पाकिस्तान से यदि हम वस्तुतः जीतना चाहते हैं तो एक ही रास्ता है कि हम न्यायपूर्ण समाज की स्थापना में जुटें। सभी जुटें, क्योंकि न्यायपूर्ण समाज सबके प्रयास से ही सम्भव है। ग्रामस्वराज्य से ही जनता में ऐसी विधायक शक्ति आ सकती है कि वह मरते दम तक बड़े-से-बड़े आक्रामक से कहती रहे कि मैं तुम्हारा साथ नहीं दूँगी, तुम्हारी आज्ञा से मुझे इन्कार है। और सच्चे मूल्यों की रक्षा का एकमात्र यही उपाय है। हम अपने देश की रक्षा और देश की सीमा-रक्षा को पर्यायवाची मानकर ही भूल करते हैं। विज्ञान के युग में ये सीमाएँ स्वतः टूटने वाली हैं। देश की सीमा एक गलत मूल्य है, और गलत मूल्य की रक्षा गलत तरीके से ही हो सकती है। व्यावहारिक यह होगा, अगर हमें अहिंसा में विश्वास है तो कि जिस मूल्य की रक्षा या प्राप्ति अहिंसा से हो ही नहीं सकती उस मूल्य को ही हम खुद के लिए अनुपयोगी मान लें।

फिर सवाल उठता है कि क्या अहिंसा की साधना और हिंसा की तैयारी साथ-साथ सम्भव है? इसका भी जवाब है नहीं। हिंसा शस्त्रास्त्रों में नहीं होती वह हमारे मन में होती है। यदि हमारा मन हिंसक है तो हम नाखून और दाँतों से भी लड़ेंगे ही, पर यदि हमारा मन अहिंसक है तो फिर बम या बन्दूक निरर्थक हो जाते हैं। शस्त्रास्त्रों से दुश्मन का सामना करना है तो हमारे लिए हिंसक वृत्ति अनिवार्य हो जाती है और यदि हमें सामना अहिंसा से करना है तो शस्त्रास्त्र व्यर्थ के बोझ बन जाते हैं। आवश्यकता होती है अहिंसक मन बनाने की। और क्या हम अहिंसक और हिंसक दोनों मनों की वृद्धि अपनी वृत्ति में कर सकते हैं? कुछ मित्र कहते हैं कि हमारी हिंसा क्रूर नहीं होगी, स्थिर भाव से की गयी होगी। पर मेरा यह निश्चित मत है कि स्थिर भाव से, असंवेदनशील होकर यदि हम हिंसा करते हैं तो इसका अर्थ है कि उसमें क्रूरता हमारे स्वभाव में इस प्रकार छिप गयी है कि उसमें कोई उत्तेजना नहीं रहती। संवेदनशीलता का ऐसा अभाव इसी बात का प्रमाण है कि हिंसा हमारे मन में गहरी पैठ गयी है।

हिंसा का उपयोग सिर्फ वहीं तर्कसंगत लगता है जहाँ हम स्वयं कायर, भयभीत होने लगते हैं। यहाँ यह समझना भी भूल होगी कि हिंसा कायरता को समाप्त कर देती है। वह कायरता को सिर्फ छिपा भर पाती है। हिंसा के मूल में कायरता होती है। पुनः अपनी कायरता को छिपाने के लिए हिंसा की तैयारी आवश्यक नहीं। अहिंसा की साधना के दरमियान जो हिंसा हममें रहती है, वही काफी है हमारी बची कायरता को छिपाने के लिए। यहाँ यह भी ध्यान रखना होगा कि अहिंसा के शास्त्र में आत्मबलिदान को हार का नहीं, जीत का प्रमाण माना जाता है।

—कुमार शुभमूर्ति,
आशियाना, रोसड़ा (बिहार)

इस अंक में

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पै०), विदेश में २२ रु०; या २५ शिलिंग या ३ डालर।
एक प्रति का मूल्य २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं मनोहर प्रेस, वाराणसी में मुद्रित

सम्पादक
राममूर्ति

वर्ष : १७ सोमवार
अंक : १२ २१ दिसम्बर, '७०

पत्रिका विभाग
सर्व सेवा संघ, राजघाट, वाराणसी–१
फोन : ६४३९१ तार : सर्वसेवा

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

अखिल भुवनव्यापी आकांक्षा

इन दिनों सारी दुनिया में कशमकश चल रही है। एक दिन ऐसा नहीं जाता, जब अखबार में अशांति की खबर नहीं आती। ऐसे तो बिना शांति के मनुष्य जी ही नहीं सकता। करोड़ों लोग जी रहे हैं, मतलब शांति तो है। लेकिन समाज में शांति नहीं है, व्यक्ति के हृदय में शांति है। अगर व्यक्तिगत शांति न होती, तो जीवन ही सम्भव न होता। व्यक्ति के हृदय में कभी थोड़ी देर अशांति हो भी जाती है, परन्तु वह थोड़ी देर टिकती है। इतना ही नहीं, दिन में अशांति हो तो भी साधारणतः रात को नींद आ जाती है। बिल्कुल गरीब लोगों के हृदय में भी काफी शांति है। परन्तु यह तो व्यक्तिगत शांति की बात हुई। जब सब दुनिया की तरफ देखते हैं, समाज को ध्यान में लेते हैं, तो दिखायी देता है कि समाज में कुछ-न-कुछ अशांति चल ही रही है। तो आज मनुष्य के सामने व्यक्तिगत शांति का सवाल नहीं है। व्यक्तिगत शांति बिल्कुल न हो, तब तो सामाजिक शांति की आशा ही नहीं कर सकते। लेकिन व्यक्तिगत शांति कुछ है, उस हिसाब से सामाजिक शांति नहीं है। इसलिए आज दुनिया में सर्वत्र यह कामना है कि सामाजिक शांति हो और समूह में प्रेम हो।

व्यक्तिगत तौर पर लोग पुण्याचरण करते हैं, महात्मा भी बनते हैं, उनका चरित्र भी गाया जाता है; लेकिन कुल का कुल समूह पुण्य में खो गया है, प्रेम का अनुभव नहीं किया ऐसा व्यक्ति ही समूह में नहीं है, पूरा का पूरा समूह प्रेममय जीवन जी रहा है, ऐसा सामूहिक पुण्य और सामूहिक प्रेम चाहिए। यह जरूरी चीज है। ऐसा ही सामूहिक प्रेम होना चाहिए। व्यक्तिगत शांति के प्रयत्न हो रहे हैं। हर एक के जीवन में मंगल कार्य हो रहा है। धर्म-वेदी व्यक्तिगत प्रेम सिद्ध हो रहा है। मनुष्य के अन्दर पुरुषार्थ की प्रेरणा है, तो कुछ-न-कुछ प्रेमलब्धि भी होती है। लेकिन जरूरत इसकी है कि ये सारी चीजें समूह के अनुभव में आयें, उनको सामूहिक रूप मिले। उसका अखिल भुवनव्यापी रूप हो, इसकी आकांक्षा है।

दिनांक : २१-५-'६३

—विनोबा

• हमारी रणभूमि बिहार में • त्रिशंकु योजनाएँ • पुरानी शैली : नये सपने •

३० जनवरी : 'शांतिदिवस' का कार्यक्रम

प्रिय बंधु,

सस्नेह जय जगत् !

आप जानते ही हैं कि पिछले कुछ वर्षों से राष्ट्रपिता महात्मा गांधीजी की पुण्य-तिथि ३० जनवरी को हम 'शांति-दिवस' के नाते मनाते आ रहे हैं। आशा है, इस साल भी देश-भर में यह व्यापक रूप में मनाया जायगा।

'शांतिदिवस' के मुख्य कार्यक्रम नीचे लिखे तीन माने हैं :—

१—शांतिजुलूस
२—प्रार्थना-सभा और
३—शांति बिल्लों की बिक्री

हर साल हम ३० जनवरी को शांति-सैनिकों की रैली करते थे। उसके बजाय इस साल हम शांतिजुलूस का कार्यक्रम सुझा रहे हैं। शांतिजुलूस में रैली को विशाल रूप मिलेगा। उसमें नगर के शांति-सैनिकों के अलावा नगर के सारे शांति-प्रेमी नागरिक, छात्र, मजदूर, महिलाएँ आदि भी शरीक होंगे। शांतिजुलूस ही नगर के किसी प्रमुख मैदान में जाकर प्रार्थना-सभा में परिणत हों, ऐसी कल्पना की गयी है। जुलूस में नागरिकों से यह प्रार्थना की जाय कि वे यथासंभव सफेद कपड़े पहनकर ही हिस्सा लें। शरीक होनेवाले लोगों की संख्या को देखते हुए ३-३, ४-४ या ६-६ की कतारें की जायँ। हर २५ लाइन के पीछे एक-एक घोष-फलक (प्लेकार्ड) रखा जाय। हर प्लेकार्ड और उसे लगाये जानेवाले डंडे का नाप बराबर हो। प्लेकार्डों पर कुछ निश्चित सूत्र ही लिखे हों। (सुझाव के लिए कुछ सूत्र आगे दिये जा रहे हैं। लेकिन आप लोग चाहें तो अन्य सूत्र भी लिख सकते हैं।) जुलूस में जो उद्घोष करवाये जायँ वे भी पहले से निश्चित होने चाहिए। जुलूस में गाने हों तो उनका आरम्भ अच्छा-जोरदार गानेवालों से करवाया जाय। यदि सम्भव हो तो माइक्रोफोन का उपयोग किया जाय। जुलूस बीच-बीच में बिल्कुल मौन रहे तो भी अच्छा है। यदि अच्छे गाने की व्यवस्था न हो सके तो मौन जुलूस करना ही अच्छा होगा। जुलूस का मार्ग पहले से ठीक करके घोषित कर देना चाहिए।

प्रार्थना, ५ मिनट की मौन प्रार्थना या सर्वधर्म-प्रार्थना हो। प्रार्थना के बाद प्रमुख नागरिकों के व्याख्यान भी रखे जा सकते हैं। किन्तु यह ध्यान रहे कि प्रार्थना-सभा एक घण्टे से अधिक लम्बी न चले।

शांतिदिवस के बिल्ले हमारे पास छपे हुए तैयार हैं। हर बिल्ला १० पैसे में बेचा जाता है। लेकिन २०० से अधिक बिल्ले मँगवानेवालों को हम ७ पैसे के एक के हिसाब से बिल्ले देते हैं। नगद पैसे देनेवाले या वी० पी० से मँगवानेवाले को ही यहाँ से बिल्ले भेजे जाते हैं। इस बार बिल्ले पर तारीख नहीं लिखी जा रही है, इसलिए उसे ३० जनवरी के बाद भी बेचे जा सकेंगे।

आपको यह पत्र हम एक विशेष जिम्मेवारी सुपुर्द करने के लिए लिख रहे हैं। हम चाहते हैं कि भारत के सभी प्रमुख नगरों में शांतिदिवस का कार्यक्रम शानदार ढंग से मनाया जाय। आपके नगर का कार्यक्रम सफलतापूर्वक पूरा करने में हम *आपसे सहयोग चाहते हैं। आपसे हमारी* प्रार्थना है कि :

अ—आप अपने नगर के प्रमुख लोगों को इस कार्यक्रम की सूचना दीजिए।

आ—उनसे मिलकर काम की योजना बनाइए तथा काम का बँटवारा कर लीजिए।

इ—इस काम के लिए आवश्यक हो तो पूर्वतैयारी की सभा भी कीजिए।

ई—स्थानीय अखबारों में इस कार्यक्रम की सूचना निकलवाइए। आवश्यक और शक्य मालूम हो तो इस कार्यक्रम की सूचना पत्रिका या लाउडस्पीकर द्वारा भी शहर में दीजिए।

एक और प्रार्थना। कृपा कर ३१ जनवरी को एक पोस्टकार्ड द्वारा हमें इस बात की सूचना दीजिए कि आपके नगर में 'शांतिदिवस' किस प्रकार मनाया गया।

सस्नेह,
नारायण देसाई
मंत्री

अ० भा० शांतिसेना मण्डल,
राजघाट, वाराणसी–१

विश्व शांतिदिवस

३० जनवरी, १९७१

घोषफलक (प्लेकार्ड) पर लिखने के लिए :

१—विश्व शांतिदिवस
२—जय गांधी - जय शांति
३—शांति अमर रहे
४—हमें शांति चाहिए
५—सत्य, प्रेम, करुणा
६—सत्य-अहिंसा
७—शांति से स्वराज्य पाया,
शांति से उसे टिकायेंगे।
८—हिंसा से कोई मसला
हल नहीं होता।

जुलूस के लिए उद्घोष :

१—महात्मा गांधी की – जय।
२—शांति शहीद – अमर रहें।
३—हमारा मंत्र – जय जगत्।
४—हमारा तंत्र – ग्रामदान।
५—हमारा ध्येय – विश्व-शांति।
६—हमारा साधन – शांतिमय क्रांति।
७—जय जय गांधी – जय जय शांति।

उत्तरप्रदेशीय सर्वोदय-सम्मेलन

उत्तरप्रदेश-सर्वोदय-सम्मेलन आगामी ९, १०, ११ जनवरी, १९७१ को आगरा में हो रहा है। सर्वोदय-मण्डल के संचालकों व सर्वोदय-कार्यकर्ताओं से निवेदन है कि वे अपने-अपने जिले में अधिक-से-अधिक लोक-सेवक व सर्वोदय-मित्र बनायें और अधिक-से-अधिक प्रतिनिधि सम्मेलन में भाग लें।

पाकिस्तान में दो पुकारें

'हमें हमारा बंगाल चाहिए'—शेख मुजीबुर्रहमान
'हमें हमारा कश्मीर चाहिए'—जुल्फिकार अली भुट्टो

वे दिन गये जब एक देश की एक राजनीति होती थी। वे
दिन भी गये जब एक धर्म की, भाषा की, जाति की, क्षेत्र की,
एक राजनीति होती थी। राजनीति सचमुच एक कभी नहीं होती,
एक सिर्फ दिखायी देती है क्योंकि राजनीति चलानेवाले किसी
तात्कालिक पुकार पर समूची जनता को इकट्ठा कर लेते हैं।
लेकिन इन पुकारों के दिन भी जा रहे हैं।

'इस्लाम खतरे में' के नारे पर पाकिस्तान बना, और 'पाकि-
स्तान खतरे में' के नारे पर अब तक चला, लेकिन जब जनता ने
यह महसूस किया कि असली खतरा तो उनके पेट को है तो
राजनीति ने पलटा खाया। पाकिस्तान की राष्ट्रीय सभा के चुनाव
में पूर्वी पाकिस्तान में अवामी लीग को जो इतनी शानदार जीत
मिली है यह इसलिए कि उसने पूर्वी बंगाल की स्वायत्तता की माँग
की है। स्वायत्तता की माँग का अर्थ है 'हमें अपने घर में ईमान
की रोटी खाने दो, और इज्जत की जिन्दगी जीने दो।' पूर्वी
पाकिस्तान गाँवों और गरीबों का इलाका है; पश्चिमी पाकिस्तान
शहरों, सेठों, शासकों और सैनिकों का। भारत और पाकिस्तान
के नये इतिहास ने सिद्ध कर दिया है कि स्वतंत्र देश में भी गाँवों
और गरीबों का उसी तरह शोषण होता है जिस तरह कोई
साम्राज्यवादी देश अपने गुलाम उपनिवेश का करता है। शहरी
और सरकारी अर्थनीति गाँवों और शहरों के शोषण पर ही चलती
है, और वही शासन को अपनी मुट्ठी में रखती है। पूर्वी बंगाल
की जनता पश्चिमी पाकिस्तान की मुट्ठी से निकलना चाहती है।
खास बात यह है कि वहाँ एक ऐसा समझदार मध्यम वर्ग निकल
आया है जो देश के साथ-साथ देश में रहनेवालों के बारे में भी
सोचता है, जिसके सामने भूख, बेरोजगारी और बीमारी के सवाल
हैं, और जो जानता है कि ये सवाल तभी हल होंगे जब राजनीति
और अर्थनीति में कुछ बुनियादी परिवर्तन होंगे। अवामी लीग
द्वारा उस मध्यम वर्ग की चेतना को प्रकट होने का मौका मिला है।
मौलाना भाशानी और उनके दल का चुनाव से अलग रहना इस
बात का प्रमाण है कि वामपंथी विचार की एक धारा ऐसी भी
है जो कुछ और करने पर उतारू है, और उस पर हिंसा का रंग
चढ़ चुका है। प्रेरणाएँ उसे बाहर से भी मिल रही हैं।

पश्चिमी पाकिस्तान में भुट्टो की आवाज अलग है। बीने है
वह पठानी प्रान्तों में भी, लेकिन मुख्यतः उनके पीछे पंजाब है—
वह पंजाब जो जमींदारों, उद्योगपतियों, साहूकारों, और सैनिकों
का है, और जिसे दो चीजों का अभ्यास है: पैसे बनाने का,
और बन्दूक चलाने का। पंजाब विलासिता का जीवन जीना
जानता है, और मजहबों को सन्दूक और बन्दूक दोनों के साथ
जोड़ सकता है। वहाँ के सेठ और शासक मजहब मुल्ला को और
बन्दूक सिपाही को सौंपकर सन्दूक अपने पास रखते हैं। ऐसे क्षेत्र
का नेता अगर भुट्टो हुआ तो कोई आश्चर्य नहीं। कश्मीर की
माँग उसके उग्र राष्ट्रवादी नेतृत्व के लिए जरूरी है। उतनी ही
जरूरी केन्द्रित प्लैनिंग और समाजवाद भी है जो गाँवों और
गरीबों को नारों और योजनाओं के भुलावे में रखकर उनका वोट
प्राप्त कर सके, और उनकी जेब से पैसा खींचकर शहरों और
सरकार के हाथों में ला सके। भुट्टो अपनी राजनीति में राष्ट्रवाद
और समाजवाद दोनों का ट्रम्प लगायेगा ताकि जीत उसके हाथ
रहे। ये ऐसे ट्रम्प हैं जिनका इस्तेमाल भारत में भी खूब हो रहा
है। दोनों देशों की भोली, असंगठित, नासमझ जनता इन ट्रम्पों से मात
खाती चली जा रही है। लेकिन नयी चेतना के नये स्वर दोनों
जगह सुनायी देने लगी है।

पाकिस्तान के लिए आगे के दिन भयंकर खींचतान के होंगे
भारत में राजनैतिक खींचतान में से दलों के नये-नये मोर्चे पैदा
हो रहे हैं, लेकिन जहाँ तक जन-जीवन का सम्बन्ध है राजनीति
टूटती चली जा रही है। पाकिस्तान की खींचतान में से क्या
निकलेगा? एक ओर सैनिक-शासन है, और दूसरी ओर विद्रोह!
हो सकता है कि मिली-जुली सरकार हो, अधिकाधिक खींचतान
हो, असन्तोष बढ़े और अन्त में फिर सैनिक-शासन हो। सरकारी
आय का ६० प्रतिशत प्रतिरक्षा पर खर्च करके पाकिस्तान की
सेना ने अपने को वहाँ के जीवन में बेहद मजबूत कर लिया है,
और उसके मुँह में शासन का खून लग चुका है। अधिकारी पैसा
बना चुके हैं, सिपाही मनमानी कर चुके हैं, और इन दोनों के
संरक्षण में व्यापारी चोरबाजारी कर चुके हैं। मिले-जुले शासन
में अगर पश्चिमी पाकिस्तान बहुसंख्यक पूर्वी पाकिस्तान का नेतृत्व
नहीं स्वीकार करेगा तो सेना नागरिक-शासन को कैसे स्वीकार
करेगी? टक्कर है सेना और नौकरशाही बनाम नये नेतृत्व की,
जो बँटा हुआ है।

हो सकता है कि स्वायत्तता की तलाश में पूर्वी पाकिस्तान
को कुछ दिन और वनवास में रहना पड़े और उसकी तकलीफें
सहनी पड़ें, लेकिन इतना निश्चित है कि क्या भारत और क्या
पाकिस्तान, दोनों के लोकतंत्र के सामने दो ही दिशाएँ हैं: एक
विकेन्द्रीकरण की, और दूसरा केन्द्रीकरण का। विकेन्द्रीकरण
शासकों की मर्जी से नहीं आयेगा, अगर आयेगा तो जनता की
शक्ति से। और, अगर जन-शक्ति के दबाव से विकेन्द्रीकरण का
क्रम एक बार शुरू हो जायगा तो क्षेत्रीय स्वायत्तता से आगे
बढ़कर ग्राम-स्वायत्तता तक पहुँचेगा। उसे वहाँ पहुँचना ही
चाहिए। लेकिन उसके लिए एक सुसंगठित ग्राम-आन्दोलन चाहिए
जो अभी पूर्वी बंगाल में नहीं है। पूर्वी बंगाल की स्वायत्तता की
माँग में अधिक अंश केन्द्र-विरोध का है। केन्द्र-विरोध पाकिस्तान
के पूर्वी बंगाल और भारत के पश्चिमी बंगाल दोनों में है, ग्राम-
आन्दोलन दोनों में से किसीमें नहीं है। बंगाली प्रतिभा→

हमारी रणभूमि बिहार में

—विनोबा

अभी हमने सूक्ष्मतर में प्रवेश किया है। इसका इजहार हमने सेवाग्राम में किया। उसका अर्थ उत्तरोत्तर खुलता जायेगा। यह निर्णय हमने अपने मन से नहीं किया है। हमें अन्दर से आदेश मिला है। यह हमारा क्षेत्र-संन्यास है। क्षेत्र-संन्यास यानी, और सब क्षेत्र छोड़कर एक ही क्षेत्र में रहना। यह विचार तो पुराना ही है। आत्मोन्नति के लिए और ध्यान के लिए पुराने जमाने में लोग इस तरह क्षेत्र-सन्यास लेते थे। परन्तु मेरा विचार वैसा नहीं है। समूह का अभिध्यान करते हुए मेरा यह सूक्ष्मतर में प्रवेश है। इसका भान मुझे बहुत अरसे से है, बल्कि गीता-प्रवचन में मैंने यह बात लिख रखी है—क्रियोपरमे कोर्मवत्तरम्—जैसे-जैसे क्रिया का उपरम होगा, वैसे-वैसे कर्मशक्ति बढ़ेगी। केवल बाहरी हलचलों से कर्म नहीं होता है। क्रिया जैसे-जैसे सूक्ष्म में जाती है, वैसे-वैसे कर्म बढ़ता है। यह हमारा पुराना ही दर्शन है। अब अवस्था आ गयी कि हम सूक्ष्म में प्रवेश करें। पांच साल पहले ही हमने हमारा सूक्ष्म-प्रवेश जाहिर किया था। लेकिन बिहार-दान का काम चला था, वह पूरा होने तक प्रवाह-पतित कर्म करना पड़ा। 'प्रवाह पतित कर्म कुर्वन् नाप्नोति किल्बिषम्', यह वचन प्रसिद्ध ही है। अब बिहार-दान का काम एक हद तक पूरा हुआ है। बाकी लोग उसे पूरा कर रहे हैं। जयप्रकाशजी ने जान की बाजी लगायी है। और हम लोग संस्थाओं के छोटे-छोटे दायरे में चर्चा करते हुए नाहक समय बिता रहे हैं। जयप्रकाशजी, कृष्णराजभाई, सुशीलादीदी, निर्मला, राममूर्तिजी वगैरह लोग वहाँ काम में लगे हैं। 'कार्यं वा साधयेत् देहं वा पातयेत्' ऐसी निष्ठा से, निश्चय से लगे हैं। सिद्धि मिलेगी तब तक वहाँ रहेंगे। दीदी ने मुझसे जाते समय पूछा था, "कितना समय वहाँ देना है?" मैंने कहा, "डू ऑर डाय" (करो या मरो)।

हमारी रणभूमि बिहार में है। वहाँ सिद्धि न मिली, तो बंगाल के अनाचार का आक्रमण बिहार पर होगा। बंगाल में गांधीजी का पुतला जलाया है, रवीन्द्रनाथ का पुतला भी जलाया है। उस हालत में हम लोगों को शायद हम जितना सूक्ष्म कर सकते हैं उतना सूक्ष्म करना चाहिए। मैंने सूक्ष्म में प्रवेश किया है, तो मेरा ध्यान निरन्तर उधर रहता है और रहेगा।

इस वक्त सर्व-सेवा-संघ और सर्वोदय मंडल जोरदार आंदोलन में पड़े हैं। आज तक जितना जोर आंदोलन में नहीं था, उतना अभी लाना है। लड़ाई मोर्चे पर चलती है और तोप वगैरह बनाने का कारखाना अलग होता है। वैसे हम भी हमारा कारखाना बनाते हैं।

इसलिए मैं भारत के मध्य में आकर बैठा हूँ। यह स्थान मध्य में है। इसलिए मेरे पास आना-जाना सुविधाजनक है। अब हमारा देश ही इतना बड़ा है, इसलिए कुछ प्रान्तों के लिए यह स्थान दूर पड़ेगा, यह बात अलग।

जिन लोगों का संस्था में रहना अत्यन्त जरूरी है, उनको छोड़कर बाकी लोगों को इस काम में जोर लगाना चाहिए। अभी भोसले बात कर रहे थे। कर्नाटक में एक संस्था खोलने की कल्पना थी। मैंने उनसे कहा, 'आपको एक जगह नहीं बैठना है। सतत घूमते रहना है। पुराने आश्रमों से जितने लोग घूमने के लिए निकाल सकते हैं, उतने निकालने चाहिए। और जितना जोर बिहार में लग सकता है, उतना लगाना चाहिए। बिहार की औसत आमदनी सारे भारत में अत्यन्त कम है। औसत २० रु० महीना आता है। नीचे के वर्ग की आय १० रु० महीना है। उस हालत में नक्सलवाद जोर कर रहा है। तो हमें वहाँ ध्यान देना चाहिए। इसलिए इस वक्त मेरा ध्यान उधर है। (१५-८-'७०)

कानपुर में ग्रामस्वराज्य कोषसंग्रह

कानपुर के एक लाख के लक्ष्यांक की पूर्ति में मदद देने के लिए पिछले दिनों गुजरात सर्वोदय मण्डल की अध्यक्षा कान्ता बहन शाह, हरविलास बहन तथा डा० नवनीत फौजदार कानपुर पधारे। ग्राम-स्वराज्य-कोष-समिति कानपुर के उपाध्यक्ष श्री रामचरण मरलिया तथा बसन्त देसाई, अनन्त भाई आदि लोगों के सहयोग से ४ दिन में इस टोली ने गुजराती-समाज तथा तेल व्यापारियों आदि से चार हजार रुपये एकत्र किये। अबतक १५ हजार रु० एकत्र हो चुके हैं। और सभी क्षेत्रों में विशेषकर बाजारों, मिलों और शिक्षण-संस्थाओं में कोष-संग्रह का प्रयास हो रहा है ताकि ११ दिसम्बर '७० तक कोटा पूरा किया जा सके।

—विनय भाई

→केन्द्र-विरोधी तो है, लेकिन अभी ग्रामाभिमुख नहीं हो सकी है।

भारत और पाकिस्तान दोनों की जनता का सुख और शान्ति इसीमें है कि दोनों देश स्थानीय स्वायत्त इकाइयों के लोकतांत्रिक संघ बन जायें, और भारत-पाक का एक महासंघ बन जाय। फिर तो कश्मीर कश्मीरियों का होगा, और बंगाल बंगालियों का; इतना ही नहीं, बल्कि हर गाँव उस गाँव में रहनेवालों का होगा। इतना है पाकिस्तान में स्वायत्तता की आवाज राजनीति के जंगल से बचकर गाँव-गाँव तक पहुँचने के विधायक रास्ते ढूँढेगी। पाकिस्तान में यह काम आसान नहीं है क्योंकि महाँ है १ हजार मील दूर के केन्द्र से, और मजहब के मदद र जवाब से। भारत में ग्रामस्वराज्य आन्दोलन को विनोबा और जे० पी० का नेतृत्व मिल गया है। इस तरह का कोई आन्दोलन और नेतृत्व पूर्वी बंगाल को भी चाहिए। जो व्यक्ति किसी समय राष्ट्रीय स्वतंत्रता की पुकार में थी, वह धीरे-धीरे स्वायत्तता की पुकार में आ गई है। भारत हो या पाकिस्तान, जनता एक है, और उसके सवाल भी एक ही हैं। जवाब भी एक ही होंगे। ●

ग्रामीण जीवन की वास्तविकताएँ और त्रिशंकु जैसी अधर में लटकती योजनाएँ

—जयप्रकाश नारायण

जयप्रकाश नारायण : तत्त्व-दर्शन

मुसहरी प्रखण्ड में काम शुरू करने के समय (९ जून '७० को) मेरे साथ दस सर्वोदय-कार्यकर्त्ता थे, जिनमें अधिकतर बिहार खादी-ग्रामोद्योग संघ के थे। उनकी संख्या अब पच्चीस हो गयी है। इनमें भी अधिकतर बिहार खादी-ग्रामोद्योग संघ के ही हैं। कुछ कार्यकर्त्ता मेरे पड़ाव पर रहते हैं और आसपास के गाँवों में काम करते हैं; अन्य कार्यकर्त्ता और भी दूर के गाँवों में भेजे जाते हैं। यह अत्यन्त सघन किस्म का काम है, जिसमें कार्यकर्त्ता को घर-घर जाना पड़ता है, अक्सर एक से अधिक बार। मैं स्वयं हर छोटे गाँव में जाकर छोटी-छोटी सभाओं में भाषण करता हूँ और कभी-कभी लोगों के निजी घरों में जाकर छोटे-छोटे समूह में इकट्ठे ग्रामीणों से बातचीत करता हूँ। गाँव के लोग मेरे कैंप में भी आकर मुझसे मिलते हैं और कभी-कभी अपनी समस्याएँ और शिकायतें मेरे सामने रखते हैं। युवकों की भी सभाएँ होती हैं। कुछ सप्ताह पूर्व युवकों का एक त्रिदिवसीय शिविर हुआ था। स्थानीय राजस्व एवं विकास-पदाधिकारी तथा उनके कर्मचारी हमें आवश्यकतानुसार सारा सहयोग देते हैं। प्रमण्डल एवं जिला पदाधिकारीगण भी अत्यन्त सहृदयतापूर्वक मदद करते रहे हैं। मैं उन सबके प्रति अत्यन्त आभारी हूँ।

ग्रामीण जीवन की सामाजार्थिक वास्तविकताएँ : अत्यन्त कुरूप

यद्यपि गाँवों में सघन कार्य करने का यह पहला अवसर मेरे लिए नहीं है, फिर भी इतना अवश्य है कि अनिश्चित काल तक के लिए, पहले-पहल एक सीमित ग्रामीण क्षेत्र में ऐसा सघन कार्य करने हेतु इस प्रकार मैं जमकर बैठा हूँ। इससे स्वाभाविक ही मुझे इन क्षेत्रों के ग्रामीण जीवन की वास्तविकता को गहराई से देखने परखने का अद्भुत अवसर मिला है। स्वयं एक ग्रामीण होने के नाते, मैं ग्रामीण जीवन को प्यार करता हूँ, और पटना या दिल्ली जैसे नगरों की अपेक्षा अपने ही गाँव में ही किसी दिन रहना पसन्द करूँगा। गाँव के प्रति इस पक्षपात की भावना के बावजूद, मैं यह स्वीकार करूँगा कि गाँव की जो सामाजिक-आर्थिक वास्तविकताएँ हैं, वे निकट से अत्यन्त कुरूप दिखायी पड़ती हैं, और उन्हें देखकर अत्यन्त क्लेश होता है।

वास्तविकताओं को आमने-सामने देखकर मेरी पहली प्रतिक्रिया यह हुई कि दिल्ली और पटना में की जा रही बड़ी-बड़ी घोषणाएँ जमीन पर की वास्तविक स्थिति से कितनी दूर और अयथार्थ हैं। बुलन्द अल्फाज, शानदार योजनाएँ, अनेकानेक सुधार। लेकिन किसी-न-किसी कारण वे सभी, या उनमें से अधिकांश आसमान में त्रिशंकु की भाँति लटके रह गये हैं। वे जमीन को मुश्किल से स्पर्श करते हैं—कम-से-कम इस क्षेत्र की जमीन को तो स्पर्श नहीं किया है। या अगर किया भी है तो बहुत हल्के-हल्के। ऐसी स्थिति में आँखों को तो बस वे ही वस्तुएँ दिखायी पड़ती हैं—दारिद्र्य, दुख, विषमता, शोषण, पिछड़ापन, गतिहीनता, पस्ती और निराशा।

कागज पर चिपके कानून और विशेषाधिकार-वंचित व्यक्ति

कुछ वर्ष पूर्व मैंने कहा था कि जो कानून पहले बन चुके हैं, वे ही अगर पूरी तरह और ठीक से कार्यान्वित कर दिये जायँ तो ग्रामीण क्षेत्र में एक छोटी-मोटी सामाजिक क्रान्ति हो जायेगी। मैंने उदाहरण के तौर पर वासगीत भूमि, बटाईदारी, भूमि-हदबन्दी, निम्नतम मजदूरी और महाजनी से सम्बन्धित कानूनों की चर्चा की थी। इसमें और भी कई जोड़े जा सकते हैं। अभी हाल में दिल्ली और पटना, दोनों जगह, वर्तमान भूमि-सुधार कानूनों को कार्यान्वित करने के सम्बन्ध में बहुत ही शोर मचाया गया है। लेकिन अगर कोई जरा निकट से देखे तो उसे पता चल जायेगा कि किस हद तक ये कानून कागज पर ही चिपके रह गये हैं, और उनमें से कुछ, जैसे बटाईदारी, निम्नतम मजदूरी, महाजनी आदि से सम्बन्धित कानून कागज पर ही रहनेवाले हैं, चाहे प्रशासन कुछ करे। इन कानूनों का लाभ उन लोगों को, जिनके लिए ये बनाये गये हैं, तब तक नहीं मिलनेवाला है, जब तक ग्राम-समुदाय को संगठित नहीं किया जाता, तथा उसका संचालन और अधिक लोकतांत्रिक ढंग से नहीं होता, जिससे कि समाज में शक्ति की तुला, जो अभी भूमिवालों और सम्पत्तिवालों के हितों की ओर बहुत अधिक झुकी हुई है, समान रूप से गाँव के सभी हितों के नियंत्रण में रहे। इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए यह ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य आन्दोलन चल रहा है, जिसके सम्बन्ध में और चर्चाएँ बाद में करूँगा।

मैं जो कुछ कह रहा हूँ, उसको स्पष्ट करने के लिए दो मिसालें काफी होनी चाहिए—अधिक मिसालों के लिए यहाँ स्थान भी नहीं है। ये दोनों मिसालें ऊपर बताये गये कार्यक्रम के अमल के सिलसिले

में प्राप्त अनुभवों से ली गयी हैं, और ये दोनों भूमिहीन मजदूरों से सम्बन्धित हैं जो ग्रामीण समुदाय का सबसे कमजोर वर्ग है। सबसे सरल कानून, "विशेषाधिकार-प्राप्त व्यक्ति वासगीत भूमि कानून" को लीजिए। यह कानून जनवरी १९४८ में पारित हुआ और उसी वर्ष फरवरी में लागू किया गया। बाईस वर्ष छः महीने गुजर चुके हैं। इन वर्षों के दौरान पटना के शासकों द्वारा बहुत चिन्ता प्रकट की गयी और बहुत सारे परिपत्र तथा सरकारी आदेश समय-समय पर जिला पदाधिकारियों के नाम जारी किये गये; लेकिन वास्तव में कुछ हुआ नहीं। इस कानून के अमल की दिशा में पहला गंभीर प्रयास बिहार में द्वितीय राष्ट्रपति-शासन के समय किया गया और इसका श्रेय राज्यपाल के तत्कालीन परामर्शी श्री त्रिवेणी प्रसाद सिंह को है। मौजूदा सरकार भी इस दिशा में कुछ करने का प्रयत्न कर रही है। तथापि मुसहरी क्षेत्र में पाता हूं कि औसत केवल ५० प्रतिशत तथाकथित विशेषाधिकार प्राप्त व्यक्ति—यद्यपि इन भूमिहीन लोगों से अधिक विशेषाधिकार-वंचित व्यक्तियों की कल्पना करना कठिन है—पर्चा प्राप्त कर रहे हैं। यह पर्चा एक ऐसा सरकारी प्रमाणपत्र है जो सम्बन्धित विशेषाधिकार-प्राप्त व्यक्तियों की वासभूमि का क्षेत्रफल बताता है, और उन्हें उस पर स्थायी हक प्रदान करता है। इतना ही नहीं, अनेक मामलों में देखा गया है कि जो पर्चा दिया गया है, उसमें उल्लिखित भूमि बहुत ही कम है। मैंने अनेक ऐसे पर्चों को देखा है जिनमें भूमि का क्षेत्र केवल १ डिसमिल लिखा गया है। अब, स्थानीय प्रशासन ने मेहरबानी कर उन लोगों को, जिन्हें पर्चा नहीं मिला है, पर्चा देने, वासभूमि के क्षेत्र को फिर से नापने का आदेश जारी करने तथा पर्चों में आवश्यक सुधार करने में बहुत तत्परता दिखायी है।

'बद' से 'बदतर' स्थिति और असहाय लोग

लेकिन कहानी यहीं खत्म नहीं हो जाती। ऐसे मामले भी मेरे सामने लाये गये हैं जहां विशेषाधिकार-प्राप्त व्यक्ति पर्चा मिलने के बाद भी, अपनी वासगीत भूमि से बेदखल कर दिये गये थे। मुझे यह कहते हुए खुशी होती है कि ऐसे मामलों में भी स्थानीय अधिकारी अब तत्परतापूर्वक काम कर रहे हैं और विशेषाधिकार-प्राप्त व्यक्तियों को उनकी वासगीत भूमि वापस दिला रहे हैं। कम-से-कम एक ऐसा मामला भी मेरे सामने आया, जिसमें रहनेवाले को दुबारा बेदखल किया गया था। अफसोस यह है कि मौजूदा अधिनियम, कानून और सत्ता की ऐसी दुष्ट अवज्ञा को रोकने में असमर्थ है; इस कारण अधिनियम में एक ऐसी दंड-धारा दाखिल करने की आवश्यकता प्रतीत होती है जो अंचलाधिकारी को (जिन्हें ऐसे मामलों में जिला समाहर्ता की प्रत्यायोजित सत्ता होनी चाहिए) बेदखल करनेवाले को ऐसा दंड देने का अधिकार प्रदान करे जिससे वह फिर ऐसी गलती न करने पाये। आज तो पीड़ित व्यक्ति के लिए सामान्य कानून को छोड़ और कोई मार्ग नहीं है, और यह कानून इतना समय और धन खर्च करानेवाला है कि वह अचानक घर से बेदखल हुए परिवारों को तत्काल कोई राहत नहीं दे सकता।

एक मिसाल और। ऊपर मैंने इस प्रसंग में कृषि-कार्य के लिए निर्धारित मजदूरी-दर कितनी कम है, इस ओर संकेत किया है। पूछताछ करने पर मुझे मालूम हुआ है कि निम्नतम मजदूरी-अधिनियम तथा श्रम-पदाधिकारी इस मामले में कितने असहाय हैं। इस अधिनियम के अन्तर्गत हर जिले में विभिन्न कृषि-कार्यों के लिए निम्नतम मजदूरी समय-समय पर निश्चित की जाती है। वर्तमान मजदूरी-दर का निर्धारण बहुत वर्ष पहले हुआ था, जो हाल में संशोधित की गयी है। संशोधित मजदूरी-दर वर्तमान मजदूरी-दर से ऊंची है, लेकिन अभी तक सरकार ने उसे लागू नहीं किया है। परन्तु यदि हम पुरानी मजदूरी-दर को ही लें तो पायेंगे कि मुसहरी के मजदूरों, खासकर संलग्न मजदूरों (कमियों) की वर्तमान मजदूरी औसत निर्धारित दरों की आधी है। यह स्थिति बहुत बुरी है। लेकिन इससे बदतर स्थिति यह है कि श्रम-विभाग के अधिकारी, जिनका काम यह देखना है कि निर्धारित मजदूरी-दर लागू हो, इस मामले में बिलकुल असहाय हैं। लेकिन यह उनका दोष नहीं है। दोष स्वयं कानून में है, और उससे भी अधिक उक्त कानून के अन्तर्गत निर्धारित पद्धतियों में है। श्रम-पदाधिकारी या निरीक्षक वस्तुतः अपनी आंखों से यह देखकर भी, कि निर्धारित दर से कम मजदूरी दी जा रही है, स्वयमेव कुछ कर नहीं सकते। मजदूर जब शिकायत करेगा, तभी उसके आधार पर कोई कार्रवाई वे कर सकते हैं। वर्तमान परिस्थिति में, खासकर एक पिछड़े इलाके में, जहां मजदूरों की आबादी जरूरत से ज्यादा है, किसी मजदूर में इतना साहस कहां कि वह श्रम-पदाधिकारी या निरीक्षक के सामने शिकायत पेश करे! लेकिन अगर वह शिकायत करने का साहस भी करता है तो पद्धति ऐसी है कि वह थककर हार जायेगा। उक्त शिकायत की पहले जांच होगी, और अगर वह ठीक निकली तो श्रम-अदालत में मामला दर्ज किया जायेगा और फिर अदालत के सामने शिकायत करनेवाले को उपस्थित होकर बयान देना होगा। तब फिर यह अदालत अन्य सभी अदालतों की तरह ही आहिस्ता-आहिस्ता काम करेगी, जिसमें स्वभावतः काफी समय लगेगा। अनेक बार कार्य-स्थगन और सुनवाई होने के बाद अगर अदालत अन्त में कोई आदेश देती है, और यदि संयोग-वश यह मजदूरों के दावों को स्वीकार कर लेती है—मेरा ख्याल है जितनी रकम का दावा किया जाता है, अदालत हमेशा उसमें भारी कटौती कर देती है—तो फिर वह आदेश सिविल एस० डी० ओ० के पास कार्यान्वयन के लिए जायेगा। सामान्यतः उक्त अधिकारी के द्वारा अन्तिम कार्रवाई होने में कई वर्ष बीत जाते हैं। इस प्रकार शहर से कोसों दूर

रहनेवाला गरीब खेतिहर-मजदूर जब देखता है कि मामला इतना पेचीदा और इतनी हैरानी का है तो वह अपना संघर्ष जारी नहीं रख पाता और बाध्य होकर अपने मालिक के आगे घुटने टेक देता है, या इसके विरुद्ध के तौर पर, भूखों मरता है अथवा गाँव छोड़कर चला जाता है। खेद की बात यह है कि बिहार में बारी-बारी से ऐसे कई मंत्री हुए, जो क्रान्तिकारी समाज-दर्शन को माननेवाले थे, पर उनमें से किसीने यह जरूरी नहीं समझा कि इस समस्या का गहराई से अध्ययन करें और अधिनियम को तथा उसके विनियमों को संशोधित करें, जिससे कि कानून अधिक कारगर ढंग से लागू किया जा सके। जो कानून लागू नहीं किया जा सके, वह न रहे, यही अच्छा है।

इतना कहने के बाद मैं पुनः यह स्पष्ट करना चाहूँगा कि कानून में तथा उसके प्रशासन में सुधार तो आवश्यक है और इससे कुछ मदद भी मिल सकती है, लेकिन स्थिति का सामना करने के लिए यही काफी नहीं है। इसके लिए अन्तिम इलाज, जैसा कि पहले बताया जा चुका है, यह है कि ग्राम-समुदाय का नैतिक एवं सामाजिक पुनर्निर्माण करते हुए उसके अन्तर्गत शक्ति के सन्तुलन को दुरुस्त किया जाय।

ग्रामीण हिंसा का उभाड़ : जिम्मेदार कौन ?

राजनीतिक उद्देश्य से प्रेरित ग्रामीण हिंसा की वृद्धि को देखते हुए देश भर में इधर बहुत चिन्ता प्रकट की गयी है। इसमें सन्देह नहीं कि अंशतः यह हिंसा राजनीतिक विचारधारा से प्रेरित कृत्रिम प्रयासों का परिणाम है, लेकिन यदि गरीबी, बेकारी और बहुत सारे सामाजिक-आर्थिक अन्याय कायम नहीं होते और इससे हिंसा के पनपने के लिए जमीन नहीं तैयार की गयी होती, तो यह हिंसा जड़ कदापि नहीं पकड़ती। जैसा कि मैं ऊपर कह चुका हूँ, यदि वर्तमान सुधार-कानून ही समुचित रूप से कार्यान्वित कर दिये जायँ, तो ग्रामीण क्षेत्र में एक मधु सामाजिक क्रान्ति हो जायेगी। मेरा यह कथन अगर सत्य है तो इसका विपर्यय भी उतना ही सत्य है। ग्रामीण हिंसा में यह जो वृद्धि हम देख रहे हैं, वह इतने लम्बे अर्से तक इन कानूनों को कार्यान्वित नहीं कर सकने का ही अनिवार्य परिणाम है। इस हिंसा के जनक तथाकथित नक्सलवादी नहीं हैं, बल्कि वे हैं जिन्होंने लगातार इतने वर्षों तक उक्त कानूनों को असफल किये है, और उनके उद्देश्यों को पराजित किया है—चाहे वे राजनेता हों, प्रशासक हों, भूमिपति हों या महाजन हों, वे बड़े किसान, जिन्होंने हदबन्दी कानून को बेनामी तथा फर्जी बन्दोबस्तियों के जरिये धोखा दिया है, वे भद्र लोग जिन्होंने सरकारी जमीन और गाँव की सामूहिक भूमि हड़प रखी है; वे भूमिपति जिन्होंने अपने बटाईदारों को कानूनी हक देने से हमेशा इन्कार किया है और उन्हें उनकी जमीन से बेदखल किया है तथा जो अपने मजदूरों को कम मजदूरी देते रहे हैं और उन्हें वासगीत भूमि से भी वंचित कर रखा है, वे व्यक्ति जिन्होंने धोखाधड़ी या जबरदस्ती से कमजोर वर्ग के लोगों की जमीन छीन ली है, वे तथाकथित ऊँची जाति के लोग जो हरिजन भाइयों को हमेशा घृणा की नजर से देखते रहे हैं, उनके साथ बुरा व्यवहार करते रहे हैं, तथा उनके प्रति सामाजिक भेदभाव बरतते रहे हैं, वे महाजन जिन्होंने अत्यधिक ब्याज वसूल करते हुए गरीबों तथा कमजोरों की जमीन अधिकृत कर ली है; वे राजनेता, प्रशासक और सभी अन्य लोग जिन्होंने इन अन्यायपूर्ण कार्यों में मदद पहुँचायी है या उन्हें प्रोत्साहित किया है—ये सभी लोग इस स्थिति के लिए जिम्मेवार हैं कि आज गरीबों और दलितों के मन में अन्याय, दुःख और उत्पीड़न-जन्य भावना इकट्ठी हो गयी है, जो अब हिंसा के रूप में बाहर निकलने का मार्ग ढूँढ़ रही है। इस स्थिति के लिए वे कानून की अदालतें और न्याय पाने की पद्धतियाँ तथा उसके लिए मुकदमे चलानेवाले मूल्य भी जिम्मेवार हैं, जिन्होंने हमारे समाज के दुर्बल वर्गों के साथ तत्परतापूर्वक न्याय नहीं होने दिया है। फिर यह शिक्षा की व्यवस्था और नियोजन का ढंग भी जिम्मेवार है, जो अपने गलत तरीके से शिक्षित निराश और बेकार युवकों की बढ़ती हुई सेना तैयार कर रहे हैं और आर्थिक विषमताओं को भी बढ़ा रहे हैं, जिसके फलस्वरूप विभिन्न वर्गों का और अधिक ध्रुवीकरण हो रहा है। और फि ये राजनेता भी जिम्मेवार हैं जिनकी स्वार्थ साधन की भावना ने लोकतन्त्र को, दलीय व्यवस्था को और उसकी विचारधाराओं को मजाक की वस्तु बना दिया है।

जब स्थिति ऐसी है, और जब लोकतन्त्र की संस्थाएँ और प्रक्रियाएँ इतने दयनीय रूप से त्रुटिपूर्ण हैं तो क्या आश्चर्य कि असंतोष, निराशा, क्षोभ और अभाव कुछ लोगों के दिमाग को हिंसा की तरफ मोड़ दें और वे उसको ही एकमात्र तारक शक्ति मान बैठें ?

क्या हिंसा तारक सिद्ध होगी ?

लेकिन यह सब तो हम समझ सकते हैं। फिर भी यह पूछना प्रासंगिक है कि क्या हिंसा तारक सिद्ध होगी, जैसा कि उसके बारे में विश्वास दिलाया जाता है? ऐसा नहीं कि हम इतिहास की प्रथम हिंसक क्रान्ति की प्रभात-वेला में हैं, जिससे यह अपेक्षा की जाय कि वह "धरती के अभागों के लिए" मुक्ति का नया दिन ला देगी। अब तक ऐसी अनेक क्रान्तियाँ हो चुकी हैं और इस कारण उनकी वह चमक बहुत कुछ धूमिल हो चुकी है, और साथ ही उनके प्रति विकर्षण की भावनाएँ पैदा हुई हैं। इस प्रश्न की विस्तारपूर्वक समीक्षा करने के लिए यह स्थान नहीं है। फिर भी उसे समुचित परिप्रेक्ष्य में रखने के लिए कुछ मुद्दों की चर्चा यहाँ की जा सकती है।

पहली बात तो यह है कि राजनीतिक हिंसा क्रान्तिकारी और प्रति-क्रान्तिकारी भी हो सकती है। यह निश्चित नहीं है कि हिंसक क्रान्तिकारी आन्दोलन हमेशा सामाजिक क्रान्ति की तरफ ही हमें ले जायेगा। उसमें से प्रतिक्रिया भी पैदा हो सकती है, और अंत में वह एक फासिस्ट

तानाशाही का रूप ले सकती है (नक्सलवादी हिंसा प्रतिहिंसा को जन्म देने लगी है।) अथवा अंततः अराजकता व्यापक गृह-युद्ध, राष्ट्रीय विघटन एवं गुलामी के परिणाम भी पैदा हो सकते हैं। जो लोग हिंसा का प्रचार करते हैं उन्हें इन संभावनाओं पर विचार करना चाहिए।

एक भोली और निहायत गलत मान्यता

दूसरी बात यह है कि क्रान्तियाँ क्रान्तिकारियों की बिलकुल मर्जी पर ही नहीं हुआ करतीं। क्रान्ति की सफलता के लिए सामाजिक एवं ऐतिहासिक परिस्थितियाँ परिपक्व होनी चाहिए। इसमें पूरी शताब्दी लग सकती है, जैसा कि इतिहास में अक्सर हम देखते हैं। भारत में जो हिंसा के पक्षधर हैं वे तेलंगाना के रक्तपात के समय से ही क्रान्ति करने का प्रयास कर रहे हैं। लेकिन इन २२ वर्षों में वे कहाँ तक आगे बढ़े हैं? हिंसक क्रान्ति के आयोजन में कम समय लगता है, यह एक भोली मान्यता है, इससे अधिक गलत और कोई बात नहीं हो सकती।

तीसरी बात यह है कि लंबी तैयारी के बाद जब क्रान्ति अंततः सफल भी होती है, तो उसकी इस सफलता का क्या अर्थ होता है? उसका अर्थ इतना ही होता है कि पुरानी समाज-व्यवस्था को ध्वस्त किया जा चुका है। लेकिन ध्वंस ही किसी क्रान्ति का लक्ष्य नहीं हो सकता। उसका लक्ष्य तो हमेशा एक नयी समाज-व्यवस्था का निर्माण करना होता है। लेकिन हिंसक क्रान्ति के सफल होने के बाद क्रान्तिकारियों का पहला काम हमेशा यह देखा गया है कि वे सत्ता के लिए आपसी खूनी संघर्ष में पिल पड़ते हैं। अपने सपनों का समाज—जो सपने आपसी रक्तपात में बह नहीं गये हों—बनाने में उन्हें कितना समय लगता है? इतिहास में क्या ऐसी एक भी सामाजिक क्रान्ति हुई है जो अपने अभीष्ट आदर्शों को प्राप्त करने में सफल हुई हो? जरा फ्रेंच-क्रान्ति पर तथा उसके समानता, स्वतंत्रता एवं भ्रातृत्व के आदर्शों पर विचार कीजिए। फिर रूसी क्रान्ति और लेनिन के इस उद्घोष पर भी विचार कीजिए कि क्रान्ति के बाद सम्पूर्ण सत्ता सोवियतों (पंचायतों)—श्रमिक सोवियतों, सैनिक सोवियतों, किसान सोवियतों—के हाथ में होगी। रूसी क्रान्ति को हुए ५२ वर्ष हो गये, और अब भी रूसी जनता के सर पर पार्टी की तानाशाही मजबूती से कायम है। कोई नहीं कह सकता कि यह तानाशाही और कितने दिनों तक कायम रहेगी और कब सोवियतों के हाथ में सत्ता आयेगी।

एक ऐतिहासिक तथ्य : बन्दूक की नलीवाली सत्ता जनता के हाथ में नहीं जाती

चौथी बात यह है कि यद्यपि सभी क्रान्तियों में केन्द्रीय प्रश्न सत्ता का ही होता है, और सभी क्रान्तियों का आयोजन जनता के लिए सत्ता प्राप्त करने के नाम पर किया जाता है, तथापि सत्ता हमेशा ही क्रान्ति करनेवालों में से ऐसे मुट्ठीभर लोगों द्वारा हड़प ली जाती है, जो सबसे ज्यादा निर्मम होते हैं। ऐसा होना अनिवार्य ही है, क्योंकि सत्ता बन्दूक की नली से निकलती है और बन्दूक सामान्य जनता के हाथ में नहीं, बल्कि हिंसा के उन संगठित तत्त्वों के हाथ में रहती है, जो हर सफल क्रान्ति में से क्रान्तिकारी सेना तथा उसकी सहायक जमातों के रूप में पैदा होते हैं। इन तत्त्वों पर जिनका नियंत्रण होता है, उनके ही नियंत्रण में सत्ता रहती है। यही कारण है कि हिंसक क्रान्ति हमेशा किसी-न-किसी प्रकार की तानाशाही को जन्म देती है। और फिर, यही कारण है कि क्रान्ति के बाद शासकों एवं शोषकों का एक नया, विशेषाधिकार-प्राप्त वर्ग कालान्तर में पैदा हो जाता है जिसके अधीन बहुसंख्यक जनता फिर एक बार गुलाम हो जाती है।

इसलिए मैं तो कहूँगा कि नहीं, हिंसा कभी तारक नहीं सिद्ध हुई है, जैसा कि पीड़ित और शोषित लोगों को समझा दिया गया है। टालस्टाय की एक प्रसिद्ध उक्ति है जिसको थोड़ा बदलकर कहा जा सकता है कि क्रान्तिकारियों ने जनता के लिए सब कुछ किया है, लेकिन उसकी पीठ पर से उतरने का कष्ट उन्होंने नहीं किया है।

यह नहीं मान लेना चाहिए कि उपर्युक्त चर्चा केवल मार्क्सवादी-लेनिनवादी साम्यवादियों को, जो आमतौर पर नक्सलवादी कहलाते हैं, ध्यान में रखकर की गयी है। यह भी नहीं कहा जा सकता कि केवल वे ही इस देश में रक्त-क्रान्ति के पुजारी हैं। रक्त-क्रान्ति में विश्वास रखनेवाली दूसरी अनेक जमातें हैं जिनमें भारतीय कम्यूनिस्ट पार्टी, कम्यूनिस्ट पार्टी (मार्क्सवादी), रिवोल्यूशनरी सोशलिस्ट पार्टी, सोशलिस्ट यूनिटी सेंटर, रिवोल्यूशनरी कम्यूनिस्ट पार्टी, बोलशेविक पार्टी, फारवर्ड ब्लाक (मार्क्सवादी) आदि शामिल हैं। इनमें जो भेद है वह केवल इस बात को लेकर कि : (क) जन-विद्रोह के आवाहन की उपयुक्त घड़ी क्या होगी, तथा (ख) अंतरिम काल में अपनायी गयी रण-नीति (स्ट्रेटैजी) क्या होगी? नक्सलवादियों की दृष्टि में क्रान्ति करने की घड़ी बस यही है। अन्य लोगों को लगता है कि यह बचकाना बहक या थामथी दुस्साहसिक कारस्वाई मात्र है। लेकिन खुद उनके बीच व्यूह-रचना के प्रश्न को लेकर तीव्र संघर्ष होते हैं। और इन संघर्षों के क्रम में शास्त्र-वाक्यों को खूब तोड़ा-मरोड़ा जाता है। ऐसा भी नहीं कि उनके आपसी मतभेद निश्चित और अटल होते हैं। वे स्थान और रूप बदलते रहते हैं, एक-दूसरे में मिलते रहते हैं तथा परस्परारूढ़ होते रहते हैं। लेकिन इस एक बात पर वे सभी एकमत होते हैं कि अन्तिम लक्ष्य तक पहुँचने के लिए सशस्त्र जन-विद्रोह अनिवार्य है। (क्रमशः)

अगले अंक में

निराशा से उत्पन्न आतंकवाद

और

एक नया क्रान्तिकारी आधार

पुरानी शैली : नये सपने

[विनोबा ने कई बार यह भाव व्यक्त किया है, "मेरी अपनी दृष्टि यह है कि छोटे-छोटे कामों में व्यर्थ शक्ति नहीं खर्च करनी चाहिए। 'मामूली सेवा वगैरह अभी नहीं, इस वक्त नहीं। इस वक्त क्रान्ति, भूमिक्रान्ति चाहिए।" लेकिन हमारे दिल में तात्कालिक घटनाएँ इस तरह असर करती रहती हैं, कि उनके कारण उत्पन्न दया-भावना का आवेग हमें अक्सर दिग्भ्रान्त करता रहता है। सोचे और प्रयत्न हम भूमिक्रान्ति के काम में नहीं लग पाते तो इधर-उधर के कुछ 'अच्छे काम' करके समाधान पाना चाहते हैं। सोचते हैं कि 'इस उस' माध्यम से 'धीरे-धीरे' हम क्रान्ति की मंजिल पर पहुँचेंगे। इस भ्रम को तोड़नेवाला एक अनुभव अपने एक पुराने साथी द्वारा श्री योगेश-चन्द्र बहुगुणा द्वारा यहाँ प्रस्तुत है। —सं०]

साध्य-साधन की एकरूपता के बारे में पुस्तकों में कई बार विभिन्न संदर्भों में पढ़ा था, कई गुरुजनों से सुना था, मैं स्वयं भी इस बात का शिक्षक बन गया था कि साधनों में ही साध्य छिपा रहता है, हम सम्यक् साधनों को विकसित करते जायें, सावधानी बरतते जायें, तो चरम साध्य तक पहुँचा जा सकेगा, क्योंकि साधन का अपनी पूर्णता में विकास ही तो साध्य है। बुद्ध ने यही कहा था, विवेकानन्द ने यही सिखाया, और गांधी ने इसीके प्रत्यक्ष प्रयोग करके दिखाये।

यह बात मैं समझता था, लेकिन जानता नहीं था। जो समझता था वह सब बाहर से था, शास्त्र का था, स्वयं के अनुभव में से वह जाना हुआ नहीं था। और सत्य तो सदैव स्वयं ही जाना जा सकता है! सत्य में तो कूदा जाता है, दूसरा कोई बाहरी साधन नहीं है—न गुरु, न ग्रन्थ, न पुरोहित और न साधु-सन्यासी, जिसके मार्फत हम सत्य को पकड़ सकें। सत्य के अज्ञात सागर की महायात्रा स्वयं ही, और अकेले ही हो सकती है। और एक दिन मैंने भी इस सत्य को जाना कि साधन और साध्य में साधर्म्य होना चाहिए।

सन् १९६६ के दिसम्बर महीने में अल्मोड़ा के तत्त्व-प्रचार-केन्द्र को छोड़कर अपना गाँव आ गया था। आगे क्या करना है इसका कोई स्पष्ट चित्र मेरे सामने नहीं था, लेकिन कुछ करना है, इसकी धुन तो थी ही। अक्सर होता यह है कि क्रांति की अधीरता हमसे कुछ-न-कुछ करवाने लगती है। क्रांति का सम्बन्ध विचार से और गहरे किन्हीं अज्ञात केन्द्रों से होता है। ये केन्द्र जब सक्रिय होकर विचार के साथ जुड़ जाते हैं, तब क्रांति की तीव्रता और भी कसमसाने लगती है। क्रांतिकारियों की श्रेणी में बहुत कम ऐसे लोग होते हैं जो विचार के निराकार रूप को पकड़कर लम्बे समय तक धीरज के साथ उसकी सम्भावनाओं की प्रतीक्षा करते रहते हैं, बाकी लोग तो सगुण-साकार रूप को ही तुरन्त देखना चाहते हैं।

यही स्थिति प्रारम्भ में मेरी थी। बादशाही थौल की देशी शराब की दूकान जन-आन्दोलन के परिणामस्वरूप बन्द हो चुकी थी, और हम सब साथी आगे का रास्ता ढूँढ़ रहे थे। तलाश करते करते हमने पाया कि रानीचौरी में बच्चों की पढ़ाई की समस्या है। पाँचवीं तक के स्कूल तो आस-पास काफी हैं, परन्तु उसके बाद आगे पढ़ने के लिए सबको ३ मील चलकर जाना पड़ता है। आजकल छोटी उम्र में ही बच्चे पाँचवीं पास कर लेते हैं। सरकारी शिक्षा का पाठ्यक्रम इतना बोझिल है, कि बच्चों को काफी भारी बस्ता साथ में स्कूल में ले जाना पड़ता है। एक तो कच्ची उम्र, रोज ६ मील आना-जाना और साथ में एक भारी बोझ, एक बड़ी समस्या थी। और हमने सोचा कि जिस क्रांति का सम्बन्ध हमारी समस्याओं से न हो वह धरती पर उतरेगी कैसे?

यही सब सोचकर हम लोगों ने तय किया कि रानीचौरी में पाँचवीं कक्षा से आगे की पढ़ाई की व्यवस्था हो। यह हम पहले से ही जानते थे कि हमारे विद्यालय के साइनबोर्ड पर अगर लिखा होगा कि "यहाँ सर्टिफिकेट नहीं मिलता है" तो कोई क्यों नाहक अपने बच्चों को वहाँ भेजेगा! इस सर्वोदय के लोगों द्वारा यह विद्यालय शुरू हो, यह सुनकर हमारे कुछ हितैषियों ने इस तरह का प्रचार प्रारम्भ भी किया कि यहाँ 'सर्टिफिकेट' नहीं मिलेगा, डोम-ठाकुर (हरिजन-सवर्ण) सब एक हो जायेंगे, यह तो आश्रम बन जायेगा, बच्चों का भविष्य बरबाद हो जायगा, आदि आदि।" हम यह भली-भाँति जानते थे कि समाज की माँग सनद की है, परन्तु हम यह अवश्य सोचते थे कि अगर विद्यालय के शिक्षक जागृत, सचेत, सृजनात्मक दृष्टि-वाले होंगे तो विद्यालय ग्रामस्वराज्य की अहिंसक क्रांति के साथ जुड़ा रहेगा, और इस तरह वह ग्रामस्वराज्य के प्रयासों का केन्द्र ही होगा।

उत्साह था, लेकिन क्रान्ति के लिए?

यही कल्पना हमने स्थानीय लोगों के सामने रखी। कुछ लोगों ने कुछ नहीं समझा, कुछ ने अधूरा समझा, पूरा शायद ही किसीने समझा हो। फिर भी लोग राजी हो गये। ग्रामस्वराज्य संघ की ओर से ही विद्यालय चले, इस पर सब सहमत हुए। सहमत होनेवाले लोगों ने ग्रामस्वराज्य का विचार समझकर ऐसा निर्णय लिया हो, ऐसी बात नहीं थी, इसका कारण यह था कि शराबबन्दी-आन्दोलन की सफलता के कारण हमारी कुछ साख बन गयी थी, और लोग समझने लगे थे कि हम कुछ कर सकते हैं, इसलिए हमारे बार-बार यह कहने पर भी कि, 'आप लोग विद्यालय को चलाने के लिए स्वतंत्र कमेटी बनायें', वे लोग यही आग्रह करते रहे, कि नहीं, ग्रामस्वराज्य संघ ही इसको चला दे।

काम की सुविधा के लिए आसपास के लोगों की हमने एक कामचलाऊ कमेटी बना ली, और काम भी प्रारम्भ हो गया। चन्दा इकट्ठा होने लगा, मकान बनने लगा, अर्थात् मिल गयी।

लोगों में अपार उत्साह दिखायी दे रहा था। जिन लोगों ने कभी पाँच अंगुलियाँ भी मिट्टी में नहीं रखी, वे सीमेंट बजरी के तसले सिर पर ढोये थे। विद्यालय की इमारत की छत तो लोगों ने दिन-भर खेती का काम करने के बाद रात को गैस की रोशनी में डाली। उस दिन पूरी रात हम काम करते रहे। जनशक्ति का यह उभाड़ देखकर मेरे मन में भी अपार उत्साह था। घर में हमारा मकान बन रहा था। ७० वर्ष के मेरे बूढ़े पिताजी घर में पत्थर तोड़ते, परन्तु जेठ के महीने की कड़ी धूप में भी मैं और भाई अमरदेव जी गाँव-गाँव घूमकर चन्दा इकट्ठा करते।

मकान बन गया। जो विद्यालय अपनी तीन कक्षाओं के साथ पंचायत-घर के सिर्फ एक ही कमरे में चलता था, कमरा भी ऐसा कि बरसात में बाहर-भीतर सब समान हो ही जाता था, वहाँ अब पक्की सीमेंट की इमारत हमारे पास थी। शिक्षक थे, शिक्षार्थी थे, प्रकृति का सौंदर्य था, लोगों की वाहवाही साथ थी।

…और उस दिन मेरी आँखें खुलीं

लेकिन एक चमत्कार जैसा हुआ; और लोगों में फिर जड़ता आने लगी। अब हम स्कूल की चर्चा करते तो लोगों के चेहरों पर कोई रौनक नहीं दिखायी देती थी। कामचलाऊ कमेटी जो बनी थी—विद्यालय सम्बन्धी सभी कामों में यह कमेटी ही अन्तिम सत्ता थी और सघ सीधे सीधे इसमें दखल नहीं करता था—उसके कुछ सदस्य तो हमारे परोक्ष में ग्रामस्वराज्य, सर्वोदय का मजाक और उसकी आलोचना भी किया करते थे। लोगों को हमारी आवश्यकता ग्रामस्वराज्य की समग्र योजना के बजाय स्कूल के लिए थी, और स्कूल तो बन चुका था!

अब यदि शिक्षक छात्रों से श्रमदान करवाते या सम्पर्क के लिए उन्हें गाँव में ले जाते, तो शिकायतें आतीं। लोग अपनी नाराजगी कभी-कभी मुझसे भी प्रकट करते, फिर भी मैं आशावान था कि हम शिक्षण के क्षेत्र में तो कम-से-कम कुछ नया कर पायेंगे। इसी उद्देश्य से हमने विद्यालय के प्रधानाध्यापक को एक महीने के लिए नयी तालीम के साधक श्री जुगतराम काका के पास वेड़छी भेजा।

लेकिन उस झटके ने अचानक मेरी गहरी नींद को तोड़ दिया; जिस दिन कार्यकर्ताओं की बैठक में विद्यालय के शिक्षकों का अनपेक्षित व्यवहार सामने आया। उनकी माँगें थीं :

(१) हमारा वेतन बढ़ाया जाय,
(२) हमें स्थायी किया जाय,
(३) हमारे लिए एक विश्राम-कक्ष की अलग से व्यवस्था हो,
(४) जिस जमीन पर विद्यालय है, उस भूमि पर ग्रामस्वराज्य सघ का कोई अधिकार नहीं रहे।

इन माँगों पर जब बहस होने लगी, तो विद्यालय के प्रधानाध्यापक इतने उत्तेजित हुए कि उन्हें यह भी सुध न रही कि वे क्या कह रहे हैं। मुझ पर तो उनका गुस्सा इतना बरसा कि जो कुछ शिष्टाचार-वश नहीं भी कहना चाहते हों,—मन में भले ही वैसा पहले से सोचते रहे हों—वह सब कह बैठे। उनके शब्द थे—'आज तक मैं व्यक्ति के रूप में तुम्हारी पूजा करता था, तुम्हारी कथनी-करनी में कोई समानता नहीं, लच्छेदार भाषा में भाषण कोई भी दे सकता है, इसी कारण यह विद्यालय सामुदायिक केन्द्र नहीं बन पा रहा है, इस विकास-क्षेत्र से सर्वोदय का नामोनिशान मिट जायेगा आदि…।" दूसरे एक शिक्षक भी सघ की प्रबन्ध समिति के एक सदस्य की बोलने की स्वतंत्रता तक को स्वीकार करने को राजी नहीं थे। वे बार-बार कह रहे थे, "चुप रहो जी, तुम नहीं कह सकते हो।"

उस दिन मैं सोचता रहा, सोचता रहा, कि आखिर ऐसा क्यों होता है? लेकिन कल्पना चाहे कितनी क्रांतिकारी क्यों न हो, कार्यक्रम यदि प्रतिगामी या यथास्थितिवाला है तो इससे भिन्न क्या परिणाम हो सकते हैं? विद्यालय चाहे क्रान्तिकारी संगठन ग्रामस्वराज्य सघ द्वारा चलाया जाय या किसी दूसरी कमेटी द्वारा; सरकारी मान्यता का लेबुल जब तक उस पर लगा हुआ है, तब तक शिक्षक पैसा,→

क्षेत्र-संन्यास से स्वाभाविक मौन की ओर

'नवो नवो भवति जायमानः', वेद का श्लोक गाता है। आये दिन उगनेवाले सूरज की किरणों के साथ समूची सृष्टि भी नित्य नूतन पाती है। नीलाम्बर जैसा है, इसका वर्णन करते हुए शंकर भगवान उमा से कहते हैं, "देवी! जैसा तुम्हारा रूप नित्य नया है।" चन्द्र की कलाएँ नित्य बदलती रहती हैं। स्वर्गीय बाबा राघवदासजी ने बाबा की विशेषता वर्णन की थी एक ही शब्द में, 'नित्यनूतन'। हर दो या तीन महीनों के बाद बाबा से मिलने के लिए आनेवाले यही पाते हैं। उन्हें बाबा के बाह्य, स्थूल कार्यक्रम में भी नूतनता दीखती है। चंद रोज पहले रोज दोपहर तीन से चार शतरंज चलता था। उस समय किसीसे मुलाकात नहीं मिलती थी। कई बार बालबहादुर जैसे लोग चर्चा के लिए आते थे, तब वहीं पाते थे। घड़ी की सुई के तीन बजाते ही बाबा चर्चा समाप्त कर खेल आरंभ कर देते थे।

अभी पिछले दिनों, ११ नवम्बर को शाम को साढ़े पाँच बजे ऐलान हो गया, "अब दिन छोटा हो गया है, सफाई के लिए समय कम पड़ता है, इसलिए कल से शतरंज का खेल बंद हो जायेगा।" थोड़े दिन के बाद भाऊ पानसे का बेटा पप्पू तथा दत्तोबादादा का दिनेश आये ठीक तीन बजे। उन्हें मालूम न था कि शतरंज बंद हो गया है। वे तो बाबा के साथ शतरंज खेलने के लिए ही आये थे। उस दिन उन्होंने देखा, तीन बजे भी बाबा सफाई में लगे हैं। फिर किसी के साथ मुलाकात शुरू हुई। पप्पू, दिनेश बाबा की तरफ आशा की निगाह लगाये सामने बैठे थे। मुलाकात खतम होते ही बाबा ने कहा, "अच्छी बात, निकालो शतरंज।" बच्चों की इच्छा पूरी हो गयी।

सूक्ष्म-प्रवेश क्यों?

हीरालाल शास्त्रीजी राजस्थान के मान्यवर पुरुषों में एक हैं। एक जमाने में वहाँ के मुख्य मंत्री थे। वनस्थली कन्या विद्यापीठ का बोलबाला सारे भारत में है। उस संस्था का आरंभ हीरालालजी ने किया है। बाबा की बिहार-बंगाल की यात्रा (सन् १९५४-५५) में कुछ दिन वे साथ थे। रोज सुबह रास्ते में चलते बाबा से कई विषयों पर चर्चा करते थे। उसके बाद वे अभी यहाँ बाबा से मिलने आये थे। रोज एक घंटा उनसे चर्चा होती थी। चर्चा में ग्रामस्वराज्य-कोष, ग्रामदान, बिहारदान, इत्यादि विषय थे ही। अलावा आध्यात्मिक विषय भी थे।

उनके एक प्रश्न के उत्तर में बाबा ने कहा—'बाबा वाक्य प्रमाण' न हो, इसीलिए यह सूक्ष्म-प्रवेश है। बाबा स्वयं किसीका वाक्य प्रमाण नहीं मानता। और अपना वाक्य किसी पर लादा जाये, किसीको आज्ञा दे, यह भी नहीं करता। गीता में आया है, परमात्मा को कोई ध्यानयोग से देखता है, कोई ज्ञानयोग से, कोई कर्मयोग से। आगे कहा

> अन्ये त्वेवम् अजानन्तः
> श्रुत्वा अन्येभ्य उपासते
> तेऽपि च अतितरन्ति एव
> मृत्युं श्रुतिपरायणाः

जो लोग दूसरों से सुनकर उपासना करते हैं, उनको गीता श्रुतिपरायण कहती है। श्रुतिपरायण यानी श्रद्धापरायण। श्रद्धा जितनी शक्तिशाली है, उतनी बुद्धि शक्तिशाली नहीं है। और श्रद्धा जितनी दुर्बल हो सकती है, उतनी बुद्धि दुर्बल नहीं हो सकती। श्रद्धा एक हद से ज्यादा दूर तक नहीं जा सकती है। बुद्धि दूर जाती है। इसलिए बुद्धि बलवान है। इससे उलटे श्रद्धा आरम्भ में बलवान है, बुद्धि नहीं। अन्त में बुद्धि बलवानी है, श्रद्धा नहीं।

हीरालालजी, "आपके सूक्ष्म-प्रवेश का अर्थ क्या है?"

बाबा, "सामान्य लेवल (स्तर) से सोचेंगे तो चिन्तन से ज्यादा शक्ति वाणी में है, और वाणी से ज्यादा शक्ति क्रिया में है। लेकिन जहाँ चित्त शून्य हो जाता है, वहाँ क्रिया से ज्यादा शक्ति वाणी में, और वाणी से ज्यादा शक्ति चिन्तन में आती है। चित्त शून्य हो जाये, तो एक-दूसरे को संदेश एकदम पहुँच जाता है, देर नहीं लगती है।"

हीरालालजी, "आप सफाई में इतना समय देते हैं, इसके माने क्या है?

बाबा, "भगवान (भारतराम) हमारे आँगन में आया है। उसकी सन्निधि में रहने का आनन्द मिलता है। 'देवाचिये द्वारी उभा क्षणभरी' (भगवान के द्वार में खड़े हैं, एक क्षण)। दूसरी बात, इस काम के बदले में माला लेकर जप करता तो मेरा समय व्यर्थ जा रहा है ऐसा कोई नहीं कहता। कचरा निकालता हूँ, तो यह भी एक जप हो सकता है। एक-एक तिनका उठाना और उसके साथ नामस्मरण करना। मैं कभी-कभी गिनता भी हूँ। आज १२१२ तिनके मैंने उठाये। उसमें मन काम नहीं करता। यह एक ध्यानयोग भी होता है। तीसरी बात, को आदमी बाहर जरा भी कचरा सहन नहीं

—धुनिक, परीक्षा, पाठ्यक्रम, पदवी और पदोन्नति से भिन्न सोच भी क्या सकते हैं? उस दिन मैं रोया भी बहुत, क्योंकि अनासक्त कर्मयोग की साधना अभी चालू ही है। पूरी निष्ठा, समर्पण व लगन से मैंने विद्यालय के लिए काम किया था, लेकिन इस परिणाम से ही मेरी आँखें सदा-सदा के लिए खुल गयीं, और मैं विद्यालय के प्रबन्ध की जिम्मेदारी से मुक्त हो गया।

महर्षि वाल्मीकि का यह सूत्र बार-बार मन में रहने लगा है—'विधिहीनस्य यज्ञस्य सद्यः कर्ता विनश्यति' विधिहीन यज्ञकर्ता जल्दी ही नष्ट हो जाता है। इस अनुभव ने सिखा दिया, कि हम सही पद्धति की चिन्ता करें, अहिंसक क्रान्ति तो हमारे चारों ओर घिरी हुई है ही।

—योगेशचन्द्र बहुगुणा

मुजफ्फरपुर की डाक

....और विरोध क्षीण होकर रहा !

शाम का झुटपुटा। भक्त-उत्सव की राह से दो खादीधारी युवक गले में झोला टाँगे गाँव में घुसे। अनजानी जगह, अपरिचित गाँव, अपरिचित लोग। दोनों युवकों के मन में आशंका थी, 'इस अँधेरे में कहाँ जायें, कहाँ ठहरें? न जाने कब तक इस गाँव में रहना पड़ेगा? क्या होगा, कैसे होगा? आदि आदि!' सामने के घर से एक अधेड़ सज्जन निकले। युवकों ने प्रणाम किया और थके-माँदे उनकी चौकी पर बैठ गये।

"कौन हैं आप, कहाँ से आये हैं?"—अधेड़ ग्रामीण ने पूछा।

"ग्रामस्वराज्य की स्थापना के उद्देश्य से आये हैं। ग्रामदान के कार्यकर्ता हैं। बगल की पंचायत में जयप्रकाश बाबू का कैम्प चल रहा है न, वहीं से अभी आ रहे हैं। अब हमें इसी पंचायत में रहकर काम करना है। किसीसे परिचय नहीं है। कल परिचय कर लेंगे और रहने की जगह भी ठीक कर लेंगे। मगर अभी तो...। अगर आप इजाजत दें तो आज रात हम यहीं रह जायें!"—कार्यकर्ता मित्र एकसाथ ही सब कह गये।

अधेड़ ग्रामीण चुपचाप उठे और अपने घर के भीतर चले गये। दोनों युवक कुछ और चिंतित हो उठे। उधर घर के अन्दर से फुसफुसाहट हुई—"बेचारे नेक लोग लगते हैं। क्या होगा, रहने दो एक रात। जयप्रकाश बाबू बड़े नेता हैं, ये उनके आदमी हैं "जमीन माँगेगा" नहीं नहीं—अरे भले घर के बेटे लगते हैं—गरीबों के लिए माँगते हैं" सब ठीक अब न..."अच्छा रहने दो...!"

किसान दो खड़ाऊँ और एक लोटा जल लेकर आये। बोले, "पैर धोकर बैठिए। आज रात भर रहिए, भोजन करिए। कल आप अपना डेरा-डंडा ढूँढ़ लीजिएगा।" रात्रि में भरपूर स्वादिष्ट भोजन मिला। सोने के लिए खाट और बिछावन भी। सवेरे उठकर दोनों युवक डेरे-डंडे की तलाश में झोला लेकर आगे बढ़ गये।

दिन बीते। गाँव में हलचल मची। कुछ बड़े किसानों की बैठक गुप्त रूप से हुई और तय हुआ कि एक भी भूमिवान न तो हस्ताक्षर करे, न कार्यकर्ताओं से बात करे, न किसी प्रकार का सहयोग करे। उस किसान से पूछा गया कि क्यों उसने पहली रात उन दोनों को ठहराया और खिलाया?

दोनों युवक कार्यकर्ता घूमते रहे, लोगों के विरोध के बाद भी अपनी बात कहते रहे। कहीं किसीने झिड़क दिया, किसीने गाली दे दी, किसीने दरवाजे से निकाल दिया। मगर ये दोनों मित्र सब सहते रहे और अपनी बात कहते रहे। सप्ताह बीते, महीने बीतने लगे। आखिर कब तक विरोध टिकता? युगवाणी का असर हुआ। लोग समझने लगे। एक ने कहा, "यह हमारे विरोधी नहीं, रक्षक हैं, हमें राह दिखाने आये हैं!" दूसरे ने कहा, "इनके द्वारा बताये मार्ग से गरीब-अमीर सबका भला है।" तीसरे ने कहा, "अरे, अब तो सब करके थक गये। ये सब बड़े सहनशील हैं, अब यहाँ से काम करके ही जायेंगे, वैसे नहीं।"

बस बना था! सहयोग मिला, साथ मिला और हस्ताक्षर होने लगे। बीघा-कट्ठा निकला और जयप्रकाश बाबू के द्वारा उसका वितरण-समारोह भी बड़े शानदार ढंग से हुआ। ग्रामसभा बनी और उसका निर्विरोध चुनाव हुआ। गाँव के पुराने झगड़े समझौते से हल होने लगे। और आज यह गाँव ग्रामस्वराज्य के लिए गठित ग्रामदानी गाँवों की ग्रामसभा का एक सुन्दर उदाहरण है।

बुधनगरा राघो में भू-वितरण समारोह

दिनांक २ दिसम्बर '७० को २ बजे दिन में बुधनगरा राघो में भू-वितरण सभा का आयोजन किया गया। सभा की अध्यक्षता श्री रामकरण सहनी ने की, जो इस पंचायत के नागरिक, मुखिया और मुजफ्फरपुर जिला सर्वोदय के अध्यक्ष भी हैं। सभा में बड़ी संख्या में गाँव के पुरुषों के अतिरिक्त महिलाएँ भी उपस्थित हुईं। बुधनगरा पंचायत में ग्रामदान की शर्तें बहुत पहले ही पूरी हो चुकी थी और बीघा-कट्ठा भी बाँटा गया था। मगर कुछ और लोग शेष थे जिन्हें अनुकूल होना था। फलतः ग्रामसभा-गठन और शेष बीघा-कट्ठा का वितरण नहीं हो सका था।

हर्ष की बात है कि अब वहाँ अनुकूलता बढ़ती जा रही है। लोग प्रेम के साथ विचार सुनने और समझने का भी प्रयत्न कर रहे हैं। हवा का रुख अब विरोधी नहीं रहा है। हाँ, प्रयत्न के बाद भी ग्रहण करने में कुछ कठिनाई उन्हें लगती है। भू-वितरण समारोह में कुल २ बीघा १६ कट्ठा जमीन का वितरण हुआ।

वैशाली में ग्रामस्वराज्य अभियान

गत २०, २१ एवं २२ नवम्बर '७० को भौना शिविर में जिला सर्वोदय मंडल के निर्णय पर विचार करके वैशाली प्रखंड में सघन ग्रामस्वराज्य-अभियान चलाने का संकल्प जे० पी० की प्रेरणा से उनके और आचार्य राममूर्ति के सान्निध्य में

→रुकावट नहीं। अब भाई, बोल सकता हूँ, लेकिन अक्सर बोलूँगा नहीं, मौन कब नहीं होगा, स्वभाव होगा। स्वाभाविक मौन होगा।" फिर अपरवण्ण हो जारी रहेगा ही। जो कहना-पूछना है, लिखित हो। उसके अलावा मैं जो कुछ पूछूँ, उसका जवाब भी लिखित दें, या कागजली से दें। कान के पास आकर लोग बोलते हैं, तब कान पर प्रहार होता है।"

बाबा का स्वास्थ्य अच्छा है। ('मैत्री' से) —कुसुम

लिया जा चुका था। उक्त संकल्प की क्रियान्विति पर विस्तारपूर्वक विचार करने और कार्यक्रम-निर्धारण के लिए दिनांक ३-१२-७० को पटेढा ग्राम-पंचायत भवन में एक बैठक बुलायी गयी। बैठक में वैशाली प्रखंड के प्रायः वे सभी नागरिक उपस्थित थे जिन्होंने इस अभियान के लिए अपना आंशिक या पूर्ण समय देने का निश्चय किया है। निकट के सरैया और कुढ़नी प्रखंड के सहयोगी कार्यकर्त्ता, जिला सर्वोदय मंडल के अध्यक्ष, श्री बद्री नारायण सिंह, भगवानपुर एवं अन्य शिक्षण संस्थानों के प्राध्यापकगण, जे० पी० कैम्प से श्री रामसेवक ठाकुर एवं आचार्य राममूर्ति आदि भी उपस्थित थे।

बैठक में ११ दिसम्बर से अभियान कार्य शुरू करने का निश्चय किया गया। १० दिसम्बर की संध्या में सभी कार्यकर्त्ता एवं स्थानीय सहयोगी मित्र कैम्प पर आ जायेंगे। ११ दिसम्बर का प्रात से प्रभात-फेरी से कार्यक्रम होगा। ८ से १२ बजे तक कार्य-पद्धति एवं समाजिक प्रश्नोत्तरी आदि के व्यावहारिक तरीके पर अनुभवों का आदान-प्रदान होगा। २ बजे दिन से ३ पंचायतों के विभिन्न गाँवों में टोलियों में बंटकर लोग जायेंगे और विचार समझाने, हस्ताक्षर कराने, बासगीत भूमि के पर्चों का सर्वेक्षण करने, हस्ताक्षर किए हुए लोगों से बीघा-कट्ठा लेकर बाँटने आदि का काम करेंगे। स्थानीय प्रमुख नागरिक और कार्यकर्त्ताओं के अतिरिक्त बाहर के कुछ अनुभवी साथी भी इस अवसर पर उपस्थित रहेंगे, जिनमें आचार्य राममूर्ति भी होंगे।

—'जयप्रकाश शिविर समाचार' से

सर्व सेवा संघ-प्रबन्ध समिति

सर्व सेवा संघ के प्रधान कार्यालय से प्राप्त सूचनानुसार संघ की प्रबन्ध समिति की बैठक आगामी २१ से २३ जनवरी '७१ तक वाराणसी में आयोजित होने जा रही है। बैठक की कार्यवाही २१ जनवरी को सुबह ९ बजे से शुरू होगी। ●

आन्दोलन के समाचार

गोष्ठी-शिविर, सभा-सम्मेलन

झाझा में प्रखंड-सभा का उद्घाटन अब २० दिसम्बर को

झाझा में पूरे प्रखण्ड के ग्रामदानी गाँवों के प्रतिनिधियों का सम्मेलन और प्रखण्डस्तरीय ग्रामस्वराज्य सभा का श्री जयप्रकाश नारायण द्वारा उद्घाटन अब १७ दिसम्बर '७० की जगह २० दिसम्बर '७० को होने जा रहा है।

झाझा से प्राप्त सूचना के अनुसार १६ दिसम्बर '७० तक प्रखण्ड के कुल १६१ ग्रामदानी गाँवों में से १२५ गाँवों में ग्रामसभाएँ गठित हो चुकी हैं। ६७ गाँवों में बीघा-कट्ठा भी वितरित किया जा चुका है।

ज्ञातव्य है कि धमना ग्रामसभा की कार्यकारिणी के सदस्य श्री गोपालशरण सिंह जयप्रकाश-स्वागत-समिति, झाझा, के अध्यक्ष हैं, जिन्होंने अपना १०० बीघा जमीन भूमिहीनों में वितरित की है। प्रखण्डस्तरीय शान्तिसेना समिति के संयोजक मा० इसहाक अली साहब का २१ बीघे और अपने बच्चे का गैरमजरुआ ३० बीघे भूमि भूमिहीनों में बाँट चुके हैं और उक्त दोनों सज्जन ग्रामसभाओं के संगठन और बीघा-कट्ठा के वितरण-कार्य में पूर्ण सक्रियता से काम कर रहे हैं।

पूर्णिया में ग्रामस्वराज्य शिविर-परिसंवाद

पूर्णिया जिले के रुपौली में, जहाँ श्री वैद्यनाथ प्रसाद चौधरी ग्रामदान-प्राप्ति के बाद के पुष्टिकार्य को सम्पन्न करने के लिए जमकर बैठे हैं, आगामी २२-१२-७० से २८-१२-७० तक एक ग्रामस्वराज्य शिविर-परिसंवाद का आयोजन किया गया है, जिसमें ग्रामदानी ग्रामसभाओं के प्रतिनिधि, पदाधिकारी आदि भाग लेंगे।

ग्रामदान के कार्यक्रमों के साथ-साथ क्षेत्र की आवश्यकतानुसार और क्या कार्यक्रम स्थानीय समस्याओं को हल करने के लिए चलाये जायँ, इस पर विचार किया जायगा। इसके अलावा सर्वोदय-दर्शन, ग्रामस्वराज्य की प्रक्रिया और ग्रामीण पुनर्रचना के भी सैद्धान्तिक, व्यावहारिक पहलुओं पर विचार-मंथन होगा।

शिविर का उद्घाटन श्री धीरेन्द्रभाई, और समापन श्री जयप्रकाश नारायण द्वारा होगा। शिविर-परिसंवाद की चर्चाओं में योगदान के लिए सुश्री निर्मला देशपांडे, आचार्य राममूर्ति, दादा धर्माधिकारी भी पधार रहे हैं।

मेरठ जिले में आन्दोलन की प्रगति

अब तक जिले के ३३८ ग्रामों के हस्ताक्षर ग्रामदान-पत्र पर हुए हैं। स्कूल-कालेजों से सम्पर्क किया गया। मेरठ जिले के २०४ शिक्षा-केन्द्रों से सम्पर्क हुआ। ३० लोकसेवक, १५२ सर्वोदय-मित्र, ९१ शान्ति-सैनिक तथा 'भूदान-यज्ञ' के १० ग्राहक बनाये गये। स्कूलों के द्वारा सर्वोदय पात्र सफल हो सके, इसके लिए प्रयत्न किया गया। ३१३-०४ रुपये मिले, बदले में साहित्य दिया और बाल-सर्वोदय-समाज की स्थापना की गयी।

आगे हर स्कूल में शान्तिसेना का केन्द्र बन सके, सर्वोदय-विचार का अध्ययन जारी हो, तथा अम्बर चरखे का प्रयोग-केन्द्र स्कूल बन सकें, इसके लिए चिंतन व प्रयत्न जारी है।

सर्वोदय मण्डल की मासिक बैठक होती है। निश्चय हुआ है कि मेरठ के हर खंड में प्राथमिक सर्वोदय-समिति बन जाय। सिम्भावली में पहली पाँच आदमियों की सक्रिय समिति बन गयी है। जिले में भूदान में प्राप्त ७४० एकड़ भूमि अब तक वितरित हुई है। —शिवप्रकाश भाई

राजधानी दिल्ली में

पिछले कुछ महीनों में दिल्ली में नगर कार्य की सयोजना हुई और साथियों ने मिलकर कदम बढ़ाना शुरू किया।

(१) १५ अगस्त से ११ सितम्बर तक दिल्ली के विभिन्न ३० क्षेत्रों में नगर-यात्रा द्वारा विद्यार्थी तथा शिक्षक-समाज, महिला तथा नागरिक क्षेत्र में विचार-गोष्ठियाँ एवं आमसभाओं द्वारा ग्रामस्वराज कोष-संग्रह तथा साहित्य-प्रचार का कार्य हुआ।

(२) श्री धीरेन्द्र मजूमदार के सान्निध्य और मार्गदर्शन में दिल्ली प्रदेश सर्वोदय मण्डल की रचना हुई। विभिन्न कार्यों का वितरण किया गया एवं लक्ष्यांक निश्चित किये गये।

(३) सेवाग्राम अधिवेशन में दिल्ली से १६ भाई-बहिन गये थे। उन्होंने पवनार में विनोबाजी से भेंट करके सलाह ली और बाद में सप्तसूत्री कार्यक्रम तैयार किया।

(४) सर्वोदय मण्डल की ओर से ग्रामस्वराज्य-कोष की संग्रह समिति की रचना की गयी। कोष-संग्रह समिति के अध्यक्ष डा० युद्धवीर सिंह और दिल्ली के महापौर लाला हंसराज के मार्गदर्शन में कोष-संग्रह का कार्य आगे बढ़ रहा है। अब तक १० हजार रुपये एकत्रित हुए हैं।

—बसन्त व्यास

ग्रामस्वराज्य-कोष

अमृतसर सर्वोदय महिला समिति का योगदान

अमृतसर में स्थानीय सर्वोदय महिला समिति द्वारा ग्रामस्वराज्य-कोष में उल्लेखनीय योगदान मिला है। समिति की श्रीमती सेठ बालकृष्ण मुंजाल ने २ अक्तूबर '७० तक ४,७०० रु० एकत्र किये थे, दि० ४-१२-७० को समिति की बैठक में २ अक्तूबर '७० के बाद एकत्र हुए १,०५० रुपये उन्होंने ग्रामस्वराज्य-कोष में जमा किये और बताया कि कुछ और भी दान मिलने के आश्वासन प्राप्त हुए हैं।

मध्यप्रदेश में ग्रामस्वराज्य-कोष में ६,५६,७७७ रुपये एकत्रित

मध्यप्रदेश ग्रामस्वराज्य-कोष समिति के मंत्री श्री नरेन्द्रकुमार दुबे ने एक जानकारी में बताया कि प्रदेश के ४३ जिलों में ग्रामस्वराज्य-कोष के अन्तर्गत गत १० दिसम्बर तक ९,५९,७७७ रुपये की राशि एकत्रित हो चुकी है। मध्यप्रदेश की प्रांतीय कोष समिति द्वारा १० लाख रुपये संग्रह करने का लक्ष्य रखा गया था। ३१ दिसम्बर १९७० तक प्रादेशिक लक्ष्यांक पूरा हो जाने की आशा है। कई जिलों में कोष-संग्रह का कार्य चल रहा है। ग्रामस्वराज्य-कोष का विनियोग मध्यप्रदेश सर्वोदय मण्डल द्वारा गठित जिला ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य समितियों के माध्यम से होगा। मुख्यतः यह राशि ग्रामदान-प्राप्ति और पुष्टि, शान्ति-सेना, साहित्य-प्रचार व प्रान्त में सर्वोदय-आन्दोलन को आगे बढ़ाने की प्रवृत्तियों पर व्यय की जायगी। केन्द्रीय और प्रांतीय अंशदान के रूप में जिलों में संग्रहित ग्रामस्वराज्य-कोष से लगभग रु० १,३५,००० प्रान्तीय कोष समिति के पास जमा हो चुके हैं। कुछ जिलों से अंशदान की राशि आना शेष है। केन्द्रीय कोष-समिति को इसके अंशदान की पहली किश्त पचहत्तर हजार रुपये भेजे जा चुके हैं। (सप्रेस)

भूदान-यज्ञ २१-१२-'७० लाइसेंस नं० ए ३४ [पहले से डाक-व्यय दिये बिना भेजने की स्वीकृति प्राप्त] रजिस्टर्ड नं० एल. ३३४

सहरसा हमारी आखिरी कूद है

सब काम बन्द करके वहाँ जाकर धसो

सन् १९७१ की अवधि आन्दोलन के लिए निर्णायक

आचार्य विनोबा द्वारा 'करो या मरो' का आह्वान

ब्रह्मविद्या मंदिर, पवनार से प्राप्त जानकारी के अनुसार बिहार ग्रामस्वराज्य समिति के मंत्री श्री विद्यासागर भाई से बातचीत करते हुए आचार्य विनोबा ने कहा कि, "सब लोग आफिस में ताला लगाओ, और सहरसा मे धसो। ... जनवरी के अन्त तक वहाँ का काम पूरा होना चाहिए। उसे 'डेड लाइन' मानो।...अगर आप लोग ग्रामदान में जोर नहीं लगा सकते हैं तो फिर आपको 'प्राइवेट बिजिनेस' करना होगा।" बिहार भूदान-यज्ञ कमेटी के पुनर्गठन के सम्बन्ध में अपनी प्रतिक्रिया जाहिर करते हुए विनोबाजी ने कहा कि, "कमेटी चार महीना नहीं बने तो भी कुछ बिगड़ेगा नहीं।"

आचार्य विनोबा ने श्री विद्यासागर भाई को कमेटी के पुनर्गठन की चिन्ता छोड़कर सीधे सहरसा पहुँचने की प्रेरणा देते हुए कहा, "आपके हाथ में १९७१ तक का ही समय है। आगे का समय मैं नहीं मानता, क्योंकि १९५१ में आन्दोलन शुरू हुआ। बीस साल के आन्दोलन के बाद भी कुछ नहीं होगा, तो... यह होनेवाला नहीं है, ऐसा माना जायेगा।"

सहरसा के काम की महत्ता के प्रति अपनी आन्तरिक स्वरा व्यक्त करते हुए विनोबा ने कहा कि, "सहरसा का काम पूरा होगा तो भारत को प्रेरणा मिलेगी।... सहरसा के बाद कुछ कहने की जरूरत नहीं रहेगी।... इसलिए अभी दो महीना ताकत लगाओ। पूरा हुआ तो ठीक, नहीं तो मर जाना, ऐसा निश्चय करो!"

(पूरी चर्चा अगले अंक में)

कृपया क्षमा करें

पिछले कुछ दिनों से प्रेस की गड़बड़ी के कारण 'भूदान-यज्ञ' कई बार समय से नहीं छप पा रहा है। प्रस्तुत अंक भी ३ दिन देर से छपा है। कृपालु पाठक, सहयोगी हमारी विवशता को महसूस कर क्षमा करें। —सं०

इस अंक में

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पै०), विदेश में २२ रु०; या २५ शिलिंग या ३ डालर। एक प्रति का मूल्य २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं मनोहर प्रेस, वाराणसी में मुद्रित

सम्पादक
राममूर्ति
वर्ष : १७ सोमवार
अंक : १३ २८ दिसम्बर, '७०
पत्रिका विभाग
सर्व सेवा संघ, राजघाट, वाराणसी-१
फोन : ६४३९१ तार : सर्वसेवा

सर्वोदय

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

नये वर्ष का संदेश

आज नया वर्ष है। परमेश्वर की कृपा का वर्ष हमारे लिए शुरू हो गया है। आज के शुभ दिन पर हमको निश्चय करना चाहिए कि हम अपनी बीती हुई जिन्दगी को बदल डालेंगे। हममें बहुत-सी बुराइयाँ हैं। हम लोग बहुत ही छोटे दिल के हो गये हैं। हम लोग केवल अपने ही बारे में सोचते हैं, दूसरों का ख्याल तक नहीं करते। यह सब बदल देने का संकल्प करना चाहिए। मन से तय कर लेना चाहिए कि अब से जो कुछ भी सोचेंगे, सारे समाज के लिए, सारे गाँव के लिए सोचेंगे।

भूदान से भी अधिक आनन्द मुझे ज्ञान-दान में मिलता है। एक जमाने में हजारों साधु, संन्यासी देश भर में सतत घूमते रहते थे और ज्ञान का प्रचार करते थे। भूदान के निमित्त से आज मैं आपको सर्वोदय का तत्त्व-ज्ञान (दर्शन) समझा रहा हूँ। मैं सबसे पीछे, ऐसा सर्वोदय में हर व्यक्ति को मानना होता है। मनुष्य की दो प्रकार की इच्छाएँ होती हैं : एक चित्तशुद्धि की और दूसरी, शरीर के लिए आवश्यक चीजें प्राप्त करने की। अपना चित्त शुद्ध करने के लिए सबसे आगे रहने की इच्छा रखनी चाहिए। पहले अपनी चित्त-शुद्धि के प्रति ध्यान देना चाहिए। उसके बाद दूसरों की चित्त-शुद्धि की बात करनी चाहिए। लेकिन शरीर के लिए आवश्यक चीजें प्राप्त करने के बारे में ऐसा कहना चाहिए कि पहले दूसरों की आवश्यकताएँ पूरी हों, उसके बाद मुझे मिले। पहले दूसरों को खाना दो, बाद में मुझे। ऐसी वृत्ति से सर्वोदय आयेगा।

—विनोबा

• सर्वोदय-क्रान्ति और नेतृत्व-प्रक्रिया • बीकानेर में जिलादान के बाद •

आपके पत्र

ग्रामदान-पुष्टि कार्यक्रम और लोकसेवक का कर्तव्य

पूज्य विनोबाजी के आवाहन पर ग्रामदान-प्राप्ति का तूफान आया और समाप्त हो गया। कुछ अच्छी-बुरी उपलब्धियाँ हुईं। अच्छी यह कि, तूफान ने देश के हजारों रचनात्मक कार्यकर्ताओं को आंदोलन से जोड़कर ग्रामस्वराज्य की हवा बनायी। और बुरी यह कि, आंदोलन में लगे अधिकांश कार्यकर्त्ताओं को यह लगा कि इस प्राप्ति से कुछ होनेवाला नहीं है। इससे उनमें निराशा पैदा हुई। विचारकों में भी निराशा आयी। लेकिन देखना यह है कि, यदि यह नहीं तो दूसरा विकल्प क्या है? जब तक कोई दूसरा विकल्प नहीं तब तक इस दुस्साध्य में भी लगे रहना है, और नये-नये प्रयोग, अभियान चलाते ही रहने हैं।

सेवाग्राम संघ-अधिवेशन के निर्णय के अनुसार अब प्राप्ति के साथ हमें पुष्टि-कार्य में अधिक शक्ति लगानी चाहिए। इस दृष्टि से जब हम फिर से संकल्पित ग्रामदानी गाँवों को देखते हैं तो ऐसा लगता है कि मानो हम काल्पनिक क्रान्ति की ओर दौड़ रहे हैं। मुझे तो ऐसा लगता है कि, इस त्याग-प्रेम-करुणाप्रधान क्रान्ति के लिए क्रान्ति के संदेशवाहकों का भी चरित्र त्याग, प्रेम और करुणाप्रधान होना चाहिए। यानी इस आंदोलन में लगे कार्यकर्त्ताओं को तो अपनी जमीन का बीसवाँ और आय का चालीसवाँ हिस्सा ग्राम-समाज या नगर-समाज को समर्पित करना ही चाहिए।

यदि कार्यकर्त्ता इतना भी करने को तैयार नहीं तो फिर समाज से हम क्या अपेक्षा कर सकते हैं? (किसी कार्यकर्ता-विशेष का नाम न लेते हुए) कई लोक-सेवकों के साथ हुई मेरी चर्चाओं में उनका स्पष्ट कहना था कि, लोकसेवक के लिए जमीन व आय का हिस्सा देने की कोई शर्त निष्ठापत्र में नहीं है। इसलिए लोकसेवक को देना आवश्यक नहीं। संस्थाओं के कई कार्यकर्त्ताओं से भी बात की, उनमें से भी अधिकांश का मन यह था कि, वे तो बहुत कम वेतन से काम करते हैं इसलिए उनको अपनी आय का कुछ हिस्सा समाज को देना संभव नहीं।

अतः जब क्रान्ति के संदेशवाहकों की स्थिति यह हो, तब समाज उससे क्रान्ति की क्या प्रेरणा लेगा, मेरा यह दृढ़ मत है कि, जब तक हम कार्यकर्ता-विशेष जो लोकसेवक अथवा शान्ति-सैनिक हैं, अपनी त्याग-वृत्ति का परिचय नहीं देते तब तक आन्दोलन का जनमत पर कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा। हमें सामाजिक कार्यकर्ता के नाते यह भी देखना चाहिए कि, हमारे बारे में लोकधारणाएँ क्या हैं।

अभी तक हमारे बारे में यह आलोचना होती है कि, यह आन्दोलन सरकारों का मुखापेक्षी है। वेतन-भोगी कार्यकर्त्ताओं का काल्पनिक कार्यक्रम है, साहित्य-बिक्री कमीशन, खादी कमीशन की पूँजी, सर्वोदय-पात्र, आदि संचित निधियों से वेतन लेकर अपनी जीविका अर्जन करनेवालों जमात है। ऐसी लोकधारणाओं के प्रति भी हमें ध्यान देना चाहिए। हो सकता है कि, ऐसी लोकधारणाओं का जवाब हम अपनी तर्कबुद्धि से दे दें, किन्तु क्या इससे जनमत का समाधान हो सकेगा? क्या हम यह ईमानदारी से कह सकते हैं कि, हमारे विरुद्ध ये सब अभियोग बिल्कुल निराधार हैं? यदि नहीं, तो अब हमें अपने आय के साधनों में तबदीली करनी होगी। और कार्यकर्त्ताओं में त्याग, प्रेम और करुणा से परिपूर्ण चरित्र निर्माण करना होगा तथा आमूल क्रान्ति के लिए एवं सामाजिक समस्याओं के लिए अहिंसक-प्रतिकार की शक्ति को प्रज्वलित करना होगा।

देश के लोकसेवक व शान्तिसैनिकों तथा आन्दोलन के विचारकों से मेरी प्रार्थना है कि, इस अहिंसक क्रान्ति के लिए हम अपने को भी उसका साधक बनायें। सर्व सेवा संघ को भी लोकसेवक व शान्तिसैनिक की निष्ठाओं में इन तत्त्वों का समावेश करना चाहिए।

—महावीर सिंह
मंत्री
चम्बल घाटी शान्ति समिति, बाह

पत्रांश

श्री कपिल भाई उरुलीकांचन में

उत्तरप्रदेश ग्रामदान-प्राप्ति समिति के संयोजक श्री कपिल भाई विनोबाजी की सलाह पर स्वास्थ्य-सुधार के लिए २२ नवम्बर '७० से निसर्गोपचार आश्रम, उरुलीकांचन (पूना) में हैं। उपचार-क्रम में टहलना, मालिश, स्टीम-टब बाथ, मिट्टी की ठंडी-गरमपट्टी, उपवास आदि चल रहा है। व्यस्त उपचार-क्रम के बावजूद मरीजों के दुख-दर्द का हालचाल लेने तथा गंभीर साहित्य के अध्ययन का पर्याप्त समय निकाल ही लेते हैं। अब तक की सूचना के अनुसार १४ दिसम्बर तक कुल २५ पौण्ड वजन कम हुआ है। शायद अभी कुछ और वजन घटाने की आवश्यकता डाक्टर महसूस कर रहे हैं।

श्री कपिल भाई ने लखनऊ स्थित अपने कार्यालय-मंत्री को लिखा है, "जीवन में प्रवास तो बहुत किया है, पर उपचार के लिए यह पहला ही अवसर है। इसलिए कार्य से मुक्ति और अकेलापन महसूस होता है।" "मुझे एकांत का अभ्यास है। जो भी जेल-यात्री होगा उसे एकान्तवास तकलीफदेह नहीं होगा। फिर मैं तो प्रकाशन विभाग द्वारा प्रकाशित नयी पुस्तकें, जिनमें बाबा की, दादा की पुस्तकें काफी हैं, साथ लाया हूँ।" एक अन्य पत्र में लिखा है, "८ दिसम्बर से ४ दिन का उपवास शुरू हुआ। सिर्फ डिस्टिल वाटर ही मिला। ईश्वर की कृपा से यह 'ट्रायल' भी पूरा हो गया।"

—कपिल अवस्थी

'हम मुबारकबाद देते हैं !'

२० दिसम्बर को एक प्रखंड-स्वराज्य सभा का जयप्रकाश नारायणजी द्वारा उद्घाटन हुआ। जे० पी० ने अपने उद्घाटन-भाषण में कहा कि यह पहली प्रखंड-स्तरीय ग्रामस्वराज्य सभा बनी है। यह सभा अभी आरजी है, किन्तु इसका बनना ग्राम-स्वराज्य आन्दोलन के विकास में एक अत्यंत महत्वपूर्ण घटना मानी जायगी। झाझा, मुंगेर (बिहार) का एक ब्लाक है, जिसमें गरीब, पिछड़े हुए लोग हैं, पहाड़ी-जंगली-पथरीली भूमि है, खेती और बीड़ी के सिवाय दूसरी कोई जीविका नहीं है। और, खेती भी क्या? नयी खेती कहीं दिखायी नहीं देती। गाँवों में कोई उद्योग नहीं, लोग बीड़ी न बनायें तो भूखों मरें। अगर जिन्दा रहना है तो अपना भरपूर शोषण कराकर ही जिन्दा रहा जा सकता है, इसे देखना हो तो झाझा में देखा जा सकता है।

बीड़ी ने झाझा को बड़ी-बड़ी कोठियों और यन्त्रविहीन कारखानों का एक छोटा नगर बना दिया है। बड़े-बड़े मकानों में हजारों मजदूर सुबह से शाम तक हाथ से बीड़ी बनाते रहते हैं। दूर-दूर तक के गाँवों में यही एक उद्योग है जो औरतों और बेकारों के हाथों तक चार पैसे पहुँचा देता है। सेठों के आदमी पत्ता और तम्बाकू गाँव-गाँव पहुँचाने और वहाँ से बीड़ी बटोरकर बाहर देशभर में भेजते रहते हैं।

आठ साल पहिले इस विकट बीहड़ क्षेत्र में शिवानन्द नाम का एक युवक बैठा। उसने ग्रामभारती कायम की। आज झाझा का पूरा क्षेत्र उसकी 'ग्रामभारती' है। इसी ग्रामभारती की ओर से उसने अपने कुछ साथियों को लेकर इतने वर्षों से काम किया है। और, काम भी इन युवकों ने क्या क्या किये हैं? आदिवासियों के टोलों में छोटे बच्चों के बालमन्दिर, जंगल में पशु चरानेवाले युवा लड़के-लड़कियों के लिए साक्षरता-वर्ग, भूदान की भूमि का वितरण, ग्रामदान की प्राप्ति और प्रखंड-दान, गाँव-गाँव में ग्रामस्वराज्य सभाओं का गठन, उनके माध्यम से सिंचाई के साधनों का निर्माण, बीघा-कट्ठा निकलवाना-बाँटना, ग्रामकोष की स्थापना और हर गाँव के चुने-चुने युवकों को लेकर एक ग्राम-शान्तिसेना का गठन : इस तरह इन्होंने सब किया। सज्जनों और संस्थाओं का सहकार और दुराव इन्हें दोनों मिला, मिलता ही जा रहा है। जो मिला इन्होंने स्वीकार किया और आगे बढ़ते गये। खुद आगे बढ़े, और क्षेत्र को आगे बढ़ाया। सेवा समर्पित भाव से की, लेकिन सस्ती महन्ती का रास्ता नहीं अपनाया। तात्कालिक विरोधों और संघर्षों से बचते हुए सबको मिलाकर चलने की कोशिश की। अविरोध के रास्ते से चलकर लोकशक्ति के दरवाजे तक पहुँच गये।

अभी यह 'प्रखंड-स्वराज्य सभा' जे० पी० के शब्दों में 'आरजी है, इसलिए और भी ज्यादा महत्वपूर्ण है।' इसे कानूनी बनाने की कोशिश की जायगी। अब आगे से झाझा प्रखंड में आन्दोलन का जो भी काम होगा वह इस लोक-संगठन के माध्यम से ही होगा। ग्रामस्वराज्य के लिए जो कुछ करना होगा वह सब प्रखंड स्वराज्य सभा के कार्यक्षेत्र के अन्तर्गत होगा। इसके पीछे मात्र नेताओं और संस्थाओं का समर्थन और आशीर्वाद नहीं है, बल्कि जनता-जनार्दन है जो पृथ्वी का शेषनाग है।

ग्रामस्वराज्य-आन्दोलन का भविष्य ग्रामस्वराज्य-क्षेत्रों पर निर्भर है। झाझा-जैसे अधिक-से-अधिक क्षेत्र जल्द-से-जल्द कैसे तैयार हों, यह प्रश्न आन्दोलन के सामने है। तूफान करिए, अति-तूफान करिए, काम यही है जिसे करना है। अलग-अलग क्षेत्रों में पद्धतियाँ भिन्न-भिन्न हो सकती हैं, होंगी भी, किन्तु निष्पत्ति एक ही होगी—लोकशक्ति का ग्रामदान-मूलक संगठन। ग्रामस्वराज्य सभा (यह नाम अधिक सार्थक है), प्रखंड-स्वराज्य-सभा, जिला स्वराज्य-सभा, इन तीन सीढ़ियों के तैयार होने में देर नहीं होनी चाहिए। देश के कई जिले हैं जहाँ यह काम शीघ्र पूरा हो सकता है। राजस्थान का बीकानेर, और बिहार का सहरसा, ये दो जिले फौरन निगाह के सामने आते हैं। बिहार में सहरसा के अलावा कई क्षेत्र हैं जो आगे बढ़ सकते हैं। उ० प्र० में आगरा, बलिया, देवरिया के नाम गिनाये जा सकते हैं। कौनसा राज्य है जिसमें ऐसे क्षेत्र नहीं बन सकते? नहीं बन रहे हैं, यह आश्चर्य है। क्या साथी नहीं हैं, साधन नहीं हैं? कमी सचमुच साथियों और साधनों की नहीं है, कमी है संकल्प-शक्ति की।

झाझा के हमारे छोटे-मोटे साथियों ने और उनके साथ ग्रामीणों ने, जिनका नाम कर्मठ कार्यकर्ताओं की किसी भी सूची में नहीं है, विलक्षण संकल्प-शक्ति का परिचय दिया है। इन लोगों ने हफ्तों दिन को दिन और रात को रात नहीं जाना है, गाँव-गाँव में ग्रामस्वराज्य सभाएँ बनवायी हैं, बीघा-कट्ठा भूमि बाँटी है, ग्रामकोष निकलवाया है, ग्राम-शान्तिसेना संगठित की है। ऐसे साथियों को उनके परिश्रम का क्या पुरस्कार मिलेगा, सिवाय उसके, जो उनकी अन्तरात्मा देगी! लेकिन वे जान लें कि पहली प्रखंड-स्वराज्य सभा की स्थापना के अवसर पर हम सब जे० पी० के इन शब्दों को दुहरा रहे हैं जो उन्होंने अपने भाषण में कहे : 'यह बहुत बड़ा काम हुआ है। हम इन साथियों को मुबारकबाद देते हैं।' ●

ईसामसीह का कारुण्यमूलक ब्रह्मचर्य

—विनोबा

ईसामसीह अब व्यक्ति नहीं रहे। उनका जब 'क्रूसिफिकेशन' (सूली पर चढ़ाना) हुआ, तो साथ-साथ 'ग्लोरिफिकेशन' (देवत्व) भी हुआ, ऐसा वह सकते हैं। इसलिए अब वे मनुष्य नहीं रहे। वैसे हो गये, जैसे हिन्दू धर्म में राम और कृष्ण हो गये। रामायण पढ़ता हूँ, तो शायद ही ऐसा कोई दिन जाता होगा, जिस दिन आँखें गीली नहीं हो जाती। यदि आज राम मनुष्य-रूप में होते, तो ऐसा असर हमारे हृदय पर न होता। जो स्थिति भारत में राम और कृष्ण की है, वही ईसाइयत में ईसामसीह की है। भगवान् बुद्ध और मुहम्मद पैगम्बर की भी यही स्थिति है। यद्यपि मुहम्मद ने बार-बार कहा था : "भाइयो, मैं तो केवल मनुष्य हूँ," लेकिन जब वे मर गये, तो उनके अनुयायियों को विश्वास नहीं हुआ कि मुहम्मद नहीं रहे। वे समझते थे, 'मुहम्मद कभी मर भी सकते हैं ?' आखिर मुहम्मद के साथी अबूबकर को, जो बाद में खलीफा बना, मसजिद पर चढ़कर लोगों से कहना पड़ा कि 'मुहम्मद सचमुच मर गये', तब लोगों ने माना। लोगों को विश्वास था कि अबूबकर सत्यवादी है। यही हालत ईसामसीह की हुई। ईसा को जब क्रूस पर चढ़ाया गया, तब उन्होंने कह दिया था कि तीन दिन के अन्दर मैं वापस आता हूँ। इसका आशय था 'इन स्पिरिट' (आत्मा के रूप में) वापस आता हूँ। कहा जाता है कि वहाँ जो बहनें थीं, उन्होंने देखा कि ईसा क्रूस से नीचे उतरे। वे बहनें लोगों से कहने लगीं कि ईसा का 'पुनरुत्थान' हुआ। ठीक यही बात भगवान् बुद्ध की थी। उन्होंने तो ईश्वर का नाम भी नहीं लिया। ईसा और मुहम्मद तो लेते भी थे। फिर भी 'बुद्ध की शरण जाने' की बात चली। 'मैं परमेश्वर की शरण हूँ,' यह बोलने के बजाय लोग 'बुद्धं शरणं गच्छामि' बोलने लगे।

सारांश, इस तरह जिनका 'ग्लोरिफिकेशन' हुआ या 'डीइफिकेशन' हुआ, वे अब मनुष्य नहीं रहे। इसलिए उनके समग्र चरित्र की हम छानबीन नहीं कर सकते, न हमें उनका पूरा चरित्र मालूम ही है। ईसामसीह के जीवन के प्रारम्भिक ३० साल कैसे बीते, यह किसीको ज्ञात नहीं। इतिहास प्रेमी अनुमान लगाते हैं, फिर भी विशेष जानकारी नहीं मिलती और न उसकी जरूरत ही है। पर मैथ्यू, मार्क, ल्यूक, जान के वचनों से उनके जितने चरित्र का पता चलता है, उस पर से एक बात मेरे चित्त में बैठ गयी है, जो मुझे सबसे बड़ी मालूम होती है। वह यह कि ईसामसीह का ब्रह्मचर्य कारुण्यमूलक था। उनके ब्रह्मचर्य में मानव मात्र के लिए इतनी करुणा थी कि वे सहज ब्रह्मचारी हो गये। इसके लिए उनको कष्ट नहीं सहना पड़ा। एक बार सभा चल रही थी। किसीने उनसे कहा, "यह तुम्हारी माँ आयी है।" तब उन्होंने कहा कि "ये सभी मेरी माताएँ ही तो हैं।" यह जो व्यापक कारुण्य था, उसीके कारण वे ब्रह्मचारी रह सके।

इस बात का ग्रहण मुझे बचपन में नहीं हुआ। ब्रह्मचर्य की प्रेरणा-ज्ञान के लिए होती है, यह तो मैं समझता था; पर जब ईश्वर का सीधा सम्पर्क, मानसिक सम्पर्क हुआ, तो ईसामसीह के व्यक्तित्व की सरलता और कोमलता (टेण्डरनेस और जेन्टलनेस) ने मेरा ध्यान खींचा। आधुनिक भाषा में कह सकते हैं कि उनका स्वभाव स्त्री का स्वभाव था। यह वैज्ञानिक (साइंटिफिक) भाषा नहीं है। स्त्री-पुरुष-भेद आत्मा में तो नहीं, शरीर में होता है। लेकिन समझने के लिए कह सकते हैं कि ईसामसीह का चरित्र 'स्त्री-चरित्र' था और उनका ब्रह्मचर्य उसीमें से फलित हुआ।

बाइबिल में कहा है : "जैसे भगवान् परिपूर्ण हैं, 'परफेक्ट' हैं, वैसे तुम भी परिपूर्ण बनो।" मनुष्य की परिपूर्णता तब होती है, जब उसमें स्त्री के गुण भी दाखिल होते हैं। उसमें पुरुष के गुण तो पहले से होते ही हैं। इसी तरह स्त्री की परिपूर्णता भी तभी होगी, जब उसमें पुरुष के गुण दाखिल हों। मुझे लगा कि 'परफेक्ट' यानी ब्रह्मचारी वह, जो पूर्ण है। जो पुरुष ब्रह्मचर्य के लिए कोशिश करेंगे, उनको अपने में स्त्री-गुणों का भी विकास करना होगा। तभी वे पूर्ण बनेंगे। जो स्त्रियाँ पूर्ण बनना चाहती हैं, उनको अपने में पुरुष-गुणों का विकास करना होगा। ईसामसीह की तरह कोई पुरुष पूर्ण होने की कोशिश करता है, तो उसमें 'जेंटलनेस' आदि गुण आते हैं, क्योंकि उन गुणों का वहाँ विकास हुआ। यदि कोई वैसी स्त्री निकलेगी, तो वह पुरुष से भी अधिक प्रखर होगी, ऐसा मेरा मानना है, क्योंकि उसमें स्त्री के गुण तो होंगे ही, पुरुष के गुण भी विकसित होंगे। इसलिए ब्रह्मचारिणी स्त्री प्रखर होगी और ब्रह्मचारी पुरुष सौम्य होगा, ऐसा मैं सोचता हूँ।

इसका एक उदाहरण ईसामसीह हैं।

हिरेकेरूर, धारवाड़ (मैसूर)
२५-१२-'५७

> ईसामसीह का जीवन लगभग ३२ साल का रहा, और उसमें दो-तीन साल प्रत्यक्ष कार्य-काल। मेरा खयाल है, उनके भ्रमण का पूरा क्षेत्र हमारे यहाँ के तीन-चार जिलों के बराबर का होगा। इतने छोटे जीवन और इतने छोटे-से क्षेत्र में उन्होंने काम किया, पर आज उनका नाम और उनके विचार सारी दुनिया में फैले हैं। इन्सान के अन्दर ऐसी कोई चीज है, जिससे वह अपने शरीर से, अपने समाज से और अपने समय से ऊपर उठ जाता है। वह ऐसा काम कर डालता है, जो दुनिया पर, हर काल पर लागू होता है। —विनोबा

निराशा से उत्पन्न आतंकवाद और एक तंग क्रान्तिकारी आधार

—जयप्रकाश नारायण

यदि विशेष रूप से केवल नक्सलवादियों को ही आलोचना का विषय बनाया जाय तो उसके दो आधार हो सकते हैं। उनमें से एक है वह पद्धति जिसका वे अनुसरण कर रहे हैं। मार्क्सवाद और लेनिनवाद, जिसकी व्याख्या स्वयं उन आचार्यों ने की है, से परिचित कोई भी व्यक्ति यह स्वीकार करेगा कि कम्यूनिस्ट पार्टी (मार्क्सवादी-लेनिनवादी) की कार्यपद्धति और विचार-धारा क्रान्तिकारी होने के बजाय आतंकवादी है और यद्यपि वे माओ का नाम बहुत लेते हैं वे माओवादी भी नहीं हैं। वे ग्वेवारा-वादी हो सकते हैं, लेकिन किसीने ग्वेवारा को मार्क्सवादी-लेनिनवादी नहीं कहा है। आतंकवाद, जो सदैव निराशा से उत्पन्न होता है, कुछ निराश युवकों तथा पिछड़े हुए और शून्य आदिवासियों एवं गाँव के गरीब लोगों के बीच एक तंग क्रान्तिकारी आधार तैयार कर दे सकता है, लेकिन ये शस्त्र विदेशी सहायता के बावजूद इतने कमजोर होंगे कि देश के अन्दर सच्ची सामाजिक क्रान्ति वे नहीं कर सकते। वास्तव में आतंकवादी हिंसा से अधिक सम्भव यह है कि समाज के उच्च वर्गों की प्रति-हिंसा को उत्तेजना मिलेगी और उसके परिणामस्वरूप अंततः किसी-न-किसी प्रकार का अधिनायकवाद ही स्थापित हो जायेगा।

नक्सलवादियों का घातक अराष्ट्रवाद

दूसरा आधार है, उनका राष्ट्रवाद-विरोध। राष्ट्रवाद के कुछ रूप आपत्ति-जनक हो सकते हैं, जैसे आक्रमणकारी, विस्तारवादी और नव-उपनिवेशवादी राष्ट्रवाद। लेकिन भारतीय राष्ट्रवाद उस श्रेणी में नहीं आता है। दूसरी तरफ चीन का हान राष्ट्रवाद, खासकर उसका यह रूप भी उसके इस दावे में प्रकट होता है कि कोई भी क्षेत्र, जो साम्राज्यवादी चीन का कभी अंग रहा था या उसके असर में था, हमेशा के लिए चीन का अंग है, आपत्तिजनक ही नहीं, खतरनाक राष्ट्रवाद है। कुछ हद तक सभी प्रकार के साम्य-वादियों में—शायद मार्क्सवादियों में ही सबसे कम—परदेशीय भक्ति का दोष होता है। लेकिन, 'अध्यक्ष माओ हमारे भी अध्यक्ष हैं'—यह नारा राष्ट्रवाद के विरोध में तथा विदेशी मालिकों के अनुसरण में सबको मात कर देता है। दूसरे देशों से विचार ग्रहण करना और उनकी कार्य-पद्धति अपनाना—ऐसा तो हम हमेशा करते हैं—तथा दूसरे देशों के नेताओं को अपने वैचारिक नेता के रूप में स्वीकार तक करना एक बात है, लेकिन किसी विदेशी राज्य के शीर्षस्थ अधिकारी को अपने भावी क्रान्तिकारी राज्य के शीर्षस्थ अधिकारी के रूप में मान्य करना बिलकुल दूसरी बात है। स्टालिनवाद के उत्थान के दिनों में भी ऐसी बात कभी नहीं देखी गयी थी। लेनिन और स्टालिन अपनी अन्तरराष्ट्रीयता के बावजूद, रूसी राष्ट्र-वादी थे, यद्यपि लेनिन, खासकर क्रान्ति की प्रारम्भिक स्थितियों में, विश्वक्रान्ति की सफलता के लिए—जिसकी वे प्रतीक्षा उत्सुकतापूर्वक कर रहे थे—सम्भवतः रूस के राष्ट्रीय हितों का बलिदान तक करने के लिए तैयार हो जाते। स्वयं माओ एक अच्छे राष्ट्रवादी हैं, उन्हें चीन के इतिहास और उसकी संस्कृति पर गौरव है, और वे चीन के पुराने साम्राज्यवादी शासकों के ढंग से विश्व पर अपने देश का आधिपत्य कायम करने का सपना देखते हैं।

"लेकिन इन्होंने सामाजिक चेतना को जागृत किया है"

इन घातक दोषों के बावजूद वर्तमान स्थिति के प्रति नक्सलवादियों की असहि-ष्णुता लोगों को आकृष्ट करती है। इसके अलावा, उनके द्वारा वर्तमान क्रान्ति से आने के प्रयास से कम-से-कम एक ऐसा यह हुई है कि उसने आम तौर पर जनता की सामाजिक चेतना को जागृत कर दिया है, और खास तौर से, सरकारियों को भूमि-सुधार तथा अन्य सामाजिक-आर्थिक सुधार शीघ्र अमल में लाने के लिए मजबूर किया है। दुर्भाग्यवश, इस देश में राजनीतियों का ढंग ऐसा रहा है कि यद्यपि सरकारें विभिन्न-काल-कार्यक्रमों में अहिंसामय तरीकों में विश्वास जाहिर करती रही हैं, लेकिन उनकी आँखें तभी खुली हैं जब हिंसा के प्रहार पर प्रहार उन पर हुए हैं।

इस विषय में एक बात और। यह स्मरण रखना चाहिए कि नक्सलवाद के नाम पर जो कुछ होता है, वह सब वास्त-विक नक्सलवादी कार्रवाई नहीं होती है। नक्सलवादी हिंसा के पीछे अनेक विभिन्न प्रेरणाएँ काम करती हैं, जिनमें विशुद्ध अपराध-वृत्ति से लेकर वैयक्तिक एवं पारिवारिक विग्रह एवं बदला तक शामिल हैं। विशुद्ध अपराध-कर्म करनेवाले भी अपने अपराधों को 'माओ जिन्दाबाद' के नारों से अलंकृत करने लगे हैं, और वे सभी धमकी के पत्र, जिनके बारे में कहा जाता है कि नक्सलवादियों की ओर से भेजे गये हैं, वास्तव में वैसे नहीं होते। इसके साथ ही यह भी मालूम होता है कि अपराध-कर्मियों, जैसे डकैतों तथा नक्सलवादी क्रान्तिकारियों के बीच एक हद तक, शायद सुविधानुसार मेल के तौर पर, समझौता हो गया हो।

गांधी की ओर लौटना होगा

यदि लोकशाही असफल सिद्ध होती है और हिंसा से भी कोई समाधान नहीं निकलता है तो फिर रास्ता क्या है? रास्ता पाने के लिए हमें गांधीजी की ओर लौटना होगा। तब हम लोग पायेंगे कि गांधीजी पहले से ही हिंसा की व्यर्थता तथा लोकतांत्रिक राज्य की स्वभावगत सीमाओं से परिचित थे। अन्य राष्ट्रीय

नेता जहाँ राष्ट्र-निर्माण के कार्यों की सफलता के लिए केवल राज्य-शक्ति पर ही भरोसा करते थे, वहाँ गांधीजी के दिमाग में यह बात स्पष्ट हो चुकी थी कि उनके सपनों का भारत, और इसलिए भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के सपनों का भारत भी, बनाने के लिए राज्य ही एकमात्र औजार नहीं हो सकता। यह निश्चित है कि राज्य के काम के महत्त्व को वे कम नहीं आँकते थे, और न उसके समुचित एवं प्रभावकारी ढंग से कार्य करने में उनकी दिलचस्पी समाप्त हो गयी थी। वास्तव में, वे इस बात के लिए चिंतित थे कि राज्य यथासंभव सर्वोत्तम लोगों के हाथों में रहे और वह उचित नीतियों, कार्यक्रमों एवं योजनाओं का अनुसरण करे। फिर भी, उनको यह स्पष्ट दीखता था कि चाहे कितनी ही अच्छी नीतियाँ हों और कितने ही अच्छे लोगों के हाथों में शासन-सूत्र हो, राज्य स्वतः अभीष्ट लक्ष्य की प्राप्ति नहीं कर सकता।

इसलिए उनकी योजना राज्य-शक्ति के साथ-साथ लोक-शक्ति के निर्माण की थी। तदनुसार, वे स्वयंसेवी कार्यकर्ताओं की एक बड़ी सेना, जनता की सेवा करने, लोगों को शिक्षित एवं परिवर्तित करने, उन्हें संगठित करने तथा स्वावलम्बी बनाने और सामाजिक परिवर्तन एवं पुनर्निर्माण की प्रक्रिया में उन्हें प्रत्यक्ष रूप से शामिल करने के उद्देश्य से, जनता के बीच वापस जाने के लिए तैयार कर रहे थे। इन उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए वे पहले की तरह सेवा, रचनात्मक कार्य, सौम्य पद्धति से विचार-परिवर्तन तथा आवश्यकतानुसार अहिंसक असहयोग या प्रतिकार का साधन अपनानेवाले थे।

उनका मार्ग परम्परागत से मूलतः भिन्न था

गांधीजी अपनी योजना कार्यान्वित करने के लिए जीवित नहीं रहे और उनके जाने के बाद उनके तत्कालीन सहयोगियों ने इस भ्रम में पड़कर, कि हाथ में आयी हुई राजनीतिक सत्ता के सहारे ही देश की समस्याओं को हल करने में वे समर्थ हो जायेंगे; उनके द्वारा दिखाये गये मार्ग पर दुबारा विचार भी नहीं किया। यदि उन्होंने वैसा किया होता और, जैसा कि गांधीजी चाहते थे, राज्य और जनता के बीच अपनी शक्तियों को विभाजित किया होता, तो स्वतंत्रता के बाद के भारत का इतिहास बहुत भिन्न होता। मैं समझता हूँ, उनकी कठिनाई यह थी कि गांधीजी द्वारा बताया गया मार्ग परम्परागत मार्ग से मूलतः इतना भिन्न था कि वह उनके लिए कोई अर्थ नहीं रखता था और न वह उन्हें रुचता ही था। सफल क्रान्तिकारियों द्वारा सत्ता से अलग रहने तथा जनता के स्वैच्छिक संगठन द्वारा क्रान्ति के लक्ष्यों को प्राप्त करने की कोशिश की बात कब किसने सुनी थी!

विनोबा ने गांधी की मशाल थाम ली

सौभाग्य से, देश में विनोबाजी के समान नेता थे, जिन्होंने कुछ ही समय बाद आगे बढ़कर गांधीजी के हाथ से गिरी हुई मशाल को उठाकर थाम लिया। यह ठीक है कि गांधीजी जैसा चाहते थे, उस ढंग से पुराने स्वातंत्र्य-योद्धाओं की महान सेना को अभिष्ट दिशा में गतिशील तथा भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस को लोक-सेवक संघ के रूप में परिवर्तित वे नहीं कर पाये। फिर भी वे रचनात्मक कार्यकर्ताओं को सर्व सेवा संघ के मंच पर इकट्ठा कर सके और उन्हें, गांधीजी के पुराने रचनात्मक कार्यक्रम के अलावा, "सौम्य पद्धति से विचार-परिवर्तन" के एक व्यापक कार्यक्रम के साथ जनता के बीच भेज सके। उस कार्यक्रम की पहली किस्त भूदान था। दूसरी किस्त यह ग्रामदान है, और इसके बाद ग्रामस्वराज्य होगा। इस आन्दोलन के क्रम में खास खास परिस्थितियों में कुछ स्थानिक सत्याग्रह भी हुए हैं। हमारे वर्तमान कार्यक्रम के संदर्भ में बड़े पैमाने पर सत्याग्रह करने की आवश्यकता हो सकती है, जिसके लिए मालूम होता है, परिस्थितियाँ परिपक्व हो रही हैं।

ग्रामदान-आन्दोलन की प्रक्रिया

ग्रामदान-आन्दोलन का उद्देश्य यह है कि वैयक्तिक एवं सामाजिक परिवर्तन की तथा ग्राम निर्माण एवं सामुदायिक स्वशासन या ग्राम-स्वराज्य की एक स्वैच्छिक प्रक्रिया शुरू हो। इस प्रक्रिया में दृष्टि-परिवर्तन तथा मूल्य-परिवर्तन और सामाजिक-आर्थिक परिवर्तनों के साथ-साथ व्यक्तिगत सम्बन्धों में परिवर्तन भी शामिल है। इसका लक्ष्य विकास के लिए सामुदायिक कर्तृत्व को आगे बढ़ाना तथा निजी साधनों से भिन्न, सामुदायिक साधनों का निर्माण करना है। इसको और भी स्पष्ट रूप से यों समझिए। हर ग्रामदानी गाँव में सभी वयस्कों की एक ग्रामसभा या ग्रामसंसद होगी, और एक ग्रामकोष होगा जिसमें ग्रामदान में शामिल हर व्यक्ति, चाहे वह नकद कमाई करनेवाला हो, कृषक हो या मजदूर हो, अपनी आय का, उपज का, या श्रम का हिस्सा देगा। जिनके पास भूमि है, उन्हें उपज का हिस्सा नियमित रूप से देने के अलावा उस गाँव में अपनी भूमि का बीसवाँ हिस्सा, भूमिहीनों के बीच वितरण के लिए, दान में देना होता है, इसके अलावा उन्हें अपनी भूमि का कानूनी स्वामित्व भी ग्रामसभा को समर्पित करना पड़ता है, यद्यपि (दान दिये गये भूमि-क्षेत्र को छोड़) भूमि पर कब्जा रखने और (ग्रामकोष में दिये गये उपज के भाग को छोड़) उपज का उपभोग करने का तथा विरासत का उनका अधिकार कायम रहता है। भूमि हस्तांतरित करने के उनके अधिकार को मर्यादित करनेवाली दो शर्तें हैं: (क) ग्रामसभा की पूर्वानुमति, तथा (ख) सम्बन्धित गाँव के केवल ग्रामदान में शामिल लोगों के हाथ भूमि को बेचने या बंधक रखने का प्रतिबन्ध। ग्रामसभा गाँव के प्रत्यक्ष एवं सहभागी लोकतंत्र का प्रतिनिधित्व करती है। इस सभा में सभी बराबर हैं, और उसके निर्णय सर्वसम्मति से या आमराय से ही होंगे। इस नियम का उद्देश्य, अन्य बातों के

अलावा, यह है कि सामुदायिक एकता एवं सामूहिक बन्धुत्व की भावना बढ़े। ग्रामकोष का विनियोग अशत गाँव में यदि कोई भूमिहीन है तो उसके लिए होगा, और अधिकांशत ग्रामसभा की योजनाओं एवं निर्णयों के अनुसार ग्राम-विकास के लिए होगा।

अभी हाल तक सर्वोदय-आन्दोलन का जोर, ग्रामदान की शर्तों के प्रति गाँव की सहमति प्राप्त करने पर था जिनका उल्लेख संक्षेप में ऊपर किया गया है। विभिन्न राज्यों में पारित ग्रामदान-अधिनियमों में थोड़ा भेद है। बिहार ग्रामदान-अधिनियम के अनुसार गाँव के कम-से-कम ७५ प्रतिशत लोगों को निर्धारित फार्मों पर हस्ताक्षर कर अपनी सहमति देनी ही चाहिए, और फिर उस गाँव के इतने काफी लोगों का ग्रामदान में शामिल होना आवश्यक है जिनके अधिकार में गाँव के निवासियों के पास जितनी भूमि है, उसका कम-से-कम ५१ प्रतिशत हो। चूँकि इस आन्दोलन का लक्ष्य कुछ अलग ढंग के नमूने तैयार करना नहीं है, बल्कि सामान्य सामाजिक परिवर्तन करना है, इसलिए उसका जोर यथासभव अधिक-से-अधिक क्षेत्रीय व्यापकता हासिल करने की ओर रहा है। ऐसे राज्यों में जहाँ आन्दोलन का प्रसार, ग्रामदान के सकल्पों की प्राप्ति के हिसाब से, काफी व्यापक — राज्य-व्यापी या जिला-व्यापी—हो चुका है, उक्त सकल्पों की कार्यान्विति का अगला कदम शुरू किया जाता है। बिहार में और तमिलनाडु में अभी यही किया जा रहा है। और जैसा कि इस लेख के दूसरे प्रकरण में कहा गया है, मुसहरी में हमारे वर्तमान कार्यक्रम का यह एक अंग है। (क्रमश)

अगले अंक में समापन किस्त

चुनौती सिर्फ हमारे लिए नहीं है!

ग्रामस्वराज्य-कोष में अपना हविर्भाग दें

क्रान्ति-चिंतन :

सर्वोदय-क्रान्ति और नेतृत्व-प्रक्रिया

❀ धीरेन्द्र मजूमदार ❀

विनोबा जब नेतृत्व-विसर्जन की बात करते हैं, तो वे विचारपूर्वक और गणित लगाकर ही करते हैं। क्योंकि आज समाज के लोकसेवक केन्द्रीय निधि आधारित होने के कारण निस्तेज हो गये हैं। अत्यन्त प्राचीन अनुभवों के आधार पर मनुष्य ने 'अर्थस्य पुरुषो दास' के सिद्धांत को समझा था। व्यक्तिवादी समाज में अर्थात् राजतंत्र, गुरुतंत्र तथा पुरोहितवाद-मूलक समाज में गुरु और पुरोहित स्वतंत्र होते थे। वे किसी अनुशासन में बँधे नहीं रहते थे। फिर भी उनमें से अगर कोई राजा या किसी विशिष्ट धनिक के सहारे रहते थे वे कुछ अधीन तो हो ही जाते थे, फिर भी वे पूर्णत न किसी सत्ता के अधीन ही होते थे, और न उनके हाथ में कोई सत्ता ही होती थी। वे शुद्ध मार्गदर्शक होते थे। लेकिन आज के संस्थावादी जमाने में लोकसेवक के गुजारे का आधार जब नेता के हाथ में होता है, तो अनिवार्य रूप से वह नेतृत्व बरबस प्रभुत्व का रूप ले लेता है, और प्रभुत्व का ही तो दूसरा नाम सत्ता है। अतएव, जब नेतृत्व और जमात के द्वारा कोई आन्दोलन होता है, तो वह आन्दोलन ही नेतृत्व के लिए निहित स्वार्थ का साधन बन जाता है। उसका कारण यही प्रभुत्व है।

मानव-समाज की प्रगति के इतिहास को अधिक गहराई से देखा जाय तो स्पष्ट हो जायगा कि इन्सान की व्यापक समस्याओं के समाधान के लिए जमात-शक्ति नाकाफी है। जब समाज विकास के निम्न स्तर पर था तब समाज के काम को चलाने के लिए कुछ प्रतिभाशाली व्यक्तियों की व्यक्तिगत शक्ति काफी थी। समाज का अधिक विकास होने पर, सार्वजनिक जीवन में लोक-चेतना का अधिक प्रसार होने पर राजा, गुरु तथा पुरोहितों की व्यक्तिगत शक्ति समाज के काम को चलाने के लिए कम पड़ गयी। तब सामाजिक प्रगति के लिए राज्य-संस्था, सेवा-संस्था एवं शिक्षण-संस्था का आविष्कार हुआ। जैसे-जैसे चेतन समाज की परिधि में विस्तार हुआ, वैसे-वैसे इन संस्थाओं के दायरे में वृद्धि हुई, और वे सफलतापूर्वक समस्याओं के समाधान का प्रयास करती रहीं। आज विज्ञान की अति प्रगति के कारण, तथा लोकतंत्र और समाजवाद के विचारों का प्रसार एवं शिक्षण के कारण चेतना सार्वजनिक बन गयी है। ऐसी परिस्थिति में, अब चाहे कितने भी विशाल पैमाने पर संगठन बनें, संस्थाओं की मर्यादित शक्ति सामाजिक समस्याओं के समाधान के लिए पूरी नहीं पड़ेगी। अतएव, आज सार्वजनिक लोक-शक्ति यानी सामाजिक शक्ति की खोज करनी पड़ेगी अर्थात् समाज और समुदाय अपने-आप कैसे क्रियाशील हों, इसका अनुसंधान करना होगा।

सर्वोदय के क्रान्तिकारी को अपने आन्दोलन के इस महत्त्वपूर्ण पहलू पर गम्भीरता से विचार करना पड़ेगा। सचालित समाज के स्थान पर सहकारी तथा स्वावलम्बी समाज की स्थापना की उद्देश्य-पूर्ति में अगर प्रमुख-मूलक सचालन-प्रक्रिया की पद्धति अपनायी गयी, तो हमारी क्रान्ति की भी वही दुर्दशा होगी जो लोकतंत्र की हो रही है। लोकराज के क्रान्तिकारियों ने यह नहीं समझा था कि लक्ष्य के अनुसार साधन होना चाहिए, तथा विचार के अनुसार पद्धति जरूरी है। क्योंकि प्रतिकूल पद्धति को अपनाने के कारण विचार बहककर ध्येय को प्रतिकूल दिशा में पहुँचा देता है। लोकतांत्रिक क्रान्ति के ऋषियों ने सार्वजनिक चेतना के विकास के साथ-साथ इन्सान के लिए सामाजिक शक्ति का बदल आवश्यक समझा था, और उन्होंने माना था कि अब मानव-समाज दबाव-शक्ति यानी भय-आश्रित

के स्थान पर सम्मति-शक्ति से चलेगी। लेकिन जिस लोकतंत्र का विचार सम्मति का अधिष्ठान रहा है, उसके संचालन में क्रान्तिकारियों ने राजतंत्र द्वारा प्रतिपादित दंड-शक्ति तथा अमलातंत्र की पद्धति को ही स्वीकार कर लिया। फलस्वरूप आज के लोकतंत्र का 'लोक' पूँजीपतियों के शोषण और अमलातंत्र तथा सैनिकतंत्रवाद के दमन से त्रस्त है।

लोकतंत्र की पद्धति लोकमूलक ही बन सकती है, जिसकी प्रक्रिया संचालित समाज की न होकर सहकारी समाज की होनी आवश्यक है। केन्द्र में अवस्थित राजा द्वारा संचालित पद्धति के लिए यह आवश्यक था कि देश के मुख्य प्रतिभाशाली व्यक्ति राजा के साथ केन्द्र में रहकर उनकी मंत्रणा के लिए नवरत्न के रूप में उपस्थित रहें। इस प्रकार के केन्द्र-संचालित पद्धति में यह आवश्यक है कि केन्द्र द्वारा नियंत्रित एक अमलातंत्र हो, तथा एक सुदृढ़ सैनिक-शक्ति का संगठन हो। लोकतंत्र के पुजारियों ने जब इसी संचालित पद्धति को स्वीकार लिया तो उसका परिणाम स्वभावतः विपरीत होना ही था। इस विपरीत परिणाम को नीचे लिखे अनुसार विभाजित कर सकते हैं:

१. राजा के विघटन के साथ जब जनता के प्रतिनिधि उसके स्थान पर आ गये, तब जनता द्वारा यह अपेक्षा स्वाभाविक थी कि उन्हींके प्रतिनिधि जब राज्य संचालित कर रहे हैं तो आवश्यक है कि वे जनता की समस्याओं पर अधिकाधिक ध्यान दें। इस अपेक्षा ने कल्याणकारी राज्यवाद के विचार को विकसित किया, जिसके परिणामस्वरूप, लोकतांत्रिक सत्ता का प्रवेश लोक-जीवन के अंग-प्रत्यंग में हो गया। और आज दुनिया में लोकतांत्रिक सत्ता सर्वाधिकारी सत्ता बनती चली आ रही है।

२. केन्द्रीय संचालन-पद्धति के अतिविकास के कारण लोकतंत्र का 'लोक' पूँजीपति तथा सेनापति के शिकंजे में पिसता जा रहा है।

३. लोकतंत्र के विचार ने जनता के मानस को साम्य, मैत्री, और स्वतंत्रता के मंत्र से उद्बोधित किया तथा सार्वजनिक शिक्षण-प्रक्रिया द्वारा लोकमानस की चेतना को विकसित किया। इस प्रकार एक तरफ वैचारिक क्षेत्र में इस सिद्धान्त ने सर्वजन के मन में स्वातंत्र्य-भाववाद को अधिष्ठित किया, तथा दूसरी तरफ विचार के प्रतिकूल केन्द्र-संचालन-पद्धति को अपनाकर समाज के अधिकारवाद को अधिक विकसित और संगठित किया। अतः लोकतांत्रिक समाज में परिस्थिति उत्कट अधिकारवादी तथा मनःस्थिति परम स्वतंत्रतावादी बनकर एक कठिन विसंगति को पैदा कर रही है। इसीलिए आज अधिकारवाद स्वतंत्रता को बर्दाश्त नहीं कर रहा है, और स्वतंत्रतावाद अधिकारवाद को इन्कार कर रहा है। इसीलिए आज दुनिया के कोने-कोने में, कशमकश की स्थिति पैदा हो रही है, और उसके कारण सारा विश्व सर्वनाश की ओर तेजी से बढ़ता चला जा रहा है। जिस शान्ति और शृङ्खला की खोज में तथा जिस समाज-व्यवस्था के विकास में इन्सान लगा हुआ था वह आज धराशायी हो रहा है।

४. पद्धति दण्ड-आधारित, दबावमूलक ही रहे तथा उसकी प्रक्रिया संचालित रहे और नेता प्रतिनिधि के रूप में संचालन के काम में लग जायें, तो समाज-जीवन में नेतृत्व विघटित हो जाता है। क्योंकि प्रतिनिधि के रूप में नेता का स्थान स्वाभाविक रूप से गिर जाता है। लोक-प्रतिनिधि उसे कहेंगे जो जनमत का प्रतिनिधित्व करता है यानी उसके पीछे चलता है; और नेता तो उसे कहेंगे जो जनमत का मार्गदर्शन करता है, अर्थात् उसके आगे चलता है। लोकतंत्र को केन्द्र-संचालित पद्धति के आधार पर विकसित करने के प्रयास ने नेतृत्व और प्रतिनिधित्व जब एक ही मनुष्य में न्यस्त कर दिया, तो स्वाभाविक ही समाज में नेतृत्व विघटित हो गया। वास्तविक नेतृत्व के अभाव में आज दुनिया में शांतिमय प्रगति में रुकावट पैदा हो गयी है, और इसीके कारण समाज की हर दिशा में विस्फोट हो रहा है। समाज-व्यवस्था की त्रुटियों के कारण कालपुरुष बैठा नहीं रहेगा। काल निरंतर प्रगति ही करता रहेगा। सामाजिक विसंगति के कारण तथा लोक-प्रवाह की रुकावट के कारण अगर उसकी प्रगति में बाधा पहुँचेगी, तो विस्फोट अवश्यम्भावी है, और वह हो रहा है।

सर्वोदय-समाज के अधिष्ठान में निष्ठा रखनेवाला सेवक भी अगर सोचता है कि वह सर्व की शक्ति की खोज किये बिना विशिष्ट जमात-शक्ति द्वारा अपने सर्वोदय-समाज की स्थापना कर लेगा, तो वह भयानक भ्रम में है।

आज जब देश में ग्रामदान का उद्बोधन हो चुका है, देश-विदेश का ध्यान इस विचार और प्रक्रिया की संभावना की ओर आकर्षित हो गया है, तो हम लोगों को गम्भीरतापूर्वक सोचना होगा कि इस क्रान्ति की शक्ति—प्रभुत्वमूलक संस्थावाद के बाहर जन-जन की शक्ति—विकसित करनेवाले पुरोहितों का स्वरूप क्या हो? आज स्वतंत्र शक्ति विकसित करनेवाले पुरोहित अपने को स्वाधारित तथा स्वतंत्र शक्ति पर अधिष्ठित नहीं कर सकेंगे तो वे जन-शक्ति के निर्माण का माध्यम कैसे बनेंगे? यही कारण है कि गांधीजी ने जब सात लाख नौजवानों के लिए अपील की थी, तब उनसे यह अपेक्षा रखी थी कि वे अपने श्रम तथा जनता के प्रेम के सहारे अपने को अधिष्ठित करें। वस्तुतः सर्व की शक्ति के विकास के लिए गांधीजी द्वारा परिकल्पित लोकसेवक ही योग्य माध्यम बन सकता है। •

'अब तुम सब आफिस को ताला लगाओ और सहरसा में जाकर धसो'

विनोबा का ऐतिहासिक आह्वान

[बिहार ग्रामस्वराज्य संघ के मंत्री श्री विद्यासागर भाई बिहार भूदान यज्ञ कमेटी (बिहार में भूदान में प्राप्त भूमि के वितरण तथा ग्रामदान अधिनियम के अनुसार ग्रामदान पुष्टि का काम करनेवाला एक अर्धसरकारी संगठन) के पुनर्गठन सम्बन्धी बिहार ग्रामस्वराज्य समिति की बैठक के निर्णयों की सूचना देने अभी हाल में ही विनोबाजी के पास गये थे। उक्त कमेटी के पदाधिकारियों के चुनाव के सम्बन्ध में बिहार सरकार विनोबाजी की सलाह सर्वोपरि मानती है। विनोबाजी ने सूक्ष्म-प्रवेश के बाद सर्व सेवा संघ को यह जिम्मेदारी दी है। इसलिए श्री विद्यासागर भाई विनोबाजी से मिलने के बाद सर्व सेवा संघ के मंत्री श्री ठाकुरदास बंग से मिलने हैदराबाद जाने की तैयारी में थे। इसी बीच विनोबाजी के साथ सहरसा के अंदर तूफान-अभियान के सम्बन्ध में चर्चा हुई। विनोबाजी ने जो कुछ कहा, उसे प्रस्तुत करते हुए उसमें व्यक्त त्वरा और तड़प के बारे में अलग से कुछ लिखने की आवश्यकता नहीं; आप स्वयं पढ़ें। —सं०]

भूदान-यज्ञ कमिटी न बने तो भी चलेगा। सरकार आप लोगों की, जयप्रकाशजी जैसे व्यक्ति की राय लिये बिना कुछ करेगी नहीं। अगर कुछ करेगी, जमीन बाँटने का अधिकार अपने हाथ में लेगी तो अच्छा ही है।

अब तुम सब आफिस को ताला लगाओ और सहरसा में धसो। उसके बिना काम नहीं होगा। तीन-चार महीना करना, यानी फसल काटने का समय होगा और चलेगी लूट। आज भी लूट हो ही रही है। लूट तक रुकना ठीक नहीं। जनवरी के अंत तक काम पूरा होना चाहिए। उसे 'डेड लाइन' मानो। सब लोगों को वहाँ दौड़ जाना चाहिए। अगर आप लोग ग्रामदान में जोर लगा नहीं सकते हैं तो फिर आपको 'प्राइवेट बिजिनेस' करना होगा। जमाने की माँग है। ये लोग काम नहीं करेंगे, तो दूसरे करेंगे। अगर नहीं करेंगे तो क्रान्ति होगी। क्रान्ति तो भगवान की होगी, मेरी होनेवाली नहीं है। आज का काम आज ही करना चाहिए। कल करेंगे, परसों करेंगे, ऐसा नहीं होना चाहिए। वेद में आया है, "अद्य अद्य श्वः श्वः"। इसलिए विद्यासागर की सारी विद्या, श्यामबहादुर की सारी बहादुरी, श्यामप्रकाश का सारा प्रकाश, सत्यानन्द का आनन्द—सारा सहरसा में होना चाहिए। मिनीटरी में क्या होना है ! सारी 'आर्मी' एकसाथ भेजी जाती है। वैसा होना चाहिए।

त्रिपुरारीशरण कहता है कि इसका अभियान करेंगे तो शोषण होगा। शोषण क्या होगा ? इसमें तो प्रत्यक्ष जमीन बाँटने की बात है। हवा से ही काम बनता है।

फाँका करके मरनेवाले हों, तो काम बढ़ेगा

आपकी कमेटी चार महीना न बने तो न बने। बिगड़ेगा नहीं। कमेटी क्या सरकार भी एक साल न हो तो कुछ बिगड़ेगा नहीं, यह मैं हमेशा कहता ही हूँ। सरकार एक साल छुट्टी लेगी, तो क्या चोरियाँ बढ़ेंगी ? शादियाँ नहीं होंगी ? किसका काम रुकेगा ?

इसलिए 'निमित्तमात्र भव सव्यसाची'-करो मन। ये सब मर चुके हैं, तुम निमित्त बनो।

पैसा नहीं है तो लूटो ! अहमदशाह अब्दाली के साथ मराठों की सेना लड़ती थी। सरदार ने पेशवा से कहा, "हमारे पास पैसा नहीं है, पैसा भेजो।" पेशवा ने कहा, "लूटो। वहाँ बुन्देलखंड को लूटो।" सरदार ने कहा, "हम लूटेंगे तो बुंदेलखण्ड के लोग हमारे खिलाफ हो जायेंगे। अहमदशाह की सेना के साथ हो जायेंगे।" नाना फड़नीस ने कहा, "होने दो, फिर देखा जायेगा।"

वैसे ही, हम आपसे कहते हैं, 'लूटो।' बैग, बोरी और स्टोल—इसमें से 'बोरी' नहीं कहूँगा। कर्जा लेना उचित नहीं है। ढाका डालकर लेना उचित है। लेकिन पैसे की जरूरत ही क्या है ? पैसे का अभाव, यही हमारी शक्ति है। लूटना यानी क्या ? किसीके बाग में जाकर केला, अमरूद हो तो खा जाना। आम के दिन नहीं हैं। नहीं तो आम खाकर रहो, ऐसा कहता। और फाँका करके मरनेवाले लोग हों, तब तो काम और बढ़ेगा। मतलब, पहले सहरसा पूरा करो, फिर जो बात बोलनी है वह बोलो। काम में तीव्रता आनी चाहिए, तब होता है। हमने बिहार छोड़ा तो "अति-तूफान" शब्द के साथ। डेढ़ साल हो गया। अति-तूफान नहीं, तूफान नहीं, सारा काम मंद-मंद चला। वृद्ध भी मंद, जवान भी मंद। जयप्रकाशजी दौड़े आये, फिर भी आप लोग पूरे आगे नहीं। जागृति आते-आते डेढ़ साल बीत गया।

आपके हाथ में सिर्फ १९७१ तक का ही समय है

किसीकी पत्नी बीमार है, किसीका लड़का मर गया, अब घर में यह चलनेवाला ही है। शिवाजी का सरदार था तानाजी। शिवाजी का हुक्म हुआ कि रायगढ़ किला फतेह करना है। बस, तानाजी निकल पड़ा। उसके लड़के की शादी थी। वह रुका नहीं। उसने क्या कहा, 'पहले रायगढ़ की शादी होगी, बाद में मेरे लड़के की।' आर्मी में सेना इधर-उधर भेजते हैं तब घर में क्या चला

है यह देखते नहीं है। वैसी 'इनटेन्सिटी' काम में होनी चाहिए। नहीं तो ब्याह, बोनी, कटनी, त्योहार देखते रहोगे, और यह देखकर काम करोगे तो साल भर में मुश्किल से दो महीना आपको काम के लिए मिलेंगे। इसलिए सहरसा में घुसो। 'भेडियाघसान' होना चाहिए। गजानन बाबू से कहो,' 'वहाँ २५० कार्यकर्ता भेजें। २५० यानी बहुत कम हैं, उनके ४ हजार कार्यकर्ताओं का १६वाँ हिस्सा।"

सोचनेवालों से काम नहीं होता। भगवान बुद्धि के अन्दर नहीं है। बुद्धि के उस पार है। 'बुद्धेः परतस्तु स'

बाबा ने क्या किया? ५ करोड़ एकड़ जमीन कैसे मिलेगी, यह सोचते बैठता तो निकलता ही नहीं। लेकिन बाबा निकला, किसीको पूछा नहीं। अकेला घूमता रहा। सारे भारत में भूदान के लिए एक ही मिटिंग होती थी। आखिर साल भर में एक लाख एकड़ जमीन हुई। फिर सर्व सेवा संघ ने प्रस्ताव किया। उत्तरप्रदेश में हम घूम रहे थे तो लक्ष्मी बाबू, वैद्यनाथ बाबू, ध्वजा बाबू मिलने आये। वह इतिहास आपको मालूम है। हम कहते थे, बिहार में ५० लाख एकड़ जमीन मिलनी चाहिए। तब अखबारवालों ने लिखा कि, 'यह शख्स इतना बोलता है, तो कुछ तो होगा ही।' फिर वैद्यनाथ बाबू ने हिसाब करके ३२ लाख की बात कबूल की। आखिर क्या हुआ? बिहार कांग्रेस ने ३२ लाख एकड़ का प्रस्ताव पास किया। ऊपरवालों ने उनसे कहा, "अरे ये क्या किया रे? इतनी जमीन कैसे मिलेगी? ऐसा प्रस्ताव क्यों किया?" श्री बाबू ने जवाब दिया कि, "हम आपसे ज्यादा जानते हैं, हमारा काम हम जानते हैं।" मैंने भरोसा नहीं किया होता तो ३२ लाख पूरे किये बिना मैं बिहार छोड़ता नहीं, लेकिन मैंने भरोसा किया और मैं गया। मुझे लगा, ये लोग पूरा कर लेंगे। मेरे बिहार छोड़ने के बाद सारा काम ढीला-ढाला चला। फिर पाँच साल पहले हमने 'तूफान' शब्द निकाला और छः महीने में १० हजार ग्रामदान की बात चलायी। और कहा 'मैं आता हूँ' अब बाबा की ओर से ही चैलेंज आया तो 'ना' कहना उचित नहीं। इस तरह औचित्य के लिए 'हाँ' कहा गया और हम आये। (यह कहते हुए बाबा बहुत हँसे।)

अब यह आखिरी कूद है (सहरसा)। प्रयत्न करके सफलता नहीं मिली तो परमात्मा की मदद मिल सकती है। अगर आप प्रयत्न ही न करें तो फिर तो प्राइवेट काम करने होंगे। आपके हाथ में १९७१ तक ही समय है। आगे का समय मैं नहीं मानता, क्योंकि १९५१ में आन्दोलन शुरू हुआ। बीस साल के आन्दोलन के बाद कुछ नहीं होगा, तो आपकी टेनेसिटी, आपका सातत्य, प्रशंसनीय है। लेकिन यह होनेवाला काम नहीं ऐसा माना जायेगा। इसलिए विद्यासागर का यह निश्चय होना चाहिए, कि, और काम हो या न हो, सहरसा में काम पूरा करेंगे।

ताला लगाओ सब कामों को

'तुलसी तब तीर तीर, सुमिरत रघुवंश वीर, विचरत मति देही'—घर-घर जाकर संतों ने प्रचार किया। भीख माँगकर खाओ—यह रामदास (महाराष्ट्र के संत) ने शिष्यों को सिखाया। उन्होंने अपने एक शिष्य को तंजावूर (दक्षिण) भेजा। तब एक 'झोला' दिया, यानी रोटी का साधन और 'दासबोध' की लिखित प्रति दी।

मैं यात्रा में तंजावूर गया था, तब मुझे ये दोनों चीजें दिखायी गयी थी। रामदास ने लिखा है, 'बहुता आणीता घ्यावी मुष्टि, वाऊ भवनी या पशा रक्षिले पाहिजे।'—भिक्षा देनेवाले ने ज्यादा भिक्षा दी, तो भी एक मुट्ठी ही लेना चाहिए, यह कैद पीछे लगा दी। मुट्ठी से ज्यादा लेना नहीं। तुमको दिन भर में १० मुट्ठी चावल चाहिए तो १० घर तो 'कम्पलसरी' जाना ही पड़ेगा। उनके शिष्य अकेले-अकेले जाते थे। शंकराचार्य ने चार शिष्यों को चार कोने में रखा। द्वारका का शिष्य पुरी के शिष्य के साथ क्या बात कर सकता था?

अभी जयप्रकाशजी का एक वक्तव्य पढ़ा, वह जवानों को आवाहन है। बहुत अच्छा, उत्तम लिखा है। उन्होंने लिखा है कि जब विवेकानन्द अमेरिका गये थे तब जवान थे, कृष्ण ने गीता सुनायी तब वह जवान थे, गौतम बुद्ध ने पत्नी को छोड़ा तब वह जवान थे, शंकर ने दिग्विजय की तब वह जवान थे। जवानों को पराक्रम करने का मौका है। (देखें—'भूदान-यज्ञ, दिनांक २३-११-७० अंक ८, पृष्ठ १०६)

इसलिए सब बंद करो—'ताला कुंजी हमें गुरु दीन्ही,'—जब चाहो तब हम बंद कर सकते हैं, और खोल सकते हैं। ताला लगाओ सब कामों को। 'यद् गत्वा न निवर्तन्ते'—जहाँ जाने पर फिर लौटना नहीं। मुझे सुशीला ने जाते वक्त पूछा था कि 'कब तक वहाँ रहना है?' तब मैंने यही जवाब दिया कि, 'काम पूरा होगा तो वापस आना, नहीं तो मत आओ।'

इसलिए तुम हैदराबाद वगैरह छोड़ दो, एकदम ट्रेन पकड़कर सीधा पहुँच जाओ सहरसा में।

बापू गये थे तो मुझे दिल्ली बुलाया था। सन् १९४८ की बात है। मैंने कहा, 'मैं यहाँ का काम पूरा किये बिना आऊँ, और बीच रास्ते में ही मर गया तो क्या होगा? न घर का, न घाट का। न इधर रहूँगा, न उधर। अपने काम में डटे रहना, यही मैं गांधीजी से सीखा हूँ। इसलिए मैं नहीं जाऊँगा।' यूँ कहकर मैं अपने काम में डटा रहा।

काम पूरा हुआ तो ठीक, नहीं तो मर जाना

सहरसा पूरा होगा तो भारत को प्रेरणा मिलेगी। नहीं तो क्या होगा? जयप्रकाशजी जैसा महान व्यक्ति लगता है तो भी काम नहीं बनता ऐसा असर भारत पर नहीं होना चाहिए। उधर बिहार में सबसे आसान है सहरसा। और

कठिन है मुजफ्फरपुर। 'फाय सवनेश टू—सवसेग' यह बाबा की 'टैक्टिस' है।

अब जो भी आयेंगे उसे मैं सहरसा जाने के लिए कहूँगा। यहाँ यह अखिल भाई हैं, मागाजी हैं, मुन्नालाल हैं, (सब सामने बैठे थे)—ये जायें सहरसा, मुन्नालाल तो घर छोड़कर जा ही सकते हैं। घर जाकर पत्नी को प्रणाम करें और जायें।

ऐसा घर-टूटा भी हुआ हो तो नदी में डाल दो, गंगा में डाल दो। फिर देखो क्या होता है ? सहरसा में तो अनेक नदियाँ हैं। अगर तुम्हारे पास सहरसा जाने के लिए भी पैसा न हो तो मैं दूँगा। 'रिटर्न टिकट' जाने को नहीं कहूँगा।

"मेरे मन में बार-बार आता है कि मैं ही क्यों न जाऊँ। लेकिन मैं अपने को रोकता हूँ। क्योंकि वह 'बाबा विश्वास' होगा। बाबा की महिमा होगी। मन में भावना आती है, तो वह वहाँ मदद करती है।

सहरसा सारे बिहार में छोटा है। लोगों की भावना वहाँ बहुत अनुकूल है। बारिश में वहाँ बाढ़ आती है। बाढ़ रास्ते खुले हैं। इसलिए अभी दो महीना ताकत लगाओ। पूरा हुआ तो ठीक, नहीं तो मर जाना, ऐसा निश्चय करो। सहरसा होने के बाद मैं कुछ कहूँगा नहीं। कहने की जरूरत ही नहीं होगी। सहरसा की प्रेरणा से ही काम हो जायेगा।

बिहार का हृदय अच्छा है। यहाँ आर्थिक स्थिति बहुत खराब है। फिर भी आध्यात्मिक विचार लोगों को पसन्द आता है, यह आश्चर्य की बात है। नक्सलवाद पनपेगा तो आश्चर्य होगा नहीं। आध्यात्मिक विचार जँचता है, यही दिखाता है कि 'हार्ट इज साउण्ड।'

सबको समाधि मिल जायगी

वहाँ की सरकार से हमारा मौखिक संदेश सुना दो कि कमेटी बनानी हो तो जयप्रकाशजी की सलाह से बनाओ। सर्व सेवा संघ की सम्मति लेनी चाहिए, लेकिन सर्व सेवा संघ अभी दूर है। इसलिए जयप्रकाशजी जैसा कहेंगे, वैसा करो।

सहरसा की हमारी पहली यात्रा अद्भुत थी। कमर तक पानी रहता था। रामदेव बाबू हमारे हनुमान थे। वे हमारा हाथ पकड़ते थे। एक दिन बहुत गहरा पानी था। नौका में जाना हुआ। नौका अच्छी नहीं थी। डगमग करती थी। रामदेव बाबू का चेहरा बड़ा गंभीर, चिंतित था। मैंने पूछा, "क्यों रामदेव बाबू, क्या बात है ?" उन्होंने कहा, "बड़ा गंभीर मामला है।" था भी वैसा ही। चारों ओर १७-२० फीट गहरा पानी था। मैंने कहा, "क्या हुआ ? अगर यहाँ हम सबको समाधि मिल जायेगी, हम सब डूब जायेंगे तो इससे उत्तम मुक्ति दूसरी क्या हो सकती है ? लोगों को श्मशान-यात्रा की तकलीफ भी नहीं होगी।" (यह कहकर बाबा खूब हँसे।)

राजा बाबू क्या करते हैं ? उन्होंने तो हमें लिखित दिया है कि "जितना हो सकता है उतना हम काम करेंगे।" उनकी उम्र कितनी है ? (विद्यासागर भाई ने बताया—७७ वर्ष है)।

७७ वर्ष उम्र है तो उनको गाड़ी में बिठाकर घुमाओ। गणपति को घुमाते हैं, वैसा घुमाओ। हमारे सहरसा कोष्ठ में क्या करते हैं ? उनसे कहना कि इसमें जोर लगाओ, समय दो। —कुसुम

ग्रामदानी गाँव खोखरा में कोई भूमिहीन नहीं

रतलाम जिले की रतलाम तहसील के ग्रामदानी गाँव खोखरा में ग्रामस्वराज्य-समिति की बैठक श्री रतनलाल पाटीदार की अध्यक्षता में हुई। श्री मानव मुनि ने ग्रामदान के बाद ग्रामस्वराज्य की बुनियादी बातें बतायीं। गाँव में कोई भी भूमिहीन परिवार नहीं। भूदान में प्राप्त २५० बीघा भूमि ३३ भूमिहीन परिवारों में वितरीत की जा चुकी है। भूमिहीन परिवारों की, भूमि प्राप्त होने के बाद, आर्थिक स्थिति में सुधार हुआ है। कुछ हद तक पारिवारिक जीवन सुखी बना है। ग्रामीणों ने बुरे व्यसनों का त्याग भी किया है।

ग्रामस्वराज्य-समिति द्वारा गाँव के एक सार्वजनिक कुएँ पर तीन हजार रुपये की लागत से मोटर आदि लगायी है, जिससे पशुओं को पानी-पीने की सुविधा हो गयी है। (सुरेश)

सहरसा जिले में ग्रामदान-पुष्टि अभियान

विनोबाजी की प्रेरणा से सेवाग्राम में सर्व सेवा संघ के अधिवेशन के अवसर पर तय पाया कि सहरसा जिले में ग्रामदान-पुष्टि का काम सर्वप्रथम अभियान चलाकर ग्रामस्वराज्य की दिशा में पूरा किया जाय। बिहार ग्रामस्वराज्य समिति ने मुजफ्फरपुर की बैठक में इसे स्वीकार करते हुए निर्णय लिया कि सहरसा जिले में कुल २३ प्रखंड हैं, मरौना प्रखंड में पहले से काम होता आया है; अतः जिले की ग्रामस्वराज्य समिति एवं जिला सर्वोदय मंडल के कार्यकर्ताओं की शक्ति से वहाँ सघन रूप से काम चलाया जाय तथा बाकी प्रखंडों में व्यापक रूप से प्रचार-कार्य चलाया जाय, ताकि स्थानीय लोग इस काम के लिए उपलब्ध हों जिन्हें प्रशिक्षित कर सुनियोजित रूप में लगाकर जिले में पुष्टि-कार्य को सम्पन्न कर के ग्राम स्वराज्य की दिशा में बढ़ाया जा सके।

तदनुसार बिहार ग्रामस्वराज्य समिति का कैम्प-कार्यालय विगत ९ नवम्बर से सहरसा आ गया है।

इस योजना को ध्यान में रखकर श्री महेन्द्र नारायण सिंह, अध्यक्ष, सहरसा जिला ग्रामस्वराज्य समिति तथा तपेश्वरजी, मंत्री, जिला सर्वोदय मंडल के नेतृत्व में जिले के कार्यकर्ताओं की प्रमुख ताकत मरौना प्रखंड में लगायी जा रही है, जिसमें १५ पूरा तथा आंशिक समय देनेवाले कार्यकर्त्ता हैं।

साथ ही सुश्री निर्मला बहन, श्री कृष्णराज मेहता तथा श्री विद्यासागर, मंत्री, बिहार ग्रामस्वराज्य समिति के तूफानी दौरे के कार्यक्रम गत १२ नवम्बर से शुरू हुए हैं। इस क्रम में निर्मली, मरौना, मनोहरपट्टी, किशनपुर, सुपौल, पिपरा, त्रिवेणीगंज, राघोपुर, सिंहेश्वर, बसंतपुर, छातापुर, कहरा, नौहट्टा, महिषी, सिमरी बख्तियारपुर, सलखुआ, सहरसा, सत्तौल, सोनवरसा, सौर बाजार आदि प्रखंडों में अब तक प्रखंडस्तरीय ग्रामसभाएँ, गोष्ठी तथा कई छोटी सभाएँ भी हुई हैं।

हर गोष्ठी एवं ग्राम सभा में मुखिया, सरपंच, जनसेवक, सरकारी अधिकारी एवं कर्मचारी, चिकित्सक, प्रोफेसर, छात्र, शिक्षक, किसान, व्यापारी, सर्वोदयप्रेमी और सामाजिक कार्यकर्ताओं ने भाग लिया। सभा एवं गोष्ठी में सुश्री निर्मला बहन एवं श्री कृष्णराज भाई के शास्त्रीय विवेचन तथा ओजस्वी भाषण से प्रभावित होकर लोगों ने अपने-अपने प्रखंड में ग्रामसभाओं का गठन, बीघा-कट्ठा वितरण, ग्रामकोष-निर्माण एवं शान्तिसेना-संगठन के काम में सहयोग देने तथा अपनी व्यक्तिगत जमीन का बीघा-कट्ठा बाँटने की घोषणा की। इसी क्रम में श्री सूर्यनारायण गुप्ता ने ग्रामसभा में मनोहरपट्टी गाँव का बीघा-कट्ठा देकर प्रमाणपत्र दे दिया, जो एक उल्लेखनीय प्रसंग है। उक्त कार्यक्रम के सिलसिले में सैकड़ों युवकों ने ग्राम-शान्तिसेना एवं तरुण-शान्तिसेना में अपना नाम लिखाया।

शान्तिसेना-शिविर बेरो (सुपौल), मनोहरपट्टी, हरकी (मरौना), सिमराही (राघोपुर), धुमहा (पिपरा), त्रिवेणीगंज में स्थानीय सहयोग से किये गये। श्री अमरनाथ भाई, सुश्री जानकी बहन, सरोजबहन, सतीशकुमार तथा अलीसन बहन (इंग्लैण्ड) आदि ने शिविर का मार्गदर्शन किया है। बेरो के शिविर का उद्घाटन सुश्री निर्मला बहन ने किया। शिविर में ३०० शान्तिसैनिकों को प्रशिक्षित किया गया, जो अपने-अपने क्षेत्र में यथासंभव सहयोग करते हैं।

आचार्यकुल के संगठनार्थ श्री रामेश्वर प्रसाद बहुगुणा, प्रतिनिधि सर्व सेवा संघ, का जिले के विभिन्न भागों में दौरा चल रहा है। फलस्वरूप ४ प्रखंडों में आचार्यकुल की स्थापना की गयी है।

श्री रामधनी बहू जो दक्षिण अमेरिका के रहनेवाले हैं, विनोबाजी की प्रेरणा से लगे हुए हैं। श्री हृदयनारायणजी (गुजरात) भी अभियान की शुरुआत से ही मरौना प्रखण्ड में डटे हुए हैं। इसके अतिरिक्त श्रीमती कुसुम बहन (दरभंगा), कुसुम काबली (बम्बई), द्रौपदी बहन, प्रेमशीला बहन (मुजफ्फरपुर) इस अभियान में लगी हुई हैं।

इसके अलावा जिले में तथा बाहर लगभग २० कार्यकर्ता अन्य प्रखंडों में लगे हुए हैं। मरौना प्रखंड में अभी ६५ ग्रामसभाओं का गठन हुआ है, ५० बीघा जमीन बाँटी गयी है, जिसके प्रमाणपत्र के साथ कब्जा भी दिला दिया गया है।

अब तक हुए कार्यों की निष्पत्ति

(१) ग्रामसभा का गठन : १७५
(२) बीघा-कट्ठा वितरण :
७५ बीघा १५ कट्ठा
(३) शांतिसैनिक : ११२५
(४) शांतिसेना-शिविर : ६
(५) प्रशिक्षित शांतिसैनिक : ३२५
(६) 'मैत्री' पत्रिका के ग्राहक : ५५
(७) बीघा कट्ठा घोषित :
१२६ बीघा

—बिहार ग्रामस्वराज्य समिति के कार्यालय से

बरेली में सर्वोदय-पात्र

बरेली जिला सर्वोदय मंडल एवं तरुण शांतिसेना केन्द्र के संयुक्त तत्वावधान में ३ दिसम्बर को बरेली में भारत के प्रथम राष्ट्रपति डा० राजेन्द्र प्रसाद का ८७ वाँ जन्म-दिवस 'सर्वोदय-पात्र दिवस' मनाया गया।

बांदा जिला सर्वोदय मंडल

जिला सर्वोदय मंडल के समस्त लोकसेवकों की बैठक सर्वोदय सेवा आश्रम चित्रकूट में १५ नवम्बर को पं० श्री लक्ष्मीप्रसादजी की अध्यक्षता में हुई। सर्वसम्मति से श्री अर्जुन भाई को जिला सर्वोदय मंडल का अध्यक्ष तथा सर्व सेवा संघ का प्रतिनिधि चुना गया। पं० श्री बद्रीप्रसादजी उपाध्यक्ष, पं० श्रीनन्दीप्रसादजी कोषाध्यक्ष, श्री सुरेन्द्रनाथ पाण्डे मंत्री तथा श्री गोविन्दसिंहजी को सह-मंत्री चुना गया।

बीकानेर में जिलादान के बाद

॥ सिद्धराज ढड्ढा ॥

राजस्थान के २६ जिलों में बीकानेर पहला और अभी एकमात्र जिला है जहाँ जिलादान का काम पूरा हुआ है। अभी एक वर्ष पहले तक ग्रामदान के विचार की बात तो अलग है, ग्रामदान का शब्द भी राजस्थान के इस क्षेत्र में बहुत प्रचलित नहीं था। लेकिन ग्रामस्वराज के आदर्श से प्रभावित कुछ निष्ठावान कार्यकर्ताओं की कोशिशों ने चंद महीनों में ही बीकानेर को देश के ग्रामदान के नक्शे पर ला दिया।

जिले की स्थिति

राजस्थान के उत्तर-पश्चिमी भाग में स्थित यह जिला कुछ विशेषताएँ रखता है। पाकिस्तान से लगा हुआ यह जिला राजस्थान के रेगिस्तानी जिलों में से एक है। इसकी आबादी बहुत घनी नहीं है। जिले में कुल ४ विकास-खण्ड हैं जो रेवेन्यू की दृष्टि से तहसीलें भी हैं। जिले में करीब ५३० गाँव और ६ कस्बे हैं जिनकी आबादी कुल मिलाकर ८ लाख है। जब कि देहातों के मुकाबले शहरी आबादी कुल देश में औसत पाँच में एक है, इस जिले की शहरी आबादी पाँच में तीन है। कारण स्पष्ट है। रेगिस्तानी इलाका और पानी की कमी के कारण देहात का जीवन कठिन है। बड़े बड़े टीबों के कारण बीच-बीच में मीलों तक आबादी नहीं है, एक गाँव से दूसरे गाँव की दूरी कहीं-कहीं तो १० मील से भी अधिक है। एक गाँव से दूसरे गाँव को अधिकतर ऊँटों की पगडंडियाँ या बैल-गाड़ियों के कच्चे रास्ते जोड़ते हैं।

बीकानेर जिले में वर्षा का सालाना औसत ६–७ इंच का है, लेकिन प्रकृति की ऐसी महिमा है कि इतनी-सी बारिश भी अगर ठीक वक्त पर हो जाती है तो पशुओं के लिए घास और मनुष्यों के लिए धान्य भरपूर होता है। गोपालन और भेड़ पालन इस क्षेत्र के लोगों की आजीविका के दो प्रमुख साधन हैं।

जिले का सबसे पहला ग्रामदान अभियान जनवरी १९७० में हुआ था। लेकिन ६ महीने के अन्दर-अन्दर जिले के कार्यकर्ताओं ने ग्रामदान का संदेश जिले के लगभग तमाम गाँवों में पहुँचा दिया। जुलाई १९७० तक ४४० गाँव ग्रामदान में आ चुके थे। जिले की दो प्रमुख खादी-संस्थाओं ने खादी-मन्दिर और खादी ग्रामोद्योग संस्थान—धन और जन दोनों प्रकार के अपने साधन मुक्त मन से इस काम के लिए मुहैया किये उसीसे यह सम्भव हो सका। जिले में इस समय ग्रामदान की स्थिति नीचे लिखे अनुसार है।

विकास-खंड	पंचायतों की संख्या	कुल रेवेन्यू गाँव	आबाद गाँव	ग्रामदानी गाँव
१. बीकानेर	३३	१८३	१४२	११८
२. नोखा	४१	१२५	१११	९६
३. लूणकरणसर	२६	१७१	१४८	१२७
४. कोलायत	२३	१४१	१२०	९९
कुल संख्या	१२३	६२०	५२१	४४०

यह दण्डनीय उपेक्षा

बारिश की कमी या अभाव के कारण इस क्षेत्र के लिए अकाल नयी चीज नहीं है, लेकिन पिछले ६-७ वर्षों में तो राजस्थान के सारे पश्चिमी इलाके के साथ-साथ बीकानेर में भी लगातार सूखे और अकाल की स्थिति रही। इस देश के योजनाकारों और राजनैतिक नेताओं ने देश की ८० प्रतिशत देहाती आबादी के हितों की कितनी उपेक्षा की है और उनके बारे में कैसी लापरवाही बरती है उसका यह इलाका एक ज्वलन्त उदाहरण है। बड़े-बड़े उद्योगों, बाँधों और लोहे के कारखानों के निर्माण के आधार पर सरकारी रिपोर्टों और अखबारों में देश की प्रगति का भव्य चित्र पिछले २० वर्षों में बराबर खींचा जाता रहा है, जबकि देश की अधिकांश आबादी और देश के सबसे बड़े उद्योग—खेती—के हितों की दण्डनीय उपेक्षा की गयी। हालांकि पिछले वर्षों की खोजों से यह साबित हो गया है कि पश्चिमी राजस्थान के रेगिस्तानी इलाके में केवल ३-४ सौ फीट की गहराई पर मीठे पानी का अटूट भंडार है, लेकिन आजादी के पिछले दो दशकों में इस क्षेत्र के लाखों मनुष्यों और पशुओं के लिए पीने के पानी की स्थिति को भी सुधारने का कोई प्रयत्न नहीं किया गया। आज भी बहुत-से क्षेत्रों में ५-५, १०-१० मील की दूरी से पीने का पानी लाना पड़ता है। इस अरसे में लोगों को झूठे दिलासे देकर राजनैतिक नेता उनके वोट प्राप्त करते रहे, लेकिन आपस की छीना-झपटी या अपना-अपना घर भरने के काम से उन्हें इतनी फुरसत नहीं थी कि वे लोगों के दुख-दर्द की ओर ध्यान दे सकें। पिछले अकाल में बीकानेर जिले के कुल पशुधन का करीब ७० प्रतिशत नष्ट हो गया। राहत के नाम पर आये हुए करोड़ों रुपये सरकारी कर्मचारियों या राजनैतिक असर रखनेवाले छोटे-बड़े लोगों की जेब में गये हैं। गाँव-गाँव में आप पायेंगे कि कस तरह साधारण स्थिति के लोग भी अरब के

नये-नये घरों और बंगलों, जीपों और ट्रकों, स्कूटर और टेरिलीन-परिधान के मालिक बन गये है, जब कि जिनके नाम पर राहत का पैसा आया था वे भूखे मरते रहे ।

अनुकूल भूमिका और चुनौती

पिछले वर्षों के अकाल के कारण इस क्षेत्र के लोगों को इस बात का प्रत्यक्ष अनुभव और अहसास हो गया है कि उनके हितों की रक्षा सरकार नहीं कर सकती । वह उनके अपने प्रयत्नों से ही संभव है । इस अनुभव के कारण ग्रामदान के विचार के स्वागत की भूमिका बन चुकी थी । अतः अब जिले के अधिकांश गांवों द्वारा ग्रामदान की योजना के लिए अपनी सहमति दे दिये जाने पर जिले के कार्यकर्ताओं के सामने एक बड़ी चुनौती उपस्थित हो गयी है । ग्रामदान के सकल्प प्राप्त करना तो प्रारंभिक कदम था । उससे आगे के लिए सामाजिक और आर्थिक व्यवस्था में बुनियादी परिवर्तन की असीम संभावनाओं का दरवाजा खुल गया है । अब सतत सेवा के द्वारा गरीब और धनी, कमजोर और बलवान, दोनों को सामाजिक शांति और समृद्धि के नये सुनहले सपनों को साकार करने में मदद करना कार्यकर्त्ताओं का कर्तव्य है । जैसा विनोबाजी कहते हैं, ग्रामदान में से या तो ग्रामस्वराज्य की अनन्त संभावनाएं प्रकट होंगी या शून्य !

बीकानेर जिला ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य समिति ने इस चुनौती को उठा लिया है । जिलादान की घोषणा के कुछ दिन बाद ही दो दिन का एक शिविर लगाया गया जिसमें जिले के करीब ४०० ग्रामीण एकत्र हुए । इस शिविर में आचार्य राममूर्तिजी ने ग्रामसभाओं के संगठन, सर्व-सम्मति से उनके सचालन और ग्रामदानी गांवों में सुख-दुख के बंटवारे तथा परस्पर सहयोग के आधार पर सुरक्षा और आपसी विश्वास का वातावरण खड़ा करने पर जोर दिया । जिला ग्रामस्वराज समिति ने करीब ५० नये नौजवान कार्यकर्त्ता नियुक्त किये हैं जो गांवों में जाकर वहां का सर्वे, हर परिवार की सम्बन्धित जानकारी का रजिस्टर, ग्रामसभाओं का सगठन आदि काम कर रहे हैं । ता० ८ से १० नवम्बर तक इन कार्यकर्त्ताओं का एक प्रशिक्षण-शिविर लिया गया था । २० नवम्बर तक बीकानेर जिले में ६२ ग्रामसभाओं का गठन हो चुका था ।

उक्त कामों के साथ-साथ बीकानेर शहर को भी नहीं भूला गया । गांधी शान्ति प्रतिष्ठान केन्द्र के सहयोग से बीकानेर में ता० २४ से २६ नवम्बर तक के तीन दिनों में भिन्न-भिन्न राजनैतिक दलों के कार्यकर्त्ता तथा समाजसेवी संस्थाओं, जैसे—स्काउट आदि के खास-खास लोगों, की अलग-अलग चर्चा-गोष्ठियां आयोजित की गयीं जिनमें ग्रामदान के काम और ग्रामस्वराज्य के विचारों की जानकारी दी गयी । यह आयोजन काफी दिलचस्प रहा । इन गोष्ठियों से शहर के राजनैतिक कार्यकर्त्ताओं और प्रबुद्ध लोगों में ग्रामदान के बारे में सुनी-सुनायी बातों के कारण जो गलतफहमियां थीं वे दूर हुई, कुछ शकाओं का निराकरण हुआ तथा जिले में चल रहे आन्दोलन की सही जानकारी उन लोगों को मिली ।

ऊपरी नेताओं का विरोध

पिछले महीनों में बीकानेर जिले में जो यह हलचल हुई उसका असर जिले के राजनेताओं और विधायकों पर होना स्वाभाविक था । पंचायत-स्तर के अधिकांश नेताओं ने तो आंदोलन में साथ दिया लेकिन जिला स्तर के नेता, विधायक और इस क्षेत्र से मंत्री-मंडल के सदस्य, इन लोगों का कुछ विरोध जाग्रत हुआ । अखबारों में कुछ आलोचना और आन्दोलन के सम्बन्ध में गलत खबरें भी प्रकाशित हुई । सर्वोदय-कार्यकर्त्ताओं ने सम्बन्धित मंत्री महोदय से सम्पर्क किया और उनसे दिल खोलकर बातचीत की, जिसके बाद उन्होंने आंदोलन के समर्थन में एक वक्तव्य भी जारी किया । ऐसे लोग हमेशा होते हैं जो किसी-न-किसी प्रकार के स्वार्थवश लोगों में किसी भी अच्छे आंदोलन के प्रति गलतफहमी तथा उलझन पैदा करने की कोशिश करते हैं । लेकिन अनुभव बताता है कि व्यक्तिगत सम्पर्क और चर्चा से इस प्रकार के भ्रामक प्रचार का बहुत हद तक मुकाबला किया जा सकता है । हमारा काम आन्दोलन की सही जानकारी समय-समय पर लोगों को पहुँचाते रहने का है और सबसे आवश्यक यह है कि हम विरोध या भ्रामक प्रचार से विचलित न हों, बल्कि अपने काम में लगे रहें ।

सौभाग्य से बीकानेर जिले के सर्वोदय-कार्यकर्त्ताओं ने अपना दिल और दिमाग ग्रामस्वराज्य के काम में उडेल दिया है ।

खादी-संस्थाओं ने न सिर्फ सारे काम का आर्थिक भार उठा लिया है, बल्कि अपने कार्यकर्ताओं को भी इस काम के लिए मुक्त किया है। प्रान्तीय सर्वोदय मंडल की ओर से भी एक प्रमुख साथी बीकानेर जिले के पुष्टि-काम के साथ बराबर संपर्क रख रहे हैं। प्रांतीय स्तर के अन्य लोग भी समय-समय पर सहयोग देते रहते हैं। सबसे बड़ी बात यह है कि गांव के लोगों का सहयोग अच्छा मिल रहा है। इसका एक अच्छा प्रमाण अभी पंचायतों के चुनाव के सिलसिले में मिला। [illegible] की घोषणा के कुछ दिन बाद ही पंचायतों के चुनाव होनेवाले थे। उधर ग्रामदानी गांवों में सर्व-सम्मति से ग्रामसभाओं का गठन हो रहा था। कई ग्रामदानी गांवों के लोगों ने स्वयं यह प्रश्न उठाया कि गांवों में ग्राम-भावना को मजबूत होने का मौका मिलना चाहिए और इसलिए पंचायतों के चुनाव, जिनसे गांवों में फूट पैदा होने का खतरा है अभी नहीं होने चाहिए। जिला-स्तर के सम्मेलन में एक के बाद एक ग्रामदानी गांवों के अध्यक्षों ने यह भावना जाहिर की और कइयों ने दृढ़तापूर्वक यह भी कहा कि अगर चुनाव स्थगित करने की हमारी मांग के बावजूद सरकार चुनाव कराती है तो हम उन चुनावों का बहिष्कार करेंगे। इस सम्मेलन में एक नये जोश और नये आत्मविश्वास की भावना स्पष्ट दिखाई दे रही थी। सौभाग्य से सरकार ने, अपने भिन्न कारणों से, फिलहाल चुनाव स्थगित कर दिये हैं।

बीकानेर जिला ग्रामस्वराज्य समिति ने आगामी मार्च तक सब ग्रामदानी गांवों में ग्रामसभा बनाने का लक्ष्य तय किया है। कई गांवों में ग्रामकोष की शुरुआत भी कर दी गयी है। ग्राम-कार्यकर्ताओं के प्रशिक्षण और ग्राम-शांतिसेना का काम भी कुमारप्पा ग्रामस्वराज्य संस्थान के सहयोग से हाथ में लिया जा रहा है। इस प्रकार बीकानेर में आशा की एक झलक दिखाई दे रही है। ●

भूदान-यज्ञ २८-१२-'७० लाइसेन्स नं० ए ३४ [पहले से डाक-व्यय दिये बिना भेजने की स्वीकृति प्राप्त] रजिस्टर्ड नं० एल. ३५४

इस देश का भविष्य जनता के हाथ में राजनीति और उसके नेताओं के हाथ में नहीं

—झाझा की प्रखण्डसभा के उद्घाटन-भाषण में जे० पी० के उद्गार—

गत २० दिसम्बर '७० को बिहार के मुंगेर जिले के एक प्रखण्ड झाझा में गठित प्रखण्ड-स्वराज्य सभा के उद्घाटन-समारोह मे उपस्थित लगभग १० हजार नागरिको, ग्रामदानी गाँवो के प्रतिनिधियों के बीच भाषण करते हुए श्री जयप्रकाश नारायण ने कहा, "इस देश का भविष्य राजनीति और उसके नेताओ के हाथ में नही, सर्वोदय के हाथ में भी नही है, है सिर्फ जनता के हाथ मे। इसलिए गाँव-गाँव मे जनता के सगठन खड़े हों, गाँव मे गाँव का राज्य कायम हो, और ऐसे गाँवो के प्रतिनिधियो की प्रखण्डस्तरीय सभा बने, जो प्रखण्ड के कामों के सम्बन्ध मे नीति निर्धारित करे, निर्णय ले। प्रखण्ड-विकास अधिकारी उसके सचिव का काम करें।"

श्री जयप्रकाश नारायण

झाझा प्रखण्ड में २० तारीख तक ७४ ग्रामसभाएँ विधिवत् बन चुकी थी, जिनमें बीघा-कट्ठा का बँटवारा भी हो चुका था। कुल ९६८ भूमिहीनों को ९७५ दाताओ द्वारा ग्रामदान की शर्त के अनुसार निकाली गयी, बीघा-कट्ठा में प्राप्त कुल २७२ बीघा, ९ कट्ठा भूमि वितरित की जा चुकी थी।

प्रखण्डस्तरीय स्वराज्यसभा के सगठन की मंजिल तक पहुँचने के प्रति अपनी प्रसन्नता व्यक्त करते हुए और प्रखण्ड की जनता को मुबारकबाद देते हुए जयप्रकाशजी ने कहा, "बिहार में झाझा सबसे आगे है, बहुत बडा काम किया है, लेकिन इससे कही अधिक काम बाकी है। शेष गाँवो के काम को पूरा करना है। और यह ग्रामसभा, बीघा-कट्ठा, ग्रामकोष भी पहला ही कदम है। सगठन काम करने लगें, विकास के काम गाँव के लोग शुरू करें, नयी शिक्षा शुरू हो, ये सब बहुत सारे काम करने हैं। लेकिन आज जो कुछ हो रहा है, वह बुनियादी है। प्रखण्ड-स्वराज्य सभा यद्यपि कानूनी सदर्भ में तो आरजी है, लेकिन हमारे लिए पक्की है।"

देश की परिस्थिति का विश्लेषण करते हुए जयप्रकाशजी ने कहा, "देश में विकास-योजनाओं के चालू हुए काफी समय हो गया, लेकिन अभी तक गाँवों का कितना विकास हुआ? अगर गाँव में गाँव की छोटी-छोटी शक्तियाँ मिल जायँ, सब लोग मान लें कि 'अपना गाँव है' ईमानदारी, मेहनत से काम करें, न्याय की स्थापना करें, अन्याय को मिटायें, तभी देश की बड़ी समस्याओ को हल करने की ताकत पैदा होगी।"

गाँव की ग्रामस्वराज्य सभा को गाँव की संसद के रूप में प्रस्तुत करते हुए ग्रामीण जनता से जयप्रकाशजी ने यह अपील की कि, "ग्रामसभा गाँव में होनेवाले अन्यायो को रोके, शोषण को रोके, बुरे व्यसनो से गाँव के लोगो को मुक्त कराने की कोशिश करे, गाँव की खेती के विकास के लिए और गाँव के बच्चो की पढ़ाई के लिए व्यवस्था करे।"

अत में आपने—'झाझा प्रखण्ड की जनता इस ग्रामस्वराज्य के क्रांति-अभियान में निरन्तर आगे बढ़ती रहेगी'—ऐसी आशा व्यक्त की। ●

इस अंक में

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पै०), विदेश में २२ रु०; या २५ शिलिंग या ३ डालर। एक प्रति का मूल्य २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं मनोहर प्रेस, वाराणसी में मुद्रित

सम्पादक
राममूर्ति
वर्ष : १७
अंक : १९
सोमवार
८ फरवरी, '७१
पत्रिका विभाग
सर्व सेवा संघ, राजघाट, वाराणसी-१
फोन : ६४३९१ तार : सर्वसेवा

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

असहकार और प्रतिकार का शिक्षण

जिस प्रकार जनता के शिक्षण या विचार-जागृति का एक पहलू यह है कि जहाँ तक मुमकिन हो, लोग सहकार ही करें और उसे स्वेच्छा से तथा समझ-बूझकर करें, उसी प्रकार जनता के शिक्षण अथवा विचार-जागृति का दूसरा पहलू यह है कि लोग असहकार और प्रतिकार के प्रसंग को पहचानें और वैसे प्रसंग आने पर सविनय असहकार और प्रतिकार करें।

असहकार और प्रतिकार एक ही वस्तु की दो अवस्थाएँ हैं। पहली की अपेक्षा दूसरी अधिक उग्र है। जहाँ असहकार से ही काम चल सके, वहाँ प्रतिकार करना नहीं होता। असहकार [illegible] हटा लेते हैं और [illegible] इतने से [illegible] कार का हाथ पूर्वक यानी [illegible] ना देते हैं। अनुशासन- [illegible] (१) विनय-रखते हुए [illegible] छल-प्रपंच के बिना और [illegible] (२) प्रकट रूप से यानी कहीं भी प्रदन के बारे में कम-से-कम मोग पेश करके और (४) दृढ़ता से यानी जब तक हार न मानते हुए, भंग करना होता है। इस तरह के कानून-भंग के लिए जो सजा हो, उसे खुशी से और बगैर द्वेष-भाव के भुगत लेना होता है। इस तरह की शिक्षा जनता के जीवन में रमी हुई होनी चाहिए और इसके लिए शिक्षण तथा राष्ट्रीय नीतिशास्त्र में उसका नित्य स्थान होना चाहिए।

सुराज्य-व्यवस्था में असहकार और प्रतिकार प्रासंगिक और नैमित्तिक होते हुए भी समाज-जीवन में उनका नित्य स्थान है। क्योंकि उनकी जरूरत केवल राजनीतिक क्षेत्र में ही नहीं होती, अपितु समाजकारण, कुटुम्बकारण और व्यक्तियों के पारस्परिक व्यवहार में भी उनके प्रयोग की थोड़ी-बहुत आवश्यकता हमेशा रहेगी। प्रतिकार न करते हुए, निष्क्रिय होकर अन्याय सह लेना, या फिर सक्रियता के आवेश में होश-हवास भुलाकर—या सम्भालकर भी—हिंसात्मक प्रतिकार करना, ये दोनों मार्ग टालकर सविनय असहकार और प्रतिकार का बीचवाला यही एक राजमार्ग है। राज्य-व्यवस्था कैसी भी क्यों न हो, जरूरत होने पर, इस मार्ग का अवलम्बन करने की वृत्ति और शक्ति समाज के नीतिशास्त्र में जागृत होनी चाहिए।

('स्वराज्य-शास्त्र' : २६-२७)

—विनोबा

• देश की समस्याएँ : दलों की घोषणाएँ • मतदाताओं की अपेक्षाएँ •

मध्यावधि चुनाव और हमारी नीति

इस मध्यावधि चुनाव में सर्व सेवा संघ ने जो नीति अपनायी है, वह मुझे दोषपूर्ण लगती है।

(१) आज की राजकीय परिस्थिति को और लोकनीति के विचार को सामने रखें, तो हमारे लिए इतना ही कहना पर्याप्त होगा कि मतदाता आज की परिस्थिति में अपना मत किसीको भी न दें।

(२) 'अच्छे आदमी को वोट दो !'—ऐसा कहने का कोई मूल्य नहीं रह जाता, जब हम जानते हैं कि अधिकांश उम्मीदवार किसी-न-किसी पक्ष के अन्दर हैं। देश में हम दल-मुक्त सरकार बनाना चाहते हैं, तो इतना कहना नाकाफी है।

(३) मतदाताओं को प्रशिक्षित करना है तो हम उन्हें आज के विधान से परिचित करायें, आज की राजनीति व आज की राज्य-व्यवस्था में कितनी गड़बड़ियाँ हैं यह बतायें। वोट अच्छे आदमी को दें, ऐसा न कहकर यह कहें कि चूँकि राज्य-व्यवस्था अच्छी नहीं है इसलिए हमें वोट देना ही नहीं चाहिए। हमारे इस प्रशिक्षण से अगर किसी चुनाव-क्षेत्र में कुछ असर पड़ा और मत देनेवालों के प्रतिशत में कमी आयी तो हम अपना कार्यक्रम सफल मानें।

(४) हमारे इस निर्णय के पीछे यह विचार होना चाहिए कि हम ग्रामस्वराज्य की बुनियाद पर भारत के नये विधान की रचना करना चाहते हैं।'

(५) मौजूदा चुनाव के मौके पर मतदाता-शिक्षण के काम में हमारी शक्ति सर्व सेवा संघ के निर्णय के अनुसार लगेगी तो कम-से-कम ५० प्रतिशत तो वह व्यर्थ ही जायगी, और ग्रामदान का जो बुनियादी काम हो रहा है वह अटकेगा। हाँ, 'हमारी भी कोई हस्ती है' ऐसा हम अगर जाहिर करना चाहते हैं, तो ऐसा करने का सन्तोष हमें मिल सकता है।

(६) एक परिणाम इसका यह भी आयेगा कि हम पूर्ण तटस्थ नहीं रह पायेंगे। हम स्वयं ऐसी विचित्र स्थिति अपने लिए पैदा कर रहे हैं, जिसके कारण सभी पक्षों का समर्थन और सहयोग हमारे ग्रामस्वराज्य-आन्दोलन को शायद न मिल पाये !

—मुन्न लाल शाह

प्रताप चौक, वार्ड १३, वर्धा (महाराष्ट्र)

मध्यावधि चुनाव और जनतंत्र

आज समाज के सामने एक विचारणीय समस्या यह है कि भारतीय चुनाव-पद्धति आज की मौजूदा सामाजिक रचना में आमूल परिवर्तन ला रही है या ला सकती है क्या ? क्या जिन संकल्पों के साथ आजादी प्राप्त की गयी थी, उस दिशा में इस पद्धति के द्वारा आगे बढ़ा जा सकता है ? मेरे विचार से ऐसा सम्भव नहीं है, और इसीलिए इस चुनाव-पद्धति का त्याग परमावश्यक है। क्योंकि मौजूदा प्रतिनिधित्व-प्रणाली और सत्ता की रचना से जनहित सिद्ध नहीं हो रहा है, बल्कि जन-अहित ही सिद्ध हो रहा है। मुख्य प्रश्न यह है कि इसको बदलने के लिए कौनसी नीति अपनायी जाय। क्योंकि आज तो किसी प्रकार सरकार में घुसना या सरकार बनाना लक्ष्य रह गया है।

आज की सत्ता-रचना में बुनियादी परिवर्तन तभी हो सकता है जब ग्राम समाज के प्रतिनिधियों की दलमुक्त सरकार यानी सही अर्थों में जनता का राज बनाने के लिए देश भर में व्यापक उत्कटा पैदा करने के लक्ष्य के साथ लोक-शिक्षण किया जाय। हमें ऐसा शिक्षण जनता को देना है, ताकि भ्रष्ट आचरणों द्वारा सत्ता चलानेवालों की बातें जनता न सुने।

अब प्रश्न उठता है कि मतदाता से हम क्या कहें ? मेरी राय में हमारे मतदाता-शिक्षण की दिशा निम्न प्रकार होनी चाहिए :

(१) मत उस उम्मीदवार को दिया जाय, जो दलीय स्वार्थ से अलग हो।

(२) जिसका पूर्व-जीवन जनहित में लगा हो, और जिसने अपनी स्वार्थसिद्धि में सार्वजनिक सुविधाओं का दुरुपयोग न किया हो।

(३) जिसने समाज में बढ़ती हुई विषमता, अन्याय, शोषण आदि को रोकने का प्रयत्न किया हो।

(४) जो वास्तव में जनशक्ति पर भरोसा रखता हो, डंडे की ताकत पर नहीं।

यदि ऐसे उम्मीदवार हमारे चुनाव-क्षेत्र में नहीं हों, तो वोट न देने के लिए जनमत तैयार करना चाहिए। अगर ऐसे लोगों का प्रतिनिधित्व सदन में सम्भव नहीं होगा, ऐसा हमें महसूस हो तो इस चुनाव के झमेले से हमको तटस्थ ही रहना चाहिए।

—दयाशंकर विद्यार्थी,

श्री गांधी आश्रम,

मीरजापुर (उ० प्र०)

चुनाव में अच्छा उम्मीदवार चुनने के लिए

गाँव-गाँव और मोहल्ले-मोहल्ले में निष्पक्ष और जागरूक नागरिकों के मतदाता-मण्डल बनाइए

- जो चुनाव में तनाव न बढ़ने दे।
- जो निष्पक्ष और स्वतंत्र चुनाव के लिए निगरानी रखे।
- जो बाद में जनता और प्रतिनिधि के बीच कड़ी का काम करे।

पर्दे के पीछे

पाकिस्तान की सरकार ने भारतीय विमान के मामले में जो कुछ किया उसके कारण भारत में क्षोभ पैदा होना स्वाभाविक था। उसके लिए कोई निष्पक्ष व्यक्ति पाकिस्तानी सरकार को दोष दिये बिना नहीं रह सकता। आश्चर्य होता है कि किस तरह सरकारों की पदासीन जिम्मेदार लोग कितनी गैर-जिम्मेदारी का काम करते हैं, और कर लेने पर उसे झूठ से ढकने या थोथे तर्क देकर उचित बताने की कोशिश करते हैं। लेकिन आज दुनिया में सरकारों की जो रचना है, और जिस तरह राजनीति चल रही है, उसे देखते हुए जनता को किसी भी वक्त किसी भी चीज के लिए तैयार रहना पड़ता है। उसे समझ लेना चाहिए कि जिस सरकार का वह अपनी समझती है वह सचमुच उसकी नहीं होती, सरकार खुद अपनी होती है, और अपने लिए होती है। यह कौन नहीं जानता कि भारत और पाकिस्तान के बीच आना-जाना खुला हो, व्यापार हो, तथा एक के दूसरे के साथ अच्छे सम्बन्ध हों तो दोनों देशों की जनता का भला होगा? लेकिन ऐसा नहीं होता। क्यों नहीं होता? उल्टे सरकारों की ओर से समय-समय पर ऐसे काम होते हैं जो जनता में तनाव और उत्तेजना पैदा करते हैं। सरकारें और उनके इर्द-गिर्द रहनेवाले 'देश खतरे में है' का हौआ बनाकर जनता को गुमराह करते हैं, और उसके मन में यह बात घुसाने की कोशिश करते हैं कि वे ही देश और जनता की रक्षा कर सकते हैं। इस धंधे में शासक, व्यापारी नेता सब एक हो जाते हैं। एक होकर वे सत्ता को अपने हाथ में रखते हैं और युद्ध की तैयारी को अपने सुख के का साधन बनाते हैं। नासमझ जनता समझती है कि जो कुछ हो रहा है सब उसके लिए हो रहा है।

पाकिस्तान में चुनावों के बाद जो स्थिति पैदा हुई और पूर्वी पाकिस्तान के जन आंदोलनों की विजय हुई उससे यह पक्की आशा हो चली थी कि निकट भविष्य में भारत और पाकिस्तान की लोक-हित की दृष्टि से करीब आने की दिशा में कुछ कदम जरूर उठेंगे। इधर भारत में भी चुनाव की घोषणा हुई, और यहाँ भी आशा हुई कि कुछ नयी शक्तियाँ सामने आयेंगी। लेकिन बीच ही में क्या हुआ? पिछले महीने भारत सरकार ने शेख अब्दुल्ला को काश्मीर जाने की रोक लगायी और 'प्लेबिसिट फ्रंट' को गैर-कानूनी घोषित कर दिया। यह उस वक्त हुआ जब शेख अब्दुल्ला और उनके साथी चुनाव लड़कर भारत के संसद में आने की तैयारी कर रहे थे। जितना बुरा असर हुआ होगा उसका काश्मीर की मुसलमान जनता पर? जो संघ के समर्थक हैं उन पर तो हुआ ही होगा, उन पर भी हुआ होगा जो निष्पक्ष चुनाव चाहते थे। भारत में यह हुआ, उधर पाकिस्तान में अभी यह विमान का कांड हुआ। दोनों देशों में उत्तेजना की लहर दौड़ गयी; शत्रुता और बदले की भावना फैल गयी। पाकिस्तान के भावी प्रधान मंत्री शेख मुजीबुर्रहमान ने विमान-कांड की निंदा की, जाँच की माँग की। उन्होंने खुले शब्दों में यह कहा कि इस कांड के पीछे सैनिक-शासन को कायम रखने में अपना निहित स्वार्थ देखनेवालों का हाथ है। बात सही भी है। निहित स्वार्थवाले नहीं चाहते कि पाकिस्तान में शासन की बागडोर ऐसे लोगों के हाथों में जाय जो जन-जीवन के ज्यादा करीब हैं, जो शत्रुता, युद्ध, और शरारतभरे राष्ट्रवादी नारों से ज्यादा जनता के कल्याण और उसके अधिकारों का आदर करते हैं। उसी प्रकार भारत में भी सत्ता के इर्द-गिर्द ऐसे तत्त्व हैं जो नहीं चाहते कि कश्मीर की समस्या का ऐसा हल हो जो वहाँ की जनता को समाधान दे, भले ही वह समाधान भारतीय संघ के भीतर चाहती हो। प्रश्न पाकिस्तान के समाधान का उतना नहीं है जितना कश्मीर की जनता के समाधान का है। लेकिन उनके लिए जनता के समाधान का महत्त्व ही क्या है?

अब समय आ गया है कि जनता समझे कि अखबारों में और रेडियो पर जिन कांडों और घटनाओं की इतनी चर्चा होती है उनके पीछे सच्चाई क्या है, और वे कौनसी शक्तियाँ हैं जो पर्दे के पीछे अपना काम करती रहती हैं, और जनता को भ्रम में रखती हैं। हमें समझना चाहिए कि हमारा जितना शोषण ठगपति और उनके स्वामियों द्वारा होता है उससे कम, बल्कि कई दृष्टियों से उससे कहीं अधिक गहरा, शोषण सत्ता और सत्ताधारियों द्वारा होता है। अखबार, रेडियो, विद्यालय, सब जनता के इस दोहरे शोषण के साधन बन गये हैं। सच्चाई को जनता से दूर रखने का एक स्थायी षड्यन्त्र-सा हो गया है।

भारत और पाकिस्तान की जनता की भलाई इसीमें है कि वह सच्चाई को जल्द समझे। न समझने की सजा उसीको भोगनी पड़ रही है, और आगे भोगनी पड़ेगी। ये दोनों देश एक-दूसरे को दुश्मन मानकर सेनाएँ बढ़ा रहे हैं, और अणु-अस्त्र बनाने की योजनाएँ तैयार कर रहे हैं। इनका बोझ जनता के सिवाय दूसरा कौन भोगेगा? क्या सचमुच एक देश की जनता दूसरे देश की जनता की दुश्मन होती है? जनता दुश्मन होती नहीं, उसे दुश्मन बनाया जाता है। और, बनानेवाले अपने को राष्ट्र और जनता का मित्र बताते हैं!

स्वतंत्रता के बाद शायद पहली बार ऐसा अवसर आता दिखायी दे रहा है जब दोनों देश अगर चाहें तो अपने इतिहास को नया मोड़ दे सकते हैं, लेकिन शर्त यह है कि जनता अपनी जोरदार आवाज ऊँची उठाये—इतनी ऊँची कि उसके मुकाबिले दूसरी कोई आवाज टिक न सके।

★

देश की समस्याएँ : दलों की घोषणाएँ

[संसद का यह मध्यावधि चुनाव कुछ अर्थों मे भारत के राजनीतिक इतिहास में विशिष्ट स्थान रखता है, ऐसा मत इस चुनाव के संबंध मे व्यक्त किया जा रहा है। एक तो भारत की उलझी हुई समस्याओ के कारण, और दूसरे राजनीतिक विचार-धारा के तथाकथित ध्रुवीकरण के कारण। यह भी कहा जा रहा है कि वर्तमान चुनाव का मुख्य निर्णायक मुद्दा 'संविधान प्रदत्त मूलभूत अधिकारों मे परिवर्तन हो या नहीं,' यही है। चुनाव के समय हर राजनीतिक दल अपने चुनाव घोषणा-पत्र में देश की समस्याओं और उनके समाधान के अपने दृष्टिकोण और कार्यक्रम को प्रस्तुत करता है। हम यहाँ देश के अखिल भारतीय स्तर के राजनैतिक पक्षों के चुनाव घोषणा पत्रों से उनके कुछ मुख्य मुद्दे प्रस्तुत कर रहे हैं। इससे समस्याओ के संदर्भ मे भारत के राजनीतिक दलों की पकड़ और सूझ-बूझ का अंदाज मिलेगा, ऐसी आशा है।-सं०]

वर्तमान राजनीति के दोष

कांग्रेस (संगठन) : देश का प्रजातांत्रिक ढाँचा हिल गया है। प्रगतिशील नीति का दावा अर्थहीन हो गया है, क्योंकि वर्तमान सरकार किसी समस्या का समाधान करने योग्य नहीं है। इसने केवल गरीबी और अमीरी का नारा लगाया, लेकिन उसके लिए वास्तव में किया कुछ भी नहीं। इसने साम्प्रदायिकता और साम्यवाद का सहारा लेकर उनके हौसले बढ़ाये। इसने गैर-संवैधानिक कार्रवाइयों की और इसकी कार्रवाइयों पर कानूनी चुनौतियाँ दी गयीं। देश में शांति और सुव्यवस्था कायम रखने के लिए उसने कुछ नहीं किया। आर्थिक परिस्थितियाँ आज देश की इतनी खराब हैं, *जितनी पहले कभी नहीं थी।*

कांग्रेस (सत्तारूढ़) : इस दल को यह यकीन है कि इसने लोगो से जो *वायदे किये हैं, देश की गरीबी, पिछड़ा*पन दूर करने और आर्थिक तथा राजनैतिक न्याय दिलाने के जो कार्यक्रम बनाये हैं, वे उस समय तक सफल नहीं होंगे, जब तक इसे जनता का पुनः आदेश और समर्थन न मिल जाय। प्रतिक्रियावादियों का संगठन एक ओर और उग्रवादी वाम-*पंथियों की हिंसा दूसरी,* दोनों देश के लिए खतरनाक हैं, और प्रगति के रास्ते में रुकावट पैदा कर रहे हैं। इन्हें एक समयोचित और प्रभावशाली सामाजिक, आर्थिक कार्यक्रम, जिन्हें प्रजातांत्रिक पद्धति से लागू किया जाय, के द्वारा ही हटाया जा सकता है।

भारतीय जनसंघ : प्रधानमंत्री देश-विरोधी और गैर-प्रजातांत्रिक शक्तियों से मिल गई हैं। देश को जिन बुनियादी सम-*स्याओं का सामना करना पड़ रहा है,* उनका समाधान करने की कोशिश न तो सरकार कर रही है, न ऐसा करने की उसकी योग्यता ही है। बढ़ती हुई बेकारी चरम सीमा पर पहुँच गयी है और पंच-वर्षीय योजनाएँ उसे दूर करने में विफल हो रही हैं। देश में जो मानव-शक्ति है, उसे *कब और कैसे राष्ट्रीय उन्नति के काम* में लगाया जाय, इसका सरकार को कोई अंदाजा नहीं है। प्रधानमंत्री की गलत नीति के कारण मुस्लिम लोग पुन. अलिगाव में आ गये हैं। उन्होंने नक्सलवादियों को, देश-विरोधी कहने की जगह सामाजिक-आर्थिक कारणों की उत्पत्ति कहकर, *प्रतिष्ठित किया है।*

भारतीय साम्यवादी दल : प्रतिक्रियावादी शक्तियों का महागठबन्धन, जिसमें *सिण्डीकेट, जनसंघ, संसोपा और स्वतंत्र* शामिल हैं, देश के लिए अधिक खतरनाक है और ये केन्द्रीय सत्ता पर कब्जा करना चाहते हैं। इस दल का उद्देश्य है—चुनाव में प्रतिक्रियावादियों को समाप्त करना, और केन्द्रीय सत्ता पर कब्जा करने की उनकी कोशिश को विफल करना। इस दल का उद्देश्य है एक ऐसी लोकसभा *का गठन, जो पहले से अधिक वामपंथी* और प्रजातांत्रिक हो, तथा संविधान में मौलिक परिवर्तन लाये। संसद के श्रेष्ठत्व पर जोर दे।

भारतीय साम्यवादी दल (मार्क्सवादी) : वर्तमान सरकार देश की राष्ट्रीय एकता को छिन्न-भिन्न कर रही है। देश की एकता की रक्षा सभी इकाइयों की समानता के आधार पर ही की जा सकती है। इस शासन में राज्यों की अगुवाई जमींदारों, *विच्छिन्नतावादियों और अन्य राष्ट्रवादियों* के हाथों में चली गयी है। जनता की दुर्दशा चरम सीमा तक पहुँच गयी है, सिर्फ कुछ लोगों ने मुनाफे के पहाड़ बनाये हैं। देश परदेशी कर्ज के बोझ से लदा है, टैक्सों के जरिये लूट जारी है। जनता के शोषण की कोई सीमा नहीं *रह गयी है। नौकरशाही बुरी तरह बढ़* रही है। प० बंगाल में खूनी गुण्डागर्दी को दबाया नहीं जा रहा है।

स्वतंत्र पार्टी : *मौजूदा सरकार* संविधान को नष्ट करने का प्रयास कर रही है, कम्यूनिस्टों का सहारा ले रही है, जिनकी वफादारी परदेश के प्रति है, देश में न्याय और सुव्यवस्था की स्थापना नहीं कर पा रही है। वह दकियानूसी आर्थिक नीति अपनाये हुए है, जो तेजी से उन्नति की दिशा मे एक रुकावट बन रही है।

संयुक्त समाजवादी दल : मौजूदा सरकार और पिछली सरकारों में कोई अन्तर नहीं है, बल्कि मौजूदा सरकार प्रधानमंत्री की सरकार है, और अधिक भ्रष्ट है। इसकी नीतियाँ जनविरोधी हैं। इस शासन में सम्पत्ति थोड़े लोगों के हाथों *में केन्द्रित हुई है। विदेशी पूँजी ने देश* की आर्थिक परिस्थिति को और बिगाड़ा है। उद्योग और व्यापार में उन्नति नहीं हो सकी है, और पाँच प्रतिशत का जो लक्ष्य निर्धारित था, वह भी नहीं पूरा *हो सका है। तस्कर-व्यापार एक हजार* करोड़ प्रतिवर्ष तक पहुँच गया है, और

इसका देश के व्यापार, उद्योग और वित्तीय स्थिति पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ा है। कृषि में कोई उन्नति नहीं हुई है। बेकारी बढ़ी है। देश की जनसंख्या का ३/४ भाग पहले से अधिक भूखा, रोगी और अधिक तबाह है।

प्रजासमाजवादी दल खतरनाक आर्थिक नीति के कारण आर्थिक विषमता और शोषण बढ़ा है, आर्थिक गिरावट आयी है। भ्रष्टाचार शासन के ऊँचे से ऊँचे ओहदे तक पूरी तरह प्रवेश पा चुका है। देश-विरोधी और प्रजातन्त्र विरोधी शक्तियाँ मजबूत हो रही हैं। असीमित जायदाद की अधिकारी शक्तियाँ मूल अधिकार के नाम पर यथास्थिति को बनाये रखने के लिए सिर उठा रही हैं।

संविधान

कांग्रेस (सत्तारूढ़) समाजवाद लाने के लिए, हिंसा के दमन के लिए, कृषि के वैज्ञानिक विकास के लिए, विशेषाधिकार समाप्त करने, बेकारी दूर करने, पब्लिक सेक्टर को प्राथमिकता देने, महँगाई रोकने, बच्चों की पढ़ाई और जन-स्वास्थ्य के सुधार के लिए संविधान में आवश्यक परिवर्तन लाया जायगा।

भारतीय जनसंघ संविधान को स्थायी नहीं मानता, परन्तु किसी राजनैतिक दल के प्रतिकूल सिद्ध हो रही बातों के कारण उसमें बार-बार परिवर्तन करने की कोशिश को भी अनुचित मानता है। दल महसूस करता है कि पिछले बीस वर्षों के अनुभवों के प्रकाश में संविधान के नवीनीकरण का वक्त आ गया है। इसके लिए दल एक 'संविधान आयोग' बनायेगा।

भारतीय साम्यवादी दल संसद के श्रेष्ठत्व को, जिसे उच्चतम न्यायालय ने चुनौती दी है, श्रेष्ठतम स्थान दिलाने के लिए यह दल संविधान में परिवर्तन करेगा, ताकि न्यायालय का यह कर्तव्य हो कि कानून को सामाजिक और आर्थिक परिवर्तन के लिए स्पष्ट रूप से नया अर्थ दे, ताकि देश में उन्नति हो और सामाजिक न्याय मिले। संविधान में दिये मौलिक अधिकारों में भी परिवर्तन आवश्यक है, ताकि संसद और विधान सभाएँ राष्ट्रीयकरण की जानेवाली मिल्कियत के लिए दिये जानेवाले मुआवजों में आखिरी फैसला कर सकें। न्यायालयों को इस सम्बन्ध में कोई अधिकार नहीं दिया जायगा।

भारतीय साम्यवादी दल (मार्क्सवादी) संविधान में लिखे हुए बुनियादी अधिकारों को इस तरह बदला जायगा कि संसद और राज्य के विधान सभाओं में देशी और विदेशी एकाधिकारवादियों, समाज के ऊपरी सतह के सम्पत्तिवानों, भूतपूर्व रजवाड़ों के खिलाफ कानून बना सकें और उनसे छीने गये भू-स्वामित्व, उत्पादन के साधन, सम्पत्ति पर साधारण जनता के जनवादी अधिकार मजबूत हों।

स्वतंत्र पार्टी संविधान में कोई परिवर्तन नहीं किया जायगा। न्यायपालिका की संवैधानिक व्याख्या के अनुसार संविधान द्वारा प्रदत्त मौलिक अधिकारों में परिवर्तन करके संविधान को नष्ट करने की जो कोशिश हो रही है, इस पर दल ने गहरी चिन्ता व्यक्त की है।

संयुक्त समाजवादी दल यह दल एक नया संविधान बनाना चाहता है। आधुनिक संविधान 'गवर्नमेंट आफ इण्डिया एक्ट १९३५' के आधार पर बना है, और जो जनता को सीमित हक देने की भूमिका में बना था, और जिसका समाजवादियों ने बहिष्कार किया था। उच्चतम न्यायालय के कुछ फैसलों के बाद यह दल महसूस करता है कि वर्तमान संविधान में कुछ ऐसी बातें हैं, जो लोक-भाषा की उन्नति में रुकावट हैं। मिल्कियत रखने के अधिकार को मूलभूत अधिकारों में से हटा दिया जायगा; और शिक्षा, नौकरी, कपड़ा, खाना, दवा आदि इसमें शामिल कर लिया जायगा।

प्रजासमाजवादी दल इस दल ने हमेशा संसद के श्रेष्ठत्व को मान्यता दी है। संसद को संविधान की ३६८वीं धारा के अनुसार संविधान में परिवर्तन करने का अधिकार प्राप्त है। गोलकनाथ के मुकदमे में उच्चतम न्यायालय के फैसले द्वारा यह अधिकार संसद से ले लिया गया है। श्री नाथपाई द्वारा प्रस्तुत संविधान संशोधन विधेयक में संसद को संविधान में परिवर्तन करने का अधिकार देने की बात कही गयी है। यह दल चाहता है कि श्री नाथपाई के उक्त विधेयक को जनता की स्वीकृति मिले, ताकि संसद को संविधान में परिवर्तन करने का अधिकार प्राप्त हो, और प्रजातांत्रिक तरीके से सामाजिक, आर्थिक विकास की राह में जो रुकावटें हैं उन्हें दूर किया जा सके। यह दल नयी संसदीय सभा बुलाने के विरुद्ध है, क्योंकि साधारण बहुमत से संविधान में परिवर्तन लाया जा सकता है। इस बात की अधिक संभावना है कि मौजूदा संविधान को बदलने के लिए शक्ति का दुरुपयोग हो। यह दल एक 'संविधान सुधार आयोग' बनायेगा, ताकि संविधान में उचित सुधार करके उसे सामाजिक, आर्थिक विकास का माध्यम बनाया जा सके।

न्याय

कांग्रेस (संगठन) कानून का शासन प्रजातन्त्र के लिए अनिवार्य है। एक स्वतन्त्र न्यायपालिका द्वारा ही यह सम्भव है। वह संविधान की रक्षा करती है, और इसमें दिये गये मौलिक अधिकारों को अक्षुण्ण रखती है। न्यायपालिका की स्वतन्त्रता की हिफाजत अनिवार्य रूप से की जायगी।

भारतीय साम्यवादी दल संविधान में ऐसे परिवर्तन लाये जायेंगे कि न्यायालय (जिसमें उच्चतम न्यायालय भी शामिल है) संसद के श्रेष्ठत्व को चुनौती न दे सके। न्यायाधीश (जिसमें उच्च और उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश भी आते हैं) संसद और विधानसभाओं के द्वारा बनाये गये एक 'पैनल' द्वारा नियुक्त किये जायेंगे। संसद को यह अधिकार होना चाहिए कि उच्चतम न्यायालय के किसी न्यायाधीश को लोक-

सभा में बहुमत से पारित प्रस्ताव द्वारा हटा सके।

भारतीय साम्यवादी दल (मार्क्सवादी) : न्यायालयों से निहित स्वार्थवालों के पक्षधर विचारकों को हटाया जायगा। उनकी जगह ऐसे लोगों को रखा जायगा जो तेजी से बदलते सामाजिक और राजनीतिक रुझान के साथ हैं। सामाजिक अन्याय, असमानता, जुल्म के खिलाफ स्वीकृत किये गये कानूनों को रद्द करने का अधिकार अदालतों से छीना जायगा।

स्वतंत्र पार्टी : संविधान द्वारा न्यायपालिका को दिये गये अधिकार की इज्जत की जायगी।

संयुक्त समाजवादी दल : दल यह प्रयास करेगा कि न्याय सबको मिले, न्याय सर्व-सुलभ और सस्ता हो। न्याय-पद्धति की मौजूदा वक्र-स्थिति को दूर किया जायगा। भारतीय दण्डविधान की दफा १०७, १०९, ११७, १४४, १५१ को खत्म कर दिया जायगा। ऐसे सभी कानूनों को हटाने के लिए यह दल संघर्ष करेगा, जो राज्य को इस लायक बनाते हैं कि वह नागरिकों को बिना मुकदमा लड़े नागरिक-स्वतंत्रता से वंचित कर देता है। फाँसी की सजा समाप्त कर दी जायगी।

प्रजासमाजवादी दल : न्यायपालिका को कार्यपालिका से पूर्णरूपेण अलग किया जायगा।

कृषि और भूमि-सुधार

कांग्रेस-(सत्तारूढ़) : किसानों की हालत सुधारी जायेगी और ऐसी परिस्थिति पैदा की जायेगी ताकि वे अच्छा जीवन व्यतीत कर सकें। इसके लिए कृषि में वैज्ञानिक उपकरणों के इस्तेमाल को प्रोत्साहन दिया जायेगा। पाँच साल के अंदर सिंचाई की सभी योजनाओं को पूरा करके सबको सिंचाई की सुविधा दी जायेगी। किसानों को ट्यूब-वेल और कुएँ खोदने में मदद दी जायेगी। खाद तथा खेती के अन्य साधन बड़े पैमाने पर उचित मूल्य में उपलब्ध कराये जायेंगे। किसानों को सहकारी तथा अन्य बैंकों द्वारा आवश्यकता पड़ने पर कर्ज दिलाने की व्यवस्था की जायेगी। किसानों को महाजनों के चंगुल से और शोषण से बचाया जायेगा। कृषि उत्पादन के बाजार का विकास उत्पादनकर्ताओं के हित में होगा। कृषि-उत्पादन को उचित कीमत मिले, इसकी भरपूर कोशिश होगी। भारत आज कृषि-उत्पादन में उस मंजिल पर पहुँच गया है, कि अब उसे बाहर से अनाज मँगाने की जरूरत नहीं है।

कांग्रेस (सत्तारूढ़) भूमि-सुधार सम्बन्धी कानूनों पर अमल करके असीमित मिल्कियत खत्म की जायगी।

भारतीय जनसंघ : खेती लायक सभी फाजिल जमीनों को भूमिहीनों के बीच बाँट दिया जायगा जिनके पास सिंचाई या दूसरा कोई साधन नहीं है, मुख्य रूप से पिछड़ी जातियों, कबीलों और सेवा-मुक्त कर्मचारियों को। उन्हें सूद-मुक्त कर्ज दिया जायगा ताकि वे सिंचाई की व्यवस्था कर सकें। सिंचाई की अधूरी योजनाओं को जल्द पूरा किया जायेगा। जनसंघ इस बात का कायल है कि जो जोते, जमीन उसकी। केवल नाबालिग, बेवा, अपाहिज, फौज और पुलिस के लोग इसके अपवाद किये जायेंगे। यह दल बँटाईदारों की रक्षा करेगा और मालगुजारी कम करेगा। कृषि उद्योग में तरक्की लायेगा।

भारतीय साम्यवादी दल : मौजूदा ऊँची हदबंदी को समाप्त करके नयी हदबंदी के कानून बनाये जायेंगे, जो आज की अपेक्षा नीची होगी। हदबंदी की इकाई परिवार होगा। कृषि-मजदूरों, आदिवासियों और गरीब किसानों के बीच फाजिल जमीन मुफ्त में बाँट दी जायगी।

भारतीय साम्यवादी दल (मार्क्सवादी) : खेतिहर मजदूरों, दस्तकारों और गाँव के गरीबों के गुजर-बसर, काम की हालत में सुधार, मजदूरी में वृद्धि के लिए उपाय किए जायेंगे। बड़े जमींदारों की अतिरिक्त जमीन गाँव के गरीबों और भूमिहीनों में बाँटी जायगी। गरीब और मध्यम दर्जे के किसानों की खेती में तरक्की लाने के लिए सभी सुविधाएँ दी जायेंगी। अन्न-संग्रह, मूल्य-निर्धारण की नीति, सोनहो आने इस तरह की जायगी कि एक ओर गरीब तथा मध्यम दर्जे के किसानों को तथा दूसरी ओर साधारण खरीददारों को फायदा पहुँचे।

स्वतंत्र पार्टी : कृषि भारत का सबसे बड़ा उद्योग है और इसे प्राथमिकता दी जायेगी। किसानों की मिल्कियत और पारिवारिक खेती उत्पादन की दृष्टि से सबसे अधिक कारगर पद्धति साबित हुई है, और सामाजिक तौर से कृषि का एक अच्छा तरीका विकसित हुआ है। इस पद्धति को कमजोर नहीं किया जायगा। साथ ही साथ भूमि-सुधार का काम तेजी से पूरा किया जायगा।

संयुक्त समाजवादी दल : देश की उन्नति उस समय तक नहीं हो सकती, जब तक कृषि में मौलिक परिवर्तन नहीं होगा। इस पर विशेष ध्यान देना होगा। आर्थिक दृष्टि से जो जमीनें घाटे की हैं, उन पर मालगुजारी खत्म की जायेगी। पारिवारिक मिल्कियत की हदबन्दी आर्थिक आय की तिगुनी सीमा तक की जायगी। सभी फाजिल और परती सरकारी और गैर-सरकारी जमीनें भूमिहीन मजदूरों और खेतिहर मजदूरों में बाँट दी जायेंगी। भूमि पानेवाले को, किसानों को बिना कर्ज या कम सूद पर कर्ज दिया जायेगा। परती जमीनों को खेती लायक बनाने के लिए, सिंचाई की सुविधा बढ़ाने के लिए बेकारों और कृषि-मजदूरों की भूमि-सेना बनायी जायेगी। वस्तुओं की कीमत के बारे में एक नीति बनायी जायेगी, ताकि औद्योगिक-उत्पादनों की कीमत कृषि-उत्पादन के अनुपात में हों।

प्रजासमाजवादी दल : दल मौजूदा भूमि कानूनों को लागू करेगा, ताकि जमीन का बराबर बँटवारा हो सके। जमीन जोतनेवाले ही उसके मालिक होंगे। जमीन की हदबन्दी परिवार की आर्थिक मिल्कियत की तीन गुना होगी। फाजिल व बेकार जमीनें भूमिहीनों और छोटे

किसानों में बाँट दी जायेगी। बीज, खाद, बिजली, सिंचाई, कर्ज इत्यादि की सुविधाएँ छोटे किसानों तक पहुँचायी जायेंगी। मालगुजारी खत्म कर दी जायेगी और भूमि-कर लगाया जायेगा। बेदखली रोकी जायेगी।

श्रम और उद्योग

कांग्रेस (संगठन) 'पब्लिक' और 'प्राइवेट सेक्टर' इस प्रकार से चलाये जायेंगे कि उनकी एक समाजवादी दिशा बन सके, न कि उनका विकास पूंजी की पूंजी के रूप में हो। स्वायत्त निगमों के रूप में इनका विकास होना चाहिए। लाइसेन्स देने का काम एक अर्ध-स्वायत्त बोर्ड पर छोड़ दिया जायगा। मजदूरों के लिए उचित मजदूरी और सामूहिक सौदे-बाजी की इजाजत हमारे प्रजातंत्र में है, परन्तु वह नाकाफी है। मजदूरों को व्यवस्था में भाग लेने का अवसर दिलाया जायगा।

कांग्रेस (सत्तारूढ़) सन् १९६१ में ही कांग्रेस ने यह बात मान्य की थी कि औद्योगिक विकास के किसी भी कार्यक्रम में 'पब्लिक सेक्टर' का महत्त्व अधिक होगा, क्योंकि वह जनता का होता है। इसे इस प्रकार से संगठित किया जायगा, ताकि उसमें अधिक-से-अधिक पूंजी लगायी जा सके। वह उचित मजदूरी की नीति अपनायेगा, जिससे उत्पादन बढ़े और उसीके अनुपात में मजदूरी भी बढ़े, व्यवस्था में मजदूरों की भागीदारी हो। 'प्राइवेट सेक्टर' भी होंगे, परन्तु उनका फैलाव अधिक-से-अधिक लोगों तक होगा।

भारतीय जनसंघ उद्योग की बिगड़ी हुई स्थिति को सुधारने के लिए उद्योग का लाइसेन्स देने का अधिकार एक स्वायत्त-शासी संगठन के हाथ में दे दिया जायगा, जो संसद के प्रति उत्तरदायी होगा। जिस उद्योग में विदेशी मुद्रा की आवश्यकता नहीं होगी, उस पर से लाइसेन्स खत्म कर दिया जायगा। इससे एकाधिकार खत्म होगा और उद्योग आम आदमी के हाथों तक पहुँचेगा। उद्योग को मिल्कियत के बारे में नीति निर्धारित करने के लिए दल एक 'राष्ट्रीय आयोग' नियुक्त करेगा। विदेशी बैंकों का राष्ट्रीयकरण करेगा। 'पब्लिक सेक्टर' को राजनीतिज्ञों और नौकरशाहों से मुक्त दिलायेगा और उसे उनके हाथ में सौंपेगा, जो इस क्षेत्र में कुशल और अनुभवी हों। जनसंघ शहरी मजदूरों की नौकरी, आवश्यकतानुसार मजदूरी की जिम्मेदारी लेगा। गुप्त मतदान द्वारा मजदूर-संगठन को मान्यता देगा। मालिकों और मजदूरों की अनुमति से ४ से २० फीसदी तक के 'बोनस' को फिर से जाँचा जायगा।

भारतीय साम्यवादी दल (मार्क्सवादी) व्यक्तिगत विदेशी एकाधिकारवादियों के कारोबार और उनकी सम्पत्ति का राष्ट्रीयकरण किया जायगा। उन सभी समझौतों को समाप्त किया जायगा जो राष्ट्रीय हित के विरुद्ध हैं। देशी-विदेशी पूंजीपतियों के सारे उद्योगों का राष्ट्रीयकरण किया जायगा। मजदूरों की हड़तालों तथा अन्य लोकप्रिय लड़ाइयों को दबाने का सिलसिला बन्द किया जायगा। इस तरह के संघर्षों में गिरफ्तार बन्दियों को छोड़ा जायगा, मुकदमे वापस लिये जायेंगे।

प्रजासमाजवादी दल 'पब्लिक और कोआपरेटिव', दोनों सेक्टरों में श्रमिक बराबर के साथी होंगे, और कारपोरेशन में उन्हें प्रतिनिधित्व प्राप्त होगा। उद्योग की योजना और व्यवस्था में श्रम-कौंसिल और उत्पादन-समितियों के द्वारा श्रमिकों का सहयोग प्राप्त किया जायगा। यह दल स्वतन्त्र और सामूहिक सौदेबाजी को बढ़ायेगा। स्वतन्त्र और प्रजातांत्रिक ट्रेड यूनियन के विकास में मदद करेगा। आवश्यकतानुसार मजदूरी, बुढ़ापे की पेंशन, श्रमिकों के लिए मकानों की व्यवस्था करेगा।

'पब्लिक सेक्टर' को सुधारने के लिए उसे स्वायत्त निगम के रूप में बदल दिया जायगा जिसमें श्रमिकों और उपभोक्ताओं का प्रतिनिधित्व होगा। रोजाना के इस्तेमाल की चीजों के उत्पादन को 'पब्लिक सेक्टर' में ले लिया जायगा।

स्वतंत्र पार्टी . बेकारी और महँगाई की समस्या का समाधान बुनियादी तौर पर भारी और बड़े पैमाने के उद्योगों को बढ़ाकर किया जायगा, ताकि साल में कम-से-कम विकास की दर ६ प्रतिशत हो सके। कृषि, व्यापार, उद्योग को बढ़ावा देने की सरकारी नीति होगी, ताकि कड़ी मिहनत, साहसिक काम की प्रेरणा मिले। एकाधिकार को व्यावसायिक प्रतिद्वन्द्विता से रोका जायगा, और आवश्यक होने पर उसके लिए कानून बनाया जायगा।

शिक्षण और स्वास्थ्य

कांग्रेस (संगठन) गलत योजनाओं के कारण आज बेकारी की समस्या हमारे सामने विकट है। यह दल बेकारी मिटाने के लिए बड़े पैमाने पर एक अभियान चलायेगा। प्रचलित परिस्थिति के अनुसार समाधानकारी शिक्षा-व्यवस्था की जायगी, और उत्पादन-वृद्धि के लिए अन्य उपाय किये जायेंगे। भारत का हर नागरिक स्वस्थ रह सके, समाज के कार्यों में भाग ले सके, बच्चों का स्वास्थ्य सुधरे, इसके लिए प्रभावशाली कार्यक्रम चलाये जायेंगे। अस्पतालों की हालत सुधारी जायगी।

कांग्रेस (सत्तारूढ़) अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा की व्यवस्था सब बच्चों के लिए की जायगी, और ऊँची शिक्षा को देश की आवश्यकतानुसार बदला जायेगा। छोटी उम्र के बच्चों को अच्छा-से-अच्छा भोजन देने का कार्यक्रम बनाया जायगा।

भारतीय जनसंघ जनसंघ शिक्षा-पद्धति में सुधार लायेगा, ताकि राष्ट्रीय-मूल्य मजबूत हो सकें और आधुनिक भारत की आवश्यकताएँ पूरी हो सकें। १४ साल तक के बच्चों को शिक्षा मुफ्त दी जाय। शिक्षा में नैतिक और राष्ट्रीय गुणों का विकास किया जायगा, ताकि बच्चों में राष्ट्र-प्रेम बढ़े, अपने देश के लोगों और अपनी परम्पराओं के प्रति आदर पैदा हो। जनसंघ इन उद्देश्यों की

पूर्ति के लिए पाठ्य-पुस्तकों में सुधार लायेगा।

भारतीय साम्यवादी दल : शिक्षा की वर्तमान पद्धति में पूर्ण परिवर्तन की आवश्यकता है, ताकि देश को धर्म-निरपेक्ष और वैज्ञानिक बुनियाद मजबूत हो। शिक्षा-पद्धति में और उसकी व्यवस्था में विद्यार्थियों का महत्वपूर्ण स्थान होगा। कृषि और प्रौद्योगिकी की उन्नति के लिए विशेष प्रयत्न किया जायगा।

संयुक्त समाजवादी दल : शिक्षा में समानता होनी चाहिए। प्राथमिक शिक्षा के सभी स्कूल, वेतन, इमारत और खर्च के लिहाज से समान होने चाहिए। खर्चीले और अंग्रेजी माध्यम के स्कूल छः महीने के अन्दर-अन्दर बन्द कर दिये जायेंगे। माध्यमिक तक शिक्षा मुफ्त दी जायगी। बेकारी दूर करने के लिए शिक्षित लोगों की एक सेना बनायी जायगी, जो दस साल में पूरी आबादी को शिक्षित बना दे। शिक्षा-पद्धति में ऐसा परिवर्तन किया जायगा कि शिक्षा देश की परिस्थितियों और आवश्यकताओं के अनुसार हो। विद्यार्थियों के प्रतिनिधियों को विद्यालयों और महाविद्यालयों की व्यवस्था में स्थान दिया जायेगा।

प्रजासमाजवादी दल : शिक्षा-पद्धति बदली जायेगी, ताकि वह युवकों की आवश्यकताओं और अभिलाषाओं के अनुकूल बने। दकियानूसी मूल्यों और विश्वासों से मुक्ति दिलाने के लिए पाठ्य-क्रमों में परिवर्तन किये जायेंगे। शिक्षा पूर्ण वैज्ञानिक होगी। मुफ्त और अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा की व्यवस्था जल्द-से-जल्द की जायेगी। शिक्षण-संस्थाओं में विद्यार्थियों को व्यवस्था के काम में महत्वपूर्ण स्थान दिया जायगा। वोट देने की उम्र १८ साल की कर दी जायेगी।

विषमता और बेकारी

कांग्रेस (संघटन) : बेकारी दूर करने के लिए सबसे पहले प्रयत्न किया जायगा। हर स्वस्थ व्यक्ति, जो काम करने योग्य है, उसे पांच साल के अन्दर काम अवश्य मिलेगा। बेकारी दूर करने के लिए छोटे-छोटे उद्योगों की तरफ ध्यान दिया जायगा, जिससे अधिक-से-अधिक लोगों को काम मिले। दल मुख्य रूप से छोटे व्यापारियों, छोटे कारीगरों तथा दूसरे कामगारों को आवश्यक सहायता और प्रोत्साहन देगा। एक राष्ट्रीय बेकारी-कोष का निर्माण किया जायगा, ताकि देश के हर नागरिक के लिए काम उपलब्ध करने में मदद दी जा सके। देहाती क्षेत्रों में बिजली पहुंचाने और वैज्ञानिक उद्योग-धंधे बढ़ाने की कोशिश की जायगी।

कांग्रेस (सत्तारूढ़) : बेकारी आज की सबसे बड़ी चिन्ता का विषय है। पंचवर्षीय योजना में इस समस्या को बहुत महत्व दिया गया है। परन्तु एक शक्तिशाली 'सेवा-नियोजन' कार्यक्रम के लिए एक मजबूत आर्थिक आधार का होना जरूरी है। जल्द ही बेकारी दूर करने के लिए देश भर में कार्यक्रम चलाये जायेंगे। स्वावलम्बी योजनाओं के लिए कर्ज दिये जायेंगे। गांवों और नगरों में निर्माण के जो काम अधूरे हैं, या शेष हैं, उनको पूरा करने का काम बहुत शीघ्र शुरू किया जायेगा।

भारतीय जनसंघ : जनसंघ पूर्ण रूप से बेकारी दूर करने की कोशिश करेगा, पढ़े-लिखे लोगों को काम पर लगायेगा। सभी काम श्रम की बुनियाद पर होंगे। कृषि और उसके साधनों में सुधार किया जायेगा।

भारतीय साम्यवादी दल : तालाबंदी, छँटनी आदि पर पाबंदी लगायी जायेगी। मजदूरों, सरकारी नौकरों और दूसरे प्रकार के मेहनतकशों के लिए आवश्यकतानुसार मजदूरी और बेकार लोगों को भत्ता दिया जायेगा।

स्वतंत्र पार्टी : बेकारी की समस्या के समाधान के लिए उत्पादन के कामों को देश में बढ़ाना, देहाती क्षेत्रों में लघु-उद्योगों के लिए बाजार बनाना, देश के विभिन्न भागों में यातायात की असुविधा को दूर करना, गांवों में कृषि-यंत्र उपलब्ध करना, दैनिक व्यवहार में आनेवाली चीजों के लिए सहायक उद्योग और उसके लिए बाजार तैयार करना, और जनता के रहन-सहन का दर्जा ऊंचा करना इस दल का लक्ष्य है।

संयुक्त समाजवादी दल : एक भूमि-सेना और दूसरी शिक्षा-सेना बनाने पर यह दल जोर देगा, ताकि बेकारी दूर हो। इस प्रकार बेकार बैठे हुए युवकों को शिक्षा और कृषि के कामों में लगाया जा सकेगा। देहातों में उपलब्ध कच्चे माल के आधार पर व्यापक पैमाने पर 'पब्लिक इन्डस्ट्रीज' खड़े किये जायेंगे।

प्रजासमाजवादी दल : यह दल आज की परिस्थिति में 'ऑटोमेशन' के विरुद्ध है, क्योंकि उससे बेकारी और बढ़नेवाली है। कुटीर उद्योगों, और कृषि और उस पर आधारित उद्योगों को बढ़ावा देने का काम किया जायगा। बेकारी और बुढ़ापे के भत्ते की व्यवस्था की जायगी।

अच्छा और स्वच्छ प्रशासन

कांग्रेस (संघटन) : यह दल साफ-सुथरी प्रशासनिक व्यवस्था करना चाहता है। निरन्तर गिरी हुई प्रशासनिक स्थिति को सुधारने के लिए कुछ दिनों पूर्व जो आयोग नियुक्त किया गया था, उसकी सिफारिशों पर ईमानदारी से अमल किया जायगा।

भारतीय जनसंघ : जो लोग धर्म या भाषा की बुनियाद पर राष्ट्र की अखंडता को खतरे में डालने या चुनौती देते हैं, उन्हें सख्ती से दबा दिया जायगा।

भारतीय साम्यवादी दल : मतदान की उम्र १८ साल कर दी जायगी। लोकसभा, विधान-सभा एवं अन्य संस्थाओं के चुनावों की मौजूदा पद्धति को बदल दिया जायगा और अनुपातिक प्रतिनिधित्व की पद्धति चालू की जायगी। लोकसभा और विधान-सभाओं में मन्त्रिमण्डल चुने गये प्रतिनिधियों की संख्या के १०% की सीमा में ही होने चाहिए।

संयुक्त समाजवादी दल : दल की मान्यता है कि इस बार केन्द्र में संयुक्त

सरकार बनेगी। कृषि और कृषि-उत्पादन के सम्बन्ध में एक ठोस नीति अपनायी जायगी। अनावश्यक जोत की जमीन पर अभी तक जिन राज्यों में लगान-माफी नहीं हुई है, उन राज्यों पर ऐसा करने के लिए दबाव डाला जायगा।

प्रजासमाजवादी दल : प्रशासन में मौलिक रचनात्मक परिवर्तन किये जायेंगे। एकाधिकार को तोड़ने के लिए कारगर कार्रवाई की जायगी।

केन्द्र और राज्य सम्बन्ध

कांग्रेस (संगठन) केन्द्र तो मजबूत होना ही चाहिए, लेकिन साथ ही उसे राज्यों के साथ के सम्बन्धों में निष्पक्ष भी होना चाहिए। आज ऐसा नहीं है। सीमा के झगड़ों को सुलझाने के लिए एक निष्पक्ष संगठन किया जायगा। राज्यपाल को भी निष्पक्ष रखने के लिए उचित कार्रवाई की जायगी।

भारतीय जनसंघ संविधान की धारा २६३ के अन्दर एक अन्तर्राज्यीय निगम बनाया जायगा, जो केन्द्र राज्य के सम्बन्धों की समस्याओं पर राय देगा। स्थानीय असंतुलन के कारण राज्य की माँग करनेवाले सभी मामलों को भी इस निगम के माध्यम से हल किया जायगा। अभी एक के बाद एक राज्य बनाते जाने का जो सिलसिला चल रहा है, वह गलत है। दिल्ली को पूर्ण राज्य का दर्जा न देकर अन्याय किया गया है।

भारतीय साम्यवादी दल संविधान में परिवर्तन करके राष्ट्रीय एकता के अनुकूल राज्यों को और अधिक अधिकार दिये जायेंगे। पिछड़ी और आदिम जातियों, कबीलों के अधिकारों की हिफाजत की जायगी। उनके समुचित विकास के लिए राज्यों के अन्दर आदिवासीबहुल क्षेत्रों में स्वायत्तशासित जिले बनाये जायेंगे।

भारतीय साम्यवादी दल (मार्क्सवादी) : राज्यपाल का पद समाप्त किया जायगा। राज्यों पर राष्ट्रपति-शासन लादने की व्यवस्था खत्म करने के लिए कदम उठाये जायेंगे। राज्यों और केन्द्र के बीच अधिकारों और कर्तव्यों का स्पष्ट पुनर्विभाजन किया जायगा। राज्यों को अधिक साधन दिये जायेंगे। केन्द्र द्वारा संचित करों का ७५ प्रतिशत भाग राज्यों को दिया जायगा। अखिल भारतीय सेवाओं सहित सभी स्तरों के अधिकारियों पर राज्य सरकारों का नियंत्रण रहेगा।

संयुक्त समाजवादी दल केन्द्र और राज्यों के सम्बन्धों में बुनियादी परिवर्तन अनिवार्य है। आज अधिक शक्ति केन्द्र के पास है, इसलिए राज्यों को प्रयोग करने और विकास-सम्बन्धी प्रयत्न करने की सुविधाएँ नहीं हैं। विकास के लिए कोष आदि के मामले में राज्यों को आत्म-निर्भर बनाने की कोशिश की जायगी। राज्य इसके लिए समुचित रीति से कोष एकत्र कर सकेंगे। बड़े पदों पर नियुक्ति भूतत्व-सिद्धान्त के अनुसार हुआ करेगा।

प्रजासमाजवादी दल केन्द्रीय उद्योग-योजनाओं के बारे में ऐसी नीति अपनायी जायगी, जिसके अनुसार राज्य को अपने जन, धन और अन्य साधनों के इस्तेमाल के अधिक अवसर उपलब्ध होंगे। इससे विकास का क्रम संतुलित होगा और केन्द्र राज्य सम्बन्ध बिगड़ने नहीं पायेंगे।

प्रतिरक्षा

कांग्रेस (सत्तारूढ़) भारतीय सेना को और अधिक मजबूत बनाया जायगा, लेकिन भारत किसी सैनिक-संधि में शामिल नहीं होगा।

भारतीय जनसंघ भारत को चीन और पाकिस्तान से खतरा है। उनके मुकाबिले के लिए सेना को मजबूत किया जायगा। उसे आधुनिक शस्त्रास्त्रों से सुसज्जित किया जायगा, परमाणविक शस्त्र बनाये जायेंगे। प्रतिरक्षा-उत्पादन में भारत को पूर्ण आत्म-निर्भर बनाया जायगा। सामुद्रिक सीमा-रक्षा के लिए जल-सेना को जितना भी हो सके सशक्त जल-सेना के रूप में विकसित किया जायगा। सीमाओं पर सेवामुक्त सैनिकों को बसाया जायगा। महाविद्यालयों में प्रतिरक्षा-कोर्स शुरू किये जायेंगे, और सारे देश में राइफल क्लब खोले जायेंगे। पाकिस्तानी घुसपैठ को रोका जायगा तथा पहले के घुस-पैठियों को भगाया जायगा।

प्रजासमाजवादी दल परम्परागत और परमाणविक शस्त्रों के मामले में देश को आत्म निर्भर बनाया जायगा। सीमाओं पर प्रतिरक्षा को दूसरी पंक्ति के रूप में कुछ बस्तियाँ बसायी जायेंगी।

विदेश-नीति

कांग्रेस (संगठन) सभी देशों से मैत्री की नीति अपनायी जायगी। वर्तमान बिगड़े सम्बन्ध सुधारे जायेंगे। पश्चिम और दक्षिण-पूर्व के देशों से घनिष्ट सम्बन्ध स्थापित किया जायगा। पाकिस्तान के साथ मित्रता का प्रयास किया जायगा। लेकिन किसी भी हालत में सीमा का विदेशियों द्वारा अतिक्रमण बरदाश्त नहीं किया जायगा।

कांग्रेस (सत्तारूढ़) पिछले २४ सालों से जो नीति अपनायी जा रही है, उसे कायम रखा जायगा। विश्वशांति स्थापित हो, उपनिवेशवाद और रंगभेद का अन्त हो, इसकी कोशिश की जायगी। तटस्थता की नीति का पालन किया जायगा। पाकिस्तान और चीन से सम्बन्ध सुधारने की कोशिश की जायगी।

भारतीय जनसंघ यह एक स्वतंत्र विदेश-नीति का कायल है। मौजूदा सरकार पर रूस का प्रभाव बढ़ता जा रहा है, जो अनुचित है। भारत की रूस के साथ भी मैत्री होनी चाहिए, लेकिन रूस को भारत की निजी मामलों में दखल नहीं देना चाहिए। अमेरिका द्वारा पाकिस्तान को हथियार दिया जाना भी अनुचित कदम है। भारत को राष्ट्रकुल से अलग कर लिया जायगा, दक्षिण एशिया से अधिक निकटता बढ़ायी जायगी, और विदेश में रह रहे भारतीयों के हितों की रक्षा की जायगी।

भारतीय साम्यवादी दल : रूस तथा दूसरे समाजवादी देशों से मैत्री और सह-

योग का सम्बन्ध बढ़ाया जायगा। राष्ट्रकुल से भारत को अलग कर लिया जायगा और चीन के साथ सम्बन्ध सुधारने की सम्भावनाओं का पता लगाया जायगा।

स्वतंत्र पार्टी : पाकिस्तान से दोस्ती की जायगी, यदि उसका भी इस ओर झुकाव होगा तो।

भारतीय साम्यवादी दल (मार्क्सवादी): साम्राज्यवादी शक्तियों द्वारा नवस्वतंत्र देशों के आर्थिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक जीवन और सैनिक-क्षेत्र में घुसपैठ और हस्तक्षेप के विरुद्ध साम्राज्यवाद विरोधी शक्तियों—खासकर अफ्रीका, एशिया के देशों के संघर्षों को संगठित करने में भारत पहल करेगा। चीन जनवादी गणराज्य और पाकिस्तान के सम्बन्धों को सामान्य बनाने के लिए सौहार्दपूर्ण पहल की जायगी। राष्ट्र के सामाजिक और सांस्कृतिक जीवन में हस्तक्षेप करनेवाले समझौतों और उनकी शर्तों को रद्द किया जायगा।

संयुक्त समाजवादी दल : भारतीय विदेश-नीति बहुत कमजोर रही है। इसे मजबूत बनाने के लिए भारत को राष्ट्रकुल से अलग हटाया जायगा। यह कोशिश की जायगी कि तिब्बत को स्वतंत्रता मिले या कैलाश, मानसरोवर, और ब्रह्मपुत्र को भारत-चीन की सीमा मान लिया जाय। नेपाल, सिक्किम और भूटान की प्रजातांत्रिक शक्तियों को मजबूत किया जायगा। पड़ोसी देशों के साथ केवल राजनीतिक स्तर पर ही नहीं, जन-स्तर पर घनिष्ठता बढ़ायी जानी चाहिए। यह दल भारत-पाकिस्तान के लोगों को एक ही राष्ट्र का मानता है, जिसे कृत्रिम बँटवारे ने दो राष्ट्र में विभाजित कर दिया है।

प्रजासमाजवादी दल : भारत की एक स्वतन्त्र, प्रगतिशील विदेश-नीति होनी चाहिए, जो सभी राष्ट्रों के बीच शक्ति और स्वतन्त्रता की कायम हो। साथ ही अपने राष्ट्र के हित में जिसकी जड़ें गहरी हो। हर प्रकार की सैनिक-संधि से भारत को अलग रखा जायगा। तटस्थ होते हुए भी हर घटना के प्रति उसके औचित्य-अनौचित्य को देखकर नीति तय की जायगी। यह दल पुराने तथा नये साम्राज्यवाद से पीड़ित तथा अभी तक गुलाम लोगों के प्रति पूरी हमदर्दी और चीनी विस्तारवाद का विरोध जाहिर करता है। साथ ही, संयुक्त राष्ट्रसंघ को मजबूत बनाने पर जोर देता है। दल की मान्यता है कि हिन्द महासागर को राजनीतिक हस्तक्षेप के लिए अड्डा नहीं बनाने दिया जायगा। अरब देशों के साथ-साथ इसराईल से भी दोस्ती कायम की जायगी।

प्रस्तुतकर्ता :

—सैयद मुस्तफा कमाल

—रामचन्द्र राही

मतदाता की अपेक्षाएँ

इस देश के करोड़ों मतदाता भिन्न भिन्न पक्ष या उम्मीदवार के कार्यक्रम और विचार को अच्छी तरह समझने के बाद ही यह तय करेंगे कि वे किसको मत देंगे। फिर भी हम मतदाता सब उम्मीदवारों से कम से-कम इतनी अपेक्षाएँ तो रखते ही है —

इस्तीफा देकर ही पक्ष-परिवर्तन करें

(१) सबसे पहली बात पक्ष-परिवर्तन की है। क्योंकि पिछले चुनाव में सैकड़ों विजयी उम्मीदवारों ने इसका कड़ुवा अनुभव इस देश को कराया है। यह हमारी दृढ़ मान्यता है कि एक पक्ष (या निर्दल) के उम्मीदवार के रूप में चुनाव में जीतनेवाले कोई भी संसद-सदस्य (या विधानसभा सदस्य) बाद में अगर दूसरे पक्ष में जाना चाहें, तो उनको पहले उस स्थान से निश्चित ही इस्तीफा देना चाहिए, जहाँ की जनता ने उनको चुनकर भेजा है। उसके बाद नये पक्ष के उम्मीदवार के रूप में उन्हें उप-चुनाव में खड़ा होना चाहिए। इस तरह न करनेवाले उम्मीदवार चाहे बहुत बड़े स्थान पर क्यों न रहे हों, पर वे मतदाताओं से द्रोह और विश्वासघात ही करते हैं, इस विषय में हमारे मन में जरा भी शंका नहीं है। इसलिए एक बात एकदम स्पष्ट है कि १९६७ के चुनाव के बाद जिन सैकड़ों चुनाव-विजेताओं—आये राम-गये राम—ने संसद या विधानसभा में दल बदल किया है (कइयों ने तो एक से भी अधिक बार) उनमें से किसीको भी इस चुनाव में हम मत नहीं देंगे। जिन्होंने उपर्युक्त नियमानुसार दल-बदल के साथ-साथ अपने पद से भी इस्तीफा दिया हो, ऐसे तो शायद ही कोई महापुरुष होंगे। हम जानते हैं कि हमारी, यानी जनता की, याददाश्त बहुत कम है। कितने ही दल-बदलुओं के नाम हम इन वर्षों और महीनों के बीच भूल भी गये होंगे, फिर भी उनके विश्वासघात से बना हुआ जख्म तो अब भी जनता के दिल में है। इसीलिए इस देश के जिन लोगों के दिल में हमारे हित की कामना हो उनसे हमारी नम्र विनती है कि पिछले चार साल की फाइलों में से ऐसे दल-बदलुओं के नाम ढूँढ-ढूँढ़कर इस समय जनता के सामने रखें। मतदाता स्वयं भी ऐसे लोगों के नाम याद करके समाचार-पत्र में 'पाठकों के पत्र' स्तम्भ के द्वारा जाहिर करें।

(२) इतना तो भूतकाल के लिए। अब जो लोग चुनाव में खड़े हो रहे हों उनसे भी हम ऐसी स्पष्ट घोषणा करवाना चाहते हैं कि चुनाव के बाद कभी भी यदि वे पक्ष-परिवर्तन करना चाहेंगे तो तुरन्त ही संसद से इस्तीफा देने को प्रामाणिकता दिखायेंगे। जाहिर में ऐसा वचन मतदाताओं को न देनेवाले किसी भी उम्मीदवार को हम अब मत नहीं ही देंगे ऐसा सब दल याद रखें। (इतना स्पष्ट करें कि १९६७ में कांग्रेस पक्ष से छूटे के पीछे जीतनेवाले किसी भी सदस्य को उस संस्था के विभाजन के बाद पुरानी कांग्रेस से नयी या नयी से पुरानी में शामिल हुए हों तो उनको अभी दल-बदलू नहीं कहेंगे लेकिन अब किसी एक कांग्रेस से चुनाव जीतकर कल नयी-पुरानी कांग्रेस में आना-जाना करें तो उनको दल बदलू ही कहा जायेगा।)

प्रतिनिधि सभागृह के अनुशासन का पालन करें

(३) संसद के कई सदस्यों में इतना भी सामान्य सद्व्यवहार नहीं होता है कि उनको सभागृह में अध्यक्ष की आज्ञा का पालन करना चाहिए। यह बात हम लोगों को बहुत ही चुभती है।

अध्यक्ष से इजाजत मिले तभी बोलना, वे जब कहें तब तुरन्त ही बोलना बन्द करके बैठ जाना और कभी सभागृह से बाहर निकाल दें तो भी सविनय चले जाना—इतने सरल अनुशासन का भी पालन न कर सकनेवाले मनुष्य को संसद में या किसी भी छोटी लोकशाहीयुक्त संस्था में जाने लायक नहीं मान सकते। ऐसे सदस्यों के अशोभनीय व्यवहार के कारण जगत की सबसे बड़ी इस लोकशाही में संसद का हाल कभी मछलीबाजार से भी बुरा बनता हुआ देखकर हम कई बार गहरी वेदना का अनुभव करते हैं। पचपन करोड़ की आबादी के सार्वभौमत्व की प्रतीक रूप संसद का इस तरह का अपमान सहने को हम मतदाता हर्गिज तैयार नहीं हैं। इसलिए हमारी माँग है कि प्रत्येक उम्मीदवार इस बार जाहिर में ऐसा वचन दे कि संसद में जाने के बाद वे अध्यक्ष की आज्ञा का पालन करेंगे। यद्यपि, अध्यक्ष भी कभी भूल कर सकते हैं, लेकिन उस भूल-निवारण के लिए संसद की कार्यवाही में उचित कदम उठा सकते हैं— धाँधली करके देश की सर्वोच्च प्रजा-प्रतिनिधि सभा का कामकाज स्थगित नहीं ही किया जा सकता।

उम्मीदवार अपनी आय तथा मिल्कियत की घोषणा करें

(४) संसद-सदस्य का वेतन-भत्ते का सवाल भी महत्त्व का है। आज उनको प्रतिमाह ५०० रु० का वेतन, और जितने दिन संसद में उपस्थित रहें उतने दिन का प्रतिदिन ५१ रु० के हिसाब से भत्ता मिलता है। देश भर में मुफ्त में रेल-यात्रा करने के लिए प्रत्येक सदस्य को प्रथम दर्जे का और उनके एक साथी को तीसरे दर्जे का पास मिलता है। संसद की बैठक के समय अपने चुनाव-क्षेत्र और दिल्ली के बीच दो से चार बार हवाई जहाज की यात्रा वे मुफ्त में कर सकते हैं। इसके अलावा भी अपार मुफ्त सुविधाएँ उनको प्राप्त हैं। जिस देश में २१ करोड़ लोगों की आय महीने में पूरे २५ रु० भी नहीं है, उसमें जनता द्वारा चुने हुए

प्रतिनिधियों के लिए इतनी सुविधाएँ दे, अगर जरूरी है तो। लेकिन संसद-सदस्य पूरी निष्ठा से अपना काम करें और इन सुविधाओं का निजी-स्वार्थ के लिए नाजायज लाभ न उठायें। इतनी अपेक्षा रखने का जनता को अधिकार है। इसलिए हम चाहेंगे कि प्रत्येक उम्मीदवार अपनी वर्तमान आय तथा अपने परिवार की मिलकियत की घोषणा करें और चुनाव में जीतने के बाद भी हर साल इसको प्रकट करते रहें। इसके अतिरिक्त, संसद-सदस्यों के विशेषाधिकारों के बारे में भी कुछ अतिशयोक्ति भरे खयाल भी कुछ सदस्य रखते हैं ऐसा हमको महसूस हुआ है। सदस्यों के जो भी विशेषाधिकार हैं वे सब संसद-गृह के अन्दर रहकर उनको भुगतने होते हैं और वह भी अध्यक्ष की आज्ञा की मर्यादा में रहकर। उसके अलावा संसद-गृह के बाहर तो उन माननीय सदस्यों के वाणी-व्यवहार के अधिकार अन्य नागरिकों के समान ही हो सकते हैं। इसलिए संसद के बाहर तो एक अदने नागरिक से विशेष कोई भी अधिकार उनको भोगने नहीं हैं, ऐसी स्पष्ट समझ के साथ ही उम्मीदवार हमसे मत माँगने आये।

अपने कार्यक्रम की बात करें

(५) चुनाव से पहले इन दिनों में उनके व्यवहार सम्बन्धी भी कुछ अपेक्षाएँ इन उम्मीदवारों से हम रखते हैं। वे अपनी वाणी पर संयम रखें। विरोधियों की बेलगाम निंदा करने की कला में सिद्धहस्त कुछ लोग पिछले चुनाव में विजयी बने होंगे। परन्तु अब वे दिन बीत गये यह सब उम्मीदवार अच्छी तरह ध्यान में रख लें। हमारा निवेदन है कि कोई भी उम्मीदवार अपने विरोधी को गालियाँ देने के लिए हमारे समक्ष न आयें, बल्कि अपनी योग्यता और जनता की सेवा के बारे में अपने विचार ही हमारे सामने रखें। यही उचित माना जायगा। उम्मीदवार केवल अपना भाषण देकर चले न जायें परन्तु हर सभा का आधा समय सभाजनों के सवालों के जवाब देने के लिए रखें। यह भी बहुत जरूरी है। इस राष्ट्र के सामने जो बड़ी-बड़ी समस्याएँ हैं उनको एक ही रात में सुलझा देनेवाली जादुई छड़ी उनके पास है ऐसा हास्यास्पद दावा कोई पक्ष या उम्मीदवार हमारे सामने न करे। दूसरी ओर, वे खुद नहीं जीतेंगे और विरोधी सत्ता पर आयेंगे तो इस मुल्क का एक या दूसरे ढंग का सत्यानाश हो जायेगा, ऐसा बचकाना भय भी हमको कोई न दिखायें।

कुछ और बातों का ध्यान रखें

चुनाव-प्रचार के समय अपने दीवाल-पोस्टरों या नारों से हमारे मकानों की दीवारें बिगाड़ने वाले अथवा रास्तों पर लाउडस्पीकरों के द्वारा हमारे घरों, शिक्षण-संस्थाओं और अस्पतालों की शांति को नष्ट करनेवाले उम्मीदवार हमको अत्यन्त पीड़ादायक लगते हैं। धर्म या जात-पाँत के नाम पर हमसे मत माँगने आनेवाले लोगों को हम इस देश की शांति और प्रगति का बड़ा से बड़ा शत्रु मानते हैं। वैसे ही, संकुचित प्रांतीय लाभों की लालच देकर भी कोई हमारा मत माँगे नहीं। विरोधियों के प्रति हिंसा का आचरण करनेवालों को तो हम कभी भी अपना मत नहीं दे सकते।

हमारे स्वप्नों को साकार बना सकेंगे ?

सौ बात की एक बात इस देश की गरीबी है। उसको दूर करने की जादुई करामात किसी पक्ष की जेब में पड़ी हुई है, और हमें मानो जनता को तो मात्र उनको मत देकर मौज करनी है, ऐसा भ्रम फैलाने का कोई प्रयत्न नहीं करना चाहिए। हम अच्छी तरह समझते हैं कि देश की गरीबी को दूर करने के लिए हमें ही ईमानदारी से जी-तोड़ मेहनत करनी है। इस मेहनत को अब हम अच्छी तरह करना चाहते हैं। उसके फल चखने के लिए और बीस-पचीस साल राह देखने की भी हमारी तैयारी है। इस जनता ने बहुत-सी यातनाएँ सही हैं और अधिक सहेगी भी। लेकिन अपनी संतानों के लिए एक उजला भविष्य छोड़ जाना चाहती है। आनेवाले कल के लिए हमारे स्वप्नों को व्यावहारिक स्वरूप जो दे सकते हैं, और उसके लिए पसीना और खून बहाने की प्रेरणा जो बराबर दे सकते हैं, ऐसे लोकप्रिय प्रतिनिधियों को चुनकर हम इस महान राष्ट्र की संसद में उनको बिठाना चाहते हैं। इस तराजू पर तौले जाने की जिसमें हिम्मत है वही हमसे वोट माँगने आये। (मूल गुजराती से)

—मूलशंकर भट्ट

—महेन्द्र मेघाणी एवं

भारत के मतदाता

सच्चा स्वराज्य मुट्ठीभर लोगों द्वारा सत्ता हासिल करने से नहीं, बल्कि सत्ता का गलत इस्तेमाल होने पर सारी जनता द्वारा उसका प्रतिकार करने की ताकत हासिल करने से आयेगा। अर्थात् सत्ता का नियमन करने की शक्ति लोगों में आये, इस वास्ते लोक-शिक्षण की प्रक्रिया से ही सच्चा स्वराज्य अवतीर्ण होगा। लोक-स्वराज्य यानी हर व्यक्ति के 'स्वराज्य' (स्वशासन) का कुल जोड़। —महात्मा गांधी

लोकतंत्र को बचाने के लिए

जात-पाँत, धर्म-पंथ, भाषा या क्षेत्र, डंडे या पैसे के आधार पर वोट न दीजिए

मुजफ्फरपुर की डाक

रोहुआ में भू-वितरण का समारोह

रोहुआ पंचायत मुसहरी प्रखंड में विशिष्ट पंचायत है—धन की दृष्टि से, गरीबी की दृष्टि से, परम्परागत प्रभाव और दबदबे की दृष्टि से एवं दमन, शोषण, उत्पीड़न आकाश की दृष्टि से। जिले के नक्शे में रोहुआ अपना महत्व रखता है बड़े और छोटे माने जानेवालों के संघर्ष और तनाव की दृष्टि से भी। पिछले भूमि-आन्दोलन के समय से ही यहाँ बड़ी कशमकश थी। बड़ी सभाएँ, बड़ी उछल-कूद, दौड़-धूप, प्रचार और वादे। गहरा आग्रह, जोरदार तैयारी, बड़े ऊँचे और कभी न पूरे किये जानेवाले प्रलोभन। मगर निष्पत्ति के नाम पर जेल, लड़ाई, मुकदमे, उत्पीड़न और घृणा-द्वेष।

इस विषम स्थिति में जे० पी० के अभियान के कार्यकर्ताओं ने २१ सितम्बर '७० को रोहुआ ग्राम में प्रवेश किया। मिलना-जुलना, विचार-प्रचार, सभा-गोष्ठी आदि कार्य प्रारम्भ हुआ। जे० पी० की भी सभा का आयोजन हुआ और लोगों का दिल धीरे-धीरे पिघलने लगा।

श्री वैद्यनाथ प्रसाद सिंह अनुकूल हुए, भवानी बाबू अनुकूल हुए, और बाकी बाबू तो सदा अनुकूल ही रहे हैं। लम्बे समय तक गाड़ी धचका खाती चलती रही और अन्त में २७ जनवरी '७१ को रोहुआ में भूमि-वितरण का जो समारोह हुआ वह सचमुच ही अपूर्व रहा।

मुख्यमंत्री, श्री कर्पूरी ठाकुर ने बैठक की अध्यक्षता की और अपने भाषण में अपनी बड़ी स्पष्टता और गंभीरता के साथ जयप्रकाश बाबू द्वारा प्रवर्तित ग्रामस्वराज्य-अभियान की महत्ता पर प्रकाश डाला। आपने बड़े मार्मिक और हार्दिक ढंग से जयप्रकाश बाबू को बहुजन का उद्देश्य करते हुए उन्हें संत तुलसी के शब्दों में "विमल विभूति" और "साधु-चरित" बताया। आपने बड़ी स्पष्टता, दृढ़ता मगर विनम्रता से कहा कि जिन उदारहृदय भूपतियों ने आज जे० पी० द्वारा प्रवाहित करुणा और दान की धारा में पुण्य-स्नान करके दान दिया है, वे बधाई के पात्र हैं। मगर, साथ ही उन्हें यह भी स्मरण रखना चाहिए कि यह दान और करुणा की धारा का उद्गम है, विसर्जन नहीं। उन्हें अभी समाज को, गरीबों को बहुत देना बाकी है और समय की पुकार पर वे इसके लिए तैयार रहेंगे, ऐसी उनसे आशा है।

अध्यक्षजी ने इस अवसर पर बहुत संक्षेप में अपने विचार रखे। उन्होंने रोहुआ के निवासियों को धन्यवाद दिया और उन व्यक्तियों की प्रशंसा की जिन्होंने अपने गरीब ग्रामीण भाइयों को भूमिहीनता-निवारण के लिए आज १५ बीघा १० कट्ठा ९ धूर जमीन का वितरण कराया और आगे भी भूमि दान में देने की तैयारी कर रहे हैं। जे० पी० ने विशेष रूप से वैद्यनाथ बाबू की चर्चा की, जिन्होंने अपना वचन पूरा किया और आज प्रथम किस्त में ६०-६५ हजार रुपये के मूल्य की भूमि दान में उत्साह और प्रेमपूर्वक दी।

श्री वैद्यनाथ बाबू आज इतना देकर भी बड़े खुश और गद्गद् थे। जे० पी० से उन्होंने कहा, "जे० पी०, मैंने जितना दिया उससे अधिक आज प्रेम और आशीर्वाद पा लिया।" उसी प्रेम-विह्वलता में वे जे० पी० और साथियों को अपने घर भी ले गये और उत्तम आतिथ्य किया। आज की सभा में जिन व्यक्तियों ने जमीन दी, जिसका वितरण हुआ, उनके नाम इस प्रकार हैं

दाता का नाम	आदाता-संख्या	बीघा	कट्ठा	धूर
श्री वैद्यनाथ प्र० सिंह	४३	१०	०	१८
" ज्ञानेश्वर सिंह	३	१	३	६
" शालदेव सिंह	२	०	१०	०
" रामचन्द्र सिंह	१	०	१०	११
" महेश्वरी प्र० सिंह	१	०	१२	४
" बीबी बारोदन कौर कपुरा चन्द	४	२	१०	०
" भवानी प्रसाद सिंह	१	०	३	१०
	५५	१५	१०	०९

मुसहरी प्रखंड पूर्ण सिंचाई की ओर

ग्राम-विकास संगम समन्वय 'एग्राड' के नाम से प्रसिद्ध है। श्री जयप्रकाश नारायण इसके अध्यक्ष हैं। यह संस्था ग्रामीण विकास की दिशा में सक्रिय है और उन सारी ऐच्छिक संस्थाओं का संगम-स्थल है जो ग्राम-विकास के काम में लगी हुई हैं। इसका कार्यालय नयी दिल्ली में है।

इस संस्था के अध्यक्ष श्री जयप्रकाश बाबू ने जब अपने को मुजफ्फरपुर के मुसहरी प्रखंड में ग्रामस्वराज्य की सिद्धि के लिए अर्पित किया तब संस्था का यह नैतिक दायित्व हो गया कि वह भी अब नगर से दूर मुसहरी जैसे कठिन ग्रामीण क्षेत्र को चट्टान पर अपनी शक्ति-परीक्षा के लिए प्रस्तुत हो।

फलतः 'एग्राड' ने इस क्षेत्र के सर्वांगीण विकास की दृष्टि से अपना अध्ययन-कार्य प्रारम्भ किया जिसके परिणामस्वरूप विकास के प्रथम चरण के रूप में सिंचाई का मास्टर प्लान तैयार किया गया। १० हजार एकड़ भूमि को पूर्ण सिंचाई का लाभ पहुँचानेवाली इस योजना का व्यय

१ करोड़ ६९ लाख होगा। इस योजना को बनाने का काम पूरा करने के बाद अब इसकी क्रियान्विति की तैयारी चल रही है। इसी दृष्टि से 'एवार्ड' के मुख्य अभियंता श्री मन्नीलाल भट्ट और श्री गिरिधर गोपाल १६ जनवरी को मुसहरी आये और जे० पी० के साथ आपने योजना के कार्यान्वयन पर चर्चा की। १७ जनवरी को इन्होंने क्षेत्र के उन प्रमुख स्थानों का निरीक्षण किया जहाँ प्रथम चरण में योजना के कार्यारम्भ की सम्भावना मानी जाती है। इन स्थानों में मरौली, खबड़ा, वैदपुर, छाहा मन, मणिका मन, खबड़ा नाला आदि प्रमुख हैं। इन लोगों ने अपने अध्ययन के आधार पर जे० पी० से परामर्श किया तथा जिला के सिंचाई एवं विद्युत विभाग के अन्य पदाधिकारियों से कार्यारम्भ के बारे में चर्चा की।

ज्ञातव्य है कि 'एवार्ड' के इस मास्टर प्लान के कार्यारम्भ के पूर्व से ही जे० पी० यहाँ की सिंचाई-सुविधा के लिए प्रयत्नशील रहे हैं। और इन कार्य में तीव्रता लाने के लिए आपने सिंचाई, विद्युत एवं बैंक के पदाधिकारियों को समय-समय पर प्रेरित भी किया है। परिणामस्वरूप उन गाँवों में, जहाँ ग्रामस्वराज्य का अभियान चला है, लगभग ३० बोरिंग और ४८ चापाकल लगाये गये हैं। अधिकांश बोरिंग में बिजली की आपूर्ति भी जे० पी० की प्रेरणा से बिजली विभाग ने तत्परतापूर्वक कर दी है।

खबड़ा पंचायत में

पंचायत खबड़ा में कुल आठ ग्राम हैं। ६ ग्राम आबाद एवं २ बेचिरागी। ग्रामस्वराज्य का काम ग्राम चकअहमद से प्रारम्भ किया गया। यहाँ पर भूमिवान परिवार-संख्या ९ और भूमिहीन परिवार-संख्या २४ है। अब ग्राम के भूमिवान एवं भूमिहीन शत-प्रतिशत ग्रामस्वराज्य में शामिल हो गये हैं। साथ-ही-साथ इस ग्राम में तीन व्यक्तियों का अभी तक वासगीत जमीन का पर्चा नहीं बन पाया था तथा ६ परिवारों को जो पर्चा मिला था उसमें कब्जे की जमीन से कम दर्ज था। उसमें सुधार करवाया गया।

दूसरा गाँव—काजीमहमदपुर है। भूमिवान किसानों की परिवार-संख्या १० है और भूमिहीन परिवारों की परिवार-संख्या ८ है। यह ग्राम भी ग्रामस्वराज्य में शत-प्रतिशत शरीक हुआ। इस ग्राम में वासगीत पर्चे ६ व्यक्ति को नहीं मिले थे। उनकी सूची दी गयी और पर्चे दिलाये गये।

तीसरा ग्राम—भीखनपुरगाछी है जहाँ भूमिवान परिवारों की संख्या १४ और भूमिहीन परिवार-संख्या ४९ है। अब यहाँ कुल ५ परिवार बाकी रह गये हैं ग्रामस्वराज्य में शामिल होने के लिए। ९४ प्रतिशत व्यक्ति ग्रामदान में आ गये हैं। जमीन के प्रतिशत में अभी कमी है। इस ग्राम में वासगीत के नये पर्चे २८ दिये गये हैं और ३ में सुधार किये गये हैं।

चौथा ग्राम—मझौलिया है। भूमिवान परिवार-संख्या ४२ और भूमिहीन परिवार-संख्या २३९ है। अभी तक जनसंख्या एवं जमीन के प्रतिशत, दोनों ग्रामदान में साठ से ऊपर आ गये हैं। आशा है, एक-दो दिन में ही विधिवत् ग्रामदान पूरा हो जायगा। इस ग्राम में नये पर्चे के लिए ८ परिवारों की सूची तथा सुधार के लिए एक परिवार की सूची दी गयी है।

पाँचवा ग्राम—खबड़ा है। यहाँ पर भूमिवान परिवार-संख्या १०२ और भूमिहीन परिवार-संख्या ३२० है। अभी तक ७८ प्रतिशत जनसंख्या ग्रामस्वराज्य में शामिल हो चुकी है और शेष के लिए प्रयत्न जारी है। इस ग्राम में नये वासगीत के पर्चों के लिए २५ तथा सुधार के लिए २५ आवेदन-पत्र अग्रसारित किये गये हैं।

छठा ग्राम—बाजमतपुर है। यहाँ १० परिवारों के हस्ताक्षर प्राप्त हुए हैं। शेष ४६ परिवारों के हस्ताक्षर प्राप्त करने हैं। काम में सर्वश्री नन्दलाल सिंह, गुमन्त पाण्डेय, वैद्यनाथ मिश्र टोलीनायक रामसेवकजी के साथ लगे हैं।

पीरमहम्मदपुर पंचायत में

पीरमहम्मदपुर पंचायत के अब्दुलनगर (उर्फ माधोपुर) तथा खालपुर ग्रामसभा का संयुक्त बैठक १६।१।७१ को ३ बजे हरपुर दसरी में खालपुर ग्रामसभा के अध्यक्ष श्री मुनहर सिंह की अध्यक्षता में हुई, जिसमें श्री जयप्रकाश नारायण ने दुनिया में चल रही राजनीति में ग्रामदान-विचार की महत्ता पर विस्तृत प्रकाश डालते हुए ग्रामसभाओं के समक्ष कुछ संकल्पों को रखा और कहा कि ग्रामसभाएँ अपनी-अपनी शक्ति के मुताबिक गाँवों में संकल्पों को कार्यान्वित करने का प्रयास मिलजुलकर करें। पीरमहम्मदपुर पंचायत में चल रहे काम की प्रगति पर चर्चा करते हुए उन्होंने कहा कि इस गति में और तीव्रता की आवश्यकता है। इस सभा में रौहुआ पंचायत और पुनास गाँव के बड़े किसान भी सम्मिलित हुए। जे० पी० ने सभा में कहा कि लोगों को यह नहीं समझना चाहिए कि अहिंसा के तरकश में एक ही तीर है। कहा नहीं जा सकता कि अहिंसक क्रान्ति में आज कौनसा तरीका अपनाया जा सकेगा।

अन्त में माधोपुर ग्रामसभा के अध्यक्ष श्री मगन राम ने अपनी ग्रामसभा की ओर से जे० पी० का अभिनन्दन करते हुए अपने पंचायत के अन्य गाँवों में अपना सक्रिय सहयोग देने का वचन दिया। सभी सूचना इस पंचायत के बारे में मिली है कि दसरी गाँव में ग्रामसभा का गठन तथा पदाधिकारियों का चुनाव सर्वसम्मति से सम्पन्न हो गया है।

पताही पंचायत में

दिनांक १७।१।७१ को ३.३० बजे अपराह्न में पताही निवासी श्री त्रिलेश्वरी प्रसाद ठाकुर की अध्यक्षता में नवराष्ट्र विद्यालय, पताही के मैदान में श्री जयप्रकाश बाबू का भाषण हुआ। सभा में पंचायत के पढ़े-लिखे नागरिक, बड़े किसान प्रबुद्ध राजनीतिक तथा तरुण वर्ग के लोग

अधिकाधिक उपस्थित थे। सभा का आयोजन इस पंचायत के ग्रामदानी गाँव मादापुर चौबे ग्रामसभा द्वारा किया गया था। आयोजन एवं व्यवस्था में पताही सर्वोदय केन्द्र के साथी सर्वश्री रामनरेश मिश्र तथा रामनरेश सिंह के अलावा मादापुर चौबे के सर्वश्री वासुदेव पाण्डेय, रामसगार पाण्डेय, रघुनाथ पाण्डेय, बैद्यनाथ साह, रामेश्वर साह, कुलदेव महतो का विशेष रूप से नाम लिया जा सकता है।

नवराष्ट्र विद्यालय के प्रधानाध्यापक श्री वृन्दा प्रसाद सिंह, स्थानीय शिक्षक-प्रशिक्षण विद्यालय के अनुदेशक श्री सच्चिदानन्द बाबू तथा पताही पंचायत के मुखिया श्री सूर्यनारायण ठाकुर का सहयोग विशेषकर प्राप्त हुआ। सभा में उपस्थित लोग शान्ति से जे० पी० का भाषण काफी देर तक सुनते रहे। इस पंचायत के ६ गाँवों में से मादापुर चौबे के अलावा मधुरापुर और धरमपुर गाँव का काम पूरा हो गया है। शेष तीन गाँवों के अपूर्ण काम को पूरा करने का प्रयास जारी है।

कतिपय सम्पन्न युवक भू-पतियों द्वारा सहयोग

१९ से २१ जनवरी के बीच मुसहरी प्रखण्ड के कुछ ऐसे सम्पन्न किसानों ने अपने समीपस्थ अन्य ऐसे भूमिवानों के पास जाकर ग्रामदान में शामिल होने के लिए निवेदन करने का निश्चय किया, जो अब तक इसमें शामिल होने से कतराते रहे हैं।

श्री कामेश्वर ठाकुरजी के साथ इन सम्पन्न एवं प्रतिष्ठित भूमिवान युवकों की टोली, जब गाँव-गाँव की ऊँची हवेलियों पर पहुँची तो माहौल कुछ बदलता-बदलता सा लगा। इस टोली में थे श्री महेश्वर-तिवारी, श्री जितेन्द्र बाबू और श्री परमेश्वर बाबू। इन लोगों ने सभापुर, महम्मदपुर, डुमरी, मणिका, छपरा, रजापुर आदि गाँवों के बड़े किसानों से भेंट और चर्चा की। अनेक लोगों पर इस मिलन और वार्ता का अच्छा प्रभाव पड़ा है और उन्होंने विचार करने तथा ग्रामदान में शामिल होने का आश्वासन दिया है। इसी क्रम में इन लोगों ने दूसरी गाँव के पुराने मामले-मुकदमों के निबटारे की दिशा में भी प्रयत्न किया और बड़ी खुशी की बात है कि वहाँ दोनों पक्षों की ओर से कोर्ट में सुलह की दरख्वास्त दे दी गयी है।

ग्राम-शान्ति का कार्य

१८ जनवरी '७१ को श्री जयप्रकाश बाबू की उपस्थिति में मणिका केन्द्र पर ग्राम-शान्तिसैनिकों की बैठक का आयोजन किया गया। बैठक में अन्य बातों के अतिरिक्त यह महत्त्वपूर्ण निर्णय लिया गया कि श्रम, सेवा एवं स्वाध्याय को सामने रखकर आगे के लिए कार्यक्रम की योजना बनायी जाय। श्री जयप्रकाश बाबू ने सुझाव दिया कि ग्राम-शान्तिसेना के संगठन को सबल एवं मजबूत बनाया जाय। अपनी शक्ति में उत्तरोत्तर वृद्धि करते रहें। ग्रामस्वराज्य की दृष्टि से जो कार्यक्रम इस क्षेत्र में चल रहा है उसमें क्षेत्र के युवकों को इस माध्यम से योगदान करना चाहिए।

२४ जनवरी '७१ को महिला शिल्प कला भवन के प्रांगण में मुजफ्फरपुर शहर-शान्तिसैनिकों की बैठक में जे० पी० ने मुख्य रूप से सुझाव दिया (क) कार्यक्रम में सातत्य लाना, पाक्षिक या साप्ताहिक शिविर का कार्यक्रम नियमित रूप से चलाना, (ख) न्यूनतम कार्यक्रम का निर्धारण एवं उसका कार्यान्वयन करना, (ग) चुनाव की दृष्टि से सर्व सेवा संघ की प्रबंध समिति की बैठक में लिये गये निर्णय के आधार पर योजना करके उसे क्रियान्वित करना। इस क्रम में उन्होंने सुझाव दिया कि फरवरी के प्रथम सप्ताह में इसके लिए आवश्यक बैठक बुलाकर कार्यक्रम निर्धारित किया जाय।

('जयप्रकाश शिविर समाचार' से)

आन्दोलन के समाचार

रीगा (मुजफ्फरपुर) में ग्रामस्वराज्य-शिविर

श्री जयप्रकाश नारायण ने मुसहरी प्रखण्ड में पुष्टि के काम के लिए अपने को केन्द्रित करके यह बात स्पष्ट कर दी है कि गाँव-गाँव जाकर समस्याओं का सामना करने और उन्हें सुलझाने के लिए लोकशक्ति जगाने का प्रयास करने पर अहिंसक क्रान्ति की प्रक्रिया शुरू हो ही जाती है। उनके प्रयासों से प्रेरणा पाकर सीतामढ़ी अनुमण्डल (मुजफ्फरपुर) के सर्वोदय-कार्यकर्त्ताओं और मित्रों ने किसी क्षेत्र में जमकर काम करने के लिए गत १७-१८ जनवरी '७१ को रमनगामा उच्चतर विद्यालय में एक शिविर का आयोजन किया। शिविर की पूरी व्यवस्था जनाधारित थी। २१ गाँवों से इकट्ठा करके साढ़े तेरह मन गल्ला और ३०५ रुपये नकद जमा किया गया था। शिविर का संयोजन श्री राम सेवक बाबू ने किया। शिविर में सीतामढ़ी एवं बैरगनिया की ११ पंचायतों के १७ गाँवों से आये ८६ व्यक्तियों ने भाग लिया। इनमें ६ शिक्षक, ४१ युवक, ३३ किसान और ६ सार्वजनिक कार्यकर्ता थे।

संयोजक द्वारा विषय-प्रवेश

(क) अन्तर्द्वन्द्व से जर्जरित समाज या देश न व्यक्ति को सुरक्षा दे सकता है, न विकास के लिए आवश्यक वातावरण तैयार कर सकता है। इन अन्तर्द्वन्द्वों का समाधान ग्रामस्वराज्य में है क्या?

(ख) समाज का भूखा एवं नंगा वर्ग तो प्रायः गूँगा बना हुआ है, किन्तु संगठित औद्योगिक मजदूर एवं वेतनधारी नाग और अधिक सुविधाओं की माँग कर रहे हैं। दूसरी ओर अधिकतर साधनसम्पन्न अधिकारी वर्ग एवं अनन्त सम्पत्ति का मालिक पूँजीवादी वर्ग अपने लिए व्यक्तिगत अधिकार की रक्षा, दूसरों के लिए अधिकतम कर्तव्य की पूर्ति तथा

अपने को छोड़ सारे समाज से नैतिकता की पुकार कर रहे हैं। इन परस्पर विपरीत स्वार्थों के निबाहों का सामंजस्य ग्रामस्वराज्य में है क्या ?

(ग) बलमत पर आधारित साम्यवादी एकमत, बहुमत पर आधारित तथाकथित जनतंत्र का बहुजन हित, और सर्वसहमति पर आधारित ग्रामस्वराज्य में उपर्युक्त समस्याओं का समाधान है क्या ? अगर नहीं, तो इन सारी समस्याओं का समाधान ग्रामस्वराज्य में है क्या ?

अतः ग्रामस्वराज्य क्या है, इसकी प्रक्रिया क्या है, इसका स्वरूप क्या होगा, इसमें खेती, उद्योग, व्यापार आदि की व्यवस्था कैसी होगी, नये समाज की नयी राजनीति क्या होगी ? इन सब बातों पर खुलकर चर्चा हुई।

कार्य-योजना

दि० १८ जनवरी के अपराह्न में कार्यक्रम के सम्बन्ध में आम बैठक में निम्नलिखित निर्णय लिये गये :

(क) १४ व्यक्तियों ने अपना पूर्ण समय देने की घोषणा स्वेच्छा से सभा में की। तीन व्यक्तियों ने अपना आंशिक समय देने का वचन दिया।

(ख) सीतामढ़ी एवं मेजरगंज प्रखंडों के रीगा, बमनगामा एवं नरहा, तीन संलग्न पंचायतों में सघन रूप से कार्यक्रम चलाने का निश्चय हुआ।

(ग) कार्यक्रम को सफलता हेतु २५ मन अनाज एवं दो हजार रुपये संग्रहित करने का आवाहन किया गया।

(घ) फरवरी, मार्च, अप्रैल, तीन महीने की अवधि इस कार्यक्रम के लिए मानी गयी। पूर्ण एवं आंशिक समय देनेवालों की बैठक २५ जनवरी को की गयी। इसमें मुंगेर से आये श्री हेमनाथ भाई का मार्गदर्शन भी प्राप्त हुआ।

(ङ) बासगीत जमीन का पर्चा, भूदान की जमीन वितरित करना एवं भूदान की वितरित जमीन को ठीक करना, बीघा-कट्ठा, ग्रामकोष एवं ग्रामसभा के कार्यक्रम चलाने का निश्चय हुआ। ●

महाराष्ट्र में सर्वोदय विचार-प्रचार

ग्राम-शान्तिसेना की स्थापना की दृष्टि से प्रशिक्षण देने के लिए अ० भा० शान्तिसेना मंडल की ओर से ठाणा जिले के कोसबाड़ में गत १ से १५ जनवरी तक बिहार, मध्यप्रदेश, राजस्थान, गुजरात और महाराष्ट्र के कार्यकर्ताओं का शिविर हुआ।

सर्व सेवा संघ के साहित्य-प्रचार विभाग की ओर से बम्बई के मिलों और कारखानों में पिछले एक-डेढ़ साल में लगभग एक-डेढ़ लाख रु० की साहित्य-बिक्री श्री विट्ठलदास मोदाणी और उनके सहयोगी कार्यकर्ताओं ने की।

लोकयात्री दल बीकानेर जिले में

पिछले करीब ४० माह से मध्यप्रदेश, उत्तरप्रदेश, हरियाणा, हिमाचल, पंजाब में करीब ८५०० मील की पदयात्रा करती हुई चारों लोकयात्री बहनों ने दिनांक २-२-'७१ को बीकानेर जिले में प्रवेश किया। पूरे फरवरी महीने में उनकी यात्रा बीकानेर जिले में चलेगी।

इस महीने का पता :
मा० बीकानेर जिला ग्रामदान ग्रामस्वराज्य समिति
खादी मंदिर, बीकानेर (राजस्थान)
फोन ६१४

इस अंक में

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पैसे), विदेश में २२ रु०; या २५ शिलिंग या ३ डालर। एक प्रति का मूल्य २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं मनोहर प्रेस, वाराणसी में मुद्रित

सम्पादक
राममूर्ति

वर्ष : १७ सोमवार
अंक : २१ २२ फरवरी, '७१

पत्रिका विभाग
सर्व सेवा संघ, राजघाट, वाराणसी-१
फोन : ६४३९१ तार : सर्वसेवा
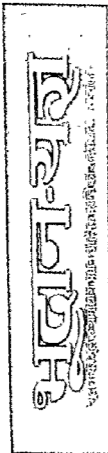
सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

पुण्य-स्मरण

बापू के प्रति बा की कैसी अनन्य भक्ति थी और ईश्वर पर उनकी कितनी अटूट श्रद्धा थी, यह आगाखाँ महल के एक प्रसंग से प्रतीत होता है।

सन १९४३ के फरवरी महीने में भारत के आकाश में घोर अन्धकार छाया हुआ था। तब बापू ने इक्कीस दिन के उपवास की घोषणा करके अग्नि-प्रवेश किया था।

उपवास के दिनों में बापू की अग्नि-परीक्षा दिन-दिन तीव्र होती जा रही थी। मगर तब भी बा सबके साथ मिलती-जुलती थी और वहाँ आनेवाले सब लोगों का कुशल समाचार पूछती रहती थीं। मिलने आनेवालों का उस महल से बाहर जाने का वक्त होता तब सबको विदा करने भी वे जाती थीं।

महल के बगीचे में एक तुलसी-क्यारा बनाया गया था। वहाँ बा रोज घी का दीया जलातीं। उस दिव्य ज्योति के सामने वे हाथ जोड़कर नमन करतीं और आर्तनाद से प्रभु की प्रार्थना करतीं। वे ईश्वर से याचना करतीं कि हे प्रभु! तुझे लेना हो तो मुझे उठा ले, लेकिन इस कड़ी अग्नि-परीक्षा में से बापू को बचा ले। यह दृश्य देखकर किसकी आँखों में आँसू नहीं आये होंगे?

बापू के उपवास के दो-चार महीने बाद बा खुद बीमार पड़ीं और उन पर हृदय-रोग का हमला हुआ।... यह बीमारी महीनों तक चली। ... सन १९४४ के फरवरी महीने की २२ तारीख को महाशिवरात्रि के दिन बापू की गोद में बा ने अपना शरीर छोड़ा।

बा की पवित्रता और उनकी अनन्य भक्ति के प्रतीक के रूप में जो एक प्रसंग बना वह भी उल्लेखनीय है। बा का अवसान हुआ। आगाखाँ महल के कम्पाउण्ड में भाई देवदास के हाथों बापू की उपस्थिति में बा का अग्नि-संस्कार हुआ। बा का शरीर भस्मीभूत हुआ। लेकिन उनकी काँच की चूड़ियाँ ज्यों की त्यों साबूत मिलीं।

इस प्रकार सन १९४२ की क्रान्ति का श्रेष्ठ समर्पण आगाखाँ महल में हुआ। ('संस्मरण' से)

—रामदास गांधी

० हिन्दूधर्म और राष्ट्रीयता ० सम्पादक और सर्वोदय ०

मध्यावधि चुनाव और हमारा मतदाता-शिक्षण अभियान

मतदाता-शिक्षण के लिए सर्व सेवा संघ ने जो कार्यक्रम उठाया है, उसके लिए संघ बधाई का पात्र है। लोकसेवक अपने स्थानों पर अथवा कुछ चुने हुए क्षेत्रों में मतदाता-शिक्षण का कार्य अवश्य करें। आज मतदाता की जो हालत है उससे तो सभी परिचित हैं। न वह पार्टियों के घोषणा-पत्रों को समझता है और न ही उम्मीदवारों से विशेष परिचय है। फिर भले-बुरे की जानकारी वह कैसे प्राप्त कर सकता है?

मेरे खयाल से प्रान्तीय सर्वोदय मंडल एवं सर्व सेवा संघ इसमें भाषणों और बुलेटिनों के माध्यम से ज्यादा उपयोगी काम कर सकते हैं। प्रत्येक पार्टी के सम्माननीय नेताओं या प्रवक्ताओं के पास जाकर निर्धारित प्रश्नों के उत्तर टेप करके उन्हें प्रकाशित करवाया जाय। प्रत्येक उम्मीदवार को अधिकृत प्रश्नावली भेजी जाय, उनसे उत्तर प्राप्त करने का प्रयत्न किया जाय।

इस प्रकार मतदाताओं का जागरूक प्रहरी सर्व सेवा संघ उम्मीदवारों तक मतदाताओं की भावनाएँ पहुँचाकर मतदाता की भी बड़ी सेवा करेगा। हमारे अखबार भी यह कार्यक्रम उठा सकते हैं। यद्यपि समय कम है, फिर भी यह प्रयास होना जरूरी है।

—महेन्द्रकुमार,
लोकसेवक,
सेवा ग्रामोदय संघ (राजस्थान)
पो० सावर, जिला-अजमेर

लोकसभा भंग होने के साथ ही मतदाता-शिक्षण का वैचारिक कार्यक्रम प्रारम्भ हुआ है, और सही भी है। 'वर्तमानेषु कालेषु वर्तयन्ति विचक्षणाः' की दृष्टि से वर्तमान कभी उपेक्षित नहीं हो सकता। वास्तव में तो यह कार्य उन राजनैतिक पार्टियों का ही है, जो जनता के समक्ष अपने प्रत्याशी खड़ा करती हैं, किन्तु आज तक उन्होंने स्वस्थ लोकतन्त्र की परम्परा के लिए अपने उत्तरदायित्व की अवहेलना करते हुए मतदाता के मत को येन-केन छीनने का ही प्रयास किया है।

कुछ समय पूर्व विनोबाजी ने इस प्रक्रिया को 'आउट आफ डेट' कह दिया है, फिर भी लोकोपयोगी कार्य को अपना आशीर्वाद भी वे प्रदान करते रहते रहते हैं। जनता राजनैतिक स्वराज्य की इस अवधि में पुणाधार न्याय से ही बहुत कुछ प्रशिक्षित हो चुकी है, और आये दिन सरकारों के बनाव-बिगाड़ से तो यह पूर्ण आश्वस्त है कि यह जनता के लिए जनता की सरकार नहीं है, निहित स्वार्थ की पूर्ति हेतु सत्ता के लिए संघर्ष करनेवालों की है।

सब कोई चाहते हैं कि सरकार अच्छे लोगों की बने, किन्तु आज प्रश्न यह है कि इस अर्थ-सापेक्षयुग में अच्छे लोग कैसे आयें। पार्टियाँ जिन देवताओं को सिंदूर लगाकर भेजती हैं, उनमें कोई अधिक कठोर होते हैं, तो कोई थोड़े कम, इस कठोर में किसीके हाथ तो बटेर लग ही जाती है। इस प्रकार यह औसतन सरकार बनती है, जिसे विनोबा बेचैरी का दूध कहते हैं।

अतः बिना सदर्भ बदले वर्तमान भूमिका से कोई अच्छी सरकार बनेगी, यह कभी संभव नहीं है। आज देश में सर्वत्र एक मगल शब्द व्यवहृत हुआ है—क्रान्ति; जो सरकार नहीं कर सकती, न कोई राजनैतिक पार्टी कर सकेगी। उसका वाहन तो जनता ही हो सकती है। अतः नागरिक की स्वातंत्र्य-चेतना को उभारने का प्रमुख कार्य सर्वोदय-कार्यकर्ता का है, वह चाहे मतदाता-प्रशिक्षण के नाते हो, चाहे ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य के माध्यम से हो।

सदियों की गुलामी ने मानव की चेतना को निश्चेतन किया है। अब स्वतन्त्रता के जामे में आयी परतन्त्रता से मुक्ति पाना उसके लिए कहीं और भी अधिक कठिन हो गया है। अभी तो वह नक्सालवाद के नारों से अधिक आकर्षित होने लगा है, जो उसकी चेतना की अगड़ाई के लक्षण प्रतीत होते हैं। अतः इस चेतना को सही दिशा देना ही सच्ची लोकसेवा है, जिसके आदर्श को व्यवहार में परिणित श्री जयप्रकाश नारायण बिहार के ग्रामीण क्षेत्र में काम कर रहे हैं।

आज सामान्य नागरिक की स्थिति क्या है? इसके उत्तर में यही कह सकते हैं कि वह किसी प्रकार जिन्दा है। उसे चुनाव-पद्धति के परिणाम की कोई जिज्ञासा नहीं है, न वह अपने मतदान के मूल्य को समझना चाहता है। प्रत्युत आये दिन के इस विघटनकारी चुनाव से ऊब चुका है, सशंक है। बहुत कुछ संभव है, वह इसके विकल्प की आशा से ही कहीं जीवित हो। दूसरी ओर चुनाव-अभियान के प्रचारक हैं जिनकी आज तक एक ही भूमिका बनी है, वह है लोभ या भय से जनता के वोट बटोरना। आज तक किसी भी दली या निर्दली ने मतदाता के स्वाधिकार की रक्षा करते हुए विरुद्ध मत-प्रचार का दावा किया है, क्या ऐसा कोई कह सकेगा? आत्मश्लाघा, परनिंदा या झूठे वायदों से मतदाता को प्रभावित करने के अतिरिक्त भी कोई श्लाघनीय कदम उठाया गया है? इस प्रकार प्रबुद्ध जन-मानस के लिए यह अभियान कभी वरदान सिद्ध हो सकता है? वह आज प्रशिक्षण की बात सुनना पसंद करेगा, कहा नहीं जा सकता। हाँ, एक प्रयोग के नाते कहीं भी, नगर या ग्रामीण क्षेत्र में, अवकाश हो, अवश्य यह काम किया जा सकता है। किन्तु विकृत भावनाओं के इस तूफान के बीच स्वयं कार्यकर्ता ही अनुप्राणित रहा रहे, यह भी एक प्रकार से सही प्रशिक्षण ही होगा।

—शिवनारायण शास्त्री,
जिला सर्वोदय मंडल,
मथुरा (उ० प्र०)

सम्पादक और सर्वोदय

लगभग एक हफ्ता हुआ अखबारों में चुनाव के बारे में विनोबा-जी की यह राय छपी थी कि ग्रामीण जनता को या तो चुनाव का बहिष्कार करना चाहिए या अपने उम्मीदवार खड़े करने चाहिए। विनोबा का यह विचार इतना नया और अटपटा लगा कि कई पत्रों ने उस पर टीका-टिप्पणी की। बिहार के एक प्रमुख अंग्रेजी पत्र ने लिखा : "हम सर्वोदय-नेताओं का आदर करते हैं। सारे सामाजिक और राजनैतिक विचारकों में वे ही हैं जिनके पास भारतीय परम्परा और मानवीय मूल्यों पर आधारित समतामूलक समाज बनाने की दृष्टि और समर्पण-वृत्ति है। लेकिन हम विनोबाजी की इस राय से सहमत नहीं हो सकते। उम्मीदवार खड़े करने का समय तो अब रहा नहीं, सिर्फ यह हो सकता है कि चुनाव का बहिष्कार किया जाय। किन्तु इस बहिष्कार से जनता को क्या मिलेगा? ज्यादा-से-ज्यादा ऐसा करना आज के लोकतन्त्र के विरुद्ध एक प्रकार का नैतिक 'प्रोटेस्ट' होगा।"

सम्पादक ने आगे लिखा : "कोई इस भ्रम में न रहे कि चुनाव के बहिष्कार मात्र से सर्वोदय-समाज बन जायगा। अगर सर्वोदयवालों ने एक गांव में भी सर्वोदय-समाज की स्थापना कर दी होती, तो उनकी बातों में विश्वास किया जा सकता था।"

इस आलोचना के साथ इस पत्र ने विनोबा के विचार को 'मनोरथ सृष्टि' (फैंटेसी) कहकर टाल दिया है।

कुछ भी हो, लेखक ने इतना तो माना है कि सर्वोदय के पास समाज-रचना की एक दृष्टि है जो दूसरों के पास नहीं है। बावजूद इसके वह इन सर्वोदय की बातों को कोरी कल्पना से ज्यादा कुछ मानने को तैयार नहीं है। क्यों? क्या लेखक को सर्वोदय के विचार और कार्यक्रम की जानकारी नहीं है? या, इसलिए कि सर्वोदय जिस सम्पूर्ण क्रान्ति की बात कहता है वह विद्वानों और विशेषज्ञों के गले के नीचे नहीं उतरती? वे सामाजिक परिवर्तन की बात का दिन रात जिक्र करते हैं, लेकिन आज की व्यवस्था में कहीं कोई बुनियादी परिवर्तन नहीं आने देना चाहते। शायद उन्हें भय होता है कि परिवर्तन कहीं ऐसा न हो जाए कि समाज में आज वे जहां हैं वहां से विचलित होना पड़े। यह कहना शायद गलत नहीं होगा कि हमारा शिक्षित समुदाय नीचे से यथास्थितिवादी है, विशेषाधिकार-परस्त है, और आधुनिकता की आड़ में उन सारी चीजों से चिपका रहना चाहता है, जो उसे यथास्थिति में बनाये रखने में सहायक होती हैं। वह अपने से ऊपरवालों के करीब तो पहुंचना चाहता है, लेकिन नीचे से नीचेवालों को अपने करीब नहीं आने देना चाहता। अगर ऐसी बात न होती तो वह सर्वोदय के समाज-परिवर्तन के विचार को समझने का कोशिश करता और उसके कार्यक्रम में आगे बढ़कर शरीक होता या सर्वोदय का कोई विकल्प प्रस्तुत करने की जिम्मेदारी महसूस करता।

पत्र के सम्पादक ने लिखा है कि किसीको इस भ्रम में नहीं रहना चाहिए कि चुनाव के बहिष्कार मात्र से सर्वोदय समाज की स्थापना हो जायेगी। कौन इस भ्रम में था? कब था? सर्वोदय की ओर से इस चुनाव के बहिष्कार की कोई योजना नहीं रखी गयी है। विनोबा की बात इस चुनाव पर लागू करने के लिए नहीं है। जहां तक इस चुनाव का सम्बन्ध है सर्वोदय ने जनता के सामने दो ही बातें रखी हैं—एक, वोट देने में उम्मीदवार की योग्यता, पात्रता, का ध्यान रखा जाय, उसकी जाति, या दल आदि का नहीं, दूसरे, मतदान स्वतन्त्र और निष्पक्ष हो। क्या इन बातों से किसी भी समझदार आदमी का मतभेद हो सकता है?

विनोबाजी ने जो बात कही है उसके पीछे लोकतन्त्र का एक नया चित्र है। सर्वोदय की ओर से आज बरसों से यह बात कही जाती रही है कि समाज-परिवर्तन के लिए आज के लोकतन्त्र में परिवर्तन करना पड़ेगा। मात्र चुनाव के लोकतन्त्र से काम नहीं चलेगा। नौकरशाही की राजनीति से जो लोकतन्त्र चलाया जा रहा है उससे समाज-परिवर्तन की आशा रखना निरर्थक है।

सम्पादक को शिकायत है कि सर्वोदय-आन्दोलन ने किसी एक गांव में भी सर्वोदय-समाज की स्थापना करके नहीं दिखाया! क्या चीज गांव में दिखायी दे तो वह मानेंगे कि वहां सर्वोदय समाज बन रहा है? गांव में दो-एक पक्के मकान, कुछ खेतों में लहलहाती फसलें, पंचायत, स्कूल, कोआपरेटिव, घरों पर बतों के रंग-बिरंगे झंडे : क्या सम्पादक को आज की व्यवस्था के इन्हीं प्रकारों से सन्तोष है? अगर नहीं तो उन्हें सर्वोदय का इससे भिन्न चित्र देखना, समझना चाहिए। सर्वोदय साधनों के स्वामित्व में परिवर्तन चाहता है, समाज के नेतृत्व में परिवर्तन चाहता है, जनता को प्रत्यक्ष निर्णय का अधिकार देना चाहता है, उसमें अनीति और अन्याय के प्रतिकार की शक्ति जगाना चाहता है। क्या उन्हें सर्वोदय का यह चित्र मान्य है? यह सर्वोदय-क्रान्ति की रूपरेखा है। क्रान्ति सदा व्यापक होती है, चुन चुनकर एक-एक गांव में नहीं होती। जिस ग्रामस्वराज्य का नारा सर्वोदय आज वर्षों से लगा रहा है वह देश के उन करोड़ों लोगों का नारा है जो गांवों में रहते हैं। हमारा विद्वान वोट का समझ सकता है, जिससे अधिकार थोड़े-से हाथों में केन्द्रित हो जाता है, वह नक्सलवाद को समझ सकता है जिससे हिंसा की शक्ति थोड़े-से हाथों में सिमट जाती है। लेकिन वह शान्ति की सर्वव्यापी शक्ति को नहीं समझ सकता। वह विशिष्टवादी है, उसके दिमाग में बहुसंख्यक जनता के लिए स्थान नहीं है। वोट और हिंसा दोनों से शक्ति थोड़े-से हाथों में केन्द्रित होती है। क्या वह यही चाहता है? ये दोनों ऐसे माध्यम हैं जिनके द्वारा कुछ थोड़े लोग समस्त जनता पर हुकूमत चलाते हैं। सम्पादक, विचारक, और विशेषज्ञ तय कर लें कि क्या वे दण्ड और सरकार की आड़ से विशिष्ट बनकर समस्त जनता पर अपना प्रभुत्व कायम रखना चाहते हैं? ●

हिन्दूधर्म और राष्ट्रीयता

—विनोबा

(ता० ५ दिसम्बर '७० को ब्रह्म-विद्या मंदिर के बुजुर्ग सदस्य श्री बालुभाई मेहता के साथ हुई चर्चा ।)

प्रश्न : आपने एक जगह कहा है कि हिन्दूधर्म का अद्वैत सिद्धान्त होते हुए भी उसमें सेवाभाव का अभाव दिखायी देता है। इसका क्या कारण ? क्या यह कह सकते हैं कि यद्यपि समाज ने उस तत्त्व-ज्ञान को बौद्धिक स्तर पर माना था, वह लोक-हृदय तक नहीं पहुँचा था ? या वह *बहुजन समाज तक पहुँचा ही नहीं था ?*

हिन्दूधर्म स्वसंरक्षण भी कर नहीं *सका और राष्ट्र-रक्षण भी नहीं कर सका।* परदेश के जो अनेक आक्रमण हिन्दुस्तान पर हुए, उन्हें रोकने की शक्ति हिन्दूधर्म में नहीं दिखायी दी। एक और भी सोचने की बात है। हिन्दूधर्म राष्ट्रीयता की भावना को जितना पोषक होना चाहिए था, उतना पोषक सिद्ध नहीं हुआ। इसका क्या कारण ?

*उत्तर : भारत में बहुत बड़ा तत्त्व-*ज्ञान पनपा—अद्वैत, इससे बढ़कर तत्त्वज्ञान *नहीं हो सकता।* इतना होते हुए भी उस अद्वैत का परिणाम सेवारूप में होना चाहिए था, वह भारत में हुआ नहीं और सेवावृत्ति प्रधानतया क्रिश्चन धर्म में प्रकट हुई। आधुनिक जमाने में विवेकानन्द ने अद्वैत को सेवा के साथ जोड़ दिया और गांधीजी ने उसको आगे चलाया। विवेकानन्द परदेश में और हिन्दुस्तान में भी बहुत घूमे थे। उन्होंने जगह-जगह देखा कि मिशनरी लोग सेवा करते हैं, हिन्दू और मुसलमान लोग वैसी सेवा नहीं करते हैं। जब उन्होंने यह देखा, *तब लोगों के* सामने यह बात स्पष्ट की कि हमारा *सिद्धान्त अद्वैत है।* और जहाँ हम सिद्धान्त में अद्वैत तक पहुँचे हैं, वहाँ हमको सेवा करनी चाहिए। इसलिए उन्होंने जगह-जगह सेवा के मिशन भी खोल दिये।

धर्म से अद्वैत अर्वाचीन

सवाल यह है कि सेवा की उपेक्षा हुई, इसका कारण क्या ? यह बहुत सोचने का मुद्दा है। दूसरे धर्मों का इतिहास देखें, तो वह दो-ढाई हजार सालों का है। इस्लाम १३०० साल का है, क्रिश्चन धर्म दो हजार साल का और बाकी दूसरे धर्म भी दो-ढाई हजार साल के अंदर के हैं। *लेकिन हिन्दूधर्म, जहाँ तक हम समझते हैं,* कम-से-कम २० हजार साल का है। वेद को प्रमाण मानें, तो वेद का जो पुरातन हिस्सा है, वह २० हजार साल से अर्वाचीन नहीं। गृत्समद ऋषि पर मैंने एक लेख लिखा है, उसमें इस बात का जिक्र है। २० हजार का इतिहास। २० हजार साल की परम्परा में अनेक अनुभव आये, अनेक परिवर्तन हुए। उस हालत में हिन्दू-धर्म का आखिरी रूप कौनसा, बीच का रूप कौनसा और पहला रूप कौनसा, सब *सोचने की बात हो जाती है।*

अद्वैत आदि जो सिद्धान्त आये, वे शंकराचार्य, रामानुजाचार्य के बाद आये। यानी १२००-१३०० साल पहले की बात समझ लीजिए, और हिन्दूधर्म का इतिहास २० हजार साल का है। २० हजार साल के इतिहास के सामने १२००-१३०० साल की बात छोटी हो जाती है। शंकर, रामानुज आये, उन्होंने पदयात्रा करके हिन्दूधर्म पर जो हमला हो रहा था, वह हटाया। *हमला यह था कि हिन्दूधर्म के* अनेक पंथ थे, उनमें मेल-मिलाप नहीं था। उपनिषद और दूसरे ग्रंथों में मेल नहीं था, और उपनिषद के अंदर भी परस्पर भेद था। वह सारा इकट्ठा करके उन्होंने समन्वय किया। आज भी समन्वय की जरूरत है, लेकिन वह अनेक धर्मों के समन्वय की है। उन्होंने जो समन्वय किया, वह हिन्दूधर्म के अंदर जो वैमनस्य था, मतभेद था, अनेक पंथ थे, भेद थे, जिससे हिन्दूधर्म टूटने को आया था, उनका समन्वय किया। लेकिन वह घटना सारी १२००-१३०० साल के अंदर की है।

पुत्रोऽहं पृथिव्याः

दूसरा सवाल है हिन्दूधर्म राष्ट्रीय भावना क्यों नहीं पनपा सका ? जैसे हिन्दू-धर्म अति पुरातन है, और इस वास्ते उसकी अनेक 'फेजेस' (अवस्थाएं) हुईं, वह विकसित होता गया, बढ़ता गया। वैसे जिसको हम आज हिन्दू राष्ट्र मानते हैं, पुराने जमाने में वह *असंभव* था। एक स्थान से दूसरे स्थान में जाना संभव नहीं था। उस हालत में भारत में एक राष्ट्रीयता कैसे आयेगी ?

भारत में एक राष्ट्रीयता की जगह एक विश्वता थी। ऋषियों का दर्शन था—'विश्वमानुष'। उस समय 'दुर्लभ भारते जन्म' नहीं था। वह तो आधुनिक है, बाद में आया है। अथर्ववेद में तो पृथ्वीसूक्त आया है। 'पुत्रोऽहं पृथिव्याः'—हम पृथ्वी के पुत्र हैं। *'नाना धर्माणं पृथ्वी विवाचस'*—जिस पृथ्वी में अनेक धर्म हैं, अनेक वाणियां-भाषाएं हैं, उस पृथ्वी की हम वंदना करते हैं—यह भावना थी। लेकिन आज हम जिसको भारत कहते हैं, वह उन दिनों मालूम भी नहीं था। उस जमाने में इधर से उधर जाना भी मुश्किल था। बीच में बड़े-बड़े अरण्य पड़े थे। इस वास्ते भारत नाम का देश उनको मालूम नहीं था। लेकिन विशाल विश्व की कल्पना उनको थी, हम एक विश्व के मानव हैं, यह भावना थी। *लेकिन इस कल्पना के प्रचार* के साधक विज्ञान आया नहीं था। आज जैसे विज्ञान की मदद से इधर की खबर तुरन्त उधर पहुँचती है, वैसी विज्ञान की मदद उस जमाने में नहीं थी। ऋषियों के चिन्तन की यह विशेषता थी, जिसके कारण विश्वमानुषता आयी और हम

पृथ्वी के हैं, यह भाषा निकली। वह ऋषियों की प्रतिभा थी। इस वास्ते भारत पर बाहर से जो हमले हुए वे एक देश पर हुए ऐसा कहना ऐतिहासिक नहीं। (यद्यपि इसमें कोई शक नहीं कि लगभग एक-डेढ़ हजार साल हुए भारत एक माना गया, रामेश्वर से काशी तक। डेढ़ हजार साल से भारत एक है, इतनी कल्पना दीखती है।)

राष्ट्रीयता नहीं, प्रान्त-राष्ट्रीयता

कोई भी पूछ सकता है कि राजपूतों के साथ मराठों की लड़ाई 'सिविल वार' (गृहयुद्ध) कहलायी जाती है और फ्रांस के साथ इंग्लैंड की लड़ाई 'इंटर नेशनल वार' (आन्तर्राष्ट्रीय युद्ध) कहलायी जाती है, वह कैसे ? इंग्लैंड और फ्रांस में अन्तर भी कितना है ? सोचने की बात है। इतना बड़ा विशाल देश था, एक प्रान्त से दूसरे प्रान्त में इतना अन्तर था, परस्पर कोई सम्पर्क नहीं था, ऐसी हालत में भारत में जो लड़ाइयाँ हुईं, वे 'सिविल वार' नहीं थीं। लेकिन उनको 'सिविल वार' कहते हैं, इसका अर्थ क्या ? इसका अर्थ यह है कि भारत ने अपना इतना विशाल बड़ा देश माना। इस वास्ते हम कहते हैं कि योरप को भारत से समाजशास्त्र सीखना बाकी है, जिससे कि योरप एक हो जाये और कम-से-कम एकत्र व्यापार करे। वहाँ तो एक-एक भाषा के एक-एक राष्ट्र बने हैं और केवल व्यापार के लिए भी इकट्ठा आ नहीं सकते हैं। यह सारा देखते हैं तो समझ में आता है कि भारत की 'राष्ट्रीयता' 'आन्तर्राष्ट्रीयता' के बराबर की है। इसलिए वह बनने में देर लगी।

एक विश्व की भावना होते हुए भी विज्ञान के अभाव के कारण भारत की एकता टिकी नहीं। आज सेना रखने का अधिकार केन्द्र को है, अलग-अलग प्रान्तों को नहीं है, वैसी स्थिति उस समय नहीं थी। अलग-अलग राज्यों की अलग-अलग सेनाएँ थीं। छोटी-छोटी सेनाएँ आपस में लड़ती भी थीं। इस तरह चलता था। इस वास्ते जिसको हम राष्ट्रीयता कहते हैं, वह आधुनिक जमाने की है। प्राचीन जमाने में राष्ट्रीयता का सवाल उठता ही नहीं था। हम विश्व के हैं, यह भावना थी। मनु महाराज ने भी यह लिख रखा है—

एतद्देशप्रसूतस्य सकाशादग्रजन्मनः
स्वं स्वं चरित्रं शिक्षेरन् पृथिव्यां
सर्वमानवाः

इस देश के श्रेष्ठ पुरुषों के द्वारा दुनिया के मानव अपने-अपने चरित्र की शिक्षा लेंगे। 'पृथिव्याम्'। मनु के सामने भी पृथ्वी आती है। विशाल ध्येय रखने के कारण जो नुकसान होता है, वह भारत को हुआ। छोटा ध्येय रखा होता, तो नुकसान नहीं होता, छोटे-छोटे राष्ट्र माने होते, तो बचाव होता। लेकिन व्यापक ध्येय माना और व्यापक बनने के लिए जिस विज्ञान की जरूरत थी, वह उपलब्ध नहीं था, इस वास्ते अतिव्यापक ध्येय के कारण भारत हारा। भारत संकुचित विचार करता, एक-एक राष्ट्र अलग माना जाता, तो वे राष्ट्र स्वतन्त्र होते और भारत बचता।

वर्ण-व्यवस्था = श्रम-व्यवस्था

जहाँ तक सेवा का ताल्लुक है, वर्ण-व्यवस्था सेवा का उत्तम साधन माना गया था। वह टूटी और उसकी जगह जाति-व्यवस्था आ गयी। जाति-व्यवस्था यानी ऊँच-नीच भावना। वर्ण-व्यवस्था में वह नहीं था। वहाँ सबका समान वेतन माना गया था, यानी आर्थिक क्षेत्र में समानता थी। सब कामों की समान प्रतिष्ठा मानी गयी थी। यानी सामाजिक क्षेत्र में समानता थी। और सब कर्मों के द्वारा समान मुक्ति मानी गयी थी, यानी आध्यात्मिक क्षेत्र में समानता थी। चातुर्वर्ण्य में आर्थिक, सामाजिक, आध्यात्मिक प्रतिष्ठा समान थी। इसलिए हमने लिख भी रखा है—

श्रमनिष्ठ करी परू निरपवाद
ऊंच नीच भेद निवारेल
आज तों डुबली वर्ण योजना ही
भेदाचा गंध हि नाहुसा जेथें
श्रमाची व्यवस्था म्हणजे वर्ण-निष्ठा,
श्रमाची अनास्था वर्णभेद।

(यदि निरपवाद रूप से श्रमनिष्ठा को अपनाते हैं, तो ऊँच-नीच भेद मिट जायगा। आज पुरानी वर्ण-योजना भी दूषित हो गयी है, जिसमें भेदभाव की गंध तक नहीं थी। श्रम की व्यवस्था यानी वर्णनिष्ठा, श्रम की अनास्था यानी वर्ण-भेद।)

वर्ण-भेद, वर्ण-युद्ध वगैरह श्रम की अनास्था के कारण होता है। कुछ लोग श्रम करना नहीं चाहते, वे श्रम करते नहीं। कुछ लोग लाचारी से करते हैं, उनको श्रम करना पड़ता है। फिर उनके बीच भेद उत्पन्न होते हैं।

प्राचीन वर्ण-व्यवस्था थी, उसमें सेवा-कार्य के लिए स्वतंत्र वर्ग-निर्माण किया था शूद्रवर्ग। शूद्र का काम क्या था ? सबकी सेवा करना। चारों ओर घूमते रहना, और जहाँ जरूरत हो वहाँ सेवा करना, और आश्चर्य होगा ब्राह्मणों को यह सुनकर, 'शूद्र पच्येरन्' सूत्र था। रसोई कौन करेगा ? शूद्र करेगा, क्योंकि वह सेवा है। रसोई बनाना, बीमारों की सेवा करना शूद्रों का काम था।

बात ऐसी है कि घर में ही कोई बीमार हो, रोगी हो या अंधा हो तो उसकी सेवा करने का काम घरवाले कर लेंगे। लेकिन, मान लीजिए, कोई लड़का अंधा है, उसको सभालनेवाले माता-पिता कोई हैं नहीं। या, माता अंधी है उसको सभालनेवाला कोई लड़का है नहीं, तो उस हालत में कौन सेवा करेगा ? उस हालत में, ग्रामसभा होगी, वह शूद्रों के द्वारा उसकी सेवा करेगी। प्राचीन काल में इस प्रकार से सेवा चलती होगी। लेकिन जब जातिभेद आया, शूद्र नीच माने गये —यह भी चार-पाँच हजार साल पुराना है— तब से इस प्रकार की सेवा नीच सेवा मानी गयी। तब वर्ण-व्यवस्था टूट गयी। उसकी जगह दूसरी कोई व्यवस्था आयी नहीं। जाति-अभिमान आ गया। उसके कारण सेवा तो टूट ही गयी, राष्ट्र-रक्षा ...

भूदान-यज्ञ। सोमवार, २२ फरवरी,

का भार उठानेवाला भी कोई न रहा। उसके पहले थोड़े लोग, क्षत्रिय लोग, राष्ट्ररक्षा करते थे, वह रहा नहीं। भारत जो हारा है, वह वर्ण-व्यवस्था टूट गयी, उसके कारण हारा है। लेकिन वह एक कारण है।

बारूद गीली निकली

बहुतों को लगता है कि अंग्रेजों की जीत हुई, उसका कारण यहाँ का जाति-भेद है। वह छोटा कारण है। मुख्य कारण भारत में 'साइन्स' नहीं था। प्लासी की लड़ाई जहाँ हुई थी, वह जगह मैं देख आया हूँ। प्लासी को बंगाली में पलाशी कहते हैं, पलाश वृक्ष वहाँ थे, इसलिए पलाशी। ग्रामदान-यात्रा के सिलसिले में मेरा उधर जाना हुआ था। वहाँ ग्रामदान होगा नहीं, यों सोचकर मेरे कार्यक्रम में प्लासी का कार्यक्रम नहीं रखा गया था। मुझे जब यह पता चला तब मैंने मेरा मार्ग बदलकर प्लासी जाने का कार्यक्रम तय करवाया और अजीब बात है कि बड़ी सहजता से वहाँ का ग्रामदान हो गया। पंडित नेहरू को जब यह पता चला, तब उन्हें मिल्टन याद आ गया, उन्होंने जाहिर व्याख्यान में कहा—"प्लासी लास्ट एण्ड प्लासी रिगेंड" (प्लासी खोयी, प्लासी पायी)। प्लासी यानी हमारा *बिलकुल कमनसीब* और देश की बदनामी। उसका ग्रामदान हुआ सुनकर उनको बहुत आनंद हुआ।

मैं वहाँ केवल ग्रामदान के लिए ही नहीं गया था। मैंने वहाँ प्लासी का रणांगण देखा। क्लाईव कहाँ खड़ा था, नवाब की सेनाएँ कहाँ खड़ी थीं, सब देखा। क्लाईव ने २२ जुलाई को हमला किया था। उस समय आद्रा नक्षत्र रहता है। यानी जोरदार बारिश रहती है। क्लाईव की सेना पेड़ों के नीचे खड़ी थी। सामने दोनों नवाबों की सेनाएँ थीं। दोनों एक हो जाते, तो ६०-७० हजार की सेना हो जाती। लेकिन अलग-अलग थे, इसलिए एक-एक की तीस-पैंतीस हजार की सेना थी। क्लाईव की बंदूकों को दूरबीनें थीं। ताक-ताककर गोलियाँ मार सकते थे। इनको तो दूरबीन नाम की चीज ही मालूम नहीं थी। उसमें भी, नवाबों की बारूद बारिश के कारण सब *गीली हो गयी थी*। अंग्रेजों की बारूद सुरक्षित, टारपोलीन से ढँककर रखी हुई थी। इन लोगों ने लड़ाई का सोचा था, वह जून में, उस समय तो बारिश नहीं थी, तो कौन आगे की सोचेगा! जुलाई में बारिश शुरू हुई तो इन लोगों ने सोचा कि अब तो क्लाईव हमला नहीं कर सकेगा। लेकिन उसने हमला किया। समय पर इनकी बारूद गीली निकली। चंद घंटों में लड़ाई समाप्त हुई। मुझे कहा गया कि दो-तीन घंटों में लड़ाई समाप्त हुई और बंगाल हारा।

चार कारण

बंगाल हारा का मतलब क्या? जनता शांत रही। कोई भी राजा आये, उसको क्या फरक था? जो गया, वह राजा भी जालिम ही था, जुल्म करनेवाला था, इसलिए गया, तो क्या हुआ? कोई परकीय राजा आया है, ऐसा लोगों को लगा ही नहीं। उनका व्यवहार ठीक चल रहा था।

अंग्रेजों की जो जीत हुई, वह सामान्यतः विज्ञान के कारण हुई। राजवाड़े ने हमारा ध्यान इधर खींचा है। पेशवे के पास सखारामबापू उनके मंत्री थे। उनकी अच्छी लायब्रेरी थी। उसमें सब हस्तलिखित पोथियाँ ही थीं। लेकिन उन किताबों में एक अंग्रेजी प्रिंटेड किताब भी मिली है। राजवाड़े लिखते हैं कि वह छपी हुई किताब देखकर भी उन लोगों को जिज्ञासा नहीं हुई कि यह क्या चीज है जान लें, सीख लें। उनकी जिज्ञासा-बुद्धि ही मर गयी थी, ऐसा आक्षेप राजवाड़े ने किया है। अब जो भी हो। लेकिन साइन्स का जो नया दौर निकला था उसका हिन्दुस्तान में अभाव था। हम हारे, वह मुख्यतः साइन्स के इस अभाव के कारण।

आपस-आपस में मतभेद था, वह भी एक कारण है। लेकिन वह छोटा कारण है। यहाँ का व्यापारी वर्ग, सारा का सारा, लूटने के सिवा और कुछ काम नहीं करता था, इसलिए व्यापारियों के लिए समाज में नफरत थी। इस वास्ते क्लाईव वगैरह आये, तब यहाँ का सारा व्यापार एकदम हाथ में ले सके।

भारत हारा इसके कारण—नम्बर एक, व्यापारियों के लिए नफरत; नम्बर दो, आम जनता की तटस्थता, नम्बर तीन, अंग्रेज लोगों की साइन्स, नम्बर चार, भिन्न-भिन्न राज्य बने थे, उनकी आपस-आपस में लड़ाइयाँ।

संतों ने बचाया

यह इतिहास आपके सामने इसलिए रखा कि सारी परिस्थिति ध्यान में आ जाये। बीच के जमाने में हिन्दूधर्म बिलकुल हार गया था। उसको लगभग डेढ़ हजार साल हुए। बीच में संतों ने उसको जगाने की जोरदार कोशिश की। लेकिन वह क्या थी? 'चोराच्या हातातील लंगोटी' (चोर के पास की लंगोटी थी)। सभी जा रहा है, तो कम-से-कम लंगोटी तो रहे पास में। तो संतों ने भक्तिभाव रखो, यही कहा। भक्तिभाव रखो का मतलब क्या? उसको मैंने नाम दिया है—'मिनिमम धर्म' विमान धर्म। कम-से-कम श्रद्धा, भक्ति तो रख सकते हैं, नामस्मरण तो कर सकते हैं। सभी खो गया है, तो जो रहा है थोड़ा, उसको पकड़े रहो। तो उस आधार से, उस भक्ति के आधार से संतों ने नीचे के वर्गों का उत्थान किया। हिन्दूधर्म का कम-से-कम मादा अपने हाथ में लेकर संतों ने भक्तिभाव प्रसारित किया। बाकी, ज्ञान की, कर्मयोग की बातें कहते रहें, वह होनेवाला नहीं, तो इतना तो करो, थोड़ा दान करो हाथ से और नामस्मरण करो, यह शिक्षा दी। संतों ने यह जो काम *किया, वह बहुत बड़ा काम माना जायेगा।* जहाँ सारा डूब रहा था, वहाँ उन्होंने थोड़ा बचाया।●

सुखपुर में तरुण-शक्ति का जागरण

सुखपुर, सहरसा जिले के सुपौल प्रखण्ड में सुपौल से ५ मील दक्षिण में सुखपुर स्टेट से जाना जानेवाला ६०० परिवारों का गाँव है। यहाँ जरूरत की सब वस्तुएँ प्राप्त हैं। सुखपुर की पुरानी शान-शौकत आज भी ड्योढ़ी (जिसका आशय दरबार से है) के नाम से पुकारे जानेवाले घरों में देखने को मिलती है।

सहरसा-अभियान के सिलसिले में निर्मला दीदी के कार्यक्रम का सुखपुर में आयोजन हुआ। उन्हींकी प्रेरणा से गाँव के कुछ तरुणों ने बैरो गाँव में आयोजित शांतिसेना-शिविर में सम्मिलित होने का निश्चय किया, और वहीं उनका परिचय अमरनाथ भाई और जानकी दीदी से हुआ। इस कैम्प से तरुणों ने अपने गाँव में ग्रामदान के विचार को व्यावहारिक रूप देने का संकल्प लिया। फलस्वरूप तरुणों ने अमरनाथ भाई और जानकी दीदी से, उनके व्यस्त कार्यक्रमों के बावजूद, सुखपुर के लिए ९ जनवरी से समय देने का निश्चय करवा लिया। ग्रामदान को चरितार्थ करने का तरुणों का यह निश्चय वास्तव में प्रशंसनीय था, क्योंकि वह आज के नवजवानों की प्रवृत्तियों से भिन्न दिशा का था।

कार्यक्रम की व्यस्तता के कारण अमरनाथ भाई तथा जानकी दीदी तारीख ९ को तो न पहुँच सके, १० तारीख को पहुँचे। उनके साथ मैं भी था। गाँव में प्रवेश करने पर पहली कोठी गंगा बाबू की पड़ती है, जो ड्योढ़ीवालों से संबंधित है। सड़क के किनारे इस ऊँची अट्टालिका के दरवाजे पर जो पहला चेहरा दिखा, वह दिलीप था। मुस्कराते हुए चेहरे पर चमकती आँखों में गजब का विश्वास और उत्साह देखने को मिला। दूसरा चेहरा जय-जगत् से अभिवादन करनेवाले कन्हैया का था। सामान को दो युवकों ने हाईस्कूल पर पहुँचा दिया और हम लोग दरबार में गंगा बाबू से मिलने गये। वहीं उनके छोटे भाई तारा बाबू से भेंट हुई। औपचारिकता के पश्चात् शाम ४ बजे हाईस्कूल पर कुछ प्रमुख लोगों की बैठक में मिलने का कार्यक्रम तय करके हम चले आये। भोजन-स्नानादि से निवृत्त होकर हमने आये हुए नवयुवकों से परिचय किया। युवकों की संख्या देखकर ही विश्वास हो गया कि सुखपुर में उत्साही युवकों की कमी नहीं है। कमी है तो केवल उस शक्ति का उचित उपयोग करनेवालों की। शाम की बैठक में दिनांक १३ को एक ग्रामसभा बुलाना तय हुआ ग्रामसभा के गठन के लिए। इस बीच के समय का उपयोग तरुणों ने टोलों में सभा कर ग्रामदान-विचार समझाने, व्यक्तिगत सम्पर्क स्थापित करने, प्रभावशाली लोगों को विचार से सहमत कराकर उनसे सहयोग लेने आदि महत्त्वपूर्ण कार्यों में किया।

सबसे महत्त्वपूर्ण कार्य प्रतिदिन की प्रभातफेरी थी, जिसमें करीबन ३५ युवक प्रात ६ बजे से सम्मिलित होकर अहिंसक नारों तथा शांति-क्रांति के गीतों से पूर्वांचल में प्रकट हो रही प्रकाश-किरणों का स्वागत करते हुए एवं वातावरण में कौतूहल पैदा करते हुए गाँव की परिक्रमा कर स्कूल पर लौटते थे।

निश्चित तिथि को ग्रामसभा की अध्यक्षता हाईस्कूल के प्रधानाध्यापक श्री सीताराम मिश्र ने की। ५०० के इस जन-समूह में भूमिहीन मजदूरों के साथ-साथ प्रमुख भूमिवान भी थे। ग्रामदान के विभिन्न पहलुओं को मैथिल भाषा में प्रभावशाली ढंग से समझाने के बाद ग्रामसभा की उपयोगिता और कार्यों को दर्शाते हुए ग्रामसभा के अध्यक्ष के लिए नाम प्रस्तावित करने के लिए कहा। प्रारम्भ में जिन सज्जनों का नाम आया, यद्यपि वे इसके लिए योग्य व्यक्ति थे, फिर भी उन्होंने अपना नाम यह कहते हुए वापस ले लिया कि मैं अपने-आपको इस योग्य नहीं समझ रहा हूँ। बाद के दो नाम भी इसी तरह वापस ले लिये गये। अंत में चौथा नाम गंगा बाबू (जो सभा में शारीरिक अस्वस्थता के कारण उपस्थित नहीं थे) का आया, जिसे सर्वसम्मति से स्वीकार कर लिया गया। अन्य पदाधिकारियों का चयन भी इसी प्रकार सर्वसम्मति से किया गया। पद से चिपके रहनेवाले इस समाज में उस दिन चुनाव के स्थान पर मनाववाली स्थिति को देखकर आदर्श समाज की कल्पना और भी बलवती हो गयी। आश्चर्य-मिश्रित वातावरण में उस दिन ग्रामसभा के गठन का वह दृश्य वास्तव में दकियानूस ख्याल के लोगों के लिए खुली चुनौती था।

बीघे में से कट्ठा निकालकर भूस्वामी जिस भूमिहीन को चाहें, दे सकते हैं। इस प्रश्न पर ग्रामसभा ने निर्णय लिया कि कुल प्राप्त जमीन को सभी भूमिहीनों में बराबर बाँटा जाय। इसके लिए गाँव का सर्वे करना पड़ा। तरुणों ने ६०० परिवारों का सर्वे तीन दिन के अल्प समय में भूमि, आमदनी, जनसंख्या, और शिक्षा के विवरण को लेते हुए पूरा किया। तरुणों ने एक सीमा तक तो अपना कार्य पूरा किया, और बीघा-कट्ठा निकालने के प्रश्न पर बुजुर्गों का आगे आना अनिवार्य-सा लगने लगा। बुजुर्ग, नवजवानों के इस उत्साह को देखकर अपने को क्यों पीछे रखते! मेरे अपने अनुभव से अभी तक शायद पूरे सहरसा में अकेला सुखपुर ही एक ऐसा गाँव है जहाँ नवजवानों का जोश तथा बुजुर्गों का होश मिलकर काम कर रहा है। गंगा बाबू, सरजू बाबू, झोली झा आदि अपनी इतनी उम्र में तथा कमजोर शरीर के बावजूद भी इस विचार के लिए दरवाजे-दरवाजे घूमे। ग्रामदान के विचार को इन्होंने आश्चर्यजनक रूप में आत्मसात किया है। अपनी समस्याओं के अनुरूप ही ग्रामदान के विचारों को ढालने का प्रयास है लोगों का। वार्तालाप के दौरान जितनी कड़ी बातें आपस में कर लेते हैं, वह किसी भी बाहरी कार्यकर्ता

के लिए असमव हो है। गंगा बाबू ने एक जगह अपनी बात रखते हुए एक भू-स्वामी से कहा कि, "नक्सालवादियो का बम गिरेगा तो हमारे इन सफेदी किये गये महलों पर ही गिरेगा। जैसिरिया (गंगा बाबू का मजदूर) की झोपड़ी पर नहीं गिरेगा।"

इतनी सारी अनुकूलताओ के बावजूद कार्य की गति मद है, क्योंकि अन्य गाँवो की तरह अधिक-से-अधिक जितनी समस्याएँ हो सकती हैं, सुखपुर में भी मौजूद हैं। मोह, ममता और जड़ता में बँधे लोगों से जब बीघा-कट्ठा निकालने की बात कही जाती है तो स्पष्ट ना नही कहकर भी किसी-न-किसी बहाने टालनेवाली बात सामने लाते हैं। जबकि विश्वासपूर्वक यह भी कहते हैं कि यह तो होकर ही रहेगा, इसको तो करना ही पड़ेगा। बीघा-कट्ठा निकालने के प्रश्न पर एक सज्जन ने अमरनाथ भाई से बड़े ही कारुणिक ढग से अपनी समस्याओ को रखा कि, "भाईजी, मेरे पास १०० बीघे जमीन है। यहाँ पर मैं ५ बीघे जमीन अपनी निकालता हूँ, लेकिन इसकी लागत आज इस समय २५,००० रुपये है, जिसमे मैं बड़े आराम से अपनी एक बेटी के हाथ पीले कर सकता हूँ। इस हालत में जब तक आप यह विश्वास हमें न दिला दें कि आनेवाली मेरी अपनी परिस्थिति आज की अपेक्षा बेहतर होगी, तब तक मैं अपनी जमीन क्यो निकालूँ!" इन प्रश्नों से यह लगता है कि गाँव में सक्षम कार्यकर्त्ताओ की आवश्यकता है, जो विश्वासपूर्वक विचारों को रख सकें। तो भी सुखपुर में अब तक १२ बीघे भूमि ग्रामसभा के पदाधिकारियो के द्वारा निकाली जा चुकी है। अन्य ग्रामीणो ने भी जमीन निकालना शुरू किया है।

गाँवों में ब्राह्मण तथा राजपूत गुट सक्रिय है। तीन साल पहले जब समर्पण-पत्र पर हस्ताक्षर करानेवाले कार्यक्रम में ब्राह्मण गुट सक्रिय था और राजपूत गुट ने जहाँ सहयोग की बात तो क्या, हस्ताक्षर करने से भी इन्कार किया था, वही पर आज राजपूत गुट ग्रामस्वराज्य तथा पुष्टि-कार्यक्रम में आगे आ रहा है, और ब्राह्मण गुट पीछे। ब्राह्मण गुट का समर्थन तो है, लेकिन सहयोग नहीं है, जिसका एकमात्र कारण उनके नेता हैं, जो गाँव के मुखिया हैं, और जिला कम्युनिस्ट पार्टी के अच्छे कार्यकर्त्ता हैं। लेकिन जब इनसे भी चर्चा हुई तो सहयोग देने का आश्वासन उन्होने दिया। वे इस कार्य में आगे आते है, तो सभी लोग उनके साथ आयेंगे। सम्भवत किसी स्थान पर उनके सहयोग न मिलने के कारण ग्रामस्वराज्य की गाड़ी रुक भी सकती है। यदि वास्तव में ग्रामदान के विचार की व्यावहारिकता प्रदान करनी है, तो इनका सहयोग पाना ही होगा और इसके लिए इनको कुछ पूर्वाग्रहो से मुक्त कराना होगा।

यद्यपि ५१ प्रतिशत जमीन और ७५ प्रतिशत जनसख्या के आधार पर पुष्टि-कार्यक्रम सम्पन्न हो जायेगा, और कानूनी मान्यता भी मिल जायेगी, लेकिन सुखपुर में इतने से ही सतोष कर लेना हमारी भूल होगी। वहाँ पर तो इस मौके का लाभ उठाकर गाँव एक परिवार के रूप में एक और नेक बँधे बने, यह विचारणीय है। कार्य की मद गति को देखते हुए तरुणो ने लोगों को मोह, ममता और जड़ता से मुक्त होकर बीघा-कट्ठा निकलवाने के लिए अन्ततोगत्वा सत्याग्रह की बात भी सोचना शुरू किया है। अमरनाथ भाई तथा जानकी दीदी को वहाँ इस विचार के चलते लोगों का अच्छा स्नेह मिला है। इन लोगो ने वहाँ पर कार्यक्रम में स्पष्ट भाग न लेकर केवल लोगो के अभिक्रम को जागृत करने का ही प्रयास किया है। सुखपुर में कार्यकर्त्ताओ की शक्ति का प्रयोग न होकर स्थानीय जन-शक्ति का जो अभिक्रम जागृत हुआ है, उसके चलते इस आन्दोलन से सम्बन्धित लोगों की आँखें सुखपुर पर गड़ी हैं। आस-पास की पचायतें भी सुखपुर को आशाभरी निगाहो से निहार रही हैं। स्थानीय जनशक्ति का प्रयोग ही सुखपुर की विशेषता है।

इन सारी अनुकूलताओ तथा प्रतिकूलताओ के बीच सुखपुर के युवक मित्रो का अदम्य उत्साह, अथक परिश्रम, पवित्र भावना तथा क्रांति की लगन व बुजुर्गों का मार्गदर्शन तथा आशीर्वाद, सब का अत्यन्त मनोहारी तथा सुखद सयोग सुखपुर की धरती पर मुझे देखने को मिला। अब ग्रामस्वराज्य की पावन गंगा को उस भूमि में प्रवाहित होने में लेशमात्र भी सदेह नही रह जाता।

—अरुणकुमार

मुजफ्फरपुर की डाक

शेरपुर शिविर में महत्वपूर्ण बैठक

दिनांक ४ जनवरी '७१ को दिन के १२ बजे जे० पी० के मुख्य कैम्प शेरपुर में मुसहरी प्रखंड ग्रामस्वराज्य अभियान में लगे कार्यकर्ताओं, ग्रामसभा के पदाधिकारियों, ग्राम-शान्तिसेना के जवानों और क्षेत्र के प्रमुख लोगों की संयुक्त बैठक हुई। बैठक में श्री देवी भाई, मंत्री, युद्ध-विरोधी आन्तर्राष्ट्रीय संघ (वार रेसिस्टर्स इंटरनेशनल) भी उपस्थित थे। श्री कैलाशप्रसाद शर्मा ने उन विषयों की चर्चा की, जिन पर आज की बैठक में विचार किया जानेवाला था। श्री परमहंसजी ने अब तक हुए कामों की जानकारी दी और फिर हर पंचायत के कार्यों के अलग-अलग प्रतिवेदन प्रस्तुत किये गये।

मुसहरी में ग्रामदान की शर्तें

प्रखंड की १७ पंचायतों में से १४ में सघन रूप से ग्रामदान का काम चला है। शेष ३ पंचायतों में कार्यारम्भ के लिए योजना बनायी गयी है। जिन ९६ गांवों में काम हुआ है, उनमें से २६ में ग्रामदान की शर्तें पूरी करके ग्रामसभा का गठन हो गया है। ४० गांवों में ग्रामदान की दोनों शर्तें पूरी हैं, और सर्वसम्मति से ग्रामसभा के गठन की तैयारी चल रही है। २२ गांवों में जनसंख्या की शर्त पूरी हो गयी है, मगर कुछ भूमिवानों के नहीं शामिल हो सकने के कारण भूमि की शर्त पूरी नहीं हुई है, जिसके लिए हर जगह कार्यकर्ता सतत प्रयत्नशील हैं। छपनगरा पंचायत का काम ग्रामदान की दृष्टि से पूरा हो गया है। एक टोले को छोड़कर सबमें ग्रामसभा भी बन गयी है। "प्रह्लादपुर पंचायत के सभी गांवों में जनसंख्या की शर्तें पूरी हैं। इन १४ पंचायतों में ग्रामदान विषयक कार्य अधिकांश पूरे हो चुके हैं, मगर अब जो थोड़ा काम शेष है वह आग्रही भूमिपतियों के कारण कठिन सिद्ध हो रहा है। ग्रामसभा-गठन के काम की ओर अब विशेष प्रयत्न चल रहा है और जहां-तहां अनुकूलता होती जा रही है ग्रामसभा-गठन के कार्य में तेजी आती जा रही है।

नवगठित ग्रामसभाएं

पंचायत प्रतिवेदन के बाद ग्रामसभाओं द्वारा किये गये कामों का प्रतिवेदन प्रस्तुत किया। ये ग्रामसभाएं अभी नवगठित और कम अनुभववाली हैं। मुख्यतः इन्होंने श्रमदान से सड़क-नहर आदि का निर्माण, कार्यालय का प्रारम्भ, ग्रामकोष का संग्रह, उपेक्षित असहायों की सहायता और सेवा तथा ग्रामदान के शेष कार्यों को पूरा करने का काम किया है। इसके अलावा बोरिंग, बिजली, पाठशाला आदि निर्माण-कार्य प्रारम्भ हुए हैं। पुराने मामले-मुकदमे को निपटाने, बीघा-कट्ठा बांटने तथा ग्राम-शान्तिसेना गठित करने की दिशा में भी उत्तम प्रयत्न कुछ गांवों में हुए हैं।

ग्राम-शान्तिसेना

ग्राम-शान्तिसेना के प्रतिवेदन से यह स्पष्ट हुआ कि काम प्रखंड के उन हिस्सों में कुछ ज्यादा हुआ है जहां ग्रामसभा पहले ही चरण में बनी और अब क्रियाशील हो चुकी है। नवगठित ग्रामसभा तथा ग्रामदान के क्षेत्र में इस कार्य में अभी पूरी गति नहीं आयी है। तय किया गया कि जैसे-जैसे जिन-जिन गांवों में ग्रामदान का कार्य बढ़ता चलता है ग्राम शान्तिसेना के कार्य भी वहां तुरत प्रारम्भ किये जायें। जनशिक्षण, युवा लोगों का संगठन, शहर में प्रदर्शन, प्रशिक्षण और प्रचार का काम शान्तिसैनिकों ने अच्छा किया है।

कुछ सुझाव

प्रत्येक ग्रामसभा योजनापूर्वक अपने समीप के अन्य गांवों को ग्रामदान में शामिल कराने तथा वहां ग्रामसभा गठित करने में मदद करे और समीप के गांवों में काम पूरा करने की जवाबदेही उठाये। इसकी योजना बनायी गयी और टोली बनाकर क्रियाशील ग्रामसभाओं के जिम्मे निश्चित गांवों की जवाबदेही दी गयी। जवाबदेही उठानेवाली ग्रामसभाएं हैं—माधोपुर, मुसहरी, नरौली, द्वारका-नगर, मारापुर चौबे।

श्री कैलाश बाबू ने सुझाया कि मार्च तक ग्रामसभा-गठन एवं सभी गांवों को ग्रामदान में शामिल करने का काम पूरा हो, ऐसा निश्चय करना चाहिए। ताकि १८ अप्रैल भूदान दिवस का वार्षिकोत्सव हम सही अर्थों में मना सकें।

जे० पी० ने सुझाव दिया कि, "एक दिन पूरे समय सभी ग्रामसभाओं के प्रमुखों एवं कार्यकर्ताओं का दिनभर का शिविर हो, जिसमें आगे के कार्य और कार्यक्रम पर विचार किया जाय।" मारापुर चौबे ग्रामसभा ने इस बैठक के लिए आमंत्रण दिया और ७ मार्च को यह बैठक हो, ऐसा तय हुआ। जे० पी० ने उपस्थित लोगों के समक्ष एक विचार यह रखा कि, "अब तक का यह अनुभव आया है कि कुछ गांव और कुछ लोग हमारा मूक विरोध करते हैं। हमारी बात सुनना नहीं चाहते और न दूसरों को भी भरमाते हैं। ऐसे गांव और व्यक्ति के लिए हमें कुछ सोचने की मजबूरी आ गयी है। मैंने कहा था—अहिंसा के तरकस में अनेक तीर हैं। ऐसे लोगों के लिए हमें क्या करना चाहिए, सोचें। सब चीज की मर्यादा होती है। समझाने-बुझाने का जहां हर प्रयास विफल होता है वहां क्या करना है? तीर तो एक से एक हैं और अचूक हैं। मगर क्या करना है इस पर हम ७ मार्च की बैठक में निर्णय लें।" उन्होंने कहा कि, "चुनाव आ गया है। स्वाभाविक है कि राजनैतिक विचारों की मत-भिन्नता का असर गांव पर पड़े। इसमें हम क्या करें? मैं समझता हूं ग्रामसभा बैठे और इस पर विचार करें। आप प्रतिनिधि के चरित्र और विचार देखें, और निर्णय लें। गांव

को टूटने न दें। एक राय होकर निर्णय लें। अगर एक राय न हो तो ग्रामसभा कोई भी निर्णय घोषित न करे। लोगों को इच्छानुसार पूरी छूट दी जाय। मगर गलत वोट न पड़े, दबाव या प्रलोभन न हो, आदि बातों का ध्यान रखा जाए। चुनाव सही ढंग से हो इसका प्रयत्न ग्रामसभा करे।" सिंचाई और पेयजल के बारे में आपने कहा कि, "सरकार ने रेखा खींच दी है कि १०६ पंचायतों पर ही अब सरकार यहाँ सुविधा देगी। अन्य भी कुछ कठिनाइयाँ हैं, अतः इसकी सीमा समझकर काम किया जाय।"

श्री देवी भाई की अभिव्यक्ति

जे० पी० की चर्चा के बाद श्री देवी भाई ने कार्यकर्ताओं को सम्बोधित किया। देवी भाई लन्दन से कुछ सप्ताह पूर्व ही भारत-भ्रमण में आये हैं। वे इंग्लैंड में सर्वोदय का ही काम करते हैं। देवी भाई ने कहा कि, "आज जिन समस्याओं से जे० पी० और आप सब यहाँ जूझ रहे हैं वह सारे विश्व में, यूरोप में और इंगलैंड में भी ऐसी ही जटिल हैं। बहुत सारी समस्याएँ बिलकुल यहाँ जैसी वहाँ भी हैं— न्याय की समस्या, समता की समस्या, शान्ति की समस्या, नागरिक स्वतन्त्रता की समस्या। मानव-मानव के बीच का यह भेद सर्वत्र भीषण रूप से वर्तमान है। उसी संघर्ष में मार्टिन लूथर किंग तक की हत्या हो गयी! वहाँ भी लूट, मार, चोरी डकैती बढ़ रही है।

"मेरी संस्था यूरोप में ५० साल पहले बनी थी और वह गांधीवादी पद्धति से इन समस्याओं के निराकरण के लिए सतत प्रयत्नशील है। मुख्य रूप से हमारे काम की दिशा है—युद्ध के विनाश से मानवता की मुक्ति के लिए संघर्ष।" उन्होंने बड़े मार्मिक ढंग से युद्ध की नृशंसता और अमानवीयता का वर्णन किया और कहा कि, "युद्ध की समाप्ति के बिना मानवता का त्राण कभी नहीं हो सकता। युद्ध और गरीबी एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। एक के रहते दूसरे का उन्मूलन नहीं किया जा सकता। दुर्भाग्य से सरकारें युद्ध की तैयारी बढ़ाती हैं और आकाशा गरीबी निवारण की रखती हैं। फलतः संसार से न युद्ध जाता है, न गरीबी मिटती है, और न शान्ति, प्रेम, न्याय और स्वतंत्रता की अभिवृद्धि होती है।" आपने बताया कि, "खुशी की बात है कि संसार को युवा पीढ़ी अब यह बात समझने लगी है और इसके लिए उसने जन-आन्दोलन सारे विश्व में छेड़ दिया है। कहीं उन्होंने टेक ओवर का नारा दिया है कहीं डू इट योरसेल्फ का। मगर बात यह समझ में आ गयी है कि करना है अब सब अपने से और इसी युवा पीढ़ी को। सारे संसार में सत्ता से, सरकार से लोग निराश हो गये हैं और मान गये हैं कि हमें संसार को अच्छा बनाने के लिए स्वयं संघर्ष करना है। खुशी की बात है कि भारत में विनोबा और जे० पी० के मार्गदर्शन में आप सारे लोग इस संघर्ष में लगे हैं तथा विदेशों में हमारे जैसे हजारों लोग लगे हैं। हम सब एक ही काम कर रहे हैं चाहे भारत में करें या विलायत में, या कहीं और। आपके काम से हमें और हमारे काम से आपको बल मिलेगा और संसार बापू एवं अन्य सन्तों के बताये मार्ग पर चलकर वर्तमान की इस विपत्ति से छुटकारा पायेगा। बस, हम सब इसी भावना से पूरे मनोयोग से इस महान काम को करते चलें।"

अंत में कामेश्वर बाबू के निर्देशन में विभिन्न शिविरों पर कार्य एवं कार्यकर्ता-नियोजन की चर्चा चली। उधर नवल भाई एवं रामनरेशजी ने शान्ति-सैनिकों की गोष्ठी की। शहबाजपुर छोड़कर शेष १६ पंचायतों के लिए कार्यकर्ता नियुक्त किये गये। आगामी ७ मार्च तक प्रखंड के हर गाँव और पंचायत में अपना काम पहुँच चुका रहेगा, ऐसी आशा है।

ग्रामदानी जयप्रकाशजी

आज १ फरवरी सन् १९७१ है। प्रात: का समय। जाड़े का मौसम। सूर्य की प्रियकर किरणें सारे शरीर को गुनगुना रही हैं। जे० पी० अपने कैम्प से पैदल निकले हैं, शेरपुर गाँव की ओर। साथ में हैं कैलाश बाबू, इन्द्रदेवजी, कामेश्वरजी, शिवनारायणजी, सुखदेवजी और अन्य मित्र।

थोड़ी ही दूर पर गाँव है, शेरपुर। जे० पी० पहले दरवाजे पर पहुँचे। मकान-मालिक श्री प्रद्युम्न तिवारी ने हाथ में दानपत्र भर जे० पी० का स्वागत किया। धन्यवाद! जे० पी० आगे बढ़े। ये युवक हैं, अनिलकुमार। नानीजी का घर है और ये हैं उनके उत्तराधिकारी। जे० पी० का स्वागत करते हुए बोले—"मुझे एक दानपत्र दीजिए। मैं नानी से हस्ताक्षर करा दूँगा, अभी वे घर पर नहीं हैं।" और वे दानपत्र लेकर जे० पी० के साथ चल पड़े। ये हैं, श्री शत्रुघ्न तिवारी। पहले से ही कुछ लोगों को अनुकूल बनाकर हस्ताक्षर करके जे० पी० के स्वागत के लिए तैयार बैठे हैं। इनमें एक गया बाबू भी हैं। इन्होंने तो पहले ही हस्ताक्षर कर दिया था। "यह मकान किनका है?" पूछते हुए जे० पी० आगे बढ़े। श्री योगेन्द्र तिवारी का। तीन भाई का संयुक्त परिवार। सुखी किसान। आपने भी हस्ताक्षर कर दिये। "और यह बड़ी हवेली?" बालेश्वर बाबू की। ८५ वर्ष के बूढ़े पिताजी बैठे हैं। जे० पी० की चर्चा चल रही है। बूढ़े बाबू कह रहे हैं—"धन्य भाग्य है मेरे, कि आप दरवाजे पर आये। मेरा बेटा बालेश्वर आयेगा तो हस्ताक्षर भी हो जायेगा।" सामने उनके भतीजे सच्चिदानन्द आ गये। २५ वर्ष के युवक। उन्होंने ग्रामदान का फार्म उठाया और हस्ताक्षर करके जे० पी० के आगे बढ़ा दिया। धन्यवाद! अब ११ बज गये थे, और जे० पी० शिविर की ओर मुड़ गये थे।

('जयप्रकाश शिविर समाचार' से)

स्वयं चिन्तन करके निर्णय करें, बाबा वाक्यं प्रमाणम् नहीं

"सो यू आर अडाप्टेड बाय गाड–भगवान ने आपका स्वीकार किया है।"

सुननेवाली शांत, सौम्य मुद्रा पर प्रश्नचिह्न अंकित हुआ। फिर से वही बात दोहरायी गयी, "'ओदेते' (odetto) यानी 'आदत्त'। आदत्त संस्कृत शब्द है। इसका अर्थ है, भगवान ने जिसका स्वीकार किया है।"

उषा ने मदद की। बाबा के शब्द अंग्रेजी में समझाये। तब वह मुद्रा खुशी से खिल उठी। फिर उनके एक-एक प्रश्न का जवाब।

"भगवान को प्राप्त करने का मुख्य साधन कौनसा?"

"मुख्य साधन है शुद्ध चित्त। चित्त शुद्ध होता है, तब भगवान उसमें प्रतिबिंबित होते हैं।"

"भगवान की सेवा कैसे करें, जब कि अपने पास किसी प्रकार की शक्ति या आरोग्य नहीं है?"

"मिल्टन अंधा था। उसने अपने अंधेपन पर एक कविता लिखी है। उसमें वह प्रभु से कहता है, 'मैं तुम्हारी सेवा कैसे करूँ? मैं अंधा हूँ।' फिर वही आगे जवाब देता है, 'प्रभु को मनुष्य की सेवा की जरूरत नहीं है। वे भी सेवा करते हैं, जो सिर्फ खड़े रहते हैं और इन्तजार करते हैं (दे आल्सो सर्व, हू ओनली स्टैंड एण्ड वेट)।' खड़े रहना यानी अपनी मजबूती पर, बुनियाद पर, आध्यात्मिक बुनियाद पर खड़े रहना।"

"क्या दूसरे के लिए हम प्रार्थना कर सकते हैं?"

"अवश्य! लेकिन वह प्रार्थना शुद्ध हृदय से होनी चाहिए। ऐसी प्रार्थना का परिणाम उन पर होता है, जिनके लिए आप प्रार्थना करती हैं।"

"तो फिर आप मेरे लिए प्रार्थना करेंगे?"

बाबा हँसने लगे। तब वह महिला आगे खिसकी और बाबा के हाथ अपने हाथ में थामकर आर्त स्वर में उसने वही प्रश्न दोहराया। तब बाबा ने आश्वस्त स्वर में उसकी पीठ सहलाते हुए कहा, "ठीक है। ओ० के०।"

यह फ्रेंच महिला आडिटी—जिन्होंने अब अपना नाम शांति कर लिया है—फ्रान्स में शिक्षिका का काम करती थी। सेहत साथ नहीं देती, इसलिए पिछले दस साल से काम से मुक्त हो गयी हैं। आध्यात्मिक जीवन के प्रति आकर्षण है और जीने का प्रयत्न कर रही हैं। जितने दिन यहाँ रहीं, रोज भरतराम-मंदिर में ध्यान करती थीं, सामूहिक प्रार्थना, विष्णुसहस्रनाम के पाठ में नियमित आती थीं, उनके हाथ में अक्सर संस्कृत गीता दिखायी देती थी।

× × ×

उत्तराखंड के समर्थ कार्यकर्ता सुंदरलालजी बहुगुणा स्वास्थ्य-सुधार के लिए महीना-डेढ़ महीना गोपुरी में निसर्गोपचार ले रहे थे। बीच-बीच में बाबा के पास आते थे। जब वे वापस उत्तराखंड लौट रहे थे, तब उन्होंने अपने काम की योजना के बारे में कुछ बातें बाबा को लिख कर दीं। उस पर बाबा ने कहा, "आपको अच्छे लोगों ने अच्छे-अच्छे सुझाव दिये हैं। आध्यात्मिक क्षेत्र में कूदना है, तो गुरु का आदेश चाहिए। लेकिन सामान्य बातों में सुनना सबकी, करना मन की। चाणक्य ने कहा, 'मेरा सब कुछ जाये, लेकिन मेरी बुद्धि न जाये—बुद्धिस्तु मागात् मम। गीता में भी है—बुद्धौ शरण अन्विच्छ।

"शरीर कभी कमजोर होने नहीं देना चाहिए। मानवदेह मिली है। मानव-देह में आत्मदर्शन की शक्यता है। इसलिए मनु महाराज ने आज्ञा दी है, 'अभुञ्जन् योगतस् तनुम्'—योग से शरीर को क्षीण होने न दें और सारे पुरुषार्थ साधें। नींद में कंजूसी नहीं करनी चाहिए। रात में सात घंटा और दिन में एक घंटा सोयें। हर माह बाबा को पत्र लिखें। उत्तर की अपेक्षा न करें। साल-भर में एकाध बार यहाँ आकर गोता लगायें।"

× × ×

जो लोग बचपन से ही बाबा के पास रहे हैं, उनमें से एक हैं, भाऊ पानसे। भाऊ पानसे ग्राम सेवा मंडल के सरंजाम कार्यालय का भार संभाल रहे हैं। उनके पेट में 'ड्यूडोनल अल्सर' है। बाबा खुद भी उस रोग के मरीज हैं और उसको उन्होंने विशिष्ट आहार लेकर काबू में रखा है। पिछले चंद रोज से भाऊ के पेट में इस पुराने रोग ने सिर ऊपर उठाया है। अब बाबा ने उन्हें यहाँ अपने पास बुलाया है। ८ जनवरी से भाऊ यहाँ हैं। बाबा का इलाज चल रहा है। उनके स्वास्थ्य में सुधार है।

× × ×

नया साल नया विचार लेकर आया। एक जनवरी की शाम की बैठक में बाबा ने कहा, "आज का दिन बोलने का नहीं, चिंतन, मनन, ध्यान का है। ईसा के नाम से सन् शुरू हुआ, वह मुझे बहुत प्रिय है। अपने यहाँ शालीवाहन के नाम से शक चलता है और विक्रमादित्य के नाम से संवत् चलता है। दोनों बादशाह के नाम से चले। इससे बेहतर है कि संत-पुरुष के नाम से चले।"

संक्रान्ति का पहला दिन। सुबह करीब १० बजे सफाई के निरीक्षण के निमित्त बाबा घूम रहे थे। २० दिसम्बर से बाबा को खाँसी है। थोड़ा बुखार भी रहता है। डाक्टर देखते हैं। दवा भी चल रही है। तात्याजी (बालकोबाजी) बाबा को जाँचना चाहते हैं। कमर के दर्द के कारण तात्याजी के लिए सीढ़ियाँ चढ़ना-उतरना कठिन जाता है, इसलिए लाल बगले

में ही रहते हैं। चारों ओर का निरीक्षण कर बाबा खुद तात्याजी के पास चले गये, ताकि तात्याजी को नीचे उतरना न पड़े। स्टेथेस्कोप से तात्याजी ने बाबा को वहीं धूप में जाँचा। फिर बाबा वापस अपनी कुटी के पास आये और जामुन के पेड़ के नीचे विराजमान हुए। स्वाभाविक ही बहनें-भाई वहाँ गोलाकार में बैठ गये। बाबा ने बोलना आरम्भ किया, "व्यक्तिगत अहंकार छोड़कर हम सब एक ही शरीर हैं, ऐसी कल्पना करके व्यवहार करें। पहले नाटक के तौर पर किया जाय। ब्राऊनिंग का वाक्य है—'फेथ मे टच ए पोप अनअवेअर' (अच्छी चीज का ढोंग करते रहें, तो श्रद्धा का स्पर्श कभी अपने आप ही हो जायेगा।) ढोंग भी ठीक ढंग से करना चाहिए। हरिश्चन्द्र का पार्ट लिया, तो ठीक तरह से करना चाहिए। उस समय मैं फलाना हूँ, ऐसा याद नहीं करना चाहिए'''।" विषय खतम हुआ। गम्भीर वातावरण को और गम्भीर बनाते हुए बाबा ने कहा—"कल संक्रांति है। कल से मैं अधिक मौन रखनेवाला हूँ। बोलने के लिए जो समय रखा है, वह भी कल से नहीं रहेगा। किसीको कुछ पूछना हो तो लिखित पूछें। आवश्यक हो, तो उत्तर भी लिखित दिया जायगा। जो कार्यक्रम और ऐसे दो-तीन हैं, पहले से निश्चित हुए हैं, वे अपवाद माने जायेंगे। बाकी कोई कार्यक्रम नहीं रहेगा। आचार्यकुल की बैठक, महाराष्ट्र सर्वोदय मंडल की बैठक और गोसेवा संघ के लोगों से मुलाकात, ये वे अपवाद हैं।"

महाराष्ट्र सर्वोदय मंडल के साथी १९ तारीख को आये थे। उन लोगों के सामने बाबा ने तीन सुझाव रखे—"(१) धाना जिले में पुष्टिकार्य पूरा करें। (२) अच्छी हिन्दी बोलनेवाले, तथा विचार अच्छी तरह से समझानेवाले कुछ लोग होंगे, उन्हें सहरसा भेजा जाय। कृष्णराज और निर्मला, दोनों वहाँ काम कर रहे हैं। (३) वृद्ध लोगों पर भरोसा न करें, वे मर चुके हैं, यों समझकर सर्वसम्मति से काम करें। उनका आशीर्वाद आपको प्राप्त है ही।"

तमिलनाडु का शान्तिसेना विद्यालय समाप्त करके इन्दुबहन टिरेकर आयी थीं। तीन-चार दिन यहाँ बिताकर वे अब बलरामपुर (बंगाल) गयी हैं। उन्होंने सामूहिक साधना, अहंनिरसन आदि के बारे में बाबा से एक प्रश्न पूछा था। उन्हें लिखित जवाब दिया गया, "स्वयं चिंतन करके निर्णय करें। बाबा वाक्य प्रमाणम् नहीं।

एक अमरीकन बहन के प्रश्नों के जवाब में लिखा : "१४ जनवरी को मैंने मौन शुरू किया, तब से चिंतन भी बन्द किया। केवल 'खुला मन' रखता हूँ। आपके सवाल मैंने पढ़े। अच्छे सवाल हैं। मैंने पढ़ लिये, तो आपको उत्तर मिल जायेगा अन्दर से।"

२० दिसम्बर को शुरू हुई बाबा की खाँसी अभी भी वैसी है। रात में खाँसी से नींद में खलल पहुँचती है। खाँसी रात को जोर करती है। दिन में भी बीच-बीच में होती है। अब बुखार नहीं है। वर्धा, सेवाग्राम के डाक्टर तथा सिविल सर्जन मिलकर इलाज कर रहे हैं। आजकल बाबा ने सफाई का काम बन्द किया है, ज्यादातर आराम करते हैं। मौन रखा है, इसकी डाक्टरों को भी खुशी है। इससे उन्हें काफी आराम मिलता है। बाबा ने स्वयं डाक्टरों को लिख दिया— "स्वास्थ्य में सुधार हो रहा है ऐसा मुझे दीखता है।"

मौन शुरू हुआ तब से बाबा की खटिया पर सिरहाने के पास दो छोटी-छोटी 'खाक़ वही' (नोटबुक) रहती हैं। एक पर पीले रंग का कवर है, उस पर लिखा है—'अस्मारम्'। बाबा स्वयं जो कहना चाहते हैं, वह उसमें लिखा जाता है। दूसरी पर लिखा है—'युष्मारम्'। इसमें आपको लिखना है बाबा के लिए। फिलहाल स्वास्थ्य के लिए क्या करना चाहिए, इस बारे में एक दिन शाम की प्रार्थना के बाद 'अस्मारम्' में लिखा गया :

१—भाप लेना
२—नमक के पानी का प्रयोग
३—उबला पानी
४—शौच की योजना
५—खट्टा खाना नहीं चाहिए
६—नाक साफ रखा जाय
७—भरपूर खाया जाय
८—खूब सोना
९—नामस्मरण करना
१०—हँसते रहना
११—फाजोल (फालतू) श्रम करना नहीं चाहिए
१२—शरीर को गरम रखना
१३—बुखार नापते रहना
१४—लेटने से तकलीफ होगी तब बैठे रहना
१५—डाक्टर एकमत से जो कहेंगे, वह दवा लेते रहना
१६—साक्षित्व से खेल देखें

तारीख २३ को तात्याजी ने पुनः बाबा को जाँचा। पिछले आठ-दस महीनों से बाबा सोते समय तकिया इस्तेमाल नहीं करते हैं। तात्याजी ने उस बारे में पूछा तथा अपना मुलायम तकिया भी दिखाया। उनका कहना था कि शायद तकिये से खाँसी में राहत मिलेगी। बाबा ने लिखा, "तकिये से कान पर दबाव आता है, इसलिए यह छोड़ा। तकिया न होने से खाँसी बढ़ती है, ऐसा अनुभव नहीं है। लेटने से खाँसी की प्रवृत्ति होती है। प्रह्लाद का बाप सोने (सुवर्ण) का तकिया रखता था। यह ज्ञान (तकिया न लेने का) मुझे कुत्ते ने दिया।"

तात्याजी ने कहा, "हम कुत्ते से भी गयेबीते हो गये।"

बाबा ने लिखा, "संन्यासी ने कुत्ते को देखकर ही कमंडलु छोड़ दिया। अवधूत के चौबीस गुरु।"

डाक्टरों का कहना है कि बाबा के स्वास्थ्य के बारे में चिन्ता का कोई कारण नहीं है। ('मैत्री' से साभार) —कुसुम

एक खुला पत्र : आपकी सेवा में

सर्वोदय-आन्दोलन के मुखपत्र 'भूदान-यज्ञ' के मार्फत यह खुला पत्र हम देश भर में फैले उन साथियों के नाम अपनी अन्तर्वेदना व्यक्त करते हुए लिख रहे हैं, जो एक समय क्रान्ति—जिसका अनिवार्यतः प्रारम्भ-बिन्दु भूमि-क्रांति है—के लिए अपने को समर्पित किये हुए हैं, और जो यथास्थिति के लिए अपनी हार्दिक अश्रद्धा और अनास्था के प्रति ईमानदार हैं, अर्थात् उक्त अश्रद्धा की श्रद्धा और अनास्था की आस्था के साथ जी रहे या जीना चाह रहे हैं। इस पत्र द्वारा हमें उनसे कुछ नहीं कहना है जो यथास्थिति को कायम रखनेवाले विभिन्न आकार-प्रकार की प्रवृत्तियों को चलाकर 'अच्छे काम करने का सुख-सन्तोष' प्राप्त करने के लिए किसी-न-किसी अधिष्ठान (इस्टेब्लिशमेन्ट) में अपने को 'फिट' किये हुए हैं, या ऐसा करने के लिए प्रयत्नशील हैं।

राजगिर-सम्मेलन के समय की बिहारदान की (अनौपचारिक) और उसके बाद तमिलनाडुदान की (अपूर्ण) उपलब्धियों के बाद सेवाग्राम के अधिवेशन (अक्तूबर '७०) में हमने यह महसूस किया कि ग्रामस्वराज्य-आन्दोलन में आ रहे एक प्रकार के गत्यावरोध को दूर करने के लिए सघन ग्रामदानी क्षेत्रों में ग्रामस्वराज्य के शक्ति-केन्द्र बनाये जायँ। जयप्रकाशजी जिस तरह मुसहरी में 'काम होगा या मेरी हड्डी गिरेगी' का संकल्प लेकर बैठे हैं, संघ-अधिवेशन में जो माहौल बना था, उससे यह आशा बनी थी कि उसी तरह देश भर में कुछ शक्ति-निर्माण के प्रयोग-केन्द्र बनाने के लिए सर्वोदय-आन्दोलन के प्रमुख लोग ग्रामस्वराज्य के लिए हड्डी गलाने बैठेंगे। करीब ७ साल पहले सर्व सेवा संघ के गोपुरी-अधिवेशन में जो तूफान प्रकट हुआ था, वह सेवाग्राम-अधिवेशन के बाद अति तूफान के रूप में गहरा और व्यापक बनेगा, ऐसी आशा के पैदा होने के ठोस आधार भी तो हैं। सर्व सेवा संघ का नया नेतृत्व क्रान्तिकारी भूमिका का है, ग्रामस्वराज्य-कोष की अप्रत्याशित सफलताओं में निहित जनता की भावनात्मक अनुकूलताएँ हैं, और सबसे ऊपर जे० पी० का एक महान संकल्प है। लेकिन अक्तूबर '७० से १२ फरवरी '७१ तक के बीच की अवधि में उस दिशा में क्या अपेक्षानुकूल प्रयत्न होते दिखाई पड़ते हैं? हाल ही में वाराणसी में सर्व सेवा संघ की प्रबन्ध-समिति की बैठक में जो प्रादेशिक गतिविधियों की जानकारी दी गयी, उसको सुनकर तो यह भी भ्रम ही साबित हुआ कि ग्रामस्वराज्य-कोष के काम को ३१ दिसम्बर तक बढ़ाया गया है, तो उसके बाद सेवाग्राम के निर्णय की भूमिका में काम होगा। तब तक कोष के ही काम में शक्ति लगेगी। लेकिन ग्रामस्वराज्य-कोष का काम भी कितने प्रदेशों में कितनी गति से हुआ?

सेवाग्राम के निर्णय के बाद बाबा के द्वारा कराये गये संकल्पानुसार केवल सहरसा में काम शुरू हुआ, जो निश्चय ही उल्लेखनीय है, लेकिन स्वयं बाबा द्वारा जिस स्वर की अभिव्यक्ति बिहार ग्रामस्वराज्य समिति के मंत्री श्री विद्यासागरजी के साथ की चर्चा में हुई थी, 'कार्यकर्ताओं में ताला लगाओ और सहरसा में बसो। काम न हो तो मर जाना, इस संकल्प के साथ जुटो' का बाबा द्वारा जो आत्यन्तिक आह्वान हुआ था उस स्वर के साथ सहरसा हमारे आन्दोलन का मोर्चा बन पाया है? अपने सूक्ष्मप्रवेश के बाद भी बाबा ने इतना कहा, हमारे आन्दोलन के सेनापति जे० पी०—जिनके व्यक्तित्व के साथ राष्ट्रीय-आन्तर्राष्ट्रीय महत्त्व की प्रवृत्तियाँ बराबर जुड़ी हुई रही हैं—सब कुछ गौण बनाकर मुसहरी में काम होगा, या मेरी हड्डी गिरेगी के संकल्प के साथ जुटे, क्या इससे भी अधिक प्रेरणापूर्ण किसी घटना का इन्तजार है हमको?

सेवाग्राम-अधिवेशन में शक्ति-केन्द्र बनाने के महत्त्वपूर्ण निर्णय के मध्य आ गया था ग्रामस्वराज्य-कोष-संग्रह की अवधि का विस्तार, और उसके बाद आ गया है लोकतंत्र के संरक्षण का कार्यक्रम मध्यावधि चुनाव में मतदाता-शिक्षण। अब हम फिलहाल इस अभियान में जोरों से लगे हैं। यह भी तो हो सकता है कि चुनाव-परिणामों के प्रकट होने पर कोई और भी तात्कालिक महत्त्व का अहम सवाल हमारे समक्ष प्रस्तुत हो सकता है, जिससे हम विमुख नहीं हो सकते?

यह सब देखकर यह चिन्ता—गम्भीर चिन्ता, पैदा होती है कि क्या हमारा आन्दोलन अपनी मुख्य धारा को प्रबल बनाये बगैर देश की संकटपूर्ण स्थिति का कोई कारगर समाधान अपनी छिटपुट प्रवृत्तियों द्वारा प्रस्तुत कर सकता है? वाराणसी में हुई प्रबन्ध-समिति की बैठक में तटस्थ पर्यवेक्षक की हैसियत से उपस्थित रहनेवाले एक शोध-छात्र ने टिप्पणी की, "यह क्रान्तिकारियों की कार्यकारिणी है या व्यवस्थापकों की व्यवस्था-सभा?" यह टिप्पणी पूरी तरह सही न भी माना जाय, तो भी कुछ ऐसी बातें तो हैं ही, जो इस तरह की प्रतिक्रियाएँ पैदा करती हैं।

यह सब हम मात्र आलोचना के लिए नहीं लिख रहे हैं, बल्कि इसलिए लिख रहे हैं कि कहीं कुछ ऐसा है जिसके कारण हम आन्दोलन की मुख्य धारा को प्रबल बनाकर उसकी ताकत से देश की समस्याओं का, संकटों का, समाधान प्रस्तुत करने की स्थिति में नहीं आ पाते, और इतस्ततः भटकते रहते हैं। हम हरदम इस स्पष्टता के साथ कदम नहीं उठा पाते कि हर अच्छा काम सर्वोदय की क्रान्ति का काम नहीं हो सकता, सम्पत्ति के स्वामित्व और नेतृत्व की प्रक्रिया और पद्धति में परिवर्तन लाने के लिए जो काम शक्ति पैदा नहीं कर सकें, उनमें हमें फँसना नहीं चाहिए।

मित्रो,

३० जनवरी से १२ फरवरी तक सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष श्री श० जगन्नाथन् ने

उपवास किया। यों उनका उपवास औपचारिक तौर पर मुख्य रूप से आत्मशुद्धि के लिए था, लेकिन उसके साथ के कई मुद्दों में एक मुद्दा यह भी था कि भूमि-समस्या के प्रति सर्वोदय-कार्यकर्त्ताओं का ध्यान अधिक त्वरा के साथ आकर्षित हो। भूमि-समस्या को लेकर शुरू हुए 'भूदान' आन्दोलन को जिस सर्व सेवा संघ ने अपना प्रमुख लक्ष्य और कार्यक्रम माना उसके अध्यक्ष को इस समस्या के प्रति सर्वोदय-कार्यकर्त्ताओं के भी ध्यानाकर्षण के लिए उपवास करना पड़े, यह स्थिति क्या ऐसी नहीं है कि आन्दोलन के अटकाव या गत्यावरोधवाले बिन्दु को बारीकी से परखकर दूर किया जाय?

हम यह महसूस कर रहे हैं कि आन्दोलन अपने जीवन-मरण के दौर से गुजर रहा है। और शायद हम अपने अस्तित्व के संरक्षण के लिए अधिक चिंतित हो उठे हैं। शायद हम भूल गये हैं कि आन्दोलन के प्राणवान् हो उठने पर ही हम भी अपने जीवन में शक्ति का संचार पायेंगे। या फिर शायद हमारा अस्तित्व आन्दोलन के साथ एकरूप नहीं हो पाया है!

यह सब हम अपने आप को इन विश्लेषणों में अलग रखकर किसी पर आक्षेप करने के लिए नहीं लिख रहे हैं। साथियो, बल्कि परिस्थिति की गम्भीरता को महसूस करके लिख रहे हैं। इस चिंता से व्यग्र होकर लिख रहे हैं कि इतने वर्षों में हम 'ग्रामस्वराज्य की एक भी नखलिस्तान-वाड़ी' क्यों नहीं बना पाये, ताकि इस विचार की शक्ति का एहसास पैदा कर सकें और हमें देश को अपने अस्तित्व का बोध कराने के लिए तरह-तरह की प्रवृत्तियों में न फँसना पड़े!

इस खुले पत्र द्वारा हम अपनी तड़प व्यक्त करने के साथ ही आप सबके सामने (खासकर उनके सामने, जो इस ग्राम-स्वराज्य-आन्दोलन के लिए ही अपने को समर्पित किये हैं) एक सवाल रख रहे हैं कि अब तक जो नहीं हुआ सो नहीं हुआ, क्या भविष्य में हम 'ग्रामस्वराज्य की नखलिस्तानवाड़ी' बनाने के हौसले के साथ कहीं जुटकर कुछ करने की सोच सकते हैं? यह हमारा कोई आवाहन नहीं है, साथियों के नाम साथियों का चिन्तायुक्त निवेदन है कि ऐसा किये बगैर कोई चारा नहीं। सर्वोदय-आन्दोलन को प्रवृत्तिमूलक मार्ग से हटाकर क्रान्तिकारी पथ पर लाने के लिए हमें या तो तत्काल पूरे समर्पण के साथ कुछ करना होगा, या फिर, जैसा कि बाबा ने कहा है, औरों की तरह रोजी-रोटी की दूकानदारी में लग जाना होगा। आन्दोलन के साथ ही हमारा सामाजिक अस्तित्व मिट जायेगा।

हमारे हृदय की यह तड़प जिन साथियों के हृदय को स्पर्श करती हो, वैसे हम सब लोग एक-दूसरे के सम्पर्क में जल्द से-जल्द आ सकें, इसके लिए नीचे के पते को सम्पर्क का माध्यम बनायें:

मार्फत: 'भूदान-यज्ञ', राजघाट, वाराणसी-१ (उ० प्र०)

—अमरनाथ,
—सतीश कुमार
—रामचन्द्र राही

शान्ति-सैनिकों के नाम पत्र

मध्यावधि चुनाव में आपके कर्त्तव्य

प्रिय शांतिसैनिक,

सप्रेम जय-जगत्!

मध्यावधि चुनाव के कारण देश में जो नयी परिस्थिति पैदा हुई है उसके संबंध में यह पत्र लिख रहा हूँ।

इस बार के ये चुनाव हमारे गणतंत्र के लिए महत्वपूर्ण हो सकते हैं। चुनाव में राजनैतिक पक्षों द्वारा जो तरीके इस्तेमाल किये जायेंगे, उन पर यह बात निर्भर रहेगी कि आगे हमारा गणतंत्र और मजबूत बनेगा या कमजोर होगा।

मध्यावधि चुनाव के संबंध में सर्व सेवा संघ ने मतदाता-शिक्षण का कार्यक्रम उठाया है, जो शायद आपने देखा होगा।

शांतिसैनिक या शांति-सेवक के नाते इस अवसर पर हमारे कुछ विशेष कर्त्तव्य उपस्थित होते हैं:

(१) हमें यह देखना चाहिए कि चुनाव के समय अशांति न हो, और

(२) हमें यह भी देखना चाहिए कि चुनाव के समय कोई व्यक्ति या पक्ष डाँट, धमकी आदि का उपयोग करके किसीको मतदान करने के लिए जाने से ही न रोके। इसके लिए अपने क्षेत्र से दूर जाने की जरूरत नहीं है। किन्तु शांतिसैनिकों को कोशिश करनी चाहिए कि अपने क्षेत्र में ये दोनों शर्तें यथासंभव अच्छी तरह पूरी हों।

इसके लिए आप अभी से निम्न कार्यक्रम उठा सकते हैं:

(१) अपने क्षेत्र में सभा करके तथा पत्रिकाओं द्वारा इन बातों का प्रचार करें।

(२) चुनाव के सिलसिले में जहाँ उम्मीदवारों के विज्ञापन लगे हों, वहाँ शांति तथा निर्भयता के लिए सूत्र लिखे जायें। अपने क्षेत्र की दीवारें इन सूत्रों से भर दीजिए।

(३) जहाँ संभव हो विभिन्न उम्मीदवारों से मिलकर उनसे इन दोनों शर्तों का पालन करने का वचन लीजिए और संभव हो तो इस विषय में नागरिकों से एक अपील भी निकलवाइए।

(४) उम्मीदवार के एजेंट तथा उनके कार्यकर्त्ताओं से भी इस विषय में बात कीजिए।

(५) चुनाव के दिनों में आप स्वयं चुनाव के 'बूथ' पर तैनात रहिए, और यदि आपको अन्य मित्र मिल जायें तो उनको भी इस कार्यक्रम में शामिल कीजिए।

(६) अपने क्षेत्र के चुनाव-अधिकारी को आप पहले से सूचित कीजिए कि आप इस प्रकार शांति-रक्षा का काम करना चाहते हैं।

आप इस संबंध में जो कार्यवाही करें, उसके संबंध में हमें भी जानकारी देने की कृपा करें। सस्नेह,

—नारायण देसाई
मंत्री

अ० भा० शांतिसेना मंडल,
राजघाट, वाराणसी-१

आन्दोलन के समाचार

सहरसा की प्रगति

(पत्रांश)

इन दिनों सहरसा जिले के पाँच प्रखंडों में सघन पुष्टि-अभियान चल रहा है। ये पाँच प्रखण्ड हैं—सदर अनुमंडल का महिषी, सुपौल अनुमंडल का सुपौल और मरौना तथा मधेपुरा अनुमंडल का घौसा आलमनगर। इसके अलावा तीन और प्रखंड—पिपरा, छातापुर और सिंहेश्वर, की एक-एक पंचायत में पुष्टि का प्रयास चल रहा है। महिषी प्रखंड में अन्य प्रान्तीय १२ भाई-बहन कार्यरत हैं। सुपौल प्रखंड की १५ पंचायतों में बि० खा० ग्रा० संघ के ५० कार्यकर्ता काम कर रहे हैं। मरौना प्रखंड में सहरसा जिले के २० कार्यकर्ता श्री महेन्द्र भाई के नेतृत्व में काम में जुटे हुए हैं। घौसा प्रखण्ड की तीन पंचायतों में सर्वश्री केशव भाई, सखी भाई और स्वामी सत्यानन्दजी के नेतृत्व में ९ कार्यकर्ताओं की तीन टोलियाँ काम कर रही हैं। आलमनगर प्रखण्ड में श्री व्रजमोहन शर्मा के मार्ग-दर्शन में पटना तथा भागलपुर जिले की टोली २ पंचायतों में काम कर रही है। इस प्रकार कुल १०० से अधिक कार्यकर्ता प्रत्यक्ष रूप से क्षेत्र में मोर्चे पर डटे हैं। इनके अलावा सुश्री निर्मला बहन और श्री कृष्णराज भाई का पूरा समय इस जिले को प्राप्त हो रहा है। आचार्यकुल का जिले के पैमाने पर गठन करने के लिए सर्व सेवा संघ की ओर से श्री रामेश्वर प्रसाद बहुगुणा जिले में एक माह से जिले का दौरा कर रहे हैं। ग्राम-शांति-सेना तथा तरुण-शांतिसेना शिविरों के संचालन का कार्य जिले में २ माह से श्री अमरनाथ भाई और सुश्री जानकी बहन कर रही हैं। इन प्रयासों के फलस्वरूप जिले में पुष्टि के लिए बहुत ही अनुकूल वातावरण तैयार हुआ है, फिर भी भूमिहीनों कि भूमि सम्बन्धी मोह के कारण पुष्टि कार्य में तीव्र गति अभी नहीं आ सकी है। हम आशा करते हैं कि निकट भविष्य में अभियान में अपेक्षित वेग का निर्माण हो सकेगा। (श्री हेमनाथ सिंह को लिखे पत्र से)

—विद्यासागर

चम्बल घाटी में श्रमदान कार्यक्रम

गांधी शांति प्रतिष्ठान, नयी दिल्ली में युवक विभाग के प्रमुख श्री एम० एन० सुब्बाराव से प्राप्त एक जानकारी के अनुसार मध्यप्रदेश के डाकू-पीड़ित इलाके चम्बल घाटी की भूमि को रहने एवं कृषियोग्य बनाने में देश भर के युवकों के भाग लेने की योजना बनायी गयी है। केन्द्रीय और युवा सेवा मंत्रालय तथा मध्यप्रदेश शासन के कृषि-विभाग द्वारा योजना के क्रियान्वयन में हर सम्भव सहायता प्रदान की जायेगी।

प्राप्त जानकारी के अनुसार इस योजना में देश के विभिन्न प्रान्तों के युवक-युवतियाँ कोई १५ दिन के शिविर में भाग लेंगे और श्रमदान करेंगे। युवक-युवतियों के रहने एवं भोजन आदि की व्यवस्था निःशुल्क रहेगी। रेलमंत्रालय द्वारा कन्सेशन की सुविधा के लिए सम्पर्क किया रहा है। ऐसे शिविर पूरे वर्ष भर लगातार चलाये जाने की योजना है।

सर्वोदय मण्डलों का पुनर्गठन

महाराष्ट्र प्रदेश के लोकसेवकों का अधिवेशन ३० जनवरी को सम्पन्न हुआ। सर्वसम्मति से श्री वसंतराव बोंबटकर का सर्वोदय मण्डल के अध्यक्ष के लिए चुनाव हुआ। श्री गंगाप्रसादजी अग्रवाल उपाध्यक्ष रहेंगे। तीन मन्त्री होंगे। श्री० शि० म० पंटे उनमें से एक हैं। बाकी दो नाम तय करने हैं। श्री नन्दलालजी काबरा को कोषाध्यक्ष बनाया गया है।

ग्वालियर जिले के समस्त लोकसेवकों की एक बैठक दिनांक ३१ जनवरी को सम्पन्न हुई, जिसमें पुनर्गठित जिला सर्वोदय मण्डल के निवेदक श्री भूरकिशोर, सहनिवेदिका श्रीमती शिवकुमारी शर्मा, संयोजक श्री एन० शाण्डिल्याचार्य, और सहसंयोजक गुरुशरण व श्री जगदीश प्रसाद तिवारी सर्वसम्मति से निर्वाचित हुए।

बुलन्दशहर जिले के सर्वोदय मण्डल का पुनर्गठन करने के लिए १० फरवरी को जिले के लोकसेवकों को आमंत्रित करके एक बैठक श्री गांधी आश्रम, रेलवे रोड के प्रांगण में की गयी, जिसमें श्री राधा-राम भाई भी आये थे। जिला सर्वोदय मण्डल का गठन सर्वसम्मति से किया गया, जो निम्न प्रकार है श्री नरेन्द्र भाई, अध्यक्ष, श्री सूबेदार तिवारी, कोषाध्यक्ष, श्री रामदेव तिवारी, मंत्री; श्री भगत प्यारेलाल, प्रतिनिधि सर्व सेवा संघ।

बरेली में जिला सर्वोदय मण्डल का वार्षिक चुनाव हुआ, जिसमें श्री ओम्

प्रकाशजी अध्यक्ष; श्री प्रेम प्रकाश, मंत्री; श्री राजबहादुर, उपाध्यक्ष; श्री रमा-वल्लभ सहमंत्री; श्री बिसन लाल चौबे, जिला-प्रतिनिधि चुने गये। श्री सुरेशचन्द्र शर्मा भी जिला-प्रतिनिधि नियुक्त हुए।

कानपुर नगर के आर्यनगर क्षेत्र के लोकसेवकों की गत ७ फरवरी को प्रात गांधी-विचार उपकेन्द्र में हुई बैठक में प्राथमिक सर्वोदय मण्डल का गठन किया गया और सर्वसम्मति से श्री शिवनारायण दास (गांधीजी) को अध्यक्ष, श्रीमती भगवती पन्त को उपाध्यक्ष श्री राम-निरंजन सिंह को मंत्री और श्री रवीन्द्र सिंह को सहमंत्री निर्वाचित किया गया।

वलीवलम् में सफल सत्याग्रह

सप्रेस की तंजावूर शाखा से प्राप्त जानकारी के अनुसार वलीवलम् मन्दिर और अन्य जमींदारों की जमीन पर काश्त करनेवाले किसानों को न्याय दिलाने के लिए श्री श० जगन्नाथन्, सुश्री फ्लोरा (लन्दन स्कूल आव नॉन-वॉयलेंस की छात्रा) और श्री रामस्वामी ने भूमिवानों को हृदय-परिवर्तन की प्रेरणा देने के लिए ३० जनवरी और २ फरवरी से वलीवलम् में जो उपवास किया था, वह सफलता-पूर्वक समाप्त हुआ। श्री रामस्वामी ने, जो उक्त मन्दिर पर उपवास कर रहे थे ५ फरवरी को उपवास समाप्त किया, सुश्री फ्लोरा ने ६ फरवरी को और श्री जगन्नाथन् ने १२ फरवरी को।

सरकार और जिलाधिकारियों के विशेष प्रयत्न से रंगन नाम के एक किसान को मन्दिर की जमीन जोतने का अधिकार मन्दिर के अधिकारियों ने प्रदान किया। तमिलनाडु सर्वोदय मण्डल की २ और ७ फरवरी को वलीवलम् में बैठकें हुई और वहाँ के प्रमुख भूमिवान के साथ सौहार्दपूर्ण चर्चाएँ हुईं। उक्त भूमिवान ने गांधीजी के ट्रस्टीशिप के सिद्धान्त के अनुसार भूमि पर काश्त करनेवालों की भलाई के लिए पूर्ण प्रयत्न का आश्वासन दिया। •

तमिलनाडु सर्वोदय मण्डल का महत्वपूर्ण निर्णय

जयप्रकाशजी जिस तरह मुसहरी में ग्राम-स्वराज्य का सघन काम कर रहे हैं, उसी तरह प्रायः प्रदेश के हर जिले के कुछ चुने हुए ग्रामदानी क्षेत्रों में ग्रामस्वराज्य का एकाग्र होकर सघन काम करने का निर्णय तमिल-नाडु सर्वोदय मण्डल ने किया है। इस काम को करने के लिए कुछ प्रमुख कार्यकर्ताओं ने अपना निश्चय जाहिर किया है। •

देश भर में 'शांति-दिवस' के आयोजन

३० जनवरी, गांधी-निर्वाण-दिवस के उपलक्ष्य में अलग-अलग ढंग से गांधी-पुण्य-स्मरण के कार्यक्रम देश भर में आयोजित किये गये। सभी जगह इस दिन को 'शांति दिवस' के रूप में मनाकर अहिंसा के पुजारी बापू को श्रद्धांजलि अर्पित की गयी।

बरेली में मौन प्रार्थना द्वारा देश के अमर शहीदों को श्रद्धांजलि अर्पित की गयी। मुरादाबाद में सूत्रयज्ञ, मौन-जुलूस और मौन-प्रार्थना का कार्यक्रम रखा गया। रीवाँ में सर्व-धर्म-प्रार्थना तथा २ घंटे की बापू-जीवनी पर फिल्म दिखाने का आयो-जन हुआ। मथुरा में पूरे दिन का कार्यक्रम रहा, जिसमें प्रभात-फेरी, सामूहिक प्रार्थना सूत्रयज्ञ आदि कार्यक्रम रखे गये थे। रतलाम के कार्यकर्ताओं ने प्रार्थना का आयोजन हरिजन बस्ती में किया।

मुजफ्फरपुर में प्रभातफेरी हुई, तरुण तथा ग्राम-शान्तिसैनिकों का एक जुलूस निकाला गया। शाम को प्रार्थना के बाद एक विराट आम सभा हुई, जिसमें जयप्रकाशजी का भाषण हुआ।

प्रथम पश्चिम बंगाल सर्वोदय सम्मेलन

पहली बार आगामी २७, २८ फरवरी और १ मार्च '७१ को कलकत्ता में प० बंगाल सर्वोदय-सम्मेलन आयोजित होने जा रहा है। सम्मेलन की अध्यक्षता श्री जयप्रकाश नारायण करेंगे। श्री धीरेन्द्र मजूमदार और श्री ठेबर भाई के भी सम्मेलन में मार्गदर्शन प्राप्त होने की आशा है।

सम्मेलन के लिए जो स्वागत-समिति गठित हुई है उसके अध्यक्ष हैं कलकत्ता विश्वविद्यालय के उपाचार्य डा० सत्येन्द्रनाथ सेन। स्वागत-समिति का कार्यालय: सी-५२, कालेज स्ट्रीट मार्केट, कलकत्ता-१२ में स्थापित किया गया है। प० बंगाल के आतंकपूर्ण वातावरण में शान्तिमय क्रान्ति के लिए के काम करनेवाले कार्यकर्ताओं का यह सम्मेलन खास महत्व रखता है।

इस अंक में

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पैसे), विदेश में २२ रु०; या २५ शिलिंग या ३ डालर।
एक प्रति का मूल्य २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं मनोहर प्रेस, वाराणसी में मुद्रित

सम्पादक
राममूर्ति
वर्ष : १७
अंक : २३ सोमवार
८ मार्च, '७१
पत्रिका विभाग
सर्व सेवा संघ, राजघाट, वाराणसी-१
फोन : ६४१९१ तार : सर्वसेवा
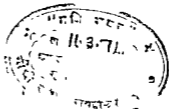
राजनीतिक समझौतों का स्तर

गांधीजी के बाद हम लोगों ने राज्यसत्ता हाथ में ली, जो 'गांधीवाले' कहलाते हैं। हम 'गांधीवाले' आपस-आपस में जो सलाह-मशविरा करते हैं, उसका स्तर नाना फड़नवीस के जमाने के स्तर से ऊँचा नहीं है। अगर होता तो बड़ी खुशी होती। परन्तु हमने भिन्न-भिन्न पार्टियों के कार्यकर्ताओं के बीच ही नहीं, एक ही पार्टी के कार्यकर्ताओं के बीच एक-दूसरे के लिए अविश्वास, हेतुओं के बारे में संशय आदि सब जो देखा, उस पर से हमें आभास होता है कि हमारा स्तर ऊँचा नहीं है।

आजकल सुलह की जो बातें चलती हैं, जिन्हें राजनीति में समन्वय कहा जा सकता है, वे ठीक वैसी ही होती हैं, जैसी नाना फड़नवीस करता था। जब अंग्रेजों ने पूना पर हमला किया तो नाना ने पूना में चारों ओर घास रखकर उसे जलाने की तैयारी कर रखी, और इधर सिंधिया, होलकर से बात शुरू की, कि मराठी सत्ता खतरे में है, तो आप सब मदद के लिए आइए। उन दोनों ने पूछा कि आप उसके बदले में हमें क्या देंगे? तो नाना ने कहा कि मालवे का हिस्सा आपको देंगे, फलाना खानदेश का हिस्सा आपको देंगे। यों करते-करते उसने सबका मिलाप किया। फिर सबकी सेनाएँ अंग्रेजों के साथ लड़ा।

अंग्रेज हारे और संकट टल गया। लेकिन नाना ने अपने मन में निश्चय कर लिया और वैसा लिख भी रखा कि आखिर राज्य अंग्रेजों के ही हाथ में जायेगा। क्योंकि जिस प्रकार से वह सारा हुआ था, वह प्रकार कोई अंतःसमाधान का नहीं था। किसको क्या दिया जाय, इस तरह की बातचीत होने के बाद ही सारे एक हो गये थे। इसलिए नाना ने समझ लिया था कि यह एकता टिकनेवाली नहीं है।

कांचीपुरम : २९-५-५६

—विनोबा

० अहिंसक प्रतिकार के लिए ईश्वरीय निर्देश ० निरामिष नहीं ०

शोषण और एकाधिकारवाद से मुक्त ग्रामस्वराज्य के लिए

संगठित अहिंसक शक्ति से हिंसा की चुनौती का मुकाबिला करें

प्रथम पश्चिम बंगाल सर्वोदय-सम्मेलन का निवेदन

कलकत्ता में २७, २८ फरवरी और १ मार्च को आयोजित प्रथम प० बंगाल सर्वोदय-सम्मेलन की समाप्ति पर सम्मेलन की ओर से जनता के नाम हिंसा, अन्याय और शोषण की परिस्थितियों के कारण आमतौर पर देश भर में और खास तौर पर बंगाल में पैदा हुई बेचैनी को मद्देनजर रखते हुए एक निवेदन जारी किया गया है।

निवेदन में कहा गया है कि मौजूदा परिस्थिति लोकतांत्रिक प्रक्रिया और आर्थिक विकास के आयोजन की विफलताओं का परिणाम है, जो अपने आप में बोझिल और असंतुलित है। सामान्य जन के हितों को नजरअंदाज करने और विकास-नियोजन कार्यक्रमों में जनता के सही प्रतिनिधित्व के न होने के कारण देश का सामाजिक-आर्थिक-राजनीतिक ढाँचा बिगड़ गया है, और लोकतंत्र के सीमित लाभ भी निम्न स्तर के लोगों तक नहीं पहुँच पाये हैं। निवेदन में कहा गया है कि देश में व्यापक स्तर पर फैल रही मायूसी एवं ऐसी शिक्षा के कारण है, जो भारतीय संदर्भ में बिल्कुल बेमेल है, और इस तरह की शिक्षा से नैराश्य और बेचैनी का ही सृजन होनेवाला है। शिक्षा तो देश के सामाजिक-आर्थिक ढाँचे से पूरी तरह अनुबन्धित होनी चाहिए।

निवेदन में हिंसा की गम्भीर चुनौती का उल्लेख करते हुए यह कहा गया है कि आतंकवाद एक स्पष्ट संकेत है कि सर्वोदय-कार्यकर्त्ता और इसमें दिलचस्पी रखनेवाले को लोग हिंसा की इस चुनौती का मुकाबिला संगठित अहिंसा और संकल्प-शक्ति के साथ करें, क्योंकि हिंसा हमेशा विध्वंस ही करती है, कभी सृजन नहीं करती। शान्ति-पदयात्रा इस दिशा में एक शक्तिशाली कदम साबित हुआ है।

देश की जनता से व्यग्रतापूर्वक अपील करते हुए निवेदन किया गया है कि ग्रामस्वराज्य के लिए ग्रामदान के क्रान्तिकारी तत्त्वों को वे अपना समर्थन दें, उसे पुष्ट करें, क्योंकि शोषण और एकाधिकारवाद से मुक्त समाज-रचना के लिए ग्रामस्वराज्य का आन्दोलन चलाया जा रहा है। कार्यकर्त्ताओं से भी नये उत्साह के साथ संगठित हो जाने का निवेदन किया गया है।

शिक्षकों और छात्रों से खास तौर पर निवेदन किया गया है कि वे सर्वोदय के आदर्शों पर एकजुट हो जायँ। तरुणों से विशेष रूप में यह अपील की गयी है कि वे तरुण-शान्तिसेना में शामिल होकर समाज और राष्ट्र के पुनर्निर्माण में प्रभावकारी योगदान करें।

ज्ञातव्य है कि उक्त त्रिदिवसीय सम्मेलन की अध्यक्षता श्री जयप्रकाशजी ने की थी। इस सम्मेलन में प० बंगाल के प्राय: हर जिले से प्रतिनिधियों के जत्थे पदयात्रा करते हुए कलकत्ता पहुँचे थे। यह उल्लेखनीय है कि जहाँ भाग लेनेवाले प्रतिनिधियों की संख्या ३५० के लगभग कूती गयी थी, वहाँ अपेक्षा से करीब दूनी संख्या में प्रतिनिधि सम्मेलन में भाग लिये। अशान्त कलकत्ता में शान्त सम्मेलन का यह सफल आयोजन सर्वोदय आन्दोलन की दृष्टि से विशेष महत्त्व रखता है।

(विशेष रपट अगले अंक में)

प्रथम पं बंगाल सर्वोदय सम्मेलन : श्री जयप्रकाश नारायण अध्यक्षीय भाषण करते हुए

अग्रलेख

निरामिष नहीं !

बंगाल के एक बड़े मार्क्सवादी नेता ने कहा है कि इस बार चुनाव निरामिष नहीं होगा। निरामिष क्यों होगा? जब नेताओं और उनके अनुयायियों ने चुनाव लड़ने के बजाय विरोधियों का शिकार खेलना शुरू कर दिया है तो सामिष भोजन का मजा क्यों नहीं लिया जायगा?

शायद वे दिन गये जब नेशनल ... हत्याएं नक्सालवादियों के मत्थे मढ़कर अलग हो जाते थे। वे दिन भी गये जब कारखानों और कार्यालयों का घेराव होता था और सड़कों पर गिरोहों की खुली मुठभेड़ होती थी। 'वर्ग-शत्रुओं' की हत्याएं भी अब कम होने लगी हैं। देहातों में लूट-पाट, हत्या और आतंक से जो दल—कोई एक दल नहीं, सभी दल—जितनी गहराई तक अपनी जड़ें मजबूत कर सकता था उसने कर ली। हर दल ने अपनी हथियारबंद सेनाएं भी सजा ली हैं। इतना सब हो चुका है। अब हत्या करनेवालों का ध्यान गांवों से ज्यादा औद्योगिक और शहरी क्षेत्रों पर गया है। शहर में पहुंचकर हिंसा ने अपना स्वरूप भी बदल दिया है। हमले छापामार पद्धति से हो रहे हैं, और हत्या करके हत्यारे गायब हो जाते हैं। अक्सर यह भी पता नहीं चलता कि कौन किसको मार रहा है। पुलिसवाले, पार्टीवाले, पैसेवाले सभी इन आक्रमणों के शिकार हो रहे हैं। यह सारा काम युवक कर रहे हैं, वे चाहे नक्सालवादी हों, पार्टी के कार्यकर्ता हों, या किसी गुण्डागिरोह के सदस्य हों। नक्सालवादियों ने तो संकल्प ही कर रखा है कि चुनाव नहीं होने देंगे, उसी तरह दलों का संकल्प हो गया दीखता है कि विरोधियों को समाप्त करके रहेंगे। इन दोनों संकल्पों की पूर्ति में धुआंधार हिंसा का प्रयोग हो रहा है। राजनैतिक हत्याओं का टोटल कई सौ हो गया है, और पन्द्रह उम्मीदवार पुलिस के पहरे में निकल रहे हैं। पूरे बंगाल में सेना गश्त लगा रही है। फिर भी हत्याएं होती जा रही हैं। यह हिंसा 'वर्ग-संघर्ष' की हिंसा नहीं है सत्ता-संघर्ष की है, इसलिए इसमें कोई ऐसी ऊंची प्रेरणा भी नहीं है जो क्रान्तिकारी हिंसा में होती है। सारा वातावरण 'गृहयुद्ध' का-सा बनता जा रहा है।

राजनैतिक शिकार खेलने में अब बंगाल अकेला नहीं है। हत्याएं दूसरी जगहों में भी हुई हैं। गुजरात तक से, जहां की धरती में उग्र राजनीति कभी पनपी नहीं, मांग की गयी है कि चुनाव के लिए सशस्त्र पुलिस तैनात की जानी चाहिए। कोई जगह खाली नहीं है। कई जगह स्थिति गम्भीर है। उधर से उत्तर प्रदेश के कुछ क्षेत्रों में स्वयं चुनाव आयोग ने हरिजनों को आक्रमण से बचाने के लिए अलग मतदान-केन्द्र बनाने की व्यवस्था की है। जिस चुनाव में नेता किसी भी कीमत पर जीतने पर उतारू हैं, उसमें बेचारे हरिजनों की रक्षा का दूसरा क्या उपाय है? इससे भी जितनी रक्षा हो जाय।

लगता है अब हमारे दलों को निरामिष राजनीति में मजा नहीं आ रहा है। इसे नक्सालवादियों की एक बड़ी विजय माननी चाहिए कि उन्होंने इस हद तक राजनीति पर खून का रंग चढ़ा दिया। या, शायद यह हुआ है कि हमारी राजनीति पिछले तेईस वर्षों में जिस तरह बनती-बदलती आ रही है उसमें उसका यह रूप प्रकट होना अनिवार्य था। संघर्ष की राजनीति संहार से कब तक बचती? दिल्ली के एक अंग्रेजी दैनिक ने अपने हाल के एक सम्पादकीय में ठीक लिखा है कि भारत 'हत्या की राजनीति' (पालिटिक्स आफ मर्डर) के युग में प्रवेश कर चुका है। हेमन्तकुमार बसु की हत्या से इस कथन में शंका के लिए गुंजाइश नहीं रह गयी है। इन्दिराजी और निजलिंगप्पा भी कहते हैं कि उन्हें हत्या के पत्र मिलते रहे हैं। कौन जाने कितने औरों को भी मिलते होंगे? दिनों-दिन हिंसा और राजनीति को अलग करना कठिन होता जा रहा है। लेकिन विष स्वयं लोकतन्त्र में नहीं है; उस राजनीति में है जो लोकतन्त्र के नाम में चलायी जा रही है। लोकतन्त्र का इस राजनीति से मेल नहीं बैठ सकता। बंगाल की हालत देखकर कलकत्ता के एक दैनिक ने तो यहां तक कहा है कि जब मतदाता निडर होकर अपने घर से मतदान-केन्द्र तक नहीं जा सकता, और जब वह अपनी मर्जी से मतदान भी नहीं कर सकता, तो लोकतन्त्र कैसा, और चुनाव किस बात का? जो चुनाव कराया जाय सेना की शक्ति से, और जीता जायगा गुंडों की शक्ति से, वह भी कोई चुनाव है? ऐसे चुनाव में लोक-मत कैसे प्रकट होगा?

जनता, जिसके लिए चुनाव है, जिसके नाम में लोकतन्त्र है, एक नहीं तीन हिंसाओं के चपेट में है—सरकार की हिंसा, दलों की हिंसा, गुंडों की हिंसा। लेकिन गुंडे अब गुंडे नहीं रहे, उनकी राजनैतिक दीक्षा हो गयी है और वे राजनैतिक दलों में सम्मानपूर्वक स्वीकार कर लिये गये हैं। कौन दल है जो इन समाज-विरोधियों का इस्तेमाल अपने संविधानिक विरोधियों के खिलाफ नहीं कर रहा है! घेराव, पथराव, जलूस, प्रदर्शन, हड़ताल आदि राजनीति के सभी कार्यक्रमों में इन असामाजिक तत्त्वों का इस्तेमाल होता है। उनके बिना राजनीति का कर्म-काण्ड सफल नहीं होता। ये गुंडे ठीके लेकर काम करते हैं। जब अभी पिछली १० जनवरी को कलकत्ता में सर्वोदय के मित्रों और कार्यकर्ताओं का शान्ति-जलूस निकला तो अनेक नागरिकों ने कहा: 'बिना किराये के इतने लोगों का जुलूस कलकत्ता में बहुत दिनों के बाद निकला है।' अगर राजनीति व्यवसाय बन गयी है, और नेता उसका लाभ उठा रहे हैं तो गुंडे क्यों न उठायें, और फिर दोनों मिलकर क्यों न उठावें?

काश, जनता जानती कि राजनीति का यह सामिष भोजन उसके ही मांस से बनाया जा रहा है!

भूदान-यज्ञ : सोमवार, ८ मार्च, '७१

अहिंसक प्रतिकार के लिए ईश्वरीय निर्देश

—एस० जगन्नाथन्

मैंने सोचा था कि उपवास के दिनों में पदयात्रा करते हुए जहाँ तक जा सकूँगा जाऊँगा। उसके बाद बेनगाड़ी से जाकर मालिकों से मिलूँगा, और उनसे कहूँगा कि भूमिहीनों को वास की भूमि (हाउस-साइट) दान में दें। मन्दिर और मठ की भूमि में खेतिहरों को खेती करने दें, और अपनी भूमि के $\frac{१}{२०}$ वाँ भाग का स्वामित्व छोड़ें।

पदयात्रा के तीसरे दिन जब मैं वेलेगुड़ी गाँव में था तो रक्कन नाम का किसान और उसका लड़का, जो शिक्षक है, अपने गाँव वल्लीवलम् से १० मील चलकर आये। आँखों में आँसू भरकर उन्होंने अपनी दुखभरी कहानी सुनायी कि किस तरह गाँव का जमींदार उनकी ६ एकड़ भूमि में लगे धान को जबरदस्ती काट रहा है। रक्कन ने मन्दिर की भूमि पट्टे पर लेकर धान की खेती की थी। मैंने उनकी बात सुनकर सोचा और तय किया कि मुझे अपनी यात्रा का क्रम छोड़कर रक्कन के गाँव जाना चाहिए।

मैंने सोचा था कि वल्लीवलम् पहुँचकर जमींदार के विरुद्ध सत्याग्रह करूँगा और गरीब रक्कन को फसल नहीं कटने दूँगा। लेकिन मेरे पहुँचने के पहिले ही फसल कट चुकी थी और धान जमींदार के घर पहुँच चुका था। उसे पुलिस का संरक्षण प्राप्त था। पुलिस का कहना था कि भले ही रक्कन खेत को बरसों से जोतता आ रहा हो, लेकिन कागज जमींदार के पक्ष में हैं। मेरे साथी रामस्वामी ने जमींदार को सूचना दी कि वे मन्दिर में उस समय तक अनशन करेंगे जब तक कि रक्कन का धान उसे वापस न मिल जाय।

लोगों के मन में प्रश्न उठेगा कि मन्दिर की भूमि पर जमींदार का क्या अधिकार है? स्थिति यह है कि गाँव में मन्दिर की कुल ३०९ एकड़ भूमि जमींदार के कब्जे में है। उसके अलावा उसके परिवार के पास २ हजार एकड़ दूसरी भूमि भी है–सब कावेरी के पानी से सिंचित, दो फसलें देनेवाली। खास वल्लीवलम् गाँव में सवर्ण हिन्दुओं के १५० परिवार हैं, ९ टोले हरिजनों के हैं जिनमें ३०१ हरिजन-परिवार रहते हैं। जमींदार को छोड़कर और किसीके पास अपनी 'वास' की भूमि नहीं है—न सवर्ण हिन्दू के पास, न हरिजन के पास। गाँव में जो भी भूमि है वह मन्दिर की है, या जमींदार की है। पूरा गाँव जमींदार की गुलामी की है।

एस० जगन्नाथन्

प्रश्न उठता है कि एक आदमी के पास इतनी जमीन कैसे आ गयी? कानून के अनुसार कोई भी व्यक्ति, जिसके पास ५ एकड़ भूमि है, दूसरी भूमि पट्टे पर न ले सकता, तो यह आदमी इतनी अधिक भूमि का अधिकारी कैसे बना हुआ है? मद्रास में १५ एकड़ की 'सीलिंग' है—डी० एम० के० पहले ३० एकड़ की थी—फिर भी चतुर भूमिवान इससे कहीं अधिक भूमि रखे हुए हैं। वल्लीवलम् के इस जमींदार ने १६ 'ट्रस्ट' बनाये हैं। ट्रस्ट पर 'सीलिंग' का कानून लागू नहीं होता। १६ ट्रस्टों में एक ट्रस्ट कस्तूरबा गांधी के नाम से है। दूसरा परिवार-नियोजन ट्रस्ट है। सारी जमीन इन्हीं ट्रस्टों के नाम से है। मन्दिर की भूमि के ७१ काश्तकार (टेनेन्ट) हैं, यद्यपि ३०९ एकड़ में से केवल ८३ एकड़ भूमि २८ लोगों को दी गयी है। जो छोटे दूकानदार, शिक्षक, चौकीदार आदि हैं। जमींदार की *अपनी भूमि, मन्दिर की भूमि नारियल और* आम के बाग आदि को मिलाकर जमींदार के ५ सौ मजदूर रोज काम करते हैं। इनमें से उसने किसीको भी भूमि नहीं दी है। हरिजनों के ३०१ परिवारों में से केवल ९ को मन्दिर की भूमि में से थोड़ी थोड़ी भूमि मिली हुई है। शेष 'टेनेन्ट' वे नामी हैं—उसके अपने नौकर, रसोइए, ट्रैक्टर के ड्राइवर, क्लार्क, आदि हैं। जिन २८ को भूमि मिली है वे सिर्फ खेती करते हैं, फसल काटते हैं जमींदार के ही आदमी, और धान जमींदार के ही घर रखा जाता है। वह अपनी मर्जी से इन २८ खेतिहरों का जितना धान चाहता है दे देता है। मन्दिर की भूमि की जितनी लगान है उससे कहीं अधिक जमींदार इन लोगों के धान में से काट लेता है। तिसपर भी काश्तकारों के ऊपर मन्दिर की लगान को बढ़ाया है!

यह है स्थिति! जब यह स्थिति है तो कहा जा सकता है कि रक्कन और उसके लड़के के साथ नया अन्याय क्या हुआ? रक्कन और जमींदार के बीच विवाद इस कारण बढ़ा कि मन्दिर की भूमि पर लगे नारियल के बाग पर रक्कन के लड़के ने डाक बोली। जमींदार के पास नारियल, आम और इमली के सैकड़ों पेड़ हैं। कानून के अनुसार इन पेड़ों की हर साल नीलामी होनी चाहिए, लेकिन होती नहीं। किसी अधिकारी की हिम्मत ही नहीं होती कि जमींदार के पेड़ों की नीलामी करें! उसकी मिनिस्टरों और बड़े अफसरों से दोस्ती जो है! लेकिन इस बक्त जो अधिकारी है उसने हिम्मत की और परम्परा तोड़ी। नीलामी ५० रुपये से १२०० रुपये तक पहुँच गयी! यह बहुत बड़ा अपराध था जिसका दंड रक्कन और उसके लड़के को मिलना ही चाहिए था। जमींदार ने कहा कि नीलामी की

रकम रखन को देनी चाहिए—एक बार में न दे सके तो ३ किस्तों में दे। रखन नहीं दे सका। वह नौकरी से हटा दिया गया। नौकरी से हटने पर रखन को जो थोड़ी भूमि बाप-दादों के समय से जोतने को मिली थी वह भी छीन ली गयी।

तमिलनाडु सर्वोदय मण्डल ने पूर्वी तंजौर में ४ शान्ति-केन्द्र शुरू किये थे। जिस ब्लाक में वल्लीवलम् पड़ता है उसमें शंकररावजी कई बार पदयात्रा कर चुके हैं। वह उस जमींदार से तीन बार मिल चुके हैं, और उनके बंगले में ठहर चुके हैं। मैं भी उनसे मिला हूँ, और मैंने कहा है कि कम-से-कम सरकार की जिस जमीन पर उन्होंने कब्जा कर रखा है उसे तो छोड़ दें, लेकिन उन्होंने यही उत्तर दिया है कि जमीन लेनी है तो सरकार के पास जाइए।

मैंने मुख्य मंत्री, राजस्व मंत्री, और धर्मादाय मामलों के मंत्री को जुलाई १९७० में पत्र लिखे। जमींदार को भी लिखा। शंकररावजी और मैं, दोनों खुद जाकर मुख्य मंत्री से मिले। उन्होंने कहा कि अब कागज ठीक है तो क्या किया जा सकता है! मुख्यमंत्री का घर वल्लीवलम् से सिर्फ ६ मील है, और उन्हें सारी बातें अच्छी तरह मालूम हैं।

मेरा पत्र बहुत दिनों तक सरकार के दफ्तरों में घूमता रहा। अन्त में एक डिप्टी-तहसीलदार आया। वह गाँव में गया, किन्तु किसकी हिम्मत कि सामने आकर कुछ कह सके? शांति-केन्द्र के कार्यकर्ताओं ने कहा कि पड़ोस के गाँव में ठहरिए तो गवाह लाये जायें। दिन के समय जाने के लिए कोई तैयार नहीं था। किसी तरह रात को ४ हरिजन काश्तकार गये। इसके लिए उन्हें यह दण्ड मिला कि जमींदार ने अपने और पड़ोस के गाँवों में उन्हें काम देना बन्द कर दिया। गुजर के लिए उन्हें शान्ति-केन्द्र से सहायता दी गयी। हमारे कार्यकर्ताओं ने रखन और इन चार हरिजनों को सलाह दी कि मन्दिर की जमीन जोतें, और जो लगान हो सीधे सरकार को दें। सरकारी अफसरों ने यह व्यवस्था मान भी ली। लेकिन जमींदार की पहुँच हर जगह है। २ फरवरी को रखन की पूरी फसल काट ली गयी। हम लोग इतनी देर से पहुँचे कि कुछ कर नहीं सके।

४ दूसरे हरिजनों की फसल काटने को बाकी थी। शान्ति-केन्द्र के कार्यकर्ता तथा दूसरे काश्तकार चाहते थे कि यह फसल जमींदार के हाथ में न पड़े, लेकिन गाँव का कोई मजदूर खेत में जाने और फसल काटने की हिम्मत नहीं कर सका। किसी तरह एक दूसरे गाँव से, जिसमें ग्रामसभा बन चुकी है, ३० मजदूर बुलाये गये, और ४ फरवरी को कटाई शुरू हुई। कटाई सर्वोदय-कार्यकर्ता भी शामिल हुए। थोड़ी ही देर में रिजर्व पुलिस का दस्ता लाठी और बन्दूक के साथ आ गया और उसने खेतों को घेर लिया। कटाई करनेवालों को आदेश दिया गया कि थाने चलें। मैं उपवास कर रहा था, और यह सब दूर से देख रहा था। कुछ मजदूर डरकर सरने में पैर धोने लगे। पुलिस ने उन्हें डांटा। इस पर मेरी पुलिस से कुछ झड़प भी हो गयी।

हम लोगों ने मंत्रियों और जिले के अधिकारियों को तार दे दिया था। मेरे, रामस्वामी, और कौस के उपवास की खबर अखबारों में और रेडियो पर आ चुकी थी। समय भी चुनाव का है। सरकार गिरफ्तारी आदि से बचना चाहती है। जिले के अधिकारी फौरन आ गये। उन्होंने ४ काश्तकारों को फसल काटने और लगान सीधे सरकार को देने की इजाजत दे दी। रखन को भी धान वापस मिल गया। बाकी २४ काश्तकारों को भी यह छूट मिल गयी है। उन्होंने भी लगान सीधे सरकार को दे दी।

इस घटना का वल्लीवलम् गाँव और आस-पड़ोस के देहात पर गहरा प्रभाव पड़ा है। लोगों को लग रहा है कि मुक्ति का एक नया रास्ता मिल गया। आज वर्षों से जो लोग पीड़ित और प्रताड़ित थे उनके अन्दर एक नया आत्म-विश्वास आता दिखायी दे रहा है। वे कहते हैं कि जुलूस बहुत निकले, प्रदर्शन बहुत हुए। लेकिन इस शान्तिपूर्ण कार्य ने जो काम कर दिखाया वह पहिले कभी नहीं हुआ। जिन लोगों के नाम से मन्दिर की जमीन का बेनामी बन्दोबस्त है वे भी अब अपनी जमीन छुड़ाने की चिन्ता में हैं।

लेकिन यह स्थिति वल्लीवलम् में ही नहीं है। तंजौर में सैकड़ों गाँवों की यही स्थिति है। अब लोग अपनी समस्याएँ लेकर शान्ति-केन्द्रों में आ रहे हैं। ●

कुछ महत्वपूर्ण संकेत

—कामेश्वर प्रसाद बहुगुणा

सहरसा के सघन पुष्टि-अभियान के सन्दर्भ में एक बार विनोबा ने कहा था कि सहरसा में सर्वोदय का 'वाटरलू' लड़ा जा रहा है। इस वचन में जितनी गहराई है उससे कहीं अधिक भयानकता है। यह अनुभव सहरसा में कार्य करते हुए बार-बार आ रहा है। इस पर भी जब म० प्र० से मेरे एक मित्र ने मुझे लिखा कि मैं सहरसा के अपने अनुभव लिखूँ तो उनके अनेक प्रश्नों के जवाब में मैंने फिलहाल यही लिखा कि सन् '१७ के बाद सहरसा में सन् '५७ के जैसा उत्साह मन में पहली बार पैदा हुआ है। उत्साह इसका नहीं है कि 'हवा' बहुत अच्छी है या अब कहीं विरोध नहीं है। उत्साह इसका है कि पहली बार जे० पी० के शब्दों में, परिस्थिति से हमारा 'आमना-सामना' हुआ है। अब यह बात सत्य है कि या तो इस पार या उस पार ही होंगे, बीच की कोई स्थिति नहीं है।

हवा की अनुकूलता

जहाँ तक 'हवा' का प्रश्न है, वह दो कारणों से बहुत अनुकूल है। एक तो नक्सलवादी मित्रों ने जो भय पैदा किया है उससे लोगों को सर्वोदय की 'शरण' का कुछ आभास हो गया है, और इस कारण अब कहीं भी सर्वोदय का विरोध नहीं होता। विरोध न करने का अर्थ 'सर्वोदय की स्वीकृति' नहीं है, वरन् 'फिलहाल यह रक्षा करेगा,' यह भाव है। मेरे विचार में 'स्ट्रैटेजी' के लिए यह अनुकूलता है। समाज में सैद्धान्तिक वर्ग-भेद से हम सदा इन्कार करते हैं, और ठीक ही करते हैं, किन्तु व्यावहारिक वर्ग-भेद से हम इन्कार करेंगे, तो अब हमारी खैरियत नहीं है, यह निश्चित है। हमारे आन्दोलन का हर कार्यकर्ता जितनी जल्दी इस बात का एहसास कर लेगा, उसके लिए, और आन्दोलन के लिए उतना ही श्रेयस्कर है। इसीलिए मैंने कहा कि 'स्ट्रैटेजी' की दृष्टि से नक्सलवादी प्रभावों का हमारे लिए विधायक महत्व है।

हवा में अनुकूलता का दूसरा कारण स्वयं विनोबा और उनकी तपस्या है। विनोबा के लिए लोगों में अविकल अत्यन्त श्रद्धा है। उनके नाम से लोगों तक पहुँचनेवाले किसी भी कार्यकर्ता को लोग स्नेह और आदर देते हैं।

किन्तु इन अनुकूलताओं से हम लाभ नहीं उठा पा रहे हैं। हमारी सभाओं में जो लोग खूब स्वागत करते हैं, बीघा-कट्ठा बाँटने की घोषणाएँ भी करते हैं, वे स्वयं से ही आरम्भ करें, इसके लिए उन्हें तैयार करने में हमें हफ्तों का समय लगता है, और उस पर भी वे बीघा-कट्ठा बाँट ही देंगे, यह कोई गारन्टी नहीं है। दानपत्र भराने में बहुत सरलता थी, क्योंकि उस वक्त शायद उन्हें यही मालूम था कि अन्य अनेक घोषणाओं की ही तरह ये घोषणाएँ भी केवल घोषणाएँ ही हैं और इनके क्रिया-न्वयन का बारी नहीं आयेगी। अब जब दाता बीघा-कट्ठा का खाता-खसरा नम्बर, रकवा तथा भूमि का स्थान आदि बताने में सैकड़ों तरह के टाल-मटोल करता है और यह हमारे धैर्य, व्यूह-रचना और कार्यक्षमता सबका कसौटी है।

यात्रियों का सत्याग्रह

सहरसा में अभी ५-६ ग्रामों में स्थन-कार्य चल रहा है। निर्मला बहन और कृष्णराज भाई एक बार सारे जिले का भ्रमण कर चुके हैं, और अब चुने हुए क्षेत्रों पर जोर लगाते हुए घूम रहे हैं। पिछले दिसम्बर मध्य से अ० भा० शान्ति सेना मण्डल के बनारस विद्यालय के ५-६ छात्र-युवक भी उनके साथ हैं। इन युवकों ने जो पुरुषार्थ प्रकट किया है वह युवकों को एक दिशा देता है। उन्हें सहरसा के पास ही बरगाहु नामक एक गाँव में भेजा गया। वहाँ के मुखिया ने निर्मला बहन की सभा में अपना बीघा-कट्ठा बाँटने और गाँव में भी बँटवाने की घोषणा की थी। छात्रों के गाँव में पहुँचने पर पहले तो मुखियाजी बहुत नम्र, शिष्ट तथा अच्छे आतिथेय के अलावा और कुछ बनने को तैयार नहीं थे। किन्तु गाँव में सभाएँ की गयीं और लोगों को विचार समझाने के बाद ग्राम-सभा बनाकर भूमि बाँटने को कहा गया। पर कोई अनुकूल जवाब नहीं मिला। छात्रों को लगा कि यह तो वचन-भंग हुआ है, और उन्होंने खुद को भी उसमें शामिल मानकर अनिश्चित काल के लिए उपवास की घोषणा कर दी। ३ दिन तक वे गाँव में भूखे रहकर काम करते रहे। इस बीच निर्मला बहन जब गाँव में पहुँचीं तो उन्होंने भी छात्रों के साथ उपवास में शामिल होने का फैसला कर लिया। इसका असर यह हुआ कि गाँव के लोगों को, और खासकर मुखियाजी जैसे प्रमुख लोगों को, अपनी भूल की प्रतीति हुई, और उन्होंने ग्रामसभा बनाकर जमीन बाँट देने का संकल्प कर लिया। सारे गाँव का ग्रामदान हुआ, और ३० दिसम्बर को गाँव के ६० भूमिहीन परिवारों को १५ बीघे भूमि कृष्णराज भाई के हाथों बँटवा दी गयी। यह सब अत्यन्त सौहार्द और प्रसन्न ढंग पर हुआ। इससे न केवल ६० भूमिहीन परिवार भूमिवान बने, वरन् मुखियाजी और उनके एक प्रमुख प्रतिद्वन्द्वी के बीच पुराने मुकदमों और दुश्मनी का भी अन्त हुआ। स्वभावतः ही यह गाँववालों के लिए और भी बड़ा राहत का काम हुआ, क्योंकि दो बड़ों की लड़ाई में बेचारे गरीब ही पिसते हैं।

ग्रामसभा का संकल्प

एक दूसरा असर मटियारी गाँव का है। नवम्बर के अन्त में जब मैं पहले पहल सहरसा गया था, वहाँ सहरसा के निकट तेघरा नामक एक गाँव में भी गया था।

यह दो साल पूर्व ग्रामदान में आया था। यद्यपि गाँव में लगभग सभी भूमिहीन लोग हैं फिर भी दो-चार भूमिवान थे उन्होंने अपनी जमीन का २०वाँ भाग गाँव के भूमिहीनों में बाँट दिया था। किन्तु ग्रामदान से दो साल तक भी कोई प्रत्यक्ष बड़ा लाभ गाँव को नहीं लगा। उनके गाँव में महिषी आदि गाँवों में रहनेवाले भूस्वामियों की ही जमीनें हैं और वे लोग उनके मजदूर या बँटाईदार हैं। अभी दिसम्बर के आरम्भ में, जब मैं तथा कुसुम बहन महिषी गये तो हमने घर-घर जाकर महिषी के कोई सता सौ भूमिवानों से प्रार्थना की फिर भी ग्राम-दान पर विचार करने के लिए बुलायी गयी सभा में आयें। किन्तु वे हमारे कहने पर भी नहीं आये। हाँ, बिना बुलाये भूमिहीन काफी आ गये। सभा हुई और ग्रामदान का विचार लोगों के सामने रखा गया, किन्तु चूँकि लोग बहुत लोग बहुत कम आये थे, ग्रामसभा का गठन नहीं किया गया। बँटवारे का तो प्रश्न ही नहीं था। तब मैंने तेघरा ग्रामसभा की बैठक बुलाकर उनसे पूछा कि वे अपने आगे के काम के बारे में क्या सोचते हैं। वे गरीब हैं, क्या कर सकते हैं, वे कहने लगे। मैंने उन्हें समझाया कि ग्रामदान में उनकी गरीबी मिटने की शक्ति है, बशर्ते कि संगठित होकर काम करें। वे भूमि की मांग करने लगे। किन्तु भूमि मेरे अकेले के कहने पर कौन देगा। फिर जिन्हें आवश्यकता है बिना उनके कहे भी कौन देगा? यह समझाने के बाद ग्रामसभा ने तीन महत्त्वपूर्ण प्रस्ताव किये। एक के द्वारा ग्रामकोष से १०० रु० की पूँजी निकालकर दो साल में वस्त्र में गाँव को स्वावलम्बी बनाने का संकल्प है। दूसरे के द्वारा लगान का अलग-अलग जाकर सरकार को न देकर ग्रामसभा को ही देने का संकल्प किया गया और तीसरे के द्वारा गाँव के सभी भूमिवानों से एक निवेदन किया गया कि वे एक निश्चित अवधि में ग्रामदान में शामिल हो जायें, नहीं तो ग्रामसभा सत्याग्रह भी कर सकती है। यह प्रस्ताव डाक से भूमिवानों को भेजने का तय किया गया।

चूँकि महिषी में ही तेघरा के अधिकांश भूमिवान रहते हैं, इसलिए ग्रामसभा के इस निश्चय की सूचना उन्हें दी गयी। साथ ही महिषी के भूमिहीनों की टोले-टोले में सभाएँ करके उन्हें ग्रामदान का विचार समझाकर ग्रामसभा बनाकर ग्रामकोष के लिए एक दिन की मजदूरी देने को कहा गया, और यह भी कहा गया कि यदि वे सब मिलकर कहेंगे तो उनके गाँव के भूमिवान् अवश्य ग्रामदान में शामिल होंगे और जमीन बाँट देंगे। केवल मेरे कहने पर तो वे नहीं देंगे, क्योंकि अकेले व्यक्ति की कोई ताकत नहीं होती। वे लोग कोई तीन-चार सौ के करीब फार्म भरने के लिए लगातार आते रहे। यह सब चल रहा था और साथ ही हम गाँव में जिस घर में टिके थे वह एक बड़े जमींदार का घर था और वहीं हमारी भोजन-व्यवस्था भी कर रहे थे। उस घर के युवा गृहपति श्री सदाशिव चौधरी ४-५ दिन की लगन के बाद ग्रामदानी बन गये। वे जनसंघ और आर० एस० एस० के कार्यकर्ता थे और अपनी पार्टी के साथियों के दबाव के विरुद्ध भी मजबूती से जुड़ गये। उन्होंने इसी दौरान तेघरा में अपना तथा अपने वंश के नाम में जो जमीन था उसका दानपत्र भर दिया। स्वयं महिषी गाँव में उनकी जो जमीन थी उसका भी दानपत्र भर दिया और बीघा-कट्ठे के हिसाब से (जो लगभग ४० कट्ठे होगी) भूमि भी बाँटने की घोषणा कर दी। गाँव के एक पुराने मुकदमे का भी समझौता इस बीच करा दिया गया। इसके बाद गाँव के कुछ और भूमिवानों ने भी दानपत्र भरे। तेघरा तथा महिषी का यह संकेत क्या आन्दोलन की सामान्य 'स्ट्रेटेजी' बन सकती है, यह विचारणीय है। और मेरा तो पक्का विश्वास है कि अब यही एकमात्र 'स्ट्रेटेजी' है।

स्थानीय अभिक्रम

एक तीसरा संकेत भी है। मरौना प्रखंड में एक गाँव में सहरसा के प्रमुख सर्वोदय-कार्यकर्ता श्री महेन्द्रनारायण सिंह और तपेश्वर भाई सभा करने के लिए गये। गाँववालों ने सभा-स्थान के लिए एक जमींदार का दरवाजा चुना, किन्तु जमींदार ने वहाँ सभा नहीं करने दी। महेन्द्रजी को वहाँ से निकल जाने को कह दिया। वे किसी दूसरे स्थान पर सभा के लिए जाने लगे, किन्तु गाँववालों ने कहा कि नहीं, सभा तो यहीं होगी। इस पर बहुत देर तक गरमागरम बहस चलती रही। इसी बीच पास के दूसरे गाँव से भी कई लोग ग्रामदान के नारे लगाते हुए आ गये। सबने जमींदार से कहा कि उन्हें जमीन न देना हो तो न दें, किन्तु सभा तो करने दें और अपमान तो न करें। खैर, सभा हो गयी, विचार समझा दिया गया। उसी गाँव के पास श्री कृष्णराज भाई की सभा कुछ दिन के बाद हुई। वहाँ काफी 'अनुपस्थित भूस्वामी' (जिसे बिहार में 'कायम' कहते हैं) भी थे। उनकी बात सुनने के बाद भू-स्वामियों ने स्वयं तय किया कि वे एक दिन इलाके के सब भूमिस्वामियों की बैठक करके जमीन बाँटेंगे। उन्होंने फिर ऐसा एक सभा का आयोजन किया और उसमें जितने भूस्वामी (लगभग [illegible]५) थे सबने एक प्रस्ताव द्वारा अपनी भूमि बाँट देने का संकल्प किया। उस प्रस्ताव को जे० पी० के नाम एक निवेदन के रूप में लिखा गया था और उन्होंने वह जे० पी० को भेज दिया।

एक चौथा संकेत और भी है। सुपौल के पास सुखपुर एक गाँव है। वहाँ ग्राम-शान्ति-सेना का एक शिविर अमरनाथ भाई और जानकी बहन ने किया था। उसमें कुछ जवान काम के लिए आगे आये और अपने गाँव का काम पूरा करने का दायित्व उन्होंने लिया। वे ही अब गाँव में जुटे रहे हैं। (देखें—'भूदान-यज्ञ' दिनांक २५-१-'७१, पृष्ठ २६४)

इसी प्रकार का एक पाँचवाँ संकेत है, जो शिक्षक-जगत् से मिला है। मैं आचार्यकुल के लिए सारे जिले में घूम गया हूँ। २३ प्रखंडों में गोष्ठियाँ की गयीं और जहाँ संभव हुआ वहाँ रात को गाँवों में भी सभाएँ आदि की गयीं। एक गाँव में हमारी सभा में स्थानीय संसोपा के एक प्रमुख कार्यकर्ता भी आये। वे भूमि छीनो आंदोलन में एक माह की जेल भी हो आये हैं। उन्होंने हमारे विचार की खूब खुलकर सार्वजनिक निंदा की, किंतु रात को निकटस्थ गाँव में सभा में रहने को वे राजी हो गये। बड़गाँव में सभा हुई और कोई २-३ घंटे की मेहनत के बाद भू-स्वामियों से ३२ कट्ठा भूमि प्राप्त हुई, जो गाँव के ३ भूमिहीन परिवारों में बाँट दी गयी। वे भाई यह सब देखते रहे। अंत में कहने लगे कि, "मुझे आज क्रांति का दर्शन हो गया है। मैंने तो सैकड़ों एकड़ भूमि पर झंडे गाड़े, किन्तु एक इंच भी भूमि बाँट नहीं पाया। यहाँ बिना किसी हो-हल्ला के रात को १० बजे ३२ कट्ठा भूमि सचमुच बेजमीन को मिल गयी। अब आप यदि विश्वास करें तो, क्योंकि आप सर्वोदयवाले राजनीतिवालों का विश्वास नहीं करते, मैं विश्वास दिलाता हूँ कि आज से मैं तन-मन-धन से सर्वोदय का कार्यकर्ता हूँ।"

उधार क्रांति : नकद क्रांति

आचार्यकुल की सभाओं के दौरान कोई ५५-६० शिक्षक इस कार्य के लिए आगे आये। उन्होंने खुद की भूमि बाँटने के साथ-साथ अपने गाँव में एक निश्चित अवधि में ग्रामस्वराज्य की चारों आरम्भिक बातें, ग्रामसभा का संगठन, बीघा-कट्ठा का वितरण, ग्रामकोष तथा ग्राम-शान्तिसेना का निर्माण कर देने का सकल्प किया। चार प्रखंड शिक्षा-प्रसार अधिकारियों ने तो कुछ पंचायतें ही 'दत्तक' लेकर उनमें यह सब कार्य कर लेने का जिम्मा लिया। किन्तु एक सभा में सो०पी०एम० के एक शिक्षक भाई ने मुझे कहा कि अब सर्वोदयवालों का इलाज करना ही पड़ेगा। वे असल में मेरे भाषण में स्टैलिन की कुछ आलोचना से सख्त नाराज हो गये थे। किन्तु उन्हें सभा में ही लोगों ने दुत्कार दिया। चौसा में उसी दल का एक भाई कहने लगा कि समाज को वैसी ही क्रांति चाहिए जैसी अभी-अभी पास के दरभंगा जिले में हुई है। वहाँ उन्हीं दिनों (१८-२० जनवरी के आस-पास) भूमिहीनों व भूस्वामियों के बीच संघर्ष में ९ आदमी गोली से मारे गये थे। खेत से अनाज काट लेने के बाद खेत में छूट गयी धान की बालियों को मजदूर बीन लेते हैं तो स्वामी उसमें से भी जो भाग मजदूरों को देना चाहिए नहीं दे रहा था। यह झगड़े की जड़ थी। इससे मजदूरों को कोई आधा से लेकर एक किलो तक अधिक धान मिल जाता। जब मैंने उस भाई से पूछा कि क्या एक किलो धान की कीमत नौ सिर होती है, तो वह बेचारा भी कोई उत्तर न दे पाया! मैंने उन्हें कहा कि इस झगड़े में ९ आदमी मरे, एक मजदूर को १ किलो धान ज्यादा मिला, किन्तु आपके दल की दिल्ली-पटना की गद्दी तो पक्की हो गयी। तब तो सभा में एक अजीब मजमा ही खड़ा हो गया! इस तरह से उनकी क्रांति को लोगों ने कब देखा है? मैंने उनसे निवेदन किया कि हिंसा तथा दल के माध्यम से आपकी क्रांति 'उधार क्रांति' होती है, किन्तु हम 'नकद क्रांति' कर रहे हैं।

मैंने ये कुछ छिटपुट अनुभव इकट्ठे किये हैं। किन्तु शायद ये सशक्त संकेत हैं। क्या हम इन्हें पिरोने का काम कर सकते हैं? यह असल प्रश्न है और सहरसा में विनोबा और जे० पी० की पुकार के बावजूद जो शक्ति लग पायी है उसमें कोई आशा नहीं बँधती। लगता है, हम अब भी 'कार्यक्रम' चला रहे हैं, आन्दोलन नहीं कर रहे हैं। अभी वहाँ आन्दोलन के कोई चिह्न नहीं हैं। किन्तु मैं भूलता हूँ, आन्दोलन तो जनता को करना है, हम कौन होते हैं आन्दोलन करने वाले? किन्तु, हाँ, हमने अपनी पूरी निष्ठा, शक्ति, संगठन तथा साधन इस पर लगाने की, और खासकर स्थानीय शक्ति को पनपाने की आशा तो की ही जाती है। हम यह भी कहाँ कर पा रहे हैं? ●

बीकानेर के मोर्चे से

लूणकरणसर में कामचलाऊ तहसील ग्रामसभा

जिला ग्रामस्वराज्य समिति की ओर से पंचायत समिति लूणकरणसर क्षेत्र में एक जोरदार अभियान (गत २८ जनवरी से ३ फरवरी तक) चलाया गया। उसके फलस्वरूप ४१ ग्रामसभाओं का गठन हुआ और २ ग्रामदान नये प्राप्त हुए। अभियान की समाप्ति पर सभी कार्यकर्ता और बाहर के गाँवों से आये ग्रामसभा के पदाधिकारियों की उपस्थिति में इलाके के समग्र विकास की दृष्टि से एक काम-चलाऊ तहसील ग्रामसभा का गठन हुआ। सर्वसम्मति से इसके लिए श्री लालूराम, ग्रामपंचायत-सोडियालो, गाँव मुमलाई-अध्यक्ष, श्री धीमाराम, ग्रामपंचायत-धीरेरां, गाँव धीरेरां—उपाध्यक्ष, श्री मोटाराम, ग्राम पंचायत, आगोर, गाँव-करणीसिया-मंत्री, श्री रेवतराम, ग्राम-पंचायत-सोडियालो, गाँव-नवड़ाएर—कोषाध्यक्ष तथा कार्य समिति के अन्य सात सदस्यों का चुनाव हुआ।

समिति की एक गोष्ठी भी हुई, जिसमें ये निर्णय लिये गये : तहसील के ५ गाँवों में सघन विकास कार्यारम्भ करना, शेष हुए गाँवों में ग्रामदान और पुष्टि करवाना, ग्रामसभाओं के पदाधिकारियों का प्रशिक्षण, कार्यालय की स्थापना और आर्थिक योग जुटाना, चुनाव के दिनों ५ बड़े गाँवों में एक-एक सर्व-दलीय मंच की व्यवस्था। ●

युवा-विद्रोह और साहित्यकार

लखनऊ में १९ फरवरी को कैण्ट रोड स्थित गांधी शांति प्रतिष्ठान के कार्यालय में 'सरस्वती' के सम्पादक प० श्रीनारायण चतुर्वेदी की अध्यक्षता में "युवा-विद्रोह और साहित्यकार" विषय पर विचार-गोष्ठी हुई, जिसका प्रारम्भ सर्वोदय-कार्यकर्ता श्री कपिल अवस्थी के गीत से हुआ। प्रतिष्ठान के मंत्री रामप्रवेश शास्त्री ने साहित्यकारों का स्वागत करते हुए कहा कि इतिहास में युवा-पीढ़ी ने अदा ही एक निर्णायक 'रोल' अदा किया है। सामाजिक परिवर्तन में युवकों का सबसे अधिक हाथ रहा है और इससे मानव-प्रगति और संस्कृति के विकास में योगदान ही मिला है।

प्रस्तावित विषय का प्रवेश और परिचय कराते हुए सुप्रसिद्ध उपन्यासकार श्री भगवती चरण वर्मा ने कहा कि जो कुछ होता है वह स्वाभाविक ढंग से होता है और अनिवार्य होता है। युवकों को मार्गदर्शन के नाम पर आज कोई चीज ग्राह्य नहीं है। आपने कहा कि वह कला किस काम की जो आनन्द के लिए न हो और उस लिखने का क्या मतलब जो स्वयं मार्गदर्शन न हो? साहित्यकार सदा ही अपने समय में प्रचलित मान्यताओं को प्रस्तुत करता है—उससे ज्योतिषी की भूमिका निभ नहीं सकती। आपने जोरदार शब्दों में कहा कि पाँच सौ से लेकर हजार वर्ष पहले के कवि और साहित्यकारों ने समाज के लिए कोई उपयोगी साहित्य नहीं दिया, फिर भी उनको ज्यों-का-त्यों ढोया जा रहा है। इन कवियों ने राज्याश्रय में पलकर सिर्फ अपने आश्रितों का गुणगान मात्र ही किया है, और उस गुणगान के साथ-साथ शृंगारिक रचनाएँ भी हैं जिनका मन्तव्य कामुकता को उद्दीप्त करना था। क्या आज का साहित्यकार भी इनसे ही मार्गदर्शन प्राप्त करे, और वह आज सिर्फ सत्ताधारियों की चाटुकारिता को ही अपना कर्त्तव्य माने? श्री भगवती बाबू ने साहित्यकारों की परिस्थितिजन्य उपेक्षा पर दुख प्रकट करते हुए कहा कि आजादी की लड़ाई में साहित्यकार भूखे रहकर भी जनभावना को प्रोत्साहित कर रहे थे। वे आज भी उसी तरह भूखे हैं, नंगे हैं, उनकी तरफ किसी का ध्यान नहीं जाता। और दूसरी तरफ जो लोग आजादी के समय गद्दारी करते थे वे आज जनता के भाग्य विधाता बने हैं और साहित्यकारों को अपना गुलाम बनाये हुए हैं। आपने कहा कि पहले जरूरत इस बात की है कि साहित्यकार खुशामद करने की आदत छोड़ें तभी वे युवा-विद्रोह का सही चित्रण कर सकते हैं।

सुप्रसिद्ध लेखक डा० रामकुमार वर्मा ने कहा कि युवा-विद्रोह समस्त सामाजिक जीवन में भयावह परिस्थिति पैदा कर रहा है। युवक आज दिशाहीन है, क्योंकि शिक्षा की पद्धति वही है जो अंग्रेजों के समय थी। आज तो इस देश को नौकरों की नहीं "अपना समझनेवालों" की जरूरत है। जब तक शिक्षा का नियमन राजनीतिज्ञों के हाथ में रहेगा तब तक युवकों की ही नहीं (वे बुड्ढे भी तो होंगे) बुड्ढों की भी हालत बदतर होती चली जायेगी और इस देश के अतीत का गौरव नष्ट हो जायगा।

आपने कहा कि साहित्यकारों से और युवकों से राष्ट्रीयता अपनाने की बात कही जाती है, लेकिन इस देश में कितने नेता हैं जिनमें राष्ट्रीयता है? हर नेता तो अपने लिए ही संघर्ष कर रहा है। फिर भी हम साहित्यकारों से क्यों देशभक्ति की बात कही जाती है? साहित्यकार भी अब अपने लिए लिखता है और वही लिखता है जो समाज में चल रहा है। उसके लिखने से विद्रोह भड़केगा या शान्त होगा, यह देखना उसका काम नहीं रह गया है।

श्री यशपालजी ने साहित्यकारों के विद्रोही स्वरूप को मुखर करते हुए कहा कि साहित्यकार सत्य को प्रकट करता है। सत्य वह जो उसके समय में समाज की नींव में हो। अगर आज समाज में अव्यवस्था है तो साहित्यकार को चाहिए कि बिना किसी अतिरंजना के उसे ज्यों-का-त्यों प्रकट करें। युवक बहुत धीरे-धीरे विद्रोह कर रहे हैं। उनके मन के भीतर छिपे विद्रोह को प्रकट करना चाहिए, और उसे गति देनी चाहिए, ताकि नये समाज की रचना शीघ्र हो सके।

श्रीमती चन्द्रकिरण सोनरेक्सा ने वर्तमान शिक्षा की बुराइयों को ही युवा-विद्रोह का मुख्य कारण बताया।

डा० कंचनलता सब्बरवाल ने युवा-विद्रोह को जीवन का चिह्न बताते हुए सिर्फ "हाँ" करनेवालों को देश के विकास का विरोधी करार दिया। आपने कहा कि साहित्यकार की आवश्यकता विश्व को सदा ही रहेगी। बिना कल्पना के विश्व का कोई काम सम्भव नहीं हो सकता। हर कल्पनाकार साहित्यकार होता ही है। आपने राजनीतिज्ञों और शिक्षकों की भूमिका स्पष्ट करते हुए विद्रोह की आवश्यकता को प्रधानता दी।

प० श्रीनारायण चतुर्वेदी ने अध्यक्षीय समापन करते हुए कहा कि मनुष्य में विद्रोह करने की नैसर्गिक प्रवृत्ति होती है। प्रकृति, समाज-दर्शन, विचारकों का विरोध मनुष्य ने सदैव किया है, इसीलिए आज मानव सभ्यता उन्नति के शिखर की ओर बढ़ भी रही है। आपने कहा कि भारतवर्ष में 'हिप्पोक्रेसी' से राजनीतिक जीवन आरम्भ हुआ और आज भी वैसा ही चल रहा है। इसमें विद्रोह की आवश्यकता थी, वह क्रमिक पद्धति से शुरू भी हो गया है।

आपने कहा कि युवा-विद्रोह समय की आकांक्षा है। दो सभ्यताओं के संघर्ष में साहित्यकारों को निर्णय करना है कि इस देश की परिस्थितियों से सामंजस्य कैसे हो? सत्ताधारियों को कुर्सी की खींचतान के बजाय युवक-वर्ग →

श्रमिक संगठन के क्षेत्र में सर्वोदय का प्रवेश

—सुन्दरलाल बहुगुणा

३० जनवरी को मैं गढ़वाल जिले के प्रवेश-द्वार कोटद्वार में पहुँचा। कोटद्वार से होकर प्रतिवर्ष हजारों तीर्थयात्री बद्रीनाथ और केदारनाथ की यात्रा के लिए जाते हैं। शराब के नशे में बेहोश मोटर-चालक कई बार मोटर-दुर्घटनाएँ कर बैठते हैं और एक बार तो बद्रीनाथ की सड़क मौत की सड़क के नाम से प्रसिद्ध हो गयी थी! दो वर्ष पहले कोटद्वार में शराबबन्दी आन्दोलन हुआ और वहाँ की शराब की दूकानें बन्द हो गयीं। अब तो गढ़वाल सहित उत्तराखण्ड के पाँच जिलों में पूर्ण शराबबन्दी हुई है। खादी भण्डार और कुछ सर्वोदय-प्रेमियों के घरों पर भी यहाँ के प्रमुख सर्वोदय-सेवक श्री मानसिंह रावत मुझे नहीं मिले। एक गली से निकलते हुए उनके एक साथी ने मुझे देख लिया और जिस स्थान पर मुझे उनसे मिलाने ले गया, वहाँ पर साइनबोर्ड लगा था—

'गढ़वाल मोटर मजदूर संघ लि०'

मोटर मजदूर संघ सर्वोदय से सीधो दूर था। पहाड़ों में न तो कल-कारखाने हैं और न कोई इस प्रकार का दूसरा व्यवसाय हो, जिसमें बड़ा संख्या में श्रमिक हों। एकमात्र उद्योग यातायात है और एकमात्र श्रमिक संगठन 'मोटर मजदूर संघ'। हल्द्वानी, कोटद्वार और ऋषिकेश में, जहाँ से पहाड़ों के लिए मोटरें जाती हैं उनके मुख्य कार्यालय हैं। ये संगठन प्रारम्भ से ही राजनैतिक पक्षों के और मुख्यतः वामपक्षी दलों के हाथ में रहे हैं। इनके द्वारा उन्हें जिले के कोने-कोने में अपने कार्यकर्त्ताओं और साहित्य को फैलाने का अवसर मिल जाता है।

मोटर-मजदूरों से हमारा सम्पर्क शराबबन्दी आन्दोलन के सिलसिले में हुआ था। कोटद्वार के आन्दोलन में उन्होंने मशाल-जलूस निकालकर समर्थन दिया था। टिहरी-गढ़वाल में उन्होंने पिछले वर्ष तत्काल शराबबन्दी की घोषणा न होने की दशा में एक सप्ताह पश्चात् यातायात की आम हड़ताल करने की घोषणा की थी। शराब के सर्वाधिक प्रभावित उसको उखाड़ने के लिए पहली पंक्ति में खड़े हो गये थे।

मानसिंहजी ने बताया, हाल ही में वे शराबबन्दी को सफल बनाने के लिए सहयोग माँगने के लिए मोटर-मजदूरों के आम जलसे में गये थे। यह उनकी चुनाव की सभा था। हमेशा की तरह राजनैतिक पक्षों के नेता अध्यक्ष-पद पाने के लिए मौजूद थे, परन्तु मजदूरों ने सर्व सम्मति से उनको अध्यक्ष-पद स्वीकार करने के लिए मजबूर कर दिया। कुछ वर्ष पहले वे स्वयं बस-कण्डक्टर बन गये थे। अपने साथियों के इस प्रेमाग्रह को वे टाल न सके, परन्तु उनकी भी एक शर्त थी: 'मोटर-मजदूर संघ राजनीति से मुक्त रहेगा।'

४० वर्ष की आयु के आसपास के श्री मानसिंह रावत सर्वोदय-सेवकों के बीच अपनी नम्रता के लिए प्रसिद्ध हैं। उनके वेशभूषा और बातचीत से कोई यह अंदाजा नहीं लगा सकता कि २० वर्ष पहले इस नवयुवक ने टाटा समाज विज्ञान संस्थान से सामाजिक कार्य में स्नातक होने के बाद विदेश शिक्षा के लिए जाने का प्रलोभन छोड़ दिया था। वे सर्वेण्ट्स आफ इण्डिया सोसायटी में उम्मीदवार-सदस्य के रूप में शामिल हुए, परन्तु वहाँ भी समाधान नहीं हुआ। सुश्री सरला बहिन से उन्होंने भूदान का संदेश सुना और सन् १९५४ में भूदानमूलक ग्रामोद्योगप्रधान अहिंसक क्रान्ति के लिए अपना जीवन समर्पित कर दिया। वे भूदान का संदेश लेकर गढ़वाल की घाटियों और चोटियों में घूमते रहे। इस कार्य में उनकी सहधर्मिणी शशि बहिन भी उनके साथ थीं। दोनों ने बोक्सा आदिम जाति के हलदूखाता गाँव में अपना सेवा-केन्द्र बनाया और उनके जीवन के साथ समरस होने की साधना करने लगे।

चार वर्ष पहले मानसिंहजी दिल्ली में गांधीजी की समाधि पर 'विश्वमैत्री' के लिए पद-यात्रा करने की प्रतिज्ञा लेकर पद-यात्रा पर निकले थे। उत्तराखण्ड से वे नेपाल, सिक्किम और भूटान होते हुए असम, बंगाल, बिहार और उत्तरप्रदेश के मैदानों की यात्रा करके २ वर्ष पहले वापस आये और पुनः गढ़वाल में लोक-शक्ति जगाने के काम में लग गये। इस यात्रा के बाद उनका पहला काम कोटद्वार का शराबबन्दी आन्दोलन था, जिसके फलस्वरूप कोटद्वार, लैंसडौन और सतपुली की शराब की दूकानें बन्द हो गयीं।

मोटर-मजदूर संघ की अध्यक्षता स्वीकार कर उन्होंने और उनके माध्यम से पहाड़ों में सर्वोदय-आन्दोलन ने एक नये क्षेत्र में प्रवेश किया है। इसके दूरगामी परिणाम होंगे। ●

→की शक्ति को सही दिशा देने के लिए सचेष्ट होना चाहिए।

पं० चतुर्वेदी ने बड़े दुःख के साथ कहा कि साहित्यकार जो कुछ लिखते हैं वह समाज का प्रतिबिम्ब होता है। आज कितने सत्ताधारी नेता हैं जो साहित्यकार को पढ़ते हैं? पढ़ने की बात दूर रख दीजिए, कितने प्रतिशत नेता हैं जो सुनने को तैयार हैं? जब हमारे नेता सुनने तक को तैयार नहीं हैं तो युवा-विद्रोह बढ़ेगा ही और राजनीतिज्ञों के प्रभाव के कारण इस देश का भविष्य अन्धकारमय होगा ही। इन पच्चीस वर्षों की प्रतीक्षा के बाद विद्रोह, अस्वीकृति और असंतोष के बवण्डर का आभास युवा-विद्रोह के रूप में मिलने लगा है। जिस संसार में हम जी रहे हैं उसकी समस्याएँ, जिज्ञासाएँ और भविष्य की योजना की उपेक्षा नहीं की जानी चाहिए।

—रामप्रवेश शास्त्री

१७ जनवरी को झलारी में एक बैठक श्री शोभाकान्तजी के दरवाजे पर हुई, जिसमें श्री वैद्यनाथ बाबू भी शामिल हुए। शोभा बाबू सम्पन्न और श्रद्धालु व्यक्ति तो हैं ही, समझदार भी हैं। शोभा बाबू के टोले की सम्पुष्टि की बारी है। शोभा बाबू का हस्ताक्षर हो चुका है। उनके बालिग पुत्रों से हस्ताक्षर कराना है। उन्होंने बड़े भक्ति-भाव से अपने एक बेटे को, जो घर में मौजूद था, बुलाया और वैद्यनाथ बाबू के सामने हस्ताक्षर कराया। जो बाहर नौकरी में हैं उन्हें डाक से समर्पण-पत्र भेजा। इसके बाद श्री शोभा बाबू ने वैद्यनाथ बाबू से कुछ जिज्ञासा भरे प्रश्न पूछे।

प्रश्न—आपने ग्रामस्वराज्य के लिए रूपौली को क्यों चुना है ?

उत्तर—चूँकि रूपौली मेरे सार्वजनिक जीवन का प्रवेश-द्वार है इसलिए यह हमारी प्रिय भूमि है। आप सभी लोगों से हमारा परिचय और प्रेम है। घर-घर से नेह-नाता है। सन् १९३० के नमक-सत्याग्रह में टीकापट्टी से, और सन् १९४२ के जन-आन्दोलन में मालपुर से गिरफ्तार होकर जेल गया। मैं अपने घर में वापस आया हूँ, और अपने घर से ही ग्रामस्वराज्य की स्थापना करना चाहता हूँ।

प्रश्न—क्या ग्रामस्वराज्य में सभी लोग श्रद्धा से सम्मिलित हो रहे हैं ?

उत्तर—कुछ लोग श्रद्धा से, कुछ बुद्धि से, कुछ संकोचवश, कुछ भयवश सम्मिलित होते हैं। आप अपना ही उदाहरण लें। आप काफी समझदार हैं, और समझ-बूझकर ग्रामदान में शामिल हुए हैं। कुछ लोग श्रद्धा से भी शामिल होंगे। ग्रामदान भी इसी पद्धति से हुआ और ग्रामस्वराज्य भी इसी पद्धति से होगा।

प्रश्न—क्या व्यक्ति का हृदय-परिवर्तन हो सकेगा ?

उत्तर—परिस्थिति-परिवर्तन से हृदय-परिवर्तन अवश्य होगा, ऐसा मेरा विश्वास है। सत, रज, और तम, इन तीन गुणों के आधार पर ही हमारी सृष्टि खड़ी है। किसी समय में किसी गुण की प्रधानता हो जाती है। समाज में सत्व गुण बढ़ायेंगे, तो अहिंसा का विकास होगा, तमोगुण बढ़ायेंगे तो हिंसा का विकास होगा।

बाद में श्री दामोदर सिंहजी, श्री वृज मोहन दत्तजी के दरवाजे पर घटो बैठकें लगी रहीं। सवाल-जवाब होते रहे, नर से नारायण बनाने की प्रक्रिया चलती रही, पर हस्ताक्षर करने से उन्होंने इन्कार कर दिया। उस समय इन पंक्तियों का लेखक भी वहाँ बैठा था। उसे ऐसा लगा कि ये लोग यदि पहले आते तो पुल-माल बनते, अब पीछे से आयेंगे तो निर्माल्य बनकर आयेंगे।

*श्री शालिग्राम सिंह, बैरिस्टर, पूर्णिया-*कोर्ट ने, जो झलारी गाँव के रहनेवाले हैं और संयोगवश गाँव में ही मौजूद थे, जब सुना कि वैद्यनाथ बाबू कुछ सम्पन्न किसानों के दरवाजे पर से वापस चले गये हैं, तो उन्होंने अपना आदमी भेजकर कैम्प से समर्पण-पत्र मगाया और अपना हस्ताक्षर करके भेज दिया। अहिंसा की प्रक्रिया कितनी सूक्ष्म होती है ! —महेन्द्र मिश्र 'मस्त'

मुजफ्फरपुर की डाक

जयप्रकाश जी उत्तर भागलपुर के अशांत क्षेत्रों में

जे० पी० को वाराणसी में सर्व सेवा संघ की प्रबंध समिति की बैठक के समय नवगछिया (भागलपुर) खादी-भंडार के व्यवस्थापक श्री विष्णुदेवजी ने खैरपुर में हुए नरसंहार की कहानी से उन्हें अवगत कराया। सारी जानकारी मिलने के पश्चात् जे० पी० ने श्री वैद्यनाथ प्रसाद चौधरी, श्री रामनारायण बाबू, श्री शिवेन्द्र सिंह तथा बिहार के अन्य मित्रों से इस घटना पर गंभीरतापूर्वक विचार किया। खैरपुर में जो घटना घटी उसने सर्वोदय-आन्दोलन में लगे सभी वरिष्ठ नेताओं के मानस को झकझोरा। २५ जनवरी को जे० पी० ने श्री नागेश्वर सेन तथा श्री गोखले भाई से इस सम्बन्ध में पुनः विचारविमर्श किया। यह तय हुआ कि १९ फरवरी से २२ फरवरी तक जे० पी० इस अशांत क्षेत्र की समस्याओं के अध्ययन के लिए यात्रा करें।

खैरपुर कांड

बिहपुर, नवगछिया और गोपालपुर *प्रखंडों का अशांत क्षेत्र पूर्णिया, मुंगेर* और सहरसा जिलों की सीमा से मिला हुआ है। आतंकवादी इसी इलाके को आधार बनाकर लूट-पाट और हत्या का काम कर रहे हैं। बताया गया कि १२ जनवरी को आतंकवादियों के नेता रामचन्द्र, हरी, दद्दू तथा कैलाश की सशस्त्र जमात से खैरपुर के भूमि-मालिक श्री सियाशरण चौधरी की मुठभेड़ हुई, जिसमें दोनों ओर से खुलकर आग्नेय अस्त्रों का प्रयोग हुआ। घटनास्थल पर ही पाँच व्यक्ति तथा एक व्यक्ति अस्पताल में जाकर मर गये। मरनेवालों में श्री सियाशरण चौधरी तथा उनके फार्म के मैनेजर श्री मिश्रा भी शामिल हैं। दूसरी ओर खैरपुर गाँव के १६ हरिजनों के मकानों में श्री सियाशरण चौधरी की रक्षा में इकट्ठे लोगों ने आग लगा दी। पूरे क्षेत्र में इस घटना से आतंक पैदा हो गया।

जे० पी० की यात्रा

१९ फरवरी को सबेरे ९ बजे जे० पी० पूसारोड से जीप द्वारा बिहपुर के लिए रवाना हुए और १२ बजे जयरामपुर पहुँचे। भागलपुर के सर्वोदय-कार्यकर्त्ता श्री नागेश्वर सेन अपने सहयोगियों के साथ वहाँ स्वागतार्थ प्रस्तुत थे। वहाँ से जे० पी० उच्च विद्यालय गये, जहाँ मुंगेर तथा भागलपुर जिले के सभी वरिष्ठ सर्वोदय नेता, भाई गोखले तथा श्री विद्यासागर भाई के साथ उपस्थित थे। जे० पी० दोपहर में जयरामपुर के श्री जगदीश प्रसाद सिंह के निवास पर ठहरे। यहीं डा० रामजी सिंह के साथ तरुण-शांति-सैनिकों की एक टोली भी उनसे आ मिली।

अपराह्न २-३० बजे हायर सेकेन्ड्री स्कूल के भवन में सभा तथा खुली चर्चा में जे० पी० ने भाग लिया। चर्चा प्रारंभ करते हुए श्री नागेश्वर सेन ने वर्तमान परिस्थितियों पर प्रकाश डाला। क्षेत्र के अन्य कई लोगों ने खुली चर्चा में भाग लिया। इसके अतिरिक्त तरुण शान्तिसैनिकों ने खैरपुर के समीप के ७ गांवों में की गयी सर्वेक्षण-रपट प्रस्तुत की।

क्षेत्र-समस्याओं की चर्चा सुनने के बाद जे० पी० ने विस्तार से ग्रामस्वराज्य की चर्चा की। पुन शाम ८ बजे बिहपुर खादी भंडार में मुंगेर, पूर्णिया और भागलपुर के प्रमुख सर्वोदय-कार्यकर्त्ताओं की गोष्ठी में भी इन समस्याओं की चर्चा हुई। इस गोष्ठी में लगभग ५० स्थानीय प्रमुख कार्यकर्त्ताओं ने भी भाग लिया। २० जनवरी को प्रात जे० पी० बिहपुर से चलकर ९-३० बजे गौरीपुर खादी-भंडार पहुँचे, जहाँ चर्चा प्रारंभ हुई। सर्वश्री नारायण प्रसाद सिंह, सुशील कुमार महतो तथा अन्य लोगों ने क्षेत्र की समस्याओं को रखा। यहाँ भी जे० पी० ने विस्तार से ग्रामस्वराज्य और ग्रामदान-आन्दोलन की चर्चा की।

खैरपुर घटना-स्थल पर

गौरीपुर खादी-भंडार से चलकर शाम को जे० पी० ने खैरपुर कांड के घटनास्थल का निरीक्षण किया। श्री सियाशरण चौधरी के बासा पर एक ट्रक तथा एक ट्रैक्टर जला पड़ा था तथा पूरा मकान, जिसमें वे रहते थे, जलकर राख का ढेर बन गया था। मकान के समीप बिहार मिलिटरी पुलिस का एक घुड़सवार दस्ता तैनात था। यह घटना-स्थल बिहपुर थाने के महादेव घाट रेलवे लाइन के किनारे है, जहाँ एक तरफ स्व० सियाशरण का मकान था और दूसरे किनारे खैरपुर गांव। खैरपुर गांव में लगभग १५-१६ मकान जली-अधजली स्थिति में पड़े थे। कहा जाता है कि १२ जनवरी की मुठभेड़ में यह सब हो गया। जो मकान जले थे वे अधिकांश हरिजनों के थे या फिर हजाम लोगों के। घटना-स्थल को देखने के लिए जयप्रकाशजी तथा प्रभावतीजी धूप में छाता लगाये चल रहे थे। पीछे-पीछे लगभग ५०० स्त्री-पुरुषों का जन-समूह भी चल रहा था, जिसमें प्रखंड विकास पदाधिकारी भी थे। जिस समय जे० पी० घटना-स्थल को देखकर चले उस समय हजार के लगभग लोग उन्हें विदा कर रहे थे।

लगभग ४ बजे शाम को अठगांवा स्कूल में खुली सभा में जे० पी० का भाषण हुआ जिसमें लगभग पांच हजार लोग उपस्थित हुए। इसमें मुसलमान, पिछड़े वर्ग के अतिरिक्त औरतें भी थीं। रेलवे लाइन के किनारे स्थित यह स्थान शीशम के बागों से घिरा था। जैसे ही जे० पी० की जीप दिखी, वैसे ही हजारों लोग उनके स्वागत के लिए दौड़ पड़े, यहाँ पर भी पुनकर क्षेत्र की समस्याओं का चर्चा हुई। इस सभा में भी लगभग दस वक्ताओं ने क्षेत्र की समस्याएँ प्रस्तुत कीं। जे० पी० ने बड़े ध्यान से इन समस्याओं को सुना। कुछ लोगों ने साहू परवत्ता परिवार के बारे में शिकायत की थी इसलिए जे० पी० ने आश्वासन दिया कि वे उसी शाम को उन लोगों से इस पर चर्चा करेंगे। शाम को लगभग ७ बजे अठगांवा से चलकर वे साहू परवत्ता पहुँचे। मिडिल स्कूल में उनके ठहरने की व्यवस्था की गयी थी। साहू परिवार के प्रमुखों ने फूलमालाओं से जे० पी० का स्वागत किया। जैसे ही जीप स्वागत-द्वार पर पहुँची, उपस्थित दो सौ लोगों ने 'जयप्रकाश जिन्दाबाद' के उद्घोष से सारा वातावरण गुंजायमान कर दिया। रात्रि लगभग ८-३० बजे साहू परवत्ता परिवार के साथ जे० पी० की चर्चा हुई।

साहू परवत्ता परिवार

साहू परवत्ता परिवार सारे बिहार की उत्सुकता का केन्द्रबिन्दु बना हुआ है। परिवार के पूर्वज लगभग दो सौ वर्ष पहले उत्तरप्रदेश से यहाँ आये थे। इनके पूर्वज को यहाँ अंग्रेजों ने ४० एकड़ जमीन की एक जागीर दी थी। आज वही बढ़ते-बढ़ते उन्हीं के कथनानुसार पन्द्रह हजार एकड़ तक पहुँच गयी है। आज इस परिवार में १८ ट्रैक्टर हैं, लेकिन लोगों का यह भी कहना है कि यह संख्या ३० के लगभग है और जमीन को तीन बीस हजार एकड़ के आसपास है।

('जयप्रकाश शिविर समाचार' से)

★

दिवंगत आचार्य हरिहर : सेवा, त्याग, करुणा के प्रतीक

महान देश भक्त समाज-सेवी अजातशत्रु आचार्य हरिहर अब हमारे बीच नहीं रहे! १९ फरवरी को वे बीमार पड़े और २१ फरवरी की प्रात. ६'४७ पर उनका देहावसान हो गया। उनकी आयु ९४ वर्ष की थी। आचार्यजी उन महान देशभक्तों में से थे जिन्होंने अपना सारा जीवन राष्ट्र की सेवा में अर्पित कर दिया।

सन् १९०१ में उन्होंने मैट्रिकुलेशन स्कालरशिप प्राप्त करके उत्तीर्ण किया। रेवेन्सा कालेज, कटक से उन्होंने एफ० ए० पास किया। इसके बाद ग्लास-शिल्प में विशेष अध्ययन के लिए जापान जाने का तय किया। उन दिनों मयूरभंज के राजा मेधावी छात्रों को छात्रवृत्ति देकर विदेश अध्ययन के लिए भेजते थे। उनकी छात्रवृत्ति प्राप्त करने के लिए बैरिस्टर मधुसूदन दास की सिफारिश की जरूरत थी। आचार्य हरिहर अपनी दरख्वास्त लेकर मधु बाबू के पास गये। मधु बाबू ने कहा कि इसके साथ चरित्र-सर्टिफिकेट की भी जरूरत होगी। आचार्यजी ने गम्भीर होकर उत्तर दिया, "मेरे चरित्र के बारे में दूसरे लोग किस तरह सर्टिफिकेट देंगे? मेरा चरित्र क्या है, यह मुझे ही मालूम है।" इस उत्तर से सतुष्ट होकर मधु बाबू ने दरख्वास्त पर सिफारिश करके भेज दिया। परन्तु आचार्यजी अपने स्वास्थ्य के कारण जापान नहीं जा सके। कलकत्ता में वकालत पढ़ने के लिए चले गये।

वकालत पढ़ते समय ही उन्होंने देखा कि वकालत सत्य और न्याय पर आधारित नहीं है। इसलिए उन्होंने वकालत की परीक्षा नहीं दी और शिक्षण के माध्यम से लोकसेवा करने का निर्णय उन्होंने लिया। गणित शास्त्र पर उनका गहरा अध्ययन था। कुछ दिनों तक उन्होंने पुरी जिला हाईस्कूल में शिक्षक का काम किया। नीलगिरी स्कूल में कुछ दिनों तक शिक्षक का काम करने के बाद वे कटक के मिशन हाईस्कूल और कालेजियट एकेडमी हाईस्कूल में ५ साल तक शिक्षक का काम किया। इसी समय अंग्रेजी में ग्रामर पर एक पुस्तक उन्होंने लिखी जो काफी लोकप्रिय हुई। सन् १९१२ में आचार्यजी ने सत्यवादी राष्ट्रीय हाईस्कूल में शिक्षक का काम किया।
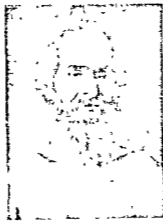
आचार्य हरिहर दिवंगत

सन् १९३० में नमक-सत्याग्रह में भाग लेकर जेल गये। नमक-कानून-भंग के लिए कटक से जो पहली टोली गोपबन्धु चौधरी के नेतृत्व में निकली उसमें वे सहनायक थे।

सन् १९४२ में 'भारत छोड़ो' आंदोलन में भाग लिया और दो साल तक ब्रह्मपुर जेल में बंदी रहे। जेल में प्रतिदिन गीता, उपनिषद् पढ़ाते थे। गीता का उड़िया अनुवाद और भाष्य उन्होंने बहुत पहले ही लिखा था जो आज बहुत लोकप्रिय है। ब्रह्मपुर जेल में ३०-३५ लोगों के लिए रोटी बनाते थे और कभी-कभी आटा पीसते थे तथा हर रोज चरखा चलाते थे। सन् १९४४ से ५२ तक वे प्रादेशिक कांग्रेस कमेटी के सदस्य रहे। सदस्य होते हुए भी उन्होंने कभी भी सत्ता की राजनीति में भाग नहीं लिया। गांधीजी के रचनात्मक और सेवामूलक कार्यों में उन्हें आनन्द आता था।

सन् १९५२ में भूदान-आंदोलन देश भर में शुरू हुआ। आचार्यजी ने इस आंदोलन में अपनी सारी शक्ति लगा दी। सन् १९३८ में गांधी सेवा संघ के डेलांग सम्मेलन, सन् १९५० में अनुगुल सर्वोदय सम्मेलन तथा सन् १९५५ में पुरी सर्वोदय सम्मेलन के समय उन्होंने अथक परिश्रम किया था। १५ अगस्त १९५८ में बालेश्वर से उन्होंने उड़ीसा की ऐतिहासिक पदयात्रा प्रारम्भ की। इस पदयात्रा के दरम्यान के सब जिलों में उनका संदेश लोगों को सुनने को मिला। कुल ५००० मील की उनकी पदयात्रा हुई।

सन् १९६० में सेवाग्राम सर्वोदय-सम्मेलन में वे सम्मेलन के अध्यक्ष बनाये गये। सेवाग्राम से लौटने के बाद अप्रैल १९६० में उड़ीसा में द्वितीय पदयात्रा का आरम्भ मयूरभंज से उन्होंने किया। उनकी पदयात्रा जब कोरापुट में पहुँची तो उसी समय बुखार हुआ और लोगों के अनुरोध पर उन्होंने पदयात्रा बंद की।

सन् १९६२ से '६८ तक वे पुरी गोपबंधु सेवासदन में बैठ गये और इस बीच भी वे उड़ीसा में भूदान-ग्रामदान कार्य के लिए घूमते रहे।

गत १२ फरवरी को अपने पवित्र जीवन के ९३ वर्ष उन्होंने पूरे किये थे। यहाँ उत्कल सर्वोदय मंडल के कार्यालय में उनका ९४ वाँ जन्मदिन धूमधाम से मनाया गया।

२१ फरवरी को प्रातः अपने प्यारे नेता के अन्तिम दर्शन के लिए लोग उत्कल सर्वोदय मंडल के कार्यालय की तरफ दौड़ पड़े। सबकी आँखों में आँसू थे। आचार्यजी को अन्तिम श्रद्धांजलि देने के लिए उड़ीसा के राज्यपाल डा० अन्सारी का भी आगमन हुआ। आचार्यजी का अन्तिम संस्कार सत्यवादी (साक्षीगोपाल) में सम्पन्न हुआ।

—गायत्री प्रसाद शर्मा

वाणी-मन्दिर, जयपुर

(परिचय)

वाणी-मन्दिर का प्रारम्भ सन् १९४५ के अक्तूबर में जयपुर राज्यप्रजा मण्डल के अधिवेशन के अवसर पर श्री सम्पूर्णानन्दजी की परोक्ष प्रेरणा से श्री वसन्तलालजी मुनीम द्वारा जौहरी बाजार स्थित अपने भाई श्री दानमलजी की दूकान पर सत्साहित्य के प्रचार हेतु हुआ था। कुछ दिन बाद जब युगान्तर प्रकाशन मन्दिर लि० की ओर से 'लोकवाणी' का प्रकाशन प्रारम्भ हुआ तब युगान्तर प्रकाशन मंदिर और श्री वसन्तलालजी के साझे में वाणी-मन्दिर के नाम से सवाई मानसिंह हाईवे (चौड़े रास्ते में) वर्तमान दूकान लेकर कार्य शुरू किया गया। सन् १९५२ तक यह क्रम चलता रहा। किन्तु इसके पश्चात् दैनिक 'लोकवाणी' का हस्तान्तरण होने के समय वाणीमन्दिर व्यक्तिगत रूप से मुनीमजी के जिम्मे ही रह गया।

बापू के ट्रस्टीशिप के सिद्धान्त पर २६ जनवरी सन् १९५६ में मुनीम साहब ने वाणी-मन्दिर का अपना स्वमित्व सर्वोदय-कार्य के लिए राजस्थान समग्र सेवा संघ को सुपुर्द कर दिया। वाणी-मन्दिर का काम पूर्ववत् स्वयं मुनीमजी देखते रहे और सन् १९६२ में समग्र सेवा संघ ने वाणी-मन्दिर का सचालन राजस्थान खादी संघ के सुपुर्द कर दिया, वह अब तक चला आ रहा है।

वाणी-मन्दिर की प्रवृत्ति के पीछे शुरू से ही सत्साहित्य के प्रचार की दृष्टि रही है। इस उद्देश्य से वाणी मन्दिर ने अपने व्यापार का दायरा सत्साहित्य तक सीमित रखा है। केवल बिक्री बढ़ाने के लिए चाहे जिस प्रकार का साहित्य दूकान पर नहीं रखा। सत्साहित्य के प्रचार के लिए दूकान की बिक्री तक सीमित न रहकर वाणी-मन्दिर द्वारा समय समय पर स्कूल, कालेजों में साहित्य-प्रदर्शनियाँ भी लगायी गयीं। विश्वविद्यालय में काउन्टर पर साहित्य रखकर 'सेल्फ सर्विस' के आधार पर बिक्री का आयोजन किया गया। वाणी-मन्दिर ने 'सहयोगी परिवार' की योजना द्वारा सत्साहित्यप्रेमियों से सम्पर्क रखने का सिलसिला भी चालू किया, जो कई वर्षों तक चला। इस परिवार की सदस्य-संख्या ३७५ तक पहुँच गयी थी, जिसमें सभी धर्मों एवं वर्गों के लोग शामिल हुए। परिवार द्वारा समय-समय पर गोष्ठियाँ भी आयोजित की जाती रहीं। देश में प्रकाशित श्रेष्ठ साहित्य यहाँ सुलभ है। इसके अलावा वाणी-मन्दिर के पास भारत सरकार के प्रकाशन विभाग की एजेन्सियाँ भी शुरू से रही हैं।

हाल ही में राजस्थान समग्र सेवा संघ, राजस्थान-खादी ग्रामोद्योग संस्था संघ तथा राजस्थान, खादी संघ ने संयुक्त प्रयास से इसकी एक स्वतन्त्र संस्था 'वाणी मन्दिर समिति, जयपुर' के नाम से रजिस्टर्ड कर निर्मित की है, ताकि इन तीनों संस्थाओं की सामूहिक शक्ति इस संस्थान को सुदृढ़ बनाने में लगे। इस नये रूप में वाणी-मन्दिर न केवल सत्साहित्य का बिक्री-केन्द्र ही है, पर सत्साहित्य के प्रेमियों का एक संगठन भी है। इसलिए इसमें प्रान्त के सत्साहित्यप्रेमियों को लेने की योजना बनायी गयी है। वाणी-मन्दिर समिति की यह कल्पना है कि राजस्थान के प्रत्येक जिले में इसकी शाखा हो, निश्चित ही सत्साहित्यप्रेमियों का यह प्रदेशव्यापी संगठन आज जो समाज में गन्दे साहित्य की बाढ़-सी आयी है, उसको रोकने में समर्थ साबित होगा।

हमारे देश का नव-निर्माण यदि लोकतान्त्रिक व्यवस्था में होना है, तो प्रेरणादायी सत्साहित्य का अधिकाधिक प्रसार एक बुनियादी कार्यक्रम है। वर्तमान समय में सर्वोदय-साहित्य-भण्डार, अजमेर, वाणी-मन्दिर, जयपुर तथा अजमेर व जयपुर रेलवे-स्टेशनों पर सर्वोदय-साहित्य स्टाल के नाम से बिक्री-केन्द्र सुचारु रूप से चल रहे हैं।

वाणी-मन्दिर जयपुर द्वारा मार्च १९७० तक रु० १,३३,३१४.७५ की बिक्री हुई है। —वसन्त बगोचीवाला

← सर्वोदय-साहित्य स्टाल, जयपुर

उद्घाटन-समारोह
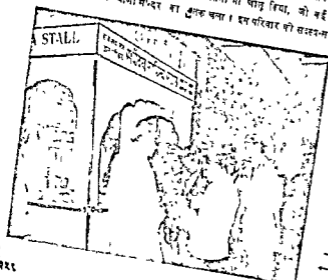
मतदाता-प्रशिक्षण कार्यक्रम का समर्थन

दिनांक २० फरवरी १९७१ को दोपहर साढ़े तीन बजे चुनाव-आयुक्त श्री सेन वर्मा से उनके कार्यालय में श्री सेवकरामजी, श्री एस० डी० शर्मा (लोकतंत्र रक्षा परिषद), श्री बाबूलाल शर्मा (गांधी शांति प्रतिष्ठान) और मैं मतदाता शिक्षण के सम्बन्ध में मिले।

श्री एस० डी० शर्मा ने मिलने का उद्देश्य बताया और समिति द्वारा प्रसारित अपील उन्हें दी। श्री सेनवर्मा ने इस प्रयत्न की प्रशंसा की और अपेक्षा व्यक्त की कि इन समाज-सेवी संस्थाओं को बंगाल में भी कुछ करना चाहिए।

समिति द्वारा अधिकृत कार्यकर्ताओं को मतदान-केन्द्र तक जाने की इजाजत के सम्बन्ध में उनसे निवेदन किया, जो उन्होंने स्वीकार किया।

दल-बदल के विरुद्ध जनमत तैयार करने और उम्मीदवारों को दल-बदल के विरुद्ध प्रतिज्ञाबद्ध करने के लिए लोकतंत्र रक्षा परिषद लोकसभा के सभी उम्मीदवारों को जवाबी पोस्टकार्ड भेज रही है। इसमें सभी उम्मीदवारों से यह अपेक्षा की गयी है कि वे चुने जाने पर दल-बदल नहीं करेंगे और संसद में दल-बदल के विरुद्ध प्रस्तावित विधेयक का समर्थन करेंगे। इस प्रयत्न को श्री सेनवर्माजी ने बहुत प्रशंसनीय बताया और इसमें हर संभव सहायता करने का वचन दिया। अपने अधिकारियों को सभी उम्मीदवारों के नाम और पते देने का निर्देश भी उसी समय दिया।

मतदाताओं को उपयुक्त उम्मीदवार न दिखने पर मतदान न करने के सम्बन्ध में चर्चा करने पर उन्होंने अपनी स्पष्ट राय दी कि लोकतंत्र की दृष्टि से मतदान नहीं करने के लिए प्रेरित करना ठीक नहीं है। जो, भी उम्मीदवार खड़े हों, उनमें से किसी-न-किसीको जो मतदाता को अपने विचारों के ज्यादा-से-ज्यादा निकट मालूम पड़े उसे, अवश्य मत देना चाहिए।

—नरेन्द्र दुबे

वाराणसी में सर्वदलीय मंच का सफल आयोजन

वाराणसी में २५ फरवरी को स्थानीय टाउनहाल में मौजूदा मध्यावधि चुनाव में चुनाव प्रचार की एक स्वस्थ और सभ्य परम्परा की शुरुआत सर्वदलीय मंच के आयोजन द्वारा हुई। पूर्व घोषित कार्यक्रम के अनुसार नगर सर्वोदय-मंडल द्वारा आयोजित इस सर्वदलीय सभा के मंच से नगर के आठ प्रत्याशियों ने बिना किसी पर कीचड़ उछाले अत्यन्त सभ्य और शालीन ढंग से अपने या अपने दल के विचार और नीतियों, कार्यक्रमों को मतदाताओं के समक्ष प्रस्तुत किये। इस कार्यक्रम में भाग लेने के लिए सभी प्रत्याशियों को सर्वश्री रोहित मेहता, अध्यक्ष, वाराणसी नागरिक परिषद; वंशीधर श्रीवास्तव, संयोजक आचार्यकुल, नारायण देसाई, मंत्री शान्तिसेना मंडल और राममूर्ति, सम्पादक 'सर्वोदय' साप्ताहिक के संयुक्त हस्ताक्षरों से १ सप्ताह पूर्व निमंत्रित किया गया था। सभा में उपस्थित लोगों ने उत्सुकता के साथ धैर्य और शान्तिपूर्वक करीब ढाई घंटे के इस कार्यक्रम में भाग लिया। सभा में सभी प्रत्याशियों को बराबर समय दिया गया था।

सभी प्रत्याशियों ने इस मंच के आयोजन के लिए सर्वोदय मंडल के प्रति आभार प्रकट करते हुए स्वस्थ लोकतांत्रिक चुनाव में इस तरह के आयोजनों को महत्वपूर्ण बताया। सभा के अध्यक्ष श्री नारायण देसाई ने अंत में श्रोताओं और वक्ताओं को धन्यवाद दिया और सभी की कार्यवाही राष्ट्रगान से समाप्त हुई।

मुंगेर जिला सर्वोदय मण्डल का पुनर्गठन

मुंगेर जिले के लोकसेवकों की बैठक ग्रामस्वराज्य संघ के प्रयोग तथा शिक्षण-केन्द्र नया छावनी में श्री शिवेन्द्र शरण सिंहजी के सभापतित्व में हुई। बैठक में कुल चौवन लोकसेवकों में से तीस लोकसेवक उपस्थित थे। श्री शिवेन्द्र शरणजी, संयोजक तथा श्री साकेत बिहारी जी, सह संयोजक सर्वसम्मति से निर्वाचित किये गये।

लोकयात्री चुरू जिले में

कार्यक्रम मार्च ९, १० जसवंतगढ़ सुजानगढ़, ११ लोढसर, १२ भोमसर, १३ सालसर।

स्थायी पता—राजस्थान समग्र सेवा संघ, किशोर निवास त्रिपोलिया, जयपुर—२ (राजस्थान)

इस अंक में

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २७ पै०), विदेश में २२ रु०; या २५ शिलिंग या ३ डालर।
एक प्रति का मूल्य २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं मनोहर प्रेस, वाराणसी में मुद्रित

सम्पादक
राममूर्ति
वर्ष : १७
अंक : २४
सोमवार
१५ मार्च, '७१
पत्रिका विभाग
सर्व सेवा संघ, राजघाट, वाराणसी–१
फोन : ६४३९१
तार : सर्वसेवा

अहिंसा और राष्ट्रीयता

अहिंसक विचारप्रणाली के अनुसार एक ही मानवसमाज में विभिन्न
राष्ट्रों की कल्पना केवल सुभीते की ही बुनियाद पर की जा सकती है।
किसी भी एक राष्ट्र को अगर अहिंसा की सुबुद्धि प्राप्त हो जाय तो वह राष्ट्र
अपने आपको दूसरे राष्ट्रों से पृथक् और विरोधी नहीं मानेगा। आसपास
के राष्ट्रों के उचित हितसम्बन्धों की रक्षा की वह उतनी ही चिन्ता करेगा,
जितनी कि अपने निज के। हिंसावादी होने पर भी राष्ट्र समूचे दीवाने
हरगिज नहीं होते। बल्कि यह कहना चाहिए कि राष्ट्र एक-दूसरे की स्पर्धा
के कारण हिंसावादी बने हैं। मनुष्य को केवल हिंसा के लिए हिंसा नहीं
भाती। इसलिए अगर कोई ऐसा राष्ट्र, जो अहिंसक विचार के अनुसार
व्यवहार करने की इच्छा रखता है और उसी के अनुरूप दुनिया से अविरोधी
सम्बन्ध जोड़ने की कोशिश करता है तो वह आसपास के राष्ट्रों की विवेक-
वृत्ति को जगाकर, उसे गति देगा और उतने अंश में उन राष्ट्रों को अहिंसा
के रास्ते पर लायेगा।

अहिंसक राष्ट्र जबरदस्ती अपना माल दूसरों पर नहीं लादेगा।
अहिंसक राष्ट्र में हरएक गाँव श्रमनिष्ठ और स्वावलम्बी रहेगा। इसलिए
दूसरे राष्ट्रों की लोभवृत्ति के लिए उसमें गुंजाइश नहीं होगी। अगर दूसरे
राष्ट्र उसके और अपने हित सम्बन्धों में विरोध मानें तो उसमें से रास्ता
निकालने के लिए और उनको पूरी तरह सन्तोष देने के लिए मित्रता की
भावना से मदद करेगा। दूसरे राष्ट्रों पर अकालादि संकट आ पड़े तो
उनकी यथासम्भव सेवा निष्कामभाव से करेगा। वादविषयक प्रश्न पंचों
को सौंपने के लिए तैयार रहेगा। दूसरे राष्ट्र अगर पंचों द्वारा न्याय कराने
को राजी न हों, या राजी होने पर भी उनका फैसला न मानें और उस पर
धावा बोल दें तो वह उनका अहिंसक प्रतिकार करेगा। इस तरह की वृत्ति
रखनेवाला अकेला राष्ट्र एकाकी नहीं रहेगा। वह सारी दुनिया भर में
अपने लिए सहानुभूति का वज्रकवच निर्माण करेगा। ऐसे राष्ट्र की कल्पना
करना असम्भव क्यों हो?

'स्वराज्य शास्त्र' (२६)

—विनोबा

• हम और हमारा आन्दोलन : आईने में • 'एखन विप्लव' •

अग्रलेख...

पूर्व बंग में जनशक्ति का सूर्योदय

पूर्व पाकिस्तान में इतिहास का एक नया अध्याय लिखा जा रहा है। राष्ट्रपति याह्या खाँ के उस वक्तव्य के ठीक बीस मिनट बाद, जिसमें उन्होंने पाकिस्तान की राष्ट्रीय असेम्बली के स्थगन की घोषणा की थी, पूर्व पाकिस्तान की राजधानी ढाका में लाखों लोगों ने जुलूस निकालकर इस घोषणा का विरोध किया। कर्फ्यू, दफा १४४ आदि सभी आदेश पीछे रह गये। जनता ने मानों आजादी का ऐलान कर दिया। जब यह लेख लिखा जा रहा है, तब पूर्व पाकिस्तान के शान्तिमय क्रान्तिकारी आन्दोलन का ९वाँ दिन चल रहा है। एक ओर जहाँ फौज द्वारा गोली चलाये जाने के कारण सरकारी आँकड़ों (१७२) और नेदरलैण्ड रेडियो के आँकड़ों (२०००) में बहुत बड़ा अन्तर दीखता है, वहाँ दूसरी ओर यह तो स्पष्ट ही है कि सारे पूर्वी पाकिस्तान में जनता ने अहिंसक आन्दोलन ही छेड़ दिया है। भीड़ न करने के सारे मार्शल लॉ आदेशों की अवहेलना करके हजारों लोग काले झंडे लिये घूम रहे हैं; जेल के कैदी जेल तोड़ बाहर निकल सीधे आवामी लीग के दफ्तर की ओर अग्रसर होते हैं और वहाँ से सेना द्वारा सताए लोगों के लिए इकट्ठा किये गये कपड़े पहनकर आगे बढ़ जाते हैं। लोकनेता मुजीबुर रहमान के आदेश से सारे बैंक अपने कारोबार को प्रतिदिन कुछ घंटों तक सीमित तथा पश्चिम पाकिस्तान की ओर जानेवाले सारे धन को रोक देते हैं, डाक-व्यवस्था के अलावा सारे शासकीय विभाग बन्द हैं। प्रेस के अलावा विदेशों को और किसी प्रकार के तार भेजे नहीं जा रहे हैं। वहाँ 'सिविलवार' हो जाने के भय से ब्रिटिश सरकार के आदेश के अनुसार पूर्व पाकिस्तान के ब्रिटिश नागरिक अपने बालबच्चों सहित पूर्व पाकिस्तान छोड़ने के लिए हवाई अड्डों पर भीड़ लगाये हुए हैं। ढाका रेडियो स्टेशन अपने आपको अब "रेडियो पाकिस्तान ढाका" नहीं, बल्कि "ढाका बेतार केन्द्र" कहता है, और घंटों तक आजादी के पूर्व के स्वाधीनता-संग्राम के गीत गाता है। यद्यपि सम्पूर्ण हड़ताल का अभी आदेश नहीं है, फिर भी सारे स्कूल-कालेज बन्द हैं। कहीं-कहीं निहत्थे बंगालियों पर गोली चलाने से फौज के बंगाली अफसर इन्कार करते हैं, और स्वयं पश्चिमी पाकिस्तान के पंजाबी अफसर से मार खाकर मरना पसंद करते हैं। याह्या खाँ की ओर से पूर्वी पाकिस्तान का गवर्नर पद संभालने के लिए भेजे गये फौजी अफसर टिक्का खाँ को बंगाली न्यायाधीश शपथ विधि कराने से इन्कार करते हैं।

"अहिंसक असहकार आन्दोलन" "सिविलनाफरमानी" आदि आन्दोलन पूर्व बंगाल के लिए नये नहीं हैं। स्वातंत्र्य-संग्राम में बंगाल की अगुवाई पूर्व बंगाल ही करता था। लेकिन एक फौजी तानाशाही के खिलाफ ७ करोड़ जनता का इस प्रकार का अहिंसक उत्थान जगत के इतिहास का एक नया अध्याय बन रहा है।

मुजीबुर रहमान की शिकायत बड़ी सीधी-सादी और साफ है: "एक देश की राष्ट्रीय असेम्बली की बैठक स्थगित करने में उस देश के सबसे बड़े पक्ष से सलाह भी नहीं ली जाती!" भारत से पूछे बिना उसे द्वितीय विश्वयुद्ध में शामिल करने की घोषणा के खिलाफ गांधी की गर्जना की याद दिलाने वाली यह शिकायत है। रहमान की माँगें भी स्पष्ट हैं—'फौजी शासन खत्म करो, सेना को बैरक में भेजो, निर्वाचित दल के हाथों में सत्ता सौंपो, पुलिस तथा फौज द्वारा की गयी हत्याओं की न्यायिक जाँच कराओ, और क्षति पूर्ति करो।' जन-आन्दोलन में माँगें इतनी ही साफ होनी चाहिए। किन्तु इन शिकायतों और माँगों के पीछे पूर्वी पाकिस्तान का २३ साल का इतिहास है। पश्चिम पाकिस्तान के कुछ शासकीय फौजी औद्योगिक और व्यापारी नेताओं द्वारा करोड़ों पूर्वी पाकिस्तानियों के किये गये शोषण की आह है। समर्थ बंगला भाषा के प्रति दिखायी गयी उदासीनता के बारे में आक्रोश है। और सबसे अधिक तो तानाशाही शासन से आजाद होने की सनातन मानवीय चेतना है।

पूर्व बंगाल और पश्चिम बंगाल, दोनों प्रदेशों की समस्याओं में कुछ समानताएँ हैं। दोनों जगह बंग-भंग की वेदना है, राष्ट्रीय नेतृत्व खो बैठने का दर्द है, और दोनों जगह केन्द्र द्वारा अन्याय किये जाने की पीड़ा है।

किन्तु जहाँ पश्चिम बंगाल में तथाकथित गांधीवादी मुख्य मंत्रियों के शासनकाल में हर प्रकार की अनीतियों की अभिवृद्धि हुई, और फलतः एक ओर आतंकवादी हिंसा, दूसरी ओर पार्टी की हिंसा और तीसरी ओर कानून और व्यवस्था के नाम से संगठित हिंसा का बोलबाला रहा; वहाँ पूर्व बंगाल में फौजी शासन, मार्शल लॉ और गोलीकाण्डों के बीच जनता अहिंसक आन्दोलन का एक अपूर्व नमूना पेश कर रही है। पूर्व बंगाल की जनता ने इतिहास के अनुभव से यह सीखा है कि हिंसा कभी सामान्य जनता का शस्त्र नहीं हो सकती। जब-जब हिंसा का आश्रय लिया जाता है, तब-तब वह थोड़े लोगों के हाथों में अधिकांश लोगों की लाचार शरणागति में परिणत होती है। घने अंधकार का जवाब और घना अंधकार नहीं, बल्कि दीपक ही हो सकता है। नंगी तानाशाही का जवाब अहिंसक लोकतंत्र ही हो सकता है। अमेरिका में मार्टिन लूथर किंग जूनियर के नेतृत्व में नीग्रो लोगों ने यह अनुभव किया। चेकोस्लोवाकिया में डुबचेक और स्वोबोदा के नेतृत्व में यही सिद्ध हुआ। और, अब पूर्वी बंगाल में मुजीबुर रहमान इसे फिर एकबार सिद्ध कर रहे हैं। आज के युग में आम लोगों के लिए हिंसा नहीं, अहिंसा ही अधिक व्यवहार्य साधन है! इस बात का उदाहरण ये लोग प्रस्तुत कर रहे हैं।

पूर्व पाकिस्तान की घटना से 'शत्रु की हार में हमारा आनन्द है' ऐसा अनुभव न करते हुए; इतिहास यह जो सबक सिखाना चाहता है, उसे पश्चिम बंग के और भारत के अन्य प्रदेशों के लोग सीखेंगे?

—ना० दे०

गांधी की साधना

—नारायण देसाई

गांधीजी का जीवन समन्वय तीर्थ-सा था। उनके जीवन द्वारा महान समन्वयों की स्थापना हुई।

उनके समग्र जीवन में क्रांति और साधना का समन्वय स्थापित हुआ था। क्रांति और साधना द्वारा उन्होंने अद्भुत शक्ति प्राप्त की। इस समय मैं गांधीजी के जीवन की एक धारा—साधना—के बारे में कहूँगा।

गांधीजी के लिए साधना और क्रांति भिन्न नहीं थे, अभिन्न थे। गांधीजी ने जो अखंड जीवन-साधना की, उसकी कुछ विशेषताएँ उनके जीवन में हमें देखने को मिलती हैं।

उन विशेषताओं के अंग-उपांगों का विचार करूँ उसमें पहले उनकी आध्यात्मिक जीवन-साधना, जो अखंडित रूप से चालू रही, उसके बारे में कुछ कहूँगा। उनकी आध्यात्मिक जीवन-साधना सामाजिक जीवन साधना से अलग नहीं रह सकी थी। यह उनकी खास विशेषता थी। उनकी आध्यात्मिक साधना का परिणाम सामाजिक क्रांति थी और सामाजिक क्रांति का माध्यम आध्यात्मिक साधना थी।

भौमिति के अनुसार सरल रेखा बनानी हो तो तीन बिन्दुओं के बीच रेखा बनानी पड़ती है। गांधीजी की आध्यात्मिक साधना के अनुसार अगर सरल रेखा बनानी हो तो उसमें भी तीन बिन्दुओं को जोड़ना होगा। इस सरल रेखा की आध्यात्मिक साधना का जो ढंग कहा है जो दिल्ली के राजघाट की समाधि पर लिखा है। गांधीजी के बचपन के आरम्भकाल में रम्भाबाई नाम की एक सेविका ने अभय-प्राप्ति के लिए राम की शरण में आने की बात बचपन से सिखायी और गांधीजी ने उसे उतनी ही सरलता और श्रद्धा के साथ स्वीकार कर ली। इतना ही नहीं, बल्कि वह उनके जीवन के रोम-रोम में व्याप्त रही। रम्भाबाई के द्वारा सिखाया गया 'हे राम' उस रेखा का प्रथम बिन्दु है।

दक्षिण अफ्रिका में पठान ने सिर पर लाठी मार दी और 'हे राम' कहकर गांधीजी जमीन पर गिर पड़े, वह दूसरा बिन्दु है।

अन्तिम बिन्दु है सीने में गोली लग जाने पर हे राम' कहा, वह। इन तीनों बिन्दुओं का जोड़ ही उनका जीवन है। वे जानते नहीं थे कि उसी क्षण उनको लाठी लगेगी या गोली मारी जायेगी, लेकिन उनकी प्रत्येक सांस राम का जाप करती थी इसीलिए अंतिम सांस के समय अत्यन्त स्वाभाविकता के साथ हे राम' उनके ओठों पर आ गया।

वे समाज के केवल अग्र-क्रांतिकारी राजपुरुष ही नहीं थे, बल्कि एक महान आध्यात्मिक साधक भी थे। उन्होंने अपनी आत्मकथा का नाम 'सत्य के प्रयोग' रखा। उनकी साधना में स्वराज्य-प्राप्ति और रामराज्य का लक्ष्य गौण था, लेकिन शून्य में मिल जाने की साधना में वे एक के बाद एक मंजिल पूरी करते जा रहे थे।

उनकी साधना की दूसरी विशेषता यह थी कि उन्होंने व्यक्तिगत गुणों को सामाजिक मूल्यों के रूप में स्थापित किया।

हम सोचते हैं तो लगता है कि ज्ञान का आग्रह जितना हिंदू धर्म ने रखा है उतना अन्य किसी धर्म में नहीं है। लेकिन अज्ञानियों की संख्या जितनी हिंदुओं में है उतनी अन्य किसी में नहीं। इन्होंने मूर्तिपूजा का विरोध किया और आज उनकी मूर्तियों की पूजा हो रही है। ईमान का आग्रह इस्लाम में सर्वाधिक है, लेकिन ईमान के आग्रही लोग भारत की इस्लामी राजनीति में कम मिलेंगे। वैसे ही प्रेम का आग्रह ईसाई धर्म में सर्वाधिक है, लेकिन धर्म के नाम पर अधिक-से-अधिक लड़ाइयाँ उसी के अनुयायियों ने की हैं। अपरिग्रह का जैन धर्म ने सबसे अधिक आग्रह रखा, लेकिन जैन लोग सबसे अधिक परिग्रही हैं।

धर्म की ऐसी विषम परिस्थिति समाज में पैदा क्यों हुई? इसके दो प्रमुख कारण हैं। आज सामान्यजनों का धर्म और महात्माओं का धर्म, ऐसे दो धर्म-भेद खड़े हो गये हैं। अमुक काम तो महात्मा ही कर सकते हैं। सामान्य मनुष्य उसे कैसे कर सकता है? ऐसा मानकर महात्माओं को उच्चासन पर बिठा दिया और इसीलिए धर्म में विषम परिस्थिति उत्पन्न हुई।

दूसरा कारण यह है कि हमलोग व्यक्तिगत पसंदगी के विषय को ही सामाजिक धर्म मानते हैं और सामाजिक धर्मों को हमने व्यक्तिगत पसंदगी का विषय बना दिया है। मैं दाढ़ी रखूँ या चोटी, वह मेरी व्यक्तिगत रुचि का विषय है उससे किसी को लाभ या नुकसान होनेवाला नहीं है। लेकिन दाढ़ी रखे वह मुस्लिम और चोटी बढ़ाये वह हिन्दू, इस प्रकार के व्यक्तिगत रुचि को हमने सामाजिक मूल्य मान लिया। वैसे ही सीधा तिलक करनेवाले अमुक सम्प्रदाय का और आड़ा करनेवाला अमुक सम्प्रदाय का। गांधीजी ने सामाजिक मूल्यों को सामाजिक मूल्यों के रूप में स्थापित किया। उनके एकादश व्रत सामाजिक मूल्य हैं।

वैसे तो सभी गुण व्यक्तिगत ही होते हैं, लेकिन समाज में जब व्यवहार करने का प्रश्न आता है तभी उसके सामाजिक मूल्य के बारे में प्रश्न उपस्थित होता है। जंगल में अकेले रहनेवाले को सत्य, अहिंसा के पालन का कोई प्रश्न नहीं उठता। उसको जब अन्य के साथ व्यवहार करना पड़ता है तभी उन मूल्यों का सवाल उठता है। सामाजिक मूल्यों की स्थापना करने के लिए हम समाज की अमुक विभूतियों के गुणगान गाते रहें, इतना ही काफी नहीं है, ऐसी प्रतीति गांधीजी ने हमको करायी है। गांधीजी ने कहा कि मेरी दृष्टि से सत्य, अहिंसा व्यक्तिगत गुण नहीं, बल्कि सामाजिक मूल्य है। गांधीजी ने उनकी सामाजिक मूल्य के रूप में स्थापना करने के लिए, उसके विविध

को व्यापक बनाने के लिए, उसको राष्ट्र-व्यापी और जगतव्यापी बनाने के लिए प्रयत्न किये। उन्होंने स्वार्थ को परमार्थ तक पहुँचाने की कोशिश की। स्वार्थ जब जगतव्यापी बन जाता है तो वह परमार्थ हो जाता है। इसीलिए गांधीजी ने छोटे-छोटे गुणों को व्यापक बनाकर उनको क्षितिजव्यापी बनाये।

उनकी साधना का समग्र या मूलभूत आधार है उनकी सत्य की खोज। सत्य पर आधारित उनकी साधना उनके विविध विषय सम्बन्धी विविध रूपों के दर्शन कराती है। नीम की चटनी खानेवाले, किसी बच्चे के शिक्षक व पाखाने की सफाई करनेवाले या किसी गाँव की सफाई करनेवाले गांधी छोटे लगनेवाले कामों में भी साधना की दृष्टि से ही पूरी एकनिष्ठा से सतत प्रयत्नशील रहते थे। गांधीजी के पास *उनकी सत्यसाधना की अद्भुत* शक्ति थी। नीति का नित्यतत्त्व, अध्यात्म का आत्मतत्त्व और समाज का साम्यतत्त्व सत्य की बुनियाद पर खड़े हैं। इसीलिए सत्य के साधक गांधीजी की दृष्टि में नीतिशास्त्र, समाजशास्त्र, धर्म और राज्यशास्त्र के अलग-अलग खण्ड नहीं थे। उनकी साधना गंगा के समान विशाल थी। उसमें आध्यात्मिकता और राजनीति या धर्म के बीच कोई भेद या दीवार नहीं थी।

वैज्ञानिक शोध करता है, लेकिन वह यह कहता है कि उसका उपयोग करने का *काम हमारा नहीं है, वह तो दूसरों का कार्य* है। इस तरह शोधक और व्यवहारकर्ता दोनों अलग-अलग हो जाते हैं। जीवन को इस तरह के टुकड़ों में विभाजित करनेवाले मनुष्यों को गांधी एक निराला आदमी ही मिला। उसने अर्थ के साथ धर्म का और राज के साथ नीति का समन्वय स्थापित कर दिखाया।

सत्य जीवन के प्रत्येक क्षेत्र पर अपनी किरण पहुँचानेवाला सूर्य है। *जिस तरह सूर्य हर जगह पर अपना* प्रकाश डालता है, उसी तरह सत्य के प्रकाश ने भी कोई भेद नहीं समझा। गांधीजी के लिए कोई चीज अधिक महत्त्व की या कोई कम महत्त्व की, ऐसी भेद-*रेखा नहीं थी। अंग्रेजों के साथ की* लड़ाई और सफाई के छोटे से कार्य के बीच उन्होंने कोई अन्तर नहीं रखा। वायसराय के साथ देश के महत्वपूर्ण प्रश्नों की चर्चा भी एक दिन कर लेंगे और दूसरे दिन समय मिला है तो चलो परचुरे शास्त्री की सेवा करने का अवसर मिलेगा कहकर सेवाग्राम भी दौड़े चले जायेंगे। उनके लिए वायसराय के साथ देश की महत्वपूर्ण चर्चा और कुष्ठ-रोगी की सेवा करने का महत्त्व समान ही था। गांधीजी की साधना में अल्प और महान का भेद मिट गया था। जो छोटी-सी बात का भी ध्यान रखते हैं, वे महत्वपूर्ण मार्ग को पार करके आगे बढ़ सकते हैं। छोटी सी भूल को भी बड़ी न मान ले और उसकी उपेक्षा कर दे तो वह उचित नहीं है।

उनके व्यक्तित्व में व्यक्तिगत और सामाजिक, प्राचीन और अर्वाचीन का समन्वय हुआ है। इसीलिए किसी को वे पुराने लगे, तो कोई कहता है कि गांधी *इसके बाद जन्म लेनेवाले बिल्कुल माडर्न* गांधी थे। वे अगर सौ-दो सौ साल बाद जन्मे होते तो लोग उनको अधिक समझ सके होते। इस प्रकार भिन्न प्रकार की भावनाएँ उनके बारे में जगने का कारण, वे प्राचीन व अर्वाचीन का समन्वय कर सके, यही था। उनके प्रत्येक कार्य का आधार तो सत्य ही था। सत्य तो सनातन है और उसका आग्रह भी हर युग में रहा है। लेकिन उन्होंने प्राचीन का आधार लेकर उसको अर्वाचीन अर्थात् नया अर्थ देने का कार्य किया। गांधी के सत्याग्रह ने प्राचीन अर्वाचीन का समन्वय कर दिखाया। उनको गीता में से अहिंसा न मिली होती तो वे गीता का त्याग कर देते, पर अहिंसा को न छोड़ते।

उन्होंने पूर्व और पश्चिम का भी समन्वय किया। गीता सर्वप्रथम तो उन्होंने अंग्रेजी में पढ़ी थी। पश्चिम में जाने के बाद वे अपने धर्म के प्रति अभिमुख हुए थे। इस तरह वे पश्चिम में गये, और पूर्वमय हुए और पूर्व-पश्चिम की उस साधना में पूर्व-पश्चिम के अद्भुत मिलन और संगम पर दीनबंधु एण्ड्रूज के साथ *मिलाप हुआ। वहाँ न कुछ पूर्व का था* न पश्चिम का। उनके विशाल हृदय मानवर्जित भेद-रेखा को पार कर चुके थे। गांधीजी और दीनबन्धु भारतवासी और इंग्लैंडवासी के रूप में नहीं, बल्कि सत्य-शोधक के रूप में आपस में मिलते थे।

उनकी साधना नित्य विकासशील थी। उन्होंने कहा था कि मैं जो आखिरी *कहूँ उसी को सत्य मानना।* एक बार उन्होंने खजूर के पेड़ को काट डालने के लिए कहा और बाद में बताया कि उसके रस में से उत्तम गुड़ बन सकता है इसलिए उसे मत काटना। एक बार विजातीय लग्न नहीं हो सकते ऐसा बताया और फिर दो पक्ष में से एक पक्ष हरिजन हो तभी शादी में शामिल होना उचित समझा। चौरी-चौरा में हिंसा हुई तब बारडोली सत्याग्रह स्थगित करने की बात चलाई थी और उसके बाद तो कहा कि चारों ओर हिंसा चलती हो तब भी उसके बीच अहिंसा का दीप जलता रहे, *वही सही होगा। ऐसे नित्य विकासशील* गांधीजी देहावसान के बाद भी अपने को विकासशील बनाये हुए हैं।

*अपने खून और पसीने को बहा*करके बनायी हुई इमारत में अगर वे कुछ पोल देखें तो उस मकान को तोड़ डालने के लिए भी वे हमेशा तैयार रहे। सत्ता की आसक्ति उनको नहीं थी। कांग्रेस लोक-सेवक-संघ न बन जाय तो वह समाप्त हो जाय, ऐसा गांधीजी ने कहा था। गांधी-सेवा-संघ में अगर व्यक्तिपूजा ही होती हो तो उसको आग लग जाय तो भी अच्छा है! ऐसा वे कहते थे।

अब मैं अल्प में से महान बनने की गांधीजी की बात का फिर से यहाँ स्मरण→

वजह भी तो है!

'हम निराश क्यों हों?' (भू० य० ४ जनवरी)। वजह भी तो है। भूदान-आन्दोलन को बीस बरस होने को आये, लेकिन यह जवान नहीं हुआ, इसकी जड़ें कहीं नहीं जमीं, यह अपने पैरों पर खड़ा नहीं हो सका। खादी संस्थाओं के कार्यकर्ता या सरकारी कर्मचारी ऊपर से आदेश प्राप्त कर, विचार से प्रेरित होकर नहीं, ग्रामदान कराते हैं, पुष्टि करते हैं। और क्योंकि उन्हें गांवों में जाने का कष्ट उठाना पड़ता है नौकरी बचाने के लिए, इसलिए वे सर्वोदय को गाली देते हैं। किस किस तरह के प्रलोभन देकर वे ग्रामीणों से ग्रामदान कराते हैं, कहते हुए शर्म आती है। चम्पारण-जिलादान, सारण-जिलादान आदि में प्रारम्भ से अब तक मैंने कार्य किया, इसलिए इसका प्रत्यक्ष अनुभव मुझे है। 'तीस तारीख तक जिलादान नहीं हुआ तो मैं योग में प्रवेश करूंगा' विनोबा के इस वचन को इस तरह फैलाया गया कि विनोबा आत्महत्या करेंगे, यदि एक माह में जिलादान पूरा नहीं हुआ तो। 'टार्गेट' पूरा करने की चिंता हो मुख्य थी, ऐसे में विचार क्या समझाया जाता? पुष्टि के समय समझायेंगे, अभी विनोबा को खुश कर लें। अपने मन को हम सांत्वना देते थे कि विनोबा हमसे अधिक बुद्धिमान हैं, दूरदर्शी हैं। वे कहते हैं तो जरूर इसमें से कुछ निकलेगा। विनोबा सब जानते हुए भी हंसकर टाल देते थे कि 'बी फार बिहार, बी फार बाबा, बी फार बोगस।'

दरभंगा जिले में एक बरस पैदल घूमकर सैकड़ों ग्रामसभाएं मैंने बनायीं। वे क्यों असफल हुई हैं, भाई रतनलाल गांधी पूछते हैं। इसलिए कि यह 'हमारा' कार्यक्रम है, जनता का नहीं। गरज हमें है, कार्यकर्ताओं को। हम महसूस करते हैं कि ग्रामदान से इनका भला होगा। विचार चाहे कितना ही उत्तम क्यों न हो, वह लादा जाता है इसलिए अधिक देर टिकता नहीं। चारों तरफ का वातावरण भी इसके लिए जिम्मेवार है। हम गांव में जाते हैं तो लोग मान जाते हैं, हम चले जाते हैं वो लोग भूल जाते हैं। हमारा काम होना चाहिए सिर्फ जगाना। करें गांव के लोग। जब वे इसमें भागीदार होंगे तब इसे 'अपना' काम समझेंगे। अभी जिस तरह की जल्दीबाजी हम लोग करते हैं, इससे लोकशिक्षण की प्रक्रिया अवरुद्ध होती है। लोक-आन्दोलन जो नहीं बन पाया है सो हमारे कारण। हममें धैर्य हो कहां है कि हम जनता को मौका दें? हम विचार अच्छी तरह उनके सामने रखें। यदि वे इसे उठाते हैं इसका मतलब उन्हें इसकी जरूरत है। नहीं उठाते हैं तो इसका मतलब यह कि उन्हें इसकी जरूरत नहीं है। हमें संतोष करना चाहिए।

—जगदीश यवानी
सर्वोदय आश्रम गरगांव, शिवसागर,

विनोबा और सर्व सेवा संघ

११ फरवरी के 'नवभारत टाइम्स' में चुनाव सम्बन्धी बाबा की टिप्पणी आयी है जिसमें स्पष्टतया उन्होंने गांववालों को चुनाव का पूर्ण बहिष्कार करने को कहा है। इस सूत्र को लेकर हमने गांव-गांव में तूफानी दौरा शुरू कर दिया है। अनुभव ऐसा आ रहा है कि गांव-गांव की सभाओं में, जहां ५०-१०० आदमी इकट्ठा होते हैं, वहां पर अब यह बात रखता हूं तो लोगों में एक नया उत्साह पैदा होता है और लोग इस कार्य के लिए कार्यकर्ता बनने की अपनी तैयारी भी बता रहे हैं।

परन्तु 'भूदान-यज्ञ' पत्रिका में अब तक के चुनाव सम्बन्धी जितने भी लेख, सलाहें और निर्देशन आये हैं और आ रहे हैं उनको पढ़कर पाठकगण भ्रम में पड़ गये हैं, और ये सारे लेख ही हमारे लिए प्रश्न बन गये हैं। एक तरफ तो बाबा की यह स्पष्ट घोषणा और दूसरी तरफ भूदान-यज्ञ पत्रिका के लेख, दोनों दो रास्ते बता रहे हैं? हम यह निश्चयपूर्वक मानते हुए आ रहे थे कि विनोबाजी की विचारनीति और सर्व सेवा संघ की विचार-नीति एक ही लक्ष्य की ओर प्रेरित करती है। लेकिन अब यह पूरी तरह से प्रतीत होने लगा है कि जैसे गांधी की नीति से कांग्रेस की नीति अलग हो गयी थी, उसी तरह से विनोबाजी की नीति से सर्व सेवा संघ की नीति भिन्न दिखायी दे रही है। इसका हमें आश्चर्य तो है ही, महान दुःख भी है।

—शम्भूदयाल त्यागी
खादी आश्रम,
दिबियापुर, जि० इटावा

(इस सम्बन्ध में देखें भूदान यज्ञ के २२ फरवरी '७१ में अंक का सम्पादकीय और सर्वोदय—सं०)

आमने-सामने

लेखक जयप्रकाश नारायण
पृष्ठ ६०, मूल्य ०-७५

इधर चार-छह महीने से श्री जयप्रकाशजी जिस अहिंसक क्रांति की भावना से प्रेरित होकर बिहार के प्रखंड में बैठे हैं और गांव-गांव की समस्याओं को हल करने में लगे हैं, वह अपने में अत्यन्त अनोखी और अभूतपूर्व घटना है।

इस किताब में उसी का विवेचन जागतिक संदर्भ में है। ●

कराता हूं। हिन्दुओं के तैंतीस करोड़ देवताओं में राम और कृष्ण सर्वाधिक लोकप्रिय हैं। हिन्दू धर्म के करोड़ों लोग राम धुन में लीन हो जाते हैं। क्योंकि राम में पतित को पावन करने की शक्ति है। गांधीजी ने जिस विराट लोकप्रियता को प्राप्त किया उसका कारण यह था कि उन्होंने अपने चरित्र के द्वारा साधारण से साधारण मोहन किस तरह महात्मा बन सकता है यह दिखलाया था। इसीलिए कोटि-कोटि लोग उनके पीछे चल सके। उनकी साधना का यही महत्व था। (दिनांक १२-२-७१ को सावरकुली में दिये गये भाषण से)

होली के अवसर पर विशेष लेख

हम और हमारा आन्दोलन : आईने में

[होली के उमंगभरे 'मूड' में सर्वोदय-आन्दोलन की मौजूदा स्थिति से चिंतित, व्यथित, शायद पीड़ित भी, अपने को कुछ अधिक क्रान्तिकारी समझनेवालों की एक, गोष्ठी में प्रस्तुत किया जानेवाला प्रथम निबन्ध ।]

क्रान्ति की हमारी मान्यता है कि समाज में साधन और व्यक्ति के बीच की आर्थिक मान्यताएँ, व्यक्ति और व्यक्ति के बीच की सामाजिक मान्यताएँ इस तरह बदलें कि किसी भी मनुष्य का किसी भी तरह से होनेवाला शोषण और दमन सदा के लिए मिट जाय; और जो नये संबंध कायम हों, उनमें हरएक के पूर्ण विकास का—ईमान की रोटी और इज्जत की जिन्दगी का—अवसर रहे। हम मानते हैं कि यह सारा परिवर्तन समझा-बुझाकर, शिक्षण की प्रक्रिया से, यानी अहिंसा से ही संभव है, दूसरे तरीकों से नहीं।

जिस समाज में हम काम कर रहे हैं उसमें लगभग हरएक की मान्यता सामन्तवादी है। जिस किसीने चाहे जिस किसी तरह से जमीन और पैसे इकट्ठे कर लिये हैं, समाज के सामान्य लोगों के मन में उसके लिए अपने आप प्रतिष्ठा जम जाती है। उसके साधन जिन्हें उपलब्ध नहीं हैं, वे उन्हें गालियाँ चाहे जितनी भी दें, पर मन से उनका 'बड़ा' होना स्वीकार किये रहते हैं और 'महाजनो येन गत: स पन्था:' न्याय से उन्हीं के रास्ते पर चलते हैं।

आजादी के बाद संपन्न बनने की आकांक्षा व्यापक रूप से फैली है। गाँववालों के सामने संपन्न बनने का मात्र एक रास्ता उपलब्ध है शोषण और दमन का। इस पूँजीवादी आकांक्षा से बचा कौन-कौन है, यह खोजने की आवश्यकता है।

जिन आदर्श-द्रष्टाओं को आज की विषमता खलती है, उन्होंने करुणावश ही सही, साम्य का जो नारा दिया, उसमें उनके पीछे आये अधिकतर वे लोग हैं जो पूँजी इकट्ठी करने की दौड़ में हारे हुए हैं।

इस तरह हमें काम करना है उस समाज में जिसकी मान्यताएँ हैं सामन्तवादी, आकांक्षाएँ पूँजीवादी और नारे समाजवादी। इस बात को जरा और साफ करूँ। गाँव की जमीन की मालिकी ग्रामसभा को समर्पित करने के लिए जमीनवालों को कहा जाता है, तब आज की विषमताजन्य सर्वहारा के रोष को न जानने-समझने के कारण अथवा मोह के कारण वे जब ग्रामदान-पत्र पर हस्ताक्षर करने से अथवा ग्रामसभा में शामिल होने से कतराते हैं, तो उन का यह कदम समझ में आता है। पर सब बातें सुन-समझ लेने के बाद गाँव के छोटे-छोटे भूमिवान, जिनकी हैसियत सम्मानित मजदूर से अधिक नहीं, और अनेक भूमिहीन भी, जब ग्रामदान की शर्तों को पूरा करने में उसी तरह अन्यमनस्कता दिखलाते हैं और बहुत कुरेदने के बाद यह जवाब देते हैं कि गाँव के बड़े मालिकों से पहले दस्तखत कराइये न, वे जिस रास्ते पर चलेंगे उससे क्या हमलोग बाहर जायेंगे! तो विद्रोह की अपनी भाषा की विफलता पर अपना सिर धुनने या उन्हें गलियाने के सिवाय और क्या किया जाय, समझ में आता नहीं।

द्वैध व्यक्तित्व

गाँव में जिन्हें थोड़ी फुरसत है, वे ही सामाजिक कामधाम के अगुआ भी होते हैं। ऐसे नेताओं के द्वैध व्यक्तित्व के कारण मालकियत-विसर्जन की गति जिस जगह अटकती है वह यों है : जब आप एक गाँव के या कई गाँवों के गिने-चुने लोगों की बैठक करते हैं तब ये अगुआ प्रगति की भाषा का जोरदार शब्दों में समर्थन करते हैं, आपको अपने गाँव में लगने का निमंत्रण देते हैं, और एकाधवार जब उनके घर पर जाइये तो ठेठ्ठना भर स्वागत करते हैं, यानी उतनी दूर तक आपके साथ रहते हैं जितनी दूर तक उनके स्वार्थ पर कोई धक्का न लगे। लेकिन जब उनको अपनी जमीन का बीसवाँ, कमाई का तीसवाँ और उपज का चालीसवाँ भाग देने की अथवा ग्रामसभा में शामिल होकर अपना रोब खोने की नौबत आती है तब जितनी बुद्धिमत्ता अथवा धूर्तता से हो सकता है, इस अवसर को भविष्य के लिए वे टाल देते हैं। ये ही चीजें जब उनकी व्यक्तिगत प्रतिष्ठा के सवाल के तौर पर उनके गले पड़ जाती हैं, तब वे चाहे जितनी दूर तक जाने को तैयार हो जाते हैं, यह अलग बात है। मामला-मुकदमा, मारपीट में भी तो व्यक्तिगत प्रतिष्ठा को जीतने के के लिए ही वे अपनी जमीन-जायदाद बेच डालते हैं अथवा किसी भी हद तक शारीरिक कष्ट सहने को तैयार हो जाते हैं! अत: द्वैध व्यक्तित्व वाले गाँव के अगुवाओं के चंगुल से निकल कर मान्यता बदलने का यह आंदोलन गाँव के सब लोगों के ग्रहण करने लायक कैसे होगा, यह विचारणीय प्रश्न है।

सार्वत्रिक जड़ता

देखा तो यह भी जाता है कि जिन्होंने तर्क से आपकी बात मान भी ली, वे भी आगे बढ़कर नयी परिस्थिति को स्वीकार करने को तैयार नहीं होते। उनका मन इतना जड़ (इनर्ट) है कि अपनी मर्जी से किसी नयी परिस्थिति में वे जा ही नहीं पाते। हल्ला-गुल्ला के बीच, देखादेखी में वे नयी परिस्थिति के जल में यदि फिसल ही पड़े तो फिर 'हर गंगे' कहकर उसमें स्नान भले ही कर लें, पर समझ-बूझकर आगे बढ़ने में वे बराबर सुस्त दीख पड़ते हैं। हल्ला-गुल्ला से प्रेरित होकर काम करने को उनका मन अभ्यस्त (कन्डीशन्ड) है, यह भी एक पहलू है।

शरणागत

जिन दिग्नों को जीविका का साधन देने की बात 'सर्वोदय' आन्दोलन में सबसे पहले है, उनसे यह अपेक्षा रखना कि वे समाज के लिए त्याग करें, अपने श्रम को प्रतिष्ठा की निगाह से देखें, आसमान के फूल तोड़ने जैसा है।

गाँव में जब हम जाते हैं तो वे हमारे पास तब ही आना स्वीकार करते हैं जब उन्हें विश्वास हो जाता है कि हम उन्हें जमीन आदि कुछ-न-कुछ देनेवाले हैं। वस्तुस्थिति तो यही है कि ग्रामदान-पत्र पर हस्ताक्षर वे इसी लोभ से करते हैं कि उन्हें जमीन मिलेगी। कहा जा सकता है कि त्याग, मान्यता-परिवर्तन आदि की भाषा चूँकि उनकी समझ में नहीं आती, इसलिए 'शिक्षण-शास्त्र' के सिद्धान्त के अनुसार उन्हें परिचित सन्दर्भ से अपरिचित तथ्यों की जानकारी देने का यह कदम है।

पर उनकी वर्तमान मानसिक स्थिति यह है कि उनका शोषण और दमन करनेवाले जिन समर्थ लोगों से भिड़ने की उनकी ताकत नहीं, उन 'दुष्टों' का दमन करने को वे भगवान से 'गोहार' करते हैं, उस भगवान से, जो कथा और पुराण के युग में पुकार सुनते ही या तो गरुड़ पर चढ़कर दौड़ पड़ते थे या विभिन्न रूपों में अवतार ले लिया करते थे। अब तो निराकार भगवान जब प्रकट नहीं होते, तब साकार कल्याणकारी सरकार की ओर वे उसी भाव से ताकते हैं, और मान बैठे हैं कि वह शंख, चक्र, गदा, पद्म लिये उनकी रक्षा के हेतु हरदम तैयार रहती है। और सरकार के मगर यानी दलाल, ये दलवाले, उन्हें रात-दिन यही सिखाया ही करते हैं कि 'सर्वधर्मान् परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज'। तो ये शरणागत चाहे भगवान की, चाहे सरकार की, चाहे पार्टियों में किसी एक की, चाहे सर्वोदयवालों की, चाहे नक्सलवादियों की शरण में जाएँ, सभी जगह उनकी वृत्ति एक ही रहती है कि उनका उद्धार कोई और कर दे, उन्हें अपने लिए खुद कुछ करना न पड़े। कभी-कभी तो उलटा ही कल्याण-कार्य करनेवालों से वे इसी बिना पर सौदा करते हैं कि उनकी यदि फलां बात मानी नहीं गयी तो वे उसे पूरा करने में सहयोग नहीं करेंगे।

स्त्री, शूद्र, अजान

शूद्र, स्त्री और युवावर्ग की गुलामी वाले इस समाज में यह प्रथा तो सिर्फ शूद्रों की यानी मेहनत पर जीनेवालों की है। स्त्रियों और जवानों को तो अपनी गुलामी समझनी अभी बाकी ही है। इनमें जो थोड़ा पढ़े-लिखे हैं, जिनके चेतन होने की उम्मीद की जाती है, उनकी एकमात्र तमन्ना होती है कि वर्तमान 'इस्टेब्लिशमेन्ट' में किसी-न-किसी तरह वे किसी सुविधावाली जगह पर पहुँच जायें।

इसी आकांक्षा के कारण लड़कियों की शादी में उसी अनुपात में पूत (तिलक) देनी पड़ती है, जिस अनुपात की सुविधावाली जगह पर भावी वर के होने की सम्भावना होती है। और ये पढ़े-लिखे निठुर—जिन्हें आप तरुण कहते हैं—अपने नाम पर माँ-बाप द्वारा ऐसा सौदा किये जाने में अपनी शान मानते हैं।

अब आइये उन कार्यकर्त्ताओं की ओर जो सर्वोदय-समाज की स्थापना में अपनी शक्ति भर जुटे हुए हैं। मैं पूरे भारत की बात नहीं करता, बिहार की ओर से भी बोलने का अपना जिम्मा नहीं मानता, लेकिन कच्चा-पक्का प्रगट चिन्तन आपके सामने रख रहा हूँ।

बिहारदान

बिहारदान हुआ विनोबाजी की प्रेरणा से। बिहारदान प्राप्ति-समिति में नाम चाहे जिन लोगों के रहे हों, वह काम कर सकी जयप्रकाश जी द्वारा जुटाये गये कोष के आधार पर। बिहार की विशाल खादी-संस्था या उसकी इकाइयों के कार्यकर्त्ता प्राप्ति-कार्य में लगे थे मालिकों यानी अधिकारियों के हुक्म से। प्रखण्डदान की प्राप्ति में प्रतिष्ठा एकदम नहद मिलती थी। सरकारी कर्मचारियों में जहाँ जिला मजिस्ट्रेट और जिन जिला रजिस्ट्रार विनोबाजी की वाणी से मोहित हुए, वहीं बी० डी० ओ० और उनके 'फील्ड स्टाफ' तथा प्राइमरी पाठशाला के शिक्षक चाहे मन से, चाहे अन्यमनस्कता से लगे हों, प्रखण्डदान प्राप्ति का चक्रव्यूह-भेदन तो होता ही चला गया।

इधर विनोबा जी श्रद्धा से और मनोरंजन चारुओं से हाथ में पेन्सिल लिये बैठे थे। प्रखण्डदान-प्राप्ति का समाचार किसी के भी मुँह से उन्होंने सुना-न-सुना कि बिहार के नक्शे पर उस प्रखण्ड को लाल रंग करके इस अदा से उसकी ओर देखते थे, मानो उतना सा राज्य जीत लिये हों। उस समय यदि किसी ने यह प्रश्न उठाने की धृष्टता की कि भाई जरा जाँच लीजिये कि घोषणा पक्की है या कच्ची, तो उस पर आँखें तरेर कर ताना गया, कि 'खबरदार, घोषणा करने वाले साक्षात् प्रभु पर यह अविश्वास।' जो हो, बिहारदान हुआ। हर एक में हरि की मूर्ति देखनेवाले बाबा तो ईश्वर से बातचीत करते बिहार से चले गये और तूफान की गति से बिहारदान प्राप्त करने वाले जब अति तूफान की गति से बिहारदान की पुष्टि का संकल्प लेकर बैठे, तो उन्हें अधकार के अलावा कुछ सूझा ही नहीं।

जेल में प्रवेश

बिहार के जिन जवानों की निरन्तर शिकायत यह थी कि बिहार की क्रान्तिकारिता प्रगट इसलिए नहीं हो रही है कि संस्थाओं पर कब्जा उनका नहीं है, बूढ़ों का है, वे जब क्रान्तिकारी संस्था 'बिहार ग्रामस्वराज्य समिति' बनाने बैठे तो राजपूत और भूमिहार महासभा के झंडे के नीचे खड़े होकर क्रान्ति को खतरे से उबारने लगे। समिति बनी। जवानों को आतोय विजय पर गौरव हुआ। बाबा की वाणी के 'सोल एजेण्ट' लोगों को अध्यात्म का उपदेश देने लगे। कार्यकर्त्ताओं को गोष्ठी बैठाने के बाहर जब काम करने की फुरसत ही नहीं थी, तब सहचिन्तन की चिन्ता

किसको होती ? जब काम का तकाजा यह था कि प्रत्यक्ष काम में लगे कार्यकर्ता-गण इकट्ठे बैठ यह तय करें कि उन्हें क्या करना और क्या नहीं करना चाहिए; तब मैले पड़ गये पुराने वस्त्रों की धुलाई के लिए दादा और राममूर्ति जी के नाम से सहरसा में एक सत्संग लाड़ी' खोली गयी। किसी कुयोग से वे दोनों उसमें आ नहीं सके। तब आध्यात्मिक सौदा बाँटनेवाले एक वृद्ध की मदद से आये हुए माल पर थोड़ी खरियामाटी की लिपाई-पुताई कर उन्हें धोया हुआ मान लिया गया, और 'सत्संग' शिविर की उपलब्धियों पर संतोष प्रगट किया गया। बाबा तो सूक्ष्म में प्रवेश कर ही चुके थे, इधर बिहार ग्रामस्वराज्य समिति भी समिति के मंत्री की जेब में प्रवेश कर गयी।

कार्यकर्त्ता, जीविका, शिक्षण

एक नव-समाज के निर्माण के लिए कार्यकर्त्ताओं को लगना है। उनकी मान्यताएँ चाहे जितनी भी स्पष्ट एवं प्रखर क्यों न हों, अपनी जीविका के लिए उन्हें कोई-न-कोई समझौता करना ही पड़ता है। यह समझौते की प्रक्रिया तो इस हद तक जानी है कि जीने को पुरानी मान्यताओं को स्वीकार कीजिये, या नयी मान्यताओं के नाम पर मौत को गले लगाइये। कार्यकर्त्ताओं के निर्वाह के लिए विनोबाजी ने ऋषि बनकर सर्वोदय-पात्र का जो सुझाव दिया अथवा दासबोध ग्रंथ और एक झोले का जो प्रस्ताव रखा वह उसे अबतक आविष्कृत नहीं कर पाया। हाल तो यह है कि अकेले-अकेले में वे बड़े सज्जन हैं, निरीह भले ही हों। दो के साथ होने पर बहस कभी समाप्त हो नहीं होती, एक की दृष्टि का कोण इतना तीखा होता है कि दूसरे को वह सह्य ही नहीं होता। तीन जहाँ साथ हुए वहाँ धरना और उससे अधिक में तो निरन्तर अराजकता ही रहती है। कौन किसे समझावे ?

काम करने के लिए इन क्रान्तिकारियों की जो जमातें बनती हैं, वे व्यवस्थापकों के दल में बदल जाती हैं। गणपति बनाने में वानर बन जाता है। क्रान्ति के इस काम में नयी पीढ़ी को लगाने के लिए स्नेह और शिक्षण की व्यवस्था अभी तक तो दीख नहीं पड़ती। व्यक्तिगत तौर पर कुछ कार्यकर्त्ताओं को रोटी देनेवाले समर्थ साथी उन्हें 'सुदामा' भले ही बना दें, 'सखा' तो नहीं ही बना पाते।

काम का सिंहावलोकन

काम के सिंहावलोकन के लिए एक साथ बैठने का कोई रिवाज यहाँ है नहीं। बहुत कोशिश करके यदि कभी एक साथ बैठना हो भी गया तो आपके मुँह से बात निकली न निकली कि वरिष्ठ साथी को यह अंड-बंड जैसी लगने लगी। आपके बहक जाने का उन्हें खटका हुआ नहीं कि उन्होंने अपनी घंटी बजायी नहीं। अब आप हैं यदि ढीठ, तो खोलिये अपना मुँह। दूसरी ओर हर नवशिक्षुआ का और प्रौढ़ भाषणिया का यह हाल कि बैठक में चाहे जो भी विषय उठाया जाये, उस सम्बन्ध में वह कुछ जाने चाहे न जाने, उस पर अपनी राय जाहिर करने खड़ा वह अवश्य होगा, और उसे यदि कोई रोके नहीं तो अपने भाषण का सारा काड सुना देने की तमन्ना रखेगा। आदिम-मानव के शोषण-युग से कथा आरम्भ कर चन्द्रलोक में मानव-युग तक की कथा वह डालना चाहेगा। 'एक मिनट' का और समय माँग कर अनगिनत मिनट तक बोलने जाने में कोई संकोच महसूस नहीं करेगा। उसके लिए तो 'तीन मिनट को मिनट मा, मर्म न जाना कोय।' परन्तु इधर 'सभा सहित पति थाकेऊ, प्रगति कौन विधि होय।' लिखकर सिलसिलेवार ढग से और संक्षेप में बोलने से उसे लगने लगता है कि क्रांति होने में कसर रह गयी है। ऐसे लोगों के कसूर के कारण काम की बात करनेवालों की भी मार सहनी पड़ती है।

कम्पनी

नक्सलपंथियों की कृपा से हो या स्वय-प्रेरणा से, पुष्टि कार्य के लिए कैम्प खुला है। कंपनी में नये से बेसी पुराने कार्यकर्त्ता भर्ती हुए हैं। ये मुँह में रोटी का टुकड़ा और मन में काल्पनिक या सही असमाधान लिये काम में जुटे हैं, पर उनकी 'कम्यूनियनशिप' नहीं बन पा रही है।

बिहार की रिपोर्टिंग

बिहार में जो भी काम हो रहा है उसकी रिपोर्टिंग करने के लिए किससे कहा जाए ? ग्रामस्वराज्य समिति के अध्यक्ष से, उपाध्यक्ष से, नं० १ मंत्री से, या नं० २ मंत्री से ? किसी को पता नहीं। 'जयप्रकाश शिविर समाचार' का जूठन और सहरसा के शिविरों का पावन-प्रसंग भूदान यज्ञ उर्फ सर्वोदय में छपना अवश्य है, पर उससे बिहार के काम का पूरा चित्र सामने आता नहीं। 'मुसहरी की मिट्टी अब गुलाम (गुलाम नहीं) हो रही है', 'मुसहरी की क्रांतिकारिता देख अन्य प्रखण्ड भी रंग बदलने लगे हैं' आदि शीर्षक से 'दुम हिलानेवाले (लेखक उन्हें कार्यकर्त्ताओं को प्रोत्साहित करनेवाले भले ही मान लें) रिपोर्टों पर कुछ न कहना ही अच्छा है।

पत्रिकाएँ

क्रान्ति के जोश में बदमाशों ने एक उंगली उठायी तो राजघाट ने जवाब में दो। वह विधायक (विधवालायक) विचारों का 'स्वतंत्र' साप्ताहिक हो, 'इस गाँव में परिपुष्ट विश्व का दर्शन' करानेवाला पाक्षिक हो, अथवा 'इस नाम से कि उस नाम से छपनेवाला' सर्व सेवा संघ का मुख पत्र हो, प्रकाशकों की मातृ-वेदना से गुजर कर देर-सबेर निकलनेवाली इन पत्रिकाओं के ग्राहकों की संख्या का हाल तो यह है कि 'जो छापे वह पढ़े' (जो छापे वह पढ़े)। अब उसमें शायद इतना ही जोड़ना बाकी रह गया है, 'जो पढ़े वह अवश्य छापे'।

मूल्य-परिवर्तन

कुछ लोगों से यह बात सुनी जाती है कि बिहारदान प्राप्ति के समय जो चूक रह गयी थी, वह पुष्टि के समय नहीं

रहनी चाहिए। मैं उन 'राय बहादुरों' की बात नहीं करता जिन्हें दूसरों के हर काम में दोष ही-दोष दीख पड़ता है और जो दूसरों के कामों का स्वयंभू हेडएक्जै-मिनर' बनकर ही अपने को वरिष्ठों की कोटि में रखने की कमर कसे रहते हैं, पर काम के नाम पर करने को जिन्हें कुछ सूझता ही नहीं। मैं बात उन मित्रों की करता हूँ जिन्हें रात-दिन काम में जुटा तो देखता हूँ, पर पुष्टि की गाड़ी एक इन्च भी आगे खिसकती नहीं देखता। पुष्टि के समय प्राप्तिवाली भूल को न दुहराने की बात तो अभी दूर है, पुष्टि कार्य शुरू कैसे हो, अभी तो मुसहरी, सहरसा, झाझा, रूपौली, वैशाली और रीगा में इसकी खोज ही हो रही है।

'पुष्टि कार्य मूल्य-परिवर्तन के लिए अथवा विकास कार्य के लिए' अभी यही बात स्थिर नहीं हो पायी है। मुसहरी में संभव है विकास के धूएँ के बाद मूल्य-परिवर्तन की आग प्रकट हो, पर अभी तो वहाँ आँसू लानेवाला धूआँ ही दीख पड़ता है।

(१) (जयप्रकाशजी + १० कार्यकर्ता) × आठ महीना + सिंचाई की करोड़ों योजना = ½ मुसहरी प्रखंड सहारे पर खड़ा। भीमसेन की यह गदा भाँजना साधारण कार्यकर्ताओं के बस का नहीं।

(२) (फूलपार वर्ष + जाससर्च के ग्रामदान ऐक्शन प्रोग्राम की जीप, ट्रैक्टर, सीमेन्ट, नगद + राममूर्तिजी का मार्गदर्शन) × शिवानन्दजी की प्रतिभा = १/कुछ, झाझा के अन्धों की प्रखंड स्वराज्य सभा।

सोलमार खाँ की इस लाठी से लोक-शक्ति यदि प्रगट हो भी जाए तो सब कार्यकर्ताओं को यह मयस्सर कहाँ?

दाताओं को निभाइशवर गाय के बच्चों और मनुष्य के बच्चों को एक ही साथ पोसनेवाली गोशाला (कहने को पाठशाला) को पितरों का उद्धार करनेवाले गायों के एक कोने में 'सर्वोदय' के नाम पर चलायी जा रही है।

'गुल्लरस्तान बैठा' भी यदि बिहार के राज्य-मंत्री बन जाएँ तो बैद्यनाथ बाबू के सर्वोदय-कार्यकर्ताओं का उद्बोधन करने की पात्रता उनमें आ जाती है। रूपौली प्रखंड में प्रगट हो रही लोकशक्ति का हाल मुझे मालूम नहीं।

वैशाली में लोकशक्ति खोजने को लक्ष्मणदेवजी जब जन-आधारित शिविरों का मंत्र पढ़ते हुए 'पूरब बान्धों पश्चिम बान्धो' कर रहे थे, तब रीगा में रामसेवक शुक्लजी ने एक शिविर जोड़ा, और ले दौड़े। (चार डग चलकर वे चारों खाने चित्त गिर क्यों न जाए?) तब लक्ष्मणदेवजी ने भी चिढ़कर आखिर वैशाली धनुष को कंधे पर उठा ही लिया। धनुष-भंग जब होगा तब होगा, गुरु विश्वामित्र तो काशी से ही ललकार रहे हैं कि 'वाह पट्ठे अब तोड़ा है!'

सब काम हम ही करेंगे!

'गाँवों में ग्रामसभा बनाने के एक काम को छोड़कर देश और दुनिया के जितने अहम सवाल होंगे, उन्हें वे अपने सिरपर उठायेंगे जरूर, उनसे चाहे कुछ भी सीझे-पाके अथवा नहीं।' सर्व सेवा संघ के प्रस्तावों और ललकारों को मैं इसी वृत्ति से देखा करता हूँ।

मित्रो! आप क्रान्ति की रफ्तार खोजनेवाले लोग कहाँ इंजन में पड़ गये हैं। आपकी बातें सुनने समझने की लालसा से आपके बीच आया हूँ। मेरी बातें सुनकर आपकी एक धारणा तो बन ही सकती है। वह यह कि 'इस आदमी को सूरज की सब रोशनी पीली ही दीख पड़ रही है, सबके चेहरे टेढ़े ही दीख पड़ रहे हैं। हो न हो, इस दुर्मुख की आँखों में पीलिया एवं ऐंचापन है।'

लक्ष्मशक्ति से ग्रामदान की पुष्टि का काम कैसे हो, इसकी खोज में १९७० में चौथम प्रखंड में लगा। रणछोड़ बनकर १९७१ में वैशाली के मित्रों के काम में सहायक होने की दृष्टि से लगवा आया तो लक्ष्मणदेव जी का टेबुल छोड़कर अभी गाँव में कदम नहीं रख पाया हूँ।

अब आपकी बात समझने की दृष्टि से अपने मन को जरा झाँका और जो दीखा, उसे आपके सामने रखा। काम क्या हो, कैसे हो, कौन करे, आदि अनन्त प्रश्नों के चक्कर में आप पड़ें, दूसरों के तिनके भर दोषों को भी पहाड़ के समान देखकर अन्त-वेंदना से पीड़ित होकर आत्मचिन्तन के लिए खुले पत्र के माध्यम इकट्ठे हों, पर टीम बनाकर काम कर सकें तो ठीक, अन्यथा अपनी डफली अपने राग को एकला चलो रे कहें। आपकी इस गोष्ठी में बोलने से अधिक सुनने की लालसा से मैं आया हूँ। आप राय स्थिर कर सकें तो वाह-वाह, नहीं कर सकें तो कोई चिन्ता नहीं। क्रान्ति की मुख्य धारा को चौड़ी करने एक शिविर से चलकर दूसरे शिविर में घूमिए और मौज कीजिए, मस्त रहिए।

— हेमनाथ सिंह

ग्रामस्वराज्य के लिए ग्राम-शिक्षण

"मुझसे मिलना हो तो रेढ़ी गाँव के चार स्थानों पर मुझे खोजना होगा। सबेरे स्नान एक चौपाल पर करता हूँ, नाश्ता दूसरी पर, शाम को तीसरी पर, तथा रात को सोने चौथी चौपाल पर जाता हूँ। ऐसा करने से गाँव के चारो पक्ष मुझे अपना ही साथी समझने लगे हैं। लेकिन सुबह नौ बजे से शाम के पाँच बजे तक अक्सर मैं अपने साथियों के साथ आसपास के दूसरे गाँवों में ही घूमता रहता हूँ। एक गाँव में कई-कई बार जाना होता है। क्योंकि जब तक उस गाँव के हर पक्ष के मुख्य व्यक्तियों के घर में स्वराज्य (भोजन का निमन्त्रण) नहीं होता, तब तक उस गाँव में लोग पकड़ में ही नहीं आते हैं।' ग्रामस्वराज्य विद्यालय (जंगम) में प्रशिक्षित एक कार्यकर्ता के गाँव में मैं गया तो उसने उपरोक्त विवरण पेश किया। ऐसे चौदह कार्यकर्ता सहारनपुर, आगरा, अलीगढ़ और आजमगढ़ जिलों में ग्रामस्वराज्य के लिए लोक-शिक्षण का काम कर रहे हैं।

इन सबके सामने पहली अड़चन है गाँव का टुकड़ों में बँटा होना। इस अड़चन को दूर करने के लिये कार्यकर्ता की तटस्थ भूमिका बहुत जरूरी है। रेढ़ी गाँव में काम करनेवाले कार्यकर्ता ने हर पक्ष के लोगों के यहाँ अपना अड्डा बना कर यह अड़चन दूर करने की अच्छी कोशिश की है। इनका नाम सुदर्शन मास्टर है। मास्टर ने रेढ़ी गाँव को केन्द्र बनाकर आस-पास के दस-बारह गाँवों में लोक-शिक्षण का काम शुरू किया है। इन्होंने जब रेढ़ी गाँव को केन्द्र के रूप में चुना तो हमारे पुराने साथियों ने कहा था कि "यह गाँव बहुत मुश्किल है, यहाँ आपस में बहुत संघर्ष है, तथा और भी बहुत सी बुरी आदतों का शिकार है।" यह चेतावनी मिलने के बाद भी मास्टर ने वही गाँव चुना और काफी सोच-विचार के बाद अपनी तटस्थ भूमिका बनाये रखने का एक रास्ता विभिन्न पक्षों के यहाँ अड्डा बनाकर रहने का निकाला। अब रेढ़ी गाँव में मास्टर हरेक के अपने आदमी हैं। गाँव के हर पार्टी वाले उन पर विश्वास करते हैं। जिस घर में मास्टर को एक बार भोजन का निमन्त्रण मिल जाता है उसको वे उस घर में 'स्वराज्य' हो गया ऐसा कहते हैं; क्योंकि इससे विचार-प्रचार के लिये अन्दर तक प्रवेश मिलता है। इन तीन महीनों में मास्टर ने अपने खाने की व्यवस्था के लिये एक बार भी किसी से नहीं कहा, और न ही स्वयं खाना पकाया। आरम्भ में काफी दिक्कत आयी, अब भी कभी-कभी भूखा रह जाना पड़ता है; लेकिन वे अपनी धुन से काम में लगे ही रहते हैं। वे मानते हैं कि यदि क्षेत्र में वहाँ के नागरिकों ने हमारे भोजन की भी चिन्ता न की तो फिर हमारी बात ही कौन सुनेगा और मानेगा? मास्टर तथा इनके साथियों को जब देखो तब किसी न किसी काम में व्यस्त पाये जायेंगे। वे कभी किसी किसान का चारा कटवाते नजर आयेंगे तो कभी किसी बच्चे को पढ़ाते नजर आयेंगे, कभी ग्रामीणों के साथ ग्रामसफाई के कामों में लगे होंगे, तो कभी गाँव के मुखिया लोगों के साथ गम्भीर चर्चा में व्यस्त होंगे। उनके थैले में सर्वोदय-साहित्य भी रहता है। इस प्रकार सेवा, शिक्षण और विचार-प्रचार के त्रिविध कार्यक्रमों के द्वारा ग्रामस्वराज्य के विचार को घर-घर पहुँचा कर लोक-जागृति और लोक-सम्मति खड़ी करने का काम ये युवक कार्यकर्ता कर रहे हैं।

ग्रामस्वराज्य की स्थापना का पहला काम है गाँव एक बने और दूसरा काम गाँव नेक बने। मास्टर ने रेढ़ी गाँव को एक बनाने के शिक्षण के साथ-साथ नेक बनाने का शिक्षण भी देना शुरू कर दिया है। सब पार्टी के युवकों को एक जगह लाने का काम शुरू हो चुका है। अब गाँव से शराब-उन्मूलन का काम भी शुरू हो रहा है। प्रमुख और अधिक शराब पीनेवाले व्यक्तियों को पहले पकड़ा है। बड़े प्यार से उनकी शराब छुड़ाने का शिक्षण शुरू हो गया है। धीरे-धीरे सिगरेट तथा हुक्का छुड़ाने का विचार भी गाँव में प्रवेश कर रहा है। कई व्यक्तियों ने शराब और सिगरेट छोड़ भी दिया है। गाँव को सुन्दर बनाने की भी चर्चा शुरू की है। गाँव के गली-कूचों की सफाई गाँववाले मिलकर करें यह विचार जोरों से गाँव में चल रहा है।

आगे की योजना बताते हुए मास्टर ने कहा कि "अब युवकों का एक शिविर लेकर युवक-शक्ति को संगठित और प्रशिक्षित करना है। और फिर उसके बाद इस लोक-शक्ति से ग्रामस्वराज्य-स्थापना के लिए लोक-अभिक्रम और सम्मति-शक्ति के अधिष्ठान का काम शुरू हो जायेगा।"

ऐसे ही २२ कार्यकर्ताओं को श्री राजाराम भाई द्वारा संचालित ग्राम-स्वराज्य विद्यालय (जंगम) में शिक्षण दिया गया था। यह विद्यालय नये कार्यकर्ता प्राप्त करने के लिए एक प्रयोग के रूप में शुरू हुआ था। जो कार्यकर्ता शिक्षित किये गये उनमें से १४ अपनी-अपनी नई मंजिल की खोज में मजबूती और उत्साह से डटे हैं।

—नरेन्द्र

गांधी आश्रम, गढ़ रोड, मेरठ

मध्यप्रदेश में भूदान वितरण

मध्यप्रदेश भूदान-यज्ञ बोर्ड द्वारा प्रसारित एक जानकारी के अनुसार गत जनवरी महीने में भूदान में प्राप्त भूमि में से बोर्ड द्वारा १,३२८,०६ एकड़ भूमि ३०६ परिवारों में वितरित की गयी। भूमि पाने वालों में ६५ हरिजन, १४८ आदिवासी, ४ पिछड़ी जाति के और ८९ सवर्ण भूमिहीन हैं।

किसानों का सत्याग्रह

गत दिनांक ७-१२-७० को धान आन्दोलन के सिलसिले में कमिश्नर के सम्मुख २०० किसानों के साथ प्रदर्शन में सम्मिलित हुआ। साथ ही महाराष्ट्र प्रदेश के साथ धान की मुक्त आवाजाही हो, इसके लिए छत्तीसगढ़ खेतिहर संघ द्वारा प्रस्ताव पास करवाया। इसके लिए अपने क्षेत्र के विधायकों को राजी करने के लिए निश्चय किया गया। यह भी तय हुआ कि जो विधायक किसानों की माँग को स्वीकार न करें उनका घेराव किया जाय। साथ ही उनके क्षेत्र में उनके इस असहयोग की जानकारी देनेवाला पर्चा बाँटा जाय।

उपर्युक्त प्रस्ताव के अनुसार मैं अपने क्षेत्र के विधायक के पास किसानों के इस पेट के सवाल पर सहयोग माँगने गया किन्तु उन्होंने कहा कि मैं इस कार्य में सहयोग नहीं दे सकता क्योंकि मैं कांग्रेस अनुशासन में बँधा हूँ। इसलिए इस आशय का पर्चा छपवाकर जनता में बाँटा गया। और इस बात का प्रचार किया गया कि उनको किसानों के वोट की चिन्ता नहीं, बल्कि कांग्रेसी टिकट की चिन्ता है। इसी तरह जिले के १७ विधायकों से मुलाकात की गयी। सबने इस कार्य में सहयोग करने में असमर्थता बतलायी। इस प्रकार जनता को व्यापक पैमाने पर अपने प्रतिनिधियों को परखने का अवसर मिला।

दिनांक १-१-७१ से गंज में व्यापारी-अधिकारी के खिलाफ सत्याग्रह किया गया। गंज में जो कम भाव में धान खरीदता था, उसे नहीं खरीदने दिया जाता था। साथ ही सफरी देशी का भाव ६१ रु० प्रतिक्विंटल के स्थान पर ६७ रु० कराने के लिए भी आन्दोलन किया गया, जिसे सरकार ने मान लिया। दिनांक ७-१-७१ को इसका ऐलान किया गया। साथ ही कम भाव में न बेचने का संकल्प प्रस्ताव ८० गाँवों में घूमकर स्वीकृत करवाया गया। —नन्दकुमार

(सर्व सेवा संघ के मंत्री को लिखे पत्र से)

नासिक में अखिल भारतीय सर्वोदय सम्मेलन

सर्वोदय समाज की ओर से आयोजित १९ वाँ अखिल भारतीय सर्वोदय सम्मेलन नासिक (महाराष्ट्र) में ८-९ और १० मई (पूर्व प्रकाशित समाचार में भूल से ७, ८, ९ मई छप गया था) को सम्पन्न होगा। इस सम्मेलन में पूरे देश के सर्वोदय कार्यकर्ता, ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य आन्दोलन के प्रतिनिधि और गांधी-विचार में आस्था रखनेवाले लोग भाग लेंगे। सम्मेलन में ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य आन्दोलन की प्रगति का सिंहावलोकन करने के साथ साथ अन्य रचनात्मक कार्यक्रमों जैसे—नयी तालीम, हरिजनोद्धार, खादी, ग्रामोद्योग, नशाबन्दी आदि आन्दोलनों के भविष्य के बारे में भी विस्तार से चर्चा होगी।

भारतीय रेलवे की ओर से रियायती टिकट दिये जाने की व्यवस्था की जा रही है। सर्वोदय सम्मेलन में भाग लेने के इच्छुक व्यक्तियों से निवेदन है कि वे रेलवे टिकट के कन्सेशन-फार्म प्राप्त करने के सम्बन्ध में मंत्री, सर्वोदय समाज, समन्वय आश्रम, बोधगया से सम्पर्क स्थापित करें।

—द्वारको सुन्दरानी
मंत्री

सर्वोदय-साहित्य प्रसार की एक करोड़ की योजना

सर्व सेवा संघ की प्रबन्ध समिति ने प्रकाशन-विभाग की एक योजना को अपनी सम्मति दी है, जिसके अनुसार अगले तीन वर्षों में एक करोड़ रुपये का सर्वोदय साहित्य घर-घर पहुँचाने का प्रयास किया जायगा।

योजना यह है कि भारत के समस्त खादी-भण्डारों पर ग्राहकों को निश्चित मूल्य की खादी पर कुछ प्रतिशत तक का साहित्य रिबेट (छूट) के रूप में उपलब्ध हो सके। इसी तरह भारत के समस्त विश्वविद्यालयों के स्नातकों एवं अन्य छात्रों तक भी यह साहित्य पहुँचाना है।

गांधी के देश में गांधी-विचार की जानकारी हर व्यक्ति को होना जरूरी है और इसलिए सर्व सेवा संघ का प्रयास रहेगा कि वह देश की सभी भाषाओं में जीवन को ऊँचा उठानेवाला साहित्य प्रकाशित करके उसका प्रसार करे। इस कार्य में प्रमुख रचनात्मक संस्थाओं का भी सहयोग प्राप्त किया जायेगा।

हिंसक भीड़ को समझाया नहीं जा सकता। इसको भड़काया जा चुका है। कोई भी इसके क्रोध का शिकार हो सकता है।
हिंसा की कोई सीमा नहीं है।

पर आप भीड़ से दूर रहिये . . .
भीड़ को भड़काने वाले से दूर रहिये।
उसकी बातों को सुनने से इनकार कीजिए।

साम्प्रदायिकता, प्रान्तीयता, राजनैतिक मत . . .
इनमें से कोई भी जान-माल के विनाश को उचित नहीं ठहरा सकता।

आप यह कर सकते हैं :

मुहल्ला समितियाँ बनाइये
हानिकारक अफवाहों को रोकिये
अपने पड़ोसी को मित्र बनाइये
अपने बच्चे को सिखाइये,
सभी मनुष्य बराबर हैं।
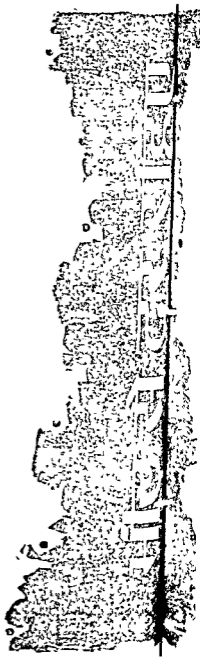
'एखन विप्लव'

हिंसा के पंजों में जकड़े हुए कलकत्ते के गले से विवश-सी आवाज आ रही है—'एखन विप्लव'। चाहे आकाश छूती इमारतें हों, या कूड़े-कचरे की ढेर से होड़ लेती हुई झोपड़ियाँ, कलकत्ते और उसके आसपास हर जगह से एक ही पुकार है—'एखन विप्लव'। हर नागरिक आतंक के घुटन में जीने की कोशिश करता हुआ शायद कह रहा है—'एखन विप्लव'। कलकत्ता की हर आँख नेताओं के या फिल्म-अभिनेताओं के कुशल-अकुशल अभिनय में भी शायद यही देख रही है—'एखन विप्लव'—अभी क्रान्ति।

लेकिन अगर किसीसे पूछिये कि विप्लव यानी क्या? विप्लव किसके लिये? विप्लव किनके द्वारा? तो इन प्रश्नों के जवाब में शायद एक ही उत्तर मिले—'नक्साल…!' नारों से रंगी हुई दीवालें नागरिकों को यह समझा रही हैं कि सत्ता बन्दूक की नली में से पैदा होती है और बन्दूक की आवाज, बम के धड़ाके, छूरे के प्रहार से आहत शरीर से बहता गरम लहू, सब यह बता रहे हैं कि बन्दूक, बम और छूरे किनके हाथों में हैं! और, इनकी ताकत से जो सत्ता पैदा होगी वह किसकी होगी? सड़कों पर दौड़ती हथियार-बन्द पुलिस और फौज की गाड़ियाँ भी हर क्षण यही याद दिलाती हैं कि सत्ता यानी बन्दूक की नली। जनसत्ता की याद दिलाने वाले चुनाव की पोस्टरबाजी और नारेबाजी के बावजूद कलकत्ता में यही दिखता है कि 'जन' को एक ही काम करना है—इस बन्दूक की सत्ता का बोझ ढोने के लिए अपनी गरदन दे देने का।

कलकत्ता के इस रौद्र और साथ-साथ आतंकित चेहरे पर इन दोनों से भिन्न शायद विस्मय का भाव क्षण-दो-क्षण को उभर आता है सर्वोदय की शांति की कुछ बातें सुनकर या अखबारों में पढ़कर। गत ३० जनवरी को कलकत्ते की सड़कों पर एक हजार के करीब मौन, शांत परन्तु दृढ़ कदमों से आगे बढ़ रहे निर्भीक शान्ति चाहनेवाले लोगों के उस समूह को गुजरते हुए जिन लोगों ने देखा, वे विस्फारित नेत्रों से पदयात्रियों के घोषफलकों को पढ़ते हुए अपने आपसे या अपने करीब के किसी अन्य से पूछ रहे थे, 'एइ शांतिटा जिनिस की?' एक 'झालदार मूड़ी' बेच रहा खोमचेवाला अपने ग्राहक को समझाता रहा है 'एइ तो सर्वोदय जुलूस, गांधी विनोबाजीर मानुष'।

इतिहास बताता है कि विप्लवी बंगाल को गांधी की अहिंसा उतनी दूर तक आकर्षित नहीं कर सकी, जितनी कि भारत के अन्य प्रदेशों को। बंगाल की अति भावुकता और महाकाली की अनन्य भक्ति से भरा हुआ हृदय विप्लव के लिये अहिंसा की शक्ति को जल्दी कबूल नहीं कर पाता। लेकिन उसकी गतिशीलता देश के जीवन में हिलोरें पैदा करती रही है, आज भी कर रही है।

हावड़ा स्टेशन से उतरकर प्रथम प० बंगाल सर्वोदय सम्मेलन के स्थल की ओर जाते हुए कलकत्ता की विशिष्टताओं ने मुझे भी काफी भावुक बना दिया है, ऐसा महसूस कर रहा हूँ। रात के पौने नौ बजे हावड़ा-ब्रिज से थोड़ी दूर आगे बढ़ने पर ऐसा लगता है कि सड़कों का मेला अब बिलकुल उखड़ने के करीब है। कारें तो भाग ही रही हैं, आदमियों के जत्थे भी भागते दिख रहे हैं। केवल बेफिक्री के साथ पड़े हुए कोई दिखते हैं तो रिक्शे पर सवारियाँ बिठाकर मनुष्य होते हुए भी पशु की तरह दौड़नेवाले ये बेबस इन्सान, या फिर फुटपाथ पर जीने और मरने वाले, हमारी सभ्यता और संस्कृति पर व्यंग बनकर छाये हुए निराश्रय, निराधार इन्सानों के छोटे या बड़े समूह।

कलकत्ता के बारे में अखबारों में रोज पढ़ने को मिलता है, और कलकत्ता से दूर रहते हुए यह महसूस होता है कि कलकत्ता यानी हर गली में या उसके नुक्कड़ पर हथगोलों के धमाके या छूरे का प्रहार करने को प्रस्तुत खूनी पंजे। मैं सहमा हुआ १२ और १५ वर्ष की उम्र के दिख रहे दो लड़कों से पूछता हूँ 'कन्या विद्यालय कहाँ है?' वे कहते हैं, 'करीब ही है। आइए आपको पहुँचा दें।' मैं उनके पीछे हो लेता हूँ। लेकिन एक सूनी गली से गुजरते हुए दिल धड़क रहा है, 'कहीं मेरे खादी के कपड़े…।' लेकिन मेरे मन को अधिक आतंकित होने का वक्त नहीं मिलता। ये लड़के कहते हैं, 'वो रहा सामने कन्या विद्यालय, वहीं सर्वोदय हो रहा है।'

स्कूल के अहाते में प्रवेश करने पर करीब तीन घंटे के बाद कलकत्ते में सहज जिन्दगी का दर्शन होता है। रात के दस बजे हैं। सम्मेलन के कार्यालय में लोग चिन्तित हैं कि अपेक्षा से लगभग दूनी संख्या में आये प्रतिनिधियों को ठहराया कहाँ जाय? कार्यालय के एक भाई मुझे बताते हैं, 'हमने सोचा था कि एक तो कलकत्ता का आतंक, दूसरे जिले-जिले से पदयात्रा करते हुए प्रतिनिधियों के पहुँचने की बात, आखिर तीन साढ़े तीन सौ से ज्यादा लोग क्या आयेंगे? लेकिन यहाँ तो संख्या सात सौ के करीब पहुँचनेवाली है।' व्यवस्था करनेवालों की परेशानी उनके चेहरों पर झलक रही है, लेकिन इसके बावजूद पूरे वातावरण में जो उमंग, अद्भुत स्फूर्ति है उसे देखकर प्रवास की थकान से बेहद बोझिल मेरी आँखों में ताजगी आ जाती है। रात के बारह बजे तक बैठा-बैठा मैं इन्तजार कर रहा हूँ कि मेरे ठहरने की कोई व्यवस्था हो जाय तो वहाँ जाऊँ। प्रतीक्षा की इस अवधि में प्रेरक दृश्यों का अवलोकन भी हो रहा है: किसी देहात के स्कूल से आये स्वयंसेवक लड़के भोजनालय के पंडाल में बाँस की चटाइयाँ बिछाकर लेटे खुशी-खुशी दिन भर की थकान उतार रहे हैं, उन्हें व्यवस्था से कोई शिकायत नहीं है।...शायद स्कूल की व्यवस्था से सम्बन्धित कोई सज्जन कार्यालय को

बेंच पर रात बिताने की योजना बना रहे हैं। कोई उनसे कहता है, 'घर क्यों नहीं जाते?' जवाब देते हैं, 'हमारे विद्यालय में मेहमान ठहरे हैं। अगर मरने का अवसर आयेगा तो इस अच्छे काम में पहले मैं मरूँगा।'...और जब मैं अपने दो मार्गदर्शक साथियों के साथ कलकत्ता की सूनी सड़क पर बारह बजे रात को अपने निवास-स्थान की ओर जा रहा हूँ, तो मन में कहीं भी भय का कोई स्पर्श महसूस नहीं होता, व्यवस्था की कठिनाई नहीं खलती।

× × ×

कलकत्ता विश्वविद्यालय के इन्स्टीट्यूट हाल में जितने लोग समा सकते हैं भरे हुए हैं। बंगाल के सांस्कृतिक संस्कार की झलक पूरे आयोजन में दिखाई पड़ रही है। प्रतिनिधियों में एक नयी चेतना और दर्शकों में एक नयी जिज्ञासा का भाव हर क्षण महसूस हो रहा है। सम्मेलन के अध्यक्ष जयप्रकाशजी औपचारिक कार्यवाहियों के पूरा होने के बाद अपने प्रथम अध्यक्षीय भाषण में कहते हैं: 'राजनैतिक हत्याओं से कभी क्रान्ति नहीं हो सकती।'' बंगाल में जो कुछ हो रहा है, उसे न तो मार्क्सवाद कहा जा सकता है, न लेनिनवाद, न माओवाद।'' लेकिन स्वराज्य के बाद जिस तरह के लोकतांत्रिक ढाँचे का विकास हमारे देश में हुआ है, उससे भी यहाँ की समस्याओं का हल नहीं होनेवाला है, यह स्पष्ट है। इसीलिए आज एक नयी क्रान्ति करनी है, वैसी क्रान्ति, जिसका संकेत गांधीजी ने किया था।'

यह साफ दीख रहा है कि बंगाली चेहरों पर गांधी का नाम सुनकर अब आड़े-तिरछे तनाव नहीं आ रहे हैं। मैं मन ही मन सोच रहा हूँ कि जो लोग व्यंग करते रहे हैं—'मजबूरी का नाम महात्मा गांधी है', उन्हें थोड़ा-सा संशोधन कर लेना चाहिए कि 'मजबूरी की परिस्थिति में से पैदा हुई अपराजेय शक्ति का नाम महात्मा गांधी है।' आशा बँधती है कि बंगाल गांधी की उस शक्ति को प्रकट करेगा।

सम्मेलन के दूसरे दिन की पहली बैठक की चर्चा का मुख्य विषय है हिंसा का मुकाबला। इस विषय के प्रमुख वक्ता श्री धीरेन्द्र मजूमदार का यह विश्लेषण है कि 'हिंसा चाहे विप्लव के उद्घोष के साथ हो या किसी और नारे के साथ, वह जन-मुक्ति का माध्यम हरगिज नहीं बन सकती। क्योंकि हिंसा की संगठित शक्ति का नियंत्रण जन-सामान्य के हाथ में रह ही नहीं सकता। जन-मुक्ति के लिए एक ही अजेय शक्ति है अहिंसा की। क्योंकि वह सामान्य मनुष्यों की संगठित संकल्प-शक्ति के रूप में प्रकट होती है।' श्री धीरेन्द्र मजूमदार के भाषण के पूर्व श्रीमती मैत्रेयी देवी हिंसा के संदर्भ में अहिंसा की शक्ति का सुचिंतित विचार पेश कर चुकी हैं।

ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य विषयक चर्चा में पश्चिम बंगाल की नयी पीढ़ी के उदीयमान प्रतिभासम्पन्न कार्यकर्ता साथी श्री शैलेश कुमार बंद्योपाध्याय ग्रामस्वराज्य की बुनियाद पर शोषण, उत्पीड़न और एकाधिकारवाद से मुक्त समाज रचना की रूपरेखा प्रस्तुत करते हैं। तीसरे पहर बंगाल के वयोवृद्ध सर्वोदय नेता श्री चारुचन्द्र भंडारी केन्द्रित उद्योगवाद और यंत्रीकरण के विध्वंसात्मक देनों की चर्चा करते हुए कहते हैं, कि 'देश और दुनिया को आज नहीं तो कल गांधी-अर्थविचार को अपनाना ही होगा।'

इसी बैठक में युवा-असंतोष विषयक चर्चा की शुरुआत करते हुए श्री नारायण देसाई कहते हैं 'यह विषय बूढ़ों की चिंता का है। मेरी चिंता का विषय तो यह है कि युवा असंतोष जितना और जैसा चाहिए उसकी तुलना में इतना कम क्यों है?'' इसीलिये श्री नारायण देसाई शिक्षा में क्रान्ति का विचार प्रस्तुत करते हुए यह विश्लेषण करते हैं कि शिक्षा में 'क्रान्ति क्यों, क्रान्ति कैसे? और शिक्षा में क्रान्ति के बाद क्या?' इन तीनों मुद्दों पर प्रेरक विचार प्रकट करते हुए समग्र क्रान्ति के संदर्भ में शिक्षा में क्रान्ति के लिये बंगाल के तरुणों का आह्वान भी वे करते हैं। श्री क्षितीश राय चौधरी ने श्री नारायण देसाई द्वारा प्रस्तुत विचारों का समर्थन करते हुए यह विचार पुष्ट करते हैं कि 'वास्तविक क्रान्ति शैक्षिक प्रक्रिया से ही संभव होगी।'

आखिरी दिन की अंतिम कार्यवाही के पूर्व अलग-अलग गोष्ठियों में चर्चाएँ हो रही हैं। इनमें सबसे अधिक दिलचस्प और आकर्षक गोष्ठी है तरुणों की। सभी चर्चाओं के सारतत्त्वों का समावेश करते हुए सम्मेलन की ओर से जो निवेदन प्रस्तुत किया गया है, वह यद्यपि काफी लम्बा है लेकिन प्रेरक और उद्बोधक है। (देखें 'भूदान-यज्ञ' ८ मार्च के पृष्ठ २४६ पर।)

अपने समापन भाषण में श्री जयप्रकाशजी कहते हैं 'बंगाल का सर्वोदय आंदोलन अब वयस्क हो गया है। बहुत ही उपयुक्त समय पर बंगाल की सभी रचनात्मक संस्थाओं के लोग संगठित रूप में इस सम्मेलन में भाग ले रहे हैं। बंगाल में चाहे जिस दल का मंत्रिमंडल रहा हो, पिछले दिनों में बंगाल के गाँवों की भयंकर उपेक्षा हुई है। सभी दलों का ध्यान कलकत्ता केन्द्रित ही रहा है। यही कारण है एक तरफ जहाँ हरियाणा में शत-प्रतिशत बिजली पहुँच चुकी है, बंगाल में अति औद्योगिक नगर कलकत्ता के बावजूद केवल तीन प्रतिशत बिजली यहाँ के गाँवों में पहुँच सकी है।'''बंगाल में जो अशान्ति है, जो हिंसा फूट पड़ी है, उससे मूल समस्या का समाधान नहीं होनेवाला है। आतंक और अराजकता से क्रान्ति नहीं होती, यह एक ऐतिहासिक तथ्य है।' श्री जयप्रकाशजी कलकत्ते शांति-पदयात्रा का जिक्र करते हुए कहते हैं, 'इस पदयात्रा के परिणामस्वरूप जो संभावनाएँ प्रकट हुई हैं वे यहाँ के सर्वोदय-आन्दोलन की नयी आशाएँ हैं। कलकत्ते में 'नेबर हुड' कायम करके छोटी-छोटी इकाइयों के रूप में संगठित जन शक्ति विकसित करने का काम होना चाहिए।' बंगाल के आतंक की चर्चा करते हुए वे कहते हैं, 'इस दृढ़ संकल्प के साथ हमारे कदम आगे बढ़ें कि शायद हिंसावादी मित्र अहिंसा के बढ़ते

भूदान-यज्ञ १५-३-'७१ लाइसेंस नं० ए ३४ [पहले से डाक-व्यय दिए बिना भेजने की स्वीकृति प्राप्त] रजिस्टर्ड नं० एल. २५४

प्रभाव को देखकर हमें अपना निशाना बना सकते हैं। हमें बलिदान की तैयारी के साथ आगे कदम बढ़ाना है। शायद इस बलिदान से हमारी वह आत्म-शक्ति प्रकट होगी, जो देश की गरीब जनता की अजेय शक्ति बनेगी।' एक नयी आशा के साथ श्री जयप्रकाशजी कार्यकर्ताओं को सम्मेलन से लौटकर काम में लगने की प्रेरणा देते हैं। जयप्रकाशजी यह भी घोषणा करते हैं कि १८ अप्रैल के बाद प० बंगाल के लोग उनका जितना समय यहाँ के काम के लिए चाहेंगे, वे देंगे।

× × ×

इस सम्मेलन की परिसमाप्ति का आखिरी कार्यक्रम है सम्मेलन-स्थल से शहीद-मीनार तक शांति जुलूस के रूप में जाकर वहाँ आयोजित जन-सभा में भाग लेने का। लगभग सात सौ बच्चे, बूढ़े, जवान-स्त्री-पुरुषों का यह निर्भय और शांतिपूर्ण जुलूस शाम के व्यस्त कलकत्ते की सड़कों से गुजरनेवाले लोगों के लिए विस्मयकारक है। हम देख रहे हैं कि चौराहों पर जुलूस के कारण दूर-दूर तक ट्रैफिक जाम हो जाने के बावजूद गाड़ियों की खिड़कियों से झाँकते चेहरों पर झल्लाहट नहीं, बल्कि उत्सुकता है।

शहीद मीनार के सानिध्य में आयोजित जनसभा गोधूली वेला में शुरू हुई है। कलकत्ता अँधेरे में डूब रहा है; लेकिन इससे अधिक महत्त्व की बात यह है कि एक नये प्रभात के आगमन का आश्वासन देकर डूब रहा है। यही आश्वासन तो सृष्टि की चिरन्तनता का राज है। इस प्रकाश और अंधकार की संधि वेला में सभा के मंच से वृद्ध चारुदा ललकारते हैं, 'भारतीय समस्याओं का समाधान हिंसा से हरगिज नहीं हो सकता।' श्रीनारायण देसाई कहते हैं, 'क्रांतिकारी कभी पैगम्बरवादी नहीं होता। हिंसक क्रांति प्रतिक्रांति की अनिवार्यता लिये होती है। आशा है कि पश्चिम बंगाल के क्षितिज में एक नयी क्रांति का अभ्युदय होगा, जो प्रतिक्रांति से सर्वथा मुक्त होगी और सारे देश को आलोकित करेगी।"

मुख्य वक्ता जयप्रकाशजी कहते हैं, 'आज जनता उस बिन्दु पर खड़ी है, जहाँ उसे तय करना है कि वह वास्तविक जनसत्ता स्थापित करेगी या अपने ऊपर किसी संगठित समूह या दल को सत्ता लदने देगी। सर्वोदय आन्दोलन शक्ति को सामान्य-जन के हाथों में देना चाहता है, और चाहता है कि उद्योग में, राजनीति में और हर-तरह के संगठनों में जनता की प्रत्यक्ष भागीदारी हो। सर्वोदय आन्दोलन मौजूदा राजनैतिक ढाँचे को बदलकर प्रत्यक्ष भागीदारीवाली, ग्रामस्वराज्य की बुनियाद पर, लोकनीति की रचना करना चाहता है।' इस लोकनीतिक संरचना की समग्र रूपरेखा प्रस्तुत करते हुए जयप्रकाशजी आगे कहते हैं, 'श्री हेमन्त बाबू जैसे महान् देशभक्त और लोकप्रिय नेता की हत्या के बाद यहाँ के लोगों को हिंसा का असली रूप दिखाई पड़ा है। यहाँ की जनता तय करे कि क्या वह वर्तमान लोकतांत्रिक ढाँचे को तोड़कर, उसकी स्वाधीनता छीनकर, जो लोग सत्ता पर अधिकार करना चाहते हैं, उन्हें ऐसा करने देगी?' जयप्रकाशजी का कहना है कि बंगाल में चुनाव स्थगित नहीं होना चाहिए और यहाँ की जनता को अपना मत उक्त तथ्यों को सामने रख कर देना चाहिये।

अपने भाषण में जयप्रकाशजी सर्वोदयवालों की मुसीबत का उल्लेख करते हुए कहते हैं, 'हमें लोग कांग्रेसी समझते रहे हैं। क्योंकि गांधीजी के जाने बाद हम खादी ग्रामोद्योग का काम करते रहे, और कांग्रेस के लोग भी खादी पहनते रहे। लेकिन हम यह स्पष्ट कर देना चाहते हैं कि यथास्थिति को बनाये रखने के लिये नहीं बल्कि उसको पूरी तरह बदलने के लिये हम काम कर रहे हैं।

बिना किसी व्यवधान के कुछ नयी उपलब्धियों के साथ पश्चिम बंगाल का यह प्रथम सर्वोदय सम्मेलन सम्पन्न हो गया है, और वहाँ से वापस लौटते समय आतंकित कलकत्ता की तस्वीर मेरी निगाहों में कुछ बदल-सी गयी दीखती है। ऐसा लगता है कि यथास्थिति से ऊबे हुए बंगाल को प्रतिक्रांति से मुक्त क्रान्ति का कोई विकल्प दिखायी देगा, तो वह उसे अवश्य अपनायेगा, और उसी समर्पण के साथ अपनायेगा, जो समर्पण आज उसमें माओ, चे-ग्वेवारा के सूत्रों पर चलने के लिए है। शायद इतिहास की वह घड़ी करीब आ रही है। सर्वोदय आन्दोलन बंगाल की आत्मा की इस छटपटाहट का स्वागत करता है : 'एखन विप्लव'।

—रामचन्द्र राही

आवश्यक सूचना

होली के अवकाश के कारण भूदान-यज्ञ का २२ मार्च का अंक प्रकाशित नहीं होगा। २९ मार्च का अंक संयुक्त होगा।

इस अंक में

शोक-समाचार

१० मार्च की सायंकाल आकाशवाणी से प्राप्त सूचनानुसार सर्वोदय परिवार के बुजुर्ग श्री अप्पासाहब पटवर्धन का देहावसान हो गया। दिवंगत आत्मा को सर्वोदय-परिवार की श्रद्धांजलि।
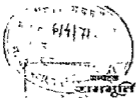
वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २७ पै०), विदेश में २२ रु०; या २५ शिलिंग या ३ डालर।

एक प्रति का मूल्य २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं मनोहर प्रेस, वाराणसी में मुद्रित

सम्पादक
राममूर्ति

वर्ष : १७ सोमवार
अंक : २५-२६ २९ मार्च, '७१

पत्रिका विभाग
सर्व सेवा संघ, राजघाट, वाराणसी-१
फोन : ५४२५१ तार : सर्वसेवा

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र
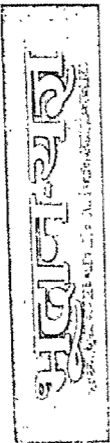
प्रतीकार की अजेय शक्ति

निःशस्त्र प्रतीकार के मार्ग की खोज करने की एक ऐतिहासिक आवश्यकता निर्माण हुई और उसमें से महात्मा गांधी आये। यों तो उनकी बात लाखों लोग न मानते, बहुत होता तो उनको कुछ जैसे दो-चार चेले मिल जाते, लेकिन यह तो सारे देश में एक विचार फैला और उसका टूटा-फूटा अमल भी हुआ। अंग्रेजों द्वारा हथियार छीन लिये जाने से एक विशिष्ट परिस्थिति निर्माण हुई। इससे गांधीजी की अहिंसा की बात को जमाने की नींव का बल मिला।

यहाँ अंग्रेजों का राज्य शक्तिशाली था, उनकी पकड़ जोरदार थी। उनका मुकाबिला कैसे किया जाय? इसकी अहिंसक युक्ति गांधीजी ने सिखायी। उन्होंने कहा कि, "हम निर्वैर भी रहेंगे और सामना भी करेंगे।" दुनिया को यह एक नया विचार मिला। इसमें निर्वैरता और प्रतीकारवृत्ति दोनों मिल गये। परिणामस्वरूप समाज के लिए एक मार्ग सूझा। निर्वैरता से प्रतीकार की शक्ति बढ़ी और प्रतीकार से निर्वैरता की। गांधीजी ने हमें ऐसी युक्ति बतायी कि सारे बड़े-बड़े शस्त्र बेकार हो गये। युक्ति यह कि अंग्रेजों को राज्य चलाने के लिए हजारों आदमियों का और करोड़ों-करोड़ जनता का सहयोग जरूरी है, वह सहयोग देना बन्द कर दिया जाय। ऐसा करें तो चाहे जितने शक्तिशाली अंग्रेजों का कुछ न चलेगा। हम सहयोग न देंगे तो वे हमें मारेंगे या सतायेंगे, फिर भी हम उन्हें सहयोग नहीं देंगे। मर जायेंगे, लेकिन आपकी मर्जी के मुताबिक काम नहीं करेंगे। ऐसे असहयोग की युक्ति गांधीजी ने सिखायी।

(गांधी : जैसा देखा-समझा पृष्ठ ८१, ८४)

—विनोबा

• विद्रोह की पृष्ठभूमि • व्यक्तिगत साधना और समाज-सेवा •

विद्रोह की पृष्ठभूमि

पूर्वी पाकिस्तान के विद्रोह को समझने के लिए और भविष्य में परिस्थिति के विकास का अन्दाजा लगाने के लिये इसकी ऐतिहासिक पृष्ठभूमि और वहाँ के समाज की मौजूदा बनावट को समझना अनिवार्य है।

पूर्वी बंगाल, जो पूर्वी पाकिस्तान कहलाता है, पाकिस्तान के पश्चिमी भाग से १००० मील दूर है। इन दोनों भागों को भारत जुदा करता है। पूर्वी बंगाल में पाकिस्तान के लिए संघर्ष वास्तव में मुस्लिम किसानों का, जो बहुमत में थे, हिन्दू जमींनदारों और महाजनों के विरुद्ध था। इसे मुस्लिम लीग के नेताओं ने अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिये इस्तेमाल किया था। इसलिये पूर्वी और पश्चिमी पाकिस्तान के बीच एक ही बात समान है—इस्लाम धर्म, वरना पूर्वी बंगाल की सांस्कृतिक और क्रान्तिकारी देशभक्ति की परम्परायें और भाषा पश्चिमी पाकिस्तान से बिलकुल भिन्न है। इन दोनों भागों के बीच कभी कोई सम्बन्ध नहीं रहा। जो सम्बन्ध था उसे फौज ने और भी कमजोर कर दिया। आर्थिक दायरे में केवल गैर-बंगाली व्यापारी हैं, जो करोड़पति बने हैं, और राजनैतिक तौर पर फौज और नौकरशाही ने इस बात का सदा ध्यान रखा है कि बंगाल का बहुमत राष्ट्रीय पैमाने पर प्रतिनिधित्व न पाये। दिसम्बर १९७० के चुनाव में शेख मुजीबुर्रहमान के दल अवामी लीग की जीत ने परिवर्तन की सम्भावनायें रोशन की थीं, जो मार्शल ला की बन्दूकों और तोपों में खो गयी।

बंगाल के मध्यम वर्ग को आर्थिक तौर पर उन्नति नहीं करने दिया गया। पश्चिमी पाकिस्तान के नये उपनिवेशवादियों ने अपने यहाँ के पूँजीपतियों को पूर्वी बंगाल के शोषण की खुली छूट दे दी। पूर्वी बंगाल से कमाया हुआ मुनाफा पश्चिमी पाकिस्तान के औद्योगीकरण पर खर्च होता रहा। परिणाम यह हुआ कि पूर्वी बंगाल में बंगाली राष्ट्रीयता पैदा हुई।

बंगाल केवल आर्थिक तौर पर ही पीछे नहीं रखा गया, बल्कि उसे सरकारी नौकरी और फौज में भी उचित जगह नहीं दी गयी। फौज में बंगालियों की संख्या नहीं के बराबर है। कारण यह है कि पश्चिमी पाकिस्तान के लोग बंगालियों पर उनकी उच्च राजनैतिक संस्कृति के कारण विश्वास नहीं करते। पश्चिमी पाकिस्तान के लोग मानते हैं कि बंगाल के लोग कमजोर और नाटे होते हैं, और लड़ने योग्य नहीं हैं। पाकिस्तान की नौकरशाही और फौज में आमतौर से यह बात कही जाती है।

कृषि का प्रश्न पूर्वी पाकिस्तान में जनसंख्या पश्चिमी पाकिस्तान से अधिक है, इसलिये भूमि पर दबाव अधिक है। पश्चिमी पाकिस्तान का क्षेत्रफल सर्वेक्षण के अनुसार १० करोड़ ४ लाख एकड़ है, और पूर्वी पाकिस्तान का २ करोड़ १० १० लाख एकड़। सन् १९५० में ३३ एकड़ पर सीलिंग लगायी गयी और इस प्रकार जो भूमि मिली वह उन किसानों में बाँट दी गयी, जो उस पर काम करते थे। पूर्वी पाकिस्तान की सामंतशाही पश्चिमी पाकिस्तान से भिन्न प्रकार की है।

गरीब किसानों की संख्या तेजी से बढ़ रही है। वे किसान, जिनके पास ५ एकड़ से कम जमीन है, उनके कब्जे में भूमि का सबसे बड़ा क्षेत्रफल (९,२५४, ७३४ एकड़) है और इनमें से ३५ लाख एकड़ २॥ एकड़ की जोतों में बँटी हुई है। ४० लाख किसान ऐसे ही हैं। ३२ लाख ऐसे किसान हैं जिनके पास इतनी कम जमीन है कि उन्हें जिन्दा रहने के लिये दूसरी जगह मजदूरी करनी पड़ती है। भूमिहीनों और थोड़ी जमीन रखनेवालों की संख्या करीब-करीब बराबर है। यह भूमिहीनों की संख्या तेजी से बढ़ रही है, क्योंकि जब कोई किसान मरता है तो उसकी सम्पत्ति बराबर-बराबर बच्चों में बाँट दी जाती है। सरकार ने छोटे किसानों पर काफी कर लगा रखे हैं। हर चीज, जिसे वह पैदा करता है, उसके अतिरिक्त उसे अपनी मिट्टी से बनी झोपड़ी पर भी कर देना पड़ता है। अगर वह कर अदा नहीं करता है तो उसकी भूमि जब्त कर ली जाती है। जिसके कारण उसे महाजन से काफी सूद पर कर्ज लेना पड़ता है और वह सूदखोरी का शिकार होता है। पिछले १० वर्षों में हालत और भी खराब हो गयी है। १९६१ में ५२ प्रतिशत किसानों के पास अपनी जमीन थी, परन्तु उनकी बड़ी संख्या बहुत गरीब थी। एक परिवार की जमीन का औसत ३'५ एकड़ था, परन्तु ५१ प्रतिशत के पास २.५ एकड़ से कम जमीन थी। खेत जोतनेवाले मजदूरों में २६ प्रतिशत भूमिहीन थे। पिछले ९ वर्षों में उनकी संख्या १२ से १५ प्रतिशत बढ़ी है। पिछले तीन वर्षों से गाँवों में अकाल की स्थिति है। चावल की पैदावार कम हो गयी है, और उसका दाम ३० प्रतिशत बढ़ गया है।

औद्योगीकरण की गति धीमी होने के कारण शहरों की जनसंख्या में कोई मुख्य परिवर्तन नहीं हुआ है। पहली और दूसरी पंचवर्षीय योजनाओं में पश्चिमी प्रान्तों के लिये पूरब की तुलना में अधिक रुपया दिया गया और पूरब में जो वास्तव में खर्च हुआ, वह स्वीकृत रकम से भी कम था। पूरब में पूँजी की भी बड़ी कमी है, क्योंकि मुस्तकिल तौर पर पूँजी पूरब से पश्चिमी भाग में भेज दी जाती है। पूरब का जूट से कमाया गया धन पश्चिमी भाग के उद्योग पर खर्च होता है। केवल यही नहीं; पश्चिमी पाकिस्तान में बनने वाली चीजें पूरब में अधिक दामों पर बेची जाती हैं। तीसरी और चौथी योजना में भी संतुलन स्थापित करने की कोशिश नहीं की गयी। पूर्वी पाकिस्तान के मेहनतकश वर्ग की मासिक आमदनी पश्चिमी भाग की तुलना में बहुत कम है। ('न्यू लेफ्ट रिव्यू' के सितम्बर-अक्तूबर '७० के अंक में प्रकाशित श्री तारिक अली के लेख से)

—प्रस्तुतकर्ता : सैयद मुस्तफा कमाल

नागरिक बनाम सैनिक

नागरिक (सिविल) शासन को हटाकर सैनिक (मिलिटरी) शासन का कायम होना कोई नयी बात नहीं है, लेकिन सैनिक शासन के रहते-रहते, शान्तिपूर्ण ढंग से, नागरिक शासन कायम हो सकता है, यह कौतुक कर दिखाना पूर्वी बंगाल में शेख मुजीबुर्रहमान का ही काम था। एशिया के इस उदीयमान नेता ने वह कर दिखाया जो इतिहास में अभी तक कहीं किसी ने किया नहीं था। क्या लोकतंत्र के विकास में नागरिक शक्ति बनाम सैनिक शक्ति के बीच मुजीबुर्रहमान द्वारा उस 'टक्कर' की शुरूआत हुई है जिसकी चेतावनी गांधीजी ने अपने अंतिम 'वसीयतनामे' में दी थी ? उनके नेतृत्व में अहिंसक प्रतीकार का जो उदाहरण पेश हुआ है उसमें बंगाली राष्ट्रीयता ही नहीं है बल्कि सैनिक शासन से मुक्ति की उत्कट भावना तथा सामान्य नागरिक की प्रतिष्ठा भी प्रकट हुई है। इस प्रतीकार में भावना के साथ संगठन का विलक्षण समन्वय हुआ है। गांधीजी ने कहा है कि संगठन अहिंसा की कसौटी है। चपरासी से लेकर मुख्य न्यायाधीश तक बंगला देश के एक-एक नागरिक को मुक्ति के इस अभियान में शामिलकर शेख मुजीबुर्रहमान ने विलक्षण संगठन-शक्ति का परिचय दिया है। वास्तव में लोक-शिक्षण या लोक-प्रतीकार के रूप में अहिंसा तभी सफल होगी जब अन्य बातों के साथ-साथ संगठन की हर बारीकी पर ध्यान दिया जायगा। काश, अगर हम अपने सर्वोदय आन्दोलन में संगठन की यह उत्कृष्ट क्षमता ला सकते !

गांधीजी ने परदेशी सत्ता से मुक्ति के लिए अहिंसक प्रतिकार का सफल प्रयोग किया। शेख मुजीबुर्रहमान ने अहिंसा की उसी शक्ति का प्रयोग देशी सत्ता से मुक्ति के लिए किया है। दोनों के सामने एक जालिम और बेगानी सत्ता थी जो जनता के सीने पर सवार थी, जनता उसे परायी मानती थी। लेकिन हम आज अपने देश में अहिंसा की शक्ति का प्रयोग समाज-परिवर्तन के लिए कर रहे हैं। हमारा समाज हमें सदियों पुरानी परम्परा से मिला हुआ है। उस समाज में हम जीते हैं, और उसीमें हमारे खान-पान और विवाह आदि के *सम्बन्ध होते हैं, हम जो भी थोड़ा सुख, सुविधा* और सुरक्षा प्राप्त करते हैं वह इसी समाज से, भले ही उसमें दमन और शोषण है। उससे मुक्ति के लिए हम परिवर्तन चाहते हैं। लेकिन परिवर्तन की चाह के साथ-साथ प्रचलित सामाजिक पद्धति और प्रचलित जीवन-मूल्यों के लिए हमारे मन में पक्षपात भी बहुत है। यही कठिनाई सरकार के सम्बन्ध में भी है। जिस सरकार को हमने इतने प्रबल बहुमत से बनाया है, उसमें दोष बहुत हैं, *लेकिन हम उसे जालिम या परायी नहीं* कह सकते। बंगाल और भारत की परिस्थिति का यह बुनियादी अन्तर हमें समझना चाहिए। हमारा सत्याग्रह समाज-परिवर्तन के लिए है, शिक्षण-प्रधान है, वहाँ सत्ता परिवर्तन के लिए है, प्रतीकार-प्रधान है। इसीलिए दोनों की प्रक्रियाओं में अन्तर है, जो अनिवार्य है। लोक-शिक्षण की प्रक्रिया में ऐसे बिन्दु आयेंगे जब प्रतीकार अनिवार्य हो जायगा उसी तरह जब बंगाल का प्रशासन लोकतांत्रिक हो जायगा और वहाँ का नेतृत्व समाज-परिवर्तन का काम हाथ में लेगा तो अहिंसा को कायम रखते हुए उसे प्रहार की पद्धति छोड़ कर अधिक-से-अधिक लोक-शिक्षण की प्रक्रिया अपनानी पड़ेगी। समय और स्थान के अनुसार क्रान्ति की प्रक्रिया बदलती है, उसका स्वरूप बदलता है। भारत को स्वतंत्रता अहिंसा की शक्ति से मिली थी, लेकिन अहिंसा की शक्ति से समाज-परिवर्तन का अनुभव उसे नहीं है। बंगला देश के सामने भारत के सर्वोदय आन्दोलन के अनुभव है—उसकी सफलताएँ-विफलताएँ दोनों है, ठीक उसी तरह जैसे आज हमारे सामने बंगाल के शान्तिपूर्ण, सुसंगठित, नागरिक-प्रतीकार का उदाहरण है। आधुनिक युग में गांधी से अहिंसा की जिस सामाजिक शक्ति का सूत्रपात हुआ, और जिसे खान अब्दुल गफ्फार खाँ, मार्टिन लूथर किंग, विनोबा और दुबचेक ने अपने-अपने क्षेत्र में, अपने-अपने ढंग से आगे बढ़ाया और नये आयाम जोड़े, उसमें शेख मुजीबुर्रहमान ने एक शानदार कड़ी जोड़ी है। हमें आशा है कि अब भारत और बंगलादेश दोनों में अहिंसा की यह कड़ी बढ़कर वहाँ पहुँचेगी जहाँ समाज बाहरी और भीतरी हिंसाओं से मुक्त होगा, और सामान्य नागरिक अपने नित्य के जीवन में हिंसा मुक्ति का अनुभव कर सकेगा। यह तभी होगा जब अहिंसा भी सत्ता (पावर) से आगे बढ़कर जनता (पीपुल) की बात सोचेगी। सत्ता प्राप्त करने की कला उसने विकसित कर ली है, लेकिन समाज बनाने की कला प्राप्त करना बाकी है। अहिंसा को अब साम्राज्य *से अधिक शासन और समाज की हिंसा का मुकाबिला करने की* शक्ति और पद्धति विकसित करनी चाहिये। ●

→संसार की आँखें इस 'वार्तालाप' पर टिकी थीं। विदेशी संवाददाताओं से भरा हुआ ढाका अन्तरराष्ट्रीय समाचारों का केन्द्र बन गया था।

एक नाजुक और कठिन दौर

अचानक २६ मार्च को बिना किसी पूर्व निर्धारित कार्यक्रम के याहिया खाँ पंजाब के लिए विमान द्वारा रवाना हो गये। साथ ही अपने कट्टरपंथी सैन्य-प्रशासक टिक्काखान को यह निर्देश दे गये कि अवामी लीग पर प्रतिबन्ध लगा दिया जाय, पूरे बंगाल पर कर्फ्यू का आतंक और सेना का कड़ा पहरा बैठा दिया जाय और जरूरत पड़ने पर मुजीब व अन्य अवामी नेताओं को गिरफ्तार भी कर लिया जाय। राजनैतिक घटना-क्रम के विद्यार्थियों को इस समय चेकोस्लोवाकिया की याद आये बिना नहीं रहती। मुजीबुर्रहमान भूमिगत हो गये हैं और अनिश्चित स्थान से प्रसारित बंगला देश बेतार केन्द्र पर अपने देशवासियों से निवेदन कर रहे हैं कि "हमें सेना के सामने घुटने नहीं टेकना है। अपने प्राणों का बलिदान देकर भी आजादी के लिए अन्तिम दम तक लड़ना है।"

—सतीशकुमार

व्यक्तिगत साधना और समाज सेवा

प्रश्न : व्यक्तिगत साधना और सामाजिक कार्य, दोनों में विरोध और द्वैत का भास होता है। वास्तव में वह है, या केवल भासमात्र है? अगर द्वैत है, तो कौन सा मार्ग श्रेयस्कर है?

उत्तर : यह भास ही है। मनुष्य ऐसा प्राणी नहीं है कि आसमान से गिरा और जमीन पर बढ़ा। समाज में ही पला है। समाज के असंख्य उपकार से उपकारित है। माता-पिता, शिक्षक, आसपास के लोग, किसान सबका उस पर उपकार है। बाबा पदयात्रा करता था, तो कहा जाता था कि बाबा कितना बड़ा सेवक है। लेकिन लोग उसकी कितनी सेवा करते थे। गाँव का उत्तम से उत्तम घर साफ करके रखना, दूध का इन्तजाम करना..., बाबा जितनी सेवा लेता था, उससे बहुत कम सेवा करता था। कुल मिलाकर जीरो (शून्य) हो जाता था। इसलिए बाबा को अहंकार हुआ नहीं। बाबा ने कितनी सेवा की, और लोगों ने उसकी कितनी सेवा की, दोनों को नापेंगे, तो हो सकता है कि लोगों की ज्यादा हो। इस वास्ते सोचने की बात है कि हम व्यक्तिगत साधना करते हैं यानी क्या करते हैं? खाना तो पड़ेगा ही। व्यक्तिगत साधना की यही बात हो कि उपवास ही उपवास करते हैं, तो ठीक है, लेकिन चाहे भिक्षा माँग कर ही क्यों न हो, खाना तो पड़ता ही है। कोई हमारे लिए खाना तैयार तो करता ही है। इसलिए जब तक हम खाते रहते हैं तब तक उसके बदले में लोगों को कुछ देना चाहिए। फिर भी, व्यक्तिगत निरीक्षण, अभ्यास करना पड़ता है, उसके लिए रोज एक घन्टा निकालें। उत्तम पर्याप्त है।

पदयात्रा में बाबा को बड़ी साधना करनी पड़ती थी। एक जगह एक दिन ही रहना है, उतने में गुस्सा कर लेंगे तो कैसे होगा? इसलिए गुस्से पर संयम रखना पड़ता था। अक्सर जो लोग सतत साथ रहते हैं, उनका बनता कम है। एक दूसरे के दोष मालूम हो जाते हैं। इस वास्ते मनुष्य को दूसरों से दूरी का अनुभव आना चाहिए। नजदीक जायेंगे तो सेवा के लिए। वे परमात्मा हैं, उनके लिए आदर आदर है। सेवा के लिए नजदीक, आदर के लिए दूर, ज्ञान के लिए अन्दर। दिल के अन्दर पैठेगा, तब उसको ज्ञान मिलेगा। डाक्टर आयेगा सेवा के लिए। वह मरीज की गलतियाँ नहीं देखता, चाहे गलत काम क्यों न किया हो और उसी से बीमारी क्यों न आयी हो। वह सेवा करेगा। वह यह नहीं देखेगा कि गलत काम किया है। इसलिए वह आदरपूर्वक सेवा करेगा। यह हमको सधना चाहिए। यह तब सधेगा, जब हम दोषों को देखेंगे नहीं। दोषों की अपने में भी क्या कमी है? इस प्रकार करते जायें, तो सारी निष्काम सेवा ही साधना हो जाती है। दोनों में विरोध नहीं।

प्रश्न : जीवन के हर क्षेत्र में आनन्द, रुचि लगती है। फिर वह विज्ञान या मेडिकल का अध्ययन हो, साहित्य, संगीत हो, सर्वोदय कार्य हो, अध्यात्म साधना हो, जो भी काम शुरू करता हूँ, सामने विशाल क्षेत्र नजर आता है, हर क्षेत्र में काम करने की इच्छा होती है। इससे शक्ति बिखर जाती है। सातत्य और एकाग्रता रहती नहीं।

उत्तर : यह तो श्रीमानों का खाना हुआ। गरीबों का खाना कैसे होता है? दो तीन रोटी और दाल। श्रीमानों का खाना? थोड़ी सी रोटी, थोड़ा चावल, इतनी सी सब्जी, चटनी, पापड़, आधा लड्डू इसका नाम है श्रीमानों का खाना। गरीबों का खाना यानी दो चीजें। "खाऊनशानी चटणी भाकर दिला ढेकर (चटनी रोटी खाकर, दी डकार)। श्रीमान थोड़ा खायेगा, थोड़ा थाली में छोड़ देगा। वैसे, अनेक बातें रुचिकर मालूम होती हैं। यहाँ, इधर से यह एक रास्ता है, वह अच्छा है। यह सामने वाला भी अच्छा है। वह उधर का भी अच्छा है। और वह चौथा भी अच्छा है। तो अब क्या करेंगे? सभी रास्तों से जायेंगे, तो गुमनीन हैं वहीं के वहीं फिर से आ जायेंगे। कोई एक रास्ता पकड़ना होगा। इसलिए रुचि हो भले सब में हो, समझना चाहिए कि दूसरे भी हैं काम करने के लिए।

मैं भूमिति और गणित में प्रवीण था। लेकिन देखा, रघुनाथ धोत्रे भूमिति में प्रवीण होने लगा, तो तुरन्त मैंने भूमिति का अभ्यास कम कर दिया। भूमिति वह करेगा, हम दूसरा विषय करेंगे। अनेक विषय हैं। इसलिए दूसरा विषय, इतिहास का अध्ययन बढ़ाया। हम आठ-दस मित्र थे। कोई एक काम करता था, दूसरा दूसरा करता था। यही आश्रमवालों से मैं यही कहता हूँ कि कोई खेती में प्रवीण हो जाय, कोई रसोई में प्रवीण हो जाय, कोई साफ झाड़ू लगाये, कोई सेवा करे, कोई विद्वान बने-ब्रह्मसूत्र, उपनिषदों का गहराई से अध्ययन करे, कोई आसपास के प्रवाहों का अध्ययन करे। विषय अनेक हैं और सब मिलकर पूरा करते हैं। यह जरूरी नहीं कि मैं ही सब पूरा करूँ। मैं ही सब करने जाऊँगा, तो श्रीमान का खाना होगा। लेकिन प्रत्येक विषय में आनन्द महसूस हो, यह मन स्थिति अच्छी है। थोड़ा ज्ञान हर एक विषय का हो और एक विषय में प्रवीण हो।

प्रश्न : स्वधर्म कैसे पहचानना?

उत्तर : स्वधर्म पहचानना नहीं पड़ता है, वह प्राप्त होता है। माँ को कैसे पहचानना, यह पूछना नहीं पड़ता। आपका जिस माता के उदर से जन्म हुआ, वह बहुत बीमार है, तो आपका काम है कि नहीं सेवा करने का? वह प्राप्त है, ढूँढ़ना नहीं होता। फिर भी पढ़े-लिखे मनुष्य को क्षेत्र तय करना पड़ता है। किसान का लड़का समझ लेता है कि मेरा धर्म

पड़ाव-पत्र : सोमवार, २९ मार्च,

खेती है और दिनभर खेती में लगा रहता है। पढ़े-लिखे चर्चा करते हैं कि किस उम्र में संसार का भार उठाना चाहिए। किसान का लड़का छः साल की उम्र में गायें चराने लगता है। उसको उसका अभ्यास बचपन से है। इसलिए उसको सहज प्राप्त धन्धा मिलता है। पढ़े-लिखे को सोचना पड़ता है।

लेकिन धर्म धन्धे से भी भिन्न है, और सेवा से भी भिन्न है। माता की सेवा सहजप्राप्त है। लेकिन उसके अतिरिक्त स्वधर्म होता है। और वह होता है अंतरात्मा का शोधन। वह हर मनुष्य का स्वधर्म है। जो यह करता है, उसको *अन्दर से प्रेरणा मिलती है।* यह बहुतों के ध्यान में नहीं आता। अभी बाबा को प्रेरणा मिली बैठ जाओ। बाबा को प्रेरणा मिली थी भूदान आन्दोलन शुरू करो। इस प्रकार से अन्दर से आदेश आते हैं, अगर चित्त साफ हो। चित्त साफ न हो, तो आत्मा की आवाज सुनायी नहीं देती। अन्दर की वह जो आवाज आती है, *उसके अनुसार मनुष्य काम करता है,* तो कोई उसको रोक नहीं सकता।

बाबा बचपन में बड़ोदा में था। वहाँ एक बगीचा था, उसमें बुद्ध की सुन्दर मूर्ति थी। बाबा रोज वहाँ जाकर उस मूर्ति का ध्यान करता था। बाबा को अन्दर से प्रेरणा थी घर छोड़ने की। घर *छोड़नेवाले दूसरे थे महाराष्ट्र के सन्त* रामदास। वह दूसरा आकर्षण था। और तीसरा जगद्गुरु शंकराचार्य। ये तीन व्यक्ति बाबा के सामने रहते थे, जो घर छोड़कर भाग गये। इसलिए कभी न कभी *घर छोड़ूँगा ऐसी बाबा को अन्दर से* प्रेरणा थी। लेकिन मन में था कि घर छोड़कर जाऊँगे, पर बाहर मार न पड़नी चाहिए। सब विषयों का ज्ञान चाहिए। इसलिए बाबा ने तरह-तरह के ग्रन्थ पढ़े। तैयारी की। इसलिए स्वधर्म तो अन्दर से जो आवाज निकलेगी, वह है। वही प्राप्त धर्म है। आप रास्ते से जा रहे हैं, रास्ते में कोई बीमार पड़ा है, सेवा की जरूरत है, तो आप उसको वैसा ही छोड़कर नहीं जायेंगे। वह धर्म सहज प्राप्त हुआ। वह नहीं करते हैं, तो आप पशु बन जाते हैं। इतना मिनिमम (न्यूनतम) तो है ही। लेकिन उसके अलावा, जो जीवन धर्म है, जो जीवनभर करेंगे, उसकी प्रेरणा अन्दर से मिलती है। उसके लिए अन्दर साफ चाहिए और मोटी श्रद्धा चाहिए। (अमर भंग के साथ हुई चर्चा से)

ब्रह्मविद्या मंदिर,
५-११-'७०

प्रतिनिधियों के वेतन और भत्ते

लोकसभा और विधानसभाओं के सदस्यों के वेतन और भत्ते आदि पिछले २३ वर्षों में क्रमशः बढ़ते ही गये हैं। इन सदस्यों को जीवन के लिए जरूरी खर्च अवश्य मिलना चाहिए, लेकिन विधानसभाओं की सदस्यता को एक प्रकार की नौकरी जैसा नहीं बना देना चाहिए। विधानसभाइयों को मिलने वाला वेतन आदि सरकारी अफसरों की तरह नहीं होना चाहिए, लेकिन अपना पूरा समय देश के काम में लगाने वाले सेवक के निर्वाह के लिए वह केवल आवश्यक भत्ता है ऐसा होना चाहिए।

इन सब धारा सभाइयों का रहन-सहन, बोल-चाल आदि भी ऐसा होना चाहिए *जो सेवाभाव से देश का काम* करनेवाले सेवकों को शोभा दे। ऐसा हो तभी जनता में उनके लिए आदर रह सकता है।

धारा सभाओं में बैठकर ये सदस्य स्वयं ही *अपने वेतन, भाड़ा-भत्ता आदि* बढ़ाने के प्रस्ताव समय-समय पर पास करते रहते हैं। इन पिछले वर्षों में इस प्रकार इन चीजों में अपेक्षाकृत बहुत वृद्धि की गई है। नतीजा स्वाभाविक तौर पर यह आया है कि जनता में धारा सभा सदस्यों के प्रति मान और आदर दिन-पर-दिन कम हुआ है।

धारा सभा के सदस्यों में से ही कुछ लोग मंत्री बनते हैं। यह सही है कि मंत्रियों *को अधिक जिम्मेदारी के और अधिक* शक्ति और समय चाहने वाले काम करने होते हैं, पर यह होते हुए भी उनके वेतन का मान सरकारी अफसरों जैसा नहीं होना चाहिए। जितने प्रमाण में वे सुख-*सुविधा भोगने लगते हैं उतने ही प्रमाण में* जनता के बीच उनका मान और आदर घटता जाता है।

हमारी नम्र राय है कि धारा सभाओं के इन सदस्यों तथा मंत्रियों के लिए अगर सामूहिक भोजनालय चलाने का रिवाज डाला जाय तो बहुत-सा आलजंजाल खतम हो जाय और इस देश की संस्कृति के साथ मेल भी बैठे। निजी खर्च के लिए उन्हें एक निश्चित भत्ता दिया जा सकता है। विदेशों के बड़े और प्रसिद्ध विश्वविद्यालयों में इस प्रकार वहाँ के अध्यापक नौजवान विद्यार्थियों के साथ एक ही रसोड़े में खाना-पीना करते हैं।

इस सार्वजनिक भोजनालय में मंत्रियों और दूसरे सदस्यों के बीच भी कोई भेद नहीं खड़ा करना चाहिए। मंत्रियों को उनके *काम और जिम्मेदारी की दृष्टि* से आवश्यक सुविधाएँ दी जा सकती हैं परन्तु मोटी-मोटी तनख्वाहें देकर उनको बड़ा अफसर नहीं बना देना चाहिए। एक बड़े सरकारी अफसर के जैसी सुविधाएँ और मोटी तनख्वाह के कारण लोगों में उनका मान-मरतबा बढ़ेगा और वे ज्यादा अच्छी तरह अपना काम का अनजाम दे सकेंगे यह दलील बिलकुल अप्रमाणित है। काम करने की शक्ति सुविधाओं से और ठाटबाट से आती है यह भ्रम है। अपने त्याग और श्रम से जो आदर होगा वही उनकी सच्ची पूँजी है, *और उसी के द्वारा वे सच्ची सेवा* कर सकते हैं। भारत के लोकतंत्र में हमें यही कार्य पद्धति अपनाना उचित है।
("वटवृक्ष" द्विमासिक से साभार)

—जुगतराम दवे

जीत गया, जीत गया, जीत गया रे

एक ट्रक पर तीस-पैंतीस लोग गाते-बजाते, चिल्लाते, चले जा रहे हैं। एक आदमी अपनी कमर में बँधी ढोल को धूम-धूमकर पीट रहा है। कई के हाथों में मजीरे हैं। सब मस्त हैं। रह रहकर सुनायी पड़ता है 'जीत गया, जीत गया, जीत गया रे'। दस-पाँच जो गाने में शरीक नहीं हैं, बीच बीच में अपने हाथ की मोटा लाठी को टेक लेते हैं, और फिर गगनभेदी नारों में डूब जाते हैं। अपनी जाति का उम्मीदवार जीता है।

इसी तरह की खुशी हासिल कर एक मित्र आज एक महीने बाद चुनाव-फ्रन्ट से लौटे हैं। उनके उम्मीदवार जीत गये हैं। खुद तो बेहद खुश थे ही, वह मुझे भी अपनी खुशी में शरीक करना चाहते थे। बोले 'मैं जिस उम्मीदवार के लिए काम करने गया था वह एक गरीब आदमी है। उसकी जीत से जनता की जीत हुई है।''

मैं नहीं चाहता था कि अपने मित्र की खुशी में खलल डालूँ फिर भी मैंने पूछा 'क्या सचमुच आपका ऐसा ख्याल है?'' 'क्यों नहीं?' फौरन कह पड़े। मैंने कहा 'पहिले के चुनावों में तो लाखों लोग वोट दे भी आते थे, लेकिन इस बार तो वह भी नहीं हुआ। बूथ पर चार-छः लोग पहुँच गये और उन्होंने ही सारे मत-पत्रों पर ठप्पे मार कर पेटियों में डाल दिये। बाद में आने वालों को पता चला कि उनके वोट पहिले ही पड़ चुके हैं। कहिए, ऐसा हुआ या नहीं!'' बोले ''हाँ हुआ, लेकिन हमारे ही क्षेत्र में नहीं, पूरे बिहार में कम या ज्यादा ऐसा ही हुआ है।'' मैंने कहा ''बताइए, जब जनता अपनी मर्जी से वोट तक नहीं डाल पा रही है तो उसकी आवाज दिल्ली कैसे पहुँचेगी? इस बार तो जैसे मतदाता-विहीन मतदान हुआ। सोचिए, पैसे, कड़े और जाति की आँधी में जनता कहाँ दिखायी दे रही है?''

लेकिन इस तूफान में भी कुछ गाँवों ने साहस का परिचय दिया है। कारण कुछ भी हो, लेकिन उन्होंने एक राय होकर वोट देने से इनकार किया है। उन्होंने वोट माँगनेवालों से पूछा है कि वोट देने से क्या हुआ अब तक, और क्या होगा आगे?

अच्छा हुआ, बुरा हुआ, कुछ भी हुआ, चुनाव हुआ और इन्दिराजी जीतीं। यह चुनाव था ही उनके लिए। इतने वर्षों के बाद फिर देश ने एक व्यक्ति के हाथों में अपना भाग्य सौंपा है। यह देखना है कि इतने प्रबल बहुमत पर बनी दिल्ली-सरकार जनता के मन को दो-चार साल और बहलाती है या अब उसके सवालों को हल करने की ईमानदारी के साथ कोशिश करती है। सही या गलत, जनता ने यह मान लिया है कि इन्दिराजी दिल्ली में उसकी लड़ाई लड़ रही हैं, अमीरों के मुकाबिले उन्होंने गरीबों का झंडा हाथ में उठा रखा है। इतना विश्वास जनता का उन्हें प्राप्त हुआ है। अगर इस विश्वास का फल न मिला तो देश में उपद्रव बढ़ेगा, हिंसा बढ़ेगी। विरोधी दिल्ली से बहिष्कृत होकर चुप नहीं बैठेंगे।

स्वतंत्रता के बाद से लेकर आजतक चुनावों के कारण देश के जीवन का जो मंथन हुआ है उसमें विष बहुत निकला है, लेकिन कुछ अच्छाई भी हाथ आयी है। एक अच्छाई यह है कि अब कोई भी सत्ता हो—संसद की हो या पाकिस्तान की तरह सेना की—जनता के बुनियादी सवालों को टालकर बहुत दिनों तक नहीं टिक सकती। वे सवाल हैं गरीबी, बेरोजगारी और विषमता के। वे सवाल ऐसे हैं कि अगर इन्दिराजी की सरकार इन सवालों को उठा ले तो भारत का नागरिक भाषा, जाति, सम्प्रदाय, क्षेत्र और इन सब को भूल जाने को तैयार है। उसकी नजर में दूसरे सब सवाल गौण हैं। दूसरी बहुत बड़ी अच्छाई है कि इन चुनावों से ऐसे मंच बन जाते हैं जिनपर हर तरह का गुस्सा उतारा जा सकता है, जहाँ तरह-तरह के 'वादों' के 'विवाद' से दिल का गुबार निकाला जा सकता है। संसद और विधानसभाओं में यह बराबर होता रहता है। अगर गुस्सा उतारने की जगहें न होतीं तो भारत का न जाने क्या हाल हो गया होता।

इन अच्छाइयों को देखकर भूल होगी यह मान लेना कि इनके भरोसे हम बहुत दिनों तक चल सकेंगे। खुद ये अच्छाइयाँ हमारी दुश्मन बन जायेंगी अगर हम आगे न बढ़े। सवाल यह है कि चुनाव द्वारा जो लोग दिल्ली की सत्ता में पहुँचे हैं क्या उनमें इन अच्छाइयों को बनाये रखने तथा नई अच्छाइयों को पैदा करने का संकल्प और शक्ति है? भरोसा नहीं होता कि है। देश बहुत बड़ा है, और उसके सवाल बहुत बड़े हैं, लेकिन हमारे नेताओं ने अपने दिल-दिमाग को बहुत छोटा कर लिया है। जब वे बड़ी बातें करते हैं तो उनकी छोटी बातें और ज्यादा निखर आती हैं। कल का स्यार अगर आज अपने को सिंह कहने लग जाय तो क्या इतने से उसके गुण बदल जायेंगे।

अगर सचमुच नयी सरकार कुछ नया करना चाहती है तो दो चीजें फौरन जरूरी हैं—शिक्षा में परिवर्तन और गाँव का नया संगठन। इस चुनाव से जनता के मन का यह निश्चित संकेत मिल गया है कि उसे अतिवाद पसन्द नहीं है—न राइट का, न लेफ्ट का। उसे नकारात्मक नारे भी नहीं पसन्द हैं। केवल गाली देने की राजनीति तो कतई नापसंद है। वह मध्यममार्गी है। उत्तेजित होकर वह कुछ भी कर बैठे, किन्तु सहजरूप से वह संघर्षप्रिय नहीं है। राजनीति उसके सिर पर तरह-तरह के संघर्ष थोपती रहती है, लेकिन वह उनसे बचने को उत्सुक है। उसे समाजवाद से इनकार नहीं है, लेकिन वह अफसरशाही को सीने पर नहीं बिठाना→

मूलतःपत्र : सोमवार, २१ मार्च, '७७।

"बेटी चमार की, नाम सावित्री"

भोजपुरी में इस कहावत का असली रूप है, 'चमारेकी बिटिया, नाम रजरनियाँ (राजरानी)।' पौराणिक सावित्री राजा की बेटी थी। पर यह सावित्री तो चमार की बेटी है, प्राकृतिक-चिकित्सा-केन्द्र, जसीडोह; से कुछ ही दूर रहती है। कल कोई इसे केन्द्र-व्यवस्थापिका सत्यभामा के पास लाकर बोला, 'बाई, इस लड़की को कोई काम दे सकिये तो देखिये।' भामा को जाने क्या सूझा, उसे चक्की पकड़ा दी, पाँच सेर पीसने पर एक रुपया मजदूरी के करार पर। हाथ-चक्की की पिसाई की दर चिकित्सा-केन्द्र में तीन आने सेर तय है। सावित्री की उम्र बारह साल की होगी, वजन उसका सिर्फ २२ किलो है। चक्की के ऊपर के पाट से सिर्फ पाँच किलो ज्यादा। इस चक्की पर प्राय: दो दाइयाँ मिलकर पीसती हैं।

सावित्री बेटी चमार की है, पर नाक-नक्श और रंग में भी, किसी ब्राह्मण-बाला से घटकर नहीं है। यदि इसे भली-भाँति नहला-धुला, वस्त्राभूषणों से सजा-सँवार दिया जाय तो "बंगाल-सुन्दरी" या "कश्मीर-सुन्दरी" भले ही न हो, "जसीडोह-सुन्दरी" तो बन ही सकती है। प्रकृति से इसे रंग काफी गोरा मिला है। सुन्दरता के दूसरे उपादान तो बाहरी ही होते हैं।

सावित्री सहित उसके घर में ६ प्राणी हैं। माँ एक, बड़ा भाई, दो छोटे भाई, एक छोटी बहिन। बाप कई साल पहले मर गया, अब माँ बीमार है। बड़ा भाई गिट्टी तोड़ता है, दो रुपये रोज पर। वह काम भी जब-तब ही मिलता है। माँ अच्छी रहने पर कहीं काम करके रुपया डेढ़ रुपया लाती रही होगी। अभी तो भाई की कमाई पर ही ६ आदमियों का गुजर होता है। माँ की दवा-दारु की बात छोड़िए, कपड़े-लत्ते भी जाने दीजिए, खाने में ही ६ प्राणियों को कम-से-कम हरेक को एक पाव अन्न तो चाहिए। इक्कीस आने सेर के हिसाब से डेढ़ सेर चावलों के दो रुपये होते हैं। तेल, नोन, लकड़ी के लिए पैसे कहाँ बचते होंगे? तब इसके मानी यह हुए कि हर प्राणी पाव-पाव नहीं खाता होगा। गिट्टी तोड़नेवाले का काम पाव से नहीं चल सकता, बहुत कम खाय तो भी आध सेर चावल चाहिए। तो अन्य पाँच प्राणियों को आधे पेट खाकर गुजर करनी पड़ती होगी।

सावित्री को उस दिन भूखा रहना पड़ा था। यही देखकर कोई दयावश इसे सत्यभामा के पास लाया था। लड़की का साहस देखिये, कुल २२ किलो वजन की, बारह साल की, एक दिन की भूखी १७ किलो के पाटवाली चक्की पर आठ घंटे में दस पाव गेहूँ पीसा।

अढ़ाई सेर आटे की इसे कितनी पिसाई मिलनी चाहिए, बाजार या सरकार-निर्धारित भाव से? साढ़े सात आने। पर न्याय या जीवन-निर्वाह-वेतन की दृष्टि से इसे कितना दिया जाना चाहिए? चिकित्सा-केन्द्र में रोटी खानेवाले तो थोड़े लोग ही हैं, और उनके लिए आटा दाइयाँ तीन आने सेर में पीसती ही हैं, तब सावित्री को ज्यादा कौन देगा, क्यों देगा, यह नहीं पूछूँगा। पर इतना तो अवश्य पूछना चाहूँगा कि ज्यादा देना चाहिये या नहीं? भामा ने परसों शाम को उसे एक रुपया दिया था, आठ घंटे के काम का। कल पूछा, 'तू कल का खैले (क्या खाया)?' तो हाथ से संकेत करते हुए कहा, 'इतना, एक कनवाँ (छटांक) भात।' "एके कनवा काहे खैने?" "और केसा (कितना) खौनीं (खाऊँगी), बाप मरि गेन।" मतलब, जिसके कोई कमाने वाला नहीं है, वह ज्यादा खा सकता है?

कल फिर लड़की आकर चक्की पर बैठ गई और दोपहर तक सवा सेर गेहूँ पीस गई। तबतक मैंने उसे देखा नहीं था, भामा से उसका वर्णन भर ही सुना था। दूसरी बेला, (दोपहर बाद) भामा ने उसे चक्की न देकर खेत में डालने के लिए राख छानने का काम दिया। तीसरे पहर लड़की को मेरे सामने बुलाया। उसे देख कर दिमाग में कितनी तरह के विचार घूम गये—"हमारे देश की कितनी गिरी दशा है? क्या सिर्फ सावित्री की ही यह दशा है? देश भर में लाखों सावित्रियाँ, उनके बहन-भाई इसी भुग-

---

→चाहती। क्या इन्दिराजी इस संकेत के शुभ पहलुओं को समझेंगी?

शिक्षा में परिवर्तन करना हो तो नयी तालीम के सिवाय देश के पास दूसरा क्या है? और, अगर गाँवों में रहनेवाली जनता को जगाना हो तो ग्रामदान के सिवाय दूसरा क्या है? दिल्ली ने इन दोनों चीजों से अब तक अपने को अलग रखा है, लेकिन क्या अब भी अलग रखेगी?

*सर्वोदय-आन्दोलन को अब ग्रामदान-*ग्रामस्वराज्य के फ्रन्ट के साथ-साथ शिक्षण का फ्रन्ट भी जोर-शोर के साथ खोल देना चाहिए। युवा-शक्ति को क्रान्ति के साथ जोड़ने का दूसरा कोई उपाय नहीं है। शिक्षण युवकों के जीवन-मरण का प्रश्न है। वे इसे पहिले समझेंगे, ग्रामदान को बाद को।

ग्रामदान की असली कसौटी है लोकशक्ति, और लोकशक्ति की परीक्षा है राज्यों के अगले चुनाव में। लगता है बिहार में विधानसभा का चुनाव १९७४ के बहुत पहले ही होगा। हमारे लिए समय बहुत कम है। कितने निर्वाचन-क्षेत्रों में जनता के उम्मीदवार खड़े होंगे? क्या *प्रचार में भी नहीं? हमें अपना ध्यान* उसी ओर रखना है, और जनता से बराबर यही कहते रहना है कि उसे सत्ता को दलों के हाथों से निकालकर अपने हाथ में लेना है। यही रास्ता उसके 'स्वराज्य' का है। —रा० मू०

घरों में दिन काट रहे हैं। इनका क्या उपाय हो सकता है? ऐसों के लिए ही तो गांधीजी ने चर्खे की योजना रखी थी। पर उसे कहाँ चलने दिया इन कलकत्ता, बम्बई के सेठों ने, और देश के नेताओं ने?

पंचवर्षीय योजनाओं ने देश को खुशहाल बनाने की एक पचवर्षीय योजना रखी, गांधीजी की आर्थिक योजना के मुकाबले में। देश में तब से हजारों नये कल-कारखाने खुल गये, पर क्या खुशहाल हुआ क्या? देश को छोड़िए, कारखाने खोलने वाले खुद भी खुशहाल हुए क्या? कलकत्ता वालों की हालत तो हमसे छिपी नहीं है, तब से हजारवाले लखपति हो गये, और लखपति करोड़पति, लेकिन चैन किसी एक को भी नहीं है? जान के लाले पड़े हुए हैं। हर वक्त कलकत्ता से खिसकना चाहता है। कहाँ जाय, क्या करे, इसी फिक्र में घुलता रहता है। सजे-सजाये वातानुकूलित कमरों में डनलोपिलो के गद्दों पर सोता है, पर आँखों में नींद कहाँ? सोचता रहता है, "इन मेरे इतने बड़े-बड़े मकानों का क्या होगा, क्या होगा हमारे इतने कल-कारखानों का? इनको कहाँ, कैसे उठाकर ले जाऊँ? हमारी यह आराम की, ऐशोआराम की हालत की, जिन्दगी सुरक्षित रह सकेगी क्या? कल कोई नक्सलाइट हमें छुरा मार देगा तो? कारखाने में मजदूर हड़ताल कर देंगे तो? सरकार हमारे 'माकर' जब्त कर लेगी तो? सम्पत्ति पर 'सीलिंग' कर देगी तो?"

सैकड़ों सम्पत्तिवालों में कोई एक होगा भाई का लाल जो इस तरह की चिन्ताओं से मुक्त हो। कोई पूछेगा कि क्या गरीब चिन्तामुक्त होता है? सावित्री चिन्तामुक्त है क्या? पर नहीं, उसे सिर्फ पेट की है, जब कि धनी को अधिक खाकर पचा न पाने के कारण पेट-दर्द की चिन्ता रहती है, उसके सिवा और भी नाना प्रकार की चिन्ताएँ घेरे रहती हैं। किसी गरीब को यहाँ नक्सलाइटों की चिन्ता है, धनी को तो सपने में भी नक्सलपंथी नजर आता है। सावित्री ने तो नक्सलपंथ का नाम भी न सुना होगा।

"सावित्री के घर से, घर क्यों कहूँ, 'टूटी टपरी' से, दो मिनट के फासले पर भारत के गिने-गिनाये ७४ बड़े सम्पत्तिवालों में से एक का ५-७ लाख की लागत का आलीशान महल है। सावित्री की टपरी से सौ-दो-सौ कदम के फासले पर कई करोड़पतियों की कोठियाँ हैं और उनसे एक फर्लांग से कम की दूरी पर पचासों ऐसे घर हैं जिनकी दशा सावित्री से शायद ही कुछ बेहतर हो। इन्हें महीनों में कौन दिन सुख से पूरी नींद नहीं आती होगी और कोठियोंवालों को अजीर्ण और चोरों के भय से।

'कौन कहता है कि ये बँगले गिरा दिये जायँ तो सावित्री की दशा में तत्काल कोई अन्तर आ जायगा? लेकिन सावित्री की तरह के लोगों के मन में जो ईर्ष्या और द्वेष इन धनियों के ठाट-बाट देखकर होता है वह तो नहीं होगा। यदि इन धनियों को समाज में रखना जरूरी ही माना जाय तो इन सबकी एक अलग बस्ती क्यों न बसा दी जाय? वहाँ या उससे दस पाँच कोस दूर किसी गरीब को रहने ही न दिया जाय। जहाँ गरीब इन्हें देख न पायें और यह भी गरीबों को न देखें। इतने गरीब और धनी का साथ-साथ रहना तो कोई माने नहीं रखता।"

इन विचारों का क्रम टूटा तो फिर सावित्री का ध्यान आया कि उसको आज मजदूरी कितनी देनी चाहिए? जीवन-निर्वाह-वेतन की दृष्टि से तो डेढ़ रुपया देना चाहिये, फिर काम चाहे जितने का हो सकता। पर डेढ़ देकर भी क्या इसे भर पेटभर खाना मिल सकेगा? नहीं। तब तय हुआ कि एक रुपया नगद दिया जाय, एक पाव चिउड़ा और आध पाव गुड़ दिया जाय।

गरीब तो अज्ञानी हैं ही, लेकिन धनियों में भी ज्ञान है क्या? ज्ञान हो तो पास-पड़ोस में इतनी भुखमरी होते हुए उन्हें विलासिता कैसे सूझ सकती है? उस दिन मेरे एक कलकत्ता के बुजुर्ग→

विश्लेषण, निश्चय और निवेदन

ग्रामस्वराज्यमूलक सर्वोदय-क्रान्ति के काम में लगे हम कुछ मित्र, जो यह महसूस कर रहे थे कि इस आंदोलन में *एक गत्यवरोध आ गया है और* इसे दूर होना चाहिए, १५, १६ मार्च को नगवाँ (वैशाली) में एक साथ बैठे, और आंदोलन की समीक्षा करते हुए उन बिन्दुओं को खोजने की कोशिश की, जहाँ से यह स्थिति जन्म लेती है।

काफी विचार-मंथन के बाद हम सबके समक्ष कुछ मुद्दे स्पष्ट हुए। वे ये हैं :—

(१) हम यह महसूस करते हैं कि आंदोलन में आये गत्यवरोध का मुख्य कारण यह है कि आंदोलन की स्वतंत्र शक्ति खड़ी नहीं हुई। हमारा आंदोलन संस्था-आधारित ही रहा, और हर अगले कदम के लिए हम शक्ति का अभाव महसूस करते रहे। हमारे आंदोलन में यह शक्ति विकसित और संगठित होनी चाहिए थी, जो नहीं हुई। आंदोलन बढ़ता गया, लेकिन कार्यकर्त्ता शक्ति का गुणात्मक और संख्यात्मक ह्रास होता गया। न तो कार्यकर्त्ता-शक्ति विकसित हुई, न आंदोलन का कोई सामूहिक नेतृत्व ही विकसित हुआ। गणसेवकत्व की चर्चाएँ तो बहुत होती रहीं, लेकिन वे कभी सार्थक और साकार नहीं हुईं।

(२) आंदोलन के गुण-दोषों की मुक्त चर्चा करने का कोई सिलसिला हमारे आंदोलन में नहीं रहा। इसलिए हम आंदोलन की कमी को दूर करने या *भूल को सुधारने का क्रम नहीं शुरू कर* सके; जो आंदोलन को ठोस बनाने के लिए अनिवार्य है।

(३) हर विषय पर भिन्न मतों को अभिव्यक्ति का पूरा अवसर देकर, उनमें से सहमति के तत्त्व निकालने का भी हमारा प्रयत्न नहीं रहा, जो सर्वसम्मति की पद्धति विकसित करने की एक अनिवार्य प्रक्रिया है।

(४) हमारे काम की व्यूह-रचना सत्ताप्रधान और व्यक्तित्व केन्द्रित होती रही है। प्रत्यक्ष काम करनेवालों की आपसी चर्चा और सम्मति का उसमें कोई स्थान नहीं के बराबर रहा है।

(५) हमारे आंदोलन के विकास-क्रम में ऐसे अवसर आते रहे हैं, जब कि प्रतिकारात्मक सत्याग्रह की कारवाई यदि की गयी होती तो आंदोलन की शक्ति बढ़ती, उसका चित्र स्पष्ट और आकर्षक बनता।

(६) हमारा आन्दोलन विचार और शिक्षणप्रधान है और इसके सशक्त माध्यम हैं साहित्य और पत्रिका। लेकिन दोनों की स्थिति चिन्तनीय है। आन्दोलन की आवश्यकताओं को पूरा करने वाला साहित्य आज हमारे पास नहीं के बराबर है। यह जिम्मेदारी सर्व सेवा संघ-प्रकाशन की है, लेकिन पिछले कुछ वर्षों के प्रकाशन को देखा जाय, तो आन्दोलन की इस आवश्यकता की पूर्ति नहीं हो पायी है, ऐसा दिखायी देता है।

(७) यह आवश्यकता बराबर *अनुभव की जा रही है कि ग्रामस्वराज्य*-मूलक क्रान्ति के लिए समर्पित साथियों की एक 'टीम' देश में नहीं बन पायी है।

बिहारदान की अनौपचारिक घोषणा और राजगृह सम्मेलन के बाद ग्रामस्वराज्य-आन्दोलन की आवश्यकता और एक आकस्मिक सवालवश जे० पी० ने जब मुसहरी में ग्रामस्वराज्य की स्थापना के लिए हड्डी गलाने के संकल्प के साथ बैठने का निश्चय किया तो ऐसा लगा कि आन्दोलन में आयी जड़ता दूर होगी एक नया प्रवाह दिखाई देगा। सर्व सेवा संघ के पिछले सेवाग्राम अधिवेशन में जे० पी० के संकल्प की प्रेरणा और अनुभवों के नये संदर्भ में आंदोलन के एक नये आयाम का दर्शन हुआ और उसी संदर्भ में यह निश्चय हुआ कि ग्रामस्वराज्य के शक्ति-केन्द्र निर्माण के लिए आंदोलन के अगले कदम के रूप में देश भर में आंदोलन के प्रमुख साथी गड़कर बैठेंगे। विनोबा की प्रेरणा से सहरसा में जिलास्तरीय मोर्चा खोलने का भी निर्णय हुआ। कुछ अन्य प्रयास भी हुए। लेकिन इतने दिनों बाद हम यह महसूस कर रहे हैं कि सेवाग्राम का वह संकल्प जहाँ का तहाँ धरा रह गया है। उक्त भूमिका में जहाँ-जहाँ काम हो रहा है, वहाँ-वहाँ का काम कुछ विशिष्ट व्यक्तियों के अपने-अपने काम-जैसा रह गया है, राष्ट्रीय आंदोलन का मोर्चा नहीं बन पाया है। इन प्रयत्नों में भी अनुभवों का कोई आदान-प्रदान नहीं है, सूत्रबद्धता नहीं है। बुद्धि की गाड़ी जिस बिन्दु पर अटक जाती है, उसे आगे ढकेलने के लिए सत्याग्रह के तरकस का कौन सा तीर कहाँ आजमाया जा रहा है, उसका क्या परिणाम आ रहा है, उसके

→दोस्त ने सुनाया कि उनके भाई के लड़के की शादी में हलवाई लोग मिठाइयाँ बना रहे थे, उसी वक्त किसी ने वहाँ एक बम फेंका, धड़ाका हुआ। क्यों फेंका बम? शायद इसलिए कि एक तरफ लोग भूखों मर रहे हैं दूसरी ओर ये पूड़ी-पकवान छन रहे हैं। दूसरे ने कल सुनाया कलकत्ता का ही अपने समधी का किस्सा। कोई अपने समधी के घर तीस थालों में मेवे-मिष्टान्न भेज रहा था, रास्ते में दस नवयुवकों ने उन्हें रोककर कहा, 'हम भूखे हैं, हम खायेंगे ये मिठाइयाँ,' और ले लीं। अगर यह मामला सुप्रीमकोर्ट जाय तो जज लोग क्या फैसला देंगे? यही न कि उन युवकों को जेल में डाल दो?

सावित्री को तो कोई जेल में भी डाल दे तो वहाँ वह सुखी रहेगी। भरपेट खाने को तो मिलेगा। उत्तर प्रदेश की जेलों में हर बंदी को रोज बारह छटाँक आटे की रोटियाँ मिलती हैं। सावित्री गरीब तो उतना खा भी न सकेगी!

— महावीर प्रसाद पोद्दार

पर अंबिका बाबू का नाम प्रस्तावित किया था, उन्हीं लोगों ने पुनः कोषाध्यक्ष के पद के लिए शोभा बाबू के नाम का प्रस्ताव कर दिया और सभा ने उनका समर्थन भी कर दिया, इतना ही नहीं, बल्कि सभा में गरीबों ने उठकर कहा कि, 'अर्थ के मामले में हमलोगों का विश्वास शोभा बाबू पर है, क्योंकि जब कभी सार्वजनिक कोष इनके यहाँ रखा गया, वही पैसा फिर से वापस मिला। न्याय के मामले में हम लोगों का विश्वास श्री अंबिका बाबू पर है। कई एक कठिन मौके पर हमलोगों ने उनको जाँचा-परखा है, इसलिए ग्रामसभा का अध्यक्ष-पद उनको ही दिया गया है।'

न्याय-शुचिता और अर्थ-शुचिता का यह एक उत्तम उदाहरण है। इसके अभाव में ही तो आज ग्राम-जीवन विषाक्त बना पड़ा है। इसके बाद नव-जवानों ने उन तथाकथित नेताओं को भी कार्य-समिति में स्थान देकर अपनी बुद्धि-मत्ता का परिचय दिया।

चुनाव के बीच चुनाव

जब कि गाँव की सारी शक्ति लोक-सभा के चुनाव-दंगल में फँसी थी, सर्वत्र पार्टीवालों के रंग-बिरंगे झण्डे लहरा रहे थे, चुनाव का भोंपू बड़े जोरों से बज रहा था, गाँव की दीवालें राजनीतिक नारों से रंगी हुई थीं, चिंतनधारा में एक तीव्र वेग था, मतभेद और अन्तर्विरोध भी कम नहीं थे। इसी चुनाव के बीच टोका-पट्टी ग्रामसभा के चुनाव का आयोजन किया गया था।

गाँव के हजारों बालिग सदस्य बच्चे बूढ़े, बीमार, जवान, धनी गरीब, मालिक, हलवाहे, सब स्थानीय शिव-मंदिर के अहाते में जमा हो रहे थे। दलवादी और ग्रामवादी शक्तियों में भिड़न्त होने की संभावना देखकर गाँव के कई प्रमुख लोगों ने कैंप में आकर वैद्यनाथ बाबू से कहा कि मार-पीट, दंगा-फसाद हो जाने का खतरा है, अतः ग्रामसभा-गठन का कार्यक्रम आज मुलतवी कर दिया जाय। इस पर वैद्यनाथ बाबू ने कहा, 'अब जो होगा, वहीं पर देखा जायगा।' इतना कह-कर वे सभा-स्थल की ओर चल पड़े।

सभा मंच पर ही वैद्यनाथ बाबू ने बड़ी कुश-लता से परिस्थिति को सम्हाला। श्री पृथ्वी-चन्द केशरी जी द्वारा ग्रामदान पर आपत्ति उठाने के बाद वैद्यनाथ बाबू ने कहा कि 'गाँववालों ने जमीन और जन-संख्या की शर्तें पूरा कर ली हैं। तीसरी शर्त आज पूरी होने जा रही है। हो सकता है, कुछ अनपढ़, गरीब किसानों ने किसी प्रलोभन में आकर समर्पण-पत्र पर अंगूठे के निशान लगा दिये हों, किन्तु आप जैसे पढ़े-लिखे लोगों ने ग्रामदान-पत्र पर छपी शर्तों को पढ़े बिना आँख मूँदकर हस्ताक्षर नहीं किया होगा, ऐसा मैं मानता हूँ। फिर भी आपलोग यदि ग्रामदान नहीं चाहेंगे तो मुझे कोई एतराज नहीं होगा। आज जो यह ग्रामसभा बन रही है उसे कानूनी मान्यता तभी मिलेगी जब आपके बीच पुष्टि पदाधिकारी आयेंगे और आपकी स्वीकृति उन्हें प्राप्त होगी। अभी तो यह कामचलाऊ ग्रामसभा बन रही है, यह बनती है बनने दीजिए, इसमें विघ्न मत डालिए। यदि आप विघ्न डालेंगे तो गाँव-वालों का अपमान होगा और मेरा भी अपमान होगा।' वैद्यनाथ बाबू के इस नम्र निवेदन के बाद आपत्तिकर्त्ताओं की बोलती बन्द हो गयी। विरोध का भाव सहयोग में परिवर्तित हो गया।

सभा में अध्यक्ष-पद के चुनाव की घोषणा की गयी तो सर्वप्रथम गाँव के एक सेवाभावी युवक श्री कुलानन्द महल का नाम अध्यक्ष-पद के लिए पेश हुआ। इसके बाद एक मिनट की देर नहीं लगी कि दूसरे पक्षवालों की ओर से एक दूसरा नाम श्री धर्मचन्द केसरी का अध्यक्ष-पद के लिए पेश हो गया। प्रथम प्रस्तावित श्री कुलानन्द महल ने बड़ी शालीनता के साथ अपना नाम वापस ले लिया, और उनकी ओर से गाँव की बिखरी शक्तियों को एकजुट करने की पूरी कोशिश होने लगी। श्री धर्मचन्द केसरी की सर्व-सम्मति से अध्यक्ष निर्वाचित हो गए।

श्री धर्मचन्द केसरी, आपत्तिकर्ता श्री पृथ्वीचन्द केसरी जी के सुपुत्र हैं। वे स्वयं और उनका पूरा टोला ग्रामदान में अब तक शरीक नहीं हुआ था न उनका परिवार ही। सभा में ही समर्पण-पत्र मँगाकर श्री धर्मचन्द केसरी ने बाप के मना करते रहने पर भी अपना हस्ताक्षर कर दिया। 'बोलो संत विनोबा की जय' से सभा-स्थल गूँज उठा। श्री धर्मचन्द केसरी सर्व-सम्मति से अध्यक्ष चुन लिये गये। उपस्थित लोगों ने कहा है कि सर्वोदय का यह धोबिया-पछाड़ है। बहुत कोशिश की गई थी पृथ्वीचन्द केसरी के परिवार तथा उनके टोले को ग्राम-दान में सम्मिलित करने की, पर सब बेकार हो चुकी थी।

एक घटना और हुई। सभाध्यक्ष की ओर से मंत्रिपद के चुनाव की घोषणा की गयी तो पृथ्वीचन्द के दलवालों ने ही मंत्रिपद के लिए श्री कुलानन्द महल का नाम दुबारा पेश कर दिया, और सभा ने सर्वसम्मति से उन्हें चुन लिया।

अध्यक्ष और मंत्री का चुनाव सम्पन्न हो जाने के बाद श्री पृथ्वीचन्द केसरी ने वैद्यनाथ बाबू से यह कहा कि वरीयता के ख्याल से यह अच्छा नहीं हुआ। यदि कुलानन्द महल ही अध्यक्ष रहते और धर्मचन्द केसरी ही मंत्रिपद को सम्भालता तो अच्छा होता। क्या अब चुनाव के बाद इतना परिवर्तन नहीं हो सकता है? इसपर वैद्यनाथ बाबू ने कहा कि एक बार स्व० पं० जवाहरलाल नेहरू कांग्रेस के अध्यक्ष बने थे और उनके स्व० पिता पं० मोती लाल जी उनके मंत्री बने थे। उनके इस कथन के बाद तुरत ही श्री कुलानन्द महल जी ने उठकर विनम्र-भाव से सभा के सामने कहा, 'हमें मंत्रिपद पर रहकर ही गाँव की सेवा करने में आनन्द मिलेगा, अब जो तय हो गया उसे रहने दीजिए।'

उस दिन सर्वसम्मति के शंखनाद में लोकसभा के चुनाव का भोंपू खो गया था। संत विनोबा की जय-ध्वनि से आम-सभा की परिसमाप्ति की घोषणा करके दो विरोधी शक्तियाँ गले मिलकर अपने घरों को वापस लौट गयी।

—महेन्द्र मिश्र 'मस्त'

अनुभव

चुनाव के भोंपू और सर्व-सम्मति का समवेत स्वर

"बहुमत के आधार पर जो चुनाव होता है, उसमें गलत आदमी भी चुन लिये जाते हैं।"

"सर्व-सम्मति के आधार पर जो चुनाव होता है, उसमें अच्छे आदमी ढूंढ़े जा सकते हैं"—उपर्युक्त कथन की सत्यता निम्नलिखित दो घटनाओं से स्पष्ट हो जाती है।

सर्व-सम्मति व्यवहार्य है

गत २८-१-७१ के अपराह्न समय श्री वैद्यनाथ बाबू के मार्ग-दर्शन में झलारी ग्रामसभा का संगठन हो रहा था। वातावरण उत्साहपूर्ण था। प्रत्येक घर के आये १६० बालिग सदस्य सभा में उपस्थित थे। गाँव के युवकों में परिवर्तन की चाह थी। "न सा सभा यत्र न सन्ति वृद्धा"—गाँव के वयोवृद्ध सज्जन श्री श्रवण सिंह जी आम-सभा की अध्यक्षता कर रहे थे। युवकों का योगदान देखकर यह स्पष्ट प्रतीत हो रहा था कि नौजवानों की एक बहुत बड़ी ताकत है, किसी भी आन्दोलन को जन-आन्दोलन बनाने के लिए। वह जिस किसी भी रास्ते से अपनी इच्छा की पूर्ति देखता है, उसी के समर्थन में लग जाता है।

श्री वैद्यनाथ बाबू के नम्र-निवेदन से सभा की कार्यवाही प्रारम्भ हुई।

गाँव के तथाकथित नेता श्री राजेन्द्र सिंह ने ग्रामसभा के अध्यक्ष पद के लिए पं० शोभाकांत झा का नाम पेश कर दिया, जिसका समर्थन सभा की अध्यक्षता कर रहे श्री श्रवण सिंह जी ने उठकर कर दिया। अब बूढ़े की बात कौन काटे। थोड़ी देर तक सभा में नीरव निस्तब्धता बनी रही, किन्तु गरीबों का वाचाल-मन तथाकथित नेताओं द्वारा लाये गये प्रस्ताव को कब माननेवाला था! उनकी ओर से एक दूसरा नाम अध्यक्षपद के लिए पेश हो गया श्री अंबिका प्रसाद सिंह का। शोभा बाबू ने अपना नाम वापस ले लिया और अंबिका बाबू सर्वसम्मति से अध्यक्ष चुन लिये गये। अंबिका बाबू सभा के सामने खड़े हुए तो उनकी आँखों से आँसुओं की झड़ी लग गयी।

सभा में मन्त्रि-पद के चुनाव की घोषणा होते ही उस समय एक कानर-सीक और चल गयी। श्री सुधीर रंजन दास का नाम, जिनकी आँखों ने अब तक कुल तीस ही वसंत देखे हैं, मन्त्रि-पद के लिए पेश हो गया। सुधीर बाबू संपन्न घर के एक सुखी किसान हैं। अब तक ग्रामदान में आने से कतराते रहे थे। मोहबंधन टूटा नहीं था। आज गाँव बोले १८७०१८ के सामने खड़े थे। क्योंकि जनता-जनार्दन के दोनों हाथ उनके समर्थन में उठ चुके थे 'न ययौ, न तस्थौ' की स्थिति में सुधीर बाबू ने समर्पण-पत्र मँगाया और सभा के बीच अपना हस्ताक्षर कर दिया। सब विनोबा की जय-जयकार से संपूर्ण सभा-स्थली गूँज उठी। यह इस बात के ज्वलंत प्रमाण हैं कि अहिंसक प्रक्रिया से ही लाखों अर्जुन के मोह-बंधन तोड़े जा सकते हैं।

न्याय-शुचिता और अर्थ-शुचिता

कोषाध्यक्ष के चुनाव में गाँव की जनता ने एक समझदारी का परिचय दिया। ग्रामसभा के अध्यक्षपद के चुनाव में जिन गरीबों ने शोभा बाबू के स्थान

श्री जयप्रकाशजी का वक्तव्य : शेख मुजीबुररहमान का पूर्ण समर्थन

गलतफहमी के भय के कारण मैंने अब तक पाकिस्तान की घटनाओं के बारे में कुछ नहीं कहा था, लेकिन शेख मुजीबुररहमान ने दुनिया के स्वातन्त्र्य-प्रेमियों के नाम जो अपील निकाली है उसे पढ़कर कुछ शब्द कहने की प्रेरणा हुई है।

सबसे पहले, उन्होंने बंगला देश की जनता को जो नेतृत्व प्रदान किया है उसके प्रति मैं अपनी गहरी प्रशंसा के भाव प्रकट करना चाहता हूँ। सारे इतिहास में दूसरे किसी नेता की मिसाल ढूँढ़ना कठिन होगा जिसने शेख मुजिबुररहमान की तरह अपने नेतृत्व में पूरी जनता को संगठित किया हो। उससे भी कठिन ऐसी मिसाल ढूँढ़ना होगा जिसमें जनता का इतने सम्पूर्ण समर्थन का उपयोग, बावजूद विरोधी उत्तेजनाओं के, इतनी सहिष्णुता और विवेक के साथ किया गया हो।

गांधीजी के बाद शेख मुजीबुररहमान ही हैं जिसने इतने बड़े पैमाने पर अहिंसा शक्ति का प्रदर्शन किया है। मेरा पक्का विश्वास है कि इस प्रेरणादायी उदाहरण का आज की परेशान, अस्त-व्यस्त दुनिया पर बड़ा विधायक प्रभाव पड़ेगा।

मैं स्पष्ट बता दूँ कि जिस तरह मैं अपने देश की अखंडता में विश्वास करता हूँ उसी तरह मैं नहीं चाहता कि पाकिस्तान की अखंडता खंडित हो। शेख मुजीबुररहमान ने खुद स्वायत्तता से अधिक की माँग नहीं की है, और यद्यपि पश्चिम पाकिस्तान के सैनिक शासन ने नर-संहार के काम किये हैं, उन्होंने अलग हो जाने का अंतिम कदम नहीं उठाया है। यह उनकी बुद्धिमता है। लेकिन अगर उन्हें अपना संयम तोड़कर आगे बढ़ना पड़ा तो उसकी जिम्मेदारी पश्चिमी पाकिस्तान के सिविल और सैनिक अधिकारियों पर होगी। आशा है वे बुद्धि से काम लेंगे, और उन्हें समय की सीमा से आगे जाने के लिए विवश नहीं करेंगे। तब तक दुनियाँ का हर नागरिक और हर सरकार, जिन्हें जनता के लोकतांत्रिक अधिकारों में विश्वास है, शेख मुजीबुररहमान का तथा बंगला देश की सरकार का, जिसका वह नेतृत्व कर रहे है, समर्थन करेगी।

—जयप्रकाश नारायण

जीवन और मृत्यु

[श्री अप्पासाहब पटवर्धन के देहावसान की खबर मिलने पर ब्रह्मविद्या मंदिर, पवनार में बाबा के निम्न प्रवचन के बाद दो मिनट की मौन प्रार्थना हुई।]

अभी फोन से, पूना से खबर आयी है कि अप्पासाहेब पटवर्धन चले गये। मेरे लिए यह खबर अनपेक्षित थी। क्योंकि आज यह सुबह ही होशियारी ने मुझे, उसको पूना से फोन आया था, उसकी खबर सुनायी थी। अप्पासाहेब को क्षय-रोग है ऐसे खयाल से परीक्षण के लिए पूना अस्पताल में भेजा गया था, परीक्षा हुई थी और डाक्टरों ने डिक्लेयर (घोषित) किया था कि उनके दोनों लंग्स (फेफड़े) साफ हैं और क्षय रोग नहीं है। अब यह खबर आयी, दोपहर को तीन बजे के करीब कि उनकी श्मशान-यात्रा निकल रही है पूना में। अब्बलक खबर सुनी, तब मुझे कबूल करना चाहिए कि मैं एकदम कुछ सुन्न हो गया। मैं कर रहा था काम अपना सफाई का। थोड़ा इधर-उधर घूमा थोड़ी देर और फिर काम में लग गया।

अप्पा के साथ हमारा परिचय-समय १९१९ से है—५२ वर्षों का है। हम दोनों महात्मा गांधी के आश्रम में थे। वे सफाई का काम करते थे और शिक्षक भी थे, मैं भी शिक्षक था। तब से परिचय था। फिर वे कुछ दिन वर्धा आश्रम में भी थे। तब मिलते रहते थे बीच-बीच में, दो-तीन माह में एकाध बार। और, कुछ भी काम करना हो, बाबा से चर्चा किये बिना करते नहीं थे। कुछ दिन से उन्होंने दूध छोड़ा था। मैंने कहा था, यह ठीक है कि दूध छोड़ना चाहिए, लेकिन दूध छोड़ेंगे, तो उसकी जगह क्या चीज लेना चाहिए, उसके प्रयोग करना आदि में नाहक समय जायेगा, इसलिए आप दूध लीजिए, तो उन्होंने दूध लेना शुरू किया था। लेकिन एकाध साल पहले, उनको लगा कि छोड़ सकते हैं, तो मुझे फिर से पूछा। मैंने कहा कि दूध छोड़ना खतरनाक तो है, लेकिन आप कोंकण में रहते हैं, वहाँ तरह-तरह की वनस्पतियाँ हैं, कटहल है, नारियल है तो दूध के बिना चल जायेगा। वे अत्यंत क्षीण हो गये। ७० पौंड वजन रहा था। उनको शंका आयी क्षय की। उन्होंने पसंद किया कि उरुली में रह कर प्राकृतिक उपचार लें। वे वहाँ गये। प्राकृतिक उपचारवालों ने कहा कि आपका रोग दुरुस्त करने की हमारी शक्ति नहीं है। दुरुस्त होने के बाद हम उनको 'टॉनिक' दे सकते हैं। उन्होंने डाक्टरी (एलोपैथी आदि) उपचार लेने से इनकार कर दिया। लोगों ने जाँच आदि के लिए आग्रह किया, तो कहा कि बाबा कहेगा, तो दूँगा। मुझे पूछा गया तो मैंने टेलिग्राम से आज्ञा दी। 'शरीर खलु धर्मसाधनम्—यह धर्मसाधन है, औषध लेने में हर्ज नहीं।' तब उन्होंने कबूल किया और पूना गये थे।

मैंने जब यह खबर सुनी, तब मैं चला गया बालूभाई (मेहता) के कमरे में और उनको सहज विनोद में कहा, 'सुबह सुना था कि अप्पासाहेब ठीक है और अभी श्मशान यात्रा की खबर सुनी। तो मैंने सोचा कि सुबह बालूभाई को देखा था, अब देख लूँ, है या नहीं?' बात यह है कि मनुष्य को मरने के लिए रोग की जरूरत नहीं है। जब उसके प्रारब्ध का क्षय होता है, तब वह रोग से, रोग के बिना भी मरेगा। प्रारब्ध क्षय के बाद अच्छा आरोग्यवान शरीर होने पर भी, परिपक्व फल के जैसा वह गिर जायेगा। लोग कहेंगे, अच्छा था, रामनाम ले रहा था, कचरा चुनकर टोकनी में डाल रहा था, कुछ हुआ नहीं, एकदम गिर गया, मर गया।

इस जन्म में किस प्रकार की जिंदगी जीना—रोगी की रोग-मुक्त की, योगी की, संन्यासी की, भक्त की यह अपने हाथ की बात है, परंतु आयुष्य पुराने कर्म से तय हुआ है। इसलिए आयु-वृद्धि या आयु घटा नहीं सकते। इस वास्ते प्रारब्ध का क्षय होने के बाद मनुष्य खतम हो जाता है। किसका प्रारब्ध किस क्षण खतम हुआ है, इसका ज्ञान होता नहीं। मनुष्य किसी भी क्षण मर सकता है।

बाबा ने बचपन से कुछ नियम किये थे। एक था ब्रह्मचर्य पालन। एक था कर्जा कभी लेना नहीं, कभी देना नहीं। कर्जा देते हैं या लेते हैं, तो वायदा करना पड़ता है कि चार महीने के बाद वापस देंगे। यानी चार महीने जिंदा रहने की जिम्मेदारी उठाने वाली। यानी ईश्वर की सत्ता अपने हाथ में ली। इसलिए बाबा कभी वचन देता नहीं कि फलाने तारीख को फलाना करूँगा, करने का विचार है कहता है। तब तक जीऊँगे या नहीं कौन जानता है? इसलिए सोने के पहले देखता है कि कर्तव्य शेष है क्या? है, तो अभी कर डालता है। क्योंकि निद्रा यानी मृत्यु का पूर्व प्रयोग है। इसलिए बाबा रात को भगवान स्मरण कर लेट जाता है नामस्मरण पूर्वक, और सोचता है कि शायद कल शरीर न भी उठे। परंतु आज की रात आखिरी रात समझ कर बाबा बराबर अपना काम पूर्ण कर लेता है। भूदान-ग्रामदान आंदोलन में बाबा ने हिसाब बताया था कि इतने-इतने किये बाकी हैं, इतना-इतना काम बाकी है, लेकिन रात को बाबा भगवान की गोद में जायेगा, और भगवान अगर कहेगा कि 'आज आना है' तो बाबा यह नहीं कहेगा कि दो महीने और दो, कुछ काम बाकी है। बाबा कहेगा, मैं आने के लिए इसी क्षण तैयार हूँ। यह वृत्ति रखें और सदा सावधान रहें। निरंतर गुण देखें—बल्कि थोड़ा दिखता हो, तो उसको बढ़ायें। यह एक बहुत बड़ी प्रक्रिया है। उससे चित्त शुद्ध हो जाता है। उससे गुण का ढेर चित्त में जमा हो जायेगा। इस वास्ते हमेशा गुण ग्रहण करें। एक-दूसरे को जितना सहयोग दे सकते हैं दें। और आज रात को परमेश्वर के पास जाना है, इस भावना से सो जायें। (दिनांक १०-३-'७१)—विनोबा

प्रकाश में आंदोलन में क्या जोड़ा जाय, क्या छोड़ा जाय, यह नहीं हो पा रहा है।

उक्त समीक्षा और स्थिति दर्शन को आंदोलन में लगे सभी लोगों के समक्ष प्रस्तुत करने की साथ ही हम इस आंदोलन के गत्यवरोध को दूर करने, सेवाग्राम के मकसद को सार्थक करने और पूरे आंदोलन को प्राणवान् बनाने के लिए कुछ अपना निश्चय और निवेदन करते हैं.

(१) इस गोष्ठी में भाग लेनेवाले हम साथी उपर्युक्त भूमिका में अपना अधिकाधिक समय और अपनी अधिकतम क्षमता इस प्रकार के ग्रामस्वराज्य के शक्ति-केन्द्र बनाने के काम में समर्पित करते हैं। हम में से जो लोग अभी इस तरह के शक्ति-केन्द्र बनाने के काम में प्रत्यक्ष नहीं लगे हैं, उन्होंने सहरसा के मोर्चे पर शक्ति लगाने का तय किया है।

(२) देश भर के साथियों से हमारा निवेदन है कि जिनके अन्दर ग्रामस्वराज्य की शक्ति खड़ी करने की तड़प है, वे इस प्रकार के क्षेत्र बनायें और उसमें गड़ें या जहाँ ऐसा प्रयत्न हो रहा है, उससे जुड़ें।

हम यह महसूस करते हैं कि यह इस आंदोलन का तकाजा है, और इस तकाजे को पूरा करने के लिए इस आंदोलन के संयोजक-संगठन सर्व सेवा संघ को अपनी सम्पूर्ण शक्ति इस तकाजे को पूरी करने में केन्द्रित करना चाहिए।

(३) हम यह महसूस कर रहे हैं कि हमारे काम की प्रक्रिया में स्थानीय जन-अभिक्रम खड़ा करके उसको इस आन्दोलन का दायित्व सौंपने का सिलसिला शुरू होना चाहिए।

(४) जन-अभिक्रम खड़ा करने के लिए ग्रामदान के अलावा दो बातों पर हम जोर देना चाहते है। वैसे तो तरुण-शान्ति-सेना और आचार्यकुल का कार्यक्रम चल ही रहा है, पर अब उसे ग्रामदान की भाँति ही एक मोर्चे की तरह हाथ में लेना चाहिए, ताकि शिक्षा में क्रान्ति के प्रश्न पर देश और समाज में जो व्यापक सहमति है, उसको शिक्षा क्षेत्र की यथास्थिति को तोड़ने और समाज-परिवर्तन की शक्ति प्रकट करने के काम में इस्तेमाल कर सकें। वर्तमान राजनीति और सत्तातंत्र को बदलने के लिए ग्रामस्वराज्य की बुनियाद पर लोकनीति की वैकल्पिक शक्ति खड़ी करने का सक्रिय प्रयत्न शुरू करना चाहिए।

(५) हम यह बहुत ही तीव्रता के साथ महसूस करते हैं कि अखिल भारतीय स्तर पर, प्रान्तीय स्तर पर, क्षेत्रीय स्तर पर सूत्रबद्धता अनिवार्य है। आन्तरिक संयोजन का सिलसिला नीचे से ऊपर तक तत्काल शुरू किया जाना चाहिए। हमारे आन्दोलन का एक युद्धस्तर पर काम करनेवाला अखिल भारतीय केन्द्र भी हो, यह अनिवार्य लगता है, जहाँ देश भर के आन्दोलन की मौजूदा स्थिति का दर्शन हो, ऐसे कार्य-क्षेत्रों से जिसका जीवत सम्पर्क हो, वहाँ के अनुभवों का आदान-प्रदान हो, आवश्यकताओं की पूर्ति का प्रयत्न हो, और उपलब्धियों का प्रचार-प्रकाशन हो। यह जिम्मेदारी सर्व सेवा संघ को निभानी चाहिए।

साथियो,

हमारा देश ही नहीं, पूरी दुनिया अब उस बिन्दु पर पहुँच गयी लगती है, जहाँ से सच्ची लोकशाही की स्थापना के लिए सैनिक शक्ति पर (दलीय तंत्र पर भी) प्रत्यक्ष नागरिक शक्ति की अनिवार्य विजय का एक महा अभियान शुरू होना चाहिए। ग्रामस्वराज्य उस लोकशाही की स्थापना के लिए बुनियादी आधार प्रस्तुत करता है। इसके लिए लोकशक्ति प्रकट करने का काम वही महायात्रा है। आइये, आने वाले युग के उस सपने को अपनी आंखों में बसाकर उस अभियान के लिए हम एक साथ निकल पड़ें। उस विधायक लोक-विद्रोह के लिए किसी विशिष्ट मार्गदर्शन और नेतृत्व की नहीं, हमारे सामूहिक प्रयत्न और पुरुषार्थ की आवश्यकता है।

अन्त में एक बार हम पुन. अपना निवेदन दुहराते हैं कि अगर आप इस आन्दोलन के प्रत्यक्ष काम से जुड़े साथी हैं, तो अपनी शक्ति इस पर केन्द्रित करें। अगर आप इस आन्दोलन के प्रति सहानुभूति और इससे किसी प्रकार की आशा, अपेक्षा रखते हैं तो प्रत्यक्ष जितना योगदान कर सकते हो, करें। अगर आप वर्तमान स्थिति से असन्तुष्ट हैं तो विकल्प की शक्ति खड़ी करने के इस काम में जुटें।

हस्ताक्षर

(१) रामचन्द्र राही
(२) अमरनाथ
(३) किशोर शाह
(४) सुरेश
(५) बाबूराव चन्दावार
(६) रामचन्द्र भार्गव
(७) सतीश कुमार
(८) कैलाश प्रसाद शर्मा
(९) हेमनाथ सिंह
(१०) रामकुमार सिंह 'अपने'
(११) कुमार शुभमूर्ति
(१२) शिवकुमार मिश्र
(१३) पद्मदेव तिवारी
(१४) रुक्मिणी बहन
(१५) लखन भाई 'दीन'
(१६) लक्ष्मणदेव प्रसाद सिंह
(१७) राममूर्ति

बरेली में तरुण-शान्तिसेना का सराहनीय कार्य

बरेली कालेज उत्तरप्रदेश की सबसे पुरानी, बड़ी और प्रमुख शिक्षण संस्थाओं में से एक है। वर्तमान सामाजिक स्थिति के कारण वहाँ भी हिंसा और अशान्ति फैलानेवाले तत्व सक्रिय रहे हैं। गत वर्ष से इस कालेज में तरुण-शान्तिसेना की स्थापना हुई तब से कालेज के प्रिंसिपल डा० जी० पी० मेहरोत्रा तथा अनेक प्राध्यापकों के सहयोग से केन्द्र के संयोजक श्री प्रेमप्रकाश भाई ने अपने तरुण-शान्तिसैनिक साथियों को लेकर वहाँ के वातावरण को हिंसामुक्त और शान्तिपूर्ण रखने में जो महत्वपूर्ण भूमिका निभायी है, उसकी सब क्षेत्रों में सराहना है। अनेक तनावपूर्ण संघर्षों के शान्तिपूर्ण समाधान में तरुण-शान्तिसेना का उल्लेखनीय योगदान रहा है।

—विनय अवस्थी

परिचर्चा

दलगत चुनावों से ग्रामों का आत्मनिर्भर होना असंभव

लखनऊ विश्वविद्यालय के लोक प्रशासन विभाग (Department of Public Administration, Lucknow University) द्वारा "पंचायती राज की समस्याएँ" विषय पर आयोजित द्विदिवसीय (१६-१७ मार्च) अखिल भारतीय गोष्ठी का समापन करते हुए श्री जयप्रकाश नारायण ने कहा कि दलगत चुनाव के आधार पर वह पंचायती राज नहीं कायम किया जा सकता जिसकी अपेक्षा गांधीजी ने जनता के सामने रखी थी। आपने कहा कि ग्रामसभाओं के चुनाव सर्वसम्मति से होने चाहिए। क्योंकि देश की आकांक्षा के अनुरूप वाले सुदृढ़ एवं लोकप्रिय नेतृत्व का उदय निचले स्तर से ही संभव है। इतिहास बताता है कि भारतीय जीवन को नियमित और निरापद बनाने में पंचायतें प्राचीनकाल से अपना योग देती आ रही हैं।

श्री जयप्रकाश जी ने कहा कि स्वराज्य के बाद इस देश ने संगठन की जिस पद्धति को अपनाया वहाँ की समस्याओं को सुलझाने की कोशिश की, उसमें असफल होने के बाद ही पंचायती राज को सुदृढ़ आधार बनाने का प्रयास किया गया। सरकारीकरण एवं नौकरशाही का पूर्ण आधिपत्य हो जाने के कारण पंचायती-राज योजना विफल हुई। अगर देश की सबसे छोटी इकाई ग्रामसभा में भी राजनीति प्रवेश करेगी तो गाँवों की एकता ही समाप्त हो जायेगी।

आपने प्रथम भागीदारी वाले लोकतंत्र और सामुदायिक विकास के मुख्य पहलुओं की व्यावहारिक विवेचना करते हुए बताया कि सर्वोदय आन्दोलन मौजूदा राजनीतिक ढाँचे को बदलकर ग्राम-स्वराज्य की बुनियाद पर लोकनीति की स्थापना करना चाहता है। सभी राजनीतिक दलों के प्रमुख नेताओं ने ग्रामदान के प्रस्ताव को सर्वसम्मति से स्वीकार तो किया, किन्तु उस पर अमल करने की कोशिश नहीं, बराबर आलोचना ही की जाती रही। फिर भी ग्रामस्वराज्य की स्थापना में काफी प्रगति हुई है। जनता अब थोथे वायदों पर भरोसा नहीं करनेवाली है, उसे तो ठोस निष्कर्ष चाहिए। इसके लिए स्वयं कदम उठाने को वह तैयार भी है। आपने कहा कि योजनाएँ ऊपर से थोपने के बजाय गाँव के स्तर पर गाँव की परिस्थिति के अनुरूप बनायी जानी चाहिए अन्यथा देश नया बननेवाला नहीं है।

इस समापन समारोह की अध्यक्षता अखिल भारतीय पंचायत परिषद के अध्यक्ष श्री एस० के० डे ने की। प्रारम्भ में पंचायत राज विभाग (उ० प्र०) के निदेशक श्री गुलाम हुसैन ने दो दिन की चर्चाओं का सार बताया। प्रो० पी० एन० मसालदान ने स्वागत एवं डा० आर० बी० दास ने धन्यवाद प्रकाश किया।

पंचायती राज की इस गोष्ठी का उद्घाटन उत्तर प्रदेश के पंचायतराज-मंत्री श्री मेंहदान सिंह ने (१६ मार्च को) करते हुए कहा था कि पंचायतों की स्थापना ग्रामीण जनता एवं ग्रामीण क्षेत्रों के सर्वतोमुखी विकास के लिए की गयी थी किन्तु "दलगत राजनीति" के कारण ऐसा संभव नहीं हो सका। आपने ग्राम-प्रधानों द्वारा अपने कर्तव्यों का पालन ठीक से न कर पाने पर खेद प्रकट करते हुए उनको प्रशिक्षित करने की आवश्यकता पर बल दिया। पंचायत-राजमंत्री ने ग्रामीण क्षेत्रों के विवादों को स्थानीय समझौतों के द्वारा सुलझाने पर ही धन और श्रम की सार्थकता बतायी। ग्रामीण क्षेत्रों के विकास में सहायता मिलेगी तथा जनता में आत्मनिर्भरता की भावना भी उत्पन्न होगी।

ज्ञातव्य है कि इस संगोष्ठी ने सरकार से पंचायती-राज की विफलताओं के कारणों का अध्ययन करने के लिए उच्चस्तरीय समिति नियुक्त करने की माँग की तथा सामाजिक परिवर्तन के लिए ग्राम-पंचायतों को "स्वायत्त" बनाने की सिफारिश की। —कपिल अवस्थी

तरुण-शांतिसेना शिविर

गांधी शान्ति प्रतिष्ठान केन्द्र के तत्वावधान में उदयपुर से १४ मील दूर कैलाशपुरी के पास तरुण-शांतिसेना का प्रथम एक दिवसीय परिचयात्मक शिविर आयोजित किया गया। उदयपुर नगर एवं ग्राम-क्षेत्र की पाँच पाठशालाओं के १०१ तरुण छात्रों तथा ७ शिक्षकों ने इस शिविर में भाग लिया।

शिविरार्थियों को तरुण-शान्तिसेना के उद्देश्य, शिक्षा, कार्यक्रम इत्यादि से परिचय कराया गया। —मगन भारती

सर्वोदय और राजनीति

क्रान्ति की प्रक्रिया में पुलिस और फौज के कानूनों से रक्षित शोषकों के समूह को, यदि मेहनतकश जनता का कोई संगठन शस्त्रबल से परास्त कर दे, तो वह हिंसा होगी; और यदि जनता के चुने हुए प्रतिनिधि लोकसभा तथा विधानसभाओं में कानून से विशेषाधिकार समाप्त कर दें तो वह राजनीति होगी; परन्तु यदि जनता आपसी सम्पर्क और सद्व्यवहार से विषमता मिटा दे तो वह लोकनीति होगी, ऐसा सर्व सेवा संघ मानता है। परन्तु ऐसी लोकनीति कायम करने का वैज्ञानिक तरीका क्या है? इसे अभी तक इजाद नहीं किया जा सका है। कोई क्रान्ति आग्रह से नहीं होती है। जनता के मन में चलनेवाली आवश्यकता ही क्रान्ति का आधार बनती है।

सर्वोदय के लोगों का जनता आदर तो करती है, परन्तु समस्याओं का हल राजनीति में देख रही है। आज राजनीति भी एक वास्तविक सत्य है। कुछ मांगों को लेकर जनता आन्दोलित हो रही है और उससे देश की राजनीति में ध्रुवीकरण की प्रक्रिया प्रारम्भ हो गयी है। क्या इस प्रकार के आन्दोलन लोकनीति के द्योतक नहीं हैं? सर्वोदय कार्यकर्ताओं का इस सम्बन्ध में अपना स्पष्ट विचार जनता के सामने रखना चाहिए।

—शिवानन्द वाजपेयी

सर्वोदय केन्द्र, कन्दारी (आगरा)

अब भी चेतें

सर्वोदय (भूदान-यज्ञ) साप्ताहिक में भाई जगदीश चवानी का पत्र पढ़ा। पत्र में उनकी व्यथा, उत्कटता, आतुरता दिखायी देती है। यह पत्र हमारे आन्दोलन के लिए दिशा-सूचक हो सकता है, यदि इसकी गम्भीरता को हम पहचानें। हमारे आन्दोलन में जो गति आती रही, हम उसको थाम कर नहीं चल सके, बल्कि बहाव में बहते गये। नतीजा हुआ कि हम भँवर में आ पड़े हैं।

सुलभ ग्रामदान के बाद सम्भावना थी कि इसे जनमानस पकड़ेगा और अन्तिम इकाई को हम अपनी आकांक्षा के रूप में लाभ पहुँचा सकेंगे, किन्तु जल्दीबाजी में हम प्रखंड, अखंड अनुमंडल, जिला और प्रान्तदान तक बढ़ आये।

एक बार हाजीपुर में सेमिनार हुआ। आचार्य राममूर्ति जी ने जे० पी० की अपील लोगों को सुनाई कि कुछ लोग इसे छाँस से एक-एक प्रयोग क्षेत्र चुनकर बैठें और सन् १९७२ तक अपने बिन्दु पर पहुँचने का लक्ष्य बनायें। नाम लिखाने में पहले आना कानी हुई, बाद में होड़ लगी, मगर संस्था का मोह किसी से न छूटा। बाद में फिर संस्थाओं से कुछ गिने-चुने कार्यकर्ताओं की माँग हुई कि जिले के पैमाने पर कुछ कार्यकर्ता इस काम को उठायें और आन्दोलन में सामूहिक नेतृत्व खड़ा हो। लेकिन संस्थाओं ने क्या किया? वैसे कार्यकर्ताओं को छोड़ने की बातें की, जिनसे पदाधिकारियों का मेल नहीं बैठता था और जो उनकी नजर में घटिया किस्म के लोग थे। परिणाम यह हुआ कि कोई कार्यकर्ता क्षेत्र में नहीं बैठा। मैं स्वयं अपने पुराने काम में लगा हूँ। सिर्फ एक रामकृत भाई (पीरो, शाहाबाद) संस्थामुक्त होकर काम में लगे। हमें अब भी चेतना चाहिए।

—शिलाकान्त मिश्र

मखनाहा, चम्पारन (बिहार)

अभूतपूर्व चुनौती

पाकिस्तान और हिन्दुस्तान अपनी बेमतलब की छेड़छाड़ से दुनिया में उपहास के पात्र बन गए थे। वे ही अब चाहें तो दुनिया के विस्मय का कारण बन सकते हैं। सैन्यवाद को जो चुनौती पूर्व बंगाल में मिली है, अभूतपूर्व ही मानी जाएगी। सैन्यवाद ही है जिसने सब मार्ग रोक दिये हैं और विश्व अपने को संकट में अनुभव करता है। पूर्व में जनबल और जन संकल्प ने तोपों-टैंकों के समक्ष एक नया अचरज घटित कर दिखाया है। वह निहत्थे बलिदान का अचरज है। उसी को अहिंसक सामर्थ्य कहना चाहिये। गांधीजी की कल्पना थी कि उस सामर्थ्य से दुनिया के सब कामकाज चल सकते हैं। और आदर्श समाज, आदर्श राज वह होगा जो उत्तरोत्तर इस सामर्थ्य से काम लेगा और हिंसा का सहारा कम करता जाएगा। (कल से)

—जैनेन्द्र कुमार

मौन भी, अश्रवण भी

विनू कान में फुसफुसायी—"कितने दिन के बाद यह आवाज सुनी !" उसकी बात सही थी। १४ जनवरी से बाबा की आवाज सुनायी नहीं दी थी। लेकिन उस दिन दोपहर, गांधीबाग में खोदते समय एक स्तम्भ, जिस पर कई मूर्तियाँ खोदी हुई हैं, मिला था, तब उन मूर्तियों को निहारते-निहारते बाबा बोल पड़े—"ये रामजी दीखते हैं, यह धेनु है न !" फिर खामोशी।

४ फरवरी की शाम की प्रार्थना के पहले फिर से यह आवाज सुनायी दी—"आज मैं कुछ बोलनेवाला हूँ।" सबके मन कानों में आ बैठे। कालिंदी की कलम इतने दिन आराम कर रही थी, वह फिर से चलने लगी "'"मौन जारी रहेगा, अश्रवण भी। प्रश्नों के उत्तर जब मुझे ठीक लगे, तब वाणी से दूँगा, क्योंकि मेरे देखा, लिखने में मेरा ज्यादा समय जाता है, कुछ थोड़ी थकान भी होती है।"

१२ अक्तूबर, १९७० को बाबा ने स्नान किया था। उसके बाद स्नान ही नहीं किया। उनको उस सम्बन्ध में कुछ कहने पर कह देते थे—"मेरी जैन साधना चल रही है। कितने दिन बिना स्नान के रहेंगे ? पहले लगा, शायद दो-तीन दिन। लेकिन दिन बीते, सप्ताह बीते, महीने बीतने लगे !" एक दिन उन्होंने बताया, "स्नान होगा। बारह फरवरी को। स्नान के बिना स्वच्छता कैसी ? तब द्वार पुरी रहे (नवद्वारे पुरे—नव द्वारों को साफ कर लिया हूँ। हो गया स्नान)।" एक दिन श्री रायचंद भाई की एक किताब देखने में आयी। उसमें 'परमपद प्राप्तिनी भावना' नाम के गुजराती श्लोकों में एक श्लोक था

'नग्नभाव, मुंडभाव सह अस्नानता,

अदंतधावन आदि परम प्रसिद्ध जो'

बस ! अच्छा-खासा आधार मिल गया। एक दिन आश्रमवासियों के सामने इस पर भाष्य भी हुआ।

४ फरवरी की शाम को ९-३० बजे सोने के लिए बाबा लेट गये। १५-२० मिनट के बाद एकदम उठकर बैठे और इशारे से लिखने के लिए कागज पेन्सिल मांगी। लिख दिया, "कल पूर्ण हजामत और स्नान।" इत्तिफाक से वह स्नान का दिन शुक्रवार का था। तब से अब हर शुक्रवार को पूर्ण हजामत तथा स्नान होता है।

किसी ने कहा—"स्नान के बिना तो हमें अच्छा नहीं लगता। बाबा कैसे रहते हैं ?" हमारे स्वामी जी ने कहा—"यह जो लगता है, इसी से बाबा जैसे लोग परे हैं।"

खांसी थोड़ी कम होने लगी और बाबा के हाथ में हंसिया आ गया। फिर से गांधी बाग में बनाये गये अभिध्यान पथ पर बाबा ज्यादा देर दीखने लगे हैं। एक दिन उन्होंने लम्बे झाड़ू की मांग की। मानो बड़े डंडे को बांधा हुआ झाड़ू, जिससे झाड़ू लगाने के लिए झुकना नहीं पड़ता। श्रद्धा ने वह बना दिया। उसके दो प्रकार हैं, एक नारियल का, दूसरा सिंदी का। जिस वक्त जिस झाड़ू की जरूरत होगी वह लेकर बाबा निकल पड़ते हैं। बायें कन्धे पर डण्डेवाला झाड़ू और दाहिने हाथ में हंसिया लेकर बाबा फौज के सिपाही जैसे चलना शुरू करते हैं। सात्यायों ने एक दिन उन्हें देखा, तो कहा—"बाबा झाड़ू लेकर जाते हैं तो जवान के जैसे सुन्दर दिखते हैं।" साम्य-पथ पर गीता छोटा झाड़ू लेकर सफाई कर रही थी। बाबा उसके पास गये और अपना डण्डेवाला झाड़ू उसके हाथ में दिया और कहा, "इससे सुविधा होगी।"

एक दिन सफाई करते-करते बाबाजी के कमरे में झाड़ू के साथ प्रवेश किया। बाबाजी ज्ञानेश्वरी पढ़ रहे थे। "बाबा भंगी हैं—और आचार्य जी भी" ! यूं कह-कर बाबा जी के कमरे में उनके खाट के पास जमीन पर बैठ गये। ज्ञानेश्वरी पढ़कर थोड़ी उसके बारे में चर्चा की।

जब समय मिलता है तो साम्यपथ के बगल के खेत में, या अभिध्यान पथ पर, धर्म पथ पर, कभी लाल बगीचे के सामने सफाई के लिए चले जाते हैं। पत-झड़ का समय है। पत्तियाँ बहुत गिरती हैं। हवा चलती है। इतनी सफाई के बावजूद भी, शाम की प्रदक्षिणा में बाधा पड़ा लगता ही है। बहनों को ज्यादा काम न हो, अध्ययन, ध्यान, चिंतन आदि के लिए समय मिले यह बाबा की इच्छा है। प्रदक्षिणा में बाबा का समय अधिक जाता है। इसका मतलब उनका काम बढ़ता है। उनकी सहानुभूति में बाबा भी रात्रि-प्रार्थना के बाद तुरत सोने के बदले, कभी सफाई में लग जाते हैं, कभी प्रदक्षिणा में साथ हो लेते हैं।

बम्बई के सुप्रीम कोर्ट के एडवोकेट श्री पळशीकर जी बीच में आये थे। वकील भी हों और भक्त भी हों, ऐसा संयोग शायद ही रहता है। लेकिन पळशीकर जी ऐसे अपवाद हैं। उनके प्रश्न कुछ चुनाव के सम्बन्ध में थे, कुछ प्रश्न आध्यात्मिक थे। चुनाव सम्बन्धी प्रश्नों के बारे में बाबा ने लिखा, "प्रश्न १-६ के सम्बन्ध में सर्व सेवा संघ से पूछा जाय। सूक्ष्म-प्रवेश के बाद मैं इसकी ओर ध्यान नहीं देता हूँ।"

प्रश्न—८-१० चमत्कार हो सकते हैं ?

उनमें से कुछ—

१—अहिंसा-सिद्धि के

२—योग शक्ति के

३—काल्पनिक या भाविकों की श्रद्धा के, उनके लिए सही। जाते-जाते पळशीकर जी ने पूछा—"भारत के लिए आगे कैसे दिन हैं ?" बाबा ने लिखा "भारत के और सारी दुनिया के अच्छे ही दिन हैं। मनुष्य अपना व्यक्तिगत जीवन सिद्ध करे तो बस है।"

गागोदा बाबा का जन्म-गाँव—वहाँ के चन्द लोग बाबा से मिलने आये थे। उस गाँव में कुछ काम करने के बारे में उन्होंने अपनी योजना बाबा के सामने पेश की। बाबा ने मराठी में लिख दिया—"

१—कल्पनाएँ अच्छी है, परन्तु एकदम अति कल्पना करनी नहीं चाहिए। एक-एक अमल में लायी जाय।

२—सरकार पर ज्यादा निर्भर न रहें। हो सके उतना गाँव की सामूहिक शक्ति से काम करें।

३—भक्ति की तरफ सबका ध्यान हो। उसके लिए सामूहिक भजन, प्रार्थना इत्यादि की योजना की जाय।

४—गीता प्रवचन का सामूहिक पठन हो।

५—गीताई कण्ठस्थ की जाय।

६—बचपन के हमारे साथी—जो अभी भी जिंदा होंगे, उनको बाबा का सविशेष प्रणाम निवेदन किया जाय।

हमारे घर के देवघर के देवता को हमारा साष्टांग प्रणाम। उस देवता का बाबा को सतत् स्मरण रहता है।"

खादी कमीशन के सदस्य श्रीमनमोहन चौधरी बम्बई से वापस जाते हुए कल यहाँ आये थे। उन्होंने खादी सम्बन्धी चर्चा की। जब वे बिदा लेने आये तब बाबा ने लिखा—"रमा देवी, मालती देवी, नब बाबू और अन्य कार्यकर्ताओं को हमारा प्रणाम निवेदन करना। हम सूक्ष्म अभिध्यान से सब सेवकों के साथ सम्बन्ध रखने की कोशिश करते हैं।"

श्री ध्वजा बाबू बम्बई से बिहार लौटते हुए रास्ते में वर्धा उतरे थे। बाबा से मिलने आये थे। उनको खादी के बारे में लिख दिया—"खादी को मदद के बजाय प्रोटेक्शन (संरक्षण) की जरूरत है। वह जैसा आप सोचते हैं, ग्रामस्वराज्य समिति भी दे सकती है।" ध्वजा बाबू ने जब बताया कि वे अब सहर्षा जिले में ज्यादा समय देनेवाले हैं तब बाबा ने लिखा—"बाबा देह से यहाँ है। पर चित्त उसका सहरसा में है।"

१२ फरवरी को बापू के श्राद्ध-दिन के निमित्त धाम नदी के किनारे मेला लगता है। उस दिन दिनभर भीड़ रहती है। गांधी स्तम्भ के पास प्रार्थना, गीताई पाठ होता है। बाबा से अनुरोध किया गया कि बाबा वहाँ जायें। बाबा ने लिखा—"बाबा अपनी जगह बैठा है। कल किसी से मिलना नहीं। नमस्कार से छुटकारा।"

१२ फरवरी को दिनभर दर्शनार्थियों का तांता लगा था। स्वर्गीय जाजूजी की पुत्रवधू यमुना बहन, बाबा के दर्शन के लिए आयीं और कहने लगीं—"आज तो आपको कुछ बोलना चाहिए, हमसे कुछ कहना चाहिए।" बाबा ने नजदीक में पड़ा लकड़ी का टुकड़ा उठाया और उस पर लिख दिया कि—'सहरसा जाओ।'

कुछ लोग मन्दिर में भगवान के चरणों में फूल, बेल की पत्ती रखते थे। और इधर बाबा के कमरे में आकर खाट पर आकर भी फूल, पत्ती चढ़ाकर जाते थे। गुरुदेव सेवामण्डल की तथा ब्रज देवी की भजन मण्डली आयी थी। 'गोपाला गोपाला देवकीनन्दन गोपाला' के संकीर्तन से पन्द्रह-बीस मिनट तक सबको भक्ति की मस्ती में झुमाया। बच्चे तन्मय होकर नाच रहे थे। बाबा की आंखों से आँसुओं की धारा बह रही थी।

पुल गाँव के कैन्टोन्मेन्ट आर्मी के कुछ अफसर बाबा के दर्शन के लिए आए। वे सिक्ख थे। बाबा ने लिखा—'एक सिक्ख सवालाख बराबर, ये सब मिलकर कितने होंगे ?" जय भाई ने उनको यह पढ़कर सुनाया। तब वे सब हँस पड़े। उन्होंने पूछा—'भारत की उन्नति के लिए मिलीटरी का क्या कर्तव्य है ?' बाबा ने लिखा—'निर्भो निरवैर' यह तो बाबा नानक ने बताया ही है। सबको निर्भय और निरवैर बनाना यह हमारी मिलटरी का काम है। (मैत्री से) —कुसुम

मुजफ्फरपुर की डाक

उत्तर भागलपुर के अशांत क्षेत्रों में

(गताङ्क से आगे)

२० फरवरी को रात में जे० पी० ने साहु परवत्ता परिवार के लोगों से चर्चा करते हुए अपनी यात्रा का उद्देश्य स्पष्ट किया। इसके पूर्व श्री रमावल्लभ साहु ने अपने परिवार का परिचय कराया और जे० पी० का स्वागत किया। परिवार के एक सदस्य श्री सूर्यबली साहु ने चर्चा करते हुए कहा कि हमलोगों के परिवार की सदस्य संख्या १,००० के लगभग है। उन्होंने भी अशांति और आतंक की कहानी अपने ढंग से रखी। उनकी बातों से लग रहा था कि आग्नेय अस्त्रों से लैस होते हुए भी वे लोग काफी आतंकित हैं। इनके परिवार की भी साठ बीघे की फसल और पचास बोरा अनाज पिछले दिनों लूट लिया गया था, ऐसा उन्होंने बतलाया। उनके अनुसार लूट-पाट की घटनाएँ पिछले एक-दो वर्षों से हो रही हैं।

साहु-परिवार साहु-परवत्ता में रहता अवश्य है, किन्तु इसकी खेती पास-पड़ोस के क्षेत्रों में फैली हुई है। बटाईदारी और बेदखली की तमाम शिकायतें जे० पी० को यात्रा के दौरान मिल चुकी थीं। चर्चा में जयप्रकाश जी ने कहा कि आज गाँव-गाँव में फूट है और गाँव दुर्योधन के दरबार बन गये हैं। हमलोगों के पास इन समस्याओं का हल है कि गाँव के लोग संगठित हों, गाँव एक हो और नेक हो। ग्रामदान के कार्यक्रम में सभी लोग सबके लिए त्याग करें, यह भावना हो।

जे० पी० ने कहा कि आप लोगों की जमीन १८-२० गाँवों में, इन्हीं तीनों प्रखण्डों में है। आप लोगों को मेरा यही सुझाव है कि आप हमलोगों के कार्यक्रम में शरीक हों। उन सभी ग्रामों में ग्रामदान के आधार पर ग्रामसभाएं बनें और ग्रामसभा के सामने लोग प्रतिज्ञा करें कि वे अपने यहाँ शान्ति स्थापित रखेंगे। अशान्ति के प्रतिकार की भावना ग्रामसभा में हो। ग्रामसभा बनने के बाद वातावरण

में परिवर्तन तभी होगा, जब कि ग्रामसभा क्रियाशील होगी। इसके पश्चात् मालिक-मजदूरों, बटाईदारों, के ५-५ प्रतिनिधि और हमारे लोग साथ-साथ बैठें और इन समस्याओं का स्थायी हल आपसी चर्चा से निकाला जाय।

अपनी चर्चा में मुख्य मुद्दे को अधिक स्पष्ट करते हुए जे० पी० ने कहा कि ग्रामदान के नियमों के अनुसार जैसा आप कहते हैं कि आपके पास १४,००० (चौदह हजार) बीघा जमीन है तो २० बीघा में कट्ठा के अनुसार ७०० (सात सौ) बीघा हुआ। जमीन की भूख आज सारे लोगों में है। आप हमारे इस प्रस्ताव पर विचार करिये। इस प्रकार जे० पी० ने साहु-परिवार के सामने ग्रामदान में बीघा-कट्ठा निकालने का प्रस्ताव रखा। जे० पी० ने साहु-परिवार के लोगों को उनके अमलों द्वारा हरिजनों की ज्यादतियों के प्रति आगाह करते हुए कहा कि कहीं इन दियरों की स्थिति भी बंगाल जैसी न बन जाए, इसपर आप लोग ध्यान दीजिएगा।

चर्चा के अन्त में श्री सूर्यवंशी साहु ने जे० पी० को आश्वासन दिया कि हमलोग अपने परिवार की ओर से ग्रामदान के नियम मानने को तैयार हैं और आप द्वारा शान्ति-स्थापना के कार्यों में मेरे परिवार का पूर्ण सहयोग मिलता रहेगा। साहु-परवत्ता में भी बिहार मिलिट्री पुलिस का एक दस्ता है जिसमें एक नायक, एक हवलदार तथा आठ सिपाही पिछले काफी दिनों से तैनात हैं और यहाँ एक अस्थायी पुलिस स्टेशन कायम किया गया है। यह दस्ता फसल के समय रहता है और अशान्ति की आशंका होने पर अन्य समय भी रहता है।

मजदूर और भूमि-मालिक आमने-सामने

जे० पी० गाँव में घूमकर लौटे तो उनके कैंप पर सैकड़ों हरिजन अपनी-अपनी समस्याएँ लेकर पहुँचे हुए थे। अधिकांश लोग साहु-परिवार द्वारा की गयी ज्यादतियों की चर्चा कर रहे थे। हरिजनों के समूह में कुछ महिलाएँ भी थीं। साहु परिवार के लोग भी पहुँच गये थे। जे० पी० वहीं बाहर एक कुर्सी पर बैठ गये। वहाँ शायद पहली बार मालिक-मजदूर और बटाईदार अपनी-अपनी शिकायतें आमने-सामने रख रहे थे। सारा वातावरण एक खुली अदालत का दृश्य प्रस्तुत कर रहा था।

यहाँ पर हरिजनों ने, जिन्हें भूदान में जमीन मिली थी, भी चर्चा की। दोनों पक्षों की बातें सुनने के बाद जे० पी० ने दोनों पक्षों को सुझाव दिया कि वे लोग अपनी समस्याओं को शान्तिपूर्ण ढंग से आपसी चर्चा करके सुलझाने का प्रयास करें। उन्होंने आश्वासन दिया कि भूदान, किसानों को जिस जमीन से बेदखल किया गया है, उसपर अविलम्ब कार्रवाई की जायगी। आप लोग शान्ति रखें, हमलोग कोई न कोई रास्ता अवश्य निकालेंगे, क्योंकि अहिंसा के तरकस में एक ही तीर नहीं है।

जे० पी० की इस यात्रा के साथ ही नरघटिया, बिहपुर तथा गोपालपुर प्रखंडों में ग्रामस्वराज्य का सघन कार्य प्रारम्भ कर दिया गया है। श्री भाई गोखले तथा श्री नागेश्वर सेन की देख-रेख में यहाँ का काम चलेगा। जे० पी० ने आश्वासन दिया है कि वे भी समय-समय पर यहाँ आते रहेंगे।

मादापुर शिविर

मादापुर चौबे ग्रामदानी गाँव के नियंत्रण पर ७ मार्च को श्री व्रजा-प्रसाद साहु की अध्यक्षता में और जे० पी० की उपस्थिति में एक शिविर प्रारम्भ हुआ जिसका संचालन श्री कैलाश प्रसाद शर्मा ने किया। बैठक में ३९ ग्रामसभाओं में से ३३ ग्रामसभाओं के पदाधिकारीगण उपस्थित थे। तथा अगल बगल के गाँवों के स्त्री-पुरुष भी उपस्थित थे। कुल उपस्थिति करीब ४०० (चार सौ) थी।

पहले से ग्रामसभाओं की ओर से प्रगति प्रतिवेदन की माँग की गयी थी जिसके अनुसार ग्रामसभाओं का प्रतिवेदन प्राप्त हुआ था। गाँवों का प्रतिवेदन सभा में पढ़कर सुनाया गया। प्रतिवेदन में निम्नलिखित जानकारियाँ दी गयी थीं।

ग्रामसभा की बैठकों की संख्या, कार्यसमिति की बैठकों की संख्या, ग्रामकोष-संग्रह और खर्च का ब्योरा, शान्तिसेना के गठन की जानकारी तथा विकास के लिये किये गये कार्यों की जानकारी। इसके अलावा पुलिस प्रशासन-मुक्ति कार्यक्रम में मुकदमों के आपसी निपटारे की जानकारी। प्रगति-प्रतिवेदन में जहाँ कुछ गाँवों की ग्रामसभाओं की वहीं हो उत्साह-वर्धक सूचना थी तो कुछ गाँव की सामान्य। कुछ एक गाँव ऐसे पाये गये जहाँ ग्रामसभा गठन के बाद कोई सक्रियता नहीं आयी।

प्रतिवेदन सुनने के बाद जे० पी० ने दो घंटा समय लेकर विस्तार से प्रतिवेदन पर अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त की। आपने अच्छे कार्यों के लिए सराहना की, तथा ग्रामसभाओं के लिए करणीय कार्यों को विस्तार से बताया। बीघा-कट्ठा वितरण, ग्रामकोष संग्रह और खर्च, शान्तिसेना, ग्रामदान पुष्टि, विकास के कार्य आदि विषयों पर जे० पी० ने स्पष्टता से पूरी जानकारी दी।

बैठक में ग्रामसभाओं ने भूदान बेदखली और भूदान में प्राप्त अतिरिक्त जमीन का वितरण करने का जिम्मा स्वीकार किया और भरोसा दिलाया कि शीघ्र ही अपने-अपने ग्रामसभाओं में वे इस काम को पूरा करेंगे। बैठक में १८ अप्रैल तक के लिए निम्नलिखित कार्य-योजना स्वीकृत हुई।

(१) अभी १५ पंचायतों में काम हो रहा है। १५ मार्च से बचे हुए अन्य दोनों पंचायतों में काम आरम्भ करके मार्च भर में वहाँ का काम पूरा किया जाय।

(२) जिन गाँवों में दोनों शर्तें पूरी हो गयी हैं, उन गाँवों में ग्रामसभा का गठन कर लिया जाय।

(३) जिन गाँवों में जन-संख्या या जमीन की कोई एक शर्त पूरी हो गयी है,→

बिहार ग्रामदान अधिनियम
संशोधन के कुछ विचारणीय बिन्दु

भारत के विभिन्न राज्यों में ग्रामदान अधिनियम बने हैं। कुछ शाब्दिक अन्तरों के अतिरिक्त सभी में एकरूपता है, इस कारण इस प्रस्तावित संशोधन का लाभ पूरे देश को मिल सकेगा। जहाँ अधिनियम बने हैं, वहाँ सुधार करने में सुविधा होगी। जहाँ बन रहे हैं, उनको बनाने में मदद मिलेगी। दूसरी ओर सारे देश के वैसे सज्जन, जो इस दिशा में चिन्तन-मनन करते हैं, उनके ज्ञान का लाभ बिहार को मिले, इस दृष्टि से बिहार की सहज अपेक्षा होगी कि वे अपने मन्तव्य जे० पी० के पास लिख भेजें।

परिभाषा

सभी राज्यों के अधिनियमों में शब्दान्तर के साथ ग्रामदान शब्द की परिभाषा *निम्न प्रकार से दी गई है—*

'ग्रामदान से तात्पर्य है इस *अधिनियम* के प्रयोजनार्थ एवं इसके उपबंधों के *अनुसार* किसी *गाँव में भूमि* का स्वैच्छिक दान।''

ग्रामदान सिर्फ भूमि का दान नहीं है। इस प्रकार यह संकुचित परिभाषा है। इसके बदले निम्नलिखित परिभाषा सुझायी गयी है :

''ग्रामदान से तात्पर्य है आचार्य विनोबा भावे से प्रणीत आन्दोलन के द्वारा इस अधिनियम के उपबंधों के अधीन आपसी सहकार एवं स्वानुशासन के आधार पर ग्रामस्वराज्य की स्थापना।''

परिभाषा की धारा में वासगीत भूमि, आदिवासी तथा सर्वसम्मत, आदि शब्दों की परिभाषाएँ जोड़ी गयी हैं तथा भू-स्वामी की परिभाषा में ट्रस्टी, मठ के सेवायत, वक्फ के वाकीफ, मुतवल्ली आदि को दाखिल किया गया है। वासगीत भूमि की सामान्य परिभाषा देते हुए एक ओर इसे ग्रामदान गाँव की शर्त पूरा करने के लिए गाँव के ५१ प्रतिशत जमीन के गणित के लिए भूमि माना गया है, पर दूसरी *ओर बीघा-कट्ठा निकालने में* इसे दाता की कुल भूमि में शुमार नहीं किया गया। मठों के सेवायत, ट्रस्टी, *वक्फ के मुतवल्ली आदि को यदि इस धारा* में भूस्वामी की हैसियत नहीं दी जायगी तो ऐसी संस्थाओं की जमीन ग्रामदान *से बाहर रह जायेगी। यह भी व्यवस्था* करनी होगी कि इस अधिनियम में इस *प्रकार की गयी परिभाषा इस अधिनियम* के लिए *अन्य* अधिनियमों पर भी प्रभावी मानी जाय।

'गाँव' शब्द की परिभाषा भ्रामक है। अब तक कोई योग्य परिभाषा ध्यान में नहीं आयी है। भौगोलिक *बन्धन नहीं* रखा जा सकता। एक राजस्व गाँव में कई टोले हैं। ऐसा राजस्व गाँव, जहाँ के कुछ टोले ही ग्रामदान में शरीक हैं, वहाँ कठिनाई यह आ जाती है कि ग्रामदान गाँव की भूमि तथा उस राजस्व गाँव के अन्य गाँवों की भूमि मिलीजुली होने के कारण भौगोलिक सीमा नहीं की जा सकती। जनसंख्या का प्रतिबन्ध भी कई प्रश्न उत्पन्न कर देता है। एक ओर जनसंख्या का प्रतिबन्ध कई छोटे गाँव का, जिनकी सहज संस्कृति एव भौगोलिक इकाई है, अन्य गाँव के साथ मिलने को बाध्य करेगा; दूसरी ओर आर्थिक दृष्टि से इतने छोटे गाँव की स्वतंत्र इकाई बनती नहीं है। इन सभी बिन्दुओं पर विचार कर कोई-न-कोई कार्यकारी हल ढूँढ़ निकालना ही होगा।

ग्रामदान

सभी राज्यों के ग्रामदान अधिनियमों की प्रमुख धारा 'ग्रामदान के रूप में दान' शीर्षक से है। बिहार, बंगाल, राजस्थान, असम के अधिनियम एवं सर्व सेवा संघ के माडल ग्रामदान एक्ट की धारा ४, महाराष्ट्र के अधिनियम की धारा ५ तथा मध्यप्रदेश के ग्रामदान बिल की धारा २१ में ग्रामदान का मुख्य प्रावधान है। कहीं-कहीं भूमिहीन के ग्रामदान के लिए अलग धारा है। भूदान-किसान के अधिकार तथा ग्रामदान की अन्य शर्तों का समावेश इस धारा में नहीं है। इनके लिए अन्य धाराओं में व्यवस्था है। अधिनियम की इस मुख्य धारा का प्रभाव पूरे अधिनियम पर पड़ता है। बिहार के अधिनियम को सामने रखकर हम इसकी समालोचना करते हुए प्रस्तावित उपबंध को निम्नरूपेण रखना चाहेंगे :

→वहाँ शक्ति लगा कर उन गाँवों में शर्तें पूरी करायी जाय।

(४) २ अप्रैल से ११ अप्रैल तक दो-दो *पंचायतों के ग्रामसभाओं के* पदाधिकारियों का एक द्विवसीय शिविर कर लिया जाय।

(५) यदि अप्रैल के प्रथम सप्ताह में ५० *प्रतिशत* गाँवों में ग्रामसभा का गठन हो जाता है, तो फिर दूसरे सप्ताह में ग्रामसभाओं के प्रतिनिधियों की एक बैठक बुलाकर इसका प्रखंडस्तरीय संगठन कर लिया जाय।

(६) १८ अप्रैल को ग्रामस्वराज्य-कूच (मार्च) का आयोजन किया जाय जिसमें सभी गाँवों से शान्ति सैनिक, ग्रामदानी किसान, ग्रामस्वराज्य के नारे लगाते हुए, ग्रामस्वराज्य के बैनरों के साथ गाँव-गाँव से पैदल चल कर मुजफ्फरपुर शहर में टाउन हाल के मैदान में इकट्ठे हों, जहाँ अगले कार्यक्रम की रूप-रेखा घोषित की जाय। इस सभा को जयप्रकाश नारायण संबोधित करें।

माधोपुर ग्रामसभा के मंत्री, श्री मडलेश्वर तिवारी के इस सुझाव को सहर्ष स्वीकार किया गया कि बाकी काम को अप्रैल माह में पूरा करके मुसहरी के प्रत्येक ग्रामसभाओं से दो-दो प्रतिनिधि नासिक में हो रहे सर्वोदय सम्मेलन में पहुँचें। *(जयप्रकाश शिविर-समाचार से)*

धारा ४ : बिहार का वर्तमान ग्रामदान अधिनियम "ग्रामदान के रूप में दान"—(१) कोई भी भूस्वामी ग्रामदान के रूप में किसी गाँव में अपनी सारी भूमि का दान इस शर्त पर कर सकता है कि वह ऐसी भूमि का अधिक से अधिक १९।२० वाँ भाग हो, जो वह उल्लिखित करे, या बिहार लैंड रिफार्म्स (फिक्सेशन आफ सीलिंग एरिया एंड ऐक्विजीशन आफ सरप्लस लैंड) एक्ट, १९६१ (बिहार एक्ट १२,१९६१) के अधीन अनुज्ञेय अधिकतम क्षेत्र हो, जो भी कम हो, इस अधिनियम के उपबंधों के अधीन रहते हुए ग्रामदान किसान के रूप में धारण करेगा, जिस आशय की घोषणा वह यथाविहित रूप और रीति से अध्यक्ष के समक्ष दाखिल करेगा।

परन्तु जहाँ किसी ऐसे स्वामी ने गाँव में अपनी कोई भूमि भूदान के रूप में दान कर दिया है वहाँ यह उप-धारा इस प्रकार प्रभावी होगी, मानो इस प्रकार दान की गई भूमि भी कुल भूमि में शामिल रही हो।

परन्तु यह और भी कि ग्रामदान-किसान के रूप में स्वधारित भूमि के मानोल्लेख में स्वामी ऐसी भूमि का विनिर्देश कर देगा, जो पट्टे पर दी गई या बंधक रखी गई हो।

(२) उप-धारा (१) के अधीन दाखिल की गयी हरेक घोषणा में यह वचन भी दिया रहेगा कि स्वामी—

(i) उस गाँव के ग्रामदान में शामिल होगा, और

(ii) धारा १७ की उप-धारा (१) के खंड (घ) के उपबंधों के अनुसार, सामुदायिक प्रयोजनों के लिए ग्रामसभा को आवधिक अभिदाय किया करेगा।

परन्तु स्वामी जिस भूमि को सरकार द्वारा दिये हुए अनुदान, पट्टा या समनुदेशन के अधीन स्थायी अधिकारों के बिना धारण करता हो, उसके सम्बन्ध में उसके द्वारा दाखिल की गई कोई घोषणा, जब तक उसे सरकार के पूर्वानुमोदन से दाखिल न किया गया हो तो, मान्य न होगी।

समीक्षा —"कोई भी भूस्वामी··· अपनी सारी भूमि दान इस शर्त पर कर सकता है कि १९।२० भाग ग्रामदान किसान के रूप में धारण करेगा," यानी पूरा दान कर १९।२० वाँ भाग दाता अपने पास रख लेता है। यह कहने में क्या संकोच कि वह २० वें भाग का दान करता है? ग्रामदान के कार्यकर्ताओं ने लोगों को बताया भी इसी भाषा में कि बीघे में एक कट्ठा (बीसवाँ) का दान देना है। कहा जाता रहा है कि भूदान की जमीन बीघा कट्ठा में मिन्हा हो जायेगी। कानून ने इसमें भी दो पेंच पैदा कर दिये। पहला—भूदान में दी गयी जमीन दाता की पूरी जमीन में शामिल मानी जायेगी, यानी एक तरफ वह अपनी कुल भूमि को सूची में दिखे लिखेगा। पुन बीघा-कट्ठा में इसका उल्लेख करेगा। इससे कई प्रश्न उत्पन्न हो जाते हैं। दूसरा—सीधे अर्थ में मनुष्य यह मानता है कि किसी के पास बीस बीघे जमीन है, पहले एक बीघे दान दिया है तो अब नया नहीं देना है। उपर्युक्त धारा के अनुसार "मानो इस प्रकार दान की गई भूमि भी कुल भूमि शामिल रही हो।" यानी, अब २१ बीघे में २१ कट्ठे देने हैं। गाँव के पास खेती की जमीन और वास की भूमि का यदि दो खाता है और उसने पड़ोस के गाँव में भूदान दिया, जो मात्र राजस्व अभिलेख में अलग गाँव है, पर सभी व्यावहारिक प्रयोजनों के लिए प्रत्यक्ष एक गाँव माना जाता है, तो उस दान का मिन्हा नहीं होगा।

किन्हीं की ओर से यह तर्क उपस्थित किया जा सकता है कि शेष १९।२० भाग की मालिकी समाप्त हो जाती है। इस प्रकार यह भी दान ही हुआ। अंग्रेजी के दो शब्द—टाइटिल एवं इन्टरेस्ट व्यवहार में आते हैं। पिता के नाम से जमीन है, पर पुत्र का भी हक है। ऐसा भी संभव है कि नाम पिता का हो, पर वह उनकी ओर-आवाद न होकर पिता से बँटवारा कर लेनेवाले पुत्र के जोत-आबाद एवं दखल-कब्जे में हो। टाइटिल, इन्टरेस्ट पोजेशन आदि शब्द भूमि के सम्बन्ध में महत्त्व रखते हैं। ग्रामसभा के नाम भूमि की मालकियत समर्पित होती है। इसका इतना ही अर्थ हुआ कि सरकार के खाते में दाता के बदले 'ग्रामसभा' का नाम रहा, उसके हक (इन्टरेस्ट), कब्जा (पोजेशन), भाग-तसरूफ (यूजूफ्रक्ट), उत्तराधिकार (सक्सेशन), आदि पर इसका कोई प्रभाव नहीं होता है। इस प्रकार इस दान को पूरे दान के अर्थ में नहीं मानकर इतना कहना काफी है कि शेष भूमि की मालकियत (टाइटिल) ग्रामसभा में अन्तरित होगी।

भूमि के अन्तरण के अधिकार पर अधिनियम में प्रतिबन्ध लगाया गया है। इस प्रावधान की व्याख्या एवं इसके व्यवहार को सही अर्थ में समझना आवश्यक है।

धारा–१७–ग्रामदान-किसान के अधिकार

(ङ) उस भूमि पर ग्रामदान-किसान के रूप में उसके अधिकार दाय-योग्य (हेरीटेबल) तो होंगे, किन्तु अन्तरणीय (ट्रान्सफरेबल) नहीं।

इस धारा ने बिक्री-बंधक आदि का हक समाप्त कर दिया, पर हम आगे देखेंगे कि इतनी मोटी बाँध लगाकर, फिर इसमें किस प्रकार आगे छेद किया जाता है। इस धारा के बाद क्रम से तीन परन्तुक (प्रोवीजो) लगे हैं।

परन्तुक ग्रामदान-किसान

(१) ऐसी भूमि में या उसके किसी भाग में निहित अपना हित, प्रतिफल लेकर ग्रामसभा को अंतरित कर सकेगा,

(२) ग्रामसभा की अनुज्ञा से ऐसी भूमि में का अपना हित या उसका कोई भाग आपस में तय पाये अधेशों और शर्तों पर किसी ऐसे अन्य व्यक्ति को अन्तरित कर सकेगा, जो धारा ४ या धारा ९ अथवा धारा २१ के अधीन उस ग्राम के ग्रामदान में शामिल हुआ हो, जिसमें वह भूमि अवस्थित हो,

(३) ग्रामसभा की अनुज्ञा से ऐसी भूमि में का अपना हित या उसका कोई भाग, यथास्थिति, सरकार या सहकारी समिति या किसी अन्य लोक-संस्था के लिए ऋण को चुकाने के लिए सरकार या सहकारी समिति या किसी अन्य लोक-संस्था के नाम दृष्टि-बंधक रख सकेगा।

अब बात इतनी रही कि जमीन की बिक्री-बंधक होगी पर दो प्रतिबंधों के साथ—ग्रामदान में शरीक लोगों के हाथ जमीन की बिक्री-बंधक दोनों हो सकती है और गाँव से बाहर, संस्था और सरकार के साथ सिर्फ बंधक हो सकती है। अब मान लें कि किसी संस्था ने ग्रामदान-किसान को ऋण दिया। किसान ने ऋण नहीं चुकाया। इस स्थिति में संस्था बंधेज की जमीन नीलाम करती है, पर उस गाँव का कोई आदमी नीलाम नहीं खरीद रहा है तो उस स्थिति में सामान्य न्याय (नेचुरल-जस्टिस) उसे गाँव से बाहर जमीन बेचने का हक देगा।

बिहार में कई वर्गों की जमीन की बिक्री पर प्रतिबंध है। भूदान-किसान भी जमीन नहीं बेच सकते। पर इसका विपरीत फल सब लोगों के सामने है। इनकी मौखिक बिक्री होती है। इन्हें कड़े सूद पर ऋण लेना पड़ता है तथा कम पैसे में दूसरे को जमीन जोतने के लिए देना पड़ता है।

सीधा प्रश्न पूछा जाता है कि यदि ग्रामसभा या गाँव के लोग जमीन नहीं खरीद सकें तो क्या होगा? यह प्रश्न अनुत्तरित है। कितनी ग्रामसभाओं के पास जमीन खरीदने की हैसियत निकट भविष्य में हो पायेगी? इस प्रकार यह सिद्ध होता है कि भूमि-बिक्री पर यह प्रतिबंध अव्यवहारिक है।

जे० पी० के सुझाव पर प्रस्तावित संशोधन

"ग्रामदान के रूप में दान—कोई भी व्यक्ति किसी गाँव के ग्रामदान में, जहाँ का वह वासी है या और उस गाँव में भूमि है, निम्न शर्तों को स्वीकार करते हुए यथाविहित रीति और रूप से घोषणा करते हुए शरीक हो सकेगा :

(१) यदि वह भूमिवान है, तो—

(क) वह अपने गाँव या उससे संलग्न गाँव या गाँवों की अपनी भूमि में से कम-से-कम बीसवें भाग भूमि का दान ग्रामसभा को यथाविहित रीति से भूमिहीनों के बीच वितरण के लिए या इस अधिनियम के अधीन ग्रामसभा द्वारा निर्धारित अन्य उपयोग के लिए देगा,

(ख) उसकी उस गाँव की शेष भूमि की मालकियत ग्रामसभा में अंतरित होगी;

(ग) इस प्रकार अंतरित भूमि या बिहार भूमि सुधार (फिक्सेशन आफ सीलिंग एरिया एण्ड एक्वीजीशन आफ सरप्लस लैंड) एक्ट, १९६१ (बिहार एक्ट १२, १९६१) के अधीन अनुज्ञेय अधिकतम भूमि का क्षेत्र जो भी कम हो उसके तथा उसके हित-उत्तराधिकारियों के कब्जे में इस अधिनियम के अधीन सतत रहेगा;

(घ) वह या उसके उत्तराधिकारी अपने कब्जे की भूमि की उपज में से कम-से-कम चालीसवाँ भाग नियमित रूप में यथाविहित रीति से ग्रामसभा को दिया करेगा,

(ङ) उसे या उसके उत्तराधिकारी को शेष उपज पर पूर्ण अधिकार होगा,

(च) उसको या उसके उत्तराधिकारियों को ऐसी भूमि या इसके किसी अंश को अंतरित करने या बंधक रखने का अधिकार होगा, परन्तु वह ऐसे अंतरण या बंधक रखने के पूर्व ग्रामसभा को सूचित करेगा तथा ग्रामसभा या ग्रामदान-किसान को व्यक्तिशः या सामूहिक रूप से इस प्रकार से अंतरण या बंधक की जानेवाली भूमि को अंतरण करने या बंधक लेने का पूर्वाधिकार होगा।

(२) यदि ग्रामसभा द्वारा निर्धारित उसकी जीविका का मुख्य स्रोत नकदी आय है तो वह यथाविहित रीति से नियमित रूप से प्रतिमाह अपनी नकदी आय का कम-से-कम तीसवाँ हिस्सा ग्रामसभा को दिया करेगा।

(३) यदि वह श्रमजीवी भूमिहीन मजदूर है तो वह प्रतिमाह कम-से-कम एक दिन का श्रम या मजदूरी विनियम द्वारा निर्धारित रीति से और समय पर नियमित रूप से ग्रामसभा को दिया करेगा।

(४) वह उस गाँव के ग्रामदान में शरीक होगा।

(५) इस धारा में अन्तर्विष्ट किसी बात से ऐसा न माना जाय कि घोषक को कोई ऐसा अधिकार प्राप्त हो गया जो घोषणा के अव्यवहित (इमीडियेटली बिफोर) न था।

परन्तु, कोई भूमिवान सरकारी दान, पट्टा या समनुदेशन से प्राप्त भूमि के संबंध में सरकार से अनुमति प्राप्त कर के ही घोषणा कर सकेगा।

परन्तु, यह और भी, यदि किसी भू-स्वामी ने अपने गाँव या उससे संलग्न गाँव में जमीन दी है जो उनकी कुल जमीन के १/२० हिस्सा या उससे अधिक है तो यह माना जायेगा कि इस प्रकार भूदान में दी गई भूमि इस धारा की उप-धारा (१) में दान दी गई है, और ऐसे व्यक्ति इस उप-धारा के दान से मुक्त माने जायेंगे, पर यदि १/२० भाग से कम है तो नये दान के द्वारा कमी की पूर्ति करेंगे।

इस संशोधन में निम्नलिखित विशेषताएँ स्पष्ट दृष्टिगोचर हैं :

(१) जिस प्रकार हम ग्रामदान

समझाते हैं, कानून भी उसी प्रकार सारी शर्तों को रखता है। हिन्दी में कानूनी भाषा थोड़ी जटिल हो जाती है। यह दुःखद है कि इसे हम नहीं मिटा सके। जे० पी० का अंग्रेजी का ड्राफ्ट अत्यन्त सरल है।

(२) सभी राज्यों में इस अध्याय का शीर्षक 'ग्रामदान गाँव' किया है। अब इसका शीर्षक मात्र ग्रामदान किया गया है तथा ग्रामदान की सभी शर्तें इसमें समाविष्ट हैं।

(३) प्रत्येक राज्य के अधिनियम में भूमिवान एवं भूमिहीन का भेद किया गया है, पर नकदी आमदनी करनेवाले का एक अलग वर्ग है। एक किसान के पास दो बीघे जमीन है, लेकिन उसका लड़का पाँच सौ रुपया कमाता है। दूसरा एक बीघा जमीन रखनेवाला व्यापारी लाखों रुपये का कारोबार करता है। क्या ये सब लोग अपनी आय का मात्र चालीसवाँ भाग ग्रामकोष में देंगे? इसके लिए प्रस्तावित संशोधन में आय का तीसवाँ भाग रखा गया है। किसे कृषक मानना है एवं किसे नकदी आयवाला मानना है, यह ग्रामसभा निर्णय करेगी।

(४) भूदान भूमि के मिल्कियत की व्यवस्था में जो वर्तमान धारा में भूल एवं अस्पष्टता है इस प्रस्तावित धारा के द्वारा उसे दूर कर दिया गया है।

(५) सबसे उपयुक्त व्यवस्था बिक्री और बंधक के सम्बन्ध में की गयी है। यदि कोई ग्रामदानी किसान जमीन बेचना चाहता है तो उसे ग्रामसभा को सूचित करना होगा। ग्रामसभा तथा ग्रामदान में शरीक लोगों को ऐसी जमीन लेने का पहला हक होगा। अब अगर गाँव की हैसियत है तथा अपनी जमीन बाहर नहीं जाने देना चाहता है तो वह गाँव से बाहर जमीन नहीं जाने देगा। इस रास्ते के निकलने से अनुत्तरित प्रश्न का निदान मिल गया है तथा गाँव की जमीन गाँव से बाहर न जाने पाये, इसकी समग्र व्यवस्था हो गयी है।

(६) इस व्यवस्था से कई ऐसे जटिल प्रश्न टल गये, जिनकी अब तक आम लोगों को कल्पना भी नहीं होगी। वर्तमान अधिनियम के अनुसार संकल्पपत्र पर हस्ताक्षर करने के बाद ग्रामसभा के गठन तक जमीन की बिक्री-बंधक बन्द रहेगी। ग्रामदान की पुष्टि की रफ्तार को देखकर हम अन्दाज लगा सकते हैं कि यह कितना टेढ़ा प्रश्न है। समस्तीपुर क्षेत्र में बैंकों ने यह सवाल पैदा कर दिया था, किसी प्रकार उसे अभी टाला गया है। बिहार-दान हो गया, बिक्री-बंधक भी चल रही है। जाने-अनजाने कई लोगों पर इसका प्रभाव नित्य पड़ता होगा।

दूसरी टेढ़ी समस्या वर्तमान अधिनियम में यह है कि ग्रामदान-किसान के द्वारा किये गये 'चार-देन' (इनकंबरेन्स) का जिम्मा ग्रामसभा का होता है। कहने को 'ग्रामसभा' को यह अधिकार दिया गया है कि वैसी भूमि को ग्रामसभा ग्रामदान से निकाल दे, जिस पर अधिक चारदेन है, पर व्यवहार में यह दीखता है कि प्रारम्भ में नवगठित ग्रामसभाएँ शैशवावस्था में रहती हैं। चालाक लोग जन्म-काल में ही इसे ऋण के सागर में डुबा देंगे। ऐसे अप्रयोजनीय एवं पेचीदे उपबन्धों को गाँव की सरल व्यवस्था में से निकालना अनिवार्य है। गाँव की एकता बढ़ेगी, गाँव के हाथ में पूँजी होगी तो वह अपने ऋण-मुक्ति की व्यवस्था कर लेगी। इस पुण्य का बोझ देकर ग्राम-सभा की रीढ़ तोड़ने की जरूरत नहीं है।

अन्य संशोधन

(१) ग्रामसभाओं के एक साथ होने की व्यवस्था :—यदि दो या अधिक ग्रामसभाएँ एक साथ मिलना चाहती हैं तो अधिनियम में इसकी व्यवस्था होनी चाहिए।

(२) ग्रामसभा के सदस्य एवं पदाधिकारी :—ग्रामसभा के सदस्यों के तीन प्रकार हैं :—

(क) वैसे व्यक्ति जो ग्रामदानी गाँव के हैं एवं ग्रामदान में शरीक हुए हैं।

(ख) जो ग्रामदानी गाँव में जमीन रहने के कारण ग्रामदान में शरीक हुए हैं, पर गाँव में नहीं बसते।

(ग) जो ग्रामदानी गाँव के हैं, पर ग्रामदान में शरीक नहीं हैं। हमारे प्रस्तावित संशोधन में अनुभव के आधार पर दूसरे एवं तीसरे प्रकार के सदस्यों को पदाधिकार से वंचित रखने का सुझाव है।

पदाधिकारियों के कार्यकाल की मर्यादा की गई है। कोई पदाधिकारी दो कार्यकाल से अधिक समय तक लगातार पदाधिकारी नहीं रह सकता।

सभी राज्यों के अधिनियमों में मात्र ग्रामसभा के सभापति के चुनाव की व्यवस्था को प्रमुखता दी गई है। मंत्री, कार्यसमिति आदि के चुनाव की व्यवस्था गौण या अस्पष्ट है। ग्रामसभा को एक साथ ही मंत्री, कोषाध्यक्ष, न्याय मंत्री आदि का चुनाव कर लेना चाहिए।

भूमि का आवंटन :—बिहार तथा कई अन्य राज्यों के अधिनियम में यह व्यवस्था है कि बीघा कट्ठा की जमीन भूमिहीनों में बँटेगी। यदि उस गाँव की ग्रामसभा अपने सामूहिक निर्णय से कोई सार्वजनिक हित के लिए, यथा—अस्पताल, स्कूल आदि के लिए, जमीन का उपयोग करना चाहेगी तो वर्तमान कानून के अनुसार गलत होगा। प्रस्तावित संशोधन में यह व्यवस्था की गई है कि ग्रामसभा भूमिहीन व्यक्ति में जमीन का वितरण करेगी या अपने सामूहिक निर्णय से अन्य उपयोग करेगी।

ग्रामसभा को पंचायत और पंचायत-अदालत का अधिकार :—वर्तमान अधिनियम में कहीं-कहीं यह व्यवस्था है कि सरकार पंचायत से विचार लेकर ग्रामसभा को पंचायत का अधिकार सौंपेगी। यह व्यवस्था तो तुरत हटानी चाहिए।

पंचायत-अदालत को बहुत थोड़े अधिकार हैं। ये अधिकार भी प्रायः पुरानी पद्धति पर बने हैं। इसमें जे० पी० →

भूदान-यज्ञ २९-३-'७१ लाइसेन्स नं० ए ३४ [पहले से डाक-व्यय दिए बिना भेजने की स्वीकृति प्राप्त] रजिस्टर्ड नं० एल. ३५

धेमाजी (असम) में पुष्टि-अभियान

लखीमपुर जिले (असम) के पूर्व सीमा-क्षेत्र का एक प्रखण्ड है धेमाजी। विनोबा की असम-यात्रा के समय यहाँ सबसे अधिक ग्रामदान हुए थे। इस प्रखण्ड में ग्रामदान अधिनियम के अनुसार मान्यता प्राप्त ५५ गाँव हैं।

इस प्रखण्ड में गत् १२ फरवरी से *ग्रामदान पुष्टि-यात्रा अमल प्रभा दाई-देऊ के मार्गदर्शन में हुई। इस अभियान में असम सर्वोदय मण्डल और स्थानीय* ग्रामदान संघ के सहयोगियों की सक्रिय मदद मिली। तीन टोलियों में बँटकर इन लोगों ने कानूनी पुष्ट ग्रामदान को सक्रिय करने और अपुष्ट ग्रामदान को पुष्ट करने का काम किया। गाँवों में बीघा कट्ठा वितरित कराने और ग्रामकोष *संग्रह करने का काम मार्च तक पूरा* कराने का निर्णय लिया गया है।

अलीगढ़ में राजनीतिक जंगलीपन का तांडव नृत्य

अलीगढ़ में गत मार्च के प्रथम सप्ताह में जो बीभत्स व अभूतपूर्व घटनाएँ हुईं, उन्हें साम्प्रदायिक हिंसा का फूट पड़ना या साधारण चुनाव का दंगा नहीं कहा जा सकता। वह तो भयावह राजनैतिक-शक्ति और मिथ्या-धर्माचरण की निकृष्टतम कट्टरपन की अभिव्यक्ति थी। यहाँ सन् १९४७ से अधिक व्यापक तबाही हुई है। दुकानों की कतार की कतार जला दी गयी और आधा सराफा बाजार नष्ट कर दिया गया। इसके शिकार हिन्दू-मुस्लिम—दोनों ही, और विशेषकर बेचारे वेतन-भोगी व गरीब मजदूर हुए हैं। पीड़ितों को देखने पर यह भी अन्दाज लगाना सम्भव नहीं दीखता कि दोनों में से किसे अधिक क्षति हुई है और इस दर्दनाक घटनाओं के लिए राजनैतिक, साम्प्रदायिक या अन्य कौन-सी ताकतें जिम्मेदार हैं। वातावरण में अब भी तनाव है, और पारस्परिक मनमुटाव व अविश्वास बढ़ गया है। सबसे अधिक दुःख की बात तो यह है कि राजनैतिक नेताओं की शह से उनमें भावनात्मक जोश और भड़क उठा है। इतना ही नहीं, इसमें राज्य तथा केन्द्र की सरकारों के मतभेदों ने ईंधन का काम किया है।

यद्यपि उत्तरप्रदेश की सरकार ने उक्त घटनाओं की न्यायिक जाँच के लिए एक अवकाश-प्राप्त न्यायाधीश की नियुक्ति की है, लेकिन आम लोगों के दिलों के घाव तब तक नहीं भर सकते या शहर में शान्ति उस समय तक नहीं हो सकती जब तक कि धन की भरमार करनेवाले दिल्ली और बम्बई के राजनेता सत्ता-प्राप्ति के तुच्छ विचार को छोड़कर एक राष्ट्र की दिशा में ठोस काम करने की नहीं सोचते। ऐसी सम्भावना शान्ति कार्य में लगे हुए उत्तर-प्रदेश शान्ति सेना समिति के प्रमुख कार्यकर्ता श्री सुरेशराम भाई ने भी व्यक्त की है। उन्हें यह भी आशंका है कि यदि राजनेताओं ने वर्तमान गम्भीर स्थिति को महसूस करके एकजुट होकर काम नहीं किया तो अलीगढ़ राजनीति से प्रभावित साम्प्रदायिक उपद्रवों में उलझकर असभ्य और जंगलीपन के दाग से अपने-आपको मुक्त नहीं कर पायेगा।

(गां० शां० प्र०—चयन से)

→ने कुछ संशोधन सुझाये हैं तथा आगे भी इस पर विचार करना चाहिए। पंचायत का अर्थ गाँव के द्वारा चुना गया न्यायाधीश नहीं, वादी एवं प्रतिवादी के द्वारा नामजद व्यक्ति होना चाहिए। ऐसे व्यक्ति गाँव के बाहर के भी हो सकते हैं। इस बिन्दु पर और भी कई प्रश्नों पर ग्रामदान के संदर्भ में विचार करना चाहिए। दीवानी मुकदमों के सम्बन्ध में ग्रामसभाओं को पंचायतों से अधिक अधिकार होना चाहिए।

अवक्रमण :—अन्त में ग्रामसभा के अवक्रमण की व्यवस्था पर ध्यान देना आवश्यक है। सरकार यदि अवक्रमण (सुपरसीड) करना चाहती है तो उसके पहले उसे ग्रामदान बोर्ड (कमेटी) से राय कर लेनी चाहिए।

अब अधिनियम के अध्यायों का विभाजन निम्न प्रकार किया गया है.

प्रारम्भिक, ग्रामदान, ग्रामदानी गाँव, ग्रामसभा का गठन, भूमि व्यवस्था, ग्रामसभा की कल्याण एवं निर्माण योजना, ग्राम-निधि और प्रकीर्ण (मिसलेनियस)। इस प्रकार के विभाजन से, क्रम से एक विषय के सारे बिन्दु एक अनुच्छेद में आ जाते हैं। वर्तमान अधिनियम की धाराओं को इस प्रकार क्रमबद्ध कर लेना आवश्यक एवं उपयोगी है। —निर्मलचन्द्र, मंत्री,

बिहार भूदान-यज्ञ कमेटी, पटना

इस अंक में

अन्य स्तम्भ

परिचर्चा, आपके पत्र, आन्दोलन के समाचार, मुजफ्फरपुर की डाक

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २७ पै०), विदेश में २२ रु०; या २४ शिलिंग या ३ डालर।
इस अंक का मूल्य २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं मनोहर प्रेस, वाराणसी में मुद्रित

सम्पादक
राममूर्ति
वर्ष : १७
अंक : २७
सोमवार
५ अप्रैल, '७१
पत्रिका विभाग
सर्व सेवा संघ, राजघाट, वाराणसी–१
फोन : ६४३९१ तार सर्वसेवा
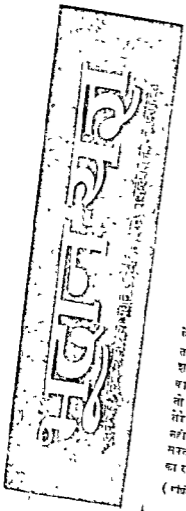
'ना' कहने की शक्ति

एक आदमी को राक्षस ने पकड़ा। राक्षस उससे सब काम कराता।
आराम का तो नाम नहीं। जरा चूँ चपड़ की कि राक्षस धमकी देता कि 'खा
जाऊँगा।' उसे बैठने ही न देता। आखिर उस आदमी ने सोचा कि कब
तक ऐसा चलेगा? इसलिए एक दिन उसने कह ही दिया कि 'जा, काम
नहीं करता, तुझे खाना है तो खा जा।' लेकिन राक्षस ने उसे खाया-वाया
नहीं, क्योंकि एक बार खा जाने पर उसका काम कौन करता? बाद में
आदमी को हिम्मत आ गयी।

संक्षेप में सार यह है कि 'ना' कहने की शक्ति, 'आपके गलत काम में
सहयोग नहीं दूँगा' यह कहने की हिम्मत, हममें आनी चाहिए। ऐसा करते
हुए मरना पड़े तो मर जायँ। मृत्यु से हम न डरें। आत्मा कभी मरती नहीं,
इसलिए हम नहीं मरते। मनुष्य में ऐसी निर्भयता आनी चाहिए। प्रेम से
सब एक होकर निर्भयतापूर्वक सामने वाले को जवाब दें कि आप के गलत
काम में हम मदद नहीं करेंगे। यह है असल अहिंसा।

डरते-डरते घर में बैठे रहें और लड़ाई में न जायँ तो अहिंसा हो गयी,
ऐसा नहीं। बल्कि लड़ाई में जाकर कहना चाहिए कि मैं मरने के लिए
तत्पर हूँ, लेकिन मारूँगा नहीं। यह ताकत है अहिंसा की और यही सही
शक्ति है। छोटा-सा बालक भी अहिंसा की शक्ति से हिंसा के बड़े राक्षस
का मुकाबला कर सकता है। उसे इतना समझना चाहिए कि 'मर जाएगा
तो भी क्या होने वाला है? सदा कायम रहने वाला कौन है? भगवान् ने
मेरे लिए जो दिन तय किया होगा, उसी दिन मरेगा। नहीं, तो कभी
नहीं।' ऐसी अहिंसा की शक्ति के सामने अणु-शक्ति भी कुछ नहीं कर
सकती। यह युक्ति गांधीजी ने सिखायी। उन्होंने इस अहिंसा की शक्ति
का राजनैतिक क्षेत्र में प्रयोग करके बताया।

(गांधी जैसा देखा समझा पृष्ठ ६७, ६८)

—विनोबा

पाकिस्तान की फौजी तानाशाही को सैनिक मदद न दें

—दुनिया के सभी देशों से जयप्रकाश नारायण की अपील—

अपने पिछले वक्तव्य में मैंने आशा व्यक्त की थी कि पाकिस्तान के फौजी और शासकीय नेता बुद्धिमत्ता से काम लेंगे, और शेख मुजीबुर्रहमान और पूर्वी पाकिस्तान की जनता को उस बिन्दु पर जाने के लिए नहीं विवश करेंगे, जहाँ से वे लौट न सकें। घटनाओं ने मेरी इस आशा को गलत ठहराया। राष्ट्रपति याहिया खाँ ने ऐसे आदेश जारी किये जिन्हें मुलायम भाषा में कठोर फौजी व्यवस्था कहा जाता है किन्तु वास्तव में जो पूरी जनता की सैनिक दासता है। जो लोग यह जानते हैं कि पूर्व-बंगाली किस हाड़-मास का बना हुआ है, उन्हें पता है कि यह कार्रवाई असफल ही नहीं होगी, बल्कि यह बंगला देश और उत्तर पश्चिम के लोगों के बीच, जो अब तक उसके देशवासी रहे हैं, भयंकर घृणा, कटुता और परायेपन का कारण बनेगी।

इस परिस्थिति के कुछ पहलुओं की ओर दुनियाँ के लोकतांत्रिक लोगों और सरकारों का विशेष ध्यान जाना चाहिए। शेख मुजीबुर्रहमान को पाकिस्तान की राष्ट्रीयसभा में बहुमत प्राप्त हुआ था। पूर्वी भाग में तो उन्हें ९८.८ प्रतिशत स्थान प्राप्त हुए थे। ऐसे मुजीबुर्रहमान लोकतंत्र के सभी सिद्धान्तों की दृष्टि से पाकिस्तान के *अधिकारप्राप्त शासक* हैं। बंगला देश की आबादी पूरे पाकिस्तान की ५८ प्रतिशत है, इसलिए वास्तव में संयुक्त पाकिस्तान का अल्पमत बहुमत को कुचलने का प्रयत्न कर रहा है। और वह अल्पमत भी बहुत छोटा होगा क्योंकि सिवाय पश्चिम के उन्मत्त पंजाबी मुसलमानों के, सिंध, उत्तर पश्चिमी सीमा तथा बलूचिस्तान के लोग इस फौजी तानाशाही के पीछे इतने एकबद्ध और संगठित नहीं हैं, क्योंकि वे स्वयं किसी-न-किसी मात्रा में स्वायत्तता की मांग करते रहे हैं। *यह आधार काफी है जिसे* लेकर दुनियाँ के लोकतांत्रिक लोग और सरकारें हस्तक्षेप कर सकती हैं, और इस दारुण स्थिति को आगे बढ़ने से रोक सकती हैं। राष्ट्रपति याहिया खाँ धोखे में हैं, *अगर वह मानते हों कि इस कार्रवाई* से वह अपने देश को टूटने से बचा सकते हैं। मेरा निश्चित मत है कि इतिहास इससे भिन्न सिद्ध करेगा।

इसमें कोई सन्देह नहीं कि भारत सरकार की स्थिति नाजुक है। पाकिस्तान में जो कुछ हो रहा है, वह केवल उस देश की भीतरी समस्या नहीं है, भारत का उससे गहरा सम्बन्ध है। इसलिए मुझे आशा है कि प्रधान मंत्री और विदेश-मंत्री राजनयिक स्तर पर सक्रिय होंगे तथा मित्र देशों को इकट्ठा करेंगे ताकि वे मिलकर इस स्थिति में अविलम्ब और प्रभावकारी *कदम उठा सकें। पहली बात* यह है कि कोई भी देश पाकिस्तान की फौजी तानाशाही को सैनिक सहायता न दे और न तो उसकी सेना या सामग्री को पश्चिमी भाग से पूरब की ओर जाने के लिए सुविधा दे।

मुझे आशा है कि कुछ दिनों पहले छपी यह खबर कि ब्रिटिश सरकार ने पाकिस्तानी हवाई जहाजों को मालदीप के अपने अड्डों पर तेल लेने की अनुमति दी, गलत है। —जयप्रकाश नारायण

सिताब दियारा

२७-३-'७१

छपते-छपते

श्री जयप्रकाश नारायण ने २ अप्रैल के अपने एक वक्तव्य में भारत सरकार से 'बंगला देश' को मान्यता देने की माँग की है।

नगर सर्वोदय मंडल का गठन

सर्व सेवा संघ के संशोधित विधान के *अनुसार कानपुर में 'नगर सर्वोदय मण्डल'* के गठन के लिए गत २० मार्च को गान्धी शान्ति प्रतिष्ठान केन्द्र पर शहर के लोक-सेवकों की बैठक हुई। बैठक की अध्यक्षता उ० प्र० सर्वोदय मण्डल के क्षेत्रीय मंत्री *श्री अर्जुन भाई ने की।* शहर के निष्ठावान् सर्वोदय कार्यकर्ता श्री इकबाल बहादुर सिन्हा को सर्व-सम्मति से मण्डल का अध्यक्ष चुना गया। और उन्हें मण्डल के पदाधिकारी तथा कार्यकारिणी नियुक्त करने का अधिकार दिया गया। अध्यक्ष ने कार्यसमिति में श्री एम० जी० वर्मा तथा *श्री रामनारायण त्रिपाठी* को उपाध्यक्ष, श्री महेश चन्द्र गुप्त, श्री शिवसहाय मिश्र तथा श्रीमती सावित्री श्रीवास्तव को मंत्री और डॉ० चन्द्रकान्त रोहतगी को कोषाध्यक्ष नियुक्त किया है।

सर्व सेवा संघ-अधिवेशन

आगामी सर्वोदय सम्मेलन के अवसर *पर नासिक में ही ५, ६, एवं ७ मई* को सर्व-सेवा-संघ का अधिवेशन होगा। संघ अधिवेशन ता० ५ को दोपहर में ३ बजे से प्रारंभ होगा, जिसमें निम्न विषय रहेंगे— (१) ग्रामदान-प्राप्ति, (२) पुष्टि, (३) शांति-सेना, (४) लोकनीति, (५) सत्याग्रह, (६) संगठन, (७) कार्यकर्ता एवं विविध। इनके अलावा और कोई विषय लेना हो तो आप २० अप्रैल तक इस कार्यालय को सूचित करें। आप अपने सर्वोदय-मण्डल की बैठक में इन विषयों पर विचार करके आइये। अन्य कोई विषय लेना हो तो उसके बारे *में भी मंडल की बैठक में सोचकर आइये।* संघ अधिवेशन में आने के लिए सभी लोक-सेवकों को सादर निमंत्रण है।

—ठाकुरदास बंग
मंत्री, सर्व सेवा संघ

आजादी—दूसरी मंजिल

जीयेंगे तो स्वतंत्र होकर, मरेंगे तो स्वतंत्रता के लिए। जिस दिन शेख मुजीबुर्रहमान और उनके देश-वासियों ने यह संकल्प कर लिया, उस दिन उन्होंने दुनिया के इतिहास में एक नया पन्ना जोड़ दिया। बंगला देश के इस स्वातन्त्र्य-संग्राम के बाद कम-से-कम एशिया का इतिहास वह नहीं रहेगा जो आज तक रहा है। और, न तो भारत-पाकिस्तान के सम्बन्ध ही वे रहेंगे जो अब तक रहे हैं।

बंगला देश की यह लड़ाई अब किन्हीं नागरिक अधिकारों के लिए नहीं रह गयी है। स्वायत्तता की माँग भी पुरानी पड़ गयी। अब यह लड़ाई पूर्ण स्वतंत्रता के लिए है—ठीक वही स्वतंत्रता जो भारत और पाकिस्तान को अगस्त १९४७ में मिली थी। लगता है आजादी की पहली मंजिल चौबीस साल पहिले पूरी हुई थी, दूसरी अब पूरी हो रही है। उस समय मुकाबिला था विदेशी साम्राज्यवाद से, इस वक्त है देशी सैनिकवाद-राष्ट्रवाद-उपनिवेशवाद से। घर का दुश्मन बाहर के दुश्मन से कम जालिम नहीं होता, बल्कि ज्यादा। साम्राज्यवाद नहीं चाहता कि कोई राष्ट्र स्वतंत्र रहे, सैनिकवादी राष्ट्रवाद नहीं चाहता कि जनता स्वतंत्र हो।

मुजीब पर यह आरोप है कि उनकी माँग से पाकिस्तान का मजबूत राष्ट्र टूट जायगा। ब्रिटिश प्रधान मंत्री, पाकिस्तान के सैनिक शासक और अति-राष्ट्रवादी नेता तथा भारत के भी कुछ लोग, ये सब ऐसे हैं जिनकी नजर में याहिया खाँ का यह औचित्य है कि वह जो कुछ कर रहे हैं वह अपने राष्ट्र को बचाने के लिए कर रहे हैं। कितना विचित्र है यह तर्क! मुजीब की माँग शुरू से स्वायत्तता की थी—पाकिस्तान के भीतर। लेकिन याहिया और उनके समर्थकों के षड्यन्त्र ने पाकिस्तान के भावी प्रधान मंत्री को 'बागी' बना दिया। चुनाव ने जो चुनाव का रास्ता पकड़ा था जो लोकतन्त्र में मान्य है, लेकिन याहिया में लोकतंत्र की शर्तें पूरी करने का साहस नहीं हुआ। वास्तव में शासकों की राष्ट्रीयता कुछ और होती है, और जनता की राष्ट्रीयता कुछ और। शासकों की राष्ट्रीयता दमन और शोषण में पनपती है, जब कि जनता उससे मुक्ति चाहती है। बेशक, बंगला देश की जनता की लड़ाई पाकिस्तान और इस्लाम के नाम में चलने वाले पशुवृत्ति दमन और शोषण से मुक्ति के लिए है। मुक्ति मानव का जन्म-सिद्ध अधिकार है, उसे कानून-कायदे या नारों में बाँधकर कम नहीं किया जा सकता। जनता को मुक्ति से अगर देश और धर्म को नुकसान पहुँचता हो—शासकों की नजर में—तो उसे अपनी मुक्ति की कीमत चुकानी पड़ती है। बंगला देश की जनता लाखों की संख्या में शहीद होकर जरूरत से कहीं ज्यादा कीमत चुका रही है। इतने पर भी अगर आज का पाकिस्तान टूटता है तो उसकी जिम्मेदारी दमन करने वालों पर होगी, न कि मुक्ति चाहने वालों पर।

अपनी आजादी की लड़ाई में भारत की जनता को इतनी कीमत नहीं चुकानी पड़ी थी। आज बंगला देश की निहत्थी जनता जिस एकता और संगठन का परिचय दे रही है वह बेमिसाल है। भारत की लड़ाई में गांधी की अहिंसा-शक्ति अधिक थी, नागरिक शक्ति कम। बंगला देश की लड़ाई पूरे तौर पर सैनिक शक्ति बनाम नागरिक शक्ति की लड़ाई है इसलिए बन्दूकों के होते हुए भी अहिंसा के अत्यन्त निकट है। असहयोग और अवज्ञा का प्रयोग जिस पैमाने पर, और जिस सफलता के साथ बंगला देश की जनता कर रही है, उस तरह उसका प्रयोग पहले कभी नहीं हुआ था। पराया सत्ता, देशी सरकार तथा पारम्परिक समाज, इन सब में अलग ढंग की अनीति और अन्याय होता है। हर एक के लिए अहिंसा के अस्त्रों का शोध होना अभी बाकी है।

भारत की संसद ने सर्व-सम्मत प्रस्ताव पासकर यह आश्वासन दिया है कि भारत की जनता बंगला देश की जनता के साथ है। स्वतंत्रता और लोकतन्त्र को मानने वाले कौन ऐसे लोग होंगे, या कौन ऐसी सरकार होगी, जिसका समर्थन बंगला देश की जनता को नहीं प्राप्त होगा। हमें आशा है कि शीघ्र वह स्थिति आ जायगी जिसमें दुनिया की अनेक सरकारों के लिए बंगला देश की स्वतंत्र सरकार को मान्यता देना आसान हो जायगा। भारत सबसे करीब का पड़ोसी है। वस्तुतः भूगोल की दृष्टि से बंगला देश भारत की गोद में है। गोद में बैठी बंगला जनता की भारतीय हृदय के स्पन्दन की अनुभूति अवश्य होती होगी। कानून के कागज अपने समय और ढंग से तैयार होंगे, लेकिन हृदय हृदय की पुकार सुनने में देर क्यों करे?

संकट की इस अत्यन्त नाजुक स्थिति में भारत को कठोर संयम बरतना पड़ रहा है। उसे भारत मुजीब षड्यन्त्र के आरोप से बचना है, युद्ध बचाना है, और बंगला देश की जनता को भी बचाना है। उसे दुनिया की सरकारों का सक्रिय सहयोग लेना है, लेकिन बंगला देश और भारत के मुक्ति-संग्राम को दूसरा वियतनाम नहीं बनने देना है। इन स्थितियों को बचाते हुए, बंगला देश के मुक्ति-अभियान को 'बरबाद' से बचाना है। भारत ने सैनिक गुटबंदी से अलग रहकर अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति और सद्भावना के रास्ते पर चलने का प्रयत्न किया है। सर्वोदय-आन्दोलन ने 'जय जगत्' का नारा लगाया है। क्या भारत सरकार, क्या भारतीय जनता और क्या विभिन्न दल और संस्थाएँ, और क्या स्वयं सर्वोदय आन्दोलन, सबकी समान कसौटी है, और होनी चाहिए, कि हमारे पड़ोस में मुक्ति की आवाज डूबने न पाये। तब तक राहत और सहायता के रूप में हम जो कुछ कर सकते हैं करें।

'हड्डी गलानी होगी'

"हड्डी गलाने की तैयारी रखनी होगी!" धीरेन भाई ने हँसते हुए कहा। सहरसा के मोर्चे पर आये हुए विभिन्न प्रदेशों के साथी, सहरसा के 'विनोबा-आश्रम' में धीरेन भाई के पास बैठे गप्प कर रहे थे। सर्वोदय-दर्शन में बुनियादी विचारों की देन देनेवाले धीरेन भाई ने दो खास शब्द भी दिए हैं, गप्प और नाश्ता-मिलन। परस्पर सौहार्द बढ़ानेवाला तथा विचार की सफाई करनेवाला यह 'गप्प' का कार्यक्रम वे निरन्तर चलाये हैं। ७०-७१ वर्षीय धीरेन भाई के पास सहजता से नाश्ता-मिलन होता रहता है, जिसमें उन्नीस-बीस साल के नवयुवक भी महसूस करते हैं कि हम किसी हम उम्र साथी से बात कर रहे हैं।

धोखेबाज महापुरुष

"बाबा ने तो दो माह के लिए सहरसा जाने की बात कही है।" एक साथी ने कहा।

"अरे, ये महापुरुष बड़े धोखेबाज होते हैं। हमें भी एक महात्मा ने कहा था कि एक साल में स्वराज्य मिलेगा। तो हमने एक साल के लिए कालेज छोड़ा था। अब पचास साल बीत गये, अभी भी हम स्वराज्य की लड़ाई लड़ ही रहे हैं।" हँसी का दौर समाप्त होने पर उन्होंने गम्भीरता से कहा :

"आप जो भाई-बहनें यहाँ आये हैं उन्हें समझ लेना चाहिए कि यहाँ का काम किस प्रकार का है। मैंने इस ग्रामस्वराज्य की क्रान्ति के चार चरण माने हैं। उच्चारण, उद्बोधन, अनुमोदन और समर्पण। अब तक का हमारा काम उच्चारण के स्तर पर रहा। बिहारदान होने का मतलब यह है कि हमने ग्राम-स्वराज्य शब्द का व्यापक पैमाने पर उच्चारण किया, गाँव-गाँव, घर-घर उस शब्द को पहुँचा दिया, जिससे देश का और थोड़े हद तक दुनिया का ध्यान खींच लिया।"

जपबल से प्राप्ति, तपबल से पुष्टि

"अब आपको पुष्टि का काम करना है, जो कठिन तो नहीं, कठोर भी है। जपबल, तपबल और बाहुबल, चौथा है दामबल। सनातन काल से ये चार प्रकार के बल माने गये हैं। हममें बाहुबल और दामबल पर आपका विश्वास नहीं है। आपने जपबल से ग्रामदान-प्राप्ति का काम कर लिया, लेकिन पुष्टि के लिए तपबल चाहिए, केवल जप से नहीं होगा। इसी-लिए यहाँ आनेवाले हरएक से मैं पूछता हूँ कि 'तुम यहाँ रमने के लिए आये हो या जमने के लिए? क्योंकि मैं मानता हूँ कि बिना जमे, तप नहीं हो सकता है।'

गप्प के लिए न समय की कोई मर्यादा रहती है, न विषय की। क्रान्ति का गहनतम विचार और काव्यशास्त्र विनोद साथ चलता है। किसी ने कहा, 'गाँवों में बहुत सुनना पड़ता है।' धीरेन भाई ने अपने जीवन की एक घटना सुनायी, "मैं जब कालेज छोड़कर निकला था तब प्रभावती जी के पिता जी स्व० ब्रजकिशोर बाबू से मिलना हुआ। उन्होंने कहा, तुमने बहुत अच्छा किया। लेकिन एक बात याद रखो। सार्वजनिक क्षेत्र में उतरे हो, चिकनिहुद (मजबूत) बनो।'

अन्तर और बहिर्मन में विसंगति

धनबाद से इस आन्दोलन में नये हुए एक वरिष्ठ साथी ने कहा, "चारों ओर हिंसा बढ़ रही है। हमारे काम का कोई असर नहीं हो रहा है। उल्टे नक्सलवादियों के प्रति ही समाज आकर्षित हो रहा है। और हममें से कई साथियों को भी लगता है कि नक्सलवादियों ने कुछ करके दिखाया है।"

इस पर धीरेन भाई ने विस्तार से समझाते हुए कहा, "चिन्ता की बात यह नहीं कि चारों तरफ हिंसा बढ़ रही है, बल्कि यह है कि अहिंसा के काम में लगे हुए आप जैसे कार्यकर्ताओं को लगता है कि हिंसा की विजय हो रही है। और आप का अंतर्मन उस हिंसा में गौरव देख रहा है। ऐसा क्यों होता है?

"बात यह है कि मनुष्य के दिमाग में दो तत्त्व काम करते हैं। आपके जैसे अधिकांश क्रान्तिकारियों का बहिर्मन क्रान्ति के विचार से प्रभावित रहता है, लेकिन अन्तर्मन में जमा हुआ है सनातन काल से चला आया परंपरागत संस्कार, जो हिंसा शक्ति का उपासक है। सनातन काल से मनुष्य यही मानता आया है कि हिंसा शक्ति ही एकमेव शक्ति है। शांति एवं सु-व्यवस्था बनाने के लिए, समाज परिवर्तन के लिए, बच्चों की तालीम के लिए और धर्म-स्थापना के लिए भी मनुष्य ने सामाजिक शक्ति के रूप में हिंसा-शक्ति को ही माना, और उसी के प्रयोग किये। अब आप देख रहे हैं, समझ रहे हैं कि एटमबम के इस युग में हिंसा-शक्ति नहीं चलेगी। इसलिए आपने विचारपूर्वक तय किया है कि सामाजिक शक्ति के रूप में अहिंसा शक्ति को प्रतिष्ठित किया जाय। लेकिन आपके अंतर्मन में तो वे ही परंपरागत संस्कार घर किये हुए हैं। इसीलिए आपको लगता है कि हिंसा में भी कुछ ताकत है। और आपके अंतर्मन में नक्सलवादियों के प्रति आकर्षण रहता है। इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं है। क्योंकि अन्तर्मन में छिपे, परंपरागत संस्कार बलवान होते हैं, लेकिन आपको समझना चाहिए कि आप अभी सच्चे क्रान्तिकारी नहीं बने हैं। आपकी अहिंसा-निष्ठा केवल बहिर्मन तक ही सीमित है। इसी मानसिक विसंगति के कारण आप निराशा के शिकार हो जाते हैं, और कहते हैं कि हिंसा की शक्ति बढ़ रही है। जब तक आपके बहिर्मन और अंतर्मन में यह विसंगति कायम रहेगी तब तक आप चाहे जितना अहिंसा-शक्ति का प्रचार करें, आप विश्वास के साथ हिंसा-शक्ति के विरोध में खड़े नहीं हो सकेंगे। इसलिए आपको प्रयत्नपूर्वक अपने परंपरागत संस्कार बदलने होंगे।"

और थोड़ा दिन में युग बदला। कुछ

लिए जितना अटपटा था उतना ही आवश्यक उनके लिए इसका उत्तर था, क्योंकि सतरवार मैथिल ब्राह्मणों का गाँव है और ब्राह्मणों की ओर से बारी-बारी से अभ्यागत साधु या ब्राह्मणों को खिलाने की व्यवस्था है। मैंने पूछा, "तो जो ब्राह्मण नहीं हैं, क्या उन्हें भूखा ही रखा जाता है ?"

पंडित जी ने कहा, "भूखा तो नहीं, परन्तु उनके लिए चौका आवश्यक नहीं होता।" मैंने अनुमान लगाया, वे दूसरी श्रेणी के मेहमान माने जाते होंगे। दो दिन बाद हमें छुटवा (भूमिहीन वामनों) के विवाह-भोज में आमंत्रित किया गया था, उसके बाद इसका भेद खुल गया।

हमारे देश में कुछ अखिल भारतीय संस्थाएँ हैं, जिनमें जाति संस्था सबसे मजबूत है और बिहार उसका गढ़ मानना चाहिए। आजादी से पूर्व इसकी सीमाएँ चौके-चूल्हे और शादी-विवाह तक ही रही होंगी, अब राजनीति को भी इसने जकड़ लिया है। इसका दर्शन हमें चुनाव के दिन हुआ। दलिपाक से इस क्षेत्र से चुनाव लड़ने वाले दो उम्मीदवारों की उपजातियों के लोग सतरवार में भी थे। दोनों जाति के लोगों ने अपनी-अपनी उपजाति के उम्मीदवार को वोट दिलाये और सबसे बड़ी खूबी यह थी कि इसके सम्बन्ध में एक को दूसरे से कोई शिकायत नहीं थी, क्योंकि यह स्वाभाविक माना जाता है। 'बोगस' वोट दिलाने के सम्बन्ध में भी दोनों उम्मीदवारों के एजेंटों में समझौता हो गया और अपने सामूहिक पुरुषार्थ से वे ७५ प्र० श० वोट दिला सके। इसमें २५ प्रतिशत अनुपस्थित लोगों के वोट भी शामिल हैं।

राष्ट्रीय एकता के संदेशवाहक

जिस घर में मेरे खाने की बारी थी, गृहस्वामी ने अतिथि देवता के लिए लीप-पोत कर चौकी बिछाई थी। खाना आने के बाद वे स्वयं पंखा झलने लगे। जब उनकी बूढ़ी माँ ने यह सुना कि मैं गंगोत्तरी और बदरी-केदार का रहनेवाला हूँ तो वे भी भक्ति-भावना से पास आकर बैठ गयीं और तीर्थयात्रा के सम्बन्ध में अनेक बातें पूछने लगीं। यह क्रम प्रायः प्रत्येक घर में दुहराया जाता है। मेरे दूसरे साथी आगरा के हैं। वे अपना परिचय देते हुए मथुरा-वृन्दावन का हवाला देते हैं। तीर्थ-स्थानों का भारत की आम जनता को कितना निकट परिचय है इसकी अनुभूति मुझे केवल बिहार में ही नहीं, कर्नाटक, गुजरात, महाराष्ट्र और अन्य प्रदेशों के देहातों में भी हुई है। सतरवार के एक घर में गंगोत्री का पवित्र जल है, इसको बताते हुए गृहस्वामी गौरव महसूस करते हैं। प्रतिवर्ष गंगोत्री क्षेत्र से हजारों लोग गंगोत्री का पवित्र जल लेकर सारे भारत में जाते हैं। वे गाँव गाँव की पद-यात्रा करते हुए अपने यजमानों की ओर से इस जल को बैजनाथ और रामेश्वरम् में चढ़ा आते हैं। भारत की राष्ट्रीय एकता के पौधे को गंगोत्री के पवित्र जल से प्रतिवर्ष सींचने वाले इन लोगों के सामने प्लेटफार्म पर राष्ट्रीय एकता के लम्बे-चौड़े उपदेश देने के बाद जाति के नाम पर वोट माँगने वाले तथाकथित राष्ट्रीय नेता कितने बौने हैं ? उत्तर काशी जिले के ग्रामदान अभियान के दौरान के बिहार और मध्यप्रदेश के गाँवों में चलने वाले आंदोलन का आँखों देखा हाल सुनाकर हम ग्रामस्वराज्य का विचार समझाते थे।

सीधा सवाल

मेहमान की मियाद अधिक से अधिक दो ही दिन होती है। हम सतरवार में ग्रामस्वराज्य की स्थापना के सिलसिले में लोगों के विचार जानने के लिए घरों में और बथानों में अलग-अलग बातें कर चुके थे। शिवरात्रि के दिन गाँव के स्कूल में सभा हुई। सौभाग्य से इसी गाँव के एक बड़े भूमिवान शिवशंकर बाबू भी पूर्णिया से घर आये थे। वे पूर्णिया में तेजी से होनेवाले ग्रामदान के बाद भूमि-वितरण के काम को देख आये थे। बंगाल के नक्सलवादी आतंक की बिहार के देहातों पर पड़ने वाली परछाई भी पूर्णिया में अधिक गहरी दीखती है। वे गाँवों में प्रेम, एकता और भाईचारे को बढ़ाने के लिए इसमें शामिल हुए। सभा का निष्कर्ष यह निकला कि इस प्रश्न पर होली के दौरान विचार होगा जब गाँव के सब लोग घर में होंगे। इस बीच हम किसी दूसरे गाँव में जायें।

'किस गाँव में जायें ?' यह सवाल हमारे दिमाग में घूमने लगा। यदि वहाँ से भी यही उत्तर मिला तो ? विनोबा सहरसा में आनेवाले अहिंसक क्रांति के हर सिपाही से अपेक्षा रखते हैं, 'करो या मरो।' एक बुजुर्ग ने कहा, 'अभी तो आपको जाना ही है। जिस घर में आपकी खाने की बारी थी, वे इतने गरीब हैं कि बार-बार मेहमानों को नहीं खिला सकते।' बुजुर्ग की स्पष्ट बातों ने हमारी आँखें खोल दीं। आखिर गाँव की गलियों में दिन भर गप-शप करते हुए घूमने के बाद परसी हुई थाली पर बैठने वालों से कैसा सर्वोदय होगा ? आज भी इस गाँव में हमारे जैसे कुछ शिक्षित बेकार हैं, जिनका दिन ताश खेलकर बीतता है। उनमें और हममें क्या फर्क है ? सिवाय इसके कि हम बातें बनाना जानते हैं। उनके पास भूमि है, जिस पर दूसरों से मेहनत कराकर वे खाते हैं। हम भी दूसरों की कमाई खाते हैं और उसके साथ-साथ प्रातः सायंकाल की प्रार्थना में दुहराये जाने वाले एकादश व्रतों में 'शरीरश्रम' के व्रत को भी पचा जाते हैं। कभी-कभी धुन में यह भी गाते हैं, 'पोस्ट खावे ओर बहावे, गीता की आवाज है।'

इन दिनों मैं रात को करवटें लेता रहता था। नींद नहीं आती थी। इसका कारण अब समझा। पहाड़ी आदमी के जीवन में चलने-फिरने और बोझ ढोने के श्रम सामान्य हैं। वह यदि श्रम न करे तो कैसे नींद आयेगी ? मैंने अपनी व्यथा ग्रामवासियों के सामने प्रकट की। हम दोनों ने होली तक गाँव में ही रहने का निश्चय किया और उनसे मेहनत-मजदूरी के कामों की माँग की। काम की माँग

इटली के गांधी डेनिलो डोलची के केन्द्र पर

पलेरमो में जब हवाई जहाज नीचे उतर रहा था तो सामने नजर आनेवाले नंगे और उबड़-खाबड़ पहाड़ भद्दे लग रहे थे, परन्तु हवाई अड्डे पर जमा होनेवाली भीड़ ऐसी नहीं लग रही थी। मैंने यूरोप में ऐसी हंसती खेलती, चहकती-चिल्लाती भीड़ कहीं नहीं देखी थी। मैंने समझा कि वे किसी राजनीतिक व्यक्ति का स्वागत करने आये हैं, परन्तु ऐसी बात नहीं थी। वे अपने मित्रों और रिश्तेदारों का स्वागत करने आये थे, जो उसी जहाज से आ रहे थे। गले मिलते, चूमते और हाथ मिलाते हुए लोगों के बीच अपना रास्ता निकाल लेना एक कठिन काम था।

यह सिसिली की पथरीली जमीन और वहां के खुश-मिजाज और मेहमान-नवाज लोगों से मेरा पहला परिचय था। मैं वहां डेनिलो डोलची के कार्यों का नजदीक से परिचय प्राप्त करने गया था।

मैं जब वहाँ पहुँचा तो डोलची नहीं थे। वह एक अन्तर्राष्ट्रीय सेमिनार में शिरकत करने वियना गये हुए थे। उनके एक नौजवान साथी 'ओराजियो' मुझे लेने आये थे। हम दोनों २० किलोमीटर का रास्ता तय करके तर्प्पेतो पहुँचे। यह रास्ता भूमध्यसागर के किनारे-किनारे गया था, जो यात्रियों के लिए उसकी सुन्दर झांकियां प्रस्तुत करता है। तर्प्पेतो समुद्र किनारे एक छोटा सा गाँव है और डोलची का केन्द्र इससे कुछ दूर पर है। यह टापू में उन चारों केन्द्रों में से एक है, जिनके द्वारा वह और उनके दो दर्जन साथी टापू की बहुत सारी समस्याओं को अहिंसक तरीके से सुलझाने की कोशिश कर रहे हैं।

डोलची पेशे की दृष्टि से इन्जीनियर थे। २० साल पहले इस टापू के लोगों की गरीबी और उनकी दयनीय परिस्थिति से प्रभावित होकर उनकी समस्याओं का अहिंसक समाधान खोजना उन्होंने अपना उद्देश्य बनाया तब से वह वहीं हैं। बेकारी और गरीबी ने एक ऐसी परिस्थिति को जन्म दिया है जिसमें जुर्म करना एक प्रकार का जीवन ही बन गया है। सैकड़ों आम परिवार डकैती और लूट में व्यस्त हैं और इस परिस्थिति का लाभ माफिया वाले उठाते हैं। माफिया शताब्दियों पुराना एक अपराध समाज है जो हर प्रकार के जुर्म—खून, चोर-बाजारी, तस्कर व्यापार—आदि करता है। राजनीतिज्ञ लोग इस समाज का अपने उद्देश्यों की पूर्ति के लिए इस्तेमाल करते हैं। इससे इस समाज को एक राजनीतिक बल भी मिल जाता है, जिसके कारण इसका विरोध करना कठिन हो जाता है। यहाँ की परिस्थितियाँ चम्बल घाटी की याद दिलाती हैं।

डोलची जब से यहाँ आये हैं, उन्होंने गरीबी, भूख और माफिया के भय के बुनियादी समस्याओं को सुलझाने की कोशिश की है। इसके लिए उन्होंने कई अवसरों पर उपवास भी किये हैं, और हड़ताल के नये तरीके प्रयोग में लाये हैं, ताकि इटैलियन सरकार इन समस्याओं पर ध्यान दे, और उनके लिए कुछ करे। इस नये हड़ताल का विचार उस समय पैदा हुआ था, जब वह बेकारी की समस्या सुलझाने के लिए किसी प्रकार की सीधी कार्रवाई की खोज में थे। काम करनेवाले लोग काम रोक सकते थे, और हड़ताल कर सकते थे, परन्तु जिनके पास काम ही नहीं था वह क्या कर सकते थे? इसलिए उनमें यह विचार पैदा हुआ कि वह एक सरकारी सड़क की मरम्मत का काम करेंगे। सरकारी मिल्कियत में दखल देना हर जगह जुर्म है, इसलिए डोलची और बहुत सारे दूसरे लोग गिरफ्तार कर लिये गये और उन पर मुकदमा चलाया गया। एक सड़क, जो खराब हालत में थी उसकी मरम्मत करनेवालों को गिरफ्तारी और उन पर मुकदमा चलाये जाने की बात अखबारों में मनमनोविनोद बनकर आयी और सरकार का मजाक उड़ा। इससे डोलची का काम बन गया। इसी तरह की वजह से वह इटैलियन गांधी कहलाये।

जिस दिन मैं वहाँ पहुँचा, सप्ताह भर का एक अन्तरराष्ट्रीय सेमिनार वहीं शुरू होनेवाला था। वहाँ योरप और अमेरिका से २० आदमी आये थे। सेमिनार का विषय था 'आर्थिक विकास में सहायता करते हुए सामाजिक परिवर्तन कैसे लाया जाय।' जाहिर है कि हर जगह के सामाजिक कार्यकर्ताओं को हम लोगों की तरह की समस्याओं का मुकाबिला करना होता है। लोगों की आवश्यकताएँ हमें आर्थिक विकास के लिए कहती हैं, परन्तु उससे सामाजिक परिवर्तन नहीं आता। कभी-कभी आर्थिक विकास से प्रचलित सामाजिक सम्बन्ध और परिस्थिति मजबूत होती है। यह विषय दिलचस्प था परन्तु वहाँ मुझे केवल डेढ़ दिन ही रहना था। मुझे भारत में ग्रामदान आन्दोलन पर विचार प्रकट करने का अवसर दिया गया। सब लोगों ने इसे दिलचस्पी से सुना। मुझे भी डोलची के साथियों का अनुभव सुनने का अवसर मिला।

इस संस्था के सभी कार्यक्रम परिस्थिति और समस्याओं के वैज्ञानिक अध्ययन पर आधारित हैं। और यह लगातार अध्ययन अभिमुख काम है। चारों केन्द्रों में उन्होंने जो कार्यक्रम लिये हैं उनमें कृषि का विकास, दस्तशिल्प की उन्नति, सहकारिता, शिक्षा में सुधार और माफिया के विरुद्ध लड़ाई मुख्य हैं।

कार्य की बुनियादी योजना इस प्रकार बनायी गयी है.

(१) स्थिति के कारणों और लक्षणों का पता लगाना—काम शुरू करने से पहले परिस्थिति और सिद्धान्त को पूरी तरह परखना। ताकि काम सही परिस्थिति को समझबूझकर शुरू किया जाय।

(२) अपराधमुक्त योजना—समस्याओं के समाधान के लिए प्रयोग में लाये जाने

वाने मार्गमों की सम्भावनाओं का पूर्व- करने से इन्कार करते हैं। डोलची के एक
...ने बताया कि केवल थोड़े से लोग

मे लोगों को परिचित कराने के लिए एक
गुप्त स्वनिर्मित रेडियो स्टेशन स्थापित
। इसकी आयु बहुत छोटी थी
४ घंटे की, जबकि पुलिस ने केन्द्र
। बोल कर उसपर कब्जा कर
परन्तु डोलची का उद्देश्य लोगों
न आकर्षित करने का तब तक
पूरा था।

...तों का केन्द्र स्थानीय सत्ता-
यों के कामों की योजना पर काम
वाले शिक्षकों और दूसरे लोगों के
ग के लिए प्रयोग में लाया जाता
इस समय भी वहाँ पर शिक्षा से
त आधुनिक विचार शिक्षकों को
। रहे थे।

अहिंसक पद्धति से समाज का
। करने वालों के साथ एक डेढ़-दिन
। एक प्रोत्साहित करनेवाला अनुभव
यद्यपि हम भारतवाले उनसे बहुत
', और हमारी और उनकी सभ्यता
संस्कृति में भिन्नता है, पर हमारी
याएँ एक जैसी हैं। कठिनाइयों के
दूर उनका आगे बढ़ने का संकल्प,
शाएँ, आशाएँ और उनकी मित्रता
को स्पर्श करती है।
मैं इन लोगों के लिए बड़े आदर भरे
के साथ रोम वापस गया।

—मनमोहन चौधरी

भूदान-यज्ञ ५-४-'७१ का परिशिष्ट

'बंगला देश को मान्यता दी जाय'

श्री जयप्रकाशनारायण का तीसरा वक्तव्य

मैं बंगला देश की स्थिति के बारे में दो बार कह चुका हूँ। लेकिन वहाँ की तेजी से साथ बदलती हुई स्थिति और तत्काल कदम उठाने की आवश्यकता मुझे फिर कहने के लिए विवश कर रही है। पश्चिमी पाकिस्तान ने बंगला देश में अंतर्राष्ट्रीय रेडक्रास को सेवा के लिए भी जाने से मना कर दिया है। इससे भी बढ़कर कोई नृशंसता हो सकती है। मैं सबसे पहले प्रणाम करता हूँ भारत की संसद को, राज्यों की विधान-सभाओं को—विशेष रूप से उत्तरप्रदेश, बिहार, असम और त्रिपुरा की—तथा इस देश की जनता को, जिन्होंने बंगला देश की बहादुर, किन्तु पीड़ित और प्रताड़ित, जनता का इतने खुले दिल से समर्थन किया है। प्रधान मंत्री ने अभी तक इस परिस्थिति में जो नेतृत्व प्रदान किया है उसके प्रति मैं प्रशंसा के भाव प्रकट करता हूँ।

अब समय आ गया है जब हमें समझना चाहिए कि सहानुभूति के मात्र वादों और संकल्पों से काम नहीं चलेगा। परिस्थिति की माँग है कि उन वादों और संकल्पों पर अमल हो। राहत के लिए ठोस सहायता और दवा आदि की व्यवस्था तो होनी ही चाहिए, हमें अपनी सीमा भी उन सबके लिए खोल देनी चाहिए जो आना चाहें। विशेष रूप से उत्तरी बंगला देश की जनता को दूसरी चीजों के साथ-साथ मिट्टी के तेल और नमक की जरूरत है जैसा कि बिहार के मुख्य मंत्री श्री कर्पूरी ठाकुर ने सीमा पर स्वयं देखा। इसके अलावा हमें इस बात की पूरी चिन्ता करनी है कि बंगला देश का स्वातंत्र्य-संग्राम पश्चिमी पाकिस्तान द्वारा कुचल न दिया जाय। इस दृष्टि से जितनी भी सहायता आवश्यक हो अविलम्ब दी जानी चाहिए। क्या सहायता दी जाय, और हमारा समर्थन किस रूप में प्रकट हो, यह निर्णय सरकार के हाथ में छोड़ देना चाहिए। मैं इतना ही कहना चाहता हूँ कि इतिहास को, जैसा मैंने समझा है, और अन्तरराष्ट्रीय विषयों की जानकारी मुझे है, उसके आधार पर मैं निश्चित हूँ कि बंगला देश को मान्यता देने से अन्तरराष्ट्रीय कानून का कतई उल्लंघन नहीं होगा। श्री छागला और श्री कृष्ण मेनन जैसे विख्यात अन्तरराष्ट्रीय विधि के ज्ञाताओं ने भी ऐसी ही राय जाहिर की।

एक दूसरा निश्चित महत्व का तथ्य यह है कि कभी जो पाकिस्तान था उसका पूर्वी भाग अपरिहार्य रूप से पश्चिमी भाग से अलग हो गया है। कितना भी नर-संहार किया जाय, तथा सेना कितना भी आतंक फैलाये और दमन करे, अब यह तथ्य बदल नहीं सकता।

न्यायालय भी उनकी गवाहियों को रद्द

मुजफ्फरपुर की डाक

अदालत-मुक्ति की दिशा में

डुमरी ग्राम (मुधनगरा पंचायत) की ग्रामदान की शर्तें जिस समय पूरी हो गयी थी, उसी समय ग्रामसभा के गठन के साथ पुराने मुकदमे को भी समझौता-वार्ता से समाप्त कर देने का आपसी विचार ग्रामीणों ने किया। यह मुकदमा, जिसमें डुमरी सहित अगल-बगल के २६७ व्यक्ति मुद्दालह के रूप में फंसे हुए थे, कोई भी विकास कार्य होने देने में बाधा उपस्थित कर रहा था। ज्ञातव्य है कि इस मुकदमे की बुनियाद सन् १९१५ ई० में ही पड़ी थी।

तय हुआ कि मुकदमे से सम्बद्ध प्रमुख लोग जे० पी० से मिलें और उनकी मध्यस्थता में निपटारा कर लें, क्योंकि पूरी संख्या के मुद्दालह को एकत्र करना कठिन था। निर्णयानुसार २२ सितम्बर '७० को डुमरी के सभी सम्बद्ध प्रमुख लोग जे० पी० से मिले और निपटारा-वार्ता शुरू हुई। तब से कैंप के कार्यकर्त्ता सतत् प्रयत्नशील रहे। बार-बार ग्रामीणों की बैठकें उक्त संदर्भ में होती रहीं। कभी-कभी वार्त्ता में अर्ध-रात्रि हो जाती थी। वार्त्ता-क्रम में एक दिन ऐसा हुआ कि कैंप के सभी कार्यकर्त्ता उठकर लौट आये। इसी बीच मुकदमा खुल भी गया। इससे ग्रामीणों ने अपनी प्रतिष्ठा का प्रश्न बनाया। जी-जान से ग्रामसभा एवं ग्राम अदालत के पदाधिकारी सुलझाने में लग गये। मुकदमा खुल गया था, इसलिए अधिक तारीख भी नहीं बढ़ायी जा सकती थी। इस दरम्यान कार्यकर्त्ता की अदालत के वकीलों से कई बार बहस छिड़ी। जब उन्हें ग्रामस्वराज्य आंदोलन के संदर्भ में पुलिस-अदालत-मुक्ति के उद्देश्यों को समझाया जाता था तब वे कायल होते थे। शुरू में तो अदालत के न्यायाधीश महोदय के उत्सुक होने पर कार्यकर्त्ता ने उन्हें भी अभियान का महत्त्व समझाया।

यद्यपि कार्यकर्त्ता ने न्यायाधीश की अदालत में खुद से आकर दोनों पक्षों की ओर से तारीख बढ़वाने का कई बार सफल प्रयास किया, फिर भी ऐसा बराबर ही महसूस किया जाता रहा कि जबतक ग्रामसभा इस जवाबदेही को पूर्णत: न ले लेगी तबतक कार्य सम्पन्न होगा नहीं। अन्तत: हुआ भी यही। डुमरी ग्रामसभा के अध्यक्ष एवं मंत्री धन्यवाद के पात्र हैं जिनके अथक प्रयासों का प्रतिफल इस मुकदमें की परिसमाप्ति के रूप में प्रकट हुआ। यहाँ के ग्रामीण बधाई के अधिकारी हैं जिनकी आकांक्षा २२ मार्च '७१ को पूरी हो गयी।

जगन्नाथ में ग्रामसभा

दुधनगरा पंचायत का सबसे आखिरी गाँव है जगन्नाथ जहाँ १० मार्च '७१ को ग्रामसभा गठित हुई है। यद्यपि यहाँ ग्रामदान की शर्तें पूर्व में हो पूरी हो चुकी थीं, लेकिन दो-चार जागरूक सपन्न किसान ऐसे भी थे जो अबतक शरीक न हो सके थे, जिनके लिए सतु प्रयास जारी था। ऐसा समझा जाता था कि उनके सम्मिलित हुए बिना ग्रामसभा काफी सक्रिय नहीं हो पायेगी। पंडित रामनन्दन मिश्र के एक शिष्य श्री राजेन्द्र ठाकुर उनके आदेशानुसार इस क्षेत्र में आये। परिस्थिति से अवगत हुए और उनके सत्प्रयास से रुके हुए लोग ग्रामदान में शरीक हो गये।

इसके उपरान्त ग्रामसभा गठित करने के लिए ग्रामसभा की सूचना प्रचारित की गयी। सभा में जागरूक लोगों की उपस्थिति अच्छी थी। श्री रामविलास मिश्र जी के सभापतित्व में कार्यवाही प्रारंभ हुई। सर्वसम्मति से निम्न पदाधिकारी एवं कार्यकारिणी के सदस्य मनोनीत किये गये–(१) सर्वश्री गणेश मिश्र, अध्यक्ष (२) राम श्रेष्ठ मिश्र, मंत्री (३) शत्रुघ्न मिश्र, कोषाध्यक्ष (४) भुट्टा पासवान, सदस्य (५) सट्टू पासवान, सदस्य (६) रामू साह, सदस्य (७) जलधारीराम, सदस्य (८) इमामन मियाँ, सदस्य (९) देवनन्दन सिंह, सदस्य।

मुसहरी अभियान की प्रगति

(१) प्रखण्ड में कुल पंचायत	१७
(२) पंचायत-संख्या—जिनमें काम चल रहा है	१६
(३) प्रखंड में कुल गाँव	१२१
(४) गाँव-संख्या जिसमें काम चल रहा है	१००
(५) गाँव संख्या–जिनमें ग्रामदान की दोनों शर्तें (जमीन और जनसंख्या) पूरी हैं	५९
(६) गाँव-संख्या–जिनमें जनसंख्या की शर्तें पूरी हैं	२५
(७) ग्रामसभा का गठन	४१

(जयप्रकाश शिविर समाचार से)

१ जनवरी १९७२ तक 'काम का अधिकार' हर एक को प्राप्त हो

—सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष श्री एस० जगन्नाथन् का वक्तव्य—

मध्यावधि चुनाव के परिणाम प्रतीक हैं जनता की आशाओं और आकांक्षाओं के, तथा राजनैतिक स्थिरता और शांतिपूर्ण मूलगामी परिवर्तन के लिए उसकी उत्कट अभिलाषा के। सर्व सेवा संघ की ओर से हम लोकसभा के नये सदस्यों के लिए अपनी शुभकामना भेजते हैं।

लोकसभा में पहिले से अधिक युवकों के प्रवेश, तथा प्रधान मंत्री की गतिशीलता के कारण स्वभावतः जनता में अपेक्षा जागी है कि बेरोजगारी, गरीबी और बढ़ते हुए मूल्यों की गंभीर समस्याओं का मुकाबिला शक्तिशाली ढंग से और दृढ़ता के साथ किया जायगा। सर्वोदय आंदोलन ने विनोबाजी के नेतृत्व में, बराबर प्रयत्न किया है कि इन समस्याओं के समाधान तथा शान्तिपूर्ण समाज-परिवर्तन के लिए जनता का अभिक्रम जागे और संगठित हो। इस दिशा में जो भी प्रयत्न होंगे उन में अपना सहकार देने के लिए संघ सदा तैयार रहेगा। पूर्ण रोजगार तथा प्रभावकारी सामाजिक सुरक्षा के कार्यक्रम को एक निश्चित अवधि के अन्दर पूरा होना चाहिए। जनता में जो आशाएँ और अपेक्षाएँ पैदा हुई हैं उनको तत्काल कदम उठाकर ही क्रियाशील बनाया जा सकता है।

लोकसभा और नयी सरकार को प्रयत्न करना चाहिए कि संविधान में घोषित 'काम का अधिकार' राष्ट्रव्यापी वास्तविकता बन जाय—अच्छा होगा कि १ जनवरी १९७२ तक। इस कार्यक्रम को यह कहकर नहीं रोकना चाहिए कि अभी व्यवस्था का अभाव है, या सरकार के मौजूदा तंत्र में इस तरह के निर्णय पर अमल करने की क्षमता नहीं है। देशभर में चलनेवाले एक विशाल कार्यक्रम में जनता के शरीक होने के कारण सरकार का तंत्र सुधरेगा और वह नए कामों के लिए समर्थ बनेगा, अथवा नये काम के नये संगठन बनेंगे।

भूमि सम्बन्धी कानूनों पर अमल के लिए तत्काल कदम उठने चाहिए, इसी तरह सिंचाई की छोटी और मध्यम योजनाएँ तथा शिक्षा में परिवर्तन का काम तुरत हाथ में लेना चाहिए। शिक्षा पद्धति में परिवर्तन लाने के काम में, ताकि वह भारतीय समाज की आकांक्षाएँ और आवश्यकताएँ पूरी कर सके, अब बिल्कुल देर नहीं होना चाहिए।

चुनाव का एक पहलू है जिसकी ओर हम देश का ध्यान दिलाना आवश्यक समझते हैं। बहुत जगहों से प्राप्त प्रामाणिक सूचनाओं के अनुसार अनुमान होता है कि भ्रष्ट व्यवहार और मतदाताओं पर अनुचित दबाव में बहुत वृद्धि हुई है। यहाँ तक की लोगों को मतदान देने से रोकने के लिए मतदान-केन्द्रों पर जबरदस्ती कब्जा कर लिया गया। लगभग सभी दल भ्रष्ट आचरण के दोषी रहे हैं। स्पष्ट है कि अगर इस तरह के आचरण पर रोक न लगायी गयी तो लोकतंत्र मखौल बनकर रह जायगा। चुनाव के कानून की छानबीन होनी चाहिए और उनमें उपयुक्त संशोधन होने चाहिए ताकि चुनाव मुक्त और निष्पक्ष हो सके। इसके अलावा मतदाता-सूचियाँ भी बहुत दोषपूर्ण रही हैं, जिसके कारण बहुत-से लोग मतदान करने से वंचित रह गये हैं। इसके कारण भी कई भ्रष्ट कार्रवाइयाँ हुई हैं।

संघ का निवेदन है कि संकट के ऐसे समय में राष्ट्र का संकल्पपूर्ण पुरुषार्थ प्रकट किया जाय। ऐसा पुरुषार्थ जो दल निष्ठा से ऊपर उठा हुआ हो, और जिससे इस देश की जनता को सुखी और समाधानकारी जीवन प्राप्त हो सके। इस देश की सरकार, राजनैतिक दल, और स्वयंसेवी संस्थाएँ, सबको इस महान पुरुषार्थ में शरीक होना चाहिए।'

आचार्यकुल

निष्कर्ष और संकल्प

बिलासपुर स्वराज्य संगम के तत्वावधान में जिले के कतिपय शिक्षकों की एक गोष्ठी ६ फरवरी '७१ को संध्या समय सर्वोदय आश्रम, सोंठीदेवरा के जवाहर पुस्तकालय भवन में आश्रम के अध्यक्ष श्री त्रिपुरारि शरण जी द्वारा स्वागत और संयोजक श्री केदार मिश्र द्वारा आयोजन की प्रयोजनीयता पर प्रकाश डालने के उपरान्त भारतीय आचार्य कुल समिति के संयोजक श्री वंशीधर श्रीवास्तव की अध्यक्षता में आरम्भ हुई। पुनः ७ ता० को प्रातः ७-३० बजे से १ बजे तक और संध्या ६ बजे से ८-३० बजे तक दो बैठकें हुईं। दूसरे दिन डा० रामजी सिंह (अध्यक्ष, दर्शन विभाग, भागलपुर विश्वविद्यालय) संयोजक, प्रादेशिक आचार्यकुल की उपस्थिति और उनके विचारों का लाभ समिति को मिला।

गोष्ठी में शिक्षकों के अतिरिक्त कतिपय समाज-सेवियों और पत्रकारों के सक्रिय चिन्तन का लाभ भी मिला।

श्री वंशीधर श्रीवास्तव के द्वारा आचार्यकुल स्थापना की पृष्ठभूमि और उसकी उपादेयता पर प्रकाश डालने के बाद प्रायः अधिकांश समय विचार-विमर्श में लगा। भाषण का क्रम प्रायः नहीं जैसा था।

गोष्ठी में एकत्रित मित्रों को ६ ता० की संध्या समय आश्रम की विभिन्न कृषि-प्रधान प्रवृत्तियों के अवलोकन और पुनः ७ ता० को २-३० बजे से ५-३० बजे तक आश्रम के पड़ोसी ग्राम क्षेत्र में स्वैच्छिक संगठनों द्वारा सम्पादित विकास कार्य देखने का भी अवसर मिला, जहाँ समाज के कमजोर वर्ग विकास मार्ग पर अब तेजी से आगे बढ़ रहे हैं।

काफी विचार-विमर्श के उपरान्त गोष्ठी ने आचार्यकुल की स्थापना और प्रसार

मनमोहन भाई ने चर्चा के लिए कुछ मुद्दे प्रस्तुत किये : (१) जनता के हाथ में सत्ता आये यह बात अभी मान्य नहीं हुई है। साम्यवादी सामाजिक विश्लेषण के साथ सत्ता एक वर्ग के हाथ में देना चाहते हैं, हम सत्ता जनता के हाथ में देने की बात नैतिक स्तर पर ही करते हैं, सामाजिक विश्लेषण के आधार पर नहीं। (२) ग्रामसभाओं में परिवर्तनकारी शक्ति पैदा हो, इसके लिए अलग-अलग स्तरों की आकांक्षाओं को करुणा या जोर से जोड़ना चाहिए। (३) शिक्षित लोग अधिष्ठान (इस्टैब्लिशमेंट) से जुड़े हुए हैं, इसलिए वे हमारी बातें नहीं समझ पाते। (४) सत्याग्रह भी हमारे सामाजिक विश्लेषण में से ही निकलना चाहिए। कान्ति भाई शाह ने कहा कि हम जिस तरह प्रतिनिधित्ववाले लोकतंत्र की जगह भागीदारी वाले लोकतंत्र की बात कहते हैं, उसी तरह प्रतिनिधित्ववाली क्रांति नहीं, बल्कि जनता की प्रत्यक्ष भागीदारी वाली क्रान्ति करना चाहते हैं। करुणा और कोप हम जनता का जगाना चाहते हैं, ग्रामसभा उसकी एक बुनियादी इकाई है। आन्दोलन विनोबा से शुरू होकर कार्यकर्ताओं और संस्थाओं के माध्यम से गुजरते हुए जनता का बनता जा रहा है। नारायण देसाई ने आन्दोलन में कोप की नहीं, करुणा की ही कमी का उल्लेख करते हुए कहा कि हमारे जीवन में, कार्यक्रम में, संस्था और संगठन में ऐसे तत्त्व हैं, जो हमें समाज तक पहुँचने से रोकते हैं। हमारा आन्दोलन काफी हद तक राज्याश्रित रहा है, और हम संख्या शूर बने हैं। यह स्थिति बदलनी चाहिए। अहिंसा के लिए अभय की जरूरत है जिसे हम प्रकट नहीं कर पाये हैं। मुक्त चिंतन के लिए हमें छोटी-छोटी *गोष्ठियों में बैठना चाहिए, जिम्मेदारियों को हस्तान्तरित करते रहना चाहिए, और* प्रशिक्षण पर विशेष ध्यान देना चाहिए। रामचन्द्राही ने ग्रामसभा की सत्तासमता के प्रश्न पर कहा कि ग्रामसभा में गाँव के चेतन लोगों की एक सक्रिय इकाई बने, इसकी पूरी कोशिश की जायगी तो इस समस्या का समाधान निकल सकता है, क्योंकि नयी पीढ़ी के चेतन लोगों को ग्रामस्वराज्य की समग्र क्रान्तिकारी कल्पना आकर्षित करती है।

दूसरी बैठक

(१९ मार्च '७०)

दूसरी बैठक की शुरुआत बसन्त नारगोलकर की सत्याग्रह-चर्चा से हुई। आपने आन्दोलन के पर्याप्त प्रभावकारी न होने के कारणों का जिक्र करते हुए मुख्य रूप से यह विचार प्रकट किया कि इस आन्दोलन में गांधी प्रणीत सत्याग्रह को जानबूझकर छोड़ दिया गया है। खतरे उठाकर सीधी कारवाई में हम नहीं पड़ते। देवेन्द्र भाई ने इस अवसर को दिल खोलने के लिए उपयुक्त मानते हुए कहा कि हम काम तो बहुत करते हैं, लेकिन जनता में उत्साह नहीं पैदा कर पाते। हम दूरगामी काम कर रहे हैं, और जनता अपनी रोज की चिंताओं से परेशान है। हम उसकी इस स्थिति के प्रति उदासीन हैं, और हमारे प्रति वह उदासीन है। आपने जनता की समस्याओं से जुड़कर समग्र कार्यक्रम हाथ में लेने का सुझाव दिया। राजनैतिक पहलू पर अपना दृष्टिकोण स्पष्ट करते हुए गोराजी ने इस बात पर जोर दिया कि ग्रामदानी क्षेत्रों से जनता के उम्मीदवार दल के उम्मीदवार के खिलाफ खड़े होने चाहिए। हमें खुद भी इस चुनौती को स्वीकार कर चुनाव लड़ना चाहिए और जनता के सामने राजनीति का एक नया आयाम प्रस्तुत करना चाहिए।

कल से आज तक की चर्चाओं को समेटते हुए जयप्रकाशजी ने कहा कि हमारा आन्दोलन दुनियाँ में एक नया प्रयोग है। विश्वामित्र की तरह नयी सृष्टि करने का काम है। न यह काम कानून से होगा, न और किसी तरीके से हमारे चाहने भर से जल्द होगा। हमारे अब तक के काम के ही परिणामस्वरूप आगे के काम के लिए ग्रामदान का एक आधार मिला है। ग्रामसभा में हितों का आमना-सामना हो, टकराव की जगह सुलझाव की स्थिति पैदा हो, तो ग्रामसभा में सत्तासमता आयेगी। केवल वितरण क्रान्ति नहीं है। विकास की गति और दिशा, शिक्षण का स्वरूप इन सबमें परिवर्तन होना चाहिए। यह स्थिति लाने के प्रयत्न में ही सत्याग्रह के बिन्दु आते हैं—कुछ गाँव ग्रामदान में शरीक नहीं होते, ग्रामदानी गाँव में कुछ लोग नहीं शरीक होते, उनके साथ क्या करें? यह सोचने का विषय है। शहरों में प्रतीकार की भूमिका जल्द आ सकती है।

जयप्रकाशजी ने सत्याग्रह और वर्तमान सर्वोदय-आन्दोलन के संदर्भ में कहा कि अगर हमारे अन्दर इसकी तीव्रता है तो हम दूसरों के लिए रुकेंगे क्यों? चिंतन और चर्चा के लिए जयप्रकाशजी ने कुछ महत्त्व के मुद्दे रखे—(१) ग्रामनेतृत्व—परिवर्तन के लिए चेतन लोगों की एक इकाई गाँव में कैसे खड़ी हो? (२) सर्वोदय के तरीके से स्वामित्व, वितरण आदि के प्रश्न कैसे हल हों? ग्रामस्वराज्य की लोकनीति औद्योगिक समाज में कैसे चलेगी? (३) सर्वोदय के पास राजनैतिक रचना का चित्र है, लेकिन आर्थिक रचना का नहीं है। आर्थिक स्वायत्तता का चित्र स्पष्ट करना होगा। कदम-दर-कदम कैसे इस दिशा में आगे बढ़ा जाय? (४) अहिंसा-विज्ञान का अध्ययन हम बहुत कम करते हैं। केवल ग्रामदान से अहिंसा नहीं होगी। नागरिक सुरक्षा, निःशस्त्रीकरण, ट्रस्टीशिप आदि का गहराई से अध्ययन आवश्यक है।

इस प्रकार के मुक्त चिंतन को महत्त्वपूर्ण मानते हुए सिद्धराज जी ने जन-जीवन में राज्य के बढ़ते हुए हस्तक्षेप और प्रवेश के खतरों से आगाह किया और कहा कि इसे हमको अपने लोक-शिक्षण का विषय बनाना चाहिए। पिछले चुनाव ने सरकार के प्रति जनता में जिस नयी आशा का संचार किया है, वह अन्त में निराशा में परिणत हो सकता है। तब हिंसा और अधिक उभड़ सकती है। लंका इसकी

मिल रहा है। क्या हम इसका कोई विकल्प सुझा सकते हैं? ग्रामसभाओं को रचनात्मक बनाना एक उपाय है। हरित क्रान्ति में बढ़ते हुए रासायनिक खादों और नये बीजों के प्रयोग के बाद के खतरों की चर्चा करते हुए आपने कहा कि विदेशों के वैज्ञानिक इसके खिलाफ आवाज उठा रहे हैं। हमारा ध्यान 'इरीगेजी' की ओर जाना चाहिए। गांव के लोगों का ध्यान इस ओर खींचना चाहिए। आन्दोलन की आन्तरिक चर्चा करते हुए आपने दो बातें कहीं—(१) प्रतीकार का जोश सर्वोदय के वातावरण में नहीं है। जिसे लोकमन अन्याय मान रहा हो, उसके खिलाफ प्रतीकार अवश्य होना चाहिए। (२) हमारे अपने जीवन में बहुत ढिलाई आयी है, उसे कसना चाहिए।

हमें आज के लोकतंत्र का विकल्प पेश करना है, यह बात सामने रखकर कार्यक्रम बनाने का सुझाव दिया बाबू चन्द्रधार ने। आज के प्रश्नों को हल करने के लिए गांव को साथ लेने की आवश्यकता बतायी क्षितीश राय चौधरी ने। आपका विचार था कि सरकार के निर्माण-कार्यों को हम संगठित करें तो काम भी होगा, लोकशक्ति भी बढ़ेगी। जयप्रकाशजी ने सरकार को दो बातें सुझायी हैं, उनकी जानकारी दी। पहली बात-सरकार घोषणा करे कि मेहनत करने वाले हर आदमी को काम दिया जायेगा। सार्वजनिक निर्माण के काम में सरकार इस प्रकार काम करने के लिए तैयार लोगों को लगाये। दूसरी बात-जितने भी ऊँचे अधिकारी हैं उनकी टोलियों में गांव के प्रत्यक्ष कार्य के लिए भेजा जाय ताकि उन्हें वस्तुस्थिति का पता चले।

तीसरी बैठक
(१९ मार्च '७१)

आन्दोलन आगे क्यों नहीं बढ़ रहा है, इस पर निराकुल विचार प्रकट करते हुए सिद्धराजजी ने कहा कि शान्ति के काम में ठोस और सघन योजना का अभाव रहा। इधर कार्यकर्ताओं का आत्मविश्वास भी घटा है। हमारा एक काम पूरा नहीं होता कि दूसरा हाथ में ले लेते हैं। चाहिए यह कि हम एक जगह पूरी ताकत लगायें और आन्दोलन की ताकत खड़ी करें।

मनमोहन भाई ने कहा कि उद्योग और पूँजी दोनों सत्ताकेन्द्रित हैं। इस स्थिति को बदलने के लिए मध्यम यांत्रिकी और ग्रामोद्योग उद्योगों का ही आधार लेना पड़ेगा। पूर्णचन्द्र जैन ने सत्याग्रह के प्रश्न पर बोलते हुए कहा कि राष्ट्रीय स्तर का आन्दोलन राष्ट्रीय स्तर के व्यक्ति के आवाहन पर ही हो सकता है। इसलिए बार-बार यह चर्चा होती है कि सत्याग्रह का आवाहन विनोबा और जे० पी० द्वारा हो। अहिंसा की शक्ति प्रकट करने और रूढ़ियों के प्रति वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनाने पर आपने जोर दिया। जगन्नाथनजी ने कहा कि बीघा-कट्ठा की बात भूमिहीनों को आकर्षित नहीं करती। ग्रामसभा दैनन्दिन समस्याओं को उठाये, और उसे हल करने की सीधी कारवाई करे। भूमि समस्या का कोई अहिंसक हल अनिवार्य रूप से हमें ढूँढ निकालना है। काश्त न करने वाले गैरहाजिर भूस्वामियों की भूमि भूमिहीनों में कैसे बटे, यह भी सोचना चाहिए। जयप्रकाशजी ने कहा कि कोई अखिल भारतीय प्रश्न आयेगा और परिस्थिति वैसी बनेगी तो सत्याग्रह अवश्य होगा। लेकिन तब तक जिन्हें लोकशक्ति लगती हो, वे आगे बढ़ें और प्रत्यक्ष कारवाई करें। जयप्रकाशजी ने यह बात दादा धर्माधिकारी गोलकर द्वारा बार-बार सत्याग्रह के लिए जोर दिये जाने पर कही।

शिक्षा में क्रान्ति की चर्चा करते हुए नारायण देसाई ने कहा कि यह समग्र क्रान्ति का ही एक हिस्सा है, लेकिन इस समय इस प्रश्न को लेने से 'ब्रेक थ्रू' मिलेगा। वंशीधर श्रीवास्तव ने इस बात पर जोर दिया कि हर विद्यार्थी के हाथ में कोई उत्पादक काम दिया जाय, प्राथमिक शालाओं का संचालन ग्रामसभा करे, और परीक्षा के साथ नौकरी का सम्बन्ध न हो। दादा ने इस खतरे की ओर संकेत किया कि शिक्षा ग्रामसभा के हाथ में होगी, तो स्थानीयता बढ़ेगी, व्यापकता घटेगी। धीरेन्द्र भाई का सुझाव था कि अभिभावक, शिक्षक, शिक्षार्थी, और शिक्षा में रुचि रखने वाले अन्य लोगों की प्रखण्डस्तरीय तदर्थ समितियाँ बनें और वे इस सवाल पर विचार करें। दादा ने पुनः इस बात पर जोर दिया कि विकेन्द्रीकरण और जयजगत का मेल होना चाहिए और हमारी भूमिका मानवीय होनी चाहिए। शिक्षा के संदर्भ में जयप्रकाशजी ने मुजफ्फरपुर प्रखण्ड में क्या किया जाय, अपनी यह तात्कालिक समस्या सबके सामने रखी थी। ■

देवरिया में आचार्यकुल और तरुण-शान्तिसेना के प्रयास

पडरौना के प्रायः सभी स्तर के विद्यालयों और महाविद्यालयों में आचार्यकुल की स्थापना हो गयी है। दो शिविर इस साल किये गये थे, जिसमें तरुण-शांति सेना की सहायता से सफाई-अभियान तथा निरक्षरता मिटाओ-अभियान चलाया गया। दोनों ही अभियान पूर्णतः सफल हुए। एक हरिजन बस्ती में प्रवेश के लिए कोई उपयुक्त मार्ग नहीं था। वहाँ सम्बन्धित लोगों से प्रार्थना करके उनसे थोड़ा-थोड़ा खेत छोड़वाकर सड़क के लिए जगह निकाली गयी। ब्राह्मणों के एक गाँव में पंचायत की सभा करके उनकी कठिनाइयों और अन्य विवादग्रस्त प्रश्नों और समस्याओं का अध्ययन किया गया तथा शान्तिमय व प्रेममय मार्ग से समझा-बुझाकर उनके प्रश्नों का समाधान निकाला गया। डिग्री कालेज में लगभग १५० छात्र व छात्राएँ तरुण-शान्तिसैनिक बन चुके हैं। ३० जनवरी १९७१ को आचार्यकुल और तरुण शांति सेना का मौन जुलूस निकाला गया। २२ फरवरी '७१ को तरुण-शान्ति सेना तथा आचार्यकुल का एक एक जुलूस, जिसमें लगभग ५०० सैनिक थे, अन्य विद्यालयों की सहायता से निकाला गया। मौन-जुलूस का उद्देश्य था मादक वस्तुओं व लाटरी का विरोध।

—जगदीश प्रसाद सिंह

१९ वां सर्वोदय सम्मेलन

प्रतिनिधियों के लिए आवश्यक सूचनाएँ

इस वर्ष १९वां सर्वोदय समाज का वार्षिक सम्मेलन ८ से १० मई, ७१ तक नासिक (महाराष्ट्र) में होने जा रहा है। सम्मेलन के पूर्व वहीं पर ता० ५, ६ एवं ७ मई को सर्व-सेवा-संघ का अधिवेशन भी होगा।

प्रतिनिधित्व

१. सम्मेलन की कार्यवाही में भाग लेने के इच्छुक भाई-बहन २० अप्रैल '७१ तक सम्मेलन मंत्री १९ वां सर्वोदय समाज सम्मेलन, बोधगया, जिला गया (बिहार) के पते पर पांच रुपये मात्र प्रतिनिधि-शुल्क भेजकर प्रतिनिधि बन सकते हैं। शुल्क-मंत्री, सर्व सेवा संघ, गोपुरी, वर्धा के पते पर या सर्वोदय मंडलों के पते पर भी भेजा जा सकता है।

२. सम्मेलन में भाग लेने के लिए प्रतिनिधि बनना आवश्यक है।

३. सम्मेलन में आनेवाले लोक-सेवकों, जिला मण्डल के संयोजकों, प्रतिनिधियों के लिए भी प्रतिनिधि बनना आवश्यक है।

४. प्रतिनिधि बनने के लिए सर्व सेवा संघ, गोपुरी तथा सर्व सेवा संघ-प्रकाशन, वाराणसी कार्यालय के अलावा सभी प्रादेशिक सर्वोदय मण्डलों, और मुख्य-मुख्य रचनात्मक तथा प्रदेश की खादी-संस्थाओं से भी संपर्क किया जा सकता है। मंत्री, सर्वोदय-समाज, बोधगया, जिला-गया (बिहार) से भी सपर्क स्थापित किया जा सकता है।

रेलवे कन्सेशन

१. सम्मेलन के सिलसिले में नासिक रोड के लिए एक तरफा किराया देकर वापसी टिकट की सुविधा रेलवे बोर्ड की ओर से प्रदान की गयी है।

२. तृतीय और द्वितीय श्रेणी में १६० किलोमीटर के ऊपर सफर करने वालों को ही यह सुविधा प्राप्त हो सकेगी।

३. वापसी टिकट की यह सुविधा प्रथम श्रेणी वालों को उसी हालत में मिल सकेगी जब उनका किराया ४०० कि०मी० के दो द्वितीय श्रेणी के पूरे किराये से कम न हो।

४. जिनकी मासिक आय एक हजार आठ सौ रुपये के अन्दर है, उन्हीं को रेलवे कन्सेशन की सुविधा प्राप्त हो सकेगी।

५. समय से कन्सेशन सर्टिफिकेट की प्राप्ति के लिए प्रतिनिधि-शुल्क के पांच रुपये २० अप्रैल १९७१ के पहले उक्त पतों पर भेजना चाहिए।

६. प्रतिनिधि शुल्क भेजते समय नाम और पता साफ साफ लिखें ताकि आगे की कार्रवाई में असुविधा न हो।

निवास-व्यवस्था

वैसे उस समय गरमी रहेगी। लेकिन सबेरे कुछ ठंढ हो सकती है। अतः हल्का गरम कपड़ा साथ लाना चाहिए। निवास का प्रबन्ध बस-स्टैंड के पास अप्पासाहेब पटवर्धन नगर में किया गया है। यह नगर हाई स्कूल ग्राउंड पर नासिक में है। स्टेशन से बस एवं टैक्सी मिलेगी। स्वयं-सेवक भी जानकारी देने के लिए स्टेशन पर उपलब्ध रहेंगे।

मार्ग

नासिक रोड स्टेशन सेंट्रल रेलवे का स्टेशन है, और यह दिल्ली-बम्बई एवं हावड़ा-बम्बई मेन लाइन पर बम्बई से १८८ किलोमीटर दूर है। सब गाड़ियाँ यहाँ ठहरती हैं।

भोजन-व्यवस्था

प्रतिनिधि भाई-बहनों के लिए भोजनालय की व्यवस्था स्वागत समिति की ओर से की गयी है। भोजन-शुल्क नासिक पहुँचने पर जमा करके भोजन टिकट प्राप्त किए जा सकेंगे।

रकम पहले से यहाँ भेजने में सुविधा रहेगी। मनीआर्डर से भोजन-शुल्क भेजना हो तो निम्न पते पर भेजा जाना चाहिए।

— मंत्री, सर्व सेवा संघ,
गोपुरी, वर्धा (महाराष्ट्र)

भोजन-शुल्क प्रतिदिन चार रुपया एवं तीन दिनों का दस रुपया रखा गया है।

दर्शनीय स्थान

नासिक शहर के पंचवटी में राम बनवास के समय रहे थे। गोदावरी नदी नासिक शहर से होकर बहती है। थोड़ी-सी दूरी पर त्र्यम्बकेश्वर का ज्योतिलिंग है और गोदावरी का उद्गम भी वहीं से है।

—द्वारको सुन्दरानी,
सम्मेलन मंत्री

इस अंक में

अन्य स्तम्भ

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पै०), विदेश में २२ रु०; या २५ शिलिंग या ३ डालर।
एक प्रति का मूल्य २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं मनोहर प्रेस, वाराणसी में मुद्रित

सम्पादक
राममूर्ति
वर्ष : १७
अंक : २८ सोमवार
१२ अप्रैल, '७१
पत्रिका विभाग
सर्व सेवा संघ, राजघाट, वाराणसी-१
फोन : ६४३९१ तार : सर्वसेवा

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

"बंगला देश की जनता पश्चिमी पाकिस्तान के जालिमों के साथ जबरदस्ती बंधकर नहीं रहना चाहती। दो संकल्पों के बीच होनेवाले इस संघर्ष के अन्तिम परिणाम के बारे में कोई संदेह न हो। उनके पास आधुनिक अस्त्र-शस्त्र हैं, हमारे पास अपने उद्देश्य में अटूट श्रद्धा है। वे किराये के टट्टू हैं, हम आजादी के सिपाही हैं। वे थोड़े हैं, हम बहुत हैं। उनकी आत्मा खोखली है, हमारी आत्मा बुलन्द है। वे कुछ लड़ाइयाँ भले ही जीत लें, किन्तु युद्ध में विजय हमारी ही होगी।"

(अमेरिका की एक गोष्ठी में पूर्व बंगाल के विद्वानों की ओर से बाँटी गयी एक अपील का अंश)

पाकिस्तान-बंगला देश : कुछ तथ्य •

स्वतंत्र देश : गुलाम जनता

शेख मुजीबुर्रहमान जीवित हों या शहीद हो चुके हों, बंगला देश की दिवानी जनता आजादी की राह पर चल चुकी है। रास्ते में दिन चाहे जितने लगें यातनाएँ चाहे जितनी सहनी पड़ें, आततायी खून चाहे जितना बहायें, अन्जाम वही होगा जो होना चाहिए—बंगला देश गुलाम नहीं रहेगा।

बंगला राष्ट्रीयता ने मुक्ति के जो आयाम प्रस्तुत किये हैं वे एशिया विशेष रूप से भारत, के भावी इतिहास को अत्यन्त गहराई से प्रभावित करेंगे। एक ही देश में एक भाग दूसरे भाग को किस तरह उपनिवेश बनाकर रख सकता है, तथा राष्ट्रीय और धार्मिक एकता के नाम में उसे गुलामी की बेड़ियों में जकड़ सकता है, इसकी मिसाल पाकिस्तान ने प्रस्तुत की है। और, वह उपनिवेश कोरे धर्म, साम्प्रदायिकता, और सैनिक राष्ट्रवाद की संकुचित दीवारों को पार कर किस तरह मुक्ति के लिए अपने अस्तित्व की बाजी लगा सकता है, इसकी मिसाल पूर्वी बंगाल ने कायम की है।

वे दिन जा रहे हैं जब नागरिक राष्ट्र से आगे सोच ही नहीं सकता था। आनेवाले दिनों का नागरिक भले ही अपने राष्ट्र से जुड़ा रहे लेकिन वह रहेगा, जीयेगा, सब अपने क्षेत्र में। उसकी जीविका और विकास का क्षेत्र वह होगा जिसे वह अपनी भाषा और संस्कृति का क्षेत्र मानेगा। राष्ट्र मात्र बड़े व्यापार और सुरक्षा का माध्यम होगा। 'एक राष्ट्र एक राज्य,' (वन नेशन वन स्टेट) के दिन जा रहे हैं यह गंभीर संकेत बंगला देश के ऐतिहासिक विद्रोह में है। इस क्षेत्र-निष्ठा के कारण राष्ट्र-निष्ठा खंडित नहीं होगी, बल्कि दिनोंदिन अधिक सांस्कृतिक और मानवीय बनेगी। आज वह केवल राजनैतिक और सैनिक है, सत्तावादी है। कोरी राष्ट्रीयता से नये मानव का समाधान नहीं है, उसकी आकांक्षाओं की पूर्ति भी नहीं है। वह ऐसी राष्ट्रीयता को नहीं कबूल करना चाहेगा जो एकता, विकास और सुरक्षा के नाम में शोषण को कायम रखे और नागरिक को स्वायत्तता से वंचित करे। नया नागरिक राष्ट्र की स्वतन्त्रता के साथ-साथ अपने क्षेत्र, अपनी भाषा, अपनी संस्कृति और जीवन-पद्धति, अपने गाँव और स्वयं अपने को भी स्वतन्त्र और स्वायत्त देखना चाहता है। न स्वतंत्रता राष्ट्र तक आकर रुकेगी, और न स्वायत्तता क्षेत्र तक।

क्या स्वतन्त्रता के क्रम में राष्ट्र से आगे की स्वायत्त सीढ़ियाँ आसानी से बन सकेंगी? लोग कहते हैं कि अन्तर्राष्ट्रीय युद्ध का भय कम हो रहा है। लेकिन राष्ट्र के भीतर के भय? वे बढ़ रहे हैं। राष्ट्र के भीतर समाज के जीवन में जो दमन और शोषण है—वह बहुत है, इससे कौन इनकार करेगा? वह नयी-नयी हिंसाओं को जन्म दे रहा है। पूर्वी बंगाल में क्षेत्र बनाम राष्ट्र की टक्कर है; नागरिक शक्ति क्षेत्र की है, सैनिक शक्ति राष्ट्र की। इस क्रम में इसके बाद की टक्करें भी होंगी। लोकतन्त्र के विकास में इन दोनों शक्तियों की कई टक्करें अभी दिखायी देती हैं।

नागरिक ये लड़ाइयाँ किस शक्ति से लड़ेगा? यह निश्चित है कि हिंसा की शक्ति उससे कहीं अधिक उस राज्य के पास है जिससे वह मुक्त होना चाहता है। खुले युद्ध में वह सशस्त्र सेना का मुकाबिला नहीं कर सकता, इसलिए उसे गेरिला-युद्ध का रास्ता अपनाना पड़ता है। आज की दुनिया में 'गेरिला-युद्ध राष्ट्रीय भी नहीं रह पाता, नागरिक के हाथ में तो क्या रहेगा? रूस, चीन तथा अन्य कई देशों के वर्ग-युद्ध, अफरीकी देशों के वंश-युद्ध तथा वियतनाम का गृह-युद्ध—ये सब इस बात के प्रमाण हैं कि हिंसा का भस्मासुर नागरिक को खा जाता है, और सचमुच जिस मुक्ति के लिए वह अपने प्राणों की बाजी लगाता है वह कभी उसके हाथ नहीं आती। शक्ति सैनिक के हाथ चली जाती है, नागरिक के लिए शहादत के नये-नये रास्ते खुलते रहते हैं।

क्या नागरिक एक बार साहस करके बन्दूकों को फेंककर 'वीरों की अहिंसा' का रास्ता नहीं अपना सकता? मुजीब और उनके साथी असहयोग और अवज्ञा की अंतिम सीमा तक गये, लेकिन वहाँ जाकर रुक गये, अहिंसा तक नहीं गये। वे वीरों की हिंसा तक जा सके, वीरों की अहिंसा तक नहीं जा सके। उनका असहयोग और अवज्ञा का प्रयोग असाधारण था लेकिन हिंसा की ही व्यूह-रचना के अन्तर्गत था। असहयोग के इतने जबरदस्त संगठन के साथ अगर मुजीब के नेतृत्व में पाँच हजार 'सत्याग्रही' सिरों पर कफन और पीठ पर अपने हाथ बाँधकर ढाका की सड़कों पर निकल पड़ते, गोलियाँ खाते, और खा-खाकर गिरते जाते, लेकिन सत्याग्रही नर-नारियों का ताँता न टूटता' और यह ढाका में ही नहीं, शहरों, कस्बों और गाँवों में भी होता तो क्या होता? होता यह कि जालिम की बन्दूकें रुक जातीं, और वह सिर झुकाकर खड़ा हो जाता। इसके सिवाय दूसरा कुछ हो नहीं सकता था। यों भी याह्या की बन्दूक तो एक दिन बन्द होगी ही लेकिन अगर दमन और शोषण की हिंसा से मुक्त होना हो, और राज्य की हिंसा को सदा के लिए समाप्त करना हो, तो नागरिक के लिए एक ही अमोघ अस्त्र है—न मारते हुए मरना, मरते जाना जब तक कि मारनेवाले का हाथ न रुक जाय। हम समझ लें कि हिंसा की हार हो सकती है, अहिंसा अजेय है। हिंसा में इतिहास के हजारों वर्ष बीत चुके हैं, अब उसे बदलना चाहिए। दूसरे की बन्दूक के संरक्षण में मनुष्य बहुत रह चुका अब उसे अपनी ही शक्ति पर भरोसा करना चाहिए।

पूर्व बंगाल का नागरिक सैनिक से, सेना के अस्त्र से लड़ रहा है। अब क्षेत्रीय स्वायत्तता से आगे बढ़ेगा तो समाज-परिवर्तन के क्रम में शीघ्र देखेगा कि हिंसा उसकी नहीं, शासकों और शोषकों की शक्ति है। उसकी शक्ति अहिंसा ही है। लेकिन अभी यहीं क्या कम है कि नागरिक ने निडर होकर अपना 'स्व' पहचाना और 'वीरों की हिंसा' का मार्ग अपनाया? ●

भुवानप्रसाद : सोमवार,

'बड़ी मुश्किल से मैंने खाना खाया'

—विनोबा

दो-तीन दिनों से मेरा बहुत-सा ध्यान पूर्व बंगाल में जो घटनाएँ हो रही हैं, उनकी तरफ है। शेख मुजीबुर्रहमान ने बंगाल की विधानसभा के लिए उम्मीदवार खड़े किये थे। उनमें से ९५ प्रतिशत उनके उम्मीदवार चुनकर आये और दोनों भागों को मिलाकर पाकिस्तान का जो चुनाव हुआ, उसमें भी उनको बहुमत मिला। यानी पूर्व बंगाल के तो वे राजा हो गये। और, पूर्व बंगाल तथा पश्चिम पाकिस्तान, इन दोनों की सत्ता उन्हींके हाथ में आयी, ऐसा इसका अर्थ होता है। जनरल याह्या खाँ ने जाहिर किया था कि मिलीटरी-राज जल्द-से-जल्द दूर करना है और लोकशाही स्थापित करनी है। उसके अनुसार यह सारा नाटक हुआ और उसके बाद आखिर की यह घटना हुई—फिर से 'मार्शल ला' जाहिर किया गया! 'शूट एट साइट,' ऐसी आज्ञा दी। १०-१२ दिन उस भले आदमी ने वहाँ बातें कीं और उतने दिनों में पश्चिम पाकिस्तान से फौज लाकर उसने रख दी। वहाँ जो फौज लाकर रखी है वह सारी-की-सारी पंजाब की है। धर्म के नाम पर लोगों ने पाकिस्तान बनाया और दो पाकिस्तान में हजार मील का अंतर है, वह भी अगर भारत अपने प्रदेश से होकर जाने की इजाजत दे तो। लेकिन उनके हवाई जहाज अभी भारत पर से नहीं जा रहे हैं। बीच में जो घटना हुई उसके कारण उनको दूर से जाना पड़ रहा है। वह करीब ३-३॥ हजार मील का अन्तर होता है। उतनी दूर से जाकर वे वहाँ राज करें, और यह सारा एक राज मानेंगे! किस जोर पर? धर्म एक है इसलिए! धर्म अगर एक है तो पाकिस्तान और अफगानिस्तान क्यों एक देश नहीं बनते हैं? ईरान और अरबस्तान क्यों एक नहीं बनते हैं? तुर्किस्तान क्यों नहीं होता है? सारे नजदीक ही हैं, परन्तु हर एक स्वतंत्र राष्ट्र है और इधर से उधर जाने के लिए पासपोर्ट लगता है। व्यापार-व्यवहार के लिए भी इजाजत लेनी पड़ती है।

यह सारा ढोंग धर्म के नाम पर चलता है। बंगला भाषा के दो टुकड़े किये। बंगला भाषा अगर एक रहती तो वह १२ करोड़ लोगों की भाषा हुई होती। दुनिया की भाषा में उसका चौथा-पाँचवां नम्बर होता। हिन्दुस्तान में भी हिन्दी के बाद बंगाली, ऐसा हुआ होता। मान लीजिए, हिंदी बोलनेवाले २५-३० कोटि हैं तो नम्बर दो में बंगाली बोलनेवाले हैं, ऐसा हुआ होता और बाकी सारी भाषाओं के नम्बर उसके बाद आते।

अपने भारत में जो गरीब प्रदेश हैं उनमें एक है उत्तर-बिहार और दूसरा है पश्चिम बंगाल। उधर केरल का कुछ भाग बिलकुल दरिद्री माना जाता है। उससे भी ज्यादा दारिद्र्य उस पूर्व बंगाल में है। उसके दारिद्र्य में कोई फर्क नहीं हुआ, उलटे उसमें वृद्धि हुई है और जितना विकास-कार्य किया गया, जितना पैसा लगाया गया वह सारा का सारा पंजाब में लगाया गया। पश्चिम पाकिस्तान में चार भाषाएँ हैं—पंजाबी, सिंधी, बलूची और पुश्तु। इन चारों भाषाओं को एक बाजू रखकर उर्दू चलायी। उर्दू किसलिए चलायी? यानी हमारा एक उर्दू सेक्शन और उधर बंगाली सेक्शन, यानी उनका और हमारा बराबर हो, नहीं तो बंगाली भाषा का सारे पाकिस्तान में वर्चस्व होगा। और, फिर जो चुनाव हुआ उसमें यह पहले मान्य किया गया था कि प्रत्येक प्रांत का स्वतंत्र अस्तित्व रहेगा। भाषा के अनुसार प्रांत रहेंगे तो फिर इधर की बाजू पंजाब, सिंध, बलूचिस्तान और पख्तूनिस्तान—ऐसे चार प्रांत रहेंगे और उधर बंगाल रहेगा, ऐसे पाँच प्रांत रहेंगे। कुल राज्य के पाँच अंग, ऐसा मान्य हुआ था।

परन्तु करीब-करीब २० वर्ष हुए, इतने सालों में पूर्व बंगाल का पूर्ण रूपेण शोषण किया गया। विकास आदि का काम पंजाब में हुआ और फौज में पंजाब के ही लोग हैं। ऐसा करके इन लोगों ने सब प्रकार से दबाया। पूर्व बंगाल में अकाल भी बहुत होता है, बहुत बड़ा तूफान आता है, बाढ़ आती है, आँधी आती है। समुद्र का किनारा है। अनेक प्रकार की तकलीफ उन लोगों को होती है, परन्तु उनकी कोई परवाह नहीं की गयी। इसलिए इन्होंने—शेख मुजीबुर्रहमान ने—बड़ी बगावत की। इतना बड़ा असहकार किया जिसकी तुलना गांधीजी ने जो असहकार किया था उसके साथ भी नहीं हो सकती है। गाँव-गाँव में असहकार किया गया। सारा बंगला देश, पुलिस, कारखाने के लोग वगैरह सबके सब असहकार में शामिल हुए। अब उसे दबाने के लिए फिर से 'मार्शल ला' लागू किया गया। कहा जाता है कि शेख राष्ट्र के टुकड़े कर रहे हैं।

यह जो घटना हुई, वह दुनिया की दृष्टि से बहुत भयंकर है। ७ कोटि लोगों में से कितने लोगों को उन्होंने मार डाला! आपस में यादवी चल रही है। बंगाली विरुद्ध पंजाबी यह झगड़ा है। पंजाबी लोग मजबूत होते हैं। उनको दूध और गेहूँ खाने को मिलता है, इसलिए वे मजबूत हड्डी के होते हैं। शारीरिक शक्ति उनकी अच्छी होती है और बंगाली लोग कमजोर होते हैं। उनको खाने को पूरा नहीं मिलता है। ऐसे लोगों पर ये लोग गोली चला रहे हैं, टैंक भी लाये गये हैं। जिसे 'स्टनेस' कहते हैं ऐसी निर्दयता उन्होंने चलायी है। यानी मानव-वध वहाँ चल रहा है। मेरा ध्यान तीन-चार दिन सतत उस तरफ था कि याह्या खाँ क्या जाहिर करते हैं। आज उन्होंने जाहिर किया—'मार्शल ला जारी रखा जाय'।

इस पर से हमको बहुत कुछ बोध लेना चाहिए। हिन्दुस्तान में भी अनेक भाषाएँ हैं, अनेक धर्म हैं, अनेक जातियाँ

है। इतने सबका यह राष्ट्र है। १४–१५ भाषाएं इकट्ठा हैं। यह हमको इकट्ठा रखना है। इसलिए हमको इस घटना से बहुत कुछ सीखना चाहिए। गरीबों की तरफ ध्यान देना चाहिए। जाति-भेद धर्म-भेद वगैरह जो भेद हिन्दुस्तान में जोर कर रहे हैं, और जो सामाजिक विषमता है वह मिटानी होगी। सामाजिक विषमता निरसन देना और आध्यात्मिक दृष्टि से हम सारे मानव एक हैं, ऐसी भूमिका बनाना और कम-से-कम चलाना। यानी क्या चलाना? हम भारतीय हैं, यह कम-से-कम है। आज के युग में हम विश्वमानव हैं, यह हमको सोचना चाहिए और इसीलिए बाबा जहां-जहां गया, वहां-वहां कहता गया—जय जगत् और जय ग्रामदान। ग्रामदान यह हमारा तंत्र है और मंत्र है जय जगत्। सारी दुनिया हमको एक करनी है, यह हमारी प्रतिज्ञा है। यह दुनिया एक हुए बगैर ये झगड़े खतम नहीं होंगे। इसलिए जागतिक भावना हमें बनानी चाहिए। हम ब्राह्मण हैं, मराठा हैं, यह जातिभेद जाना चाहिए। ऐसे जो अनेक प्रकार के भेद हैं, ये सब-के सब खतम हों और हम सबको एक होकर काम में लगना चाहिए और भारत की जो मुख्य समस्या है—१. सामाजिक विषमता और २. आर्थिक विषमता, उसको दूर करने की तरफ सबका ध्यान केन्द्रित होना चाहिए। इसे तीव्रता से करना चाहिए ऐसा बोध इसमें से हमें मिलता है।

आज की घटना के कारण मुझे इतना दुःख हो रहा है कि आज मैंने बहुत कष्ट से खाना खाया, यानी सहजता से आज मेरा भोजन नहीं हुआ। मुझे ऐसी आदत है कि अनेक आपत्तियां आयीं तो भी मैं प्रसन्नता रखता हूं, और भोजन करता हूं लेकिन आज मुझे बिलकुल ही प्रसन्नता नहीं थी। बड़ी मुश्किल से मैंने खाना खाया। मानव ने मानव पर कितने प्रकार का आक्रमण किया है, इसका भान इस घटना से होता है। (मूल मराठी से अनूदित)

पवनार, वर्धा २७-३-७१

स्वायत्तता की जड़ें

१. अगर १९४० के मुस्लिम लीग के प्रस्ताव के अनुसार पाकिस्तान बना होता तो पूरब में पूरे बंगाल और असम को मिलाकर एक 'स्वतंत्र राज्य' होता। प्रस्ताव में स्वतंत्र 'राज्यों' की बात कही गयी थी।

१९४७ में विभाजन के बाद भी सुहरावर्दी ने संयुक्त बंगाल के लिए कोशिश की थी, और १९४९ तक वह ढाका नहीं गये थे। इस कारण अयूब खाँ उनकी देश-भक्ति को संदेह की नजर से देखते थे। अन्त में पूर्व में जो छोटा पाकिस्तान बना वह घाटे का सौदा निकला। बंगाली काफी संख्या में न सेना में थे, और न सरकार में। फजलुल्हक पूर्व के नेता थे, लेकिन जिन्ना और लियाकत अली खाँ पश्चिम में उनसे कहीं बड़े नेता थे। पूर्व के पास सांत्वना की एक ही चीज थी—पश्चिम से बड़ी उसकी संख्या।

पाकिस्तान बन जाने के बाद प्रश्न यह था कि इस्लामी राज्य का ढांचा और स्वरूप क्या हो। बहुत वाद-विवाद के बाद तय हुआ कि पाकिस्तान संघ-राज्य (फेडरेशन) हो। फिर प्रश्न उठा कि संघ के विधान-मंडल में किस इकाई को कितना प्रतिनिधित्व हो। १९५० की 'बुनियादी सिद्धान्त समिति' में तय हुआ कि विधान-मंडल दो सदनों का हो, जिनमें से पहले सदन (अपर हाउस) में इकाइयों का बराबर प्रतिनिधित्व हो। बराबर प्रतिनिधित्व में पूर्व पाकिस्तान को संख्या के कारण विशेष स्थान न मिलता। इस सिद्धान्त का पूर्व में बड़ा विरोध हुआ। नवंबर ४, ५, १९५० को ढाका में हुए एक सम्मेलन में मांग की गयी कि पूर्व और पश्चिम में पाकिस्तान गण-राज्य हो, और दोनों भागों में दो स्वायत्त क्षेत्रीय सरकारें हों, तथा केन्द्रीय संसद का निर्वाचन दोनों भागों की जन-संख्या के आधार पर हो। केन्द्रीय संसद का अधिकार-क्षेत्र विदेश-नीति, प्रतिरक्षा और सिक्के तक सीमित रहे।

२. दिसम्बर १९५२ में समिति ने दूसरी रपट तैयार की। उस वक्त ख्वाजा नाजिमुद्दीन, जो पूर्व पाकिस्तान के थे, प्रधान मंत्री थे। इस रपट में दो सदनों का सिद्धान्त मान्य किया, लेकिन पहले सदन के १२० सदस्यों में ६०-६० दोनों भागों के लिए रखा। दूसरे सदन के ४०० सदस्यों में भी दोनों के लिए बराबर-बराबर प्रतिनिधित्व रखा गया। अधिकार भी दोनों सदनों के बराबर रखे गये, लेकिन मंत्रि-मंडल निचले सदन के प्रति उत्तरदायी बनाया गया। इस बार इस योजना का विरोध पश्चिमी पाकिस्तान में हुआ। उसके विरोध के कारण यह दूसरी योजना भी रद्द हो गयी।

३. १९५३ में मुहम्मद अली प्रधान मंत्री हुए। उन्होंने एक नया फार्मूला निकाला। उसके अनुसार पाकिस्तान की पांच इकाइयां मानी गयीं—(क) पूर्व बंगाल, (ख) पंजाब, (ग) उत्तर-पश्चिमी प्रान्त, सीमा की रियासतें और आदिवासी क्षेत्र, (घ) सिंध और खैरपुर (ङ) बलूचिस्तान, बलूचिस्तान रियासती संघ, संघ की राजधानी कराची, और बहावलपुर रियासत। पहले सदन की ५० सीटें इन पांच में बराबर-बराबर बांटी गयीं। लोक-सभा (हाउस ऑफ पीपुल) में ३०० में से १६५ स्थान पूर्व बंगाल को दिये गये। लेकिन अधिकार दोनों सदनों के बराबर रखे गये। माना गया कि राष्ट्रपति का चुनाव दोनों सदनों की संयुक्त बैठक में हो। संयुक्त बैठक के अन्य निर्णय सामान्य बहुमत से हों, लेकिन पूर्व-पश्चिम दोनों भागों के अलग-अलग कम-से-कम ३० प्रतिशत सदस्यों का समर्थन अनिवार्य माना जाय। अगर किसी बिल या प्रश्न पर दोनों सदन मिलकर भी रास्ता न निकाल पायें तो राष्ट्रपति विधान-मंडल को भंग कर दे।

इस फार्मूले में समझौते के कई आकर्षक तत्त्व थे, और ऐसा लगा कि इस आधार पर संविधान बन जायगा।

इसी बीच पूर्व बंगाल में चुनाव हुआ। जिसमें फजलुलहक और सुहरावर्दी की भारी जीत हुई, और मुस्लिम लीग की भारी हार। इसके कारण गवर्नर-जेनरल गुलाम मुहम्मद ने संविधान-सभा को भंग कर दिया और उसका काम जहाँ-का-तहाँ रह गया।

उधर पश्चिम पाकिस्तान में धीरे-धीरे नौकरशाही और सेना की प्रभुसत्ता होने लगी। पहिले सेना ने नौकरशाही को बल दिया, लेकिन धीरे धीरे वह खुद सामने आने लगी। नौकरशाही और सेना दोनों में पूर्व बंगाल के लोग नहीं के बराबर थे, इसलिए सत्ता के संघर्ष में पूर्व बंगाल का हाथ नहीं रहा। वह राष्ट्रीय जीवन की मुख्य धारा से बहता गया।

४. १९५६ में नया संविधान बना। इसने पहिले के मुहम्मद अली-फारमूले को समाप्त कर दिया। पश्चिम पाकिस्तान पाँच की जगह एक इकाई मान लिया गया। सदन एक ही रखा गया जिसमें पूर्व और पश्चिम के दोनों प्रान्तों को प्रतिनिधित्व की समता रखी गयी। अधिकांश प्रश्नों के निर्णय के लिए सामान्य बहुमत का आधार मान्य किया गया। राष्ट्रपति को बहुत-से विशेष अधिकार दिये गये। प्रतिरक्षा, वैदेशिक मामले, सिक्का, बैंक, प्रचार, वैदेशिक व्यापार आदि केन्द्रीय सरकार के विषय माने गये। प्रान्तीय स्वायत्तता केवल कहने के लिए रह गयी।

५. अयूब खाँ ने जो संविधान बनाया, उसमें दोनों भागों को समान प्रतिनिधित्व तो दिया ही गया, चुनाव अप्रत्यक्ष (इनडाइरेक्ट) कर दिये गये। पूर्वी भाग की आकांक्षाओं को अनसुनी कर दिया गया। मार्च १९६९ में जब अयूब-शासन के अंतिम दिन थे तो एक गोलमेज सम्मेलन में यह तय हुआ कि संघीय और संसदीय व्यवस्था लागू की जाय और बालिग मताधिकार से चुनाव हो। लेकिन यह दरकार कि जनसंख्या के आधार पर प्रतिनिधित्व या प्रान्तीय स्वायत्तता के प्रश्न नयी संविधान-सभा के लिए टाल दिये गये, पूर्व के प्रतिनिधि शेख मुजीबुर्रहमान, मुर्शेद और नुरुल अमीन समेत, सम्मेलन से उठकर चले गये।

५. याहया खाँ ने एक आदमी एक वोट' के आधार पर चुनाव कराया, और जनसंख्या के आधार पर प्रतिनिधित्व का सिद्धान्त मान्य किया, लेकिन बाद को जिस तरह घटना-चक्र चला उसमें जुलफीकार अली भुट्टो के हाथ में वस्तुतः 'वीटो' चला गया। उसके कारण स्वायत्तता की माँग जोर पकड़ती गयी। पूर्व-बंगाली कहने लगे कि अगर राष्ट्र के स्तर पर उनकी आवाज की कीमत नहीं है तो कम-से-कम उन्हें अपने घर, यानी पूर्व बंगाल में काम करने का मौका मिलना चाहिए।

६. दूसरा प्रश्न झगड़े का था सरकारी आय में भाग। आयकर पूरा-पूरा केन्द्रीय सरकार का कर दिया गया। बिक्रीकर के प्रशासन को केन्द्रीय सरकार ने अपने हाथ में ले लिया। नौकरियों में पूर्व बंगाल के लोग २५ प्रतिशत से अधिक नहीं थे। इन बातों को लेकर असंतोष बढ़ता दिनोंदिन बढ़ता ही गया।

७. इनसे भी बड़ा प्रश्न बंगला भाषा का था। राष्ट्रीय एकता के नाम में पूर्वी बंगाल की भावनाओं का कभी भी ध्यान नहीं रखा गया। जब पश्चिम की पाँच इकाइयाँ एक में मिलायी गयीं तो पूर्व बंगाल का नाम पूर्व पाकिस्तान रखा गया।

कोशिश की गयी कि पूर्व बंगाल उर्दू को कबूल कर ले। तर्क यह दिया गया कि जब पाकिस्तान एक राष्ट्र है तो उसकी राष्ट्रभाषा ऐसी भाषा होनी चाहिए जो मुसलमानों की हो। भाषा को लेकर १९५२ में ढाका विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों ने उग्र प्रदर्शन किये जिसके उत्तर में पुलिस ने गोली चलायी और अनेक विद्यार्थी मारे गये। भाषा के प्रश्न को लेकर दो वर्षों तक संघर्ष चलता रहा। किसी तरह १९५६ के संविधान में बंगला को मान्यता मिली। अयूब खाँ के जमाने में जब 'बुनियादी जम्हूरियत' (बेसिक डिमाक्रेसी) का बोलबाला था तो राष्ट्रीय भाषा का कार्यवाई कुरान की आयतों से शुरू होती थी। पूर्व बंगाल के प्रतिनिधियों ने आग्रह किया कि आयतों का बंगला अनुवाद किया जाय, सरकार को ऐसा करना पड़ा।

इस प्रकार पिछले चौबीस वर्षों में—

१९४० का प्रस्ताव जिसने पाकिस्तान को जन्म दिया

२३ मार्च १९४० में मुस्लिम लीग ने लाहौर में निम्नलिखित प्रस्ताव पास किया था :

'प्रस्ताव हुआ कि आल-इंडिया मुस्लिम लीग के इस अधिवेशन का यह निश्चित मत है कि इस देश में कोई भी ऐसी संवैधानिक योजना नहीं चल सकती, या मुसलमानों को मान्य हो सकती, जब तक वह इस बुनियादी सिद्धान्त पर न बनायी जाय, अर्थात् भौगोलिक दृष्टि से मिली हुई इकाइयों (यूनिट) को जोड़कर क्षेत्र (रीजन) बना दिये जायँ, जिनका आवश्यक हेर-फेर के साथ इस तरह निर्माण हो कि जिन इलाकों (एरिया) में मुसलमानों का बहुमत हो, जैसे उत्तर-पश्चिम और पूर्वी भाग (ज़ोन) में, उनके स्वतंत्र राज्य (इण्डिपेण्डेण्ट स्टेट्स) बना दिये जायँ जिनमें इकाइयाँ (कन्स्टीटुएण्ट यूनिट्स) स्वायत्त और प्रभुसत्ता सम्पन्न (आटोनोमस ऐण्ड सावरेन) होंगी।''

यही प्रस्ताव पाकिस्तान का आधार था, और यही शेख मुजीबुर्रहमान का आधार है!

फरवरी १५ . अगर रहमान संविधान बनाने के बारे में उनकी पार्टी के विचारों को मान्यता नहीं देते तो राष्ट्रीय बैठक के बहिष्कार की भुट्टो द्वारा धमकी ।

फरवरी १६ . प्रांतीय विधानसभा में अवामी लीग पार्टी के नेता रहमान का निर्वाचन—भुट्टो द्वारा पाकिस्तान के दोनों भागों के लिए दो प्रधान मंत्री का प्रस्ताव ।

फरवरी १८ : रहमान की घोषणा कि इस्लाम का यह अर्थ नहीं है कि बंगाल की संस्कृति नष्ट कर दी जाय ।

फरवरी २१ : याह्या खाँ द्वारा केबिनेट भंग ।

फरवरी २८ : अवामी लीग और पीपुल्स पार्टी के बीच चर्चा के लिए भुट्टो द्वारा राष्ट्रीय सभा के उद्घाटन को स्थगित करने की मांग ।

मार्च १ याह्या खाँ ने राष्ट्रीय सभा की बैठक स्थगित कर दी—पूर्वी पाकिस्तान का गवर्नर वाइस-ऐडमिरल एस० एम० अहसन बर्खास्त ।

राष्ट्रीय सभा की बैठक स्थगित करने के विरुद्ध रहमान द्वारा ढाका में आम हड़ताल का आवाहन ।

मार्च २ : ढाका में हिंसा—कर्फ्यू लागू ।

मार्च ३ : अवामी लीग द्वारा अहिंसक असहयोग की घोषणा । १० मार्च को राजनैतिक नेताओं की बैठक के लिए याह्या खाँ के आमंत्रण को रहमान ने अस्वीकार कर दिया ।

मार्च ५ : सेना द्वारा कारंवाई में अवामी लीग के ३०० स्वयंसेवक और कार्यकर्ता मारे गये ।

मार्च ६ : याह्या खाँ की घोषणा : राष्ट्रीय सभा की बैठक २५ मार्च को होगी ।

मार्च ७ . रहमान की घोषणा . सरकार के कर्मचारी मुझसे आदेश लें, जनता टैक्स न दे, अवामी लीग २५ मार्च की राष्ट्रीय सभा की बैठक में तभी भाग लेगी जब (क) मार्शल ला उठा लिया जायगा, (ख) सत्ता चुने हुए प्रतिनिधियों को सौंप दी जायगी, (ग) सेना अपनी बारीकों में लौट जायगी, (घ) सेना की कारंवाई में हुई हत्याओं की जांच होगी ।

'वेस्ट पाकिस्तान राइफल्स' के सैनिकों का बंगाली प्रदर्शनकारियों पर गोली चलाने से इनकार ।

मार्च ८ सविनय अवज्ञा आन्दोलन शुरू ।

मार्च ९ पूर्वी पाकिस्तान के न्यायाधीश का गवर्नर टिक्का खाँ को शपथ दिलाने से इनकार ।

मार्च १४ केन्द्रीय सरकार का आदेश सब कर्मचारी १५ तक काम पर वापस आ जायँ ।

मार्च १५ : रहमान द्वारा स्वायत्तता की घोषणा—पूर्वी पाकिस्तान के लिए ३५ आदेश जारी—याह्या ढाका पहुंच गये ।

मार्च १७ . सेना द्वारा की गयी हत्याओं की जांच की टिक्का खाँ द्वारा घोषणा ।

मार्च १८ रहमान को जांच का अधिकारी अमान्य ।

मार्च १९ : याह्या और रहमान में चर्चाएँ शुरू ।

मार्च २१ भुट्टो ढाका पहुंच गये—याह्या से चर्चा । पश्चिमी पाकिस्तान के दूसरे दलों के नेताओं की भी आपसी चर्चा । रहमान की याह्या से चर्चा ।

मार्च २२ : याह्या ने फिर राष्ट्रीय सभा की बैठक स्थगित कर दी ।

मार्च २५ : वार्ता टूटने का संकेत—और अधिक हत्याएँ ।

मार्च २६ . मार्शल ला प्रशासक टिक्का खाँ द्वारा १६ और आदेश जारी ।

ढाका और आसपास के क्षेत्र में २४ घंटे का कर्फ्यू। विश्वविद्यालय में 'ईस्ट पाकिस्तान राइफल्स' के अड्डे पर कत्ल-अनेक निहत्थे लोगों की हत्या।

याह्या का सेना को आदेश 'सविनय अवज्ञा आन्दोलन को कुचल दो'।

भारत में वामपंथी नेताओं द्वारा सरकार बंगला देश की जनता को नैतिक समर्थन की माँग।

मार्च २७ : प्रधान मंत्री द्वारा बंगला देश की मान्यता के सम्बन्ध में उचित समय पर निर्णय का संकेत।

पाक हवाई सेना ने बंगला देश पर बमबारी की।

टिक्का खाँ कड़ा घायल।

मुजीब द्वारा पश्चिमी पाकिस्तानी सेना के आत्म-समर्पण की माँग।

बलूचिस्तान और उत्तर पश्चिमी सूबे में स्वतंत्रता की घोषणा का खबर।

मार्च २८ बंगला देश की अंतरिम सरकार स्थापित। मेजर जिया खाँ सरकार के प्रधान नियुक्त।

लेफ्टिनेंट जेनरल टिक्का खाँ पूर्वी पाकिस्तान में मार्शल ला प्रशासक नियुक्त।

मार्च २९ पाकिस्तान थलसेना द्वारा चटगाँव में गोलीबार।

ढाका के रेडियो स्टेशन के लिए घमासान लड़ाई।

मार्च ३० कोमिल्ला सिलहट क्षेत्र की मुजीब सेनाओं द्वारा मुक्ति। ढाका रेडियो स्टेशन ध्वस्त।

२. कानूनी स्थिति

बंगला देश ने अपनी स्वतंत्रता घोषित कर दी है। पाकिस्तान की सरकार एकता और देश की प्रभुसत्ता की दुहाई देती जा रही है। ऐसी स्थिति में कानून और नैतिकता (लेजिटिमेसी) की दृष्टि से सही स्थिति क्या मानी जाय? सामान्य तौर पर अन्तरराष्ट्रीय कानून के सिद्धान्तों के अनुसार यह माना जाता है कि अन्तरराष्ट्रीय 'व्यक्ति' (परसन) का उदय तभी माना जाता है जब (क) उसकी सरकार हो, (ख) बड़े भाग पर उसका प्रभुत्व हो, (ग) जब जनता के बहुमत का समर्थन हो, (घ) अन्तरराष्ट्रीय संधि करने की क्षमता हो, (ङ) संयुक्त राष्ट्र संघ का सदस्य होने की योग्यता हो।

२७ मार्च को प्रेसिडेंट याह्या खाँ ने अपने रेडियो भाषण में बंगला देश द्वारा स्वायत्तता की माँग को 'देश-द्रोह' (ट्रेजन) बताया। देश के सभी राजनैतिक दलों को बंद कर दिया, मुख्य रूप से पूर्वी बंगाल में अवामी लीग को, कर्फ्यू लागू कर दिया, और सैनिक-प्रशासकों को आदेश दिया कि वे शान्ति और सुव्यवस्था कायम रखें। लेकिन बाद की घटनाओं से यह सिद्ध है

शेख मुजीबुर्रहमान

कि बंगला देश की स्वतंत्र, प्रभुसत्तासम्पन्न सरकार का उदय हो गया है। यह तथ्य है कि (१) मुक्तिसेना के सैनिक कमाण्डर जिया खाँ द्वारा बंगला देश की अन्तरिम सरकार अवामी लीग के निर्वाचित नेता द्वारा २८ मार्च १९७१ को गठित हुई, (२) बंगला देश का अस्तित्व अब असंदिग्ध है। शेख मुजीबुर्रहमान की ओर से रेडियो पर बोलते हुए जिया खाँ ने कहा "हम लोगों ने शेख मुजीबुर्रहमान खाँ के नेतृत्व में एक प्रभुसत्तासम्पन्न सरकार गठित की है जिसने कानून और संविधान के अनुसार काम करने की घोषणा की है। अगर पश्चिम पाकिस्तानी सरकार का दमन न होता तो ६ सूत्रों पर आधारित अवामी लीग द्वारा तैयार किये गये संविधान के मसविदे के अनुसार हम जनता के कानून को स्पष्ट करते।" ३० मार्च १९७१ को अवामी लीग के एक नेता ने घोषित किया कि "एक स्वतंत्र और प्रभुसत्तासम्पन्न बंगला देश अब एक अकाट्य तथ्य है, दुनिया की कोई शक्ति हमें स्वतंत्रता से वंचित नहीं कर सकती।"

३ उसी रेडियो-भाषण में जिया खाँ ने दुनिया के देशों को आश्वासन दिया है कि बंगला देश अंतरराष्ट्रीय सम्बन्धों का सद्भावना के साथ निर्वाह करेगा। उनके शब्द हैं "अंतरराष्ट्रीय सम्बन्धों में नयी लोकतांत्रिक सरकार गुट-निरपेक्ष नीति का पालन करेगी। वह सभी राष्ट्रों से मित्रता रखेगी और अंतरराष्ट्रीय शान्ति का प्रयत्न करेगी।"

४ मान्यता के लिए बाकायदा अनुरोध—जब विरोधी दल के नेता भारत सरकार से बंगला देश को मान्यता के लिए जोर दे रहे थे तो उन्होंने कहा था कि 'हमें कुछ अन्तरराष्ट्रीय मान्यताओं (नार्म) का निर्वाह करना पड़ता है। सम्भवतः प्रधान मंत्री बंगला देश से मान्यता के बाकायदा अनुरोध की प्रतीक्षा कर रही थीं। इस बीच जिया खाँ ने दुनिया के सभी देशों से 'नैतिक और ठोस सहायता' की ही नहीं बल्कि लोकतांत्रिक और शांतिप्रिय देशों से 'मान्यता' की भी माँग की है। उन्होंने अपने भाषण में कहा, "... अतः हमारा सभी लोकतांत्रिक और शान्तिप्रिय देशों से अनुरोध है कि वे बंगला देश की वैध और लोकतांत्रिक सरकार को मान्यता दें।"

५. प्रभुत्व का प्रश्न—बंगला देश की राजनैतिक सत्ता के बारे में प्रश्न उठाये जा सकते हैं। यह कहा जा सकता है कि बावजूद चुनाव के शेख मुजीबुर्रहमान को बाकायदा सत्ता नहीं सौंपी गयी थी। यद्यपि उन्हें प्रेसिडेन्ट

याह्या खाँ ने 'पाकिस्तान का भावी प्रधान मंत्री' कहकर सम्बोधित किया था। कुछ भी हो, मानना पड़ेगा कि चुनाव में उन्हें बंगला देश का प्रबल बहुमत प्राप्त हुआ था। देश की ५८ प्रतिशत जनसंख्या पूर्व पाकिस्तान में है। प्रान्तीय सभा में रहमान को ३०० में २७२ सीटें मिलीं, तथा राष्ट्रीय सभा में बहुमत, यानी १६२ सीटें। सबसे बड़ी बात यह है कि ३ मार्च १९७१ से, जब राष्ट्रीय सभा की बैठक स्थगित की गयी। मुजीबुर्रहमान का प्रशासन, बैंकिंग, शिक्षण तथा अन्य विभागों पर कंट्रोल रहा है, और जनता का उन्हें पूरा समर्थन मिला है। ऐसी स्थिति में भारत सरकार को पूरा अधिकार है कि वह बंगला देश की सरकार को अनौपचारिक (डी फैक्टो) मान्यता दे सकती है। भले ही औपचारिक (डी जूरे) न दे सके। मान्यता के विभिन्न आधार ये हो सकते हैं

(क) बंगला देश पर पश्चिम पाकिस्तान के आक्रमण के कारण भारत की सीमा पर सुरक्षा का प्रश्न पैदा हो गया है।

(ख) बड़े पैमाने पर बमबारी और विनाशकारी कार्रवाइयों के कारण पड़ोसी क्षेत्रों की भारतीय जनता अरक्षा का अनुभव कर रही है।

(ग) यह युद्ध स्थानीय न रहकर व्यापक हो सकता है, क्योंकि ऐसा टकराव में बड़े राष्ट्र हस्तक्षेप कर बैठते हैं।

(घ) भारत सरकार की दृष्टि में उसके और असम, नागालैण्ड, त्रिपुरा के बीच सचार के साधन लड़ाई के दौरान नष्ट हो सकते हैं।

(ङ) भारत सरकार को विश्वास है कि सैनिक-शासन नहीं, जनता के निर्वाचन से अधिकार-प्राप्त सरकार ही शांति स्थापित कर सकती है।

(च) इस बड़े पैमाने पर होनेवाले नर-संहार की उपेक्षा नहीं की जा सकती। इसलिए भारत सरकार को कानूनी हक है कि वह बंगला देश की सरकार को 'डी फैक्टो' मान्यता दे। मान्यता देने के बाद भारत सरकार संयुक्त राष्ट्रसंघ की घोषणा की आर्टिकिल ॥ (२) के अंतर्गत सुरक्षा परिषद में बंगला देश का प्रश्न उठा सकती है।

३ भारत की शक्ति की सीमाएँ

कई कारणों से भारत सरकार मान्यता देने से अब तक रुकी हुई है। सबसे पहिले भारत सरकार को यह भय हो सकता है कि भारत के भी कुछ क्षेत्र 'स्वतंत्रता' की माँग कर सकते हैं। दूसरे, भारतीय मुसलमानों के बहुमत को पसन्द नहीं है कि संयुक्त पाकिस्तान खंडित हो। तीसरे, कि मान्यता के बाद अगर वह बंगला देश को सैनिक-सहायता दे तो 'सेन्टो' और 'सीटो' संधियों के अन्तर्गत पाकिस्तान को अमेरिका, ब्रिटेन, फ्रान्स और आस्ट्रेलिया से सहायता मिलेगी। वह भारत की सहायता से कहीं अधिक होगी। भारत सरकार को यह आश्वासन नहीं है कि गुट-निरपेक्ष देशों का बहुमत बंगला देश के पक्ष में संयुक्त राष्ट्रसंघ के हस्तक्षेप का समर्थन करेगा। भारत सरकार जानती है कि हिन्द महासागर में रूस और अमेरिका दोनों के जबरदस्त 'मिसाइल अड्डे' हैं। अंत में भारत सरकार को भरोसा नहीं है कि पश्चिम पाकिस्तान और चीन कब क्या कर बैठेंगे। अंत में बंगला देश को मान्यता से ही बंगला देश की कठिनाई दूर नहीं होगी, बल्कि उसे वहाँ के स्वातंत्र्य-संग्राम में शरीक होना पड़ेगा। लेकिन लगता है उस स्थिति के लिए भारत के दल, विधान-सभाएँ, जनता, सभी तैयार हैं। लेकिन कुछ करने के पहिले उसकी व्यावहारिकता अच्छी तरह समझ लेनी चाहिए। फिर भी भारत-जैसे लोकतांत्रिक, स्वतंत्रता-प्रिय देश के लिए प्रश्न रह जाता है कि वह क्या करे। सीमाएँ *बहुत हैं किन्तु हमें याद रखना* चाहिए कि १७७६ में अमेरिका के राज्य स्वतंत्रता की लड़ाई में विजयी नहीं हो सकते थे अगर फ्रान्स से उन्हें नैतिक, राजनैतिक तथा सामग्रियों की सहायता न मिली होती। उसी तरह ब्रिटिश सरकार की सहायता के बिना ग्रीक जनता १८२८ में आटोमन साम्राज्य के अत्याचार से मुक्त न होती। १९१४ के पहले और १९३९ के दूसरे महायुद्ध में कई सरकारें अपने देश के बाहर ब्रिटेन में बनीं। और उनमें से कुछ को लोकतांत्रिक सरकारों का मान्यता के बाद अंतरराष्ट्रीय हैसियत प्राप्त हो गयी। इसलिए भारत को, जो लोकतांत्रिक जीवन-पद्धति में विश्वास रखता है, चाहिए कि बंगला देश की सरकार को मान्यता दे। उसके ऐसा करने से विश्व समुदाय बंगला देश को स्वीकार करेगा और वह पश्चिम पाकिस्तान के सैनिक-शासन की नृशंसता से मुक्त हो सकेगा। —श्री इन्द्रदेव नारायण तिवारी, गांधी विद्या संस्थान, वाराणसी

गांधीजी ने नोआखाली में क्या कहा था ?

१९४६ में नोआखाली की यात्रा में गांधीजी ने 'चटगाँव आरमरी रेड' के क्रान्तिकारियों से कहा था .

"अगर पूर्वी बंगाल में एक भी हिन्दू रह जाता है तो मैं उसे सलाह दूँगा कि मुसलमानों के बीच रहे और मरना हो तो वीर की तरह मरे। गुलाम होकर जीने से इनकार कर दे। हो सकता है कि उसमें बिना लड़े हुए मरने की अहिंसक वीरता न हो। लेकिन अगर वह अन्याय के सामने सिर नहीं झुकायेगा और आदमी की तरह मरना स्वीकार करेगा तो प्रशंसा पायेगा। कोई मनुष्य कितना भी क्रूर और हृदयहीन क्यों न हो, वह बहादुरी की प्रशंसा करता ही है। मैं आपसे यह नहीं कह रहा हूँ कि शस्त्र चलाना छोड़ दीजिए या मेरी तरह वीरता का अनुसरण कीजिए। मैंने भी पक्की वीरता कहाँ सीखी है? मैंने पूर्वी बंगाल में उसकी परीक्षा करने आया हूँ। मैं चाहता हूँ कि आप पारंपरिक ढंग का वीरता अपनायें। आप दूसरे लोगों, पुरुषों और स्त्रियों में वीरता का भाव भरें, और उन्हें सिखायें कि अगर सम्मान खोकर जीने के सिवाय दूसरा रास्ता न रह गया हो तो निडर होकर मौत को गले लगायें।

जिला और सर्वोदय-मंडलों तथा पत्र-पत्रिकाओं के नाम

प्रिय मित्र,

इस साल अखिल भारतीय सर्वोदय सम्मेलन नासिक (महाराष्ट्र) में ८, ९, १० मई को होने जा रहा है। आपके प्रदेशीय सर्वोदय-मंडल के पास रेलवे कन्सेशन-सर्टिफिकेट भेजे जा रहे हैं। अगर ज्यादा कन्सेशन-सर्टिफिकेटों की जरूरत हो तो श्री द्वारको सुन्दरानी, समन्वय आश्रम, बोधगया (गया) या गोपुरी, वर्धा (तार सर्व सेवा, फोन ३६५) को तार द्वारा सूचित करें।

जो सम्मेलन में आना चाहें उन्हें अपने पास ५ रुपया प्रतिनिधि-शुल्क के तौर पर जमा करना है। शुल्क प्राप्त करके आप जितने कन्सेशन-सर्टिफिकेट दें उनकी संख्या की सूचना तार द्वारा २५ अप्रैल को इस कार्यालय को दें, ताकि सम्मेलन की व्यवस्था में सुविधा हो। जो सर्टिफिकेट-पुस्तिका बच जायँ, और दिये गये सर्टिफिकेटों के काउंटर-फायल तथा प्राप्त रुपया अपने साथ नासिक लेते आइए। कोशिश कीजिए कि सम्मेलन में अधिक से अधिक लोग आयें। मई के आरम्भ में खेतिहर, विद्यार्थी, शिक्षक, सभी को आने में सुविधा होगी।

× × ×

हम सब ग्रामस्वराज्य की स्थापना के महान कार्य में लगे हुए हैं। देहात के बड़े भाग में हमारा काम हो रहा है। शहरों को भी हम छू रहे हैं। इतने पर भी हमारे काम की जानकारी शहरों में, विशेष रूप से दिल्ली में नहीं के बराबर है। राष्ट्र की रीति-नीति को बनानेवाले, लोकसभा के सदस्य, सरकार के मंत्री और सचिव, बड़े उद्योगपति, व्यापारी, प्रबन्धक, शिक्षाशास्त्री, सम्पादक और पत्रकार नहीं जानते कि हम क्या कर रहे हैं।

हम लोगों ने तय किया है कि दिल्ली में हमारा एक सूचना-केन्द्र रहे जहाँ हमारे आन्दोलन की पूरी जानकारी प्राप्त हो। यह जानकारी उपर्युक्त लोगों के पास पहुँचायी जाय। सूचना-केन्द्र ६, राजघाट कालोनी, नयी दिल्ली में रखा गया है। इस काम में ग्रामस्वराज्य-कोष के कोषाध्यक्ष श्री रामेश्वर ठाकुर का सहयोग प्राप्त हुआ है। वह श्री राधाकृष्ण तथा अन्य मित्रों के सहयोग से काम करेंगे। निर्देशन श्री देवेन्द्रकुमार गुप्त का रहेगा।

सूचना-केन्द्र के पास देश भर से पहले हमारे कार्यों की सूचनाएँ आनी चाहिए। सर्व-सेवा-संघ के प्रधान केन्द्र, राज्य सर्वोदय मंडल, जिला सर्वोदय मंडल तथा अन्य संस्थाओं से निवेदन है कि वे अपने कार्यों की उपयोगी जानकारी दिल्ली कार्यालय को भेजें।

अपने क्षेत्र के ऐसे संसद-सदस्यों तथा विशिष्ट व्यक्तियों के, जो दिल्ली में रहते हों और जिनका सहयोग आपके काम के लिए आवश्यक हो, नाम भी भेजिए ताकि सूचना-केन्द्र से सूचनाएँ उनके पास भी भेजी जा सकें।

आशा है आप इस प्रचार-कार्य का महत्त्व महसूस करेंगे और अपने क्षेत्र के सर्वोदय-कार्य की सूचनाएँ नियमित रूप से दिल्ली-केन्द्र को भेजते रहेंगे।

× × ×

इस कार्यकर्ताओं को अपने कुटुम्बीजनों को विशेषकर सहधर्मिणी का एवं तरुण लड़के-लड़कियों का इस सम्मेलन में लाना चाहिए और उन्हें सर्वोदय को समझने का, इस उम्र के युवकों से मिलने का एवं भावात्मक वातावरण में सम्मिलित होने का मौका उपलब्ध कराना चाहिए। अतः आप अधिक से अधिक कुटुम्बीजनों को सम्मेलन में लायें ऐसी प्रार्थना है।

ठाकुरदास बंग

गोपुरी वर्धा मंत्री, सर्व-सेवा-संघ

पाकिस्तान—बंगला देश

विषमता की कहानी (कुछ आँकड़े)

	पश्चिमी पाकिस्तान	पूर्वी पाकिस्तान
क्षेत्रफल (वर्गमील)	३१०,३७२	५५,१२६
खेती में भूमि कुल भूमि का प्रतिशत	२४·५	६३·६
जनसंख्या, १९६९-७०	६ करोड़ १ लाख	७ करोड़ १ लाख
भूमिहीन	१·५ करोड़	२·२५ करोड़
प्रति मील व्यक्ति	२००	१२००
विकास व्यय	६००० करोड़	३०० करोड़
विकास का रेट १९६४-६५ से १९६९-७० के बीच	६ प्रतिशत	४ प्रतिशत
राष्ट्रीय उत्पादन	५१५० करोड़	६००० करोड़
राष्ट्रीय आय में वृद्धि का हिस्सा	५८·४	२०·४
राजस्व-व्यय	६००० करोड़	१५०० करोड़
योजनागत व्यय	७० प्रतिशत	३० प्रतिशत
प्रति व्यक्ति आमदनी	५५०	३५०
कृषि-उत्पादन	९५ लाख टन	८५ लाख टन
शिक्षा	१४ प्रतिशत	१२ प्रतिशत
पक्के मकानों का प्रतिशत	७३·६	९४·८
मुस्लिम आबादी का प्रतिशत	९७·१७	८०·४३
विदेशी सहायता	८० प्रतिशत	२० प्रतिशत
केन्द्रीय विभागों में नियुक्ति	९० प्रतिशत	२० प्रतिशत
चावल का भाव	२५ रु० मन	५० रु० मन
सोने का भाव	१३५ रु० भर	१७० रु० भर

7¼%
5-वर्षीय
डाकघर सावधि जमाओं पर
इसी प्रकार
3 वर्षीय जमाओं पर 7%, 1 वर्षीय जमाओं पर 6%
ब्याज प्राप्त कीजिये
एक वर्ष में 3,000 रु० तक ब्याज पर आयकर नहीं लगता। इसमें अन्य कर योग्य सिक्युरिटियों और जमाओं का ब्याज शामिल है।
अधिक जानकारी के लिये पास के डाकघर से सम्पर्क कीजिये
राष्ट्रीय बचत संगठन
davp 70/661

गतांक से आगे

नाहक मिलनं

चौथी बैठक

(२० मार्च '७१)

आज की चर्चा निर्मला बहन के पत्र से शुरू हुई। सहरसा के मोर्चे पर एकाग्रता के साथ जुटी हुई निर्मला बहन ने चर्चा के लिए दो-तीन महत्त्व के मुद्दे पत्र द्वारा सबके सामने पेश किये थे। (क) क्या अहिंसक क्रान्ति का कोई अखिल भारतीय मोर्चा होना चाहिए ? (ख) क्या आपसी बैठकों में आत्मालोचन और उसके बाद अनिंदा व्रत का पालन सम्भव है ? (ग) आपस की पारस्परिकता का विकास कैसे हो ?

नारायण देसाई ने पारस्परिकता की चर्चा को आगे बढ़ाते हुए कुछ मुद्दे रखे। हमारी जमात में सबको अपनी क्षमता की अभिव्यक्ति का अवसर मिलना चाहिए। किसकी क्षमता किस काम में अधिक उपयोगी होगी, यह खोजना चाहिए। इस तरह हरएक की क्षमता का संयोजन होगा तो उसका विकास भी होगा। आज तो थोड़े काम के लिए अधिक कार्यकर्ता हैं। इसीलिए टकराव होते हैं। काम का विस्तार करके सबको आन्दोलन में स्वतन्त्र रूप से अपनी प्रतिभा का योगदान दे सकने लायक स्थिति लानी चाहिए। नैतिकता के प्रश्न पर खुलकर चर्चा होनी चाहिए। हम चर्चा करते नहीं हैं, स्पष्ट होना नहीं चाहते हैं। मेरा निवेदन यह है कि 'सत्य' को सामने रखें और शेष बातों का आग्रह छोड़ें। इस विषय में स्पष्टता होगी तो पारस्परिकता का विकास होगा।

इस पर सिद्धराजजी ने प्रश्न उठाया कि व्यक्ति की क्षमता की खोज में कहीं उसको एक साधन के रूप में इस्तेमाल तो नहीं करने लगेंगे ? पूर्णचन्द्रजी ने इसकी स्पष्टता करते हुए कहा कि व्यक्ति खुद अपनी क्षमता के अनुकूल काम ढूँढ़े। नारायण देसाई ने कहा कि व्यक्ति तो ऐसा करे ही, लेकिन समुदाय उसे ऐसा करने में मदद करे।

मनमोहनभाई ने पर-चर्चा की मनोवैज्ञानिक व्याख्या करते हुए कहा कि पर-चर्चा लोग इसलिए करते हैं कि वे समझना चाहते हैं कि दूसरे क्या, क्यों कर रहे हैं ? समाजशास्त्र, मानसशास्त्र का यह एक मुख्य विषय है। इस दृष्टि से पर-चर्चा बुरी चीज नहीं है, क्योंकि इससे परिस्थिति को समझने की एक अन्तरदृष्टि प्राप्त होती है। यह तो एक शैक्षिक प्रक्रिया है। हम छोटी-छोटी-मण्डलियों में बैठकर आत्म-आलोचना करें, निन्दा-स्तुति के लिए नहीं, परिस्थिति को समझने के लिए। हमारे समाज में बचपन से मन के ऊपर एक दबाव पड़ता है, जिसकी प्रतिक्रिया में आवेश पैदा होता है। परिस्थिति को निरपेक्ष और तटस्थ भाव से परखा जाय तो उसमें निन्दा, आवेश, आक्रमण नहीं होगा। इसके लिए हमको अपने संस्कार बदलने की निरन्तर कोशिश करनी होगी।

वंशीधर श्रीवास्तव ने 'कार्यकर्ता अधिक हैं, काम कम है,' नारायण देसाई की इस बात पर आश्चर्य प्रकट करते हुए कहा कि स्थिति इसके विपरीत है। आपस में चर्चा करके मन की भड़ास निकाल ली जाय, 'कैथारसिस' कर ली जाय, तो निन्दा की प्रेरणा नष्ट हो जायगी। रामचन्द्र राही ने स्पष्टता के लिए नारायण देसाई की चर्चाओं के संदर्भ में यह प्रश्न पूछा कि काम तो आन्दोलन की ही भूमिका में ढूँढ़े और दिये जायेंगे न ? नारायण देसाई ने कहा कि आन्दोलन के बिंदुओं को तय करके हर एक को हम उन्हीं पर लगाना चाहते हैं। देवेन्द्र भाई ने कहा कि निर्मलाजी के पत्र पर इससे छोटे रूप में चर्चा हो सकती है। प्रश्न तकनीक का नहीं, क्रियान्वयन का है।

जैनेन्द्रकुमार ने आन्दोलन के गुणात्मक पहलू पर अधिक गहराई से विचार करते हुए कहा कि प्रयोजन प्रधान हो जाता है, तो व्यक्ति छूट जाता है। हमारी कोशिश रहती है, काम निकालने की। मनुष्य के प्रति बगली रुख हमारा नहीं होना चाहिए, बल्कि समग्रता का होना चाहिए। पूरे मनुष्य को सामने रखना चाहिए। समस्याओं का रूप वैयक्तिक है या सामाजिक, यह सोचना है। अहिंसक समाज-रचना करनी है तो मानव-चित्त का विकास अनिवार्य है। इसलिए हमारा रुख केवल वैचारिक नहीं, संवेदनात्मक भी होना चाहिए। संवेदनात्मक सम्बद्धता के अभाव में मनुष्य का कोई मूल्य नहीं रह जाता।

आपने कहा कि तटस्थ और वैज्ञानिक सामाजिक अध्ययन में मानव-चित्त को भिन्न तत्त्व मान लिये जाने के कारण प्रश्न खुलकर स्पष्टता के साथ सामने आये उससे पहले ही उत्तर सामने आ जाता है और वह दूसरों पर लाद दिया जाता है। मानव की समस्या मानवीय न रहकर सिर्फ भूमि की, अर्थ की, गाँव की हो जाती है। आदर्श एक स्वतन्त्र मूल्य हो जाता है, और मनुष्य को उसकी बलिवेदी पर कुर्बान किया जाने लगता है।

सम्बन्धों की हमारी क्रान्ति की विशिष्टताओं को स्पष्ट करते हुए जैनेन्द्रकुमार ने कहा कि इसमें यश है, सत्ता नहीं। यह इस क्रान्ति की मौलिक बात है। लेकिन प्रत्यक्ष मानव का घटक जो गाँव है, उसका राष्ट्र और विश्वमानव (परोक्ष) के बीच भाव-संचरण होना चाहिए। जब प्रयोजन प्रधान हो जाता है और मनुष्य गौण तो प्रत्यक्ष मानव इतना ज्यादा सामने आ जाता है कि परोक्ष मानव छूट जाता है। इसलिए ग्रामस्वराज्य को सीमा न मानकर उसमें और राष्ट्रस्वराज्य में एक तारतम्य होना चाहिए। इस भूमिका में काम करते समय 'काम' से पहिले 'करनेवाले' की चिंता होनी चाहिए। विश्लेषणात्मक चिंतन के कारण दृष्टि आर्थिक बन गयी है, 'स्वत्व-वाद' ही सब कुछ बन गया है। ग्रामदान में भी स्वत्व के ही हस्तांतरण में हम लगे हैं। स्वत्व की बराबरी में समता नहीं है,

बल्कि 'स्वत्व-मुक्ति' में है। ऐसे लोग निकलने चाहिए, जो 'स्वत्व-मुक्त' हों।]

अन्त में आपने प्रत्यक्ष मानव के साथ अनुरागात्मक और परोक्ष मानव के साथ विचारात्मक सम्बन्ध की आवश्यकता बतायी। सतीशकुमार ने संवेदनशील सम्बद्धता के साथ-साथ वैचारिक प्रतिबद्धता की भी आवश्यकता बतायी और यह प्रश्न उठाया कि दोनों साथ-साथ कैसे चलें? आपने कहा कि केवल विचार के स्तर पर आन्तरिक पीड़ा प्रकट नहीं होती। हम साथ जीते नहीं, इसलिए 'कामरेड-शिप' हमारे बीच नहीं पनपती। उसमें प्रतिबद्धता वैचारिक होती है, लेकिन सम्बद्धता संवेदनात्मक नहीं होती। इसी तरह परिवारों में संवेदनात्मक सम्बद्धता के बावजूद वैचारिक प्रतिबद्धता नहीं होती। जैनेन्द्रकुमार ने कहा कि इसका कोई बना-बनाया फार्मूला नहीं है, इस दृष्टि से निरन्तर जागरूक रहकर प्रयत्न करना चाहिए।

क्रान्ति के आरोहण में 'यूटोपिया' की अत्यावश्यकता बताते हुए कान्तिभाई शाह ने केन्द्रीकरण और विकेन्द्रीकरण की चर्चा छेड़ी और कहा कि केन्द्रीकरण का कौशल और विकेन्द्रीकरण की भागीदारी और आत्माभिव्यक्ति का मेल कैसे हो, इस पर विचार करना चाहिए। मनमोहनभाई ने कहा कि वैज्ञानिक दृष्टि की बात को पश्चिम का दृष्टिकोण मान लेना गलत होगा। आपने सर्वोदय आन्दोलन में वैज्ञानिकता की कमी की चर्चा करते हुए भावात्मक सम्बद्धता को बौद्धिक आधार देने की आवश्यकता बतायी।

नारायण देसाई ने निर्मला बहन के पत्र में उठाये गये अखिल भारतीय मोर्चे की चर्चा करते हुए कहा कि उसका स्वरूप भौगोलिक होगा या लक्ष्य-एकता का? उनका अपना मत था कि आग्रह छोड़ें और हर एक को स्वतंत्र रूप से सोचने दें।

जयप्रकाशजी ने जैनेन्द्रजी की अभिव्यक्तियों के प्रति प्रशंसात्मक भाव व्यक्त करते हुए कहा कि सर्वोदय-दर्शन में यह बात बिलकुल साफ है कि मानव ही केन्द्र है, विचार, कार्यक्रम आदि गौण हैं। लेकिन आज मानव जिस स्थिति में है, उसके प्रति संवेदना का अनुभव करके ही उसे उस स्थिति से मुक्ति दिलाने के हम कुछ प्रयत्न कर रहे हैं। हमारा 'अप्रोच' राजनीतिक तरीकों से भिन्न है। हमें किसी विचार का आग्रह नहीं है, लेकिन काल और देश को देखते हुए हमने एक कार्यक्रम स्वीकार किया है। मानवीय मूल्य को सिद्ध कैसे किया जाय? इसी प्रश्न के जवाब में दूसरी चीजें आती हैं। ग्रामस्वराज्य में संकुचितता नहीं है, न उसका सन्दर्भ सिर्फ गाँव का है, वह एक अप्रोच है, भागीदारी और साझेदारी को जीवन के हर क्षेत्र में समाज के हर स्तर पर लागू करने का।

राहतवाले रचनात्मक काम और परिवर्तन के लिए क्रान्तिकारी काम की क्या दो समानान्तर धाराएँ अभी चल रही हैं? इनमें क्या परस्पर के पूरक होने की सम्भावना नहीं प्रकट हो सकती? ये प्रश्न पेश करते हुए जैनेन्द्रकुमार ने कहा कि आज भी गांधी-परिवार काफी बड़ा है भारत भर में, वह अगर एक साथ हो सके तो भारत के लिए आगामी सम्भावनाएँ काफी बड़ी हो सकती हैं। रामचन्द्र राही ने कहा कि गांधीजी के जमाने में जन्मी राहतकार्य करनेवाली सभी रचनात्मक संस्थाओं की मुख्य धारा 'स्वराज्य' थी। लोककल्याणकारी राज्य में उन संस्थाओं का संदर्भ बहुत बदल गया। 'ग्रामस्वराज्य' सभी रचनात्मक संस्थाओं के राहत-कार्यों की मुख्य धारा के रूप में कैसे आये और उसके संदर्भ में इन संस्थाओं के काम की क्या रूपरेखा और दिशा हो, य. सोचकर तालमेल का कोई रास्ता निकालना चाहिए। नारायण देसाई ने इसे वृत्ति और रुख का विषय बताते हुए कहा कि हमारे अपने अन्दर की उच्च भावना और संस्थाओं के प्रति हीन भावना के कारण अधिक बाधाएँ आती हैं। वसंत बोम्बटकर ने गांधी के समय से चली आ रही आश्रम, रचनात्मक संस्थाओं और आन्दोलन की प्रवृत्तियों का उल्लेख करते हुए कहा कि तीनों का समन्वित रुख हो, एक का मूल्य दूसरे की मर्यादा को स्वीकारे तो क्रान्ति के काम में सुविधा होगी। पुष्टिकार्य में ऐसा हो भी रहा है। यह विचार था पूर्णचंद्र जैन का। पाटिल साहब ने कहा कि ग्रामस्वराज्य की बुनियादी चीज है ग्रामभावना। लेकिन हम शर्तों को मुख्य बना देते हैं, ग्रामभावना गौण हो जाती है।

दादा धर्माधिकारी ने रचनात्मक संस्था और कार्य की भूमिका की चर्चा को आगे बढ़ाते हुए कहा कि राहत का काम तो हो, लेकिन उसमें से भावी समाज की झाँकी भी मिले। क्या उसका संकेत इन संस्थाओं में मिल सकता है? क्या मूल्यों की कुछ झाँकी मिल सकती है? इन संस्थाओं में ये चीजें नहीं हैं, इसीलिए ये अब उपयोगी नहीं रह गया हैं। समाज में ऐसे संगठन भी होने चाहिए, जिन्हें देखकर राज्य-संस्था में सुधार हो। गांधीजी ने लोकसेवक संघ की कल्पना इसी दृष्टि से की थी। आज संस्थाओं का अनुबन्ध क्रान्ति के साथ नहीं रह गया है। इनका जीवन क्रान्ति-अभिमुखता पर है, इसे इनके प्रमुख लोग समझते हैं। देवेन्द्र भाई ने कहा कि सर्व सेवा संघ समग्रता की कल्पना में से निकला। जब भूदान-आन्दोलन शुरू हुआ तो दूरियाँ आपस की घटीं, लेकिन खत्म नहीं हो रही है। संस्थाओं का पुराना ढाँचा बाधक सिद्ध हो रहा है। आपकी राय थी कि सर्वोदय-सम्मेलन केवल ग्रामदान सम्मेलन न हो, सब इसमें अपनापन महसूस करें, समानता बढ़े। संस्थाओं के व्यक्ति तो करीब आते हैं, लेकिन संस्थाएँ खुद नहीं आतीं। कृपालानीजी जैसे गांधी परिवार के लोग अलग हैं। यह दूरी मिटनी चाहिए। इस दूरी और अलगाव की चर्चा पर अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए दादा ने कहा कि कुछ राजनीति वाले गांधी परिवार के लोग हमारे साथ । इसलिए सोचना चाहिए कि अलगाव के कारण दूसरी ओर भी हैं।

क्रान्ति और रचना-विषयक अपना चिन्तन प्रकट करते हुए जैनेन्द्रकुमार ने

सर्वोदय-कार्यकर्ताओं की हत्या

पाक्षिक अंग्रेजी पत्र 'पर्सनालिटी' के सम्पादक और सर्वोदय-कार्यकर्ता श्री सच्चिदानन्दजी तथा सर्वोदय-कार्यकर्ता श्री गोविन्द रेड्डी को उनके आश्रम गोविन्दपुर, खारीझालू (बिजनौर, उ०प्र०) में कुछ अज्ञात व्यक्तियों ने सोमवार ५ अप्रैल '७१ की रात में गोली मारकर हत्या कर दी। यह समाचार रेडियो और अखबार से प्राप्त हुआ है। विशेष जानकारी प्राप्त करने की कोशिश की जा रही है।

"आज प्रातः रेडियो पर अपने दो सर्वोदय कार्यकर्ताओं और साथियों—श्री सच्चिदानन्द और श्री गोविन्द रेड्डी—की अज्ञात व्यक्तियों द्वारा हत्या का समाचार सुनकर हम गांधी-विद्या-संस्थान के सदस्य तथा सर्व सेवा संघ के शांतिसेना मंडल, प्रकाशन और पत्रिका विभागों के कार्यकर्ता, स्तंभित रह गये। हमें सहसा विश्वास नहीं हुआ कि ऐसे तपे-तपाये, अहिंसा में निष्ठा रखनेवाले, सेवकों की इस प्रकार हत्या हो सकती है। हम सब लोग तीसरे पहर गांधी-विद्या-संस्थान के भवन में मिले। हमने श्रद्धापूर्वक इन साथियों का स्मरण किया। भाई सच्चिदानन्द से जो व्यक्तिगत रूप से परिचित नहीं था वह भी बिजनौर से प्रकाशित उनके पत्र 'पर्सनालिटी' द्वारा उनकी तेजस्वी लेखनी से परिचित था। उन्होंने सदा अपनी आवाज अनीति और अन्याय के विरुद्ध उठायी। जीवन में कभी उन्होंने मानव-विरोध के साथ समझौता नहीं किया। उनके व्यक्तित्व में एक मानव—विशुद्ध मानव—मूर्तिमान हुआ था। उसी प्रकार भाई श्री गोविन्द रेड्डी थे जिन्होंने अपने जीवन में खेती को साधना के रूप में अपनाया, और धरती-माता की सेवा में अपने व्यक्तित्व को विलीन कर दिया। सेवाग्राम आश्रम और कोरापुट का गरडा गाँव उनकी तपस्या के साक्षी हैं। अपने ऐसे दो साथियों को खोकर हम ही नहीं, सारा गांधी-परिवार स्तब्ध होगा। हमें विश्वास है कि जैसे इनका जीवन मनुष्यता के लिए समर्पित था उसी तरह इनकी मृत्यु भी मनुष्यता की वेदी पर बलिदान सिद्ध होगी, और जैसे इनका जीवन, उसी तरह इनकी मृत्यु, हमारे लिए सदा त्याग और समर्पण की प्रेरणा देती रहेगी।"

—गांधी-विद्या-संस्थान के सदस्य, तथा सर्व सेवा संघ के शांतिसेना मंडल, प्रकाशन, और पत्रिका विभागों के कार्यकर्ता
वाराणसी, दिनांक : ८-४-७१

श्री वैद्यनाथ प्र० चौधरी का स्वास्थ्य

रानीपतरा, २६ मार्च ७१। श्री वैद्यनाथ प्रसाद चौधरी दिनांक ५ मार्च ७१ से बीमार पड़े थे। टीकापट्टी पुष्टि-अभियान कैम्प में ही बीमार पड़े। उनका लीवर खराब हो जाने के कारण उन्हें पतला दस्त और बुखार हुआ था। पर अब उनके स्वास्थ्य में काफी सुधार हो रहा है। १५ मार्च '७१ से पथ्य के रूप में दोनों जून भोजन दिया जा रहा है। दो दिनों से अपने से उठ बैठ तथा बरामदे पर थोड़ी देर तक टहल लेते हैं। किन्तु कमजोरी अभी काफी है।

रूपौली पुष्टि-अभियान में श्री अनिरुद्ध बाबू तथा श्री रामकृपाल बाबू उनकी अनुपस्थिति में कार्य कर रहे हैं।

इस अंक में

अन्य स्तम्भ

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पै०), विदेश में २२ रु०; या २५ शिलिंग या ३ डालर।
एक प्रति का मूल्य २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं मनोहर प्रेस, वाराणसी में मुद्रित
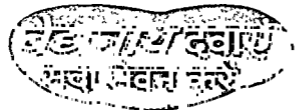
ग्रामसभाओं को मजबूत बनाओ

महिषासुर जब जोर कर रहा था तो उसको न शंकर रोक सका, न विष्णु और न ब्रह्माजी। वे सब मिलकर दुर्गाजी के पास गये। दुर्गा ने कहा कि तुम सब अपने-अपने आयुध मुझे दे दो, इस तरह सब शस्त्रों से सज्जित होकर दुर्गा ने महिषासुर-मर्दन किया। ग्रामसभा अपनी दुर्गा है। उसे अपने सब अस्त्र दे दो। नहीं तो सभी देवता हारेंगे। खादीवाले, हरिजन-सेवावाले, नशाबन्दी-वाले जो भी काम करना चाहते हैं वे सब अपना काम ग्रामसभा द्वारा करायें। जहाँ ग्रामसभा न हो वहाँ ग्रामसभा बनाने का प्रयत्न करो, तभी सब समस्याएँ हल होंगी। तमिल में एक कहावत है कि यह गाँव का कुँआ सबका कुँआ है। हमारी ग्रामसभा इस कुँए की तरह हो। ग्रामसभा कुँआ बने और पूरे गाँव में सिंचाई हो। इसलिए बाबा कहता है कि सब क्रियाओं और कार्यों की संख्या कम करो। ग्रामसभाओं को मजबूत बनाओ।

शहरों में पचास-साठ शहर चुनकर शान्तिसेना का काम करो। शहरों में भी हमारा अड्डा होना चाहिए। गाँव का काम ग्रामसभा द्वारा और शहर का काम शान्तिसेना द्वारा होना चाहिए।

सन् १९२१ से १९७१ तक ऐसे पचास साल खादी के काम के हो गये। एक से सवा प्रतिशत तक खादी का काम बढ़ा। इस प्रकार जो काम किया है उससे काम होनेवाला नहीं। इसलिए नया तरीका निकालना होगा। खादी को मदद की नहीं, 'प्रोटेक्शन' की जरूरत है। यह 'प्रोटेक्शन' उसे ग्रामसभा द्वारा मिल सकता है।

[ब्रह्मविद्या मन्दिर, पवनार ४ अप्रैल '७१]

—विनोबा

• यात्रा के इस बिन्दु पर • पाकिस्तान अपनी गलती स्वीकारे •
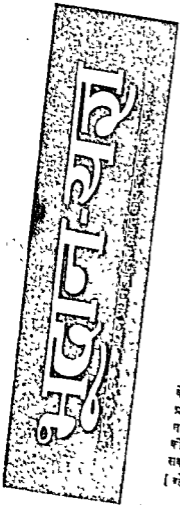
बंगला देश और उर्दू प्रेस

उर्दू की प्रायः सभी पत्रिकाओं में बंगला देश में होनेवाली घटनाओं को पूर्ण रूप से पेश किया गया है, और वहाँ होनेवाले नरसंहार पर दुःख प्रकट किया है।

'हमदर्द' (श्रीनगर) के अनुसार पाकिस्तान का भविष्य अंधकारमय है और वह टूट रहा है। राष्ट्रपति याह्या खाँ इस समस्या को सुलझाने में समर्थ नहीं होंगे, इसका पूर्वानुमान इस पत्रिका ने किया था।

'कौमी आवाज' (लखनऊ) ने पाकिस्तान के संकट को भुट्टो की पैदा की हुई बताया है। उसके अनुसार भुट्टो ने राष्ट्रीय एसेम्बली की बैठक को स्थगित कराकर पाकिस्तान के भविष्य को खतरे में डाल दिया है। पत्रिका ने यह भी लिखा है कि संकट को दूर करने का एक ही रास्ता था कि पाकिस्तान को उसके प्रांतों का महासंघ बना दिया जाय, जिसमें हर प्रांत को स्वायत्तता प्राप्त हो और केन्द्र के अधिकार सीमित हों।

'अल्जमियत' (दिल्ली) का कहना है कि पाकिस्तान के लोग गैर-इस्लामी विचारों को कबूल करके इस दुर्दशा तक पहुँचे हैं। पाकिस्तान के संकट का कारण यह है कि इस्लामी विचार, जिस पर पाकिस्तान की इमारत खड़ी थी, उस पर कोई ध्यान नहीं दिया गया और, प्रान्तीयता, भाषा, नस्ल के झगड़ों में पड़कर छोटी-छोटी राष्ट्रीयता—बंगाली, पंजाबी, सिन्धी आदि—में बँट गये। अगर इस्लाम के मूल विचारों को माना जाता और अपनाया जाता तो आज पाकिस्तान की यह दशा न होती। पाकिस्तान के संकट का कारण वास्तव में पश्चिमी सभ्यता का अनुकरण है। पाकिस्तान आज उन कारणों से टूट रहा है, जो इस्लाम के विरुद्ध हैं।

'कोहकन' (पटना) का कहना है कि पूर्व बंगाल की जनता के बलिदान के जज्बे को दबाना मुश्किल है। उसे सैनिक-शक्ति से दबाया नहीं जा सकता। याह्या खाँ ने बड़ी गलती की है। जब उन्होंने वहाँ चुनाव कराया था तो उन्हें जनता के प्रतिनिधियों को सत्ता सौंप देनी चाहिए।

'दावत' (दिल्ली) ने लिखा है कि पाकिस्तानी राष्ट्र और उसका नेतृत्व बहुत ही नाजुक हालत में है। अगर पूर्वी पाकिस्तान अलग हुआ तो पश्चिमी पाकिस्तान के टुकड़े हो जायेंगे, बलूचिस्तान, सिन्ध, और सीमान्त प्रान्त भी स्वायत्तता चाहेंगे। अगर पूर्वी पाकिस्तान के साथ समझौता किया गया तो पाकिस्तान को भारत के साथ भी सम्बन्ध सुधारना होगा। कश्मीर के प्रश्न को समाप्त करना होगा। पूर्वी पाकिस्तान को स्वायत्तता देकर ही अलग होने से रोका जा सकता है। इस सम्बन्ध में पत्रिका में मौलाना अबुल कलाम आजाद की अपनी अंतिम किताब में लिखा हुआ यह कथन भी दोहराया गया है कि पाकिस्तान के दोनों अंग बहुत दिनों तक साथ नहीं रह सकेंगे। धर्म में इतनी शक्ति नहीं रही है कि वह भौगोलिक दूरी को खत्म कर सके। पत्रिका ने यह प्रश्न भी उठाया है कि क्या धर्म में भौगोलिक दूरी को खत्म करने की योग्यता बाकी है? मौलाना आजाद का कहना था कि ऐसी कोई योग्यता धर्म में नहीं है।

'नकीब' (फुलवारी शरीफ, पटना) ने लिखा है कि पश्चिमी और पूर्वी पाकिस्तान को केवल मशीनगन की नोक पर ही एक रखा जा सकता है। परन्तु प्रश्न यह है कि क्या ७ करोड़ जनता की शक्ति की तुलना में मशीनगन अधिक प्रभाव डाल सकेगी? पत्रिका ने यह भी लिखा है कि पाकिस्तान आज एक नाजुक मोड़ पर खड़ा है। यह मोड़ पाकिस्तानी शासकों की मूर्खता से आया है। तेईस वर्षों तक पूर्वी पाकिस्तान पर पश्चिमी पाकिस्तान का दबाव रहा। अब अगर पश्चिमी पाकिस्तान पूर्वी पाकिस्तान का दबाव कबूल कर ले तो पाकिस्तान टूटने से बच सकता है। परन्तु क्या पश्चिमी पाकिस्तान इसके लिए तैयार है?

उर्दू की बहुत सारी पत्रिकाओं ने 'लन्दन टाइम्स' के इस विचार का समर्थन किया है कि अगर पूर्वी पाकिस्तान पश्चिमी भाग से अलग हो जाता है तो न केवल पाकिस्तान, बल्कि एशिया और सारे संसार को एक बहुत बड़ी समस्या का सामना करना होगा।

बहुत सारी पत्रिकाओं, जैसे—आबशार (कलकत्ता), इन्कलाब (बम्बई), सदाये आम (पटना)—ने पाकिस्तान में होनेवाले गृहयुद्ध का पहले ही अंदाजा लगा लिया था। अधिकतर पत्रिकाओं ने अपने सम्पादकीय में केवल घटनाएँ बयान कर दी हैं। उन पर अपनी कोई राय या विचार प्रगट नहीं किया है।

कुछ ऐसी पत्रिकायें भी हैं जिन्होंने शेख मुजीबुर्रहमान को गद्दार कहा है। ये हैं—एक्सप्रेस (वाराणसी), रहनुमा-ए-दकन (हैदराबाद), आगाज (पटना)। 'एक्सप्रेस' ने तो शेख मुजीबुर्रहमान को मीरजाफर कहा है। उसके सम्पादकीय का शीर्षक था 'जाफर अज् बंगाल बशक्ले मुजीब पैदा शुद' अर्थात् बंगाल में मीरजाफर मुजीब की शक्ल में पैदा हुआ है। इन पत्रिकाओं के अनुसार मुजीब का सबसे बड़ा जुर्म यह है कि उनकी इस हरकत से पाकिस्तान टूट रहा है, जिसके लिए मुसलमानों ने बड़ी कुर्बानी दी थी। मुजीबुर्रहमान के संघर्ष को गद्दारी करार देनेवाले यही तीन अखबार हैं।

प्रस्तुतकर्ता : सैय्यद मुस्तफा कमाल

आवश्यक सूचना

नासिक-सम्मेलन के अवसर पर 'भूदान-यज्ञ' का विशेष अंक ३ मई '७१ को प्रकाशित होगा। इसलिए २६ अप्रैल '७१ का अंक नहीं प्रकाशित होगा। उसके बाद भी सर्वोदय-सम्मेलन का संयुक्त अंक प्रकाशित होगा।

सर्वोदय-सम्मेलन में बिक्री करने के लिए जिन साथियों को ३ मई के अंक चाहिए, वे कृपया तुरन्त सूचना दें, ताकि हम उसीके अनुसार अंक प्रकाशित करके सम्मेलन-स्थल पर उपलब्ध कर सकें।

सम्पादकीय

यात्रा के इस बिन्दु पर

गाडी की गति निरन्तर तेज होती जा रही थी और हमारी चर्चा भी भी। सहयात्री नक्सलवादी उपद्रवों की व्याख्या कर रहे थे, और उनके कारणों की छान-बीन भी। अचानक ब्रेक लगे और एक झटके के साथ गाडी रुक जाय, इस तरह नक्सलवाद के जन्म की जिम्मेदारी सर्वोदय-भूदान वालों पर डालते हुए उन्होंने चर्चा को विराम-बिन्दु पर पहुँचा मानकर खिडकी से बाहर के बदलते दृश्यों में अपने को उलझा लिया। हमारी चर्चा की गाडी कुछ क्षण ठहरी रही। फिर उनको अपनी ओर आकर्षित करते हुए मैंने कहा 'भाई साहब, आपकी बात अगर पूरी तरह सही मान लें, कि विनोबा का भूदान-ग्रामदान असफल हुआ, उसकी प्रतिक्रिया में से नक्सलवाद पैदा हुआ, तो भी क्या एक स्वतंत्र और लोकतंत्रीय व्यवस्थावाले देश के एक जिम्मेदार नागरिक के नाते आपका फर्ज यहीं पूरा हो जाता है ?''

ठीक यही तर्क पेश करते हुए पिछले दिनों अपने देश के शायद सबसे अधिक बिकनेवाली साप्ताहिक पत्रिका 'धर्मयुग' में किसी विद्वान का लेख प्रकाशित हुआ था। इसकी चर्चा करते हुए एक भाषण में दादा धर्माधिकारी ने कहा था, "लिखनेवाला यह लिखने के बाद सोच रहा होगा कि यह बहुत करारी आलोचना होगी भूदान-ग्रामदान वालों की। वे भला इसका क्या जवाब देंगे ? उनके पास इसका कोई जवाब नहीं है। सचमुच हमारे पास जवाब है नहीं। हम कहते हैं कि हाँ मान लेते हैं कि हम असफल हुए और इसीकी प्रतिक्रिया में से नक्सलवाद पैदा हुआ। लेकिन आपका क्या यह भी कहना है कि भूदान-ग्रामदान नहीं हुआ होता, तो यह पैदा हो नहीं हुआ होता ? आखिर आप कहना क्या चाहते हैं ? भूदान-ग्रामदान असफल हुआ उसमें से नक्सलवाद पैदा हुआ तो आप इसकी खुशी में ढोल बजाकर नाचेंगे ? आपको कहना यह चाहिए कि असफल हुआ तो चलो हम सफल बनाने आते हैं। लेकिन नहीं, उनको तो खुशी इस बात की है कि भूदान-ग्रामदानवालों के दाँत खट्टे हुए। उनके दाँत खट्टे हुए तो आपके मीठे तो नहीं हुए। हम तो सबके दाँत मीठे करना चाहते हैं।' दादा के भाषण की याद मुझे उस वक्त ताजी हो आयी थी।

अपने देश में आमतौर पर पढ़े-लिखे लोगों की एक-सी इसी प्रकार की प्रतिक्रिया होती है। हम उनमें अपने आन्दोलन प्रति आकर्षण नहीं पैदा कर पा रहे हैं, यह हमारी चिंता का विषय भी है। यों अगर हम केवल भूदान में प्राप्त और वितरित भूमि के आँकडे ही उनको सुना देते हैं, तो उनके चेहरे पर विस्मय का भाव आ जाता है। लेकिन बावजूद इसके इस आन्दोलन के बारे में उपर्युक्त धारणा पढ़े-लिखे लोगों में आमतौर पर विद्यमान है।

इसका एक मुख्य कारण तो यह है कि ये पढ़े-लिखे लोग हर चीज को, वह अगर नयी है तब तो और भी अधिक, शास्त्रीय संदर्भ में परखने की कोशिश करते हैं, जिसका माध्यम ग्रंथ हैं। भूदान-विचार की विवशता यह रही है कि यह भले ही एक ऐसे व्यक्ति के माध्यम से व्यक्त हुआ हो, जो शास्त्रों का प्रकाण्ड ज्ञाता है, लेकिन जन्म इसका शास्त्र के नहीं, समस्या के गर्भ से हुआ है। शास्त्र से इसका पोषण बराबर होता रहा है लेकिन विकास इसका सहज हुआ है, समस्याओं की चुनौतियों में से हुआ है, और जो स्वतःस्फूर्त है। और जो १८ अप्रैल '५१ और तेलंगाना का पोचमपल्ली गाँव, उस गाँव की जलती भूमि-समस्या का साधक विनोबा के समक्ष पेश होना, यह सब कुछ पूर्वनियोजित नहीं था नियति का संयोग इसे चाहे तो भले कह लें। उस दिन जो कुछ प्रकट हुआ, वह कितनी सम्भावनाएँ लिये आया है, यह किसे पता था। समस्याओं की चुनौतियाँ मिलती गयीं, भूदान की काया पुष्ट होती गयी, आकार बढ़ता गया। प्रथम ग्रामदान मंगरौठ भी पूर्व-चिंतन और योजना का परिणाम नहीं था, समस्याओं के समाधान के लिए प्रकट हुआ संकेत था। आज विकास के इस क्रम में सफलताओं-असफलताओं की गठरी लिये हम इस आन्दोलन को एक ऐसे बिन्दु पर आ गये हैं, जहाँ अपेक्षाओं के पूरे न होने का खेद भी है, और आगे बढ़ने के लिए असीम सम्भावनाओं का आधार भी है। ऐसे बिन्दु पर हम उनको कैसे अपनी स्थिति समझायें, जिन्हें सवाल सामने आयें इसके पहले ही उनके जवाब चाहिए। वे बने-बनाये जवाब, जिनसे आनेवाले भविष्य के सवालों के साथ निपटा जा सके।

भूत की सीमाओं में सिमटे हुए, भविष्य की सम्भावनाओं को अनुमान पर आधारित विचारवाद के सहारे जब हम वर्तमान को देखने की कोशिश करते हैं, तो हमें वास्तविकता का दर्शन नहीं होता, यद्यपि हम उसे शास्त्रीय और वैज्ञानिक दृष्टिकोण कहते हैं। आज दुनिया के क्षितिज पर निगाह दौडाने तो स्पष्ट दिखायी देगा कि इसी दृष्टिकोण के कारण वर्तमान का विध्वंस हो रहा है। मानव सुख टूट रहा है। क्योंकि भूत और भविष्य का अभिशाप मानव का मानव से अलग करता जा रहा है। और मानव को मानव से अलग करनेवाली प्रक्रिया और चाहे जो कुछ भी हो, क्रान्ति तो हर्गिज नहीं है।

भूदान से शुरू हुआ और ग्रामस्वराज्य के रूप में विकसित हुआ यह आन्दोलन वह क्रान्ति करने के प्रयत्न में लगा है, जो कभी हुई नहीं, इतिहास में जिसके प्रमाण नहीं मिलते, शास्त्रों के आधार पर जिसे समझना कठिन पडता है। क्योंकि यह आन्दोलन मानव और उसकी समस्याओं के आमने-सामने होकर समस्याओं के हल ढूँढता है, क्रान्ति की प्रक्रिया शुरू करता है। मानव को मानव से जोडने की, ग्रामसभा जिसका साकार स्वरूप है, क्रान्ति के इस अभियान में अगर हम कहीं विफल भी होते हैं, तो वह आगे की सफलताओं का आधार बनता है। क्या आज का फर्ज सिर्फ इतना ही है कि हम कितना असफल हुए, इसका 'रेकर्ड' तैयार करें ? ●

हम चाहते क्या हैं ?

—शेख मुजीबुर्रहमान

[नीचे हम शेख मुजीबुर्रहमान का चुनाव के पहिले का एक रेडियो-भाषण दे रहे हैं। उससे आपको उनके और उनके दल अवामी लीग के चिंतन की झांकी मिलेगी।—सं]

हम राजनैतिक स्वतंत्रता से वंचित हैं। हमारे साथ आर्थिक अन्याय होता है। हमारा क्षेत्र विषमता का शिकार है।

हमारी माँगें हैं (१) ऐसी लोकतांत्रिक व्यवस्था कायम हो जिसके संविधान में सभी बुनियादी अधिकारों की गारंटी हो। हमने अपने घोषणा-पत्र में राजनैतिक दलों, मजदूर-संगठनों और स्थानीय संस्थाओं का ढांचा प्रस्तुत किया है। हम प्रेस और विद्यालयों की स्वतंत्रता उन्हें वापस देंगे, और भ्रष्टाचार को दूर करेंगे।

आज के आर्थिक ढांचे में आमूल परिवर्तन होना चाहिए। इस वक्त राष्ट्र की औद्योगिक सम्पत्ति का ६०% मात्र दो दर्जन परिवारों के हाथ में है। बैंकों की ८०% पूंजी, बीमा की ७५% पूंजी, बैंकों द्वारा दी गयी पेशगी के ८२% का लाभ ३% लोग उठाते हैं। इसके कारण, तथा ऋण, अनुदान, प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष टैक्स, विदेशी विनिमय आदि की रीति-नीति में पक्षपात के कारण आर्थिक शक्ति का भयंकर केन्द्रीकरण हुआ है।

भूमि-सुधार केवल नाम के लिए हुए हैं। *सामंतवाद का अब भी बोलबाला* है। गांवों से लोग शहरों में आ रहे हैं। श्रमिकों का १/५ भाग, यानी ९० लाख *लोग बेकार हैं। बेकारी बढ़ रही है।* साथ-साथ महँगाई भी बेतहाशा बढ़ रही है।

पूर्व और पश्चिमी पाकिस्तान के बीच आर्थिक विषमता २० वर्षों में बढ़ती ही गयी है। इतने वर्षों में सरकार ने अपनी रेवेन्यू से पूर्वी बंगाल में केवल ५ अरब खर्च किये है, जब कि पश्चिमी पाकिस्तान में ५० अरब खर्च किये गये। विकास का खर्च ३० अरब पूर्व बंगाल में हुआ, ६० अरब प० पाकिस्तान में। इन बीस वर्षों में प० पाकिस्तान ने विदेशी विनिमय से कमाया १३ अरब, और विदेशों से माल मँगाया ३० अरब का। यह कैसे हुआ? इसलिए कि प० पाकिस्तान ने विदेशी सहायता का ८०% हड़प लिया, और पू० बंगाल की कमाई के ५ अरब *हथिया लिये।*

बंगाल के सिर्फ १५% केन्द्रीय नौकरियों में हैं, और १०% से कम प्रतिरक्षा-*नौकरियों में।*

इस अर्थनीति का परिणाम यह हुआ है कि अधिकांश गांव सदा अकाल की *स्थिति में रहते हैं।*

मुद्रास्फीति (इन्फ्लेशन) का असर है कि प० पाकिस्तान के मुकाबिले पू० बंगाल में कीमतें ५० से १००% ज्यादा है। मोटा चावल प० पाकिस्तान में २०-२५ रु० मन है, जब कि पू० बंगाल में ४०-५० रु० मन है, गेहूँ वहां १५-२० रु० मन है, यहाँ ३०-३५ रु० मन। सरसों का तेल वहां २.५० रु० सेर है, यहां ५.०० सेर। सोने की कीमत कराची में १३५-१४० रु० प्रति तोला है, जब कि ढाका में १६०-१६५ रु०। जिसपर प० पाकिस्तान से पू० बंगाल में सोना लाने में 'कस्टम' है।

केन्द्रीय सरकार ने, जिसके हाथ में आर्थिक मामलों का नियमन-संचालन है, इन अन्यायों को दूर करने का कोई *प्रयत्न नहीं किया है।*

केन्द्रीय नौकरशाही और शासकों से न्याय पाना असंभव है। हमारे प्रतिनिधि कोशिश करते हैं तो आपस के तनाव बढ़ते हैं। हम इस नतीजे पर पहुँचने हैं कि अब एक ही उपाय रह गया है कि हमारे ६ सूत्रीय कार्यक्रम के आधार पर पाकिस्तान-संघ की सब इकाइयों को स्वायत्तता दे दी जाय। स्वायत्तता के अन्तर्गत आर्थिक स्वायत्तता भी होनी चाहिए। इसीलिए हम चाहते हैं कि इकाइयों को टैक्स, विदेशी विनिमय, विदेशी व्यापार और सहायता, आदि पर अधिकार हो। केन्द्रीय सरकार के हाथ में विदेशी मामले और प्रतिरक्षा हो, और किसी हद तक करेंसी। अखिल पाकिस्तान सेवाएँ तोड़ दी जायँ, उसके स्थान पर संघीय सेवाएँ हों जिनमें भर्ती जन-संख्या के आधार पर हो। हर इकाई को *अपनी 'मिलीशिया'* रखने का अधिकार होना चाहिए। इससे पाकिस्तान की सुरक्षा को बल मिलेगा, *और आपके संदेह दूर होंगे।*

हम मानते हैं कि अर्थनीति को बदलने के लिए बैंक और बीमा का राष्ट्रीयकरण होना चाहिए। औद्योगिक संस्थानों की पूँजी और व्यवस्था में श्रमिकों का भाग होना चाहिए।

निजी क्षेत्र (प्राइवेट सेक्टर) को चाहिए कि आर्थिक विकास में अपना भरपूर रोल अदा करे। बड़े-बड़े केन्द्रित संस्थान (मोनापोली और कार्टेल) समाप्त होने चाहिए। टैक्स की पद्धति बदलनी चाहिए, और शौकीनी की चीजों पर कड़ा प्रतिबन्ध लगना चाहिए।

छोटे और गृह-उद्योगों को भरपूर समर्थन और सहायता मिलनी चाहिए। बुनकरों के लिए कच्चे माल, रंग, ऋण आदि की सुविधा होनी चाहिए। छोटे उद्योगों की सहकारी समितियाँ गाँव-गाँव में बननी चाहिए, ताकि रोजगार की सुविधाएँ ग्रामीण जनता को मिलें।

जूट—विनिमय-दर में पक्षपात और बिचौलियों (मिडिल मेन) के कारण जूट-उत्पादकों को उचित मूल्य नहीं *मिलता। जूट-व्यापार का* राष्ट्रीयकरण होना चाहिए और उसकी उपज और 'क्वालिटी' बढ़ाने के लिए शोध होने *चाहिए।*

कपास—कपास भी जूट की ही तरह है। उसका भी राष्ट्रीयकरण आवश्यक है। पहिले की सरकारों की *उपेक्षा*

के कारण हमारी व्यापारिक फसलों, जैसे-जूट, गन्ना और तम्बाकू, में प्रति एकड़ बेहद कम उपज है।

वास्तव में पूरे खेती के क्षेत्र में आमूल परिवर्तन की आवश्यकता है। पश्चिम पाकिस्तान की जागीरदारी, जमींदारी, सरदारी प्रथाएँ समाप्त होनी चाहिए। जमीन पर 'सीलिंग' लगाकर, खेतिहरों के हितों की रक्षा होनी चाहिए। 'सीलिंग' से निकली भूमि और सरकार की खास भूमि भूमिहीनों में बाँटी जानी चाहिए।

सहकारी समितियाँ—छोटे छोटे खेतों के कारण अच्छी खेती नहीं हो पाती, इसलिए खेतिहरों को समझना चाहिए कि वे 'मल्टीपरपज कोआपरेटिव सोसाइटियाँ' बनायें। सरकार इन्हीं सोसाइटियों के द्वारा सिंचाई, बाँध, पानी की निकासी, ट्यूबवेल, पंप, खाद, बीज, यंत्र, ऋण, नयी पद्धतियों के शिक्षण आदि का काम कर सकती है।

तत्काल राहत देने की दृष्टि से हम लोग २५ बीघा तक की जोत पर लगान खत्म कर देंगे और पुराना बकाया भी छोड़ देंगे। आगे चलकर हम लगान की प्रचलित व्यवस्था को ही खत्म कर देंगे।

बाढ़—बुनियादी कामों पर सबसे पहले ध्यान देने की जरूरत है। बाढ़ का नियंत्रण और प० पाकिस्तान में रेह और दलदल की रोक।

बिजली—बिजली की व्यवस्था करके गाँवों तक बिजली पहुँचाने की जरूरत है।

संचार और यातायात—उत्तर बंगाल से सीधा आवागमन हो, उसके लिए आवश्यक है कि यमुना नदी पर पुल बने। उसी तरह सिंध और पंजाब की नदियों पर भी पुल की जरूरत है। आवागमन की दृष्टि से समुद्र और नदियों में बंदरगाह, सड़कें और रेलों पर तुरत ध्यान देना चाहिए।

शिक्षण—दुःख है कि सन् १९४७ के बाद प्राइमरी स्कूलों की संख्या घट गयी है। साक्षरता का प्रतिशत केवल १८ है, और निरक्षरों की संख्या १० लाख से अधिक की सालाना वृद्धि हो रही है। राष्ट्र के आधे से अधिक बच्चों को शिक्षा नहीं मिल रही है। जो लड़के और लड़कियाँ स्कूल जाती हैं उनमें से १८% और ६% लड़कियाँ ५ साल की प्राथमिक शिक्षा पूरी करती हैं। हमारा विश्वास है कि राष्ट्रीय आय का कम-से-कम ४%, शिक्षा पर खर्च होना चाहिए। ५ साल के भीतर शिक्षा मुफ्त और अनिवार्य हो जानी चाहिए। इसी तरह माध्यमिक और विश्वविद्यालयों की शिक्षा का विकास हो। बंगला और उर्दू हर क्षेत्र में अंग्रेजी का स्थान ले लें, इसके लिए फौरन कार्रवाई होनी चाहिए। क्षेत्रीय भाषाओं को प्रोत्साहन मिलना चाहिए।

शहरों में झुग्गियों की बस्तियों की जगह कम दाम के मकान बनने चाहिए ताकि थोड़ी आमदनी के लोगों को राहत मिले।

ग्रामीण जनता को डाक्टरी सहायता देने की गरज से डाक्टरी स्नातकों के लिए राष्ट्रीय सहायता की योजना चलनी चाहिए।

श्रमिकों के बुनियादी अधिकारों की रक्षा होनी चाहिए। संघ बनाना, सामूहिक सौदा और हड़ताल—ये उनके अधिकार हैं। जिन कानूनों द्वारा उनके अधिकारों पर आघात पहुँचता हो उन्हें रद्द कर देना चाहिए। अगर श्रमिकों को उद्योग में न्यायपूर्ण स्थान मिलता तो वे उत्पादन बढ़ाने का प्रयत्न अवश्य करेंगे।

नागरिकों की समता में हमारा दृढ़ विश्वास है। अल्पसंख्यकों को जानना चाहिए कि हमने सम्प्रदायवाद का हमेशा विरोध किया है। हमारी व्यवस्था में उनके अधिकार समान होंगे, और उन्हें कानून का समान संरक्षण मिलेगा।

यह झूठा प्रचार किया जाता है कि हमारा ६ सूत्रीय कार्यक्रम इस्लाम के विरुद्ध है। जिस चीज से क्षेत्र और क्षेत्र, मनुष्य और मनुष्य के बीच न्याय की स्थापना हो वह इस्लाम के विरुद्ध नहीं हो सकती। हम लोगों ने इस सिद्धान्त में अपने विश्वास की घोषणा की है कि पाकिस्तान में कोई ऐसा कानून नहीं होना चाहिए जो कुरान या सुन्नी के विरुद्ध हो।

अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में हम गुटों की राजनीति में नहीं पड़ेंगे। सीटो सेन्टो, तथा दूसरी सैनिक-संधियों से अलग हो जायेंगे। हम सबके साथ, विशेष रूप से पड़ोसियों के साथ सहअस्तित्व की नीति बरतेंगे। हम कश्मीर-प्रश्न का निपटारा संयुक्त राष्ट्रसंघ के प्रस्तावों के अनुसार चाहते हैं। फरक्का बैरेज के बनने से बंगाल का जो क्षति पहुँचेगी उसे बचाना चाहिए।

हम अपने ६ सूत्रीय कार्यक्रम को लेकर चुनाव लड़ रहे हैं। उन्हींकी पूर्ति के लिए हम सत्ता चाहते हैं। हम चाहते हैं कि राजनैतिक बन्दियों पर से मुकदमे उठा लिये जायँ, और जिन्हें सजा मिल चुकी है वह रद्द कर दी जाय।

हम पाकिस्तान में लोकतन्त्र चाहते हैं। अगर लोकतन्त्र नहीं रहेगा तो पाकिस्तान नहीं रह सकता। हमारे ६ सूत्रीय फारमूले के आधार पर हर इकाई को पूर्ण स्वायत्तता मिलनी चाहिए, तथा नये सारतात्विक राष्ट्रीय संविधान के अन्तर्गत सामाजिक क्रांति के लिए मूलगामी आर्थिक कार्यक्रम पूरे किये जाने चाहिए।

यह हमारे लिए चुनौती है। अल्लाह ने चाहा तो हम उसे पूरा करेंगे। ■

क्या संवेदना का स्रोत सूख गया है ?

—इन्द्र नारायण तिवारी

लगता है दर्शन दिशा खो चुका है, राजनीति अपनी नीति खो चुकी है, और साहित्य की अभिव्यक्ति छिन गयी है, गणित की गणना मिट चुकी है। आखिर हो क्या गया है ? बंगला देश में क्या यह नर-संहार होता ही रहेगा ? हलाकू से हिटलर तक नर-मेध की इस परम्परा पर दुनिया ने चुप्पी क्यों साध रखी है ? क्या चंगेज खाँ से बढ़कर याह्या खाँ नादिरशाही नहीं कर रहा है ?

अजीब बात है। शब्दों के अर्थ बेकार हो गये। स्वार्थ का ताला कसकर लगा दिया गया है। अनन्त नर-नारी, निहत्थे, निर्दोष बच्चों का संहार इतने दिनों से बंगला देश में हो रहा है। अमेरिका डर रहा है कि उसके हाथ से वीयत्नाम राज्य न निकल जाय। रूस डर रहा है कि हंगरी, पोलैंड, रोमानिया के अलावा साइबेरिया, बाहरी मंगोलिया, लैटेविया और ताजिकिस्तान न निकल जाय। चीन डर रहा है कि कहीं उसके हाथ से तिब्बत और आन्तरिक मंगोलिया न निकल जाय। कनाडा क्यूबेक के लिए परेशान है। इंग्लैण्ड आयर्लैण्ड को छाती से चिपकाये हुए है। और तो और, लंका डरा हुआ है कि जफना के हिन्दू छोटा हिन्दुस्तान लंका में न बना लें। भारत तो तमिलनाडु के करुणानिधि से और उड़ीसा के विश्वनाथ दास से धमकी पा चुका है। तेलंगाना और विदर्भ तो छाती पर है ही। कश्मीर की आजादी का भी डर है।

माँ-बहनों की चीख और गुहार के बावजूद भारत की करुणा की परम्परा कहाँ है, उपनिषद् के आत्म-दर्शन में जंग लग गयी है क्या ? तथागत की करुणा-धारा किस मरुभूमि में सूख गयी ? गार्गी की निर्भयता किसके प्रहार से चूर-चूर होकर ध्वस्त हो गयी ? कहाँ गयी तेरी लक्ष्मीबाई, प्रताप और भगत सिंह की परम्परा ? आग लग गयी है भारत की ज्ञान-गगरी में जो इतने नृशंस नर-संहार में भी पक्ष लेने में डावाँडोल है !

कहाँ गया भारत का महान् नर-समूह और उसकी जनशक्ति ? कुछ दिन पहले के इसी भारत के एक भाग में अस्पतालों पर बम गिर रहे हैं, विश्वविद्यालय, विद्यार्थी और शिक्षक समेत नपाम बम से जलाकर राख किये जा रहे हैं और भारत की जनता कुछ कर सकने में असमर्थ है। क्या हमारी शान्ति कब्रगाह की शान्ति नहीं है ? अन्तर्राष्ट्रीय विधि के सारे कानूनों को क्या दफना नहीं दिया गया है ? अजीब है यह तटस्थता की नीति।

सहानुभूति, एकता, प्रतिज्ञा, क्या ये कोरी हैं ? कहाँ गयी हमारी 'करेंगे या मरेंगे' की परंपरा ? आग लगा दो उस अन्तर्राष्ट्रीयता में जो निष्पक्ष शान्ति साधकर पाकिस्तान की इस बर्बरता को बरदाश्त कर रही है। मिटा डालो उस भ्रातृत्व को जो निहत्थी माँ बहनों को कुचलते देखकर केवल प्रस्ताव पास कर सकता है। नहीं चाहिए हमें प्रजातन्त्र की वह सहनशीलता जो बंगला देश को श्मशान बनते देखकर और अधिक सहनशील बनने की आदत डाल रहा है। नहीं चाहिए हमें वह धर्मनिरपेक्षता जो करोड़ों को गोलाबारी से भुनते देखकर भी निरपेक्ष है। विदा कर दो उस समाजवाद को जो समाज के इस भूखण्ड में दरार होने से रोक नहीं रहा है। दफना दो उस शब्द-कोष को जो इतने विस्तृत एवं घनीभूत नर मेध को भी 'घरेलू मामले' की प्रामाणिकता देता है।

कहाँ गयी क्रिश्चियानीटी की सेवा-भावना जो आँखों के सामने अस्पताल के रोगियों, निर्दोष किसानों और मजदूरों को भुनते देख रही है ! नहीं चाहिए हमें विज्ञान, जो रूस और अमेरिका के स्वार्थ का हथकण्डा मात्र बना है। नहीं चाहिए हमें वह सभ्यता जो कायरता को प्रथम देती है। सच कहें, नहीं चाहिए हमें लिंकन का प्रजातन्त्र और जेफरसन का गणतन्त्र, जो प्रजा की शक्ति को चूर-चूर करने में मदद कर रहे हैं। न्यूयार्क की स्वातन्त्र्यमूर्ति कितनी लज्जित होती होगी !

और इन मुसलमान देशों की समता-प्रिय जनता को क्या हो गया है ? वे क्यों मूक हैं ? क्या इस्लाम की यह समता बंगला देश के हर नर-नारी को फौजी हथियारों से समतल कर देने में खुश बना रही है ?

मिस्र देश की जनता से बड़ी उम्मीद थी, पर वह भी दूर से ही पाकिस्तानी एकता और बंगला देश की स्वायत्तता के मिलन का संगीत गाता है।

और वह राष्ट्रसंघ ? नहीं, वह तो 'षडयन्त्र संघ' है। उसने कोरिया को दो टुकड़ों में चीरे जाते देखा। उसने वियतनाम का जर्रा-जर्रा नष्ट होते देखा। उसने ही अरब-इजरायल के युद्ध को बनाये रखा, ताकि रूस और अमेरिका के हथियारों की बिक्री हो सके। उसने कश्मीर में युद्ध विराम कर रखा, ताकि अमेरिका और रूस का बम उद्योग चलता रहे। कैसा है यह मृत्यु का व्यापार !

यह कुछ तथाकथित महान शक्तियों के हाथ की कठपुतली मात्र है। गुड़िया है वह रूस और अमेरिका की। रूस लेनिन के सिद्धान्तों को दफनाने में खुशी मनाता है, अमेरिका लिंकन की प्रतिमा को मजार मानता है।

यह भौतिक सभ्यता ! इतिहास तेरे ऊपर अपना निर्णय देगा। हम प्रगति, तरक्की, विज्ञान, विकास की बात कर रहे हैं। जब हम इन शब्द जालों से घिरकर कायर हो जाते हैं तो जीवन की सबसे बहुमूल्य धरोहर को खो देते हैं—वह है मानव के दर्द को समझने की संवेदन-शक्ति। हमारी प्रगति की नींव में उस भय के कीड़े हैं, जो नींव के हर तन्तु को कुरेदकर नष्ट कर डालेगा।

प्रणाम है प० बंगाल और त्रिपुरा के नवयुवकों को जो २५ मार्च से सजग होकर मुक्ति-सेना का साथ देने को-

जननायक शेख मुजीबुर्रहमान

मुजीब का जन्म १७ मार्च १९२० को पूर्वी बंगाल के फरीदपुर जिले के गोपालगंज सबडिवीजन के तुंगीपाड़ा गाँव में हुआ था। माता-पिता सम्पन्न जमींदार थे। मुजीब ने गोपालगंज से मैट्रीकुलेशन पास किया, और आगे की पढ़ाई के लिए कलकत्ता के इस्लामिया कालेज में नाम लिखाया। वहाँ बी० ए० पास किया, और एल० एल० बी० किया।

शेख मुजीबुर्रहमान की उम्र इस वक्त ५१ वर्ष है। चार बच्चे हैं। बीमे का काम उनका पेशा था। अखबारों में छपी खबर के अनुसार पाकिस्तानी फौजियों ने उनके एक लड़के और लड़की को मार डाला है।

पढ़ते वक्त से ही मुजीब की राजनीति में दिलचस्पी थी। संगठन करने में निपुण थे, और बोलने बहुत अच्छा थे। विद्यार्थी थे तभी आल इण्डिया मुस्लिम स्टूडेंट्स लीग की कौंसिल के सदस्य चुन लिये गये थे।

कलकत्ता से घर लौटे तो स्थानीय मुस्लिम लीग के सेक्रेटरी चुन लिये गये। पाकिस्तान के बन जाने के बाद उन्होंने युवकों और विद्यार्थियों के संगठन का काम किया। बेहद मेहनत से काम किया, लेकिन मुस्लिम लीग की राजनीति से उनका मन खट्टा होने लगा। वह उससे अलग हो गये, और हुसेन सुहरावर्दी के नेतृत्व में 'अवामी लीग' की स्थापना की। सुहरावर्दी और शरतचन्द्र बोस ने मिलकर बंगाल के बँटवारे के खिलाफ आवाज उठायी थी। वे स्वतंत्र बंगाल चाहते थे।

सन् १९४८ की बात है। मुहम्मद अली जिन्ना ढाका गये थे। वहाँ आमसभा के भाषण में उन्होंने कहा "उर्दू इस देश की राष्ट्रभाषा होने जा रही है। इसके बारे में किसीके मन में कोई संदेह नहीं रहना चाहिए। जो इसका विरोध करेगा वह पाकिस्तान का दुश्मन है।"

मुजीब ने अपने थोड़े साथियों के साथ जिन्ना साहब का विरोध किया। उन्होंने नारे लगाये कि पूर्वी पाकिस्तान की राजभाषा बंगला होनी चाहिए। मुजीब और उनके साथी गिरफ्तार कर लिये गये, और जेल पहुँचा दिये गये। सन् १९५२ में फिर भाषा के इसी प्रश्न पर मुजीब के नेतृत्व में ढाका में आन्दोलन हुआ। सरकार ने दमन से काम लिया। कई जवान फौज की गोलियों के शिकार हुए।

सन् १९५४ में मुजीब पाकिस्तान की विधान-सभा के सदस्य चुने गये। यह

शेख मुजीबुर्रहमान ऐतिहासिक इसान

पहला मौका था कि पूर्वी बंगाल में मुस्लिम लीग बुरी तरह हारी। पूर्वी बंगाल में केन्द्रीय सरकार के खिलाफ हवा फैल गयी। फजलुल हक के, जो बंगाल के पुराने नेता थे, नेतृत्व में सरकार बनी। मुजीब एक मंत्री हुए। थोड़े ही दिनों में वह सरकार भंग कर दी गयी, और फौजी शासन लागू कर दिया गया। मुजीब फिर जेल पहुँचा दिये गये।

सन् १९५५ में मुजीब संविधान सभा के लिए चुने गये। सन् १९५८ में वह पूर्वी पाकिस्तान की अताउर्रहमान सरकार में मंत्री हुए, लेकिन मुख्य मंत्री से मतभेद होने के कारण बहुत दिनों तक रह नहीं सके। केन्द्रीय सरकार ने पूर्वी पाकिस्तान की सरकार तोड़ दी। अयूब खाँ डिक्टेटर बन गये। मुजीब जेल पहुँच गये। सन् १९६० में छूटे।

सन् १९६५ में हिन्द-पाक युद्ध हुआ। मुजीब ने देखा कि पूर्वी बंगाल तो वस्तुतः भारत की कृपा पर है। उन्होंने अयूब की तानाशाही की आलोचना की। वह भारत-पाक युद्ध के विरोधी थे। उनकी राय थी 'भारत से आर्थिक और व्यापारिक सम्बन्ध रखना पूर्वी पाकिस्तानियों के लिए जीवन-मरण का प्रश्न है। भारत सदियों से हमारा स्वाभाविक और सबसे करीब का साझेदार रहा है।" अयूब कश्मीर में जनमत-गणना की बात कहते थे तो मुजीब जवाब देते थे कि पूर्वी बंगाल में कराकर 'तमाशा देखिए।'

सन् १९६६ में बंगला देश की स्वायत्तता का आन्दोलन शुरू हुआ। मुजीब ने ६ सूत्रीय कार्यक्रम बनाया। एक साल में वह तीन बार पकड़े गये, और तीनों बार अदालत से छूटे। सन् १९६८ में अयूब ने उनके ऊपर भारत से मिलकर सशस्त्र विद्रोह करने का अभियोग लगाया। मुजीब और उनके कई साथियों के खिलाफ 'अगरतला षड्यंत्र केस' चलाया गया।

फरवरी १९६९ में मुजीब छूटे, क्योंकि राजनैतिक चर्चाओं में पूर्वी बंगाल की ओर से वही बात करते थे।

तब तक अयूब की जगह याह्या खाँ आ गये। उन्होंने चुनाव की घोषणा की। मुजीब और उनकी पार्टी 'स्वायत्तता' के प्रश्न पर चुनाव लड़ी। उनकी असाधारण जीत हुई।

जीत के बाद क्या हुआ? वह एक कड़वी कहानी है।

कौन जानता है बंग-बंधु मुजीब कहाँ है? ■

नगरों में सर्वोदय-कार्य की दिशा

नरसिंहपुर, बिहार में नाहर सम्मेलन के अवसर पर दिनांक २० मार्च, '७१ को नगरों में सर्वोदय-कार्य के सम्बन्ध में श्री जयप्रकाश नारायण की उपस्थिति में चर्चा हुई। चर्चा में निम्नलिखित मित्र उपस्थित थे :

(१) जयप्रकाश नारायण (२) मनमोहन चौधरी (३) एस० जगन्नाथन् (४) ठाकुरदास बंग (५) शिरीष राय चौधरी (६) नारायण देसाई (७) शांतिभाई (८) गोविन्दराव देशपाण्डे (९) राममूर्ति (१०) पूर्णचन्द्र जैन (११) हरविलास शर्मा (१२) सुमन बंग (१३) सिद्धराज ढड्ढा।

शहरों में सर्वोदय कार्य की दृष्टि से क्या-क्या काम होने चाहिए, इस पर चर्चा हुई। चर्चा का सार नीचे लिखे अनुसार रहा।

(१) उद्योग तथा व्यापार के क्षेत्र में मुख्य बात यह है कि इसमें लगे हुए लोग—मालिक, संचालक, मजदूर आदि सब—यह महसूस करें कि इन प्रवृत्तियों का मुख्य हेतु समाज की आवश्यकताओं की पूर्ति करना है, इसलिए उनका संचालन समाज हित में होना चाहिए, व्यक्तिगत या किसी वर्ग के मुनाफे के लिए नहीं। गांधीजी ने ट्रस्टीशिप का जो विचार सामने रखा था उसकी भी मूल भावना यही है। आज कुछ छोटे उद्योग एवं व्यापार हैं जो व्यक्तिगत मालिकी के हैं, लेकिन इसके अलावा आज की अर्थ रचना में अधिकांश बड़े उद्योगों में मालिकी किसी एक विशिष्ट व्यक्ति या समूह की नहीं रह गयी है। शेयर होल्डर को मालिक माना जाय तो यह मालिकी भी बाजार में शेयरों की बिक्री के जरिए अक्सर बदलती रहती है। इसलिए मुख्य बात यह है कि उद्योग व्यापार के संचालन में सामाजिक उत्तरदायित्व का पूरा ध्यान रखा जाना चाहिए। २-३ अखिल भारतीय परिषदों में इस विषय की चर्चा हुई है और उद्योग कम्पनियाँ अपने विधान में सामाजिक उत्तरदायित्व के सिद्धान्त और कार्यक्रम को स्वीकार करें इसका एक मसविदा भी बना है। कुछ प्रमुख कम्पनियों ने उसे अपने विधान में दाखिल भी किया है। इसकी जानकारी एकत्र की जाय और इस कार्यक्रम को आगे बढ़ाने का प्रयत्न किया जाय।

ट्रस्टीशिप को कानूनी रूप देने के लिए स्वर्गीय डा० लोहिया ने एक बिल का मसविदा तैयार किया था। उस पर फिर से विचार करके सम्बन्धित वर्गों की राय लेकर, प्रश्न को आगे बढ़ाया जाय।

व्यापार के क्षेत्र में भी व्यापारी संगठनों के जरिए सामाजिक उत्तरदायित्व का पहलू दाखिल करने की कोशिश की जाय। इस सम्बन्ध में 'फेयर ट्रेड प्रैक्टीसेस एसोसियेशन' का काम उल्लेखनीय है। हैदराबाद, हनुमानगढ़ (राजस्थान) आदि में भी व्यापारी संगठनों द्वारा बिक्री कर स्वेच्छा से देने तथा मिलावट न करने आदि के प्रयत्न हुए हैं। इस चीज को आगे बढ़ाने की कोशिश की जाय।

मजदूर-क्षेत्र में भी इस लक्ष्य से काम करने की कोशिश की जाय। अपनी ओर से मजदूरों के अलग संगठन बनाने का ज्यादा उपयोग नहीं होगा, क्योंकि मजदूर संगठनों का मुख्य काम आज मजदूरी, सुविधाएँ आदि बढ़ाने का ही माना जाता है।

(२) जिस तरह ग्रामीण क्षेत्र में ग्रामसभाओं के जरिए सामूहिक लोकनीति कम्युनिटेरियन पोलिटी' विकसित करने का कार्यक्रम है उसी प्रकार नगरों की व्यवस्था सामूहिक लोकनीति और लोगों के प्रत्यक्ष सहयोग का कार्यक्रम बनना और उठना चाहिए। जिस प्रकार ग्राम सभा से प्रखण्ड-सभा तक की योजना सोची गयी है, उसी प्रकार नगरों में 'पड़ोस सभा' (नेबरहुड काउंसिल) से नगर-सभा तक की योजना किस प्रकार हो, इसका चिन्तन और प्रयोग करना चाहिए।

(३) इन छोटे-छोटे मोहल्लों में या 'पड़ोस' में सामूहिक शक्ति से वहाँ की समस्याओं के हल करने के और परस्पर सहायता के कार्यक्रम उठाये जा सकते हैं, जैसा कुछ समय तक बम्बई के उपनगर विलेपार्ले में प्रयोग हुआ था। विलेपार्ले के प्रयोग की जानकारी इकट्ठी करके परिचालित की जा सके तो अच्छा होगा।

(४) नगरों में शांतिसेना, तरुण शांतिसेना आदि के संगठन की ओर विशेष ध्यान देना चाहिए। जहाँ संभव हो उन नगरों में शांति बनाये रखने की जिम्मेदारी शांतिसेना उठा सके ऐसा प्रयत्न करना चाहिए। शहरों में झुग्गी-झोपड़ी बिरादरी के कार्यक्रम को बढ़ाने में भी मदद करनी चाहिए। विभिन्न शहरों में जो शांति प्रतिष्ठान केन्द्र हैं उनको भी इन कामों में शामिल करना चाहिए।

(५) सर्वोदय-पात्र का कार्यक्रम अभी तक प्रभावशाली ढंग से नहीं हो सका है, पर यह कार्यक्रम शहरों के लिए बहुत उपयोगी है। अब तक के प्रयोगों में रही कमियों को ध्यान में रखते हुए संभव हो तो कुछ जगह सर्वोदय पात्र का सघन प्रयोग करना चाहिए।

(६) शहरों में, खासकर विद्यार्थियों और बुद्धिजीवी वर्गों में, सर्वोदय विचार, आन्दोलन की जानकारी पहुँचाना जरूरी है। शांति-प्रतिष्ठान केन्द्रों की मदद से सभाएँ, गोष्ठियाँ आदि की जायँ। अभी सर्व सेवा संघ ने "सर्वोदय-संचयन" (डाइजेस्ट) को हाथोंहाथ शहरों के चुने हुए प्रमुख लोगों के पास पहुँचाने की योजना बनायी है, उसका पूरा लाभ उठाना चाहिए।

(७) शहरों में आबादी के केन्द्रीकरण के कारण कुछ विशेष समस्याएँ, जैसे—आवागमन की दिक्कत, गंदी बस्तियाँ, सफाई आदि नागरिक सुविधाओं→

गतांक से आगे

नाहक मिलन

पाँचवीं बैठक

(२० मार्च '७१)

दोपहर के बाद की चर्चा शुरू करते हुए ठाकुरदास बंग ने कहा कि मोर्चा क्षेत्र में नहीं, कार्यक्रम का होना चाहिए। आन्दोलन की एक मुख्य धारा भी होनी चाहिए लेकिन एक ही रहे, यह ठीक नहीं होगा। एकाग्रता की जगह एकांगीयता आयेगी। सेवाग्राम में पुष्टि के सघन-क्षेत्र बनाने का निर्णय हुआ था, साथ ही ग्राम-स्वराज्य-कोष के काम को पूरा करने का भी निर्णय हुआ था, और मतदाता-शिक्षण के काम का भी निर्णय हुआ था। अब सघन-क्षेत्र का काम किया जा सकता है। पुष्टि मुख्य धारा रहे, लेकिन दूसरे काम भी हैं। ग्रामदान का काम कार्यकर्त्ताओं का था, जनता का नहीं। हमारी चिंता का विषय यह है कि आन्दोलन जनता का कैसे बने। हमें इसके लिए अपनी कार्य-पद्धति बदलनी चाहिए, भले ही प्राप्ति ग्रामदान की न हो, और पुष्टि की गति धीमी पड़ जाय। हमारा पहला काम होना चाहिए जनता में से कार्यकर्त्ता तैयार करने का। लोगों में पहले चेतना जगायी जाय, ग्रामस्वराज्य के लिए उन्हें तैयार किया जाय। अब हम सत्याग्रह के पीछे न दौड़ें। सत्याग्रह के प्रश्न पर अपना विचार व्यक्त करते हुए बंग साहब ने कहा कि 'सम्पत्ति' के बारे में लोगों की मान्यता बदलने का काम पहले किया जाय, काम करते करते कहीं टकराव पैदा हो तो सत्याग्रह किया जाय। सघन ग्रामदानी क्षेत्रों में अन्याय-प्रतीकार में सत्याग्रह करना चाहिए, उसमें से तेज प्रकट होगा। सत्याग्रह तभी हो सकता है जब मान्यता बन गयी हो। बीच में ही दादा ने एक प्रश्न किया कि क्या मान्यता बदलने का साधन भी सत्याग्रह बन सकता है? बंग साहब ने अपनी बात जारी रखते हुए कहा कि भूमि सम्बन्धी कार्यक्रम बनाना चाहिए। इसमें तीन तरह के लोगों को लेना चाहिए। जिनके पास भूमि के अलावा दूसरे भी पेशे हैं, जो ग्रामदान-पत्र पर हस्ताक्षर करने के बाद भी भूमि नहीं देते, जो बाहर के मालिक हैं।

कार्यक्रम के बारे में बंग साहब ने और भी कुछ मुद्दे रखे। जैसे—हर प्रदेश में पुष्टि कार्य के सघन क्षेत्र हों, मतदाता-शिक्षण, और शहरों का काम हो तात्कालिक समस्याओं को हाथ में लिया जाय, देश भर के विद्यालय तरुण-शान्तिसेना के काम के क्षेत्र बनें, और वहाँ संगठन खड़ा हो, ग्राम-शान्तिसेना और आचार्यकुल के भी संगठन खड़े हों। संगठन के विषय में बोलते हुए आपने कहा कि मतभेद व्यक्त करने का माध्यम क्या हो? मेरी राय में 'भूदान यज्ञ' में विचार भेद व्यक्त हो सकता है, लेकिन व्यक्ति या व्यवस्था के बारे में कोई अपवाद हो तो सर्व सेवा संघ की प्रबन्ध समिति या संघ-अधिवेशन को उसकी अभिव्यक्ति का माध्यम बनाया जाना चाहिए। हमको एक नीति-मर्यादा भी अपने लिए निश्चित करनी चाहिए। अन्त में अपने संस्थाओं में सुधार की आशा व्यक्त करते हुए कहा कि हमें इसकी कोशिश बंद नहीं करनी चाहिए।

इसके बाद सत्याग्रह की चर्चा को और अधिक बढ़ाने के लिए तथा अपने विचार को पूरी तरह रखने के लिए वसन्त नारगोलकर ने अपना लम्बा निबंध पढ़ा। बाबूराव चन्दावार ने कहा कि हमें 'गांधी का सत्याग्रह' और 'विनोबा का सत्याग्रह' इस झगड़े में नहीं पड़ना चाहिए, जिसका संकेत नारगोलकरजी के निबन्ध में है। लेकिन मेरे विचार से देश भर में यह एक मान्यता बन गयी है कि जमीन उसकी, जो जमीन को जोतता है, इसलिए सोचना चाहिए कि जमीन के वितरण के लिए बेरोजगारों के हाथ में रोजगार देने के लिए हम क्या कर सकते हैं।

नारायण देसाई ने प्रश्न उठाया कि क्या सत्याग्रह वही है जिसमें प्रतिपक्षी पर दबाव पड़े? आज भी तो सत्याग्रह चल रहा है। विनोबा की यात्रा भी मेरी दृष्टि से सत्याग्रह की ही प्रक्रिया थी। परिवर्तन की प्रेरणा देने के बाद क्या हम दबाव को सत्याग्रह की प्रक्रिया में अनिवार्य मानेंगे?

कुछ उपप्रश्नोत्तरों के बाद जैनेन्द्र-कुमार ने सत्याग्रह के बारे में अपना चिंतन प्रकट करते हुए कहा कि विनोबा को विनोबा होने का और गांधी न होने का हक है। हमें क्या हक है कि गांधी से जो अपेक्षाएँ थीं, वही अपेक्षाएँ हम विनोबाजी से रखें? विनोबा जो हैं, उन्हें उसी रूप में हमें स्वीकार करना चाहिए। विरोध, विचार और यत्न जब समाप्त हो जाते हैं तो आन्तरिक विवशता, व्यथा की विवशता में से ही सत्याग्रह का उदय होता है। सत्याग्रह की

—का अभाव आदि, खड़ी हो जाती हैं। इन प्रश्नों के बारे में लोक मानस को जाग्रत करना चाहिए। कई देशों में इस प्रकार के अध्ययन हुए हैं कि शहरों की आबादी की मर्यादा क्या हो। भारत में शहरों के प्लानिंग तथा आबादी की उपयुक्त मर्यादा आदि के बारे में अभी चिन्तन नहीं के बराबर है। योजना कमीशन के ध्यान में भी शायद यह बात नहीं है।

नगर सर्वोदय-समिति का मुख्य काम ऊपर बताये हुए तथा इसी प्रकार के अन्य कार्यक्रमों को प्रोत्साहन देने तथा स्थानीय मित्रों के जरिए उन्हें शुरू करने का होना चाहिए। उसका दूसरा काम विभिन्न शहरों में चल रहे इस प्रकार के कार्यक्रमों की जानकारी के "क्लीयरिंग हाउस" का होना चाहिए। तीसरा काम, सम्बन्धित विषयों पर चर्चाएँ, अध्ययन, गोष्ठियाँ आदि आयोजित करने का है।

—सिद्धराज ढड्ढा

स्रोत 'स्पॉन्टेनियस' है, 'आर्गेनाइज्ड' नहीं। इसीलिए ज्ञानी पुरुष में से सत्याग्रह का स्रोत निकलने की सम्भावना नहीं है। किये जानेवाले 'सत्याग्रह' और अन्त-प्रेरणा' से होनेवाले 'सत्याग्रह' में फर्क होता है। सत्याग्रह नागरिक-भूमिका पर होता है, आत्यन्तिक भूमिका पर नहीं।

तब सत्याग्रह सामाजिक शक्ति कैसे बन सकेगा ? यह प्रश्न उठाया पूणचन्द्र जैन ने। स्पष्टीकरण में ...ने हयुमार ने कहा कि आत्मिकता और सामाजिकता में द्वैत नहीं है। एक की अनरव्यथा दूसरी को स्पर्श कर सकती है। स्नेह जितना व्यापक होगा व्यथा उतनी ही व्यापक होगी।

जगन्नाथबाबू ने कहा कि किसी भी प्रकार की सीधी कार्रवाई के लिए ग्रामदान की बुनियाद अनिवार्य है। उसके बिना हमें कोई आधार नहीं मिलेगा। आज की मुख्य धारा का काम यही है कि ग्रामसभाएँ मजबूत की जायें।

सत्याग्रह की इस लम्बी चर्चा का उपसंहार करते हुए जयप्रकाशजी ने कहा कि विनोबा ने केवल भूमि-वितरण के लिए आन्दोलन नहीं शुरू किया था वह काम तो कानून से भी हो सकता था। उन्होंने आन्दोलन शुरू किया सम्बन्धों को बदलने के लिए एक समग्र क्रान्ति के लिए अपनी प्रतिभा से उन्होंने इसका एक रास्ता बताया। हमें कुछ बुनियादी काम करने है, उसके क्रम में सत्याग्रह के अवसर आयेंगे। परिस्थिति में से सत्याग्रह निकलेगा, उसके दो रूप होंगे—(१) अन्त प्रेरणा से, (२) संगठित प्रयत्न से। जब तक ग्रामदान नहीं किया जायगा, तब तक सीधी कार्रवाई की परिस्थिति कैसे निकलेगी ? उस परिस्थिति तक पहुँचने के लिए ग्रामदान अनिवार्य कदम है।

इसके बाद मुसहरी में खादी का काम ग्रामाभिमुख होकर कैसे आगे बढ़े, इसकी योजना और दिशा के बारे में कुछ चर्चाएँ हुई। (क्रमशः)

कितना भोजन : कितनी भूख

—प्रबंध प्रसाद

माघ की ठंड की सिकुड़न में उनके शरीर पर मैल की मोटी पर्त जम गयी थी। टूटी चारपाई को चारों ओर से घेरे महिलाओं तथा एकमात्र पुरुष से हमने पूछा "आपके भोजन में भिन्न-भिन्न वस्तुओं का समावेश रहता है ?" उसका प्रतिप्रश्न था—"सबेरे दोपहर और शाम सब जोड़-कर बतायें बाबूजी ?" अशिक्षित ग्रामीण रंग के इस हँसमुख किशोर के चेहरे पर अभाव से भरा असंतोष का भाव स्पष्ट झलक रहा था। अभाव की भाषा में भाव दे इस युवक ने स्पष्ट करते हुए कहा— बाबूजी यहाँ जबसे नक्सलवादी हत्या हुआ काफी लोग आ चुके। अनेक बातें पूछीं, न आप खाने की बात क्यों पूछते हैं ? हमार समझाने पर उसका कहना था ...ना ठीक है, आप कहते हैं तो सही-सही बता देता हूँ। पर आपको विश्वास नहीं होगा, सच कहता हूँ। उसने अपने भोजन के व्यंजनों को इस क्रम से गिनाया— शकरकंद मकरा, खेसारी नमक-मिर्च, जौ, चना, चूहा, घोंघा साग, आलू। कभी-कभी चावल गेहूँ भी मिल जाता है। वह रुका ही था कि एक वृद्ध महिला ने कहा, 'बाबूजी गोबर से भी अनाज मिलता है।

'पर आप लोग दिन भर में क्या क्या खाते है ?' 'जो मिल जाता है खा लेते हैं। आज सबके की एक रोटी खायी है। 'साथ में क्या लिया ?" 'कुछ नहीं। "दोपहर में क्या खाइयेगा ?" शायद कुछ नहीं। हाँ शाम का दो आने का शकरकंद खाऊँगा।

क्या सब लोग इतना ही खाते है ? हाँ "...तो कुछ नहीं खायी है।" वे घर में बच्चे रो रहे हैं। वे चूहा मारा है। इसी प्रकार जिसको जो मिलता है, खा लेता है।"

२५-३० घरों के इस मुसहर-टोले ने भी आजादी के २३ वसन्त देखे हैं। पर उनके लिए तो हर वसन्त चूहा, घोंघा और मकई के चारों ओर घूमता रहा है।

उपभोग-स्तर के सही अन्दाज के लिए यह देखना आवश्यक है कि विभिन्न आर्थिक स्तर के लोग भोजन पर कितना व्यय कर पाते हैं। मुजफ्फरपुर जिले में एक प्रखण्ड है। सन् १९६८-६९ में इस क्षेत्र में नक्सलवादी आरंभ था। मुजफ्फर-पुर से सटा प्रखण्ड मुसहरी है। मुसहरी, काँटी और पारू ये तीन प्रखण्ड मिलकर एक क्षेत्र बनता है जहाँ अनेक नक्सली घटनाएँ घटीं। इनमें पारू सबसे दूर का क्षेत्र है। इसे ठेठ देहात कह सकते है। इस क्षेत्र में हमने उपभोग का स्तर जानने का प्रयास किया। उपभोग की दृष्टि से गरीब तथा सामान्य दो स्तर कर सकते हैं। गाँव में उच्चस्तरीय उपभोग की तलाश ठीक नहीं। गरीब वर्ग में उप-भोग (भोजन) का ढाँचा इस रूप में देखा जा सकता है

मौसम	प्रति व्यक्ति भोजन पर मासिक व्यय (रुपयों में)
गर्मी	१२
बरसात	१५
जाड़ा	१३

इस स्तर में सामान्यतया मजदूर-वर्ग आता है। इस क्षेत्र में मजदूर तथा निम्नतम आर्थिक स्तर के लोगों की आय का मुख्य स्रोत मजदूरी है। दूसरा स्रोत है दूर जाकर मजदूरीनुमा काम करना। यहाँ के लोग असम की ओर जाकर कुली गिरी करते हैं रिक्शा चलाते हैं, चाय बगान आदि स्थानों में काम करते हैं। इस प्रकार के लोग प्रायः अकेले ही वहाँ रहते हैं और मासिक २० से ४०-६० तक घर पर भेजते हैं। ऊपर जो आँकड़े दिये गये है उनमें इन दोनों प्रकार के लोगों का उपभोग-स्तर दर्शाया गया है। मजदूरी

करनेवालों का उपभोग का स्वरूप मौसम से प्रभावित होता है। बरसात में किसानों के यहाँ ज्यादा काम रहने के कारण इस मौसम में उपभोग-स्तर थोडा-ऊँचा हो जाता है। धान-रोपाई के समय मजदूरों की माँग अधिक होने के कारण उपभोग-स्तर ऊँचा हो जाता है, क्योंकि इस समय चावल जैसा अन्न भी उसे प्राप्त होता है। सामाजिक दृष्टि से इस वर्ग में सामान्यतया हरिजन जातियाँ आती हैं, लेकिन मध्यम तथा उच्च जाति के लोग भी कमोवेश इस स्तर में आ जाते हैं। इस स्तर के उपभोग में आर्थिक सम्पन्नता एवं विपन्नता एक माप-दंड है। हम कह सकते हैं कि विपन्न आर्थिक स्तर के लोग इस वर्ग में जाते हैं।

उपभोग का दूसरा स्तर इससे थोडा भिन्न है। इस वर्ग में गाँव के सामान्य किसान आ जाते हैं। गाँव के गिने-चुने परिवारों को छोडकर शेष इस वर्ग में शामिल किये जा सकते हैं। इनके स्तर को इस रूप में देख सकते हैं।

मौसम	प्रति व्यक्ति भोजन पर मासिक व्यय (रुपयों में)
गर्मी	३०
बरसात	२५
जाडा	२५

इस प्रकार इस स्तर के उपभोक्ताओं में गाँव के तथाकथित अमीर लोग आते हैं। यह अलग प्रश्न है कि २५ रु० मासिक भोजन पर व्यय में कितनी अमीरी है। फिर इस नाममात्र की रकम से उन्हें कितना पौष्टिक तत्व मिलता है, यह अलग चीज है। वैसे सामान्य ग्रामीण या अन्य किसीके भोजन में उपलब्ध पौष्टिकता की तलाश करना सत्य से बचने के समान है। कितने लोगों को आवश्यक पौष्टिक भोजन मिलता है, इस पर विचार करने की जगह इस बात पर विचार करना उपयुक्त होगा कि कितने लोगों के पेट में दोनों वक्त कुछ भी जाता है। हम गिने-चुने लोगों को छोड दें तो उपरोक्त दोनों स्तर के लोग प्रति दिन क्रमश ४०-४५ और ८०-९० पैसे में दोनों वक्त भोजन करते हैं। अर्थात् प्रति वक्त २०-२५ या ४०-४५ पैसे में पूरा भोजन। ऊपर गाँव के उपभोग-स्तर को जिन दो वर्गों में विभाजित किया है उसमें भी दूने का फर्क है। मजदूर-वर्ग का भोजन-स्तर तो चौंकानेवाला है--एक वक्त में २०-२५ पैसा यानी एक कप चाय। जितने में हम शहर के नुक्कड पर एक कप चाय की चुस्की लेते हैं, उतने में वह एक वक्त भोजन करता है।

एक दिन एक अर्थ-अर्थविज्ञान-वेत्ता से चर्चा हो रही थी। गाँव की गरीबी पर चिंतित रहनेवाले उस अर्थशास्त्री से जब मैंने उपरोक्त तथ्य बताये तो उन्होंने मेरे हिसाब को सरासर गलत बताते हुए कहा, "आप हर चीज को पैसे में आँकते हैं। गाँव में दूध, दही, ताजे फल, सब्जी हर चीज मिलती है। वे चीजें शहर में कहाँ मिलती हैं? गाँव में जिनके यहाँ जायें दूध-दही तो मिलेगा ही।" और उन्होंने ग्राम्य जीवन का मनमोहक चित्र हमारे सामने प्रस्तुत कर दिया। एक तरफ गाँव की दरिद्रता पर हार्दिक चिंता तो दूसरी ओर ग्राम्य-भोजन का स्वादिष्ट जायका। यह हाल हमारे नेता, अधिकारी, विद्वान, सबका है। कारण साफ है। ये लोग गाँव के जिस वर्ग से सम्बद्ध है, उनके यहाँ भोजन का जायका मिलता है, तो यह समझ बैठते है कि सबको वही जायका मिलता होगा। पर गरीबी के सत्य से वे इन्कार कैसे कर सकते हैं? इसलिए उस पर चिंता व्यक्त करना स्वधर्म है। इस बात की पुष्टि के लिए किसी आँकड की आवश्यकता नहीं कि गाँव से दूध-दही गायब हो रहा है। जिनके पास गाय-भैंस है, वे खाते कम, बेचते अधिक हैं। हाँ, गाँव में होनेवाली आय को मात्र पैसे में आँकना उनके प्रति न्याय नहीं होगा। उनकी फुटकर तथा तात्कालिक आय इस प्रकार विविधता लिये होती है कि उसको पैसे में हिसाब करना मुश्किल नहीं। फिर भी प्रतिदिन भोजन का हिसाब नित्य के भोजन को देखकर लगाया जा सकता है। ऊपर जो आँकड़ा दिया गया है वह मात्र भोजन पर होनेवाला व्यय है। हमारे ख्याल से उपरोक्त आँकडे की पुष्टि के लिए किसी प्रमाण की जरूरत नहीं है। यदि प्रमाण की आवश्यकता हो तो भारत सरकार द्वारा प्रस्तुत इस आँकडे को देखा जा सकता है -

वस्तु	उपभोग पर व्यय (रु०में)* (३० दिनों में एक व्यक्ति द्वारा किया जानेवाला)
अनाज	८·१५
अनाज का प्रति स्थापत्य चीजें	९·०५
दाल	१·००
दूध	१·६१
अन्य भोज्य पदार्थ	४·०१
कुल भोजन पर व्यय	१५·६७

इस आँकडे के अनुसार औसत प्रति व्यक्ति प्रति शाम भोजन पर व्यय २५ पैसा पडता है। इसमें गाँव के सभी स्तर के लोग शामिल हैं। भोजन और भूख के इस अन्तराल को कमतर करने के अब तक के प्रयासों में सफलता से अधिक असफलता ही हाथ लगी है। आज गाँव पारिवारिक तथा व्यक्तिगत इकाइयों में विभक्त है, साथ-ही-साथ उत्पादन में भी एकाकीपन है। हर स्तर पर इकाई इतनी छोटी है कि ग्रामीण अर्थव्यवस्था में गतिशीलता नहीं आ पाती है। आर्थिक दारिद्र्य के बावजूद गाँव में एक आर्थिक हित का विकास नहीं हो पा रहा है। भूख और भोजन में सामजस्य के लिए आवश्यक है कि गाँव की बिखरी आर्थिक इकाइयों को एकसाथ संयोजित किया जाय। सबकी भूख शान्त हो सके इसके लिए सबके सामूहिक प्रयास की आवश्यकता है। गाँव के मजदूर, कारीगर, छोटे-बड़े किसान, महाजन, सबका सम्यक् विकास तभी हो सकता है जबकि सब एकसाथ एक-दूसरे के हित के लिए काम करें। जरूरत इस बात की है कि सबकी भूख सबकी चिंता का विषय बने। ●

* 'इण्डिया' सन् १९६९

चिंतन और झाड़ू

"आप जिस तरह वेद-उपनिषद का उत्तम चिंतन करते हैं उस तरह देश का चिंतन करते हैं या नहीं ?"

"वेद-उपनिषद का विचार करता हूं इसका आपको कैसे पता ?"

"उसका चिह्न है, वह मालूम होता है।"

"तो फिर देश का करता हूं या नहीं इसीका पता कैसे नहीं चलता !" संवाद सुननेवाले हंस पड़े।

"इन दिनों मेरा एक ही कार्यक्रम चलता है, झाड़ू लगाना।"

"आपका झाड़ू लगाने का क्षेत्र बहुत छोटा है। उसे व्यापक बनाइए। सारे देश में झाड़ू लगाइए। उसकी बहुत जरूरत है।"

"मेरे झाड़ू का डंडा छोटा है, वह बहुत लंबा है।"

मिर्जापुर के निवासी पी० वाई० देशपांडे आये थे, उनका बाबा के साथ संवाद हो रहा था। पी० वाई० का कहना है कि बाबा को देश में चलनेवाली घटनाओं के बारे में बोलना चाहिए, अभिध्यान काफी नहीं। बाबा का कहना रहा "मैं झाड़ू लगा रहा हूं।"

× × ×

अप्पासाहब पटवर्धन की मृत्यु की खबर जिस दिन आयी थी उस दिन शाम की प्रार्थना से पहले बाबा ने अप्पासाहब के बारे में चंद शब्द कहे थे। दो दिन बाद अण्णासाहब सहस्रबुद्धे बाबा से मिलने आये थे।

बाबा "अप्पा में श्रद्धा बहुत थी और तर्क भी था। मुख्य बात यह है कि इस जन्म में आरोग्य रखकर जीना, या रोगी रहकर जीना, अपने हाथ की बात है। लेकिन कब मरना, अपने हाथ की बात नहीं है। जिस गति से परमात्मा ने बाण छोड़ा होगा, उस गति से आदमी मरेगा।"

अण्णासाहब "योग कहता है, प्राण की गति रोक सकते हैं, आयु बढ़ा सकते हैं।"

बाबा "योगी अपनी आयु को बढ़ा सकता है, यह भ्रम है। पूर्वकर्म के अनुसार उसको योग की बुद्धि हुई होगी इसलिए योग किया। एक ही मिसाल है, भीष्म की। दक्षिणायन में वे नीचे गिरे। उत्तरायण शुरू हुआ तब प्राण छोड़े। यह स्वच्छंद मृत्यु थी। उसी अवस्था में, शरपंजर पर से व्याख्यान दिये—जो शांतिपर्व नाम से महाभारत में आये हैं। उसमें राजधर्म, आपद्धर्म और मोक्ष धर्म, ऐसे तीन धर्म बताये हैं। विष्णुसहस्रनाम भी उसीमें है।

'बड़े-बड़े योगी आखिर में रोगी होकर मरे हैं। बापू ने जाहिर किया था, मैं बीमार होकर मरा तो समझ कि यह गलत योगी था। उनकी मृत्यु हुई गोली लगकर। अंत में उन्होंने रामनाम लिया। वे योगी थे। मीटिंग में दस मिनिट देरी है, समय खाली है तो दस मिनट के लिए वे सोने जाते थे। गहरी नींद। तीन बजे उठाना हो तो ठीक तीन बजे उठ जाते थे।"

फिर बाबा का प्रिय विषय छिड़ा—निद्रा का। बाबा ने कहा "किसीने रवीन्द्रनाथ से कहा था, नींद नहीं आती है। क्यों ? बोले, क्योंकि मृत्यु याद आती है। रवीन्द्रनाथ ने उस भले आदमी से कहा, अरे मृत्यु यानी क्या ? स्तन बदलना। एक स्तन से दूसरे स्तन पर जाना। प्रकृतिमाता के एक स्तन का दूध है जीवन और दूसरे स्तन का दूध है मृत्यु। हमारे पोषण की योजना है।"

× × ×

एक जमाने में देश के जवानों में जोश पैदा करनेवाले अच्युतजी पटवर्धन इन दिनों बेंगलूर में शांत-सा अनामय जीवन बिता रहे हैं। काशी जाते हुए वे बाबा से मिलने हेतु यहां दो दिन रहे थे। बाबा के साथ तीन बैठकों में काफी दिलचस्प चर्चाएं हुई।

"रूस में चली वैचारिक गुलामी (इंटलेक्चुअल परसिक्युशन), अमरीका में नीग्रो का सवाल, वीएतनाम का युद्ध, अफ्रीका में आदिवासियों का सवाल, देश में बंगाल की स्थिति, यह सब देखकर मानव की हमारी जो कल्पना (कन्सेप्ट आफ मैन) है, उसे धक्का लगता है। मानव एक तरफ तो चांद पर जाने की मुहीम करता है दूसरी तरफ इतनी संकुचितता। मन अस्वस्थ हो जाता है।" अच्युतजी कह रहे थे।

"मान लीजिए, हम अस्वस्थ हुए, और उससे परिस्थिति सुधरी तो अस्वस्थ होना अच्छा है। नहीं तो हम स्वस्थ रहकर ही उसे मदद पहुंचा सकेंगे। लेकिन दुःख होता है इसका मतलब यही है कि आप अभी भी 'ह्यूमन' हैं। यह मानवता है। इन सब सवालों की तरफ मैं तटस्थता से देखता ही हूं। इसे मैंने 'अभिध्यान' नाम दिया है—विश्व के अभिमुख होकर ध्यान करना।"

दूसरे दिन की बैठक में अच्युतजी ने चंद सवाल लिखकर दिये थे। एक के उत्तर में बाबा ने कहा ... "चिंतन और आचरण में जो तफावत है, वह अनादिकाल से आज तक सतत चला आया है। वह अंतर कम हो सकता है, लेकिन मिट नहीं सकता। तुझे तुझे प्र ज्यतरे—वेद में वचन आता है। अरे भगवन्! एक एक चरण हम तेरी तरफ आते हैं, तो तू दो-दो चरण पीछे हटता जाता है। तेरे और हमारे बीच अंतर कायम रहता है। बड़ा ही सुंदर वाक्य है। हम कदम-ब-कदम बढ़ते हैं, और तुम दूर हटते हो, तो अन्तर बढ़ता जाता है। हमारी तीव्रता बढ़ती है। बीच-बीच में निराशा होती है। लेकिन निराश होकर हम बैठ जायेंगे, तो अन्तर कम होनेवाला नहीं। कदम बढ़ते हैं, तो उतना अन्तर तो कम होता ही है। नहीं तो तीन कदम का अन्तर हो जायेगा। आखिर हमारा उद्धार हम नहीं करनेवाले। वह देखेगा अन्तर बहुत बढ़ रहा है, झपटकर पक

गया है। तो वह भारी शक्ति से एकदम हमें उठा लेगा।"

× × ×

बाबा के कार्यक्रम के बारे में क्या लिखा जाय? हम लिखती हैं और छपते-छपते उनके कार्यक्रमों में बदल होता रहता है। पिछली बार मौन का लिखा था। लेकिन छपते-छपते 'मौन' रहा नहीं। सफाई चार-साढ़े चार घंटा चलती है। ब्रह्मविद्या मंदिर ने २५ मार्च को बारह बरसों की तपस्या पूर्ण की है। उस निमित्त से १८ तारीख से प्रातःकाल की शांत, गंभीर वेला में ४-१५ से ५ बजे तक बाबा बहनों के प्रश्नों के जवाब के निमित्त बोलते हैं। चर्चा का स्वरूप पारिवारिक है। मुलाकात के लिए अक्सर सुबह १० से ११-३० के बीच तथा दोपहर ३ से ४-३० के बीच समय दिया जाता है।

इन दिनों उनके दाहिने पाँव के घुटने में काफी दर्द रहता है। अत्यंत दर्द के बावजूद सफाई तथा काकाजी के साथ भ्रमण चलता है। बीच में अल्ट्रा व्हायोलेट किरणों से ताप लेते थे। अभी उरुली की होशियारी बहन आयी है, तो वे कुछ आयुर्वेद की दवाइयों का लेप लगा देती हैं। तात्याजी कहते हैं "बाबा ने बचपन से ही शरीर की परवाह नहीं की है। यह उनकी पुरानी आदत है।"

बाबा की खाट पर वेद-उपनिषद तथा आक्सफर्ड डिक्शनरी के सिवा तीसरी किताब नहीं दीखती है। दोपहर में १२-३० से १-३० के बीच पत्र-व्यवहार, अखबार पढ़ते हैं। कभी-कभी आधा घंटा सोते हैं, हमेशा नहीं। कभी तो जामुन के पेड़ के नीचे, पत्थरों के नीचे से कचरा निकालने बैठते हैं। पत्थरों के नीचे से कचरा निकालने के काम को उन्होंने 'हिरण्यगर्भ भूगर्भ' नाम दिया है। 'हिरण्यगर्भो भूगर्भो माधवो मधुसूदन' भगवान विष्णु के ये नाम!

घुटने के दर्द को छोड़कर बाकी स्वास्थ्य ठीक है।

('मैत्री' से) —कुसुम

स्व० श्री सच्चिदानन्द (स्वामीजी) और श्री गोविन्द रेड्डी

—हत्या के सम्बन्ध में प्राप्त जानकारी—

ता० ८ अप्रैल १९७१ के रोज सुबह की रेडियो से स्वामी सच्चिदानन्दजी और श्री गोविन्द रेड्डीजी की हत्या का समाचार सुनते ही सेवाग्राम आश्रम, वर्धा से श्री प्रभाकरजी, काशी से श्री रामगोपालजी दीक्षित, पवनार से श्री रामभाऊ म्हसकर और उत्तराखंड से श्री चंडी प्रसाद भट्ट शुक्रवार ९ अप्रैल को बिजनौर पहुँचे। बिजनौर से करीब तीन मील पर खारी गाँव के पास गोविन्दपुर (पो० झालू) में स्वामी सच्चिदानन्दजी का आश्रम है। ७-८ एकड़ जमीन पर पाँच झोंपड़ियों से बना हुआ यह आश्रम नजदीक के दोनों गाँवों से करीब एक मील दूरी पर है। इसी स्थान से स्वामीजी "पर्सनलिटी" नाम का अंग्रेजी पाक्षिक (साइक्लोस्टाइल) का सम्पादन और प्रकाशन कई सालों से करते रहे। इस पत्रिका के मार्फत वे स्पष्टवादिता और निर्भीकता के साथ स्थानीय अन्यायों का प्रतीकार किया करते थे। इस पत्रिका के द्वारा नजदीक के देहातों के प्रश्नों को सच्चिदानन्दजी अपने हाथ में लेते और उनके निराकरण में जुट जाते थे। आज की गन्दी राजनीति, भ्रष्टाचार और सामाजिक, आर्थिक अन्याय और गुण्डागर्दी के खिलाफ बड़ी सख्त भाषा में वे इस पत्रिका द्वारा कड़ी आलोचनाएँ करते थे, और इसके परिणामस्वरूप आनेवाली कठिनाइयों का मुकाबला करने के लिए तैयार रहते थे। फलतः रिश्वतखोर शासकीय कर्मचारी, पुलिस विभाग, शोषक जमींदार वर्ग, गन्ना मिल-मालिक और गुण्डागर्दी को प्रोत्साहन देनेवाले वकील-समाज की आँखों में सच्चिदानन्दजी खटकते थे। इस बदली हुई परिस्थिति का भान कुछ दिनों से उन्हें होने लगा था और यदा-कदा अपने सहयोगियों के साथ हुई उनकी बातचीत से प्रकट होता था कि अब वे इस आश्रम को छोड़कर अन्यत्र चले जाने की सोच रहे हैं। श्री रेड्डीजी, सेवाग्राम आश्रम के बापू के समय से ही सदस्य थे तथा अक्तूबर '७० में सेवाग्राम

से निकले थे और इलाहाबाद में ३-४ माह रहने के बाद एक माह से श्री सच्चिदानन्द के साथ आकर रह रहे थे। सन् '५६-'५७ में वे दोनों उड़ीसा के कोरापुट क्षेत्र में ग्राम-निर्माण के काम में लगे रहे थे।

इस आश्रम में पहुँचने तथा पास के गाँव के लोगों से मिलने-जुलने के बाद जो जानकारी मिली उसके अनुसार सोमवार ता० ५ अप्रैल १९७१ की रात्रि के करीब साढ़े आठ या नौ बजे तक कुछ ग्रामवासी सच्चिदानन्दजी के साथ उनके कमरे के बरामदे में बातचीत कर रहे थे। "उसी समय तीन पिस्तौलधारी वहाँ पहुँचे। उन्होंने इन ग्रामवासियों को वहाँ से भाग जाने को कहा और सच्चिदानन्दजी पर गोलियाँ बरसायीं। बाद में पड़ोस में किताब पढ़ते बैठे गोविन्द रेड्डी के कमरे में जाकर उनको भी गोली का निशाना बनाया और हत्यारे वहाँ से भाग गये। बाद में झाड़ी की आड़ में छिपे ग्रामवासी वहाँ लौट आये और उन्होंने इन दोनों को मृत पाया। ये शस्त्रधारी गाँववालों के परिचित थे।"

दूसरा बयान उनके निकट के मित्रों का यह था कि, "हत्या के समय आश्रम में इन दो के सिवाय तीसरा कोई मौजूद नहीं था। रात में गोलियों की आवाज सुनकर पास के दोनों गाँवों (सारी और माधू) के लोग दौड़ आये। वहाँ उन्होंने स्वामीजी को मृत और रेड्डीजी को वेदनाओं से कराहते पाया। लोगों को देखते ही रेड्डीजी ने वेदना से छूटने के लिए उनसे कहा, 'पानी पिलाओ, स्वामीजी तो गये।' तब उन्हें पता लगा कि ये हत्यारे नहीं हैं, तब आपने पानी माँगा और बाद में प्राण छोड़े।

तीसरा बयान ग्राम के निवासियों से प्राप्त सूत्रों के अनुसार, "हत्यारे तो गिरफ्तार किये जा चुके हैं, जिनके साथ स्वामीजी की बहुत दिनों से रंजिश चली आ रही थी। लेकिन इस घटना के पीछे हत्यारों का उकसाने और संरक्षण करने के लिए कुछ सरकारी कर्मचारियों, जिनके खिलाफ स्वामीजी की ही कोशिश से रिश्वतखोरी का मुकदमा चल रहा है, और कुछ प्रमुख वकीलों, जिनके निहित स्वार्थों में स्वामीजी आड़े आते थे और जिनकी ज्यादतियों को पत्रिका द्वारा जनसाधारण के सामने वे प्रकाश में लाते थे, का हाथ है। इन तत्त्वों द्वारा पहले भी स्वामीजी पर आक्रमण किया गया था। गोली लगने पर श्री सच्चिदानन्द तो फौरन मर गये, पर श्री रेड्डीजी लगभग ढाई घंटे तक जीवित रहे और जब उनको पुलिस स्टेशन ले जा रहा था तब गाँव के समीप इशारे से उन्होंने पानी की माँग की और तत्पश्चात् २-३ मिनट बाद ही प्राण छोड़ दिये। उन्होंने पुलिस को क्या बयान दिये यह किसीको पता नहीं। गिरफ्तार किये गये व्यक्तियों और उनके साथियों ने कई बार लोगों से कहा है कि हमारे रास्ते में रोड़ा अटकाने-वाले छह आदमी हैं और सातवें हैं स्वामीजी, जो इन सबके सरगना हैं। इन सबको देखना है।"

कुछ अन्य सूत्रों से मालूम हुआ कि गोलियों की आवाज सुनने के बाद कुछ ग्रामवासी वहाँ पहुँचे। वहाँ श्री रेड्डी तड़प रहे थे। लोगों को देखते ही वे चिल्ला पड़े, "पानी पिलाओ पानी पिलाओ" स्वामीजी तो मारे गये।" गाँववालों ने पानी पिलाया। —प्रभाकर

हत्याकांड के बाद

श्री सच्चिदानन्दजी तथा श्री रेड्डीजी की हत्या के बाद बिजनौर के नगर-परिषद-भवन में ११ अप्रैल, '७१ को सायंकाल ५-३० बजे स्थानीय नागरिकों तथा बाहर से आये सर्वोदय-कार्यकर्ताओं की एक सभा आयोजित हुई। इस सभा में तीन निर्णय लिये गये

(१) सारी गाँव में दिनांक १२ अप्रैल से १८ अप्रैल तक शान्ति-शिविर प्रारम्भ किया जाय। ग्रामवासियों के साथ मिलकर प्रातः और सायं प्रार्थना-सभाएँ की जायँ जिनमें सभी धर्मों की प्रार्थनाएँ सम्मिलित हों। गाँव के युवकों और बच्चों के साथ प्रभात-फेरियाँ की जायँ तथा दीवारों पर अच्छे-अच्छे उपदेश लिख जायँ, जिससे लोग अहिंसा और प्रेम के सिद्धान्त से कुछ परिचित हो सकें।

(२) स्वामी सच्चिदानन्दजी की स्मृति में 'धर्मनिरपेक्ष' का एक श्रद्धांजलि अंक १८ अप्रैल तक प्रकाशित किया जाय। यह निर्णय लिया गया कि श्री वीरेन्द्र कुमार शर्मा सम्पादक, 'लोकमत' बिजनौर इस श्रद्धांजलि अंक का सम्पादन करेंगे जिसकी करीब एक हजार प्रतियाँ प्रकाशित की जायेंगी। इस पत्रिका के लिए यदि सम्भव हुआ तो विशेष संस्मरण

लेख स्वर्गीय श्री रेड्डी के मित्र डा० गाडगिल तथा श्री देवेन्द्र कुमार गुप्त, मंत्री, केन्द्रीय गांधी स्मारक निधि से सम्पर्क कर मँगवाये जायँ।

(३) खारी गाँव के ग्रामवासियों के सहयोग से १८ ता० को श्री स्वामीजी और श्री रेड्डीजी का श्राद्ध-दिवस मनाया जाय, जिसमें सम्मिलित होने के लिए सर्वोदय-परिवार के सदस्यों एवं स्थानीय नागरिकों को आमंत्रित किया जाय। इस दिन यज्ञ किया जायेगा तथा सभी धर्मों के लोगों की सामूहिक प्रार्थना आयोजित की जाय।

सभा के तुरन्त बाद सुश्री सरला बहिन, सर्वश्री सुन्दरलाल बहुगुणा, रामगोपाल दीक्षित, मैंलाजी, चन्द्र सिंह तथा गोविन्द प्रसाद बहुगुणा सीधे खारी गाँव पहुँचे। इसी गाँव के पास गोविन्दपुर आश्रम है, जहाँ श्री स्वामीजी और श्री रेड्डीजी साथ रहते थे। आश्रम पहुँचकर मौन प्रार्थना की गयी और गाँव में रात्रि के ८॥ बजे एक सभा की गयी। सभा-स्थल था गाँव का विद्यालय। काफी संख्या में लोग एकत्रित हुए। इनमें ज्यादा संख्या मुसलमान भाइयों की थी। श्री सुन्दरलालजी ने गाँववासियों से कहा कि हमें श्री सच्चिदानन्दजी और श्री रेड्डीजी की हत्या का समाचार सेवाग्राम में मिला, जहाँ देश के सभी रचनात्मक कार्यकर्ताओं का एक सम्मेलन अभी-अभी समाप्त हुआ है। इस समाचार से वहाँ आश्रम-परिवार तथा सारे देश से आये रचनात्मक कार्यकर्ताओं को आघात पहुँचा। हम लोग चाहते हैं कि इस घटना को कोई कानूनी तूल न दिया जाय। सरकार अपने काम के लिए जिम्मेदार है। हम चाहते हैं कि सब लोग आपस में प्रेम से रहें, एक-दूसरे के दिल आपस में मिलें।

सरला बहिन ने कहा कि, "आप सब लोग गाँव में रहते हैं, एक ही परिस्थिति, वातावरण और व्यवसाय के लोग हैं, इसलिए यहाँ पर तो एकता और प्रेम हमेशा रहना चाहिए। दूसरों के दुःख में हिस्सा लेनेवाले व्यक्ति ही आपसी सद्भाव बढ़ाते हैं।"

खारी गाँव के एक वयोवृद्ध एवं प्रमुख श्री हाजी अब्दुल्ला ने कहा, "स्वामीजी से हम सबका बड़ा प्रेम था। वे हमारी बुनकर सोसायटी के प्रमुख व्यक्ति थे, हमारी तकलीफों का बड़ा ध्यान रखते थे तथा अधिकारियों तक हमारी तकलीफों को पहुँचाते थे।" श्री अब्दुल्ला भाव-विभोर होकर कहने लगे कि, "खुदा इसका गवाह है कि स्वामीजी और रेड्डीजी की मृत्यु से हमें कितना सदमा पहुँचा है। हम इसका बयान नहीं कर सकते।"

अन्त में श्री दीक्षितजी ने ग्रामवासियों से निवेदन किया कि वे १८ ता० तक यानी श्राद्ध-दिवस तक गाँव में रहेंगे। प्रातः गाँव की गलियों में प्रभात-फेरी होगी और सायंकाल बारी-बारी हर चौक में प्रार्थना-सभाएँ हुआ करेंगी। आप सब लोग इन कार्यक्रमों में शरीक होंगे।"

बिजनौर —गोविन्द प्रसाद बहुगुणा
११ अप्रैल, १९७१

१९वाँ सर्वोदय समाज सम्मेलन

सम्मेलन में भाग लेनेवाले प्रतिनिधि अपना निवास-शुल्क भेजकर प्रवेश-पत्र तथा रेलवे-कन्सेशन 'सर्टिफिकेट निम्न पते से भी मँगा सकते हैं। ज्ञातव्य है कि सम्मेलन ८, ९, १० मई '७१ को नासिक (महाराष्ट्र) में होगा।

अ० भा० शांति-सेना मण्डल,
राजघाट, वाराणसी-१ (उ०प्र०)

इस अंकमें

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पै०), विदेश में २२ रु०; या २५ शिलिंग या ३ डालर। एक प्रति का मूल्य २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं मनोहर प्रेस, वाराणसी में मुद्रित

भूदान-यज्ञ

सम्पादक : राममूर्ति
वर्ष : १९, अंक ३०-३१ : सोमवार, ३ मई '७१
पत्रिका-विभाग, सर्व सेवा संघ, राजघाट, वाराणसी-१

सर्वोदय

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

हम और हमारा आन्दोलन

इस अंक में

आवरण चित्र

यह डिजाइन फ्रांसीसी कलाकार विक्टर वासरेली की रचना है। इस डिजाइन में सार्वभौम मानव का अमूर्त चित्र चित्रित है जो मस्तक के केन्द्र बिन्दु से उद्भूत ज्ञान से उद्भासित है। इसे हमने 'यूनेस्को कूरियर' के फरवरी १९७० के अंक से साभार प्रकाशित किया है।

आवश्यक सूचनाएँ

● नासिक सर्वोदय-सम्मेलन के कारण 'भूदान यज्ञ' का १० मई का अंक प्रकाशित नहीं होगा। १७ मई का संयुक्त अंक प्रकाशित होगा।

● हमें खेद है कि सम्मेलन के अवसर पर आन्दोलन की विविध जानकारी को प्राथमिकता देने के कारण 'नायर-मिशन' की आखिरी किस्त रोकनी पड़ रही है।

सम्मेलन के उद्घाटनकर्ता : श्री रामचन्द्र राव गोरा

सेवाग्राम-अधिवेशन के समय का एक दृश्य याद आता है। चर्चाओं के दौर के बाद प्रार्थना की सूचना प्रसारित की गयी और सब लोग गम्भीर मुद्रा में प्रार्थना के लिए सावधान होने लगे। तभी दो व्यक्ति बड़ी ही स्फूर्ति के साथ उठे और कमरे के बाहर चले गये। सर्वोदय समाज के लिए मन में जो धारणा थी उससे भिन्न था यह बहिर्गमन—हाँ साधारण बाहर जाना वह नहीं था—मुझे अपने पीछे खींच ले गया। उन दोनों व्यक्तियों की उम्र में बड़ा फर्क था लेकिन उनकी स्फूर्ति में बिलकुल नहीं। आसपास बैठे लोगों से पूछने पर पता लगा कि यही हैं नास्तिक गोरा। उनके साथ उनके दोस्त-जैसा जो तरुण था वह उनका बेटा था लवणम्। जानकारी पहले से भी थी मुझे उनके बारे में लेकिन उनकी नास्तिकता के बारे में नैतिक सहमत देख-सुनकर यद्यपि प्रार्थना चल रही थी, पर मुझे आस्तिकता से अधिक गहरी उनकी नास्तिकता बार बार अपनी ओर खींच रही थी।

आमतौर पर अपनी आस्था को अपने जीवन का आधार बनाना, अपने अन्दर के सत्य को उसके ही रूप में स्वीकारना और अपनी निखालिस अनुभूतियों को बाहर भीतर से एकसाथ जीना कठिन होता है बहुत कठिन। इसीलिए अक्सर हमारी चाह कुछ और राह कुछ होती है। गोराजी का उनकी अनास्था की आस्था पर खड़ा संघर्षशील व्यक्तित्व अपने अनुभूत सत्य के साथ जीने की हर कीमत अदा करता आया है। अपने विश्वास के प्रति पूर्ण वफादारी के कारण ही गोराजी का ईश्वर द्रोह आत्यन्तिक रूप में मानव-भक्ति बन गया है। और इसीलिए उनके सम्पर्क में क्षण-दो-क्षण के लिए आनेवाला व्यक्ति भी उनकी गहरी और साथ साथ ऊँची मानवीय संवेदना का स्पर्श पाता ही है, और तब शायद वह सोचने को विवश हो जाता है, कि पूर्ण ब्रह्म की कल्पना के साथ एकरूप होनेवाले साधक की तुलना में अपूर्ण इन्सान के साथ इस एकात्मभाव से जुड़ने की कठिन और सघन साधना

जो गोराजी ने की है, वह इन्सान को दोयम दर्जे पर रखनेवाली आज की पूरी सामाजिक रचना में कितनी महत्व की है।

गोराजी प्रोफेसर गोरा हैं। लवरा में उन्होंने अपने जीवन का क्रियाशील अध्याय इसी रूप में शुरू किया था। लेकिन अंग्रेजों की गुलामी को तोड़ने की चेतना, जो पूरे भारतीय उपमहाद्वीप में पैदा हुई थी, से वे अपने को अलग नहीं रख सके। शिक्षण गुलामी की जंजीरों को और मजबूत बनाने के लिए चलने लगे तो वह शिक्षण रह ही नहीं जाता, यह *गोराजी ने महसूस किया और अपनी* चेतना के निर्देशानुसार मुक्ति-संग्राम में जुट गये। इसके लिए जो कीमत चुकानी पड़ी उसमें वे कभी पीछे नहीं रहे। लेकिन गोराजी की मुक्ति-चेतना केवल सत्ता परिवर्तन तक सिमटी नहीं रह सकी। सामाजिक संरचना के कारण गुलामी के शोषण और दमन में पीसे जा रहे हरिजनों की—जो समाज के आखिरी छोर पर हैं—मुक्ति को भी उन्होंने अंग्रेजों की गुलामी से मुक्ति की तरह ही आवश्यक *माना और खुद हरिजन बन गये। गोरा* की चेतना को ब्राह्मणत्व का अमानवीय बोझ सहन नहीं हुआ। उन्होंने उसे उतार फेंका। आन्ध्र प्रदेश के विजयवाड़ा जिले के पटामटा नामक स्थान में हरिजनों के साथ बस गये। उनके अपने हो गये। लड़की की शादी की तो हरिजन लड़के से, लड़के की शादी की तो हरिजन लड़की से। इस अनुभूत सत्य के साथ जीने के उनके वज्र संकल्प को किसी प्रकार का प्रहार तोड़ नहीं सका।

स्वराज्य के बाद अपने देश की राजनीतिक रचना में दलवादी भूमिका जो प्रबल हुई, उसमें लोकतंत्र का सत्य 'लोक' दब गया। गोराजी की राजनीतिक चेतना इस पर विद्रोह कर उठी। आज वे दलमुक्त लोकतंत्र—जिसमें लोक की सत्ता एक सत्य बनकर प्रकट हो—के लिए सतत प्रयत्नशील हैं।

भारत भूखा है। वैभव से पहले इसे भात चाहिए। गोराजी भारत की भूख को पहचानते हैं, उसके कारण पैदा होने-वाले खतरों को अपनी दूरदृष्टि से देखते हैं, इसीलिए उनकी प्रबल मान्यता है कि भारत की भूमि का उपयोग भात के लिए ही होना चाहिए, वैभव के लिए नहीं। उनकी यह अनुभूति भारत के अन्तिम व्यक्ति की अनुभूति है। गोराजी वैभव के लिए दुरुपयोग की जानेवाली भूमि को मुक्त करके उसे भात के लिए सदुपयोग में लाने का आन्दोलन करते आ रहे हैं। इसके लिए वैभववालों का कोप भी सहे हैं। कई बार जेल गये हैं। लेकिन क्या 'कोप' कभी सत्य को दबा पाया है ?

सत्य की बुनियादी पर असत्य के प्रहारों को झेलता हुआ गोराजी का व्यक्तित्व एक निखरा हुआ, प्रखर व्यक्तित्व है, जो गहरी इन्सानियत में सराबोर होकर अत्यन्त प्रेमल है, चाह नहीं, राह नहीं के द्वन्द्व से मुक्त है। इन्सान के व्यक्तित्व का सम्पूर्ण समादर उनके हृदय का सहज गुण है। इसीलिए तो उनका पूरा परिवार—पत्नी, बेटी बेटे, उनके गहरे मित्र हैं। इन्सानपूर्ण जीवन के इर्द-गिर्द पैदा होनेवाली प्रतिक्रिया वहाँ नहीं है।

ऐसे सत्यनिष्ठ व्यक्ति के द्वारा सर्वोदय-सम्मेलन का उद्घाटन हमारी मानवीय चेतना को और अधिक संवेदन-शील बनाने के लिए एक प्रेरक सुअवसर है, जिसका लाभ हर सर्वोदयप्रेमी को प्राप्त होगा, ऐसी आशा है। —राही

सम्मेलन-अध्यक्ष : भाई साब सिद्धराज

"जान पड़ता है आप भी सिद्धराजजी की तरह मिठाई के शौकीन हैं।"

अभी उस दिन भाई त्रिलोकचन्द चौधरी मुझे देखने मेरी कुटिया पर पधारे तो उनके मुख से सबसे पहला वाक्य यही निकला। प्राकृतिक चिकित्सा के जबरदस्त हामी त्रिलोकचन्दजी की शिकायत में काफी दम है कि आँव और पेचिश से पीड़ित होने का एक बड़ा कारण मिष्टान्न-प्रियता भी होता है।

बेनी ने कहने पर दहला जमाया—"मधुर प्रिय होना इनके लिए स्वाभाविक है।" और मैं सोचता हूँ कि वह मधुर-प्रियता किस काम की, जिसमें वास्तविक मधुर प्रियता न हो। मधुर का तो सब कुछ मधुर ही होना चाहिए। कृष्ण की भाँति 'अधर मधुर, वचन मधुर''' मधुराधिपतेर अखिल मधुर'।

माधुर्य जब मानव के अंग-अंग में, रोम-रोम में रमा जाय तब न उस माधुर्य की शोभा है। जीवन में जब सत्य का माधुर्य हो, प्रेम का माधुर्य हो, करुणा का माधुर्य हो तब कहा जा सकता है कि अमुक मनुष्य माधुर्यप्रिय है।

भाई साहब सिद्धराजजी माधुर्य की इस दिशा में बहुत-कुछ आगे बढ़े हैं। उनके मुख पर रहनेवाली सहज मुस्कराहट, गरीबों के लिए सर्वस्व-त्याग की उनकी भावना और सेवा तथा तपस्या से ओतप्रोत उनका अपरिग्रही जीवन इसका एक ज्वलन्त उदाहरण है।

'तुम्हीं ने चुराया है सोने का हमारा हार'—एक मद्रासी परिवार अपने डिब्बे में बैठे एक सीधे-सादे दुबले-पतले नौजवान पर ऐसी तोहमत लगा रहा था।

बेचारा नौजवान बुरा फँसा। ज्यों-ज्यों वह अपनी सफाई दे, त्यों-त्यों वह परिवार और अधिक गुर्राये—'दूसरा कोई आदमी इस डिब्बे में है ही नहीं, फिर हार लेगा कौन ?'

अजीब मुसीबत। जान जाने की नौबत आ पहुँची। तभी संयोग से वह खोया हुआ हार उसी डिब्बे में नीचे पड़ा हुआ मिल गया।

एम० ए०, एल० एल० बी० पास करके जयपुर से मद्रास जानेवाला यह राजस्थानी युवक था सिद्धराज ढड्ढा।

उस दिन जो वकील अपनी ही वकालत नहीं कर सका, वह दूसरों की वकालत करने में कैसे सफल होता ? पर

सिद्धराज ढड्ढा

थोडे ही दिनो के बाद जब उसके जीवन ने नया मोड लिया तब से आज तक वह एक सफल वकील बना है शोषितो और पीडितो का, दीनो और दुखियो का, बेसहारा और सर्वहारा लोगो का।

गांधी की आंधी आयी कि देश के हजारो नौजवान उसके झोंके मे बह गये। वकीलो ने वकालत छोड दी, डाक्टरो ने डाक्टरी छोड दी, सरकारी कर्मचारियो ने सरकारी नौकरी छोड दी। जिधर देखिये उधर—"सर बांधे कफनवा हो शहीदो की टोली निकली।

सिद्धराज भी उस टोली का एक नायक बन गया। व्यापार-मण्डल की मोटी तनख्वाहवाली सेक्रेटरी की नौकरी उसे बांधकर नहीं रख सकी। गांधी का 'वालटियर' बनना उसके लिए गौरव की बात थी। और उस प्रवाह में वह पडा सो पडा—"कहां रोके रुकती है धार ? चली जब घहराकर एक बार।"

आजादी तो हमें मिली, परन्तु इतने से ही तो समस्या का समाधान होना नहीं। जगह जगह राज्यो में और केन्द्र में गांधी के सेनानियो ने शासन-सत्ता का सूत्र अपने हाथ में लिया। उन्होने देश की गरीबी, बेकारी आदि को दूर करने के लिए प्राणपण से कोशिश की। परन्तु उसकी फलश्रुति क्या है ?

राजस्थान में सिद्धराज ने भी पडित हीरालाल शास्त्री के मंत्रिमंडल में मंत्री की कुर्सी सम्भाली लेकिन अनुभव से सा ही आया कि कुर्सी पर बैठकर सेवा करने की अपेक्षा गरीबो की झोपडियो में जाकर सेवा करना ज्यादा अच्छा है। देश की सेवा के इच्छुक लोक सेवको का स्थान देश के गांवो में है।

गांधी को भगवान ने उठा लिया तब गांधीवादी सेवको को लगा कि गांधी के लक्ष्य की पूर्ति के लिए रचनात्मक कार्यकर्ताओ का पद और सत्ता से मुंह मोडकर दरिद्र देशवासियो की सेवा मे दरिद्र बनकर अपने को खपा देना चाहिए।

विनोबा और जयप्रकाश के मार्गदर्शन में जो मुट्ठी भर कार्यकर्ता आज देश में सर्वोदय की दीपशिखा आलोकित कर रहे हैं, उनमें भाई साहब सिद्धराज का वरिष्ठ स्थान है। बिहार में अकाल-पीडितो की सेवा का कार्य हो, विश्व में 'पीस ब्रिगेड' (शान्तिसेना) का कार्य हो, ग्रामस्वराज्य कोष का काम हो, सर्व सेवा संघ-प्रकाशन का काम हो, 'सूदान' (अंग्रेजी), 'भूदान-यज्ञ' (हिन्दी), 'पीपुल्स ऐक्शन' (अंग्रेजी) आदि के सम्पादन आदि का काम हो, अथवा सर्वोदय-क्षेत्र की बडी से बडी जिम्मेदारी का काम हो, लोगो की आंखें सिद्धराज की तरफ बरबस खिच जाती हैं। उन्हें ट्रैक्टर दफ्तर चलाने में अथवा टोकरी और फावडा लेकर भंगी का काम करने में, अथवा गांव गांव घूमकर ग्रामदान प्राप्त करने में अथवा पुस्तक, लेख, टिप्पणी आदि लिखने में एक-सा ही रस आता है। यो उनकी रुझान साहित्यिक है परन्तु रचनात्मक कार्य की अहर्निश व्यस्तता मे उसके लिए समय ही कहां मिलता है। देश-विदेश की यात्रा, सुन्दर दृश्यो का अवलोकन मित्रो की चौकडी में बैठकर धीरेन दा के प्रमुख काम 'गप्पाष्टक' में सबके साथ अट्टहास करना भी उन्हें रुचिकर है। खादीकार्य को उठाने और बढाने में भी उनकी दिलचस्पी है। पर उनका निर्देशक है विनोबा। जब जहां जिस मार्ग पर वह कमाण्डर उन्हें भेज देता है शांति का यह सेनानी मुस्कराता हुआ उसी मार्ग के लिए चल देता है।

धन्य है ऐसा सेवार्पित जीवन, जिसकी हर छोटी-बडी बात से कोई-न-कोई प्रेरणा लेकर हम अपना जीवन सफल कर सकते है। राजस्थान के कार्यकर्ता तो उस पर जी जान से न्योछावर है ही, सारे देश के सर्वोदय-कार्यकर्ता उसे परम आदर की दृष्टि से देखते हैं। सर्वोदय-सम्मेलन इस बार ऐसे तपे-तपाये सेवक को अध्यक्ष के आसन पर प्रतिष्ठित कर रहा है, यह हम सबका परम सौभाग्य है।

'तुम मुबारक रहो हजार बरस, हर बरस के दिन हो पचास हजार !!!'

—श्रीकृष्णदत्त भट्ट

नासिक

राजगृह के बाद नासिक। हम अठारह महीने के बाद मिल रहे हैं। इन्हीं अठारह महीनों में हमारे आन्दोलन का दूसरा दौर शुरू हुआ पुष्टि का। हममें से जो लोग पुष्टि-कार्य में लगे उन्होंने परिस्थिति को, जे० पी० की तरह, आमने-सामने देखा। समस्याएँ चुनौती हैं, सम्भावनाएँ आशा और शक्ति का स्रोत। राजगृह में विहारदान की सम्भावनाएँ प्रकट हुई थीं नासिक में समस्याओं और सम्भावनाओं का संतुलन दीखना चाहिए।

इस बार सम्मेलन मात्र सर्वोदय-सम्मेलन नहीं है 'सर्वोदय-समाज सम्मेलन' है। कई मित्रों को लगता था कि सर्वोदय ग्रामदान बन गया है, उसके सम्मेलनों में सारा समय ग्रामदान की चर्चा में लग जाता है। यह शिकायत इस बार दूर की जा रही है।

सर्वोदय निस्सन्देह ग्रामदान से बड़ा है, इसलिए सर्वोदय-समाज ग्रामदान माननेवालों से बड़ा है। शरीर हृदय से बहुत बड़ा है, लेकिन क्या हृदय के बिना भी शरीर की कल्पना की जा सकती है? क्या हृदयविहीन शरीर की कोई कीमत रह जाती है? हृदय के न चलने पर शरीर, शरीर नहीं रह जाता, लाश हो जाता है।

गांधी ने हमें बताया था कि सर्व का उदय आज के समाज में सम्भव नहीं है। सर्व के उदय की चिन्ता करनी हो तो समाज की नयी रचना करनी चाहिए। समाज की शक्ति ग्रामदान के सिवाय दूसरी किस अहिंसक प्रवृत्ति में है? जरूर, दूसरी प्रवृत्तियाँ परिवर्तन की दिशा में ले जाती हैं, परिवर्तन का मानस भी बनाती हैं, लेकिन प्रत्यक्ष परिवर्तन ग्रामदान ही करता है, इसलिए कि ग्रामदान स्वामित्व और सत्ता का स्वरूप बदलता है।

जब गांधीजी ने १८ रचनात्मक कार्यों की बात कही थी तो उनके मन में स्वराज्य था—गांवों का, जनता का स्वराज्य था। रचनात्मक कार्यक्रम के द्वारा वह स्वराज्य के लिए समाज की शक्ति प्रकट करना चाहते थे, यह सिद्ध करना चाहते थे कि जीवन में मानवीय सम्बन्ध सम्भव है, और जीविका में भी मानवीय सम्बन्ध सम्भव है। मानवीय सम्बन्ध उसी रचना में सम्भव है जहाँ समता है। इसीलिए उन्होंने कहा था कि समता नहीं होगी तो खूनी गृहयुद्ध अनिवार्य है। समता असम्भव है जब तक आज का स्वामित्व रहेगा। इसलिए ग्रामदान ने स्वामित्व के अंत करने की ही बात सबसे पहले कही। यही कारण है कि ग्रामदान दूसरे सब रचनात्मक कार्यों का प्राण बन गया। दूसरे सब रचनात्मक कार्यक्रमों को चाहिए कि अपने प्राण की रक्षा करें, उसे पुष्ट करें और उसकी नींव पर नये समाज की रचना की दिशा में आगे बढ़ें। जितने भी रचनात्मक कार्य हैं, और उनकी संस्थाएँ हैं, वे अच्छा कार्य कर रही हैं, इसमें सन्देह नहीं, लेकिन अब उन्हें केवल सेवा-कार्य नहीं, रचना का कार्य भी करना चाहिए। ग्रामदान के साथ जुड़े बिना यह कैसे सम्भव होगा? ग्रामदान और रचनात्मक कार्य के इस अनुबन्ध पर नासिक में चर्चा होनी चाहिए, और निश्चित उपाय अमल होना चाहिए।

रचनात्मक कार्य, यानी समाजरचना का कार्य, देश के विकास में पीछे पड़ चुका है। विकास को राज्य के हवाले कर रचनात्मक कार्य ने राज्य-शक्ति से प्राप्त साधनों से सीमित सेवा करके ही सन्तोष मान लिया है। साधन देकर सत्ता ने सेवा को दासी बना लिया है। दासी भूल गयी है कि उसका सहज स्थान रानी का था।

राज-सत्ता का स्वभाव होता है कि वह सदा अपने को सर्वोपरि रखती है। लोक-शक्ति में ही यह उदारता होती है कि वह सेवा को प्रतिष्ठा देती है। अगर सेवा प्रतिष्ठा चाहती है तो उसे लोकजीवन का ही माध्यम बनना चाहिए।

ग्रामदान ने पिछले बीस वर्षों में जिस तरह लोक-जीवन को हिलाया है, उसे एक नयी दिशा दी है, उसकी सांसों में नये मूल्यों की सुगन्ध भरने की कोशिश की है, वह देश में छा गयी होती अगर दूसरे रचनात्मक कार्यों ने उसे अपना लिया होता। लेकिन वे निर्णय नहीं कर सके। उनके मन के किसी कोने में संशय छिपा रहा। *उन्होंने समझा कि ग्रामदान १८ रचनात्मक कार्यों में एक* उन्नीसवाँ कार्यक्रम है। और, अगर उन्नीसवाँ कार्यक्रम हो सकता है तो बीसवाँ, इक्कीसवाँ, भी हो सकता है। अगर यह सही हो कि ग्राम-स्वामित्व के बिना ग्रामस्वराज्य सम्भव नहीं है, और ग्राम-स्वराज्य ही गांधी-विचार का आधार है, तो ग्रामदान 'एक कार्य' नहीं रह जाता, उसका दर्जा 'एक ही कार्य' का हो जाता है।

जो समाज संघर्ष और संहार द्वारा अपने को समाप्त कर रहा है उसकी हम कौनसी सेवा करेंगे? अगर संघर्ष नहीं मिटता, संहार नहीं रुकता, तो क्या करेंगे हम मरहम-पट्टी करके, और कब तक करते रहेंगे? क्या हम देख नहीं रहे हैं कि दमन और शोषण की सारी शक्तियाँ सत्ता में केन्द्रित हो गयी हैं? सत्ता ने सेना से अपने को अजय बना लिया है। जितनी विराट उसकी शक्ति है, उतना ही व्यापक यह भ्रम है कि राज्य संरक्षक है, अनिवार्य है। सेवा सोचे कि वह किसके साथ रहेगी? शस्त्र-आधारित राज्य-शक्ति के साथ या मनुष्य-आधारित लोक-शक्ति के साथ?

अहिंसा में विश्वास रखनेवाले और अहिंसक समाज की स्थापना के लिए काम करनेवाले हर व्यक्ति को अब अपना स्थान तय कर लेना चाहिए। जहाँ दुःख है वहाँ सेवा का अवसर है, इस तरह का निरीह, निर्विकार दिखायी देनेवाला रुख लेने से काम नहीं चलेगा, अहिंसा के साथ न्याय नहीं होगा। अब यह सिद्ध है कि राज्य-शक्ति का जितना जोर होगा समाज हिंसा से उतना ही मुक्त होगा। समाज को हिंसा मुक्ति की दिशा में ले जाने की शक्ति ग्रामदान में है।

नासिक तीर्थ-स्थान है। वहाँ इकट्ठा होनेवाले सर्वोदय-समाज के भाई बहन दिल खोलकर चर्चा करें कि सर्वोदय समाज कैसे आयेगा। ग्रामदान ने एक रास्ता दिखाया है। अगर कोई दूसरा रास्ता होगा तो हम लोक-सेवक उस पर चलने को तैयार होंगे। हम मार्ग के भक्त नहीं हैं, भक्त हैं मुकाम के, जहाँ हम सबको पहुँचना है।●

हम, हमारा आन्दोलन और जमाने की रफ्तार

—विनोबा

मालूम नहीं, मुझे क्या बोलना चाहिए। बहुत सारे चेहरे परिचित हैं, कोई आठ-दस चेहरे अपरिचित दीखते हैं, यानी नये आये हुए हैं। ये अपरिचित चेहरे जितने बढ़ते जायेंगे, उतनी देश की तरक्की होती जायेगी। मैंने आठ-दस वर्ष पहले कहा था जब प० नेहरू थे, कि ६० साल के उम्रवाले 'इलेक्शन के लिए न खड़े हों, सुप्रीम कोर्ट के न्यायाधीशों, जिनका दिमाग परिपक्व होता है, को पैंसठ साल में 'रिटायर' करते हैं तो क्या वजह है कि राजनीतिक बूढ़े होते चले जायें, फिर भी अपना दिमाग चलायें। तब 'इलेक्शन' हुआ था, मैंने कहा था कि ६० साल के उम्रवाले जो हार गये होंगे उनके लिए बाबा को खुशी है और यही बात इस चुनाव के लिए भी लागू है और कमबेशी अपने समाज पर भी लागू है।

नये चेहरे और 'क्यू'

मतलब यह नहीं कि पुराने लोग बेकार हो जायेंगे। उनका आशीर्वाद, मार्गदर्शन, सुझाव मिलेगा। नये जवान सलाह लें। वृद्ध के पास जाकर सलाह खानगी तौर पर ले सकते हैं, जँच जाय तो अमल करें, अन्यथा नहीं। यह परमेश्वर की योजना है। परमेश्वर पुराने को उठाता है ताकि नये को मौका मिले। पर कभी-कभी जवानों को भी उठा लेता है। यह भी हुआ है कि मेरे जैसे वृद्ध देखते रहे और जवान चले गये। हमारे एक बुजुर्ग साथी किशोरलाल मशरूवाला हमेशा बीमार रहते थे, उन्हें दमा था। कहते थे कि मैं 'क्यू' में खड़ा हूँ परमेश्वर के पास पहुँचने के लिए। जवान लोग मेरे जैसे बुड्ढों को धक्का लगाकर आगे चले जाते हैं। यह 'क्यू' तोड़ने का रिवाज भारत में अधिक है। यूरोप में भी यह रिवाज है, लेकिन उतना नहीं है। यह जो प्रार्थना वेद में आयी है—पीछेवाला पहले चला जाय, हे भगवान वैसा मत कर, ऐसी प्रार्थना है। इन लोगों की आयु ऐसी बनाओ कि आगेवाला आगे और पीछेवाला पीछे जाय। इस प्रार्थना को भगवान ने थोड़ी सुनी है, थोड़ी नहीं सुनी है। भगवान का कान बाबा के कान की तरह है, थोड़ा सुनता है थोड़ा नहीं सुनता। नये चेहरों को देखकर अच्छा लगता है।

मुझे एक बहुत बड़ा शब्द सूझा था। पुरानी बात है, यह शब्द मैंने मेण्ट फ्रान्सिस की किताब में कहीं देखा था। शब्द है—डोण्ट आर्गनाइज। जिसको संगठन कहते हैं उसको गठान लगती है। गठान न बनाओ। लूज आर्गनाइजेशन' होना चाहिए। गांधीजी के बाद जो पहली सभा हुई थी और जिसमें गांधीजी के 'पोलिटिकल' और 'नान पोलिटिकल' दोनों प्रकार के साथी आये थे, डा० जाकिर हुसेन भी उसमें आये थे। उसमें तय हुआ कि एक 'लूज आर्गनाइजेशन' बनाया जाय। उसे सर्वोदय-समाज का नाम दिया गया। जाकिर साहब बोले कि किसी महान व्यक्ति के जाने के बाद उसके अनुयायी पक्का संगठन बनाते हैं, पर यहाँ चमत्कार हुआ कि केवल 'ब्रदरहुड' बनाकर छोड़ दिया। यह अद्भुत घटना है। उसी विचार के अनुसार हमारा संगठन है।

माला-संस्कृति गुलदस्ता संस्कृति

हमारे कुछ साथी खादी के काम में लगे हैं, कुछ हरिजन के, स्त्रियों के, भूदान-ग्रामदान आदि के काम में लगे हुए हैं। ये सब भ्रातृ मंडल के नाते इकट्ठा होते हैं। अब विचार आया है कि एक माला बने जिसमें इन सबको पिरोया जाय। माला में धागा बारीक होता है और छिपा होता है, लेकिन फूल अलग-अलग दीखते हैं। यही भारतीय संस्कृति है। यही 'लूज आर्गनाइजेशन' है। प्रेम का धागा सबके हृदय में पिरोया जाना चाहिए। पश्चिम की संस्कृति गुच्छ करती है, वह गुलदस्ता-संस्कृति होती है। यह संस्कृति भारत की नहीं है। भारत में माला है और पश्चिम में गुलदस्ता है। यही कारण है कि दो दो हजार साल से यहाँ १५-१६ भाषाएँ विकसित हो रही हैं। वहाँ १५-१६ देश हैं। यहाँ इतनी भाषाओं का एक ही देश बना हुआ है। जब हम बिहार में थे तो दरभंगा जिले का ग्रामदान हुआ। जिले की जनसंख्या ५०-६० लाख की है। वहाँ एक डेनमार्क का आदमी हमारे साथ था। वह बोला, यह तो पूरे डेनमार्क का ग्रामदान हुआ। 'दरभंगा इज डेनमार्क।' वहाँ डेनमार्क पूरा स्वतन्त्र देश है। यूरोप में छोटे-छोटे 'ट्राइब्स' हैं। वहाँ तो 'ट्राइबलिज्म' चल रहा है।

हमारे देश में हरेक को आजादी है, पर सब प्रेम के धागे में गूँथे हुए हैं। भारत की संस्कृति माला की संस्कृति है और पश्चिम की संस्कृति गुलदस्ता की संस्कृति है। पाँच हजार सेवकों की एक जमात यहाँ है। सरकारी और व्यापारिक संगठन के बाहर दुनिया में कहीं भी सेवकों की इतनी बड़ी जमात नहीं है। हम लोग अपने को न्यून न समझें। परमात्मा की कृपा से 'सुपिरियारिटी काम्प्लेक्स' तो हमारे यहाँ नहीं है, पर हम सत्त्व-शून्य हो गये हैं, ऐसा नहीं मानना चाहिए।

सन् १८८५ में कांग्रेस की स्थापना हुई। उसके बीस साल बाद स्वराज्य' शब्द निकला। उसके पहले लोग सरकार के सामने अपने दुख ही रखते थे। उसमें बहुत बड़े-बड़े लोग थे। उसके बीस साल बाद, सन् १९०६-०७ में 'स्वराज्य' शब्द निकला और सन् १९४७ में स्वराज्य मिला। ६२ साल के बाद स्वराज्य मिला। इतने असंख्य नेता लगे और आन्दोलन चला। अभी तो २२ साल हुए स्वराज्य मिला। ६२ सालों में वे कहाँ से कहाँ और हम २२ सालों में कहाँ से कहाँ पहुँचे। हमारी बहुत ज्यादा प्रगति हुई है। लेखा-जोखा लें

भूदान-यज्ञ साप्ताहिक, ३ मई, '७१

[illegible]
प्रगति हुई, इतनी उतनी नहीं हुई थी।

'हार्ट' है, 'ब्रेन' नहीं

बाबा के साथ 'हार्ट' बहुत अच्छा है, पर 'ब्रेन' नहीं है। 'ब्रेन बेस्ट' तो सरकारी नौकरी में है। अंग्रेजों के समय में भी जो बड़े-बड़े दिमागी लोग थे, राममोहन राय से लेकर आजादी के बाद तक, सब नौकरी करके ही बड़े काम में लगे। मेरी मान्यता है कि प्रामाणिकता से नौकरी करनेवाले भी उत्तम देशसेवक हैं। जिनको नौकरी नहीं मिली वे उनकी स्पर्धा में लगे और उनमें से बचे हुए लोग हमारे पास हैं। ऐसी हालत में हम २२ साल के बाद यहाँ से वहाँ पहुँचे!

देश की प्रगति शब्द से नापी जाती है। अभी हमारे नाम से निधि एकत्र की गयी और उसका नाम 'ग्राम-स्वराज्य कोष' रखा गया। यह बहुत ऊँचा शब्द है। पिछले २२ सालों में शब्दों का अद्भुत विकास हुआ है। हर गाँव का अपना स्वराज्य है। खादीवाले और सभी कामवाले ग्राम-स्वराज्य बनाने में लगे, सामान्य भूदान से ग्रामदान तक आये, खादी से ग्रामाभिमुख खादी तक आये। शब्द हमेशा ऊँचा होता है। शब्द की तराजू में जब हम अपने को तौलते हैं तो न्यून ही साबित होते हैं। लेकिन हमें अपने को हीन नहीं मानना चाहिए। क्योंकि शब्द हमेशा ऊँचा ही होता है। आदमी शब्द-अभिमुख होकर ही जीता है।

सन् १९१६-१७ में तिलक का भाषण मैंने सुना था। उनका कहना था कि हमारा ध्येय ध्रुव का ध्येय है। ध्रुव का ध्येय इंग्लैण्ड से केपकेमोरीन जाता है। लेकिन जहाज 'पोल स्टार' को देखकर चलता है। हालाँकि उसे ध्रुवतारे पर जाना नहीं है। शब्द ध्रुवतारा होता है। वह खो जाय, तो सब गड़बड़ हो जाता है। जहाज का मार्गदर्शक 'पोल स्टार' है, वह दिशा देता है, उसकी मंजिल नहीं है। देखना यह है कि दिशा ठीक है या नहीं। हमें न्यूनगंड नहीं होना चाहिए। परमात्मा की कृपा से 'सुपीरियारिटी काम्प्लेक्स' से तो हम बचे हुए ही हैं।

इतना प्रेम किसी जमात में नहीं

जब हम इकट्ठा होते हैं तो चर्चा होती है, और कभी-कभी गर्म चर्चा हो जाती है। पर ऐसा नहीं मानना चाहिए कि प्रेम नहीं है। जितना प्रेम इस जमात में मैंने देखा उतना कहीं नहीं देखा। हमने सारे भारत की यात्रा की है, सब जमातें देखी हैं। जब पास में रहते हैं तो ऊँचा-नीचा दिखायी देता है। दूर से देखने पर पृथ्वी गोल दीखती है, बाहर से देखने पर सब बराबर दीखता है। आँख, कान, नाक में जो भिन्नता है, वैसी ही चित्त में भी भिन्नता होती है, ऐसा समझना चाहिए। भिन्न आदतवाले नजदीक बैठते हैं तो कुछ गर्मा-गर्मी हो जाती है, तो भी उत्तम प्रेम है। पर प्रेम की वृद्धि की गुंजाइश भी है। हमने प्रगति काफी की है और हमलोगों में व्यापकता की दृष्टि की कमी नहीं है। लेकिन मेरे प्यारे भाइयो, जमाने की माँग बहुत तेज है। प्रगति हमने की, किन्तु जमाने की माँग ज्यादा है इसलिए प्रगति समाधानकारक नहीं है।

बाबा जब बिहार में था, तब बिहार को अति-तूफान शब्द देकर आया। तो किसीने पूछा कि इतनी उतावली क्यों है। मैंने कहा कि उतावली मुझे नहीं, जमाने को है। सन् १९११ में तैंतीस करोड़ आबादी थी, तब पाकिस्तान की आबादी भी हमारे साथ थी। अब सन् १९७१ में भारत की आबादी ५५ करोड़ हो गयी है और पाकिस्तान की अलग। इतनी तेजी के साथ जनसंख्या बढ़ रही है, जमीन का रकबा प्रति व्यक्ति घट रहा है। उत्तर बिहार में—मुजफ्फरपुर में, श्री जयप्रकाशजी का काम का क्षेत्र मिला। वहाँ पर प्रति व्यक्ति २५-३० सेण्ट जमीन होगी। इतनी कम जमीनवाले क्षेत्र में गरीबी मिटाने का काम बहुत कठिन हो जाता है और समस्या जोरों के साथ बढ़ती जाती है।

बंगला देश से सबक सीखें

मेरा ध्यान इन दिनों बंगला देश में है। वहाँ की हालत भी मुजफ्फरपुर जैसी है। प्रति व्यक्ति २५ सेण्ट जमीन होगी। विकास के लिए साधन नहीं है। सेना में अधिक पंजाबी ही हैं, और विकास भी पंजाब में ही हुआ है, यहाँ नहीं। इसलिए वहाँ की ऐसी स्थिति है। इस पर से हमें सबक सीखना चाहिए। कलकत्ता सारे बंगाल को चूसता है। जब मैं कलकत्ते के बारे में सोचता हूँ तो भगवान से यही प्रार्थना करता हूँ कि इसके २५ कलकत्ते हो जायें। देश में जितनी भी समस्याएँ हैं, सब कलकत्ता में हैं। जब हम छोटे थे तो अखबारों में पढ़ते थे—बाँकुड़ा भूखा है। आज भी बाँकुड़ा भूखा है। इतने साल से वह भूखा मर रहा है। फिर भी वहाँ के लोग दिमाग नहीं बिगाड़ते हैं, मुझे तो इस बात का आश्चर्य हो रहा है कि वह कितना शान्त है। यह सब चैतन्य महाप्रभु का असर है। 'हरि बोल', 'हरि बोल' में सब भूल जाते हैं। मराठी और हिन्दी में कहावत है—"भूखा बंगाली"। दोनों बंगाल के यही हाल हैं।

नक्सलवादी विचार बहुत कम है। जहाँ गरीबी हद दर्जे की हो, वहाँ हिंसा फूट पड़ती है। जो हाल कलकत्ता का है वही हाल केरल का भी है, उत्तर केरल का। पुरानी कहावत थी—'असन्तुष्टा द्विजा नष्टा'। बाबा ने नयी कहावत बनायी—'असन्तुष्टा द्विजा कम्यूनिस्टा।' कम्यूनिस्ट बनाने के कारखाने सरकार ने खोल रखे हैं। आज नक्सलवादियों के नाम पर जो भी डाके पड़ रहे हैं, उनमें अस्सी प्रतिशत डाकुओं के हैं। ये डाकू क्रान्तिवादी नहीं हैं। ऐसी भयानक हालत है, इसलिए मन में उतावली है। क्योंकि जमाने की माँग बहुत तेज है। तंजावुर में जगन्नाथन् को उपवास करना पड़ता है। देश में इतनी सारी समस्याएँ हैं कि अगर हम हरेक पर उपवास करने बैठें तो खाने के लिए मौका नहीं मिलेगा, इतनी समस्याएँ हैं। जमाने की माँग बहुत तेज है,

शोध गलत और अपूर्ण करार दी जाय। पर आखिरकार बहुत दिन तक अमेरिकन जनता को धोखे में नहीं रखा जा सका। सिगरेट से कैन्सर को बढ़ावा मिलता है, यह सिद्ध होने के बाद भी पूँजीवाद के आधार पर टिकी हुई अमेरिकी सरकार की यह हिम्मत नहीं हुई कि सिगरेट के व्यापार पर रोक लगा दे। उसे नागरिक-आजादी के सिद्धान्त का बहाना भी मिल गया, पर जनमत के दबाव से इतना जरूर करना पड़ा कि अब अमेरिका में सिगरेट के हर पैकेट पर यह छापना लाजमी हो गया है कि सिगरेट पीने से कैन्सर होने का खतरा है।

पर हिन्दुस्तान में आज भी सिगरेट का व्यापार बिना रोक-टोक के चल रहा है। क्या प्रगतिशील और समाजवादी कहलानेवाली सरकारें जनहित में कोई कदम उठाने की हिम्मत करेंगी ?

* * *

एक समाचार के अनुसार अभी कुछ दिन पहले राजस्थान से सीमान्त क्षेत्र जैसलमेर, बाड़मेर, बीकानेर व जोधपुर के "सीमान्त नेताओं" के एक दल को, भारत सरकार की ओर से भारत-दर्शन योजना के अन्तर्गत १५ दिन के लिए देश के विभिन्न स्थानों पर घुमाया गया। इस यात्रा का उद्देश्य शायद यह था कि देश की सीमा—जैसे सुदूर क्षेत्रों में रहनेवाले लोगों के ध्यान में आये कि हमारा देश भारत कितना विशाल, कितना विविध और कितना भव्य है, उसकी विविधता में कितनी एकता है और भविष्य में उसकी प्रगति की कितनी सम्भावनाएँ हैं।

इस दल में इन चारों क्षेत्रों के कोई १०-१५ लोग थे। मालूम हुआ कि उन्हें आगरा, भोपाल, बम्बई, दिल्ली और जयपुर शहरों में घुमाने का कार्यक्रम बनाया गया था। इस दल के एक सदस्य दिल्ली में मिले। जब उनसे सहज ही पूछा कि वे कहाँ ठहरे हुए हैं तो यह जानकर आश्चर्य हुआ कि उनके दल को दिल्ली के एक शानदार लोदी होटल में ठहराया गया है जिसमें हर सदस्य पर पैंतीस रुपये रोज खर्च आता है। मालूम हुआ कि बम्बई में भी उन्हें इसी तरह के होटल "सी ग्रीन" में ठहराया गया था। दिल्ली में उनके कार्यक्रम में प्रधानमंत्री और उपराष्ट्रपति से भेंट तथा दिल्ली के शानदार बाग-बगीचे और "जू" आदि दर्शनीय स्थानों को देखने का कार्यक्रम रखा गया था। मैं यह तो नहीं पूछ सका कि रेल का सफर उनका किस दर्जे में हुआ होगा, पर यह देखते हुए कि वे लोग सीमान्त "नेता" थे और ठहरने का इंतजाम उनका ३५ रुपये रोजवाले होटल में किया गया था, उनका रेल का सफर पहले दर्जे से कम में नहीं हुआ होगा।

जिस देश में करोड़ों लोगों को रोजाना पैंतीस पैसे भी नसीब नहीं होते, न दोनों समय भरपेट भोजन मिलता उस देश में इस प्रकार लोगों को भारत की भव्यता का दर्शन कराने के लिए पैंतीस रुपये रोज के होटलों में ठहराया जाय और पहले दर्जे में घुमाया जाय इससे बढ़कर समाजवाद का मजाक और क्या हो सकता है ? इस तरह घुमाकर भारत सरकार इन लोगों को किस भारत का दर्शन कराना चाहती है ? आगरे का ताजमहल, बम्बई का 'सी ग्रीन' होटल, वहाँ के 'मरीन ड्राइव', उस पर अखंड चलनेवाली नयी-नयी रंग-बिरंगी मोटर-गाड़ियों की शृंखला और वहाँ के चौंधिया देनेवाले विलासपूर्ण जीवन तथा दिल्ली के समाजवादी नेताओं के ठाट-बाट का दर्शन क्या भारतीय जीवन की वास्तविकताओं पर पर्दा डाल सकता है ? "भारत-दर्शन" के जरिये भारत सरकार लोगों को राष्ट्रीय एकता का भान कराना चाहती है, पर भिन्न भिन्न प्रान्तों के शहरों में लोगों को घुमा देने, उन्हें बढ़िया होटलों में ठहराने और खिलाने-पिलाने या वहाँ के दर्शनीय स्थान उनको दिखा देने से वे भारत की भव्यता की *भावना के बजाय अपनी परिस्थिति के* बारे में असन्तोष या ईर्ष्या या महत्वाकांक्षा लेकर ही लौटेंगे। राष्ट्र की भावात्मक एकता अपने से ज्यादा दुखी देशवासियों के लिए कुछ त्याग करने से, या भारत की सांस्कृतिक व धार्मिक एकता के दर्शन से ही सम्भव हो सकती है।

भारत-दर्शन की यात्रा के लिए इन "सीमान्त नेताओं" का चुनाव भी कुछ अजीब था। सबके बारे में तो नहीं कहा जा सकता लेकिन उस दल में कम-से-कम दो व्यक्ति ऐसे जरूर थे जिनका न तो कोई सीमा से सम्बन्ध था न वहाँ के जीवन से। संस्थाओं में काम करनेवाले लोग वे थे। इस विशाल देश में जहाँ करोड़ों लोगों को न भरपेट खाना मिलता है, न काम, जहाँ अत्यधिक गरीबी और अभाव है वहाँ सरकारी खजाने के हर पैसे का उपयोग पहले ऐसे कामों में होना चाहिए जिससे जनता की अनिवार्य तात्कालिक आवश्यकताएँ कुछ पूरी हो सकें। इसके बजाय लाखों रुपये इस प्रकार की निरर्थक योजनाओं में खर्च करना गरीब जनता के प्रति द्रोह नहीं तो और क्या है ? एक तरफ अच्छे कामों के लिए सरकारें हमेशा पैसे के अभाव का रोना रोती रहती हैं और दूसरी तरफ सरकार में गये हुए लोग जगह-जगह अपने प्रशासक या दलाल खड़े करने और अपने तथा अपनी पार्टी के वर्चस्व को सुरक्षित करने के लिए सरकारी खजाने का दुरुपयोग करते हैं। आखिर जनता कब जगेगी और कब ऐसे लोगों से जवाब तलब करेगी ?

* * *

चुनाव की आँधी आयी और चली गयी। सन् १९५२ से अब तक यह पाँचवाँ देशव्यापी चुनाव था। हमारे देखते-देखते भारत की राजनीति कितनी नीचे उतर आयी है इसका अन्दाज इन चुनावों में जो कुछ हुआ उससे प्रत्यक्ष है। आदमी का मन आश्चर्यजनक रीति से परिस्थिति के साथ मेल कर लेता है, हालाँकि पिछले पाँचों चुनावों में धाँधली, जोर-जबरदस्ती, आतंक और भ्रष्टाचार उत्तरोत्तर बढ़ते रहे हैं पर चूँकि *कुल मिलाकर किसी-न-*किसी तरह चुनाव निपट जाता है इसलिए

इन बातों की गंभीरता की ओर लोगों का ध्यान नहीं जाता। पर अगर यही सिलसिला जारी रहा तो वास्तव में जनतंत्र कितने दिन कायम रहेगा यह गंभीरता से सोचने की बात है।

इस बार के चुनाव में पिछले किसी चुनाव की अपेक्षा हिंसा, मारकाट, आतंक और जातिवाद का बोलबाला रहा, पर चूँकि सभी पार्टियाँ इन बातों में समान रूप से माहिर हो गयी हैं इसलिए यह आश्चर्य की बात नहीं है कि इन घटनाओं के खिलाफ कोई विशेष आवाज नहीं उठ रही है। पार्टियों की ओर से की जानेवाली धाँधली के अलावा इस पिछले चुनाव में व्यापक और योजनाबद्ध अनियमितता की शंका भी इधर-उधर सुन उठी है। चंडीगढ़ के गोदाम में पड़े हुए मतपत्रों का बरामद होना, अमुक स्याही की करामात आदि से इन शंकाओं को कुछ आधार भी मिला लेकिन सरकारी पक्ष की जैसी प्रचण्ड जीत हुई है उसके कारण विरोधी दलवालों की हिम्मत किसी चीज को उठाने की नहीं रही है। उनका हतप्रभ हो जाना स्वाभाविक है। अंग्रेजी की कहावत है कि सफलता से ज्यादा सफल कोई चीज नहीं होती। अब कोई शिकायत भी करें तो किस मुँह से करें? लोग यही समझेंगे कि यह हारे हुओं की शिकायत है। और राजनैतिक पार्टियों के अलावा दूसरे लोग न उतने मुखर हैं न समाचारपत्रों आदि में उनकी बात का वजन मिलता है।

चुनावों का सही और निष्पक्ष होना जनतंत्र की बुनियाद है। लोगों को बार-बार के अनुभव से अगर ऐसा लगे कि चुनाव निष्पक्ष नहीं हो रहे, या कि चुनावों में लोगों को मत देने की आजादी नहीं है तो आगे-पीछे चुनावों पर से और जनतंत्र पर से लोगों की श्रद्धा उठ जायेगी। या तो लोग निराश होकर बैठ जायेंगे और पार्टियाँ यह नाटक करती रहेंगी, या और लोग समाज की सारी व्यवस्था को ही चकनाचूर करने के लिए तैयार हो जायेंगे, जैसा कि आज नक्सलवादी कर रहे हैं। स्पष्ट है कि दोनों ही स्थितियाँ खतरे से खाली नहीं हैं। राजनैतिक पार्टियाँ या सरकार (जो स्वयं राजनैतिक पार्टी से बनती है) इस स्थिति को सुधारने में कोई पहल करेंगी यह मानना व्यर्थ है। प्रबल जनमत ही उनको ऐसा करने के लिए बाध्य कर सकता है।

इस सिलसिले में दो-चार बातें ऐसी हैं जिनका होना चुनावों की निष्पक्षता के लिए जरूरी है। पहली बात तो यह है कि चुनाव के समय देश के प्रधानमंत्री को चुनाव-प्रचार के काम में विशेष सुविधाएँ हरगिज नहीं मिलनी चाहिए। चुनाव को अगर विभिन्न पार्टियों द्वारा अपनी-अपनी ताकत आजमाने का मौका माना जाए तो यह जरूरी है कि उन ताकत आजमानेवालों में से किसीको भी, किसी भी बहाने, विशेष सुविधाएँ नहीं होनी या मिलनी चाहिए। प्रधानमंत्री को सरकारी काम के महत्त्व या सुरक्षा के बहाने भी चुनावों में सरकारी हवाई जहाज इस्तेमाल नहीं करना चाहिए। हवाई जहाज से वह उड़ता या उड़ती फिरे तो भारत जैसे गरीब और सामन्त परम्परा के मुल्क में दूसरों की अपेक्षा यह कितनी बड़ी, पलड़े को भारी करनेवाली बात है इसका अनुमान लगाना मुश्किल नहीं है। दुर्भाग्यवश पं० जवाहरलाल नेहरू जैसे व्यक्ति ने यह परम्परा चलायी पर निष्पक्ष चुनावों के हित में यह परम्परा निश्चित रूप से बंद होनी चाहिए।

दूसरी बात यह कि आकाशवाणी को सरकार के नियंत्रण में से निकालकर इंग्लैंड की 'बी० बी० सी०' की तरह एक स्वायत्त निगम के हाथ में सौंपना चाहिए। पिछले महीनों में आकाशवाणी ने जो पार्ट अदा किया वह विरोधी पक्षों के लिए ही नहीं, निष्पक्ष नागरिकों के लिए भी बहुत ग्लानि पैदा करनेवाला था। इस तरह की बातों के होते हुए यह मानना कि चुनाव वास्तव में निष्पक्ष और स्वतंत्र हुआ, जिन्दा मक्खी को निगलने के समान है।

कई लोगों ने बार-बार यह माँग की है, जिनमें हमारे देश के वयोवृद्ध मनीषी चक्रवर्ती राजगोपालाचारी भी हैं, कि आम चुनावों से दो महीने पहले पार्टी की सरकार को इस्तीफा दे देना चाहिए और शासन राष्ट्रपति या राज्यपाल द्वारा चलाया जाना चाहिए। जिन बातों की चर्चा ऊपर की गयी है उस तरह के पक्षपात की संभावना भी इस माँग को पुष्ट करती है। राष्ट्रपति-शासन से अब भारत की जनता अपरिचित नहीं है। आये दिन प्रदेशों में इसका उपयोग हुआ है और हो रहा है। चुनाव के समय केन्द्र में भी पार्टी की सरकार नहीं रहनी चाहिए। कहा जाता है कि केन्द्रीय शासन राष्ट्रपति द्वारा संभाले जाने के लिए संविधान में कोई नियम नहीं है। पर इस कमी को दूर करना मुश्किल नहीं है। वास्तव में चुनाव में अनियमितता की बहुत-सी आशंका इस एक कदम से दूर हो जाती है।

इस देश में चुनाव-कानून भी बेहद भोंडा और पंगु है। आँख के सामने धाँधली होते हुए भी मतदान-केन्द्र के अधिकारी को उसे रोकने का कोई अधिकार नहीं है, यह एक से अधिक बार सुना और देखा गया है। चुनाव-अधिकारी पक्षपाती है—और ऊँचे स्तर तक के अधिकारी के लिए भी यह कहना मुश्किल है कि वह ऐसा नहीं है—तब तो भगवान ही मालिक है। कई लोगों को यह जानकर आश्चर्य होगा कि कम-से-कम एक क्षेत्र इस देश में ऐसा है जिसमें इन पिछले २० वर्षों में पहली बार मतदान हुआ है। 'चुनाव' तो हर बार हुए लेकिन या तो विरोधियों के नामजदगी-पत्र खारिज हो जाते थे या अन्य बहानों से हमेशा प्रतिनिधि 'निर्विरोध' चुना जाता रहा। हथियारबंद लोगों ने मतदान की नौबत ही नहीं आने दी।

जनतंत्र को अगर हम सफल बनाना चाहते हों तो हमें पिछले चुनावों से सबक लेना चाहिए। उपरोक्त बातों पर ध्यान दिया जाना और जनमत का प्रकट होना बहुत जरूरी है। —सिद्धराज ढड्ढा

जगन्नाथन्‌जी और उनकी वेदना

सतीशकुमार . इस समय देश में ग्रामस्वराज्य के शक्ति-केन्द्र खड़े करने की हवा बह रही है। जयप्रकाशजी मुसहरी में और वैद्यनाथ बाबू रुपौली में ग्राम-स्तर पर क्रान्ति की परिस्थिति को पकाने का काम कर रहे हैं। बीकानेर जिला राजस्थान में और सहरसा जिला बिहार में क्रान्ति की प्रक्रिया को तीव्र करने की भूमिका अदा कर रहे हैं। आपने भी तंजौर जिले को 'दक्षिण का सहरसा' बनाया है, ऐसा हम लोग मानते हैं।

जगन्नाथन् पूर्वी तंजौर जिले में १३ प्रखंड हैं। इनमें से हमने ४ प्रखंडों को सघन कार्य के लिए अपने हाथ में लिया है। इस क्षेत्र को चुनने के पीछे एक व्यापक पृष्ठभूमि रही है। मैंने और मेरी पत्नी ने यहाँ सालों से काम किया है। मजदूर-चेतना की उपस्थिति ने भूमि-मालिकों के मन में भय पैदा किया है। शायद आपको याद होगा कि इसी क्षेत्र में ४२ हरिजन जिन्दा जला दिये गये थे। मालिकों ने मजदूर-समस्याओं से उकताकर और मजदूरों की रोज-ब-रोज की झंझटों से छुटकारा पाने के लिए ट्रैक्टरों और मशीनों से खेती करना शुरू किया। उस समय कम्यूनिस्टों ने ट्रैक्टर-विरोध का व्यापक आन्दोलन चलाया था और मैंने उसका पूरा समर्थन किया था। इस तरह हवा में एक गरमी यहाँ काफी अर्से से रही है और इस क्षेत्र में जो ज्वाला है, उसकी उपेक्षा हम लोग नहीं कर सकते।

सतीशकुमार . क्या हवा की यह गरमी यानी समस्याओं की गहनता और तनाव की उपस्थिति हमारे काम के लिए ज्यादा अनुकूल वातावरण प्रस्तुत करनेवाली हैं?

जगन्नाथन् . किसी हद तक यह सही बात है। जयप्रकाशजी को भी मुसहरी के तनावपूर्ण वातावरण ने प्रयोग की संभावनाएँ दीं। तेलंगाना में भी एक ज्वालामुखी-जैसी स्थिति ने भूदान के विचार को जन्म दिया। बच्चे के जन्म से पहले की प्रसववेदना की भाँति क्रान्ति के पहले की मुक्ति-वेदना तनाव और पीड़ा की परिस्थिति में से गुजरती है। *क्रान्तिकारी के सामने जितनी कठिन चुनौती होगी उतनी ही तीव्रता आयेगी।* साथ ही जहाँ समस्या की भयंकरता है, वहाँ हमको सक्रिय और सचेष्ट होना ही चाहिए। जैसे आग लगने पर या अकाल पड़ने पर भी तो हम जनता की मदद के लिए दौड़ते हैं।

सतीशकुमार तंजौर जिले के जिन चार प्रखंडों को आपने ग्रामस्वराज्य की प्रयोग-भूमि बनाया है, उनमें समस्या की भयंकरता और तनाव की गहनता के क्या कारण हैं?

जगन्नाथन् लोगों के मानस में असंतोष और आक्रोश पैदा करनेवाला सबसे बड़ा कारण है, मंदिरों का भूमि पर अधिकार। हमारे क्षेत्र की २५ प्रतिशत भूमि पर मंदिरों का स्वामित्व है और यह भूमि बड़े-बड़े किसानों द्वारा आबाद की जाती है। मामूली मजदूरी के अलावा लाभ का कुल हिस्सा मालिकों और मंदिरों के बीच बँट जाता है। इसलिए पिछले दिनों जब मैंने उपवास किया था, तब इस सवाल की ओर देशभर का ध्यान आकृष्ट हुआ था। दूसरी बात यह है कि ९० प्रतिशत भूमिहीन केवल भूमिहीन ही नहीं हैं, बल्कि उनकी झोंपड़ी के नीचे की जमीन भी उनकी अपनी नहीं है। किसी भी दिन उनको बेघर बनाया जा सकता है। यह एक भयंकर स्थिति है। मेरी पत्नी इसकी योजना बना रही है कि तंजौर जिले की महिलाएँ मद्रास में विधान-सभा के सामने प्रदर्शन करके यह माँग करें कि जहाँ उनकी झोपड़ी है, वह जमीन उन्हींकी मानी जाय।

जगन्नाथन्: क्रान्तिकारी दृष्टि

सतीशकुमार ग्रामदान-पुष्टि की दृष्टि से इस क्षेत्र में *अभी तक की क्या* उपलब्धि रही है?

जगन्नाथन् हमने ९ गाँवों में ग्राम-सभाओं की रचना सम्पन्न कर ली है। स्वामित्व-विसर्जन, ग्रामकोष आदि की तरफ भी हम इन ९ गाँवों में काफी आगे बढ़े हैं। पर 'बीघा-कट्ठा' भूमि-वितरण तब तक के लिए रुका है, जब तक मंदिरों की भूमि के बारे में कुछ फैसला न ले लिया जाय। लोग 'बीघा-कट्ठा' से ज्यादा मंदिरों की भूमि बजमीनों में बँटवाने के लिए उत्सुक हैं।

सतीशकुमार हमारे आन्दोलन की गतिविधि में भूमिहीन लोग हिस्सा नहीं ले पाते। वे इस आशा में रहते हैं कि 'सर्वोदयवाले' आयेंगे और बड़े मालिकों से जमीन लेकर हममें बाँट देंगे। इस तरह 'दान' पाने की उत्सुकता से आगे वे बढ़ नहीं पाते। आपको अपने क्षेत्र में कैसा अनुभव आ रहा है?

जगन्नाथन् . भूमिहीन सदियों से दबाये गये हैं। निष्क्रियता और दासता ने उनके अभिक्रम को मूर्छित कर दिया है। उनकी बुद्धि को कुण्ठित करनेवाली हमारी समाज-व्यवस्था के कारण ही भूमिहीनों का उत्साह प्रगट नहीं हो पाता और वे हमारे आन्दोलन को उठा सकने में असमर्थ रहे हैं। हमारे क्षेत्र के एक गाँव, वलीवलम् के एक किसान हैं—देसिकरजी। उनका अपने गाँव में इतना दबदबा है कि उनकी दहशत के

कारण एक भी भूमिहीन या हरिजन चूँ तक नहीं कर सकता! तमिलनाडु के मुख्य मंत्री करुणानिधि भी कलीवलम् के पास के ही हैं। मैंने मुख्य मंत्री से कहा कि देसिकरजी ने ३२ एकड़ सरकारी भूमि पर गैर-कानूनी कब्जा कर रखा है, वह भूमिहीनों में बँटनी चाहिए। पर मुख्य मंत्री स्वयं इस मामले में पड़ने से हिचकिचा रहे थे। हमने देसिकरजी को किसी तरह कुछ भूमि भूमिहीनों में बाँटने के लिए तैयार किया। वे शायद यह सोचकर तैयार हो गये कि कोई भी आदमी उनकी जमीन लेने के लिए साहस नहीं करेगा। उनका यह सोचना सही निकला। सप्ताहों तक हरिजनों को समझाने की पूरी चेष्टा के बावजूद कोई भी जमीन लेने का साहस नहीं कर रहा था। सब डर रहे थे। किसी तरह हमने ११ हरिजनों के आवेदन प्राप्त किये और इनको देसिकरजी के सामने उपस्थित किया। उनको सख्त ताज्जुब हुआ। उन्होंने जमीन देने का अपना वादा वापस ले लिया और इन हरिजनों को डराने-धमकाने की भी चेष्टा की। ऐसी स्थिति है हमारे भूमिहीन हरिजनों की। इस तरह के दमित लोग कैसे हमारे इस मुक्ति और क्रांति के आन्दोलन में सक्रिय हिस्सा ले सकते हैं?

सतीशकुमार : लेकिन अगर हम लोग भूमिहीनों के उद्धारकर्ता और भूमिदाता बने रहेंगे तो भूमिहीन कभी भी अपने पैरों पर खड़े होने का साहस नहीं जुटा सकेंगे।

जगन्नाथन् : आपकी बात बिलकुल सही है और मुझे इस बात की सतत चिन्ता भी है। यह आवश्यक है कि भूमिहीन और भूमिवान एक-दूसरे के आमने-सामने आकर अपनी समस्याओं पर विचार कर सकें। इससे उनकी साहसहीनता टूटेगी। हमारे आन्दोलन में अधिकांश लोग उच्च वर्ग तथा ऊँची जाति के हैं। यह सुखद स्थिति नहीं है। ग्रामस्वराज्य को स्थापना सामान्य वर्ग के सामान्य आदमी द्वारा होगी। भारतीय स्वातन्त्र्य-आन्दोलन मुख्य रूप से उच्च वर्ग द्वारा चला, पर अब वह दोहराया नहीं जा सकेगा। अब लोग इस आन्दोलन में सक्रिय हिस्सा लें, इसके लिए मजबूत ग्रामसभा की आधार-शिला आवश्यक है। ग्रामसभाएँ ही भूमिहीनों को साहस संचित करने की दिशा दे सकेंगी और ग्रामसभाएँ ही सत्याग्रह की शक्ति बटोरनेवाली इकाइयाँ बन सकेंगी, इसीलिए मेरे मन में एक तीव्र छटपटाहट है, जो बाकी सभी कामों को गौण करके इस काम में जुट जाने के लिए मुझे बाध्य कर रही है।

सतीशकुमार : आपने अपनी जो तीव्र छटपटाहट व्यक्त की है वैसी ही छटपटाहट क्या हमारे आन्दोलन के अन्य नेताओं में भी है?

जगन्नाथन् : मैंने जो उपवास किया था, उसके पीछे जो कई कारण थे उनमें एक कारण यह भी था कि तमिलनाडु सर्वोदय मंडल ने ग्रामस्वराज्य के इस काम को पर्याप्त महत्त्व नहीं दिया और देशभर में फैले हुए सर्वोदय-कार्यकर्ताओं एवं नेताओं ने भी इस काम की तीव्रता को महसूस नहीं किया। दुर्भाग्यवश हम लोग इधर-उधर के कुछ गौण कामों में अपनी शक्ति, समय और साधन खर्च कर डालते हैं और मुख्य काम उपेक्षित रह जाता है। अब तक अगर हमारा ध्यान इधर-उधर बँटता था तो भी चल जाता था, क्योंकि ग्रामस्वराज्य के प्रत्यक्ष काम की मुख्य धारा को बलवान बनाने में स्वयं विनोबाजी का मार्गदर्शन हमें प्राप्त था। पर अब जब कि वे सूक्ष्म में प्रवेश कर गये हैं, हमारा दायित्व बहुत ज्यादा बढ़ गया है। यदि अब हम भूमि-प्राप्ति और ग्रामदान के प्रश्नों पर अपना ध्यान केन्द्रित नहीं करेंगे तो आन्दोलन को बहुत क्षति पहुँचेगी।

सतीशकुमार : ग्रामस्वराज्य के बुनियादी काम पर सारा ध्यान केन्द्रित करने की आपने बात कही। क्या आप यह सलाह देंगे कि देशभर के कार्यकर्ता तमिलनाडु या इस तरह के किसी एक ही क्षेत्र में जुट कर काम करें?

जगन्नाथन् : गाँवों में काम करने का जो स्वरूप और चरित्र है, उसे देखते हुए मेरा यह अनुभव है कि बाहरी प्रान्तों से आये हुए लोगों का पर्याप्त उपयोग नहीं है। क्योंकि बाहर के कार्यकर्ताओं के लिए भाषा, भोजन, रहन-सहन आदि की अनभिज्ञता एक व्यावहारिक कठिनाई है। असली काम तो स्थानीय शक्ति और स्थानीय कार्यकर्ताओं द्वारा ही संभव है। यदि बाहर के लोग आते भी हैं, तो स्थानीय लोगों की मदद में आयें, काम की मुख्य भूमिका अपने हाथ में न लें, ताकि उनके वापस जाने पर काम को क्षति न पहुँचे। स्थानीय कार्यकर्ता-शक्ति का निर्माण करने से ही आन्दोलन की बुनियाद दृढ़ होगी।

सतीशकुमार : आन्दोलन की बुनियाद दृढ़ करने का महत्त्व हम सभी महसूस करते हैं। जब आप सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष बने, तभी से हम लोगों के मन में यह आशा जगी कि जिला-स्तरीय सर्वोदय मंडलों और लोकसेवकों का आधार मजबूत बनाकर उनकी शक्ति सर्व सेवा संघ के संगठन में प्रगट होगी। क्या आपको लगता है कि इस दिशा में पर्याप्त प्रगति हुई है?

जगन्नाथन् : प्रगति तो हुई है, पर उसे पर्याप्त प्रगति नहीं कहा जा सकता। ठाकुरदास बंग निरंतर इस काम के लिए देश में घूमते हैं। मैं अपने कार्यकर्ताओं से भी अपील करना चाहता हूँ कि वे जिला-स्तर पर लोकसेवकों का संगठन खड़ा करने की तरफ ध्यान दें। हमारे काम की यह शायद सबसे कमजोर कड़ी है कि हम आन्दोलन के दिशा-निर्देश तथा नीति-निर्णय के लिए विनोबा, जे० पी० या सर्व सेवा संघ की प्रबन्ध समिति पर ही निर्भर रहे हैं। नीचे से निर्णय लेने की कोई प्रक्रिया का विकास अब तक नहीं हुआ है। यह तब तक नहीं होगा जब तक कि ३३० जिलों में से कम-से-कम १२० जिलों में हमारे संगठन मजबूत न हों। गांधीयुग में तो हमने 'नीचे से ऊपर की ओर' बढ़ता हुआ संगठन बनाने की कल्पना की है, पर यथार्थ में 'ऊपर से नीचे की →

यह क्रान्ति है या भ्रान्ति ?

—जयप्रकाश नारायण

यहाँ जनानपुर में धेनू बाबू की हत्या हुई। आज सुबह मैं उनके घर गया था। उनके परिवार से मिला। वहाँ जो कुछ देखने को था वह देखा, जो सुनने को था वह सुना। यह देखने-सुनने से ऐसा लगा कि हम लोग इतने महीने से जो काम यहाँ कर रहे हैं, उसके ऊपर पानी फिर गया। आप लोग आज इतनी बड़ी तादाद में बाजे-गाजे के साथ यहाँ आये, यह देखकर सन्तोष होता है, बड़ी खुशी होती है, लेकिन वह दुर्घटना आंखों के सामने खड़ी हो जाती है, तो मन खट्टा हो जाता है।

यह सब किसने किया वह तो भगवान ही जानता है, लेकिन वे अगर डाकू और लुटेरे न हों, और यह सारा क्रान्ति के नाम से किया हो, तो मैं कहना चाहता हूँ कि उस क्रान्ति से जो कुछ पैदा होगा वह मानवी नहीं, राक्षसी ही होगा। इस प्रकार के काम से समाज में जो विकार पैदा होगा, उसका परिणाम अमानवीय संस्कृति में ही हो सकता है। क्या आदमी को कितना भी गुस्सा हो, रोष हो, फिर भी वह इस प्रकार की क्रूरता का काम कर सकता है?

मैंने सुना कि यहाँ जो सौ-डेढ़ सौ लोग आये थे, उसमें अधिकांश युवक थे। हम देखते हैं कि हम लोगों के कार्य का असर युवकों के मानस पर बहुत कम पड़ा है। हमारी यह भारी विवशता है, यद्यपि युवकों की आज की समस्याएँ हमने नहीं पैदा कीं, ग्रामस्वराज्य ने नहीं पैदा की। हम मानते हैं कि हमारी कल्पना की समाज-रचना होगी, शिक्षा की पद्धति में वैसी क्रान्ति होगी, तो युवक ऐसा सोच भी नहीं सकता। युवकों की आज की समस्याएँ समाज की व्यवस्था के कारण, शिक्षा-पद्धति के कारण हैं। फिर भी इन युवकों को हम समझाना चाहते हैं कि इस प्रकार के कार्य से देश का और गाँव का कभी भी भला नहीं हो सकता।

इससे कोई समस्या हल होती है क्या ?

मैंने सुना कि वहाँ ऐसा-ऐसा नारा लगा "महाजनी का नाश हो, हम महाजनी मिटा देंगे।" मैं पूछना चाहता हूँ कि यह कोई पहली हत्या तो है नहीं। ऐसी हत्याओं से क्या आज तक महाजनी खतम हुई है? भूमिवानों की कितनी हत्याएँ हुईं। फिर भी क्या जमीन बँटी? प्रत्येक व्यक्ति को कर्ज चाहिए। क्या वह सब बैंक से मिलेगा? लड़की की शादी करनी हो, घर में कुछ बीमारी हो, ऐसे अवसर पर बैंक से तो कर्ज मिलेगा नहीं। तो, महाजनी प्रथा तो रहेगी, जब तक गृहस्थ रहेंगे, महाजन रहेंगे। हाँ, आज वे लोग सूद बहुत

जे० पी० मानवीय शान्ति का आवाहन

ज्यादा लेते हैं। और भी कई प्रकार के कारनामों से जमीन वगैरह हड़प लेते हैं। उसको जरूर रोकना है। लेकिन कैसे रोकेंगे? हत्या कर देने से क्या कल से महाजनी का काम बन्द हो जायेगा? समाज में बहुत सारे दोष हैं, अनीति है, शोषण है, अन्याय है, जोर-जुल्म बहुत है, नहीं है—ऐसा तो मैं नहीं कहता। लेकिन उसका उपाय क्या कत्ल करना है? इससे कोई समस्या हल होगी ऐसा अगर कोई मानता हो, तो वह बहुत बड़े भ्रम में है। बल्कि इससे तो गरीब लोगों को ही ज्यादा भुगतना पड़ेगा। क्योंकि अब पुलिसवाले आयेंगे। इधर से बन्दूक, उधर से बन्दूक। गाँव-गाँव में अशान्ति फैलेगी। तो यह समझने की बात है कि इससे कोई समस्या हल होनेवाली है नहीं।

ग्रामसभा के मार्फत नक्शा बदल सकता है

आप सब ग्रामदानी गाँवों के लोगों को मैं एक बात के बारे में सावधान कर देना चाहता हूँ। किसने कत्ल की, किसने डकैती की, उसमें हम लोग न पड़ें। वह पुलिस का काम है। हमारा काम तो हमारा जो कार्यक्रम है उसको फैलाने का, आगे बढ़ाने का है। सुख-शान्ति के लिए यही एक रास्ता है, दूसरा रास्ता है नहीं। तो, हम शक्ति भर इस काम को करें। गाँव में प्रेम बढ़ायें, मेल बढ़ायें।

→और' वाली प्रक्रिया ही हमारी विवशता बनी हुई है। यह विवशता तब तक दूर नहीं होगी जब तक लोकसेवक स्वयं इसका दायित्व नहीं उठायेंगे। केवल अध्यक्ष और मंत्री का प्रयत्न इसके लिए काफी नहीं है। कार्यालय के पास देश भर में काम कर रहे लोकसेवक पर्याप्त सूचनाएँ भी नहीं भेजते हैं। उनकी कठिनाई क्या है, काम की प्रगति क्या है, और केन्द्रीय दफ्तर से उन्हें क्या मदद चाहिए, इस सम्बन्ध में यदि बराबर जानकारी मिले तो आन्तरिक संयोजन को सुदृढ़ बनाया जा सकेगा। मैं सबसे ज्यादा जोर इस बात पर देना चाहता हूँ कि जब तक हमारे लोकसेवक आम लोगों के साथ आत्मसात नहीं हो जायेंगे, जब तक जन-समस्याओं के साथ वे अपने को नहीं जोड़ेंगे, जब तक अन्याय के प्रतीकार की शक्ति खड़ी नहीं करेंगे, जब तक एक सत्याग्रही की भूमिका नहीं अपनायेंगे, तब तक सर्व सेवा संघ की एवं लोक-सेवकों की शक्ति खड़ी नहीं हो सकेगी। ●

एक दूसरे के सुख-दुख में भाग लें। बांटकर खायें। हमारे गांव में कोई भूखा न रहे, नंगा न रहे, बेघर न रहे, बेकार न रहे, इसके लिए यथासम्भव कोशिश करें। तब आप देखेंगे कि पूरा नक्शा बदल जायेगा। सब ग्रामसभाएं अपनी बात समझकर अच्छी तरह काम करें, तो एक साल में इस प्रखण्ड का नक्शा बदल सकता है।

यह हिंसक हत्याकांड तो तेलंगाना से शुरू हुआ है। बताइए, उसमें इतने दिनों में क्या हो गया? बंगाल में भी वर्षों से यह चल रहा है। लेकिन वहां भी गरीब को क्या मिला? किसान को क्या मिला? यह तो विनाश का रास्ता है, सर्वनाश का रास्ता है। क्या हो गया है नक्सलवाद से? क्या जमीन की, गरीबी की, महाजनी की समस्या हल हो गयी? और आज तक नहीं हुई तो अमुक समय के अन्दर हल हो जायगी, ऐसी कोई योजना है उनके पास?

हां, मुझसे कोई पूछे तो मैं कह सकता हूं कि हमारे पास ऐसी योजना है। ग्रामसभाएं ठीक से काम करें, तो पांच वर्ष के अन्दर गांव में कोई भूखा नहीं रहेगा, नंगा नहीं रहेगा, बेकार नहीं रहेगा। हरेक को ३६५ में से कम-से-कम २०० दिन का काम मिले, इतना तो जरूर हो सकता है। और, हरेक को रोजाना दो रुपये कम-से-कम मजदूरी मिले। इस ग्रामस्वराज्य के रास्ते से इतना पांच साल में हो सकता है। जबकि हिंसा, खून, कत्ल से कितने वर्ष में गरीबी मिटेगी, मैं नहीं कह सकता।

वहां एक और नारा भी लगाया गया था 'हमसे जो टकरायेगा, चूर-चूर हो जायेगा।' ना, मैं अपने बारे में इतना कह दूं कि हम सर्वोदयवाले किसीसे टकराना नहीं चाहते। यदि राजकिशोर बाबू से मेरी मुलाकात हो जाय, तो मैं उन्हें भी समझाऊं। किससे टकराना? अन्याय से, शोषण से, उत्पीड़न से टकरायेंगे। आदमी से क्या टकराना? वे भी हमारे भाई ही हैं। वे गलत रास्ते पर चल रहे हैं। उन्हें भी प्रेम से समझाना है।

आप लोग जानते हैं कि ग्रामसभा में जो ११ संकल्प लिये जाते हैं उनमें एक संकल्प यह भी है कि 'हमारे गांव में अन्याय या अनीति न हो, इसका हम प्रयत्न करेंगे।' अन्याय करनेवाला, शोषण करनेवाला आखिर रहता तो गांव में ही होगा न? तो, आप सब मिलकर उसका बहिष्कार कर दीजिए। कह दीजिए कि न हम आपके खेत में काम करेंगे, न आपके बर्तन धोयेंगे, न आपका कुछ भी काम करेंगे। हम आपका पूरा बहिष्कार करेंगे। ग्रामसभा कोई बात सर्वसम्मति से तय करती है और वह नहीं मानता, तो सारा गांव उसका बहिष्कार करेगा। आप की इस सामूहिक शक्ति को आप समझ लें। इस सामूहिक शक्ति के सामने उसको झुकना ही पड़ेगा।

दूसरी ओर आप देख रहे हैं कि हम गांववालों को दूसरी एजेंसियों से कर्ज दिलवाने का प्रयत्न कर रहे हैं। कुछ कामों के लिए बैंकों से वाजिब सूद पर कर्ज मिले, ऐसा हमारा प्रयत्न है। इस तरह दूसरों से कर्ज मिलने लगेगा, उससे भी महाजनों पर असर पड़ेगा।

यह सब होगा। क्यों नहीं होगा? गांववालों की सामूहिक शक्ति से यह सब अवश्य होगा। होकर ही रहेगा। इस देश को शान्ति कायम करना हो, तो इस ग्रामस्वराज्य के मार्ग से अवश्य समाज-परिवर्तन होगा।

शहर में भी काम हो

और एक बात। शहरवालों को भी इन सब बातों से परिचित होना होगा। गांव में इतना काम हुआ। इतनी जमीन बंटी। इतने लोगों को जमीन का पर्चा मिला। इतनी ग्रामसभाएं बनीं। उन्होंने सर्वसम्मति से अपना काम चलाना शुरू किया। इन सब बातों का शहरवालों को पता होना चाहिए। उनको कुछ पता ही नहीं रहता, बिलकुल बेखबर रहते हैं। जो पढ़े-लिखे लोग हैं उनसे ज्यादा अज्ञानी आपको दूसरे कम मिलेंगे। कइयों का मानस तो इतना जड़ देखा कि उनकी समझ में बात आती ही नहीं। इसलिए हमें शहरों में भी काफी काम करना पड़ेगा। मुजफ्फरपुर में भी हम काम शुरू करना चाहते हैं ताकि वहां के नागरिकों को पता चले कि इस क्षेत्र में इतना काम हो रहा है।

ऐसी टेढ़ी बुद्धि पर तरस आती है

मैं इस पूरे क्षेत्र में करीब-करीब घूम चुका हूं। मेरा अनुभव ऐसा हुआ है कि कुछ खास-खास गांव बहुत कठिन हैं। अर्थात् वहां हमारी दाल कुछ कम गली। मणिका, प्रह्लादपुर, छपरा, रघुनाथपुर वगैरह कुछ ऐसे गांव हैं, जहां बड़े लोग अभी ग्रामदान के काम में आगे नहीं आ रहे हैं। और अब तो इस बैजू बाबू के हत्याकांड के सिलसिले में ऐसा सुना कि वहां के कुछ लोग कह रहे हैं कि यह कांड ग्रामदानवालों ने ही करवाया है। वे कहते हैं कि सर्वोदयवालों ने इस क्षेत्र के कुछ १०-१२ आदमियों के नाम नक्सलवादियों को दे दिये हैं। अब देखो! ये ऐसे दिमागवाले लोग हैं कि उनकी बुद्धि पर तरस आती है। क्रोध या गुस्सा नहीं आता, तरस आती है।

जरा सोचिए तो सही! हम यहां जून महीने में आये। हमारे आने से पहले भी यहां हत्याएं हुई थीं। उसकी जिम्मेवारी किसकी थी? दरभंगा, मुंगेर बंगाल में भी हत्याएं हो रही हैं, वह कौन करवाता है? तो, ऐसी अकल है उनकी! ऐसी अकल से तो भगवान ही बचाये! वैसे, व्यक्तिगत मिलेंगे, तो दुनियाभर की चापलूसी की बातें करेंगे, और पीठ-पीछे ऐसी बातें करते हैं। क्या हम इतने बेईमान लोग हैं, धोखेबाज लोग हैं, कि ऊपर-ऊपर से अहिंसा की बातें करेंगे और अन्दर से हत्या करायेंगे? ऐसे लोगों की बुद्धि पर तरस आती है। तो, हमको भी सोचना पड़ेगा कि जितना

दिमाग बहुत टेढ़ा है, बुद्धि बहुत टेढ़ी है, जिनका मोह बहुत गहरा है, उन्हें कैसे समझाया जाय। उन लोगों के ध्यान में यह बात आनी होगी कि आप गाँव में रहियेगा, और गाँव एक तरफ और आप दूसरी तरफ, यह कैसे चलेगा? तो किस प्रकार उन्हें समझाया जाय? असहयोग या सत्याग्रह किस प्रकार का हो? उन्हीं के हित में उनका मोह-विसर्जन कैसे किया जाय? यह सब सोचना होगा।

क्या बाबू लोगों के दिमाग से बाबूगीरी जायेगी नहीं?

बीच में चुनाव हुआ। उस वक्त मुसहरी में क्या हुआ उसकी कुछ जानकारी मुझे है। हमारे ग्राम-शान्तिसैनिक जितने थे वे टोलियाँ बनाकर १८ मतदान-केन्द्रों पर खड़े रहे और मतदाताओं को इतना कहते रहे कि जोर-जबर्दस्ती न की जाय, किसीको वोट देने से न रोका जाय। तो हमको ऐसी जानकारी मिली कि १८ में से १६ केन्द्रों पर तो कुछ जोर-जबर्दस्ती नहीं हुई, लेकिन २ केन्द्रों पर ऐसा हुआ। एक तो छपरा केन्द्र पर। वहाँ रघुनाथपुर के लोगों ने बूथ पर कब्जा कर लिया। वहाँ मध्य-प्रदेश के हमारे विद्वान साथी रामचन्द्र भार्गव और उनकी पत्नी रुक्मिणी बहन आपके क्षेत्र में सेवा करने आये हैं। वे दोनों लोगों को समझाते रहे, लेकिन कोई नहीं माना और उनके साथ अच्छा बर्ताव नहीं किया। रघुनाथपुर के लोगों ने बूथ पर कब्जा कर लिया और ठप्पा मारकर वोट डाल दिये। फिर जब हरिजन-टोले से लोग आये, तो उन्हें कह दिया गया कि आपका वोट तो हो गया है। अन्दर आफिसर साहब बैठे थे, लेकिन उन्होंने कुछ नहीं किया। मुसहरी गाँव के एक बूथ पर भी वैसा ही हुआ।

यह सब जानकर मुझे बड़ा अफसोस और दुःख हुआ। इस देश में अमीर और गरीब के बीच आसमान-जमीन का अन्तर है। पढ़ा-लिखा और अनपढ़, ऊँच-नीच, सवर्ण-अवर्ण, धनी-निर्धन तरह-तरह के भेद हैं। किन्तु वोट के बारे में सब समान हैं। हरेक को एक वोट है। और क्षेत्रों में भेद है, लेकिन इसमें भेद नहीं। हमारे लोकतन्त्र में सबको ऐसा समान अधिकार दिया गया है। फिर भी आप लोग जोर-जबर्दस्ती करके गरीब को अपना हक नहीं भोगने दीजिएगा? कितने दुःख की बात है! हमें तो किसीसे मतलब नहीं है, न महेश बाबू से, न नवल बाबू से। जनता को हमारी तरफ से यही कहा गया था कि अच्छे उम्मीद-वार को देखकर वोट दीजिए। लेकिन किसको वोट देना है यह हम नहीं कहेंगे। अच्छा कौन है यह आप ही तय कीजिए। इसलिए हमें तो किसीसे मतलब नहीं है। लेकिन लोकतन्त्र में ऐसा व्यवहार कैसे सहा जा सकता है? स्वराज्य के २३ वर्ष हुए। क्या अभी भी बाबू लोगों के दिमाग से बाबूगीरी जायेगी नहीं? लाठी से और पैसे से ही सब काम करते रहेंगे?

मुसहरी प्रखण्ड में निर्माण-कार्य

मुसहरी प्रखण्ड में ग्रामसेवा संगम एवं बिहार रिलीफ कमिटी की ओर से कुछ निर्माण-काम शुरू हुआ है। गण्डक में दो योजनाएँ हैं। एक नाव पर ५ हार्स पावर का डीजल इन्जिन रखकर जहाँ-तहाँ आवश्यकतानुसार पानी दिया जायेगा। इसकी जिम्मेवारी माधोपुर ग्रामसभा ने ली है। दूसरा एक ४० हार्स पावर का इन्जिन बैठाया जायेगा। इससे करीब १२०० एकड़ की सिंचाई की योजना होगी।

इसके अतिरिक्त गरीबों के लिए चापाकल की योजना हाथ में ली गयी है। आप लोगों को ध्यान में रखने की बात है कि ढाई एकड़ से कम जमीनवाले को चापाकल के लिए सरकार से ५० प्रतिशत 'सबसिडी' मिलती है। २॥ से ५ एकड़ तक जमीनवाले को २५ प्रतिशत 'सबसिडी' मिलती है। इसके ऊपरवाले को 'सबसिडी' नहीं मिलती। लेकिन सरकार भी कितनी 'सबसिडी' देगी? राज्य भर में ५८१ प्रखण्ड हैं। उनमें एक आपका भी मुसहरी प्रखण्ड है। तो सरकार की भी मर्यादा होगी 'सबसिडी' देने में। अपने बजट में आपके हिस्से के अनुसार वह दे सकती है। सबको तो नहीं दे सकेगी। इसलिए अब आपको तुरन्त चापाकल चाहिए, तो 'सबसिडी' का मोह छोड़ना होगा और पूरी रकम बैंक से लेकर चापाकल लगवाना होगा। हम आपको बैंक से कर्ज दिलवा देंगे।

हमारी यह शर्त है कि जहाँ ग्रामसभा बनी है, वहीं हम मदद करेंगे। हम कोई सरकारी अफिसर नहीं हैं। हम किसीके नौकर नहीं हैं। आप हमारा विचार मान्य करेंगे तभी हम मदद करेंगे। विचार मान्य करने में आप ही को फायदा है। उससे हमको क्या मिलता है? क्या जमीन मिलती है? ग्रामकोष से पैसा मिलता है? जो कुछ करना है वह आपको ही करना है। जो कुछ फायदा होगा, वह आपको ही होगा। तो आप अपना कल्याण चाहते हों, तो विचार मान्य करें।

न्यूनतम मजदूरी का सवाल है। उसके बारे में हम मजदूरों को बुलायेंगे और मालिकों को बुलायेंगे। दोनों से बातचीत होगी। और वे भी दोनों आमने-सामने बातचीत करेंगे। आज तो मालिक की शिकायत है कि मजदूर पूरा काम नहीं करता। और मजदूर कहता है कि मेरा पेट नहीं भरता, तो मैं कैसे काम कर सकूँगा? तो, अब समय आ गया है जब कि दोनों आमने-सामने बैठें और एक-दूसरे से बात करें। मालिक को क्या पोसाता है वह भी देखना पड़ेगा, और मजदूर को कम-से-कम कितना मिलना चाहिए वह भी देखना पड़ेगा। इस तरह आमने-सामने बैठकर एक-दूसरे को समझाने की कोशिश करने से ही समस्याएँ हल होंगी। सिर्फ नारा लगाने से या कानून बना देने से कभी कोई समस्या हल होनेवाली है नहीं।

(भू-क्रान्ति दिवस, १८ अप्रैल '७१)

७—बिहार में कानूनी पुष्टि की स्थिति यह है :

(१) जिन गांवों का ग्रामदान गजट द्वारा पुष्ट हो चुका है— १,२३९

(२) जिन ग्रामसभाओं को अधिकार मिल चुका है— ४१४

(३) जिन गांवों का कागज तैयार है— १,४४९

कानूनी पुष्टि में समय बहुत अधिक लगता है। सब किसानों के पास जमीन का ब्योरा नहीं रहता, और सरकारी कार्यालयों से भी आसानी से नहीं मिलता। इसके अलावा पुष्टि के नियम ऐसे हैं, और इतना अधिक समय और शक्ति लेनेवाले है कि आदमी ऊब जाता है।

दो

८—निष्पत्ति जो भी हो, प्रश्न है कि अब तक हुए अपने इस कार्य को हम कैसे आँकें ? हम कैसे जानें कि हमारा कार्य सही दिशा में, उचित गति से बढ़ रहा है ? आंकड़ों के अलावा गुणात्मक दृष्टि से हमारी स्थिति क्या है ? पुष्टि सख्या से कहीं अधिक गुण की चीज है।

प्रगति के इस विवरण से स्पष्ट है कि जहाँ तक बिहार का सम्बन्ध है, पुष्टि का 'अति-तूफान' नहीं पैदा किया जा सका है। पूरे बिहार में मात्र १७ ब्लाकों में हमारा प्रवेश हो सका है, और सघन काम की दृष्टि से अभी हम ७ से अधिक क्षेत्रों को नहीं गिना सकते। राजस्थान के बीकानेर को बिहार के साथ जोड़ लें तब भी देशभर में सघन क्षेत्रों की सख्या कुछ खास नहीं बढ़ती। मध्यप्रदेश के साथियों ने टीकमगढ़ में सघन कार्य, करने का विचार किया था। सभवत शुरू कर दिया होगा। अगर तमिलनाडु, उड़ीसा, या उत्तरप्रदेश में पुष्टि का कोई विशेष कार्य होता हो तो उसकी सूचना नहीं है, शायद अभी तक सघन कार्य नहीं शुरू हुआ है।

९—इन थोड़े सघन क्षेत्रों में जो काम हुआ है उससे कुछ मूल्यवान अनुभव प्राप्त हुए हैं जिन्हें सामने रखकर हम अपने काम का मूल्यांकन कर सकते हैं, और आगे के लिए कुछ नये ढग से सोच सकते है।

बिहार के सब क्षेत्रों में किसी एक योजना से, और किसी केन्द्रित निर्देशन में, काम नहीं हुआ है। *अलग-अलग क्षेत्रों में जो साथी काम कर रहे हैं उन्होंने अपनी शक्ति और सूझ-बूझ के अनुसार काम किया है।*

(अ) गया के कौआकोल और मुंगेर के झाझा प्रखडों में पुष्टि का कार्य खेती, सिंचाई के विकास-कार्यक्रम के साथ जोड़कर हुआ है। झाझा ब्लाक के कुल १६१ गांवों में से १२६ यानी ७८ प्रतिशत गांवों मे ग्रामसभाएँ गठित हो गयी हैं, और उनके प्रतिनिधियों को लेकर 'प्रखड-स्वराज्यसभा' भी बन गयी है, जिसका उद्घाटन २० दिसम्बर १९७० को श्री जयप्रकाश नारायण ने किया। प्रखड-स्वराज्य सभा की रजिस्ट्री के लिए दरख्वास्त दे दी गयी है। उसने इस साल के अकाल में बहुत उपयोगी 'रोल' अदा किया है, और वह धीरे-धीरे प्रखड की जनता का विश्वास प्राप्त करती जा रही है। उसके विकास कोष मे प्रखड के गांवों से लगभग ५ हजार रुपये भी जमा हो चुका है। उसके नेतृत्व में उस ब्लाक में पुष्टि का काम जारी है। गांवों मे तथा प्रखड के स्तर पर एक नया और गैर-राजनैतिक लोक-नेतृत्व विकसित हो रहा है। पिछले चुनावों में इस नेतृत्व ने अपनी तटस्थता का निर्वाह किया।

कौआकोल में कई सक्रिय ग्रामसभाओं का गठन हुआ है। लेकिन आर्थिक कठिनाई और कार्यकर्ता न होने के कारण *वहाँ के पुष्टि-कार्य में रुकावट आ गयी है।*

(ब) सहरसा में ग्रामदान की मूल शर्तों की पूर्ति पर जोर दिया गया है। अभी इसी प्रारम्भिक कार्य का जिले के ब्लाकों में विस्तार करने का प्रयास है। साथ-साथ ग्राम-शान्तिसेना के शिविरों तथा आचार्यकुल का क्रम भी शुरू हुआ है।

सहरसा के मरौना प्रखड में बीघा-कट्ठा वितरण के साथ 'डीफेक्टो' पुष्टि-कार्य पूरा हो चुका हैं। लगभग ९० ग्राम-सभाओं के आधार पर 'प्रखड स्वराज्य सभा' का गठन अभी ३० अप्रैल '७१ को हुआ जिसका उद्घाटन श्री धीरेन्द्र भाई ने किया। इस तरह बिहार में ३ *प्रखडस्व राज्य-सभाएँ, झाझा, रुपौली,* मरौना में बन चुकी हैं।

इन सभाओं में नया नेतृत्व प्रकट हुआ है। उसके आँकड़े अधूरे हैं, लेकिन नीचे लिखे आंकड़ों से कुछ सकेत मिलते हैं

क्षेत्र	ग्रामसभाएं	पदाधिकारी					
		सवर्ण	बैकवर्ड	हरिजन	आदिवासी	मुसलमान	ईसाई
कौआकोल	११३	५	९३	१३	२	—	—
झाझा	१२६	७	१२६	१३३	७३	३७	२
रुपौली	५३	१६	१७४	८	३	११	—
सहरसा	८४	विवरण		प्राप्त	नहीं।		
मुसहरी	५३	४८	६९	३८	—	११	—

	शिक्षित	अशिक्षित
कौआकोल	२०४	१३५
झाझा	९०	२८८
रुपौली	२१२	—
सहरसा	—	—
मुसहरी	१६६	—

	राजनैतिक दलों के	गैर-राजनैतिक नागरिक
कौआकोल	६	३३३
झाझा	३५	३४३
रुपौली	११	२०१
सहरसा	—	—
मुसहरी	८	१५८

(ग) पूर्णिया के रुपौली क्षेत्र में ग्रामदान की शर्तों की पूर्ति, शान्तिसेना, आचार्यकुल और तरुण-शान्तिसेना का समग्र कार्यक्रम चलाया जा रहा है।

(द) मुसहरी (मुजफ्फरपुर) का प्रयोग कई दृष्टियों में विशिष्ट है। वहाँ स्वयं श्री जयप्रकाश नारायण अपनी योजना के अनुसार पुष्टि का कार्य कर रहे हैं। जब जून '७० में वह वहां गये तो उन्होंने देखा कि बावजूद मुसहरी के प्रखण्डदान और मुजफ्फरपुर के जिलादान की घोषणा के ७५-५१ की शर्त की दृष्टि से हमारे ग्रामदान कितने कच्चे हैं और ग्रामदान की घोषणा में किये गये संकल्प कितने कमजोर हैं। स्थिति यह थी कि मुसहरी के किसी भी गांव में ग्रामदान की शर्त पूरी नहीं थी, इसलिए बहुत अधिक समय और शक्ति प्राप्ति के प्रारम्भिक काम में देनी पड़ी। प्राप्ति का जो काम हुआ भी था उसमें कई कमियां थीं जिनके कारण पुष्टि के काम की कठिनाई बहुत बढ़ गयी। प्राप्ति के दौरान में मजदूरों और भूस्वामियों तक विचार पहुँचाने की कोशिश नहीं हुई थी। मजदूरों ने यह मानकर अँगूठा-निशान दे दिया था कि विनोबाजी का काम है तो भूमि मिलेगी, और कुछ यह मानकर अलग रह गये थे कि हस्ताक्षर करना, न करना, घर के मालिक का काम है, उन्हें क्या करना है। इसलिए पुष्टि में सबसे पहिले इस बात पर ध्यान देना पड़ा कि परिभाषा के अनुसार प्राप्ति पक्की हो, उसके बाद ही पुष्टि का क्रम शुरू किया जाय। पुष्टि के अन्तर्गत ग्रामदान की शर्तों की पूर्ति के अलावा ग्रामीण जीवन के ऐसे प्रश्न भी लिये गये जो मालिकों और मजदूरों के लिए तात्कालिक महत्व के हैं। इसीलिए एक ओर भूमिहीनों के लिए वास की भूमि (होमस्टेड लैण्ड) का प्रश्न लिया गया, दूसरी ओर मालिकों के लिए सिंचाई, बिजली आदि की सुविधा प्राप्त करने का। साथ-साथ ग्रामसभाओं के पदाधिकारियों के शिक्षण तथा ग्राम-शान्तिसेना के संगठन का काम भी शुरू किया गया। पूरे प्रखण्ड में पुष्टि का पहला दौर चल रहा है। ५३ ग्रामसभाएँ बन चुकी हैं। प्रखण्ड स्वराज्य-सभा बनने का आधार क्रमशः तैयार हो रहा है। मुसहरी ब्लाक के लिए सिंचाई की एक मास्टर-प्लान बनी है। जे० पी० ग्रामाभिमुख खादी और शिक्षा के प्रश्न को भी उठानेवाले हैं। इस प्रकार मुसहरी के पुष्टि-कार्य में समग्रता का आधार लिया गया है।

(तीन)

१०—हमारा पुष्टि-कार्य संस्थागत कार्यकर्ताओं तथा नागरिक सहयोगियों के सम्मिलित प्रयास से हो रहा है। नागरिक अभी भी सहभागी ही हैं। वे ऐसे सहयोगी हैं कि पीछे पड़कर उनका समय और शक्ति लेनेवाले पूरे समय के कार्यकर्ताओं का होना अनिवार्य है। दो स्थानों—मुजफ्फरपुर के वैशाली और मुंगेर के चौथम—में यह स्थिति थी कि इस प्रकार से पूरा समय देनेवाला केवल एक साथी था। इसने सारा काम स्थानीय नागरिकों के सहयोग के आधार पर संगठित करने का लम्बी अवधि तक जोड़-तोड़ प्रयत्न किया। बावजूद इसके कि उन क्षेत्रों में निष्ठावान् सहयोगी मौजूद हैं फिर भी दोनों में से एक जगह भी ऐसी अनुकूल स्थिति नहीं बन पायी जहाँ से आगे बढ़ा जा सके। अगर कुछ और साथी होते और आर्थिक सहायता होती तो आज दोनों प्रखण्डों का काम बहुत आगे बढ़ गया होता। इसे विफलता कहना चाहें तो कह सकते हैं, लेकिन यह गम्भीर चिन्ता का विषय है। इस पर चिन्तन होना चाहिए। संस्थाओं के पूरे समय के कितने कार्यकर्ता मिलेंगे? कब तक मिलेंगे, और कितने क्षेत्रों के लिए मिलेंगे? इस तरह कैसे हमारा काम बढ़ेगा? और, पुष्टि के लिए कार्यकर्ता भी पुष्ट चाहिए और साधन भरपूर।

११—हमारे अभिक्रम से प्रारम्भिक पुष्टि भले ही हो जाय किन्तु आगे के काम का आधार बन गयी हैं। अभी तक जो ग्रामसभाएँ बनी हैं उनमें कई ग्रामसभाओं ने सक्रियता का परिचय दिया है। लेकिन यह नहीं कहा जा सकता कि कहीं किसी क्षेत्र में ग्रामसभाएँ अपने अभिक्रम से ग्रामस्वराज्य के रास्ते पर चल पड़ी हैं। हर जगह उन्हें जोर लगाकर उठाना, चलाना, बढ़ाना पड़ता है। इतने पर भी अक्सर वे एक कदम जाकर रुक जाती हैं और कई तो बिल्कुल बैठ जाती हैं। यह विषय गहरी जाँच का है कि ऐसा क्यों होता है? क्या ऐसा केवल लोगों के प्रमाद (दुर्नीशिया) के कारण होता है? या, गाँव के जीवन में ऐसे अन्तर्विरोध हैं जो लोगों को एक सूत्र में बँधने नहीं देते और सामूहिक पुरुषार्थ की भूमिका बनने नहीं देते? कहीं ऐसा तो नहीं है कि गाँव के प्रश्नों को जिस तरह हमारे आन्दोलन ने समझा है और उनका जो हल प्रस्तुत किया है वह गाँववालों के गले के नीचे नहीं उतरता? जिस गाँव के स्वराज्य की बात कही जा रही है, और ग्रामदान जिस ग्रामस्वराज्य का पहला कदम है, वह गाँव अपने स्वराज्य के लिए उत्साहपूर्वक आगे क्यों नहीं बढ़ता? क्या स्नेह, समता और स्वतन्त्रता के जो मूल्य हम लोगों के सामने रख रहे हैं उनका हमारी हिन्दू-मुसलमान जनता के दैनन्दिन जीवन के सन्दर्भ से मेल नहीं बैठता? या, ग्रामदान की पद्धति इतनी नयी है कि गाँववालों का दिमाग नहीं चल पाता? कुछ भी हो कहीं कोई बात जरूर है, जो ग्राम और ग्रामदान के बीच में दीवार बनकर खड़ी है। उसे ढहाने का उपाय अभी तक हमारे हाथ नहीं लग रहा है। हमने माना था कि समर्पण-पत्र का हस्ताक्षर वह पूँजी है जो गाँठ खोल सकती है लेकिन हमें स्वीकार करना चाहिए कि हमारी आशा सही नहीं निकली है। हस्ताक्षर करनेवाला हस्ताक्षर से इनकार तो नहीं करता लेकिन उसे ऐसा मसला भी नहीं मानता जिसे पूरा करना ही चाहिए।

'कन्फ्रन्टेशन'

ऐसी स्थिति में हम क्या करें ? कैसे इसका मुकाबिला करें ? कुछ मित्र कहते हैं कि मालिक-मजदूर को करीब लाने के लिए पहले उन्हें आमने-सामने खड़ा करना जरूरी है। यह रास्ता 'कन्फ्रन्टेशन' का है। इस रास्ते पर चलने के लिए हमें भूमि के प्रश्न के दूसरे सब पहलुओं, जैसे काम की जमीन, बटाईदारी, बदखली, शोषण, कर्ज आदि को हाथ में लेना पड़ेगा। ताकि जनता को लगे कि ग्रामदान उनके प्रश्नों का उत्तर ढूँढने का प्रयत्न कर रहा है और इस प्रयत्न में उन्हें स्वयं शरीक होना चाहिए। हमें यह मानना चाहिए कि हम अभी तक ग्रामसभाओं को परिवार, जाति, वर्ग और दल से भिन्न 'गाँव' के धरातल पर लाकर उन्हें गाँव की समस्याओं के साथ नहीं जोड़ सके हैं। कैसे जोड़ सकेंगे कहना कठिन है। हो सकता है 'कन्फ्रन्टेशन' के रास्ते यह सम्भव हो।

लेकिन यह 'कन्फ्रन्टेशन' की बात बहुत नाजुक है। 'कन्फ्रन्टेशन'—न्याय-अन्याय का हो तो बात दूसरी है, लेकिन समाज की जो रचना है और जो आबोहवा है, उसमें हर प्रश्न फौरन जाति बनाम जाति, वर्ण बनाम वर्ण, वर्ग बनाम वर्ग, दल बनाम दल का बन जाता है, और न्याय-अन्याय पीछे छूट जाता है। 'कन्फ्रन्टेशन' का प्रयोग किया तो जा सकता है, लेकिन परिणामों को सम्हालने की शक्ति आमतौर पर हमारे आन्दोलन में है ऐसा दिखायी नहीं देता। इस सम्बन्ध में तंजोर का प्रयोग महत्त्वपूर्ण होगा। वहाँ सन् १९४०-४१ से कम्यूनिस्ट मित्रों द्वारा जो काम हुआ था उसमें 'कन्फ्रन्टेशन' की ऐसी स्थिति पैदा कर दी है कि उसमें दोनों पक्षों को आमने-सामने बिठाने या आवश्यकतानुसार प्रतीकार का नेतृत्व करने का रोल हम अदा कर सकते हैं। लेकिन बिहार में ऐसी स्थिति नहीं है। वहाँ का मजदूर-बटाईदार मोहताजी की स्थिति में है, चेतनाशून्य है, असंगठित है, वह सीधा खड़ा नहीं हो सकता—आँख में आँख नहीं मिला सकता। हम भी जब गाँव में जाते हैं तो मालिक यह सोचते हैं कि ये गरीबों के वकील बनकर आये हैं, इसलिए वे हमें टालते हैं। गरीब यह सोचते हैं कि हम उन्हें जमीन दिलायेंगे इसलिए वे हमारे सामने 'भगत' बनकर आते हैं। एक से माँगकर दूसरे को देने, दाने रहने का धंधा हमने नहीं उठाया था। हमारी यह 'इमेज' सही नहीं है, और हमारे काम के अनुकूल तो बिल्कुल नहीं है। जरूर, अब यह जरूरत महसूस होती है कि अगर मजदूर की अपनी आवाज होगी, तो वह क्रान्ति की प्रक्रिया में ज्यादा प्रभावकारी ढंग से शरीक हो सकता। यह स्थिति कैसे आयेगी ? क्या मजदूरों का अलग संगठन बनाना ठीक होगा, या ग्रामसभा की ही राह देखनी चाहिए ? मजदूर की मोहताजी और मालिक की स्वार्थपरता दोनों ग्रामसभा के बनने और चलने में बाधक हैं। लोक-शिक्षण की इस प्रक्रिया से इस संकट का रास्ता निकलेगा यह पुष्टि में एक गम्भीर चिन्तन और प्रयोग का विषय है। इस सिलसिले में सघन कार्य की पूरी पद्धति और प्रक्रिया ही विकसित करनी पड़ेगी।

ग्रामसभाओं के चलने में एक बहुत बड़ा प्रश्न राजनैतिक दलों और महाजनों का है। गाँव में दोनों का अपने-अपने ढंग का प्रभाव है और दोनों अपने प्रभाव का ग्रामसभा के चलने के विरुद्ध भरपूर इस्तेमाल कर रहे हैं। गाँव में जो चेतन व्यक्ति है वह किसी-न-किसी दल के साथ जुड़ा हुआ है। हम उससे दल-निष्ठा के स्थान पर ग्राम-निष्ठा ग्रहण नहीं करा पाये हैं। करा पायेंगे यह कहना कठिन है, नहीं तो क्या करेंगे यह अभी स्पष्ट नहीं है।

गाँव के बड़े और छोटे भूमिवान, दोनों बीघा-कट्ठा देना टालते हैं इसलिए वे ग्रामसभा के प्रति उत्साह नहीं दिखाते। वे यह भी सोचते हैं कि एक बार ग्रामसभा बन जायगी, और काम करने लगेगी तो तरह-तरह के प्रश्न उठेंगे। वे नहीं चाहते कि गरीबों की ओर से प्रश्न उठाये जायें। यह सोचने की जरूरत है कि जो भूमिवान हस्ताक्षर करके भी भूमि नहीं देते उनके सम्बन्ध में क्या कार्रवाही की जाय।

प्रायः दो बीघा तक के भूमिवानों पर बीघा कट्ठा देने की पाबन्दी नहीं है इसलिए दो बीघे से अधिक भूमि रखने-वाले अपने को संयुक्त परिवार न बना-कर छूट लेने के लोभ से विभक्त बताते हैं। जो भूमिवान बीघा-कट्ठा निकालते भी हैं वे अपने साथ जुड़े हुए (अटैच्ड) मजदूर को ही देते हैं। ऐसे मजदूरों की संख्या कम है। उन्हें भूमि भी बहुत कम मिलती है। जो मजदूर किसी मालिक के साथ जुड़े हुए नहीं है उन्हें बीघा-कट्ठा मिलने की कोई गुंजाइश नहीं है। इस कारण थोड़े-से मालिकों और थोड़े से मज-दूरों के सिवाय दूसरे मालिक और मजदूर अलग रह जाते हैं। जिन सघन क्षेत्रों में बीघा-कट्ठा प्राप्त करने में दूसरे क्षेत्रों की अपेक्षा अधिक सफलता मिली है उसके कारणों की छानबीन होनी चाहिए। मुख्य व्यक्ति का प्रभाव, कार्यकर्ताओं की कर्मठता, सातत्य, विचार का आकर्षण आदि तो हैं ही, लेकिन मजदूरों और गरीबों का जगना उठना भी एक बड़ा कारण मालूम होता है। सहरसा के सरौना और मुंगेर के झाझा, दोनों प्रखंडों में यह बात रही है। इस ओर हमारा ध्यान जाना चाहिए कि गरीब आँखें खोलते हैं तो अमीर की भी आँखें खुलती हैं।

ग्रामकोष भी बीघा-कट्ठा से कम कठिन प्रश्न नहीं है। सहयोग-समितियों का सारा काम इतना अप्रामाणिक रहा है, कि लोगों को विश्वास नहीं होता कि ग्रामकोष चल सकेगा। और, ग्रामकोष में मजदूरों के श्रम का संयोजन भी बहुत कठिन पड़ रहा है।

बिहार में जो नक्सालवादी घटनाएँ हुई हैं उनकी मालिकों पर यह प्रतिक्रिया हुई है कि उनकी संवेदनशीलता, जो भी

पहले थी, तेजी के साथ समाप्त होती जा रही है। उन्हें रक्षा के लिए पुलिस, खेती के लिए सहकारी समिति का ट्रैक्टर और पूंजी के लिए सरकार का बैंक अधिक भरोसे का मालूम होता है। वे सोचते हैं कि इन सहारों से वे गांव की, और श्रमिक की जरूरत से मुक्त होकर इतमीनान के साथ जी लेंगे। ग्रामसभाओं के सम्बन्ध में एक कठिनाई यह भी है कि ग्रामदान का सारा विचार इतना नया है, उसकी पद्धति प्रचलित पद्धतियों से इतनी भिन्न है, कि गांव के अच्छे और मेरनीयत लोग भी नहीं सोच पाते कि अगला कदम कैसे लें। इस दृष्टि से ग्राम-सभाओं के पदाधिकारियों तथा ग्राम-शान्ति-सेना का शिक्षण-प्रशिक्षण पुष्टि-कार्य की सबसे ज्वलन्त समस्या है।

आशा की किरण

बावजूद इन कठिनाइयों के दूसरी ओर यह अनुभव भी है कि जहां-जहां सघन रूप से काम होता है वहां लोगों के सोचने का तरीका बदलता है।

मुसहरी के सघन कार्यक्रम से लोक-चेतना को नयी स्फूर्ति मिली है, चिन्तन के नये आयाम मिले हैं। नक्सलवादी घटनाओं के कारण, मजदूरों पर होनेवाला पुलिस का दमन, दान की भूमि, मजदूरों की बेदखली, बीघा-कट्ठा आदि प्रश्न लेने से मजदूरों में आशा जगी है। उसी तरह हिंसक घटनाओं की, सुनी आलोचना और सिंचाई, बिजली आदि की सुविधा प्राप्त करने की कोशिश ने मालिकों का हमारी ओर खींचा है। ग्राम-शान्तिसेना ने युवकों की सक्रियता के लिए दिशा खोली है। यद्यपि अभी उनकी निष्ठा स्थिर नहीं हुई है।

मुसहरी के गरहा-बरारपुर गांव में अप्रैल के मध्य में एक महाजन का जो ग्रामदान में शामिल नहीं थे, चोरी हुई, युवकों द्वारा जिनमें सम्भवतः स्थानीय युवक भी शामिल थे जिस बना दिया जाना इस बात का संकेत है कि हमारा आन्दोलन नयी पीढ़ी से कितनी दूर है। और, जो युवक आन्दोलन के प्रभाव में आते भी हैं उनकी चेतना शान्ति के रास्ते पर दृढ़ रहेगी, इसकी गारंटी नहीं है। बहुत संगठन, शिक्षण और अभ्यास की जरूरत है।

मुसहरी में जो अनुभव आये हैं वे ही लगभग दूसरे क्षेत्रों के भी हैं। श्री वैद्यनाथ बाबू ने हमारे प्रश्नों के जो उत्तर दिये हैं उनसे स्थिति का अनुमान होता है। प्रश्न-उत्तर निम्नलिखित हैं:

प्रश्न : पुष्टि की दृष्टि से मुख्य उपलब्धियां क्या हैं ?

उत्तर : ग्रामसभा में सामूहिक पुरुषार्थ की शुरुआत, सामूहिक चिन्तन, बीघा-कट्ठा, नये कार्यकर्ताओं और सहयोगियों की प्राप्ति।

प्रश्न : किन बातों को भविष्य के लिए आप सबसे अधिक आशाजनक मानते हैं ?

उत्तर : स्थानीय लोगों की सहानुभूति, सहयोग।

प्रश्न : मुख्य समस्याएं क्या हैं ?

उपेक्षा ?	नहीं।
प्रमाद ?	नहीं।
दलबदल ?	कई गांवों में किसानों द्वारा दानमलाव।
विरोध ?	नहीं।
कार्यकर्ताओं की कमी ?	हां।
आर्थिक कठिनाई ?	हां।
वाहन का अभाव ?	हां।

प्रश्न : स्थानीय जनता का क्या रुख है :

मालिक का ?	सहयोग करना।
महाजन का ?	कम सहयोग।
मजदूर का ?	सहयोग, सद्भाव, आशावान। (विभिन्न राजनैतिक दलों के कारण एकता नहीं हो पाती। गांव के लोग पार्टियों के पीछे दौड़ते हैं।)

१२—यह सही है कि जहां भी काम हुआ है वहां कुछ ठोस निष्पत्ति हुई है, और आन्दोलन की सदाशयता से लोग प्रभावित हुए हैं। लेकिन यह भी सही है कि हमारी प्रगति अत्यन्त धीमी है और शक्ति अत्यन्त सीमित। कैसे बढ़ेगी गति और कैसे बढ़ेगी शक्ति, यह प्रश्न है। बिहार के कुछ क्षेत्रों में व्यक्तित्व के प्रभाव, कार्यकर्ताओं की संख्या और साधनों की उपलब्धि के कारण अब तक जो काम हुआ है वह बहुत अच्छा हुआ है। लेकिन सीमित है। बिहार के ही कुछ सामान्य क्षेत्रों में जहां काम शुरू हो चुका है और जहां हमारे कुछ कर्मठ साथी धैर्य और साहस के साथ परिस्थिति से जूझ रहे हैं उनका काम तेजी के साथ आगे बढ़ता अगर कार्यकर्ता होते, साधन होते। ऐसा नहीं है। कहां से आयेंगे ? स्वयं सहरसा जिले के २२ प्रखंडों में अभी तक सिर्फ ४ में प्रवेश हो सका है। और जितना काम पूरा करना है उसका अत्यन्त छोटा अंश ही पूरा हो सका है। गति का धीमापन कार्य की शक्ति को खा जाता है। उसी तरह गति चाहे जितनी तेज हो अगर गति के मोह और भ्रम में काम कच्चा रह गया तो बची-खुची शक्ति भी समाप्त हो जाती है।

आशंकाएं

'तूफान' और 'आंधी-तूफान' आदि शब्द कहकर विनोबाजी इतमीनानवाद (ग्रैजुअलिज्म) के खतरों की याद दिलाते रहते हैं लेकिन न तो प्राप्ति में ही सही ढंग का तूफान बन पड़ा और न तो अब पुष्टि का ही आंधी-तूफान बन पा रहा है। हम सरकारमुक्त गांव, 'जनता सरकार' के ध्येय को बार-बार दुहराते हैं। ग्रामस्वराज्य की धारणा करते हैं। ग्रामसभा से आगे जाकर अगले चुनावों में जो दूर नहीं हैं, अपना उम्मीदवार की स्थिति तक पहुंचना चाहते हैं लेकिन आज अभी तक हम एक क्षेत्र भी ऐसा नहीं बना पाते हैं जहां ग्रामस्वराज्य के ६ सूत्रों का प्रयोग हो सके। सहरसा जिले को हमने इस काम के लिए चुना है। बिहार की शक्ति से सहरसा का काम पूरा होगा, यह कहना बहुत कठिन है। अखिल भारत

में अगर हमारी शक्ति हो भी तो वह सहरसा के लिये उपलब्ध नहीं हो रही है। भय है कि अगर यही स्थिति रही तो सारी आशावादिता के बावजूद सहरसा में बिहार का आन्दोलन समा जायेगा, और बिहार में देश का! कारण चाहे जो हो, लेकिन परिणाम यह स्पष्ट है कि हमारा यह समाज हमारे इत्मीनानवाद को उदारता के साथ हजम कर लेता है, और फिर जहाँ का तहाँ पड़ा रह जाता है। अगर हम इतमीनान की जगह तूफान पैदा करना चाहते है तो हमें जरा निर्मम होकर लोकसेवक से लेकर सर्व सेवा संघ तक के अपने संगठन को, अपने कार्यक्रम को, कार्यकर्ताओं को, विचार-प्रचार तथा कार्य-पद्धति को, संस्थाओं को, तथा अपने-अपने जीवन को टटोल लेना चाहिए। सहरसा के काम को भी हर पहलू से तटस्थ होकर परखने की जरूरत है। कहीं ऐसा न हो कि हमारे ऊँचे इरादे हमारे अपने ही हाथों पामाल हो रहे हो—'ट्रेजेडी आफ गुड इन्टेन्शन्स मिसफ्रिपोर्टेड' की बात न लागू होती हो!!

१३—बिहार में जो भी काम हो रहा है उसके आधार पर यह नहीं कहा जा सकता कि आगे के लिए बिहार ने, स्वयं अपने लिए या दूसरे राज्यों के लिए, कोई ऐसा नमूना प्रस्तुत किया है जिसकी नकल की जा सके। उसका कोई 'पैटर्न' 'मल्टीप्लायबल' नहीं माना जा सकता। स्थानीय अभिक्रम क्रान्ति-निष्ठा और उत्तरदायित्व का कोई ठोस उदाहरण नहीं बन पाया है। नागरिकों में यह संकल्प अभी दिखाई नहीं दे रहा है। अपवाद एक-से-एक सुन्दर मौजूद हैं, फिर भी वे अपवाद हैं। हमारे बीच न तो पर्याप्त संख्या में सुयोग्य कार्यकर्ताओं का 'कैडर' है, और न हमारे साथ नागरिकों की संकल्प-शक्ति ही है। इन दोनों कमियों को जल्द-से-जल्द दूर करने की जरूरत है। ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य की स्वतन्त्र शक्ति होनी चाहिए, उसका अपना 'कैडर' होना चाहिए। वह सहयोग सबसे ले, लेकिन उसे दूसरों की बैसाखी पर चलने की बेबसी से मुक्त होना चाहिए। बीकानेर ने २०-२५ ग्रामदान कार्यकर्ताओं की स्वतन्त्र टीम तैयार की है। दूसरे राज्यों को भी इस ओर ध्यान देना चाहिए।

यह भी सोचने की जरूरत है कि हमारे तौर-तरीके में, और हमारी संस्थाओं की आबोहवा में कौनसी कमियाँ है जो नये लोगों को, विशेष रूप से युवकों को, हमारे बीच आने को रोकती हैं।

हमारे आन्दोलन के जो माध्यम (इन्स्ट्रूमेन्ट) है उनकी उपयुक्तता की छानबीन होनी चाहिए। क्या सचमुच मानते हैं कि इन सर्वोदय मण्डलों और ग्रामस्वराज्य-समितियों से हम आन्दोलन को चला सकेंगे? अगर नहीं तो इन्हें सही और दुरुस्त करने की बात कब सोची जायगी?

करें क्या?

१४—समस्याओं और सम्भावनाओं की सूची बढ़ायी जा सकती है। लेकिन सिर्फ गिना देने से क्या होगा जब तक अध्ययन, शोध, प्रयोग आदि की व्यवस्था न हो। पुष्टि के सम्बन्ध में कई प्रश्न ऐसे हैं, और बराबर पैदा होते रहते हैं, जिन्हें स्थानीय स्तर पर कार्यकर्ता अपनी सहज बुद्धि से हल नहीं कर सकते। ऐसे प्रश्नों के अध्ययन और उनके बारे में चिन्तन की व्यवस्था होनी चाहिए। ग्रामसभाओं के गठन, संचालन और समन्वय (इंटीग्रेशन) का सारा प्रश्न ही शोध और प्रयोग का है।

देश के अलग-अलग भागों में काम करनेवाले साथियों के भिन्न परिस्थितियों में भिन्न अनुभव आते है जो दूसरी जगह के साथियों के लिए उपयोगी हो सकते है, लेकिन पता ही नहीं चलता कि कहाँ क्या हो रहा है। पूछने, लिखने पर भी जानकारी नहीं मिलती। कभी-कभी सन्देह होने लगता है कि हम सब अलग-अलग स्थानीय कार्यक्रम चला रहे हैं, या एक समाजव्यापी अखिल भारतीय आन्दोलन?

१५—पुष्टि का कार्य अत्यन्त कठिन है। जिस तरह के कार्यकर्ताओं और जिस पद्धति से प्राप्ति का काम चल गया—जो भी अच्छा-बुरा चला—उससे पुष्टि का काम नहीं चलेगा। ज्यादा सूझ-बूझ, क्षमता और कर्मठता के साथी चाहिए—पूरा और आंशिक समय देनेवाले, दोनों। हर राज्य में कम-से-कम एक जिलादानी क्षेत्र पुष्टि के लिए अवश्य लिया जाय। उसके प्रखण्डों से वरिष्ठ साथी जिम्मेदारी के साथ जुड़ें। लेकिन जूनियर कार्यकर्ताओं की टीम की पूरक शक्ति के रूप में जुड़े, स्वयं मुख्य व्यक्ति न बन जाय कि साथियों का अभिक्रम कुंठित हो जाय। इस तरह के पुष्टि प्रोजेक्ट लिये जायेंगे तो कामरेडशिप का विकास होगा जिसका आज अभाव है। साथीपन के बिना न नए साथी आवेंगे और न आकर टिकेंगे।

१६—शक्ति के बहुत बड़े स्रोत स्वयं ग्रामदानी गाँव और उनकी ग्रामसभाएँ है। ग्रामसभाओं के पदाधिकारियों तथा ग्राम-शान्तिसेना का प्रशिक्षण बड़े पैमाने पर हाथ में लेने की जरूरत है। साथ ही यह भी ध्यान में रखना जरूरी है कि हमें पुष्टि को ग्रामदान तक ही सीमित नहीं रखना चाहिए, बल्कि ग्राम-शान्तिसेना, तरुण शान्ति सेना, आचार्यकुल, आदि सबको चुने हुए सघन क्षेत्रों में केन्द्रित करना चाहिए। नगर, गाँव, और विद्यालय हमारे आन्दोलन के विभिन्न मोर्चे है। लड़ाई सब मोर्चों पर साथ-साथ होनी चाहिए।

१७—पुष्टि का काम हाथ में लेने पर नगरों के काम की अपेक्षा अधिक सिद्ध होगी। नगरों में हम अब तक प्रभावकारी ढंग से नहीं पहुँच सके हैं, इसीलिए शायद हम शिक्षित समुदाय तथा युवकों और पत्रकारों आदि का ध्यान नहीं आकर्षित कर सके हैं। अब यह कमी पूरी करनी चाहिए।

१८—इस क्रम में 'शिक्षा में क्रान्ति' का ग्रामदान के समानान्तर अभियान बन सकता है। उसमें सम्भावना है कि ग्रामदान से कहीं जल्द समाज पर 'इम्पैक्ट' पैदा करके, तथा शिक्षक, विद्यार्थी, —

है इसलिए उसके आसपास की जमीनें शहर के और बाहर के होशियार लोग खरीद रहे हैं। ग्रामदान-आन्दोलन से इस प्रवृत्ति पर रोक लग रही है और गाँव की जमीन गाँववालों के लिए सुरक्षित रहे, ऐसी हवा बनी है। ग्रामदान-कानून के अन्तर्गत ग्रामसभाओं को गाँवों के सहन भूमि की सारी व्यवस्था करने का अधिकार दिया गया है, ग्रामसभाओं की कानूनन घोषणा होने में कुछ समय लग सकता है, लेकिन गाँवों की ओर से यह भावना प्रकट हुई है कि भूमिहीनों का मसला तथा गोचर आदि भूमि-सम्बन्धी दूसरे प्रश्न हल करने की दृष्टि से ग्रामदान की शर्त के अनुसार मिलनेवाली ५ प्रतिशत जमीन, भूदान में मिली हुई अन्य जमीन तथा सरकारी पड़त आदि मिलाकर सारी उपलब्ध जमीन के वितरण की योजना बना ली जाय, और यथासंभव आगामी बारिश के पहले-पहले इस योजना के अनुसार भूमि का वितरण हो जाय। इसमें देर लगती हो तब भी ग्रामदान की शर्त के अनुसार मिलनेवाली ५ प्रतिशत जमीन का वितरण तो हो ही जाय, यह विचार ग्रामसभाओं के सामने रखा गया है।

इस प्रकार बीकानेर जिले में ग्राम-स्वराज्य की ओर तीव्र गति से और योजनापूर्वक कदम बढ़ रहा है। सौभाग्य से इस क्षेत्र की खादी-संस्थाओं ने इस सारे काम को उठा लिया है। प्रदेश सर्वोदय मंडल ने भी बीकानेर के काम को प्राथमिकता देने का निश्चय किया है। राजनीतिवालों की ओर से अन्दर-ही-अन्दर कुछ शंका-कुशंका प्रगट होती रहती है, पर लोग आगे बढ़ते जा रहे हैं। पिछले २३ वर्षों के कटु अनुभव से गाँवों के समझदार लोग इस ओर झुक रहे हैं, हालाँकि अब भी कहीं-कहीं स्वार्थ आड़े आता है।

बीकानेर जिले में एक और बड़ी सम्भावना है जो शायद देश के बहुत कम जिलों में होगी। वह यह कि इस जिले में सब नहीं तो अधिकांश घरों में काम दिया जा सकता है। योजना की दिशा और उसकी प्राथमिकताएँ गलत होने से देश में बेकारी बराबर बढ़ती जा रही है। अब भारत सरकार ने हर वर्ष ५० करोड़ रुपया कुल देश में खर्च करके बेकारों को काम देने की एक तात्कालिक योजना ३ साल के लिए शुरू की है, जिसके अन्तर्गत हर जिले में करीब १५ लाख रुपया खर्च होगा। इस खर्च से हर जिले में केवल एक हजार लोगों को वर्ष में १० महीने काम देने की कल्पना है। योजना में कहा गया है कि काम करनेवाले को औसत ३ रुपये रोज मजदूरी मिलेगी। एक हजार आदमियों को १० महीने अर्थात् ३०० दिन ३ रुपये रोज के हिसाब से देने पर मजदूरी में कुल ९ लाख रुपया खर्च होगा। मालूम होता है सरकार ने यह तो मान ही लिया है कि १५ लाख में से ६ लाख, यानी ४० प्रतिशत, इस योजना को कार्यान्वित करने के लिए सरकारी नौकरों, अफसरों आदि को दिये जानेवाले वेतन और भत्ते, तथा अन्य व्यवस्था में खर्च होगा। बीकानेर जिले के देहाती क्षेत्र में घर-घर लोगों को उन कताई का धंधा बिना इतने भारी भरकम व्यवस्था-खर्च के आसानी से दिया जा सकता है। केवल उसके लिए आवश्यक पूँजी चाहिये। जिले में आज भी खादी संस्थाओं के मार्फत करीब एक करोड़ रुपये का ऊनी कपड़ा बनता है। इस कपड़े की खपत की भी कोई समस्या नहीं है। अब चूँकि→

क्रान्ति की प्रक्रिया और पद्धति

चिन्तन के लिए कुछ नये बिन्दु

—धीरेन्द्र मजूमदार

ग्रामदान-प्राप्ति की तरह पुष्टि का काम तीव्र गति से नहीं होगा, ऐसा अनुभव आ रहा है। काम केवल सामान्य कानूनी पुष्टि का नहीं है, बल्कि पुष्ट ग्रामसभा टिकी रहे ऐसी स्थिति पैदा करना भी अत्यन्त आवश्यक है। हम चाहते हैं नव-समाज-रचना करना, अर्थात् हम पुराने मूल्य, पुरानी मान्यताओं तथा परम्पराओं को बदलना चाहते हैं। सो भी बुनियादी तौर पर, जिसे किताबों में समग्र क्रान्ति कहते हैं। इतिहास के प्रथम काल से ही जनता ने कभी अपने आप कार्य-निर्णय (फैसला) नहीं लिया है। हमेशा कोई-न-कोई राजा, गुरु, पुरोहित, राज संस्था, संत-महापुरुष जनता की समस्याओं का हल करता रहा है। जनता ने बहुत किया तो उनके पीछे चली। आज हम कहते हैं कि समाज अपने आप कार्य-निर्णय (फैसला) करे। हम बाहरी नेतृत्व और जमात का निराकरण करना चाहते हैं। अर्थात् जो बात इतिहास ने कभी नहीं की थी वह हम करना चाहते हैं। अतिप्राचीन काल में राजा, गुरु, पुरोहित, आदि व्यक्तियों के सहारे समाज चलता था। बाद के लोकतन्त्र और समाजवादी क्रान्ति से इतना ही हुआ कि व्यक्तियों के हाथ से संस्थाओं के हाथ में सामाजिक नियन्त्रण पहुँची। यानी राजा के स्थान पर राज बना, गुरु के स्थान पर शिक्षण संस्था बनी, पुरोहित के स्थान पर सम्प्रदाय-संस्थाएँ बनी। लेकिन आज हम संस्थावाद से आगे बढ़कर मनुष्य को समाजवाद तक पहुँचना चाहते हैं। यानी ग्रामसभा समाज के रूप में हम सम्पूर्ण नयी संस्कृति का निर्माण करना चाहते हैं। इसलिए मैं मानता हूँ कि अब हम लोगों को दो महीने, चार महीने, छः महीने आदि में काम पूरे करने की भाषा छोड़ देनी चाहिए।

अतएव अभियान के मित्रों का साथ-साथ तीन स्तरों पर अपने आन्दोलन को चलाने की बात सोचनी होगी। प्रथम स्तर में व्यापक विचार शिक्षण का काम होगा, द्वितीय स्तर में पुष्टि के तात्कालिक काम के लिए अभियान होगा, और तृतीय स्तर में समग्र कार्यकर्ताओं को प्रखण्ड स्तर पर इस नयी संस्कृति के निर्माण के लिए अपने जीवन का मिशन बनाकर बैठना होगा। सहरसा जिले के साथियों को मैं बराबर कहता रहता हूँ कि जिस तरह उपनिवेशवाद में अंग्रेज संस्कृति के निर्माण के लिए सैकड़ों और हजारों की तादाद में पादरियों ने मिशन बनाकर उसके लिए अपना जीवन लगाया था उसी तरह हमें सामन्तवादी संस्कृति को बदलकर स्वराज-संस्कृति की स्थापना के लिए सैकड़ों को बैठना होगा। अतएव सहरसा, बीकानेर या तमिलनाडु के सघन क्षेत्रों में कार्रवाई भी जारी, वह कम-से-कम एक साल टिकने के ख्याल से जाय। मैंने कम-से-कम एक साल इसलिए कहा कि आज के वातावरण में टिकने के धारण का बहुत अभाव है। वैसे आवश्यकता तो आजीवनदान की ही है।

सहरसा में दल के कई साथी ऐसे नया नई दृष्टि के साथी आगे आ रहे हैं। उनसे मेरी चर्चा होती रहती है। मुझको लगता है कि हमारे काफी अच्छे साथियों के मन में अपनी असमर्थता का भाव रहता है। उनको लगता है कि हम कोई 'एक्शन' नहीं करते। कुछ को लगता है कि हम अपनी 'इमेज' ऐसी नहीं बना सके हैं कि जिससे गरीब लोग हमें उनके तरफदार मानें। इन मित्रों के लिए डायरेक्ट एक्शन (सीधी कार्रवाई) का मतलब होता है कि गरीब लोग संगठित होकर भूमि प्राप्ति के लिए आगे बढ़ें और कुछ अहिंसक प्रतीकार का यानी सत्याग्रह का काम करें। वे मानते हैं कि जो कुछ हो रहा है वह भूदाता का काम हो रहा है। इसके जरिये सामाजिक क्रियाशीलता का विकास नहीं हो सकेगा।

मेरा नम्र निवेदन है कि हमें इस क्रान्ति को अधिक गहराई से देखना होगा। प्रथमतः हमको समझना होगा कि इस क्रान्ति की पद्धति 'कन्फ्रन्टेशन' की नहीं है बल्कि 'रिप्लेसमेन्ट' की है। 'कन्फ्रन्टेशन' उनकी तरफ से होता है जो वंचित हैं, जब कि रिप्लेसमेन्ट अनिवार्य रूप से उन्हीं की तरफ से होता है जिन्होंने समाज के कुछ लोगों को वंचित रखा है। सहरसा के अनुभव से मुझको स्पष्ट एहसास हो रहा है कि इस क्रान्ति का माध्यम (इन्स्ट्रूमेन्ट ऑफ रिवोल्यूशन) इतिहास की दूसरी क्रान्तियों से बिलकुल भिन्न है। अगर रूस की क्रान्ति का माध्यम मजदूर था या चीन की क्रान्ति का माध्यम छोटा किसान था, तो हमारी इस क्रान्ति के माध्यम बड़े और मध्यम वर्ग के किसान ही होंगे और क्रान्ति के लिए पहल उनके द्वारा ही होगी।

हम यह कहकर सत्याग्रह की बात मानते हैं। प्रश्न यह है कि अगर कभी आवश्यकता हुई भी तो सत्याग्रह कौन करेगा और कैसे करेगा? विनोबा कहते हैं कि सत्याग्रह का अधिकारी वही है जो सत्यग्राही होता है। अर्थात् सत्य के लिए आग्रह वही करता जिसने उस सत्य को स्वीकार किया है। अगर जमीन की व्यक्तिगत मालकियत का विसर्जन कर उसे समाज का समर्पित करना और बीघा में एक कट्ठा बाँटना सत्य है, तो इस सत्य

—अभियान क्षेत्रों में ग्रामसभाएँ बन गयी हैं और बनती जा रही हैं। इसलिए अपने-अपने गाँव में कुएँ बनवाने और मजदूरी चुकाने आदि की जिम्मेदारी ग्रामसभाएँ उठा लें तो यह काम तुरन्त सारे गाँवों में फैलाया जा सकता है। इससे ग्रामसभाओं को मजबूत बनाने में और सक्रिय करने में भी मदद मिलेगी।

इस प्रकार बीकानेर जिले में ग्राम-स्वराज्य की कुछ झाँकी दिखाई देने लगी है, एक शान्तिमय क्रान्ति की उषा प्रकट हो रही है।

—सिद्धराज ढड्ढा

का आग्रह वही कर सकता है, जिसने समझ-बूझकर इस पर आचरण किया है। हमारा इस क्षेत्र का अनुभव यह है कि अधिकतर उन्हीं किसानों ने विचार को समझकर स्वीकार किया है, जिनके पास बहुत अधिक जमीन है या काफी जमीन है। दूसरों ने किसी असर से, हवा से या किसी प्रकार की प्रेरणा से इस विचार को स्वीकार किया है। इसलिए जिन्होंने नहीं दिया है, उनसे जमीन माँगने के लिए अगर किसी 'स्टेज' पर सत्याग्रह की आवश्यकता होगी भी तो उसके कर्त्ता उपरोक्त बड़े और मध्यम वर्ग के किसान होंगे। ऐसा सत्याग्रह ग्राम-स्तर पर न होकर कम-से-कम प्रखण्ड-स्तर पर ही हो सकता है, क्योंकि जिन्होंने सत्य को स्वीकार किया है, वे भी अपने गाँव में राग-द्वेष और पट्टीदारी की भावना से मुक्त नहीं हो सकेंगे। प्रखण्ड-स्तर पर तटस्थता अधिक होगी और सत्याग्रही टीम भी बड़ी होगी।

मुझसे कई मित्रों ने पूछा है, "तो क्या मजदूर-वर्ग क्रांति के इस नाटक में केवल दर्शक ही रहेगा? क्या जो लोग शामिल नहीं हुए हैं, उन्हें अहिंसक प्रक्रिया में शामिल कराने में उनका कोई रोल नहीं रहेगा?" जरूर रह सकता है। लेकिन 'जिनका सत्य वे ही सत्याग्रह की पात्रता रखते हैं', इस सिद्धान्त से बाहर नहीं। उनकी क्रियाशीलता इस बात से प्रगट हो सकती है कि जो लोग नियमित रूप से एक दिन की मजदूरी ग्रामसभा को समर्पित करते रहे हैं, उनकी टीम, जो लोग नहीं समर्पित करते हैं उनसे समर्पण का आग्रह कर सकती है, उनका यह आग्रह का कार्यक्रम ग्राम-स्तर पर भी चल सकता है। सत्याग्रह के अलावा भी मजदूर-वर्ग ग्रामसभा में सक्रिय भाग लेकर अपने को क्रियाशील बना सकेगा। वस्तुतः सदियों से शोषित और दलित मजदूर इतना हिम्मत करने लग जाय तो वही एक क्रांति होगी।

इसी प्रकार जो मित्र मार्ग खोजने के लिए आज गाँव में पुष्टि का काम कर रहे हैं वे समाज के हर वर्ग की क्रियाशीलता का प्रकार खोज सकते हैं, लेकिन उन्हें यह बात हमेशा अपने सामने रखनी होगी कि इस क्रांति की पद्धति 'कन्फ्रन्टेशन' नहीं, बल्कि 'रिएप्रोचमेण्ट' है और सत्याग्रह की पात्रता उन्हींको है, जिन्होंने उस सत्य की स्वीकृति का परिचय समाज को दिया है।

अन्त में मैं अपने मित्रों से अपील करूँगा कि अब समय आ गया है कि पुराने प्रवृत्तिमूलक कार्यक्रम से मुक्त होकर समर्थ कार्यकर्त्ता 'करो या मरो' का सकल्प लेकर सघन क्षेत्र में बैठ जायें। •

भूदान के भूसे में भी दाना

(बिहार की भूदान-प्राप्ति और वितरण की जानकारी)

शक्ति के विषय में कहा गया है 'अति सौम्यानि रौद्रायै।' बाबा का बेरांई गाँव में रौद्र-दर्शन हुआ था। असम-यात्रा का मुंगेर जिले के बेरांई ग्रामदानी गाँव के पड़ाव पर परम भक्त निवेदक भाई गोखले जिले का प्रतिवेदन पढ़ रहे थे। प्रथम वाक्य का अन्तिम चरण "१५ हजार एकड़ जमीन का वितरण बाकी है।" पूरा होते ही बाबा ने बिजली की तरह प्रतिवेदन की प्रति झटक ली। ब्रह्म-तेज प्रगट हुआ। पूरा मुखमंडल लाल। प्रताड़ना के शब्द निकले "पाँच वर्ष से १५ हजार एकड़ जमीन नहीं बँटी, अपराध कर्म है, सारे लोग फाँसी के तख्ते पर झुला देने के योग्य हैं।" रामभूति, रामनारायण, गणेश, भवानी सबके सब स्तब्ध। वज्र ध्वनि पूरे प्रांत में गूँज गयी। एक दिन के बाद ही श्याम बाबू (स्वर्गीय), वैद्यनाथ बाबू सबने अपनी-अपनी गर्दन भागलपुर में 'बाबा' के सामने रखी। व्यवहारसिद्ध वैद्यनाथ बाबू ने कहा, "मुंगेर क्यों? सारा बिहार आपके सामने दोषी है। २१ लाख एकड़ में से ३ लाख एकड़ के लगभग जमीन बँटी है। वस्तुस्थिति यह है कि बिहार में सन् '५७ में ही भू-वितरण का हिसाब करीब-करीब पूरा किया, लेकिन जो बचा हुआ भूसा है उसमें से भी दाना निकलना है। उसके लिए प्रयास करना पड़ता है।' कभी कागज बदलना है, कभी दिल पिघलना है, और कभी मिट्टी बदलकर ऊसर से उर्वर हो जाती है।

कमिटी के अध्यक्ष गौरी बाबू ने भू-वितरण-योजना बनायी। सन् '५७ के बाद वितरण बंद-जैसा हो गया था। बाबा के आग्रह पर पंचायतों को वितरण-अधिकार दिया गया, पर व्यर्थ ही हुआ। अन्ततोगत्वा योजनाबद्ध वितरण का काम कमिटी द्वारा शुरू किया गया। सन् '६५ से आज तक प्रतिवर्ष पन्द्रह-बीस-पच्चीस हजार एकड़ तक जमीन बँट जाती है। सन् १९७०-७१ में भी २१ हजार एकड़ भूदान की जमीन का वितरण हुआ। मार्च '७० तक बिहार का कुल भू-वितरण ४ लाख १३ हजार ६२५ एकड़ पूरा हुआ है।

बिहार में कुल २१ लाख एकड़ भू-प्राप्ति की घोषणा हुई। इनमें से १९ लाख एकड़ जमीन के कागजात भूदान-कमिटी के कार्यालय में हैं, जिनमें से कुछ अधूरे हैं। १४ लाख ४७ हजार एकड़ जमीन को कृषि के अयोग्य माना गया। इनमें से अधिकांश भूमि गाँव के सामूहिक उपयोग में या जंगल-नदी-पहाड़ आदि है। पर इन पर दाता का स्वामित्व था। इनके दाताओं ने सरकार से मुआवजा नहीं लिया। बोगस दान-पत्रों की संख्या ८ प्रतिशत से अधिक नहीं है। शेष करीब ४० हजार एकड़ जमीन में से २० हजार एकड़ तक जमीन और बँट सकती है।

निर्मलचन्द्र
मंत्री,
बिहार भूदान कमिटी, पटना-३

आर्थिक स्वायत्तता : विचार के कुछ बिन्दु

—डॉ० अवध प्रसाद

आर्थिक स्वायत्तता के सम्बन्ध में विचार करना अपने आपमें एक नयी बात है। आधुनिक अर्थ-विज्ञान में ग्रामस्तरीय आर्थिक स्वायत्तता का महत्त्व नगण्य-सा है। प्रथम तो ग्रामस्तर की आर्थिक इकाई भी संभव है, यह आज के अर्थशास्त्री मानने को तैयार नहीं हैं। फिर ग्रामस्तर पर किसी प्रकार की स्वायत्त अर्थ-व्यवस्था हो सकती है यह अर्थ-विज्ञान के गले नहीं उतरता। स्वायत्तता का जो अर्थ प्रचलन में है उसमें अनेक शंकाएँ भी उठ जाती हैं। क्या एक राष्ट्र के भीतर स्वायत्त राजनीतिक व्यवस्था की तरह ही स्वायत्त अर्थ-व्यवस्था भी सम्भव नहीं है? फिर क्या ग्रामस्तर पर भी स्वायत्तता सम्भव है? आर्थिक विकास की जो भी योजनाएँ बन रही हैं उनमें एक गाँव को स्वायत्त इकाई मानकर उसका संचालन एवं संयोजन किया जा सकता है, यह सहज में नहीं स्वीकार किया जा सकता। अर्थ-व्यवस्था पर मोटी नजर दौड़ाने से भी इस बात की पुष्टि सहज में ही हो जाती है कि अर्थ-व्यवस्था में अलग-अलग स्वायत्त इकाइयों का विकास संभव नहीं वह बन नहीं सकती। हमारा सम्पूर्ण जीवन विश्व-अर्थ-व्यवस्था से जुड़ा हुआ है। कई अगर अमेरिका में महँगी होती है तो उसका प्रभाव बिहार के बाजार की दुकान पर पड़ता है। उसी प्रकार जीवन के हर क्षेत्र पर विश्व-अर्थ-व्यवस्था का प्रभाव पड़ता है। अर्थ-व्यवस्था में उत्पादन की पद्धति में व्यवस्था तथा तकनीक का जो स्वरूप प्रचलन में है उसमें ग्रामस्तर पर स्वायत्तता की कल्पना भले ही की जाय लेकिन व्यवहार में अनेक समस्याएँ सामने आ जाती हैं। कच्चे माल की सुविधा, भूमि एवं उसकी उत्पादकता, प्राकृतिक संरचना आदि कई ऐसी सीमाएँ हैं जिसके कारण स्वायत्त ग्राम-अर्थ-व्यवस्था सम्भव नहीं है। व्यापार तथा विनिमय का जो स्वरूप आधुनिक अर्थ-व्यवस्था में प्रचलित है उसमें भी इस स्तर की स्वायत्तता सम्भव नहीं। यदि इतिहास पर गौर करें तो आगे का काफी पीछे ले जाना पड़ेगा तब जाकर कहीं स्वायत्त ग्राम-व्यवस्था का धुंधला चित्र नजर आ सकता है। आधुनिक अर्थ-व्यवस्था ने उसे क्रमशः खत्म किया है।

स्वायत्तता की दृष्टि से राष्ट्रीय स्तर पर अवश्य कतिपय प्रयास किये जाते रहे हैं। वैचारिक स्तर पर भी पाश्चात्य अर्थशास्त्रियों में भी एडरिक लिस्ट आदि ने इस ओर वैचारिक विकास किया है। व्यावहारिक स्तर पर प्रायः यह प्रयास रहता है कि राष्ट्रीय स्तर पर स्वायत्त अर्थ-व्यवस्था रहे। सफलता चाहे जिस अंश में भी मिली हो, हर राष्ट्र अधिकतम स्वायत्तता के लिए प्रयत्नशील रहता है। यही नहीं आर्थिक होड़ में अधिकतम विदेशी व्यापार का प्रयास भी आधुनिक अर्थ-व्यवस्था का प्रमुख अंग रहता है। कम-से-कम आयात और अधिक-से-अधिक निर्यात में एक दृष्टि यह भी रहती है कि हम अधिक-से-अधिक आवश्यकता की वस्तुएँ स्वयं तैयार करें। यह तो हुई राष्ट्रीय स्तर पर स्वायत्तता की बात। ग्राम या स्थानीय स्तर पर पूर्ण स्वायत्तता कभी सधी नहीं। वैसे राष्ट्रीय स्तर पर भी पूर्ण स्वायत्तता कभी नहीं सधी। आर्थिक विकास की जो दिशा है उसमें भविष्य में भी शायद नहीं सधेगी। अतीत पर विचार करने पर स्थानीय स्वायत्तता एक अंश में देख सकते हैं। प्राचीन भारत को ही लें, तो उस समय की आवश्यकताओं की वस्तुओं की उपलब्धि स्थानीय स्तर पर सम्भव थी। भोजन, वस्त्र, मकान, स्वास्थ्य, शिक्षा स्थानीय स्तर के साधनों से काफी हद तक सुलभ थी। हाँ, उस समय हमारी आवश्यकताएँ काफी सीमित थीं, फिर न तो आवागमन की इतनी सुगमता थी, न उत्पादन की विविधता, और न ही आधुनिक जटिल आर्थिक ढाँचा ही था। थोड़े में निर्वाह था। स्वास्थ्य के लिए नीम-हकीम तक हम सीमित थे, और शिक्षा के लिए स्थानीय विद्वान तक। कुछ काशी, प्रयाग तक भी दौड़ते थे। कह सकते हैं कि एक सीमा तक हम स्वायत्त अर्थ-व्यवस्था के समीप थे। जैसा कि आज देखते हैं, वह व्यवस्था आज नहीं है सम्भव भी नहीं है। लेकिन इससे क्या स्वायत्तता का आज महत्त्व समाप्त हो गया—स्थानीय या ग्राम-स्तर की स्वायत्तता का? निश्चय ही एक इकाई को दूसरी इकाई से अलग करनेवाली स्वायत्तता के दिन नहीं रहे। स्थानीय स्तर पर तो क्या राष्ट्र-स्तर पर भी ऐसी स्वायत्तता सम्भव नहीं, जो कि एक राष्ट्र को दूसरे राष्ट्र से अलग करे, द्वेष बढ़ाये और मात्र व्यापारिक लाभ के लिए एक-दूसरे का शोषण करे।

भारत में एक समुदाय है जो कि स्थानीय स्तर पर स्वायत्तता का हिमायती रहा है। गांधीजी के वैचारिक आधार को मानकर यह समुदाय विकसित हुआ, जो कि ग्राम-स्थानीय स्तर कहें तो ज्यादा स्पष्टता रहेगी है—स्तर की स्वायत्त अर्थ-व्यवस्था के लिए प्रयत्नशील रहा है। ग्रामदान इसी प्रकार की आर्थिक स्वायत्तता की ओर बढ़ने का प्रयास कर रहा है। पर ग्रामदान की आर्थिक स्वायत्तता ऊपर बतायी गयी आर्थिक स्वायत्तता के समान नहीं है। वैसे, ग्रामदान किस प्रकार की आर्थिक स्वायत्तता स्थापित करना चाहता है, यह अभी तक सिद्धान्त या व्यवहार, किसी भी स्तर पर पूर्ण रूप से निर्धारित नहीं किया जा सकता है। ग्रामदान की आर्थिक स्वायत्तता क्या है इसे स्पष्ट करना अभी बाकी है। इतना जरूर है कि स्वायत्तता का अलग-अलगवाला अर्थ ग्रामदान को स्वीकार्य नहीं। इसकी स्वायत्तता को स्पष्ट करने के लिए एक तो हमें गांधी-विचार की ओर देखना होगा, और दूसरी ओर ग्रामीण व्यवस्था और समस्याओं की ओर, जिस पर गांधी-विचार किया है।

गांधीजी ने एक ओर तो पूरे विश्व को एक कुटुम्ब के रूप में माना, अर्थात् सम्पूर्ण मानव जाति को एक परिवार के रूप में संगठित करने की कल्पना की। इस अर्थ में ग्राम, राज्य या राष्ट्र स्तर तक की संकीर्णता नहीं रहनी चाहिए। दूसरी ओर उन्होंने एक ग्राम को एक स्वायत्त इकाई भी माना। इन दोनों में विरोधाभास लग सकता है। क्योंकि आज का चिंतन स्वायत्तता यानी अलगाव तक सीमित है। परन्तु गांधीजी की स्वायत्तता तो समुद्र में उठनेवाली लहरों के समान है। समुद्र में लहरें उठती हैं तो वह क्रमशः बड़ी होती जाती है, लेकिन एक-दूसरे में मिलकर क्रमशः बड़ी होती जाती हैं, समाप्त नहीं होती। छोटे का अस्तित्व समाप्त नहीं होता, बल्कि बड़े के साथ एक-रस होकर वह भी बड़ा हो जाता है, सार्थक हो जाता है। सिद्धान्त ये बातें तो आकर्षक है, परन्तु व्यवहार? तो, व्यवहार प्रयोग पर से निखरेगा और सिद्धान्त भी प्रयोग में ही गहनता को प्राप्त करेगा।

एक प्रश्न आर्थिक समृद्धि और स्वायत्तता को लेकर उठाया जा सकता है। यदि समृद्धि को लक्ष्य मान लें तो स्वायत्तता नहीं सध सकेगी, क्योंकि आर्थिक समृद्धि खूब आये इसके लिए वणिक-वृत्ति आवश्यक है। खेत में नकद आयवाली फसलें उगायें। इससे समृद्धि खूब आयेगी। लेकिन यदि स्वायत्तता की ओर झुकना है, तो आवश्यकता का विचार रखना होगा। आवश्यकता की वस्तुओं के उत्पादन को प्राथमिकता देनी होगी। फिर भी हम कूप-मंडूक नहीं बन सकते। प्राकृतिक अनुकूलता, कुशलता, तकनीक, कच्चा माल, आवागमन, आवश्यकताएँ आदि को ध्यान में रखकर ही सारा संयोजन संभव है। व्यवहार में तो परस्परावलंबन सधेगा। समृद्धि के साथ-साथ स्वायत्तता की ओर बढ़ना होगा। हम यह न भूलें कि प्रत्येक व्यक्ति विश्व-समाज से जुड़ा है। अतः एक व्यक्ति का हित विश्व के अन्य व्यक्तियों के हित का विरोधी नहीं होगा। एक का हित दूसरे के हित से टकरायेगा नहीं, बल्कि जुड़ता चला जायगा।

आर्थिक स्वायत्तता का पूर्ण विवेचन—सैद्धान्तिक, व्यावहारिक—करना अभी बाकी है और इस बाकी को किसी एक लेख में पूरा करना सम्भव भी नहीं। फिर यह तो प्रयोग-चर्चा से ही विवेचित हो सकता है। यहाँ तो आर्थिक स्वायत्तता का प्रश्न-भर उठा देना पर्याप्त है। कुछ ऐसे भी प्रश्न होते हैं जिनका मूल्य उनके उत्तरित होने से अधिक उठाये जाने में होता है। ●

सहरसा-समाचार

जिले में आन्दोलन की पृष्ठभूमि और प्रगति का लेखा-जोखा

सहरसा बिहार का एक नया जिला है। १ अप्रैल १९५४ को इसे जिले के रूप में मान्यता मिली। इसके पहले यह उत्तरी भागलपुर का अंग था।

जिले का परिचय

सहरसा जिले में कुल १,३५५ गाँव है, जिनमें १४५ बेचिरागी है और १८ शहरी क्षेत्र में पड़ते हैं। जिले की आबादी १९६१ की जनगणनानुसार १७,२३,५६६ है। १६,५६,१३९ ग्रामीण क्षेत्रों में है, और ६७,४२७ शहरी क्षेत्रों में। आबादी में इसका स्थान ३२८ जिलों में से ८६वाँ है। बिहार सर्वे के अनुसार यहाँ का क्षेत्रफल २१, ५५ वर्गमील यानी ५४५३.२ वर्गकिलोमीटर है।

जिले में कुल तीन अनुमंडल हैं सदर, सुपौल और मधेपुरा। प्रखंडों की संख्या २३ है। सन् १९५१ तक जिले का सम्पूर्ण क्षेत्र ग्रामीण था। सन् १९६१ में ६ स्थानों को शहरी क्षेत्र में लिया गया। वे हैं—सुपौल (१७,४६०), सहरसा (१४,८०३), मधेपुरा (११,८३२), मुरलीगंज (९,८४९) वीरपुर(८,०६१), और निर्मली (५,४२३)।

जिले के ८१९ प्रतिशत कामगार कृषि-कार्य में लगे हुए हैं। खेतों में काम करनेवाले ऐसे कामगारों में वे लोग है जो भूपतियों के यहाँ मजदूरी पर काम करते है, लेकिन उस जमीन पर उनका कोई हक नहीं है।

भूदान से ग्रामदान की ओर

भूदान में २८,६९६ दाताओं से कुल ३८,४३२ एकड़ जमीन प्राप्त हुई, १६,३८७ एकड़ जमीन १२,५८८ आदाताओं के बीच बँटी। जिला भूदान यज्ञ कमिटी के अनुसार २९० एकड़ भूमि पर से आदाताओं को बेदखल किया गया है और १६, ९७ एकड़ भूमि पर आदाताओं का पूर्ण कब्जा है।

सन् १९५६ का अंत होते-होते जिले में ग्रामदान का काम भी शुरू हो गया था और ग्रामदान की पुरानी शर्तों के अन्तर्गत दो ग्रामदान—भट्टाबाड़ी और कोरिहार गाँव प्राप्त हो चुके थे। भट्टाबाड़ी में विकास के अच्छे काम हुए। बाद में मुकदमेबाजी के कारण वहाँ का काम तितर-बितर हो गया।

श्री महेन्द्र नारायण सिंह, जो जिले के प्रमुख कार्यकर्ता हैं, सन् १९५४ में ही आन्दोलन के सम्पर्क में आ गये थे। सन् १९६५ में जयप्रकाशजी के सहरसा-आगमन पर उन्होंने पाँच ग्रामदानी गाँवों की घोषणा की। सन् '६५ के अन्त में जब विनोबाजी तीसरी बार सहरसा आये तो उस समय तक ३२ गाँवों का ग्रामदान हो चुका था।

उसी साल बाबा ने ग्रामदान आन्दोलन को तूफानी गति से चलाने का आवाहन किया। जिले के कार्यकर्त्ताओं ने इस आह्वान को स्वीकार किया। सन् १९६६ में पहला प्रखंडदान—निर्मली—घोषित हुआ।

श्री जयप्रकाश नारायण की यात्रा

अप्रैल '७० में बिहार ग्रामस्वराज्य

समिति की बोधगया की बैठक के अवसर पर सहरसा के जिला-निवेदक श्री महेन्द्र नारायण सिंह ने ग्रामदान-पुष्टि के लिए सहरसा की अनुकूल परिस्थिति का उल्लेख करते हुए श्री जयप्रकाश बाबू से ६ से १० मई तक के समय की मांग की जो मान्य की गयी। श्री जयप्रकाश बाबू की यह यात्रा जिले के तीनों अनुमंडलों के प्रमुख स्थानों में हुई। इस अवसर पर उन्हें पुष्टि-कार्य के लिए तीन हजार रु० की थैली भेंट की गयी। ग्रामदानी गांवों के भूमिहीनों को वितरित करने के लिए बीघा-कट्ठा के तौर पर निकाली गयी लगभग ६० बीघे जमीन दान में दी गयी।

नयी परिस्थिति से अनुप्राणित होकर जिला ग्रामस्वराज्य समिति के कार्यकर्त्ता संगठित रूप से मरौना प्रखंड के पुष्टि-अभियान में जुट गये। श्री कृष्णराज भाई का सबल मार्गदर्शन उन्हें प्राप्त होता रहा। परन्तु कुछ दिनों बाद मरौना प्रखंड की कमजोर जलवायु से श्री कृष्णराजजी का गला बैठ गया, आवाज रुंध गयी, फलतः चिकित्सा के लिए उन्हें वापस काशी जाना पड़ा।

बाबा का परामर्श

२ अक्तूबर ७० को सेवाग्राम में पूज्य बाबा की हीरक जयन्ती समारोह के प्रसंग में आयोजित सर्व सेवा संघ अधिवेशन में भाग लेने बिहार के बहुत-से प्रमुख सर्वोदय-सेवक वहां गये थे। इस अवसर पर बिहार के सर्वोदय-सेवकों को बाबा ने सहज ही प्रदेश की संगठित शक्ति को सहरसा जिले की ग्रामदान-पुष्टि में लगाने का परामर्श दिया जिसे सबने शिरोधार्य किया।

बिहार ग्रामस्वराज्य समिति का निर्णय

१६-१७ अक्तूबर को सर्वोदयग्राम, मुजफ्फरपुर में बिहार ग्रामस्वराज्य समिति की बैठक हुई। बैठक में पूज्य बाबा के परामर्श के प्रकाश में प्रान्तीय स्तर पर सहरसा जिले में ग्रामदान-पुष्टि-कार्य सम्पन्न करने का निर्णय लिया गया। इसकी कार्यान्विति के लिए समिति का कैम्प कार्यालय सहरसा में खोलना निश्चित हुआ।

इसी क्रम में आयोजित विगत २३-२४ अक्तूबर को सहरसा जिला ग्राम-स्वराज्य समिति की बैठक ने बिहार ग्रामस्वराज्य समिति द्वारा लिये गये उपर्युक्त निर्णय का हार्दिक स्वागत किया। साथ ही इसके सफल कार्यान्वयन के लिए उसने अपनी शक्ति बिहार ग्रामस्वराज्य समिति को समर्पित करने का भी निश्चय किया।

तदुपरान्त उपर्युक्त निर्णयानुसार विगत ८ नवम्बर को बिहार ग्रामस्वराज्य समिति के मंत्री अपने कैम्प कार्यालय सहित सहरसा आ गये। उनके साथ ही राज्य के विभिन्न जिलों से सर्वोदय तथा खादी-कार्यकर्ताओं की टोलियां सहरसा पहुँचने लगीं।

बाबा के उद्‍गार

बाबा ने सहरसा जिले की पुष्टि शीघ्र सम्पन्न करने के लिए जो आह्वान किया, उसमें यह भाव व्यक्त किया "दूसरे सारे कार्यों को स्थगित करो, दफ्तरों को ताला लगाओ और सब सहरसा में धंसो। आगे आपने कहा कि 'अब मेरे पास जो भी मिलने आयेगा उसे मैं सहरसा जाने को कहूँगा। सहरसा की पुष्टि का- सम्पन्न हो जाने पर आगे कुछ कहने की आवश्यकता ही नहीं रहेगी।' इस प्रकार बाबा ने सहरसा का पुष्टि कार्य सम्पन्न करने के लिए देश भर के सर्वोदय-सेवकों का आह्वान किया।

बाबा के उपर्युक्त उद्‍गार के संदर्भ में बिहार के सभी प्रमुख सर्वोदय-सेवकों का एक शिविर विगत १ से ५ जनवरी '७१ को सहरसा में सम्पन्न हुआ। निम्नांकित महत्त्वपूर्ण संकल्प शिविर में पारित हुए जिनका कार्यान्वयन आज हो रहा है।

१—सर्वोदय-जगत् के तीन वयोवृद्ध नेताओं—सर्वश्री धीरेन्द्रभाई, ध्वजाबाबू तथा गोपाल बाबू—ने सहरसा में बैठने की घोषणा की। सहरसा जिले के वयोवृद्ध नेता श्री राजेन्द्र मिश्र ने भी इस कार्य में समय देने का संकल्प किया।

२—बिहार खादी ग्रामोद्योग संघ के अध्यक्ष श्री गजानन बाबू ने जिले के तीन अनुमंडलों में से एक, सुपौल की पुष्टि सघन तथा दरभंगा जिला सर्वोदय मंडल के कार्यकर्त्ताओं की सम्मिलित शक्ति से करने की जिम्मेदारी लेने की घोषणा की।

३—राज्य के निम्नांकित जिलों के प्रमुख कार्यकर्त्ता साथियों ने सहरसा में अपने सहयोगियों की टोली के साथ लगने की घोषणा की :

श्री लक्ष्मीनारायण —संथाल परगना, श्री केशव मिश्र—गया, ब्रजमोहन शर्मा—मुंगेर, कपिलदेव कुमार—पटना, नागेश्वर सेन —भागलपुर, विश्वनाथ शर्मा —छपरा।

तीन मोर्चे

निम्नलिखित तीन मोर्चों पर काम करने का फैसला समिति ने लिया। पहला मोर्चा था लोक शक्ति को संगठित करने का, दूसरा था शांतिसेना का, और तीसरा था—आचार्यकुल का। इन मोर्चों पर डटने की जिम्मेदारी निम्नलिखित व्यक्तियों पर सौंपी गयी (क) सर्वश्री कृष्णराज भाई निर्मला दगपाडे और विद्यासागर भाई—लोकशिक्षण के द्वारा लोकशक्ति खड़ी करना, (ख) श्री अमरनाथ भाई और सुश्री जानकी बहन—शांतिसेना, (ग) श्री रामेश्वर प्रसाद बहुगुणा—आचार्यकुल।

प्रान्तीय दफ्तर के यहां आने के बाद बम्बई, पंजाब, मध्यप्रदेश, उत्तरप्रदेश आदि राज्यों से करीब २५ कार्यकर्त्ता आये। बिहार के विभिन्न जिलों ने भी अपने अपने कार्यकर्त्ता भेजे जो इस प्रकार हैं—पटना–८, गया–८, संथालपरगना–४, मुंगेर–१, भागलपुर–४, छपरा–२, दरभंगा–८, और सहरसा–२०। बिहार खादी-ग्रामोद्योग संघ से भी लगभग १०० कार्यकर्त्ता आये।

कार्यक्षेत्र

यों तो सम्पूर्ण जिला ही इस पुष्टि-अभियान का क्षेत्र है, मगर अभी मुख्य रूप से ४ प्रखंडो में कार्यकर्त्ताओं की शक्ति लग रही है। ये चार प्रखंड हैं: सुपौल, मरौना, महिषी और चौसा। मरौना में प्रांतीय दफ्तर के सहरसा आने के पूर्व ही अभियान प्रारम्भ हो गया था और महिषी में दिसम्बर से। सुपौल और चौसा प्रखंडों में क्रमश १५ और २० जनवरी से कार्यकर्त्ता जुटे हैं। इसके अलावा दरभंगा के बिरौल प्रखंड में भी कार्य चल रहा है।

महिषी प्रखंड में अन्य प्रांतों से आये साथियों की निगरानी में अभियान चल रहा है। बिहार के विभिन्न जिलों से आये कार्यकर्त्ता चौसा में लगे हैं। मरौना तो स्थानीय कार्यकर्त्ताओं का यानी जिला ग्रामस्वराज्य समिति का कार्यक्षेत्र रहा ही है। सुपौल में कार्य पूरा करने का जिम्मा खादी-कार्यकर्त्ताओं पर यानी संघ से आये साथियों पर है। बिरौल में सुशीला बहन के अलावा दरभंगा जिले के कार्यकर्त्ता काम कर रहे हैं।

प्रखंडों में अब तक किये गये कार्यों की प्रगति

मरौना : इस प्रखंड में अब तक ८४ ग्रामसभाएँ गठित की जा चुकी हैं। ५७८ दाताओं से प्राप्त १७० बी० १९ क० साढ़े पाँच धूर जमीन ७१९ आदाताओं में बाँट दी गयी है। ६२ बी० ५ क० १५ धूर जमीन प्रमाण-पत्र पर प्राप्त हुई है, मगर उसका वितरण अभी तक नहीं हुआ है।

शान्तिसैनिकों की संख्या ९२५ है तथा आचार्यकुल के सदस्य २६ हैं। १७ गाँवों में ग्रामकोष भी जमा हुआ है। कुल २२ कार्यकर्त्ता काम में जुटे हैं।

सुपौल : १६ पंचायतों में सघन रूप से काम चल रहा है। प्रखंड के ८० गाँवों में २४,३६७ परिवार हैं। ४ गाँवों के ३,५८२ परिवार शहरी क्षेत्र में हैं। ग्रामीण क्षेत्र के २०,७८५ परिवारों में से १०,२१० परिवार अब तक ग्रामदान में शामिल हो सके हैं। १४ फरवरी को ३ दाताओं द्वारा ३ बी० जमीन २१ आदाताओं को दी गयी है। कामचलाऊ २० ग्राम-समितियाँ गठित की गयी हैं। शान्तिसेना के चार शिविर हुए हैं। शान्तिसैनिकों की संख्या १६७ है। २३४ रु० २८ पै० का साहित्य बेचा गया है। कार्यकर्त्ताओं की संख्या ९५ थी, जिनमें खादी के ७३ और ग्रामदान के २२। होली की छुट्टी में या व्यक्तिगत कामों से कुछ कार्यकर्त्ता वापस चले गये हैं। अभी केवल ५४ कार्यकर्त्ताओं की शक्तियाँ लगी हुई हैं।

महिषी ७ पंचायतों में सघन रूप से काम चल रहा है। वे पंचायतें हैं गडौल, कुन्दह, आरा, महिषी, बलुआहा, राजनपुर और मैना। बलुआहा के १११ भूमिवानों में से १०१ ने ग्रामदान-फार्म पर हस्ताक्षर कर दिया है। ६८ दाताओं ने ७२ आदाताओं को १५ बी० जमीन दी है।

तेघड़ा के १४२ परिवारों में २५ भूमिवान के हैं। सबके सब ग्रामदान में शामिल हैं। १९ आदाताओं ने ८० कट्ठा जमीन ८० आदाताओं को दी है। ग्राम कोष का निर्माण और शान्तिसेना का गठन वहाँ हुआ है।

महिषी पंचायत में ७३० परिवार हैं। १०० भूमिवान और ४१० भूमिहीन परिवारों ने ग्रामदान-फार्म पर हस्ताक्षर कर दिये हैं। १० दाताओं ने १३ बी० ४५ आदाताओं के बीच बाँटी है।

राजनपुर में १६ मार्च को श्री धीरेन्द्र मजूमदार की उपस्थिति में ४१ आदाताओं के बीच ११ बी० १४ क० १५ धूर जमीन बाँटी गयी है। भाई चन्द्रभान ने जो उस पंचायत में काम कर रहे हैं, एक भेंट में बताया कि उस दान-समारोह के बाद १० बी० १३ क० ५ धूर जमीन और भी मिली है जो ७० आदाताओं के बीच बाँटी गयी है। इस तरह यहाँ कुल ४५ दाताओं द्वारा प्राप्त २२ बी० ८ क० जमीन १११ आदाताओं के बीच बाँटी गयी। इस पंचायत में स्थानीय युवकों का काफी सहयोग मिल रहा है। यहाँ शान्तिसेना का एक शिविर भी हुआ है।

हरिविलास भाई, जो मनरवार गाँव में कार्यरत हैं, लिखते हैं: "२३ मार्च को १० दाताओं ने १८ आदाताओं को ६ बी० १ क० साढ़े चार धूर जमीन श्री कृष्णराज भाई की उपस्थिति में वितरित की। मनरवार महिषी गाँव का एक टोला है जिसमें ११८ परिवार हैं। ९५ परिवार ग्रामदान में शामिल हैं। ३५० बी० भूमि में से २७५ बी० ग्रामदान में शामिल है। इस तरह बाँटने योग्य कुल १३ बी० जमीन वहाँ निकलती है। बाकी लगभग ७ बीघे की प्राप्ति का प्रयास चल रहा है। मनरवार में ग्रामसभा बन चुकी है।"

महिषी प्रखंड में शान्तिसेना के ६ शिविर हो चुके हैं, जिनमें २८० शिविरार्थियों ने भाग लिया। ४४ शिक्षक आचार्यकुल के सदस्य बने हैं। तेघड़ा, बलुआहा, राजनपुर, मनरवार और बलिया सिमर, इन पाँच गाँवों में ग्रामसभाएँ बन चुकी हैं। तेरह ग्रामसमितियों का गठन भी हुआ है।

चौसा वंशगोपाल पंचायत के फुटनमा गाँव में जमीन और जनसंख्या की दोनों शर्तें पूरी हो चुकी हैं। मखदुमपुर में तीन दाताओं द्वारा १० बी० १७ क० जमीन १८ आदाताओं में बाँटी गयी है। इन दोनों गाँवों में अभी ग्रामसभा का गठन नहीं हो पाया है। फूलपुर टोले में ५ दाताओं द्वारा भूदान में प्राप्त १६ बी० ६ क० १० धूर जमीन फूलपुर के पाँच और कलासन गाँव के १८ आदाताओं में बाँटी गयी है।

धोमई पंचायत के अजगैवा गाँव में ग्रामसभा का गठन हो गया है। जमीन और जनसंख्या की दोनों शर्तें भी पूरी हो चुकी हैं। लुरियाइस्लामपुर पंचायत गाँव के १०० भूमिहीनों में ७५ और २२० भूमिहीनों में से २१४ के हस्ताक्षर प्राप्त हो चुके हैं। ७३६ एकड़ जमीन में से ४३५ एकड़ और २०० जनसंख्या में से १८००—

मुजफ्फरपुर की डाक

एक दुखद घटना

गत ११ अप्रैल को जलालाबाद कैम्प के मित्रों के साथ काम की स्थिति के बारे में चर्चा चल ही रही थी कि सकरा प्रखण्ड के एक ग्रामीण ने आकर सूचना दी कि जलालपुर ग्राम के बड़े किसान और महाजन (सूद पर रुपया लगाने वाले) श्री बच्चू प्रसाद शाही की रात में डाकुओं ने हत्या कर दी। इस अप्रत्याशित सूचना ने सभी लोगों को चिन्ता में डाल दिया। जे० पी० तो बाहर जाने के लिए तैयार थे, अतः उन्होंने कुछ मित्रों को तुरन्त वहाँ जाकर स्थिति देखने का निर्देश दिया।

मुजफ्फरपुर आने पर सूचना मिली कि "मामला ज्यादा गहरा है। बच्चू बाबू को जिन्दा जलाया गया है। उनके एक जीर-निया (खेती का काम देखनेवाले नौकर) की भी हत्या की गयी है। घर एवं घर की सामग्री जला दी गयी है। घर के दूसरे कई लोग भी भाले, बम एवं अन्य हथियारों से घायल हैं।"

इस सूचना के मिलते ही ये लोग तुरन्त अस्पताल गये। ४ व्यक्तियों की मरहमपट्टी हो चुकी थी और वे सब बातचीत करने की स्थिति में थे। एक व्यक्ति का ऑपरेशन चल रहा था, उन्हें गहरा आघात था मगर डाक्टरों के अनुसार खतरे से बाहर थे। घटना के बारे में कुछ जानकारी अस्पताल में ही लोगों से मिली। उसके बाद लोग घटना-स्थल जलालपुर ग्राम में गये। वहाँ पुलिस पहुँच चुकी थी और डी० आई० जी०, एस० पी०, डी० एस० पी० आदि उपस्थित थे। सादे ग्रामीण वेश में भी कुछ लोग इधर-उधर चक्कर मार रहे थे। सम्भव है वे भी ग्रामीण दर्शक ही रहे हों।

पुलिस की देख-रेख में इन लोगों ने बारीकी से घटना-स्थल का निरीक्षण किया। दृश्य बड़ा दुखद था। पक्का मकान खण्डहर अवस्था में था। जले हुए कागजातों और कपड़ों के ढेर कोठ-रियों में थे। सब कुछ अस्तव्यस्त था। घर डरावना और खण्डहर-सा दीख पड़ता था। घटना का वर्णन निम्न प्रकार किया गया। (सम्भव है इसमें कहनेवालों ने अपनी समझदारी से कुछ जोड़ा घटाया हो।)

"रात के लगभग ११-३० बजे थे। चाँदनी रात थी। लोग सो चुके थे। अचानक बच्चू बाबू का घर डाकुओं ने चारों ओर से घेर लिया और वे तोड़-फोड़ करते हुए घर के भीतर घुस। बन्दूक, पटाके हथियारों और हमलावरों की आवाजें हुईं। परिवार के लोग समझ गये कि डाकू आ गये हैं। जो भाग सके, जैसे-तैसे भागे। कुछ को भागने के क्रम में ही गोली लगी या अन्य धारदार हथियार की चोट लगी। डाकुओं ने घर की महिलाओं से निवेदन किया कि 'आप सब घरों से बाहर निकलकर एक ओर चली जायँ। आप सब हमारी माँ-बहनें हैं। आप सबको कोई घाट नहीं पहुँचायेंगे। अगर रुपये-पैसे हों तो हमें दे दें। मगर हम घर के मर्दों को नहीं छोड़ेंगे। सारे महाजनों (सूदखोरों) को बन्द करा देंगे। आदि-आदि। इसके बाद घर की महिलाएँ बाहर निकल आयीं। एक अतिशय बीमार बूढ़ी को भी उठाकर घर के बाहर निकाला गया। इसके बाद डाकुओं ने घरों में घुसकर सामानों को इकट्ठा करके घरों में आग लगाना शुरू किया। बच्चू बाबू (घर के बूढ़े मालिक) को उनके कमरे में पकड़ लिया गया और घर के कागजात, वस्त्रादि उन पर डालकर आग लगा दी गयी। दरवाजे पर एक दूसरे बूढ़े जीरनिया (खेतीबारी देखनेवाले नौकर) थे। वे मकान से बाहर थे, शायद भाग रहे थे। उनको गोली मारी गयी एवं अन्य हथियारों से हत्या कर दी गयी।"

मुसहरी प्रखण्ड में हिंसा और आतंक का वातावरण इधर कुछ समय से समाप्त हो गया था। सब यह मानने लगे थे कि स्थिति सामान्य हो गयी है। इस घटना ने एकाएक सभी स्तर के लोगों को पुनः झकझोर दिया है, और एक बार फिर

—ग्रामदान में शामिल हो गये हैं। इस तरह यहाँ भी दोनों शर्तें पूरी हो गयी हैं।

दुर्गापुर पंचायत के बड़ौना, हरिगारी और दुर्गापुर में जोर-शोर से हस्ताक्षर-प्राप्ति का काम चल रहा है। बड़ौना के १७ भूमिहीनों में से ११ के हस्ताक्षर प्राप्त हो चुके हैं। इसी प्रकार बरदह पंचायत के नवटोल गाँव में ३५ बड़े भूमि-वानों ने हस्ताक्षर कर दिये हैं। अब यहाँ दोनों शर्तें पूरी हो गयी हैं। इस प्रखण्ड में शान्तिसेना के दो शिविर हुए और ३० शिविरार्थियों ने भाग लिया।

विनोबा बाबा की प्रेरणा से सुशीला बहन "करो या मरो" का संकल्प लेकर बिहार आयी थीं। मुसहरी में जे०पी० के साथ बात होने पर तय हुआ कि वे विरौल (दरभंगा) में अपनी शक्ति लगायें, और ७ अगस्त से वे वहाँ लगी हुई हैं। विरौल सहरसा के महिषी प्रखण्ड से जुड़ा हुआ है।

उस प्रखण्ड में ३१ मार्च तक जो प्रगति हुई है उसका विवरण इस प्रकार है : प्रखण्ड में कुल १२७ गाँव हैं जिनमें १०३ गाँव ग्रामदान में शामिल हैं। २७ गाँवों के कागज पुष्टि-पदाधिकारी के पास भेज दिये गये हैं। ९ ऐसे गाँव हैं जिनके कागज तो तैयार हैं, मगर पुष्टि-पदाधिकारी के कार्यालय में भेजे नहीं गये हैं। २१ गाँवों में ग्रामसभाएँ बनी हैं और २० गाँवों में ग्रामसमितियाँ। बैरमपुर, सोनपुर और सरदी, इन तीन गाँवों में क्रमशः ७ बी० ११ क०, ८ बी० १४ क०, और २ बी० ९ क०—कुल १८ बी० १२ क० भूमि २४ परिवारों से प्राप्त हुई है। उनमें से ८ बी० १४ क० ३१ भूमिहीनों में बाँटी जा चुकी है। ●

यह सोचने को बाध्य कर दिया है कि स्थिति का शांत और सहज-सा हो जाना बहुत ज्यादा मानी नहीं रखता, मानी रखता है उन कारणों का सम्यक् निदान होना, जो ऐसी घटनाओं को पैदा करते हैं।

ग्रामस्वराज्य-अभियान-समारोह

९ जून '७० से सघन रूप से मुसहरी प्रखंड में जे० पी० के नेतृत्व में ग्राम-स्वराज्य अभियान चला है। अब ऐसी कोई भी पंचायत शेष नहीं रही है, जहां यह काम पूर्ण या आंशिक रूप से नहीं हुआ हो।

कार्य के प्रथम चरण की इस संतोष-प्रद स्थिति के बाद यह आवश्यक समझा गया कि अब पूरे प्रखंड के कार्यकर्त्ता, सहयोगी ग्रामीण जन, ग्रामसभा के सदस्य, शांतिसैनिक आदि समारोहपूर्वक एक जगह बैठें और अब तक की कार्य-स्थिति एवं आगे के कामों पर विचार करें। *अब यह जरूरी लगा कि शेष कामों को* पूरा करने एवं ग्रामस्वराज्य-अभियान के दूसरे चरण के शुभारंभ के लिए प्रखंड-स्तरीय ग्रामसभा गठित की जाय और एक ऐसा संगठन बनाया जाय जिसके निर्देशन में विकास एवं क्रांति के आगामी कार्य योजनाबद्ध ढंग से चलाये जा सकें।

१८ अप्रैल का समारोह अनेक दृष्टियों से अभूतपूर्व रहा। प्रखंड के पचासों ग्रामसभाओं से अलग अलग जत्थों में नारे लगाते, गाते-बजाते, पोस्टर-बैनर लिये हुए जब चारों ओर से झुण्ड-के-झुण्ड ग्रामीण रोहुआ बगीचे के समारोह-स्थल पर जुटने *लगे तो देखनेवाले देखते ही* रह गये। इस अवसर पर ३०० से अधिक युवा-प्रशिक्षित वर्दी-धारी शांतिसैनिकों की टोली ने अहिंसक शक्ति के प्रति लोगों के मन में आश्वासन का भाव पैदा किया।

यद्यपि ७० गांवों में ग्रामदान की दोनों शर्तें पूरी हो गयी हैं किन्तु, मात्र आंकड़ों में शर्तें पूरी हो जाना ग्रामसभा गठन का मार्ग खोलना है। ग्रामसभाएँ तो *वहीं तभी गठित की जाती हैं, जब* ग्राम-भावना प्रकट होती है, उसके ग्यारह संकल्पों के यथायोग्य पालन की भूमिका बनती है, सौहार्दपूर्ण वातावरण बनता है, जिसमें सहज सर्वसम्मत चुनाव संपन्न होता है। इस प्रखंड में कुछ ऐसे भूमि-वान भी हैं जो बीघा-कट्ठा तो बांटने को तैयार हैं, बांटते भी हैं, पर ग्रामसभा में शामिल होना नहीं चाहते। कारण यह है कि उन्हें ग्रामसभा की क्रांतिकारी भूमिका का आभास मिल गया है, और इसे वे अपनी शोषण-वृत्ति और कुप्रभाव कायम रखने की प्रवृत्ति के प्रतिकूल पाते हैं।
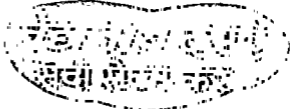
उपर्युक्त आधार पर प्रखंड के पचास प्रतिशत से अधिक गांवों में ग्रामसभा नहीं बन पायी है। अतः प्रखंडसभा के गठन के काम को स्थगित किया गया। मान्यता यह थी कि प्रखंडसभा बनते ही शेष कामों को पूरा करने की जिम्मेवारी प्रखंडसभा को दी जायेगी। हां, उसे कार्यरत रखने हेतु सारी सक्रियता बरती जायेगी। प्रखंडसभा के गठन के अभाव में काम के पग को उसी प्रकार आगे किस तरह ले जाया जाय, यह अभी अभियान में लगे लोगों के लिए विचारणीय विषय है।

('जयप्रकाश शिविर समाचार' से)

सर्व सेवा संघ सर्वव्यापक और सक्षम कैसे बने ?

सर्व सेवा संघ ने देशभर में काफी हद तक ग्रामदान से ग्राम-स्वराज के विचार का व्यापक लोक-शिक्षण किया है। फिर भी यह सगठन देशभर में अभी तक इतना व्यापक और सक्षम नहीं हो सका है कि अपने नैतिक व भौतिक बल से देशभर को प्रभावित कर सके, और आन्दोलन को तेज गति से आगे बढ़ा सके। इसलिए यह आवश्यक है कि सर्व सेवा संघ व्यापक भी हो और सक्षम भी। इस दिशा में संघ के सभी अध्यक्ष श्री जगन्नाथन् एवं मंत्री श्री ठाकुरदास बंग काफी प्रयत्नशील हैं। परन्तु कोई विशेष प्रगति नहीं हो पाती है। कारण कि देश की जनता अभी तक पक्षमुक्त नैतिक सगठन की आवश्यकता महसूस ही नहीं कर रही है, और न हम यह करा पाते हैं। इसलिए अब हमें सोच-समझकर इस सम्बन्ध में शीघ्र कदम उठाने चाहिए, ताकि आन्दोलन तेज गति से आगे बढ़ सके तथा सर्व सेवा संघ देशव्यापी सक्षम सगठन बन सके।

इस सम्बन्ध में मेरे निम्न सुझाव हैं जिन पर गम्भीरता से विचार करके निर्णय लिए जायें। सर्व सेवा संघ व्यापक कैसे हो? यहाँ व्यापकता से मेरा तात्पर्य इधर-उधर अधिक-से-अधिक लोक-सेवक बनाने से नहीं है। वैसे अहिंसक सगठन में संख्या बल इतना महत्त्व नहीं रखता, जितना नैतिक बल। फिर भी इसकी व्यापकता के लिए हर गाँव व नगर के हर मुहल्ले में कम-से-कम लोक सेवक, शांतिसैनिक व सर्वोदय-मित्र जितने बन सकें बनाए जायें। जहाँ तक हो सके, सर्व प्रथम लोक-सेवक न बनाकर शांतिसैनिक या सर्वोदय-मित्र ही बनाए जायें ताकि आगे चलकर उनमें से जो लोक-सेवक बनने योग्य हों, उन्हें लोक-सेवक बनाया जा सके। देश के हर गाँव व शहरों के हर मुहल्ले में सर्वोदय-केन्द्र हो, जिसके सदस्य वहाँ के सभी सैनिक व सर्वोदय-मित्र हों। सैनिक व सर्वोदय-मित्र के लिए सर्वोदय-पात्र का विचार मान्य हो और वे ३)६५ रु० या ३६५ मुट्ठी अनाज केन्द्र को अवश्य दें। सर्वोदय मित्र के लिए १ किलो अनाज या १) देना उचित रहेगा। भूदान-दाता व आदाता तथा ग्रामदानी गाँवों से हमें सर्व प्रथम शुरुआत करनी चाहिए। सर्वोदय-केन्द्र ग्रामस्वराज के लिए सब की शांति, सुरक्षा, एवं शिक्षण का बुनियादी नैतिक सगठन होगा।

इन सभी केन्द्रों के संयोजक या प्रतिनिधियों से नगर तथा प्रखंड सर्वोदय समिति या मित्र-मंडल का गठन किया जाय। इसी प्रकार जिला स्तर पर सभी नगर एवं विकास-खंड प्रतिनिधियों से जिला सर्वोदय मंडल का गठन किया जाय।

सर्व सेवा संघ का गठन, जो आज जिला प्रतिनिधियों से किया जाता है, उसके साथ प्रदेश प्रतिनिधि भी जोड दिये जायें। शांति-सैनिक व सर्वोदय-मित्र हमारे संगठन के सहयोगी सदस्य मान लिए जायें। इस प्रकार संगठन के व्यापक स्वरूप को विकसित करने हेतु दोनों तरफ से कोशिश होनी चाहिए। सर्व सेवा संघ को चाहिए कि वह तत्काल हर प्रदेश से संगठन को सक्रिय व सक्षम करे तथा प्रदेश सगठन की मदद से हर जिले में व्यवस्थित सर्वोदय-मंडल गठित करे। हर जिला सर्वोदय-केन्द्र एवं शांति-केन्द्र का बुनियादी और विकास खंड स्तर पर भी संगठन खड़ा करना चाहिए ताकि सर्वोदय-केन्द्र से सर्व सेवा संघ तक सगठन की कड़ी जुड सके।

इस सगठन को सक्षम करने के लिए नैतिक व भौतिक आधार खडे करने होंगे। अन्यथा सगठन न खड़ा हो सकेगा, न आगे बढ़ सकेगा। भौतिक आधार के लिए सर्वोदय-पात्र ही हो सकता है। लोक-सेवक के लिए सर्वोदय-पात्र के विचार को मान्य करके ३)६५ देना अनिवार्य है ही, अब हमें हर शांतिसैनिक व ग्राम-शांति-सैनिक के लिए भी ३)६५ या ३६५ मुट्ठी धान अनिवार्य मानना चाहिए, तथा तरुण-शांतिसैनिक एवं सर्वोदय मित्र के लिए १) अथवा ग्रामीण क्षेत्र में १ किलो अनाज लेना काफी होगा। सग्रहित अनाज व धन का आधा हिस्सा केन्द्र के पास ही रहे बाकी आधे में से १/८ प्रखंड, १/८ जिला, १/८ प्रदेश, १/८ देश के सगठन के पास भेजा जाय। इससे विचार के आधार पर हमारे सगठन का आर्थिक आधार बन सकेगा, तथा आगे चलकर चन्दे से पीछा छूट सकेगा।

जहाँ तक नैतिक आधार खड़ा करने का प्रश्न है, वह सरासर सभव नहीं है, फिर भी ज्यों-ज्यों सगठन का हर सेवक सतत् स्वाध्याय से विचार स्पष्टता व गहरी निष्ठा निर्माण करेगा, तथा तदनुसार अपना जीवन ढालेगा, तथा व्यक्तिगत एवं सामूहिक रूप से हर प्रकार की अनैतिकता के खिलाफ कदम उठायेगा, तो सेवक और सगठन की नैतिकता निखरेगी। दोनों का नैतिक प्रभाव अपने-अपने क्षेत्र में अवश्य ही पड़ेगा। सगठन को अपने सेवकों के लिए सतत् स्वाध्याय सेवा व त्याग के सामूहिक अवसर प्राप्त हो सकें, इस प्रकार सारे कार्यक्रम निर्धारित करने चाहिए। हमारा साध्य सर्वोदय है और साधन शुद्धि का पूरा पूरा आग्रह है। साथी सह-योगियों का भी कोई अभाव नहीं है सिर्फ उन्हें सस्नेह सगठित व शिक्षित करना है ताकि सर्व सेवा संघ व्यापक हो सके और भौतिक व नैतिक आधार के जरिए सक्षम हो सके।

—बद्री प्रसाद स्वामी

वार्षिक मूल्य : १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पैसे), विदेश में २२ रु०; या २५ शिलिंग या ३ डालर। एक प्रति का मूल्य २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं मनोहर प्रेस, वाराणसी में मुद्रित
आवरण : खण्डेलवाल प्रेस, वाराणसी-१ इस अंक का : २० पैसे

सम्पादक
राममूर्ति
वर्ष : १७ सोमवार
अंक : ३२-३३-३४ २४ मई, '७१
पत्रिका विभाग
सर्व सेवा संघ, राजघाट, वाराणसी-१.
फोन : ६४१९१ तार : सर्वसेवा

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

साथियों के नाम

पाकिस्तान की लश्करी तानाशाही ने बंगला देश के नागरिकों का वंशोच्छेद करने का जो क्रूर-कृत्य जारी किया है उससे हम सबके हृदय भरे हुए हैं। बाबा एवं जयप्रकाशजी ने ठीक कहा है कि हम पाकिस्तान के खिलाफ नहीं हैं। लेकिन पाकिस्तान ने बंगला देश पर जो आर्थिक गुलामी लादी है और प्रजातंत्र पर जो पाशविक हमला किया है उसके खिलाफ आवाज उठाए बिना हम कैसे रह सकते हैं। दुनिया के देशों में मानवता की आवाज बुलंद करने के लिए जयप्रकाशजी इस समय घूम रहे हैं। हमारी परमेश्वर से प्रार्थना है कि वे अपने उद्देश्य में सफल होकर भारत वापस लौटें।

लेकिन साथ ही हमें अपने-अपने क्षेत्र में इस काम को त्वरा के साथ मजबूती से करना है। बाबा को डर है कि बंगला देश का संहार विश्व-शांति के लिए खतरा सिद्ध हो सकता है।

अतः जैसा कि हमने नासिक-सम्मेलन में निश्चय किया, तदनुसार जयप्रकाशजी की विश्वयात्रा की अवधि में हमें अपने देश में, बंगला देश को मान्यता मिले, ऐसा वातावरण निर्माण करना है। हमारे प्रिय नेता जयप्रकाशजी दुनिया की 'कान्शन्स' (चेतना) को जागृत कर रहे हैं, हम अपने देश की 'कान्शन्स' को जागृत करें।

मुझे आशा है कि हर लोकसेवक १०० संस्थाओं एवं संघटनों से मिल-कर, बंगला देश को भारत सरकार मान्यता दे, इस आशय का प्रस्ताव उनसे पास करवाकर प्रधानमंत्री के पास तार द्वारा भेजवायेंगे। इस प्रकार बंगला देश की जनतांत्रिक आकांक्षा को समर्थन देने के लिए आप संस्थाओं से एवं संघटनों से तुरंत सम्पर्क साधें और अपने क्षेत्र से सैकड़ों तार भेज-वायें। मुझे आशा है कि आप इस कार्य को प्राथमिकता देंगे।

मैंने खुद इस काम का प्रारम्भ कर दिया है और आप सब लोकसेवकों की ओर से मैंने आज (१४-५-७१ को) जयप्रकाशजी की विदेशयात्रा के अवसर पर उन्हें तार भेजा है कि "हम सब इस कार्य को उठा रहे हैं।"

आपका,
—एस० जगन्नाथन, अध्यक्ष

सर्व सेवा संघ

● नासिक का सर्वोदय-समाज-सम्मेलन : गांधी के प्रति (?) प्रतिवेदन ●

सेना और संरक्षण

बंगला देश

आपने जितने प्रस्ताव किये हैं, सब अच्छे हैं। मुजीबुर्रहमान ने उत्तम चमत्कार सिद्ध किया। अगर वह अहिंसा भी सिद्ध करता तो दुनिया एकदम ऊपर उठती। लेकिन वह ताकत थी नहीं। इसलिए अब 'गोरिल्ला वारफेअर' चला है। 'तुम शस्त्र-शक्ति से मारना चाहते हो तो मारो, यह कहकर वे लोग मरने के लिए तैयार होते, तो दुनिया भर में ताकत बढ़ती। लेकिन मैं उनको दोष नहीं देता। गांधीजी के जमाने में हमने यही किया। 'मार्शल लॉ' के रहते अहिंसा कैसे सिद्ध करना, वह अभी हुआ नहीं।

लोकतंत्र की रक्षा के लिए सेना का कोई उपयोग नहीं, मिलिटरी से उसका रक्षण नहीं हो सकता। वह तारक नहीं, मारक है। समाजवादी, फॉसिस्ट, सब सेना रखते हैं। इसका मतलब है, 'कॉमन प्रैक्टिस' हो गया। इसलिए बंगला देश में जो हुआ वह यह सिद्ध करता है कि लोकतंत्र की रक्षा सेना से नहीं होती। भारत सेना-विसर्जन करे। हम सब वातावरण तैयार कर सकेंगे तो तीसरी शक्ति खड़ी होगी।

यूनो सेना रखता है, यह यूनो की गलती है। हम सेना नहीं रखेंगे, ऐसा यूनो तय कर सके, तो नैतिक शक्ति बढ़ेगी। आज यूनो की नैतिक शक्ति क्षीण है।

आज अहिंसा की ताकत हमें खड़ी करनी है तो गाँव के सिवाय दूसरा आधार नहीं है। यह गाँव की बुनियाद पर ही हो सकता है। हम यह कर सकें, तो अहिंसा की ताकत खड़ी होगी।

मुजीब ने जो काम किया, वह बहुत बड़ा है। फिर भी वह राजनैतिक है। उन्होंने ज्यादा-से-ज्यादा मत प्राप्त किये। वही इन्दिरा ने किया। लोगों को आदत हो गयी है कि हमारा कारोबार हमें किसी के हाथ में देना है। राजनीतिक दलवाद जाना नहीं। हम तो लोकनीति चाहते हैं, राजकारण से मुक्ति चाहते हैं। इसलिए हमारा आन्दोलन बुनियादी है, ये दो-तीन बातें मन में स्पष्ट हो तो कार्यकर्ताओं का उत्साह बढ़ेगा। दक्षिण केरल, उत्तर बिहार और उत्तर बंगाल सबसे गरीब हैं, लेकिन इन सबसे गरीब है पूर्व बंगाल। शायद एशिया में सबसे गरीब देश होगा। अब मुजीब के हाथ में सत्ता होती तो जैसे हम इंदिराजी की तरफ ताकते हैं, वैसे ही वहाँ के लोग मुजीब की तरफ ताकते। मुजीब भी ज्यादा नहीं कर सकते, दुनिया-भर से पैसा मांगते, तब काम चलता।

बंगला देश में घनी आबादी है। वहाँ छोटी-छोटी नदियाँ बहुत हैं, यातायात मुश्किल है। इस परिस्थिति का फायदा बंगला देश को मिलेगा सेना के खिलाफ लड़ने के लिए। इसलिए उसका मुख्य आधार बारिश है। एक बारिश जोर से बरस जाये तो उसका लाभ मिलेगा पूर्व बंगाल को।

वहाँ से भारत में पहले ही ५० लाख शरणार्थी आये हैं। अब इसमें भी आ रहे हैं। हिन्दू और मुस्लिम दोनों मर रहे हैं। ऊपर से बम गिरता है तो वह यह देखता नहीं कि नीचे हिन्दू है या मुस्लिम।

बंगला देश के प्रश्न पर बाबा ने काफी चिंतन किया है। बीच में एक विचार आया था कि यूनो बिल्कुल चुप है तो उसकी सद्विवेक बुद्धि जगाने के लिए उपवास किया जाय। लेकिन सोचा, जो मनुष्य उपवास के लिए तैयार है उसे और भी क्रियाशील काम करने होंगे। उपवास किया और अनुकूल परिणाम आया तो आगे के काम की जिम्मेदारी आती है। लेकिन सूक्ष्म-प्रवेश के साथ वह कहाँ तक बैठेगा? यह सोचकर मैंने तय किया—बाबा शिव अद्वैत। उसी से जो कुछ होगा वह होगा।

सीमा पर जाने के बारे में

गांधीजी की जो हालत हुई वही बाबा की होगी। मैंने कहा था, 'गांधीजी थे तो गांधी-विश्वास था, अपने पर विश्वास नहीं था।' वैसे बाबा-विश्वास होगा, आपका अपने पर नहीं होगा।

तमिलनाडु

तमिलनाडु के बारे में मैं सोचता हूँ तो मुझे आश्चर्य होता है। तंजावूर जैसा जिला, असंख्य देवालय वहाँ हैं, धार्मिक वृत्ति है, तमिलनाडु का वह धान्य का कोठार है, ऐसे जिले में गरीबों को न्याय क्यों नहीं मिलता? यह मेरी समझ में नहीं आता। अपने श्रमिक को अच्छा रखने में नुकसान नहीं, लाभ है। यह सामान्य ज्ञान है।

तमिलनाडु में कभी-कभी आंदोलन को साम्प्रदायिक स्पर्श होता है। निश्चियन विरुद्ध अन्य जमात, ब्राह्मण विरुद्ध हरिजन इस तरह। ऐसा होता है, इसलिए मानवीय समस्या मुख्य है, जिसका जाति, धर्म के साथ कोई ताल्लुक नहीं, ऐसा नहीं है।

आपने जो सत्याग्रह किया था, उसमें आपको सफलता मिली थी। आपकी बात उन्होंने मान ली थी, यह अकल का काम है ऐसा समझ करके।

तमिलनाडु में मुख्य शक्ति है—गाँव का मंदिर। सब भूमि भगवान की, यह भावना तमिलनाडु में है। भक्तिमान लोग हैं।

रामस्वामी नायकर मंदिरों के खिलाफ क्यों काम करता है? निहित स्वार्थ के खिलाफ लड़ना है तो लड़े। इसलिए मंदिरों का विरोध न करते हुए मंदिरों पर कब्जा कर लें।

अब आपको फैलना चाहिए

भारत में ६,००० प्रखंड हैं। उन ६,००० में आपका कार्य तय होना चाहिए। अब आपको फैलना चाहिए। मुश्किल यह है कि आप लोगों से कहते हैं कि यह काम आपको करना होगा, यानी आप आसमी लोगों को काम में लगाना चाहते हैं।

विनोबा जगन्नाथन् की चर्चा से
ब्रह्मविद्या मंदिर, २ मई, '७१

नासिक—नासिक के बाद

नासिक में क्या हुआ ? जो लोग नासिक नहीं गये थे वे पूछते हैं कि इस बार के सम्मेलन में क्या खास बात हुई ? सर्व-सेवा-संघ के मंत्री श्री ठाकुरदास बंग ने सम्मेलन के सामने जो नया 'त्रिविध कार्यक्रम' रखा उसमें तीन बातें थीं—बंगला देश, पुष्टि और संगठन। वास्तव में नासिक में जो कुछ कहा गया वह इस नये त्रिविध में समाया हुआ है। अब यह बात कहने को नहीं रह गयी है कि ग्रामदान-प्राप्ति की सार्थकता उसकी पुष्टि में है। नासिक में यह बात बार-बार कही गयी, और मानी गयी, कि पुष्टि के अधिक-से-अधिक सघन क्षेत्र लिए जायँ और डटकर काम किया जाय। बिहार के सघन पुष्टि-क्षेत्रों और राजस्थान के बीकानेर जिले में जो काम हुआ है और जो नतीजे सामने आये हैं उनसे सिद्ध हो गया है कि पुष्टि के कार्यक्रम में लोकशक्ति की असीम सम्भावनाएँ छिपी हुई हैं जिन्हें प्रकट करना अब हमारा पहला और मुख्य काम है।

नासिक में सबने माना कि प्राप्ति और पुष्टि एक ही प्रक्रिया के पूर्वार्द्ध और उत्तरार्द्ध हैं और दोनों में समय का 'गैप' नहीं होना चाहिए। प्राप्ति इतनी ही न मानी जाय कि गाँव के लोगों ने हस्ताक्षर कर दिया, बल्कि यह माना जाय कि गाँववालों के हस्ताक्षर हो गये और ७५-५१ की शर्त पूरी हो गयी तो ग्रामदान का 'संकल्प' हुआ। ऐसे 'संकल्पित ग्रामदान' को ग्रामदान उस वक्त घोषित किया जाय जब ग्रामदान की चारों शर्तें पूरी हो जायँ। तब तक घोषणा का मोह रोका जाय। इस प्रकार प्राप्ति का अन्त और पुष्टि का प्रारम्भ, दोनों एक हो जायेंगे। हमने आज तक इनको अलग माना जिसके परिणाम अच्छे नहीं हुए। अब हम सजग रहें।

हमारे आन्दोलन की पुष्टि कई दृष्टियों से हमारे संगठन की पुष्टि पर निर्भर है। इस ओर जितना ध्यान जाना चाहिए उतना अब तक नहीं गया है। हमारे संगठन का बुनियादी घटक लोकसेवक है। सत्ता के मोह और सम्पत्ति के स्वार्थ से अलग रहनेवाला तथा सत्य और अहिंसा के जीवन-मूल्यों पर आग्रह रखनेवाला लोकसेवक ही सर्वोदय का सच्चा सिपाही है। ऐसे लोकसेवकों की जीवन इकाइयाँ देश के हर क्षेत्र में बनेंगी तो लोकशक्ति की स्थानीय प्रेरणा तैयार होगी, इसलिए लोकसेवक अधिक-से-अधिक संख्या में बनने चाहिए, लेकिन यह बात न भूली जाय कि लोकसेवक अच्छे चाहिए, न कि किसी तरह जल्दी-जल्दी बना लेने चाहिए। लोकसेवक हमारे सारे कार्य में बुनियाद की ईंट है, उसका कमजोर होना आन्दोलन के लिए घातक होगा।

नासिक में जितने लोग आये थे उन सबका दिल और दिमाग बंगला देश की समस्या से भरा हुआ था। ढाका के अंग्रेजी पत्र 'पीपुल' के सम्पादक और समाचार सम्पादक का हमारे बीच मौजूद होना हमें बराबर याद दिलाता रहा कि 'सभ्य' कहलानेवाले इस युग में भी बुनियादी मानवीय मूल्यों की क्या स्थिति है। मनुष्य अपने ढंग से अपनी जिन्दगी जी सके, उसकी यह मामूली माँग भी आज तक पूरी नहीं हो सकी है। जनता ने अपनी सुरक्षा और स्वतन्त्रता के लिए जो सैनिक रखे, शासक बनाये और संगठन खड़े किये, वे सब जनता के दुश्मन बन गये। बंगला देश की जनता अपनी कुर्बानी से दुनिया की जनता को यह सबक सिखा रही है कि देश का स्वतन्त्र होना एक बात है और उसमें रहनेवाली जनता का स्वतन्त्र होना बिल्कुल दूसरी। देश के स्वतन्त्र होते हुए भी उसकी जनता गुलाम बनी रह सकती है। शासक और शासन के शस्त्र-धारी सैनिक नहीं चाहते कि जनता उनकी गुलामी से मुक्त हो, ठीक उसी तरह जैसे साम्राज्यवादी नहीं चाहते कि उनके उपनिवेश स्वतन्त्र हों। इसीलिए पाकिस्तान के शासक और सैनिक स्वतन्त्रता की सजा देने के लिए अपनी ही जनता पर एक साथ टूट पड़े हैं। वे सोचते हैं कि अगर जनता खड़ी हो गयी तो उनका क्या होगा ?

आश्चर्य यह है कि दुनिया के लिए बंगला देश में जैसे कुछ हो ही नहीं रहा है। हर देश का दिमाग राजनीति से भरा हुआ है। वह शक्ति और शक्ति के सन्तुलन के अलावा कुछ सोचता नहीं। मनुष्य और मनुष्यता की चिन्ता किसे है ? मनुष्यों की यह दुनिया मनुष्यों की नहीं, सत्ताधारियों की है। जयप्रकाशजी ने ८ तारीख के भाषण में दर्द भरे शब्दों में कहा कि उनका मोह भंग हो गया है। वह सोचते थे सभ्यता में मनुष्यता के लिए स्थान होगा, लेकिन बंगला देश के प्रति दुनिया का जो रुख है वह कुछ और ही बता रहा है।

नासिक में हरएक ने महसूस किया कि बंगला देश की जनता ने स्वतन्त्रता के इतिहास में एक नया अध्याय जोड़ा है। वहाँ राष्ट्रीय स्वतन्त्रता के बाद क्षेत्रीय स्वायत्तता का क्रम शुरू हुआ है। हमने भारत में क्षेत्रीय स्वायत्तता से आगे बढ़कर ग्राम-स्वराज्य की घोषणा की है। यह क्रम उस वक्त तक चलना चाहिए जब तक एक-एक व्यक्ति राज्य के दमन से मुक्त होकर अपनी जगह स्वायत्त न हो जाय, और अपने निर्णय से पड़ोसियों के साथ सहकार के सूत्र में न बँध जाय। राज्य के सशस्त्र संगठन के स्थान पर जनता का सहकारी संगठन बनाना ही अहिंसा की दृष्टि से सच्चा रचनात्मक कार्य है।

बंगला देश का स्वातन्त्र्य-संग्राम और हमारा ग्रामस्वराज्य, दोनों मुक्ति की क्रान्ति के दो चरण हैं। वे अपने देश को मुक्त करना चाहते हैं। गुलामी को मिटाना चाहते हैं, हम अपने लाखों गाँवों और शहरों का। हम दोनों सभ्यता में मनुष्यता की प्रतिष्ठा करना चाहते हैं। हम दोनों चल पड़े हैं। कब मुकाम पर पहुँचेंगे कौन जानता है ? ●

सेना और संरक्षण

बंगला देश

आपने जितने प्रस्ताव किये हैं, सब अच्छे हैं। मुजीबुर्रहमान ने उत्तम असहकार सिद्ध किया। अगर वह अहिंसा भी सिद्ध करता तो दुनिया एकदम ऊपर उठती। लेकिन वह ताकत थी नहीं। इसलिए अब 'गोरिल्ला वारफेअर' चला है। 'तुम शस्त्र-शक्ति से मारना चाहते हो तो मारो, यह कहकर वे लोग मरने के लिए तैयार होते, तो दुनिया भर में ताकत बढ़ती। लेकिन मैं उनको दोष नहीं देता। गांधीजी के जमाने में हमने यही किया। 'मार्शल लॉ' के रहते अहिंसा कैसे सिद्ध करना, वह अभी हुआ नहीं।

लोकतंत्र की रक्षा के लिए सेना का कोई उपयोग नहीं, मिलिटरी से उसका रक्षण नहीं हो सकता। वह तारक नहीं, मारक है। समाजवादी, फॅसिस्ट, सब सेना रखते हैं। इसका मतलब है, 'कॉमन ब्रैकेट' हो गया। इसलिए बंगला देश में जो हुआ वह यह सिद्ध करता है कि लोकतंत्र की रक्षा सेना से नहीं होगी। भारत सेना-विसर्जन करे। हम सब वातावरण तैयार कर सकेंगे तो तीसरी शक्ति खड़ी होगी।

यूनो सेना रखता है, यह यूनो की गलती है। हम सेना नहीं रखेंगे, ऐसा यूनो तय कर सके, तो नैतिक शक्ति बढ़ेगी। आज यूनो की नैतिक शक्ति क्षीण है।

आज अहिंसा की ताकत हमें खड़ी करनी है तो गाँव के सिवाय दूसरा आधार नहीं है। यह गाँव की बुनियाद पर ही हो सकता है। हम यह कर सकें, तो अहिंसा की ताकत खड़ी होगी।

मुजीब ने जो काम किया, वह बहुत बड़ा है। फिर भी वह राजनैतिक है। उन्होंने ज्यादा-से-ज्यादा मत प्राप्त किये। वही इन्दिरा ने किया। लोगों को आदत हो गयी है कि हमारा कारोबार हमें किसी के हाथ में देना है। राजनीतिक दलवाद जाता नहीं। हम तो लोकनीति चाहते हैं, राजकारण से मुक्ति चाहते हैं। इसलिए हमारा आन्दोलन बुनियादी है, ये दो-तीन बातें मन में स्पष्ट हो तो कार्यकर्ताओं का उत्साह बढ़ेगा। दक्षिण केरल, उत्तर बिहार और उत्तर बंगाल सबसे गरीब हैं, लेकिन इन सबसे गरीब है पूर्व बंगाल। शायद एशिया में सबसे गरीब देश होगा। अब मुजीब के हाथ में सत्ता होती तो जैसे हम इंदिराजी की तरफ ताकते हैं, वैसे ही वहाँ के लोग मुजीब की तरफ ताकते। मुजीब भी ज्यादा नहीं कर सकते, दुनिया-भर से पैसा मांगते, तब काम चलता।

बंगला देश में घनी आबादी है। वहाँ छोटी-छोटी नदियाँ बहुत हैं, यातायात मुश्किल है। इस परिस्थिति का फायदा बंगला देशको मिलेगा सेना के खिलाफ लड़ने के लिए। इसलिए उनका मुख्य आधार बारिश है। खूब बारिश जोर से बरस जाये तो उसका लाभ मिलेगा पूर्व बंगाल को।

वहाँ से भारत में पहले ही ५० लाख शरणार्थी आये हैं। अब इसमें भी आ रहे हैं। हिन्दू और मुस्लिम दोनों मर रहे हैं। ऊपर से बम गिरता है तो वह यह देखता नहीं कि नीचे हिन्दू है या मुस्लिम।

बंगला देश के प्रश्न पर बाबा ने काफी चिंतन किया है। बीच में एक विचार *आया था कि यूनो बिल्कुल चुप है तो* उसकी सद्‌विवेक बुद्धि जगाने के लिए उपवास किया जाय। लेकिन सोचा, जो मनुष्य उपवास के लिए तैयार है उसे और भी क्रियाशील काम करने होंगे। उपवास किया और अनुकूल परिणाम आया तो आगे के काम की जिम्मेदारी आती है। लेकिन सूक्ष्म-प्रवेश के साथ वह कहाँ तक बैठेगा? यू सोचकर मैंने तय किया—शान्त शिव अद्वैत। उसी से जो कुछ होगा वह होगा।

सीमा पर जाने के बारे में

गांधीजी की जो हालत हुई वही बाबा की होगी। मैंने कहा था, 'गांधीजी थे तो गांधी-विश्वास था, अपने पर विश्वास नहीं था।' वैसे बाबा-विश्वास होगा, आपका अपने पर नहीं होगा।

तमिलनाडु

तमिलनाडु के बारे में मैं सोचता हूँ तो मुझे आश्चर्य होता है। तंजावूर जैसा जिला, असंख्य देवालय वहाँ हैं, धार्मिक वृत्ति है, तमिलनाडु का वह धान्य का कोठार है, ऐसे जिले में गरीबों को न्याय क्यों नहीं मिलता? यह मेरी समझ में नहीं आता। अपने श्रमिक को अच्छा रखने में नुकसान नहीं, लाभ है। यह सामान्य ज्ञान है।

तमिलनाडु में कभी-कभी आंदोलन को साम्प्रदायिक स्पर्श होता है। क्रिश्चियन विरुद्ध अन्य जमात, ब्राह्मण विरुद्ध हरिजन इस तरह। ऐसा होता है, इसलिए मानवीय समस्या मुख्य है, जिसका जाति, धर्म के साथ कोई ताल्लुक नहीं, ऐसा नहीं है।

आपने जो सत्याग्रह किया था, उसमें आपको सफलता मिली थी। आपकी बात उन्होंने मान ली थी, यह अक्ल का काम है ऐसा समझ करके।

तमिलनाडु में मुख्य शक्ति है—गाँव का मंदिर। सब भूमि भगवान की, यह भावना तमिलनाडु में है। भक्तिमान लोग हैं।

रामस्वामी नायकर मंदिरों के खिलाफ क्यों काम करता है? निहित स्वार्थ के खिलाफ लड़ना है तो लड़ें। इसलिए मंदिरों का विरोध न करते हुए मंदिरों पर कब्जा कर लें।

अब आपको फैलना चाहिए

भारत में ६,००० प्रखंड हैं। उन ६,००० में आपका कार्यालय होना चाहिए। अब आपको फैलना चाहिए। मुश्किल यह है कि आप लोगों से कहते हैं कि यह काम आपको करना होगा, यानी आप आलसी लोगों से काम में लगाना चाहते हैं।

विनोबा जगन्नाथन् की चर्चा से
ब्रह्मविद्या मंदिर, २ मई, '७१

अध्यादकीय

नासिक—नासिक के बाद

नासिक में क्या हुआ ? जो लोग नासिक नहीं गये थे वे पूछते हैं कि इस बार के सम्मेलन में क्या खास बात हुई ? सर्व-सेवा-संघ के मंत्री श्री ठाकुरदास बंग साहब ने सम्मेलन के सामने जो नया 'त्रिविध कार्यक्रम' रखा उसमें तीन बातें थीं—बंगला देश, पुष्टि और संगठन। वास्तव में नासिक में जो कुछ कहा गया वह इस नये त्रिविध में समाया हुआ है। अब यह बात कहने की नहीं रह गयी है कि ग्रामदान-प्राप्ति की सार्थकता उसकी पुष्टि में है। नासिक में यह बात बार-बार कही गयी, और मानी गयी, कि पुष्टि के अधिक-से-अधिक सघन क्षेत्र लिए जायँ और डटकर काम किया जाय। बिहार के सघन पुष्टि-क्षेत्रों और राजस्थान के बीकानेर जिले में जो काम हुआ है और जो नतीजे सामने आये हैं उनसे सिद्ध हो गया है कि पुष्टि के कार्यक्रम में लोकशक्ति की असीम संभावनाएँ छिपी हुई हैं जिन्हें प्रकट करना अब हमारा पहला और मुख्य काम है।

नासिक में सबने माना कि प्राप्ति और पुष्टि एक ही प्रक्रिया के पूर्वार्द्ध और उत्तरार्द्ध हैं, और दोनों में समय का 'गैप' नहीं होना चाहिए। प्राप्ति इतनी ही न मानी जाय कि गाँव के लोगों ने हस्ताक्षर कर दिये, बल्कि यह माना जाय कि गाँववालों के हस्ताक्षर हो गये और ७५-५१ की शर्त पूरी हो गयी तो ग्रामदान का 'संकल्प' हुआ। ऐसे 'संकल्पित ग्रामदान' को ग्रामदान उस वक्त घोषित किया जाय जब ग्रामदान की सारी शर्तें पूरी हो जायँ। तब तक घोषणा का मोह रोका जाय। इस प्रकार प्राप्ति का अन्त और पुष्टि का प्रारम्भ दोनों एक हो जायेंगे। हमने आज तक इनको अलग माना जिसके परिणाम अच्छे नहीं हुए। अब हम सजग रहें।

हमारे आन्दोलन की पुष्टि कई दृष्टियों से हमारे संगठन की पुष्टि पर निर्भर है। इस ओर जितना ध्यान जाना चाहिए उतना अब तक नहीं गया है। हमारे संगठन का बुनियादी घटक लोकसेवक है। सत्ता के मोह और सम्पत्ति के लाभ से अलग रहनेवाला तथा सत्य और अहिंसा के जीवन-मूल्यों पर आग्रह रखनेवाला लोकसेवक ही सर्वोदय का सच्चा सिपाही है। ऐसे लोकसेवकों की जीवन्त इकाइयाँ देश के हर ब्लाक में बनेंगी तो लोकशक्ति की स्थानीय प्रेरणा तैयार होगी, इसलिए लोकसेवक अधिक-से-अधिक संख्या में बनने चाहिए, लेकिन यह बात न भूली जाय कि लोकसेवक बनने चाहिए, न कि किसी तरह जल्दी-जल्दी बना लेने चाहिए। लोकसेवक हमारे सारे कार्य में बुनियाद की ईंट है, उसका कमजोर होना आन्दोलन के लिए घातक होगा।

नासिक में जितने लोग आये थे उन सबका दिल और दिमाग बंगला देश की समस्या से भरा हुआ था। ढाका के अंग्रेजी पत्र 'पीपुल' के सम्पादक और समाचार सम्पादक का हमारे बीच मौजूद होना हमें बराबर याद दिलाता रहा कि 'सभ्य' कहलानेवाले इस युग में भी बुनियादी मानवीय मूल्यों की क्या स्थिति है। मनुष्य अपने ढंग से अपनी जिन्दगी जी सके, उसकी यह मामूली माँग भी आज तक पूरी नहीं हो सकी है। जनता ने अपनी सुरक्षा और स्वतन्त्रता के लिए जो सैनिक रखे, शासन बनाये और संगठन खड़े किये, वे सब जनता के दुश्मन बन गये। बंगला देश की जनता अपनी कुर्बानी से दुनिया की जनता को यह सबक सिखा रही है कि देश का स्वतन्त्र होना एक बात है और उसमें रहनेवाली जनता का स्वतन्त्र होना बिलकुल दूसरी। देश के स्वतन्त्र होते हुए भी उसकी जनता गुलाम बनी रह सकती है। शासक और शासन के शस्त्र-धारी सैनिक नहीं चाहते कि जनता उनकी गुलामी से मुक्त हो, ठीक उसी तरह जैसे साम्राज्यवादी नहीं चाहते कि उनके उपनिवेश स्वतन्त्र हों। इसीलिए पाकिस्तान के शासक और सैनिक स्वतन्त्रता की सजा देने के लिए अपनी ही जनता पर एक साथ टूट पड़े हैं। वे सोचते हैं कि अगर जनता खड़ी हो गयी तो उनका क्या होगा ?

आश्चर्य यह है कि दुनिया के लिए बंगला देश में जैसे कुछ हो ही नहीं रहा है। हर देश का दिमाग राजनीति से भरा हुआ है। वह शक्ति और शक्ति के सन्तुलन के अलावा कुछ सोचता नहीं। मनुष्य और मनुष्यता की चिन्ता किसे है ? मनुष्यों की यह दुनिया मनुष्यों की नहीं, सत्ताधारियों की है। जयप्रकाशजी ने ८ ता० के भाषण में दर्द भरे शब्दों में कहा कि उनका मोह भंग हो गया है। वह सोचते थे संसार में मनुष्यता के लिए स्थान होगा, लेकिन बंगला देश के प्रति दुनिया का जो रुख है वह कुछ और ही बता रहा है।

नासिक में हमलोगों ने महसूस किया कि बंगला देश की जनता ने स्वतन्त्रता के इतिहास में एक नया अध्याय जोड़ा है। वहाँ राष्ट्रीय स्वतन्त्रता के बाद लोकीय स्वतन्त्रता का क्रम शुरू हुआ है। हमने भारत में क्षेत्रीय स्वतन्त्रता से आगे बढ़कर ग्राम-स्वराज्य की घोषणा की है। यह क्रम उस वक्त तक चलना चाहिए जब तक एक-एक व्यक्ति राज्य के दमन से मुक्त होकर अपनी जगह स्वायत्त न हो जाय, और अपने निर्णय से पड़ोसियों के साथ सहकार के सूत्र में न बँध जाय। राज्य के सशस्त्र संगठन के स्थान पर जनता का सहकारी संगठन बनाना ही अहिंसा की दृष्टि से सच्चा रचनात्मक कार्य है।

बंगला देश का स्वातन्त्र्य-संग्राम और हमारा ग्रामस्वराज्य, दोनों मुक्ति की क्रान्ति के दो चरण हैं। वे अपने देश को मुक्त करना चाहते हैं। गुलामी को मिटाना चाहते हैं, हम अपने लाखों गाँवों और शहरों का। हम दोनों समाज में मनुष्यता की प्रतिष्ठा करना चाहते हैं। हम दोनों चल रहे हैं। कब मुकाम पर पहुँचेंगे कौन जानता है ? ●

ग्रामदान-सम्बन्धी सर्व सेवा संघ की नयी नीति

(१) ग्रामदान-संकल्प-पत्र पर हस्ताक्षर प्राप्त करने का कार्य आन्दोलन के लिए एक प्रारम्भिक, लेकिन आवश्यक कदम है। अतएव पूर्व स्वीकृत शर्तों के आधार पर घोषणा-पत्र पर हस्ताक्षर कराने का काम जारी रहना चाहिए। किन्तु हस्ताक्षर प्राप्त करने में पूरी-पूरी सतर्कता और सावधानी बरतनी चाहिए। इसके लिए हस्ताक्षर लेने के पूर्व गाँव की आमसभा का आयोजन करना चाहिए और उसमें गाँववालों को ग्रामदान का सारा विचार समझाना चाहिए। छोटे-छोटे समूहों में चर्चा-गोष्ठी द्वारा भी विचार समझाना चाहिए और गाँव के सहयोगियों को साथ लेकर भी व्यक्तिगत हस्ताक्षर प्राप्त करने चाहिए। प्रतिशत पूरा होने पर हस्ताक्षर देनेवाले ग्रामवासियों की सभा करके सामूहिक संकल्प अवश्य दोहराया जाना चाहिए।

जिन गाँवों में इस प्रकार हस्ताक्षर प्राप्त किये जायेंगे, उन्हें 'संकल्पित ग्रामदान' कहा जायेगा। संकल्पित ग्रामदानों का प्रकाशन जानकारी और रेकार्ड के के लिए अपने पत्रों, पत्रिकाओं और समाचार-पत्रों में भी किया जाना चाहिए।

ग्रामदान के लिए संकल्प और पुष्टि एक ही प्रक्रिया के अंग हैं, इसलिए दोनों के बीच समय का अन्तर नहीं रहना चाहिए। यह स्पष्ट है कि ग्रामसभा-गठन, भूमि-वितरण, ग्रामकोष-निर्माण और मालकियत के विधिवत् हस्तान्तरण के बिना ग्रामदान मात्र संकल्प ही रहेगा, और उसका समाज पर अपेक्षित परिणाम भी नहीं हो सकेगा। इसलिए संकल्पित ग्रामदानों में पुष्टि के लिए जोरदार प्रयत्न करना हमारी प्राथमिक जिम्मेदारी है। जिन गाँवों में पहले ग्रामदान का संकल्प हुआ है, वहाँ पुष्टि का अभियान चलाना तो आवश्यक है ही, साथ ही, ऐसे नये क्षेत्रों में भी जहाँ अब 'संकल्पित-ग्रामदान' हो वहाँ तुरन्त ही पुष्टि का कार्य शुरू किया जाना चाहिए। इसलिए प्रदेशों में आन्दोलन की व्यूह-रचना और संयोजन करते समय इस बात का ध्यान रखना नितान्त आवश्यक है कि संकल्प और पुष्टि के बीच समय का अन्तर न रहे।

(२) संकल्प के पश्चात् अनौपचारिक पुष्टि का कार्य करना अगला कदम है। इसमें ग्रामसभा का गठन, सर्वानुमति से ग्रामसभा की कार्य-समिति का गठन, ५ प्रतिशत भूमि निकालना, भूमिहीनों में उसका वितरण करना, ग्रामसभा के सदस्यों द्वारा ग्रामकोष के लिए अपना भाग अर्पित करना, ग्राम-शान्तिसेना की इकाई का गठन करना और कानूनी पुष्टि के लिए आवश्यक कागजात तैयार करना सम्मिलित है। इस अनौपचारिक पुष्टि के सम्पन्न होने पर ही 'ग्रामदान' सम्पन्न हुआ माना जायगा।

(३) अनौपचारिक पुष्टि सम्पन्न करने के बाद जिन प्रदेशों में ग्रामदान-विधान बन गये हैं, वहाँ कानूनी-पुष्टि के लिए कोशिश करनी चाहिए। •

जयप्रकाश नारायण की विश्व-यात्रा

बंगला देश के लिए विश्व जनमत को जाग्रत और संगठित करने के मिशन पर विश्व-यात्रा के लिए निकलने के पहले श्री जयप्रकाश नारायण ने १५ मई १९७१ को पत्रकार परिषद में कहा कि वे एक स्वतन्त्र व्यक्ति के रूप में और विश्व-नागरिक के नाते इस यात्रा पर जा रहे हैं। यह सही है कि स्वयं भारत सरकार ने भी अभी बंगला देश को मान्यता नहीं दी है। इस प्रश्न पर वे भारत सरकार से सहमत नहीं हैं। लेकिन विश्वयात्रा वे बंगला देश को मान्यता दिलाने के लिए ही नहीं बल्कि संसार के सामने एक दुहरी ट्रेजेडी को स्पष्ट करने के भी लिए कर रहे हैं। दुहरी ट्रेजेडी यह है कि एक तो वहाँ सर्वमान्य मानव अधिकारों के खिलाफ बहुत बड़े पैमाने पर नरसंहार किया जा रहा है और दूसरे जिस तरह लोगों को मारा जा रहा है उसी तरह वहाँ प्रजातंत्र की खुलेआम हत्या की जा रही है।

जे० पी० ने कहा कि वे बंगला देश में नरसंहार को रोकने के लिए तो वातावरण बनायेंगे ही, साथ ही वहाँके प्रजातन्त्र की रक्षा के लिए लोगों और सरकारों को समझायेंगे। बंगला देश के हल की पहली पहल यही हो सकती है कि शेख मुजीबुर्रहमान और उनके साथियों को पाकिस्तान रिहा करे। समस्या का हल क्या होगा, यह मुजीबुर्रहमान और अवामी लीग ही तय कर सकती है।

जयप्रकाश नारायण की यह यात्रा सर्व सेवा संघ, गांधी शान्ति प्रतिष्ठान और गांधी स्मारक निधि के नेताओं, देश के अन्य नेताओं, खासकर प्रसोपा और ससोपा के नेताओं, तथा सरकार से सलाह मशविरा करके तय की गयी है। जे० पी० बंगला देश के प्रधानमंत्री श्री ताजुद्दीन अहमद ने १८ मुद्दों का जो 'डायरेक्टिव' निकाला है उसका भी खुले दिल से समर्थन और सराहना करते है।

जे० पी० ने कहा कि दो सौ साल के उपनिवेशवाद और हिटलर तथा मुसोलिनी के कारण संसार इतना भावनाशून्य और क्रूर हो गया है कि बंगला देश के नरसंहार से भी उसकी संवेदना नहीं जगती।

यात्रा का कार्यक्रम

जे० पी० ४० दिन की इस यात्रा में काहिरा, रोम, बेलग्रेड, मास्को, कोपेनहेगन, स्टाकहोम, हैम्बर्ग, पेरिस, लन्दन, वाशिंगटन, न्यूयार्क, ओटावा, वेंकोवेर, टोकियो, मनीला, सिंगापुर, जार्कार्ता, कुआलालम्पुर और बेंकाक जायेंगे।

पत्रिका-प्रकाशन में वह विलम्ब

प्रेस की गड़बड़ी के कारण 'भूदान-यज्ञ' का यह अंक पूरे एक सप्ताह विलम्ब से प्रकाशित हुआ है। प्रेस के मामले में बेवश होने के बावजूद हम आपके सामने विलम्ब के लिए क्षमा-प्रार्थी तो हैं ही! —सम्पादक

अपनी मन्द गति को अति-तूफान का वेग दें

—सर्व सेवा संघ के अधिवेशन में अध्यक्ष का आह्वान—

बंगला देश में हजारों लोग कत्ल किये गये, हजारों निर्वासित हुए, धर्म के नाम से पहले देश का विभाजन किया, फिर उसके एक भाग का कई वर्षों से शोषण कर उसे गरीब बनाया और अब सहधर्मी लोग कत्ल किये जा रहे हैं। ऐसे वातावरण में हम सब बहुत ही वेदनापूर्ण हृदय से यहां इकट्ठा हुए हैं। आजादी चाहनेवाले देश की जनता तानाशाही और मिलिटरी की भयानक क्रूरता के नीचे रौंदी जा रही है और उसका जीवन बर्बाद किया जा रहा है। शान्तिपूर्वक जनता की स्वतन्त्रता की प्यास को कोई भी बलवान राज्य राक्षसी वृत्ति द्वारा मिटा नहीं पाता, यह इतिहास की सिखावन है। भारत के राजकीय, सामाजिक एवं आर्थिक स्वातन्त्र्य के लिए सत्याग्रह का अनुपम मार्ग दिखाकर महात्मा गांधीजी इसी शताब्दी में जन्मे और जनता की स्वतन्त्रता को कुचल डालनेवाला तानाशाह हिटलर भी इसी शताब्दी में जन्मा। हिटलर मरा और दुनिया ने उसके क्रूर इतिहास को गड्ढे में गाड़ दिया। अब दुनिया प्रकाश की ओर आगे बढ़ रही है। उसी हिंसा के तानाशाही मार्ग से बंगला देश की जनता को कुचल करके याहिया खां की मिलिटरी ने राज्य करने का निश्चय किया है। याहिया खां की पराजय निश्चित है। स्वतंत्रता के लिए बंगला देश की जनता अपने को बलिदान कर रही है। इस शूर योद्धा की सारी दुनिया प्रशंसा कर रही है। हम नतमस्तक होकर प्रणाम करते हैं और उनकी विजय की प्रार्थना करते हैं।

बंगला देश और दुनिया का मौन

इसी सन्दर्भ में एक विचार हमारे मन को व्यथित कर रहा है। इतनी सारी जनता अमेरिका, इंग्लैंड या यूरोप के और किसी देश में मारी गयी होती, इस किस्म का हत्याकांड हिंसा भी वहां हुआ होता, तो दुनिया आवेश के साथ जाग उठी होती। गोरी चमड़ी के लिए कीमत मालूम होती है, लेकिन काले देश के लोगों का लाखों की संख्या में कत्ल हो, खून की नदियां बहें, तो भी गोरी चमड़ीवाले देश अपनी खुशी में और खेल में मस्त रहते हैं। रंगभेद के कारण काले देश की जनता को वे मच्छर के समान मानते हैं। प्रजातन्त्र-प्रिय इंग्लैण्ड, अमेरिका आदि देश लोकतन्त्र को भी खत्म करनेवाले याहिया खां की राक्षसी सत्ता के खिलाफ कोई विरोध या प्रदर्शन नहीं कर रहे हैं। शायद उनको अच्छा लगता होगा कि इस निमित्त से युद्ध-सामग्री का हमारा व्यापार बढ़ रहा है। यूरोप के किसी देश के इतने लोगों को कत्ल किया होता, तो एक बड़ी भयानक आग लग जाती। याहिया खां के खिलाफ युद्ध शुरू हो गया होता।

भारत प्रजातन्त्र की राह पर दृढ़तापूर्वक धीरे-धीरे बढ़ रहा है, इसलिए बंगला देश की स्वतन्त्रता-प्रीति की भावना का यह देश समर्थन कर रहा है। उनकी स्वतन्त्रता उन्हें असहयोग के मार्ग से मिले, इसके लिए हम सब प्रकार की अहिंसक कार्यवाही करेंगे। विनोबाजी और जयप्रकाशजी इसमें हमें मार्गदर्शन कर रहे हैं।

बंगला देश की जनता का स्वतन्त्रता-आन्दोलन देखकर विनोबाजी ने जो उद्गार प्रकट किये उन्हें हमें बारीकी से ध्यान में रखना चाहिए। देश की किसानी सफल हो, और मजदूर हो यह विनोबाजी का स्पष्ट संकेत है। इस देश की विषमता, ऊंच-नीचता, गरीबी तुरन्त दूर हो यह बंगला देश के स्वतन्त्रता-आन्दोलन से हमें सीखना है। यहां विनोबाजी की सूचना है और मैं यहां आपका ध्यान आकर्षित करना चाहता हूं। गरीबी दूर हो और समता स्थापित हो, यह अभिलाषा मध्यावधि चुनाव में बहुत स्पष्ट रूप में जनता ने प्रकट की है, लेकिन उनकी अभिलाषा निकट काल में पूरी होगी, इसके बारे में संशय है। केन्द्र और राज्य सरकार की आज की हलचलों में जनता की अभिलाषा के मुताबिक कोई तेजी नहीं दीख रही है। सत्तारूढ़ पक्ष और सरकार-विरोधी पक्ष, दोनों ही गरीबी दूर करने में उदासीन हैं और कोई खास गम्भीरतापूर्वक काम नहीं कर रहे हैं। गरीबी दूर करने की कोई खास योजना नहीं प्रस्तुत की गयी। अब समय आया है कि मीठी-मीठी बातों से समय बिताया नहीं जा सकेगा। क्या हम उम्मीद करें कि केन्द्र एवं राज्य-सरकारें गरीबी दूर करने के लिए और विषमता मिटाने के लिए तेजी से कदम उठायेंगी?

गरीबी मिटाना और विषमता दूर करना इन दोनों के लिए एक महान आन्दोलन भारत भर में पिछले बीस सालों से चल रहा है, लेकिन राज्य के नेता और दल के नेता यह सब देखते हुए भी न देखने-जैसा व्यवहार कर रहे हैं, और सुनते हुए भी न सुनने जैसा नाटक कर उदासीनता से बैठे हैं। उत्पादन के साधन पर यानी खासकर जमीन पर भगवान का ही स्वामित्व है और व्यक्तिगत स्वामित्व का निराकरण एवं ग्रामस्वामित्व का विचार ग्रामदान द्वारा पेश किये जाने पर भी राजनैतिक लोग जानबूझकर इस सम्बन्ध में सोचने को, चिन्तन करने को, और उसे कार्यान्वित करने को तैयार नहीं हैं। ग्रामीण जनता ने ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य के विचार का, जो विनोबाजी के ज्ञानभण्डार से निकला, बहुत स्वागत किया। यह विचार आगे बढ़ रहा है। ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य आन्दोलन से ही गरीबी दूर होगी, समता आयेगी और जनता की शक्ति निर्माण हो सकेगी।

राजनैतिक नेता ग्रामदान आन्दोलन को स्वीकारें

इसलिए गरीबी दूर करने में जिनकी अभिरुचि हो, ऐसे पार्टी के नेता ग्राम-

दान आन्दोलन को स्वीकार करें और उसे मजबूत बनायें। ग्रामदान आन्दोलन को अस्वीकारते हुए प्रजातन्त्र को मजबूत बनाना या समता एवं गरीबी मिटाने की बात करना केवल ढोंग ही है। इस देश में जनसंख्या बढ़ रही है और जमीन और आदमी का अनुपात बहुत कम है, इसलिए यहाँ की भूमि की जटिल समस्या को सुलझाने के लिए ग्रामदान ही एकमात्र उपाय है। 'लैण्ड सीलिंग' आदि से जनता में समता नहीं आयेगी। अभी सब पार्टियाँ केवल 'सीलिंग' के बारे में ही सोचती हैं, लेकिन 'सीलिंग' से गरीबों के लिए खास कुछ नहीं निकला है, यह साफ है। 'लैण्ड सीलिंग' व्यक्तिगत या पारिवारिक करने से या पाँच-दस एकड़ का रखने से भी समता के लिए बहुत गुंजाइश नहीं है।

भूमि की मालकियत गाँव की हो और गाँव के सब निवासियों के हित में भूमि की व्यवस्था हो, यह आज की परिस्थिति का सर्वोत्तम मार्ग है। ग्रामदान इस दिशा में पहला कदम है। ग्रामदान पर अमल करना राजनैतिक पार्टियों का कर्तव्य है। सन् १९७१ में हुए चुनाव में जनता ने अपनी अभिलाषा को जाहिर कर दिया। इसको पहचाननेवाले राजनैतिक कार्यकर्ता शीघ्र राजनैतिक मार्ग से जनता की अभिलाषा पूर्ण करने में लगेंगे, ऐसी आशा है। सन् १९५७ में ग्रामदान परिषद, एलवाल में प्रमुख राजनैतिक पक्षों ने ग्रामदान आन्दोलन को अपनी स्वीकृति दी थी। सन् १९५७ की तुलना में आज आन्दोलन बहुत आगे बढ़ गया है। इस सन्दर्भ में ग्रामदानमूलक ग्रामस्वराज्य का लक्ष्य सब राजकीय पार्टियाँ स्वीकार करें और कार्यान्वित करें, ऐसी आशा है। गरीबी हटाने और आर्थिक समता लाने का ग्रामदान के बिना और कोई उपाय हो तो हम उसे स्वीकारेंगे। लेकिन ये राजकीय नेता दूसरा कोई मार्ग भी नहीं बतायेंगे और ग्रामदान भी नहीं स्वीकारेंगे, तो इस देश को पश्चिम बंगाल के समान, लंका के समान, बहुत ही बड़ी भयानक अराजकता का सामना करना पड़ेगा। इसलिए विनोबाजी ने बड़े ही उपयुक्त समय पर हमें आगाह किया है।

हम अपनी गति तेज करें

सर्वोदय के हम कार्यकर्ताओं को विनोबाजी की चेतावनी को समझकर अपने में ही कर्तव्य पालन करने में उद्यत हो जाना चाहिए। ग्रामदान के बाद इस चुनौती को स्वीकार कर हमारे नेता जयप्रकाशजी बिहार के मुसहरी प्रखण्ड में महान कार्य कर रहे हैं, और सहरसा जिले में अनुभवी सर्वोदयी-नेता और साथी राजस्थान के बीकानेर में बड़े महत्वपूर्ण काम सफलता के साथ कर रहे हैं, वे सब काम हम सबके लिए मार्ग-दर्शक हैं।

तमिलनाडु देश का दूसरा प्रान्तदान है। तमिलनाडु में भी ६ जिलों में से १४ प्रखण्डों को चुना गया है, उनमें से ६ प्रखण्डों में काम चालू हुआ है। ग्रामदान आंदोलन की जिम्मेदारी है कि पुष्टि का काम पूरा हो। इन प्रखण्डों में जन-शक्ति जागृत हो रही है। इन क्षेत्रों में हमें जनशक्ति से बेकारी-निवारण और गरीबी मिटाने की सफल योजना बनानी चाहिए। इस पुष्टि-कार्य से आर्थिक समता की तरफ हमें अति तीव्र गति से आगे बढ़ना चाहिए। इसीलिए तो इस ग्रामदान-पुष्टि योजना को विनोबाजी अग्नि-तूफान कहते हैं। लेकिन दुर्भाग्यवश इसके बदले हम अति मंद गति से ही जा रहे हैं। विनोबाजी की इस चेतावनी को न समझकर हममें से कई साथी अपने-अपने सार्वजनिक कार्य में लगे हैं। इस परिस्थिति को बदलकर हमें पुष्टि-कार्य में लगना होगा। हर पुष्टि-केन्द्र से अन्याय और शोषण के खिलाफ जनता की सत्याग्रह की शक्ति प्रकट होनी चाहिए। जहाँ जनशक्ति प्रकट हुई, तो देश भर में उसका परिणाम होगा ही। सन् १९७१ साल में देश भर में कम-से-कम १०० प्रखंडों में ऐसे पुष्टि-कार्य के लिए जमकर बैठनेवाले समर्पित भावना के साथी निकलने ही चाहिए।

ग्रामदान के बाद ग्रामसभा का गठन कर ग्रामसभा की जनशक्ति के द्वारा चलाना देना, यह हमारा काम नया भी है, और बहुत कठिन भी है। इस कार्य में अनुभवी और प्रथम दर्जे के कार्यकर्ता लगने चाहिए। ग्रामीण जनता के मनोभावों को समझकर प्रश्नों की समीक्षा कर उपाय ढूँढने का और योजना पर अमल करने का प्रशिक्षण कार्यकर्ताओं का देना अत्यन्त आवश्यक है। ग्रामसभा की एकता को बनाने में राजनैतिक दल रूपी नयी जाति बहुत ही विघ्नकारी है। आर्थिक विषमता बहुत पुराना रोग है। राजनैतिक भेदासुर चुनाव के समय टुकड़े कर रहा है और इस भेदासुर के सामने एकता लाना बड़ा कठिन काम है। राज्य-स्तर पर, जिले के स्तर पर पार्टी नेताओं का गठन कर यदि बाद में ग्रामसभाओं के काम के लिए हम सहानुभूति प्राप्त करेंगे तो ही गाँव में अनुकूल परिस्थिति निर्माण होगी। भेद-भाव को भूलकर, ग्राम विकास-कार्यों में पार्टी-भेद को भुलाकर जनता को ऐक्य के आधार पर कार्यशील करने का ग्रामदान आन्दोलन के सिवाय दूसरा कोई मार्ग नहीं दीख रहा है।

भूमि-सवाल हल करने में लगें

ग्रामसभा की स्थापना होने पर ग्रामदान-योजना के मुताबिक २०वाँ हिस्सा जमीन निकालना बहुत कठिन लगता है। जहाँ सिंचाई नहीं है, ऐसे क्षेत्रों के ग्रामदानी गाँवों में अभी कुछ जमीन निकल सकती है। इस जमीन को भी खेती लायक बनाने के लिए पूँजी की जरूरत है। सिंचाई की सुविधावाले क्षेत्रों में २०वाँ हिस्सा जमीन आमतौर पर नहीं निकल रही है, ऐसा ही कहना होगा। कई बड़े जमींदार जमीन छोड़ने में पीछे हटते हैं और कई जमींदार ग्रामदान आन्दोलन में शामिल नहीं होते और ग्रामदान के बाहर ही रहते हैं। ऐसी परिस्थिति में ग्रामसभा इकट्ठी हो और जनता प्रेमभाव से ऐसे जमींदारों के पास जाकर जमीन माँगे और न देने पर उसका उपाय ढूँढ़े। इस

प्रकार अहिंसक मार्ग से जनशक्ति का निर्माण होना चाहिए। एक और कठिनाई हमें ग्रामदानी गाँवों में दूर करनी है। मठ और मन्दिर जैसी सार्वजनिक संस्थाओं की जमीन को भी जमींदारों ने अपने कब्जे में कर रखा है। सरकारी पड़ती जमीन को भी इन लोगों ने अपने हाथ में रखा है। इन प्रश्नों का निपटारा ग्रामसभा करे, ऐसा जनता चाहती है। जैसे 'लैण्ड सीलिंग' कानून के खिलाफ कई तरह से इन लोगों ने जमीन को अपने पास दबाकर रखा है। खुद का स्वामित्व छोड़ने के पूर्व कम-से-कम मन्दिर, मठ और सरकारी जमीन तो ग्रामसभा को दे देने के लिए इन जमींदारों को आगे आना चाहिए। जनता की शक्ति विकसित कर ग्रामसभा को इस प्रश्न का निराकरण करना चाहिए। यह ग्रामसभा का पहला कर्तव्य है। अलावा इसके बढ़ते हुए व्यापार के कारण, शहरों में बढ़ती हुई कामकाज की सुविधा के कारण लोग शहरों में जाकर बस रहे हैं और इस प्रकार 'एबसेन्टी लैण्डलार्डिज्म' यानी बाहर के जमींदारों का वर्ग बढ़ रहा है। जमींदारों की जमीन फिलहाल 'एडहॉक' तरीकों पर क्यों न हो, ग्रामसभा के नियंत्रण में आनी चाहिए। ग्रामसभा का कानूनी उचित हिस्सा गाँव के बाहर के जमींदारों का निश्चित करना होगा। मुआवजे की रकम उचित मुद्दत में देकर जमीन ग्रामसभा की मालिकी की कर देनी चाहिए। जमीन के बारे में ऐसे सुधार ग्रामसभा द्वारा कार्यान्वित किये जाने पर ग्रामसभा जीवित संस्था बनेगी। जनशक्ति द्वारा ही यह सब होगा। विनोबाजी भी यही चाहते हैं।

वैज्ञानिक रीति से कृषि-उत्पादन बढ़ाने की योजना बनाने के साथ-साथ ग्रामसभा गाँव के उद्योगों की योजना बनाये, मुख्यतया खाद्य वस्तुओं की उपयोग के लायक वस्तु बनाने का उद्योग, कपड़ा बनाने का उद्योग, मकानों की रचना की ईंटें, कवेलू, चूना आदि उत्पन्न बनाने की योजना ग्रामसभा तैयार कर सकती है। ग्राम-उद्योग योजना को गाँव की जनता ग्राम-सभा द्वारा अपनायेगी तभी खादी-आंदोलन भविष्य में सफल होगा। केन्द्र और राज्य-सरकारों को अपनी विकास-योजना ग्रामसभा द्वारा कार्यान्वित करने के लिए देना चाहिए।

सर्वोदय समाज के निर्माण के लिए विकेन्द्रित अर्थ-रचना, विकेन्द्रित शासन और उनके द्वारा अंतिम लक्ष्य ग्रामस्व-राज के सम्बन्ध में जनता को ग्रामसभा द्वारा स्पष्ट विचार-प्रचार और शिक्षण, सामर्थ्य दिया जाना चाहिए। जैसे, स्वराज्य के लिए राष्ट्रीय सेवादलों की स्थापना हुई वैसे हर गाँव में ग्रामसभा ग्रामस्वराज्य-सेवक की सेना को खड़ा करे। उनके प्रशिक्षण की व्यवस्था प्रखण्ड-स्तर पर करनी चाहिए। गाँव के नौजवान ग्रामस्वराज्य-सेवक के नाते प्रखण्ड-स्तर पर शांति-रक्षा का और शांति-सैनिक का भी काम करेंगे। जंगल-सुधार, नयी जमीन बनाना, रास्ते तैयार करना, गृह-निर्माण ऐसे विधायक काम 'लेबर आर्मी' के रूप में ये ग्रामस्वराज्य-सेवक करेंगे। इन सबके लिए प्रखण्ड-स्तर में प्रखण्ड-सभा के निर्माण के साथ-साथ ग्रामस्वराज्य-तरुण सेवक-सेना भी तैयार होनी आवश्यक है।

संगठन मजबूत बनायें

एक बड़ी कमजोरी का हमें भान होना चाहिए। ग्रामस्वराज्य आन्दोलन के लिए ग्रामीण, जिला और प्रांतीय स्तर पर संगठन निर्माण नहीं हुआ है और सर्व सेवा संघ ऊपरी स्तर पर कमजोर स्थिति में चला आ रहा है। कुछ प्रान्तों में प्रांतीय सर्वोदय मण्डल भी शक्तिहीन स्थिति में चले आ रहे हैं। विनोबाजी हमें सचेत करते हैं कि अभी तक सर्व सेवा संघ शक्तिशाली नहीं हुआ है। विनोबाजी से पूछा गया था कि राष्ट्र भर में बंगला देश के नाम से एक दिन निश्चित कर उपवास, प्रार्थना आदि करने के सम्बन्ध में कार्यक्रम दिया जाय या नहीं। विनोबाजी ने स्वीकृति नहीं दी, क्योंकि वे हमारे संगठन की कमजोरी अच्छी तरह जानते हैं। ऐसे वक्तव्य पर कितनी ग्रामसभाएँ कितने गाँवों में अमल करनेवाली होंगी, यह विनोबाजी जानते हैं। हर प्रखण्ड-स्तर पर सर्वोदय मण्डल चलाने के लिए हजारों समर्पित लोग लगेंगे, इसके लिए क्या प्रांतीय योजना बनायी जाय, इसका निर्णय नासिक के इस संघ-अधिवेशन में लेना है जहाँ स्वशासित कार्य चल रहे हैं या जहाँ ग्रामदान-क्षेत्र हैं, ऐसे क्षेत्रों में लगातार पुरुष होकर प्रखण्ड-स्तरी। संगठन १९७१ में करें इसके लिए हम क्रियाशील होना चाहिए। इसके सिवाय कम-से-कम १०० जिलों में जिला-स्तर का काम चलाने लायक सर्वोदय मण्डल इस साल हमें बनाने चाहिए। जिला-स्तर पर सर्वोदय सेवक जिला सर्वोदय-सम्मेलन बुलाकर इकट्ठे हों, उसमें से सर्वोदय मण्डल बनायें और आगे के काम की योजना बनायें। १०० जिलों में हम इस साल कार्य कर सकते हैं क्या? इस सम्बन्ध में इस नासिक के सर्व सेवा संघ के अधिवेशन में निर्णय लेना चाहिए।

नासिक,
दिनांक ५-५-'७१

—एस० जगन्नाथन्

पढ़िए

बंगला देश सहायता-कोष के लिए प्रकाशित

'बंगला देश का संघर्ष'

- सन् १९०५ से अबतक ७१ वर्ष का संक्षिप्त इतिहास
- शोषण, हिंसा और दमन की कहानी
- नयी सरकार की मान्यता का सवाल और विश्व की सरकार
- विश्व-जनमत और दुनिया के अखबारों की राय

मूल्य : ५० पैसे, डाक-खर्च : १० पैसे

प्रकाशक : नगर सर्वोदय मंडल (गांधी शांति प्रतिष्ठान केन्द्र) टाउन हाल, वाराणसी-१

सर्व सेवा संघ के मंत्री का प्रतिवेदन

सात माह पहले हम सब लोग सेवाग्राम में मिले थे। तब २ अक्तूबर के पवित्र दिन बाबा को ग्रामस्वराज्य-कोष अर्पण करने का समारोह हुआ। उस समय ग्रामदान पुष्टि, प्राप्ति, लोकसेवक की परिभाषा, ग्रामस्वराज्य-कोष आदि विषयों पर चर्चाएँ हुईं। सेवाग्राम-अधिवेशन से ग्रामदान-आंदोलन ने नया मोड़ लिया। वैसे तो राजगीर-सम्मेलन से ही आंदोलन ने अपना रुख बदला था। सेवाग्राम-अधिवेशन में पुष्टि पर जोर देने का तय हुआ। वैसे ही ग्रामसभा-गठन एवं बाँटने योग्य जमीन का आधा हिस्सा जमीन बँटने पर ही ग्रामदान की घोषणा की जाय, यह सेवाग्राम-अधिवेशन में तय किया गया।

पर पिछले सात महीनों में इस निर्णय के मुताबिक कहीं ग्रामदान चला नहीं। कार्यकर्ता इस विचार को मानते हैं, लेकिन अपने को कमजोर महसूस करते हैं। इसलिए राह खोल सकें ऐसे सूझबूझवाले, अनुभवी और आत्मविश्वास रखनेवाले कार्यकर्ताओं को इस काम में अगुवा बनकर कहीं काम करके दिखाना चाहिए अन्यथा प्राप्ति की दृष्टि से आंदोलन कुंठित सा हो जायेगा। कम-से-कम ग्रामदान के विचार-प्रचार एवं गाँववालों से ग्रामदान-पत्र पर हस्ताक्षर लेने का काम पूर्ववत् जारी रहना चाहिए था। ऐसे गाँवों को हम ग्रामदान करके घोषित नहीं करें। लेकिन प्रचार तो शुरू रहना चाहिए था। वह भी नहीं हुआ। यह ठीक नहीं हुआ।

पुष्टि-कार्य

पुष्टि का काम बिहार एवं तमिलनाडु में सघन रूप में हो, ऐसा सेवाग्राम-अधिवेशन में तय हुआ था। देशभर में जहाँ-जहाँ अनुकूल क्षेत्र हो वहाँ भी पुष्टि-कार्य शुरू करने का निर्णय किया गया था। यह काम बिहार, तमिलनाडु एवं राजस्थान के बीकानेर जिले में चल रहा है। बिहार में मुजफ्फरपुर, पूर्णिया, सहर्षा, दरभंगा आदि जिलों में पुष्टि का काम शुरू हुआ है। मुसहरी के लिए देशभर से चुने हुए आठ लोगों की माँग की गयी थी। वह माँग पूरी नहीं हो सकी। गुजरात, महाराष्ट्र, मध्यप्रदेश एवं बिहार के कुछ साथी वहाँ मदद के लिए गये थे। मुसहरी के काम का प्रथम चरण पूरा हुआ है। और वहाँ का काम अब इस स्थिति में आ पहुँचा है कि जयप्रकाशजी अब कुछ समय बाहर भी दे सकेंगे। लेकिन इसी समय जलालपुर में एक नागरिक की हत्या हो गयी है। हम आत्मसंतुष्ट न रहें, इसके लिए यह एक चेतावनी है।

सहरसा में सुश्री निर्मला बहन, कृष्णराजजी आदि अखिल भारतीय स्तर के कार्यकर्ता धीरेन्द्रभाई के मार्गदर्शन में जुटे हुए हैं। बिहार के साथियों के अलावा बंबई, गुजरात, उत्तर प्रदेश आदि प्रदेशों के कुछ साथी उन्हें मदद कर रहे हैं। आगे का हमारा काम कार्यकर्ताप्रधान नहीं पर जनताप्रधान हो, यह हमारी पुष्टि के काम की दिशा है। इसके लिए लोगों में चेतना पैदा करके, उनका नेतृत्व जगाकर, उन्हें संगठित, प्रशिक्षित करके उनके द्वारा पुष्टि का काम आगे बढ़ाना है। इसलिए वहाँ सालभर के लिए ऐसे समर्थ साथियों की जरूरत है, जो प्रशिक्षक भी बन सकें। धीरे-धीरे यहाँ पुष्टि का काम जड़ पकड़ रहा है। हवा बदल रही है। एक हजार से अधिक भूमिहीनों में तीन सौ एकड़ से अधिक भूमि का वितरण हुआ है। गाँवों में ग्रामसभाएँ गठित हुई हैं। १७ गाँवों में ग्रामकोष इकट्ठा हो रहा है। तरुणों को संगठित करने का काम चल रहा है। भविष्य में उसका असर जरूर दिखाई देगा। अखिल भारत शांतिसेना मंडल ने अपनी कुछ शक्ति इस काम में लगायी है। आचार्यकुल का काम भी चल रहा है।

पूर्णिया जिले के रूपौली थाने में श्री वैद्यनाथ बाबू डटे हैं। फिलहाल उनका स्वास्थ्य कुछ नरम है। उनके ठीक होते ही यहाँ का काम फिर जोरों से आगे बढ़ेगा। भागलपुर जिले में नौगछिया, मुंगेर जिले में झाझा (यहाँ प्रखडसभा भी बन गयी है) और चौथम, मुजफ्फरपुर जिले में वैशाली में भी पुष्टि का काम चल रहा है। दरभंगा जिले में ब्रह्मविद्या मंदिर की सुशीला बहन अकेली ही बिरौल प्रखंड में अलख जगा रही हैं। राजस्थान के कार्यकर्ताओं ने अपनी सारी शक्ति बीकानेर जिले के पुष्टि-कार्य पर लगाने का तय किया है। चार प्रखंडों का सवापाँच सौ गाँवों का यह छोटा-सा जिला है। अकेले बीकानेर प्रखंड में एक लाख एकड़ से अधिक भूदान मिला है। नहर आने से वह रेगिस्तान कहलानेवाली भूमि अब सोना उगलेगी। खुशी की बात है कि राजस्थान के समर्थ बुजुर्ग साथी तथा संस्थाएँ, विशेषतः खादी-संस्थाएँ तन-मन-धन से इस काम में लगी हैं। इन सब कारणों से बीकानेर जिला बहुत जल्द देश को राह दिखा सकेगा ऐसी उम्मीद है। सहरसा, मुसहरी एवं तंजौर आदि जिलों की तरह ही यह भी एक अखिल भारतीय क्षेत्र है, जहाँ से सर्वोदय आंदोलन को बहुत अपेक्षाएँ हैं। श्री बद्रीप्रसाद स्वामी का पूरा समय तथा श्री सिद्धराज ढड्ढा का मुख्य समय इसी महत्त्वपूर्ण काम में लग रहा है।

तमिलनाडु तो संघ के अध्यक्ष का ही प्रदेश है। अपनी पूरी शक्ति वे वहाँ लगा रहे हैं। तमिलनाडु-दान के बाद पुष्टि के काम में विशेष गति नहीं आ पायी थी। अतः श्री जगन्नाथनजी ने कार्यकर्ताओं का धक्का देने, झकझोरने के लिए ता० ३० जनवरी से १२ फरवरी तक उपवास किया। उसका परिणाम अच्छा हुआ। कार्यकर्ता हड़बड़ाते हुए जगे, पुष्टि की योजना बनायी गयी और वे काम में जुटे। अपने उपवास-काल में उन्होंने एक सफल सत्याग्रह भी किया। तमिलनाडु में, विशेषतः तंजौर जिले में भूमि की समस्या भयंकर जटिल है। मठ, मंदिर तथा बड़े-बड़े जमींदारों ने बहुत सारी भूमि हड़प ली है। अतः भूमि का प्रश्न लेकर पुष्टि का काम आगे बढ़ाने का वहाँ के कार्यकर्ताओं ने तय किया है।

महाराष्ट्र में काफी मिलान हुआ है, वहाँ के पुष्टि के काम में अधिकतर शक्ति लगाने का महाराष्ट्र सर्वोदय मंडल ने तय किया है। काम का प्रारम्भ भी हो गया है। सर्वोदय-सम्मेलन समाप्त होते ही इस काम में महाराष्ट्र की शक्ति लगेगी।

शांतिसेना

आज तक हमारा सारा आंदोलन कार्यकर्ताप्रधान रहा है। श्री शंकररावजी ने राजगीर में कहा था कि दरअसल लेने का काम कार्यकर्ता न करें, वातावरण बनाने का काम वे करें। गाँव के लोगों को इस काम के लिए प्रवृत्त करें। महाराष्ट्र में ग्राम-शांतिसेना तथा तरुण-शांतिसेना के माध्यम से कार्यकर्ता प्राप्त करने तथा प्रशिक्षण देने का काम शुरू हुआ है। उसका अच्छा परिणाम नजर आ रहा है। विविध शांतिवादी तरुण सामने आ रहे हैं। उत्कल सर्वोदय मंडल ने ग्राम-शांतिसेना एवं ग्रामदानी गाँवों के कार्यकर्ताओं का शिविर लिया। उसमें आंदोलन जन-आधारित बनाने की एवं उसे ग्रामदानी गाँवों के कार्यकर्ताओं की शक्ति से चलाने का निर्णय लिया गया, जिससे कि प्रदेश-दान की ओर द्रुत गति से कदम बढ़ सकें। मध्यप्रदेश, गुजरात, कर्नाटक, आन्ध्र आदि प्रदेशों में भी पुष्टि का काम प्रारम्भ हुआ है।

देश के कुछ चुने हुए ग्राम शांतिसैनिकों के प्रशिक्षकों का एक शिविर कोसबाड (महाराष्ट्र) में हुआ जो बड़ा असरकारी साबित हुआ। विद्यार्थियों की छुट्टियों में तरुण-शांतिसेना का एक अखिल भारतीय शिविर इन्दौर में हुआ था। उससे अनेक तरुण प्रेरित हुए और उन्होंने अपना एक साल का समय इस काम के लिए देने की घोषणा की। उनका एक 'चलते विद्यालय' चला और वे ग्रामदान काम में भी जुट गये हैं। इनमें से कई स्नातकोत्तर परीक्षा पास हैं। उनके कारण आज कई नये-नये तरुण इस काम के लिए समय देने के लिए आगे आ रहे हैं। यह एक खुशी की बात है। तरुण-शक्ति के इस आन्दोलन में गति के साथ और बड़ी संख्या में आये बिना आन्दोलन गति के साथ आगे बढ़ेगा नहीं।

सत्याग्रह

गुजरात के भरूच जिले में श्री हरि-वल्लभभाई पारीख के मार्गदर्शन में अंकलेश्वर की भूमि-समस्या को लेकर २४६ भाई-बहनों ने एक सफल सत्याग्रह किया। दूसरा एक सत्याग्रह गुजरात में खेडा में हुआ, जिसके कारण १८ लोगों को कारावास हुआ। काम करने पर भी मजदूरी न मिलने के कारण कच्छ में एक सत्याग्रह हुआ। हरियाणा में रेवाड़ी में श्री सुशीलाजी ने एक स्थानीय समस्या को लेकर उपवास किया और वह हल हुई। जगह-जगह होनेवाले हर अन्याय के खिलाफ सत्याग्रह करना आज शायद संभव नहीं होगा। पर कम-से-कम भूमि के क्षेत्र में होनेवाला एक भी अन्याय हमें नहीं सहना चाहिए। भविष्य में भी हमें इस ओर ध्यान देना चाहिए। हमारे आंदोलन का मुख्य माध्यम हमने भूमि-समस्या माना है। तो इस विषय में हमारी परिकल्पना स्पष्ट होनी चाहिए।

लोकनीति

इस साल मध्यावधि चुनाव में मत-दाता-शिक्षण का कुछ काम हुआ। समयाभाव के कारण ज्यादा काम नहीं हो पाया। पर जो थोड़ा-बहुत हुआ उसका काफी अच्छा असर नजर आया। गुजरात, महाराष्ट्र, आन्ध्र आदि प्रांतों में कुछ अधिक काम हुआ। गुजरात और महाराष्ट्र के काम में तो कुछ अनोखे कदम भी स्पष्ट हुए। कश्मीर में इस चुनाव के समय वहाँ की स्थिति के बारे में अध्ययन तथा निरीक्षण करने एक अध्ययन-दल भेजा गया था। उसका अच्छा असर हुआ।

मध्यावधि चुनाव में जो अनुभव आये उनके आधार पर हमें सन् १९७२ के चुनाव के लिए तैयारी करनी चाहिए। जल्द ही सर्वोदय का घोषणा-पत्र (मेनिफेस्टो) प्रकाशित हो इस दिशा में प्रयत्न जारी है। और उसके लिए एक समिति भी नियुक्त की गयी है।

संगठन

हमारा संगठन व्यापक बने इस दृष्टि से लोकसेवक की सदस्य देने के शर्तें ढीली की गयी। फलस्वरूप जगह-जगह लोक-सेवक बन रहे हैं, पर मंथर गति से। लोक-सेवक तथा सर्वोदय-मित्र बनाने का काम हमें तेज गति से करना चाहिए। इससे संगठन व्यापक बनेगा, साथ-साथ सबल भी होगा। हमारे छोटे दोरे कार्य-कर्ताओं की शक्ति का अंदाज निरास इससे हो सकेगा और उनका आत्म-विश्वास बढ़ेगा। अंतिम लोगों के पास पहुँचना होगा जिससे जन-सम्पर्क बढ़ेगा। जन-आन्दोलन बनाने की दृष्टि से यह और भी आवश्यक है। लेकिन इस काम में टोलियाँ निर्माण करना होगा। इसके लिए एक महीनाभर देशभर में एकसाथ इस काम की मुहिम चलाये बिना उचित गति से यह कार्य होगा नहीं।

साहित्य-प्रचार

विचार-प्रचार का मुख्य साधन हमारी पत्रिकाएँ हैं। हर सप्ताह वे नया संदेश लेकर आती हैं। अतः हर गाँव एवं नगर में उनको पहुँचाना चाहिए। जमाने की रुचि का ख्याल में रखते हुए हमारा साहित्य-निर्माण होना चाहिए। खुशी की बात है कि प्रकाशन-समिति इस दिशा में सोच रही है और प्रयत्नशील है। व्यापक दृष्टि से एक बड़े पैमाने की साहित्य-प्रकाशन-प्रचार की निर्माण एवं बिक्री की योजना समिति ने बनायी है।

आचार्यकुल

आचार्यकुल का काम धीरे-धीरे कुछ रूप ले रहा है। गत वर्ष में उत्तरप्रदेश के आचार्यकुल का राज्यव्यापी सम्मेलन हुआ। आचार्यकुल का काम बिहार, महाराष्ट्र में भी आगे बढ़ रहा है। शिक्षित जगत् में यह विचार जड़ पकड़ रहा है इसका यह प्रतीक है। आचार्यकुल का तरुण-शान्तिसेना के काम पर भी अच्छा असर होगा।

नयी तालीम

नयी तालीम समिति अब अलग से रजिस्टर्ड संस्था हो चुकी है। अतः वह एकाग्रता से शिक्षण का काम कर सकेगी।

पुष्टि का काम जैसे जैसे बढ़ेगा वैसे-वैसे गाँव के शिक्षण का सवाल भी पुष्टि के बाद के कार्य के रूप में हाथ में लेना पड़ेगा। इस प्रकार नयी तालीम के लिए अब विशाल क्षेत्र खुल रहा है।

नगर-कार्य

ग्रामस्वराज्य के कोष का काम करते-करते शहरों के शिक्षित और धनवान लोगों से संपर्क हुआ। इनमें भविष्य में भी सम्पर्क बना रहे तथा सर्वोदय-कार्य से वे परिचित होकर उसमें रुचि लें इस उद्देश से 'सर्वोदय-सचयन' (डायजेस्ट) साल में तीन बार निकालकर देशभर के चार-पाँच हजार लोगों तक पहुँचाने की योजना बनी है। दिल्ली राजधानी होने से वहाँ देश के नेता और नीति-निर्धारक रहते हैं। देश-विदेश से भी काफी मेहमान वहाँ आते हैं। सर्वोदय-विचार का परिचय और कार्यक्रमों की जानकारी उन्हें मिले इस दृष्टि से दिल्ली में श्री देवेन्द्रकुमार गुप्त के मार्गदर्शन में एक 'सूचना-केन्द्र' खोला गया है। अन्य नगरों में भी काम शुरू करने का राजगीर-सम्मेलन में विनोबाजी ने सुझाया था। उद्योग के क्षेत्र में ट्रस्टीशिप की भावना से काम करने का योजनाबद्ध प्रयत्न होना अभी शेष है। कुछ उद्योगपतियों ने ट्रस्टीशिप का सिद्धान्त अपने उद्योग तथा जीवन में लाने की तैयारी बतायी है और इनमें से कुछ ने इस दिशा में एक-दो प्राथमिक कदम भी रखने शुरू किये हैं। इस काम को अंजाम देने के लिए नगर-समिति का पुनर्गठन किया गया है।

विविध

ग्रामदान-विकास समिति की ओर से वाराणसी में एक गोष्ठी हुई। अनेक विषयों के सम्बन्ध में चर्चा करना आवश्यक होता है। लेकिन समयाभाव के कारण विषय-सूची निर्धारित सभाओं में और बैठकों में यह हो नहीं पाता है। अतः किसी विषय का या समय का बंधन न मानते हुए श्री जयप्रकाशजी की उपस्थिति में बिहार में नरसिंहपुर में पाँच दिन का मुक्त मिलन हुआ। इसमें एक-दूसरे को नजदीक से जानने का और विचार समझने का मौका मिला। यह मिलन उपयोगी साबित हुआ।

जायदाद

गत जनवरी में प्रबंध-समिति ने अपनी अनावश्यक जायदाद बाँटकर एवं बेचकर हलका होने का निर्णय किया। इस पर शीघ्र अमल करना है।

खादी

खादी की स्थिति डाँवाडोल है। उस पर विचार कर मार्ग सुझाने के लिए जनवरी की प्रबंध-समिति की बैठक में एक समिति नियुक्त की गयी। सच देखा जाय तो खादी के लिए अब सच्ची बुनियाद बन रही है। पुष्टि समाप्त होने पर ग्रामदानी गाँवों में जो विकास-कार्य होगा उसमें ग्रामाभिमुख खादी को प्रमुख स्थान रहेगा। अतः खादी के भविष्य का अब वास्तविक उदय हो रहा है।

केरल एवं बंगाल

केरल एवं बंगाल सर्वोदय-आंदोलन में हमेशा ही प्रश्न-प्रदेश रहे हैं। इस वर्ष केरल में जन-जागृति-सेना का गठन हुआ और सर्वोदय मंडल ने हिंसा के खिलाफ आम उपवास (मास फास्ट) त्रिवेन्द्रम के क्षेत्र में संगठित किये। केरल सर्वोदय मंडल का पुनर्गठन किया गया और श्री मन्मथन् अध्यक्ष बनाये गये। कलकत्ता में बंगाल सर्वोदय-मंडल के बीस साल के जीवन में पहली बार बंगाल प्रदेश सर्वोदय सम्मेलन श्री जयप्रकाशजी की अध्यक्षता में दो माह पूर्व सम्पन्न हुआ। कलकत्ता में हिंसा का वातावरण होते हुए भी ६०० प्रतिनिधि इस सम्मेलन में शरीक हुए। इसलिए कार्यकर्ताओं में उत्साह आया और उन्होंने भविष्य के काम की योजना बनायी। त्रिवेणी से कलकत्ता तक शांतियात्रा और कलकत्ता शहर में शांतियात्रा श्री दिनेश सिंह तथा नारायणदेसाई के मार्गदर्शन में निकाली गयी। बंगाल सर्वोदय मंडल का पुनर्गठन हुआ और श्री अनंग विजय मुकर्जी अध्यक्ष बनाये गये।

बंगला देश

बंगला देश में चल रहे भीषण नरसंहार से हर विवेकशील आदमी काँप उठा है। श्री जयप्रकाशजी ने दुनिया में सबसे प्रथम इसका धिक्कार किया और बंगला देश का समर्थन किया। विनोबाजी ने इस नरसंहार का तीव्र शब्दों में धिक्कार किया। प्रमुख सर्वोदय कार्यकर्ता एक सप्ताह पूर्व इस विषय पर विचार करने कलकत्ता में मिले। कार्यकर्ता प्रशिक्षण के लिये पाँच शिविर चलाना, प्रमुख देशों की राजधानियों एवं यूनो में जाकर नरसंहार रोकने एवं बंगला देश को न्याय दिलाने का प्रयत्न करना, इस्लामाबाद तक शांतियात्रा निकालना, इस प्रश्न पर भारत में अंतर्राष्ट्रीय परिषद् लेना आदि कार्यक्रमों का निर्णय कलकत्ता में हुआ।

कार्यकर्ता

इन सब कामों को सुचारु रूप से करने के लिए समर्पित जीवनवाली, देशभर में फैली हुई कार्यकर्ताओं की बड़ी अनुशासनबद्ध अध्ययनशील जमात चाहिए। और यही शायद हमारी सबसे कमजोर कड़ी है। कार्यकर्ताओं का अध्ययन बढ़े और इनके ज्ञान में वृद्धि हो, इसलिए घूमते ग्रंथालय की योजना शुरू करने की तैयारी हो रही है। इस योजनानुसार कुछ चुनी हुई किताब कार्यकर्ताओं के पास डाक से भेजी जायगी। किताब के वापिस आने पर दूसरा सेट भेजा जायेगा। प्रदेश सर्वोदय-मंडलों को भी प्रार्थना की गयी है कि व प्रांतीय भाषाओं में ऐसे ग्रंथालय शुरू करें। इसी प्रकार हमारे कुछ साथी अपनी रुचि का एक-एक विषय चुनकर उसमें तज्ञ बनें ऐसी योजना बनायी जा रही है। गांधीजी के जमाने में कुमारप्पा अर्थशास्त्र में, जाजूजी खादी में, ऐसे कई भिन्न-भिन्न विषयों के तज्ञ उपलब्ध थे। ऐसे तज्ञ अब भी हममें होने चाहिए।

ग्रामस्वराज्य-कोष

गत अक्तूबर से दिसम्बर '७० तक श्री सिद्धराजजी के मार्गदर्शन में ग्राम-स्वराज्य-कोष के अभियान से अब अर्थाभाव

की एक बड़ी कठिनाई कुछ हद तक दूर हो गयी है। कई प्रदेशों एवं अनेक जिलों के पास कोष होने से कहीं का काम आगे तेजी से बढ़ना चाहिए। आपा पेंढार-कर भी कइयों ने इस कोष को समृद्ध किया है। अब इसका उपयोग भी इन गरीब दाताओं की भूमि को सामने रखकर मित-व्ययिता से हमें करना है। कोष के कारण सर्वोदय-मण्डलों में तनाव निर्माण न हो, यह भी हमें देखना होगा। फिजूलखर्ची से हमारी आस्था, प्रतिष्ठा और कार्य, तीनों को हानि पहुँचेगी। कोष की सहू-लियत मिल जाने से कार्यकर्ताओं की संख्या एवं गुणवत्ता, दोनों बढ़ाने के प्रयत्न कहीं-कहीं शुरू हुए हैं। ये सर्वत्र होने चाहिए। अपने आचरण तथा व्यवहार के नियमन के लिए कार्यकर्ताओं को स्वयं आचार-संहिता बनानी चाहिए। इस बारे में महाराष्ट्र में प्रयत्न आरम्भ हुआ है यह शुभ लक्षण है।

शहीद

हमारे दो निष्ठावान, सेवाभावी, त्यागी, निडर एवं कर्मठ साथियों की ठीक एक माह पहले उत्तर प्रदेश के बिजनौर जिले के गोविन्दपुर गाँव में हत्या हो गयी। स्वामी सच्चिदानन्द गोविन्दपुर से 'धर्म-नगरी' नाम का साप्ताहिक पत्रिका पिछले कई वर्षों से चला रहे थे। यह पत्रिका स्पष्टवादिता एवं निर्भीकता के लिए प्रसिद्ध थी, और भ्रष्टाचार, गुंडा-गर्दी, गन्दी राजनीति इत्यादि के खिलाफ काफी बुलन्द आवाज उठाती थी। अतः कई निहित स्वार्थवालों की आँखों में स्वामीजी खटकते थे। और आखिर इसी कारण उनकी हत्या निहित स्वार्थवालों ने करवायी। श्री रेड्डीजी एक माह से गोविन्दपुर में स्वामीजी के साथ रहते थे। आखिर उनकी भी जीवनलीला समाप्त कर दी गयी। गांधीजी के बाद हुतात्मा बनने का भाग्य हमारे इन दो साथियों को मिला। इनकी पावन स्मृति को अभिवा-दन! मलशुद्धि के जनक श्री अप्पासाहब पटवर्धन दो माह पूर्व सद्गत हुए। वे विरल शहीद थे। उनके जैसा बहुमुखी व्यक्तित्व और तपस्वी जीवन शायद ही फिर मिलेगा।

श्री शंकरराव देव

हमारे वरिष्ठ नेता श्री शंकरराव देव इस बीच सख्त बीमार हुए। भगवान की कृपा से उनका स्वास्थ्य अब धीरे-धीरे सुधर रहा है।

समय की पुकार

शान्तिमय क्रांति यह आज के समय की पुकार है। संघ ने लोकसेवक की शर्तों को ढीला बनाकर अपने संगठन को व्यापक बनाने की प्रक्रिया आरम्भ कर, शान्तिमय क्रांति के लिए सब तैयारी कर रहा है। कुछ वरिष्ठ साथियों ने पुष्टि के लिए एवं जनशक्ति निर्माण के लिए कुछ क्षेत्रों में खुद को गाड़ लिया है। इससे सर्वोदय-आन्दोलन को नया मोड़ मिला है। और इसके परिणाम दूरगामी होंगे। अन्याय के खिलाफ कुछ स्थानों पर सफल सत्याग्रह करने से एवं दो कार्य-कर्ताओं की शहादत से यह बिरादरी तेजस्वी बनी है। सत्याग्रह-शिक्षण एवं तरुण दल जैसे सार्वजनिक पहलू में रुचि लेकर सब तरुण वर्ग ऐसा लग रहा है, यह सिद्ध हो रहा है। कार्यकर्ताओं के प्रशिक्षण एवं आचरण के प्रयत्न शुरू हो रहे हैं। इन शक्तियों के आगमन से सर्वोदय की धमनियों में नया खून दौड़ने लगा है। ग्रामस्वराज्य-कोष से अर्थाभाव मिट गया है। इस प्रकार सर्वोदय-आन्दोलन को लम्बी छलांग मारने के लिए आवश्यक लगभग सभी शर्तें पूरी हो गयी हैं। आन्दोलन ने भी अब इक्कीसवें वर्ष में, यानी जवानी में प्रवेश किया है। होश के साथ जवानी के जोश से अब ऊँची छलांग मारनी चाहिए।

सिद्धराज ढड्ढा

सर्व सेवा संघ का अधिवेशन

५ मई को ३-१० बजे सर्व सेवा संघ का अधिवेशन नासिक में शुरू हुआ। स्वागत, अध्यक्षीय भाषण, मंत्री के प्रतिवेदन के बाद ग्रामदान-प्राप्ति और पुष्टि-विषयक चर्चा शुरू हुई। महाराष्ट्र के श्री गोंदुभौकरजी ने ग्रामदान-आन्दोलन को जन-आन्दोलन बनाने के लिए गम्भीर चिंतन की आवश्यकता बतायी। उन्होंने कहा कि ग्रामदानों की इतनी संख्या के बावजूद भी हमारे आन्दोलन में चम-त्कार नहीं हो पाता है। पुष्टि की समस्या गम्भीर है। हमारा आन्दोलन एक तरह से ठप है। यह सिर्फ आन्दोलन के नेताओं के ही नहीं कार्यकर्ताओं के भी गम्भीर चिंतन का विषय है। ग्रामदान की शर्तों की पूर्ति के बाद भी ग्रामसभा सतत क्रियाशील कैसे रहे, यह उससे भी बड़ा सवाल है।

उत्तर प्रदेश के श्री महावीर भाई ने यह चिंता व्यक्त की कि हम यह स्थिति नहीं ला सके हैं कि गाँववाले खुद ग्रामस्वराज्य की स्थापना के लिए कुछ कदम लें। हमें अहिंसक तरीके से भूमि की समस्या हल करनी है। हमें चाहिए कि भूमिहीनों की सेना लेकर भूमिवालों के पास पहुँचें, और भूमि की माँग करें। हमारी अहिंसा की निष्ठा के बल पर वह सेना अहिंसक रह सकेगी। भूमिहीनता मिटाने के लिए हमको सत्याग्रह करना चाहिए। उत्तर प्रदेश के ही श्री कृष्णकुमार ने कहा कि हमको मान लेना चाहिए कि भारत के सभी गाँव ग्रामदान में आ गये हैं, क्योंकि जो गाँव ग्रामदान में आ गये हैं और जो ग्रामदान में नहीं आये हैं उनमें कोई फर्क नहीं है। हम जमीन को निजी स्वत्व भी नहीं मानते हैं। इसलिए अब हमें वितरण कैसे हो, इसकी चिंता करनी चाहिए। मिल्कियत का जो आधार है कानून उसे बदलने का काम करना चाहिए। श्री नरेन्द्र भाई (उत्तर प्रदेश)

ने कहा कि हमारी 'रिपोर्टिंग' में सत्य को दबाया जाता है, पावन-प्रसंग को सामने लाया जाता है। दूसरे तथ्य प्रकट नहीं होता। सरकार का हित और लोकहित, दोनों में टकराव की स्थिति आती है तो हम पीछे हटते हैं, लोगों का साथ नहीं देते। इसलिए लोक-शक्ति खड़ी नहीं होती।

गुजरात के **डा० द्वारकादास जोशी** ने कहा कि प्राप्ति और पुष्टि का काम एकसाथ होना चाहिए। जब हम इस काम के लिए गांवों में जाते हैं तो हमें अपने हृदय का परिवर्तन भी करना चाहिए। हम गांवों को एक परिवार बनाने के लिए हार्दिक भावना लेकर जायेंगे, तो उसका परिणाम अहिंसक होगा। हमारी भाषा में, व्यवहार में अहिंसा का निरंतर अभ्यास होना चाहिए और हमको निरंतर समूह की शक्ति विकसित करने की कोशिश करनी चाहिए।

राजस्थान के **श्री गोकुल भाई भट्ट** ने कहा कि प्राप्ति-कार्य में, बीघा-कट्ठा में प्राप्त होनेवाली भूमि के ५० प्रतिशत के वितरित हो जाने के बाद ही ग्रामदान की घोषणा करने की, जो मर्यादा डाली गयी है वह अव्यावहारिक है। 'पुष्टि और प्राप्ति-कार्य दोनों साथ चलें, प्राप्ति की टोली आगे बढ़ती जाय लेकिन कोई मुख्य आदमी पुष्टि के लिए गांवों में दो-तीन दिन रुक जाय।

आंध्र के **श्री आर० के० राम** ने ग्रामदान की शर्तों को प्राप्ति के काम में ही पूरा करा लेने पर जोर दिया। **श्री बद्री प्रसाद स्वामी** (राजस्थान) का विचार था कि प्राप्ति और पुष्टि शब्द छोड़ें और सर्वोदय के व्यापक संदर्भ में ग्राम-स्वराज्य की बात कहें। उसकी स्थापना के लिए कार्यक्रम के सुझाव के तौर पर ग्रामदान को रखें। हमने कार्यक्रम और प्रक्रिया को मुख्य स्थान दिया है और यह निरातिए है, इसको गौण बना दिया है।

आंध्र के **श्री वी० वेंकट रामाराव** ने कहा कि बहुत थोड़े-से कार्यकर्ता हैं और उन्हींके द्वारा हम सब कुछ करा लेना चाहते हैं। हम अपने आन्दोलन द्वारा दिमागी इनकलाब लाना चाहते हैं। यह इनकलाब कैसे आये इसका सामूहिक चिंतन होना चाहिए।

महाराष्ट्र की **श्रीमती सुमन बंग** ने कहा कि आन्दोलन की ठोस बुनियाद बनानी है तो अब ग्रामदान के विचार-प्रचार के लिए हमारे नेता जगह-जगह के दौरे न करें, बल्कि ग्रामदान के सघन के क्षेत्रों में बैठकर ग्रामस्वराज्य की शक्ति प्रकट करें। जिनके दिल में आत्म-विश्वास है कि इस आन्दोलन से कुछ होनेवाला है उन्हें अब इस तरह जमकर बैठना ही होगा और इस तरह आगे की राह खोजनी होगी।

श्री सम्पतलाल पारीख (राजस्थान) ने इस बात पर जोर दिया कि सबल्पित ग्रामदान उसे ही माना जाय, जिसमें गांववाले खुद ग्रामदान-पत्र पर हस्ताक्षर करें, कार्यकर्त्ता करायें नहीं। गांवों को उस स्थिति तक लाने का काम कार्यकर्त्ता करेगा।

सभी चर्चाओं को समेटते हुए **श्री जगन्नाथजी** ने कुछ मुख्य मुद्दों पर जोर दिया (१) कार्यकर्त्ताओं की आत्मशक्ति और उनकी तीव्रता बढ़नी चाहिए। (२) हमारा लक्ष्य ग्रामस्वराज्य है। जल्दीबाजी में या असावधानी के कारण हम लोगों के सामने इसका पूरा चित्र रखने में न चूकें। (३) कमजोरी को स्वीकार करना पीछे हटना नहीं है। संशोधन करते हुए हमें आगे बढ़ना है। (४) जनता की सम्मति कितनी प्रतिशत प्राप्त हुई है, ग्रामदान की घोषणा करते समय इसकी जानकारी भी देनी चाहिए। (५) प्राप्ति और पुष्टि दोनों कार्य साथ चल सकते हैं। दोनों में जनता को शामिल करने की कोशिश होनी चाहिए। इसकी पूरी पद्धति विकसित करनी चाहिए। (६) भूमि की समस्या को हमें प्राथमिकता देनी ही होगी। क्योंकि यह अन्तिम व्यक्ति का सवाल है और अन्त्योदय के लिए इस सवाल को छोड़ना संभव नहीं। ग्रामसभा जब तक भूमि-समस्या का हल करने के लिए सक्रिय नहीं होगी, तब तक उसका स्वरूप क्रान्तिकारी नहीं होगा।

अन्त में श्री जगन्नाथजी ने कहा कि हम सब आत्मिक, आध्यात्मिक और अनुराग की शक्ति के साथ इस क्रान्ति के काम में लगें और लोगों को इस महायज्ञ में शामिल करते चलें। हमारी यह निरंतर कोशिश रहे कि समस्याओं को लोगों के माध्यम से ही हल किया जाय।

अधिवेशन के दूसरे दिन टोलियों में बैठकर निश्चित मुद्दों पर चर्चाएँ हुईं और टोली-नायकों ने अपनी-अपनी टोलियों में व्यक्त विचारों का सार सुनाया, जिसके आधार पर ही ग्रामदान-सम्बन्धी नीति निर्धारित की गयी।

टोलियों के लिए विचारणीय मुद्दे

१. प्राप्ति

१—ग्रामदान की घोषणा कब हो? क्या ग्रामदान की चारों शर्तें पूरी हो जाने पर ही ग्रामदान की घोषणा की जाय?

क्या सेवाग्राम के प्रस्ताव में परिवर्तन करना आवश्यक है?

२—प्राप्ति की प्रक्रिया में जनता का अभिक्रम और उत्तरदायित्व कैसे प्राप्त किया जाय?

इस सम्बन्ध में अभी तक के क्या अनुभव हैं? आगे के लिए क्या सुझाव है?

३—क्या अब तक के ग्रामदानों को, अथवा प्रचलित पद्धति से प्राप्त ग्रामदानों को कोई नया नाम देना आवश्यक है, जैसे 'सम्मति प्राप्त ग्रामदान', या 'सबल्पित ग्रामदान', या 'ग्रामदान स्टेज एक', 'स्टेज दो,' या अन्य कोई नाम?

२. पुष्टि

१—किसी ग्रामदानी गांव को पुष्ट कब मानें?

क्या पुष्टि की कोई शर्तें हों? क्या? पुष्टि-कार्यक्रम में प्राथमिकता क्या हो?

२—ग्रामसभा को सशक्त और सक्रिय बनाने की क्या प्रक्रिया हो?

३—पुष्टि के अब तक के क्या अनु-
भव है ?

३. सत्याग्रह

१—ग्रामस्वराज्य के संदर्भ में प्रतीका-
त्मक सत्याग्रह का स्वरूप और
निमित्त क्या हो सकते है ?

२—सत्याग्रह में कार्यकर्ता तथा जनता
का क्या स्थान हो ?

४. लोकनीति

१—क्या अगले चुनाव में जनता के अपने
उम्मीदवार खड़े किये जा सकते है ?
कहाँ ? उसके लिए क्या पूर्वतैयारी
आवश्यक मानी जाय ?

२—क्या चुनाव में लोक-सेवक भी खड़ा
हो सकता है ?

३—क्या लोक-सेवक ग्रामसभा में पद
ग्रहण कर सकता है ?

४—मतदाता-शिक्षण का कार्यक्रम अगले
चुनाव में रखा जाय या नहीं ? पूरे
देश में क्या सामान्य कार्यक्रम हो ?

५ संगठन

१—लोक-सेवक बनाने में क्या बातें ध्यान
में रखी जायें ?

२—सर्वोदय मण्डलों को सक्रिय बनाने के
क्या उपाय किये जायें ?

३—सर्वोदय मण्डल, ग्रामस्वराज्य समिति
तथा ग्रामसभा-प्रखण्ड-सभा का आपस
में क्या सम्बन्ध हो ?

४—गाँव में शान्ति-सैनिक, सर्वोदय-मित्र
या लोक-सेवक, क्या बनाये जायें ?

६. शांतिसेना

१—शान्तिसेना का सर्वोदय-मण्डल से
क्या सम्बन्ध हो ?

२—विद्यालयों में तरुण-शान्तिसेना, गाँवों
में ग्राम-शान्तिसेना, क्या यह भेद
आवश्यक है ? क्यों ?

गोष्ठियों की रिपोर्ट पर खुली चर्चाएँ भी
हुईं, जिसमें लोगों ने भाग लिया। इसमें
सत्याग्रह विषयक चर्चा मुख्य रही। श्री
दिनेशचन्द्र (बिहार) ने सुझाया कि भूदान-
किसानों की बेदखली के खिलाफ सत्याग्रह
किया जाय। श्री बाबूराव चन्दावार
(महाराष्ट्र) ने यह प्रश्न प्रस्तुत किया
कि क्या सामाजिक, राजनीतिक तथा
आर्थिक परिवर्तन की कोई सत्याग्रही
प्रक्रिया हो सकती है ? श्री मेवालाल
गोस्वामी (उत्तरप्रदेश) ने अनुपस्थित
मालिकों के खिलाफ सत्याग्रह करने का
सुझाव दिया। श्री महावीर भाई
(उत्तरप्रदेश) ने ऐसे कार्यक्रम बनाने पर
जोर दिया जिन्हें सामान्य कार्यकर्ता चला
सकें, साथ-ही-साथ सरकार पर दबाव भी
डाला जा सके। श्री ओमप्रकाश (फर्रुखा-
बाद) ने स्वमान्य सत्य के लिए आग्रह करने
का विचार प्रकट किया। श्री श्यामबहादुर
(बिहार) ने अन्य दलों के सत्याग्रह-
कार्यक्रमों में शामिल होने का सुझाव
दिया। श्री त्रिपुरारि भाई (बिहार) ने
सत्याग्रह के कई क्षेत्र गिनाये—अन्याय के
खिलाफ, हिंसा के खिलाफ, भूदान की
बेदखली के खिलाफ अपनी संस्थाओं के
साथियों के खिलाफ। श्री मनमोहन भाई
(उड़ीसा) ने अपने ध्येय-प्राप्ति के लिए
सत्याग्रह की आवश्यकता बतायी। पुष्टि-
कार्य में कुछ क्षेत्रों की जनता को सत्याग्रह
के लिए तैयार करने की आवश्यकता की
चर्चा करते हुए उन्होंने ग्रामोद्योगों के संरक्षण
के लिए ग्रामसभा द्वारा मिल उत्पादन के
बहिष्कार और उनकी दुकानों के सामने
धरना देने की तैयारी करने का आवाहन
किया। श्री देवेन्द्र भाई (दिल्ली) ने असह-
योग और सत्याग्रह इन दो प्रक्रियाओं का
जिक्र किया और कहा कि जिसे हम
गलत मान रहे हैं उसके साथ असहयोग
होना चाहिए, और सत्याग्रही को सामा-
जिक शस्त्र के रूप में इस्तेमाल करना
चाहिए। श्री जगन्नाथनजी ने यह चिंता
व्यक्त की कि हमारी खुद की कमजोरियों
के कारण आन्दोलन आगे नहीं बढ़ पा
रहा है। हमारा कोई संगठन क्रान्ति के
अनुकूल नहीं है सत्यनिष्ठ नहीं है। सुश्री
मंजरी साइवल ने कार्यकर्ताओं के गुणा-
त्मक विकास के लिए स्वावलम्बी इकाइयों
के निर्माण पर जोर दिया और उसकी
रूपरेखा प्रस्तुत की। इसके बाद जय-
प्रकाश नारायण का समापवर्तक भाषण
हुआ।

—राही

ग्रामस्वराज्य के व्यापक संदर्भ में धरती पर ठोस काम करें !

— सर्व सेवा संघ-अधिवेशन में कार्यकर्ताओं को श्री जयप्रकाश नारायण की सलाह —

यहाँ ग्रामदान-पुष्टि और प्राप्ति के बारे में चर्चाएँ हुई। चर्चाओं को सुनकर ऐसा लगता नहीं है मुझे, कि यहाँ ऐसे लोग बैठे हैं जो कुछ काम जमीन पर कर रहे हैं, और उस काम के सिलसिले में जो अनुभव आये हैं, जो कठिनाइयाँ आयी हैं, जो प्रश्न उठे हैं, उन पर विचार कर रहे हैं। बहुत-सी बातें हुई जो वर्षों से सुनता हूँ, आज भी सुनता रहा। राममूर्तिजी ने पुष्टि के ऊपर राजगीर से आज तक का छोटा-सा एक प्रतिवेदन पेश किया है, जो आपके सामने है। उससे ही पता चलेगा कि क्या कुछ हम कर रहे हैं। जो हमने काम हाथ में लिया, वह काम हम सातत्य से करते रहे होते तो जो भी हमें सफलता-विफलता मिलती उस पर से, उस काम के बारे में हम सोच सकते, आगे की बात कर पाते। लेकिन वह तो कम होता है। जो भी मुझे देशभर से रिपोर्ट मिलती है, जो इस प्रतिवेदन में देखा सरसरी तौर पर, उससे तो यही लगता है कि अपना काम देश भर में शिथिल-सा है। वह किस वजह से है, किस कारण से है? हमारे अन्दर खराबी है, हम कार्यकर्ताओं की खराबी है, संस्थाओं की खराबी है, जो लोग मुक्त हैं—अर्थ से मुक्त हो या तन्त्र से मुक्त हो, उनकी खराबी है? क्या है, पता नहीं, पर राजगीर के बाद कुछ काम नहीं हुआ। कोष का काम आया। अब कोष के काम से मुक्त हुए। कोष के आधार पर काम बढ़ सकता था हमारा।

हमारा मुख्य कार्यक्रम क्या है ?

इस पर भी विचार कर लेना चाहिए गंभीरता से, कि मुख्य कार्यक्रम हमारा ग्रामस्वराज्य का है या नहीं? अगर मुख्य कार्यक्रम यह है हमारा, तो हम करें। उसके साथ-साथ ग्राम-शांतिसेना और ग्रामाभिमुख खादी, ये दो और कार्यक्रम जुड़े थे और ये त्रिविध कार्यक्रम हम रटते आये हैं। ये हमारे मुख्य कार्यक्रम हैं। जो भी हमको संघर्ष करना है, सत्याग्रह करना है, कोई नयी दिशा लानी है, वह इस काम को करते हुए। ये काम हम करते नहीं, और बस मन में यह रहता है कि कुछ होता नहीं, कुछ असर नहीं हो रहा है, जनता हमारे पीछे नहीं आ रही है, जन-आन्दोलन नहीं हो रहा है। बस, इसी उधेड़-बुन में रहेंगे तो न इधरके रहेंगे, और न उधर के। कुछ नहीं होगा। इसलिए या तो सर्व सेवा संघ तय करे अपने अधिवेशन में, या मिलें एक सप्ताह, दो सप्ताह के लिए जब समय मिले, बैठें और तय करें कि इस काम को छोड़ना है तो छोड़ें, इससे ज्यादा प्रभावकारी कार्यक्रम दिखता हो, तो उसे ही लें।

आजकल क्या हो रहा है? इधर-उधर थोड़े-से चिराग जल रहे हैं। बीकानेर में कुछ हो रहा है, तमिलनाडु में कुछ काम हो रहा है, कुछ बिहार में हो रहा है, कुछ और जगह होता होगा जिसकी पूरी जानकारी नहीं है। हम जितने कार्यकर्ता साथी हैं यहाँ, उनके द्वारा इससे ज्यादा काम हो सकता था। तो क्यों नहीं होता है? इसका उत्तर अगर इस सम्मेलन में नहीं मिलता है तो किसी जगह तो मिलना चाहिए।

बाबा ने कहा था, कुछ तो विनोद में कहा था, कुछ अन्दर से कहा था सेवाग्राम में, कि बाबा यानी 'बोगस'। जहाँ-जहाँ पुष्टि का कार्य हो रहा है, प्रतिशत निकाला गया है? घोषणा हुई है ७५ प्रतिशत जनसंख्या, ५१ प्रतिशत भूमि के आधार पर ग्रामदान की? यों ही आप घोषणा कर दीजिएगा? मालूम ही नहीं कि कितने लोगों ने वोट दिया ग्रामस्वराज्य के लिए! फिर कहने का क्या अधिकार है कि ग्रामदान हुआ? सब भूमिहीनों को मिला लिया और एक भी भूमिवान नहीं आये तो ग्रामदान की घोषणा हो जायेगी? यह तो बुनियाद है, कागज का काम नहीं है। कागज का काम तो यह है कि समर्पण-पत्र की प्रतियाँ कराओ, खाता-खसरा भरो, पुष्टि-पदाधिकारी के पास भेजो। ठीक है, दूसरे लोग करेंगे इस काम को, लेकिन आपने कुछ किया है, कोई भी मानसिक परिवर्तन, कोई सामाजिक परिवर्तन किया है? ग्रामस्वराज्य की बुनियाद वहाँ डाली?

अब यह अपनी स्थिति है। कितने प्रदेशों में आँकड़े सही हैं मालूम नहीं। आप (जगन्नाथनजी) भी कह रहे थे कि तमिलनाडु में भी जो प्राप्ति के आँकड़े हैं वे सब सही हैं ऐसा नहीं कहा जा सकता।

ग्रामस्वराज्य का ठोस आधार

सुबह लोकनीति की बात हो रही थी। जैसे कोई आसान चीज है। हमारी छोटी-सी पुस्तिका है, उसका भी उल्लेख हुआ 'लोकस्वराज्य' का। लोकनीति का अगर कोई आधार हो सकता है, तो दो प्रकार के आधार हो सकते हैं, एक प्रकार का आधार कच्चा आधार है पंचायती राज का, उसका अनुभव लिया जा चुका है, आप फिर लेना चाहें ले सकते हैं। लेकिन पक्की नहीं है चीज, वह बालू की भीत है, जिस पर लोकनीति आप खड़ी करना चाह रहे हैं। दूसरा आधार क्या है? ग्रामसभाएँ हैं नहीं। पूरे मतदान क्षेत्र में ५-१० ग्रामसभाएँ बनी होंगी। वह भी केवल नाम के लिए बनी होंगी, ग्रामसभा ही बना देने से तो काम नहीं होगा। जो मतदान केन्द्र होते हैं, उन मतदान-केन्द्रों के इर्द-गिर्द लगभग एक हजार मतदाता होते हैं। तो उनकी सभाएँ की जायँ और अपनी-अपनी सभा में अपने प्रतिनिधि चुनें और मतदाताओं के प्रतिनिधि एक जगह इकट्ठे हो मतदाता परिषद में। मतदाता-परिषद उम्मीदवार खड़ा करे। मतदाता-परिषद का निर्माण ठीक

ढंग से हुआ है, नीचे बिलकुल बालू नहीं है कुछ भी ठोस है मिट्टी, तो जो मतदाता-परिषद की तरफ से उम्मीदवार खड़ा किया गया, वह जीत सकता है, क्योंकि मतदाताओं के प्रतिनिधियों ने उसको खड़ा किया।

अब इसमें एक आदमी कैसे खड़ा किया जायेगा ? तीन सौ प्रतिनिधि बैठे हैं। भिन्न-भिन्न जातियों के लोग हैं, भिन्न भिन्न गाँवों के लोग हैं, उनके अपने लोग हैं, इधर खींचतान, उधर खींचतान होती है, इस खींचतान में एक आदमी सर्वसम्मति से जहाँ-तहाँ कैसे खड़ा किया जाय ? अब तक जो प्रयोग किये गये, सफल नहीं हुए, क्योंकि उसके पीछे लोकमत नहीं होता, ठोस संगठन नहीं रहता है। तो कोई एक चुनाव-क्षेत्र है, लोकसभा को छोड़ दीजिए, विधान सभा को ही लीजिए, जहाँ जितने ग्राम-दानी गाँव हैं वहाँ ग्रामसभाएँ बन गयी हैं, और १०० में नहीं तो ८० प्रतिशत में तो ग्रामसभाएँ बन ही गयी हैं, और ये ग्राम-सभाएँ सक्रिय हैं, ग्रामसभा ने बीघा-कट्ठा बाँट दिया है, गाँव के मामले-मुकदमे मिटा रही है, गरीबी है, बेकारी है, झगड़े हैं, व्यसन हैं, उनको दूर कर रही है, अपने विकास की बात सोच रही है, अपनी योजना बना रही है, सभा में साथ बैठकर न्याय कैसे करना, एक स्तर पर कैसे पहुँचना, इसकी कोशिश कर रही है ? अब यह सब हो रहा है, यानी एक चुनाव-क्षेत्र में कम-से-कम ८० प्रतिशत ग्राम-सभाएँ सक्रिय हो गयी हैं, तब लोकनीति के आधार पर विधानसभा का चुनाव कराया जा सकता है वहाँ। क्योंकि हर ग्रामसभा अपने अपने प्रतिनिधि भेजेगी। ग्रामसभा संगठित होगी। वर्ष-दो-वर्ष से वह काम कर रही होगी। तो वह ग्राम-सभा बैठेगी, अपना प्रतिनिधि चुनेगी। किस आधार पर ? जनसंख्या के आधार पर ? छोटी ग्रामसभा हो वहाँ से भी एक प्रति-निधि, बड़ी ग्रामसभा हो तो वहाँ से कितने, यह तय कर लें। हम उनकी मदद करें। ये सब संगठित ग्रामसभाओं के प्रतिनिधि बैठकर के एक आदमी का चुनाव करें। यह तो कोई आसान बात नहीं है। अभी तो कोई मौका ही नहीं आया है, ठोस आधार ही नहीं बना है। हम लोकनीति, लोकनीति कर रहे हैं, लेकिन एक क्षेत्र नहीं है चुनाव का, लोकसभा को छोड़ दीजिए, विधान सभा का भी, जहाँ सन् '७२ में यह हम कर लें।

अपने को खाद बना दें

हो सकता है, मेरी कार्य-पद्धति में कोई दोष हो, और आपमें से दूसरे भाई, जो ग्रामस्वराज्य के कार्यक्रम में आस्था रखनेवाले होंगे, कोई नयी पद्धति निकालें। कुछ काम तमिलनाडु में हो रहा है, कुछ कोरापुट में हो रहा है। अमुक प्रकार की परिस्थिति में उनकी अनुकूलताएँ हैं। मुसहरी में हो रहा है, रूपौली में हो रहा है। वैशाली में कोशिश हुई है, फिर कुछ जवान लोग वहाँ जाना चाहते हैं, करेंगे वे लोग। वहाँ पर स्थानीय नागरिकों के आधार से काम करने का प्रयास था। बड़ा सुन्दर प्रयास था। काफी स्थानिक नागरिक निकलकर आये थे, अच्छे-अच्छे जमीनवाले लोग। लेकिन अभी तक फल बहुत कम निकला है। बीघा-कट्ठा वगैरह बँटा है। आगामी ९ जून को मेरा एक वर्ष पूरा हो जायेगा मुसहरी में। पिछले कुछ महीने से सारण में कमी हो गयी है, फिर भी वहाँ कार्यकर्ता मित्र लगे हुए हैं। लेकिन अभी तक आधे गाँवों में भी ग्रामसभाएँ नहीं बन पायी। एक गाँव नहीं मिला, जहाँ प्राप्ति का काम पूरा हुआ था। प्राप्ति का भी काम करना पड़ता है, पुष्टि का भी काम करना पड़ता है। इस प्रकार प्राप्ति और पुष्टि का साथ-साथ काम करना पड़ता है। मेरा ख्याल है कि वहाँ एक साल मुझे और लगेगा। इतने समय में अगर एक प्रखण्ड भी ऐसा हो सकता है कि वह कह सके कि हम स्वशासित हो सके, हम अपना राज चला रहे हैं, तो महत्त्वपूर्ण बात होगी। अभी तो गाँवों में नया नेतृत्व पैदा हुआ है। लेकिन इस नये नेतृत्व को भी बहुत कुछ मदद करने की आवश्यकता है। जब हम ग्रामीण-जीवन की गहराई में जाते हैं तो दुनिया भर की बातें सामने आती हैं। बीस-बीस वर्ष के मुकदमे हैं, उनकी जड़ें न काटी जायँ तो वे दबा दें, नयी ग्राम-भावना को। यह कठिन काम है। हमें तो लगता है कि इस समग्र क्रांति के कार्य में अगर हम-आप हम तो इस दुनिया में चन्द दिनों के मेहमान हैं—लेकिन यहाँ जो नौजवान लोग बैठे हुए हैं, वे इस बात के लिए अगर तैयार न हों, कि अपने को खाद बना दें, तो मैं नहीं समझता हूँ कि हम यह काम कर पायेंगे। कठिन काम है, आसान काम नहीं है। चारों तरफ की परिस्थितियाँ आर्थिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक, प्रशा-सनिक—विरोध में हैं। जो अनुकूल हैं वे सिर्फ बातों में।

यह कोई आसान बात नहीं है

एक और कठिनाई है। मैंने आपसे पहले भी कहा था कि जनता को हम समझाना चाहते हैं कि आप अपना राज्य कीजिए। जनता अपना राज्य करने को तैयार नहीं। जनता कहती है कि हमारा पेट भर दो, हमें काम दो, हमारे लिए शिक्षा, स्वास्थ्य का प्रबन्ध कर दो, तुम चलाओ यह राज्य। मनुष्य को स्वार्थ से कितना भय होता है। जनता गाँव जिम्मेदारी लेने को तैयार नहीं। राज चलाने का मतलब जिम्मेदारी लेना, गैर जिम्मेदारी नहीं, वह तो सब कोई कर सकता है। गाँव-गाँव के लोग जिम्मेदारी लें कि हम अपने गाँव में अपनी व्यवस्था करेंगे। यह कोई आसान बात नहीं है। उनका आकर कोई कह देता है कि हम यह कर देंगे, तुम हमको वोट दे दो तो वे उसके पीछे लग जाते हैं। गरीबी हटाने का नारा कोई हमने नहीं लगाया, इन्दिराजी ने लगाया। दूसरे लोगों ने इन्दिरा हटाओ का नारा लगाया। जनता ने गरीबी हटाओ का नारा पसन्द किया, इन्दिरा हटाओ का नारा नहीं पसन्द किया।

अब दूसरे लोग कहते हैं कि हम गरीबी हटा देंगे या हमारी पार्टी गरीबी हटा देगी और हम कहते हैं कि तुम अपनी

पैरों पर खड़े हो जाओ, तुमको यह काम करना है। तुमको कठिन परिश्रम करना है, तुमको जमीन बाँटनी है, तुमको उत्पादन करना है, तुम करो, तुम करो तुम करो। वे कहते हैं हम कर देंगे। तो आपकी-हमारी कोई नहीं सुनता। सर्वोदय का विचार है कि हर उद्योग का एक समुदाय बने। उसमे व्यवस्था करनेवाले, तकनीकी काम करनेवाले, मेहनत करनेवाले सब लोग मिलकर के एक परिवार, एक समुदाय बनायें, सब मिलकर अपने कर्तव्य की पूर्ति करें। जो उत्पादन होता है कि उसके लिए सब मिलकर नियम बनायें कैसे बँटवारा हो, कितना रिजर्व में जाय, कितना मुनाफा बाँटा जाय, घाटा हो गया तो क्या हो। घाटा भी उठाना पड़ेगा। मजदूरी में से काटना पडेगा। मजदूर तैयार होगा? जैसे ग्रामस्वराज्य की बात है, वैसे कारखाना-स्वराज्य की बात है। जिम्मेदारी से लोग भागते हैं और हम जिम्मेदारी थोपना चाहते हैं। इसमें केवल प्रतिनिधियों का चुनाव नहीं है, इसमें प्रत्यक्षरूप से राजकारण में भाग लेना है। प्रत्यक्ष लोकतन्त्र की बात है। अत्यन्त कठिन काम है।

लोकनीति का प्रशिक्षण

आज सब परिस्थितियाँ हमारे प्रतिकूल हैं और इसमें हमें काम करना है। बाबा सूक्ष्म-प्रवेश में गये। अब प्रत्यक्ष मार्गदर्शन उनका नहीं है। जायें तो सलाह दे देंगे। उनकी शक्ति, उनका व्यक्तित्व, उनका प्रभाव, इन कारणों से कुछ हमें भी पंख मिल जाते थे, हम भी कुछ उड़ लेते थे। अब तो हमें जमीन पर दो पावों से ही चलना पड़ेगा। धीरे-धीरे ही चलना पड़ेगा।

मतदाता-शिक्षण का काम इस चुनाव के पहले से हो रहा है। हर चुनाव में मतदाता-शिक्षण का काम हुआ है। इस बार यह ख्याल था कि कुछ मात्रा में काम हो। गाधीजी ने जो अपना वसीयतनामा लिखा है, उसमें आप पढ़िए। रचनात्मक कार्यों में एक नया कार्यक्रम जोड़ा है गाधीजी ने—वोटर-लिस्ट को देखना, उसकी दुरुस्ती करना, हर मतदाता से सम्पर्क रखना। गाधीजी जनता से अपने को कभी दूर नहीं रखते थे। करोड़ों आदमी इसमें भाग लेते हैं। लोकनीति का विकल्प विचार के रूप में आज हमारे सामने है, व्यवहार के रूप में तो आज हमारे सामने कुछ है नहीं। जनता समझती है कि चुनाव मे उसके भाग्य का निर्णय हो रहा है। अब उसमें हमारी तरफ से कोई बात नहीं कही जाय, यह ठीक नहीं है। जनता के सामने एक बहुत बड़ा मुहीम है, उसमें हम मार्गदर्शन करते हैं। आज सुबह जिस प्रकार की चर्चाएँ हुई, उसमें काफी तीव्र विरोध था मनों में। तो प्रबन्ध समिति सोचे कि मतदाता-शिक्षण का कार्य अपने हाथ में रखा जाय या छोड़ दिया जाय। कितने भाइयों का ख्याल है कि हम गुमराह हो रहे है। अभी मतदाता-शिक्षण का जो कार्य हुआ उसे जनता ने पसन्द किया, उसका असर भी हुआ, विनोबाजी ने कह दिया है कि मैं आपका मार्गदर्शन नहीं करूँगा। लेकिन इतना कहा है कि सर्व सेवा संघ अपने अधिवेशन में, बैठकों में सर्वसम्मति से जो तय करेगा वह गलत भी हो तो मैं उसको मान्यता दूँगा, उसका समर्थन करूँगा। हमको वह बालिग बनाना चाहते है और हम नाबालिग रहें, हम उनका उद्धरण, उनकी सलाह लेकर ही काम करते रहें, यह क्या ठीक है? फिर भी जिस कार्यक्रम में सामंजस्य न हो उसे छोड़ देना चाहिए। आप अगर समझते हैं कि लोकतन्त्र के काम से आप पथभ्रष्ट हुए हैं, तो आप सोचिए।

ग्रामसभा और विधानसभा के बीच में

लोकनीति के बारे में एक बात आपसे और कहूँ कि एकदम से ग्रामसभा, विधान सभा, लोकसभा यही हमको तीन स्तर याद रहते हैं। अभी मुसहरी की दो पंचायतों में मुखिया का चुनाव है। एक पंचायत है, उसमें चार गाँव हैं। चारों गाँवों में ग्रामसभा बन गयी है। चारों गाँवों में कुछ-न-कुछ बीघा-कट्ठा बँटा है। ग्रामसभा सक्रिय है। एक-आध अच्छे कार्यकर्ता पिछड़ी हुई जातियों से आये हैं। बुधनगरा उस पंचायत का नाम है। यहाँ के मुखिया लोकसभा के उम्मीदवार थे। हार गये। वह भी पिछड़ी हुई जाति के हैं। उन्होंने ग्रामदान के काम में बहुत मदद की है। अब मैंने उनसे कहा कि चार गाँव हैं, चारों गाँवों की सभा हो। विशेष सभा हो, हर घर से एक बालिग इकट्ठा हो और हर ग्रामसभा अपने प्रतिनिधि चुने। एक प्रतिनिधि मंडल बने। हर गाँव से २५ आदमी आ जायें। चार गाँव हैं तो १०० आदमी हो गये। १०० आदमी इकट्ठे होकर मुखिया के लिए एक आदमी को सर्वसम्मति से चुनिये। नहीं तो क्या होगा कि पिछले दिनों में हमने जो भी काम किया, चुनाव में जब कटुता होगी तो बहुत सारा काम हमारा बिगड़ जायेगा। तो लोकनीति का मतलब यह है कि आज के संविधान में और संविधान के अतिरिक्त जो पंचायत समिति, जिला परिषद के एक्ट बने हुए हैं वे भी कानून कायम हैं, उन पर आधारित इन संस्थाओं का रूपान्तर हो, यानी लोकतन्त्र के रंग में ये रंगी जायें। हमारी अपनी राय है कि ग्रामपंचायत उठ जानी चाहिए, सिर्फ ग्रामसभा और प्रखण्ड-सभा ही रहनी चाहिए। लेकिन आज तो है ग्रामपंचायत। ग्रामपंचायत है तो ग्रामपंचायत का चुनाव होगा, फिर चुनाव की सब गंदगी होगी।

समग्र क्रान्ति का दृष्टिकोण

एक दो बातें आप लोगों से और निवेदन करना चाहता हूँ। यह बात कठिन है, यह काम कठिन है। मात्रा की आवश्यकता है। जो मुसहरी में हो रहा है, वही शायद सब जगह नहीं दुहराया जा सकता। यहाँ काफी शक्ति लगी है। अभी जवान लोग जायेंगे वैशाली में भी तो काफी शक्ति लग जायेगी। [illegible] में इतनी शक्ति नहीं लग रही है। [illegible] में इतनी शक्ति नहीं लग रही है। दूसरे क्षेत्रों में भी इतनी शक्ति तो नहीं लग रही है। फिर भी दृष्टि वहाँ काम करने की केवल पुष्टि की नहीं समग्र-क्रान्ति की

होनी चाहिए। दृष्टिकोण में फर्क आये, यह समग्र-क्रान्ति का एक महत्त्वपूर्ण हिस्सा है। जब तक लोगों का मानस नहीं बदला जायेगा, दिमाग नहीं बदला जायेगा तब तक क्रान्ति नहीं होगी। मेरा ख्याल है मुसहरी में ५८ प्रतिशत लोग हैं, जो हाथ से काम करना नहीं चाहते हैं। एक तो वर्ग है महिलाओं का, मध्यमवर्गीय महिलाओं का, राजपूत, भूमिहार, ब्राह्मण, कायस्थ, इनके जो मर्द हैं वे तो खेतों में काम करते हैं, लेकिन इनकी औरतें खेतों में काम नहीं करेंगी। वे चरखा चलायेंगी, लेकिन खेत में नहीं जायेंगी। और, कुछ ऐसे लोग हैं, जिनमें जाति-प्रथा के कारण यह अहंकार है कि हम तो हल छू नहीं सकते, यह काम नहीं कर सकते। अब धीरे-धीरे गरीबी के कारण वे मजबूर हो रहे हैं। ऐसी हालत है कि ब्राह्मण शहर में, बाजार में चमड़े की दूकान कर लेगा, जूते की दूकान कर लेगा, लेकिन अपने गांव में जाकर हल नहीं पकड़ेगा। वह वहां गांव में नीचा हो जायेगा। बहुत सारे हमारे कार्य के अंग हैं लेकिन सबसे कठिन यह अंग है लोगों की मान्यता को बदलना।

शिक्षण में क्रान्ति

अब शिक्षा की समस्या को ले लें। जैसी शिक्षा चल रही है, उसी प्रकार की शिक्षा, उसी प्रकार के स्कूल से तो काम चलता नहीं है। समाज बदलना है, तो जो प्रचलित विद्यालय हैं, उनको बदलना है। तो हम चाहते हैं कि शिक्षक, विद्यार्थी अभिभावक और ग्रामसभाओं को लेकर शिक्षा में किस प्रकार की क्रान्ति हो, इस पर विचार हो और उसके अनुसार काम शुरू हो। मौजूदा शिक्षा को बदल-कर ऐसी शिक्षा देनी है कि शिक्षा प्राप्त करके शिक्षित लोग कुछ उत्पादन का काम करें। समाज के ऐसे अंग बनें कि भविष्य के निर्माण में, ग्रामसभा को चलाने में कारगर हो सकें।

विकास

उसी तरह विकास की बात है। विकास का काम हम नहीं करते हैं, हमारे कार्यकर्ता यह काम नहीं करते हैं, लेकिन अगर आप यह सोचते हैं कि ग्राम-विकास का काम आन्दोलन का काम नहीं है तो यह दृष्टि का कोई बेकार होगा। ग्रामसभा बनने के बाद कोई पूछेगा कि ग्रामसभा बनी, वहां गेहूं पैदा होता था पहले २०० मन, अब ग्रामसभा बनने के बाद कितने सौ मन पैदा होता है? कौन दो सौ मन कहियेगा कि सवा दो सौ मन कहियेगा? ग्रामसभा बनने के बाद गांव को आगे जाना चाहिए। उत्पादन का वितरण कैसे होगा यह आप गांव के सामने रखिये।

सत्याग्रह

हमारे यहां मुसहरी में ऐसी स्थिति नहीं हुई कि कोई सत्याग्रह हो। सत्याग्रह हुआ तो तीन दिनों का उपवास हुआ, तीन कार्यकर्ताओं का। उन्होंने उपवास किया और फैसला हो गया। हो सकता है, यह सम्भव है कि कुछ समय के बाद ऐसी परिस्थिति आये कि सत्याग्रह हो। लेकिन सत्याग्रह कौन करेगा? क्या पुरोहित करेंगे? या जनता करेगी? हम लोग कहते हैं कि आपने बीघा-कट्ठा बांटा, आपके गांव में ५ घर हैं, नहीं शरीक हो रहे हैं, १० घर हैं, नहीं शरीक हो रहे हैं तो क्या कीजिएगा? सोचना पड़ेगा। कुछ करना होगा। यह भी देखना पड़ेगा कि उसमें से जातिवाद न फैल जाय, दलबाद न पैदा हो जाय, गांव में फूट न पैदा हो जाय। क्योंकि जमीन के मालिक लोग, महाजन लोग काफी चालाक होते हैं। गरीबों को फाड़ लेना, खासकर मजदूरों को फोड़ लेना आसान है इनके लिए। यह हो सकता है कि ऐसी स्थिति आये, और जब वह स्थिति आयेगी तो सत्याग्रह व्यापक रूप से होगा।

ग्रामाधारित खादी

अब आखिर में ग्रामाधारित खादी की चर्चा भी आपसे कर लेना चाहता हूं। बहुत चर्चा हुई और हम लोग जब खादी के संचालकों के साथ बैठते हैं तो एक सवाल भी होती है कि इतने दिनों से बात हुई, लेकिन कहीं भी ग्रामाधारित खादी नहीं हुई। अगर कुछ हुआ तो विनोबाजी के शब्दों में पत्थर के टुकड़े हुए, संस्थाओं का विकेन्द्रीकरण हुआ। खादी ग्रामाधारित तो नहीं हुई। इस पर से मेरा अनुभव यह है कि खादीवालों को कातना बन्द करना चाहिए। उनका कोई दोष नहीं। ग्रामाधारित खादी नहीं होगी, जब तक ग्राम की दृष्टि नहीं बदलेगी। जब तक गांव के लोग स्वयं नहीं चाहेंगे कि हम अपना कपड़ा पैदा करेंगे अपने लिए, जब तक इसके लिए उनका संगठन नहीं होगा। खादी को ग्रामाभिमुख करना है तो गांव को भी खादी-अभिमुख करना होगा। जो कातनेवाली महिलाएं हैं, वे मिल के कपड़े पहनती हैं। मजदूरी के लिए कताई होती है। इसलिए खादी ग्रामाधारित तभी होगी, जब गांव के लोगों का संकल्प होगा, गांव के लोगों का संगठन होगा।

आपमें से जो भाई जमीन पर बैठकर काम कर रहे हैं किसी क्षेत्र में ग्रामस्वराज्य-ग्रामदान के आधार पर, उनसे मेरा निवेदन है कि इस प्रकार से आप सोचिए—एक गांव है, उसकी ग्राम-सभा में विचार रखिये कि आपके गांव में सब लोगों को काम नहीं है। अनाज पैदा आप करते ही हैं, वस्त्र भी आप पैदा करें तो वस्त्र में स्वावलम्बी होने से आर्थिक दृष्टि से आपका स्वावलम्बन भी होगा, स्वराज्य भी उस सीमा तक सिद्ध होगा। शायद ठीक ढंग से आप करेंगे तो आपको कपड़ा भी सस्ता और अच्छा मिलेगा। यह उनको समझायें। गांव के परिवारों को पूछ लीजिए कि कितने परिवार हैं जो वस्त्र-स्वावलम्बन करना चाहते हैं। वस्त्र-स्वावलम्बन की परिभाषा बना लीजिए कि प्रति व्यक्ति कम-से-कम १२ गज कपड़ा अपने सूत का उपयोग करेंगे। बाकी कपड़ा मिल से खरीदेंगे, चाहे जो करेंगे। कितने ऐसे घर हो गये, देख लीजिए। अधिकांश निम्न मध्यमवर्गीय घर होंगे। मजदूर-घर नहीं होंगे।

उनको दो तकुवे का चरखा दीजिए और उनसे कहिए कि आप उतना ही सूत दीजिएगा जितने का कपड़ा आपको चाहिए। बाकी सभी घर स्वावलम्बन में नहीं आयेंगे। फिर गाँव में तय कीजिए कि गाँव में कितने लोग हैं जो इस वस्त्र-स्वावलम्बन में नहीं हैं। उनके लिए कितने वस्त्र की आवश्यकता है। १२ गज, १५ गज जो भी औसत वे बनायें, उनके हिसाब से इतना कपड़ा और बनवायें। वह ६ तकुवे चरखे पर बने। वह चरखा घर-घर दिया न जाय। गाँव की श्रमशाला में वे चरखे रहें, जहाँ जो दो घंटे से कम कातना चाहता है, उसे मौका न दिया जाय। कम से-कम दो घंटा कातें। टेप बनाकर दिया जाय। जितना काते उसकी मजदूरी दी जाय। पूंजी सारी ग्रामसभा की हो। खुद बुनवाकरके ग्रामसभा गाँव में उसे बेचेगी। गाँव के लोगों को खरीदना पड़ेगा। क्योंकि उनका संकल्प है। जितना वे खरीदें उससे १० प्रतिशत ज्यादा ग्रामसभा तैयार करना चाहे तो करे और शहर में बेचे इसकी व्यवस्था के लिए जो भी संस्था मदद देना चाहे दे।

मैं तो वह दिन देखना चाहता हूँ कि सर्व सेवा संघ के अधिवेशन में ठोस काम की चर्चा हो। जमीन पर काम नहीं करते, तो वही पुरानी रट लगाते रहते हैं, जिसे सुनते-सुनते कान पक गये हैं।

नासिक —जयप्रकाश नारायण
७ मई '७१

बंगला देश-सहायता-कार्य में मदद करें

सर्व सेवा संघ की देश की जनता से अपील

लोकतन्त्र तथा स्वायत्तता के लिए बंगला देश की जनता की प्रायः सर्वसम्मत आकांक्षा को कुचल डालने के लिए पाकिस्तान की जंगी तानाशाह सरकार की ओर से चलनेवाले दमन के सामने शेख मुजीबुर्रहमान के नेतृत्व में जो अहिंसक असहकार का व्यापक और सफल आंदोलन चला, वह विश्व के स्वातन्त्र्य-संग्रामों के इतिहास का एक गौरवमय अध्याय बनकर सर्वदा के लिए रहेगा। *पाकिस्तान की सरकार के दमन ने आगे जो भयानक नर-संहार का रूप धारण* किया उसका मुकाबला करने के लिए इस समय बंगला देश की जनता को शस्त्र का सहारा लेना पड़ा। *सर्व सेवा संघ पाकिस्तान की सरकार के* इस अमानवीय बर्बर कृत्य की तीव्र निंदा करता है।

संघ विश्व की जनता तथा राष्ट्रों से अपील करता है कि वे पाकिस्तान की सरकार को इस दमन से निवृत्त करने के लिए उस पर अपना सारा प्रभाव डालें तथा बंगला देश की स्वतन्त्र सरकार को तुरत मान्यता देने के लिए भी संघ भारत सरकार से तथा दुनिया के अन्य सारे राष्ट्रों से अपील करता है।

बंगला देश के मुक्ति-आंदोलन के संदर्भ में संघ निम्न कार्यक्रम उठाने का निर्णय करता है

१. बंगला देश के युवकों के लिए शिविर चलाना।

२. विदेशों में बंगला देश के पक्ष में अनुकूलता निर्माण करने के लिए प्रतिनिधियों को भेजना।

३. उपरोक्त उद्देश्य से शुरू होनेवाली अंतर्राष्ट्रीय शांति-पदयात्रा में सहयोग देना।

४. भारत में एक अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन के आयोजन में योगदान करना।

५. भारत के अन्दर विभिन्न तबकों में बंगला देश के पक्ष में लोक-शिक्षण का कार्यक्रम उठाना। तथा,

६. देश के अंदर शांति कायम रखने में मदद करना।

इन कार्यों को करने के लिए निधि संग्रह करना।

संघ के इन सारे कार्यक्रमों को सफल करने में मदद करने तथा निधि में उदारता से दान करने के लिए संघ देशवासियों से निवेदन करता है।

संघ देश की सारी प्रातिनिधिक संस्थाएँ, जैसे—ग्रामपंचायत, जिला परिषद आदि तथा समाज-सेवी सार्वजनिक संस्थाएँ, जैसे—विद्यार्थी-संगठन, ट्रेड यूनियन्स, रचनात्मक संस्थाएँ, महिला मंडल, राजकीय पक्ष, आदि से अपील करता है कि, *वे बंगला देश को मान्यता देने के बारे में प्रस्ताव पास कर भारत* सरकार के पास भेजें।

निधि के लिए रकम सर्व-सेवा-संघ, गोपुरी, वर्धा (महाराष्ट्र) एवं गांधी शांति प्रतिष्ठान, २२३ दीनदयाल उपाध्याय मार्ग, नयी दिल्ली—१ को भेजी जायें।

एस० जगन्नाथन्	जयप्रकाशनारायण	राधाकृष्ण
अध्यक्ष, सर्व सेवा संघ		मंत्री, गांधी शांति प्रतिष्ठान

सर्वोदय-सम्मेलन : चित्रों में

मंच पर

जे० पी० सिद्धराज जी गोरा जी

तरुण-शक्ति
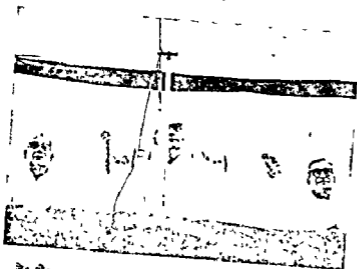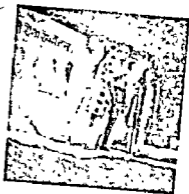
बंगला देश के अतिथि
जे० पी० के साथ

पण्डाल में

श्रोता-वर्ग

बंगलादेश के मतीउर्रहमान
बंगसाहब के साथ

हम राजनीति के प्रति अब उदासीन न रहें

आन्दोलन को प्राणवान बनाने के लिए राजनीतिक सक्रियता अनिवार्य

—सर्वोदय समाज सम्मेलन में प्रो० गोरा का उद्घाटन-भाषण—

श्री गोरा जी

पूज्य विनोबाजी को पोचमपल्ली में जब पहला भूदान मिला, तभी जीवन का एक नया तरीका प्रारम्भ हुआ, उसको हम सर्वोदय कहते हैं यानी सारी जनता की सर्वतोमुखी प्रगति। उसके अनुसार हमने "जय-जगत्" का नारा भी अपनाया। सारी दुनिया की दृष्टि हमने आकर्षित की। आचार्य विनोबा, श्री जयप्रकाश नारायण और सिलोन के श्री आर्य रत्न को क्रिमोपादन का 'मैगसेसे पुरस्कार' मिलना हमारी सफलताओं की पहचान है।

इन सफलताओं के बावजूद हमारे कार्यकर्ताओं में एक तरह की निराशा की भावना फैल रही है। वह भावना यह है कि आन्दोलन की तीव्रता कम हो रही है और कार्यकर्ताओं में जोश और क्षमता उचित मात्रा में दीख नहीं पड़ती। इस सम्मेलन के उद्घाटन करने का जो अवसर मुझे दिया, उसके लिए पहले मैं सम्मेलन के मंत्री द्वारकोजी के प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट करता हूँ और इस अवसर का उपयोग करके हमारी कमजोरी के कारण और इस कमजोरी को दूर करने के उपाय आपके सामने रखना चाहता हूँ। आज हम अपने आंदोलन को पुनः शक्तिशाली बनाना चाहते हैं। आज हमारे सामने कई चुनौतियाँ हैं। नक्सलवादियों की चुनौतियाँ हैं, राजनैतिक दलों में "आयाराम और गयाराम" की जो स्थिति है, उससे जनतंत्र खतरे में है, अभी बंगला देश में जो चल रहा है, वह भी हमारे लिए एक चुनौती है। इन चुनौतियों को स्वीकार करके आगे बढ़ने के लिए भी अपने आन्दोलन को हमें शक्तिशाली बनाना है।

सर्वोदय की सर्वांगीण प्रगति का अर्थ है कि मानव-जीवन के सभी क्षेत्रों से हमारा सम्बन्ध और सभी क्षेत्रों में हमारी दिलचस्पी। हमारा आरम्भ अच्छा हुआ और बड़ी-बड़ी सफलताएँ भी हमने प्राप्त कीं, खास करके बिहार में। भूदान ने 'ट्रस्टीशिप' के सिद्धान्त को आचरण का रूप दिया। उसने अहिंसात्मक पद्धति से आर्थिक समता की स्थापना का वायदा किया और कम्युनिस्ट पद्धति की हिंसा का एक विकल्प प्रस्तुत किया। इसलिए बहुत कम समय में ही शांतिसेना, संपत्ति-दान, सर्वोदय-पात्र, आचार्यकुल-जैसे नये आयाम सामने आये। कई भाषाओं में हमने साहित्य प्रकाशित किया।

हमारी गैरराजनीतिक नीति

स्वाधीनता के बाद हमने रचनात्मक कार्यों की अच्छी शुरुआत की। शुरू में हमारा कार्य ऐसे क्षेत्रों में रहा जहाँ सरकार से सम्बन्ध की जरूरत नहीं थी। हमने गैरराजनीतिक तरीका अपनाया और भारत की राजनैतिक स्वतंत्रता के कारण जनता को श्रेय व सुविधाएँ पहुँचाने के कार्यों के लिए काफी अवसर मिला। ज्यों-ज्यों हमारा कार्य आगे बढ़ा, सरकारी पद्धतियों से हमारा सम्बन्ध आया। सरकार की केन्द्रित शासन पद्धति से हमारी विकेन्द्रित पद्धति अलग पड़ गयी। सन् १९५७ में मैसूर के एलवाल में जो कान्फरेंस हुई, उसमें इस भिन्नता को सामने लाया गया। प्रत्यक्ष टकराव को दूर रखकर समन्वय की दृष्टि से इस समस्या को हल करने की हमने कोशिश की। यह हमारे आन्दोलन को एक मोड़ देनेवाली घटना बनी। आन्दोलन को सीधा आगे ले जाने के बदले गैर-राजनैतिक कार्यक्रमों के चक्कर में हम पड़ गये। इससे युवकों को हम प्रेरणा नहीं दे सके और समाज पर हमारा प्रभाव लुप्त होने लगा।

आज समाज में राजनीति जीवन का गौण अंग नहीं है। आधुनिक दुनिया में व्याप्त पेचीदे सवालों को हल करने के लिए राजनीति को एक साधन के रूप में तैयार किया गया। यह तो सही है जितना केन्द्रीकरण बढ़ेगा, उतनी शक्ति राजनीति की बढ़ेगी और तब राजनीति जनता की सेवा करने के बजाय जनता पर राज चलायेगी। अगर हमने राजनैतिक दृष्टि से सोच कर पंचायती राज में प्रवेश किया होता, तो काफी मात्रा में हम विकेन्द्रीकरण को अमल में ला सके होते और सरकार को जनता के नियंत्रण में रखने में कुछ सफलता मिली होती। लेकिन हमारी गैर-राजनैतिक पद्धति के कारण ये अवसर हाथ से छूट गये और हम जन-जीवन के मुख्य प्रवाह से अलग हो गये। बिहार में लोग, सहरसा जिले में जो ठोस काम हुआ, उसमें या मुसहरी प्रखण्ड में जे० पी० ने जो काम किया, उसमें दिलचस्पी लेने के बजाय, पटना में मंत्रिमण्डल के घटन विघटन की जो तैयारियाँ होती हैं, उसमें ज्यादा दिलचस्पी ले रहे हैं। इसके जिम्मेदार हम हैं, और जो गलती हुई, हमारी है। जनता का एक मुख्य हित जो है, उसे हम नजर-अन्दाज करते हैं। इसलिए सर्वोदय को पुनः शक्तिशाली बनाने के लिए हमारा रचनात्मक कार्यक्रम राजनीति में सक्रिय दिलचस्पी लेना होगा। हमें राजनीति में सक्रिय भाग लेना है और सर्वोदय के लक्ष्य की ओर उसे मोड़ना है। इसी तरह की यथार्थ दृष्टि के कारण महात्मा गांधी ने रचनात्मक कार्यक्रम के साथ-साथ राजनैतिक सम्पादन को भी अपनाया। जब दूर-दृष्टि और आदर्शों-

जब भले कहलानेवाले लोग राजनीति में सक्रिय भाग नहीं लेते हैं, तब राजनीति व्यवसायी-राजनीतिज्ञों की सत्ता-केन्द्रित राजनीति बन जाती है, यह कोई आश्चर्य की बात नहीं। राजनैतिक सत्याग्रह के बिना रचनात्मक कार्यक्रम कमजोर होकर राजनीति लोगों के झटके में उड़ जाता है। सैद्धान्तिक रूप से सही होने पर भी, और शक्तिशाली संगठन के बावजूद ग्रामदान-आंदोलन राजनैतिक कार्यक्रम की कमी के कारण बहुत आगे बढ़ नहीं सका।

राजनीति से अलग क्यों रहें ?

इस नारे से कि सत्ता भ्रष्ट करेगी, हमें डर नहीं लगता है। अगर सत्ता भ्रष्ट करती तो हमें राजनैतिक स्वाधीनता के लिए लड़ने की जरूरत ही क्या थी? हमारे मंत्रियों द्वारा बनाये गये कानूनों को हम क्यों मानते हैं और उन्हें क्यों स्वीकार करते हैं? अगर उपरोक्त सूत्र को मान लेते हैं तो उसके अनुसार वे सबसे ज्यादा भ्रष्ट हैं, क्योंकि उनके हाथ में ज्यादा सत्ता है। इसलिए सत्ता भ्रष्ट नहीं करती है। सत्ता केवल जनता के प्रतिनिधियों के सामर्थ्य और ईमानदारी की परीक्षा लेती है। यह नारा सत्ताधारी लोगों की ओर से प्रचारित किया गया। वे चाहते हैं कि ईमानदार और अच्छे नागरिक राजनीति में न आयें, क्योंकि उनके आने से इन सत्तालोलुपों और सत्ताधारी लोगों की दाल नहीं गलेगी। इसलिए "सत्ता भ्रष्ट करेगी" के नारे से डर खाकर दूर रहने के बजाय ईमानदार और अच्छे नागरिकों को चाहिए कि वे राजनीति में सक्रिय भाग लेकर राजनीति को शुद्ध और उपयोगी बनायें।

आखिर, राजनीति यानी जनता की समस्याओं को सरकार के जरिये हल करना। सरकार एक संस्था है जिसको जनता ने टैक्स देकर और सहयोग देकर खड़ा किया है। सरकार से सेवा की माँग करना सभ्य समाज में प्रत्येक नागरिक का जन्मसिद्ध अधिकार है। एक तरफ प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से सरकार को टैक्स देना, दूसरी तरफ गैर-राजनीतिक दृष्टि के कारण सरकार का उपयोग नहीं करना हमारी कमजोरी का द्योतक है। जब तक हम टैक्स देते रहेंगे तब तक किसी को भी गैर-राजनीतिक नहीं रहना है। यही नहीं, इस आधुनिक दुनिया में गैर-राजनैतिक रहने की कोई आवश्यकता नहीं है। क्योंकि आधुनिक समाज सरकारी संस्था को किसी-न-किसी रूप में रखना ही है। गैर-राजनैतिक रीति अपनाने के बदले हम यह कर सकते हैं कि सरकार में सत्ता का केन्द्रीकरण होना रोक कर, उसका विकेन्द्रीकरण करें।

यथार्थ में, राजनीति सभ्य समाज के जीवन का एक अविभाज्य अंग बन गयी है, और दिन-ब-दिन गैर-राजनैतिक कार्य का भाग कम होता जा रहा है। अच्छा नागरिक जीवन प्रत्येक नागरिक से राजनीति में अत्यधिक रुचि रखने की अपेक्षा करता है। जब कभी हम सर्वोदय कार्यकर्ता, भूमि-समस्या को हल करने की दृष्टि से, पुष्टि के कार्यक्रम को लेते हैं तो अनुभव में यह आता है कि या तो सरकार का सहयोग लेना पड़ता है या सरकार की केन्द्रित सत्ताधारी पद्धति के विरोध में सत्याग्रह करना पड़ता है। इस संदर्भ में तमिलनाडु में श्री जगन्नाथन् के अनुभव प्रमुख उदाहरण हैं।

राजनीति के प्रति हमारी उदासीनता ने राजनैतिक सत्ता को व्यवसायी राजनीतिज्ञों के हाथों में जाने दिया। इसलिए त्याग और बलिदान से जो स्वराज्य हमने प्राप्त की, उसका उचित लाभ जनता को नहीं पहुँचा। सामान्य वयस्क मताधिकार में निहित राजनैतिक समानता आर्थिक और सामाजिक समता नहीं ला सकी। दलगत और सत्तापरक राजनीति ने राजनैतिक जीवन को भ्रष्ट किया और उस दल से इस दल में, फिर इस दल से दूसरे दल में जल्दी-जल्दी हेरफेर करने की बेशर्म पद्धति सामान्य हो गयी। राजनैतिक दल सामान्य जनता के राजनैतिक अज्ञान का शोषण करते हैं और उनके वोट को खोखला बनाते हैं। इसलिये नक्सलवादियों का जनतंत्र से विश्वास उठ गया और वे शोषण से टक्कर लेने के लिए षड्यंत्र तथा हिंसात्मक पद्धति को अपनाते हैं। इस स्थिति में हम अगर सैद्धांतिक शुद्धता में उलझ कर परिस्थिति की यथार्थता को नजर-अन्दाज करेंगे तो जनता के प्रति अपना कर्तव्य निभाने में विफल साबित होंगे। जनता की सेवा और आदर्श के प्रति श्रद्धा के लिये हमें प्रतिष्ठा मिली हुई है। इसलिए हमारी आँखों के सामने जो हिंसा और संकीर्ण जमातों का लोभ बढ़ रहा है, इसकी जिम्मेवारी से हम मुक्त नहीं हो सकते। इसलिए हमारा तत्कालीन और मुख्य कर्तव्य है कि जनतंत्र की खोयी हुई प्रतिष्ठा फिर से वापस लायें और त्याग तथा बलिदान से प्राप्त की गई राजनैतिक आजादी के लाभ जनता तक पहुँचायें।

हमारी सक्रियता का लक्ष्य

यहाँ हम स्पष्ट कर देना चाहते हैं कि राजनीतिक सक्रियता से हमारा अर्थ यह नहीं है कि हम आज की यथास्थितिवादी दलगत और सत्ताकेन्द्रित राजनीति और सत्तातंत्र को चलाने के लिए उसमें दाखिल होना चाहते हैं। हमारा यह घोषित मकसद है कि हमें हिंसा-शक्ति की विरोधी दण्ड शक्ति से भिन्न स्वतंत्र तीसरी शक्ति खड़ी करनी है, जिसे हम जनशक्ति कहते हैं। जिसे विकसित करने के लिए ही ग्राम-स्वराज्य का बुनियादी काम कर रहे हैं, और जिसको विकसित करके हम आज के दलीयतंत्र को बदलकर लोगों की प्रत्यक्ष साझेदारी वाला वास्तविक लोकतंत्र खड़ा करना चाहते हैं। साथ ही सत्ता की सारी शक्ति, जो केन्द्र की राजधानी और राज्य की राजधानियों तथा प्रशासन केन्द्रों में केन्द्रित है, उसे गाँव-गाँव तक पहुँचाना चाहते हैं। ऐसा करके ही लोकतंत्र की बुनियाद को हम पक्की कर पायेंगे, उसे यथार्थ बना पायेंगे। इसलिए राजनीतिक सक्रियता का हमारा स्पष्ट मकसद है कि आज की दलीय पद्धति और प्रशासन को हम बदलना चाहते हैं।

गैर-राजनीति की नीति के कारण हमने राजनैतिक सत्ता को राजनैतिक दलों के हाथों में जाने दिया। इन दलों ने राजनीति को सत्तावाली राजनीति में बदल कर सरकार को स्वार्थी और संकीर्ण बनाया। सत्ता की गद्दी पर बैठने और सरकारी आमदनी को व्यक्तिगत सुख और शान-शौकत में खर्च करने के अलावा उनका और कोई काम नहीं। इसलिये, अब हम राजनीति में प्रवेश करके सरकार से राजनैतिक दलबन्दी को हटाकर उसे जनता की सेवा करने लायक बनायें। जनता के प्रतिनिधियों की शान-शौकत और आडम्बरों को हटाकर जन-प्रतिनिधियों को याद दिलायें, कि वे यहाँ जनता की सेवा के लिए भेजे गये हैं न कि शान-शौकत वाला जीवन बिताने के लिए। हमारे संविधान में ४०वाँ आर्टिकल जो है, उसे अमल में रखने के लिए सरकार को मजबूर करें।

संविधान का ४०वाँ आर्टिकल इस प्रकार है :

"ग्राम पंचायतों के संघटन के लिए सरकार को कदम उठाना है। और इन पंचायतों को ऐसी सत्ता और ऐसे अधिकार देने हैं, जिससे वे स्वशासन की इकाइयों के रूप में काम कर सकें।"

हमारे संविधान में यह जो कहा गया, इससे स्पष्ट मालूम होता है कि हमारा संविधान विकेन्द्रीकरण की व्यवस्था देना चाहता है, जो सर्वोदय का लक्ष्य है।

विकेन्द्रीकरण के जरिये अहिंसात्मक तरीके से आर्थिक और सामाजिक समानता की स्थापना करने के लिये यह त्रिविध कार्यक्रम उपयोगी हो सकता है।

पहला, पुष्टि के रचनात्मक कार्यक्रम को तेजी से बढ़ाना है, क्योंकि यह संविधान के ४०वें आर्टिकल को अमल में लाना है।

दूसरा, सर्वोदय आन्दोलन को चुनाव में ऐसे उम्मीदवार खड़े करने है जो निर्दलीयता, निराडंबरता और संविधान के ४०वें 'आर्टिकल' को मानते हों।

तीसरा, सर्वोदय उम्मीदवार चुनकर, सर्वोदय तरीके से सरकार का निर्माण करने तक की इन्तजारी में हमें नहीं बैठना है। सरकार में दलबन्दी और शानशौकत के जो कन्वेंशन्स हैं, उनके विरोध में हमें फौरन सत्याग्रह शुरू करना है।

लोकसभा के लिए मध्यवर्ती चुनाव के समय मतदाता-शिक्षण का कार्यक्रम लेकर हमने अच्छा आरम्भ किया। मतदाता-शिक्षण को शक्तिशाली और लाभदायी बनाने के लिए सत्याग्रह और चुनाव में उम्मीदवार खड़ा करने के कार्यक्रमों को लेकर आगे बढ़ना है।

जनता के उम्मीदवार

दलों के उम्मीदवारों के विरोध में जनता के उम्मीदवार खड़े करने का काम मतदाता समितियों के जरिए हो सकता है। श्री जयप्रकाशनारायण ने अपनी पुस्तक 'स्वराज्य फार द पीपुल (लोक स्वराज)' में इस पद्धति को विस्तार से बताया है। यह पद्धति ग्रामदानी प्रान्तों में वहाँ की जनता को राजनैतिक शिक्षण देने के बाद सुचारु रूप से अमल में लायी जा सकती है। लेकिन राजनैतिक मंच पर राजनैतिक दलों ने आज ऐसा कब्जा कर रखा है जिससे पूरे देश में मतदाता-समितियों का संगठन करना शायद सम्भव नहीं होगा। इसलिए प्रारम्भिक कदम के नाते निर्दलीयता, निराडंबरता और विकेन्द्रीकरण के लिए ऐच्छिक रूप से जो समर्पित हैं, ऐसे व्यक्तियों को जनता के उम्मीदवारों के रूप में चुन सकते हैं।

शुरू में जनता के ये उम्मीदवार चुनाव में हार सकते हैं, लेकिन चुनाव में जनतन्त्र की एक नयी पद्धति को प्रवेश कराने में वे निश्चित रूप से सफल होंगे। शुरू में आदर्शों और सिद्धान्तों की जो विजय होगी, वह बाद में आदर्शों और चुनावों, दोनों की विजय में परिणित होगी। यह समाज का वह नया विधान है जिसकी राह सर्वोदय देख रहा है।

सत्ता का सही अर्थ

सत्ता का अर्थ भी हमें ठीक से समझना है। ऐसा समझना गलत है कि वही सत्ता है, जो मन्त्रियों के हाथों में है या सरकारी सेवा में लगे हुए लोगों के हाथों में है। यथार्थ में सत्ता वह है, जो सरकार को नियंत्रण में रखती है। असली सत्ता जनता के पास है। लेकिन अपने गैर-राजनैतिक तरीकों के कारण जनता उस सत्ता से वंचित हो जाती है। अगर राजनैतिक दृष्टि जनता अपनायेगी और सत्याग्रह का उपयोग करेगी तो जनता अपनी शक्ति और सत्ता को पुनः प्राप्त करेगी। सर्वोदय यानी जनता की सत्ता या लोकनीति है।

हमारे आन्दोलन की और एक बड़ी कमी है उसका हिन्दू दृष्टिकोण। बुद्धि के स्तर पर हम सब मानवीय हैं, जय जगत् का नारा दुहराते हैं, फिर भी हममें से बहुत लोग हिन्दू आदर्शों से ऊपर नहीं उठे हैं। 'पाजिटिव सेक्युलरिज्म' के बदले ज्यादा-से-ज्यादा हम सब धर्मों के प्रति समान आदर करते हैं। सर्वोदय-मंच शिक्षा बने, गैर-हिन्दुओं को भी यह अपना मंच लगे, इसके लिए इन्सानी बिरादरी मुख्य चीज है। किसी तरह की प्रार्थना व्यक्तिगत विषय होनी चाहिए, और आम कार्यक्रमों में वह नहीं होनी चाहिए। अपना देश में ही नहीं कौमी तबाही का विस्तार करते हुए यू॰एन॰ओ॰ को प्रतिनिधि मंडल भेजने का जो निश्चय किया, वह तभी राष्ट्रीयता की संकीर्णता से ऊपर उठकर मानवीय मूल्यों को हम जो महत्त्व देते हैं, उसका पता चलता है। जब हम सर्वोदय कार्यकर्ता अपने व्यक्तिगत जीवन में उचित रूप से सार्वजनिक मूल्यों का आचरण करेंगे, तभी उस प्रतिनिधि-मण्डल की कार्रवाई को शक्ति मिलेगी। श्री ठाकुर दास बंग ने अपने लेख "अगला कदम" में जो चेतावनी दी, वह समय पर आयी है।

मैं चाहता हूँ कि इन बीस सालों के हमारे अनुभवों का हम मूल्यांकन करें और सर्वोदय समाज में, फिर से शक्तिशाली जनशक्ति तथा जन-आन्दोलन खड़ा करने के लिए, आवश्यक सुधार करें।

—रामचन्द्र राव गोरा

नासिक, ८-५-७१

सर्वोदय-क्रान्ति : अंधकार की शक्तियों से जनता की मुक्ति का महायज्ञ

—१९वें सर्वोदय सम्मेलन के अध्यक्ष श्री सिद्धराज ढड्ढा का उद्बोधन—

सर्वोदय समाज के इस वार्षिक सम्मेलन की अध्यक्षता करने में मैं अपने आपको सम्मानित महसूस कर रहा हूँ, यह अगर स्वीकार न करूँ तो वह सच्चाई नहीं होगी। इस सम्मान के लिए मैं आप सबका अत्यन्त कृतज्ञ हूँ। बड़ों की तथा साथियों की इस इच्छा को मैंने एक कर्तव्य के तौर पर शिरोधार्य किया है। इस जिम्मेदारी के सचालन में मैं ईश्वर की कृपा और आप सबके सहयोग के लिए प्रार्थना करता हूँ। मुझे भरोसा है कि मेरी पात्रता अपात्रता का सवाल न करके मेरी प्रार्थना स्वीकार करेंगे।

इस अवसर पर पूज्य विनोबा शरीर से यहाँ उपस्थित नहीं होते हुए भी सबको उनकी मौजूदगी का अनुभव हो रहा होगा। वे उपस्थित नहीं हैं, यह ख्याल ही हमारे सामने उनको खड़ा कर देता है, ऐसी विलक्षण गति मन की है। भूदान आन्दोलन के वे प्रणेता और द्रष्टा हैं। बापू के जाने के बाद पिछले २२-२३ वर्षों में वे हमारे प्रेरणास्रोत और मार्गदर्शक रहे हैं। कुछ वर्षों से उन्होंने भौतिक दृष्टि से अपने आपको समेटकर हमें गण-सेवकत्व विकसित करने का मौका दिया है। लेकिन पवनार आश्रम में बैठे हुए भी उनका ध्यान बराबर आन्दोलन की गतिविधि तथा हमारी सबकी ओर लगा रहता है। इसलिए वे हमारे बीच हैं ही। हमारा सौभाग्य है कि आदरणीय जयप्रकाशजी तथा पू० दादा भी हमारी चर्चाओं में प्रत्यक्ष मार्गदर्शन करने के लिए यहाँ उपस्थित हैं।

इस सम्मेलन में देश के कोने कोने से सर्वोदय-विचार के प्रति सहानुभूति रखनेवाले भाई-बहन इकट्ठे हुए हैं। सर्वोदय-विचार, सर्वोदय आन्दोलन और सर्वोदय-सेवकों के बारे में तरह-तरह की सही या गलत धारणाएँ लोगों के मन में है। कुछ लोग समझते हैं कि सर्वोदय एक तरह का पथ है, जिसका उद्देश्य कुछ धार्मिक-मिश्र-सामाजिक पुनरुत्थान है। कुछ अन्य लोग यह समझते हैं कि यह राजनीति में हारे हुए लोगों की जमात है, या ऐसे लोगों की, जो गांधीजी के जमाने से रचनात्मक कार्यकर्ता कहलाते हैं यानी वे लोग जो सार्वजनिक क्षेत्र में कुछ-न-कुछ सेवा का काम करते रहते हैं। सर्वोदय के क्रान्तिकारी उद्देश्य शान्तिमय तरीकों से समाज-परिवर्तन की उसकी आकांक्षा से, जो परिचित है और जो कुछ सहानुभूति भी रखते हैं ऐसे लोग भी यह समझते हैं कि ये 'सर्वोदयवाले' भले लोग तो हैं लेकिन आज के जमाने के अनुकूल नहीं है इनसे कुछ होने-जानेवाला नहीं है। इधर

श्री सिद्धराज ढड्ढा

कुछ वर्षों के अनुभव से बहुत से लोगों को यह जरूर लगने लगा है कि देश को अगर अपनी मौजूदा कठिनाइयों से पार पाना है तो उस इस विचार की ओर मुड़ना होगा। फिर भी कुल मिलाकर लोगों के मन में सर्वोदय-विचार और खासकर उसके कार्यक्रम के बारे में अभी पूरा विश्वास नहीं जमा है। बाहर से इसकी गतिविधि देखनेवाले की बात तो अलग है लेकिन सर्वोदय-सेवकों में से भी बहुतों के मन में समय-समय पर कुछ शकाएँ प्रकट होती रहती है। अगर सर्वोदय-विचार को उसके ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में और आज की युग की परिस्थिति के संदर्भ में समझने की कोशिश की जाय तो उसके क्रान्तिकारी स्वरूप और उसकी सामयिक उपयोगिता के बारे में शका की गुंजाइश नहीं रहेगी। सर्वोदय के कार्यक्रम और कार्य-पद्धति में भले ही कमियाँ रही हों, या उस कार्यक्रम में लगे हुए हम जैसे सेवक उसका क्रान्तिकारी पहलू प्रगट न कर सके हों पर जहाँ तक सर्वोदय विचार का सम्बन्ध है वर्तमान परिस्थिति में मानव जाति की सुरक्षा और कल्याण के लिए उसके जैसा दूसरा कोई मार्ग नहीं है।

सर्वोदय-विचार को हमें देश और काल, दोनों के संदर्भ में, अर्थात् जागतिक और ऐतिहासिक पृष्ठभूमि में देखना और समझना चाहिए तब हमें उसका सही महत्व ध्यान में आयेगा। सत्रहवीं-अठारहवीं शताब्दी में एक नये युग का प्रारंभ हुआ जिसे इतिहासकार "औद्योगिक क्रान्ति" के नाम से पुकारते हैं, पर जिसका दायरा वास्तव में कहीं ज्यादा व्यापक था, ऐसा एक मोड़ मानव-जाति के विकास-क्रम में आया। ज्ञान-विज्ञान का एक अभूतपूर्व विस्फोट इस अवधि में हुआ जिसके कारण मनुष्य को गरीबी अभाव, अज्ञान और अनाचार के अंधकार में से निकलकर सम्पन्नता समृद्धि, शांति, और आध्यात्मिक विकास के युग में प्रवेश करने का अवसर आया। पर दुर्भाग्य से यह क्रांति स्वार्थ और सत्ता के जाल में फँसकर वरदान के बदले अभिशाप बन गयी। नयी परिस्थिति में मानव-मन उदात्त भावनाओं का विकास कर सके उसके पहले मानव हृदय में छिपी हुई वासनाएँ और विकार क्रान्ति पर छा गये। मनुष्य को मुनाफाखोरी, शोषण और उत्पीड़न के नये और जबरदस्त साधन हाथ लग गये। हर वाद या स्थिति (थीसिस) का प्रतिवाद (एन्टीथीसिस) अवश्य खड़ा होता है। इस नये खतरे के खिलाफ भी १९वीं सदी में मार्क्स का चिन्तन प्रकट हुआ। मार्क्स ने प्रचलित अन्याय का प्रतिवाद तो किया पर वास्तव में वह

प्रतिवाद भी सत्ता और हिंसा के उन्हीं तत्त्वों पर खड़ा था जो पुराने समाज के आधार-स्तम्भ थे। वह अपने आपको उनसे अलग नहीं कर सका। पूंजीवाद रूपी थीसिस के प्रतिवाद (एन्टीथीसिस) की नयी दिशा वास्तव में अमेरिका में थोरो, इग्लैण्ड में रस्किन और रूस में टाल्स्टाय ने पकड़ी, उन्होंने पूंजीवाद के केवल ऊपरी लक्षण नहीं बल्कि उसकी बुनियादों को समझकर उनका प्रतिवाद किया। गांधी के जीवन, विचार और कर्तृत्व में इस प्रतिवाद ने परिपक्वता और मूर्तरूप धारण किया। वास्तव में यह नयी-पुरानी दोनों अच्छाइयों का समन्वय था। गांधी ने इसको "सर्वोदय" नाम दिया।

गांधी के पहले सर्वोदय की कल्पना लोगों को नहीं सूझी थी ऐसी बात नहीं है, पर यह कल्पना अधिकतर भावना के क्षेत्र में या व्यक्तिगत जीवन तक सीमित रही। सामाजिक जीवन में और समाज-शास्त्र के चिन्तन में "अधिक-से-अधिक लोगों का अधिक-से-अधिक हित" (ग्रेटेस्ट गुड ऑफ दी ग्रेटेस्ट नम्बर) इसी सिद्धान्त की मान्यता रही, 'सर्वोदय' की नहीं। भगवान बुद्ध के जमाने से "बहुजन-हिताय बहुजन-सुखाय" यही समाज-जीवन का मानदंड रहा। सामाजिक क्षेत्र में गांधी पहला उल्लेखनीय व्यक्ति था जिसने समझ-बूझकर इस सिद्धान्त को अमान्य किया। उसने घोषणा की, **"मैं अधिक से अधिक लोगों का अधिक-से-अधिक हित** वाले सिद्धान्त को नहीं मानता.. **सब लोगों का** अधिक-से-अधिक हित करना ही एक सच्चा, गौरवपूर्ण और न्यायोचित सिद्धान्त है।" अधिक-से-अधिक लोगों के अधिक-से-अधिक हितवाले सिद्धान्त में जो छिद्र थे उन्हें गांधी ने खोलकर सामने रख दिया। उन्होंने कहा—"(इस सिद्धान्त को) नग्न रूप में देखें तो उसका अर्थ यह होता है कि ५१ फीसदी लोगों के माने गये हित के खातिर ४९ फीसदी लोगों के हितों का बलिदान कर दिया जाय। यह सिद्धान्त निर्दय है और मानव समाज को इससे बड़ी हानि हुई है।"

सर्वोदय अव्यवहार्य क्यों ?

सर्वोदय हो, यानी सब लोगों की भलाई हो, यह बात इतनी सीधी और सरल मालूम होती है कि विचार में हर कोई उसको मानने को तैयार हो जाता है और उसका समर्थन करता है। लेकिन जहां आचार की बात आयी कि पग-पग पर स्वार्थ आड़े आता है और कठिनाइयां खड़ी हो जाती हैं। यही कारण है कि लोग सर्वोदय-विचार का तो ऊपर-ऊपर से समर्थन करते रहते हैं लेकिन जहां उसके आचरण की बात आती है तो उसको अव्यवहार्य बताने लगते हैं। लेकिन अगर वह सचमुच अव्यवहार्य है तब फिर विचार के रूप में भी सर्वोदय का समर्थन करना ईमानदारी की बात नहीं है। सच तो यह है कि जिस मार्ग को हम व्यहार्य मानते हैं वही आज के विज्ञान के युग में पुराना पड़ गया है। इतना ही नहीं, भौतिक विज्ञान की प्रगति से प्राप्त शक्तियों के कारण वह मार्ग सर्वनाश की ओर ले जानेवाला और इसलिए अत्यन्त अव्यवहार्य बन गया है। अगर इस विनाश से मानव जाति को बचाना हो तो पुराने रास्ते को छोड़ना होगा। लेकिन बात यह है कि सैकड़ों वर्षों से चली आ रही पुरानी लीक पर चलना आसान है। उसमें सामान्य मनुष्य को सुरक्षा महसूस होती है। नये रास्ते पर चलना या नया रास्ता बनाना हमेशा मुश्किल होता है।

गांधी नये युग का मसीहा था। उसने देख लिया था कि विज्ञान की असाधारण प्रगति के कारण जो नयी परिस्थिति पैदा हो रही है उसमें "५१ विरुद्ध ४९" का नहीं, बल्कि **"बिना अपवाद सबके"** हित का मार्ग अपनाना होगा, अन्यथा मानव जाति का विनाश होगा। इस नये रास्ते पर चलने के लिए कौन कौन-सी बातें आवश्यक हैं और मानव को इस नयी यात्रा में उसके कदम किस दिशा में बढ़ने चाहिए, उनका संकेत भी गांधी ने किया। **सर्वोदय करना हो,** तो आरंभ अन्त्योदय से करना होगा। यानी विकास की योजना ऐसी करनी होगी जिससे सबसे गरीब और सबसे कमजोर को सबसे पहले लाभ मिले। **सर्वोदय करना हो,** तो स्वाभाविक ही हिंसा का मार्ग छोड़ना होगा। क्योंकि जहां हिंसा आयी, कि सर्वोदय का 'सर्व' खण्डित हुआ। स्पष्ट है कि सर्वोदय और हिंसा परस्पर विरोधी हैं। **सर्वोदय करना हो,** तो स्वार्थ का रास्ता छोड़ना होगा। सही बात तो यह है कि जिसे हम स्वार्थ समझते हैं वह भी अन्ततोगत्वा वैसा साबित नहीं होता। उसके पीछे पड़ने में दुःख, ईर्ष्या और असंतोष ही पल्ले पड़ते हैं। इसीलिए गांधीजी ने जोर देकर कहा कि सबके भले में ही अपना भी भला है। **सर्वोदय करना हो,** तो इसके लिए सबको मिलकर प्रयत्न करना होगा, किन्हीं भी अच्छे-से-अच्छे चन्द लोगों को जनता की भलाई करने का अधिकार दे देने से काम नहीं बनेगा। सत्ता के केन्द्रीकरण को तोडना ही होगा—राजनीतिक और आर्थिक दोनों प्रकार का।

गांधीजी ने सर्वोदय-सिद्धान्त का और उसे प्राप्त करने के साधनों का केवल प्रतिपादन ही नहीं किया, उन्होंने अपने और समाज के जीवन में उन्हें उतारने की निरन्तर कोशिश भी की। देश के आजाद होने तक तो स्वाभाविक ही सारा ध्यान और शक्ति उसी लक्ष्य पर केन्द्रित थे, आजादी के बाद इन सब बातों को देश और समाज के जीवन में उतारने का मौका आया। लेकिन दुर्भाग्य से उसी समय गांधीजी हमारे बीच से उठ गये। हमारी खुशकिस्मती थी कि गांधीजी के हाथ की मशाल को लेकर विनोबा आगे बढ़े। उसके बाद का इतिहास आप और हम सब जानते हैं। उसका कुछ जिक्र आगे करूंगा।

मौजूदा संदर्भ और सर्वोदय

पिछले दशकों में विज्ञान का जो अभूतपूर्व विकास हुआ है उस परिस्थिति में सर्वोदय का मार्ग ही असल में व्यावहारिक है। पुराना रास्ता, पुराने तरीके और पुरानी मान्यताएं कितनी अव्यवहार्य

और विनाशकारी है उसका प्रत्यक्ष चित्र आज हम सारी दुनिया में देख रहे हैं। एक ओर तो विज्ञान का इतना विकास हुआ है और मानव के हाथ में इतनी शक्ति आयी है कि वह इसी दशक में चन्द्रमा से भी आगे बढ़कर सारे ग्रहों की परिक्रमा करने की योजना बना रहा है। दूसरी ओर, इतनी प्रगति के बावजूद दुनिया के तीन-चौथाई लोग गरीबी, अभाव और अज्ञान में दिन काट रहे हैं। गरीबों को काम और रोजी देने के लिए अगर आप खादी ग्रामोद्योग की बात करें तो विज्ञान के जमाने की दुहाई देकर विनोबा समाजवाद के पंडित अर्थशास्त्री और उनके समर्थक नेता आपका मजाक उड़ायेंगे। लेकिन उनकी चार चार पंचवर्षीय योजनाओं के बावजूद बढ़ती जा रही गरीबी, मुफलिसी और बेकारी का जवाब कोई उनसे तलब करे तो? काश, जनता इतनी संगठित होती। यह बात दिन में सूरज के प्रकाश जैसी स्पष्ट होने पर भी वे इसे कबूल नहीं करेंगे कि आज स्वराज के २४ बरस बाद, और गरीबी-बेकारी मिटाने के नाम पर अरबों रुपया पानी की तरह बहा देने और देश को गिरवी रख देने के बावजूद, देश की हालत जो पहले से भी बदतर हुई है वह इनकी प्रगतिशील तथा वैज्ञानिक कही जानेवाली नीतियों, योजनाओं के कारण ही। योजनाएँ सफल न होने के जो दूसरे-दूसरे कारण दिये जाते हैं वे अधिकतर अपनी कमियों को छिपाने के झूठे बहाने हैं, जैसे आबादी का विस्फोट, या राजनैतिक 'स्टन्ट', जैसे प्रतिगामी तत्त्वों द्वारा रुकावट की बात।

मेरा आशय यह नहीं है कि इन कारणों में सचाई नहीं है, बल्कि यह है कि अव्वल तो इन कारणों का पनपना उन योजनाओं में ही निहित था, जो अपनायी गयी, और दूसरे, इनके बावजूद गरीबों की दशा सुधारी जा सकती थी अगर नीतियाँ ठीक होतीं और इरादों में सचमुच ईमानदारी होती। उदाहरण के लिए, आबादी बढ़ने के बावजूद अगर योजनाओं में अन्त्योदय का उद्देश्य सामने होता, तो अपनी सुख सुविधाएँ, वेतन और भत्ते आदि बढ़ाये जाने के बजाय गरीबों के कष्टों में हिस्सा बँटाने की सच्ची समाजवादी भावना होती, पहले भारी-भरकम योजनाओं के सफेद हाथियों के पीछे करोड़ों-अरबों रुपया खर्च करने के बजाय साधारण जनता को लाभ पहुँचा सकनेवाली छोटी छोटी योजना को प्राथमिकता दी जाती। जनता पर टैक्स बढ़ाते जाने और उसे कम खर्ची के उपदेश देने के बजाय सरकारी कामों में कई निरर्थक योजनाओं, प्रदर्शनों और तमाशों में तथा राष्ट्रपति-भवन और राजभवनों के शाही ठाट-बाट आदि में जो लाखों-करोड़ों की फजूलखर्ची हो रही है वह रोकी जाती तो गरीबों की हालत में पिछले बीस बरस में अवश्य काफी सुधार हो सकता था।

उद्देश्य भिन्न : साधन, पद्धति एक

प्रतिगामी तत्त्व समाज की प्रगति को रोक रहे हैं, यह भी सही है। पर जिस प्रकार की केन्द्रित और पूँजी-प्रधान योजनाएँ अपनायी जाती हैं उन्हींके चलते इन तत्त्वों को पनपने का मौका मिलता है और वे मजबूत होते हैं। प्रतिगामी तत्त्वोंवाला बहाना अपने राजनीतिक प्रतिद्वन्द्वियों को बदनाम करके उन्हें खत्म करने के लिए अच्छा हो सकता है, लेकिन बेचारी जनता का अनुभव तो यही है कि इस प्रकार पुराने "प्रतिगामी" खत्म होते जाते हैं और उनकी जगह पहलेवालों से ज्यादा खतरनाक नये प्रतिगामी पैदा होते जाते हैं। और, भोली जनता एक के बाद एक प्रतिगामी तत्त्वों के खत्म होने की आशा में बार-बार धोखा खाती रहती है।

और, यह सब केवल हिन्दुस्तान में या केवल पूँजीवादी मुल्कों में हो रहा हो सो बात नहीं है। दुनिया में करीब-करीब सर्वत्र कमो-बेश यही हाल है। समाजवाद और साम्यवाद की मूल प्रेरणा गरीबों की भलाई की जरूर थी, पर उन्होंने भी पद्धति और साधन वे ही अपनाये जो पूँजीवाद के आधार थे। विज्ञान की प्रगति का लाभ केवल चंद लोग न उठायें, आम जनता को वह मिले, उसका उपयोग गरीबी और अभाव दूर करने में हो, इसके लिए यह जरूरी है कि व्यवस्था का विकेन्द्रीकरण हो, अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति का अधिकार और शक्ति सीधे जनता के हाथ में हो, किसी केन्द्रित सत्ता के नहीं। विज्ञान और तकनीकी विकास के साथ जब केन्द्रीकरण जुड़ जाता है तब शोषण और उत्पीडन का भयंकर सर्वग्राही राक्षस खड़ा हो जाता है। इसी प्रकार उसके साथ हिंसा जुड़ जाने से वह हिंसा सर्वनाश का रूप धारण कर लेती है। समाजवाद और साम्यवाद ने भी केन्द्रीकरण की पद्धति और हिंसा का साधन, जो पूँजीवाद के उपकारक थे और हैं, उन्होंको अपनाया। लेनिन ने लक्ष्य तो यह जरूर घोषित किया कि सारी सत्ता जनता की पंचायतों के पास जानी चाहिए—"ऑल पॉवर टू दी सोवियट्स" लेकिन रास्ता अपनाया वही पुराना। नतीजा हम देख रहे हैं कि सोवियत क्रान्ति को पचास बरस से ऊपर हो जाने के बाद भी आज सत्ता जनता के हाथ में नहीं है, राज्य या पार्टी के हाथ में है। कई महत्त्व के मामलों में वहाँ जनता शायद पहले से भी अधिक गुलाम है।

पीढ़ियों का अन्तर

इस प्रकार पुराने मूल्यों पर आधारित समाज-व्यवस्था या पुरानी नीतियों पर चलनेवाली सरकारें, चाहे वे नाम से पूँजीवादी हों या समाजवादी, या साम्यवादी, विज्ञान के आज के युग में जनता की सुख-समृद्धि, उसकी भलाई और विकास में असमर्थ साबित हो रही हैं। दुनिया भर के नौजवानों में जो विद्रोह की लहर आज दौड़ रही है, वह इसी गतिरोध के कारण पीढ़ियों के बीच का अन्तर या 'जेनेरेशन गैप' दुनिया में कब नहीं रहा है? पर आज वह अन्तर न मिटनेवाली खाई इसलिए बन गयी है क्योंकि परिवर्तन और प्रगति का नाम लेनेवाली शक्तियाँ भी पुराने मूल्यों के साथ जुड़कर कुण्ठित हो रही

हैं। तब नौजवान उनसे कैसे प्रेरणा लें? तीन बरस पहले फ्रांस की और अब पिछले महीने ही सीलोन (श्रीलंका) की घटनाएँ यह प्रमाणित कर रही हैं। भारत में भी नक्सालपंथ का उदय इसीका द्योतक है। जिन्होंने लंका की घटनाओं को गहराई से समझने की कोशिश की होगी उन्हें वहाँ की और भारत की परिस्थिति की तुलना ध्यान खींचनेवाली समानता का भान हुए बिना नहीं रहा होगा। हम इस देश में ऐसे विस्फोट के कितने नजदीक या कितने दूर हैं, यह विस्फोट होने तक अपनी-अपनी राय का विषय है।

बंगला देश

पिछले चंद सप्ताह में हमारे देश की दूसरी सीमा पर पूरब में जो घटनाएँ घटी हैं तथा घट रही हैं वे आज के युग में एक दूसरे प्रकार के खतरे की ओर इशारा करती हैं। पूर्वी बंगाल में स्वार्थ से प्रेरित सत्ता और हिंसा का नंगा नाच हम देख रहे हैं। विभिन्न सूत्रों से जो समाचार मिल रहे हैं उनसे जाहिर है कि बंगला देश में योजनापूर्वक जातिनाश और नरसंहार की कार्यवाही चल रही है। हजारों आदमियों को सिर्फ इसलिए कि वे अपने मुल्क में अपना शासन चाहते हैं; निर्दयता के साथ मौत के घाट उतारा जा रहा है, और दुनिया के देश खड़े-खड़े तमाशा देख रहे हैं। वे इसलिए नहीं बोल पा रहे हैं कि उनकी आलमारियों में भी उसी तरह के कंकाल बंद हैं। आज की केन्द्रित व्यवस्था के कारण हर देश में ऐसे उपेक्षित क्षेत्र मौजूद हैं, जहाँ की जनता पीड़ित, उपेक्षित, शोषित और असंतुष्ट है। इसलिए ये देश डरते हैं कि बंगला देश का पक्ष न्यायपूर्ण होते हुए भी अगर हम उसका समर्थन करते हैं तो कल हमारे यहाँ भी इसी तरह की प्रवृत्ति उठ खड़ी होगी। स्वायत्तता की प्रवृत्ति के खिलाफ देशों को अखंडता की दुहाई दी जाती है। पर जरा गहराई से सोचें तो सही, कि यह अखंडता आखिर चीज क्या है? दुनिया के बहुत-से देशों की सीमाएँ अस्वाभाविक तौर से, और कई मामलों में जनता की आकांक्षाओं के विरुद्ध, शासकों ने मनमाने ढंग से बना ली हैं। पाकिस्तान स्वयं इसका एक नमूना साबित हो चुका है। ऐसे देशों की अखंडता का क्या मूल्य या क्या औचित्य है? ऐसे मामलों में अखंडता कायम रखने का मतलब जुल्म और अन्याय को कायम रखना नहीं तो और क्या है? और क्या किसी देश की अखंडतापूर्ण वैधानिक और जनतांत्रिक तरीके से प्रकट की गयी, उसके निवासियों के बहुमत की राय से भी ज्यादा वजन रखती है?

भारत ने शुरू में अपनी सहज मानवीय परम्परा के अनुरूप और राजनीतिक परिणामों की बहुत चिन्ता किये बिना, पूर्वी बंगाल की निहत्थी जनता पर किये गये अमानुषिक आक्रमण की निन्दा और देश की जनता की इस आकांक्षाओं के समर्थन में लोकसभा के सर्व-सम्मत प्रस्ताव के जरिये साहस के साथ अपनी आवाज उठायी थी। पर अफसोस है कि बाद में भारत सरकार ने अपने हाथ से अभिक्रम खो दिया। मेरी नम्र राय में बंगला देश को मान्यता देने में देर करने के कारण इस देश के प्रतिगामी विचार रखनेवाले लोगों को बल मिला है और कई तरह की उलझनें खामखा में हमने मोल ली हैं। न्याय का और मनुष्यता का तकाजा है कि बंगला देश की समस्या जितनी जल्दी हो सके हल हो।

पुराने दकियानूसी खयालों से चिपके हुए लोग इन विचारों को फिर व्यवहार-शून्यता बतायेंगे, लेकिन अब वह जमाना आया है जब कि छोटे-छोटे क्षेत्रों के जन-समूहों को स्वशासन और स्वायत्तता के अधिकारों से वंचित रखना सम्भव नहीं होगा। विज्ञान की प्रगति के कारण पहले की अपेक्षा अब बहुत छोटे-छोटे क्षेत्रों में मानव का समग्र विकास सम्भव हुआ है। मानव की आकांक्षाएँ बढ़ी हैं, और विज्ञान के कारण उनकी पूर्ति का मार्ग भी खुल गया है। इसलिए जगह-जगह छोटे-छोटे क्षेत्रों में आत्म-निर्णय और स्वातंत्र्य की आवाज उठ रही है। इसी चीज का दूसरा पहलू यह है कि देश जितना बड़ा और सत्ता जितनी केन्द्रित होगी उतनी ही शोषण और उत्पीडन की संभावनाएँ ज्यादा होंगी। पुराने जमाने में हर गाँव करीब-करीब स्वयपूर्ण होता था। एक का दूसरे से सम्बन्ध भी अधिक नहीं रहता था, क्योंकि आवागमन और संचार के साधन बहुत सीमित थे। विज्ञान के इस युग में शोषण का डर, केन्द्रित व्यवस्था की वजह से उपेक्षा की संभावना, और भौतिक विकास की इच्छा के कारण फिर से छोटे-छोटे क्षेत्रों का स्वत्व जागृत हुआ है, हालाँकि आवागमन और संचार के साधनों के विकास के कारण भौतिक दृष्टि से सारी दुनिया इतनी नजदीक आ गयी है कि गाँव तो क्या, देश-देश भी अब अलग नहीं रह सकते। जो लोग वर्तमान के जाल-जंजाल और स्वार्थ को भेदकर दूर तक देख सकते हैं, वे समझते हैं कि आज के युग में इन दोनों बातों का मेल मिलाना ही होगा—अधिक-से-अधिक स्थानीय स्वायत्तता और जागतिक व्यवस्था! विनोबा का "जय ग्रामदान—जय जगत्" का उद्घोष इसीलिए विज्ञान के युग के अनुकूल है। स्थानीय स्वायत्तता और जागतिक व्यवस्था के बीच की जो भी चीजें हैं उनका व्यवस्था की सहूलियत के लिए भले ही उपयोग हो, अपने-आप में उनका कोई औचित्य या मूल्य नहीं है। वे पुराने जमाने की चीजें हो गयी हैं।

हमारा समर्थन क्यों?

पूर्वी बंगाल की घटना के सम्बन्ध में एक-दो बातें यहाँ स्पष्ट करना जरूरी है। पूर्वी बंगाल के लिए हमारी जो हमदर्दी है उसमें पाकिस्तान का द्रोह नहीं समझना चाहिए। हमारी आन्तरिक इच्छा और प्रार्थना है कि दुनिया का हर देश फले-फूले, पाकिस्तान भी। लेकिन अगर कोई स्वयं ही बबूल के बीज बोयेगा तो दुनिया भर की सदिच्छा के बावजूद वह उसमें से आम नहीं पा सकेगा।

जोर-जुल्म के आधार पर एक हजार मील दूर के भूखंड को, जिसकी भाषा और संस्कृति भिन्न है आज के युग में कोई अपने स्वार्थ और शोषण के लिए काबू में नहीं रख सकता। यह चेष्टा करके पाकिस्तान अपना अहित ही कर रहा है, यह बात आज नहीं तो कल उसको समझ में आयेगी। स्वयं अपने हित में पाकिस्तान को आज की अपनी नीति बदलनी ही होगी। पूर्वी बंगाल अगर अलग हो रहा है तो उसकी पूरी जिम्मेदारी, जैसा श्रद्धेय जयप्रकाशजी ने कहा है, दो, और सिर्फ दो ही, व्यक्तियों पर है—श्री याहिया खाँ और श्री भुट्टो। पूर्वी बंगाल की घटना को अपना 'घरेलू मामला' बताकर तो वे बुद्धि का अपमान ही कर रहे हैं। दो देशों या कौमों के बीच की बात तो छोड़िये, कोई व्यक्ति भी अगर अपने बीवी-बच्चों या भाइयों के गले पर छुरी फेर रहा हो तो उनके बीच में दखल देना और उसको वैसा करने से रोकना पड़ोसियों का न सिर्फ अधिकार है बल्कि कर्तव्य भी। हम प्रार्थना करें कि भगवान पाकिस्तान के नेताओं को जल्दी-से-जल्दी सद्बुद्धि दें जिससे पूर्वी बंगाल का नर-संहार बन्द हो और जनतंत्र की विजय हो।

पूर्वी बंगाल की घटना से अन्तर्राष्ट्रीय जगत का जो चित्र उभरकर आया है वह इस बात को साबित कर रहा है कि आज की सरकारें और आज की समाज-व्यवस्था (एस्टेब्लिशमेंट) न तो अपनी-अपनी जनता की आकांक्षाओं का प्रतिनिधित्व करते हैं, न उनकी भावनाओं के अनुरूप काम करने की क्षमता उनमें है। इन सरकारों को जो चलाते हैं, अर्थात् राजनीतिक नेता और अफसर लोग, उनके निहित स्वार्थ खड़े हो गये हैं। और, अब इन लोगों को जनता या देश की भावनाओं का प्रतिनिधित्व करने के बजाय उन स्वार्थों को बचाने की फिक्र ज्यादा है।

राष्ट्रों का संगठन और सेना का निर्माण जनता की सुरक्षा और उसके विकास में मददगार होने के लिए किया जाता है, उसको कुचलने के लिए या उसकी आकांक्षाओं को दबाने के लिए नहीं। इसलिए पूर्वी बंगाल में सेना का जो उपयोग किया जा रहा है, वह अनैतिक ही नहीं सरासर असंवैधानिक भी है। यह आवाज दुनिया के देशों को और जनता को उठानी चाहिए। जमाना बदलने के साथ पुराने संस्थान, पुरानी व्यवस्थाएँ और पुरानी मान्यताएँ अगर बदली नहीं जातीं तो वे समाज-जीवन के लिए खतरा बन जाती हैं, उसका एक उदाहरण सेनाएँ हैं। आज हम देख रहे हैं कि अणुयुग के जमाने में सुरक्षा के लिए सेनाएँ आउट डेटेड होती जा रही हैं, लेकिन देश के आन्तरिक मामलों में उनका उपयोग बढ़ता जा रहा है। यह बहुत खतरनाक प्रवृत्ति है। सेना का औचित्य बाहरी आक्रमण से सुरक्षा के लिए है, न कि आन्तरिक मामलों में एक के खिलाफ दूसरे वर्ग की स्वार्थ की रक्षा करने में। यह सब देखते हुए, क्या आज सेनाओं के अस्तित्व के बारे में ही बुनियादी तौर से सोचने का समय नहीं आया है।

देश के बीच आवागमन का प्रतिबंध क्यों?

इसी प्रकार देशों के बीच आवागमन पर लगाये गये कृत्रिम प्रतिबन्धों के बारे में भी आवाज उठाना आवश्यक हो गया है। आज शायद बहुत से लोगों के ध्यान में यह बात नहीं है कि आवागमन की यह रुकावट पिछले १०० साल से भी कम की उपज है। गहराई से देखा जाय तो यह व्यवस्था उतनी जनता के हित के लिए नहीं है जितनी राज्यों और सरकारों के सर्वाधिक हितों की रक्षा के लिए। भगवान ने मनुष्य को पाँव दिये हैं, उन पाँवों से केवल देश के भीतर ही नहीं, पृथ्वी पर कहीं भी विचरण करने का उसका जन्मसिद्ध अधिकार है। बंगला देश में चलाये जा रहे निर्दयतापूर्ण नर-संहार को घरेलू मामला बनाकर सेवा के कामों के लिए भी वहाँ जाने से लोगों को रोका जा रहा है वह बात इस सारे प्रश्न पर पुनर्विचार करने की आवश्यकता सिद्ध करती है।

बंगला देश और श्रीलंका की घटनाएँ इस बात का संकेत है कि दुनिया के देशों को अपनी नीतियाँ और व्यवस्था पलटनी होंगी। भारत बहुत पुराना देश है। हजारों वर्ष पुरानी उसकी संस्कृति है और इसलिए उसकी रीढ़ अपेक्षाकृत मजबूत है। पर हम भी अगर नये जमाने के संकेतों को नहीं पहचानेंगे, तो हमें भी एक दिन पछताना पड़ सकता है। आज भी हमारा पछतावा कम नहीं है। आजादी के पहले जो सपने हमने सेये थे व एक-एक करके चूर हुए हैं। आजादी के बाद देश को बनाने का उसकी आत्मा को ऊँचा उठाने का, उसके करोड़ों निवासियों के आँसू पोंछने का एक सुनहरा मौका हमें मिला था। पर हमने अपने तुच्छ स्वार्थों के लिए उस मौके को खो दिया। गाँव-गाँव में लाखों-करोड़ों लोगों की तेजहीन आँखें, सूखे पेट नंगे बदन, और सबसे अधिक तो चरित्र की कंगालियत देखकर किसको रोना नहीं आयेगा? गांधीजी ने स्वतंत्र भारत का जो सपना देखा था और जो राह हमें बताई थी उसके अनुसार हमने कुछ भी किया होता और उस राह पर चले होते तो आज यह हालत नहीं होती। अब भी चेतने का समय है। लेकिन केवल समाजवाद के नारों से या बड़े-बड़े वादों से आज की परिस्थिति काबू में नहीं आ सकती। उसके लिए नीतियाँ बदलनी होंगी, स्वार्थ को त्यागना होगा, सत्ता के किलों को तोड़ना होगा, हिंसा के भ्रमजाल से बाहर निकलना होगा, विज्ञान को निहित स्वार्थों के चंगुल से निकालना होगा, और जनता को सरकार से मुक्त होना होगा।

जन-स्वराज्य

यह सब आज की सरकारें, या कोई सरकार नहीं कर सकती। ये काम स्वयं लोगों को करने होंगे। जनता के अभिक्रम और संगठन से ही ये काम संभव हैं। स्वराज के बाद सबसे बड़ी गलती हम

लोगों के यह मान बैठने में हुई कि अब जनता का काम सिर्फ टैक्स देने का या समय-समय पर भिन्न-भिन्न कामों के लिए अपने प्रतिनिधि चुन देने का है, बाकी सारा काम सरकार को करना है। राजनैतिक पार्टियों ने तथा नेताओं ने इस भ्रम को प्रोत्साहन दिया, क्योंकि उनके अस्तित्व का औचित्य उसी में था। पर गांधीजी बराबर हम लोगों को यह चेतावनी देते रहे कि सच्चा स्वराज्य थोड़े लोगों के द्वारा सत्ता प्राप्त कर लेने से नहीं हो जाता बल्कि जनता के अपने पाँव पर खड़े होने से ही वह हासिल हो सकता है। उन्होंने स्वयं अपने आचरण से इसे हमारे सामने रखा। आजादी के बाद वे सरकार में नहीं गये, सेवा के द्वारा जनता की शक्ति बढ़ाने के काम में लगे रहे, और कांग्रेस-संगठन को भी उन्होंने यही सलाह दी। पर संयोग से इसी बीच उनकी हत्या हो गयी और हम लोग नये-नये स्वराज्य का भोग करने में ऐसे मशगूल हो गये कि उनकी उस योजना को वर्षों तक किसीने याद भी नहीं किया। गांधीजी ने स्पष्ट शब्दों में कहा था कि "स्वराज्य का अर्थ है सरकारी नियंत्रण से मुक्त होने के लिए लगातार प्रयत्न करना...यदि स्वराज्य हो जाने पर लोग अपने जीवन की हर छोटी बात के लिए सरकार का मुँह ताकना शुरू कर दें, तो वह स्वराज्य-सरकार किसी काम की नहीं होगी।"

अब बहुत बड़ी कीमत चुकाकर हासिल किये हुए २४ बरस के अनुभव के बाद शायद हमें गांधीजी की इन बातों में मुख्य सचाई और बुद्धिमानी का भान हो। गांधीजी ने बिना किसी दुविधा की गुंजाइश से कहा था—"आजादी नीचे से शुरू होनी चाहिए। हर एक गाँव में लोगों की हुकूमत या राज होगा। उसके पास पूरी सत्ता और ताकत होगी। हर एक गाँव को अपने पाँव पर खड़ा होना होगा, अपनी जरूरतें खुद पूरी कर लेनी होंगी, ताकि वह अपना सारा कारोबार खुद चला सके। यहाँ तक कि वह सारी दुनिया के खिलाफ अपनी रक्षा खुद कर सके।" इसी दृष्टि से गांधीजी ने खादी, ग्रामोद्योग, नयी तालीम, हरिजन-सेवा आदि रचनात्मक प्रवृत्तियाँ चलायी थीं। केवल राहत या सेवा के कार्यक्रम के रूप में गांधीजी ने उनकी सृष्टि नहीं की थी। गांधीजी के चले जाने के बाद विनोबाजी के नेतृत्व में इसी अधूरे काम को पूरा करने में हममें से बहुत-से लोग लगे रहे हैं। भूदान-ग्रामदान का कार्यक्रम इसमें और जुड़ा और वह जनता में एकता, संगठन और शक्ति पैदा करने का साधन होने से प्रमुख कार्यक्रम बना।

अभूतपूर्व उपलब्धियाँ

कमियाँ और दोष हर बड़े काम में स्वाभाविक हैं। वे इस काम में भी रहे होंगे, पर हम विधायक दृष्टि से देखें तो पायेंगे कि इस काम में जो सफलताएँ अब तक मिली हैं वे अभूतपूर्व हैं। आप लोग तो इन तथ्यों से परिचित होंगे, पर आज भी देश में ऐसे बहुत-से लोग हैं जिन्हें इन बातों की स्पष्ट जानकारी नहीं है। २० वर्ष हुए, १९५१ के अप्रैल में भूदान आंदोलन का जन्म हुआ। शुरू के ६-७ वर्ष तक भूदान के रूप में इस आंदोलन का पहला दौर चला। इस अवधि में देश के करीब पौने छः लाख भूमिवानों ने कम-ज्यादा करके ४१ लाख एकड़ से ज्यादा जमीन स्वेच्छा से अपने गरीब भूमिहीन भाइयों के लिए दी। इसमें से साढ़े बारह लाख एकड़ जमीन बँट चुकी है, जिसका लाभ साढ़े चार लाख गरीब परिवारों को मिला है। दुनिया के इतिहास में स्वेच्छा से इतनी जमीन एक हाथ से दूसरे हाथ में जाने का कोई दूसरा उदाहरण नहीं है। भूदान का महत्व और भी स्पष्ट हो जायगा, अगर यह बात हमारे ध्यान में रहे कि पीछले २० वर्षों में, बावजूद तरह-तरह के कानून बनाये जाने के, अब तक सारे भारत में इससे आधी जमीन भी सरकारें भूमिवानों से लेकर भूमिहीनों को नहीं दे सकी हैं। मेरे अपने प्रदेश राजस्थान में जब कि भूदान के द्वारा अब तक ८४ हजार एकड़ जमीन हस्तान्तरित हो चुकी है, सीलिंग के कानून द्वारा अभी पिछले महीने तक, स्वयं राजस्थान सरकार के राजस्व राज्य-मंत्री के अनुसार, सरकार के हाथ में सिर्फ १०,३४७ एकड़ जमीन आयी है। इस १० हजार एकड़ में से भी सचमुच गरीब भूमिहीनों को कितनी मिली है या कितनी मिल सकेगी इसमें संदेह है। किसी भी बात का मजाक उड़ाना आसान है, पर तथ्य इस बात की साक्षी है कि असफल कानून हुआ है, न कि भूदान आन्दोलन।

भूदान के कार्यक्रम ने यह साबित कर दिया है कि मनुष्य अपने स्वार्थ से ऊपर उठ सकता है। भूदान के गर्भ से आन्दोलन का दूसरा चरण ग्रामदान के रूप में प्रगट हुआ। ग्रामदान देश के टूटे हुए, जर्जर और तरह-तरह के भेदों से ग्रसित गाँवों की एकता और उनके संगठन की योजना है। इससे अच्छी दूसरी योजना अभी तक कोई नहीं बना सका है, बनाये तो हार्दिक स्वागत है। भूदान में स्वार्थ से थोड़ा ऊपर उठ कर अपनी जमीन का कुछ हिस्सा देने की बात थी, जो अपेक्षाकृत आसान थी, लेकिन ग्रामदान में प्रचलित मान्यताओं, और व्यवस्था को बदलने का सवाल था। अपनी-अपनी सब रोटें, इसके बजाय ग्रामसभा के माध्यम से सारे गाँव के सुख-दुख को एक समझकर उसमें हिस्सा बँटाने और मिल-जुलकर काम करने की बात थी। अतः भूदान की तरह ग्रामदान की योजना को एक-एक गाँव में लागू करते जाने से काम बननेवाला नहीं था। ग्रामदान के विचार की मान्यता के लिए पहले वातावरण बनाना जरूरी था। इसलिए गाँव-गाँव जाकर ग्रामदान का विचार समझाने और उसके लिए लोगों की स्वीकृति प्राप्त करने का काम ग्रामदान के इस दूसरे चरण में मुख्य था। पिछले १०-१२ वर्षों में देश के लगभग एक-तिहाई गाँवों में यह काम हुआ है। इस प्रकार घर-घर, गाँव-गाँव जाने का इतना बड़ा काम आजादी के बाद के इन २३-२४ वर्षों में किसी भी संगठन या जमात ने नहीं किया है।

शान्ति का जागतिक आन्दोलन

अब पिछले वर्ष से आन्दोलन ने तीसरे चरण में प्रवेश किया है, ग्रामदान की जिन शर्तों का व्यापक प्रचार किया गया, उन्हें अब कार्यरूप में परिणत करने का सवाल है। ग्रामदान के विचार की नींव पर अब ग्रामस्वराज्य का भवन खड़ा करना है। हमारे सौभाग्य से इस काम की प्रत्यक्ष अगुवाई स्वयं जयप्रकाशजी ने बिहार के मुसहरी प्रखंड में बैठकर की। इसके अलावा बिहार में सहरसा, पूर्णिया, भागलपुर आदि कई अन्य क्षेत्रों में भी काम शुरू हुआ। उत्तर भारत में बिहार को छोड़कर शायद राजस्थान ही ऐसा प्रदेश है जहाँ एक पूरे (बीकानेर) जिले में योजनापूर्वक ग्रामदान के बाद का काम हो रहा है। ग्रामदान की शर्तों के अनुसार कदम बढ़ाने का काम आसान नहीं है। सैकड़ों वर्षों की परम्पराओं और पीढ़ियों से प्राप्त सुविधाओं तथा लाभ को छोड़कर शोषण और जोर-जबरदस्ती के बजाय परस्पर सहयोग और भाईचारे के आधार पर नये समाज की रचना का काम बहुत कठिन है। बीकानेर जिले के काम के साथ मेरा जो निकट सम्पर्क आया है उस पर से मैं कह सकता हूँ कि जनता आगे कदम बढ़ाने को तैयार है, बशर्ते कि हम लोग धीरज, लगन, श्रद्धा और साहस के साथ उस काम में लगे रहें। इस काम में इन गुणों के साथ-साथ हमारी कार्य-कुशलता, योग्यता और कल्पनाशीलता, सबकी कसौटी होनेवाली है। पर यह कार्य अगर हम कर सकें तो उससे जो लोकशक्ति प्रगट होगी उसके जरिये जनता सरकार के पाश से मुक्त होकर सचमुच आजाद होगी।

इस सारी पृष्ठभूमि में हम देखें तो हम महसूस करेंगे कि सर्वोदय-विचार और सर्वोदय-आन्दोलन सम्प्रति में आज के युग में अंधकार की शक्तियों के खिलाफ जनता की मुक्ति का महाव्रत है। इस देश भारत की परिस्थिति में, ग्रामदान की शर्तों के आधार पर बनी हुई ग्रामसभा के रूप में इस मुक्ति की कुंजी हमारे हाथ में आयी है। अभी कुछ ही दिन पहले पूज्य विनोबाजी ने कहा था कि "ग्रामसभा अपनी दुर्गा है, जैसे महिषासुर-मर्दन के लिए सब देवताओं ने एक होकर अपने-अपने शस्त्र दुर्गा को दे दिये थे, इसी तरह अपने सब शस्त्र उसे (ग्रामसभा को) दे दो। नहीं तो (अकेले-अकेले रहे तो) सभी देवता हारेंगे। खादीवाले, हरिजन-सेवावाले, नशाबन्दीवाले जो भी काम करना चाहते हैं वे सब अपना काम ग्राम-सभा द्वारा करायें।" केवल गाँव ही नहीं, अब समय आया है कि "शहरों में भी हमारा अड्डा होना चाहिए। पचास-साठ शहर चुनकर शांतिसेना का काम करें। गाँव का काम ग्रामसभा द्वारा और शहर का काम शांतिसेना द्वारा होना चाहिए।" बाबा का यह प्रधान मार्गदर्शन हम सबके लिए पर्याप्त होना चाहिए।

मैंने नम्रता-पूर्वक आपके सामने यह बात रखने की कोशिश की है कि सर्वोदय आन्दोलन केवल भारत का नहीं, एक जागतिक आन्दोलन है, केवल राहत का नहीं, क्रांति का कार्यक्रम है। आज के युग की यह परम आवश्यकता है। अन्याय, शोषण, विषमता, और उत्पीड़न से त्रस्त मानव जाति के लिए यह आशा का संदेश है, आश्वासन है। इस परिप्रेक्ष्य में हम हमारे इस काम को देखेंगे तो हमें लगेगा कि हमारा जीवन धन्य है, जो इस काम में उसे लगाने का हमें मौका मिला है।

आप सबको आदरपूर्वक प्रणाम।

—सिद्धराज ढड्ढा

अण्णासाहब पटवर्धन नगर,
८ मई '७१, नासिक

१९वाँ सर्वोदय-सम्मेलन : गांधी के प्रति प्रतिवेदन

८ मई की सुबह शांतिसेना विषयक चर्चा में श्री नारायण देसाई ने अपनी बंगला देश की सीमा-यात्रा के अनुभव सुनाये, शरणार्थियों को राहत पहुँचाने के लिए शिविर-योजना की जानकारी दी, साथ ही यह भाव व्यक्त किया कि वास्तव में शांतिसेना अब धीरे-धीरे ठोस बुनियादों पर विकसित हो रही है। तरुण-शांति सेना द्वारा आगामी ६ अगस्त को आयोजित किये जाने वाले 'शिक्षा में क्रान्ति' के लिए प्रदर्शन-कार्यक्रम की जानकारी देते हुए कहा कि हर प्रदेश की राजधानियों में उस प्रदेश के विद्यार्थियों, शिक्षकों और अभिभावकों द्वारा विराट प्रदर्शन आयोजित किये जाने का कार्यक्रम निश्चित हुआ है।

तीसरे पहर सम्मेलन के लिए बने विशाल पण्डाल में १९वाँ सर्वोदय समाज सम्मेलन शुरू हुआ। इस अवसर पर प्रतिनिधियों, दर्शकों और श्रोताओं की कुल उपस्थिति ७ हजार के करीब थी। सम्मेलन-परम्परा के अनुसार स्वागत इत्यादि की कार्यवाही के बाद दादा-धर्माधिकारी ने सम्मेलन के उद्घाटनकर्ता और अध्यक्ष से परिचय की रस्म अदा करते हुए कहा, "यह विचित्र संयोग है कि इस सम्मेलन का उद्घाटन करनेवाले हैं एक निरीश्वरवादी श्रीरामचन्द्र राव गोरा, अध्यक्षता करनेवाले हैं ईश्वरनिष्ठ सिद्धराज भाई और परिचय करा रहा है धर्माधिकारी।" दादा ने श्री गोराजी के मानवनिष्ठ और श्री सिद्धराज ढड्ढा के बहुमुखी प्रतिभासम्पन्न व्यक्तित्व का शब्द-चित्र प्रस्तुत करते हुए यह कार्य सम्पन्न किया।

सबसे पहले सर्वोदय-परिवार के दिवंगत साथियों को दो मिनट के मौन के साथ श्रद्धांजलि अर्पित की गयी।

श्री गोराजी ने बड़े ही रोचक ढंग से अपना उद्घाटन भाषण पढ़ा, जो पहले अंग्रेजी में उनके द्वारा लिखा गया, उसके बाद बेटे लवणम् द्वारा हिन्दी में अनुवाद किया गया, और फिर उनकी बोलने की सुविधा के लिए बेटी द्वारा तेलगु लिपि में लिखा गया था। गोराजी का तेलगु और अंग्रेजी-प्रभावित हिन्दी उच्चारण बहुत ही मधुर था। इसके बाद अध्यक्षीय भाषण करते हुए श्री ढड्ढाजी

ने कहा कि यह सम्मेलन वास्तव में गांधीजी के विचार के अनुसार काम करनेवाले लोगों का गांधी के प्रति अपने काम का प्रतिवेदन है। चूँकि बंगला देश के लिए विश्वमत जागृत करने हेतु जयप्रकाशजी अपनी विश्व-यात्रा की पूर्व-तैयारी के लिए आज ही रवाना होनेवाले थे, इसलिए उनका भी भाषण हुआ जो मुख्य रूप से बंगला देश की पीड़ित जनता के प्रति उनकी गहरी संवेदना की उमड़ती अभिव्यक्ति थी। (पूरा भाषण अगले अंक में।) जयप्रकाशजी के भाषण को जिन्होंने सुना, वे पुराने क्रान्तिकारी जयप्रकाश को याद किये बिना न रह सके।

९ मई को सम्मेलन की कार्यवाही का प्रारम्भ करते हुए श्रीनारायण देसाई ने कहा कि ३० जनवरी १९४८ को महाभारत का एक पर्व समाप्त हो गया जब कि महात्मा गांधी की शव-यात्रा तोपों की सवारी पर निकली। तब से लगातार कोशिश हो रही है कि गांधी की स्मृति को फूलों में गाड़ दिया जाय और गांधी को अपनी महत्वाकांक्षाओं को पूरा करने के लिए चाहे जैसा इस्तेमाल किया जाय। इसी का दूसरा परिणाम है कि आज गांधी की मूर्ति के भंजक पैदा हो रहे हैं। वास्तव में आज नयी पीढ़ी को क्रान्तिकारी गांधी का पता ही नहीं है। इसलिए गांधी के प्रति प्रतिवेदन वास्तव में अपने प्रति प्रतिवेदन होना चाहिए। आपने कहा कि हम अपने काम के प्रति कितने ईमानदार हैं यही गांधी के प्रति प्रतिवेदन है। कार्यकर्ताओं से श्रीनारायण भाई ने कहा कि कल हम जितने कार्यक्षम थे, उससे अधिक कार्यक्षम आज हुए कि नहीं, यही इस बात की कसौटी है। दूसरी बात, व्यक्तिगत व्यवहार में हम एक दूसरे के प्रति स्नेहपूर्ण हैं कि नहीं, यह हमारे संगठन की कसौटी है। और, अन्त में आपने सर्वानुमति के बारे में अपना मत व्यक्त किया कि यह सत्य-शोधन की प्रक्रिया होनी चाहिए, एक दूसरे पर विचार लादने की नहीं।

इसके बाद सुश्री कान्ता बहन ने मुसहरी के अपने अनुभव सुनाते हुए जलालपुर में हुए अभी हाल के हत्याकांड की जानकारी देते हुए कहा कि इस प्रकार के कुकृत्यों के बाद जो समाज बनेगा वह अमानवीय ही होगा। श्री गंगाप्रसाद अग्रवाल ने परभणी में नागरिकों और छात्रों द्वारा साम्प्रदायिक सद्भाव के लिए किये गये उपवास-सत्र की जानकारी दी। २४ घंटे के उपवास सत्र में, जो १४५ दिन चला, करीब १३ सौ लोगों ने भाग लिया। इनमें से ६ सौ छात्र थे और ३ सौ महिलाएँ थीं। श्री साठेजी ने स्वर्गीय अप्पा साहब की चलन-शुद्धि विचार-धारा का संक्षिप्त परिचय दिया। श्री आर० टी० सुब्रह्मण्यम् ने तमिलनाडु के नशाबन्दी आन्दोलन की जानकारी देते हुए कहा कि तमिलनाडु पहला प्रदेश है जहाँ नशाबन्दी लागू की गयी है। लेकिन अब सरकार उसे खतम करना चाहती है। हम जन-आन्दोलन द्वारा सरकार पर दबाव डाल रहे हैं कि वह नशाबन्दी को पूर्ववत् लागू रखे। श्री मनमोहन भाई ने अपनी विदेश-यात्रा के अनुभवों के आधार पर विश्व के शांति-आन्दोलन की जानकारी दी और कहा कि युद्ध-विरोध से शुरू होनेवाला पश्चिम का आन्दोलन अब गांधी की प्रेरणा पाकर शांति के लिए समाज-परिवर्तन की अनिवार्यता की ओर अग्रसर हो रहा है। श्री वंशीधर श्रीवास्तव ने केन्द्रीय आचार्यकुल समिति की ओर से आचार्यकुल आन्दोलन की जानकारी दी। आचार्यकुल का आन्दोलन इस समय मुख्य रूप से उत्तर प्रदेश, बिहार, राजस्थान और महाराष्ट्र में चल रहा है। श्री गोविन्दराव देशपांडे ने पिछले दिनों सम्पन्न हुए मध्यावधि चुनाव के समय सर्व सेवा संघ द्वारा किये गये मतदाता-शिक्षण के कार्यों की संक्षिप्त जानकारी दी। गांधी स्मारक निधि के मंत्री श्री देवेन्द्र गुप्ता ने रचनात्मक संस्थाओं को एक-दूसरे के करीब लाने के लिए संस्था-कुल के रूप में हो रहे प्रयत्नों के बारे में बताया। सर्व सेवा संघ के मंत्री श्री ठाकुरदास बंग ने राजगीर-सम्मेलन के बाद से अब तक के हुए कामों की समीक्षा करते हुए ग्रामदान-पुष्टि, सर्वोदय-संगठन और बंगला देश का त्रिविध संदेश दिया।

सम्मेलन की तीसरी सभा आचार्य राममूर्ति की ब्रोशर-व्याख्या से शुरू हुई। आपने कहा कि हम सत्तरपूर्ति एक साल के लिए ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य की संभावनाओं को प्रकट करने में पूरी शक्ति के साथ जुट जायँ और तब अगले सम्मेलन में इस बात की छानबीन करें कि क्या इस आन्दोलन का आधार सचमुच ब्रोशर ही है? श्री बद्री प्रसाद स्वामी ने बीकानेर जिलादान के बाद वहाँ हो रहे पुष्टि-कार्यक्रम की जानकारी दी और श्री माणिक्यम् ने भी तमिलनाडु में हाल ही में हुए वलिवलम्-सत्याग्रह की उपलब्धियों पर प्रकाश डाला। श्री वसन्त नारगोलकर ने गांधीवादी सत्याग्रह को अपनाने पर जोर दिया।

नगालैंड में शांति के लिए सन् १९६५ से काम कर रहे डा० अरम् ने वहाँ की प्रगति की समीक्षा करते हुए कहा कि सन् '७१ का साल वास्तविक शांति का साल हो सकता है। उनके साथ आये नगालैंड के भूमिगत सैनिक अधिकारी श्री हेसो ने सर्वोदय-समाज के बीच आने को पाकर गौरवान्वित अनुभव किया। श्री अण्णा यादव ने नासिक से पण्ढरपुर की अपनी सर्वधर्म समभाव-यात्रा की जानकारी दी। श्री मनमोहन भाई ने बंगला देश के सहयोग में कार्य करने की तीन दिशाएँ बतायीं—

१—बंगला देश की सीधी मदद, २—बाहर की दुनिया में जनमत अनुकूल बनाना, ३—अपने देश के अन्दर बंगला देश के लिए सहानुभूति जागृत करते रहना। इसके बाद श्री हरिवल्लभ परीख ने रंगपुर क्षेत्र में चल रहे अन्नेश्वर-सत्याग्रह की जानकारी दी।

इस अधिवेशन-सम्मेलन के विशेष अतिथि ढाका से प्रकाशित होनेवाले 'दी पीपुल्स' दैनिक के सम्पादक जनाब अबीदुर्रहमान और समाचार-सम्पादक जनाब शुभान के भाषण हुए। उनके भाषणों में तार्किकता के साथ जो गहरी अनुभूतियों की अभिव्यक्ति थी, उसे मानवता

का शंखनाद कहा जाय, तो कोई अत्युक्ति नहीं होगी। अजीजुर्रहमान के शब्द अब भी कानों में गूँज रहे हैं, "हमारी लड़ाई स्वाधीनता की नहीं है, स्वाधीनता तो हमारे हाथ में है। लेकिन हमारे घर में दूसरे देश के लोग घुस आये हैं, उनको हमें भगाना है। हम तो २६ मार्च को ही स्वाधीन हो गये। उस दिन जो सूरज उगा था वह हमारी स्वाधीनता का सूर्योदय था।

"आज बंगला देश में कोई मरण से नहीं डरता। वह जानता है कि मरण तो जीवन का निश्चित तथ्य है। लेकिन बंगला देश का हर नागरिक आज उस मरण के लिए तैयार है, जिसके बाद यह दुनिया याद करेगी कि यह भी एक जाति थी, जो अपनी स्वाधीनता के लिए मिट गयी।"

सर्वोदय-समाज की जय जगत्वाली भूमिका से अत्यन्त प्रभावित हुए अजीजुर्रहमान ने बड़े ही भावपूर्ण ढंग से कहा कि जब हमारा देश बाहरी सेना के इस आक्रमण से मुक्त होगा, तब हम ढाका में सर्वोदय-सम्मेलन बुलायेंगे, और बंगला देश में भी सर्वोदय-आन्दोलन शुरू करेंगे। जनाब अजीजुर्रहमान ने कहा कि, "अब तो हम हर साल सम्मेलन में भाग लेंगे। मुझे तो लगता है कि यह एक हमारा बड़ा परिवार है, जिसके बीच हम आये हैं।"

१० मई को सम्मेलन की आखिरी सभा में उपस्थिति पहले दिन की अपेक्षा काफी कम हो गयी थी।

इस सभा की कार्यवाही में पहले विविध प्रवृत्तियों की जानकारी दी गयी। पूर्णिया जिले के श्री अनिरुद्ध बाबू ने वहाँ के ग्रामदान-पुष्टि आंदोलन की जानकारी दी। श्रीमती अमलप्रभादास ने असम के आंदोलन की, खासकर वहाँ की महिलाओं द्वारा चलायी जा रही लोकयात्रा की जानकारी दी। राजस्थान समग्र सेवा संघ के मंत्री श्री त्रिलोकचन्द जैन ने (अभी राजस्थान में चल रही) १२ वर्षीय लोकयात्रा के बारे में संक्षिप्त जानकारी प्रस्तुत करते हुए लोकयात्री बहनों का नमस्कार सम्मेलन में आये सर्वोदय-परिवार के लोगों तक पहुँचाया। श्री रामचन्द्र राही ने भारत भर की सर्वोदय-पत्रिकाओं की जानकारी देते हुए सर्वोदय-क्रान्ति की सफलता चाहने-वालों से अनुरोध किया कि वे अपने योग-दान के रूप में इस विचार-क्रान्ति की पृष्ठभूमि तैयार करने के लिए कम-से-कम पत्रिकाओं के प्रचार-प्रसार-पठन का तो यथाशक्ति प्रयत्न करें। केरल के एक कार्यकर्ता साथी ने वहाँ के आन्दोलन की जानकारी देते हुए कहा कि वहाँ की भिन्न परिस्थितियों में आन्दोलन का व्याव-हारिक स्वरूप हम तलाश रहे हैं।

इसके बाद कुछ समय तक खुली चर्चा हुई, जिसमें सर्वश्री वसंत व्यास (दिल्ली), वी० वी० चारी (मैसूर), जितेश्वर शर्मा (मणिपुर), सतीश (बिहार), कृष्णकुमार (मेरठ), गंगा प्रसाद सहनी (बिहार), विट्ठल दास मोदाणी (बम्बई) आदि ने भाग लिया। उसके बाद ग्रामदानी क्षेत्रों से आये गुजरात के एक आदिवासी श्री मगन भाई, बिहार के श्री रामरतन महतो, मध्यप्रदेश की रुक्मिणी बहन ने अपने भावोद्‌गार प्रकट किये।

श्री द्वारको सुन्दरानी ने सम्मेलन की ओर से निवेदन प्रस्तुत किया, जिसका भाष्य श्री वीरेन्द्र दत्त ने किया। श्री जय-प्रकाशजी ने उसमें कुछ जोड़ने के लिए सुझाव दिये। लेकिन निवेदन चूँकि आखिरी वक्त में पेश हुआ था, इसलिए पिछले सम्मेलनों की तरह इस बार भी उस पर कोई चर्चा न हो सकी।

सम्मेलन-अध्यक्ष ने सर्वोदय-समाज-सम्मेलन की कार्यवाही सुचारु-रूप से चलाने में सहयोग देने के लिए प्रति-निधियों के प्रति कृतज्ञता प्रकट करते हुए स्नेहपूर्ण विदाई दी। सम्मेलन-मंत्री श्री द्वारको सुन्दरानी ने आयोजकों की कठि-नाइयाँ और उनकी व्यवस्था-शक्ति का परिचय देते हुए कहा कि पूरे सम्मेलन की तैयारी ६ सप्ताह में हुई है। आपने आयोजकों के प्रति सर्वोदय-समाज की ओर से आभार प्रकट किया। महाराष्ट्र सर्वो-मण्डल के अध्यक्ष श्री वसंत बोम्बटकर ने भी अपने उद्‌गार प्रकट करते हुए कहा कि कितने कम समय में सारी व्यवस्था करनी पड़ी, उसमें सम्मेलन का सुचारु-रूप से सम्पन्न होना एक सुखद आश्चर्य ही है। श्री पोतनीस, कार्याध्यक्ष, स्वागत-समिति ने अंत में कहा कि आपने जो स्मृतियाँ जगायी हैं, वे बराबर बनी रहेंगी। हम आशा करते हैं कि नासिक आपके दिलों में, नासिक के दिल में आप बने रहेंगे। और अन्त में दादा धर्माधिकारी के समारोप भाषण के साथ यह १९वाँ सर्वो-दय-समाज-सम्मेलन सम्पन्न हुआ। —हीरा
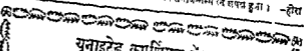
हमें अहिंसक लोक-शक्ति का विस्फोट करना है

—नासिक-सर्वोदय-सम्मेलन का निवेदन—

बंगला देश में हो रहे भयानक नर-संहार की काली छाया में हमारा यह १९वां सम्मेलन हो रहा है। बंग-बन्धु शेख मुजीबुर रहमान ने अहिंसक असहयोग का जैसा उदाहरण प्रस्तुत किया, वह सदा प्रेरणा देता रहेगा। सैनिक-अत्याचारों और सशस्त्र प्रतिकार के बीच आज भी बंगला देश की साहसी जनता असहयोग आन्दोलन जारी रखे हुए हैं। इतिहास के इस निर्णायक क्षण में हम बंगला देश की जनता के साथ हैं और अपने देशवासियों से अपील करते हैं कि वे अपने समर्थन और अपनी सहानुभूति को इतने प्रभावशाली ढंग से प्रकट करें कि भारत ही नहीं, अन्य राष्ट्रों की सरकारें भी बंगला देश को मान्यता देने पर मजबूर हो जायें। यह अत्यन्त खेद और चिन्ता की बात है कि विश्व के अनेक राष्ट्र बंगला देश में हो रहे भयानक अत्याचारों को पाकिस्तान का अन्दरूनी मामला बताकर मूक-दर्शक की तरह देख रहे हैं।

लेकिन हमें विश्वास है कि विश्वात्मा जागृत होगा और बंगला देश के लोगों की शहादत बेकार नहीं जायेगी। मानवता से हमारी अपील है कि प्रत्येक व्यक्ति बंगला देश के लिए एकत्रित किये जा रहे कोष में अपना योगदान दे और इस तरह उसे आजाद होने में मदद करे।

विश्व-परिस्थिति

वियतनाम-युद्ध के विरोध में संयुक्त राज्य अमेरिका में हाल ही किया गया प्रदर्शन वहाँ बढ़ती हुई युद्ध-विरोधी भावना का द्योतक है तथा शांति को मजबूत करनेवाला एक महत्वपूर्ण कदम है। आशा है, दक्षिण-पूर्व एशिया में शान्ति-स्थापना में इससे मदद मिलेगी।

लेकिन मध्य-पूर्व में संयुक्त अरब गणराज्य और इजराईल के बीच का वैमनस्य पूर्ववत् बना हुआ है। वहाँ शांति और सद्भावनापूर्ण समझौते के लिए जो प्रयत्न जारी है, वह शीघ्र फलदायी हो, यह आवश्यक है।

हमारे पड़ोसी देश श्रीलंका में हिंसा का विस्फोट चिन्ता का विषय है। बेकारी दिलानेवाला शिक्षण, विषमता और शोषण से उत्पीड़ित जनता की स्थिति के प्रति नयी पीढ़ी का विस्फोट ऐसे हिंसक विस्फोटों का कारण है। सामाजिक और राजनीतिक परिवर्तन के लिए नवयुवकों में जो छटपटाहट और असन्तोष दिखाई देता है, उसका उपाय है कि उनकी शिक्षा में क्रान्तिकारी परिवर्तन हो और न्यायपूर्ण और समतामूलक समाज की स्थापना में उनकी शक्तियों का उपयोग किया जाय। श्रीलंका की घटनाएँ हमारे अपने देश के लिए स्पष्ट संकेत और सबक हैं।

विश्व में विज्ञान के नये आयाम प्रकृति में सन्तुलन-शास्त्र (इकोलॉजी) के विकास ने अहिंसा और विज्ञान के समन्वय का मार्ग प्रशस्त किया है। भोजन, वायु, जल आदि को दूषित करनेवाली विभीषिका पिछड़ी दिशा की टेक्नालॉजी के कारण उत्पन्न हुई है। हमारा विश्वास है कि जैसे-जैसे सतुलन-शास्त्र का विकास होता जायेगा, नयी टेक्नालॉजी बनेगी, जो गांधीजी की खादी-ग्रामोद्योग और प्रकृति-निष्ठ विकेन्द्रित उद्योग-व्यवस्था को वैज्ञानिक आधार भी प्रदान करेगी। हमारे देश और विश्व के वैज्ञानिक इस दिशा में प्रयत्नशील हों, यह हमारी अपेक्षा है।

राष्ट्रीय परिस्थिति

लोकसभा के मध्यावधि चुनाव ने देश में लोकतंत्र और स्थिरता का नया युग प्रारम्भ किया है। गरीबी हटाने के लिए देश की जनता ने सरकार को नया 'मेण्डेट' दिया है। आशा है, सरकार जनता को दिये गये वायदे को शीघ्रातिशीघ्र पूरा करने की पहल करेगी। हम मानते हैं कि सरकारों के जरिये बुनियादी परिवर्तन कभी नहीं लाये जा सकते। परिवर्तन तो लोक-भावना में तबदीली लाने से ही हो सकेंगे। इस काम में सरकार की भी शक्ति लग सकती है। लोक-शक्ति का निर्माण किये बिना देश में व्याप्त गरीबी, गैर-बराबरी और शोषण से हम मुक्त नहीं हो सकते। जागृत जन-शक्ति और उसके आधार पर कार्य करनेवाली लोकतांत्रिक सरकार के प्रयत्नों में परस्पर सहयोग होना विकास की अनिवार्य शर्त है। सौभाग्य से आज हमारे देश में इस सहयोग की अच्छी सम्भावना है। जैसा कि जमीन के व्यक्तिगत स्वामित्व-जैसी रूढ़िगत आदिम परम्परा की जड़ें हिलाने में ग्रामदान आन्दोलन के नतीजों से साबित हुआ है।

हमारी उपलब्धियाँ

गांधी-शताब्दी वर्ष में हुए राजगीर-सम्मेलन के पश्चात् तमिलनाडु का सकल्पित प्रान्तदान और पूज्य विनोबाजी की ७५वी वर्षगांठ के निमित्त से एकत्रित लगभग एक करोड़ का ग्रामस्वराज्य-कोष हमारी विशेष उपलब्धि है। लेकिन इससे भी कहीं अधिक महत्वपूर्ण और प्रेरक घटना प्रेम और करुणा से प्रेरित होकर श्री जयप्रकाशजी का बिहार के मुसहरी क्षेत्र में बैठना और ग्रामदान-पुष्टि के लिए किया जा रहा कार्य है। इससे आन्दोलन का नया आयाम प्रकट हुआ है और नयी आशा का सचार हुआ है।

इसी प्रकार सहरसा के मोर्चे पर लगे हमारे साथी बधाई के पात्र हैं। जिस एकाग्रता, धैर्य और साहस के साथ वे कार्य कर रहे हैं, वह बहुत प्रेरक है। हमें विश्वास है कि सहरसा से ग्रामदान-पुष्टि का अच्छा उदाहरण देश को मिलेगा। बीकानेर तथा देश के अन्य क्षेत्रों में उठाया गया ग्रामदान-पुष्टि-कार्य ग्राम-स्वराज्य की दिशा में हमें आगे बढ़ायेगा।

सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष श्री एस० जगन्नाथनजी और उनके साथ अनेक साथियों द्वारा भूमि-समस्या के त्वरित समाधान के लिए किये गये उपवास ने हम सबको आत्म-निरीक्षण का अवसर प्रदान

किया है। बड़ौदा जिले में जमेश्वर का लोक-सत्याग्रह, वसमतनगर (महाराष्ट्र) के नागरिकों का साम्प्रदायिक शान्ति के लिए उपोषण-यज्ञ तथा अशान्ति और तनाव के बीच आयोजित कलकत्ते की शान्ति-यात्रा की घटनाएँ उस दिशा की द्योतक हैं, जिनमें अहिंसा की शक्ति का अधिकाधिक उपयोग सामाजिक समस्याओं के हल की खोज में किया जा रहा है।

लेकिन इन उपलब्धियों के बीच और इनसे मिले पाठ से हमें अपनी कमजोरियों पर भी ध्यान देना चाहिए। आज तक लोगों ने अपनी परिस्थिति की जिम्मेदारी अपनी किस्मत पर या अपनी किस्मत के मालिक शासक-वर्ग की मानी है और उसी की परम्परा में वे आज के प्रजातंत्र में भी शासकों, राजनीतिक दलों तथा नेताओं पर निर्भर रहते हैं। इस स्थिति को बदलना और ग्रामस्वराज्य की भूमिका से काम करना, ऐसी बुनियादी तब्दीली है, जिसमें लोगों को अपनी जिम्मेदारी खुद उठाकर परिस्थिति में अपने आधार पर परिवर्तन लाना है। यह कठिन कार्य लोक-शिक्षण द्वारा लोक-आत्मविश्वास बढ़ाने के ऐसे गहरे काम की माँग करता है कि हमारे काम में जरा भी गफलत हुई तो लोकशक्ति के जागरण की दिशा से हम हट जाते हैं और नाम वास्ते किये गये ग्रामदान आन्दोलन पर एक बोझ ही सिद्ध होते हैं। ग्रामवासियों को अच्छी तरह विचार समझाकर और पूरी सतर्कता और सावधानी से ग्रामदान-संकल्प-पत्र पर हमें हस्ताक्षर लेना था, लेकिन हम अपेक्षित सावधानी और सतर्कता नहीं बरत पाये। पूज्य विनोबा ने बिहार छोड़ते समय हमें पुष्टि के अति-तूफान का संदेश दिया था। लेकिन हम पूरी गंभीरता के साथ उसे तुरन्त नहीं उठा पाये। देश में लोकसेवकों और जिला सर्वोदय-मण्डलों का ठीक से गठन नहीं कर सके और आवश्यकता के अनुसार उन्हें सक्रिय भी नहीं कर सके। इसलिए अब आगामी वर्ष में हमें इन कमियों को दूर करने का भरसक प्रयत्न करना है।

हमें अपनी कमियों को उत्तरोत्तर दूर कर सारे देश को ग्रामस्वराज्य की दिशा में तेजी से आगे बढ़ाना है। इसके लिए हमें सारे देश में प्राप्त डेढ़ लाख संकलित ग्रामदानी गाँवों में पुष्टि का अति-तूफान खड़ा करना होगा, देश के सभी गाँवों में ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य का संदेश पहुँचाकर उन्हें ग्रामदान के लिए तैयार करना होगा और समाज की नव-रचना के लिए प्रचलित सारे रचनात्मक कार्य, जैसे—खादी-ग्रामोद्योग, नशाबन्दी, हरिजन सेवा, और सेवा की अन्य सभी प्रवृत्तियों को ग्रामसभाओं के माध्यम से ही करने के लिए उपयुक्त संयोजन करना होगा।

हमारा विश्वास है कि ग्रामदान-संकल्प-पुष्टि का अति-तूफान और ग्राम-सभाओं के माध्यम से किया जानेवाला रचनात्मक कार्य देश में अहिंसक लोकशक्ति का विस्फोट करेगा। ●

नासिक सम्मेलन में प्रतिनिधित्व

सर्व-सेवा-संघ का अधिवेशन नासिक में गत ६ मई से प्रारम्भ होकर ८ मई, '७१ को प्रातः सम्पन्न हुआ। इसमें देश भर के लगभग ५०० लोकसेवकों और प्रतिनिधियों ने भाग लिया।

१९ वाँ अखिल भारतीय सर्वोदय-सम्मेलन नासिक रोड-स्थित पुरानी डिस्टीलरी मैदान में ८ मई को अपराह्न से प्रारम्भ होकर १० मई '७१ को सम्पन्न हुआ। सम्मेलन में देश के विभिन्न राज्यों के लोकसेवक और प्रतिनिधि सम्मिलित हुए। उनकी राज्यवार संख्या इस प्रकार है: महाराष्ट्र ६५२८, गुजरात ३७२, मध्यप्रदेश, २६४, उत्तरप्रदेश २४४, बिहार १९३, तमिलनाडु, १५३, मैसूर १३४, पश्चिम बंगाल १२७, राजस्थान ५९, आंध्र ४६, उड़ीसा ४३ असम ३२, दिल्ली २१, केरल २१। उनके अतिरिक्त पंजाब, हरियाणा, हिमाचल-प्रदेश, नेफा, कश्मीर, मणिपुर और मेघालय के प्रतिनिधि भी शामिल हुए।

आगामी सर्वोदय-सम्मेलन
पंजाब में

पंजाब सर्वोदय-मण्डल के अध्यक्ष ने सर्वोदय-सम्मेलन के अन्तिम दिन उपस्थित समुदाय से निवेदन किया कि आगामी सर्वोदय सम्मेलन पंजाब में करने का निश्चय किया गया है। हम आप सबको सम्मेलन में पधारने के लिए आमंत्रित करते हैं।

5-वर्षीय
डाकघर सावधि जमाओं पर
इसी प्रकार
3 वर्षीय जमाओं पर 7%. 1 वर्षीय जमाओं पर 6%.
ब्याज प्राप्त कीजिये
एक वर्ष में 3,000 रु० तक ब्याज पर आयकर नहीं लगता। इसमें अन्य कर योग्य सिक्युरिटियों और जमाओं का ब्याज शामिल है।
अधिक जानकारी के लिये पास के डाकघर से सम्पर्क कीजिये
राष्ट्रीय बचत संगठन
davp 70/661

आवश्यकता है मानव-मस्तिष्क के नव-संस्करण की

—१६ वें सर्वोदय-सम्मेलन में दादा धर्माधिकारी का समारोप भाषण—

मैं बहुत अनिच्छा और संकोच के साथ आपकी सेवा में उपस्थित हुआ हूँ। सभापति महोदय से अनुरोध किया था कि वे मुझे यहाँ (मंच पर) आने के लिए बाध्य न करें। जहाँ किसी चीज की कमी होती है, और माँगनेवाले ज्यादा होते हैं वहाँ आने का मेरा साहस कम होता है। यहाँ समय की कमी थी और समय माँगने वाले ज्यादा लोग थे, उनमें से कईयों को अध्यक्ष महोदय ने समय नहीं दिया। मैंने निवेदन किया था कि मेरा समय दूसरों को दे दिया जाय। देने के लिए मेरे पास और कुछ तो है नहीं, शेष जो आयु है उसका कर सकता तो आयुर्दान करता, लेकिन वह मेरे वश की वस्तु नहीं है। मेरे पास एक ही चीज प्रचुर मात्रा में है समय—जो मैं दे सकता हूँ। लेकिन जहाँ कमी है वहाँ का उम्मीदवार नहीं। 'कान्स्टीट्यूयेन्ट असेम्बली' में मैं पाँच साल रहा, लेकिन मैंने वहाँ एक बार भी मुँह नहीं खोला। वहाँ लोगों को आश्चर्य होता था कि यह शख्स मुँह क्यों नहीं खोलता। लेकिन मैं इसलिए मुँह नहीं खोलता था कि सदस्यों के लिए वहाँ समय कम पड़ता था।

हमारे मित्र बसन्त नारगोलकर ने कहा था कि वे कार्यकर्ता भी नहीं हैं और सदस्य भी नहीं हैं। लेकिन वे पुरुषार्थी व्यक्ति हैं। कश्मीर गये, नेफा गये, बंगलादेश गये। मैं तो उन व्यक्तियों में से हूँ जो संकट से बराबर बचता रहता है। जहाँ संकट हो, संघर्ष हो, वहाँ से मैं दूर रहा हूँ। फिर भी आपके बीच आ जाता हूँ, कुछ देने के लिए नहीं, बल्कि पाने के लिए, अपना खाली बर्तन जीवन से भर लेने के लिए। और, जो पाने के लिए आता है वह आपको क्या दे?

मैं जो कुछ सुना उससे भर गया हूँ। जयप्रकाश बाबू के भाषणों के बाद किसी और व्यक्ति के भाषण की आवश्यकता है? राममूर्तिजी के विवेचन के बाद और किसी विवेचन की क्या आवश्यकता है? अध्यक्ष महोदय का नपा-तुला भाषण हुआ, गोराजी का भाषण हुआ। आप तो भाषण सुनते-सुनते अब अकर गये होंगे। अब कहने के लिए कुछ बच नहीं गया है। लेकिन इनमें से एक निष्कर्ष पर मैं पहुँचा हूँ कि अब एक सांस्कृतिक क्रान्ति की आवश्यकता है, एक साइकोलॉजिकल रिओरिएंटेशन—मनुष्य के एक मानसिक नव-संस्करण की आवश्यकता है। वह नव-संस्करण क्या है? उसे थोड़े में मैं आपके सामने रखूँगा।

मनुष्यों का सामीप्यीकरण हो

हमारे दो उद्घोष हैं—एक को हमने कहा है हमारा मंत्र जय जगत्, दूसरे को कहा है हमारा तंत्र ग्रामदान, अब ग्रामस्वराज्य। किस गाँव का स्वराज्य? कौई गाँव है? संविधान सभा के सम्मुख जब अम्बेडकर ने हमारा संविधान पेश किया तो उन्होंने कहा—'गाँव क्या है? शुद्र दोनवाद, जिसने दुनिया की बात कभी सोची नहीं!' या तो सोची है तो ब्रह्माण्ड की बात, जो कहीं है ही नहीं, शून्य है, या फिर अपने गाँव की बात सोची है। इस-लिए गाँव के इस नक्शे को बदलने की आवश्यकता है। गाँव का नक्शा किस तरह से बदला जायगा? गरीबी-अमीरी समाप्त कर देने से गाँव का नक्शा नहीं बदलेगा। गाँव का नक्शा बदलने के लिए जितनी आवश्यकता वर्ग-निराकरण की है, उतनी ही आवश्यकता जाति-निराकरण की है। आज हमारे गाँव में जितने मुहल्ले हैं वे सारे के सारे जातिस्थान हैं। आज देश में जो भाषा के आधार पर राज्य बने हैं, वे वास्तव में भाषिक राज्य हैं, आज में से कोई कह सकता है? ये सारे के सारे जातीय राज्य में परिणत हो गये। किस जाति का किस राज्य में प्रभुत्व है मैं नहीं कहूँगा। यह जाति हमारे जीवन की एक आवश्यकता है। और, यह शहरों से कहीं ज्यादा गाँवों में उग्र रूप में दिखाई देती है। जाति निराकरण, वर्ग-निराकरण आप किस साधन से करेंगे उसकी चिन्ता मुझे बहुत ज्यादा नहीं है। निवेदन यह है कि हर गाँव को सारे जगत का एक संक्षिप्त प्रतिबिम्ब बनना चाहिए, जगत् मानवता का विश्वरूप और गाँव मानवता का लघुरूप। गाँव में और विश्व में प्रकार-भेद और गुणात्मक भेद नहीं होगा, केवल आकार-भेद होगा। वह अपने में एक छोटा-सा विश्व होगा। इसके बिना सौमनस्य और सुभागत्य नहीं आयेगा। मैं इतना ही कहूँगा कि परिणाम यह आना चाहिए कि गरीब-अमीर, ब्राह्मण-भंगी इनके बीच की दीवार मिटे। ये एक दूसरे के नजदीक आयें। यह हमारा प्रयोजन है।

वर्ग-निराकरण हो, जाति-निराकरण हो, लेकिन साथ साथ मनुष्यों का सामीप्यीकरण हो। वे एक दूसरे के निकट आयें। आप अहिंसा और हिंसा के विवाद में मत पड़िये। अहिंसा जिस दिन सिद्धान्त बन जायेगा उस दिन उसका जीवन में स्थान नहीं रह जायगा, वह निर्जीव बन जायगा, उसका एक वाद बन जायगा, जिससे हमको बचना चाहिए। हिंसावाद दुनिया में है ही नहीं। जितने भी शस्त्र प्रयोग करनेवाले हैं—हिटलर से लेकर नागरवाला तक और सुनकर लड़ाई में हिस्सा लेनेवाला से लेकर, सेनापति, सिपहसालार, कमाण्डर इन चीफ तक, जितने भी हिंसा करने वाले हैं, शस्त्र का प्रयोग करनेवाले हैं उन्होंने कभी हिंसा को जीवन का सिद्धान्त नहीं माना। उन्होंने इतना ही दावा किया कि हिंसा जीवन में अनिवार्य है। वह कहते हैं कि मेहरबानी कीजिए हमको अहिंसा की उतनी आवश्यकता नहीं है जितनी कि साहसिकता की और वीर-वृत्ति की। निर्भीकता, साहसिकता का इस देश में विकास होना चाहिए। और, मैं आपको विश्वास दिलाता

हूँ कि जिस दिन इस देश के तरुणों में वीर-वृत्ति और साहसिकता का विकास होगा, वे चट्टान से, दीवार से जाकर टकरायेंगे और आकर आपसे कहेंगे कि हिंसा में, शस्त्र-प्रयोग में वह वीरवृत्ति के लिए *अवकाश नहीं है। यह कोई बुद्ध,* महावीर, ईसा, गांधी की अहिंसा नहीं। यह टकरा गया है दीवार से, वहाँ से पराजित हुआ है, लौट रहा है और आपसे कह रहा है कि वहाँ निर्भीकता और वीरता के लिए अवकाश नहीं है, साहसप्रियता और वीरता का अवसर नागरिक के लिए, सिपाही के लिए नहीं।

अंग्रेज इस देश को तीन मौलिक रत्न देकर गये हैं—एक, लोकतन्त्र, दो समानता, कानून के सामने सब समान और, तीन सर्वधर्म समन्वय। ये तीन अनमोल वरदान अंग्रेजों के सम्पर्क से इस देश को प्राप्त हैं। *इनका संरक्षण होना चाहिए,* संवर्धन होना चाहिए, इनकी व्यापकता बढ़नी चाहिए।

तटस्थ निरीक्षण बहुत अच्छी चीज है। मैंने यहाँ आत्म-समीक्षा सुनी। अच्छी चीज है, लेकिन यहाँ आत्म-ग्लानि और आत्म-हीनता भी देखी। जो उठा उसने कहा कि हमें जनता का समर्थन नहीं मिल रहा है, हमारे साथ 'इन्टलेक्चुअल्स' नहीं है। मैं पूछना चाहता हूँ कि बुद्धिमान लोग आपके साथ नहीं हैं तो यहाँ बैठे हुए लोग कौन हैं? बुद्धिमान नहीं हैं? मैं पूछना चाहता हूँ कि लोकमान्य तिलक से गांधी तक क्या बुद्धिवाले लोग उनके साथ थे? क्या इनके जमाने में कोई समय आया जब किसी ने कहा हो कि इनके साथ बुद्धिवाले लोग हैं? यह लोकमान्य तिलक तमोलियों का नेता था। बुद्धिमान लोग उनके साथ थे, लेकिन बुद्धिवादी लोग उसके साथ नहीं थे, बुद्धिजीवी साथ नहीं थे। कभी किसी नेता के साथ ये दोनों नहीं रहे। बुद्धिवादी वह है जो दलील ही दलील करता है, किसी नतीजे पर नहीं पहुँचता, और बुद्धिजीवी वह है जो बुद्धि बेच-बेच कर जीता है। नेतृत्व हमेशा बुद्धिमानों का रहा है।

प्रतीकारात्मक आन्दोलन

गांधी के आन्दोलन में तो मैं बचपन में आया और इसी में बुढ़ापे के किनारे पहुँचा। मैंने देखा *कि गांधी के जितने* प्रतीकारात्मक आन्दोलन हुए, उनमें तो लोग शामिल हो जाते थे। और, उनमें शामिल होते थे किस नीयत से? गांधी की अहिंसा में हिंसा का जितना अवसर था उतने के लिए, गांधी के सत्य में जितना असत्य के लिए अवसर था उतने के लिए, गांधी के सत्य के लिए नहीं, उनकी अहिंसा के लिए नहीं!

प्रतीकार के आन्दोलन में अवश्य लोग शामिल होते हैं। मैं आपसे यह नहीं कह रहा हूँ कि प्रतीकार नहीं करना चाहिए। मैं निवेदन यह करना चाहता हूँ *कि आन्दोलन का जो प्रतीकारात्मक हिंसा* आता है, उसमें संख्या आती है और जैसे आती है वैसे चली भी जाती है। गांधी के विधायक कामों में कभी कोई संख्या नहीं आयी। गांधी की खादी, अस्पृश्यता-निवारण आदि को कितनों ने दिल से स्वीकार किया? इस आन्दोलन में आप प्रतीकारात्मक तत्व अवश्य दाखिल कीजिए लेकिन इसकी कुछ मर्यादाएँ हैं—हिंसा अहिंसा की मर्यादा नहीं—हर प्रतीकार के बाद और हर प्रतीकार के पहले नीयत यह होगी और यथासंभव प्रयत्न यह होगा कि प्रतीकार के बाद मनुष्य एक दूसरे के निकट आये, कौटुम्बिक भावना का, सहृदयता का, सौहार्द का मनुष्यों में विकास हो।

परिणाम हमारे हाथ में नहीं है लेकिन हमारा प्रयत्न यह होगा। इसी लिए मैंने आपके सामने न हिंसा की बात कही न अहिंसा की बात कही। इस देश के तरुणों के सामने अगर तीन ही विकल्प हैं—एक क्रान्तिकारी की हिंसा, दूसरी प्रतिष्ठित श्रेष्ठमान पूँजीवाद की हिंसा, या तीसरी पद-दलित की हिंसा, तो मैं आपको कहूँगा कि समाज की प्रतिष्ठित हिंसा के खिलाफ क्रान्तिकारी की और पद-दलित की हिंसा कहीं श्रेयस्कर है। लेकिन क्या इससे हमारा साध्य सिद्ध होगा? प्रयोग का विषय है। प्रयोग किया गया और क्रान्तिकारी इस परिणाम पर पहुँचा है कि यह विषम और अवैज्ञा-*निक सिद्ध हुआ है। इससे हमारा साध्य* सिद्ध नहीं होगा। इसमें कोई दर्शन की बात नहीं, अध्यात्म की बात नहीं।

क्रान्ति-विरोधी कार्य

इसका निराकरण क्या है? दो चीजों की तरफ आपका ध्यान दिलाता हूँ—पूँजीवादी संदर्भ में रचनात्मक पुष्टि के, क्रान्ति के जितने प्रयोग होंगे, प्रतीकात्मक होंगे। इनका मूल्य अंकगणित में नहीं बीज-गणित में होगा।

लेकिन आप खूब याद रखिये—एक कहता है नमूना दिखाओ, दूसरा कहता है नमूनावाद गलत है। इसमें *एक चीज जानने की है कि जब तक संदर्भ* नहीं बदलता, सारे रचनात्मक प्रयोग सांकेतिक होंगे, संख्या की दृष्टि से, आकार की दृष्टि से उनका मूल्य सीमित ही होगा। सावधानी इतनी रखनी होगी कि प्रचलित प्रतिष्ठाओं को हम अपने कार्य से कमजोर करेंगे, पुष्ट नहीं करेंगे। प्रचलित प्रतिष्ठाएँ कौन-कौन सी हैं? राज्य की सत्ता, सम्पत्ति की सत्ता, शस्त्र की सत्ता, और इनके साथ-साथ जाति की प्रतिष्ठा। ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य के कार्य में हमने अगर इन प्रतिष्ठाओं को पुष्ट किया है या तरजीह दी है, या किसी तरह इनका समर्थन किया है, इनको किसी प्रकार से जीवन प्रदान किया है तो क्रान्ति-विरोधी कार्य किया है। इसे आपको खूब अच्छी तरह समझ लेना चाहिए। इसलिए गाँवों में जिनके पास शस्त्र-शक्ति या संपत्ति होगी, उनकी हम सहायता नहीं करेंगे, बल्कि उनकी शक्ति को नहीं बढ़ने देंगे। यह दोष है जिसके कारण हमारे चित्त में ग्लानि है। इस ग्लानि को दूर करने का यही उपाय है कि यहाँ हम बैठकर यह संकल्प करें कि इन प्रतिष्ठाओं को हम आगे पुष्ट नहीं होने देंगे।

जय जगत : क्षितिज ही चौहद्दी

अब जय जगत् को लीजिए। ग्रामदान ग्रामस्वराज्य का अधिष्ठान है जिसपर कदम रखकर हम ग्रामस्वराज्य तक जाना चाहते हैं। भगवान की कृपा से नहीं, भगवान के क्रूर विधान से, संयोग से, बंगला देश जय जगत् का आधार बन सकता है। बंगला देश ने नवसंस्करण की आवश्यकता प्रस्तुत की है। यह कैसा विचित्र संयोग है। सन् १९०५ में सारा बंगाल एक था, संस्कृति और भाषा के आधार पर अंग्रेजों ने सम्बन्ध विच्छेद करने की कोशिश की। बंगाल खड़ा हो गया अंग्रेजों के विरोध में। सन् १९४७ में भाषा का आधार छोड़कर उसी बंगाल के दो बंगाल हो गये सम्प्रदाय के नाम पर। और, गांधी को जाना पड़ा, उस समय जो वहाँ अमानुष अत्याचार हुआ था, दयार्द्र होकर वहाँ जाना पड़ा। आज फिर बंगला देश का प्रश्न प्रस्तुत है। सम्प्रदाय, भाषा ये औपाधिक आधार हैं। ये मानवीय जीवन के वास्तविक आधार नहीं हैं। अब यह सिद्ध हो गया है।

करुणानिधि शेख मुजीबुर्रहमान की ही बात दबी जबान में कहता है। वह कहता है कि राज्यों को अब स्वायत्तता मिलनी चाहिए। और, राज्य का आधार क्या है आप समझ लीजिए। सत्य के प्रति आँख बन्द कर लेना न सत्यनिष्ठा है और न विज्ञाननिष्ठा है। हमारे देश में औसत हिन्दू जातिवादी है, औसत मुस्लिम साम्प्रदायिक है और औसत राष्ट्रवादी भाषावादी है। तीनों का नवसंस्करण करना होगा। इस देश के तरुणों को इससे ऊपर उठना होगा, और इससे ही नहीं पश्चिम और पूर्व से भी ऊपर उठना होगा। लोकतन्त्र पश्चिम से आया है इसलिए वह गलत है आप कहेंगे, तो वे कहेंगे कि सूरज पूरब से आता है इसलिए वह गलत है। और जो यथार्थवादी है वह कहेगा कि पृथ्वी गोल है न पूरब है और न पश्चिम है। जय जगत् का मतलब ही है पृथ्वी गोल है। क्षितिज ही हमारी चौहद्दी है, कम-से-कम ऐसा हमारा मानस बनना चाहिए। तब हम यह सकेंगे कि हमारे लिए बंगला देश मानवीय करुणा का प्रतीक है। मित्रो, मनुष्य के गुण और मनुष्य के दोष निरुपाधिक होते हैं। क्रूरता की कोई सीमा नहीं, क्रूरता कोई भेद नहीं करती, वह सगे भाई की भी हत्या कर सकती है। करुणा भी कोई भेद नहीं करती। पाकिस्तान की क्रूरता में सम्प्रदाय का भी कोई भेद नहीं और भारत की सहृदयता में, सौहार्द में, आप देख रहे हैं कि न सम्प्रदाय का भेद रह गया है, न भाषा का भेद रह गया है। यह एक अवसर है जब हम अपने चित्त की भावनाएँ जय जगत् के लिए विकसित कर सकते हैं।

हमारा देश अपने संरक्षण के लिए कभी अमेरिका का मुँह देखता है तो कभी रूस का मुँह देखता है, और चीन से और पाकिस्तान से मुकाबिला करना है। जो भयभीत है, संरक्षणकांक्षी है वह दूसरों को आश्वासन नहीं दे सकता। इस कमजोरी को पहचान लेना आवश्यक है। तो क्या हम यह कह सकते हैं कि इस देश के ५५ करोड़ लोग अपना संरक्षण स्वयं कर सकते हैं? शस्त्रों से जहाँ तक हो सकता है वहाँ तक शस्त्रों से, और जहाँ शस्त्रों की मर्यादा आ जायेगी, उसके बाद शस्त्रों से नहीं सीनों से? इस देश में शस्त्र-निरपेक्ष वीर-वृत्ति की आवश्यकता है। जिस दिन इस देश का नागरिक प्रत्ययपूर्वक यह कह सकेगा कि इस देश का संरक्षण शस्त्र निरपेक्ष, शस्त्रधारी होते हुए भी, वीर-वृत्ति से कर सकेंगे उस दिन, मैं आपको आश्वासन दिलाता हूँ, दुनिया में कोई ताकत नहीं है जो इस देश की ओर आँख उठाकर देखे। और वही दिन होगा, जिस दिन आप बंगला देश को संरक्षण का आश्वासन दे सकेंगे। इसलिए यहाँ गांधी की आवश्यकता है क्योंकि इस देश में शस्त्र-निरपेक्ष वीर-वृत्ति का निर्माण करना है।

आज इस देश में दो भावनाएँ क्षीण हो रही हैं। संकीर्ण ध्वंसक अस्मिताएँ हमारे देश में पनप रही हैं, हर क्षेत्र में हर राज्य में। ये छोटे राज्यों की आकांक्षाएँ नहीं हैं, यह देश को टुकड़े करने की अस्मिताएँ हैं। भावरूप विधायक भारतीय भावना की आवश्यकता आज है। इस भारतीय भावना के दो पहलू हैं—मानवनिष्ठ भारतीयता, भारतनिष्ठ मानवता। भारतवर्ष की भूमि पर जो मनुष्य है वह हमें प्रिय है। नागालैण्ड की भूमि नहीं, नागा मनुष्य, कश्मीर की भूमि नहीं उस पर रहने वाला मनुष्य, चण्डीगढ़ की भूमि नहीं वहाँ का नागरिक और हरियाणा का नागरिक हमें प्रिय है। मनुष्यों की पारस्परिकता ही भगवान का अधिष्ठान है। लोक-जीवन में पारस्परिकता ईश्वर का अधिष्ठान है। भारतीयता है लेकिन मानवनिष्ठ है। आवश्यकता होगी तो मानवता के नाम पर अपने आपको उत्सर्ग कर देने की इस देश की जनता की तैयारी होनी चाहिए। क्या मानवता के मंदिर में यह देश उत्सर्ग लेकर जायगा, अपना नैवेद्य लेकर जायेगा?

पुरुषार्थ में मशगूल हो जायें

आशा और आनन्द के साथ सफर करने में जो मजा है वह मुकाम पर पहुँचने में नहीं है। इसे मैंने साहसप्रियता कहा है। निरन्तर प्रगति मानवता की सांस्कृतिक प्रतिष्ठा का महान अधिष्ठान है। निरन्तर प्रगति पहुँचना है ही नहीं। जहाँ प्राप्ति की आकांक्षा है, वहाँ अध्यात्म है ही नहीं। बच्चा छाया के पीछे-पीछे छाया पर कदम रखने के लिए दौड़ता है, छाया आगे-आगे भागती जाती है। जब वह उलट कर भागने लगता है तो छाया पीछे पीछे दौड़ने लगती है। मित्रो, सिद्धि के पीछे आप दौड़ेंगे तो आप पागल हो जायेंगे। आप पुरुषार्थ में निरत रहेंगे तो सिद्धि आपके पीछे-पीछे दौड़ेगी, आप इसके आगे-आगे होंगे। मित्रो, यह असफलता नहीं है यह पुरुषार्थ का आनन्द है। इस आनन्द में हम मयूर हो जायें, विभोर हो जायें, हमेशा के लिए पुरुषार्थ में मग्न रहें, ऐसा वरदान भगवान आपको दे। इस प्रार्थना के साथ आप सबको धन्यवाद देता हूँ।

नासिक, १०-४-७१

पाकिस्तान का द्वन्द्वपूर्ण इतिहास और बंगला देश की बुनियाद

—ढाका से प्रकाशित 'दी पीपुल' के सम्पादक जनाब अबीदुर्रहमान के शब्दों में—

मैं आपको बताना चाहता हूँ कि बंगला देश की भूमि वैसी ही पवित्र है जैसी दुनिया की कोई दूसरी पवित्र भूमि, जहाँ के साढ़े सात करोड़ लोग अपनी स्वतन्त्रता के लिए जिन्दगी और मौत की लड़ाई लड़ रहे हैं। उनकी जीत यकीनन है और उन लोगों ने लड़ने का फैसला किया है मरने का नहीं, लड़ने का और किस्मत आजमाने का। उन्होंने बहुत सारी जानें और जायदादें खोयी हैं, अब उनके पास कुछ नहीं रहा है सिवा उनके विश्वास और उनके इरादे के।

बंगला देश पर हिंसा और बर्बरता की जा रही है। यह कहानी सन् १९४७ से आरम्भ होती है जब पत्रिकाओं और किताबों में उसे स्वतन्त्रता मिली, परन्तु यथार्थ में नहीं। या यों कहें कि अगर हमें स्वतन्त्रता मिली तो दूसरे मालिक ने हमारी वह स्वतन्त्रता छीन ली। हमारे मालिक बदले परन्तु परिस्थिति नहीं बदली। यह मालिक और अधिक कठोर था, और भारत के उस भाग का था जिसे आज पश्चिमी पाकिस्तान कहते हैं।

लाहौर का प्रस्ताव और पाकिस्तान की वास्तविकता

सन् १९४० के लाहौर-प्रस्ताव में यह बात स्पष्ट लिखी हुई मिलती है कि जहाँ मुसलमानों की बहु-संख्या है, वहाँ उनके स्वतन्त्र और प्रभुसत्ता-सम्पन्न देश होंगे। अर्थात् एक स्वतन्त्र राज्य पश्चिमी भाग का, जिसमें पंजाब, सीमान्त प्रान्त, बलूचिस्तान, सिन्ध सम्मिलित हैं, और दूसरा बंगाल और पूर्वी इलाकों का स्वतन्त्र राज्य।

बर्तानियांवालों ने जाते-जाते देश का बँटवारा करा दिया। एक हिन्दुस्तान बना और दूसरा पाकिस्तान। बँटवारे से जो चोट हिन्दुस्तान को पहुँची थी उसे उसने झेल लिया। हिन्दुस्तान जिन्दा रहा और उसने तरक्की की। हिन्दुस्तान की तरक्की एक समझदारी के दर्शन के अन्तर्गत हुई, जबकि पाकिस्तान निहित स्वार्थ का शिकार हो गया।

सन् १९४६ में कौंसिल आफ मुस्लिम लीग में जब स्वतन्त्रता की शर्तें तय की जाने लगीं और लाहौर-प्रस्ताव का जिक्र आया तो बंगाल के कुछ नेताओं ने, जिनमें अबुल हाशिम सबसे आगे थे, यह माँग की कि लाहौर-प्रस्ताव पर, जो पाकिस्तान की स्थापना की बुनियाद है, अमल किया जाय। परन्तु मिस्टर मुहम्मद अली जिन्ना का भारी भरकम व्यक्तित्व सामने आ गया और उन्होंने पूछा, "क्या

अबीदुर्रहमान : दर्द की दास्तान

तुम नहीं चाहते हो कि मेरी जिन्दगी में पाकिस्तान बन जाय?" उनके सामने बंगाल के नेता कमजोर पड़ गये, क्योंकि जिन्ना हिन्दुस्तान के दस करोड़ मुसलमानों के नेता थे। इसलिए बंगाल के नेतृत्व ने उनकी बात स्वीकार कर ली, और यह तय पाया कि एक ही मुसलमान राज्य होगा। इस तरह पूर्वी बंगाल की दुखभरी दास्तान की पहली ईंट स्वयं मिस्टर जिन्ना ने रखी, और इस तरह बंगालियों की दुखभरी कहानी का आरम्भ हुआ।

अब पाकिस्तान एक वास्तविकता बन गया जिसकी बुनियाद दो सस्ते नारों पर थी—एक इस्लाम धर्म, दूसरा पाकिस्तान की एकता। सन् १९४७ में जब कुछ बंगालियों ने कराची में राजधानी होने के विरुद्ध प्रदर्शन किया तो उन्हें इस्लाम और पाकिस्तान का दुश्मन करार दिया गया, उन्हें कम्युनिस्ट या हिन्दुस्तान का दलाल कहा गया।

सन् १९४८ में जिन्ना ढाका आये और बंगाल के विद्यार्थियों ने और शेख मुजीबुर्रहमान ने बंगाली भाषा को राज्य-भाषा बनाने का आन्दोलन शुरू किया। उस समय वहाँ के मुख्य मंत्री ख्वाजा नाजिमुद्दीन थे। वह डर गये और उन्होंने विद्यार्थियों के साथ एक संधि कर ली और उनकी माँग स्वीकार कर ली। इस सिलसिले में उन्होंने संधि के दस्तावेज पर हस्ताक्षर भी किया। मिस्टर अजीज अहमद, जो उस समय मुख्य सचिव थे, दौड़े हुए जिन्ना के पास गये और कहा कि, "जनाब, अगर आप बंगला को राज्य भाषा स्वीकार कर लेंगे तो बड़ी क्षति होगी।" मिस्टर जिन्ना ने कहा, "लेकिन नाजिमुद्दीन ने हस्ताक्षर कर दिया है।" अजीज अहमद ने कहा, "वह हस्ताक्षर दबाव में आकर किया है। इसलिए वे उससे इन्कार कर सकते हैं।" मिस्टर जिन्ना ने उनके परामर्श के अनुसार यह घोषित किया कि चूंकि वह हस्ताक्षर दबाव में आकर किया गया था, इसलिए वह कानूनी तौर पर स्वीकार नहीं किया जा सकता है। जब जिन्ना ने इस बात की घोषणा एक पब्लिक मीटिंग में की, कि पाकिस्तान की राज्य-भाषा उर्दू होगी, तो हम लोगों ने प्रतीकार किया। जिसका मिस्टर जिन्ना को बड़ा दुख हुआ। वह वापस गये और कुछ दिनों बाद मर गये।

स्वयं जिन्ना ने प्रजातंत्र की जड़ खोद डाली

जिन्ना ने स्वयं पाकिस्तान में प्रजातन्त्र की बुनियाद उखाड़ दी। उन्होंने गवर्नर जनरल की हैसियत से सत्ता अपने हाथ में ली। सन् १९३५ के कानून में संशोधन किया गया और गवर्नर जनरल की शक्ति,

जो नाम मात्र थी वह, सबसे बड़ी कर दी गयी और प्रधान मंत्री और उसका मंत्रि-मंडल कठपुतली बन गया। मिस्टर जिन्ना की मौत के बाद ख्वाजा नाजिमुद्दीन, जो बंगाली नेताओं में सबसे अधिक सहयोगी थे, गवर्नर जनरल बनाये गये। परन्तु जब एक बंगाली गवर्नर जनरल हुए तो सारी शक्ति लियाकत अली के हाथों में आ गयी, जो प्रधान मंत्री थे। फिर जब लियाकत अली मार दिये गये तो नाजिमुद्दीन को प्रधान मंत्री बना दिया गया और गुलाम मुहम्मद गवर्नर जनरल हुए। अब फिर एक बार पूरी की पूरी शक्ति गवर्नर जनरल को दे दी गयी, इसलिए कि प्रधान मंत्री एक बंगाली था। उनकी हैसियत एक कठपुतली की हो गयी।

पाकिस्तान का पूरा इतिहास यह बताता है कि पश्चिमी भाग को पूर्वी भाग की तुलना में हमेशा विशेष अधिकार प्राप्त रहे। उद्योग में भी चौधरी मुहम्मद अली के दांव-पेंच के कारण बंगाल बहुत पीछे रह गया। पूर्वी बंगाल के साथ इस अन्याय ने जनता में पश्चिम के लोगों के प्रति घृणा बढ़ायी। जैसे जैसे आर्थिक असमानता और पूर्वी पाकिस्तान की गरीबी बढ़ती गयी, बंगला भाषा दबायी जाने लगी, वैसे-वैसे बंगाल में यह एहसास बढ़ता गया कि उनकी हैसियत एक उपनिवेश में रहनेवाले गुलामों की-सी हो गयी है।

जब नाजिमुद्दीन प्रधान मंत्री की हैसियत से ढाका आये और उन्होंने घोषित किया कि पाकिस्तान की राजभाषा उर्दू होगी, तो बंगाल के लोगों ने यह तय कर लिया कि यह फैसला नहीं माना जाय। आन्दोलन आरम्भ हुआ जिसका नेतृत्व विद्यार्थियों के हाथ में था और जिसमें पूरे बंगाल के लोग शरीक थे। इस आन्दोलन की बुनियाद इस बात पर थी कि बंगला भी पाकिस्तान की राजभाषा होगी। यह पहला राजनैतिक आन्दोलन था जो बंगाल में किया गया। यह आन्दोलन चार-पांच साल तक चलता रहा। परन्तु सन् १९५३ में इसने रुख बदला और जब चुनाव हुआ तो मुस्लिम लीग, जिसे कुछ समय तक सत्ता प्राप्त थी, ९ स्थान जीत सकी और ३०० स्थान खो दी। इस तरह सन् १९५४ में पहली बार पूर्वी बंगाल में प्रजातान्त्रिक सरकार बनी। परन्तु पश्चिमी पाकिस्तान की सरकार ने उसको चलने नहीं दिया।

इस्कन्दर और अयूब के काले कारनामे

इस्कन्दर मिर्जा का जमाना बंगालियों में फूट डालने उन्हें बांटने और उन पर शासन करने का रहा। सन् १९५४ तक पाकिस्तान की राजनीति चली जो सतह पर रही। सन् १९५४ तक 'कान्स्टीच्युएन्ट एसेम्बली' संविधान न बना सकी। सन् १९५६ में संविधान बना, उसके अनुसार सरकार भी स्थापित हुई, फिर राजनैतिक नेताओं के आपस में झगड़ने का बहाना करके अयूब खां ने सत्ता पर कब्जा जमा लिया। उन्होंने मार्शल लॉ घोषित कर दिया। और, सन् १९५८ में सेन्टो और सीटो की संधि पर हस्ताक्षर करने के बाद जब वह इंग्लैण्ड गये, तो वहां एक होटल में बैठे-बैठे उन्होंने पाकिस्तान का एक संविधान बना डाला। अयूब खां वह आदमी थे जो पाकिस्तान की उस समय की राजनीति के नियंत्रक थे। बाद में वह राष्ट्रपति बन गये। वह एक अक्लमंद आदमी थे। उन्होंने बुनियादी प्रजातंत्र की पाकिस्तान में बुनियाद डाली। यह वास्तव में एक राजनैतिक अदाकारी थी। इसके द्वारा उन्होंने सही प्रजातंत्र को खतम कर दिया। बुनियादी प्रजातंत्र के अन्तर्गत ८० हजार लोकप्रतिनिधि चुने गये। इन्हें पद और दौलत की घूस देकर उन्होंने अपना बना लिया। और, इस तरह अयूब का शासन सन् १९६५ तक दबदबे के साथ चलता रहा।

सन् १९६५ में पाकिस्तान के इतिहास में एक अहम मोड़ आया। अब तक वहां कोई राजनैतिक नेतृत्व नहीं था। राजनैतिक जीवन शून्य था। नेता तो थे, लेकिन वे जेलों में बंद थे। पूर्व बंगाल के सभी नेता मुजीबुर्रहमान, भसानी, अताउर्रहमान को बाहर आने की इजाजत नहीं थी। मुजीब के विरुद्ध ३६ मुकदमें दर्ज थे। सन् १९६२ में जब बुनियादी प्रजातंत्र आया तब कुछ थोड़े से राजनीतिज्ञों ने राजनैतिक जीवन की शुरुआत की। सन् १९६४ में पहला राष्ट्रीय प्रजातांत्रिक मोर्चा बना और एक आन्दोलन प्रारम्भ हुआ। सन् १९६५ में पाकिस्तान में चुनाव हुआ। यह चुनाव बुनियादी प्रजातंत्र के अन्तर्गत था। अयूब भी राष्ट्रपति-पद के लिए एक उम्मीदवार थे। यह कहना उचित होगा कि यह बुनियादी प्रजातंत्र के अन्तर्गत राष्ट्रपति का चुनाव था। उस समय भी बंगाल के लोगों ने बालिग मताधिकार की मांग की, जो पूरी नहीं हुई। यह विरोधी आन्दोलन यद्यपि पूर्वी बंगाल में बहुत मजबूत था, परन्तु कुछ कर नहीं पाया। और अयूब राष्ट्रपति चुन लिए गये। परन्तु वह बंगालियों के समर्थन से वंचित थे। सन् १९६९ में ऐसी परिस्थिति पैदा हुई कि अयूब को गद्दी छोड़नी पड़ी। इसमें पूर्व बंगाल का भी बड़ा हाथ था।

अयूब ने जाते हुए याहिया को मार्शल लॉ प्रशासक और राष्ट्रपति घोषित किया। याहिया ने आते ही कहा कि उनकी सरकार अन्तरिम सरकार है, और वे चुनाव कराकर सत्ता जनता के प्रतिनिधियों को सुपुर्द कर देंगे। उन्होंने दो साल बाद चुनाव कराया। यह चुनाव दिसम्बर १९७० में हुआ। इसमें याहिया खां की कुछ शर्तें थीं। वह चाहते थे कि देश का एक नया संविधान बने, और उसके बाद सरकारें बनें। नयी 'कान्स्टीचुएन्ट एसेम्बली' चुनी गयी, ताकि वह नया संविधान बना सके। इसमें शेख मुजीबुर्रहमान को बहुमत प्राप्त हुआ। वह पूर्व बंगाल के कानूनी अधिकारों और मनोकामनाओं की पूर्ति देखना चाहते थे।

याहिया को यह उम्मीद थी कि बहुमत उनके अनुकूल होगा। वह यह समझ रहे थे कि मुजीब को ६० प्रतिशत से ज्यादा वोट नहीं मिल सकेगा। इस तरह पश्चिमी पाकिस्तान और पूर्वी पाकिस्तान के बचे हुए ४० प्रतिशत के वोट से मिलजुलकर एक पश्चिमी पाकिस्तानी सरकार बना ली जायगी। कुछ सैनिक अफसरों ने चुनाव के सम्बन्ध में इनका विरोध भी किया था। चुनाव में अवामी लीग को १६७ सिटें मिली। फिर उन जगहों में, जहाँ चक्रवात (साइक्लोन) के कारण चुनाव नहीं हुआ था, ७ सीटें और मिली। इस तरह से ३१३ में से १७४ जगहें मुजीब ने जीती। स्पष्ट बहुमत प्राप्त हुआ।

यह भुट्टो को पसंद नहीं आया। उन्होंने मुजीब को उनके ६ सूत्रीय कार्यक्रम और भारत-मित्रता के कारण पाकिस्तान का दुश्मन करार दिया। सेना ने भी इसे समर्थन दिया। भुट्टो ने कहा कि पाकिस्तान में तीन पार्टियाँ हैं—स्वयं उनकी पार्टी, मुजीब की पार्टी और सेना। मिस्टर भुट्टो और सेना बंगाल के विरुद्ध एक हो गये। मुजीब ने यह स्पष्ट घोषित कर दिया कि ६ सूत्रीय कार्यक्रम का एक शब्द भी वह नहीं हटायेंगे।

एक ऐतिहासिक धोखा

बाद में भुट्टो मुजीबुर्रहमान से मिलने ढाका आये। फिर उन्होंने यह घोषित किया कि वे और उनके साथी नेशनल एसेम्बली का बहिष्कार करेंगे। उनके इस कथन को याहिया का आशीर्वाद प्राप्त था। इसलिए याहिया ने एक मार्च को ऐलान किया कि अब 'नेशनल एसेम्बली' *की बैठक नहीं होगी।* हमारा नेता सामने आया और बंगाल के लोग उसके पीछे एक दीवार की तरह खड़े हो गये। *जनता सड़कों पर आ गयी।* उसके बाद उन्हें कुचलने के लिए सेना आयी। ढाका में अत्याचार आरम्भ हुआ। मारपीट का दौर बढ़ा। अखबारों को, पत्रिकाओं को यह चेतावनी दी गयी कि वे सेना की कार्रवाई न छापें। परन्तु हम पत्रकारों ने मुजीबुर्रहमान की अनुमति से सभी खबरें छापीं। *शेख मुजीबुर्रहमान जो चाहते,* कर सकते थे। वह बंगाल के सबसे बड़े नेता थे। परन्तु वे इस बात के कायल थे कि जनता का फैसला ही आखिरी फैसला होता है। सन् १९६९ में उन्होंने असहयोग, अहिंसा का रास्ता चुना। हम लोगों ने *अहिंसा का रास्ता* इसलिए चुना, क्योंकि हम जानते थे कि वे लोग हम लोगों पर इल्जाम देने के बाद हमारी *हत्या शुरू करेंगे।* इसलिए मुजीब ने १७ मार्च को उन चार सूत्रों की घोषणा की, जिनकी दो बातें यह थी कि मार्शल लॉ *उठाया जाय,* जनता के प्रतिनिधियों को सत्ता दी जाय और पूर्व बंगाल में जगह-जगह पर होनेवाली कत्ल व गारतगरी की तहकीकात करायी जाय। ६ मार्च को याहिया को यह एहसास हुआ कि मुजीबुर्रहमान अपनी जगह पर अटल रहेंगे। ७ मार्च को मुजीब ने एक बड़ी बैठक बुलायी। उसमें नेशनल एसेम्बली के सभी बंगाली नुमाइन्दे थे। याहिया डरते थे कि हो सकता है कि मुजीब ७ मार्च को स्वतन्त्रता की घोषणा कर दें। लेकिन मुजीब ने ऐसा न करके उस दिन उन ४ शर्तों की ही घोषणा की। याहिया के सामने केवल एक ही रास्ता था कि वे जनता के प्रतिनिधि को सत्ता सौंप दें।

मार्च के मध्य में याहिया ढाका आये और शेख मुजीब से वार्ता शुरू हुई। वे इस बात की अदाकारी करते रहे कि याहिया और मुजीब नजदीक आ रहे हैं। *यह दरअसल षड्यन्त्र था।* इस बीच फिर भुट्टो आये। यह वार्ता असफल रही। भुट्टो, याहिया और दूसरे पश्चिमी *पाकिस्तानी नेताओं की एक गुप्त बैठक* हुई। मुजीब अब तक याहिया को अच्छा आदमी समझ रहे थे। किन्तु २१ मार्च को उनको पता लगा कि दाल में कुछ काला है। परन्तु शेख मुजीब क्या कर सकते थे? याहिया ने बड़ा धोखा दिया था। वे इस बीच पूर्व पाकिस्तान की पवित्र धरती पर सेना जमा कर रहे थे। जब यह काम पूरा हो गया तो वह पिंडी चले गये। और, फिर २५ मार्च की रात में पूर्व बंगाल की जनता ने अपने को तोपों की घनघोर गरज के बीच पाया।

पत्रकारों पर सेंसर लगा। बर्बरता अपनी इन्तहा पर पहुँच गयी। परन्तु पूर्व बंगाल का संघर्ष अब तक जारी है, और यह उस समय तक जारी रहेगा जब तक उसे स्वतन्त्रता मिल न जाय। पाकिस्तान के पास तोपें और बमवर्षक जहाज हैं। लेकिन बंगला देश के पास विश्वास, हौसला और दृढ़ प्रतिज्ञा है, जो पाकिस्तान के लिए एक बड़ी चुनौती के रूप में खड़ी है। ●

इस अंक में

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पैसे), विदेश में २२ रु०; या २५ शिलिंग या ३ डालर।
इस अंक का मूल्य ५० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं मनोहर प्रेस, वाराणसी में मुद्रित

सम्पादक
राममूर्ति

वर्ष : १७ सोमवार
अंक : ३५ ३१ मई, '७१

पत्रिका विभाग
सर्व सेवा संघ, राजघाट, वाराणसी-१
फोन : ६४३९१ तार : सर्वसेवा

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

इस सदी का विस्फोट

मैं यह मानता हूँ कि एक बड़े 'निरोशन' की आज आवश्यकता है। एक पूरे सार्वत्रिक निषेध की आवश्यकता है। वह टी० एस० इलियट था न, पुराणपंथी आदमी था, लेकिन उसने तीन बातें कहीं, कि 'एटीन्थ सेन्च्युरी, द सेन्च्युरी आफ विजन', 'नाइन्टीन्थ सेन्च्युरी, द सेन्च्युरी आफ क्यूरियोसिटी', और आज की 'ट्वेन्टियथ सेन्च्युरी द सेन्च्युरी आफ इन्टरोगेशन।' हर चीज के विषय में प्रश्न, सन्देह नहीं प्रश्न!

इस तरह से यह सारा का सारा 'इन्टरोगेशन' है, लेकिन 'इन्टरोगेशन' में यहाँ पर तीन चीजें और मिल गयी हैं: एक मिली है 'एक्सप्लोजन आफ पापुलेशन', यह 'जिनीयस' का 'एक्सप्लोजन' नहीं, 'एक्सप्लोजन आफ पापुलेशन' से मतलब यह है कि १५ साल से लेकर २२-२३ साल तक की उम्र के लोग ज्यादा हैं आज। जो हमारी आबादी है उसमें दूसरा है 'एक्सप्लोजन आफ एजुकेशन।' बेकारी में आप क्या कहते हैं कि "जॉब ओरिएण्टेड एजुकेशन' दो!" इसको मैं बहुत गलत मानता हूँ। इसका मतलब यह है कि ये जो नौजवान हैं, उनको इस समाज में 'आब्जर्ब' कर लो, तो इनकी बगावत खत्म हो जायेगी। ये बागी हैं, ये समाज को बदलना चाहते हैं, इनमें से कुछ, जो नहीं बदलना चाहते हैं, वे 'आब्जर्ब' हो जायेंगे। ठीक भी है, लेकिन कुछ जो थोड़े हैं, इस समाज को बदलना चाहते हैं, आब्जर्ब नहीं होना चाहते हैं, उनकी मैं कद्र करता हूँ। जिनको इसी समाज में जॉब चाहिए, वे किस काम के हैं! तीसरा है 'एक्सप्लोजन आफ प्रामिसेज'—वादे ही वादे हैं, वादे ही वादे हैं। एक ने किया था मजाक कि 'मैं उनसे तो अच्छा हूँ जो वादे ही नहीं करते। मैं कम-से-कम ५० प्रतिशत तो करता हूँ।' इनके 'प्रामिस' और 'परफारमेंस' में जो बहुत बड़ी खाई रह गयी है, उसमें से ये तीनों चीजें हमारे देश में आयी हैं। इसलिए कहते हैं कि इनको काम दे दें; तो यह सारा का सारा आन्दोलन खत्म हो जायेगा। होगा नहीं, और होगा तो मुझे दुःख होगा। इस समाज की बुनियादों को बदलने का अगर कोई आन्दोलन चल रहा है तो मैं नहीं चाहूँगा कि जब तक बुनियादें नहीं बदलती हैं तब तक वह खत्म हो।

—दादा धर्माधिकारी

• ग्रामदान-आन्दोलन : कितना बोगस ? • राक्षसी कूटनीति •

नगरों में सर्वोदय कार्य की दिशा

दिनांक १९ अप्रैल १९७१ के 'भूदान-यज्ञ' में श्री सिद्धराज ढड्ढा द्वारा लिखित लेख 'नगरो में सर्वोदय कार्य की दिशा' पढ़ा। वह अधूरा-सा प्रतीत हुआ। क्योंकि इसमें सर्वोदय कार्यकर्ताओं के लिए कुछ बुनियादी कार्यों की उपेक्षा की गयी है

लेख में शातिसेना तथा तरुण-शांति-सेना के सगठन पर जोर दिया है वह तो ठीक है, परन्तु उनके प्रमुखकार्य के सम्बन्ध में मैं यह कहूँगी कि यदि उनका मुख्य कार्य शहरो में शांति बनाये रखना होगा तो फिर पुलिस तथा शांतिसैनिक के कार्य में अन्तर ही क्या रह जायेगा? क्योंकि पुलिस का कार्य भी तो शांति एवं व्यवस्था बनाये रखना ही होता है। बल्कि भय की शक्ति के कारण पुलिस यह कार्य शांतिसैनिक से अधिक सफलतापूर्वक कर सकती है। इसलिए शांतिसैनिक जब तक प्रत्यक्ष रूप से जनता की सेवा करते नजर नहीं आयेंगे, तब तक न वे उनके झगड़े ही सुलझा सकते हैं और न कोई उनकी बात ही सुनेगा।

इसलिए मैं सोचती हूँ कि शांतिसैनिक का मुख्य काम शांति बनाए रखना नहीं बल्कि अशांति को ही उत्पन्न न होने देने का प्रयत्न होना चाहिए।

अब अब देखना यह है कि अशांति उत्पन्न होने के कारण क्या हैं और उन्हें दूर करने का क्या प्रयत्न शांतिसैनिक को करना होगा। वे कारण-कार्य इस प्रकार है.

१—आर्थिक विषमता को कम करने का प्रयत्न करना,

२ – लोगो को व्यस्त बनाना,

३ लोगो की धार्मिक भवनाओं के अन्तर्विरोध को कम करना।

आर्थिक विषमता दूर करने के लिए शांतिसैनिकों को खादी एवं लघुउद्योगो के उत्पादनों का स्वयं भी निष्ठापूर्वक उपभोग करना चाहिए और शहरियों को भी। इनके लाभ एवं आवश्यकता समझा कर, इनके उपयोग के लिए प्रेरित करना चाहिए। खादी एवं गाँधी-अर्थव्यवस्था के आधार पर विचार-प्रचार करना चाहिए। इस प्रकार ग्रामीण उत्पादनों के प्रचार में वृद्धि होने से गरीब कुछ ऊपर उठेंगे और मिलों के उत्पादनों की बिक्री कम होने पर अमीर कुछ नीचे आयेंगे। इससे आर्थिक विषमता कुछ कम होगी।

इसके अतिरिक्त खादी का अधिकाधिक प्रचार हो जाने पर सबका जीवन सादा एवं समरूप दिखाई पड़ेगा। जिससे दिखावेपन के कारण उत्पन्न ईर्ष्या, द्वेष, चोरी, दगा एवं हत्याएँ इत्यादि समस्याएँ स्वयं हल होती जायेंगी।

दूसरा काम है लोगों को व्यस्त रखने की कोशिश करना। कहावत है 'खाली दिमाग शैतान का घर, लोगों के पास काम न होने के कारण जो समस्याएँ उत्पन्न होती हैं, अशांति उत्पन्न करने में उनका विशेष हाथ रहता है। खादी-प्रचार से अधिकाधिक संख्या में बेकार ग्रामीण इस धंधे को अपनायेंगे। इससे एक ओर गरीब वर्ग में बेरोजगारी की समस्या हल होगी, दूसरी ओर काम मिल जाने पर दंगा-फसाद करने का उन्हें अवकाश ही नहीं रह जायेगा। शहरी लोगो में भी आत्मनिर्भरता एवं महँगाई कम करने के उपाय के रूप में घर-घर कातने का प्रचार करना चाहिए। जिससे अपने खाली समय को शहरी लोग, व्यर्थ की बातों में बर्बाद करने की जगह, उत्पादन-कार्य में लगा सकें।

तीसरा काम है धार्मिक अन्तर्विरोध कम करने का प्रयत्न करना। इसके लिए शांतिसैनिकों को सब धर्मों के सेवाभाव को उभारकर इस बात का दिग्दर्शन कराना चाहिए कि खादी द्वारा किस हद तक लोक-सेवा की जा सकती है। जिससे लोग धार्मिक विषमताओं में न उलझकर, मानवता पर आधारित सेवाभाव एवं खादी को धर्म का मूल समझने लगें। इस प्रकार धर्म के आधार पर होने वाले झगड़ों की सम्भावना कम हो जायेगी। इन सब कामों को करने के लिए।

१—साहित्य प्रचार आवश्यक है।

२—स्थान-स्थान पर सभाएँ, मुहल्ला-गोष्ठियाँ इत्यादि करना चाहिए, जिससे वहाँ एकत्रित लोगो को विचार समझाया जा सके, ऐसी गोष्ठियों में बातचीत बड़े आत्मीय ढंग से हो सकती है।

३—इसके लिए शांतिसैनिकों को स्वयं भी किसी गांधी-विचारधारा के विद्वान से सम्पर्क रखना चाहिए और उनका मार्ग-दर्शन लेते रहना चाहिए। क्योंकि जब तक शान्तिसैनिक स्वयं ही सर्वोदय विचारधारा को अच्छी तरह नहीं समझ सकता होगा, तब तक वह उसका सही प्रचार भी नहीं कर सकेगा।

अब हमने देखा कि सब समस्याओं को सुलझाने में खादी-प्रचार सबसे अधिक जरूरी है। इसलिए सर्वोदय कार्यकर्ता के लिये खादी (सभी लघुउद्योग भी)-प्रचार प्रमुख कार्य है। इसके लिए उन्हें अपने-अपने नगरों से चन्दा इकट्ठा करके खादी पर छूट देने की व्यवस्था करनी चाहिए। इस छूट में सरकार की सहायता की भी आवश्यकता नहीं, बल्कि जनता की सेवा के लिए यह जनआधारित छूट की व्यवस्था होगी। इस प्रकार सस्ती होने पर खादी का प्रचार बढ़ेगा और ग्रामस्वराज्य के कार्य को एक ठोस आधार मिल जायेगा, जो सर्वोदय-क्रान्ति का मूल उद्देश्य है।

—वीना माथुर,
दिल्ली प्रदेश सर्वोदय मण्डल

हमारे ये सम्मेलन

हमारे इन सम्मेलनों का स्वरूप जितनी जल्द बदल जाय उतना ही अच्छा, नहीं तो डर है कि इनकी जो कुछ अच्छाई बची हुई है वह भी शीघ्र समाप्त हो जायगी। सर्वोदय को मानने वाले ऐसे लोगों की संख्या बढ़ रही है जो सर्वोदय-सम्मेलन में जाना बेकार समझने लगे हैं।

जो साथी पूरे तौर पर ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य-आन्दोलन में लगे हुए हैं वे सम्मेलन में इसलिए जाते हैं कि वहाँ आन्दोलन के हर पहलू पर, देशभर से आये हुए साथियों द्वारा, अखिल भारतीय भूमिका में विस्तृत चर्चा होगी, और कुछ मूल बातों पर आन्दोलन की एक सार्वदेशिक दिशा और कार्यपद्धति स्थिर होगी ताकि देश के किसी भी कोने में काम करनेवाले साथी का यह महसूस हो कि अपने ही जैसे हजारों साथियों के साथ वह एक आन्दोलन का अंग है, और ये सब साथी उस देशव्यापी आन्दोलन को, जिसकी अगुआई सर्व सेवा संघ कर रहा है, समस्याओं और संभावनाओं के समान रूप से साझेदार हैं। दुख है कि यह अपेक्षा अभी तक पूरी नहीं हो पा रही है। एक तो प्रत्यक्ष कार्यकर्ताओं की काम में लगे हुए बहुत कम साथी आर्थिक कारणों से सम्मेलन या अधिवेशन में पहुँच पाते हैं, दूसरे जो किसी तरह पहुँचते हैं वे कुछ बहुत लेकर लौटते नहीं। यह गम्भीर चिन्ता का विषय है। इसका फौरन उपाय सोचा जाना चाहिए।

हम मान लेते हैं कि सम्मेलन एक ऐसे सर्वोदय समाज के लिए होना है जिसके सदस्यों का सख्या ग्रामदान-कार्यकर्ताओं से कहीं अधिक है, और सर्वोदय-समाज की प्रवृत्तियाँ अनेक और विविध हैं। लेकिन अधिवेशन (अधिवेशन तो पूरे तौर पर ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य-आन्दोलन के लिए ही सुरक्षित रहना चाहिए। अगर कम पड़ते हों तो पूरे एक हफ्ते का समय निकाला जाय और आन्दोलन के विविध पहलुओं की विस्तृत चर्चा के लिए तीन दिन यदि अधिवेशन और सम्मेलन का साथ करने से बोझ अधिक पड़ता हो तो अधिवेशन अलग किया जाय। साल का एक अधिवेशन अलग होना भी है, दोनों अलग हों। चर्चाएँ अधिक तैयारी के साथ की जायँ। निर्धारित मुद्दों पर जिलों से निवेदन मंगाये जायँ। जिला-प्रतिनिधि पूरी जानकारी लेकर आयें। चर्चाएँ प्रतिनिधियों और लोकसेवकों तक सीमित रहें। महत्व के हर मुद्दे पर प्रबंध समिति अपनी तरफ से सार प्रस्तुत करे ताकि अधिवेशन तथ्यों और तर्कों के आधार पर अपनी राय कायम कर सके। आन्दोलन की मुख्य नीति-रीति के सम्बन्ध में प्रबंध समिति को हर ६ महीने या सालभर के लिए अधिवेशन से स्पष्ट मार्ग-दर्शन प्राप्त करना चाहिए। अधिवेशन में होने वाली सम्पूर्ण कार्यवाही का पूरा खाका तथा चर्चा का क्रम और पद्धति पहले से तैयार रहनी चाहिए। तैयारी करने का काम सर्व सेवा संघ की विभिन्न समितियों तथा प्रधान कार्यालय का है।

सक्रिय प्राथमिक सर्वोदय मंडल देश के हर जिले के हर ब्लाक में होने चाहिए। इतना न हो तो कम-से-कम जिले का एक जिला-स्तरीय सर्वोदय मंडल तो सक्रिय हो। जहाँ एक भी सक्रिय सर्वोदय मंडल न हो, अथवा जहाँ लोकसेवकों की न्यूनतम संख्या भी न हो, उस जिले के प्रतिनिधित्व का क्या अर्थ है? लोकसेवक अधिवेशन में अपने क्षेत्र का 'प्रतिनिधि" होता है, और अपने क्षेत्र में आन्दोलन का। अगर वह यह दोहरा रोल न अदा कर सके तो उसका लोकसेवकत्व किस काम का है? आन्दोलन में लगे हुए हर लोकसेवक का, तथा हर सघन क्षेत्र का, सीधा सम्बन्ध सर्व सेवा संघ के साथ भी होना चाहिए। हर जिला सर्वोदय मंडल को अपने प्रतिनिधि के द्वारा सर्व सेवा संघ के साथ जुड़ा रहना चाहिए। सर्व सेवा संघ लोकसेवकों का भाई-चारा है। इस नाते उसका मुख्य काम है विचार देना, क्रान्ति की नीति रीति स्थिर करना, और आन्दोलन की अखिल भारतीयता कायम रखना। इस व्यापकता के साथ तथा सर्व सेवा संघ के मार्गदर्शन में प्रत्यक्ष कार्य की योजना जिले और राज्य में बनेगी।

संघ-अधिवेशन के संचालन और कार्यपद्धति से यह झलकना चाहिए कि वह अहिंसक क्रान्ति की "सुप्रीम संस्था" है जो हर क्षण समस्याओं से जूझ रही है, और जिसके निर्णय सुदूर कोनों में बैठे हुए साथियों के लिए प्रेरणा का काम कर रहे हैं। साथियों को प्रेरणा के साथ-साथ एक बड़े भाई-चारे के संरक्षण की भी जरूरत है।

संघ-अधिवेशन में आन्दोलन का काम पूरा हो जाय तो सम्मेलन का काम आसान हो जायगा। संघ की ओर से साल भर के काम के प्रतिवेदन के साथ-साथ एक अच्छी तरह सोचा हुआ, नपा तुला, परिस्थिति पर प्रकाश डालनेवाला, निवेदन भी सम्मेलन के सामने प्रस्तुत होना चाहिए। जरूरत हो तो सम्मेलन में स्पष्टीकरण कर दिया जाय। इसी तरह दूसरी प्रवृत्तियों की ओर से भी प्रतिवेदन पेश हो, और आगे की कार्य-योजना बनायी जाय।

गांधी-विचार से प्रेरित तथा सर्वोदय के नाम से चलने वाली विभिन्न प्रवृत्तियों में समाज-परिवर्तन के संदर्भ में तालमेल कैसे बिठाया जायगा, इसकी चर्चा सम्मेलन में होनी चाहिए, और उसीके अनुसार जिलों और राज्यों में काम होना चाहिए। इतने दिनों के अनुभव से यह सिद्ध हो चुका है कि रचनात्मक संस्थाएँ ग्रामदान को अपना मुख्य काम मानने की स्थिति में नहीं हैं। ग्रामस्वराज्य-आन्दोलन उनसे आंशिक सहयोग से अधिक की अपेक्षा नहीं कर सकता। वह सहयोग हार्दिक और सार्थक हो, यह कोशिश करनी चाहिए। लेकिन सहयोग उसको मिलता है जिसके पास अपनी शक्ति होती है। संघ-अधिवेशन को ग्रामस्वराज्य-आन्दोलन का सशक्त माध्यम बनाने का पूरा प्रयत्न होना चाहिए। ●

ध्यान : एकाग्रता और व्यग्रता

सवाल : आत्मा और ब्रह्म दोनों एक है इस प्रकार का ध्यान अक्सर भारत में किया जाता है, सोऽहम् । वह जो बाहर है और जो अन्दर है वह एक ही है । इस प्रकार के ध्यान के लिए कोई मूर्ति या पत्थर पड़े चिह्न, त्रिकोण, स्वस्तिक आवश्यक हैं क्या ? उपयोगी हैं क्या ?

जवाब : ध्यान की जो प्रक्रिया है, वह बहुत सूक्ष्म है । ध्यान में मनुष्य जागृत निद्रा में होता है । गाढ़ निद्रा जो होती है उसमें केवल निद्रा होती है । एक केवल जागृति, जैसे हम अभी बैठे हैं, एक केवल निद्रा, दोनों के बीच में ध्यान । और ध्यान में निद्रा की जो तन्मयता है, वह होती है, लेकिन शून्यता नहीं होती, बल्कि जागृति होती है । उसका वर्णन शब्द में मुश्किल है करना, लेकिन थोड़े में मैं उसका वर्णन गाढ़ निद्रा, जागृत निद्रा ऐसा करता हूं ।

श्रद्धा के अलावा भी । सुन्दर झरना बह रहा है, स्वच्छ निर्मल पानी बह रहा है, तो उसके किनारे यदि हम बैठते हैं ध्यान करने के लिए, तो जल्दी ध्यान सधता है । उसकी स्वच्छता, निर्मलता, मंद-मंद गति, सबके मिलाकर परिणाम होता है । जैसे हिमालय पहाड़ सामने है, हम उधर मुंह करके बैठे और सूर्य की चमक पड़ी, सफेद दिख रहा है । उससे चित्त एकाग्र होने में मदद होगी । ये तो कुछ ऐसे आलम्बन हैं जो सब मानव के लिए समान हैं । फिर उसके अलावा जिसकी श्रद्धा जहां बैठी है, जैसे मान लीजिये ओऽम्, यहां लिखा हुआ है, यह स्वस्तिक है, यह ध्यान के लिए आलम्बन है । क्रास है क्रिश्चियन लोगों का, वह ध्यान के लिए आलम्बन है । क्रास और स्वस्तिक में बहुत थोड़ा फर्क है; या कोई अंक है या शून्य का भी ध्यान किया जाता है । दीपशिखा जल रही है, दीपशिखा का ध्यान है । धीरे-धीरे महादेव के लिंग पर पानी टपक रहा है । आलम्बन के लिए और भी कोई पत्थर लिया, सुन्दर गोल पत्थर पड़े हैं । पेड़ का ध्यान हो सकता है । ये सब ध्यान के लिए आलम्बन हो सकते हैं । शिव की मूर्ति, विष्णु की मूर्ति, राम की मूर्ति, भगवान क्राइस्ट का रूप, कृष्ण का रूप, बुद्ध का चित्र, ये सभी ध्यान के लिए लिए जा सकते हैं, जिसकी श्रद्धा जहां बैठे । ये प्राथमिक है, उसमें वे मदद रूप होते हैं । प्रगत अवस्था आ जाती है, तो फिर आलम्बन की जरूरत नहीं । उसमें बिना आलम्बन के भी ध्यान हो सकता है । तो उसके लिए सीधे बैठे । सीधे बैठने से जो नाड़ी-प्रवाह है, उसमें सुषुम्ना नाड़ी है, वह जो नाड़ी में से ध्यान बहता है, ध्यान का जो प्रवाह होता है, वह उस नाड़ी में से है । तो सीधे बैठते हैं तो ध्यान जल्दी होता है । गीता ने भी कही सीधे बैठने की बात परन्तु वह भी प्राथमिक अवस्था में ही है । प्राथमिक अवस्था में सीधा बैठना लाभदायी है । वैसे आगे चलकर पांव फैलाकर बैठा तो भी ध्यान होता है, लेटे-लेटे भी ध्यान होता है, चलते-चलते भी ध्यान होता है और बाबा के लिए अद्भुत ही है । बाबा की हालत बहुत वर्षों से ऐसी ही है कि उसकी एकाग्रता इतनी सहज है कि वह है ही और अनेकाग्रता के लिए प्रयत्न करना पड़ता है ।

मान लीजिये यहीं पर रसोई करना है । तो बेसन कहां है आटा कहां है, ऐसे दो-चार-पांच वस्तुओं की तरफ ध्यान देना पड़ेगा । उसमें बाबा को प्रयास करना पड़ता है और एकाग्रता के लिए कुछ करना ही नहीं पड़ता है । जो है, सो एकाग्रता है । चित्त न इधर जाता है, न उधर जाता है । वह अपने स्थान पर ही बैठा है । उसका मुख्य कारण है कि बाबा आलसी है । मैंने बहुत दफे कहा था कि बाबा को इधर घूमो, उधर घूमो यह नहीं होता, आलसी होने से उसको ध्यान सहज सधता है । मैं जब असम प्रदेश में था, शंकर देव की पुण्यतिथि थी, उस दिन मेरा व्याख्यान हुआ था । तो मैंने कहा कि शंकर देव ने जो ध्यान आदि बताया, मुझे सहज ही सधता है, उसका कारण यह है कि मैं आलसी हूं । चित्त इधर दौड़ाओ, उधर दौड़ाओ, उसमें मेहनत होती है और चित्त अपना आराम से बैठा है, कुछ मेहनत ही नहीं । इसलिए विनोद में मैंने वहीं पर बताया कि असमवालों को ध्यानयोग सहज सधेगा, भक्तिमार्ग सहज सधेगा, क्योंकि असम के लोग आलसी है । सबके सब तो नहीं आलसी हैं, लेकिन 'लाहे लाहे होगा' (धीरे-धीरे होगा), यह असम का मुख्य वाक्य है । तो, क्योंकि आलस है और निवृत्ति-मार्ग में आलस ही भरा है, किसीको मारना हो तो औजार लेना पड़ेगा, और जोर से फेंकना पड़ेगा, मुख से जोर से चिल्लाना पड़ेगा । मारना नहीं, हिंसा करना नहीं, झूठ बोलना नहीं । झूठ बोलना होगा तो वह यत्न करना पड़ेगा, सारी अच्छी योजनाएं करनी पड़ेगी ।

बच्चे को भी सत्य बोलना सधता है वह तो आसान है । उसमें कुछ षड्यंत्र नहीं, बनाना नहीं, कुछ नहीं । जैसा है वैसा बोलना । मारना नहीं, गुस्सा नहीं करना और झूठ नहीं बोलना, यह नहीं नहीं नहीं, इसलिए आलसी मनुष्य के लिए आसान मार्ग । इसलिए बाबा ने बहुत दफे समझाया, बहुत 'सिरियसली' बाबा ने समझाया कि बाबा ने शादी क्यों नहीं की । लोग पूछते हैं । तो केवल आलस के कारण नहीं की । शादी करे तो रात को जागना पड़े, बच्चा चिल्ला रहा है, नींद खराब होगी । बीमार पड़ गया है, नींद खराब होगी । बाबा अपनी नींद में कभी दखल चाहता नहीं । और इतनी भूदान-यात्रा हुई ११ साल, उसमें वह अच्छी निद्रा सोता और बाबा का यह भाग्य है कि निद्रा में अक्सर स्वप्न आते नहीं । इन दिनों जरा देखा खांसी शुरू हुई, तो खांसी का तो मुझे

इतना दुख नहीं हुआ, लेकिन खाँसी में स्वप्न शुरू हो गये और परमेश्वर की कृपा है कि स्वप्न अच्छे थे, खराब थे नहीं। परन्तु स्वप्न पड़े तो मुझे अच्छा नहीं लगता, लेकिन वह भी गया बिचारा। तो, मुझे आश्चर्य है कि उधर खाँसी शुरू हुई और इधर गाढ़ निद्रा. ऐसा ही हुआ। खाँसी शुरू हो गयी तो एकदम आधी निद्रा आ गयी और उसमें स्वप्न शुरू हो गये। परन्तु अक्सर बाबा को कुछ स्वप्न-विघ्न आते नहीं। बिल्कुल पड़ा यानी मरा समझ लो। मर ही गया। ऐसी सुंदर निद्रा निस्स्वप्न बाबा को आती है। वह यदि शादी करता तो अच्छी निद्रा उसको आती कैसे? यह संभव नहीं था। बहुत तकलीफ होती है। लड़की देखने जाओ, उसके लिए पैसे का संग्रह करो, कर्जा ले रखो बाबा तो उसमें बिल्कुल घबड़ाता। मारा जा बाबा सोचता है, इतना भयंकर है। तो केवल आलस के कारण भय के कारण संसार में पड़ा ही नहीं, और आलस के कारण ही उसको ध्यान सध सकता है। आप लोग भी थोड़ा आलस साध लें।

और मेरा जो आखिरी व्याख्यान हुआ हमारे लोगों के सामने, राजगिर में बिहार छोड़ने समय, वह निद्रा पर था। कम-से-कम ८ घंटे गाढ़ निद्रा सोना ही चाहिए। यह मैंने आखिरी संदेश दिया हमारे हजारों साथियों को कि सोते कितना हो? तो इस प्रकार से यदि आलस हो चित्त में, तो ध्यान सहज सधेगा। बैठा है चित्त, बस हो गया। न इधर दौड़ता है न उधर। तो चित्त एकाग्र करना पड़ता है ऐसी जो भाषा बोलते हैं, वह बाबा को तो अनुभव में ही नहीं आती। चित्त एकाग्र क्या करना पड़ता है? वह तो है ही। उसको व्यग्र करना पड़ता है, चारों ओर दौड़ना हो तो वह मेहनत का काम है। उसका इन्तजाम करना पड़ता है। बाबा की यात्रा चली थी, उसमें ये सारी चीजें होती, डिनर निकाला, ये करो, वो करो। लेकिन बाबा कुछ नहीं करता था, सारा इन्तजाम करनेवाले दूसरे लोग ही होते थे। वह अपने स्थान पर ही खड़ा था। चार बजे उठा और चलने लगा। बाबा को कुछ करना ही नहीं पड़ा। जितना करना पड़ता था बाकी के सब लोग करते थे।

तो, मैंने यह आपको कहा कि एकाग्रता मनुष्य के लिए अत्यन्त सहज है अगर चित्त में मलीनता न हो तो। और यही गीता में स्थितप्रज्ञ के श्लोक में थोड़े में कह दिया प्रसन्नचेतसो ह्याशु बुद्धिः पर्यवतिष्ठते। चित्त प्रसन्न है, निर्मल है, शांत है तो उसकी एकाग्रता यानी खेल है, श्रम ही नहीं उसमें। और चित्त की व्यग्रता, इसीमें श्रम होता है।

तो चित्त एकाग्र करना इत्यादि जो बात है यह बाबा के बहुत ज्यादा ध्यान में आती नहीं, लेकिन मैं जानता हूँ कि कइयों को चित्त एकाग्र करना बड़ा कठिन लगता है। ध्यान करने को बैठे तो चित्त इधर दौड़ा उधर दौड़ा ऐसा होता है। मैं ऐसे लोगों को कहता हूँ कि जहाँ-जहाँ चित्त दौड़ा, उसके पीछे-पीछे जाओ और यहाँ पर कैसे दौड़ा? ध्यान के लिए बैठा तो एकदम सरोजा चित्त में आयी। सरोजा तो तेलगु भाषा बोलनेवाली है, तो तेलगु भाषा की ओर ध्यान गया। तेलगु का कोष मैंने पढ़ा था जेल में, तो जेल में ध्यान गया। तो जेल में पढ़ने के लिए फलाने-फलाने गुरुजी थे तो रेड्डी थे। तो रेड्डी के पास चित्त चला गया। अभी रेड्डी कहाँ होंगे, तो मालूम हुआ कि वे चार साल पहले मर गये। कहाँ मरे तो गुंटूर में। तो चित्त गुंटूर में गया। तो गुंटूर के नजदीक ही तेनाली है वहाँ पर सूर्यनारायण रहता है। तो अब कहाँ से शुरू हुआ था और कहाँ गया। उसका प्रवास बराबर लिख रखना। तो ऐसे १०-२०-२५ प्रवास लिख रखोगे तो चित्त के ध्यान में आयेगा कि जहाँ-जहाँ मैं जाता हूँ मेरे पीछे पीछे आता है तो वह भागेगा कि अब कोई प्रवास ज्यादा रहा नहीं। चित्त शांत हो जायेगा। ठीक रखो।

– विनोबा के साथ प्रश्नोत्तर

[ब्रह्मविद्या मंदिर, पवनार २५-३-'७१]

५० गाँवों में कोई भूमिहीन न रहा

उत्तरकाशी जिले की पुरोला तहसील की कमल सिराई और रामा सिराई पट्टियों के ५० गाँवों में पिछले एक माह में सब भूमिहीन कृषि मजदूरों के लिए जमीन मिल चुकी है। १८ अप्रैल को जिला सर्वोदय मंडल द्वारा आरंभ किये गये ग्रामदान-पुष्टि-अभियान के दौरान प्रत्येक गाँव में भूमिवानों ने थोड़ी-थोड़ी भूमि देकर अपने गाँवों के भूमिहीनों में ग्रामस्वराज्य-ग्रामसभाओं के द्वारा वितरित करायी है। भूमि प्राप्त करनेवाले ५७ व्यक्तियों में अधिकांश हरिजन हैं, जिनमें अब तक लगभग ४६३ नाली जमीन बाँटी गई है। जिस क्षेत्र में भूमि बाँटी गई है, वहाँ की जमीन पर्वतीय जिलों में सर्वाधिक उपजाऊ और कीमती है। दान में दी गई भूमि में सिंचाई और बगीचे की जमीन भी शामिल है।

ग्रामदान-पुष्टि के कार्य के लिए टिहरी और उत्तरकाशी जिलों के सर्वोदय कार्यकर्ताओं की चार टोलियाँ गाँव गाँव घूम-कर ग्रामदान-पुष्टि का कार्य कर रही हैं, और शिक्षक तथा विकास कार्यकर्ता इसमें सहयोग दे रहे हैं।

उत्तर प्रदेश में ग्रामदान कानून न होने के कारण दान में वितरित भूमि को भूमिहीनों के नाम पर तुरन्त दर्ज कराने में कठिनाई हो रही है। यद्यपि जमीन का कब्जा तुरन्त दिया जाता है। कुछ गाँवों में दान-दाताओं ने देव मन्दिरों में सकल्प पढ़कर ग्रामस्वराज्य-ग्रामसभा को भूमि सौंपी और भूमिहीनों को तिलक लगाया।

सुश्री सरला बहन ने भी गाँव गाँव की यात्रा की और ग्रामस्वराज्य-ग्राम-सभाओं में महिलाओं को शामिल होने तथा शराब-बन्दी को सफल बनाने की प्रेरणा दी।

श्री सुन्दरलाल बहुगुणा इस अभियान के प्रारंभ से ही गाँव-गाँव में प्रत्यक्ष पुष्टि-कार्य करते हुए अभियान का नेतृत्व कर रहे हैं।

—सुरेन्द्रदत्त भट्ट

राक्षसी कूटनीति : कराहती इंसानियत

—जयप्रकाश नारायण

मेरे हृदय में उद्विग्नता है, बंगला देश की दुखी जनता और वीर सिपाहियों के लिए हम मदद कर सकें तो करें, लेकिन क्या इसलिए कि हम पाकिस्तानी विरोधी हैं ? या कि हमें इस बात के लिए खुशी हो रही है कि पाकिस्तान टूट रहा है ? हमें तो यह इसलिए करना है कि बंगला देश में जिस प्रकार का काण्ड आज हो रहा है, नृशंस, क्रूरतापूर्ण, राक्षसी, उस प्रकार का हिटलर के समय में हुआ हो शायद ! पुराने जमाने में भी क्या कभी ऐसा काण्ड हुआ था ? आज के जमाने में तो सिर्फ हिटलर की याद आती है। मानवता कहीं है क्या आज ! खेद है कि हम सहानुभूति के अलावा और कुछ नहीं कर पा रहे हैं। हमारे देश में लोकशाही की स्थापना हुई है। दोष है, कमियाँ हैं इसमें, फिर भी हम लोकतन्त्र के पुजारी हैं। हम मानते हैं कि जनता को यह अधिकार होना चाहिए कि वह अपने भाग्य का निर्णय स्वयं करे।

बंगला देश की जनता ने अपने भाग्य का फैसला किया था। वहाँ जैसा चुनाव हुआ था, वह किसी लोकतान्त्रिक देश में नहीं हुआ। अवामी लीग को ९९.०९ प्रतिशत वोट मिले थे। चुनाव में १९ दलों ने भाग लिया, लेकिन जनता ने अवामी लीग के नेता शेख मुजीबुर्रहमान के हाथों में अपना भविष्य सौंप दिया। आज न जाने वह कहाँ हैं, किस हालत में हैं ? यह आदमी पूर्व और पश्चिम पाकिस्तान के प्रधान मंत्री पद का हकदार था। आज पता नहीं, वह कहाँ है ? जिस दिन पश्चिम पाकिस्तान की जनता को बंगला देश की असलियत का पता चलेगा, शायद वहाँ की जनता भी याहिया का समर्थन बन्द कर देगी। इधर समझौता चल रहा था, उधर कुछ दूसरी ही तैयारी हो रही थी। सेना के खर्च पश्चिम ही ने नहीं, बंगला देश की गरीब जनता ने भी टैक्स के रूप में चुकाये थे। आज वही सेना उनकी कत्ल-हत्या कर रही है। याहिया पठान हैं। मैं पठानों का हृदय जानता हूँ। यदि उन्हें ठीक जानकारी मिले तो वे याहिया को छोड़ेंगे नहीं। मित्रो, वहाँ जो कुछ हो रहा है वह समूचे देश की हत्या है, मानवता की हत्या है। पाकिस्तान की सेना बंगला देश की सेना से लड़ी होती तो कोई बात थी। वह तो निहत्थे मजदूर, छात्र, औरतों, बच्चों, से लड़ रही है। उन्हें गोली मार रही है। यह है पाकिस्तान—पवित्र देश ! इससे भी नापाक काम क्या कोई कर सकता है ?

मेरा हृदय आन्दोलित हो रहा है। विचित्र दुनिया की स्थिति है आज। सभ्यता का विकास या विज्ञान से दुनिया ने कितनी समृद्धि की है ? मानव आज कहाँ से कहाँ पहुँच गया है। गुफा की जिन्दगी से चाँद तक पहुँच जाने पर भी क्या वास्तव में सभ्यता का विकास हुआ है। यह तो बर्बरता है। मुट्ठी भर लोगों को छोड़कर पूरी दुनिया निश्चिन्त सी बैठी है। अन्तर्राष्ट्रीय रेडक्रास को कराची से बंगला देश नहीं जाने दिया। क्या रूस और अमेरिका को यह अभी तक मालूम नहीं है कि वहाँ क्या हो रहा है ? इन देशों के पूरी दुनिया में खुफिया लोग घूमा करते हैं। क्या सी० आई० ए० को नहीं मालूम कि बंगला देश में क्या हो रहा है ? शायद उन्हें डर है कि ५४ करोड़ और साढ़े सात करोड़ के देश कहीं नजदीक न आ जायँ। ये सब राष्ट्र खेल किया करते हैं। वे पाकिस्तान और भारत में बराबर सन्तुलन बनाये रखना चाहते हैं। पलड़ा भारत का भारी न हो जाय कहीं। पाकिस्तान को विदेशी सहायता भारत से पाँच गुना अधिक मिली, क्यों ? सत्ता का सन्तुलन बिगड़ न जाय इसलिए ! और स्वतन्त्र बंगला देश तो हमारा मित्र बनेगा।

ये नक्सलपंथी कहे जानेवाले लोग माओ के आगे सिर झुकाते हैं, उन्हें अपना चेयरमैन मानते हैं। वही माओ तानाशाह याहिया की पीठ ठोक रहे हैं। तो याहिया को ये क्या कहेंगे ? अमेरिका को देखिये, पिंग-पांग टीम को आमन्त्रित क्या कर दिया चीन ने, अमेरिका सिर के बल चला जा रहा है। राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ वाले नेपाल के राजा को नागपुर में आमन्त्रित करना चाहते थे हिन्दू राज्य के राजा के नाते उसने क्या किया ? उसके पास भी ताकत है, याहिया के पास भी ताकत है। शेख के पास वोट है, इसलिए उसको मान्यता नहीं दत। क्या यह कोई 'फ्री वर्ल्ड' है ? यह तो 'स्लेव वर्ल्ड' है। सब मक्कार हैं। याहिया खां के पास ताकत के सिवाय क्या है ? क्या उसे जनता ने वोट दिया था ? सब मक्कार हैं, बदमाश हैं। लाखों लोग मार डाले गये फिर भी लोग चुप हैं। अब इस दुनिया से मेरी कोई आशा नहीं रह गई है। ऐसा भ्रम-भंजन हुआ है कि मैं कह नहीं सकता।

स्पेन की क्रांति को कुचलने का कुचक्र चला। एक अन्तर्राष्ट्रीय ब्रिगेड वहाँ गया क्रांतिकारियों के साथ, कन्धे से कन्धा मिला कर लड़ा। लेकिन यहाँ तो निहत्थी जनता लड़ रही है। संडे आब्जर्वर ने लिखा है कि यह 'बम्बू स्टिक (लाठी) से सुसज्जित सेना है।' जब हिटलर ने पोलैण्ड पर आक्रमण किया था तब गांधी ने कहा था वहाँ के जन-संघर्ष के बारे में कि वह जो कर रहे हैं, वह लगभग अहिंसा है। पोलैण्ड ने उसके आक्रमण का—जिसने विश्व-विजय का सपना देखा था—सीना खोल कर रोका था। गांधी ने कहा था कि पोलैण्ड की हिंसा क। दुनिया साफ करेगी। लोगों ने उनसे इस बारे में ऊपर उठाना था फिर उन्होंने कहा कि उनका यह संघर्ष लगभग अहिंसा है। बंगला देश के लोगों को सीना खोलकर लड़ना है आज, इसके लिए उन्हें हथियार चाहिए, उनको पूरा प्रशिक्षण चाहिए। यह सब हम आज नहीं दे सकते। भारत सरकार तो अहिंसा नहीं

मानती ! वह उन्हें दे सकती है क्या ? अलजीरिया के समय युद्ध का खर्च फ्रान्स में रहने वाले अलजीरियावासियों से मिला था। वे लोग ही उनका स्रोत थे। बंगला देश का एक नवयुवक मुझे कलकत्ता में मिला। उसे लंदन के लिए मैंने कुछ पत्र वगैरह भी दिये। वह वहाँ पर एक लाख पौण्ड एकत्र करेगा तथा उस पैसे से हथियार खरीदेगा। यह सब होगा।

शेख अन्त तक अहिंसक रहे। उन्होंने आदेश नहीं दिया था गोली चलाने का। गांधीजी जेल में थे, बाहर हमने हिंसा की, उन्होंने सहृदयता से हमारे बारे में लिखा, इधर-उधर वाले भी। लेकिन समर्थन नहीं किया हमारा। हमने १९४२ की भूमिगत क्रांति को इस तरह जारी रखा था। आज वैसी ही स्थिति है वहाँ की।

आज बंगला देश पर अरब देश कुछ नहीं बोल रहे हैं। अफ्रीका और एशिया के हर स्वतंत्र देश की समस्याएँ हैं। लेकिन हमें यह समझना चाहिए कि सम्प्रदाय की, भाषा की, अल्प-संख्यकों की समस्याओं-जैसी समस्या बंगला देश की नहीं है। यदि वहाँ चुनाव नहीं होते, उसमें शेख की ऐसी विजय नहीं होती और असहयोग में उन्हें १०० फीसदी समर्थन नहीं मिलता तो फिर बात दूसरी थी। लेकिन इन सब कारणों से इस तो आज वहाँ विद्रोही कौन है ? बंगला देश की जनता नहीं, पाकिस्तान का सैनिक शासन। बंगला देश की जनता को विद्रोही बतानेवाला या तो मूर्ख होगा या फिर मक्कार। बंगला देश के प्रधान मंत्री ने कहा था, "आज इस देश में वोट की कीमत नहीं, जनता की कीमत नहीं, कीमत केवल बन्दूक की है और वह बन्दूक हमारे पास नहीं है।' दुनिया के लोग इस घटना से आँखें मूँदे हुए हैं। सोते हुए को तो जगा सकते हैं, लेकिन जो जाग कर भी सो रहा है, उसे कैसे जगा सकते हैं ?

बंगला देश के लिए हम क्या कर सकते हैं—यह सोचना है। वहाँ की सरकार कुछ देर से बनी। शरीफ लोग हैं, उन्हें समझौते के दौरान शक तो हो गया था, लेकिन पाक शासन इतनी दूर तक चला जायेगा, इसकी कल्पना उन्होंने नहीं की। सोचा था सबको जेल में भर देंगे, 'एसेम्बली' रद्द कर मार्शल-लॉ जारी कर देंगे, और वे इसके लिए तैयार भी थे। लेकिन हुआ क्या ? लगता है वे राक्षस हैं सब। २५ की रात्रि को हमला शुरू हुआ तब शेख ने कहा कि मैं यहीं से ढाका में ही रह कर नेतृत्व करूँगा। उस दिन पाँच लोगों का हाई कमाण्ड चुना गया। उन्होंने कहा कि मैं नहीं रहा तो ये पाँच लोग काम चलायेंगे। बाद में जब मंत्रिमण्डल बना, तो उन पाँच में से तीन लोग उसमें उपस्थित थे। उनमें से एक ने मुझसे कहा था कि, "भारतसरकार हमें मान्यता दे।' बिहार, असम, उत्तरप्रदेश, बंगाल, राजस्थान आदि कई विधानसभाओं ने बंगला देश के समर्थन में प्रस्ताव पास किये हैं। प्रधानमंत्री ने भी संसद में प्रस्ताव रखा था। उन्होंने कहा था कि मान्यता देने में कुछ दिक्कतें हैं। लेकिन मैं मानता हूँ कि उन्हें मान्यता मिलनी चाहिए। हमने बहुत मदद की है, लेकिन अभी तो उन्हें बहुत ज्यादा मदद की आवश्यकता है। मैं प्रधानमंत्री के ऊपर नाजायज दबाव, अनुचित दबाव डालने के लिए नहीं कहता, वह तो मैं उनके हाथ मजबूत करने के लिए कहता हूँ कि हर पंचायत, विधानसभा, परिषदें, संगठन, छात्र, मजदूर आदि बंगला देश के समर्थन में प्रस्ताव पास करें और प्रधानमंत्री को तार भेजें। वहाँ तार का एक पहाड़ ही लग जाय, जिससे वे रूस, अमेरिका और ब्रिटेन से कह सकें—'जनता की माँग है यह। आखिर लिहाज कर कब तक जनता की आवाज को दबाया जा सकता है। प्रधानमंत्री का काम कठिन हो, यह मैं नहीं चाहता। उनसे तो मेरी सहानुभूति है, इसलिए यह अपील कर रहा हूँ, सुझाव दे रहा हूँ। हमने अणुबम के बारे में हस्ताक्षर अभियान चलाया था। उसी तरह बंगला देश पर भी हस्ताक्षर अभियान चले। एक करोड़ हस्ताक्षर देश भर में इकट्ठे हों, इससे उन (प्रधानमंत्री) को बड़ी मदद मिलेगी।

बंगला देश का भविष्य क्या होगा ? लड़ाई का फैसला क्या होगा ? भविष्य और फैसला एक ही होगा, दूसरा हो नहीं सकता, लेकिन इसका निर्णय उनकी अपनी हिम्मत से शक्ति से होगा, उसमें सहानुभूति, मदद सबकी रहेगी। मुझे लगता है कि पाकिस्तान एक सपना था, अब वह ओझल हो गया है। पाकिस्तान को तोड़ने की जिम्मेदारी याहिया पर है, शेख पर नहीं। अवामी लीग के छह सूत्री माँग में स्वायत्तता की माँग थी, स्वतंत्रता की नहीं। बंगला देश को पंजाबी पठान पूँजीपतियों ने उपनिवेश बनाकर छोड़ा था। २४ साल उसका शोषण किया। बहुत ही मर्मभेदी ढंग से चुनाव के समय अवामी लीग ने एक पोस्टर में लिखा था - **सोने का बंगला श्मशान क्यों ?** २४ मार्च तक स्वायत्तता के आधार पर बातचीत चली थी। वे शर्तों को मानते गये और चुपचाप सेना की तैयारी करते गये। फिर कहा कि याहिया ढाका से इस्लामाबाद जायेंगे, वहाँ से कागज वगैरह पूरा करके बयान देंगे, बयान के बदले फिर जो इस्लामाबाद से उन्हें मिला, उसे सब जानते हैं। बंगला देश के प्रधानमंत्री ने कहा कि, 'पाकिस्तान लाशों के एक पहाड़ के नीचे दबा दिया गया है।" वह पहाड़ कितना ऊँचा होगा, यह कौन जाने। चीन तो पाकिस्तान की मदद कर रहा है। वह नहीं चाहता कि चीन के इतने पास भारत का एक मित्र राष्ट्र बन जाय। माओ, जो तमाम उपनिवेशवादों के विरुद्ध था, गुलामों का नेता था, उस माओ ने यह सब कर दिखाया। हमारे यहाँ नक्सलवादी रहते हैं, दीवारों पर लिखते हैं कि अध्यक्ष माओ हमारे अध्यक्ष हैं। अब उनसे कहता हूँ कि वे लिखें अध्यक्ष माओ और अध्यक्ष याहिया हमारे अध्यक्ष हैं।

नासिक, ८ मई '७१

गांधीजी ने नमक बनाने की बात कही तो उस नमक में से कितना नमक दाल में डालने लायक बना होगा ? हम उस वक्त पढ़ते थे, नमक बनाया था। पंडित मोतीलाल नेहरू को भी नमक बनाते देखा था। बड़े नेताओं को देखा था। वह सारा का सारा नमक बोगस था। न दाल में डालने लायक था, न सब्जी में डालने लायक था, खाने लायक बिलकुल नहीं था। उस नमक की सार्थकता आँकी गयी थी नमक के बनाने में, बनाकर जेल जाने में। क्योंकि वह नमक स्वराज्य का नमक माना गया था, दाल का नमक नहीं माना गया था। आज भी पुष्टि के जो इलाके लिये गये हैं, उनमें कोई जाकर भूमिवानों से पूछे, भूमिहीनों से पूछे कि क्या समझते हो तुम इस ग्रामदान को ? भूमिवान कहेगा, 'साहब यह बात बहुत अच्छी है, अगर यह पूरी हो जाय तो आगे के लिए बड़ी आशा दिखाई देती है।' भूमिहीन कहेगा कि बात इतनी अच्छी है कि भरोसा नहीं होता कि कभी सच होगी। लेकिन कुछ लोगों को इससे भी जमीन मिली है शायद हमको भी इसीसे मिल जाय। इस देश के करोड़ों डूबते हुए दिलों में आशा संचार करना क्या बोगस काम है ?

एक मानवीय कठिनाई

हस्ताक्षर करने वाले भूमि नहीं देते। बहुत टालमटोल करते हैं। यह भी नहीं कहते कि नहीं देंगे। शादी में श्वसुर गरीब है तो बार-बार दामाद से वादा करता है कि साइकिल देंगे, लेकिन खरीद नहीं पाता। उसकी नीयत बिलकुल दुरुस्त है लेकिन नहीं खरीद पाता है बेचारा। ये जो लोग जमीन नहीं देते, बदमाश हैं ? बेवकूफ हैं ? भूले हैं ? या मार्क्सवादियों की भाषा में वर्गशत्रु हैं ? हमलोगों को सिखाया है मार्क्सवादियों ने कि वर्ग के जो लोग शत्रु हैं उनसे आशा रखना, उनपर भरोसा करना नादानी है। ये कभी भी बात माननेवाले हैं नहीं। अगर हम भी यही मान लें कि जितने भूमिवान हैं ये वर्ग-शत्रु हैं, तो हमारी अहिंसा का क्या होगा ? इतने सारे हिन्दुस्तान के लोग, ७६ फीसदी लोग, जिनके पास भूमि है वे सब-के-सब वर्ग-शत्रु हैं तो बाकी २४ फीसदी भूमिहीनों से ग्रामस्वराज्य कायम होगा ? अहिंसा सफल होगी ? क्या होगा ? वास्तव में दस्तखत करने के बाद जो लोग भूमि नहीं देते, वह एक सामान्य मानवीय कठिनाई है। हम जानते हैं कि यह करना चाहिए, कर नहीं पाते। पूछिये, "नहीं दीजियेगा जमीन ?" कहेंगे, "दे देंगे, हाँ हाँ, दे देंगे।" यह एक मानवीय कठिनाई है। नया काम, अपरिचित काम, मालूम नहीं क्या होगा। मनुष्य के आचरण का यह बहुत बड़ा सिद्धान्त है कि जानी-पहचानी हुई बुराई अपरिचित अच्छाई से अच्छी है। जानता है गाँव का आदमी कि कितनी विकट परिस्थिति में जीवन है लेकिन फिर भी उसमें पड़ा हुआ है पड़ा रहता है। उससे निकल कर अच्छी स्थिति में जा नहीं पाता। यह उसके संस्कार की बात है। संस्कार कैसे बदलेगा ? शिक्षा से।

किसके खिलाफ ?

हमारा अधीर साथी कहता है कि सत्याग्रह क्यों नहीं करते ? वह कहता है 'अल्टिमेटम' क्यों नहीं देते ? सालभर का समय दे दो, ६ महीने का समय दे दो, दो महीने का समय दे दो, जमीन नहीं दोगे तो तुम्हारे खिलाफ सत्याग्रह करेंगे। जमीन न देनेवालों की संख्या ज्यादा है, देने वालों की संख्या कम है। बहुमत के खिलाफ सत्याग्रह करें ? अगर देनेवालों की संख्या कम होती तो यह हम कह सकते थे कि ये गाँव में चार आदमी रह गये हैं, बाकी ९६ ने दे दी है जमीन, इनके खिलाफ प्रतीकारात्मक कार्रवाई होगी। अगर बहुमत के खिलाफ प्रतीकार होगा तो इतनी बहुसंख्यक जनता के खिलाफ होनेवाला प्रतीकार कहीं अहिंसा की लाइन में जाकर बैठ जायेगा। क्योंकि उसने भी हाथ बहुमत के खिलाफ उठाया है। लेकिन आजतक जितना काम हुआ, वह यह दिखाता है कि हमारी शर्तों को हस्ताक्षर करनेवालों ने ग्रहण किया, हमने जितना आग्रह रखा, उतना उन्होंने ग्रहण किया। हमारा आग्रह कम था, उन्होंने कम ग्रहण किया। अगर हमारा आग्रह ज्यादा होता तो वे ज्यादा ग्रहण करते। यह एक स्थिति है। दूसरी बात, अभी तक ५८७ ब्लाकों में बिहार के १७ ब्लाकों में काम शुरू हुआ। इन १७ में ७ सघन पुष्टि के ब्लाक हैं और १० सामान्य हैं जिनमें प्रवेश हुआ है, कुछ न कुछ लिखा जा रहा है। काम बहुत फैला नहीं है। इन सात में पिछले एक साल के अन्दर तीन में प्रखण्ड सभाएँ बन गयीं। ग्राम-सभाएँ बन गयीं, ग्रामसभाओं के प्रतिनिधियों को लेकर प्रखण्ड-सभा बन गयी। हमारी गाड़ी दूसरे टीयर हो गयी। ७ में तीन। क्या प्रतिशत आता ? ४२ प्रतिशत। जहाँ हमने काम शुरू किया पुष्टि का वहाँ हमको एक साल के अन्दर ४२ प्रतिशत सफलता मिली। 'थर्ड डिवीजन' में तो हैं ही, पास तो हो ही गये 'सेकेन्ड डिवीजन' के करीब जा रहे हैं। बाकी था '४ प्रतिशत, ०७४ प्रतिशत और पुष्टि के काम करने के बाद सफलता साल भर में ४२ प्रतिशत। अगर बिहार के दूसरे ब्लाकों में साथ साथ काम शुरू हो सका होता तो शायद हम आज ५० फीसदी से आगे होते। लेकिन नहीं शुरू हो सका। कार्यकर्ताओं की संख्या कम है। जो कार्यकर्ता हैं भी संशयात्मा हैं। कुछ होगा ? ग्रामदान से क्या हुआ ? मानो ग्रामदान करा देने से ही सब कुछ हो जानेवाला था, पुष्टि की जरूरत ही नहीं। इसलिए बार-बार यह सवाल उठता है कि हमारे कार्यकर्ताओं की संख्या कैसे बढ़ेगी ?

मैं बराबर यह महसूस करता हूँ कि इस आन्दोलन के कार्यकर्ताओं की राष्ट्रीय स्तर पर ट्रेनिंग चाहिए और ये जितने भी पुष्टि के सघन क्षेत्र देश भर में लिये जायँ, वे सब हमारी दृष्टि से राष्ट्रीय मोर्चे माने जायँ। केवल सहरसा क्यों ? हर एक मोर्चा राष्ट्रीय मोर्चा हो और हमार

हमारे ऐसे सेवकों और सिपाहियों की संख्या होनी चाहिए जो किसी फ्रंट पर किसी वक्त लड़ने के लिए तैयार हों। जिनका कोई जिला नहीं, कोई राज्य नहीं, ऐसे सेवकों की एक संख्या होनी चाहिए। लेकिन वह एक अलग विचारणीय विषय है। पर बहुत महत्त्व का है। नहीं हैं ऐसे साथी, इसलिए पुष्टि का काम जितना बढ़ना चाहिए, नहीं बढ़ पाता।

कठिनाई कहाँ ?

दूसरी बात मैं आपसे कहना चाहता हूँ वह है पुष्टि के सम्बन्ध में। बीघा-कट्ठा की जमीन का महत्त्व अपनी जगह है लेकिन ग्रामसभाओं का गठन और उनका सक्रिय होना, यह हमारे आन्दोलन का बुनियादी प्रश्न है। क्या कभी ग्राम सभाएँ गठित होंगी? गठित होकर चलेंगी? चलेंगी तो टिकेंगी? अभी तो यह अनुभव आता है कि ग्रामसभाएँ बन नहीं पाती। बनती हैं तो चल नहीं पाती, और चलती है तो टिक नहीं पाती। किसी तरह झटके दे देकर उनको उठाना पड़ता है, चलाना पड़ता है। वे एक कदम, दो कदम चलकर बैठ जाती हैं। जयप्रकाशजी ने बार-बार कहा कि यह काम बहुत कठिन है। कठिन तो बेशक है, इसीलिए तो करने लायक है। कठिन तो है ही। बहुत कठिन, और क्यों कठिन है? कारण? कठिनाई कहाँ है? और उस कठिनाई को दूर करने के उपाय क्या सुझाये गये हैं?

कितनी धाराएँ ?

हमारे आन्दोलन में कई प्रकार की धाराएँ चलती हैं, इन कठिनाइयों को सामने रखकर। एक उपाय यह सुझाया जाता है कि अगर प्रतीकात्मक सत्याग्रह किया जाय तो ये ग्रामसभाएँ सक्रिय हो जायेंगी। लेकिन मैं जब गाँव में जाता हूँ तो यह देखता हूँ कि सत्याग्रह हो या असत्याग्रह हो, कुछ भी हो, लेकिन ऐसा कोई काम न किया जाय, जिससे गाँव की एकता, जो भी आज है, टूट जाय। गांव की एकता को खंडित करनेवाला कोई भी कार्यक्रम शायद सत्याग्रह नहीं कहा जा सकेगा, वह और कुछ कहा जायेगा। 'अल्टिमेटम' देने की बात अभी आपसे मैंने कही। जयप्रकाशजी ने कहा कि परिस्थिति में से सत्याग्रह निकलेगा। कोशिश हमारी है सत्याग्रह टालने की, नहीं टाल सकेंगे तो तैयारी है करने की। क्या स्वरूप होगा यह अलग प्रश्न है। लेकिन उसका परिणाम यह होना चाहिए कि सत्याग्रह की कार्रवाई के बाद गाँव की एकता बढ़ती हुई दिखाई दे, घटती हुई न दिखाई दे। परिणाम सत्याग्रह के शुभ या अशुभ होने का लक्षण है, सत्याग्रही की नीयत उसकी कसौटी नहीं है। यह आन्दोलन कार्यकर्ता की 'कान्शस' का विषय उतना नहीं है जितना कि जनता के 'कन्सेन्सस' का है। अन्तरात्मा बनाम आमराय, यह एक वाद और विवाद का विषय हो सकता है। लेकिन गांव में खड़े होकर सोचेंगे तो हमें अपनी अन्तरात्मा से ज्यादा कोशिश यह करनी पड़ेगी कि जिस बिन्दु पर जनता की राय है उसका 'कन्सेन्सस' कैसे हो। गांव की एकता का प्रश्न है।

'भूमिहीनों की सेना सजानी चाहिए, उसको लेकर भूमिहीनों के दरवाजे पर जाना चाहिए, उनके खेतों पर धावा बोलना चाहिए।' ये तमाम कार्यक्रम हैं और इन कार्यक्रमों को चलाना वर्ग-संघर्ष के अन्तर्गत हुई, हो सकती है, लेकिन यह बहुत बड़ा प्रश्न है कि शान्तिपूर्ण उपाय से गांव में परस्पर विरोधी हितों को एक धरातल पर कैसे लाया जाय? हो सकता है कि सत्याग्रह के द्वारा हो, प्रतीकार के द्वारा हो लेकिन एक धरातल पर कैसे लाया जाय? प्रश्नों का प्रश्न, यह प्रश्न है ग्रामसभाओं की सक्रियता का। नहीं आते वे एक मंच पर। अलग अलग रहना चाहते हैं, अविश्वास है। मजदूर समझता है कि मालिक हमारा भला करेगा नहीं, मालिक समझता है कि यह मजदूर कभी हमारा शुभचिन्तक होगा नहीं।

एक दूसरी विचारधारा है मनोरंजन-जगत में 'कन्फ्रंटेशन' की। आमने-सामने मुलाकात में बैठो। आमने-सामने बैठने से कोई रास्ता निकलता है तो ठीक, नहीं निकलता है तो देखा जायेगा। इस तरह का एक प्रयास हमलोगों ने मुजफ्फरपुर जिले में एक जगह किया था। १२६ मजदूर एक तरफ और ९ मालिक एक तरफ। मजदूरी का सवाल था, बेदखली का सवाल था, सिंचाई के पानी का सवाल था। दोनों में समझौता हुआ, कागज पर लिखा गया, आमसभा में पढ़ा गया। 'कन्फ्रंटेशन' का वह एक रास्ता हो सकता है। मैं मानता हूँ कि 'कन्फ्रंटेशन' के अनेक अवसर हैं और उसका अभ्यास और अनुभव होना चाहिए।

पुष्टि के अन्तर्गत एक और 'थीयरी' चलाई गयी है, धीरेनभाई ने चलाई है, उसको वह 'रिएप्रोचमेंट थीयरी' कहते हैं। 'रिएप्रोचमेंट थीयरी' से वह क्या मतलब लगाते हैं? मालिक बढ़कर मजदूर को अपने नजदीक लायेगा। क्योंकि 'कन्वर्शन' की 'डाइनेमिक्स', हृदय-परिवर्तन की 'डाइनेमिक्स' में सबसे ज्यादा जो सम्पन्न है उसको विपन्न की तरफ बढ़ना चाहिए। गांधीजी ने कहा था, कि यह हरिजन समस्या तो सवर्णों के प्रायश्चित्त की समस्या है। एक 'एप्रोचमेंट' है। प्रायश्चित करना है सवर्णों को, क्योंकि उन्होंने बहुत अन्याय किया है अवर्णों के प्रति। धीरेन भाई कहते हैं कि 'कन्वर्शन' की 'डाइनेमिक्स' में भूमिवान भूमिहीन की ओर बढ़े और कहे कि हमने तुम्हारे साथ बहुत ज्यादती की, कुछ भूमि का हिस्सा देकर मैं प्रायश्चित कर रहा हूँ। एक चौथी 'थीयरी' जो मुझे विशेष रूप से प्रिय है और अपनी जगह मैंने उसका नाम दे रखा है 'ब्रिज थीयरी'। पुल बनाने की प्रक्रिया, पुल बनाने का विचार, सिद्धान्त। क्या मतलब? अगर भूमिवानों में ऐसे व्यक्ति नहीं निकलते हैं जो अपने वर्गहित से ऊपर उठकर ग्रामहित की बात सोचें, भूमिहीनों में ऐसे व्यक्ति नहीं निकलते हैं जो वर्गहित से ऊपर उठकर ग्रामहित की बात सोचें, तो ग्रामस्वराज्य कैसे होगा? अगर हमें श्रमिकों का राज कायम करना होता तो कोई चिन्ता की बात नहीं, हम

मजदूरों का राज्य स्थापित कर सकते थे। नारे को लगानेवाले जो दूसरे साथी लोग हैं उनके साथ शरीक हो सकते थे। लेकिन मुसीबत तो यह कि हमारा नारा ग्राम-स्वराज्य का है। हमने श्रमिक-राज्य का नारा लगाया नहीं। बहुत ही सहानुभूति है हमारे मन में श्रमिकों के प्रति, फिर भी हमने श्रमिक राज्य का नारा नहीं लगाया। मालिक राज्य का भी नारा नहीं लगाया, मजदूर राज्य का भी नारा नहीं लगाया। शिक्षित-अशिक्षित, ब्राह्मण-अब्राह्मण किसी के राज्य का नारा नहीं लगाया। नारा लगाया ग्रामस्वराज्य का।

ग्रामीण जीवन का भीतरी द्वन्द्व

गाँव के भागभी जीवन में अन्तर्द्वन्द्व है इस अन्तर्द्वन्द्व का मुकाबिला अहिंसा कैसे करेगी? बहुत अपार अन्तर्द्वन्द्व है। आज जितनी जमीन बीघे-कट्ठे में बँट रही है उससे हरगिज हम यह न सोचें कि इस भीतरी परस्पर विरोध के निराकरण का कोई रास्ता निकल आया है। जो ग्रामसभाएँ बन गयी हैं, जो सक्रिय हो रही हैं, उनसे भी यह हरगिज अपेक्षा न रखें कि हमारे लिए रास्ता खुल गया है।

इन प्रश्नों के उत्तर देने के लिए बहुत प्रयोग और अभ्यास की जरूरत है, चिन्तन की जरूरत है, विद्वान से लेकर सामान्य नागरिक और कार्यकर्ता तक को यह खोज करनी है। जब हम नये विषय और नये शोध की तरफ बढ़ेंगे तब जाकर इस प्रश्न का जवाब निकलेगा कि ग्रामहित लोगों के दिल में कैसे आयेगा। इसलिए मैं मानता हूँ कि जो हमारे क्षेत्र हैं उनमें ऐसे मालिक और मजदूर के बीच की जो खाई है, उसमें पुल का काम कर सकें। मालिक मजदूर की तरफ बढ़नेवाला हो, मजदूर मालिक की तरफ बढ़नेवाला हो। आज ये नदी के दो किनारों पर खड़े हैं, बीच में कोई पुल नहीं है। इतनी जबरदस्त समस्या है।

ग्रामदान का सिक्का : कितना खरा, कितना खोटा ?

पुष्टि के साथ एक प्रश्न आता है विकास का। नवनवशाली मुसहरी में विकास सघटन और शिक्षण, विकास के अन्दर जो ये तीन आयाम हैं पुष्टि के, इन तीनों को साथ लेकर चल रहे हैं। जैसे आज अर्थशास्त्री, समाज-शास्त्री कहते हैं बुनियाद में एक ढाँचा तैयार करना, नींव डालना और उसके ऊपर इमारत खड़ी करना, वैसे ही कई दूसरे क्षेत्र हैं जहाँ यह कोशिश हो रही है कि पहले ग्रामदान की शर्तें पूरी हो जायँ, ग्रामसभाएँ गठित हो जायँ, तब इन ग्रामसभाओं के आधार पर नयी इमारत खड़ी की जाय। कुछ लोग मानते हैं कि बुनियादी ढाँचा पहले तैयार कर लिया जाय, तब उसके बाद का काम किया जाय। दोनों जगह परिणाम अच्छे आ रहे हैं। स्थानीय परिस्थिति के कारण कहीं कुछ सम्भव होता है कहीं कुछ नहीं सम्भव होता है।

बुनियाद बनती है, तो फिर उसके ऊपर विकास का काम आसान हो जाता है। आज हमारा क्या काम है? विकास के लिए साथी तैयार करना, यानी एक नेतृत्व तैयार करना, और संस्था तैयार करना जिसको हम कहते हैं जनता का संगठन, वही विकास करेगा, वही इस आन्दोलन का नेतृत्व करेगा और वही अपनी संगठित शक्ति से राज्य-शक्ति का मुकाबिला करेगा।

आखिरी बात आप से मैं इस वक्त यह कहना चाहता हूँ पुष्टि और इस आन्दोलन के सम्बन्ध में प्रश्न अनेक हैं। ये प्रश्न बोझिल हैं, और उन प्रश्नों के जो उत्तर दिए गये हैं उनमें से भी बहुत बोझिल सिद्ध हुए हैं। लेकिन नये-नये प्रश्नों की कमी नहीं, नये उत्तरों की जरूरत है। और आज से अगले सम्मेलन तक जो शायद एक साल बाद होगा, इस साल के अन्दर अगर हम हजारों की संख्या में क्षेत्रों में बैठ सकें, तो कुछ हासिल हाथ जरूर आयेगा। और तब, जिस पंजाब में सन् १९२९ में स्वतन्त्रता की घोषणा हुई थी, उस पंजाब में चले हजारों साथी लिख आयें उस सम्मेलन में, जो जिलों से यह कह सकें कि एक साल तक हमने जी-जान लगाकर तुम्हारे ग्रामदान का सिक्का चलाने की कोशिश की, यह खोटा सिक्का है बाजार में नहीं चलता। आज हमने देखा ही नहीं कि इस सिक्के में क्या है और पहले ही हमने कहना शुरू कर दिया कि यह खोटा सिक्का है। बहुत बड़ा योगदान होगा हम सबका उस पंजाब के सम्मेलन में, अगर एक हजार हमारे साथी उठकर यह कह सकें कि यह सिक्का खरा है या खोटा है।

नासिक, ६ मई '७१

बंगलादेश के लिए क्या करें ?

बंगला देश के सम्बन्ध में सर्वोदय-आन्दोलन क्या करने जा रहा है, इस विषय में सब लोग जानने के लिए उत्सुक होंगे। आपमें से जो लोग नासिक सर्वोदय-सम्मेलन में आये थे, उनको तो कार्यक्रमों के बारे में पूरी जानकारी होगी ही। काम की स्पष्टता के लिए मैं फिर से कुछ बातें लिख रहा हूँ।

लोक-शिक्षण

बंगला देश के सम्बन्ध में शायद सबसे बड़ा काम हम लोगों के पास लोक-शिक्षण का है। यद्यपि इस सम्बन्ध में अखबारों ने काफी बड़ा काम किया, लेकिन फिर भी इस समस्या के बारे में सर्वोदय की दृष्टि से लोक-शिक्षण करने का हमारा प्रमुख काम होगा। बंगला देश को शीघ्रातिशीघ्र मान्यता दिलाने के लिए हिन्दुस्तान के पाँच लाख गाँवों से प्रस्ताव हमारे प्रधानमंत्री के पास जाना चाहिए।

उसके लिए विनोबाजी, जयप्रकाशजी इत्यादि के उद्धरणों का उपयुक्त साहित्य भी बनाया जा सकता है।

एकता

लोक-शिक्षण का ही एक महत्वपूर्ण अंग है हमारे देश में एकता बनाये रखना। पश्चिम पाकिस्तान की सरकार की इस समय बाकायदा कोशिश यह रहेगी कि भारत में किसी प्रकार से साम्प्रदायिक दंगे फैलें। हम लोगों को यह ध्यान रखना चाहिए कि ऐसा किसी हालत में न होने पाये। अतएव हमें जागरूक रहना होगा और साम्प्रदायिक दंगों से बचने की कोशिश करनी होगी। हमारे देश का जो वर्ग यह समझ रहा है कि बंगला देश के बनने से पाकिस्तान के टुकड़े हो जायेंगे और उससे इस देश के अल्पसंख्यकों की सुरक्षा को खतरा है, उस वर्ग को हमें यह समझाना पड़ेगा कि पाकिस्तान के टुकड़े मुजीब ने नहीं, बल्कि याहिया खाँ और जुल्फिकार अली भुट्टो ने करवाया है, जिन्होंने अन्त तक बातचीत करने के लिए उत्सुक अवामीलीग के नेताओं को धोखा देकर उन पर अचानक आक्रमण करके अन्तर-विग्रह का आरम्भ किया। उनको यह भी समझाना चाहिए कि इस देश के अल्प-संख्यकों का हित बंगला देश के बनने से खतरे में नहीं पड़ेगा, बल्कि कुछ अधिक सुरक्षित होने की ही संभावना है। साढ़े सात करोड़ जनसंख्या का एक मित्र राष्ट्र यदि हमारा पड़ोसी बनता है, तो उससे इस देश के अल्प-संख्यकों का कल्याण ही है। एक ओर हिन्दू बहुमत वाला धर्म-निरपेक्ष जनतंत्र और दूसरी ओर मुस्लिम बहुमत वाला धर्म-निरपेक्ष जनतंत्र यदि होगा, तो उससे दोनों देशों के अल्प-संख्यकों की सुरक्षा बढ़ेगी।

विश्व की अन्तरात्मा को जागृति

यह बड़े दुर्भाग्य का विषय है कि बंगला देश में लोगों की निर्मम हत्या हुई है, लेकिन इस विषय में अभी तक विश्व की सरकारें चुप हैं। यह प्रश्न पाकिस्तान का आंतरिक प्रश्न नहीं है, यह मानवीय अधिकारों का प्रश्न है, लोकतंत्र का प्रश्न है तथा धर्म-निरपेक्षता का प्रश्न है, और इसकी सफलता-असफलता का परिणाम पूरे दक्षिण एशिया की राजनीति पर पड़ेगा। इस बात को ध्यान में रख कर शांतिसेना-मण्डल तथा सर्व सेवा संघ ने विश्व की चेतना को जगाने की चेष्टा करने के लिए श्री जयप्रकाश नारायण से विदेश यात्रा करने की प्रार्थना की थी। श्री जयप्रकाशजी १५ मई से ४० दिन की विश्वयात्रा के लिए निकल पड़े हैं।

सितम्बर महीने में श्री जयप्रकाशजी के निमंत्रण से दिल्ली में अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन भी होगा, जिसमें खास कर एशिया-अफीका के और जगत् के दूसरे हिस्सों के कुछ लोग भी शामिल होंगे। इस काम के लिए एक 'प्रिपेरेटरी कमेटी' की स्थापना हो चुकी है।

शांति-कूच

एक कार्यक्रम यह भी सुझाया गया है कि बंगला देश के सम्बन्ध में विश्व के शांति-प्रेमियों का ध्यान आकर्षित करने की दृष्टि से एक अन्तर्राष्ट्रीय शांति-कूच भी निकाला जाय। यह शांति-कूच कहाँ से कहाँ तक होगा, उसका स्वरूप पदयात्रा का होगा या समुद्र यात्रा का, उसमें कितने लोग शामिल होंगे, उसके उद्देश्य तथा कार्यक्रम क्या होंगे, इत्यादि का विचार करना अभी बाकी है। इस सम्बन्ध में जगत् की पाँच प्रमुख शांतिवादी संस्थाओं के पास तार भेजे जा चुके हैं। ये संस्थाएँ अगर चाहेंगी तो इस प्रकार का कोई अन्तर्राष्ट्रीय कार्यक्रम उठायेंगी। इसमें यदि आवश्यक माना जायेगा तो भारत के प्रतिनिधि भी शामिल होंगे। इस महीने के अन्त तक इस कार्यक्रम की रूपरेखा बन जाने की उम्मीद है।

बंगला देश के युवकों से सम्पर्क

बंगला देश के लिए जद्दोजेहाद करने-वाले हजारों युवक आज ऐसे हैं, जिनके पास काम करने की कुछ तमन्ना तो है, लेकिन दिशा की उतनी स्पष्टता नहीं है। ऐसे युवकों में से प्रायः एक हजार युवकों को तालीम देने का काम सर्वोदय-आन्दोलन उठायेगा। वैसे यह तालीम राजनैतिक विचारों की स्पष्टता, अहिंसक प्रतिरोध के विविध पहलुओं का अध्ययन और आरोग्य के सम्बन्ध में जानकारी देने के लिए होगा। हजारों लोगों को तालीम देने के लिए १४-१५ दिन के १० शिविर चलाने होंगे, ऐसा अन्दाज किया जाता है।

शरणार्थियों की सेवा

अभी भारत में प्रायः १५ लाख शरणार्थी बंगला देश से आ चुके हैं। उनमें से हजारों लोग ऐसे हैं, जो अपने माँ, बहन या बूढ़े, बच्चों को छोड़कर स्वयं वापस बंगला देश में अपना संघर्ष जारी रखने के लिए गये। इन सारे शरणार्थियों की सेवा का भार उठाना तो भारत सरकार के लिए मुश्किल काम है। सद्भाग्य से कई गैर-सरकारी संस्थाओं •

राजस्थान में नये अनुभव, नये साथी

बीकानेर जिले के नौखामंडी पड़ाव पर एक अपरिचित शक्ल के २२ वर्षीय नवयुवक आये और बहुत कुतूहल से बोले "क्या आप ही वे बहिनें हैं जो १२ वर्ष की भारत पदयात्रा पर निकली हैं? मैंने आप के बारे में अखबार में पढ़ा था। मुझे भी प्रेरणा मिली।" यह भाई हैं इन्दौर के श्रीकान्त। माह दिसम्बर में ये अकेले ही १० वर्ष की भारत पदयात्रा पर निकल पड़े थे। देश में साम्प्रदायिकता के विष को खत्म करने की तड़प लेकर बहुत तकलीफों के बावजूद इनका उत्साह कम नहीं हुआ है। उनको यात्री बहनों ने कुछ सुझाव दिये और पुनः मिलने का निमन्त्रण दिया। ३-४ दिन के बाद ही श्रीकान्त भाई अचानक पुनः आ पहुँचे। उन्होंने बताया, "मैं जहाँ-जहाँ गया, लोगों ने मुझे यही सुझाव दिया कि यदि तुम अपने मिशन में सफल होना चाहते हो तो लोकयात्री बहनों के पास जाओ।" तीन दिन हमने श्रीकान्त भाई

—ने इस काम में अपना-अपना योगदान दिया है। बहुत शीघ्र ही अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाएँ भी इसमें मदद करेंगी, ऐसी उम्मीद है। रिलीफ के काम में अवश्य हम लोग सबसे पीछे हैं। लेकिन हम लोग अपनी मर्यादा समझ कर इसको मर्यादित रूप में ही उठायेंगे। १६ मई से कलकत्ता तथा बनगाँव में होनेवाले अखिल भारतीय तरुण-शान्तिसेना-शिविर में श्रमदान के काम के निमित्त और शरणार्थियों की सेवा के लिए विशाल आकार का सेप्टिक टैंक बना देने की योजना की गई है। इस तरह से सफाई का ऐसा काम हाथ में लिया जायेगा जिसे करने के लिए अक्सर दूसरे लोग तैयार नहीं होते।

बंगला देश के सम्बन्ध में इस सारे काम को करने के लिए खर्च तो होगा ही। अन्दाज किया जाता है कि अभी थोड़े

को अपनी पदयात्रा में रखा। तत्पश्चात् बीकानेर जिले की ग्रामदान-पुष्टि के निमित्त होने वाले ग्रामस्वराज्य-शिविर में हमने उन्हें भेज दिया। वहाँ से श्रीकान्त भाई ने लिखा है, "मैंने दो माह बीकानेर के पुष्टि कार्य में लगाने का तय किया है।" मित्रों के समाचारों से मालूम पड़ा है कि वे बहुत उत्साह से कार्य कर रहे हैं।

ग्राम—झाड़वा। आमसभा समाप्त हुई। सभा में से एक ४० वर्षीय सज्जन उठे और मंच के पास आकर उन्होंने लोकयात्री बहनों के प्रति आभार प्रकट करते हुए सर्वोदय का पुरजोर समर्थन किया। उनके चन्द शब्दों ने सबका ध्यान आकर्षित कर लिया। उनसे परिचय हुआ। वे हैं सुजानगढ़ के श्री भँवरलाल मून्दड़ा, एक निष्ठावान् समाज-सेवक। आजकल वे महेश्वरी-समाज में फैली हुई दहेज-प्रथा के विरोध में प्रचार करते हैं और साधारण परिवारों

महीनों में ही प्रायः पाँच लाख रुपये का खर्च होगा। इतनी सहायता की रकम भी हम लोगों को ही एकत्र करना होगा।

जो मित्र बंगलादेश के काम के लिए मदद करना चाहते हैं उनके करने योग्य कुछ बातें लिख रहा हूँ। प्रत्यक्ष रूप से सीमा क्षेत्र पर आकर करने का बहुत बड़ा काम नहीं है। उसके लिए बंगला भाषा की जानकारी भी आवश्यक है। लेकिन परोक्ष रूप से आप अवश्य इस काम में सहायता कर सकते हैं। जैसे—(१) ग्राम-सभाओं से बंगला देश के सम्बन्ध में प्रस्ताव पास करवा कर, (२) अपने क्षेत्र में इस विषय में लोक-शिक्षण करके, (३) अपने क्षेत्रों में शान्ति बनाये रख कर, (४) इन कामों के लिए पैसे एकत्रित करके।

आशा है, आप अवश्य इस काम के लिए यथासम्भव सहायता करेंगे।

नारायण देसाई,
मंत्री

की शादी के लिए आर्थिक मदद दिलाते हैं। करीब ८ दिन वे लोकयात्रा में रहे और हमारी व्यवस्था की स्वेच्छा से जिम्मेदारी उठाली। उनके उत्साह, संयोजक शक्ति और समय की पाबन्दी ने हमें प्रभावित किया। वे कह रहे थे, "बीकानेर जिलादान हुआ है। मैं चूरू जिलादान कराऊँगा।"

हमारे तीसरे नये साथी हैं श्री हरिसिंहजी, जिन्होंने एक समय स्वराज्य-प्राप्ति की तड़प लेकर नेताजी सुभाषचन्द्र बोस की सेना में कप्तान का काम किया। आज वही देश में उठ रही हिंसा की अग्नि को बुझाने हेतु शान्ति-सैनिक बनकर देश के नौजवानों का आह्वान कर रहे हैं। श्री हरिसिंहजी मारवाड़ी में स्वरचित कविताओं को सुनाकर युवकों को मन्त्रमुग्ध करते हैं। आठ-दस रोज तक वे लोकयात्रा में रहे।

दिनांक १-१-७१ को लोकयात्रा ने पंजाब से राजस्थान में प्रवेश किया था। उस संयोग और वियोग की घड़ी में पंजाब, हरियाणा और राजस्थान के वरिष्ठ कार्यकर्ता उपस्थित थे। राजस्थान के समग्र सेवा संघ तथा खादी के कार्यकर्ताओं ने लोकयात्रा की पूर्ण जिम्मेवारी उठा ली। बीकानेर, चूरू और सीकर जिलों में दो-तीन संस्थाओं की मदद से एक ऊँट गाड़ी लोकयात्रा में रही, जो सामान को एक गाँव से दूसरे गाँव में पहुँचाने में मदद करती थी।

८४ दिन की अवधि में हमने गंगानगर, बीकानेर, चूरू और सीकर जिलों की करीब ५०० मील की यात्रा पूरी की है। इस अवधि में कुल १५६ सभाएँ हुईं, जिनमें करीब ४०,००० लोगों ने विचार सुना। बीकानेर को छोड़ अन्य जिलों में यात्रा पूर्णरूपेण जनाधारित रही। खर्च से ज्यादा रकम उसी जिले के सर्वोदय मंडल को देकर हम आगे बढ़े। साहित्य बिक्री भी हुई तथा ग्रामदान, मैत्री के ग्राहक बने।

—लोकयात्री

पता : राजस्थान समग्र सेवासंघ, किशोर-निवास, त्रिपोलिया बाजार, जयपुर—२

शिक्षा में क्रान्ति अनिवार्य क्यों ?

देश में हर कोई कहता रहा है कि शिक्षा प्रणाली में परिवर्तन होना चाहिए। पर यह विचित्र विरोधाभास है कि सबसे कम यदि किसी क्षेत्र में परिवर्तन हुआ है तो वह है शिक्षा का क्षेत्र। वह प्रणाली ज्यों-की-त्यों बनी है, जिससे अंग्रेजों के जमाने में बाबुओं का उत्पादन होता था। जो सारी समस्याएँ ताक पर रखकर गोरे साहब की नौकरी बजाता था। अब उस प्रणाली से काले साहबों की नौकरी बजाने वालों की फौज बन रही है। एक स्वतंत्र राष्ट्र को क्या सिर्फ नौकरों की जरूरत है? राष्ट्र की आशाओं और आकांक्षाओं को वाणी देने का काम क्या उस समुदाय से सधेगा, जिसके सामने स्वयं आशा का कोई बिन्दु नहीं?

इतिहास के पन्नों में ढूँढ़िए कि आज जो शिक्षा प्रणाली चल रही है, उसे किसलिए चलाया गया था। गुलाम भारत का स्वप्न था—स्वतंत्रता, अंग्रेजों का एक लक्ष्य था शासन। इतने बड़े देश पर शासन करने समूचा इंग्लैण्ड तो आ नहीं जाता, इसलिए शासन-भक्त भारतीयों का समूह चाहिए था, जो नौकरी, पैसे के लालच में देश को भूल जाये। इस दृष्टि से अंग्रेजों ने शिक्षा नीति तय की और भारत में अंग्रेजों की लीला शुरू हुई। किताबी पढ़ाई ने चिन्तनहीन बनाया। शारीरिक और मानसिक दुर्बलता बढ़ी। एक नकलची वर्ग पैदा हुआ, जो अंग्रेजों की तरह रहकर अपने को जन्मना अंग्रेज समझने लगा। सरकारी कार्यालयों में शासन के छोटे पदों पर, दारोगा की कुर्सी पर, स्वतंत्रता प्रेमियों का मनोबल तोड़ने के लिए इन भारतीयों का उपयोग हुआ। इस वर्ग को नौकरी मिली।

आजादी के बाद भी शिक्षा की मशीन वही रही। यंत्र पुराना और नये किस्म के उत्पादन की मान्यता कितनी अवैज्ञानिक है? स्वतंत्र भारत में शिक्षा का प्रसार हुआ। विद्यालयों में उन परिवारों के लड़के पहुँचे जिनमें कई पुश्त से अक्षर-ज्ञान भी नहीं था। इस तरह शिक्षार्थी वर्ग में बड़ी क्रान्ति हुई। शिक्षा पानेवाला बदला, किन्तु शिक्षा वही रही, प्रणाली वही रही। कैसे सामंजस्य होगा? यह शिक्षा प्रणाली प्रारम्भ हुई थी जीविका देने के लिए और जीविका लेने के लिए। आज का तरुण कहता है कि उसे जीवन से अनुप्राणित शिक्षा चाहिए। हमारी माँग जीवन और जीविका दोनों की है। समानता का जीवन और सम्मान की जीविका। यह माँग वर्तमान शिक्षा प्रणाली में पूरी होनेवाली नहीं है। बेकारों की फौज लम्बी होती जा रही है। कुर्सियों की कमी है, किन्तु सभी बैठना चाहते हैं। कारण? शिक्षा-यंत्र से पिसकर सबों के अंग दुर्बल हो गये हैं। जीवन पहले ही निकल चुका था, जीविका अब निकल गयी। शेष बचा है पुस्तकों का ढेर, प्रमाण-पत्रों की थाल, बेकारों की सेना, और हताश निर्बल देश का भविष्य।

संसार में शायद हमारा ही एक अनूठा देश है जिसकी परीक्षाओं में ६० से ५० प्रतिशत विद्यार्थी फेल होते हैं, किन्तु किसी को चिन्ता नहीं होती। इतना खर्च किसके पीछे होता है? क्यों नहीं कहा जाय कि वर्तमान शिक्षा प्रणाली ने अवसर-वादिता और गैर-बराबरी का पोषण किया है? यदि असफल होनेवाले ५०-६० प्रतिशत विद्यार्थी कमजोर हैं, तो इस शिक्षा प्रणाली को चालू रखने का क्या औचित्य है? जिस शिक्षा का लाभ बहुसंख्यक वर्ग नहीं उठा पाता, उस शिक्षा को जिलाये, चलाये रखने का भार उस पर क्यों? ये सब प्रमाण हैं कि हमारी शिक्षा-पद्धति इतनी अधूरी, प्रयोजनहीन, अस्पष्ट और आधारहीन है कि उसमें कोई राष्ट्रीय, सामाजिक दृष्टिकोण विकसित होगी, ऐसी आशा नहीं की जा सकती है। न इसमें ज्ञान है, न पुरुषार्थ, न जीवन है न जागरूकता। इसने विद्यार्थी को निकम्मा और कुन्द बनाया है। आज का विद्यार्थी अपनी महत्वाकांक्षाओं और विकास की सम्भावनाओं के अनुरूप कोई पौरुषवान कार्य नहीं कर सकता। क्योंकि इसकी कोई कल्पना या आदर्श उसके सामने नहीं है। जब तक वह पढ़ता रहा, उत्तर-पुस्तिकाओं में कैद रहा, और अब उसके बाद जीवन के ऐसे कारागार में बन्द है जिसके ताले की चाभी बाहर ही छूट गयी है।

कैसी विडम्बना है कि जो शिक्षा कभी विद्यार्थी की समस्याएँ हल करती थी, आज वही उसके लिए सबसे बड़ी समस्या है।

हम शिक्षा-प्रणाली में आमूल परिवर्तन की माँग करते हैं तो सिर्फ इसलिए नहीं कि हमें रोजगार चाहिए, यद्यपि हमें रोजगार भी चाहिए। हम सारे भारत के विद्यार्थियों के लिए शिक्षा का समान अवसर और स्तर चाहते हैं। आर्थिक असमानता के वातावरण में किसी खास वर्ग के लिए विदेशी ढंग की शिक्षा, खर्चीले कान्वेंट खोले जायँ और समाज के एक वर्ग को जबरदस्ती हीन बनाया जाय, इसका हम सख्त विरोध करते हैं। आज की शिक्षा-नीति समाज की गैर-बराबरी का कायम रखने की नीति है, जिससे हमारा मतभेद है। ज्ञान की प्रतिद्वन्द्विता सीमित की जा रही है। हम मानते हैं कि सामाजिक और आर्थिक किसी भी स्तर पर क्रान्ति करने के लिए दिमागी क्रान्ति की जरूरत है, और शिक्षा इस दिमागी क्रान्ति का आधार है। हम इस आधार में परिवर्तन चाहते हैं।

आप विद्यार्थी हैं, अभिभावक हैं या शिक्षक हैं तो सहयोग, समर्थन और मार्गदर्शन के लिए हम आपकी ओर देखते हैं। अब समय आ गया है कि अपने भविष्य के लिए हम स्वयं जागरूक हों और तमाम जिम्मेवारियों को वहन करने के लिए तैयार रहें। हम न तो उच्छृंखल हैं, और न उच्छृंखलता पसन्द करते हैं।

पुष्टि, संघटन और बंगला देश

प्रिय बंधु,

नासिक में ता० ५, ६, ७ और ८ मई को दोपहर तक सर्व सेवा संघ का अधिवेशन हुआ। बाद में १० मई तक सम्मेलन चला। अधिवेशन में ग्रामदान सम्बन्धी नयी नीति तैयार की गयी। (देखें-भूदान-यज्ञ २४ मई '७१ का अंक।)

अब हमारे अगले काम की दिशा द्विविध रहेगी—प्राप्ति और पुष्टि। अकेले जे० पी० के मुसहरी में बैठने से अब काम नहीं चलेगा। अतः जगह-जगह पुष्टि का काम जोरों से चलना ही चाहिए। लेकिन जहाँ प्रखण्डदान या छोटे से क्षेत्र में कई ग्रामदान हुए हैं, और प्राप्ति और पुष्टि दोनों काम करने की शक्ति नहीं है, वहाँ पुष्टि को प्राथमिकता दी जाय। १९७१-७२ के वर्ष 'कन्सालिडेशन' वर्ष बनें, तो ग्रामस्वराज्य के लिए लाभकारी होगा।

हमें इस वर्ष संघटन खड़ा करना है। इसलिए सावधानी के साथ ज्यादा से ज्यादा लोकसेवकों की बैठक बुलाकर जिला सर्वोदय मण्डल का गठन किया जाय। लोकसेवक एवं सर्वोदय-मित्र बनाने हैं। जिले के सब सर्वोदय प्रेमी नागरिकों का जिला-सम्मेलन बुलाकर उसमें पुष्टि प्राप्ति का कार्यक्रम बताकर उन्हें सक्रिय किया जाय। देश भर में १०० ठोस और सक्रिय जिला सर्वोदय मंडल इस वर्ष बनाने हैं। सम्भव हो तो जिले में प्रखण्ड सर्वोदय मंडल का गठन भी किया जाय। जिले में लोकसेवकों का ठीक से रजिस्टर रहे और लोकसेवकों के नाम पते एवं लोकसेवक बनने की तारीख, लोकसेवकों के फार्म एवं शुल्क संघ कार्यालय को भेजा जाय।

अक्तूबर में संघ-अधिवेशन होगा। अतः ३० सितम्बर तक अधिक-से-अधिक लोकसेवक बनाकर उनके नाम यहाँ भेजे जायें। आज जो लोकसेवक हैं उनके नाम एवं पते फौरन भेजिएगा, जिससे लोकसेवकों का रजिस्टर यहाँ संशोधित करने में सुविधा हो।

एक अन्तर्राष्ट्रीय तात्कालिक काम की जिम्मेदारी भी हम पर आ पड़ी है। सर्व सेवा संघ ने जो ६सूत्री कार्यक्रम सोचा है, वह आप जानते ही हैं। बंगला देश को प्रत्यक्ष मदद हो, इस दृष्टि से स्थानीय लोगों को चंदा इकट्ठा करने के लिए सक्रिय करना है यह कार्य तुरंत करना है। देशभर से ५ लाख रुपये इन कार्यों के लिए चाहिए। आप अपनी रसीदबुक पर ही इकट्ठा करें। रकम सर्व सेवा संघ को भेज दें। सर्व सेवा संघ की अपील (देखें भूदान-यज्ञ २४ मई का अंक) अपनी प्रान्तीय भाषा में अनुवाद करके प्रकाशित एवं वितरित करें।

अपने जिले की प्रातिनिधिक और सार्वजनिक समाज-सेवा संस्थाओं से बंगला देश को मान्यता देने के बारे में प्रस्ताव पास करके भारत सरकार को भेजवाने का काम करें।

ग्रामदान-पुष्टि का काम करते-करते हमारे कार्यक्षेत्र में जहाँ भी अन्याय—खासकर भूमि से सम्बन्धित प्रश्नों के बारे में—होता हो जाकर, हमें अन्य सब उपाय आजमा चुकने पर, शान्तिमय तरीके से प्रतीकार करना है।

आप पुष्टि के लिए कौन से क्षेत्र ले रहे हैं, एवं कौन व्यक्ति कब से वहाँ बैठ रहे हैं संघटन के लिए कौन से जिले ले रहे हैं, यह लौटती डाक से सूचित करने की कृपा करें।

सस्नेह,

[हस्ताक्षर]

सर्व सेवा संघ, मंत्री
प्रधान कार्यालय, गोपुरी, वर्धा

→हम न तो अनुशासनहीन हैं और न मर्यादा तोड़ने में हमारा विश्वास है, पर हम न्यायपूर्ण समाज के आकांक्षी हैं और स्वयं को उसका एक जीवित अंग मानते हैं।

आज की शिक्षा का जो पोला ढाँचा खड़ा है, उसे गिरा देने की तैयारी है। उसमें कोई आकर्षण या भविष्य के प्रति सुरक्षा की निश्चितता कुछ भी नहीं है। रूप और गुण हीन इस अवस्था में रहने से हम इन्कार करते हैं।

—राष्ट्रीय तैयारी समिति,
तरुणशांति-सेना

सर्व सेवा संघ की सेवाग्राम की जमीन का वितरण

— ६१ एकड़ जमीन १६ भूमिहीनों को दी गई—

सर्व सेवा संघ की सेवाग्राम की ६१ एकड जमीन का वितरण ता० २६ मई को सेवाग्राम में किया गया। वरोडा गाँव के १४ कुटुंबों ने और सेवाग्राम के ७ कुटुंबों ने सभा में भूमि की माँग की थी। वरोडा के १२ एवं सेवाग्राम के ४ कुटुंबो को जमीन देने का तय हुआ। क्योंकि वितरणयोग्य जमीन इतनी ही थी। सेवाग्राम के ७ कुटुंबों में से ४ कुटुंबो के नाम भूमिहीनों ने एकमत से चुने। वरोडा के २ कुटुंबों ने अपने नाम वापस लिए एवं १२ नाम एकमत से चुने। यह देखकर वरोडा के एक ग्रामीण कार्यकर्ता श्री निरजनसिंह को स्फूर्ति हुई और उन्होंने तत्क्षण अपनी उस गाँव की ढाई एकड़ जमीन नाम वापिस लेनेवाले इन दो भूमिहीनों को देने का निर्णय किया। श्री निरजनसिंह सात वर्ष तक वर्धा जिला सर्वोदय मडल के सयोजक रहे है।

२७ मई, नेहरू पुण्यतिथि के दिन इन १८ कुटुंबों के हाथो में परधाम में भूमि के पट्टे विनोबा के करकमलों द्वारा दिए गए। उस समय बाबा ने कहा कि ग्रामदान शुरू हो जाने पर भूदान बद हो गया, ऐसा लग रहा था। आज का समारोह यह बता रहा है, यह अक्ल दे रहा है कि जहाँ ग्रामदान होने में देरी हो वहाँ भूदान प्राप्ति एव वितरण जारी रहना चाहिए। नदी बहती हुई चली गयी तो भी पीछे का प्रवाह बद नहीं होना है। अब आप अदाता गाँव में मिलकर काम करें। उससे आपकी शक्ति बढ़ेगी। भूदान एव ग्रामदान परस्पर पूरक है।

—ठाकुरदास बग
मंत्री,
सर्व सेवा सघ

विश्व-शांतियात्रा से

ता० २१ को काबुल पहुँचा। मेरे जैसा शान्ति-यात्री, जिसका न कोई परिचय अथवा सम्पर्क है, अफगानिस्तान में कहाँ ठहरे, क्या व्यवस्था हो? अनिश्चितता थी। १५-२० मिनट इधर-उधर जाने के बाद एक जगह बैठ गया। अचानक ही काबुल में रह रहे एक भारतीय व्यापारी, जो किसी की प्रतीक्षा मे काबुल हवाई अड्डे पर आये हुए थे, पूछने लगे, "क्या मैं आप की मदद कर सकता हूँ। क्या आप मेरे पास ठहरना पसद करेंगे?" न कोई जानकारी और न उनसे परिचय, आधा घटा तक उनकी कार मे सफर करने के बाद उनके घर पहुँचा। काबुल में १० दिन ठहरना हुआ और उन्हीं के पास ठहरा।

विभिन्न लोगों—सरकारी अधिकारियों, काबुल विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों और प्राध्यापकों के साथ अच्छा कार्यक्रम रहा। —रामसहाय पुरोहित

अखिल भारतीय तरुण-शान्तिसेना-शिविर

अखिल भारतीय तरुण-शान्तिसेना-शिविर का बारहवाँ सत्र कलकत्ता में बड़े उत्साह के साथ आरम्भ हुआ, जिसमें सभी राज्यों से आये हुए सौ तरुण-तरुणियों ने भाग लिया। शिविर मध्य कलकत्ता बालिका विद्यालय में बड़ी सादगी से हुआ। शिविरार्थी बगला देश में हो रहे स्वतन्त्रता सग्राम के लिए बहुत चिन्तित थे, और उस विषय पर बोलनेवाले लोगों को बड़े गौर से सुना जाता था।

श्री एस० पी० मिश्रा, न्यायाधीश, कलकत्ता उच्च न्यायालय ने उद्घाटन सभा का सभापतित्व किया। सभा में प्रमुख सर्वोदय कार्यकर्ता और दूसरे नागरिक उपस्थित थे। श्रीमती मैत्रेयी देवी ने उद्घाटन भाषण किया। टैगोर के अमर गीत 'आमार सोनार बंगला आमी तोमाय भालो बासी' से कार्यवाही शुरू हुई थी।

श्री किशोर देशपाण्डे और मोहम्मद सफीउल्लाह ने तरुण-शान्तिसेना-शिविर के उद्देश्य बताये। अखिल भारतीय शान्तिसेना मण्डल के मन्त्री श्री नारायण देसाई ने अपने भाषण में इस बात पर जोर दिया कि शान्तिसेना परिस्थिति की चुनौती का मुकाबला करना चाहती है न कि किसी दल या दृष्टिकोण का। श्री देसाई ने यह घोषणा की कि २० मई के बाद यह शिविर बनगाँव में होगा ताकि शिविर में भाग लेने वाले बगला देश की समस्या को समझ सकें।

(सदेश, कलकत्ता)

इस अंक में

अन्य स्तम्भ

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पै०), विदेश में २२ रु०; या २५ शिलिंग या ३ डालर।
एक अंक का मूल्य २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं मनोहर प्रेस, वाराणसी में मुद्रित

सम्पादक
राममूर्ति
वर्ष : १७ सोमवार
अंक : ३६ ७ जून, '७१
पत्रिका विभाग
सर्व सेवा संघ, राजघाट, वाराणसी-१
फोन : ६४३९१ तार : सर्वसेवा

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

युद्ध-विरोध : सफलता की दिशा ?

जब तक युद्धों की जड़ों का विश्लेषण नहीं होता है और उसके कारण समझ में नहीं आते हैं, तब तक युद्ध रोकने के लिए किये गये सब कार्य निष्फल साबित होंगे। दुनिया की तथाकथित दुर्बल जातियों का शोषण करनेवाली अमानुष आदि ही क्या अर्वाचीन युद्ध का मुख्य कारण नहीं है ?

युद्ध के पीछे मुक्ति देनेवाला पहलू नहीं होगा, वीरता और पराक्रम नहीं होगा, तो युद्ध एक घृणास्पद बात होगी और उसका खात्मा करने के लिए भाषण देने की जरूरत नहीं रहेगी। लेकिन मैं जो सुझाना चाहता हूँ, वह युद्ध की सभी शाखाओं से, जिसमें रेडक्रॉस संघटन भी शामिल है, अनंतगुना उदात्त चीज है। मैं जो कह रहा हूँ, उस पर विश्वास करिए, दुनिया में करोड़ों दूसरे कैदी हैं, जो अपनी कामनाओं के तथा जीवन के बंधनों के गुलाम हैं। विश्वास करिए दुनिया में करोड़ों ऐसे लोग हैं, जो अपनी युद्ध की मूर्खता के कारण ही जख्मी हुए हैं, और करोड़ों ऐसे घर हैं, जो उद्ध्वस्त हो गये हैं। इसलिए कल की शान्ति-संस्थाएँ, जब अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में अपना काम आरम्भ करेंगी, तब उनके सामने बहुत अधिक काम उपस्थित होगा।

आज क्या हो रहा है ? अहिंसा के तत्त्व को दूर कर उसके सिंहासन पर हिंसादेवी की स्थापना ! मानो वह जीवन का शाश्वत कानून ही है। शस्त्रास्त्र तैयार करने में एक पागल होड़ आज दुनिया में सर्वत्र दिखायी दे रही है।

—मो० क० गांधी

('माइंड ऑफ महात्मा' से)

खुदा का वास्ता देकर कहता हूँ कि ...

—खान अब्दुल गफ्फार खाँ

सीमांत गांधी खान अब्दुल गफ्फार खाँ का बंगला देश पर वक्तव्य

खुदा का वास्ता देकर कहता हूँ कि....

मैंने बंगाल की घटनाओं पर कोई बयान इसलिए नहीं दिया था, क्योंकि इस समस्या पर पाकिस्तान की सरकार से बातचीत करने की कोशिश कर रहा था ताकि यह समस्या प्रेम और शांति से सुलझ जाय।

यद्यपि मैंने बहुत दिनों तक प्रतीक्षा की, परन्तु पाकिस्तान की सरकार ने मेरी अपील का कोई उत्तर नहीं दिया। इस बीच भुट्टो और कैयूम लोगों को गुमराह करने और सच्चाई को छिपाने के लिए झूठे प्रचार करते रहे। यह अफसोस की बात है कि मार्शल लॉ होते हुए उनके वक्तव्य और झूठे प्रचार पर कोई रोक नहीं है। ये वक्तव्य पत्रिकाओं में छापे जाते हैं, और रेडियो से उनकी घोषणाएं की जाती है ताकि विरोधी नेताओं को बदनाम किया जाय। विरोधी नेताओं को देश और जनता के हित में सच्चाई को पेश नहीं करने दिया जाता है। इसलिए अब यह मेरा कर्तव्य हो गया है कि सच्चाई को जिस रूप में मैं देख रहा हूँ उस रूप में पेश करूँ।

मैंने पाकिस्तान के राष्ट्रपति का भाषण सुना जिसमें उन्होंने मार्शल लॉ की घोषणा की थी, और जिसके बाद बंगालियों पर मुसीबत आयी। इसका मुझे शोक और दुःख हुआ। यह क्या था? कैसे हुआ? और क्यों हुआ? बंगाली सच्चे मुसलमान हैं। वे पाकिस्तान के लिए दूसरों से ज्यादा वफादार हैं। पाकिस्तान उनकी कोशिशों से बना था। क्योंकि बँटवारे के समय केवल बंगाल में ही मुस्लिम लीगी सरकार थी। बलूचिस्तान, सीमान्त प्रान्त, सिन्ध या पंजाब में कोई मुस्लिम लीगी सरकार नहीं थी। मैं इसी शोक और दुःख में था कि तभी मुझसे मिलने जलालाबाद से पाकिस्तान के दूत आये। मैं प्रसन्न हुआ कि वे मुझसे मिलने आये। अपनी बातचीत के बीच उन्होंने मुझसे कहा कि बंगाली पाकिस्तान को तबाह कर रहे हैं। मैंने उनसे पूछा, "आप पाकिस्तान को किस तरह का बनाना चाहते हैं? और, क्या यह तोपों, मशीनगनों और बमों के द्वारा बनेगा?"

हिंसा घृणा है, और वह दूसरों के दिल में भी घृणा पैदा करती है। अगर लोगों के दिल में घृणा और बुराई हो तो साथ रहना असम्भव हो जाता है। एकता की कोई आशा नहीं रह जाती। पाकिस्तान की सरकार ने जो रास्ता अपनाया है, वह रचनात्मक नहीं है। उस दूत ने मुझसे पूछा कि रचनात्मक रास्ता कौन-सा था? मैंने बताया कि रचनात्मक रास्ता प्रेम और सद्भावना का था। एक ही घर में भाइयों की तरह साथ रहने का था, जो एक दूसरे से सलाह मशविरा लेते हों।

मैंने उनसे कहा कि बंगाली बहुसंख्या में हैं, और बहुसंख्या कभी भी देश तोड़ना नहीं चाहती, इसलिए यह मुजीब साहब नहीं थे, जो पाकिस्तान को नष्ट कर रहे थे। अगर पाकिस्तान नष्ट होता है तो यह भुट्टो और कैयूम की गलत नीति के कारण।

मैंने उनसे यह भी कहा कि अगर पाकिस्तान की सरकार सम्पूर्ण पाकिस्तान को अपने इसी रूप में रखना चाहती है तो मैं एक शान्तिपूर्वक हल के लिए मुजीब साहब और पाकिस्तानी सरकार के बीच मध्यस्थता करने के लिए तैयार हूँ। अगर पाकिस्तानी सरकार शान्तिपूर्ण हल चाहती है, तो बंगाल जाने के लिए भी तैयार हूँ। मैं अपने साथ कुछ लोगों को पंजाब से, कुछ को सिन्ध से, कुछ को बलूचिस्तान से लूँगा, जो प्रतिनिधि-मण्डल के रूप में अपने बंगाली भाइयों से मिलने जायेंगे। मैं विश्वास करता हूँ कि बंगाली इस प्रतिनिधि मण्डल को स्वीकार करेंगे। दूत ने मुझे बताया कि वह मेरा यह प्रस्ताव राजदूत तक पहुँचा देंगे। और अगर सम्भव हो तो मुझसे मिलने के लिए भी उनको कहेंगे।

दूत चले गये। राजदूत मुझसे मिलने नहीं आये, लेकिन कुछ दिनों के बाद उन्होंने अपना एक प्रतिनिधि भेजा जिनके साथ वह दूत भी थे। हम लोग बैठ गये और बातें करने लगे। बातचीत के बीच उन्होंने यह कहा कि पाकिस्तानी सरकार यह चाहती है कि मैं एक वक्तव्य दूँ। मैंने कहा कि वक्तव्य की कोई जरूरत नहीं है। मेरे वक्तव्य से क्या लाभ है? अगर सरकार एक शान्तिपूर्ण हल चाहती है, तो मैं बंगाल जाने को तैयार हूँ। उन लोगों ने मुझसे पूछा कि क्या मुजीब मेरे विचारों को स्वीकार करेंगे? मैंने कहा कि मेरी यह कोशिश होगी। उन लोगों ने मुझसे पूछा कि मैं पाकिस्तान क्यों नहीं जाता? मैंने कहा कि मैं पाकिस्तान जाने को तैयार हूँ, अगर मैं यह समझूँ कि सरकार शांति के लिए तैयार है, और मुझे सेवा का अवसर देगी। इसके बाद वे लोग चले गये।

कुछ दिनों के बाद दूत फिर आये और मुझे यह बताया कि वे इस्लामाबाद गये थे। मैंने उनसे इस्लामाबाद की परिस्थिति पूछी। उन्होंने मुझसे यह पूछा कि क्या यह अच्छा न होगा कि मैं पाकिस्तान जाऊँ और राष्ट्रपति से मिलूँ? मैंने उनसे कहा कि पाकिस्तान में मार्शल लॉ है। और युद्ध करके नेताओं ने खेल बिल्कुल बिगाड़ दिया है। यह लड़ाई पाकिस्तान की भलाई के लिए नहीं बल्कि सत्ता के लिए लड़ी जा रही है। पंजाब के पूँजीपतियों और सैनिक नेताओं ने सत्ता पर कब्जा कर रखा है। गरीब बंगाल का कोई दोष नहीं है, उसका दोष इतना ही है कि उसने चुनाव जीता है। यह खेल, जो आज बंगाल में खेला जा रहा है, हम लोगों के साथ खेला जा चुका है। हम पख्तूनों का सीमान्त प्रान्त में बहुमत था। पंजाब में तैंतीस स्थानों पर हमारा कब्जा था। मुस्लिम लीग को कुल १७ स्थान प्राप्त थे। जिन्ना साहब ने मनमानी

'दुनियां के शासको एक हो जाओ'

शान्ति के दूत बनकर दुनिया की राजधानियों में मनुष्यता की आवाज पहुंचाने का मिशन लेकर श्री जयप्रकाशजी विश्व-यात्रा पर निकले है। कहीं कोई शासक सुन लेता है, कोई सुनकर अनसुनी कर देता है, तो कोई ऐसा भी निकल आता है जो सुनने की कौन कहे मिलना भी नहीं चाहता। लेकिन जयप्रकाशजी चलते जा रहे है। चलना अपना काम है, उसे करते जा रहे हैं। और इधर क्या हो रहा है? शरणार्थियों का तांता टूटता नहीं, जालिम की बन्दूकें थमती नहीं। दुनिया में हर जगह लोग भारत की सेवा-परायणता की प्रशंसा कर रहे हैं कि किस धैर्य के साथ भारत लाखों-लाख शरणार्थियों को अपने घर में जगह दे रहा है, उनकी देख-भाल कर रहा है। जितना खर्च पाकिस्तान का बंगला देश के नर-संहार में हो रहा है, उससे कहीं अधिक भारत का दुखी पड़ोसियों की सेवा में हो रहा है। सहानुभूति में दूसरे देशों से सहायता की सामग्रियां भी आ रही हैं, लेकिन जरूरत कितनी है और मदद कितनी है, दोनों का कोई मुकाबिला है?

वस्तुत: 'विश्व-परिवार' चुप है। अफ्रीका और एशिया योरप और अमेरिका के गरीब रिश्तेदार हैं। नीग्रो, अरब, वियतनामी, बंगाली आदि तीसरी दुनिया के ऐसे लोग हैं जिनका काम है मरना। अधिक-से-अधिक व अधिकारी हैं पश्चिमवालों की थाली के जूठन के। अगर वे बराबरी का दावा करेंगे तो उसका पुरस्कार यही है कि उन्हें मरने का मौका दिया जाय। वह मौका उन्हें भरपूर मिल रहा है। दूसरे महायुद्ध के बाद एशिया और अफ्रीका में जो जागरण हुआ है वह योरप और अमेरिका को बर्दाश्त नहीं है।

प्रश्न है: जुल्म कब खत्म होगा? बंगलादेश के नव-जागरण की पहली प्रकाश-रेखाएं विलीन हो चुकीं। जवानी की कली मसली जा चुकी। उठते हुए सिर काटे जा चुके। जनता आतंक का शिकार हो चुकी; विद्रोही गोरिला बन चुके। मुजीब जेल में जीवित हों या न हों, इतिहास में अमर हो चुके। यह सब हुआ, हो चुका, लेकिन जुल्म कायम है। इसलिए कायम है कि दुनिया चाहती नहीं कि बंद हो। जयप्रकाशजी विश्व-समुदाय की जिस अंतरात्मा (कान्शस) को जगाने गये हैं वह है कहां और किन तत्त्वों की बनी है? वह अंतरात्मा पश्चिम की हो या पूरब की; गोरी, काली, पीली, या किसी वर्ण की हो, क्रिश्चियन हो, या कम्यूनिस्ट, नेपाल की हिन्दू हो या मिस्र के मुसलमान, अंतर कहां है? सैनिक सैनिक है, शासक शासक है, और सेठ सेठ है। जो सरकारें शरणार्थियों के लिए दान (आम्सं) भेज रही हैं, उन्हीं के शस्त्रों (आर्म्स) से उनके देश-वासियों का संहार किया जा रहा है। सचमुच जय-प्रकाशजी बंगाल की मानवता के प्रतिनिधि बनकर दुनिया की मानवता को जगाने गये हैं।

मानव के नाम में १९४६ में गांधी ने नोआखाली की यात्रा की थी—अकेले, जब हिन्दू-मुसलमान दोनों मानव से दानव बन गये थे। उसी मानव के नाम में १९५१ में विनोबा पदयात्रा पर निकले अकेले, यह कहने के लिए कि भाई को भूमि का एक टुकड़ा तो दो। आज १९७१ में उसी मानव के प्रतिनिधि बनकर जयप्रकाशजी दुनिया के मानवों को उनकी मानवता की याद दिलाने निकले हैं। सभ्यता मानवता-शून्य हो गयी है।

मार्क्स ने कहा था 'दुनिया के मजदूरो एक हो जाओ।' सवा सौ साल बीत गये, मजदूर तो एक नहीं हो सके, लेकिन दुनिया के सेठ और शासक एक होते जा रहे हैं—देश, वर्ण, भाषा, धर्म आदि का भेदभाव छोड़कर बंगला देश के प्रश्न पर सारे शासक एक हो गये हैं, सिर्फ उनकी कूटनीति की भाषा अलग-अलग है। उसी तरह एशिया और अफ्रीका के गरीब श्रमिकों के शोषण से सस्ता माल तैयार करने के लिए कई देशों के पूंजी-पतियों के मिले जुले (मल्टीनेशनल) कारखाने खुलते जा रहे हैं। मुनाफे के प्रश्न पर दुनिया के पूंजीपति भी एक हो रहे हैं। शायद अब नया जमाना आता है अंतर्राष्ट्रीय पूंजीवाद और अंतर्राष्ट्रीय साम्राज्यवाद का। अलग-अलग देशों में बनी सरकारें इसी नये अंतर्राष्ट्रीय साम्राज्यवाद की एजेंट के रूप में रहेंगी, और उद्योग-व्यापार की कम्पनियां अंतर्राष्ट्रीय पूंजीवाद की।

इस संकट से मुक्ति का उपाय क्या है? अगर कोई उपाय है तो यही कि राज्य-शक्ति का विघटन हो। राज्य-शक्ति के स्थान पर लोकशक्ति की स्थापना सिर्फ सुन्दर भविष्य में नहीं बल्कि आज, अभी होनी चाहिए। यही इस जमाने में क्रांति की पुकार है। इस संदर्भ में क्रान्तिकारी और जनता दोनों को समझना चाहिए कि उन्हें किन शक्तियों से मुक्त होना है। जयप्रकाशजी की यात्रा से उन्हें यह भान हो गये तो बड़ी बात होगी। तब तक शायद बंगला देश के नर-नारियों को संकीर्णवादी राष्ट्रवाद की वेदी पर बलि होकर मुक्ति की कीमत चुकानी पड़ेगी। वे चुका रहे हैं, दुनिया देख रही है। ●

डा० अरम के अरमान

डा० अरम

सतीश कुमार : आज हमारा आन्दोलन जिस जगह आकर खड़ा है, उस संदर्भ में नयी-नयी चुनौतियाँ भी हमारे सामने उपस्थित हैं। आपकी दृष्टि से वे चुनौतियाँ कौन-सी हैं?

डा० अरम : आपके इस सवाल का उत्तर मैं मध्यावधि चुनावों के परिप्रेक्ष्य में देना चाहूँगा। चुनावों के पहले राजनैतिक जीवन में एक व्यापक अस्थिरता थी। केन्द्रीय शासन किस समय लड़खड़ा कर गिर पड़ेगा, इसका भय लोगों के मनों में था। ऐसी अस्थिरता में से ही सैनिक शासन का जन्म होता है। अगर सर्वोदय-विचार-पद्धति लोकशाही के लड़खड़ाने पर विकल्प प्रस्तुत कर सके और सैनिक तानाशाही के बजाय सर्वोदय वाले शासन-व्यवस्था को संभाल सकें, तो माना जायेगा कि लोकशाही की चुनौती को हमने स्वीकार किया।

सतीश कुमार : लेकिन मध्यावधि चुनावों ने उस अस्थिरता का अंत कर दिया है। अब अभी शासन को संभालने का कोई सवाल सामने नहीं है।

डा० अरम : हाँ, यह ठीक है। पर श्रीमती गांधी ने गरीबी और बेकारी के अंत का कार्यक्रम घोषित करके चुनाव जीता है। यह अच्छा हुआ कि चुनावों के परिणामस्वरूप केन्द्र में स्थिरता आ गयी। केवल इन पाँच वर्षों के लिए ही नहीं, बल्कि अगले चुनावों में भी श्रीमती गांधी ही पुनः शासन में आनेवाली हैं, ऐसा मेरा अंदाज है। यह तो स्पष्ट है कि अकेले इंदिराजी गरीबी और बेकारी समाप्त नहीं कर सकेंगी। इसलिए हमें कुछ ऐसे सामान्य कार्यक्रमों की खोज करनी चाहिए, जिनमें सरकार और सर्वोदय के बीच 'सहयोग' हो सके और हम सरकार की प्रगतिशील नीतियों को चरितार्थ करने के लिए इंदिराजी के हाथ मजबूत कर सकें। मुझे लगता है कि यह बहुत ही महत्वपूर्ण कार्यक्रम है और इस पर गंभीरता के साथ विचार करने की जरूरत है।

सतीश कुमार : हमारे आन्दोलन में कार्यकर्ताओं की प्रायः यह शिकायत रही है कि सर्वोदय का शासन के साथ आवश्यकता से अधिक सहयोग है। इसके कारण हमारी तेजस्विता कम हुई है और सर्वोदय की शासनमुक्त समाज-रचना की कल्पना लोगों की नजरों में धुंधली हुई है।

डा० अरम : यह तो हमें स्पष्ट हो ही जाना चाहिए कि हम वर्तमान संविधान और संसदीय लोकशाही के अंतर्गत रहकर ही काम कर सकते हैं। इस लोकशाही ने वाणी स्वातंत्र्य जैसे कुछ मौलिक अधिकार भी हमें दिये हैं। इस संसदीय लोकशाही के स्थान पर प्रत्यक्ष लोकशाही की स्थापना करने का हमारा विचार भी फैलाते रहने की जरूरत है। हमें वर्तमान लोकशाही से संतुष्ट नहीं होना है। परन्तु प्रत्यक्ष लोकशाही और ग्रामस्वराज्य की स्थापना के हमारे कार्यक्रम दूरगामी हैं, जबकि गरीबी व बेकारी का अंत, शिक्षा-पद्धति में परिवर्तन और इसी तरह के अन्य तात्कालिक कार्यक्रमों के महत्व को हम नजरअंदाज नहीं कर सकते। इन कार्यक्रमों को हाथ में लेने के लिए धन, कार्यकर्ताशक्ति और अन्य साधनों की आवश्यकता होती है। बिना सरकार के साथ सहयोग किये ये साधन कहाँ से जुटेंगे। फिर सरकार भी तो हमारी ही है। सरकार में भी तो हमारे देशवासी ही हैं। उनसे नफरत करने की कोई जरूरत नहीं।

सतीश कुमार : आपके इस सहयोग प्रस्ताव में मुझे कुछ खतरनाक परिणाम आने की संभावना दीखती है। इस प्रकार सहयोग के कारण हमारा आन्दोलन 'सरकारी मंच' के रूप में परिवर्तित हो जायेगा, ऐसी आशंका होती है।

डा० अरम : अगर हम अपने विचारों को अच्छी तरह समझते हैं, अगर हम अपने मूल उद्देश्य तथा दूरगामी कार्यक्रमों से भटकते नहीं हैं, अगर हम सहयोग के स्थान पर सहयोग और जरूरत पड़ने पर सरकार से असहयोग करने को भी तैयार हैं तो फिर आपकी जिन खतरों की आशंका है, वह निराधार हो जायेगी। हमें अपनी भूमिका पर भरोसा रखकर और अपने मुख्य आदर्शों की सही समझ तथा उन पर श्रद्धा रखकर ही सहयोग का कार्यक्रम बनाना चाहिए। केवल हम गाँवों की पुनर्रचना और ग्रामदान के सीमित कार्य-

→ ७—गाँव के जो भूमिवान आदि ग्रामदान में अब तक शामिल नहीं हुए हों। उन्हें ग्रामदान में शामिल करने तथा आसपास के गाँवों को ग्रामदान में आने के लिए कदम बढ़ाना चाहिए। इसके लिए व्यक्तिगत 'एप्रोच', ग्रामसभा में चर्चा, ग्रामदानी लोगों के जुलूस आदि के जरिए वातावरण बनाना चाहिए।

काम करते करते स्थानीय परिस्थिति के अनुसार इस प्रकार के अन्य कदम भी सूझेंगे। सार यह है कि ग्रामदान के बाद पुष्टि के काम में हमारा मुख्य लक्ष्य यह होना चाहिए कि गाँव एक इकाई के रूप में काम करने लगे और ग्रामसभा सक्रिय हो। ग्रामसभा ग्रामस्वराज्य की कुंजी है और उसके सक्रिय होने में क्रांति की असीम संभावनाएँ छिपी हुई हैं। ●

क्रम तक अपनी प्रवृत्तियों को मर्यादित कर लेंगे तो राष्ट्रीय जीवन की मुख्य धारा से कट जाने का डर है।

सतीश कुमार : अगर हम थोड़ा-सा इस प्रकार के सहयोगी प्रयासों का इतिहास देखें तो हमें लगेगा कि वे प्रयास असफल ही रहे हैं। उदाहरण के तौर पर भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी ने दूरगामी उद्देश्यों और मुख्य आदर्शों की भिन्नता के बावजूद श्रीमती गांधी की तथाकथित प्रगतिशील नीतियों का समर्थन किया। उससे न केवल कम्युनिस्ट पार्टी कई टुकड़ों में विभक्त हो गयी, बल्कि लोगों की नजरों में वह इंदिराजी की जेब में चली गयी। क्या उसी तरह हमारा आन्दोलन भी उनकी जेब में नहीं चला जायेगा?

डा० अरम : इंदिराजी की जेब इतनी बड़ी नहीं है कि जिसमें सर्वोदय आन्दोलन समा सके। जहाँ तक कम्युनिस्ट पार्टी का सवाल है, उन्होंने राजनैतिक 'स्टंट' के रूप में अपनी पार्टी के संकुचित स्वार्थों को ध्यान में रखकर सहयोग का हाथ बढ़ाया था। ताकि पार्टी को सत्ता की सौदेबाजी और सीटों के बटवारे में राजनैतिक लाभ प्राप्त हो सके। जबकि हमारा सहयोग इस तरह के किसी 'स्टंट' या सौदेबाजी के लिए नहीं होगा। अगर कोई 'जनहित' कार्यक्रम हो और इंदिराजी शुद्ध हृदय से हमारा सहयोग चाहती हों, तभी यह सहयोग दिया जा सकता है। फिर यह भी समझ लें कि हमारा सहयोग यानी क्या? अगर मैं इंदिराजी को गरीबी तथा बेकारी निवारण के कार्यक्रम में जनता का सहयोग मिले और सर्वोदय कार्यकर्ता जनता को इस प्रकार के कार्यक्रमों के प्रति जागरूक कर सकें, यही हमारा 'सहयोग' उनको मिल सकता है।

सतीश कुमार : कम्युनिस्ट पार्टी की बात छोड़ भी दें तो खादी का उदाहरण लीजिए। खादी वाले खादी कमीशन के माध्यम से सरकार को सहयोग दे ही रहे हैं और सरकार का भी सहयोग ले रहे हैं। क्या खादी आज सरकारी जेब में नहीं चली गयी है? ग्रामदान तथा सामुदायिक विकास कार्यक्रम के बीच 'निकटतम सहयोग' स्थापित करने के प्रयास भी किये जा चुके हैं। असल में कोई भी सरकार प्रगतिशील नारों का मुखौटा चढ़ाकर सत्ता में बने रहने और यथास्थिति को कायम रखने का ही प्रयास करती है।

डा० अरम आपकी बात सही होगी अगर 'हर हालत में सहयोग करना ही है' ऐसी पृष्ठभूमि रखकर सहयोग किया जाय। अपने आदर्शों में दृढ़ आस्था रखे बिना अगर हम सहयोग करेंगे तो अपना व्यक्तित्व खो बैठेंगे। पर मुझे पूरा विश्वास है कि हमारे आन्दोलन के साथी अपनी क्रान्तिकारी भूमिका के साथ पूरी तरह प्रतिबद्ध हैं और इसलिए अगर हम किन्हीं निश्चित कार्यक्रमों के लिए सरकार को सहयोग देते हैं तो हमारे भ्रष्ट हो जाने या तेजोहीन हो जाने का कोई खतरा नहीं है।

सतीश कुमार आपने कहा कि हमें अपने को पुनर्रचना और ग्रामदान के काम तक ही सीमित नहीं करना चाहिए। क्या आप इस बात का थोड़ा सा खुलासा करेंगे?

डा० अरम मुझे लगता है कि हमारा आन्दोलन गाँवों में और भूमि के प्रश्न पर क्रान्ति की रचना के साथ आत्यन्तिक रूप से सम्बद्धता प्रगट कर रहा है। परिणाम यह हुआ है कि अन्य सभी क्षेत्रों की हमने उपेक्षा की है इसी उपेक्षा के कारण शहरों पर, राजनीति पर और बुद्धिजीवियों पर हमारे विचारों का जो प्रभाव उत्पन्न होना चाहिए था, वह नहीं हो सका। हमारा एक कार्यक्रम 'जय जगत्' भी है। पर विश्वशान्ति के अन्तर्राष्ट्रीय प्रश्नों पर या तो हम चुप रहते हैं या बहुत देर से अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करते हैं। जब ऐसा करते हैं तो केवल 'बोर कर' रह जाते हैं, कभी सक्रियता नहीं दिखाते। इसी तरह शिक्षा में क्रान्ति, राजनीति में सुधार, मतदाताओं का प्रशिक्षण इत्यादि मोर्चों पर हम सर्वथा अनुपस्थित और किसी भी कार्यक्रम के स्तर पर अप्रस्तुत रहते हैं। इसीलिए मैंने कहा कि हमारी क्रान्ति के लिए ग्रामदान एक कार्यक्रम है, एक मोर्चा है, यही सम्पूर्ण नहीं है।

सतीश कुमार आपकी बात से सहमत होने में मुझे आपत्ति नहीं होती, अगर गाँवों का, ग्रामदान और ग्रामस्वराज का हमारा मोर्चा मजबूत होता। हालांकि विनोबा तो कहते हैं कि 'एकै साधे सब सधै।' पर हम तो आज यह 'एक' भी नहीं साध पा रहे हैं। क्षेत्र की प्रतिबद्धता में लगे हुए दायित्वपूर्ण कार्यकर्ताओं की संख्या देश भर में दस से ज्यादा नहीं होगी। शिकायत तो यह है कि 'ग्रामदान से क्रान्ति' वाली 'थियरी' पर हमारे आन्दोलन के 'अंदर' के लोगों को पूरा विश्वास नहीं है। ग्रामस्वराज्य का काम एक तरह से 'असंभव' काम है। इसकी कठिनाई को आप हम सब जानते हैं। यदि हमारी थोड़ी-सी शक्ति को हम पचासों प्रकार के कार्यक्रमों में बाँट देंगे तो हमारा यह बुनियादी काम क्या कमजोर नहीं पड़ जायगा? क्या हमारे आन्दोलन की मुख्य धारा सूख नहीं जायेगी?

डा० अरम जिनको 'ग्रामदान से क्रान्ति की 'थियरी' पर विश्वास नहीं है, उनको इस आन्दोलन में रहकर अपना समय नष्ट नहीं करना चाहिए। मेरा कहना सिर्फ इतना ही है कि 'केवल ग्रामदान से ही क्रांति' की 'थियरी' भी ठीक नहीं है। हालांकि ग्रामदान के काम ने इस देश के जीवन को एक ऐतिहासिक मोड़ दिया है। इस काम की उपलब्धियों को पूरा न्याय दिये बिना हमारे आंदोलन का कोई स्वरूप ही नहीं रह जायेगा। परन्तु ग्रामस्वराज्य के काम को परिपूर्ण एवं शक्तिशाली बनाने के लिए अन्य कामों का भी महत्वपूर्ण स्थान है, केवल इसी तथ्य की ओर मैं आपका ध्यान आकृष्ट करना चाहता हूँ। ●

ग्रामदान के संदर्भ में बेकार श्रमशक्ति को पूँजी में परिवर्तित करने की समस्या

—एस० एस० अय्यर

ग्रामीण क्षेत्रों में रहनेवाली जनसंख्या के पास आय तथा रोजगार प्रदान करने का एक ही मुख्य स्रोत भूमि है, जिस पर कि वे निर्भर हैं और यह एक प्रारम्भिक समस्या है। इस समस्या की वस्तुस्थिति को समझने के लिए इसके ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य को ध्यान में रखना आवश्यक है। बढ़ता हुआ ग्रामीकरण और भूमि पर सामंती तथा अकर्मण्य निहित स्वार्थ की वृत्ति का विकास विदेशी साम्राज्य की निश्चित योजना का परिणाम है। इसलिए भारतीय आर्थिक पुनर्निर्माण के लिए आवश्यक है कि ग्रामीण तथा शहरी दोनों क्षेत्रों में अतिरिक्त श्रमशक्ति को गैर कृषि कार्यों में लगाने का लक्ष्य रखा जाय।

ग्रामीण क्षेत्र में बेकार श्रमशक्ति दो प्रकार की है, एक तो कृषि से सम्बद्ध तथा दूसरा ग्रामीण उद्योगों से सम्बद्ध। कृषक वर्ग के कुछ युवकों को भी बेकार या अर्धबेकार समुदाय में शामिल कर सकते हैं। इस प्रकार समस्या यह है कि इन लोगों को उत्पादक कार्य की सुविधा किस प्रकार दी जाय?

गाँव की इस प्रकार की बेकार मानव शक्ति को स्थायी तौर पर उपयोग में लाया जाय, इसकी कुछ सीमायें भी हैं। एक—इस प्रकार की बेकार मानवीय शक्ति ऐसे वर्ग के हाथ में केन्द्रित है, जो कि सदियों से शोषण करते आये हैं। भूतकाल में और आज भी श्रमिक पर नियंत्रण तथा उसका उपयोग शक्तिशाली तथा भूमिपति वर्ग अपने लाभ के लिए कर रहा है। इस प्रकार ऐसे कार्यक्रम, जिसका लक्ष्य श्रम का सामूहिक पूँजी के रूप में उपयोग हो, तभी चल सकता है जबकि हम समानता और सामाजिक न्याय पर आधारित सामाजिक, आर्थिक व्यवस्था स्थापित करने की सोचें। दो—प्रत्येक परिवार को इस बात की गारंटी मिलनी चाहिए कि उसे जीवन-निर्वाह की न्यूनतम सुविधा मिलेगी। बिना इस प्रकार की गारंटी के श्रमिकों को अपना श्रम लगाने की प्रेरणा नहीं होगी। तीन—इस प्रकार की योजनाएँ अधिक-से-अधिक बड़े समुदाय को लाभान्वित कर सकेंगी। ये लाभान्वित लोग स्थानीय समाज के हों ताकि जिसे आवश्यकता है उसे सुविधाएँ मिल सकें। परन्तु इस प्रकार की योजनाएँ ऐसी भी होनी चाहिए जो कि उत्पादक हों। चार—ग्रामीण क्षेत्रों में ऐसी योजनाएँ सोची जानी चाहिए जो कि पूँजी निर्माण कर सकें। परन्तु यह नहीं भूलना चाहिए कि पूँजी-निर्माण के लिए बचत में वृद्धि तथा उपभोग में कमी, मशीन जैसा गैर मानवीय साधनों का उपयोग आवश्यक है। पाँच—विचार-स्तर पर देखें तो क्या यह आवश्यक है कि इस प्रकार के कार्यक्रमों पर सामाजिक लाभ को ध्यान में रखकर विचार किया जाय। क्या यह कहना अधिक उचित नहीं होगा कि बेरोजगार तथा अर्धबेरोजगार युवकों को कार्य की सुविधा प्रदान की जाय, सम्भवतः यह स्थायी पूँजी-निर्माण में सहायक होगा। मैं समझता हूँ इस प्रकार का प्रयोग बेकार श्रम को रोजगार प्रदान करने में अधिक सहायक तथा मानवीय दृष्टि से युक्त होगा। इस प्रकार का कार्यक्रम आर्थिक दृष्टि से गिरे हुए लोगों की मौलिक आवश्यकताओं की पूर्ति में सक्षम होगा, साथ-ही-साथ यह पूँजी-निर्माण में भी सहायक होगा जो कि सामाजिक दृष्टि से उपयोगी है। समाज में एक ऐसा वर्ग भी है जिसे कि स्वेच्छा और स्वतंत्र रूप से बेकार श्रम के रूप में देख सकते हैं। यह उच्च समुदाय से सम्बद्ध है। परम्परागत यजमानी-प्रथा का घनिष्ट सम्बन्ध भूस्वामी वर्ग तथा उनकी पूरी व्यवस्था से है और यह समुदाय समाज के उस वर्ग का शोषक रहा है जो कि शारीरिक श्रम करता है। इस यजमानी व्यवस्था के अन्तर्गत भूस्वामी के अधीन रहनेवाले सभी लोग उस (भूस्वामी) की इच्छा के भी अधीन रहते हैं। हाँ, इतना जरूर है कि श्रमिक-वर्ग समय-समय पर, जैसे बीमारी, शादी तथा परिवार के अन्य संकट के समय भूस्वामी से कुछ मदद प्राप्त करता है।

सार्वजनिक लाभ के लिए कार्य के संयोजन की जिम्मेदारी राज्य की है। यह जिम्मेदारी कौटिल्य के समय भी थी। हमारे देश में सबसे बड़ी असंगति गाँव और शहर में व्याप्त अन्तर है। यह जो एक असंगति है कि सरकार शहरों में सार्वजनिक उपयोगिता के निर्माण-कार्यों की जिम्मेदारी लेती है, जब कि ग्रामीण क्षेत्र की जनता अधिक कर का भुगतान करती है, इस अन्तर को तथा शहर और ग्रामीण क्षेत्र की सम्पूर्ण संगति-असंगति को देखते हुए इस प्रकार के कार्यक्रमों पर विचार करना चाहिए। इसमें यह दृष्टि भी ध्यान में रखनी चाहिए कि शहर से ग्रामीण क्षेत्र में अतिरिक्त साधन किस प्रकार जाय।

श्रम को पूँजी में परिवर्तित करने में शोषक तत्वों को तीन प्रकार से समाप्त किया जा सकता है—(१) जहाँ श्रम-सहकारिता के आधार पर कार्य हाथ में लिया जायगा वहाँ पूँजी का स्वामित्व श्रमिक के पास रहेगा। (२) जब पूँजी की कमाई में गाँव के बहुसंख्यक लोग लाभान्वित होंगे और इन कार्यक्रमों में सम्पूर्ण बेकार जनसंख्या लगेगी, तो ऐसी स्थिति में सम्पन्न वर्ग के लोगों को मुफ्त श्रम देना चाहिए। (३) इस प्रकार रोजगार उन्मुख कार्यक्रमों का एक के बाद एक, इस रूप में संयोजन किया जाना चाहिए जिससे सतत् रोजगार में वृद्धि हो, और साथ-ही-साथ बौद्धिक कार्यक्रमों में भी वृद्धि हो।

यदि ये स्थितियाँ पूरी हो सकीं, तो अतिरिक्त श्रम, जो कि आज भार है

वरदान साबित होगा, और स्थिर ग्रामीण अर्थव्यवस्था में भौतिक तथा गत्यात्मक परिवर्तन ला सकेगा। फिर भी यह निश्चित रूप से समझ लेना चाहिए कि श्रमिक वर्ग और उत्पादन के साधन के अनुसार ही इसका वास्तविक और गुणात्मक प्रकार होगा। इस तरह अतिरिक्त श्रम के उपयोग की कोई योजना तीन चरणों में चलनी चाहिए। प्रथम चरण में धान्य वृद्धि तथा साधनों का उपयोग सम्पत्ति निर्माण के कार्य में करने का प्रयास किया जाय, दूसरे चरण में कार्यों को अच्छे साधनों द्वारा सम्पन्न किया जाय। तीसरे चरण में कार्यों में विविधता का स्तर अधिक ऊँचा किया जाय। कुछ मौलिक प्रश्नों का उत्तर भी खोजना होगा। अन्तिम दो चरणों में प्रारम्भिक पूँजी और साधन तथा कार्यगत पूँजी कौन देगा? प्रखण्डस्तर या जिलास्तर स्तर के शहरों तथा गाँव के किसानों के एक समुदाय के पास इस प्रकार की शक्ति ही कितनी है।

हमें यह भी नहीं भूलना चाहिए कि न तो हमारी अर्थ-व्यवस्था स्थायी तौर पर कृषि प्रधान रहनेवाली है, और न ही ग्रामीण क्षेत्र के लोग स्थायी तौर पर अकुशल रहनेवाले हैं, और, न ही शहरी जीवन की सुविधाओं से वंचित रह सकते हैं। नियोजन का प्रयास यह होना चाहिए कि गलत रास्ते पर जा रही श्रमशक्ति को काम दिया जाय और ग्रामीण क्षेत्रों में शहर में प्राप्त सुविधाएँ प्रदान की जायँ। इन उद्देश्यों का सोचविचार बहुधन्धी औद्योगिक विद्यालयों, औद्योगिक प्रतिष्ठानों, सहकारी संगठनों, शहरों में कारखानों के माध्यम से किया जा सकता है। आर्थिक समृद्धि और शहरी विरोधाभास, दोनों साथ-साथ चलता है, लेकिन एक पोषित ग्रामदानी गाँव, जहाँ कि ग्रामदान की शर्तें पूरी हो चुकी हैं, वहाँ प्रथम चरण में उत्पादन वृद्धि, विक्रय की व्यवस्था तथा सहकारी संगठन का सूत्रपात किया जा सकता है। इस प्रकार के गाँव में निम्नलिखित सामाजिक-आर्थिक स्थिति स्वीकार की जायेगी—(१) ग्रामस्वराज्य तथा उसके सहायक अंग के रूप में एक नया सामाजिक संगठन, (२) २०वाँ हिस्सा जमीन पुनर्वितरण के लिए प्राप्त होगा, और यह भूमिहीन या जिसे ग्राम-सभा चाहेगी उन्हें खेती करने के लिए देगी। (३) उत्पादन का २०वाँ भाग ग्रामसभा को प्राप्त होगा। इस कोष का उपयोग सार्वजनिक हित के लिए—जैसा कि ग्रामसभा चाहेगी—होगा। (४) ग्रामहित करने के लिए व्यक्तियों का एक संगठन होगा। (मूल अंग्रेजी से)

अनु० : डा० अभय प्रसाद

आखिरी किस्त

नाहक मिलन

['नाहक मिलन' की रिपोर्ट का अंतिम भाग हम पाठकों को सघ-अधिवेशन और सम्मेलन के कारण काफी देर से दे पा रहे हैं, इसका हमें खेद है। फिर भी चर्चाएँ चूँकि वैचारिक महत्त्व की हैं, इसलिए उनकी उपयोगिता में कोई कमी इस विलम्ब के कारण नहीं आती, हमारी इस बात से शायद पाठकगण भी सहमत होंगे! —सं०]

२९ मार्च का पूरा दिन लोकनीति की चर्चा का रहा। हाल में लोकसभा के लिए हुए मध्यावधि चुनाव में मतदाता शिक्षण का जो कार्य सर्व सेवा संघ द्वारा किया गया, उसी सिलसिले में कश्मीर के चुनाव का पर्यवेक्षण करने एक टीम गयी थी, जिसके अनुभव गोविन्दराव देशपांडे ने सुनाये। यह टीम कश्मीर में १० दिन रही। ७०-३५ मतदान केन्द्रों का इन्होंने निरीक्षण किया। उनके कुछ विशेष अनुभव

(१) अनन्तनाग में इससे पूर्व कभी चुनाव नहीं हुआ था, क्योंकि एक उम्मीदवार खड़ा होता था, बिना मतदान के चुन लिया जाता था। वहाँ मतदाताओं के लिए सबसे बड़ा आकर्षण था मतदान-पत्र। वहाँ देखने काफी बड़ी भीड़ जाती थी।

(२) कहीं-कहीं चुनाव के एक दिन पहले तक नहीं मालूम था कि मतदान-केन्द्र कहाँ है।

(३) श्रीनगर में राजनीतिक चेतना अधिक है।

(४) आमतौर पर मतदाताओं में उत्साह बहुत था, लेकिन मतदान-केन्द्रों की व्यवस्था मनोरंजनक नहीं थी।

(५) कुल ५३८ मतदान-केन्द्रों में से ३०-३२ केन्द्रों पर गड़बड़ी की बात कही गयी, लेकिन कुल मिलाकर चुनाव शांतिपूर्ण हुआ।

रिपोर्ट सुनकर जयप्रकाशजी ने सवाल उठाया कि क्या सर्वोदय कश्मीर की जनता के मानवीय प्रश्नों में रुचि ले रहा है या शेख साहब और दूसरे कारणों से कभी-कभी सक्रिय हो जाता है? जयप्रकाशजी ने कहा कि हमारा ध्यान वहाँ के नागरिकों के अधिकारों की ओर रहा है। हम वहीं तक ही सीमित हैं। वहाँ की राजनीति दलों की उतनी नहीं है, जितनी दूसरे स्तर की है। कश्मीर मुसलमान प्रधान है, इसीलिए उसकी राजनैतिक स्थिति का खास महत्त्व है। चुनाव के कारण वहाँ जागरण हुआ है। उसका 'फॉलोअप' होना चाहिए। कश्मीर में समाज-सेवा की परम्परा नहीं है।

गोविन्दराव देशपांडे ने देशभर में हुए मतदाता-शिक्षण के काम की जानकारी भी दी। दिल्ली में १३ संस्थाओं की एक संयुक्त-समिति ने मिलकर काम किया। महाराष्ट्र के एक मतदान-केन्द्र पर मतदाताओं ने कहा कि 'कोई भी उम्मीदवार हमें पसन्द नहीं है, हम किसी को वोट नहीं देंगे।' लेकिन कुल मिलाकर अपेक्षित पैमाने पर काम नहीं हो सका। न जिला समितियाँ बन पायीं और न पर्यवेक्षण समितियाँ ही बन पायीं। कहीं-कहीं यह सवाल भी उठा कि यह काम आन्दोलन की मुख्यधारा से कार्यकर्ताओं का ध्यान हटायेगा। कई लोग ऐसे हैं जिनको ग्रामदान आदि मान्य नहीं है, लेकिन वे इस मोर्चे पर काम करने को

तैयार हैं। कहीं-कहीं सर्वदलीय मंच के भी आयोजन हुए, जैसे—दिल्ली, पूना, मुजफ्फरपुर, वाराणसी। गुजरात में कुछ विशेष काम हो पाया।

इसके बाद विभिन्न प्रदेशों में हुए मतदाता-शिक्षण के काम के अनुभव सुनाये गये। पाटिल साहब ने एक महत्व का मुद्दा पेश किया कि हमारे मतदाता शिक्षण के काम में 'कन्टेन्ट' (विचार-तत्व) नहीं था, बहुत ही उलझा-चिंतन रहा हमारा इस पर। ग्रामस्वराज्य से संसद तक का नया ढाँचा क्या हो, कैसे हो, यह हमारे मतदाता-शिक्षण के कार्य में 'कन्टेन्ट' के रूप में रहना चाहिए। इस पर स्पष्ट चिंतन होना चाहिए। त्रिपुरारीजी ने इस बात पर जोर दिया कि लोकनीति के आधार पर पूरी रूपरेखा व्यवस्था की तैयार की जानी चाहिए। जयप्रकाशजी ने कहा कि आन्दोलन की मुख्यधारा के पूरक रूप में हमें इस तरह के कार्यक्रम लेने ही चाहिए। जहाँ सघन काम आन्दोलन का हो रहा हो, वहाँ और अधिक प्रभावशाली ढंग से यह काम हो सकता है। हम इस काम को हर्गिज छोड़ नहीं सकते, क्योंकि देश के करोड़ों लोगों का इस चुनाव से बहुत गहरा और महत्वपूर्ण सम्बन्ध है, और जन-आन्दोलन करने वाले जन-जीवन के इतने महत्वपूर्ण और गहरे विषय से अलग कैसे रह सकते हैं?

दोपहर के बाद इसी विषय की चर्चा को और आगे बढ़ाते हुए पाटिल साहब ने कहा कि : (१) कुछ निर्दल व्यक्ति चुन भी लिये जायें अगर जनता के उम्मीदवार के रूप में, तो उनका एक अलग ग्रुप होगा, और वह एक पार्टी हो जायगी। (२) क्या लोकसेवक जनता के उम्मीदवार का प्रचार करेगा? (३) अगर मतदाता मण्डल किसी दल के ही उम्मीदवार को चुने तो? विभिन्न क्षेत्रों के मण्डल विभिन्न दलों के उम्मीदवार चुनें तो? इस विषय पर दादा ने कहा कि 'ग्रूपिंग' 'एडहॉक' होगी, बहस में सर्वानुमति विकसित करने की कोशिश की जायगी, सत्ता-अभिमुखता नहीं रहेगी तो पार्टी का आकर्षण नहीं रहेगा। लोकसेवक प्रचार नहीं, शिक्षण करेगा। आज जिस तरह का चुनाव-प्रचार होता है, उस स्थिति में वह उम्मीदवार की अयोग्यता प्रकट करेगा। हमें 'मत' के महत्व को बढ़ाना है, 'संख्या' के महत्व को घटाना है। मनमोहन भाई ने सुझाया कि यह दृष्टिकोण विकसित करना होगा कि बहुसंख्यक अल्पसंख्यक को अधिक-से-अधिक साथ लेकर चलें। इसकी क्रियात्मक पद्धति विकसित करनी होगी। इसके बाद जयप्रकाशजी ने चुनाव के बाद की राष्ट्रीय स्थिति पर अपना विचार व्यक्त किया। आपने आशा व्यक्त की कि केन्द्र की स्थिर सरकार के कारण कुछ फर्क आयेगा। जनता ने समझदारी दिखायी है। इन्दिराजी को कुछ समय मिला है। शायद उनके बारे में जो अच्छी धारणाएँ बनी हैं, उन्हें वे टिकाये रखने के लिए कुछ करें।

२२ मार्च को अंतिम बैठक सर्वोदय परिवार के दो बुजुर्ग सर्वश्री आचार्य हरिहर और अप्पासाहब पटवर्धन के दिवंगत होने पर दो मिनट की मौन प्रार्थना के बाद शुरू हुई।

ठाकुरदास बंग ने सुझाया कि सर्व सेवा संघ नयी संसद को एक सुझावयुक्त प्रतिवेदन दे। जैनेन्द्रजी ने पूछा कि क्या प्रतिवेदन देने भर से हमारा फर्ज पूरा हो जाता है या उससे सुझावों को पूरा कराने की भी जिम्मेदारी हम पर आती है? केवल सुझाव, प्रतिवेदन का कोई विशेष अर्थ नहीं है। राज्य की वादिता एक चीज है, राज्य की वास्तविकता दूसरी चीज है। हम ''वास्तविकता' के नहीं वादिता के विमुख हैं। हम सद्भाव की राजनीति में विश्वास रखते हैं, सत्ता की राजनीति में नहीं। हमें मात्र सुझाव देकर तटस्थ नहीं हो जाना चाहिए, बल्कि सरकार का सहयोग करना चाहिए।

इसके बाद चर्चा का विषय बदल गया। सिद्धराजजी ने सर्वोदय की दृष्टि से नगरों में काम करने की दिशा में कुछ सुझाव प्रस्तुत किये। (१) उद्योग-व्यापार में लोगों की भागीदारी हो, ऐसे कुछ प्रयोग किये जायें जहाँ अनुकूल व्यक्ति मिलें वहाँ। (२) जनसंख्या के बढ़ रहे घनत्व का हल खोजने के लिए लोगों को जागृत किया जाय, कुछ सुझाया जाय। (३) नगर-व्यवस्था लोकहित को सामने रखकर हो। मुहल्ला-सभा तक का संघटन हो। (४) महानगरों में तरुण-शान्तिसेना के काम को व्यापक पैमाने पर संघटित किया जाय। (५) शिक्षण-संस्थाओं, नगर के प्रबुद्ध लोगों तक सर्वोदय की गतिविधियों, उपलब्धियों की जानकारी पहुँचायी जाय। (६) सर्वोदय-पात्र का संघटित काम किया जाय।

दादा ने नगर-कार्य पर अपना विचार प्रकट करते हुए कहा, ''क्या हम शहरी-जीवन की संरचना को भी बदलना चाहते हैं? व्यवसाय कुछ उत्पादक हैं, कुछ समाज-विरोधी हैं। किराया, सूद, मुनाफा, ठीका पर ही अधिक सम्पत्ति आधारित है। उद्योगों को छोड़कर शेष सम्पत्ति नकली है जिसे कानून से खत्म किया जा सकता है। गाँवों की सम्पत्ति वास्तविक है, बुनियादी है। शहरों में जो लोग झगड़े, बीमारी, लोगों के दोष, उनकी मुसीबतों का व्यवसाय करते हैं, मनोरंजन का व्यवसाय करते हैं, कैसे लोगों को अपने पेशों से अरुचि पैदा की जा सकती है क्या? अगर ऐसा नहीं होगा तो उप-नगरवाद बढ़ेगा, नगरवाद घटेगा नहीं। आज के नगर क्षेत्रीय बनते जा रहे हैं। कुछ नगर ऐसे हों, जो विश्व-नगर हों। उनकी अपनी भाषा प्रान्तीय न हो, वहाँ सह-जीवन और संयुक्त जीवन का शिक्षण हो। हमारे नगरकार्य सर्वोदय की दिशा के हैं या नहीं, इसका मापदण्ड यह होना चाहिए कि वहाँ केवल व्यवहार-शुद्धि नहीं, व्यवसाय-शुद्धि की ओर कदम बढ़ रहे हैं। चोर-बाजारी करनेवाला भी सर्वोदय के काम में हिस्सा ले, लेकिन सर्वोदय की दिशा के किसी संघटन, समुदाय का अधिकारी व्यक्ति वह न हो।

जयप्रकाशजी ने अध्ययन और चिंतन

के लिए कुछ मुद्दे प्रस्तुत किये : (१) नगरो में मानव को मानवोचित जीवन कैसे मिले, यह विश्वव्यापी समस्या है। क्या नगर कृषि-औद्योगिक हो ? (२) नगरो का आकार क्या हो ? शुमाखर की राय है कि पश्चिम में भी ५ लाख से ऊपर की जनसंख्या के नगर नहीं होने चाहिए। (३) नगरो में प्राकृतिक असंतुलन बराबर बढ़ता जा रहा है, उस समस्या का हल क्या हो ?

नगर-चर्चा के बाद आर्थिक स्वायत्तता का विषय शुरू हुआ। चर्चा का प्रारम्भ करते हुए पूर्णचन्द्र जैन ने कहा कि सब प्रश्नो की जड में आर्थिक प्रश्न है। आर्थिक स्वायत्तता पर विचार करते समय तीन बातें सामने आती हैं—कच्चा माल, यंत्र, मानवीय प्रयास। कच्चा माल, प्रशोधन, साधन-सरंजाम, शक्ति के उपयोग में स्वावलम्बन होना चाहिए। वितरण, यातायात, बाजार की स्वायत्तता के प्रश्न भी आते हैं। प्राथमिक आवश्यकताओं में आत्मनिर्भरता होनी चाहिए। छोटी-से-छोटी इकाई की भी आत्मनिर्भरता जरूरी है। नीचे से ऊपर तक एक दूसरे से जुडी हुई स्वायत्त इकाईयाँ होनी चाहिए। व्यक्ति का व्यक्ति द्वारा, गाँव का गाँव द्वारा या किसी इकाई का दूसरी इकाई द्वारा शोषण न हो।

राधा ने सवाल रखा कि जोर किस पर हो, क्षेत्र के विकास पर या आवश्यकता की वस्तुओ पर ? सिद्धराजजी ने कहा कि ग्रामसभा का दृढ़ीकरण मुख्य काम है। पूर्ण रोजगार और आवश्यकता के अनुसार उत्पादन को एक साथ जोड़ा जाय। त्रिपुरारीजी का विचार था कि आवश्यकता आधारित विकास हो। साधन जो उपलब्ध हैं, उन्ही का इस्तेमाल अधिक-से-अधिक हो। गाँव और क्षेत्र के साथ परिवार और व्यक्ति की स्वायत्तता पर विचार करना आवश्यक है। मनमोहन भाई ने कहा कि स्वायत्तता और आत्मनिर्भरता क्या एक ही चीज है ? स्वायत्तता के रहते हुए भी आत्मनिर्भरता न हो, यह सम्भव है। जयप्रकाशजी ने विश्वास व्यक्त किया कि राजनीतिक और आर्थिक दोनो क्षेत्रो की स्वायत्तता के मोर्चे पर काम किया जा सकता है। ग्रामसमाज को समझाकर इसके लिए तैयार करना है। कुछ इस विषय पर शंकाएँ भी हैं। जैसे—स्वायत्तता से पिछडापन आता है, संकीर्णता आती है। इन सब सवालो पर अध्ययन, चिंतन करके साहित्य बनाना चाहिए। गाँव और शहर के बीच का संतुलन क्या होगा ? नियोजन गाँव से शुरू हो, और ऊपर जाय। गाँव और शहर के बीच आज तो बाजार है, क्या कोई दूसरा संघटन भी हो सकता है ?

अंतिम मुद्दा था चर्चा का—समाज-परिवर्तन का काम करनेवालो का प्रशिक्षण। इस दिशा में महाराष्ट्र, उडीसा के काम के अनुभव सुनाये गये। मनमोहन भाई कहा कि प्रशिक्षण के दो मुद्दे होंगे—परिवर्तन की परिकल्पना, परिवर्तन की प्रक्रिया। जयप्रकाशजी ने प्रशिक्षण के कुछ विषय सुझाये। ग्रामसभाएँ खुद कैसे आगे बढ़ने की स्थिति में आयें, कानूनी पुष्टि, ग्रामदान की शर्तों की पूर्ति, ग्रामसभा का कार्य-संचालन, ग्रामकोष का हिसाब-किताब, विनियोग, आपसी टकराव, उसका निराकरण, सर्वानुमति का विकास आदि विषय प्रशिक्षण के लिए महत्वपूर्ण हैं। साथ ही गाँववालो को विकास की सुविधाओ, भूमि आदि के कानूनो, उत्पादन वृद्धि की नयी प्रक्रियाओ की भी जानकारी दी जानी चाहिए। ग्रामसभा मामले-मुकदमें कैसे निपटायेगी, इसका भी प्रशिक्षण होना चाहिए। प्रशिक्षण का काम जिला और प्रदेश स्तर पर कार्यकर्ताओ के लिए भी होना चाहिए।

इस नाहक चिंतन में क्या हुआ, आप के सामने प्रस्तुत है। इतनी चर्चाओ के लिए हम इतमीनान से समय पर बैठ सके, हमें कोई असुविधा का अनुभव न हो, इसके लिए नरसिंहपुर की खादी-संस्था ने जो सुव्यवस्था की, उसकी तारीफ करने के लिए और कुछ लिखने की जरूरत नहीं, इतना ही लिखना पर्याप्त होगा कि बिहार की अव्यवस्था के प्रति अति संवेदनशील और तीव्र आलोचक मित्रो ने भी कहा—'यहाँ की व्यवस्था ने तो गुजरात को भी मात दे दी। बिहार के बारे में हमें धारणा बदलनी पडेगी।' नरसिंहपुर के साथियों के प्रति आभार प्रकट करना तो मात्र औपचारिकता का निर्वाह मात्र होगा, लेकिन उनका आतिथ्य पूरी तरह आत्मीय-भाव बनकर दिल में समाया हुआ है गोष्ठी में भाग लेनेवालो के।

—प्रस्तुतकर्ता : राही

प्रतिशत मार्जिन न बढ़ाकर उसके बदले उतनी ही रकम प्राप्त हो सके, इतनी अधिक मार्जिन रेडीमेड या प्रोसेसिंग पर चढ़ायी जा सकती है।

(आ) बिक्री भण्डारों को बिक्री कमीशन १० प्रतिशत के बदले १०½ प्रतिशत : बिक्री-भण्डारों को सम्प्रति १० प्रतिशत कमीशन दिया जाता है। इसके स्थान पर मई-१९७१ से १०½ प्रतिशत कमीशन दिया जाय। बिक्री भण्डारों को चाहिये कि वे यह आधा प्रतिशत कमीशन सर्वोदय-साहित्य-योजना के नाम से नया खाता खोलकर उसमें जमा रखें।

हिसाबी जमा-खर्च

साहित्य का हिसाब ठीक तरह से रखने के लिए नीचे अनुसार पाँच खाते खोलने होंगे :

१— सर्वोदय साहित्य योजना खाता,
२—पुस्तक खरीद खाता,
३—प्रकाशक कमीशन खाता,
४—पुस्तक बिक्री खाता और
५—साहित्य रियायत खाता।

(अ) पुस्तक खरीद खाते में पुस्तक की मूल कीमत के हिसाब से रकम नामे लिखी जाय। साहित्य-खरीद पर जो कमीशन मिला हो उसे प्रकाशक कमीशन खाते में जमा किया जाय।

(आ) पुस्तकें जो बेची जायें उनकी बिक्री मूल कीमत के हिसाब से बिक्री खाते में जमा की जाय। पुस्तक बिक्री पर जो रियायत दी गयी हो वह साहित्य रियायत खाते में नामे लिखी जाय।

(इ) खादी-उत्पादन केन्द्रों से बिक्री भण्डारों को खादी खरीदने पर १० प्रतिशत के बजाय १०½ प्रतिशत कमीशन मिलेगा; उसमें से आधा प्रतिशत कमीशन सर्वोदय साहित्य योजना खाते में जमा किया जाय।

(ई) वर्ष के अन्त में रियायत खाते में जो रकम नामे पड़ी हो उसमें से आधी रकम सर्वोदय साहित्य योजना खाते में नाम लिखकर रियायत खाते में जमा की जाय और आधी रकम प्रकाशक कमीशन खाते नामे लिखकर रियायत खाते जमा की जाय। अर्थात् ५० प्रतिशत रियायत की गयी, उसमें २५ प्रतिशत रियायत प्रकाशक कमीशन में से जायगी और २५ प्रतिशत रियायत खादी मार्जिन की जमा रकम में से जायेगी।

समन्वय

साधारणतया प्रदेश स्तर पर यह समन्वय किया जायगा कि जिन संस्थाओं में साहित्य बिक्री कम होने के कारण आय के प्रमाण में रियायत कम दी गयी हो उनसे यह बची जमा रकम ले ली जायेगी एवं जिन संस्थाओं में साहित्य बिक्री अधिक होने के कारण आय से अधिक खर्च हुआ हो उनकी उक्त जमा रकम में से कमी की पूर्ति की जायगी।

फेरीवालों को साहित्य-बिक्री में प्रोत्साहन

जो मान्य कार्यकर्ता खादी-भण्डार से साहित्य लेकर घूम-घूम कर पुस्तक बिक्री करेगा, उसे ३५ प्रतिशत कमीशन देने की व्यवस्था रहेगी। यानी २५ प्रतिशत कमीशन प्रकाशक कमीशन खाते से एवं १० प्रतिशत सर्वोदय साहित्य योजना खाते से दिया जा सकेगा। यह विशेष कमीशन फुटकर साहित्य बिक्री पर ही होगा, थोक बिक्री पर नहीं। जो कार्यकर्ता नियत रकम से अधिक फुटकर साहित्य बेचेगा उसे ४ प्रतिशत विशेष कमीशन सर्वोदय-साहित्य-योजना खाते से दिया जा सकेगा।

मासिक रिपोर्ट

साहित्य प्रगति की रिपोर्ट एवं अपने सुझाव हर माह प्रमाण-पत्र समिति, लखनऊ, खादी और ग्रामोद्योग कमीशन, बम्बई एवं सर्व सेवा संघ प्रकाशन, राजघाट, वाराणसी को भेजे जायें ताकि हमारे कदम किस गति से बढ़ रहे हैं, यह मालूम होता रहे।

(अ) ग्राहक की रुचि : ग्राहक किस प्रकार का साहित्य चाहते हैं इसकी जानकारी बराबर सर्व सेवा संघ प्रकाशन, वाराणसी के पास पहुँचती रहे ताकि नये-नये साहित्य के निर्माण का प्रयास होता रहेगा।

नासिक में हुई सर्वोदय-साहित्य-प्रसार योजना-समिति की बैठक में यह तय हुआ कि आगामी १ अगस्त '७१, तिलक-पुण्य-तिथि के दिन एक साथ देश भर में इस योजना की शुरुआत की जाय। उस दिन इसका शुभारम्भ समारोह पूर्वक हो।

इस अंक में

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पै०), विदेश में २२ रु०; या २५ शिलिंग या ३ डालर।
एक अंक का मूल्य २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं मनोहर प्रेस, वाराणसी में मुद्रित

सम्पादक
राममूर्ति
वर्ष : १७
अंक : ३७
सोमवार
१४ जून, '७१
पत्रिका विभाग
सर्व सेवा संघ, राजघाट, वाराणसी–१
फोन : ६४३९१ तार : सर्वसेवा

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

एक जागतिक भ्रम

हिंसा के बारे में यह आमतौर पर भ्रम फैला है कि हिंसक क्रांति जल्दी हो जाती है। लेकिन इसके बारे में मैं साफ कर दूँ। हिंसक क्रांति को करने में भी काफी समय लगता है। पुरानी व्यवस्था तोड़ देने के बाद नयी लाने में भी कम समय नहीं लगता। मनुष्य बनाये बिना क्रांति सफल नहीं कही जा सकती। 'हरेक यथाशक्ति समाज को देगा, समाज उसे आवश्यकता भर वापस करेगा।' क्रांति के इस लक्ष्य की घोषणा हुए कितने दिन बीत गये, लेकिन स्थिति क्या है?

डाक्टर और मजदूर को एक-सा देते हैं तो फिर काम करने की प्रेरणा का सवाल आ जाता है। फिर पूँजीवादी मूल्य वहाँ स्थापित होते हैं कि काम के बराबर दाम। जिन मूल्यों की स्थापना के लिए रूसी क्रांति हुई थी, वे मूल्य आज वहाँ नहीं हैं। ५४ वर्ष हो गये हैं और कितने वर्ष लगेंगे, मुझे नहीं मालूम, इतिहास को नहीं मालूम।

हमने तो एक विचित्र रास्ता अपनाया है। लोगों को यह रास्ता समझाने के लिए, अपनाने को प्रेरित करने के लिए कष्ट सहेंगे, नैतिक दबाव डालेंगे, हमारे पास इसके अलावा कोई और ताकत नहीं है। हमें नया मन बनाना है, नया समाज बनाना है। आज की संस्कृति और विज्ञान के अभिशाप से भारत की जनता को सचेत करना है। अगर बदलाव का कोई तरीका निकलेगा तो वह अहिंसा के रास्ते से ही निकलेगा।

नासिक : ८ मई '७१

—जयप्रकाश नारायण

• राहत विकास और क्रांति : कोई अनुबन्ध ?

• क्रांति का दर्शन : रिएप्रोचमेंट की प्रक्रिया

बंगला देश का संघर्ष और अहिंसा

['विनोबा, व्यक्तित्व और विचार' नामक ग्रंथ सस्ता साहित्य मण्डल ने प्रकाशित किया। विनोबाजी को ग्रंथ अर्पण करने के लिए श्री यशपाल जैन दिल्ली से आये थे। उस वक्त ब्र० वि० म० के ज्ञान-मंदिर में एक सभा हुई। आरम्भ में श्रीउमाशंकरजी शुक्ल ने सभा का उद्देश्य बताया। बाद में कॉमर्स कॉलेज के प्रिंसिपल श्री शाह ने स्वागत-भाषण किया। श्रीयशपालजी ने ग्रंथ की रूपरेखा बतायी। इस अवसर पर विनोबा द्वारा व्यक्त विचार प्रस्तुत है। —सं०]

'अब है हमारी बारी'—हमारे बहुत-से साथी परलोक चले गये हैं। जो हमसे छोटे थे, वे भी गये और जो बड़े थे वे भी गये। इसलिए यह भजन मैं हमेशा बोलता हूँ—'अब है हमारी बारी।' यशपालजी जैन दिल्ली में बैठकर दिल्ली के वातावरण को टालकर के सर्वोदय का काम करते हैं। यह सामान्य शक्ति नहीं हैं। दिल्ली में रहना और दिमाग न खोना, यह बहुत बड़ी साधना है। यह आपको सधी है। और, बहुत अच्छा साहित्य इन्होंने प्रकाशित किया है। इस जमाने में सबसे उत्तम साहित्य-प्रकाशन में नम्बर एक है गोरखपुर प्रेस, नम्बर दो में नवजीवन और सस्ता साहित्य मण्डल। बहुत बड़ी सेवा आप कर रहे हैं।

अभी ग्रंथ समर्पण किया। जैनों में सबसे बड़ा शब्द है 'निरग्रंथ'। शब्द है 'निरग्रंथ' और अर्पण किया ग्रंथ। लेकिन जो समाज अपने सेवकों की कद्र करता है वही आगे बढ़ता है। पहले जमाने में लोग यह काम धीरज से करते थे। मनुष्य को मरने देते थे। लेकिन आजकल कौन देखे राह मरने की! श्रद्धापूर्वक करते हैं, उसका नाम है श्राद्ध। मैंने कहा, 'मरने तक ठहरना चाहिए था'। मान लीजिए एक आदमी गंगा नदी तैर रहा है। पूरी नदी तैर गया है। लेकिन अब किनारे को हाथ लगना बाकी है। उतने में डूब गया तो क्या आप उसे गंगा तैरा है ऐसा कहेंगे? वैसे ही मरने तक कोई मनुष्य सत्पथ पर चलता रहा तो बेड़ा पार है। लेकिन जीवन भर सत्पथ पर चले और आखिर में वह पथ से हट गया तो क्या करेंगे? मरने से पहले कोई उधम मचाये तो क्या? लेकिन जीते जी भी गुणगान कर लेते है तो जैसे बच्चों को 'शाबाश' कहते हैं, तो बच्चा अच्छा काम करता है, वैसे ही यह होता है। लेकिन असल में जो लोग यह काम करते हैं उनका ही गुण अधिक प्रगट होता है।

'परगुण-कथनेन स्वान् गुणान् ख्यापयन्.' दूसरे का गुण गाते हुए, जाहिर करते हुए अपना ही गुण जाहिर करते हैं। गुणग्रहणशीलता बहुत बड़ा गुण है। अल्प गुण को बड़ा करना। असम के महापुरुष माधवदेव का वचन है—'अधमे केवल दोष लवय'—अधम मनुष्य दूसरों के केवल दोष देखता है, 'मध्यमे गुण दोष लवय करिया विचार'—मध्यम मनुष्य दूसरों के गुण-दोष दोनों लेकर विचार करता है, 'उत्तमे केवल गुण लवय'—उत्तम मनुष्य केवल दूसरों के गुण लेता है; 'उत्तमोत्तमे अल्प गुणक करय विस्तार'—जो उत्तमोत्तम मनुष्य होता है वह दूसरों के अल्प गुण को बढ़ाता है। गुण को बढ़ाना, गुणों को ही गाना। 'मेरे रामजी में तो हरिगुण गाना'। हरि दुनिया में भरा है। इसलिए हरिगुण गाना यानी हरएक का गुण गाना। इस प्रकार गुणगान के तौर पर ऐसा काम (ऐसे ग्रंथ लिखने का) करते हैं।

श्री भैन - बंगला देश ने हिंसात्मक प्रवृत्तियों का सहारा लेकर अपना नैतिक बल क्षीण कर दिया है। अब हम क्या करें?

बाबा—सोचने की बात है बंगला देश में चुनाव हुए। उसमें ९८ प्रतिशत वोट मुजीब को मिले। जो चमत्कार यहाँ इंदिराजी ने किया, उससे बड़ा चमत्कार वहाँ हुआ। तो उसके विरोध में वहाँ मिलिटरी आयी, और ऊपर से लोगों पर बम गिराना शुरू किया। अब वहाँ के लोगों ने उत्तम असहकार साबित किया। अहिंसा साबित नहीं की। लेकिन असहकार साबित किया। भारत में गांधीजी के जमाने में हमने भी क्या किया था? जब अंग्रेजों का राज था तब हमने असहकार ही साबित किया था, अहिंसा नहीं। लेकिन हमने जितना असहकार साबित किया उससे उन्होंने ज्यादा ही किया। लेकिन ऊपर से बम गिरे और प्रतीकार अहिंसक हो इसकी मिसाल दुनिया में अभी तक कहीं बनी नहीं है। वे लड़ रहे हैं। तो कैसे? लाठी, बंदूक से। इसलिए उनकी जो प्रतीकार की प्रक्रिया चल रही है उसका हमें गौरव महसूस होना चाहिए। वे वीर हैं, वीरता को सिद्ध कर रहे हैं, यह छोटी बात नहीं है। वे महावीर नहीं हैं। महावीर तो वह है जो अहिंसा से प्रतीकार करता है। वीर वह है जो हटेगा नहीं, मुकाबला करेगा। महावीर तो दुनिया में गत हो गये। उनकी संख्या इनी-गिनी ही रही है। लेकिन कायर बनने से वीर बनना अच्छा है। और वे आजादी के लिए कोशिश कर रहे हैं। इसलिए उनके लिए हमें आदर होना चाहिए। हम प्रार्थना कर सकते हैं तो उनकी सहानुभूति-पूर्वक मदद पहुँचाना और दुनिया की चेतना जागृत करना कर्तव्य हो जाता है।

—ब्रह्मविद्या मंदिर
१८ मई, '७१

प्रगति के पथ-चिह्न

- बिहार ने १९५१-६९ की अवधि मे तीन पचवर्षीय एव तीन वार्षिक योजनाओं के माध्यम से विकास-कार्यों में लगभग ७८४ करोड़ ६७ लाख रुपये लगाये हैं।

- १८ वर्षों की इस अवधि मे हमारी खाद्यान्न उत्पादन की वार्षिक क्षमता ५१ लाख टन से बढ़कर ८५ लाख टन से भी ऊपर पहुँच गयी है।

- वृहत और मध्यम श्रेणी की सिंचाई-योजनाओ द्वारा साढ़े ४१ लाख एकड़ खेत की पक्की सिंचाई का प्रबध हुआ है, जिसमें करीब ३१ लाख एकड़ खेत में पटवन हो रहा है।

- आहर, पईन, बाध, कुँए और नलकूपो और पम्पिंग सेटो के जरिए भी लगभग २६ लाख एकड़ खेत के लिए पटवन का प्रबन्ध है।

- प्राथमिक स्कूलो की संख्या १९५१ में २३,९९९ थी जो आज ४४,५०० है, छात्र-छात्राओं की संख्या साढे १४ लाख से बढ़कर करीब ४४ लाख हो गयी है। माध्यमिक स्कूलो की संख्या, जो १९५१ में ६४३ थी, आज २,२७५ है और छात्र-छात्राओं की संख्या भी १ लाख से बढ़कर ५ लाख हो गयी है।

—बिहार सरकार के जन-सम्पर्क विभाग द्वारा प्रसारित

राहत, विकास और क्रान्ति : कोई अनुबन्ध ?

—जयप्रकाश नारायण

राहत और विकास इन दोनों में हमने भेद नहीं किया। बिहार रिलीफ कमिटी ने राहत का काम पूरा होने के बाद स्थायी रिलीफ का काम हाथ में लिया, ताकि सूखा पड़ने पर भी अकाल न पड़े। इस माने में विकास का काम एक 'स्थायी राहत' (स्थायी रिलीफ) का काम हो जाता है।

हम जो मुसहरी में कर रहे हैं, वह इस प्रकार से होना चाहिए कि अन्य क्षेत्रों में भी वैसा किया जा सके। यह सही दृष्टि है। लेकिन इसमें एक फर्क करना पड़ेगा। विनोबाजी जहाँ बिहार में रहे, उनसे एक विशेष प्रेरणा मिली। वहाँ राज्यपाल, मुख्य मंत्री आदि उनसे मिलने आते थे। राजनीतिक पक्षों की बैठक भी उनके सान्निध्य में होती थी। यह विनोबाजी के व्यक्तित्व के प्रभाव के कारण होता था। अब जहाँ वे नहीं हैं, वहाँ यह नहीं हो सकेगा। लेकिन इसका मतलब यह नहीं कि जहाँ विनोबाजी नहीं गये वहाँ ग्रामदान नहीं हुए, प्रखण्डदान नहीं हुए, जिलादान नहीं हुए। इसी प्रकार सब प्रदेशों में तो मैं नहीं जा सकता। लेकिन जहाँ मैं हूँ, वहाँ कुछ विशेषता रहेगी, जो हर जगह नहीं हो सकेगी। यहाँ मुख्य मंत्री, सरकारी अधिकारियों वगैरह की ओर से काफी सहयोग मिलता है। ऐसा और प्रदेशों में नहीं हो सकेगा, यह मैं मानता हूँ।

समग्रता की दृष्टि

दूसरी बात यह कि मेरी और आपकी दृष्टि में समग्रता होनी चाहिए। हम एक समग्र-क्रान्ति (टोटल रिवोल्यूशन) करने जा रहे हैं। इसलिए एक काम पूरा हो जाय, तब दूसरा हाथ में लेंगे, इस तरह सोचना ठीक नहीं है। पहले सभी गाँवों में प्राप्ति का काम पूरा हो जाय, फिर पुष्टि हो जाय, बीघा-कट्ठा बँट जाय, ग्रामकोष मिल जाय, इसके बाद ही आगे का काम हाथ में लेंगे, ऐसा हो नहीं सकता। सब काम साथ-साथ चलेंगे। ग्रामसभा बनी, उसका ग्राम-स्वराज्य की स्थापना हुई। यह गाँव की लोकसभा है। वास्तव में यही सच्ची लोकसभा है जिसमें प्रत्यक्ष लोक 'पब्लिक' ... है। अब हम ग्रामसभाओं से ग्रामदान की ४ शर्तों के अतिरिक्त ११ संकल्प लेने के लिए कहते हैं, जो उनमें एक संकल्प यह भी है कि हमारे गाँव में कोई भूखा, नंगा और बेघर न रहे, इसके लिए हम कोशिश करेंगे। यह संकल्प तो हो गया, लेकिन वह पूरा कैसे होगा ? क्या हम यह कहेंगे कि हमने तो संकल्प करा दिया, अब वह पूरा कैसे हो, इससे हमें कोई मतलब नहीं ? यह तो बिलकुल गैर-जिम्मेदारी की बात होगी।

मुझे लगता है कि हम क्रान्तिकारी और अध्यात्मवादी कहलाने में तो गर्व मानते हैं, लेकिन व्यवहारवादी बनने से भागते हैं। हमें यह भूलना नहीं चाहिए कि ग्रामसभा बनाने के बाद भी अगर गरीबी और बेकारी की समस्या हल न हुई, तो ग्रामसभा टूट जायेगी। हम तो एक राज्य बना रहे हैं—ग्रामसभा, जनता का राज्य। जब राज्य बनायेंगे, तब क्या सिर्फ बीघा-कट्ठा ही बाँटेंगे ? हाँ, गरीबी और बेकारी की समस्या सिर्फ एक गाँव को लेकर हल नहीं हो सकती। तो फिर एक प्रखण्ड का क्षेत्र लेना होगा, एक जिले का क्षेत्र लेना होगा। लेकिन इन सभी प्रश्नों को हाथ में लेना ही होगा। हमारी लोकतंत्र की कल्पना नीचे से ऊपर की ओर जाने की है। तो जब नीचे के स्तर पर निर्णय, आयोजन आदि होंगे, तभी ऊपर की ओर हम जायेंगे न ?

अगर गाँव में लोग पूछेंगे कि बिजली कैसे मिलेगी, उसके लिए क्या-क्या करना पड़ेगा, तो क्या हम कहेंगे कि हमें खबर नहीं है ? कुछ मोटी-मोटी जानकारी हमारे कार्यकर्ताओं को होनी चाहिए। हर ग्रामसभा करेगी, ऐसा कह देने से काम चलेगा नहीं। ग्रामसभा को भी मार्ग दिखाना पड़ेगा।

ग्रामसभा का मार्गदर्शन कौन करेगा ?

ग्रामसभा को मार्ग दिखाने के लिए क्या आवश्यकता होगी ? यह आपको ही करना पड़ेगा। हम कहते तो हैं कि बी० डी० ओ० का मतलब है भूदान डेवलपमेंट ऑफिसर, लेकिन क्या उनको कह देने से वह भूदान का ऑफिसर बन जायेगा ? आप खुद चिन्तन नहीं करेंगे, योजनाएँ नहीं समझेंगे, कानून वगैरह की जानकारी नहीं प्राप्त करेंगे, तो बी० डी० ओ० को भूदान का ऑफिसर कैसे बना सकेंगे ?

खादी ग्राम-आधारित हो, ऐसी चर्चा तो बहुत हुई। लेकिन अब तक इस दिशा में कुछ हुआ नहीं। इसके लिए भी प्रयोग करने पड़ेंगे। हमने एक नक्शा बनाया है। उसे कार्यान्वित करना है। उसके मुताबिक प्रत्यक्ष काम होना चाहिए। इस काम के लिए कार्यकर्ता चाहिए। आप में से ही किन्हीं को काम के लिए तैयार होना पड़ेगा।

इस प्रकार आगे के काम के लिए ग्रामसभा के लोगों को लेकर शिविर चलाने पड़ेंगे और उनको ये सब चीजें समझानी पड़ेंगी। पहले हम खुद समझेंगे, तभी ग्रामवालों को समझा सकेंगे। हमको ही पूरी समझ नहीं होगी, तो लोगों को कैसे समझायेंगे ?

बासगीत जमीन का पर्चा दिलाना, तरह तरह-सेवा, ये सब काम भी साथ-साथ चलेंगे। एकांगी होने से काम बनेगा नहीं। काम करते-करते अनुभव होते हैं तो उन पर से आगे सोचने को मिलता है। हमने देखा कि बासगीत कानून में कुछ दोष है, कमियाँ हैं, उसमें सुधार होने चाहिए। इस बारे में मुख्य मंत्री से बात हुई है। एक क्षेत्र में बैठकर काम करते हैं, तो यह सब अनुभव आते हैं।

हमने यह भी देखा है कि किसान की जमीन बिक जाती है। बंधक रखने के

सन तो यह कागज लाओ और वह कागज लाओ, ऐसा कहते हैं, मगर वेचने के वक्त कुछ नहीं। पूछा, तो कहा गया कि यह सब देखने की जिम्मेवारी खरीदनेवाले की है। वैसे ही सीलिंग कानून में भी क्या-क्या कमियाँ हैं, यह ध्यान में आया है।

मुजफ्फरपुर शहर की दोनों तरफ गंदी नालियाँ हैं। हमारा ध्यान जब उधर गया, तो देखा कि किसानों को खाद भी मिले और नाली साफ भी रहे, ऐसा कोई मार्ग निकल सकता है। फिर, सर्वे की पद्धति में भी क्या-क्या त्रुटियाँ हैं, इसका भी अनुभव आया। उनके निराकरण के लिए अपने सुझाव मुख्य मंत्री को लिख-कर दिये हैं। प्रत्यक्ष काम करने से ही ये सब बातें ध्यान में आ सकती हैं।

ये समस्याएँ गाँव की हैं

अब कहिये कि ये सारी समस्याएँ हैं या नहीं ? ये सब किसान की समस्याएँ हैं, गाँव की समस्याएँ हैं। इसलिए मेरा कहना है कि हमारी दृष्टि समग्रता की हो। उत्पादन कैसे बढ़े, बेकारी कैसे घटे, इसका चिन्तन हमें करना ही पड़ेगा। उस दिन (१८ अप्रैल १९७१ को) मैंने रोहुआ की सभा में कहा कि पाँच वर्ष में इस प्रखण्ड में जो कोई हाथ से काम करना चाहेगा, वह बेकार नहीं रहेगा। यह कोई खयाली बात नहीं है। हम ठीक ढंग से काम करें, तो यह हो सकता है। अगर ऐसा करना हो तो क्षेत्रीय विकास के लिए क्या-क्या कदम हो सकते हैं, यह सोचना ही पड़ेगा।

मुझे जानकारी मिली कि मुजफ्फरपुर जिले में ३० वर्ष पहले जितनी जमीन सिंचित होती थी, उसमें से बहुत कम जमीन को आज पानी मिलता है। इतने सालों के आयोजन के बावजूद आज ऐसी स्थिति है। इस पर भी ध्यान देना होगा।

जनसंख्या बढ़ रही है। उसको रोकने का भी उपाय करना चाहिए। सिर्फ ब्रह्मचर्य पर भाषण दे देने से तो यह समस्या हल नहीं हो जायेगी। इसलिए मैं बार-बार कहता हूँ कि समग्रता की दृष्टि चाहिए।

विकास के बिना समाज में क्रान्ति नहीं हो सकती। गरीबी मिटाने का काम क्रान्तिकारी जरूर है, लेकिन गरीबी विकास-कार्यक्रमों के बिना मिटेगी नहीं। इस प्रखण्ड (मुसहरी) में प्रति व्यक्ति सिर्फ ३० डिसमल जमीन है। इसलिए केवल जमीन बाँट देने से समस्या का हल होनेवाला नहीं है। उत्पादन भी बढ़ना चाहिए, विकास होना चाहिए।

हमने छोटे किसानों के लिए चापाकल बिठाने का काम हाथ में लिया। हरिजनों के लिए पेयजल का प्रबन्ध हो, इस दृष्टि से भी चापाकल लगवाये। इस कार्य में भी काफी अनुभव हुए हैं और कई सबक सीखने को मिले हैं। सरकारी तंत्र के माध्यम से जितना काम होता था, उससे कई गुना कम खर्च में और बहुत कम समय में हमने कर दिखाया। मुख्य मंत्रीजी को यह देखकर आश्चर्य हुआ। बिहार रिलीफ कमिटी के काम के बारे में अपनी रिपोर्ट में श्री वर्गीज ने लिखा था कि ऐसी स्वतंत्र एजेन्सियाँ सरकार के लिए 'पेस सेटर' (गतिवर्धक) बन सकती हैं। कम समय और कम खर्च में कैसे काम हो सकता है, इसकी यह एक मिसाल है।

गाँव एक राज्य होगा न !

इस प्रकार ये सब काम करते हुए हमें ग्राम-सभाओं को आगे ले जाना है। हमारी कोशिश हो कि ये सब बातें ग्राम-सभा के ध्यान में आती जायँ और ग्राम-सभा खुद अपनी जिम्मेदारी समझने लगे। फिर ग्रामसभा लोगों को समझायेगी। आज हम देखते हैं कि कई जगह एक किसान की जमीन कई टुकड़ों में बँटी हुई है। इससे कई दिक्कतें सामने आती हैं। सिंचाई की व्यवस्था करने में भी बाधा आती है। इसलिए हमें लोगों को समझाना पड़ेगा कि जमीन की अदला-बदली करके चकबन्दी करो। ग्रामसभा में आज यह करने की शक्ति नहीं है। लेकिन यह शक्ति उसमें आये, इस ढंग से उसको तैयार करना पड़ेगा।

वैशाली में दीवानजी ने इस दिशा में अच्छा काम किया है। उन्होंने कई ग्रुप बनाये हैं और उनके लिए सामूहिक तौर से सिंचाई की व्यवस्था की है। ऐसे एक ग्रुप में ३३ छोटे किसान हैं और कुल जमीन ४८ एकड़ इकट्ठी हुई है। इतनी जमीन आज २२७ टुकड़ों में बँटी हुई है। अब इस ४८ एकड़ के पूरे प्लाट के लिए सिंचाई का प्रबन्ध करने का सोचा है। उन्होंने ४ या ६ इंच के बोरिंग के लिए दरखास्त दी है। इस प्रकार सब टुकड़ों को पानी मिल जायेगा। नहीं तो एक-एक टुकड़े को लेकर पानी का प्रबन्ध कैसे हो सकता था ? एक बार सब टुकड़ों को पानी मिल जायेगा तब फिर अनुभव से लोग चकबन्दी के लिए भी तैयार हो जायेंगे। इस प्रकार लोगों की हम मदद कर सकते हैं।

मेरा कहना यह है कि गाँव तो एक राज्य है। उसमें सभी बातें आयेंगी। उनके बारे में हमारा चिन्तन चलना चाहिए। विकास के प्रश्न पर बैठकर विचार करना चाहिए। केवल खेती से ही नहीं होगा। दूसरे उद्योगों के बारे में भी सोचना पड़ेगा। शिक्षा में भी परिवर्तन आना चाहिए। आज शिक्षा का क्या हाल है ? अभिभावक, शिक्षक, शिक्षा-शास्त्री, सब मिलकर नयी शिक्षा-योजना तैयार करें, ऐसी कोशिश करनी पड़ेगी।

विकास के काम में मेरी भूमिका

विकास के काम के बारे में मेरी भूमिका इस प्रकार की है। सम्भव है, किसी को कुछ सहायता देने में मुझसे कुछ गलती हुई होगी। इसमें भावना का प्रश्न है, करुणा का प्रश्न है। कोई मेरे पास अपनी कौटुम्बिक या किसी प्रकार की तकलीफ लेकर चला आता है, तो मैं अपने को रोक नहीं पाता। मुझसे जितना हो सके, उतना करने की मैं कोशिश करता हूँ। यह सब करुणा-प्रेरित है और उसमें मुझसे कुछ गलतियाँ भी हुई होंगी। लेकिन इसकी जिम्मेवारी आप में से किसी के ऊपर नहीं है। फिर भी विकास की जिम्मेवारी आप पर अवश्य है।

किसी को चापाकल दे देना औघड़-दानी बनने की बात नहीं है। यह विका→

क्रान्ति का दर्शन : रिएप्रोचमेंट की प्रक्रिया

—श्री धीरेन्द्र मजूमदार से कुछ महत्त्वपूर्ण प्रश्नोत्तर—

प्रश्न ग्रामदान और ग्रामस्वराज्य की इस क्रान्ति में हमलोग जो लगे हुए हैं, कहते जरूर हैं कि हम अन्याय और गरीबी मिटाना चाहते हैं लेकिन अभी तक हम अन्याय-पीड़ित और गरीब लोगों के मन में यह विश्वास पैदा नहीं कर सके हैं कि हम उनके तरफदार हैं। क्या इस क्रान्ति में ऐसा कोई कार्यक्रम नहीं निकाला जा सकता है जिससे वे समझें कि हम उनके हैं ?

उत्तर वस्तुतः हम किसी वर्ग विशेष के तरफदार नहीं हैं इसलिए हमको ऐसे कार्यक्रम खोजने की जरूरत नहीं है जिससे गरीबों की तरफदारी साबित हो। हमको अन्याय और गरीबी अवश्य मिटानी है, लेकिन किसी की तरफदारी करके नहीं। हमको पूरे समाज की तरफदारी करनी है। आपको समझना चाहिए कि समाज की जिस प्रथा और पद्धति के कारण अन्याय और गरीबी का जन्म होता है उसका शिकार अन्यायी और अन्याय-पीड़ित दोनों ही हैं। वस्तुतः अमीर और गरीब वर्ग के बीच में कोई विभाजक रेखा नहीं है और न अन्यायी और अन्याय-पीड़ित में ही है। अमीर और गरीब की लम्बी सीढ़ी बनी हुई है जिसका प्रसार फुटपाथ पर बैठकर भीख माँगनेवालों से लेकर टाटा, बिरला और हेनरी फोर्ड तक पहुँचा हुआ है। उसी तरह अन्याय और अन्याय-पीड़ित में कोई विभाजक नहीं है। अगर आप गहराई से निरीक्षण करेंगे तो पता चलेगा कि समाज के हर मनुष्य का दोनों रोल है। वह कहीं अन्यायी है और कहीं दूसरे बिन्दु पर अन्याय-पीड़ित भी है। इसी को तो गांधी कहता था कि हर मनुष्य के अन्दर में देवासुर का युद्ध चलता है। अतएव आप लोगों के मन से अपने को असमर्थ महसूस करने की बात निकाल देनी चाहिए।

आपके मन में इस प्रकार की भावना इसलिए उठती है कि आप लोगों में पुरानी क्रान्तियों की मान्यताएँ भरी हुई हैं। इस तरह पुरानी चीजों को मानते रहनेवालों को ही न कट्टरपन्थ मनुष्य कहते हैं। क्रान्ति-विचार भी समय आने पर कट्टरपन्थ विचार हो जाता है। जब कभी नयी क्रान्ति का उद्घोष होता है तो पुराने परम्परावादी क्रान्ति के संस्कार के कारण नयी क्रांति में लगनेवाला मनुष्य भी भूल-भुलैयों में पड़ जाता है। अतएव आपको वर्तमान क्रान्ति पर गहराई से विचार करने की जरूरत है। वह यह है कि इस क्रान्ति में कोई वर्ग किसी दूसरे वर्ग से संघर्ष नहीं करता है, बल्कि पूरा समाज परिस्थिति से संघर्ष करता है जिस कारण अन्याय, गरीबी, बेकारी आदि संकटों का जन्म होता है।

प्रश्न लेकिन आज जो गरीब तथा अन्याय-पीड़ित मनुष्य हैं वे अत्यन्त कुण्ठित और पंगु हो गये हैं। अगर उनकी तरफ से अपनी स्थिति को सुधारने के लिए क्रिया-शीलता का कार्यक्रम नहीं उपस्थित किया जायगा तो वे उसी तरह से कुण्ठित और मूर्छित बनके पड़े रहेंगे। जिनके पास जमीन नहीं है उनको क्या आप इस बात के लिए उद्बोधित और संगठित नहीं कर सकते हैं कि वे उनसे जमीन माँगें जिनके पास जमीन है। हम छीनने की बात नहीं करते हैं, माँगने की ही बात कहते हैं। क्या माँगना अहिंसात्मक प्रक्रिया नहीं है ? अगर है तो मेरी समझ में इनके द्वारा माँगने का कार्यक्रम चलाया जायगा तो आन्दोलन में शक्ति और गतिशीलता आयगी। आज जो बीघा-कट्ठा वितरण की बात की जा रही है वह तो दाताओं पर मेहरबानी की बात है। उसमें से क्रान्ति कैसे निकलेगी ?

उत्तर पहले आपको अहिंसा के प्रश्न पर विचार करने की जरूरत है। अहिंसात्मक प्रक्रिया और शान्तिमय प्रक्रिया दो अलग चीजें हैं। सदियों से शोषित और दलित बने रहने के कारण गरीब वर्ग में ईर्ष्या और द्वेष का घड़ा भरा हुआ है। उसकी भूख जमीन की है। इसलिए जमीन वालों के प्रति उनके अन्दर द्वेष और क्षोभ भरा हुआ है। ऐसी स्थिति में जमीन के बिन्दु पर केवल विचार सिखाकर उन्हें अहिंसक नहीं बनाया जा सकता। चूँकि उनकी स्थिति मजबूरी की है इसलिए आप बहुत कोशिश करेंगे तो उनमें अधिक से अधिक शान्तिमय क्रियाशीलता ला सकेंगे।

—कर रहा काम है। अलबत्ता, हमें यह देखना है कि लोगों के मानस-परिवर्तन और समाज-परिवर्तन का जो काम हम कर रहे हैं, उस पर यह विकास का काम हावी न हो जाय। हमारे मुख्य काम में यह विकास का काम भी मददगार बन सकता है और बना भी है, ऐसा मेरा मानना है। हालाँकि हमारी यह दृष्टि कतई नहीं रही कि हम किसी को मदद कर दें या विकास का काम करा दें, तो हमारा काम बढ़े। ऐसा सौदा हमें नहीं करना है, किसी को कोई प्रलोभन नहीं देना है।

यह सारा मैंने आपके सामने इसलिए रखा कि हमारे काम की भूमिका क्या है, वह आप सबके ध्यान में आये। यहाँ मुसहरी प्रखण्ड में जो हो रहा है उसमें मेरी उपस्थिति के कारण जो कुछ विशेषता है, वह दूसरे प्रदेशों में भले ही न हो सके, लेकिन जो यह समग्र दृष्टि है वह तो सब जगह हो सकती है।

मैंने यह भी देखा कि मुसहरी के नक्सलवाद की जड़ में मार्क्सवाद नहीं है। भूख, शोषण, बेईमानी, मुकदमेबाजी, ये सब यहाँ के नक्सलवाद की जड़ में हैं। ऊपर की परिस्थिति पर ही देखने से कुछ और लगती हो, तह में क्या है, यह हमें देखना पड़ेगा। बीमारी की जड़ कितनी गहरी है इसको समझना ही पड़ेगा और उसमें से रास्ता निकालना पड़ेगा।

—सिताबदियारा। २५-४-'७१

लेकिन केवल मालिकों की क्रियाशीलता हिंसा नहीं करती है। अमुक हद तक के बाद 'प्रोवोकेशन' मिलने पर वे हिंसात्मक हो जायेंगे, क्योंकि उनकी वृत्ति में अहिंसा नहीं है। दूसरे कारणों से भी वे अहिंसात्मक नहीं रहेंगे। अगर मान भी लें कि जमीनवालों की तरफ से कोई 'प्रोवोकेशन' नहीं होगा तब भी माँगते रहने पर भी अगर जमीन नहीं मिलेगी, तो उनमें निराशा होगी। हर मनोवैज्ञानिक जानता है कि निराश व्यक्ति या तो सम्पूर्ण अचेतन हो जाता है या विध्वंसकारी बन जाता है। वस्तुतः हिंसा निराशा की ही अभिव्यक्ति मात्र है।

दूसरी तरफ जमीनवाले सदियों तक मजदूरों को दबाते रहे हैं और मजदूर भी हमेशा दबते रहे हैं। ऐसी स्थिति में जब सब मिलकर संघटित रूप से माँगने के लिए पहुँचेंगे तो उनको लगेगा कि उनकी प्रतिष्ठा पर आघात हो रहा है। आप जानते हैं कि प्रतिष्ठा पर आघात असहनीय होता है। उस कारण मालिकों की तरफ से भी हिंसा की अभिव्यक्ति अनिवार्य होगी। अतः आपके तरीके से जमीन छीनी जा सकती है, माँगी नहीं जा सकती। छीनने की प्रक्रिया में थोड़े अरसे के लिए सही, तात्कालिक सफलता मिलती है, और हिंसा के प्रहार से परिचित मार्ग होने के कारण, भूमिवान भी 'डीमॉरलाईज्ड' हो जाता है। लेकिन आप कहते हैं कि छीनने की प्रक्रिया आपकी नहीं है।

अतएव अहिंसा की प्रक्रिया पर आपको और गहराई से सोचना होगा। अगर आप समाज का वर्ग-भेद मिटाना चाहते हैं और पूरे समाज को इस भेद के खिलाफ संघर्ष कराना चाहते हैं तो आपका तरीका 'कनफ्रन्टेशन' का नहीं होगा' रिएप्रोचमेन्ट' का होगा। 'कन्फ्रन्टेशन' में वंचित वर्ग को प्रतिरोध के लिए संघटित किया जाता है जबकि 'रिएप्रोचमेन्ट' के लिए जिन लोगों ने दूसरों को वंचित रखा है उन्हीं को संघटित करना पड़ता है। इस पद्धति में मालिकों को ही पहल करनी पड़ेगी। आखिर मजदूर क्या लेकर 'रिएप्रोच' करेगा? 'रिएप्रोचमेन्ट' के लिए कुछ सौगात देनी पड़ेगी न!

आप जो बीघा में एक कट्ठा वितरण का कार्य कर रहे हैं उससे क्या गरीबी मिटने वाली है? वह तो 'रिएप्रोचमेंट' की प्रतिमा पर पुष्पांजलि चढाना मात्र है। उससे मालिक-मजदूर के बीच सम्बन्ध-निर्माण का श्रीगणेश होता है। गरीबी, अन्याय, अज्ञान आदि मिटाने का संकल्प तो पूरे गाँव के लोग करते हैं जिसका अमल ग्रामसभा बनने के बाद ही हो सकेगा।

प्रश्न : आपने कहा कि मजदूरों को संघटित करके जमीन माँगी नहीं जा सकती है छीनी जा सकती है, यह बात मेरी समझ में नहीं आयी। अगर मजदूरों में अविश्वास और क्षोभ है, रोष और विरोध है, तो भी अब तक हिंसावालों ने इन भावनाओं की प्रेरणा से संघटित कर जमीन छीनने का कार्यक्रम चलाया है। अगर हम उसी तरह उनके साथ बैठकर उनको अहिंसक प्रेरणा से संघटित करें और उनके परिणाम-स्वरूप उनके दिल में सद्भावना का विकास करके भूमिवानों को जमीन देने के लिए कहलायें, तो क्या उसमें से अहिंसा और प्रेम की भावना नहीं निकल सकती है? यह प्रक्रिया भी पुनर्मिलन (रिएप्रोचमेंट) की ही तो होगी। अगर आप मालिकों को समझाकर पुनर्मिलन की दिशा में प्रेरित कर सकते हैं तो मजदूरों को क्यों नहीं कर सकते हैं?

उत्तर : मालिकों की भावना और मजदूरों की भावना में अन्तर है। मालिकों में स्वार्थ, मोह, ममता आदि जो विकार-वृत्तियाँ हैं, वे किसी दूसरे की क्रिया की प्रतिक्रिया नहीं हैं। प्रकृति में स्वभावतः जो संस्कृति और विकृति के तत्त्व मौजूद रहते हैं, मालिकों की उपरोक्त भावना उन्हीं विकृतियों की अभिव्यक्तियाँ मात्र हैं। अति प्राचीन काल से मनुष्य शिक्षा-दीक्षा तथा साधना की प्रक्रिया से संस्कृति का विकास करते हुए इस विकृति के निरसन का प्रयास करता आया है। आज हम उनके अन्तर्निहित सांस्कृतिक तत्त्व को शिक्षण-क्रिया से विकसित करके उनकी उस प्राकृतिक विकृति का निराकरण करने का प्रयास कर रहे हैं। जमाने की आवश्यकता के कारण उस प्रयास का परिणाम तेजी से आगे आ रहा है।

लेकिन मजदूरों के अन्दर अविश्वास, क्षोभ, द्वेष, विरोध आदि विकारों का जो पुँजीकरण हुआ है वह प्रकृति के अन्तर्निहित स्वाभाविक विकृति की अभिव्यक्ति नहीं है। वह तो मालिकों की विकृतिमूलक क्रियाओं की प्रतिक्रिया है। इस प्रतिक्रिया का निराकरण तभी हो सकता है जब उनके अनुभव में मालिकों की अब तक की प्रतिकूल क्रिया के बदले में कुछ अनुकूल क्रिया दिखायी दे। इस अनुकूल क्रिया की अनुकूल प्रतिक्रिया के सहारे ही आप उनमें शिक्षण-प्रक्रिया द्वारा सांस्कृतिक विकास का कार्यक्रम प्रारम्भ कर सकते हैं। जब तक उनके अनुभव में हजारों वर्षों से चली आयी प्रतिकूल क्रिया का कोई विकल्प नहीं दिखाई देगा, तब तक वे आपकी बात सुन नहीं सकते। इसलिए मैं कहता हूँ, कि इस आन्दोलन का प्रारम्भ बड़े और मध्यम वर्ग के किसानों द्वारा ही हो सकता है। हमेशा मजदूरों में प्रतिक्रिया की भावना ही रही है, और आज भी उनकी क्रियाशीलता प्रतिक्रिया के रूप में ही प्रकट होगी। वस्तुस्थिति का यह तथ्य है। इसे आपको समझना चाहिए। मजदूरों में जो प्रतिक्रियात्मक भावना आज मौजूद है उसे छीनने की क्रिया में परिणत करना सहज और स्वाभाविक है। लेकिन अगर आप इस भावना को बदलना चाहते हैं तो किसी नवप्रस्फुटित सांस्कृतिक भावना की प्रतिक्रिया में ही उनकी सिद्धि हो सकेगी।

प्रश्न : क्षोभ और विरोध में एक शक्ति है इसे भी आप मानेंगे न? क्या हम अपने उद्देश्य की सिद्धि में इस शक्ति का इस्तेमाल नहीं कर सकते हैं?

उत्तर : शक्ति तो बन्दूकों की नली में से भी निकलती है। लेकिन वह शक्ति क्रान्ति की नहीं होती, विनाश की होती है।

इसी बिन्दु पर क्रान्ति के शास्त्र में गांधीजी ने नयी बात बतायी है। वह है साध्य और साधन की एकरूपता। सांस्कृतिक साध्य के लिए विकृतिमूलक साधन का अगर आप इस्तेमाल करेंगे तो सिद्धि भी विकृतिमूलक ही होगी। आप कहेंगे कि इन शक्तियों को उदर्ध्वीकरण (सब्लीमेट) करके मनुष्य अपने विकास के लिए इस्तेमाल कर सकता है, लेकिन आपका ऐसा सोचना, मनुष्य ने सनातन काल से जो गलती की है, उसी की एक कड़ी मात्र है।

इन्सान केवल जिन्दा नहीं रहना चाहता, वह अपनी उन्नति भी करना चाहता है। उसने इसके लिए प्रकृति की अन्तर्निहित संस्कृति का विकास तथा विकृति के निरसन और नियन्त्रण की पद्धति को अपनाया। अपने विकास के लिए उसने विकृति तत्त्व की शक्ति को 'सब्लीमेट' कर उसके इस्तेमाल का प्रयास किया।

प्रकृति में सहकारिता सांस्कृतिक तत्त्व है जबकि प्रतिद्वन्द्विता विकृति-तत्त्व है। इन्सान ने प्रतिद्वन्द्विता की इस विकृति-शक्ति को अपनी तरक्की के लिए इस्तेमाल किया। परिणाम-स्वरूप जहाँ कुछ भौतिक उन्नति सिद्ध हुई वहाँ परस्पर संघर्ष की वृत्ति का भी विकास हुआ, जिसके फल-स्वरूप आज का संसार सार्वत्रिक संघर्ष से चूरचूर हो रहा है। उसी तरह विकृति के नियन्त्रण के लिए दण्डशक्ति के रूप में विकृति-शक्ति का ही संगठन किया गया। फलस्वरूप वह शक्ति अपनी मात्रा बढ़ाते-बढ़ाते आज इस रूप में प्रकट हो रही है कि इन्सान का अस्तित्व ही खतरे में पड़ गया है। अतएव आपका लक्ष्य अगर दण्डमूलक विकृति-शक्ति के स्थान पर संस्कृति मूलक सम्मति-शक्ति का अधिष्ठान करना है, तथा अपने विकास के लिए प्रतिद्वन्द्विता के रूप में विकृति-शक्ति के इस्तेमाल के बदले में सहकारिता मूलक संस्कृति-शक्ति का विकास करना है, तो उसकी सिद्धि के लिए क्रोध, शाप, विरोध आदि विकृति-शक्ति के इस्तेमाल का विचार आपको छोड़ ही देना होगा। ●

<u>सरकारी सहायता</u>

खादी और मिल-वस्त्र

(वी० रामचन्द्रन्)

कपड़ा मिल तो खड़ा हो उनके सरपर, पर खादी खड़ी हो अपने पाँव पर : समाजवादी न्याय कपड़ा मिल को सहायता खादी को आत्म-निर्भरता का उपदेश

इस देश में माना यह जाता है कि बड़े-बड़े मिल-मालिक, पूँजीपति देश के गरीबों की सेवा कर रहे हैं क्योंकि मिलों में मोटा एवं सस्ता कपड़ा तैयार करने में वे पूँजी लगाते हैं। भारत में कपड़ा मिल उद्योग को खड़ा हुए अब एक सौ साल से अधिक हो रहा है। वह इतना नया नहीं कि दावा कर सके कि उसे शैशव काल में झंझावात से गुजरते समय संरक्षण दिया जाय। जन्मकाल से ही ये मिलें सरकार की छत्र-छाया में पल रही हैं। इस समय इन्हें कहा गया है कि वे अपने कुल उत्पादन की एक चौथाई नियंत्रित किस्म के माल की करें यानी २५ प्रतिशत मोटा, सस्ता, खुरदरा कपड़ा बनायें जो गरीबों के काम आ सके। शेष वे अपनी मर्जी से बनायें। जो मिलें निर्धारित मात्रा से जितना मीटर कम कपड़ा तैयार करेंगी उन पर उन्हें ६ पैसे प्रति मीटर जुर्माना देना होगा। पर व्यवहार में होता यह है कि ये मिलें नियंत्रित कपड़ों के न बनाने का ही अपना नियंत्रण चलाती हैं, फलतः मोटे कपड़े के उत्पादन की सख्त कमी है।

पहली अप्रैल 'सार्वत्रिक मूर्ख दिवस' के रूप में मनाया जाता है। हमारी सरकार का नया वर्ष उसी दिन से शुरू होता है। साल भर में सरकार कौन-कौन एवं कैसा-कैसा काम करेगी उसका अंदाज उसके नव-वर्ष-दिवस से ही लगाया जा सकता है। गत-मूर्ख-दिवस यानी १ अप्रैल १९७१ को विदेश व्यापार मंत्री ने कपड़ा मिलों को ये दो कदम उठाये जाने की धमकी दी (१) नियन्त्रित माल के उत्पादन की मात्रा वर्तमान २५ प्रतिशत से बढ़ाकर ४० या ५० प्रतिशत तक की जायगी, (२) नियन्त्रित माल का निर्धारित मात्रा से कम उत्पादन करने वालों पर जुर्माना ६ पैसे से बढ़ाकर २५ पैसे प्रति मीटर किया जायगा।

यह धमकी जिस दिन दी गयी उसे ध्यान में रखिये। धमकी देने के दिन के तीन सप्ताह के अन्दर ही सरकार ने कपड़ा-मिल-उद्योग के इस प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया कि नियन्त्रित माल (मोटा कपड़ा) कुल उत्पादन का चौथाई ही रहे। इस उत्पादन पर सरकार उसे सबसिडी (आर्थिक सहायता) दे। यह सबसिडी शेष ७५ प्रतिशत कपड़े के मूल्य में से आये।

फारमूला यह तैयार किया गया कि सबसिडी फण्ड तैयार करने को विदेशों से मँगायी जाने वाली रुई पर प्रति गाँठ तीन सौ रुपये लेवी लगायी जाय। विदेशी रुई से सिर्फ महीन कपड़ा (अनियन्त्रित किस्म) ही बनाया जाता है। वर्तमान-रुई-आयात वर्ष में ११ लाख गाँठ रुई के आने का हिसाब है। उसमें पौने दस लाख गाँठ विभिन्न मिल-मालिकों को दी जा चुकी है। अब जो शेष सवा लाख गाँठ उन्हें दी जाने को है, सबसिडी-फण्ड के लिए लेवी वे सिर्फ इसी पर देंगे यानी पौने चार करोड़ रुपया, जबकि उप-भोक्ताओं से वे इस मद में कुल गाँठों पर तैंतीस करोड़ (११ लाख × ३००) रुपये प्राप्त करेंगे। इस तरह इस कदम से बिना हाथ पाँव हिलाये उन्हें सवा उन्तीस करोड़ रुपये की आमदनी हो गयी। विदेशी रुई से बने कपड़े का जो दाम निर्धारित किया जाता है वह इस तरह है कि यह लेवी यदि वर्तमान मूल्य में से भी दी जाती तो मालिकों को कोई घाटा नहीं होता। इस फारमूला का एक हिस्सा यह भी है कि सुपरफाइन, फाइन और हायर मीडीयम

पड़े पर क्रमश. १५, १२ और ६ पैसे प्रति मीटर की लेवी लगाकर मिल उद्योग वाले ७५ लाख रुपये सबसिडी फण्ड में देंगे। मोटा कपड़ा बनाने में चूकनेवाले मिलों के जुर्माने से वसूल रकम में से सरकार भी इसमें उतना ही (७५ लाख) रुपये देगी। इस तरह सबसिडी के सवा पाँच करोड़ रुपये होंगे। मई-जुलाई ७१ की तिमाही में १० करोड़ मीटर मोटा कपड़ा बनेगा जिस पर यह सबसिडी दी जायगी यानी पचास पैसे से कुछ अधिक की प्रति मीटर सबसिडी। वर्ष का हिसाब जोड़ा जाय तो सालभर में ४० करोड़ मीटर मोटा कपड़ा तैयार किया जायगा। मिलवालों का कुल वार्षिक उत्पादन ४०० करोड़ मीटर है। इस तरह वे चौथाई (२५ प्रतिशत) के बदले मात्र दसवाँ हिस्सा (१० प्रतिशत) ही नियन्त्रित माल (मोटा कपड़ा) तैयार करते हैं।

मिलवालों का हल्ला-गुल्ला यह है कि नियंत्रित माल तैयार करने में उन्हें ७५ पैसे प्रति मीटर का नुकसान उठाना पड़ता है। ऊपर कहा ५० पैसे प्रति मीटर सबसिडी तो उन्हें दिया ही जाता है। प्रश्न है कि शेष २५ पैसे का नुकसान कौन उठाता है? यदि कहा जाय कि यह नुकसान तो मिलवाले ही सहते हैं तो प्रश्न उठता है कि यह वे सहें क्यों? कहने की आवश्यकता नहीं कि उनका यह हल्ला-गुल्ला अतिशयोक्तिपूर्ण है।

अब खादी की ओर आइये। खादी उद्योग को अनेक सीमितताओं एवं बाधाओं से गुजरना पड़ रहा है। इस समय इसका वार्षिक उत्पादन दस करोड़ मीटर है। खादी के मूल्य और व्यवस्था पर सरकार अभी जो सबसिडी देती है वह सब मिलाकर मुश्किल से साढ़े तीन करोड़ रुपया है। इसका अर्थ यह हुआ कि इसे लगभग ३५ पैसे प्रति मीटर सबसिडी मिलती है, जब कि मोटा कपड़ा तैयार करनेवाले मिल मालिकों को ५० पैसे प्रति मीटर। विशेषज्ञों की बनी अशोक मेहता कमिटी ने अपने कर्तव्य का पालन करते हुए यह रिपोर्ट दी है कि दस वर्ष में खादी को अपने पाँव पर खड़ा हो जाना चाहिए जिससे इसे सरकारी सहारे की आवश्यकता ही न रहे। पिछले एक सौ साल से चलते हुए कपड़ा मिल उद्योग ने भी यह बता दिया कि वह उसके सिर पर खड़ा रहेगा। अर्थशास्त्र के क्षेत्र में इससे बढ़कर चमत्कार और क्या होगा? तरस आती है विशेषज्ञों की बुद्धि पर!

कहानी यहीं समाप्त नहीं होती। मोटा कपड़ा बनाने को प्रोत्साहित करने की गरज से मिलों को सरकार ने रुई, सूत और आयात किये गये उत्पादनशुल्क कर्ज के अलावा टैक्स रिबेट भी दिये। मजा तो यह है कि मिलों ने इन सब सुविधाओं का भरपूर लाभ लिया, और अब नियंत्रित माल तैयार करने में कन्नी काटती है। इस पर ढाई साल मार का जुर्माना देना पड़ता है। (मूल अंग्रेजी से)

अनुवादक—हेमनाथ सिंह

बजट पर प्रतिक्रियाएँ

केन्द्रीय वित्तमंत्री श्री चौव्हाण ने गत २८ मई को लोकसभा में जो बजट पेश किया है वह मध्यम वर्ग को समान रूप से प्रभावित करेगा। एक सामान्य परिवार अपनी निश्चित आय में गृहस्थी की सभी आवश्यकताओं की पूर्ति कठिनाई से ही कर सकेगा। सामान्य लोगों के लिए इस बजट में यह संकेत है कि वह खर्च करने में अपना हाथ कसे।

बजट का उद्देश्य 'गरीबी हटाओ' से अधिक 'मध्यम वर्ग हटाओ' मालूम होता है। क्योंकि किसी भी गृहिणी को अब प्रेशर कूकर और लिपस्टिक लेने के लिए अधिक पैसे देने होंगे। ट्रैक्टर, टाइपराइटर, और कैमरा लेनेवाल का भी अधिक पैसे खर्च करने होंगे। टेलीफोन और डाक पर भी खर्च बढ़ जायगा। पहनने के बने बनाये कपड़ा और रसायन के पदार्थ पर भी कर लगाया गया है।

'स्टेट्समैन' ने लिखा है कि दो अर्थों में यह एक बर्बर बजट है। पहला, यह कि बिना इसका ध्यान हुए कि काम करने के लिए प्रोत्साहन, बचत करने और पूँजी लगाने की क्षमता बिलकुल नष्ट न हो जाये यह कर का बड़ा बोझ लादता है। दूसरे यह कि, इस बात की कोई आशा नहीं बँधती है कि इस प्रकार से प्राप्त किये हुए साधनों को बहुत ही उत्पादक कामों में ही लगाया जायेगा।'

'इण्डियन एक्सप्रेस' का विचार है कि वित्तमंत्री ने 'पूर्ण रूप से आय बढ़ाने के कार्य में अपने को व्यस्त कर दिया है। बजट ने अर्थ के किसी भी भाग—कृषि, उद्योग अथवा निर्यात को बढ़ावा नहीं दिया है।

एक प्रमुख डेली, ने लिखा है कि हमारे समाजवादी मंत्रीगण अपनी बनी-बनाई दुनिया में रह रहे हैं। वित्तमंत्री जिसको परोक्ष कर में वृद्धि मानते हैं उसका बोझ मध्यम वर्ग और निम्न वर्ग के लोगों पर पड़ेगा।'

'टाइम्स आफ इण्डिया' ने लिखा है कि 'श्री चौव्हाण पिछले बारह महीनों में मूल्य में ७ प्रतिशत की वृद्धि पर ध्यान रखने में असफल रहे हैं और इस बात का भरोसा नहीं है कि चीजों का मूल्य जहाँ है वहीं रहेगा।'

'पेट्रियट' का विचार है कि बजट अप्रोत्साहित करनेवाला है, और यह परिवर्तन निश्चित रूप से सभी चीजों के मूल्य को बढ़ायेगा और उच्च मजदूरी और अधिक वेतन की माँग को बढ़ायेगा।'

'हिन्दुस्तान टाइम्स' का विचार है कि मूल्यों की वृद्धि में रोक लगाने, रोजगार बढ़ाने, और धंधे लगाने के लिए प्रोत्साहन के लिए अर्थ में उत्पादन की शक्ति बढ़ाना अनिवार्य है। परन्तु इसकी बजाय हुआ यह है कि आय में असमानता दूर करने और साधन बढ़ाने की मजबूरी के दबाव में था। चौव्हाण ने इन दोनों उद्देश्यों की पूर्ति के सभी रास्ते में स्वयं पराजित होनेवाले रास्ते से कोशिश की है।—प्रस्तुतकर्ता गोपाल सुरेन्द्र प्रसाद

बंगला देश के सन्दर्भ में

श्री जयप्रकाशजी की विदेश-यात्रा

श्री जयप्रकाशजी काहिरा, बेलग्रेड, मास्को, हेलसिंकी, पेरिस होते हुए लन्दन पहुँचे। यात्रा की समाचार-पत्रों की रिपोर्ट से पता लगता है कि किसी भी देश के पास पूर्व बंगालियों की सहायता के लिए सेवा एवं राहत की कोई भी योजना नहीं है और न तो किसी देश में उन्हें इस समस्या के राजनैतिक और जनतांत्रिक हल के लिए कोई चौकसी मिली। केवल युगोस्लाविया के राष्ट्रपति मार्शल टीटो बंगला देश को मान्यता देने के विचार पर अब तक गौर कर रहे हैं। परन्तु टीटो के अनुसार यह बहुत हद तक बंगला देश की आन्तरिक परिस्थिति पर निर्भर करता है। केवल मार्शल टीटो ही एक ऐसे राष्ट्राध्यक्ष हैं जो श्रीजयप्रकाशजी से स्वयं मिले। श्री टीटो ने बंगला देश पर श्रीमती गांधी के निवेदन का समर्थन किया, और भारत पर शरणार्थियों के बोझ और उससे पैदा होनेवाली समस्याओं को समझा।

वेटीकन में इसाई धर्म के सबसे बड़े आध्यात्मिक नेता 'पोप' ने जयप्रकाशजी को विश्वास दिलाया कि कैथोलिक संगठन भारत में शरणार्थियों को राहत पहुँचाने में सहायता देगा। पोप ने जयप्रकाशजी की अपील पर एक वक्तव्य भी जारी किया। पूर्व बंगाल का झगड़ा एक बड़े युद्ध में बदल सकता है, अतः वहाँ के लोगों की विशेष परिस्थितियों को सामने रखते हुए शान्ति स्थापित करने की उन्होंने अपील की। सेंट पीटर बैसिलीका में दिये गये इस वक्तव्य में पोप ने कहा कि एशिया में नये और खतरनाक टकराव को रोकने की आवश्यकता है। पोप ने पूर्व बंगाल के पीड़ित लोगों के लिए समवेदना प्रगट की।

हेलसिंकी में जयप्रकाशजी ने बड़े-बड़े समाजवादी नेताओं से बातें कीं। स्वीट्जरलैण्ड के प्रधानमंत्री ने बड़े गौर से उनकी बातें सुनीं और बंगला देश के लोगों से सहानुभूति प्रकट की। पश्चिमी जर्मनी के चांसलर ब्रिनीब्राट ने कहा कि बंगला देश या भारत में शरणार्थियों की सहायता के सिवा उनकी सरकार इस स्थिति में नहीं है कि राजनैतिक तौर पर कुछ कर सके।

पेरिस में जयप्रकाशजी को जूनियर मंत्री श्री लीरोवस्की और राष्ट्रीय सभा के दूसरे सदस्यों से भेंट हुई। उन्होंने सहानुभूति प्रकट की परन्तु कुछ ठोस कार्य करने के लिए वे तैयार नहीं नजर आये। मंत्री महोदय ने जयप्रकाशजी की इस अपील का भी कोई उत्तर नहीं दिया कि फ्रान्स में पाकिस्तान के हाथों स्वतन्त्र रूप से हथियार बेचे जाने पर रोक लगायी जाय। लन्दन में जयप्रकाशजी से श्री कुशा ने भेंट की जो विदेश कार्यालय में जूनियर मंत्री हैं। उन्होंने जयप्रकाशजी को बताया कि समस्या के राजनैतिक हल के लिए श्री हीथ ने याह्या खाँ को कई चिट्ठियाँ लिखी हैं। जयप्रकाशजी का ख्याल है कि रूस की सरकार ने समस्या और उससे पैदा होनेवाली पेचीदगियों को बहुत अच्छी तरह समझा है।

जयप्रकाशजी ने लन्दन में कहा कि पश्चिमी देश पाकिस्तान को दो कारणों से सहायता देना चाहते हैं। एक तो उन्हें यह भय है कि पाकिस्तान चीन की गोद में चला जायगा और दूसरे यह कि उनके पहले का दिया हुआ ऋण पाकिस्तान नहीं लौटायेगा।

लन्दन में जयप्रकाशजी ने उन सरकारों और प्रतिनिधियों को जिनसे वे मिले यह चेतावनी दी कि अगर संसार के लोग अपने उत्तरदायित्व को नहीं समझते हैं तो बंगला देश की आज की हालत में भारत की परिस्थिति का मुकाबला करने के लिए कठोर कदम उठाना पड़ेगा। वह कदम क्या होगा, यह नहीं कह सकते, लेकिन वह कदम कठोर होगा। जयप्रकाशजी ने कहा कि श्रीमती गांधी पर व्यक्तियों, राजनैतिक दलों, सामान्यजन और परिस्थिति का दबाव बढ़ता जा रहा है। प्रश्नों के उत्तर में जयप्रकाशजी ने यह बताया कि जिन देशों में वे गये उनके मंत्रियों को उन्होंने बताया कि जो देश पाकिस्तान को प्रभावित करने की स्थिति में हैं उनका उत्तरदायित्व है कि अपने, समाज, लोकतन्त्र और मनुष्यता को ध्यान में रख के पाकिस्तान पर सेना को बैरकों में भेजने, सभी कैदियों को बिना शर्त रिहा करने और जनता के प्रतिनिधियों का अधिकार सौंप देने के लिए वार्ता आरम्भ करने को दबाव डालें।

जयप्रकाशजी ने सभी जगह यह भी बताया कि पाकिस्तान में दिसम्बर के चुनाव के बाद यह बात स्पष्ट हो गयी है कि बंगला देश का नेता कौन है।

ब्रिटिश सरकार के सन्दर्भ में बात करते हुए उन्होंने यह कहा कि ब्रिटेन को चाहिए कि वह पाकिस्तान की सारी सहायता बन्द कर दे, क्योंकि इससे वह पाकिस्तान के युद्ध की शक्ति बढ़ाती है। उसे सहायता देनेवाली सरकार नैतिक तौर पर बंगला देश में होनेवाली अमानवीय घटनाओं के लिए जिम्मेदार है।

शेख अब्दुल्ला :

शेख अब्दुल्ला ने 'रहनुमाये दकन' को इन्टरव्यू देते हुए कहा है कि संसार की कोई सरकार देश को टुकड़े करनेवाले आन्दोलन को सहन नहीं करेगी। उन्होंने अवामी लीग के छः-सूत्री कार्यक्रम का हवाला देते हुए कहा कि विदेशी व्यापार स्थानीय विषय बनाने की माँग अनुचित है और कोई भी सरकार ऐसी माँग को कभी भी स्वीकृति नहीं देगी। उन्होंने बताया कि गैरबंगालियों के कत्लेआम और पश्चिमी पाकिस्तान सरकार के

विरुद्ध घृणा फैलाने की तैयारी की गयी थी। उन्होंने आशा प्रगट की है कि पूर्व बंगाल से सहानुभूति प्रगट करते हुए भारतीय सरकार समस्या की वास्तविकता की ओर होशियारी से देखेगी। उन्होंने कहा कि पूर्व पाकिस्तान के लिए आत्मनिर्णय की माग भारत करता है, परन्तु यह भूल जाता है कि भारत काश्मीर में २३ वर्षों से क्या कर रहा है। उन्होंने कहा कि शब्दों और कार्यों का यह अन्तर स्वतंत्रता-प्रेमी लोगों के लिए सोचनीय है। उन्होंने कहा कि काश्मीर विश्व की समस्या है, जिसका संबंध काश्मीर के ५० लाख लोगों के अधिकार से है और कश्मीरी अपने उद्देश्य की प्राप्ति के लिए संघर्ष करते रहेंगे।

शेख अब्दुल्ला ने कहा कि करीब-करीब संसार के सारे देश इस विचार के हैं कि पूर्व पाकिस्तान की घटनाओं के पीछे भारत का हाथ है, जो इसने अपने स्वार्थ के हित में किया है। उन्होंने कहा कि भारतीय समाचार पत्रों का बंगलादेश के लिए शोर मचाना वास्तविकता से बहुत दूर है। ऐसा मालूम होता है कि वे पाकिस्तान के साथ दूसरे युद्ध का वातावरण तैयार कर रहे हैं। उन्होंने चेतावनी दी कि जो लोग भारत को युद्ध में खींचना चाह रहे हैं, वे भारत की कोई मदद नहीं कर रहे हैं और वह जल्दी ही अपनी गलती को महसूस करेंगे। उन्होंने यह कहा कि अपने देश की एकता को टूटने से बचाने के लिए याहा खाँ के सामने कोई दूसरा चारा न था।

उथाँ

श्री उथाँ ने कहा है कि "अप्रैल से अब तक जितनी खबरें मुझे मिली हैं उनके आधार पर मैं यह समझता हूँ कि पूर्व पाकिस्तान की घटनाएँ मानव इतिहास में अत्यन्त दुःखदायी हैं। यद्यपि भविष्य के इतिहास के पंडितों को इस सच्चाई का अध्ययन करना चाहिए, और अपनी आलोचना देनी चाहिए। परन्तु यह मानव इतिहास पर एक बड़ा कलंक है। भारत को शरणार्थियों के कारण देश के पूर्वी भाग में एक बड़ी समस्या का सामना करना पड़ रहा है। मानव इतिहास में इस भारतीय करुणा के जोड़ का उदाहरण नहीं मिलता।

अरब देश

बंगला देश की घटनाओं के संबंध में अरब देशों ने बड़ी बेरुखी दिखायी है। प्रगतिशील कहे जानेवाले देश, जैसे सीरिया, अल्जीरिया, संयुक्त अरब गणराज्य (मिस्र) ने भी बंगला देश के लोगों से कोई सहानुभूति नहीं दिखायी और भारत के दृष्टिकोण को समझने में असफल रहे। रूढ़ीवादी अरब देशों ने स्पष्ट तौर पर यह बात कही कि बंगला देश पाकिस्तान की आन्तरिक समस्या है, और सबसे बड़े इस्लामी देश की हैसियत से अपने को टूटने से बचाने के लिए वह जो कुछ भी करता है व उसका हर कीमत पर समर्थन करेंगे। सऊदी अरब, कुवैत इत्यादि ने, सुना जाता है कि, पाकिस्तान की आर्थिक सहायता भी की है।

इस्लामी सेक्रेटेरियट

इस्लामी सेक्रेटेरियट के महामंत्री तुंकू अब्दुल रहमान के वक्तव्य के अनुसार सेक्रेटेरियट को पूर्व बंगाल की जनता के दुःख से 'सहानुभूति है' और 'इसने मुस्लिम देशों से अपील की है कि उन्हें सहायता दी जाये।' श्री तुंकू ने रबात में अपने एक इन्टरव्यू में, जो इस्तकलाल पार्टी के समाचार-पत्र में छपा है, कहा कि—'हम इससे अलावा कुछ नहीं कर सकते।'

इन्सानी बिरादरी

मौलवी फारुक, अवामी ऐक्शन कमिटी के अध्यक्ष और इन्सानी बिरादरी के सदस्य, ने अपने एक पत्र में राधाकृष्ण जी, मंत्री, गांधी शान्ति प्रतिष्ठान को लिखा है कि 'आपने इन्सानी बिरादरी की तरफ से प्रेस को जो बयान दिया है, मैं उससे सहमत नहीं हूँ।' असहमति के कारण बताने के बाद मौलवी फारुक ने लिखा कि आप लोगों ने भारत पाकिस्तान संबंध को सुधारने का सच्चाई के साथ प्रयत्न किया है। राष्ट्रपति अयूब के जमाने में इस मिशन पर पाकिस्तान के विरुद्ध जो मोर्चा बना था, मेरी राय में उप-महाद्वीप की उससे कोई सेवा नहीं की जा सकती। अगर इन दोनों देशों के बीच गलतफहमी दूर करने का काम करें तो यह एक ऐतिहासिक सेवा होगी। मुझे इस बात का दुःख है कि इन्सानी बिरादरी का संगठन जिन उद्देश्यों की सिद्धि के लिए किया गया था, उनके बारे में भारत में कोई पूछनेवाला नहीं है। भारत में चुनाव के समय भी साम्प्रदायिक दंगे हुए और अल्पसंख्यकों (मुसलमानों) से कांग्रेस को वोट देने का बदला लिया गया और इन्सानी बिरादरी खड़ी तमाशा देखती रही, परन्तु इस समय दूसरे देश की आन्तरिक समस्या में हस्तक्षेप का झण्डा लेकर वह मैदान में आ गयी है। मेरी राय है कि इन्सानी बिरादरी जिस गलत रास्ता पर जाना चाहती है और इसके अध्यक्ष पाकिस्तान के विरुद्ध मुहिम चलाने में जिस तरह व्यस्त हैं, उसको सामने रखते हुए दूसरे सदस्यों को सन्जिदगी से सोचना होगा कि इस संगठन को कायम रखने का कोई लाभ है क्या? और क्या अब समय नहीं आ गया है कि इसको खतम कर देने के प्रसंग पर विचार किया जाये?' यह पत्र मौलवी फारुक ने राधाकृष्णजी के पत्र के उत्तर में लिखा है जो उन्होंने इन्सानी बिरादरी द्वारा दिये गये एवं वक्तव्य के समर्थन के लिए भेजा था। ●

अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति और बंगला देश

काका कालेलकर

पूर्व बंगाल के पक्ष में जब देश में जन जागृति हुई और लोगों ने जोर शोर से प्रस्ताव पास करना शुरू किया तब देश के अनुभवी वृद्ध नेता श्री राजगोपालाचारी ने एक गंभीर चेतावनी दी, उसका अर्थ लोगों ने ध्यान में नहीं लिया। लोगों के मन में पूर्व बंगाल के लोगों के प्रति उत्कट सहानुभूति है वह योग्य है, इष्ट है। पश्चिमी पाकिस्तान ने पूर्व बंगाल के नर-नारी, बच्चे बूढ़े सबका जो कत्ल चलाया है, उसके प्रति लोगों के मन में जो चिढ़ उत्पन्न हुई है और पाकिस्तान के राज्यकर्ता की तरफ जो तिरस्कार जाग्रत हुआ है वह भी योग्य है। पूर्व पाकिस्तान के दुखी एवं पीड़ित लोगों के दुःख-निवारण के लिए अगर यहाँ से हम मदद भेज सकते हैं और उन तक मदद पहुँच सकती है तो जरूर वैसी मदद करनी चाहिए।

लेकिन मानव जाति के सर्वोच्च राजनीतिक नेताओं ने जो अन्तर्राष्ट्रीय कानून बनाये हैं और उनके पीछे का तत्वज्ञान जब तक दुनिया के सब राष्ट्रों को मान्य है तब तक हम पूर्व बंगाल के सहयोगी और पश्चिमी पाकिस्तान के खिलाफ युद्ध चलानेवाले दुश्मन बने बिना राजनीतिक कोई भी कदम उठा नहीं सकते। इस चीज को समझ लेना हमारा प्रथम धर्म है।

केवल योरप-अमरीका ही नहीं, एशिया, अफ्रीका आदि सारी दुनिया के राष्ट्रों ने जो राजनीतिक तत्वज्ञान मान्य किया है और जो आज की समस्त मानवता मान्य करती है उसकी बुनियाद हमें प्रथम समझनी चाहिए।

आज की अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति हरेक स्वतंत्र राष्ट्र की सार्वभौम स्वतंत्रता को मान्यता देती है। हरेक मौजूदा कानूनियत राष्ट्र की सरकार को अपने राष्ट्र का कारोबार चलाने का पूरा और अमर्याद अधिकार है। अपने राष्ट्र के अन्दर वह कुछ भी करे उसमें हस्तक्षेप करने का बाहरी राष्ट्र को तनिक भी अधिकार नहीं है।

हरेक राष्ट्र की सार्वभौम एकता और स्वतंत्रता मंजूर करने के लिए सारे राष्ट्र बाध्य हैं, इस बुनियादी भूमिका पर ही आज का अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति-शास्त्र बना हुआ है। (इसके अनुसार जब पूर्व बंगाल की जनता पश्चिमी पाकिस्तान को लड़कर हटा देगी और पश्चिमी पाकिस्तान प्रत्यक्ष आचरण में अपनी हार कबूल कर अपनी फौज और अपनी हुकूमत पूर्व बंगाल से हटा लेगा और पूर्व बंगाल की जनता अपनी स्वतंत्रता अमल में लाकर अपनी सरकार बनायेगी तब तो दुनिया के सारे देश और जागतिक राष्ट्रसंघ भी, पूर्व बंगाल की स्वतंत्रता को बाकायदा मान्यता देंगे और वहां की नयी स्वतंत्र सरकार के साथ समान भाव से बातचीत करेंगे।)

तब तक पूर्व बंगाल में पश्चिमी पाकिस्तान के लश्कर की ओर से जो कत्ल चल रहा है और मानवता का वध हो रहा है वह सारी पाकिस्तान राष्ट्र की आन्तरिक समस्या ही गिनी जायेगी। अगर हम पाकिस्तान के खिलाफ बाकायदा युद्ध करना चाहें तो पूर्व बंगाल की मदद में हम अपनी फौजें भी भेज सकते हैं और फिर उसमें से अगर कोई जागतिक युद्ध शुरू हुआ तो उसके लिए हमें तैयार रहना होगा।

तब आज की परिस्थिति का इलाज क्या? मैंने इस लेख के प्रारंभ में ही कहा है कि भारत की जनता पूर्व बंगाल की तरफ अपनी नैतिक सहानुभूति बता सकती है। पश्चिमी पाकिस्तान का तिरस्कार कर सकती है और दुःखी पामर लोगों के दवा-दारू की मदद भी भेज सकती है। इससे अधिक कुछ करना हो तो हमें अंतर्राष्ट्रीय राजनीतिक विज्ञान की बुनियाद में सुधार करना होगा। दुनिया के तमाम स्वतंत्र राष्ट्रों की सार्वभौम स्वतंत्रतावाली बुनियाद की जगह पर दुनिया के स्वतंत्र-परतंत्र, छोटे-बड़े सब राष्ट्रों को लेकर एक विशाल मानव कुटुम्ब बनता है, उसकी पारिवारिक आध्यात्मिक एकता को ही सार्वभौम मानना चाहिए, और उसके खिलाफ अगर किसी राष्ट्र ने द्रोह किया तब उस राष्ट्र के खिलाफ अंतर्राष्ट्रीय फौजों से आक्रमण न करते हुए जागतिक राष्ट्र-परिवार के सारे सदस्य उस गुनहगार राष्ट्र के खिलाफ सार्वभौम असहयोग जाहिर करेंगे तो आठ दस दिन के अंदर ही गुनहगार राष्ट्र अपने दुराचार से निवृत्त हो जायेगा। जगत के सब सज्जन राष्ट्र ऐसे गुनहगार राष्ट्र को न अन्न देंगे, न युद्ध की सामग्री देंगे, न अपनी जमीन पर से यान, अपने समुद्र पर से गुनहगार को जाने देंगे, तो देखते-देखते गुनहगार को शरण आये बिना चारा ही नहीं रहेगा।

लेकिन आज के छोटे-बड़े स्वतंत्र राष्ट्र मानवीय पारिवारिकता राजनीतिक क्षेत्र में स्वीकार करने को तैयार नहीं हैं। उनके लिए बुनियादी वस्तु स्वतंत्र सार्वभौम राष्ट्र ही है। अन्तर्राष्ट्रीय नास्तिक कानून है। नास्तिक इसलिए कहता हूँ कि आज का अंतर्राष्ट्रीय राजनीति-शास्त्र समस्त मानवता की एकता को राजनीतिक स्तर पर मान्य करने को तैयार नहीं है।

अब भारत को आध्यात्मिक मानवीय संस्कृति के आधार पर अगर हम छोटे-बड़े, स्वतंत्र-परतंत्र, सब वर्गों में सब राष्ट्रों को एक मानवीय परिवार बनायेंगे और उसको मान्यता देंगे तभी जाकर आज की नास्तिकता दूर होगी। (यहाँ नास्तिक शब्द का भगवान के साथ कोई संबंध नहीं है।)

इसी दृष्टि से हम लोगों को इस नयी अंतर्राष्ट्रीयता का प्रचार शुरू करना चाहिए और उसके लिए विश्वमान्यता प्राप्त करने की जबरदस्त प्रवृत्ति चलानी चाहिए। युगमानस इसके लिए अनुकूल हो सकता है। ('सर्वोदय प्रेम सर्विस' के सौजन्य से)
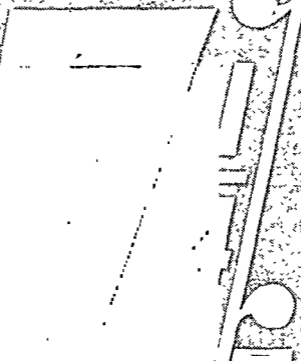
कमाइये
5-वर्षीय
डाकघर सावधि जमाओं पर
3 7%
1 6%
राष्ट्रीय बचत संगठन

अमरीका और जयप्रकाश नारायण

टी० वी० परशुराम (वाशिंगटन)

अमरीका पाकिस्तानी राष्ट्रपति जनरल याह्या खाँ पर जोर दे रहा है कि वह शेख मुजीबुर्रहमान और दूसरे पूर्व बंगाली राजनीतिक बंदियों को जल्दी रिहा करें और उनके साथ बातों के द्वारा समस्या का एक राजनीतिक हल निकालें।

यह समझा जाता है कि संयुक्त राष्ट्र अमरीका जनरल याह्या खाँ के 'सहयोग करनेवाले राजनैतिक नेताओं' के साथ के 'मोर्चा' बनाने की कोशिश से अप्रभावित है। उसका मानना है कि यह 'मोर्चा' निर्वाचित नेताओं का स्थान नहीं ले सकता। फिर भी वह यह सोच रहा है कि पाकिस्तान तो संयुक्त ही रहे जिसमें पूर्व बंगाल को अवामी लीग के ६ सूत्रीय कार्यक्रम के आधार पर स्वायत्तता प्राप्त होगी। इससे आगे बढ़कर वह अब तक पूर्व बंगाल की स्वतन्त्रता की बात सोचने के लिए तैयार नहीं है। अमरीकी कूटनीति शेख मुजीबुर्रहमान और उनके साथियों की रिहाई तथा पश्चिमी पाकिस्तानी और पूर्व बंगाल के इन वास्तविक नेताओं के बीच एक राजनीतिक हल खोजने तक अभी सीमित है।

सर्वोदय नेता श्री जयप्रकाश नारायण की अमरीका के यात्री के एक राजनैतिक एवं नीति निर्धारक श्री जोसेफ सिसको असिस्टेन्ट सेक्रेटरी आफ स्टेट से मुलाकात हुई, और परिस्थिति पर स्पष्टता से बातचीत हुई। अमरीका के एक नीति-निर्धारक (पालिसी मेकर) की जे० पी० की कोटि के नेता और स्वतन्त्रता-संग्राम के सेनानी से पहली बार भेंट हुई है।

यह समझा जाता है कि श्री जयप्रकाशजी ने श्री सिसको से कहा कि पाकिस्तानी सेना के आक्रमण और आतंक के बाद सतह पर सब कुछ शान्त मालूम हो सकता है परन्तु अगर पूर्व बंगाल की आकांक्षाएँ पूरी नहीं हुईं तो गुरीला युद्ध हो सकता है। वह चाहते हैं कि अमरीका के लोग यह समझ लें कि पूर्व बंगाल में २५ मार्च से जो घटनाएँ घटी हैं उनके बाद वह पूर्ण स्वतन्त्रता के अतिरिक्त किसी और विकल्प को स्वीकार कर ही नहीं सकता।

अमरीकी स्टेट डिपार्टमेन्ट से बातचीत के बाद श्री जयप्रकाश नारायण ने भारतीय दूतावास के सदस्यों से कहा कि "इस पूरे प्रश्न में मेरी दृष्टि शान्ति की खोज करनेवाले की है। मैं चाहता हूँ कि जितना जल्दी सम्भव हो उस क्षेत्र में शान्ति स्थापित हो जाय, ऐसी शान्ति जिसकी नींव दृढ़ हो वरना सतही शान्ति के नीचे केवल घनघोर असन्तोष और टकराव होगा। बंगला देश के शरणार्थियों, प्रान्तीय धारा-सभा के सदस्यों और मंत्रियों से बातचीत करने के बाद मुझे इसका दृढ़ विश्वास हो गया है कि बंगाली पूर्ण स्वतन्त्रता से कम कुछ भी स्वीकार नहीं करेंगे। यही एक बात है जिसे मैं हर एक से कहने की कोशिश कर रहा हूँ। हमलोगों को इस वास्तविकता को स्वीकार कर लेना चाहिए कि बंगला देश बन चुका है और रहेगा, कायम रहता है।

अब प्रश्न केवल यह है कि यह बंगला देश जनतान्त्रिक प्रगतिशील सम्प्रदाय-निरपेक्ष एवं तटस्थ नेतृत्व के अन्दर रहेगा या माओवादी लोगों के प्रभाव के अन्दर। इसके अतिरिक्त कोई तीसरा विकल्प नहीं है।

पश्चिमी देशों ने स्वतन्त्र बंगला देश की वास्तविकता को स्वीकार करने से अब तक जो इन्कार किया है, श्री जयप्रकाश नारायण ने उसकी आलोचना की। उन्होंने कहा कि बहुत वर्षों से ब्रिटेन, अमरीका और उस क्षेत्र में दिलचस्पी रखनेवाले दूसरे देश भारत और पाकिस्तान के बीच शक्ति का 'संतुलन' रखने पर तुले हुए हैं। इस दृष्टि से उन्होंने पाकिस्तान को भारत की तुलना में पाँच गुना अधिक सहायता दी है। वह केवल इसलिए कि दोनों में वे संतुलन कायम रख सकें। अब तो यह संतुलन एकदम टूट गया है। बंगला देश यदि एक स्वतन्त्र राष्ट्र और भारत के मित्र के रूप में खड़ा होता है तो यह संतुलन समाप्त हो जायेगा। इसलिए पश्चिमी देशों को इस परिस्थिति को स्वीकार कर लेने का मानस अपना बनाने में समय लगेगा।

भारत का अब सन्दर्भ बदल गया है। इस परिस्थिति में वे अब महसूस कर रहे हैं कि 'संतुलन' बनाने की चेष्टा निष्फल हो रही है। 'हरी क्रान्ति' के द्वारा गेहूँ के उत्पादन में भारत काफी आगे बढ़ चुका है। उद्योग में भी वह अब बहुत पीछे नहीं रहा है। राजनीतिक क्षेत्र में प्रधानमंत्री की प्रबल बहुमत से जीत ने सबको अचम्भे में डाल दिया और इससे भारत की प्रतिष्ठा संसार में बढ़ी और अब लोग यह समझ गये हैं कि भारत में एक स्थिर सरकार है।

जे० पी० को विश्वास है कि अगर बंगला देश की कठिनाइयों को लम्बी अवधि से पहले समाप्त कराया जा सका तो वहाँ एक प्रजातांत्रिक सरकार होगी। भारत सरकार ने बंगला देश को अब भी मान्यता नहीं दी है, यह नीति उन्हें अच्छी नहीं लगी। बंगला देश ने अपनी स्वतन्त्र हैसियत को दो बार सिद्ध कर दिखाया है—एक बार आम चुनाव के परिणाम में और दूसरी बार असहयोग आन्दोलन में।

श्री जयप्रकाश नारायण ने बताया कि वे अभी भी भारत पाकिस्तान मैत्री संघ के अध्यक्ष हैं। जनरल याह्या खाँ और दूसरे क्या करते हैं उन्हें इस बात की चिन्ता नहीं। वह चाहते हैं कि भारत और पश्चिमी पाकिस्तान के लोग मित्र बनें। जनता को सरकार से अलग मानना चाहिए।

गाए, १४ जून '७१

श्री जयप्रकाश नारायण ने यह बताया कि एक बाहिरा को छोड़ (वहाँ के लोग आन्तरिक उलझनों में फँसे थे) जहाँ कहीं भी वे गये वह वहाँ की सरकार एवं गैर-सरकारी नेताओं की बातचीत तथा जनमत से सन्तुष्ट थे। हर जगह उन्होंने पूर्व बंगाल के लोगों के लिए सहानुभूति और चिन्ता देखी। पर वह यह नहीं बता सकते कि वह सहानुभूति और चिन्ता किस सीमा तक ठोस कार्यक्रम का रूप धारण करेगी।

श्री जयप्रकाश नारायण ने श्री सिसको को यह बताया कि भारत में शरणार्थियों के लाखों की संख्या में आ जाने के कारण भारत के लिए एक गंभीर परिस्थिति पैदा हो गयी है। अमरीका और दूसरे राष्ट्र भारत के इस आर्थिक बोझ में हाथ तो बँटा सकते हैं परन्तु इस भगदड़ से पैदा होनेवाले सामाजिक और राजनैतिक दबाव का मुकाबिला भारत को अकेला ही करना पड़ा। उनका अनुमान है कि माओवादी इस परिस्थिति से लाभ उठाने का प्रयत्न कर रहे हैं। वे पश्चिमी बंगाल में संकट पैदा कर देने के लिए हथियार संग्रह कर रहे हैं। पूर्व बंगाल के अन्दर पुलिस-अड्डों से लूटे गये हुए हथियार वे कलकत्ते भेज रहे हैं। वे शेख मुजीबुर्रहमान को अमरीकी एजेंट बताकर याह्या और माओ को भाई घोषित कर रहे हैं।

श्री जयप्रकाश नारायण ने यह कहा कि वह चाहते हैं कि अमरीका तीन बातों के लिए दबाव डाले। पहला, पाकिस्तानी फौज पूर्व बंगाल में बैरकों में लौट जाय, दूसरा, सभी राजनैतिक कैदी रिहा किये जायँ और तीसरा, पूर्व बंगाल सर्व सम्पन्न सप्रभुता और पूर्ण स्वतन्त्रता से कुछ भी कम स्वीकार नहीं करेगा। वस्तु-स्थिति तो यह है कि अवामी लीग के कुछ नेता याह्या खाँ से बातचीत करने से भी इनकार कर सकते हैं।

'इंडियन एक्सप्रेस' दैनिक ६ जून '७१ से साभार

ये तथ्य [illegible]

मुजफ्फरपुर जिले में जमीन पर जनसंख्या का दबाव कितना अधिक है एवं कितने अधिक लोगों को कितनी कम जमीन पर गुजर करना पड़ रहा है इसका एक मोटामोटी अन्दाज इस बात से मिल सकता है कि इस जिले में लगभग ८२ प्रतिशत किसान-परिवारों के पास पाँच एकड़ से कम जमीन है। इससे यह बात साफ जाहिर होती है कि छोटे किसानों की संख्या मुजफ्फरपुर जिले में कितनी अधिक है। ध्यान देने लायक बात यह भी है कि जिले के किसान परिवारों का लगभग ४०% एक एकड़ से कम का जोतदार है है और लगभग ६५% ढाई एकड़ से कम का। दस एकड़ से अधिक जमीन रखनेवाले तो सौ में सिर्फ सात-आठ परिवार ही हैं यानी मोटा-मोटी हर तेरह किसान में एक किसान। पचास एकड़ से अधिक वाले किसान, सौ में नहीं, हजार में चार है यानी हर २५० में एक।

(—मुजफ्फरपुर डिस्ट्रिक्ट सेन्सस हैंडबुक १९६१ के आधार पर)

नयी दिल्ली : भारत के गाँवों में रहनेवाले लगभग सवा सात करोड़ लोग ऐसे हैं जिन्हें रहने का कोई उपयुक्त घर नहीं। उसी तरह शहरों में करीब एक करोड़ ऐसे लोग रह रहे हैं जो बिलकुल बेघरबार है।

चतुर्थ पंचवर्षीय योजना में गृह-निर्माण पर सुझाव देनेवाली एक समिति बनी है। उसके द्वारा लगाये गये एक अन्दाज के अनुमार ये आँकड़े हैं।

चतुर्थ योजना के आरम्भ में कूता यह गया था कि करीब ८४ लाख घरों की कमी है। एक साथ इतनी संख्या में घर बनाने में ३३,००० करोड़ की पूँजी चाहिए। इतनी बड़ी राशि निकट भविष्य में उपलब्ध होनेवाली नहीं है।

सहरसा की प्रगति

चौसा प्रखण्ड में अबतक कुल २७ बीघा जमीन बाँटी गयी है और १० गाँवों में ग्रामसभा का गठन हुआ है। कहीं कहीं तो दाताओं ने लगी हुई फसलवाली जमीन भी आदाताओं को दी है। ग्रामसभा के गठन में लोगों ने जिस तरह, गाँव के हर तबके के लोगों को प्रतिनिधित्व करने का अवसर दिया है, उससे अन्य गाँवों पर भी अच्छा प्रभाव पड़ रहा है। लोकनीति में लोगों की आस्था दृढ़ हुई है।

बिरौल प्रखड के बारे में हमें जो जानकारी २२ मई तक प्राप्त हो सकी है वह इस तरह है :—कुल पंचायत संख्या २१, कुल गाँव की संख्या—१४५ (राजस्व ९०, अन्य ५५), कुल परिवार संख्या—२१७५, समर्पण पत्र (पुराने)—९५७३ समर्पणपत्र (नये) ७७६८, कुल—१७,३०५ भरवाने के लिए बाकी—४,५०५, सर्वेक्षण समर्पण पत्र संख्या—७२९६, पुष्टि में भेजे गये गाँव संख्या—२२, वितरित भूमि—१८ बी० १७ क०, ग्रामसभा की संख्या—४६। —'सहरसा समाचार' से

इस अंक में

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पै०), विदेश में २२ रु०; या २५ शिलिंग या ३ डालर। एक अंक का मूल्य २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं मनोहर प्रेस, वाराणसी में मुद्रित

सम्पादक
राममूर्ति
वर्ष : १७
अंक : ३८
सोमवार
२१ जून, '७१
पत्रिका विभाग
सर्व सेवा संघ, राजघाट, वाराणसी-१
फोन १४३९१ तार : सर्वसेवा

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

वर्तमान को न खोयें

तीन काल हैं—भूत, वर्तमान, भविष्य। भूतकाल का चित्त पर बोझ न हो, और कल क्या होगा, इसकी चिंता न हो। यह कोई खास नयी बात मैं नहीं कह रहा हूँ। यह तो अनुभवियों ने पहले भी कह रखा है। इसे उपनिषद् में 'कालज्ञान' नाम दिया है। जीर्ण करना। प्रत्यक्ष वर्तमान है, वह कितना है? हम बोलते-बोलते वाक्य शुरू करते हैं, तो उसका एक हिस्सा भूतकाल में चला जाता है। आगे हम जो वाक्य बोलेंगे, वह भविष्य का हिस्सा होगा। चन्द शब्द ही वर्तमान है। इतना अल्प वर्तमान है। लेकिन इतना सूक्ष्म न भी हो, आज का आज और कल का कल, इतना तो हो। वेद में भी आया है—अद्य अद्य श्वः श्वः—आज का आज, कल का कल। कल जो हो गया, उसकी कुछ भी याद नहीं, और भविष्य की चिन्ता नहीं।

सामने जो बैठे हैं, वे नये हैं, और मैं भी नया हूँ। भास होता है कि वही लोग हैं, और वही मैं हूँ, लेकिन इस प्रकार मानना विकास में बाधा देता है। नवो नवो भवति जायमानः। इसलिए पुराना जरा भी न सोचें। पुराना जहाँ याद आता है, वहाँ वर्तमान हाथ से निकल जाता है, फिर रहा क्या? जो वर्तमान हमारे हाथ में है, उसे न खोयें। वर्तमान हमारे हाथ में है, कल की कौन जानता है? कल तो भगवान के हाथ में है।

ऐसी भूमिका जब तक होती नहीं, तब तक निरुपाधिक तटस्थ साक्षीरूपेण ध्यान नहीं हो सकेगा, यह बहुत समय पहले से मेरे ध्यान में है।

२-२-७१

—विनोबा

नयी शिक्षा की बुनियाद : चिन्तन के बिन्दु
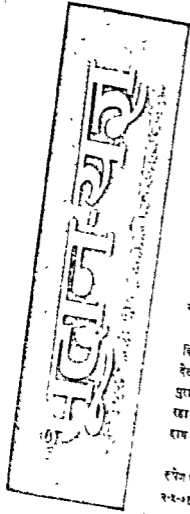
जमाने की आकांक्षा

पिछले दिनों सहरसा के कार्यक्षेत्र में कुछ देखना व करना हुआ। थोड़े दिनों के, पर स्पष्ट, अनुभव से जो वस्तुस्थिति सामने आयी है यह साथियों के समक्ष रखना चाहता हूँ।

जमींदारी उन्मूलन के थोड़े दिनों बाद ही भूदान-यज्ञ प्रारम्भ हुआ। लक्ष्य पूरा नहीं हुआ पर आशातीत सफलता मिली। हमारे देश में जमीन का एक गम्भीर मसला है जिसे हल करना ही होगा, यह बात सर्वमान्य हुई। उम्र से नहीं, दिल से जो नौजवान थे उन्हें इस यज्ञ ने तीव्रता के साथ स्पर्श किया था। 'धन और धरती बट के रहेगी'''' जैसे नारे जनता की रगों में सीधे प्रवाहित हो जाते थे। क्यों? इसलिए कि वह जमाना मिल्कियत के शिकंजे में था और 'मिल्कियत की जंजीरें तोड़ दो' यह जमाने की माँग थी। पुरुषार्थ को जमाने की पुकार से प्रेरणा प्राप्त होती ही है।

मैंने किताबों में पढ़ रखा था कि कल्पना कीजिये, पीढ़ियों के मजदूर को जब भूमि का एक टुकड़ा दिया जाता है तो वह कितना अभिभूत हो उठता होगा। सहरसा में कुछ भू-वितरण समारोह हुए। एक तो जमीन पर प्रत्यक्ष कब्जा दिलाने का हुआ। पर मैंने देखा कि भूमिहीनों में वह उत्साह नहीं है जो इनमें होना चाहिए था। कभी कभी तो आदाता उपस्थित ही नहीं रहते थे। इसके विपरीत दाताओं में पर्याप्त उत्साह व लगन दीखी। इसका क्या कारण हो सकता है? जमीन पर अधिकार से भूमिहीनों को प्रेरणा क्यों नहीं मिली, उनमें एक नया उत्साह क्यों नहीं प्रस्फुटित हुआ और क्यों थोड़ी भूमि छोड़ देने में भूमिवान संतोष का अनुभव कर रहे थे?

एक भूमिहीन को ग्रामदान समझाते हुए मैंने बार बार जोर इस बात पर दिया कि तुम्हें भूमि मिलेगी, तुम्हारा भी हर गाँव की धरती के एक टुकड़े पर हो जायगा। फिर भी वह चुपचाप सिर हिलाता सुनता रहा। परन्तु जब मैंने यूँ ही उसके कंधे पर हाथ रखकर पूछा कि 'भाई, क्या सुबह का नाश्ता तुम अपने यहाँ कराओगे?' तो लगा मानो, उसे मेरा हाथ नहीं, हल्की बिजली का तार छू गया हो। आँखों में चमक आ गयी, शरीर में हलचल हुई और प्रस्ताव की स्वीकृति के साथ ही साथ उसने अपने परिवार ही नहीं, जाति भर की दुख-कथा सुना दी। सुबह बार-बार आकर याद दिलाता रहा कि 'आपको मेरे यहाँ नाश्ता करना है।' प्रेम का आग्रह टाल देना किसी के लिए सम्भव नहीं। यहाँ भू-प्राप्ति की नहीं, समानता के आधार पर व्यवहार की प्रेरणा ने उसे अनुप्राणित किया था।

रायभीर गाँव के एक मजदूर को भूदान की जमीन पर से बेदखल किया गया। मजदूर की खबर पर हमलोग जब इसमें यह समझ कर पड़े कि मजदूर ही नहीं आन्दोलन भी बेदखल हुआ है तो गहराई में जाने पर स्पष्ट हुआ कि समस्या की जड़ें जमीन में ही नहीं वरन् पूरे समाज में हैं। झा जी को यह शिकायत थी कि यह चमार इतना बढ़-चढ़ कर क्यों बोलता है, दब के क्यों नहीं रहता? उस मजदूर की भी शिकायत यह नहीं थी कि उसकी जमीन छीनी गयी है। वह यह थी कि उसे लोग दबाना चाहते हैं। भरी सभा में उसने कहा था कि सरपंच साहब कम मजदूरी देते हैं। इसीकी सजा वे देना चाहते हैं। एक भूमिहीन ने तो स्पष्ट शब्दों में कहा कि 'जब मुखियाजी के जूते के नीचे ही रहना पड़ा और पड़ेगा तो ५ कट्ठा जमीन लेकर ही क्या होगा?' उसे ग्राम-सभा में दिलचस्पी लेने के लिए मैं तभी राजी कर सका जब कि उसे विश्वास हो गया कि यह कार्यक्रम मनुष्य को जूते के नीचे से निकालने का ही है। भूमिवानों से बातें करने पर यही स्पष्ट हुआ कि वे गरीबी दूर करने के लिये नहीं वरन् समर्पण पत्र इसलिये भरते हैं कि इससे उनके और मजदूर के बीच की खाई पटती है। मजदूर भी मालिक बनकर इनके कुछ निकट आ ही जाता है। जिन भूमिवानों की ओर से प्रतिरोध होता है, उसका भी मुख्य कारण बीघा-कट्ठा नहीं ग्रामसभा है, बराबर का दर्जा है।

इन तथ्यों से यह स्पष्ट लगता है कि यह प्रेरणा-स्रोत मिल्कियत-विसर्जन की आवश्यकता में नहीं समान स्तर पर होने की अभिलाषा में है। जब हम यह कहते हैं कि पूँजीवाद की दीवार में दरारें पड़ चुकीं, उसे तो जमाने की हवा गिरा देगी, अब हमारा काम होगा सत्ता को बाड़ों को तोड़ना, तो इसका यही अर्थ हो सकता है कि मिल्कियत की जड़ें उखड़ चुकीं, उसे समय का प्रवाह बहा ले जायगा। अब क्रान्ति का अगला कदम है विशिष्टता के मंचों को उखाड़ना। अब जमाने की माँग आर्थिक समता नहीं रही, वह तो आयेगी ही, जमाने की आकांक्षा सांस्कृतिक समता है।

इसका अर्थ यह नहीं कि आर्थिक समता की आवाज निरर्थक है बल्कि यह है कि सांस्कृतिक समता की आवश्यकता पर हमें विशेष बल देना चाहिए। कोई भी आन्दोलन तभी आन्दोलन बन सकता है जब वह समय के तकाजे का प्रतिनिधित्व करता है, जनता की अभिलाषाओं के अनुकूल होता है। अर्थात् ग्रामस्वराज्य आन्दोलन जन-आन्दोलन बने इसके लिए आवश्यक है कि हम ग्रामसभा की सच्ची जनतांत्रिक पद्धति पर, इसके वेदान्ती मूल्यों पर विशेष प्रकाश डालें। बीघा में कट्ठा निकालना, ग्रामकोष खड़ा करना अनिवार्य है, मौलिक आवश्यकता है, क्योंकि सामाजिक समानता की जड़ें आर्थिक स्वावलम्बन में ही होती हैं, परन्तु जनता के सामने यह स्पष्ट कर ही देना चाहिए कि हम धन नहीं, सर बचाने आये हैं, हमारा आन्दोलन बीघा-कट्ठे का नहीं ग्रामस्वराज्य का है, समृद्धि का नहीं सम्मति का है, सम्मति का है, एक नयी संस्कृति का है। यह बात अलग है कि उस नयी संस्कृति का एक परिणाम समृद्धि भी होगा।

—कुमार शुभमूर्ति

अग्रलेख / सम्पादकीय

पुष्टि दोनों ओर

सन् १९७२ भी वैसा ही रहेगा जैसा १९७१ है। कुछ नया नहीं होगा। लगता है दिल्ली और देश की दूसरी सरकारों ने ऐसा ही निर्णय कर लिया है। सरकार का काम है चलते रहना, व चलती रहेंगी। चलते रहने का भरपूर प्रबन्ध उन्होंने अपने बजट में कर लिया है। इससे आगे शायद उन्होंने कुछ सोचा ही नहीं है। अगर सोचा होता तो किसी भी सरकार के बजट में कोई संकेत तो मिलता। आज की दुनिया में बजट सरकारों के हाथ में एक जबरदस्त साधन है जिससे व देश के विकास को गति और दिशा देती हैं, और अनेक सवालों के हल के लिए साधन जुटाती हैं, भूमिका बनाती हैं। इसके विपरीत प्रतिगामी सरकारें बजट का इस्तेमाल जनता से धन इकट्ठा करने के लिए तो कर लेती हैं लेकिन उसके सवालों को टालती हैं जो चल रहा है उसी को चलाती रहती हैं। ऐसी सरकारों के हाथ में बजट दमन का अस्त्र बन जाता है। हमारी सरकार ने क्या निर्णय किया है? अगर हम उसकी नेकी को कबूल कर लें, और नीयत पर शुबहा न भी करें, फिर भी उसके बजट को देखकर किसी तरह यह भरोसा नहीं होता कि उसने बजट का इस्तेमाल जनता के सवालों का हल करने के लिए किया है। उलटे सरह यह होता है कि उसने यथा-स्थिति को बनाये रखने का ही फैसला किया है। वस्तुतः सरकार उन्हीं शक्तियों को पुष्ट करती जा रही है जिनका कमजोर होना हम समाज-परिवर्तन के लिए आवश्यक मानते हैं। दिनादिन शस्त्र और पूँजी की सत्ता जनता के जीवन पर हावी होती जा रही है। दुर्भाग्य यह है कि समाजवाद के नाम से यह सब हो रहा है जब हमारे सभी राजनैतिक दल समाजवाद की दुहाई देते हैं, और समाजवाद लाने के लिए दिनरात परेशान रहते हैं।

कहाँ एक ओर सरकार और राजनैतिक दलों का पुष्टि-कार्यक्रम, और कहाँ हमारा पुष्टि-कार्यक्रम? दोनों में कोई मेल है? उस ओर के पुष्टि-कार्य में अपार सा धन लगे हुए हैं, उसे परम्परा का समर्थन प्राप्त है। और, जनता भी यही सोचती है कि उसी पुष्टि में उसकी अपनी पुष्टि भी है। ऐसी प्रतिकूल परिस्थिति में हमें अपना पुष्टि कार्य करना है।

हमें स्वीकार करना चाहिए कि हमारा पुष्टि-कार्य अभी बहुत पिछड़ा हुआ है। परिस्थिति की प्रतिकूलता तो है ही, लेकिन हम यह दावा नहीं कर सकते कि जितना पुरुषार्थ हम कर सकते थे उतना भी हमने समय से किया है। अब भी कितने क्षेत्रों में पुष्टि-कार्य पूरे संकल्प के साथ शुरू किया गया है?

प्राप्ति के बाद जो इतना समय बीता है वह पुष्टि में एक बहुत बड़ी प्रारम्भिक प्रतिकूलता है जो स्वयं हमारी पैदा की हुई है। उस प्रतिकूलता के कारण वातावरण में ग्रामदान के लिए जो शिथिलता आयी है उसके कारण पुष्टि का छोर पाना काफी कठिन हो गया है।

दूसरी कठिनाई है कार्यकर्ताओं की। तेज गति के साथ काम पूरा करने के लिए जितने कार्यकर्ताओं की आवश्यकता है, उतने हमारे पास नहीं हैं। कार्यकर्ता और साधन दोनों का अभाव है। कई ऐसे क्षेत्र हैं जहाँ अकेला एक साथी जूझ रहा है। ऐसे साथियों को एक धागे में बाँधकर काम को आगे बढ़ाने वाली कोई शक्ति और संगठन भी नहीं है। इसके अलावा हमारी काम करने की जो पद्धति है वह अधिक कार्यकर्ताओं के आधार पर बनी है। एक दो कार्यकर्ता तथा स्थानीय सहयोगियों को लेकर काम करने की पद्धति हमें विकसित करनी है। लेकिन यह काम इतना नाजुक है कि इसे प्रखर बुद्धि से पूरा करने के लिए अनुभवी साथियों की जरूरत है। उन्हें साहस करके अब इस अंतिम और श्रेष्ठ लड़ाई में सामने आना चाहिए।

पुष्टि के संदर्भ में हमें अपने संगठनों पर भी निगाह डालनी चाहिए। उनकी रचना कार्य और निर्णय की पद्धति, समाज में उनकी प्रतिष्ठा आदि कई बातें हैं जिनमें हमारे सर्वोदय मंडल और ग्रामस्वराज्य समितियाँ कई गंभीर अपूर्णताओं की शिकार हैं। सर्वोदय मंडल और ग्रामस्वराज्य समिति ने अभी तक अपने लिए अलग-अलग रोल भी नहीं तय किये हैं।

लेकिन ये जितनी भी कठिनाइयाँ हैं वे सब हल हो सकती हैं अगर हम जनता का अपनी ओर खींच सकें। अभी तक जनता ने नहीं समझा है कि उसके प्रश्नों का उत्तर सर्वोदय के सिवाय दूसरे किसी के पास नहीं है। इसलिए वह हताश होकर भी उन्हीं शक्तियों के पीछे दौड़ती है जो उसे ठोकर लगाती हैं। यह हमारे राष्ट्रीय जीवन का एक दुखद तथ्य है, जिसे हम इनकार नहीं कर सकते।

जिस संकल्प और सयोग के साथ यथास्थिति की शक्तियाँ अपनी पुष्टि में जुटी हुई हैं उससे कहीं अधिक संकल्प, सयोजन और समर्पण के साथ हमें ग्रामदान की पुष्टि में जुटना है। पुष्टि दोनों ओर है इधर भी उधर भी। पुष्टि की दौड़ है। इसलिए जरूरत है जरा अपने को देख लेने की अपनी कमियों को दूर कर लेने की। हम अपने आन्दोलन के एक ऐसे निर्णायक बिन्दु पर पहुँच गये हैं जहाँ से पीछे हम लौट नहीं सकते। आगे हमें बढ़ना है। अगर हम आगे बढ़ जायेंगे तो बच जायेंगे। हमारा देश बच जायगा। शायद दूसरे देशों की जनता के लिए भी मुक्ति का मार्ग खुल जायगा।

एक सुन्दर प्रयोग

अभी १३ से १६ जून तक गोरखपुर के डी० ए० वी० कालेज में एक सुन्दर प्रयोग हुआ। उत्तर प्रदेश के कई जिलों से लगभग ६० तरुण-शान्तिसैनिक और आचार्यकुल के सदस्य इकट्ठा हुए थे। कई हेडमास्टर, प्रिंसिपल और प्रोफेसर भी थे। उनका पाँच→

भारत की भाषाएँ देवनागरी लिपि में लिखी जायँ

हम यहाँ गये साल ७ जून को आये थे। एक वर्ष पूरा हुआ। यहाँ के वातावरण से हमको बहुत प्रसन्नता हुई। हमारा मुख्य कार्यक्रम तो यहाँ पर, व्यक्तिगत ध्यान का रहा। ध्यान का बाह्यरूप कचरा निकालना। रोज तीन-तीन, चार-चार विष्णु सहस्र नाम होते थे। एकेक कचरे के साथ एकेक नाम। तीन हजार, चार हजार कचरे के टुकड़े उठाये जाते थे। अब इसके आगे वह कार्यक्रम बहुत कम रहेगा। ध्यानपथ, मुक्तिपथ अच्छे बन गये। देवगण भी अच्छा हुआ। गये साल की तुलना में स्वच्छता का काम बहुत कम हो गया। दसवां हिस्सा भी नहीं और वह जो रहा है वह यहाँ की साधिकाएँ और साधकजन मिलकर कर लेंगे। तो बाबा ने सोचा है कि बाबा अब सफाई-कार्यकर्ता नहीं रहेगा, सफाई निरीक्षक रहेगा।

जहाँ तक देह का ताल्लुक है, तीन ऋतुओं में तीन रोग हुए। बारीश में विषम ज्वर, ठंड में खांसी और गरमी में आँव। उसके अलावा चक्कर शुरू हो गया, जो बीच में तीन-चार साल से बन्द था। उसके लिए जोरदार औषधयोजना चल रही है और उम्मीद है, उसका परिणाम होगा। पाँच-सात दिन से चक्कर नहीं है। खैर। आगे क्या होगा यह तो अनुभव से मालूम होगा।

मेरा लिखने का तो मैंने समाप्त ही किया है। नया अध्ययन मैंने न करने का तय किया है। लेकिन अखबार पढ़ना चल रहा था और पत्रव्यवहार जो आता है वह। पत्रव्यवहार का तो खास बोझ मुझ पर नहीं रहता है। क्योंकि खराब अक्षर हों तो मैं पढ़ता नहीं और अच्छे अक्षर हों तो जिस पर निशान किये होते हैं उतना ही हिस्सा मैं पढ़ता हूँ। तो वह पढ़ने में खास नुकसान नहीं। अखबार मैं पढ़ता था काफी लेकिन इस वक्त एक विशेष बात हो गयी। है बात वह मेरे मन में पुरानी, लेकिन इस वक्त वह जोर कर रही है। हिन्दुस्तान की एकता के लिए हिन्दी भाषा जितना काम देगी उससे बहुत ज्यादा देवनागरी लिपि देगी। अब देवनागरी में हिन्दुस्तान की सब भाषाएँ लिखी जायें। इसका आरम्भ कैसे किया जाय? तो हमारे अपने जो अखबार चलते हैं तमिल में, उड़िया में इत्यादि, वे अपने अखबार नागरी में छापना शुरू करें। ऐसी सूचना मैंने दे रखी है। अब उस पर वे अमल कब करेंगे मालूम नहीं। उसके लिए व्यवस्था करनी पड़ती है। लेकिन मेरी आंख में भी तकलीफ थी तो मुझे लगा, मैं अखबार पढ़ना कम करूँ। तो तय किया अभिध्यान के लिए। जिस वस्तु का बाह्य जगत् में प्रचार हो, अमल हो ऐसी इच्छा होती है, उस पर अभिध्यान करूँगा। अभिध्यान के लिए निश्चित किया कि नागरी में छपा ही पढ़ूँगा। अर्थात् परदेश के जो अखबार होंगे वह पढ़ने में हर्ज नहीं। लंदन से 'पीस-न्यूज' आता है वह लंदन का है। उसके लिए यह अपेक्षा नहीं है कि वह देवनागरी में छपे। देवनागरी की अपेक्षा भारत से है। बाहर से बहुत अखबार आते नहीं। एक दो आते हैं, वे पढ़ने में हर्ज नहीं। परन्तु हिन्दुस्तान के जो अखबार होंगे वे जितने नागरी में होंगे उतने ही पढ़ूँगा। उससे मेरी आंख बचेगी और एक विषय का अभिध्यान होगा।

इस साल मेरा जो अभिध्यान चला, अभिध्यान के अलावा ध्यान जो किया गया वह केवल परमेश्वर का कहिए, परमात्मा का कहिए उसी का किया गया; पर जो अभिध्यान किया वह जिन कामों की मुझे अत्यन्त आवश्यकता मालूम होती है उनके लिए किया गया, उसमें ग्रामदान आन्दोलन एक है। उसमें भी खास करके सहरसा वगैरह जो स्थान हैं, उन पर अभिध्यान चला। उसके अलावा बंगला देश की समस्या खड़ी हुई उसके लिए कुछ अभिध्यान हुआ। और भी विषय थे, लेकिन स्थूलरूपेण ये विषय रहे। अब आगे क्या किया जायेगा और क्या प्रवृत्ति रहेगी चित्त की, वह तो आज मैं कह नहीं सकता। -- विनोबा

ब्रह्म विद्या मन्दिर, ७, जून '७१

→दिन तक सह-जीवन शिविर हुआ। साथ खाना, साथ चर्चा करना, शाम को साथ खेलना भी। इस साथ के कारण एक दूसरे को समझने में बहुत मदद मिली, आपस का दुराव मिटा, कोण कम हुआ, दृष्टि बढ़ी।

चर्चा और चिंतन का मुख्य विषय था 'शिक्षा में क्रान्ति।' आचार्यकुल के संयोजक हमारे वरिष्ठ साथी श्री वंशीधरजी ने शिक्षा में क्रान्ति पर एक सुन्दर निबन्ध तैयार कर दिया था जो चर्चा का आधार था। शिक्षा संस्थाओं का संचालन शिक्षक-शिक्षार्थी-अभिभावक की स्वायत्त समितियों द्वारा हो, शिक्षा का आधार उत्पादक श्रम हो, डिग्रियाँ नौकरी के लिए अनिवार्य न मानी जायँ, शिक्षकों के वेतन में अधिक-से-अधिक समानता हो, आदि बातें आसानी से मान्य हो गयीं। और, यह भी तय हो गया कि ९ अगस्त को शिक्षा में क्रान्ति के प्रश्न पर राजधानियों में शिक्षक-शिक्षार्थी-अभिभावक के जो सम्मिलित प्रदर्शन होंगे, उनमें ज्यादा-से-ज्यादा लोग शरीक होंगे।

यह खुशी की बात है कि तरुण-शान्तिसेना और आचार्यकुल के कारण विद्यार्थियों और शिक्षकों का एक ऐसा समुदाय तैयार हो रहा है जो पेशे, राजनैतिक दलबंदी और जेनरेशन-गैप के संकुचित दायरे से ऊपर उठकर देश की समस्याओं के संदर्भ में सोचने लगा है। आशा होती है कि अगर यह काम आगे बढ़ेगा तो आचार्यकुल द्वारा हमारे आन्दोलन का बुद्धि-पक्ष, तथा तरुण-शान्तिसेना द्वारा हृदय-पक्ष पुष्ट होगा। ऐसे शिविर अधिक-से-अधिक होने चाहिए। "शिक्षा में क्रान्ति" हमारे आन्दोलन का "सेकेन्ड फ्रन्ट" है। ●

नयी शिक्षा की बुनियाद : चिन्तन के बिन्दु

—रोहित मेहता

भारत में शैक्षिक प्रयास को नयी दिशा देने के लिए हमें शिक्षा-नीति के विषय में बिलकुल स्पष्ट होना चाहिए। अतः यह आवश्यक है कि एक ऐसा घोषणा-पत्र तैयार किया जाय, जिसमें व्यक्ति और समाज दोनों के सन्दर्भ में शिक्षा के निदेशक सिद्धान्त दिये गये हों। ये निदेशक सिद्धान्त शिक्षा के दर्शन का ही प्रतिपादन न करें, बल्कि इस दर्शन का रोजमर्रा के शैक्षिक अभ्यासों में कार्यान्वित किस ढंग से हो, इसका भी स्पष्ट वर्णन करें। अतः नीचे चिन्तन के लिए कुछ ऐसे बिन्दु दिये जा रहे हैं, जिन्हें शिक्षा के क्षेत्र में नये प्रयास के लिए आवश्यक समझा गया है।

१—भारत में पूर्व प्राथमिक से विश्वविद्यालय स्तर तक शिक्षा के लक्ष्य क्या होने चाहिए? इतना स्पष्ट है कि ये लक्ष्य ऐसे हों जिनसे व्यक्ति का उपयुक्त विकास सम्भव हो—सर्वथा पृथक अवस्था में नहीं, परन्तु उस समाज के सन्दर्भ में, जिसमें वह रह रहा है।

२—इस लक्ष्य की पूर्ति के लिए शैक्षिक प्रयासों को ऐसा उचित आधार देना चाहिए, जहाँ स्वतन्त्रता और अनुशासन के परस्पर विरोधी तत्त्वों का समन्वय किया जा सके। इस सम्बन्ध में इतना ध्यान रखना चाहिए कि जो अनुशासन स्वातंत्र्य को सीमित करेगा, आज समाज में स्वीकृत नहीं होगा, परन्तु यह भी उतना ही सच है कि जो स्वतन्त्रता अनुशासन-हीन आचरण को जन्म देगी, वह समाज के स्वस्थ विकास के हित में नहीं होगी।

३—वैज्ञानिक और प्राविधिक शिक्षा पर अत्यधिक बल देने की आधुनिक प्रवृत्ति क्या शिक्षा के क्षेत्र में एकांगिता को जन्म नहीं देगी?

इस प्रश्न का सम्बन्ध शिक्षा में समन्वित विकास की समस्या से है। विज्ञान और कला विषयों का उचित ढंग से समन्वय कैसे किया जाय? क्या यह आवश्यक नहीं है कि शिक्षा के प्रत्येक स्तर पर इनका समन्वित सबंध स्पष्ट रहना चाहिए? इसे कैसे किया जाय?

४—क्या आधुनिक शिक्षा शीघ्र और अत्यधिक 'स्पेशलाइजेशन' की दिशा में नहीं जा रही है? आज के युग में हम 'स्पेशलाइजेशन' की आवश्यकता का अनुभव करते हैं, परन्तु हमें उसके दोषों की जानकारी भी होनी चाहिए, जिससे शिक्षण की प्रक्रिया में आवश्यक पूरक तत्त्वों का सम्मिश्रण किया जा सके। वे तत्त्व क्या हैं? और इन्हें कैसे शामिल किया जाय?

५—आज की आधुनिक शिक्षा की एक बहुत बड़ी समस्या यह है कि विद्यार्थी को जीवन के आन्तरिक मूल्यों के शोध करने की दिशा में कैसे प्रवृत्त किया जाय? क्या केवल नैतिक शिक्षा के दाखिल करने से काम चल जायगा?

इस संबंध में इसे ध्यान रखना चाहिए कि समय आ गया है जब विज्ञान और अध्यात्म के समन्वय को शैक्षणिक प्रक्रिया में उचित स्थान प्राप्त कराया जाय। प्रश्न यह है कि इस दिशा में कैसे प्रयास किया जाय?

६—आज के लोकतांत्रिक समाज में छात्र और अध्यापक-सम्बन्ध क्या हो?

यह स्पष्ट है कि गुरु-शिष्य का पारम्परिक संबंध आधुनिक सन्दर्भ में प्रासंगिक नहीं होगा। अतः दोनों में नया सम्बन्ध क्या हो?

इस सम्बन्ध में यह भी आवश्यक है कि क्या विद्यार्थी शैक्षिक प्रयास में केवल निष्क्रिय साझेदार (पार्टनर) रहें अथवा शैक्षणिक और प्रशासनिक दोनों मामलों में सक्रिय साझेदार हों। यह भी स्पष्ट है कि इस प्रश्न का संबंध छात्र-विद्रोह से है, जो आज शिक्षा जगत् की भयंकर समस्या बन गया है।

७—क्या परीक्षा की संकल्पना और पद्धति के विषय में बिलकुल नया विचार करने का समय नहीं आ गया है?

हमारे सारे शैक्षिक प्रयास परीक्षा-परक हो गये हैं और परीक्षा-फल ही उनके मापदण्ड के आधार हो गये हैं। इससे ज्ञान की खोज का पक्ष बिलकुल गौण हो गया है। हमारे विद्यार्थी परीक्षा उत्तीर्ण कर लेते हैं, परन्तु उनकी जिज्ञासा की प्रवृत्ति सदा के लिए समाप्त हो जाती है।

हमारी शिक्षा-प्रणाली में परीक्षा का स्थान क्या हो? और परीक्षा का रूप क्या हो?

८—क्या यह सच नहीं है कि हमारी शिक्षा उस सामाजिक वातावरण से बिलकुल विच्छिन्न है, जिसमें छात्र रहता है?

हमारा शैक्षिक प्रक्रिया और समाज की आवश्यकताओं में एक सबध स्थापित करना है। आज तो स्थिति यह है कि या तो छात्र में समाज के प्रति विरोध की प्रवृत्ति पनपती है अथवा दुर्बल समझौता (एडजस्टमेन्ट) की। हम क्या करें कि इन दोनों दोषों से बचें और विद्यार्थी में ऐसी क्षमता पैदा करें कि वह समाज में रचनात्मक भूमिका अदा कर सके? आज की शिक्षा अनुत्पादक व्यक्तित्व विकसित करती है। हम उत्पादक व्यक्तित्व का विकास कैसे करें?

९—क्या शिक्षा का सबंध केवल छात्र और अध्यापक से है अथवा अभिभावक से भी। अगर अभिभावक से है तो शैक्षिक प्रक्रिया में उसका क्या स्थान होना चाहिए? आज यह आवश्यक हो गया है कि शिक्षा छात्र, अध्यापक और अभिभावक का सम्मिलित उत्तरदायित्व हो। प्रश्न यह है कि अभिभावक को शिक्षा के कार्यक्रम में सक्रिय भागीदार कैसे बनाया जाय?

इसी प्रश्न से अभिभावकों को शिक्षित करने का प्रश्न भी जुड़ा हुआ है, जिससे उनमें शिक्षा के नये दृष्टिकोण की चेतना जागे। क्या प्रौढ़-शिक्षा की वैसी योजना जो पाश्चात्य देशों में प्रचलित है, यहाँ भी लागू करना आवश्यक नहीं है? इस योजना का प्रयोजन साक्षर बनाना नहीं है, बल्कि अभिभावकों में शिक्षा के नवीन दृष्टिकोण की चेतना जागृत करना है।

१०—क्या तरुण की विद्रोह-भावना समाज की प्रगति का एक स्वस्थ तत्व नहीं है? अगर है तो शैक्षिक प्रक्रिया विद्रोह के इस तत्व को रचनात्मक दिशा कैसे दे, जिससे विद्यार्थी अपनी तारुण्य-शक्ति का अपव्यय व्यर्थ के आन्दोलनों में न करें?

यह सच है कि अगर तरुण अपनी विद्रोह-शक्ति खो दें तो जिस समाज में वह रहते हैं, वह गतिशील नहीं हो सकेगा। आज का विद्यार्थी-विद्रोह निष्प्रयोजन और निरर्थक होता है, परन्तु इन निष्प्रयोजन आन्दोलनों के पीछे विद्रोह की आग देखी जा सकती है। विद्रोह की यह प्रवृत्ति जगी कैसे रहे और कैसे उसे व्यापक आधार दिया जाय? विद्रोह की यह शक्ति पूरी शैक्षिक प्रक्रिया का भाग कैसे बनेगी?

११—शिक्षा के इस नये दृष्टिकोण (अप्रोच) के अनुरूप शिक्षा की प्रगतिशील प्रशासनिक संरचना कैसी होगी?

हमको भूलना नहीं चाहिए कि शैक्षिक प्रशासन का दकियानूसी जड़ (ब्यूरोक्रेटिक) ढाँचा शिक्षा के किसी भी प्रगतिशील दृष्टिकोण को समाप्त कर सकता है। अतः इससे बचना चाहिए।

वर्तमान स्थिति यह है कि विश्वविद्यालय स्तर के नीचे की शिक्षा-संस्थाओं का प्रबंध तीन एजेंसियों द्वारा होता है—सरकार, स्थानीय स्वायत्त निकाय और स्वैच्छिक संगठन। जहाँ तक वित्त का संबंध है, सरकार न केवल अपनी संस्थाओं का खर्च पूरा करता है, जो कुल संख्या का केवल पाँचवाँ भाग है, बल्कि स्थानीय स्वायत्त निकायों और स्वैच्छिक संगठनों के स्कूलों का खर्च भी बहुत हद तक पूरा करता है। स्थानीय निकायों को लगभग ७५ फीसदी और स्वैच्छिक संगठनों को लगभग १८ फीसदी सहायता मिलती है। वास्तविकता यह है कि स्कूली शिक्षा पर खर्च होनेवाली अधिकांश राशि सरकार और शिक्षा-शुल्क से प्राप्त होती है। हम सब जानते हैं कि स्थानीय निकायों और स्वैच्छिक संगठनों का प्रबंध दोषपूर्ण है, अतः उत्तरदायित्व कार्य में दखलन्दाजी। शिक्षा के राष्ट्रीयकरण की माँग की जाती रही है। तर्क किया जाता है कि जब सरकार शिक्षा का लगभग पूरा खर्च देती ही है तो शिक्षा का राष्ट्रीयकरण क्यों नहीं कर दिया जाय।

परन्तु शिक्षा का राष्ट्रीयकरण लोकतंत्र के लिए घातक सिद्ध होगा, क्योंकि तब विचारों का 'रजिमेन्टेशन' रोका नहीं जा सकेगा, जिसकी किसी भी कीमत पर बचना है।

तब मार्ग क्या है?

नये प्रगतिशील 'अप्रोच' का आधार विकेन्द्रीकरण और स्थानीय स्वायत्त निकायों और स्वैच्छिक संगठनों के कुप्रबंध से ही नहीं, सरकार से मुक्ति होनी चाहिए। इस प्रकार की मुक्ति कैसे प्राप्त होगी? ●

वक्तव्य

श्री आत्मा राम भाई का उपवास

—शराब-बन्दी के लिए एक नैतिक अपील—

अखिल भारत स्तर पर मद्य-निषेध नीति निर्धारित की जाय, इस पर जोर देने के लिए गुजरात के सुप्रसिद्ध कार्यकर्ता श्री आत्मारामजी १ जून से २१ दिनों का उपवास कर रहे हैं। मद्य-निषेध का समाज के लिए नैतिक और धार्मिक मूल्य तो है ही, पर जो लोग दलित वर्ग, आदिवासी, हरिजन सरीखे समाज के पिछड़े एवं अन्तिम व्यक्तियों के कल्याण-कार्य में लगे हैं वे यह महसूस करते हैं कि इस नीति की कितनी प्रबल आवश्यकता है। समाज में उत्पादक श्रम करनेवाले इन ग्रामीण एवं शहरी मजदूरों का महाजनों के कड़े सूद पर ऋण के द्वारा, एवं मालिकों आदि द्वारा तो शोषण होता ही है, अनेक पुराने सामाजिक रिवाजों के भी वे शिकार हैं। उन रिवाजों में एक शराब पीने की बुराई भी है। समाज का यह वर्ग जब तक शराब की बुराइयों से मुक्त नहीं होता तब तक वह समाज के शेष लोगों के साथ कदम में कदम मिला कर आगे बढ़ने की क्षमता विकसित नहीं कर सकता। बड़े बड़े सुधारकों ने, गांधीजी ने भी, नशाबन्दी को अपने जीवन का लक्ष्य बना कर काम किया। केन्द्रीय और राज्य सरकारें इस लक्ष्य की ओर से अत्यन्त उदासीन हैं, यह दुर्भाग्य की बात है। इन परिगणित और पिछड़े वर्ग के कल्याण में सरकारों की इतनी रुचि तो है, परन्तु नशा के कारण इन पर जो आफतें आती हैं और इनका जो इससे सर्वनाश होता रहता है, उस ओर से ये बेपरवाह हैं।

तामिलनाडु और गुजरात, दो ऐसे राज्य हैं, जिनने पूर्ण नशाबन्दी को कार्यान्वित करने की अगुआई की है। इनसे बहुत आशा बंधती है। हम हार्दिक आशा रखते हैं कि उनके पथ में चाहे जितनी भी बाधाएँ आवें उनके बावजूद ये मद्य-निषेध के कार्यक्रम को चलाते रह कर इसमें अन्य राज्यों के मार्गदर्शक बनेंगे।

हमें विश्वास है कि आत्मारामजी के उपवास से शासनकर्ताओं और राजनैतिक दलों के नेताओं की चेतना जाग्रत होगी और उसके बल पर देश यथाशीघ्र पूर्ण मद्य-निषेध की ओर कदम बढ़ा सकेगा। श्री आत्माराम ने जिस महान उद्देश्य की सिद्धि के लिए यह तप प्रारम्भ किया है उसकी सफलता के लिए हम सब लोग ईश्वर से प्रार्थना करते हैं।

मदुराई ४-६-'७१

—एस० जगन्नाथन्
अध्यक्ष, सर्व सेवा संघ,

विकास भाई : क्रान्ति या विकास ?

[सर्वोदय में युवा-शक्ति से परिचय पाने का प्रयत्न कीजिये तो आप विकास भाई से अवश्य मिलेंगे। काली दाढ़ी के पीछे चमकता हुआ चेहरा, गम्भीर आँखें और गहरा चिन्तन आपको प्रभावित करेगा। वे भाषण नहीं देते, बल्कि भाषण-बाजी से दूर भागते हैं, लेकिन बातचीत में वे घण्टों आप से विचार विमर्श करेंगे। स्थापित सर्वोदय-परम्परा की भाषा और मुहावरों से अलग हटकर उन्होंने ऐसी भाषा की तलाश की है, जिसे आज का विद्रोही तरुण आसानी से समझ सकता है। हालांकि व सुर विद्रोही से ज्यादा विधायक होना पसंद करते हैं, पर विद्रोहियों के साथ उनकी पटती खूब है। सम्पन्न परिवार की पृष्ठभूमि और बुर्जुआ-शिक्षा से प्राप्त इन्जीनियरिंग की डिग्री के घुटन भरे वातावरण से बाहर आकर उन्होंने गाँव और गाँव की क्रान्ति को भारतीय-प्रगति का आधार माना है। लीजिये, उनसे हुई एक लम्बी बातचीत का संक्षिप्त सार प्रस्तुत है।]

सतीश कुमार : इन दिनों किस काम में व्यस्त हैं आप ?

विकास भाई : शहरातू और विश्वविद्यालयी तरुणों को, इन्जीनियरों, डाक्टरों और वैज्ञानिकों को गाँव की समस्या के निकट लाने का एक प्रयत्न हम लोग कर रहे हैं। गाँव की वास्तविकताओं से कट कर और देहाती समस्याओं की भयंकरता से मुँह छिपाकर भारतीय-प्रगति की बातें करना एक बन्धा खासा फैशन चल पड़ा है। कुछ ऐसे तरुण और विद्यार्थी भी हैं, जो समस्या की वास्तविकता से पलायन तो नहीं करना चाहते, पर समस्या से आमना-सामना कैसे हो, यह नहीं जानते। उनके लिए हम सूत्र संयोजक बनकर एक अवसर और माध्यम उपस्थित करने की कोशिश कर रहे हैं। अप्रैल और मई महीनों में हमने इस तरह के तरुणों के लिए दिल्ली, बम्बई और बेंगलोर में शिविर किये, जिनमें २८० विद्यार्थी आये। अब इनको हमने उन उन क्षेत्रों में भेजा है, जहाँ ग्रामीण-प्रगति के कुछ प्रयोग या प्रवृत्तियाँ चल रही हैं। हो सकता है कि इनमें से कुछ लोग इस प्रारम्भिक परिचय और अनुभव के बाद कम से कम एक साल का समय दें।

सतीश कुमार : समस्याओं की वास्तविकता से जुड़ने के लिए क्या एक साल का समय पर्याप्त होगा ?

विकास भाई : ग्रामीण क्षेत्र में हम लोग अनेक प्रयोग और प्रवृत्तियाँ चला रहे हैं। मुसहरी, मादीग्राम, बाजगया, गोविन्दपुर, रंगपुर इत्यादि। इन क्षेत्रों में हमारे सामने दुहरी समस्या है। एक तो यह कि हमारे साथ तकनीकी वैशिष्ट्य वाले लोगों का अभाव है। हम बाँध बनाना चाहते हैं, बोरिंग करना चाहते हैं, खेती को आधुनिक बनाना चाहते हैं, कुछ औद्योगिक प्रवृत्ति शुरू करना चाहते हैं परन्तु इन्जीनियरों, कृषि-विशेषज्ञों और तकनीकी जानकारों के अभाव में हमारा काम या तो रुक जाता है या उसमें बहुत विलम्ब होता है। दूसरी समस्या यह है कि शहरी आदतों वाले, आधुनिक शिक्षा और संस्कारों वाले युवक एवं 'विशेषज्ञ' हमारे साथ आते भी हैं तो हम उनको सम्भाल नहीं पाते। उनको सन्तोष दे सकने वाला काम नहीं दे पाते। उनकी भाषा और उनके मुहावरों में हम अपनी बात नहीं समझा पाते। ऐसी स्थिति में ग्राम-सेवा की पृष्ठभूमि वाले कार्यकर्ताओं और आधुनिक शिक्षा-दीक्षा वाले 'विशेषज्ञों' के बीच एक क्रमिक सम्पर्क की प्रक्रिया का प्रारम्भ जरूरी है। हमारे प्रयत्न में यही भूमिका है।

सतीश कुमार : 'विशेषज्ञों द्वारा ग्रामीण-प्रगति के प्रयत्न अब तक कई बार हो चुके हैं। क्योंकि 'विशेषज्ञ' किसी एक ही पक्ष का दक्ष है, इसलिए उसके दिमाग में सम्पूर्ण क्रान्ति का चित्र समा नहीं पाता। फिर मतभेद, मनभेद और प्रक्रियाभेद उत्पन्न होते हैं। पश्चिमी देशों का समाज तो पूरी तरह से तकनीकी वैशिष्ट्य वाले विशेषज्ञों द्वारा ही परिचालित और नियमित है। इसलिए वहाँ का सामान्य आदमी अपने को अजनबी महसूस करने लगा है।

विकास भाई

विकास भाई : यह एक वास्तविक प्रश्न है जिसके महत्व को मैं पूरी तरह समझता हूँ। इसका समाधान यही है कि 'विशेषज्ञ' को हम 'ऊँचा' या 'विशिष्ट' न मानें। उसके हाथ में नियन्त्रण भी न जाने दें। उसको एक सलाहकार की भूमिका में रखें। पर ऐसा सलाहकार भी नहीं, जो अपनी सलाह दे कर छुट्टी पा ले। बल्कि पूरी प्रक्रिया में उसे भी सबके साथ 'साझीदार' होना चाहिए। जैसे हम जनतन्त्र में सबकी साझीदारी लाना चाहते हैं, उसी तरह क्रान्ति, प्रगति निर्माण और विकास के काम में भी सबकी साझीदारी चाहते हैं। ग्रामीण-पुनर्रचना के क्षेत्र में लगे हुए हम सर्वोदय कार्यकर्ताओं की भूमिका भी यही होगी कि गाँव के जीवन-मूल्यों एवं सम्बन्धों में आ रहे परिवर्तन की प्रक्रिया में हम साझीदार बनें। गाँव के साथ हमारा तादात्म्य जुड़े

और यह क्रान्ति या परिवर्तन हमारे लिए एक जीवंत अनुभव बन जाय। कभी-कभी गाँवों में हमलोग 'उपदेशक' बन जाते हैं। लोगों के लिए क्या अच्छा है और क्या बुरा है, उनको क्या करना चाहिए और क्या नहीं करना चाहिए, इसका मार्गदर्शन और उपदेश देने लगते हैं। इस तरह हमलोग भी अपने को एक 'ऊँचे' स्थान पर प्रतिष्ठित कर लेते हैं।

सतीश कुमार : जब हम गाँव का विकास करने जाते हैं, तो यह स्वाभाविक ही है कि लोग हमें कुछ 'ऊँचा' या ज्यादा प्रबुद्ध मानें और इसलिए ज्यादा आदर भी दें। हमारी उपस्थिति से उनको आर्थिक लाभ की भी संभावना रहती है। हम सरकारी या संस्थागत मदद लायेंगे, 'ओक्सफाम' या 'वार ऑन वांट' जैसी संस्थाओं द्वारा विदेशी मदद भी लायेंगे। इस यथार्थ को हमारे लिए नकारना असंभव होगा कि हम उनके 'संरक्षक' नहीं हैं।

विकास भाई : यह सोच लेना होगा कि हम क्रान्तिकारी हैं या मात्र गाँव का विकास चाहते हैं? जीवन-मूल्यों और सामाजिक संबन्धों में परिवर्तन लाने की प्रक्रिया को तेज करना हमारा लक्ष्य है या गाँव में आर्थिक सुख-सुविधा जुटाना? अगर विकास और आर्थिक संपन्नता लाने के लिए धन और साधन जुटानेवाले 'दाता' हम बनेंगे तो लोगों को हमारे क्रान्ति के विचारों में कोई दिलचस्पी नहीं होगी। हम सलाहकार, संरक्षक, उपदेशक और दाता बनकर गाँव में जाते हैं तो सम्बन्ध-परिवर्तन की प्रक्रिया को भूल जाना चाहिए। खास तौर से हमारे द्वारा लायी हुई विदेशी मदद या बाहरी मदद क्रान्ति-कार्य के लिए साधक से ज्यादा बाधक बनती है। आर्थिक विकास का मोह हमें जकड़ लेता है और पग पग पर समझौता करने के लिए बाध्य करता है। गाँव भी अपनी शक्ति, अपने अभिक्रम और पराक्रम पर निर्भर न रह कर बाहरी मदद का मोहताज बन जाता है। बाहर वाले मदद देने के लिए अपनी प्रत्यक्ष या परोक्ष शर्तें मनवाने की चेष्टा करते हैं और इस तरह हम एक दुष्चक्र में फँस जाते हैं। मुझे इस तरह की 'बाहरी' मदद के माध्यम से काम करने का अनुभव है और वह कोई अच्छा अनुभव नहीं है।

सतीश कुमार : हमारे कुछ साथी ऐसा सोचते हैं कि सरकारी, संस्थागत या विदेशी मदद अगर बिना किसी शर्त के मिलती हो तो उसे स्वीकार करने में आपत्ति नहीं होनी चाहिए।

विकास भाई : यह एक भोलापन है कि 'बाहरी' मदद निरपेक्ष हो सकती है। इस भोली मान्यता से हमें मुक्त होना पड़ेगा। हो सकता है कि शर्तें या अपेक्षाएँ प्रत्यक्ष रूप से न लादी जाती हों, पर परोक्षरूप से तो अपेक्षाएँ रहती ही हैं। हमारी सरकार भी विदेशों से इसी मुगालते में मदद लेती है कि वह मदद निरपेक्ष तथा शुद्ध भाव से दी जा रही है। पर क्या हम यह नहीं जानते कि मदद देनेवाले देशों का दबाव और दबदबा हमारी राष्ट्रीय-अन्तर्राष्ट्रीय नीतियों के निर्धारण के समय डाला जाता है। सबसे बड़ा प्रश्न तो यह है कि क्या हम पूरे भारत के सभी गाँवों के लिए पर्याप्त मदद बाहर से, संस्थाओं से या विदेश से जुटा भी सकेंगे? आखिर तो हमको गाँवों के अन्दर छिपे हुए साधन-स्रोतों को ही ढूँढना पड़ेगा। हम मूल्य-परिवर्तन एवं सम्बन्ध-परिवर्तन की जिस प्रक्रिया के साक्षी बनना चाहते हैं, उसमें विकास, आर्थिक निर्माण आदि कुछ हद तक स्थिति को अनुकूल बनाने के लिए सहायक होते हैं। इसीलिए तदनुकूल सरणी को हम ग्रामाभिमुख बनाने की चेष्टा कर रहे हैं। पर आखिर में इनको गाँव की ग्रामसभा के साथ जुड़ना होगा। विकास आदि के काम अन्त में ग्रामसभा को साधनों के बल पर और लोकशक्ति के बल पर करने होंगे। हमको अपने विशिष्ट ज्ञान का या विशेषज्ञता का उपयोग भी ग्रामसभा के माध्यम से ही करना होगा। ग्रामसभाएँ जब तक नहीं बनती हैं, तब तक एक संक्रमण-काल है, जिसमें हमको बड़ी सावधानी के साथ गाँववालों का 'साझीदार' बनना है।

सतीश कुमार : आपने मुसहरी, सहरसा, बोधगया, रंगपुर, गोविंदपुर इत्यादि कुछ क्षेत्रों के नाम गिनाये। इनमें काम की क्या स्थिति है?

विकास भाई : इस प्रश्न का उत्तर कैसे ढूँढा जाय, यही हमारे लिए सबसे बड़ा प्रश्न है। विभिन्न क्षेत्रों में काम करनेवाले साथियों के बीच सम्प्रेषण और संचार का नितान्त अभाव है। संचार के बिना हमलोग एक दूसरे की दिक्कतों, विशेषताओं, उपलब्धियों, अनुभवों आदि से परिचित नहीं हो पाते। अगर हर तीन महीने पर क्षेत्रों में काम करने वाले वास्तविक कार्यकर्ता आपस में मिलकर विस्तार से अनुभवों का आदान-प्रदान करके आपसदारी कायम कर सकें, संवाद और सम्प्रेषण की स्थिति पैदा कर सकें, एक दूसरे के बीच सही सही संचार स्थापित कर सकें तभी आपके प्रश्न का उचित उत्तर मिल सकता है। संचार से मेरा अभिप्राय आँकड़ों वाली रिपोर्ट या भावुकता-प्रधान पावन-प्रसंगों से नहीं है, बल्कि एक तथ्य-परक, यथार्थवादी विश्लेषण एक दूसरे के सामने किये जाने से है। आपसी पत्र-व्यवहार द्वारा भी इस दिक्कत का हल कुछ हद तक किया जा सकता है, पर हम ऐसे उलझे रहते हैं कि उसमें व्यस्तता का भ्रम पाल लेते हैं और सामान्य शिष्टाचार-पूर्ण या उत्साहवर्धक सन्देशों से आगे बढ़कर विश्लेषण की हद तक पहुँच ही नहीं पाते। संचार का अभाव किसी भी आन्दोलन की व्यापकता के लिए सबसे बड़ी बाधा है। ●

अमेरिकी लोगों की अनुकूल प्रतिक्रियाएँ

वाशिंगटन में जयप्रकाशजी ने यह महसूस किया कि सभी गैर-साम्यवादी देशों में जहाँ-जहाँ वे गये इनमें अमेरिका का रवैया बंगला देश की समस्या पर सबसे अधिक संतोषजनक है। वे अमरीकी कांग्रेस और प्रशासन के रवैये से संतुष्ट थे। उन्होंने यह भी महसूस किया कि अमरीका पाकिस्तान पर इस बात के लिए दबाव डाल रहा था कि वह जनता के सच्चे प्रतिनिधियों से, अर्थात् शेख मुजीबुर्रहमान और उनके साथियों के साथ, राजनैतिक हल खोजे। उन्हें इसका भी विश्वास था कि अमरीका द्वारा जो १७५ मीलियन डालर शरणार्थियों को राहत पहुँचाने के लिए दिये गये हैं वे केवल प्रारंभिक किस्त के हैं।

वाशिंगटन में यह बात मानी जाती है कि पाकिस्तान को उस समय तक नयी आर्थिक सहायता की आशा नहीं रखनी चाहिए जब तक वह ऐसी परिस्थिति न पैदा करे कि शरणार्थी वापस जाने को तैयार हो जायँ। प्रशासकीय क्षेत्र में कांग्रेस का यह दृष्टिकोण माना जाने लगा है कि अमरीका को शान्ति और स्थिरता के लिए सही दिशा में दबाव डालना चाहिए।

जयप्रकाशजी की मुलाकात श्री कांसिगर और सिनेटर कूपर, मोलर, स्टार्कमैन इत्यादि तथा प्रसिद्ध कांग्रेसी श्री बोल्स और श्री गालागार से हुई।

श्री जयप्रकाशजी ने अमरिकनों को यह बताया कि उन्हें अब संयुक्त पाकिस्तान की बात नहीं सोचनी चाहिए, बल्कि बंगला देश को खड़े होने में सहायता देना चाहिए। उन्होंने यह भी कहा कि पाकिस्तान पूर्व और पश्चिम में आबादी की संख्या में समानता लाने की एक शैतानी योजना पर काम कर रहा है, और इसीलिए लाखों बंगालियों को, विशेषतः हिन्दुओं को, वह वहाँ से भारत में ढकेल रहा है, और भारत को सामाजिक और राजनैतिक स्तर पर कमजोर करके वह भारत की धर्मनिरपेक्षता और लोकतंत्र को कमजोर करना चाहता है। उन्होंने यह भी कहा कि भारत को परिस्थिति से मजबूर होकर अपनी रक्षा के लिए कुछ करना भी पड़ सकता है, और यह पाकिस्तान के लिए लाभदायक होगा क्योंकि इससे उसकी अपनी समस्या भारत पाक-समस्या बन जायेगी।

न्यूयार्क में एक कम्यूनिटी चर्च की सभा में बोलते हुए श्री जयप्रकाशजी ने कहा कि उन्होंने उन सभी नेताओं से, जिनसे वे मिले हैं, यह कहा है कि पाकिस्तान को सभी प्रकार सैनिक सहायता बन्द कर दी जाय और आर्थिक सहायता उस समय तक के लिए रोकी जाय जब तक कि बंगला देश में सैनिकों द्वारा जनता का कत्ल रुक नहीं जाय, इस्लामाबाद के सैनिक वापस बैरकों में न जायें, सभी राजनैतिक बन्दियों को रिहा न कर दिया जाये, और उनसे वार्ता के द्वारा राजनैतिक हल पाकिस्तान खोज न ले। उन्होंने यह भी कहा कि अगर संसार के बड़े देश बंगला देश का एक शान्तिपूर्ण राजनैतिक हल नहीं करवा पाते हैं तो पूर्व बंगाल से दक्षिण पूर्व एशिया तक फैला समूचा क्षेत्र खूनी क्रान्ति में फँस जायेगा। और इस परिस्थिति में भारत एक मौन दर्शक नहीं रह सकता।

जयप्रकाशजी ने यह भी कहा कि अन्तर्राष्ट्रीय राहत पहुँचाने की कोशिश बहुत थोड़ी हुई, यद्यपि अब यह ज्यादा हो रही है। परन्तु राजनैतिक और सामाजिक बोझ में कोई हिस्सा नहीं बँटा सकता है और यह एक टाइम बम की तरह है जो भारत में लगा दिया गया है।

११ जून की सुबह में जयप्रकाशजी की उ थां से बंगला देश पर बातचीत हुई। जयप्रकाशजी ने उन्हें यह बताया कि भारत अब तक पाकिस्तान की छेड़खानी सहन करता जा रहा है, परन्तु इसकी एक सीमा होगी, और अगर परिस्थिति नहीं बदली तो भारत-पाकिस्तान के बीच एक युद्ध अवश्य छिड़ जायगा।

बंगला देश के उग्रवादी भारत के उग्रवादियों से मिलकर, चीन के नाम पर, अवामी लीग के नेतृत्व को धक्का देकर एक राष्ट्रीय और सामाजिक क्रान्ति की कोशिश कर रहे हैं। जयप्रकाशजी ने एक सभा में भाषण देते हुए यह कहा कि बंगला देश अन्तर्राष्ट्रीय षड्यंत्र का अड्डा बन सकता है।

शांतिपूर्ण हल के लिए अपनी योजना बताते हुए जयप्रकाशजी ने कहा कि उन्होंने अपने प्रवास में सभी को यह बताया है कि शेख मुजीबुर्रहमान और अवामी लीग के दूसरे नेता रिहा होने के बाद अगर याह्या खाँ से बात न करें तो किसी को आश्चर्य नहीं होना चाहिए क्योंकि याह्या के हाथ खून में रंगे हैं। इस्लामाबाद को पूर्व बंगाल में अब तक कोई पिट्ठू सरकार बनाने के लिए नहीं मिल पाया है जिसके लिए वह बड़ा प्रयत्न कर रहा है और हर प्रकार का दबाव डाल रहा है।

जयप्रकाशजी ने अपना दृष्टिकोण यह बताया कि पाकिस्तान मर चुका है और इसे याह्या खाँ तथा उनकी सेना और भुट्टो ने बर्बाद किया है। उन्होंने कहा कि सरकारों ने स्वीकार किया है कि बंगला देश बन चुका है यद्यपि उन्होंने यह बात स्पष्ट रूप में नहीं कहा है और नहीं जानते हैं कि राजनैतिक तौर पर इसके लिए क्या किया जाये।

जयप्रकाशजी ने अमेरिकनों को यह बताया कि वियतनाम का सैनिक हल खोजने का अनुभव अमेरिका के लिए जल्दी कदम उठाने के लिए काफी होना चाहिए। ●

समस्या को देखने के विभिन्न कोण

अमेरिका के विदेश विभाग उपसमिति के अध्यक्ष श्री कारनीलियस गालागार ने, जो अभी-अभी शरणार्थियो की दैन्य परिस्थिति देखकर लौटे है, अमेरिका के हाउस आफ रिप्रेजेन्टेटिव में कहा कि पाकिस्तान की सैनिक सरकार की सहायता से केवल कत्लेआम को बढ़ावा मिलेगा और महामारी फैलेगी। उन्होने यह भी कहा कि शरणार्थियो की सख्या पाकिस्तान सरकार की बर्बरता और जनता के चुने हुए प्रतिनिधियो को कुचलने का खुला प्रमाण है।

विदेशमंत्री श्री स्वर्णसिंह की विदेश-यात्रा

विदेशमत्री श्री स्वर्ण सिंह बगला देश की समस्या को लेकर विदेश के दौरे पर गये हुए हैं। वे मास्को में अपने मिशन के परिणाम से पूर्णरूप से सतुष्ट है। उन्होने बताया कि पश्चिमी जर्मनी भारत से इस बात में सहमत है कि शरणार्थियो का घर लौटते समय अपनी रक्षा और भविष्य का विश्वास होना चाहिए।

पश्चिमी जर्मनी के विदेश विभाग के स्थायी मत्री श्री पाल फ्रैन्क ने श्री स्वर्णसिंह को यह बताया कि पश्चिमी जर्मनी दक्षिण एशिया की सत्ता की राजनीति में पड़ना नही चाहता, परन्तु यह उस इलाके की शान्ति में दिलचस्पी रखता है।

एक प्रेस कान्फरेंस में यह पूछे जाने पर कि ससार के देश पाकिस्तान पर किस बात के लिए दबाव डाले, उन्होंने कहा कि उन्हे उसको सहायता देने से इनकार करना चाहिए, क्योंकि उससे वह सैनिक-शासन मजबूत करेगा। श्री सिंह ने यह बताया कि पश्चिमी देशों को परिस्थिति के अपने अन्दाजों के मुताबिक वक्तव्य देना चाहिए। अब तक उन्होंने उन बातो को, जिन्हे वे महसूस करते हैं, प्रकट करने में बडी काहिली दिखाई है। वे जो बातें निजी तौर पर करते हैं वह उन्हे स्पष्ट रूप में खुले-आम कहना चाहिए, क्योंकि हमलोग यह समझते हैं कि सही बातें पाकिस्तान के लोगों को नही मालूम है, क्योंकि वहाँ प्रेस स्वतत्र नही है।

प्रधान मंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी

प्रधानमत्री ने सिलचर में अपने एक भाषण में कहा है कि आखिरकार पाकिस्तान बगला देश के लोगो के साथ सबध तोड़ने के बजाय किसी प्रकार का राजनैतिक हल खोजेगा।

कछार में एक प्रेस कान्फरेंस में बगला देश के भविष्य के बारे में पूछे जाने पर उन्होने बताया कि उनके भविष्य का फैसला हमें नही करना है, इसका फैसला बगला देश और पाकिस्तान के लोगो को करना है। उन्होंने यह आशा प्रकट की कि ऐसी परिस्थिति जल्द ही पैदा की जायेगी कि शरणार्थी अपने घरो को वापस जा सकें। उन्होने लोगो से कहा कि वे हिम्मत के साथ परिस्थिति का मुकाबला करें।

श्री एम० सी० छागला

एक सभा मे बगलादेश पर भाषण देते हुए श्री छागला ने दुख और आश्चर्य प्रकट किया कि ससार के अधिकतर देश बगला देश की घटनाओ से बेरुखी दिखा रहे हैं। उन्होने कहा कि बगला देश को मान्यता न देकर भारत ने गलती की है, जिसके लिए इतिहास हमें क्षमा नहीं करेगा। उसे मान्यता शीघ्र देनी चाहिए।

अल्पसंख्यक कन्वेंशन

लखनऊ में बगला देश की समस्या पर अल्पसख्यक कन्वेन्शन हुआ जिसके उद्घाटन भाषण में श्री फखरुद्दीन अली अहमद ने कहा कि "उन मशीनों को टूटना है जो पूर्व बगाल की स्वतन्त्रता के जज्बे से टकरायेंगी।" कन्वेन्शन में एक प्रस्ताव स्वीकृत किया गया जिसमें कहा गया कि—"पाकिस्तान बगला देश की जनता की जायज और लोकतांत्रिक आकाक्षाओ को कुचलने के लिए नरसहार कर रहा है और उस बर्बरता का इतिहास में कोई उदाहरण नही मिलता। उसने जानबूझकर यह परिस्थिति पैदा की है जिसका उद्देश्य भारत के लिए समस्याएँ खड़ी करना है। जिसके परिणाम मे ५० लाख शरणार्थी भारत आ चुके हैं।" प्रस्ताव में पाकिस्तान की इस नयी चुनौती का मुकाबला करने के लिए राष्ट्रीय एकता को दृढ करने की अपील की गयी है।

हजरत अमीर शरीअत मौलाना मिनत उल्लाह रहमानी ने एक पत्र में जयप्रकाशजी को सलाह दी है कि "बंगला देश" से अधिक महत्वपूर्ण समस्या उन शरणार्थियो की है जो पूर्व बगाल से भारत आ गये हैं। बगला देश की समस्या खालिस राजनैतिक है और सामाजिक और सुधारात्मक सगठनो को इसमें दिलचस्पी नही लेनी चाहिए। उन्होंने लिखा है कि इसानी बिरादरी एक सामाजिक और सुधारात्मक सगठन है, राजनैतिक नही। उन्होने जयप्रकाशजी को सलाह दी है कि वह इन्सानी बिरादरी को इस समस्या में न उलझायें। उन्होने यह भी लिखा है कि भारत में बहुत से मुस्लिम-कुश-न-फसादात (मुसलमानो का कत्लेआम करनेवाले साम्प्रदायिक दगे) हुए, मगर इन्सानी बिरादरी की तरफ से हजारो बेगोरो कफन लाशों की हमदर्दी में कोई बयान नहीं आया। फिर पाकिस्तानी मकतूलीन (मारे जानेवाले लोगों) की हमदर्दी में यह बयान कुछ अजीब-सा है। आगे चलकर उन्होने लिखा है कि "आपका ख्याल है कि वहाँ फौज ने 'ज्यादती' की है, मुझे इससे इस एतराफ के साथ पूरा इत्तफाक (समर्थन) है कि फौज ने वहाँ ज्यादती की है और बगालियो ने गैर-बगालियों के साथ 'ओवर ज्यादती' की है।"

उन्होने यह सलाह दी है कि इन्सानी बिरादरी को दूसरे देश की समस्या और बगला देश के समर्थन से ध्यान हटाकर भारत में आये उन शरणार्थियो की समस्या की तरफ ध्यान देना चाहिए, जो पाकिस्तान

एक अलग ग्रामस्वराज्य सभा बनानी है। अभी तक ४-५ गावों की एक ही ग्रामसभा होती है, जो कभी मिल नहीं पाती। अब अपने गाँव की ग्रामस्वराज्य सभा रोज बैठ सकेगी।

ग्रामस्वराज्य सभा बनी। सभापति कौन होगा इसके लिए कई नामों की चर्चा हुई और अन्त में एक ३५ वर्षीय युवक श्री सुरेन्द्र सिंह के नाम पर सर्व-सम्मति हो गयी। उनके मंत्री ४६ वर्षीय श्री कुन्दन-सिंह बने।

४ किलोमीटर दूर पुरोला में तहसील की नयी इमारत बन रही है, परन्तु इसमें सबसे पहले बन चुकी है खजाने की इमारत। सरकार के पास अपना खजाना अवश्य होना चाहिए। आज की ग्राम पंचायतें अनुदान के लिए विकास अधिकारी के सामने पल्ला पसारती हैं। कोई सरकार भिखमंगी तो नहीं हो सकती? फिर सौदाड़ी की ग्रामस्वराज्य ग्रामसभा का कोष कैसे बनेगा? दिल्ली की सरकार के पास रुपया बनाने की टकसाल और नोट छापने का छापाखाना है। एक सदस्य ने कहा, 'हमारे पास तो यह नहीं है।' तत्काल उत्तर मिला, 'सिक्के और नोटों से तो पेट नहीं भरता। हमारे पास अन्न है, ऊन है जिनसे पेट भरता है, तन ढकता है। ग्रामदानी गाँवों में पैदावार का ४०वाँ हिस्सा जमाकर ग्रामकोष बनता है।' गेहूँ की फसल आने में अभी देरी है। सौदाड़ी के लोगों ने तय किया कि प्रत्येक परिवार ग्रामकोष के लिए कम-से-कम एक-एक कुड़ी (किलो) धान जमा करेगा। अधिक जितना चाहे दे। यह अनाज अगली फसल आने तक जरूरतमन्दों को दिया जायेगा। उधार की प्रचलित दर फसल पर ड्योढ़ा वसूल करने की है। सौदाड़ी की ग्राम-स्वराज्य सभा ने इसे सवैया कर दिया।

गाँव के झगड़े गाँव में ही तय हो सकें, इसके लिए ५९ वर्षीय श्री गोविन्दप्रसाद न्याय मण्डल के अध्यक्ष चुने गए। श्याम-दास, जयपुरी और हरदयाल सिंह शान्ति सैनिक बने।

ग्रामस्वराज्यसभा ने पहली ही बैठक में गाँव के भूखे लोगों की खोज की। सौदाड़ी में एक ही भूमिहीन कमल है। कमल दूसरों का हल जोतने की मजदूरी कर अपनी गुजर-बसर करता है। हाल ही में उस पर विपत्ति का पहाड़ टूट पड़ा। परिवार की दूसरी कमाऊ सदस्या उसकी पत्नी चल बसी। पत्नी के शोक में व्याकुल कमल घर में रो रहा था। एक विधवा बहन श्रीमती जयवीर देई ने कहा, "मैं ४ नाली (दो एकड़) के दो खेत कमल के लिए देती हूँ।" एक-एक करके पाँच लोगों ने कमल के लिए खेत दिए और कुछ ही मिनटों में कमल भूमिवान हो गया। उसके पास १२ नाली (६एकड़) भूमि हो गयी है। जिस काम को दिल्ली और लखनऊ की सरकार २४ वर्षों में नहीं कर सकी, गाँव की सरकार ने पहले ही दिन कर लिया। अगली सुबह जब कमल को भूमि का प्रमाण-पत्र दिया गया तो वह एकाएक विश्वास नहीं कर सका कि नयी सुबह की पहाड़ की चोटियों में उगनेवाले सूर्य के साथ उसका भाग्योदय भी हो गया है।

हमारी सभा रात के एक बजे समाप्त हुई। वर्षों पहले बापू ने ग्रामस्वराज्य का स्वप्न देखा था। आज सौदाड़ी जैसे दूरस्थ गाँवों में, जो स्वराज्य की लड़ाई से कोसों दूर रहे हैं, ग्रामस्वराज्य के अवतरण देखकर हम धन्यता का अनुभव कर गहरी नींद में सो गये। २-३ गाँवों में हर दिन इसी तरह की सभाएँ होती हैं। पिछले १० दिनों में २० गाँवों में ग्राम-स्वराज्य सभाओं की स्थापना हो चुकी है। क्रांति की आग ठंडी न पड़े इसके लिए पीछे-पीछे कुछ गाँवों में सरला बहनजी की यात्रा चलती है। पिछले ३२ वर्षों में पहाड़ी गाँवों की सेवा करने के बाद उनके पास जनता को देने के लिए एक संदेश है—स्त्री-शक्ति के जागरण का और शराब बन्दी का। इनकी इस क्षेत्र के नवनिर्माण के लिए सबसे अधिक आवश्यकता है। सबसे अधिक श्रम करने के बावजूद भी अभी तक बहनों को समाज में सम्मानित स्थान नहीं मिला है। कन्या-विक्रय और तलाक की कुप्रथाएँ आम रिवाज है। अनाज की शराब बनाने और शराब से आतिथ्य करने की पुरानी परम्पराएँ अभी समाप्त नहीं हुई हैं, यद्यपि सरकार की ओर से हुई शराबबन्दी का अच्छा असर पड़ा है।

कमल नदी की घाटी उत्तर की ओर की चोटियों को छूने के लिए बढ़ती है और ग्रामस्वराज्य-यात्रा का आरोहण भी घाटियों से चोटियों की ओर हो रहा है आजीविका का एकमात्र साधन भेड़ पालन है।

—सुन्दरलाल बहुगुणा

९ अगस्त के लिए पूर्व तैयारी : कुछ सुझाव

तरुण-शान्तिसेना ने शिक्षकों और अभिभावकों के सहयोग से आगामी ९ अगस्त को 'शिक्षा में क्रान्ति दिवस' के रूप में मनाने का निश्चय किया है। इस दिन सारे देश की प्रान्तीय राजधानियों में विद्यार्थी, शिक्षकों और अभिभावकों की संयुक्त रैलियाँ अपना माँगपत्र राष्ट्र एवं राज्य के शिक्षा मंत्रियों के सामने प्रस्तुत करेंगी।

भविष्य निश्चय ही नौजवानों के हाथ में है। लेकिन उसके लिए हमें आज से ही प्रयत्न शुरू कर देना पड़ेगा। ९ अगस्त हमारे आन्दोलन के लिए निर्णायक सिद्ध होगा। हमें विश्वास है कि हम सब मिलकर ९ अगस्त से इस सड़ेगले इतिहास में एक स्वर्णिम अध्याय जोड़ेंगे।

'शिक्षा में क्रान्ति दिवस' को ज्यादा प्रभावशाली बनाने के लिए आवश्यक है कि हमारी सारी बातें जनता के सामने स्पष्ट रूप से पहुँचे। हमारा प्रचार जितना ज्यादा स्पष्ट और तीव्र गति से होगा, हम उतने ही ज्यादा जनता के निकट आयेंगे और व्यापक जन-आन्दोलन की भूमिका बन सकेगी।

आप साधनों की वृद्धि का ध्यान रखते हुए विभिन्न तरीके अपना सकते हैं। हम आपको यहाँ कुछ सुझाव दे रहे हैं। आशा है आपको उनसे सहायता मिलेगी।

१—सभी तरुण-शान्तिसेना के केन्द्रों से अविलम्ब सम्पर्क स्थापित किया जाय तथा सभी सदस्यों को तुरन्त कार्यक्रम की सूचना दी जाय।

२—सभी सहयोगी संगठनों से समर्थन एवं सहयोग माँगा जाय, जिससे वे भी इस कार्यक्रम में पूर्णतः शामिल हो सकें।

३—पहले क्षेत्रीय स्तर पर शिक्षा पर विचार-गोष्ठियाँ की जायँ, उसके बाद प्रान्तीय स्तर पर। इनमें ज्यादा-से-ज्यादा विद्यार्थियों, शिक्षकों व अभिभावकों को शामिल किया जाय, जिससे वैचारिक सफाई हो सके, और एक पुष्ट एवं स्वस्थ मानस का निर्माण होने में सहायता मिले।

सारे प्रान्त में शिविर किये जायँ, जिनमें शिक्षा में क्रान्ति मुख्य विषय माना जाय। साथी प्राप्त करने की कोशिश एवं ९ अगस्त के बाद के कार्यक्रम भी सोचे जायँ।

४—पैम्फलेट्स निकाले जायँ, जिनमें समस्या का स्पष्ट ज्ञान 'शिक्षा में क्रान्ति क्यों?' 'बदलते सामाजिक मूल्य और शिक्षा' 'क्रान्ति की भूमिका में शिक्षा' 'नयी समाज रचना के लिए शिक्षा बदलो' आदि पर प्रकाश डाला जाय।

५—पोस्टर और फोल्डर निकाले जायँ, जो बेकारी, शिक्षित बेकारी तथा पढ़नेवाले विद्यार्थियों के प्रतिशत का ज्ञान कराते हों। पोस्टरों की भाषा में कार्टूनों का पुट हो तो ज्यादा अच्छा रहेगा।

६—समाचार पत्रों में लेख लिखे जायँ एवं रेडियो पर वार्ताएँ आयोजित की जायें। लेख अच्छे शिक्षाविदों से भी लिखवाकर छपवाने चाहिए।

७—व्यक्तिगत चर्चाओं एवं बैठकों का आयोजन किया जाय। सभाएँ चौराहों पर एवं भीड़ भरे स्थान पर की जायँ। प्रत्येक नुक्कड़-सभा २० से ३० मिनट की ही हो तो ज्यादा प्रभावशाली रहेगी।

८—शहर के केन्द्र में तथा भीड़ के स्थानों में प्रदर्शनियों का आयोजन किया जाय। उससे जनता बहुत आसानी से अपने विचारों को समझेगी।

९—आज के वैज्ञानिक साधन सिनेमा का भी उपयोग करना चाहिए। सिनेमा स्लाइड्स बनवाये जायँ। उन पर छोटे-छोटे सूत्र-वाक्य एवं कार्यक्रम की जानकारी रहे।

१०—पुराने अखबारों पर सूत्र लिखकर दिवालों पर चिपकाये जायँ। हो सके तो एक साथ 'दिवाल पर लिखने का सप्ताह' मनाया जाय।

११—सघन रूप से देश भर में हस्ताक्षर करवाये जायँ। 'हस्ताक्षर' फार्म यहाँ कार्यालय में उपलब्ध है। उन पर शिक्षकों, अभिभावकों एवं विद्यार्थियों के हस्ताक्षर करवाये जायँ एवं उन्हें सारे कार्यक्रम के बारे में बताया जाय।

१२—पोस्टकार्ड पर राष्ट्रपति को, शिक्षामंत्री को, इस शिक्षा-प्रणाली के विरोध में अपना मत देकर भेजा जाय।

१३—सभी पत्रों के ऊपर '९ अगस्त शिक्षा में क्रान्ति' की मुहर लगाकर भेजा जाय।

१४—अपनी सभी गतिविधियों की साप्ताहिक रिपोर्ट वाराणसी केन्द्र को भेजते रहें, जिससे उसका लाभ देश उठा सके।

१५—अपने मुखपत्र 'तरुण मन' की ग्राहक-संख्या बढ़ायी जाय, क्योंकि हमारा सारा कार्यक्रम, मन्तव्य, वक्तव्य उसी में प्रकाशित होगा, वही हमारा मुख्य प्रवक्ता भी होगा।

आप अगर नये तरीके अपनाना चाहें तो अपना सकते हैं, लेकिन उसकी जानकारी शीघ्र राष्ट्रीय तैयारी समिति को भी भेजिए। निश्चय ही आप अगस्त कार्य शुरू कर देंगे इसकी हमें पूर्ण आशा है।

अब है हमारी बारी !

नासिक की गोदावरी का पवनार की धाम में मिलन था। सम्मेलन से अपने-अपने प्रांतों में जाने से पूर्व उत्कल, मध्य-प्रदेश तथा नगालेंड के मित्रों का आगमन था।

आप है हेसो। पहले नगालेंड में भूमिगत थे। अब वहां की शान्ति समिति के सदस्य हैं।" डा० अरम ने परिचय दिया।

'हेसो' शब्द बना है, अशोक से। अशोक का बना हशोक—हशोक से हेसो। नगालेंड के क्षेत्र मे बौद्ध लोग घूमे हैं।' बाबा।

बाबा कुटी के सामने अमरूद के पेड के नीचे 'केदारनाथ' की प्रतिष्ठापना हुई है। वह स्थान गौतमभाई ने सुन्दर बनवाया है। वहीं बैठकर चर्चा हो रही थी। डा० अरम ने बताया, "नगालेंड मे अठारह अलग अलग जमातें है। उनकी बोलियां एक दूसरे से बिलकुल भिन्न हैं। वे आपस में टूटी-फूटी असमिया बोलते है और उसे उन्होंने 'नगामीज' नाम दिया है। कोहिमा रेडियो से 'नगामीज' खबरें सुनायी जाती हैं। इन अठारह बोलियों में रोमन लिपि में बाईबिल छपी है।" बाबा ने सुझाया कि कोहिमा के शांति केन्द्र से नागरी लिपि मे एक पत्रिका शुरू हो और उसकी भाषा 'नगामीज' हो।

श्री हेसो ने कहा कि, "हम नगा लोग शांति चाहते हैं और राजनैतिक हल शांति के रास्ते से ही निकालना चाहते हैं। जब से वहां पीस फायर हुआ है तब से नगा लोग शांति का महत्व समझे हैं।" बाबा, "भारत के साथ रहने में नगालेंड का नुकसान नहीं है, आर्थिक दृष्टि से भारत का उन पर आक्रमण होनेवाला नहीं है।"

मनमोहनभाई ने बंगला देश की चर्चा छेड़ी। बाबा ने बताया "हम पन्द्रह-सोलह दिन बंगला देश में घूमे हैं। वहां हमको अक्सर स्कूलों में ठहराया जाता था। हाईस्कूलों की लायब्रेरी की किताबें हम देखा करते थे। वहां हमने बंगला भाषा का अभिमान देखा। वहां के लोग कहते हैं हमारी बंगला खाटी सोना (शुद्ध सोना) है। कलकत्ते वाली बंगला शुद्ध सोना नहीं है। उस पर हिन्दी के संस्कार हैं। वहां की किताबों में मैंने देखा कि उस भाषा मे ९० प्रतिशत संस्कृत शब्द है। वहां मुसलमान लोग ज्यादा है, लेकिन भाषा बंगला है। मराठी में ५० प्रतिशत संस्कृत है, मलयालम् में ६० प्रतिशत, हिन्दी में ४० प्रतिशत और पश्चिम बंगाल की बंगला भाषा में ६० प्रतिशत संस्कृत शब्द हैं। मैंने उन लोगों से पूछा, 'आपको किन महापुरुषों का अभिमान है ?' जो जवाब मैंने सुना उसकी मुझे कल्पना नहीं थी। उन्होंने कहा कि, "गौतमबुद्ध, मुहम्मद पैगम्बर, चैतन्य महाप्रभु और गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर ने हमारा दिल और दिमाग बनाया है।"

इन दिनों बाबा नागरी लिपि पर बहुत जोर दे रहे हैं। मनमोहनभाई, कृष्णम्मा बहन से भी उन्होंने कहा कि हिन्दुस्तान की एकता के लिए हिन्दी भाषा से भी अधिक जरूरत नागरी लिपि की है। नागरी लिपि में हमारी पत्रिकाएं निकलें। मैं 'भी वादी' हूं ही वादी नहीं। इसलिए उड़िया, तमिल, असमिया ये लिपियां भी चलें और नागरी भी।

विसर्जन आश्रम के श्री दीपचंद जैन, जिनका नाम बाबा ने 'मौनमुनि' रखा है, नासिक से लौटे थे। उनके दो चार प्रश्नों में एक प्रश्न यह भी था, "हमारे आश्रमों में आत्मीयता दीखती नहीं।" "उसका इलाज क्या ?" बाबा, उपाय यही है, कि यह कमी महसूस हो। कमी है यह दीखता है तो आपस में मशवरा करने के लिए सहज बैठा जाय। उसमें काफी प्रश्न हल होते हैं। दूसरी बात, हमारे आश्रम का जो ध्येय है वह मन में कायम हो। हम आश्रम में किसलिए आये है ? इस ध्येय का सतत स्मरण रहेगा तो आत्मीयता रहेगी।"

नागपुर के शिक्षकों के प्रशिक्षण स्कूल से शिक्षक आये थे। ये शिक्षक अखिल भारत के थे—कश्मीर से लेकर कन्या-कुमारी तक के और पंजाब से उत्कल तक के लोग थे। बाबा के कमरे में भीड़ करके साठ लोग बैठे। उनके दो प्रमुखों को बाबा ने अपनी खाट पर बिठा लिया और कहा, "हिन्दी बहुत सरल है, इसलिए वह राष्ट्रभाषा हो सकती है, लेकिन हिन्दी में लिंग का झमेला है। दक्षिण की भाषा, तथा बंगाली और असमिया में लिंग का झमेला कम है। लिंग के अनुसार क्रियापद के रूप बदलते नहीं, जैसे हिन्दी मराठी में बदलते हैं। इसलिए दक्षिणवालों को हिन्दी कठिन महसूस होती है। लेकिन हिन्दी बोलने में गलती हुई तो भी हर्ज नहीं। पूना में आप मराठी बोलेंगे और उस मराठी में दूसरी भाषाओं के शब्द डालेंगे तो लोग सहन नहीं करेंगे, हिन्दी में दूसरी भाषाओं के शब्द चल जाते है। हिन्दी वाले सहनशील हैं। हिन्दी बोलते हुए संस्कृत शब्दों का उपयोग भी कर सकते है। जहां हिन्दी शब्द ठीक याद न आवे, वहां संस्कृत शब्द डाल सकते हैं। बाबा ऐसा ही करता है ...।"

एक दिन की बात। विष्णु सहस्र नाम का पाठ जामुन के पेड़ के नीचे हुआ और आरती के लिए लोग मन्दिर में गये। बाबा कमरे में जाकर खाट पर बैठ गये। और एक आगन्तुक सज्जन एकदम बाबा के सामने खाट के बिलकुल पास आकर पलथी मारकर बैठ गये, मानो उनकी मुलाकात तय हुई हो। पाठ आरम्भ होने के पहले भी शुभ्रवेशधारी वे सज्जन बाहर से खिड़की में से बाबा को निहार रहे थे। उनका बाबा के सामने बैठने का ढंग देखकर किसी को भी हंसी आती। बाबा का ध्यान स्वाभाविक ही उनकी तरफ गया और बाबा उनकी

जानकारी पूछने लगे। वे थे अमरावती जिले के एक पटवारी। वर्धा शहर में महाराष्ट्र के पटवारियों का सम्मेलन चल रहा था, उसमें शरीक होने वे आये थे। उन्होंने अपने दिल का दुख प्रकट किया, "इन दिनों तुकडोजी महाराज के बारे में किसी अखबार में या रेडियो पर कुछ भी नहीं आता है। क्या किया जाये?"

सन्त तुकडोजी महाराज का महाराष्ट्र के, खास करके विदर्भ के बहुजन समाज पर असर है। बाबा ने उस भाई को समझाया, "अरे! रेडियो पर तो निकम्मे गाने भी आते हैं। उन गानों के साथ तुकडोजी महाराज के भजन नहीं आते वह अच्छा ही है।"

पर वे भाई गुमसुम हो कर बैठे ही रहे, भोलेभाले चेहरे पर उदासी की छाया। फिर बाबा ने मुस्कराते हुए गाना शुरू किया—

हे यार हमने वह पथ देखा
खुशी को जिसमें सभी मगन,
न जिसमें जन थे, न जिनमें मन था
खुशी की धुन में रहे मगन।

ताल देते हुए बाबा इन्हीं पंक्तियों को दुहराने लगे। पास में खड़ी पद्मा, रमू को भी उत्साह आया। कमरे में जो-जो थे, सबकी ताली बाबा के साथ बजने लगी। थोड़ी देर वातावरण खुशी की धुन से भर गया। उस भाई का उदास चेहरा खिल उठा।

एक दिन सुबह की बात। हमेशा के जैसे काकाजी ध्यान के लिए बाबा के कमरे में पहुँचे। बाबा ने एकदम पूछा, "क्यों काकूभाई! आज का शुभ समाचार मालूम हुआ कि नहीं?"

असमंजस में पड़े काकाजी बाबा का मुँह ताकते खड़े हो रहे।

बाबा, "धनंजयराव गाडगील गये।"

काकाजी, 'यह शुभ समाचार कैसे?'

बाबा, "आदमी अपने घर जाता है यह शुभ समाचार नहीं तो क्या? असल में वही ठौर अपना है, और यह है पराया।

"अब है हमारी बारी'—बाबा थोड़ी देर गुनगुनाते रहे।

"जाना तो कैसे जाना? हँसते-हँसते, गाते-गाते अब जाने के दिन आये हैं, इसलिए अच्छा चार दिन-संगीतिको संग अब हँसते-हँसते चार दिन बिताने हैं। गीता में आता है न? तुष्यन्ति च रमन्ति च। हमने अनुवाद किया भक्ति कीर्तने सादृश से आनन्दित खेलतो, (मेरे संकीर्तन से भरे हुए वे आनन्द से रमते हैं।)

इस सप्ताह में देखा गया कि बाबा ने सफाई थोड़ी कम की है और सुबह-शाम आश्रम के अहाते में —ज्ञानपथ से शुद्धिपथ, ध्यानपथ, मुक्तिपथ, प्रज्ञापथ, ऐसे वे घूमते हैं। सुबह काकाजी को साथ लेते हैं। दोनों वृद्ध 'दोया गोया' 'दोगा-बोगा' कहते तो नहीं, लेकिन उसी तरह दोनों हाथ हिलाते चलते हैं।

आँख की तकलीफ के कारण पढ़ना कम किया है। बारीक-बारीक कचरा भी चुनना बन्द किया है। सब्ज बढ़ो साम बढ़ो गोश बढ़ो—गुनगुनाते सुनाई देते हैं।
—(मैत्री से)

—कुसुम

बाबा का स्वास्थ्य

कुछ दिनों से बाबा की श्रवणशक्ति पहले की अपेक्षा अधिक कम हुई है। १९६४ में चक्कर आने की तकलीफ थी वैसा ही अनुभव मई माह में रहा। प्रथम बार ५ मई को चक्कर का भास हुआ। उसके बाद भी हल्के चक्कर का अनुभव रहा। वर्धा तथा सेवाग्राम के डाक्टरों ने जाँच की। २३ तारीख की रात को दस बजे फिर से जोरों से चक्कर आने लगे शरीर में पसीना भी था। करीब दस-पन्द्रह मिनिट चक्कर का अनुभव रहा होगा। बाद में वे सो गये। तारीख ३० को बम्बई के डाक्टर आपटे तथा शाह आये थे। "आडीओग्राम' लिया गया। श्रवण शक्ति पहले की अपेक्षा कम है—२० प्रतिशत रही है। चक्कर का निदान 'लेबरिन्थीन वर्टिगो' किया गया, जो १९६४ में किया गया था। डाक्टरों की सलाह के अनुसार दवा तथा इन्जेक्शन के द्वारा उपचार चालू है। उसके बाद अभी तक एक बार चक्कर आया।

कुछ दिनों से आँखों में भी तकलीफ है। तारीख १८ मई को एक आँख लाल हो गयी थी, दर्द भी था। वर्धा के सिविल सर्जन का, जो आँखों के विशेषज्ञ हैं, उपचार चालू था। २ जून को दोनों आँखों को तकलीफ शुरू हुई है। उपचार चालू है।

स्वास्थ्य के कारण बाबा ने सफाई का काम तथा पढ़ना आदि कम कर दिया है। अहाते में सुबह घूमते हैं। ऐसे मिलना-जुलना बातें भी होती हैं।

बाबा का वजन १११ पौंड है। आहार हमेशा की तरह चालू है।
३ जून, १९७१

—महादेवी ताई

आन्दोलन के समाचार

मुसहरी के मोर्चे से

एक साल पूरा हुआ

९ जून १९७० को अपने चन्द साथियों के साथ मुसहरी में पुष्टि कार्य जिस भूमिका में श्री जयप्रकाशजी ने प्रारंभ किया वह अब सर्वोदय जगत में सर्व विदित है। आज जब उसका एक साल पूरा हो गया है तो जयप्रकाशजी सुदूर देशों में बंगला देश पर हो रहे बर्बर अत्याचार के विरुद्ध जनमत तैयार करने के लिए लोकदूत के रूप में घूम रहे हैं। उनकी अनुपस्थिति में भी कार्यकर्ता काम पर डटे हैं। मई माह में प्रमुख कार्यकर्ताओं के नासिक सम्मेलन में चले जाने के कारण तथा शादी-विवाहों की धूम में कार्यकर्ताओं एवं सहयोगियों के व्यस्त होने के कारण प्रगति संतोषजनक नहीं कही जा सकती। फिर भी जो अब तक की प्रगति है वह निम्नलिखित है—

(१) अभियान के पूर्व ग्रामदान प्रपत्र पर हस्ताक्षर—३,०५८

(२) अभियान अवधि में हस्ताक्षर प्राप्त परिवार संख्या—९,४०९

(३) ग्रामसभा का गठन संख्या—५४ (राजस्व गाँव-४३, टोले—११)

(४) ग्रामदान की दोनों शर्तें पूरी-गाँव संख्या—७० (राजस्व गाँव-५७, टोले-१३

(५) ग्राम संख्या, जहाँ एक ही शर्त पूरी है—२५

(६) पुष्टि हेतु दाखिल गाँव की संख्या—८

(७) पुष्टि हेतु कागजात की तैयारी चल रही है—५

(८) मई माह में कार्यरत कार्यकर्ता संख्या—१५

एक दुखद घटना

मई माह में एक दुखद हिंसात्मक घटना फिर हो गयी। प्रहलादपुर पंचायत के नरसिंहपुर गाँव में, जहाँ अभी सरकार की ओर से सशस्त्र सिपाही मौजूद हैं, २१ तारीख की रात्रि में श्री बालेश्वर सिंह पर बन्दूक से दो अनजाने व्यक्ति हमला कर भाग गये। श्री सिंह को तुरन्त मुजफ्फरपुर सदर अस्पताल पहुँचाया गया। भगवान की कृपा से अब वे खतरे से बाहर हैं। इस घटना और इसके पूर्व में अप्रैल माह में बैचू राय की हत्या की घटना से क्षेत्र में आतंक का सृजन होना स्वभाविक है। फिर भी अपने कार्यक्रम में कोई व्यवधान पैदा नहीं हुआ है, सब पूर्ववत् चल रहा है।

—कैलाश प्रसाद शर्मा

चारुबाबू की पदयात्रा

पश्चिम बंगाल सर्वोदय मंडल के भूतपूर्व अध्यक्ष और बंगाल के वयोवृद्ध सर्वोदय सेवक श्री चारुचन्द्र भण्डारी ने चालीस कार्यकर्ताओं को लेकर चौबीस परगना जिले के डायमण्ड हारबर अनुमंडल के दक्षिणी भाग में गत १८ मई '७१ से भूदान-ग्रामदान पदयात्रा प्रारम्भ की है। प० बंगाल में हुई राजनीतिक हत्याओं के कारण इस क्षेत्र के लोग एक तरह से भयग्रस्त थे। गत १० जून तक करीब २१ पड़ाव उनके हुए। पदयात्री दल ने इलाके के विस्तृत ग्रामीण क्षेत्र में लोगों से सम्पर्क स्थापित कर उन्हें अपने जीवन में निर्भीकता लाने के लिए प्रोत्साहित किया। लोग पदयात्रियों का हार्दिकता से स्वागत कर रहे हैं।

लोकयात्रा का कार्यक्रम

दिनांक	नाम स्थान	जिला
२२।६।७१	शिवगंज	सिरोही
२३।६।७१	पौसालिया	,,
२४।६।७१	पालड़ी	,,
२५।६।७१	सिरोही	,,
२६।६।७१	सिदरथ	,,
२७।६।७१	कृष्णगंज (मंडा)	,,
२८।६।७१	सिरोडी	,,
२९।६।७१	हायल वाया मालगाँव	,,
३०।६।७१	अनादरा	,,
१।७।७१ से ३।७।७१	आबूपर्वत	,,
४।७।७१	—	,,
५।७।७१	ततहैटी	,,
६।७।७१	आबू रोड	,,
७।७।७१	गुजरात में प्रवेश	,,

स्थायी पता —राजस्थान समग्र सेवा संघ, किशोर निवास, त्रिपोलिया बाजार, जयपुर-२, फो० ७२९७३

अस्थायी पता —श्री मंत्री, नया समाज मंडल, सिरोही (राजस्थान)

इस अंक में

वार्षिक शुल्क । १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पै०), विदेश में २२ रु०; या २५ शिलिंग या ३ डालर।
एक अंक का मूल्य २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं मनोहर प्रेस, वाराणसी में मुद्रित

सम्पादक
राममूर्ति
वर्ष : १७
अंक : ३९ सोमवार
२८ जून, '७१
पत्रिका विभाग
सर्व सेवा संघ, राजघाट, वाराणसी-१
फोन : ६४३९१ तार : सर्वसेवा

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

आध्यात्मिक भूमिका

सर्वोदय-विचार इतना व्यापक है कि हम उसके अमल करने की कोशिश मात्र कर सकते हैं। पूरा अमल तो हो नहीं सकता। सर्वोदय के पूरे अमल के लिए तो परमेश्वर के दर्शन की जरूरत है।

ईश्वर-दर्शन का मतलब क्या है? ईश्वर की खोज कैसे हो? ईश्वर गुणमय है। सत्य, प्रेम, करुणा आदि मंगल-गुणों की परिपूर्णता ही ईश्वर है। ईश्वर का एक-एक अंश और एक-एक रूप एक-एक मनुष्य में प्रकट हुआ है। इसलिए सर्वत्र गुण-दर्शन होना चाहिए। इस तरह ईश्वर का एक-एक अंश देखने को मिलेगा और इस प्रकार गुण-ग्रहण करते-करते हृदय गुण-भंडार बनेगा, तथा ईश्वर का परिपूर्ण दर्शन होगा।

हमारे ये दान, सेवा, त्याग, सत्याग्रह आदि सभी कार्यक्रम भगवान् की अव्यक्त शक्ति के दर्शन के लिए हैं। सत्याग्रह में हम क्या करते हैं? सुख-दुःख सहन करते और सामनेवाले में जो सद्‌अंश होता है, उसे बाहर लाते हैं। सत्याग्रह में ऐसी श्रद्धा होती है कि सामने सद्‌अंश है ही। यही है गुण-दर्शन। इसी गुण-दर्शन के आधार पर ही तो सत्याग्रह है। इस गुण-दर्शन की श्रद्धा पर तो दान का कार्यक्रम चलता है। सारे सर्वोदय का कार्यक्रम गुण-दर्शन पर आधारित है। यह गुण-दर्शन होगा तो ईश्वर का दर्शन होगा। पूर्ण अंश का दर्शन एकदम तो नहीं हो जाता। आज एक अंश का दर्शन होगा, कल दूसरे का। जब तक यह देह है, तब तक प्रयत्न चलता रहेगा। इसीलिए तो बापू कहते थे कि 'मेरी खोज चल रही है। इस खोज के लिए ही जीवन है।' इस तरह बापू के सारे कामों के पीछे आध्यात्मिक भूमिका थी।

(गांधी : जैसा देखा-समझा पृष्ठ २०, २१)

—विनोबा

● क्रान्ति, कर्त्ता और जीवन का संतुलन ●

पूर्वी पाकिस्तान से बंगला देश

(जनता के साथ गद्दारी की कहानी)

[अंग्रेजी 'सेमिनार' के जून '७१ के अंक मे प्रकाशित श्री शिशिर गुप्ता, प्रोफेसर आफ डिप्लोमेसी, जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, दिल्ली द्वारा लिखे एक लेख के आधार पर। ज्ञातव्य है कि श्री शिशिर गुप्ता जयप्रकाशजी के साथ बंगला देश के समर्थन के लिए लोकमत तैयार की विश्वयात्रा में गये हैं।—सं०]

पूर्व बंगाल की राष्ट्रीयता की जड़ें उसकी सांस्कृतिक स्वायत्तता में है, लेकिन उसमें तीव्रता आयी है पाकिस्तान की राजनैतिक और आर्थिक घटनाओ के कारण। पाकिस्तान की केन्द्रीय सरकार ने जो उपनिवेशवादी नीति-रीति चलायी उसी ने पूर्वी बंगाल की राष्ट्रीयता को भड़काया।

क्या पश्चिमी पाकिस्तान के विशिष्ट लोग (एलीट) एकता की समस्याओं को सुलझाने में असमर्थ थे ? सचमुच उनकी असमर्थता उतनी नहीं थी जितनी परिस्थिति की पेचीदगी थी। पाकिस्तान एक सामान्य ढंग से बना हुआ राज्य नहीं था। बड़े लोगों की विफलता इसीसे शुरू हुई कि उन्होंने एक ऐसे राज्य की कल्पना की जो किसी तरह सम्भाला नहीं जा सकता था। कोई भी नेतृत्व होता उसके लिए पाकिस्तान को एक राष्ट्र बनाना कठिन होता।

मुस्लिम राष्ट्र की कल्पना अवास्तविक थी। ऐसा राष्ट्र विदेशी साम्राज्यवादी शासकों के दिमाग में उपजा था। अंग्रेजों की नीति इतनी ही नहीं थी कि झगड़ा लगाओ, और हुकूमत करो, बल्कि यह थी कि प्रजा में फूट डालो और साम्राज्य की एकता कायम रखो। यही नीति उन्होंने भारत में शुरू से अन्त तक अपनायी। इसीलिए उन्होंने जाति और धर्म के भेदभावों पर हमेशा जोर दिया तथा क्षेत्र और भाषा के प्रति निष्ठा को पीछे रखा।

अंग्रेजों ने एक-एक गाँव को हिन्दू-मुसलमान में बाँट दिया, और दोनों को आपस में लड़ाकर दोनों का इस्तेमाल अपने साम्राज्य को मजबूत करने में किया। इसी में से एक ओर 'अखंड भारत' और दूसरी ओर 'मुस्लिम राष्ट्रवाद' का जन्म हुआ। इन राजनैतिक नारों ने भारतीय समाज के टुकड़े कर दिये, और आज के जमाने में ये नारे कितने निकम्मे हैं, यह बात छिपी नहीं रही। बिलकुल नकली बुनियादों पर पाकिस्तान की रचना शुरू हुई। बनने को तो यह बन गया, किन्तु प्रश्न पैदा हुआ कि पाकिस्तान की विशिष्टता कैसे कायम रखी जाय।

शुरू शुरू में उत्तर-पश्चिम के क्षेत्रों को अलग करने की बात दिमाग में आयी थी। इकबाल ने पूरे उत्तर-पश्चिमी क्षेत्र की बात सोची थी, जिसमें सभी थे, केवल मुसलमान नहीं। यह कल्पना मुस्लिम लीग जैसे राजनैतिक दल के काम की नहीं थी, क्योंकि उसके दिमाग में मुस्लिम राष्ट्रवाद था। मुस्लिम लीग वास्तव में उन क्षेत्रों की पार्टी थी जिनमें मुसलमानों का अल्पमत था। इसलिए अगर उत्तर-पश्चिमी क्षेत्रों को लेकर एक अलग राज्य बनता तो उनके किस काम का होता ?

इकबाल के दस साल बाद जिन्ना ने पाकिस्तान का अर्थ यह बताया कि वह सभी मुसलमानों का घर होगा। इस नारे में भारत भर में रहनेवाले १० करोड़ मुसलमानों के सामने एक अलग राष्ट्र का चित्र प्रस्तुत किया। मुसलमानों में जो ऊपर के लोग थे वे समझने लगे कि हिन्दू अधिक संख्या में हैं तो क्या, वे उनके बराबर हैं। मुस्लिम लीग ने अपना यह आधार छोड़ दिया कि वह अल्पसंख्यकों की पार्टी है, और उसे भारत के बड़े राज्य में इन अल्पसंख्यकों के अधिकारों की माँग करनी है। लीग ने सोचा कि कितने भी अधिकार मिलें आखिर अल्पसंख्यक अल्पसंख्यक ही रहेंगे। इसलिए दो राष्ट्रों की बात! उसने सोचा कि मुसलमानों का राष्ट्र छोटा भले ही होगा, लेकिन बड़े राष्ट्र के बराबर होगा।

दो राष्ट्रों का सिद्धान्त उस वक्त सामने आया जब यह सोचना भी कठिन था कि कभी दो स्वतन्त्र राज्य भी बनेंगे। उस वक्त दो राष्ट्रों की बात कह कर मुस्लिम लीग ने सिर्फ अपनी सौदा करने की शक्ति बढ़ा ली। दो राष्ट्रों की बात तो उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य में सर सैयद अहमद ने भी कही थी, लेकिन दो राज्यों की बात तो उनके दिमाग में आयी भी नहीं रही होगी।

१९४० में आल इंडिया मुस्लिम लीग ने क्यों और किस तरह अपने प्रसिद्ध पाकिस्तान प्रस्ताव पास किया ? क्या इस कारण कि मुस्लिम लीग ने देख लिया था कि १९३९ में छिड़ चुके दूसरे विश्व महायुद्ध के कारण भारत में तेजी के साथ संविधानिक परिवर्तन होंगे, और साम्राज्यवाद के स्वरूप में भी परिवर्तन हो जायगा, युद्ध में विजय चाहे जिसकी हो ? क्या पाकिस्तान-प्रस्ताव का सम्बन्ध किसी तरह इस तथ्य से था कि जर्मन सेना मध्य पूर्व में बढ़ रही थी और ईरान, ईराक में जर्मनी के पक्ष में हवा बहने लगी थी ? क्या उत्तर-पश्चिमी भाग को शेष भारत से अलग कर लेने की बात इसलिए थी कि उसे भारत में चल रहे स्वतन्त्रता-संग्राम के राजनैतिक दबावों से निकाल लेना था ?

कुछ भी हो, १९४० का लाहौर प्रस्ताव पूरे तौर पर अस्पष्ट था। उसमें इतना ही कहा गया था कि मुसलमान अपने को तभी सुरक्षित महसूस करेंगे जब मुस्लिम बहुमतवाले स्वतन्त्र राष्ट्र (स्टेट्स) बन जायगे।

यह स्पष्ट है कि मुस्लिम राष्ट्र के लिए स्वतन्त्र मुस्लिम राज्य की माँग इकबाल के उत्तर-पश्चिमी राज्य की (१९३० में) माँग से बहुत भिन्न थी। लेकिन मुस्लिम लीग ने कभी भी साफ-→

बंगलादेश का मुक्ति-संग्राम और हम

प्रधानमंत्री ने कहा है कि जो पाकिस्तान का 'भीतरी मामला' था, वह भारत का भीतरी मामला हो गया है। भीतरी ही मामला नहीं, दोनों के बीच यह बहुत बड़ा मामला बन गया है। किसी ने बहुत ठीक कहा है कि अगर पाकिस्तान की याह्या सरकार भारत पर सीधा आक्रमण भी कर देती तो इससे ज्यादा क्या करती ? लगभग ७० लाख शरणार्थियों को भारत की सीमा के अन्दर ढकेल कर पाकिस्तान ने भारत के लिए आर्थिक और सामाजिक समस्या ही नहीं, उसकी सुव्यवस्था और सुरक्षा के लिए भी एक जबरदस्त खतरा पैदा कर दिया है जिससे भारत सशस्त्र प्रतीकार से बचते हुए केवल राजनयिक प्रयासों के बल पर, कैसे अपने को बचा सकेगा यह कहना कठिन है। भारत की सरकार वह प्रयास कर रही है। भारत की ओर से यह बात कही जा रही है कि यह प्रश्न पूरे दक्षिणी एशिया की शान्ति का है, इसलिए विश्व की शान्ति का है, क्योंकि आज की दुनिया में न शान्ति स्थानीय रह गयी है, न अशान्ति।

लेकिन इस पूरे बंगला देश की समस्या का राष्ट्रीय सुरक्षा के अलावा एक दूसरा पहलू भी है जिसकी ओर हम ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य में लगे हुए लोगों का ध्यान जाना चाहिए। बंगला देश की लड़ाई जनता की मुक्ति की दिशा में एक जबरदस्त कदम है। उसके द्वारा राष्ट्रीय स्वतंत्रता के संदर्भ में क्षेत्रीय स्वतंत्रता का प्रश्न सामने आया है, ठीक उसी तरह जैसे साम्राज्यवाद के संदर्भ में राष्ट्रीय स्वतंत्रता का प्रश्न था। अगर बंगला देश का मुक्ति-संग्राम विफल होता है, और दुनिया की शक्तियाँ बंगला देश को राजनैतिक भूलभुलैया में डालकर उसे पश्चिमी पाकिस्तान का उपनिवेश बना रहने देती हैं तो भारत में चल रहे हमारे आन्दोलन पर कोई गहरा असर पड़ेगा या नहीं ? अगर पड़ेगा तो क्या ? हमें लगता है कि दुर्भाग्यवश, कुछ वर्षों के लिए ही सही, अगर मुक्ति-संग्राम को धक्का लगता है तो भारत में हमारे आन्दोलन को भी धक्का लगेगा। हमारे देश में भी लोक-शक्ति की आवाज धीमी पड़ सकती है। पाकिस्तान की तरह हमारे देश में भी प्रतिगामी शक्तियाँ संगठित होकर राष्ट्रवाद के नारे की आड़ में जनता पर प्रहार करेंगी। हमारा ढाँचा भले ही लोकतंत्र का रहे, किन्तु शिक्षा और शस्त्र से वे शक्तियाँ लोकशक्ति को दबाने, कुचलने और खत्म करने की कोशिश करेंगी। उन शक्तियों को यह भरोसा हो जायगा कि शस्त्रों द्वारा स्वार्थों की रक्षा आज की दुनिया में भी सफलतापूर्वक की जा सकती है। ये प्रतिगामी शक्तियाँ अपने स्वार्थों की रक्षा के लिए राष्ट्रवाद के नाम में राज्य-शक्ति को ज्यादा-से-ज्यादा मजबूत बनायेंगी। राज्य-शक्ति के मजबूत होने का अर्थ है नेताशाही, नौकरशाही, पूँजीशाही और सैनिकशाही का लोकशक्ति के विरुद्ध संघटित मोर्चा—कभी खुलकर, कभी छिपकर।

पिछले चुनाव से यह क्रम साफ-साफ शुरू हो गया है। राजनैतिक स्थिरता के नाम में एक दल को इतना प्रबल बहुमत प्राप्त हो गया है कि वस्तुतः उसका देश के जीवन पर एकाधिकार स्थापित हो गया है। गरीब देश में, विकास और कल्याण के लोभ में, राज्य के हाथ में अपने जीवन को सौंप देना जनता के लिए कोई अस्वाभाविक बात नहीं है। वह यहाँ भरपूर हो रहा है। अगर बंगलादेश में लोकशक्ति को मात खानी पड़ी तो भारत की जनता हताश होकर और भी अधिक आत्म-विश्वास खो बैठेगी। ऐसी स्थिति में कुछ छिटपुट आतंकवादी घटनाएँ भले ही होती रहें, लेकिन किसी संघटित, व्यापक, लोक आन्दोलन का जोर पकड़ना आसान नहीं रह जायगा।

देश का लोकमानस बावजूद समाजवादी नारों के 'रेडिकल' न रह कर 'रिएक्शनरी' होता जा रहा है। यह परिणाम है उस राजनीति और शिक्षण का जिसने स्वतंत्रता के बाद भी 'स्टेटस को' को कायम रखा है। जनता को आगे नहीं बढ़ने दिया गया है इसलिए वह पीछे जा रही है। उसे परम्परागत संस्थाओं, सम्बन्धों और मूल्यों में अपनी सुरक्षा दिखायी देने लगी है। वह परिवर्तन के प्रति सशंकित हो गयी है। शान्ति चीज अच्छी है, लेकिन शान्ति में कोई शक्ति है जो समाज का बदल और जीवन को नया बना सकती है यह भरोसा उसे नहीं रह गया है।

ऐसी स्थिति में लोकशक्ति की दृष्टि से बंगलादेश के अभियान का हमारे लिए अत्यंत गहरा महत्त्व है। देश भले ही दो हों लेकिन जनता एक है और उसके हित एक हैं। जनता की एक जगह जय होती है तो हर जगह जय होती है, और अगर एक जगह पराजय होती है तो हर जगह पराजय होती है। जयप्रकाशजी उसी जनता के प्रतिनिधि बनकर गये हैं जो बँटी हुई नहीं है, जिसका सुख-दुख एक है, और जो अब यह समझने लगी है कि भविष्य भी एक ही है। •

* साफ यह नहीं बताया कि 'पाकिस्तान' की कल्पना क्या है ! उन्होंने अपना रुख हमेशा नकारात्मक रखा।

हो सकता है कि साफ-साफ न कहने के पीछे मन के किसी कोने में यह बात रही हो कि कांग्रेस और मुस्लिम लीग के बीच समझौता होगा, और किसी प्रकार का ढीला ढाला संघ (कान्फेडरेशन) स्थापित होगा। सोचने की बात है कि १९४० में पाकिस्तान की माँग करने के बावजूद १९४६ में मुस्लिम लीग ने कैबिनेट मिशन की योजना स्वीकार कर ली जिसमें भारत को कई जोन में बाँट कर सबको एक राज्य के अन्तर्गत संघ बनाने की बात

(क्रमशः)

अहिंसा ही मानव का अपना गुण

प्रश्न : आज हिंसक प्रवृत्तियाँ जोर पकड़ रही हैं। क्योंकि अहिंसक प्रवृत्तियाँ मंद पड़ी हैं। अहिंसक प्रवृत्तियाँ तेजस्वी कैसे हों ?

उत्तर : जहाँ तक मैं देखता हूँ, आज दुनिया में अहिंसा हिंसा से बहुत अधिक है। पहले भी ऐसा ही था, अहिंसा ज्यादा थी, हिंसा कम थी। आज भी ऐसा ही है। लेकिन होता क्या है ? मानव-मन में अहिंसा भरी है। अहिंसा ही मानव का अपना गुण है, मानव का स्वभाव है। इसलिए उसके विरोधी कोई घटना होती है, तो एकदम ध्यान खींचती है और अखबारों में भी उसकी खबर आ जाती है। माता बच्चे को प्यार करती है। उसकी खबर कोई अखबार देगा नहीं कि फलानी माँ ने अपने बच्चे को बहुत प्यार किया। वह तो मानव-गुण है। लेकिन वही कोई माँ अपने बच्चे की कत्ल कर दे, तो तुरंत उसका टेलीग्राम जायेगा और अखबार में खबर आयेगी। अखबारों में ज्यादातर कचरा भरा रहता है और पोलिटिक्स होता है—पोलिटिक्स भी एक प्रकार का कचरा ही है। मानव-स्वभाव के विरोध में जो घटना घटती है, डाका, चोरी, तस्करी, खून, वह सारी अखबारों में आती हैं। इस वास्ते अखबारों से अंदाज नहीं लगता कि मानव-समाज किस तरह काम कर रहा है।

मानव-समाज आज भी बहुत अहिंसक है। करोड़ों किसान खेती कर रहे हैं। वह अहिंसक प्रवृत्ति ही है। कई लोग रचनात्मक कार्यक्रम में लगे हैं, वह तो अहिंसक कार्यक्रम ही है। समाज में भक्ति भी है। हिन्दुस्तान में ही नहीं, दुनिया में सर्वत्र भक्ति-भावना है। आज पूछा जाये, प्रिंटिंग प्रेस आकर सौ साल हुए, इन सौ सालों में कौन सी किताब सबसे अधिक खपी, तो घर-घर में पहुँची हुई किताब मिलेगी तुलसीदास की रामायण। वह तो प्रिंटिंग प्रेस आने के पहले ही पहुँच चुकी थी जगह-जगह पर। फिर भी छापाखाना आने के बाद उसको बढ़ावा मिला। महाराष्ट्र में ज्ञानेश्वरी जितनी खपती है, उतनी दूसरी किताब नहीं खपती। इन दो प्रांतों की मिसाल मैंने दी। यह कोई नहीं कहेगा कि आज भक्ति की कमी है। भक्ति है, अहिंसा है, लेकिन अहिंसा, भक्ति में शक्ति नहीं है। यही मुख्य बात है कि भक्ति और अहिंसा में शक्ति कैसे लायें। वह शक्ति लाने के लिए गाँव-गाँव के लोग को अपने पाँव पर खड़े होने चाहिए। इसीलिए हम यहाँ हिन्दुस्तान में ग्रामस्वराज्य का काम कर रहे हैं। उसके एप्रिसिएशन (प्रशंसा) में इग्लैंड के एक भाई ने मुझे एक पत्र लिखा था कि इग्लैंड में भी इसकी जरूरत है, क्योंकि इग्लैंड में भी यही चलता है कि निक्सन हमारा भला करेगा, जॉनसन हमारा भला करेगा। 'दे विल डू फार अस' (वे हमारे लिए करेंगे)। हमारा भला वे करेंगे—हम नहीं। उसको नाम दिया 'देइज्म'। यहाँ लोग सोचते हैं कि इन्दिरा जी हमारा भला करेंगी, वैसे ही वहाँ के लोग सोचते हैं। लोग पराधीन हो गये हैं। राजाओं के जमाने में जैसे पराधीन थे वैसे आज लोकशाही के नाम से पराधीन हैं। तो इस पराधीनता से—'देइज्म' से छुटकारा पाना होगा। और गाँव-गाँव में शक्ति खड़ी करनी होगी, जिससे कि अहिंसा की शक्ति बने। वह मुख्य समस्या है। अहिंसा की कमी नहीं है, उसमें शक्ति नहीं है। वह है, यह भी बड़ा उपकार है प्राचीनों का। उन्होंने हमारे लिए काम किया इसीलिए अहिंसा और भक्ति हिन्दुस्तान में मौजूद हैं। उसको सुव्यवस्थित ढंग से संगठित करना हमारा काम है। इसलिए निराश होने का कारण नहीं। दुनिया भर में अहिंसा की शक्ति की आवश्यकता महसूस हो रही है। लोकशक्ति कैसे बनेगी यही प्रेरणा सब दूर है।

दूसरी बात, मैंने कहा कि अखबारों में कचरा भरा रहता है। वह तो है ही, उसके अलावा दुनिया भर की खबरें अखबारों में सारी, एकदम सामने आती हैं। कोरिया में क्या चला है, चीन में क्या हो रहा है, वियतनाम में क्या हो रहा है, रूस में क्या हो रहा है, पाकिस्तान में क्या चल रहा है, यह सारा एकदम पता चल जाता है। क्योंकि विज्ञान का युग है, इस वास्ते दुनिया भर की खबरें इकट्ठा सामने आती हैं। चार सौ साल पहले का जमाना होता, तो आज वियतनाम में क्या चल रहा है, पता न चलता। लेकिन आज दुनिया के कोने में कुछ खुद आवाज हुई, तो भी उसका पता चलता है।

प्रश्न : आपका आगे का कार्यक्रम क्या है ?

उत्तर : अभी जो बाबा को प्रेरणा हुई है क्षेत्र-सन्यास की, और बाबा यहाँ बैठा है, वह उसकी अपनी प्रेरणा से नहीं, वह अंतर्यामी का आदेश है। यहाँ बैठा हुआ है, तो क्या करता है ? अभिध्यान। अभिध्यान यानी अभिमुख होकर, लोकाभिमुख होकर ध्यान करना। हमारे कार्यकर्ता जहाँ-जहाँ काम कर रहे हैं, और जहाँ तक बाबा का मानसिक चिंतन पहुँचता है, उनको संदेश पहुँचता है। जितनी जानकारी कार्यकर्ताओं के काम की मिलती है, बाबा पढ़ता रहता है। यह है अभिध्यान, जो सूक्ष्म कर्मयोग है। उसके अलावा सफाई करता है। यह बाबा का आज चल रहा है। और आगे की बात ? को जाने कल की। बल्कि गांधीजी की एक बात बाबा ने कभी मानी नहीं—रोज डायरी लिखने की। बाबा पर वरद हस्त था प्राचीनों का। उन्होंने कहा है, भूत की आसक्ति छोड़ो, भविष्य की चिंता छोड़ो—

अतीतानुसंधानं भविष्यदविचारणम्

औदासीन्यमपि प्राप्ते जीवन्मुक्तस्य लक्षणम्

लोग कहते हैं कि आपको अपना आत्मचरित्र लिखना चाहिए। मैं अगर लिखूं, तो वह मेरी अनात्मकथा होगी। आत्मकथा तो लिखी नहीं जाती, देह की ही कथा होगी, इसलिए वह अनात्मकथा

क्रान्ति, कर्ता और जीवन का संतुलन

मुसहरी क्षेत्र के कार्यकर्ताओं के साथ जयप्रकाशजी की एक महत्वपूर्ण चर्चा

आज जो परिस्थिति और हवा है, इतिहास की जो दिशा है, राजनीति का जो हाल है, और जो आर्थिक परिस्थिति १०० में से ८० या ९० लोगों की है, उसको देखते हुए, और हम सबकी जो शक्ति है, उसको देखते हुए, हम लोगों ने पिछले ८-१० महीनों में जो भी काम किया, वह वास्तव में बहुत बड़ा काम है। इस अर्थ में बहुविध कार्य हुए और सब एक ही दिशा की तरफ ले जानेवाले हुए। इसलिए निराश होने की कोई बात नहीं है। इतना ही है कि जितना किया है, उससे कहीं ज्यादा करना है।

गुण-दोष की परख

मैंने तो अपने ही बारे में सोचा था कि मैं यहाँ बैठूँगा। लेकिन मेरे साथ आप लोगों (मुसहरी प्रखण्ड में काम कर रहे कार्यकर्ता) ने भी ऐसा ही सोचा इसलिए मैं आप सबका आभारी हूँ। वैसे तो यह काम जैसे मेरा है, वैसे आपका भी है। इसलिए आभार मानने की कोई जरूरत नहीं होनी चाहिए। फिर भी आप सब काम तो कर ही रहे थे, घर तो नहीं बैठे थे, वहाँ से यहाँ आकर काम करने को सोचा, इसलिए मैं आपका आभारी हूँ।

हमारे बीच एक विषय अक्सर उठता आया है कि हमारे गुण दोष क्या हैं। कुछ विषय ऐसे हैं, जिनके बारे में मैं चुप रहता हूँ। जैसे, अध्यात्म की चर्चा मैं कभी नहीं करता। वैसे ही इसके बारे में भी मैं अपने को चर्चा करने का अधिकारी नहीं मानता। मुझको तो आप लोग आसमान पर चढ़ा देते हैं। लेकिन मैं जानता हूँ कि मुझमें कितने दोष हैं, कितनी कमियाँ हैं।

हमारी ऐसी वृत्ति बननी चाहिए कि हम अपने को ही तौलें, अपने को परखें, बराबर आत्म-परीक्षा करते रहें, अपना प्रभाव दूसरे पर कितना है, वह सोचें। यह भी एक अध्यात्म का विषय है। हम अपनी तरफ ज्यादा ध्यान दें।

इस आन्दोलन में जो इतने लोग आये हैं, उन्हें क्या प्रलोभन है? राजनीति में तो कई तरह के प्रलोभन रहते हैं। लेकिन इसमें तो कोई प्रलोभन नहीं है। कोई एक आंतरिक शक्ति है, चरित्र का कोई गुण है, जो आप सबको खींच लाया है। हम सब तो गुण-दोष

जयप्रकाश नारायण

से भरे ही हैं। विनोबाजी ने सेवाग्राम में माधवदेव का एक वचन कहा था। उन्होंने उसमें अधम, मध्यम, उत्तम और उत्तमोत्तम मनुष्य की परिभाषा की थी। जो दूसरों का दोष ही दोष देखता है, वह मनुष्य अधम है, जो दूसरों का गुण और दोष दोनों देखता है, वह मध्यम है, जो दूसरों का गुण देखता है, वह उत्तम है, और, जो दूसरों के छोटे गुण को बढ़ाकर देखता है, वह उत्तमोत्तम है। विनोबाजी ने कहा था कि 'बापू ने मेरे साथ ऐसा ही किया, उन्होंने मेरे छोटे गुण को बहुत बड़ा कर देखा।' और यह याद करते-करते विनोबाजी का कंठ भर आया था।

मैं समझता हूँ कि इस काम में हम लोगों के लिए वास्तविक प्रेरणा अध्यात्म की ही है। हमारी दृष्टि माधवदेव की होनी चाहिए, इन मामलों में मेरा ऐसा चिन्तन है।

एक विर्पारिचित प्रश्न है, जिसकी सम्मेलनों में, गोष्ठियों में उसकी चर्चा होती आयी है। कांचनमुक्ति, गरीबमुक्ति, अपनी मांग को कम करना आदि कई बातें हुई हैं। यह सब चर्चा व्यर्थ है ऐसा तो मैं नहीं कहता, लेकिन उसका यदि ऐसा असर होता हो कि हम महँगाई के जमाने में हम १००-२००-५०० रुपये अगर

होगी। और वे सत्य के प्रयोग नहीं होंगे, विस्मरण के प्रयोग होंगे। और प्रस्तावना में मैं लिखूंगा कि इसमें जो लिखा है वह सही है, ऐसी कोई गारंटी नहीं। बहुत सा तो भूलता गया हूँ, जो बचा हुआ है, वह लिखा है, वह भी सही है ऐसा विश्वास नहीं। उपन्यास जैसा होता है, वह कोई सत्यकारी नहीं होता, लेकिन बोधात्मक हो सकता है। वैसे इसमें बोध मिले कुछ तो मिले, लेकिन यह अनात्मकथा या विस्मरण के प्रयोग हैं। तो भूतकाल का बोझ होना नहीं चाहिए और भविष्य की चिंता होनी नहीं चाहिए। भूत से छुटकारा और भविष्य की चिन्ता नहीं।

बापूने बचपन से दो नियमों का पालन किया। एक तो ब्रह्मचर्य का पालन और दूसरा, किसी से कर्जा लेना नहीं और किसी को कर्जा देना नहीं। यह क्यों? कर्जा लेंगे, तो वादा करना पड़ता है कि आपके पाँच सौ रुपये मैं दो साल के बाद लौटाऊँगा। इसका मतलब क्या हुआ? दो साल जीने की जिम्मेवारी मैंने उठायी। यह तो भगवान के हाथ में है मेरे हाथ में नहीं। भगवान की जिम्मेवारी अपने हाथ में लेना बहुत बड़ी जिम्मेवारी हो जाती है। इसलिए भविष्य को हाथ में लेना बाबा के स्वभाव में नहीं। इसलिए जो होगा सो होगा।

(श्री यशपाल जैन के साथ हुई चर्चा से, दिनांक १८-५-'७१)

अपने निर्वाह के लिए लेते हैं, तो हमारा त्याग कुछ कम हुआ, या हम दूसरों को जवाब नहीं दे सकते हैं, या लज्जित होते हैं, तो यह ठीक नहीं है। हम जो कर नहीं सकते, उसे सोच कर चिन्तित होते रहते हैं।

त्याग का मापदण्ड

मैं अगर इस उम्र में भी तय कर लूं कि घुटने के ऊपर तक की ही धोती पहनूंगा, मोटा कुर्ता पहनूंगा, तो वह नहीं कर सकता हूँ ऐसा मैं नहीं मानता। लेकिन समझने की बात है कि यह आन्दोलन सन्यासियों का आन्दोलन नहीं है, वह गृहस्थों का आन्दोलन है। कभी-कभी मुझे ऐसा लगता है कि हमारे नेता की कमी यह है कि वह बाल-ब्रह्मचारी है, इसलिए गृहस्थ की दृष्टि से देख नहीं सकते। घर-गृहस्थी की अनेक समस्याएँ रहती हैं। लेकिन इन प्रश्नों की उन्हें कोई परवाह नहीं है। फिर भी, जिनसे यह सारा काम करवाना है, वे तो इन प्रश्नों से ही जकड़े हुए रहते हैं।

खैर, समझने की बात यह है कि लोगों से हम सन्यासी बनने के लिए नहीं कह रहे हैं। कौनसा त्याग करने को कहते हैं ? उन्हें अपना विचार बतलाते हैं और लोग अपनी स्थिति में रहते हुए उस विचार के मुताबिक कुछ आचरण करें, इतना ही हम कहते हैं। त्याग करना हम कहाँ सिखाते हैं ?

और जब हम अपने बारे में सोचते हैं, तो याद रखना चाहिए कि त्याग का भी एक मापदण्ड होना है। अगर मेरी दृष्टि देश का प्रधान मंत्री बनने की रहती तो मुझे कोई रोक नहीं सकता था। जिस तरह अर्जुन को चिड़िया की सिर्फ आँख ही दिखाई देती थी, उसी तरह मैं भी भारत के प्रधान मंत्री के पद पर अपना ध्यान केन्द्रित करता, तो वह मेरे लिए बायें हाथ का खेल था। यदि मैं सोचता कि मैं देश का प्रधान मंत्री बनकर कुछ कर लूंगा, तो अलग सोशलिस्ट पार्टी क्यों बनाता ? प्रभावती के कारण बापू के आश्रमवाले मुझे जमाई मानते थे। जवाहरलालजी के साथ भी भाई का ही नाता था। इन सब चीजों का लाभ मैं ले सकता था। लेकिन मैंने कभी ऐसा सोचा ही नहीं। प्रधान मंत्री होने से मेरा जो उद्देश्य था, वह सिद्ध होगा, ऐसा मैंने माना ही नहीं। यह कोई त्याग नहीं है। जान-बूझकर और अपना उद्देश्य नजर के सामने रख कर मैंने ऐसा किया।

तो, मैं कह यह रहा था कि हम कुछ अधिक खा पी रहे हैं, जिससे हमारा आन्तरिक विकास रुकता है, ऐसा अगर हमें लगे, तो उसके बारे में सोचिएगा। हम तप करेंगे, अपने आप को कसेंगे, ऐसा अगर मानते हैं, तो समझना चाहिए कि इसके लिए तमाम साधु सन्यासी लोग हैं ही। त्याग करने और अपने आप को कसने का एक और उदाहरण पेश कर देने से कुछ समाज का परिवर्तन होगा, ऐसा नहीं लगता।

बापू ने लंगोटी अपना ली, तो यह उन्होंने कोई नाटक नहीं किया था। उनसे जब रहा नहीं गया, तभी उन्होंने ऐसा किया था। आपको भी ऐसी कुछ अनुभूति हो और आप ऐसा कुछ करें, तो ठीक है। लेकिन ध्यान में रखें कि हम कोई सन्यासी बनने नहीं जा रहे हैं, और न समाज को हम सन्यासी बनाना चाहते हैं। क्या हम गरीबी ही बाँटते रहेंगे ? समाज में सुख हो, शांति हो, समृद्धि हो, नीति हो, सदाचार हो, मानवता हो, इस दिशा में हमारा यह सब प्रयास है।

मध्यम मार्ग मुझे भाता है

मैं धोती-कुर्ता पहन लेता हूँ तो लंगोटीवाले से मेरा असर कम हो गया, ऐसा मैं नहीं मानता। वैसे तो कोई कहेगा कि यह आदमी ओवल्टीन पीता है, सन्तरा खाता है, धोबी से कपड़े धुलवाता है। मैं नहीं मानता कि इससे सर्वोदय में कोई कमी आ जाती है। हाँ, मैं नहीं कहता कि आप ऐश-आराम करें। लेकिन हरेक के जीवन में कुछ 'बैलेन्स' (संतुलन) हो, वह हर आदमी खुद ही अपने अंतर में तय कर सकता है। हृदय से मैं बौद्ध हूँ। मध्यम मार्ग मुझे भाता है।

आप सब अपने-अपने काम-धन्धे छोड़ कर इस आन्दोलन में आये हैं। यहाँ आप नौकरी नहीं करते हैं। स्वेच्छा से इस आन्दोलन का काम कर रहे हैं। नहीं तो आप में से भी कोई वकालत करता, कोई नौकरी-धंधा करता और अच्छा कमा लेता। वह सब छोड़कर आप इस आन्दोलन के काम में लगे हैं, और निर्वाह के लिए आप कुछ लेते हैं, तो कोई पाप नहीं करते। और लोगों के पास जाकर आप उन्हें जेल जाने या सन्यासी बनने को नहीं कहते। वे सब अपना काम नये ढंग से करें, इतना ही कहते हैं। उन्हें आप त्याग करना नहीं सिखाते, बल्कि समाज में विषमता घटे, शांति और समृद्धि बढ़े, सब लोग अपना काम अच्छी तरह से कर सकें, इसके लिए एक नयी विचारधारा आप उनके सामने पेश करते हैं।

काम की तीव्रता के बारे में हम सबको सोचना चाहिए। विनोबाजी ने सहरसा और मुसहरी के काम के बारे में कहा कि इस काम में सातत्य और तीव्रता होनी चाहिए। पर्व-त्योहार वगैरह की वजह से काम न रुके। जितनी भी तीव्रता संभव हो, उतनी तीव्रता से काम किया जाना चाहिए। लेकिन इसमें भी अपने गार्हस्थ्य जीवन के कारण कुछ बाधाएँ आ सकती हैं। हाँ, वे नेता हैं, इसलिए थोड़ा बढ़ा-चढ़ाकर कहते होंगे। उसका आधा भी हम कर सकें तो काम हो जा सकता है। मैं देखता हूँ कि मेरा भी इस काम में जितना सातत्य रहना चाहिए, उतना नहीं रहा। वैसे निजी काम के लिए तो एक ही बार, जब मेरा भाई सिताबदियारा आया तो, मुझे मुसहरी क्षेत्र से बाहर जाना पड़ा। बाकी एक या दूसरे काम के लिए बाहर जाना पड़ा। अभी बंगला देश का प्रश्न आया। इसके कारण भी मुझे बाहर जाना पड़ा है। यह प्रश्न बड़े महत्त्व का है। फिर भी मैं मानता हूँ कि सातत्य टूटा, यह ठीक नहीं हुआ। आगे सातत्य रहे, इसके लिए मेरी पूरी कोशिश रहेगी।

२१ मई १९७१ के अंक में 'परस्पेक्टिव' वाला लेख मुख पृष्ठ पर छपा है। उसका नाम है "इस सदी के विस्फोट"। इलियट की परम्परा में बड़ी मार्मिकता से दादा इसी ऐतिहासिक संदर्भ की बात कहते हैं। अतः फिर गांधी और विनोबा के काल को देश की आजादी का और भूदान-ग्रामदान आन्दोलन को मात्र हम 'विजन' (भविष्य के स्वप्न का काल) फेज मानें। १९६० के दशक को क्यूरियोसिटी' (उत्सुकता) का दशक मानें तो '७० और आगे के दशकों को हम 'इन्ट्रोगेशन' के दशक मान सकते हैं और फिर साथ-साथ 'प्रोमिसेस', प्रतिज्ञा के युग का आरंभ भी। कुछ ही आगे सही 'परफोरमेंस' (उपलब्धि) के युग के आगमन से हम बच पायेंगे क्या? कथनी और करनी के सम्मिलन को कौन रोक सकता है?

नैतिकता और ऐतिहासिकता की पारस्परिकता

फिर तुलनात्मक दृष्टि से जीवन के अन्य आयामों को देखें। उदाहरण के लिए नीति की दृष्टि से 'ग्रामसभा' मौलिक है, बुनियादी है—नयी लोक-नीति के परिवेश में। ऐतिहासिकता की दृष्टि से चैतन्य का उभाड़ ऊपर से आता दिखता है। मौलिक इकाई, 'ग्रामसभा' के महत्व को अन्य विचारधारावालों की तरह हम भूले नहीं, यह हमारी खूबी है। लेकिन चैतन्य-विस्तार की प्रक्रिया को समझें तो क्रान्ति को समझने में सहूलियत हो सकती है। अतः ऐतिहासिक शक्तियों और नीतिगत शक्तियों की दौड़ की पारस्परिकता की 'पेंजिंग और प्रियारिटी' को हम समझें तो नये 'शांता मेरिया'—ग्रामसभा—की प्रस्थापना की तैयारी हम ठीक से कर पायेंगे। तब हमें ग्रामसभा को 'उठाना' नहीं पड़ेगा, 'जगाना' नहीं पड़ेगा। कभी-कभी 'झटके' से अगर ग्रामसभा जगती है, चलती है, टिकती है, तो फिर इनके 'लटके' की बाढ़ को, कारवां को—कौन रोक सकता है?

क्रान्तियों की कोख और आज की स्थिति

विचार की दृष्टि से जिस प्रकार महाभारत में कौरव बहुत पहले हार चुके थे, मध्ययुगीन यूरोप में मध्ययुग के कोख से रेनासा (पुनर्जागरण), रिफारमेशन (धर्मसुधार) और सृजनकारी ज्ञानयुग का जन्म हुआ, व्यवहार में जिस प्रकार बोरबोन वंश की कोख से फ्रांस की राज-क्रांति, जार के उदर से रूसी क्रांति, च्यांग-काई-शेक की तथाकथित प्रजातांत्रिक सत्ता से चीनी क्रांति और उपनिवेशवाद एवं साम्राज्यवाद के पेट से नव-स्वातन्त्र्य आन्दोलन का जन्म हुआ, उसी प्रकार आज के विचार में विभक्त, व्यवहार में शोषण-ग्रस्त, दिखावे में मोहग्रस्त प्रजातन्त्र की कोख से साम्यक्रान्ति का उद्भव हो चुका है। पूर्व की परम्परा का विश्लेषण, वर्तमान की आवश्यकता का आकलन ही नहीं भविष्य की रेखा भी निश्चित हो चुकी है।

परिमार्जन की सख्त आवश्यकता

गांधी की चौड़ाई, विनोबा की गहराई और जे० पी० की ऊँचाई तो अपनी धरोहर है ही, यह परम्परा एक ऐसी निधि है जिसे कोई विधि बाध नहीं सकती। मात्र स्मरण से असीम उत्साह हृदय-सागर में छलकने लगता है। लेकिन याद रखें, हर साथी अपने अपने क्षेत्र में, कार्य-स्तर पर, समस्याओं के समाधान ढूंढें। ग्राम-चैतन्य, ग्रामदान, ग्रामस्वराज्य, जैसे सूत्र मंत्रों को भूलें नहीं, लेकिन इन सूत्रों के भरोसे अधिक गाफिल न रहें। जिस तरह गांधी तथागत की करुणा को, कृष्ण के कर्म को, ईसा के बलिदान को, समाज की समस्या को, हर तन्तु से 'जीवन सत्य शोधन' के सहारे जोड़ सके, उसी प्रकार हम सभी अपना-अपना क्षेत्र निश्चित करें। जिस प्रकार विनोबा ने गांधी का परिमार्जन किया, शंकर के व्यक्तिगत 'दान' को सामाजिक और आर्थिक जामा पहनाकर 'दानम् संविभाग:' को उच्चरित किया, निषेधात्मक सत्याग्रह को 'सत्यग्राही' बनाया, सर्वोदय से साम्यक्रान्ति की परम्परा निकाली, उसी तरह हमें भी अपनी विफलता के क्षणों को, दर्दों की घाटियों को चुनना होगा। जैसा गांधी ने कहा 'ग्रेटर इज द सफरिंग, हायर इज द एचिवमेंट।' चैतन्य दर्द जितना घनीभूत होगा, परिणति उतनी ही असरदायिनी होगी। हमें तो दर्दों का ग्राहक और घनीभूत कर्मों का वाहक बनना होगा।

अपना जो कासेस है—कम सेंस, छोटी बुद्धि है उसके अनुसार लगता है कि इस आन्दोलन के शब्दों ने आज तक के सारे आन्दोलन के शब्दकोष को खोखला बना दिया है। हमलोग बचपन में कहा करते थे "सुखा, पच्चीस मुक्का"। बस, अब अन्य क्रान्तियों की धारा में केवल मुक्केबाजी रह गयी है। बिखरता दर्शन की तरह सम्पूर्ण बिखरती राजनैतिक, मँहगी आर्थिक व्यवस्था और टूटा औद्योगिक जगत साम्य-क्रान्ति के मुख में बैठा है। यह हम पर है कि प्रोमिसेस' तक रखते हैं या 'परफॉरमेंस' के रोमांस का टेस्ट भी करते हैं, और स्वाद तो रखने में नहीं, चखने में है।

फिर त्याग के लिए हम आन्दोलन में नये आयाम भी खोजें। निषेधात्मक सैनिक विजय के लिए, गलत उद्देश्य के लिए, सेना, रणनीति, युद्ध-कला, युद्ध-शिक्षा होती है। हम एनर्जीबाजी के चक्कर में बहक न जायें, लेकिन आवश्यकता है कि 'अहिंसक सूसाइड स्क्वायड' बनाया जाय। 'करो या मरो' नहीं, कर गुजरना है। इसकी तैयारी अपने-अपने क्षेत्र में करनी होगी। तभी हम नवमानव संस्कृति के चैतन्य सभा में, 'ग्रामसभा' में प्राण फूंक सकते हैं। जे० पी० ने इसी अंक में ठीक ही कहा है कि हमें तो 'खाद' बन जाने में दर्शन होगा साम्य-जीवन के मुखड़े का। ●

समाज-व्यवस्था में व्याप्त जाति और धर्मभेद का जहर

—काका कालेलकर—

किसी समय हमारी जाति संस्था एक सुन्दर समाज रचना थी जिसमें आर्थिक समानता का तत्व भले न हो, किन्तु कौटुम्बिक भावना का, प्रेमयुक्त सेवा और आत्मीयता का माद्दा प्रधान था और जातिव्यवस्था में सरकार का हस्तक्षेप नहीं था। लेकिन यह जातिव्यवस्था प्राथमिक विचारों का एक प्रयोग था। अगर वह मानवहित के लिए कल्याणकारी संघटन होता तो उन दिनों हम राजनैतिक एकता को मजबूत कर सकते। लेकिन आन्तरिक शोषण और बाहर से आक्रमण दोनों संकटों के सामने हम टिक नहीं सके। यही दोष था हमारे जाति-संघटन में। वर्ण व्यवस्था तो एकांगी और काफी हद तक कृत्रिम थी। हमारे शास्त्रों ने और हमारे देश का नेतृत्व करनेवाले लोगों ने केवल जाति और वर्ण के सुन्दर चित्र ही खींचे। प्रत्यक्ष व्यवहार में इन संघटनों में क्या-क्या दोष आ सकते हैं, इसका पूरा चिन्तन हमारे यहाँ हुआ ही नहीं। अंग्रेजों के दिनों में हमारी संस्कृति के भले-बुरे दोनों आदर्श कमजोर हो गये, लेकिन भारत की धर्मनीति काफी मजबूत होने के कारण विदेशी लोग हमारा पूरा नाश नहीं कर सके। पठान, मुगल, पोर्तुगीज, अंग्रेज आदि छोटे-बड़े विदेशी आक्रमणों के सामने हम लड़ तो न सके, उनकी दासता हमने स्वीकार कर ली, लेकिन हमने अपनी कुटुम्ब-संस्था और जाति व्यवस्था काफी हद तक संभाल रखी। वर्ण-व्यवस्था में भी हमलोगों ने चिन्तन शून्य किया। सुन्दर-सुन्दर कृत्रिम आदर्शों के चित्र लोगों के सामने रखे, लेकिन जाति और वर्ण दोनों वंशपरम्परागत बनाये। फलत दोनों संघटनों की तेजस्विता नष्ट हुई और प्रधान बातों में दासता मान्य करके छोटी-छोटी स्वतन्त्रता हमने कायम रखी।

अब भी गफलत में

आज का मुख्य दुख यह है कि जातिभेद के कारण और धर्मभेद के कारण, जो परस्पर अलगाव, अविश्वास हमने मान्य रखा उसके फलस्वरूप हमारी सारी समाज व्यवस्था और राष्ट्रीयता विघातक हो गयी। (केवल दुर्बल नहीं, किन्तु विघातक हो गयी।) हमारे आज के सामाजिक नेताओं का अभिप्राय यही है कि जाति-व्यवस्था आप ही आप टूट रही है, उसका नाम क्यों लें? दोष हो या जहर। केवल उदासीनता की नीति से उसके असर से हम बच नहीं सकते। भारत का विशाल हिन्दू-समाज अब भी गफलत में है, और गफलत के भयानक खतरे देखते हुए भी मानता है कि पुरानी व्यवस्था का आग्रह छोड़ दिया, इस वास्ते उसका जहर हमें खायेगा नहीं।

गांधीजी ने अंग्रेजों का राज हटानेका प्रण किया, इसके लिए जो विचार-प्रचार जरूरी था वह उन्होंने अवश्य किया। उसके फलस्वरूप हम आजाद हो गये।

जिन बातों का प्रचार करना उन दिनों लाभदायक नहीं था, उनका शाब्दिक प्रचार उन्होंने नहीं किया, किन्तु प्रत्यक्ष व्यवहारों में, आश्रम जीवन में और अपने साथियों में, कौटुम्बिक और सामाजिक संबंधों में प्रत्यक्ष आचरण द्वारा विशाल क्रान्ति का चित्र लोगों के सामने रखा। उन्होंने जातिभेद को दफना दिया। श्रेष्ठ-कनिष्ट भाव प्रत्यक्ष आचरण में कहीं रहने नहीं दिया और जोरों से यह समझाया कि धर्मभेद के कारण समाज में फूट पड़ने का कोई कारण नहीं है। सहभोजन के प्रचार में खाना, पकाना, परोसना और साथ बैठकर खाना, कहीं भी भेदभाव न मानना, ऐसा उनका कार्यक्रम था। देश इसके लिए तैयार था। इसलिए यह काम आसानी से चल सका।

गांधीजी ने भिन्नधर्मी स्त्री पुरुषों के बीच के विवाहों को प्रोत्साहन दिया और इस दूसरी क्रान्ति का प्रारम्भ उन्होंने कर दिखाया।

आज इन दो बातों में किसी भी समाज का विशेष आग्रह नहीं तो भी आज के शिथिल जीवन के द्वारा पुरानी संस्कृति के गुण और लाभ गायब हो गये हैं। चुनाव के दिनों में हम देख सकते हैं कि हमारे सामाजिक दोष कितने मजबूत हैं और चुनाव के कारण ही संगठित हो रहे हैं। मुसलमानी समाज एक जाति बन गया है। ईसाइयों का समाज भी एक जाति बन रहा है। दोनों का संघटित होना अपने संकुचित स्वार्थ के लिए हितकर सिद्ध हुआ है।

हरिजन भी विशेष अधिकार के लोभ में अपनी जातिनिष्ठा बढ़ा रहा है। फलत. गांधीजी के आने के पहले राष्ट्र की जो हालत थी, उसी तरफ जाना मतदाताओं को लाभदायक मालूम होता है।

जातिनिष्ठा पनप रही है

गांधीजी ने ब्राह्मण और हरिजन, यह भेद भी अपने आश्रम में रहने नहीं दिया। रोटी-बेटी व्यवहार के पुराने नियम अब चलते नहीं लेकिन हम लोगों की जातिनिष्ठा अभी भी नष्ट नहीं हुई। मेरे पुराने स्नेही आचार्य कृपलानी ने सही कहा है कि हम जाति-व्यवस्था की निंदा करते हैं बार बार, किन्तु चुनाव जीतते हैं जाति व्यवस्था की मदद से ही। जाति-व्यवस्था के जो लाभ थे वे सब गायब हो गये हैं, और सामाजिक संकुचितता बढ़ाने के लिए ही जातिनिष्ठा जीवित है। इतना ही नहीं, वह पनप रही है और मजबूत हो रही है।

मेरी शिकायत है कि हम (सर्वोदय-कार्यकर्ता) अब जाति निष्ठा का न समर्थन करते हैं और न जी-जान से विरोध। जातिनिष्ठा की और जाति-व्यवस्था की हम उपेक्षा करके ही सन्तोष मानते हैं। जातिनिष्ठा ईसाइयों की हो, मुसलमानों की हो या हिन्दुओं की हो, देश की एकता तोड़ रही है। जातिभेद और धर्मभेद के कारण देश की एकता जोरों से टूट रही है इस भयानक स्थिति की तरफ हमारे

देश के नेता ध्यान ही नहीं देते। इनमें हमारे सर्वोदय कार्यकर्ता भी शामिल हैं।

ग्रामदान के द्वारा धर्मभेद और जातिभेद गौण हो जायेंगे, यह आशा गलत नहीं है, लेकिन इतने से हम सन्तोष नहीं मान सकते। जहाँ सत्ता और सम्पत्ति केन्द्रित होती है वहाँ संकुचित स्वार्थ ज्यादा मजबूत होते ही हैं। जहाँ सत्ता और सम्पत्ति का प्रभाव केन्द्रित होता है वहाँ देश की एकता और आजादी भी खतरे में आती है। दूसरा इलाज यह ही है कि हम जाति के संगठनों को बाध्य करें कि उनके फण्डों का आधा हिस्सा दूसरी जाति की मदद में खास नियम पूर्वक देते जायें। और अन्तर्-जातीय विवाहों को जोरों से प्रोत्साहन दिया जाय। (जब मैं संकुचित जातिनिष्ठा की बात करता हूँ तब मेरे मन में सारे मुसलमान भी एक जाति के हैं, और वह जाति संकुचित जातिनिष्ठा से दूषित हो गयी है। ईसाइयों की हालत भी वैसी ही है। हालांकि उनके नेता अधिक कुशल होने के कारण उनकी जाति-निष्ठा का प्रदर्शन वे नहीं करते हैं।)

एकता और आजादी के लिए खतरे

धर्मभेद को और जातिभेद को 'इग्नोर' (नजर-अन्दाज) करो यह सूत्र मैं बराबर जानता हूँ लेकिन मैं कहता हूँ कि यह सूत्र कारगर नहीं है। मैं जानता हूँ कि जातिभेद, धर्मभेद 'इग्नोर' करने से वे भेद धीरे-धीरे काल में नष्ट हो जायेंगे, लेकिन राजनीतिक परिस्थिति बताती है कि केवल करने से वे उसके पहले ही नष्ट हो जायेंगे। जातिभेद और धर्मभेद राष्ट्रीय एकता के लिए और आजादी के लिए बड़े खतरनाक विघ्न हैं। यह मुद्दा अगर हमारे ध्यान में नहीं ली, तो हम सर्वोदयी नहीं हैं।

मैं यह कोई नयी बात नहीं कर रहा हूँ। बिहार, महाराष्ट्र, गुजरात, मद्रास, पंजाब आदि प्रदेशों के नेताओं ने ये सब बातें अपने-अपने ढंग से कही होंगी। ये कार्यक्रम और सूचनाएँ पुरानी हो गयी हैं, उनके बारे में अब करने का कुछ नहीं रहा है, ऐसा कहनेवाले को हम क्या जवाब दें? जिस सूचना का अमल कभी हुआ ही नहीं, केवल परिस्थिति उसके अनुकूल हुई है ऐसा कह कर आप इसे बाजू पर रख देंगे तो वैसा करने का आपका हक है। लेकिन दवाई पुरानी है उसमें नवीनता कुछ भी नहीं, ऐसा कह कर नयी दवा मांगते रहने से मरीज का दर्द दूर नहीं होगा। मर्ज दार्शनिक नहीं है, सच्चा है, जान लेनेवाला है। उसका इलाज जिस प्रकार हो सकता है, उसी प्रकार को अमल में लाना चाहिए।

बहुत से लोग आज यह कहने लगे हैं कि देश के सब समाजों की आर्थिक स्थिति सुधार लीजिए, बाकी की सब बातें आप ही आप ठीक होंगी। सोचना आसान है बाकी की बातें जब मौलिक हैं, तब उनका विचार और इलाज होना ही चाहिए। मैं इतना ही पूछूँगा, "देश में जिन लोगों की आर्थिक स्थिति अच्छी है उनके अन्दर ये सारे दोष नहीं हैं?"

हम लोग ग्रन्थनिष्ठ, वचननिष्ठ और देखते-देखते परम्परा-निष्ठ बन जाते हैं। कभी कभी [illegible] ढंग से अपनाते हैं। हमें सत्यनिष्ठ, प्रयोगनिष्ठ, अनुभवनिष्ठ बनकर अनुकूल इलाज करना चाहिए और समय-समय पर हमने कितना किया कितना बाकी है, हमारे इलाज का कोई फल होता या नहीं, नहीं होता हो तो इलाज में क्या फर्क करना चाहिए, इलाज करनेवाले हम लोगों में कौन-सी कमियाँ हैं यह भी हमें देखना चाहिए। केवल वैज्ञानिक पृथक्करण करने से देश का दुःख दूर नहीं होगा।

(सर्वोदय सम्मेलन-नासिक, के लिए लिखे गये लेख से।)

विश्व-शान्ति यात्रा से

अफगानिस्तान में मेरी यात्रा अच्छी चल रही है। मैं इतनी कल्पना ही नहीं करता था कि अफगानिस्तान में इस विश्व-शान्ति पदयात्रा का इतना स्वागत मिलेगा। काबुल में १० दिन रहना और वहाँ अच्छा सम्पर्क हुआ। काबुल यूनिवर्सिटी में अच्छा कार्यक्रम रहा। अखबार वालों ने काफी प्रचार किया और [illegible] समाचार दिये।

अफगानिस्तान रेडियो ने भी समाचार प्रसारित किये। अफगानिस्तान सरकार के [illegible] और [illegible] विभाग के मन्त्री तथा प्रदेशों के [illegible] से भेंट [illegible] है। अफगानिस्तान सरकार का समर्थन और शुभ-कामना तथा आशीर्वाद इस यात्रा को मिले और यहाँ [illegible] हुई। सरकार के [illegible] विभाग ने अफगानिस्तान प्रदेश में [illegible] की व्यवस्था की है। विद्यार्थी और शिक्षक [illegible] करते हैं। अफगानिस्तान के गाँव के लोगों का भी इस यात्रा को अच्छा [illegible] मिला है। [illegible] ने इस भारतीय सर्वोदयवादी का [illegible] पर [illegible] किया तथा [illegible] करने में कोई कसर नहीं रखी। काबुल में [illegible] एक भी [illegible] नहीं था [illegible] ९० मिलों का [illegible] और अफगानिस्तान [illegible] हजारों अफगानी मित्रों को छोड़कर विदा होना हुआ। —रामसहाय पुरोहित

बंगला देश तरुण-शिविर

गत २ जून को पटना में [illegible] बंगला देश के तरुणों के एक शिविर का उद्घाटन [illegible] (बंगला देश) के उपकुलपति डा० [illegible] रहमान [illegible] हुआ। बंगला देश के [illegible] ने इसमें भाग लिया। [illegible] और [illegible] के इन लोगों में अधिकतर बंगला देश के ग्रामीण क्षेत्र के थे। [illegible] अप्रैल, '७१ को बंगला देश [illegible] के लिए [illegible] शिविर का आयोजन किया। [illegible] और [illegible] के लिए [illegible] यह शिविर [illegible] था। [illegible] यह शिविर चला। प्रमुख वक्ताओं में थे [illegible] डा० [illegible], [illegible] एम० पी० सिंह, [illegible] चौधुरी, [illegible] आदि।

हमारी समस्या : पुष्टि की पुष्टि

—कामेश्वर प्रसाद बहुगुणा

[श्री कामेश्वर प्रसाद बहुगुणा सहरसा पुष्टि अभियान के सिलसिले में पिछले कई महीनों से वहाँ आचार्यकुल के संगठन कार्य में लगे हैं। प्रस्तुत लेख मुख्यरूप से उनके सहरस-अनुभव पर आधारित है। —सं०]

राजगृह सम्मेलन के बाद सर्वोदय आन्दोलन को एक मोड़ मिलेगा यह आशा की गयी थी। यह आशा कुछ हद तक पूरी हुई। पुष्टि अभियान चला और कुछ बढ़ा। किन्तु आन्दोलन को असल मोड़ तो तब मिला जब जे० पी० ने मुसहरी-अभियान शुरू किया। यद्यपि मुसहरी का कदम किसी पूर्व-नियोजित चिन्तन का फल नहीं था, वह तो भूदान की तरह संयोग से प्रकट हुआ था, किन्तु उसने आन्दोलन को निश्चय ही एक मोड़ दिया। पुष्टि का विराट दर्शन जे० पी० के इस कदम के बाद ही प्रकट हुआ।

बेदम बहस

अब इस बहस में कोई दम नहीं रह गया है कि ग्रामदान कितना बोगस था। पुष्टि-अभियान के अनुभवों ने सारे ग्रामदानों को समान भूमिका पर रख दिया है। जहाँ समस-बूझकर हस्ताक्षर हुए हैं, वहाँ आगे का बाकी कार्य कोई सरलता और तेजी से सम्पन्न हो गया है, ऐसा कहीं दीखा नहीं। असल में हस्ताक्षरों के संदर्भ में इस सवाल को उठाना अब व्यर्थ लगता है, क्योंकि अब तो यह भी अनुभव आ रहे हैं कि लोग बिना हस्ताक्षर किये भी बीघा-कट्ठा देते हैं, बल्कि देने को तत्पर रहते हैं। और जहाँ हस्ताक्षर हुए हैं वहाँ पर भी न तो मालकियत मिट गयी है, न बीघा-कट्ठा ही आसानी से बँट रहा है। मेरे विचार में अब यही प्रश्न रह गया है कि जब हस्ताक्षरों की दोनों शर्तें पूरी हो गयी, तो फिर क्यों न माना जाय कि भूमि की निजी मालकियत स्वतः ही समाप्त हो गयी है? शोध को मालकियत की इस स्वतः समाप्ति का अहसास कैसे हो, यह असल सवाल है। इस सवाल का उत्तर ही अब पुष्टि की असल समस्या बन गयी है।

चिंता की मुख्य बातें

कम-से-कम बिहार में जहाँ-जहाँ भी पुष्टि कार्य चल रहा है, वहाँ वहाँ प्रत्येक की अपनी पद्धति है। वहाँ यह दूसरी समस्या है कि एक को दूसरे की पद्धति की जानकारी नहीं है, और कभी-कभी तो यह स्पष्ट लगा कि कहाँ कितनी जमीन बँट गयी, कितनी ग्रामसभाएँ बन गयी, आदि की तुला पर ही हम अपना काम तौलते हैं। मैं नहीं कहता कि यह तौल गलत है, किन्तु यह पुष्टि की मजबूती की तौल नहीं कही जा सकती है। क्यों? इसके अनेक कारण हैं।

पहली बात तो यह है कि जहाँ जमीन बँट गयी है वहाँ वह वास्तव में भूमिहीन को मिल ही गयी है, यह कोई निश्चयपूर्वक नहीं कह सकता। एक नहीं, कई जगहों पर ऐसे अनुभव आये हैं कि प्रमाण-पत्र मिलने के बाद भूमि असल आदाता को मिली नहीं। कुछ स्थानों पर यह भी जानने को मिला कि दाताओं ने सभाओं में तो स्वयं अपने हाथ से प्रमाण पत्र दे दिये, किन्तु बाद को कागज दुरुस्ती के नाम पर या अन्य किसी बहाने से वे उसे वापस ले लिये। इसलिए आंकड़ों से पुष्टि का मूल्यांकन करना हानिकर होगा। दूसरी बात यह है इस प्रकार की तौल से आन्दोलन की इमेज केवल 'जमीन बँटने' तक सीमित रह जाती है जबकि जमीन का वितरण इस आन्दोलन की मुख्य चिंता कभी नहीं रही है। वह तो एक गौण और प्रत्यक्ष साधन है, जिससे ग्रामीणों के 'सम्बन्ध' बदलेंगे। संबंधों में परिवर्तन हमारी मुख्य चिंता है। तीसरी बात यह है कि इस प्रकार की तौल से कार्यकर्ताओं में चिंतन के बजाय आवेश पनपता है। उन्हें आंकड़ा बढ़ाने के नये-नये तरीके सूझते हैं, आंकड़े बढ़ जाते हैं किन्तु बुनियाद ठोस नहीं बनती। फिर और इसी कारण से कार्यकर्ताओं में परस्पर हीन-भाव-ग्रन्थियाँ बनती हैं क्योंकि बड़े आंकड़ेवालों को स्पष्टतः ही प्रशंसा मिल जाती है, जबकि दूसरों को, चाहे उन्होंने पहले से अधिक मेहनत की हो, तकलीफें उठाई हों, उस तरह की प्रशंसा नहीं मिलती। हमारी पुष्टि में जमीन-वितरण से पूर्व अपने कार्यकर्ता की पुष्टि पहली शर्त है। उसका 'मॉरेल' सबसे बड़ी चीज है जिसकी रक्षा तथा वर्द्धन सर्वाधिक महत्व की बात है।

पुष्टि का एकमात्र आधार

इसका अर्थ यह नहीं कि आंकड़े न बढ़ाये जायें, वह तो पुष्टिकार्य का स्वतः प्राप्त नतीजा होगा ही, किन्तु यह पुष्टि की मजबूती का आधार नहीं है। पुष्टि की मजबूती का एकमात्र आधार यही हो सकता है कि ग्रामसभा बन जाने के बाद पुष्टिकार्य ग्रामसभा की चिंता और कार्यक्रम बन जाय। हस्ताक्षर पूरे कराने, जमीन बाँटने तथा 'कब्जा' दिलाने, ग्रामकोष की स्थापना करके उससे सरकार तथा साहूकार को स्थानापन्न करने, किसानों से लगान वसूल करके उसे सरकारी खजाने में जमा कराने, गाँवों में कोई अन्याय हो तो उसका निराकरण करने आदि के काम, ग्रामसभाओं की चिंता होनी चाहिए, न कि सर्वोदय कार्यकर्ताओं या आन्दोलन की। यह सब कैसे हो, इस पर अभी कहीं से कोई उदाहरण नहीं मिल पाता है। मुसहरी में कुछ ग्रामसभाएँ कुछ सक्रिय दिखाई देती हैं, और खासतौर पर सिंचाई के लिए धावाबल तथा अनुदान आदि प्राप्त करने तथा किसानों में बाँटने का काम उन्होंने किया है। किन्तु वहाँ भी यह ग्रामसभा की ताकत या प्रभाव के बजाय जे० पी० के प्रभाव के कारण ही हो सका है। हमारे देश की सरकारें अभी इतनी पिछड़ी तथा भ्रष्ट हैं कि वे सीधे जनता के प्रभाव को

स्वीकार करती ही नहीं। वे तो व्यक्तियों या गुटों के दबावों में काम करती हैं। यही मध्ययुगीन प्रवृत्ति थी।

पुष्टि में ग्रामसभा का सरकारों पर प्रभाव होना चाहिए और इसके लिए तत्काल कुछ प्रायोगिक ग्रामसभाएँ होनी चाहिए। यह अनुभव आ रहा है कि गाँव के बड़े भूमिवान तथा सरकारी लोग खासकर रेवेन्यू विभाग के लोग, ग्रामदान की "सामने तारीफ पीछे निन्दा" की नीति का पोषण करते हैं। ग्रामसभाएँ इस नीति का एकमात्र जवाब हो सकती हैं। क्या यह हो सकता है कि अब ग्रामसभाएँ ही लगान जमा करें और गाँव के विकास के लिए कोई भी मदद केवल ग्रामसभा के द्वारा मिले? सरकारें उनके इस अधिकार को मान्य न करें तो किसान लगान देना और मदद लेना भी बन्द कर दें। ग्रामसभा के क्षेत्र में आनेवाली सभी भूमि पर ग्रामसभा कब्जा कर ले और संभव हो तो फालतू भूमि का भूमिहीनों में वितरण भी कर दे। अब समय आ गया है जब सरकारों को स्वायत्त-ग्रामसभा के अस्तित्व का प्रमाण दिया जाना चाहिए।

क्या हम इसके लिए तैयार हैं? यह ठीक है कि अभी ग्रामसभाएँ सघटित नहीं हैं, कमजोर हैं, और गाँव के सम्पन्न लोग तथा सरकारी पक्ष के लोग उसे बराबर कमजोर ही रखने की चेष्टा कर रहे हैं। वे करते रहेंगे। उनका सामना करना पुष्टि-अभियान के कार्यक्रम में क्यों न जुड़े? मुसहरी के एक बड़े जमींदार सज्जन ने मुझसे कहा कि, 'आज सर्वोदयवालों की वही स्थिति हो गयी है जो १९२०-२१ में कांग्रेसवालों की थी कि गाँव के तथा सरकार के लोग उनसे डरने लगे हैं।' संभव है यह बात सही हो, किन्तु यह हमारे आन्दोलन के लिए खतरा है। मैंने उनसे कहा कि 'गाँव तथा सरकार को हमारे बजाय ग्रामसभा से डरना पड़े, यह हमारी कोशिश है।' तो वे सहज बोल पड़े, 'यह और भी खतरनाक होगा।' उन्होंने सही कहा। सर्वोदयवाले डरावने बनेंगे, तो उन्हें 'पालतू' बनाया जा सकता है, किन्तु ग्रामसभा को पालतू बनाने का काम, यदि सही ढंग से पुष्टि चली तो, आसान नहीं होगा।

नक्सलवाद कोई समस्या नहीं

यों अब तक की उपलब्धियाँ कम नहीं है। पिछले एक साल में सबसे अधिक स्पष्ट जो बात हुई है वह यह है कि यदि भारत में कभी 'भारत-स्वराज्य' हुआ तो वह सर्वोदय की ही पद्धति से होगा। जब जे० पी० मुसहरी गये तो लोगों ने तथा अखबारवालों ने कहा वे वहाँ 'नक्सलवाद' का मुकाबिला करने या उसका जवाब देने गये हैं। किन्तु मुसहरी में ही सबसे पहले यह बात स्पष्ट हुई कि असल में नक्सल-वाद कोई प्रश्न ही नहीं है, जिसका जवाब दिया जाय। नक्सलवाद तो देश में चल रही सरकारी, गैरसरकारी हिंसा की प्रति-क्रिया मात्र है। वह अपने आप में कोई क्रिया नहीं है। मुसहरी में गत एक साल में इस तरह की, जिसे लोग नक्सलवादी कहते हैं, ९ हत्यायें हुई हैं। अधिकतर ये हत्यायें जमीनवालों की ही हुई हैं। किन्तु यह बात समझने की है कि जिन परिवारों में से किसी ने भी एक गज भूमि किसी भूमिहीन को नहीं दी। न वे नक्सल-वाद से आतंकित ही हैं। हाँ, परेशान रहते हैं और बार-बार पुलिस का संरक्षण चाहते हैं। किन्तु भूमि छोड़ने को वे तैयार नहीं हुए। इसके विपरीत जे० पी० के पुष्टि-कार्य के कारण मुसहरी में ६० एकड़ भूमि (अप्रैल '७१ तक) करीब डाई सौ भूमिहीन परिवारों में बँट चुकी है। यही बात रुपौली (पूर्णिया) की है, जहाँ पर मार्क्सवादी तथा नक्सलवादी दोनों सक्रिय हैं। पर वहाँ भी वे लोग एक कट्ठा भूमि नहीं बाँट पाये, जब कि वैद्यनाथ बाबू ने वहाँ ६० एकड़ से भी अधिक भूमि भूमिहीनों में बँटवाई है। यही अनुभव सहरसा के महिषी और चौसा प्रखण्डों की है। वहाँ भी नक्सलवादी सक्रिय हैं, किन्तु उनसे वहाँ किसी को भूमि नहीं मिली। पुष्टि-अभियान के दौरान चौसा में श्री विद्यासागर भाई के और महिषी में निर्मला बहन तथा कृष्णराज भाई के प्रयत्नों से केवल पिछले ४ माह में ही क्रमशः ३० और ४५ एकड़ भूमि का भूमिहीनों में वितरण हुआ है। अब इस पर कोई कहे कि नक्सलवाद का जवाब देने के लिए ही सर्वोदय का यह कार्य हो रहा है तो ऐसे लोगों को क्या समझायें! महिषी में तो नक्सलवादी कहे जानेवाले लोग अपना पुराना धंधा छोड़कर इस आन्दोलन में आये हैं। यदि नक्सलवाद कोई ताकत हो भी तो अब तक का अनुभव यही बताता है कि वह कोई सामाजिक ताकत नहीं है, कोई कारगर और सफल ताकत नहीं है। ऐसे दिलचस्प अनुभव भी आ रहे हैं कि मार्क्सवादी लोग भी भूमि के वितरण में न केवल रुचि रखते, वरन् तरह-तरह की भ्रान्तियाँ फैलाकर उस कार्य में बाधा डालते हैं। रुपौली में एक मार्क्स-वादी अध्यापक बन्धु से जब दिल खोलकर बातें हुईं, तो वे कहने लगे कि भूमिहीनों को थोड़ी-थोड़ी भूमि देने के हम इसलिए विरोधी हैं, कि इससे उनका संगठन बनाने में कठिनाई होती है।

तिहरे हमले की सम्भावना

अब इस क्रान्ति को क्या कहें, जो भूमिहीन को भूमि या बेकार को काम देने पर नहीं, बस "क्रान्ति" पर विश्वास करती हो। पुष्टि-अभियान के ये सब अनुभव यही बताते हैं कि ज्यों-ज्यों पुष्टि पुष्ट होगी, त्यों त्यों तीन तरफ से उस पर हमले होंगे। एक तो सरकारी नौकरशाही का, दूसरा सम्पन्नों का और तीसरा तथाकथित क्रान्तिकारी मार्क्स-वादियों और नक्सलवादियों का हमला। उस दिन के लिए हमें तैयार रहना चाहिए।

लेकिन इन हमलों से बचाव हो सकता है। न केवल बचाव ही वरन् इन्हें नाकाम भी बनाया जा सकता है। इसका कुछ आभास मरौना प्रखण्ड में आने से लगता है। सहरसा जिले के सर्वोदय कार्यकर्ता श्री महेन्द्र नारायण सिंह तथा श्री उमेश्वर भाई

काम पर लगे हैं। महेन्द्रजी को वहाँ लोग सन्तजी के नाम से जानते हैं। वहाँ अब यह स्थिति है कि किसी भी खादीधारी झोला लटकाये हुए जानेवाले को गाँव के मजदूर या किसान या भूमिवान, सभी देखते ही पूछेंगे कि क्या वे विनोबा के आदमी हैं? यदि हैं तो उनकी अमुक बात सुन लें या अमुक झगड़ा तय कर दें। वहाँ ग्राम सभाओं ने दो ऐसे महत्वपूर्ण और सफल आन्दोलन किये। सामन्तों द्वारा जबरदस्ती हथियायी गयी जमीन पर भूमिहीनों को कब्जा दिलाया गया। यह सब परम्परागत ढंग के जुलूसों, प्रदर्शनों या मुकाबिलेबाजी से नहीं हुआ। मजदूरों के दल में दल के मर्द बाजा बजाते रहे, भजन गाते रहे और स्त्रियों को कहा कि वे उस जमीन पर लगी फसल काट लें, जो मालिक ने जबरदस्ती ले ली थी। और ऐसा ही हुआ। इससे यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि ग्रामदान में जनशक्ति को जागृत करने तथा उसे रचनात्मक दिशा देने की शक्ति है। हम जन-संघटन से क्यों कतरायें? क्या जूँ पड़ने की डर से कोई घघरा पहनना छोड़ता है? जूँ न पड़ने पावें, इस तरह की सफाई और सावधानी तो रखनी ही होगी, किन्तु घघरा पहनने से इन्कार नहीं किया जाता।

प्रशंसकों से बचें

सबसे पहले हमारा विश्वास पुष्टि पर दृढ़ होना चाहिए। बिना क्षेत्र में उतरे उस पर लम्बी-लम्बी टीकायें करना गलत होगा। हमारे आन्दोलन की प्रकृति ही ऐसी है कि उसे केवल दफ्तरों या शहरों में बैठकर नहीं समझा जा सकता। ऐसे लोगों की प्रशंसा या निन्दा दोनों ही निरर्थक हैं। यह क्षेत्र का कार्य है, दफ्तर में बैठकर 'रिसर्च' करने का नहीं है। बल्कि ऐसे प्रशंसक मित्रों से भी बचना होगा जो ऊँचे मकानों में अपने शानदार दफ्तरों में मेज पर गांधीजी की प्रतिमा या चित्र के सामने बैठकर आन्दोलन की प्रशंसा में खूब लिख रहे हैं।

नक्सलवादी गांधी की मूर्तियाँ तोड़ रहे हैं, उन पर जो पुस्तकें लिखी गयी हैं उन्हें जला रहे हैं, इसके लिए सर्वोदय के ऐसे कार्यकर्ता तथा मित्र भी जिम्मेदार हैं। आज मुसहरी में जे० पी० के सम्पर्क ने जनमानस पर गहरी छाप छोड़ी है। यदि वे लोग जो जे० पी० के काम की खूब तारीफ कर रहे हैं, किन्तु अपने शानदार दफ्तर को छोड़कर दो माह भी कहीं क्षेत्र में जाने को तैयार नहीं हैं। इन क्षेत्रों को देखेंगे तो इससे क्या इनकी अप्रतिष्ठा होगी? यदि इस तरह के सभी वरिष्ठ लोग कम से कम छः माह के लिए भी जे० पी० की तरह कहीं बैठें तो कितना काम हो। उनका खुद का प्रशिक्षण भी हो। किन्तु वह ऐसा नहीं करेंगे और पुष्टि की पुष्टि का प्रयास करेंगे। ऐसे ही लोग निराशा की हवा फैलाते हैं।

किन्तु निराशा का कोई कारण नहीं है। पिछले केवल ग्यारह माह में ही ७०० एकड़ से भी अधिक भूमि बिहार में केवल १७ सघन क्षेत्रों में पुष्टि-अभियान में बँटी है। सैकड़ों गाँवों में ग्रामसभाएँ बनकर ग्रामस्वराज्य की बुनियाद डाली गयी है। क्या इसी अवधि में इतने क्षेत्र में भी किसी अन्य राजनैतिक दल ने या सरकार ने ही इतनी भूमि भूमिहीनों में बाँटी है? आज गाँवों में सर्वोदय-कार्यकर्ता के अलावा कोई और सुनकर मालकियत मिटाने की बात कह रहा है? क्या उसके अलावा कोई क्षेत्र में है भी? चुनाव के दौरान खूब दल के दल लोग गाँवों में घूमते हैं, किन्तु क्या वे कभी मालकियत मिटाने की बात कहने की हिम्मत कर सकते हैं? सर्वोदय आन्दोलन की संख्यात्मक नहीं, गुणात्मक संरचना भी है, और मूल्यांकन भी है। बस काम पर लगे रहना, यही सर्वाधिक महत्व की बात है। जो चलेगा वही पहुँचेगा। बैठा रहनेवाला कैसे कहीं पहुँचेगा? ●

तरुण-शान्तिसेना-शिविर

अखिल भारत तरुण-शान्तिसेना शिविर का समापन गत ३० मई, ७१ को अभय आश्रम, बनगाँव में हुआ। बंगला देश की सीमा पर यह रमणीक स्थान है। शिविर का संचालन और मार्गदर्शन नारायण भाई कर रहे थे। पश्चिम बंगाल के 'स्टुडेन्ट्स एण्ड यूथ सालिडरिटी कौंसिल' के तरुण कार्यकर्ताओं ने इस शिविर की सफलता के लिए तन-मन से काम किया। इस शिविर में प्रमुख प्रवक्ता थे सर्वश्री आर० आर० दिवाकर, गोविन्दराव देशपाण्डे, राधाकृष्ण, मनमोहन चौधरी एवं मालती देवी। स्मरणीय है कि तरुण-शान्तिसेना का यह वार्षिक शिविर पश्चिम बंगाल में पहली बार आयोजित हुआ था। गत १६ मई से आरम्भ होनेवाले इस शिविर में भारत के लगभग सभी राज्यों के एक सौ तरुण-तरुणियों ने भाग लिया। ●

संयुक्त राष्ट्र के समक्ष रैली : कनाडा के विदेशमंत्री की आलोचना

जे० पी० ने संयुक्त राष्ट्र संघ के सामने आयोजित एक रैली को सम्बोधित करते हुए कहा कि संसार के नेताओं के पास बंगला-देश की समस्या को हल करने और शान्ति स्थापित करने के लिए अभी भी समय है, यद्यपि यह समय अब अधिक नहीं है। अगर वे इस समस्या को सुलझाने में दिल-चस्पी नहीं लेते हैं तो भारतीय उपमहादेश और पूरा दक्षिणी पूर्वी एशिया का क्षेत्र अशान्ति का शिकार हो जायेगा जिसका परिणाम सारे संसार पर क्या होगा, कहा नहीं जा सकता।

श्री नारायण ने कहा कि पाकिस्तान सारे संसार में यह प्रचार कर रहा है कि पूर्व बंगाल की अशान्ति भारत-पाक समस्या या हिन्दू-मुस्लिम समस्या है। परन्तु विदेशी पत्रकारों के कारण संसार धीरे-धीरे वास्तविक समस्या को जान पा रहा है, और संसार की आँखों में धूल झोंकने का और अपने जुर्म को छिपाने का पाकिस्तानियों का प्रयास असफल हो गया है। अब कोई ऐसा व्यक्ति, संघटन या संस्था नहीं है जिसे इस बारे में किसी प्रकार का भ्रम रह गया हो।

समस्या के इतिहास और अभी की स्थिति का विश्लेषण करते हुए, जबकि ५ लाख लोग मारे जा चुके हैं और ७० लाख भारत में शरणार्थी के रूप में आ चुके हैं। श्री नारायण ने कहा कि इन सारी घटनाओं ने पश्चिमी संसार को प्रभावित नहीं किया है और पश्चिम में अमरीका और पश्चिमी योरप के कुछ अखबारों को छोड़कर कहीं कोई विशेष प्रभाव नहीं मालूम पड़ता है। यह लगता है कि जैसे संसार का विवेक मर चुका है।

संसार के नेताओं से तत्काल कदम उठाने की अपील करते हुए श्री नारायण ने कहा कि स्वतंत्र संसार के नेता—श्री निक्सन, श्री हीथ, श्री पोम्पीदू को चाहिए कि वे स्पष्ट रूप में इन जुर्मों की निन्दा करें। उन्हें याह्या खाँ की सरकार पर, युद्ध खत्म करने, सेना को बैरक में भेजने, शेख मुजीब और दूसरे राजनैतिक नेताओं को रिहा करने, और राजनैतिक हल खोजने के लिए दबाव डालना चाहिए। उन्होंने कहा कि यदि शेख मुजीब और उनके साथी याह्या खा से हाथ मिलाना भी पसन्द न करें क्योंकि उनके हाथ बंगालियों के खून से रंगे हुए हैं तो किसी को आश्चर्य नहीं होना चाहिए। यह पश्चिमी पाकिस्तान के नेताओं का काम था कि वे एक राजनैतिक हल खोजने के लिए कोशिश करने, वार्ता करने, चाहे वह हल स्वायत्तता का होना या प्रभुसत्ता-सम्पन्न स्वतंत्र बंगला देश का।

पश्चिमी पाकिस्तान के एक राजनैतिक विज्ञान-वेत्ता श्री एकबाल अहमद ने उस रैली में यह कहा कि वे पूर्व बंगाल में पश्चिमी पाकिस्तान की कार्रवाइयों के विरुद्ध उन्हीं कारणों से हैं, जिन कारणों से अलजीरिया में फ्रांस के और वियतनाम में अमेरीका के विरुद्ध हैं।

यह रैली बंगला देश बचाओ समिति, की ओर से आयोजित की गयी थी।

जे० पी० ने ओटावा में एक सम्वाद-दाता गोष्ठी में यह कहा कि पाकिस्तान की आर्थिक सहायता करना 'सैनिक तानाशाही' का समर्थन करना है जिसके द्वारा वे बंगला देश के लोगों के विरुद्ध नाजियों की तरह की कार्रवाई करते रहेंगे। श्री नारायण ने कनाडा के विदेश-मंत्री श्री शार्प के उस वक्तव्य की आलोचना की, जिसमें उन्होंने कहा था कि कनाडा की सहायता पूर्व बंगाल की सैनिक बर्बरता में सहायक नहीं है।

श्री नारायण ने कहा कि वह श्री शार्प के दृष्टिकोण को स्वीकार नहीं कर सकते। उन्होंने कहा कि वे सभी प्रोजेक्ट जो पाकिस्तान में चल रहे हैं, जिनकी देखरेख केन्द्रीय पाकिस्तान सरकार द्वारा की जाती है, उनको अगर सहायता दी जाती है, तो यह प० पाकिस्तान सरकार का राजनैतिक समर्थन है और नैतिक समर्थन भी। उन्होंने कहा कि सारे संसार के देश पाकिस्तान पर दबाव डालें कि उसे उस समय तक कोई सहायता नहीं मिलेगी जब तक पूर्व बंगाल में सैनिक कार्रवाई बन्द न हो, बंदी रिहा न किये जायें, और उनसे पूर्व बंगाल के भविष्य पर बात न की जाय। उन्होंने कहा कि बंगाली शायद प्रभुसत्ता से कम कुछ भी स्वीकार नहीं करेंगे। जयप्रकाशजी ने पूर्व-बंगाल से शरणार्थियों के भारत आने के तांता को एक प्रकार का नागरिक आक्र-मण (सिविल इनवेजन) कहा। उन्होंने कहा कि एक ऐसा समय भी आ सकता है जब भारत शरणार्थियों की समस्या हल करने के लिए एकतरफा कार्रवाई करे। उन्होंने यह बताने से इन्कार किया कि वह कार्रवाई क्या होगी।

टोकियो में जे० पी० ने पाकिस्तान की सहायता करनेवाले जापान और दूसरे राष्ट्रों से कहा कि वे पाकिस्तान से कहें कि जब तक वह बंगला देश के लोगों के विरुद्ध अपनी सैनिक कार्रवाई नहीं रोकता है और एक राजनैतिक हल नहीं खोज लेता है, उसकी सारी सहायता बन्द रहेगी।

त्रिपुरा में तरुण-शिविर

सर्व सेवा संघ की बंगला देश सहायता समिति ने तय किया है कि बंगला देश के विद्यार्थियों और तरुणों का अगला शिविर त्रिपुरा राज्य में अगरतला में होगा। बंगला देश सहायता समिति के मंत्री ने सीमा-क्षेत्र के विस्तृत दौरे के पश्चात् यह जानकारी दी।

सर्वोदय प्रेस सर्विस

विश्व जनमत को अनुकूल बनाने के प्रयत्न

—परिस्थिति की चुनौती—

विदेशमंत्री श्री स्वर्ण सिंह ने अमेरिका के सेक्रेटरी आफ स्टेट विलियम रोजर्स को बंगला देश की स्थिति और भारत के लिए उससे पैदा होनेवाले राजनैतिक, सामाजिक और आर्थिक परिणामों एवं समस्याओं से अवगत कराया।

श्री सिंह ने श्री उथां से अपनी मुलाकात में कहा कि वे बंगला देश की परिस्थितियों को सामान्य बनाने और शरणार्थियों की वापसी के लिए वातावरण बनाने में अपने 'महान व्यक्तित्व' का प्रभाव डालें। श्री सिंह ने कहा कि शरणार्थियों की वापसी केवल उसी समय संभव है जबकि पूर्व बंगाल के सच्चे प्रतिनिधियों के साथ एक राजनैतिक हल निकल आये।

श्री उथां से उन्होंने यह भी कहा कि भारत संसार के अन्य देशों को इस गफलत में रहने नहीं देगा कि पूर्व बंगाल में मानवीय दृष्टिकोण से कुछ सहायता प्राप्त कर देने के बाद वे वहाँ की समस्या को निपटा चुके हैं। उन्होंने कहा कि भारत को दी हुई सहायता वास्तव में पाकिस्तान की ही सहायता है, क्योंकि शरणार्थी पाकिस्तानी नागरिक हैं, जिनकी भारत अन्य देशों की ओर से देख-भाल कर रहा है। उन्होंने कहा कि शरणार्थियों को वापस लौटने की याहिया खाँ की बातों से किसी को धोखे में नहीं पड़ना चाहिए, क्योंकि उसके बाद भी २० लाख शरणार्थी भारत आ चुके हैं। शरणार्थियों की वापसी या अन्तर्राष्ट्रीय मानव-सहायता की आड़ में इस्लामाबाद के सैनिक शासकों के जुर्म को छिपाने या शरणार्थियों की समस्या हल करने के लिए कदम न उठाने की चाल को सफल नहीं बनने देना है।

श्री स्वर्ण सिंह और फ्रांस के विदेश मंत्री श्री मौरिस शुमैन की चर्चा के बाद जो संयुक्त वक्तव्य जारी किया गया है, उसमें शुमैन ने इन परिस्थितियों पर परेशानी व्यक्त की है, और यह इच्छा प्रकट की है कि इस संकट के राजनैतिक हल के लिए और शरणार्थियों की वापसी के लिए सभी प्रयत्न किये जायँ।

श्री सिंह ने कनाडा में कहा कि भारत इस बात को बर्दाश्त नहीं कर सकता कि पूर्व बंगाल के शरणार्थी उसे असंतुलित कर डालें। उन्होंने एक सम्वाददाता गोष्ठी में कहा कि वे मित्र राष्ट्रों की सरकारों को पूर्व बंगाल के गृहयुद्ध से पैदा होने वाली शरणार्थियों की समस्या की गम्भीरता को समझाने का प्रयास कर रहे हैं। अगर अन्तर्राष्ट्रीय कम्यूनिटी समस्या को हल करने में उचित दिलचस्पी नहीं लेती है तो भारत को कोई कार्रवाई करनी होगी। उनसे पूछा गया कि क्या भारत इस बोझ को हटाने के लिए शक्ति का प्रयोग करेगा? तो श्री सिंह ने उत्तर दिया कि 'न्यूज कान्फरेन्स' में हमें शक्ति के प्रयोग की बात नहीं करनी चाहिए। भारत ने संसार के राष्ट्रों से जो अपील की है वह दो सिद्धांतों पर आधारित है, एक तो यह कि पूर्व बंगाल में ऐसी परिस्थिति पैदा की जाये कि शरणार्थियों का भारत आना कम हो, दूसरे जो आ चुके हैं, वे घर वापस जा सकें। अगर विदेशी सरकारें काफी जोर लगायें तो पश्चिमी पाकिस्तान की सरकार तुरन्त कुछ करने के लिए मजबूर हो सकती है। एक वक्तव्य में श्री सिंह ने कहा कि पाकिस्तानी सरकार ने सैनिक शक्ति के द्वारा पूर्व बंगाल के आत्म-निर्णय के आन्दोलन को दबा रखा है। अगर पूर्वी भाग में परिस्थिति न सुधरी तो पाकिस्तान की सारी आर्थिक और सैनिक सहायता बन्द कर दी जानी चाहिए।

नेशनल प्रेस क्लब, वाशिंगटन में जब श्री सिंह से पूछा गया कि श्री निक्सन के वक्तव्य न देने पर उनका क्या ख्याल है, तो उसका उत्तर देना उन्होंने टालते हुए एक दूसरे प्रश्न के उत्तर में कहा कि, कठोर वास्तविकता यह है कि उनके विवेक को झकझोरने की आवश्यकता है ताकि वे स्पष्ट तौर पर बातें कह सकें। परिस्थिति की गम्भीरता के कारण उन्हें इसे उचित रूप में देखना चाहिए। इस समस्या के राजनैतिक हल के लिए जड़ को देखना चाहिए, मात्र सतह को नहीं।

यह पूछे जाने पर कि क्या वाशिंगटन की वार्ता 'बहरों की बातें थी?' श्री सिंह ने कहा कि ऐसा नहीं कहा जा सकता। अमेरिका की सरकार राहत कार्यों में दिलचस्पी ले रही है, हम उसका स्वागत करते हैं। हमलोगों ने उन लोगों को यह भी बताया है कि समस्या को हल करने के लिए जड़ में जाने की आवश्यकता है, केवल रोग के लक्षण देखकर कुछ लगाने से काम नहीं चलेगा। श्री सिंह ने कहा कि यदि अमेरिका के लोग स्पष्ट और प्रभावशाली तौर पर अपनी नापसन्दगी व्यक्त करें तो पाकिस्तान की सैनिक सरकार पर बड़ा प्रभाव पड़ेगा और पश्चिमी पाकिस्तान के लोगों पर भी, जो प्रेस पर पाबन्दी होने के कारण सच्चाई से अपरिचित हैं। साथ ही साथ इससे पीड़ितों को भी तसल्ली मिलेगी तथा लोकतन्त्र और उदार परम्पराओं के विरुद्ध जुर्म करनेवालों को भय होगा। श्री सिंह ने कहा कि उनका कर्तव्य है कि अमेरिका के राष्ट्रपति, जनता और दूसरे नेताओं को बंगला देश की सच्चाई से वे अवगत करायें। यह अब उन लोगों पर निर्भर है कि वे कैसा रवैया अपनाते हैं। जब श्री सिंह से शरणार्थियों के कैम्प में पैसे देने की बात पूछी गयी तो उन्होंने वास्तविक स्थिति बताने के बाद कहा कि उन्हें इस बात का अक्सर सन्देह होता है कि पैसे की बात करने की नीति मूल समस्या पर से ध्यान हटाने के लिए अपनायी गयी है। जब उनसे पूछा गया कि भारत-अमेरिका सम्बन्ध कैसे अच्छा हो सकता है तो उन्होंने कहा कि अगर आप हमारा समर्थन करेंगे तो सबध बहुत सुधर जायेंगे। श्री सिंह ने कहा कि अमेरिका और संसार के दूसरे राष्ट्र के पास बहुत सारे

भूदान-यज्ञ २८-६-'७१ लाइसेंस नं० ५ १४ [पहले से डाक-व्यय दिए बिना भेजने की स्वीकृति प्राप्त] रजिस्टर्ड नं एल.१२४

बीकानेर ग्रामस्वराज्य समिति के निर्णय

दिनांक ३-६-७१ को ग्रामदान ग्रामस्वराज्य समिति की बैठक श्री रघुवर दयालजी गोयल की अध्यक्षता में सम्पन्न हुई। अन्य सदस्यों के अतिरिक्त विशिष्ट आमन्त्रित व्यक्तियों में सर्वश्री सिद्धराज, जवाहरलाल जी, पूर्णचन्द्र जी, बद्री प्रसाद स्वामी, देवी दत्त पन्त ने भी भाग लिया। इसमें निम्न-लिखित निर्णय लिये गये :

१—ग्रामदान ऐक्ट के अनुसार ग्राम-सभाओं के फार्म आदि भराने के कार्यक्रम को प्राथमिकता दी जायेगी। कानून के अन्तर्गत नियम, फार्म आदि तैयार होकर प्राप्त होने ही यह कार्य प्रारम्भ कर दिया जायेगा। कार्यकर्ता, साधन आदि को ध्यान में रखते हुए यह निर्णय लिया गया कि जिले की हर तहसील को ४ या ५ सर्किलों में बाँट कर यह कार्य क्रमशः एक एक सर्किल में पूरा किया जाय। सभी तहसीलों में साथ-साथ काम चलेगा।

२—जिन तहसीलों में राजस्व विभाग के द्वारा बारानी भूमि के 'अलाट्मेन्ट' की कार्यवाही हो रही है वहाँ निमित ग्रामसभाओं के जरिए वहाँ के भूमिहीनों के प्रार्थना-पत्र भरवा कर उन्हें भूमि दिलाने की कोशिश की जाय। इस सम्बन्ध में समिति की ओर से एक शिष्टमण्डल कृषि मंत्री श्री खेमारामजी से मिला। मण्डल ने बीकानेर जिले की 'अलाट्मेन्ट' कमेटी में ग्रामदान बोर्ड तथा जिला समिति के प्रतिनिधित्व के विषय में भी सुझाव दिया।

३—लूणकरणसर तहसील में नहरी जमीन के 'अलाट्मेन्ट' की समस्या वास्तव में गम्भीर है। इसलिए अनियमितताएँ दुरुस्त होने तक वहाँ भूमि-वितरण कार्य स्थगित रखा जाय, इस प्रकार का निवेदन कृषि मंत्री से किया जाय।

४—राजस्व की भूमि के 'अलाटमेन्ट' के सिलसिले में जयपुर में राजस्व मंत्री से बातचीत की जाय, यह तय हुआ।

५—विधान सभा के आगामी महत्वपूर्ण चुनावों पर अग्रिम बैठक में विचार किया जायगा।

६—ग्रामसभा से जिला सभा तक प्रशासनिक स्वरूप तथा ग्रामस्वराज्य के सन्दर्भ में ग्राम, ग्राम-समूह या ब्लाक की विकेन्द्रित आर्थिक योजना के स्वरूप के विषय में समग्र सेवा संघ प्रान्तीय स्तर पर गोष्ठी या परिसंवाद की आयोजना कर मार्ग-दर्शन करे। ● मंत्री बी० ग्रा० स०

१४ एकड़ भूदान २२१ भूमिहीनों में वितरित

मध्य प्रदेश भूदान यज्ञ मण्डल द्वारा प्रसारित जानकारी के अनुसार गत अप्रैल माह में मण्डल द्वारा रायपुर, जबलपुर, शिवपुरी, गुना तथा पूर्वी निमाड़ जिलों में ९१४-०२ एकड़ भूदान-भूमि २२१ भूमिहीन परिवारों में वितरित की गयी। आदाता परिवारों में हरिजन ५५, आदिवासी १४०, सवर्ण २४ तथा पिछड़ी जाति के २ परिवार शामिल हैं। मण्डल के मंत्री श्री हेमदेव शर्मा के अनुसार भूदान बोर्ड वर्षा-ऋतु से पूर्व अधिकाधिक भूदान भूमि-वितरण के लिए प्रयत्नशील है। (सप्रेस)

इस अंक में

पैंतरे हैं जिनका प्रयोग वे इस्लामाबाद पर दबाव डालने के लिए कर सकते हैं। इस समय वे दबाव डालने का कोई कारगर राजनैतिक तरीका खोजकर, पूर्व बंगाल की परिस्थिति को बिगड़ने से बचा सकते हैं। श्री सिंह ने कहा कि पाकिस्तानी सरकार से यह आशा नहीं करनी चाहिए कि वह अन्तर्राष्ट्रीय रिलीफ को पीड़ित लोगों में बाँटेगी। इस सम्बन्ध में उन्होंने पिछले तूफान में दिये गये रिलीफ के उनके द्वारा अनुचित प्रयोग का उदाहरण दिया।

प्रधानमंत्री का अभिमत

प्रधानमंत्री ने राज्यसभा में ३ घंटे की, बंगला देश के शरणार्थियों पर, बहस के बीच कहा कि संसार आज सहायता दे या न दे, पर उसे बंगलादेश की घटनाओं के परिणामों को जरूर ही भुगतना होगा। अन्तर्राष्ट्रीय कम्युनिटी इसको नजरअन्दाज नहीं कर सकती, उन्हें अपना उत्तरदायित्व समझना ही होगा। उन्होंने इस पर आश्चर्य प्रकट किया कि भारत द्वारा राजनैतिक हल खोज पर जोर देने की आलोचना की जा रही है, और उन्होंने पूछा कि, "क्या अब कोई यह सोचता है कि भारत किसी ऐसे हल को स्वीकार कर लेगा जिसका अर्थ बंगला देश की मौत हो ?"

प्रस्तुतकर्ता : सैयद मुस्तफा कमाल

वार्षिक शुल्क। १० रु० (सफेद कागज। १२ रु०, एक प्रति २५ पै०), विदेश में २२ रु०; या २५ शिलिंग या ३ डालर।
एक अंक का मूल्य २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं मनोहर प्रेस, वाराणसी में मुद्रित

सम्पादक : राममूर्ति
वर्ष : १७ सोमवार
अंक : ४० ५ जुलाई, '७१
पत्रिका विभाग
सर्व सेवा संघ, राजघाट, वाराणसी–१
फोन : ६४३९१ तार : सर्वसेवा

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

ब्रह्मचर्य का अर्थ

अपने अनुभव से मेरा यह मत स्थिर हुआ है कि यदि आजीवन ब्रह्मचर्य रखना है, तो ब्रह्मचर्य की कल्पना अभावात्मक (निगेटिव) नहीं होनी चाहिए। 'विषय-सेवन मत करो' यह अभावात्मक आज्ञा है, इससे काम नहीं चलता। 'सब इन्द्रियों की शक्ति को आत्मा में लगाओ' ऐसी भावात्मक (पॉजिटिव) आज्ञा की आवश्यकता है। ब्रह्मचर्य के सम्बन्ध में 'यह मत करो', इतना कहकर काम नहीं चलता, 'यह करो', कहना चाहिए और इसलिए 'ब्रह्मचर्य' शब्द की योजना की गई है।

ब्रह्म अर्थात कोई भी बृहत् कल्पना। ब्रह्मचारी का जीवन तप से, संयम से ओतप्रोत रहता है। पर उसके सामने रहनेवाली विशाल कल्पना के अनुपात में सारा संयम उसे अल्प ही जान पड़ता है। ब्रह्मचर्य को मैं विशाल ध्येयवाद और तदर्थ संयमाचरण कहता हूँ।

दूसरी बात यह कि जीवन की छोटी छोटी बातों में भी नियमन की आवश्यकता है। खाना, पीना, बोलना, बैठना, सोना आदि सब विषयों में नियमन चाहिए। मनचाही चाल चले और इन्द्रिय-निग्रह साधें, यह आशा व्यर्थ है। घड़े में तनिक-सा छेद हो, तो भी वह पानी रखने लायक नहीं रह जाता। इसी प्रकार चित्त की भी स्थिति है।

ब्रह्मचर्य की साधना के लिए एक तो यह निष्ठा होनी चाहिए कि 'यह चीज हमें करनी ही है।' दूसरा, दिन भर कोई-न-कोई उत्तम कार्य होना चाहिए, जिससे रात में सोते समय बिस्तर को पीठ लगते ही तुरन्त नींद आ जाय। तीसरी बात, सोने के पहले लम्बी सांस लें और नाम-स्मरण करें। ब्रह्मचर्य के लिए उत्तम निद्रा बहुत बड़ा साधन है, और उत्तम निद्रा के लिए सर्वोत्तम साधन, दिन भर काम करना—काम ऐसा जिसमें शारीरिक श्रम और मानसिक श्रम, दोनों चाहिए।

(विनोबा : व्यक्तित्व और विचार : पृष्ठ २९९-३००)

—विनोबा

● मुसहरी की सम्भावना ● बंगला देश : राजमत, जनमत ●

सुधार या पूर्ण-परिवर्तन ?

ता० ७ जून के भूदान-यज्ञ में सतीश कुमार की डा० अरम से हुई बातचीत मैंने पढ़ी। इस विषय में मुझे जो कुछ कहना है वह भूदान-यज्ञ के मार्फत कहना उचित समझता हूँ।

डा० अरम ने 'सरकार की प्रगतिशील नीति को चरितार्थ करने के लिए इन्दिराजी के हाथ मजबूत करने' की बात पर जोर दिया है और यह प्रतिपादन किया है कि 'हमें कुछ ऐसे सामान्य कार्यक्रमों की खोज करनी चाहिए जिनमें सरकार और सर्वोदय के बीच सहयोग हो सके।' सतीश कुमार ने इस बातचीत में एक से अधिक बार डा० अरम के सामने यह पहलू रखने की कोशिश की कि इस प्रकार के सहयोग से ग्रामस्वराज्य आन्दोलन के 'सरकारी मत के रूप में परिवर्तित हो जाने की आशंका है और आन्दोलन के लिए इस प्रकार के सहयोग के कुछ खतरनाक परिणाम आ सकते हैं।' पर डा० अरम मूल 'थीसिस' पर कायम रहे।

सर्वोदय आन्दोलन सब का सहयोग लेना चाहता है और उसके लिए स्वयं पहले हाथ बढ़ाने को उसे तैयार रहना चाहिए, यह सही है। हम किसी से नफरत करें यह तो प्रश्न ही नहीं है। जिस प्रकार के सहयोग की बात डा० अरम ने कही है उसका थोड़ा गहराई से विश्लेषण करना चाहिए। डा० अरम का कहना है कि 'प्रत्यक्ष लोकशाही (डायरेक्ट डेमोक्रेसी) और ग्रामस्वराज्य की स्थापना के हमारे कार्यक्रम दूरगामी हैं, जबकि गरीबी और बेकारी का अन्त, शिक्षा पद्धति में परिवर्तन और इसी तरह के अन्य तात्कालिक कार्यक्रमों के महत्व को हम नजरअन्दाज नहीं कर सकते।' उन्होंने सहयोग की उनकी कल्पना को स्पष्ट करते हुए कहा 'इन्दिराजी की गरीबी तथा बेकारी निवारण के कार्यक्रम में जनता का सहयोग मिले और सर्वोदय कार्यकर्ता जनता को इस प्रकार के कार्यक्रमों के प्रति जागरूक कर सकें,' यह हमारा सहयोग इन्दिराजी को मिलना चाहिए।

प्रत्यक्ष लोकशाही और ग्रामस्वराज्य के हमारे कार्यक्रम दूरगामी हो सकते हैं, पर क्या वास्तव में यह सम्भव है कि इन कार्यक्रमों के बिना गरीबी और बेकारी का अन्त हो सकता है या शिक्षा पद्धति में मौलिक परिवर्तन हो सकता है? इनमें से हरएक कार्यक्रम का एक दूसरे पर असर होगा और इसलिए एक के लिए दूसरे का इन्तजार करने की जरूरत नहीं है यह कुछ हद तक ठीक है फिर भी प्रत्यक्ष लोकशाही, यानी लोकशक्ति, और ग्रामस्वराज्य का बुनियादी काम काफी आगे बढ़ जाने पर ही गरीबी, बेकारी, शिक्षा-पद्धति आदि पक्षों के बारे में कुछ किया जा सकता है। और क्या जिस काम की अपेक्षा इन्दिराजी की सरकारी अमले और उनकी पार्टी के लोगों से होना उचित है वह काम हम करें? अर्थात् सरकारी नीतियों के एजेंट बन कर उनके लिए 'जनता का सहयोग' हासिल करें?

गरीबी तथा बेकारी निवारण के ऐसे कौन से नये या प्रगतिशील कार्यक्रम इन्दिराजी ने उठाये हैं कि हम जनता के सामने उनकी वकालत कर सकें? तीन साल के लिए ५० करोड़ रु० सालाना खर्च करने से ही क्या बेकारी दूर हो जायेगी? हम मानते हैं कि गाँव-गाँव में जब तक ग्रामोद्योग खड़े नहीं किये जायेंगे, जमीन व्यवस्था में सुधार केवल कानून की पोथियों में न रह कर व्यवहार में नहीं उतरेगा, तब तक हरगिज इस मुल्क की बेकारी दूर नहीं होगी। क्या इन्दिराजी की सरकार ने इन मामलों में पहले वाली सरकारों से कोई भिन्न नीति जाहिर की है? क्या उसने जनता का नैतिक धरातल उठाने के लिए शराबखोरी और जुए को बढ़ावा देने से अपना हाथ खींचा है? मुझे आज की सरकार की नीतियों में पहले की अपेक्षा कोई मौलिक परिवर्तन नजर नहीं आता, बल्कि जो परिवर्तन नजर आता है वह यह कि समाजवाद के नाम पर लोगों के गले का फंदा और कसा जा रहा है और उन्हें धोखा दिया जा रहा है।

इसके अलावा एक और बुनियादी बात की तरफ मैं ध्यान आकर्षित करना चाहता हूँ। डा० अरम का कहना है कि इस बारे में तो हमें स्पष्ट हो ही जाना चाहिए कि हम वर्तमान संविधान और संसदीय लोकशाही के अन्तर्गत रह कर ही काम कर सकते हैं। वास्तव में हमें इस बारे में स्पष्ट हो जाना चाहिए। हमें 'वर्तमान संविधान और संसदीय लोकशाही' के नीचे रह कर ही काम करना है, यह धारणा मेरे खयाल से उलटे हुए विचारों का द्योतक है, वर्तमान संविधान में बहुत कुछ बदलना होगा और आज की संसदीय लोकशाही तो हम खतम ही करना चाहते हैं। आज केन्द्रित सत्ता के जो गढ़ हैं, और पार्टियों का जो शिकंजा है, दोनों को हम तोड़ना चाहते हैं और आज की संसदीय लोकशाही इन दोनों को मजबूत करना चाहती है। हमारा रास्ता सच होगा या नहीं यह दूसरी बात है, लेकिन हमें अपने-आप में बिलकुल स्पष्ट होना चाहिए।

डा० अरम की इस बात से मैं सहमत हूँ कि ग्रामस्वराज्य के काम को परिपूर्ण एवं शक्तिशाली बनाने के लिए हमें आन्दोलन को गाँवों तक ही सीमित नहीं रखना है और उसमें अन्य कामों का भी महत्वपूर्ण स्थान है, पर इस प्रक्रिया में यह सावधानी रखना अत्यन्त आवश्यक है कि हम अपनी दृष्टि मूल लक्ष्य से न हटने दें।

आपका,

—सिद्धराज ढढ्ढा

विदेशी पैसा

इतने वर्षों के बाद सरकार को विदेशी पैसे की याद आयी है, और उसे महसूस हुआ है कि विदेशी पैसा देश के लिए खतरा बन सकता है। अचानक सरकार को यह बात कैसे सूझ गयी कि विदेशी पैसे पर रोक लगनी चाहिए? क्या इस बात के सूझने में इतनी देर लगनी चाहिए थी?

जब भारत स्वतंत्र हुआ तो विदेशी शासन का अंत हुआ, लेकिन सिर्फ विदेशी शासन का अंत हुआ। स्वतंत्रता के बाद भी विदेशी अस्त्र-शस्त्र, विदेशी पूँजी, और विदेशी 'दिमाग' के लिए हमने कभी दरवाजा बन्द नहीं किया, बल्कि पहले से कहीं ज्यादा खोल दिया। आज हमारे राष्ट्रीय जीवन का कौन-सा पहलू है जिसमें विदेशी पैसा नहीं पहुँचा है? सेना के अस्त्र-शस्त्रों को छोड़ भी दें, तो पंचवर्षीय योजना के द्वारा विकास में, दलों के द्वारा राजनीति में, प्रेस और पत्रों में, बड़े-बड़े संस्थाओं में, सेवा संस्थाओं के रचनात्मक कार्यों में, महत्त्वाकांक्षी विद्वानों और युवा-युवतियों की विदेश-यात्राओं में, जहाँ देखिए हर जगह विदेशी पैसे की माया दिखायी देगी। हम गरीब देश के लोग समझ लेते हैं कि धनी देश विश्व-बंधुत्व की भावना से प्रेरित होकर, खुले और साफ दिल से, हमें मदद करते हैं ताकि हमारे दुःख दूर हो जायँ और हम भी उनकी बिरादरी में शरीक होने लायक बन जायँ। लेकिन दुनिया की सरकारों में कितना भाईचारा है, यह हमने बंगलादेश के प्रश्न पर देख लिया। अब भ्रम की कोई गुंजाइश नहीं रह गयी है। जरूर विदेशों में ऐसी सेवा संस्थाएँ हैं जो निश्छल मन से भारत के गरीबों की सहायता करती हैं, लेकिन उनकी सरकारों या धार्मिक संगठनों की ओर से जो पैसा आता है उसके पीछे राजनैतिक उद्देश्य होता है जिसे दुनिया जानती है, और जिसे अब हम भी, यद्यपि कुछ देर से जानने लगे हैं।

तो, दूसरे देश क्यों इतना पैसा देते हैं? और जो पैसा आता है वह किन स्रोतों से आता है? मुख्य रूप से विदेशी पैसा चार स्रोतों से आता है—सरकारों से, पूँजीपतियों से, पार्टियों से, धार्मिक और सेवा-संस्थाओं से। इनके अलावा विदेशी सरकारों के खुफिया-विभागों की ओर से बहुत बड़ी रकम छिपे रूप में अनेक व्यक्तियों, संस्थाओं और संस्थानों को मिलती रहती है। किस उद्देश्य से मिलती है, देने और लेनेवाले ही जानें। विदेशी पैसा खुलकर भी आता है, छिपकर भी।

जो पैसा विदेशी सरकारों से हमारी सरकार को मिलता है वह देश के विकास के लिए मिलता है जिससे हमारी सरकार सहायता देनेवाले देशों से विकास की जरूरत का माल और तकनीकी ज्ञान खरीदती है, और यहाँ देश में चलनेवाली विकास-योजनाओं में खर्च करती है। इस तरह हमारे देश पर अरबों रुपये का विदेशी कर्ज लद गया है। विदेशी पैसे ने, जिसमें अमरीकी पैसे का हिस्सा सबसे बड़ा है, इतना ही नहीं किया है। उस पैसे ने हमारी सारी विकास-नीति को, उद्योगों और खेती के विकास को, यहाँ तक कि गाँवों के सामुदायिक विकास को भी, विदेशी साँचे में ढाल दिया है। विदेशी पैसा लेकर हमारी सरकार ने समृद्धि के कुछ 'पाकेट' तैयार किये हैं। देश का विकास देश की परिस्थिति से बिल्कुल अलग हो गया है। विवेकशून्य मशीनीकरण, केन्द्रीकरण, और शहरीकरण ने देश के विकास को ऐसी दिशा दे दी है कि समझ में नहीं आता कि इसमें कब, कैसे मोड़ लाया जा सकेगा। कौन जाने भारत को गाँव बनाम शहर के भयंकर गृहयुद्ध से गुजरना पड़े?

विदेशी पैसे ने जनता के मुकाबिले सरकार की शक्ति बेहद बढ़ा दी है। बहुत कुछ विदेशी पैसे के ही बल पर देश में राज्यवाद का जन्म और विकास हुआ है। जैसे-जैसे सरकार की शक्ति बढ़ी है, जनता की शक्ति, उसका उत्साह और अभिक्रम घटता गया है। आज वह शून्य-सा हो गया है। अभिक्रम और उत्साह का स्थान हिंसा और हताशा ने ले लिया है।

सरकार के चारों ओर, देशी-विदेशी पैसे से लाभान्वित होनेवाला, नेताओं-अधिकारियों-ठेकेदारों व्यापारियों का एक नया वर्ग (न्यू क्लास) निर्मित हुआ है जो देश पर हुकूमत कर रहा है, जिसने अंग्रेजी और अंग्रेजियत को कायम कर रखा है, जिसके बच्चे पब्लिक स्कूलों में पढ़ते हैं, और जिसने सुख और समृद्धि के साधनों को अपनी मुट्ठी में कर लिया है। वह नया वर्ग देश को चला रहा है, करोड़ों लोग भूख और भ्रम में उनके इशारे पर नाच रहे हैं।

विदेशी पैसे का भरपूर इस्तेमाल देश के सामन्तवाद—पूँजीवाद (आर्थिक स्टेटस को) को कायम रखने में किया गया है। उसके खून से राज्यवाद तो तगड़ा होता ही जा रहा है। आर्थिक क्षेत्र की तरह राजनैतिक क्षेत्र में भी विदेशी पैसा चुनावों में अति-राष्ट्रवादी, साम्प्रदायिक, और प्रतिगामी तत्त्वों को बढ़ावा देता है। अमरीका के सी० आई० ए० का जाल दुनिया में फैला है। जो अमरीका कर रहा है, वही दूसरे समृद्ध देश भी कर रहे हैं। अमरीका चाहता है कि भारत पूँजीवादी बना रहे और उसके 'प्रभाव-क्षेत्र' में रहे, रूस चाहता है कि भारत राष्ट्रीयकरण के रास्ते पर चले, और उसके प्रभाव को स्वीकार करे। भारत 'स्वतंत्र' रहे, और अपनी प्रतिभा और परिस्थिति के अनुसार अपने भविष्य का निर्णय करे, यह कोई नहीं चाहता। यह इस नये युग का नया साम्राज्यवाद है।

विदेशी पैसे के कारण जो हाल भारत का हुआ है उससे बुरा हाल पाकिस्तान का हुआ है। यह जानी हुई बात है कि मुख्य रूप से विदेशी पैसे के कारण ही पाकिस्तान में सैनिक शासन शुरू से आज तक टिका रहा है। और, भारत और पाकिस्तान लड़ने भी विदेशी ही अस्त्रों से रहे हैं, उन्हीं देशों के दिये हुए अस्त्रों से जो→

शराब की दूकानों को पुनः खोलने का विरोध

उत्तराखण्ड मद्य-निषेध-समिति की अध्यक्षा गांधीजी की अंग्रेज शिष्या श्री सरला बहन ने पर्वतीय जिलों के विधायकों से, इलाहाबाद हाई कोर्ट द्वारा इलाहाबाद–वाराणसी आदि में शराबबन्दी के आदेश को निरस्त करने के उपरान्त पर्वतीय जिलों में भी पुनः शराब की दूकानें खुलने की अफवाह का जिक्र करते हुए अपील की है, "मैं तो यह विश्वास नहीं कर सकती कि कोई भी लोकप्रिय सरकार अपनी प्रगतिशील नीतियों को उलटकर जनता को सर्वनाश की ओर ढकेल सकती है। आप यहाँ की जनता के प्रतिनिधि हैं और यदि इस अफवाह में कोई तथ्य है तो मुझे विश्वास है कि आप शराब की दूकानों को पुनः खोलने के विचार का विरोध करेंगे और सरकार से शराबबन्दी को सफल बनाने के लिए बड़े कदम उठवायेंगे, जिससे सामाजिक कार्यकर्ताओं द्वारा इस दिशा में जानेवाले कार्य को बल मिल सके।"

७० वर्षीय सरला बहन ने रवाईं के दूरस्थ क्षेत्रों में अपनी पदयात्रा का जिक्र करते हुए कहा है—"मैं प्राय घूमती रहती हूँ। सरकारी शराब की दूकानों के बन्द होने से अवैध शराब के अड्डे समाप्त हो रहे हैं। यह क्षेत्र घर-घर शराब चुआने के लिए मशहूर था, परन्तु यहाँ भी बहुत लोग शराब छोड़ रहे हैं और कई गाँव शराब-मुक्त हो चुके हैं।"

पाँच शराबबन्दीवाले जिलों में शराब की दूकानें पुनः खुलने की अफवाह फैलाने में शराब के व्यापारी और आबकारी विभाग के कर्मचारी सक्रिय हैं। मार्च, १९७० में जन-आन्दोलन के फलस्वरूप टिहरी और गढ़वाल जिलों में शराबबन्दी हुई थी। यदि पुनः शराब की दूकानें खुलीं तो पहले से भी तीव्र जन-आन्दोलन होने की आशंका है।

नगालैंड में शान्ति-कार्य

'यदि शान्ति के काम में शान्ति-शोध की कोई सार्थकता है तो उस शोध को कर्म की ओर मोड़ना आवश्यक है। घटना के बाद के अध्ययन के महत्त्व से इन्कार नहीं किया जा सकता, लेकिन घटना के पहले के अध्ययन से शान्ति के काम को बहुत सहायता मिलेगी' नगालैंड शान्ति-केन्द्र के निदेशक डा० एम० अरम अशान्ति क्षेत्र के एक लम्बे अनुभव के कारण शान्ति और अहिंसा की सगुण व्याख्या करते हैं। नगालैण्ड में शान्ति-प्रयासों के शुरू हुए सात ही वर्ष हुए हैं, पूरी तरह शान्ति अभी दूर है, लेकिन परिस्थितियों की जटिलता को देखते प्राप्त सफलताएँ उल्लेखनीय हैं। १९६४ में जब नगा समस्या अपने उत्कर्ष पर थी, सेना विद्रोहियों तथा साथ साथ नागरिकों के भी जान-माल का काफी नुकसान हुआ तब श्री जयप्रकाश नारायण, श्री माइकेल स्काट और स्व० चालिहा के प्रयासों से एक शान्ति मिशन की स्थापना हुई। मिशन की सहायता से ६ सितम्बर १९६४ को युद्ध विराम हुआ। तब से आज तक कुछ छुट-पुट वारदातों को छोड़कर स्थिति लगभग वैसी ही है। लेकिन युद्ध विराम शान्ति स्थापना का पर्याय नहीं है। इसलिए शान्ति केन्द्र को लगातार इन परिस्थितियों से जूझना पड़ता है। १९६५ में खुले इस शान्ति केन्द्र का मुख्यालय कोहिमा में है। १९६८ में मोकोचुंग में एक दूसरा केन्द्र खोला गया। तुएनसंग और फेक में भी दो और केन्द्रों को खोलने का प्रयास जारी है। १९७० में नगालैण्ड तरुण-शान्तिसेना की स्थापना की जा चुकी है। अभी हाल ही में महिलाओं के शान्ति प्रशिक्षण का भी आयोजन किया गया है।

सत्तारूढ़ पार्टी, विरोधी पार्टियों और भूमिगत विद्रोहियों के दो दलों के नेताओं के बीच मध्यस्थता कर मतभेद खतम करने का प्रयास चल रहा है। इन सब समस्याओं के बीच घिरे होते हुए भी केन्द्र जनता की अहिंसक शक्ति तैयार करने के उद्देश्य को नहीं भूला है।

(गां० शां० प्र० पत्रक से)

→दोनों के बीच शान्ति और सद्भावना का दम भरते रहते हैं। आज भी अमरीका ने याह्या के शासन को लड़ाई के अस्त्र-शस्त्र देना कहाँ बन्द किया है? शरणार्थियों के लिए दवा, जालिमों के लिए बन्दूक, और विकास के लिए पूँजी का कितना अच्छा मेल है!

विदेशी पैसे ने हमारे विशेषज्ञों और विद्वानों के दिमाग को भी खरीद लिया है। कितने ही शोध-संस्थानों को विदेशी सहायता मिल रही है। विदेशी पैसे से हमारे विद्वान, साहित्यकार, और पत्रकार विदेश-यात्राएँ कर रहे हैं। हमारे युवक और युवतियों के लिए विदेशों से आकर्षक वेतन-वृत्तियाँ आ रही हैं। इस सबका परिणाम क्या हो रहा है? भारत की प्रतिभा भारतीय ज्ञान और संस्कृति की परम्परा से विमुख हो रही है। वह भारतीय जीवन को भारतीय नहीं विदेशी चश्मों से देखती है। यही कारण है कि भारतीय विद्वानों द्वारा भारतीय समस्याओं के रूसी और अमरीकी हल सुझाये जाते हैं। भारतीय समस्याओं का भारतीय समाधान हमारे विद्वानों को जैसे सूझता ही नहीं। सूझे भी कैसे? पैसा विदेशी, पुस्तकें विदेशी, भाषा विदेशी! सोचने और काम करने के तौर-तरीके विदेशी, आकांक्षाएँ विदेशी जब सभी कुछ विदेशी हो तो कोई चीज देशी सूझेगी कैसे?

गांधीजी ने कहा था कि दिमाग की खिड़कियाँ हर तरफ के ज्ञान के लिए खुली रखनी चाहिए, लेकिन साथ ही उन्होंने यह चेतावनी भी दी थी कि पैर अपनी धरती पर मजबूती के साथ जमे रहने चाहिए। आज ठीक इसके विपरीत हो रहा है। देशी ज्ञान के लिए दिमाग की खिड़कियाँ बंद कर दी गयी हैं, भारतीय चिंतन से भारत का जीवन बहिष्कृत है; नजरें और चीजें विदेशी चमक-दमक और पैसे पर लगी हुई हैं। जब देश में विदेशी शासन था तो स्वदेशी की आवाज थी, आज देश स्वतंत्र है तो विदेशी की धूम है! यह गुलामी नहीं तो और क्या है? ●

बंगला देश की मान्यता का सवाल

श्री जैनेन्द्र कुमार

बंगला देश के सम्बन्ध में बताते हुए प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी ने कहा कि भारत को किसी का डर नहीं है, लेकिन मान्यता का प्रश्न विचाराधीन है। विचार के अधीन यह एक अर्से से चल रहा है और याहिया खाँ की पंजाबी फौजें बंगला देश पर करीब पूरी तरह कब्जा कर बैठी हैं। प्रश्न को विचार से बाहर निकाल कर फैसले पर लाने की जरूरत थी और है तो समय के एक बिन्दु तक। उस समय के पार होने पर प्रश्न क्या बेकार ही न हो जायेगा ?

बंगला देश से उत्थापित लोगों की तादाद भारत पर चढ़ती और बढ़ती ही आ रही है। ७० लाख तक वह पहुँच गयी बतायी जाती है। शायद एक करोड़ तक पहुँच जायेगी। लाखों हताहत के बीच सुरक्षा के लिए करोड़ों की भगदड़ मचे तो इसमें अचरज ही क्या है ? जो वहाँ हुआ उसकी वीभत्सता की चर्चा करने में लाभ नहीं है। इतिहास में वैसी दूसरी मिसाल मिलना मुश्किल है। उन विस्थापितों के लिए सरकार भरसक जो किया जा सकता है, कर रही है। पर भार भारी है और उसके अकेले बस का नहीं है। सन्तोष है कि सब ओर उस दिशा में सक्रियता है। संस्थाएँ और सरकारें सहायता लेकर दौड़ पड़ी हैं और यू० एन० ओ० भी इस काम के लिए चेत गया है। उसकी ओर से ऊ थान्त महोदय ने स्वयं पूर्व बंगाल की भूमि पर सहायता भेजने के लिए याहिया साहब को लिखा।

यह सब सहायता हो रही है और हुए बिना रह नहीं सकती। मानव जाति का जी चैन नहीं पायेगा जब तक वह इस बारे में अपना कर्तव्य न निभाये। खुशी की बात है कि राजनीति इन्सानियत को इससे रोक नहीं सकती बल्कि मजबूर होकर अपने बावजूद इसमें योग ही दे सकती है।

पर क्या करना इतना ही है ? जो जीते बच गये हैं उनको भूखा-नंगा होने से बचाये रखना, बस हो जायेगा ? हाँ, घाव पर मरहम लगेगा और वह लाजिमी है। ऐसे शरीर की रक्षा होगी पर उस हृदय का क्या होगा जो छिद और छिद गया है और जिसका जख्म मानव चेतना और मानव इतिहास को कभी सोने नहीं देगा। वह सवाल कुछ को जीते रखने या कुछ के मर जाने का नहीं है। वह सवाल है क्या सच हारेगा और जुल्म जीतेगा ? इन्साफ नहीं रहेगा, ताकत का नाच ही रह जायेगा ?

राजमत विचार में रह सकता है। पर जनमत फैसले पर आ चुका है। वह फैसला लोगों के मनों में हो गया है और इतिहास में से उसे पोंछा नहीं जा सकेगा।

राज की अपनी मर्यादाएँ हैं, अपनी मुसीबतें हैं उनको कम करके देखना गलत है। शस्त्र सम्भार राज के पास रहता है। राज के उस रूप में पड़ने से शस्त्रों से लैस सारी राज सत्ताओं का शक्ति-सन्तुलन डगमगा जायेगा। हिन्द सरकार शेख मुजीब वाली बंगला सरकार को मान्यता दे तो उसका अर्थ क्या यही न होगा कि उसके पक्ष में बंगला भूमि पर तत्काल अपना शस्त्र-सैन्य भी भेजे ? इससे क्या युद्धस्फोट की चिंगारी ही परिस्थिति में न पड़ जायेगी ? और क्या उससे बंगला वासियों का हित होगा ? इत्यादि-इत्यादि राजविचार राजमत को ठिकाये रखता है और उसे अपनी सहानुभूति को नैतिक सहायता की सीमा में ही बाँधे रखना पड़ता है।

कुछ यही विचार होगा जो और देशों को भी आगे बढ़ने नहीं देता। चीन की प्रशंसा करनी चाहिए कि उसने कूटनीति का सहारा नहीं लिया है और न्याय को याहिया के पक्ष में घोषित कर दिया है।

मान्यता का प्रश्न ठीक इसी जगह सगन है। चीन ने मान्यता दी है कि राजनीतिक, सांविधानिक और आईनी तौर पर याहिया खाँ हक बजानिब हैं कि तीन हजार मील का चक्कर काटकर उनकी फौजें उन सब तत्वों और ताकतों को नाबूद कर दें जो बंगाल को स्वतंत्र करना चाहती हैं। पाकिस्तान एक इकट्ठा और मुत्तहिदा राज है और वह इस्लामी राष्ट्र है। बगावत और बकवास है यह कहना कि संस्कृति बंगाल की अपनी होगी। पाकिस्तान के पास फौजी हथियार किस लिए हैं, क्या इसलिए नहीं कि कौम को हर बगावत से महफूज रखा जाय और बागियों को हमेशा के लिए कुचल दिया जाय ? सुनाते उन्होंने तीन हजार मील का चक्कर देकर भी पंजाबी पल्टनें और विदेशी हथियार बंगाल पर चढ़ा भेजे जिनको हुक्म था कि पाकिस्तान को बचायें और अवामी लीग का जड़ तक सफाया कर दें।

जब तक शेख मुजीब की मुक्त सरकार को मान्यता नहीं मिलती तब तक गोया कानूनी पोजिशन वही रहती है कि पाकिस्तान की हुकूमत का यह अपना मामला है और उस पर फौजी कार्रवाई हुकूमत बखूबी कर सकती है। उसमें मरनेवालों की तादाद पर कुछ मौकूफ नहीं है और दुनिया के लिए उससे कोई सवाल पैदा नहीं होना चाहिए।

क्या यह पोजिशन भारत को स्वीकार है ? भारत की जनता को एकदम स्वीकार नहीं है। क्या भारत के राज को स्वीकार है ? यह बड़ा सवाल है और गौर हो तो इस पर होना चाहिए। यह सवाल एक्सपीडियेन्सी के मातहत नहीं है। यह फौजी सियासत पर ही टिका नहीं है। यह ईमान का सवाल है। आप चाहें तो फौजें न भेजिए पर कहिये तो कि ईमान से आप क्या मानते हैं ?

हालात यह है कि आम चुनाव हुआ और शेख मुजीब क्या बंगाल बल्कि पूरे पाकिस्तान में बड़ी अक्सरियत से चुने गये। →

[शेष पृष्ठ ६११ पर देखिए]

मुसहरी के बारे में एक सहचिंतन

—कान्ति शाह

मेरे एक मित्र कह रहे थे कि आपके आन्दोलन में आज जो एक खोज हो रही है, उसका जवाब मुसहरी में से मिलेगा। मुसहरी आपके आंदोलन का दूसरा पोचमपल्ली बनेगा। पोचमपल्ली बने-न-बने यह तो भगवान के हाथ की बात है। लेकिन इतना सही है कि वहाँ ग्रामस्वराज्य की दृष्टि से सघनपुष्टि-काम का एक समग्र प्रयोग चल रहा है। हम सब की दृष्टि मुसहरी पर रहनी चाहिए, और हम सबको वहाँ के काम मे पूरा सहयोग देने की कोशिश करनी चाहिए। करीब एक महीना मैं मुसहरी क्षेत्र मे घूमा। वहाँ जो कुछ देखा-सुना वह मुझे काफी आशास्पद लगा। जिस ढग से वहाँ काम हो रहा है, वह ठीक है। गाड़ी ठीक पटरी पर है। नींव ठीक ढग से डाली जा रही है।

कुछ प्रश्न :

मुसहरी के बारे में हमारे बीच कई सवाल उठते रहते हैं। इसलिए पहले उन सवालों की कुछ चर्चा कर लेना उचित समझता हूँ।

(१) मुसहरी को क्यों चुना? ग्रामदान के काम के लिए वह बहुत कठिन क्षेत्र है। *दिवाल से सिर टकराने से क्या फायदा?* हमारी व्यूहरचना तो एक सफलता प्राप्त कर दूसरी प्राप्त करने की (फ्रॉम सक्सेस् टू सक्सेस्) होनी चाहिए।

बात सही है। लेकिन चुनने की नौबत आये, तब न? मुसहरी को चुनने कौन गया था? स्वाभाविक ही वह आ गया है। जैसे १९५१ में विनोबाजी तो सर्वोदय सम्मेलन में गये थे, न कि तेलगाना में। बीच में पोचमपल्ली का दान आ पड़ा, और भूदान-यज्ञ आन्दोलन शुरू हो गया। *ठीक उसी तरह यह भी एक बिलकुल* स्वत प्राप्त चुनाव (स्पोंटेनियस च्वाइस) हुआ है। इसलिए यह 'क्यों?' से परे है। *और मैं तो यह भी कह सकता हूँ कि* ग्रामदान के काम की दृष्टि से दूसरे क्षेत्रो से मुसहरी की परिस्थिति में कोई ज्यादा अंतर नहीं है। और ऐसा भी हो सकता है कि नक्सलवाड़ी ललकार (चैलेन्ज) आमने-सामने होने के कारण मुसहरी क्षेत्र हमारे काम के लिए ज्यादा अनुकूल है।

(२) एक प्रखंड के पीछे कितना समय-शक्ति लगे? ऐसे तो सारे देश में पहुँचने के लिए अनेक वर्ष लगेंगे?

मेरी समझ में तो यह भी चर्चा के परे है। अपने आन्दोलन का 'ब्राडकास्ट' बहुत हुआ, अब 'डीपकास्ट' की बारी है। कितनी गहराई पर पानी निकलेगा, कोई कह नहीं सकता। यह तो एक प्रयोग है। एक बार कुछ चीज हाथ में आयेगी, तो प्रगुणित (मल्टीप्लाई) होने में समय नहीं लगेगा।

(३) श्री *जयप्रकाशजी तो अनेक काम* हाथ में लेते हैं और फिर उसमें उलझ जाते हैं। ग्रामदान के काम पर एकाग्र नहीं हो पाते।

मैंने तो मुसहरी में जो कुछ देखा उस पर से लगा कि वहाँ जो काम हाथ में उन्होंने लिया है, वे सब मेनस्ट्रीम को पुष्ट करनेवाले ही हैं। बल्कि मैं तो कहना चाहूँगा कि अब तो एकाध क्षेत्र में इतनी समग्रता के साथ ही प्रयोग करने का समय आ गया है। जे० पी० ने नासिक में यही *कहा कि मुसहरी में उनकी दृष्टि सिर्फ* ग्रामदान-पुष्टि की नहीं है, समग्र क्रान्ति *की है।*

(४) विकास के काम हमें उठाने चाहिए या नहीं, इस बात की भी काफी चर्चा हमारे बीच चलती है। समझने की बात यह है कि आज समाज की जो स्थिति है, उसमें सिर्फ जमीन बाँट देने से या 'एक बनो, नेक बनो' जैसे नारे से काम नहीं चलेगा। विकास के काम को भी लेना ही पड़ेगा। हाँ, वह विकास *हमारी दृष्टि से हो। अन्तिम मनुष्य को* नजर के सामने रखकर हो। और यह भी देखना होगा कि विकास का काम हमारे मूल्य-परिवर्तन के बुनियादी काम पर हावी न हो जाये, बल्कि विकास का काम भी समाज-परिवर्तन एवं मूल्य-परिवर्तन में मदद रूप हो।

एक बात और। हम लोग ग्रामीण स्तर से सयोजन की बात लगातार कहते आये हैं। लेकिन उसका प्रत्यक्ष अनुभव अब तक नहीं के बराबर है। मेरा मानना है कि मुसहरी में ऐसे सयोजन का एक अनूठा प्रयोग आरंभ हुआ है। उसमें जो अनुभव आयेगा, वह केवल हमारे आन्दोलन के लिए ही नहीं बल्कि सारे देश के लिए उपयोगी होगा। *१८ अप्रैल को मुसहरी प्रखण्ड के ग्रामदानी* प्रतिनिधियों की सभा में जे० पी० ने एलान कर दिया है कि पाँच साल के अन्दर मुसहरी में कोई बेकार न रहे ऐसी कोशिश हमारी रहेगी। अब, ऐसा एलान करने की गुंजाइश आज तो प्लानिंग कमीशन में भी नहीं है। तो, हमारे प्रयोग से उसको भी मार्गदर्शन मिलेगा। और *यह सिर्फ मंच के मंच पर से कहने की* ही बात नहीं है, जे० पी० इस बारे में काफी 'सिरियस' हैं। नासिक में उन्होंने इस बात का जिक्र करते हुए कहा कि— '१८ अप्रैल को मैंने 'प्रतिज्ञा' की है।' खैर, मैं कहना यह चाहता था कि मुसहरी में जो विकास के काम उठाये जा रहे हैं, उसको और ऐसी व्यापक दृष्टि से देखना चाहिए।

(५) जे० पी० के *कारण मुसहरी में* गवर्नमेंट मशिनरी का काफी सहयोग मिल जाता है। यह बात सही है। दूसरी जगह ऐसी अनुकूलता नहीं मिलेगी। फिर भी मुझे इसमें कोई आपत्ति नहीं लगती। मैं एकाध ही क्षेत्र में गवर्नमेन्ट मशिनरी को इस तरह चलना-मिलती हो, तो वह जरूरी है। आखिर यह *स्वराज्य की सरकार है, ब्रिटिश राज* नहीं है। गवर्नमेंट मशिनरी भी यदि ठीक ढग से चले, तो लोगों के कुछ प्रश्न हल हो *सकते हैं, इस बात का* दर्शन देश को मिलेगा। बाद में विशिष्ट

व्यक्तित्व की जगह सामूहिक लोकशक्ति से चालना देने की भी सम्भावना प्रकट हो सकती है। लोग जब देखेंगे कि हमारे लिए इतनी निधि (फण्ड) सरकार के पास थी ही, ऐसे कानून भी थे, लेकिन उसका उपयोग नहीं होता था, कानून का अमल नहीं होता था, तब लोग खुद भी सरकार से काम करवाने के लिए सक्रिय होंगे। तो, यह भी एक लोकशिक्षण का ही काम है।

तो, मैं कहना यह चाहता हूँ कि मुसहरी में जो काम चल रहा है, वह ठीक पटरी पर चल रहा है, नींव ठीक ढंग से डाली जा रही है। लेकिन अभी तो काम की शुरूआत ही हुई है। सिर्फ लेवलिंग हुआ है, नींव डालने की शुरूआत हुई है। नींव पूरी होना भी बाकी है। सच कहा जाये, तो पुष्टि क्या प्राप्ति का काम ही चल रहा है, या यह कह सकते हैं कि प्राप्ति-पुष्टि साथ-साथ चल रही है। १२१ में से करीब ५० गांवों में ग्रामसभा बनी है। ५० प्रतिशत गांव हो जाने पर प्रखण्ड-सभा का गठन करने का वहां सोच रहे हैं। यद्यपि मुझे यह जचता नहीं। यह तो विधान बदलने जैसी महत्त्व की बात है। इसलिए कम-से-कम ७० या ८० प्रतिशत का लक्ष्य रखना चाहिए। तभी वह प्रखण्डसभा प्रभावोत्पादक हो सकेगी।

ग्रामसभाओं में काफी उत्साह देखा। उन्हें आगे ले जाना है। उनको सक्रिय बनाना है। उनके अनेक प्रश्न हैं। उसमें हमें पड़ना पड़ेगा। हमें भी नया-नया सुलझाव सूझेगा। कई बड़े मालिक अब तक ग्रामदान में शामिल नहीं हुए हैं। तो, ऐसे कई सवाल हैं। आमने-सामने होकर इन सवालों का हल ढूँढ़ना पड़ेगा। अब तक तो केवल जनरल सोइवर्क ही हुआ है। ऐसे सवालों का सीधा सामना (कन्फन्टेशन) होना बाकी है। वह स्टेज अब आ रहा है। जे० पी० ने रोहुआ की सभा में और नरसिंहपुर गोष्ठी में असहयोग एवं सत्याग्रह का जिक्र किया ही था। लेकिन उन्हें लगता है कि एक मौका और दिया जाये। तो, अब मुसहरी में कन्फन्टेशन का स्टेज शुरू होने जा रहा है।

एक सुझाव

इस सन्दर्भ में मैं ऐसा महसूस करता हूँ कि अब मुसहरी में जे० पी० की उपस्थिति की नितांत आवश्यकता है। बल्कि मैं तो यह कहूँगा कि पहले स्टेज से भी ज्यादा आवश्यकता दूसरे स्टेज में है। बिना पूर्ण सातत्य एवं एकाग्रता के यह काम हो नहीं सकता। और जे० पी० का सातत्य टूटेगा, तो मुसहरी के काम को बहुत ही नुकसान होगा। इसलिए गंभीरता से सोचना चाहिए। हम सब सोचें। जिनको इस आन्दोलन के लिए कुछ भी अनुराग हो, वे सब सोचें। जे० पी० को अब कम-से-कम एक साल के लिए मुसहरी क्षेत्र से बाहर न जाना पड़े ऐसा आयोजन हो। कभी भी जे० पी० को बाहर बुलाने की बात आये, तो हम अपने को ही पूछें—क्या इसके बिना नहीं चल सकेगा?

जे० पी० का स्वभाव हम जानते हैं। वे किसी को 'ना' नहीं कह सकते। जैसे कोई किसी भी प्रकार की मुसीबत लेकर आये, तो उसकी मदद करने की कोशिश करते हैं, वैसे ही कोई आकर कुछ काम बताता है और उसके लिए बाहर आने के लिए कहता है, तो जे० पी० अपने करुणा-प्रधान स्वभाव के कारण 'ना' नहीं कह सकते। इसलिए मुसहरी में जे० पी० का सातत्य खण्डित न हो वह देखने की जिम्मेवारी ज्यादातर हम साथियों पर आती है। जब भी जे० पी० को बाहर बुलाने की इच्छा हो, तब पहले हम अपने आपसे पूछें कि क्या यह आवश्यक है?

मुसहरी प्रखण्ड के साथी कार्यकर्ताओं को भी मैं कहूँगा कि अब आप लोगों पर बड़ी जिम्मेवारी है। आप लोग जे० पी० पर कड़ा पहरा रखें। काम कठिन है। ब्रिटिश सल्तनत जो नहीं कर सकी थी, वह आप लोगों को करना है। प्रेम से यह जिम्मेवारी आप निभायें। कानून तो आप जानते ही हैं। बाहर जाने का वे नाम लें, तो उनसे पूछिए—'क्या यह सचमुच आवश्यक है?' मुँह पर पूछने की हिम्मत न होती हो, तो एक प्लेकार्ड बनाइये—और जब भी जरूरत पड़े, तब उनके कमरे में जाकर वह रख दीजिए। कुछ डांट सहकर, कुछ नाराजगी मोल लेकर भी इतना अवश्य कीजिए। जे० पी० ने खुद स्वातंत्र्य आन्दोलन में कुछ कम सहा है? तो क्या हम आप इस आन्दोलन के लिए इतना नहीं सहेंगे?

मुसहरी में था तब जे० पी० के मुँह से मैंने कई बार सुना कि 'यहां' के काम में मेरा सातत्य टूटा, वह अच्छा नहीं हुआ। काम को क्षति पहुँची, इस बात का काफी बोझ भी उनके मन पर देखा। वैसे तो मैं भी जे० पी० की बहुमुखी प्रतिभा का बड़ा प्रशंसक हूँ। उनकी अनेकविध प्रवृत्तियों से हमारा आन्दोलन पुष्ट होता है, ऐसा मैं मानता हूँ। फिर भी आज समय की माँग है कि वे पूर्णतया मुसहरी के काम में एकाग्र हों। उन्होंने खुद नासिक में सच ही कहा कि "आज तक के सभी कामों में यह मुसहरी का काम मेरे जीवन में सबसे महत्त्व का काम है।" इस महत्त्व को हम भी पहचानें।

और भी एक बात है। जे० पी० के नाम के साथ युवावस्था में जेल में से भागना, भूगर्भ प्रवृत्ति चलाना वगैरह ऐसा जुड़ गया है कि जे० पी० भी कभी बड़ी उम्र के हो सकते हैं, वह ख्याल ही हमें नहीं आता। लेकिन काल किसी के लिए रुकता नहीं। आज जे० पी० ७० वर्ष के हुए। उन्हें हम लोग कब तक घुमाते रहेंगे? एक बार पूरा दिन उनका कार्यक्रम इतना व्यस्त रहा कि आखिर रात को नौ बजे प्रभा दीदी चिढ़कर बोल उठीं, 'कैसे कैसे कार्यक्रम रखते हो? इतना तो सोचो कि वे आदमी हैं, बैल तो नहीं!' और एक बार दीदी कह रही थीं कि मुसहरी में आये थे तब लगा कि अब दौड़धूप कम हो जायेगी, लेकिन अभी फिर से वही तांता शुरू हो गया है। मैंने वहां मुसहरी और पटना में देखा कि चार-पांच

घंटे की जोश-सफर कर के आते हैं, दोपहर पहुँचे, रात को फिर निकले। वैसे ही रात को १ बजे जीप से पहुँचे, दूसरे दिन सवेरे ९ से रात को १० बजे तक एक के बाद एक मीटिंग्स और मुलाकातें, और दूसरे दिन बड़ी फजर ही डेरा उठा। क्या है यह सब ? आदमी से क्या ऐसे काम लिया जाता है ? और इस उम्र में ?

जे० पी० खुद भी अब उम्र महसूस कर रहे हैं। १९६९ में स्व० श्रीप्रकाशजी को एक पत्र में उन्होंने लिखा था, : "मेरा भी शरीर अब वैसा नहीं रहा, जैसा पहले था। उम्र हुई, मधुमेह तो है ही। बहुत इच्छा होती है कि अब भाग-दौड़ बन्द करूँ। लेकिन मित्र लोग जान छोड़ने नहीं। देखें भगवान कब तक निभाता है।

'मित्र लोग जान छोड़ने नहीं।' कैसे छोड़ें ? रघुकुल रीति सदा चली आई। बाबा तो अक्सर हम पर आरोप लगाते हैं - 'हिन्दुस्तान के लोगों की आदत है कि जब तक आदमी जिन्दा रहता है, उससे खूब काम लेते हैं। उस पर कोई रहम नहीं करते हैं। फिर मर जाने के बाद उसके नाम से स्मारक बनाते हैं।'

जे० पी० और उन पर दया—मेल नहीं बैठता। इसलिए जे० पी० के लिये दया की याचना नहीं करता, लेकिन हम और आपके लिये यह एक मानवता और विवेक-बुद्धि का तकाजा है। सर्वश्री नारायण, सिद्धराज, राधाकृष्ण, बगमोहन वगैरह जिनकी सलाह का जे० पी० पर असर होता है और जे० पी० के कार्यक्रम तय करने में जिनका हाथ रहता है, उन सबसे मेरी प्रार्थना है कि जे० पी० को मुसहरी के बाहर मत बुलाइये, दिल्ली मत बुलाइये, कलकत्ता मत बुलाइये, मैं तो कहूँगा कि बीकानेर भी मत बुलाइये—कम-से-कम एकाध साल के लिये।

वहीं बैठकर कुछ लिखने-पढ़ने की इच्छा जे० पी० ने कई बार प्रकट की है। मुझे याद है कि ठेठ १९६३ में आरामबाग में उन्होंने बाबा के पास भी यह इच्छा व्यक्त की थी। आज यदि हमलोग इजाजत दें तो मुसहरी में जे० पी० को यह मौका भी मिल सकता है और वह ज्यादा फलदायी होगा। वैसे सूखे चिंतन मनन के बजाय काम करते करते जो चिंतन होगा वह ज्यादा उपयुक्त होगा। इस तरह जो लिखा जायगा उसका बहुत महत्व होगा। जे० पी० बाहर आकर भाषण कर जायें या सेमिनार में भाग लें उससे इसका महत्व कुछ कम नहीं, बल्कि ज्यादा ही है। लेकिन इसके लिए उनको मौका मिलना चाहिए। मुसहरी के बारे में उन्होंने जो पहला लेख लिखा है, वह इसका सबूत है। उसका शीर्षक है, 'आमने-सामने' और अब जो दूसरा लेख वे लिखना चाहते है, उसका शीर्षक—'मुसहरी इन ए टेस्ट-ट्यूब' है। दोनों शीर्षक काफी अर्थपूर्ण हैं। आमने-सामने कुछ अनुभव ग्रहण करने हो, या प्रयोगशाला में कुछ खोज करनी हो, तो दोनों के लिए पूर्ण एकाग्रता एवं स्थूल उपस्थिति की भी जरूरत होती है। प्रयोगशाला में से किसी नतीजे पर पहुँचना हो, तो डट के, खप के, जम के ही काम करने का समय अब आ पहुँचा है।

तो मेरा नम्र अनुरोध है कि कम-से-कम एकाध साल तक अब जयप्रकाशजी मुसहरी क्षेत्र से बाहर न निकलें। कुछ महत्व की मीटिंग आदि हो, तो मुजफ्फरपुर तक आ सकते हैं, या तो अपवाद-स्वरूप ज्यादा-से-ज्यादा पटना तक। उससे आगे नहीं। एकाध साल तक मुसहरी की ऐसी कैद स्वीकार कर लें। ऐसा कुछ स्थूल नियम अब बनाना ही पड़ेगा।

मैं जानता हूँ कि ऐसा स्थूल नियम बना लेना जे० पी० को जँचेगा नहीं। वे कहा करते हैं कि 'मैं तो बौद्ध हूँ, मध्यम-मार्ग मुझे भाता है' इसलिये ऐसा एक्स्ट्रीम स्टैण्ड उनकी प्रकृति के लिये रुचिकर नहीं होगा। फिर भी मैं निवेदन करना चाहूँगा कि मेरा सुझाव सब पूछो तो मध्यम-मार्गी ही है। 'हां' थोड़ा विवेक रखेंगे और सहज भाव से जो होगा सो होगा'—यह तो एक अत्यंतिक आदर्शवाद (एक्सट्रीम आइडियालिज्म) हुआ। हम सबकी खामियाँ, स्वभाव, विवेकबुद्धि की मर्यादा, यह सब देखकर तो ऐसा एक स्थूल नियम कुछ समय के लिए बना लेना ही एक मध्यम मार्ग माना जायेगा।

'ब्रेक थ्रू' की संभावना

अस्तु ! इतना सब मैंने क्यों लिखा ? इसीलिए कि अपना आन्दोलन आज एक अत्यन्त महत्व के बिन्दु पर आ पहुँचा है। आगे के लिये 'ब्रेक थ्रू' की आवश्यकता है, और वह ब्रेक थ्रू की सम्भावना मुसहरी में दीख रही है। पोचमपल्ली से शुरू करके एक पूरा वर्तुल पूर्ण करके हम मुसहरी में फिर से उसी बिन्दु पर आ पहुँचे है। 'आमने-सामने' केवल एक लेख का शीर्षक मात्र नहीं हैं, वह तो आज उस क्षेत्र की ही नहीं बल्कि सारे देश-दुनिया की प्रत्यक्ष परिस्थिति का नख-दर्पण है। विनोबा ने १९५१ में पोचमपल्ली में इस चैलेन्ज के साथ यात्रा शुरू की थी—'क्या तुझे अहिंसा पर, करुणा पर विश्वास है ? विश्वास हो तो इस काम को उठा ले, नहीं तो हिमालय चला जा।' आज हम सबके सामने भी वही चैलेन्ज है। और उस सन्दर्भ में मुसहरी के काम का बड़ा ऐतिहासिक महत्व है। वह कोई आहिस्ता-आहिस्ता, या फुरसत के समय में करने का काम नहीं है। हमारी पूरी ताकत के साथ पूर्ण एकाग्रता एवं सातत्य से करने का काम है। हमारे आन्दोलन का भविष्य उस पर निर्भर है। हम लोग आज की परिस्थिति के ऐतिहासिक महत्व को पहचानें, जे० पी० जैसे एक ऐतिहासिक व्यक्तित्व को पहचानें, अहिंसक समाज-परिवर्तन के कितने बड़े काम में लगे हैं उसके महत्व को पहचानें, तो मुझे लगता है कि एकाग्रता एवं सातत्य कठिन नहीं, बहुत आसान है।

आखिरी एक बात। मुसहरी, सहरसा आदि स्थानों में आज जो काम हो रहा है, उसकी ओर देखने की एक उपयुक्त पार्श्व-भूमि भी हमें अपनानी होगी। जैसे बाहर वाले १५-२० दिन या महीना-दो-महीना

[शेष पृष्ठ ६१४ पर देखिए]

पुष्टि के प्रयोग की दिशा

पू० बाबा के आदेश से व आशीर्वाद से मेरा बिहार में आना हुआ और पू० जे० पी० के निर्देश से मेरा कार्यक्षेत्र दरभंगा जिले का बिरौल प्रखंड तय हुआ। १८ अगस्त, '७० से मैं इस प्रखण्ड में हूँ। मेरी दृष्टि तो यही है कि जनता अपने हित में इस काम का महत्व समझेगी तो स्वयं प्रवृत्त होकर गाँव-गाँव में जमीन बाँट लेगी। बिना इस समझ और श्रद्धा के हमारे द्वारा वितरण होगा तो व्यापक आंदोलन का रूप नहीं आयेगा। और बड़ी बात यह कि बीघा-कट्ठा बँटने के बाद भी ग्राम हृदय बनने की दिशा में गाँव प्रवृत्त नहीं होगा, जो ग्राम-स्वराज्य खड़ा करने की बुनियाद है। जनता स्वयं प्रवृत्त होकर काम करे, इसकी क्या प्रक्रिया हो सकती है, बुद्धि की भूमिका पर इसकी कोई स्पष्टता मेरे पास नहीं है। भगवान में श्रद्धा रखकर आ कदम सूझता है, पाँव बढ़ाती जा रही हूँ। पहले पदयात्रा करते हुए तीन पंचायतों में भूमिवानों से समर्पण-पत्र भराते हुये ७५ प्रतिशत जनसंख्या व ५१ प्रतिशत जमीन का आँकड़ा पूरा करने का प्रयत्न किया, इसमें अच्छी सफलता मिली। २० गाँवों के कागज पुष्टि के लिए जा चुके हैं, बाकी तैयार किए जा रहे हैं। दूसरे माह में बैरमपुर गाँव में १२ दिन रहकर और सोनपुर गाँव में ८ दिन रहकर सर्दी गाँव में ४ दिन रहकर बीघा-कट्ठा का वितरण कराया।

जमीन वितरित हो गयी, लेकिन मन को ऐसा लगा कि खुद के प्रयत्न से एक-एक गाँव में वितरण कराते हुए पूरे प्रखंड में कब तक पहुँचेंगे? कार्यकर्ता अपने पास केवल ५-६ ही थे और यह कठिन काम करने लायक उनका प्रभाव होता नहीं था। तो मन में निर्णय हुआ कि प्रखण्ड भर की सब पंचायतों के मुख्य गाँवों में घूमते हुए ग्रामसभाएँ बनाएँ -और हम उनसे सम्पर्क करके उन्हें प्रवृत्त करें। उनके जरिए गाँव-गाँव में काम हो। पूरे प्रखण्ड की यात्रा में दो-तीन माह समय लगा। फरवरी में पूरे प्रखंड की यात्रा पूरी हो गयी। ४२ ग्राम समितियाँ बनीं। ग्राम समितियों के व्यक्ति हमारे सामने खूब उत्साह दिखाते हैं, काम की जिम्मेवारी भी लेते हैं, लेकिन गाँव छोड़ने के बाद स्वयं प्रवृत्त नहीं होते। अब पूरे प्रखंड को ५ खण्ड में बाँटकर एक-एक कार्यकर्ता ग्रामसभाओं को प्रवृत्त करने के लिए नियुक्त कर दिया है। हर प्रखण्ड में खंड के प्रमुख लोगों की समितियाँ बना दी हैं। खंड समिति का भी एक स्थानीय व्यक्ति संयोजक होता है, समिति की बैठक बुलाकर खंड के काम के लिए योजना बनाकर काम स्थानीय व्यक्तियों से कराने का प्रयत्न होता है। हर खंड में इन स्थानीय लोगों को कार्यकर्ता के निर्वाह के लिए अनाज एकत्रित करने व एक केन्द्र-स्थान, आफिस की तरह, बनाने की जिम्मेवारी भी दी जाती है। कल्पना यह है कि इस तरह की व्यवस्था होने पर कार्यकर्ता सर्वोदय मंडल की नौकरी से मुक्त होकर जनाधारित बन जायें और जनता के अपने खंड का पूरा जिम्मा उठा लेने पर कार्यकर्ता मुक्त हो जायें। बिरौल प्रखंड के सहरसा के साथ शामिल होने का निर्णय जनवरी माह में हुआ। तब से सहरसा की सीमा की तीन पंचायतों व बिरौल की सीमा की तीन पंचायतों में मिला जुला काम हुआ। दोनों क्षेत्रों के अनुभवों का आदान-प्रदान हुआ। कृष्णराजजी के प्रयत्न से डी० ई० ओ० (जिला शिक्षा पदाधिकारी) की सहायता मिली, शिक्षकों की बैठक हुई। श्री कामेश्वर बहुगुणा ने इस क्षेत्र में एक सप्ताह का समय दिया, आचार्यकुल का संघटन किया। धीरेन दा का प्रोग्राम हर खंड में पाँच स्थानों में रखा गया। धार्मिक समाज के साथ भी सम्पर्क स्थापित हुआ है। इस तरह समाज के सब वर्गों से सम्पर्क करके उन्हें प्रवृत्त करने का प्रयत्न हो रहा है।

इतने व्यापक सम्पर्क के बाद भी जनता स्वयं इस काम में प्रवृत्त हो, जन-आंदोलन का रूप साकार हो, इसके लिए बीघा-कट्ठा बाँटने अथवा ग्राम-स्वराज्य के विचार को समझ लेने से ज्यादा गहरी कोई प्रेरणा चाहिए, ऐसा महसूस हो रहा है। इस खोज के दरम्यान में मैं आत्म-शोधन की भूमिका पर पहुँच गयी हूँ। जनता बीघा-कट्ठा देने के डर से हमसे दूर भागती है, पकड़ में आने पर भी दान भरपूर श्रद्धा से नहीं होता, प्रयत्न की सफलता-असफलता का परिणाम सेवक के चित्त में आता है, चित्त परिणामापेक्षी अर्थात् सीमित बनता है, सेवक किसी संस्था से वेतन लेता है, (भले ही वह सर्वोदय मंडल हो, वेतन कितना भी कम हो) उस संस्था के अधिकारी के जरिये उसे नौकर जैसा व्यवहार मिलने लगता है और स्वतंत्र अभिक्रम की अपेक्षा वह स्वयं भी नौकरी-वृत्ति से काम करने लगता है, जनता की दृष्टि में भी सेवक का गौरव कम होता है। इस परिस्थिति में जनता सर्वोदय काम को भी नौकरी का काम समझ रही है। त्याग भावना से, आत्मकल्याण की दृष्टि से काम में प्रवृत्त होने की प्रेरणा ही नहीं हो रही है। कार्यकर्ताओं में एक दूसरे से ज्यादा अधिकार पाने और काम का ज्यादा परिणाम दिखाने का लोभ और पारस्परिक सम्बन्धों में तनाव तथा दुर्भाव भी दिखाई देता है। इस आत्मशोधन की भूमिका पर मुझे अपने को कसौटी पर रख कर ईश्वर के आधार से चलने की प्रेरणा हुई। मैंने सहरसा जिला सर्वोदय मंडल के संयोजक श्री बैजनाथ भाई को ८ अप्रैल को बता दिया कि बिरौल प्रखंड के काम के लिए व जो मदद (लगभग ६०० रु० माह) देते हैं, इस प्रखंड में मेरे प्रयोग को दृष्टि में रखकर देते हों, तो उसे बन्द कर सकते हैं। यदि वे स्वयं इस प्रयोग में भाग लेना चाहते हों तो जो कार्यकर्ता उनके आदेश से चलने को तैयार हों, उन्हें दे भी सकते हैं। मैं उसमें से मुक्त हुई। कार्यकर्ताओं को भी मैंने कह दिया कि जो स्वयं प्रेरणा से मुझे सहयोग करेंगे, वह

सहयोग लूँगी। सर्वोदय संस्था की नौकरी से ज्यादा अच्छा होगा अपने परिवार की व्यवस्था करने में जरूरी समय देते हुए, बाकी का समय व चिंतन सर्वोदय काम के लिए देना। ७ अप्रैल को कृष्णराजजी व धीरेन दा भी हमारे बीच थे। उनका भी समर्थन मिला तो मैंने इसे भगवान का आशीर्वाद समझा। हमारे साथी कार्यकर्ताओं ने भी यह पसंद किया और सबकी सलाह से मेरे लिए यह कार्यक्रम तय हुआ है कि मैं अब एक स्थान पर ही रहूँ। विरौल प्रखंड भर परिचय व संपर्क हुआ ही है। जहाँ लोग बुलावें वहाँ जाकर केवल हार्दिक मिलन व वैचारिक प्रशिक्षण का काम करूँ। बीघा-कट्ठा निकालना वगैरह काम जनता ही करेगी। धीरेन दा के शब्दों में केवल मानसिक परिस्थिति बदलने का काम मेरा, उसके परिणाम-स्वरूप परिस्थिति बदलने का काम जनता का। इस प्रक्रिया में देर लग सकती है, लेकिन जो होगा वह श्रद्धापूर्वक होगा, ऐसा समर्थन जब धीरेन दा जैसे बुजुर्ग, कामेश्वर बहुगुणा जैसे साथियों का मिलता है, तो मैं अपने को आश्वस्त महसूस करती हूँ, अन्यथा शीघ्र परिणाम की उतावली मुझे भी महसूस होती ही है।

धीरेन दा व बहुगुणाजी के जाने के बाद मैं इस खोज में थी कि मेरे स्थिर रहने का कौन-सा स्थान उपयुक्त होगा। संयोगवश बैरमपुर गाँव में १७-४-'७१ को पहुँची, जहाँ छः माह पूर्व १२ दिन रहकर मैंने भूमि वितरण कराया था। यहाँ वितरण की हुई जमीन पर कब्जा कराना बाकी ही था। कर्नाटक की लक्ष्मी और मैं—दोनों मिलकर प्रखंड में यह काम कर रहे हैं। दादा भोसले (कर्नाटक) हमारे साथ एक सप्ताह रहे। वे भी बैरमपुर में हमारे साथ थे। जनता का श्रद्धाभाव से निमंत्रण व दादा भोसले की सम्मति मिलने पर अब मैं और लक्ष्मी इसी गाँव में स्थिर बैठ गये हैं। रहने के लिए एक निवास गाँव के खादी-भंडार के एक भाग में मिल गया है। भोजन गाँव के दो परिवारों में करते हैं। सर्वोदय पात्र रखाने का प्रयत्न हो रहा है। गाँव के स्त्री-पुरुष, बच्चे, नवयुवक, भूमिवान, भूमिहीन सबके साथ घनिष्ठ सम्पर्क से वे अधिकाधिक श्रद्धा से इस काम के लिए प्रेरित होंगे, ऐसा महसूस हो रहा है।

एक सप्ताह यहाँ रहने के बाद ग्राम-सभा के जरिए भूमिहीनों को जमीन पर कब्जा दिलाने का काम संपन्न हुआ। भूमिवानों में अपने जीवन की सुरक्षा के लिए ग्राम-भावना का निर्माण करना, श्रद्धापूर्वक दान व त्याग के लिए प्रवृत्त करना, भूमिहीनों में व स्त्रियों में अपनी इच्छा के विरुद्ध किसी शक्ति के सामने न झुकने की स्वातंत्र्य व अपने स्वातंत्र्य की रक्षा के लायक आत्मबल विकसित करना और सेवक को गरीब के साथ एक-रूप होने की दिशा में मोड़ना, इन तीन दिशाओं में एक जगह गहराई से प्रयत्न करने की जरूरत लग रही है। इसी केन्द्र-स्थान में रहते हुए नजदीक की तीन पंचायतों के क्षेत्र में भी संपर्क करती हूँ। तीन पंचायतों का काम पूरा होने तक सामान्यतया इस गाँव में स्थिर आसन रहे, यह सोचा है। यह लगता है एक गाँव का प्रभाव इस छोटे क्षेत्र में, और क्षेत्र का पूरे प्रखंड में होगा, ऐसी आशा रखी है। समय कितना लगेगा इसकी कोई कल्पना नहीं। इस प्रयत्न के फलस्वरूप यदि आत्म-कल्याण की भावना से प्रेरित होकर काम करनेवाले सेवक गाँव स्तर पर और प्रखंड स्तर पर कुछ भी तैयार हो सकें तो मैं समाधान मानूँगी।

इस तरह के मेरे निर्णय व स्थिर आसन से बैठने के बाद इस क्षेत्र में जो पाँच-सात कार्यकर्ता साथी हैं, उनमें गंभीर चिंतन चल रहा है। आत्म-कल्याण की दृष्टि से यह काम करेंगे। तभी जनता में प्रतिष्ठित होंगे, तभी जनता इसे अपना काम समझकर सेवक और सेवक परिवार का खर्च वहन करने के लिए उन्मुख होगी। दो कार्यकर्ताओं ने सर्वोदय मंडल की सहायता से मुक्त होकर जनता में काम करने का निर्णय लिया है। तीन-चार उस दिशा में जाने को पाँव मजबूत करने का प्रयत्न कर रहे हैं। ऐसे लोगों की संख्या बढ़ी तो इस दरभंगा क्षेत्र में अन्य विचारवान व प्राणवान नवयुवक भी इस दिशा में अपना जीवन व समाज का जीवन मोड़ने के प्रयत्न में लगेंगे ऐसी आशा व प्रार्थना कर रही हूँ।

—सुशीला

(सर्व सेवा संघ के मंत्री को लिखे पत्र से)
विरौल, दरभंगा, बिहार

सहरसा नगर स्वराज्य समिति

१३ जून को नगर स्वराज्य समिति की बैठक सहरसा खादी भंडार में हुई। बैठक में निर्णय लिया गया कि नगर में शांतिसेना का कार्य एवं साहित्य प्रचार आदि काम सघन रूप से किया जाय। यह भी तय किया गया कि नगरपालिका के आगामी चुनाव में मतदाता शिक्षण के माध्यम से सर्वसम्मत चुनाव कराने का प्रयास किया जाय।

पुष्टि कार्यकर्ताओं की बैठक

१४ जून को सुपौल, पिपरा एवं किसुनपुर प्रखंडों में पुष्टि अभियान में लगे कार्यकर्ताओं की एक बैठक सुपौल खादी भंडार में हुई। कार्यकर्ताओं ने अपने-अपने क्षेत्र के काम की जानकारी लिखित या मौखिक दी। अधिक वर्षा हो जाने के कारण सुपौल तथा किसुनपुर के पश्चिमी हिस्से में अचानक बाढ़ आ गयी है। नाव आदि की समुचित व्यवस्था के अभाव में कार्यकर्ताओं की भी कठिनाई बढ़ गयी है।

यह तय पाया कि जिन आठ पंचायतों में अनुकूलता है उनमें प्रति पंचायत कम से कम पाँच कार्यकर्ता लगाये जायें, और सघन रूप से लगकर आगामी पन्द्रह दिनों में काम पूरा किया जाय।

मरौना प्रखण्ड

प्रखंड में ३८ राजस्व गाँव हैं। ग्रामदानी गाँव एवं टोले ९८ हैं। इनमें ६९ में ग्रामदान की दोनों शर्तें पूरी हो गयी हैं। २३ में अब तक ग्रामदान की कोई भी शर्त पूरी नहीं हुई है। भयंकर वर्षा के कारण प्रखंड के लगभग सभी गाँवों में बाढ़ आ गयी है। कार्यकर्ता चारों तरफ से पानी से घिर गये हैं। मगर उनका उत्साह कम नहीं हुआ है। वे इस काम को पूरा करके ही वापस आनेवाले हैं।

१० जून तक की जानकारी के अनुसार ६५ ग्रामसभाओं और १५ ग्राम-समितियों का गठन हो चुका है। जहाँ कुछ नहीं हुआ ऐसे गाँवों की संख्या १८ है। १५ गाँवों की ग्रामसभाओं ने गाँव की पुष्टि का काम पूरा करने का जिम्मा उठा लिया है। ६६ गाँवों में बीघा-कट्ठा से प्राप्त जमीन का वितरण हुआ है, इनमें १८ गाँवों में बीघा-कट्ठा की जमीन पर आदाताओं को दखल दिया जा चुका है। १७ ग्रामसभाओं में ग्राम-कोष भी जमा हुआ है। शान्ति-सैनिकों की संख्या ९२८ है।

चौसा प्रखण्ड

इस प्रखण्ड में १० ग्रामसभाओं का गठन तथा बीघा-कट्ठा के रूप में ३७ बीघा ५ कट्ठा जमीन का वितरण हो चुका है। १० गाँवों में दोनों शर्तों की पूर्ति हो चुकी है।

महिषी

इस प्रखंड में ७९ राजस्व गाँव हैं। ९४ गाँवों में ग्रामदान के काम हुए हैं। ६० ऐसे गाँव है जहाँ एक भी शर्त पूरी नहीं हुई थी। सिर्फ २४ ऐसे गाँव है जहाँ हस्ताक्षर (जनसंख्या ७५ प्रतिशत) की शर्त पूरी हुई है। १३ गाँवों में बीघा-कट्ठा में प्राप्त भूमि का वितरण आंशिक रूप से हुआ है। इस प्रखंड में अब तक कुल १४ ग्रामसभाओं का गठन हो चुका है। २७२ दाताओं द्वारा ५१० आदाताओं में १०५ बीघा १६ कट्ठा २ धूर जमीन (१०० एकड़ = ८५ बीघा) बीघा-कट्ठा में प्राप्त कर बाँटी गयी है। प्रखंड में शान्ति-सेवकों के कुल ९ शिविर हुए जिनमें ५५१ शिविरार्थियों ने भाग लिया। ८१ शान्ति-सैनिक बनाये गये हैं। एक सौ रुपये का सर्वोदय साहित्य बेचा गया।

सुपौल

इस प्रखंड में ग्रामदान-प्राप्ति अभियान के समय २८,६३० हस्ताक्षर हुए थे। पुष्टि अभियान के क्रम में ३१ मई तक ४१ हजार नये हस्ताक्षर प्राप्त हुए हैं। ११ गाँवों में ग्रामदान की दोनों शर्तें पूरी हो गयी हैं। २३ गाँवों में ग्राम-सभा और ग्राम समितियों का गठन भी हो गया है। अब तक ३०४ शान्ति-सैनिक बनाये गये हैं। ७९१ रु० का साहित्य बिका है। ३० सर्वोदय-पात्र रखवाये गये हैं। बीघा-कट्ठा में प्राप्त २० एकड़ १८ डिसमल जमीन का वितरण हुआ है।

पिपरा

पिपरा प्रखंड में दो ग्रामसभाओं का गठन हुआ। ८० रुपये का साहित्य बिका।

किसनपुर

किसुनपुर प्रखंड में २२८३ नये हस्ताक्षर प्राप्त हुए तथा २० रुपये का साहित्य बिका है।

ग्राम शान्तिसेना श्रम-शिविर

१३ से १६ जून तक सड़डीहा गाँव (सिमरी बख्तियारपुर प्रखंड) में ग्राम-शान्तिसेना का श्रमशिविर किया गया। शिविर में उपस्थिति ५० की प्रतिदिन रही। गर्मी की छुट्टी में स्कूल, कालेज, एवं नौकरी से गाँव आये हुए युवकों ने विशेष रूप से उसमें भाग लिया। शिविर में श्रमदान कार्य को प्रमुखता दी गयी। एक फर्लांग लम्बी सड़क मरम्मत की गयी। साथ ही हर संध्या बौद्धिक वर्ग का कार्य भी दो घंटे चला।

बिहार सर्वोदय युवक संगठन

११ और १२ जून को बिहार सर्वोदय युवक संगठन की बैठक भी सहरसा में हुई। करीब ५० सेवक बैठक में उपस्थित थे। सरकार के साथ सर्वोदय संस्थाओं के सहकार का आकार-प्रकार क्या हो, इस पर श्री धीरेन भाई ने संक्षेप में प्रकाश डाला। उन्होंने कहा कि सरकार का सहकार लेना ही है तो हम सरकारी तंत्र के ही मार्फत लेंगे। हम अब सरकार आधारित सर्वोदय संस्था नहीं चलायेंगे। अगर हमें ग्रामदान का काम करना है तो हम भूदान कमेटी में न जाकर सरकार के रेवेन्यू विभाग से ही व्यवहार करें तथा खादी कमीशन, खादी बोर्ड आदि संस्थाओं में खुद न जाकर सरकार को कह दें कि वह अगर आवश्यक समझती है तो उसे वह खुद चलावे और हम शक्ति भर उसमें सहकार करें।

—सहरसा समाचार (पाक्षिक बुलेटिन से)

उत्तरप्रदेश का ग्रामदान-पुष्टि-प्रशिक्षण शिविर

गांधी शताब्दी समारोह के अवसर पर ही उत्तरप्रदेश के सर्वोदय कार्यकर्ताओं ने यह महसूस किया कि प्रदेश में ग्रामदान-पुष्टि का कार्यक्रम चलाना चाहिए। पुष्टि-अभियान के शुरू में प्रदेश स्तरीय शिविर करने की आवश्यकता महसूस की गयी और तदनुसार २२, २३ और २४ जून को लखनऊ में प्रदेशीय स्तर के शिविर का आयोजन आचार्य राममूर्तिजी के मार्गदर्शन में किया गया।

शिविर बालकृष्ण सिंह हिन्दी कन्या जू० हा० स्कूल, लखनऊ में रखा गया। प्रत्येक जिले से दो-दो कार्यकर्ताओं को बुलाया गया था, किन्तु कई जिलों में अब तक जिला सर्वोदय मण्डल न बन पाने के कारण सिर्फ ४७ व्यक्ति ही शिविर में आये। २२ जून को ४-३० बजे सायंकाल स्वामी कृष्णानन्द (अध्यक्ष, उत्तरप्रदेश सर्वोदय मण्डल) की अध्यक्षता में शिविर प्रारंभ हुआ जिसका उद्घाटन आचार्य राममूर्तिजी ने किया। श्री लक्ष्मीन्द्र प्रकाश, (संयोजक, उत्तरप्रदेश ग्रामदान प्राप्ति और पुष्टि कार्य) ने कहा कि ग्राम स्वराज्य आन्दोलन अब कार्यकर्ताओं के हाथ से जनता के हाथ में जाना चाहिए। इसके लिए अब हम सिर्फ जनता को ही शिक्षित करें।

शिविर का उद्घाटन करते हुए आचार्य राममूर्ति ने पुष्टि कार्य के लिए कार्य, कर्ता, और कोष की अनिवार्यता पर विस्तार से प्रकाश डाला। आपने ग्राम-स्वराज्य के छह तत्व (१) स्वायत्त ग्रामसभा, (२) दलमुक्त ग्राम-प्रतिनिधित्व, (३) पुलिस-अदालत-निरपेक्ष व्यवस्था, (४) ग्रामाभिमुख अर्थनीति, (५) स्वतंत्र शिक्षण, और (६) सर्वधर्म समभाव को बुनियादी आधार बताया।

दूसरे दिन आचार्यजी के मार्गदर्शन में शिविर की कार्यवाही चली। आचार्यजी ने शिविरार्थियों का सवाल लेते हुए दलयुक्त सरकार और भ्रष्टाचारयुक्त गाँव का सन्दर्भ बताया। श्रमिक, युवक और स्त्री को गुलामी से मुक्त करने की आवश्यकता बताते हुए ग्राम प्रतिनिधित्व और ग्राम-स्वामित्व, सर्वोदय की राजनीति और सर्वोदय की अर्थनीति की रूपरेखा समझायी। कार्यकर्ताओं द्वारा पूछे गये अनेक प्रश्नों के उत्तर आचार्यजी ने दिये।

तीसरे दिन प्रातः ७-३० बजे से ही बैठक शुरू की गयी ताकि दोपहर तक शिविर समाप्त किया जा सके। श्री कृष्ण राम भाई ने देश की विषम परिस्थिति शिविरार्थियों को समझायी। उ० प्र० ग्रामदान प्राप्ति समिति के अध्यक्ष श्री कपिल भाई ने उत्तरप्रदेश में ग्रामदान आन्दोलन के अब तक के अनुभव बताये और कहा कि देश की बदलती हुई परिस्थिति में हमें बड़ी सावधानी के साथ आन्दोलन को मजबूत करना है। आपने कहा कि ग्राम-स्वराज्य के लिए पूर्ण निष्ठा और समर्पित जीवनदान कार्यकर्ताओं की आवश्यकता है। शिविर का समापन आचार्य राममूर्ति ने पुष्टि का व्यावहारिक कार्यक्रम बताकर किया।

शिविर में शामिल हुए शिविरार्थियों में से २५ कार्यकर्ताओं ने ग्राम-स्वराज्य पुष्टि-कार्य में एक वर्ष तक के किसी भी जिले में देने का निश्चय किया। सीमित शक्ति को देखते हुए निर्णय लिया गया कि पहले जिन चार जिलों में पुष्टि-कार्य करने का सोचा गया था उन सभी जिलों में शक्ति बिखरने से काम नहीं बनेगा, अतः पहिले एक जिले को, फर्रुखाबाद को, ही लिया जाए। श्री कालीचरण टण्डन तथा भैरवसिंह भारतीय के निमंत्रण पर फर्रुखाबाद जिले के मुहम्मदाबाद ब्लाक को पुष्टि कार्य के लिए लिया गया। २५ कार्यकर्ताओं के अलावा स्थानीय १० कार्यकर्ता इस अभियान में शामिल होंगे। प्रान्तीय सर्वोदय मंडल के पदाधिकारियों ने भी निश्चय किया है कि घूमफिर कर वे अपना ज्यादा समय इसी ब्लाक में देंगे। ऐसी योजना है कि इनमें से कोई न कोई इस ब्लाक में अवश्य ही उपस्थित रहेंगे।

यह उत्साहजनक और आशाजनक स्थिति है कि पुष्टि-कार्य के आरम्भ में इतने कार्यकर्ता साथी लग रहे हैं। पुष्टि अभियान की तैयारी में कुछ समय लग जायेगा अतः निर्णय हुआ कि जुलाई के अन्तिम सप्ताह में अभियान की शुरुआत की जाय।

शिविर के पुष्टि-कार्य के परिप्रेक्ष्य में आचार्यजी ने पुष्टि कार्य के व्यावहारिक शास्त्र का विस्तारपूर्वक समझाया।

स्वामी कृष्णानन्द के अध्यक्षीय भाषण के बाद आतिथेय श्री श्यामदास ने धन्यवाद-प्रकाश किया।

शिक्षा में क्रांति

गांधी शान्ति प्रतिष्ठान (लखनऊ) में २४ जून की शाम को 'शिक्षा में क्रान्ति दिवस' मनाने की दृष्टि से आचार्य राममूर्ति की अध्यक्षता में एक बैठक हुई जिसमें 'शिक्षा में क्रांति क्यों ?' पर विस्तार से चर्चा हुई। श्री आत्माराम गोविन्द खेर (स्पीकर विधानसभा उ० प्र०) भी उपस्थित थे। श्री रामप्रकाश शास्त्री और श्री सतीश भारतीय ने कार्यक्रम की रूप-रेखा बतायी और उत्तरप्रदेश के सभी जिलों के प्रतिनिधियों से अनुरोध किया कि ९ अगस्त को लखनऊ में जो विशाल प्रदर्शन होगा उसमें प्रत्येक जिले से कम से कम १,००० लोग (छात्र, शिक्षक, अभिभावक) शामिल हों। आये हुए लोगों में इस प्रदर्शन को सफल बनाने में विशेष दिलचस्पी दिखाई दी।

—कपिल अवस्थी

[पृष्ठ ६०८ का शेषांश]

यहां आ जाते है और हिन्दुस्तान की संस्कृति के बारे में, लोगों के बारे में, परम्परा के बारे में अपने अभिप्राय देते हुए एक-दो पुस्तक लिख डालते है, वैसे ही हम लोग इन पुष्टि-कार्यों के बारे में अभिप्राय देते रहेंगे, तो उचित नही होगा। नासिक मे हमारे एक वरिष्ठ साथी मुझे कह रहे थे : 'मुसहरी में क्या हुआ? कितनी जमीन बँटी? नक्सलवादी प्रवृत्तियां कितनी बन्द हुईं? कितना समय और कितनी शक्ति वहां लगायी गयी, और आज तक कितनी नगण्य निष्पत्ति हुई। लोग तो हमे कहते है कि आपने वहां आपकी सबसे बडी तोप लगायी, और निष्पत्ति में बताते हैं कि उस तोप से ५० मच्छर मरे।'

यह दृष्टिकोण उचित नही है। कोई भी नयी खोज हो, तो आरम्भ में तो बहुत छोटी ही होगी। जिस दिन बिजली की पहले पहल खोज हुई होगी, तब शायद वह बिजली हमारी बैटरी के छोटे से बल्ब को भी जला सके उतनी होगी या नही, भगवान जाने। अणुशक्ति की खोज मे भी वैसा ही हुआ होगा। और आजकल मानव-वंश के बारे में प्रयोग हो रहे हैं, उसमें भी निष्पत्ति की मात्रा कितनी होगी? फिर भी ऐसी नन्हीं सी खोजें नोबेल पुरस्कार के पात्र गिनी जाती हैं। दुनिया मे वे हलचल मचा देती हैं। तो, वैसे ही हमारा आन्दोलन मानव विज्ञान के क्षेत्र में एक अनूठी खोज मे लगा है। उसकी निष्पत्ति को मात्रा मे नहीं, गुणवत्ता में ही नापा जा सकता है। मानव के परस्पर के सम्बन्ध के बारे में हम लोग एक बड़ी ही महत्वपूर्ण खोज में लगे है। उस खोज के लिए उचित समझा जाय, ऐसा चिन्तन-मनन और आचरण हमारा हो। ●

⊛ गांधीजी के सम्पूर्ण साहित्य को कन्नड भाषा में प्रकाशित करने की योजना बन चुकी है। संसार के करीब करीब सभी भाषाओं में गान्धीजी की चर्चा आज है। —एन० कस्तूरी
(चयन से)

९ अगस्त : शिक्षा में क्रान्तिदिवस

हमारी मांग है कि —

(१) शिक्षा में उत्पादक श्रम तुरन्त जोड़ा जाय।

(२) शिक्षा का प्रशासन शिक्षक-विद्यार्थी और अभिभावकों के हाथ में हो।

(३) पड़ोसी स्कूल खोले जांय।

(४) डिग्री का सम्बन्ध नौकरियों से तोड दिया जाय।

९ अगस्त को लाखों लाख हस्ताक्षरों के समर्थन से युवक चार्टर प्रदेश के शिक्षा-मंत्री को देने के लिए प्रदेश की राजधानी में होने वाली विशाल रैली में भाग लें। हस्ताक्षर फार्म यहां से अविलम्ब मंगवायें।

सतोष भारतीय
संयोजक' शिक्षण में क्रान्ति दिवस
तरुण-शान्तिसेना, राजघाट, वाराणसी–१

मध्य प्रदेश की गतिविधि

मध्य प्रदेश भूदान-यज्ञ बोर्ड के अधीक्षक श्री नारायण चिनाम्बरे ने भोपाल से लिखा है कि मई १९७१ में रायपुर, जबलपुर और शिवपुर में २८ परिवारों के बीच भूदान की ७४ ए० ५४ डि० जमीन बांटी गयी जिनमें हरिजन १०, आदिवासी १४, पिछडी जाति के १ और सवर्ण ३ हैं। मध्यप्रदेश में ५८,५८५ दाताओं से प्राप्त ४,०९,९५१ एकड जमीन में से अब तक ५०,७४५ परिवारों के बीच १,८८,३८८ एकड जमीन बांटी जा चुकी है। ५६,२३२ एकड जमीन वितरण के लायक नही है। १,६९,३३१ एकड जमीन बांटना अभी बाकी है। ●

प्रधानमंत्री

बंगला देश के संदर्भ में

बंगला देश के सम्बन्ध में बोलते हुए प्रधान मंत्री श्रीमती इन्दिरा गान्धी ने कहा कि अगर बड़े देश चाहें तो राजनैतिक हल निकल सकता है, पर हर गुजरते हुए दिन के साथ इसकी संभावना कम होती जा रही है। जो लोग अभी कुचले जा रहे हैं उनकी मदद से हल अभी निकलना चाहिए। किसी देश को अब तक ऐसी समस्या का सामना नहीं करना पड़ा है। अगर योरप के किसी भी देश में दस हजार शरणार्थी पहुँच जायें तो पूरा महाद्वीप हिल जाय। परन्तु भारत संसार के सबसे गरीब देश के ७० लाख ऐसे शरणार्थियों से निपट रहा है जो जख्मी, थके-हारे, और भयभीत तथा भूखे हैं। इस समस्या को हल करने के लिए भारत के पास हिम्मत और निश्चय है। उन्होंने कहा कि शरणार्थियों को स्थायी तौर पर भारत में नहीं बसाया जायेगा, परन्तु उन्हें कत्ल होने के लिए वापस भी नहीं भेजा जायेगा। अन्तर्राष्ट्रीय सहायता जितनी आवश्यक है उसका दसवां भाग मिला है। उन्हें आशा है कि यह सहायता बढ़ेगी। परन्तु भारत को अधिक चिन्ता लोकतन्त्र, मनुष्य के अधिकार और मानव-प्रतिष्ठा की है।

शरणार्थियों के सम्बन्ध में उन्होंने उस दिन कहा कि वह एक अन्तर्राष्ट्रीय उत्तर-दायित्व है और भारत के प्रतिनिधि भीख मांगने नहीं बल्कि उनका अधिकार मनवाने के लिए विदेशों में घूम रहे हैं।

उन्होंने कहा कि पूर्वबंगाल में जो युद्ध हुआ है उसका पूर्वी क्षेत्र में बड़ा गहरा प्रभाव पड़ेगा क्योंकि उस क्षेत्र के लोगों के ऐतिहासिक और सांस्कृतिक सम्बन्ध एक हैं।

उन्होंने बंगला देश की घटनाओं का विश्लेषण करते हुए कहा कि शेख मुजीब का दोष उनका वह वक्तव्य था जिसमें उन्होंने कहा था कि उनका दल भारत से कभी खत्म न होने वाली दुश्मनी की नीति के विरुद्ध है। यह बात वहाँ के सैनिक शासकों को पसन्द नहीं आयी जो पाकिस्तान की वास्तविक शत्रु गरीबी से न लड़कर काल्पनिक दुश्मन, भारत, के विरुद्ध अपनी शक्ति बर्बाद कर रहे थे। उन्होंने कहा कि 'पाकिस्तान सैनिक तानाशाही के कारण मजबूत हुआ है और भारत लोक-तन्त्र के कारण कमजोर हुआ है,' यह बात बेबुनियादी और गलत सिद्ध हो चुकी है। बंगला देश की दुखान्त घटना से यह सबक भी मिला है कि शक्तिशाली सेना के आधार पर कोई राष्ट्र मजबूत और शक्तिशाली नहीं बन सकता, बल्कि राष्ट्र जनता, युवक, विद्यार्थी और किसानों से शक्तिशाली बनता है। उन्होंने कहा कि भारत कभी भी शक्ति के सामने घुटने नहीं टेकेगा, और मजबूर किये जाने पर अपनी स्वतन्त्रता की रक्षा के लिए युद्ध तक करेगा।

अमरीकी संसद में संशोधन-बिल

अमरीकी रिप्रेजेंटेटिव, और हाउस सब-कमिटी ऑन एशियन अफेअर्स के अध्यक्ष कोरनेलियस गालागार (डेमोक्रेट) ने पाकिस्तान को सैनिक तथा आर्थिक सहायता बन्द करने के लिए अमरीकी हाउस ऑफ रिप्रेजेंटेटिव में एक संशोधन पेश किया है। इसके अनुसार सहायता उस समय तक बन्द रहेगी जब तक कि एक अन्तर्राष्ट्रीय निरीक्षक दल यह सूचना न दे कि पाकिस्तानी सरकार रिलीफ के कार्यों में सहयोग कर रही है और भारत गये हुए शरणार्थियों को वापस आने की आज्ञा मिल गई है। उन्होंने यह संशोधन 'फारेन एड बिल' में किया जो हाउस के फारेन अफेअर्स कमिटी के पास है। एक ऐसा ही प्रस्ताव सिनेट में भी पेश किया गया है।

शरणार्थियों की वापसी

संयुक्तराष्ट्र संघ के शरणार्थियों के कमिश्नर प्रिन्स सदरुद्दीन से जब यह पूछा गया कि क्या उनको भारत और पाकिस्तान में हुई बातों से शरणार्थियों के वापस लौटने में सहायता मिलेगी तो उन्होंने कहा कि 'यह पूर्व बंगाल की परिस्थिति पर आधारित है, यहाँ की बातों पर नहीं।'

'क्या संयुक्तराष्ट्र शरणार्थियों को कुशलता के साथ वापसी की जमानत दे सकता है?' यह प्रश्न पूछे जाने पर उन्होंने कहा कि 'किसी सम्प्रभुसत्ता-सम्पन्न देश की सीमा के अन्दर एक अन्तर्राष्ट्रीय संगठन के लिए यह करना बहुत कठिन है।' हम मानवता के तरीकों से प्रयत्न कर सकते हैं, परन्तु जमानत लेना कठिन है।' प्रिन्स सदरुद्दीन ने यह आशा प्रकट की कि अन्तर्राष्ट्रीय सहायता केवल जारी नहीं रहेगी, बल्कि बढ़ेगी। उन्होंने यह भी कहा कि एक संगठन भारत और पाकिस्तान में स्थापित किया जायेगा जो शरणार्थियों की वापसी में सहायता देगा। इस सिलसिले में संयुक्तराष्ट्र के हाई कमिश्नर का प्रतिनिधि ढाका में नियुक्त किया जायेगा जो पूर्व बंगाल में शरणार्थियों के वापसी के केन्द्रों से सम्बन्ध रखेगा।

राजदूतों की वापसी

भारतीय और पाकिस्तानी राजदूतों की वापसी के सम्बन्ध में डाक्टर फीजरील (स्वीजरलैंड के राजदूत) ने श्री एस० के बनर्जी से बातें कीं। संयुक्तराष्ट्र की रिपोर्टों से पता चला है कि पाकिस्तान ने यह स्वीकार किया है कि किसी अलग दायरे में एक तीसरी पार्टी के सामने श्री मेहदी मसूद (पाकिस्तानी डप-हाई-कमिश्नर) श्री हुसैनअली के साथियों के साथ बातें करें।

पाकिस्तान सहायता क्लब की बैठक अनिश्चित काल के लिए स्थगित हो गयी है। भारत सहायता क्लब ने ११५ करोड़ डालर की सहायता का आश्वासन दिया है। यह आर्थिक सहायता शरणार्थियों के लिए दी जानेवाली सहायता से अलग है।

प्रस्तुतकर्ता :—सैयद मु० कमाल

। सोम[illegible]

सर्वोदय मण्डलों के नाम

प्रिय बंधु,

शिक्षा में क्रांति का महत्व आप जानते ही हैं। तरुण-शांतिसेना ने इस कार्यक्रम को अपना एक मुख्य कार्यक्रम माना है और तरुण-शांतिसेना ९, अगस्त १९७१ को राष्ट्रीय स्तर पर देशभर में इसी विषय पर व्यापक अभियान चलाने जा रही है। उसकी तैयारियाँ शुरू हो गयी हैं। 'शिक्षा में क्रान्ति' समग्र क्रान्ति का एक अंग है। नये तरुणों को, विद्यार्थियों को समग्र क्रांति की ओर आकर्षित करने का एक उत्तम माध्यम भी 'शिक्षा में क्रान्ति' आन्दोलन है। अतः सब सर्वोदय कार्यकर्ताओं को तरुण-शांतिसेना से सम्पर्क कर इस महत्वपूर्ण कार्यक्रम की सफलता के लिए उन्हें पूरा सहयोग देना चाहिए। आप ऐसा करें ऐसी मेरी आपसे प्रार्थना है।

बंगला देश के बारे में आपने क्या काम किया, कृपया लिखें। कितनी संस्थाओं के प्रस्ताव हुए ? कितना चंदा इकट्ठा हुआ ? जानकारी एवं रकम गोपुरी भेजने का कष्ट करें।

ठाकुरदास बंग

मंत्री

सर्व सेवा संघ

अ० भा० महिला लोकयात्री टोली

प्राप्त जानकारी के अनुसार अखिल भारत महिला लोकयात्री टोली आगामी ८ जुलाई को राजस्थान में आबूरोड से गुजरात में प्रवेश करेगी। स्मरणीय है कि २५ अक्टूबर, १९६७ को कस्तूरबा-ग्राम (इंदौर) से महिला-यात्रियों की यह अभूतपूर्व लोकयात्रा विनोबाजी की प्रेरणा से १२ वर्ष के लिए भारत-भ्रमण पर देश में स्त्री-शक्ति के जागरण के उद्देश्य को लेकर निकली थी। अब तक यह टोली मध्यप्रदेश, बिहार, उत्तर प्रदेश, पंजाब, हरियाणा, जम्मू-कश्मीर आदि का करीब दस हजार मील का भ्रमण कर गत १ जनवरी '७१ से राजस्थान में घूम रही है जहाँ से यह ८ जुलाई को गुजरात में प्रवेश करेगी। गत १३, १४ जून को पाली जिले में सादड़ी रानपुर में राजस्थान की २५ प्रबुद्ध बहनों का एक लोक-आधारित विचार शिविर आयोजित हुआ।

तरुण-शांतिसेना : महाराष्ट्र शिविर

भिवंडी में ३ जून से १२ जून तक दस दिन अ० भा० तरुण-शान्तिसेना का महाराष्ट्र का चौथा प्रांतीय शिविर सम्पन्न हुआ। शिविर में महाराष्ट्र के २१ जिलों से ९६ और इंदौर से ७, इस तरह कुल १०३ शिविरार्थी थे, जिनमें से १९ बहनें थीं। मुख्यतः महाविद्यालयीन विद्यार्थियों का समावेश था। हरिजन-गिरिजन उन्नति मण्डल के विद्याश्रम छात्रावास में शिविर का आयोजन रहा।

शिविर काल में हर रोज विविध विषयों पर बौद्धिक चर्चाएँ होती थीं। निमंत्रित अतिथियों में सर्वश्री दादा धर्माधिकारी, बाबा आमटे, यदुनाथ थत्ते, रा० कृ० पाटील, गोविन्दराव देशपांडे, अप्पासाहब देशपांडे, डा० कुमार सप्तर्षि, प्रा० चन्द्रकान्त पाटगांवकर प्रा० गु० श्री० पंढरीपांडे, मामा साहेब क्षीरसागर, श्याम सुन्दर शुक्ल, अण्णा जाधव इत्यादि विद्वद्जनों का समावेश था।

शिविर का सम्पूर्ण संचालन और आयोजन तरुणों ने ही किया। शिविर संचालकत्व की जिम्मेदारी हर तीसरे दिन बदलती रही। गण-सेवकत्व की दिशा में यह एक ठोस कदम रहा। शिविर के प्रमुख मार्गदर्शक श्री गंगाप्रसादजी अग्रवाल का इसमें अनोखा योगदान रहा। तरुण-शांतिसेना की ओर से शिविर काल में करीब ढाई सौ रु० की साहित्य बिक्री की गयी, 'तरुण मन' के चार ग्राहक भी बने।

'शिक्षण' इस विषय पर तीन दिन तक चर्चाएँ हुईं। आज की शिक्षा-प्रणाली के दोष देखकर उसे जीवनाभिमुख करने के लिए शिक्षा में क्रांति करने की दिशा में निर्णय लिये गये। जुलाई माह में बम्बई में और महाराष्ट्र के विविध क्षेत्र में शिविर आयोजित किये जायेंगे। इन शिविरों के द्वारा तरुण प्रचलित शिक्षा पद्धति के विरुद्ध आवाज जनता तक पहुँचायेंगे। ९ अगस्त को महाराष्ट्र के सब जिलों से आये हुए तरुणों का एक मार्च बम्बई में निकाला जायेगा। इस मार्च में शामिल क्रान्ति के अग्रदूत बनने के लिए सब तरुण-तरुणियों से महाराष्ट्र समिति की ओर से आवाहन किया गया है। —दिनकर चौधरी

(संदेश)

इस अंक में

वार्षिक शुल्क। १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पै०), विदेश में २२ रु०; या २५ शिलिंग या ३ डालर।

एक अंक का मूल्य २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं मनोहर प्रेस, वाराणसी में मुद्रित

सम्पादक
राममूर्ति

वर्ष : १७ सोमवार
अंक : ४१ १२ जुलाई, '७१

पत्रिका विभाग
सर्व सेवा संघ, राजघाट, वाराणसी-१
फोन : ६४३९१ तार : सर्वसेवा

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

स्वाध्याय

अध्ययन में महत्त्व लम्बाई-चौड़ाई का नहीं, गम्भीरता का है। समाधि अध्ययन का मुख्य तत्त्व है।

समाधियुक्त गम्भीर अध्ययन के बिना ज्ञान नहीं। अध्ययन से प्रज्ञा स्वतन्त्र और प्रतिभाशाली होनी चाहिए। प्रतिभा के माने हैं, बुद्धि में नयी-नयी कोंपलें फूटते रहना। नयी कल्पना, नया उत्साह, नयी खोज, नयी स्फूर्ति—ये सब प्रतिभा के लक्षण हैं। लम्बी-चौड़ी पढ़ाई के नीचे यह प्रतिभा दबकर मर जाती है।

वर्तमान जीवन में आवश्यक कर्मयोग का ध्यान रखकर ही सारा अध्ययन करना चाहिए। अन्यथा भविष्य-जीवन की आशा में वर्तमान में मरने जैसा हो जाता है। भगवान की इस रूप पर अपार कृपा ही समझनी चाहिए कि हममें वह कुछ-न-कुछ कमी रख ही देता है। वह चाहता है कि यह कमी जानकर हम जागृत रहें।

जीवन का मार्ग दो बिन्दुओं से ही निश्चित होता है। हम हैं कहाँ, यह पहला बिन्दु, हमें जाना कहाँ है, यह दूसरा बिन्दु! इन दोनों बिन्दुओं को तय कर लें, तो जीवन की दिशा तय हो गयी। इस दिशा पर ध्यान दिये बगैर इधर-उधर भटकते रहने से रास्ता तय नहीं हो पाता।

सारांश, 'अल्प मात्रा, सातत्य, समाधि, कर्माविरोध, और निश्चित दिशा' यह गम्भीर अध्ययन का सूत्र है।

प्रतिदिन कुछ-न-कुछ लिखते रहना चाहिए। विचार करने की भी एक आदत होती है। आदत से विचार बढ़ता है। प्रतिदिन का निरीक्षण, श्रम, अनुभव, यदि रोज लिख लिये जायँ तो स्मरण, चिंतन, अनुशीलन की आदत पड़ती है।

हाथ, वाणी और बुद्धि मनुष्य की विशेषताएँ हैं। तीनों का एक दूसरे पर असर होता है। तीनों के काम अर्थात् उद्योग, जप और चिन्तन हमारे अन्दर स्वस्थ हो जाने चाहिए। तब वेग के साथ हमारी सर्वांगीण प्रगति होगी।

—विनोबा : कार्यकर्ता और विचार पृष्ठ ११६-११७ से

• मेरी विदेश-यात्रा • मरीना में क्रान्ति-दर्शन •

निर्णय-किसका ?

अमेरिका में वह कौन था जिसने अंतिम निर्णय किया कि वियेतनाम में नर-संहार होना चाहिए ? और, पाकिस्तान में किसने निर्णय किया कि बंगला देश में खून की नदियाँ बहनी चाहिए ? मनुष्यता के प्रति इस तरह के निर्णय कौन करता है ? जब राजाओं का जमाना था तो बात और थी, लेकिन इस जमाने में इस तरह के निर्णय करनेवाले कौन होते हैं ? अगर लाखों-करोड़ों के वोट से बनी सरकारों में भी इतने गम्भीर निर्णय करने का अधिकार कुछ-एक व्यक्तियों को ही होता हो तो सोचना पड़ेगा कि लोकतंत्र में ऐसे निर्णयों से जनता और मनुष्यता की रक्षा कैसे होगी ? जो लोग सोचते थे कि वोट लोकतंत्र का प्राण है, और वोट ही वह स्रोत है जिससे नागरिक के अधिकार फूटते हैं, उनके लिए यह सोचने का अवसर है। वे सोचें कि अगर लोकतंत्र में भी निर्णय की शक्ति जनता के जीवन से इतनी दूर चली जाती हो तो केवल सरकार बनाने के लिए वोट के प्रयोग का कितना महत्व रह जायगा।

लोकतंत्र का प्राण अब मात्र वोट नहीं है, निर्णय के बिना वोट प्राणहीन-सा हो गया है। कितना निर्णय जनता के हाथों में है, यह प्रश्न मुख्य है। अगर एक बार वोट देने के बाद जनता को अपना जीवन बन्दूक और सन्दूक की ही शक्तियों के हाथ में सौंप देना पड़े तो मानना पड़ेगा कि जनता एक नये प्रकार की गुलामी में ही पड़ी हुई है। गांधीजी ने लोकतंत्र की यह कसौटी मानी थी कि अधिकार का दुरुपयोग होने पर जनता में प्रतिकार करने की शक्ति है या नहीं। वोट के रास्ते से सरकार के भीतर घुसकर बन्दूक अपना दमन और सन्दूक अपना शोषण कायम रख सकती है, यह हम तमाम दुनिया में देख रहे हैं। यही देखकर गांधीजी ने कहा था कि आज दुनिया में सच्चा लोकतंत्र नहीं है। अभी-अभी अमेरिका में वियेतनाम के सम्बन्ध में सेना के दफ्तर से जो कागज बाहर आये हैं उनसे पता चलता है कि अमेरिका जैसे देश में भी जनता को कितने अंधकार में रखा जाता है। इंगलैण्ड के पिछले प्रधानमंत्री विल्सन ने अपने संस्मरणों में स्वीकार किया है कि भारत-पाक-युद्ध के समय किस तरह उनके अधिकारियों ने उन्हें गुमराह किया जिसके कारण उसने भारत-विरोधी रुख अपनाया। प्रचार के साधनों पर सरकार और उसके समर्थन में खड़ी होनेवाली पैसे और शस्त्र की शक्तियों का अधिकार होने के कारण जनता जान ही नहीं पाती कि सचाई क्या है। ऐसी हालत में मुट्ठी भर लोगों के किये हुए निर्णयों को मान लेने के सिवाय उसके सामने दूसरा चारा नहीं रहता। 'राष्ट्र खतरे में है', राष्ट्र की इज्जत का प्रश्न है', 'राष्ट्र के हितों की रक्षा करनी है', आदि नारों से जनता के मुँह बन्द कर दिये जाते हैं। वोट जनता देती है, पैसा भी जनता देती है, लेकिन कहीं भी निर्णय उसके हाथ में नहीं है। इसी तरह एक नहीं सभी सरकारें चल रही हैं।

जैसे-जैसे राज्य की सत्ता फैलती और उसकी शक्ति बढ़ती जा रही है, जनता निर्णय से दूर रहती चली जा रही है, और उसकी बची-खुची प्रतिकार-शक्ति भी कुंठित होती जा रही है। जनता की ओर से समय-समय पर होने वाले हिंसक विस्फोटों से अंत में राज्य की ही शक्ति बढ़ती है, स्वयं जनता की नहीं। इस तरह राज्य की शक्ति बढ़ाकर लोकतंत्र कैसे जीवित रह सकता है ? वोट के अधिकार के साथ-साथ जनता के हाथ में निर्णय कैसे जायेगा और उसकी प्रतिकार-शक्ति 'कैसे विकसित' होगी, यह सोचने की जरूरत है। इस वक्त लोकतंत्र वस्तुतः राज्य शक्ति बनाम लोक-शक्ति का प्रश्न बन गया है।

अन्य क्षेत्रों की तरह लोक-जीवन में भी पुराने तरीके पुराने पड़ गये हैं। उनसे समाज की नयी समस्याएँ हल होती नहीं दिखाई देतीं, और न तो विज्ञान के इस युग में मानव-जीवन की संभावनाएँ ही सिद्ध होती दिखाई देती हैं। कई पुराने गुण भी इस युग में कितने भयंकर दोष सिद्ध हो सकते हैं, इसकी एक नहीं अनेक मिसालें सामने आयी हैं। परम्परा से एक बहुत बड़ा गुण माना गया है कर्तव्य-पालन। वियेतनाम में अमेरिकी और बंगला देश में पाकिस्तानी सिपाहियों ने जो जुर्म किये हैं, क्या उन्होंने ऐसा कर्तव्य-पालन की दृष्टि से नहीं किया है ? क्या उन्हें ऐसा करने का ऊपर के अधिकारियों द्वारा आदेश नहीं दिया गया था ? और, आदेश का पालन न कर क्या वे अपने कर्तव्य से च्युत न माने जाते ? वियेतनामी गाँव 'माईलाई' के संहार के मामले में नर-संहार करनेवाले अमेरिकी सिपाहियों ने साफ-साफ कहा है कि उन्होंने जो कुछ किया आदेश पाकर किया और उन्होंने वही किया जिसकी उन्हें ट्रेनिंग दी गयी थी। इस युग का सिरताज मानव-द्रोही हिटलर (याह्या के पहले) भारतीय परिभाषा के अनुसार बाल-ब्रह्मचारी था, और त्यागी तो था ही। उसके जमाने में जर्मनी में जो अत्याचार हुए वे उसके आदेश से ही हुए थे। उसके हाथ में सत्ता थी, निर्णय की शक्ति थी। उसने जो कुछ किया राष्ट्र के लिए किया। उसने जनता के हृदय में राष्ट्र का गौरव जगाया। जनता ने अपने को समर्पण किया, और उसके पीछे चली। परिणाम क्या हुआ ? उसने पूरे देश को जैसे खून का प्यासा बना दिया। लाखों यहूदी उसके अत्याचारों के शिकार हुए। बंगला देश का उदाहरण हमारी आँखों के सामने है। ऐसे लोगों की संख्या काफी है जो मानते हैं कि याह्या राष्ट्र के प्रति अपने कर्तव्य का पालन कर रहा है। कितना बड़ा फासिला है जनता और जनता की सरकारों में ? जीवन की नयी परिस्थितियों और पुराने मूल्यों में ?

लोकतंत्र के लिए बिलकुल नया सन्दर्भ चाहिए—नयी व्यवस्था चाहिए, निर्णय की नयी प्रक्रिया चाहिए, नया शिक्षण चाहिए, नये जीवन मूल्य चाहिए। इस दिशा में निश्चित रूप से पहला

मेरी विदेश यात्रा

प्र. १६ मई को दिल्ली छोड़ा और २६ जून को लौटा। ४१ दिन लगे।

प्र. इन स्थानों का परिभ्रमण किया : कैरो, रोम, बेलग्रेड, मास्को, हेलसिंकी, स्टाकहोम, बोन, पेरिस, लंदन, वाशिंगटन, न्यूयार्क, ओटावा, हैनोवर, टोकियो, बैंकाक (सिर्फ विश्राम, मुलाकातें नहीं) जकार्ता, सिंगापुर, क्वालालम्पुर, बैंकाक (दिल्ली आने के लिए हवाई जहाज पकड़ने)।

सर्व सेवा संघ और गांधी शांति प्रतिष्ठान की ओर से शांति के एक सेवक के नाते मैंने यह प्रवास किया। उनकी ओर से मुझे जो आर्थिक एवं अन्य सहायता मिली उसके लिए मैं बहुत कृतज्ञ हूँ।

भिन्न-भिन्न देशों की राजधानियों में हमलोग गये, वहाँ हमारे देश के जो प्रतिनिधि हैं उन्होंने जो सहायता और आतिथ्य दिया उसके लिए भी मैं आभारी हूँ। उन लोगों के प्रति विशेष रूप से, और भारत सरकार के प्रति सामान्यतः हम कृतज्ञ हैं जिन्होंने मेरी यात्रा को अधिक से अधिक उपयोगी बनाने के लिए जो कुछ करना सम्भव था किया।

मैंने यह जो यात्रा की वह सिर्फ इसलिए नहीं की कि उद्वास्तुओं के लिए राहत जुटाई जाय, या मनुष्य के कष्टों की कहानी सुनाई जाय और विश्व की अन्तरात्मा को जगाने की कोशिश की जाय। जो लाखों उद्वास्तु भागकर भारत आये हैं अथवा जो करोड़ों बंगला देश में आतंक, भुखमरी और महामारी के शिकार हैं उन्हें मदद मिले, यह निस्सन्देह अत्यन्त आवश्यक है, और स्वभावतः मैंने इस सम्बन्ध में भी बातें कीं। जहाँ तक दुनिया की अन्तरात्मा का प्रश्न है—जितनी भी अन्तरात्मा बची है—एक कैरो को छोड़कर हर जगह अखबारों ने उसे जगाने का अद्भुत काम किया है और अभी भी कर रहे हैं।

मुझे इससे बड़ी चिंता इस प्रश्न के राजनीतिक पहलुओं की, और इसे अविलम्ब हल करने की थी। जिनसे मैं मिला उन्हें मैंने यह समझाने की कोशिश की कि यह उद्वास्तुओं की अथवा मानवता की जो समस्या है वह जड़ में एक राजनैतिक समस्या की ही देन है।

मैंने पाया कि अखबारों तथा सूचना के अन्य साधनों के माध्यम से, जिनमें उनके दूतावास के माध्यम भी हैं, संसार की सभी सरकारें इस प्रश्न के राजनैतिक पहलू से अच्छी तरह परिचित थीं। मेरा ख्याल है, आमतौर पर यह महसूस किया गया था कि पाकिस्तान सरकार ने बंगला देश की जनता के लोकतांत्रिक निर्णय को अपनी फौजी ताकत से कुचलने का जो काम किया है उसने उसके खुद पाकिस्तान के एक सम्मिलित राष्ट्र बने रहने को खतरे में डाल दिया है। फिर भी मैंने यह पाया कि कुछ सरकारें अब तक क्षीण आशा के एक तिनके को पकड़े बैठे हुए थे कि पाकिस्तान के दोनों भागों को अब भी कुछ कड़ियाँ जोड़कर रख सकती हैं। इसलिए ऐसा लगा कि सब पाकिस्तान पर यह जोर डाल रहे थे कि वह फौजी कार्रवाई बन्द कर दे और बंगला देश के नेताओं के साथ कोई राजनैतिक समझौता कर ले। वाशिंगटन में राजनैतिक समझौते (पोलिटिकल एकामोडेशन) की बात आमतौर पर कही जाती थी। जब उनसे मैं पूछता था कि क्या उनके मन में सरकार के विद्रोहियों से समझौते की कल्पना तो नहीं है तो वे जोरों से इसका खण्डन करते थे। फिर जब उनके सामने यह बात रखी जाती थी कि पाकिस्तानी फौज ने बंगला देश में जो कुछ किया है उसे देखते हुए आत्मसम्मान-वाले किसी भी बंगाली को यह स्वीकार नहीं हो सकता कि पश्चिमी पाकिस्तान के साथ रहने को जो कोई संबंध रखे तब वे ठोस तर्क न देकर अपनी कामना प्रकट करने लगते थे।

बात सचमुच यह है और इसे भारत के लोगों को साफ-साफ समझ लेना चाहिए कि सभी बड़े राष्ट्र शक्ति सन्तुलन की उस यथास्थिति को बनाये रखने के लिए चिन्तित हैं जो इस वक्त दुनिया में कायम है। उनमें से कुछ तो इस बात के लिए विशेष तौर पर इच्छुक हैं कि दक्षिण एशिया में वह सन्तुलन बना रहे जिसे खुद उन्होंने जानबूझकर किया है, और इसीलिए उन्होंने पाकिस्तान को बढ़ावा देकर भारत को नीचे रखने की नीति अपना रखी है।

लोग समझते हैं कि अगर बंगला देश में छापामार युद्ध बहुत दिनों तक चला

—कदम सत्ता का विकेन्द्रीकरण ही है। शुरुआत तीन जगहों से होनी चाहिए—गाँव, शहर और विद्यालय। इन तीनों जगहों में रहनेवाले नागरिकों को अपना काम मुख्य रूप से अपने निर्णय से चलाने के लिए तैयार होना चाहिए। सम्भव है भूलें हों। लेकिन क्या आज से ज्यादा होंगी? और, यदि हों भी तो भूलें करने, सीखने, और अपने पैरों पर खड़े होने के सिवाय मुक्ति का दूसरा रास्ता नहीं है।

कठिनाई यह है कि जनता को परिस्थिति की प्रतीति नहीं है। वह परिस्थिति की मांग पूरी करने के लिए तैयार नहीं है। उसके ऊपर अब भी राष्ट्रीयकरण का जादू है। उसके ही ऊपर नहीं, नेताओं और 'क्रान्तिकारियों' के ऊपर भी। लेकिन अब लोग समझ रहे हैं कि राष्ट्रीयकरण सरकारीकरण से भिन्न नहीं है, इसलिए जनता की मुक्ति का मार्ग नहीं है।

समूचे जीवन के सन्दर्भ में क्रान्ति की दिशा स्पष्ट है। नित्य के जीवन में निर्णय की शक्ति जनता के हाथ में जानी चाहिए। निर्णय के केन्द्र वहाँ होने चाहिए जहाँ लोग स्वाभाविक रूप से रहते हैं, और काम करते हैं। यही मांग भारत में 'ग्रामस्वराज्य' की है, और यही मांग पश्चिम में 'न्यू लेफ्ट' की है। ●

तो इस उपमहादेश की सुस्थिरता और प्रगति पर क्या प्रतिकूल प्रभाव पड़नेवाले हैं, लेकिन मन में वे यह आशा पाल रहे हैं कि किसी-न-किसी तरह यह संकट टल जायगा।

संसार की राजधानियों में जो नीति निर्धारण करनेवाले राजनायकगण हैं, उनमें से कुछ अभी इस बात के कायल नहीं हैं कि बंगला देश में प्रतिकार के एक जबरदस्त आन्दोलन का चलना अनिवार्य है। जब तक बंगला देश के मुक्ति-संग्राम के सैनिक पाकिस्तान के इस दावे को कि पूर्वी बंगाल में सब कुछ सामान्य (नार्मल) है, अच्छी तरह गलत नहीं साबित कर देते, तब तक वे परिस्थिति की वास्तविकता नहीं महसूस करेंगे।

वे लोग याहिया खाँ को यह मित्रतापूर्ण सलाह देते रहेंगे कि वह अपने घर को सम्भाल कर रखें। वे उनकी मांगी हुई पूरी मदद देने से इनकार भी कर सकते हैं।

किसी भी हालत में पहला सिरदर्द भारत का है, और उसे ही पाकिस्तान की काली करतूतों का फल भोगना पड़ेगा, और मैंने कहीं नहीं देखा कि भारत को इस विपत्ति से बचाने की चिन्ता किसी को हो।

उद्वासितों की देखरेख का जो आर्थिक बोझ है उसका एक अंश वे उठा सकते हैं यद्यपि उद्वासितों की जो संख्या हमलोग उन्हें बताते थे वह उन्हें बढ़ा-चढ़ा कर बतायी हुई मालूम होती थी। लेकिन यह स्पष्ट है कि इस संकट के जो सामाजिक और राजनैतिक बोझ हैं वे तो भारत को ही उठाने पड़ेंगे। आर्थिक बोझ के मुकाबिले ये दूसरे बोझ कितने अधिक भारी और कठिन हैं, यह तो भगवान ही जानता है।

"पाक - सहायता—मंडल" (एड पाकिस्तान कन्सोर्टियम) का निर्णय अच्छा हुआ है। लेकिन इसका यह अर्थ नहीं है कि कन्सोर्टियम का कोई सदस्य अलग अपनी ओर से पाकिस्तान को मदद नहीं दे सकता। दूसरे यह भी देखने की बात है कि अगर बंगला देश में उस तरह की एक कठपुतली सरकार बना डाली जाती है, जिसकी योजना पाकिस्तान के प्रेसिडेंट बना रहे हैं, तो कन्सोर्टियम उसे अपनी शर्तों के लिए काफी मान लेता है या नहीं।

इस यात्रा में मेरी जो धारणा बनी है, उसे संक्षेप में इस तरह कहा जा सकता है कि भारत में हमलोग इस बात को अच्छी तरह समझ लें कि हम यह आशा नहीं रख सकते कि हमारे सिर पड़ी विपत्ति को कोई दूसरा ओढ़ लेगा। निपटना तो हमलोगों को ही पड़ेगा। दूसरी बात यह कि हमलोगों को यह तय कर ही लेना पड़ेगा कि बंगला देश के लोगों का जो निरन्तर दमन किया जा रहा है और उसके आर्थिक, राजनैतिक और सामाजिक जो भी नतीजे सामने आ सकते हैं, वे क्या हमारे राष्ट्र के हित में होंगे? इस कथन को इस तरह न माना जाय कि पाकिस्तान का टूटना भारत के राष्ट्रीय हित में होगा। प्रेसिडेंट याहिया खाँ और उनके सलाहकारों ने मिलकर अपने राष्ट्र को तोड़ने में सफलता प्राप्त कर ली है। जवाब इस प्रश्न का देना है कि पश्चिमी पाकिस्तान द्वारा बंगला देश को बलपूर्वक अपने चंगुल में रखने के प्रयत्न को, हमारे लिए उसके जो वर्तमान तथा भविष्य-कालीन फल होनेवाले हैं उनके सहित, क्या हम खड़े-खड़े देखते रहेंगे और सिर्फ बहादुराना बोल बोलते रहेंगे? जहाँ तक मेरा सवाल है मैं बिलकुल साफ-साफ यह मानता हूँ कि अब अधिक निष्क्रिय रहना भारत के राष्ट्रीय हितों के साथ वफादारी नहीं होगी।

प्रेसिडेंट याहिया खाँ ने २८।६ को बेहद चोट पहुँचानेवाला जो बयान दिया है उससे यह साफ है कि इस्लामाबाद की न तो यह इच्छा है और न उसमें यह योग्यता है कि बंगला देश में उसने जो समस्या पैदा कर रखी है उसके लिए कोई सन्तोषजनक राजनैतिक समाधान ढूँढ़ सके। बंगला देश के चुने हुए नेताओं के साथ कोई समझौता करने की बात वह सोचता ही नहीं है। वस्तुतः वह बंगला देश पर अपने औपनिवेशिक नागफाँस को उचित और कानून-सम्मत रूप देने के ख्याल से अनेक चुनाव क्षेत्रों में नये चुनाव कराने का मजाक करने की योजना बना रहा है। अब यह हमलोगों के देश को और पूरी दुनिया को स्पष्ट हो जाना चाहिए कि पाकिस्तान के वर्तमान शासकों से यह उम्मीद रखना कि बंगला देश के प्रति अपने मूल रुख को वे बदलेंगे, मिथ्या है। इसने वस्तुतः पाकिस्तान में राजनैतिक समझौते की आशा को और भी अधिक कठिन बना दिया है।

विदेश में जिन जिन से मेरी मुलाकात हुई उनमें से हर एक ने इस बात की प्रशंसा की कि हमारी प्रधान मंत्री ने एक बड़े संकट में संयम और कुशलता का परिचय दिया है। उनकी इस कुशलता की प्रशंसा मैं भी करता हूँ। परन्तु अब उन्हें यह निर्णय लेना ही चाहिए कि क्या प्रत्यक्ष क्रिया का समय आ पहुँचा है या नहीं।

पूर्वी बंगाल के लोगों को पाकिस्तान के आतंक से उबार लेने की और उनके खोये गणतंत्र को उनके हाथ देने की किसी परोपकारी नीयत से ही कुछ करने का प्रश्न नहीं है, बल्कि याहिया खाँ को रोकना है कि वह अपने देश की आन्तरिक अराजकता को इस देश में न भेजें और अपने देश की जनसंख्या का पुनर्वितरण हमारे माथे न करें। सबसे अधिक हमें इसलिए कदम उठाना है कि हमारा राष्ट्र तथा उसकी राजनैतिक, आर्थिक और सामाजिक संस्थाएँ सुरक्षित रहें। मैं यह मानता हूँ कि प्रधानमंत्री खुद तय करें कि वह कब कदम उठायेंगी, क्योंकि वह ही इस स्थिति में पक्ष-विपक्ष की सब बातें जानती हैं और उन्हें उचित ढंग से तोल सकती हैं। परन्तु मेरे जैसे नागरिक के सामने मूल बातें बिलकुल साफ हैं और उन्हीं के आधार पर मैं कदम उठाने की बात कह रहा हूँ।

जयप्रकाश नारायण

समाज परिवर्तन की हमारी आकांक्षा

सर्वोदय आन्दोलन में लगे हम साथियों की एक सर्वमान्य भूमिका यह है कि हम वर्तमान समाज को बदलना चाहते हैं और उसके लिए ग्रामदान ग्रामस्वराज्य को बुनियादी कार्यक्रम मानकर उसकी सम्भावनाओं को आजमा रहे हैं। विनोबाजी के सूक्ष्म-प्रवेश से पूर्व तक उनका विशिष्ट व्यक्तित्व या शासन की हर कमी को पूरा करता रहा, या कम-से-कम उसका एहसास हमें कराता रहा। लेकिन राजगीर के बाद प्रायः संक्रमण-काल के कारण अब पूरा आन्दोलन और हम उसके कर्ता वास्तविकता के अधिक करीब आये हैं। इसलिए आशा है कि अब हम तथ्य-परक चर्चा कर सकेंगे। मेरे मन में जो बातें हैं उन्हें आपके समक्ष चर्चा के लिए प्रस्तुत कर रहा हूँ।

ऐतिहासिक सन्दर्भ.

अक्सर हमारे सर्वोदय-समाज में 'यह क्रान्तियुग की माँग है, लोग तैयार हैं, हमारे पहुँचने भर की देर है' जैसी भाषा का प्रयोग भरपूर होता रहा है। भूदान-युग तक शायद सचमुच यह एक ऐतिहासिक तथ्य मालूम पड़ता था। लेकिन ग्रामदान की पुष्टि के समय हम सोचने को विवश हुए कि इस भाषा का प्रयोग हम किस हद तक करें। क्या विकेन्द्रित और स्वायत्त आर्थिक, राजनैतिक रचना का जो चित्र हम प्रस्तुत करते हैं, उसके लिए लोग तैयार हैं? हमारे पहुँचने भर की देर है? पूँजीवादी, साम्यवादी या संसदवादी, साम्यवादी और लोकतान्त्रिक सत्तावादी-राजनीति और उसके मान्य अभिन्न अंग से जुड़ी आर्थिक रचना के केन्द्र निरन्तर दृढ़ हो रहे हैं, और सामान्य जनता इनमें से ही किसी-न-किसी में अपनी सुरक्षा या मुक्ति देखती रही है। इसलिए आखिर हमारे प्रान्त के ग्राम-स्वराज्य एक दूसरा विकल्प में अधिक कोई दबाव जन-मानस में नहीं बन पाया। यह एक जागतिक परिस्थिति है। इसमें हमारे विकल्प के प्रति किसी-न-किसी बिन्दु पर जाकर प्रबल आकर्षण की सम्भावना भरपूर है, लेकिन आज क्या हमारे काम की व्यूह-रचना में हमारी भूमिका धैर्य के साथ प्रायोगिक होगी या गति के साथ सामाजिक विप्लव और उलट फेर की? पहली स्थिति में प्रतिकूलताओं से दब जाने का खतरा है, दूसरी स्थिति में जोरों से आगे बढ़ने की कोशिश में बीच में ही टूट जाने का खतरा है। हम करें क्या? इस स्थिति को साफ किये बिना अपना 'रोल' तय करना बहुत कठिन मालूम होता है।

संघटन और नेतृत्व.

ऐतिहासिक सन्दर्भ में आन्दोलन को उपयुक्त भूमिका और आधार देने के लिए संघटन और नेतृत्व की ओर ध्यान जाता है। हम किसी के प्रति कोई आक्रोश व्यक्त करने की मनोभूमिका से अलग हटकर ही सोचते हैं तो ऐसा लगता है कि समाज परिवर्तन की आकांक्षा और कार्यक्रम के प्रति जो निष्ठा अनिवार्य है, वह मौजूदा संघटन और उस संघटनात्मक सन्दर्भ में जो नेतृत्व है, उसमें इसका बहुत अभाव है। इसलिए भी, हम परिस्थिति की प्रतिकूलताओं को झेलने और उन पर आन्दोलन का प्रभाव पैदा कर पाने में कठिनाई का अनुभव करते हैं। क्या इसका कारण यह नहीं है कि हमारा संघटन और संघटनात्मक नेतृत्व क्रान्ति की प्रक्रिया में से विकसित नहीं हुआ है? जो नेतृत्व और संघटन क्रान्ति की प्रक्रिया में से नहीं विकसित होगा, वह क्रान्तिकारी 'रोल' कभी भी अदा नहीं कर सकता। इस भूमिका में सर्व सेवा संघ, सर्वोदय मण्डल ग्रामस्वराज्य समितियों आदि का, और ग्रामसभा का क्या स्थान है? चित्र क्या है?

क्रान्ति और कर्ता :

गांधी युग से ही स्पष्ट तौर पर यह मान्यता स्थापित हुई है कि क्रान्तिकारी के जीवन में क्रान्ति के मूल्यों का समावेश होना चाहिए, इतना ही नहीं, वह प्रकट भी होना चाहिए। समाज-निरपेक्ष साधक की अलगाव और आत्मसंतुष्टि या शहादत की आत्यन्तिक भूमिका से भिन्न क्या क्रान्तिकारी जीवन के कुछ मूल्य हो सकते हैं, जिनको हमारे जीवन से प्रकट होना चाहिए? एक दौर था सर्वोदय-समाज में, जब क्रान्ति कुछ निष्ठाओं के आग्रहपूर्ण पालन में दिखाई देती थी, एक दौर शुरू हुआ कि निष्ठाओं को छोड़कर चलने के आग्रह में क्रान्ति दिखाई देने लगी। होना क्या चाहिए? क्योंकि पहली स्थिति में हमारे जीवन का कसाव इतना बढ़ जाता है कि हम किसी-न-किसी बिन्दु पर टूट जाते हैं, और दूसरी स्थिति में इतने ढीले हो जाते हैं कि प्रतिक्रान्ति के मूल्य हमें निगल जाते हैं। इतना तो माना जा सकता है न कि जिस हद तक हमारे जीवन-मूल्य-स्थापित प्रतिगामी ढाँचे के अन्तर्गत होंगे उस हद तक हम यथास्थिति में परिवर्तन लाने के काम में कमजोर साबित होंगे?

अब क्रान्ति की बात। मान्य सूत्र है कि जीवन के सम्बन्धों में परिवर्तन, वैसा परिवर्तन जिसके कारण आदमी आदमी के अधिक निकट आये, ही क्रान्ति का लक्ष्य हो सकता है। चूँकि हम समाज-परिवर्तन की बात कहते हैं, इसलिए सहज समाज में यानी गाँव में जाते हैं। सहज समाज वही है जिसके सदस्यों के जीवन के सम्बन्ध सहज हों, जीविका के आधार सहज हों। सहज सम्बन्धों की व्याख्याएँ अनेक हो सकती हैं, लेकिन एक कसौटी उसकी यह हो सकती है कि जिस सम्बन्ध में व्यावसायिकता गौण हो, कौटुम्बिकता मुख्य हो। परिवार से इस सहज सम्बन्ध की शुरुआत होती है, लेकिन जो पड़ोस और कुछ हद तक गाँव की सीमा में भी फैलती है। शहरी जीवन में यह सहजता नहीं के बराबर है। उसी तरह सहज जीविका वह, जिसमें मनुष्य के श्रम और उसकी प्राकृतिक वृत्तियों को उभार

कर जीविका न कमाई जा रही हो, जो आज की विज्ञापन-प्रधान व्यावसायिकता में होता है। मनुष्य के पुरुषार्थ और उत्पादन के साधनों द्वारा प्रत्यक्ष उत्पादन और उपभोग की प्रक्रिया को हम सहज जीविका का आधार मान सकते हैं। गाँव में दोनों हैं इसलिए बुनियादी क्रान्ति की शक्ति वहीं से पैदा होगी।

लेकिन गाँव में मनुष्य को मनुष्य से अलग करने वाली दो बुनियादें हैं : १—वर्ग-भेद, २—जाति-भेद। इन भेदों को मिटाने के लिए हम ग्रामसभा के रूप में गाँव को एक नया आधार देना चाहते हैं। लेकिन कठिनाई यह है कि गाँव में उच्च जाति और अपेक्षाकृत सम्पन्न लोगों को नेतृत्व देनेवाले गाँव की सीमा से बहुत दूर महानगरों और राजधानियों में रहते हैं। उसी तरह नीच मानी जानेवाली जाति के और गरीब, लेकिन चेतन लोगों के मन में नये सम्बन्धों के निर्माण की सम्भावना अपना स्थान नहीं बना पाती, वे किसी-न-किसी रूप में अपने से ऊपरवालों की स्थिति में आने की कोशिश करते हैं। उनमें चेतना पैदा करनेवाले लोग उनको इसी के लिए तैयार भी करते हैं।

इस परिस्थिति में हमारे आन्दोलन की तीन चिंतन-धाराएँ हैं—पहली तो वर्गसंघर्ष से प्रभावित है, जिसमें दबे हुए लोगों की ओर से या उनके साथ होकर अन्याय के प्रतिकार की बात की जाती है। दूसरी यह कि दोनों तरफ के लोगों को कहीं एक बिन्दु पर लाने की कोशिश की जाय। तीसरी यह कि समाज का समझदार और सम्पन्न व्यक्ति भविष्य की सम्भावनाओं को समझकर मिलन के लिए आगे बढ़े। ये धाराएँ हमारी अपनी तीव्रता और छिटपुट के अनुभवों के सहयोग से प्रवाहित हैं। लेकिन जिस तरह साम्यवादी क्रांति की परिकल्पना में वर्गसंघर्ष का एक शास्त्रीय और उसकी भूमिका में वैज्ञानिक आधार क्रान्ति की गत्यात्मकता के लिए विकसित हुआ है, क्या हमारे क्रान्ति-शास्त्र में ऐसा कोई आधार है? क्या इसकी आवश्यकता है? ऐसा आधार प्रस्तुत किया जा सकता है?

क्रान्ति की समग्रता :

विकास और क्रान्ति के सन्दर्भ में क्रान्ति की समग्रता का चिंतन हम करते हैं। अगर 'समग्र क्रान्ति' से हमारा मतलब वही है जो अँग्रेजों के 'टोटल रिवोल्युशन' का है, तो इस पर पुनर्विचार करना चाहिए। समग्र-क्रांति, क्रान्ति में आंशिकता के दोष को दूर करने और जीवन के हर बिन्दु को स्पर्श करने के लिए व्यवहृत होना चाहिए न कि विकास या राहत के काम को नया आवरण देने के लिए। विकास के काम की क्या यह कसौटी नहीं होनी चाहिए कि यथास्थिति को बदलने की तीव्रता में उससे किसी प्रकार की कमी न आये, बल्कि वर्तमान ढाँचे को जड़ता और उसके विकास की आवश्यकता अधिक स्पष्ट रूप में सामने आये ताकि परिवर्तन की तीव्रता और अधिक बढ़े?

रामचन्द्र राही

मरौना में क्रांति दर्शन

परमेश्वर कुमर

[श्री परमेश्वर कुँवर, भू० पू० विधायक हैं जो तीन बार सहरसा जिले के महिषी क्षेत्र से बिहार विधान सभा के लिए चुने गये। संयुक्त समाजवादी दल के निष्ठावान् कार्यकर्ता के नाते गरीबों, पीड़ितों और शोषितों के लिए आप प्रचलित समाज व्यवस्था के साथ निरंतर संघर्ष करते रहे हैं। भूदान आन्दोलन में आप ने सक्रिय योगदान किया है। भूदान के विकसित रूप ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य आन्दोलन में आपने जो नयी क्रान्ति का दर्शन किया वह इस लेख में प्रस्तुत है। —सं०]

मरौना प्रखंड का ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य आन्दोलन का समारोह दिनांक १८-६-७१ को मनहरपट्टी में होनेवाला था। कृष्णराज भाई और निर्मला बहन के साथ मैं भी हो लिया। मुझे इस आन्दोलन को नजदीक से देखना और समझना था। उस दिन मौसम अत्यन्त खराब था। मेघाच्छादित आकाश में से रुक रुक कर रिमझिम रिमझिम बादल बरस पड़ते थे। कोशी में बाढ़ आ गयी थी। बाढ़ का वह पहला दौर था। एक गुजराती भाई के शब्दों में, बाढ़ पूरे विस्तार में फैल गयी थी। एक गाँव से दूसरे गाँव में जाने के लिए अनेक जगहों में पानी पार करना होता था। आना जाना बहुत कष्टसाध्य हो गया था। हमलोग समझते थे कि समारोह नहीं हो सकेगा। लोग आयेंगे कैसे, सभा कहाँ होगी, इसी चर्चा और उधेड़बुन के साथ करीब चार मील नदी में नाव पर गये। सोहनपुर की ग्रामसभा के अध्यक्ष की नाव थी, ग्राम-शान्तिसेना के लोग खेनेवाले थे। सोहनपुर की शान्तिसेना के नायक लाउडस्पीकर बजा रहे थे। नाव पर से उतरने के बाद वर्षा, कीचड़, पानी से जगल का रास्ता, टेढ़ी मेढ़ी सड़कें, मेड़ों से हो कर हम सभी सम्हाल सम्हालकर पैर उठाते और रखते जा रहे थे। कौन सी कामना थी? न वोट लेना था, न विधायक या सांसद बनना था। कोई महाराष्ट्र से आये हैं, कोई राजस्थान से। निरहंकार, निष्काम निरपेक्ष वृत्ति से प्रकृति के ताण्डव से जूझ रहे हैं। सामाजिक क्षेत्र में निष्काम कर्म-योग का प्रयोग चल रहा है। ईश्वर का काम ईश्वर के लिए कर रहे हैं। हम मात्र कर्म करते हैं, फल ईश्वर को अर्पण करते जाते हैं। इस भूमिका पर चरित्र, आचरण और व्यक्तित्व के निर्माण का कार्य चल रहा है। हमलोग मनहरपट्टी पहुँच गये। रिमझिम कुछ तेज हो गया। हमलोग तेजी से स्कूल में घुस गये। इस इलाके में न रेल जाती है, न बस, न

जोर। एक मित्र के शब्दों में एक ही तरीका दीख रहा है, 'चरणम् चरणम्' गच्छामि।

कर्म योग से अनन्त शक्ति का स्फोट होता है। यह पहले पहल मैंने मनहरपट्टी में देखा। कर्मयोगियों के मार्ग की बाधाएँ आप से आप दूर हो जाती हैं। ईश्वर के निमित्त किये जानेवाले कर्म बाधाओं और आपदाओं में अपना मार्ग प्रशस्त कर लेते हैं। वर्षा बन्द हो गयी, धूप हो गयी। स्कूल पर सभा होनी थी। सभास्थल सचमुच भर गया था। इतनी विपरीत परिस्थिति में भी अधिकांश ग्राम-सभाओं के पदाधिकारी और शान्ति-सेना-नायक पहुँच गये थे। झुंडों में नारे लगाते, लोग आते थे। धनी, गरीब, भूपति, भूमिहीन सभी एक साथ, एक नारा लगाते थे। लगता था जैसे वर्ग निराकरण का प्रयोग शुरू हो गया है। न किसी को धन का बड़प्पन था और न किसी को निर्धनता की हीनता थी। सभी का एक उद्देश्य था—प्रेमाधारित समता के समाज का निर्माण। कानून के रास्ते से आ हुआ, पिछले लेनिन चौबीस वर्षों से लाखों ने देखा और समझा है। एक इन्सान का सहार कर दूसरे इन्सान का निर्माण नहीं हो पाता। इस रहस्य को भी लाखों ने समझ लिया है। तो इसके अतिरिक्त और कौन सा रास्ता हो सकता है? इसलिए तो सारा मरौना प्रखण्ड इस रास्ते पर चल पड़ा है। यह सब महेन्द्रजी और उनके साथियों की तपस्या का फल है।

मरौना में जो चीज सबसे आकर्षक लगी, जो हर क्षण मेरे मन को खींच रहा था मालकियत-विसर्जन का नया दृष्टिकोण। एक ऐसा समाज बनेगा जिसमें मालकियत किसी की नहीं रहेगी, लेकिन उपभोग का अधिकार सबका होगा। 'शक्ति के मुताबिक काम और जरूरत के मुताबिक दाम'—इसी सिद्धान्त का सुन्दर उद्घाटन ग्रामदान कर, सारे देश की भाषा में उसी का रूपान्तर है।

वर्ग-संगठन, वर्ग-संघर्ष और वर्ग-राज्य के माध्यम से आज तक शक्ति के मुताबिक काम और जरूरत के मुताबिक दाम का कार्यान्वयन नहीं हो सका। उलटे कमरतोड़ काम और उस पर दानवी राज्य और महायुद्ध का माहौल बनता है। गाँव की सम्पूर्ण सम्पत्ति पर गाँव की मालकियत गाँव का अपना राज, अपना बल, अपना प्रयास सर्वानुमति से निर्णय। आज तक यह नहीं बना। आज हम प्रत्येक व्यक्ति अलग अलग हैं, इसलिए निःशक्त, वाणीहीन हैं। गाँव और समूह की संगठित शक्ति के सामने दिल्ली को समर्पण करना होगा। मगर, गाँव और गाँव-समूह को संगठित करने का इसके अतिरिक्त रास्ता ही क्या है?

मरौना में जो नेतृत्व बन रहा है उसमें भी एक अपूर्वता है। लेकिन नेतृत्व नहीं समग्र नेतृत्व बन रहा है। वह नेतृत्व आस-पास का नहीं, दल का नहीं, न कहीं वर्ग का भाव, न शिक्षा और पुरुषार्थ का दम्भ, राजनीति-निरपेक्ष, एक आध्यात्मिक वातावरण में समर्पण के निमित्त बनता हुआ नेतृत्व। एक वर्ग-विहीन वर्ण-विहीन समाज निर्माण के लिए इसी तरह के नेतृत्व की आवश्यकता है ऐसा मुझे दर्शन हुआ। इस नेतृत्व में 'प्रभुता पाई काहि मद नाहिं' का पूर्ण विलोप होता है। ऐसे नेतृत्व से इतिहास के उस अध्याय का अन्त हो जाता है जिसमें कभी स्तालिन, कभी माओ कभी हिटलर आदि व्यक्तित्व उभर आते हैं। सभा की सदारत मुझे करने कहा गया। मैं न निर्णय था, न आकांक्षा और कामना रहित। फिर भी सदारत करने के लिए मेरा नाम पेश किया गया। कृष्णराज भाई के प्रवचन हुए। बिलकुल नया सुना। कैसे काम को आगे बढ़ाया जाय—नया संगठन को दीक्षा। महेन्द्रजी ने मरौना प्रखण्ड में काम का एक संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत किया। किसने किया, किसका पुरुषार्थ, कौन सी स्ट्रेटजी—इसकी कोई चर्चा नहीं, सब ईश्वर की कृपा से हुआ। एक निरहंकार नेतृत्व। मैं मुग्ध था। क्या इस तरह के प्रच्छन्न क्रान्तिकारियों की सभा की सदारत करने की योग्यता मुझमें है? यह प्रश्न मुझे बारबार कुरेद रहा था। मैं भाव-विह्वल हो उठा। मैं बोल रहा था। पूँजीवाद और संसदीय प्रजातंत्र एक ही गर्भ से निकला है, उपनिवेशवाद और मताधिकार की शय्या पर पला संसदीय निर्माण सम्भव है क्या? जातीय और वर्ग-विद्वेष परिपूर्ण नेतृत्व वर्ण विहीन और वर्ग-विहीन समाज की रचना कर सकता है क्या? उस सभा में कुछ कहने के लायक मैंने अपने को नहीं पाया। अन्त में निर्मला बहन की अमृत-वाणी, जैसे—क्रान्ति की अजस्र सरिता प्रवाहित हो रही हो। सभी क्रान्ति की भावना से ओत-प्रोत हो गये। सभा समाप्त हुई। भजन-कीर्तन हुए। फिर, न मौसम की कोई चिन्ता न बाढ़ का भय, सभी अपने अपने गाँव चले गए। कैसे गए होंगे?

अन्त में सर्वोदय सेवकों की बैठक हुई जिसमें यह तय हुआ कि मरौना प्रखंड के बाद अब मधेपुरा प्रखण्ड में सब की शक्ति लगाकर काम पूरा किया जाये। मैंने महिलाओं से तूफान खड़ा करने के लिए सबको निमंत्रित किया। अन्त में निर्मला बहन ने बुद्धदेव की एक कहानी सुनायी।

बुद्धदेव अपने शिष्यों को धर्म-प्रचार के लिए विदेश भेजना चाहते थे। उन्होंने कहा "शिष्यो, मैं तुम्हें ऐसे प्रदेश में भेजना चाहता हूँ, जहाँ पर शायद लोग तुम्हारा स्वागत नहीं करेंगे। तब तुम क्या करोगे?"

"भगवन, हम समझेंगे कि लोग बड़े अच्छे हैं। उन्होंने हमारा स्वागत भले ही न किया हो लेकिन हमारी बात तो सुनी।

शिष्यों ने उत्तर दिया।

"और, अगर उन्होंने तुम्हारी बात नहीं सुनी तो?"

अमर आत्मा गोविन्द रेड्डी

मालती देवी चौधरी

रंग-बिरंगी जमीन, सुहावना खेत, सींचनेवाला बांध—इनके जिस दर्शन से मन प्रसन्न हो उठता था, आज वही सब दृश्य दिल को भारी, सूना सा बना रहा है। हर वक्त स्नेहास्पद गोविन्द रेड्डी का निरलस और कार्यव्यस्त परंतु गोली से दागा हुआ पुतला आंखों में नाच रहा है। उनकी ही लगन और साधना ने हम में खेती का रस भर दिया था।

रेड्डीजी के साथ पहली मुलाकात कब हुई थी इसकी ठीक-ठीक मुझे याद नहीं है। कोरापुट में १९५५ में विनोबाजी की जब पदयात्रा चल रही थी उस समय प्रदेश के बाहर से बहुत गिनेमाने और माहीर यहां आये थे। श्री अण्णा साहब सहस्रबुद्धेजी के ऊपर सर्व सेवा संघ की तरफ से ग्रामदान-निर्माण-कार्य सौंपा गया था और उन्होंने देश भर से परीक्षित और कुशल विशेषज्ञ तथा कार्यकर्ताओं को बुलाकर काम की विभिन्न जिम्मेवारी दी थी। उनमें से भाई गोविन्द रेड्डी खेती के काम में कारगर कलाकार एव व्यक्तित्व थे। वे ग्रामदानी आदिवासी गाँव गरण्डा मे केन्द्र बनाकर बस गये और गांववालों को धान की खेती का उन्नत तरीका सिखाने में जम गये।

निर्माण काम में रेड्डीजी का पहला मोर्चा—अभियान था क्रान्तिकारी चकबन्दी का, निजी मिलकियत के छोटे-छोटे टुकडों का बांध मिटाकर नये सिरे से और बराबर के नाप से क्यारियाँ बनवाने का। लोगों को समझा बुझाकर जमीन की ढलाव को देखकर उन्होंने दस-दस बीस-बीस सेंट की धान की क्यारियाँ बनवायी और उनका बटन इस तरह से करवाया कि एक किस्म की जमीन जिसको जितनी प्राप्त थी वह उसे एक ही जगह पर मिल सके। चकबन्दी के साथ साथ सिंचाई की भी आदर्श व्यवस्था करवाने की कोशिश उन्होंने की और वास्तविक यह सब काम गरण्डा तथा पास के कई गाँवों को आदर्श कृषि फार्म का रंग-रूप दे रहा था, जिसे देखने के लिए उस समय कार्यकर्ताओं की, ग्रामनेताओं की खूब भीड़ लगी रहती थी और देश भर के ग्रामदानी क्षेत्रों में एक चहल-पहल मच गयी थी।

पर तुरत ही रेड्डीजी का ध्यान शराब-बन्दी की तरफ मुड़ा क्योंकि उन्होंने यह देख लिया कि नशा छोड़े बिना ये आदिवासी अपने पसीने का अनाज भोग नहीं सकेंगे, यहाँ तक वे खेती का काम ठीक समय पर और अच्छी तरह से कर नहीं सकेंगे। आदिवासी स्वभावत नशा-प्रिय होता है और इसी के ही कारण वह आर्थिक और सामाजिक दुर्गतियों का शिकार बनता है तथा जीवन की विभिन्न समस्याओं में फँसा रहता है। रेड्डीजी गरण्डा गाँव में आदिवासियों के बीच उन्हीं की एक कोठरी में बिलकुल सीधे सादे रहने लगे और लोगों को नशा छोड़ने के लिए लगातार समझाते रहे। उनके सरल परंतु कठोर परिश्रम करनेवाले जीवन से प्रभावित होकर करीब सभी परिवारों ने शराब छोड़ दिया। पर इने-गिने कई पियक्कड़ बस में नहीं आये। इसलिए उन्हें उपवास करना पड़ा था और उसका अच्छा असर उनपर अवश्य हुआ था। मद्यनिषेध कार्यक्रम के बाद शाकाहारी रेड्डीजी ने आदिवासियों को गोमांस भक्षण से निवृत्त करने के लिए मछली पालन का धंधा हाथ में लिया था और सिंचाई के लिए जो तालाब गरण्डा में खुदाये थे उनमें मछली छोड़ी थी और अपने उद्देश्य में वे काफी हद तक सफल भी हुए थे।

तो रेड्डीजी के चकबन्दी काम का चमत्कार बढ़ता जा रहा था और जिस ढंग से प्रत्येक प्लाट का इतिहास तथा हिसाब वे रखते थे वह किसी भी सरकारी फार्म को लज्जित कर रहा था, यद्यपि उसकी अच्छाइयों को मानने की तैयारी स्थानिक [illegible] सरकारी-अफसरों की नहीं थी। पर काम का प्रभाव इस तरह से बनता गया कि कोरापुट जिले में काम करनेवाले सर्व सेवा संघ के सभी भाई-बहन कार्यकर्ताओं की तीन दिन की एक बैठक गरण्डा में बुलायी गयी और वहीं हमें रेड्डीजी का अच्छा परिचय मिला। उनकी दृढ़ता, कार्यकुशलता, व्यवस्था-शक्ति और सबसे ऊपर प्रेमल स्वभाव तथा मधुर व्यवहार से हम सब बहुत ही आकृष्ट हुए।

रेड्डीजी का सबसे बड़ा गुण यह था कि वे निर्भीक थे। सच्चे और एकनिष्ठ थे। जो काम उन्हें न्यायोचित लगता था उसे हजारों बाधाओं के बावजूद सफलता हासिल होने तक करते रहने से वे हटते नहीं थे। पर गरण्डा के कार्य के दरमियान एक समय वे एकाएक कोरापुट छोड़कर चल निकले। उनके स्वभाव से परिचित हमारे जैसे मित्रों के लिए यह घटना आश्चर्यजनक थी। बाद में उन्होंने अपने कई मित्रों को जाने का असल कारण लिखा और सौभाग्य से एक पत्र मुझे

→"भगवन्, हम समझेंगे कि लोग बड़े अच्छे हैं। उन्होंने हमारी बात नहीं सुनी लेकिन हमें गाली तो नहीं दी।"

"और अगर गाली दी तो?"

"भगवन्, हम समझेंगे कि उन्होंने गाली ही दी, मारा पीटा तो नहीं। लोग बड़े अच्छे हैं।"

"और अगर मारा पीटा तो?"

"भगवन्, हम समझेंगे कि उन्होंने मारा पीटा ही, तो भी जान से तो नहीं मार डाला। लोग बड़े अच्छे हैं।"

"और अगर जान से मार डाला तो?"

"भगवन्, हम समझेंगे कि उन्होंने हमें भगवान का काम करते हुए भगवान के पास पहुँचा दिया। लोग बड़े अच्छे हैं।"

बुद्धदेव ने मुस्कुराते हुए कहा कि "जाओ, शिष्यो! अब तुम धर्म-प्रचार कर सकते हो।"

भी मिला। मालूम हुआ कि एक विशिष्ट कार्यकर्ता ने विनोबाजी के सामने रेड्डीजी के बारे में कुछ झूठी रिपोर्ट पेश की। रेड्डीजी के स्वाभिमान को जोरों का धक्का लगा और उन्होंने कोरापुट छोड़ दिया तथा अपने पुराने कार्यक्षेत्र सागर लौट गये। फिर भी काम को अधूरा छोड़कर जाने के कारण उनका मन बेचैन था। तब वे गरण्डा वापस आये और अपने अधूरे काम को पूरा करने में लग गये।

कोरापुट में उत्कल नवजीवन मण्डल की तरफ से जो सेवा-कार्य हो रहा था, उसके प्रति उनकी श्रद्धा बहुत गहरी थी और उन्होंने जब नवजीवन मण्डल के नाम पर काम करने का निर्णय लिया तब हमें बहुत आनन्द हुआ। वास्तव में उनके जैसे नैष्ठिक ब्रह्मचारी और गांधीजी के जमाने से कार्य करनेवाले सेवक को पाकर मण्डल ने धन्यता महसूस की। पिछले तेरह वर्षों में मण्डल में रहकर सेवा तथा प्रशिक्षण आदि अन्य जो सेवा-कार्य वे कर गये हैं उनकी तुलना मण्डल के इतिहास में विरल है।

गरण्डा गांव बस सर्विस के रास्ते से ७ मील की दूरी पर जंगल के भीतर अवस्थित है। फिर भी रेड्डीजी के प्रभाव से कोरापुट में आज वह एक प्रसिद्ध गांव है। उस गांव के नौजवानों में से अनेकों ने पढ़ाई-लिखाई कर ली है मगर छोड़ दिया है। और इसके कारण वहां की आर्थिक स्थिति काफी सुधर गयी है।

गरण्डा में तेरह साल की सेवा पूरी हो चुकी थी कि सेवाग्राम आश्रम के व्यवस्थापक श्री विमलनारायण भाई ने और गांधीजी की पुत्रवधू निर्मला बहन गांधी ने रेड्डीजी से सेवाग्राम आश्रम में लौटने का आग्रह किया। उन दोनों के बार-बार के अनुरोध से उन्होंने सेवाग्राम गांधी आश्रम की खेती की जिम्मेदारी उठाना कबूल किया और उनके स्थान पर किसी ऐसे कार्यकर्ता को गरण्डा में भेजने को नवजीवन-मण्डल को लिखा, जिसे तेलुगु भाषा आती हो और खेती का अनुभव हो। रेड्डीजी ने स्वयं तेलुगु सीख ली थी (वे मैसूर के थे और उनकी भाषा कन्नड़ थी) और लोगों में अच्छी तरह से घुल-मिल गये थे। आखिर १९६९ जून के अन्त में गरण्डा से वे विदा हुए। सेवाग्राम गांधी आश्रम की विशाल खेती की जिम्मेदारी संभालते हुए भी वे गरण्डा से तथा नवजीवन मण्डल से संबंध रखे हुए थे। अन्त तक वे मण्डल की कार्यसमिति के सदस्य थे। १९७० नवम्बर में भुवनेश्वर में कार्यसमिति की जो बैठक तथा प्रेस कनफरेन्स हुई थी उसमें शरीक हुए थे। प्रेस-कनफरेन्स में उन्होंने गरण्डा क्षेत्र में चल रहे पुलिस-दमन का हूबहू वर्णन किया था। गरण्डा आन्ध्र और उड़ीसा की सीमा पर है और उस क्षेत्र में नक्सलपन्थियों का दो बरस से हलचल है, जिन्हें दबाने के लिए पुलिस का भी लोगों पर मनमानी अत्याचार हो रहा है। गरण्डा गांव के भीतर भी पुलिस की एक छावनी पड़ी है। आदिवासियों को डरा धमकाकर उनसे मुर्गी, बकरी वगैरह छीन लेना, उन्हें शराब पीने को उकसाना, कहीं कहीं उन्हें नक्सलपन्थी कहकर उनपर जुर्म ढाना आदि पुलिस के कारनामों का उन्होंने भण्डाफोड़ किया था।

सेवाग्राम गांधी आश्रम में एक साल रहने के बाद देश भर में अपने साथियों के द्वारा चल रहे कई निर्माण केन्द्र घूम घूम कर देखने का उन्होंने कार्यक्रम रखा। बनरामपुर (पश्चिम बंगाल) में श्री शिशिर भाई के पास कुछ दिन बिताकर वे समन्वय आश्रम-बोधगया के श्री द्वारको भाई के पास पहुंचे थे। फिर बाद में चन्द्रभागाजी के अनुरोध से दनाड़ा-वाद में कुम्भमेला में सर्वोदय-साहित्य बेचने में लगे रहे। तदुपरान्त वे अपने पुराने मित्र स्वामी (साधु) सच्चिदानन्द के पास जाकर बिजनौर (उत्तरप्रदेश) में रहे।

आजन्म ब्रह्मचारी स्वामी सच्चिदानन्द भी निर्भीक और राष्ट्रवादी थे। एम० ए० डिग्री के बाद सर्वोदय आन्दोलन में कूदे थे। कोरापुट में सर्व सेवा संघ के अधीन रेड्डी वगैरह मित्र मण्डली के बीच ग्रामदान पत्रिका के अंग्रेजी संस्करण का संपादन उन्होंने दो साल तक किया था। बड़े ओजस्वी वक्ता और तेज कलमवाले कार्यकर्ता थे। बिजनौर में वे एक अंग्रेजी पाक्षिक 'पर्मनालिटि' निकालते थे और वहां न्यस्तस्वार्थियों का उनसे कुछ विरोध भी हो चला था।

सर्वोदय जगत के ये दोनों सितारे जब बिजनौर में साधनारत थे तब दुर्वृत्तों ने रात को गोली से उनकी हत्या कर डाली। रेडियो से अकाल मृत्यु की जब यह खबर सुनी तब बच्चे की तरह बिलख पड़ी। संभाला नहीं गया। क्या सचमुच वे नहीं रहे? रेड्डीजी के जैसे मीठे स्वभाव के और निर्वैर व्यक्तित्व की कैसे हत्या हो सकती है? मन कैसे यह मान सकता था? पर सचाई सचाई थी और दुर्भाग्य दुर्भाग्य था। जिस बहादुर ने कोरापुट के जंगल में लाठी से बाघ मारा था वह आखिर एक लुच्चे हत्यारे की गोली का शिकार हो गया।

रेड्डीजी का हमारे प्रदेश (उड़ीसा) की बहनों का काम बहुत पसन्द था और उन्हें साधारण सेवा क्षेत्र में प्रोत्साहित करने के लिए वे हमेशा उनके केन्द्रों में घूम आते थे। उत्कल नवजीवन मण्डल और कस्तूरबा ट्रस्ट की बहनें जिस तरह से बरसों से दुर्गम जंगलों में निर्भयता से और लगन से काम कर रही हैं वह उन्हें बहुत आनन्द देता था और उसकी वे बहुत प्रशंसा करते थे।

आजन्म ब्रह्मचारी होते हुए भी वे अपनी छोटी गृहस्थी को बहुत ही व्यवस्थित ढंग से संभालते थे और अपनी रसोई स्वयं करते थे। सुगृहिणी की तरह अपने रसोई-घर और कोठार को अत्यन्त साफ सुथरा और सजा हुआ रखते थे।

दिन बीतते जाते हैं। पर रेड्डीजी का शारीरिक वियोग दिन को पीड़ा देता रहता है। उनकी शहादत हम साथी कार्यकर्ताओं के लिए जितनी दुखदायी है प्रभु से प्रार्थना है कि उससे अधिक प्रेरणादायी बने और दिवंगत आत्मा को शांति मिले। ●

अहिंसक क्रान्ति—व्यापक लोक-शिक्षण

कामता नाथ गुप्त

(गुप्तजी एक अवकाश प्राप्त जज हैं। अपने एक विदेशी मित्र को उनने सर्वोदय आन्दोलन की जो एक झांकी दी है, यह अंश उसी में से है। — सं)

मुझे यह देखकर प्रसन्नता हो रही है कि आप और इंगलैंड में आपके मित्र विनोबाजी के ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य आन्दोलन के प्रशंसक इसलिए हैं कि यह लोकशिक्षण के द्वारा लोगों को अपने पाँवों पर खड़े होने को प्रेरित कर रहा है। गाँव गाँव के संगठन में बढ़ता हुआ यह स्वराज्य नगरों तक फैलेगा।

आपलोग जब यह कहते हैं कि यह आन्दोलन अच्छा है तब हमलोगों को यह कथन अच्छा लगता है, प्रोत्साहन भी मिलता है, परन्तु जब 'अच्छे विश्वास संसार की वर्तमान परिस्थिति में कहाँ तक कारगर हो सकेंगे,' इस तरह की आशंका व्यक्त करते हैं, तब आप के इस रुख से हमें कोई अनुत्साह नहीं होता। यह बात तो सर्वविदित है कि लोगों के मन पर जो बातें पीढ़ियों से आ रही हैं वे अकस्मात् मिटती नहीं, उनके मिटने में समय लगता है। इस भूमिका में जब किसी असामान्य व्यक्ति के मन में कोई नयी हितकारी कल्पना उठती है तब सामान्यजन के मन में एक उत्सुकता उठ खड़ी होती है। उनके मन में जो विचार बैठा रहता है उसे उखाड़ फेंकने को, बहुत लोकशिक्षण और विचार-प्रचार की आवश्यकता होती है। संसार आज एक अस्वस्थ और विभ्रमित आबोहवा में है। इस भूमिका में इस अहिंसक आन्दोलन का जन्म हुआ है।

संसार में आज निराशा एवं अंधकार का जो भी वातावरण है उसमें हर राष्ट्र में लोगों के मन में शान्ति के लिए एक आम आकांक्षा है, सरकारों की चाहे जो योजना हो, वह बहुधा प्रतिकूल दिशा में ही होती है। विज्ञान ने आज इसकी संभावना तो प्रकट कर दी है कि सभी मनुष्य के कल्याण के लायक साधन जुटाया जा सकता है, पर वह जिस दिशा में चलकर सम्भव है, विज्ञान वह दिशा देने में असमर्थ है। वह मिलना तो अध्यात्म से ही सम्भव है। और विनोबाजी के आन्दोलन का मुख्य आधार अध्यात्म ही है। विज्ञान ने जो प्रचुरता दी है वह तो दी ही है पर उसने एक भयंकर चीज और दी है। वह है 'वर्गीकरण'। आज वर्ग है अतः उसके संगठन (यूनियन) भी हैं, जैसे कारखाने के मजदूरों के, किसानों के, खेतिहर मजदूरों के, विद्यार्थियों के, शिक्षकों के, सरकारी कर्मचारियों के वगैरह-वगैरह।

संगठन का धर्म यह है कि अन्य समुदायों के टक्कर में अपने सदस्यों के हित की वह रक्षा करें। इसका नतीजा यह होता है कि समाज में झगड़ा और फूट पैदा होता है। सिर्फ छोटे समुदायों का ही नहीं, सरकारों के भी संगठन हैं जैसे नाटो, सीएटो, सेन्टो आदि। और सबसे ऊँचा 'राष्ट्र संघ' (यू० एन० ओ०) भी तो यही है न। सरकारों के ये संगठन उन-उन देशों के लोगों के नाम की आड़ में बनाये जाते हैं पर ये चलते हैं सरकारी तंत्र के बल पर। इसका लाभ सिर्फ शामिल सरकारों को मिलता है - पर यह सब चलता है, उन लोगों के (राष्ट्र की जनता के) नाम में, जिनके द्वारा वे सरकारें बनायी गयी हैं, किन्तु उसका लाभ मिलता है उन व्यक्तियों को जो सरकार चलाते हैं। और जन साधारण का क्या हाल है ? शासकों के कारनामों के नीचे वे पिसते हैं, चीखते हैं, विरोध (प्रोटेस्ट) करते हैं, और असहाय-सा हल्ला-गुल्ला (एजिटेट) करते हैं। लोगों की इस बेबसी का कारण क्या है ? जिस शक्ति को लोगों को अपने हाथ में रखना था, उसे उन लोगों ने सरकारों के हाथों सौंप दिया है। और ये सरकारें क्या करती हैं ? अनन्त प्रतिज्ञाएँ, जिनके पालन को वे आवश्यक नहीं मानती। और इधर जनता का क्या हाल है ? आज भी उनका शोषण सरकारों के हाथों उसी तरह हो रहा है जिस तरह पुराने राजे-महराजे और सम्राटों के हाथों होता था। अमरीका के एक प्रसिद्ध लेखक, डेनियल पी० हाफमैन ने, जो धर्मशास्त्र के विशेषज्ञ माने जाते हैं, अपनी पुस्तक 'द कमिंग कल्चर' (१९६४ संस्करण) में लिखा है, 'पश्चिमी देशों में एक भावना यह घर करती जा रही है कि सरकारें लोगों की रक्षक नहीं, भक्षक हैं। राष्ट्र की सरकारों और लोगों के सम्बन्ध का आधार आज भी हिंसा और प्रतिशोध ही है। (अध्याय ४, पृष्ठ ५०)

आज के संसार की नयी पीढ़ी को इस बात का साफ-साफ एहसास हो रहा है। इसलिए आज तक के शासकों ने जिस समाज को गढ़ा है उसमें रहने से, उसे मानने से ही वे इन्कार कर रहे हैं।

गांधीजी ने शासकों के इस शोषण-वृत्ति को समझ लिया था। इसीलिए तो मृत्यु के बहुत दिन पहले ही उनने यह रखा था कि 'जो सरकार अल्पतम शासन करती है, वही उत्तम है।' उनने तो यह भी कह रखा था कि—'जब जनता का संगठन हो जायगा तब फौज का टक्कर जनता से होगा, क्योंकि सरकारों के टिकने का सहारा तो फौज ही है। आज बंगला देश में पाकिस्तानी फौज के करामात हम देख ही रहे हैं। और तुर्रा तो यह है कि इतिहास में अभूतपूर्व इस नरसंहार पर सरकारों के संगठन की सबसे बड़ी जमात राष्ट्रसंघ ने अब तक भी इसके विरोध में मुँह से एक भी शब्द नहीं निकाला है। पाकिस्तान की सरकार के नृशंस कामों की क्या वह इससे ताईद नहीं करता अथवा उस पर से क्या वह आँखें नहीं मूँदे हुए है ? इससे तो एकदम प्रत्यक्ष हो गया है कि यह राष्ट्र संघ किसका पक्ष ले रहा है। लोगों का या सरकार का ? पाकिस्तान की फौजी कार्रवाई क्या एक वर्ग का (सरकार का) दूसरे वर्ग के (जनता के) साथ युद्ध नहीं है ? और

मुस्लिम परसनल लॉ

सैयद मुस्तफा कमाल

[सर्वोदय आन्दोलन का उद्देश्य मात्र सामाजिक नहीं, सम्पूर्ण क्रांति लाना है। समाज में एक बड़ी संख्या मुसलमानों की है। भूदान-यज्ञ अपने पाठकों के लिए मुसलमानों की समस्याएं, तथा विभिन्न सामाजिक, राष्ट्रीय, अन्तर्राष्ट्रीय, समस्याओं पर उनके दृष्टिकोण को पेश करते रहना चाहता है। —सं०]

मुस्लिम परसनल लॉ की बुनियाद शरीअत पर है। शरीअत इस्लाम का एक अनिवार्य भाग है। मुसलमान यह मानते हैं कि शरीअत के कानून हर जमाने के लिए व्यवहारिक है। यह जीवन के सभी अंगों को छूता है, और उनसे सम्बन्धित सभी समस्याओं का हल करता है। जीवन में जितने भी कोने होते हैं, उनके लिए शरीअत में दस्तूर है, जिसकी बुनियादी कुरान, हदीस और मुसलमानों के पैगंबर साहब के द्वारा स्थापित की हुई परम्पराओं पर है।

आम मुसलमान मुस्लिम परसनल लॉ में किसी भी तरह का परिवर्तन नहीं चाहते हैं क्योंकि ऐसा होने से शरीअत, मुस्लिम इतिहास और चीने हुए धार्मिक ज्ञान से उनका नाता टूट जायेगा उन्हें यह खटका है। मुसलमानों के यहाँ शादी-ब्याह, तलाक और विरासत इन्हीं कानून के द्वारा तय पाते हैं। जिस समय हिन्दू कोड बिल संसद से पास हो रहा था, उस समय मुस्लिम परसनल लॉ में परिवर्तन की बात की गयी थी। परन्तु उसे स्थगित कर दिया गया था।

मुसलमानों में मुस्लिम परसनल लॉ में परिवर्तन की समस्या पर उनके दृष्टिकोण को तीन भागों में बाँटा जा सकता है।

पहला दृष्टिकोण यह है कि मुस्लिम परसनल लॉ धर्म का एक अनिवार्य भाग है और उसमें कोई परिवर्तन नहीं किया जा सकता। गैरमुस्लिमों के द्वारा इसमें परिवर्तन की कोशिश शरीअत को रद्द कर देने के बराबर होगी। उनका कहना है कि तमाम देशवासियों के लिए संसद के द्वारा एक युनिफार्म सिविल कोड बना दिया जाना धर्मनिरपेक्षता व, धार्मिक स्वतंत्रता के आदर्श के विरुद्ध है। चूँकि संसद में गैरमुस्लिमों की संख्या अधिक है, इसलिए मुसलमान वोट का इस पर कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा और वह परिवर्तन गैर-मुस्लिमों के द्वारा होगा। इस दृष्टिकोण को माननेवाले आम मुसलमान और 'ओलमा' (धार्मिक पंडित) हैं।

दूसरा दृष्टिकोण यह है कि मुस्लिम परसनल लॉ में परिवर्तन हो और सभी देशवासियों के लिए एक ही कानून, युनिफॉर्म सिविल कोड, हो परन्तु इसके लिए अनिवार्य है कि मुस्लिम लोकमत उसके पक्ष में हो। चूँकि मुस्लिम लोकमत अभी उसके लिए तैयार नहीं है इसलिए उसे उसकी आवश्यकता समझाया जाय ताकि मुसलमान स्वयं परसनल लॉ में परिवर्तन के लिए तैयार हों। बिना उनकी सहमति के युनिफॉर्म सिविल कोड बनाना अनुचित होगा। इस दृष्टिकोण के माननेवालों की राय है कि 'ओलमा' से इस समस्या पर बातचीत की जाय।

ऐसा वे इसलिए कहते हैं कि १९३९ में 'ओलमा' ने एक विधेयक का समर्थन किया था, जिसे काजी मोहम्मद अहमद काजमी ने केन्द्रीय संसद में पेश किया था। विधेयक का उद्देश्य था कि भारत में मुसलमान औरतों को न्यायालय के द्वारा 'फसख' (ब्याह को रद्द करने) का अधिकार दिया जाय। यह कानून १९३९ में पास हुआ और इसका नाम डिजोल्यूशन ऑफ मुस्लिम मैरेजेज एक्ट १९३९ है। इस दृष्टिकोण के माननेवाले प्रो० मोहम्मद हबीब, प्रो० मोहम्मद मुजीब, डा० सैयद आबिद हुसैन, डा० सैयद अतहर अब्बास रिजवी, डा० मोहम्मद यासीन और ए० ए० ए० फैजी हैं।

तीसरा दृष्टिकोण यह है कि संसद मुस्लिम परसनल लॉ में परिवर्तन कर दे और सारे भारतवासियों के लिए एक कानून युनिफॉर्म में सिविल कोड बना डाले और मुस्लिम लोकमत की कोई परवाह न करे। यह दृष्टिकोण हमीद दलवाई और ए० बी० शाह का है। इस दृष्टिकोण के मानने वालों का मुसलमानों में न कोई वजन है, न आवाज।

—क्या राष्ट्रसंघ अपने वर्ग का समर्थन नहीं कर रहा है?

इन सब अत्याचारों का जो निदान गांधीजी ने सोचा था, विनोबाजी ने रास्ता वही पकड़ा है। ग्रामदान ग्राम-स्वराज्य के शान्तिमय आन्दोलन के द्वारा वह जड़ से लोकशक्ति को जागृत और संगठित करने का प्रयास कर रहे हैं, जिससे लोग सरकारों के कम से कम सहयोग से अपने दैनन्दिन कामों को निपटा सकें।

विनोबाजी ने जो योजना रखी है, लगभग सारे संसार के लोगों ने उसका स्वागत किया है। इस समय बिहार में उसके कार्यान्वयन की चेष्टा हो रही है—यह आवश्यक है कि प्रगति बहुत धीमी है। बात तो यह है कि स्थापित परम्परा को बदलने में समय लगता है। इसलिए हमलोग अधीर नहीं होते। विनोबाजी ने अपनी योजना के साथ अपने विचार को कभी इस तरह बन्द नहीं किया कि इसके आगे वे सोचते ही नहीं। इससे कोई अधिक व्यापक और दूरगामी योजना उनके सामने यदि आ जाय तो उस पर गौर करने को वे हमेशा तैयार हैं। उन्हें यदि अपनी गलती सूझ जाय तो उसे दुरुस्त करने को वे तत्क्षण तैयार हैं। इस तरह आज की पीड़ित दुनिया को बचाने का रास्ता उन्होंने बता दिया है। अब आवश्यकता है उसके अनुकूल चेष्टा करने की। और चूँकि उनका आन्दोलन शान्तिमय है, अतः इस क्रान्ति के लिए और भी अधिक प्रयास की—गहरे और व्यापक लोकशिक्षण की—आवश्यकता है। ■

ये लोग मुस्लिम परसनल लॉ में परिवर्तन के कायल हैं और यह कहते हैं कि सभी मुस्लिम देशों में मुस्लिम परसनल लॉ में परिवर्तन किया गया है। मुसलमानों की तरफ से इसका उत्तर यह दिया जाता है कि शायद ही कोई ऐसा मुस्लिम देश है जिसने कुरान और शरीअत की सर्वोच्चता से इन्कार किया हो जिन पर मुस्लिम परसनल लॉ की बुनियाद आधारित है। सबों ने शरीअत को ही मुस्लिम कानून की बुनियाद माना है। उन्होंने इसलाम के आरंभिक युग के स्मृतिज्ञों की तरह शरीअत की रोशनी में आधुनिक मुस्लिम समाज के तकाजों को सामने रखकर परसनल लॉ में परिवर्तन किया है ताकि आधुनिक युग के तकाजे पूरे हो सकें। इसका मुस्लिम देश या समाज को अधिकार है। केवल टर्की एक ऐसा मुस्लिम देश है जहाँ मुस्तफा कमाल ने शरीअत को रद्द करके बिलकुल आधुनिक कानून बनाये।

अभी मुस्लिम विश्वविद्यालय अलीगढ़ में धार्मिक शिक्षा और कानून विभाग में एक गोष्ठी का आयोजन किया गया था जो पूरे चार दिनों तक चली। गोष्ठी में निम्नलिखित दृष्टिकोण सामने आये।

१—मुस्लिम परसनल लॉ की समस्या पर ठंडे और संजीदा वातावरण में गौर करना जरूरी है। समाज के आधुनिक माँगों को सामने रखकर 'ओलमा' की रहनुमाई में मुस्लिम परसनल लॉ पर गौर करने की जरूरत से इन्कार नहीं किया जा सकता।

२—जब शरीअत में तबदीली की बात की जाती है तो उसका मतलब यह होता है कि उस कानून में तबदीली की जाय जो ब्रिटिश शासन की एसेम्बली का मंजूर किया हुआ है और जिसे शरीअत एक्ट कहते हैं और जो 'ओलमा' से सलाह व मशवरे के बाद बनाया गया था और आइन्दा भी तबदीली होगी तो इसी शरीअत एक्ट में होगी एवं 'ओलमा' के मशवरे से ही।

३—भारतीय संविधान के अनुच्छेद मुस्लिम परसनल लॉ के ढांचे के विरुद्ध हैं।

४—मुस्लिम परसनल लॉ में तबदीली के तकाजे जिन हलकों से किये जा रहे हैं, मुसलमानों के साथ उन हलकों का जो रवैया रहा है वह उनपर संदेह करने के लिए काफी है।

५—अभी कोई ऐसी शख्सीयत पैदा नहीं हुई है जो शरीअत और सामाजिक तकाजों पर अधिकार रखती हो। इसलिए परिवर्तन का प्रश्न अर्थहीन है। ●

पंजाब-समाचार

जालंधर जिले के शाहकोट ब्लाक (प्रखण्ड) में सघन ग्रामदान पुष्टि अभियान चलाया जा रहा है। श्री उजागर सिंह बिरगा, अध्यक्ष, पंजाब सर्वोदय मण्डल इसका मार्गदर्शन कर रहे हैं। दीनानाथ सहयोग कर रहे हैं। अब तक लोहिया, और शाहकोट में छात्र सभाएँ की जा चुकी हैं। डा० दयानिधि पटनायक का भी कार्यक्रम रखा गया है।

—दीनानाथ
पंजाब सर्वोदय मंडल जालंधर

जिला सर्वोदय मंडल, सीकर (राजस्थान)

सीकर जिला सर्वोदय मंडल के तत्वावधान में जिले के शांति-सैनिकों एवं लोक-सेवकों की सभा २४-६-७१ को रींगस में श्री पूर्णचन्द्र जैन की सन्निधि में हुई।

अन्य कार्रवाइयों के साथ-साथ मंडल ने बंगला देश को मान्यता देने हेतु भारत सरकार तथा अन्य राष्ट्रों से अपील की।

सर्वोदय मंडल का पुनर्गठन हुआ। श्री सोफी बहन अध्यक्षा और श्री केशव कुमार शर्मा मंत्री चुने गये। जिले के लोक-सेवक सदस्य होंगे। श्री रामेश्वरजी अग्रवाल सर्व सेवा संघ के प्रतिनिधि और श्री सोफी बहन राजस्थान समग्र सेवा संघ की प्रतिनिधि चुनी गयी।

ग्रामदान प्राप्ति और पुष्टि के सम्बन्ध में तय हुआ कि जिला सर्वोदय मंडल, ग्रामदान अभियान समिति एवं खादी समिति मिलकर इस कार्य को सम्पन्न करें। इसके लिए शीघ्र बैठक बुलाने को तय किया गया।

मंत्री
—केशव कुमार, शर्मा

पूर्व पाकिस्तान से बंगला देश

(जनता के साथ गद्दारी की कहानी)

२८ जून के अंक से आगे

जिन्ना का यह सोचना सही था कि मुस्लिम राष्ट्र की कल्पना तभी सार्थक होगी जब भारतीय राष्ट्र की कल्पना बनी रहे। उसी अलग मुस्लिम राष्ट्र का आधार क्या होगा ?

सौभाग्य या दुर्भाग्य से भारतीय संघ की एक शक्तिशाली केन्द्रीय सत्ता कायम करने का विचार कायम नहीं रह सका। देश की राजनीति उपद्रवों के भँवर में पड़ गयी, और कांग्रेस या मुस्लिम लीग किसी के नेताओं में यह शक्ति नहीं रह गयी कि १९४७ की घटनाओं को नया मोड़ दे सकें। आखिर, एक अजब पाकिस्तान का जन्म हुआ—ऐसे पाकिस्तान का जिसका एक भाग जिसमें उसकी अधिक संख्या रहती थी सत्ता से एक हजार मील दूर था। भारतीय मुसलमानों के नेता पश्चिमी पाकिस्तान चले गये। रह गये करोड़ों मुसलमान जिन्हें पाकिस्तान का फल भोगना पड़ा।

१९४७ में पाकिस्तान लीग कार्यकर्ताओं के आधार पर बना। भौगोलिक दृष्टि से पाकिस्तान की विचित्रता स्पष्ट थी। एक राष्ट्र की हैसियत से उसकी शिष्ट सत्ता कमजोर थी और, उसका नेतृत्व 'बाहरी' था, उन लोगों का नहीं था जिन्हें लेकर पाकिस्तान बना था। लेकिन इसी बाहरी नेतृत्व के कारण पाकिस्तान की एकता कुछ दिन तक टिकी भी रही।

इन बाहरी 'हिन्दुस्तानी' नेताओं ने शुरू के वर्षों में नये पाकिस्तानी राज्य की वैचारिक नींव डाली। जिन्ना अपने निजी जीवन में 'सेकुलर' था, उसके मूल्य पश्चिमी थे। उसकी इच्छा थी कि पाकिस्तान एक आधुनिक राष्ट्र बने जो गैर-मजहबी राष्ट्रीयता के आधार पर खड़ा हो। ११ अगस्त १९४७ को पाकिस्तान की कान्स्टीट्यूएन्ट एसेम्बली में उसने यह बात कही थी। लेकिन बाद की घटनाएँ, मुख्य रूप से १९४८ में जिन्ना की हत्या-यात्रा, पाकिस्तान को दूसरी दिशा में ले गयीं।

मार्च १९४९ में जब संविधान बना तो उसकी एक शर्त और नियम के रूप में पाकिस्तान एक 'मुस्लिम राष्ट्र' घोषित हुआ। जिन्ना १९४८ में ही मर चुका था, उसके बाद पाकिस्तान के 'बाहरी' नेतृत्व की सत्ता कायम रखने की जिम्मेदारी प्रधानमंत्री लियाकत अली खाँ पर पड़ी। जैसे-जैसे इस नेतृत्व के स्थान पर 'भूमि' (अपने देश के) नेतृत्व की माँग बढ़ती गयी, लियाकत अली का इस्लाम पर आग्रह बढ़ता गया। १९५० में उसने एक षड्यंत्र का पता लगाया जिसमें सेना के कुछ युवा अफसरों ने उसका तख्ता उलटने का षड्यंत्र किया था। एक साल बाद रावलपिंडी में ही लियाकत अली की हत्या हो गयी। लोगों का अन्दाज था कि इस षड्यंत्र में पंजाबी नौकरशाही का हाथ था।

अपने शासन-काल में लियाकत अली ने हमेशा भारत-विरोध पर जोर दिया था। स्वतंत्रता होते ही भारत-पाकिस्तान में भिड़न्त हो गयी थी, और उसके बाद भी ऐसी जगह कि दो पड़ोसी देश मित्र की तरह रहते, पाकिस्तान के नेताओं ने भारत-विरोध के आधार पर पाकिस्तान को मजबूत करने की कोशिश की। अपने लिए संकट बढ़ता देखकर लियाकत अली ने लड़ाई की धमकी को भारत के प्रति पाकिस्तान के रुख का प्रतीक बनाया। इस नीति से लियाकत अली अपने को बचा तो नहीं सका, लेकिन उसके उत्तराधिकारियों को इस्लाम के अलावा एक दूसरा जबरदस्त नारा भी मिल गया। इस्लाम को मजबूर करने की शक्ति उसमें नहीं थी, भारत की दुश्मनी का होआ खड़ा करने की तो थी ही।

लियाकत अली के देहान्त के साथ तीन में से एक अवास्तविकता खत्म हो गयी। धीरे-धीरे 'बाहरी' नेतृत्व के स्थान पर देशी नेतृत्व उभरने लगा। यहीं से पाकिस्तान में बसने वाले विभिन्न समुदायों के बीच सत्ता और अधिकार की छीना-झपटी भी शुरू हुई।

बाहरी नेतृत्व पर प्रहार पंजाब में शुरू हुआ। लेकिन भीतर-भीतर नौकरशाही और सेना, दोनों उभर आने की कोशिश कर रही थीं। इस तरह लियाकत के मरने के बाद सत्ता के संघर्ष में मुख्य स्थान लेने वाला संयुक्त सैनिक-नौकरशाह-गुट (मिलिटरी-ब्यूरोक्रेटिक ग्रुप) सामने आया।

पंजाब का दूसरे प्रांतों के मुकाबिले प्रभुत्व और इस गुट का प्रभुत्व, दोनों एक-दूसरे के साथ जुड़े हुए थे। जब तक बाहरी नेतृत्व था, पंजाब और बंगाल का आपसी विरोध दबा रहा, लेकिन उसके जाते ही वह प्रकट हो गया, और सत्ता में पंजाब और बंगाल के स्थान का प्रश्न मुख्य बन गया। बंगाल के पास संख्या की शक्ति थी, पाकिस्तान में उसका बहुमत था, इसलिए उसने अधिकारों के लिए लोकतांत्रिक रास्ता अपनाया। इसके विपरीत पश्चिमी पाकिस्तानियों ने अपना प्रभुत्व कायम रखने के लिए तानाशाही तरीकों पर भरोसा किया। १९५४ तक खुले संघर्ष के लिए रास्ता साफ हो गया था। पाकिस्तान की केन्द्रीय सरकार में सेना और नौकरशाही के पंजे खूब मजबूती के साथ जम चुके थे। दूसरी ओर पूर्वी बंगाल के चुनाव में 'अवामी लीग' और 'कृषक श्रमिक पार्टी' की विजय हुई।

पूर्वी बंगाल में संयुक्त मोर्चे के मुकाबिले मुस्लिम लीग का सफाया हो गया, और ऐसा लगा कि संयुक्त मोर्चा पाकिस्तान में बुनियादी परिवर्तन करके रहेगा। लेकिन कराँची की सेना-नौकरशाही ने लोकतंत्र के ढाँचे के भीतर तानाशाही को अच्छी तरह घुसा रखा था। १९५३ में गुलाम मुहम्मद ने जबरदस्ती

प्रधान मंत्री नाजिमुद्दीन को बर्खास्त कर दिया।

विदेशी सहायता :

पहली टक्कर में पाकिस्तान की केन्द्रीय सत्ता विजयी हुई। पूर्वी बंगाल के नेताओं पर देश-द्रोह का अभियोग लगाया गया और वे सत्ता से निकाल फेंके गये। ऐसा कैसे संभव हुआ, यह इतिहास का एक रोचक प्रश्न है। जब लोकतंत्र और तानाशाही आमने-सामने थे तो लोकतंत्र विरोधी शक्तियों को भरपूर विदेशी सहायता का बल मिला। इसने उन्हें लोकतांत्रिक शक्तियों के ऊपर ला दिया। उस वक्त पाकिस्तान की राजनीति में जो भी रुचि रखता रहा होगा उसने साफ-साफ देखा होगा कि अमेरिकी सैनिक सहायता ने लोकतांत्रिक शक्तियों को समाप्त करने में कितना जोरदार रोल अदा किया। अमेरिका ने पाकिस्तानी सरकार को अस्त्र-शस्त्र की मदद की जिसके कारण ऐसी स्थिति बन गयी कि लोकतांत्रिक शक्तियों को मार खानी पड़ी। वास्तव में सैनिक-नौकरशाही षड्यंत्र के तीनों मुख्य व्यक्तियों—गुलाम मुहम्मद, इस्कंदर मिर्जा, अयूब खाँ—का वाशिंगटन की बातों में स्थान था। पूर्वी बंगाल के लोग समझ रहे थे कि क्या हो रहा है। उन्होंने अपने १९५४ के घोषणा-पत्र में पश्चिमी देशों से दोस्ती की निरपेक्ष नीति अख्तियार करने और तटस्थता (नान-अलाइनमेंट) की मांग की। यह भी मजेदार बात है कि जब पूर्वी बंगाल की सरकार बर्खास्त की गयी तो इस्कंदर मिर्जा गवर्नर बनाकर ढाका भेजे गये।

चार वर्षों तक यही हाल रहा। संवैधानिक शक्तियों और संस्थाओं का निरन्तर ह्रास होता गया। १९५८ में सेना ने पूरी सत्ता को अपने हाथ में कर लिया। तब से वहाँ की सरकार ने प्रान्तीय विरोध को बराबर कुचल डालना बनाया। एक के बाद दूसरे पाकिस्तानी प्रधान मंत्री—चार साल में पाँच!—ने बीसवीं सदी के बदले का यही रास्ता अपनाया कि भारत को शत्रु बनाया जाय। (क्रमशः)

बिहार के सन्दर्भ में एक योजना

त्रिविध कार्यक्रम की खादी

नासिक-सम्मेलन के अवसर पर सर्व सेवा संघ की प्रबन्ध समिति की एक बैठक में ग्रामाभिमुख खादी के प्रश्न पर चर्चा हुई और इस बात पर चिन्ता प्रकट की गयी कि इस दिशा में जिस तरह का प्रयत्न होना चाहिए था, वह अभी तक नहीं हो सका है। इस समय देश में जिन ग्रामदानी क्षेत्रों में पुष्टि का सघन कार्य हो रहा है, वहाँ ग्रामाभिमुख खादी के लिए अनुकूल भूमिका बनानी चाहिए, और उनमें सुनियोजित प्रयोग शुरू किये जाने चाहिए। श्री जयप्रकाश नारायण ने नासिक के संघ-अधिवेशन में बोलते हुए मुसहरी, मुजफ्फरपुर में होने वाले खादी-कार्य का उल्लेख किया और कहा कि गांवों के संदर्भ में खादी की समस्या दुहरी है—एक खादी को ग्रामाभिमुख करना, और दो, गांव को खादी-अभिमुख करना। हमारे प्रयोग में दोनों प्रक्रियाएँ साथ चलनी चाहिए।

नासिक में होने वाली चर्चाओं में प्रबन्ध समिति के सदस्यों के अतिरिक्त कमीशन के सर्वश्री अण्णासाहब, मनमोहन भाई, सोमभाई, बल्लभाई भी शरीक थे। खादी समिति के मंत्री श्री बो० रामचन्द्रन् जी भी थे। कमीशन के मित्रों की ओर से कहा गया कि अगर ग्रामदानी क्षेत्रों में ग्रामाभिमुख खादी के प्रयोग की दृष्टि से कोई विशिष्ट योजना बनायी जायगी तो कमीशन उसका स्वागत करेगा और साधनादि की सहायता देने के लिए प्रस्तुत होगा।

नासिक में हुई चर्चाओं के आधार पर पटना में २६, २७ मई '७१ को बिहार में खादी तथा ग्रामदान के कार्य में लगे हुए प्रमुख व्यक्तियों की बैठक हुई। बैठक में दो दिनों तक ग्रामाभिमुख खादी के प्रश्न पर गंभीरतापूर्वक विचार हुआ, और निर्णय किया गया कि कार्य शुरू करने की दृष्टि से एक प्रारंभिक योजना कमीशन के पास भेजी जाय।

योजना का प्रारूप

विकास कार्य का नया माध्यम बिहार के कुछ क्षेत्रों में ग्रामदान का पुष्टि-कार्य ऐसे बिन्दु पर पहुँच गया है, जहाँ 'ग्रामस्वराज्य सभा' तथा 'प्रखण्ड-स्वराज्य सभा' के रूप में जनता के माध्यम उपलब्ध हो गये हैं, और उनके द्वारा, आर्थिक विकास के व्यापक कार्यक्रम के अंग के रूप में खादी-ग्रामोद्योग का कार्य हाथ में लिया जा सकता है। अभी वे क्षेत्र निम्नलिखित हैं :

रूपौली (पूर्णिया), मढ़ौरा (सारण), मुसहरी (मुजफ्फरपुर), ताराा (मुंगेर)। प्रखण्ड स्वराज्य सभा निकट भविष्य में बन जायगी।

इन चार प्रखण्डों में ग्रामस्वराज्य सभाओं तथा प्रखण्ड स्वराज्य सभाओं का निर्माण हो चुका है या होने वाला है। भविष्य में खादी-ग्रामोद्योग का नया काम इन चार के अतिरिक्त उन्हीं प्रखण्डों में शुरू किया जायगा जिनमें कम-से-कम इतनी संख्या में गांवों में ग्रामस्वराज्य सभाएँ बन जायँ जिनकी आबादी उस प्रखण्ड की कुल जनसंख्या का ५० प्रतिशत हो, और जिन गांवों में बीघा-कट्ठा के आधार पर बँटने लायक भूमि का कम-से-कम ५० प्रतिशत भाग भूमिहीनों में वितरित हो जाय।

गांवों में ग्रामस्वराज्य सभाओं के माध्यम से चलनेवाले कामों के प्रखण्डस्तरीय संयोजन बाहर के लोगों से पूँजी और कच्चे माल की प्राप्ति, स्टॉकिंग, प्रशिक्षण, अतिरिक्त उत्पादन की खपत आदि की दृष्टि से प्रखण्ड स्वराज्य सभा जानकार लोगों की एक प्रखण्ड-विकास समिति गठित करेगी। विकास समिति का अपना संविधान होगा तथा यह एक रजिस्टर्ड संस्था के रूप में काम करेगी। दैनंदिन कार्यों में यह पूर्ण स्वतंत्र होगी, लेकिन नीति-रीति, कार्य-योजना, बजट और आदि की दृष्टि से इसका संयोजिका

साप्ताहिक
ग्रामभूति

वर्ष : १७ सोमवार
अंक : ४२ १९ जुलाई, '७१

पत्रिका विभाग
सर्व सेवा संघ, राजघाट, वाराणसी-१
फोन : ६४३९१ तार : सर्वसेवा

सर्वोदय

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

बंगला देश का संकट

मानवता की पुकार : अहिंसा का उत्तर

"ओमेगा—१" इंग्लैण्ड से रवाना

१ जुलाई, १२ बजे दिन को 'ओमेगा—१' इंग्लैण्ड में सेन्ट मार्टिन से बंगला देश के लिए चल पड़ी। लगभग तीन हफ्ते में बम्बई पहुँचेगी। वहाँ से भारत के भीतर होती हुई बंगला देश जायगी। सीमा पर रुकेगी नहीं, चलती ही जायगी—वहाँ तक, जहाँ सेवा की जरूरत है। पाकिस्तान की सरकार रोकेगी भी तो रुकेगी नहीं। ओमेगा की सेवा चलती रहेगी—जब तक उसके लोग पकड़ न लिये जायँ, गोली से उड़ा न दिये जायँ, किसी दुर्घटना के शिकार न हो जायँ, या ऐसी दूसरी सेवा-संस्थाएँ न खड़ी हो जायँ जो पाकिस्तानी सरकार से स्वतंत्र होकर काम कर सकें।

'ओमेगा—१' एक ऐम्बुलेंस गाड़ी है। सफेद रंगी हुई है। इस पर 'रेडक्रास' बना हुआ है जिसके चारों ओर इसी वृत्त पर भिन्न रंग में ऊपर यह चिन्ह 'ओमेगा' है। उस गाड़ी में चिकित्सा का सामान है, और चार स्वयंसेवक हैं।

ओमेगा को खुश्की और पानी के रास्ते बम्बई पहुँचकर भारत होते हुए बंगला देश जाना है। अगर पाकिस्तान की सरकार कहीं रोकेगी तो दूसरी जगह से घुसेगी। घुसने का प्रयत्न नहीं छोड़ेगी। ओमेगा में चलनेवाले साथी जानते हैं कि वे किस तरह का जोखिम उठा रहे हैं, लेकिन वे हर स्थिति के लिए तैयार हैं। कुल ६० लोगों में से, जिन्होंने नाम दिये थे, चार चुने गये हैं। ये चार जान हथेली पर रखकर निकले हैं। वे निकले हैं इस संकल्प के साथ, कि दुखी मानवों और उनकी सेवा करनेवालों के बीच जो दीवालें खड़ी की गयी हैं उन्हें नहीं मानना है—परिणाम चाहे जो हो।

चारों साथियों के नाम हैं : मार्क ड्यूरन, पहले पुलिसमैन, अब ड्राइवर और मेकेनिक; [illegible] मेटा, फर्स्ट एड और [illegible] कार्यों में निपुण; [illegible] [illegible], मेकेनिक, ड्राइवर, जो भारत और नेपाल में पैदल यात्रा कर चुके हैं; [illegible], [illegible], जो खुश्की के रास्ते पिछले साल बंगाल आये थे।

—पीस न्यूज, २ जुलाई १९७१ से

• एक विद्वान की विलक्षण सूझ • साथियों के मन में •

खादी और मिल वस्त्र

भूदान-यज्ञ के ता० १४ जून, १९७१ के अंक में श्री बी० रामचन्द्रनजी का 'खादी और मिल वस्त्र' शीर्षक से एक विचार प्रवर्तक लेख प्रकाशित हुआ है। उसमें उन्होंने बताया है कि २५ प्रतिशत मोटा कपड़ा बनाने का भारत सरकार का आदेश कपड़ा मिलें अमल में नहीं ला रही हैं। मिलों का कहना है कि मोटा कपड़ा बनाने में उन्हें प्रति मीटर ७५ पैसे घाटा उठाना पड़ता है। सरकार की ओर से मिलों को मोटे कपड़े के उत्पादन पर प्रति मीटर करीब ५० पैसे सब्सिडी दी जाती है। श्रीरामचन्द्रनजी ने आगे बताया है कि मोटे कपड़े के उत्पादन के लिए सब्सिडी और अन्य सहूलियतें मिलने पर भी कपड़ा मिलें २५ प्रतिशत मोटा कपड़ा बनाने वाली नहीं हैं। वे ज्यादा से ज्यादा केवल १० प्रतिशत मोटा कपड़ा बनायेंगी जो करीब ४० करोड़ मीटर होगा।

श्री बी० रामचन्द्रनजी ने अपने लेख दो बातें मुख्यतः बतायी हैं—एक यह कि सरकार की ओर से खादी को केवल ३५ पैसे प्रति मीटर सब्सिडी दी जाती है, फिर भी कहा जाता है कि खादी को अपने पैर पर खड़ा होना चाहिए। दूसरी ओर मोटे मिल-वस्त्र पर ५० पैसे प्रति मीटर सब्सिडी दी जाती है। इतना ही नहीं, जब-जब मिल वस्त्र उद्योग वाले चिल्लाने लगते हैं सरकार उन्हें अधिक सहायता देती रहती है। श्री रामचन्द्रनजी चाहते हैं कि मिल वस्त्र उद्योग को २५ प्रतिशत नियन्त्रित मोटे वस्त्र के उत्पादन के लिए मजबूर करना चाहिए।

मिल वस्त्र उद्योग को सहायता देने और खादी उद्योग को सहायता बन्द करने की सरकार की कुटिल नीति के बारे में श्री रामचन्द्रनजी ने जो कुछ कहा है वह ठीक है। परन्तु उन्होंने जो उपाय बताया है वह गलत है। उनके लेख का सारा जोर मिल वालों को मोटे वस्त्र के उत्पादन के लिए मजबूर करना चाहिए, इस पर है। उनका यह सुझाव खादी को मारनेवाला है। खादी का ६०-७० प्रतिशत उत्पादन मोटे माल का यानी २० अंक, मेट्रिक ३३ अंक, के नीचे का होता है। पारंपरिक चरखे का ज्यादातर सूत इस अंक के नीचे का ही होता है। पुराने और नये सभी तरह के अम्बर चरखों की बनावट २० अंक का सूत कातने की दृष्टि से की गयी है। इसलिए अम्बर चरखे का सूत भी ज्यादातर मोटा ही काता जाता है। इस तरह खादी का अधिकतर उत्पादन परिभाषा में मोटे माल का होता है।

खादी का कुल वार्षिक उत्पादन १० करोड़ मीटर है। इतने माल को खपाना ही संस्थाओं को आज कठिन हो रहा है। गत वर्षों में खादी की बिक्री करीब २५ प्रतिशत घट गयी है तथा संस्थाओं को अपना उत्पादन कम करना पड़ा है। ऐसी स्थिति में यदि कपड़ा मिलें १० प्रतिशत यानी ४० करोड़ मीटर के बदले २५ प्रतिशत यानी १०० करोड़ मीटर मोटे माल का उत्पादन करने लगें तो खादी वस्त्र उद्योग को बड़ा भारी आघात पहुँचेगा यह स्पष्ट है। मिल वस्त्र की कीमत पहले से ही खादी से कम है। अब सरकार उस पर उसे ५० पैसे प्रति मीटर सब्सिडी देती है अतः उसका मोटा माल खादी से भी सस्ता हो ही जायगा। इसलिए यह स्पष्ट है कि मिलें यदि मोटा माल ज्यादा तादाद में बनाने लगें तो उस हालत में मिल की प्रतिस्पर्धा में खादी का जिन्दा रहना मुश्किल हो जायगा। मिलों द्वारा मोटे माल के अधिक उत्पादन कराने और उसे सब्सीडी देने की सरकार की नीति खादी के हित में नहीं उसे मुलुंदड देनेवाली है, यह स्पष्ट हो जाता है।

खादी कमीशन और सर्व सेवा संघ द्वारा शुरू से प्रयत्न किया जा रहा है कि कुछ खास किस्म के मोटे माल का उत्पादन खादी क्षेत्र के लिए सुरक्षित कर दिया जाय और २० अंक के ऊपर यानी केवल मीडियम और फाइन अंक के माल का उत्पादन मिल वस्त्र उद्योग को सौंपा जाय। परन्तु प्लैनिंग कमीशन तथा सरकार द्वारा खादी क्षेत्र के इस सुझाव को स्वीकार नहीं किया गया और खादी का मूल्यांकन करनेवाली समितियों ने भी इसे व्यावहारिक नहीं बताया। उनकी मुख्य दलील यही रही की मोटे माल की देश में जितनी आवश्यकता है उतने मोटे माल का उत्पादन खादी क्षेत्र नहीं कर सकेगा। लेकिन मोटे माल की कुछ किस्में खादी के लिए सुरक्षित की जा सकती थीं। परन्तु सरकार की नीति मिल वस्त्र उद्योग को अधिक-से-अधिक उत्पादन करने के लिए प्रोत्साहन देने की होने के कारण उसके उत्पादन पर किसी तरह का नियन्त्रण करना सरकार को कभी स्वीकार नहीं हुआ।

इसलिए मिलों को १० प्रतिशत के बदले २५ प्रतिशत मोटा माल बनाने के के लिए मजबूर करने का सुझाव देने के बदले सरकार को यह सुझाव देना जरूरी है कि वह मिल के मोटे वस्त्र पर ५० पैसे प्रति मीटर सब्सिडी देने के बदले उतना ही सब्सीडी चालू ३५ पैसे सब्सिडी के अलावा खादी के मोटे माल पर दें और मिलों को कह दें कि वे मोटे माल का उत्पादन जितना करना चाहती हैं उतना करें। उनपर सरकार की ओर से किसी तरह की सब्सिडी नहीं दी जायगी। श्री रामचन्द्रनजी से मेरी प्रार्थना है कि सर्व सेवा संघ की खादी समिति में तथा खादी कमीशन में इस सवाल को वे उठायें और खादी क्षेत्र के द्वारा सरकार को ऐसा सुझाव देने तथा सरकार द्वारा उसे स्वीकार कराने की कोशिश करें।

—भास्कर दिवाण

एक विद्वान की विलक्षण सूझ

१० जुलाई के वाराणसी के हिन्दी दैनिक 'आज' के अनुसार गांधी-विद्या-संस्थान में 'देश की आर्थिक-सामाजिक संरचना और खादी ग्रामोद्योग के सन्दर्भ में औद्योगिक जीवन-क्षमता' विषय पर हुई विचार-गोष्ठी में प्रसिद्ध अर्थशास्त्री प्रो० ए० के० दास गुप्त ने, जो उसकी अध्यक्षता कर रहे थे, खादी के सम्बन्ध में इन शब्दों में अपनी राय दी : 'खादी की माँग बढ़ाने के लिए फैशन की सहायता ली जा सकती है। उदाहरण के लिए फिल्म अभिनेता और फिल्म अभिनेत्रियाँ खादी को युवकों और युवतियों में प्रचलित कर सकती हैं।' दूसरा सुझाव बम्बई विश्वविद्यालय के अर्थशास्त्र विभाग के अध्यक्ष प्रो० पी० आर० ब्रह्मानन्द ने दिया। उन्होंने कहा : 'एक निश्चित आमदनी से ऊपर के सभी सरकारी कर्मचारियों के लिए खादी पहनना अनिवार्य हो जाय।'

खादी के कार्यकर्ताओं के सामने इधर कुछ दिनों से एक बड़ा सवाल पैदा हो गया है कि खादी की माँग कैसे बढ़ायी जाय। खादी की बिक्री घटने के कारण चर्खे घटते जा रहे हैं। चर्खों से कत्तिनों के हाथ में जो भी थोड़े पैसे पहुँच जाते थे उनसे वे वंचित होती जा रही हैं। अम्बर का इतना बड़ा कार्यक्रम भी चल नहीं पा रहा है। पुरानी सुघटित संस्थाओं को घाटा हो रहा है। पूरक उद्योग के रूप में भी खादी अपना स्थान खोती जा रही है। इसका मुख्य कारण यह है कि मिल-खड्डी में तो सरकार ने पैसा बहुत खर्च किया लेकिन उसने खादी का संरक्षण (प्रोटेक्शन) नहीं किया। गाँवों के उद्योगीकरण की योजना में खादी केन्द्रीय धुरी का उद्योग बन सकती थी लेकिन मुख्य मिल उद्योगों के मुकाबिले सरकार खादी के लिए उत्पादन का एक अलग क्षेत्र नहीं सुरक्षित कर सकी। सरकार की दृष्टि लाखों गाँवों के उद्योगीकरण पर नहीं है। अगर गरीब और बेरोजगार के प्रति उसकी नीयत नेक होती, अगर विकास की उसकी दिशा सही होती, और उसकी योजनाएँ गाँव और शहर के बीच सन्तुलित होतीं तो खादी तथा उसके साथ गाँव के दूसरे उद्योगों की स्थिति आज जो है उससे बहुत भिन्न होती। सरकार ने गांधीजी का युग समझ ही छोड़ दिया।

हमें खुशी है कि हमारे कुछ विद्वानों का ध्यान खादी की ओर जा रहा है शायद इसलिए कि गरीबी, बेरोजगारी, और विषमता के कारण जो हिंसा पैदा हो रही है उससे अन्य शिक्षित जन की तरह वे भी चिन्तित हो गये हैं। लेकिन हमारे विद्वान इस स्थिति से निपटने का उपाय क्या सुझा रहे हैं? प्रो० दास गुप्त चाहते हैं कि उद्योग के रूप में खादी चले। उनका ख्याल है कि अगर खादी को सिनेमा के अभिनेताओं-अभिनेत्रियों की मुहर मिल जायगी तो वह लोकप्रिय हो जायगी। वे फैशन के जादूगर हैं। सरकार, समाज, और विद्वानों से अधिक शक्ति इस देश में अभिनेताओं और अभिनेत्रियों के पास है। उनके हाथ में कानून नहीं है, तलवार भी नहीं है लेकिन फैशन की वह शक्ति है जो एक दिन में खादी भंडारों को लाखों-लाख दिलवा सकती है। प्रो० दास गुप्त खादी को इस शक्ति का लाभ पहुँचाना चाहते हैं। मजाल है कि एक फिल्म में नायक और नायिका खादी पहनकर निकल आयें, और सिनेमा देखनेवाले ५० लाख भारतीय दूसरे दिन खादी खरीदने के लिए टूट न पड़ें। खादी ग्रामोद्योग कमीशन का केन्द्रीय कार्यालय बम्बई में है। अभिनेताओं और अभिनेत्रियों का एक बड़ा अड्डा भी वहीं है। हमारी सलाह है कि विचार-गोष्ठी में व्यक्त किया गया प्रो० दास गुप्त का विचार कमीशन के अधिकारियों के पास भेज दिया जाय ताकि वे फौरन अभिनेताओं और अभिनेत्रियों के पास पहुँच जायें। कहीं ऐसा न हो कि बाड़े के मिल-मालिकों को विचार-गोष्ठी के इस बड़े विद्वान की राय मालूम हो जाय और वे खादीवालों से पहिले ही सिनेमा के तारों और तारिकाओं को प्रभावित कर लें।

खादी बिके या न बिके, लेकिन हम तो कायल हैं अपने विद्वानों की मौलिक सूझ के। कौन कहता है कि हमारे देश के विद्वान समाज के वास्तविक जीवन से अलग एक नकली दुनिया में रहते हैं और उनका दिमाग उसी में बँधा रहता है, और धीरे-धीरे वास्तविकता को समझने में सर्वथा असमर्थ हो जाता है? कम-से-कम अब सामान्य नागरिक की समझ में आ जायगा कि देश में अर्थशास्त्र के साथ-साथ एक अनर्थशास्त्र भी है, जिसके बड़े-बड़े विशेषज्ञ हैं—सरकार के भीतर भी और सरकार के बाहर भी। अगर ऐसा न होता तो क्या रोटी रोजी के बुनियादी सवालों का आज तक कोई हल न सूझता, और स्वतन्त्रता के चौबीस वर्ष बाद खादी को सिनेमा के अभिनेताओं और अभिनेत्रियों की शरण में जाने की सलाह दी जाती?

वाराणसी की जिस गोष्ठी में सिनेमा और खादी का अनुबन्ध जोड़ा गया उसी में अपने एक निबन्ध में प्रो० ब्रह्मानन्द ने कहा है : "हमने रूस और पश्चिम की नकल की और विपरीत दिशा में चल गये। अब समय आ गया है कि हम फिर मुड़ें। गांधी की नये सिरे से खोज होनी चाहिए और व्यापक स्तर पर उनके विचारों के आधार पर कार्यक्रम बनाना चाहिए। अगर ऐसा न हुआ तो मुझे डर है कि भारत दिशाहीन हिंसा की चपेट में पड़ जायगा। गांधीजी के जो कार्यक्रम पुराने पड़ गये हैं उन्हें हम छोड़ दें, लेकिन अहिंसक और समतावादी समाज के उनके लक्ष्य को नहीं। समता के साथ विकास सम्भव है। खादी में एक दूसरी बात भी है। खादी पहनने से हम गरीब के साथ जुड़ते हैं—सीमित मात्रा में ही सही। लेकिन यह भावना [illegible] की समाज-रचना में मर जाती है। अपनी विकास-योजनाओं से हम विषमतापूर्ण समाज बना रहे हैं।"

गांधी को माननेवालों ने विद्वानों और विशेषज्ञों से कभी यह नहीं कहा कि वे गांधी को जैसे-का-तैसा मान लें। उन्होंने इतना ही कहा कि गांधी को समझें। गांधी ने स्वयं 'सत्य के प्रयोग' →

माईलाई

[सैनिक, विज्ञान और विश्व-बंधुत्व के इस युग का सैनिक, निरपराध नागरिकों पर इतने अत्याचार क्यों करता है ? क्या वह स्वयं खून का प्यासा होता है ? या, वह सिर्फ अपने कर्तव्य का पालन करता है ? वियतनाम के माईलाई गाँव का संहार करनेवाले, सिपाहियों के दिमाग की एक झाँकी नीचे लिखे संवाद में, जो बी० बी० सी० और उनके बीच हुई थी, मिलेगी ।—सं०]

प्रश्न—१ : क्या आप सोचते हैं कि जो कुछ आपने किया है उसका कारण यह है कि आपको यही ट्रेनिंग मिली है !

कैरी कासले—एक सिपाही को यही करना पड़ता है। उसका काम है आदेश पाना और उसे पूरा करना।

कारफोलो—हमलोग 'मारो, मारो' कहकर दौड़ा करते थे, इसलिए कि मारना हमारे दिमागों में पैठ जाय और हमें ऐसा लगने लगे कि हम भी मार सकते हैं। फिर भी जब पहली बार हम किसी को गोली मारते हैं तो हमें बार-बार उसकी याद आती है। लेकिन दूसरी बार यह ख्याल होता है कि लड़ाई में मारने के सिवाय दूसरा करना ही क्या रहता है ? चाहे हम मारें या वे मारेंगे।

बर्नहार्ट—वहाँ कौन दौड़ रहा है ? एक औरत दौड़ रही है। हम उसे गोली मार देते हैं। अब वह दौड़ती क्यों नहीं ? आखिर, पिछले गाँव में हमने तीन ही बलात्कार किये, और एक ही बूढ़े आदमी की हत्या की।

कासले—हम लोगों ने गाँव का सफाया कर दिया। ट्रेनिंग में यही करना सिखाया जाता है। इसमें आगा-पीछा करने की गुंजाइश नहीं है। हमें आदेशों का पालन करना है। हमें एक क्षेत्र दे दिया जाता है, और कहा जाता है कि उसमें जो कुछ हो सबको नष्ट कर देना है। इसलिए गाँव में जब हम लोग सबको मार चुके तो सब मकानों में आग लगा दी।

सिम्पसन—हाँ, हमें यही आदेश था कि गाँव में कोई चीज न रहने पाये—स्त्री, बच्चे, शिशु, गाय, बिल्ली, कुछ नहीं। जब हम गाँव में पहुँचे तो पहुँचते ही हमने गोली चलाना शुरू कर दिया। इतने में हमने एक स्त्री को देखा। उसकी पीठ हमारी ओर थी। हमारे अफसर लेफ्टिनेन्ट लाक्रास ने आज्ञा दी—'शूट करो।' मैंने कहा—'आप शूट कीजिए। मैं एक स्त्री को नहीं शूट करना चाहता।'

उसने उत्तर दिया—'मैं आदेश दे रहा हूँ कि उसे शूट करो। अगर तुम शूट नहीं करोगे तो तुम्हें ही शूट कर दिया जायगा।' इसलिए वह ज्योंही दरवाजे में पैर रख रही थी मैंने ५–६ गोलियाँ चलायीं। वह वहीं खतम हो गयी। मैंने जाकर देखा उसकी बाहों में तीन महीने का एक बच्चा था। वह भी मर चुका था।

गाँव में हमलोगों ने पाँच आदमियों को पकड़ा था। एक ने कहा 'इन्हें मार डालो।' एक साथी ने मेरी राइफल ली, और आगे बढ़कर बारी-बारी हर एक की आँख पर रखकर दाग दिया, पाँचों खतम ! इसी तरह लेफ्टिनेन्ट कैली ने पचास आदमियों को शूट कराया, और सियों एक गड्ढा खोदकर भरवा दिया।

प्रश्न—२ : यह सब करने में सिपाहियों को कैसा लगता था ?

बरथोल्ड—सबको मजा आ रहा था। कोई खास बात नहीं, हर एक अपना काम कर रहा था।

कारफोलो—कुछ सिपाही तो जैसे पागल हो गये थे। एक ने एक चाकू लेकर आदमियों को काटना शुरू कर दिया।

सिम्पसन—हाँ, वे शरीर को अंग-भंग कर देते थे। कुछ पकड़े हुए लोगों को बाँध कर लटका देते। उनकी खोपड़ी निकाल लेते। उनका गला काटते। इसमें उन्हें बड़ा मजा आता।

बरथोल्ड—एक कान काट लेने का अर्थ हुआ कि एक वियतकाग कम हुआ।

प्रश्न—३ : सिपाहियों में आपस में इन क्रूर कृत्यों के बारे में कोई चर्चा भी होती थी ?

सिम्पसन—क्यों नहीं ? उस रात हर एक चर्चा कर रहा था कि किसने कितने लोगों को मारा।

प्रश्न—४ : अधिकारियों में क्या प्रतिक्रिया हुई ?

बर्नहार्ट—मेरे प्लेटून सारजेण्ट ने कहा 'अगर कर्नल आये और कुछ पूछे तो इस बात की कोई चर्चा ही मत करना।' लेकिन जब कर्नल आया तो उसने इस तरह पूछताछ की कि मुझे लगा उसे पहले से सब मालूम था।

प्रश्न—५ : ऐसे काण्डों को रोकने का कोई उपाय है ?

बर्नहार्ट—हाँ, हम लोग वियतनाम से निकल आयें। •

—तथा 'एक कदम काफी' से अधिक कभी कोई माँग नहीं की। लेकिन उसकी इतनी माँग भी विद्वानों ने—कितने विद्वानों ने—कब पूरी की ? गांधी के सामने भारत के करोड़ों हाड़-माँस के नर-नारी थे। उसके सामने एक ऐसे समाज का चित्र था जिसमें मनुष्य सम्मान और सहकार के साथ जी सके। उसके मन में शास्त्र या किसी 'वाद' से अधिक मूल्य था मानव का। जिस मानवीय शक्ल के उद्योगीकरण (इंडस्ट्रियलाइजेशन विद ए ह्यूमन फेस) की गांधी ने कल्पना की थी उसके केन्द्र में उसने खादी को रखा था। उसी जगह रखकर खादी को देखना चाहिए। और विशुद्ध विज्ञान के आधार पर उसे स्वीकार या अस्वीकार करना चाहिए। गांधी इतिहास का कोई ऐसा कूड़ा नहीं था जो काल के प्रवाह में बहकर भारत के किनारे आ लगा था, और अपनी सड़ाँध की दुर्गन्ध देश में फैलाकर चला गया।

ठीक है, हमारे विद्वान गांधी को नये सिरे से समझें, परखें, यों ही स्वीकृति या अस्वीकृति में हाथ न उठा दें। अगर वे ग्रंथों और दिमागी ग्रंथियों से बाहर आकर प्रत्यक्ष जीवन तथा उसकी समस्याओं और सम्भावनाओं को देखेंगे तो पायेंगे कि गांधी में पास आज के भारत और आज की दुनिया के लिए बहुत-सी काम की चीजें हैं। •

बंगला देश

रोजर मूडी

(लेखक श्री मूडी इंग्लैंड से निकलनेवाली पाक्षिक पत्रिका 'पीस न्यूज' के सह-सम्पादक हैं। उनके लेखों ने बंगला देश के सम्बन्ध में संसार के लोगों के विवेक को काफी जगाया है।—सं०)

बंगला देश के दुःख का प्याला लबालब भर चुका है, उसकी स्थिति चरम सीमा को पार कर चुकी है। बंगला देश में गत अक्टूबर में एक भयंकर तूफान आया था। लाखों लोग उसमें बेघर-बार हो गये थे। उस समय भी बाहरी देशों ने बंगालियों की सेवा में राहत के जो सामान भेजे थे उसे वहाँ जाने से रोक दिया गया था। इस समय पाकिस्तानी फौज वहाँ जो गजब ढा रही है वह अवर्णनीय है, लोग मक्खी-मच्छरों की तरह मारे जा रहे हैं। लाखों-लाख लोग वहाँ से भाग कर शरण लेने भारत आ रहे हैं। इनकी विपदाओं का क्या कहना। मानो उतनी विपत्ति पर्याप्त नहीं थी। अब शरणार्थी हैजे और भुखमरी के शिकार हैं।

पश्चिमी बंगाल के स्वास्थ्य विभाग के डायरेक्टर ने बताया, "इस विपत्ति से शरणार्थियों को अन्तर्राष्ट्रीय हस्तक्षेप के द्वारा ही उबारा जा सकता है।" उनके हाथों में दवाइयों के जो स्टाक थे वे करीब-करीब समाप्त हो चुके हैं। सीमा पर उद्वासितों के लिए जो कैम्प खुले हैं वे समस्याओं से पूरी तरह निपटने में असमर्थ हैं। शरणार्थियों में से लाखों कलकत्ते की ओर बढ़ रहे हैं। शहर में हैजा न फैले इस दृष्टि से उनका प्रवेश वहाँ रोक दिया गया है और लिखने के समय तक कौन जाने कितने हजार लोग—उनको सहसा सागर तक पहुँच गये हों तो आश्चर्य क्या?—दवा के अभाव में मर रहे होंगे।

भारत में आनेवाले शरणार्थियों का विवरण देना शब्दों से परे है। उसकी व्यवस्था का बोझ भारत पर आ पड़ा है। ऊपी के मार्गन साउथम ने भारत से यह प्रतिज्ञा की है कि इस समस्या के समाधान में वह इसकी सभी संभव मदद करेगा। ब्रिटिश सरकार ने भी करीब दो करोड़ रुपये की मदद भारत को देने की प्रतिज्ञा की है। भारत सरकार ने यह कूता था कि आगामी ६ महीनों में करीब सवा अरब रुपये खर्च होंगे। परन्तु यह हिसाब हैजा फैलने के पहले का था। उस समय तो वर्षा भी शुरू नहीं हुई थी। यह रकम भारत को यदि समय से मिल भी जाय, जिसकी संभावना है नहीं, तो भी समय रहते भारत रुपये का उपयोग किस तरह कर सकेगा कि लोगों की जान बचायी जा सके, समझ में नहीं आता।

यह माना जा सकता है कि कालक्रम से संसार के अन्य देशों की मदद से वह विपत्ति दूर हो जायगी जो पाकिस्तानी फौज के कारण पश्चिमी बंगाल, आसाम, त्रिपुरा एवं उन सीमावर्ती इलाकों पर पड़ा है, जहाँ ये शरणार्थी शरण ले रहे हैं। अगले पखवारे में हम यह खबरें सुन सकते हैं कि दवाएँ, डाक्टर, भोजन की सामग्री, राहत पहुँचानेवाले विशेषज्ञ, और राष्ट्रसंघ के राहत प्रतिनिधि उत्तरी-पूर्वी भारत क्षेत्र की ओर बढ़ रहे हैं, और संभवतः जुलाई समाप्त होते होते इन समस्याओं को काबू में लाया जा सके।

लेकिन विपत्ति की जड़ किस जगह है, मैं उस ओर आप का ध्यान खींचना चाहता हूँ। उद्वासितों को किसी-न-किसी जगह 'बसा' लेने में विपत्ति की जड़ है।

भारत की सीमा पर ये उद्वासित जब बस जायेंगे तो भारत का कितना बड़ा सिर दर्द होंगे, यह कौन बता सकता है? उद्वासितों की यह समस्या तो पैलेस्टाइन अरब की तरह ही होगी जिसका भयंकर आर्थिक और राजनीतिक बोझ इस देश को अगले अनेक दशकों तक ढोना पड़ेगा। भला यह दर्द अपने सिर लेना भारत क्यों चाहे?

ब्रूस केन्ट ('वार आन वान्ट' के एक डायरेक्टर, जो उद्वासितों को देख-सुन कर गत सप्ताह लौटे हैं) ने भविष्यवाणी की है कि भारत में विशाल पैमाने पर 'साम्प्रदायिक दंगों' की संभावना एकदम सामने है। कारण यह है कि पाकिस्तानी फौज बंगला देश से हिन्दुओं को खदेड़ रही है। ये भारत आकर जोतने की जमीन और जीने के लिए रोजी-रोजगार के लिए पूरी कोशिश करेंगे। यों भी पश्चिमी बंगाल संसार के सबसे अधिक सघन कृषि-आधारित जीवनवाले क्षेत्र में से है। शरणार्थियों का यह नया बोझ उसकी कमर तोड़ देगा।

भारत सरकार इन खतरों को अच्छी तरह समझती है। कुछ सप्ताह पहले यदि वह इन उद्वासितों को भारत के विभिन्न हिस्सों में भेज देती तो, संभव है, तत्कालीन समस्याओं का समाधान हो जाता, ऐसा दीखता। अब हैजा-वाहकों को देश के विभिन्न हिस्सों में फैलाना आत्महत्यावत् होगा। अगले ६ महीनों में इन उद्वासितों को वह उनके देश—पूर्व बंगाल—में भेज दे, यही उसका सर्वप्रमुख लक्ष्य हो सकता है।

यह काम संभव किस तरह है? तीन में से एक समाधान की संभावना है। पहली—पाकिस्तान जो बार-बार भारत को उत्तेजित कर रहा है वह जब असह्य हो जायगा, यानी जब भारत इस नतीजे पर पहुँच जायगा कि शरणार्थियों के भारत-आगमन को किसी भी कीमत पर रोका जाय, तब भारत की सेना सीमा पार कर बंगला देश में घुसेगी और पाकिस्तानी फौज को वहाँ से हटा कर इन शरणार्थियों को अपने घरों वापस जाने की सुविधा पैदा कर देगी।

दूसरी—पाकिस्तान सरकार पूर्व बंगाल के साथ यह समझौता कर ले कि

उद्वासितों को बसाने के लिए एक फौज-रहित क्षेत्र बनाया जाय और राष्ट्र संघ को इसकी देख-रेख के लिए आमंत्रित करे।

तीसरा—पश्चिमी देश पश्चिम पाकिस्तान को कोई भी आर्थिक मदद देना तब तक बन्द कर दें जब तक वह पूर्व बंगाल से अपनी फौज वापस न बुला ले, जिससे उद्वासित अपने-अपने घर निर्बाध लौट सकें।

पहली स्थिति में दूसरे पाकिस्तान-भारत युद्ध की सम्भावना है। जो कुछ दीख रहा है उससे यह अनुमान लगाया जा सकता है कि चाहे युद्ध से, चाहे बातचीत से, कश्मीर पर कब्जा कर लेने के लिए याह्या खाँ पूरब में विस्तृत पैमाने पर भारत को उत्तेजित करने को कटिबद्ध हैं। यह कहा जा सकता है कि पाकिस्तान सरकार अपने वर्तमान मूड में पूर्व बंगाल को खो देने पर तुली हुई है जिससे वह पश्चिम में वृहत्तर पाकिस्तान बना ले सके। पाकिस्तान की इस नीयत के कार्यान्वयन में चीन की मदद तो मिलने वाली है ही।

दूसरा समाधान तो सबसे अधिक वाहियात है। ऐसा करने से गाजापट्टी का दूसरा संस्करण ही तैयार होगा; वह चाहे सीमा के उस पार ही क्यों न हो। जब तक पाकिस्तान फौज के बल पर पूर्व बंगाल को अपने चंगुल में रखेगा तब तक ये उद्वासित खुशी-खुशी तो घर नहीं ही लौटेंगे, उन्हें बन्दूक की नोक के बल लौटने को बाध्य भले ही किया जाय।

इस तरह हमारे सामने अब सिर्फ तीसरा समाधान शेष रह जाता है। यह कहने में मुझे कोई हिचक नहीं कि इसकी सम्भावना अत्यन्त ही क्षीण है। गत मार्च में ज्योंही पाकिस्तान ने बंगला देश पर आक्रमण किया, हमलोगों ने अपना यह दृढ़ मत प्रगट कर दिया कि शान्तिपूर्ण समझौते के लिए यह आवश्यक है कि पश्चिमी पाकिस्तानी फौज को पूर्व बंगाल से हटा लिया जाय। तब से हम लोग इस बात पर ध्यान आकर्षित करते रहे हैं कि पूर्व बंगाल में राहत बाँटने का काम पश्चिमी पाकिस्तान वालों के हाथ हरगिज नहीं दिया जाय, कारण कि इसका उपयोग वे जनता के दमन में ही करेंगे।

इस समय इस बात पर जोर देने की आवश्यकता तो और भी अधिक है। जब तक पाकिस्तानी फौज पूर्व बंगाल से वापस चली नहीं जाती, तब तक उद्वासित तो भारत आते ही रहेंगे और उनका बोझ भारत पर इतना बढ़ जायगा कि भारत को युद्ध घोषित करना पड़ेगा। जब तक पश्चिमी पाकिस्तान अपनी फौज वापस बुला नहीं लेता तब तक ये उद्वासित भारत से लौट कर घर जायें इसकी तो जरा भी सम्भावना नहीं है।

जब तक पश्चिमी पाकिस्तान पूर्वी बंगाल से निकल नहीं आता, तब तक उन-लोगों की हालत जो वहाँ पड़े हुए हैं (और भारत में आये शरणार्थियों को जितनी कठिनाईयों का सामना करना पड़ रहा है, उससे कई गुना अधिक कष्ट वे वहाँ भोग रहे हैं) दिन-ब-दिन बिगड़ती ही चली जायगी। मैं जिस भाषा का प्रयोग कर रहा हूँ उससे अधिक सख्त (स्टाँगर) भाषा का प्रयोग असम्भव है, कारण यह है कि बंगला देश के लोग जिस घोर दुर्दशा से गुजर रहे हैं, वह चरम-सीमा तक पहले ही पहुँच चुकी है। हैजे से भारत में यदि वे हजारों-हजार की संख्या में मौत की गोद में पहुँच रहे हैं तो बंगला देश में वे लाखों की संख्या में मौत के घाट उतारे जा रहे हैं।

भारत के पूर्वी-उत्तरी हिस्से में आज जो दर्दनाक हालत है उस ओर यदि अपनी चिन्ता हमलोग अभिमुख कर दें तो वह बात तुलनात्मक रूप से हल्की होगी और उसका औचित्य भी समझा जा सकता है। वस्तुस्थिति तो यह है कि उद्वासित शरणार्थियों की समस्या का समाधान और भारतीय उपमहादेश में युद्ध से बचने की कुंजी अभी भी बंगला देश में है। 'सेना बाहर जाये, राहत देश में आये', यह माँग हम आज करें, इसकी जरूरत पहले जितनी थी आज उससे बहुत अधिक है। ●

पूर्व पाकिस्तान से बंगला देश

(जनता के साथ गद्दारी की कहानी)

जब फौजी शासन लागू हुआ और अयूब खाँ राष्ट्रपति हो गये तो पूर्वी बंगाल की जनता की यह आशा जाती रही कि उसकी फरियादें सुनी जायेंगी। अयूब खाँ ने अपने समय में पूर्वी बंगाल को उप-निवेश बनाने के क्रम को तेजी से आगे बढ़ाया। सत्ता की उसने तीन सीढ़ियाँ बनायीं, लेकिन सत्ता की कुंजी सेना और नौकरशाही के ही हाथ में रही। सन् १९६२ में एक नया संविधान लागू हुआ, लेकिन राजनैतिक दलों के लिए कार्यक्षेत्र बहुत सीमित रखा गया। अयूब ने सन् १९५८ में जो अधिकारवादी ढाँचा कायम किया था उसमें उसकी 'बेसिक डिमाक्रेसी' की योजना से कोई अन्तर नहीं पड़ा, बल्कि नीचे से ऊपर तक उसके समर्थकों और पिट्ठुओं की एक बड़ी जमात तैयार हो गयी।

पूर्वी बंगाल का उचित प्रतिनिधित्व न सेना में रखा गया, न नौकरशाही में। देश की ५५% जनसंख्या पूर्वी बंगाल में थी, लेकिन देश की सेना में केवल १०% बंगाली थे। बड़ी नौकरियों में भी बहुत कम बंगाली थे। राजनैतिक दलों को काम करने की जितनी छूट मिली थी उससे वे सेना और नौकरशाही का मुकाबिला नहीं कर सकते थे।

अयूब पाकिस्तान की राजधानी कराँची से इसलामाबाद ले गया। इससे पंजाबियों की प्रधानता बढ़ी। कहीं किसी ओर यह कोशिश नहीं थी कि बंगालियों की आकांक्षाओं को समझा जाय, और उन्हें पूरा किया जाय। अयूब खुद मानता था कि बंगाली दब्बू और निकम्मे होते हैं। उसने देखा था कि सन् १९४८ में किस तरह सेना के एक अफसर के आ जाने पर

बगावती भाग खड़े होते हैं। वह मानता था कि पूर्वी बंगाल और पश्चिमी पाकिस्तान में जो अन्तर है वह इसलिए है कि पश्चिमी पाकिस्तान के लोग ज्यादा योग्य और कर्मठ हैं।

लगभग दस साल तक पूर्वी बंगाल की जनता को मौका नहीं मिला कि वह कोई राजनैतिक या सामाजिक आंदोलन कर सके और अपनी भावनाओं को प्रकट करे। उसे बराबर दबाए रखा गया। शेख मुजीबुर्रहमान जैसे लोगों पर देश द्रोह का मुकदमा चला और वे जेल में डाल दिये गये। मजे की बात यह है कि पूर्वी बंगाल के सार्वजनिक जीवन में जो तीन सबसे बड़े व्यक्ति हुए—सुहरावर्दी-१९४८, फजलुल्हक-१९५४; मुजीब-१९६६, उन सब पर देश-द्रोह का अभियोग लगाया गया।

इन घटनाओं से पूर्वी बंगाल की जनता की यह धारणा दृढ़ होती गयी कि जब तक पाकिस्तानी राष्ट्र की बुनियादें नहीं बदलेंगी तब तक उसकी सुनवाई नहीं होगी। उसने देख लिया कि उसे दबाकर रखने के लिए बार-बार भारत का हौवा खड़ा किया जाता है। उसे पाकिस्तान की पूरी विदेश-नीति ही अस्वीकार थी। वह इस नतीजे पर पहुँच गयी कि जब तक भारत-पाक सम्बन्ध नहीं बदलेंगे तब तक पाकिस्तान की राजनीति को बदलने की कोशिश सफल नहीं होगी।

जब सन् १९६९ में अयूब का शासन खत्म हुआ तो उसके खिलाफ दो शक्तियाँ काम कर रही थीं। खुद पश्चिमी पाकिस्तान में जो लोग प्रगतिशील और लोकतांत्रिक विचारों के थे उन्होंने देखा कि अयूब की रचना में लाखों के बदले कुछ थोड़े से परिवार खेल खेल रहे हैं, और उन्हीं की जेबें गर्म हो रही हैं। पूर्वी बंगाल के लोगों के सामने तो यह बात साफ थी कि अयूबशाही के समाप्त हुए बिना उनके लिए कोई भविष्य नहीं है। इतना होते हुए भी पूर्वी बंगाल और पश्चिमी पाकिस्तान की भीतरी भावनाओं में बहुत अंतर था। पश्चिमी पाकिस्तान की लोकतांत्रिक शक्तियां भुट्टो के नेतृत्व में संघटित थीं, जिसके लिए भारत की शत्रुता से बढ़कर दूसरी कोई नीति नहीं थी।

फिर भी, पूर्वी और पश्चिमी पाकिस्तान की शक्तियों में जो एकता दिखायी पड़ी अस्थायी ही सही—उससे अयूब की गद्दी हिली और उसके उत्तराधिकारी याहिया को आश्वासन देना पड़ा कि वह चुनाव करायेंगे और जनता के चुने हुए प्रतिनिधियों को सत्ता सौंपेंगे। लेकिन जो चुनाव हुए उनसे तनाव और अधिक बढ़ गया। सन् १९७० के चुनाव में पूर्वी और पश्चिमी पाकिस्तान में दो अलग-अलग पार्टियों की जीत हुई। दोनों के मिलने का कोई आधार नहीं था। शेख मुजीबुर्रहमान और जुलफिकार अली भुट्टो की राजनीति बहुत भिन्न थी।

चुनावों के बाद क्या हुआ यह सबको मालूम है। याहिया के सामने दो ही विकल्प थे एक, पाकिस्तान की एकता की खातिर वह भुट्टो की परवाह न कर पूर्वी बंगाल से समझौता कर लेता और उनकी स्वायत्तता की मांग स्वीकार करता दो, यह न कर वह पूर्वी बंगाल का दमन करता और स्वयं अपनी तानाशाही की गद्दी पर जमा रहता।

याहिया ने दूसरा रास्ता चुना। दूसरा रास्ता चुनने में उसने ऐसी ऐतिहासिक शक्तियों को उभाड़ दिया है जिन पर वह काबू नहीं पा सकता। पूर्वी बंगाल की जनता ने स्वतन्त्रता की घोषणा कर दी है। फिलहाल पश्चिमी पाकिस्तान में कोई घाटा नहीं दिखायी देता, लेकिन कब तक ? आगे क्या होगा कहा नहीं जा सकता।

पूर्वी बंगाल में लड़ाई कब तक चलेगी, कोई नहीं बता सकता। लेकिन इसमें संदेह नहीं कि पाकिस्तान की पुरानी स्थिति वापस नहीं लौट सकती। पूर्वी बंगाल या तो फौजी शासन में रहेगा, या स्वतन्त्र होगा।

अगर इस्लामाबाद के शासक सोचते हों कि वे बहुत दिनों तक पूर्वी बंगाल को भ्रम में रख सकेंगे तो वे स्वयं भ्रम में हैं। उनके पास इतने साधन नहीं हैं कि घर से इतनी दूर ऐसी लड़ाई को जारी रख सकें। पूर्वी बंगाल के लोग बहुत साहसी साबित हुए हैं। उनके प्रमुख लोग समाप्त कर दिये गये हैं, फिर भी वे डटे हुए हैं। उनका निश्चय और अधिक दृढ़ हुआ है। भारत भी पूर्वी बंगाल का पश्चिमी पाकिस्तान द्वारा दमन कब तक होने देगा ? जिस तरह पड़ोसी के घर की आग अकेले उसी की चिंता की बात नहीं उसी तरह पाकिस्तान का मामिला अब उसका घरेलू मामला नहीं रह गया है।

जो कुछ पाकिस्तान में हुआ है उससे भारत की गंभीर क्षति हो चुकी है। पाकिस्तान का संकट भारत का संकट बन चुका है। लाखों शरणार्थियों के आ जाने के कारण भारत के लिए एक गंभीर स्थिति पैदा हो गयी है। राजनैतिक स्थिरता आर्थिक उन्नति, सामाजिक एकता, सभी दृष्टियों से भारत के लिए संकट पैदा हो गया है। भारत और पाकिस्तान के बीच भौगोलिक ऐतिहासिक और सांस्कृतिक सूत्र अनेक हैं। भारत उन्हें नहीं भूल सकता। भारत इस संकट में नैतिक पहलुओं की भी उपेक्षा नहीं कर सकता। अगर भारत पूर्वी बंगाल पर पाकिस्तान का प्रभुत्व रोकना ही चाहता तो वह उसका कब तक दमन करता रहेगा ? (समाप्त) ●

पूर्णिया जिला ग्रामस्वराज्य समिति

पूर्णिया जिला ग्राम स्वराज्य समिति के नवगठन के लिए समिति की आम सभा की बैठक तारीख ३० मई '७१ को सर्वोदय आश्रम, रानीपतरा में हुई थी। समिति ने अध्यक्ष के चुनाव के बाद अध्यक्ष को भार दिया था कि वे समिति के अन्य पदाधिकारियों एवं कार्य समिति के सदस्यों का मनोनयन कर लें। तदनुसार समिति के पदाधिकारी एवं कार्यसमिति के २५ सदस्य मनोनीत किये गये।

—नरसिंह नारायण सिंह

साथियों के मन में

पुष्टिकार्य में लगे बिहार के कार्यकर्ता साथियों की एक गोष्ठी सिमुलतला, मुंगेर में १९, २० जून को हुई। यह गोष्ठी अनौपचारिक रूप से बुलायी गयी थी। रूपौली (पूर्णिया), सहरसा, वैशाली, मुसहरी (मुजफ्फरपुर), कौआकोल (गया), झाझा (मुंगेर), के मुख्य साथी इस गोष्ठी में शामिल हुए। कुल संख्या १७ थी। गोष्ठी का मुख्य उद्देश्य था अपने काम के बारे में सोचना और सोचकर आगे के लिए रास्ता निकालना। औपचारिकता से अलग हट कर साथियों का यह एक मुक्त मिलन था।

पहले दिन की गोष्ठी में सभी साथियों ने अपने-अपने क्षेत्र के अनुभव रखे। इसमें इस बात की कोशिश थी कि काम करते-करते जो भी खट्टे-मीठे अनुभव आये हैं उन्हें निःसंकोच एक दूसरे के सामने रखा जाय। और, इसीलिए पुष्टि के सिलसिले में जो भी आशाजनक और निराशाजनक अनुभव आये हैं उन्हें सबने स्पष्टता के साथ रखा। लोगों ने यह महसूस किया कि जिस क्रान्ति-शक्ति का दर्शन पुष्टि के कार्य में होना चाहिए वह अभी नहीं दिखाई देती। इसीलिए प्रश्न उठता है कि क्या बीघा-कट्ठा भूमि बाँट देने से या अन्य कुछ विकास-कार्य कर देने से सर्वोदय की क्रान्ति सम्पन्न होगी? श्री कैलाशबाबू ने स्पष्ट कहा कि हम काम में लगे जरूर हैं, लेकिन उसमें से कुछ निकलता नजर नहीं आता। यही "कुछ" जो निकल नहीं पा रहा है उसे हम निकालना चाहते हैं। पुष्टि-कार्य में लगे लोगों के लिए यह प्रश्न चिन्ता का है कि अगर पुष्टि से क्रान्ति का दर्शन नहीं हुआ, समाज-परिवर्तन का मार्ग प्रशस्त नहीं हुआ तो हमारा पुष्टि-कार्य का परिणाम थोड़ा-बहुत राहत-कार्य होकर रह जायेगा, उसमें से क्रान्ति निष्पन्न नहीं होगी।

विभिन्न क्षेत्रों में पुष्टि-कार्य कर रहे मित्रों ने अपना-अपना अनुभव सुनाया जो यहाँ प्रस्तुत है :

(१) अमरनाथ भाई (सहरसा). मैं पुष्टि-कार्य में प्रत्यक्ष तो नहीं लगा हूँ लेकिन ग्रामशान्तिसेना का काम करते-करते वहाँ जो कुछ देखता हूँ उस पर से जो मेरे मन में चिन्तन चलता है उसे पेश करता हूँ। हम पुष्टि का जो कार्य अपने क्षेत्र में कर रहे हैं उतने से मन को समाधान नहीं हो पाता है। शिक्षण की प्रक्रिया में तीव्रता नहीं आती। कितना धीरज रखा जाय? हम धक्का देकर काम को आगे बढ़ाने की कोशिश करते हैं, काम कुछ आगे बढ़ता भी है, परन्तु अपेक्षा से बहुत कम। आखिर कार्यकर्ता कितने दिनों तक कागज लेकर गाँव-गाँव घूमते रहेंगे? यह आन्दोलन जन-आन्दोलन कब बनेगा? पुष्टि के सिलसिले में स्थानीय कुछ नये लोग आते जरूर हैं, परन्तु उतने से शक्ति नहीं बन रही है। विचार का असर कम है और व्यक्ति का ज्यादा। जो ग्रामसभाएँ बनी हैं उनकी बुनियाद मजबूत नहीं है। मेरे मन में एक सवाल पैदा होता है कि जो कार्यकर्ता बाहर से जाकर किसी क्षेत्र में पुष्टि-कार्य में लगते हैं, वे कब मानेंगे कि पुष्टि-कार्य हो चुका, अब उनकी आवश्यकता नहीं है? इसकी कसौटी क्या होगी? हम क्रान्ति के कार्यकर्ता हैं इसकी अनुभूति ऐसे नहीं होती, परन्तु जब हम पुष्टि-कार्य में लगते हैं तो ऐसी अनुभूति होती है। अभी तक हम कार्यकर्ता रहे हैं क्रान्तिकारी नहीं।

अलग-अलग क्षेत्रों में पुष्टि-कार्य करने के बजाय क्यों न एक क्षेत्र में पुष्टि का कार्य किया जाय, उसमें पूरे देश के वरिष्ठ लोग लगें और ग्रामस्वराज्य की हम भी एक 'नक्सलवाड़ी' बनायें। वरिष्ठ [illegible] के [illegible] नेतृत्व नहीं पैदा हो सकता।

कैलाशबाबू (मुसहरी) : हमारे कार्य में ताल-मेल का बहुत अभाव है। बिहार राज्यदान के बाद काम में जो सातत्य आना चाहिए था वह नहीं आया। काम में शिथिलता आ गयी। बाबा के बिहार से जाने के बाद कोई नेतृत्व नहीं रहा। लोक-सेवकत्व सध नहीं पा रहा है। श्री जयप्रकाशजी मुसहरी आये तो हम भी उनके साथ कार्य में लग गये। परन्तु हम देख यह रहे हैं कि एक वर्ष तक पुष्टिकार्य करने के बाद भी उसमें से कुछ खास निकल नहीं रहा है। बीघा-कट्ठा बँट जाय यह बड़ी बात नहीं है, थोड़ी जमीन बँट जाने से होगा क्या? वह भी आमतौर पर भूमि-मालिक बीघा-कट्ठा की भूमि अपने स्थायी मजदूरों को ही देते हैं। दूसरे मजदूर, जिनकी संख्या बहुत अधिक है, छूट जाते हैं।

आज गाँवों में सामन्तवादी संस्कार टूट रहा है लेकिन पूँजीवादी संस्कार बढ़ रहा है। पूँजीवादी संस्कार का कैसे सामना किया जाय यह सवाल है। हमारे वर्तमान कार्यक्रमों का उसपर कोई खास प्रभाव नहीं होता।

जरूर, पुष्टि-कार्य से लोगों में कुछ आशा जगी है। कुछ लोग आगे बढ़ रहे हैं, लेकिन मैं कहूँगा कि अधिक लोग छूट ही रहे हैं। मुसहरी में हमारे इतने दिन कार्य करने के बाद भी केवल दो-तीन व्यक्ति ही सहयोगी मिले हैं। हमारे पुष्टि कार्य का जो भी आकर्षण हुआ है वह क्रान्ति-दर्शन के कारण नहीं। ऐसे लोग क्रान्ति का दूरगामी दर्शन नहीं कर पाते। उन्हें तो बिजली, पम्प आदि जैसी चीजें प्रेरित करती हैं। ग्रामसभा, ग्रामस्वराज्य का क्रान्ति-विचार, आदि उनको प्रेरित नहीं कर पाते। अन्याय, शोषण, का प्रतीकार और विकास-कार्य साथ-साथ हो सके इसका कोई उपाय हमें ढूँढना होगा। अहिंसक प्रतीकार की कोई प्रक्रिया हमें ढूँढनी होगी।

हम लोकशिक्षण उसी तरह करते चले जायें, जैसे करते आ रहे हैं तो काम नहीं बनेगा। हमें सोचना होगा कि ग्राम-सभा की सक्रियता का क्या आधार हो। कोई गाँव उस वक्त संगठित हो जाता है जब उसे बाहर से मुकाबिला करना पड़ता है लेकिन गाँव के अन्दर के प्रश्नों पर गाँव के लोग आपस में संघटित नहीं हो पाते। जे० पी० का मुसहरी में जो प्रयत्न हो रहा है उसका इतना प्रभाव हुआ है कि हमारी जमात पर लोगों का विश्वास जगा है।

ग्रामसभा को सक्रिय करने और अपनी समस्याओं के प्रति अभिमुख करने के लिए हमें कुछ उपाय सोचने होंगे। गाँव में संघटन की कोई शक्ति खड़ी होती है तो निहित स्वार्थ वाले मुकाबिले में खड़े हो जाते हैं।

श्री अमरनाथ भाई के सुझाव के अनुसार कोई एक सघन क्षेत्र बनाने से काम पर अच्छा प्रभाव होगा, ऐसी बात नहीं है, कई क्षेत्रों में काम करना ज्यादा उपयोगी होगा। मुसहरी में देखा यह गया है कि जब एक पंचायत में कार्य होता है तो दूसरी पंचायत प्रतीक्षा में बैठी रहती है।

बद्रीनारायण सिंह (मुजफ्फरपुर) हमने बिहारदान की घोषणा करके कम गलती नहीं की है। हम इस आन्दोलन में अपने अन्य कार्यों और अपनी सारी कम-जोरियों के साथ लगे हैं। हममें समर्पण-वृत्ति का अभाव है। हमारा ऐसा मानस बना है कि धीरे धीरे धीरजपूर्वक यह कार्य करते रहने का है, और उसी तरह हम करते रहें। जब कार्यकर्ता का ही मानस ऐसा है तो जनता छलांग मारकर आगे नहीं जा सकती है।

हम आचार के मामले में बेहद कम-जोर हैं। हमारे मन में भी वही जाति, धर्म, सम्प्रदाय की भावना काम करती है। हमारे आन्दोलन का मार्क्सवाद की तरह वैज्ञानिक आधार नहीं बना है।

रामसेवक ठाकुर (मुसहरी) : इस विचार के वाहक को अपने बारे में स्पष्ट होना चाहिए। मैं देखता हूँ कि गांधीजी के बाद हमारे चिन्तन में समग्रता का अभाव है। कोई ऐसा नेता नहीं है जो सर्वोदय की समग्रता को लेकर नेतृत्व कर सके। गणसेवकत्व के विचार के कारण कोई एक नेतृत्व नहीं रहा और गणसेवकत्व भी नहीं सधा। आज हम गणसेवकत्व की बात कहकर जिम्मेदारी से मुक्त नहीं हो सकते।

जो हम स्वयं नहीं बनना चाहते वही हम दूसरे को बनाना चाहते हैं। सर्वोदय सदाचार का विचार है पर हमारा आचरण वैसा नहीं है। आचार-विचार में तालमेल नहीं है, ईमानदारी नहीं है। यह इस सर्वोदय की क्रान्ति के लिए बाधक है।

हम एक नयी सभ्यता बना रहे हैं, इसीलिए हम छोटे साबित हो रहे हैं। अगर हम छोटे छोटे काम लेकर बड़े कामों से हटते हैं। यह पलायनवाद है।

लक्ष्मणदेवजी (वैशाली) वैशाली में स्थानीय सहयोगी ज्यादा हैं। कुल संख्या ६० होगी। अनुकूलता पैदा होती जा रही है। वैशाली में कार्यकर्ताओं में भरोसा और विश्वास जगा है कि कार्य सम्पन्न होगा।

मैं मानता था कि थोड़े लोगों से हम काम सम्पन्न कर लेंगे, परन्तु ६ महीने के अनुभव से यह लगने लगा है कि थोड़े लोगों से कार्य नहीं हो सकेगा। ज्यादा संख्या में लोगों को इसमें शामिल करना होगा।

आम लोग इस आन्दोलन को आन्दोलन नहीं मानते। ऐसी स्थिति क्यों है ? अन्य आन्दोलनों से लोग आन्दोलित होते हैं, लेकिन ग्रामस्वराज्य का आन्दोलन लोगों को आन्दोलित नहीं कर पाता। सर्वोदय का विचार क्रान्तिकारी है, परन्तु हमारा आचरण इसके विपरीत है।

हमारे संघटन सक्षम नहीं हैं और न क्रान्तिकारी ही हैं। इसके विषय में सोचना आवश्यक है। संयोजन और संघटन में समग्र दृष्टि का अभाव है।

हम अपना कार्य प्रारंभ करते हैं मूल्य बदलने के उद्देश्य से, परन्तु सुधार का काम शुरू हो जाता है। आन्दोलन के संचालन में व्यवहार-बुद्धि का अभाव है। इसके निराकरण के लिए सहचिन्तन की आवश्यकता है।

बाबूराव चन्दावार (जो आजकल वैशाली में समय देने लगे हैं) : वैशाली में घूमने पर एक बात ध्यान में आयी है कि वहाँ स्थानीय लोगों के सहयोग की सम्भावना अन्य जगहों से ज्यादा है। वहाँ विभिन्न दलों के जो लोग काम करनेवाले हैं वे सर्वोदय के कार्य को मानते हैं। दलों की ओर से विरोध की स्थिति नहीं है। भूदान के समय में जैसा अनुभव आया, वैसा ही अनुभव इस बार वैशाली में आया।

कार्यकर्ताओं की बैठक समय-समय पर होती रहनी चाहिए ताकि हमेशा हम यह देखते रहें कि हमारा कार्य सही दिशा में हो रहा है या नहीं। कार्यकर्ता अपने स्तर पर चिन्तन करता रहे, यह नहीं हो पा रहा है, और यही कारण है कि उनमें निराशा पैदा होती है। क्रान्ति में इसका ध्यान रखना आवश्यक होता है। खुलकर चर्चा की परम्परा डालनी चाहिए।

पीड़ितों और शोषितों के मन में बदले की भावना होती है। उनको इससे कैसे बचाया जाय ?

अनिरुद्ध सिंह (पूर्णिया) रूपौली में अब तक पुष्टि का जो काम हुआ है उस पर से हम अब यह कहने की स्थिति में पहुँचे हैं कि प्रखण्डदान पूरा हुआ। इससे ज्यादा कुछ नहीं हुआ है। रूपौली में जो नक्सली आतंक था, वह अब कुछ कम हुआ है। ऐसा हमारे कार्य की वजह से भी हुआ होगा और उनके भूमिगत होने के कारण भी हुआ होगा।

रूपौली की जनता का सर्वोदय की तरफ आकर्षित होने का कारण है विकास के काम होने का आभास। विकास और क्रान्ति का कार्य हमें साथ-साथ करना है। विकास का कार्य हाथ में लेते हैं तो प्रशासन से सम्बन्ध आता है। प्रशासन में घुस

का बोल-बाला है, उसके खिलाफ प्रतीकार की आवश्यकता है।

साथियों में 'टीम' की भावना का अभाव है। राग-द्वेष बहुत ज्यादा है।

आन्दोलन में शुरू की तीव्रता अब कम हो गयी है। ग्रामदान के लिए जनता के मन में तीव्रता नहीं थी, बाबा के मन में तीव्रता थी।

ऊपर से कार्यक्रम तय किए जाते हैं और कार्यकर्ताओं को करना पड़ता है। नीचे के कार्यकर्ताओं की आवाज ऊपर नहीं पहुँचती।

रामकृपाल सिंह (रूपौली, पूर्णिया) स्थानीय कार्यकर्ता विचार समझाने में अक्षम है। जनता को विचार समझा सकने वाले सक्षम कार्यकर्ताओं की आवश्यकता है। हमें कार्यकर्ता नहीं मिलते हैं इसका कारण यह है कि हम जनता से कार्य की शुरूआत नहीं करते। आमलोग यह मानते हैं कि यह विशिष्ट लोगों का कार्य है। विशिष्ट लोगों के आ जाने पर भले ही लोग मदद कर देते हैं परन्तु अपनी जिम्मेदारी मानकर काम नहीं करते।

मजदूरी का प्रश्न रूपौली में उठाया गया है, अतः मजदूरों में आशा जगी है। मालिक को भी यह चीज पसन्द है क्योंकि इससे उनका कार्य बढ जाता है। कबला गाँव की ग्रामसभा ने मजदूरी का प्रश्न उठाया था। अच्छा असर हुआ है। मजदूरी एक रुपये से डेढ़ रुपये हो गयी।

श्यामलीजी (कौआकोल, गया) हमारे कार्य का परिणाम कार्यकर्ता देखते हैं, तो उनमें निराशा होती है। वे देखते हैं कि समाज तो बदला नहीं, जहाँ का तहाँ है, हमने इतने ग्रामदान कराये, इतना पुष्टि का कार्य किया, तो क्या हुआ?

गाँवों में कर्ज की समस्या बहुत बड़ी है। गाँव का आदमी कर्ज चाहता है। कहाँ से कर्ज आवे? बेकार नवयुवक भी गाँव में सिरदर्द है।

क्रान्ति का कार्य वर्षों तक नहीं किया जा सकता है, क्योंकि एक दिन गोली खाकर मर जाना आसान है लेकिन कष्ट में, अभाव में, रहकर ज्यादा दिन कार्य नहीं हो सकता।

केशव भाई (गया): भूदान की हजारों एकड़ भूमि बाँटी गयी, बड़े पैमाने पर भूमिहीनता मिटी, लेकिन उन जगहों में भी नये समाज का दर्शन नहीं होता है। जिन्हें भूमि मिली वे भी क्रान्ति के साधक नहीं बने। उनके अपने जीवन में फर्क नहीं आया। इसका कारण क्या है?

हमारे जो भी संघटन खड़े किए जायँ, ऊपर के संघटन का नियंत्रण नीचे के संघटन पर न हो।

किसी कार्यक्रम को लेकर मुझे निराशा नहीं हुई। निराशा तब होती है जब कार्यक्रम तो हम बना लेते हैं लेकिन उसमें हम दिल से नहीं लगते। जितना हम समय लगाते हैं, उतना हमें समाधान मिलता है।

ग्रामदान-प्राप्ति में एक बड़ी भूल यह हुई कि ग्रामदान की शर्तों को छिपाकर हमने प्राप्ति की चेष्टा की।

भूमिहीनों को हमने नहीं छूआ, उनको प्रभावित नहीं किया। उनको हमने एकदम छोड़ दिया।

शिवानन्द भाई (झाझा, मुंगेर) झाझा पिछड़ा क्षेत्र है। बीड़ी और महुआ का धंधा मुख्य है। तीन महीने का भोजन बाहर से मँगाना पड़ता है। यहाँ पर बाहर के लोगों का प्रभुत्व है। यहाँ के राजनीतिक नेता भी बाहर के हैं। हमने अपने कार्य के सिलसिले में कोशिश यह की कि कुछ नये कार्यकर्ता प्राप्त हों। कुछ नये लोग मिले हैं। हमने एक मित्र-मण्डल बनाया है। हमारी कोशिश यह रहती है कि ग्रामीण लोग आगे रहें और हम पीछे। यहाँ के लोग अपने आप भी सोचने लगे हैं, फिर भी हमारी कठिनाई कम हो गयी है ऐसी बात नहीं है।

जब यहाँ पर आवगर्नमेंट की योजना के अन्तर्गत विकास-कार्य शुरू करने की बात आयी तब हमने गाँव के लोगों से कहा कि ग्रामदान की जो शर्तें हैं उनके पूरा होने पर ही विकास-कार्य शुरू किया जा सकता है। इसके कारण हमने ६ महीने तक विकास-कार्य को रोक रखा था। पुष्टि के कार्य के साथ हमने विकास-कार्य को जोड़ा है।

यहाँ प्रखण्ड-स्वराज्य-सभा बनी है, उसकी माह में एक बार बैठक होती है। ६०-७० गाँव के लोग आते हैं। औसत ६० आदमी की उपस्थिति रहती है। ४-५ घंटे की बैठक होती है, ग्रामसभाओं के कार्य की रिपोर्टिंग की जाती है, गृहस्थी की चर्चा होती है। हम भावनात्मक पहलू को संघटित करने की कोशिश कर रहे हैं।

भूदान किसानों का संघटन बनाया है। कोई प्रसंग आता है तो गाँव के लोग उसमें पड़ते हैं। कार्यकर्ता उसमें नहीं जाते। हमने गाँव के लोगों के सामने यह बात स्पष्ट कर दी है कि जिसकी समस्या है वह जब स्वयं खड़ा होगा तभी हम उसकी मदद करेंगे। यहाँ पर इस बात को लोग समझने लगे हैं।

इस प्रखण्ड में राहत-कार्य के लिए जो सरकार की योजना है उसका ठीका ग्राम-स्वराज्य सभा को दिया जाय, ऐसी माँग प्रखण्ड अधिकारी से की गयी है। इसका विरोध प्रखण्ड के मुखियों की ओर से किया जा रहा है, क्योंकि वे सारा ठीका लेते रहे हैं। गाँव के एक-एक व्यक्ति के हस्ताक्षर से बी० डी० ओ० को निवेदन दिया जाय, ऐसा सोचा गया। बी० डी० ओ० ने ग्रामसभा को अपजीकृत घोषित किया और काम नहीं दिया। यहाँ का राहत-कार्य बन्द पड़ा है।

विरोध में सब मुखियों का प्रतीकार हमने नहीं किया। अपना कार्य हम करते रहे। हम उन्हें अपनी बैठकों में आमंत्रित करते हैं। इसका परिणाम यह हुआ कि कुछ मुखिया ढीले पड़े हैं। ग्रामसभाओं और प्रखण्ड स्वराज्य-सभा के संघटन से राजनीतिक लोगों में घबड़ाहट है।

(क्रमशः)

भरत भाई : एक अखण्डित आस्थावाले साथी

भरत भाई : एक ही सपना

नयी पीढ़ी का नशापन और उसकी प्रखरता का पूरा अहंकार लिए जब हम ५८ वर्षीय, हमारी निगाहों में पुरानी दकियानूस पीढ़ी के, भरत भाई के साथ नगरों में ७ मई की रैलियों के अन्दर की जोरदार चर्चा कर रहे थे, उस समय उनकी क्षीण आवाज और धैर्यपूर्वक धार शब्दों में अपनी बात कहने के ढंग को हमने उनका पुरातनपन मान लिया था। हमारे मन के किसी कोने में यह बात गहरी पैठ गयी थी कि ये बूढ़े लोग अब चुक गये हैं। इनसे किसी नयी क्रान्ति की आशा तो क्या, चर्चा करना भी व्यर्थ है।

लेकिन दूसरे ही दिन जब वैशाली क्षेत्र और उसके बाहर से आये कुछ मित्रों की गोष्ठी में यह तय हुआ कि कल सुबह से वैशाली में पुष्टि का अभियान शुरू किया जाय, इसके लिए जो लोग समय देने को तैयार हों, वे अपना नाम लिखायें, तो उन नाम लिखाने वालों में भरत भाई सबसे आगे थे। लेकिन तब भी मेरे मन का अहंकार यह सोचने से बाज नहीं आया कि भावुक आदमी हैं, पुष्टि की कठिनाइयाँ जितनी पड़ेंगी तो टिक नहीं पायेंगे।

दूसरे दिन अभियान शुरू हुआ। धूप और बारिश के बीच भटकने का क्रम चला। बैरिया दुरुर और दो ब्लाक प्रखर के मझोले भरत भाई की यात्रा में कहीं कोई शिथिलता या उत्साहहीनता क्षण भर को भी नजर नहीं आयी। रहीं दिनों की एक घटना। उस दिन सुबह के हल्के नाश्ते पर ही पूरा दिन गुजारना पड़ा, कहीं बैठे-बैठे नहीं, पुष्टि के काम में दौड़ते करते-करते। (यों यह तो इस काम में लगने वालों के लिए कोई नयी बात नहीं है।) शाम को जब हम एक गाँव से दूसरे गाँव के लिए चले तो थोड़ी दूर जाने पर भरत भाई के पाँव लड़खड़ाये, और वे अपने को संभाल नहीं सके, गिर पड़े। हम घबड़ाये, लेकिन अंदाज हो गया कि भूख के कारण पेट में गैस पैदा हुई है, जिसका दबाव हृदय-गति पर पड़ा है और कमजोरी के कारण शायद ब्लड प्रेशर भी नीचे आया है। शिविर में उनको लाया गया। ४०-४५ मिनट बाद जब वे होश में आये तो बोले, "आप लोग मीटिंग में जाइये, अब मैं ठीक हूँ। ऐसा तो होता ही रहता है।' तब एक सामान्य आदमी के अन्दर की महानता के आगे मेरे नयी पीढ़ी के अहंकार को झुकना पड़ा। दूसरे दिन उनसे बातचीत करते हुए मैंने पूछा, "भरत भाई, वह कौन सी प्रेरणा है जो आपके कदमों को, और पूरे जीवन को भी, गतिशीलता को कायम रखे हुए है ?" अन्दर का कोई तार छू गया हो और झनझना उठा हो उस भावपूर्ण आवाज में भरत भाई बोले हम बहुत दूर का दर्शन तो कर पाते नहीं अपनी समझदारी सीमित है लेकिन एक बात बचपन में ही दिल में बस गयी थी कि जनता का राज होना चाहिए। इसी के लिए अंग्रेजों को मार भगाने की लड़ाई लड़ने में शामिल हुआ और तब से वही एक साध लिए चल रहा हूँ लड़ रहा हूँ। आजादी के बाद कांग्रेस राज हुआ। जनता का राज कहीं दिखाई नहीं दिया। इसलिए समाजवादी आन्दोलन में शरीक हुआ। लोकतांत्रिक समाजवाद की बात मन को बहुत भायी, लेकिन उसके साकार होने का कोई लक्षण नहीं दिखाई दिया, कोई राह नहीं सूझी तो विनोबा की रोशनी का आभास पाकर इधर खिंच आया। क्योंकि दिखाई दिया कि विनोबा, जिस जनता का राज हम चाहते हैं, उस जनता के बीच घूम रहे हैं उस जनता को जगाने का काम कर रहे हैं।"

तो क्या आप को लगता है कि विनोबा के बताये ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य के रास्ते से जनता का राज कायम होगा ?"

'इस आन्दोलन का विचार-दर्शन, कार्यक्रम, पद्धति सही है, आगे का यानी विनोबा, जे० पी० का नेतृत्व भी सही है, कम कार्यकर्ताओं की कमी है। ' लेकिन दिशा सही है तो मंजिल पर कभी-न-कभी पहुँचेंगे ही, चाहे हम रहें न रहें बादवाले तो बढ़ते जायेंगे ही। अब तो एक ही आकांक्षा है कि यही काम करते-करते शरीर छूटे। इस आन्दोलन में लगे कुछ लोगों को देखकर बहुत आशा बंधती है, और विश्वास होता है कि हम मिट जायेंगे, दुनिया नहीं मिटेगी, वह तो बदलेगी, और अवश्य बदलेगी। जनता का राज स्थापित होगा और अवश्य होगा।"

भरत भाई की इस अखण्डित आस्था के प्रति मैं नतमस्तक हो गया। इस बूढ़े आदमी का जीवन एक गहरी आस्था का गुलदस्ता है जिसकी कितनी जरूरत है अनास्था के इस युग में। कहाँ टिक पाती है हमारी चेतना अपनी मौजूदा अनास्था के भी आधार पर। हम अपनी अनास्था के प्रति भी तो आस्थावान नहीं हो पाते। और इसीलिए हमारा अपना जीवन अन्तर-विरोधों के भंवरों में पड़कर टूटता रहता है।

भरत भाई के जीवन के भीतर झाँकते झाँकते मैं अपने भीतर झाँकने लगा हूँ, इसका भान होते ही मैंने चर्चा की कड़ी को जोड़ने की कोशिश करते हुए फिर पूछा, "भरत भाई, कुछ अपने व्यक्तिगत जीवन के बारे में भी बतलायेंगे ? अगर कोई एतराज न हो, तो बतायें कि आप की पारिवारिक जिन्दगी कैसी रही है, और आप जब सामाजिक कामों के लिए अपने को समर्पित किये तो, घर वालों की क्या प्रतिक्रिया हुई ?"

जैसे कोई अन्तर का मार्मिक स्थल छू गया हो, भरत भाई कुछ रुकते-रुकते कहते गये, "१७ साल का था, तब स्वराज्य के आन्दोलन में कूदा था। एक ही भावना प्रबल थी, कि अंग्रेज हमारी छाती पर जबरदस्ती बैठे हैं, इन्हें मार भगाना है। समझदारी कुछ बढ़ी तो कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी में शामिल हो गया। घर के लोग तो नाराज हुए ही। बाबूजी बहुत बिगड़े। गाँव में ही भूमिगत रहना पड़ता था। सत्याग्रह, पिकेटिंग, पर्चे बाँटना, यही सब काम करता था। तीन बार जेल गया। '४२ में तो १५ महीना 'सेल' में रखा गया। स्वराज्य के बाद '५५ तक सोशलिस्ट पार्टी का ही काम किया। किसान सभा का काम किया। जिला का सेक्रेटरी भी रहा।' लेकिन समाधान नहीं हुआ, और आखिर '५५ में लोक सेवक का निष्ठापत्र भर दिया। तब से इसी काम में लगा हूँ।' आखिर तक लगा रहना चाहता हूँ।" "

"और शादीवादी...?"

"बचपन में शादी कर दी गयी, बच्चे पैदा हो गये, लेकिन कुछ किया नहीं परिवार के लिए। बड़े भाई साहब सभालते रहे। उधर कुछ ध्यान देने की कभी जरूरत ही नहीं रही। इधर घर का बँटवारा हो गया है, और कठिनाई कुछ बढ़ गयी है। जिन्दगी भर यह सब किया नहीं, अब जिम्मेदारी आ गयी, तो भी सोचता हूँ कि कट ही जायेगी किसी तरह से। बड़ी लड़की की शादी हो गयी है। दो लड़के हैं। बड़ा तो पढ़ने लिखने में तेज है, छोटा लगता है पढ़ नहीं पायेगा। कुल ४-५ बीघे के लगभग जमीन है। गरीबी तो है ही, लोग कहते हैं कि कुछ कमाया नहीं, आखिरी समय दुख भोगना बदा है। मैं सोचता हूँ कमाई करने का मतलब है आज की समाजरचना में ईमान को बेचना, वह नहीं बेचा तो, क्या ईमान की कमाई कोई कमाई नहीं है? एक दुख अगर है भी, तो इस सुख के मुकाबिले में वह कितना कम है कि ईमान तो बचा है!"

एक जिन्दा शहीद के सम्पर्क ने, इतिहास के एक अप्रकट पात्र ने अपनी आस्था के प्रति वफादार होने की जो प्रेरणा दी, उससे मेरा दिल भर आया। कमजोरी जब दो तीन दिनों में कुछ कम हुई तो साथियों ने कहा, "भरत भाई, आप को हम घर पहुँचा देते हैं, वहाँ जाकर आराम करें। क्षेत्र में ऐसी तकलीफें होती ही रहने वाली हैं।" तो भरत भाई बोले, "मैं जीना चाहता हूँ लड़ने-लड़ते, इसी का अभ्यासी हूँ, हार कर मोर्चे से लौटने वाली जिन्दगी भी कोई जिन्दगी है!"

— राही

यह राजनैतिक जुआ कब तक?

(काका कालेलकर)

जब हम विद्यार्थी थे तब राज्यकर्ता अंग्रेजों के देश के बारे में हम चाव से पढ़ते थे। ब्रिटेन का इतिहास, वहाँ का साहित्य, उनके रस्म-रिवाज, उनके आहार-विहार सब बातों में कुछ-न-कुछ जानकारी हमें मिलती ही थी। हमने देखा, उनके राजनैतिक और राष्ट्रीय (हाउस आफ लार्डस और हाउस आफ कॉमन्स) इन दो संस्थाओं का महत्व असाधारण है और अंग्रेजों के स्वभाव में अपने राजा के प्रति निष्ठा भी काफी होने के कारण गद्दीनशीन राजा अथवा रानी और पार्लियामेंट की दोनों सभाओं, तीनों का महत्व एक सा मानने का उनका रिवाज है।

उसके बाद जब लोक-जागृति बढ़ी, शिक्षा का प्रचार सार्वत्रिक हुआ, व्यापार-हुनर के कारण देश की संपत्ति बढ़ी, तब (हाउस आफ कॉमन्स) ही सबसे श्रेष्ठ संस्था बन गयी। उनके साथ-साथ देश में चलने वाले अखबारों का महत्व बढ़ा।

आज ब्रिटेन में ही नहीं, सारी दुनिया में लोक-प्रतिनिधि के रूप में अखबारों का स्थान चौथा है और दिन-ब-दिन बढ़ता जाता है।

भारत में भी जन-मानस तैयार करने में अखबारों का महत्व कम नहीं है। लेकिन हम कह नहीं सकते कि लोगों की और देश के नेताओं की अभिरुचि के पीछे-पीछे अखबार जाते हैं या लोगों की अभिरुचि या लोगों का आकर्षण बनाने का काम अखबार करते हैं। इसमें शक नहीं कि दोनों परस्परावलंबी हैं, तो भी आज की हालत में जब जनता कम पढ़ी है, कम जागरूक है और लोकमत का प्रभाव आज के अखबारों पर विशेष नहीं है, तब कहना पड़ता है अखबार ही जनता के लिए गुरु के स्थान पर हैं और सारे अखबारों पर प्रभाव है अधिकार-लालसा में फँसे हुए देश के नेताओं का।

विलायत में एक जमाना था जब बड़े-बड़े उद्योगपति चाहे जितना खर्च करके अनेक अखबार अपने काबू में रखते थे और उन अखबारों का प्रभाव राजनीतिज्ञों पर भी पड़ता था और सामान्य जनता पर तो पड़ता ही था। यही हालत अभी तक अमेरिका की भी थी। लेकिन अब दोनों देशों के अखबार धनपतियों के गुलाम नहीं रहे। शिक्षा-संपन्न, लोक-हितचिंतक, राष्ट्रसेवकों का प्रभाव दोनों देशों में अब जोरों से बढ़ रहा है। अब हम मान सकते हैं कि सारी दुनिया की यही हालत है।

भारत में अखबारों का प्रभाव शायद कम होगा। लेकिन लोकमानस तैयार करने में अगर किसी को सफलता मिलती है तो वह अखबारों को ही मिलती है।

भारत के अन्यान्य प्रदेशों के अखबारों का स्वरूप देखने से दो बातें ध्यान में आती हैं। (थोड़े अपवाद हम छोड़ दें।) अंग्रेजी अखबारों का जैसा प्रभाव है वैसा देशी-भाषा के अखबारों का नहीं है। और दुःख के साथ कहना पड़ता है कि कुल मिलाकर सोचा जाय तो अंग्रेजी अखबारों के पीछे जितना अध्ययन-चिंतन

राष्ट्रीय तैयारी समिति की बैठक

राष्ट्रीय तैयारी समिति की बैठक दिनांक २७-६-७१ को वाराणसी में हुई।

विचारणीय विषयों पर जो चर्चाएँ हुईं, उनका सार निम्नलिखित है।

प्रादेशिक गतिविधि

गुजरात : मदा बहन ने बताया कि अभी हाल में ही शिविर व सम्मेलन हुआ है। 'शिक्षा में क्रान्ति' विषयक छपी पत्रिका निकलती है। हस्ताक्षर लेना प्रारम्भ कर दिया है। शिक्षाशास्त्रियों से मुलाकातें भी की हैं। जगह-जगह गोष्ठियाँ की हैं। सारे गुजरात को ७ क्षेत्रों में बाँट दिया गया है, जिनकी जिम्मेदारी अलग-अलग लोगों ने उठायी है।

राजस्थान : श्री दशोत्तरजी का कहना था कि अभी तक तो हम कुछ भी नहीं कर पाये हैं, आगे करने की योजना है।

महाराष्ट्र : श्री किशोर भाई का कहना था कि हमने इस समस्या को स्पष्ट करने वाली एक पुस्तक प्रकाशित की है। हम सरकार से माँग नहीं करेंगे, वरन् अपना निश्चय बतलायेंगे। उन्होंने पहले के चार केन्द्रों में ही सारा जोर लगाने का पंगना किया है। भिवण्डी में हुए प्रान्तीय शिविर में बहुत ही अच्छा उत्साह था। बम्बई में भी सम्पर्क उन्होंने किया है। आचार्यकुल से भी सहयोग लेने का उन्होंने निश्चय बतलाया। शिक्षा में क्रान्ति दिवस से पहले एक दिन विद्यालय बन्द करने की योजना भी उन्होंने बतायी, उस दिन विद्यार्थी रचनात्मक काम करेंगे। उनका विचार है कि डिग्री के प्रमाण-पत्र जलाना एक अच्छा कार्यक्रम रहेगा।

दिल्ली : श्री कृष्णन् नायर ने बताया कि अभी शून्य है। आगे करने की योजना है।

उत्तर प्रदेश : श्री विनय भाई ने बताया कि सारे प्रदेश में सम्पर्क हुआ है। हमने अखबारों के विशेषांक भी निकलवाये हैं। क्षेत्रीय स्तर पर तथा प्रान्तीय स्तर पर सेमिनार करने का निश्चय किया है। आचार्यकुल इस काम में अच्छा सहयोग दे रहा है। हम इस कार्यक्रम को ९ अगस्त के बाद चलाने के लिये भी कटिबद्ध हैं। सारे प्रदेश में इससे अच्छा उत्साह भी पैदा हुआ है।

बिहार : कोई सदस्य उपस्थित नहीं था, लेकिन श्री अमरनाथ भाई ने रिपोर्ट दी। सारे प्रदेश में प्रचार हुआ है। गोष्ठियाँ भी हो रही हैं। हस्ताक्षर लेना शुरू किया गया है।

दक्षिण के बारे में सुब्बारावजी ने कहा कि उन्होंने कुछ मित्रों से सम्पर्क स्थापित किया है, लेकिन वे बंगला देश के सहायता कार्यक्रम में व्यस्त रहने के कारण सारा ध्यान इस तरफ नहीं दे पा रहे हैं।

प्रचार

सभी माध्यमों से प्रचार करने का निश्चय किया गया है। शिक्षा में क्रान्ति सम्बन्धी बैज स्थानीय स्तर पर बनवाये जायँ। पोस्टर दिल्ली में छपेंगे तथा इसकी जिम्मेवारी कृष्णन् नायर ने उठायी है। २० जुलाई तक यह सब पहुँच जाय, यह तय हुआ है। घोषणा-पत्र भी दिल्ली में ही छपेगा। पोस्टर दस हजार तथा घोषणा-पत्र पचास हजार छपाने का विचार किया जा रहा है। क्षेत्रों की रिपोर्ट साप्ताहिक रूप से वाराणसी भेजी जाय। स्थानीय रूप से फोल्डर ज्यादा से ज्यादा संख्या में छपा कर बँटवाया जाय।

९ अगस्त का कार्यक्रम

प्रदर्शन तरुण-शान्तिसेना के नेतृत्व में ही हो। जुलूस में श्रम के साधन (कुदाल, फावड़ा) साथ रहें, तो अच्छा, जुलूस मौन रहे। शिक्षा में क्रान्ति दिवस के बैज बनाये जायँ तथा वितरित किये जायँ तो अच्छा रहेगा। जुलूस किसी जन-स्थान में जन-सभा में परिणित हो जाय। जुलूस में घोषणा-पत्र वितरित किया जाय। सभा में घोषणा-पत्र पढ़ा जाय तथा प्रतिज्ञा हो। वक्ता सीमित रखे जायँ। शिक्षामंत्री का भार से हस्ताक्षर फार्म तथा घोषणा-→

आचार्य भिसे

पिछली देवशयनी एकादशी के दिन महाराष्ट्र के प्रखर रचनात्मक कार्यकर्ता आचार्य भिसे का देहावसान हुआ। कुछ समय पहले अप्पासाहब पटवर्धन और अब आचार्य भिसे की मृत्यु से महाराष्ट्र के सर्वोदय आन्दोलन ने दो स्तम्भ गँवाये।

पिछली पीढ़ी के लोगों में एक गुण था, इस पीढ़ी के लोगों को सीखने लायक—एक काम लिया तो उसी के पीछे पूरा जीवन लगा देने का गुण। अगर और प्रवृत्तियाँ लेंगे तो भी वहीं लेंगे जो मूल प्रवृत्ति से शाखा की तरह निकली हों।

उसी गुण के अनुसार आचार्य भिसे ने आदिवासियों की शिक्षा को अपना जीवन कार्य माना और बाकी जो कुछ भी काम लिया, वह उसी काम में निकलने के कारण लिया।

सेवा की प्रेरणा आचार्य भिसे को गोपाल कृष्ण गोखले से मिली थी—ठक्कर बापा की तरह। गोखले एजूकेशन सोसायटी की ओर से ग्रामीण क्षेत्र में एक विद्यालय खोलने की बात भिसेजी के सामने रखी गयी। भिसेजी पहले तो निर्णय नहीं कर पाये, लेकिन जब उन्होंने आदिवासी क्षेत्रों में एक ईसाई मिशनरी की लगन देखी तब आदिवासी क्षेत्र में काम करने का विचार स्वीकार कर लिया। करीब पचास साल पहले की यह घटना है। अब पचास साल बाद उसी सेवा क्षेत्र में उनका शरीर भस्मीभूत हुआ।

शिक्षा में रुचि थी, इसलिए शिक्षा के प्रयोग करते थे। आदिवासियों के लिए दिल में आग थी, इसलिए उनकी सेवा के साधन ढूँढ निकालते थे। बोर्डी (जिला–ठाणा) का विकास हुआ, शारदाश्रम नाम का छात्रावास बना, आदिवासी सेवा मण्डल बना, जंगल मजदूरों का सहकारी संघ बना, आश्रम शालाएँ निकलीं, बालवाड़ियाँ बनीं, 'कृषि शिक्षा संस्था बनी'—एक ही मूल की अनेक शाखाएँ। ग्रामदान के विचार को रचनात्मक काम के लिए बुनियाद मानने वाले देश के इनेगिने रचनात्मक कार्यकर्ताओं में से आचार्य एक थे। उन्हीं के पुण्य से महाराष्ट्र के ठाणा जिले के सैकड़ों गाँव ग्रामदान आन्दोलन में शामिल हुए।

आचार्य की प्रकृति ऐसी नहीं थी कि जहाँ जाने जंग छेड़ देते। वे सेवक स्वभाव के थे, योद्धा-स्वभाव के नहीं। लेकिन काम ही ऐसा लिया था कि आसपास के अमीर, राजनीतिज्ञ, भूमि-मालिक आदि लोगों से कुछ-न-कुछ टक्कर हो ही जाती थी। किन्तु जिनका आचार्य ने मुकाबला किया, उनको भी उन्होंने प्रेम से ही जीता।

ठाणा जिले का समुद्रतटीय बोर्डी गाँव अत्यन्त रमणीय स्थान है। आचार्य भिसे की सेवा ने भौगोलिक दृष्टि से इस रमणीय स्थान को सामाजिक दृष्टि से भी रमणीय बना दिया। महाराष्ट्र में कहीं रचनात्मक काम का क्षेत्र देखने की आपकी इच्छा हो, तो जो दो-चार स्थान आपको मिलेंगे, उनमें से एक आचार्य भिसे का बोर्डी क्षेत्र है।

—नारायण देसाई

→पत्र भेजा जाय। अगले कार्यक्रम के बारे विचार तथा इसका मूल्यांकन हो।

हम किसी भी प्रतिष्ठान से माँग नहीं करेंगे, वरन् अपना घोषणा-पत्र जनता के सामने उसकी स्वीकृति के लिये रखेंगे। हम सीधे जनता से ही उसकी भाषा में अपनी कहानी कहना ज्यादा पसन्द करेंगे।

संयोजन

सभी प्रदेश ३ तारीख तक तार से हस्ताक्षरों की संख्या की सूचना केन्द्रीय कार्यालय को दें। सभी प्रदेश साप्ताहिक रिपोर्ट भेजें।

घोषणा-पत्र

इसको तैयार करने की जिम्मेदारी श्री नारायण भाई को दी गयी। वे आचार्यकुल द्वारा स्वीकृत शिक्षा-व्यवस्था की रूपरेखा तथा भारतीय सांस्कृतिक क्रान्ति के घोषणा-पत्र की प्रस्तावना से शिक्षा में क्रान्ति विषय के घोषणा-पत्र को तैयार करेंगे। यह केन्द्रीय स्तर पर तो छपेगा ही, लेकिन अधिक प्रचार के लिये आवश्यक है कि इसका प्रकाशन स्थानीय स्तर पर हो।

सम्पर्क

सम्पर्क के समय के पते अच्छी तरह सम्हाल कर रखे जायँ। प्रदेश स्तर पर फालो-अप की तुरन्त योजना बने तथा केन्द्र को इसकी तुरन्त सूचना दी जाय। प्रदेशों से केन्द्र सम्पर्क रखेगा। १५ अगस्त को यह अभियान समाप्त समझा जाय। २२ अगस्त रविवार को पटना में राष्ट्रीय समिति की मूल्यांकन मीटिंग रखी गई है।

कार्यालय

मनोज भारतीय अपना अधिकांश समय उत्तर प्रदेश में कार्यक्रम को पुष्ट बनाने के लिये देना चाहते हैं। अतः तय किया गया है कि कुमारी माधवी चौधरी सारे कार्यक्रम का कार्यालयीन पक्ष सम्हालेंगी।

माधवी चौधरी, महासचिव,

मनोज भारतीय, संयोजक,

राष्ट्रीय तैयारी समिति

मध्यप्रदेश में पुष्टि अभियान के मोर्चे

प्रादेशिक सर्वोदय मण्डल द्वारा जिला ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य-समितियों के कार्यकर्ताओं को प्रशिक्षित करने के लिए १७ अप्रैल, १९७१ को दो माह की अवधि का एक सत्र खादी-ग्रामोद्योग-विद्यालय, माचना (इन्दौर) में सम्पन्न हुआ, इसमें ८ जिलों के ३४ कार्यकर्ताओं को कताई के नए साधनों में और सैद्धान्तिक-व्यावहारिक पाठ्यक्रम में प्रशिक्षित किया गया।

उक्त पाठ्यक्रम के समापन में यह अनुभव हुआ कि दो माह की अवधि प्रशिक्षण के लिए अपर्याप्त है। अतः गत १६ जून, ७१ से १० जिला समितियों के १४ कार्यकर्ताओं का छः माह की अवधि का प्रशिक्षण-सत्र माचना में शुरू हुआ है।

ग्रामदान-पुष्टि-कार्य

मण्डल के निर्णयानुसार टीकमगढ़ जिले में ग्रामदान-पुष्टि के सघन कार्यक्रम के लिए सामूहिक शक्ति लगाने का कार्य प्रारंभ हुआ है। म० प्र० भूदान-यज्ञ बोर्ड के अध्यक्ष श्री चतुर्भुज पाठक भोपाल से अपना मुख्य केन्द्र स्थानान्तरित कर टीकमगढ़ आ गये हैं और गांधी स्मारक निधि के अध्यक्ष श्री काशीनाथ त्रिवेदी भी संकल्पानुसार टीकमगढ़ जिले के बलदेवगढ़ प्रखण्ड में अपनी शक्ति लगा रहे हैं। उनके साथ ही गांधी-निधि के ९ कार्यकर्ताओं की सामूहिक शक्ति बलदेवगढ़ में लग रही है।

दिनांक २६ से २८ जून, १९७१ तक बलदेवगढ़ में आचार्य राममूर्तिजी के सान्निध्य में एक ग्रामदान-पुष्टि-विचार-शिविर सम्पन्न हुआ जिसमें टीकमगढ़ जिले के स्थानीय कार्यकर्ताओं, अधिकारियों, एवं शिक्षकों के अलावा प्रदेश के देवास, इन्दौर आदि ग्रामदान-पुष्टि-क्षेत्र में लगे लगभग ८० लोगों ने भाग लिया।

आचार्य राममूर्तिजी ने शिक्षकों की सभा में आचार्य-कुल के बारे में संबोधित किया।

टीकमगढ़ जिले में शिविरोपरान्त पुष्टि-कार्य की व्यूह-रचना बनी है। बलदेवगढ़ प्रखण्ड को पुष्टि का कार्य-क्षेत्र, तहसील को सम्पर्क क्षेत्र और जिले को प्रभाव क्षेत्र बनाकर काम करने का तय किया है।

देवास जिले में वहाँ की जिला-समिति ग्रामदान-पुष्टि कार्य के लिए उद्यत है। श्री दादाभाई नाईक के मार्गदर्शन में पुष्टि-कार्य हेतु प्रारंभिक सम्पर्क का कार्य प्रारंभ हुआ है।

इधर इंदौर जिला समिति की ओर से भी जिले की सब तहसील में श्री नरेन्द्र भाई के संकल्प और प्रेरणा से पुष्टि-कार्य का मोर्चा खोला गया है। पालिया और आसपास की चार-पाँच पंचायतों में विचारगोष्ठी और सभाओं तथा दाता-आदाता की बैठकों आदि से प्रारंभिक सम्पर्क कार्य शुरू हुआ है। यहाँ गांधी-निधि के ६ कार्यकर्ता स्थानीय सहानुभूति रखने वालों की मदद से संलग्न हैं।

—महेन्द्र कुमार
मंत्री, म० प्र० सर्वोदय मंडल

भूल सुधार

भूदान-यज्ञ के २१ जून' ७१ के अंक ३८ में पृष्ठ ५८० पर दूसरे कालम में ११ वीं और १५-१६ वीं लाईन में क्रमशः निम्नप्रकार पढ़ें– ४ नाली (०·२ एकड़) तथा १२ नाली (०·६ एकड़)।

इस अंक में

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पै०), विदेश में २२ रु०; या २५ शिलिंग या ३ डालर। एक अंक का मूल्य २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं मनोहर प्रेस, वाराणसी में मुद्रित

सम्पादक
राममूर्ति

वर्ष : १७ सोमवार
अंक : ४३ २६ जुलाई, '७१

पत्रिका विभाग
सर्व सेवा संघ, राजघाट, वाराणसी-१
फोन : ६४३९१ तार : सर्वसेवा

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

भारत की सांस्कृतिक परम्परा का सन्देश

आधुनिक जगत में जीवित रहने के लिए संस्कृति को अपना आधार बहुत विस्तृत करना होगा और आम जनता की बात सोचते हुए युवकों को नहीं भुलाया जा सकता। राज्य उनकी आवश्यकताओं की ठीक तरह पूर्ति प्रायः नहीं कर पाते। युवकों की आजकल की अधिकतर बुराइयों की जड़ शायद संस्कृति की भूख न मिटने में, या जिसे शायद सांस्कृतिक निरक्षरता कहा जा सकता है, उसमें है।

हम भारत के लोग संस्कृति के विकास को कलाओं, विशेषरूप से साहित्यिक, अभिनयात्मक या सुघट्य कलाओं, के विकास की बराबरी में रखना पसंद नहीं करते। हमारी यह धारणा है कि संस्कृति के जरिये मनुष्य के मन में आदर्शों का एक उच्चता-क्रम जम जाता है। सच पूछिए तो परम्परागत संस्कृतियों का, विशेषकर भारत की संस्कृति का, यही सन्देश है। भारत के इतिहास के किसी भी काल-विशेष में जीवन के अंतिम लक्ष्य के बारे में कोई संशय नहीं रहा—वह लक्ष्य यह नहीं था कि मनुष्य को अधिक-से-अधिक सुविधाओं से युक्त बनाया जाय, बल्कि यह था कि उसे उसके आत्मिक विकास की असीम संभावनाओं का बोध कराया जाय।

भारतीय परम्परा समन्वय में मनुष्य का विकास करने की आवश्यकता पर बल देती है जो इस संसार में भी असमन्वय नहीं पैदा करता और संसार को भी अपने अन्दर असमन्वय नहीं पैदा करने देता।

डी० आर० [illegible]*

* यूनेस्को द्वारा वेनिस में आयोजित सांस्कृतिक सम्मेलन में व्यक्त विचार, यूनेस्को कूरियर के फरवरी '७१ के अंक से साभार।

• जीने-मरने का सवाल • धृष्टता की सीमा •

जीने-मरने का सवाल

हम बंगला देश के मुक्ति संग्राम को उस हिन्दू की निगाह से नहीं देखते जो यह देखकर खुश होता है कि पाकिस्तान बरबाद हो रहा है। हम उस मुसलमान की निगाह से भी नहीं देखते जो यह सोचकर भय खाता है कि पाकिस्तान टूट जायगा तो हिन्दुस्तान में उसका क्या होगा। हमारी दृष्टि विशुद्ध मानवीय और भारतीय है। हम मानते हैं कि मानव को मुक्ति मिलनी चाहिए। इस नाते हम नहीं चाहते कि पश्चिमी पाकिस्तान तलवार के जोर पर बंगला देश को अपना उपनिवेश बनाकर रखे। हम उपनिवेशवाद के विरोधी हैं। बंगला देश को अपने ढंग से जीने का उतना ही अधिकार है जितना पश्चिमी पाकिस्तान को—उसके साथ रहकर, या उससे अलग होकर।

लेकिन अब बंगला देश का प्रश्न केवल मानवता और लोकतंत्र की रक्षा का नहीं रह गया है। हमारे लिए वह राष्ट्रीय सुरक्षा का प्रश्न भी बन गया है। लाखों-लाख शरणार्थी भेजकर पाकिस्तान ने अपने संकट को हमारे मत्थे मढ़ दिया है। हम असह्य खर्च की चपेट में पड़ गये हैं। लेकिन खर्च से भी अधिक भयंकर वह सामाजिक और राजनैतिक कीमत है जो इस संकट के कारण हमें चुकानी पड़ रही है, तथा आगे न जाने कितनी चुकानी पड़ेगी।

यह खतरा अगर शीघ्र न टला तो भारत के पूर्वांचल में ही नहीं, दक्षिण और दक्षिण-पूर्वी एशिया में शान्ति भंग करनेवाली एक भयंकर स्थिति पैदा हो सकती है। ऐसी स्थिति में भारत को अपनी सुरक्षा के लिए हर संभव कदम उठाना ही पड़ेगा, शीघ्र उठाना चाहिए। उठाने का उसे हक है। वह अपने घर को जलता हुआ देख कर बैठा हुआ नहीं रह सकता। इस भूमिका में बंगला देश की विजय हमारी विजय हो जाती है, और उसकी हार हमारी हार। उसकी और हमारी हार के साथ जुड़ी हुई है लोकतंत्र की हार, मानवता की हार, गांधी-विचार की हार।

पाकिस्तान का सैनिक शासक जानता है कि बंगला देश में किन चीजों की बाजी लगी हुई है। वह धर्म का नाम लेकर, राष्ट्र का नाम लेकर, और हिन्दू-हिन्दुस्तान को अपनी जनता के सामने 'शत्रु' के रूप में प्रस्तुत कर अपने को बचाने का प्रयत्न कर रहा है। उसकी योजना है कि - (क) पूर्वी बंगाल में हिन्दू न रह जायं, (ख) वहाँ के जीवन से अवामी लीग, उसके नेतृत्व, और उसकी विचार-धारा की जड़ें साफ हो जायं, (ग) जो मुसलमान बच जायं उनका 'इस्लामीकरण' हो, और वे बंगला भाषा और बंगला संस्कृति को भूल जायं, (घ) हिन्दुओं की सम्पत्ति याहिया-परस्त निम्न-मध्यम-वर्गीय बंगाली और गैर-बंगाली मुसलमानों में बांटी जाय और उन्हें लेकर एक ऐसा राजनैतिक आधार बनाया जाय जिस पर कठपुतली सरकार खड़ी की जा सके। इस योजना की सफलता पर पाकिस्तान की फौजी हुकूमत का अस्तित्व निर्भर है। अगर यह योजना नहीं सफल होगी तो फौजी शासन खत्म होगा, और बंगला देश एक स्वतंत्र राष्ट्र के रूप में उभर आयेगा। इतना ही नहीं, सारी एशिया का इतिहास एक नया मोड़ लेगा। लोकतंत्र की आशा में सैनिक शक्ति को पीछे छोड़कर नागरिक शक्ति आगे जायगी। पाकिस्तान के ही नहीं, दुनिया के शासक और सैनिक इस बात को जान रहे हैं, इसलिए उन्हें पाकिस्तान में नागरिक शासन के कायम होने की चिंता नहीं है। इसीलिए याहिया भी अपनी जगह निश्चिन्त है। वह दुनिया को दिखाने के लिए बंगला देश में एक कठपुतली सरकार बनाने की कोशिश कर रहा है। अगर दुनिया उसे मान ले तो क्या हम भी उसे मानकर निश्चिंत रह सकेंगे? क्या किसी तरह की एक सरकार के बन जाने से हमारा संकट दूर हो जायगा?

तो, हम क्या करें? मानवता को भूल जायं? पड़ोसी को छोड़ दें? अपने राष्ट्रीय हितों को ताक पर रख दें? अगर नहीं, तो बंगला देश को मान्यता देने, और उसके परिणामों को झेलने के लिए तैयार होने के सिवाय हमारे सामने दूसरा रास्ता क्या है? बंगला देश में ऐसी स्थिति बननी ही चाहिए कि ये शरणार्थी, वापस जायें और भयमुक्त होकर वहाँ रह सकें। हिन्दू-मुसलमान का प्रश्न हमेशा के लिए समाप्त हो, और सेना का नागरिक जीवन के साथ खेलवाड़ बंद हो।

यह कैसे होगा? कोई नहीं कहता कि भारत पाकिस्तान पर आक्रमण कर दे और बंगला देश को लड़ाई स्वयं लड़ने लगे। अपनी मुक्ति की लड़ाई तो बंगला देश की मुक्ति-सेना को ही लड़नी है। लेकिन मान्यता के बाद हम उसे लड़ने के साधन दे सकते हैं। सहायता के अनेक दूसरे काम कर सकते हैं। साधन पाकर बंगला देश के युवक जान हथेली पर रखकर जो लड़ाई लड़ेंगे वह पाकिस्तानी सेना के किराये के सिपाही कभी नहीं लड़ सकते। वियतनाम की मिसाल आंखों के सामने है। इसलिए बंगला देश की विजय निश्चित है।

बंगला देश की विजय में बंगला देश की विजय तो है ही, पाकिस्तान की भी 'विजय' है—अगर वह समझे। उस विजय के गर्भ से एक लोकतांत्रिक, गैरसाम्प्रदायिक, शांतिप्रिय, समतावादी पाकिस्तान का जन्म होगा। लेकिन पाकिस्तान के मौजूदा शासक पाकिस्तान की ऐसी विजय नहीं चाहते। अपनी करनी से वे अपने देश और राष्ट्र का जितना अहित कर सकते थे, कर चुके। जो पाकिस्तान कल तक था वह अब आगे नहीं रहेगा। बंगला देश को मान्यता देकर वे पाकिस्तान को बचा सकते थे। लेकिन उन पर बन्दूक का नशा सवार है। वे बंगला देश के साथ किसी तरह के सम्मानपूर्ण समझौते के लिए तैयार नहीं हैं। याहिया की घोषणा के बाद, और बड़े राष्ट्रों का रुख देखकर, किसी प्रकार के राजनैतिक समाधान की अंतिम आशा भी समाप्त हो गयी है। बड़े राष्ट्र दबाव डालने को तैयार नहीं हैं, याहिया बन्दूक से आगे देखने को तैयार नहीं है।

भारत का हित पाकिस्तान के टूटने में नहीं है, बल्कि उसके →

'हम खुद लड़ेंगे और अपना खून देकर स्वाधीनता लेंगे'

— सतीश कुमार से हुई बातचीत में बंगला देश के गृहमंत्री और अवामी लीग के महासचिव मुहम्मद कमरुज्जमां के उद्घोष—

सतीशकुमार भारत सरकार से बंगला देश की सरकार क्या अपेक्षा रखती है।

कमरुज्जमां अपेक्षा? कुछ भी नहीं। भारत सरकार ने हमें निरपेक्ष, निलिप्त और सैद्धांतिक समर्थन दिया है। हम कृतज्ञ हैं भारत सरकार के और भारत की समूची जनता के, जिसने आशा से अधिक सहयोग और समर्थन हमें दिया है। इस नाजुक और विनाशग्रस्त घड़ी में भारत के बुद्धिजीवियों ने, समाचारपत्रों ने, सरकार ने, और लोगों ने हमारा जो पुरजोर समर्थन किया है, उसके प्रति हम केवल आभार ही व्यक्त कर सकते हैं। भारत हमारे लिए और क्या करे, यह सोचना हमारा काम नहीं बल्कि ऐसा सोचना हमारी खुद्दारी का घातक होगा।

सतीशकुमार लेकिन आपकी इतनी अपेक्षा तो हो ही सकती है कि भारत सरकार बंगला देश की सरकार को औपचारिक मान्यता दे।

कमरुज्जमां हां, यह अपेक्षा हमें है। हम चाहते हैं कि स्वाधीनता, जनतंत्र और धर्म-निरपेक्षता के मानवीय मूल्यों में विश्वास करने वाला दुनिया का हर देश हमें राजनैतिक मान्यता देकर इन मूल्यों की स्थापना के लिए लड़ी जाने वाली हमारी लड़ाई में सहयोगी बने। चूंकि भारत हमारा पड़ोसी है और वह पिछले २३ सालों से इन्हीं मूल्यों का हर कीमत पर प्रतिष्ठित करने में जुटा रहा है, इसलिए बंगला देश की सरकार को मान्यता देने में भी वह पहल करे। यह संसार के लिए एक परीक्षा की घड़ी है। सैनिक सत्ता के साथ नागरिक सत्ता की हमारी लड़ाई है। मैं देख रहा हूं कि जनतंत्र, संसदीय प्रणाली और नागरिक शक्ति का ढिंढोरा पीटने वाली सरकारें बेनकाब हो गयी हैं और सैनिक तानाशाही का समर्थन कर रही हैं। बंगला देश के संग्राम ने कम-से-कम दुनिया के ढोंगियों की पोल तो खोल ही दी है। हमें आशा है कि अब भी जनतंत्र की शक्तियां विजयी होंगी और याहिया खां की उपनिवेशवादी सेना का समर्थन करने से जनतंत्र में विश्वास करने वाले देश बाज आयेंगे।

सतीशकुमार भारत सरकार आपको मान्यता देने में अब तक विफल रही है। इससे क्या आप लोगों के मन में एक खीझ तो पैदा नहीं हो रही है?

कमरुज्जमां खीझ या झुंझलाहट का कोई प्रश्न नहीं। भारत ने औपचारिक मान्यता न देकर भी जो कुछ किया है वह मान्यता देने की ही भूमिका है। विदेश मंत्री स्वर्णसिंह ने विश्व में जो वातावरण बनाया और जयप्रकाश नारायण जैसे भारत के दिग्गज नेता ने संसार की राजधानियों को हिलाने का जो काम किया, उससे हमारा हौसला बढ़ा है। जयप्रकाश नारायण के नाम का उल्लेख मैं इसलिए कर रहा हूं कि उन पर पाकिस्तान-विरोधी होने का आरोप कोई भी नहीं लगा सकता, और उनकी आवाज में पूरी भारतीय मानसिकता प्रकट हुई है। भले ही वे हमारी बंगला देश सरकार के औपचारिक दूत नहीं थे, पर उनको हमने अपना ही दूत समझा है। यदि मैं भारतीय नागरिक होता तो शायद उन्हीं का शिष्य होता। आज नहीं तो कल हमारी जनतंत्रात्मक सरकार को दुनिया मान्यता देगी ही।

सतीशकुमार क्या आप यह चाहेंगे कि भारतीय सेना मुक्तिसेना के साथ मिलकर लड़ाई लड़े और पाक-पलटन को परास्त करे?

कमरुज्जमां आप यह खूब समझ लीजिए कि यह हमारी अपनी लड़ाई है। हम यह नहीं चाहते कि भारत बंगला देश की आजादी प्लेट में रखकर हमें उपहार में दे दे। हम खुद लड़ेंगे और अपना खून देकर स्वाधीनता हासिल करेंगे। हमारी मुक्ति फौज संघटित हो रही है। अगले चार-छह महीने में कम-से-कम एक लाख जवानों को हम प्रशिक्षण देकर तैयार कर लेंगे और तब पाकिस्तानी हमलावरों के दांत खट्टे कर देंगे। भारत हमें मान्यता देकर, हथियार देकर, हमारा मददगार बने, इस कठिनाई की घड़ी में हमारा सहयोगी बने, एक मित्र राष्ट्र की भांति हमारा साथ दे, इतना ही पर्याप्त है, बाकी लड़ाई तो हम खुद ही लड़ेंगे। खून बहाकर हासिल की हुई आजादी का महत्व आसानी से प्राप्त आजादी की अपेक्षा कहीं ज्यादा होता है और वह कीमत चुकाने के लिए हम तैयार हैं।

सतीशकुमार : श्रीमती गांधी कहती हैं कि पाकिस्तान बंगला देश के साथ किसी राजनीतिक समझौते पर पहुंचे। आप लोगों की दृष्टि में इस राजनीतिक समझौते से उनका क्या अर्थ है?

कमरुज्जमां राजनीतिक समझौते से श्रीमती गांधी का तात्पर्य हम लोग यही समझते हैं कि हमारे निर्विवाद नेता मुजीबुर्रहमान को मुक्त किया जाए, अन्य राजनीतिक बंदियों को भी रिहा किया जाय, हमलावर पाकिस्तानी सेना को वापस बुलाया जाय, और बंगला देश को

—स्थान, सुखी और स्वस्थ रहने में है। वह नासमझ है जो अपने पड़ोसी के घर में आग लगी देखकर खुश हो। लेकिन लगी हुई आग को बुझाने का जो उपाय है उसे तो भारत को करना ही पड़ेगा। लेकिन यदि पाकिस्तान भारत को इतनी छूट भी नहीं देना चाहता, और बंगला देश की मान्यता को 'अपराध' मानकर भारत के विरुद्ध कोई कार्रवाई करता है, तो भारत को सशस्त्र आत्म-रक्षा का अधिकार है। भारत के सामने जीने-मरने का सवाल है। उसे हल करने के लिए वह जो कुछ कर सकता है करेगा, और उसे करना चाहिए।●

एक स्वतंत्र तथा प्रभुता-संपन्न राष्ट्र के रूप में मान्यता दी जाय। अवामी लीग का छः सूत्रीय कार्यक्रम अब एक-सूत्री कार्य-के रूप में बदल गया है और वह एक सूत्र है—स्वतंत्र बंगला देश। इसी सूत्र को ध्यान में रखते हुए श्रीमती गांधी यह जानती हैं कि पूर्ण स्वाधीनता के अतिरिक्त कोई भी समझौता अवामी लीग को मान्य नहीं होगा।

सतीशकुमार : जहाँ तक भावना का सवाल है, मैं आपके साथ हूँ कि बंगला देश की जनता, मुक्ति फौज और अवामी लीग इस संग्राम में विजयी हो तथा पूर्ण स्वाधीनता प्राप्त करें। पर थोड़ा यथार्थ-वादी दृष्टिकोण अपना कर भी स्थिति का विश्लेषण आवश्यक है। एक तरफ अमरीका, ब्रिटेन और चीन से मिले हुए नितांत आधुनिक हथियारों से लैस प्रशि-क्षित पाक सेना तथा दूसरी तरफ लगभग निशस्त्र, अभ्यासरहित मुक्ति-फौज, इन दोनों के मुकाबले में मुक्ति-फौज की विजय का विश्वास दिलानेवाले कौन से ठोस कारण आपके पास हैं?

कमरुज्जमां : तुलना इस तरह कीजिए कि एक तरफ भावनाहीन, भाड़े के टट्टू पाक सैनिक, जो केवल याहिया की हविस और सनक को पूरी करने के लिए लड़ रहे हैं, तथा दूसरी तरफ सर पर कफन बांधकर मातृभूमि की आजादी के लिए शहीद होना चाहनेवाले भावनाशील मुक्ति फौजों और उनकी समर्थक करोड़ों जनता, जो इस स्वाधीनता को अपने लिए अस्तित्व-रक्षा का प्रश्न मानकर लड़ रही है। इतिहास साक्षी है कि तोड़े हुए चंद क्रांतिकारियों के सामने दुनिया की बड़ी-से-बड़ी फौजी ताकत को भी झुकना पड़ा है। वियतनाम में अमेरिका नहीं जीत सका और भारत पर ब्रिटिशराज नहीं रह सका तो क्या बंगला देश पर याहिया खां का कब्जा चल सकेगा? आप यह क्यों नहीं देखते कि आखिर दृष्टि से पाकिस्तान दिन-प्रतिदिन दिवा-लिया होता जा रहा है। पाकिस्तान अंदर से खोखला हो चुका है और उसका दम घुट रहा है।

सतीशकुमार : बंगला देश के बाहर कुछ लोगों की ऐसी मान्यता बन रही है कि अब बंगला देश पर पाक सेना का कब्जा पूर्ण हो गया है और मुक्ति-फौज की गति-विधि शून्यवत् होती जा रही है।

कमरुज्जमां : जो लोग ऐसा सोचते हैं वे या तो पाकिस्तानी प्रचार-तंत्र के बहकावे में आ गये हैं या उन्हें ताजा घटनाओं की कोई जानकारी नहीं है। बंगला देशवासी ऐसे दब्बू और भोंदू नहीं हैं कि स्त्रियों पर खुले आम बलात्कार करनेवाली, नवयुवकों, अध्यापकों, राज-नीतिज्ञों और बुद्धिजीवियों को चुन-चुनकर मौत के घाट उतारने वाली, गांवों और कस्बों को जलानेवाली बर्बर एवं नृशंस पाक सेना के कब्जे को स्वीकार कर लेंगे और चुपचाप बैठ जायेंगे। बंगला देश में असहयोग आन्दोलन और युद्ध दोनों जारी है। अभी भी कारखाने खुले नहीं हैं, दफ्तर बंद पड़े हैं, यातायात ठप्प है और पाक सेना हतप्रभ होकर पड़ी है। युद्ध के स्तर पर हमारी मुक्ति फौज ने इतने शस्त्रास्त्र एकत्र कर लिये हैं कि अगले छः महीने तक गेरिल्ला युद्ध चलाया जा सके। प्रतिदिन १००-२०० पाक सैनिक मारे जाते हैं। अब बरसात का मौसम शुरू हो गया है, इसलिए और भी अधिक तेजी से हमारी मुक्ति फौज पाक सैनिकों का सफाया कर सकेगी।

सतीशकुमार जब तक स्वाधीनता संग्राम के लिए राजनीतिक जन आन्दोलन संघटित और संचालित करने का काम था, अवामी लीग मुजीबुर्रहमान के नेतृत्व में पूरी तरह सफल हो सकी थी। पर अब मुजीब को बंदी बना लिया गया है और अवामी लीग के नेतृत्व को गेरिल्ला युद्ध चलाने का पर्याप्त अनुभव नहीं है, ऐसी स्थिति में मौलाना भासानी और मुहम्मद तोहा जैसे वामपंथी नेता क्या आप लोगों को नेतृत्व से हटा कर इस आन्दोलन एवं युद्ध को आत्यंतिक वामपंथ की ओर ले जाने का प्रयत्न नहीं करेंगे? क्या बंगला देश के सामने पाकिस्तान के उपनिवेश से निकल कर चीन के उपनिवेश में बदल जाने का खतरा नहीं है?

कमरुज्जमां : यह एक निहायत बेहूदा सवाल है। पहले तो आप यह जान लीजिए कि मौलाना भासानी का चीन की नीतियों से पूरी तरह मोहभंग हो गया है। जो चीन इस संकट की घड़ी में हमारे जन-आन्दोलन का समर्थन करने के बजाय याहिया की तानाशाही का समर्थन कर रहा है, उसके प्रति किसी भी बंगलादेशवासी की सहानुभूति नहीं हो सकती। मौलाना भासानी और उनके साथियों के सामने चीन की इस दुरंगी चाल का पर्दाफाश हो गया है। वे इस राष्ट्रीय मुक्ति संग्राम के साथ हैं। जहाँ तक मुहम्मद तोहा का सवाल है, उन्हें बंगला देश के लोगों से अधिक बाहर के समाचार संवाददाता ही जानते हैं। उनका जनता के साथ कोई संपर्क नहीं है और न कोई विशेष प्रभाव ही है। फिर हमारे लिए वामपंथ और दक्षिणपंथ का पश्चिमी विश्लेषण इस समय बिल्कुल बेतुका है। बंगला देश की स्वाधीनता ही हमारे लिए एकमात्र मंजिल है। इसलिए आप लोगों से, विशेषकर से समाचार पत्रवालों से, हमारा विनम्र आग्रह है कि कृपया बातों को इस तरह बेमतलब उलझा कर मुख्य सवाल से ध्यान हटाने और भ्रम पैदा करने की कोशिश न करें। काश! मुजीब का नेतृत्व हमें आज भी प्राप्त होता। पर जनता की उद्दाम आकांक्षाओं में से नेतृत्व पैदा होता है। कोरा नेतृत्व जन-आन्दोलन पैदा नहीं कर सकता। इसलिए किसी भी नेता से जनता की स्वातंत्र्य आकांक्षाएँ ज्यादा बलवान होती हैं। फिर हमें अब भी दृढ़ विश्वास है कि शीघ्र ही हम अपने नेता मुजीब को भी अपने देश के साथ ही स्वाधीन करा सकेंगे।

(धर्मयुग : २५ जुलाई '७१ के अंक से साभार)

धृष्टता की सीमा : राजनैतिक नेताओं से कुछ साफ-साफ बातें !

—सिद्धराज ढड्ढा

पिछले तीन महीने से बंगला देश पर जो अत्याचार होता रहा उसे दुनिया के देश चुपचाप खड़े देखते रहे हैं, पर इधर कुछ दिनों से जिस तरह की सलाह उनके पद जिम्मेदार लोग दे रहे हैं वह तो बेशरमी की हद है। महीनों के अभूतपूर्व दमन, नरसंहार और जुल्म के बाद भी बंगला देश की आत्मा कुचल दिए जाने और आजादी की आग बुझ जाने के आसार नजर नहीं आ रहे तो अब दुनिया के ये हमदर्द लोग पाकिस्तान पर यह 'दबाव' लाने का यत्न कर रहे हैं कि उसे बंगला देश के साथ "राजनैतिक समझौता" कर लेना चाहिए। एक ने तो स्पष्ट ही यह सुझाव रखा कि याहिया खां का आवामी लीग का छः सूत्री फार्मूला मान लेना चाहिए। इस सुझाव से बढ़कर धृष्टता और क्या हो सकती है? आवामी लीग का छः सूत्री फार्मूला मान्य करने के लिए क्या स्वयं याहिया खां की सरकार द्वारा कराये गये आम-चुनावों का परिणाम काफी नहीं था? उसके बाद भी, पूर्वी बंगाल की सारी जनता द्वारा एक स्वर से किए हुए शान्तिपूर्ण असहयोग और अभूतपूर्व प्रदर्शन से बढ़कर बंगला देश के एकछत्र नेता मुजीबुर्रहमान के साथ याहिया खां की पन्द्रह दिन की बातचीत भी क्या काफी नहीं थी? उस समय भी मुजीब ने स्थायी समझौता के तौर पर छः सूत्री फार्मूले से ज्यादा क्या मांगा था? इस बीच लाखों निर्दोष लोगों का निर्दयतापूर्वक कत्ल और सारे मुल्क को बरबाद और उजाड़ होने देने के बाद उन्हीं छः शर्तों के अनुसार समझौता करने की सलाह दुनिया के ये नेता किस मुंह से दे रहे हैं? याहिया खां ने बाकायदा युद्ध की घोषणा की होती तब भी उसकी फौजों ने जो राक्षसी और बर्बर अत्याचार वहां किये वह क्षम्य नहीं माने जाते। फिर निहत्थी प्रजा पर इस प्रकार के जुल्म के खिलाफ तो इन देशों ने एक शब्द भी मुंह से नहीं निकाला और अब "राजनैतिक समझौते" की बात कर रहे हैं। समझौता का यह 'दबाव' पाकिस्तान पर नहीं बल्कि बंगला देश की बहादुर जनता पर डाला जा रहा है। मानवीयता का ही नहीं, सामान्य न्याय का भी यह तकाजा है कि पहले याहिया खां और उनके साथियों को, जो इस कत्लेआम के लिए जिम्मेदार हैं, अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय के सामने खड़ा किया जाय और उनके मानव-द्रोही कामों के लिए उन्हें सजा दी जाय।

× × ×

हिन्दुस्तान के राजनैतिक नेताओं के आज के रवैये, उनकी बातें और उनकी मनोवृत्ति को देखकर कुछ बातें साफ-साफ कहने की आवश्यकता महसूस होती है। आज की स्थिति को देखते हुए सार्वजनिक जीवन के संदर्भ में शुद्धता और सच्चाई की बात करना तो शायद पुराने जमाने की और दकियानूसी बात मानी जायगी, लेकिन ऐसा लगता है कि ये लोग सामान्य नागरिक और मनुष्य से अपेक्षित मर्यादाओं के उल्लंघन को भी बहुत गंभीर बात नहीं मानते। वरना मंत्रियों ही नहीं विधायकों तक के परिवारों में होनेवाली शादियों के संबंध में जो बातें प्रकाश में आती हैं उनका इनकार हर्गिज नहीं किया जाता। महाराष्ट्र के एक एम० एल० ए० के यहां शादी में एक लाख से ऊपर मेहमानों की दावत दी गयी और उस भोज में प्रदेश और केन्द्र के मंत्री मौजूद थे, यह केवल खबर के रूप में ही नहीं बल्कि आंखों देखे गवाहों की जबानी देश के जिम्मेदार अखबारों में प्रकाशित हुई। लेकिन महाराष्ट्र के मुख्यमंत्री ने यह कह कर कि ऐसी दावतों में अक्सर बिना बुलाये भी लोग आ जाते हैं, उस दावत में खाने वालों का तो अपमान किया ही है, सामान्य मनुष्य की बुद्धि का भी अपमान किया है। इससे भी ज्यादा आश्चर्य की बात यह है कि आये दिन समाजवाद और प्रगतिशीलता की दुहाई देनेवाली देश की प्रधानमंत्री ने भी इस बात को तथा ऐसी ही कुछ और शिकायतों को यह कहकर टाल दिया कि हमारे देश के अखबारों में जो प्रकाशित होता है उस सबको सच मानने की गुंजाइश नहीं है। इन शिकायतों में एक यह भी थी कि केन्द्र में जो नया समाजवादी मंत्रीमंडल बना है उसके एक मंत्री महोदय के दफ्तर में उनके कमरे को उनके बैठने लायक बनाने में एक लाख रुपया खर्च हुआ। यह खबर किसी सामान्य अखबार में नहीं बल्कि 'टाइम्स आफ इण्डिया' जैसे अखबार में छपी थी। ऐसी बातों का तथ्य के आधार पर जवाब न देकर उन्हें सस्ते आक्षेप की ओट में टाल देना प्रधान मंत्री के लिए, खासकर जनतांत्रिक देश में, बिलकुल गैर-जिम्मेदारी की बात है। इस तरह कब तक लोगों को धोखा दिया जा सकेगा?

मंत्रियों, नेताओं और बड़े-बड़े अफसरों द्वारा लाखों-करोड़ों रुपये के गबन और भ्रष्टाचार के मामले तो आजकल रोज अखबारों में प्रकाशित होते रहते हैं। उनमें आधे भी सच हों—और वे सच नहीं हैं यह मानने की बहुत कम गुंजाइश है—तो यह बात गौरतलब और देश के लिए खतरे की स्थिति की परिचायक है। अभी कुछ दिन पहले ही राजस्थान की विधान सभा में राज्य के दो मंत्रियों के खिलाफ भ्रष्टाचार के गम्भीर आरोप लगाये गये थे। यह सही है कि परस्पर विरोधी लोगों द्वारा एक-दूसरे पर आरोप-प्रत्यारोप लगाना आज की

राजनीति में एक सामान्य बात हो गयी है और कभी-कभी उनमें पूरी सचाई भी नहीं होती पर, जैसा राजस्थान समग्र सेवा संघ के अध्यक्ष ने अपने वक्तव्य में कहा है, इन मामलों में सदन में जो चर्चा हुई उसमें वहां भी इन घटनाओं की सचाई के बारे में किसी ने इन्कार नहीं किया, न सम्बन्धित मंत्रियों ने, न उनका बचाव करते हुए मुख्यमंत्री ने। बल्कि, इन दोनों ही घटनाओं का मुख्यमंत्री ने जैसी टेक्निकल और छिछली दलीलों से बचाव किया वह आश्चर्य में डालने वाला तथा सार्वजनिक जीवन की शुद्धता की दृष्टि से बहुत चिन्तनीय है। इसी प्रकार अभी हाल ही में एक और घटना प्रकाश में आयी है जिसके अनुसार प्रदेश कांग्रेस के एक जिम्मेदार पदाधिकारी कई लाख रुपये के नहरी पानी का गैर-कानूनी ढंग से वर्षों तक इस्तेमाल करते रहे जब तक कि स्वयं जिले के कलेक्टर ने मौके पर जाकर इस अनियमित कार्रवाई को न देखा। इस घटना के बचाव में भी मुख्यमंत्री ने जिस तरह की दलील दी वह उनके लायक नहीं थी। उन्होंने कहा कि उक्त फार्म पर बिजली की खपत के जो बिल आये वे इस बात को प्रमाणित नहीं करते कि इतने बड़े परिमाण में पानी की चोरी की गयी होगी। इस बचाव से तो मुख्यमंत्री ने यह और शंका पैदा कर दी कि कहीं बिजली की भी तो चोरी नहीं की गयी? यह सब जानते हैं कि इस तरह की चोरियां आजकल साधारण बात हो गयी हैं।

जो जरा भी समझदार हैं उन्हें इस प्रकार की दलीलें भुलावे में नहीं डाल सकतीं। देश के जिम्मेदार नेता सूरज की रोशनी की तरह गलत बातों को भी जब इस तरह दरगुजर कर देते हैं और कानूनी दलीलों से उनका बचाव करते हैं तो यह देश के भविष्य के लिए खतरे का संकेत है। जाहिर है कि यह परिस्थिति नागरिक जीवन के लिए ही नहीं बल्कि स्वयं जनतंत्र के लिए भी घातक है। यह विद्रोह को खुला निमंत्रण है। जनतंत्र की सफलता इस बात पर निर्भर करती है कि शासन करने वाले अपने निजी स्वार्थ से ऊपर उठकर सर्वथा निष्पक्ष और न्याय बुद्धि से काम करें। बल्कि, सार्वजनिक जीवन में तथा अधिकार के पदों पर होने के नाते, उनसे अपेक्षा रखना गलत नहीं है कि उनके आचार का नैतिक मानदण्ड सामान्य लोगों से ज्यादा ऊंचा होना चाहिए।

आशा है, हमारे राजनैतिक नेतागण भी समय रहते चेतेंगे। पर इस परिस्थिति का असली इलाज तो जागृत जनमत के के द्वारा ही संभव है। आज की परिस्थिति द्वारा उत्पन्न विपत्ति और विनाश की आशंका से समाज को कोई बचा सकता है तो वह संगठित लोकशक्ति। इस परिस्थिति का इलाज अब सिवा इसके और नहीं है कि लोग संगठित होकर विद्रोह करें। हम चाहते हैं कि यह विद्रोह शांतिमय और विधायक हो। अतः समझदार नागरिकों का कर्तव्य है कि वे ऐसे समय में चुप न बैठकर अपने-अपने मतों की अभिव्यक्ति द्वारा लोक-मानस को जगाने तथा उसे संगठित और सक्रिय करने में मदद करें। ●

सहचिन्तन

साथियों के मन में

(गतांक से आगे)

कार्यकर्ता मित्रों के अनुभव सुन लेने के बाद चर्चा के लिए निम्नलिखित मुख्य मुद्दे निश्चित किये गये।

१—बुनियादी मूल्य (सत्य, अहिंसा)।

२—कार्यक्रम : (पुष्टि, प्रतिकार—स्वरूप, साधन)।

३—पुष्टि की कल्पना।

४—एक क्षेत्र या कई क्षेत्र?

५—जनता को शामिल करना (पीपुल्स इन्वाल्वमेन्ट)—किसान, शिक्षित लोग, मजदूर, युवक।

६—*कार्यकर्ता का क्या रोल हो?*

७—ग्रामसभाओं की सक्रियता।

८—कार्यकर्ता का शिक्षण-अध्ययन।

बुनियादी मूल्य

यह प्रश्न उठा कि क्या सर्वोदय के बुनियादी मूल्यों (सत्य और अहिंसा) पर से हमारी निष्ठा डिगी है या वह अपनी जगह दृढ़ है? इस विषय पर काफी देर तक चर्चा होती रही। सबका यह मानना था कि ये जो निष्ठायें हैं वे सर्वोदय-दर्शन का आधार हैं। इनपर हमारी निष्ठा दृढ़ होनी चाहिए। अगर किसी भी अर्थ में कम हुई है तो सोचना चाहिए। यह बात महसूस की गयी कि व्यक्तिगत स्तर पर निष्ठाओं में काफी गिरावट आयी है। इसका परिणाम यह हुआ है कि सामूहिक जीवन में भी निष्ठाओं का अभाव दीखता है। इसका दर्शन हमारे संगठनों में होता है।

अहिंसा की चर्चा के सिलसिले में यह कहा गया कि अभी तक अहिंसा दो का साधन रही है—एक, साधक की अहिंसा और—दो, (शान्ति) सैनिक की अहिंसा। अब ग्रामस्वराज्य-सभाओं के संदर्भ में गृहस्थों की व्यावहारिक अहिंसा के स्वरूप और सीमाओं के विकास की आवश्यकता है।

(इस विषय पर यह निश्चय किया गया कि अगली बैठक में इस पर विशेष चर्चा की जायेगी। जो लोग इसमें शरीक हों वे अध्ययन करके आयें।)

प्रतीकार

यह प्रश्न उठता है कि लोगों में क्रान्ति की चेतना नहीं पैदा हो रही है। कुछ लोगों का यह मानना है कि असहकार, बहिष्कार, प्रतीकार की प्रक्रिया को हमने अपने आन्दोलन से हटा दिया है, इसीलिए क्रान्ति की चेतना पैदा कर पाने में हम असमर्थ हो रहे हैं। इसके लिए क्या किया जाय? मत-परिवर्तन की कोशिश की जाय, बहिष्कार किया जाय, असहयोग हो, क्या किया जाय? और, बहिष्कार किया जाय तो उसका क्षेत्र क्या हो? इस विषय पर काफी चर्चा हुई। आमराय थी कि सामाजिक बहिष्कार को टालना

चाहिए, परन्तु जहाँ आर्थिक शोषण होता हो तो शोषण के खिलाफ बहिष्कार हो सकता है। यानी शोषण की प्रक्रिया का बहिष्कार किया जा सकता है। इस सम्बन्ध में यह प्रश्न उठा कि किसी ग्रामसभा ने बहिष्कार का सामूहिक निर्णय लिया और वह कार्यकर्ता की निगाह में गलत निर्णय है, उस स्थिति में कार्यकर्ता क्या करे? ऐसी स्थिति में कार्यकर्ता को ग्रामसभा के निर्णय के साथ असहकार करना चाहिए, ऐसी आमराय थी।

ग्रामदानी गाँव में काम की दो एजेंसियाँ रहेंगी-ग्रामसभा और ग्राम-शान्ति-सेना। ग्राम-शान्तिसेना भी सत्याग्रह कर सकती है। परन्तु आज ग्राम-शान्तिसेना की योजना और प्रशिक्षण में सत्याग्रह का स्थान नहीं है। इस विषय में स्पष्ट होने की आवश्यकता महसूस की गयी। ग्राम-शान्तिसैनिक को शांति की 'डायनेमिक्स' का तात्त्विक ज्ञान और व्यावहारिक अनुभव होना चाहिए।

प्रतीकार में पहल कौन करे—कार्यकर्ता या ग्रामसभा? पहल ग्रामसभा ही कर सकती है। जहाँ तक सम्भव हो प्रतीकार के अवसर न आयें इसके उपाय ढूँढने होंगे। लेकिन आ जाय तो प्रतीकार टाला न जाय। बाहरी सत्ता के विरुद्ध प्रतीकार और शोषण-मुक्ति के लिए प्रतीकार के स्वरूप और पद्धति में अन्तर है—बड़ा अन्तर है। इस अन्तर को सामने रखना चाहिए।

पुष्टि

पुष्टि की चर्चा में निश्चय हुआ कि ग्रामदान में शर्तों की पूर्ति का आग्रह रखा जाय। नासिक में हुए सर्व-सेवा-संघ के निर्णय के अनुसार ही ग्रामदान की घोषणा की जाय। ग्रामसभा में ऐसे व्यक्तियों को पदाधिकारी नहीं बनाना चाहिए जिन्होंने अपनी बीघा-कट्ठा भूमि का वितरण न किया हो।

ग्रामसभा के नाम पर चर्चा हुई। इस पर आमराय थी कि ग्रामसभा से अच्छा नाम ग्रामस्वराज्य-सभा रहेगा, अतः 'ग्रामस्वराज्य-सभा' नाम का ही प्रचलन किया जाय।

ग्रामस्वराज्य-सभा और प्रखण्ड-स्वराज्य-सभा के बन जाने तक कार्यकर्ता की मुख्य जिम्मेदारी मानी जाय। उसके बाद ग्रामस्वराज्य-सभा और प्रखण्ड-स्वराज्य-सभा अपने अपने कार्य की मुख्य जिम्मेदारी लें और कार्यकर्ता का रोल पूरक हो—सहायक, शिक्षक का।

पुष्टि-कार्य में कानूनी पुष्टि की कठिनाई ज्यादा है। कानूनी पुष्टि की प्रक्रिया को लचीला करने की कोशिश होनी चाहिए।

ग्रामस्वराज्य-सभाओं में राजनीतिक दलों के लोग पदाधिकारी न हों, क्योंकि उनके कारण ग्रामस्वराज्य सभा में झगड़े होंगे। इसपर एक मित्र की यह राय थी कि ऐसे लोगों को मना कैसे किया जायेगा। इसके लिए तो हम केवल लोगों को समझा सकते हैं या उस व्यक्ति को समझा सकते हैं कि वह दल को छोड़कर ही ग्रामस्वराज्य सभा में पदाधिकारी हो। ग्रामस्तर पर दलगत राजनीति को जितना कम कर सकेंगे उतना ही सर्वोदय-आन्दोलन की जड़ जमेगी।

आज ग्रामस्वराज्य-सभा बन जाने के बाद भी पंचायत रहती है। इस स्थिति में ग्रामस्वराज्य-सभा और पंचायत दो एजेन्सियाँ काम करने लगती हैं। जब तक कानूनी पुष्टि नहीं होगी तब तक इस स्थिति में ही काम करना पड़ेगा। देखना यह चाहिए कि मुखिया लोग ग्रामस्वराज्य-सभाओं में पदाधिकारी न बनें। अपवाद स्वरूप कोई मुखिया पदाधिकारी हो भी सकता है।

पुष्टि और विकास-कार्य, दोनों साथ-साथ चलें अथवा नहीं? इस प्रश्न पर यह राय थी कि विकास-कार्य ग्राम-स्वराज्य-सभा और प्रखण्ड-स्वराज्यसभा की ही मार्फत होना चाहिए। उसमें कार्यकर्ता प्रायः न फँसे। प्रखण्ड-स्वराज्य-सभा विकास की अलग एक उपसमिति बना दे। सघन पुष्टि क्षेत्रों में हमारे काम का विकास इस दिशा में होना चाहिए कि आज ब्लाक स्तर पर जो प्रशासन है उसमें क्रम से बी॰डी॰ओ॰ का स्थान विकास-समिति ले, बी॰ डी॰ सी॰ का स्थान प्रखण्ड-स्वराज्य-सभा ले और पुलिस के स्थान पर ग्राम-शान्तिसेना आ जाय।

बड़ी इकाइयाँ छोटी इकाइयों को दबाती हैं अतः ग्रामस्वराज्यसभा और प्रखण्ड स्वराज्यसभा का कार्य-क्षेत्र स्पष्टरूप से अलग होना चाहिए। प्रखण्ड-स्वराज्य-सभा ग्राम-स्वराज्यसभा को दबाये नहीं। गाँव की इकाई को कमजोर नहीं होने देना चाहिए। ग्राम-स्वराज्यसभा की अपनी योजना हो, अपना निर्णय हो।

प्रखण्ड-स्वराज्यसभा में 'कोआप्टेड' सदस्य न हों, केवल ग्रामस्वराज्य-सभाओं के प्रतिनिधि होने चाहिएँ।

कार्यकर्ता की भूमिका

कार्यकर्ता पुष्टि के कार्य में किस बिन्दु तक लगा रहे यह प्रश्न उठा। इस प्रश्न पर आमराय थी कि प्रखण्ड-स्वराज्य-सभा के बनने तक वह प्रत्यक्ष पुष्टि-कार्य में लगा रहे। उसके बाद उसकी भूमिका लोकशिक्षक, लोकसेवक की होगी। वह विकास-कार्य से प्रत्यक्ष रूप से नहीं जुड़ा रहेगा। कार्यकर्ता ग्रामस्वराज्यसभा अथवा प्रखण्ड स्वराज्यसभा में कोई पद नहीं स्वीकार करेगा। एक मित्र की राय थी कि कार्यकर्ता नागरिक की भूमिका स्वीकार कर ले। एक अन्य मित्र ने कहा कि क्षेत्र में लम्बे समय तक कार्यकर्ता की आवश्यकता रहेगी, लेकिन उसका रोल बदल जायगा।

सत्याग्रही लोकसेवकों की एक जमात खड़ी करने की आवश्यकता सबने महसूस की, परन्तु लोकसेवक बनाने का अभियान नहीं चलना चाहिए।

कार्यकर्ता की जीविका

कार्यकर्ता की जीविका पर विभिन्न मत थे। एक मत था कि कार्यकर्ता का अपना एक केन्द्र हो, केन्द्र में थोड़ी जमीन हो, जिसमें केवल साग-सब्जी, फल, कपास और दूध के लिए चारा उगाया जाय। अनाज क्षेत्र से प्राप्त किया जाय। सेवा की फीस से जेब-खर्च चले। दूसरा मत था

बिहार राज्य बंगला देश सम्मेलन

बिहार शांतिसेना समिति के प्रयास से बिहार राज्य बंगला देश सम्मेलन गत ६ और ७ जुलाई को सफलतापूर्वक सम्पन्न हुआ। सम्मेलन की अध्यक्षता राज्यपाल श्री देवकान्त बरूआ ने और उद्घाटन श्री जयप्रकाश नारायण ने किया। पटना विश्वविद्यालय के उपकुलपति श्री ए० आर० मल्लिक ने विशेष अतिथि के रूप में सम्मेलन में भाग लिया।

सम्मेलन दो दिनों तक चला। राज्य के विभिन्न जिलों से करीब २०० प्रतिनिधि सम्मेलन में शामिल हुए। सम्मेलन के द्वारा दो प्रस्ताव पारित हुए जिनके आधार पर बिहार राज्य बंगला देश सहायता समिति ने तीन महत्त्वपूर्ण निर्णय लिये हैं :

(क) १ अगस्त को सम्पूर्ण बिहार में बंगला दिवस मनाया जाय।

(ख) बंगला देश को मान्यता दिलाने के लिए राष्ट्रीय स्तर पर संसद के सामने प्रदर्शन किया जाय।

(ग) बंगला देश की मान्यता के लिए कम-से-कम दस लाख हस्ताक्षर प्राप्त कर ११ अगस्त को प्रदर्शन के साथ प्रधान मंत्री को समर्पित किया जाय।

दोनों प्रस्ताव निम्नलिखित हैं :

प्रस्ताव नं० १

तत्काल मान्यता दी जाय

यह सम्मेलन बंगला देश में पाकिस्तानी सेना द्वारा साढ़े सात करोड़ जनता की राजनैतिक आकांक्षाओं के दमन, ९८ प्रतिशत बहुमत प्राप्त जन-प्रतिनिधियों को सत्ता-हस्तान्तरण करने से इनकार, अभूतपूर्व नरसंहार तथा अन्य अमानुषिक अत्याचारों से उत्पन्न परिस्थिति पर घोर चिन्ता प्रकट करता है, और बंगला देश के मुक्ति-संग्राम को पूर्ण सफल बनाने की दिशा में हर कदम उठाने का संकल्प करता है।

यह सम्मेलन बंगला देश के मुक्ति-संघर्ष को स्वतंत्रता, लोकतंत्र, धर्मनिरपेक्षता एवं अन्य मानवीय अधिकारों की रक्षा का संघर्ष मानता है।

इस सम्मेलन का निश्चित मत है कि बंगला देश को मुक्ति दिलाने के लिए सबसे पहला जरूरी कदम यह है कि भारत सरकार स्वाधीन बंगला देश की सरकार को अविलम्ब मान्यता दे। यह सम्मेलन महसूस करता है कि बहुत अच्छा होता, अगर भारत सरकार ने स्वाधीन बंगला देश की सरकार को मान्यता देकर उसे समय पर पर्याप्त सहायता दी होती। मान्यता देने में अब तक का विलम्ब हो काफी हानिकारक सिद्ध हुआ है, आगे और विलम्ब बंगला देश के लिए और भारत देश के लिए भी सर्वनाशकारी सिद्ध होगा।

तानाशाह याहिया खाँ के हाल के वक्तव्य से अब यह बात साबित हो गयी है कि पाकिस्तान का सैनिक शासन बंगला देश के चुने गये प्रतिनिधियों के साथ कोई राजनीतिक समझौता करने के लिए तैयार नहीं है, बल्कि वहाँ के मुक्ति-संग्राम को कुचलने तथा पाकिस्तान में सैनिक तानाशाही कायम रखने और बंगला देश को अपना उपनिवेश बनाये रखने के लिए कटिबद्ध है। ऐसी परिस्थिति में भारत सरकार के सामने एक यही रास्ता है कि वह शेख मुजीबुर्रहमान तथा अवामी लीग के नेतृत्व में गठित बंगला देश के चुने गये प्रतिनिधियों की सरकार को मान्यता दे और प्रभुसत्ता एवं लोकतंत्र की रक्षा के लिए सभी आवश्यक कदम उठाये।

इस सम्मेलन का विश्वास है कि अगर भारत सरकार स्वाधीन बंगला देश की सरकार को मान्यता देने का निर्णय लेती है तो दुनिया के और भी देश उसे मान्यता देने के लिए तैयार होंगे तथा अन्तरराष्ट्रीय समुदाय की सहानुभूति भी अवश्य मिलेगी।

यह सम्मेलन आशा करता है कि भारत सरकार इस ऐतिहासिक संकट की घड़ी में हिम्मत से काम लेगी और देश की जनता पर भरोसा कर बंगला देश को अविलम्ब मान्यता देगी और उसकी मुक्ति के लिए तत्काल सभी कदम उठायेगी।

(इस प्रस्ताव को संयुक्त सोशलिस्ट पार्टी के अध्यक्ष श्री कर्पूरी ठाकुर ने अधिवेशन में प्रस्तुत किया और श्री जयनारायण सिंह, एडवोकेट, सत्तारूढ़ कांग्रेस, ने उसका समर्थन किया। यह प्रस्ताव सर्वसम्मति से सम्मेलन द्वारा स्वीकृत किया गया।)

प्रस्ताव नं० २

बंगला देश का संकट अब भारत का संकट

मुक्ति-संघर्षरत बंगलादेश की जनता पर पाकिस्तानी सैनिक शासन द्वारा निरंतर किये जानेवाले बर्बरतापूर्ण आक्रमण तथा नृशंस दमन के चलते ६० लाख से अधिक विस्थापित भारत आ चुके हैं और प्रतिदिन हजारों की संख्या में उनका आना जारी है। इतनी बड़ी संख्या में लोगों को उजाड़ने और खदेड़ कर देश छोड़ने के लिए मजबूर करने का कुकृत्य मानवीय इतिहास की अद्वितीय अभूतपूर्व घटना है। यह सम्मेलन पाकिस्तानी सेना द्वारा किये जाने वाले इस नरमेध की भर्त्सना करता है और इस बात पर चिन्ता प्रकट करता है कि इतनी बड़ी संख्या में विस्थापितों के आने से भारत की आन्तरिक समस्याएँ—आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक—अत्यन्त जटिल हो रही हैं। सम्मेलन सरकार और जनता से अपील करता है कि वह विस्थापितों को राहत देने और उससे सम्बद्ध समस्याओं के समाधान के लिए भरपूर प्रयास करे। सम्मेलन विस्थापितों के प्रति अपनी आत्मीयता प्रकट करते हुए विश्वास दिलाता है कि भारतीय जनता हर परिस्थिति में उनका साथ देगी।

सम्मेलन का यह निश्चित मत है कि विस्थापितों को बंगला देश में सम्मानपूर्वक वापस लौटाने और पूर्ण सुरक्षित जीवन व्यतीत करने लायक राजनीतिक परिस्थितियाँ पैदा करने के अतिरिक्त विस्थापितों के मसले का दूसरा समाधान नहीं

विनोबा-निवास से

वंग-भंग का भिन्न स्वरूप : भक्ति और शक्ति

२२ जून, ज्येष्ठ अमावस्या। काली-काली रात में तूफान के साथ आयी घन-घोर वर्षा का धामनदी ने बड़ी खुशी के साथ स्वागत किया। तब से धाम की ध्वनि से आसमान गूँज उठा है। सवेरे देखा, अत्यन्त उत्साह के साथ वर्षा का पानी लेकर चट्टानों में से भागती-दौड़ती धाम जा रही थी।

बुधवार २३ जून। सबसे बड़ा दिन। दोपहर आश्रम-कन्याओं से बाबा बोल रहे थे। बाहर रिमझिम वर्षा हो रही थी। "आज आषाढ़ की प्रतिपदा है। कालिदास ने लिखा है, आषाढ़स्य प्रथमे दिवसे— आषाढ़ के प्रथम दिन बहुत बारिश होती है। वैसे आज जोरदार वर्षा हो रही है। कल आर्द्रा नक्षत्र शुरू होता है, सूर्य दक्षिणायन में जायेगा। क्रांति का समय है। आज महादेवी से बात हो रही थी। वेद में आया है—नवो नवो भवति जायमान। चंद्र रोज नया होता है, वैसे मनुष्य को रोज नया होना चाहिए। कल की महादेवी दूसरी थी, आज की महादेवी दूसरी है। कल की उषा, कल की उषा, आज नहीं है। हम सब नये हैं। नदी बह रही है। पुराना पानी तो एक-एक मिनट में चला गया। नदी आकार-रूपेण वही दीखती है। लेकिन नदी में फर्क पड़ता है। वैसे देह वही दीखती है, लेकिन देह में भी फर्क पड़ता है, बाल्य, तारुण्य, जरा···। इसलिए हमेशा भान होना चाहिए कि हम आज कलवाले आदमी से व्यवहार नहीं कर रहे हैं। मुझे लगा कि यह वेद-संदेश आपको सुनाऊँ।"

× × ×

बाबा कहते हैं, "मैं हमेशा हमारे तीन-चार हजार सेवकों का स्मरण करता रहता हूँ। आजकल अक्सर अनुभव यह रहा है कि किसी को याद करता हूँ तो दो-तीन दिन में वह मनुष्य या तो मिलने आ जाता है या उसका पत्र मिल जाता है।'

चंद रोज पहले भाऊ पानसे, राधाकृष्ण बजाज तथा रणजीत भाई से बाबा की बातें हो रही थीं। इस बातचीत के दौरान बाबा ने लेलेजी को याद किया था। दो-तीन दिनों के बाद अकस्मात स्वयं लेलेजी विष्णुसहस्रनाम के समय उपस्थित हुए। कहने लगे, "टाइम्स आफ इंडिया" में देखा बाबा की चक्कर आ रहे हैं। तो सिर्फ मिलने आया हूँ। बात-चीत करनी नहीं है।" उनको देखते ही बाबा ने कहा, "बगाराम हाजिर हो गया रे। हमने अभी अभी इसे याद किया था। देखो बगाराम। अपने यहाँ रिवाज है, आश्रम बदलने का। मनुष्य माता-पिता के घर में सुख से रहता है। लेकिन शास्त्र उसे चैन से रहने नहीं देता। कहता है उठो चलो गुरु के घर। तो वह गुरु के घर जाता है। दो तीन साल उसे गुरु-गृह में तकलीफ होती है। फिर उसे गुरु का वात्सल्य, तथा गुरु-बंधुओं का प्यार मिल जाता है। जरा वहाँ सुख मिलने लगा, तो शास्त्र कहता है, चलो गृहस्थाश्रम करो, न करना हो तो समाजसेवा करो। फिर देखा मनुष्य का उसमें भी अच्छा चल रहा है, समाजसेवा, कुटुम्बसेवा उसके लिए स्वाभाविक हो गयी है तो शास्त्र कहता है, चलो नजदीक के जंगल में जाओ, गाँव में भिक्षा माँगो और जो विद्यार्थी आयेंगे उनको सिखाओ। जंगल में उसे आरम्भ में कष्ट था, तकलीफ थी। लेकिन कुछ दिनों बाद वहाँ भी उसका ठीक जम गया, गाँव का प्रेम, विद्यार्थी की सेवा भी मिली। जंगल में सुख से रहने लगा तो शास्त्र कहता है, चलो उठो, भारत में प्रदक्षिणा करो। मतलब, शास्त्र बिना तकलीफ से रहने नहीं देता।

"दूसरा विचार यह है कि एक ही काम सतत सालों तक करते रहने से मनुष्य की बुद्धि का विकास कुंठित होता है। ऐसे काम का मनुष्य आदी हो जाता है। इसलिए नया काम करना चाहिए जिसमें स्वतन्त्र श्रम करना पड़े, आध्यात्मिक संशोधन करना पड़े, थोड़ा आध्यात्मिक चिंतन-मनन कर सकें, इसलिए पुराना काम छोड़ना पड़ता है। हम जो काम करते थे वह अब दूसरे लोगों को करने दें।"

× × ×

छः में दस मिनिट बाकी थे। प्रार्थना की घंटी बजी। एक-एक कर के सब बाबा-कुटी की ओर चलने लगे। बारिश की एक जोरदार बौछार आ गयी थी। कुटी में पैर रखते ही देखा बाबा "चरणामृतजल" बाँट रहे थे। क्या है, कहाँ से आया? सबको कुतूहल था। किसी ने पूछ ही लिया। "इन्द्र के घर का पानी है"—बाबा ने चम्मच भर पानी अंजलि में डालते हुए कहा। बाबा कुटी के सामने की सीमेंट की बेंच पर खुले आकाश का पानी झेलने के लिए एक पात्र बाबा ने रखवा दिया था। उसी का पानी बाँटा जा रहा था। सबको बाँटने के बाद बाबा ने बालभाई को बुलाया। पात्र उनके हाथ में दिया और खुद अंजलि सामने कर दी। बालभाई ने थोड़ा-सा पानी उनकी अंजलि में डाला। 'वाह, बहुत मीठा है।" चरणामृत की तरह पान करते हुए बाबा बोल उठे।

× × ×

जून की १० तारीख को नारायण भाई देसाई कलकत्ते से आये थे। वहाँ शरणार्थियों के बीच उनका काम चला है। उसका लिखित विवरण उन्होंने बाबा के सामने पेश किया। साथ-साथ चंद प्रश्न भी पूछ लिये थे। इन दिनों अक्सर कम बोलनेवाले बाबा उस दिन पूरे दो घंटे बैठकर बोल रहे थे। नारायण भाई के अन्य प्रश्नों में दो प्रश्न थे — (१) आप स्वयं इस विषय में कुछ 'एक्शन' (कदम) लेने का सोच रहे हैं? (२) क्या आप कलकत्ता आ सकते हैं? बाबा ने प्रथम तो हँसते हुए इन प्रश्नों का जवाब देना टाला। लेकिन नारायण भाई ने अपना हठ छोड़ा नहीं। तब बाबा एकदम गंभीर हो गये और बोले, "इन प्रश्नों के बारे में तो मैं हमेशा खुद ही बहुत चिंतन करता रहता हूँ।•"

यों कहकर कुछ देर खामोश रहे।

पवनार-यात्रा : सोमवार, २६ जुलाई, '७१

फिर कहा—"प्रश्न यह है कि शारीरिक उपस्थिति काम करेगी कि मानसिक उपस्थिति ? मानसिक उपस्थिति के मानी क्या ? निर्मला का पत्र आया था, "बंगला देश की परिस्थिति के बारे में चिंता होती है, क्या करें ?" मैंने उसे कहलवाया, 'तुम सहरसा पूरा करो, और बात सोचो मत। एक ही साधे सब सधे! "

पिंडे पिंडे मतिर् भिन्ना। कई लोग आते हैं और कई तरह के सवाल बाबा से करते हैं। लेकिन पिछले माह में उत्तर-प्रदेश के एक भाई ने एक अजनबी सवाल किया। वे पूछ बैठे, "बाबा, आप की ७५ वर्ष की आयु हो गयी। अगर आपको फिर से मनुष्य जीवन शुरू करना हो, तो कैसे शुरू करेंगे, क्या करेंगे ?" बाबा बोले, "इस जीवन में हमने दो गलतियाँ कीं। वे गलतियाँ हम दुबारा मनुष्य जीवन शुरू करना हो तो नहीं करेंगे। पहली बहुत बड़ी गलती यह रही कि स्कूल तथा कालेज में हमने साढ़े सात साल व्यर्थ बिताये। यह गलत काम हुआ। दूसरी गलती हुई पढ़ना-लिखना सीखा। यह दोनों गलतियाँ दुबारा नहीं करूँगा। मुहम्मद पैगम्बर पढा-लिखा होता, तो भगवान का प्रत्यक्ष साक्षात्कार नहीं कर सकता। मैं 'निरक्षर' हूँ यह बहुत अच्छा हुआ, ऐसा वे कई मर्तबा कहते थे। जो पढ़ना-लिखना जानते हैं, उनके और परमात्मा के बीच किताब खड़ी हो जाती है। हम पढ़ना-लिखना सीखे, तो कुछ बुरा तो नहीं हुआ, अच्छा ही हुआ, लेकिन इससे भी अच्छा होता अगर वह नहीं सीखा होता। फिर नये जीवन में मैं क्या करूँगा ? खेती करूँगा। मालिक नहीं बनूँगा, मजदूर बनूँगा, जितनी मजदूरी मिलेगी उसमें निभाऊँगा। दूसरी बात, भक्ति करूँगा। बस !"

बंगाल के कुछ कार्यकर्ता श्रमशिविर के निमित्त बरोरा आये थे। वापस बंगाल लौटते समय वहाँ ठहरे थे। कह रहे थे—"देश का बहुत पतन हुआ है। बंगाल की स्थिति देखकर दिल बैठ जाता है।"

बाबा—"ऊपर-ऊपर देखने से ऐसा लगता है। करोड़ो लोग गाँवों में खेती कर रहे हैं। साथ-साथ आध्यात्मिक भूमिका रखते हैं। बंगाल आज विभाजित हुआ है, उसके दो टुकड़े हुए हैं—शक्ति और भक्ति। शक्ति में माननेवाले भक्ति में विश्वास नहीं करते, भक्ति में माननेवाले शक्ति में विश्वास नहीं करते। तो पूर्व और पश्चिम ऐसे बंगाल के टुकड़े नहीं है, शक्ति और भक्ति ऐसे टुकड़े हैं। देश में अंतर्गत खतरा है ही, इसलिए शक्तिवालों को भक्ति और भक्तिवालों को शक्ति सीखनी चाहिए। बंगाल के गाँव गाँव में तो 'हरि बोल, हरि बोल' चलता है। 'माओ बोल, माओ बोल' सिर्फ शहरों में है।"

देश की एकता के लिए हिन्दी से भी नागरी-लिपि अधिक महत्व की है और एकता के लिए इस कड़ी की अत्यंत जरूरत है, यह इन दिनों बाबा बार-बार कह रहे हैं। इसके लिए भूदान-ग्रामदान की पत्रिकाएँ नागरी में छपें यह उनका सुझाव है। और स्वयं नागरी छोड़कर अन्य लिपि नहीं पढ़ेंगे यह उनका निश्चय है। इस पर बोलते हुए ७ जून को उन्होंने कहा था, "जिस वस्तु का बाह्य जगत में प्रसार हो, अमल हो ऐसी इच्छा होती है उस पर अभिध्यान करूँगा। अभिध्यान के लिए निश्चित किया कि नागरी में छपा ही पढ़ूँगा। अर्थात् परदेश के अखबार पढ़ने में हर्ज नहीं।" इसका परिणाम यह हुआ है कि बाबा की खाट पर दोपहर के समय अखबारों का जो बड़ा ढेर लगता था वह ढेर अब छोटा हो गया है। विदेश से आनेवाली पत्रिकाएँ वहाँ रहती है लेकिन भारत के केवल नागरी लिपिवाले अखबार, पत्रिकाएँ वहाँ रहती हैं। इससे बाबा का समय भी बचता है, आँख भी। जब से आँखों का कष्ट शुरू हुआ, बाबा ने पढ़ना बहुत कम किया है। जिन चिट्ठियों पर बालभाई निशान करते हैं, उतना ही हिम्मा पढ लेते हैं। दिनभर में कभी २२ मिनट, कभी २७ मिनट, कभी तो १० मिनट ही पढ़ना होता है।

८ जून से बाबा सफाई के निरीक्षक बने हैं। अलावा आश्रमकन्याओं के साथ खेती में काम करते हैं। सफाई की घंटी बजती है तब बाबा का आदेश होता है—"सब एक कतार में खड़े हो जायें, अपने-अपने औजारों के साथ।" फिर 'एक, दो, तीन' ऐसी गिनती होती है। उसके बाद बाबा सफाई का स्थान बताते हैं, उस तरफ मोर्चा जाता है। 'सफाई समाप्त' की घंटी बजते ही "सब एकदम खड़े हो जायें, औजारों के साथ" का हुक्म होता है। बरसात के दिन हैं, तो घास निकालने का ही काम होता है। कभी क्षेत्र बड़ा हो तो छुट्टी समय पर नहीं मिलती है। शीलाबहन की घंटी बज जाती है, तब बाबा कहते हैं, "काम पूरा होगा, फिर छुट्टी मिलेगी। इसके बाद काम है क्या—खाने का ही तो काम है ना ? (सफाई के बाद नाश्ता होता है।) वह कोई महत्व का काम नहीं है—लगाओ जोर। 'अब दस मिनट बाकी है' 'अब चार मिनट बाकी है' 'अब एक मिनट' "एक दिन आखिर का एक मिनट जरा लंबा हुआ। शीलाबहन ने कहा, "लगता है आज ब्रह्मदेव का मिनट होगा।"

बाबा का सुप्रीम कमांडर का रोब देखने जैसा होता है। हाथ में हँसिया लेकर हर एक टोली के पास जाकर देखते हैं, सुझाव देते हैं, जिसकी गति मंद हो उसे उत्तेजना देते हैं, घास से भरी टोकरियाँ उठाकर टब में डालते हैं। इस कमांडर से भय नहीं लगता है, बल्कि वातावरण में प्रसन्नता व्याप्त होती है, उनको पास आते देखकर हाथों में उत्साह आता है। हँसीविनोद में खेलते हुए कभी-कभी डेढ़ घंटा कैसे बीत जाता है, पता नहीं चलता। सबेरे सफाई कहाँ होगी इसका निर्णय शाम को अहाते में घूमकर बाबा कर लेते हैं।

बाबा का स्वास्थ्य ठीक है। चक्कर के लिए दवाई चल रही है। रात में सोते वक्त पाँव की बाजू से खाट दो ईंटों पर रखी जाती है ताकि सिर नीचे हो। चक्कर शुरू हुआ तब से बाबा रात में ऐसे ही सोते हैं। (मैत्री से) —कुसुम

दुनिया में शान्ति के प्रयास

बंगला देश में ओमेगा

बंगला देश में भुखमरी और पीड़ा को तथा बरनार्डिया में अन्तर्राष्ट्रीय राहत पहुँचानेवाली एजेन्सियों की लापरवाही को देखते हुए चार ऐक्टिविस्ट फ्रेन्ड्स सर्विस यूनिट, पीस न्यूज, मैनचेस्टर कम्यूनिटी और ऐक्शन ग्रुप तथा ऐक्शन बंगला देश की ओर से एक प्रोजेक्ट शुरू किया गया है— ओमेगा। आयोजक आर्गेना का कहना है कि यह केवल राहत का मिशन नहीं है, यह हस्तक्षेप का कार्य है। २५ मार्च को पूर्व बंगाल पर आक्रमण के बाद से, ७ करोड़ पुरुषों, महिलाओं और बच्चों को बाहर से अन्तर्राष्ट्रीय कोई राहत नहीं पहुँचाई गयी है। और जब तक पाकिस्तान बंगला देश पर आधिपत्य जमाये रहता है, तो यह निश्चित है कि राहत केवल उन लोगों तो पहुँचेगी जो उनके आदेश के सामने घुटने टेक देंगे। इस समस्या का केवल एक ही हल है कि पाकिस्तानी सेना बंगला देश से निकल जाय।

गरीब अफ्रीकनों के निमित्त यात्रा

डॉ० निमसला, एक दक्ष राजनीति-विज्ञान वेत्ता, इसी महीने शुरू हुई ६० से ९० दिन की अमस्टरडम से मास्को तक की एक यात्रा का नेतृत्व करेंगे। गाड़ी में ये लोग (विद्यार्थी और सम्मिलित होनेवाले यात्री) होंगे। केनेडिनवा भाग के मार्गों से अफ्रीका के विभिन्न दलों में सहयोग के लिए प्रचार करेंगे।

यात्रा का एक बड़ा उद्देश्य है तन्जानिया प्रोजेक्ट के लिए रुपये इकट्ठा करना जिससे तनजानिया में सामाजिक कार्यकर्ताओं का एक भवन स्थापित होगा, जहाँ सामुदायिक विकास के कार्यकर्ताओं का प्रशिक्षण होगा।

कोष इकट्ठा करने के अतिरिक्त यात्री पश्चिमी यूरोप के लोगों को यह बात समझायेंगे कि वे अपनी सम्पत्ति में अविकसित देशों को भागीदार बनायें ताकि उनके साथ शान्तिपूर्ण और सामञ्जस्यपूर्ण सम्बन्ध स्थापित हो सकें।

इस यात्रा के लिए विनोबाजी की यात्रा से प्रेरणा ली गयी है, जिन्होंने १९५१ से १९६२ तक ६,००० से अधिक गाँवों की यात्रा की, जिसमें उन्होंने ग्रामीणों से यह कहा कि अपनी सम्पत्ति में गरीबों को भी भागीदार बनायें। विनोबाजी ने ४०,००० किलोमीटर से अधिक यात्रा की और गरीबों के लिए ४१,६८,८२३ एकड़ से अधिक जमीन इकट्ठी की।

भारत से वाशिंगटन तक शान्ति यात्रा

रामगोपाल पुरोहित एक भारतीय सर्वोदय कार्यकर्ता, जो शान्ति के लिए विश्व-यात्रा कर रहे हैं, २१ अप्रैल को अफगानिस्तान पहुँचे जहाँ से वह ईरान जा रहे हैं। उनकी यात्रा का मार्ग दिल्ली, काबुल, पेरिस, लन्दन होते हुए वाशिंगटन तक है। रास्ते में वह विभिन्न शान्ति-दलों, विद्यार्थी-संगठनों एवं पत्रिकाओं के प्रतिनिधियों से मिलेंगे। अपने उद्देश्यों के स्पष्टीकरण में रामगोपालजी ने कहा है कि—"पिछले बीस वर्षों में संसार में सैनिक खर्च ३० प्रतिशत बढ़ा है जो संसार की पैदावार का ७ प्रतिशत है। यह लैटिन अमेरिका, दक्षिण एशिया और मध्यपूर्व की वार्षिक आमदनी के बराबर है। यह विनाश की दिशा है।"

संसार का सैनिक खर्च सदा से अधिक

यूनाइटेड स्टेट्स आर्म्स कन्ट्रोल और डिसआर्मामेंट एजेन्सी के अनुसार पिछले साल संसार का सैनिक खर्च २०४ बिलियन डालर हुआ।

विकासशील देशों में सेना पर बढ़ता खर्च उनकी पूरी राष्ट्रीय पैदावार से अधिक है। सन् १९६८ में यह बढ़ता हुआ खर्च स्कूल जानेवाली उम्र के करोड़ों लड़के-लड़कियों की शिक्षा पर होने वाले पब्लिक खर्च के बराबर है।

चार ऐक्टिविस्ट इन्टरनेशनल, न्यूज बुलेटिन से

बंगला देश पर अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन

बंगला देश पर हो रहे अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन की तिथि तैयारी समिति ने सितम्बर १८, १९, २० से बदलकर अब १४, १५, १६ अगस्त १९७१ कर दी है। ४ जुलाई को हुई तैयारी समिति की इस बैठक में श्रीमती विजय लक्ष्मी पंडित प्रो० एन० जी० गोरे, श्रीमती नीरा डागरा, श्री आर० डी० भण्डारे, श्री दुर्गादास, श्रीमती फूलरेणु गुहा, श्री एस० के० दे आदि भी उपस्थित थे। अध्यक्षता श्री जयप्रकाश नारायण ने की। बैठक ने सम्मेलन की गम्भीरता को देखते हुए उसे जल्दी से जल्द सम्पन्न करने की राय रखी थी।

सम्मेलन का प्रयास बंगला देश के संघर्ष को ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत करना, उसकी आजादी की लड़ाई के पक्ष में विश्व जनमत बनाना, लाखों लोगों को उनकी मातृ-भूमि से बाहर खदेड़ने के विरुद्ध वातावरण बनाना और बंगला देश में लोकतांत्रिक व्यवस्था की प्रतिष्ठा करना होगा।

उल्लेखनीय है कि बंगला देश की अस्थायी सरकार के २०-२५ सदस्यों का एक प्रतिनिधि मंडल भी सम्मेलन में भाग ले रहा है। (पवन से)

शरणार्थियों पर चार करोड़ रुपये प्रतिदिन खर्च

जानकार सूत्रों के अनुसार बंगला देश से आए शरणार्थियों पर प्रतिदिन लगभग चार करोड़ रुपये खर्च हो रहे हैं। इसमें से एक करोड़ रुपये से कुछ अधिक केन्द्रीय सरकार खर्च कर रही है और शेष राज्य सरकार तथा विभिन्न समाज सेवी संस्थाओं की ओर से व्यय किया जा रहा है।

गैर सरकारी आँकड़ों के अनुसार एक करोड़ से ज्यादा अधिक शरणार्थी इस समय भारत में हैं—सरकार की ओर से यह संख्या ६८ लाख बतायी गयी है। शरणार्थियों के शिविरों का दौरा कर लौटे→

९ अगस्त : शिक्षा में क्रान्ति-अभियान की तैयारी

बिहार

बिहार तरुण शान्तिसेना समिति की ११ अप्रैल की बैठक में अन्य बातों के अतिरिक्त यह महत्वपूर्ण निर्णय लिया गया कि 'शिक्षा में क्रान्ति' को एक प्रमुख कार्यक्रम माना जाय। तदनुसार शिक्षा में क्रान्ति-अभियान उपसमिति का भी गठन किया गया। राष्ट्रीय तैयारी समिति के निर्णय के अनुसार यह तय किया गया है कि ९ अगस्त को प्रान्तीय स्तर पर पटने में एक विशाल जुलूस का आयोजन किया जाय जिसमें शिक्षक, विद्यार्थी एवं अभिभावक को इसमें शामिल होने के लिए प्रेरित किया जाय।

इस कार्यक्रम को सफल करने की दृष्टि से ऐसा तय किया गया है कि मुजफ्फरपुर, भागलपुर, जमशेदपुर, रांची एवं गया में विश्वविद्यालय स्तर का शिक्षा में क्रान्ति परिसंवाद २८ जुलाई तक आयोजित कर लिए जायें। फिर पटने में प्रान्तीय स्तर का परिसंवाद किया जाय। इन परिसंवादों के सुझाव के आधार पर ९ अगस्त को जाने के लिए शिक्षा में परिवर्तन लाने की दृष्टि से कार्यक्रम बनाये जाँय।

यह भी सोचा गया है कि जनमत संग्रह करने की दृष्टि से 'शिक्षा में क्रान्ति' के पक्ष में हस्ताक्षर प्राप्त किये जायें, जिसके लिए लक्ष्यांक एक लाख का रखा गया है।

परिसंवाद के आयोजन के क्रम में गांधी शान्ति प्रतिष्ठान के सभी केन्द्रों के कार्यकर्ताओं की एक गोष्ठी का आयोजन ९-१० जुलाई को भागलपुर गांधी-शान्ति प्रतिष्ठान में किया गया।

इस सिलसिले में जिला स्तर पर तरुण शान्ति सेना शिविर एवं सम्मेलन का भी आयोजन किया जा रहा है। अभी भागलपुर के गौरीपुर-लत्तीपुर गाँव में दिनांक २० से २२ जून तक जिला-स्तरीय तरुण शान्ति सेना शिविर एवं सम्मेलन किया गया। 'बंगला देश' एवं 'शिक्षा में क्रान्ति' इन दो विषयों पर गहराई में जाकर तरुण शान्ति सैनिकों ने चर्चा की। आगे कुछ स्नातक एवं स्नातकोत्तर छात्र एवं छात्राओं ने एक साल का अपना समय भी इस क्रान्ति के लिये देने का निर्णय किया।

उसी प्रकार गया में श्री केशव भाई ने शिक्षकों एवं तरुण शान्ति सैनिकों की एक सम्मिलित बैठक का आयोजन २७ जून को किया। काफी विचार-विमर्श के बाद "शिक्षा में क्रान्ति" कार्यक्रम स्वीकृत किया गया। १८ जुलाई को गया कालेज, गया में उक्त विषय पर परिसंवाद करने का भी निर्णय लिया गया।

उक्त बैठक में ही २८ जुलाई से १ अगस्त तक जिला स्तरीय तरुण शान्ति सेना शिविर एवं सम्मेलन करने का निश्चय किया गया। उसके लिए एक समिति भी गठित की गयी। संयोजन का भार प्रो० राधामोहनजी पर सौंपा गया।

—नवल किशोर सिंह

उत्तरप्रदेश

उत्तर प्रदेशीय शिक्षा में क्रान्ति-अभियान समिति की बैठक गत १४ जुलाई को लखनऊ में हुई। शिक्षा में क्रान्ति-दिवस के आयोजन को सफल बनाने के लिए नागरिकों की एक सभा श्री आत्माराम गोविन्द खेर (अध्यक्ष, विधान सभा) की अध्यक्षता में हुई। इसमें काम के उत्तरदायित्व का बँटवारा हुआ।

—रामप्रवेश शास्त्री

राजस्थान

राजस्थान समग्र सेवा संघ कार्य समिति के निश्चयानुसार सारे प्रदेश में ९ अगस्त '७१ को शिक्षा में क्रान्ति-दिवस के रूप में मनाने का निश्चय किया गया है। राजस्थान प्रदेश शान्तिसेना के संगठक श्री दीन दयाल दशोत्तर इस कार्यक्रम का संयोजन कर रहे हैं। ●

→व्यक्तियों का—जिसमें सत्तारूढ़ दल के कुछ संसद सदस्य भी शामिल हैं—कहना है कि बंगला देश से आनेवाले सभी व्यक्तियों का रजिस्ट्रेशन नहीं हो रहा है। एक संसद-सदस्य ने बशीरहाट और बनगाँव के जिलाधिकारियों के हवाले से इसके तीन कारण बताए हैं—रजिस्ट्रेशन कुछ निर्धारित स्थानों पर किया जाता है जबकि शरणार्थी भारत में सीमा के और भी अनेक स्थानों से प्रवेश करते रहते हैं। उधर से आने वालों में बहुत से हिन्दुओं और मुसलमानों के रिश्तेदार और मित्र भारत में हैं और वे शिविरों में जाने के बजाय सीधे उन्हीं के यहाँ चले जाते हैं। रजिस्ट्रेशन स्थलों पर भी शरणार्थी इतनी अधिक संख्या में रहते हैं कि एक-एक का रजिस्ट्रेशन असंभव हो जाता है। ●

आन्दोलन के समाचार

बिहार में पुष्टि की प्रगति

सहरसा

चौसा प्रखण्ड : चौसा प्रखंड में अब तक ११ गाँवों में ग्रामसभा और दो गाँवों में ग्रामसमिति का गठन हो चुका है। चार गाँवों में बाकायदा पुष्टि के लिए दाखिल किये गये हैं। अजगैवा और देवं दास टोला, इन दो गाँवों में ग्रामकोष भी जमा हुआ है। चौसा-नदिठा में कुल ५२ दाताओं से ३४ बी० ११ क० ७ धूर जमीन प्राप्त हुई है जिनमें ७६ आदाताओं में ३१ बी० ११ क० १५ धूर जमीन बाँटी गयी। भूदान की ७ बी० १० क० जमीन पर ११ आदाताओं को दखल दिलाया गया। तीन दिनों में १०८ रु० का सर्वोदय-साहित्य बेचा गया।

पूर्णिया

रुपौली प्रखण्ड में पुष्टि और निर्माण कार्य अब दूसरे चरण में पहुँचा है जहाँ गोष्ठियों के माध्यम से ग्रामस्वराज्य की स्थापना के प्रयास होने लगे हैं। अब उसके पड़ोसी प्रखण्ड भवानीपुर में पुष्टि की अनुकूलता की जा रही है। गत १० जून को एक विशिष्ट स्थानीय प्रमुख लोगों की एक बैठक की गयी। रानीगंज प्रखण्ड में भी कार्यकर्ता पुष्टि कार्य में लगे हुए हैं। —'पूर्णिया जिला सर्वोदय समाचार' बुलेटिन से।

मुसहरी

मुसहरी प्रखंड में अब ग्रामस्वराज्य-सभाओं की संख्या काफी हो गयी है। अपनी क्षमता और शक्ति के अनुसार वे कार्यशील हैं, हालांकि उन्हें सक्रिय और सक्षम बनाने के लिए उनके प्रशिक्षण की आवश्यकता है। फिर भी कई ग्रामस्वराज्य-सभाओं के कार्य उल्लेखनीय हैं। माधोपुर उन्हीं में से एक है। बीघा-कट्ठा वितरण, ग्रामकोष-संग्रह, सड़क-निर्माण, छोटे लोगों के लिए आवास का प्रबन्ध, बिजली की लाइन लाने एवं मामला मुकदमों के आपसी निपटारे में यह गाँव सक्रिय है।

छपरा चकुली गाँव ने पुलिस अदालत मुक्ति के प्रयास को सफलता-पूर्वक कार्यान्वित किया। जमीन सम्बन्धी एक पेचीदे झगड़े को ग्रामस्वराज्य सभा में ही सुलझा लिया गया।

इसी ग्रामस्वराज्य सभा के प्रयास से सन् १९१५ से चल रहे एक मुकदमे का आपसी समझौता हो गया जिसमें गाँव के २५० परिवार उलझे हुए थे।

मुकुन्दपुर गाँव की जनसंख्या २३१ है। गाँव के लोग अनपढ़ हैं। फिर भी ग्रामस्वराज्य सभा ने तय किया है कि 'न किसी पर जुल्म करेंगे और न किसी का जुल्म सहेंगे।' ●

स्वामी सर्वोदयानंद का निधन

स्वतंत्रता संग्राम के एक सेनानी, कर्मठ कार्यकर्ता तथा दृढ़व्रती संन्यासी, जो शुरू से ही खादी जिला सर्वोदयमण्डल के अध्यक्ष भी थे, श्री स्वामी सर्वोदयानन्दजी ८२ वर्ष की आयु में दिनांक ८-७-७१ का निधन हो गये। सर्वोदय-परिवार की ओर से दिवंगत-आत्मा को श्रद्धांजलि।

क्रान्तिकारी परिवर्तन पुनः निर्माण की पहली आवश्यकता

मानव मूल्यों के ह्रास के युग में शिक्षा का क्षेत्र ही सबसे अधिक क्षति-ग्रस्त होता है। धर्म, दर्शन, शासन आदि मानव जीवन के किसी एक अंश से सम्बन्ध रखते हैं, किन्तु शिक्षा सम्पूर्ण मानव जीवन की मूल्यात्मक संजीवनी शक्ति है।

स्वतंत्र होने के उपरान्त हमने इस बार-बार परीक्षित सत्य की उपेक्षा कर दी है; इसी से हमारे जीवन का वर्चस्व नष्ट होता जा रहा है। शिक्षा की दृष्टि से शिक्षक, विद्यार्थी, शिक्षा का लक्ष्य, भाषा, पाठ्यक्रम, प्रणाली, वातावरण तथा परीक्षा में अष्टांगिक परिवर्तन आवश्यक है। चेतन तत्व होने के कारण अध्यापक तथा विद्यार्थी दोनों के दृष्टिकोण तथा सम्बन्धों में क्रान्तिकारी परिवर्तन शिक्षा के पुनः निर्माण की पहली आवश्यकता है। जो अपने स्वत्व से अनभिज्ञ है, वह अपने अधिकार की माँग करने में भी असमर्थ रहता है।

विश्वास है शिक्षा में क्रान्ति का आह्वान हम सब में उस आत्म-विश्वास को जगा सकेगा जो "सा विद्या या विमुक्तये" में ध्वनित होता आ रहा है।

—महादेवी वर्मा

उप-कुलपति
प्रयाग महिला विद्यापीठ

० ९ अगस्त : शिक्षा में क्रान्ति दिवस ०

शिक्षा में क्रान्ति की घोषणा

हम, भारत के छात्र, शिक्षक और अभिभावक आज की शिक्षा में जड़मूल से क्रान्ति चाहते हैं। हम यह अनुभव करते हैं कि हमारी शिक्षा जीवन से पूरी तरह विमुख है। हम उसे जीवन से ओतप्रोत बनाना चाहते हैं।

इस देश में राष्ट्रपति से लेकर साधारण नागरिक तक आज की शिक्षा की आलोचना करता है, लेकिन स्वराज्य के २२ साल बाद भी अभी हमारी शिक्षा में कोई महत्वपूर्ण सुधार नहीं हुआ। शिक्षा सम्बन्धी आयोगों के सुझाये हुए सुधार भी कार्यान्वित नहीं किये गये। हम इस परिस्थिति को सहन नहीं कर सकते।

● छात्रों के नाते हम देखते हैं कि आज की शिक्षा से हमारे व्यक्तित्व का विकास नहीं होता, बल्कि वह हमें दिशाहीन बनाती है और उसके कारण हम अपने आप से परायापन महसूस करते हैं। उससे न हमारे चारित्र्य के गुणों का विकास होता है, न हमें वह आत्म-विश्वास सिखाती है। यों भी आदि से अन्त तक केवल दिमागी तोता-रटन कराती है और उसकी नीरसता हमारे जीवन में भी नीरसता को कूट-कूट कर भर देती है।

● शिक्षकों के नाते हम यह अनुभव करते हैं कि आज की शिक्षा शिक्षाशास्त्र के सारे सिद्धान्तों की भयंकर अवहेलना करती है। इसमें शिक्षक और छात्र के बीच कोई सम्बन्ध नहीं रहता। अपनी मुसीबतों से तथा दलबन्दियों से ग्रस्त शिक्षक छात्रों की आवश्यकताओं की ओर ध्यान भी नहीं दे पाते और वे दूषित परीक्षा-पद्धति के बोझ से लदे छात्रों से पारस्परिकता अनुभव नहीं करते—अवसर तो वे दो विरोधी दलों की भाँति एक दूसरे से टकराते रहते हैं।

● अभिभावकों के नाते हम यह अनुभव करते हैं कि आज की शिक्षा का हमारे समाज-जीवन से तलाक-सा हो गया है। यह शिक्षा दासता एवं सामंतवादी मूल्यों की रक्षा ही नहीं करती, बल्कि उन्हें बढ़ावा देती है। इसमें सामाजिक समस्याओं का कोई अध्ययन नहीं होता। नये समाज बनानेवाले नागरिक तो यह शिक्षा किसी हालत में नहीं बनाती। यह शिक्षा हमारे बच्चों को जीवन के लिये उपयोगी शिक्षा तो देती ही नहीं, बल्कि शिक्षा पूरी होते होते ही उनके सामने बेकारी की भीषण समस्या उपस्थित कर देती है। वास्तव में शिक्षा से समाज की समस्याएँ सुलझनी चाहिएँ, लेकिन यहाँ तो शिक्षा ही समाज के लिये एक समस्या बनी हुई है। हमारी शिक्षा सर्वथा श्रम-विमुख है।

हम चाहते हैं कि छात्र, शिक्षक और अभिभावक मिल कर शिक्षा में क्रान्ति के लिये वातावरण तैयार करें, उसके लिये व्यापक आन्दोलन करें तथा शिक्षा में आमूल परिवर्तन करके ही रुकें। इस क्रान्ति के लिये हम सरकार, या और किसी से कोई भिक्षा-याचना करना नहीं चाहते। हम तो चाहते हैं कि समाज का वातावरण ही ऐसा बने कि आज की शिक्षा जारी रखना असम्भव हो जाय और छात्र, शिक्षक, अभिभावक, शिक्षाशास्त्री तथा अन्य नागरिक आपस में सलाह कर नयी शिक्षा का मंगलाचरण करें।

नयी शिक्षा नवीन समाज रचना की द्योतक हो। शिक्षा में क्रान्ति केवल शिक्षा क्षेत्र के परिवर्तनों के लिये नहीं हो सकती, क्योंकि शिक्षा समग्र समाज का एक अंग है। अतः शिक्षा में क्रान्ति एक समग्र क्रान्ति के अंग के रूप में होगी। क्रान्ति के बाद जो शिक्षा हो, उसमें विद्यार्थी परायापन महसूस नहीं करेगा तथा उससे ऐसा समाज बनेगा जिसमें शोषण तथा वर्ग-भेदों का स्थान नहीं होगा।

नयी शिक्षा में छात्र तथा शिक्षकों के बीच स्नेह, स्वातन्त्र्य और सह-विकास का जीवित सम्बन्ध हो। उसकी शिक्षा-वस्तु में उद्देश्य की स्पष्टता हो, व्यक्तित्व का विकास हो और जीवनोपयोगी काम का प्रत्यक्ष एवं सैद्धान्तिक ज्ञान हो। वह नये समाज की गतिशीलता देनेवाली हो।

इस शिक्षा का पाठ्यक्रम रुचिकर हो, और उसमें परिस्थिति के अनुसार परिवर्तन का लचीलापन हो। शिक्षा ऐसी हो, जिससे छात्र स्वयं अपने पैरों पर खड़ा रहने की तालीम पाये, उसे अपने उदर-निर्वाह के लिये औरों का आधार न लेना पड़े, उसमें ज्ञान प्राप्त करने की स्वतंत्र शक्ति जागृत हो, और उसे अपने आप को वश में रखने की शक्ति भी प्राप्त हो। इस पाठ्यक्रम में छात्रों की सामाजिकता का भी पूरा अवकाश हो। आत्म-निर्भरता, पड़ोसी के प्रति प्रेम, समाज के लिये कुछ-न-कुछ उपयोगी काम करने की प्रवृत्ति तथा पारस्परिकता में वृद्धि इस पाठ्क्रम से सिद्ध हो।

[illegible] छात्रों की स्मरण शक्ति का ही नहीं, बल्कि उनके समग्र विकास का हो। [illegible] सग पर नहीं आजमायी जाय, वरन् शिक्षा का क्रम ही ऐसा हो कि जिससे [illegible] होता रहे। परीक्षा का सम्बन्ध नौकरियों से न हो।

नयी शिक्षा का तंत्र भी आज की तरह उपनिवेशकाल की सामन्तवादी-पूंजीवादी मूल्यों पर आधारित नहीं होना चाहिए। नयी शिक्षा सरकार के तंत्र से मुक्त हो। उसके प्रत्यक्ष निर्णय स्थानीय व्यवस्था करे। प्रशासन में गुरुजनशाही, हुक्मशाही और नौकरशाही खतम हो।

आज की शिक्षा में धनवान व्यक्ति का असमर्थ बच्चा आगे बढ़ता जाता है, जबकि गरीब बच्चा सक्षम होते हुए भी अर्थाभाव के कारण आगे नहीं बढ़ पाता। वर्ग भेदों पर स्थित सारे विद्यालय तुरन्त बन्द हों और सबको विकास करने का समान अवसर मिले, ऐसा हम चाहते हैं।

शिक्षा की व्यवस्था तथा प्रशासन में छात्र, शिक्षकों तथा अभिभावकों का भी स्थान होना चाहिए।

अंत में हम एक बार पुनः यह घोषित करना चाहते हैं कि आज की शिक्षा में हम क्रान्तिकारी परिवर्तन कर शिक्षा को नये व्यक्तित्व तथा नये समाज के लिये उपयोगी एवं कार्यक्षम बनाना चाहते हैं। इसके लिये हम सब सदा यथाशक्ति प्रयास करते रहेंगे।

—छात्रों, शिक्षकों, अभिभावकों की ओर से

शिक्षा : सभ्यता की अंतिम आशा

पिछले सप्ताह हमारे कार्यालय में एक पत्र आया। उसमें
लिखा हुआ था 'आप लोग गरीबों के लिए इतना करते हैं, लेकिन
क्या आप नहीं जानते कि विधवाओं का क्या हाल है? उनके
लिए कुछ क्यों नहीं करते?'

हम जानते हैं कि हमारे समाज में किस पर क्या बीत रही
है। विधवा जिसका भविष्य न हो, युवक जिसकी जीविका न
हो, अछूत जिसे सम्मान न हो, उद्वासित जिसे आश्रय न हो
बच्चा जिसे प्यार न हो, उसका क्या जीवन होगा इसकी कल्पना
ही की जा सकती है। सदियों से हमारा समाज इन्हें इसी रूप
में रखकर चल रहा है। वह इन्हें इस स्थिति में देखने का इतना
अभ्यस्त हो गया है कि उसके मानस में कोई उथल-पुथल नहीं
होती। हमने जैसे यह मान लिया कि भगवान की लीलाभरी
सृष्टि में जो चीज जैसी है वैसी है, उसमें किसी को कुछ करना
नहीं है।

जिस तरह इस महिला ने विधवा की बात कही है, उसी
तरह एक मित्र ने बम्बई के उन बच्चों के बारे में लिखा है जो
देशभर से पकड़कर वहाँ ले जाये जाते हैं। उन्हें अलग किसी स्थान
पर अँधेरी कोठरियों में रखा जाता है। वहाँ उनका अंग-भंग
किया जाता है और उसे भीख माँगने का नाम दिया जाता
है। कई बच्चों की आँखें तक फोड़ दी जाती हैं क्योंकि अंधे
को भिक्षा अधिक मिलती है। भिक्षा माँगने में उनकी बाकायदा
अलग-अलग मुहल्ले में ड्यूटी लगती है। दिन में कई बार एक
आदमी जाकर उनसे पैसे वसूल कर लाता है। उन्हें मिलता है
पहनने को चिथड़ा और खाने को शायद नमक-रोटी।

यह सब कौन करता है? करता है वह व्यापारी जो पूँजी
लगाता है इन बच्चों के व्यापार में। बम्बई ही नहीं, शायद ही
कोई बड़ा शहर हो जहाँ यह व्यापार न चलता हो। इसी तरह
का व्यापार लड़कियों का है जो पकड़कर वेश्या बनायी जाती
हैं। एक व्यापारी जैसे दस-बीस भिखारी रखता है, उसी तरह
वह भिखारी या वेश्याएँ भी रख लेता है। उनसे वह अपने
लिए 'लक्ष्मी' कमाता है। लक्ष्मीपति से समाज कब पूछता है
कि उसने लक्ष्मी कैसे कमायी है? समाज में जो सम्मान और
सुख सम्पत्ति से मिलता है वह उसे भरपूर मिल जाता है। इसके
सिवा उसे दूसरा चाहिए क्या?

सभ्यता की ऊपरी सतह पर है सरकार, उसकी पुलिस, सेना,
उसके असंख्य कार्यालय और कर्मचारी, हैं विश्वविद्यालय और
दूसरे सस्थान, जहाँ बड़े-बड़े विद्वान दिमागी ताने-बाने से अपनी
अलग दुनिया बुनते रहते हैं, और हैं पत्र-पत्रिकाएँ-पुस्तकें जिन्होंने
मोहक भाषा द्वारा जीवन के सत्य को छिपाने की अद्भुत कला
विकसित कर रखी है, इनके अलावा हैं सेवक और उनकी सेवा-
संस्थाएँ जो जीती हैं सचमुच अपने लिए, लेकिन दम भरती हैं
समाज का। यह ऊपर की परत पर स्थित दुनिया है, नीचे की
परत की दुनिया बिल्कुल दूसरी है। लेकिन शराब, जुआ, वेश्या
विधवा, गुण्डा, तस्कर व्यापार, अपराध, भ्रष्टाचार, हिंसा,
बेकारी तथा न जाने क्या-क्या, दोनों जगह हैं।

९ अगस्त को हम शिक्षा में क्रान्ति का दिन मना रहे हैं।
हमारे दिल में बड़े-बड़े अरमान हैं। हम अपने और अपने देश
के लिए नये जीवन का स्वप्न देख रहे हैं। अच्छा होगा कि उस
दिन हम उन बच्चों, किशोरों, और तरुणों की बात जरूर करें
जो किसी संघटित विद्यालय में हैं, लेकिन साथ ही उनकी बात
भी सोचें जो कभी विद्यालय का मुँह नहीं देखेंगे, इतना ही नहीं,
जो शायद कभी जीवन का कोई सुख नहीं देखेंगे।

क्या शिक्षा, और क्या विकास आदि जीवन का दूसरा पहलू,
हमने अभी 'सब' को सामने रखकर सोचना शुरू ही नहीं किया
है। हम जब भी सोचते हैं तो हमारे सामने वही दुनियाँ रहती
है जो ऊपर की कही जाती है। हम अपनी ही समस्याओं को
सबकी समस्या मान लेते हैं और उनके समाधान में सबका
समाधान समझ लेते हैं। क्रान्ति की बात सोचते समय भी प्रायः
हमारी यही ऊपरी, सतही, दृष्टि रहती है। यही कारण है कि
हमारी बात समाज के हृदय की गहराई से छूकर उसे भीतर से
नहीं जगा पाती।

शिक्षा सभ्यता का शृंगार नहीं है स्वयं जीवन का दूसरा
नाम है, और नये समाज की नयी शक्ति है। उसी रूप में हम
उसकी बात सोचें और, समाज के सामने रखें। अंग्रेज चिंतक
एच० जी० वेल्स के शब्दों में सभ्यता और सर्वनाश में होड़ हो
रही है। शिक्षा सभ्यता की अंतिम आशा है।

क्रान्ति करना और क्रान्ति जीना

महाराष्ट्र में एक शादी हुई, पूरे देश में उसकी चर्चा हुई।
भला ऐसी भी कोई शादी होती है जिसमें नेताओं से लेकर
सामान्य लोगों तक एक लाख के विशाल जनसमूह की दावत
हो, जिसमें ऐसी शान-शौकत का प्रदर्शन हो कि पुराने राजे-
महाराजे भी मात मारें। इस शादी की चर्चा संसद तक
में हुई। वहाँ तो प्रधानमंत्री ने यह कहकर मामले को टाला
कि हमलोगों की शादियों में बहुत-से लोग तमाशा देखने के
लिए बिना बुलाये भी आ जाते हैं। लेकिन बाद को उन्होंने
मुख्यमंत्रियों को पत्र लिखा, और वैभव के ऐसे भद्दे प्रदर्शन की
निंदा की। वह जानती अवश्य होंगी कि ऐसे पत्रों से क्या
होनेवाला है, लेकिन कुछ लोकमत का प्रभाव, कुछ अपनी भी

अन्तरात्मा का दबाव, उनको लिखना था लिख दिया और छुट्टी ली।

हमलोग सामंतवाद के उत्तराधिकारी हैं, और हमें अपने उत्तराधिकार पर गर्व है! गरीब और सामंतवादी परम्परा के देश में वैभव के प्रदर्शन में सहज ही बड़प्पन की अनुभूति होती है। दूसरों से भिन्न और उनके ऊपर दिखाई देने में गौरव मालूम होता है। बड़ा कौन नहीं बनना चाहता? गरीब लोग शादी आदि के समारोहों में कर्ज लेकर भी 'बड़ों' की नकल करके बड़ा बनने की कोशिश करते हैं, ठीक उसी तरह जैसे हमारे 'बड़े' पश्चिमी तौर-तरीकों की अंधी नकल करके 'आधुनिक' बनने की कोशिश करते हैं।

यह लक्षण है जीवन में गहरे सांस्कृतिक खोखलेपन का। सदियों से हमने कोई नयी जीवन-पद्धति विकसित करने की कोशिश नहीं की है। स्वतंत्रता के बाद भी हम पुराने सामंतवाद पर ही जीते चले जा रहे हैं। अंग्रेजी राज के बाद हमारे नये नेताओं ने बड़ा बनने की कोई नयी दिशा नहीं दिखायी। बल्कि उन्होंने अधिकार, धन और वैभव के प्रदर्शन की जो लिप्सा दिखायी है उससे संकेत मिलता है कि ऊँचे स्तरों पर नैतिक और सांस्कृतिक सड़ांध कितनी ज्यादा है! सामंतवादी युग में राजे महाराजे, जो सांस्कृतिक दृष्टि से गिरा हुआ जीवन बिताते थे, जनता के 'प्रतिनिधि' नहीं थे, लेकिन हमारे नेता, हमारे मंत्री, हमारे 'प्रतिनिधि' हैं—हमारे पैसे पर पलनेवाले! लेकिन हम देखते हैं कि हमारे इन प्रतिनिधियों के हाथों श्रम, सेवा, और सादगी के मूल्यों में जो गिरावट आयी है वह हमारे देश के सांस्कृतिक इतिहास में आगे चलकर एक 'ट्रेजेडी' गिनी जायगी।

देश में क्रान्ति का नाम लेनेवालों की कमी नहीं है। आधुनिक सामाजिक क्रान्ति में यह तत्त्व मान्य है कि राजनैतिक-आर्थिक परिवर्तन टिक नहीं सकता जब तक कि शैक्षिक-सांस्कृतिक परिवर्तन न हो। कई अर्थशास्त्री भी कहने लगे हैं कि विकास देश के बदले हुए 'मन' (ऐटीट्यूड) का 'बाई-प्रोडक्ट' है। गांधीजी की नयी तालीम का तो यह एक बुनियादी सूत्र ही है कि उत्पादन को शिक्षण का अनिवार्य परिणाम होना चाहिए। लेकिन क्रान्ति की सारी पुकार में शैक्षिक-सांस्कृतिक तत्त्व कहीं दिखाई नहीं देता।

सारे क्रान्ति-दर्शनों में सबसे अधिक सर्वोदय के क्रान्ति-दर्शन में क्रांति को नित्य जीवन में जीने पर जोर दिया गया है। अगर यह बात न हो तो रोज प्रार्थना में एकादश व्रतों के उच्चारण का अर्थ क्या है? और, क्या अर्थ है सर्वोदय को बार-बार एक सम्पूर्ण जीवन-दर्शन बताने का?

लेकिन शायद हमने अपने सांस्कृतिक मूल्यों का भी संस्थाकरण (इन्स्टिट्यूशनलाइजेशन) कर डाला है। कताई, श्रम, प्रार्थना आदि के मूल्य हममें से अनेक लोगों के लिए संस्था के कर्मकाण्ड से अधिक कुछ नहीं रह गये हैं। कोई आश्चर्य नहीं कि जनता को हमारे उच्चारण और आचरण में बड़ी खाई दिखायी देती है। क्यों न दिखाई दे? काश, हमको भी दिखायी देती!

वैभव का जो भद्दा प्रदर्शन महाराष्ट्र के विवाह में हुआ वह कोई ऐसा उदाहरण नहीं है जिसके छोटे संस्करण सेवा की दुनिया में नहीं मिलेंगे। सेवा-संस्थाओं के जीवन में वेतन-मान भले ही ऊँचा न हो, लेकिन झूठे दिखावे और बरबादी के अवसर और उदाहरण कम नहीं हैं। विवाह, सामूहिक खान-पान और सर्वोलि रंग-ढंग को जाने दीजिए, हमारी संस्थाएँ रोटी-बेटी में जातिवाद और छूआछूत से भी सर्वथा मुक्त हैं, यह नहीं कहा जा सकता। दूसरों से अधिक मुक्त हैं, यह कोई संतोष की बात नहीं है। कई आलोचकों के यह कहने में काफी तथ्य है कि समाज और सरकार के साधनों पर पलनेवालों में जो चारित्रिक दोष आ जाते हैं वे हमारी अनेक रचनात्मक सेवा-संस्थाओं में भी आ गये हैं। वे सर्वोदय की संस्कृति का कहाँ तक प्रतिनिधित्व कर रही हैं, इसमें संदेह है। हमारे गुणों की परख हमारे साइनबोर्डों से नहीं, हमारे जीवन से होगी।

अभी हाल में दो विदेशी विद्वानों ने सर्वोदय-आन्दोलन का गहरा अध्ययन कर एक ग्रंथ लिखा है—"दी जेन्टिल अनार्किस्ट्स"। वे इस नतीजे पर पहुँचे हैं कि सर्वोदय-आन्दोलन को सबसे अधिक खतरा संस्थावाद से है। यद्यपि सर्वोदय के बहुत से लोग चाहते हैं कि जीवन और समाज में कुछ नयापन आये, फिर भी पुरानी संस्थाओं के सहज प्रमाद—गुटबाजार, झगड़े, कर्म-काण्ड, जाति, अधिकार-लिप्सा, भौतिकवाद, आदि—का बोझ हमारे मन पर इतना अधिक रहता है कि सिवाय खटास और हताशा के कुछ खास हाथ आता नहीं। क्या इस स्थिति के लिए संस्थाओं का जीवन बहुत हद तक जिम्मेदार नहीं है?

निश्चित रूप से सर्वोदय की क्रान्ति क्रान्तिकारी से ही शुरू होती है। अपने को अलग रखकर जो क्रान्ति की जायगी वह हर्गिज अहिंसक नहीं होगी। सर्वोदय का क्रान्तिकारी अपने को बदलता हुआ समाज में परिवर्तन के बीज बोता है। सर्वोदय ऐसे क्रान्तिकारियों का भाईचारा है—होना चाहिए—जो अपने जीवन को उठाते हुए नीचे से एक नये समाज की रचना करने का प्रयत्न करते हैं। ऐसे क्रान्तिकारी की क्रान्तिकारिता इसमें है कि उसे क्रान्तिकारी होने का 'साइनबोर्ड' लेकर न घूमना पड़े। उसका जीवन ही उसका झण्डा हो।

नया जीवन जीना आसान नहीं है। आसान नहीं है समाज में सत्य और अहिंसा को प्रतिष्ठित करना। हमने समाज के सामने एक क्रान्ति-योजना रखी है—ग्रामस्वराज्य की। गांधी का 'एक कदम' हमारे अपने जीवन में भी उठे और उठता रहे ताकि यह दिखायी दे कि हम क्रान्ति करनेवाले ही नहीं हैं, क्रान्ति जीनेवाले भी हैं। ●

शैक्षिक, सांस्कृतिक परिवर्तन की दिशाएँ : उपनिवेशवाद से मुक्त देशों का संदर्भ

—जेम्स एनगुगी

[प्रस्तुत लेख यद्यपि मूलरूप में अफ्रीकी संदर्भ में लिखा गया है, लेकिन इसमें व्यक्त विचार उन सभी अफ्रीकी-एशियाई देशों के लिए समान महत्व के मालूम होते हैं, जो पिछली दो-तीन दशाब्दियों में औपनिवेशिक गुलामी से मुक्त हुए हैं। —सं०]

अधिक-से-अधिक विस्तृत अर्थ में देखें तो संस्कृति वह जीवन-पद्धति है जिसकी रचना कोई जाति अपना जीवन चलाने और अपने सम्पूर्ण परिवेश से अनुकूलता कायम करने का सामूहिक प्रयत्न करते हुए करती है। यह उसकी कला, उसके विज्ञान और उसकी सारी सामाजिक संस्थाओं का, जिनमें उसके धर्मों और कर्मकांडों की पद्धतियाँ भी आ जाती हैं, कुल योग होती है।

इतिहास के प्रवाह में गुणात्मक सम्पर्क करते और आगे बढ़ते हुए ऐसे भौतिक और आत्मिक मूल्यों के एक समूह का विकास हो जाता है जो उस समाज को एक निराली नैतिक विशेषता प्रदान करते हैं। ये मूल्य अक्सर आम जनता के गीतों, नृत्यों लोककथाओं, चित्रकला, मूर्तिकला, उसके कर्मकांडों और समारोहों में व्यक्त होते हैं।

पिछले वर्षों में रचनात्मक गतिविधि के ये विविध रूप संस्कृति शब्द के अर्थ के प्रतीक बन गये हैं। संस्कृति विषयक हर विचार-विमर्श अनिवार्यतः इन गतिविधियों को केन्द्र बनाकर ही चलता है, पर हमें यह ध्यान रखना चाहिए कि उनका जन्म किसी जाति की जीवन-पद्धति से होता है और वह जीवन-पद्धति बदलने पर वे भी कुछ समय में पूरी तरह बदल जायेंगी अथवा नष्ट हो जायेंगी या परिवर्तित हो जायेंगी। वर्तमान स्थिति में, हमें अफ्रीका में नये देशों का यत्न करना चाहिए कि जीवन के नये पहलुओं को बतानेवालों द्वारा या पुराने रूपों को नया रूप देकर किस प्रकार स्पष्ट या अभिव्यक्त किया जा सकता है।

संस्कृति : परम्परागत समाज में

कोई भी जीवित संस्कृति कभी जड़ नहीं होती। सामूहिक रूप से मनुष्य लोग अपने प्राकृतिक परिवेश को अपने अनुकूल बनाने के लिए संघर्ष करते हैं और इस क्रम में एक सामाजिक परिवेश पैदा कर लेते हैं। प्राकृतिक परिवेश में परिवर्तन, या अधिक ठीक-ठीक कहें तो, उनके संघर्ष के स्वरूप में परिवर्तन से उनकी संस्थाओं का स्वरूप बदल जाएगा जिससे उनकी जीवन और विचार-रीति बदल जायेगी। उनके जीवन और विचार की नयी रीति फिर उनकी संस्थाओं और प्राकृतिक परिवेश पर प्रभाव डालेगी। यह एक द्वंद्वात्मक क्रम है।

संस्कृति की एकीकारक भूमिका, जिसका वर्णन डब्ल्यू० ई० अब्राहम्स ने 'द माइंड आफ अफ्रिका' में किया है, परम्परागत समाजों के बारे में विशेष रूप से सच साबित होती है

'संस्कृति (आपसी) सहनशीलता और सहयोग को स्वाभाविक बनाने का एक साधन है। इसे उतनी ही मात्रा में सफलता मिलेगी जितनी मात्रा में इसे स्वतः प्रमाण बनने दिया जाएगा। यद्यपि इसमें भोजन से वाद-विवाद की छूट होती है और उससे यह पुष्ट ही होती है, पर इन वाद-विवादों के निर्णय के सिद्धान्त संस्कृति से ही प्राप्त होते हैं।

'जनता के सारे विश्वासों, क्रियाओं और मूल्यों की दृष्टि से संगठित करके संस्कृति जीवन के उस अंश में व्यवस्था भरती है जो राज्य के क्रियाक्षेत्र के बाहर होता है। यह इस तरीके से व्यवस्था करती है कि समाज का, साझी भावनाओं और सारे मूल्यों के आधार पर, एकीकरण हो जाय। यह एक साझे भविष्य के निर्धारण और उसे प्राप्त करने के प्रयत्नों में सहयोग के लिए आधार बनाती है।"

जोमो केन्याटा की पुस्तक "फेसिंग माउंट केन्या" संस्कृति की यह एकीकारक क्रिया चलती होने का सजीव उदाहरण है। इसे पढ़ते ही एक आन्तरिक, गतिशील आत्मा से भरी दुनिया दिखायी देती है, यह उन बातों की ईसाई प्रचारकों द्वारा की गयी निंदाओं का प्रामाणिक खंडन भी है जिन्हें वे अंधविश्वास जंगली और अज्ञानपूर्ण समझते थे। सबसे बड़ी बात यह है कि इससे संस्कृति का राजनीतिक और आर्थिक आधार बहुत अच्छी तरह प्रस्तुत होता है। गिकुयु (एक अफ्रीकी जन-समुदाय) जीवन के सब पहलुओं पर विचार करने के बाद अंत में केन्याटा ने बलपूर्वक यह स्थापना की है कि किसी जाति के अपना स्वरूप पहचानने के क्रम में संस्कृति की भूमिका सबसे पहले आती है

"जीवन के इन सब पहलुओं से ही" केन्याटा ने लिखा है, "किसी सामाजिक संस्कृति की रचना होती है। और मनुष्य को जो संस्कृति विरासत में मिलती है, वह ही उसे अपनी दुनियावी खुशहाली के साथ-साथ उसका मानव होने का गौरव भी प्रदान करती है। यह उसे उसके मानवीय तथा नैतिक मूल्य सिखाती है। और उसे यह अनुभव कराती है कि उसे काम करना चाहिए और स्वतंत्रता के लिए लड़ना चाहिए।"

संस्कृति और राजनीति

संस्कृति को राजनीति से पहले रखना गलत है। पहले राजनीतिक और आर्थिक मुक्ति हो जाने पर ही सांस्कृतिक मुक्ति, किसी जाति की सर्जक भावना और कल्पना का सुन्दर विकास, हो सकता है। लोग जब निषेधात्मक सामाजिक ढाँचे का विनाश और नये ढाँचे की रचना करने में सक्रियता से लगे होते हैं, तभी वे अपने आप को देखना शुरू करते हैं। उनका तब नया जन्म होता है।

आजादी की लड़ाई लड़ते हुए अधिकतर अफ्रीकी बुद्धिजीवी सिर्फ वह चीज चाहते थे जो उन्हें नहीं मिल पाती थी, या यों कहिए कि वे इस लड़ाई को अपनी तात्कालिक आवश्यकताओं की दृष्टि से देखते थे। ये आवश्यकताएँ हर हालत में उस सामाजिक स्थिति के कारण पैदा हुई थीं जो उन्हें औपनिवेशिक प्रणाली की बदौलत हासिल हुई थी, पर इनकी पूर्ति उस प्रणाली के आधारभूत जातीय भेदभाव के कारण न हो पाती थी। ये लोग वही कपड़े और जूते पहनना चाहते थे, वही वेतन पाना चाहते थे, उसी प्रकार के आराम-देह बंगलों में रहना चाहते थे जो इनके बराबर योग्यता वाले इनके गोरे समकक्षों को प्राप्त थे।

आजादी के बाद, उनकी आवश्यकताओं पर लगी जातीय भेदभाव की रुकावट हट गयी। अपने भूतपूर्व विजेताओं के ढंग के रहन-सहन के लिए अंधी दौड़ शुरू हो गयी। चमड़ी का कालापन घटानेवाले पदार्थों, सीधे बालों, बेमतलब ड्राइंग रूम पार्टियों, बड़ी-बड़ी भूमि-सम्पदाओं, देहात स्थित निवासस्थानों, मर्सीडीज और बैंटले मोटरकारों का चारों ओर बोलबाला है। फिर भी, इनमें से कुछ लोग मुँह से एक काल्पनिक अतीत से मजबूती से चिपटे हुए हैं और उसकी प्रशंसा के गीत गाते हैं।

यदि हमें सच्ची राष्ट्रीय संस्कृतियों का विकास करना है तो हमें अपनी स्थिति को पहचानना होगा। इसका अर्थ यह है कि हमें अपने सामाजिक और आर्थिक ढाँचों की पूरी तरह जाँच करनी होगी और यह जानना होगा कि क्या वे वास्तविक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए और आम जनता का काम करने या उसका बेरोकटोक बनाये रखने के लिए सचमुच उपयुक्त हैं? कोई भी आदर्श, कोई भी कल्पना, तब तक शून्य है जब तक उसे सत्यात्मक रूप न दिया जाय।

यद्यपि, अंततोगत्वा किसी सार्थक आत्मस्वरूप का विकास सामाजिक ढाँचों के पूर्ण पुनर्गठन पर निर्भर है—यह बात सर्वथा बुनियादी है—पर हमें नयी भावनाओं और नये कलारूपों के विकास की सुविधाएँ पैदा करने के लिए खास नीतियाँ बनानी चाहिए।

शिक्षा की मार्मिक भूमिका

इस काम में शिक्षा की भूमिका मार्मिक महत्त्व की है। औपनिवेशिक पद्धति ने उस प्रकार की शिक्षा को जन्म दिया जो गुलामी, अपने से नफरत और आपसी संदेह को पुष्ट करती थी। इसने एक ऐसी जाति पैदा कर दी जिसकी जड़ें किसी भी संस्कृति में नहीं हैं।

आज हमारी शिक्षा के अधिक साफ दीखनेवाले प्रजातीय पहलू हटा दिये गये हैं। पर असली शिक्षा प्रणाली, जिसका लक्ष्य गुलाम मस्तिष्क पैदा करना था, और जो साथ ही देहाती किसान और शहरी मजदूर से नफरत करती थी, जड़ से नहीं बदली गयी है। हमारे स्कूलों में, हमारे विश्वविद्यालयों में यूरोप ही केंद्र में खड़ा होता है। और अब ऐसे लोग पैदा करने पर जोर दिया जाने लगा है जो शासन करने के लिए पैदा हुए हों।

अभी हाल में यूनिवर्सिटी कालेज, नैरोबी, में एक बड़ा महत्त्वपूर्ण विवाद पैदा हो गया। कुछ प्रोफेसरों ने यह प्रश्न उठाया कि इंग्लिश विभाग – यह साहित्य का अध्ययन करानेवाला एकमात्र विभाग है—जो आजाद अफ्रीका के बीचों-बीच जमा हुआ ब्रिटिश साहित्य पढ़ाता जा रहा है, कायम रखना कहाँ तक उचित है।

साहित्यादि विषयों के अध्ययन के विषय में इस संकीर्ण, मूलतः औपनिवेशिक दृष्टिकोण को, इस आधार पर उचित ठहराया गया कि लोगों को एक ही संस्कृति की ऐतिहासिक दृष्टि से निरंतरता का अध्ययन करने की आवश्यकता है। इस विचार के पीछे यह मान्यता खड़ी है कि हमारी चेतना और सांस्कृतिक विरासत की केंद्रीय जड़ ब्रिटिश परंपराएँ और आज की पश्चिमी उन्नति है। प्रोफेसरों का कहना था कि :

"यदि एक ही संस्कृति की ऐतिहासिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण निरंतरता का अध्ययन करना आवश्यक है तो वह संस्कृति अफ्रीकी क्यों नहीं हो सकती ? अफ्रीकी साहित्य केंद्र में क्यों नहीं हो सकता जिससे हम अन्य संस्कृतियों को इसकी तुलना में देख सकें ?"

इस लक्ष्य की पूर्ति के लिए, उन्होंने इंगलिश विभाग समाप्त करने की, और इसके स्थान पर मुख्यतः अफ्रीकी साहित्य और भाषाएँ पढ़ानेवाला विभाग स्थापित करने की माँग की। उन्होंने कहा कि साहित्य विभाग अंग्रेजी और फ्रेंच में लिखा गया आधुनिक अफ्रीकी साहित्य, अफ्रो-अमरीकी और कैरीबियन साहित्य और यूरोप की साहित्य-परंपरा का चुना हुआ पाठ्यक्रम पढ़ाया करे। पर इस विभाग का मूल आधार अफ्रीकी साहित्य की मौखिक परंपरा का अध्ययन होना चाहिए।

उपनिवेशवाद के अवशेष

औपनिवेशिक प्रणाली गुलाम प्रजातियों पर अपनी भाषा लादती है, फिर जनता की अपनी भाषाओं को हीन बनाती है। ऐसा करके वे अपनी भाषा सीखने को बड़प्पन की निशानी बना देती हैं : जो कोई इसे सीख लेता है, वह बड़प्पन के निशान वर्ग और उसकी भाषाओं को हीन समझने लगता है। अपनायी हुई भाषा के विचार-क्रम और मूल्य अपनाकर वह अपनी मातृभाषा की मूल्य-प्रणाली से विमुख हो जाता है।

हम एक क्रांतिकारी संस्कृति का निर्माण करना चाहते हैं जो दकियानूसी परंपरा या राष्ट्रीय सीमाओं के तंग घेरे में बंद न होकर बाहर की ओर अभिमुख हो। राष्ट्रीय तथा जागरूक की चेतना को या तो एक समाजवादी कार्यक्रम में रूपांतरित कर दिया जाए, अन्यथा वह निष्प्राण रहेगी और मर जायगी।

पिछले साल तांगानिका में शिक्षकों •

शिक्षा में क्रान्ति : दृष्टि और दिशा

हम शिक्षा में क्रान्ति चाहते हैं। लेकिन हम क्या चाहते हैं ?

शिक्षा की अनेक परिभाषाएं हैं—सब एक-से-एक बढ़कर। लेकिन सबमें यह संकेत है कि शिक्षा के बिना मनुष्य मनुष्य नहीं बन सकता, इसलिए शिक्षा ऐसी होनी चाहिए जो मनुष्य को मनुष्य बनावे। यह प्रयोजन बुरी शिक्षा से नहीं सिद्ध होता। जैसे खराब भोजन से शरीर खराब होता है उसी तरह कुशिक्षा से संस्कृति खराब होती है। अनुभव से यह सिद्ध हो गया है कि कुशिक्षा अशिक्षा से कहीं अधिक बुरी होती है। और, यह भी सिद्ध है कि साक्षरता के बिना भी शिक्षा संभव है। यह मानना भूल है कि शिक्षा कहीं से शुरू होकर कहीं खत्म होती है। कोई डिग्री मिल गयी तो शिक्षा पूरी हो गयी, यह विचार आज के विज्ञान और लोकतन्त्र के जमाने में सर्वथा गलत है। जब तक जीना है तब तक सीखने, सुधारने, सवारने का क्रम चलाना चाहिए- गर्भ से मृत्यु तक। जीवन भर चलनेवाले इस क्रम के रूप और गुरु सहायक हो सकते हैं लेकिन सच्ची शिक्षा वही होगी जो मनुष्य स्वयं अपने का ...ा। यह क्षमता शिक्षा द्वारा हर एक में पैदा होनी चाहिए।

विज्ञान और लोकतन्त्र की भूमिका में हम अपने देश के संदर्भ में शिक्षा के दो लक्ष्य मान सकते हैं। एक यह कि शिक्षा पाकर हर व्यक्ति अपने लिए ईमान की रोटी और इज्जत की जिन्दगी प्राप्त कर सके। दूसरे यह कि शिक्षा पाकर देश के लाखों गांवों और शहरों में रहनेवाले ५६ करोड़ लोग शांति के साथ मिलजुल-कर रह सकें। पहले लक्ष्य को आर्थिक तथा दूसरे को सामाजिक—सांस्कृतिक, और आध्यात्मिक भी, मान सकते हैं।

मनुष्य अपने पेट से जुड़ा हुआ है। पेट ही नहीं, वह प्रकृति और पड़ोसी के साथ भी जुड़ा हुआ है। किसी-न-किसी रूप में उसने अपने को परमेश्वर के साथ भी जोड़ रखा है। इस तरह हमारे जीवन का एक अनुबन्ध-वृत्त (युनिवर्स ऑव कारिलेशन) है जिसमें पेट, पड़ोसी प्रकृति और परमेश्वर, चार मुख्य तत्व हैं। इसी अनुबंध से सारे ज्ञान विज्ञान का जन्म हुआ है। इसलिए इस अनुबंध से अलग हटकर शिक्षा सच्ची शिक्षा नहीं हो सकती, और मनुष्य का सच्चा विकास भी नहीं हो सकता।

आज की शिक्षा हमें इन चार में से किसी के भी साथ नहीं जोड़ती, इसलिए वह ... है। लेकिन शिक्षा अकेली नहीं है ... में प्रचलित संपूर्ण ... व्यवस्था का अं... है। ... संभव नहीं है कि हम एक ओर शिक्षा को जड़ से बदल दें और दूसरी ओर राजनैतिक और आर्थिक व्यवस्था को ज्यों-की-त्यों छोड़ दें। क्रान्ति के लिए राजनीति, अर्थनीति, शिक्षानीति, समाजनीति और धर्मनीति, जिनको मिलाकर जीवननीति बनती है, सबको साथ बदलना चाहिए। लेकिन अगर इसमें से किसी क्षेत्र में सुधार करना हो तो सुधार ऐसा होना चाहिए जो क्रान्ति की दिशा में ले जानेवाला हो।

शिक्षण की किसी नयी सुधार-योजना में बाल-शिक्षण और प्रौढ़-शिक्षण, दोनों को साथ-साथ सोचना चाहिए। बाल-शिक्षण से समाज बनता है, लेकिन समाज बदलने के लिए प्रौढ़-शिक्षण अनिवार्य है। हमें समाज को बदलना भी है, और बनाना भी, इसलिए हमारे लिए विद्यालयों में पढ़नेवाले विद्यार्थियों की शिक्षा का जितना महत्व है उससे कम महत्व उन करोड़ों प्रौढ़ों का नहीं है जो गांवों शहरों में रह रहे हैं, और खेतों-खलिहानों, कारखानों, दूकानों और दफ्तरों में काम कर रहे हैं। जब हम लड़के-लड़कियों को उत्पादक हुनर सिखाना चाहते हैं तो जो लोग उत्पादक या अन्य उपयोगी कार्यों में पहले से लगे हुए हैं उन्हें शिक्षित-प्रशिक्षित करने की बात क्यों नहीं सोचेंगे ?

लोकतन्त्र में सरकार बनाने-बदलने का काम प्रौढ़ वोटरों का है लेकिन समाज-परिवर्तन का काम किसका है ? अगर लोक-चेतना परिवर्तन को स्वीकार न करे, और लोक-शक्ति परिवर्तन के लिए स्वयं आगे न बढ़े और परिवर्तन के बड़े काम को सरकार के हाथ में सौंप दे तो निश्चित है कि घूम-फिरकर सरकार की शक्ति सेना के हाथ में चली जायगी, और सैनिक शासन का प्रभुत्व जम जायेगा, चाहे वह पाकिस्तान की तरह नंगा, खुला हुआ हो, या अमेरिका की तरह छिपा हुआ। इस दृष्टि से समाज के जीवन को सरकार के प्रभुत्व से बचाना लोकतन्त्र की इस समय सबसे बड़ी समस्या है। उसके लिए समाज को तैयार करने का काम शिक्षण का है। इस संदर्भ में प्रौढ़-शिक्षण (या लोक-

---

से बातचीत करते हुए जूलियस न्येरेरे ने उनसे अनुरोध किया था कि वे अरुषा घोषणा के क्रांतिकारी लक्ष्यों के संदर्भ में तारतम्य पैदा करने में हमारा शिक्षा दें

"... अपना आगामी दी हुई शिक्षा बलर्क पैदा करेगी, जैसे उपनिवेशकों की दी हुई शिक्षा करती थी। आप योद्धाओं के बजाय गुलामों या अर्ध-गुलामों के गुट को शिक्षा दे रहे होंगे। अपने छात्रों को औपनिवेशिक मनोवृत्ति से बाहर निकालिए। आप जबर्दस्त आदमी पैदा करते हैं, हठीले नौजवान, जो कुछ कर सकें, न कि निकम्मे नौजवान।"

जो सच्ची राष्ट्रीय संस्कृति ऐसे स्वस्थ हठीले नौजवान" पैदा कर सकती है जो सामूहिक सहयोग पर, न कि निमम शोषण निमम छीनो-और-खाओ पर आधारित समाज को पोषित करती, जो संस्कृति एक जाति के सामूहिक परिश्रम से पैदा होती है, वही संस्कृति आज के संसार को कोई महत्वपूर्ण उपयोग और मौलिक वस्तु प्रदान करने की योग्यता रखती है। (अफ्रीका की स्वाधीनता और सांस्कृतिक आजादी शीर्षक से यूनेस्को कूरियर के फरवरी '७१ के अंक में छपे एक बड़े निबन्ध से साभार पुनर्मुद्रित)

अगर शिक्षित मस्तिष्क इसी तरह इतिहास से चिपका रहनेवाला ही रहा, और शिक्षण-व्यवस्था और कुछ ऊपरी प्रक्रियाओं में फर्क कर दिया गया तो भी वह शिक्षण क्रान्तिकारी हो सकेगा, यह सम्भव नहीं। इसीलिए समस्या सामने आती है कि कैसे इस तरह के मस्तिष्क का निर्माण हो, जो स्वयं क्रान्तिकारी हो सके, जो प्रतिपल बदलती परिस्थितियों का सामना करने के लिए तैयार हो, जो शिक्षितों में प्रयोगसिद्ध होने तक इन्तजार करने के बदले प्रयोगसिद्ध करने की क्षमता पैदा करे।

इस पहलू को सामने रखते हैं तो ध्यान में आता है कि शिक्षण की प्रक्रिया और उसका ढाँचा जितना ही अधिष्ठान-मुक्त होगा, उतना ही क्रान्तिकारी भूमिका बनाये रख सकेगा। जितना अधिक वर्तमान से जुड़ा रहेगा, उतना ही अधिक समय की माँग को पूरा कर सकेगा। वर्तमान से शिक्षण को जोड़ने के लिए ही गांधी की नयी तालीम में समाज, प्रकृति और उत्पादन-प्रक्रिया को बुनियादी आधार माना गया है। जो बीत चुका, प्रयोगसिद्ध हो चुका, वह तेजी से बदल रही परिस्थितियों में केवल संदर्भ के लिए है; जो संदर्भ मात्र के लिए है उसी तक आज शिक्षण को सीमित कर दिया गया है। इसीलिए उसका भारी बोझ हमारे मस्तिष्क की क्षमता को कुण्ठित कर देता है। वह मानसिकता विकसित नहीं हो पाती, जो नयी चुनौतियों का नयी चेतना और स्फूर्ति के साथ मुकाबिला कर सके।

संदर्भ-विषयक विद्वत्ता वास्तव में समाज की यथास्थिति को बनाये रखने के लिए होती है, और न केवल यथास्थिति-पोषक होती है, बल्कि वह परिवर्तन-विरोधी भी होती है। इसीलिए गांधी और विनोबा ने तालीम को निरन्तर नयी बनाये रखने पर जोर दिया, और माओ ने विशेषज्ञता की तालीम को दकियानूसी घोषित किया।

आज की शिक्षा स्थापित मूल्यों को समाज में टिकाये रखने में लगी है, जैसा समाज आज का है—विषमता, शोषण और मानवीय मूल्यों से हीन—उसे बनाये रखने के लिए चल रही है। यह स्थिति किसी भी गाँव या नगर की प्राथमिक इकाई से लेकर जागतिक स्तर का है। यह कितनी अमानवीय हो सकती है, इसका ताजा उदाहरण अमेरिका के 'पेंटागन अध्ययन' के रहस्योद्घाटन के रूप में दुनिया के सामने है। अमेरिकी सरकार के विशेषज्ञों और नेताओं ने मिलकर वियतनाम में जो कसाईपन किया है, वह किसी अशिक्षित बुद्धि वाले की योजना से नहीं विद्वानों की योजना से। बंगला देश की जाग्रत जन-चेतना को कुचलने के प्रयत्न में लगे याह्या खाँ के समर्थन के पीछे किसिंगर जैसे विद्वान प्राध्यापक की सलाह काम कर रही है।

इसलिए शिक्षण में क्रान्ति के साथ-ही-साथ समाज में भी क्रान्ति की बात आ जाती है। बल्कि दोनों परस्पर की पूरक क्रान्तियाँ हो जाती हैं। और, जब गांधी-विनोबा ने क्रान्ति को एक घटना नहीं, आरोहण की प्रक्रिया के रूप में प्रस्तुत किया तो उस क्रान्ति की प्रक्रिया ही शैक्षिक हो गयी। यानी शैक्षिक क्रान्ति की प्रक्रिया में से सामाजिक क्रान्ति प्रकट होनी चाहिए।

प्रश्न यह खड़ा होता है कि क्या सामाजिक क्रान्ति को अपने गर्भ में धारण किए ऐसी शैक्षिक क्रान्ति के लिए आज के शिक्षक, शिक्षार्थी, अभिभावक तैयार हैं? या वे अपने तात्कालिक असंतोष के कारणों को मिटा भर देने को क्रान्ति मान रहे हैं? स्थिति कुछ ऐसी ही दीखती है। इसीलिए आज तक यह शिक्षा ऊपर से नीचे तक आलोच्य बनकर भी टिकी हुई, या टिकाये रखी गयी है। हड़ताल होते हैं अध्यापकों के वेतनवृद्धि के लिए, अन्य सुविधाओं के लिए, छात्रों के अपने सीमित हितों की पूर्ति के लिए, लेकिन पूरी शिक्षा को बदलने के लिए कहाँ कभी हड़ताल और प्रदर्शन हुए भारत में?

क्यों? क्योंकि जिनकी उच्च, महा और विश्वविद्यालयों तक पहुँच है, वे समाज की यथास्थिति में ही अपना निहित स्वार्थ की पूर्ति या कम-से-कम उसका आभास पाते हैं।

इस विषम स्थिति में तरुण-शान्ति-सेना शिक्षा में क्रान्ति के लिए आगे बढ़ी है। बढ़ी है उन्हें उद्बोधित और संगठित करने, जो वर्तमान सामाजिक ढाँचे में उज्ज्वल भविष्य का आभास नहीं अंधकार की भयानकता पा रहे हैं, जो आज के मूल्यों के प्रति आस्था खो चुके हैं और जो नये मूल्यों के लिए अपनी इस अनास्था को आधार बनाकर, अस्थिरता और अनिश्चितता के सारे खतरे मोल लेकर एक नयी खोज में लगने के लिए प्रस्तुत हैं, जिन्हें किसी नये विचार के प्रयोगसिद्ध स्वरूप की जड़ प्रतीक्षा नहीं, बल्कि जो स्वयं उसको प्रयोगसिद्ध करना चाहते हैं!

इस दिशा में आगे बढ़नेवालों का अभिनन्दन करते हुए हम उनसे कुछ कहना चाहते हैं। उन्हें कुछ सावधानी के संकेत देना चाहते हैं। मौजूदा समाज-विद्रोह के स्वरों को अपने कोलाहल में विलीन कर लेने की उत्कृष्ट कला विकसित किये हुए है। वह जानता है कि मौजूदा मूल्यों पर प्रहार करने और नये मूल्यों की खोज करनेवालों को किस प्रकार हजम किया जाता है। यह एक ऐसा खतरा है जिसमें क्रान्ति की शक्तियों का लोप होता रहा है, क्रान्तिकारी प्रतिक्रान्ति की चपेट में आते रहे हैं, मुक्ति के मसीहे बंधन के जाल की डोर थामे इतिहास में भरे पड़े हैं। आप उससे बचने के लिए क्या सतर्क हैं? आप की सतर्कता के साथ उसकी उचित और आवश्यक व्यूह-रचना है?

सर्वोदय-आन्दोलन ने क्रान्ति की अब तक की प्राप्त अवधारणा में क्रान्ति की है। इसके लिए क्रान्ति के दर्शन में दो तत्त्व जोड़े हैं—क्रान्ति किसी व्यक्ति या व्यक्तियों के समूह द्वारा नहीं 'सर्व' द्वारा हो, क्रान्ति की प्रक्रिया में, इस 'सर्व' को क्रान्ति का

शिक्षा में परिवर्तन के कुछ महत्त्वपूर्ण बिन्दु

हम शिक्षा में आमूल परिवर्तन चाहते हैं, मात्र सुधार नहीं। हम एक भिन्न प्रकार की शिक्षा-प्रणाली ही चाहते हैं। इसलिए हम—(१) शिक्षा के लक्ष्य में, (२) शिक्षा के पाठ्यक्रम में, (३) शिक्षण-प्रणाली में, (४) परीक्षा पद्धति में और (५) शैक्षिक प्रशासन में क्रान्तिकारी परिवर्तन चाहते हैं।

हमारी प्रचलित शिक्षा सामन्ती और परम्परागत सीमाओं से आबद्ध साम्राज्यवादी प्रशासन की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए गठित की गयी थी। उसकी कल्पना ही कुछ मध्यमों के लिए की गयी थी जो राजकाज चलाने में अंग्रेज महाप्रभुओं की सहायता करें। फलतः उसने पेशेवरों के अलगाव और देश के सर्वसाधारण को 'हीन' समझने के बौद्धिक दम्भ एवं शोषण की प्रवृत्तियों को ही पनपाया और आज भी पनपा रही है।

स्वतन्त्र भारत एक दूसरे प्रकार का समाज बनाना चाहता है—एक ऐसा समाज जिसमें सभी मनुष्यों के लिए सम्मान और समानता होगी, किसी के द्वारा किसी का शोषण नहीं होगा और श्रम से उत्पादित साधनों में सबका सहभाग होगा। पूँजीवाद-सामन्तवाद मुक्त समाज के लोकतान्त्रिक समाजवाद की यह कल्पना भिन्न है। इसलिए हमको प्रचलित शिक्षा प्रणाली से भिन्न एक ऐसी शिक्षा-प्रणाली चाहिए, जो सबमें साथ-साथ रहने की और साथ-साथ समाजोपयोगी उत्पादक श्रम करने की भावना का पोषण करे, व्यक्तिगत स्वार्थ के स्थान पर सर्व के कल्याण के भाव विकसित करे और भौतिक दम्भ के स्थान पर समाजवादी समाज के मूल्यों को स्वीकार करने की तत्परता उत्पन्न करे।

व्यक्ति के शारीरिक, बौद्धिक और आध्यात्मिक गुणों का स्वतन्त्र और मुक्त विकास शिक्षा का उत्तम लक्ष्य है, परन्तु इस विकास से यदि व्यक्ति में अपने लिए सत्ता और सम्पत्ति के संग्रह की इच्छा बढ़ती है, और वह भी पड़ोसी के शोषण की कीमत पर, तो यह असामाजिक प्रवृत्ति है और त्याज्य होनी चाहिए। स्वार्थ के लिए व्यक्तिगत विकास का हमारी शिक्षा में कोई स्थान नहीं होना चाहिए।

शिक्षा के लक्ष्य

अतः जहाँ तक लक्ष्य का सम्बन्ध है हम चाहेंगे कि हमारी शिक्षा का सम्बन्ध समाजवादी लोकतान्त्रिक राष्ट्र के जीवन, उसकी आकांक्षाओं और आवश्यकताओं के अनुरूप हो। हम चाहेंगे कि व्यक्ति के स्वतन्त्र और मुक्त विकास में किसी प्रकार की बाधा न पड़े और कभी भी उसके स्वतन्त्र भाव-प्रकाशन पर समाज या राज्य का अंकुश न रहे। परन्तु हम यह भी चाहेंगे कि व्यक्ति का यह मुक्त विकास उसके सामुदायिक जीवन के हित में हो। सबको शिक्षा का समान अवसर मिले, यह शिक्षा का दूसरा लक्ष्य होना चाहिए और ऐसी अवस्था होनी चाहिए जिससे नागरिक को जीवन के हर पहलू की शिक्षा जीवन पर्यन्त मिलती रहे और वह नित्य नूतन ज्ञान विज्ञान सीखता रहे। शिक्षा को संगठित विद्यालयों तक ही सीमित न रखा जाय। शिक्षा का तीसरा ध्येय होना चाहिए—विश्व-बन्धुत्व की प्रवृत्ति का विकास। आज के अणु युग में शिक्षा का यह ध्येय न रहा, तो विश्व का नाश निश्चय है।

शिक्षा का पाठ्यक्रम

शिक्षा के इन लक्ष्यों की पूर्ति इस पाठ्यक्रम से नहीं होगी, जो आज चल रहा है। यह पाठ्यक्रम शास्त्रीय और एकांगी है—केवल बुद्धि-पक्ष पर जोर देता है और हाथ के सृजनात्मक पक्ष की अवहेलना करता है। यह किसी भी हुनर की दीक्षा नहीं देता और इसमें छात्रों को कोई समाजोपयोगी धंधा सिखा कर उत्पादक इकाई बनाने की कल्पना नहीं है। अतः हमें शिक्षा का एक ऐसा पाठ्यक्रम चाहिए

(१) जो छात्र को समाज का उत्पादक नागरिक बनने में सहायता दे। विज्ञान और तकनीकी के अभाव में आज कोई भी उद्योग उत्पादक नहीं हो सकता, खेती भी नहीं। अतः सम्बन्धित विज्ञान और तकनीकी का शिक्षण उद्योग शिक्षण का आवश्यक अंग होना चाहिए।

(२) इस पाठ्यक्रम की सामान्य भूमिका काम मूलक खेतिहर-औद्योगिक (एग्रो-इंडस्ट्रियल) एवं समता-मूलक समाज की हो। इस देश की अस्सी प्रतिशत जनता गाँवों में रहती है। कृषि और ग्रामोद्योग उनके जीवन के आधार हैं। परन्तु पाठ्यक्रम में कृषि और ग्रामोद्योग की यह सर्वाधिक महत्ता प्रतिबिम्बित नहीं होती। हमारा पाठ्यक्रम कृषि-ग्रामोद्योग-मूलक ही होना चाहिए।

(३) यह पाठ्यक्रम ऐसा हो जो कुल मिला कर एक स्वावलम्बी आत्म-निर्भर व्यक्तित्व का सृजन कर सके। इस पाठ्यक्रम को शिक्षा के प्रत्येक स्तर पर,

---

शिक्षण लगातार दिया जाय। दूसरा कि क्रान्ति स्थिर हो, निरन्तर हो। अन्यथा वह हस्तान्तरण मात्र क्रान्ति नहीं। क्रान्ति के आरम्भ यानी क्रान्ति का शिक्षण करनेवाले निरन्तर नयी चुनौतियों के प्रति 'सर्व' का ध्यान खींचते रहें और इस प्रकार एक ऐसे सजग मस्तिष्क के विकास का काम करें जो स्वयं क्रान्ति का 'सेतु' बने।

शिक्षा में क्रान्ति का मोर्चा तात्कालिक परिणामों के लिए तो हो ही, लेकिन क्रान्ति में 'स्थिर नवीनता' और 'सर्व' के तत्त्व आधार बनें, तभी क्रान्ति उक्त खतरों से बची रह सकेगी।

९ अगस्त को शिक्षा में क्रान्ति का जो अभियान शुरू हो रहा है, वह तात्कालिक और सीमित दायरे का तूफान मात्र नहीं हो, बल्कि क्रान्ति की एक अखण्ड प्रक्रिया का, एक अविराम आरोहण का प्रारम्भ-बिन्दु बने, यह हमारी शुभाकांक्षा है।

—रामचन्द्र राही

प्रारम्भिक और माध्यमिक स्तर पर भी, अपने में पूर्ण इकाई होना चाहिए। पूर्ण इकाई का अर्थ यह है कि प्रारम्भिक पाठ्यक्रम माध्यमिक स्तर की शिक्षा के लिए और माध्यमिक स्तर का पाठ्यक्रम स्नातक-स्तरीय शिक्षा के लिए तैयारी मात्र न होकर, जीवन के लिए तैयारी होगा। इस दृष्टि से प्रारम्भिक और माध्यमिक स्तर के पाठ्यक्रमों में उद्योग अथवा कार्य-अनुभव के लिए आवश्यक हो तो आधा समय दिया जाय। कार्यक्रम को सफल बनाने के लिए स्कूलों के साथ फार्म और कारखाने सलग्न हों, जिससे छात्र को काम करने का प्रभावी अवसर प्राप्त हो। जहाँ यह तत्काल सम्भव न हो, वहाँ पड़ोस के खेतों और कारखानों या दूकानों में काम करने की व्यवस्था हो।

(४) इस प्रकार के पाठ्यक्रम का विद्या-निर्माण लय-स्तर पर ही सम्भव है, क्योंकि स्कूल-स्कूल की परिस्थितियाँ भिन्न होती हैं। आज पाठ्यक्रम का निर्माण राज्य-स्तर पर होता है और फिर उसे राज्य के सभी स्कूलों के लिए समान रूप से निर्धारित कर दिया जाता है। उद्योगपरक अथवा कार्यानुभव-मूलक पाठ्यक्रम में ऐसा नहीं हो सकता। अत: पाठ्यक्रम निर्माण के लिए जिलास्तर की एक समिति की स्थापना हो, जिसमें अध्यापकों और छात्रों के प्रतिनिधियों के अतिरिक्त शिक्षा विशेषज्ञ भी हों। राज्य अथवा राष्ट्रीय स्तर पर जो पाठ्यक्रम बनें, वे मात्र संकेत के लिए हों (केवल सजेस्टिव हों)।

शिक्षण-प्रणाली

हमारी वर्तमान शिक्षण-प्रणाली अमीरों और गरीबों के लिए अलग-अलग शिक्षा व्यवस्था के ढंग को प्रश्रय देती है। अमीरों के लड़के उच्च-स्तर की शिक्षा देनेवाले उन पब्लिक स्कूलों में पढ़ते है, जहाँ लम्बी-लम्बी फीसें ली जाती हैं और गरीब लाचार होकर अपने बच्चों को घटिया स्तर के नि:शुल्क सरकारी अथवा स्थानीय बोर्डों के स्कूलों में भेजते हैं।

शिक्षण-प्रणाली के इस दोष का सम्बन्ध हमारे सविधान से है। सविधान के १९ 'ग' और 'च' के अनुसार सभी नागरिकों को यह अधिकार दिया गया है कि वे किसी भी उद्देश्य से गैर-सरकारी स्कूल स्थापित कर सकते हैं (कोठारी कमीशन १०-७७)।

यही कारण है कि स्वतंत्रता के २४ वर्ष बाद भी समाजवाद लाने के लिए सकल्पित इस देश में आज भी शिक्षा के क्षेत्र में विषमता बनी हुई है। इसके तीन भयकर परिणाम हो रहे हैं:

(१) अमीर-गरीब के अलगाव की खाई चौड़ी होती जा रही है और सामाजिक संश्लेषण की क्रिया समाप्त होती जा रही है, क्योंकि पब्लिक स्कूलों में पढ़े हुए अमीरों के बच्चे राष्ट्र-जीवन की वास्तविकता के सम्पर्क में नहीं आते और स्कूलों से निकलने पर वे सामान्य भारतीय जीवनधारा में अपने को निमज्जित नहीं कर पाते।

(२) राष्ट्र योग्य गरीब की प्रतिभा से वंचित होता जा रहा है। अवसर मिलता और उपयुक्त शिक्षा मिलती तो न जाने कितने ही गरीब बच्चे राष्ट्र की निधि होकर राष्ट्र की सम्पदा और वैभव में वृद्धि करते।

(३) चूँकि अंग्रेजी माध्यम से शिक्षा पाने के कारण अखिल भारतीय प्रशासकीय और प्रादेशिक सेवाओं के लिए पब्लिक स्कूलों से उत्तीर्ण विद्यार्थी ही अधिक सफल होते हैं, धीरे-धीरे देश का प्रशासन ऐसी नौकरशाही के हाथ में चला जा रहा है, जो देश के सर्व-साधारण जीवन और उसकी समस्याओं को सहानुभूतिपूर्ण ढग से समझ ही नहीं सकती।

हमें यह समझ लेना चाहिए कि शिक्षा में विषमता रखते हुए हम समाज में समता नहीं ला सकते और इस मार्ग में अगर हमारा सविधान ही बाधा है तो इसमें इस तरह सशोधन करना चाहिए, जिससे:

(१) प्रयोग की गुजाइश रहते हुए भी देश में शिक्षा की सामान्य विद्यालय प्रणाली (कॉमन स्कूल सिस्टम ऑफ पब्लिक एजुकेशन) चले।

(२) पड़ोसी स्कूल की सकल्पना कार्यान्वित हो अर्थात् एक स्तर की शिक्षा के लिए पड़ोस के सब बच्चे एक ही तरह के स्कूल में जायें। परन्तु जब तक यह सशोधन न हो, राज्य सरकारों को निम्नांकित कदम उठाने चाहिए:

(क) किसी भी स्कूल में पढ़ाई की कोई भी फीस न ली जाय। यदि आवश्यक हो तो शिक्षा के खर्च की पूर्ति शिक्षा उपकर (एजुकेशनल सेस) लगाकर की जाय।

(ख) उच्च-से-उच्च अच्छी शिक्षा प्राप्त करने का अवसर धन या वर्ग पर निर्भर न कर प्रतिभा पर निर्भर करे। इसके लिए गरीब और योग्य छात्रों के लिए पर्याप्त छात्रवृत्ति की योजना चलायी जाय।

(ग) शिक्षा का माध्यम मातृभाषा या क्षेत्रीय भाषा हो और इसी भाषा में राज्य का प्रशासन भी चले।

परीक्षा-पद्धति

आज की शिक्षा में भ्रष्टाचार इसलिए है कि परीक्षा नौकरी का पासपोर्ट है विद्यार्थी के लिए। परीक्षा में उत्तीर्ण होना ही प्रमुख लक्ष्य है। अध्ययन का पक्ष गौण है। इस स्थिति को बदलने के लिए निम्नांकित कदम उठाने चाहिए:

(क) परीक्षा का नौकरी से सम्बन्ध विच्छेद करना होगा। नौकरी या रोजगार देनेवाला अपनी परीक्षा स्वयं ले और चुनाव करे। इस परीक्षा में बैठने के लिए किसी दूसरी परीक्षा के प्रमाण-पत्र की आवश्यकता न हो।

(ख) आज की लिखित बाह्य परीक्षा से परीक्षार्थी के रुझानों, प्रवृत्तियों और कौशलों का मूल्यांकन नहीं हो सकता, चरित्र का तो कतई नहीं हो सकता। इस प्रकार का मूल्यांकन तो वही अध्यापक कर सकता है, जो विद्यार्थी के साथ रहता है। अतः अन्तर परीक्षाओं को महत्व

दिया जाय और मूल्यांकन साल में एक दो बार, केवल छात्र की स्मरण-शक्ति का न होकर उसके समग्र व्यक्तित्व का सतत होता रहे। जो प्रमाण-पत्र दिया जाय उस पर उत्तीर्ण या अनुत्तीर्ण न लिखा जाय। वह केवल वर्णनात्मक हो।

(ग) स्कूलों को अन्तिम पब्लिक परीक्षा (जब तक मान्य हो) लेने का अधिकार हो और उनकी संस्तुति पर राज्य परीक्षा बोर्ड उन्हें प्रमाण पत्र दे।

शैक्षिक प्रशासन

शैक्षिक प्रशासन का दकियानूसी ढांचा शिक्षा के किसी भी प्रगतिशील प्रयास का गला घोंट सकता है। अत: आज की शिक्षा में किसी भी परिवर्तन के पहले शैक्षिक प्रशासन और विद्यालय प्रबंध में परिवर्तन आवश्यक है।

(१) शिक्षा सरकार मुक्त होनी चाहिए, जिससे विचार पर किसी का नियंत्रण न रहे। उत्तर स्वातन्त्र्य काल में शिक्षा के केन्द्रीयकरण और राष्ट्रीयकरण (सरकारीकरण) की मांग बढ़ी है। शिक्षा आज राज्य का विषय है। उसे केन्द्र का विषय बनाया जाय, ऐसी मांग भी बराबर होती रही है। केन्द्रीयकरण की पद्धति का अहिंसक समाज-रचना से मेल नहीं बैठता। लोकतन्त्र के लिए शिक्षा के केन्द्रीकरण की प्रवृत्ति सत्ता और सम्पत्ति के केन्द्रीयकरण से भी अधिक घातक सिद्ध होगी, क्योंकि यदि शिक्षा का सरकारीकरण हुआ तो विचारों के 'रेजिमेंटेशन' से बचा नहीं जा सकता, और विचारों का रेजिमेन्टेशन अधिनायकवाद को जन्म देगा। लोकतन्त्र की रक्षा के लिए, लोकनिर्णय की पवित्रता अक्षुण्ण रहनी चाहिए, जो शिक्षा के केन्द्रीकरण से समाप्त हो जायेगी। अत: शिक्षा सरकारी नियंत्रण से मुक्त होनी चाहिए और शिक्षा विभाग को न्याय-विभाग की तरह स्वायत्त होना चाहिए। अर्थात् सरकार शिक्षा विभाग को धन और साधन दे, लेकिन विद्यालय के नियमन और संचालन में उसका हस्तक्षेप न हो, ठीक वैसे ही, जैसे सरकार न्याय विभाग को वेतन तो देती है, लेकिन न्याय के लिए न्यायाधीशों को स्वतन्त्र छोड़ देती है।

(२) राष्ट्रीयकरण के स्थान पर शिक्षा का विद्यालयीकरण होना चाहिए। विद्यालयों की सारी प्रवृत्तियों की व्यवस्था शिक्षक, अभिभावक और छात्र की सम्मिलित समिति को सौंपी जाय। प्रत्येक स्कूल या निश्चित क्षेत्र के कुछ समान स्तर के स्कूलों के लिए एक विद्यालय समिति हो, जिसमें विद्यालय के अध्यापकों के प्रतिनिधि, ग्रामसभा के प्रतिनिधि (अभिभावक) और जिला-शिक्षा-बोर्ड द्वारा मनोनीत जिले के कुछ शिक्षा विशेषज्ञ हों।

(३) इसी प्रकार ब्लाक, जिला, राज्य और राष्ट्र के स्तर पर ऐसा गैर-सरकारी ढांचा बनाया जाय, जिसमें विद्यालय की स्वायत्तता के साथ क्षेत्रीय समन्वय और संयोजन सम्भव हो।

सरकार आज जो वित्तीय सहायता डिस्ट्रिक्ट बोर्डों, नगर पालिकाओं और गैर-सरकारी स्कूलों के प्रबंधकों को दे रही है, वह इन स्वायत्त समितियों को दे।

शिक्षा के विभिन्न स्तरों पर विद्यार्थी वर्ग पर व्यय

हमारे संविधान में अनिवार्य और निःशुल्क प्रारम्भिक (अर्थात् कक्षा १ से ७, ८ तक की ६ से १४ वर्ष तक की) शिक्षा प्रदान करने का उत्तरदायित्व राष्ट्र का माना गया है। यह लक्ष्य १९८५-८६ तक भी पूरा होगा, ऐसी आशा नहीं है। प्रौढ़ शिक्षा पर तो बहुत ही कम ध्यान दिया गया है। और आज भी निरक्षरों का प्रतिशत ७० से कम नहीं है अर्थात् आज भी इस देश की दो तिहाई जनता पढ़-लिख नहीं सकती। और जिस ढंग से हम चल रहे हैं उस ढंग से चलते रहे तो दो हजार ईस्वी तक भी हम पूरे देश को साक्षर नहीं बना सकते।

इसका कारण है। हमने उच्च शिक्षा पर जरूरत से ज्यादा खर्च किये हैं। १९६५-६६ तक प्रारम्भिक, माध्यमिक और उच्च स्तर के प्रत्येक शिक्षा-स्तर की शिक्षा के लिए शिक्षा पर व्यय होने वाले कुल धन का एक-एक तिहाई दिया गया है (कोठारी कमीशन १९-१३)। सार्जेन्ट कमीशन ने स्कूली शिक्षा के लिए कुल शैक्षिक व्यय का २/३ भाग निश्चित किया था, जब उसने अवधि १९८० तक रखी थी। ब्रिटेन, अमेरिका और रूस में भी स्कूली शिक्षा और उच्च शिक्षा में व्यय का अनुपात क्रमश: ८५.९ १४.१, ७२.४ २७.६ और ८६.७ १३.३ का है।

स्तर के अनुसार हमारा प्रति छात्र व्यय निम्न प्रकार है

(१) लोअर प्राइमरी (कक्षा १ से ४) रु० ३०.००

(२) हायर प्राइमरी (कक्षा ५ से ७) रु० ४५.००

(३) माध्यमिक शिक्षा रु० १०७.००

(४) उच्च शिक्षा (आर्ट कोर्स) रु० ३२८.००

(५) उच्च शिक्षा (साइंस कोर्स) रु० १,१६७.००

अत: प्रारम्भिक और माध्यमिक स्तर के लिए अगर अच्छी शिक्षा का प्रबन्ध करना हो, तो सरकार को मजबूर किया जाय कि वह विश्वविद्यालयी शिक्षा पर अपना व्यय कम करे। अगर हम प्रारम्भिक और माध्यमिक स्तरों की शिक्षा को अपने में पूर्ण इकाई बना देते हैं तो उन पर और भी अधिक खर्च करना होगा। इस खर्च के लिए उच्च शिक्षा पर किया जाने वाला व्यय कम करना ही होगा।

शिक्षक

स्वायत्त आत्म-निर्भर शिक्षक शिक्षा में क्रान्ति की सबसे पहली शर्त है। अध्यापक शिक्षण-तन्त्र का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण पुर्जा है। अत: शिक्षा के मूल्यों में परिवर्तन करना है तो मेधावी अध्यापकों के चयन और नियुक्ति को वरीयता देनी होगी और अध्यापकों के उचित पारिश्रमिक, प्रगति के अवसर और उनके कार्य एवं सेवा की उपयुक्त शर्तों की व्यवस्था करनी होगी। इस सम्बन्ध में निम्न कदम उठाने चाहिए। →

शिक्षा में क्रान्ति और कोठारी आयोग

कोठारी कमीशन (१९६४-६६) शिक्षा के सम्पूर्ण पहलुओं पर सुझाव देनेवाला अपने ढंग का पहला शिक्षा-आयोग था। और उसने तो दावा किया है कि अगर उसके सुझावों का कार्यान्वयन किया जाय तो भारत की शिक्षा में क्रान्ति हो जायगी। कमीशन की रिपोर्ट का पहला वाक्य है—'भारत के भाग्य का निर्माण इस समय उसकी कक्षाओं में हो रहा है।" और इसी विश्वास के साथ उसने सुझाव दिया है कि देश की कक्षाओं को ठीक कर दिया जाय तो देश का भाग्य पलट जायगा। उसने जो संस्तुतियां की है, उसे उसने 'शैक्षिक क्रान्ति' ही कहा है (कोठारी कमीशन : १–१६) और आस्था व्यक्त की है कि अगर शिक्षा की राष्ट्रीय-प्रणाली में गुणात्मक और परिमाणात्मक दोनों ही दृष्टियों से किया जाय तो शिक्षा के माध्यम से सामाजिक और सांस्कृतिक क्रान्ति हो जायगी। कमीशन लिखता है—'हमारी इस रिपोर्ट का उद्देश्य उन कार्यक्रमों को सामने लाना है जो शैक्षिक क्रान्ति कर सकते हैं।" (शिक्षा आयोग : १-१७)। इस क्रान्ति को अमली रूप देने के लिए कमीशन ने निम्नांकित सिफारिशें की हैं :

(१) शिक्षा को लोगों के जीवन की आवश्यकताओं और आकांक्षाओं से सम्बंधित करना चाहिए जिससे वह लोकतांत्रिक एवं समाजवादी समाज के प्रयोजन की पूर्ति कर सके (१-१८)। इसके लिए आयोग ने शिक्षा को उत्पादिता से जोड़ने का सुझाव देते हुए विज्ञान और कार्य-अनुभव को शिक्षा का अभिन्न अंग बनाने की, और शिक्षा के व्यवसायीकरण की, विशेषकर माध्यमिक स्कूल स्तर पर, संस्तुति की है (१-२२)। उत्पादिता की दृष्टि से ही उसने विश्वविद्यालय-स्तर पर कृषि और शिल्प-विज्ञान (टैक्नालोजी) की शिक्षा पर अधिक जोर देने का भी सुझाव दिया है (१-३२)।

(२) सबके लिए अच्छी शिक्षा का समान अवसर उपलब्ध होना चाहिए। इसीलिए कमीशन ने लोकशिक्षा की एक समान स्कूल प्रणाली (कामन स्कूल सिस्टम) विकसित करने का सुझाव दिया है जिससे प्रचलित शिक्षा-प्रणाली जिस सामाजिक अलगाव और वर्ग-भेद को बढ़ा रही है उससे बचा जा सके (१-३५)। अध्याय–९ अनुच्छेद–३७ में तो उसने काफी फीस लेनेवाले पब्लिक स्कूलों और लोकनिधि से लगभग निःशुल्क चलनेवाले घटिया स्तर के स्कूलों के एक साथ समाज में चलते रहने की स्थिति को अलोकतांत्रिक और समतापूर्ण आदर्श से मेल न खानेवाला बताया है, और इस स्थिति को दूर करने के लिए आगे चलकर अध्याय १० में 'पड़ोसी स्कूल' की संस्तुति की है—ऐसे स्कूल की, जिनमें स्कूल के पड़ोस में रहने वाले सभी विद्यार्थी बिना किसी भेदभाव अथवा धनी-निर्धन के विचार के, एक साथ पढ़ें। उसने यह भी संस्तुति की है कि इन स्कूलों में पढ़ाई की कोई फीस न ली जाय।

(३) सामाजिक एकता दृढ़तर हो, जिससे वर्गों के बीच बढ़ती हुई खाईं पटे। इस प्रयोजन की सिद्धि के लिए शिक्षा आयोग ने सिफारिश की है कि 'किसी-न-किसी प्रकार की सामाजिक और राष्ट्रीय सेवा सभी विद्यार्थियों के लिए अनिवार्य बना दी जाय और सभी स्तरों पर वह शिक्षा का एक अभिन्न अंग हो (१-४०)।

(४) शिक्षा और लोकतंत्र दोनों ही दृष्टियों से आवश्यक है कि शिक्षा के प्रारम्भिक स्तर से उच्चतम स्तर तक शिक्षा का माध्यम प्रादेशिक भाषाएँ रहें और राज्यों का शासन प्रादेशिक भाषाओं में ही चले। इसीलिए सारे देश में शिक्षा के लिए एक ही माध्यम पर जोर देना (चाहे वह हिन्दी हो या अंग्रेजी) बुद्धिमानी नहीं होगी। अंग्रेजी अथवा विश्व की दूसरी भाषाओं का अध्ययन छोड़ा न जाय, परन्तु किसी स्तर पर भी वे शिक्षा का माध्यम न रहे। इसीलिए उसने यह भी सिफारिश की है कि विश्वविद्यालय स्तर की उच्च शिक्षा के लिए भी प्रादेशिक भाषाओं में पुस्तकें तैयार की जायें और इसके लिए देर से देर लगभग दस वर्ष का समय लिया जाय (१-५३)। अंग्रेजी माध्यम को उसने केवल अखिल भारतीय संस्थाओं के लिए सलाह दी है और वह भी अस्थायी रूप से फिलहाल के लिए है (१-५६)। अन्तर्राष्ट्रीय आदान-प्रदान के अध्याय–१ अनुच्छेद–५७ के अन्तर्गत कमीशन ने अंग्रेजी का 'पुस्तकालय भाषा' के रूप में, सबसे महत्वपूर्ण माध्यम मानकर उसकी पढ़ाई को जारी रखने की संस्तुति की है। उसे कोई क्रान्तिकारी भी शायद ही अस्वीकार करे।

(५) शिक्षा-संस्थाओं में नैतिक, सामाजिक और आध्यात्मिक मूल्यों की शिक्षा प्रारम्भ की जाय और इस प्रकार की शिक्षा को स्कूली कार्यक्रमों का अभिन्न अंग बना दिया जाय। उत्तर स्वास्थ्य-

---

→(१) समान वेतन : समान योग्यता और समान दायित्व वाले सभी अध्यापकों को एक समान अथवा एक जैसा वेतन मिलना चाहिए।

(२) वेतन-क्रम की एकता : एक संस्था में काम करने वाले सभी अध्यापकों का वेतन-क्रम एक हो। विशेष काम करने के लिए अलग से एलावेन्स दे दिया जाय।

(३) वेतन मान में न्यूनतम अन्तर : चूँकि अध्यापन एक रचनात्मक कार्य है और उसमें सबके लिए निष्ठा और समर्पण की भावना समान है, अतः अध्यापक का वेतन उसकी योग्यता पर आधारित होना चाहिए, चाहे वह प्रारम्भिक स्कूल का अध्यापक हो, चाहे विश्वविद्यालय का प्रोफेसर। इसी कारण प्रारम्भिक स्कूल के अध्यापक और विश्वविद्यालय के अध्यापक के वेतनमान का अन्तर न्यूनतम होना चाहिए। आज औसत अन्तर एक और छः का है। (कोठारी आयोग सारिणी ३.१)। यह अन्तर १.३ से अधिक न हो।

—वंशीधर श्रीवास्तव

काल में इस प्रकार की शिक्षा न देने का दुष्परिणाम यह हुआ है कि हमारे छात्रों में नैतिक और सामाजिक मूल्यों के कम-जोर पड़ने से एकांगी भौतिक दृष्टिकोण का विकास हुआ है, जो अवांछनीय है। आज के युग की सबसे बड़ी आवश्यकता है विज्ञान और टेक्नालोजी से अध्यात्म का समन्वय। इस समन्वय के लिए हमारे देश के लिए ही नहीं, सारे विश्व के लिए यह आवश्यक हो गया है कि विज्ञान और टेक्नालोजी से प्राप्त ज्ञान और कौशल का सतुलन नीति-शास्त्र तथा धर्म से सम्बधित मूल्यों से बैठाया जाय और स्वतन्त्रता एव सत्य और करुणा के महान आदर्शों के लिए जीवित रहने का हमारा नया अभियान और गहरी आस्था हमारी शिक्षा प्रणाली द्वारा अभि-व्यक्त हो (१-८३)।

(६) विभिन्न एजेन्सियो—जैसे सर-कार, स्थानीय निकायो और निजी प्रबन्धकों के अधीन काम करनेवाले एक ही कोटि (समान काम करनेवाले समान योग्यता के) अध्यापकों का वेतन समान हो। समानता का यह सिद्धान्त शीघ्रातिशीघ्र लागू होना चाहिए (३-९)।

(७) बाह्य परीक्षण के आधार पर दिये हुए प्रमाणपत्र में जिन विषयो की परीक्षार्थी ने परीक्षा दी है केवल उनमें ही उसके निष्पादन का विवरण होना चाहिए, सम्पूर्ण परीक्षा में उसकी सफलता या असफलता के सबध में कोई टिप्पणी नही होनी चाहिए। विद्यार्थी को स्कूल द्वारा भी एक प्रमाणपत्र दिया जाना चाहिए जिसमें सचित इन-कार्ड (क्यूमुलेटिव रेकार्ड्स) के आधार पर उसकी आन्तरिक मूल्यांकन का लेखा दिया जाय। यह प्रमाणपत्र बोर्ड के प्रमाणपत्र के साथ सलग्न कर देना चाहिए। इस आन्तरिक परीक्षा में विद्यार्थी के समस्त पहलुओ का सतत मूल्यांकन होना चाहिए (९-८०-८१)।

कुछ चुने हुए स्कूलो को अपने विद्या-र्थियो के मूल्यांकन तथा दसवीं कक्षा की समाप्ति पर उनकी अन्तिम परीक्षा लेने का अधिकार होना चाहिए, यह परीक्षा बोर्ड की परीक्षा के समकक्ष मानी जायगी और स्कूलों की सिफारिश पर बोर्ड परीक्षार्थियों को प्रमाण-पत्र देगा (९-८२-८३)।

(८) विद्यालय सकुल (स्कूल कम्प-लेक्स) की स्थापना की जाय।

(९) प्रशासन को पर्यवेक्षण से अलग कर दिया जाय, भले ही दोनो ही के बीच निकट का सहयोग हो।

(१०) सभी शैक्षिक संस्थाओं के लिए अनिवार्य रजिस्ट्रेशन का कानून वाछनीय होगा। गैर-रजिस्टर्ड सस्था चलाना एक अपराध माना जाना चाहिए (१०-८०)।

(११) प्रत्येक राज्य में एक स्कूल शिक्षा बोर्ड की स्थापना की जानी चाहिए जिसकी स्थापना विधि के द्वारा की जानी चाहिए। इसे पर्याप्त स्वतन्त्रता और अधिकार मिलना चाहिए। इसका वित्त एक अलग निधि के रूप में हो जिसका प्रबन्ध और अनुरक्षण बोर्ड के द्वारा किया जाय। इसी प्रकार प्रत्येक जिले में जिला स्कूल बोर्ड हो जिसमें जिलापरिषद, नगर-पालिकाओ, शिक्षाशास्त्रियों और शिक्षा से सम्बधित दूसरे विभाग के प्रतिनिधि रहने चाहिए। जिले के सभी सरकारी और स्थानीय स्वायत्त निकायों पर इस बोर्ड का प्रशासन होगा। यही बोर्ड जिले के सभी गैरसरकारी सस्थाओं को सहायक अनुदान भी देगा। स्कूली शिक्षा की विकास योजना बनाना और उसका कार्या-न्वयन भी इसी बोर्ड की जिम्मेदारी रहेगी। एक लाख या इससे अधिक जन-सख्यावाले बड़े नगरो में नगर पालिका स्कूल बोर्ड स्थापित हो।

(१२) उपयुक्त क्षेत्रो में केन्द्रीकरण और अन्य क्षेत्रो में, विशेषत प्रशासन में, विकेन्द्रीकरण का सही सम्मिश्रण ही सघीय लोकतन्त्र में शैक्षिक योजना होगी।

(१३) स्कूल की छात्रवृत्तियां केवल उन स्कूलो के लिए होनी चाहिए जो समान स्कूल-पद्धति के भीतर हो। इसी प्रकार विश्वविद्यालय स्तर के लिए छात्रवृत्तियाँ केवल उन छात्रो के लिए हो, जिन्होंने समान स्कूल पद्धति से चलनेवाले स्कूलो से माध्यमिक शिक्षा प्राप्त की है (१०-२१)।

(१४) दस वर्ष के भीतर एक क्रमबद्ध कार्यक्रम के अधीन विश्वविद्यालय स्तर पर प्रादेशिक भाषाओ को शिक्षा के माध्यम के रूप में अपना लेना चाहिए (११-६२)।

(१५) विश्वविद्यालय के विद्या परिषदों तथा बोर्डों में भी विद्यार्थियो के प्रतिनिधियो को शामिल किया जाना चाहिए (१३-६)।

ये हैं शिक्षा के विभिन्न क्षेत्रो से सम्बन्धित उस कोठारी आयोग के कुछ सुझाव, जिसमें देश के ही नहीं, विदेश के भी कई चोटी के शिक्षाशास्त्री शामिल थे। ५ वर्ष बाद भी इनमें से किसी भी सुझाव का कार्यान्वयन नहीं हुआ है। अगर सरकार अपने द्वारा नियुक्त आयोग की संस्तुतियो को ही मान ले, तो देश की शिक्षा का स्वरूप बदल जाय। और आयोग ने रिपोर्ट के प्रारम्भ में जिस शैक्षिक क्रान्ति की आशा की थी वह चरितार्थ हो जाय।

मैं इस तालीम से बेहद असंतुष्ट हूँ। असलियत से इसका कोई सम्बन्ध नहीं है। आज के जमाने की माँग है कि आज जो तालीम चल रही है उसे जल्द-से-जल्द दफना दिया जाय। दफनाना दो तरह से होता है। पिता की लाश इज्जत के साथ दफनायी जाती है लेकिन हमारी यह तालीम इज्जत के साथ दफनाने लायक है ही नहीं। यह बुरी चीज है, जो हिन्दुस्तान के जिगर को खा रही है। यह लोगों का पराक्रम खतम कर रही है।

—विनोबा

शिक्षा को बदले कौन ?

आज की पढ़ाई का मूल उद्देश्य हो गया है डिग्री प्राप्त कर लेना। सबकी आकांक्षा रहती है कि हमें कहीं ऊँची-मोटी तनख्वाह की नौकरी प्राप्त हो जाय। पढ़े लिखे लोग अपनी सांस्कृतिक प्रतिष्ठा को खोकर विदेशी चाल-चलन और रिवाज पकड़ते जा रहे हैं। छात्र परीक्षा भवन में छूरा दिखाकर या पैसे के बलपर परीक्षाएँ पास कर रहे हैं। शिक्षक की प्रतिष्ठा समाज में नहीं है।

लेकिन शिक्षक भी क्या करें ? वह तो शासन तन्त्रों में बँधा हुआ है। शिक्षक अपने से ऊँचे अधिकारी की जी-हुजूरी में लगा रहता है। आज हर जगह से आवाज आ रही है कि शिक्षा बदली जाय, पर सिर्फ आवाज देने से ही नहीं, बदलने से शिक्षा बदलेगी। यह काम करेगा तो शिक्षक ही, लेकिन तब, जब शिक्षक की मानसिक भूमिका उसके लायक तैयार होगी। —बहोरा पोद्दार

पूर्णिया (बिहार)

बदलेगा स्वयं तरुण

देश की स्वतंत्रता प्राप्त होने के समय ही राष्ट्रध्वज के साथ शिक्षा भी बदलनी थी, किन्तु राष्ट्र-नेताओं ने देश की युवा-शक्ति को इतने सुदीर्घ काल तक मानसिक गुलामी में रखकर उसके समग्र जीवन को ही अस्त-व्यस्त कर दिया, उसकी चेतन शक्ति जड़ बनी, न उसके लिए सम्मान का जीवन रहा, न जीविका। फलतः आज देश के युवकों की विद्रोह-शक्ति राष्ट्र-निर्माण की ओर न लगकर उसके ध्वंस में ही लगी है।

कोई भी राष्ट्र युवावर्ग की शक्ति को इस तरह विध्वंसक दिशा में जाने देकर क्या अपने स्थायित्व का संरक्षण कर सकेगा ? आज देश में युवकों की कैसी दयनीय स्थिति है। लाखों लाख की तादाद में आज का शिक्षित बेवकूफ और बेकार की स्थिति में रोजी-रोटी की तलाश करता हुआ दर-दर की ठोकरें खा रहा है।

कौन चिंतित है इस युवक की वेदना पर ? बड़े-बड़े राजनैतिक मंचों से शिक्षा-विदों और शिक्षा-मंत्रियों की ओर से एक ही प्रलाप सुनने में आता है कि यह शिक्षा निकम्मी है, किन्तु आज तक शिक्षा के क्षेत्र में कोई परिवर्तन क्यों नहीं आया ? सत्तारूढ़ या सत्ताकांक्षी राज-नैतिक दल अपनी सत्ता की महत्वाकांक्षाओं के प्रति सजग हैं लेकिन शिक्षा में परिवर्तन की चिंता उनको नहीं है। क्या वर्तमान शिक्षा-संस्थानों के आचार्यों के मन में इस युवावर्ग की व्यथा के प्रति कोई टीस है ? वे कोई परिवर्तन चाहेंगे ? उत्तर है वे जिस ढांचे में ढले हैं, उससे भिन्न दृष्टि-कोण को स्वीकार करना उनकी सामर्थ्य के बाहर है।

अभिभावक विवश हैं। वर्तमान शिक्षा संस्थानों के अतिरिक्त कोई विकल्प नहीं है, जहाँ अपने बच्चों को दाखिल करा सकें। बिना ऊँची डिग्री के समाज में बच्चों का कोई भविष्य नहीं। नतीजा यह है कि वे भी वर्तमान प्रवाह को कायम रखने में मददगार हैं।

स्वतन्त्र शिक्षा संस्थाएँ सरकारी मान्यता के प्रभाव में अपना स्वत्व नहीं रख सकीं, यहाँ तक कि गांधी की बुनि-यादी तालीम का भी बेसिक के नाम से सरकार ने मजाक ही उड़ाया।

अब कौन शेष रहा है जो इस क्रान्ति के लिए सोचे ?

इतना तो निश्चित है कालचक्र पीछे की ओर नहीं घूमेगा।

बौद्धिक परतन्त्रता की बेड़ी में जकड़े भारत की मुक्ति के लिए आखिर तरुण-हृदय ही बलिदान के लिए तैयार होगा। स्वतन्त्र कहे जानेवाले देश में पर-तन्त्रता की शिक्षा चलती रहे, यह अब सम्भव नहीं होगा। देश ऐसी भूमिका में आ पहुँचा है, जहाँ उसे परिस्थितियाँ विचार-क्रान्ति के लिए विवश कर रही हैं। इसीलिए अब चेतन छात्र देश को ललकारेंगे, भ्रष्ट शिक्षण का सर्वथा बहिष्कार करेंगे और एक विधायक तथा रचनात्मक मार्ग खोजेंगे।

"स्ववीर्यं गुप्ता हि मनो. प्रसूतिः" अर्थात् मनु की संतान स्वयं अपने पराक्रम से ही रक्षित रहती है। इस ध्येयवाद को मानकर अपने बलबूते पर, अपने पैरों पर ही भारत के तरुणों को खड़ा होना होगा। तरुण वह है जो स्वयं तरकर दूसरों को तारने वाला है। उद्घोष हो चुका है, ९ अगस्त से उस अभियान की शुरुआत भी हो रही है। —शिवनारायण शास्त्री

अब केवल चर्चा का समय नहीं

आज दुनिया भर में एक हलचल मची हुई है। अत्यन्त भयाक्रान्त वातावरण में सम्पूर्ण शिक्षा-जगत सांस ले रहा है।

आज छात्र, अध्यापक, व्यवस्थापक और अभिभावक सभी लड़ाई के मोर्चे पर हैं, लेकिन दुर्भाग्य की बात है कि इनकी लड़ाई पारस्परिक है। छात्र की रुचि पढ़ने में नहीं है, अध्यापक पढ़ाने से जी चुराता है, व्यवस्थापक, व्यवसायी बन गया है, अभिभावक उदासीन है।

वस्तुतः शिक्षा के सूर्य को परीक्षा और प्रमाण-पत्र रूपी राहु-केतु निगल गए हैं। इन दोनों से शिक्षा को मुक्त करना होगा। व्यवहारतः इन दोनों की निर-र्थकता सिद्ध हो चुकी है। इनका जीवन और जीविका से बिलकुल सम्बन्ध नहीं रह गया है।

शिक्षा में क्रान्ति की केवल चर्चा का समय अब नहीं रहा। देशव्यापी सत्याग्रह शिक्षा में क्रान्ति के लिए शुरू हो जाना चाहिए। हम इस क्रान्ति के लिए विशेष रूप से देश के नौजवानों, छात्रों, शिक्षकों और अभिभावकों का आवाहन करते हैं।

राम प्रवेश शास्त्री,
संयोजक,
उ० प्र० शिक्षा में क्रान्ति समिति

शिक्षा में क्रान्ति : कब और कैसे ?

—काका कालेलकर

एक जमाना था जब शिक्षाशास्त्री आपस में मिलकर चर्चा करते थे कि विद्यार्थी को किस प्रकार पढ़ाया जाय। माँ-बाप के द्वारा समाज को भी समझाया कि ठोक-पीटकर बच्चों को पढ़ाने में लाभ की अपेक्षा हानि ही अधिक है। इससे बच्चों के चारित्र्य में काफी गिरावट आती है और उनकी बुद्धि कुछ क्षीण हो होती है। शिक्षक कोई पुलिस नहीं है कि मारकर या धमकाकर नयी पीढ़ी को सीधा कर दे। शिक्षा की कला इसमें है कि बच्चों की बुद्धि में, भावनाओं में और आदतों में सुधार हो जाय, जीवन के हरएक क्षेत्र में सफलता पाने के लिए जरूरी कौशल्य वे प्राप्त करें और साथ-साथ अपनी सामाजिक जिम्मेदारी समझनेवाले नागरिक भी वे बनें।

इन सब बातों में समाज की कितनी प्रगति हुई सो कहना कठिन है, लेकिन शिक्षा पद्धति के आदर्श समझने में, लोकमानस में काफी प्रगति हुई है। लेकिन आज का जमाना 'शिक्षा पद्धति में क्रान्ति' की बात नहीं करता। आज की आवश्यकता है "सम्पूर्ण शिक्षा में क्रान्ति।"

शिक्षा किसे देनी है? किसलिए देनी है? शिक्षा के द्वारा हम जीवन के सब क्षेत्रों में क्या-क्या प्रगति करना चाहते हैं? शिक्षा के द्वारा धर्मों को हम सुधार सकते हैं या नहीं? राज्यतंत्र का सुधारने का काम शिक्षा के द्वारा ही सधेगा या नहीं, ऐसे अनेक सवाल उठते हैं।

गांधीजी का कहना था कि आजकल के समाज में ऊपर के चन्द लोगों को ही शिक्षा मिलती है और वह भी अशिक्षित लोगों का शोषण करने की कला में प्रवीण बनाने की शिक्षा दी जाती है। फलतः शिक्षित लोगों का जीवन बिगड़ता है। वे आलसी और परावलम्बी बनते हैं। आजकल शिक्षित की परिभाषा अगर की जाय तो कहना पड़ेगा—'शिक्षित आदमी वह जो स्वयं कभी भी शरीरश्रम नहीं करेगा।' वह अगर उत्पादक शरीरश्रम करेगा तो उसकी प्रतिष्ठा कम हो जायेगी। अगर डाक्टर ने शरीरश्रम करने की सलाह दी तो टेनिस खेलेगा या पैदल घूमने जायेगा। 'सुशिक्षित वह है जो सामान्य जनता को अशिक्षित रखकर उसके श्रम से लाभ उठाने का तन्त्र सघटित कर सके।' कोई भी सुशिक्षित मनुष्य ऐसी निर्लज्ज व्याख्या मान्य नहीं करेगा। लेकिन अपने जीवन के द्वारा इसी व्याख्या की सत्यता वह सिद्ध करता है।

गांधी जी का कहना था कि राष्ट्रीय शिक्षा में ग्रामोद्योग की, हस्तोद्योग की शिक्षा देने से विद्या में श्रमजीवन की आदत पड़ेगी। पिछड़े व श्रमिक लोगों का शोषण करने की उसकी वृत्ति भी नहीं रहेगी। एकत्रित पूंजी के मुनाफे पर अथवा सूद पर जीने की इच्छा भी वह नहीं करेगा, जिसे उत्पादक परिश्रम करने का आनन्द मिला है।

विशाल जनता के जीवन का प्रधान हिस्सा आजीविका प्राप्त करने में व्यतीत होता है। मनुष्य को जीने के लिये चाहिए—अन्न, वस्त्र, मकान, और काम करने के लिये तरह-तरह के स्थूल और सूक्ष्म साधन, जिसे हम औजार कहते हैं। अन्न के लिये हम खेती और बागवानी करते हैं। उसके बाद आता है वस्त्र का उद्योग, जो उद्योग अगर गाँव के लोगों के और किसानों के हाथ में रहा तो समाज का स्वास्थ्य बिगड़ने का डर नहीं रहता।

राष्ट्र के सबसे श्रेष्ठ आधार स्तम्भ हैं—किसान और जुलाहा। इनके साथ-साथ आते हैं बढ़ई, लुहार आदि कारीगर। इनके बाद आते हैं हिसाब लेखक और मुहर्रिर, चित्रकार आदि। इनके बाद आयेंगे वैद्य आदि दवा करनेवाले लोग।

समाज अगर निरोगी है तो हरेक घर का सारा काम घर के लोग ही करेंगे। सफाई करने के लिये, बर्तन माजने के लिये अथवा पाँव दबाने के लिये मजदूर रखने में लोगों को शर्म लगेगी।

गांधीजी का कहना है कि 'व्यापक अर्थ में आजीविका प्राप्त करने के प्रयत्न में ही सब उद्योगों के, विज्ञान के और समाज-व्यवस्था चलाने के शास्त्र तैयार हुए हैं। इसीलिए आजीविका की कला सीखते-सीखते उन्हीं की मदद से विज्ञान आदि सब विद्या-कलाएँ सिखानी चाहिए।

गांधीजी का उद्देश्य था कि सारे देश में शोषण-रहित, ऊँच-नीच भेदरहित, अहिंसक समाज-व्यवस्था की स्थापना की जाय और शिक्षण इसी हेतु दिया जाय।

लेकिन आजकल के समाज में गांधीजी का यह आदर्श अमल में लाने की हिम्मत नहीं है, इच्छा भी नहीं है। उसे तो विज्ञान और यन्त्र-विद्या के द्वारा जो तरह-तरह के साधन पैदा किये जाते हैं उन्हीं में बढ़ावा करना, यन्त्रोद्योग द्वारा वस्तु-निर्माण करना, उपयोगी वस्तुएँ बेचकर धन कमाना, सारी समाज-व्यवस्था सरकार नाम की हिंसा-कुशल संस्था द्वारा चलाना और ऐसे करते हुए शिक्षा का सार्वत्रिक प्रचार करना, और श्रमजीवी, दबी हुई, बेचारी जनता के दुःख का निवारण करना अधिकाधिक सत्ता और सम्पत्ति सरकार नामक राज्य-संस्था के हाथ में दे देना, और उसके द्वारा समाज की स्थिति सुधारना इतना ही चाहिए।

ऐसे आदर्श का विकास पश्चिम में बहुत हुआ है। उनके वहाँ की चर्चा से लाभ उठाकर वहाँ आदर्श जैसा वहाँ है वैसा ही यहाँ दाखिल करना, यह है आज के हमारे अच्छे-से-अच्छे राष्ट्रीय नेताओं का आदर्श। इसलिये वे कहने लगे हैं कि गांधीजी के आदर्श आज के जमाने के काम के नहीं हैं।

यह है आज की स्थिति और हम ऐसे लोगों में उन्हीं के द्वारा शिक्षा में क्रान्ति लाते हैं। लोगों को समझना चाहिए कि "जैसा होगा जीवन का आदर्श, उसी के अनुकूल हो सकेगी शिक्षा की पद्धति।" इसलिए जब तक हम जीवन में क्रान्ति

९ अगस्त का कार्यक्रम

१—प्रदर्शन तरुण-शांतिसेना के नेतृत्व में ही हो।

२—जुलूस मौन हो और उसकी जानकारी जुलूस से कुछ पहले लाउडस्पीकर से दे सकते हैं।

३—जुलूस में श्रम के साधन (कुदाल-फावड़ा) साथ में रहे तो अच्छा।

४—शिक्षा में क्रान्ति के बारे में नारे प्लेकार्ड्स पर लिखकर जुलूस के साथ रखें।

५—जुलूस में पोस्टर्स तथा घोषणा-पत्र वितरित करें।

६—मौन जुलूस में जुलूस के आगे कुछ लोग कार्यक्रम का प्रचार करें।

७—जुलूस किसी जगह सभा में परिणत हो।

८—सभा में घोषणा-पत्र पढ़ा जाय और प्रतिज्ञा की जाय।

९—वक्ता सीमित रखे जायँ।

१०—हस्ताक्षर की घोषणा की जाय तथा कार्यक्रम के बारे में पूरी जानकारी दी जाय।

११—उपकुलपति, शिक्षामंत्री, रेडियो आदि को हस्ताक्षर-फार्म तथा कार्यक्रम के बारे में पूरी जानकारी दी जाय।

—राष्ट्रीय तैयारी समिति,
शिक्षा में क्रान्ति-अभियान,
राजघाट, वाराणसी

करने में एकमत नहीं हुए हैं, शिक्षा में क्रान्ति करने की आशा व्यर्थ है। आज तक शहर के लोग और शहरी जीवन, गाँवों का शोषण करते आये हैं। शहरों में और गाँवों में भी उच्चवर्ग के लोग निचले वर्ग के लोगों का शोषण करते हैं। पुरुष वर्ग स्त्री-जाति का शोषण करता है। धर्माचार्य और धर्मप्रचारक (इनमें निःपरिग्रही, नि संग अपरिग्रही, अविवाहित, सन्यासी आ गये) सामान्य भोले अतिमान लोगों का शोषण करते हैं।

केवल कानून से यह शोषण बंद नहीं होगा। एक तरह का शोषण रोका तो उसी में दूसरी तरह का शोषण खड़ा हो ही जाता है। इसलिए जीवन में 'शोषण को टालने की वृत्ति' आनी चाहिए। सामाजिक जीवन में क्रान्ति और जीवन में क्रान्ति तब आयेगी जबकि बचपन से उस प्रकार की शिक्षा दी जायेगी।

हम चाहते हैं कि विद्यार्थी, अभिभावक, शिक्षक, संस्था चलानेवाले संचालक, शिक्षाशास्त्री, समाज का सम्पूर्ण जीवन अपने काबू में लाने की महत्त्वाकांक्षा रखनेवाली सरकार और सरकार को अपने हाथ में रखने की कला में प्रवीण नेता, ये सब आपस में विचार-विनिमय करें और कोई एक निर्णय करें।

मैं चाहूँगा कि हरेक नागरिक पुरुष या स्त्री अपने मन में सोचे कि क्या उसे दूसरे को दुखी करके जीना है? या दूसरों का दुख दूर करने के लिये? इस एक प्रश्न में जीवन की सारी क्रान्ति आ जाती है। मैं चाहूँगा कि तरुण-शान्तिसेना में काम करनेवाले लड़के-लड़कियाँ चौदह हो या अधिक, इस एक प्रश्न का अपने मन के साथ निश्चय करें। केवल चर्चा के लिये नहीं, किन्तु जीवन के आदर्श के तौर पर। इतना करने पर उनकी सारी चर्चा में नयी जान आयेगी, और उनके मन में नये-नये सवाल खड़े होंगे।

मैं उनके साथ विचार-विनिमय करने के लिए तैयार हूँ। ●

पूर्णिया जिले के रूपौली प्रखण्ड में पुष्टि-अभियान की प्रगति

रूपौली प्रखंड की ८ जुलाई '७० से १८ अप्रैल '७१ तक की स्थिति—प्रथम चरण : ७६ हजार में ५६ हजार लोग, और ४६ राजस्व गाँवों में ४५ ग्रामदान में शामिल। ३६ राजस्व गाँवों में ६६ ग्रामसभाएँ बन चुकी। ७० ग्रामसभाएँ कार्यरत। २२ गाँवों में बीघा-कट्ठा वितरण तथा ग्रामकोष संग्रह कार्य। सपुष्टि अभियान के प्रथम चरण में अहिंसक पद्धति की प्रयोजनीयता सिद्ध हो चुकी है। अब इस पद्धति में विश्वास-भूमि बनानी है।

ग्रामसभाओं के पदाधिकारियों के चुनाव में सर्व-सम्मति के अभूतपूर्व प्रयत्न—खोज-ढूँढ़कर सच्चे और सही आदमी को पदासीन करने की चेष्टा, गलत आदमी के चुने जाने की संभावना समाप्त। अधिकांश गाँवों के कागज (ग्रामदान पत्र) पुष्टि कार्यालय में दाखिल हो चुके हैं।

अब द्वितीय चरण की व्यूह-रचना को उत्तर, पूर्व और दक्षिण (रूपौली, बैरिया, वकना) तीन हिस्सों में बाँटा गया। हर एक में ७ पंचायतें और १ ग्रामसभाएँ। प्रत्येक में समर्थ कार्यकर्ता निरंतर ग्रामसभाओं से सम्पर्क कर रहे हैं। १४, ५, १६ जून को तीनों क्षेत्रों में जो पुनर्निर्माण सम्मेलन किये गये उनमें हजारों लोगों ने भाग लिया। इस अवसर पर ग्रामसभाओं के प्रतिनिधियों की बैठक में ब्यौरेवार कार्य-अनुभव और कार्य-योजना पर विचार हुआ।

मुसहरी और रूपौली में अल्प भूमि-वालों के लिए सिंचाई-योजना की बिहार सरकार ने स्वीकृति दी है। बिहार रिलीफ कमिटी उसका कार्यान्वयन करेगी। ये योजनाएँ जनाधारित बनें, इस पर विशेष ध्यान दिया जा रहा है।

—महेन्द्रमिश्र 'मस्त'

गुजरात के जाग्रत् जनसमाज में

राजस्थान की यात्रा समाप्त करके अब हम गुजरात में आ गये हैं। जुलाई की ९ ता० थी। राजस्थान के अंतिम पड़ाव आबूरोड से सुबह ४-३० बजे हम निकल पड़े। मौसम सुहावना था। पिछले दिनों की बरसात ने पेड़ पौधों की प्यास बुझाकर उन्हें हराभरा कर दिया था। अरावली पर्वत की छोटी-बड़ी श्रृंखलाओं के बीचों-बीच पक्की सड़क पर जैसे-जैसे हमारे कदम गुजरात की ओर बढ़ने लगे, वैसे-वैसे बापू की पुण्य-स्मृति जागृत होने लगी और हृदय गद्गद हो गया। विचार आया, बापू से हमने जीवन-प्रेरणा प्राप्त की है, उसी महा-मानव की जन्मस्थली में हम आठ माह तक विहार करेंगी। बापू का कहना था कि अहंकार निरसन के बिना सत्य का दर्शन सम्भव नहीं। लोकयात्रा सत्य की ओर अग्रसर होने की ही यात्रा है। प्रभु का ऐसा अनुग्रह हो कि गुजरात की पुण्य भूमि में विहार करते हुए हमारा अहंकार निरसन हो जाय और फिर उसकी ही मर्जी चले, जैसे सन्त ज्ञानेश्वर चाहते थे—'मालिके जेतुने नेले, ते उते निवान्ता चि गेले तया पाणिया ऐसा केले, हो आवेगा।'

अभी यात्रा प्रारम्भ किये हमें आधा घंटा ही हुआ था कि ५ बजे सुबह, सुश्री हरविलास बहन, गुजरात में लोकयात्रा की संयोजिका, अपने ५-६ साथियों के साथ कार में लोक-यात्रियों से मिलने आ गयीं। पिछली रात वह काफी देर से सोई थीं और आज सुबह भी ३-३० बजे उठ गयी थीं। उनकी सौम्यता, तत्परता और लगन ने हमें प्रभावित किया। पंजाब के श्री ओम प्रकाश त्रिखा तथा उनकी पत्नी लक्ष्मी बहन और हिमाचल के सामी भाई कुछ दिन पूर्व से ही यात्रियों के साथ थे। कुछ ही कदम आगे बढ़े थे कि हाई स्कूल के छात्र सफेद पेंट-कमीज की भुभ्र पोशाकों में स्वागतार्थ खड़े मिले। फिर मिले गुजरात के पहले पड़ाव अम्बाजी के नगरवासी, गुजरात के जाने-माने सर्वोदय तथा रचनात्मक संस्थाओं के कार्यकर्ता तथा स्थानीय विद्यार्थियों और शिक्षकों के समूह। इस प्रकार काफिला बढ़ता ही गया। उस वक्त याद आयी विनोबाजी की यात्रा की, और साथ ही कवि की पंक्ति "वह अकेला ही चला था जानिबे मंजिल मगर, लोग साथ आते गये और काफिला बनता गया।"

स्वागत का भव्य आयोजन था। स्कूल के बच्चों के द्वारा बजाई गयी बैंड की ध्वनि से सारा वातावरण गुंजायमान हो रहा था। नगरवासी गुलाल, फूल-मालाएँ, चावल आदि अभिनन्दन की सामग्री लिए बहुत तत्परता के साथ खड़े थे। सर्वोदय गीत गाते हुए, लोकयात्रियों के साथ इस बड़े काफिले ने नगर में प्रवेश किया। सबसे पहले ८२ वर्षीय पूज्य रविशंकर महाराज ने प्रेम-विभोर मुद्रा में यात्रियों का स्वागत किया और फिर एक के बाद एक वरिष्ठ कार्यकर्ताओं ने यात्रियों का अभिनन्दन किया।

निवास की व्यवस्था अम्बाजी की उत्तम धर्मशाला में की गयी थी, जो तोरणों से सज्जित थी। स्वागत-सभा उसी धर्मशाला के बड़े हाल में ९-३० बजे सुबह रखी थी। सुश्री हरविलास बहन ने यद्यपि बताया था कि अम्बाजी में उनका सम्पर्क नहीं था, तथापि पूरा आयोजन बहुत बड़ा और व्यवस्थित था। लोकयात्रियों की सुविधा का भरपूर ध्यान रखा जा रहा था।

रविशंकर महाराज से अलग से भी भेंट हुई। उन्होंने मिष्टान्न और फल आदि आगे बढ़ाते हुए कहा, "मदालसा बहन ने आपके लिए मिठाई, फल तथा कुछ रकम भेंटस्वरूप भेजी है।" विनोबाजी का स्मरण करके वे बोले, "एक बार मैं और विनोबाजी एक ही जेल में थे। हम उन्हें पत्थर ढोते हुए देखा करते थे। वे बहुत कम बोलते थे। वे शुद्ध ब्राह्मण हैं।" स्वागत सभा की अध्यक्षता भी रविशंकर महाराज ने की।

गुजरात प्रवेश के साथ ही जनमानस में गांधी का असर देखा और देखा तरुण विद्यार्थियों तथा शिक्षकों का विशिष्ट उत्साह, जिससे सम्पूर्ण वातावरण अनु-प्राणित हो रहा था। कहाँ राजस्थान की घूँघट में सिमटी, नखशिख गहनों से लदी बहनें, और कहाँ सीधे पल्ले की साड़ी पहने अत्यन्त शृंगारवाली सादगी की मूर्ति ये गुजरात की बहनें। राहत मिली इनको देखकर। पुण्य सौम्य प्रकृति के कम बोलने वाले, घर अत्यन्त व्यवस्थित व स्वच्छ। मन में सवाल उठा, व्यवस्था में इतनी माहिर यह गुजरात की जनता समाज की व्यवस्था को सुधारने में पीछे क्यों?

यह एक यहाँ की ही विशेषता लगी। सभा समाप्त होते ही स्त्री-पुरुष और बच्चों की साहित्य-स्टाल पर भीड़ हो जाती है, और लोग पुस्तकें खरीद-खरीद कर ले जाते हैं। राजस्थान में ऐसी रुचि वाले कम देखे। वैसे तो रंग-बिरंगे कवर की सर्वोदय विचार की छोटी-छोटी सस्ती पुस्तकें, जो गुजरात वालों ने तैयार की हैं, वे किसी को भी आकर्षित करेंगी। फिर भी यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगा कि यहाँ की जनता को सद्विचारों तथा सद्ग्रन्थों की अच्छी परख है तथा उसकी कद्र है। पिछले सात दिनों में ३०० रुपये से भी अधिक की साहित्य बिक्री तथा उसकी ५० से ऊपर पत्र-पत्रिकाओं के ग्राहक बनाना, इस बात का सबूत है। जिस व्यापक पैमाने पर यहाँ की जनता में सर्वोदय विचार गया है, उससे यह अनु-मान लगता है कि गुजरात में क्रान्ति धीरे-धीरे नहीं आयेगी, जब होगी, तो एकदम होगी।

गुजरात में दस वर्ष से श्री जुगतराम दवे की प्रेरणा से तरुण शान्तिसैनिक-प्रशि-क्षण शिविरों की शृंखला का कार्यक्रम चला है। इस अवधि में हजारों तरुण प्रशिक्षण प्राप्त करके निकल चुके हैं। इसी

का यह परिणाम है कि आज भी महेन्द्र भट्ट जैसे तरुण इन्जीनियर और भारती तथा मन्दाकिनी बहन जैसी उच्च शिक्षा प्राप्त तरुणियाँ अपनी जीवन की सुविधाएँ त्याग कर इस काम में जुटी हैं। आजकल इन्होंने शिक्षा में परिवर्तन लाने की दृष्टि से विद्यार्थियों, शिक्षकों तथा अभिभावकों का हस्ताक्षर-अभियान प्रारम्भ कर रखा है।

बहुत माह के बाद विद्यार्थियों की इतनी विशाल सभायें देखी। तीन-चार स्कूल के बच्चे एक ही स्थल पर इकट्ठे हो जाते हैं! पिछले सात दिनों में ६ सभाओं में १९ स्कूलों के करीब ५,००० छात्रों ने सर्वोदय-विचार सुने।

नयी तालीम की पद्धति से चल रही आश्रमशालाओं में आदिवासी बच्चों में स्फूर्ति, तत्परता और अनुशासन दिखाई दिया। इसका श्रेय उन शालाओं के संचालकों को है, जिन्होंने एक समय राष्ट्र-प्रेम की भावना से ओत-प्रोत होकर स्वतंत्रता संग्राम में भाग लिया था। आज वही शिक्षा को माध्यम बना कर जन-जागृति का काम कर रहे हैं। "साँप निकालने वाले, भीख माँगने वाले, मदारी, भाट, नट आदि बंजारा जाति के ये बच्चे हैं"—परिचय देते हुए प्रवासी-आश्रम-शाला के संचालक ने बताया। ऐसे वर्ग से आये बच्चों का जीवन बनता हुआ देख कर बहुत संतोष हुआ।

इस प्रकार गुजरात में बड़ी धूमधाम के साथ लोकयात्रा प्रारम्भ हो गयी है। पिछले ७ दिन में २० सभाओं में ७५०० लोगों ने विचार सुना।

राजस्थान की यात्रा के आँकड़े
(१-१-७१ से ८-७-७१)

जिले	११
मील	१२६०
दिन	१८९
पड़ाव	१६१
सभाएँ	३४५
उपस्थिति	करीब १ लाख
साहित्य-बिक्री	४,२०० रु०
पत्र-पत्रिकाओं के ग्राहक	१५०
धन-संग्रह	३,५०० रु०
व्यय	३,००० रु०
बाकी	५०० रुपये

राजस्थान को देकर चले आये।

—निर्मल वैद्य

मंत्री का पत्र

सर्वोदय मंडलों के संघटन के सम्बन्ध में

यह मूल बात सब लोकसेवकों के सामने रहे कि हमारा संघटन अहिंसा पर आधारित है और हम अपने संघटन बनाने में जिस हद तक आपस में भाई-चारे की भावना से तथा सत्य और प्रेम का आधार रखकर काम करेंगे, उसी हद तक अहिंसा की कसौटी पर हम खरे उतरे समझे जायेंगे और इसी का प्रभाव हमारे आसपास के वातावरण पर तथा जिन ग्रामसभाओं के गठन आदि की बात हम करते हैं उनके संघटन पर पड़ेगा। इस दृष्टि से हमारा प्रयत्न यह होना चाहिए कि हम लोकसेवक बनते तथा बनाते समय पूरी सचाई बरतें और जानबूझकर कोई अनियमितता न करें। लोकसेवकों की जो योग्यता लोकसेवक के निष्ठापत्र में दी हुई है, उसको शब्दशः तथा भावना में, दोनों दृष्टियों से मानने का हमारा प्रयत्न हो।

(१) लोकसेवक कभी भी बने या बनाये जा सकते हैं, लेकिन उनके पदें की समाप्ति की तिथि ३१ दिसम्बर होगी।

(२) लोकसेवकों की सूची हमेशा सही तैयार रहनी चाहिए। लोकसेवक जैसे जैसे बन जायें उनके नाम सूची में बराबर दर्ज होते रहें। यह सूची जिला सर्वोदय मंडल, प्रादेशिक सर्वोदय मंडल तथा सर्व सेवा संघ के दफ्तर में रहे।

(३) जिस दिन चुनाव की सूचना जारी होने को हो उससे कम-से-कम एक महीना पहले जिन लोकसेवकों के नाम लोकसेवकों की सूची में विधिवत् दर्ज हो जायें, वे ही संघटन के चुनाव में भाग लेने के लिए अधिकारी माने जायें।

(४) चुनाव की विधि, समय तथा उस मीटिंग में विचारणीय विषय आदि की सूचना चुनाव से कम-से-कम ३ हफ्ते पहले सम्बन्धित सर्वोदय मंडल के दफ्तर से जारी होनी चाहिए। यह सूचना प्रत्येक लोकसेवक के पास डाक से जानी चाहिए और उस प्रदेश की सर्वोदय पत्र-पत्रिकाओं में भी, स्थानीय समाचारपत्रों में, भी प्रकाशन के लिये जाय तो अच्छा होगा। इसकी जानकारी प्रदेश सर्वोदय मंडल को भी भेजी जानी चाहिए। प्रादेशिक-सर्वोदय मंडल के चुनाव की सूचना सर्व सेवा संघ को भी दी जानी चाहिए।

जिला तथा प्रादेशिक मंडलों के लिए कार्यकारिणी का चुनाव करने के लिए निम्न पद्धतियों में से किसी भी एक को स्वीकार किया जा सकता है। जिस प्रकार सर्व सेवा संघ में पहले अध्यक्ष का चुनाव करते हैं और फिर अध्यक्ष कार्यकारिणी के सदस्यों को मनोनीत करता है, या पहले सर्व-सम्मति से कार्यकारिणी के लिए जितने सदस्य चुनने हों उतने चुने जायँ, फिर वे लोग आपस में सर्व-सम्मति से अध्यक्ष व अन्य पदाधिकारी चुन लें।

(५) सर्वोदय मण्डल की साधारण सभा या असाधारण सभा या कार्यकारिणी-सभा बुलाना, पदाधिकारियों का चुनाव, उनका अधिकार व कर्तव्य, कोरम, हिसाब-किताब रखने के नियम आदि के बारे में समय-समय पर जैसे-जैसे जरूरी हो, उप-नियम बनाये जा सकते हैं।

(६) हर स्तर के सर्वोदय मंडल में इस बात का नियम जरूर रहना चाहिए कि उसका आर्थिक वर्ष कब-से-कब तक रहेगा और उसके आर्थिक-वर्ष की समाप्ति पर उस साल के आय-व्यय का लेखा-जोखा तैयार कर उसकी जाँच बराबर अपने मंडल में स्वीकार कराकर दाताओं तथा ऊपर के सर्वोदय मंडलों को भेजना अनिवार्य मानना चाहिए। समाचारपत्रों में भी इसकी जानकारी दी जाय।

(७) अक्सर मीटिंगों की सूचना में विचारणीय विषयों के अन्त में लिख दिया जाता है कि अन्य आवश्यक विषय, जो सभापति की आज्ञा से प्रस्तुत किये जा सकेंगे। इस बारे में हमें इतना ध्यान रखना चाहिए कि इसके अन्तर्गत ऐसे ही विषय लिए जायँ जिन पर कोई मतभेद की संभावना न हो। कभी-कभी महत्व के विषय भी इसी तरह ले लिए जाते हैं जो कि उचित नहीं है।

(८) कभी-कभी नियमों में परिपत्र द्वारा प्रस्ताव पास करने की योजना रहती है। उसमें इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि परिपत्र के द्वारा वे ही प्रस्ताव पास कराये जायँ, जिनके बारे में मतभेद होने की कोई संभावना न हो। साथ ही इस बारे में यह स्पष्ट रहना चाहिए कि इतने दिन के अन्दर कम-से-कम आधे से अधिक लोगों का समर्थन प्राप्त हो जाय और विरोध किसी का न आये। ऐसा न हो कि किसी का उत्तर न आये तो यह मान लिया जाय कि उसकी स्वीकृति है।

(९) अनेक बार नियमों में ऐसा रहता है कि यदि कोरम पूरा न हुआ तो मीटिंग स्थगित कर दी जायेगी और स्थगित मीटिंग में कोरम पूरा न होने पर भी कार्यवाही की जा सकेगी। उस परिस्थिति में यह उचित है कि स्थगित मीटिंग की सूचना नियमित रूप से सदस्यों को दी जाय। इसका ब्योरेवार वर्णन नियमों में होना चाहिए। लेकिन जहाँ स्थगित मीटिंग में कोरम के अभाव में भी कार्यवाही करने की विधि है, वहाँ यह स्पष्ट रहना चाहिए कि उन्हीं विषयों का विचार किया जायगा जो पहले की मीटिंग में विचारार्थ थे। उस मीटिंग में अन्य आवश्यक विषय जैसी कोई बात का विचार नहीं हो।

(१०) जिला स्तर के चुनाव जहाँ-जहाँ हों, प्रदेश की ओर से किसी ऐसे व्यक्ति को वहाँ भेजा जाय तो अच्छा रहेगा, जो आपस में सद्भावना का वातावरण बनाने में सहायक हो सके और जिसके नैतिक प्रभाव से लोगों को कुछ प्रेरणा मिल सके।

(११) यह मूल बात ध्यान में रहे कि हमें सभी सदस्यों का ज्यादा-से-ज्यादा सहयोग प्राप्त करने का प्रयत्न करना है और जो लोग काम में रुचि न लेना चाहें, उनके दिल में उस काम के लिए उत्साह पैदा हो, इस तरह के काम का संचालन करना चाहिए।

(१२) मंडलों के गठन के लिये जनवरी से नये वर्ष का प्रारम्भ माना जाय।

(१३) जिला सर्वोदय मंडलों का चुनाव हर दो साल में हो तथा सर्व-सेवा संघ के प्रतिनिधि के लिये अवधि तीन साल की मानी जाय।

इतनी मुख्य बातें बता देने के बाद बाकी तफसील प्रादेशिक सर्वोदय मंडल अपने प्रदेश की परिस्थिति के अनुसार तय कर सकते हैं। ऊपर की बातों को ध्यान में रखकर हर प्रदेश में प्रादेशिक सर्वोदय मंडल का गठन हो अथवा यह भी संभव हो सकता है कि पहले जिला स्तर पर जिले-जिले में सर्वोदय मंडल का गठन हो जाय फिर प्रदेश सर्वोदय मंडल का गठन हो।

ठाकुरदास बंग

मंत्री सर्व सेवा संघ
प्रधान कार्यालय गोपुरी, वर्धा

बलदेवगढ़ : प्रारम्भिक भूमिका

११ अगस्त १९६८ को, मध्यप्रदेश का पहला जिलादान, टीकमगढ़ का, कार्य सम्पन्न हुआ था। बुन्देलखण्ड क्षेत्र के इस जिले में तीन तहसील, छः विकास-खण्ड और ८७२ आबाद गाँव है, जिनमें ७७० गाँव ग्रामदानी हैं, इनमें टीकमगढ़ तहसील-दान तो ११ सितम्बर '६७ को ही सम्पन्न हुआ था। अक्तूबर '६९ तक मध्यप्रदेश के ४३ जिलों के ६७,००० गाँवों में ग्रामदान का सन्देश पहुँचा। इनमें ७ जिलों का जिलादान हुआ। ११।। ह हजार से अधिक गाँव ग्रामदान में आये।

मार्च '७' के अन्त में मध्यप्रदेश सर्वोदय मण्डल की कार्य समिति ने प्रान्त में पुष्टि कार्य शुरू करने पर विचार किया और फलस्वरूप सर्व-सम्मति से यह निश्चय हुआ कि टीकमगढ़ जिले में पुष्टि काम शुरू किया जाय और वहाँ प्रान्त के सब गुरुजन और साथी अपनी शक्ति लगायें। ७ जून '७१ से जिले के बलदेवगढ़ विकास खण्ड को पुष्टि का सघन प्रयोग क्षेत्र मानकर काम का श्री गणेश हुआ।

बलदेवगढ़ विकास-खण्ड को पुष्टि के प्रयोग क्षेत्र के रूप में चुनने के पीछे हमारी दृष्टि मुख्य यह रही है कि जिले के अन्य क्षेत्रों की तुलना में यह क्षेत्र अधिक पिछड़ा हुआ और उपेक्षित माना जाता है। गरीबी, बेकारी कर्जदारी आदि की समस्याएँ भी यहाँ अपने प्रबल रूप में विद्यमान हैं। शिक्षा की दृष्टि से यह क्षेत्र काफी पिछड़ा हुआ है। २,१२,००० में करीब, ३०,००० लोग शिक्षित हैं। खेती, पान की खेती और मछली-पालन उद्योग के अलावा इस क्षेत्र में आम लोगों की जीविका के लिए दूसरे कोई सबल और सुस्थिर आधार नहीं है। तालाबों और कुओं की बहुलता के कारण सिंचाई का क्षेत्र यहाँ अपेक्षाकृत कुछ अधिक है।

बलदेवगढ़ में धीमर, चमार, धोबी, कुम्हार, नाई और आदिवासी अन्य लोगों की तुलना में अधिक पिछड़े और अभाव-ग्रस्त हैं। व्यसनग्रस्तता तो है ही। शराब इन्हें अधिक तंग करता है। मुसलमानों की यहाँ खासी अच्छी बस्ती है। कुछ सम्पन्न परिवारों को छोड़कर शेष परिवार यहाँ भी गरीबी और बेकारी से परेशान हैं। इस क्षेत्र में बहुत अधिक सम्पन्न लोग नहीं हैं। दीन-हीन स्थिति में रहने और जीनेवालों की खासी बड़ी संख्या यहाँ मौजूद है।

पिछले दिनों बलदेवगढ़ की बस्ती को निकट से देखने-समझने और यहाँ के भाइयों, बहनों, नवजवानों और प्रमुख लोगों से मिलने-जुलने का हमें मौका मिला। बड़े-बूढ़ों और जवानों के मुँह से उनके दुख-दर्द की जो बातें सुनने को मिलीं, उनसे हमें लगा कि यहाँ औसत आदमी का विश्वास अपने ऊपर से और अपनों के ऊपर से बहुत कुछ उठ-सा गया है और रहा सहा विश्वास भी तेजी से उठता जा रहा है। आम आदमी इसे बराबर महसूस करता है और मौका मिलने पर वह अपनी बात पूरे दर्द के साथ कह भी देता है। बस्ती में ऐसी कोई हवा नहीं, जिससे खोया हुआ विश्वास फिर जम सके और आपस के सम्बन्ध मीठे और घने हो सकें।

बलदेवगढ़ क्षेत्र की अनेक गंभीर समस्याओं में एक समस्या डाकुओं की भी है। वर्षों से यह क्षेत्र डाकू-पीड़ित क्षेत्र रहा है और इसके कारण यहाँ का सहज सम्पन्न आदमी अपने को कुछ अरक्षित पाता है। आम जनता तो पीड़ा पाती ही रहती है। डाकू समस्या के हल के लिए सरकार अपनी ओर से जो कदम उठाती है, उससे न समस्या का कोई हल निकलता है और न पीड़ित जनता को कोई राहत मिलती है।

संक्षेप में आज इस क्षेत्र की कुछ ऐसी ही कहानी बनती है। इस भूमिका के कारण पुष्टि-कार्य के लिए यह क्षेत्र हमें अधिक उपयुक्त लगा।

गत १५ दिनों में बस्ती के अधिक-से-अधिक घरों से और व्यक्तियों से हमलोग मिले हैं। उनसे बातें की हैं। उनका स्नेह और सद्भाव पाया है। ग्रामदान के संकल्प-पत्र पर हस्ताक्षर करने की बात यहाँ प्रायः सभी के ध्यान में है। पुष्टि के काम के लिए यह एक शुभ लक्षण है। पुष्टि की आवश्यकता से भी कोई इंकार नहीं करते। चाहते हैं और कहते हैं कि गाँव की जमीन ग्रामसभा के नाम चढ़ जाये तो अच्छा हो हो। गरीब वर्ग के लोग खास तौर पर इन बातों में अधिक रुचि लेते हैं और चाहते हैं कि यह सब काम जल्दी-से-जल्दी हो जाने चाहिए। पर बस्ती के किसी भी वर्ग की ओर से इस कार्य में सक्रिय रूप से पड़ने की कोई तैयारी अभी नहीं दिखती नहीं है। गाँव का अपना कोई सामाजिक और सामूहिक जीवन बना लगता नहीं है। आम जनता एक प्रकार से अन्धेरे और भ्रम में ही जीती चली जा रही है और अधिकतर पुराने सामन्त-वादी और पूँजीशाही मूल्यों को पकड़कर चलने में ही अपना कुशल समझती है। नये मूल्यों और नये सम्बन्धों का कोई स्पर्श यहाँ आम और खास लोगों को हुआ दिखता नहीं।

इन सब दृष्टियों से देखें तो पुष्टि-कार्य के लिए यह क्षेत्र काफी कठिन क्षेत्र लगता है। फिर भी यहाँ के आम लोगों में जो सहृदता, सरलता और निश्छलता पायी जाती है, वह अपने आप में यहाँ के समाज की एक बड़ी निधि है। उसके सहारे लोक हृदय में प्रवेश करके अहिंसक क्रांति के नए विचारों और कार्यक्रमों के लिए स्थान बनाना अन्य स्थानों की तुलना में कुछ आसान ही होगा, ऐसा हमें लगता है।

एक पखवाड़े में अपने व्यापक लोक-सम्पर्क से और लोक-जीवन के निकट दर्शन से हमें यह लगा है कि इस क्षेत्र में ग्रामस्वराज्य की अहिंसक क्रान्ति की

सिद्ध करने के लिए यहाँ पूरे समाज को चारों ओर से जगाने और झकझोरने का पुरुषार्थ प्राथमिकतापूर्वक करना होगा। लोगों की अपनी जो व्यक्तिगत और सामाजिक समस्याएँ उलझी पड़ी हैं उनको सुलझाने की दिशा में भी जाग्रत भाव से सतत् प्रयत्नशील रहना होगा। सामाजिक और आर्थिक क्रान्ति के लिए लोकमानस में अनुकूल चेतना जगाने की दृष्टि से लम्बे समय तक लोक शिक्षण का और लोक-संस्कार का काम अत्यन्त धीरज के साथ करना होगा। इसके लिए इस काम में निष्ठा, श्रद्धा, दृष्टि और उत्कटता रखनेवाले भाई-बहनों की एक समर्थ टोली को यहाँ गड़कर जमने की तैयारी रखनी होगी। पुष्टि का काम अथवा गाँवों में ग्रामस्वराज्य की स्थापना के लिए अनुकूल लोकमानस बनाने का काम बहुत गहरा, जटिल और श्रमसाध्य काम है। प्राप्ति के काम के साथ इसकी कोई तुलना नहीं हो सकती। जो गति सामूहिक अभियानों के चलते प्राप्ति-काम में आ सकी थी, वह गति पुष्टि-काम में सरलता से आनेवाली नहीं है। हमें तो पुष्टि के निमित्त से गाँव की एक एक बिखरी कड़ी को जोड़कर ग्रामजीवन में मजबूती लाने का काम अविरोध भावना से और मित्र-भावना से करना है। आज के बिखरे टूटे लोक समाज के बीच इस काम को जमाने में हमें अपना सारा पौरुष, सारी कुशलता सारी चातुरी और सारा धैर्य लगाना होगा। जो भी इस काम में पड़ेंगे, उनके लिए यह काम किसी कठोर साधना से कम कठोर और कम श्रमसाध्य नहीं होगा। आशा-निराशा, यश-अपयश और मान अपमान के थपेड़ों के बीच से गुज-रते हुए हमें अपनी आँखें मंजिल की ओर गड़ाए रखनी होंगी और अविचल भाव से उस दिशा में सतत बढ़ते रहने का दृढ़ निश्चय करना होगा।

—काशिनाथ त्रिवेदी

प्रदेशीय नयी तालीम समिति

राजस्थान में बुनियादी शिक्षा के लिए आन्दोलन खड़ा करने की दृष्टि से समग्र सेवा संघ ने ५ व्यक्तियों की नयी तालीम समिति का गठन किया है। इस समिति के संयोजक श्री त्रिलोकचन्द्र जैन हैं।

—अशोक कुमार

सहरसा जिला आचार्यकुल

गत २९ जून को सहरसा में जिला शिक्षा पदाधिकारी के आमंत्रण पर जिले के सभी शिक्षा प्रसार पदाधिकारियों और उच्च विद्यालयों के प्रधान अध्यापकों की बैठक हुई। इस बैठक की अध्यक्षता पूर्णिया के भूतपूर्व जिला शिक्षा पदाधिकारी श्री परमेश्वर झा ने की। चर्चा के बाद निश्चय किया गया कि मधेपुरा प्रखंड में ग्रामदान-पुष्टि का काम मुख्य रूप से जिला आचार्यकुल सम्पन्न करे, जिसमें शिक्षकों एवं छात्रों का योगदान होगा।

—प्रमोद कुमार

प्राप्ति और पुष्टि साथ-साथ चले

– काका साहब के सुझाव –

नासिक सर्वोदय सम्मेलन के लिए काका साहब ने जो सुझाव दिये थे उस सम्बन्ध में उनसे भेंट करने के लिए सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष, मंत्री, मनमोहन चौधरी, गोविन्दराव देशपाण्डे तथा नरेन्द्र दुबे उनसे मिलने के लिए आये थे। उनके साथ बहुत ही हार्दिक विचार-विमर्श हुआ।

काका साहब ने कहा कि हमें सभी धर्मों का एक परिवार बनाना है। आर्थिक समानता के कार्यक्रम के साथ सामाजिक क्रान्ति के लिए स्वतन्त्र कार्यक्रम चलाने की आवश्यकता पर उन्होंने जोर दिया और उसका महत्व भी बताया। ग्रामदान आन्दोलन के बारे में उन्होंने अपने विचार प्रकट करते हुए कहा कि इस आन्दोलन की शुरुआत के साथ ही पुष्टि कार्य पर जोर देना चाहिए था। पहले एक काम पूरा हो, बाद में दूसरा हो, ऐसा नहीं होना चाहिए। प्राप्ति के साथ-साथ पुष्टि चलानी चाहिए थी। पुष्टि कार्य के लिए एक बहुत मजबूत समिति होनी चाहिए और लोगों के हृदय मान्य करें, ऐसे कार्यक्रम होने चाहिए। जिनके हस्ताक्षर मिले हैं उनमें से एक भी हस्ताक्षर खोना नहीं चाहिए। उन सभी हस्ताक्षरों का पूरा लाभ लेना चाहिए।

उन्होंने आगे कहा कि बिहार से श्री उमेश का पत्र आया है कि श्री जयप्रकाशजी अभी विदेश गये हैं, और भूमिपति हमारे कार्य का विरोध कर रहे हैं, ऐसी हालत में हमें क्या करना चाहिए। हमारे कार्य में सत्याग्रह का रोज नया नमूना मिलना चाहिए। आज कई लोग नक्सलवादी बन गये हैं, वे आपको अपने शत्रु मानते हैं, मैं उनका विरोध नहीं करूँगा। एक बाजू भूमिपति तथा सरकार है। सरकार की सहानुभूति आप के साथ है। परन्तु वह सहयोग करते हैं भूमिपतियों का स्थिति को यथावत् बनाये रखने में। हमें कहना चाहिए कि भूमिपतियों को अन्न वस्त्र आदि के अलावा विशेष नहीं मिलेगा। अन्यायों को रोकना चाहिए और उसे रोकने के कार्य में रुकावट आती है तो हमें जेल जाना चाहिए। नक्सलवादियों की पद्धति आत्मघातक है, मैं उसका समर्थन नहीं करता हूँ। परन्तु कार्य ऐसा होना चाहिए कि जिससे उनका परिवर्तन हम कर सकें। —वसन्त व्यास

आप लाख कोशिश करें आजाद हिन्दुस्तान का दिमाग परकीय भाषा को कबूल नहीं करेगा। बच्चे उसे कबूल नहीं कर रहे हैं इसीसे जाहिर होता है कि उनका दिमाग आजाद है। अगर वे अंग्रेजी में दिलचस्पी लेते तो मैं हिन्दुस्तान के भविष्य के बारे में मायूस हो जाता। अगर बच्चों पर अंग्रेजी न लादी जाय और मातृभाषा के जरिए उन्हें सब विषयों का ज्ञान दिया जाय तो बहुत ही कम समय में वे ज्ञान ग्रहण कर सकेंगे। प्रयोग करने से यह बात सिद्ध हो जायगी।

—विनोबा

इस अंक में

अन्य स्तम्भ

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पैसे), विदेश में २२ रु० ; या २५ शिलिंग या ३ डालर।
इस अंक का मूल्य ३० पैसे। श्री कृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिये प्रकाशित एवं मनोहर प्रेस, वाराणसी में मुद्रित

सम्पादक
राममूर्ति
वर्ष : १७
अंक : ४५
सोमवार
९ अगस्त, '७१
पत्रिका विभाग
सर्व सेवा संघ, राजघाट, वाराणसी-१
फोन : ६४३९१ तार : सर्वसेवा

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

पाकिस्तानी अकड़ : अमेरिका की गुलामी

पाकिस्तान बेचारा इतना डाँवाँडोल दीखता है कि हमको तो उस पर दया ही आती है। न कोई व्यवस्था-शक्ति वहाँ है, न कोई योजना वहाँ दीखती है, न परस्पर एकता है, न प्रजा के लिए समृद्धि की कोई तजवीज बनी है। बस, एक कश्मीर का झगड़ा है। उसे बार-बार खड़ा करके भारत के द्वेष के नाम पर प्रजा को काबू में रखते हैं। इस प्रकार उस देश में जो तरह-तरह के दुःख हैं, उन दुःखों की तरफ से लोगों का ध्यान ही खींच लिया। बाकी जो कुछ दीखता है, शक्ति का आभास, वह केवल अमेरिका की गुलामी है। इसके सिवा और कुछ नहीं है।

ऐसे देश से क्या डरना है? उसकी बेचारे की अत्यन्त दयनीय दशा है। वह शस्त्रास्त्र बढ़ा रहा है, उससे उसकी ताकत बढ़ेगी, ऐसा हम नहीं समझते। बल्कि हम ऐसा समझते हैं कि वह शस्त्रास्त्र बढ़ा रहा है, इस वास्ते उसकी कमजोरी बढ़ रही है। वह क्षीण हो रहा है। वह भारत पर क्या आक्रमण कर सकेगा। वह भारत पर तब आक्रमण कर सकेगा, जब अमेरिका उसको आक्रमण के लिए प्रेरित करेगा। अमेरिका उसको आक्रमण के लिए तब प्रेरित करेगा जब एशिया आदि सब राष्ट्रों से लड़ने को ठानेगा और विश्वयुद्ध शुरू करने का इरादा करेगा। इसलिए उस देश की कोई भीति रखने का कारण नहीं।

कांचीपुरम्
२१-५-'५६

—विनोबा

• पाक की नापाक सेना और मृत्युंजयी बंगला देश •

मुस्लिम परसनल लॉं

मुस्लिम परसनल लॉं पर मुसलमानों का दृष्टिकोण सैयद मुस्तफा कमाल ने आपके पत्र के माध्यम से रखा, उसके लिए धन्यवाद।

मुसलमानों को अपना दृष्टिकोण बदलना होगा और ऐसी दृष्टि रखनी होगी जो इस देश के अनुरूप हो, तथा देश की जनता में गलतफहमियाँ कम करनेवाली हो। जिन मुसलमानों को इस धर्मनिरपेक्ष देश के अनुरूप नहीं रहना था, उनको उसी समय देश छोड देना चाहिए था, जब उनकी माँग पर उन्हें इस देश का बँटवारा करके अलग देश पाकिस्तान दिया गया। पाकिस्तान इस्लामी राज्य बना, वहाँ उनको शरियत के मुताबिक पूरी तरह रहने का मौका था, और है। इस देश में जो कानून बनने चाहिए, वे सबके लिए समान बनने चाहिए। आज के मुस्लिम परसनल लॉं से हमारी मुस्लिम बहनों पर जुल्म हो रहा है, उनको भविष्य की असुरक्षा है। कभी भी उनको तलाक मिल सकता है। कभी भी उनकी एक सौत क्या अनेक सौतें आ सकती हैं और उनकी आर्थिक हालत कमजोर होने की वजह से उनमें बेहालत बढ़ती है, जो हमारे देश को पीछे ले जाने में मदद करेगी। मुल्ला-मौलवियों का दृष्टिकोण साम्प्रदायिक है, जो इस देश में सदा खाई बनाये रखना चाहता है। इसलिए मुस्लिम लोकमत को परिवर्तित करने उलेमाओं से बात करने की आवश्यकता नहीं है। मुसलमानों में भी समझदार वर्ग है, उन्हें खुद समझना चाहिए तथा समझाना चाहिए या मुसलमानों को मर्यादित समय में समझाने का प्रयत्न करना चाहिए।

श्री हमीद दलवाई या श्री ए० बी० शाह का जो दृष्टिकोण है, उसकी मुसलमानों में कोई कीमत न हो, ऐसा बात नहीं है। कुछ मुसलमान बहनों ने प्रधान मंत्री तथा महाराष्ट्र के मुख्यमंत्री के सामने इस लॉं के खिलाफ प्रदर्शन किये हैं तथा मुसलमान वह़ों के हस्ताक्षर पेश किये हैं।

मुस्लिम परसनल लॉं के बारे में यह जो मान्यता है कि मुसलमानों की तरफ से माँग आनी चाहिए, तो वह भी हुई है। मगर यह दृष्टिकोण बदलना होगा और यह मानना होगा कि देश की हर समस्या पर देश के हर नागरिक को बोलने का अधिकार है। सरकार को अविलम्ब किसी तरह की राह देखे बिना मुस्लिम परसनल लॉं को रद्द कर तथा हिन्दू कोड बिल को रद्द कर सब नागरिकों के लिए समान मैरेज कोड बनाना चाहिए।

—मदन गोपाल रस्तोगी,

१५-७-'७१ लंका, वाराणसी।

शिक्षा में क्रान्ति-अभियान का मैं स्वागत करता हूँ

यह प्रसन्नता की बात है कि देश का नवयुवक वर्ग देश की गिरती हुई अवस्था के प्रति सजग और सचेत हो रहा है। अंग्रेजों के शासनकाल में हमारे देश में जो शिक्षा-पद्धति प्रचलित थी उसका मुख्य उद्देश्य था देश में अंग्रेजों के शासन में सहयोग देनेवाले वर्ग की स्थापना, यानी उनके गुलाम क्लर्कों को तैयार करना। उच्चतम् कक्षाओं में, जहाँ केवल कुछ चुने हुए सम्पन्न घरों के लोग ही जा सकते थे, वैज्ञानिक शिक्षा की व्यवस्था थी, लेकिन इस शिक्षा को प्राप्त करनेवाले लोगों को भी शासकों की गुलामी में रहकर शासक-वर्ग के हित के लिए ही काम करना पड़ता था। वैसे समस्त जनता असहाय अवस्था में छोड़ दी गयी थी।

देश के स्वतन्त्र हो जाने के बाद भी शिक्षा की प्राचीन परिपाटी वैसी-की-वैसी कायम है। आज भी शिक्षण-संस्थाओं में क्लर्क तैयार हो रहे हैं। जीवन के निर्माण का काल इस प्रकार की शिक्षा में बिता देने के बाद विद्यार्थी श्रम से विमुख हो जाते हैं, उनके अन्दरवाला समस्त उत्साह जाता रहता है, एक तरह से उनकी प्राण-शक्ति ही क्षय हो जाती है। उनके हाथ आती है कुण्ठा और निराशा। और हरेक व्यक्ति जीवित रहने के लिए गुलामी अथवा नौकरी के पीछे दौड़ने लगता है।

यह दुर्भाग्य की बात है कि शिक्षा की ओर देश के नेतृत्व एवं शासन का ध्यान गया ही नहीं। सत्ता जिन लोगों के हाथ में आयी वह गुट बनाकर अपना स्वार्थ साधन करने में लग गये और देश का नवयुवक वर्ग विवश एवं असहाय-सा नैतिक तथा आत्मिक ह्रास की ओर बढ़ने लगा।

जनतंत्र सजग और सचेतन जन की ही परम्परा है। हमारा नवयुवक वर्ग सजग एवं सचेत हो रहा है, यह हर्ष और सन्तोष का विषय है। यह नवयुवक वर्ग ही अपने आन्दोलनों से देश के शासन तथा नेतृत्व को देश में बढ़ती हुई निरावलम्बन, निराशा तथा बेकारी की समस्याओं को हल करने पर मजबूर कर सकता है।

मैंने तरुण-शान्तिसेना की विज्ञप्ति पढ़ी, और मुझे लगा कि देश के नवयुवक वर्ग में एक ऐसा भी भाग है जो निराशा और कुण्ठा की निष्क्रियता से ऊपर उठकर अपने तथा देश के निर्माण के प्रति सजग एवं सचेतन है, और कार्यरत हो रहा है। शिक्षा में आमूल परिवर्तन के बिना काम नहीं चलेगा। नवयुवकों के इस अभियान से देश का शासन तथा नेतृत्व अपने स्वार्थ से ऊपर उठकर देश की आधारभूत समस्याओं को सुलझाने के लिए विवश हो, इस उद्देश्य का मैं स्वागत करता हूँ। इस सजग एवं सचेत युवा वर्ग के साथ मेरी समग्र शुभकामनाएँ हैं, और समय पड़ने पर मेरा पूरा सहयोग भी उसे प्राप्त होगा।

— भगवती चरण वर्मा

२-८-'७१

चित्रलेखा, महानगर, लखनऊ

कौन दोस्त, कौन दुश्मन ?

कौन किसका दोस्त, और कौन किसका दुश्मन ? किसी भी देश की सरकार हो, सरकारों की दुनिया निराली है। हमारी-आपकी जो दुनिया है उससे बिल्कुल भिन्न। उस दुनिया में न मनुष्य है, न मनुष्यता, न मित्रता है, न शत्रुता, न प्रेम है, न घृणा। वहाँ है इन सबसे दूर हटी हुई सत्ता और उसका स्वार्थ। वह दुनिया इनके सिवाय दूसरा कुछ नहीं जानती।

उसी दुनिया के दो रहस्यपूर्ण प्राणी हैं निक्सन और माओ। कल तक जो गाली से नीचे बातें नहीं कर सकते थे, आज वे ही गले मिलते दिखाई दे रहे हैं। जैसे सन्यासी का कोई दोस्त या दुश्मन नहीं होता, उसी तरह सत्ता की दुनिया में भी कोई दोस्त या दुश्मन नहीं होता। सन्यासी भगवान के सिवाय दूसरा कुछ नहीं जानता। शासक सत्ता के सिवाय दूसरा कुछ नहीं मानता, वही उसका भगवान है।

निक्सन अपना स्वार्थ लेकर चीन के पास जा रहा है, और माओ अपना स्वार्थ लेकर अमेरिका के पास। दोनों के स्वार्थों में टकराव है, लेकिन स्वार्थ की एकता है। हो सकता है रूस के मुकाबिले दोनों को एक-दूसरे से स्वार्थ साधना हो। और चीन को रूस और जापान दोनों के मुकाबिले अमेरिका की जरूरत हो।

जिस दिन चाऊ-इन-लाई ने निक्सन को प्रेम के साथ चीन बुलाया उस दिन चीन ने स्वीकार कर लिया कि अमेरिका एक वास्तविकता है जो गाली दे दे कर उड़ायी नहीं जा सकती, और जब निक्सन ने चीन जाने की घोषणा की तो उसने मान लिया कि चीन भी एक जबरदस्त वास्तविकता है जो उपेक्षा और दुराव से खत्म नहीं की जा सकती। दोनों ने समझ लिया कि अगर एक-दूसरे को समाप्त नहीं कर सकते तो साथ रहना ही पड़ेगा, और साथ रहने के लिए नये सम्बन्ध बनाने ही पड़ेंगे। यह मिलन सहअस्तित्व की योजना है।

अगर बीच में गड़बड़ी न पड़ जाय तो निक्सन-माओ मिलन होना निश्चित है और दुनिया की राजनीति में कुछ नये गुलों का खिलना भी निश्चित है। अब वह दिन दूर नहीं है जब संयुक्त-राष्ट्र-संघ में चीन अमेरिका और रूस के मुकाबिले सिर ऊंचा करके बैठेगा। तब दुनिया दो की न रहकर तीन की होगी। अणुबम-धारियों की बिरादरी में चीन शरीक हो चुका है। लेकिन उसकी एक विशेषता है। वह पश्चिम के प्रभुत्व का विरोधी है। पीला होने के नाते वह गोराशाही का दुश्मन है। और, जनता की मुक्ति के लिए लड़े जानेवाले गोरिल्ला-युद्ध की कला सबसे अधिक उसके पास है। इस प्रकार विश्व-सत्ता के मंच पर चीन सहज ही एशिया, अफ्रीका और द० अमेरिका की राष्ट्रीयता, स्वतंत्रता और समानता की पुकार का प्रतिनिधि बन जायगा, और दुनिया भर में जो करोड़ों-करोड़ लोग और पश्चिमी देशों के नव-साम्राज्यवाद और रंगभेद के शिकार हैं उनकी सहानुभूति प्राप्त कर लेगा।

पड़ोसी और एशियाई भाई होने के नाते भारत को चीन पर गर्व होता अगर वह एक ऐसी नयी दुनिया का निर्माण करता जिसमें मनुष्य और मनुष्यता के लिए स्थान होता। लेकिन उसने भी राह उन्हीं की पकड़ी जो बन्दूक की ही शक्ति में विश्वास करते हैं, मनुष्य की शक्ति में नहीं। निक्सन, कोसीजिन, माओ, याहिया, ये सब एक ही शास्त्र के ज्ञाता, एक ही शक्ति के उपासक, और एक ही राह के राही हैं। ये आपस में अनेक भले ही हों, किन्तु मनुष्य और मनुष्यता के विरुद्ध सब एक हैं।

निक्सन-माओ-मिलन से अमेरिका और चीन को चाहे जो मिले दुनिया को क्या मिलेगा ? क्या यह आशा पूरी होगी कि इस मिलन के प्रभाव से दुनिया के तनाव कम होंगे ? स्पष्ट है कि आज दुनिया की कोई सरकार दूसरी सरकार से खुला युद्ध छेड़ने के लिए आतुर नहीं है। विश्व-युद्ध का भय बहुत कम हो गया है। बीसवीं सदी के बचे वर्षों में खतरा अंतर्राष्ट्रीय युद्ध से अधिक राष्ट्रों के भीतरी युद्धों और संघर्षों का है—क्षेत्रीय संघर्ष, वर्ग-संघर्ष, और जनता बनाम सरकार के बीच संघर्ष। दक्षिणी एशिया में इस क्रम का सूत्रपात करने का श्रेय याहिया खाँ को मिल गया है।

भारत की दृष्टि से यह मिलन निक्सन-माओ का ही होकर रह जायगा या निक्सन-माओ-याहिया का नया तिगड्डा बनेगा ? बंगला देश के मामले में इस वक्त इन तीनों की ओर से जो कुछ होनेवाला है क्या उसका जबरदस्त संकेत नहीं है ?

एशिया की बदलती परिस्थिति में भारत क्या करेगा ? क्या रूस की शरण जायेगा ? क्या अणु-अस्त्रों की होड़ में अपना घर बेचेगा ? और गरीबी के साथ-साथ गृहयुद्ध की आग में अपने को जला डालेगा ? या, क्या पाकिस्तान और चीन जैसे सैनिकवादी पड़ोसियों के बीच किसी तरह रहकर अपमान की जिन्दगी बितायेगा ?

भारत की नियति दूसरी है। क्या हम अपनी नियति को पहचानेंगे ? अगर नहीं पहचानेंगे तो इन रास्तों पर चलने के सिवाय दूसरा विकल्प क्या है ? चीन ने चाहे जो कुछ किया लेकिन अपने लाखों गाँवों को मुक्त और मजबूत किया। लेकिन भारत के नेतृत्व ने गाँवों को गुलाम बनाकर रखने में ही कल्याण और विकास देखा। हमारी स्त्री व्यक्तित्वविहीन, हमारा श्रमिक सम्मानविहीन, और हमारा युवक भविष्यविहीन—क्या यही तरीका है देश को शक्तिशाली बनाने का ?

हम समझ लें कि आगे एशिया और अफ्रीका के हर देश में असली टक्कर होगी गाँव और शहर के बीच। माओ ने अपनी क्रान्ति में इस रहस्य को पहचाना, और अपने गाँवों को संगठित कर क्रान्ति और राष्ट्रीय निर्माण को साथ जोड़ दिया। लेकिन→

पाकिस्तान बरबादी के रास्ते पर

—बादशाह खाँ

सीमान्त गांधी खान अब्दुल गफ्फार खाँ ने पाकिस्तान के सैनिक शासकों को चेतावनी दी है कि निर्दयतापूर्वक बलप्रयोग करके वे बंगला देश की समस्या हल नहीं कर सकते हैं। इसके लिए उन्हें कोई राजनीतिक हल ढूंढ़ना होगा।

काबुल में कल जारी किये गये एक वक्तव्य में बादशाह खाँ ने कहा है कि जो लोग सत्ता के नशे में हैं वे इतिहास से सबक सीखने को तैयार नहीं हैं और ऐसे रास्ते पर चल रहे हैं जिससे पाकिस्तान बरबाद हो जायगा।

उन्होंने कहा है कि जनता की इच्छा का आदर करके ही देश की एकता कायम रखी जा सकती है। बादशाह खाँ ने कहा है कि आम चुनाव से मालूम हो गया है कि जनता की क्या इच्छा है।

बादशाह खाँ ने कहा है कि वर्तमान संघर्ष पाकिस्तान अथवा इस्लाम की रक्षा के लिए नहीं बल्कि सत्ता के लिए है। इस सम्बन्ध में उन्होंने पंजाब के निहित स्वार्थी तत्वों और भूतपूर्व विदेश मंत्री *भुट्टो की षड्यन्त्रकारी भूमिका की* विशेष आलोचना की है।

उन्होंने कहा है कि जनरल याहिया खाँ ने अपने ही 'वैधानिक आदेशों' में वचन दिया था कि वह देश के चुने हुए प्रतिनिधियों को सत्ता सौंप देंगे और इसीलिए देशव्यापी चुनावों के परिणामों की घोषणा होने के बाद जनरल याहिया खाँ की प्रभुसत्ता स्वतः समाप्त हो गयी।

पाकिस्तान की स्थिति की चर्चा करते हुए बादशाह खाँ ने कहा है: एक पाकिस्तानी अपने पाकिस्तानी भाई की हत्या कर रहा है और मुसलमान सभी उपलब्ध साधनों से अपने भाई मुसलमान को मौत के घाट उतारने का प्रयत्न कर रहे हैं। क्या यह तथ्य नहीं है कि अपने पाकिस्तानी भाई के द्वारा जाति-संहार से बचने के लिए पाकिस्तानी देश से भाग रहा है और मुसलमान अपने ही मुसलमान भाई के अत्याचारों से बचने के लिए भाग कर भारत में, जो अभी तक हिन्दुओं का देश और पाकिस्तान व इस्लाम का शत्रु माना जा रहा है, शरण ले रहे हैं? इससे अधिक विचित्र बात क्या हो सकती है कि इन मुसलमानों को हिन्दू आश्रय दे रहे हैं? *पाकिस्तान और दो देश के सिद्धान्त का* क्या हुआ? और पूर्वी तथा पश्चिमी पाकिस्तान को एक देश के रूप में किस आधार पर रखा जा सकता है?

बादशाह खाँ ने कहा है कि चुनाव में राष्ट्रीय स्तर पर समग्र बहुमत और 'शत-प्रतिशत सफलता' के बावजूद पूर्वी बंगाल सत्ता प्राप्त नहीं कर सका। इससे पश्चिम पाकिस्तान के छोटे प्रान्त सोचने लगे हैं कि वे पंजाब के शोषण से अपने को कैसे बचा सकेंगे।

उन्होंने कहा है: इस निराशाजनक वातावरण में आशा की एक किरण यह है कि सम्पूर्ण विश्व ने एक स्वर से पाकिस्तान सरकार की नीतियों की निन्दा की है। मुझे विश्वास है कि विश्व की शक्तियाँ इस लोकतान्त्रिक और मानवीय दृष्टिकोण को बनाये रखेंगी तो उन लोगों में विश्वास पैदा करने में बहुत मदद मिलेगी जो मानवीय गरिमा और समस्याओं के हल के लिए संघर्ष कर रहे हैं।

बादशाह खाँ ने मुसलमानों से विशेष अपील में कहा है कि यदि हम अच्छे मुसलमान हैं तो हमें मौन रह कर यह सब कुछ नहीं देखना चाहिए। उन्होंने इस संदर्भ में कहा है कि मुस्लिम लीग की गलत नीतियों के कारण गत २३ सालों में मुसलमानों को बहुत कष्ट हुआ है।

बादशाह खाँ ने कहा है: सत्ता के भूखे राजनीतिक नेताओं को मैं चेतावनी देना चाहता हूँ कि नृशंस शक्ति से मानवीय समस्याएँ कभी हल नहीं हो सकती हैं। इस देश ने ब्रिटिश साम्राज्यवाद का मुकाबिला किया है, फिर अयूब खाँ के तानाशाही शासन को उखाड़ फेंका है और मैं यह मानने को तैयार नहीं हूँ कि कोई अन्य तानाशाह उन पर उनकी इच्छाओं के खिलाफ शासन कर सकेगा। सत्ता के भूखे सैनिक 'जुंटा' ने जो रास्ता चुना है वह पाकिस्तान की बरबादी का रास्ता है। क्या वे यह चेतावनी सुनेंगे?

—हमने क्या किया? याहिया और उसकी सेना पंजाब की शहरी-औद्योगिक-केन्द्रित अर्थनीति, राजनीति, शिक्षण-नीति की प्रतिनिधि है, इसलिए बंगला देश को अपना उपनिवेश बनाकर रखना चाहती है। राष्ट्रवाद की आड़ में छिपे इस नये औद्योगिक और राजनैतिक केन्द्रवाद की रक्षा में सैनिकवाद और राज्यवाद का उदय हुआ है।

हम अपने देश में भी, लोकतन्त्र के ढाँचे के भीतर, समाजवाद के नारे की आड़ में, राज्यवाद को ही बढ़ावा देते चले जा रहे हैं। क्या लाखों गाँवों और उनमें रहनेवाले करोड़ों लोगों को कमजोर कर हम इस तरह के सरकारी समाजवाद की शक्ति से अपनी सीमा पर संगठित होनेवाले साम्यवादी और सम्प्रदायवादी सैनिकवाद का मुकाबिला कर सकेंगे? कैसे करेंगे? कब तक करेंगे?

जो परिस्थिति की चुनौती है वह हमारे लिए नयी सीख बनाने का अवसर है। हमारी समस्याओं की कुंजी गाँवों की मुक्ति और जनता की शक्ति में है, न कि अमेरिका के पैसे और रूस की बन्दूक में। भारत का भविष्य दलबंदी में नहीं, एकता में है, नौकरशाही में नहीं, सामाजिक क्रान्ति में है।

हमारा नेतृत्व, दल का नाम और नारा चाहे जो हो, सत्ता के पीछे पागल है। लेकिन जनता? क्या वह भी सोयी ही रहेगी? अगर हमारी जनता जग जाय तो हर जगह की जनता के लिए रास्ता खुल जाय। ●

नगर-स्वराज्य की रूपरेखा और कार्यक्रम

—सिद्धराज ढड्ढा

सर्वोदय आन्दोलन के अब तक अनुभव से ग्रामीण क्षेत्र के लिए ग्रामस्वराज्य की कुछ रूपरेखा और कदम निश्चित हुए हैं। ग्रामदान की योजना और शर्तों के आधार पर गठित ग्रामसभा के रूप में जन-संगठन और जन-अभिक्रम का एक प्रभावकारी माध्यम हमारे हाथ लगा है। उसके जरिये ग्रामस्वराज्य की ओर बढ़ने का मार्ग देहाती जनता के लिए खुल गया है।

इतने वर्षों के इस अनुभव के बाद अब समय आया है कि हम शहरों के बारे में भी सोचें और कदम उठायें। क्या शहरी क्षेत्र में भी ऐसे कुछ कदम उठाये जा सकते हैं, जिनसे नगर की जनता सीधे अपने हाथ में अपनी व्यवस्था ले सके? ग्रामस्वराज्य के काम में अब तक जो अनुभव आया है और जो थोड़े से सिद्धान्त स्थिर हुए हैं उनके आधार पर नगर स्वराज्य के लिए कुछ सुझाव नीचे दिये जा रहे हैं। आशा है शहरों में काम करने वाले साथी इन पर ध्यान देंगे और अपनी प्रतिक्रियाएँ प्रकट करेंगे।

उद्देश्य

नगर हो या गाँव, हमारे काम का उद्देश्य क्या है यह स्पष्ट हो जाना चाहिए। जनतन्त्र होते हुए भी आज जनता निःसहाय है। जनतन्त्र का आज का स्वरूप प्रातिनिधिक है। अर्थात् मतदाता या जनता के हाथ में इतना ही है कि ५ वर्ष या कम ज्यादा समय में एक बार वोट देकर प्रतिनिधि चुन दे। जहाँ तक व्यवस्था का सवाल है वह सारी प्रतिनिधियों के जरिये संचालित होती है। जनता का सीधा उसमें कोई हाथ नहीं है, न प्रतिनिधियों के काम पर कोई नियंत्रण है।

प्रातिनिधिक शासन की इस प्रणाली से राजनीतिक दल और पार्टियाँ तो संघटित हुई हैं लेकिन समाज विघटित होता जा रहा है। नागरिक या मतदाता एक-दूसरे से असम्बद्ध, बिखरे हुए, असहाय और आत्मविश्वासहीन होते जा रहे हैं, क्योंकि एक बार वोट दे देने के बाद उनका न तो व्यवस्था से कोई सम्बन्ध रहता, न प्रतिनिधि पर नियंत्रण। प्रतिनिधियों को जनता के नाम पर मनचाही करने की छूट मिल जाती है। एक बार चुन जाने के बाद उनकी मनमानी को रोकने का जनता के पास कोई उपाय नहीं है।

राष्ट्र या प्रदेश जैसे बड़े क्षेत्र के लिए प्रतिनिधि सत्तात्मक प्रणाली का स्थान लेनेवाला कोई आसान और व्यावहारिक विकल्प हो सकता है, इसमें कई लोगों को कठिनाई मालूम होती है, पर क्या गाँवों, कस्बों और नगरों में भी इसका कोई विकल्प नहीं हो सकता, जिससे जनता सीधे अपनी व्यवस्था कर सके, या उसका नियंत्रण कर सके?

जनतंत्र का बुनियादी उसूल यह है कि राज्य जनता का हो, जनता के लिए हो और जनता के द्वारा संचालित हो। आज हमारे देश का राज्य हमारा है, हमारे लिए है, लेकिन हमारे द्वारा नियंत्रित नहीं है, और इसलिए वह 'हमारे लिए' होते हुए भी प्रत्यक्ष व्यवहार में हमारे हित के लिए सिद्ध नहीं हो रहा।

दुर्भाग्य से जनता को यह समझाया गया है, और वह भी यह समझ बैठी है, कि शासन प्रतिनिधियों के द्वारा ही चल सकता है। पर ग्रामदान-आन्दोलन के जरिये ग्रामीण क्षेत्र में दलगत और प्रातिनिधिक राजनीति का विकल्प खड़ा करने का प्रयोग व्यापक स्तर से चल रहा है। अब समय आया है कि शहरों में भी जनतन्त्र के आधार पर स्वायत्त नगर-समाज का संघटन और स्थापना करने की कोशिश की जाय, जिसके द्वारा नगर की जनता अपने राजनीतिक, आर्थिक, स्वास्थ्य और शिक्षा सम्बन्धी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए सत्ता-मुक्त नगर-राज्य का संघटन करे। ज्यों-ज्यों नगर-समाज संघटित होता जायगा, त्यों-त्यों आज की व्यवस्था पर भी उसका प्रभाव और नियंत्रण बढ़ता जायगा, और अन्ततोगत्वा नगरों की व्यवस्था से सम्बन्धित आज के कानूनों में भी परिवर्तन हो सकेगा।

संघटन

नगरों में यह उद्देश्य कैसे कार्यान्वित हो? जनता का संघटन किस प्रकार हो? इसके लिए कुछ सुझाव नीचे दिये जा रहे हैं

मुहल्ला सभा : जिस प्रकार ग्रामदान की योजना के अनुसार गाँवों में ग्रामसभा संघटन की बुनियादी इकाई है और उसमें सारे बालिग ग्रामनिवासी सदस्य हैं, उसी तरह शहर में भी 'मुहल्ला-सभाएँ' संघटन की इकाई होंगी। उस मुहल्ले या क्षेत्र में रहनेवाले सब बालिग स्त्री-पुरुष मुहल्ला-सभा के सदस्य होंगे। मुहल्ला-सभा आसानी से मिल सके इसके लिए शायद १०० से १२५ कुटुम्बों की, यानी लगभग ५०० ६०० जनसंख्या वाले क्षेत्र की एक मुहल्ला-सभा बनाना ठीक होगा। मुहल्ला-सभा एक संयोजक तथा एक कोषाध्यक्ष चुन ले। इसके बाद समय-समय पर तय किये हुए विभिन्न कामों या प्रवृत्तियों के लिए छोटी-छोटी तदर्थ समितियाँ बना ली जाँय। कार्यकारिणी जैसी कोई चीज न हो तो अच्छा, वरना फिर व्यवस्था में प्रातिनिधिक स्वरूप दाखिल हो जायगा और जनता निष्क्रिय हो जायगी। पूरी मुहल्ला-सभा ही समय-समय पर मिलती रहे और पुरानी प्रवृत्तियों की समीक्षा करे तथा नये कामों के बारे में निर्णय ले।

मण्डल सभा : आज की व्यवस्था के अनुसार नगर-वार्डों में या मण्डलों में बँटे हुए होते हैं और इन मण्डलों के आधार पर नगरपालिका या नगर-परिषद् के लिए प्रतिनिधियों का चुनाव होता है। वार्ड के अन्तर्गत जो मुहल्ला-सभाएँ हों, उनका संयोजक तथा एक और प्रतिनिधि, इस प्रकार हर मुहल्ला-सभा के दो प्रतिनिधि मिलाकर मण्डल-सभा बनेगी। बड़े शहरों में वार्ड काफी बड़े-बड़े हैं। ऐसे शहरों में मुहल्ला-सभा और वार्ड-सभा के बीच शायद

एक और स्तर करना पड़े। वार्ड की ओर से नगरपालिका के लिए चुने हुए प्रतिनिधि भी इस वार्ड या मण्डल सभा के पदेन सदस्य हों। मण्डल के क्षेत्र में विभिन्न कामों से सम्बन्धित शासन तथा नगरपालिका के अधिकारी भी मण्डल-सभा में विशेषरूप से निमंत्रित किये जायें।

नगर सभा : इसी प्रकार हर मण्डल-सभा से एक या दो प्रतिनिधि लेकर नगर-सभा बने। क्षेत्रीय प्रतिनिधित्व के अलावा नगर-सभा में पेशों के आधार पर भी प्रतिनिधित्व हो। सम्बन्धित सब अधिकारी विशेष निमंत्रित हों।

कार्यक्रम और कार्यप्रणाली

मुहल्ला : मुहल्ला-सभा का पहला काम अपने मुहल्ले के परिवारों का पूरा सर्वे कर लेने का होगा। सर्वे की प्रश्नावली का एक नमूना बना हुआ रहे, लेकिन मुहल्ले की परिस्थिति और मुहल्लेवालों की इच्छा के अनुसार मुहल्ला सभा इसमें घटा-बढ़ी कर ले। मुहल्ला-सभा अपने अपने क्षेत्र से सम्बन्धित भिन्न-भिन्न कामों के लिए भिन्न समितियाँ बना ले। उदाहरण के लिए, एक समिति स्वास्थ्य और चिकित्सा की हो सकती है, एक रोशनी-सफाई आदि म्युनिसिपल सेवाओं से सम्बन्धित, तीसरी शिक्षा की, चौथी रोजगार की। इसी प्रकार एक सांस्कृतिक कार्यक्रम समिति भी हो जो मुहल्ले में विभिन्न पर्व, त्योहार, उत्सव आदि सामूहिक रूप से मनाने का आयोजन करे। मुहल्ला-सभा में चर्चा होकर कामों के बुनियादी लक्ष्य निर्धारित किये जा सकते हैं और उनकी क्रियान्विति परस्पर सहयोग से सम्बन्धित समिति करे। उदाहरण के लिए, मुहल्ला-सभा इस बात पर विचार करके निर्णय करे कि मुहल्ले में कोई भी बीमार बिना देखभाल के या दवा-दारू के न रहे, फिर चिकित्सा समिति इसकी योजना और अमल करे। इसी प्रकार मुहल्ला-सभा में तत्सम्बन्धी विचार और निर्णय हो जाने पर शिक्षा समिति पढ़े-लिखे नौजवानों द्वारा यह काम कर सकती है कि मुहल्ले में जो बच्चे आज स्कूल नहीं जा सकते, उन्हें वहीं पढ़ाया जाय। एक बार लोगों में जागृति आ जाने पर इस प्रकार अनेक कार्यक्रम उठाये जा सकेंगे।

मण्डल : वार्ड में स्थित म्युनिसिपल सेवाएँ—जैसे प्राईमरी स्कूल, वाचनालय-पुस्तकालय, डिस्पेंसरी आदि की व्यवस्था वार्ड-सभा के अधीन हो। सफाई-रोशनी जैसी नगर सेवाओं के बारे में मुहल्ला-सभाओं से जो सुझाव या सूचनाएँ आयें उनपर विचार कर वार्ड सभा अमल कराये। रोजगार की दृष्टि से भी वार्ड-सभा आवश्यक योजनाएँ क्रियान्वित करने का प्रयास करेगी।

नगर : नगर में रोशनी, पानी, स्वास्थ्य, सफाई, आवागमन के मार्ग, नागरिक सुरक्षा, लोक-शिक्षण, सांस्कृतिक प्रवृत्तियाँ, बेघर लोगों के लिए सस्ते घर का निर्माण, बड़ी सार्वजनिक सेवाएँ, जैसे-अस्पताल, उच्च-विद्यालय आदि तथा उद्योग, ये सब नगर-सभा के काम के दायरे में आयेंगे। आयात-निर्यात और व्यापार आदि की व्यवस्था और नियंत्रण भी नगर-सभा करेगी।

निर्णय : मुहल्ला-सभा से लेकर नगर-सभा तक, तथा इनकी विभिन्न समितियों आदि के निर्णय यथासम्भव एक राय से लिये जाने चाहिए। बहुमत से निर्णय लेने की आज की प्रणाली समाज को बाँटती है। उसके कारण लिये गये निर्णयों के प्रति एक प्रकार का प्रतिरोध उत्पन्न होता है और अल्पमत वालों में असंतोष का निर्माण। बहुमत से फैसला करने का तरीका आज प्रचलित है और आसान भी है, पर अनुभव से यह मालूम होगा कि विचार-पूर्वक प्रयत्न करने पर एक राय से निर्णय करना कठिन नहीं होगा। उससे समाज का संगठन और एकता बनी रहेगी।

अर्थ-व्यवस्था

इस सारे काम में अर्थ की भी आवश्यकता होगी। स्पष्ट है कि यह धन लोगों से ही प्राप्त करना होगा। ऐसी सार्वजनिक प्रवृत्तियों के लिए अक्सर कुछ लोगों से चंदा लेकर काम चलाया जाता है। हमें ऐसी पद्धति अपनानी चाहिए कि हर घर से थोड़ा थोड़ा करके अर्थ-संग्रह हो। यह भी लोगों के अभिक्रम को जाग्रत करने का एक तरीका होगा, और लोग इस काम की आवश्यकता महसूस करते हैं या नहीं इसकी भी कसौटी होगी।

यों तो मुहल्ला-सभा की सदस्यता शुल्क के तौर पर हर परिवार से थोड़ी-थोड़ी रकम एकत्रित की जा सकती है, पर अर्थ संग्रह के साथ-साथ भावना का निर्माण भी हो और बच्चों में भी शुरू से ही समाज के लिए कुछ-न-कुछ करने के संस्कार पड़ें, इस दृष्टि से एक सुझाव यह है कि घर में रोज बच्चे के हाथ से एक सिक्का या एक मुट्ठी अन्न सामाजिक काम के लिए अलग निकालने का तरीका अपनाया जाय। सिक्का छोटे से छोटा यानी एक पैसा हो सकता है। स्वेच्छा से कोई परिवार अधिक निकालना चाहे तो दो पैसे, तीन पैसे या रुपये तक का सिक्का निकाल सकता है। महीने या सालभर की सहायता इकट्ठा देना और लेना आसान हो सकता है, लेकिन रोज-रोज इस प्रकार समाज के काम के लिए कुछ निकालने में, और वह भी बच्चों के हाथ से, समाज में एकता की भावना, और समाज के लिए हर एक को कुछ-न-कुछ करना चाहिए इस वृत्ति के निर्माण का लाभ भी मिलेगा।

हर घर से प्रति सप्ताह संग्रह का काम भी मुहल्ले-मुहल्ले के बच्चों के शिक्षण और मनोरंजन का एक अच्छा कार्यक्रम हो सकता है। इस प्रकार जो अन्न-संग्रह हो उसका अधिकांश मुहल्ला-सभा के पास उसके खुद के कार्य संचालन तथा मुहल्ले की अन्य प्रवृत्तियों के लिए रहना चाहिए, कुछ निर्धारित अंश — १० या २० प्रतिशत मण्डल और नगर-सभाओं को उनका काम चलाने के लिए दिया जाय।

आज के वातावरण में इस प्रकार→

पाक की नापाक सेना और मृत्युंजयी बंगला देश

—अभय बंग

(नागपुर से बंगला देश की सीमा पर शरणार्थी शिविरों में सेवा के लिए गयी मेडिकल टीम के एक सदस्य के रोमांचक अनुभव।)

इसी १५ मई की बात है। बंगला देश में से भारत की ओर आ रहा था। सीमा का नाला पार करके भारतीय हद में तो आ गया था लेकिन फिर अंधेरे में रास्ता भूलकर भटकने लगा। बांस के झुरमुटों के घने अंधेरे में हजारों जुगनू जगमगा रहे थे। लेकिन उनके प्रकाश में राह का मिलना नामुमकिन था और उस सौंदर्य को निरखने की मन स्थिति में मैं था नहीं। सद्‌भाग्य से तभी एक साथी मिल गया—गिरीश बर्मन। एक देहाती निर्वासित, अभी-अभी सीमा पार करके भारत में आया था। उसे भी सीतलकूची कैम्प में जाना था, इसलिए साथ हो लिये। हिन्दी और बंगला में हमारी बातचीत चलने लगी।

"तुम्हारी बारी (घर) कहाँ है ?" मैंने पूछा।

"एखान थेके बीस मील आछे बाबू।"

"क्या काम करते थे ?"

"आमी किसान।"

"बहुत अच्छा। तुम्हारा बांगला तो सोनार बांगला है।" वह एकदम रुक गया। मेरी ओर देखते हुए व्यंग्य स्वर में बोला "कोथाय बाबू सोनार बांगला ? आमार बांगला तो श्मशान होई गेछे।"

उसके इन सादे शब्दों में व्याप्त भीषणता मुझे काटते हुए चली गयी। कुछ क्षण तक हम वैसे ही खड़े रहे, गहरे अंधेरे के सन्नाटे में उस भीषणता का अनुभव करते हुए। फिर कदम चलने लगे।

अब वह जरा खुलकर बोलने लगा। बांगला देश में उसकी बीस एकड़ जमीन थी। परिवार था। गांव के मुस्लिम लीग वालों ने पाकसेना-सहित उसके घर पर हमला करके उसका सब कुछ लूट लिया। उसकी नजरों के सामने उसकी लड़की को खींच कर ले गये। घर की एक-एक चीज ले गये। बेटी के दुःख से पागल होकर उसकी पत्नी ने कुएँ में कूदकर जान दे दी। सब तरफ से टूटा हुआ वह अकेला अब भारत में आया था।

चलते-चलते एक पेड़ पर बैठे गिद्धों की काली आकृतियाँ देख कर वह ठिठक गया। पागल जैसे हाथ हिलाकर चिल्लाया 'अरे मूर्खों, यहाँ क्यों समय बर्बाद करते हो ? मेरे श्मशान बांगला में आओ। वहाँ तो लाशों के ढेर पड़े हैं। जाओ, मजा करो...हा...हा...हा हा...'

उसकी भयानक आवाज सुनकर मैं घबरा गया। अरे, यह कोई इन्सान की आवाज है।

आज का दिन ही ऐसी अघटित बातों से भरा हुआ निकला। सुबह ही हमने सीतलकूची में (भारतीय सीमा के अन्दर का गांव) दो बड़े विस्फोट के धमाके सुने। सीमा पर जाने के बाद छोटे-मोटे विस्फोट के धमाके सुनने से तो कान आदी हो गये थे, लेकिन आज के ये धमाके जबर्दस्त थे। फिर उड़ती हुई खबर आयी कि बंगला देश के भीतर मुक्ति फौज ने हाथीबधा गांव में पुल उड़ा दिया। यह उसी का धमाका था। हमारा सीतलकूची कैम्प सीमा से भीतर दो मील, और सीमा से आधा मील उधर हाथीबधा ?

आकर्षण जबर्दस्त था। शाम को मैं और मेरा साथी विजय, दोनों सीमा की ओर निकले। रास्ता पूछते हुए सीमा तक पहुँचे। सीमा यानी क्या ? एक नाला, हमारे किसी भी देहात में हो वैसा। उस पार वही जमीन, वैसे ही खेत, वही आकाश वही हरा। फिर भी यह भाग भारत और वह भाग पाकिस्तान कहलाता है। सीमा पर आने के बाद आदमी को इन काल्पनिक सीमाओं की व्यर्थता समझ में आने लगती है।

और हमारी धड़कन बढ़ गयी

हाथीबधा गांव, हमारे किसी भी एक देहात-सा। झोपड़ियाँ अभी तक खड़ी थीं। पाक सेना सीमा से बहुत नजदीक आने की हिम्मत नहीं की थी, इससे वहाँ का जीवन बहुत हद तक सर्वसामान्य ढंग से चल रहा था, मगर गांव वाले डरे हुए थे। भीतरी भागों से आने वाले निर्वासित हाथीबधा में थोड़ा रुकते, और अपनी मातृभूमि को "अलविदा" कहकर भारत में प्रवेश करते। लगातार यही सिलसिला जारी था। कन्धों पर, बैल गाड़ियों पर, सायकल पर सामान लादे हुए ये हजारों इन्सान किस आशा से भारत में

—जन-जागृति और जन संगठन का काम आसान नहीं है। इसके लिए प्रेरणा देने का काम वही लोग कर सकेंगे जो स्वयं निःस्वार्थ वृत्ति से सेवा के काम में लगे हों। ऐसे कार्यकर्ताओं को सत्ता के पदों से, और अब चुनावों आदि के प्रलोभन से, दूर रहना होगा। इस सारे कार्यक्रम की सफलता इस बात पर निर्भर करती है कि समाज में एक समूह ऐसा हो जो स्वयं सत्ता में न जाय, पार्टीबाजी से दूर रहे। इस काम को करने का जो बीड़ा उठायें, उन्हें अपने ऊपर यह पथ्य लागू करना चाहिए।

इस प्रकार सीधे जनता द्वारा अपने अभिक्रम से स्वायत्त-शासन का एक ढांचा खड़ा किया जा सकता है। केवल जनता के लिए ही नहीं, बल्कि जनता के द्वारा विकेन्द्रित शासन-व्यवस्था का एक नमूना पेश करने की दिशा में बढ़ा जा सकता है। केन्द्रित और प्रातिनिधिक शासन-व्यवस्था जनता की आकांक्षाएँ पूरा करने के लिए निकम्मी और अक्षम साबित हो चुकी है। ऐसी परिस्थिति में इस नयी क्रान्ति के लिए समाज के विचारवान लोग और नौजवान अवश्य आगे आयेंगे, यह आशा करना अनुचित नहीं होगी। ●

प्रवेश कर रहे थे ? एक भूमि से उखाड़े हुए ये इतने पौधे दूसरी भूमि में कैसे पनपेंगे, मैं समझ नहीं पा रहा था ।

वापस लौटते-लौटते रात हो गयी । चेहरा, कपड़े, भाषा—सभी हमें बंगाली जनता से एकदम भिन्न बता रहे थे । एक अँधेरी राह से जाते समय एकदम हम पर टार्च की रोशनी पड़ी । खट्-खट् जूतों की आवाज आयी, और हम दोनों पर रायफलें तानकर तीन सैनिक सामने आ खड़े हुए ।

दिल की धड़कन मानो बन्द हो जा रही हो । ये भारतीय सैनिक हैं या मुक्ति फौज के या पाकिस्तानी घुसपैठिये सैनिक ? कुछ समझ में नहीं आ रहा था । हम कौन हैं इसका स्पष्टीकरण देते-देते पसीना छूट रहा था । क्योंकि हमारी हिन्दी सुनते ही हम गैर-बंगाली पाकिस्तानी गुप्तचर हैं, ऐसा उन्हें शक आ रहा था । वे भारतीय बार्डर सिक्युरिटी फोर्स के सैनिक थे । अब हिन्दी बोलें तो और शक बढ़ता है, और करीब-करीब बिलकुल न आनेवाली बंगला में बोलें तो भी मुश्किल । उनके ट्रिगर पर की उँगली पर नजर रखे अब गोली छाती में घुसेगी या पेट में, इस बारे में मैं सोच रहा था, तभी विजय को सद्बुद्धि आयी, वह एकदम चिल्लाया, "हम सीतलकूची के शरणार्थी शिविर में डाक्टर हैं, नागपुर से आये हैं ।"

बन्दूक की नलियाँ धीरे-धीरे नीचे झुकीं । उनमें से एक ने सीतलकूची कैम्प में नागपुर से डाक्टरों के एक दल के आने की बात सुनी थी । पूरी जानकारी और पहचान के बाद समाधान पाकर वे चलते बने । हमने राहत की साँस ली । पाक सेना की बन्दूकों के सामने निर्वासितों की क्या हालत होती होगी, इसका कुछ आभास हमें मिला ।

नागपुर से ६ मई को निकलकर हमारी मेडिकल टीम जब बंगाल में पहुँची तब पता चला कि प्रत्यक्ष सीमा पर पहुँचनेवाली भारत की वह पहली टीम है । कूचबिहार जिले के सीतलकूची और उसके आसपास के चार निर्वासित शिविरों की जिम्मेदारी हम पर सौंपी गयी । सीतलकूची गाँव की जनसंख्या है दस हजार, लेकिन उसके आजू-बाजू फैले हुए इन शिविरों में निर्वासितों की संख्या हो गयी थी पचास हजार । पूरा गाँव, रास्ते चौक, आँगन, स्कूल, खेत सब इन्सानों से ढक गये थे । इतनी सुन्दर बंगाल की भूमि, हरे रंग का सागर फैला हुआ । हरेभरे खेत, बाँस के झुरमुट, नारियल के ऊँचे पेड़ और जगह-जगह छोटे-छोटे तालाब, लेकिन प्रकृति ने जितनी उदारता से दिया है उतनी ही क्रूरता से इन्सान ने विनाश और दुःख पैदा किया है ।

समस्याओं का ज्वार

बंगाल की समस्याएँ तीन हैं—अपार जनसंख्या, बेकारी और गरीबी । इन तीनों समस्याओं को बढ़ाने के लिए अब निर्वासितों की यह बाढ़ आ गयी है । सन् '४७ में और उसके बाद भी सतत निर्वासित आते ही रहे हैं । कलकत्ता के फुटपाथों पर जो लोग दीखते हैं वे मुख्यतः इन्हीं में से हैं । उनकी एक पीढ़ी फुटपाथ पर ही गुजरी । इन पुरानों की ही व्यवस्था अभी पूरी तरह नहीं हो पायी थी कि नये निर्वासितों की विराट समस्या आ खड़ी हुई । उस समय हर रोज करीब एक लाख नये निर्वासित आते थे । कूचबिहार जिले में ही हर घंटे में एक हजार, इस प्रमाण में मानव-सागर की ये लहरें आ रही थीं । पचहत्तर लाख तो अब तक भारत में आ ही चुके हैं । कब तक, और कितने अभी आयेंगे, भगवान जाने ।

सीमा हर तरफ पूरी तरह से खुली है । निर्वासित ज्यादातर पैदल ही आते हैं—कंधे पर बोझा लादे । बोझा ढो ढोकर उनके कंधों में घाव हो जाते हैं । कभी-कभी बूढ़ों को भी इस तरह उठाकर लाना पड़ता है । बहुत भीतर से, पचास-सौ मील से पैदल चलते हुए आने के कारण ये एकदम थके हुए निराश लोग होते हैं । बहुतों का सब कुछ लुट गया है । बदन पर के कपड़े, कुछ अनाज, एकाध गठरी, इसके सिवाय और कुछ भी साथ नहीं ।

आनेवाले निर्वासितों में करीब पाँच प्रतिशत शहरों से और बाकी सब देहातों से आते हैं । नब्बे प्रतिशत से भी ज्यादा हिन्दू हैं । पाक सेना सिर्फ शहरों में ही पहुँची और वहाँ उसने बिना हिन्दू-मुसलमान भेद किये सबको मारना शुरू किया । इसलिए शुरू के दिनों में आनेवाले निर्वासितों में मुस्लिम साठ प्रतिशत थे । लेकिन अब जो निर्वासित आ रहे हैं वे मुख्यतः देहातों से आ रहे हैं । उन्हीं के गाँव के मुस्लिम लीग, जमायतें इस्लाम वालों द्वारा लूटे गये । ये साम्प्रदायिक मनोवृत्ति की पार्टियाँ अब सेना का सहारा मिलने के कारण जोर पकड़ रही हैं । गाँव के अवामी लीग के नेताओं को और हिन्दुओं को लूटना उन्होंने शुरू किया, इसलिए निर्वासितों में हिन्दुओं की संख्या ज्यादा है ।

शिविरों की जिन्दगी

निर्वासितों को सरकार ने शिविरों में रखा है । १५ × ५ फीट के तम्बू में दस-बारह लोग रहते हैं । फिर भी लाखों अभी आश्रयहीन हैं । खेतों में, पेड़ों के नीचे, आँगनों में, रास्ते के किनारे रह रहे हैं । ऊपर से बरसात, वह भी बंगाल की, शुरू हुई है । पहनने के लिए ज्यादातर लोगों के पास एक से ज्यादा कपड़ा नहीं है । स्त्रियों के पास भी एक साड़ी के सिवा कुछ नहीं । उसीसे खुले में नहाना और फिर बदन पर ही उसे सुखाना । पुरुषों के पास कमर की धोती के सिवाय दूसरा कोई वस्त्र नहीं । बच्चों के तन पर तो कपड़े का सवाल ही नहीं । ओढ़ने बिछाने के लिए भी कुछ नहीं, रसोई पकाने के लिए बर्तन नहीं । इस 'नहीं' की कितनी गिनती की जाय ?

स्वच्छता और आरोग्य का बुरा हाल है । सब ओर गन्दगी फैली हुई है । हैजा ऐसी हालत में जोर मारेगा ही । इसीलिए तरुण-शान्तिसेना के बनगाव शिविर ने पाखाना बनाने का काम उठाया था । सफाई की सख्त जरूरत है । एक समय तो सीमा पर हैजे से हर रोज करीब एक हजार

लीग मरने लगे थे।

लेकिन अनाज सबको नियमित मिल रहा है। एक वयस्क को एक दिन में निम्न प्रकार राशन मिलता है

चावल—४०० ग्राम

दाल—१०० ग्राम

तेल—२० सीसी

नमक—४० ग्राम

मिर्च, हल्दी, जीरा और राशेल, कुछ शिविरों में बच्चों के लिए पाउडर का दूध भी दिया जा रहा है।

दर्द के दास्तान

अत्याचारों की कहानियाँ जितनी कही जायँ उतनी कम हैं। अब यह म्यानुशाला–विधवा बुढ़िया। उसके छः भानजे मारे गये। लड़के के पैर में गोली लगी। किसी तरह दोनों भारत पहुँचे। कूचबिहार हॉस्पिटल में लड़के का पैर काटना पड़ा। उसका अकेला सहारा। और वह पूछती है कि उसका पैर ठीक हो जायगा न?

"हो जायगा, एकदम ठीक हो जायगा।" दूसरी ओर देखते हुए मुझे जवाब देना पड़ता है। सब ओर यही हाल। इनको ढाढ़स देते-देते मेरा अपना दिल टूटने लगता है। क्या हेंगा इन सबका?

इनमें एक-एक इन्सान दर्द की एक एक कहानी है। सैदपुर शहर की बात है। यहाँ बिहारी मुस्लिम बहुत बड़ी तादाद में थे। हिन्दुओं के विरुद्ध सबसे अधिक तीव्र भावनाएँ बिहारी मुस्लिमों की हैं। सैदपुर के दुलालचन्द राय, एक सम्पन्न आदमी, वैसे पूर्व बंगाल में हिन्दू सभी सम्पन्न थे, मजदूर-वर्ग मुस्लिम ही था। १९६१ और ६४ में जब दंगे हुए और बिहारी मुस्लिमों ने दुलालचन्द के घर पर हमला किया, तब उसके मुहल्ले के मुस्लिमों ने ही उसके कुटुम्ब की रक्षा की। लेकिन इस समय सेना और मुस्लिम लीग के जबर्दस्त हमले के आगे सभी निरुपाय हो गये। अवामी लीग के समर्थक मुस्लिम भी कुछ जान के डर से, कुछ लूट के लोभ से लूटने में शामिल हो गये। घर बार, दस हजार की दुकान सब लूट ली गयी। दो भाई, एक चचेरा भाई और माँ को गोली मार दी गयी। बचे हुए कुटुम्ब के साथ दुलालचन्द भाग आया। तीन दिन में पचास मील पैदल चलकर भारतीय सीमा तक पहुँचे। रास्ते में साथ का सब कुछ लुट गया। फिर भी भारत में कदम रखने पर राहत की साँस ली।

बाबुलचन्द, १७ साल का तरुण विद्यार्थी, अवामी लीग के छात्रलीग शाखा के सैदपुर केन्द्र का सेक्रेटरी, उसने अवामी लीग के लिए तूफान-सरीखा काम किया था। उसका घर लूट गया तब वह पड़ोस के गाँव में गया हुआ था। लौटकर घर आया तो हालत देखकर हक्का-बक्का रह गया। तभी मुस्लिम लीग के लोगों ने उसे और मुहम्मद और रविनकुमार नाम के उसके दो मित्रों को पकड़ा। पीठ में छुरे दिखाकर गाँव के बाहर ले गये, महम्मद और रविनकुमार का छुरा भोंककर मार डाला। अब बाबुलचन्द की बारी थी। तभी कद्दूस खाँ नाम का स्थानीय मुस्लिम लीग का एक आदमी दौड़ता हुआ आया। इस कद्दूस खाँ पर बाबुल ने कभी कोई उपकार किया था, उसकी याद करके वह समय पर दौड़ आया। अपने ही आदमियों से लड़कर उसने बाबुलचन्द को छुड़ाया, साइकल पर बैठाकर सीमा के पास लाकर पहुँचाया और कुछ पैसे भी दिये खाने-पीने के लिए। कद्दूस खाँ की याद करते हुए बाबुलचन्द की आँखें गीली हो गयी।

यह भी जिन्दगी है

बाईस तारीख की रात। मोमबत्ती अँधेरा निगल रही थी। एक तम्बू में एक जख्मी मुक्ति सैनिक पड़ा था सलिकु रहमान नाम का। बीस साल का जवान लड़का, इंटर आर्ट्स का विद्यार्थी था। अब मुक्ति फौज में शामिल हुआ था। लालमनिहार के पाक सेना के थाने पर हमला करते हुए जख्मी हुआ था। उसकी ड्रेसिंग करते समय उसके चेहरे पर वेदना का एक भी चिह्न न पाकर मैं चकित हो रहा था। लेकिन उलटकर वह पूछ रहा था कि "डाक्टर साहब, फिर से लड़ने के काबिल कब हो जाऊँगा?" मैं बोल पड़ा, "गजब के आदमी हो यार तुम, कहाँ से लाते हो यह जोश, यह मरने की हिम्मत?"

मोमबत्ती की ओर हँसकर देखते हुए वह बोला, "ये शमा है न? इसी शमा से सीखा है मैंने हँसते हुए जल जाना।"

अंकित हो गया है उसका यह वाक्य मेरे दिल में।

पाक सेना कभी-कभी भारतीय सीमा के भीतर आकर गोलाबारी करती है। पट्रोल के पास कुछ जलते हुए घर हमने देखे। सुबह ही वहाँ पर पाक सेना ने गोलियाँ चलायी थीं। सीतलकूची के जिस शिविर में मैं था, वहाँ पर तो आजकल हररोज तोप के गोले आकर गिरते हैं हाथीबधा से।

आखिर में एक बात का उल्लेख किये बिना नहीं रह सकता। पश्चिम बंगाल के सरकारी अधिकारी, ऊपर से नीचे तक के सभी जी-जान से काम कर रहे हैं। लालफीताशाही, भ्रष्टाचार, आलस कुछ भी नहीं। ये बंगाली कर्मचारी अक्षरशः राक्षस-जैसा काम पर भिड़े हैं–अठारह-अठारह घंटे। उनमें परशु कुमार राय मेरी नजरों से हटता ही नहीं है। बी० डी० ओ० आफिस का यह क्लर्क रात को दो बजे तक काम करता था। हम सीतलकूची के कैम्प से जब लौटे तो उसकी एकांत झोपड़ी में गये थे। मध्यरात तक उसने अपनी आर्त आवाज में हमें रवीन्द्र संगीत गाकर सुनाया। "आमार देशेर माटी, भारते महा मानवेर तीरे, आमार सोनार बांगला" और आखिर में "एकला चलो रे।" वह हमारा जानी दोस्त बन गया था। दूसरे दिन सुबह बस पर बिदा करने आया था। बस हिली। परशु नजरों से ओझल हुआ, गाँव भी ओझल हुआ, सिर्फ बाँस के और नारियल के ऊँचे सिर निगाहों में बस रहे। मैंने मन-ही-मन उन सब से अलविदा कहा।●

'रिअप्रोचमेन्ट थियरी' : कुछ प्रश्न चिन्ह

२४ जून, ७१ के 'भूदान यज्ञ' में श्री धीरेन्द्रभाई का 'रिअप्रोचमेंट' का विचार पढ़ने को मिला। आन्दोलन के सभी कार्यकर्ताओं को गहराई से सोचने के लिए उनके विचार प्रेरित करते है। क्रान्ति के चिंतन की सही दिशा के लिए विचारो की सफाई होना जरूरी है। श्री धीरेन्द्र भाई के विचारो से इस दिशा में मदद मिलेगी ऐसी आशा करना स्वाभाविक है। लेकिन उनके 'रिअप्रोचमेंट' वाले विचार पर स्पष्टता के लिए कुछ बिंदु मैं यहाँ प्रस्तुत कर रहा हूँ।

"क्रान्ति में कोई वर्ग किसी दूसरे वर्ग से संघर्ष नहीं करता है, बल्कि पूरा समाज परिस्थिति से संघर्ष करता है।" श्री धीरेन्द्रभाई की यह नयी खोज नहीं है। और वर्ग-संघर्ष की कल्पना को इससे अलग मानने की आवश्यकता भी नहीं है। जब पूरा समाज संघर्ष में उतरता है, और वह परिस्थिति से संघर्ष करता है तब उस परिस्थिति की जड़ में जो होंगे, उन्ही से संघर्ष करना होता है। जड़ मे जो होंगे वे सब आपस में संघर्ष करेंगे। आर्थिक तथा सामाजिक शोषण के अवसर जहाँ पैदा होते है, वहीं पर संघर्ष किया जाता है। सम्पत्ति-निर्माण करने के साधन से जिन्होंने सम्पत्ति-निर्माणकर्ताओं को वंचित रखे, और सामाजिक प्रतिष्ठा की रूढ़िप्रियता को गले लगाकर जिन्होंने सम्पत्ति निर्माणकर्ताओं को दासता की जंजीरों से बाँधकर रखा, ऐसा वर्ग परिस्थिति की जड़ मे अवश्य है। ऐसे वर्ग से संघर्ष करना परिस्थिति से ही संघर्ष करना होगा। क्रान्ति में संघर्ष का अर्थ इससे कोई भिन्न होगा, ऐसा नहीं लगता। अन्याय, गरीबी बेकारी आदि संकटों का जन्म दासता के मूल्यों को प्रतिष्ठित करने के आग्रह से हुआ है। इसमें सम्पूर्ण समाज का दायित्व नहीं के बराबर है। अर्थात् झूठी प्रतिष्ठा के लिए जिन्होंने दासता को बनाए रखा, उन्ही पर इसका दायित्व है, यह भूला नहीं जा सकता। इसलिए परिस्थिति से संघर्ष करने का मतलब वर्ग-संघर्ष से अलग नहीं है।

"अहिंसात्मक प्रक्रिया और शान्तिमय प्रक्रिया दो अलग चीजें है।" यह श्री धीरेन्द्र भाई का सोचना अपनी जगह ठीक है। "सदियों से शोषित और दलित बने रहने के कारण गरीब वर्ग में ईर्ष्या और द्वेष का घड़ा भरा हुआ है।" यह भी विशिष्ट परिस्थिति में सही है। लेकिन गरीबी या गरीब का निर्माण केवल भौतिक अभाव के कारण होता है, ऐसा मानना गलत होगा। मनुष्य द्वारा मनुष्य की उपेक्षा का परिणाम गरीबी है। यह उपेक्षा धर्म और राजनीति की गलत धारणाओं से निर्माण हुई है। गरीब सवर्ण की प्रतिष्ठा धर्म ने माना। राजनीति ने उसका समर्थन किया। लेकिन जीवनोपयोगी उत्पादन करनेवाला उत्पादक अवर्ण धर्म तथा राजनीति की प्रतिष्ठा से हमेशा वंचित रहे हैं। इन्हें प्रतिष्ठित मानने का साहस धर्म या राजनीति में कभी आया नहीं क्योंकि ऐसा साहस करने से धर्म और राज्य की दण्डनीति ही उपेक्षित हो जाती। धर्म और राज्य की दण्डनीति उपेक्षित न रहे, इसलिए श्रमजीवियों को उपेक्षित रखने का धर्म और राजनीति ने सिलसिला चलाया था। धर्म और राजनीति का स्वभाव श्रमजीवियों को दलित करने का ही रहा है। इसलिए गरीबों में ईर्ष्या और द्वेष सम्पत्ति के अभाव के कारण नहीं है, बल्कि उनकी उपेक्षा के कारण है। अर्थात् इस ईर्ष्या और द्वेष के परिणामस्वरूप हिंसा पैदा होती है यह मानना उचित नहीं है। मानवीय भूमिका में गरीब को भी प्रतिष्ठा देना, उनके अस्मिता को समानता के स्तर पर लाना उनको संतुष्टि के लिए पर्याप्त मानना चाहिए।

गरीब को शोषण से मुक्ति चाहिए। यह मुक्ति प्राप्त करना उसका जन्मसिद्ध अधिकार ही मानना चाहिए। इसलिए उसकी मुक्ति का सही तरीका वह अपनाए, ऐसी परिस्थिति का निर्माण करना हमारा कर्तव्य है। हिंसा के खतरों के कारण गरीबों के इस जन्मसिद्ध अधिकार का महत्व कम नहीं किया जा सकता।

गरीब की मुक्ति का हमारा उपाय 'रिअप्रोचमेंट' का मानें या 'कन्फ्रन्टेशन' का मानें? किस उपाय को गरीब सहजता से स्वीकार करेगा, यह उसकी मनोदशा पर ही निर्भर करता है। यह ठीक है कि हम 'रिअप्रोचमेन्ट' को अपनाएँ। लेकिन जहाँ तक शोषक वर्ग द्वारा समाज-परिवर्तन में पहल किए जाने की बात है, वह उनकी मर्जी पर छोड़ने की नहीं है। अपनी मर्जी से वे पहल कभी नहीं करेंगे। परिस्थिति के दबाव से ही वे पहल कर सकेंगे। ऐसे दबाव को हमें हिंसा नहीं कहना चाहिए। शोषक वर्ग की मुक्ति का भी उपाय इसे मानना चाहिए। इस दबाव के बिना मालिक-मजदूरों के बीच के सम्बन्ध बनेंगे, ऐसा नहीं मान सकते। मालिकों को स्वयं प्रायश्चित के रूप में गरीबों से सम्बन्ध स्थापित करना चाहिए। इससे उनकी प्रतिष्ठा बढ़ेगी, लेकिन यदि वे प्रतिष्ठा को अपनी रूढ़िप्रियता से जोड़ते है तो इस रूढ़ि को दबाव से ही तोड़ा जा सकता है। यह तोड़ना उचित ही होगा।

'रिअप्रोचमेन्ट' का महत्व मालिक-मजदूर तथा अमीर-गरीब के बीच सम्बन्ध बनाने के लिए है। लेकिन यह सम्बन्ध मालिक या अमीर की मर्जी से ही बनेगा ऐसा नहीं माना जा सकता। क्योंकि उनकी मर्जी रूढ़ियों के बंधनों से मुक्त नहीं है। इस वस्तुस्थिति को नजर-अंदाज नहीं कर सकते।

श्री धीरेन्द्र भाई के दो महत्वपूर्ण विश्लेषणों पर भी विचार करना आवश्यक लगता है। "मालिकों में स्वार्थ, मोह, ममता, आदि जो विकार-वृत्तियाँ हैं, वे किसी दूसरे की क्रियाओं की प्रतिक्रियाएँ

नहीं है। प्रकृति में स्वभावतः जो संस्कृति और विकृति के तत्व मौजूद रहते हैं, मालिकों की उपेक्षा भावना उन्हीं विकृतियों की अभिव्यक्तियाँ मात्र हैं।"

श्री धीरेन्द्रभाई ने मजदूरों का विश्लेषण बिल्कुल दूसरे ढंग का किया है। कहते हैं "लेकिन मजदूरों के अन्दर अविश्वास, क्षोभ, द्वेष, विरोध आदि विकारों का पुंजीकरण हुआ है, वह प्रकृति के अन्तर्निहित स्वाभाविक विकृति की अभिव्यक्ति नहीं है, वह तो मालिकों की विकृतिमूलक क्रियाओं की प्रतिक्रियाएँ हैं।" मालिकों की विकृतियों की अभिव्यक्तियाँ प्राकृतिक हैं, यह भावना गलत है। अभिव्यक्तियों का निर्माता केवल मनुष्य है। ये अभिव्यक्तियाँ मनुष्य के दुरभिमान तथा मनुष्यता को भूलने का परिणाम है। इसमें मालिक और मजदूर में भेद नहीं कर सकते। ऐसा भेद करके मजदूरों को संकीर्णता के दोषों से बचाने का प्रयास किया गया है, इसमें मालिकों की संकीर्णता छिपाने की कोशिश अन्तर्निहित है। संकीर्ण न केवल मजदूर होता है और न केवल मालिक। संकीर्णता दोनों में ही होती है। इसलिए मजदूर और मालिक की विकृतियों का जो विश्लेषण श्री धीरेन्द्र भाई ने किया, वह कुछ पूर्वाग्रह से दूषित लगता है। पूर्वाग्रह से अलग हटकर सोचने पर ही हम वस्तुस्थिति तक पहुँच सकेंगे।

मजदूरों की क्रियाशीलता को प्रतिक्रियात्मक भावना से हमेशा जोड़ते रहना उनपर अविश्वास व्यक्त करने-जैसा होगा। और बड़े तथा मध्यम वर्ग के किसानों पर अनावश्यक विश्वास व्यक्त करके यह आन्दोलन जन-आन्दोलन नहीं बनेगा। आन्दोलन के जन-आन्दोलन बनने की आवश्यकता इसलिए है कि हम समग्र क्रान्ति चाहते हैं। समग्र क्रान्ति के लिए कोई भी क्रियाशील हो सकता है। इसलिए "आन्दोलन का प्रारम्भ बड़े और मध्यम वर्ग के किसानों द्वारा ही हो सकता है।" श्री धीरेन्द्र भाई का यह कहना एक तरह से अनुचित मानना चाहिए।

अहिंसा प्रतिद्वन्द्विता नहीं चाहती। क्योंकि प्रतिद्वन्द्विता सहकारिता मूलक संस्कृति शक्ति का विकास नहीं कर पाती। लेकिन अहिंसा से समाज-परिवर्तन की प्रक्रिया शुरू होती है यह अभी सिद्ध नहीं हुआ है, और अहिंसा का आज का व्यक्तिगत साधना का स्वरूप समाज-परिवर्तन के लिए उपयुक्त नहीं बना है इसे ध्यान में रखना होगा। अहिंसा को समाज-परिवर्तन की प्रक्रिया से जोड़ना होगा, उसकी पद्धति विकसित करनी होगी। नहीं तो अहिंसा के लिए समाज-परिवर्तन की प्रक्रिया स्थगित नहीं रह सकती।

समाज-परिवर्तन की प्रक्रिया की शुद्धता बनाए रखने के लिए क्रियाशील अहिंसा जरूरी है। समाज-परिवर्तन की प्रक्रिया में क्रियाशील अहिंसा का कोई जबरदस्त प्रयास अब तक हुआ नहीं, इसीलिए अहिंसक पद्धति से समाज-परिवर्तन की बात अभी तक समाज के सामने स्पष्ट रूप से आयी नहीं है। अतएव हमारा आग्रह मात्र अहिंसा का नहीं समाज-परिवर्तन की प्रक्रिया में अहिंसा को दाखिल करने का हो। इससे परिवर्तन की प्रक्रिया शुद्ध रहेगी और अहिंसा भी वस्तुनिष्ठ बनेगी। वह अभी वस्तुनिष्ठ नहीं है, बहुत अधिक आत्मनिष्ठ है। अहिंसा का बहुत अधिक आत्मनिष्ठ रहना अहिंसा के अस्तित्व के लिए शायद खतरा ही है।

सहकारिता का सांस्कृतिक तत्व और प्रतिद्वन्द्विता का विकृति तत्व इन दोनों में हम सांस्कृतिक तत्व को चुनेंगे। लेकिन क्या हम तत्व का कोई गुणात्मक रूप कर सकते हैं? वह क्या है, यह अभी कोई नहीं बता रहा है। श्री धीरेन्द्र भाई के विवेचन में भी इसे साफ ढंग से रखा नहीं गया है। सांस्कृतिक तत्व का परिवर्तन की शक्ति न बन पाना, यह उसकी बहुत बड़ी कमजोरी है, और यह धारणा भी गलत है कि परिवर्तन में अपने आप में संस्कृति के तत्व नहीं होते हैं। परिवर्तन अपने आप में एक विकास का तत्व है। किसी भी परिवर्तन में विकास का अगला कदम होता है। इसलिए जो सांस्कृतिक तत्व परिवर्तन से जुड़ा नहीं है, वह मनुष्योपयोगी नहीं रहेगा। अर्थात् केवल सांस्कृतिक तत्वों को स्वीकार करके चलेगा नहीं। इन तत्वों में परिवर्तन की गुणात्मकता हो, यह देखना आवश्यक है। यदि ऐसी गुणात्मकता के अभाव में संस्कृति के तत्व क्षीण होते हैं, तो इसका यह अर्थ है कि कोई नया परिणाम लाने में वे समर्थ नहीं हैं। तो फिर उन चंद तत्वों को टिकाये रखने का आग्रह हम किसलिए करें?

पुणे —बाबूराव चंदावार
२-८-७१

चीनी-अमेरिकी मैत्री और अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति

राष्ट्रपति निक्सन ने चीनी प्रधानमंत्री का चीन आने का निमंत्रण स्वीकार कर लिया है। निक्सन की चीन-यात्रा प्रचलित कूटनीति की धार के बल उड़ा कर देगी। सारे संसार की विदेश-नीति इससे प्रभावित होगी और अंतर्राष्ट्रीय कूटनीति एक नयी दिशा लेगी।

भारत के लिए भी अनिवार्य है कि समय की बदलती हुई कूटनीतिक मांगों के सन्दर्भ में अपनी विदेश-नीति पर पुन: विचार करे। भारत को आज एक प्रगतिशील, समय की मांगों के अनुकूल, विदेशी कूटनीति की सबसे अधिक आवश्यकता है, वरना इस बात का बड़ा खतरा है कि दुनिया की कूटनीति में भारत अलग-थलग न पड़ जाय, जो एक छोटे देश के लिए तो मामूली बात हो सकती है, लेकिन भारत जैसी विशाल जनसंख्या और साधनों वाले देश के लिए वह स्थिति वांछनीय नहीं होगी।

भारत को यह सोचना है कि शक्ति के संतुलन का जो त्रिभुज बनने जा रहा है, जिसका आधार पाकिस्तान है, और जिसकी एक भुजा अमरिका और चीन मिलकर हैं, और दूसरी भुजा रूस है, उस शक्ति के त्रिभुज को वह अपने हक में किस प्रकार अनुकूल बनायेगा।

भारत को अपनी विदेशनीति निर्धारित करते समय निम्न तथ्यों को ध्यान में रखना चाहिए :

(१) प्रचलित राजनीति और कूटनीति में दर्शन और दृष्टिकोण की बात बकवास मानी जाती है।

(२) आज की राजनीति में दुश्मनी और दोस्ती कोई चीज नहीं होती। सबसे बड़ा महत्व राष्ट्रीय हित होता है।

(३) चीन-अमेरिका की मित्रता भारतीय उपमहाद्वीप का राजनीतिक नक्शा बदल देगी।

(४) अब चीन को संयुक्तराष्ट्र संघ की सदस्यता प्राप्त हो जाने की पूरी सम्भावना है। इसके बाद चीन एशिया और अफ्रीका का नेता बन जा सकता है, यह बात अमेरिका और पाकिस्तान के हित में होगी। पाकिस्तान को प्रसन्नता इस बात की होगी कि भारत का प्रभाव संसार के राजनैतिक मंच से भाप की तरह उड़ गया। अमेरिका को रूस के अरब देशों तथा भूमध्य सागर में बढ़ते हुए प्रभाव को कम करने में आसानी होगी।

(५) सोवियत रूस, जापान और पश्चिम यूरोप के देश करीब आयेंगे। अगर यह न हो सका, तो एक ओर यूरोप का ऐक्य बढ़ेगा, जिसमें रूस भी शामिल होगा, दूसरी ओर जापान और रूस की मित्रता बढ़ेगी। फिर बरतानिया राष्ट्रकुल को प्रभावशाली और शक्तिशाली बनायेगा और यूरोप के साझा बाजार में बराबर का साथी बनकर अपना प्रभाव-क्षेत्र बढ़ायेगा।

(६) पश्चिमी पाकिस्तान, अरब और गैर-अरब मुस्लिम देशों का नेतृत्व प्राप्त करने की कोशिश करेगा। इस प्रयास में चीन और अमेरिका सबको सहायता देंगे और रूस को असफल बनाने की कोशिश करेंगे।

यूरोप की एक नयी कल्पना

यह आशा की जाती है कि अब बरतानिया को यूरोप के साझा बाजार की सदस्यता प्राप्त हो जायगी। फ्रांस इसका स्वागत करेगा। उसकी इच्छा है कि उसका पुराना साथी बरतानिया उसके निकट आ जाय। पश्चिम जर्मनी के साथ पच्चीस साल के अस्थिर सम्बन्ध ने जर्मन लोगों के प्रति फ्रांसीसियों के अविश्वास को बढ़ाया है।

परन्तु फ्रांस के लोगों को यह समझने में कठिनाई हो रही है कि साझा बाजार के संरचनात्मक ढांचे में बरतानिया कैसे फिट होगा। आर्थिक संकट (जिससे हाल में फ्रांस को गुजरना पड़ा) के दिनों में फ्रांस के लोगों ने यह महसूस किया कि अडेनावर, शूमैन और डी गासपेरी 'यूरोपवाद' की पिछले पच्चीस साल से जो बात करते रहे हैं, उसे अमली रूप दिया जाय।

बरतानिया साझा बाजार में सम्मिलित होने का प्रयत्न बहुत दिनों से कर रहा है, परन्तु साझा बाजार के सदस्य (विशेष तौर से फ्रांस) उसे पसन्द नहीं करते थे। लेकिन पिछले दिनों मुद्रा-संकट की स्थिति से गुजरने के बाद फ्रांसीसी बरतानिया के इस साझा बाजार में शामिल होने की इच्छा के प्रति सहानुभूति रखने लगे हैं। इस सहानुभूति को अमेरिका की नयी पृथकत्ववाद की रणनीति ने और जर्मनी की आर्थिक भीमकायता के कारण बढ़ती हुई उसकी राजनैतिक विशालता ने और मजबूत किया।

बरतानिया की साझा बाजार की सदस्यता प्राप्त होने से दगाल की यूरोप की कल्पना आगे बढ़ेगी। दगाल एक मजबूत स्वतंत्र और प्रगतिशील यूरोप, जिसमें रूस भी शामिल हो, चाहते थे।

राजमनार की रिपोर्ट

राजमनार की रिपोर्ट भारतीय संविधान के ढांचे में उग्र सुधारवादी मौलिक परिवर्तन लाने की पहली कोशिश है। केन्द्र-राज्य सम्बंध के सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक पहलू पर इतना गहरा चिन्तन भारत में स्वतंत्रता प्राप्त करने के बाद कभी नहीं हुआ था। वैसे तो राज्यों ने केन्द्र की अत्यधिक शक्तियों के विरुद्ध आवाज उठायी थी, परन्तु इस सिलसिले में कोई ठोस प्रस्ताव सामने नहीं आया था। कारण यह था कि केन्द्र और राज्य में एक ही दल की सरकारें हुआ करती थीं फिर संयुक्त विधायक दल की सरकारों के पास इस विषय पर सोचने के लिए न समय था, न इच्छा थी।

राजमनार कमिटी की कुछ ऐसी सिफारिशें भी हैं जिनसे साधारण तौर पर सहमत होना कठिन है। जैसे—

(१) भारतीय संविधान के अनुच्छेद ३५६ और ३५७ को, जो संकटकालीन

, कानून के सम्बन्ध में है, रद्द कर देने की सलाह।

(२) भारतीय संविधान के अनुच्छेद २५६, २५७ तथा ३३९ (२) को, जो केन्द्र द्वारा राज्यों को निर्देशन के सम्बन्ध में है, रद्द कर देने की बात।

अगर ये सिफारिशें मान ली जायेंगी तो भारतीय संविधान में मजबूत केन्द्र की जो बात की गयी है उसकी जड़ कट जायगी, परन्तु राजमन्नार समिति की कुछ सिफारिशें उपयोगी हैं। केन्द्र-राज्य सम्बन्ध के आर्थिक पहलू के सिलसिले में दिये गये कुछ महत्व के सुझाव निम्न प्रकार हैं:

(१) भारतीय संविधान की केन्द्रीय सूची (सूची न० १) तथा सगामी सूची (सूची न० ३, केन्द्र-राज्य सम्बन्धी सूची) पर पुनः विचार के लिए एक उच्च शक्तिशाली कमीशन की नियुक्ति।

(२) विधि निर्माण एवं कर-स्थापन के बचे अधिकार राज्यों की विधानसभाओं के सिपुर्द कर दिये जायें।

(३) राज्य की आय का आधार—(क) कारपोरेशन टैक्स, (ख) निर्यात और कस्टम ड्यूटी भी हो। (ग) परिसंपत्ति की पूंजी के लिए मूल्य पर टैक्स एकत्रित करके राज्य और केन्द्र में बांटा जाये।

(४) सभी प्रकार के आबकारी कर को, जिसका वितरण केन्द्र की इच्छानुसार होता है, निश्चित तौर से राज्य और केन्द्र में बांट दिया जाय।

(५) आबकारी कर का अतिरिक्त कर केवल राज्यों की अनुमति से जारी रखा जाय।

(६) आयकर अधिभार को कॉर्पोरेशन टैक्स की दर से जोड़ा जाये, ताकि राज्य भी उसका हिस्सेदार बन सके। भविष्य में कोई भी अधिभार बिना बहुराज्यों की अनुमति के न लगाये जायें।

(७) अनुच्छेद २८७ के अनुसार बिजली की खपत या बिक्री पर टैक्स लगाने पर जो पाबन्दी है वह खत्म की जाय।

(८) केन्द्र द्वारा राज्यों को ग्रान्ट एक स्वतन्त्र संस्था, जैसे 'फाइनेन्स कमीशन' या ऐसी ही किसी दूसरी संस्था की सिफारिश पर दी जाया करे।

(९) 'फाइनेन्स कमीशन' एक स्थायी संस्था बना दी जाय, जिसका सचिवालय हो।

(१०) राज्य से सम्बन्धित सभी समस्याओं पर विचार के लिए विशेषज्ञों की एक कमेटी बनायी जाय।

(११) योजना आयोग स्वतन्त्र हो।

हरित क्रान्ति

सम्भावना है कि हरित क्रान्ति से आय की क्षेत्रीय असमानता राज्यों के भीतर तथा राज्यों के बीच बढ़ेगी। यह नयी विकास-नीति केवल उन स्थानों पर सफल हुई है जहां निश्चित रूप से पानी उपलब्ध है। हरित क्रान्ति से असमानता बढ़ेगी। असमानता सिंचाई की सुविधावाली भूमि के मालिकों, भूमिहीनों और थोड़ी बहुत जमीन रखनेवालों के बीच महसूस की जायगी। यह असमानता प्रायः समान जमीन रखनेवाले मालिकों के बीच भी बढ़ेगी।

अन्तःक्षेत्रीय असमानता के बढ़ने के कारण हैं—तैयार की हुई चीजों की तुलना में कृषि के उत्पादनों का बढ़ता हुआ मूल्य और आधिक तरीके का कृषि के आय के परिमित वितरण में असफल होना।

ग्रामीण क्षेत्र में कृषि उत्पादन के लिए बड़े पैमाने पर सरकारी पूंजीविनियोग और नयी विकासनीति को कार्यान्वित करने के कारण बढ़ती हुई कृषि पैदावार क्षेत्रीय असंतुलन के मुख्य कारण हैं।

कुछ ऐसी प्रत्युपयोगी शक्तियां भी हैं जो बढ़ती हुई असमानता को ठीक कर सकती हैं।

(१) प्रभावशाली भूमिहदबन्दी कृषि-आय को सीमित करेगी।

(२) हदबन्दी लागू होने के बाद फाजिल जमीन को छोटे किसानों और भूमिहीनों के बीच बांट देने से कृषि-आय बढ़ेगी। इस तरह हदबन्दी और पुनर्वितरण से ग्रामीण आय के वितरण के बीच की खाई कम होगी।

(३) टुकड़ों में बंटी-बिखरी खेती की चकबन्दी और सहकारी खेती, छोटे किसानों को इस लायक बनायेगी कि वे अपने साधनों का अधिक समझदारी से प्रयोग कर सकें और वे हरित क्रान्ति से लाभ उठाने के योग्य बन सकें।

(४) यह प्रयत्न किया जा रहा है कि चौथी पंचवर्षीय योजना को विकासक्षम रूप में बदला जाय ताकि छोटे किसान, कृषि-मजदूर हरित क्रान्ति से लाभ उठा सकें। छोटे किसानों को सहायता देनेवाली एजेन्सियां स्थापित की जा रही हैं। को-आपरेटिव क्रेडिट सोसायटी और भूमि-विकास के लिए ऋण देनेवाले बैंकों को यह निर्देश दिया जा रहा है कि वे छोटे किसानों की आवश्यकताओं को महत्व दें और छोटे किसानों को कर्ज देने की शर्तों में उदारता की नीति अपनायें।

(५) कम वर्षा के क्षेत्रों के लिए उपयुक्त किस्म के बीज के शोध की कोशिश की जा रही है। ऐसी तकनीक विकसित करने के लिए भी प्रयोग किये जा रहे हैं, जो सूखी खेती में सहायता दें। ये कोशिशें हरित क्रान्ति को असीमित कर देंगी और क्षेत्रीय असंतुलन को, जो आज इतनी तेजी से बढ़ रहा है, खत्म कर देंगी। ये प्रत्युपयोगी शक्तियां प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से कृषि के क्षेत्र में आय के वितरण की असमानता को घटाने की दिशा में काम करेंगी।

बेकारी की समस्या हरित क्रान्ति से हल नहीं होगी, परन्तु सूखी खेती की तकनीक को विकसित करके, मिश्रित खेती, और कृषि सम्बन्धी आम कार्य को बढ़ाकर अर्ध बेकारी दूर की जा सकती है। ('इकानामिक टाइम्स' के क्रमशः ८ तथा ९ जुलाई के अंकों में प्रकाशित श्री बी० डी० नाग तथा श्री श्यामनन्दन सिंह के लेखों से।)

प्रस्तुतकर्ता : कुंवर मुस्तफा कमाल

आन्दोलन के समाचार

पुरोला प्रखण्ड में ग्रामस्वराज्य की ठोस बुनियाद

उत्तरकाशी जिले में पुरोला प्रखंड के १४५ गांवों में ग्रामदान पुष्टि का कार्य सम्पन्न हो गया। इन गांवों में ग्रामस्वराज्य-सभाओं की स्थापना हो चुकी है। यह पुष्टि-अभियान १८ अप्रैल से ३ जुलाई '७१ तक ३ चरणों में चला। १८ अप्रैल से २९ मई तक कमलसिराई, रामासिराई और पट्टियों के गांवों में, २ जून से १९ जून तक फतेपर्वत, पंचगाई, अडोर, बडागू और सिगतूर पट्टी गांवों में, २० जून से ३ जुलाई '७१ तक बंगाण क्षेत्र के मासमोर, सिंगतपट्टी कोठी गाड़पट्टी के गांवों में यह अभियान चला।

प्रत्येक गांव में ग्रामसभा का गठन, जिसमें अध्यक्ष, मंत्री, कोषाध्यक्ष, न्यायमंडल-अध्यक्ष, ग्रामस्वराज्य संघ के लिए प्रतिनिधि व छोटे-बड़े गांव के अनुसार दो से लेकर ६ तक ग्राम-शान्तिसैनिक चुने गये। पिछले झगड़ों के राजीनामे कराने का प्रयत्न किया गया। ग्रामकोष में लोगों ने फसल की उपज का ४० वां भाग और अन्य मासिक आय का ३०वां भाग जमा करना स्वीकार किया है। कुछ ग्रामसभाओं में लोगों ने तुरन्त ग्रामकोष चालू करने के लिए प्रति परिवार एक रुपये से लेकर २५-०० तक नकद और कुछ अन्न स्वेच्छा से जमा किया है। थडियाड़, फतेपर्वत, पंचगाई अडोर, बडासू और सिगतूर के लोगों ने, जहां प्रत्येक परिवार में भेड़-पालन का धन्धा होता है, ग्रामकोष में ऊन जमा करने का भी निश्चय किया है। गांवों में अब तक अन्न और रुपया सवाया ड्योढ़ा दर पर दिया जाता था। ग्रामकोष में एकत्रित अन्न और रुपया गांव के गरीब परिवारों को तुरन्त १२½% प्रतिवर्ष ब्याज पर दिया गया और भविष्य के लिए भी यही दर निश्चित हुई।

भूमिहीनों के लिए भूमि

प्रत्येक गांव में भूमिहीन व कम भूमिवालों के लिए भूमि ग्रामस्वराज्यसभा द्वारा प्राप्त की गयी है। अब तक इन १४५ गांवों में कुल मिलाकर ४५९ दाताओं द्वारा २५२ भूमिहीन व कम जमीनवालों के लिए १६५९९ नाली (८३ एकड़) जमीन मिली है जिसे ग्रामदान पुष्टि की कार्यवाही की बैठकों में ही तुरन्त वितरित किया गया। थडियाड़ और पर्वत की तरफ लोगों ने, जिन गरीब परिवारों के पास भेड़ें नहीं थीं, उन्हें भेड़ें भी दान में दी हैं। फतेपर्वत के भिनरी गांव में ९ सम्पन्न परिवारों ने ९ गरीब परिवारों के खेत में खाद देने के लिए एक-एक रात के लिए वहां अपनी भेड़ों का पड़ाव मुफ्त लगाना स्वीकार किया है। वहां के रिवाज के अनुसार खेतवाले को इसके लिए भेड़-मालिक को पच्चीस रुपये और खाना देना पड़ता है।

जमीन का ग्रामीकरण समस्त ग्रामसभाओं ने पुष्टि कार्यवाही में यह प्रस्ताव पारित किये हैं कि अब गांव की कुल जमीन की मालकियत ग्रामसभा की मानी जायगी और जमीन की सीधी खरीद-बिक्री नहीं हो सकेगी।

प्रतिनिधि-सम्मेलन इस विकास क्षेत्र में अलग-अलग ३ स्थानों पर पुरोला, नैरवाड और आराकोट में किये गये। पुरोला की आसपास की ३ पट्टियों का पुष्टि-कार्य सम्पन्न होने के पश्चात् २९ मई '७१ को पुरोला में; फतेपर्वत, पंचगाई, अडोर बडासू और सिगतूर पट्टियों के गांवों के प्रतिनिधियों का १३ जून को नैरवाड़ में और अंत में बंगाण क्षेत्र के गांवों के प्रतिनिधियों का सम्मेलन आराकोट में ३ जुलाई '७१ को सम्पन्न हुआ। पुरोला में ग्रामस्वराज्य सभाओं के ४००, नैरवाड में ३५, आराकोट में ३३ प्रतिनिधियों ने इनमें भाग लिया। —सुरेन्द्र दत्त भट्ट

जिला सर्वोदय मण्डल-बलिया का गठन

२५ जुलाई '७१ श्री गांधी आश्रम, बलिया में श्री कपिल भाई के सान्निध्य में बलिया जिले के लोक-सेवकों की बैठक हुई जिसमें जिला सर्वोदय मण्डल के पदाधिकारियों का सर्वसम्मत चुनाव हुआ। इस बैठक की अध्यक्षता सर्वोदय मण्डल के भूतपूर्व अध्यक्ष श्री रामेश्वर प्रसाद ने की। श्री पचदेव तिवारी, अध्यक्ष, श्री शिवकुमार मिश्र, मंत्री एवं श्री स्वामीनाथ तिवारी, कोषाध्यक्ष चुने गये।

इस अवसर पर श्री गांधी आश्रम से आये हुए चार सर्वोदय कार्यकर्ताओं के द्वारा बेरुआरबारी प्रखण्ड में चल रहे पुष्टि को गति देने के लिए अगस्त में अनेक लोक-सेवकों ने समय देने का निश्चय किया। —शिवकुमार

ओमेगा टीम भारत में

अब दो सप्ताह के भीतर, सब कुछ योजना के अनुसार होता है तो, ओमेगा टीम भारत और पूर्व पाकिस्तान के बीच की सीमा पार कर जायेगी।

पहली टीम अभी नयी दिल्ली में है। उनकी गाड़ी कराची से नयी दिल्ली भेजी जा रही है और वहां १० अगस्त को पहुँचेगी। दूसरी ओमेगा टीम के दो सदस्य बेन कुले, और रोजर मूडी गत् २७ जुलाई (मंगलवार) को नयी दिल्ली पहुँच गये। दूसरी ओमेगा टीम के चार और सदस्य नयी दिल्ली आयेंगे। वे हैं एलेन कोनेट, डीरोल फ्लेमिंग, डान डियू और क्रिस्टिन वैरट।

वे सीमा पर किस प्रकार पहुँचेंगे यह उस समय की भारत की स्थिति पर आधारित है। परन्तु यह आशा की जाती है कि दोनों टीमें एक ही समय भीतर जायेंगी, सहायता-कार्य के लिए दो सदस्यों को भारत में छोड़कर, जो सामान की आपूर्ति करेंगे, लन्दन से सम्पर्क रखेंगे,→

बंगला देश सहायता समिति का कार्य विवरण

कलकत्ता में १२ जून '७१ की सभा में हम लोगों ने तीन बातें सोची थीं। एक तो बंगला देश के युवकों के शिविरों की संख्या ६ की जाय, और ये शिविर बंगाल प्रदेश सर्वोदय मंडल, गांधी शांति प्रतिष्ठान एवं अन्य गांधीवादी मित्रों की ओर से भिन्न क्षेत्रों में चलाये जायें, दूसरे, सभाओं का कार्यक्रम शरणार्थी छावनियों में नमूने के तौर पर उठाया जाय। इसके लिए सरकार के पुनर्वास मंत्रालय से बातचीत करना आवश्यक माना गया है, जो अभी तक मंत्री महोदय की सुविधा न होने से नहीं हो पायी है। तीसरी बात यह सोची गयी कि शरणार्थी छावनियों में सेवा का कुछ सामान पहुँचाया जाय। इसके लिए आक्सफेम आदि संस्थाओं से सहायता प्राप्त करने का सोचा गया है। एक बात और सोची गयी थी कि इन सब कामों के लिए जो पैसा चाहिए उसके लिए सभी प्रदेश सर्वोदय मण्डल अपनी ओर से भरसक कोशिश करें। यह व्यवस्था सर्व सेवा संघ द्वारा होगी। बंगला देश की महिलाओं का एक शिविर कलकत्ता में हो रहा है। सेवा का सामान हमारी समिति की ओर से आक्सफेम की मदद से पहुँच रहा है। सफाई के काम के लिए जानकारी व्यक्तियों की एक बैठक हाल ही में वाराणसी में हुई थी और उस काम में भी उल्लेखनीय प्रगति हुई है।

बंगला देश के लिए हम लोगों को पाँच-छः लाख रुपया एकत्र करना है। अभी तक इसमें विशेष प्रगति नहीं हो रही है। अब हमें पैसे के लिए तेजी से कदम उठाने होंगे। सभी सर्वोदय-कार्यकर्ताओं को इस काम में लगना चाहिए।

बंगला देश अन्तर्राष्ट्रीय परिषद ता० १४, १५, १६ अगस्त को दिल्ली में होगी।

बंगला देश के काम में एक कदम उठाया गया है, वह है निर्वासितों की सेवा के लिए कलकत्ता में एक प्रक्रिय 'सेल' की रचना का। यह 'सेल' सब निर्वासितों की छावनियों में सेवा-कार्य का 'कोआर्डिनेशन' करेगा। इसकी जिम्मेदारी श्री क्षितीशराय चौधरी ने उठायी है। अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन का काम श्री राधाकृष्ण भाई ने उठाया है। बंगला देश के युवकों के शिविर की जिम्मेदारी भिन्न-भिन्न मित्रों ने उठायी है। साम्प्रदायिक एकता का काम श्री नारायण भाई कर रहे हैं। शिविर की सफाई का जिम्मा भी अशत श्री नारायण भाई और क्षीतिशराय चौधरी ने उठाया है।

१६-७-७१

—गोविन्दराव देशपांडे

-और हर प्रकार से उन लोगों की सहायता करेंगे जो बंगला देश के अन्दर हैं।

इस बीच ब्रिटेन में चार आदमियों की टीम देश में घूम-घूमकर लाउडस्पीकर, पोस्टर, फोटो, और पर्चे द्वारा ओमेगा के सन्देश का प्रचार कर रही है। पहली अगस्त को ट्रेफलगर स्क्वायर में 'बंगला देश रैली' ओमेगा के कार्य के लिए समर्थन और सहायता प्राप्त करने के लिए आयोजित हुई। ओमेगा की सहायता के लिए स्कूलों में चन्दे किये गये हैं, रेस्तरां में, सड़कों पर चन्दे जमा किये गये हैं, ताकि ओमेगा की कार्रवाई चलती रहे।

(पीस न्यूज के ३० जुलाई के अंक से)

अमेरिका-चीन की दोस्ती : अटकलबाजियाँ

तैवान (फारमोजा)

निक्सन ने कहा है कि चीन के साथ नया सम्बन्ध पुराने मित्रों के मत्थे नहीं किया जा रहा है, फिर भी फारमोजा को भय तो है ही कि अमेरिका और चीन की दोस्ती उसके मत्थे पड़ेगी। चीन को मौका मिल जायगा कि नये सिरे से उसे अपने में मिलाने का दावा करे। यह भय निराधार नहीं है। चिएँगकाई शेक का चीन नकली है, माओ का चीन असली है। क्या असली चीन नकली चीन को एक स्वायत्त इकाई के रूप में रहने देगा ?

जापान

जापान एशिया का ही नहीं, दुनिया का एक बड़ा औद्योगिक देश है। औद्योगिक क्षेत्र में उसकी अमेरिका से प्रतिद्वद्विता भी है। ऐसी हालत में क्या अमेरिका-चीन की दोस्ती से जापान-अमेरिका का सम्बन्ध सुधरेगा ? क्या चीन के मुकाबिले जापान एशिया में अगुआ बना रह सकेगा ? क्या वह अपनी सुरक्षा के लिए अमेरिका के आश्वासनों पर भरोसा कर सकेगा ? सम्भवत वह भी सैनिक शक्ति बढ़ायेगा।

दक्षिण कोरिया

उत्तर कोरिया कम्यूनिस्ट है। क्या चीन से बढ़ावा पाकर वह दक्षिण कोरिया से अपनी दुश्मनी और तेज कर देगा ?

विएतनाम

इस नयी दोस्ती से लड़ाई खत्म होगी ?, होनी चाहिए। अमेरिका इस लड़ाई से निकलना चाहता है। उसे निकलने का बहाना भी मिल जायगा, क्योंकि हनोई को लडाई के लिए मदद मुख्यतः चीन से मिलती रही है। अब विएतनाम 'विएत-काग' (स्वातन्त्र्य-सैनिक) के हाथ में जायगा। लेकिन क्या अमेरिका दक्षिण-पूर्व एशिया को चीन के लिए खुला छोड़ देगा ? दूसरी ओर क्या चीन अमेरिका को एशिया में, खास तौर पर अपने पड़ोस में, घुसकर बैठा रहने देगा ? इतना निश्चित है कि दक्षिण-पूर्व एशिया में शान्ति चीन के बिना नहीं हो सकती या, यह भी हो सकता है कि अमेरिका दुनिया को दिखाने के लिए चीन से शान्ति और मैत्री की बात करता रहे और उधर विएतनाम में किसी-न-किसी बहाने बना रहे, और युद्ध को बढ़ाता रहे।

रूस

यद्यपि निक्सन ने कहा है कि 'चीन के साथ सम्बन्ध किसी दूसरे देश के खिलाफ नहीं है,' फिर भी रूस के सामने सबसे बड़ा प्रश्न-चिन्ह तो पैदा हो ही गया है। चीन उसका दुश्मन, अमेरिका जबरदस्त प्रतिद्वंद्वी। दोनों की दोस्ती का क्या होगा ? हो सकता है रूस की अमेरिका से मित्रता बढ़े। इधर वह भारत को मिलाकर रखेगा।

अमेरिका

पीकिंग के आमन्त्रण के कारण अमेरिका की पूर्व-एशियाई नीति में बुनियादी परिवर्तन होगा—केवल चीन के ही प्रति नहीं, बल्कि विएतनाम, टोकियो, मास्को के प्रति भी। वह ज्यादा यथार्थवादी होगी। वह चीन को संयुक्तराष्ट्रसंघ में सम्मानपूर्ण स्थान पाने से रोक नहीं सकता।

निक्सन, और उनके द्वारा अमेरिका को यह श्रेय मिलेगा कि वह दुनिया में शान्ति चाहता है, इसीलिए चीन की ओर शान्ति और मैत्री का हाथ बढ़ा रहा है।

दुनिया

क्या निक्सन-माओ सचमुच मिल जायँगे, या सिर्फ मुलाकात होकर रह जायगी ? अगर मुलाकात के बाद मित्रता बढ़ी तो क्या अमेरिका और रूस के दो गुटों के बाद चीन का एक तीसरा गुट बनेगा ? क्या लड़ाई से बचते हुए तीनों अपना-अपना प्रभव-क्षेत्र बनायेंगे और दुनिया शीतयुद्ध में गर्म होती रहेगी ? या तीनों मिलकर दुनिया को सुख और शान्ति का कोई सही रास्ता दिलायेंगे ? ■

निक्सन अमेरिकी स्वातन्त्र्य-प्रतिमा से—तुम बूढ़े हो तो क्या हुआ मैं अब भी तुम्हें सैनिक बना दूँगा।' (मैक्सिको की एक पत्रिका से साभार)

इस अंक में

अन्य स्तम्भ

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २० पैसे), विदेश में २२रु० ; या २५ शिलिंग या ३ डालर।
इस अंक का मूल्य २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिये प्रकाशित एवं मनोहर प्रेस, वाराणसी में मुद्रित

सम्पादक
राममूर्ति
वर्ष : १७
अंक : ४६ सोमवार
१६ अगस्त, '७१
पत्रिका विभाग
सर्व सेवा संघ, राजघाट, वाराणसी-१
फोन : ६४३९१ तार : सर्वसेवा

सर्व सेवा संघ का मुख्य पत्र

दुनिया के सभ्य राष्ट्रों से इजराइली संसद का निवेदन

बंगला देश में पश्चिम पाकिस्तान ने जो नरसंहार, ध्वंसलीला और व्यापक अत्याचार किये उससे इजराइल को गहरी चोट लगी है। पश्चिम पाकिस्तान के इस कृत्य का हम विरोध करते हैं। इजराइल के लोग स्वयं वंशोच्छेद के आतंक के कटु-अनुभव से गुजरे हैं। वे बंगला देश के निवासियों के दुःख-दर्द के साथ एवं उन लाखों-लाख लोगों के साथ, जो कत्लेआम से बच भागे और भारत में शरण लिये हैं तथा भूख और बीमारी के शिकार हैं, अपनी आत्मीयता व्यक्त करते हैं।

इजराइल की जनता ने स्थानीय रेडक्रास सोसाइटी के द्वारा भारत-स्थित बंगला देश के शरणार्थियों की दवा, खुराक आदि से मदद की है। इनकी विपत्ति घटाने को इजराइल सरकार ने और भी अधिक मदद देने सम्बन्धी वक्तव्य दिया है। नेसेत उसकी ताईद करता है।

सभी सभ्य राष्ट्रों से, जो मनुष्य के सम्मान तथा उनके जीने एवं स्वतंत्र रहने के अधिकार को बरकरार रखना चाहते हैं, एवं सभी अन्तर्राष्ट्रीय संघटनों से नेसेत निवेदन करता है कि बंगला देश के सम्पूर्ण विनाश के लिए चलाये जा रहे पश्चिम पाकिस्तान के इस चक्र का वे विरोध करें। अब और अधिक लोगों का संहार न हो तथा वहाँ और अधिक जुल्म न ढाया जाय, इस दिशा में वे कदम उठायें एवं वह सब मदद लेकर आगे आयें जिनसे शरणार्थियों के कष्ट दूर किये जा सकें।

गत २१-७-७१ को नेसेत (इजराइल की संसद) ने यह प्रस्ताव पारित किया। भारत के बाद इस तरह का प्रस्ताव करनेवाली यह दूसरी संसद है।

• संसार का सबसे बड़ा खतरा • बंगला देश के भीतर •

शांति, मित्रता, सहकार

जब अमेरिका ने चीन की ओर हाथ बढाया तभी मालूम हो गया कि रूस का हाथ भारत की ओर बढ़ेगा। रूस और भारत में मित्रता की कमी कभी नहीं थी, अब संधि से और पक्की हो गयी। नयी बात यह हुई कि इस संधि से भारत रूस के साथ शक्ति-सतुलन के एक नये ढांचे में आ गया। अगर एशिया में अमेरिका-चीन-पाकिस्तान का त्रिभुज बन सकता है तो रूस-जापान-हिन्दुस्तान का क्यो नही ? लेकिन जापान को अभी सोचना पड़ेगा कि अमेरिका से वह कितना अलग हट सकता है और रूस के कितना निकट आ सकता है।

रूस और भारत के बीच 'शाति, मित्रता और सहकार' की यह सधि एक-दो दिन का काम नहीं है। क्योंकि वस्तुतः सधि की वार्ता करने नहीं, सधि पर हस्ताक्षर करने आये थे। और, सभवत. भारत से श्री धर मास्को की यात्रा पर सधि का मसौदा तैयार करने गये थे। हम जिस नाटक को आज स्टेज पर देख रहे हैं उसकी तैयारी पर्दे के पीछे दो वर्षों से हो रही थी। अमेरिका और चीन भी लगभग इतने ही दिनों से एक-दूसरे की ओर बढ रहे थे। आज की दुनिया जिस तरह चल रही है उसमें यह सम्भव नही कि एक ओर कुछ हो तो दूसरी ओर न हो। इसी तरह अलग अलग देशों की 'मित्रताएँ' पूरे विश्व के लिए 'शत्रुता' बन जाती है।

संधि का एक अर्थ स्पष्ट है कि अब भारत की सुरक्षा रूस की चिंता बनेगी और रूस की सुरक्षा भारत की। आक्रमण या आक्रमण का भय होने पर सम्मिलित चिंता सम्मिलित चेष्टा का रूप लेगी। जैसे कुछ दिन पहले याहिया ने कहा था, 'हम अकेले नही हैं', उसी तरह अब भारत कह सकता है 'हम भी अकेले नही है।' अमेरिका जिस तरह अधा होकर बंगला देश के मामले में पाकिस्तान का साथ दे रहा है, और उसका बल पाकर पाकिस्तान जिस तरह पागल हाथी बना हुआ है, उसे देखते हुए भारत को साथी की भी जरूरत थी और सुरक्षा के साधनो की भी। इस सधि से दोनों प्राप्त हो गये। भारत आश्वस्त हो गया। और, इस्लामाबाद ? या पेकिंग ? जाहिर है कि अब लड़ाई की बात आसानी के साथ उनके मुँह से नहीं निकल सकेगी। इसी अर्थ में जयप्रकाशजी ने कहा है कि यह सधि दक्षिणी एशिया में शाति की सबसे बडी गारंटी है। स्वभावत. शस्त्रो की दुनिया में युद्ध का भय शाति का सबसे बड़ा आश्वासन बना हुआ है। भय से युद्ध रुका रहेगा, तनाव बढ़ता रहेगा, युद्ध की तैयारी होती रहेगी।

हमारे देश में क्या विरोधी, और क्या सरकार के समर्थक, यह सधि किसी को अस्वीकार नही है, क्योंकि जो परिस्थिति है उसमें भारत के सामने दूसरा विकल्प नही था। रूस में तो विरोध का प्रश्न ही नही है, पर उसके सामने भी कोई विकल्प नही था। अगर हमारे कुछ लोगों के मन में भय है तो इतना ही कि भारत कही रूस का पिछलग्गू न बन जाय, और बगला देश के प्रश्न पर अपने निर्णय के अनुसार कदम उठाने की उसकी स्वतन्त्रता कम न हो जाय। समय ही बतायेगा कि ये भय कहाँ तक सही हैं। भारत सरकार से यह अपेक्षा तो है ही कि बंगला देश को मान्यता देने में वह अब ज्यादा देर नही करेगी। लेकिन इतना तो मानना ही पड़ेगा कि बड़े रिश्तेदार की पंक्ति में बैठने का मौका यों ही नही मिलता, उसके लिए कुछ-न-कुछ कीमत तो चुकानी ही पड़ती है। वह कीमत कितनी होगी यह भारत की अपनी शक्ति पर निर्भर है। किसी वक्त भारत अपनी नैतिक शक्ति के भरोसे कहता था 'हम सबके हैं; हम किसी के नही हैं।' भले ही आज भारत का अपनी सैनिक शक्ति पर भरोसा बढ़ा हो, लेकिन सेना के बल पर वह अपनी पुरानी बात पर कायम नही रह सकेगा। दुनिया शक्ति के ध्रुवो में बँटती जा रही है। भारत ने सुरक्षित *अस्तित्व की खोज में इनमें से एक ध्रुव के साथ सधि की है।*

बात कुछ दूसरी होती अगर पिछले वर्षों में भारत ने नैतिक शक्ति कायम रखी होती, और नागरिक-शक्ति बढायी होती। लेकिन उसने नागरिक से अधिक सैनिक पर ध्यान दिया। सैनिक शक्ति कितनी भी आवश्यक हो, किन्तु नागरिक और नैतिक शक्ति के बिना वह कितनी अधूरी होती है, इसके अनेक उदाहरण द्वितीय महायुद्ध के बाद के इतिहास में मौजूद हैं। और, अकेली सैनिक शक्ति कितनी भयकर होती है इसका उदाहरण बगला देश में आँखों के सामने है। जिस देश में नेतृत्व ने सत्ता को व्यसन बना लिया हो, शिक्षित और सम्पन्न वर्ग इतना स्वार्थी और सकुचित हो, जहाँ का युवक देश के जीवन की मुख्य धारा से इतना अलग हो, और जहाँ करोड़ो लोगो के लिए आज भी रोटी तक का ठिकाना न हो, उस भारत के लिए घर के भीतर अरक्षा के तत्वों और अवसरो की कमी नही है। उनसे रक्षा किसी बाहरी संधि के द्वारा कितनी होगी ? उसके लिए भीतर की शक्ति चाहिए, नागरिक-शक्ति चाहिए। वह शक्ति हमने नही बनायी है, यह हमारे लिए चिंता का सबसे बडा विषय है। अपने-अपने ढग से रूस और चीन दोनों ने अपनी नागरिक-शक्ति का निर्माण किया है। अमेरिका ने भी किया है। लेकिन हमने ? हमने उसकी ओर ध्यान भी नही दिया है। नागरिक-शक्ति तब बनती है जब देश के जीवन में हर नागरिक के लिए स्थान होता है, जब स्त्री, युवक, और श्रमिक की शक्ति देश के उत्थान और विकास के साथ जुड़ती है। यही नागरिक-शक्ति देश की स्थायी सुरक्षा और विकास की कुंजी है जो हमारे हाथ में नहीं है।

हमारी कामना है कि जिस शान्ति, मित्रता और सहकार की बात भारत और रूस के बीच तय हुई है, वह भारत के भीतरी जीवन में भी उतरे। हम बाहर से भले ही आश्वस्त हैं, लेकिन भीतर से निश्चिन्त नहीं हैं।●

९ अगस्त को शिक्षा में क्रान्ति का अभियान प्रारम्भ

राज्य की राजधानियों और जिला-मुख्यालयों में जुलूस, प्रदर्शन और सभाओं के आयोजन

देश भर से प्राप्त हो रहे समाचारों के अनुसार तरुण-शान्तिसेना द्वारा पूरे देश में ९ अगस्त को शिक्षा में क्रान्ति-अभियान का उत्साहवर्द्धक शुभारम्भ हुआ। इस विशेष दिन को मुख्य रूप से राज्यों की राजधानियों और जिला-मुख्यालयों में विशाल जुलूस, प्रदर्शन और सभाओं के कार्यक्रम आयोजित किए गये, जिनमें तरुण-शान्तिसैनिकों, छात्रों, अभिभावकों, अध्यापकों ने उत्साह से भाग लिया।

लखनऊ :

उत्तर प्रदेश की राजधानी लखनऊ में हमारे विशेष प्रतिनिधि की सूचनानुसार करीब १०० छात्रों, अभिभावकों और प्राध्यापकों का एक मौन जुलूस बड़े ही अनुशासित ढंग से शहर के मुख्य मार्गों से गुजरते हुए साढ़े पाँच किलोमीटर का फासला तय करके राज्यपाल को ज्ञापन देने के बाद विधान-सभा भवन के सामने विधायक-निवास के प्रांगण में सभा के रूप में परिणत हो गया। ज्ञातव्य है कि नगर में धारा १४४ लागू होने और विधानसभा-भवन मार्ग से गुजरने या वहाँ सभा करने की जिलाधीश की निषेधाज्ञा के कारण लखनऊ के तरुणों में रोष पैदा हो गया था, और वे निषेधाज्ञा का प्रतीकार करने के लिए तैयार हो चुके थे। लेकिन ८ अगस्त को अभियान-आयोजकों के एक प्रतिनिधि-मण्डल के साथ हुई जिलाधीश की बातचीत के बाद परिस्थिति बदली और विधान-सभा-भवन मार्ग से होकर विधायक निवास तक जुलूस ले जाने की अनुमति जिलाधीश की ओर से प्राप्त हो गयी।

इस कार्यक्रम के आयोजन में प्रदेश सर्वोदय मण्डल, प्रदेशीय तरुण-शान्तिसेना, भारतसेवक (?) और स्थानीय गांधी शान्ति प्रतिष्ठान केन्द्र ने सक्रिय योगदान किया। लखनऊ के छात्र और यहाँ की तरुण शान्तिसेना ने बहुत ही उत्साह से दिनरात लोक-शिक्षण का काम किया। लखनऊ में यह उत्साहवर्द्धक दृश्य देखने को मिला कि तरुण-शान्तिसेना के विचार से आकर्षित नये-नये छात्र शिक्षा में क्रान्ति-अभियान के पोस्टर चिपकाने, पर्चे बाँटने, ध्वनि-विस्तारक यंत्र से प्रचार तथा अन्य पूर्वतैयारियाँ करने में दिनरात लगे रहे थे। इन सारे कार्यक्रमों के सूत्राधार के रूप में सर्वश्री विनय अवस्थी, संतोष भारतीय, दिनेश कुमार दीक्षित, प्रेमप्रकाश, अमरनाथ भाई, रामप्रवेश शास्त्री आदि के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं।

इस ९ अगस्त के प्रदर्शन में उत्तर-प्रदेश के २७ जिलों से आये प्रतिनिधियों

रूस-भारत संधि की मुख्य बातें

१. संधि २० वर्षों के लिए है। अगर दोनों में से कोई देश संधि को समाप्त नहीं करना चाहेगा तो अवधि पाँच-पाँच साल के लिए बढ़ती जायगी।

२. दोनों में से किसी देश पर आक्रमण होने पर, या आक्रमण का भय पैदा होने पर, दोनों देश तुरंत इस दृष्टि से परामर्श करेंगे कि कैसे आक्रमण दूर किया जाय, तथा अपने देश की शान्ति और सुरक्षा कायम रखी जाय।

३. दोनों देश किसी ऐसे तीसरे देश को, जो इनमें से किसी देश से सशस्त्र संघर्ष करेगा, किसी प्रकार की सहायता नहीं देंगे।

४ दोनों एक-दूसरे के विरुद्ध किसी प्रकार की सैनिक व्यवस्था में शरीक नहीं होंगे, न स्वयं कोई कार्रवाई करेंगे, और न अपनी भूमि ऐसी किसी कार्रवाई के लिए देंगे।

५ दोनों देश किसी एक या अधिक देशों से, खुलकर या छिपकर, ऐसा कोई समझौता नहीं करेंगे जिसका इस संधि के साथ मेल न हो, या जिससे एक-दूसरे को सैनिक क्षति होती हो।

६ अगर संधि की व्याख्या में मतभेद होगा तो दोनों देश आपस में चर्चा करके तय कर लेंगे।

यह संधि अनाक्रमण की है, सैनिक संधि नहीं है। आक्रमण होने पर या आक्रमण का भय पैदा होने पर, शान्ति के लिए परामर्श और प्रभावकारी कदम उठाने की बात कही गयी है, तुरंत सैनिक कार्रवाई करने की नहीं। भारत के विदेश मंत्री ने कहा है कि इस क्षेत्र के अन्य देशों से भी इस तरह की संधियाँ हो सकती हैं। हाँ, ऐसे ही देशों से हो सकेंगी जो सोवियत रूस के विरुद्ध नहीं हैं। उसी तरह सोवियत रूस पाकिस्तान के साथ संधि नहीं कर सकता जब तक कि वह भारत के साथ शत्रुता की नीति छोड़ न दे। भारत द्वारा बंगला देश की मान्यता में कोई बाधा नहीं पड़ती। इस संधि से दोनों देश एशिया और दुनिया में शांति को सुदृढ़ बनाने का प्रयत्न जारी रखेंगे। सोवियत रूस मानता है कि भारत की गुट-निरपेक्षता की नीति का विश्व-शांति में महत्वपूर्ण स्थान है।

विदेशमंत्री श्री स्वर्ण सिंह ने कहा है कि अगर कोई देश हमारे देश की अखण्डता और हमारी प्रभुसत्ता पर आक्रामक दृष्टि रखता होगा तो इस संधि के बाद उसे हजार बार सोचना पड़ेगा। ग्रोमिको ने यह कहकर कि 'हमेशा, सुख और दुख में, हम साथ रहे हैं' संधि पर अपना संतोष प्रकट किया है। इसे दोनों ने अपने-अपने देश के लिए अत्यंत हितकारी माना है। ■

ने भाग लिया, जिनमें दानापुर से आये लोगों की संख्या अधिक थी। हजरतगंज स्थित गांधी प्रतिमा के पास इसी दिन सुबह ६ बजे से शाम को ६ बजे तक २१ व्यक्तियों ने शिक्षा में क्रान्ति के लिए प्रतीकात्मक उपवास भी किया।

उपद्रवी और अशान्ति पैदा करने वाले प्रदर्शनों, जुलूसों को देखने की आदी हो गयी नगर के नागरिकों की आंखों में इस मौन और शान्त जुलूस को देखकर विस्मययुक्त जिज्ञासा के भाव पैदा हो रहे थे। ध्वनि-विस्तारक यंत्र द्वारा जुलूस के उद्देश्यों का उद्घोष करती हुई एक टोली जीप से जुलूस के आगे-आगे चल रही थी।

शाम की सभा में आचार्य राममूर्ति ने शिक्षा में क्रान्ति के विविध पहलुओं पर प्रकाश डालते हुए कहा, "हमारे शब्दों से अधिक क्रान्तिकारी शक्ति छात्रों- शिक्षकों- अभिभावकों के इस सम्मिलित सहयोग में है, जो अभी-अभी मौन जुलूस के रूप में प्रकट हुआ है। यह एक ऐतिहासिक प्रारम्भ हुआ है। वर्तमान गुलामी की शिक्षा को बदलने के लिए इसके कुप्रभाव में आने वाले छात्रों, अध्यापकों और अभिभावकों का संयुक्त मोर्चा पूरे देश में संघटित होना चाहिए।" आपने कहा कि, "शिक्षण बदलेगा तो समाज बदलेगा, देश की पूरी राजनीति और अर्थनीति बदलेगी, और इस परिवर्तन की शक्ति इस संयुक्त मोर्चे से ही बन सकेगी।" राज्यपाल को ज्ञापन दिये जाने का मकसद स्पष्ट करते हुए आपने कहा, "हम जनता के प्रतिनिधियों को भी अपनी बात सुनाना चाहते हैं, इसीलिए सरकार को ज्ञापन दिया गया। लेकिन हम इस गलतफहमी में नहीं हैं कि सरकार शिक्षा में क्रान्ति कर देगी। हमें पता है कि **इन पत्थर की सरकारी इमारतों में रहने वाले भी पत्थर हो गये हैं,** संवेदन-शून्य हो गये हैं। हमें यह भी पता है कि राज्यपाल राज्यों की कितनी मँहगी शोभा हैं। इसलिए क्रान्ति तो उनके ही द्वारा होगी जो इसके कुप्रभाव से ग्रस्त हैं।" ज्ञातव्य है कि ज्ञापन मुख्य मंत्री और शिक्षा मंत्री को दिया जाना था, लेकिन वे सभी लोग कांग्रेस द्वारा आयोजित दिल्ली के प्रदर्शन में भागलेने चले गये थे, इसलिए ज्ञापन राज्यपाल को ही दिया गया।

९ अगस्त को शुरू हुए इस अभियान को चालू रखने का निश्चय दूसरे दिन की बैठक में किया गया। तय हुआ कि प्रदेश के हर कालेज में शिक्षण में क्रान्ति का संयुक्त मोर्चा बनाया जाय और इस प्रकार एक निश्चित अवधि के अन्दर इसे शिक्षण के बहिष्कार की मंजिल तक पहुँचाया जाय। दूसरे दिन १० अगस्त को ही विधान सभा के सामने जाकर विधान सभा की बैठक में भाग लेने जा रहे विधायकों को भी ज्ञापन दिया गया। लखनऊ के दैनिक अखबारों ने महत्वपूर्ण योगदान किया।

पटना

पटना में 'शिक्षा में क्रान्ति दिवस' का प्रचार काफी बड़े पैमाने पर किया गया था। पटना में सभी मुख्य-मुख्य स्थानों और सड़कों पर पोस्टर आदि चिपकाये गये थे। ८ अगस्त से लाउडस्पीकर द्वारा भी नगर में प्रचार किया गया।

बिहार राज्य के अन्य नगरों— जमशेदपुर, भागलपुर, मुजफ्फरपुर और गया—से भी ९ अगस्त के कार्यक्रम में भाग लेने के लिए तरुणों की टोलियाँ आयी थीं।

९ अगस्त को १-३० बजे दिन में गांधी मैदान के उत्तरी-पूर्वी कोने से करीब करीब ५-६ सौ लोगों का एक मौन जुलूस निकला। जुलूस में लोग काफी संख्या में प्लेकार्ड्स लिए हुए थे, जिन्हें उत्सुक लोग बड़े ध्यान से पढ़ते थे। जुलूस में भाग लेने वालों में हाई स्कूल तक की आयुवाले छात्रों की संख्या अधिक थी। जुलूस अशोक राजपथ, साइंस कालेज, बारी रोड, बाकरगंज होता हुआ करीब ४ मील का फासला तय करके श्रीकृष्ण स्मारक आडीटोरियम में ४ बजे शाम को सभा के रूप में परिणित हो गया।

सभा की अध्यक्षता बी० एन० कालेज के प्राध्यापक श्री महेन्द्र नारायण ने की। श्री रणजीत ने 'शिक्षा में क्रान्ति' का घोषणा-पत्र पढ़कर सुनाया। फिर बिहार राज्य के अन्य नगरों से आये हुए तरुण प्रतिनिधियों ने भाषण दिये। डा० रामजी सिंह, प्राध्यापक, भागलपुर विश्वविद्यालय ने भी ओजस्वी और प्रेरक भाषण दिया। श्री श्यामबहादुर सिंह के धन्यवाद ज्ञापन और राष्ट्रगान के बाद सभा समाप्त हुई।

सभा के बाद एक बैठक में आगे के लिए कार्यक्रम बनाया गया और यह निश्चय किया गया कि हर विद्यालय में जाकर शिक्षा में क्रान्ति के लिए विद्यार्थियों को प्रेरित किया जाय और अभिभावकों, शिक्षकों और विद्यार्थियों का एक संयुक्त मोर्चा शिक्षा में क्रान्ति के लिए संघटित किया जाय।

सहरसा

सुश्री निर्मला बहन की सूचना के अनुसार सहरसा में करीब तीन हजार लोगों का जुलूस निकला। इसमें भाग लेने के लिए जिले के कोने-कोने से छात्र, अध्यापक, अभिभावक आये थे। ●

कृत्रिम और दूषित शिक्षा पद्धति

हमारी शिक्षा पद्धति बहुत ही कृत्रिम और दूषित है। वह अपने देश के जीवन के सदर्भ में न छात्रों को शिक्षित ही करती है और न उन्हें इस योग्य बनाती है कि वह अपनी जीविका का ही अर्जन कर सकें और साथ ही सेवाभाव द्वारा देश की सेवा कर सकें। हमारे मन में जो स्टैण्डर्ड (स्तर) का दृष्टिकोण है वह बिल्कुल ही खोखला तथा अंग्रेजों द्वारा प्रतिष्ठित केवल क्लर्कों के जीवन के लिए उपयोगी है। स्टैण्डर्ड का अर्थ होता है मूल्य। उसके दो रूप हैं। एक रूप यह कि छात्र उसे अर्जित कर सकें और दूसरा यह कि वह समाज के लिए उपयोगी हो। हमारे वर्तमान स्टैण्डर्ड की भावना इन दोनों रूपों से वंचित करती है।

—सुमित्रानन्दन पन्त

संसार का सबसे बड़ा खतरा

—मनमोहन चौधरी

बंगला देश के सम्बन्ध में अमेरिका की नीयत के बारे में अब किसी भ्रम की गुंजाइश नहीं रही। इसने तय कर लिया है कि हर तरह से याहिया के शासन की मदद करेंगे और जीने के अभाव में हाथ-पाँव मार रहे बंगला देश को कुचल कर रहेंगे। अपनी इस नीयत की सिद्धि के लिए उसने भारत पर हर तरह से यह दबाव डालना शुरू कर दिया है कि वह बंगला देश को समर्थन न दे।

इसने याहिया की सरकार को हथियार भरे जहाज भेजे और इस तरह की मदद करते रहने की अपनी नीयत भी जाहिर की। इस दृष्टि से उसने पाकिस्तान को यह सालिम नाव यह कहकर दिये कि पिछले वर्ष नवम्बर में पूर्व बंगाल में तूफान के शिकार लोगों को राहत पहुँचाने के लिए दे रहे हैं। वह पाकिस्तान को नदियों के युद्ध पोत दे रहा है। बंगला देश में छोटी बड़ी असंख्य नदियाँ हैं। उनमें एक जगह से दूसरी जगह जल्दी पहुँचने के लिए पाकिस्तानी फौज को तेज नौकाओं की बेहद जरूरत है। विश्वबैंक ने पाकिस्तान को आर्थिक मदद देना रोक देने का जो निर्णय लिया, अमेरिका ने अपने को उससे भी अलग रखा और विभिन्न नामों से उसे आर्थिक सहायता करता ही जा रहा है। इसने एक कुख्यात अमेरिकी अफसर को ढाका भेजने का तय किया है। वह ढाका के पुलिस अधिकारियों के परामर्शदाता की हैसियत से जा रहा है।

निक्सन की दोरुखी नीति

निक्सन नौ दस महीने बाद चीन जायेंगे। पर उनकी घोषणा की तिथि इस तरह चुनी गयी कि भारत पर दबाव पड़े। राष्ट्रसंघ द्वारा भारत और बंगला देश की सीमा पर पर्यवेक्षक नियुक्त किये जायँ यह कदम भी इसी नीयत से प्रस्तावित है कि भारत पर दबाव पड़े। और सबसे अधिक क्षोभ उभारनेवाला उसका काम तो यह है कि उसने भारत सरकार के विरुद्ध ऐसे भद्दे झूठे आरोपों का एक जाल बुना जिससे आगे नीच-से-नीच स्तर का दलाल भी लजा जाय।

चोर-चोर मौसेरे भाई

अमेरिका के इन कारनामों से यद्यपि जी एकदम खट्टा हो जाता है तथापि उसमें आश्चर्य की कोई बात है नहीं। यू०एस०ए० (अमेरिका) के पूँजीपतियों ने करोड़ों-करोड़ डालर की पूँजी पश्चिम पाकिस्तान में लगायी है तथा आगे और भी पूँजी लगाने की योजना उनके सामने है। उस पूरे देश की अर्थ-व्यवस्था में उनका एक शक्तिशाली निहित स्वार्थ बन गया है। इस काम में पाकिस्तान के चन्द परिवारों के वे लोग उनके साझेदार हैं, जो वहाँ स्वयं पूँजीपति एवं सामन्तवादी हैं तथा फौज की चोटी के लोग हैं। पाकिस्तान की सारी राज-व्यवस्था और अर्थ-व्यवस्था इन्हीं लोगों की मुट्ठी में है। इस छोटी जमात के हाथ से यदि राजकीय सत्ता निकल जाती है तो अमेरिकी पूँजीपतियों की वहाँ लगी सारी पूँजी और उनके स्वार्थ पर धक्का लगेगा। इसलिए अमेरिकी सरकार को किसी भी कीमत पर इन शासकों का हाथ मजबूत करना ही है।

पाकिस्तान इस रोग का अकेला रोगी नहीं है। जिन जिन देशों में इस तरह प्रतिगामी शासन है वे अमेरिकी संस्करण की मुक्त दुनिया का सहारा है। पोर्तुगाल में सालाजार, स्पेन में फ्रैन्को, ग्रीस में फौजी पिट्ठू, नागवान में चाग काई शेक, कम्बोडिया में लान नोल, दक्षिण वियतनाम में कार्ई और थिउ, तथा दक्षिणी एशिया में इसान किथ ये सब एक ही थैली के चट्टे-बट्टे हैं। इससे अधिक नाम गिनाने की आवश्यकता नहीं है। थाईलैण्ड का राजा और दक्षिण अफ्रिका का वोर्स्टर, प्रकट या प्रच्छन्न रूप से अमेरिकी सरकार के साथी हैं। फिर दक्षिणी अमेरिका के छोटे-बड़े सभी देशों में जो तानाशाह या कठपुतली गणतन्त्र हैं, उनका नाम लेना क्यों छोड़ा जाय?

अमेरिकी स्वतन्त्रता का माप दण्ड

अमेरिकी सरकार जिसे स्वतन्त्रता कहती है उसका कुल मापदण्ड यह है कि अमेरिकी पूँजीपति उस देश में अपनी पूँजी लगायें और उसका मुनाफा घर ले जायें। उनकी नजरों में शेष सारी बातों का महत्व गौण है। मैंने ऊपर जिन अर्धविकसित एवं गरीब देशों के नाम गिनाये हैं उनको अपने-अपने देश की प्रतिक्रियाशील सरकार को समर्थन देने को बाध्य होना पड़ता है। क्योंकि थोड़ा भी प्रगतिशील उदार गणतान्त्रिक ढाँचा उनके स्वार्थ पर एक धक्का के रूप में सामने आयेगा। इन सुरक्षित विदेशी स्वार्थों को जिसने अपनी जड़ वहाँ गहरा जमा ली है, धक्का दिये बिना उन गरीब देशों में पूरे जनसमाज को, सामान्य-से-सामान्य राहत पहुँचाना भी असम्भव है। उन देशों का साधारण जन समाज तो जीवन की अनिवार्य आवश्यकताओं की भी आपूर्ति से वंचित है—उनकी सुख सुविधाओं की बात पूछनेवाला कौन है?

अमेरिकी सरकार की जो विभिन्न एजेन्सियाँ हैं वे इन पूँजीपतियों की पूँजी की एवं उनके स्वार्थों की रक्षा के लिए किसी भी हद तक बढ़ जाने को तैयार हैं। राजनीतिज्ञों को, सरकारी नौकरों को और सुरक्षा अधिकारियों को घूस देने में ये बेहिसाब रुपये खर्च करते हैं। जो नेता उनके आग्रह मानने में आनाकानी करते हैं उन्हें मरवा देने में उन्हें जरा भी हिचक नहीं। और जब इस तरह शासकों को अपने कब्जे में लाने में वे असमर्थ होते हैं तब उनकी गद्दी उलटवा देने में विरोधियों की सब तरह से सहायता करते हैं। दक्षिणी अमेरिकी महादेश के सभी देशों का पूरा इतिहास इसी तरह के उलटफेर का इतिहास है। सभी दक्षिणी अमेरिकी देशों की अर्थ-व्यवस्था

उत्तरी अमेरिका के पूँजीपतियों की मुट्ठी में है। वहाँ के किसी भी देश की सरकार ने जहाँ इनके स्वार्थ पर जरा भी धक्का देने की कल्पना कि कुछ दिनों के अन्दर उसका अपदस्थ हो जाना स्वाभाविक है। ये अमेरिकी पूँजीपति स्थानीय पूँजीपतियों के साथ साठ-गाँठ किये रहते हैं। और जनसाधारण की हैसियत तो गुलामों जैसी होती है। पाकिस्तान में भी बात यही है। सार्वजनिक (पापुलर) विद्रोह को दबाने के लिए अमेरिकी सरकार तानाशाहों को हथियार, प्रशिक्षण एवं अन्य सारी सुविधाएँ देती है।

अमेरिकी सरकार की खुराक

क्रूरता और निर्ममता तो अमेरिकी सरकार की मानो दैनन्दिन खुराक ही है। इसलिए ऐसी कुछ अपेक्षा रखना कि बंगला देश की घटनाओं से इसके मन में उथल-पुथल मच जायगा, निरर्थक है। दक्षिण वियतनाम के लोग अपनी स्वतंत्रता एवं न्याय प्राप्ति के लिए जो प्रयास कर रहे हैं, उसे कुचल डालने के लिए और कठपुतली सरकार को सहारा दिये रहने के लिए यह पिछले दस वर्षों से अधिक समय से उनपर, बंगला देश से भी बढ़कर, बर्बरता कर रही है। माइलाई जैसी तो वहाँ सैकड़ों घटनाएँ घटीं। इस गाँव की घटना तो प्रकाश में इसलिए आ गयी कि कुछ अखबारवाले उसको लेकर लगातार हल्ला-गुल्ला मचाते रहे। इसकर से अमेरिकी सरकार को यह नाटक करना था कि इस घटना से वह चिन्तित है। क्रुद्ध जनमानस की तुष्टि के लिए एक गरीब छोटे फौजी अफसर को बलि का बकरा बनाया गया।

यह बात उत्साहवर्द्धक है कि अमेरिका के आम लोग बंगला देश की समस्याओं के सही पहलू से वहाँ की सरकार के रुख के बावजूद अच्छी तरह परिचित हैं। वहाँ के अखबार एवं समाचार के दूसरे माध्यमों ने लोगों के सामने वस्तुस्थिति को रखने का काम बहुत ही उत्तम रीति से किया है। बंगला देश के प्रश्न के अलावे वहाँ की जनता, खासकर नयी पीढ़ी के लोग, अमेरिकी सरकार के वियतनाम में तथा अन्य जगह उलझने के पहलू पर अधिक तीखे आलोचक हो रहे हैं। सरकार की एजेन्सियाँ, जो उनके गणतांत्रिक अधिकार पर दस्तन्दाजी करती हैं, उनका वे घोर विरोध करते हैं। बड़े-बड़े उद्योगपतियों के गठबन्धनों एवं अन्तर्राष्ट्रीय फौजी गठबन्धनों से उनके अपने समाज पर और पूरे संसार पर जो खतरा उपस्थित होनेवाला है उसका एहसास तेजी से बढ़ रहा है। वे साफ-साफ देख रहे हैं कि इन गठबन्धनों से उनकी अर्थ-व्यवस्था और सरकार चन्द लोगों की मुट्ठियों में सिमटती जाती है। गणतांत्रिक मूल्यों के लिए उनके मन में जो व्यग्रता है वह बिल्कुल हार्दिक है। इन मूल्यों की रक्षा के लिए उन्होंने जो प्रयत्न किये वे अधिकतर सफल भी हुए। उसका एक उदाहरण है 'पेन्टागन पेपर्स' को लेकर अखबारों का हाल की विजय।

डालर साम्राज्यवाद

इस सन्दर्भ में यह कह देना कुछ अप्रासंगिक नहीं होगा कि संसार के मामले में अमेरिका के रोल का यह मूल्यांकन मार्क्सवादी विश्लेषण से मिलता-जुलता है। पर एक मार्के का फर्क है। अमेरिका की जनता का और अखबार का रोल यह साबित करता है कि न तो आर्थिक ताकतें सामाजिक, राजनैतिक और सांस्कृतिक जीवन पर पूरा अंकुश रखती हैं और न यह ही सही है कि पार्लियामेन्टरी गणतंत्र पूँजीवाद का एक उप-परिणाम (बाई-प्रोडक्ट) है। गणतंत्र और पूँजीवाद दोनों दो शक्तियाँ हैं जिनका जन्म एक ही ऐतिहासिक प्रसंग में हुआ था, पर दोनों के मूलभूत मूल्य भिन्न हैं। ज्यों-ज्यों समय बीतता जाता है त्यों-त्यों दोनों की दिशा एक दूसरे से भिन्न होती जा रही है। आज दोनों दोनों एक दूसरे के विरोध में खड़े हैं।

पूँजीवाद और डालर-साम्राज्यवाद की शक्तियों के लिए एक सुविधा मिल गयी है। वह यह कि आर्थिक प्रक्रिया—आर्थिक निर्णय लेने की एवं संचालन की, और राष्ट्र की सुरक्षा का तंत्र बहुत ही पेचीदा, उलझनवाला और केन्द्रित हो गया है। इस कारण सामान्य नागरिक की समझ में वह लगभग नहीं आता है। दूसरी ओर इस पेचीदगी और केन्द्रीयकरण के कारण ही एक शीर्षस्थ अल्पसंख्यक समुदाय उसका संचालन करता है।

पर अब इसके लिए संघर्ष आरंभ हो गया है। हम आशा कर सकते हैं कि अमेरिका में गणतन्त्रीय और मानवीय मूल्य अन्ततोगत्वा विजयी होंगे और लोभी तथा पूँजीवाद की तमन्नाओं को मार भगायेंगे। फिर वे लोग अपनी आर्थिक और राजनैतिक व्यवस्था को इस तरह चलायेंगे कि वे संसार के लोगों के लिए खतरे के रूप में नहीं रहें। निस्सन्देह इसमें बहुत दिन लगनेवाला है।

भारत क्या करे ?

भारत के लिए उपयुक्त यह होगा कि वह अमेरिका की चाटुकारिता करना छोड़े और यह महसूस करे कि इस समय हम इतिहास के चौराहे पर हैं। साम्राज्यवादी दबावों के प्रति हमारी प्रतिक्रियाएँ यह तय करेंगी कि हम सचमुच स्वतंत्र और आत्मसम्मानपूर्ण राष्ट्र की तरह जीना चाहते हैं या एक उद्धत साम्राज्यवादी देश के पीछे पीछे उसकी दुम बन कर हिलना।

पूरे संसार में नव-उपनिवेशवाद (डालर-साम्राज्यवाद वगैरह) से बचने के लिए एक आन्दोलन चल रहा है। सर्वोदय आन्दोलन अपने को संसारव्यापी आन्दोलन का यदि एक अंग मानकर चले तो इसकी ताकत भी बढ़ेगी और सत्य की स्पष्टता भी। (मूल अंग्रेजी से)

चाहिए और भारत की नीति का समर्थन करना चाहिए।

शंका—पाकिस्तान अखंड न रहा तो भारत के मुसलमानों का सहारा चला जायेगा। फिर उन्हें कौन बचायेगा? इसलिए सशस्त्र पाकिस्तान भारत के मुसलमानों के जानमाल के लिए आवश्यक गारंटी है।

समाधान—भारत के मुसलमानों को पाकिस्तान ने नहीं, भारत सरकार की, गांधी-नेहरू की, सेक्यूलर नीति ने, गांधी की शहादत ने, अनेक उदार नेताओं के निष्पक्ष रुख ने एवं सर्वोदय-आन्दोलन की न्यायपूर्ण नीति ने बचाया है। सर्वोदय का अंग शांतिसेना ने उनकी सेवा की है, और नफरत की आग को बढ़ने से रोका है। शांति सैनिकों की सेवा के कारण मुसलमानों के दुःख एवं उनके खिलाफ षड्यंत्र हमें मालूम हुए हैं। लेकिन इतिहास में एक भी उदाहरण नहीं है जब पाकिस्तान के कारण भारत के मुसलमानों के जानमाल की हानि रुकी है। इधर सरकार की कड़ी कार्रवाई से या शांतिसेना की निगरानी से वह रुकी है, इसके उदाहरण मौजूद हैं। ये सब नीतियाँ कायम रहेंगी, पाकिस्तान अखंड रहे या न रहे। बल्कि बंगला देश सरीखा साढ़े सात करोड़ जनसंख्यावाला मुस्लिम बहुल राष्ट्र यदि भारत का पड़ोसी बनता है तो उनसे मुसलमानों के जानमाल की रक्षा बढ़ेगी ही क्योंकि वह राष्ट्र भी सेक्यूलर एवं लोकतांत्रिक होगा। स्वतंत्र बंगला देश के पड़ोसी मित्र राष्ट्र के रूप में होने से भारत में जो थोड़ी बहुत हिन्दू सांप्रदायिकता है उसकी ताकत घटेगी। अतः मुसलमानों को अपने सीमित स्वार्थ को ख्याल में रखकर भी बंगला देश का ही समर्थन करना चाहिए। और बंगला देश को समर्थन देने की भारत के सब लोगों की आकांक्षा के साथ समरस होकर देश-प्रेम व्यक्त करना चाहिए।

शंका—बंगला देश के बिहारियों पर अवामी लीगवालों ने हमले शुरू किये और उनकी हत्याएँ कीं। उन्हें बचाने के लिये याहिया को दमन का सहारा लेना पड़ा। इसलिये याहिया को समर्थन यानी शांति को समर्थन है।

समाधान—बिहारियों की हत्याएँ हुईं, यह गलत हुआ। लेकिन ये कब हुईं? मार्च २५ के पूर्व यानी याहिया खाँ के मिलिटरी द्वारा आक्रमण के पूर्व होतीं तब अवामी लीग जिम्मेवार मानी जा सकती थी। उस समय अनेक देशों के विदेशी पत्रकार पूर्व बंगाल में मौजूद थे। पाकिस्तान के या दुनिया के अखबारों में २५ मार्च के पूर्व ऐसी हत्याओं का कोई जिक्र नहीं है। अतः ये हत्याएँ २५ मार्च के बाद हुई हैं। उस समय तो मुजीब के समर्थक पाकिस्तानी लश्कर की गोली के शिकार हो चुके थे या भारत भाग आये थे या अपने जानमाल को बचाने की फिक्र में थे। जो लोग स्वतंत्रता की लड़ाई लड़ रहे थे, उन्होंने, किसी भी बंगाल के साथ एकमत न होनेवालों को, एवं पाकिस्तानी लश्कर का अवामी लीग समर्थकों का पता बतानेवालों को देशद्रोही समझकर मारा हो तो आश्चर्य नहीं। उसकी प्राथमिक जिम्मेवारी याहिया खाँ पर एवं स्वयं बिहारियों के कृत्यों पर है। इसमें अवामी लीग का क्या दोष? भारत में आज भी पाँच-छह करोड़ मुसलमान हैं इसका हमें गर्व है। पश्चिम पाकिस्तान से इसके पूर्व ही हिन्दू भगा दिये गये थे। अब पूर्व बंगाल से भी ज्यादातर हिन्दू भगा दिये गये हैं या मार डाले गये हैं। क्या यही शान्ति का समर्थन है? इससे यहाँ के मुसलमानों के लिए सबसे बड़ा खतरा याहिया खाँ ने पैदा किया है और भारतीय मुसलमानों के साथ शत्रुता की है।

शंका—बंगला देश का समर्थन यानी देश को टुकड़े करनेवाले का समर्थन है। कश्मीर को भारत स्वतंत्रता क्यों नहीं देता? मान लीजिये मुजीब की तरह स्वतंत्र देश की माँग भारत में भी कोई करे तो भारत का एवं सर्वोदय का रुख क्या रहेगा?

समाधान—बंगला देश का समर्थन यानी स्वतंत्रता एवं लोकतंत्र का समर्थन है। पाकिस्तान में आरम्भ में पाँच-छह साल आंशिक लोकतंत्र था। बाद में वह भी नहीं रहा। दिसम्बर '७० में चुनाव हुए। उनके परिणामों को फौजी शासन कुचल रहा है। अतः देश के टुकड़े करने का दायित्व मुजीब पर नहीं, याहिया खाँ पर है। मुजीब ने ६ माँगें रखी थीं। उन पर उनका दल चुनकर आया था। शोषण के खिलाफ स्वायत्तता की ये माँगें थीं। बातचीत चल रही थी। याहिया खाँ ने २५ मार्च को फौजी आक्रमण कर मुजीब के समर्थकों को बंगला देश की स्वतंत्रता घोषित करने के लिए मजबूर किया। अतः पाकिस्तान का द्रोही याहिया है। किसी भी राज्य का शोषण भारत ने कभी नहीं किया। कश्मीर का भी नहीं। कश्मीर के मामले में सर्वोदय-आन्दोलन एवं उसके नेता श्री जयप्रकाश नारायण ने उसकी जायज माँगों का हमेशा समर्थन किया है। भारत में जनतंत्र है, अतः किसी भी राज्य की जायज माँग भारत के लोकतंत्र में मानी जायगी, और सर्वोदय उसका हमेशा समर्थन करेगा। यदि याहिया सरीखा कोई तानाशाह भारत में लोकतंत्र का अपहरण कर सत्ता अपने हाथ में ले ले तो जनता उसके खिलाफ बगावत करेगी और वह जायज होगा। बंगला देश में यही हो रहा है। पश्चिम पाकिस्तान में भी यह होगा तो वह मुनासिब ही होगी। आज कई राज्यों की माँग है कि राज्य को अधिक आर्थिक अधिकार दिये जाँय। सर्वोदय उसका समर्थन करता है। इतना ही नहीं, एक कदम आगे जाकर वह गाँवों को अधिक अधिकार देने की यानी ग्रामस्वराज्य की माँग करता है। यदि किसी राज्य को भारत सरकार कुचले तो सर्वोदय अपनी आवाज उसके खिलाफ उठायेगा। तामिलनाडु के द्रविड़ मुन्नेत्र कजगम ने पहले भारत से अलग होने की माँग की थी। लेकिन केन्द्र सरकार द्वारा दबाने जाने का उनका भ्रम बाद में दूर हुआ और उन्होंने संविधान में परिवर्तन कर भारत से अलग होने की बात छोड़ दी। लोकतन्त्र में भारत में हमेशा संघर्ष चले हैं—कैसे अलग

बंगला देश के भीतर

—बिल एलिस

(यह निबन्ध एक टेप से लिया गया है जो जून में बंगला देश से आया है। इसे एक अमेरिकन इन्जीनियर बिल एलिस ने रेकर्ड किया था, जो उस समय 'पूर्व पाकिस्तान वाटर एंड पावर डेवलपमेंट अथारिटी' के कार्यकर्ता थे। यह जो कुछ बता रहे हैं उसे उन्होंने मई के महीने में देखा था जब वह बाढ़ पर काबू पाने के लिए गांवों में भेजे गये थे। वह बंगला देश से पत्र नहीं भेज सकते थे इसलिए उन्होंने अपने अनुभवों को टेप कर लिया जो मित्रों द्वारा तेहरान के रास्ते चोरी से यूरोप लाया गया। बिल अब पाकिस्तान छोड़ चुके हैं इसलिए उनके अनुभव प्रकाशित किये जा रहे हैं।)

कल मैं क्षेत्र में हफ्ता भर घूमकर लौटा। यह प्रवास इसलिए अनिवार्य हो गया था कि क्षेत्र से जो सूचनाएँ मिल रही थीं वे काफी नहीं थीं। टेलीफोन पर पूरी बात नहीं हो पाती थी, और क्षेत्र के लोगों से बात करने से यह पता लगता था कि वे टेलीफोन पर खुलकर बात करना नहीं चाहते थे। इसलिए मैंने फैसला किया कि स्वयं जाकर देखना चाहिए कि ढाका से बाहर जहाँ संघर्ष हो रहा है वहाँ क्या स्थिति है। मेरा एक उद्देश्य यह भी था कि देखा जाय कि बारीसाल में, जहाँ तक हमारे प्रोजक्ट का सम्बन्ध है, क्या हो रहा है। यह भी देखना था कि क्या हम अपने एक डीजल बोट का जिसमें कुछ दोष है, पानी में उतार सकते हैं।

जिस बारीसाल में हमारी नाव बंधी हुई थी वह 'सेक्यूरिटी' एरिया है वहाँ मुझे जाने की आज्ञा नहीं मिली। मैंने इन्चार्ज को लिखा बताया कि मैं इन्स्पेक्टर की आज्ञा पाने के बाद ही आ सकूँगा, उसने उतनी ही असमर्थता प्रकट की। इसलिए मैंने फैसला किया कि मैं स्वयं जाकर देखूँगा। जैसे ही मैं नीचे उतरा वैसे ही मैंने महसूस किया कि वे क्यों मुझे वहाँ नहीं जाने देना चाहते थे। पिछले कुछ हफ्ताह से वे प्रतिदिन १० से २० लोगों को मार रहे थे। यह मुझे उन लोगों से मालूम हुआ जो उस क्षेत्र में रहते हैं। रोज तीसरे पहर ४ बजे १० से २० गोलियों के चलने की आवाज आती थी, और फिर बन्दरगाह में लाशों के शरीर तैरते नजर आते थे। मुझे विश्वसनीय लोगों से यह मालूम हुआ कि पिछले सप्ताह से यह कार्रवाई बन्द है। अब इस बात पर परदा डालने के लिए वे लोगों को गांवों में ले-ले जाकर मार रहे हैं।

मुझे उस क्षेत्र के लोगों से पूछताछ करने से मालूम हुआ कि अब सैनिक कार्रवाई ने नया रूप ले लिया है। सेना नगरों में कब्जा करने के बाद गांव में घुस रही है, और खास-खास हिन्दुओं की तलाश कर रही है। इसलिए अब हिन्दू बड़ी संख्या में घर छोड़कर भाग रहे हैं।

ग्रामीण क्षेत्र में हर घर में १५ से २० आदमी रह रहे हैं, जब कि घरों में खाना घरवालों के लिए भी काफी नहीं है। खुलना में चावल का दाम ६० रुपये सेर हो गया है। कुछ गांवों में तो १०० रुपये सेर तक है। यह एक दिलचस्प बात है कि पुरानी सांप्रदायिक दुश्मनी खत्म हो गयी है और बहुत सारे मुसलमानों ने हिन्दुओं को शरण दे रखा है। वे इस बात का पूरा ध्यान रख रहे हैं कि सेना को इसका पता न चल सके। बारीसाल के एक गांव में जब सेना पहुँची तो उसने गांव के प्रधान से पूछा कि हिन्दू कहाँ हैं? जब उसने नहीं बताया तो सेना ने उसे शूट कर दिया और आग लगा दी।

दिन के समय बारीसाल में सन्नाटा रहता है। अखबारों में गवर्नर के मार्शल लॉ की ओर से मजदूरों को काम पर वापस आने की बात कही रहती है। सेना की ओर से सरकारी नौकरों को काम पर आने का आदेश रहता है; न आने की सूरत में बड़ी सजा देने की धमकी रहती है। परन्तु हर कोई यह बात जानता है कि जो कोई काम पर जाता है उसे गोली से उड़ा दिया जाता है। एक हिन्दू, जो जज थे, और बड़े प्रतिष्ठित थे, बीस वर्षों से बारीसाल में रहते आये थे, उन्होंने सोचा, 'यह हमारा देश है। मैं यहाँ इतने दिनों से रह रहा हूँ। मैंने कोई गलती नहीं की है। मुझे काम पर वापस जाना चाहिए।' वह बारीसाल वापस आये। दूसरे ही दिन वह और उनका लड़का, दोनों घर के बाहर बुलाये गये, और बरामदे में शूट कर दिए गये। दूसरे एक आदमी, जो सरकारी अधिकारी थे, सेना की बात मानकर काम पर गये। वह हिन्दू थे। दूसरे दिन उनको और उनके परिवारवालों को गोली मार दी गयी।

इस क्षेत्र में लोगों को इस प्रकार से मारा जा रहा है जिस तरह जानवरों का शिकार किया जाता है। उनके भागने के लिए दक्षिण दिशा में समुद्र के सिवाय दूसरी कोई जगह नहीं है, और जब वे भागते हैं तो समुद्र और आगे बढ़ती हुई सेना के बीच घिर जाते हैं।

बारीसाल से हम खुलना की ओर रवाना हुए। रास्ते में नदी में एक भी नाव नहीं मिली और रास्ते में मुश्किल से ही दस-बारह आदमी काम करते नजर आये। कुछ मछली पकड़ते हुए नजर आये। घाटों पर भी कम आदमी थे। नदी में कई स्थान पर लाशें तैरती दिखाई दीं। हम शाम को लगभग ७ बजे निकले थे। ढाई घंटे बाद हम खुलना के रास्ते में पहुँच गये। हमने एक के बाद दूसरे गांव को जलते देखा। कोई भी गांव ऐसा नहीं था। कभी अगर दूर एक सिपाही नहीं देखा था, लेकिन आसमान में धुआँ और जलते गांवों को स्पष्ट दिखाई दे रहे थे। बीच-बीच में जहाज की सर्चलाइट में नदी में लाशें तिर कर नदी में तैरते हुए दिखाई दे जाते थे। जहाज

के एक आदमी ने बताया कि पिछले दो हफ्तों से गाँवों का जलाया जाना इसी तरह चल रहा है।

दूसरे दिन सुबह ६ बजे हम खुलना पहुँचे। चारों ओर लूट हो रही थी और आग लगायी जा रही थी। खुलना में १०-२० लोगों को रोज खुलेआम छुरे से काट दिया जाता है। मेरे रहते-रहते एक आदमी और उसके लड़के को छुरा भोंका गया। गाँव में हाल यह है कि जब सेना पहुँचती है तो मुसलमान लोग, और वे लोग जो राजनैतिक तौर पर असन्तुष्ट हैं, अवामी लीगवालों और हिन्दुओं का पता बता देते हैं। फिर सेना उन्हें खतम कर देती है। बाद में इन भेदियों को नक्सलवादी या दूसरे आकर मार डालते हैं। तब फिर सेना आती है और पूरे गाँव का सफाया कर देती है। खुलना से दक्षिण का क्षेत्र हिन्दू-प्रधान है, और लोगों ने मुझे बताया कि वह क्षेत्र वीरान कर दिया गया है। कोई वहाँ रह नहीं गया है। लोगों ने मुझे यह भी बताया कि अगली फसल में केवल १० प्रतिशत खेत जोता जा सकेगा, क्योंकि केवल १० प्रतिशत आबादी बच गयी है। और यह वह क्षेत्र है जो पिछले नवम्बर माह के तूफान से प्रभावित नहीं हुआ है। अगले साल अगर सब कुछ ठीक हो गया तो भी वे सोचते हैं कि क्या उन्हें किसी भी काम के लिए मजदूर मिल सकेंगे।

अब मैं ढाका वापस आ गया हूँ। यहाँ की परिस्थिति एक नया मोड़ ले रही है। सेना ने नगरों पर पूरा कब्जा कर लिया है, यातायात पर भी उसका कब्जा है। अब वह ढूँढ़-ढूँढ़ कर हिन्दुओं का सफाया कर रही है। सेना और सरकार के लोग अपने ही प्रचार के कारण मानने लगे हैं कि हर पेड़ के पीछे घुस-पैठ करने वाला एक भारतीय खड़ा है। हर हिन्दू सन्देह की नजर से देखा जाता है। जिन सरकारी कर्मचारियों के बीच मैं काम कर रहा हूँ, वे निराश और भयभीत हैं। कोई ऐसा परिवार नहीं है, जो प्रभावित नहीं हुआ हो, जिसके लोग मारे न गये हों, या जिनकी लड़कियाँ भगायी न गयी हों। इसके कारण आम लोगों में सरकार का कोई समर्थन नहीं है। हर आदमी, यहाँ तक कि चपरासी भी यह जानता है कि पाकिस्तानी अखबारों में जो छप रहा है वह झूठ है।

एक बात जो मुझे शिक्षित से लेकर अदद चपरासी तक हर वर्ग के बंगाली ने कही वह है कि आप अपने देश को किसी प्रकार की सहायता न भेजने दें, खाना भी नहीं। खाना केवल सेना को मिलेगा और हमारी पीड़ा बढ़ेगी। कुछ लोगों ने मुझे बताया कि वे भूखे मरना पसन्द करेंगे, किन्तु इस हालत में जीवित रहना नहीं। ●

कीसिंगर-कथा

कीसिंगर साईगान, थाईलैंड, भारत होते हुए पाकिस्तान पहुँचे। ८ जुलाई को तीसरे पहर कीसिंगर इस्लामाबाद पहुँचे। याहिया खाँ से ९० मिनट तक उनकी बातचीत हुई। उसके बाद ऐलान किया गया कि वे आराम करने नथिया गली जा रहे हैं। उसके बाद कीसिंगर को ६४ घंटे तक किसी ने कहीं पाकिस्तान में नहीं देखा। पत्रकारों ने अंदाज लगाया कि वह किसी पूर्व पाकिस्तानी से मिल रहे होंगे। ९ जुलाई को पाकिस्तानी सरकार ने ऐलान किया कि कीसिंगर नथिया गली में एक दिन और ठहरेंगे, क्योंकि उनका पेट खराब हो गया है।

पूर्व पाकिस्तान या पहाड़ों में जाने के बजाय, कीसिंगर को इस्लामाबाद से ७ मील दूर रावलपिंडी हवाई अड्डे पर ले जाया गया। वहाँ वह पेकिंग के लिए पाकिस्तान इण्टरनेशनल एयरलाइन्स बोइंग ७०७ से रवाना हुए। वायुयान के चलानेवाले भी नहीं जानते थे कि वह किसे लिए जा रहे हैं। उन्होंने सोचा होगा कि कोई अंग्रेज सौदागर जा रहा है। एक पाकिस्तानी वायुयान का पेकिंग जाना कोई बड़ी बात नहीं थी। कीसिंगर के साथ तीन सहायक थे जॉन होल्डरिज, जो सुदूर पूर्व की समस्याओं के विशेषज्ञ हैं और चीनी बोलते हैं, विंस्टन लार्ड, एक विशेष निजी और रेयर्ड स्मीसिर, जो दक्षिणी-पूर्वी एशिया के विशेषज्ञ और विदेश विभाग के कर्मचारी हैं। कीसिंगर के स्टाफ के बाकी दूसरे लोग रावलपिंडी में रह गये। उन्हें भी कुछ पता न था कि कीसिंगर कहाँ गये हैं।

९ जुलाई की दोपहर में कीसिंगर पेकिंग के बाहर एक उजड़े हवाई अड्डे पर उतरे। उन्हें मार्शल यह ची येन इंग और दो विदेश विभाग के कर्मचारियों ने स्वागतम् कहा। पास ही दुभाषिया हुआ भी थे, जो अमेरिकी मामलों के विशेषज्ञ और कनाडा में राजदूत हैं। कीसिंगर की यात्रा के कारण उन्होंने ओटावा (कनाडा) जाना स्थगित कर रखा था। कीसिंगर को पेकिंग से बाहर झील के किनारे एक सुन्दर इमारत में ठहराया गया। चार बजे शाम में चाऊ-एन-लाई पहुँचे, गम्भीर बातचीत शुरू हुई। चाऊ-एन-लाई और कीसिंगर आमने-सामने बैठे। भोजन के समय और फिर रात में बहुत देर तक बातें होती रहीं। कीसिंगर अपने साथ निक्सन, रोजर्स, और अपने द्वारा तैयार किये हुए वक्तव्य की मोटी पोथी लाये थे। इस वार्ता का पहले से तैयार किया हुआ कोई एजेंडा नहीं था। वार्ता जिन विषयों पर हुई उनमें से एक राष्ट्रपति का पेकिंग आना भी था। वार्ता के समय दो दुभाषिये भी उपस्थित थे, एक अमेरिकी और दूसरा चीनी, जिनकी हावर्ड में शिक्षा हुई थी। ये दोनों चाऊ के लिए अनुवाद कर रहे थे। चाऊ बड़ी अच्छी अंग्रेजी आसानी से बोलते हैं, उन्होंने एक आध बार दुभाषिये के अनुवाद को दुरुस्त किया। उन्होंने अनुवाद का प्रबन्ध केवल समय लेने के लिए किया था। ताकि वह अपना उत्तर तैयार कर सकें। उन्होंने →

बिहार में सर्वोदय-आन्दोलन

[पिछले दिनों श्री ठाकुर दास बंग और श्रीमती सुमन बंग ने बिहार में १६ दिन का दौरा किया। इस दौरे में भूदान-ग्रामदान के सघन-क्षेत्रों का उन्होंने अध्ययन किया। प्रस्तुत है श्रीमती सुमन बंग की लेखनी से बिहार-प्रवास के उनके अनुभव। —सं०]

स्नेह-सम्मेलन

यंत्रयुग है यह ! यंत्र में घर्षण टालने के लिए स्नेह की आवश्यकता होती है। स्नेह के कारण बिना आवाज किये यंत्र ठीक से चलता है, ज्यादा दिन चलता है। मानव मन को भी ठीक से चलने के लिए स्नेह की आवश्यकता होती है। बिना स्नेह के आदमी जिंदा नहीं रह सकता। साथ काम करते हैं तो कई बार किसी-न-किसी सही या गलत कारण से आपस में मत-मुटाव पैदा हो जाता है। पर स्नेह मिलने से फिर मन साफ हो जाता है। स्नेह का रज्जू मजबूत बनाने के लिए बीच-बीच में मिलना, दिल खोलकर मुक्त मन से बातें करना आवश्यक होता है। बिहार के प्रमुख साथी ता० १३ से १५ जुलाई तक हजारीबाग जिले में पारसनाथ के पास मधुबन में स्नेह-मिलन के लिए इकट्ठे हुए थे। पूरे बिहार से चालीस-पचास साथी आये थे। प्रकृति ने असीम स्नेह बरसाया है इस स्थान पर। जैनियों का यह तीर्थस्थान है। पार्श्वनाथ भगवान का मंदिर है यहाँ।

अपने मन में जिसके बारे में जो लगता था उसे हरेक ने दिल खोलकर रखा। तरीका रखने का किसी का सीधा था तो किसी का 'शुगर कोटेड'। कुछ गलत-फहमियाँ, कुछ पूर्वग्रह, कुछ नासमझी हटने, मन का गुबार निकलने, मन हलका होने पर उसमें स्नेह भरने का कुछ काम भी हुआ। बिहार के साथियों में कितनी प्रचंड शक्ति है इसका दर्शन हुआ। बौद्धिक दृष्टि से इतने समर्थ साथी शायद ही किसी एक प्रदेश में होंगे। श्रद्धा और बुद्धि का सुन्दर संगम इन साथियों में मैंने पाया। विनोबाजी ने क्यों बिहार को अपनी प्रयोगशाला बनायी है, इसका प्रमुख कारण प्रत्यक्ष देखने से अधिक स्पष्टता से ध्यान में आया, मधुबन का स्नेह-मिलन सफल होता है, और ये सब साथी एक दिल से जुट जाते हैं, तो बिहार में चमत्कार हो सकता है, इसमें कोई शक नहीं। पर इसके लिए आवश्यकता है परस्पर स्नेह की, विश्वास की और काम में सातत्य से जुटने की।

आज नहीं तो कल इसी दिशा में जाना है

गया जिले में अन्त्योदय की दिशा में चलनेवाला एक काम यानी वहाँ का विद्यालय। जिन भूमिहीनों को भूदान की जमीन मिली है उनके तथा अन्य भुइयाँ जाति के सौ बच्चे इस विद्यालय में पढ़ते हैं। नयी तालीम का प्रयोग चल रहा है यहाँ। एक पैसे की सरकारी मदद नहीं ली जाती है, न किसी प्रकार का प्रमाण-पत्र यहाँ दिया जाता है। देश में ऐसे बहुत कम विद्यालय होंगे, जहाँ नौकरी के लिए नहीं, जीवन के लिए शिक्षण दिया जाता है। शायद ही कोई विद्यालय भारत में ऐसा होगा जिसने अपने को किसी बोर्ड या यूनिवर्सिटी से न जोड़ा हो, या सरकार के सामने मदद के लिए हाथ न फैलाया हो। स्थानीय तथा राष्ट्र की समस्याओं को सुलझाने की सामर्थ्य और आत्मविश्वास रखनेवाले उत्तम चारित्र्यवान नागरिक, नया मानव, नयी संस्कृति निर्माण करने का काम यहाँ चल रहा है। समाज ने जिनकी सिर्फ उपेक्षा ही नहीं की बल्कि जिन्हें पैरों तले कुचल डाला, ऐसे पददलित समाज को ऊँचा उठाने का, अन्त्योदय का, सर्वोदय का, यहाँ काम चल रहा है। गांधी, विनोबा, जय-प्रकाशजी का विद्यालय तथा शिक्षण के बारे में जो सपना है—"नौकरी के लिए नहीं, जीवन के लिए शिक्षा" उसे यहाँ साकार करने का प्रयत्न द्वारको भाई तथा उनके साथी कर रहे हैं। इसी राह पर भारत को ही नहीं दुनिया को भी चलना होगा, आज नहीं तो कल।

समाज के निर्माण में लगे तरुण युवक

आज का युवक कुछ करना नहीं चाहता है सिवाय विध्वंस के, ऐसा कहने-वाले जरा चलें उन चार नवजवानों के पास, जो अभी-अभी विश्वविद्यालय की इंजीनीयरिंग की पढ़ाई पूरी करके निकले हैं। गणेश, गिरिजा एवं उनके दो साथी जिन कठिनाइयों में ग्रामसेवा का काम कर रहे हैं वह स्पृहणीय है। पहाड़ी इलाका, रात में जहाँ शेर आकर दूध पीते बच्चों को धीरे से माताओं की गोद में से उठा ले जाता है, ऐसी पहाड़ी की गोद में ये साथी रहते हैं। निवास के लिए मकान बनाने का काम चल रहा है। मकान में न दरवाजे हैं, न सोने के लिए चारपाई। ऐसी स्थिति में भाई सतीश अपनी पत्नी और एक साल के बच्चे को

→बिना अपना नोट देखे एक बार भी उत्तर नहीं दिया।

१९ जुलाई को, कीसिंगर और उनकी पार्टी को पेकिंग की सैर करायी गयी। उस दोपहर को चाऊ के साथ उन लोगों की वार्ता पेकिंग के 'ग्रेट हाल ऑफ दी पीपुल' में हुई जो पहले की बैठक की तरह ८ घंटे चली। वार्ता में चीनी बहुत ही नम्र रहे। बातचीत साफ-साफ हुई। फिर अमेरिकियों और चीनियों ने मिलकर सरकारी विज्ञप्ति तैयार की। रविवार को अन्तिम बैठक हुई और विदाई-भोज हुआ। अमेरीकी एक बजे रवाना हुए। कीसिंगर के चेहरे से उनकी सफलता झलक रही थी। जब वह पेकिंग से लौटे तो गौर से देखनेवाला यह देख सकता था कि जो आदमी 'पेट का रोगी' था, उसका वजन ५ पौण्ड बढ़ गया था! ●

ले आये हैं। ये चारों युवक बड़ी मेहनत करते हैं। उमड़ता हुआ उत्साह और ध्येय-वाद की गरमी के कारण हँसते-हँसते ये सारे कष्ट सहते हैं। जहाँ मानव-मानव के नाते और इज्जत के साथ जिया रह सके, ऐसी नयी दुनिया ये बनाना चाहते हैं।

अब भी यह सब चल रहा है

"मुझसे जबरदस्ती दो सौ रुपये के कागज पर जमींदार ने अंगूठा लगवाया। मेरी पत्नी को पीटा। मैं अंगूठा नहीं दे रहा था तो जान से हाथ धोना पड़ेगा—ऐसा धमकाया गया। मेरा बैल भी जबरन ले गये। मैं क्या करता?"

"यह सारा अत्याचार क्यों किया जमींदारों ने? क्या तुमने कर्ज लिया था उनसे?"

"नहीं भाई, मेरे पिता उनके 'जन' (स्थायी मजदूर) थे। उनके मरने के बाद मैं वह काम करूँ ऐसा मालिक का कहना था। मुझे भूदान की जमीन मिली है, अतः मैंने वह मंजूर नहीं किया। उसके बदले में मुझसे मालिक २०० रु० मांगने लगे। नहीं देने पर यह सारा हुआ।"

द्वारको भाई सरीखे आप्त, तत्पर और समर्थ सेवक के सेवा-क्षेत्र में भी जमींदार इतनी हिम्मत कर सकता है। लोकतन्त्र में यह कैसा खिलवाड़ हो रहा है? और गाँव भी कैसा मुर्दा! इस तरह के अत्याचार सहता चला जा रहा है। "क्यों नहीं संगठित होकर प्रतीकार करते हो?" पूछने पर गाँववालों ने जवाब दिया—"सरकार उनकी है, पुलिस उनके पास है हमारी कौन सुनता? हम सारे कुचल दिये जाते।"

पुष्टि की दिशा में गया जिला

बिहार के हर जिले में इस ही प्रकार से सैकड़ों एकड़ का भूदान मिला हुआ है। देश भर में ऐसा बहुत कम क्षेत्रों में होगा। ५००, १०००, २२०० एकड़ का एक एक चक। गया जिले में, विशेषतः बाराचट्टी थाने में और बौआकोल विकासखंड में काम हो रहा है। बाराचट्टी थाने में द्वारको भाई ने अपना ध्यान भूदान में बँटी जमीन के विकास पर केन्द्रित किया है। आक्सफेम से काफी मदद इसके लिए उन्हें मिली है।

सोखोदेवरा आश्रम की ओर से बौआकोल प्रखंड में ग्रामदानोत्तर कार्य चल रहा है। श्री त्रिपुरारी शरण मार्ग-दर्शन करते हैं। १५-२० कार्यकर्ताओं की अच्छी टीम यहाँ तैयार हुई है। पुष्टि-कार्य में चार पद्धतियाँ यहाँ अपनायी गयी हैं—

१. निर्माण काम द्वारा पुष्टि,

२. ग्रामसभा बनाकर बाद में बीघा-कट्ठा निकलवाना,

३ बीघा-कट्ठा निकलवाकर बाद में ग्रामसभा बनाना,

४ ग्रामकोष शुरू करवाकर बाद में ग्रामसभा स्थापित करना।

जहाँ जैसी परिस्थिति हो, लोगों की जैसी मनःस्थिति तथा तैयारी हो, यह देख कर विवेक के साथ काम किया जाता है यह अच्छा है। इस प्रखंड के बीस गाँवों में सघन तथा दस गाँवों में व्यापक काम शुरू है। जिन गाँवों में सघन काम शुरू है, वहाँ के लोगों से निरंतर सम्पर्क रखा जाता है। इस ब्लाक में ग्राम-निर्माण मंडल काम कर रहा है, जिसके अध्यक्ष त्रिपुरारी शरण जी हैं। गया जिले में तरुण-शान्तिसेना का अच्छा काम हो रहा है।

पचबा और पावापुरी गाँवों में हम गये थे। इन दोनों गाँवों में हमने देखा कि नदी, नाले पत्थर पहाड़ तोड़कर, पानी बाँधकर भूदान में मिली बंजर पड़ी भूमि को सुन्दर उपजाऊ बनाने का जोरदार प्रयास यहाँ हो रहा है। धान और मकके की समतल भूमि में लहलहाते पौधे देखकर किसान की छाती गर्व से और आनन्द से फूली नहीं समाती है। कृषि सुधार के साथ-साथ उनके ज्ञान की भी वृद्धि हो, अतः सोखोदेवरा आश्रम में नव-जवान किसानों का एक साल का प्रशिक्षण वर्ग भी चलाया जाता है। ये नवजवान घर आने पर नये ढंग से कृषि करने का प्रयत्न करते हैं। आश्रम की कृषि काफी उन्नत होने से ग्रामीणों के लिए वह एक प्रेरणा-स्थान बना है। प्रत्यक्ष देखने-करने के बाद नवजवान अपनी कृषि बड़े आत्मविश्वास के साथ करते हैं। इन दोनों गाँवों में पाँच गुना उत्पादन-वृद्धि हुई है। ग्रामदान तथा भूदान के कारण जिन भूमि-हीनों को जमीन मिली है, उन्होंने भी चार-पाँच गुना उत्पादन वृद्धि की है। भूदान के कारण भूमि के टुकड़े होते हैं, उत्पादन घटता है, ऐसी दलीलें देनेवाले पंडित जरा यहाँ आकर प्रत्यक्ष अपनी आँखों से तो देखें। सही दृष्टि, ठीक समय पर आवश्यक मदद यदि मिलती है तो अनपढ़ कहलानेवाले हमारे ये किसान हरित क्रान्ति करके दिखा सकते हैं, यह यहाँ देखने को मिला।

बदलता नेतृत्व

आज तक गाँव का नेतृत्व धनिकों के हाथ में था, पर अब हवा ने अपना रुख बदला है। गरीब तथा पिछड़ी जातियों के कई नवजवान जगह-जगह पदाधिकारी बने हैं और बड़े उत्साह और उमंग के साथ अपने गाँव का कारोबार वे चला रहे हैं। बड़े बूढ़ों के आशीर्वाद प्राप्त कर वे आगे बढ़ रहे हैं। इन ग्रामदानी गाँवों में सर्व-सम्मति से चुनाव होता है, अतः दलबन्दी तथा गुटबन्दी का तनाव वहाँ नहीं है। बड़े स्नेह के साथ सब मिलकर कारोबार चलाते हैं। राजनीति में स्वार्थ साधा जाता है, लेकिन ग्रामदान के काम में तो पदाधिकारी बनना यानी त्याग करने की, स्वार्थ में खुद को सबसे अन्त में रखने की, तथा सेवा में सबसे पहले रहने की तैयारी रखनी पड़ती है, यह वे सब जानते हैं। पचबा की ग्रामसभा का अध्यक्ष एक नवजवान है। सरकार से या कहीं से भी गाँव के लिए जो मदद मिलती है, उसके लिए उसका नंबर अंतिम होता है। अपने हाथ में अधिकार होने से उसका गलत उपयोग न करें, इसका उसे सतत भान है।

ग्रामकोष में फसल का चालीसवाँ हिस्सा लोग निकालते हैं लेकिन उनकी बढ़ती हुई आकांक्षाओं की उससे पूर्ति नहीं होती है। अतः ग्रामसभा कुछ बड़े

मुसहरी की डाक

बिना कफन का मुर्दा जले तो जले, पर ग्रामदान होकर रहेगा

२१ जुलाई '७१ को जलालपुर में भी ग्रामसभा का गठन हो गया। जब ९ जून '७० को मुसहरी के सनहा पंचायत में जे० पी० आये थे तब से आज तक एक वर्ष एक महीना पन्द्रह दिन हो गये। इस बीच लगातार इस गाँव में प्रयास होता रहा। कितने उतार-चढ़ाव आये, कितने कठिन और घुमावदार रास्तों से होकर गुजरना पड़ा, यह सब बैठ कर देखने से पता चलता है। १६ दिनों के कैम्प में इस गाँव का शायद ही कोई ऐसा आदमी हो जो जे० पी० के सम्पर्क में न आया हो। गाँव का कदाचित ही कोई प्रमुख किसान हो जिसके दरवाजे पर वह न गये हों। कार्यकर्तागण गाँव के लोगों से एक तरफ मिलकर ग्रामदान का विचार समझाकर वापस आते थे तो दूसरी ओर गाँव में ऐसे विरोधी तत्त्व थे जो तत्काल वहाँ जाकर उन्हें भड़का देते थे। सारा प्रयत्न मिट्टी में मिल जाता था। वे समझाते थे कि ग्रामदान करोगे तो जमीन बेचने का अधिकार खत्म हो जायगा और तब कोई मुसीबत के वक्त कर्ज भी नहीं देगा। गरीब आदमी के घर में शादी-विवाह, जनेऊ और श्राद्ध होना मुश्किल हो जायगा। इस तरह कार्यकर्ताओं और ऐसे विरोधी तत्त्वों के बीच लम्बे अर्से तक संघर्ष चलता रहा और धीरे-धीरे ही सही, गाँव के लोगों का भय और उनकी आशंका मिटती गयी। उत्साह का वातावरण बनने लगा।

एक दिन गाँव के एक बड़े किसान ने एक ग्रामीण युवक को जब यह कहा कि "ग्रामदान करना है तो करो, मगर समझ लो, ऐसा समय भी आ सकता है जब घर में कफन के बिना लाश पड़ी रह जाये।" तब उस युवक ने तपाक के साथ कहा था, "अगर कफन के लिए पैसे नहीं होंगे और कहीं से नहीं मिलेगा तो बिना कफन का मुर्दा जला देंगे पर अब ग्रामदान होकर रहेगा।" गाँव में हस्ताक्षर होना शुरू हो गया। गाँव के लोगों को कर्ज न मिलने, जमीन की बिक्री बन्द हो जाने, जयप्रकाशजी के कार्यकर्ताओं के द्वारा मजदूरों को उकसा कर गाँव की शांति भंग कराने, ग्रामदान में शामिल होनेवाले मजदूरों की झोपड़ी उजाड़ देने, और उनपर मुकदमा चलाने आदि जैसी भय, आतंक और आरोप की बातें कही गयीं। पर लोग समझ चुके थे कि ग्रामदान के बिना जोर-जुल्म का अन्त नहीं हो सकता। आखिर हिम्मत और उत्साह के आगे विरोधियों की एक भी न चली। कार्यकर्ताओं के सातत्य और लगन ने कठिनाई पर विजय पायी और ९ अप्रैल को हस्ताक्षर का काम सम्पन्न हो गया। ११ अप्रैल को जलालपुर के चकरी हिस्से में ग्रामसभा का गठन भी कर दिया गया जिसके अध्यक्ष, श्री ठकुरी महतो, मंत्री, श्री महेश दास तथा कोषाध्यक्ष, श्री महेश्वर राय सर्वसम्मति से चुने गये।

उत्तर प्रदेश आगे बढ़ रहा है

वर्तमान सरकार ने अपने कार्यकाल के थोड़े दिनों में ही :

- चीनी मिलों की बकाया वसूली के लिए कड़ी कार्यवाही की तथा उनके अधिग्रहण की दिशा में कदम उठाये।
- हरिजनों और पिछड़ी जातियों को अनेक सुविधाएँ प्रदान कीं। बेघरों को घर और बेरोजगारों को रोजगार देने के लिए अनेक कार्य किये।
- राजनीतिक पीड़ितों की पेंशन में वृद्धि की।
- बाढ़ की विभीषिका का सामना करने के लिए अनेक कदम उठाये।
- गेहूँ की खरीददारी की ऐसी व्यवस्था की जिससे किसानों को सही दाम मिल सके।

सरकार इस प्रदेश को समाजवाद के रास्ते पर ले जाने के लिए कृत-संकल्प है।

आइये! स्वतंत्रता दिवस के इस राष्ट्रीय पर्व पर हम सब समाजवादी समाज की रचना में सक्रिय रूप से भाग लेने का व्रत लें।

सूचना विभाग, उत्तर प्रदेश द्वारा प्रसारित हवतर-३

सम्पादक
राममूर्ति

वर्ष : १७ सोमवार
अंक : ४७ २३ अगस्त, '७१

पत्रिका विभाग
सर्व सेवा संघ, राजघाट, वाराणसी-१
फोन : ६४३९१ तार : सर्वसेवा

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

चौथी दुनिया

सभी कल्पनाओं को किसी-न-किसी नाम से पुकारने की आवश्यकता पड़ती है। हम आमूल-चूल परिवर्तन चाहते हैं। यह कैसे हो इस पर चर्चा करना चाहते हैं। इस चर्चा को भी जब एक नाम देना ही है तब यह 'चौथी दुनिया' (द फोर्थ वर्ल्ड) नाम किसी भी अन्य नाम के समान उपयुक्त है। हमारी चर्चा का प्रारंभ बिन्दु है संसार की सत्ता के वर्तमान ढांचों की समाप्ति। उनकी समाप्ति हम इसलिए नहीं चाहते कि वे पूंजीवादी, या कम्युनिस्ट या फासिस्ट या कुछ अन्य हैं, पर सिर्फ इसलिए कि वे बहुत बड़े विस्तारवाले हैं।

राज्य-सत्ता के सन्दर्भ में राज्य का बड़ा आकार केन्द्रित अर्थव्यवस्था से और परिवर्तन की गति को तेज करने के अभियान से सम्बन्धित है। हम एक ऐसी चौथी दुनिया की कल्पना करते हैं जिसमें सरकार और अर्थव्यवस्था सचमुच मानवीय अंकुश में हो। ऐसी ईकाइयों का आकार छोटा, सार्थक और मानवीय मापदंड का होता है। ऐसे आकार में अधिकतम निर्णय विकेन्द्रित रूप से होते हैं। उसमें परिवर्तन की गति का नियमन मुनाफा और सत्ता के भूखे अति-अल्प समुदाय के हाथ में नहीं होता। मानव के छोटे समुदाय अपने रोज-ब-रोज की आवश्यकताओं की पूर्ति को ध्यान में रख कर निर्णय करते हैं। उसमें समुदाय के सदस्यों की बुद्धि और प्रतिभा जहाँ तक दौड़ सकती है, दौड़ती है।

हम इस बात का आग्रह रखते हैं कि इन सब बातों में दक्षता का मापदण्ड आर्थिक उत्पादन के छिटपुट आंकड़े न हों। इसका मापदण्ड हो मनुष्य को अधिक अच्छा बनाने के लिए सुचिन्तित सिद्धान्त, जो सिद्धान्त मनुष्य इतिहास में संग्रहित हो।

(पीसमेकर, मार्च अप्रैल, '७१ से)

● पृथ्वीग्रह पर अपने साढ़े तीन अरब पड़ोसियों के नाम
२,२०० वैज्ञानिकों का एक संदेश ●

शिक्षा में क्रान्ति-अभियान

लखनऊ में शिक्षा में क्रान्ति के लिए प्रतीकात्मक उपवास

ग्वालियर

जिला सर्वोदय मण्डल, तरुण-शान्ति-सेना और गांधी शान्ति प्रतिष्ठान के संयुक्त तत्त्वावधान में ९ अगस्त—शहीद-दिवस—के अवसर पर शिक्षा में क्रान्ति विषयक एक संगोष्ठी ग्वालियर नगर के केन्द्रीय स्थल जीवाजी चौक स्थित केन्द्रीय पुस्तकालय के सभा-भवन में आयोजित की गयी।

"शिक्षा के विविध क्षेत्रों में क्रान्ति की महती आवश्यकता है। शिक्षा उद्योग प्रधान हो, जो विद्यार्थी को जीवन में सार्थक बनाये। वह नौकरी के लिए मारा-मारा न फिरे बल्कि उसकी योग्यता और क्षमताओं का समग्र विकास हो। दुनिया के अधिकांश देशों में वहाँ की शिक्षा "जॉब ओरिएण्टेड है।"—सभापति शिक्षा अधिक्षक डा० बी० पी० अर्गल ने अपने विचार व्यक्त करते हुए नगर के अत्यधिक संख्या वाले जे० सी० मिल उच्चतर माध्यमिक विद्यालय को जे० सी० मिल के साथ जोड़ने पर जोर दिया। इसी तरह स्थानीय मध्य भारत खादी संघ के साथ भी एक-दो विद्यालय जोड़े जा सकते हैं।

"छात्र कभी खराब नहीं होते, उनको सही शिक्षा देने का उत्तरदायित्व शिक्षकों और उनके अभिभावकों का है।" इस तथ्य को विविध उदाहरणों सहित नगर के दो प्रबुद्ध छात्र श्री जे० एस० ठाकुर और अक्षय कुमार शर्मा ने रखा। उन्होंने तरुण शान्तिसेना के माध्यम से इस अभियान को सतत आगे बढ़ाने पर भी जोर दिया।

शिक्षक-पालक महासंघ की ओर से श्री बी० के० गोरे और समाज सेवी संस्थाओं की ओर से श्री जगदीश चन्द्र कटियार ने अपने विचार प्रकट किये। डा० कृष्णशरण श्रीवास्तव, सम्पादक शिक्षा-दर्शन, ने अभिभावकों की ओर से आयोजन की सराहना की, और हर तरह का सहयोग देने का आश्वासन दिया। सभा की अध्यक्षता श्री राधारमन दुबे ने की। इस अवसर पर आचार्यकुल के गठन हेतु प्रो० गुरुशरण के संयोजकत्व में एक तदर्थ समिति श्री वेद प्रकाश सक्सेना, श्री बी० के० गोरे और डा० कृष्णशरण श्रीवास्तव की बनायी गयी। कार्यक्रम का संयोजन एवं संचालन प्रो० गुरुशरण ने किया। उन्होंने अन्त में सभी उपस्थित सज्जनों के प्रति उनके सहयोग के लिए आभार प्रकट किया।

बीकानेर

बीकानेर में ९ अगस्त को तरुण-शान्तिसेना के आव्हान पर शिक्षा प्रणाली में आमूल परिवर्तन के लिए शिक्षा में क्रान्ति-अभियान-दिवस मनाया गया। इस अवसर पर एक मौन जुलूस निकाला गया। शिक्षा में क्रान्ति सम्बन्धी कई पोस्टर जुलूस में काम में लाये गये। नगर के विभिन्न मोहल्लों में घूमता हुआ जुलूस रतन बिहारी पार्क में (जहाँ से रवाना हुआ था) वापस आकर नागरिक-सम्मेलन के रूप में परिवर्तित हो गया।
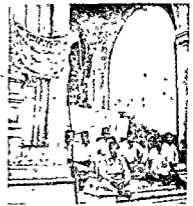
इस नागरिक-सम्मेलन में शिक्षा और क्रान्ति पर प्रकाश डाला गया। ग्राम-स्वराज्य एवं नगरस्वराज्य समितियों की ओर से हस्ताक्षर अभियान भी चलाया गया।

बम्बई

प्राप्त सूचनाओं के अनुसार बम्बई के जुलूस में करीब ३०० लोगों ने भाग लिया। जुलूस के सभा के रूप में परिणित हो जाने के बाद आ० भा० शान्तिसेना मण्डल के मंत्री श्री नारायण देसाई ने शिक्षा में क्रान्ति विषयक प्रेरक भाषण दिया। ●

शिक्षा में क्रान्ति के लिए प्रदर्शन : राजधानी (उ० प्र०) की जनता के समक्ष

एक शांतिवादी पत्र का बंगाली जनता के नाम संदेश और हमारा निवेदन

"हमारे कुछ बंगाली मित्र यह नहीं समझ पाते हैं कि हम बंगला देश के आन्दोलन का समर्थन करते हैं, फिर भी वहाँ की जनता के सशस्त्र विरोध का समर्थन नहीं करते हैं। वे हृदय से मानते हैं कि बंगला देश सशस्त्र संघर्ष के द्वारा ही मुक्ति पा सकता है। एक स्वतंत्र बंगला देश की कल्पना मुक्ति फौज के समर्थन से अलग किस प्रकार की जा सकती है?

"अगर हमारी नीति मुक्ति के लिए किये गये संघर्षों से अलग रहने की है तो वह सिर्फ इसलिए नहीं कि नैतिक दृष्टि से हम मनुष्य को मारना गलत समझते हैं। इतिहास में इस बात के उदाहरण भरे पड़े हैं कि हिंसा की क्रान्ति लोगों के जीवन में खास परिवर्तन नहीं लाती। सैनिकवाद, केन्द्रवाद और श्रेणीवाद, हिंसक क्रांति के अनिवार्य अंग हैं। हिंसक संघर्ष का चरित्र ही ऐसा होता है कि ये चीजें पैदा हो ही जाती हैं। लेकिन इन चीजों का स्वतंत्रता और समता के समाज के साथ मेल नहीं बैठता।

"आम तौर पर मुक्ति के संग्राम से एक ही उद्देश्य प्राप्त होता है, एक सत्ता के स्थान पर दूसरी सत्ता आ जाती है। नयी सत्ता अपने को कायम रखने के लिए सब कुछ करने को उतनी ही तैयार रहती है जितनी पहली सत्ता, और अपनी शक्ति का प्रयोग करने में उतनी ही मनोविकार भी होती है।

"जब पश्चिमी पाकिस्तान ने पूर्वी बंगाल पर आक्रमण किया तो 'पीस न्यूज' ने एक तीन-सूत्री राजनैतिक कार्यक्रम के लिए अन्तरराष्ट्रीय समर्थन और सहायता की माँग की थी

१—पूर्वी बंगाल से पश्चिमी पाकिस्तान की पूरी सेना वापस हो।

२—सर्वेक्षणिक बातचीत शुरू की जाय।

३—पश्चिमी पाकिस्तान की सरकार और संयुक्तराष्ट्र संघ द्वारा पूर्वी बंगाल की जनता का यह अधिकार मान्य किया जाय कि वे अपने निर्णय से अपना राजनैतिक संगठन कर सकें, जिसमें अलग राज्य बनाने का अधिकार शामिल हो।

"यह तीन महीने पहले की बात है। समय बीतने के साथ जानकारों की भयंकर भविष्यवाणियाँ सही साबित हो चुकी हैं। शरणार्थियों की समस्या इतनी बड़ी हो गयी है कि भारत अपनी उदारता के उन्हें आने से रोका नहीं सकता। बंगला देश से सहानुभूति रखनेवाले लोग इस समस्या का कोई समाधान नहीं पाते हैं कि ये लाखों हिन्दू, जो अपने घरों से भाग आये हैं, अपने वतन वापस जायेंगे।

"भविष्य अंधकारमय है, सम्भावनाएँ कई हैं। एक सम्भावना यह भी है कि बंगला देश स्वतंत्र हो, लेकिन मुस्लिम राजनीतिज्ञ अपने नये देश में हिन्दुओं को वापस लेना पसन्द न करें। यह भी सम्भव है कि भारत में साम्प्रदायिक दंगे हों जिससे पूर्वी बंगाल का बदला लेने के लिए मुसलमानों को भारत से भगाना शुरू किया जाय। यह भी हो सकता है कि भारत और पाकिस्तान में युद्ध हो, और पूर्वी बंगाल की सीमा पर हिन्दू शरणार्थियों के लिए एक क्षेत्र कायम किया जाय।

"समय बीतने से इस तीन-सूत्री कार्यक्रम का महत्त्व खतम नहीं हुआ है। इस कार्यक्रम को पूरा करने के लिए हमने, दूसरे बहुत लोगों ने, राजनैतिक दलों और अखबारों ने पश्चिमी पाकिस्तान के आर्थिक बहिष्कार के लिए सरकार पर से अपील की है, ताकि याहिया खाँ और उनके फौजी साथी दुनिया की बात सुनने को मजबूर हों।

"पश्चिमी सरकारों ने हमारे सुझाव को उत्साह के साथ स्वीकार नहीं किया है। पिछले कुछ दिनों में अमेरिका से एक रिपोर्ट आयी है जिसकी घोषणा सीनेटर एडवर्ड केनेडी ने की है। उसे मिस्टर हरीवर्ड बेग ने, जो एजेंसी ऑफ इन्टरनेशनल डेवलपमेंट के हैं, और मिस्टर जोसेफ रयान ने, जो कृषि-विभाग के कार्यकर्ता हैं, ३ जून और २१ जून के बीच बंगला देश के अन्दर व्यापक अध्ययन करके तैयार किया है। उनका कहना है कि अगर पहली अगस्त के पहले तात्कालीन कदम नहीं उठाये गये तो लाखों लोग भूखों मर जायेंगे। जहाँ तक हमें पता है बंगला देश में कोई तात्कालीन कदम नहीं उठाया जा रहा है।

"हर व्यक्ति, जिसे लोगों की पीड़ा से सहानुभूति है, चिन्तित है। वह सोच नहीं पा रहा है कि क्या करे। बंगाली जनता की स्थिति तो और भी कठिन है। लेकिन निराश हो देने से, या हताश होकर मन-मसोसे काम कर बैठने से, तो समस्या का हल नहीं निकलेगा।

"तो, क्या किया जाय? क्या तारिक अली के रास्ते पर चला जाय? उन्होंने लिखा है 'नि:संदेह पुराना समाज नये समाज को जन्म दे रहा है। पूर्वी बंगाल और लंका की परिस्थिति बता रही है कि प्रसव कराने के लिए दाई अधीर हो रही है। कितना अच्छा लगता है यह कहना कि इतिहास ने सब कुछ पहले से तय कर रखा है, इसलिए एक नहीं अनेक वियतनामों का स्वागत है।' (आखिर, वियतनाम में इतिहास अपनी नियति ही तो पूरी कर रहा है!) अगर हम इतिहास के मार्क्सवादी-लेनिनवादी नमूने को मान लें तो पूर्वी पाकिस्तान का नर-संहार एक आशा दिखाने-वाला कांड बनकर रह जाता है।

"भारतीय और चीनी सरकारों का रवैया भी कोई कम गैर-जिम्मेदारी का नहीं है जो परिस्थिति से राजनैतिक लाभ उठाने की कोशिश कर रही हैं।

"हम भी यही मत करें, या बार बार यह कहें और इसके लिए कोशिश करें कि पूर्वी बंगाल से पश्चिमी, पाकिस्तान की

सेना हटायी जाय ? इससे सत्ता की आकांक्षा को धक्का लगेगा, इसलिए यह रास्ता सबसे ज्यादा कठिन है।

"यह रास्ता बन्दूक उठाने से ज्यादा कठिन है; पुलों को उड़ा देने से ज्यादा कठिन है; मुसलमानों को मारनेवाले मुसलमानों को गोली मार देने से ज्यादा कठिन है।

"लेकिन हम बंगालियों से अनुरोध करते हैं कि वे इस विकल्प पर विचार करें—समय रहते विचार कर लें।"

इंगलैण्ड का अंग्रेजी साप्ताहिक 'पीस न्यूज' शांतिवादी है। उसका विश्वास शांति में तो है ही, अहिंसा में भी अटूट है। वह मानता है कि हिंसा किसी के द्वारा की जाय, किसी परिस्थिति में की जाय, गलत है। नैतिक दृष्टि से गलत है, व्यावहारिक दृष्टि से भी गलत है। हिंसा से उन उद्देश्यों की सिद्धि नहीं होती जिनके लिए वह की जाती है। हिंसा की प्रकृति ही ऐसी है कि जब वह एक बंधन से मुक्त करती दिखायी देती है तो अनेक नये बंधनों में जकड़ती जाती है। इतिहास में जो *हिंसक क्रान्तियाँ हुई हैं उनके उदाहरण हमारे सामने हैं।* आज की दुनिया में जो हिंसाएँ हो रही हैं उनकी चेतावनी स्पष्ट है। जिस राज्य की रचना जनता की रक्षा के लिए हुई थी वह स्वयं एक आक्रामक हिंसक संघटन बन गया है। इसलिए बंगला देश की जनता को 'पीस न्यूज' की सलाह है कि साहस करके हिंसक प्रतीकार का रास्ता छोड़ दे।

अवश्य, यह कोशिश होनी चाहिए, और 'पीस न्यूज' यह कोशिश कर रहा है, कि बंगला देश से पाकिस्तानी सेना हटे और उसे अपने भविष्य का निर्णय करने का अधिकार मिले। बंगला देश इससे भिन्न चाहता क्या है ? प्रश्न है यह कैसे हो ?

हम खुद मानते हैं कि अगर बंगला देश की जनता ने अन्याय के प्रतीकार के लिए शुरू से अहिंसा का रास्ता अपनाया होता, उसी के आधार पर अपनी शक्ति संघटित की होती, तो आज बात कुछ दूसरी ही होती। जहाँ लाखों मर रहे हैं, और करोड़ों की जान आतंक और भूख से भयंकर खतरे में है, वहाँ अगर कुछ हजार चुने हुए अहिंसा के सिपाही सीना तान कर ढाका की सड़कों पर निकलते, याहिया की गोलियाँ खाते, गिरते, खाते जाते और गिरते जाते, तो असंभव था कि याहिया के हाथ न रुकते और दुनिया दहल न उठती। जिस जनता ने मुजीब के नेतृत्व में असहयोग और अवज्ञा (नानकोआपरेशन और डिसओबीडिएंस—सिविल नहीं) को इस पूर्णता तक पहुँचाया था वह शहादत को नागरिकों की सामूहिक अहिंसक प्रतीकार-शक्ति के प्रयोग का एक नया सफल नमूना पेश कर सकती थी।

लेकिन, और यह बहुत बड़ी बात है, बंगला देश अपनी ही सेना के ऐसे आक्रमण के लिए तैयार नहीं था। वह जानता नहीं था कि ऐसा जुल्म भी हो सकता था। उसकी सारी तैयारी आन्दोलनात्मक, तनातनी की थी, मरो मारो के युद्ध की नहीं। वहाँ नागरिक शक्ति संघटित थी, न हिंसा की शक्ति संघटित थी, और न अहिंसा की। अगर हिंसा की शक्ति भी संघटित होती तो मुक्ति फौज 'बाँस की सेना' न कही जाती।

आज हम बंगला देश में मुक्ति वाहिनी की ओर से जो कारवाई देख रहे हैं वह जवाब है पाकिस्तानी सेना की हिंसा का। १९४२ में 'भारत छोड़ो' आन्दोलन में भारत की जनता ने जो तोड़-फोड़ किया था उसे गांधीजी ने साफ-साफ अंग्रेजी सरकार द्वारा की गयी हिंसक कारवाई की प्रतिक्रिया माना था, जो बात सही थी।

दुनिया मानती है कि बंगला देश की जनता के ऊपर जुल्म हो रहा है। लेकिन ? शरणार्थियों के लिए आधा पेट अन्न, सिपाहियों के लिए भरपूर बन्दूक—यह है बंगला देश की पुकार का विश्व-परिवार द्वारा उत्तर! अपवाद हैं किन्तु जाहिर है कि याहिया को दबाने की शक्ति दुनिया में नहीं है। क्या 'पीस न्यूज' के पास कोई उपाय है ?

कोई भी, चाहे वह हिंसा में विश्वास रखनेवाला हो या अहिंसा में, बंगला देश को यह सलाह नहीं दे सकता कि वह *२६ मार्च को शुरू हुआ मुक्ति-संग्राम अगस्त के मध्य में बंद कर* दे। उसे लड़ाई तो चलानी ही है। प्रश्न इतना ही है कि कैसे ?

अगर बंगला देश 'पीस न्यूज' की सलाह मानकर अपने हथियार—जो भी उसके पास हैं—आज अचानक डाल दे तो क्या परिणाम होगा ? क्या उसका ऐसा करना अहिंसा माना जायगा ? अगर यही अहिंसा है तो आत्म-समर्पण क्या है ?

अभय तथा अन्याय के प्रतीकार में मरने की, मारने की नहीं, तैयारी—ये दो ऐसे गुण हैं जिनके बिना अहिंसा संभव नहीं है। जो लड़ाई इस वक्त बंगला देश में लड़ी जा रही है क्या उसके बिना वहाँ जनता का मनोबल कायम रह सकेगा ? इस वक्त लड़ाई का विकल्प कायरता और आत्म-समर्पण के सिवाय दूसरा कुछ नहीं है, जो अहिंसा के बिलकुल विरोधी तत्त्व हैं। वास्तव में अपने स्वत्व की रक्षा में एक नृशंस संघटित सैनिक शक्ति के मुकाबिले बंगला देश की वस्तुतः निहत्थी नागरिक शक्ति, राजनैतिक और साम्प्रदायिक क्षुद्रताओं को छोड़कर, जिस तरह उठ खड़ी हुई वह दुनिया के इतिहास में एक कौतुक है—अहिंसा के बिलकुल नजदीक पहुँचनेवाला। हिंसा-अहिंसा नहीं, सैनिक बनाम नागरिक, उसकी कसौटी है। उसकी विजय में सैनिकवाद की पराजय होगी, उसकी पराजय में लोकतंत्र, धर्म-निरपेक्षता, और लोकशक्ति की एक साथ पराजय है। कोई मानवतावादी इन मूल्यों की पराजय कैसे देख सकता है ? मानवता को छोड़कर अहिंसा जीयेगी कैसे, चलेगी कैसे ?

यह अवसर हिंसा-अहिंसा का प्रश्न उठाने का नहीं, कुछ समय अशुभ परिणामों के भय से पीछे हटने का नहीं, बल्कि उनसे बचने का प्रयत्न करते हुए, जिसमें विश्वभर के शांतिवादियों, मानवतावादियों, की बहुत बड़ी जिम्मेदारी है, आगे बढ़ने का है। 'जय बंगला' बोलते हुए बढ़ते जाने का है। बंगला देश के सामने कोई विकल्प नहीं है।●

पृथ्वीग्रह पर अपने साढ़े तीन अरब पड़ोसियों के नाम २,२०० वैज्ञानिकों का एक संदेश

न्यूयार्क में ११ मई १९७१ को हुए एक सादे समारोह में संयुक्त राष्ट्र महासचिव ऊ थान्त को एक संदेश अर्पित किया गया जिस पर २३ देशों के २,२०० वैज्ञानिकों के हस्ताक्षर हैं—यह संदेश 'पृथ्वीग्रह के अपने साढ़े तीन अरब पड़ोसियों के नाम' लिखा गया है और मानव जाति के सामने मौजूद 'अभूतपूर्व साझे खतरे' की चेतावनी देता है।

जिन छह प्रसिद्ध वैज्ञानिकों ने इन पृष्ठों पर अविकल रूप में दिया गया यह संदेश पेश किया, उनसे महासचिव ने कहा :

"मैं समझता हूँ, अन्ततः मनुष्य जाति यह जान गयी है कि पृथ्वी की चारों ओर भौतिक और जैविक घटनाओं का एक नाजुक संतुलन कायम है जिसे प्रौद्योगिक विकास के मार्ग पर दौड़ते हुए विवेकहीन होकर बिगाड़ना ठीक नहीं। एक गंभीर साझे खतरे के बारे में, जिसमें मनुष्य जाति के पूर्ण विनाश के बीज मौजूद हैं, यह चिंता वह मानवी बल सिद्ध हो सकती है जो मनुष्यों को एक आदर्श से प्रेरित कर सके। यह विश्व-व्यापी मानव जाति की रक्षा की लड़ाई तब ही जीती जा सकती है जब सारे राष्ट्र इस पृथ्वी पर जीवन की रक्षा का एक साथ मिल कर प्रयत्न करें।"

चूँकि इस संदेश का मसौदा शुरू में फ्रांस के मेंटन स्थान पर बुलायी गयी एक सभा में बनाया गया था, इसलिए इसे 'मेंटन संदेश' कहने लगे और यह यूरोप, उत्तरी अमेरिका, अफ्रीका, एशिया और दक्षिण अमेरिका के बीच विज्ञानियों और परिस्थिति-विज्ञानियों में घुमाया गया है।

सभा का संयोजन एक नये, स्वयंसेवी, गैर-सरकारी, राष्ट्रातीत शांति-आंदोलन 'दाई दोंग' ने किया था। इस नाम का शाब्दिक अर्थ है 'महान सघटित जीवन वाला संसार' एक ऐसी धारणा जिसका जन्म कन्फ्यूशियस—पूर्व के चीन में २,५०० साल से भी अधिक पहले हुआ था।

मेंटन संदेश पर हस्ताक्षर करनेवाले २,२०० वैज्ञानिकों में चार नोबेल पुरस्कार विजेता (साल्वाडोर लूरिया, जाक मोनो, ऐल्बर्ट जेंट-ग्योर्गी और जार्ज वाल्ड), और विश्व के ऐसे बड़े प्रसिद्ध वैज्ञानिक हैं जैसे थॉ रोस्तां, सर जूलियन हक्सले, थोर हेयरडाल, पाल एहरलिख, मार्गरेट मीड, रेने दुबों, लार्ड रिची कैल्डर, शुतारो यामामोटो, जेरार्डो बुडोव्स्की, एनरिक बेल्ट्रान और मोहम्मद ब्की बरकत।

यद्यपि हम एक-दूसरे से बहुत दूर-दूर रहते हैं और हमारी संस्कृतियाँ, भाषाएँ भावनाएँ, राजनीतिक और धार्मिक मान्यताएँ एक-दूसरे से बहुत भिन्न हैं, पर हमें इस जमाने के एक अभूतपूर्व साझे खतरे ने संघटित कर दिया है। इस तरह का और इतना बड़ा खतरा इंसान के सामने पहले कभी नहीं आया, और इसका जन्म कई घटनाओं के एक जगह मिल जाने का परिणाम है। इनमें से प्रत्येक से हमारे सामने प्रायः काबू में न आनेवाली समस्याएँ आती हैं, ये सब मिलकर आनेवाले भविष्य में न केवल मनुष्य के दुःखदर्द में भारी वृद्धि की सम्भावना पेश करती है, बल्कि पृथ्वी पर मानव जीवन के लोप या प्रायः लोप का खतरा भी पैदा करती है।

जीव-विज्ञानी तथा अन्य परिस्थिति-विज्ञानी होने के नाते हम इन समस्याओं के किन्हीं खास समाधानों की सार्थकता के बारे में नहीं बोल रहे हैं, हम तो अपने इस पक्के विश्वास के कारण बोल रहे हैं कि ये समस्याएँ मौजूद हैं, भूमण्डलव्यापी और परस्पर सम्बन्धित हैं, और कि समाधान तभी निकल सकते हैं जब हम एक साझी आवश्यकता की सिद्धि के लिए सीमित स्वार्थों को त्याग दें।

समस्याएँ

*** प्राकृतिक परिस्थिति में विकार :** हमारी प्राकृतिक परिस्थिति की श्रेष्ठता अभूतपूर्व तेजी से बिगड़ रही है। संसार के कुछ भागों में यह अधिक साफ जाहिर है कुछ में कम। जिन क्षेत्रों में यह अधिक जाहिर है वहाँ सार्वजनिक खतरे की घंटी बजने लगी है, परन्तु कुछ क्षेत्रों में परिस्थिति-गत विकार अभी दूर की और अप्रासंगिक चीज मालूम होते हैं।

अंततः प्राकृतिक परिस्थिति तो सबकी एक ही है, जो कुछ एक हिस्से में होता है, उसका सम्पूर्ण पर असर पड़ता है। इस प्रक्रम में सबसे अधिक विस्तृत क्षेत्र में परिचित उदाहरण सारे संसार में खाद्य पदार्थों में ऐसे जहरीले पदार्थों का प्रवेश है जैसे पारा, सीसा, कैडमियम, डीडीटी, अन्य क्लोरीन वाले कार्बनिक यौगिक, जो इन जहरों के उत्पत्ति स्थान से बहुत दूर रहने वाले पक्षियों और अन्य प्राणियों के ऊतकों में पाये गये हैं।

तेल के बिखराव, कारखानों के छूटे-कचरे और विविध प्रकार के बाहर बहनेवाले स्रावों ने संसार भर के प्रायः सब मीठे और समुद्री पानियों पर उसी तरह बुरा प्रभाव डाला है जैसे उस मल-प्रवाह और कार्बनिक गन्दगी ने, जो इतनी अधिक मात्रा में डाली जा रही है कि प्रकृति का सामान्य चक्र उसे नहीं सुधार पाता। नगरों पर स्मॉग (धुएँ और कोहरे) के भारी बादल छाये रहते हैं और वायु में तैरते हुए प्रदूषकों ने अपने मूल स्थान से सैकड़ों मील दूर खड़े पेड़ नष्ट कर दिये हैं।

इससे भी अधिक भयजनक बात यह है कि हम प्रौद्योगिक प्रकल्पों और प्रायोजनाओं में लगातार विवेकहीन नये कदम उठाते जा रहे हैं (उदाहरण के लिए, अतिस्वन हवाई विमान और परमाणु शक्ति के संयंत्रों का योजनाबद्ध बड़ी संख्या में निर्माण), और एक मिनट रुककर यह नहीं सोचते कि उनका हमारी प्राकृतिक

परिस्थिति पर दीर्घकालीन प्रभाव क्या हो सकता है।

प्राकृतिक साधनों की कमी : यद्यपि पृथ्वी और इसके प्राकृतिक साधन सीमित हैं और उनका कुछ अंश बिलकुल समाप्त हो सकता है, फिर भी औद्योगिक समाज इसके बहुत से फिर से न पैदा होनेवाले साधन खर्च किये जा रहा है और जो साधन फिर पैदा हो सकते हैं उनका कुप्रबंध कर रहा है, साथ ही यह दूसरे देशों के साधनों का उपयोग बिना यह ख्याल किये कर रहा है कि आज के लोग या भविष्य की पीढ़ियाँ उनसे वंचित हो जायगी।

पृथ्वी पर कुछ ऐसी वस्तुओं की कमी होने लगी है जिनका किसी औद्योगिक समाज के लिए मार्मिक महत्त्व है, और महासागरों के नीचे से खनिज पदार्थ खोज निकालने की योजनाएँ बन रही हैं। पर ऐसे प्रयासों में धन और ऊर्जा का भारी व्यय होगा (और हमारे ऊर्जा पैदा करने वाले ईंधन सीमित मात्रा में हैं)। इन्हें आरम्भ करने से पहले समुद्री प्राणियों और पौधों के जीवन पर इनके सम्भावित प्रभावों का सावधानी से अध्ययन कर लेना चाहिए क्योंकि ये चीजें भी हमारी प्राकृतिक माला का हिस्सा हैं और हमें अधिक प्रोटीन वाले खाद्य देने का एक साधन हैं।

संसार की प्रायः सारी अच्छी सिंचाई वाली उपजाऊ खेतों की जमीन पहले ही काम आ रही है। फिर भी हर साल, विशेषरूप से औद्योगिक राष्ट्रों में इसमें से करोड़ों एकड़ जमीन कारखाने, सड़कें, पार्किंग-स्थान आदि बनाने के लिए खेती से निकाल ली जाती है। वन काटने, नदियों पर बाँध बनाने, एक फसल की खेती करने, जीवनाशकों और पत्ता-नाशियों के अनियंत्रित उपयोग, खानें खाली करने और अन्य अदूरदर्शिता के तथा अनुत्पादक कामों से प्राकृतिक परिस्थिति में बड़ा असंतुलन पैदा होने लगा है, इसका कुछ क्षेत्रों में विनाशकारी प्रभाव हो रहा है और दीर्घ काल में संसार के बड़े भूभागों की उत्पादकता पर इसका बुरा प्रभाव पड़ सकता है।

अच्छी से अच्छी हालत में भी पृथ्वी इतनी काफी वस्तुएँ नहीं पैदा कर सकती कि सारे लोग उनका उतनी मात्रा में उपभोग कर सकें जितनी मात्रा में औद्योगिक समाजों के अधिकांश लोग करते हैं। जीवन शैलियों में बहुत गरीबी तथा बहुत अमीरी के कारण पैदा होने वाली विषमता संघर्ष और क्रान्ति का एक कारण बनी रहेगी।

आबादी, भीड़-भाड़ और भूख : पृथ्वी की मौजूदा आबादी ३५० करोड़ है और आजकल के आबादी-नियंत्रण कार्यक्रमों के आधार पर लगाये गये हिसाब के अनुसार सन् २००० तक यह करीब ६५० करोड़ हो जायगी। कुछ लोगों ने ऐसी कुछ आशाभरी भविष्यवाणियाँ की हैं कि औद्योगिक और प्राकृतिक साधनों का विकास करके इससे भी कहीं अधिक आबादी को खाना, कपड़ा और मकान दिये जा सकते हैं।

पर आज का तथ्य यह है कि दुनिया की दो-तिहाई आबादी को भरपेट पोषक भोजन नहीं मिलता, और पोषण की दिशा में कुछ प्रगति होने पर भी भारी अकाल की आशंका सचमुच बनी हुई है। प्रदूषण और प्राकृतिक परिस्थिति में विकार आ जाने से खाद्य के कुछ स्रोतों पर पहले ही बुरा प्रभाव पड़ रहा है, और पोषण के प्रचलित आसार स्वयं प्रदूषण पैदा कर रहे हैं।

इसके अलावा, आबादी की सूचक संख्याएँ भ्रामक हैं क्योंकि वे उपभोग के घटक पर विचार नहीं करतीं। हिसाब लगाया गया है कि अमेरिका में पैदा हुआ एक बालक अपने जीवन काल में भारत में पैदा हुए एक बच्चे से कम-से-कम बीस गुना उपभोग करता है और प्राकृतिक परिस्थिति में लगभग पचास गुना प्रदूषण पैदा करता है। इसलिए परिस्थितिगत प्रभाव की दृष्टि से देखें तो सबसे अधिक उद्योगोंवाले देश ही सबसे घने बसे हुए हैं।

मनुष्य को खाली जगह और एकांत की किसी मात्रा में जरूरत है, यह बिलकुल ठीक-ठीक बताना तो कठिन है पर जरूरत उसे है अवश्य और ध्यान देने पर दिखाई दे सकती है। हम केवल रोटी के सहारे नहीं जीते। यदि प्रौद्योगिकी सबके लिए पर्याप्त सिंथेटिक (कारखानों में बना) खाद्य पैदा कर सके तो भी रोज बढ़ती हुई आबादी से होने वाली भीड़-भाड़ के सामाजिक और पारिस्थितिक परिणाम विनाशकारी होने की संभावना है।

युद्ध : इतिहास के आरंभ से मनुष्य के अन्य किसी काम की इतनी व्यापक निंदा नहीं हुई जितनी युद्ध की, और अन्य किसी काम को इतना अपनाया भी नहीं गया जितना इसे। अधिक विनाशकारी तरीकों की खोज जारी है।

जब सबसे खतरनाक हथियार हासिल कर लेने और इसकी ताकत देख लेने के बाद हम इसके और अधिक इस्तेमाल से पीछे हट रहे हैं, पर अनेक भय के कारण हम अपने शस्त्रागारों में इतने काफी परमाणु हथियार भरने से बाज नहीं आ रहे जो सारी धरती का सारा जीवन कई बार नष्ट कर सकते हैं। इसी तरह हम जैविक और रासायनिक हथियारों के अंधाधुंध प्रयोग, प्रयोगशाला और रणक्षेत्र, दोनों ही स्थानों पर करते ही जा रहे हैं। परिस्थिति हमें ऐसे 'छोटे युद्ध' या आक्रामक कार्यवाहियाँ करने से भी नहीं रोक सकी है जो अंत में परमाणु युद्ध को जन्म दे सकती है।

अगर एक आखिरी बड़ा युद्ध टल भी जाए, तो भी इसकी तैयारियों में वे भौतिक और मानवीय साधन खर्च हो जाते हैं जो संसार के वंचित लोगों को खाना और मकान देने और प्राकृतिक परिस्थिति की रक्षा और सुधार करने के तरीके ढूँढ़ने के काम में लगने चाहिए।

जाहिर है कि जब मनुष्य ने कुछ

छोटे भौगोलिक क्षेत्रों में कुछ स्थानों पर, स्थायी, अपेक्षया शांतिपूर्ण समाजों की स्थापना करने में सचमुच सफलता प्राप्त कर ली है तब युद्ध का कारण मानव-जाति की जन्मजात युद्धलिप्सा को बताना काफी नहीं। हमारे जमाने में यह दिखायी देता है कि विश्वव्यापी युद्ध के खतरे दो बातों से पैदा होते हैं

संसार के प्रचुर उद्योगों वाले और अल्प उद्योगों वाले हिस्सों के बीच मौजूद विषमता और करोड़ों गरीबों का अपनी हालत सुधारने का संताप।

बराबर राष्ट्र-राज्यों में, जो एक अधिक समतामूलक समाज के निर्माण के लिए अपनी खुदगर्जी छोड़ने को तैयार नहीं, शक्ति और आर्थिक लाभ की स्थिति पाने के लिए चल रही होड़।

इस प्रकार पेश करने पर यह समस्या समाधान के दायरे से बाहर की-सी मालूम होती है। फिर भी मानव जाति अतीत काल में यह प्रदर्शित कर चुकी है कि इसमें नयी स्थितियों के अनुकूल बनने की और लोच की असाधारण क्षमता है।

क्या किया जा सकता है ?

जो कुछ पहले कहा गया है उसमें हमारे सामने मौजूद समस्याओं की आंशिक सूची मात्र दी गयी है।

१९४०-५० के दशक में, जब परमाणु बम का विकास करने का निर्णय किया गया था, अमेरिका ने २०० करोड़ डालर खर्च किये और यह काम दो साल में पूरा करने के लिए सारे संसार से विशेषज्ञ इकट्ठे किये। १९६०-७० में, जब अमेरिका चन्द्रमा पर पहुँचने की होड़ में फंसा हुआ था, उसने इस दौड़ में बाजी जीतने के लिए २००० करोड़ डालर और ४,००० करोड़ डालर के बीच रकम खर्च की सोवियत संघ, अमेरिका, अब भी अंतरिक्ष अनुसंधान पर करोड़ों डालर खर्च कर रहे हैं।

निश्चय ही, परमाणु या अंतरिक्ष अनुसंधान से अधिक महत्व का काम मानव जाति के अस्तित्व के लिए आशंका पैदा करने वाली समस्याओं पर भारी अनुसंधान करने का है। इसे इतने ही बड़े पैमाने पर और इससे भी अधिक जरूरी समझ कर तुरंत शुरू करना चाहिए। इस अनुसंधान का खर्च प्रचुर उद्योगों वाले राष्ट्रों को उठाना चाहिए, क्योंकि वे ही यह खर्च उठाने में सबसे अधिक समर्थ हैं, साथ ही, वे साधनों के मुख्य उपभोक्ता, मुख्य प्रदूषणकर्ता भी हैं।

क्योंकि इस संकट पर बहुत जल्दी कार्यवाही करने की जरूरत है, इसलिए हम यह अनुरोध करते हैं कि अनुसंधान जारी रहते-रहते भी निम्नलिखित कार्यवाहियाँ की जाएं। हम उन्हें सर्वरोगनाशक इलाज के रूप में नहीं पेश कर रहे, इन्हें हम रोकने वाली कार्यवाहियों के रूप में ही पेश कर रहे हैं स्थिति ऐसी दुर्दशा तक आगे न बढ़ सके जहाँ से लौटना असंभव हो

ऐसी प्रौद्योगिक नवीनताओं को स्थगित कर दिया जाए जिनके भावी परिणाम पहले नहीं जाने जा सकते और जिनका होना मानव की अस्तित्वरक्षा के लिए अनिवार्य नहीं है। इसके अंतर्गत हथियार, विलास-पूर्ण ढुलाई साधन, नये और कारोबारी जीवनाशक, नये प्लास्टिकों का निर्माण, लंबी-चौड़ी नयी परमाणु बिजली प्रायोजनाओं की स्थापना, आदि हैं। इनमें वे इंजीनियरिंग प्रायोजनाएँ भी शामिल होंगी जिनका प्राकृतिक परिस्थिति पर पड़ने वाला प्रभाव अभी जांचा नहीं गया—बड़ी नदियों पर बांध बनाने जंगली जमीन के 'पुनरुद्धार', समुद्र तल की खनिज-खुदाई प्रायोजनाएँ आदि।

ऊर्जा के उत्पादन में और सामान्यतया उद्योग में मौजूदा प्रदूषण नियंत्रण प्रौद्योगिकी लागू की जाए और कच्चा सामान बड़े पैमाने पर बार-बार इस्तेमाल किया जाए जिससे साधनों के ह्रास की चाल धीमी हो और प्राकृतिक परिस्थिति की चेतना बनाये रखने के लिए जल्दी ही अंतर्राष्ट्रीय समझौते हो सकें। इनमें उस समय संशोधन किया जा सकता है जब यह अधिक साफ पता चल जाए कि प्राकृतिक परिस्थिति में सुधार के लिए क्या-कुछ करने की जरूरत है।

संसार के सब क्षेत्रों में आबादी की वृद्धि रोकने के कार्यक्रमों को तीव्र किया जाए पर साथ ही यह पूरी तरह ध्यान रखा जाए कि नागरिक अधिकारों में कमी किया किये ही यह काम पूरा करना आवश्यक है। यह बात महत्वपूर्ण है कि इन कार्यक्रमों के साथ-साथ सुविधा-भोगी वर्गों के खर्च के स्तर में कमी हो, खाद्य तथा अन्य वस्तुओं का सब लोगों में अधिक न्याययुक्त वितरण हो सके।

बिना यह परवाह किये कि समझौता होने में क्या कठिनाइयाँ हैं, राष्ट्रों को युद्ध का उन्मूलन करने, अपने परमाणु हथियारों को बेकार करने और अपने रासायनिक तथा जैविक हथियार नष्ट करने के रास्ते खोजने चाहिए। एक विश्वव्यापी युद्ध के दुष्परिणाम तत्काल सामने आ जायेंगे और उनसे पैदा हुई खराबी को दूर न किया जा सकेगा, इसलिए व्यक्तियों और समूहों का भी कर्तव्य है कि वे ऐसे अनुसंधानों या प्रक्रमों में हिस्सा न लें।

पृथ्वी को, जो इतनी बड़ी दीखती रही है, अब छोटी समझना चाहिए। हम एक बंद-प्रणाली में रहते हैं। हम अपनी अगली पीढ़ियों के लिए पृथ्वी पर और एक-दूसरे पर पूरी तरह निर्भर हैं। इसलिए जो बहुत-सी बातें हमें एक-दूसरे से अलग करती हैं वे उस परस्पर-निर्भरता और उन खतरों के मुकाबले कुछ भी नहीं हैं जो हमें संगठित करते हैं।

हमें यकीन है कि यह बात अक्षरशः सच है कि अपनी भेदभावनाओं से ऊपर उठ कर ही मनुष्य पृथ्वी को अपना घर बनाये रखने में समर्थ हो सकते हैं। प्रदूषण, भूख, अत्यधिक आबादी और युद्ध की असली समस्याओं के समाधान खोज लेना शायद आसान है, पर मिलकर काम करने की वह विधि तलाश करना कठिन है जिसके जरिए समाधानों की खोज करनी होगी, फिर भी कार्य आरंभ तो हमें करना ही है। (यूनेस्को कूरियर के अगस्त '७१ के अंक से साभार)

बिहार में सर्वोदय-आन्दोलन

(गतांक से आगे)

झाझा में प्रखण्ड सभा

हिन्दुस्तान में जहाँ पहली ग्रामदान प्रखण्ड-स्वराज्य-सभा बनी उस झाझा प्रखण्ड (जिला-मुंगेर) में हम आये। श्री शिवानन्द भाई यहाँ काम करते हैं। अपने विद्यार्थी जीवन से ही शिवानन्द भाई क्रान्तिकारी रहे है। झाझा प्रखण्ड में १६ प्रतिशत लोग मुसलमान है। आक्सफेम तथा बिहार रिलीफ कमिटी ने यहाँ के विकास के लिए करीब दस लाख रुपये खर्च किये हैं। "फूड फार वर्क" प्रोग्राम से कुछ कुएँ और तालाब भी बने हैं। कृषि का काफी विकास हुआ है। उत्पादन तीन-चार गुना बढ़ा है। हिन्दू-मुसलमानों में आपस में अच्छा मेल है। स्थानीय नेतृत्व आगे आया है। ग्राम-स्वराज्य का सपना साकार हुआ देखने की वृद्धों को जल्दी लगी है। पर जल्दबाजी से काम बिगड़ता है, आपस के सम्बन्ध खराब होने का डर है, इस बात का ध्यान कर जवानों ने बागडोर अपने हाथ में ले ली है, और सब को सम्भालते हुए वे आगे बढ़ रहे हैं।

इस प्रखण्ड में कुल १२६ गाँव हैं। ग्रामसभाएँ हर माह बैठती हैं। करीब ८६ गाँवों में बीघा-कट्ठा में अब तक कुल ३५० बीघा जमीन बँटी है। ५० गाँवों में ग्रामकोष शुरु हुआ है। जनमानस में स्पष्ट परिवर्तन हुआ नजर आता है। आज के शिक्षण के प्रति आकर्षण नहीं। लोग बीड़ी के पत्ते तोड़ने का धन्धा करते हैं। झगड़े आपस में निपटाये जाते हैं। ग्रामसभा में साथ बैठने के कारण सामाजिक विषमता कम हो रही है।

यहाँ प्रखण्डसभा की बैठक नियमित रूप से होती है। उसमें अच्छी खासी उपस्थिति रहती है। एक सौ ग्रामदानी गाँवों के २०० प्रतिनिधि उसमें भाग लेते हैं। हरेक अपने यहाँ के काम की रिपोर्ट पेश करता है तथा जो समस्याएँ ग्रामसभा में हल नहीं हो पाती हैं, उनकी चर्चा प्रखण्ड सभा में करते हैं। प्रखण्ड स्तर की योजना बनायी गयी है। प्रखण्डसभा के पदाधिकारी सर्वसम्मति से चुने गये हैं।

झाझा प्रखण्ड में जो काम हुआ है उसका प्रभाव सरकारी अधिकारियों पर भी अच्छा पड़ा है। बिहार के एक भूतपूर्व मंत्री कुछ रहे थे, "लोकतंत्र की दृष्टि से आपका ग्रामदान का काम बहुत महत्व का है। ग्रामदान के कारण नया नेतृत्व गाँव-गाँव में खड़ा हो रहा है। कई छोटे-छोटे लोग आगे आ रहे हैं। सरकार की भी कई अच्छी योजनाएँ हैं। पर निहित स्वार्थवाले जनता तक उन्हें पहुँचने नहीं देते हैं। सरकारी योजना का ८० प्रतिशत पैसा ये लोग बीच में ही चाट जाते हैं। अतः हम कई सरकारी योजनाएँ सर्वोदय-वालों को चलाने देते हैं, जो कम पैसे में अच्छी तरह और जल्द अमल में आती हैं।" चकाई ब्लाक में भी पुष्टि का काम प्रारम्भ हुआ है।

चौथम, बेलदौर (जि० मुंगेर) प्रखण्डों में भी पुष्टि-कार्य चल रहा है। श्री रामनारायण बाबू, गणेश बाबू और उनके चार-पाँच साथी काम में जुटे हुए हैं। पुष्टि का काम कार्यकर्ता आधारित न बने, इसका विशेष ध्यान रखा जा रहा है। अतः यहाँ कार्यकर्ता अगुवा बनकर काम नहीं करते हैं। जैसे-जैसे स्थानीय शक्ति खड़ी होती जाती है, काम आगे बढ़ाया जाता है। कार्यकर्ता केवल तकाजा करते हैं। अन्य प्रखण्डों में भी काम शुरू करने की योजना बनायी गयी है। प्रखण्ड-दान-पुष्टि समिति बनी है। विचार-गोष्ठियाँ की जा रही हैं जिनमें नागरिकों की विचार सफाई होती है। हर गाँव में भूदान पत्रिका के पठन-पाठन की व्यवस्था करने का प्रयत्न कार्यकर्ता कर रहे हैं। शिक्षकों का ज्यादा-से-ज्यादा सहकार लेने का प्रयत्न किया जा रहा है।

सहरसा की गतिशीलता

सहरसा जिले का काम अब तेजी से आगे बढ़ेगा ऐसा लगता है। क्योंकि कुछ समर्थ नेता इस काम के लिए अनुकूल हुए हैं और सक्रिय सहयोग दे रहे हैं। बिहार प्रदेश कांग्रेस के भूतपूर्व अध्यक्ष श्री राजा बाबू, मंसोरा के वहाँ के नेता श्री परमेश्वर कुवँरजी, श्री लहटन चौधरी (कांग्रेसी विधायक) आदि लोग भी सक्रिय सहयोग दे रहे हैं। एक नक्सलवादी नेता श्री बी० के० आजाद भी धीरे-धीरे अनुकूल हो रहे हैं और करीब आ रहे हैं। सुश्री निर्मला बहन, सर्वश्री कृष्णाराजजी, मित्तलजी, विद्यासागरजी आदि तो जमकर बैठे ही हैं। जानकी बहन और उनके तरुण साथियों के कारण तरुण-शान्तिसेना का काम भी आगे बढ़ रहा है। श्री कामेश्वर बहुगुणा के कारण आचार्यकुल का काम भी चल पड़ा है। सुशीला बहन भी एक माह के लिए आयी है विरौल से। महिषी में वह बैठी हैं और आध्यात्मिक मार्ग से वहाँ के लोगों को जागृत करने का प्रयास कर रही है। श्री लखन भाई उनके साथ हैं। सर्वोदय-पात्र का काम भी शुरू किया है।

बिहार में गंगा, कोसी आदि नदियों ने ऐसी धूम मचायी है कि कई गाँव जल-मग्न हो गये हैं। आवागमन के लिए नौका का काफी इस्तेमाल करना पड़ता है। रोज बारिश, गाँव में जिधर देखो उधर पानी या कीचड़ ! ऐसी हालत में भी कार्यकर्ता काम कर रहे हैं।

सहरसा जिला ग्रामस्वराज्य समिति के अध्यक्ष श्री महेन्द्र भाई हैं। मरौना प्रखण्ड में वे काम कर रहे हैं। मरौना की प्रखण्डसभा जल्द ही बनने जा रही है। इस प्रखण्ड में करीब १०० गाँव हैं। उनमें से ९२ गाँवों में ग्रामसभाएँ बनी है। कुछ काफी सक्रिय भी हैं। बीघा-कट्ठा में ६५ बीघा भूमि बँटी है। १७ गाँवों में ग्रामकोष शुरू हुआ है। यह प्रखण्ड ज्यादातर पिछड़ा हुआ है। कई

गाँव ऐसे हैं जहाँ एक भी साक्षर आदमी नहीं है।

सहरसा के साथी अब ऐसा अनुभव कर रहे हैं कि पुष्टि का काम भी तूफान की गति से यानी अभियान पद्धति से ही आगे बढ़ सकेगा, धीरे-धीरे करने से नहीं। इसलिए ११ सितम्बर से २ अक्तूबर तक एक जोरदार अभियान चलाने का उन्होंने तय किया है। इसके लिए बिहार से एवं देश भर से चोटी के कार्यकर्ता आयें और स्थानीय नेतृत्व खड़ा करें, ऐसा आयोजन किया जा रहा है। इस अभियान में ग्रामसभाओं के पदाधिकारी, एम० एल० ए०, प्रभावशाली नागरिक आदि रहेंगे। तीस टोलियाँ बनायी जायेंगी। आगे का काम कार्यकर्ता आधारित न रह, लोकाधारित बने, यह तय किया गया है। यहाँ के काम का अब दूसरा चरण शुरू हो रहा है। जगह-जगह सर्वोदय केन्द्र बनाने का सोचा जा रहा है। हर केन्द्र पर तीन-तीन कार्यकर्ता रखने की योजना है। ये कार्यकर्ता ग्रामसभाओं को सक्रिय बनाने का काम करेंगे।

हवा गरम न रहे तो काम कठिन होता है। अतः बड़े लोगों से दौरे पर जाने का भी सोचा गया है। यहाँ के प्रमुख ५०-१०० लोगों की एक अपील भी निकलने का प्रयत्न जारी है। नागरिकों की एक ग्राम-स्वराज्य समिति बनाने का भी सोचा गया है। कई बड़े भूमिवान अनुकूल बने हैं। वे इस काम को उठा लें, सक्रिय हों, इसके लिए उनकी एक गोष्ठी जल्द ही होगी।

कुल मिलाकर सहरसा का काम अच्छी तेज गति से होगा, ऐसा दिखायी देता है।

पूर्णिया में पूर्ण प्रयत्न

पूर्णिया जिले में पुष्टि का जो काम चल रहा है उसकी अपनी खासियत है। यहाँ के काम के लिए न अभी तक बाहर से पैसा आया है, न कोई कार्यकर्ता। जिले की शक्ति के बल पर ही श्री वैद्यनाथ बाबू ने यहाँ सारा काम खड़ा किया है। श्री वैद्यनाथ बाबू की अथक सेवा के कारण ही नक्सलियों के इस गढ़ में कुछ काम सम्पन्न हुआ है। रुपौली प्रखण्ड में विशेष काम हुआ है। यह प्रखण्ड राजनैतिक चेतना की दृष्टि से जिले में अग्रगण्य स्थान रखता है। गाँव-गाँव में राजनैतिक पक्षों के कार्यकर्ता हैं। लेकिन सबका सहयोग इस काम में मिल रहा है। कई कम्यूनिस्ट भाई ग्रामसभाओं के पदाधिकारी बने हैं। रुपौली की प्रखण्ड सभा भी बनी है। ८ जुलाई '७० को श्री वैद्यनाथ बाबू ने पुष्टि का काम यहाँ शुरू किया था। एक साल में काफी प्रगति हुई है।

यह वही प्रखण्ड है जहाँ एम० एम० जोशी के नेतृत्व में गत साल 'भूमि हड़प' आन्दोलन शुरू हुआ था। इस आन्दोलन के समय सौ एकड़ भूमि हड़पी गयी थी, जो कभी इधर, कभी उधर जाती रही। आज भूमि भूमिहीनों के पास नहीं है। बारह मुकदमे इस सिलसिले में चल रहे हैं, जिसमें आशोकोपा गाँव के, जहाँ से यह आन्दोलन शुरू हुआ था, १५० लोग फँसे हैं। यह आशोकोपा गाँव अब पछता रहा है। भूदान-ग्रामदान की पद्धति की श्रेष्ठता उनके ख्याल में आती है और उसका महत्त्व अब उन्हें महसूस हो रहा है। इस गाँव में अब ग्रामसभा बन गयी है। स्नेह तथा आदर के साथ श्री वैद्यनाथ बाबू को बड़े आग्रह से गाँववालों ने प्रस्ताव कर के बुलाया था। हम जिस दिन रुपौली पहुँचे उसी दिन श्री वैद्यनाथ बाबू वहाँ गये थे।

गाँववालों ने सभा भी रखी थी। सभा में थोड़ी गड़बड़ी हुई, पर जल्द ही लोग सँभल गये। गाँवों के लोग आज की राजनीति से तथा नेताओं से तंग आ गये हैं। वे अब अपने गाँव से दलीय राजनीति को हटाना चाहते हैं पर शहर के उनके नेता उन्हें भड़काते रहते हैं और वैसा करने से रोकते रहते हैं। इसका परिणाम कई गाँवों में देखने को मिला। ग्रामसभाएँ सर्वसम्मति से अपना कारोबार चलाने लगती हैं और बीच में ही कोई-न-कोई चुनाव आ जाता है, जो इसमें अवरोध पैदा कर देता है। अब तक हमारी चुनाव-पद्धति में आमूलाग्र परिवर्तन नहीं होगा, सर्वसम्मति को सर्वत्र स्वीकार नहीं किया जाता, तब तक कभी कोई गाँव एकरस नहीं हो सकता।

पूर्णिया जिले में रुपौली एवं भवानीपुर प्रखण्ड में पुष्टि का सघन काम चल रहा है, और रानीगंज प्रखण्ड में १५ में से ५ पंचायतों में अभी-अभी काम शुरू हुआ है। पर्याप्त सघन काम रुपौली प्रखण्ड में हुआ है लेकिन अब अन्य प्रखण्डों की ओर भी विशेष ध्यान दिया जा रहा है।

आजकल श्री वैद्यनाथ बाबू का स्वास्थ्य अच्छा नहीं रहता है फिर भी उनका काम जारी ही है। अनेक गाँवों में ग्रामसभाएँ बनी हैं, कुछ सक्रिय भी हैं। बीघा-कट्ठा में कुछ भूमि बँटी है। बहुत बड़े प्रमाण में यहाँ भूदान में भूमि मिली हुई है। इसलिए बीघा-कट्ठा में भूमि बँटने की बहुत कम गुंजाइश है। कानूनी पुष्टि का काम भी चल रहा है। लेकिन उस पर जानबूझ कर विशेष जोर नहीं दिया गया है। ग्रामसभा का चुनाव होते ही ग्रामसभा किस प्रकार सक्रिय हो, ग्रामसभा के द्वारा शान्ति सेना का संगठन, ग्रामकोष का संग्रह एवं ग्राम-निर्माण की योजना बनाने, इसके लिए लोकशिक्षण का काम भी पुष्टि-अभियान के दौरान ही करने का प्रयत्न किया जाता है। लोगों की भाषा में ग्रामगीत के पर्चे दिखाने का काम भी रुपौली प्रखण्ड में हुआ है। जहाँ-जहाँ ग्रामसभा ठीक से काम करने लगी है, वहाँ झगड़ों का निपटारा भी गाँव में ही होने लगा है। जगह-जगह सम्पर्क-केन्द्र भी खोले जा रहे हैं। विशेषतः बहनें इसमें काम उठाती हैं।

ग्राम-शान्तिसेना संगठित करने की ओर विशेष ध्यान दिया जा रहा है। यह काम अत्यन्त महत्त्व का है। इससे स्थानीय कार्यकर्ता तैयार करने में अनुकूलता पैदा होगी। कजरा गाँव में एक कम्युनिस्ट ही ग्रामसभा के अध्यक्ष बने हैं और वे अब वर्ग-संघर्ष के बजाय सर्वसम्मति से काम करने लगे हैं।

मु[illegible]ना का प्रेरक क्षेत्र

मुजफ्फरपुर जिले के मुसहरी प्रखण्ड ने पुष्टि-अभियान को जन्म दिया, ऐसा कहने में अतिशयोक्ति नहीं होगी। नक्सलवादियों की कृपा या अकृपा कहिए कि उन्होंने हमारे दो साथियों को जान से मारने की धमकी दी, और फलस्वरूप जयप्रकाशजी दौड़ कर आये और वहाँ जमकर बैठे। इसका अद्भुत परिणाम कार्यकर्ताओं पर हुआ और जो पुष्टि-कार्य राजगीर सम्मेलन के बाद तुरंत तूफान नहीं, अतितूफान की गति से शुरू होना चाहिए था और जो शुरू ही नहीं हुआ था, वह शुरू हुआ। आन्दोलन को नया मोड़ मिला। मुसहरी का काम अब इस अवस्था में आ पहुँचा है कि वहाँ प्रखण्ड-सभा बनाना जरूरी था। ता० २७ जुलाई को उसके लिए गाँव-गाँव से प्रतिनिधि आये थे। पर सर्वसम्मति से पदाधिकारियों का चुनाव नहीं हो पाया, अतः प्रखण्डसभा उस दिन नहीं बन पायी। अब ११ सितम्बर को फिर से सभा बुलाने का तय हुआ। यह सभा भूतपूर्व मुख्यमंत्री श्री कर्पूरी ठाकुर की अध्यक्षता में हुई थी। बहुमत से काम करने की बरसों से लोगों की आदत पड़ी है, अतः सर्वसम्मति पर आने में कठिनाई होती है। गुटबाजी की आदत भी रोड़ा सिद्ध होती है। इस सभा में जयप्रकाशजी ने पदाधिकारी कैसा हो, इस पर प्रकाश डाला था।

वैशाली में जन-अभिक्रम

वैशाली प्रखण्ड में भी पुष्टि का काम हो रहा है। श्री लखनदेवजी वहाँ काम करते हैं। अच्छे संभ्रांत, शिक्षित, १०-१५ मध्यम एवं बड़े किसानों को लखनदेवजी ने जोड़कर रखा है। इन किसानों ने अपना बीघा कट्ठा दे दिया है। बीस में से पन्द्रह पंचायतों में अभी तक ग्रामस्वराज्य का संदेश पहुँचाया गया है। आधा प्रखण्ड अनुकूल है। सर्वोदय-मित्र बनाकर स्थानीय जन एवं धन का आधार इस माह तैयार कर पुष्टि-कार्य करने का यहाँ के कार्यकर्ताओं ने तय किया है।

भागलपुर में तरुण-शक्ति

भागलपुर जिले में तरुण-शांतिसेना का अच्छा काम चल रहा है। कीहपुर, गोपालपुर, नवगछिया के अशान्त प्रखण्ड हैं। नक्सलवादियों का काफी प्रभाव है। भूमि-हड़प आन्दोलन यहाँ भी हुआ था। ठीक से काम का आयोजन किया जाय तो यहाँ के भूमिवान आसानी से सक्रिय किये जा सकते हैं। पिछले साल इस क्षेत्र में कई खून एवं लूटपाट की घटनाएँ हुई थीं। इस असुरक्षाग्रस्त क्षेत्र में गत फरवरी में जयप्रकाशजी ने चार दिन पदयात्रा की थी। उससे कुछ वातावरण बना था। लेकिन कार्यकर्ताओं के अभाव में उससे ज्यादा लाभ नहीं उठाया गया। यह क्षेत्र फिलहाल जलमग्न होने से किसान संकटग्रस्त हैं। खेतों में और घरों में इतना पानी आ गया है कि नाव का उपयोग करना पड़ता है। मकई की फसल पानी में डूब गयी है। किसान तैरते हुए उसकी कटनी कर रहे थे।

बिहार के साथियों से आशा

दरभंगा, चम्पारण आदि जिलों में भी पुष्टि का काम चल रहा है, पर धीमी गति से। चम्पारण में श्री उदितनारायण चौधरी ने नरकटियागंज प्रखण्ड में ४० गाँवों में ग्रामसभा का गठन किया है। और वहाँ ६० बीघा जमीन वितरण के लिए निकाली गयी है। दक्षिण भागलपुर में नाथ नगर एवं सुल्तानगंज प्रखण्डों में काम शुरू है।

बिहार में पुष्टि एवं ग्रामस्वराज्य के काम की अच्छी संभावनाएँ हैं। प्रमुख कार्यकर्ता बुद्धिमान हैं। भूदान-ग्रामदान एवं खादी का व्यापक काम हुआ है। आवश्यकता है एकत्र होकर योजनाबद्ध तरीके से काम करने की। मिल-मिलन के बाद यह सफल होगा एवं बिहार के साथी प्रथम प्रदेशदान होने से आनेवाली जिम्मेवारियों को महसूस कर काम में जुटेंगे, हम यह आशा करते हैं (समाप्त)

—सुमन बंग

आन्ध्रप्रदेश रचनात्मक कार्यकर्ता-सम्मेलन

२, ३, ४ और ५ जुलाई को ग्रामसेवा केन्द्र, शिवरामपल्ली, हैदराबाद में आन्ध्र प्रदेश सर्वोदय सम्मेलन हुआ। १९ जिलों से आये १०५ कार्यकर्ताओं ने भाग लिया।

सम्मेलन में लोकनीति, संगठन, सर्वोदय, शान्तिसेना, नगरस्वराज्य कार्य, ग्रामदान प्राप्ति-पुष्टि, सर्वोदय-साहित्य-प्रसार, खादी-ग्रामोद्योग और नशाबन्दी पर अलग-अलग टोलियों में एवं सम्मिलित चर्चा हुई और निर्णय लिये गये।

शीघ्र ही जिलों में सर्वोदय-सम्मेलन किये जाने का निर्णय लिया गया।

अन्य बातों के साथ-साथ कार्यकर्ताओं ने यह निश्चय किया कि बंगला देश की समस्या किस तरह लोकतन्त्र को बचाने की समस्या है, बैठकों और गोष्ठियों द्वारा इसका व्यापक लोक-शिक्षण किया जाय।

गत १ और २ जुलाई को वहीं आन्ध्रप्रदेश के रचनात्मक संस्थाओं के प्रतिनिधियों ने भाग लिया। श्री देवेन्द्रकुमार गुप्त ने सम्मेलन का उद्घाटन किया। गोराजी सभापति थे। उन्होंने प्रतिनिधियों से आग्रह किया कि जब चारों ओर हिंसा का बोलबाला दीख रहा है तब अहिंसक समाज-रचना के लिए, विनोबाजी द्वारा चलाये गये ग्रामस्वराज्य की स्थापना के लिए ग्रामदान-आन्दोलन को सफल बनाने में प्राणपण से जुट जायें और सर्वोदय समाज की स्थापना करके ही दम लें।

श्री राधाकृष्ण बजाज ने बताया कि खादी तभी टिक सकती है, जब सर्वोदय विचार लोगों के मन पर बैठेगा। इसलिए हर कार्यकर्ता संकल्प ले कि वह अपने-अपने जिले में घर-घर सर्वोदय साहित्य पहुँचाने की योजना और चेष्टा करेगा।

इस सम्मेलन ने एक प्रस्ताव द्वारा भारत सरकार से यह अनुरोध किया कि वह बंगला देश को शीघ्र मान्यता दे।

—सी० वी० चारी

मंत्री, आन्ध्रप्रदेश सर्वोदय मंडल

विनोबा-निवास से

नागरी लिपि: भारत की एकता को बचाने के लिए

'तमाशा! इधर आओ। बहुत कतल करना बाकी है। ए 'तीन वाले!' यहां से उठो, वहां जाओ। कतल करना आसान है, लाशें उठाना कठिन है। उसमें समय बहुत जाता है'' यहां लाशें उठाना है'''''' पहलवानजी!' कितना समय बाकी है?''

यह कोई बकता देश के गदर की बातें नहीं है, ब्रह्मविद्या-मन्दिर का अहाता है और वहां सुबह सफाई हो रही है। उस समय सफाई करनेवालों पर देखरेख करनेवाले बाबा इस तरह की भाषा का उपयोग करते हैं। 'तमाशा', 'तीन वाले', 'पहलवानजी', 'अजगर', ये बाबा के द्वारा लड़कियों को दिए हुए निकनेम हैं।

कतल करना = घास काटना

लाशें उठाना = काटे हुए घास के तिनके उठाना

काम करते समय कोई आपस में बातें करने लगते हैं, तो तुरत बाबा चेतावनी देते हैं—'क्लाइट वर्क सुपरिटेंड।' १७ जुलाई से सफाई के आरम्भ में बाबा स्वयं भी सफाई करनेवालों की कतार में गिनती के लिए खड़े हो जाते हैं और सबकी बहुत सक्की गिनती करते हैं।

× × ×

आराम उधार, श्रम नकद

अपना देश की समस्या लेकर श्री जयप्रकाशजी प्रभावतीजी के साथ विदेश गये थे। भारत लौटने पर दोनों बाबा से मिलने आये थे। १४ तारीख की दोपहर में करीब दो बजे वे यहां पहुंचे। बाबा ने गुरु के कार्यक्रम में बदल किया था। दोनों एक दूसरे से मिले, प्रणाम हुआ और नीचे बैठे ही थे कि बाबा ने दोनों से पूछा—''इतने दिनों में जयप्रकाशजी को नींद ठीक मिली?' दोनों ने बतलाया कि लगातार कार्यक्रम होने के कारण नींद पूरी नहीं मिल सकी थी। इसलिए यहां आने की है और ३० जुलाई से ७ अगस्त तक सेवाग्राम में विश्राम करने का सोचा है।

बाबा—''आपका आराम उधार है, श्रम नकद। ३० जुलाई को आपको यह काम शुरू किए ढाई माह पूर्ण होते हैं। ७ दिन का आराम नाकाफी है, पंद्रह दिन आराम करना चाहिए। आराम में मुलाकातें बंद होनी चाहिए। दूसरी बात, रात में हमेशा पूर्ण आराम, रात में कोई कार्यक्रम न हो। बाबा ने यात्रा में रात में कोई कार्यक्रम नहीं रखा, इसलिए बाबा का स्वास्थ्य ठीक रहा। जर्मन दार्शनिक कांट से पूछा गया था, 'दुनिया में सबसे सुन्दर चीज कौन-सी है?' उसने कहा, 'दुनिया में दो चीजें सुन्दर हैं—स्टारी हेवन एबव्ह एण्ड सेन्स आफ ड्यूटी बिलो (ऊपर सितारों से भरा आकाश और नीचे कर्तव्य-भावना)।' मैंने 'सेन्स आफ ड्यूटी आफ बिलो' का अर्थ 'सेन्स आफ ड्यूटी इन डे टाईम' (कर्तव्य-भावना दिन में) किया है।''

दो-तीन दिन की चर्चा के दौरान में बाबा ने जे० पी० के स्वास्थ्य के बारे में बार-बार जिक्र किया। एक दिन कहा, ''श्रीकृष्ण के जीवन के तीन उपनिषद बनाये हैं—(१) २४ साल तक ब्रह्मचर्य, (२) ४४ साल तक गृहस्थाश्रम और समाजसेवा, (३) ६८ के बाद ४८ साल आत्मचिंतन। कुल आयु ११६ साल की। ईशावास्य में जिजीविषेत् शत समाः कहा है। वेद में पुरुष का आयु शतायु बताया है। महाभारत में १०० से ज्यादा आयु बतायी है। उपनिषद में आता है—यह षोडश वर्षवान् भवीत्—जो इस प्रकार सोचेगा वह ११६ साल जियेगा। अंग्रेजी में २८ पौंड का एक क्वार्टर बनाया है। ४ क्वार्टर का एक हंड्रेडवेट, २८ के चार गुना ११२, उसका हंड्रेडवेट बनाया। पौंड का सैंकड़ा ११२ होता है। श्रीकृष्ण ११६ साल जीये। जयप्रकाशजी को ११६ साल जीना चाहिए और उसकी जिम्मेवारी प्रभावती पर।''

दो दिन, दो बैठकों में करीब छः घंटे चर्चा हुई। तीसरी बैठक दूसरे दिन दोपहर में हुई। उस दिन ज्यादा बातें नहीं हो रही थीं, बाबा भी कम बोल रहे थे और जे० पी० भी। अधिक समय खामोशी में ही बीता। किसी ने जे० पी० से कहा—''आप तो कह रहे थे बहुत बातें करनी हैं, और आप कुछ बोलते ही नहीं हैं।'' जे० पी० ने मुस्कराते हुए जवाब दिया—''बोलने से ही बातें होती हैं, ऐसा नहीं, निकट बैठने से भी बातें हो जाती हैं।''

१६ तारीख को दो बजे जे० पी० पूना की ओर चले गये। उन्हें विदा देने के लिए बाबा प्लेटफार्म पर उतर कर गाड़ी के पास खड़े हो गये थे।

× × ×

आत्म सम्पर्क

मैत्री आश्रम, असम से अमलप्रभाबाई देका, शोभनाताई रानडे, गुणदा बहन तथा प्रवीणा बहन आयी थीं। मैत्री आश्रम के सर्वाङ्गीण कार्य के बारे में बाबा से विस्तार से बातें हुईं। वहां का कार्यक्रम किस प्रकार हो, इसकी चर्चा चली। बाबा एक कविता गुनगुनाने लगे—

''दिवस बोलतो काम करा,
रात्र विचार करा मनी।
—रात कहती है कि चिंतन करो,
दिन बोलता है काम करो।
एकचि तारा दिन दावी,
असंख्य भास्कर परिमित

—दिन में एक ही तारे का दर्शन होता है—सूर्य छोटा-सा सितारा है—और रात में असंख्य भास्कर दीखते हैं। दिन हम पृथ्वी को खोलता है, लेकिन रात, एजनी अनन्त आकाश को, इसलिए दिन में जनसम्पर्क, सृष्टि संपर्क हो और रात में आत्मसम्पर्क, चित्तसम्पर्क।''

भारत की एकता के लिए नागरी लिपि चलाने की दृष्टि से बम्बई से भूदान पत्रिका में एक कालम नागरी में

देने का बाबा का सुझाव वाईडेकू ने मान्य किया है।

तेनाली (आंध्र) के डा० सूर्यनारायण पत्नी के साथ आये थे। साथ उनके साथी श्री जनार्दन स्वामी तथा मित्र कृष्णमूर्ति भी थे। तीन-चार दिन यहाँ रहे। उनसे भी नागरी लिपि के सबन्ध में बातें हुईं। उन्होंने भी तेलगू साम्ययोगमु नागरी में छापने का मान्य किया है।

भगवान का दर्शन

डाक्टर के साथ आये हुए उनके मित्र ने बाबा से कुछ सवाल किये थे उनमें एक सवाल था—'आप ने भगवान का दर्शन किया है ?' बाबा ने कहा — 'जी हाँ ! दर्शन ही नहीं, भगवान से बातचीत भी करता हूँ···मेरे सामने ये सब क्या दर्शन हैं ? ये सब भगवान ही हैं। हमने पदयात्रा में ऐसा ही दर्शन किया था—सहस्र शीर्षः सहस्रपादः। जिनसे बातें करता हूँ, वे भगवान हैं, यहाँ जमीन से मूर्तियाँ निकलीं वे भी भगवान हैं, सामने ये पेड हैं, वे भी भगवान हैं ।

रोज सुबह, खेती-सफाई-काम के बाद, करीब ७-३० बजे बाबा और काकाजी ध्यान करते हैं। ध्यान के बाद बाबा काकाजी से उनकी निद्रा, आहार आदि के बारे में पूछताछ करते हैं। बीच में काकाजी को भी चक्कर आते थे, तब बाबा ने काकाजी से पूछा— "चक्र, शौच, क्षुधा, निद्रा, सब ठीक ?" एक दिन, ध्यान के बाद रोज की प्रश्नोत्तरी खतम हुई, तब काकाजी ने बाबा के पाँव पर मस्तक रखकर प्रणाम किया। आज इस तरह प्रणाम क्यों, देखनेवालों के मन में जिज्ञासा उठी। बाबा ने कहा— "आज बालूभाई को ८२ वर्ष पूरे हुए, ३४ अभी बाकी हैं।" पास में प्रवीणा खड़ी थी। उसकी ओर देखते हुए बाबा ने कहा—"तुम ३४ हो, ८२ पूर्ण करो।" और फिर हँसते हुए बाबा कमरे में चले गये।

शाम को प्रार्थना के पूर्व बाबा ने कहा—"आज आषाढ़ वद्य चतुर्दशी। आज वद्य त्रयोदशी को नामदेव की पुण्यतिथि। दूसरे दिन बालूभाई का जन्म है। हमारा भाग्य है कि वे हमारे बीच रहते हैं। वे अपने को ११ साल का बच्चा मानते हैं (व्र० वि० मं० आकर बालूभाई को ११ साल पूर्ण हुए)। उसके पहले ५० साल उन्होंने गांधीजी के आन्दोलन में काम किया। धुलिया जिले का हर आदमी उनको जानता है। अभी उन्होंने ब्रह्मविद्या पर एक पुस्तक लिखी है। यह प्रकाशित होनेवाली है। परमात्मा करें, हम लोगों का सौभाग्य हो कि साथ साधना करने का मौका और मिले।"

"इन दिनों में एक लोकविलक्षण विचार करता हूँ। यूरोप के टुकड़े-टुकड़े थे। अब वह नजदीक आ रहा है। क्योंकि यूरोप भर में एक ही लिपि चलती है। हिन्दुस्तान टूटने की अवस्था में है। हिन्दुस्तान को जोड़ने के लिए हिन्दी से ज्यादा नागरी का उपयोग होगा। उसीसे भारत जुटेगा। आप अपने अखबार का एकाध कालम नागरी में छापें। भाषा अंग्रेजी हो, पर लिपि नागरी हो। नागरी के प्रचार के लिए वह एक साधन होगा। नागरी में डिसाईज (शुद्ध) उच्चारण हो सके इस तरह छापना चाहिए ।"

नागपुर-टाईम्स के संपादक अनंतराव दीवड़े से बाबा बातें कर रहे थे।

बंगला देश सरकार को तुरंत मान्यता दें

हाल ही बंगला देश के सबन्ध में बाबा के विचार अखबारों में प्रकाशित हुए हैं। बम्बई के मराठा दैनिक के प्रतिनिधि बाबा से मिलने आये थे। उन्होंने इस सम्बन्ध में सवाल किया। बाबा ने कहा—"बाबा ने दो बातें कही हैं। यह जो कहा है कि भारत निःशस्त्रीकरण करे, यह है बाबा का पागलपन ! और यह जो कहा है कि बंगला देश को सरकार तुरंत मान्यता दे, वह है बाबा का विज्डम (बुद्धिमानी)। बाबा के ब्रेन (दिमाग) में एक कोने में पागलपन है और दूसरे कोने में विज्डम !"

× × ×

खानदेश के देवराम नारखेडे, आस्ट्रेलिया में भारतीय राजदूतावास में काम किया। खानदेश में समाज-सेवा करते हुए कड़ुए घूंट पीने के बावजूद भी अपनी श्रद्धा को अडिग रखनेवाले ! आज उनको सेवाकार्य करते हुए दिखायी देती है समाज में शराबखोरी, भ्रष्टाचार, व्यभिचार। आज समाज में इतना पतन हुआ है, कैसे काम होगा ?

बाबा कालिदास सुनाते हैं—"दशरथ को कौन से व्यसन नहीं थे : न मृगयाभिरतिः—शिकार के लिए नहीं जाता था। न दुरोदर—जुआ नहीं खेलता था। न च शशिप्रतिमाभरणं मधु—शराब नहीं पीता था। सुन्दर प्याला है, उसमें चन्द्र का प्रतिबिम्ब पड़ा है, ऐसी शराब उसे पसंद नहीं थी। तमुदयाय न वा नवयौवना प्रियतमा यतमानमपाहृत—नवयौवना का उसे आकर्षण नहीं था। यानी वह व्यभिचार नहीं करता था। अब ये व्यसन उसे नहीं थे, यानी क्या ? दूसरों को थे, इत्यर्थः। किसी बड़े व्यक्ति का इस तरह वर्णन करने का मतलब होता है, दूसरों को ये व्यसन थे। नहीं तो बड़े व्यक्ति का वर्णन करते हुए उनके गुणों का वर्णन होगा। शराब पीता नहीं, व्यभिचार करता नहीं, जुआ खेलता नहीं, ऐसा वर्णन कैसे होगा ? यह मैं इसलिए कह रहा हूँ कि ये सारे व्यसन सनातन हैं। आज ही समाज बिगड़ा है, यह कल्पना गलत है। भागवत में आया है— अर्थस्य साधने सिद्धे उत्कर्षे रक्षणे व्यये। नाशोपभोग आयासस् त्रासश् चिन्ता भ्रमो नृणाम्—पैसा कमाने में, उसकी वृद्धि करने में, संभालने में, खर्च करने में, उपभोग लेते वक्त इत्यादि में मनुष्य को आयास यानी शारीरिक कष्ट होते हैं, त्रास यानी मानसिक चिन्ता होती है। और आगे कहते हैं—एते पंचदश

भारत-रूस संधि : भारत के कुछ प्रमुख अखबारों की प्रतिक्रियाएँ

(भारत-रूस संधि का यद्यपि पूरे देश ने एक स्वर से स्वागत किया है, तथापि तात्कालिक उत्साह से हटकर दूरगामी सतर्कता बरतने की राय विभिन्न पत्रों में व्यक्त की गयी है। कुछ प्रमुख भारतीय पत्रों की प्रतिक्रियाओं का सारांश यहाँ प्रस्तुत है। स०)

टाइम्स आफ इण्डिया ने लिखा है कि इस संधि से भारत गुट-निरपेक्षता की नीति से विमुख हुआ है, इस आधार पर इसकी टीका की जा सकती है। परन्तु वस्तुस्थिति यह है कि कोई भी नीति सर्वकालीन नहीं हो सकती, खासकर तेजी से बदलती हुई और खतरनाक परिस्थिति में। इस संधि का आशय यदि यह हो कि अब भारत सरकार निर्भीक होकर बंगला देश की मुक्ति-वाहिनी को मदद देगी तो देश इसका स्वागत करेगा। पर इस संधि का आशय यदि यह हो कि अब वह स्वतन्त्र निर्णय नहीं ले सकेगी तो लोगों को इससे बहुत निराशा होगी। अभी लोगों के मन पर जो बात सर्वोपरि है वह है बंगला देश की मान्यता की, और वह भी शीघ्र। इस सम्बन्ध में दो बातें ध्यान देने योग्य हैं। एक तो यह कि वर्तमान अखण्ड पाकिस्तान को स्वीकार कर अवामी लीगवाले पाकिस्तानी फौजियों से समझौता कतई नहीं करेंगे। और दूसरी यह कि उधर पूर्व बंगाल पर सैनिक सत्ता अपना पंजा जमाती चली जाय और इधर भारत सत्तर लाख विस्थापितों का बोझ ढो-ढोकर अपने आर्थिक, राजनैतिक और सामाजिक ढाँचे की कमर तोड़ ले, यह नहीं हो सकता। शरणार्थी यहाँ से शीघ्र वापस जायँ, इसका रास्ता निकालना पड़ेगा। इसका अर्थ यह हुआ कि यदि भारत पाकिस्तान के साथ युद्ध करने से अलग रहना चाहता है तो इसे इतने बड़े पैमाने पर मुक्ति-वाहिनी को मदद देनी चाहिए कि वह अनेक वर्षों के बदले चन्द महीनों में बंगला देश को स्वतन्त्र कर ले। भारत सरकार ने यह महसूस किया कि सोवियत सहायता के बिना इस खतरे को वह उठा नहीं सकती। इसलिए उसने संधि की। अब आगामी घटनाओं के आधार पर ही इसके लाभ-हानि को आँका जा सकेगा।

इण्डियन एक्सप्रेस की राय में इस संधि को सैनिक संधि नहीं कहा जा सकता। यह सोवियत अरब संधि से, जो कुछ ही सप्ताह पूर्व की गयी, भिन्न है। उस संधि में रूस ने अरब देश को हथियार देने और उसकी सेना को प्रशिक्षित करने का भी जिम्मा लिया है।

भारत-रूस की यह संधि दो बराबर हैसियत वालों की संधि है, एक बड़े राष्ट्र और दूसरे पराश्रित राष्ट्र के बीच की नहीं है। भारत की गुट निरपेक्षता का निर्वाह करते हुए यह संधि की गयी है। किसी बाहरी देश के आक्रमण करने पर दोनों देश तुरन्त एक दूसरे से 'राय-मशविरा' करेंगे, संधि में इस बात पर बल दिया गया है।

भारत और पूर्व एशिया में जो परिस्थिति बन रही है, यह संधि उसी का प्रतिफल है। सोवियत रूस को चीन अपना प्रधान शत्रु मानता है। चीन से अमेरिका की बढ़ती समीपता की ओर है। इसे रूस शंका की नजर से देखता है। सामान्य तौर पर भारत चीन के प्रति अमेरिका के नये रुख का स्वागत करता, परन्तु वाशिंगटन-पेकिंग-इस्लामाबाद की नयी धुरी के बनने से भारत का बेचैन हो जाना स्वाभाविक है। पूर्व बंगाल की जनता के दमन के लिए चीन पाकिस्तान को हथियार दे रहा है। निक्सन ने अमेरिका की जनता की राय और 'हाउस आफ रिप्रेजेन्टेटिव्स' के प्रस्ताव की घोर उपेक्षा करते हुए याहिया खाँ को हथियार और आर्थिक सहायता देना जारी रखा है। पूर्व बंगाल में जो नर-संहार किया जा रहा है तथा पूरे पाकिस्तान में जो गणतंत्र की हत्या की जा रही है, अमेरिका ने उसे भी नजरअन्दाज कर दिया है।

कहा जा सकता है कि इस संधि के कारण भारत ने गुट निरपेक्षता की नीति छोड़ दी। पर एशिया में नये शक्ति-संतुलन को देख भारत ने अपने पुराने रुख को नयी परिस्थिति के अनुकूल बनाया है।

इकॉनामिक टाइम्स के अनुसार यह संधि भारत की विदेश नीति में एक ऐतिहासिक मोड़ है। गुटनिरपेक्षता के कारण भारत अब तक सैनिक संधियों से अलग रह रहा था। पर अब परिस्थिति बदल गयी है। पाकिस्तान की ओर से युद्ध की धमकी सुनने को यह देश अभ्यस्त हो चुका था। पर इस समय खतरे की बात यह है कि याहिया शासन अमेरिका और चीन के बूते पर यह धमकी दे रहा है। उधर वाशिंगटन ने दिल्ली पर यह दबाव डालने में कोई कसर नहीं रखी कि इस्लामाबाद को अपनी राह चलने दिया जाय।

अमेरिका-चीन समझौते का क्या स्वरूप होगा, यह अभी भविष्य के गर्भ में है। परन्तु भारत और पाकिस्तान के सम्बन्ध में दोनों की नीति समानान्तर है। ऐसी हालत में भारत के विरुद्ध जो शक्तियाँ इकट्ठी हो रही हैं, उन्हें लाचार हो चुपचाप बैठे देखते नहीं रहा जा सकता था। उन्हें बे-असर करने के लिए कुछ करना ही था। भारत का यह कदम राष्ट्रीय सुरक्षा और धर्म निरपेक्षता

—अनर्थ—उसके पन्द्रह अनर्थ हैं—स्तेय हिंसानृत दम्भ काम क्रोध स्मयो मद। भेदो वैरमविश्वासः संस्पर्धा व्यसनानि च। हम इनका विवरण (ब्योरा) जानते नहीं, लेकिन भागवतकार गिनाकर लिखते हैं। इन पन्द्रहों दुर्गुणों—अनर्थों को चाहिए कि वह उससे अलग रहे। भागवत के जमाने से यह चला है। अनर्थ का प्रमाण बढ़ा, इसका कारण यह है कि पैसा बढ़ा है। ग्रामीण समाज से पैसा निकाल ही देना चाहिए।''

—कुसुम

(सेक्युलरिज्म) की रक्षा के हित में है।

इस संधि से पाकिस्तान भारत पर आक्रमण करने का इरादा छोड़ दे सकता है। तत्काल मड़रानेवाले खतरे को टालने में भारत सफल हो गया। पर अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में इस संधि का गहरा असर पड़नेवाला है। भारत के भौगोलिक महत्व को समझने में अमेरिका की अपेक्षा सोवियत रूस ने अधिक दूरदर्शिता दिखायी है।

हिन्दुस्तान टाइम्स के अनुसार यह संधि भारत को सोवियत यूनियन के साथ किसी सोवियत सैनिक कार्रवाई के साथ नहीं बांधती। फिर भी इसमें शक नहीं कि सुरक्षा-व्यवस्था के लिए संसार के दो अति शक्तिशाली राष्ट्रों में से एक के साथ गठबन्धन कर भारत ने गुट-निरपेक्षता की नीति छोड़ दी है।

चीन और पाकिस्तान की प्रतिक्रिया भारत के विपरीत अब और अधिक तीखी हो सकती है।

अमेरिकी-चीनी मित्रता ने रूस के मन में भय पैदा किया। इस कारण वह भारत की ओर मुड़ा। अमेरिका में वियतनाम-युद्ध के खिलाफ जनमत बन रहा है। यूरोप में उसका मुख्य प्रतिद्वन्द्वी रूस है। रूस पश्चिमी एशिया के तेल-बहुल क्षेत्र में, उत्तरी अफ्रीका में और भारत महासागर में घुस न सके, यह अमेरिका की चेष्टा है। इसी दृष्टि से पाकिस्तान की महत्ता उसकी नजरों में है।

चीन को अपना जागतिक हित साधने में पाकिस्तान का उतना अधिक महत्व नहीं है कि उसके कारण वह हिमालय की भारत-चीन सीमा पर युद्ध में फंसना पसन्द करेगा। और, फिर भारत-चीन के युद्ध में अपने हित की रक्षा की दृष्टि से रूस खड़ा-खड़ा मुंह नहीं ताकता रहेगा। दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि संधि के बिना भी वर्तमान जागतिक भूमिका में रूस की मदद भारत को मिलनेवाली थी ही। भारत-रूस के इस संधि से शीतयुद्ध का एक नया अध्याय शुरू हो सकता है जिसकी रणभूमि भारत हो। क्या यह माना जाय कि दूरदृष्टि के अभाव में अल्पकालीन हित के लिए भारत ने दीर्घ-कालीन संधि कर ली? और क्या इस तरह जाने-अनजाने वह रूस-चीन के आपसी झगड़े में पिस नहीं जायगा? इस संधि से बंगला देश के बारे में भारत को क्या सहूलियत मिली, अभी यह कहना मुश्किल है।

अमृत बाजार पत्रिका की राय में भारत-रूस संधि किसी तीसरे देश के विरोध में नहीं है। इसका पूरा जोर जागतिक शान्ति और अन्तर्राष्ट्रीय सुरक्षा पर है। यह संधि गुट-निरपेक्षता के एकदम अनुकूल है। इसका असर सम्पूर्ण दक्षिण-पूर्व एशिया पर पड़नेवाला है।

ऊपर-ऊपर से देखने पर यह लग सकता है कि भारत पिछले दो दशकों से चली आ रही गुट-निरपेक्षता की विदेश-नीति से हट रहा है, पर इसे गौर से देखने पर समझ में आ जाता है कि यह गुट-निरपेक्षता को मजबूत करनेवाला है।

स्टेट्समैन ने लिखा है कि यह संधि एक तरह से सैनिक संधि है। यह इस आशा से की गयी है कि पाकिस्तान भारत पर चढ़ाई करने की हिम्मत नहीं करेगा। संधि में रूस की जिस मदद की चर्चा है उसका निहित अर्थ यह है कि पाकिस्तान यदि चढ़ाई कर दे तो अमेरिका और चीन उसकी मदद करेंगे ही।

निक्सन की नीति यद्यपि पाकिस्तान को सहायता देने की है तथापि यह मानने का कोई भी कारण नहीं है कि पाकिस्तान जब भारत पर चढ़ाई कर देगा तो अमेरिका उसकी मदद करेगा ही या उसे नजरअन्दाज कर देगा। न यह मानने का कोई कारण है कि चीन ने यह जिम्मा ले लिया है कि इस उपमहादेश में पाकिस्तान चाहे जो भी उत्पात करता रहे, हर हालत में वह उसकी मदद करता रहेगा।

अमेरिका, चीन और पाकिस्तान की दुरभिसंधि से भारत घबड़ाया हुआ सा लगता है। इसलिए यह संधि जल्दीबाजी में की गयी लगती है। चीन-अमेरिका की दोस्ती अभी बहुत दूर की बात है। भारत उपमहादेश में होनेवाले युद्ध से न तो चीन और न अमेरिका को ही कोई लाभ होनेवाला है। पाकिस्तान युद्ध करने का चाहे जितना भी दम भरता हो, वह जिस पचड़े में अभी पड़ा है, उससे निकलने के लिए उसने यदि युद्ध छेड़ा तो उसके वर्तमान सहायक उसका पल्ला छोड़ देंगे इस बात की सम्भावना है। यह अनुमान किया जा सकता है कि इस संधि में रूस का स्वार्थ जागतिक है। भारत की सुरक्षा अथवा बंगला देश में उसकी दिलचस्पी प्रासंगिक है। ■

प्रस्तुतकर्ता : हेमन्त सिंह

गुजरात के भड़ौच जिले में पुष्टि के प्रयास

गुजरात के भड़ौच जिले के २५० गाँवों में ग्रामदान-संकल्प-पत्र पर साधारणतः ठीक तादाद में हस्ताक्षर हुए हैं। आमोद तहसील के ५५ गाँवों में से ३५ गाँवों में ग्रामदान-संकल्प हुआ है। गत जनवरी माह से यहाँ पुष्टि-काम का प्रारम्भ हुआ। पिछले छह महीनों में ५४ गाँवों में और अप्रैल में ७ टोलियों द्वारा सात दिन की सामूहिक यात्रा ३० गाँवों में हुई।

अब तक १४ गाँवों में ग्रामस्वराज्य समिति का औपचारिक ढंग से निर्माण हुआ। कार्य-क्षेत्र में बार-बार जाने से वातावरण अच्छा बनता है और ज्यादा गाँवों में समितियाँ बनेंगी ऐसा महसूस होता है।

यहाँ खेतिहर मजदूर की आबादी अधिक है। वे अधिकतर भील लोग हैं। मजदूरी की दर एक रुपये से दो-ढाई रुपये तक है। यह बहुत कम है। अमीर और गरीब के बीच विषमता का प्रमाण ज्यादा है। इसलिए दोनों में संघर्ष होता है और सतत तनाव रहता है।

यहाँ मुस्लिम समाज की आबादी भी काफी है। सात गाँव तो पूरे मुस्लिमों के हैं। तुलनात्मक ढंग से देखें तो मुस्लिम समाज उदार बनता है, सामूहिक काम करने की कुछ क्षमता भी रखता है और मजदूरों से सहानुभूतिपूर्ण और उदार व्यवहार करता है।

अप्रैल माह में सामूहिक यात्रा के बाद ऐसे ही मजदूरों ने मजदूरी की दर बढ़ाने के लिए हड़ताल करने का प्रयत्न किया तो तहसील में ऐसा एक भ्रम पैदा हुआ कि सर्वोदय कार्यकर्ता मजदूरों को ज्यादा बढ़ावा देते हैं। इससे कार्य की दृष्टि से विरोधी वातावरण पैदा हुआ। इससे फायदा यह हुआ कि लोग कुछ सर्वोदय के विचार के बारे में सोचने लगे।

अभी वातावरण कुछ साफ होता जा रहा है। नारेश्वर गाँव में तीन दाताओं ने बीसवें हिस्से की जमीन भूमिहीन खेतिहर मजदूरों में बाँटी। कार्यक्रम भूदान जैसा ही था, ग्रामदान की दृष्टि से सामूहिक प्रेरणा नहीं थी।

यहाँ के जमींदार तो ग्रामदान में शामिल हैं, फिर भी बीसवें हिस्से की जमीन नहीं दे रहे हैं। इसके मूल में जमींदारों की लोभ-वृत्ति भी होगी और मजदूरों के काम करने की अक्षमता, काम करने में लापरवाही भी। छह महीने हुए, फिर भी ग्रामस्वराज्य का कार्यक्रम बहुत मंदगति से चल रहा है। १५ जुलाई से तहसील में तीन केन्द्र शुरू किये हैं, जो निम्न प्रकार हैं

केन्द्र	गाँव	कार्यकर्ता
दसर	१७	२
आमोद	२०	२
समनी	१८	२

पहले कार्यकर्ता हर गाँव में जाकर सम्पर्क बढ़ाते हुए सर्वोदय-साहित्य का प्रचार करेंगे। जहाँ-जहाँ ग्रामस्वराज्य समिति का निर्माण हुआ है वहाँ जाकर फिर उसे सक्रिय करने का प्रयत्न करना पड़ता है। एक गाँव में लोगों ने आगे के कार्यक्रम के लिए सोचा और प्रस्ताव पास किया। दूसरे ९ गाँवों में समिति की बैठक हुई, लेकिन कोई निर्णय नहीं हुआ। और एक गाँव में समिति की बैठक बुलाने का प्रयत्न किया, फिर भी बैठक नहीं हो पायी। सर्वश्री कान्ता, हरविलास बहन और कान्तिभाई दो माह से तहसील में समय दे रहे हैं। यहाँ निम्नलिखित कठिनाइयाँ हैं।

(१) ग्रामस्वराज्य का काम आगे नहीं बढ़ रहा है।

(२) सामूहिक भावना जागृत नहीं होती है।

(३) हमारी शक्ति और कार्यक्रम मर्यादित हैं।

सब मिलाकर देखें तो काम खास होता नहीं है। फिर भी हम निरुत्साहित नहीं होते हैं, उत्साह बढ़ता ही जाता है। मेरे साथ अम्बालाल भाई ९ महीने से हैं। →

'ओमेगा' शान्तिदल : बंगला देश

प्राप्त सूचनाओं के अनुसार 'ओमेगा' शान्तिदल के आठ सदस्य, जो बरतानिया और अमेरिका के नागरिक हैं, अपनी पूर्व योजना के अनुसार गत १८ अगस्त को भारतीय सीमा पार कर जैसोर रोड से बंगलादेश की सीमा में करीब १५० गज की दूरी तक गये और वहीं पाकिस्तानी सैनिकों द्वारा रोक दिये गये। इस ओमेगा दल के साथ दो मोटर गाड़ियों में पीड़ित नागरिकों के लिए सहायता सामग्री थी। पहली गाड़ी के साथ जो चार ओमेगा-सदस्य थे, उन्हें सैनिक अपने साथ में ले गये। शेष चार को वापस लौटने का आदेश दिया, लेकिन उन्होंने कहा कि 'हम नहीं जायेंगे। आप हमें गिरफ्तार कर सकते हैं।' बाद में इन्हें भी गिरफ्तार करके जैसोर छावनी ले जाया गया और रातभर पूछताछ करने, इन्हें भारतीय जासूस साबित करने, तरह-तरह से अपमानित करने—जिसमें व्यंग्य के लहजे में 'शास्त्रीय गांधीवादी 'सत्याग्रही' कहना भी शामिल था—के बाद दूसरे दिन वापस भारत लौटने को मजबूर कर दिया।

ओमेगा शान्तिदल के एक प्रवक्ता के अनुसार यह दल इसी महीने के अंत तक फिर वहीं-से बंगला देश में प्रवेश करने की कोशिश करेगा।

—अक्टूबर माह में तालुका पंचायत के कर्मचारी, शिक्षक, गाँव के लोग और सर्वोदय कार्यकर्ताओं की सामूहिक शक्ति लगाकर हर गाँव में ग्रामस्वराज्य समिति बनाने का अभियान चलाने की बात सोची गयी है।

भरुच जिले में समग्र काम हो, और दो-तीन तहसीलों में सघन काम हो, ऐसा प्रयत्न कर रहे हैं।

इस माह में २५० रुपये का साहित्य बिका, "भूमिपुत्र" गुजराती पत्रिका के ७० ग्राहक बने।

लोकयात्री बहनों की टोली अभी गुजरात में है। यात्रा ठीक तरह से चल रही है। यात्रा का काम, वैचारिक दृष्टि से गुजरात को अच्छी तरह से मिले ऐसा प्रयत्न कर रहे हैं। —द्वारकादास जोशी

सर्व सेवा संघ के नये प्रकाशन

माता कस्तूरबा

लेखक : डा० बाबूराव जोशी व रमेशचन्द्र ओझा

प्रस्तुत पुस्तिका में माता कस्तूरबा के जीवन की झाँकी दो लेखकों द्वारा प्रस्तुत की गयी है। किशोर वय के लड़के-लड़कियों के लिए प्रेरक पुस्तिका।

मूल्य - रु० १.२५

मेरा बचपन : विनोबा के सहवास में

लेखक बालकोबा भावे

इस छोटी सी पुस्तिका में विनोबाजी के अनुज बालकोबाजी ने अपने बचपन के संस्मरण बड़ी ही सहजता से लिपिबद्ध किये हैं। उस समय के विनोबा के व्यक्तित्व को समझने के लिए ये प्रसंग भी बहुत ज्ञान-सामग्री देते हैं।

मूल्य ० ५०

क्रान्ति : प्रयोग और चिंतन

लेखक धीरेन्द्र मजूमदार

धीरेनदा की अनुभूतिपूर्ण, सशक्त विचारधारा से सर्वोदय जगत के पाठक भलीभाँति परिचित हैं। इस ग्रंथ में उन्होंने भूदान-ग्रामदान आन्दोलन की पृष्ठभूमि में, जन-आधारित क्रान्ति का विवेचन प्रत्यक्ष प्रयोगों तथा अनुभवों की बुनियाद पर किया है। ग्रामीण मानस, ग्रामीण संरचना के मनोविज्ञान तथा कार्यकर्ताओं की मनःस्थिति आदि के आधार पर क्रान्ति-शास्त्र का ऐसा अनोखा विश्लेषण अन्यत्र दुर्लभ है।

मूल्य रु० ६.००

योग

लेखक : राधाकृष्ण नेवटिया

इस छोटी-सी पुस्तक में स्वस्थ रहने के उपायों पर प्रकाश डाला गया है। प्राणायाम, व्यायाम, खान-पान, विचार-विहार आदि की दृष्टि से समझने और करने योग्य साधनों की जानकारी।

मूल्य रु० १.००

रैंडम रिफ्लेक्शंस (अंग्रेजी)

(विचारपोथी का अंग्रेजी अनुवाद)

अनुवादक : वसन्तराव नारगोलकर

विनोबाजी की विचारपोथी में जीवन-प्रेरक विचार-कण हैं। वे नित्य मननीय हैं। यह अंग्रेजी अनुवाद श्री नारगोलकर ने बड़ी मेहनत से तैयार किया है।

मूल्य रु० ६ ००

सर्व सेवा संघ प्रकाशन
राजघाट, वाराणसी

इस अंक में

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २० पैसे), विदेश में २२रु० ; या २५ शिलिंग या ३ डालर।
एक अंक का मूल्य २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिये प्रकाशित एवं मनोहर प्रेस, वाराणसी में मुद्रित

सम्पादक
राममूर्ति

वर्ष : १७ सोमवार
अंक : ४८ ३० अगस्त, '७१

पत्रिका विभाग
सर्व सेवा संघ, राजघाट, वाराणसी-१
फोन : ६४३९१ तार : सर्वसेवा

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

विश्व की जनता और सरकारों से एक और निवेदन

बंगला देश में कत्लेआम करने और वहाँ भुखमरी की स्थिति पैदा करके उस देश की सम्पूर्ण जनता के विरुद्ध जो अपराध किये जा रहे हैं उनसे अन-भिज्ञ होने का दावा कोई देश नहीं कर सकता। ९८ प्रतिशत बहुमत से अवामी लीग के जो प्रतिनिधि चुने गये उनका दमन शुरू कर दिया गया। फलतः ७० से ८० लाख शरणार्थी भागकर भारत आ चुके हैं। उनके अलावे लाखों-लाख लोगों के सिर पर मृत्यु मँडरा रही है।

न्यूवेक (प० जर्मनी) में २५ से ३० जुलाई '७१ तक हुई अपनी बैठक में अन्तर्राष्ट्रीय युद्ध विरोधी संगठन की परिषद ने यह माँग की है कि :

- पाकिस्तान फौरन बंगला देश से अपनी सेना वापस बुला ले,
- बंगला देश के सभी राजनैतिक बंदियों को मुक्त किया जाय और सत्ता अवामी लीग के प्रतिनिधियों को सौंप दी जाय,
- पाकिस्तान सरकार जब तक बंगला देश से बाहर नहीं निकल आती, तब तक हर तरह की सैनिक और आर्थिक सहायता तुरंत बंद की जाय।

यह परिषद हर देश की जनता और सरकार से यह आग्रह करती है कि उन्हें जो भी मदद देनी है वह सीधे बंगला देश को दें, और बंगला देश के निवासियों के आत्म-निर्णय के सिद्धान्त को वे स्वीकार कर लें।

विभिन्न देशों में स्थित अपनी शाखाओं से यह संस्था बंगला देश के सम्बन्ध में किए गये अभिक्रमों को समर्थन देने का निवेदन करती है। ऑपरेशन ओमेगा उनमें एक है। इसका उद्देश्य है कि बंगला देश के लोगों को राहत की सामग्री सीधे पहुँचायें। इस क्रम में पाकिस्तानी फौज यदि उन्हें रोके तो आवश्यकता पड़ने पर वे अहिंसक प्रतिकार भी करेंगे।

डब्ल्यू० आर० आई० अपनी सभी शाखाओं से अनुरोध करता है कि वे इसके लिए एक व्यापक अभियान आरम्भ कर दें कि जो भी सरकार या प्राइवेट फर्म पाकिस्तान को हथियार भेज रही है, वह उसे रोक दे।

(डब्लू० आर० आई० न्यूजलेटर से)

• हिंसा-अहिंसा का सवाल : बंगला देश का सन्दर्भ •

आगामी चुनाव और मतदाता शिक्षण की पूर्व तयारी

मैसूर, गुजरात और पंजाब में इस समय राष्ट्रपति शासन है। आन्ध्र, महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश, राजस्थान, असम, हिमाचल प्रदेश तथा जम्मू-कश्मीर की प्रान्तीय विधान सभाओं की अवधि अगली फरवरी '७२ में समाप्त हो रही है। अनुकूल हवा (जीतने की उम्मीद) देखकर शासक कांग्रेस दल उत्तर प्रदेश और बिहार में भी चुनाव कराने की सोच सकता है। प० बंगाल भी यद्यपि राष्ट्रपति शासन में है तथापि वहाँ अभी अमन-चैन की स्थिति, पडोस में बंगला देश का संकट और राज्य में लाखों-लाख उद्वासितों की संख्या को ध्यान में रख वहाँ तत्काल कोई चुनाव कराना सम्भव नहीं होगा।

उपर्युक्त एक दर्जन राज्यों की विधान-सभाओं के चुनाव के कारण पूरे देश में एक छोटे आम-चुनाव का सा वातावरण बननेवाला है।

सर्व सेवा संघ ने मतदाता-शिक्षण का काम हाथ में लिया है। संघ के अगले अधिवेशन में मतदाता-शिक्षण भी चर्चा का मुख्य मुद्दा है।

आम चुनाव जब बहुत नजदीक आ जाता है तब जनमानस 'चुनाव उत्तेजना' से इस तरह ग्रसित रहता है कि वह न तो पूर्व-आग्रह को ही छोड़ पाता और न कोई नवीन विचार ही ग्रहण कर पाता है। सामान्य समय में चुनाव के सम्बन्ध में कुछ सुनने-समझने में वह रुचि ही नहीं दिखाता। उसे वह बेसुरा राग मानता है।

सर्वोदय विचारकों के सम्बन्ध में जनमानस में कुछ अच्छी और कुछ गलत प्रतिमाएँ बनी हैं। उनमें एक यह है कि ये लोग कुछ अच्छी-अच्छी बातें कहते हैं, पर वे व्यावहारिक नहीं होतीं। इसलिए सामान्य समय में भी उनकी बातें सुनने की ओर लोगों का कम झुकाव रहता है। पूर्व-आग्रह और उत्तेजना के समय तो उनके मन की ग्रहणशीलता की ओर भी उम्मीद नहीं की जा सकती।

दूसरी ओर चुनाव एक ऐसा सर्व-रोचक विषय है कि उस पर कुछ कहने और सुनने की रुचि सबकी हो जाती है। लोगों का मन कहने-सुनने के लिए खुलता है। संसद के पिछले मध्यावधि चुनाव के समय जिन मित्रों ने मतदाता प्रशिक्षण का कुछ काम किया था उन्हें बड़ा ही उत्साहवर्द्धक अनुभव आया है।

चुनाव की सम्भावना की खबर चूँकि अखबारों में आ गयी है इसलिए अब लोकमानस इस अवसर पर खुलनेवाला है। मेरा सुझाव यह है कि सर्व सेवा संघ मतदाता प्रशिक्षण समिति यथाशीघ्र सुचिन्तित और व्यवस्थित फोल्डर और पुस्तिकाएँ प्रकाशित करे, जिससे कि लोगों के बीच पहुँचने और पहुँचाने के लिए स्थानीय सर्वोदय मण्डलों और लोक-सेवकों को पर्याप्त सामग्री और मार्गदर्शन मिले।

चुनाव उत्तेजना फैलने के पहले तक हम जितनी बातें जनसाधारण तक पहुँचा सकेंगे, वे लोगों के लिए उतनी अधिक स्पष्ट होंगी।

स्थानीय और जिला सर्वोदय मण्डलों को यानी लोकसेवकों और इस काम में रुचि रखनेवाले नागरिकों को ही मुख्य-रूप से मतदाता प्रशिक्षण का काम करना होता है। जहाँ स्थानीय तौर पर ऐसे पर्चे, पोस्टर, फोल्डर तैयार किये जाते हैं, उनकी भी प्रतियाँ सर्व सेवा संघ की उक्त समिति एवं व्यक्तियों के पास भेज दी जानी चाहिए, तो उनके आधार पर सार्वदेशिक सामग्री तैयार करने में एवं स्थानीय मण्डलों का मार्गदर्शन करने में सर्व सेवा संघ को सुविधा हो सकती है।

—हेमनाथ सिंह

सर्व सेवा संघ का अधिवेशन

सर्व सेवा संघ का छः माही अधिवेशन ता० २९ से ३१ अक्तूबर तक भोपाल में होगा। देशभर के सब लोक-सेवकों को इसमें उपस्थित रहकर भाग लेने का निमंत्रण है।

इस अधिवेशन में मुख्य दो विषय रहेंगे : (१) सकल्पित ग्रामदानों की प्राप्ति एवं उनकी पुष्टि (२) लोक-नीति, मतदाता-शिक्षण। आपको याद होगा कि नासिक में दूसरे विषय पर चर्चा हुई थी और भिन्न-भिन्न राय प्रकट हुई थी। समय के अभाव में अधिक चर्चा नहीं हो सकी थी। जयप्रकाशजी ने उस समय सुझाया था कि इसी को मुख्य विषय मानकर पर्याप्त समय लेकर चर्चा की जाय और इस विषय पर सर्वसम्मत राय बनायी जाय। बंगला देश का विषय उस समय तक बना रहा तो वह भी चर्चा का एक विषय रहेगा। इन विषयों के अलावा और कोई महत्वपूर्ण विषय आप सुझाना चाहें तो सुझा सकते हैं।

सभी जिला सर्वोदय मंडलों एवं प्राथमिक सर्वोदय मंडलों से प्रार्थना है कि वे अपने-अपने मंडल की बैठक जल्द बुलाकर उसमें इन विषयों की चर्चा करें और वहाँ प्रकट होनेवाली सामूहिक राय प्रदेश सर्वोदय मंडल को लिख भेजें। इसके बाद प्रदेश सर्वोदय मंडल की बैठक बुलायी जाय, वहाँ जिलों से आयी हुई रायों की चर्चा हो और उसका निष्कर्ष ता० ५ अक्तूबर तक सर्व सेवा संघ, गोपुरी, वर्धा को प्रदेश सर्वोदय मंडल भेजने की कृपा करें।

• सब प्रदेश सर्वोदय मंडल अपने-अपने प्रदेश के लोकसेवकों की अद्यतन सूची ३० सितम्बर तक गोपुरी कार्यालय में भेज देने की कृपा करें। इसके लिए जिलों से अधिकृत सूचियाँ मँगाने का प्रबन्ध उन्हें करना चाहिए।

भोपाल मध्य रेलवे के बम्बई-दिल्ली एवं मद्रास-दिल्ली लाइन पर जंक्शन स्टेशन है। भोपाल का पता : श्री हेमदेव शर्मा, ७६, मालवीय नगर, भोपाल (मध्य प्रदेश)

—ठाकुरदास बंग
मंत्री
सर्व सेवा संघ

सम्पादकीय

सत्ता तो मिल गयी, लेकिन स्वतंत्र कब होंगे ?

स्वतंत्रता दिवस के उपलक्ष्य में लिखे गये अपने विशेष लेख में एक लेखक ने यह प्रश्न उठाया है कि '१५ अगस्त १९४७ को भारत एक प्रभुसत्ता-सम्पन्न राज्य (सावरेन स्टेट) तो हो गया, लेकिन भारत के लोग स्वतंत्र कब होंगे ?'

लेखक के सामने प्रश्न है मानसिक और सांस्कृतिक स्वतंत्रता का। उसने कहा है कि हमारे मानस की जब यह स्थिति है कि हम आज भी पश्चिम को ही अपना अगुआ मानते हैं, जब हम हर चीज में पश्चिम के ही तौर-तरीकों का अनुसरण करने में गौरव मानते हैं तो हमारी स्वतंत्रता किस बात में है ? हमारे युवक-युवतियां हिप्पियों के कपड़े पहन रही हैं। दिल्ली के शासक-वर्ग के सामने सितार-वादन-समारोह में हमारे सितारवादक का परिचय यहूदी मेन्यूहिन देता है। अभी हाल में दिल्ली के एक महिला कालेज की छात्राओं ने सौन्दर्य-प्रतियोगिता का विरोध किया। क्यों? इसलिए नहीं कि इस तरह की प्रतियोगिता हमारी संस्कृति के विरुद्ध है, बल्कि इसलिए कि पश्चिम में वैटमिनेट ने पहले विरोध किया था। उसकी देखादेखी दिल्ली की कुछ छात्राओं ने भी किया।

स्टेशन पर, सड़क पर, बाजार में और पत्र-पत्रिकाओं में विज्ञापनों को देख लीजिए। सेक्स ही सेक्स रहता है, सेक्स के सिवाय दूसरा कुछ रहता ही नहीं। यहाँ तक कि पिछले फिल्म-समारोह के अवसर पर कुछ युवक कांग्रेस मंत्रियों ने खुलकर फिल्मों में नग्नता का समर्थन किया। सिद्धान्त क्या बताया गया था ? आधुनिकता। आधुनिकता के नाम में यह सब आवश्यक है, क्षम्य है।

आजकल मुक्त प्रेम की बहुत चर्चा होती है। यह सही है कि प्रेम बांधकर रखने की चीज नहीं है, लेकिन स्त्री-पुरुष सम्बन्धों की व्यावसायिकता तथा विवाह की लेन-देन और जाति से मुक्त करने की बात क्यों नहीं होती ? मुक्तता और उच्छृंखलता के बीच कोई रेखा होगी तो उसकी चर्चा क्यों नहीं होती ?

गर्भपात का कानून पास हो और उस पर किसी प्रकार की हलचल न हो, अनियंत्रित सेक्स के साथ-साथ जुए और शराब-खोरी का खुला प्रचार हो, युवक-युवतियाँ चरस और अन्य नशीली चीजों का खुला सेवन करें—ये ऐसी चीजें हैं जो भारतीय संस्कृति के विशुद्धतम मूल्यों के लिए गंभीर चुनौती हैं। फिर भी हम क्या कर रहे हैं ?

सांस्कृतिक दृष्टि से तो हम पश्चिम की आँधी में बहे जा ही रहे हैं राजनीति में भी हमारा वही हाल है। हमारे नेताओं और शासकों का दिमाग, चाहे वे पूँजीवादी विचार के हों या साम्य-वादी, पश्चिम से ही बँधा हुआ है। उन्हें अमेरिका, रूस और चीन के सिवाय दूसरा कुछ दिखायी ही नहीं देता। जब उन्हें पश्चिम से अपनी रीति-नीति का समर्थन मिलता है तब वे अपने को ठीक समझते हैं, अन्यथा नहीं।

यही हाल हमारे योजनाकारों, विद्वानों और बुद्धिवादियों का है। उन्हें पश्चिम का प्रमाण चाहिए, पश्चिम की प्रेरणा और प्रशंसा चाहिए। जो पश्चिम में होता है वही आधुनिक है, वैज्ञानिक है। इस तरह का भ्रम उन्होंने फैला रखा है। लगता है जैसे ऊपर से नीचे तक भारत से भारतीयता को समाप्त करने का एक सुनियोजित षड्यंत्र हो।

गांधीजी ने आधुनिकता और वैज्ञानिकता के नाम में पश्चिम के इस अंधानुकरण के विरुद्ध जेहाद छेड़ा था। उन्होंने आधुनिकता और वैज्ञानिकता के भेद का हमेशा ध्यान रखा। जो वैज्ञानिक था उसे ही उन्होंने स्वीकार किया, तथा आधुनिक हो या पारंपरिक जो अवैज्ञानिक था उसे साहसपूर्वक अस्वीकार किया। लेकिन स्वतंत्रता के बाद यह बात बदल गयी। गांधी के भारत में अंग्रेज के लिए स्थान था, अंग्रेजियत के लिए नहीं, नेहरू के भारत में अंग्रेज के लिए स्थान नहीं था, लेकिन अंग्रेजियत के लिए भरपूर था। परिणाम यह हुआ कि दिल्ली जिस तरह स्वतंत्रता के पहले राजनैतिक दासता का केन्द्र थी उसी तरह स्वतंत्रता के बाद सांस्कृतिक गुलामी का केन्द्र बनी, और बनती ही जा रही है। भारत की राजधानी होते हुए भी आज दिल्ली भारत की परि-स्थिति, भारत की परम्परा, और भारत की प्रतिभा से इतनी दूर है—दूर ही नहीं उसकी इतनी विरोधी है—कि वहाँ जाकर लगता ही नहीं कि यह एक ऐसे देश की राजधानी है जो अभी चौबीस साल पहले इतिहास के सबसे बड़े साम्राज्यवाद से मुक्त हुआ है।

गांधी और माओ की सांस्कृतिक क्रान्ति में अंतर है। माओ ने जबरदस्ती खिड़की बन्द कर साम्राज्यवादी और संशोधनवादी हवा को अपने देश में घुसने से रोका है। लेकिन गांधी ने ऐसा नहीं किया। उन्होंने कहा 'मेरे घर में हर दिशा से हवाएँ आने दो। लेकिन मैं उनके झोंके से अपने पैर नहीं उखड़ने दूंगा।'

आज जीवन के हर क्षेत्र में पश्चिम की हवा से हमारे पैर उखड़ते जा रहे हैं। पश्चिम गेंद की तरह हमें उछाल रहा है। राजनीति से लेकर फैशन तक हर चीज में हम पश्चिम का पिछलग्गू होने में धन्यता का अनुभव कर रहे हैं। यह हमारे नये नेतृत्व की सबसे बड़ी विफलता है—प्रशासन, नियोजन, शिक्षा, सबकी विफलता है। यह देश के संपूर्ण विशिष्ट वर्ग (एलीट) की विफलता है जो हर प्रश्न का उत्तर पश्चिम में ढूँढ़ता है, जिसके हाथ में देश का जीवन है। अंग्रेजी शासन ने देश के जिस 'स्व' को समाप्त किया था उसे गांधी ने वैज्ञानिक और मानवीय आधार दिया, लेकिन अब उस क्रम को आगे बढ़ाने का अवसर आया तो हमने गुलामी की जंजीरों को गले का हार बनाकर पहन लिया।

हम स्वतंत्रता के पचीस समारोह मना चुके। हमने विदेशी →

संविधान में २४वाँ संशोधन

विरोधियों की शंकाएँ : सरकारी समाधान

भारतीय संविधान का निर्माण भारत के जन-प्रतिनिधियों द्वारा किया गया और २६ जनवरी १९५० से लागू हुआ। तब से अनुभव के आधार पर जनहित को ध्यान में रखकर इसमें कई बार संशोधन किये गये। यह २४वां संशोधन सम्पत्ति के अधिकार से सम्बन्धित है। इसमें किसी की सम्पत्ति छीनने का प्रश्न नहीं है। यह संशोधन पार्लियामेन्ट को सम्पत्ति से सम्बन्धित वह अधिकार पुन: देने के लिए है, जिससे सुप्रीम कोर्ट ने इसे 'गोलकनाथ विरुद्ध पंजाब राज्य' केस के फैसले के द्वारा वंचित कर दिया है।

राज्य सभा में इस बिल पर बोलते हुए प्रधान मंत्री ने यह आश्वासन दिया कि इस संशोधन का उद्देश्य न तो मौलिक अधिकारों को समाप्त करने का है, जिसमें सम्पत्ति रखने का अधिकार भी है, और न संविधान को कमजोर बनाने का। इस संशोधन का एकमात्र उद्देश्य है संसद को और संविधान को अधिक मजबूत बनाना।

संसद जनता द्वारा चुने गये प्रतिनिधियों की सभा है। अत: यह लोगों की सामूहिक इच्छा-शक्ति का प्रतिनिधित्व करती है। बदलते हुए समय की मांगों के अनुसार वह यदि संविधान में संशोधन नहीं कर सके तो फिर लोगों का विश्वास ही इसकी शक्ति एवं उपादेयता पर से समाप्त हो जायगा। उन्होंने बताया कि इसी उद्देश्य से कि लोगों का विश्वास संसद पर से उठे नहीं, इस संशोधन के द्वारा उसको संविधान में संशोधन करने का पूर्ण अधिकार (सॉवरेन राइट) पुन: दिया जा रहा है। सामाजिक न्याय और मानवीय प्रगति को ध्यान में रखकर जब आवश्यकता महसूस हो, संसद संविधान में संशोधन कर सकती है।

इस तरह यह संशोधन संविधान के उद्देश्यों के न तो विपरीत है और न यह उससे टकराता है। यह संविधान से असंगत नहीं है।

इस संशोधन पर एक आरोप यह लगाया जाता है कि नागरिक के सम्पत्ति रखने के अधिकार को यह समाप्त करने के लिए एवं उस पर नियंत्रण लगाने के लिए है। इस आरोप के उत्तर में प्रधान मंत्री ने कहा कि किसी की सम्पत्ति को राज्य तभी अधिग्रहण करेगा जब वैसा करना देश के एवं जनता के हित में होगा। यदि व्यक्तिगत सम्पत्ति देशहित अथवा जनहित में बाधक बनेगी तो उसे राज्य द्वारा अधिग्रहित कर लिया जायगा। कुछ विरोधी दलों ने यह प्रचार कर रखा है कि यदि यह संशोधन स्वीकृत हो गया तो हर आदमी अपनी सम्पत्ति से वंचित हो जायगा यह बात सरासर गलत है।

श्रीमती गांधी ने कहा कि हमलोग किसी की भी सम्पत्ति पर हाथ नहीं लगाने वाले हैं। सरकार की मंशा यह है कि हर नागरिक के लिए न्याय का व्यवहार उपलब्ध हो।

कुछ सदस्यों ने यह शंका व्यक्त की कि इस संशोधन से अल्पसंख्यकों के अधिकार पर विपरीत प्रभाव पड़ेगा। प्रधान मंत्री ने आश्वासन दिया कि यह शंका बेबुनियाद है। उन्होंने यह कहा कि स्वयं वे और उनका दल अल्पसंख्यकों—धार्मिक या भाषाई—के अधिकार सुरक्षित रखने के लिए लड़ते रहे हैं। भविष्य में भी उनके अधिकार बनाये रखने के लिए उनका दल प्रयास करता रहेगा।

कुछ लोगों की यह मांग थी कि इस बिल को जनमत संग्रह (रेफरेन्डम) के लिए प्रसारित किया जाय। इसका जवाब देते हुए उन्होंने कहा कि अभी हाल का मध्यावधि चुनाव उनका दल इसी बात पर लड़ा था कि सामाजिक न्याय और आर्थिक प्रगति लाने के लिए वे लोग संविधान में संशोधन करेंगे। लोगों ने उनके दल को जो समर्थन दिया उसे ध्यान में रख इस संशोधन को रेफरेन्डम के लिए प्रसारित करने की कोई आवश्यकता नहीं रह जाती।

शासक दल पर एक आरोप यह लगाया जाता है कि इस संशोधन का मुख्य उद्देश्य है कि प्रधान मंत्री और उनके दल को 'सर्व सत्तावादी अधिकार' (टोटेलीटेरियन पावर्स) दिये जायें। इसका जवाब देते हुए प्रधान मंत्री ने कहा कि इस बिल को तो प्रारम्भ में स्वर्गीय नाथ पै ने लाना चाहा था, जो उनके दल के नहीं थे। इस समय भी इस संशोधन बिल को न सिर्फ उनके दल का समर्थन है बल्कि अन्य अनेक दलों के सदस्यों का भी।

श्रीमती गांधी ने यह जोर देकर कहा कि संसद का न्यायपालिका (ज्युडिशियरी) के साथ कोई संघर्ष नहीं है। उन्होंने यह बताया कि यदि गोलकनाथ केस का फैसला संसद के अधिकार के प्रतिकूल नहीं गया होता, तो इस संशोधन की आवश्यकता ही नहीं पड़ती।

इस संशोधन के समर्थन में कानून के प्रसिद्ध जानकार श्री शीतलवाड़ ने कहा

→आक्रमण से रक्षा के लिए सेना बनायी है, लेकिन अपनी सांस्कृतिक गुलामी से मुक्त होने के लिए क्या किया है? आज देश का मानस पहले से कहीं अधिक नयी चीजें ग्रहण करने को तैयार है। लेकिन वे नयी चीजें क्या हों, यह कौन बतायेगा? यह प्रयोग और संशोधन कब होगा, कहाँ होगा, कि क्या नया, कितना नया, कैसा नया, हमारे लिए अहितकर है? कब बाहर की अंधी नकल छोड़कर भारत के गारे-माटी से भारत का भविष्य गढ़ा जाना शुरू होगा?●

कि कानून की तरह संविधान को भी बदलते हुए समय के अनुकूल ढालना पड़ता है। संविधान में एक बार जो लिख दिया गया उससे आगामी पीढ़ियों को बाँधे रखने का अधिकार किसी को नहीं है।

गोलकनाथ केस पर सुप्रीम कोर्ट ने जो फैसला दिया था उसका हवाला देते हुए उन्होंने कहा कि उसके कारण संविधान को जो धक्का लगा वह तो बहुत पहले ही दुरुस्त कर लिया जाना चाहिए था। खुशी की बात यह है कि वह अब दुरुस्त किया जा रहा है।

उन्होंने यह कहा कि सदन के बाहर एक चर्चा यह चलती है कि इससे लोगों की 'स्वतन्त्रता' संकट में पड़ेगी। उन्होंने सदन का ध्यान इस बात की ओर खींचा कि स्वतन्त्रता की सुरक्षा इस बात पर निर्भर नहीं है कि संविधान में क्या लिखा हुआ है। वह इस पर निर्भर है कि लोग और उनके प्रतिनिधि राष्ट्र के प्रति अपने कर्तव्यों का पालन किस हद तक करते हैं एवं एक दूसरे के प्रति क्या व्यवहार रखते हैं।

उन्होंने सदस्यों को यह राय दी कि संविधान संशोधन का जब भी अवसर आये, तब वे गहराई और सावधानी से विचार करने के बाद ही निर्णय लें। जन-प्रतिनिधि होने के नाते जब वे यह अच्छी तरह समझ लें कि कुछ संशोधन, परिवर्तन आवश्यक हैं, तब गणतांत्रिक भूमिका में उन्हें जो आवश्यक जान पड़े वह उन्हें करना चाहिए।

श्री कुमार मंगलम् ने श्री गोखले से सहमति प्रकट करते हुए यह कहा कि सब बातों से ऊपर की बात तो यह है कि लोगों की जागरूकता और शक्ति ही स्वतन्त्रता की रक्षा के निर्णायक तत्त्व हैं। ब्रिटेन के लोग इन के आधार पर ही अपनी स्वतन्त्रता सुरक्षित रखे हुए हैं।

उन्होंने यह कहा कि जन-प्रतिनिधियों के मुकाबिले कोर्ट में बैठे मात्र ग्यारह बुद्धिमान लोगों पर ही भरोसा रखना लोकतंत्र नहीं है। गोलकनाथ केस का हवाला देते हुए उन्होंने कहा कि उस निर्णय का आधार यह मान्यता है कि जन-प्रतिनिधियों पर भरोसा नहीं किया जा सकता, अतः लोगों को अपने ही विपरीत अपनी हिफाजत करनी है। वस्तुस्थिति तो यह है कि सुरक्षा 'कोर्ट' से नहीं, जनता से ही मिल सकती है।

समाज की आवश्यकता और व्यक्ति के अधिकार के बीच संतुलन बिन्दु का निर्णय करने में प्रतिनिधि-सभा न्यायपालिका से कहीं अधिक उपयुक्त है। इसलिए न्यायाधीश यदि कानून को उस रूप में पेश करते हैं जिसे बदलने की आवश्यकता जनता महसूस करती है तो लोगों की इच्छा को मूर्तरूप देने का अधिकार संसद को है। १९३६ में अमेरिका के सुप्रीम कोर्ट ने अपने एक निर्णय पर फिर से फैसला किया था। उन्होंने यह आशा व्यक्त की कि उसी तरह उपयुक्त अवसर आने पर गोलकनाथ केस पर भारत का सुप्रीम कोर्ट भी करेगा।'

जिन लोगों ने यह माँग की कि इस संशोधन में सुप्रीम कोर्ट की राय पूछी जानी चाहिए थी, विधि-मंत्री श्री गोखले ने उनसे यह कहा कि सुप्रीम कोर्ट कोई राय देने को बाध्य नहीं है। इसके अलावा एक बात और है। वह यह कि आगे किसी खास मुकदमे पर निर्णय देते समय सुप्रीम कोर्ट प्रतिनिधि-सभा को दी गयी अपनी राय पर दृढ़ रहे ही, यह उसके लिए आवश्यक नहीं है। और अन्तिम बात यह है कि सरकार इस संशोधन पर यदि उसकी राय माँगती और वह यदि गोलकनाथ केस के फैसले का ही हवाला सरकार को देता तो फिर क्या होता!

अन्त में श्री गोखले ने कहा कि जनता के हित में और उसके स्वार्थ की सिद्धि के लिए ही हम संशोधन के द्वारा संसद की सर्वोपरिता पुनः स्थापित की जा रही है।

यह संशोधन लोक सभा और राज्य सभा, दोनों ही सदनों में भारी बहुमत से पारित हुआ।

[illegible]-पत्र : सोमवार, ३० अगस्त, '७१

डालर का संकट

डालर (अमेरिकन सिक्का) करीब चालीस वर्षों के बाद फिर कठिनाई में फँसा है। पश्चिमी यूरोप के देशों के सिक्कों के मुकाबिले पिछले कुछ सप्ताह में इसका मूल्य घटा है। सोने का मूल्य डालर में जिस दर से निर्धारित है, अमेरिका के पास अभी मात्र उतना ही सोना है कि उससे वह विदेश के अपने व्यापार के वर्तमान साख को किसी तरह बचा ले। कुछ लोगों का तो अनुमान है कि वहाँ के सरकारी खजाने (फोर्ट नाक्स में) उतना भी सोना इस समय नहीं है।

डालर के संकट के कई कारण हैं।

१—देश में बेरोजगारी बढ़ी है।

२—मुद्रा-स्फीति (अधिक नोट छापने का काम) हुई है?

३—उद्योग-धंधों में मन्दी आयी है।

४—विदेशी-व्यापार में निर्यात से अधिक आयात हुआ है। १८९३ के बाद इस वर्ष पहली बार वहाँ ऐसा हुआ है।

५—सरकारी खजाने में सोने की मात्रा घटी है।

पिछले दिनों करीब तीन महीने से संसार के विभिन्न हिस्सों में यह अनुमान लगाया जा रहा था कि डालर का अवमूल्यन होगा। उसे बचाने के लिए गत १५ अगस्त को प्रेसिडेन्ट निक्सन ने कुछ कदम उठाये। उनमें मुख्य ये हैं

१—मुद्रा के विनिमय के लिए अमेरिकी बैंक ३५ डालर में १ औंस (ढाई तोला) सोना देने को वचनबद्ध थे। पिछले ३७ वर्षों से आ रहे इस परम्परा को कुछ दिनों के लिए स्थगित किया गया है। इस बीच विदेश के सिक्कों के साथ डालर के नये विनिमय का दर स्थापित करने की बातचीत चलायी जा रही है।

२—अगले तीन महीने के लिए वेतन और बाजारभाव स्थिर कर दिये गये हैं।

३—अतिरिक्त आयात पर दस प्रतिशत टैक्स बढ़ा दिया गया है।

४—विदेशों की सहायता में दस प्रतिशत की कटौती की गयी है। इस समय अमेरिका विदेशों को प्रतिवर्ष डेढ़ अरब डालर की सहायता कर रहा है।

५—अमेरिकी केन्द्रीय सरकार द्वारा किये जानेवाले खर्च में कटौती की गयी है। विभिन्न लोक-कल्याण कार्यवाले इस मद में ४ अरब ७० करोड़ डालर की कटौती होगी। यह कुल केन्द्रीय खर्च का २ प्रतिशत है।

६—मोटर गाड़ी पर आबकारी कर समाप्त किया जायगा। इस कर से २ अरब ३० करोड़ डालर की आय सरकारी खजाने में घटेगी। निक्सन की यह घोषणा अमेरिका के इतिहास में एक उग्र संकटकालीन कदम है।

विदेशों में डालर की प्रतिष्ठा बचाने और अपने देश में रोजगारी (इम्प्लायमेन्ट) बढ़ाने तथा मुद्रास्फीति घटाने के लिए उन्होंने यह कदम उठाया।

डालर का अवमूल्यन रोकने का प्रश्न अमेरिका के लिए उतना आर्थिक नहीं है जितना अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में यह उसकी प्रतिष्ठा का प्रश्न है।

प्रेसिडेन्ट निक्सन की यह आर्थिक नीति अत्यन्त उग्र कदम है। प्रेसिडेन्ट रुजवेल्ट के करीब ४० वर्षों के बाद देश के मोर्चे पर इस तरह का कदम उठाया गया है।

निक्सन की यह घोषणा उनके चीन जाने की पिछले महीने की घोषणा से कम सनसनीखेज नहीं है। इसमें सन्देह नहीं कि इस घोषणा का प्रभाव अमेरिका में अगले वर्ष होनेवाले प्रेसिडेन्ट के चुनाव पर पड़ेगा।

भारत की चिंता

भारत को विदेशों से जितनी आर्थिक सहायता मिलती है उसमें करीब आधा अमेरिका से ही मिलता है। विदेशों को दी जानेवाली रकम में दस प्रतिशत की कटौती की जो घोषणा प्रेसिडेन्ट निक्सन ने की है उससे वे सब देश चिन्तित हो उठे हैं जिन्हें अमेरिकी मदद मिलती है। भारत की भी चिंता स्वाभाविक है। इस वर्ष भारत को अमेरिका से (२२० मिलियन डालर) २२ करोड़ डालर—करीब १ अरब ६५ करोड़ रुपये—की मदद मिलने वाली है। इस घोषणा के अन्तर्गत भारत को दी जानेवाली सहायता में करीब १६ करोड़ ५० लाख रुपये की कटौती होगी।

भारत की चिंता एक दूसरी भी है। डालर की अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिष्ठा के कारण विदेशी विनिमय के लिए छोटी औकातवाले संसार के अनेक देश अपनी पूँजी डालर में एवं कुछ अन्य प्रतिष्ठित विदेशी मुद्रा में रखते हैं। इससे विदेश से व्यापारिक लेन-देन का हिसाब चुकता करने में उन्हें सुविधा होती है। अमेरिकी मुद्रा में भारत का विदेशी विनिमय सुरक्षित कोष (फॉरेन एक्सचेंज रिजर्व) करीब ३०० मिलियन डालर, ३० करोड़ डालर (२२५ करोड़ रुपया) है। पिछले सैंतीस वर्षों से अमेरिका विनिमय के लिए लेन-देन करनेवाले विदेशी विक्रेताओं को १ आउन्स (ढाई तोला) सोना ३५ डालर की दर से देता रहा है। पिछले कुछ महीनों में तो खुले बाजार में, (डालर की साख गिरने से) सोने का मूल्य ४३-४४ डालर प्रति आउन्स तक चढ़ गया था। सोना देने के तत्काल स्थगन की निक्सन की घोषणा से भारत के सुरक्षित कोष के उपयोग में बाधा आयी है। इसका अर्थ यह हुआ कि अगले तीन महीने की अवधि में विदेशों में खरीद-फरोख्त के काम में इस कोष का निर्बाध उपयोग नहीं किया जा सकेगा।

पिछले तीन महीनों से अन्तर्राष्ट्रीय विनिमय के बाजार में जापान के येन और पश्चिम जर्मनी के मार्क का मूल्य डालर के मुकाबिले आठ से दस प्रतिशत ऊँचा उठा, पश्चिम यूरोप के कई अन्य देशों की मुद्रा का भी।

अमेरिका के सामने विकल्प

डालर का बाजार भाव बनाये रखने के लिए अमेरिका के सामने दो विकल्प हैं।

(१) सोने का महँगा दाम वह स्वीकार कर ले यानी १ आउन्स सोने के बदले ३५ डालर से अधिक दे।

(२) हाल के प्रतिष्ठित विदेशी सिक्कों का महँगा दाम स्वीकार कर ले यानी १०० मार्क, येन आदि के बदले जितना डालर वह देता रहा है उससे अधिक दे।

दो में एक कदम भी स्वीकार करने पर अमेरिका की आर्थिक प्रतिष्ठा घटेगी। पहला कदम स्वीकार करने पर सोना के खानवाली कम्पनियों को अनपेक्षित लाभ मिलेगा और सोना को छिपाकर संग्रह करनेवालों एवं उसके चोरबाजारियों को लाभ मिल जायगा।

यदि वह दूसरा कदम स्वीकार करता है तो विदेशों से वापस पानेवाली उसकी रकम घटेगी।

आज विनिमय की जो दर है वह दूसरे महायुद्ध की समाप्ति के बाद दिसम्बर १९४५ में ब्रेटन ऊड नामक स्थान पर स्थिर की गयी थी। निक्सन की इस घोषणा के कारण उस निर्णय पर गहरा असर पड़ेगा।

अमेरिका के अन्य वजनों एवं दबावों के कारण यदि विदेशी सिक्कों का नया मूल्य स्थिर किया जाता है तो उससे सबसे अधिक धक्का जापान और पश्चिमी जर्मनी को लगनेवाला है। यों यूरोपीय साझा बाजार से फ्रांस आदि अन्य देश भी प्रभावित होंगे ही। हाल के महीनों में मार्क और येन ने डालर को दौड़ में पीछे छोड़ दिया है। उस संदर्भ में इसको अधिक धक्का लगनेवाला है यानी जापान और पश्चिम जर्मनी के विदेश व्यापार पर और उनकी समृद्धि पर विपरीत असर पड़ेगा। यों जापान ने तो अपनी दृढ़ता अब तक दिखायी है और डालर के समक्ष वह झुकना नहीं चाहता यानी येन का अवमूल्यन नहीं करना चाहता, पर अमेरिका को वह किस हद तक नाराज करना पसन्द करेगा, यह भविष्य ही बतायेगा।

भारत पर विनिमय सम्बन्धी असर

पिछले व्यापारिक सम्बन्धों के कारण भारत का रुपया विदेशी विनिमय में →

हिंसा-अहिंसा का सवाल : बंगला देश का संदर्भ

—दत्तोबा दास्ताने

सन् १९६२ के चीन-भारत संघर्ष के समय अहिंसावादियों और शांतिवादियों में विचार-मंथन की प्रक्रिया जोरों से शुरू हुई थी और भारत के तथा भारत के बाहर के शांतिवादियों की ओर से अनुकूल-प्रतिकूल प्रतिक्रियाएँ व्यक्त की गयी थीं। लेकिन उस समय भारत पर चीन का आक्रमण हुआ था और उसमें भारत को आत्म-संरक्षण के तौर पर सेना का उपयोग करना पड़ा था। किसी देश के सैनिक आक्रमण के समय अहिंसावादी और शांतिवादी व्यक्तियों और संस्थाओं को क्या कदम उठाना चाहिए, इस विषय पर उस समय मंथन हुआ था।

लेकिन बंगला देश का मामला तो बर्बर सैनिक तानाशाही का नग्न ताण्डव-नृत्य है जिसने सारे विश्व की विवेकबुद्धि को एक जबरदस्त चुनौती दी है। यह एक राष्ट्र का दूसरे राष्ट्र पर आक्रमण नहीं है। न यह गृहयुद्ध कहा जायगा जो कि किसी राष्ट्र की सेनाओं में दो गुट हो जाने पर सत्ता हथियाने के लिए छिड़ जाता है। बंगला देश में जो कुछ हो रहा है वह लोगों की लोकतांत्रिक ढंग से प्रकट की गयी माँग को सेना द्वारा निर्मम, पाशविक और बर्बर नरसंहार करके दबाने का एक विकराल तथा बीभत्स काण्ड है। पाकिस्तान की बारह करोड़ की आबादी में पूर्व बंगाल की आबादी साढ़े सात करोड़ है फिर भी पूर्व बंगाल का आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक शोषण पिछले २० सालों से हो रहा था, उसके विरोध में पूर्व बंगाल ने स्वायत्तता की माँग की थी। पाकिस्तान के सार्वभौमत्व के अन्तर्गत अपना कारोबार स्वयं चलाने की वह तजवीज थी।

याहिया खाँ द्वारा पाकिस्तान की नेशनल एसेम्बली के लिए चुनाव घोषित किये जाने पर पूर्व बंगाल की जनता की लोकतांत्रिक आकांक्षाएँ जागृत हो उठीं और उसने प्रगतिशील आवामी लीग के प्रतिनिधियों को करीब शतप्रतिशत (९८ प्रतिशत) वोटों से चुन दिया।

लेकिन पाकिस्तान के सैनिक तानाशाह इस अभूतपूर्व जनशक्ति की अभिव्यक्ति को बरदाश्त नहीं कर सके और समझौते का झूठा और धोखाधड़ी भरा नाटक करते हुए परदे के पीछे से जनता को सबक सिखाने की क्रूर साजिश की, जिसके फल-स्वरूप पूर्ण स्वतंत्रता का ऐलान करने के अलावा पूर्व बंगाल के लोगों के पास अन्य कोई विकल्प नहीं रह गया। इसके कारण पिछले ४-५ महीनों में नरसंहार की जो कार्रवाई हुई, उसने साबित कर दिया कि पश्चिम पाकिस्तानवाले समूचे पूर्व बंगालियों को दुश्मन समझकर दमन की नीति अपना रहे हैं। 'पाकिस्तान की अखंडता को सुरक्षित रखने के लिए इस बगावत को हम कुचल रहे हैं' ऐसा याहिया खाँ भले कहें, लेकिन पश्चिम पाकिस्तान के साथ पूर्व बंगाल एक राष्ट्र बनकर इसके आगे कभी नहीं रह सकता, इसपर याहिया खाँ की बर्बरता ने मुहर लगा दी।

कुछ ज्वलंत प्रश्न

इस पार्श्वभूमि पर जब हम बंगला देश की समस्या को देखते हैं तो कई महत्वपूर्ण प्रश्नचिह्न हमारे सामने नये सिरे से खड़े होते हैं।

(१) क्या बंगला देश में जो हुआ वह महज पाकिस्तान का अंदरूनी मामला है?

(२) क्या किसी राष्ट्र को अपने अंदरूनी मामलों से निपटने के लिए नर-संहार का निरंकुश अधिकार है या सभ्य देशों के मान्य उसूलों की कोई मर्यादा भी है?

(३) सर्वमान्य लोकतांत्रिक पद्धति से यदि किसी प्रदेश की जनता ने अपनी सर्व-सम्मत राय द्वारा स्वयं निर्णय की माँग पेश करती है तो उसको सेना या शस्त्रों के बल पर दबाने का सार्वभौम सरकार को अधिकार है क्या?

(४) कोई तानाशाही सरकार जब अमानवीय ढंग से अत्याचार करने लगे तब अन्य राष्ट्र क्या तमाशा देखते रहें?

केवल तात्त्विक चर्चा करके हिंसा-अहिंसा के प्रश्न का निर्णय नहीं किया जा सकता। सत्य, अहिंसा, आदि तत्त्वों को मनुष्य पूर्ण रूप से अपने जीवन में कभी-भी नहीं ला सकता, यह गांधीजी ने अच्छी तरह समझाया है। फिर अग्निकुंड से दूर बैठकर बंगला देश निवासियों ने जो किया उसकी मीमांसा हिंसा-अहिंसा की कसौटी पर करना कहाँ तक उचित है? इसलिए अहिंसक व्यक्ति अहिंसक प्रतीकार जिस ढंग से करेंगे उसी ढंग से राष्ट्र की समूची जनता प्रतीकार कर सकेगी, ऐसी अपेक्षा करना भी गलत है। हम देखेंगे नहीं और शरणागति स्वीकारेंगे

→ब्रिटेन के पाउन्ड (स्टर्लिंग) से बँधा हुआ है। अतः डालर के अवमूल्यन का इस पर सीधा असर नहीं पड़नेवाला है। पर स्वयं स्टर्लिंग इस समय डालर का एक कमजोर पिछलग्गू है। अतः डालर के मूल्य में हेरफेर होने का असर उस पर पड़नेवाला ही है और उसके मार्फत एक हद तक भारत पर।

भारत अमेरिका का कर्जदार है। रुपये के मुकाबिले यदि डालर का मूल्य घटा, यानी डालर के मुकाबिले यदि रुपये का मूल्य बढ़ा तो ऋण-शोध में भारत लाभान्वित होगा।

संसार के अन्य देशों पर प्रभाव

संसार का शायद ही कोई देश हो जिसकी अर्थ-व्यवस्था पर प्रेसिडेन्ट निक्सन की डालर-सम्बन्धी इस घोषणा का प्रभाव नहीं पड़ा हो। घोषणा के तुरन्त बाद ही, हर देश के बाजार-भाव पर अनुकूल या प्रतिकूल, कम या बेशी, असर पड़ा है। सभी देश बहुत ही उत्कंठा से अमेरिका की आर्थिक गतिविधि पर नजर रख रहे हैं। ● प्रस्तुतकर्ता : हेमनाथ सिंह

नहीं, इस निश्चय के साथ जनता शस्त्रों से लैस सेना के खिलाफ जो भी स्वयं स्फूर्ति प्रतीकार करेगी, उसे—'करीब-करीब अहिंसा' ही कहा जायगा। सेना के सामने सीना खोलकर निर्भयता के साथ मर मिटने की अहिंसा इनेगिने व्यक्तियों में ही होगी। मरना तो है ही, फिर चूहों की मौत मरने की अपेक्षा गोली के सामने सीना खोलकर मरनेवाले कुछ सत्याग्रही भी तैयार किये जा सकते हैं। लेकिन जब मासूम बच्चों, बूढ़ों, और औरतों पर पाशविक अत्याचार का कहर ढाया जाता हो तब अहिंसक प्रतीकार कैसे किया जाय, इसका प्रयोग अभी तक कहीं हुआ नहीं है। हम अपने हृदयों को टटोलकर देखें कि हम ऐसी परिस्थिति में होते तो क्या करते? यह ठीक है कि पत्थर, धनुष-बाण, या बंदूक हाथ में न लेकर लाख-दो-लाख लोग निर्भयता पूर्वक सेना के सामने खड़े होकर शहीद हो जाते तो शायद दुनिया की विवेक-बुद्धि अधिक तीव्रता से जाग उठती। लेकिन बिना किसी पूर्व तैयारी या पूर्व शिक्षण के, या पूर्व प्रयोग के, उतनी बड़ी अपेक्षा रखना उन बंगला देश के नौजवान बहादुरों के साथ अन्याय करने जैसा होगा।

अहिंसक प्रतीकार की आदर्श व्याख्या के अनुसार मारने की शक्ति होते हुए मारने के लिए हाथ न उठाकर अत्याचार के खिलाफ टटकर खड़े होकर मर जाना और वह भी अत्याचारी व्यक्ति के प्रति द्वेष न रखकर उसकी अत्याचारी वृत्ति का मुकाबिला करना पूर्ण अहिंसक प्रतीकार कहा जायगा। लेकिन इस आदर्श तक जो नहीं पहुँच सकते, वे कायरता से भागने या अत्याचारी के सामने घुटने टेकने की अपेक्षा अपने हाथ में जो भी शस्त्र मिले उससे अत्याचार का प्रतीकार करते हैं, तो उनकी इस कृति को हिंसक प्रतीकार नहीं कहा जायगा। अपने से हजार गुना अधिक बलशाली और शस्त्र-सज्ज अत्याचारी के खिलाफ जो भी प्रतीकार किया जाता है उसीको 'करीब-करीब' अहिंसक प्रतीकार कहते हैं।

आज भी बंगला देश में गेरिल्ला युद्ध चल रहा है। लेकिन बंगला देश के किसान, मजदूर या अन्य बंगाली जनता याहिया खाँ की हुकूमत से सहकार नहीं कर रही है, और कोई भी पंचमार्गी उनको कठपुतली सरकार बनाने के लिए नहीं मिल रहा है, यह अहिंसक असहयोगात्मक प्रतीकार की ही निशानी है।

हमारे सहयोग का स्वरूप क्या हो ?

अब बंगला देश के इस आंदोलन में हम क्या और किस तरह का सहयोग दें, यह सवाल आता है। पहला सहयोग तो यही होगा कि इस आंदोलन के साथ अपनी पूर्ण सहमति और अपना नैतिक समर्थन हम प्रकट करें। सहयोग का दूसरा प्रकार है बंगला देश की सरकार को मान्यता देकर उसको दैनंदिन जीवन की उपयोगी चीजें, दवा-दारू, साज-सामान, तथा सेवापयक और शुश्रूषापयक पहुँचाएँ। शस्त्रों की मदद पहुँचाना अहिंसा की मर्यादा में नहीं आता। किसी राष्ट्र के अंदर चल रहे संघर्ष में बाहर का कोई राष्ट्र एक गुट की मदद में शस्त्रास्त्र पहुँचाता है, तो दूसरा बाहरी राष्ट्र दूसरे गुट की मदद में शस्त्रास्त्र पहुँचाने लगता है, इसलिए शस्त्रों की मदद देने का यह तरीका 'कोल्ड' नहीं बल्कि 'हॉटवार' जारी रखने का है। वास्तव में इस तरह का अंदरूनी संघर्ष जब शुरू होता है तब बाहर के सभी राष्ट्रों को चाहिए कि उस राष्ट्र में किसी को भी शस्त्रास्त्रों की मदद न दी जाय, या शस्त्र खरीदने के लिए धन न दिया जाय। लेकिन बड़े राष्ट्र अपनी-अपनी व्यूह-रचना के अनुसार, जिसे 'शक्ति-संतुलन' कहा जाता है, स्वयं सामने न आकर दूसरों के पीछे छिपकर ताकत का संतुलन ऊपर-नीचे करवाते रहते हैं।

किसी सार्वभौम राष्ट्र के अंदरूनी मामले में बाहर से दखल देना कहाँ तक उचित है? यह पूछा जाता है। अंदरूनी मामला यानी क्या? सार्वभौमत्व की मर्यादा क्या है? आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक और विदेशनीति सम्बन्धी प्रश्नों में जो देश अपनी स्वतंत्र नीति तय करने का अधिकारी होता है, उसे सार्वभौम राष्ट्र कहा जाता है। लेकिन किसी भी राष्ट्र की सरकार को न्यायोचित नागरिक अधिकारों की शांतिपूर्ण मांग करनेवाले किसी आन्दोलन को सेना के बल से या अमानुषिक अत्याचारों से कुचलने या निहत्थे नागरिकों की हत्या करने का अधिकार नहीं है, नहीं रहना चाहिए। ऐसी नृशंस हत्या जहाँ भी होती हो, उसकी कड़ी निंदा करनी चाहिए और उस देश के साथ अन्य राष्ट्रों को असहकार की नीति अपनाकर उसे सही मार्ग पर लाने की कोशिश करनी चाहिए।

पूछा जायगा कि भारत के पड़ोस में तिब्बत में चीन ने लामाओं के साथ जो व्यवहार किया, उसके विरोध में भारत ने क्या किया? या अन्य देशों में भी इस तरह का अन्याय होता है तब भारत को आवाज उठानी चाहिए या नहीं? जवाब सरल है आवाज उठानी चाहिए और अंतर्राष्ट्रीय दबाव भी डलवाना चाहिए। चीन तो राष्ट्रसंघ में भी नहीं है, और वहाँ सैनिक तानाशाही है। इसलिए भारत में आये हुए लामाओं को शरण देने के अलावा भारत कुछ कर नहीं सकता था। दलाई लामा को चीन वापस माँग रहा था तो भारत ने साफ इनकार कर दिया और भारत के साथ चीन की दुश्मनी बढ़ने का वह भी एक कारण बन गया। भारत ने वह रोष सहन किया, लेकिन लामा को चीन के हवाले नहीं किया।

क्या दुनिया का कोई दायित्व है ?

बंगला देश का मामला इससे भिन्न है। पूरे पाकिस्तान की जनसंख्या की तुलना में पूर्व बंगाल की जनसंख्या ६३ प्रतिशत है। जनता ने चुनाव में अवामी लीग को बहुमत प्राप्त करा दिया। अवामी लीग की माँग शुरू में केवल स्वायत्तता की थी। उसके लिए शान्तिपूर्ण तरीकों से उन्होंने आंदोलन चलाया और समझौते की बातचीत की। ऐसी हालत में धोखा

देकर जल, थल, वायु सेना का धावा बोलकर घास की तरह पूर्व बंगाल को तहस-नहस करके बरबाद किया गया। ३-४ महीने के अंदर एक करोड़ के करीब शरणार्थी भारत में जान बचाकर आश्रय के लिए भाग आये। इतिहास में ऐसे नग्न अत्याचार की मिसाल नहीं है। वैसे ही सारी दुनिया की सरकारें आँख बन्द करके चुपचाप बैठकर तमाशा देख रही हों, इसकी भी इतिहास में मिसाल नहीं है। अमेरिका जैसा समता, न्याय, और बंधुत्व का दावा करनेवाला देश सारी लाज-शरम छोड़कर खुल्लम-खुल्ला पाकिस्तान की इस नर-संहार में सहायता कर रहा है, यह देखकर लगता है कि 'वर्ल्ड-कॉन्शन्स' जैसी कोई चीज ही नहीं रह गयी। संयुक्त राष्ट्र संघ क्यों बनाया गया था? किसी भी राष्ट्र के साथ अन्याय होता हो तो उसका हल सब मिलकर ढूंढ़ें और लड़ाई का मौका न आने दें। किसी देश के अंदरूनी मामले में हस्तक्षेप न करने की मर्यादा संयुक्त राष्ट्र संघ की है। लेकिन कोई देश निहत्थे नागरिकों का गुना कत्लेआम करे तो क्या उसे अंदरूनी मामला मानकर वह खामोश हो बैठा रहे? मानवीय मूल्यों की रक्षा का जहाँ सवाल है वहाँ राष्ट्र-समूहों को दखल देना ही चाहिए। शरणार्थियों को भारत में भागने जैसी भयभीत परिस्थिति पूर्व बंगाल में पैदा करके पाकिस्तान ने एक तरह से भारत पर जनसंख्या का आक्रमण कर ही दिया है। इसलिए भारत के लिए बंगला देश का प्रश्न जीवन-मरण का प्रश्न हो गया है।

बंगला देश को मान्यता देने की दृष्टि से भारत सरकार ने दुनिया की सभी सरकारों से अनुरोध किया, लेकिन कोई भी राष्ट्र मान्यता देने की हिम्मत नहीं कर रहा है। क्योंकि अमेरिका ने पाकिस्तान को खुलेआम मदद जारी रख कर उसका एक तरह से समर्थन किया है। राष्ट्र संघ भी बड़े राष्ट्रों की खींचातानी के कारण कोई कदम उठाने में समर्थ नहीं रह गया है। ऐसी स्थिति में भारत अकेला बंगला देश को मान्यता देगा तो लड़ाई का खतरा उठायेगा। ऐसी स्थिति में क्या किया जाय? जब तक पूर्व बंगाल में पाकिस्तानी सेना की हुकूमत है तब तक शरणार्थी पूर्व बंगाल नहीं लौट सकेंगे। पाकिस्तान की सेना पूर्व बंगाल से कैसे हटेगी? सेना हटने का एक ही शांतिपूर्ण तरीका है और यह है अवामी लीग से राजनैतिक समझौता और लोक-प्रतिनिधियों को सत्ता सौंप देना। अमेरिका इसमें पहल करेगा तो पाकिस्तान को समझौते के लिए मजबूर कर सकेगा। बंगला देश की सरकार को भारत हथियार देगा तो अमेरिका या चीन भारत से दस गुना अधिक हथियार याहिया खाँ को देगा, और बंगला देश एक और वियतनाम बन जायगा। भारत यदि पूर्व-बंगाल में फौज भेजेगा तो भारत-पाकिस्तान युद्ध हो जायगा, जिसमें से विश्वयुद्ध का भी खतरा पैदा हो जायगा। इस खतरे को भाँपकर ही भारत-रूस मैत्री संधि हुई है। यानी मजबूरन भारत को बड़े राष्ट्रों के एक गुट का आश्रय लेना पड़ रहा है।

समस्या का हल?

शस्त्रों की लड़ाई से कोई मसला हल नहीं होता है, ऐसा अनुभव आने हुए भी बंगला देश की सरकार को मान्यता देकर उसे शस्त्रादि तक सब तरह की सहायता दी जाय, ऐसी माँग भारत में सभी कर रहे हैं। शस्त्रों के उपयोग से तात्कालिक लाभ होता भी हो, तब भी अहिंसक उपायों का प्रयोग करनेवालों को चाहिए कि दूसरा कारगर उपाय भी खोजा जाय। शस्त्रबल आम जनता का बल नहीं हो सकता। आम जनता की शक्ति बनानी हो तो शस्त्र का भरोसा छोड़कर और दूसरे रास्ते अपनाने का शिक्षण जनता को देना होगा। शस्त्र के आधार से तो शस्त्रधारी व्यक्ति या गुट का प्रभुत्व बढ़ता है। लोकतंत्र में जनता का प्रभुत्व बढ़ना चाहिए, न कि शस्त्रधारी का। इसलिए अपनी न्यायोचित माँग के लिए अहिंसात्मक असहयोग के शस्त्र का सामूहिक और शांतिपूर्ण उपयोग करने का रास्ता अपनाना चाहिए।

यह मानी हुई बात है कि चाहे कोई भी तानाशाह हो, वह आम जनता के असहयोग के सामने उस देश पर या जनता पर सेना या शस्त्रों के बलपर राज्य नहीं कर सकता। डराने-धमकाने के लिए भले सेना काम दे, लेकिन हमेशा के लिए सेना रखकर राज्य चलाना असम्भव है। बंगला देश में जनता ने नरसंहार शुरु होने से पहले अनुशासन, एकता, और दृढ़ता का परिचय दिया था। आज भी याहिया खाँ के सैनिक अधिकारियों को उस देश में दिनन का कारोबार चलाने के लिए लोग नहीं मिल रहे हैं। एक कारण तो यह है कि सेना कब किसको बिना किसी कसूर के गोली मार देगी, इसका भरोसा नहीं रह गया है। लेकिन पाकिस्तानी शासन के साथ किसी प्रकार का सहयोग न करने का निश्चय भी इसके पीछे काम कर रहा होगा। सम्पूर्ण असहयोग का रास्ता भले तत्काल फलदायी न दीखता हो लेकिन आखिर वही उपाय ऐसा है जो पाकिस्तानी सैनिक तानाशाह को घुटने टेकने के लिए बाध्य करेगा।

पाकिस्तान ने बंगालियों के साथ दुश्मन का सा व्यवहार किया है। अभूतपूर्व बर्बरता और नरसंहार करके पूर्व पाकिस्तान का स्वत्व खतम किया है। सभी बंगालियों का भरोसा पाकिस्तान पर से उठ गया है इसीलिए पाकिस्तानी दूतावासों में उच्च पदों पर रहनेवाले बंगाली पाकिस्तान का नागरिकत्व छोड़कर अपने को बंगला देश का नागरिक घोषित कर रहे हैं। अब दुनिया की कोई भी ताकत पूर्व बंगाल को पाकिस्तान के साथ रख नहीं सकती। समान-धर्म का होना ही किसी राष्ट्र को एक रखने में कारगर नहीं होता। भ्रातृभाव, भाषा, संस्कृति, आर्थिक समानता, इत्यादि अन्य बहुत सारी बातें समाज को एक सूत्र में बाँधने में कारगर होती हैं। बंगला देश की समस्या ने यह फिर से स्पष्ट रूप से सिद्ध कर दिया है। ●

सहज आध्यात्मिकता

[ता० १५-७-'७१ की शाम को, ब्रह्मविद्या मंदिर की बहनों के साथ जयप्रकाशजी की बातचीत]

प्रश्न : आध्यात्मिक परिभाषा इस्तेमाल करने की आपकी वृत्ति नहीं रही है। पर बापू-परिवार के आध्यात्मिक मंडल में आपका जीवन सहज समा जायेगा। आपके खयाल के अनुसार आपने अपने जीवन को अंतिम लक्ष्य क्या माना और जीवन को वैसा मोड़ देने के लिए क्या प्रयत्न किये ?

जे० पी० आध्यात्मिक भाषा इस्तेमाल करने की वृत्ति का सवाल नहीं है, यह मैं योग्यता या क्षमता का सवाल मानता हूँ। जहाँ तक मेरे अपने जीवन की बात है, मैं खुद भी उसके बारे में कम ही सोचता हूँ। क्या किया, कैसे किया, क्यों किया, इन सबके बारे में कभी सोचता हूँ, तो लगता है कि जीवन में सहजता ही है। अब अमुक परिस्थिति में सहजता से क्यों व्यवहार हुआ इसका कारण पूछेंगे, तो समझना या समझाना कठिन है। मैं समझता हूँ कि छोटी उम्र में माता-पिता से और समाज से ऐसे कुछ संस्कार प्राप्त हुए होंगे कि अमुक परिस्थिति में सहज ही कुछ करने का सूझता है।

मैं जब स्कूल में पढ़ता था, तब स्वराज्य-आंदोलन चल रहा था। गांधी-युग तब आया नहीं था। बापू उस समय दक्षिण अफ्रीका में थे। वहाँ के उनके कार्य के बारे में कुछ जानकारी थी। लेकिन भारत में उनका कोई खास कार्य शुरू नहीं हुआ था। हमारा देश आजाद कैसे होगा, गुलामी से मुक्त कैसे होगा, यह तीव्र भावना मन में रहती थी। एक बेचैनी-सी रहती थी। बंगाल के क्रान्तिकारी आंदोलनवालों से भी मुलाकात होती थी। देश को आजाद करने के लिए उस वक्त कोई रास्ता स्पष्ट नहीं था सिवाय हिंसा के। तो उन क्रान्तिकारियों का असर था। फिर बापू का पहला देशव्यापी आंदोलन चला, उसमें सहयोग दिया। पढ़ने की इच्छा थी, लेकिन यहाँ की पढ़ाई नहीं चाहता था। जब असहयोग-आन्दोलन जरा ढीला हुआ, तब मैं पढ़ने के लिए अमेरिका चला गया।

जब देश की आजादी के लिए और वह भी क्रान्तिकारियों के मार्ग से प्रयत्न करने का सोचा था, तब यह भी साफ था कि तरह-तरह की तकलीफें उठानी पड़ेंगी, तरह-तरह की यातनाएँ सहन करनी पड़ेंगी, जान भी खतरे में आ सकती है। इस सब के लिए खुद को तैयार करना था। उसके लिए मैं गीता का आश्रय लेता था। बहुत सबेरे उठकर, ठंडे पानी से नहा कर रोज नियमित गीता का पाठ करता था। यह भी लगता है कि इस गीता-पठन के पीछे भी बचपन के कोई संस्कार होंगे, कह नहीं सकता।

फिर यह भी विचार चलता था कि देश स्वतंत्र होगा, तो गरीबों के लिए कुछ करना होगा, उनका शोषण खत्म करना होगा। तो साम्यवाद के समाजवाद के विचारों ने आकर्षित किया। कम्यूनिस्ट साहित्य खूब पढ़ा। बचपन की और युवावस्था की जो प्रेरणा रही, अन्त तक वही रही देश की आजादी और समाज का रूप बदलने की। इसमें इतना ही हुआ कि हिंसात्मक रीति से या कानून से समाज का परिवर्तन नहीं हो सकता है, इसका भान आता गया तो सर्वोदय विचार की ओर ध्यान गया।

मेरे जीवन में जो कुछ आध्यात्मिक दिखायी देता होगा, उसके मूल में यही सारा है। अब यह भी आध्यात्मिक हो सकता है कि दूसरों के दुःख से दुःखी हो, गरीबों के लिए कुछ करने की प्रेरणा हो। क्यों हो, इसका उत्तर मेरे पास नहीं है। मैं खुद ज्यादातर राजनैतिक-सामाजिक स्तर पर ही सोचता रहा हूँ। माँ का और प्रभावती का भी कुछ आध्यात्मिक
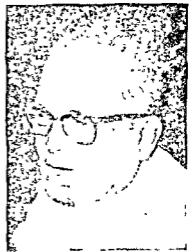
जे० पी० आध्यात्मिक राजनीतिज्ञ

असर मुझ पर हुआ होगा, मगर उसका विश्लेषण या बयान मेरे पास नहीं है।

प्रश्न ईश्वर को आप किस स्वरूप में देखते हैं ?

जे० पी० इस पर भी मेरा चिंतन-मनन तो नहीं है। लेकिन भगवद्गीता का रोज नियमित पाठ करता था, यह तो मैंने कहा ही। सादगी की तरफ भी ध्यान था। मार्क्स-विचार के परिचय के साथ-साथ मैं निरीश्वरवादी बना था। सर्वोदय-विचार में आने के पहले ही, मेरे सामने सामाजिक और राजनैतिक प्रश्नों के सिलसिले में आचार-नीति और धर्म-नीति—एथिक्स—का सवाल उठा था। स्तालिन के जमाने में रूस में जो मिथ्यावाद चला था, उद्देश्य अच्छा है तो चाहे जिस उपाय से उसकी प्राप्ति कर सकते हैं, उससे बहुत विचार-मंथन हुआ। जब मैंने पूना में उपवास किये थे, तब मन में यह चला कि राजनीति और एथिक्स (नीतिशास्त्र), इनका सम्बन्ध क्या ? इस प्रश्न पर सोचते हुए इस जगह पर आना पड़ा कि एथिक्स से भी पूरा-पूरा उत्तर मिलता नहीं, तब मानना होगा कि कोई ऐसी अस्तित्व-शक्ति है, जिसको शब्दों में ईश्वर कहें। ईश्वर के स्वरूप के बारे में मेरी तो स्थिति ऐसी है कि इस प्रश्न के उत्तर में चुप ही रहना चाहिए। यह तो अनुभूति से ही पता चल सकता है। अगर कोई

ऐसी आस्था न हो कि अन्तिम सत्य है, तो जीवन की कोई धुरी रहेगी नहीं, आदमी को अच्छा होने की आवश्यकता है क्या, इस प्रश्न का उत्तर ही नहीं मिलेगा।

प्रश्न : आपने कहा है, "इन्सेंटिव टु गुडनेस" (अच्छाई के लिए प्रेरणा)।

जे० पी० : हाँ मैंने यही कहा है। उपवासकाल में मुझे यह अनुभव हुआ कि 'मटेरियलिस्ट फिलॉसफी' (भौतिकवाद) से 'इन्सेंटिव टु गुडनेस' मिल नहीं सकती। किसी भी भौतिकवाद से अच्छाई के लिए कोई भी प्रेरणा मिल नहीं सकती। मैटर (जड़तत्व) क्या है? मैटर भी तो ईश्वर की तरह ही बनता जा रहा है। जिस स्थूल मानी में मार्क्सवादी भौतिकवाद मानते हैं, उसमें अच्छाई की प्रेरणा नहीं। मार्क्सवादी ही क्यों, सभी पालिटिशियन्स (राजनीतिवाले) इसको मानते हैं, जो उद्देश्य है उसकी प्राप्ति में कुछ भी करने में हिचकिचाते नहीं। मार्क्सवादी कम-से-कम अपने तत्त्वविज्ञान पर उसको जस्टिफाइ (प्रमाणित) तो करते हैं, कहते हैं कि हमने ऐसी बात की। लेकिन 'पालिटिशियन्स' का ऐसा नहीं।

प्रश्न : आप ईश्वर की प्रार्थना करते हैं?

जे० पी० प्रार्थना सामुदायिक तो अवश्य है, पर रोज करना नहीं। आलस्य है, मान लीजिए। पर जब कभी प्रार्थना में बैठता हूँ उसका असर जरूर होता है, उससे लाभ भी होता है। कोई साहित्य पढ़ता हूँ उस प्रकार का, तब भी लाभ होता है हृदय को। मैं मानता हूँ, निर-हंकारता से अपना कार्य कोई करे, तो वह प्रार्थना ही है।

प्रश्न : निरहंकार होने के लिए भी तो कुछ प्रयत्न करने पड़ते हैं?

जे० पी० : हाँ, वह तो है ही। निरहंकार होना भी सहज नहीं है। पर मैं अपना देखता हूँ कि शायद वह सहज ही था। उसके लिए कुछ किया हो, ऐसा नहीं लगता। बचपन से ही खास कोई आकांक्षा कि मुझे प्रसिद्धि मिले, सत्ता मिले, जिसको एम्बिशन कहते हैं, ऐसी रही नहीं। मैंने यह कभी नहीं सोचा कि मैं ऐसा बनूँगा, या वैसा बनूँगा।

प्रश्न काम करने के पीछे आपकी क्या दृष्टि रहती है?

जे० पी० : काम अच्छी तरह से करना है, यह भाव रहता है। सफल हो ऐसा भी लगता है। लेकिन उससे मुझे प्रसिद्धि मिले, ऐसा नहीं लगता।

प्रश्न मृत्यु का सामना किस प्रकार से करने की आपकी कल्पना है?

जे० पी० सामना-वामना क्या करना है, वह आयी तो आयेगी, उसका खास भय नहीं। यह कोई दर्शन शास्त्र के कारण है, ऐसा नहीं। कारण शायद यह हो कि क्रान्तिकारियों का आकर्षण था, तब मृत्यु का सामना करने की तैयारी थी।

प्रश्न मरणोपरान्त जीवन (लाईफ आफ्टर डेथ) के बारे में आपकी क्या मान्यता है?

जे० पी० मृत्यु के बाद, शरीर खतम होने के बाद भी कुछ बचता है, ऐसा मैं मानता हूँ।

प्रश्न सर्वोदय-प्रधान-समाज में अध्यात्म का क्या स्वरूप आप मानते हैं?

जे० पी० : समाज-जीवन में, या सामूहिक जीवन में अध्यात्म का मुख्य प्रकट लक्षण यही हो सकता है, या होना चाहिए, कि जो लोग इकट्ठा हैं, कम-से-कम गाँव के लोग, वे एक-दूसरे के लिए चिन्ता करें, एक-दूसरे की सहायता करें, एक-दूसरे के लिए त्याग करने की आवश्यकता हो, तो त्याग भी करें। मेरे सुख में दूसरों का भाग हो, दूसरे के दुःख में मेरा भी भाग हो। गाँव में कुआँ खोदना हो, तो गाँववाले खोदें, किसी का घर बाँधना है, तो गाँव-वाले मदद करें, बिजली की व्यवस्था करनी है, तो गाँववाले करें। फिर अलग-अलग इंश्यूरेन्स होते हैं, वह फिक्र भी गाँववाले ही करें। 'सोशल सिक्योरिटी' (समाज सुरक्षा) का, वेलफेयर (समाज कल्याण) का काम आज सरकार करती है, वह समाज स्वयं करे। व्यक्ति के लिए, समाज के लिए वह आध्यात्मिक-मानवीय मूल्य होगा।

('मैत्री' से साभार)

ऑपरेशन ओमेगा

बंगला देश पर पड़े संकट को दो महीना हुआ। 'आपरेशन ओमेगा' नामक एक अन्तर्राष्ट्रीय टोली बनायी गयी। इसका कार्यालय लन्दन में है। ओमेगा मात्र राहत देनेवाला संगठन नहीं है। यह बंगला देश की विपत्ति की जड़ पर सीधा शान्तिमय प्रहार करने का एक मिशन है। इसका उद्घोष है "विपत्ति में पड़े मानवों को जो राहत देने की क्षमता और साहस रखते हैं उनसे अलग रखने में जो सीमा-बन्धन है उसे ये जायज नहीं मानते। मरणासन्न मनुष्य को मदद देने के लिए किसी भी मनुष्य को किसी की अनुमति की आवश्यकता ही नहीं है।"

श्री रोजर मूडी उस टोली के नायक हैं। लन्दन से "पीस न्यूज" नामक एक अन्तर्राष्ट्रीय शान्तिवादी साप्ताहिक पत्रिका निकलती है। मूडी उसके सह-सम्पादक हैं। उन्होंने एक भेंट-वार्ता में कहा कि "राष्ट्र-संघ ने मानव के अधिकार के घोषणा-पत्र बना रखे हैं। नरसंहार और वंशोच्छेद को रोकने के लिए अन्तर्राष्ट्रीय सभाएँ हुई हैं और उनमें इस मन्सूबे को स्वीकार भी किया गया है। पर इन सब के बावजूद उन्नीस आक्रमक 'आन्तरिक मामले' के नाम से कुर्सी किलों और सेवा भावियों के बीच दीवाल खड़े किये रहते हैं। 'ओमेगा ऑपरेशन' इन बाधाओं को मानने से इन्कार का प्रतीक है।"

इस टोली के संगठन में इन संगठनों का सहयोग है : वार रेजिस्टर्स इण्टर-नैशनल (डब्लू० आर० आई०), 'मैन-चेस्टर कम्यूनिटी रिसर्च ऐण्ड ऐक्शन ग्रुप' "ऐक्शन बांगला देश," 'लेबर पीस फेलो-शिप' 'पीस प्लेज यूनियन,' फेलोशिप आफ री-कान्सिलिएशन।'

इंग्लैण्ड, फ्रांस आदि यूरोप के अन्य देशों तथा अमेरिका के सैकड़ों लोग इस टोली के समर्थक हैं।

(सप्रेस)

उड़ीसा में पुष्टि के प्रयास

बालेश्वर जिले के दो प्रखण्डों में पुष्टि के काम पर जोर लगाया। एक में ५६ एकड़ और दूसरे में करीब ७० एकड़ जमीन बँटी। हर एक में बारह-पन्द्रह ग्रामसभाएँ बनी। आगे के काम का जिम्मा स्थानीय लोगों को सौंप करके अब कार्यकर्ताओं की टोलियाँ दूसरे दो प्रखण्ड में लगी हैं। पर यहाँ स्थानीय लोगों के द्वारा अपेक्षित गति से काम नहीं हो रहा है। इन प्रखण्डों में काम को आगे बढ़ाने के बाद ही कार्यकर्ता आगे बढ़ने की सोचेंगे।

मयूरभंज जिले में एक प्रखण्ड में पुष्टि का प्रयत्न चल रहा है। यहाँ नक्सलवादियों का भी जोर है। कई हत्यायें हुई हैं। इस बहाने पुलिस का भी जुल्म शुरू हुआ है। यहाँ राजनैतिक पक्षों के कार्यकर्ताओं का सहयोग मिल रहा है। पर अभी तक बड़े जमीनवालों का 'रेसपांस' अच्छा नहीं है।

पिछले महीने में कोरापुट में जिला सर्वोदय सम्मेलन हुआ। उसमें ३२ प्रखंडों से आये ५०० के लगभग कार्यकर्ताओं तथा ग्रामीणों ने भाग लिया। आगे के काम, पुष्टि, शान्तिसेना-संघटन, ग्रामकोष आदि के बारे में निर्णय लिये गये। अब तक इस जिले में कुल ग्रामदानी गाँवों में से करीब आधे गाँव में (३,००० गाँवों में) जमीन बँट चुकी है तथा ग्रामसभाएँ बनायी गयी हैं। पर उनमें से १५-२० प्रतिशत ग्रामसभाएँ ही कुछ काम करती हैं, बाकी के गाँवों में जमीन का बँटवारा, ग्रामसभाओं को सक्रिय बनाना, आदि के बारे में अभी काम धीरे-धीरे चल रहा है। सम्मेलन के बाद उसमें तेजी आने की आशा है।

दूसरे जिलों में इधर-उधर थोड़ा बहुत कुछ होता रहता है, पर कोई खास ताकत नहीं बनी है। कुल मिलाकर वहाँ काम की गति मंद ही है।

सुश्री रमा देवी तथा अन्नपूर्णा जी ३० स्वयंसेवक लेकर बंगला देश के शरणार्थियों की सेवा करने गयी हैं।

नवबाबू और मालती देवीजी की तबीयत इन दिनों ठीक नहीं रहती है।

—मनमोहन चौधरी

बीकानेर में ग्रामदान-पुष्टि आन्दोलन की प्रगति

पिछले डेढ़ वर्ष से बीकानेर जिले में ग्रामदान का काम सघनरूप से हो रहा है। जनवरी, १९७० के पहले बीकानेर जिले में ग्रामदान का काम नहीं के बराबर था। जनवरी '७० के प्रारम्भ में कोलायत तहसील के दियातरा गाँव में पहला ग्रामदान शिविर व अभियान आयोजित किया गया। करीब ३०० व्यक्तियों ने भाग लिया। शिविर के बाद तीन-तीन, चार-चार की टोलियाँ बनाकर लोग तहसील के करीब-करीब सारे गाँवों में फैल गये। ७ दिनों में ही कोलायत तहसील के कुल १२० आबाद गाँवों में से ९९ गाँवों की जनता ने ग्रामदान के घोषणा-पत्रों पर हस्ताक्षर करके उसे अपनी स्वीकृति दी।

कोलायत तहसील की तरह, अगले ६ महीनों में जिले की बाकी तीनों तहसीलों में भी शिविर और अभियान चलाये गये, और इस प्रकार जुलाई, १९७० तक बीकानेर जिले में हर तहसील में ८० प्रतिशत गाँवों का ग्रामदान सम्पन्न हो गया।

गत ३० जुलाई, १९७० को सीकर में राजस्थान प्रान्तीय सर्वोदय सम्मेलन के अवसर पर श्री जयप्रकाश नारायण की उपस्थिति में बीकानेर के जिलादान की घोषणा की गयी।

ग्रामदान की पुष्टि का पहला अभियान अक्टूबर में बीकानेर तहसील में चलाया गया। इस अभियान के दौरान ६० गाँवों में सर्वसम्मति से ग्रामसभाओं का गठन हुआ और कई गाँवों में ग्रामकोष तथा ग्राम-शान्तिसेना की शुरुआत भी हुई।

आन्दोलन के इस दूसरे दौर में ९ नये ग्रामदान भी हुए। ग्रामसभाओं के गठन का काम अब भी जारी है। अब ग्रामसभाओं की संख्या २७५ के ऊपर पहुँच गयी है।

इस बीच राजस्थान विधानसभा में नया ग्रामदान कानून भी पास हो गया है। यह कानून राष्ट्रपति के हस्ताक्षर के लिए दिल्ली गया हुआ है। कानून लागू होते ही कानून के अनुसार ग्रामसभाओं को मान्यता दिलाने का काम हाथ में लिया जायगा।

इसी दौरान सरकार की ओर से बीकानेर जिले में जमीनों के आवंटन का काम हो रहा है। ग्रामदान के कार्यकर्ताओं ने इस काम के लिए फिर गाँव-गाँव घूम कर भूमिहीनों के प्रार्थनापत्र भरवाये। छतरगढ़ में बहुत वर्ष पहले भूदान में मिली हुई करीब १ लाख बीघा जमीन है। अब उसमें नहर आने वाली है, यह जमीन भूदानबोर्ड के जरिये अभी तक खेती के लिए दी जाती रही है। अब पूरी जमीन का सर्वे करके जिले के भूमिहीनों में योजना पूर्वक इस जमीन के वितरण का कार्यक्रम भी हाथ में लिया जा रहा है। लेकिन सारे काम बहुत समय और शक्ति चाहते हैं। जमीनों के लिए करीब ७-८ सौ भूमिहीनों के प्रार्थनापत्र भराये जा चुके हैं।

गाँवों के साथ-साथ अब बीकानेर शहर में भी सघनरूप से कार्य हाथ में लिया गया है। जिले में हुए ग्रामदान कार्य की जानकारी देने के अलावा शहर में नगर-स्वराज्य की दृष्टि से किस प्रकार काम हो इस बारे में शहर के बुद्धिजीवियों में कई सभाएँ हो चुकी हैं। नगर-स्वराज्य के काम के लिए लोगों में अच्छा उत्साह जागृत हुआ है। इस प्रकार पिछले डेढ़ वर्ष के काम से बीकानेर जिले के गाँवों में और शहर में एक नया मन्थन शुरू हुआ है और जागृति के चिन्ह नजर आने लगे हैं। एक तरह से यह काम की शुरुआत है। ग्रामस्वराज्य के उद्देश्य की पूर्ति के लिए अभी काफी काम करना होगा। ●

मध्य प्रदेश में भूदान की जमीन का वितरण

जून १९७१

जिला	रकबा ए. डि	परिवार संख्या
बिलासपुर	३-१६	५
गुना	३३- ०	७
शिवपुरी	२३८-००	६५
टीकमगढ़	२-२७	१
	२७६-४३	७८

विभिन्न सामाजिक विभागों में इस जमीन का वितरण इस तरह है।

हरिजन	६७-५४	२०
आदिवासी	१२३-००	३१
सवर्ण	७७-८६	२४
पिछड़ी जाति	८-०३	३
	२७६-४३	७८

जुलाई १९७१

गुना	१८७-००	४७
रायपुर	१८-६८	१२
	२०५-६९	५९
हरिजन	८१-००	२२
आदिवासी	७५-७२	२३
सवर्ण	४४-९७	१३
पिछड़ी जाति	४-००	१
	२०५-६९	५९

—नारायण चिताम्बरे

बीरभूम जिला सर्वोदय-मंडल

गत १८-७-७१ को बीरभूमि जिले के लोक सेवकों की बैठक सर्वोदय आश्रम नलहटी में महम्मद सैयद अली के सभापतित्व में हुई। ९ सदस्यीय जिला सर्वोदय मण्डल की कार्यसमिति का निर्वाचन हुआ। श्री लाल बिहारी सिंह अध्यक्ष और श्री लक्ष्मीकान्त बनर्जी मंत्री चुने गये। ५-८-७१ को सर्व सेवा संघ के लिए जिला प्रतिनिधि चुनने के लिए जिले के लोक सेवकों की बैठक बसोया रेशम शिल्पी संघ कार्यालय में श्री विश्वनाथ गुप्त के सभापतित्व में हुई। श्री लाल बिहारी सिंह जिला प्रतिनिधि निर्वाचित हुए।

— शान्ति कुमार राय, सहमंत्री,
जिला सर्वोदय मंडल, पो०—नलहटी

महिषी में ग्रामसभा सक्रिय

जुलाई और अगस्त में महिषी ग्रामसभा की चार बैठकें हुईं। इन बैठकों में लिये गये निर्णयों को कार्यान्वित करने ग्रामसभा के प्रमुख लोग तनमन से लगे हुए हैं। संस्कृत विद्यालयों के शिक्षकों और छात्रों ने ग्राम-सफाई, सड़क-निर्माण आदि में भाग लिया। प्रखण्ड विकास पदाधिकारी का सहयोग मिला। सुश्री सुशीला बहन और श्री अलख नारायण भाई गाँववालों के आग्रह से उनके बीच कुछ और दिन टिके रहे हैं। बीघा कट्ठा में निकाली गयी २० बीघा जमीन अब तक बाँटी जा चुकी है। 'भूदान-यज्ञ' एवं 'मैत्री' के ग्राहक-पाठक बढ़ रहे हैं। अन्तलत मुक्ति की कल्पना है।

—रघुदत्त झा, महिषी

जिला सर्वोदय मंडल मुजफ्फरपुर का पुनर्गठन

दिनांक २१-७-७१ को जिला सर्वोदय मंडल, मुजफ्फरपुर के लोक सेवकों की आम सभा हुई, जिसमें ३२५ में २०० लोक सेवकों की उपस्थिति रही। प्रस्ताव संख्या ६ के मुताबिक निम्नलिखित पदाधिकारी सर्वसम्मति से चुने गये—

(१) श्री कामेश्वर ठाकुर, अध्यक्ष
(२) श्री विन्देश्वरी प्रसाद सिंह, उपाध्यक्ष
(३) श्री नन्दकिशोर ठाकुर, कोषाध्यक्ष
(४) श्री जगन्नाथ पाण्डेय, मंत्री
(५) श्री गंगा प्रसाद सहनी, सहायक मंत्री

बीकानेर में ग्रामस्वराज्य के साथ-साथ नगर स्वराज्य

पिछले एक महीने में बीकानेर जिले में था। बीकानेर जिले के अधिकांश गाँवों में ग्रामदान के संकल्प हो चुके हैं। इस बीच राजस्थान सरकार द्वारा संशोधित ग्रामदान कानून भी पास हो गया है। अतः अब इन ग्रामदानी गाँवों को कानूनी मान्यता दिलाने की कार्यवाही करनी है। कानूनी मान्यता मिलने पर गाँवों की जमीन की व्यवस्था का अधिकार सरकार के रेवेन्यू विभाग के बजाय ग्रामसभा के हाथ में आ जायगा।

ग्रामदान की योजना गाँवों के हित में है यह समझने में गाँववालों को कठिनाई नहीं होती, लेकिन गाँवों के कुछ ताकतवर लोगों ने शासक-पार्टी और शासन-तन्त्र के बल पर ऐसा जाल बिछा रखा है कि उसमें से निकलना गाँवों के लोगों के लिए मुश्किल हो रहा है। इन ताकतवर लोगों के डर और अहसान से लोग दबे हुए हैं। बीकानेर में जो अनुभव आया उस पर से ऐसा लगता है कि कुछ अच्छे कार्यकर्ताओं द्वारा गाँवों के बीच में बैठकर वहाँ चल रहे अन्याय और शोषण का मुकाबिला किये बिना, और अपनी सेवा के जरिये लोगों की ताकत बढ़ाये बिना ग्रामदान का अच्छा काम भी आगे नहीं बढ़ सकेगा। बीकानेर की चारों तहसीलों में इस प्रकार चार केन्द्र कायम करने का सोचा गया है।

गाँवों के काम के साथ-साथ इस बार बीकानेर शहर में भी विचार-प्रचार किया गया। पिछले डेढ़ वर्षों में बीकानेर जिले के गाँवों में जो काम हुआ है उसकी जानकारी शहर के लोगों को देने के साथ-साथ शहर में भी उसी प्रकार मोहल्ला सभाओं के गठन के जरिये 'नगर-स्वराज्य' के कार्यक्रम का सुझाव लोगों के सामने रखा गया। बीकानेर शहर में करीब २०० 'कारनर-मीटिंगें' की गयीं। नगर-स्वराज्य की योजना छपाकर वितरित की गयी तथा स्कूलों, कालेजों, अस्पतालों, रोटरी क्लब आदि विभिन्न संस्थाओं में मीटिंग तथा आमसभाएँ की गयीं। बीकानेर शहर में अच्छा वातावरण बना और नगर-स्वराज्य के काम को आगे बढ़ाने के लिए एक समिति का निर्माण हुआ। (एक पत्र से)

उड़ीसा में पुष्टि के प्रयास

बालेश्वर जिले के दो प्रखण्डों में पुष्टि के काम पर जोर लगाया। एक में ५६ एकड़ और दूसरे में करीब ७० एकड़ जमीन बँटी। हर एक में बारह-पन्द्रह ग्रामसभाएँ बनी। आगे के काम का जिम्मा स्थानीय लोगों को सौंप करके अब कार्यकर्ताओं की टोलियाँ दूसरे दो प्रखण्ड में लगी हैं। पर यहाँ स्थानी लोगों के द्वारा अपेक्षित गति से काम नहीं हो रहा है। इन प्रखण्डों में काम को आगे बढ़ाने के बाद ही कार्यकर्ता आगे बढ़ने की सोचेंगे।

मयूरभंज जिले में एक प्रखण्ड में पुष्टि का प्रयत्न चल रहा है। यहाँ नक्सालवादियों का भी जोर है। कई हत्यायें हुई हैं। इस बहाने पुलिस का भी जुल्म शुरू हुआ है। यहाँ राजनैतिक पक्षों के कार्यकर्ताओं का सहयोग मिल रहा है। पर अभी तक बड़े जमीनवालों का 'रेसपॉंस' अच्छा नहीं है।

पिछले महीने में कोरापुट में जिला सर्वोदय सम्मेलन हुआ। उसमें ३२ प्रखंडों से आये ५०० के लगभग कार्यकर्ताओं तथा ग्रामीणों ने भाग लिया। आगे के काम, पुष्टि, शान्तिसेना-संगठन, ग्रामकोष आदि के बारे में निर्णय लिये गये। अब तक इस जिले में कुल ग्रामदानी गाँवों में से करीब आधे गाँव में (३,००० गाँवों में) जमीन बँट चुकी है तथा ग्रामसभाएँ बनायी गयी हैं। पर उनमें से १५-२० प्रतिशत ग्रामसभाएँ ही कुछ काम करती हैं, बाकी के गाँवों में जमीन का बँटवारा, ग्रामसभाओं को सक्रिय बनाना, आदि के बारे में अभी काम धीरे-धीरे चल रहा है। सम्मेलन के बाद उसमें तेजी आने की आशा है।

दूसरे जिलों में इधर-उधर थोड़ा बहुत कुछ होता रहता है, पर कोई खास ताकत नहीं बनी है। कुल मिलाकर वहाँ काम की गति मंद ही है।

सुश्री रमा देवी तथा अन्नपूर्णा जी ३० स्वयंसेवक लेकर बंगला देश के शरणार्थियों की सेवा करने गयी हैं।

नबबाबू और मालती देवीजी की तबीयत इन दिनों ठीक नहीं रहती है।

—मनमोहन चौधरी

बीकानेर में ग्रामदान-पुष्टि आन्दोलन की प्रगति

पिछले डेढ़ वर्ष से बीकानेर जिले में ग्रामदान का काम सघनरूप से हो रहा है। जनवरी, १९७० के पहले बीकानेर जिले में ग्रामदान का काम नहीं के बराबर था। जनवरी '७० के प्रारम्भ में कोलायत तहसील के दियातरा गाँव में पहला ग्रामदान शिविर व अभियान आयोजित किया गया। करीब ३०० व्यक्तियों ने भाग लिया। शिविर के बाद तीन-तीन, चार-चार की टोलियाँ बनाकर लोग तहसील के करीब-करीब सारे गाँवों में फैल गये। ७ दिनों में ही कोलायत तहसील के कुल १२० आबाद गाँवों में से ९९ गाँवों की जनता ने ग्रामदान के घोषणा-पत्रों पर हस्ताक्षर करके उसे अपनी स्वीकृति दी।

कोलायत तहसील की तरह, अगले ६ महीनों में जिले की बाकी तीनों तहसीलों में भी शिविर और अभियान चलाये गये, और इस प्रकार जुलाई, १९७० तक बीकानेर जिले में हर तहसील में ८० प्रतिशत गाँवों का ग्रामदान सम्पन्न हो गया।

गत ३० जुलाई, १९७० को सीकर में राजस्थान प्रान्तीय सर्वोदय सम्मेलन के अवसर पर श्री जयप्रकाश नारायण की उपस्थिति में बीकानेर के जिलादान की घोषणा की गयी।

ग्रामदान की पुष्टि का पहला अभियान अक्टूबर में बीकानेर तहसील में चलाया गया। इस अभियान के दौरान ६० गाँवों में सर्वसम्मति से ग्रामसभाओं का गठन हुआ और कई गाँवों में ग्रामकोष तथा ग्राम-शान्तिसेना की शुरुआत भी हुई।

आन्दोलन के इस दूसरे दौर में ९ नये ग्रामदान भी हुए। ग्रामसभाओं के गठन का काम अब भी जारी है। अब ग्रामसभाओं की संख्या २७५ के ऊपर पहुँच गयी है।

इस बीच राजस्थान विधानसभा में नया ग्रामदान कानून भी पास हो गया है। यह कानून राष्ट्रपति के हस्ताक्षर के लिए दिल्ली गया हुआ है। कानून लागू होते ही कानून के अनुसार ग्रामसभाओं को मान्यता दिलाने का काम हाथ में लिया जायगा।

इसी दौरान सरकार की ओर से बीकानेर जिले में जमीनों के आवंटन का काम हो रहा है। ग्रामदान के कार्यकर्ताओं ने इस काम के लिए फिर गाँव-गाँव घूम कर भूमिहीनों के प्रार्थनापत्र भरवाये। छतरगढ़ में बहुत वर्ष पहले भूदान में मिली हुई करीब १ लाख बीघा जमीन है। अब उसमें नहर आने वाली है, यह जमीन भूदानबोर्ड के जरिये अभी तक खेती के लिए दी जाती रही है। अब पूरी जमीन का सर्वे करके जिले के भूमिहीनों में योजनापूर्वक इस जमीन के वितरण का कार्यक्रम भी हाथ में लिया जा रहा है। लेकिन सारे काम बहुत समय और शक्ति चाहते हैं। जमीनों के लिए करीब ७-८ सौ भूमिहीनों के प्रार्थनापत्र भराये जा चुके हैं।

गाँवों के साथ-साथ अब बीकानेर शहर में भी सघनरूप से कार्य हाथ में लिया गया है। जिले में हुए ग्रामदान कार्य की जानकारी देने के अलावा शहर में नगर-स्वराज्य की दृष्टि से किस प्रकार काम हो इस बारे में शहर के बुद्धिजीवियों में कई सभाएँ हो चुकी हैं। नगर-स्वराज्य के काम के लिए लोगों में अच्छा उत्साह जागृत हुआ है। इस प्रकार पिछले डेढ़ वर्ष के काम से बीकानेर जिले के गाँवों में और शहर में एक नया मन्थन शुरू हुआ है और जागृति के चिन्ह नजर आने लगे हैं। एक तरह से यह काम की शुरुआत है। ग्रामस्वराज्य के उद्देश्य की पूर्ति के लिए अभी काफी काम करना होगा। ●

आन्दोलन के समाचार

मध्य प्रदेश में भूदान की जमीन का वितरण

जून १९७१

जिला	रकबा ए. डि.	परिवार संख्या
बिलासपुर	३-१६	५
गुना	३३-०	७
शिवपुरी	२३८-००	६५
टीकमगढ़	२-२७	१
	२७६-४३	७८

विभिन्न सामाजिक विभागों में इस जमीन का वितरण इस तरह है।

हरिजन	६७-५४	२०
आदिवासी	१२३-००	३१
सवर्ण	७७-८६	२४
पिछड़ी जाति	८-०३	३
	२७६-४३	७८

जुलाई १९७१

गुना	१८७-००	४७
रायपुर	१८-६९	१२
	२०५-६९	५९
हरिजन	८१-००	२२
आदिवासी	७५-३२	२३
सवर्ण	४४-९७	१३
पिछड़ी जाति	४-००	१
	२०५-६९	५९

—नारायण वितामबरे

वीरभूम जिला सर्वोदय-मंडल

गत १८-७-७१ को वीरभूमि जिले के लोक सेवकों की बैठक सर्वोदय आश्रम नलहटी में महम्मद सैयद अली के सभापतित्व में हुई। ९ सदस्यीय जिला सर्वोदय मण्डल की कार्यसमिति का निर्वाचन हुआ। श्री लाल बिहारी सिंह अध्यक्ष और श्री सत्यीकान्त बनर्जी मंत्री चुने गये। ५-८-७१ को सर्व सेवा संघ के लिए जिला प्रतिनिधि चुनने के लिए जिले के लोक सेवकों की बैठक बसोया रेशम शिल्पी संघ कार्यालय में श्री विश्वनाथ गुप्त के सभापतित्व में हुई। श्री लाल बिहारी सिंह जिला प्रतिनिधि निर्वाचित हुए।

— शान्ति कुमार राय, सहमंत्री,
जिला सर्वोदय मंडल, पो०—नलहटी

महिषी में ग्रामसभा सक्रिय

जुलाई और अगस्त में महिषी ग्रामसभा की चार बैठकें हुईं। इन बैठकों में लिये गये निर्णयों को कार्यान्वित करने ग्रामसभा के प्रमुख लोग तनमन से लगे हुए हैं। संस्कृत विद्यालयों के शिक्षकों और छात्रों ने ग्राम-सफाई, सड़क-निर्माण आदि में भाग लिया। प्रखण्ड विकास पदाधिकारी का सहयोग मिला। सुश्री सुशीला बहन और श्री अलख नारायण भाई गांववालों के आग्रह से उनके बीच कुछ और दिन टिक रहे हैं। बीघा कट्ठा में निकाली गयी २० बीघा जमीन अब तक बांटी जा चुकी है। 'भूदान-यज्ञ' एवं 'मैत्री' के ग्राहक-पाठक बढ़ रहे हैं। अन्त-जन मुक्ति की कल्पना है।

—रघुदत्त झा, महिषी

जिला सर्वोदय मंडल मुजफ्फरपुर का पुनर्गठन

दिनांक ११-७-७१ को जिला सर्वोदय मंडल, मुजफ्फरपुर के लोक सेवकों की आम सभा हुई, जिसमें ३२५ में २०० लोक सेवकों की उपस्थिति रही। प्रस्ताव संख्या ६ के मुताबिक निम्नलिखित पदाधिकारी सर्वसम्मति से चुने गये—

(१) श्री कामेश्वर ठाकुर, अध्यक्ष
(२) श्री बिन्देश्वरी प्रसाद सिंह, उपाध्यक्ष
(३) श्री नन्दकिशोर ठाकुर, कोषाध्यक्ष
(४) श्री जगन्नाथ पाण्डेय, मंत्री
(५) श्री गंगा प्रसाद सहनी, सहायक मंत्री

बीकानेर में ग्रामस्वराज्य के साथ-साथ नगर स्वराज्य

पिछले एक महीने में बीकानेर जिले में था। बीकानेर जिले के अधिकांश गांवों में ग्रामदान के संकल्प हो चुके हैं। इस बीच राजस्थान सरकार द्वारा संशोधित ग्रामदान कानून भी पास हो गया है। अब वह इन ग्रामदानी गांवों को कानूनी मान्यता दिलाने की कार्यवाही करती है। कानूनी मान्यता मिलने पर गांवों की जमीन की व्यवस्था का अधिकार सरकार के रेवेन्यू विभाग के बजाय ग्रामसभा के हाथ में आ जायगा।

ग्रामदान की योजना गांवों के हित में है यह समझने में गांववालों को कठिनाई नहीं होती, लेकिन गांवों के कुछ ताकतवर लोगों ने पार्टी-पार्टी और शासन-तंत्र के बल पर ऐसा जाल बिछा रखा है कि उसमें से निकलना गांवों के लोगों के लिए मुश्किल हो रहा है। इन ताकतवर लोगों के डर और अहसान से लोग दबे हुए हैं। बीकानेर में जो अनुभव आया उस पर से ऐसा लगता है कि कुछ अच्छे कार्यकर्ताओं द्वारा गांवों के बीच में बैठकर वहां चल रहे अन्याय और शोषण का मुकाबिला किये बिना, और अपनी सेवा के जरिये लोगों की ताकत बढ़ाये बिना ग्रामदान का अच्छा काम भी आगे नहीं बढ़ सकेगा। बीकानेर की चारों तहसीलों में इस प्रकार चार केन्द्र कायम करने का सोचा गया है।

गांवों के काम के साथ-साथ इस बार बीकानेर शहर में भी विचार-प्रचार किया गया। पिछले डेढ़ वर्षों में बीकानेर जिले के गांवों में जो काम हुआ है उसकी जानकारी शहर के लोगों को देने के साथ-साथ शहर में भी उसी प्रकार मोहल्ला सभाओं के गठन के जरिये 'नगर-स्वराज्य' के कार्यक्रम का सुझाव लोगों के सामने रखा गया। बीकानेर शहर में करीब २०० 'कार्नर-मीटिंगें' की गयीं। नगर-स्वराज्य की योजना छपाकर वितरित की गयी तथा स्कूलों, कालेजों, व्यापारियों, रोटरी क्लब आदि विभिन्न तबकों में मीटिंग तथा आमसभाएं की गयीं। बीकानेर शहर में अच्छा वातावरण बना और नगर-स्वराज्य के काम को आगे बढ़ाने के लिए एक समिति का निर्माण हुआ। (एक पत्र से)

—सिद्धराज ढड्ढा

सक्रिय ग्राम शान्ति सैनिक

मरौना प्रखण्ड (सहरसा) के कुन्दरिया, बेलही तथा लक्ष्मनियाँ पंचायतों के ग्राम-शांतिसैनिकों ने गत १५ अगस्त को घनघोर वर्षा के बावजूद ६'३० बजे सुबह स्वतन्त्रता-दिवस के उपलक्ष में प्रभात-फेरी की। सर्वोदय-केन्द्र, लालपुर के प्रांगण में झंडोत्तोलन किया और बैठक की।

लालपुर ग्रामसभा ने गाँव की ग्राम-दान पुष्टि के कागज तैयार कर पुष्टि पदाधिकारी को दे दिया।

—दुर्गानन्द भाई

बंगला देश तरुण शिविर

बंगला देश वॉलन्टरी सर्विस कोर और गांधी शान्ति प्रतिष्ठान के तत्त्वाधान में पंचम बंगला देश तरुण-शिविर का आयोजन पिछले दिनों अभय आश्रम, बनगाँव में किया गया। बंगला देश की श्रीमती साजेदा चौधरी (मेम्बर, नेशनल एसेम्बली, बंगला देश) ने उसका उद्घाटन किया। गांधी शान्ति प्रतिष्ठान के आजीवन कार्यकर्ता श्री गोपीनाथ नायर (केरल) ने इस दस-दिवसीय शिविर का संचालन किया। उद्‌वासित तरुण-तरुणियों को समाज विज्ञान, पुनर्निर्माण और नागरिक गुणों का प्रशिक्षण देने की दृष्टि से इन शिविरों का आयोजन किया गया है। (संदेश)

बाढ़ पीड़ितों की सेवा में

बिहार इस वर्ष भयंकर बाढ़ की चपेट में पड़ गया है। भागलपुर जिला ग्रामस्वराज्य समिति के मित्रगण अपनी शक्ति भर जिले के बाढ़-पीड़ितों की सेवा में जुट गये हैं।

—गोपी रमण मंडल

विचार-शिक्षण

डा० दर्शननिधि पटनायक ने १० से १४ जुलाई तक सोनानगर का और ३ से ८ अगस्त तक फिरोजपुर का परिभ्रमण किया। मुख्यतः विद्यालयों से सम्पर्क किया।

—बनारसी दास मोदर, मंत्री पंजाब सर्वोदय मण्डल, जालन्धर शहर

'बंगाल बंद' का मूल्य

द बेंगाल चेम्बर्स ऑफ कॉमर्स एन्ड इन्डस्ट्रीज ने 'बंगाल बंद' के सम्बन्ध में यह हिसाब लगाया है कि एक रोज के 'बंगाल बंद' से करीब १५ करोड़ रुपये का नुकसान होगा। नुकसान का अनुमान इस तरह है

उत्पादन	५ करोड़ ७५ लाख
व्यापार	५ ,, १० ,,
परिवहन	० ,, ६० ,,
बैंकिंग बीमा	० ,, २० ,,
घरेलू और सार्वजनिक सेवा	१ ,, ७५ ,,
वेतन, मजदूरी, फीस २	,, ५० ,,

'बन्द' के दिन आमतौर पर सभी लोगों को होनेवाली व्यक्तिगत कठिनाइयों का हिसाब इसमें नहीं लगाया गया है। 'बन्द' के एक दिन पहले दैनिक उपयोग के कई पदार्थों का दाम बढ़ जाता है। सब्जी, साग, मछली, अण्डे का मूल्य १५ से २५ प्रतिशत तक बढ़ जाता है।

इस समय बंगला देश से जो बेशुमार उद्‌वासित शरणार्थी भारत आ रहे हैं उसके कारण कई कठिन समस्याएँ पैदा हुई हैं। उस सन्दर्भ में यह 'बन्द' और भी अधिक दुस्सह है।

जनवरी १९७० से जुलाई १९७१ तक पाँच बार 'बंगाल बन्द' हो चुका है। इसके अलावा छोटे-मोटे अन्य स्थानीय 'बन्द' तो हुए ही। उन सबने सामान्य जन जीवन को काफी अस्त-व्यस्त कर दिया। इस किस्म की हड़तालों से लाभ किनको-किनको होता है यह समझना कठिन है। राज्य की अर्थ-व्यवस्था पर इसका कुप्रभाव व्यापक रूप से पड़ता है।

इस तरह औद्योगिक उत्पादन, मजदूरी, वेतन, राज्य की आय एवं अन्य आर्थिक व्यवस्था में जो भारी नुकसान होता है, उसे ध्यान में रख इन चैम्बरों ने प्रस्तावित 'बन्द' के आयोजकों से निवेदन किया है कि वे अपने निर्णय पर फिर से विचार करें।

केन्द्रीय श्रम-मंत्री श्री आर० के० खाडिलकर के आमन्त्रण पर पश्चिम बंगाल के श्रमिक-युनियनों के करीब २० प्रतिनिधियों में दो को छोड़कर शेष ने इस पर गौर करने का आश्वासन दिया।

बंगला देश पर अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन

बंगला देश पर आयोजित किये जाने वाले अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन की तैयारी समिति ने घोषणा की है कि सम्मेलन की तिथि बदलकर १८, १९ और २० सितम्बर कर दी गयी है। पहले सम्मेलन की तिथियाँ १४, १५ और १६ अगस्त रखी गयी थीं। (संदेश)

सर्वोदय परिवार के तीन बुजुर्ग उरुली में

ता० ७ अगस्त को मैं उरली कांचन गया था। वहाँ सर्वोदय परिवार के तीन बुजुर्गों के सहवास में आठ घंटे बिताने का सुअवसर मिला।

श्री अण्णासाहब सहस्रबुद्धे २० जुलाई को विश्राम, भोजन-नियंत्रण हेतु निसर्गोपचार आश्रम में आये। एक मास यहाँ रहेंगे। अण्णासाहब कुछ वर्षों से गले की तकलीफ, रक्तचाप, खाँसी, आदि से पीड़ित हैं। तरह-तरह की दवाईयाँ लेकर थक गये। रक्तचाप १८६ तक जाता था। आठ माह पूर्व आपने औषध छोड़ने का तय किया। अपना आहार खुद ही नियंत्रित किया। कई किताबें आहार पर इसीलिए पढ़ीं और ४ माह पूर्व कच्चा अनाज खाना प्रारम्भ किया। दूध भी धारोष्ण ही लेते हैं। चार साल पहले शरीर का वजन १२० पौंड था। इस आहार को प्रारंभ करने के पूर्व वह कम होते होते १०६ पौंड हो गया था। रात को नीद नहीं आती थी। पिछले आठ माह से इस आहार पर रहने के कारण रक्तचाप १५० हुआ और वजन भी ११० पौंड हुआ। नींद आने लगी। जुकाम, खाँसी, गले की तकलीफ सबसे एक-एक करके राहत मिली। शरीर में स्फूर्ति है। ७१ के करीब उम्र हो रही है।

श्री रविशंकर दादा यहाँ १५ दिनों से हैं। यहाँ विश्राम के लिए आये हैं। ८८ साल की उम्र है। यहाँ आने पर चलते चलते पैर की हड्डी में थोड़ी चोट आ गयी थी। अब ठीक हो रही है। वजन १३० पौंड है। पैर में गठिया है। एक माह विश्राम के लिए यहाँ आये हैं— बीमारी के उपचार हेतु नहीं। आज भी ३-४ मील आसानी से घूम लेते हैं। वे गुजरात की बंगला देश सहायता समिति के अध्यक्ष हैं। बिहार के १९६७ के अकाल में दादा ने बिहार में भी-तोड़ परिश्रम किया। गरमी के मौसम में दस-पन्द्रह मील प्रतिदिन पैदल घूमना पड़ा। तब से स्वास्थ्य कमजोर हो गया है। दूर का दीखता नहीं—आदमी या साइकिल सरीखा वाहन नजदीक आने पर ही दीखता है। गरदन के पिछले हिस्से के दो मनके इकट्ठे हो गये हैं, अतः पीछे या बगल में देख नहीं सकते। तीन साल से यह बीमारी है। 'हमारा काम अटकता नहीं, वह चल रहा है—ऐसा आप मस्ती से कह रहे थे, वह आहार में दूध और बिना नमक की सब्जी आदि ही लेते हैं, अन्न छोड़ दिया है।

श्री शंकरराव देवजी अब करीब-करीब पूर्ण स्वस्थ हो गए हैं, यह जानकर सर्वोदय परिवार में सबको खुशी होगी। वजन ९२ पौंड है। इसके पूर्व वजन ११० पौंड रहता था। इसीलिए काफी कमजोरी है। गले में तकलीफ होने से बोलने में तकलीफ हो रही है ऐसा लगता है और आवाज उतनी साफ नहीं है जितनी होनी चाहिए। हाजमा, नींद, स्फूर्ति—सब ठीक है। बंगला देश, लोकनीति, ग्रामसभाओं की गतिविधियों, पुष्टि, संघटन, सत्याग्रह आदि विविध विषयों पर डेढ़ घंटे तक उन्होंने चर्चा की। तमिलनाडु में क्या चल रहा है, इसकी आस्थापूर्वक तहकीकात की। विश्राम के लिए उन्हीं में ठहरे हैं।— ठाकुरदास बंग

बिहार भूदान-यज्ञ कमिटी

बिहार भूदान-यज्ञ-अधिनियम की धारा ४ के अन्तर्गत राज्य सरकार ने बिहार भूदान-यज्ञ कमिटी का पुनर्गठन कर दिया है। श्री बद्री नारायण सिंह को इस कमिटी का अध्यक्ष तथा सर्वश्री जयप्रकाश नारायण, गौरीशंकर शरण सिंह, वैद्यनाथ प्रसाद चौधरी, गजानन दास, लाल सिंह त्यागी, निर्मल चन्द्र, और श्याम प्रकाश सिंह को सदस्य नियुक्त किया है। बिहार सरकार के मुख्य मंत्री और राजस्व मंत्री भी इस कमिटी के पदेन सदस्य बनाये गये हैं।

बिहार भूदान-यज्ञ-अधिनियम के १९५४ के अनुसार इस कमिटी का पुनर्गठन प्रत्येक चार साल पर किया जाता है। सर्व प्रथम इस कमेटी का पुनर्गठन १९५४ में किया गया था और उसके अध्यक्ष श्री गौरीशंकर शरण सिंह बनाये गये थे जो पिछले १६ वर्षों तक इस पद पर बने रहे।

—हरिश्चन्द्र प्र० सिंह
बिहार भूदान यज्ञ कमिटी, पटना–३

९ अगस्त के समाचार

शिक्षा में क्रान्ति अभियान

गांधी शांति प्रतिष्ठान केन्द्र, जमशेदपुर के तत्वावधान में शिक्षा में क्रान्ति अभियान के क्रम में निम्नलिखित कार्यक्रम बनाये गये।

१. 'शिक्षा में क्रान्ति : क्यों और कैसे', 'शिक्षा में क्रान्ति की घोषणा' शीर्षक पर्चे छपवा कर स्कूलों, कालेजों और अन्य शिक्षण-संस्थाओं में वितरित किये गये।

२. शहर की शिक्षण-संस्थाओं से व्यापक रूप से सम्पर्क कर शिक्षा में क्रान्ति के विभिन्न पहलुओं पर सेमिनार आयोजित करने को उन्हें प्रेरित किया गया।

३. वीमेन्स कालेज में २ और ३ अगस्त को, रिजनल इन्स्टीच्यूट ऑफ टेक्नालॉजी एवं वर्कर्स कालेज में ४ और ५ अगस्त को तथा को-ऑपरेटिव कालेज जमशेदपुर में ४ से ७ अगस्त तक सेमिनार हुए।

यूनिवर्सिटी की स्वायत्तता, शिक्षा का माध्यम, परीक्षा पद्धति, आदि विषयों पर विद्वान शिक्षकों ने पेपर तैयार किये तथा छात्रों एवं शिक्षकों ने उन पर चर्चा की।

करीम सिटी कालेज, आर० डी० टाटा हाई स्कूल, के० एम० पी० एम० हाईस्कूल, लोएला हाईस्कूल, कन्वेन्ट हाईस्कूल आदि जगहों में भी गोष्ठियाँ आयोजित की गयी।—मुहम्मद अयूब खाँ

पत्रांश

मुनिजन और बंगला देश

आपने मुनिराज श्री जनक विजयजी और विद्यानन्दजी के बारे में लिखा, उसके लिए धन्यवाद। अब मुनियों के नाम के साथ 'महाराज' शब्द लगाना अच्छा नहीं लगता। गुजरात के रविशंकरजी को सब 'महाराज' कहते थे अब उनको रविशंकर दादा कहते हैं। राजाओं के राज्य हमने तोड़ दिये। गुजरात में रसोई बनानेवालों को 'महाराज' कहने का रिवाज है। क्योंकि वे होते हैं ब्राह्मण, और रसोई बनाते हैं, वैश्यों के लिए।

मुनिजन 'जगम' हो कर सारे देश के लोगों से मिलते हैं, देश के हर प्रदेश की आर्थिक, सांस्कृतिक, राजनैतिक और सामाजिक परिस्थिति जानते हैं। आजकल के अखबारों से गहरी सेवा हो नहीं सकती सो मुनिजनों के द्वारा—अगर वे चाहे तो—अच्छी तरह से हो सकेगी।

आधा बंग देश भारत में है। आधा पाकिस्तान में है। उसे हम 'पूर्व बंग' कह सकते हैं। पूर्व बंग का और वहाँ के नर-संहार का सवाल अन्तर्राष्ट्रीय है। लेकिन अधिक-से-अधिक भुगतना पड़ता है भारत को। इसलिए भारत सरकार यह सवाल दुनिया की सब सरकारों के सामने रखकर मदद माँग रही है। हमारा काम भारत सरकार पर दबाव डालने का नहीं है। किन्तु यह पहचान कर कि दुनिया की छोटी-बड़ी सरकारें अन्तर्राष्ट्रीय गुटबाजी में फँसी हुई हैं, और युद्धों में मदद भी करती है, हमारी जनता को चाहिए कि दुनिया के सब राष्ट्रों की सरकारों को बाजू पर रख वहाँ की जनता के सांस्कृतिक नेताओं से सम्पर्क बढ़ायें। और उसे उस राष्ट्र की जनता में जागृति लाकर विश्वमानस का प्रभाव वर्तमान परिस्थिति पर डालने की कोशिश करें। जिस तरह 'अ-सरकारी विश्वजन' का मानस हम जागृत करें। और उसका प्रभाव दुनिया की सरकारों पर और अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थिति पर लादने की कोशिश करें।

हम लोगों को 'अ-सरकारी लोक-मानस को संघटित करके नये युग का प्रारम्भ करना है। जिस तरह 'धर्म-सत्ताओं के द्वारा धार्मिकता का अनुभव हुआ है', उसी तरह 'राजसत्ताओं द्वारा मानवता का और विश्वशान्ति का प्रभावी प्रचार हो नहीं सकता'। इस वास्ते हम लोगों को अ-सरकारी विश्वमानस संघटित करने का प्रारम्भ करना है।

इस काम को पुराने ढंग के मुनिजन कर नहीं सकते। जिन मुनिजनों को भूत-काल के इतिहास का ज्ञान है, वर्तमान परिस्थिति पर जिनका जिंदा प्रभाव है ऐसे मुनिजन ही जनता को भविष्य काल की सेवा के लिए तैयार कर सकते हैं।

—काका कालेलकर के सप्रेम वंदेमातरम्
(श्री मानवमुनि को लिखे एक पत्र से)

इन्दौर में गांधी-स्वाध्याय-संस्थान का आयोजन

स्थानीय गांधी शांति प्रतिष्ठान केन्द्र के तत्त्वावधान में गांधी-स्वाध्याय-संस्थान का शुभारम्भ होने जा रहा है। जिसके अन्तर्गत शिक्षित नवयुवकों के लिए गांधी-दर्शन के अध्ययन वर्ग लगेंगे। संस्थान का साढ़े पाँच माह की अवधि का एक पाठ्यक्रम तैयार किया गया है जिसके अन्तर्गत प्रति शनिवार और रविवार को संस्थान के अध्ययन वर्ग लगेंगे। सैद्धान्तिक के अलावा व्यवहारिक ज्ञान का भी पाठ्यक्रम में समावेश किया गया है। स्वाध्याय वर्गों में अध्यापन के लिए एक अध्यापक मण्डल मनोनीत किया गया। समय-समय पर गांधी-दर्शन के मनीषियों को भी व्याख्यान हेतु बाहर से निमंत्रित किया जायगा।

हिरोशिमा दिवस

गत छः अगस्त को कलकत्ते में जो हिरोशिमा दिवस मनाया गया, उसका लोकमानस पर गहरा असर पड़ा है। पश्चिम बंगाल सर्वोदय मण्डल और गांधी शांति प्रतिष्ठान के सहयोग से कलकत्ता सर्वोदय मण्डल ने एक शान्ति-कूच (पीस-मार्च) का आयोजन किया था। शान्ति-वादियों के इस जुलूस में ओमेगा टीम के सदस्य भी शामिल हुए। कलकत्ता की सड़कों पर मौन धारण कर चलनेवाले इस जुलूस का ... गहरी गुप्तर प्रभाव पड़ा। इस जुलूस की परिणति जिस सभा में हुई उसके मुख्य प्रवचनकर्ता सर्वश्री नारायण देसाई, रोजर मूडी और क्षितीश राय चौधरी थे। • (सप्रेस)

इस अंक में

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २० पैसे), विदेश में २२रु० ; या २५ शिलिंग या ३ डालर।
एक अंक का मूल्य २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिये प्रकाशित एवं मनोहर प्रेस, वाराणसी में मुद्रित

सम्पादक
राममूर्ति
वर्ष : १७
अंक : ४९
सोमवार
६ सितम्बर, '७१
पत्रिका विभाग
सर्व सेवा संघ, राजघाट, वाराणसी-१
फोन ६४:९१ तार : सर्वसेवा

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

विनोबा द्वारा गांधी-विचार का क्रान्तिकारी पक्ष—कुछ लोग जिसे 'यूटोपियन' (कोरी कल्पना) कहेंगे—अधिक प्रबल हुआ है, तत्वतः सुस्पष्ट हुआ है और क्रान्ति का एक विश्वसनीय सत्य बनकर प्रकाश में आया है; न केवल भारतीय, बल्कि सम्पूर्ण मानव समाज के समग्र पुनर्निर्माण के लिए एक आह्वान बन कर!

—ज्योफ्रे आस्टर गाइं और मेरजिल क्यूरेल लिखित 'दी बेटिल एनार्किस्ट्स' : पृष्ठ-२८ से

• बंगला देश को मान्यता देना भारत के हित में : विलम्ब अनुचित •

—विनोबा

चीन का माओ : भारत का विनोबा

माओ नेता है, शासक है; विनोबा संत है, सेवक है, और नेतृत्व भी करता है लेकिन नेता नहीं है। दोनों जनसंख्या की दृष्टि से दुनिया के दो सबसे बड़े देश के महानतम व्यक्ति हैं। एक के पीछे राज्य की सत्ता और एक विशाल सेना की शक्ति है, दूसरे के पास अपनी साधना, जनता की श्रद्धा और विचार की शक्ति है। एक बन्दूक के बिना नागरिक को पंगु मानता है; दूसरा बन्दूक के कारण नागरिक को असहाय देखता है। एक ने सेना को क्रान्ति की मुख्य शक्ति बनाया है, दूसरे ने शस्त्र-मुक्ति को क्रान्ति की सिद्धि माना है। एक को विजय का यश प्राप्त हो गया है; दूसरा क्रान्ति की साधना से गुजर रहा है। दोनों इतिहास की कसौटी पर हैं।

माओ और विनोबा में भिन्नताएँ अनेक हैं, लेकिन समानताएँ भी कम नहीं हैं। दोनों असाधारण हैं। दोनों ने क्रान्ति के इतिहास में अपना अलग-अलग अध्याय जोड़ा है।

चीन और भारत दोनों खेतिहर देश हैं। दोनों की अति प्राचीन सांस्कृतिक परम्परा है। दोनों ने सदियों तक घोर सामंतवाद देखा है। दोनों की जनता का भयंकर शोषण हुआ है। भारत ने प्रत्यक्ष विदेशी साम्राज्यवादी शासन देखा है, जबकि चीन ने विदेशी साम्राज्यवाद के गठबंधन में भ्रष्ट देशी सरकार देखी है, और विदेशी आक्रमण भी झेले हैं।

भारत में १९४७ में देशी सत्ता कायम हुई; चीन में १९४९ में माओ के हाथ में सत्ता आयी। चीन जनसंख्या और क्षेत्रफल में बड़ा भाई है, लेकिन नये राजनैतिक जन्म की दृष्टि से वह हमसे दो वर्ष छोटा है। लेकिन बाईस वर्ष में चीन का नाम दुनिया में तीसरे नंबर पर लिया जा रहा है। चीन एक 'सुपर पावर' हो रहा है। और, हम? हम 'सुपर पावर्टी' के शिकार हैं।

अक्सर कह दिया जाता है कि चीन में शक्ति और समृद्धि बन्दूक की नली से निकली है। यह सही है कि चीन तानाशाही कम्यूनिस्ट देश है, और उसने समाज-परिवर्तन के क्रम में अनेक लोगों को मौत के घाट उतारा है। तमाम दुनिया में साम्यवाद सत्ता के संघर्ष में पड़कर हिंसा का क्रान्ति-दर्शन बन गया है। हम उस हिंसा से बचे हुए हैं, लेकिन हमने अपने लाखों-लाख नागरिकों—पुरुष, स्त्री, बच्चों—को घुल-घुलकर मरने की छूट तो दे ही रखी है। क्या स्थिति है हमारे देश की स्त्रियों की? क्या भविष्य है हमारे युवकों का? और, क्या जीवन है हमारे श्रमिकों का? क्या हम चीन की नृशंसता की मिसाल देकर अपनी हृदयहीनता और अकर्मण्यता का औचित्य सिद्ध कर सकते हैं? अगर चीनी सरकार के साथ अपनी शत्रुता के कारण हम चीन की विकास-योजना के गुणों से भी मुँह मोड़ेंगे तो अपने और अपने देश के प्रति बहुत बड़ा अन्याय करेंगे।

चीन की सफलता का रहस्य वह मुक्ति है जो माओ की व्यवस्था में चीन की स्त्री, युवक और श्रमिक को प्राप्त हुई है। माओ ने इन तीनों को नया जीवन दिया है—सुखी, स्वतन्त्र, सार्थक। ऐसे जीवन का वे पहले कभी स्वप्न भी नहीं देख सकते थे। ये ही तीन शक्तियाँ हैं जो माओ के चीन को बना रही हैं, बचा और बढ़ा रही हैं। माओ चीन की इन त्रिविध शक्तियों का निर्माता है।

विनोबा का त्रिविध कार्यक्रम भी मुक्ति का कार्यक्रम है। ग्रामदान, खादी और शान्तिसेना में अगर स्त्री, युवक, और श्रमिक की मुक्ति का संदेश न हो तो दूसरा क्या होगा? फिर इस कार्यक्रम में नया समाज-निर्माण करने की शक्ति कैसे आयेगी?

माओ का साम्यवाद खेतिहर साम्यवाद है, जबकि रूस का साम्यवाद औद्योगिक है। इस नाते माओ ने शुरू से 'गाँव' के बुनियादी महत्व को समझा था। उसने गाँवों की शक्ति संघटित की, उस शक्ति से शहरों को घेरा, और सत्ता प्राप्त की, एवं मुख्यतः उसी शक्ति से वह अपने देश का निर्माण कर रहा है। गाँवों को उसने तोड़ा नहीं। उन्हें उनके स्वाभाविक रूप में रहने दिया, लेकिन पतन के गड्ढे से निकाल लिया। उन्हें अपने पैरों पर खड़ा किया। ऐसी संघटित ग्राम इकाईयों को कम्यून के रूप में क्षेत्रीय विकास के साथ जोड़ा। ये कम्यून नयी आर्थिक रचना की रीढ़ बने हुए हैं। उनका नेतृत्व साम्यवाद की कार्य-पद्धति में दीक्षित, प्रशिक्षित, स्थानीय 'केडर' के हाथ में है। पुलिस और सेना उनके दैनंदिन जीवन से दूर हैं।

माओ ने क्रान्ति के पहले चरण में भूमिवानों से भूमि लेकर भूमिहीनों में बाँटी। भूमिहीनता मिटी तो सहकारिता आयी। सामूहिक खेती अंत में आयी। हर परिवार के पास अपनी 'गृह-वाटिका' है। ग्रामीण योजना में घरेलू, ग्रामीण, और क्षेत्रीय उद्योगों को भरपूर बढ़ावा दिया गया है। कम्यून का आर्थिक संघटन अधिक-से-अधिक स्वाश्रयिता के आधार पर किया गया है, और उत्पादक को न्याय की पूरी गारंटी है। आपसी मामलों में निर्णय आपसी और स्थानीय है।

जिस तरह माओ ने चीन में गाँव को पकड़ा, विनोबा ने उसी तरह भारत के गाँवों को स्वतन्त्रता के बाद क्रान्ति का स्रोत और आधार माना। माओ का 'केडर' विनोबा की ग्राम-शान्ति-सेना है। चीन के गाँव और कम्यून के संघटन में ऐसे कई तत्व हैं जो विनोबा की ग्रामस्वराज्य‌ना और प्रखण्डस्वराज्य की योजना में मौजूद हैं।

चीन के गाँव और कम्यून के दैनंदिन जीवन में पुलिस का हस्तक्षेप नहीं है। विनोबा के ग्रामस्वराज्य में पुलिस-अदालत-मुक्ति है।

माओ की शिक्षण-योजना में उत्पादक श्रम का जो स्थान है, तथा बौद्धिक और शारीरिक श्रम की प्रतिष्ठा में जो समानता है, वह ऐसी है जो नयी तालीम के किसी भक्त के लिए ईर्ष्या का विषय होगी। माओ ने माना है कि मनुष्य के सांस्कृतिक परिवर्तन के बिना सामाजिक सम्बन्धों का परिवर्तन टिकाऊ नहीं होगा। विनोबा ने अन्य परिवर्तनों के साथ-साथ मनुष्य के आध्यात्मिक स्वरूप की कल्पना की है जो उसका सबसे शुद्ध सांस्कृतिक स्वरूप है।

माओ ने क्रान्ति के अपने कार्यक्रम में किस शक्ति का प्रयोग किया है, और विनोबा किस शक्ति का कर रहे हैं? माओ की शक्ति दण्ड और प्रतिहिंसा की रही है। यह शक्ति पीड़ितों को बदला लेने का भरपूर मौका देती है। इसलिए अत्यन्त व्यापक और शक्तिशाली होती है।

इस दण्डशक्ति का प्रयोग वर्ग-शत्रुओं से अधिक उनके विरुद्ध किया गया है जिन्होंने माओ की राष्ट्रीय योजना का विरोध किया है। ग्रामदान की योजना में लोकमत और कानूनी दबाव की गुंजाइश उन २५ प्रतिशत के प्रति है जो मनाने से न मानें। लेकिन विनोबा किसी स्थिति में संहार का समर्थन नहीं करते। माओ के लिए, क्या पूरे साम्यवाद के लिए, संहार परिवर्तन की प्रक्रिया का बुनियादी अंग है। यह तत्व सेना को भी 'क्रान्तिकारी' बना देता है। क्योंकि सेना के ही संरक्षण में और उसी की शक्ति से साम्यवादी 'क्रान्ति पलती और बढ़ती है। विनोबा की योजना में शोषितों की मुक्ति का तो आश्वासन है, लेकिन उन्हें बदला लेने के 'सुख' से वंचित होना पड़ता है।

माओ ने सैनिक को काफी हद तक नागरिक बनाया है, और विनोबा ने नागरिक को 'सैनिक' (शान्तिसैनिक) बनाने की कोशिश की है। यह अन्तर माओ और विनोबा को समानान्तर रेखाओं जैसा बना देता है, जो देखने में एक जैसी है और जो काफी दूर तक साथ भी चलती है, लेकिन अन्त में जिसके छोर कभी मिलते नहीं।

माओ की क्रान्ति-योजना में चीन की भावी दिशा क्या होगी? यह निश्चित है कि माओ के नेतृत्व ने जिस तरह चीन की मेहनतकश जनता और युवापीढ़ी को मुक्ति का स्वाद चखाया है उससे चीन नये जीवन के मार्ग पर अग्रसर होगा, दिनोदिन सुसंगठित और समृद्ध होगा। लेकिन सैनिकवादी, विस्तारवादी होगा। इसलिए एशिया, मुख्य रूप से दक्षिणी और दक्षिणपूर्व एशिया के लिए खतरा बना रहेगा। भारत को चैन की नींद नहीं सोने देगा। क्रान्ति के नाम में भीतरी षड्यंत्रों को बढ़ावा देता रहेगा। किसी दिन साम्यवाद का अंतर्विरोध प्रकट होगा। नागरिक 'वाद' से ऊपर उठकर साम्य की मांग करेंगे। तब सारे सैनिक शासनों की तरह चीन भी सैनिक-बनाम-नागरिक संघर्ष का शिकार होगा। माओ की योजना में यह कल्पना भी नहीं है कि माओ का चीन कभी स्वयं माओवाद से भी मुक्त हो। जो बन्दूक मुक्ति दिलाती है वह बाद को गुलामी का कारण बन जाती है।

और, अगर भारत में विनोबा सफल हुए तो भारत का क्या स्वरूप होगा? अगर ऐसा हुआ तो जो शक्ति आज तक दुनिया के हाथ नहीं आयी है वह भारत के हाथ आ जायगी—शान्ति की शक्ति। यह शक्ति क्रान्ति को भी मानवीय बना देगी, जो किसी दूसरी शक्ति से सम्भव नहीं है। अगर विनोबा का बताया हुआ शान्तिपूर्ण लोकशक्ति के द्वारा समाज-परिवर्तन का रास्ता भारत ने अपना लिया तो भारत गृहयुद्ध और अराजकता से बच जायगा, क्योंकि भारत में सर्वोदय का विकल्प साम्यवाद नहीं है, विकल्प है भारत का टुकड़ों में टूट जाना, और भयंकर अराजकता में पड़ जाना।

लोकशक्ति के संगठन का अर्थ है सैनिक शक्ति से चलनेवाले राज्य से मुक्ति। यह एक नये समाज और नयी सभ्यता के निर्माण की कल्पना है। सांस्कृतिक क्रान्ति की शुरुआत माओ ने भी की है, लेकिन उसे चलानेवाली शक्ति सैनिक ही है। एक बिन्दु पर पहुँचकर सैनिक शक्ति और लोकशक्ति में कितना विरोध हो सकता है, इसका उदाहरण बंगला देश है। इस स्थिति से उबरने का उपाय माओ की मुक्तिसेना के पास नहीं है, अगर है तो विनोबा की ग्रामस्वराज्य-योजना में, और नागरिक की शक्ति में।

माओ इतिहास के प्रवाह में आ चुका है, विनोबा अभी इतिहास के गर्भ में है। माओ का प्रयोग इतिहास के साथ चल रहा है, विनोबा का प्रयास नया इतिहास बनाने का है। माओ को चीन ने स्वीकार कर लिया है, विनोबा को भारत की आत्मा अभी दूर से समझ रही है। माओ उत्तर बन चुका है, विनोबा प्रश्न और उत्तर दोनों प्रस्तुत कर रहा है। ●

तंजावूर में मंदिर की २१२ एकड़ भूमि भूमिहीनों को वितरित

गत २७-८-७१ को तंजावूर जिले के मन्नीवलम् गांव में हिरण्यवर्मन नाथ स्वामी मंदिर की २१२ एकड़ सिंचित भूमि वहीं के १२९ खेतिहर मजदूरों में वितरित की गयी। अभी तक यह भूमि बेनामी काश्तकारों के कब्जे में थी। कलीतूर के गांधी शान्ति केन्द्र के अनुरोध से सरकारी जांच का आदेश हुआ और नागपट्टिनम् के तहसीलदार के रेकर्ड में उक्त तथ्य सही पाया गया, इसके बाद उस मंदिर के मुख्य अधिकारी ने भूमिहीन मजदूरों में पुनर्वितरण के लिए वह जमीन दे दी। बेनामी काश्तकारों ने उस भूमि को पुनः अपने कब्जे में लेने के लिए मुंसिफ कचहरी की शरण ली। वह कोशिश नाकामयाब हुई और भूमि का वितरण हो गया।

—के० एम० नटराजन्, मंत्री, तमिलनाडु सर्वोदय मण्डल

बंगला देश को मान्यता देना भारत के हित में : विलम्ब अनुचित

—श्री मनमोहन चौधरी के साथ हुई चर्चा में आचार्य विनोबा का सुचिंतित अभिमत—

गत महीने के प्रथम सप्ताह में मैं पवनार गया था। तब विनोबाजी के साथ बंगला देश की समस्या के कुछ व्यापक पहलुओं पर चर्चा हुई। सबसे पहले तो मैंने उनके समक्ष अपने निम्न विचार व्यक्त किये, और इन विषयों पर उनके अभिप्राय जानने की जिज्ञासा व्यक्त की।

"आज तो हम देख रहे हैं कि कई बड़े देश, पाकिस्तान बंगला देश के अंदर अपनी बर्बरता बंद कर दे, इसके लिए उस पर दबाव डालने के बदले, भारत के रुख में परिवर्तन कराने के लिए उस पर दबाव डाल रहे हैं। अमेरिका की सरकार पाकिस्तान को हर सम्भव सहायता कर रही है, और दूसरी ओर शरणार्थियों के लिए मदद के वादे करके भारत का मुँह भी बंद करने की कोशिश कर रही है। ऐसा लग रहा है कि भारत इस समय एक नाजुक परीक्षा की घड़ी से गुजर रहा है। बंगला देश के प्रश्न को किस तरह हल किया जाय, इस विषय में शायद हम लोगों के बीच मतभेद होंगे, लेकिन मूल बात यह है कि हमारा निर्णय अमेरिका की सरकार के भयवश, मन से या बेमन से, होगा या स्वतंत्र रूप से निर्भयता के साथ सोच-समझकर! हमलोग अगर ऐसी धमकियों से डर जायेंगे तो हमारा नैतिक अधःपतन होगा और हम गुलामी की अवस्था में चले जायेंगे। लेकिन इस समय अगर हम निर्भयता दिखा सकेंगे तो एक स्वतंत्र और स्वाभिमानी राष्ट्र की हैसियत से जी सकेंगे।

"इस संदर्भ में सर्वोदय-आन्दोलन की भूमिका अत्यंत महत्त्वपूर्ण बन जाती है। बंगला देश की घटना के विषय में केवल आपने और जयप्रकाशजी ने ही नहीं, बल्कि करीब-करीब प्रत्येक सर्वोदय कार्यकर्ता ने जो स्वयंस्फूर्त सक्रियता दिखायी है, वह इस आन्दोलन की आध्यात्मिक स्वस्थता की निशानी है। बंगला देश की मुक्ति का यह आन्दोलन अगर लम्बा चलेगा तो उसके पीछे एक सर्वांगीण तात्विक विचार-धारा का आधार चाहिए, और उससे सामाजिक, आर्थिक और राजकीय कार्यक्रमों को बल मिलना चाहिए। इस आन्दोलन की जड़ें जनता के भीतर गहरी पैठ जानी चाहिए। इस आन्दोलन की पद्धति भी ज्यादा प्रभावकारी बननी चाहिए। हाल के दिनों में वियतनाम और क्यूबा के जैसे आन्दोलनों ने अपना तात्त्विक आधार मार्क्सवाद से प्राप्त किया है। बंगला देश में क्या होगा? हमलोगों ने बंगला देश को अपना पूरा-पूरा समर्थन दिया है, और उनके साथ हमने जो भावात्मक एकता की अनुभूति की है, उसको देखते हुए लगता है कि यहाँ की भूमिका गांधीजी के विचारों को आधार बनाने के लिए अनुकूल है। इस मुक्ति-आन्दोलन के प्रति चीन ने जो रुख अख्तियार किया है, उसके कारण बंगला देश के आन्दोलन के ऊपर मार्क्सवाद का असर बहुत कम रहेगा, ऐसा लगता है। इसलिए हमलोगों को इस आन्दोलन में अधिक गहरी रुचि रखनी चाहिए और अपने से जितनी शक्य हो, उतनी मदद करनी चाहिए।

"मुझे ऐसा भी लगता है कि सर्वोदय-आन्दोलन को एक जागतिक क्रान्तिकारी आन्दोलन के रूप में अपना दृष्टिकोण विकसित करना चाहिए। हमको ऐसी प्रतीति होनी चाहिए कि हमारा आंदोलन

डूबते याहिया को डूबने निक्सन का सहारा : तिनका नहीं पोत

आज दुनिया भर में राजनीय व आर्थिक स्वतन्त्रता तथा सामाजिक क्रान्ति के लिए जो उद्योग हो रहा है, उसके एक हिस्से के रूप में है। अभी तक हमारे जागतिक दृष्टिकोण में एक ऐसा भी रुख था कि यथावत् स्थिति भले ही चालू रहे, लेकिन शान्ति खतरे में न पड़नी चाहिए। अब हमको दुनिया भर के क्रान्तिकारी आन्दोलनों और स्वतन्त्रता की लड़ाईयों के साथ अधिक घनिष्ठ सम्बन्ध विकसित करना होगा।

"हमारे ग्रामस्वराज-आन्दोलन को एक साम्राज्यवाद विरोधी आन्दोलन का स्वरूप अपनाना चाहिए। हाल की हमारी आन्तरिक परिस्थिति के सन्दर्भ में भी यह बात अधिक मुनासिब है, क्योंकि आज हमारे सामने बुनियादी सवाल यह है कि हम अमेरिका के साम्राज्यवाद के नीचे दब जायेंगे या एक सही रूप में स्वतन्त्र देश की हैसियत से खड़े रहेंगे। सर्वोदय-आन्दोलन का यह नया आयाम उसकी शक्ति बढ़ानेवाला सिद्ध होगा।"

जय जगत् को व्यावहारिक रूप देने का मौका

मेरे उपर्युक्त विचारों के सन्दर्भ में विनोबाजी ने कहा, "मैं आपके विचारों के साथ पूर्ण रूप से सहमत हूँ। इसीलिए मैंने 'ग्रामदान' और 'जय जगत्' ऐसे दो सूत्र दिये हैं। एक ओर हम ग्रामदान आन्दोलन के द्वारा परिवार का दायरा बढ़ायेंगे और दूसरी ओर एक विश्व-समाज का निर्माण करने की कोशिश करेंगे। उसके बाद आज के देश विश्वराष्ट्र के प्रान्त होंगे, और आज के प्रान्त जिले होंगे। 'जय जगत्' के विचार को व्यावहारिक रूप देने का मौका बंगला देश ने आपको दिया है। उसका पूरा-पूरा लाभ लेना चाहिए। लोगों के समक्ष भी 'जय जगत्' के विचार को व्यक्त करने का यह उचित समय है।"

चर्चा को आगे बढ़ाते हुए विनोबाजी ने, बंगला देश की घटना के सन्दर्भ में अमेरिका की सरकार और यूनो ने जो गलत रुख अपनाया है, उसकी आलोचना की और कहा कि, "अमेरिका की सरकार जो खेल खेल रही है उसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं है। उसको तो इस क्षेत्र में सत्ता का सन्तुलन बना रहे, इसी में दिलचस्पी है। इसीलिए वह पाकिस्तान की सरकार को जैसे भी हो, मदद करने को आतुर है। अगर ऐसी जरूरत आ पड़े तो वह भारत को भी मदद करेगी। उसने तो एक नया सूत्र भी बनाया है 'बैलेन्स आफ इम्बैलेन्सेज' (BALANCE OF IMBALANCES)—असन्तुलनों का सन्तुलन। अभी पाकिस्तान में असन्तुलन है, इसलिए अब अगर भारत में भी कोई ऐसी स्थिति खड़ी हो जाय तो वे खुश होंगे, क्योंकि ऐसे संयोगों में एक आपत्ति के सामने दूसरी आपत्ति खड़ी हो जाने से तराजू सन्तुलित हो जायेगा। फिर भी अमेरिका की तो बात समझ में आती है, लेकिन यूनो का रुख अधिक दुःखदायी है। वहाँ एक पूरी कौम की हत्या हो रही है फिर भी यूनो चुप बैठा है।"

"चुप नहीं बैठा है, वह तो सरहद पर पर्यवेक्षकों की नियुक्ति की बात करके और भारत-पाकिस्तान को एक ही लकड़ी से हाँक करके पाकिस्तान की मदद करने की कोशिश कर रहा है।" मैंने बीच में ही कहा।

"हाँ, अब यूनो के राष्ट्रों ने विकृत रुख अपनाया है। पर्यवेक्षकों की बात को अस्वीकार करके भारत सरकार ने सही कदम उठाया है।" विनोबाजी ने कहा।

फिर उन्होंने आगे कहा, "अभी तक मैंने इन्दिरा सरकार की बंगला देश सम्बन्धी नीति का बचाव किया है, लेकिन याहिया खाँ के जून महीने के वक्तव्य के बाद मुझे लग रहा है कि अब हमको बंगला देश की सरकार को मान्यता देने में देर नहीं करनी चाहिए। याहिया खाँ ने स्पष्टता से जाहिर कर दिया है कि लोकशाही के साथ उनको कुछ लेना-देना नहीं है।

"उद्वासितों की संख्या ७० लाख से भी आगे बढ़ गयी है। उनके पीछे जितना खर्च होगा, उसकी अपेक्षा युद्ध में शायद आधा ही खर्च होगा। और उद्वासितों की संख्या व खर्च तो दिनोदिन बढ़ते ही जायेंगे।

"लेकिन यहाँ के मुसलमानों का रुख बंगला देश के बारे में ठंडा है। कितनों को ऐसा लगता है कि मुजीब पाकिस्तान को तोड़ रहा था इसलिए याहिया खाँ के पास पाकिस्तान को एक बनाये रखने के लिए इसके सिवाय दूसरा रास्ता ही क्या था? अगर युद्ध होगा, तो आन्तरिक शान्ति बनाये रखने का काम अत्यन्त महत्व का होगा, नहीं तो, जैसा कि अमेरिकी सरकार चाहती है, दोनों पलड़े समान हो जायेंगे।

"एक बहुत बड़ी कसौटी से हम लोग गुजर रहे हैं। लेकिन इससे तो अत्यन्त उत्साह का अनुभव होता है। कसौटी होनी हो तो ऐसी ही हो।"

मान्यता देने के क्या परिणाम होंगे?

गैर-सरकारी संघटनों के द्वारा उद्वासितों के लिए जो राहत कार्य हो रहे हैं, उनका उल्लेख करते हुए विनोबाजी ने कहा, "वे सब काम प्रशंसनीय हैं, लेकिन उनसे मूल प्रश्न को हल करने में कोई मदद नहीं मिलेगी। केवल बंगला देश को मान्यता देने से ही इस प्रश्न के निवारण में मदद मिल सकती है।"

"मान्यता देने पर वे बहुत जोर दे रहे थे, इसलिए मैंने दोपहर को पूछा कि, "मान्यता देने से क्या परिणाम आयेगा? आपकी कल्पना क्या है?"

काफी देर तक सोचने के बाद उन्होंने कहना शुरू किया, "अभी उसके सभी परिणामों की कल्पना करना मुश्किल है, क्योंकि अधिकांश तो आन्तरराष्ट्रीय परिस्थिति पर निर्भर करता है। फिर भी एक बात निश्चित है। यदि भारत बंगला देश को मान्यता देगा तो अन्य कई देश ऐसा करने के लिए आगे बढ़ेंगे। दूसरी ओर खुद एकदम करीब का देश होकर और वहाँ की घटनाओं का सबसे

ज्यादा भुक्तभोगी होकर भी यदि भारत अब मान्यता देने में विलम्ब करेगा तो दूसरों से शुरुआत करने की अपेक्षा कैसे रख सकते हैं? अगर अमेरिका इसका विरोध करेगा तो रूस जरूर भारत का समर्थन करेगा। यदि इसके कारण कुछ उथल-पुथल होगी और अन्य देशों के बीच नये जोड़-तोड़ होंगे तो वह भारत के हित में होगा। युद्ध की एक विश्वयुद्ध में भी परिणति हो सकती है, परन्तु अगर दूसरे देश बीच में न पड़ें, तो भारत-पाक के बीच का मर्यादित युद्ध भारत के लाभ में होगा।

"दूसरी बात यह है कि मान्यता देने से भारत बंगला देश की मुक्ति फौज को खुल्लमखुल्ला मदद कर सकेगा। लोकशाही को टिकाये रखने के लिए वह ऐसा कर रहा है, यह दावा वह कर सकेगा। इसके फलस्वरूप चोरी-चुपके मदद करने का आरोप नहीं लगेगा, और इसके कारण हमारी नैतिक शक्ति बढ़ेगी।

"तीसरी बात यह है कि हम मान्यता देंगे, उससे बंगला देश की जनता को बल मिलेगा। अभी तक हमने उनके प्रति केवल सहानुभूति व्यक्त की है और सहायता की है, लेकिन मान्यता नहीं दी है। मान्यता देकर हम जाहिर करेंगे कि बंगला देश स्वतन्त्र है, और वह कभी पश्चिम पाकिस्तान के कब्जे में नहीं जायेगा। भावना-प्रधान बंगाली लोग इतना अधिक भुगतने के बाद पश्चिम पाकिस्तान का सार्वभौमत्व कभी भी नहीं स्वीकार करेंगे। वे आखिर तक उनके विरुद्ध लड़ते रहेंगे। हम लोग मान्यता देंगे तो उनको बहुत बल मिलेगा।

"फिर स्वतंत्र बंगला देश भारत का घनिष्ठ मित्र बनेगा। दोनों देशों के बीच दोनों के लिए लाभदायी व्यापारिक सम्बन्ध स्थापित होंगे। किसी को लगता है कि बंगला देश भारत में मिल जायेगा। लेकिन ऐसा होनेवाला नहीं है।

"स्वतंत्र बंगला देश के कारण बंगाली भाषा को भी बहुत प्रोत्साहन मिलेगा। १२ करोड़ लोगों के द्वारा बोली जाती हो, ऐसी भाषाएँ दुनिया भर में गिनी-चुनी हैं। केवल अंग्रेजी, रूसी, हिन्दी, जापानी और इन्डोनेशियन भाषाएँ इस मामले में बंगाली की बराबरी कर सकती हैं। इसमें मैंने चीनी भाषा की गिनती नहीं की है क्योंकि असल में चीन में अनेक बोलियाँ हैं, यद्यपि लिपि एक है। अभी तक पूर्व और पश्चिम बंगाल के बीच साहित्यिक आदान-प्रदान बहुत कम होता रहा है। नतीजा यह हुआ है कि बंगाली भाषा का विकास कुंठित हो गया।"

बंगला देश की संस्कृति में योगदान

सन् १९६२ में विनोबाजी की पद-यात्रा कुछ दिन पूर्व बंगाल में भी हुई थी, उसकी याद करके उन्होंने कहा, "मेरा निवास अधिकतर शालाओं में रहता था और मैं उस अवसर का उपयोग करके वहाँ के पुस्तकालयों की पुस्तकों का गहराई से निरीक्षण करता था। मैंने देखा कि उस पार की बंगाली भाषा में मूल संस्कृत में से आये हुए शब्दों की संख्या कम-से-कम ८० प्रतिशत तो है ही। यहाँ की बंगाली में ऐसा नहीं है। इतना ही नहीं, मलयालम् के अलावा अन्य किसी भारतीय भाषा में भी ऐसे शब्दों का प्रमाण इतना अधिक नहीं है। पूर्व बंगाल के लोग तो यह दावा करने में गौरव का अनुभव करते हैं कि उनकी बंगाली तो 'शुद्ध सोना' है, जबकि कलकत्ता की ओर की बंगाली ऐसी नहीं है।

"मैं वहाँ पूछता था कि बंगला देश की सभ्यता और संस्कृति को आकार देने में सबसे अधिक योगदान किसका माना जायेगा? तब वे लोग जवाब में चार नाम गिनाते थे—बुद्ध, मुहम्मद पैगम्बर, श्री चैतन्य और रवीन्द्र नाथ टाकुर। मुस्लिम भी इसमें अपवाद नहीं थे। क्या यह असाधारण बात नहीं है कि एक कवि का एक गीत भारत का राष्ट्रगीत हो और उसीके दूसरे गीत को बंगला देश का राष्ट्रगीत बनने का गौरव प्राप्त हुआ हो?"

"क्या रवीन्द्र नाथ ने कभी ऐसी कल्पना की होगी कि उनके विचार एक दिन क्रान्ति जगायेंगे?" मैंने पूछा।

"कवि द्रष्टा होते हैं। वे भविष्य को बहुत दूर तक देख सकते हैं। रवीन्द्र नाथ लिख ही गये हैं : 'युगान्तर दिने अग्नि स्नाने।' अग्नि-स्नान यानी दूसरे शब्दों में जिसको रक्त-स्नान कहते हैं वही, और आज वह चल रहा है।"

"आप स्वयं अपने ढंग से बंगला देश को कुछ मदद करने का सोच रहे हैं क्या?" मैंने पूछा।

विनोबाजी ने कहा, "हाँ, मैं सतत् इस बारे में सोच रहा हूँ।"

इसके बाद वहाँ भी ग्रामस्वराज्य आन्दोलन

और, बाद में जब हम ग्रामदान-आन्दोलन सम्बन्धी कुछ बातों की चर्चा कर रहे थे, तब विनोबाजी ने फिर बंगला देश का उल्लेख करते हुए कहा, "वे लोग अभी राजकीय स्वतन्त्रता और लोकशाही के लिए लड़ रहे हैं। वे जब स्वतन्त्र हो जायेंगे तब उनके यहाँ भी हमारे जैसा ही लश्कर, नौकरशाही, पुलिस आदि की भरमार वाला राजतंत्र खड़ा होगा। लोग भी हमारे यहाँ की तरह ही राज्य आश्रित बनेंगे। तब लोगों को आत्मनिर्भर बनाने की, सरकार को पक्षीय राजनीति से मुक्त करने की और गाँवों को सरकार की व्यर्थ की दखलदाजी से मुक्त करने की यानी ग्रामस्वराज्य की जरूरत होगी। परन्तु ग्रामस्वराज्य का आन्दोलन बंगला देश में अपनी जड़ें जमाये, उससे पहले वह हमारे यहाँ सफल होना चाहिए। इसीलिए मैं पूर्ण सातत्य और एकाग्रतापूर्वक ग्राम-स्वराज्य आन्दोलन को आगे बढ़ाने पर जोर दे रहा हूँ। बंगला देश के हित में हमारा यह सबसे अधिक योगदान होगा।"

—मनमोहन चौधरी

अभिव्यक्तियाँ मालिक-मजदूर में समान रूप से होती हैं, इसमें कोई सन्देह नहीं है। फिर भी मालिकों के द्वारा असुर-प्रेरित विकृत क्रियाओं के जवाब में मजदूरों में जिस भावना का पूँजीकरण होता है वह सामान्य नहीं है, विशिष्ट है।

इस स्पष्टीकरण के बाद मालिक और मजदूर की भूमिका में रिअप्रोचमेन्ट की क्रिया पर विचार करना चाहिए। हमारी क्रान्ति का लक्ष्य समाज में विकार-प्रेरित क्रियाओं को बदल कर सहकारिता, सद्भावना आदि संस्कृति प्रेरित भावनाओं का विकास करना, और उसके माध्यम से समतावादी स्वावलम्बी समाज की स्थापना करना है। हम अहिंसक-शक्ति से यानी शिक्षण-शक्ति से इस लक्ष्य को पूरा करना चाहते हैं। शिक्षण-प्रक्रिया से मालिक और मजदूर दोनों को ऊपर बताये गये अपने अन्त स्थित असुर प्रेरित प्रभावों से मुक्त किया जा सकता है। लेकिन मजदूरों के अन्दर हजारों साल से मालिकों के द्वारा या उच्च वर्ग के लोगों के द्वारा शोषण, दमन, उपेक्षा आदि क्रियाओं के जवाब में जिन भावनाओं का पूँजीकरण हुआ है उनका बदल केवल शिक्षण प्रक्रिया से ही होना कठिन है। अतः रिअप्रोचमेन्ट की डाइनेमिक्स में मालिकों को ही इसकी पहल करनी होगी, क्योंकि जब तक क्रिया में बदल नहीं होता तब तक प्रतिक्रिया में बदल नहीं हो सकता। इसका मतलब यह नहीं है कि हम रिअप्रोचमेन्ट की प्रक्रिया में मजदूर शामिल नहीं रहेंगे। किन्तु वे इसमें पहल करने वाले नहीं होंगे, वे प्रत्युत्तर के रूप में शामिल होंगे। इस तरह से मालिकों के द्वारा पहल की गयी क्रिया ही रिअप्रोचमेन्ट की प्रारंभिक क्रिया होगी और उसकी प्रतिक्रिया स्वरूप रिस्पॉन्स के रूप में वह फिर सारे समाज में व्याप्त होगी।

भाई बाबूराव ने कहा है कि मानवीय भूमिका में गरीब को भी प्रतिष्ठा देना उसके अस्तित्व को समानता के स्तर पर लाना उसकी संतुष्टि के लिए पर्याप्त मानना चाहिए। उनका यह विचार सही है और रिअप्रोचमेन्ट की प्रक्रिया में यही होता है। जब भूमिवान बीसवाँ भाग भूमि देकर भूमिहीन को भी भूमिवान की श्रेणी में दर्ज करता है, और जब वह नया भूमिवान भी उस पुराने भूमिवान के समान स्तर पर हो, ग्रामसभा का सदस्य बन एक आसन पर बैठने लगता है, तब समाज इसी दिशा में चलना आरम्भ कर देता है।

परिवर्तन में अपने आप में संस्कृति के तत्व होते हैं, यह बात हमेशा ही सही नहीं होती है। किसी मुल्क में लोकतंत्र के स्थान पर सैनिक या राजनैतिक तानाशाही कायम हो जाय तो इसे परिवर्तन तो कहा जायेगा किन्तु इसमें संस्कृति का तत्व भी निहित है, यह मानना गलत होगा। परिवर्तन में सांस्कृतिक तत्व भी निहित है यह मानना गलत होगा। परिवर्तन में सांस्कृतिक तत्व है या नहीं, यह परिवर्तन के प्रकार और दिशा से निर्धारित होगा। अगर परिवर्तन मनुष्य को दमन, शोषण और उपेक्षा आदि से मुक्त करने की ओर होता है तो उसमें संस्कृति तत्व है, यह माना जा सकता है। किन्तु उसमें भी यह देखना होगा कि वह परिवर्तन आगे चलकर संस्कृति के इस तत्व के सहारे पर टिका रह सकता है या नहीं, तभी वह सही अर्थों में संस्कृति तत्ववाला परिवर्तन कहा जा सकेगा। नहीं तो परिवर्तन का प्रकार और दिशा यदि संस्कृति की ओर है भी, किन्तु उसमें उस पर टिके रहने की शक्ति नहीं है तो फिर उसे हम संस्कृति तत्व से युक्त नहीं कहेंगे, केवल संस्कृति की ओर उन्मुख है ऐसा ही कहेंगे। अगर संगीन के बल पर यानी विकार मूलक शक्ति के सहारे उस परिवर्तन को टिकना पड़े तो समझना होगा कि उसमें कोई संस्कृति तत्व नहीं था, वह केवल परिवर्तन मात्र था। आज हम देख रहे हैं कि रोज-रोज संसार में सरकारें और शासन प्रणालियाँ बदल रही हैं तो क्या हम इन परिवर्तनों को कोई संस्कृति का तत्व मान लेंगे? इस बात पर खूब गहराई से सोचना होगा और हमें केवल ऊपरी परिवर्तन को सही परिवर्तन मान लेने की भूल से बचना होगा।

यह सही है कि अहिंसा से समाज परिवर्तन सिद्ध हुआ है इसकी नजीर इतिहास में नहीं है। यह गांधीजी की मौलिक देन है। इसलिए तो इसे नयी क्रान्ति की संज्ञा भी दी जाती है। मैं तो इसी कारण मित्रों को कहा करता हूँ कि आप की यह यात्रा तो कास्कोडिगामा की यात्रा है। यही कारण है कि क्रान्ति में सहित विनोबा के, हम कोई किसी को मार्गदर्शन नहीं कर सकते। हमको तो मार्ग-खोजन का काम स्वयं ही करना होगा। अगर हम मार्ग-खोजन की दृष्टि से काम करेंगे तो क्रान्ति की प्रगति के साथ-साथ मार्ग का भी दर्शन होता जायेगा।

इस मार्ग-खोजन में 'अहिंसा' को 'समाज-परिवर्तन की प्रक्रिया' से नहीं जोड़ना है। बल्कि अहिंसा द्वारा समाज-परिवर्तन की पद्धति विकसित करनी होगी। यह अत्यन्त ही शुभ लक्षण है कि देश का तरुण समाज क्रियाशील अहिंसा के दर्शन के लिए व्यग्र है। लेकिन साथ-साथ यह भी अत्यन्त दुर्भाग्य की बात है कि वह हिंसात्मक क्रियाशीलता की डिजाइन में ही अहिंसा को देखना चाहता है। उसको यह बात पहले समझनी होगी कि जिस अहिंसा-शक्ति ने देश के लाखों लोगों को, लाखों गरीबों को उबारने और उन्हें प्रतिष्ठित करने की निगाह से लाखों एकड़ भूमि पर से सम्मानपूर्वक अपना स्वामित्व छोड़ने के लिए प्रेरित किया है, और जिस अहिंसा ने फिर लाखों लोगों को भूमि पर से व्यक्तिगत स्वामित्व विसर्जित करने के लिए और उसे समाज के स्वामित्व में दे देने के लिए तैयार किया है, वह अहिंसा-शक्ति कैसे निष्क्रिय कही जा सकती है? तरुणों को यह भी समझना होगा कि

आचार्य विनोबा भावे : कालातीत मूल्य चेतना

[आचार्य विनोबा आगामी ११ सितम्बर '७१ को अपने जीवन के ७६ वर्ष पूरे कर रहे हैं। इस अवसर पर दिनमान के एक विशेष प्रतिनिधि की 'भेंटवार्ता' हम अपने साथियों-पाठकों के लिए पुनर्मुद्रित कर रहे हैं। यह भेंटवार्ता विनोबा के व्यक्तित्व के एक विशिष्ट अंश को प्रस्तुत करती है। —सं०]

आचार्य विनोबा क्रान्ति द्रष्टा ऋषि

जब दिनमान के प्रतिनिधि ने आचार्य विनोबा भावे से मिलने की इच्छा उनके एक सहयोगी से व्यक्त की, तो उनके होंठों पर एक हल्की-सी मुस्कान खिल आयी। आचार्य को इस अप्रत्याशित आगंतुक की सूचना देने के बाद सहयोगी ने प्रतिनिधि से उनकी प्रतिक्रिया इन शब्दों में व्यक्त की : "वह क्यों आये हैं? यहाँ कोई अवैध शस्त्र इत्यादि तो बरामद नहीं हुआ है।" प्रतिनिधि को सहसा सोच में पड़ा महसूस करके उन्होंने आचार्य का आशय स्पष्ट किया "मतलब यह कि समाचार पत्र तो केवल सनसनीखेज बातों में ही दिलचस्पी रखते हैं और यहाँ इस आश्रम में ऐसा कुछ नहीं है।" देश के समाचार पत्रों की इस संक्षिप्त और सारगर्भित आलोचना की सूचना प्रतिनिधि को देने के बाद आचार्य के इसी सहयोगी ने उसे बताया कि "बाबा साढ़े पाँच बजे सो जाते हैं, इसलिए कल सुबह का समय उन्होंने आपको दिया है।" दूसरे दिन सुबह जब प्रतिनिधि ने आचार्य के कमरे में प्रवेश किया तो अभिवादन स्वीकार करने के बाद उन्होंने आहिस्ते से कहा 'आप दिल्ली से आये हैं, दिल्ली तो गंधर्व नगरी है।' इससे पहले कि प्रतिनिधि उनसे कोई सवाल करे, उन्होंने जिज्ञासा की "दिल्ली में स्टार देखने का अवसर तो कम ही मिलता होगा, हाँ जब स्टार देखने को मन हो, फिल्म स्टार देख लेते होंगे।" मितभाषी और विनोद प्रिय आचार्य ने फिर एक झटके में शहरी सभ्यता और जिंदगी की शल्य चिकित्सा-सी प्रस्तुत की। आचार्य को इस बात का दुख था कि सभी कुछ तेजी से शहरों की ओर सिमटता चला जा रहा है और ग्रामों की कुर्बानी पर आबाद हो रहे शहर उनका न केवल बहुमुखी शोषण कर रहे हैं बल्कि उनके अस्तित्व को भी नकार रहे हैं। हमारा प्रयास ग्रामों को उनका खोया अस्तित्व लौटाने का है। इस अस्तित्व की वापसी का अर्थ स्पष्ट होना चाहिए। जब सही मायने में यह वापसी घटित होगी तब लोग दिल्ली में केन्द्रित संसद, सेना और प्रदर्शन की ओर ध्यान न देकर उस शान्त आन्दोलन की ओर ध्यान देंगे जो ग्रामों की जिन्दगी को अनुप्राणित करता रहा है।

एक प्रयोग

आचार्य विनोबा भावे इस बड़े तथ्य से अवगत हैं कि मानवतावादी विचार अक्सर अपने अंतर्विरोधों की आग में जल जाते रहे हैं एवं हिंसा और असंतोष की शक्तियाँ समाज को नयी दासता में जकड़ती रही हैं। लेकिन इन शक्तियों की जय-पराजय को वह केवल ऐतिहासिक सीमाओं के संदर्भ में नहीं देखते। वह मूल्यों की कालातीत प्रकृति के सन्दर्भ में ही उनकी नियति का भी मूल्यांकन करते हैं। इस दृष्टि से आचार्य विनोबा भावे समग्र विद्रोही हैं, जो इतिहास की स्थापनाओं और मान्यताओं के सामने प्रश्न-चिन्ह लगाने के आदी हैं। वह प्रयोगधर्मी हैं और किसी भी प्रयोग को इसीलिए त्याज्य समझने के लिए तैयार नहीं हैं, क्योंकि तात्कालिकता और सामयिकता (ऐतिहासिकता भी) की गवाही उसके

→उन्हें क्रियाशील अहिंसा की खोज अवश्य करनी है, और अधिक व्यापक पैमाने पर करनी है। किन्तु उसके लिए अहिंसा के स्वधर्म के अनुसार जो मार्ग हो, वही उचित और वैज्ञानिक मार्ग है। उतावली में घबराकर या छटपटाहट के उतावलेपन में उसे हिंसात्मक या शांतिमय प्रतिरोध की लीक पर चलाने का प्रयास यदि किया गया तो अहिंसा स्वधर्म-च्युत तथा पथभ्रष्ट होकर अंधी गली में भटक जायेगी।

अहिंसा सनातन काल से आत्मनिष्ठ रही है। लेकिन गांधीजी के द्वारा प्रतिपादित अहिंसा आत्मनिष्ठ के साथ-साथ मुख्य रूप से वस्तुनिष्ठ है, यह बात समझनी चाहिए। हम गांधीवाले भी अभी इस बात को सही और पूरे ढंग से नहीं समझ सके हैं। वस्तुतः गांधीजी ही प्रथम व्यक्ति थे जिन्होंने अहिंसा को वस्तुनिष्ठ और समाजनिष्ठ धरातल पर खड़ा किया। आज विनोबा संसार की वस्तुस्थिति के सन्दर्भ में अहिंसक समाधान का मार्ग बता रहे हैं। विज्ञान और लोकतंत्र में सामाजिक और मानसिक परिस्थिति में जो परिवर्तन आया है उसके कारण अब सुरक्षा के लिए सैनिक की बन्दूक, शांति और शृंखला के लिए पुलिस के हाथ की बन्दूक और सामाजिक परिवर्तन के लिए क्रान्तिकारी के हाथ की बन्दूक, ये तीनों तरह की बन्दूकें और उसकी सारी पद्धति और दर्शन, सबके सब पुराने पड़ गये हैं और व्यर्थ हो गये हैं। ऐसी परिस्थिति में समाज-परिवर्तन के लिए जो अहिंसक क्रान्ति का उद्घोष हुआ है वह केवल आत्मनिष्ठ अहिंसा नहीं है, वह वस्तुनिष्ठ और सामाजिक है यह बात समझनी चाहिए। ●

पक्ष में नहीं है। उपलब्धियों का उनके लिए अपने आप में कोई महत्व नहीं है। उपलब्धियाँ साकार तभी होती हैं जब वे मूल्यों की चेतना को न केवल झटका देती हैं बल्कि इस प्रक्रिया में नये मूल्यों का सृजन करती है। ऐतिहासिकता के आइने में तथ्य और मूल्य की प्रकृति को देखना और दिखाना आचार्य की दृष्टि में कहीं-न-कहीं उस सनसनीखेज से जुड़ा होता है जो जड़ के विरुद्ध चेतना के विद्रोह को हिकारत की नजर से देखती है। भूदान और ग्रामदान आन्दोलनों को वह सनसनीखेज से सर्वथा पृथक और भिन्न एक प्रयोग मानते हैं, जो चिंतन-पद्धति में बुनियादी परिवर्तन के साथ जुड़ी हुई है। दुनिया में सिद्धांतों का जो संघर्ष चल रहा है, या सिद्धांतों के नाम पर जो संघर्ष चलाया जा रहा है, उसके अस्तित्व को स्वीकार करने के बावजूद उनकी निरर्थकता की उन्हें गहरी चेतना है।

निरपेक्षता के त्रिकोण

मौलिक और कालातीत चिंतन की यह यन्त्रणा जहाँ एक ओर विनोबा के व्यक्तित्व को प्रयोगधर्मी विद्रोही का व्यक्तित्व प्रदान करती है, वहाँ दूसरी ओर निरपेक्षता के उस त्रिकोण को भी जन्म देती है, जो एक चिंतन के रूप में उनकी निजी उपलब्धि कही जा सकती है। वह एक ऐसे समाज की कल्पना को समर्पित है जिसका आधार राजनीति-निरपेक्षता, पूर्वाग्रह-निरपेक्षता और धर्म-निरपेक्षता है। निरपेक्षता की उनकी वह चेतना विज्ञान-सापेक्ष सामाजिकता पर आधारित है। दिनमान के प्रतिनिधि को उन्होंने बताया कि जिस तरह कालातीत मूल्य चेतना ने क्रमश. धर्म-सापेक्षता को गुजरे जमाने की घटना साबित कर दी, उसी तरह राजनीति-सापेक्षता को भी वह अतीत की अभिव्यक्ति साबित कर रही है। जब तक समाज में धर्म-सापेक्षता का आग्रह रहा, इस तथ्य को नहीं समझा गया कि यह मुहावरा ही पुराना पड़ गया है। आचार्य की दृष्टि में राजनीति का भी मुहावरा अब वैज्ञानिक चिंतन ने पुराना बना दिया है। यही कारण है कि "राजनीति इस जमाने की सबसे बड़ी साम्प्रदायिकता है। धर्म पर आधारित साम्प्रदायिकता ने सामाजिकता का जो विघटन किया, राजनीति ने उस विघटन को न केवल बरकरार रखा बल्कि उसकी अभिव्यक्ति को नये आयाम प्रदान किये।" आचार्य की दृष्टि में जिस तरह धर्म-सापेक्ष सामाजिकता राजनीति-सापेक्ष सामाजिकता के दबावों के अंदर चरमरा गयी उसी तरह राजनीति-सापेक्षता सामाजिकता भी आज विज्ञान-सापेक्षता सामाजिकता के दबावों को महसूस कर रही है। जिस जमाने में हम जी रहे हैं उसका मुहावरा राजनीति निश्चय ही नहीं है, क्योंकि "राजनीति एक पूर्वाग्रह है और विज्ञान इस पूर्वाग्रह का भंजक।" आचार्य का कहना है कि उनका आन्दोलन इसी नये मुहावरे की तलाश का आन्दोलन है, कि यह प्रयास है एक नयी चिंतन विधा से साक्षात्कार का, और अगर यह साक्षात्कार अधूरा है तो भी यह स्थायी न होकर अधिक प्रयास की माँग करता है। उनका तर्क है कि जहाँ सवाल सामाजिकता के नये मुहावरे की तलाश का हो वहाँ उसकी सफलता और विफलता का मूल्यांकन सीमित ऐतिहासिकता, तात्कालिकता और सामयिकता के संदर्भ में किया ही नहीं जा सकता।

साक्षात्कार : 'जीवित मौत' से

आचार्य का सहज विनोद लौट आया था और यह विनोद जितना सुखद लग रहा था उतना ही मार्मिक भी। "मेरा पासपोर्ट तो कभी का कट चुका है बस वीसा का इंतजार है और लगता है कि वह कहीं खो गया है।" वह अपने को अपने अंदर समेटते हुए से कहते हैं। चिंतन और चेतना की इस मनःस्थिति को उनके सहयोगी 'जीवित मौत से साक्षात्कार' कहते हैं। उनका कहना है कि इधर एक लम्बे अरसे से आचार्य ने अपने आप को इस मनःस्थिति से गुजारना शुरू कर दिया है. "कर्म स्थूल है, विचार की मुक्ति जीवित मौत की चेतना से अपने-आप को जोड़ना है।" आचार्य के एक सहयोगी ने दिनमान के प्रतिनिधि को बताया कि उन्होंने अपना आशय और अधिक स्पष्ट करते हुए इस प्रयोगधर्मी और विद्रोही व्यक्तित्व की नयी चेतना को इन शब्दों में व्यक्त किया. "आचार्य का विश्वास है कि कर्म के रूप में जो कुछ उन्हें देना था वह दिया जा चुका है। जब तक विचार कर्म की सीमाओं में बँधा हुआ है, वह शुद्ध विचार नहीं है। इसलिए आचार्य ने अब यह कहना शुरू कर दिया है कि उन विचारों को, जिन्हें अब तक मैं कार्यों की अभिव्यक्तियाँ प्रदान करता रहा हूँ, अब उन्हें स्वतः कर्म में परिणत होने देने का वक्त आ गया है।"

(दिनमान ७ अप्रैल '६८ से साभार)

ग्रामसभा का गठन

वैशाली प्रखंड में ग्रामस्वराज्य की स्थापना का सघन प्रयास चल रहा है। इस क्षेत्र में नागरिक शक्ति ही कार्यकर्ताओं का आधार रही है। इसी के परिणामस्वरूप आन्दोलन के मित्रों की संख्या बढ़ी है, बीघा-कट्ठा जमीन का वितरण होने लगा है, तथा अब ग्रामसभाओं का गठन होना आरम्भ हो गया है।

गत ११ अगस्त '७१ को जारंग ग्राम पंचायत के सिहमा में ग्रामसभा का गठन हुआ, जिसकी सारी कार्यवाही सर्व सम्मति से सम्पन्न हुई। १५ व्यक्तियों की कार्यकारिणी समिति बनी जिसमें अध्यक्ष, उपाध्यक्ष, मंत्री कोषाध्यक्ष एवं ११ सदस्य बनाये गये। विचार-मंथन काफी देर तक चला। काफी प्रश्नोत्तर हुए। सबों के दिल में कुछ-न-कुछ कहने सुनने को था, अतः खुल कर चर्चा हुई। इस सारी कार्यवाही में श्री दाबू राय चौधरी, श्री रामनारायण सिंह श्री मोहन प्र० सिंह, श्री विश्वनाथ सिंह तथा इस ग्राम पंचायत के मुखिया उपस्थित थे, जिन्होंने चर्चा में महत्वपूर्ण योग दिया। सत्यदेव प्र० सिंह

ग्रामीण जीवन : गरीबी से बेहोशी तक

[श्री धीरेन्द्र भाई अपनी जीवन यात्रा के ७१ वर्ष आगामी १० सितम्बर '७१ को पूरे कर रहे हैं। इस अवसर पर उनकी जीवन-साधना की एक झलक उन्हीं के ही शब्दों में यहाँ प्रस्तुत है, जो हम सबके लिए प्रेरणादायी है।—स०]

गर्मी दिन-दिन भीषण होने लगी और लू अधिक चलने के कारण चर्खे का काम भी कुछ कम होने लगा। गर्मी की वजह से मेरा घूमना भी कम हो गया। कभी-कभी मैं चार-चार पाँच-पाँच दिन तक देहात में जाता ही नहीं था। इधर राष्ट्रीय सप्ताह भी आ गया था, यह भी मेरे देहात में न जाने का एक कारण हुआ। इसमें मैंने केवल टाडा के कस्बे में खादी बेचने का प्रोग्राम रखा। राष्ट्रीय सप्ताह के प्रोग्राम के लिए अकबरपुर से श्री देवनन्दन भाई भी मेरी सहायता के लिए आए हुए थे। बाद में वह भी मेरी सहायता के लिए टाडा ही रहने लगे। हम दोनों ने बड़ी धूम से खादी बेचने का काम किया। सप्ताह समाप्त होने पर वे हिसाब देने के लिए अकबरपुर चले गये।

उनके चले जाने पर मैंने सोचा कि लगभग पन्द्रह दिन हो गये, मैं देहात नहीं गया। अब देहात का प्रोग्राम बनाना चाहिए। तदनुसार मैं देहात में जाकर देखा कि चारों ओर हैजा फैला हुआ है। गाँवों में अनेक व्यक्ति मर रहे हैं। हर तरफ आतंक छाया हुआ है। कोई एक गाँव से दूसरे गाँव जाने का साहस नहीं करता था। मुझको गाँव में आते देखकर सब लोग आश्चर्य करने लगे, और गाँव की औरतें दबी जबान से मुझे टाडा वापिस जाने के लिए कहने लगीं। वे मेरे निकट आकर इस प्रकार धीरे से कहती थीं कि कहीं कोई सुन न ले। मैं टाडा वापिस तो अवश्य आया किन्तु डिस्ट्रिक्ट बोर्ड की कॉलरा डॉक्टर से दवा लेकर फिर गाँवों को वापिस चला गया। देहात में जब मैं कॉलरा के रोगी के पास जाकर उसे दवा देने की कोशिश करता था तो लोग बहुत एतराज करते थे। कहते थे, "भवानी माई नाराज हो जायेंगी और जितने लोग बचे हैं, उन्हें भी हैजा हो जायगा।" मैं कहीं-कहीं जबरदस्ती दवा पिला देता था लेकिन साधारणतया इस काम में सफल न हो सका। भर कहीं आनेवाली अन्य जाति के एकाध व्यक्तियों को तो मैं दवा पिला भी सका, किन्तु चमारों के परिवार में किसी एक को भी दवा पिलाने में असमर्थ रहा, यद्यपि हैजे का प्रकोप सबसे अधिक इन्हीं लोगों में था। कुछ ब्राह्मण, क्षत्रिय घरों के लोग हमें बुला कर भी ले गये, क्योंकि वे लोग पहले से ही मुझे डाक्टर साहब समझते थे। इस प्रकार चार-पाँच दिन प्रयत्न करके देखा कि इन लोगों में दवा का प्रबन्ध करना बेकार है। कड़ाके की धूप में अनेक गाँवों का चक्कर लगाने पर शायद ही एकाध आदमियों को दवा पीने के लिए तैयार कर पाया था। गाँव के लोग ऐसे संक्रामक रोग को रोग नहीं समझते हैं, इसे 'भवानी माई' का प्रकोप समझते हैं। मैंने देखा कि घर में इतने भीषण रोग के होते हुए भी लोग निश्चिन्तता के साथ बैठे रहते थे। बगल में रोगी पड़े हैं, किन्तु न तो वे रोते हैं, न कुछ कहते हैं, और न किसी प्रकार का प्रयत्न ही करते हैं। मैंने बहुत प्रयत्न किया कि यदि ये लोग दवा खिलाना स्वीकार नहीं करते तो मैं कम-से-कम प्याज का रस ही पिला दूँ। किन्तु उनकी गरीबी इतनी है कि बेचारों के घरों में प्याज भी नहीं होती थी।

गाँव के लोगों को दवा पीने से इन्कार करते हुए तथा इस प्रकार निश्चिन्त भाव से बैठे हुए देख कर प्रारम्भ में मुझे कुछ-कुछ क्रोध-सा प्रतीत हुआ किन्तु फिर विचार करने लगा कि ये लोग इतने गरीब और इतने साधनहीन हैं कि 'भवानी माई का प्रकोप' और 'तकदीर'

धीरेन्द्र भाई : समर्पित साधक

इत्यादि कह कर सन्तोष कर लेते हैं। इनके लिए यह भी एक प्रकार से अच्छा ही है। क्योंकि यदि इन्हें विश्वास होता कि दवा से ही रोगी अच्छा हो सकता है, तो वे इधर-उधर भटकते, दवा की कोशिश करते किन्तु कहीं प्रबन्ध न होने के कारण निराश हो जाते और कुछ कर न सकने के कारण स्वयं को धिक्कारते। ऐसी अवस्था में उन्हें प्रायः उन्माद-सा हो जाता।

मैंने अनुभव किया है कि अवध के ग्रामीणों की गरीबी गरीबी की अवस्था से गुजर कर बेहोशी की स्थिति में पहुँच गयी है। इसलिए लोग अपने को विवश जानते हुए भी उससे मुक्ति पाने के लिए किसी प्रकार की क्रान्ति या विद्रोह नहीं करते हैं। ऐसी परिस्थिति में जब कभी अकस्मात् महामारी का प्रकोप होता है, तो इनके लिए 'भवानी का प्रकोप' की मनोवृत्ति ही एक मात्र सान्त्वना है। जो इस प्रकार की मनोवृत्ति को कुसंस्कार कह कर इन पर व्यंग्य करते हैं, उनको चाहिए कि इनके कुसंस्कारों के प्रति इन्हें उपदेश देने की अपेक्षा इनकी आर्थिक स्थिति सुधारने का प्रयत्न करें। वे देखेंगे कि आर्थिक सुधार के साथ-साथ इनकी

कूप-मंडूक मनोवृत्ति क्रमशः दूर होती जायगी। मेरा अनुभव है कि देहात में जिनकी आर्थिक स्थिति जितनी ही खराब है, उतने ही अधिक वे कुसंस्कारों के शिकार हैं।

तीन-चार दिन इधर-उधर घूमने के पश्चात् मुझे महसूस होने लगा कि इस अथाह महासागर में मैं एक बूंद कैम्फर लेकर कर ही क्या सकता हूँ ? दवा भी लगभग समाप्त हो चुकी थी। गाँव के लोग भी मुझसे बार-बार टांडा वापस जाने का आग्रह कर रहे थे। अतः एक कुर्मी के घर खाना खाकर कुछ देर आराम करने के पश्चात् टांडा वापस चला आया। धूप के कारण टांडा पहुँचते-पहुँचते बिलकुल थक गया और मकान पर पहुँच कर सो गया। शाम को तीन-चार मित्र मुझसे मिलने आये। मैं उनसे बात करने लगा और साथ ही शर्बत बनाकर उन लोगों को पिलाया और स्वयं भी पिया। अँधेरा हो जाने पर वे लोग अपने-अपने घर चले गये। मैं लालटेन जलाकर आँगन में आ बैठा। काफी थक गया था, खाना बनाने की बात सोच रहा था किन्तु कुछ आलस्य आ रहा था। आलस्य तोड़ कर उठना ही चाहता था कि अकस्मात् पाखाने की हाजत महसूस हुई। मैं टट्टी गया किन्तु वहाँ से लौटने के पाँच ही मिनट बाद फिर टट्टी लगी, इस तरह दो-तीन बार टट्टी जाने के बाद मेरे सिर में चक्कर आने लगे और हाथ-पैर कमजोर होने लगे। अब मुझमें इतनी भी शक्ति नहीं रह गयी कि उठकर कहीं बाहर जा सकूँ। पास-पड़ोस में कोई था भी नहीं, जिसको सहायता के लिए बुलाऊँ। फिर मैं चार-पाई पर के बिछौने हटाकर उसे नाली के पास ले जाकर उसी पर लेट गया। कैम्फर की बोतल की ओर देखा तो वह भी खाली थी।

अन्ततः परमात्मा के ही भरोसे लेट गया और उसी चारपाई पर से ही टट्टी करता रहा। टट्टी के साथ-साथ कै भी शुरू हो गयी थी। मैं कुछ घबड़ा गया किन्तु करता ही क्या ? सोचा, चलो 'भवानी के भरोसे' पड़े रहो।

संयोग से रात की गाडी से ९-१० बजे के लगभग देवनन्दन भाई आ गये। मुझे ऐसी स्थिति में देखकर बहुत घबराये और कुछ रुआसे-से हो गये। कहने लगे कि भाई धीरेन, अब क्या होगा ? मैंने उन्हें सान्त्वना देते हुए जवाब दिया, "इस समय यह सोचने का अवसर नहीं है, तुम जल्दी से जाकर जानकी प्रसाद के यहाँ से कैम्फर की बोतल ले आओ।" जानकी प्रसादजी का घर आश्रम से ५ मिनट का रास्ता था, देवनन्दन सिंह चले गये और शीघ्र ही दवा लेकर लौट आये। कैम्फर तो नहीं मिला किन्तु कोई दूसरी दवा लाकर पिलायी। जानकी प्रसादजी मेरी वैसी अवस्था सुन कर मेरे पास न आकर सीधे डाक्टर के पास चले गये। इसी बीच मेरे हाथ-पाँव ऐंठने लगा और क्रमशः मैं बेहोश हो गया। डाक्टर आये, मेरी दवा-दारू हुई किन्तु मुझे कुछ भी पता नहीं चला। जब मैं होश में आया तो मेरा कै-दस्त बन्द हो चुका था और बरामदे में एक दूसरी चारपाई पर लिटाया जा चुका था। इस आकस्मिक बीमारी ने मुझे बिलकुल कमजोर बना दिया। पंद्रह-बीस दिन के बाद कहीं अकबरपुर जाने लायक हुआ। अकबरपुर के लोग मुझे टांडा से बुला ले गये। पन्द्रह-बीस दिन वहाँ रहने के पश्चात् जब मुझमें कुछ शक्ति आयी तो मैं रेल-द्वारा घर चला गया। लगभग दो माह घर रहना पड़ा, जिसमें गाँव और वहाँ के लोगों से कोई सम्बन्ध नहीं रह सका।—धीरेन्द्र मजूमदार

(समग्र ग्राम सेवा की ओर : पृष्ठ १०२-१०६)

उ० प्र० तरुण-शांतिसेना शिविर तथा सम्मेलन

शिविर : २४ से २८ सितम्बर, ७१ तक, सम्मेलन २६ से ३० सितम्बर, ७१ तक।

तरुण-शान्तिसेना का उत्तर प्रदेश दूसरा प्रदेशीय शिविर तथा पहला प्रादेशिक सम्मेलन आगरा विश्वविद्यालय के तत्वावधान में बरेली कालेज, बरेली में होने जा रहा है।

इस शिविर तथा सम्मेलन में विचार शिक्षण के लिए आचार्य काका साहब कालेलकर, आचार्य राममूर्ति जी, प्रो० रामजी सिंह आदि सर्वोदय के विद्वान विचारकों के पधारने की आशा है। साथ ही अन्य प्रदेशों के अनेक तेजस्वी तरुण भी हमारे कार्यक्रमों में शामिल हो रहे हैं।

सम्मेलन में तरुण-शान्तिसेना के सभी सदस्य तथा दर्शक भाग ले सकेंगे, लेकिन शिविर तरुण-शान्तिसेना के चुने हुए सदस्यों के लिए सीमित रहेगा। शिविरार्थियों को दो रुपया शिविर-शुल्क तथा प्रतिनिधियों को एक रुपया प्रतिनिधि शुल्क देना होगा। शिविरार्थियों के भोजन की निःशुल्क व्यवस्था रहेगी, प्रतिनिधियों को भोजन खर्च देना होगा।

आवेदन पत्र भेजने की अन्तिम ता० १० सितम्बर, ७१ है।

सम्मेलन के प्रतिनिधियों की सूचना २० सितम्बर तक भेज दें। आवेदन पत्र तथा सूचना भेजने तथा आवश्यक जानकारी पाने के लिए इस पते पर सम्पर्क करें। **उ० प्र० तरुण शान्तिसेना कार्यालय, गांधी शान्ति प्रतिष्ठान केन्द्र, १५।२३९, सिविल लाइन्स, कानपुर–१ (उ० प्र०) फोन : ६८६६२)**

श्रद्धांजलि

● गत १ अगस्त को होशियारपुर जिला सर्वोदय मण्डल के संयोजक श्री ठाकुर उधम सिंह का देहावसान हो गया। आपकी उम्र ७६ वर्ष की थी।

● गत १६ अगस्त को बिहार खादीग्रामोद्योग संघ के वरिष्ठ कार्यकर्ता श्री श्याम बिहारी सिंह भी अब इहलोक में नहीं रहे।

सर्वोदय-परिवार की ओर से दिवंगतों को श्रद्धांजलि।

सहरसा के मोर्चे से

ग्रामस्वराज्य पदयात्रा

पुष्टि-अभियान संचालन समिति की गत् ४ ५ जुलाई को हुई बैठक में लिये गये निश्चय के अनुसार ११ सितम्बर से २ अक्टूबर तक जिले के त्रिवेणीगंज सहित चौबीस प्रखण्डों और ६ नगरों में स्थानीय प्रमुख नागरिकों के नेतृत्व में ग्रामस्वराज्य पदयात्रा-अभियान प्रारम्भ हो रहा है। अभियान के दौरान समस्त जिले में ग्राम-स्वराज्य के विचार और कार्यक्रम को वेग देने की दृष्टि से आन्दोलन को जनाधारित बनाने का प्रयत्न किया जा रहा है। जिन क्षेत्रों में पहले से ही काम चल रहा है वहाँ आगे के काम को वहाँ की जनता उठा ले और शीघ्र पूरा करने का संकल्प करे, तथा नये क्षेत्रों में लोग इस काम के लिए आगे आयें, इस दृष्टि से ही इन अभियानों का संयोजन किया जा रहा है।

स्थानीय नागरिकों की पदयात्रा टोलियों के साथ विचार-प्रचार और मार्ग-दर्शन करने की दृष्टि से प्रान्त और देश के कुछ वरिष्ठ साथियों को भी आमंत्रित किया जा रहा है। बिहार के वयोवृद्ध नेता श्री राजेन्द्र मिश्र और सहरसा के युवा सर्वोदय नेता श्री महेन्द्र नारायण सिंह ने एक संयुक्त पत्र भेजकर लगभग ११८ मित्रों को इस काम में सहयोग करने के लिए देश भर से आमंत्रित किया है। सारा अभियान जनाधारित ही होगा और स्थानीय ग्रामीण नागरिक समितियाँ और नगरस्वराज्य समितियाँ अभियान का सारा दायित्व लेंगी। अभियान के दौरान विचार-शिक्षण के साथ-साथ साहित्य और शान्तिसेना तथा आचार्यकुल के संगठन पर भी ध्यान दिया जायेगा, और ग्रामसभाओं के माध्यम से ग्राम-स्वराज्य के काम को उठाने और पूरा करने के साथ-साथ गाँवों में अदालत-मुक्ति की दृष्टि से समाधान समितियों का संघटन हो, ऐसा प्रयास भी रहेगा। अभियान में जिले के प्रमुख नागरिक, विभिन्न राज-नीतिक पक्षों के कार्यकर्ता, संसद सदस्य और विधायक आदि लोग भाग लेंगे।

पुष्टि के लिए कागज तैयार

अब तक सहरसा जिले में कुल १० गाँवों के कागज तैयार कर पुष्टि पदा-धिकारी के दफ्तर में जमा कर दिये गये हैं। ज्ञातव्य है कि इन गाँवों को पुष्ट करने का अधिकार पूर्णिया के पुष्टि पदा-धिकारी को सौंपा गया है।

जिन गाँवों के कागज तैयार हैं उनका विवरण नीचे दिया जा रहा है।

प्रखण्ड	गाँव	भूमिवान	भूमिहीन
मरौना	१-ओरहा-टोला	४८	३
	२-टोला-सिमराहा	१५	११
	३-रतनापुर	४४	४६
	४-महेशपुर	१०	१४
	५-लालपुर	२३	२६
घोघा	६-डिमहा	७	१३
	७-फुलपुर	४८	६४
	८-अजगैवा	१०	७८
	९-कलासन	७५	२४५
महिषी	१०-तेघड़ा	१६	१३२

महिषी में सुशीला दीदी

सुशीला बहन पिछले माह से महिषी में काम कर रही हैं। बीच में उनका स्वास्थ्य बहुत खराब हो गया था फिर भी उनका काम चालू रहा। उन्होंने विनोबा में जो कार्य-पद्धति विकसित की है उसीके माध्यम से वे महिषी में काम कर रही हैं। सायं-प्रातः की प्रार्थना और सत्संग गोष्ठियाँ बराबर होती हैं। गाँव के युवकों और नागरिकों को संघटित कर गाँव में कुछ धूमधाम कार्य भी किये गये हैं। इस बीच भूमिहीनों में ८ बीघा भूमि का वितरण भी हुआ है। इस प्रकार महिषी गाँव में अब तक कुल २० बीघा भूमि का वितरण हो चुका है। यहाँ के काम में महिषी के पुराने शिक्षक और सर्वोदय सेवक पं० रघुनन्दन झा का पूरा सहयोग प्राप्त है। अब उसी गाँव के एक सुशिक्षित युवक श्री दयानन्द झा सुशीला दीदी के सम्पर्क के कारण ग्रामस्वराज्य के काम को संघटित करने में लगे हैं। सत्संग में गाँव के लोग रुचि ले रहे हैं। तेलहर गाँव में भी सभी भूमिवानों और भूमिहीनों ने समर्पण-पत्र पर हस्ताक्षर कर ग्रामसभा का गठन कर लिया है। ग्रामसभा की बैठकें नियमित हुआ करती हैं। मुखिया श्री त्रिपति नारायण जी ने अपनी १ बीघा जमीन ४ आदाताओं में बाँटी है, दूसरे भूमिवानों ने भी अपनी जमीन का बीघा कट्ठा निकालकर भूमि-हीनों में देने का आश्वासन दिया है।

पोखर भिण्डा गाँव के भूमिवानों में से १४ भूमिवानों और सभी ३५ भूमिहीनों ने अपना समर्पण-पत्र भर दिया है। राउटी में श्री चन्द्र चूड़ सिंह ने खुद अपने कार्य-कर्ता को सहरसा भेजकर बीघा-कट्ठा निकालने और ग्रामसभा आदि बनाने का फार्म मँगा लिया है। यहाँ से दो कार्य-कर्ता साथी उनकी मदद में गये हैं। बाजे में पहले से ही ग्रामसभा बन चुकी है और बीघा-कट्ठा निकल चुका है। श्री अली-हसन के सत्प्रयासों से अदालत-मुक्ति का काम जोर पकड़ रहा है। उस क्षेत्र के आस पास के अनेक मामलों का अदालत से बाहर आपसी तौर पर ग्रामीणों के सहयोग से राजीनामा कराया गया है। इसका दूसरे क्षेत्र पर भी अच्छा असर पड़ा है।

आचार्यकुल

गत २९ जून को जिले के शिक्षा-धिकारियों और आचार्यकुल की संयुक्त बैठक में यह निर्णय लिया गया था कि आचार्यकुल ग्रामस्वराज्य के काम को लोक-शिक्षण का कार्य मानकर उठा ले और मधेपुरा प्रखण्ड में सघन प्रायोगिक काम करे। उस संदर्भ में मधेपुरा में २७ अगस्त को जिला आचार्यकुल की एक आवश्यक बैठक बुलायी गयी।

श्री कामेश्वर प्रसाद बहुगुणा ने महिषी और मधेपुरा की प्रखण्ड आचार्य-

कुल समितियों की बैठकों में भाग लिया और आचार्यकुल के काम को कुछ गति प्रदान की।

तरुण-शान्तिसेना

जिले के अनेक उच्च विद्यालयों में पिछले दिनों तरुण-शान्तिसेना की टोलियों ने घूम-घूम कर तरुण-शान्तिसेना का अच्छा संघटन किया। इसमें सहरसा के जिला शिक्षा पदाधिकारी का अच्छा सहयोग मिला। ३० हाई स्कूलों में तरुण-शान्तिसेना का संघटन किया गया है। प्रत्येक विद्यालय में एक शिक्षक के मार्ग-दर्शन और एक छात्र के नेतृत्व में तरुण-शान्तिसेना की इकाईयाँ कायम की गयी। साथ ही साहित्य प्रचार का भी अच्छा काम हुआ और १५-२० दिनों की यात्राओं में कोई ६०० रुपये का साहित्य बेचा गया और 'मैत्री' आदि सर्वोदय पत्रिकाओं के ग्राहक बनाये गये।

फिलहाल जिन ३० स्कूलों में तरुण-शान्तिसेना का गठन किया गया है, उनके प्रभारियों और संयोजकों का एक त्रिदिवसीय शिविर मधेपुरा में ४ से ६ सितम्बर तक आयोजित करने का निर्णय लिया गया। शिविर की व्यवस्था का जिम्मा मधेपुरा नगरस्वराज्य समिति की ओर से समिति के अध्यक्ष श्री शिवनेश्वर मण्डल ने सहर्ष उठाया है।

सिंहेश्वर प्रखण्ड में तरुण शान्तिसेना के संघटन का भार वहाँ के विकास पदाधिकारी श्री बुद्धिनाथ झा एवं चिकित्सा पदाधिकारी श्री नरेश झा ने अपने ऊपर लिया है।

शिक्षा में क्रान्ति दिवस

भारतीय तरुण-शान्तिसेना के आवाहन पर ९ अगस्त को सारे देश में 'शिक्षा में क्रान्ति' दिवस मनाया गया। सहरसा में भी ग्रामस्वराज्य पुष्टि अभियान समिति ने जिले में इस कार्यक्रम के आयोजन का निश्चय किया और इसके लिए सारे जिले में पूर्व तैयारी की दृष्टि से तरुण-शान्तिसेना की तीन टोलियाँ सुश्री जानकी पाण्डे, कुमार शुभमूर्ति, लखनदीन, अखिल चन्द्र पढ़िया और तपेश्वर भाई के नेतृत्व में घूमी। आचार्यकुल की ओर से भी जिले भर में शिक्षकों का आवाहन किया गया और श्री कामेश्वर प्रसाद बहुगुणा सहर्षि, मधेपुरा, त्रिवेणीगंज आदि स्थानों में घूमे। नगरस्वराज्य समिति सहरसा ने सारे आयोजन के संयोजन का जिम्मा लिया और समिति के संघटन मंत्री श्री जयानन्द झा, जिला हाई स्कूल के प्राचार्य डा० जयदेव, मनोहर उच्च विद्यालय के अध्यापक श्री गोपालजी और श्री अश्विनीजी तथा सहरसा के जनप्रिय लोक नेता श्री परमेश्वर कुँवर ने शहर में अभियान की व्यवस्था की।

९ अगस्त को दो बजे जिला हाई स्कूल से छात्रों, शिक्षकों तथा अभिभावकों का एक विशाल जुलूस निकला। सहरसा के बुजुर्गों का कहना है कि सहरसा के जीवन में तरुणों और शिक्षकों का ऐसा सुव्यवस्थित और प्रेरक विशाल प्रदर्शन यहाँ पहले कभी नहीं हुआ। जुलूस में नगर के सैकड़ों नागरिकों के अलावा विभिन्न राजनीतिक दलों के लोग, शासकीय सेवकों के साथ-साथ बिहार के वरिष्ठ नेता श्री राजेन्द्र मिश्र जैसे लोग भी थे।

जुलूस अन्त में मनोहर उच्च विद्यालय के प्रांगण में आमसभा में बदल गया। सभा की अध्यक्षता श्री राजेन्द्र मिश्र ने की, और मुख्य अतिथि के रूप में श्री धीरेन्द्र मजूमदार ने अपने भाषण में क्रान्ति की एकांगी दृष्टि के खतरे के प्रति ध्यान आकृष्ट करते हुए कहा कि समाज में समग्र क्रान्ति किये बिना शिक्षा में क्रान्ति का कोई अर्थ नहीं होता। हमें अगर एक नये जीवन और संस्कृति की रचना करनी है, और शिक्षण को उसका वाहन बनना है तो शिक्षा शास्त्रियों से कहना चाहिए कि शिक्षा को शासन-मुक्त और सामाजार्थिक रचना विकेन्द्रित करनी होगी।

सभा में सुश्री निर्मला देश पाण्डेय ने भी ग्रामस्वराज्य के संदर्भ में शिक्षा की भूमिका पर प्रकाश डाला। जिले के कोने-कोने से आये अध्यापकों ने भी यह विचार व्यक्त किया कि वर्तमान शिक्षा को जारी रखना अब एक सामाजिक द्रोह है। सहरसा जिले के परमेश्वर कुँवर ने जोर देकर कहा कि आज शिक्षा और शिक्षक राजनीतिज्ञों के गुलाम हो गये हैं, जो राजनीतिज्ञ शिक्षा जैसे मामले में नितान्त अयोग्य और जीवन में भ्रष्ट हैं। इसलिए यह बहुत स्वागत योग्य बात है, और सर्वोदय की इस पुकार की अनसुनी नहीं की जा सकती। डा० जयदेव ने भी शिक्षा के पुराने उद्देश्य—मानव की मुक्ति-की तरफ ध्यान खींचते हुए कहा कि शिक्षा को मुक्त किये बिना सामाजिक मुक्ति की बात नहीं कही जा सकती। मनोहर उच्च विद्यालय के प्रधानाध्यापक श्री परमेश्वर झा ने जोर देकर कहा कि गांधीजी की बुनियादी शिक्षा ही एक मात्र मार्ग है और वही हमारा अगला कदम हो सकता है। सारे जिले से कोई २२०० छात्रों और सौ शिक्षकों ने प्रदर्शन में भाग लिया। इनके अलावा हजारों अभिभावकों और नागरिकों ने भी इसमें हिस्सा लिया।

समाचार मिले हैं कि जो लोग सहरसा नहीं आ सके, उन्होंने अपने-अपने क्षेत्रों में प्रदर्शन किये। चौसा और दूसरे स्थानों में छात्रों एवं शिक्षकों ने प्रदर्शन और सभाएँ कीं। चौसा के बलासन हाई-स्कूल के प्रधानाध्यापक ने भी अपने विद्यालय में कार्यक्रम आयोजित किया।

बेलगाँव जिला सर्वोदय मंडल के पत्र से

● बेलगाँव जिला सर्वोदय मण्डल द्वारा बंगला देश की सहायता में निधि एकत्र करने का काम शुरू हो गया है। गत महीने में १,०४० ८० पै० (एक हजार चालीस रुपये, अस्सी पैसे) एकत्र किये गये जो सर्व सेवा संघ को भेज दिये जायेंगे।

● ९ अगस्त को बेलगाँव में शिक्षा में क्रान्ति अभियान का शुभारम्भ हुआ। इस अवसर पर आयोजित रैली में २५० लोगों ने भाग लिया।

—नारायण पवार, मंत्री,
जिला सर्वोदय मण्डल

विनोबा जयन्ती से गांधी जयन्ती तक व्यापक कार्यक्रम चलायें

दिनांक ८।८।७१ को लखनऊ में प्रदेशीय सर्वोदय मण्डल के क्षेत्रीय समितियों तथा समितियों के संयोजकों की एक बैठक हुई, जिसमें ११ सितम्बर से २ अक्तूबर तक के व्यापक कार्यक्रम की योजना पर विचार हुआ। इस बैठक के निर्णयानुसार :

(१) ११ सितम्बर से २ अक्तूबर तक हर जिले में ग्रामस्वराज्य के विचार प्रचार के लिए पदयात्राओं का आयोजन किया जाय।

(२) जिन जिलों में सर्वोदय मण्डल नहीं बने हैं, उन जिलों के लोकसेवक मिलकर जिला सर्वोदय मण्डल का गठन करें तथा सर्वोदय मित्र, शान्ति-सैनिक व तरुण-शान्तिसैनिकों की भर्ती करें।

(३) हर जिला व प्राथमिक सर्वोदय मण्डल अपने जिले में साहित्य-बिक्री की व्यापक योजना बनाए और उसके लिए साहित्य मंगाने की व्यवस्था करे। साहित्य बिक्री का कार्य ऐसे व्यक्तियों को सुपुर्द किया जाय जो बिक्री में विशेष रुचि रखते हों। साहित्य-बिक्री के साथ 'भूदान-यज्ञ' तथा अन्य सर्वोदय पत्र-पत्रिकाओं के ग्राहक बनाये जाएँ।

उपरोक्त कार्यक्रम को व्यापक रूप से चलाया जाय ताकि इस विशेष अवसर पर सारे प्रदेश में ग्रामस्वराज्य-आंदोलन का वातावरण तैयार हो सके।

आशा है सभी इकाईयाँ व लोकसेवक मिलजुलकर इस कार्यक्रम को चलाएँगे।

—महावीर सिंह, मंत्री
उ० प्र० सर्वोदय मण्डल

साहित्य-बिक्री का अभियान प्रतिदिन चलाएँ। साथ ही 'भूदान यज्ञ' तथा 'मैत्री' एवं अन्य सर्वोदय विचार की पत्र-पत्रिकाओं के ग्राहक बनाएँ। इससे व्यक्तिगत सम्पर्क होगा तथा अच्छे अनुभव प्राप्त होंगे। आगरा में श्री गोपाल नारायण शिरोमणि, एडवोकेट इस प्रकार का प्रयोग बराबर करते रहते हैं। अभी गत दो माह में उन्होंने ७०० परिवारों में गांधीजी की आत्मकथा पहुँचायी है।

— कृष्णचन्द्र सहाय
संयोजक, सर्वोदय साहित्य प्रचार विभाग,
उ० प्र० सर्वोदय मण्डल

हमारा आगामी प्रकाशन

१ — मुस्लिमों का धर्म
—इस्माईल भाई नागोरी

२—अहिंसा का एकादी पथिक
—सोमेश पुरोहित

३—आँखों देखा हाल ग्रामदानी गाँवों का परिचय

४—लोकनीति
—विनोबा

५—ऋषि विनोबा जीवन और कार्य
—श्रीमन्नारायण

६—स्त्री-शक्ति
—विनोबा

७ - हृदय रोग
—शरण प्रसाद

८—ब्लडप्रेशर की प्राकृतिक चिकित्सा
—धर्मचन्द्र सरावगी

(सर्व सेवा संघ प्रकाशन)
राजघाट, वाराणसी

सर्वोदय पर्व में

सर्वोदय-साहित्य प्रचार-अभियान

११ सितम्बर से २ अक्तूबर तक सारे देश में सदैव की भाँति इस वर्ष भी सर्वोदय पर्व मनाया जा रहा है। इस पखवारे में साहित्य-प्रचार की ऐसी योजना बनाएँ कि घर-घर साहित्य का प्रवेश हो सके। इस सम्बन्ध में निम्न सुझाव पेश का रहा हूँ

● पहली अगस्त से खादी-भण्डारों ने साहित्य-प्रचार के लिए खादी-बिक्री के साथ साहित्य पर विशेष कमीशन देना स्वीकार किया है, उस ओर जनता का ध्यान आकर्षित कर रहा है।

● सर्व सेवा संघ ने ५.०० रु० तथा ७.०० रु० के सेट तैयार किये हैं, जिनकी असली कीमत क्रमशः ८.०० रु० एवं ११.०० रु० है। ये सेट सर्व सेवा संघ से सीधे मंगाये जा सकते हैं।

● 'विनोबा व्यक्तित्व और विचार' ग्रन्थ सस्ता साहित्य-मण्डल ने प्रकाशित किया है जिसका मूल्य ४०.०० रु० है लेकिन यदि कार्यकर्ता बिक्री के लिए लेना चाहते हैं तो २५ प्रतिशत कमीशन पर वह ग्रन्थ उनको प्राप्त हो सकता है। स्कूल और कालेजों की लाइब्रेरियों में अधिक-से-अधिक पुस्तकें पहुँचाने का प्रयास करें।

● सत्यपाल दीक्षित बनारस

भूदान-यज्ञ ६...'७१ लाइसेन्स नं० ए ३४ [पहले से डाक-व्यय दिये बिना भेजने की स्वीकृति प्राप्त] रजिस्टर्ड नं० एल. १२४

अमेरिका पाकिस्तान को मदद देना तत्काल बन्द करे
सिनेटर केनेडी की माँग

अमेरिकन सिनेटर श्री एडवार्ड एम० केनेडी ने अमेरिकन प्रेसिडेन्ट श्री निक्सन से निवेदन किया कि पश्चिम पाकिस्तान को दी जानेवाली सब मदद वह बन्द करें। जो कुछ उन्होंने भारत-यात्रा के क्रम में देखा उसे उन्होंने पूर्व बंगाल के सम्बन्ध में पाकिस्तान की 'निष्ठुर दमन नीति' कहा।

भारत में एक सप्ताह का दौरा कर शरणार्थियों के स्थानों का निरीक्षण करने के बाद वह वाशिंगटन लौटे। पूर्व बंगाल से भागे लाखों-लाख लोगों को उन्होंने देखा और यह चेतावनी दी कि लोगों के गुस्से को ठंढा करने और राहत पहुँचाने के लिए यदि कोई उपाय नहीं किया गया तो पूर्व बंगाल की हालत पाकिस्तान और पूर्वी भारत के लिए भयंकर दुर्गम स्थिति पैदा कर देगी।

शरणार्थियों को मदद देने के लिए अमेरिकी सीनेट की उपसमिति का चेयरमैन (ऍडवर्ड) केनेडी हैं। अमेरिकी सरकार पाकिस्तान को जो हथियार से लदे जहाज भेज रही है, केनेडी उसके आलोचक रहे हैं।

यहाँ के नेशनल प्रेस क्लब में बोलते हुए एक लिखित भाषण में उन्होंने कहा कि यह कितनी लज्जा और दुख की बात है कि हथियार लदे जहाजों को भेजा जाना अब भी जारी है, जब कि मात्र एक कलम की नोक से रोक दिया जा सकता है।

गत वर्ष पूर्व बंगाल तूफान और गृहयुद्ध की चपेट में पड़ा था। गृहयुद्ध में तो यह फँसा हुआ है ही। अभी हाल की बाढ़ ने उसके कष्टों को और भी कई गुना बढ़ा दिया है।

केनेडी ने कहा कि उनके पास सबूत है कि पश्चिमी पाकिस्तानी फौज पूर्व बंगाल के नागरिकों की हत्या कर रही है। उन्होंने यह भी कहा कि शरणार्थियों ने पाकिस्तानी फौज और उसके सहयोगियों द्वारा की गयी भीषण क्रूरता, कत्लेआम, लूट, आगजनी, उत्पीडन और अत्याचार की कहानियाँ उन्हें सुनायी।

उन्होंने यह राय व्यक्त की कि अमेरिका से हथियारों का पश्चिमी पाकिस्तान भेजा जाना तत्काल बन्द किया जाना चाहिए। पाकिस्तान की सरकार को, जो मानवता के एकदम मामूली सिद्धान्त का भी उल्लंघन करते हुए चल रही है, किसी तरह की आर्थिक सहायता देना भी रोक देना चाहिए।

पश्चिम पाकिस्तान के फौजी अधिकारियों को, और संसार के लोगों को हम यह दिखा दें कि बंगाल में किये गये इतिहास में अभूतपूर्व कत्लेआम के लिए अमेरिका के मन में गहरी और अमिट नफरत है।

पश्चिम पाकिस्तान के साथ राजनयिक सम्बन्ध तोड़ने की तो बात केनेडी ने नहीं कही, पर उन्होंने निक्सन को यह राय दी कि वह जेनरल याहिया खाँ पर सीधा दबाव डालें कि बंगालियों के प्रति अपनी नीति वह उदार करें।

केनेडी ने जब भारत-भ्रमण आरम्भ किया था तब पाकिस्तानी सरकार ने उन्हें पूर्व बंगाल में जाने की अनुमति नहीं दी थी।

उन्होंने अमेरिकी शासन की प्रशंसा करते हुए कहा कि उसने राष्ट्रसंघ के मार्फत ८ करोड़ डालर (६० करोड़ रुपया) की जो मदद उसने दी है, वह पूर्व बंगाल के लिए दिये गये अन्तर्राष्ट्रीय दान से ज्यादा अधिक है। उन्होंने कहा, "परन्तु जब हम यह देखते हैं कि भारत को शरणार्थियों की राहत के लिए पचास करोड़ से एक अरब डालर (पौने चार अरब से साढ़े सात अरब रुपये) का बजट सिर्फ चालू वर्ष में बनाना पड़ रहा है तब हम महसूस करते हैं कि बाहर की दुनिया कितनी अल्प मदद दे रही है और अमेरिका का दान कितना छोटा है। ●

कच्छ में लोक यात्री दल का कार्यक्रम

दिनांक	स्थान
७-९-७१	चिरई
८-९-७१	भीमसार
९-९-७१	वागभेदी
१०-९-७१	अजार
११-९-७१ / १२-९-७१	आदीपुर
१३-९-७१	गांधीधाम
१४-९-७१	कण्डला

पता —मार्फत श्री कणी भाई संघवी मंत्रीवाड़ी
पो० रापर, जिला-कच्छ (गुजरात)

इस अंक में

अन्य स्तम्भ

वार्षिक शुल्क। १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पैसे), विदेश में २२ रु०; या २५ शिलिंग या ३ डालर।
एक अंक का मूल्य २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिये प्रकाशित एवं मनोहर प्रेस, वाराणसी में मुद्रित

सम्पादक
राममूर्ति

वर्ष : १७ सोमवार
अंक : ५० १३ सितम्बर, '७१

पत्रिका विभाग
सर्व सेवा संघ, राजघाट, वाराणसी–१
फोन : ६४३९१ तार : सर्वसेवा

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

अमेरिकी जनता के समक्ष एक चुनौती

अब अमेरिकावासियों के लिए अपने नेताओं से यह पूछने का वक्त आ गया है कि, "आखिर हम किस तरह की सरकार को अपने प्रभाव में लेना चाहते हैं, और उसका मकसद क्या है ?"

क्योंकि पिछली दुःखद दशाब्दी में आत्म-निर्णय के विचार और लोकतंत्र के सिद्धान्तों को, हमारे देश के समुद्री किनारे से १० हजार मील दूर की धरती (वियतनाम) पर संरक्षण देने के लिए अमेरिकी नेता एक सौ बिलीयन डालर (पचहत्तर लाख करोड़ रुपये) और ४५ हजार जिन्दगियों की बलि दे चुके हैं। और आज पाँच गुनी जनसंख्या (वियतनाम के मुकाबिले) वाले १२ हजार मील दूर के देश (पूर्व बंगाल) में आत्म-निर्णय को ही कुचलने के लिए, एक मुक्त चुनाव के परिणामों के विरुद्ध षड्यंत्र रचने के लिए, अमेरिकी नेता, अमेरिकी जनता का समर्थन माँग रहे हैं।

आप यह कहते हैं कि हमको इससे कुछ भी लेना-देना नहीं है, कि हम दुनिया भर की रखवाली करने का ठेका नहीं ले रखे हैं। यह बात ठीक हो सकती है। लेकिन यह एक नग्न सत्य है कि हम लोग पूर्व बंगाल में पहले ही उलझ चुके हैं। हमारी बन्दूकें वहाँ काम आ रही हैं। पिछली दो दशाब्दियों में आर्थिक सहकार के रूप में हमारा धन वहाँ लगाया जा चुका है।

सवाल यह नहीं है कि हमको इसमें उलझना चाहिए या नहीं, सवाल यह है कि हमें किस तरह इसमें लगना चाहिए। सवाल यह नहीं है कि हम धन व्यय करें अथवा नहीं, सवाल यह है कि हम धन किसलिए व्यय करें। सवाल यह है कि हमें और अधिक शस्त्रों की आपूर्ति करनी है, या भीषण रूप से पीड़ित क्षेत्रों में मदद पहुँचानी है, और शांति के लिए मानवीय कार्यक्रमों में अपनी शक्ति और साधन लगाने हैं ?

(नेशनल प्रेस क्लब, वाशिंगटन, अमेरिका में दिए गए एक भाषण से।)

—(सिनेटर) एडवर्ड कैनेडी

• यूनो को शांतिसेना रखनी चाहिए :—विनोबा •

यूनो को शांतिसेना रखनी चाहिए

नारायण भाई : अगर भारत-पाकिस्तान का युद्ध छिड़ जाये तो अहिंसा में माननेवालों का क्या कर्त्तव्य होगा, तफसील से समझाइये।

विनोबाजी : भारत-पाकिस्तान युद्ध की संभावना दीखती नहीं। अगर हुआ तो 'वर्ल्ड वार' होगी। क्योंकि उसमें दोनों बाजू से शक्तियाँ पड़ेंगी। 'वर्ल्ड वार' तो कोई चाहते नहीं। बड़ी सत्ताएँ भी चाहती नहीं। बड़ी शक्तियाँ जगह-जगह छिटपुट लड़ाईयाँ हों, यह चाहती हैं। राजाजी ने तो सुझाया है कि रूस के साथ आप की जो संधि (ट्रीटी) हुई है उसमें ऐसी कोई बात नहीं है कि अमेरिका के साथ क्यों न हो, इत्यादि इत्यादि। लेकिन जहाँ 'वर्ल्ड वार' होती है वहाँ 'इंटरनेशनल' क्षेत्र में अहिंसा क्या कर सकती है? इसकी कोई मिसाल दुनिया के इतिहास में अभी नहीं है। मैंने कई दफा कहा, और जयप्रकाशजी ने भी महसूस किया कि यूनो आर्मी रखता है, यह गलत है। अगर उसे आर्मी रखनी ही थी तो अमेरिका और रूस से ज्यादा आर्मी रखता। वह सम्भव था नहीं। इसका मतलब थोड़ी-सी आर्मी रखकर 'नाक कटवाकर अपशकुन' किया। इसलिए यूनो को शांतिसेना रखनी चाहिए थी। भारत में ५५ करोड़ लोग हैं। दुनिया की आबादी का ⅙ हिस्सा है। यूनो ५-७ लाख की शांतिसेना रखे तो भारत एक लाख शांतिसैनिक दे। फिर इस शांतिसेना को दूसरे देश में भेज सकते हैं। जो देश उस शांतिसेना को कबूल नहीं करेगा, वह दुनिया की सहानुभूति खोयेगा। अब 'वार' के सिलसिले में क्या कर सकते हैं? इसका यही उत्तर है कि ऐसी विश्व शांतिसेना हो और वह यूनो की तरफ से ही हो। यूनो उसे अलग-अलग देशों में भेजे। अब वह सशस्त्र सेना भारत में भेजना चाहता था, लेकिन भारत ने उसे कबूल नहीं किया। शांतिसेना होगी तो कोई भी देश 'ना' नहीं कहेगा। 'हाँ' कहेगा। अगर 'ना' भी कहता तो भी शांतिसेना उस देश में जाती, मारी जाती तो हर्ज नहीं।

दूसरा उपाय कोई व्यक्ति हो, जिसका चित्त पूर्ण निरहंकार हो, जिसकी दुनिया के लिए पूर्ण सहानुभूति हो, और जिसकी सेवा दुनिया जानती हो। ऐसा व्यक्ति उपवास करे तो उसका परिणाम हो सकता है। यह दो रास्ते दीखते हैं, इंटरनेशनल क्षेत्र में अहिंसा के लिए।

नारायण भाई : पहला रास्ता जो बताया उसके लिए अनुकूलता हो रही है, ऐसा लगता है। यूनो की तरफ से अलग-अलग देश में कांगो, साइप्रस, इत्यादि देशों में जो सैनिक गये, उन्होंने कहा कि हम बिना शस्त्र के जाते तो अधिक परिणाम होता। उनके अनुभवों के आधार पर तथा यूनो में काम करनेवाले मेरे एक मित्र के पत्र से लगता है कि ऐसी कोशिश हो रही है। दूसरे रास्ते के बारे में आपने उपवास की बात बतायी। क्या शरीरधारी अहंकार-शून्य हो सकता है? अहंकार शून्यवाला हो तो आप उनमें से एक हैं। तो आप उपवास का सोचते हैं?

बाबा : खुशी की बात है कि यूनो के शस्त्रधारी सैनिकों को ही सूझा कि हम निःशस्त्र जाते तो परिणाम होता। अगर ऐसा हुआ तो यूनो को पत्र जाये कि आप 'आर्मी डिसबैंड' करें। वह 'प्रेक्टिकल' होगा। जब साइंस के कारण दुनिया नजदीक आयी है तब शान्तिसैनिक अगर एक देश के लिए सोचेगा तो वह 'आउट-डेटेड' होगा। इसलिए मुक्त दुनिया के बारे में सोचनेवाला हो।

दूसरी बात, आपने मुझे पूछा है कि मैं उपवास का सोच सकता हूँ क्या? हम सोच भी सकते हैं और नहीं भी सोच सकते हैं। कहना कठिन है। वैसी परिस्थिति, मौका आया तो असम्भव नहीं है। उसका परिणाम न हो तो भी उपवास बाबा कर सकता है। अगर बाबा कमजोर हो जाये तो आपको ऐसा कहने की हिम्मत होनी चाहिए कि 'अब तो थोड़ा ही है, चलाइये।' जैसा जैन लोग संथारा करनेवालों से कहते हैं।

नारायण भाई : यूनो आज जिस प्रकार से काम कर रहा है उससे मालूम होता है कि उस पर 'पावर ब्लाक' का परिणाम होता है। यूनो 'पावर ब्लाक' का प्यादा है। उस हालत में यूनो से स्वतंत्र ऐसी 'युनाइटेड पीपुल्स' की संघटना हो सकती है क्या?

बाबा : यूनो के सामने यह रखा जाये और वह अगर इनकार करे तो किस कारण से इनकार करेगा? कहेगा—(१) व्यवहार्य नहीं है, (२) इष्ट नहीं है। व्यवहार्य नहीं है कहेगा तो उससे कह सकते हैं कि भारत एक लाख शांतिसैनिक देगा। अनिष्ट है कहेगा तो उसे पूछा जाय कि समझाइये कैसे अनिष्ट होगा? क्या इससे यूनो की ताकत कम होगी? इस तरह उसके साथ बातचीत की जाये।

अगर वह दोनों का उत्तर नहीं देता है और शांतिसेना खड़ी नहीं करता है, तब आप स्वतंत्र ताकत खड़ी कर सकते हैं। फिर यूनो खतम ही होगा। उसका कोई उपयोग नहीं होगा।●

ब्रह्मविद्या मंदिर, पवनार

मुस्लिमों का धर्म

लेखक : इस्माइल भाई मागोर

इस छोटी-सी रचना में गुजरात के सुपरिचित रचनात्मक कार्यकर्ता तथा खेती, बागवानी के निष्णात श्री इस्माइल भाई ने इस्लाम धर्म की अच्छी जानकारी दी है। नीति, धर्म, दर्शन, समाजदर्शन, मैत्री, अहिंसा आदि तत्वों का यह परिचय अन्य धर्मवालों के लिए सचमुच मनन की चीज है। धर्म समन्वय की दिशा में सुन्दर प्रयास।

मूल्य ७५ पैसे
सर्व सेवा संघ प्रकाशन,
राजघाट, वाराणसी-१

एक साथी की कठिनाई

पुष्टि के सम्बन्ध में एक वरिष्ठ साथी ने, जो एक प्रदेशीय सर्वोदय मंडल के पदाधिकारी भी हैं, अपनी कठिनाई इन शब्दों में प्रकट की है

"ग्रामदान की शर्तों को पूरा करने के लिए अभी गांववालों को कहना साथियों ने स्वीकार नहीं किया क्योंकि क्षेत्र में ग्रामदान संकल्प का कोई वातावरण नहीं है। यदि जिले व क्षेत्र के कार्यकर्ता प्रत्यक्ष कार्य नहीं करेंगे तो बाहर के कार्यकर्ता नहीं टिक सकेंगे, ऐसा मुझे लगता है। ऐसी स्थिति में हमें क्या करना चाहिए?"

प्रदेशीय सर्वोदय मंडल ने एक खास जिले के मित्रों के आग्रह पर पुष्टि के सघन अभियान के लिए एक ब्लाक चुना, तथा बाहर से कुछ कार्यकर्ता भेजे, साधन जुटाये। क्षेत्र में कुछ दिन काम करने के बाद अब यह मालूम होता है कि

(१) उस क्षेत्र में ग्रामदान-संकल्प का वातावरण नहीं है, (२) क्षेत्र या जिले के कार्यकर्ता, एक-आध अपवाद छोड़कर, प्रत्यक्ष काम में नहीं लगते, और (३) बाहर के कार्यकर्ता भी पूरी संख्या में पहुँचे नहीं, और जो पहुँचे भी उनकी संख्या में कुछ दिन बाद कमी होने लगी।

यह गम्भीर स्थिति है। इससे साफ जाहिर है कि क्षेत्र का चुनाव गलत हुआ। जिस क्षेत्र में ग्रामदान का वातावरण न हो, जहां कुछ समर्थ साथी और सहयोगी न हों उस क्षेत्र में शक्ति लगाने का अर्थ क्या है? निश्चित ही 'पुष्टि' का अर्थ 'प्राप्ति' नहीं है। पुष्टि उन ग्रामदानों की होनी चाहिए जो 'प्राप्त हो चुके हैं। 'प्राप्त' गांवों में ग्रामदान की शर्तें पूरी नहीं हो चुकी होंगी, लेकिन अगर सामान्य तौर पर गांववालों को अपने संकल्प की भी याद न हो, और उन्हें क, ख से ग्रामदान की वर्णमाला सिखानी पड़े, तो मान लेना चाहिए कि ऐसा क्षेत्र पुष्टि के पहले दौर में चुना जाने लायक नहीं है।

ऐसा कोई राज्य नहीं है—जिसमें राज्यदान हो चुका है वह भी नहीं—जो अपने सब ग्रामदानी क्षेत्रों में एक साथ पुष्टि का काम शुरू कर सके। इसलिए राज्य के साथियों को तय करना चाहिए कि वे अपनी सीमित शक्ति किस अधिक-से-अधिक 'अनुकूल' क्षेत्र में लगायें। 'अनुकूलता' की परख पुष्टि का अभियान शुरू करने के पहले का अत्यन्त महत्वपूर्ण कार्य है। दुःख है कि इस प्रश्न पर जितना ध्यान दिया जाना चाहिए उतना नहीं दिया जा रहा है। इसका परिणाम स्पष्ट है। पुष्टि के काम में बाहर की शक्ति किसी क्षेत्र में पूरक ही बन सकती है, मुख्य नहीं। किसी बहुत विशेष स्थिति में विशेष शक्ति जुटाकर किसी क्षेत्र में काम किया जा सकता है लेकिन यह विशेष निर्णय का विषय है। इसे पुष्टि की सामान्य स्थिति नहीं माना जा सकता।

पुष्टि का काम प्राप्ति से बहुत भिन्न है। पुष्टि का अभियान भी प्राप्ति के अभियान से भिन्न है। पुष्टि में ग्रामदान का पूरा गुण और शक्ति प्रकट करने की बात है, आज के राजनैतिक, आर्थिक, और शैक्षिक ढांचे के स्थान पर नयी समाज-रचना की नींव में पहली ईंटें डालने की बात है। गांव में ग्रामस्वराज्य-सभा के गठन से लेकर प्रखंडस्वराज्य-सभा गठित करने तक का सारा कार्य पुष्टि के अंतर्गत आता है। लोकशक्ति के इस माध्यम के गठित हो जाने के बाद कार्यकर्ता-शक्ति अनावश्यक नहीं होती, बल्कि उसका रोल बदल जाता है। इतना सारा काम कैसे होगा, अगर क्षेत्र ऐसा हो जिसमें ग्रामदान की सामान्य शर्तों की चर्चा करने में भी साथियों को संकोच होता है?

ग्रामदान के पास साधन और साथी अत्यंत सीमित हैं। उनके इस्तेमाल में ज्यादा-से-ज्यादा सतर्कता और व्यवहार-बुद्धि से काम लेना चाहिए। भले ही हमें काम राज्य-भर के कुछ ही सघन क्षेत्रों में करना हो, लेकिन क्षेत्र, जिला और राज्य इन तीनों स्तरों पर काम की व्यूह-रचना होनी चाहिए। पुष्टि के लिए एक ब्लाक से छोटा क्षेत्र उपयुक्त नहीं होता। व्यापक और सघन कार्य दोनों को एक-दूसरे से पोषण मिलता है। एक के बिना दूसरे का एक बिन्दु से आगे विकास नहीं हो पाता। और, समाज की चेतना को एक ही बिन्दु पर एक ही प्रवृत्ति द्वारा छूने से भी काम नहीं चलता। उसे विभिन्न बिन्दुओं पर विभिन्न प्रवृत्तियों द्वारा स्पर्श करने की जरूरत होती है।

हमारे साथी की जो कठिनाई है उसमें इस बात का भी संकेत है कि कुछ साथियों के मन में पुष्टि के आयाम, प्रक्रिया, लक्ष्य आदि स्पष्ट नहीं हैं। उनकी सहायता के लिए हम पुष्टि पर एक लेखमाला शुरू कर रहे हैं। तब तक हमारा अनुरोध है कि पत्र लिखनेवाले हमारे साथी अपने राज्य में पुष्टि के प्रश्न पर नये सिरे से विचार कर लें।

सहरसा का अभियान

सहरसा में जिस तरह का पुष्टि-अभियान चल रहा है, उसे हम सभी जानते हैं। सहरसा को हम लोगों ने अपने आन्दोलन का एक मुख्य मोर्चा माना है। इसी नाते बिहार तथा बिहार के बाहर के अनेक साथियों ने वहां काम किया है, और इस वक्त भी कर रहे हैं। सुश्री निर्मला बहन और श्री कृष्णराज भाई तो वहां डटे ही हुए हैं।

अभी तक जो काम हुआ है उसमें और अधिक गति और व्यापकता लाने की दृष्टि से ११ सितम्बर से २ अक्तूबर तक एक विशेष अभियान शुरू किया गया है। उसमें किसी वरिष्ठ साथी के नेतृत्व में हर प्रखंड में पदयात्रा चल रही है। एक साथ जिले भर में पदयात्राओं का कार्यक्रम लोकशिक्षण का जबरदस्त माध्यम है। आशा है इस अभियान से—सहरसा के कार्य में अपेक्षित गति और व्यापकता आयेगी।

दोष : गुणों की छाया मात्र

प्रश्न : सत् प्रवृत्ति करते समय व्यक्ति के बारे में अच्छे-बुरे विचार मन में आते हैं, उन्हें कैसे दूर करें ?

विनोबा : यह सब प्रश्नों का प्रश्नराज है। असत् प्रवृत्तियों को छोड़ दिया। वह छोड़ना कठिन भी नहीं था। सज्जन मनुष्य रजोगुण, तमोगुण और असत् प्रवृत्ति छोड़ ही देता है। पुण्यमार्ग का आचरण करता है और पुण्यमार्ग में भी अनेक लोगों से सम्पर्क आता है। और लोगों की हर एक की अपनी-अपनी दाढ़ी-मूँछ होती है, जिसको अंग्रेजी में इडिओसिंक्रेसिस कहते हैं—अपने-अपने स्वभाव विशेष। वे ध्यान में आते हैं, तो उनके लिए कुछ विचार भी बन जाते हैं। फलाना मनुष्य देखा, वह तो आवेशी है, क्रोधी है, फलाना रजोगुणी है, फलाना अभिमानी है, दाम्भिक है, इत्यादि-इत्यादि ध्यान में आता है। तो क्या किया जाय ?

विचार पोथी में एक विचार है—**"सेवा जवळून, आदर दुरून, ज्ञान आंतून"** (सेवा नजदीक से, आदर दूर से, ज्ञान अंदर से)। हमको सेवा करनी पड़ती है, इसलिए नजदीक जाना पड़ता है। नजदीक जाते हैं, तो सेवा होती है। उस समय सेवा करनेवाला दोष देखता नहीं। आपने कुछ कुप्रवृत्तियाँ कीं, उनके परिणामस्वरूप आपके पेट में गड़बड़ है। डाक्टर आयेगा तो सद्वर्तन का पाठ नहीं पढ़ायेगा, प्रेमपूर्वक औषध देगा। यों नहीं कहेगा कि भले आदमी! तूने जो पाप किया, उसके परिणाम में तू अपना भोग ले, लेकिन सेवा करना अपना धर्म मानेगा। मुझे एक भाई ने एक ग्रीटिंग (शुभेच्छा) कार्ड दिया था, उस पर लुई पाश्चर का एक वाक्य लिखा था फ्रेंच में और अंग्रेजी में :

मैं आपका कार्य जानना नहीं चाहता, मैं आपका मत क्या है, जानना नहीं चाहता, मैं आपका दुःख क्या है, जानना चाहता हूँ।

समाप्तम्! आपका दुःख दूर करने में, मैं मदद में आ सका तो उपकार है। मुझे वह उपनिषद्-वाक्य के समान मालूम हुआ। मेरा धर्म दुःखियों की सेवा करना है और उस सेवा के लिए मैं नजदीक जाता हूँ। सेवा के लिए नजदीक जाना अनिवार्य है।

नजदीक जाने से दोष दीखने का सम्भव है। वह देखना काम नहीं। वह देख लिया तो मैं दोषी ठहरूँगा। तब मैंने अपना धर्म नहीं किया। इसलिए सेवा के लिए नजदीक जायें, आदर दूर से करें। मराठी संत रामदास स्वामी ने कहा है—**दुरूनी माझा नमस्कार गुरुदेवा**—गुरु को मेरा दूर से नमस्कार है—आदरपूर्वक। इसलिए हम व्यक्ति से कितने भी परिचित हो जायें, उसके और हमारे बीच अंतर रखना चाहिए, हार्दिक अंतर। समझना चाहिए कि सामनेवाले सारे रामस्वरूप हैं। सामने (आँगन में) यह विष्णु की मूर्ति है, ऊबड़-खाबड़ है, उसकी नाक भी कट गयी है, लेकिन वह सारा हम देखते नहीं। वह देखना तो शिल्पी का काम है, हमारा नहीं। जैसे हम भगवत् मूर्ति की ओर देखते हैं, तब बाह्य आकार को महत्त्व देते नहीं, अंतरतत्त्व की ओर देखते हैं, वैसे व्यक्ति कितना भी दोषमय हो, हम उसे गुणमय देखें। असम के माधव देव का वाक्य है—अधम मनुष्य केवल दोष ही लेता है। मध्यम मनुष्य गुण-दोष, दोनों लेता है। उत्तम केवल गुण लेता है। और उत्तमोत्तम मनुष्य अल्प गुण का भी विस्तार कर लेता है। दूसरा वाक्य है नानक का—**विणु गुण कीते भगति न होई।** बिना गुण के भक्ति होती नहीं। गुण संकीर्तन करना भक्ति है। जब तक गुणी मनुष्य के गुण ग्रहण नहीं करते, तब तक हमें भक्ति सधेगी नहीं। और मीराबाई का वाक्य है—**गोविंद के गुण गाना।** मेरा तो धंधा गुण गाना है, दोष गाना नहीं। सब गोविंद-मूर्ति हैं। हम मानते हैं कि सत् प्रवृत्ति करते हुए हमारा अनेकों से परिचय होता जाता है, यह हमारी गलती है। असली परिचय हो नहीं सकता। जब तक हम किसी के अंतर्यामी नहीं बनते, तब तक उसका स्वरूप क्या है, जान नहीं सकते। इसलिए ईसा मसीह ने कहा है—**यी जज नॉट अदर्स दैट यी बी नॉट जज्ड** (दूसरों को मत जाँचो, ताकि तुम्हारी ही जाँच न हो)। तुम्हारा ही न्याय न हो, इसलिए न्याय करना हमारा काम नहीं। न्यायदेवता उधर बैठा है, वह न्याय देगा। तुम क्या करोगे? **ज्ञान आंतून**—व्यक्तिगत ज्ञान तब होता है, जब उसके हृदय में आप प्रवेश करते हैं। वह प्रवेश गुणों के द्वारा ही हो सकता है। फिर वही मनुष्य खुद-ब-खुद अपने दोष आपके पास प्रकट करेगा, तब जैसा डाक्टर शस्त्र चिकित्सा से शल्य निकाल देता है, वैसे कुशलतापूर्वक दोष निकाल दें, और गुण की ओर देखें।

विचार-पोथी में एक और विचार है—**"मनुष्य-जीवन घर है, दोष दीवार है, गुण खिड़की है।"** अगर आपको उस मनुष्य के अंदर प्रवेश करना है तो कैसे करेंगे? दीवार से करने जायेंगे तो टकरायेंगे, खिड़की से करेंगे, तो अंदर प्रवेश होगा। गरीब-से-गरीब मनुष्य का भी घर क्यों न हो, एक भी घर ऐसा नहीं मिलेगा, जिसको एक भी दरवाजा न हो। हर घर को कम-से-कम एक दरवाजा तो होता ही है। इस वास्ते गुणविहीन मनुष्य दुनिया में है नहीं। और बिना दीवारवाला घर भी नहीं होता। इसलिए दोषरहित मनुष्य भी नहीं है। दोषरहित केवल गुणवान एक ही है भगवान। जैसे सफेद कागज को बिना काला किये, उस पर लिखने को कहेंगे, तो लिख नहीं सकेंगे, वैसे दोष के बिना गुण प्रकट नहीं होगा, →

नगरस्वराज्य : बुनियादी आधार क्या ?

कह सकते हैं, नगरस्वराज्य की बात एक जमाने से दुहराई जा रही है। पर जैसा प्रयत्न ग्रामस्वराज्य की दिशा में हुआ, नगरस्वराज्य की दिशा में अभ्यास भी नहीं हुआ। उसका कुछ प्रयत्न-प्रयोग हुआ होता, तो चित्र स्पष्ट होता। फिर भी श्री सिद्धराजजी के प्रयत्न से नगर-स्वराज्य का जो विचार आया है उस पर समग्र दृष्टि से विचार किया जाना चाहिए।

ग्रामस्वराज्य की बात जब कही गयी तो गांव की गरीबी, विषमता, शोषण-उत्पीड़न, एवं, बेकारी जैसे सवाल का उत्तर इसके गर्भ में छिपा हुआ था। आज भी जब हम उस दिशा में बढ़ने का प्रयत्न करते हैं तो उपर्युक्त प्रश्नों का किस हद तक निराकरण हो रहा है या इससे आगे हो सकेगा, यही हमारे माप-तौल का आधार बनता है। जब समीक्षा करने बैठते हैं, तब भी यही दृष्टि रहती है। यदि इन प्रश्नों को ग्रामस्वराज्य से अलग कर दें तो वह बेमतलब की चीज हो जाता है। आखिर जिस गांव का स्वराज्य होगा, उसमें रहनेवालों का क्या होगा ? वे वैसी ही दीन-हीन अवस्था में रहेंगे, जिस तरह पिछले हजारों वर्षों से रहते आये हैं, या उसमें फरक होगा ? गांव की सारी समस्याओं का निराकरण ग्राम-स्वराज्य की परिकल्पना में अन्तर्निहित है, यह मानकर प्रयत्न प्रारम्भ किया गया है।

देखना यह है कि जिस नगरस्वराज्य की बात हम करते हैं, उसमें गांव की वे समस्याएं आती हैं या नहीं और उनका किस हद तक इसमें निराकरण होता है।

विषमता की खाई

इसमें पहली बात विषमता की है। विषमता से तात्पर्य आर्थिक और सामाजिक दोनों से है। ये विषमताएं गांव में जितनी हैं शहर में कम नहीं हैं। सामाजिक विषमता कुछ कम है, तो आर्थिक विषमता उसकी रही सही कमी को पूरा कर देती है। गांव में गरीब और अमीर आमने-सामने होता है इसलिए गरीबी के कारुणिक दृश्य का पूंजीपति पर कुछ तो असर होता है, जबकि शहर में गरीबी का चित्र ज्यादा कारुणिक होकर भी आंख से दूर होने के कारण कम प्रभावी होता है। दूसरी बात, गांव की अपेक्षा शहर में मजदूरों का जीवन ज्यादा दुःखमय होता है। काम मिल जाने से शहर में रूखी-सूखी रोटी की तो एक हद तक गारन्टी मिल जाती है। पर जिस गंद, संकीर्ण और नरक-तुल्य स्थान में वे रहते हैं, गांव की अपेक्षा वह ज्यादा कष्टकर होता है। बम्बई और कलकत्ता जैसे शहरों में मजदूरों की हालत तो अत्यन्त ही कारुणिक होती है। पूरा जीवन फुटपाथ पर बीत जाता है। बच्चा पैदा करने से लेकर जीवन की सारी क्रियाएं वहीं सम्पन्न हो जाती हैं। यह कितना कष्टमय होता है, इसकी कल्पना करना भी मुश्किल है।

ग्रामस्वराज्य में मजदूरों की इस दशा के निराकरण के लिए हमने भूदान और ग्रामदान में जमीन प्राप्त कर उन्हें देने और बसाने की व्यवस्था की है। इससे एक हद तक तो विषमता को कम करने में अवश्य मदद मिलती है। दूसरी बात, ग्राम-सम्पदा का महत्त्वपूर्ण आधार भूमि का एक हद तक समाजीकरण हो जाता है। अर्थात् गांधीजी के विचारों के अनुसार गांव का किसान, जो अब तक जमीन का मालिक था, ट्रस्टी बन जाता है। इससे आर्थिक और सामाजिक क्षेत्र में बड़ा भावनात्मक परिवर्तन होता है। गांव की जमीन पर जो अब तक मालिक बने हुए थे और जिन लोगों को मजदूर कहा जाता था वे दोनों जमीन के मालिक नहीं सेवक और सरक्षक बनते हैं। इससे आदमी-आदमी के बीच ऊंच-नीच के भेद पर बड़ा गहरा प्रहार होता है। अब तक समाज में एक ऐसा वर्ग था जो दाता और स्वामी दोनों की हैसियत से पूजा जाता था, ग्रामस्वराज्य में हर व्यक्ति के दाता हो जाने पर केवल धन के कारण पूजे जानेवालों का स्थान दूसरा हो जाता है, अर्थात् सबकी एक ही श्रेणी हो जाती है।

अप्रकट रहेगा। जैसे भगवान हैं। दयामय भगवान अप्रकट है। मां में प्रेम है, आसक्ति भी है, तो वह प्रेम प्रकट होता है। आसक्ति का आधार लिए बिना दयालु बन नहीं सकते। पराक्रम के साथ थोड़ा अहंकार जुड़ा हुआ है तो पराक्रम प्रकट होगा। कांटे के बिना गुलाब नहीं। कांटे को टालकर गुलाब को लेना होता है। मनुष्य में जो दोष हैं, वे गुण प्रकाशन के लिए होते हैं। गुण ही गुण रहेगा, तो वह प्रकट नहीं होगा। इसलिए दोष दीखते हैं, तो मूल गुण भी होने चाहिए। दोष गुण-छाया होते हैं। जेल में मैं कहा करता था कि यहां ५० कैदी हैं, उनमें ५० पाप्यसूर्य भी हैं, गिनती १०० नहीं होती। छाया गिनते नहीं, वैसे गुण-छाया-रूप दोष होते हैं, उन्हें भी गिनना नहीं चाहिए। जेम्स क्राईस्ट की भाषा तीव्र थी। बारबार कहते हैं—हे शास्त्र पंडितो ! दांभिको ! धिक्कार है तुम्हारा"। तुकाराम महाराज की भाषा भी ऐसी ही थी। वे खुद कहते हैं—तुका म्हणे माझे सबळे तोंड (तुका कहता है मैं मुंहफट बोल रहा हूं)। लोकमान्य तिलक का एक व्याख्यान हुआ था, उसमें उन्होंने कहा था—"अन्तर्बाह्य भगवद्रूप हुए तुकाराम को गालियां देने का जो अधिकार प्राप्त है, वह हमें या आपको प्राप्त नहीं हो सकता।" तुकाराम या जेसस की भाषा में जो कड़ापन है, वह प्रेम ही है और उनके अन्तःकरण की छटपटाहट की निशानी है। मनुष्य के गुणों की छाया रूप दोष होते हैं, उनको हम देखेंगे, तो मूलस्थ शक्ति होंगे। (गुजरात रचनात्मक समिति के सदस्य श्री मनुभाई सोमाणी के साथ दिनांक २१-६-७१ को महाविद्या मंदिर में हुई चर्चा से।)

क्योंकि पूरे गाँव में एक भी ऐसा आदमी नहीं रहता है जो समाज को देता नहीं है। हर आदमी समाज को देनेवाला है, और समाज की शक्ति को बढ़ानेवाला है इसकी प्रतीति गाँववालों को अपने आप ही एक दिन होने लगती है। ग्रामस्वराज्य में बीघा-कट्ठा, ग्रामकोष और महीने में एक दिन की मजदूरी या कमाई देने की बात वर्ग-निराकरण प्रस्तुत करता है। मेरी समझ से नगरस्वराज्य की कल्पना में आर्थिक और सामाजिक विषमता का कोई भी—ग्रामस्वराज्य के जैसा—निराकरण नहीं प्रस्तुत किया गया है।

समस्या का कोई हल ?

यदि नगरस्वराज्य के साथ सम्पत्तिदान की बात जोड़ दी जाय तो कदाचित समस्या कोई का हल प्रस्तुत हो सकता है। यद्यपि यह भी सम्भव है कि ग्रामदान में बीघा-कट्ठा की बात से सम्पत्तिदान की यह बात ज्यादा मूल्यवान न हो, अभी ज्यादा कठिन प्रमाणित हो सकती है। मैंने सन् ५५-५६ में कई औद्योगिक क्षेत्रों में तथा नगरों में सम्पत्तिदान का काम किया था। अनुभव बताता है कि यह काम बीघा-कट्ठा से ज्यादा कठिन होता है। और यह कठिनाई फार्म पर हस्ताक्षर कराने की अपेक्षा संग्रह करने की ज्यादा होती है। इसलिए इस पर गहराई में जाकर विचार किया जाना चाहिए। पर कुछ ऐसी बातें तो अवश्य होनी चाहिए जिससे आर्थिक विषमता और वर्ग दोनों का निराकरण निकल सके।

जहाँ तक शोषण और उत्पीड़न की बात है, शहरों में गाँव के जैसा शोषण नहीं होता है। और, जो होता है उसमें प्रकार-भिन्नता रहती है। शहर के गरीब-अमीर, मालिक-मजदूर में गाँव के जैसा कोई सीधा सम्पर्क नहीं होता। शहर में 'मानव की एक भीड़' होती है, उसमें समाज-जैसा कुछ नहीं होता। एक ही मकान के अन्दर रहनेवालों का क्रन्दन या हास्य दूसरों को सुनाई नहीं पड़ता या उसका उनपर असर नहीं होता। आदमी-आदमी के बीच कहीं कोई लगाव है तो केवल काम का, नहीं तो जीवन में केवल कटाव-ही-कटाव है। किसी के दुःख-सुख का कोई स्पन्दन किसी दूसरे को नहीं होता। आदमी का रोना भी उसी को सुनना पड़ता है और हँसना भी। यह अपने आपमें बड़ी निष्ठुर क्रिया है। उस दुःख की भयानकता को क्या कहा जाय जिसमें आँसू को खुद ही पीना पड़े या खुद ही हवा करके सुखाना पड़े, और कोई भी उसे पोंछनेवाला न हो। ऐसे अलगाव के वातावरण में आदमी की भीड़ के बीच किस प्रकार 'समाज' को लाया जा सकता है, इस पर भी विचार किया जाना चाहिए। नहीं तो नगरस्वराज्य का अर्थ 'नगर-निगम' की अधिक दोषपूर्ण-व्यवस्था के विकल्प-स्वरूप एक अधिक जनतांत्रिक और कम दोषपूर्ण व्यवस्था रह जायेगा।

कोई नयी बात ?

फिर नगर के असामाजिक जीवन में सामाजिकता लाने के लिए सम्पत्ति-दान की नयी बात का समावेश कर देने मात्र से भी काम नहीं चल पायेगा। क्योंकि नगरस्वराज्य की व्यवस्था में भी उन सारे तात्विक गुणों का समावेश आवश्यक है, जिन पर ग्रामस्वराज्य की आधारशिला रखने की बात कही गयी है। जिसमें एक सबसे बड़ी और महत्वपूर्ण बात नगर के औद्योगिक संस्थानों के ट्रस्टीशिप की है। हमने गाँव में जमीन की मिल्कियत को समाप्त करने की बात मान ली है, और उस दिशा में ग्रामस्वराज्य के लिए ग्रामदान का अभियान चलाया है। शहर में ऐसी सम्पत्ति के स्रोत-उद्योग-धंधों के लिए हमारी क्या नीति होगी और कौन-सी व्यवस्था प्रस्तुत करेंगे? क्या ग्रामस्वराज्य जैसी नगरस्वराज्य की व्यवस्था के लिए भी औद्योगिक संस्थानों का 'ट्रस्टीकरण' आवश्यक होगा या नगरस्वराज्य के बाद उसके लिए कोई अन्य व्यवस्था देने की बात सोची जायेगी? यदि नगरस्वराज्य में सम्पत्ति के स्रोत-स्वरूप उद्योग-धंधों की मिल्कियत को कायम रखकर कुछ बात सोची जायेगी तो हमारी अहिंसा की नीति में गाँव और शहर में रहनेवालों के प्रति भेद करना होगा, जो ग्रामस्वराज्य और नगरस्वराज्य की तात्विक एकता के लिए उपयुक्त नहीं होगा, अपितु हानिकारक भी हो सकता है। इसलिए नगरस्वराज्य के कुछ ऐसे विधि-निषेध प्रस्तुत किये जाने चाहिए, जो आज के समाज में उठी समस्याओं का निराकरण प्रस्तुत कर सकें, और गाँव एवं नगर की व्यवस्था को एकरूपता दे सके।

नगरस्वराज्य की मुहल्ला-सभा और मण्डल-सभा आदि की व्यवस्थाओं के साथ भी एक ऐसा समुचित उपाय होना चाहिए, और एक ऐसे कोष या बैंक का भी प्रबंध होना चाहिए जिससे नगर के पीड़ित वर्ग को संकट के समय सहायता पहुँचाई जा सके। किन्तु यह सर्वोदय-पात्र के 'संग्रहित' अनाज या पैसे से नहीं हो सकेगा।

श्री सिद्धराजजी ने नगरस्वराज्य का विचार प्रस्तुत कर आवश्यक चर्चा के लिए उपयुक्त सामग्री प्रस्तुत की है।

जहाँ तक नगरस्वराज्य के ढाँचे का सवाल है, श्री सिद्धराजजी का सुझाव सगत जान पड़ता है। काम प्रारंभ करने अथवा नगरस्वराज्य की परिकल्पना को एक स्वरूप देने के बाद इसकी भी संभावित त्रुटि का पता चलेगा। फिर भी विचार किया जाना चाहिए।

—उमेशचन्द्र त्रिवेदी,
मुसहरी प्रखण्ड, मुजफ्फरपुर

पुष्टि : किसलिए ? कितनी ? कैसे ?

[नासिक-सम्मेलन के निर्णय के अनुसार राज्यों में पुष्टि-कार्य को गंभीरतापूर्वक हाथ में लेने की कोशिश हो रही है। जून के पिछले पखवारे में दो राज्यों, उत्तर प्रदेश और मध्य प्रदेश, में राज्य-स्तरीय पुष्टि शिविर हुए थे। उत्तर प्रदेश सर्वोदय मंडल ने सघन पुष्टि-अभियान के लिए फर्रुखाबाद जिले का मुहम्मदाबाद ब्लाक चुना था। मध्य प्रदेश में एक सघन क्षेत्र इन्दौर जिले में चुना जा चुका है, दूसरा टीकमगढ़ जिले का बलदेवगढ़ ब्लाक है, जिसमें शिविर हुआ।

इन शिविरों में जाने से यह एहसास हुआ कि पुष्टि के सम्बन्ध में कुछ बातें ऐसी हैं जो पुष्टि में लगनेवाले साथियों के मन में, तथा संस्थाओं के वरिष्ठ लोगों के मन में, जो अपने कार्यकर्ताओं को पुष्टि के लिए भेजती हैं, स्पष्ट होनी चाहिए। उनके स्पष्ट होने से काम अच्छा और आसान होगा। इसी दृष्टि से यह लेख माला शुरू की जा रही है। स्वभावतः जो बातें कही जा रही हैं वे संक्षेप में, और सुझाव के रूप में कही जा रही हैं। आशा है देश के विभिन्न भागों में काम करनेवाले साथी अपनी बैठकों में इन पर विचार करेंगे, इनका विस्तार करेंगे, तथा अपने अनुभव के प्रकाश में इन्हें परखेंगे। ऐसा होगा तो कुछ दिनों में अनुभवों की एक बड़ी पूंजी हाथ आ जायगी।]

पुष्टि किसलिए ?

ग्रामस्वराज्य के लिए। ग्रामस्वराज्य क्या है ?

हमने बार-बार कहा है कि ग्रामदान हमारी क्रान्ति का पहला कदम है। हमारी क्रान्ति क्या है ? जिस समग्र क्रान्ति की हम कल्पना करते हैं, उसे हमने 'ग्रामस्वराज्य' का नाम दिया है। ग्रामस्वराज्य में नगरस्वराज्य शामिल है।

ग्रामस्वराज्य क्या है ? उसके लक्षण और तत्त्व क्या हैं ? समाज में कम से कम क्या परिवर्तन हो तो हम मानेंगे कि ग्रामस्वराज्य का बुनियादी आधार तैयार होगा ? हमने १९४७ में अंग्रेजी शासन के समाप्त होने पर माना कि देश स्वराज्य हो गया। ग्रामस्वराज्य में हम क्या देखना चाहते हैं ? कई बार चर्चा करके तय हुआ है कि ग्रामस्वराज्य में निम्नलिखित बातों का होना जरूरी है। उन्हें हमने 'ग्रामस्वराज्य के सूत्र' कहा है। वे ६ हैं।

स्वायत्त ग्रामस्वराज्य सभा

(क) हर गांव की (या लगभग १०० से ऊपर की जनसंख्या के टोलों की) अपनी ग्रामस्वराज्य-सभा हो, जिसमें उसके सब बालिग स्त्री और पुरुष सदस्य हों।

यह सभा गांव के आपसी जीवन के लिए जिम्मेदार हो। आपसी निर्णय से गांव के जीवन का नियमन और संचालन हो। शान्ति, सुव्यवस्था, विकास, शिक्षण, मनोरंजन, स्वास्थ्य, न्याय, दूसरे गांवों के साथ सम्बन्ध, आदि ग्रामीण जीवन के पहलू उसके दायरे के भीतर माने जायं। अपने क्षेत्र में ग्रामस्वराज्य-सभा स्वायत्त हो। गांव में गांव का 'कानून' चले। गांव में सहकार, बाहर सरकार—इस आधार पर काम हो। सरकार ग्रामस्वराज्य-सभा के काम में हस्तक्षेप न करे। (ग्रामस्वराज्य-सभा और सरकार का सम्बन्ध ग्रामदान एक्ट के अनुसार हो। ऐसे ऐक्ट कुछ राज्यों में बने हुए हैं, शेष में बनेंगे।)

(ख) ग्रामस्वराज्य-सभा सब बालिगों की हो, लेकिन रोज-रोज का काम करने के लिए एक 'कार्य-समिति' हो। कार्य-समिति में आवश्यकतानुसार सदस्य हो सकते हैं—७ से १५ तक। बहुत बड़ी कार्य-समिति ठीक नहीं होगी। कार्य-समिति के सदस्य ग्रामस्वराज्य-सभा की खुली बैठक में चुने जा सकते हैं, या यह भी हो सकता है कि ग्रामस्वराज्य-सभा अध्यक्ष को सर्वसम्मति से चुन ले और उसे अधिकार दे दे कि वह अपनी कार्य-समिति बना ले।

कार्य-समिति में चार पदाधिकारी मुख्य होंगे जो ग्रामस्वराज्य-सभा के भी पदाधिकारी होंगे—अध्यक्ष, मंत्री, कोषाध्यक्ष, और ग्राम-शान्तिसेना का नायक।

गांव के अलग-अलग काम कार्य-समिति के सदस्यों में बंटे रहेंगे, लेकिन जरूरत के अनुसार कार्य-समिति हर कार्य के लिए अलग उपसमिति भी बना सकती है। उपसमितियों के सदस्य ग्रामस्वराज्य-सभा की खुली बैठक में भी चुने जा सकते हैं। लोग खुशी से अपनी रुचि के अनुसार अपना नाम दें, यह सबसे अच्छा होगा। ऐसा करने से ग्रामस्वराज्य-सभा के अधिक-से-अधिक सदस्य गांव के काम के साथ जुड़ सकेंगे और सब मिलकर काम करेंगे तो सामूहिक जिम्मेदारी की भावना बनेगी।

(ग) ग्रामस्वराज्य-सभा के निर्णय सर्व-सम्मति या सर्वानुमति से होंगे। उसी तरह कार्य-समिति के निर्णय भी होंगे। ग्रामदान ऐक्ट में इसकी चर्चा की गयी है। सर्वसम्मति या सर्वानुमति पर इतना जोर इसलिए है कि गांव में एकता बढ़े, और विरोध निर्मूलित घटे।

गांव की एकता सबसे बड़ी चीज है। उसे किसी कीमत पर नहीं टूटने देना चाहिए। मालिक-मजदूर, हिन्दू-मुसलमान, सवर्ण-अवर्ण, धनी-गरीब, सबको लगना चाहिए कि ग्रामस्वराज्य-सभा सबकी है जहां निडर होकर बात कही जा सकती है, और जहां किसी की जोर-जबरदस्ती नहीं चलती।

काम चाहे कितना अच्छा या जरूरी हो, अगर ग्रामस्वराज्य-सभा में, या कार्य-समिति में उसके पक्ष में आमराय नहीं है तो उसे बहुमत के बल पर थोप डालने का हठ कदापि नहीं करना चाहिए। ऐसे हठ से एकता टूट जायगी, और जब एकता टूटेगी तो ग्रामस्वराज्य-सभा भी टूट जायगी।

गाँव के गरीब और दबे हुए लोगों का ध्यान विशेष रूप से रखना चाहिए, नहीं तो उनके मन की निराशा और अविश्वास बना रहेगा। ग्रामस्वराज्य-सभा की असली शक्ति परस्पर विश्वास और सहकार की है।

(घ) गाँव के जो लोग ग्रामदान में न शरीक हों, वे भी ग्रामदान के कानून के अनुसार ग्रामस्वराज्य-सभा में सदस्य होंगे। उनके साथ किसी तरह का दुराव रखना उचित नहीं होगा। उनकी हर बात ध्यान से सुननी चाहिए। अगर उनके साथ अच्छा बर्ताव होगा तो वे आज नहीं तो कल ग्रामदान में अवश्य शरीक हो जायँगे। पूरे गाँव से अलग कटकर कोई कब तक रह सकता है ?

ग्रामस्वराज्य-सभा एक तरह से 'गाँव की सरकार' होगी। उसीके द्वारा गाँव के लोग आपसी निर्णय से अपने जीवन की व्यवस्था और विकास करेंगे।

(ङ) इस तरह की स्वायत्त व्यवस्था गाँव में, ब्लाक में, जिले में, राज्य में, और एक दिन पूरे राष्ट्र में स्थापित हो, यह ग्रामस्वराज्य आन्दोलन का लक्ष्य है। ग्रामस्वराज्य-सभाओं के बनजाने पर उनके प्रतिनिधियों को लेकर प्रखण्डस्वराज्य-सभा बनेगी। बिहार में ऐसी चार प्रखण्ड-स्वराज्य-सभाएँ बनने की स्थिति आ गयी है। इसी तरह की सीढ़ियाँ दिल्ली तक बनती जायँगी।

(च) ये इकाईयाँ अपने भीतरी जीवन में स्वायत्त होंगी, लेकिन अनेक धागों से देश और दुनिया के साथ जुड़ी रहेंगी। यह योजना अलग अलग जीने की नहीं, आपसी सहकार के साथ जीने की है। इसमें कोशिश यह है कि राज्य और सरकार की दमन-शक्ति दिनोंदिन घटे, और जनता की, एक-एक नागरिक की, अपनी शक्ति बढ़े। राज्य की सैनिक शक्ति बढ़ते-बढ़ते कहाँ तक जा सकती है, और किस तरह अपनी ही जनता का संहार कर सकती है, यह हमने पूर्व बंगाल में देख लिया।

इन स्वायत्त इकाईयों में असली लोकतंत्र विकसित होगा। गाँव और नगर की जनता मिलकर अपना काम करे, और ऊपर की इकाई में नीचे की इकाई के प्रतिनिधि जायँ, यह लोकतंत्र जनता के जीवन के साथ जुड़ा रहेगा। आज की व्यवस्था में जनता केवल वोट देती है, सारा काम-काज दूर राजधानियों में होता है। यह गलत है। स्वराज्य को गाँव-गाँव, नगर-नगर में फैलना चाहिए।

—राममूर्ति

[illegible] की चिट्ठी

वलीवलम् की भूमि समस्या : हमारी कसौटी

पिछले दस दिनों के प्रत्येक दिन उद्वेगपूर्ण और नाजुक थे। नयी-नयी घटनाएँ अप्रत्याशित रूप से अचानक घट जाती थीं। बार बार हम लोगों को सनसनीखेज और विस्फोटक परिस्थिति का सामना करना पड़ रहा था, हम लोग वैसी परिस्थिति से घिरे हुए थे। यह सब वलीवलम् के मन्दिर की जमीन से सम्बंधित है। इस मन्दिर के २३२ एकड़ बेनामी जमीन को हम लोगों ने एक कसौटी (टेस्ट केस) की तरह चुना है।

समस्या यद्यपि अभी नहीं सुलझी है (बाद की सूचना के अनुसार सुलझ गयी है देखें ६ सितम्बर का अंक—स०), फिर भी बात अब किनारे लगते लगते पर है। मन्दिरों की जमीन की बेनामी अव्यवस्था को सुलझाने के काम को राज्य सरकार ने जमकर हाथ में लिया है। मुख्यमंत्री और 'एनडोमेन्ट' (मन्दिरों में चढ़ायी गयी जमीन आदि से सम्बन्धित) मंत्री ने इस मामले को अपने हाथ में लिया है। मुझे यह देखकर खुशी होती है कि सामान्य-जन की समस्याओं के प्रति डी० एम० के० मंत्रिमंडल जागरुक और सक्रिय है। पिछले बीस वर्षों में कांग्रेस के मंत्रित्वकाल में हमलोग ऐसी समस्याओं को जब-जब सरकार के सामने लाये थे, तब-तब उन्होंने जो उदासीनता बरती थी, मुझे उसका अनुभव है। कांग्रेसवालों के मंत्रित्व-काल में एक बार कामराज के समय और दूसरी बार भक्तवत्सलम् के समय सर्वोदय कार्यकर्ताओं को सत्याग्रह करना पड़ा था। स्वतंत्रता-प्राप्ति के दिनों में हमलोगों ने कन्धे से कन्धा मिलाकर काम किया था। परन्तु दुर्भाग्य की बात यह रही कि सामान्य जन की अत्यावश्यक समस्याओं को भी सुलझाने की ओर हमारे मित्रों ने कुछ ध्यान नहीं दिया था। सत्ताधारी द्र० मु० क० मंत्रीगण हमलोगों से बहुत परिचित नहीं हैं, परन्तु वे सामान्य जन की समस्याओं के प्रति जागरूक हैं, इसलिए वे शीघ्र और प्रभावकारी ढंग से ध्यान देते हैं। समस्याओं के समाधान की उन्हें चिन्ता है। इसलिए वे हमारे साथ सहयोग करने के लिए तैयार रहते हैं।

एक सर्वदलीय बैठक में यह निर्णय लिया गया था कि यदि १० तारीख तक मन्दिर की जमीन की समस्या सुलझायी नहीं जा सकी तो सीधी कारवाई की जायगी। द्र० मु० क० के जिला स्तरीय एक नेता श्री तिरमलाई नारायणसामी इस काम में पूरा-का-पूरा लग गये हैं। वह रचनात्मक रुख रखनेवाले एक योग्य नेता हैं। गरीबों की समस्याओं के साथ समरस हो जाने के लिए बिल्कुल तत्पर रहते हैं। सरकार में उनका प्रभाव है। मन्दिर की जमीन की बेनामी अव्यवस्था के पूरे सवाल को राज्य-स्तरीय सरकारी अधिकारियों की बैठक में हाथ में लिया गया। कानून (लॉ) विभाग के सचिव, राजस्व (रवन्यू) विभाग के सचिव, मन्दिर सम्पत्ति (इनडावमेन्ट) विभाग के आयुक्त (कमिश्नर) और मंत्री ने इस बैठक में भाग लिया। मुझे भी उसमें बुलाया गया। वलीवलम् गाँव की मन्दिर की जमीन की बेनामी अव्यवस्था

को टेस्ट-केस की तरह हाथ में लिया गया। मंत्री ने एक सरकारी जाँच का आदेश दिया। उसके बाद तुरन्त जिला-स्तरीय अधिकारियों की बैठक बुलायी गयी। जाँच-कार्य मन्दिर के प्रांगण में ही दो दिनों तक चला। पाँच सौ से अधिक लोगों ने जाँच अधिकारी को अपने बयान दिये। पुराने दिनों में हमलोग कभी कल्पना भी नहीं कर सकते थे कि इतनी जल्दी इस तरह सरकार की ओर से जाँच करायी जा सकती है। द्र० मु० क० के मन्त्रिकाल में यह परिवर्तन ध्यान देने लायक है। वलीवलम् और आसपास के गाँवों के लोगों को इस घटना से इतना अधिक उत्साह आया कि वे उस जाँच अधिकारी के सामने बयान देने सैकड़ों की संख्या में उमड़ पड़े। उनमें से यद्यपि बहुत लोग भूखों मर रहे थे और भविष्य में भी उनको काम मिलने की जो सम्भावना थी, उसे भी ऐसा करके वे खो चुके हैं। जमींदार उन्हें आगे और सतायेगा। इस सबके बावजूद वे बयान देने आये।

जाँच के समय भी उस मालिक ने, जो बेनामी बन्दोबस्त के बल पर मन्दिर की जमीन का लाभ उठा रहा है, दो बार जमीन को जोतने की कोशिश करने के क्रम में हिंसक परिस्थिति का निर्माण किया—एक बार ९ तारीख को और दूसरी बार १४ को। उसने यह योजना कर रखी थी कि यदि उसका प्रतिरोध किया गया तो वह जोरों का हमला करेगा। उसने हरिजनों और सवर्णों के बीच तनाव पैदा करने की कोशिश की। उसकी इस बदनीयती का हमलोगों ने सफलतापूर्वक पर्दाफाश किया। जब उसने खेत जोतने के लिए हलवाहों को भेजा तब उसका सामना क्लीम और कृष्णम्मल के नेतृत्व में भजन गाती हुई महिलाओं ने किया। इन लोगों ने हलवाहों को जोतने से रोकने में सफलता प्राप्त की। पुरुषों ने स्त्रियों पर हाथ उठाने की हिम्मत नहीं की। पुरुषों ने यदि स्त्रियों पर हमले किये होते तो मैं तो निश्चय ही मानता हूँ कि हिंसा फूट पड़ी होती। दोनों बार स्त्री स्वर-सेविकाओं ने डटकर मुकाबिला किया। बहन क्लीम, जो एक अंग्रेज सामाजिक कार्यकर्त्री हैं, और कृष्णम्मल के साथ पचास स्त्रियों की एक टोली तैनात है, जो उनके साथ किसी भी क्षण अहिंसक ढंग से काम करने को मुस्तैद रहती है। स्त्रियों द्वारा यह अहिंसक प्रतिरोध एक अभिनव प्रयोग है। गत वर्षों के अनुभव में तो सिर्फ हिंसा, मारपीट, गोलीबारी, गृहदाह आदि ही होते रहे हैं। इसके पहले इस तरह की सफलता का इन्हें अनुभव नहीं आया था। द्र० मु० क० सरकार ने लोगों को हिफाजत (प्रोटेक्शन) करके इतिहास बदल दिया है। पुलिस जमींदार को जमीन पर जाने से रोक रही है। समय के इस परिवर्तन को लोग परख रहे हैं, उससे परिचित हो रहे हैं। अहिंसात्मक प्रतिरोध और सरकारी जाँच से लोगों में आत्मविश्वास का निर्माण हुआ है। आत्म-सम्मान का भाव बढ़ा है। गाँव के इतिहास में पहली बार पुलिस ने लोगों की मदद की और जमींदार को जमीन पर जाने से रोका।

जाँच के लिए जो खास कचहरी बनी, उसने दो दिनों तक सुनवाई की। गवाह देने और जमीन के बेनामी बन्दोबस्त का सबूत देने के लिए लोग सैकड़ों की तादाद में हाजिर हुए और उन्होंने सफलता पायी। जाँच अधिकारी ने यह घोषणा की कि २३२ एकड़ जमीन बेनामी जोत में है। अधिकारी ने उस बन्दोबस्तों को खारिज किया और उसे भूमिहीनों में बाँटने के लिए निकाला। सर्वदलीय कार्यकर्ताओं ने गांधी शांति प्रतिष्ठान के कार्यकर्ताओं की मदद से उन भूमिहीनों की सूची तैयार कर दी, जिन्हें जमीन दी जानी थी। इधर लोग जमीन के बाँटे जाने की अधीरता से इंतजार कर रहे थे, उधर निष्ठुर जमींदार ने सिविलकोर्ट में जाकर "एड-इन्टरीम इंजंक्शन केस" दायर कर दिया। (२४ तारीख को उसकी सुनवाई हो गयी और फैसला भूमिहीनों के पक्ष में हुआ।)

आशा है बेनामी व्यवस्था में पड़ी करीब तीन लाख एकड़ जमीन बड़े जमींदारों के पंजे से निकल सकेगी और भूमिहीनों में बाँटी जा सकेगी। हजारों भूमिहीन भूमिवाले हो जायँगे। राज्य के इस भाग में जो हिंसापूर्ण तनाव है उसमें इससे काफी कमी आयेगी। वलीवलम् में हमारे प्रयोग के, और अब तक मिली हुई सफलता के समाचार दूर-दूर तक फैल गये हैं। अपनी सफलता पर लोग प्रसन्न हैं।

—एस० जगन्नाथन्
अध्यक्ष, सर्व सेवा संघ

कुरान सार

एक अभिनव संस्करण

(नागरी लिपि में मूल अरबी, हिन्दी अनुवाद सहित)

कुरान-शरीफ मूलतः अरबी भाषा में है। लेकिन हिन्दी पाठकों की सुविधा के लिए विनोबाजी द्वारा सम्पादित कुरान-सार का मूल अंश इस ग्रंथ में नागरी लिपि में दिया गया है। एक ओर मूल कुरान की आयतें हैं और दूसरी ओर सामने के पृष्ठ पर हिन्दी अनुवाद है। नागरी लिपि में होने से हिन्दी पाठक अरबी का आनंद भी उठा सकते हैं।

नागरी लिपि में अरबी के उच्चारणों के लिए विशेष लिपि-संकेत बनवाये गये हैं।

पक्की जिल्द और लगभग ४०० पृष्ठ की सामग्री का यह पवित्र ग्रंथ केवल रु० ६) में प्राप्य है।

सर्व सेवा संघ प्रकाशन
राजघाट, वाराणसी–१

अगला सर्वोदय सम्मेलन जालंधर में

विश्वस्त सूत्रों से ज्ञात हुआ है कि अगला सर्वोदय सम्मेलन जालंधर (पंजाब) में होगा। तिथि की घोषणा बाद में की जायेगी।

शिक्षा में क्रान्ति-अभियान : क्रम न टूटे

ऐसा लगता है कि आज अपना देश समस्याओं की बारूद की ढेर पर बैठा हुआ है। उन समस्याओं को देखने के अपने अलग-अलग दृष्टिकोण तथा उनके समाधान के सबके भिन्न-भिन्न नुस्खे लोगों के पास हैं। काश, इन समस्याओं से जूझने का प्रयास और पुरुषार्थ सामूहिक रूप से इस देश में हो पाता! "एक ही साधे सब सधे," वाली कहावत यदि किसी समस्या के लिए लागू होती है तो वह है शिक्षा की समस्या। गरीबी, बेकारी, भुखमरी, अनुशासनहीनता, उच्छृङ्खलता, श्रमविमुखता, प्रमाद, कर्त्तव्यहीनता आदि समस्याएँ इस दूषित शिक्षा-नीति की ही उपज हैं। आजादी के २४ साल में राष्ट्रपति से लेकर फुटपाथ पर जीनेवाले आदमी तक एक स्वर से "आज की शिक्षा पद्धति बड़ी दोषपूर्ण है, वह तुरंत बदलनी चाहिए" का उद्घोष बराबर करता आया है। देश भर में जितनी सहमति व्यापक रूप से इस सवाल पर है, शायद ही किसी दूसरे सवाल पर उतनी सहमति हो। फिर भी आश्चर्य होता है कि थोड़े बहुत परिवर्तनों के साथ गुलाम देश में लार्ड मैकाले द्वारा चलायी गयी शिक्षा-पद्धति ही आजादी के पच्चीसवें साल भी चल रही है।

शिक्षा-पद्धति बदलने के सवाल पर लगभग सर्वसम्मति है। अब प्रश्न उठता है इसे कौन बदलेगा और उस बदल का स्वरूप क्या होगा। तरुण-शान्तिसेना द्वारा पिछले ९ अगस्त को शिक्षा में क्रान्ति-अभियान आरंभ किया गया। इस अभियान के वाहक होंगे छात्र, शिक्षक तथा अभिभावक। इन तीनों को ही आज की शिक्षा के सर्वाधिक दुष्परिणाम भुगतने पड़ रहे हैं। ९ अगस्त के कार्यक्रम की पूर्व तैयारी के सिलसिले में उत्तर प्रदेश तथा बिहार की शिक्षण संस्थाओं में जाना हुआ। छात्रों, शिक्षकों तथा अभिभावकों से सामूहिक तथा व्यक्तिगत रूप से बातें हुईं। प्रतिक्रियाओं में लोगों की आकांक्षा, जिज्ञासा, शंका, संभावना, प्रयास तथा पुरुषार्थ का जो दर्शन हुआ, उससे जहाँ इस अभियान के लिए उत्साह तथा प्रेरणा मिलती है वहीं इस सर्वमान्य सवाल के हल की दुरूहता का भी भान होता है। इस काम के लिए हमें काफी सूझ-बूझ के साथ संयुक्त रूप से सतत सक्रिय पुरुषार्थ करना होगा। शिक्षा में क्रान्ति का भावी कार्यक्रम निश्चित करते समय ये स्वर काफी उपयोगी सिद्ध होंगे।

वर्तमान शिक्षा की निरर्थकता

"आप लोग क्यों पढ़ने के लिए आयी हैं?" लड़कियों के एक इंटर कालेज में पूछा।

"नौकरी के लिए।" आठवीं कक्षा में पढ़नेवाली एक लड़की ने उत्तर दिया।

"पढ़ने के बाद नौकरी मिलती है?"

"नहीं मिलती है।"

"जिस उद्देश्य से आप शिक्षा लेने आयी हैं वह तो शिक्षा से पूरा होता नहीं। फिर विद्यालय आने से क्या लाभ?"

"कुछ नहीं!" सम्मिलित स्वर।

"फिर आप लोग विद्यालय छोड़ने को तैयार हैं क्या? यदि हैं तो हाथ उठायें।"

"सभी ने हाथ ऊँचा कर अपनी सहमति व्यक्त की।"

श्रम विमुखता

एक डिग्री कालेज के छात्रों से बातचीत हो रही थी। उपस्थित छात्रों में से अधिकांश अंतिम वर्ष के थे।

"पढ़ाई पूरी करने के बाद क्या करने का विचार है?"

"पढ़ाई समाप्त होगी। फिर नौकरी की तलाश आरंभ होगी।" बहुत देर के बाद कोने से एक आवाज आयी।

"नौकरी की कल्पना आप लोगों के दिमाग में क्या है? खेत में, फैक्ट्री में, दुकान में, दफ्तर में जो भी काम मिल जाय, कर सकते हैं?"

"जी नहीं, कुर्सीवाली नौकरी चाहिए।"

"भाई, प्रतिवर्ष आप ही लोगों जैसे २१ लाख लोग कोई-न-कोई अंतिम परीक्षा पास करके निकलते हैं। कुर्सियाँ तो बहुत सीमित हैं। यदि कुर्सीवाली नौकरी न मिली तो क्या करेंगे?"

उत्तर में एक अजीब खामोशी!

"अच्छा यह बताइए, मेहनत, मजदूरी का कोई काम मिला तो बेकारी की हालत में कर सकते हैं?"

चेहरों पर सर्वथा अस्वीकृति का भाव!

परिवर्तन की आकांक्षा

छात्र, शिक्षक, अभिभावक सभी के बीच शिक्षा में परिवर्तन की सार्वत्रिक आकांक्षा दिखी। आश्चर्य हुआ, महिला डिग्री कालेज की छात्राओं के उत्साह को देखकर। यों जब भी महिला शिक्षा-संस्थाओं में जाता हूँ तो किसी आन्दोलनात्मक काम में उनके प्रत्यक्ष सहयोग की संभावनाएँ कम ही दीखती हैं। यद्यपि बहनों में उत्साह, शक्ति, श्रद्धा तथा लगन भरपूर रहती है, फिर भी प्रत्यक्ष क्षेत्र में आने की दृष्टि से आज भी उनकी बहुत सारी सीमाएँ हैं।

"अब तक की चर्चाओं में यह बात साफ हुई कि आप लोग शिक्षा में क्रान्ति के पक्ष में हैं। अब यह बताइये क्रान्ति करेगा कौन?"

"हम लोग।"

"विद्यालय और घर की चाहरदिवारी में ही रहकर या सड़क पर भी आने की तैयारी है?"

"आवश्यकता हो तो सड़क पर भी आने की तैयारी है।"

नयी पद्धति की अपेक्षा :

९ अगस्त का कार्यक्रम बतलाने पर एक इंटर कालेज के प्राचार्य ने कहा, "विधान-सभा के सामने उपवास, जुलूस व मंत्रियों को माँगपत्र देना तो राजनीतिक पार्टियों के धंधे होते हैं, आप लोगों ने भी उसे अपनाया ? इससे बहुत आशा नहीं दीखती" "आगे उन्होंने कहा आप लोगों से तो आन्दोलन के कुछ नये तौर तरीकों की अपेक्षा थी।"

आशा की किरण :

नागरिकों की एक गोष्ठी में एक सज्जन ने कहा, "सबसे अच्छी बात यह है कि आप लोगों ने इस महत्वपूर्ण सवाल को उठाया है। यदि राजनैतिक पार्टियों की ओर से इस सवाल को उठाया गया होता तो 'पोलिटिकल स्टन्ट' बनकर रह जाता। एक उपयोगी सवाल भी सार्वजनिक प्रयास का विषय नहीं बन पाता। लेकिन एक तटस्थ मंच से इस सवाल को उठाये जाने से आशा होती है कि जरूर कुछ बदल होकर रहेगा।"

चेतावनी :

एक सज्जन ने कहा, "सर्वोदयवालों की ओर से सर्व सामान्य को स्पर्श करनेवाली किसी समस्या को उपयुक्त समय में यदि उठाया गया तो वह है शिक्षा में क्रान्तिकारी यान। लेकिन आप लोगों द्वारा चलाये गये बहुत सारे अभियानों का हश्र देखते हुए सदेह होता है कि इस अभियान को भी आप लोग किसी निष्कर्ष तक पहुँचा सकेंगे या बीच में ही छोड़ देंगे।"

कुछ अन्य प्रश्न :

"समाज में क्रान्ति हुए बिना क्या शिक्षा में क्रान्ति संभव है ?" एक प्राध्यापक का सवाल था।

"जी नहीं। सामाजिक क्रान्ति के बिना शिक्षा में क्रान्ति संभव नहीं होगी। लेकिन शिक्षा और समाज दोनों अन्योन्याश्रित हैं। इसलिए क्रान्ति के लिए परस्पर मदद मिलेगी। समाज की समस्याओं का हल शिक्षा में ढूंढा जाता है लेकिन आज तो शिक्षा ही समाज के लिए समस्या बनी हुई है। अतः शिक्षा में क्रान्ति के प्रयास से सामाजिक क्रान्ति में मदद मिलेगी।" "शिक्षा में क्रान्ति के लिए सरकार बदलनी होगी।" एक समाजवादी मित्र का विचार था।

"सन् '६७ के बाद यह बहुत स्पष्ट हो गया है कि सरकार बदलना तथा शिक्षा या समाज बदलना, दोनों दो भिन्न चीजें हैं। सबसे अधिक बार सरकारें बिहार प्रदेश में बदली हैं। शिक्षा की सबसे दयनीय हालत भी यहीं देखी जा सकती है।"

"गांधीजी द्वारा प्रतिपादित नयी तालीम भी असफल सिद्ध हुई। यदि सही शिक्षा का कोई नमूना आप लोग पेश कर सकेंगे, तो सहज ही लोग आकृष्ट होंगे।" अभिभावकों की गोष्ठी में यह सवाल उठाया गया।

"वस्तुतः गांधीजी द्वारा प्रतिपादित नयी तालीम का प्रयोग सही माने में हुआ ही नहीं। इसलिए उसकी असफलता का प्रश्न ही नहीं उठता। पुरानी शराब ही नयी बोतल में रखने की कोशिश की गयी। साथ ही यह भी देखना होगा कि देश भर में सरकार तथा विवश होकर समाज द्वारा भी मान्य शिक्षा व्यापक रूप से चलती रहेगी और छिटपुट रूप से सही शिक्षा के कुछ प्रयोग चलते रहेंगे, यह संभव नहीं होगा। बदन को झुलसानेवाली पछुआ के झकोरों के बीच पुरवाई की शीतलता बनाये रखने का प्रयास निष्फल ही सिद्ध हुआ। नमूनावाद समस्या का हल नहीं है।"

"शिक्षा में क्रान्ति के लिए आपकी दृष्टि से क्या परिवर्तन होने चाहिए ?' एक प्रधानाचार्य महोदय ने पूछा।

"इस सवाल का सर्वसम्मत जवाब देना हमारे जैसों के लिए मुश्किल होगा। हम तो इतना ही जानते हैं कि आंगन में कूड़ा सड़ रहा है उसे साफ कर दिया जाय। इस कूड़े की सफाई के बाद आंगन में क्या फुलवारी लगानी है, यह अच्छी तरह माली ही बता सकेगा। अतः शिक्षा शास्त्रियों की राय ही इस सदर्भ में अधिक उपयोगी होगी। कई शिक्षा आयोगों में परिवर्तन की दृष्टि से महत्वपूर्ण सिफारिशें की गयी हैं, किन्तु वे सरकारी फाइलों तक ही सीमित रहीं। अच्छा तो यह होगा कि छात्र, शिक्षक, शिक्षा-शास्त्री तथा अभिभावकों के सम्मिलित चिंतन से शिक्षा का स्वरूप निश्चित किया जाय। यों आरंभिक कदम के तौर पर निम्न चार बातें हो सकती हैं

(१) शिक्षा में श्रम जोड़ा जाय। विद्यालय के साथ कृषि फार्म तथा कारखानें, एवं कृषि फार्म और कारखानों के साथ विद्यालय का सम्बन्ध स्थापित किया जाय। छात्र अपने खर्च का कुछ हिस्सा श्रम द्वारा अर्जित कर सकें।

(२) डिग्री का सम्बन्ध नौकरी से न जोड़ा जाय। नौकरियों के लिए स्वतंत्र परीक्षाएं हों।

(३) समाजवाद के उद्घोष के साथ 'कनवेन्ट' और 'पब्लिक स्कूलों' का मेल नहीं बैठता। अतः विशेष प्रकार के विद्यालय बंद कर डा० कोठारी आयोग की सिफारिश के अनुसार पड़ोसी स्कूल की कल्पना को मूर्तरूप दिया जाय।

(४) न्यायपालिका जैसी ही शिक्षा भी सरकारी तंत्र से मुक्त होनी चाहिए। शिक्षा-व्यवस्था छात्र, शिक्षक तथा अभिभावकों के संयुक्त तत्वावधान में हो।

शिक्षा में क्रान्ति अभियान की सफलता तथा असफलता कुल मिलाकर पूरे समाज की सक्रियता पर ही निर्भर करती है। लेकिन चूँकि तरुण-शान्तिसेना के तत्वावधान में इसे आरंभ किया गया है, अतः यश-अपयश का भागीदार भी इसे ही बनना पड़ेगा। निःसंदेह इस कार्यक्रम से तरुण-शान्तिसेना में एक अद्भुत वेग आने की संभावना है। लेकिन यदि अभियान में ढिलाई आयी तो उल्टा असर भी पड़ सकता है। वस्तुतः हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि ९ अगस्त शिक्षा में क्रान्ति अभियान का आरंभ था, अन्त तो हमारे पुरुषार्थ पर निर्भर है।

—अमरनाथ

अरब देशों की समस्या और राजनीति

अरब देशों की समस्या गहरी और राजनीति अजीब है। समस्या २३ साल पुरानी है। इसकी शुरुआत सन् १९४८ से होती है, जब संयुक्त राष्ट्र संघ की स्वीकृति से इजराइल बना था। जहाँ भिन्न-भिन्न राष्ट्रीयता के यहूदी आ बसे हैं। सन् १९४८ में ही यहूदियों ने १० लाख फलस्तीनी अरबों को निकाल बाहर किया, और उन शरणार्थियों की संख्या बराबर बढ़ती गयी। वे पड़ोस के अरब देशों में संयुक्त राष्ट्र संघ के दान पर पल रहे हैं।

संयुक्त राष्ट्र के प्रस्ताव के अनुसार सन् १९४७ में इजराइल को ५,९०० वर्ग-मील का इलाका दिया गया था, जो १९४८ में युद्ध-विराम पर हस्ताक्षर करते समय ३४,००० वर्गमील हो गया था। और सन् १९६७ के युद्ध में इजराइल ने संयुक्त अरब गणराज्य, सीरिया और जार्डन के बड़े भाग पर कब्जा कर लिया, और सैनिक दृष्टि से इतने महत्त्वपूर्ण स्थान पर दखल कर लिया कि इजराइल किसी भी समय वहाँ से इन तीनों देशों को रौंद सकता है।

अरब समस्या के तीन पहलू हैं :

(१) फलस्तीनी अरबों और इजराइल के बीच युद्ध का तनाव,

(२) अरब देशों और इजराइल के बीच स्थायी तनाव और युद्ध के खतरे,

(३) स्वयं अरबों के बीच खींचतान एवं संघर्ष।

● फलस्तीनी अरबों और इजराइल के बीच युद्ध का वातावरण सन् १९४७-४८ से बना हुआ है। '६७ के युद्ध के बाद तीन लाख अरब बाहर किये गये। इन फलस्तीनी अरबों ने छापामार युद्ध शुरू कर रखा है। छापामार लड़ाई करनेवालों के कई संगठन हैं, जिनमें अलफतह मुख्य है। इसके नेता यासिर अरफात हैं। छापामारों की प्रतिज्ञा है कि उन्हें लड़कर ही मातृभूमि वापस लेनी है, इसलिए वे किसी भी राजनैतिक समझौते के विरुद्ध हैं। अरब देश अगर इजराइल से कोई समझौता कर भी लें, तो छापामार उसे स्वीकार नहीं करेंगे, विशेषकर एक ऐसे समझौते को, जिसमें फलस्तीनी अरबों की समस्या का संतोषजनक और न्यायपूर्ण हल न हो।

इन छापामारों और जार्डन के शाह हुसैन की सेना के बीच अभी-अभी जो भयंकर संघर्ष और युद्ध हुआ, उसमें छापामारों की शक्ति बहुत हद तक टूट गयी है। शाह हुसैन का कहना है कि उनकी सेना ने छापामारों को पूर्णतः कुचल दिया है। जार्डन की इस कार्रवाई की सभी अरब देशों ने आलोचना की है। यासिर अरफात और अल्जीरिया के बूमदाएन इस घटना के बाद बहुत करीब आ गये हैं, और अल्जीरिया ने छापामारों को पूरी सहायता का वादा किया है।

● अरब देशों और अरब जनता ने इजराइल को मान्यता नहीं दी है। जिसके लिए इजराइल बहुत इच्छुक है। अरब देश इजराइल की सीमा के विस्तार में रुकावट हैं, इसलिए इजराइल की इनसे लड़ाई चलती रहती है।

● आर्थिक, सैनिक और शासकीय तौर पर इजराइल बहुत मजबूत है, अरब उससे कई पीढ़ी पीछे हैं, इसलिए युद्ध में उनकी बराबर हार होती है। और अरब भूमि पर इजराइल का कब्जा और दखल बढ़ता ही जाता है। २२ नवम्बर सन् १९६७ के संयुक्त राष्ट्र संघ के फैसले के बावजूद इजराइलियों ने कब्जा किये हुए स्थान लौटाये नहीं। डाक्टर जारिंग और विलियम रोजर्स भी इस कोशिश में असफल रहे। संयुक्त अरब गणराज्य इस बात पर राजी था कि छः महीने के लिए युद्ध बन्द रहे, और स्वेज नहर खोली जाय। परन्तु इस शर्त पर कि संयुक्त अरब गणराज्य को स्वेज नहर के पूर्वी किनारे तक जाने का अधिकार हो, और नहर का खोला जाना, कब्जा किये हुए इलाके से इजराइली सेना की वापसी का पहला कदम हो। परन्तु इजराइल ने इसे स्वीकार नहीं किया। इजराइल चाहता था कि अनिश्चितकाल के लिए युद्ध स्थगन हो, और स्वेज खोलने और कब्जा छोड़ने को अलग-अलग प्रश्न माना जाय। इसलिए जो कुछ आशा थी यह खत्म हो गयी। संयुक्त अरब गणराज्य ने रूस के साथ 'मित्रता और सहकार' की १५ वर्षीय संधि कर ली है, और राष्ट्रपति सआदत ने अपने देश के लोगों से वादा किया है कि १९७१ के अन्त तक कोई-न-कोई फैसला हो जायेगा। उन्होंने यह भी कहा है कि वह युद्ध के आमने-सामने हैं।

ऐसा लगता है जब तक इजराइल १९६७ में कब्जा किये हुए स्थानों को नहीं छोड़ता, और फलस्तीनी अरबों को उनका अधिकार नहीं मिलता, पश्चिमी एशिया में शान्ति स्थापित नहीं हो सकती।

अभी की परिस्थिति यह है कि इजराइल अनिश्चित काल के लिए युद्ध-स्थगन चाहता है, और अरब देश इजराइल से यह जानना चाहते हैं कि वह '६७ में कब्जा की हुई जगहों को कब खाली कर रहा है? इजराइल उन स्थानों को खाली करने के लिए तैयार नहीं है। इजराइल की पीठ ठोंकनेवाला अमेरिका है, जो इजराइल की सहायता इसलिए कर रहा है कि पश्चिमी एशिया में रूस का प्रभाव घटे और वह आगे बढ़ने न पाये। अरबों को रूस का पूरा समर्थन प्राप्त है, और वह उनकी मदद कर रहा है, क्योंकि वह इस इलाके के अमेरिकन प्रभाव को बढ़ने से रोकना चाहता है।

अरबों के आपस में भी गहरे मतभेद हैं और इनके बीच भयंकर संघर्ष चल रहा है

हाल में हुई सूडान की क्रान्ति और प्रति-क्रान्ति, मोरक्को में क्रान्ति की विफलता, इराक में क्रान्ति के वातावरण का गर्म होना, सऊदी अरब का शाह हुसैन को भूखा रहना, सीरिया और इराक का अपनी-अपनी सीमा जार्डन के लिए बन्द कर देना, फलस्तीनी अरब छापामारों का जार्डन द्वारा कुचला और दबाया जाना, सूडान जानेवाले वायुयान का, जिसमें इराक के बड़े-बड़े अफसर थे, सऊदी अरब में नष्ट किया जाना, लिबिया द्वारा बी० ओ० ए० सी० वायुयान पर सवार सूडानियों का अपहरण किया जाना, जार्डन का अरब लीग से निकाले जाने की मांग आदि परिस्थिति को सामने लानेवाले स्पष्ट संकेत हैं।

अरबों के आपसी सम्बन्ध बनावट से अधिक पेचीदे हैं। ३०० वर्ग मील में फैले १५ देशों के बीच का यह सम्बन्ध आश्चर्यजनक भी नहीं है। लेबनान में तो आधे से भी अधिक अल्प-संख्यक हैं। अरब देशों के अल्पसंख्यक ये हैं ऑर-थोडॉक्स मैरोनाइट-कॉप्ट ईसाई, बर्बर, ड्रूज इत्यादि।

अरब राजनीति का नया मोड़

नासिर के समय तक अरब देश दो गुटों में बंटे हुए थे। संयुक्त अरब गणराज्य, यमन, अल्जीरिया, इराक प्रगतिशील और समाजवादी देश थे। सऊदी अरबिया, जार्डन और मोरक्को परम्परावादी देश थे। परन्तु अब गुटों का स्वरूप बदल रहा है, क्योंकि संयुक्त अरब गणराज्य के राष्ट्रपति सादात जार्डन के शाह हुसैन को फटकार रहे थे, सऊदी अरब के शाह के फैसले की प्रशंसा कर रहे थे, और दो सप्ताह बाद वह मोरक्को के शाह हसन को मोरक्को के विद्रोह को विफल बनाने पर मुबारकबाद दे रहे थे ठीक उसी समय, जब कि इस विद्रोह को लीबिया के कर्नल गद्दाफी (संयुक्त अरब गणराज्य के गहरे मित्र और सहयोगी) का समर्थन प्राप्त था।

पिछले दिनों यूनियन ऑफ अरब रिपब्लिक, नाम, एक नया 'फेडरेशन' संसार के नक्शे पर उभरा है। इसके तीन सदस्य हैं मिस्र, लीबिया और सीरिया। जनवरी में इस फेडरेशन में सूडान भी शामिल होगा, अपनी घरेलू समस्याओं की उलझनें निपटाने के बाद। इन तीनों अरब देशों में निम्नलिखित बातें समान हैं।

(क) राजनैतिक दृष्टिकोण,
(ख) राष्ट्रीयता
(ग) सेना आधारित राजनीति,
(घ) साम्यवाद की दुश्मनी
(ङ) समाजवाद की चाह
(च) देश की सर्वोच्च सत्ता पर सैनिकों का आधिपत्य।

फेडरेशन का संविधान स्पष्ट रूप में यह कहता है कि फलस्तीनी अरबों की कीमत पर इजराइल से समझौता या बातचीत नहीं होनी चाहिए। संघ के सदस्य वही अरब देश होंगे, जो क्रान्तिकारी और समाजवादी हैं। सदस्य देशों की सेना अलग-अलग और स्वतन्त्र होगी, परन्तु संघ की एक संयुक्त नियमित सेना भी होगी। संघ के सदस्य अपने साथी सदस्य देशों के अन्दर के विद्रोह या बाहरी खतरों की स्थिति में सैनिक कार्रवाई में आपसी मदद कर सकते हैं।

फेडरेशन का राष्ट्रीय गीत और झंडा एक होगा।

कोई भी सदस्य देश किसी भी दूसरे देश से संधि कर सकता है, या सम्बन्ध स्थापित कर सकता है। फेडरेशन में शामिल हर देश की संयुक्त राष्ट्र संघ की सदस्यता कायम रहेगी।

अरब के आधुनिक इतिहास में यह दूसरी बार संघ बना है। पहली बार मिस्र और सीरिया का संघ १९५८ में बना था जो तीन साल छः महीने बाद टूट गया।

यह नहीं कहा जा सकता कि यह संघ कितने दिनों तक कायम रहेगा। जबकि अरब राजनीति स्थिर नहीं है, और वहाँ सप्ताह में दो बार इन्कलाब हुआ करता है।

अरब देश में आज कई प्रकार की शक्तियाँ काम कर रही हैं। इन शक्तियों को दो भागों में बाँटा जा सकता है। एक ओर विभाजक शक्तियाँ हैं, जो ये हैं :

(१) संयुक्त राष्ट्र बनने की कोशिश
(२) एक प्रगतिशील लोकतान्त्रिक और समाजवादी राष्ट्र होने की उत्सुकता,→

इरादतगंज : गैर-सरकारी मदद भी चाहिए

इलाहाबाद शहर से चौदह मील की दूरी पर, इरादतगंज नामक गाँव के पास बंगला देश से आये हुए शरणार्थी बसाये गये हैं। गत १७ अगस्त को वहाँ मैं गया और करीब दो घंटे तक रहा।

इरादतगंज के शरणार्थी शिविर में १०,०६० लोग हैं जिनमें मर्द, औरत, बूढ़े और बच्चे सभी शामिल हैं। बच्चे ज्यादा तादाद में हैं, और उनके बाद बूढ़ों का नम्बर है। लेकिन जवान भी काफी हैं। इन शरणार्थियों के परिवारों की संख्या २,०२० है। इनके कैम्प की व्यवस्था की सुविधा की दृष्टि से चार सेक्टरों में बाँटा गया है।

इस समय शरणार्थी छोलदारी के तम्बुओं में रह रहे हैं। लेकिन पन्द्रह दिन के अन्दर वे टट्टरदार मकानों में रहने लगेंगे, जिन पर एस्बेस्टस की छत रहेगी। निवास की दृष्टि से इन्तजाम अच्छा है।

शरणार्थियों की सेवा के लिए एक छोटा-सा अस्थायी अस्पताल बनाया गया है। एक पुरानी बिल्डिंग इस काम के लिए इस्तेमाल की जा रही है। मरीजों की खास शिकायत यह थी कि रात को कोई डाक्टर वहाँ नहीं रहता। दवा कभी मिल जाती है कभी नहीं। कई मरीज मैंने ऐसे देखे जिनके बदन पर कोई कपड़ा नहीं था। अस्पताल के कम्बल से अपने को ढँके हुए थे। पूछने पर पता चला कि रात के लिए स्टाफ शीघ्र ही आनेवाला है।

करीब पन्द्रह सौ बच्चे पाँच और पन्द्रह के बीच की उमर के हैं। इनकी पढ़ाई के लिए स्कूल खोल दिया गया है। अभी चार शिक्षक हैं। और शिक्षक नियुक्त किये जानेवाले हैं। राशन केन्द्र सरकार द्वारा निर्धारित मात्रा में दिया जाता है।

शरणार्थियों के साथ भारत सरकार का व्यवहार मेहमानदारी का है। लेकिन दिन भर खाली न बैठे रहना पड़े, इसलिए इनको कुछ रोजगार देने का विचार चला है। इनमें से कुछ शिक्षक है, कुछ अन्य धन्धों के कारीगर हैं, जैसे सिलाई, राज-मिस्त्री, बढ़ईगीरी आदि। उनको उनकी रुचि के अनुसार काम देने का प्रयत्न चल रहा है। इसके अलावा उनको कुछ सहायता देकर टी-स्टाल और को-ऑपरेटिव स्टोर भी चलवाये जा रहे हैं। फिर भी बहुत से लोग खाली रह जाते हैं। उनको चरखा देने का विचार है। शुरू में एक सौ चर्खे चलवाये जायेंगे। उस अनुभव के आधार पर काम आगे बढ़ेगा। कताई सिखाने के लिए एक कार्यकर्ता भी वहाँ रहेंगे। स्कूल के बच्चों को तख्ती देने का विचार है।

शिविर में सबसे खास माँग है कपड़े की, चाहे वह पहनने का हो या ओढ़ने-बिछाने का। इलाहाबाद की कई सार्वजनिक संस्थाओं ने कुछ कपड़ा पहुँचाया भी है। उत्तर प्रदेश शान्ति-सेना की ओर से भी कपड़ा भेजा गया है। लेकिन अभी भी कपड़े की कमी बहुत अधिक है जिसे दूर करने के लिए गैर-सरकारी संगठनों को कोशिश करनी चाहिए।

कपड़े के अलावा बर्तन भी चाहिए। कुछ तो उनके पास हैं। लेकिन उनसे काम नहीं चलता। बर्तनों की भी सहायता जुटानी चाहिए।

—सुरेशराम

पचाननपुर शिविर : सेवकों की कमी

पंचाननपुर (बिहार) गया नगर से १० मील की दूरी पर है। यहाँ द्वितीय विश्व-युद्ध के जमाने में अंग्रेजों ने सैनिक हवाई अड्डा बनाया था। यह बहुत बड़ा हवाई अड्डा है।

यहाँ २६ अगस्त '७१ की शाम तक २५,९५० शरणार्थी आ चुके थे। कुल ५,८४२ परिवार हैं।

राशन महीने में ३ बार दिया जाता है। यहाँ पर दो अस्पताल हैं। एक जर्मनी ने दिया है। इसमें १०५ बेड की व्यवस्था है। यह सभी प्रकार से, सभी सुविधाओं से परिपूर्ण है। एक अस्पताल भारत सरकार की ओर से बना है। परन्तु स्टाफ की कमी दोनों अस्पतालों में है। डाक्टरों और दूसरे मेडिकल स्टाफ की सख्त जरूरत है।

शरणार्थियों में खुलना, राजशाही, बेरीसाल, फरीदपुर, जैसोर, कुष्टिया

→(३) एक स्वतन्त्र और शक्तिशाली राष्ट्र बनने की आकांक्षा।

दूसरी ओर विरोधात्मक शक्तियाँ भी हैं :

(१) रोज-रोज का रक्तपात, संघर्ष, विद्रोह और क्रान्ति,

(२) प्रगतिशील और रूढ़िवादी अरब देशों के बीच तनाव,

(३) हर अरब देश में प्रगतिशील और रूढ़िवादी लोगों के बीच भयंकर संघर्ष।

इन दोनों शक्तियों के बीच कुछ और शक्तियाँ भी हैं जो 'कैटेलिटिक एजेंट' (तटस्थ सहायक) के तौर पर काम कर रही हैं। वे हैं -

(१) फलस्तीनी गैरिल्ला दस्ते,

(२) धर्म, संस्कृति और भाषा की एकता,

(३) एक शानदार भूतकाल, जो हजार साल तक कायम रहा।

ये सारी उलझनें किस प्रकार हल होंगी, यह कहना कठिन है। सम्भावनाएँ निम्नलिखित हैं

(१) सारे अरब देश रूस के पिछलग्गू बन कर रह जायँ,

(२) तीनों बड़े राष्ट्र रूस, अमेरिका और चीन के प्रभाव क्षेत्र में बँट जायँ,

(३) इजराइल के उपनिवेश बन जायँ और इजराइली शासन नील से फेरात तक स्थापित हो जाय।

(४) संयुक्त, शक्तिशाली, प्रभावशाली, स्वतन्त्र राष्ट्र बन कर उभरें और एक 'शक्ति' बन जायँ जैसे कि योरप के राष्ट्र पिछली शताब्दी में शक्तिशाली राष्ट्र बनकर उभरे थे।

—सैयद मुस्तफा कमाल

और पटना जिले के लोग हैं। राजशाही विश्वविद्यालय के कुछ विद्यार्थी भी हैं।

आये हुए शरणार्थियों में ३,००० लोग, जो पिछली तीन ट्रेनों से आये हैं, वे रात खुले में सड़क के किनारे पड़े हुए हैं। अभी उनके रहने के लिए झोपड़ों या खेमों की व्यवस्था नहीं हुई है। बाकी लोग टाट-प्रूफ की बनी झोपड़ियों में रह रहे हैं। झोपड़ियाँ ऐसी हैं कि अगर आकाश दो घंटे बरसता है तो झोपड़ियाँ चार घंटे बरसती हैं। कुछ लोग खेमों में भी हैं।

रेडक्रास की ओर से उन्हें बर्तन, चारपाइयाँ जल्द ही दी जानेवाली हैं। ऐसा मुझे रेडक्रास के बिहार स्टेट के इन्चार्ज ने बताया, जो स्वयं दिल्ली से आये हुए हैं, और सेना के ही आदमी हैं। सेवा-कार्य में कैथोलिक रिलीफ और सर्वोदय आश्रम, सोखोदेवरा (गया) और गया जिले के सर्वोदय कार्यकर्ता लगे हुए हैं।

शरणार्थियों में करीब १० प्रतिशत लोग शिक्षित हैं।

कुछ शरणार्थियों ने शिविर के अन्दर अपनी छोटी-छोटी दुकानें खोल रखी हैं। छोटे बच्चों का एक स्कूल भी नजर आया, जिसमें शरणार्थी ही शिक्षक हैं। मुझे कर्नल साहब ने, जो कैम्प के इन्चार्ज हैं, बताया और रेडक्रास सोसाइटी के इन्चार्ज ने भी कहा कि उनकी यह कोशिश है कि इन शरणार्थियों को अपने पैरों पर खड़ा किया जाय। परन्तु इनमें काम करने की रुझान कम पायी जाती है। शरणार्थियों से बातचीत करने पर उन्होंने अपना देश वापस लौटने के बारे में निम्न बातें कहीं,

(क) वे उसी समय अपने घरों को वापस जायेंगे, जब वहाँ वैसी परिस्थिति पैदा हो जाय, जैसी २५ मार्च से पहले थी। वे अपने घरों को वापस जाना चाहते हैं, परन्तु उसी हालत में, जब वे वहाँ सुरक्षित रह सकें।

(ख) वे जब तक यहाँ हैं, काम चाहते हैं। उन्हें अस्थायी रोजगार दिया जाय।

उन लोगों ने यह भी बताया कि इस शिविर में तीन प्रकार के शरणार्थी हैं। (१) बहुत सारे तो डर कर भाग आये हैं, (२) बहुत से खाने को कुछ न मिलने के कारण आये हैं। और, (३) बाकी लोग किसी-न-किसी रूप में दुर्घटनाओं के शिकार होकर आये हैं।

उनमें बहुत सारे ऐसे लोग भी हैं जो जून और जुलाई में आये हैं। वे लोग गाँव के रहनेवाले हैं। चूँकि सेना गाँव में नहीं पहुँच पायी थी, और इनका ख्याल था कि वह आ भी नहीं सकेगी, क्योंकि गाँव वर्षा के कारण टापू बन गये हैं। इसलिए वे लोग वहाँ टिके हुए थे। परन्तु सेना के लोग 'स्टीम बोट' में आने लगे, और गाँवों में भी वह सब करने लगे, जो वे नगरों और कस्बों में कर रहे थे, इसलिए वे भाग आये। शरणार्थियों की शारीरिक स्थिति बहुत ही खराब है। उनकी हालत दयनीय है।

इस कैम्प में कुल ५० हजार शरणार्थियों को रखा जायेगा। अभी २४ हजार और आयेंगे।

इस कैम्प में बड़ी समस्या राशन वितरण और सफाई की है। केवल १ सैनिक अधिकारी ७६ हजार लोगों की व्यवस्था कर रहे हैं। ऐसे लोगों की यहाँ बड़ी आवश्यकता है, जो राशन बाँटने में, और सफाई के कामों में सहायता दें। साथ ही कुछ 'टेबुल वर्क' करनेवाले अनुभवी लोग भी चाहिए। ●

—कमाल

विन्ध्य क्षेत्र के सर्वोदय-सेवक का देहावसान

विन्ध्य क्षेत्र के सुप्रसिद्ध स्वतन्त्रता संग्राम-सैनिक और सर्वोदय-सेवक बाबू श्री प्रेमनारायण खरे का गत २४ अगस्त '७१ की रात्रि को अचानक हृदय-गति रुकने से देहावसान हो गया। उनकी आयु लगभग ६० वर्ष की थी।

स्वतन्त्रता के बाद श्री खरे ने अपने को गांधीजी के रचनात्मक कार्यक्रमों में लगा दिया था और पिछले कुछ वर्षों से वे टीकमगढ़ जिले में ग्रामदान-पुष्टि कार्य में लगे हुए थे। वे बलदेवगढ़ प्रखण्ड के अन्तर्गत भेलसी गाँव में प्रचार टोली के साथ गये हुए थे। २३ अगस्त को दोपहर भोजनोपरान्त वे शौच गए और वहाँ अचानक उन्हें दिल का दौरा पड़ा। उन्हें खरगापुर से आ रही एक डाक्टर की जीप में बलदेवगढ़ लाया गया, जहाँ अस्पताल में उनका उपचार किया गया। परन्तु अर्द्धरात्रि के बाद पुनः दौरा पड़ने से प्राण वे मुक्त पाये गये।

मध्यप्रदेश सर्वोदय मंडल और गांधी-स्मारक-निधि द्वारा स्व० श्री खरे के असामयिक निधन पर शोक प्रकट करते हुए उनके परिवारजनों को तार द्वारा संवेदना संदेश भेजा गया। (सप्रेस) ●

पुष्टि-कार्यकर्ताओं की गोष्ठी

बिहार में विभिन्न जगहों पर पुष्टि काम में लगे मित्रगण अपने-अपने क्षेत्र में काम करते समय एक साथ बैठकर काम का संयोजन करते रहते हैं। तभी तो काम में ताजगी बनी रहती है। सब क्षेत्रों में काम करनेवाले प्रमुख मित्र बीच-बीच में एक साथ बैठकर अनुभव का आदान-प्रदान करें, इसकी आवश्यकता भी कुछ दिनों से महसूस की जा रही थी। इस दृष्टि से गत जून में कुछ मित्र सिमुलतला (मुंगेर) में इकट्ठे हुए थे। उसी क्रम में तय किया गया था कि दूसरी बैठक पूर्णियाँ में हो। उसी के मुताबिक ता० ३० और ३१ अगस्त को भवानीपुर-राजधाम (पूर्णियाँ) में मुसहरी, वैशाली, धाखा और रुपौली प्रखण्डों में काम करनेवाले मित्रों की एक गोष्ठी हुई। गया और सहरसा से कोई मित्र नहीं आ सके। कुल ६ बैठकें हुई। १५ घंटे बैठे। बैठकों में २०-२५ मित्र शामिल रहते थे।

रुपौली प्रखण्ड में पुष्टि की प्रगति

१. पूर्णिया जिले के रुपौली प्रखण्ड में २१ पंचायतें हैं।

२. ५५ रेवेन्यू गाँव हैं।

३. अब तक ५५ ग्रामसभाएँ बनीं।

४. प्रखण्ड की जनसंख्या १९६१ की जन-गणना के अनुसार ७६,९८५ है।

५. तूफान कालीन ग्रामदान अभियान में ग्रामदान में शामिल :
भूमिवान परिवार—१,३३५।
भूमिहीन परिवार—३,३६४।

६. पुष्टि अभियान में ग्रामदान में शामिल होने वाले :
भूमिवान परिवार—१,९३३।
भूमिहीन परिवार—१,५६६।

७. ग्रामदान में शामिल होनेवाले अब तक : कुल
भूमिवान परिवार—३,२६८।
भूमिहीन परिवार—४,९३०।

८. ग्रामदान में शामिल कुल जन-संख्या ४९,०७७।

९ ग्रामदानी गाँवों के लोगों की उनके गाँव में कुल जमीन १४,९१६ एकड़ ३६ डिसमल।

१०. ग्रामदान में शामिल लोगों की जमीन १०,९७३ एकड ६३ डिसमल।

११. ग्रामदानी गाँवों के प्रत्येक छोटे भूमिवान का दो एकड़ कम कर तथा भूदान में मिली जमीन का रकबा बाद करके प्राप्त होनेवाली बीसवाँ हिस्सा जमीन का रकबा.
९८ एकड़ ६५ डिसमल।

१२ बीसवाँ हिस्सा से प्राप्त भूमि का रकबा ७३ एकड़ २२ डिसमल।
दाता संख्या—१६७।

१३. बीघा-कट्ठा का वितरण :
६१ एकड़ ८० डिसमल।
आदाता संख्या—१७५।

१४ भूदान की जमीन वितरित : ७१८ एकड। आदाता संख्या ६६२।

१५. ग्रामदान में शामिल गाँवों की जनसंख्या—७७ से १०० प्रतिशत तक।

१६. ग्रामदान में शामिल रकबा—
३ गाँवों में ५१ प्रतिशत से कम,
४१ गाँवों में ५१ प्रतिशत से अधिक,
२४ गाँवों में १०० प्रतिशत।

—हेमनाथ सिंह

युद्ध की विभीषिका

मुक्त प्रेम-जनित ये बच्चे

वियतनाम न्यूज लेटर का एक समाचार है।

सेगॉव की 'सामाजिक विषयों से सम्बन्धित मंत्रालय' के सूत्रों से यह ज्ञात हुआ है कि अमेरिकी सैनिकों (काले और गोरे) ने वियतनामी लड़कियों को जो अपने साथ रखा उनके अब करीब दस हजार बच्चे शीघ्र ही अनाथ हो जायेंगे, कारण ये सैनिक अब वापस जानेवाले हैं।

इनमें से अधिकतर बच्चे इस समय ६ वर्ष की उम्र के हैं और अपनी अपनी माँ के साथ रहते हैं। करीब एक हजार वैसे बच्चे वियतनाम के विभिन्न अनाथालयों में पाले जा रहे हैं। अनाथालयों में करीब तीन हजार ऐसे बच्चे भी हैं जिनके माँ-बाप मारे गये हैं। अपने दादा-दादी के द्वारा पूरे वियतनाम में अनगिनत हजार मातृ-पितृ-विहीन बच्चे पाले जा रहे हैं। वियतनाम में यह रिवाज है कि दादा-दादी बच्चों को पालें।

—डब्लू० आर० आई० न्यूजलेटर से

इस अंक में

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पैसे), विदेश में २२ रु० ; या २५ शिलिंग या ३ डालर।
एक अंक का मूल्य २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिये प्रकाशित एवं मनोहर प्रेस, वाराणसी में मुद्रित

सम्पादक
राममूर्ति

वर्ष : १७ सोमवार
अंक : ५१ २० सितम्बर, '७१
पत्रिका विभाग
सर्व सेवा संघ, राजघाट, वाराणसी-१
फोन : ६४३९१ तार : सर्वसेवा

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

शब्दों में अभिव्यक्ति असम्भव

[गत १४ से २२ अगस्त '७१ तक जर्मन जनवादी गणतंत्र की लोकसभा (फोल्कसकामर) का तीन सदस्यीय प्रतिनिधि मण्डल शरणार्थियों की समस्या का अध्ययन करने भारत आया था। सीमा-क्षेत्रों का दौरा करने के बाद दल के नेता प्रो० रोल्फ़ दीबर ने पत्र-प्रतिनिधियों के सम्मेलन में जो बयान दिया, उसके कुछ प्रमुख अंश :]

हमने कलकत्ता के इर्द-गिर्द और सीमा-क्षेत्रों में जो कुछ देखा और यात्राओं के दौरान जो कुछ सुना उसे सिर्फ शब्दों में व्यक्त कर पाना मेरे लिए सम्भव नहीं। शरणार्थियों की दुःख-गाथा इतनी हृदय विदारक है, और उन पर जो जुल्म ढाये गये हैं, वे इतने घृणित हैं कि हम वे देख कर स्तम्भित रह गये।... हम यदि यहाँ न आते, जहाँ पूर्व बंगाल के शरणार्थी अस्थायी तौर पर बसाये गये हैं और जहाँ उन अभागे लोगों की अनन्त धारा आज भी भारत में चली आ रही है, तो हमें सही स्थिति का ज्ञान कभी न होता।

यह समस्या एक वास्तविक अन्तर्राष्ट्रीय समस्या है। भारत यह न सोचे कि सिर्फ वही इस स्थिति से चिन्तित है। मैं कह सकता हूँ कि जर्मन जनवादी गणतंत्र की सरकार, भारत सरकार के इस विचार की भागीदार है कि इस स्थिति से अन्तर्राष्ट्रीय तनाव बढ़ता है और समस्या का समाधान केवल शांतिपूर्ण राजनीतिक तरीकों से किया जा सकता है।...

भारत में शरणार्थियों का निरन्तर आना निश्चय ही रोका जाना चाहिए और ऐसी परिस्थितियाँ पैदा की जानी चाहिए जिनमें सुरक्षा सहित उनकी शीघ्र वापसी सम्भव हो सके। इसके लिए आधारभूत राजनीतिक समस्या का स्थायी हल हो जाना चाहिए। ऐसा पूर्व बंगाल की जनता और उसके निर्वाचित प्रतिनिधियों के साथ बातचीत करके ही हो सकता है।...

हम एक राजनीतिक समाधान चाहते हैं, जिससे एशिया और विश्व में शांति और सुरक्षा पैदा हो सके। हमने पाकिस्तान को कभी भी हथियार नहीं दिये हैं और न कभी देंगे। हम शेख मुजीबुर्रहमान की रिहाई की माँग करते हैं।

• संस्थावाद और सर्वोदय-क्रान्ति •

सम्पादकीय

गर्भपात : स्त्री के सोचने की बात

स्त्री को माता बनना ही चाहिए, वह चाहे या न चाहे, यह विचार पुराना पड़ गया। आज भी इस विचार के समर्थकों की कमी नहीं है कि मातृत्व में ही स्त्री के जीवन की चरम सिद्धि है। किन्तु यह विचार नये मूल्यों के नये जमाने का नहीं है। स्त्री उतनी ही एक व्यक्ति-स्वायत्त-व्यक्ति है जितना पुरुष। वह विवाह करेगी या नहीं, और विवाह करने पर भी माता बनेगी या नहीं, और अगर बनेगी तो कितनी संतानों की, यह उसके अपने विवेक और निर्णय का प्रश्न है।

लेकिन स्त्री के स्वायत्त व्यक्तित्व को स्वयं स्त्री ने कभी पहचाना नहीं, और पुरुष से अलग भी स्त्री का कोई अस्तित्व है, यह मान्यता भारत ही नहीं, किसी देश की जीवन-परम्परा में नहीं रही है। पिता, पति और पुत्र के संरक्षण में रहनेवाली स्त्री सदा आश्रिता ही रही है। हर समाज स्त्री की हीनता को संस्कृति बनाकर जीता रहा है। वह भोग की वस्तु है, सेविका है; संतति पैदा करने का साधन है यही उसका भाग्य है। ऊँचे दिमागवालों ने उसे देवी कहा, माता का पद ऊँचा उठाया, और उसे गृहिणी के नाम से विभूषित किया, लेकिन स्त्री का जीवन अपने में भी सार्थक है, यह नहीं सोचा गया। मूल मान्यता यही रही कि स्त्री पुरुष के पतन का कारण है, उसकी चरम साधना में बाधक है। उसका त्याग किये बिना मनुष्य 'सिद्ध' नहीं हो सकता। एक गांधीजी ऐसे साधक थे जिन्होंने इस पाप-विचार का त्याग किया, स्त्री की स्वायत्तता को स्वीकार किया।

गर्भपात को वैध करार देने के कानून (मेडिकल टरमिनेशन आव प्रेगनेन्सीज बिल) की इस घोषणा के बाद कि यदि गर्भ से स्त्री की जान का खतरा हो, या उसके शारीरिक या मानसिक स्वास्थ्य को आघात पहुँचता हो तो, मान्यता प्राप्त चिकित्सक द्वारा गर्भपात अवैध नहीं होगा। हर हालत में गर्भिणी को गर्भ का निर्वाह करना ही चाहिए, ऐसा कहना सर्वथा अनुचित है। इसी तरह उसे गर्भ धारण करने के लिए विवश करना भी अनुचित है। उसे पति से भी भोग की वस्तु बनने से इनकार करने का अधिकार है। ये सब बलात्कार के ही रूप हैं।

लेकिन यहीं एक बात गम्भीरतापूर्वक सोचने की पैदा होती है। जिस सरकार के कानून ने स्त्री को गर्भपात की छूट दी है, और गर्भ-निरोध के अनेक साधन उपलब्ध कराये हैं, उसकी नजर में स्त्री की क्या हैसियत है और स्त्री-पुरुष सम्बन्ध की क्या कल्पना है? कानून के समर्थकों द्वारा इस बात का ढिंढोरा पीटा जा रहा है कि गर्भपात को वैध करार देने से दो बड़े लक्ष्य सधेंगे . एक यह कि देश में हर साल जो ६० लाख गर्भपात चोरी से होते हैं वे बंद हो जायेंगे, दूसरा यह कि गर्भपात से जनसंख्या वृद्धि रोकने में बहुत बड़ी मदद मिलेगी। ये दोनों लक्ष्य—चोरी से गर्भपात रोकना और जनसंख्या में कमी करना—ऐसे हैं जिनसे कोई समझदार आदमी असहमत नहीं हो सकता। उपायों से मतभेद भले ही हो। लेकिन जो सरकार गर्भपात को वैध करने का कानून पास कर सकती है, वह यह कैसे बर्दाश्त करती है कि स्त्री को हमारे पूँजीवादी बाजार ने 'व्यवसाय' बना डाला है? जिस समाज को दिन-रात यही दीक्षा दी जा रही है कि स्त्री भोग की वस्तु है, और उनके अंग विज्ञापन के, वह स्त्री की मुक्ति की बात कैसे समझेगा? स्त्री के व्यक्तित्व की स्वायत्तता की बात उसके दिमाग में कैसे घुसेगी? माता बनने में तो स्त्री की प्रतिष्ठा भी थी, लेकिन भोग की पुतली बनने में?

गर्भपात का कानून बना—राष्ट्रपति का हस्ताक्षर होना बाकी है—लेकिन समाज ने चूँ तक नहीं किया। लगता है कि हिन्दू कोड बिल के बाद हमारे समाज की पाचन-शक्ति बहुत बढ़ गयी है। लेकिन क्या यह मान लिया जाय कि गर्भपात, और गर्भनिरोध को स्वीकार करनेवाले समाज ने विवाह के पहले, और विवाह के बाहर भी, स्त्री-पुरुष के लैंगिक सम्बन्धों को स्वीकार कर लिया है, अब इस तरह का सम्बन्ध करनेवाले निन्दनीय नहीं समझे जायेंगे?

गर्भ-निरोध और गर्भपात का प्रश्न स्त्री-पुरुष के सम्पूर्ण सम्बन्ध के साथ जुड़ा हुआ है, और स्त्री-पुरुष का सम्बन्ध समाज के पूरे जीवन से। यह स्पष्ट है कि पुराने जमाने से चले आये श्रम और पूँजी के सम्बन्ध भी बदलने चाहिए, बदलना अनिवार्य है। आज के समाज में दोनों अमानवीय हैं, दोनों को मानवीय होना है। और स्त्री-पुरुष के सम्बन्ध तभी मानवीय होंगे जब वे सहज, स्वाभाविक होंगे, जब उनके बीच जाति, परिवार की प्रतिष्ठा, और लेन-देन के सवाल नहीं रहेंगे, जब विवाह प्रेम का परिणाम होगा, जब स्त्री अपनी दीनता से मुक्त होगी, और पुरुष अपने प्रभुत्व से, जब 'सेक्स' कुत्सित न माना जाकर सृजनकारी शक्ति और प्रेम की अभिव्यक्ति के रूप में स्वीकार किया जायगा और पुरुष-स्त्री दोनों एक दूसरे का शोषण छोड़कर साथी की तरह रहना सीखेंगे।

सरकार के सामने ये प्रश्न नहीं हैं, और बाजार के लिए तो स्त्री सदा 'बिकाऊ' है। एक को इतने से संतोष है कि उसकी पंचवर्षीय योजना के निरूपण को करने की एक थाह मिल जाय, दूसरे को बस इतने से मतलब है कि माल बिकता जाय, और मुनाफा मिलता जाय। क्या स्त्री को भी इतने से ही संतोष है कि उसे किसी दूसरे से अच्छे कपड़े और चमकते गहने मिलते जायँ, और वह उन्हें अपना शरीर देकर प्राप्त करती जाय? क्या गर्भ-निरोध और क्या गर्भपात, एक बार वह अपने को पुरुष-प्रवाह से अलग हटाकर देखे, और तय करे कि वह क्या चाहती है। अब समय आ गया है कि वह दुरुस्तापूर्वक शोषण का सौंदर्य बनने से इनकार करे। इस अस्वीकृति में मुक्त-जीवन के नये क्षितिज दिखायी देंगे। तब तक कानून की बेड़ियाँ बदलती रहेंगी, कटेंगी नहीं।●

जन्म दिन : ११ सितम्बर '७१ : की अभिव्यक्ति

कसौटी अलविदा के वक्त होगी

—विनोबा

ऐसा आदेश कार्यक्रम बनानेवालों की तरफ से मुझे मिला है कि अभी मुझे यहाँ बोलना है। बोलना क्या है? केवल वंदन करना है आप सब लोगों का। आप अपना काम छोड़कर शुभकामना प्रकट करने के लिए इकट्ठा हुए हैं। आप सबके आशीर्वाद से बाबा को पक्का विश्वास हो जाता है कि बाबा मरने तक जरूर जी लेगा। इसमें तनिक भी संदेह नहीं रहता। खास करके वृद्धों के आशीर्वाद बहुत बलवान होते हैं। जवानों के हाथ बलवान होते हैं। उनके हाथों से काम होता है। लेकिन वृद्धों के आशीर्वाद से काम होते हैं। यहाँ पर ९३ साल के एक भाई भी हैं। मैं रोज भगवान के नामों का स्मरण करता हूँ। उसमें अनेक रूपों में इनके नामों का स्मरण होता है। भारत के जिन वृद्धों से मेरा परिचय है और जिनके नाम का मुझे पता है उन वृद्धों का भी स्मरण करता हूँ। ऐसे ६० वृद्ध हो जाते हैं सारे भारत में। उनमें से कुछ यहाँ बैठे हुए हैं। बहुत बड़ी ताकत हमको वृद्धों के आशीर्वाद से मिली।

मुझे इस बात का समाधान है कि मेरे जीवन में प्राप्तव्य रहा नहीं है। जो कुछ प्राप्त करना था वह प्राप्त हो गया है। फिर भी शरीर शेष है। तो जो कुछ काम उससे बनेगा वह बने। कर्तव्य शेष नहीं, यह बहुत बड़ा समाधान है मेरे चित्त में। इस बारे किसी प्रकार की चिंता चित्त में नहीं है। चिंतन चलता है, वह अलग बात है।

एक समाधान मुझे यह है कि जिस क्षेत्र में बाबा है वहाँ बहनों की ब्रह्मविद्या बहुत अच्छी चल रही है। जितनी अपेक्षा थी उससे अधिक ही अच्छी चल रही है। सभी बहनें सामूहिक साधना में मग्न हैं और अपनी-अपनी पूरी ताकत उसमें लगाती हैं। १२ साल हो रहे हैं इसकी स्थापना के। जिस प्रकार से उस दिशा में प्रगति हो रही है उससे मुझे समाधान है।

दूसरा मुझे समाधान है कि भारत में अत्यन्त महत्व का जो काम चल रहा है, जिसको मैं सबसे ज्यादा महत्त्व देता हूँ वह ग्रामस्वराज्य स्थापना का है। जिसके लिए ग्रामदान आधार है। ग्रामदान तो बिहार में हो गया तमिलनाडु में हुआ और भी कई जगहों पर हो गये। लगभग समझ लीजिए हिन्दुस्तान में ६०-६५ जिलों में ग्रामदान हो गया है। लेकिन ग्रामदान के बाद प्रत्यक्ष जमीन देना मजदूरों को, उनको इकट्ठा बैठाना एक सभा में सब प्रेम के साथ इकट्ठा बैठें अपने स्वराज्य के लिए प्रयत्न करें, यह जो बड़े महत्व का काम है, उस काम में हमारे साथी लोग उसके साथ लगे हुए हैं। एक फ्रंट खुला है सहरसा में। वहाँ पर २ अक्टूबर तक बड़ा अभियान चलेगा, जिसमें धीरेन भाई जैसे, राजा बाबू (बिहार के एक नेता) जैसे ७० साल की उम्र के वीर लगे हुए हैं बड़े मनोयोग से। ऐसे ही कृष्णराज हैं, निर्मला हैं, ऐसे नवजवान भी लगे हुए हैं। मुझे पूर्ण विश्वास है कि वहाँ का काम आगे हो जायेगा। एक जिले में ग्रामस्वराज्य का काम पूरा हो जाता है तो हिन्दुस्तान के दूसरे जिले एक के पीछे एक हो जायेंगे। जो पहले होना है वह मुश्किल होता है बाकी के आसान होते हैं। सहरसा के मैदान में बहुत सारे कार्यकर्ता लगे हुए हैं और मेरा अभिध्यान उनकी तरफ सतत लगा हुआ है। रात में उनका चिंतन करता हूँ। यहाँ भी काम करने के लिए जाते समय कहता हूँ सहरसा जा रहा हूँ, अमुक प्रखंड में जा रहा हूँ। इस तरह से मेरी भावना इसके साथ जुड़ी हुई है। वह काम भी अच्छा रूप ले रहा है।

तीसरा समाधान मुझे यह है जो बहुत बड़ी बात है, वह है विद्वानों का एक मत होना। जो कि अत्यन्त कठिन काम है। अज्ञानी लोग एकमत हो जाते हैं लेकिन विद्वानों का एकमत होना बहुत कठिन है। परन्तु आचार्यकुल दिन-ब-दिन लोकप्रिय हो रहा है। क्या महाराष्ट्र, क्या उत्तर-प्रदेश, क्या मध्यप्रदेश, क्या बिहार, गुजरात में भी जहाँ-जहाँ यह विचार पहुँचता है लोगों को आकर्षण मालूम होता है। मुझे जो अपेक्षा थी उससे भी ज्यादा सफल हो रहा है। उसमें अब संघटन का सवाल है। जैसा कि मैंने कहा विद्वानों को इकट्ठा करना, उनके प्रश्नों का उत्तर देना, यह सब करना पड़ता है। परन्तु उसमें जो सफलता मिल रही है, क्षेत्र खुल रहा है, उससे मुझे बहुत समाधान मिला है। यह तीसरा समाधान है।

इस प्रकार से पहला समाधान कि कोई कर्तव्य शेष नहीं रहा, और दूसरा सहरसा आदि स्थानों में—नाम तो एक लिया, लेकिन और भी नाम हैं—जहाँ शान्तिसेना, ग्रामदान और ग्रामाभिमुख खादी आदि का प्रयोग चल रहा है। तीसरा है विद्वानों का एक मत करना और उनकी आवाज बुलन्द करना, जिसका सरकार पर और जनता पर, हिन्दुस्तान के अन्दर और बाहर के देशों पर असर पड़े। यह जो बाबा को त्रिविध समाधान है उसके अलावा अन्य समाधान जो है वह तो है ही। इस बारे में आज आपलोगों के दर्शनों से बहुत ही प्रसन्न हूँ। अत्यन्त आनन्द होता है आपलोगों को देखकर।

लेकिन आखिर में कसौटी होगी। अभी पाँच दिन पहले वर्धा में खबर फैली की बाबा का देहान्त हो गया। यह बात कैसे फैली, इस पर विचार करने पर मालूम हुआ कि रोज सहस्रनाम के समय बहनें इकट्ठा होकर सहस्रनाम का उच्चारण करती हैं और मैं भी उसमें शरीक होता हूँ। उस रोज कुछ थकावट के कारण मैं शवासन में लेटा था और बहनें मेरे पास बैठकर नामस्मरण कर रही थीं। तो एक साइकिल वाला आया और देखा कि बाबा आज इसमें शरीक नहीं हुआ, लेटा हुआ है और उसके चारों ओर भजन हो रहा है तो जरूर बाबा अब जाने ही वाला है इसलिए यह भजन आदि हो रहा है। वह दौड़ा-दौड़ा वर्धा→

एक खुला पत्र : पाकिस्तानी प्रेसिडेन्ट के नाम

सेवा में,
श्री जनरल यहिया खाँ
प्रेसिडेन्ट पाकिस्तान

महोदय,

यह पत्र मैं आपको व्यक्तिगत तौर पर लिखने की धृष्टता कर रहा हूँ। मैं इस बात से अवगत हूँ, कि मैं वही बातें कर रहा हूँ जिन्हें बहुत लोग महसूस करते हैं।

इस बीसवीं सदी में मनुष्यों के व्यापक पैमाने के कष्ट से दुनिया शीघ्र अवगत हो जाया करती है। फिर भी इस दिशा में काफी प्रयास और किये जाने की आवश्यकता है। संसार के लोगों के ध्यान पर जब-जब दुखी लोगों का कष्ट आता है तब-तब वे सहानुभूति दिखाते हैं, और आर्थिक सहायता करते है। पूर्व पाकिस्तान के लोगो पर जो विपत्ति पड़ी है वह इसका अपवाद नही है। विपत्ति के शिकार लोगो को मात्र सहायता देना ही यथेष्ट नही है।

अब वह समय आ गया है जब यह बात साफ-साफ तय कर ली जानी चाहिए कि किस विपत्ति को प्रकृति-जन्य कहा जाय और किसे मनुष्य के निर्णय से लाया हुआ माना जाय। मनुष्यों पर विपत्ति ढाने की जिम्मेदारी जिन लोगो पर है उन्हें संसार के लोगो के सामने हाजिर किये जाने की आवश्यकता है। उनके कामो की भर्त्सना की ही जानी चाहिए।

पूर्व पाकिस्तान में पिछले दिनों जो कुछ हुआ है, जिसमें हजारो लोगो की जाने गयी हैं, ढाका यूनिवर्सिटी के विद्वान शिक्षकों में से तीस से अधिक सदस्य मारे गये हैं, लाखो पुरुष, स्त्री और बच्चे, जो जान बचाने के लिए भारत में शरणार्थी बनकर गये हैं, और जो अपार कष्ट में पड़े हैं, पाकिस्तान के प्रेसिडेन्ट की हैसियत से उन सबकी जिम्मेदारी आपकी है।

दूसरे-दूसरे कामो की जिम्मेदारी दूसरो की हो सकती है, पर इन कृत्यो की जिम्मेदारी आपकी है। संसार के लोगो का विवेक आप जैसे लोगों के प्रति विद्रोह करता है और सब आपकी भर्त्सना करते है। आप जिस पद पर आसीन हैं उसकी मर्यादा बनाये रखने के लिए आपको संसार की अदालत ट्रिब्यूनल के सामने कृत्यो की सफाई देने को तैयार रहना चाहिए।

यह खुला पत्र आपको हम इसलिए लिख रहे है कि हम लोग इस निश्चय पर पहुँच चुके हैं कि मनुष्य पर जो विपत्तियाँ स्थायी-जैसी दीख रही हैं उनका अन्त तभी हो सकता है जब लोगों का विवेक जगाया जाय, और मनुष्यो पर ढाई जानेवाली विपत्तियो का जो व्यक्ति जिम्मेदार दीख पड़ता है, उस पर जिम्मेदारी डाली जाय और उससे उसका जवाब-तलब किया जाय। इस समय तो संसार में ऐसी कोई कानूनी हैसियत है नही जो यह कर सके, परन्तु आपके विवेक और मानव मात्र के विवेक के सामने आपके कृत्यो को रखकर इस समय जांचा जा रहा है।

वह समय आ गया है जब पूर्व बंगाल के लोगो की विपत्ति को समाप्त करना ही है, और इस लक्ष्य की सिद्धि के लिए आप तत्काल इस पुकार पर ध्यान दें। और बातो के साथ-साथ इसमें यह निहित है :

(क) पूर्व पाकिस्तान के लोगो ने जो बहुत ही साफ-साफ अपनी यह इच्छा जाहिर कर दी है कि वे स्वायत्त-शासन (सेल्फ गवर्नमेन्ट) चाहते हैं, आप उसकी कद्र करें।

(ख) पूर्व पाकिस्तान से पश्चिमी पाकिस्तान की फौज वापस बुला लें।

(ग) पूर्व पाकिस्तान में जिन पर विपत्ति पड़ी है, एवं जो उद्वासित घर लौटना चाहते हैं उन्हें फिर से बसाने के लिए व्यापक पैमाने पर राहत दी जाय। यह राहत कार्य आप करें एवं उन गण्य-मान्य (रिकाग्नाइज्ड) मानव-सेवा-संस्थाओं को उसका संघटन करने की अनुमति दें, जो वह काम करना चाहते हैं।

अभी हाल में आपने भारत से युद्ध करने की धमकी दी है। ऐसी विपत्ति नही आने दी जानी चाहिए और इसको आपकी इस दिशा की सक्रियता द्वारा टाला जा सकता है। ऊपर के रास्ते पर आप चलें, तब यह संभव है।

राष्ट्र संघ की स्थापना जनहित के नाम पर हुई थी। शान्ति और मानव अधिकार की सुरक्षा की सबसे बड़ी आशा आज भी उसी से है। जो लोग, चाहे जिस किसी भी राजनैतिक उद्देश्य की सिद्धि के लिए, यह जिम्मा लिए हुए हैं, कि मनुष्य के मूल्य (वर्थ) और प्रतिष्ठा (डिगनिटी) को समाप्त कर दें, उन्हें ऐसा करने नही दिया जा सकता, यह काम संसार के चाहे किसी भी कोने में क्यो न होता हो।

आपके हाथो में यह पत्र देना यदि संभव रहा होता तो यह पत्र आपको हाथो-हाथ ही दिया जाता। व्यक्तियो और संस्थाओ के समर्थन का संघटन किया गया होता। परन्तु जो स्थिति है उसमें हम लोग इसे उस जगह जाने दे रहे है जहाँ इसे समर्थन और नैतिक सहयोग मिल सकेगा।—डोनाल्ड जी० ग्रूम

६८१, ऑरौंग रोड, टूराक
मेलबोर्न विक्टोरिया, ३१४२
आस्ट्रेलिया

→ गया और उसने लोगों में खबर फैला दी कि बाबा का देहांत हो गया। वहाँ से इस बारे में पूछताछ के लिए फोन आया तो इस खबर के बारे में मालूम हुआ।

मैंने कहा कि आपलोगों की परीक्षा होगी। जिस आनंद से आपलोग आज के दिन बाबा के लिए अपनी शुभ कामनाएँ व्यक्त करने के लिए यहाँ इकट्ठा हुए, उसी आनन्द से बाबा के जाने पर भी इकट्ठा होकर भगवान का स्मरण करेंगे और दुःख नही मानेंगे और मानेंगे कि बाबा ने अपना काम कर लिया है। अब हमें उनके काम को उठा लेना है, ऐसा जब बाबा देखेगा तो बाबा कहेगा कि पास हैं। •

संस्थावाद और सर्वोदय-क्रान्ति

—श्री धीरेन्द्र भाई से एक महत्वपूर्ण चर्चा—

प्रश्न : आज से १३-१४ साल पहले विनोबाजी ने कहा था कि सर्वोदय की क्रान्ति का अभियान तन्त्रमुक्त, निधिमुक्त तथा सर्वजन आधारित ही चलना चाहिए। सर्व सेवा संघ ने भी विनोबाजी के इस विचार को सर्वसम्मति से स्वीकार किया था, लेकिन अब तक उसके अमल का कोई प्रमाण नहीं हुआ। क्योंकि यह विचार अव्यवहार्य है। तब से आज तक आन्दोलन तन्त्र तथा निधियुक्त ही रहा। फिर अब आप कह रहे हैं कि इस युग में संस्थावाद की पद्धति बासी हो गयी है। उससे अब समाज नहीं चल सकता है। आप कहते हैं कि समाज को अपने आप संचालित होना चाहिए। जिसे आप "समाजवाद" कहते हैं। लेकिन ऐसा विचार रख कर मानव समाज के इतिहास को ही आप इनकार करना चाहते हैं। इतिहास के हर युग में सामान्य जनता ने हमेशा ही किसी-न-किसी 'एजेन्ट' के मार्फत अपना काम साधना चाहा है। पहले भी राजा, गुरु, पुरोहित, आदि के सहारे जनता का काम चलता रहा है। और उसके बाद अब राज्य संस्था, शिक्षण-संस्था सघटनो सेवा-कल्याण-संस्था, आदि संघटनों के सहारे चल रहा है। आपका आन्दोलन भी संस्थाओं के सहारे चल रहा है। इतना ही नहीं, जनता की चाह भी यही है। वह अपने आप समाज नहीं चलाना चाहती है। वह इतना ही चाहती है कि नेता और संस्था ईमानदार तथा योग्य हो। ऐसी हालत में क्या यह आवश्यक नहीं है कि आप लोग इस तरह अव्यवहारिक बातों को छोड़कर अपनी संस्थाओं को शुद्ध करने का प्रयास करें ?

उत्तर : मैं संस्थावाद का निराकरण केवल अपने आन्दोलन के लिए नहीं चाहता हूँ। समाज की प्रगति के लिए तथा इन्सान की मुक्ति के लिए मैं यह आवश्यक मानता हूँ कि समाज संस्थावाद से मुक्त हो। ऐसा कहने में मैं इतिहास को इनकार नहीं करता हूँ, बल्कि इतिहास की अगली कड़ी की ओर संकेत करता हूँ। इतिहास के प्रथम युग में जब मनुष्य-समाज ने राजा, नेता या गुरु का आविष्कार किया था, उस समय उनके सामने जो समस्याएँ थी, वे स्थानीय थी। वे सरल होती थी एवं थोड़े लोगों का धुनी थी। तब समाज की क्रियाशीलता को कुछ व्यक्तियों के हाथ में सौंप कर मनुष्य निश्चिन्त हो सकता था। लेकिन ज्ञान विज्ञान की प्रगति तथा मानव चेतना के प्रसार के साथ-साथ समाज की समस्याएँ जब जटिल होती गयी, तब व स्थानीय न रह कर व्यापक दायरे को घेरने लगी। इधर चेतन-समाज की परिधि बढ़ती रही। तब मनुष्य व्यक्तिगत रूप से समस्याओं के समाधान तक पहुँच नहीं सकता था। तब समाज की क्रियाशीलता के लिए और बड़ी एजेन्सी की आवश्यकता हुई। इसी आवश्यकता में से संस्थावाद का आविष्कार हुआ।

व्यक्तिवाद के विघटन का एकमात्र कारण समाज के क्रिया-कलापों की व्यापकता ही नहीं रहा। बल्कि प्रभुत्व-निष्ठा तथा भ्रष्टाचार के कारण कालक्रम से व्यक्तियों की शक्ति भी घटती गयी। उसी प्रकार आज के समाज को समाधान देने में संस्थाएँ भी असमर्थ हो रही हैं। शुरू-शुरू में संस्थाओं में जो नेतृत्व रहा है वह बदल कर प्रभुत्व में परिणत हो गया है। शुरू में छोटी संस्थाएँ थी, जिस कारण वे लोकजीवन के साथ अधिक समरस हो सकती थी तथा उनमें मानवीय चेतना का संचार होता रहता था। लेकिन सामाजिक आवश्यकताओं की व्यापकता के कारण जैसे-जैसे संस्थाओं का विस्तार होता गया वैसे-वैसे उनकी चेतना घटती गयी। और कुल मिलाकर आज संस्थाएँ भी प्रभुत्व-निष्ठ, भ्रष्टाचारी तथा जड़ हो गयी हैं।

दूसरी ओर समाज की समस्याएँ अति जटिल तथा उसकी चेतना सार्वजनिक हो गयी है। इसलिए आज मनुष्य को अपनी समस्याओं के समाधान के लिए सामुदायिक रूप से अपने क्रिया-कलाप चलाने पड़ेंगे। अब राज्य-संस्था, सेवा-संस्था, कल्याण-संस्था या शिक्षण-संस्था के सहारे बैठे रहने से उसका काम नहीं चलेगा। यही कारण है कि आज विनोबा ग्रामदान और ग्रामस्वराज्य को आगे बढ़ाना चाहते हैं, ताकि इन्सान संस्थावाद से निकल कर समाजवादी क्रियाशीलता का अधिष्ठान कर सके।

जब हम संस्थावाद की बात करते हैं तब हमें मानव इतिहास की कड़ी की एक भयावह परिस्थिति की ओर भी ध्यान देने की जरूरत है।

वस्तुतः इन्सान ने सेवक और सेवा-संस्थाओं का आविष्कार योंही नहीं किया था बल्कि कुछ आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए किया था। प्रारम्भ में जिन्दा रहने के लिए आवश्यक अन्न-वस्त्र के उत्पादन के औजार अत्यन्त निम्नकोटि के होने के कारण, पैदा करके जीना अत्यधिक कष्टकर तथा समय-सापेक्ष प्रक्रिया रही है। ऐसी स्थिति में मानव-प्रगति के लिए चिन्तन, मनन, अध्ययन, अध्यापन तथा सुरक्षा के लिए समय निकालना संभव नहीं रहा होगा, तो स्वाभावतः जनता ने योग्य तथा बुद्धिमान लोगों को चुनकर उन्हें उत्पादन के कठोर काम से मुक्त कर उनको सेवा के काम में लगाया तथा उनके गुजारे के लिए अपने उत्पादन में से थोड़ा-थोड़ा निकालकर पूरा करने लगे। इस प्रक्रिया में से नयी समस्याएँ निकली। उन सेवकों की जो सन्तानें थी, जिन्हें माता-पिता के कोमल तथा विशिष्ट जीवन जीने का अभ्यास हो गया था, उन्हें भी उसी प्रकार जीवन की सुविधाएँ आवश्यक हो गयी। अब यह अनिवार्य हो गया कि उनके लिए भी सेवा का ही नया-नया कार्यक्रम खोज निकाला जाए। इस तरह सेवक-वर्ग बढ़ते-बढ़ते आज इतने विशाल पैमाने पर जनता की

छाती पर फैल गया है कि वही मनुष्य के दमन और शोषण के लिए एक प्रमुख कारण बन गया है।

आपने इतिहास का जिक्र किया है। इसे यदि गहराई से समझेंगे तो पता लगेगा कि विश्व के सामान्य जन ने जब देखा कि सामन्त वर्ग उनका दमन और शोषण करनेवाला बन गया है तो उसने क्रान्ति कर उसके विघटन का प्रयास किया। लेकिन सामन्त वर्ग के विघटन के बाद जिस पूंजीपति वर्ग का विस्तार हुआ वह जनता की छाती पर और भी बड़ा बोझ बनकर बैठ गया। तब फिर प्रजा ने क्रान्ति कर उस वर्ग के विघटन का भी प्रयास किया। लेकिन उसके विघटन से जिस सेवक वर्ग के सहारे समाज चलता रहा, वह आज पूँजीपति वर्ग से अधिक व्यापक पैमाने पर जनता की छाती पर सबसे भारी बोझ बनकर उसे दबा रहा है। इसलिए आज के समाज की क्रान्ति सेवक वर्ग से मुक्ति की ही हो सकती है। यही कारण है कि गांधीजी संचालित समाज के स्थान पर सहकारी समाज की स्थापना करना चाहते थे। यही कारण है कि आप सब लोग शासन-मुक्त समाज चाहते हैं, और यही कारण है कि विनोबाजी ने हमारे आन्दोलन के लिए तन्त्रमुक्त तथा निधिमुक्त प्रक्रिया अपनाने को कहा था।

प्रश्न: आप का तर्क अकाट्य है, लेकिन जैसा कि आप ही कह रहे हैं अति प्राचीनकाल से जनता संस्था-आधारित ही रही है। अब आप एकाएक संस्था-मुक्ति की बात कर रहे हैं। आप कितना भी विकेन्द्रीकरण करें, कुछ-न-कुछ संस्था का ढाँचा तो रखना ही होगा।

उत्तर: जरूर रखना होगा, लेकिन समझना होगा कि वह संधिकालीन व्यवस्था है और हमारे काम की व्यूहरचना ऐसी करनी है, जिससे क्रमशः संस्थाओं की आवश्यकता न हो। संस्थाओं में भी कदम-दर-कदम क्रान्ति के लक्ष्य की दिशा में नित्य नया मोड़ लाना है। यद्यपि हमने इसकी आवश्यकता को हमेशा स्वीकार किया है, फिर भी हमने इस दिशा में आगे बढ़ने का कभी प्रयास नहीं किया है। वस्तुतः जब तक हमारी मान्यता इस दिशा में नहीं बदलेगी तब तक कभी गम्भीर प्रयास नहीं होगा। अभी तक हुआ भी नहीं है। १९४४-४५ में गांधीजी की प्रेरणा से चर्खा संघ ने नव संस्करण का प्रस्ताव सर्वसम्मति से स्वीकार किया था लेकिन प्रस्ताव के अनुसार अमल का प्रयास नहीं किया गया। १९५७ में हिन्दुस्तानी तालीमी संघ ने गांधीजी की समग्र नयी तालीम को रूपान्तरित करने के लिए सर्व-सम्मति से यह प्रस्ताव स्वीकार किया था कि अब पूरे गाँव को शाला मानकर समग्र नयी तालीम का काम किया जाय लेकिन इस बिन्दु पर भी हमने प्रस्ताव ही स्वीकार किया, अमल का प्रयास नहीं किया। इसी तरह १९५८ में पवनी की बैठक में सर्व सेवा संघ ने सर्वसम्मति से यह प्रस्ताव स्वीकार किया कि अपने लक्ष्य के अनुरूप आन्दोलन की प्रक्रिया के लिए तन्त्रमुक्ति तथा निधिमुक्ति के सिद्धान्त को स्वीकार किया जाय। लेकिन इस प्रस्ताव के अमल के लिए भी कोई गम्भीर प्रयास नहीं किया गया। अगर कुछ प्रयास हुआ भी तो उल्टी दिशा में हुआ। हमने नीचे की भूदान समितियों को बन्द कर दिया लेकिन ऊपर के सर्व-सेवा संघ को कायम रखा। जो ऊपर मार्गदर्शन करनेवाले लोग थे वे तो तन्त्र से बंधे रहे, पर नीचे के सामान्य कार्यकर्ताओं को तन्त्रमुक्त कर दिया। नतीजा यह हुआ कि वे कार्यकर्ता दिशाहारा होकर खादी ग्रामोद्योग संघ, गांधी निधि, आदि निधि तथा तन्त्र-प्रधान संस्थाओं में प्रवेश करने के लिए बाध्य हो गये। अगर भूदान समितियों के साथ-साथ हम सर्व सेवा संघ को भी विसर्जित कर देते तो जो बड़े कार्यकर्ता थे वे नीचे के कार्यकर्ताओं के साथ मिलकर भूमे रहकर भी मार्ग खोजने के काम में लग सकते थे। दुर्भाग्य से वैसा नहीं हुआ।

सो अभी अगर हम संस्थाओं में रहकर तथा संस्थाओं के माध्यम से काम चला रहे हैं, तो उसका कारण यह नहीं है कि तन्त्रमुक्ति, निधिमुक्ति

ऊँचा दावा : सामूहिक साधना

ऊँचा दावा : सर्वोदय जैसी हृदय-परिवर्तन का दावा करनेवाली विचार-पद्धति जिन्होंने अपना ली, उनलोगों ने शंकराचार्य, बुद्ध, गांधी जैसे पुराने संतों से भी अधिक गहराई में जाने की प्रतिज्ञा की। समाज-रचना बदलनी है, पूरा का पूरा जीवन-परिवर्तन करना है, नया विश्व-मानव बनाना है—यह तो ब्रह्मदेव की भाषा है, किसी सामान्य प्राणी की नहीं। ऐसी भाषा जब हम बोलते हैं, तो हमें आध्यात्मिक गहराई में जाना होगा। हम गहराई में नहीं जाते हैं, आत्मतत्त्व का संशोधन नहीं करते हैं, स्वाध्याय नहीं करते हैं, तो अपनी अपेक्षित कल्पना से उलटे परिणाम लानेवाले साबित हो सकते हैं।

सामूहिक साधना : जो सामुदायिक वही साधना। सामुदायिक सेवा ही व्यक्तिगत साधना होनी चाहिए। परन्तु इससे भी मेरे विचारों का समाधान नहीं होता। सामुदायिक सेवा भी सामुदायिक साधना के स्वरूप में होनी चाहिए। समुदाय की भौतिक उन्नति की चिन्ता करना पर्याप्त नहीं होगी। उसकी भौतिक, नैतिक, आध्यात्मिक उन्नति की सेवा ही सेवा है। ऐसी सेवा को साधना का स्वरूप प्राप्त होता है। उसके पेट में—और पेट में ही रह सकती है।

—विनोबा

अव्यावहारिक है, बल्कि यह है कि हम उस दिशा में कदम उठाने के खतरों का सामना करने की हिम्मत नहीं किये। हमने ऐसी हिम्मत नहीं की, क्योंकि हम संस्थाओं के अन्दर खुद फँसे रहे। इसलिए बावजूद सब कुछ के हमारा कार्यक्रम आन्दोलन का रूप नहीं ले रहा है।

प्रश्न : आप की कितनी बातें तो समझ में आती हैं लेकिन आप जो कहते हैं कि संधि-काल में यद्यपि संस्थाओं का सहारा रहेगा, फिर भी हमको संस्थाओं के आकार और प्रकार को निरन्तर इस ढंग से मोड़ना होगा जिससे युग की माँग के अनुसार संस्था मुक्ति सध सके। उस मोड़ की दिशा और उसका स्वरूप क्या होगा ?

उत्तर : आज संस्थाओं का दायरा जो बढ़ रहा है, उसे समाप्त करना होगा। समाज की माँग बढ़ने के साथ-साथ संस्थाओं का प्रसार होता गया था और वह अब पराकाष्ठा पर पहुँच गया है। यानी संस्थाएँ राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय रूप ले रही हैं। ये संस्थाएँ इतनी अधिक दृढ़ हो गयी हैं कि अब इनका रुख मोड़ना सम्भव नहीं होगा। अतएव जो शासन-मुक्त तथा स्वतंत्र लोकशक्ति के अधिष्ठान की क्रान्ति करना चाहते हैं, उन्हें नयी क्रान्ति की प्रक्रिया से नयी कल्पनाओं और नमूनाओं का अलग नये केन्द्रों का गठन करना होगा। मैंने नयी 'संस्था' नहीं कहा, 'केन्द्र' कहा है ताकि पुराने व्यापक संस्थाओं के स्थान पर स्वतंत्र तथा स्वायत्त छोटे-छोटे केन्द्र का फर्क स्पष्ट हो। बड़ी-बड़ी संस्थाओं के स्थान पर छोटे केन्द्र के अधिष्ठान का मतलब यह नहीं है कि तथाकथित विकेन्द्रीकरण की पद्धति से बड़े केन्द्रों को तोड़कर छोटे-छोटे केन्द्रों में बाँट दिया जाय।

इस प्रकिया का उल्लेख कर विनोबाजी ने ठीक ही कहा था कि "पत्थर को इकट्ठा कर देने से वह ढेर होगा लेकिन पत्थर ही रहेगा।" अतएव क्रान्ति के आधार के रूप में जिन नये केन्द्रों का संघटन करना होगा, उनका जन्म नयी क्रान्ति के कोख से ही होना चाहिए। यह हुआ इन केन्द्रों के स्वरूप में भेद की बात। नये केन्द्रों के प्रकार में भी फर्क करना होगा। पुरानी संस्थाओं द्वारा समाज का कल्याण, सेवा तथा अन्य विभिन्न कार्यक्रमों का संचालन होता रहता है। क्रान्ति के केन्द्र का रोल भिन्न होगा। उसका काम सेवा नहीं होगा, न नाना कार्य या व्यवस्था नहीं होगा और न समाज को विकास का साधन मुहैया कर देना होगा। ये केन्द्र निरन्तर प्रयास करेंगे कि जनता अपने सामूहिक चिन्तन, निर्णय तथा पुरुषार्थ से सब प्रकार के काम को चलाये। ये उन्हें समुचित सलाह देंगे। धीरे-धीरे ऐसे केन्द्रों का रोल केवल लोकशिक्षण का ही रहेगा, संघटन का काम दमन भी जनता के स्वयं नेतृत्व द्वारा ही होगा।

केन्द्रों के प्रकार में एक दूसरा परिवर्तन आवश्यक है। अब तक समाजवादी क्रान्ति की वाहक संस्थाएँ सामन्तवादी और पूँजीवादी मूल्यों के आधार पर चलती रही हैं। इन संस्थाओं में भी उसी तरह के दर्जे बने रहते हैं जैसे सामन्तवादी और पूँजीवादी समाज में होते हैं। इन संस्थाओं में भी कोई अधिकारी होता है तो कोई मातहती कार्यकर्ता। पारिवारिक आवश्यकताएँ समान होने पर भी मातहती कार्यकर्ता से अधिकारी का वेतन अधिक होता है। हमारे सर्वोदय विचार की वाहक संस्थाओं में भी यही परिपाटी है। यहाँ-वहाँ वेतन की समता का विचार जरूर माना है लेकिन वहाँ भी अधिकारी लोग अपने लिए इतनी सहूलियतों का निर्माण कर लेते हैं कि वेतन-समता द्वारा साम्य भावना का अधिष्ठान शून्य हो जाता है। क्रान्ति के केन्द्र में साम्ययोग के मूल्य का अधिष्ठान होना चाहिए। वहाँ कोई अधिकारी और मातहत नहीं होना चाहिए। जिसपर जो जिम्मेदारी हो, उसे कार्य-विभाजन मानना चाहिए। अगर हम श्रम-मूलक समाज की स्थापना करना चाहते हैं तो जो मार्गदर्शक कार्यकर्ता होगा, वह सबसे अधिक श्रम कर रहा है, ऐसा दर्शन होना चाहिए। ●

प्रश्न आपका : उत्तर हमारा

प्रिय भाई

आप सब जो लोग ग्रामस्वराज के काम में लगे हैं उन्हें अब तक यह महसूस हो गया होगा कि, आज ग्राम-स्वराज के विचार को और अधिक गहराई से समझने की आवश्यकता है। उसके लिए गाँव के लोगों को समझा कर साहित्य बनाने की भी आवश्यकता है। मैं इधर कुछ दिनों से उसी का प्रयास कर रहा हूँ।

अतएव आप सब भाई-बहन जनता के प्रश्नों और शंकाओं के लिए एक नोट-बुक रखा करें और कोई शंका या प्रश्न उठते ही तुरन्त नोट कर लें। एक पखवाड़े में जितने प्रश्न नोट हों, उन सबको एक पत्र में लिखकर यहाँ मेरे पास भेज दें। आप मन में भी यदि कोई शंका या प्रश्न उठे तो, उसे भी लिख भेजें। हर १५ दिन पर इस प्रकार से जो शंकाएँ और प्रश्न मिलेंगे उनका समाधान लिखकर पुस्तिका के रूप में छापने का प्रयास होगा।

साथ ही आपके क्षेत्र में और जो साथी, चाहे व किसी संस्था के हों या स्वतंत्र नागरिक हों, आपके सम्पर्क में आयें और जो आप के काम में कुछ रुचि लेते हों, उन्हें भी प्रश्नों को नोट करके मेरे पास भेजने के लिए प्रेरित करें।

सस्नेह आपका,
धीरेन्द्र भाई
बिहार ग्रामस्वराज समिति, विनोबा आश्रम
गइरसा (बिहार)

भूमि सुधार कानून : एक सुझाव

सेवा में,

श्री ए० पी० शिन्दे,
कृषि राज्य मंत्री
केन्द्र सरकार, नयी दिल्ली

महाशय,

सर्वोदय कार्यकर्ता और सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष की हैसियत से हम भूदान-ग्रामदान-आन्दोलन विनोबाजी के मार्गदर्शन में चलाते हैं। 'सेन्ट्रल लैण्ड रिफार्म्स कमिटी' ने जो सिफारिश की है कि सभी राज्यों में जमीन की सीलिंग एक समान हो और उसकी घोषणा आपने जो राज्य-सभा में की, मैंने उसे दिलचस्पी के साथ पढ़ा। इन सिफारिशों को राज्य यदि प्रभावकारी ढंग से और यथासंभव शीघ्रातिशीघ्र कार्यान्वित करें तो इससे करोड़ों श्रमिकों को लाभ होगा, यह सोचकर खुशी होती है। सर्वोदय आन्दोलन यह चाहता है कि जमीन का ग्रामीकरण हो। यह होता है ग्रामदान के द्वारा, जब गाँववालों में से अधिकांश (कम से कम तीन चौथाई लोग) अपनी-अपनी जमीन की मालकियत ग्रामसभा के नाम दे देते हैं। ग्रामसभा में गाँव के सभी बालिग सदस्य रहते हैं। ग्रामदान-आन्दोलन सारे भारत में फैलता जा रहा है। लोगों को यह लक्ष्य स्वीकार करने को हमलोग जन-सम्पर्क करके कह रहे ही हैं। फिर भी इस लक्ष्य की सिद्धि के लिए सरकार जो कानून बनाती है, हमलोग उसका स्वागत करते हैं। हमलोग आपका ध्यान निम्नलिखित ६ बातों की ओर खींचना चाहते हैं जिससे राज्यों के जमीन-सुधार कानूनों द्वारा लोगों को अधिकतम लाभ मिल सकें।

१—शिक्षा ज्यों-ज्यों फैलती जा रही है, कार्यालयों की नौकरी, औद्योगिक प्रतिष्ठानों, पेशों (वकालत, डाक्टरी आदि), व्यापार आदि से विस्तृत मौकों के द्वार खुल रहे हैं। इनकी नकद कमाई से छोटे, मध्यम और बड़े आकार के ऐसे मालिक हर साल बढ़ते जा रहे हैं जो खुद अपने हाथों खेती नहीं करते। ऐसे लोग जो खुद खेत जोतते नहीं हैं, पर खेतों के मालिक हैं वे देश की प्रगति में बाधा स्वरूप हैं। नतीजा यह है कि खेती करनेवाले दिनोदिन भूमिहीन बनते जा रहे हैं। शिक्षक, क्लर्क, कान्सटेबल आदि निम्न-मध्यम वर्गीय लोगों और उनके ऊपर वाले सतह पर व्यवसायी, डाक्टर, इंजीनियर, वकीलों और ऊँचे अफसरों के हाथों में जो जमीन है उस कारण गाँव की अर्थव्यवस्था और उलझ जाती है।

इसलिए जमीन पर से वैसे मालिकों का बोझ हटा देना, जो खुद खेती नहीं करते, उसी तरह अति आवश्यक है जैसे जमींदारी का मिटाना आवश्यक था। पेशावाली और व्यवसायवाली यह जमींदारी पुरानी सामन्तवादी जमींदारी की तुलना में भूमिहीन किसानों को अधिक चौपट कर रही है। कारण यह है कि इनकी संख्या लाखों में है और इनके विलास और आराम एवं श्रम से विमुख रहने की माँग नित्य नये-नये ढंग से बढ़ती ही जाती है। इसलिए जमीन पर सिर्फ मालिकी रखनेवाले बीचवैयों को समाप्त करने के लिए उपयुक्त कानून बनाये जाने चाहिए। तभी स्वयं खेती न करनेवालों के हाथ से जमीन निकाली जा सकेगी और वह खुद खेती करनेवाले भूमिहीनों को दी जा सकेगी।

२—अधिकतर राज्यों में किसानों की परिभाषा स्पष्ट नहीं है। पट्टे पर जमीन सिर्फ भूमिहीन जोतदार किसानों को ही दी जानी चाहिए। परन्तु इस समय खुद खेती करने की जो परिभाषा है, सफेदपोश पेशेवाले लोग जैसे वकील, इंजीनियर, व्यवसायी आदि भी यह दावा कर सकते हैं कि वे खेतों करनेवाले किसान हैं। परिभाषा यह है कि जो आदमी खुद श्रम करता है अथवा अपने परिवार के सदस्यों के श्रम से खेती करवाता है वह किसान है। इसके मुताबिक अपने कार्यालय के निर्धारित समय के पहले और बाद में कुछ क्षणों तक खेत में जाकर देखभाल कर लेनेवाला कोई सरकारी कर्मचारी भी यह दावा कर सकता है कि वह किसान है। खुद से खेती करने की परिभाषा में यह निर्धारित किया जाना चाहिए कि रोज कम-से-कम ६ घंटा शरीर-श्रम करना आवश्यक है। तब किसानी के नाम पर जो जमीन का झूठा बन्दोबस्त हुआ है वह इससे समाप्त हो जायगा और भूमिहीन किसानों के लिए हजारों एकड़ जमीन उपलब्ध हो जायगी।

३—ट्रस्टों, धार्मिक संस्थानों, सहयोग समितियों के सदस्य आदि सब की सीलिंग के बाहर जमीन की छूट समाप्त कर दी जानी चाहिए। तब जमीन के सीलिंग सम्बन्धी कानून प्रभावकारी हो सकेंगे।

४—जमीन की सीलिंग किसी भी हालत में प्रति परिवार, जिसमें ५ सदस्य से अधिक हैं, सिंचाई वाली दो-फसला जमीन की १० एकड़ से अधिक न हो और पांच सदस्य तक की संख्यावाले परिवार में यह ५ एकड़ हो।

५—आर्थिक और दूसरी मदद जो दी जाती है उसमें उन गाँवों को प्राथमिकता दी जानी चाहिए जो मालकियत एक साथ रख रहे हैं या उन खेतिहरों को देनी चाहिए जो सहयोग से खेती करते है।

६—प्रखण्ड स्तर पर खुले कोर्ट स्थापित किये जाने चाहिए जिनमें सरकारी और गैरसरकारी व्यक्ति रहें। जमीन की सीलिंग, टेनेन्सी, उचित मालगुजारी, मजदूरी आदि सम्बन्ध में जो झगड़े उठें, वे इन्हीं कोर्टों में निपटा दिये जायें।

हमको उम्मीद है कि 'सेन्ट्रल लैण्ड रिफार्म्स कमिटी' इस प्रस्ताव पर विचार करेगी और राज्यों को प्रभावकारी 'लैंड सीलिंग' कानून बनाने की राय देगी।

—एस० जगन्नाथन्,
अध्यक्ष, सर्व सेवा संघ

बंगला देश के शरणार्थियों के बीच

उड़ीसा के एक राहत-दल द्वारा हुए सेवा कार्यों की रपट

बंगला देश के शरणार्थियों की सेवा करने उड़ीसा की रिलीफ पार्टी में १० डाक्टर (हाउससर्जन), ८ सहायक (मुख्यत: कस्तूरबा ट्रस्ट की प्रशिक्षित सेविकाएँ) और १४ स्वयं-सेवक थे, जो मुख्यत: रचनात्मक कार्यकर्ता थे। रमादेवी चौधरी टोली के साथ थीं। यह रिलीफ टोली २६ जून की रात को पश्चिम दिनाजपुर जिले का मुख्यालय बालु घाट पहुँची। जिला मजिस्ट्रेट और जिला स्वास्थ्य पदाधिकारी से राय-मशविरा करके २७-६-७१ से टोली काम में जुट गयी। इनमें सात को रायगंज में और शेष को हीली प्रखण्ड के शरणार्थियों और गाँवों की सेवा में लगाया गया।

पृष्ठभूमि : हैजा, डायरिया, डिसेन्ट्री आदि रोग महामारी के रूप में वहाँ फैले हुए थे। हजारों शरणार्थियों के लिए दवाई की कोई व्यवस्था नहीं थी। सैकड़ों शरणार्थी रोज मर रहे थे। हीली प्रखण्ड की जनसंख्या मात्र ४३,००० है। परन्तु करीब १,५०,००० शरणार्थी वहाँ आ चुके हैं। इनमें से अधिकांश मुसलमान हैं। हीली प्रखण्ड एकदम समतल और उपजाऊ क्षेत्र है। यहाँ धान और जूट के उर्वर खेत हैं। इसके तीन तरफ पूर्वी पाकिस्तान है। विभाजन के पहले यह व्यापार का बहुत ही चालू केन्द्र था। चावल की यहाँ १६ मीलें थीं। परन्तु विभाजन की सीमा रेखा बहुत गड़बड़ है। बहुत परिवारों के घर इस पार भारत में है तो बैठक, रसोई घर, गोशाला, खलिहान, कब्रिस्तान, श्मशान आदि उस पार पाकिस्तान में। यही हाल उधर के परिवारों का है। इस प्रखण्ड का पूर्वी पाकिस्तान के साथ २४ मील की सीमा लगी हुई है। जिसमें ४ मील का तो फैसला अभी भी होना बाकी है।

हमारा तत्कालीन लक्ष्य था महामारी रोकना। सबको सुई दी गयी, पीने के पानी के स्रोत को कीटाणु-मुक्त किया गया, शरणार्थियों की झोपड़ियों और ग्रामीणों के घरों में दवाइयाँ छिड़कवायी गयीं। उड़ीसा रिलीफ पार्टी ने १८,६११ व्यक्तियों को हैजे की सुई दी, ५७८ कूओं में दवाई डाली, शरणार्थियों के सभी झोपड़ियों और कैम्पों में और अधिकतर ग्रामीणों के घरों में कीटनाशक दवाई छिड़की। तीन गाँवों की सफाई की, ६ चापाकल (ट्यूबवेल) मरम्मत किये। ५ हजार रोगियों को दवाएँ दीं। मुख्य रोग ये थे हैजा, डायरिया, पुराने आँव, टायफायड, निमोनिया, एनीमिया, नेफ्राइटिस, श्वास के रोग तथा बच्चों के तरह-तरह के रोग।

उड़ीसा और गुजरात की टीम ने मिलकर ४७ गाँवों और शिविरार्थी शिविरों की विस्तृत और सघन सफाई की। कुछ शिविरार्थियों ने स्वयं-सेवकों की सहायता की। २,३६५ बच्चों को पाउडर दूध और मल्टी चिल्ड्रेन फुड दिये जाते थे। २,२०० शिविरार्थियों को साबुन की टिकिया दी गयी। १०,०० साड़ियाँ बाँटी गयीं। ये सामान आक्सफैम ने दिये।

हीली प्रखण्ड का क्षेत्रफल करीब ३५ वर्गमील है। उसके ८२ गाँवों में से ७९ गाँवों में हमारा कार्यक्षेत्र था। सीमा पर के गाँवों पर खास ध्यान दिये जाने की आवश्यकता है।

सीमा पर की चौकियों के कारण हमारे स्वयं-सेवकों को बहुत कठिनाई होती थी। हमारी स्वयं-सेविकाएँ भी चेक-पोस्ट, फौज, ट्रेंचों और खाईयों की कठिनाईयों के बीच शरणार्थियों और ग्रामीणों के स्वास्थ्य की सेवा कर रही हैं। पूरे सेवा-दल के लोग उत्साह, हिम्मत, कौशल के साथ तेजी से काम में जुटे हैं।

हीली प्रखण्ड के लोगों का मनोबल काफी ऊँचा है। वे यह महसूस करते हैं कि अन्यायियों द्वारा सताये और भगाये गये लोगों को शरण देकर वे न्याय का पक्ष ले रहे हैं। उन्हें अपने धर्माचरण पर

—है। पिछले दस वर्षों में जनसंख्या में १० करोड़ ८० लाख की वृद्धि हुई है।

बंगला देश से भागकर ८० लाख शरणार्थी भारत आये हुए हैं। वे बेघर-बार हैं, बिना रोजी-रोजगार के हैं। उनके कष्ट से द्रवित हो कर भारत ने उन्हें शरण दी है और उनकी परवरिश कर रहा है। भारत के इस नेक काम में कई देशों के लोगों ने थोड़ी-थोड़ी सहायता दी है। पर कुल मिलाकर सबसे बड़ा बोझ भारत को ही उठाना पड़ रहा है। ८० लाख लोगों को पोसने का यह बोझ कितना भारी पड़ रहा है, विस्थापितों पर खर्च होनेवाले पौने दो करोड़ रुपये प्रतिदिन के खर्च से इसे कूता जा सकता है।

भारत की जनसंख्या हर साल एक करोड़ से अधिक के हिसाब से बढ़ रही है। बच्चे जब तक जवान नहीं होते तब तक उनके दो हाथ काम करनेवाले हैं नहीं, उनके मात्र एक मुँह को उतना भोजन तो चाहिए ही जिससे वे बच सकें, बढ़ सकें। बढ़ने पर जब तक उन्हें काम नहीं मिलता, तब तक भी उन्हें भोजन-वस्त्र चाहिए। इस बोझ की कल्पना कीजिए।

जैसा कि आप जनसंख्या वृद्धिवाले चार्ट में देख चुके हैं। भारत की जनसंख्या १९६१-७१ की दशक में २४-६६ प्रतिशत के हिसाब से बढ़ी है, जब उसके पहले की दशक १९५१-६१ में यह वृद्धि २१-६४ प्रतिशत थी और १९४१-५१ की दशक में यह वृद्धि मात्र १३-३१ प्रतिशत थी। यानी वर्तमान दशक की वृद्धि की दर इससे लगभग दूनी है।

जन-संख्या का यह विस्फोट क्या सिर्फ सरकार का ही सिरदर्द है? क्या कभी इस पर आप सोचते हैं?

—हेमनाथ सिंह

विज्ञान : वरदान भी, अभिशाप भी

भारत में जितनी मोटर गाड़ियाँ चलती हैं उनका दसवाँ हिस्सा एक सौ में आठ, बम्बई में है। वृहद् बम्बई का क्षेत्रफल भारत का मात्र ०·१५ प्रतिशत है। इसका अर्थ यह हुआ कि पूरे भारत में उतने बड़े क्षेत्र में औसत जितनी मोटर गाड़ियाँ हैं उनसे ५३० गुना अधिक बम्बई में है।

बड़े-बड़े कारखानों के और मोटर गाड़ियों के धूओं में ये पदार्थ मिले रहते हैं। सल्फर डायक्साइड, कारबन मोनोक्साइड, हाइड्रोजन सल्फाइड, हाइड्रोकारबन, अमोनिया और लेड गैस। इनमें से साँस लेने से अनेक शारीरिक व्याधियों के साथ-साथ कैंसर तक हो जाता है।

वायु को दूषित करने में कारखानों और मोटर गाड़ियों का हाथ सबसे अधिक रहता है। कूड़े कचड़े, तेलों की गैस तथा गैसोलिन से भी वायु दूषित होती है। नये-नये रासायनिक पदार्थों के निर्माण के क्रम में—जैसे टेरेलिन आदि, आश्चर्यजनक गति से प्रभाव डालनेवाली दवाइयों आदि के निर्माण के काम में वायु अधिक तेज गति से दूषित होती है।

वायु को दूषित करनेवाले इन पदार्थों के कारण वायु दिन में तीन गुणा अधिक तेजी से रात में दूषित होती है। इसका एक कारण तो यह भी हो सकता है कि दिन में वायु की गति तेज रहने के कारण दूषित पदार्थ अधिक तेजी से बिखर जाते हों।

दूषित पदार्थों के कण वायु में इकट्ठे होते रहते हैं। एक सीमा से अधिक बढ़ने पर मनुष्य के स्वास्थ्य को प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से हानि पहुँचाते हैं। श्वास के अलावे ये पदार्थ भोजन और पानी द्वारा शरीर में पहुँच कर नुकसान पहुँचाते हैं।

वायु का दूषण मुख्यतः सूर्य की किरणों द्वारा दूर किया जाता है। पर दूषण की गति जब तेज हो जाती है तब परिवेश में दूषित पदार्थों के इकट्ठे होते रहने से पूरे जीव समुदाय पर, दीर्घकालीन हानिकारक असर पड़ता है।

भाभा एटोमिक रिसर्च सेन्टर के एक विभाग ने अध्ययन द्वारा उपरोक्त बातें बताती है।●

→गौरव और बल महसूस होता है। वे शांत भाव से अपने काम में लगे हैं। उनके बच्चे 'आमार सोनार बांग्ला' (बंगला देश का राष्ट्र गीत) गाते हैं।

सीमा पार पाकिस्तान में जले घर, उजड़े परिवार, भयानक सूनापन, उपजाऊ जमीन परती पड़ी हुई और उसमें काँटे, घास-फूस उगे दीख पड़ते हैं। बड़ा ही दर्दनाक दृश्य है। यह सब कृत्य पाकिस्तानी फौजियों का है। होली पर भी अप्रैल, '७१ में उन्होंने तीन दिनों तक गोलाबारी की। शिविरार्थियों से रोज पाकिस्तानी फौजियों और समाजविरोधी तत्वों द्वारा ढाये गये अत्याचारों की जो कहानियाँ हम लोग सुन रहे हैं, उनसे रोंगटे खड़े हो जाते हैं।●

शस्त्र से लदे पाकिस्तानी जहाजों के सामने धरना

पाकिस्तान भेजे जानेवाले अमेरिकी हथियार से लदे दो जहाजों का मार्ग क्रमशः १४-१५ जुलाई को बाल्टीमोर में और २३ जुलाई को न्यूयार्क में अवरुद्ध किया गया। पद्मा नामक पाकिस्तानी जहाज जब बाल्टीमोर पहुँचा तब छोटी-छोटी नावों द्वारा घेर लिया गया। सात नाविकों को यह कह कर गिरफ्तार कर लिया गया कि वे जहाज के रास्ते में अवरोध डाल रहे हैं और पुलिस अफसर को अलग कर रहे हैं। धरना देनेवालों ने बन्दरगाह पर भी धरना दिया।

लेकिन बड़ी बात तो यह थी कि मजदूर संघ के सदस्यों ने धरना देनेवालों को साथ कर जहाज पर सामान लादने से इनकार कर दिया। दो दिनों के बाद हार कर, पद्मा को बाल्टीमोर से सैनिक सामग्री लिए बिना ही रवाना होना पड़ा।

२३ जुलाई को सलजट नामक पाकिस्तानी जहाज जब न्यूयार्क पहुँचा तब इसके आगे भी जल और स्थल मार्ग से धरना दिया गया। यहाँ नाविकों को गिरफ्तार नहीं किया गया। परन्तु मजदूरों ने यहाँ यूनियन की बात नहीं मानी और जहाज पर हथियार लादने को आगे बढ़े। जो लोग धरना दिये हुए थे करीब आध घंटे तक उन्होंने इन मजदूरों को समझाया। उनके पर्चों में यह जिक्र था हाल के वर्षों में ११ राष्ट्रों का 'कन्सोर्टियम' (सहयोग के निमित्त समूह) जो पाकिस्तान को सहायता दे रहा है, अमेरिका उनमें एक है। अमेरिका को छोड़ कर सब राष्ट्रों ने यह निर्णय लिया है कि पाकिस्तान को दी जानेवाली सारी मदद तब तक स्थगित रखी जाय जब तक पूर्व बंगाल की स्थिति में सुधार न हो जाय। अमेरिका उनका साथ नहीं दे रहा है।

बन्दरगाह के द्वार पर बंगला देश के उन दो लाख शहीदों की आत्मा की शान्ति के लिए प्रार्थना की गयी जिनको पाकिस्तानी फौजियों द्वारा २५ मार्च से उस समय तक मारे जाने की खबर थी।

'पूर्वी बंगाल के मित्र' नामक संगठन द्वारा दोनों जहाजों के खिलाफ धरना देने का यह आयोजन किया गया था। १४ अगस्त (पाकिस्तान जन्म दिवस) को राष्ट्र संघ के सामने 'पूर्वी बंगाल के मित्रों' ने एक जन प्रदर्शन किया।

—डब्लू० आर० आइ० न्यूज लेटर से

ओमेगा के चारों गिरफ्तार सदस्य रिहा

तारीख १७ सितम्बर को बी० बी० सी० से प्राप्त सूचना के अनुसार 'ऑपरेशन ओमेगा' के चारों सदस्य पाकिस्तानी जेल से रिहा कर दिये गये हैं, और उन्हें बंगला देश से बाहर चले जाने का आदेश दे दिया गया है।

ज्ञातव्य है कि वे लोग बंगला देश में राहत सामग्री बाँटने के लिए प्रवेश करने के जुर्म में पाकिस्तानी सेनाधिकारियों द्वारा गिरफ्तार किये गये थे।●

तमिलनाडु भूमि सुधार कानून : समस्याएँ और समाधान

तमिलनाडु सरकार के राजस्व मंत्री को दिया गया भूमि सुधार सम्बन्धी एक ज्ञापन

[पूरे भारत में जमीन की हदबन्दी में एकरूपता लाने का प्रस्ताव केन्द्र सरकार ने राज्य सरकारों के सामने रखा है। इस अवसर पर तमिलनाडु सर्वोदय मण्डल ने 'तमिलनाडु लैण्ड सीलिंग ऐक्ट' का गहराई से अध्ययन कर राज्य सरकार के सामने सुधार सम्बन्धी ब्योरेवार व्यावहारिक सुझाव रखा है। इसे हम इस दृष्टि से प्रकाशित कर रहे हैं कि अन्य राज्यों के सर्वोदय मण्डलों के मित्र भी राज्य की सरकारों के सामने इस तरह के सुझाव रखें।]

सर्वोदय आन्दोलन यह चाहता है कि जमीन और उत्पादन के साधन पर समाज का अधिकार हो, व्यक्ति का नहीं। इस तरह हमलोग जमीन की व्यक्तिगत मालिकी के पक्ष में नहीं हैं। हम यह मानते हैं कि इस लक्ष्य की सिद्धि मात्र कानून बनाने से नहीं, बल्कि मुख्यत लोगों के प्रेम, न्याय और नैतिक चेतना को जगाकर उनके द्वारा स्वेच्छया समर्पण से हो सकती है। इस लक्ष्य की सिद्धि के लिए सर्वोदय कार्यकर्ता पूरे देश में ग्रामदान आन्दोलन—गाँव की जमीन की मालकियत ग्रामसभा की—का विचार फैला रहे हैं।

फिर भी तमिलनाडु सर्वोदय मंडल भूमि सुधार कानून का स्वागत यह मानकर करता है कि खेती लायक जमीन की मालकियत की अखरनेवाली विषमता को घटाने और उसी क्रम में कुछ लोगों के हाथ में ऐसी जमीन को एकत्र हो जाने से रोकने का यह अन्तरिम उपाय है। लेकिन हमें यह कहते हुए दुःख होता है कि 'मद्रास लैण्ड रिफार्म्स : फिक्सेसन ऑफ सीलिंग आन लैण्ड : एक्ट १९६१, में कुछ ऐसी व्यवस्था (धाराएँ) है—खास कर नवें अध्याय में जमीन रखने की छूट सम्बन्धी—जिससे उस कानून का उद्देश्य ही विफल हो जाता है। गाँवों में रहकर हम लोग सतत काम कर रहे हैं। गाँव-वालों से हमारा नजदीक का सम्पर्क होता है। पदयात्राओं में हम गाँवों का हाल देखते हैं। उस पर से हमें जो अनुभव आये हैं उनको ध्यान में रखकर हम यह सुझाव दे रहे हैं। इसलिए हम यह महसूस करते हैं कि जो सुझाव दे रहे हैं, उनपर यदि अमल किया जाय, तो वे इस कानून के उद्देश्य की सिद्धि में सहायक होंगे।

यह बात सही है कि लैण्ड सीलिंग ऐक्ट के लागू होने के बाद भी खेती वाली जमीन की मालकियत में विषमता रह गयी। ऐसी जमीन कुछ लोगों की मुट्ठी में सिमट गयी। इससे खेती से सम्बन्धित सबको नुकसान हुआ। चौथी योजना के मूल्यांकन के लिए जो कागजात संसद में रखे गये उनमें भी यह स्वीकार किया गया है कि "लक्ष्य और कानून के बीच में बहुत अन्तर रह गया है, उसी तरह कानून और उसके कार्यान्वयन की दूरी भी बहुत रह रही है।" यह बात खास तौर पर सही है, कारण कानून की कुछ धाराएँ उद्देश्य को विफल करने वाली हैं। जमीन रखने और हस्तान्तरित करने की जो छूट हदबन्दी कानून में रखी गयी है उसका उपयोग उसके उद्देश्य को विफल करने में किया जाता है।

तमिलनाडु लैण्ड रिफार्म्स ऐक्ट में इन अनेक छूटों और संशोधनों के कारण वह कानून इतना ढीला पड़ गया है कि इससे भूमिहीनों में बाँटने के लिए बहुत जमीन मिलने की सम्भावना रही नहीं। इस कानून की विफलता से उन किसानों की आशाएँ तो मिट्टी में मिल गयी हैं जो यह तमन्ना लिये बैठे थे कि जिस जमीन को वे पुश्त-दर-पुश्त से जोतते आ रहे हैं अब वे उसके अधिकारी हो जायेंगे।

गाँव के ये लोग युग-युग से शोषित और सामाजिक दुर्व्यवस्थाओं से पीड़ित हैं। उनकी बेहद गरीबी और पिछड़ापन हृदय विदारक है। हर राज्य से जो न्यूनतम अपेक्षा की जाती है वह यह है कि योजना आयोग ने भूमि सुधार सम्बन्धी जो सुझाव दिये हैं उनको—खासकर जमीन के बीचवैयों को समाप्त करना, मालगुजारी घटाना, जोतदार की सुरक्षा, जमीन की हदबन्दी आदि को—वह कार्यान्वित करे।

मन्दिर की जमीन

प्रारम्भ में ही हम आप का ध्यान लैण्ड सीलिंग ऐक्ट के सेक्शन २ की ओर आकर्षित करते हैं। इसमें कहा गया है कि "यह ऐक्ट उस जमीन को लागू नहीं होगा जो सार्वजनिक किस्म के धार्मिक ट्रस्टों के हाथ में है।" इस धारा द्वारा मन्दिरों और मठों की जमीन को छूट दी गयी है। तमिलनाडु में इस तरह की जमीन करीब ढाई लाख एकड़ है। यह बात सही है कि वैसी जमीन की निगरानी के लिए एक कानून 'मद्रास पब्लिक ट्रस्ट एक्ट ५७, १९६१' अलग है। हमें यह कहते हुए दुःख होता है कि इस कानून को ठीक ढंग से अमल में लाया नहीं गया। यह कानून इतना दोषपूर्ण है और इसमें इतने चोर-द्वार हैं कि प्रभावशाली बीचवैये इसके उद्देश्य को विफल करके किसानों का शोषण करते रहे हैं। बहुत जगह तो मठों की जमीन के मालिक उनके एजेन्ट हैं जिन्हें जोतने बोने से कोई सरोकार नहीं है। मन्दिरों की जमीन का यही हाल है कि जमीन के जोतनेवालों को भी उक्त ऐक्ट १९६१ का लाभ नहीं मिलता। बीचवैये लोग अधिकारियों को प्रभावित कर जमीन अपने कब्जे में किये रहते हैं। वे जोतदारों के काल्पनिक नाम देकर

मुसहरी प्रखण्ड : ग्रामस्वराज्य के बढ़ते कदम

ग्रामपंचायत शेरपुर के दस रेवेन्यू गाँवों में छ की ग्रामदानपुष्टि की शर्तें पूरी हो गयी। ग्रामसभा गुम्ता, आरदह, शेरपुर नारायण, रतवारा एवं मधौली धर्मदास के अध्यक्ष, मंत्री एवं अन्य सेवा-भावी सदस्य बाढ़ और वर्षा से पीड़ित लोगों को राहत दिलाने के काम में तन-मन से लगे हुए हैं।

ग्रामपंचायत खबड़ा के गाँव भवानीपुर भीखनडीह में बड़े किसान भी अब ग्रामदान में शामिल हो गये हैं। यहाँ पिछले छः महीने से कार्यकर्ता बराबर विचार समझाते रहे। —रामेश्वर सिंह

ग्रामस्वराज्य की दिशा में

अब मुसहरी प्रखण्ड में ग्रामस्वराज्य की भावना ने ग्रामसभाओं के माध्यम से वह मंच प्रस्तुत कर दिया है जहाँ से प्रखण्ड के बचे हुए गाँवों में भी आन्दोलन की चर्चा खुलकर चल पड़ी है। जिन गाँवों को अब तक कठिन कहा जा रहा था उन गाँवों में भी काफी दिलचस्पी से विचारों का आदान-प्रदान चल रहा है। ग्रामदानी-स्वराज्य-सभाओं ने जन-मानस को प्रभावित किया है। युवा पीढ़ी सचेष्ट और सक्रिय हो उठी है।

मुसहरी प्रखण्ड में अब तक कुल गठित ग्रामसभाओं की संख्या राजस्व गाँव—७२; टोले १२, कुल योग = ८४।

इस वर्ष की अभूतपूर्व वर्षा और भयंकर बाढ़ के कारण प्रखण्ड के लोगों की तबाही हो गयी। मौसम की प्रतिकूलता के बावजूद कैम्प के साथियों का प्रयास तत्परता के साथ जारी है।

कार्यक्रम स्थगित

५ सितम्बर '७१ से गुजरात विद्यापीठ के प्राचार्य श्री ज्योति भाई के नेतृत्व में यहाँ के विद्यालयों में अभिनव शिक्षा पद्धति का एक प्रयोग-शिविर आरंभ होनेवाला था। अतिशय वारिश के कारण आवागमन की भारी असुविधा हो गयी है। इसीलिए यह कार्यक्रम स्थगित कर दिया गया है।

—जयप्रकाश शिविर समाचार से।

दरभंगा जिले की प्रगति

श्री प्रमोदकुमार प्रेम, सम्पादक 'बिहार ग्रामस्वराज्य समाचार' पाक्षिक बुलेटिन, ने गत २२ से २८ अगस्त तक दरभंगा जिले का दौरा कर इन जानकारियों का संग्रह किया है

सदर दरभंगा अनुमण्डल के ग्यारह प्रखण्डों में ४९५ ग्रामसभाओं का गठन हो चुका है। १८६ गाँवों की पुष्टि के कागजात तैयार कर पुष्टि-पदाधिकारी के पास भेज दिये गये हैं। ३१ गाँवों की पुष्टि का गजट हो चुका है। बीघा-कट्ठा में १८ बीघा १३ कट्ठा जमीन बँटी है। ग्रामस्वराज्य कोष में १४ हजार रुपये जमा हुए हैं। बिरौल, सिंहवाड़ा और जाले प्रखण्डों में ग्रामस्वराज्य समितियों का गठन हो चुका है।

मधुबनी अनुमण्डल में ग्रामसभाओं और १० प्रखण्डस्वराज्य-समितियों का

दैनन्दिनी १९७२

गत वर्षों की भाँति सर्व सेवा संघ की सन् १९७२ की दैनन्दिनी शीघ्र ही प्रकाशित होने वाली है। इस दैनन्दिनी के ऊपर प्लास्टिक का चित्ताकर्षक कवर लगाया गया है। इसकी कुछ विशेषताएँ निम्न हैं

- इसके पृष्ठ रूलदार हैं।
- इसके प्रत्येक पृष्ठ पर मनीषियों के प्रेरक वचन दिये गये हैं।
- इसमें सर्वोदय-आन्दोलन, विशेषकर भूदान ग्रामदान की जानकारी तथा सर्व सेवा संघ के कार्य की संक्षेप में जानकारी दी गयी है।
- गत वर्षों की भाँति यह दैनन्दिनी दो आकारों में छापी गयी है जिसकी कीमत प्रति दैनन्दिनी निम्न है।

(अ) डिमाई साइज	९" × ५॥"	रु० ५·००
(ब) क्राउन साइज	७॥" × ५"	रु० ४·००

आपूर्ति के नियम

- विक्रेताओं को २५ प्रतिशत कमीशन दिया जाता है।
- एक साथ ४० या अधिक दैनन्दिनी मंगाने पर ग्राहक के निकटतम रेलवे स्टेशन तक फ्री पहुँच भिजवायी जाती है।
- इससे कम संख्या में दैनन्दिनी मँगाने पर पैकिंग पोस्टेज और रेलमहसूल का खर्च ग्राहक को वहन करना पड़ता है।
- भिजवायी गयी दैनन्दिनी वापस नहीं ली जाती।
- दैनन्दिनी की बिक्री पूर्णतया नकद वी० पी० या बैंक के मार्फत रखी गयी है।
- आर्डर भिजवाते समय अपना नाम पता और निकटतम रेलवे स्टेशन का नाम सुवाच्य अक्षरों में लिखिए और यह स्पष्ट निर्देश दीजिए कि मँगायी गयी दैनन्दिनी के लिए आप रकम अग्रिम ड्राफ्ट द्वारा भिजवा रहे हैं या बिल्टी वी० पी० या बैंक के द्वारा भिजवा दी जाय।

उपर्युक्त शर्तों को ध्यान में रखते हुए अपना क्रयादेश अविलम्ब भिजवाइये क्योंकि इस वर्ष भी दैनन्दिनी सीमित संख्या में छपाई गयी है।

मंत्री,
सर्व सेवा संघ प्रकाशन,
राजघाट, वाराणसी।

गठन किया गया है। ४२३ गाँवों के कागजात तैयार हुए। उनमें २१८ गाँवों का कागज पुष्टि पदाधिकारी के पास भेजा गया। १३० गाँवों को पुष्ट किया गया है। ६९ गाँव गजट में प्रकाशित हो चुके हैं। अब तक २५१ बीघा १८ कट्ठा जमीन भूमिहीनों में बाँटी जा चुकी है। ग्रामस्वराज्य कोष में १०,४३१ रु० प्राप्त हुए हैं।

समस्तीपुर अनुमण्डल में १५ कार्यकर्ताओं की मदद से फिलहाल वारिसनगर और हसनपुर प्रखण्डों में पुष्टि का काम चलाया जा रहा है। २८८ गाँवों के कागज पुष्टि पदाधिकारी के कार्यालय में पुष्टि हेतु पड़े हैं। २१ ग्रामसभाओं का गठन कर दिया गया है। १८ ग्रामसभाओं में निर्वाचन करा लिया गया है। ६० दाताओं से प्राप्त ७ बी० ५ क० ३ धूर जमीन ७६ आदाताओं के बीच बाँटी गयी है। —बि० ग्रा० स्व०-बुलेटिन से

ग्राम-निर्माण मण्डल की बैठक

ग्राम-निर्माण मण्डल सर्वोदयपुरी (गया) की नियामक समिति की बैठक १५ अगस्त को हुई।

जिले के पाँच प्रखण्डों में खादी काम के विकेन्द्रीकरण का निर्णय लिया गया।

कौआकोल, गोविन्दपुर और बाराचट्टी क्षेत्रों में सघन ग्रामदान पुष्टि अभियान चलाने का निर्णय भी लिया गया।

शाहाबाद जिला सर्वोदय मण्डल की बैठक

दिनांक ५ सितम्बर को शाहाबाद जिला सर्वोदय मण्डल की कार्य समिति की एक आवश्यक बैठक श्री रामेश्वर राय की अध्यक्षता में हुई। १७ सदस्य और ९ आमंत्रित उपस्थित थे।

बाढ़ के कारण पीड़ित लोगों को राहत दिलाने और मवेशियों के लिए चारा मँगवाने के सेवा-कार्य में सहायता करने का निश्चय किया गया।

२ अक्टूबर से अघौरा प्रखण्ड में ग्रामदान-पुष्टि तथा ग्रामसभाओं के गठन का अभियान चलाने का निर्णय लिया गया।

—रामेश्वर राय
अध्यक्ष, जिला सर्वोदय मण्डल

बिहार भूदान यज्ञ कमिटी

पुनर्गठित बिहार भूदानयज्ञ कमिटी की ४ सितम्बर को प्रथम बैठक में सर्वसम्मति से श्री श्यामप्रकाश सिंह कमिटी के मंत्री चुने गये। कमिटी के अध्यक्ष श्री बद्रीनारायण सिंह हैं। इस कमिटी का पुनर्गठन बिहार भूदान-यज्ञ-ऐक्ट की धारा ४ के अधीन राज्य सरकार ने अगले ४ वर्ष के लिए किया है।

—हरिवंश प्रसाद सिंह

संथाल परगना सर्वोदय कार्यकर्ता सम्मेलन

विगत २८ और २९ अगस्त को संथाल परगना जिले के सर्वोदय कार्यकर्ताओं का दो दिनों का एक सम्मेलन पदैयाहाट में हुआ। श्री मोतीलाल केजरीवाल ने अध्यक्षता की।

कई अन्य निर्णयों के साथ मतदाता प्रशिक्षण के लिए सभी अनुमण्डलों में शिविरों का आयोजन करने का निर्णय लिया गया।

विश्व शान्ति यात्रा से

विश्व-शान्ति के लिए विश्व की यात्रा पर निकले श्री रामसहाय पुरोहित अफगानिस्तान ईरान और इराक की यात्रा कर चुके हैं। उनके अनुभव आप दार हैं एमा वे लिख रहे हैं। अखबार, रेडियो, और टेलिविजन के द्वारा उनकी यात्रा के समाचार विस्तार के साथ उक्त देशों में प्रसारित किये गये और ईरान व इराक में वे स्वयं टेलीविजन के द्वारा लाखों लोगों के सामने अपनी बात रख सके।

आगे व बगदाद से सीरिया जायेंगे और वहाँ से लेबनान होते हुए रोम पहुँचेंगे।

श्री रामसहाय पुरोहित ने मानवता और ईश्वर के प्रति अपनी आस्था व्यक्त करते हुए लिखा है कि इसके सहारे ही उनकी अकेली यात्रा भी सानन्द और सुगम बन रही है। ●

भूदान-यज्ञ २०-९-'७१ लाइसेन्स नं० ए १७ [पहले से डाक-व्यय दिये बिना भेजने की स्वीकृति प्राप्त] रजिस्टर्ड नं० एल. १५४

विनोबा जयन्ती : पवनार में

११ सितम्बर को सुबह पवनार में १० से ११ बजे तक विनोबा जयन्ती का कार्यक्रम सम्पन्न हुआ। अच्छी खासी भीड एकत्र थी। लोगों ने दर्शन हुए, गुण्डियों का दान दिया, कुछ ने कपडे आदि भी दिये। सब कुछ एक खुले मैदान में पेड के नीचे पत्थर पर बैठकर बाबा आनन्द से स्वीकारते रहे। उसके बाद विभिन्न धर्मों की प्रार्थनाएँ हुई।

बाबा ने हँसते हुए कहा कि हमारे जन्मदिन पर आशीर्वाद देने आप सब लोग अपने-अपने काम छोडकर आये हैं, तो अब बाबा को पूरा विश्वास हो गया है, कि बाबा मरने तक अवश्य जीयेगा।

(पूरा भाषण पृष्ठ ७८७ पर पढ़ें)

आप लोगों की कसौटी तब होनेवाली है, जब बाबा के जन्म दिन पर आप जिस तरह खुशी व्यक्त करने आये हैं, उसी तरह बाबा को बिदा करने आयेंगे, उतनी ही खुशी से, कि यह इंसान अपना काम पूरा करके गया है। हमें बाकी काम करने हैं। फिर सबसे हाथ उठवाया कि सबको बाबा के जाने पर खुशी होगी न ? और सबने हाथ उठाकर 'हां' की स्वीकृति दी।

अक्तेश्वर सत्याग्रह : समाधानकारक निर्णय

अक्तेश्वर (गुजरात) के आदिवासियों की जमीन को, जिस पर २२ परिवार यानी २०० व्यक्तियों का जीवन निर्भर है, एक बडे भूमिपति के कब्जे से छुडाने के लिए गत १८-४-७० को श्री हरिवल्लभ भाई परीख के मार्गदर्शन व सहकार से आदिवासियों ने जो सत्याग्रह शुरू किया था उसका कोई आशाजनक परिणाम नहीं आने पर, यानी सरकार द्वारा आदिवासियों को जमीन देने के लिए कोई सफल कार्रवाई नहीं की जाने पर फिर ११ सितम्बर से (विनोबा जयंती) २ अक्टूबर (गांधी जयंती) तक बडे पैमाने पर सत्याग्रह करने का उन्होंने फैसला किया था। ताजे समाचारों के अनुसार गत ८ तारीख को झगडे का समाधान पूर्वक निपटारा हो गया है।

सामूहिक शक्ति से अहिंसक तौर पर गाँव की जमीन के झगडे का निपटारा हो सकता है, यह इसका एक सफल उदाहरण है।

इस अंक में

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पैसे), विदेश में २२ रु० ; या २५ शिलिंग या ३ डालर। एक अंक का मूल्य २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिये प्रकाशित एवं मनोहर प्रेस, वाराणसी में मुद्रित

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

श्री जयप्रकाश नारायण विजयदशमी को अपनी उम्र के ६९ वर्ष पूरे कर रहे हैं

गत १५ जुलाई '७१ को बाबा ने कहा था, "श्री कृष्ण ११६ साल जीये। जयप्रकाशजी को ११६ साल जीना चाहिए!" बाबा की यह शुभकामना पूरे सर्वोदय-परिवार की शुभकामना है।

अभ्यादकीय

जे० पी० : एक प्रवाह

जब गांधीजी मरे तो लोगों ने अपने-अपने ढग से अपना शोक प्रकट किया, और अपनी-अपनी भाषा में श्रद्धांजलि समर्पित की। लेकिन एक व्यक्ति ने जो बात कही वह हृदय में गहराई तक घर कर गयी। उसने कहा : 'अब वह इस देश में कौन होगा जो सत्ता के भय और सम्पत्ति के लोभ से ऊपर उठकर सत्य कहेगा; सत्य के सिवाय दूसरा कुछ नहीं कहेगा ? गांधी क्या मरे, सत्य की वाणी मर गयी !'

गांधीजी के बाद जब एक-के-बाद दूसरे दल बनने लगे, और हर दल और उसके नेता यही सिद्ध करने की कोशिश करने लगे कि उनका जो सत्य है वही राष्ट्र का सत्य है, उसके सिवाय दूसरा सत्य है ही नहीं, और जब जनता ने देखा कि इनके लिए सचमुच सत्ता ही सबसे बड़ा सत्य है, तो लगने लगा कि गांधीजी की श्रद्धांजलि में उस व्यक्ति ने जो बात कही थी, बिल्कुल सही थी।

लेकिन, जैसे-जैसे समय बीता, एक ऐसी आवाज कानों में पड़ने लगी जिसमें गांधी के सत्य की तरह सत्ता का भय नहीं, सम्पत्ति का लोभ नहीं और दल का मोह नहीं, जो सीधे हृदय से निकलती है और हृदय तक पहुँचती है। वह आवाज है जे० पी० की।

आज कौन दूसरा है जिसके बारे में लोग यह कह सकें कि बात इस आदमी की सही हो या गलत, लेकिन उसकी नीयत में सुबहा नहीं किया जा सकता, उसके दामन में दाग नहीं लगाया जा सकता ? तभी तो दो वर्ष पहले जब सतारा में कुछ लोगों ने जे० पी० को 'गद्दार' कहा तो शाम की आमसभा में जे० पी० बोले : **'अगर जयप्रकाश देशद्रोही है, तो आप को ढूँढ़ना पड़ेगा कि इस देश में देश-प्रेमी कौन है ?'** वास्तव में जे० पी० के सिवाय इस वक्त देश में दूसरा कोई गैर-सरकारी व्यक्ति नहीं है। इसीलिए बाढ़ से लेकर बंगला देश तक कोई भी प्रश्न हो, हर जगह जे० पी० के सिवाय दूसरा कौन है जो पक्ष से मुक्त होकर सबकी बात बोलेगा और सबके हित का काम करेगा ? जे० पी० सबके हैं। उनके हृदय में मानव की मूर्ति है, वह उसीके उपासक हैं।

मानव की ही तलाश में जे० पी० समाजवाद से सर्वोदय तक आये। उन्होंने साथियों के साथ किसी समय मिलकर समाजवादी दल की स्थापना की थी। लेकिन जे० पी० ने देख लिया दल और सरकार का समाजवाद फौलादी होता है, मानवीय नहीं होता। दुबेक की तरह जे० पी० को तलाश थी ऐसे समाजवाद की, जिसकी शक्ल मानवीय हो। मानवता की हत्या करनेवाला सरकारवाद—जिसे लोग समाजवाद समझते रहे हैं—किस काम का ? वह क्रान्ति भी किस काम की जो स्वयं क्रान्ति को अमानवीय बना दे ? ऐसी क्रान्ति क्रान्ति ही नहीं है, मात्र सत्ता का परिवर्तन है।

जे० पी० ने सर्वोदय में समाजवाद की मानवीय शक्ल देखी। विनोबा ने जे० पी० के समाजवाद में सर्वोदय का व्यावहारिक स्वरूप देखा। दोनों करीब आये, दोनों ने एक दूसरे को समझा, भारत की जनता को 'ग्रामस्वराज्य' का संदेश मिला।

विनोबा प्रभाव हैं, जे० पी० प्रवाह। प्रभाव से हम प्रेरित हो सकते हैं · प्रवाह के साथ चल सकते हैं। ●

प्र वा ह

प्र भा व

एक विवादास्पद व्यक्तित्व : विवाद से परे

—कयूम असर

[कयूम असर साहब उन लोगों में हैं जिनको जयप्रकाशजी के साथ मजदूर-आन्दोलन में काम करने और उनको बहुत ही करीब से देखने का मौका मिला है। हम आभारी हैं कि हमारी दरख्वास्त पर उन्होंने यह मजमून लिखकर हमें दिया। —सं०]

अंग्रेजी साम्राज्य ने जयप्रकाश नारायण को बराबर जेल में रखा। सन् १९४२ में वे हजारीबाग जेल से फरार हुए तब वहाँ जनता में उनके नाम की प्रसिद्धि हुई। आजादी के मतवाले तो उन्हें पहले से ही जानते व पहचानते थे। अंग्रेजों के खिलाफ जो आन्दोलन चल रहा था, उसमें लगे हुए बुद्धिजीवियों का एक दल तो इनके साथ था ही। वह उस वक्त कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी के सेक्रेटरी थे। इण्डियन नेशनल कांग्रेस की लीडरशिप उन्हें इज्जत की निगाह से देखती थी। हाँ, अवसरवादी कांग्रेसी उन्हें नापसन्द करते थे। लेकिन गांधीजी के वे प्रिय पात्र थे। जवाहर लाल, मौलाना आजाद वगैरह जैसे चोटी के लीडर उनके महान व्यक्तित्व के कायल थे। इसलिए अवसरवादी लोग बहुत खुलकर उनके खिलाफ मोर्चा नहीं लेते थे।

मई सन् १९४६ में वे अंग्रेजों के जेल से आजाद हुए। पटना से दिल्ली और वहाँ से बम्बई गये। आल इण्डिया रेलवे मेन्स फेडरेशन की पुकार पर २७ जून से आम हड़ताल का पूरे मुल्क में शोर था। बम्बई में 'नेवल अफसरों' के साथियों पर मुकदमा शुरू हो चुका था। मिस्टर जिन्ना की हिन्दुस्तानी मुसलमानों में तूती बोल रही थी। मुस्लिम लीग जिन्दाबाद के नारों की गूँज में कानपड़ी आवाज नहीं सुनाई देती थी। बहुसंख्यक हिन्दुस्तानी मुसलमान मिस्टर जिन्ना की हर आवाज पर दिलोजान से कुर्बानी करने को तैयार थे। ठीक उसी वक्त जयप्रकाश नारायण ने मिस्टर जिन्ना के दो राष्ट्र के सिद्धान्त की बुनियाद पर मुल्क के बँटवारे को गलत कहा। इधर अखबारों में जयप्रकाश नारायण का बयान आया और उधर लीगी मुसलमानों के तलवे की लहर सर तक पहुँच गयी। जयप्रकाश नारायण हिन्दू सम्प्रदायवादी लोगों की टोली में ढकेल दिये गये। यह वह कौम नहीं थी जो पलट कर देखती। वक्त के तकाजों की इसकी समझ खत्म हो चुकी थी। ये लोग तो परम्पराओं में जकड़े हुए थे। इस हालत में जयप्रकाश नारायण का बयान लीगी मुसलमानों को बेहद अखरा। फिर क्या था? अल्लाह दे और बन्दा ले। जयप्रकाश नारायण से आम मुसलमानों के गुस्सा और नाराजगी की यह शुरुआत थी।

दूसरा विश्व-युद्ध खत्म हो चुका था। कांग्रेस पर से कुल पाबंदियाँ उठा ली गयी थीं। सन् १९४२ के तकरीबन सभी कैदी अंग्रेजों के जेल से बाहर आ चुके थे। आजादी का आन्दोलन पुन: जोर पकड़ चुका था। हिन्दुस्तानी जनता का जोशो-खरोश बढ़ा हुआ था। हिन्दुस्तान में जयप्रकाश नारायण की शोहरत आसमान को छू रही थी। सोशलिस्ट पार्टी की लोक-प्रतिष्ठा बहुत बढ़ी हुई थी। उन दिनों जयप्रकाश नारायण जिधर निकल जाते थे लोग आँखें बिछाते थे। बम्बई वाली घटना को अभी चन्द ही महीने गुजरे थे कि नोआखाली में साम्प्रदायिक दंगा हो गया। और मुल्क की फिजा में जहर घुल गया। गांधीजी इस आग को बुझाने के लिए नोआखाली गये। अपने साथियों के साथ जयप्रकाश नारायण पूर्वी यू० पी० के दौरे पर थे। उसी वक्त बिहार में हिन्दू-मुस्लिम दंगा फूट पड़ा। पटना, गया और मुंगेर जिलों के बड़े हिस्सों में मुसलमानों के खून की होली खेली जाने लगी। दूर-दूर तक के इलाके मुसलमानों के खून से रंगीन हो गये। मजलूमों की फरियाद जयप्रकाश नारायण के कानों में ज्योंही पहुँची, दौरा रद्द करके वे बिहार वापस आ गये और अपने साथियों की टोली लेकर दिनरात दंगे की आग को ठंढा करने के काम में जुट गये। इस काम में खुद उनकी जान के लाले पड़ गये थे। बिहारशरीफ सब-डिवीजन के एक दूर दराज इलाके में, दंगाइयों को शान्त करने की दौड़-धूप में उनकी जीप पानी से भरे एक खड्ड में उलट गयी। डूब कर मर जाने का खतरा था। लेकिन जिन्दगी बाकी थी। ऐन मौके पर सड़क से करीब ही बी० बी० लाइट रेलवे की पटरी पर गुजरने वाली पैसेन्जर गाड़ी के मुसाफिरों ने जयप्रकाश नारायण को जीप समेत पानी में गिरते देख लिया था। गाड़ी रोकी गयी और जयप्रकाश नारायण उनके हाथों बचा लिये गये।

पूर्वी यू० पी० के दौरे पर रवानगी के पहले पटना यूनिवर्सिटी के शिक्षकों, विद्यार्थियों, बुद्धिजीवियों और कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी के कार्यकर्ताओं के तकाजे पर 'अंजुमन इस्लामिया हॉल' पटना में जयप्रकाश नारायण ने अपनी मशहूर रचना 'सोशलिज्म क्यों' (ह्वाई सोशलिज्म) की विस्तृत व्याख्या के लिए सिलसिलेवार ६-७ लेक्चर दिये थे। इन लेक्चरों का इंतजाम रजी अजीमाबादी, कयूम कायद और अहद फातमी ने किया था, जो उस वक्त पार्टी की जिला शाखा के सेक्रेटरी थे। भीड़-भाड़ से बचने और शांति सुव्यवस्था बनाये रखने की गरज से दाखिले की फीस मुकर्रर कर दी गयी थी। शरीक होनेवालों में अब्दुल माजिद साहब, सदर, मुस्लिम स्टूडेन्ट फेडरेशन भी थे।

हैदर इमाम साहब पटना की कोठी, और डाक्टर अब्दुल हफीज मरहूम के आहाते में मुस्लिम लीग की तरफ से रिलीफ का दफ्तर खुला। भय और दहशत की फिजा का हर तरफ राज था। अफवाहों का बाजार गर्म था। मुसलमानों पर ढाये गये जुल्मोसितम की दास्तान हर जबान पर थी। बिहार में इस साम्प्रदायिक

रक्तपात का बाजार गर्म कराने की जिम्मेदारी जहाँ बहुसख्यक समुदाय के चन्द प्रसिद्ध व्यक्तियों पर डाली जा रही थी, वहीं जयप्रकाश नारायण का नाम भी जोरशोर के साथ लिया जाता था। पटना शहर में यही बात आम थी कि जयप्रकाश नारायण ने खूनी फसाद का मनसूबा तैयार किया था। और इस मनसूबे को चुने हुए हिन्दुओं के सामने 'यगमैन्स इन्स्टीट्यूट' पटना में पेश करके इस पर अमल करने के लिए उकसाया था। और यह भी कहा जाता था कि जयप्रकाश नारायण खुद भी दगा का नेतृत्व करते हुए रगे हाथों पकड़े गये और मौके पर उनकी तसवीर भी उतार ली गयी है। जिसे यकीन न आये, रिलीफ कमिटी के दफ्तर में जाकर देख ले।

सन् १९४७ में भारत और पाकिस्तान एक ही मुल्क से बट कर आजाद देशों की शक्ल में दुनिया के राजनीतिक नक्शे पर उभरे। आजादी के साथ ही भयानक खून-खराबी और बरबादी आयी। लाखों इन्सान मारे गये। करोड़ों लोग बेघर हुए। जयप्रकाश नारायण ने सरदार पटेल को जिम्मेदार करार दिया। दिल्ली में उन दिनों मुसलमानों का पक्ष लेने के इल्जाम में पंडित नेहरू और जयप्रकाश नारायण को मार डालने की बात आम थी। इस खतरे की परवाह न कर श्री जयप्रकाश नारायण दिल्ली की सड़कों पर मुसलमानों की जानोमाल और इज्जत आबरू को बचाने की हर मुमकिन कोशिश में बेतहाशा भागते-दौड़ते नजर आये।

सन् १९३४ में नवजवान बुद्धिजीवियों की एक जमात द्वारा, जो अंग्रेजी साम्राज्य से मुल्क की मुक्ति के साथ-साथ हिन्दुस्तान में समाजवादी हुकूमत भी कायम करना चाहती थी, कांग्रेस के अन्दर कांग्रेस-सोशलिस्ट पार्टी के नाम से एक सगठन भी बना। इस टोली में आचार्य नरेन्द्रदेव, युसुफ मेहर अली, अशोक मेहता, डा० राममनोहर लोहिया वगैरह के नाम उल्लेखनीय हैं। इससे पहले कांग्रेस पर प्रतिक्रियावादी लोगों का बोलबाला था। प० नेहरू और मौलाना आजाद जैसे लोग इन लोगों से अलग जरूर थे, लेकिन कमजोर पड़ते थे। ऐसे वक्त में कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी की स्थापना से कांग्रेस के अन्दर-बाहर इन प्रतिक्रियावादी लोगों में हलचल मच गयी। इन दोनों गुटों में सीधा टकराव नहीं हो, यह गांधीजी की नीति थी ताकि अंग्रेजी साम्राज्य के खिलाफ मोर्चा कमजोर नहीं हो।

मुल्क के अखबार पूँजीपतियों के कब्जे में थे। कांग्रेस-सोशलिस्ट पार्टी और उसके लोग जनता के बीच अपना सही स्थान हासिल नहीं कर सकें, यह देश के अखबारों की खुली नीति थी। जयप्रकाश नारायण के व्यक्तित्व को बिगाड़ कर पेश करने में ये अखबार बराबर सक्रिय रहे हैं।

जयप्रकाश नारायण अपने इन्कलाबी विचार के कारण एक साथ अंग्रेज साम्राज्यवादियों, पूँजीवादियों, जागीरदारों, जमींदारों, सम्प्रदायवादियों और प्रतिक्रियावादियों की नफरत का सीधा निशाना बनते रहे हैं। खास तौर पर हिन्दुस्तानी कम्युनिस्ट पार्टी जयप्रकाश नारायण का चरित्र हनन करने में सबसे आगे रही। जयप्रकाश नारायण स्पष्ट और निर्भय रहे, सच कहने में कभी हिचकते नहीं। हंगरी पर रूसी सेना के आक्रमण के खिलाफ उन्होंने जिस साहस का सबूत दिया ज्यादातर भारत के नेताओं में इसका अभाव ही नजर आता है। हंगरी के मामले में भारत सरकार के रुख की उन्होंने कड़ी आलोचना की थी। उसे पढ़कर जवाहरलाल नेहरू बेहद बिगड़े थे। पंडित नेहरू की विदेश नीति की ऐसी खुली आलोचना सिर्फ वही शख्स कर सकता था, जिसे गद्दी की राजनीति से दिलचस्पी नहीं हो। गया के सर्वोदय सम्मेलन में जयप्रकाश नारायण ने गद्दी की राजनीति से अपनी किनाराकशी का एलान किया। विधायक राजनीति (कन्स्ट्रक्टिव पालिटिक्स) में वे अब भी हैं।

मुश्किल यह है कि आज गद्दी की राजनीति (पॉवर पालिटिक्स) और विधायक राजनीति (कन्स्ट्रक्टिव पालिटिक्स) में लोग फर्क नहीं कर पाते हालांकि दोनों में जमीन आसमान का फर्क है।

सामयिक घटनाओं पर जयप्रकाश नारायण की टिप्पणी को आमतौर पर लोग राजनीति पर उनकी दखलदाजी मानते हैं। यही लोग उन्हें इस जमाने का बहुत बड़ा चिन्तक और सुधारक की शक्ल में भी पेश करने में आगे नजर आते हैं और उन्हें बर्ट्रेण्ड रसल की कोटि का मानते हैं। जयप्रकाश नारायण को अस्थिर मिजाज का आदमी भी कहा जाता है, और बड़ा राजनीतिज्ञ भी माना जाता है। ऐसी मिलीजुली रायें हमारी राष्ट्रीय जिन्दगी की विशेषता है। यह तो कहिये कि जयप्रकाश नारायण का सत्यनिष्ठ और समग्र व्यक्तित्व, ईमानदारी, बेदाग राजनीतिक जिन्दगी, दूरदर्शिता, ज्ञान की गहराई और इसी तरह की बहुत सी विशेषताओं से भरा-पूरा है, जिसके कारण वे देश के राजनीतिक और सामाजिक क्षितिज के चमकते सितारे बनकर मौजूद हैं।

× × ×

कलकत्ता, राउरकेला, और जमशेदपुर में हिन्दू-मुस्लिम दंगे हुए। जयप्रकाश नारायण ने हिन्दू आक्रमकता की खुली निन्दा की। भय और दहशत की फिजा दूर करके स्थिति को सामान्य बनाने के लिए उन्होंने कोई कसर उठा नहीं रखी। जयप्रकाश नारायण के खिलाफ हिन्दुस्तानी मुसलमानों में जो धारणाएँ थीं वे कुछ देर के लिए मिट गयीं। मुसलमानों में हर तरफ उनकी प्रशसा होने लगी और देखते ही देखते उनकी लोकप्रियता की मुसलमानों में तूती बोलने लगी। लेकिन मुसलमानों की राय में स्थिरता नहीं है। राँची का हिन्दू-मुस्लिम दगा हुआ। जयप्रकाश नारायण ने हिन्दुओं की बर्बरता की निन्दा करने के साथ ही मुसलमानों

के बारे में आम हिंदुओं की राय का भी हल्के से जिक्र किया। और हवा का रुख बदल गया। मुसलमानों की हालत बिलकुल छोटे बच्चों जैसी है। पुचकारिये, प्यार कीजिए, मिठाई दीजिए, आपके हो जायेंगे। जरा-सी घुड़की दिखायें, डाटें और फिर देखें वे आपसे दूर भागेंगे। ऐसा ही हुआ। हिन्दुस्तानी मुसलमान जयप्रकाश नारायण पर सावन भादो की तरह बरसे। मुसलमानों में जयप्रकाश नारायण के अनुकूल बनी हुई साख फिर से बिगड़ गयी, और अहमदाबाद के दंगे के समय यह हालत अपनी चरम सीमा पर पहुँच गयी, क्योंकि अखबारवालों ने जयप्रकाश नारायण की बातों को तोड़ मरोड़ कर पेश किया था।

अहमदाबाद के दंगों के वक्त ही सरहदी गांधी भारत आये। हुकूमत और जनता ने उन्हें हाथों-हाथ लिया। मुल्क के दौरे पर वे जिधर भी गये हिन्दुस्तानी जनता ने उनका हार्दिक स्वागत किया। वे भाई-भाई के आपसी लड़ाई-झगड़े को देख कर बेहद दुखी और रंज थे। इसलिए जहाँ भी गये उन्होंने खरी-खरी सुनायी। अपनी खुरदुरी जबान में मुल्क की मौजूदा बिगड़ती हालत का कारण इसी आपसी झगड़े को बताते रहे, और इससे आइन्दा बचने की चेतावनी देते गये। हिन्दुस्तान से वापसी के पहले उन्होंने जयप्रकाश नारायण से इंसानी बिरादरी के गठन की ख्वाहिश जाहिर की, ताकि हिन्दू-मुस्लिम खाई को पाटनेवाला एक राष्ट्रीय मोर्चा बन सके। इसके लिए सरहदी गांधी के जन्मदिन पर दिल्ली में इंसानी बिरादरी नाम से देश के चुने चुने हुए लोगों का एक राष्ट्रीय सम्मेलन बुलाया गया जिसमें इन्सानी बिरादरी का बाकायदा गठन हुआ। जयप्रकाश नारायण इस संघटन के अध्यक्ष चुने गये। इन्सानी-बिरादरी सम्मेलन में शरीक तमाम मुसलमान प्रतिनिधियों ने एक स्वर से कहा कि बहुसंख्यक समुदाय में जयप्रकाश नारायण से ज्यादा मुसलमानों का दोस्त हिन्दुस्तान में दूसरा कोई नहीं। याद रहे कि इस सम्मेलन में जमायते इस्लामी हिन्द, मजलिसे मुशावेरत, मुस्लिम मजलिस, इत्तहादुल मुसलेमीन के अलावा दूसरे मुस्लिम संघटनों की चोटी के नेता भी प्रतिनिधित्व कर रहे थे।

जयप्रकाश नारायण की तरह खतरे की परवाह न करके आग में कूदनेवाले कम होते हैं। कश्मीर का मामला, शेख अब्दुल्ला की बातें और भारत-पाक मैत्री में उनकी गहरी दिलचस्पी उन्हें बहुसंख्यक समुदाय में अलोकप्रिय बनाये हुए हैं। जयप्रकाश नारायण कश्मीर के मामले में पाकिस्तान को एक फरीक मानते थे। लेकिन सन् १९६५ में पाकिस्तान के हमले के बाद कश्मीर सम्बन्धी उनकी नीति में फर्क आ गया, और मुसलमानों की नाराजगी हासिल हो गयी।

जयप्रकाश नारायण ने माँग की थी कि तिब्बत की अस्थायी हुकूमत को मंजूरी दी जाय। यह राय नहीं मानी गयी। लेकिन इसका महत्व उस वक्त समझ में आया जब हमारे ऊपर हिमालय के उस पार से आग के गोले बरसने लगे।

आज के बंगला देश को बात लीजिए। पड़ोस में आग लगी हुई है। आग बढ़ती ही जा रही है। किसी भी वक्त हम इस आग की लपेट में आ सकते हैं। लाखों की तादाद में बेघर मुसलमान-हिन्दू, औरत-मर्द, बूढ़े-जवान और बच्चे हमारे मुल्क में आ गये हैं। हमारी आर्थिक स्थिति पर इसका बुरा असर पड़ना लाजिमी है, और दूसरे क्षेत्रों में भी पड़नेवाले इसके दुष्प्रभावों से बचा नहीं जा सकता। इस हालत में अगर जयप्रकाश नारायण बंगला देश की हिमायत में उठते हैं, तो उनके इस कदम से किस समुदाय का ज्यादा भला होगा, इसमें दो राय की गुंजाइश नहीं थी। लेकिन जयप्रकाश नारायण की बंगला देश में दिलचस्पी का इजहार मुसलमानों की नजर में एक और जुर्म बन गया है।

जयप्रकाश नारायण के नजदीक उसूल और इन्साफ पर जो बात खरी उतरी, जबान पर आ गयी। सच कड़ुआ होता है। बात जिसके खिलाफ पड़ी, वह आग हो गया। कभी बहुसंख्यकों की नाराजगी, कभी अल्पसंख्यकों की, कभी दोनों की एक साथ। जमींदारी खतम की जाय, बेजमीनों में जमीन बाँटी जाय, बैंक, बीमा, कोयला की खानों का राष्ट्रीयकरण किया जाय, कारखानों पर मजदूरों की मिल्कियत हो, दौलत का बँटवारा हो, नाबराबरी खत्म की जाय, साम्प्रदायिकता दूर हो, वगैरह, जैसी बातें करनेवाले को क्या मुल्क के मौजूदा राजनीतिक और सामाजिक ढाँचे में लोकप्रियता हासिल होगी ?●

सर्व सेवा संघ अधिवेशन अब २८ अक्तूबर से

सर्व सेवा संघ का छः माही अधिवेशन ता० २८ अक्तूबर को सबेरे १० बजे भोपाल में शुरू होगा। और वह ता० ३१ अक्तूबर की शाम तक चलेगा। इससे ३ के बजाय पूरे ४ दिन अधिवेशन के लिए उपलब्ध होंगे।

आशा है सब प्रदेश सर्वोदय मण्डल अपने-अपने प्रदेश के लोकसेवकों की मतदान सूची ता० ३० सितम्बर तक गोपुरी कार्यालय में भेज देंगे।

सर्व सेवा संघ, गोपुरी
वर्धा (महाराष्ट्र)

ठाकुरदास बंग
मंत्री

आचार्यकुल का गठन

गांधी शांति प्रतिष्ठान, लखनऊ में श्री रोहित मेहता एवं श्री वंशीधर, संयोजक, केन्द्रीय आचार्यकुल समिति की उपस्थिति में शिक्षाविदों की एक बैठक में लखनऊ में आचार्य-कुल के संघटन हेतु दस सदस्यों की एक तात्कालिक समिति बना दी गयी है। श्री अवधेश दयाल को इसका संयोजक नियुक्त किया गया।

आवश्यक सूचना

दशहरे की छुट्टियों में प्रेस बन्द रहने वाला है, इसलिए अगला ४ अक्तूबर '७१ का अंक दो-तीन दिन देर से प्रकाशित होगा।
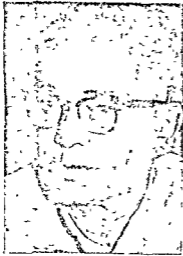
पारदर्शी

कई बार ऐसा हुआ कि
प्रखरता के पुंज भी बलने लगे,
और जिनमें सूर्य से ज्यादा तपिश थी
वे किसी निष्क्रिय शीत से सिकुड़ने लगे
और वह दस्तरखान,
जो अनेकों के भोजन के लिए
बिछाया गया था
सिमटते-सिमटते सिर्फ उनके बैठने योग्य
रह गया
—थालियों की चमक
उनके वस्त्रों से झाँकने लगी।

कई बार ऐसा नहीं भी हुआ

पर ऐसा बहुत कम हुआ कि एक
पारदर्शी निर्मलता का स्रोत
बढ़ता गया, फैलता गया
अगाध होता गया—
फिर भी उसमें कहीं कमी नहीं हुई
पारदर्शिता कहीं मलिन नहीं हुई

भरे मन, कान्ति भरे।
'न बुद्ध, न बुद्ध' की टेर में भी
जाने क्या चुन-चुन 'वह' अपनी झोली धरे।
भरे मन, कान्ति भरे।

—कुमार प्रशान्त
काली कोठी क्वार्टर्स
मुजफ्फरपुर (बिहार)

[कवि की ओर से : इधर जयप्रकाश बाबू का कार्यक्रम जो मुजफ्फरपुर में रहा, उसके सम्पर्क में मैं रहा हूँ। मुजफ्फरपुर का यह क्षेत्र वैशाली गणतन्त्र का क्षेत्र रहा है। लेकिन इधर की हिंसक नक्सलवादी गतिविधियों के बीच जयप्रकाश बाबू का अहिंसक ग्रामदान आन्दोलन एक विशिष्ट महत्व का रहा है, और है। इसी पृष्ठभूमि में 'प्रियदर्शी' शीर्षक एक रचना अनुभूत हुई है। इस रचना में जयप्रकाश बाबू का नाम नहीं है, प्रियदर्शी शब्द पर ही उनके नाम का बोध है।]

प्रियदर्शी

यह वैशाली की भूमि, नायिका जगती का शृंगार।
हृदय में करुणा लिये अगाध, निछावर करती सब पर प्यार !!
मुक्तिवर्ण कदली निर्मित गात, हरित-वसना यह सुन्दर नार !
सुशोभित सधवा सरस सकाम, सँभाले अपना यौवन भार !!

आम्रकुंजों की घूँघट ओट, छिपाये अपना सुन्दर रूप।
लटकती मणि-सी लीची लाल, सुघर यह कैसा रूप अनूप !!
मुकुट हीरक हिमगिरि उत्तुंग, दीप्त आभा ज्योतित संसार !
नीलमणि की माला यह शुभ्र, गंडकी कंठ का हार !!

निनादित कल-कल ध्वनि संगीत, सुनाती है अपना इतिहास !
शालिग्रामी है मेरा नाम, उदर में करता देव निवास !!
भूमि निश्चित यह परम पुनीत जहाँ मैं करती सिंचित नीर !
न सकता ग्रस जीवन को ग्राह, सेव जो रहा हमारे तीर !!

जगत की करुणा निकली फूट, प्रथमतः मेरे दक्षिण वाम !
प्रकाशित जग में गौतम बुद्ध और जिन महावीर का नाम !!
श्रेष्ठतम जन-जीवन का रूप, इसी वैशाली का गणतन्त्र !
बसा था रुचिर हमारे कूल, दिया जिसने जीने का मन्त्र !!

तुम्हें होगा ही वह दिन याद, हुआ प्रियदर्शी नृपति अशोक !
सत्य का जिसने किया प्रचार, अहिंसा से अनुप्राणित लोक !!
मिली जो हमसे संस्कृति-ज्योति, वहीं से करने चला प्रकाश !
चलाया हुआ धर्म का चक्र, अधर्मी तत्वों का कर नाश !!

पुनः आया प्रियदर्शी रूप, लिये हिंसा का प्रबल विरोध !
प्रतिष्ठित होगा ही गणतन्त्र, हमारी इस धरती का शोध !!

—'दिल मेंहसवी'

जयप्रकाश नारायण : एक सत्यशोधक समाजवादी

"जहाँ तक मेरा सम्बन्ध है, मैं अब जीवन-यात्रा के उस मोड़ पर पहुँच गया हूँ जहाँ से मुझे अकेले ही यात्रा करने का निश्चय कर लेना है। यदि मैं आप सबको भी अपने साथ चलने को राजी कर सकता तो मेरे हृदय को अत्यन्त प्रसन्नता होती, किन्तु मैं अनुभव करता हूँ कि हम मार्ग में अक्सर आपस में मिलेंगे और यात्रा के अंत में हम सबका मार्ग एक ही हो जायेगा। हम उस दिन को देखने के लिए भले ही जीवित न रहें, किन्तु मुझे पक्का विश्वास है कि यदि संसार को कभी शांति, स्वतन्त्रता और भाईचारे का स्थल बनना हो तो समाज को अंतत सर्वोदय में मिलना होगा।"

ये शब्द एक ऐसे ऐतिहासिक यात्री के हैं जो आज से लगभग ५० साल पूर्व जीवन के उद्देश्य की खोज की यात्रा पर निकला था और ३५ साल तक अनेक सह-यात्रियों के साथ पथ के सुख-दुःख, आशा निराशा तथा जीवन-मरण के थपेड़े खाता हुआ एक ऐसी ऊँची जगह पर पहुँच गया जहाँ से वह अपने और अपने साथियों की पिछली यात्रा पर निगाह डालने के अलावा आगे के मार्ग को भी बहुत दूर तक देख सकता था। उसने अपने उस गन्तव्य के बारे में कभी कुछ सुखद बातें सुनी थीं, कुछ सुखद स्वप्न भी देखे थे, जिसे प्राप्त करने के लिए वह इतने लम्बे काल तक चलता रहा। किन्तु गन्तव्य तक पहुँचने का अगला मार्ग नया तो था ही, साथ ही वह मंजिल तक पहुँचा ही देगा इसका भी कोई पक्का निश्चय नहीं था। जीवन-यात्रा अनन्त होती है। उसकी मंजिल तक पहुँच जाना तो और भी कठिन होता है। किन्तु यात्री ने देखा कि और कोई मार्ग नहीं है और वह साहस के साथ आगे चल पड़ा। वह जानता था .

"चलता मुसाफिर ही पायेगा,
मंजिल और मुकाम रे।"

हमारे प्राचीन ऋषियों ने "चरैवेति, चरैवेति" का मन्त्र देकर इसी अनन्त-यात्रा का उद्घोष किया था। यही मन्त्र इस यात्री का सम्बल है और जीवन के प्रति अचल निष्ठा ही उसकी मार्गदर्शिका है। यात्री के ये शब्द 'हम फिर कभी मिलेंगे' कानों में गूँज जाते हैं। इस यात्री का नाम है जयप्रकाश नारायण। आज से ढाई हजार वर्ष पहले के युवा राजकुमार गौतम की तरह वह राज्य-सम्पत्ति तथा सुख को तिलांजलि देकर मानव-कल्याण के लिए निकल पड़े हैं, और आज गाँव-गाँव, नगर-नगर की गली-कूचों में घूम-घूम कर एक महान विचार का संदेश सुना रहे हैं।

जीवन का शोध

जीवन जीना एक चीज है, जो सभी करते हैं, किन्तु जीवन का शोध करके जीना कोई विरले ही कर पाते हैं, क्योंकि जीवन-शोधन के लिए स्वयं जीवन को तपाना-गलाना पड़ता है। यह सबके वश की बात नहीं है, यद्यपि सबकी यह आकांक्षा होती है। जयप्रकाश का सारा जीवन एक तप है। जीवन के आरम्भ में ही वैराग्य प्राप्त हो जाना कठिन नहीं होता, क्योंकि उस वक्त जीवन एक तरल पदार्थ रहता है, उसे कोई भी शक्ल दी जा सकती है, किन्तु वैभव (सत्ता, धन, यश आदि का) भोगने के बाद वैभव त्याग बड़ी कठिन कार्य है। ऐसे लोग पहली श्रेणी के लोगों से भी कहीं अधिक वीर होते हैं। फिर किसी आकस्मिक, मानसिक या शारीरिक धक्के से वैभव का त्याग भी सरल होता है, किन्तु ज्ञान-पूर्वक सहज त्याग उससे भी कहीं अधिक कठिन होता है। जयप्रकाश ऐसे ही वीरों में से हैं जिन्होंने न तो जीवन के आरम्भ काल में ही वैराग्य ग्रहण किया और न कोई मानसिक या शारीरिक आघात लगने पर ही ऐसा किया।

भारतीय संस्कृति में त्याग को उच्च-तम मूल्य स्वीकार किया गया है। जयप्रकाश उसकी अत्युत्तम मिसाल हैं। खासकर इस युग में, जब विज्ञान ने मनुष्य मात्र की आकांक्षाओं को आसमान तक पहुँचा दिया है, और जब भोग ही जीवन का पाथेय बनता जा रहा है, जब लोग गाँव के मुखिया या सरपंच बनने के लिए भी क्या-क्या नहीं करते हैं, उस युग में जयप्रकाश की सत्ता-विमुखता समाज को उस ऊँचे मूल्य की ओर आकर्षित करती है जिसमें मनुष्य के लिए कोई भी बन्धन नहीं हो सकता, वह अपनी सत्ता का स्वयं मालिक है। उसका मूल्य स्वयं वही है। पश्चिमी जगत में, जहाँ समाजवाद के नाम से स्वतन्त्रता, समता तथा बन्धुत्व के ऊँचे मानवीय मूल्यों के आधार पर सामाजिक रचना के महान और प्रेरणादायी ऐतिहासिक प्रयास किये गये हैं, जयप्रकाश जैसा कोई व्यक्ति क्यों नहीं सामने आया? इस सवाल का उत्तर क्या समाजवाद या साम्यवाद दे सकेगा? इसका उत्तर केवल भारत के पास है। उपरोक्त मूल्य शाश्वत होते हैं और वे 'सत्ता-निरपेक्ष' हैं। यह भारत की खोज है। पश्चिम में सत्ता प्रधान है, मूल्य गौण है, और समाजवाद तथा साम्यवाद दोनों ने (पश्चिम में उत्पन्न होने के कारण) इस बात को स्वीकार किया है। किन्तु भारत में इसे कभी नहीं माना गया। यहाँ सत्ता गौण है, मूल्य प्रधान है।

यह मूल्य सामाजिक था किन्तु बहुत सीमित अर्थ में। सीमित इसलिए कि स्वयं जीवन (व्यक्ति) एक सामाजिक प्रक्रिया है किन्तु मूल्य प्राप्ति के बाद पुनः यह सामाजिकता भी समाप्त हो गयी है, अतः इसी जीवन से सामाजिकता का निरन्तर त्याग करते जाना (सन्यास, समाधि आदि के द्वारा) उसके लिए आवश्यक माना गया था। व्यक्ति के सम्मुख सदा यह उद्देश्य उज्ज्वल और स्पष्ट रहे, यह उसे बराबर प्रेरणा देता रहे, इसलिए उसके सामने संसार को, जीवन (शरीर) को, तथा जीवन की

क्षणभंगुरता, बीभत्सता आदि को हमेशा स्पष्ट करते रहना होता था। इस तरह परम-मूल्य की प्राप्ति एक प्रकार की नकारात्मक प्रक्रिया बन गयी और लोग अपनी ही दुनिया (समाज) से एक तरह से घृणा करने लगे। व्यवहार में आने पर सर्वसाधारण के लिए उसका अर्थ केवल अपना हित हो गया और इससे एक प्रकार की सामाजिक निष्क्रियता पैदा हो गयी।

मूल्य यह स्वीकार किया गया कि जीवन की सार्थकता भगवद् प्राप्ति में है और चूँकि भगवान तो कण-कण में व्याप्त हैं, हर प्राणी में हैं, अतः जहाँ तक बन पड़े प्राणी मात्र की सेवा में ही भगवद्-प्राप्ति है। प्राणियों में मनुष्य सबसे श्रेष्ठ है, इसलिए मनुष्य मात्र की सेवा के लिए स्वार्पण कर देना सर्वोत्तम भक्ति का लक्षण है। इस प्रकार भारत में समाज-सेवा एक आध्यात्मिक क्रिया हो गयी और भारत के सभी संतों ने उसी पर जोर दिया है। यह अध्यात्म का समाजीकरण है। समाज सेवा से उस स्तर तक पहुँचने के लिए अक्सर धार्मिक होना आवश्यक माना जाता है, किन्तु श्री जयप्रकाश नारायण विज्ञान के माध्यम से यहाँ तक आये हैं। इससे सिद्ध होता है कि अध्यात्म और विज्ञान में मौलिक एकता है। 'समाजवाद से सर्वोदय की ओर' और 'आमने-सामने' ये दो पुस्तकें जयप्रकाश की उस महान यात्रा की प्रक्रिया की दिलचस्प और प्रेरणादायी कहानी कहती हैं। भारत के हर सजग नागरिक को ये पुस्तकें अवश्य पढ़नी चाहिए। उससे पता लगेगा कि तथाकथित मार्क्सवादी वैज्ञानिक जिस विज्ञान की बात करते हैं उसका अन्त कहाँ होता है। यदि विज्ञान सत्य की एक खोज है, तो उसे अन्ततः सत्य की खोज में लगे अन्य प्रयासों के साथ होना ही पड़ेगा। सत्यान्वेषण की यात्रा एकांगी नहीं हो सकती। सत्य के अनेक पहलू होते हैं, और उन सबको जानने के प्रयोगों की जानकारी के आधार पर ही वह यात्रा सम्पन्न हो सकती है। इसमें मुख्य बात यह है कि हमारा सत्यान्वेषण का जैसा साधन होगा, हमें उतना और वैसा ही सत्य दिखायी देगा।

समाज अमर है

स्वतन्त्रता, समता और बन्धुत्व प्राप्त करने के लिए राज्यरूपी दूबिन से समाज-रूपी दूबिन निश्चय ही कहीं अधिक बड़ी और दूर तक देखनेवाली है। राज्य समाज का एक अंश मात्र है और मरण-शील है, जबकि समाज अमर है। शाश्वत सत्य का पता केवल शाश्वत साधन से ही लग सकता है। जयप्रकाश ने वही शाश्वत साधन पकड़ा है। इसी बात को ध्यान में रखकर एशियन सोशलिस्ट कान्फ्रेन्स (१९५४) में श्री मार्क गेज ने कहा था, "सम्भव है कि एशिया तथा दुनिया के समाजवादी इस दिशा में जय-प्रकाश की जैसी दूरी तक न जा सकें, किन्तु जयप्रकाश नारायण ने उन्हें जो चुनौती दी है उसे नजर-अन्दाज नहीं किया जा सकता है।" गेबिन्ट ने ठीक ही कहा है कि "पश्चिम के साथ समानता खोजने से पूर्व एशिया की यह पहली आवश्यकता है कि वह अपने ही विचारों से निर्देशित हो। श्री जयप्रकाश नारायण ऐसे प्रथम राज-नेता हैं जो न तो पश्चिमी बुद्धिजीवियों में से आये हैं और न रजवाड़ों की प्रशा-सनिक श्रेणी से ही निकले हैं। उनके विचार किसी अन्य के बजाय उनके खुद के और भारतीय दृष्टान से निकले हैं।'

गांधीजी ने एक बार कहा था कि "जयप्रकाश समाजवाद के आचार्य हैं और समाजवाद के बारे में जो जयप्रकाश नहीं जानते वह कोई नहीं जानता।" जयप्रकाश की प्रतिभा के कारण ही गांधीजी ने उन्हें ऐसे महान आचार्य का पद दिया है। भारतीय समाज वैज्ञानिकों में सम्भवतः वे ही पहले व्यक्ति हैं जिन्होंने अमूर्त समाज के विकल्प के रूप में मूर्त समुदाय का प्रत्यय दिया है। निश्चय ही इसमें उन्हें गांधीजी के वर्तुलाकार समाज के प्रत्यय से ही प्रेरणा मिली है, किन्तु जे० पी० ने उसे ठोस समाजशास्त्रीय धरातल प्रदान किया है। लघु समुदायों का विचार पश्चिम में कुछ पहले से चल रहा था, किन्तु यह बात ध्यान में रखने की है कि पश्चिम में भी उस विचार को गांधीजी की विकेन्द्रित समाज की कल्पना ने चालना दी थी। गांधीजी ने अपना यह विचार सन् १९०८ में ही 'हिन्दस्वराज्य' के माध्यम से दुनिया के सामने रखा था।

नया योगदान

इसके साथ ही राजशास्त्र में भी जे० पी० ने सत्ता (पावर) के प्रत्यय को एक नया आयाम प्रदान किया है। प्रचलित राजशास्त्र में सत्ता का अर्थ हमेशा राज्य-सत्ता से लगाया गया है, और यहाँ तक कि तथाकथित लोकराज्य में भी लोक-सत्ता का अर्थ लोक की तरफ से राज्य-सत्ता ही लगाया गया, किन्तु जे० पी० ने बताया है कि सत्ता का अर्थ और अधिष्ठान राज्य नहीं होता, जनता होती है। इसलिए जनता की तरफ से सत्ता नहीं बल्कि जनता की सत्ता ही वास्तविक लोक-सत्ता होती है और इस अर्थ में राजनीति एक पिछड़ा प्रत्यय हो जाती है। राजनैतिक संगठनों का उद्देश्य सत्ता प्राप्त करना भी हो तो भी उन्हें राज्य तथा जनता में फर्क है यह तो समझना ही चाहिए। उन्हें 'जन-सत्ता' के प्रत्यय को सही परिप्रेक्ष्य में देखना चाहिए।

यहाँ पर यह समझने की बात है कि 'जन-सत्ता' तथा 'प्रतिनिधि-सत्ता' में, भी फर्क होता है। 'जनता के लिए' जो सत्ता होती है वह प्रातिनिधिक हो सकती है, चाहे वह प्रतिनिधि राजा, दल, कोई नेता या एक समूह ही क्यों न हो, किन्तु वह जन सत्ता नहीं होती। 'जनता के लिए सत्ता' में और 'जनता की सत्ता' में फर्क है। हम तो राज्य-विहीन समाज की रचना ही करना चाह रहे हैं, मार्क्स भी यही चाहता था। किन्तु क्या हम समाज-विहीन राज्य की कल्पना कर सकते हैं? जे० पी० ने इस प्रश्न पर ध्यान खींचा है। श्री एम० एन० राय ने भी अपने ढंग से इस तथ्य की ओर इशारा किया था, किन्तु वे अब तक 'जन-सत्ता' के अपने

प्रलय को कभी स्पष्टतया नहीं समझ सके या समझा पाये। जे० पी० ने जब प्रत्यक्ष लोकतंत्र का प्रलय दिया है, तब यह उलझन हल हो जाती है। गांधीजी ने ऐसे प्रत्यक्ष लोकतंत्र का विचार सूत्र-रूप में दिया था और जे० पी० ने उसे वैज्ञानिक रूप दिया है। गांधी से लेकर जयप्रकाश तक राजशास्त्र का यह विकास भारत की विशिष्ट देन मानी जायेगी।

विचार-क्षेत्र से भी अधिक व्यक्तिगत क्षेत्र में जे० पी० की महानता अपूर्व है। जो उन्हें निकट से जानते हैं वे उनकी नम्रता तथा हृदय की आर्द्रता से प्रभावित हुए बिना नहीं रहेगा। 'बड़े-आदमी' का भान उनमें कहीं है ही नहीं। साथियों के साथ ऐसा हमदम होनेवाला, इतना ऊँचा नेता कोई देखने में नहीं आया। हृदय स्फटिक की तरह स्वच्छ और जग भी मैल न सहन करनेवाला है। वे राजनीतिज्ञों की तरह दो मुँह नहीं रखते। जो दिल में है, जैसा लगा, निलिप्त होकर निडरता से कह देते हैं। लोकप्रियता की कभी परवाह नहीं। जन-नेताओं में ऐसी निर्भिकता आ जाये तो राजनीति में व्याप्त भ्रष्टाचार समाप्त ही हो जाय।

लोग कहते हैं, और सभी कहते हैं कि जे० पी० को जे० पी० बनाने और जीवन यात्रा के इस ऐतिहासिक मोड़ तक उन्हें लाने का श्रेय उनकी धर्मपत्नी श्रीमती प्रभावतीजी को है। इस महान महिला के बारे में बहुत कम लोगों को ज्ञान है, किन्तु जो जानते हैं उन्हें मालूम है प्रभावतीजी ने छाया की तरह जे० पी० का अनुगमन मात्र नहीं किया, उन्हें निर्देश भी दिया है। सभी जानते होंगे कि जे० पी० की हजारों-लाखों की सभाओं में प्रभावतीजी को किसी ने कभी सामने मंच पर नहीं देखा होगा। वे या तो श्रोताओं में कहीं बैठी होंगी या फिर मंच के पिछवाड़े में कहीं होंगी। प्रभावतीजी को जितना दुलार उन्हें बापू से मिला है। उनका प्रारम्भिक जीवन गांधीजी के साथ ही बीता है। प्रभावतीजी जे० पी० को जिस सावधानी और दृढ़ता से सम्भाले रहती है, यह उन्हें निकट से देखनेवाले अच्छी तरह जानते हैं।

इस साल विजया दशमी को जयप्रकाशजी ६९ साल पूरे कर रहे हैं। अपनी इस उम्र में भी वे सन् '४२ की भांति सक्रिय हैं। जे० पी० के मुसहरी अभियान से स्पष्ट है कि वे आज भी कितनी तीव्रता से समाज के लिए सक्रिय हो सकते हैं। लोकशाही की स्थापना के लिए बंगला देश में चल रहे नागरिक शक्ति बनाम सैनिक शक्ति के संघर्ष में वे जिस प्रकार का सक्रिय योगदान दे रहे हैं, वह उनकी आहत मानवता के प्रति अति-संवेदनशीलता की ताजी मिसाल है। वे किसी भी युवा क्रान्तिकारी से कहीं अधिक क्रान्तिकारी हैं। जे० पी० इस महान जीवन-यात्रा की इस मंजिल पर पहुँचे। उनके लिए हम यही प्रार्थना करें कि उन्हें दीर्घ व स्वस्थ जीवन मिले, और वे अपनी मंजिल पर पहुँचें। 'चरैवेति, चरैवेति।'

—कामेश्वर प्रसाद बहुगुणा

वे करुणा-मूर्ति हैं

जयप्रकाश बाबू के संवेदनशील करुण हृदय से कौन अपरिचित है? उनके करुणामय व्यक्तित्व की एक सुन्दर घटना सुनने को मिली थी। वह पाठकों के लिए प्रस्तुत है।

बिहार गांधी स्मारक निधि के पटना कार्यालय में बहुत पहले एक सेवक था। १० बजे सुबह से ५ बजे शाम तक कार्यालय में कार्य करने के साथ ही उसने गाय-भैंस पालकर दूध बेचने का सिलसिला भी जमा लिया था। कार्यालय की साइकिल का उपयोग वह दूध बांटने आदि के कार्य में भी कर लेता था। सार्वजनिक सम्पत्ति का व्यक्तिगत उपयोग न हो, इस दृष्टि से उससे कहा गया कि वह साइकिल का उपयोग कार्यालय के समय के बाद के लिए बन्द कर दे। साइकिल के उपयोग का व्यक्तिगत लाभ लेने की छूट बन्द कर देने का परिणाम यह हुआ कि उसे पैदल दूध देने जाना पड़ता था और इस कारण कार्यालय में उसकी उपस्थिति में अनियमितता होने लगी थी। अन्ततोगत्वा उससे कहना पड़ा कि वह दोनों काम एक साथ नहीं कर पाता। इसलिए या तो वह दूध का धन्धा करे या निधि का काम। निधि का कार्य छोड़कर वह दूध का ही धन्धा करने लगा।

चूँकि उस दूधवाले के रहने और गाय-भैंस पालने का स्थान भी निधि कार्यालय के निकट ही था, अतः उस दूधवाले के आसपास रहनेवाले निधि के एक-दो अन्य कार्यकर्ता भी दूधवाले की सब चालाकियाँ देखते थे। उसकी एक चालाकी यह भी थी कि वह सबेरे उठकर गाय, भैंस से दूध निकाल लेता और उस दूध को सुरक्षित रख देता। उसके बाद वह अपने उन जानवरों को पर्याप्त मात्रा में सत्तू व गुड़ या चीनी खिला देता। इतना करके एक-आध घंटे बाद वह अपनी गाय-भैंस को उन घरों पर ले जाता, जिनका आग्रह रहता कि दूध उनके ही सामने दुहकर उन्हें दिया जाय। वह दूधवाला भैंस को दुहकर दूध उन्हें दे देता। बाद में वह पहले से दुहकर रखे गये दूध में पर्याप्त पानी मिलाकर बाँट आता। उसका यह सिलसिला काफी समय तक चला। दूध लेनेवालों में अन्य बहुतेरों के साथ निधि के एक अधिकारी, शासन के एक मंत्रीजी और हमारे जयप्रकाश बाबू भी थे। दूधवाला अक्सर जयप्रकाश बाबू के लिए तो (कुछ अवसरों को छोड़कर) इतनी रियायत करता कि उन्हें पहले से निकालकर सुरक्षित रखे अच्छे दूध में सिर्फ थोड़ा ही पानी मिलाकर दे देता था। मंत्रीजी को और निधि के भाई को भी अक्सर शुद्ध दूध मिल जाता, यानी सुरक्षित रखे दूध में से ही, पर पर्याप्त पानी और चीनी मिला हुआ।

की आमदनी है। जमीन जोतनेवाले और जमीन के बीच कोई भी बीचवैया न हो, न तो मन्दिर-मठ और स्कूल-कालेज विश्वविद्यालय। हमलोग सभी तरह के बीचवैयों का विरोध करते हैं।

इस तरह की छूट यदि दी जायगी तो लैण्ड सीलिंग ऐक्ट की धाराओं से बच निकलने के लिए बहुत से काल्पनिक ट्रस्ट और दातव्य संस्थाएँ बना ली जायेंगी। इसलिए हमलोग यह सुझाव देते हैं कि धारा ७३ के उपधारा २ को समाप्त कर दिया जाय और दातव्य एवं शैक्षिक संस्थाओं, ट्रस्टों तथा विश्वविद्यालयों को जमीन रखने की कोई छूट न दी जाय। जो वास्तविक कृषि-शिक्षण संस्थाएँ हैं उन्हें नमूने की खेती के लिए जमीन की जरूरत हो सकती है। वैसी संस्थाओं को काम लायक जमीन रखने की अनुमति दी जा सकती है।

सहयोग समितियाँ

धारा ७३, उपधारा–३ को-ऑपरेटिव सोसाइटीज ऐक्ट के मुताबिक जो सहयोग समितियाँ निबंधित हुई हैं उनसे भिन्न सहयोग समितियों को धारा ७३ की उपधारा ३ के मुताबिक जमीन रखने की छूट है। किसी भी सहयोग समिति को पूरी की पूरी छूट नहीं दी जानी चाहिए। जितनी जमीन की व्यवस्था किया जाना सम्भव है उतनी जमीन का अधिकतम क्षेत्रफल निर्धारित कर दिया जाय। परन्तु यह ध्यान रखा जाय कि इसका उपयोग जमीन की हदबन्दी कानून की धाराओं से बच निकलने के लिए नहीं हो। ऐसी सहयोग समितियों के सदस्य वे ही हों जो जमीन अपने हाथों जोतते हों।

उद्योग या व्यापार करनेवाली संस्थाओं के कब्जे में भूमि

धारा ७३ की उपधारा ४ में उद्योग अथवा व्यापार करनेवाली संस्थाओं को जमीन रखने की छूट है। इसका यह नतीजा हो सकता है कि उद्योग या व्यापार करनेवाली कुछ संस्थाएँ खेती लायक बहुत अधिक जमीन हासिल कर लेंगी। यह काम भूमि सुधार कानून की मन्शा के बिलकुल विपरीत है। उद्योग या व्यापार करनेवाली संस्थाओं के लिए जमीन आमदनी का जरिया न बने। इस उपधारा को समाप्त कर दिया जाय, यह हमलोगों का विशेष आग्रहपूर्ण सुझाव है।

पहाड़ी क्षेत्र

धारा ७३ की उपधारा ५ में किसी भी पहाड़ी क्षेत्र में पड़नेवाली जमीन को सीलिंग एक्ट से छूट है। यदि पहाड़ी क्षेत्रों में भी हदबन्दी लागू की जाय तो हम लोगों का यह दृढ़ विश्वास है कि किसान जंगली एवं पहाड़ी जमीन को उपजाऊ बनाने में खास दिलचस्पी लेंगे। इसलिए पहाड़ी जमीन को सीलिंग ऐक्ट से छूट नहीं दी जानी चाहिए।

बगान

धारा ७३ की उपधारा ६ में सभी बगानों को सीलिंग एक्ट से छूट है। चाय, कॉफी, आदि के बाग लगानेवाले को बगान के नाम पर जमीन के बड़े-बड़े चक रखने की छूट देना एक और अन्याय है। बगान आदि के लिए जमीन के लिए बड़े-बड़े चक रखना यदि जरूरी ही हो जाय, तो वैसी जमीन की मालिकी सर्वसाधारण समाज के हाथ में रहे। अच्छा तो यह होगा कि यह काम करनेवाले मजदूरों की सहयोग समिति के पास रहे अन्यथा वैसी जमीन का राष्ट्रीयकरण कर लिया जाय।

टोपियोका, सुपारी, नारियल के बाग

धारा ७३ की उपधारा ७ में टोपियोका, सुपारी, नारियल के बगीचे में परिणत जमीन को सीलिंग ऐक्ट से मुक्त रखती है। हमारी सलाह है कि इसके लिए कोई छूट नहीं दी जानी चाहिए, क्योंकि अन्न की खेती से कहीं अधिक आमदनी इन चीजों से होती है।

जलावन की लकड़ी तथा गोशाला के लिए जमीन

धारा ७३ की उपधारा ८ और १० उस जमीन को लैण्ड सीलिंग ऐक्ट से मुक्त रखती है जिसका उपयोग सिर्फ जलावन पैदा करने के लिए, पशुपालन या अन्य जानवरों, पक्षियों को पालने के लिए किया जाता है। व्यक्तिगत मिल्कियत की जमीन में इस तरह की कोई भी छूट नहीं होनी चाहिए। अगर ऐसी छूट दी ही जानी हो, तो ऐसी जमीन को ग्राम-समाज की सामूहिक मिल्कियत में रखा जाना चाहिए।

पट्टे पर दी गयी जमीन

टेनेन्ट्स प्रोटेक्शन ऐक्ट १९५५ (पट्टेदारों की हिफाजत का कानून) और फेयर रेन्ट एक्ट १९५६ (उचित मालगुजारी कानून) के बावजूद पट्टेदारों की समस्याएं आज भी पहले की तरह बेहद उलझी हुई हैं। उनकी समस्याएँ ये हैं : (क) जमीन उन्हें मौखिक रूप से बन्दोबस्त में दी जाती है। इस कारण यह आशंका बराबर बनी रहती है कि उनकी जमीन जब चाहे तब छीन ली जायगी। (ख) मालगुजारी बहुत अधिक ली जाती है जो अन्यायपूर्ण है। (ग) भिन्न-भिन्न ढंग से उनकी जमीन छीन ली जाती है, जैसे—वे खुद छोड़ दें, इसके लिए उन्हें मजबूर किया जाता है, मालिक खुद जमीन जोतेंगे यह कहकर उन्हें बेदखल कर दिया जाता है, जमीन पर उनका कोई रैयतवारी अधिकार नहीं है, यह कहकर उन्हें जमीन पर से भगा दिया जाता है। (घ) बेनामी पट्टेदार के नाम से पट्टे रहते हैं।

उम्मीद यह की जाती थी कि पट्टेदार का व्यापक दायरेवाला एक कानून बनाया जायगा अथवा हदबन्दी कानून में ही इससे सम्बन्धित कुछ प्रगतिशील धाराएँ जोड़ दी जायेंगी। परन्तु हमलोग देखते यह हैं कि हदबन्दी कानून में पट्टेदारी की जमीन पर हदबन्दी लगाने की व्यवस्था के अलावा रैयतों की हालत में सुधार करने की दिशा में कोई और कदम उठाया ही नहीं गया है।

१९६१ के हदबन्दी कानून में पट्टे पर रखी जानेवाली जमीन की अधिकतम सीमा ५ एकड़ निर्धारित की गयी है।

इसका भी वही प्रभावकारी ढंग से लागू नहीं किया गया है। अधिकतर तो उसका उल्लंघन ही होता है, पालन नहीं।

इसलिए रैयतों की स्थिति सुधारने के लक्ष्य को सरकार के सामने अनेक योजनाओं में लिपिबद्ध देखकर हमलोग यह महसूस करते हैं कि भूमि सुधार कानून में नीचे लिखी बातें जोड़ दी जायें.

(१) खुद काश्त करनेवाले हर रैयत को उस जमीन का मालिक बना दिया जाय जो पट्टे पर उसकी काश्त में है। यह ध्यान में अवश्य रखा जाय कि यह सीलिंग में निर्धारित ५ एकड़ की सीमा से अधिक न हो। इसका अर्थ यह हुआ कि पट्टे पर जमीन जोतनेवाले रैयतों की हिफाजत के कानून—कल्टीवेटिंग टेनेन्ट्स प्रोटेक्शन ऐक्ट १९५५ के सेक्शन ४ए और लैण्ड रिफार्म्स ऐक्ट १९६१ के सेक्शन ६८—में खुद जोतने के लिए जमीन रैयत से पुनः प्राप्त कर लेने का जो अधिकार दिया गया है वह भी समाप्त कर दिया जाय।

(२) किसी लिखित कागज के अभाव में खेती करनेवाले रैयतों के लिए यह कठिन होता है कि वे जमीन खुद जोत रहे हैं इसका सबूत भी दे सकें। इस सिलसिले में हमलोगों को यह देखकर प्रसन्नता है कि सरकार ने एक कानून बनाकर यह जरूरी बना दिया है कि सरकार और भूमि मालिक रैयतों के नाम और उनके काश्त की जमीन के विवरण का खतियान रखें। इसमें हमलोग यह सुझाव देना चाहते हैं कि रैयतों के अधिकार को कागज में दर्ज करने के लिए जो लोग लगाये जाँय उनमें उस क्षेत्र में रहनेवाले स्थानीय लोगों को भी रखा जाय। गाँवों में रहनेवाले अनेक रैयतों को इससे यह सुविधा होगी कि वे गैर-सरकारी लोगों के पास अधिक आसानी से पहुँच सकेंगे और उनकी मार्फत अपने नाम अधिक आसानी से दर्ज करा सकेंगे।

कुडियिरुप्पु (वासगीत जमीन)

'कुडियिरुप्पु' गाँवों में रहनेवाले गरीब भूमिहीन लोगों का पुराने जमाने से आ रहा एक सुपरिचित अधिकार है। उस समय के जमींदार या भूमि मालिक के कब्जे में जो जमीन थी उसमें किसी भी जमीन में इन भूमिहीनों को अपने रहने की झोपडी बनाने की अनुमति दे दिया करते थे। स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद विभिन्न राज्यों में भूमि सुधार सम्बन्धी कानूनों ने इस परम्परागत अधिकार की परिभाषा की और उसे कानूनी रूप दिया और गाँव में रहनेवाले भूमिहीन, गृह-विहीन गरीबों के घरबार के अधिकार को सुरक्षित करने की व्यवस्था की। लोकसभा में चौथी योजना का जो प्रारूप पेश किया गया है, उसमें यह सुझाया गया है कि जिस जमीन पर किसान, कारीगर, खेतिहर मजदूर ने रहने के अपने घर बनाये हों, उस जमीन पर उनका अधिकार पूर्णतः सुरक्षित रहे।

यह ध्यान देने लायक बात है कि केरल के भूमि सुधार कानून में वासगीत जमीन पर रहनेवालों का कायमी अधिकार सुरक्षित कर दिया गया है। वास की जमीन पर से उन्हें किसी कारण से बेदखल नहीं किया जा सकता। इसमें यह व्यवस्था भी की गयी है कि झोपड़ियों के ये निवासी यदि उस जमीन पर मलिकाना अधिकार प्राप्त करना चाहते हैं तो उस जमीन का बाजार भाव के दाम का चौथाई मात्र देकर वे उस जमीन का मालिक हो जा सकते हैं। इसमें सरकार उन्हें आधी रकम देगी। शेष आधी रकम उन्हें खुद देनी होगी।

तमिलनाडु के लैण्ड सीलिंग ऐक्ट में झोपड़ों में रहनेवाले इस तरह के भूमिहीनों की रक्षा की कोई व्यवस्था नहीं है। इसलिए हमलोग बहुत तीव्रता से यह महसूस करते हैं कि लैण्ड सीलिंग ऐक्ट में इस तरह की व्यवस्था की जानी चाहिए कि झोपड़ियों से निवासियों को किसी भी कीमत पर हटाया नहीं जा सके, और उनके वास की जमीन की मालिकी उनके हाथ में चली जाय। झोपड़ी-निवासियों को उनके वास की जमीन से किसी भी तरह निकाला न जाय एवं भूमिवानों की कुटिल चालों से उनकी हर तरह से हिफाजत की जाय। इस दृष्टि से हमलोगों का सुझाव यह है कि रैयतों के नाम और अधिकार का खतियान बनाने के जैसा ही भूमिहीनों के नाम और उनके वास की जमीन का विवरण लिखने की भी व्यवस्था की जानी चाहिए। नाम दर्ज कर लेने का यह काम कानून बनने के पहले झटपट पूरा कर लिया जाना चाहिए। कोई कागजी सबूत यदि नहीं रहा तो जमीनवाले इन झोपड़ीवालों को अपने घर और जमीन से बेदखल कर देने के लिए वैसे ही अनेक तरीकों का उपयोग करेंगे, जैसे दूसरे भूमि सुधार कानूनों के क्रम में उन्होंने किया।

आपस के कुछ बँटवारे तथा हस्तांतरण आदि

लैण्ड रिफार्म्स (रिडक्शन ऑफ सीलिंग ऑन लैण्ड) ऐक्ट १९७० की धारा २१९ जैसी धारा में आपस में बँटवारे के द्वारा जमीन को अपने पास रख लेने की जो गुंजाइश दी गयी है, उसको समाप्त किया जाना चाहिए, अन्यथा भूमि सुधार कानून का उद्देश्य ही समाप्त हो जायगा।

भूमि सुधार कानून का लाभ ठीक ढंग से प्राप्त करने के लिए यह आवश्यक है कि इस कानून को जिस तारीख को लागू किया गया (६ अप्रैल १९६०), उस तारीख से जमीनवालों ने जो भी जमीन इस नीयत से हस्तांतरित की है कि इस कानून की धाराओं से वे बच निकलें, उन सब हस्तांतरण को नाजायज करार दे दिया जाय।

ऊपर जो सुझाव दिये गये हैं उन पर यदि अमल किया गया तो भूमि सुधार कानून बनाने के उद्देश्यों की बहुत हद तक पूर्ति हो जायेगी। इसलिए हमलोग तमिलनाडु सरकार से यह आग्रह करते हैं कि यह हमलोगों के सुझाव को स्वीकार कर लें और समाज के सबसे अधिक अभावग्रस्त लोगों को न्याय दें।

—तमिलनाडु सर्वोदय मण्डल

[illegible]: क्या, कितनी, कैसे ? —(२)

दलमुक्त ग्राम-प्रतिनिधित्व

अगर एक बार यह बात ध्यान में आ जाय कि ग्रामस्वराज्य का अर्थ यह है कि गाँव के लोग आपस में मिलकर, अपने निर्णय से, गाँव का कामकाज चलाएँ और सरकार के जिम्मे उतना ही काम सौंपें जितना वे अपनी शक्ति से नहीं कर सकते, तो दूसरी बातों को समझने में कठिनाई नहीं रह जायगी। ग्रामस्वराज्य के विचार में गाँव एक इकाई है और ग्रामस्वराज्य-सभा उसका संघटन है। संघटन ही नहीं, यह अपने गाँव की 'सरकार' है। अगर ऐसी बात है तो गाँव के बाहर की जो सरकार है, उसमें गाँवों की आवाज कैसे पहुँचेगी? उसमें गाँवों के प्रतिनिधि भेजे जायेंगे या हम मान लेंगे कि अलग-अलग राजनैतिक दलों के प्रतिनिधि जनता के प्रतिनिधि हैं, और उनसे हमारा काम चल जायगा? दल एक ही गाँव में कई हो सकते हैं लेकिन ग्रामस्वराज्य-सभा एक ही होगी। ग्रामस्वराज्य-सभा पूरे गाँव की बात बोलेगी, जबकि दल का आदमी अपने दल या समर्थकों की बात कहता है।

इसलिए हम कहते हैं कि विधान सभा या संसद में ग्रामस्वराज्य-सभाएँ अपने निर्वाचन-क्षेत्र से अपना एक सर्वसम्मत उम्मीदवार खड़ा करें। यह कैसे होगा, यह सोचा जा चुका है। 'राजदान के बाद क्या?' (प्रकाशक—सर्व सेवा संघ, राजघाट, वाराणसी-१) नाम की पुस्तिका में विस्तार के साथ बताया गया है कि किस तरह एक निर्वाचन क्षेत्र की अलग-अलग ग्रामस्वराज्य-सभाएँ एक से लेकर पाँच तक सर्वसम्मत प्रतिनिधि भेजकर अपने क्षेत्र का एक निर्वाचन मण्डल (इलेक्टोरल कॉलेज) बनायेंगी और किस तरह यह निर्वाचन मण्डल अपना सर्वसम्मति (या सर्वानुमति) से उम्मीदवार तय करेगा। यह उम्मीदवार उस क्षेत्र की ग्रामस्वराज्य-सभाओं की ओर से चुनाव में (विधान सभा या लोकसभा के लिए) खड़ा होगा। इस उम्मीदवार को उस निर्वाचन क्षेत्र की ग्रामस्वराज्य-सभाओं का समर्थन होगा, यह उनका 'अपना' उम्मीदवार होगा। इसका यह अर्थ नहीं है कि उस क्षेत्र से दलों के या स्वतंत्र उम्मीदवार नहीं खड़े होंगे, लेकिन जिस उम्मीदवार के पीछे इतना जबरदस्त जनमत होगा उसके मुकाबिले किसी भी दल के उम्मीदवार के जीतने की क्या आशा रहेगी? उसे तो अपनी 'कन्वेसिंग' भी नहीं करनी पड़ेगी।

इस तरह अगर किसी राज्य में दलों के स्थान पर जनता के उम्मीदवार जीतकर विधान सभा में पहुँच जायेंगे तो सरकार आज की तरह न बनकर बिल्कुल नये ढंग से बनेगी। तब विधान सभा के सब सदस्य मिलकर अपना नेता चुनेंगे और वह अपना मन्त्रिमंडल बनायेगा। हर विभाग के लिए विधान सभा के सदस्यों की एक अलग कमिटी बनेगी। सरकारी दल और विरोधी दल में आज की तरह स्थायी अलगाव नहीं रहेगा। जो कार्यक्रम विधान सभा में आमराय से मान्य होगा उसके अनुसार सरकार काम करेगी। दलबदल का सवाल ही नहीं रहेगा। सरकार निश्चित होकर काम करेगी। निर्वाचन क्षेत्रों में बने निर्वाचन मण्डल अपने प्रतिनिधि के काम का लेखा-जोखा लेते रहेंगे। इस पद्धति में विधान सभा और सरकार किसी में एक दूसरे का विरोध करनेवाले की जरूरत नहीं रह जायेगी। अलग-अलग प्रश्नों को लेकर मतभेद भले ही हों, लेकिन वह स्थायी नहीं होगा और उसके कारण दल नहीं बनेंगे। दलों के स्थान पर संघटित गाँवों के प्रतिनिधित्व से लोकतंत्र दलों के हाथ से निकल सीधे जनता के हाथ में पहुँच जायगा। इस लोकतन्त्र में ग्रामस्वराज्य-सभाओं के प्रतिनिधियों से प्रखण्डस्वराज्य-सभा, प्रखण्डस्वराज्य-सभाओं के प्रतिनिधियों से जिलास्वराज्य-सभा, और इसी तरह ऊपर के राज्य और राष्ट्र तक के संघटन बनते जायेंगे। ये अपने-अपने क्षेत्र में स्वायत्त होंगे, और परस्पर सहयोग से काम करेंगे। ऊपर की इकाई नीचे की इकाई की मदद करने के लिए होगी, उस पर शासन करने के लिए नहीं। यह है ग्रामस्वराज्य, प्रखण्डस्वराज्य, जिलास्वराज्य, राज्यस्वराज्य और राष्ट्र-स्वराज्य का चित्र, जिसे ग्रामस्वराज्य आन्दोलन जनता के सामने रख रहा है।

इसी तरह की व्यवस्था नगरों के लिए भी हो सकती है।

पुलिस-अदालत-निरपेक्ष-व्यवस्था

गाँव-गाँव, नगर-नगर की जनता अपना स्वराज्य कैसे कायम रख सकेगी अगर वह अपने झगड़ों को लेकर अदालतों में दौड़ती रहेगी, और अपनी रक्षा के लिए पुलिस के मुट्ठी भर आदमियों के भरोसे बैठी रहेगी? जिस तरह सरकार अपनी पुलिस और न्याय की व्यवस्था रखती है, उसी तरह ग्रामस्वराज्य की 'सरकार' यानी ग्रामस्वराज्य सभा (या नगर-स्वराज्य-सभा) को भी अपनी पुलिस और न्याय की व्यवस्था करनी पड़ेगी। उसकी व्यवस्था कैसी होगी? ग्रामस्वराज्य-सभा अपने गाँव के लिए या प्रखण्डस्वराज्य सभा अपने प्रखण्ड के लिए, ग्राम-शांतिसेना संघटित करेगी। उसका काम होगा गाँव में शांति बनाये रखना, अशांति न होने देना, लेकिन अगर रोकने की कोशिश करने पर भी कोई झगड़ा हो ही जाय या विवाद खड़ा हो जाय, तो उसे पुलिस-अदालत में न जाने देना, बल्कि गाँव में ही आपसी तौर पर हल कर लेना।

यह 'सेना' शांति के साथ-साथ गाँव की रक्षा करेगी, उसके खेत खलिहानों की, पशुओं की, घरों की, हर चीज की। शांति-सेना के 'सैनिक' बारी-बारी पहरा देंगे, और अपने ऊपर जोखिम उठाकर भी गाँव को भीतरी अशांति या बाहरी आक्रमण से बचायेंगे।

ग्राम-शांतिसेना के 'सैनिक' गाँव में भी विकास के काम के अगुआ होंगे।

ग्रामस्वराज्य-सभा की योजना के अनुसार वे खेती, भूमि-सुधार, वृक्ष लगाने, पशु पालने, सड़क बनाने, कुआँ और आहर-तालाब खोदने, उद्योग चलाने, आदि सब काम करेंगे। शांतिसेना में बच्चों, किशोरों, तरुणों, प्रौढ़ों, स्त्रियों और पुरुषों की अलग-अलग टोलियाँ होंगी। सबके अलग-अलग काम होंगे। शांतिसेना का हर सदस्य शांति-सैनिक तो होगा ही, साथ ही उत्पादक और नागरिक भी होगा। उसके कर्तव्य अधिक होंगे, अधिकार नहीं। वह ग्रामस्वराज्य-सभा की भुजा होगी।

न्याय के लिए गाँव में विशेष व्यवस्था करनी होगी। इसकी भी विस्तार के साथ चर्चा 'राज्यदान के बाद क्या?' पुस्तक में की गयी है। मुख्य बात समझने की यह है कि गाँव में ऐसी व्यवस्था होनी चाहिए जिससे विवाद के फरीकों को, तथा गाँव के दूसरे लोगों को भी, समाधान हो जाय। अदालत, कानून, हाकिम, वकील, गवाह और कागज के तरीके गाँव में लागू करने से न्याय नहीं होगा, मुकदमेबाजी होगी, जैसी आज होती है। मुकदमेबाजी से गाँव बरबाद हो जाता है। उसे तुरत बंद करना चाहिए।

तो, समाधान कैसे होगा? सबसे अच्छा यह होता है कि जिन दो आदमियों में विवाद हो, वे आपस में चर्चा करके झगड़ा सुलझा लें। यह न हो तो मित्रों की सहायता लें। यह भी न हो सके तो बीच-बिचाव के लिए दोनों मिलकर गाँव के या गाँव के बाहर के किसी एक व्यक्ति को, या दो-तीन व्यक्तियों को, पंच मान लें और फैसला करा लें। अगर आपसी तौर पर इनमें से कोई उपाय न हो सके तो मामला ग्रामस्वराज्य-सभा के सामने रख दें। वह खुद कोई निर्णय कर देगी या अपनी ओर से पंच तय कर देगी। पंच गाँव के बाहर के भी हो सकते हैं। ग्रामस्वराज्य-सभा यह भी कर सकती है कि पंचों की एक स्थायी सूची रख और किसी विवाद के निर्णय के लिए उसमें से एक या एक से अधिक पंचों को चुना लिया करे।

अगर दो गाँवों के बीच विवाद पैदा हो जाय तब भी आपसी तौर पर यही तरीका अपनाया जा सकता है। जरूरत पड़ने पर पंच का काम प्रखण्ड स्वराज्य-सभा कर सकती है। —राममूर्ति

देश भर में विनोबा-जयंती मुजीब-मुक्ति दिवस के रूप में मनायी गयी

उत्तर प्रदेश:

प्राप्त सूचना के अनुसार मथुरा नगर में सर्वोदय मंडल व गांधी निकेतन आश्रम के सम्मिलित प्रयास से ११ सितम्बर को पूरे दिन का कार्यक्रम रखा गया, जिसमें प्रबुद्ध स्थानीय नागरिकों, अध्यापकों, छात्रों, रचनात्मक संस्थाओं के द्वारा प्रभातफेरी का कार्यक्रम रहा। शिक्षण-संस्थाओं में ८ से १२ बजे तक सर्वोदय-साहित्य प्रचार, १२ से २ बजे तक सामूहिक सूत्रयज्ञ, ५ बजे के बाद, विचार-गोष्ठी आदि का कार्यक्रम बहुत उत्साहजनक ढंग से सम्पन्न हुआ। साथ-साथ सर्वोदय पात्र का आरंभ भी कई विद्यालयों में किया गया। और सर्वोदय कार्यकर्ता भी अपने-अपने घरों में सर्वोदय-पात्र की स्थापना करें ऐसा सर्वसम्मति से निर्णय लिया गया। अन्त में सामूहिक प्रार्थना हुई और विनोबाजी के दीर्घ जीवन की कामना की गयी।

कानपुर में जिला सर्वोदय मंडल के अध्यक्ष की अध्यक्षता में शाम को ५॥ बजे एक आम सभा में विनोबाजी के प्रति श्रद्धा व्यक्त की गयी तथा श्रीमती मदालसा नारायण ने विनोबाजी के विचारों का परिचय देते हुए कहा कि विनोबाजी का विचार ही विश्वयुद्ध के खतरे को टाल सकता है।

बलिया जिला सर्वोदय मंडल की ओर से बलिया में विनोबा जयंती के उपलक्ष्य में एक आमसभा का आयोजन किया गया जिसमें सर्वोदय के प्रमुख कार्यकर्ता श्री कपिल भाई ने बलिया निवासियों से आह्वान किया कि वे इस शांतिमय क्रान्ति का नेतृत्व करें। शिक्षकों से अपील की गयी कि वे ग्रामस्वराज्य के काम में अपना योगदान दें। सभा में कवि श्री रमाशंकर पाण्डेय ने विनोबाजी को गीतों में श्रद्धांजलि अर्पित की और उनकी दीर्घायु की शुभकामना व्यक्त की।

वाराणसी में भी स्थानीय रचनात्मक संस्थाओं के सम्मिलित प्रयास से विनोबा-जयन्ती मनायी गयी।

बिहार:

पटना में विनोबा-जयंती के अवसर पर बिहार-भूदान-यज्ञ कमिटी द्वारा बंग-बंधु मुजीब की मुक्ति एवं बंगला देश को मान्यता प्रदान करने हेतु भारत सरकार से मांग की गयी।

मुजफ्फरपुर जिला सर्वोदय मंडल की ओर से श्री कामेश्वर प्रसाद ठाकुर की अध्यक्षता में आयोजित एक सभा ने मुजीब-मुक्ति व बंगला देश को मान्यता देने का प्रस्ताव सर्वसम्मति से पारित किया। विनोबाजी के दीर्घ जीवन के लिए भगवान से प्रार्थना की गयी।

ग्रामसभा मणिका विशुनपुर मनोहर (मुजफ्फरपुर) की ओर से भी प्रभात-फेरी, ग्रामसफाई व आमसभा का आयोजन किया गया और ग्रामसभा के सभी सदस्यों ने बंगला देश को शीघ्र मान्यता देने और मुजीब को मुक्त कराने की मांग करते हुए प्रस्ताव पास किया।

जिला ग्रामस्वराज्य समिति रांची के तत्वावधान में आयोजित सभा में फौजी शासन के चंगुल से लोकनायक मुजीब की बिना शर्त अविलम्ब रिहाई और बंगला देश को मान्यता देने की मांग भारत सरकार से की गयी।

पूर्णिया की सभी सर्वोदय संस्थाओं ने मिलकर विनोबा-जयंती को मुजीब-मुक्ति

दिन के रूप में मनाया व बंगला देश को जल्द से जल्द मान्यता देने की मांग सरकार से की। राष्ट्रसंघ के महामंत्री को भी अपनी मांगों की जानकारी देने हेतु पत्र भेजा गया।

सारन जिले में भी विनोबा-जयंती मुसीबत-मुक्ति दिवस के रूप में मनायी गयी।

डालटेनगंज (पलामू) में कई रचनात्मक संस्थाओं के तत्वावधान में विनोबा-जयंती मनायी गयी। जुलूस समाप्ति पर एक आमसभा का आयोजन किया गया और बंगला देश को २ अक्तूबर तक मान्यता दे देने की मांग सरकार से की गयी।

नरकटियागंज (चम्पारण) ग्राम स्वराज्य सर्वोदय सघन क्षेत्र की ओर से १० सितम्बर को श्रम-जयंती के रूप में श्री धीरेन्द्र मजूमदार का जन्म-दिन मनाया। ११ सितम्बर को मुसीबत-मुक्ति के रूप में विनोबा-जयंती मनायी गयी।

गांधी शांति प्रतिष्ठान के तत्वावधान में जमशेदपुर में आमसभा का आयोजन हुआ जिसमें नगर के गण्यमान्य व्यक्तियों ने विनोबाजी को अपनी श्रद्धांजलि अर्पित की। फादर रोड रीगन ने कहा कि "आज कहने का अवसर नहीं बल्कि करने का अवसर है और विनोबाजी ने जो सोचा यह करके दिखाया है इसीलिए हमने ११-१२ सितम्बर को अपने ३०० विद्यार्थियों के साथ २ घंटे का श्रमदान शुरू किया है और यह कार्यक्रम आगे भी चलता रहेगा।"

धनबाद, जिला सर्वोदय मंडल, जिला ग्रामस्वराज्य समिति और बिहार खादी ग्रामोद्योग संघ के संयुक्त तत्वावधान में विशाल आमसभा का आयोजन हुआ। सभा की विशेषता यह रही कि वर्ग, वाद और नीति-रीति के भेदों से रहित भावनाओं का अनोखा संगम यहाँ दिखायी दिया।

मध्यप्रदेश

टीकमगढ़ में आचार्य श्री शोभारामजी गुप्त की अध्यक्षता में एक सभा का आयोजन किया गया। सर्वोदय के कार्यकर्ता और अखिल भारतीय शांतिसेना मंडल के संयोजक श्री रामगोपाल दीक्षित भी सभा में उपस्थित थे। श्री दीक्षितजी ने तरुण छात्रों को अहिंसक क्रांति में अपना योगदान देने का आह्वान किया।

ग्रामदानी गांव बलदेवगढ़ में ११ सितम्बर को एक सार्वजनिक सभा का आयोजन ग्रामस्वराज्य केन्द्र की ओर से किया गया। इस सभा में ग्रामवासियों ने सर्वसम्मति से ग्रामसभा का संगठन किया। उसी दिन ग्रामकोष का श्रीगणेश भी हुआ।

राजस्थान

बांसवाड़ा जिला सर्वोदय मंडल व अन्य संस्थाओं ने विनोबा जयंती के दिन प्रभातफेरी सूत्र-यज्ञ, आमसभा, प्रार्थना व साहित्य-बिक्री के कार्यक्रमों का आयोजन किया।

विनोबा-जयंती से गांधी जयंती तक सर्वोदय-पर्व मनाने का निश्चय किया जिसमें ३०० रुपये की साहित्य-बिक्री, २१ 'भूदान-यज्ञ' के व २१ ग्रामराज के ग्राहक बनाने का संकल्प किया। साथ-साथ लोकसेवक व शांतिसैनिक बनाने, गांधी-जयंती को २४ घंटे का अखण्ड सूत्र-यज्ञ चलाने और दशमी के मेले में साहित्य-बिक्री के लिए प्रदर्शनी लगाने आदि का निर्णय लिया गया।

बीकानेर के खादी मंदिर में विनोबा-जयंती मनायी गयी और इस अवसर पर सर्वोदय मण्डल के गठन का भी कार्यक्रम निश्चित किया गया।

पंजाब

विनोबा-जयंती के अवसर पर आदमपुर (जालंधर) में सर्वोदय-साहित्य की अखिल भारतीय बिक्री योजना का उद्घाटन डा० भीमसेन, भूतपूर्व मुख्य मंत्री, पंजाब ने किया। यह साहित्य-बिक्री योजना पंजाब, हरियाणा, हिमाचल, चण्डीगढ़ और दिल्ली के सभी खादी-भंडारों में ११ सितम्बर से चालू हुई है, जिसमें खादी खरीदनेवालों को खादी खरीद के अनुपात में निश्चित मात्रा में अपनी पसन्द का साहित्य ५० प्रतिशत रियायत पर मिलेगा।

इसी सन्दर्भ में आदमपुर में प्रभात-फेरी हुई, और गांववालों की ओर से सड़क बनाने का काम हुआ तथा आमसभा में विनोबाजी के प्रति श्रद्धा व्यक्त करते हुए उनके दीर्घजीवन की कामना की गयी।

दिल्ली

दिल्ली प्रदेश सर्वोदय मण्डल द्वारा आयोजित कार्यक्रम में प्रार्थना सभा के अलावा हरिजन बस्ती से सम्पर्क भी किया गया। ●

भूदान-यज्ञ २७-९-'७१ लाइसेन्स नं० ए १४ [पहले से डाक-व्यय दिये बिना भेजने की स्वीकृति प्राप्त] रजिस्टर्ड नं० एल. १५४

बंगला देश अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन की राय में बंगला देश को विश्व का जन-समर्थन प्राप्त

—— प्रतिनिधियों द्वारा दुनिया के सभी राष्ट्रों से हर प्रकार की मदद और तत्काल मान्यता की अपील ——

गत १८, १९, २० सितम्बर '७१ को नयी दिल्ली में आयोजित बंगला देश अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन ने, जिसकी अध्यक्षता सर्वोदय नेता श्री जयप्रकाश नारायण ने की, भाग लेनेवाले २४ देशों के प्रतिनिधियों द्वारा सम्मेलन की समाप्ति पर जारी की गयी सर्वसम्मत संस्तुतियों में कहा है कि "बंगला देश एक प्रभुसत्ता-सम्पन्न राष्ट्र के लिए आवश्यक सभी शर्तें पूरी करता है।" दुनिया के सभी मुल्कों से इस सम्मेलन ने अपील की है कि वे पश्चिम पाकिस्तान को हर प्रकार की सामरिक और आर्थिक मदद देना बंद करें, और बंगला देश को हर तरह की उपयुक्त सहायता दें ताकि प०.पाकिस्तान द्वारा हो रहा सैनिक दमन बन्द हो और बंगला देश की साढ़े सात करोड़ जनता सैनिक तानाशाही की गुलामी से मुक्त हो सके।

सम्मेलन में भाग लेने के लिए आये हुए ७ देशों के प्रतिनिधियों से बंगला देश को जन-मान्यता प्राप्त हो चुकी है, इसकी अभिव्यक्ति के लिए प्रतीक के तौर पर बंगला देश सरकार की मुहर लगे पासपोर्ट के साथ २२ सितम्बर '७१ को बंगला देश में प्रवेश का भी कार्यक्रम बनाया, बाद में गलतफहमी से बचने की दृष्टि से इसे कार्यान्वित नहीं किया।

केन्द्रीय आचार्यकुल समिति की बैठक

गत १२-१३ सितम्बर '७१ को ब्रह्म-विद्या मन्दिर, पवनार में केन्द्रीय आचार्य-कुल समिति की तीसरी बैठक आगरा विश्वविद्यालय के कुलपति श्री शीतल प्रसाद जी की अध्यक्षता में सम्पन्न हुई। इन दो दिनों में हुई कुल चारों बैठकों में विनोबाजी का मार्गदर्शन प्राप्त हुआ। शुभारम्भ और समापन उन्हीं के ही प्रवचनों से हुआ, जो उनके सूक्ष्म-प्रवेश को ध्यान में रखते हुए विशेष महत्वपूर्ण माना जायगा।

इन बैठकों में समिति ने आचार्य-कुल की शिक्षा-नीति पर एक सुस्पष्ट रूपरेखा को अंतिम रूप दिया। इसका ड्राफ्ट उ० प्र० की आचार्यकुल समिति द्वारा नियुक्त एक उपसमिति ने तैयार किया था। विनोबाजी ने इस मसविदे को अपना पूर्ण समर्थन दिया, और इस पर संतोष व्यक्त किया। इसके पूर्व आचार्य-कुल के विधान पर चर्चा हुई थी, और एक ठोस संगठन के लिए तैयार किये गये इस विधान को भी आखिरी रूप दिया गया।

उक्त विधान के अनुसार आचार्यकुल को व्यापक और ठोस बुनियादी आधारों पर संगठित करने के लिए मौजूदा समिति का कार्यकाल ३ साल के लिए बढ़ाया गया। श्री सिद्धराज ढड्ढा, सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष और मंत्री को भी पदेन सदस्य बनाया गया। समिति के संयोजक श्री वंशीधर श्रीवास्तव ने समिति के आग्रह पर इसका संयोजक बने रहना स्वीकार किया। यह अपेक्षा व्यक्त की गयी कि ३ साल में आचार्यकुल का प्राथ-मिक इकाई से लेकर राष्ट्रीय इकाई तक का विधिवत संगठन हो जायेगा।

इस बैठक में भाग लेने के लिए समिति के संयोजक श्री वंशीधर श्रीवास्तव के अलावा सदस्यों में दिल्ली से श्री जैनेन्द्र कुमार, राजस्थान से श्री पूर्ण-चन्द्र जैन, महाराष्ट्र से श्री मामा क्षीर-सागर, श्री गोविन्द राव देशपाण्डेय, मैसूर से श्री के० एस० आचार्लू, बिहार से प्राचार्य श्री कपिल, उत्तर प्रदेश से सर्वश्री शीतल प्रसाद, रोहित मेहता, डा० अनन्त रमण आये थे। आमंत्रित के रूप में मध्य प्रदेश से श्री गुरुशरण, राजस्थान से श्री सिद्धराज ढड्ढा, दिल्ली से श्री वसंत व्यास, सर्व सेवा संघ के मंत्री श्री ठाकुरदास बंग, वाराणसी से श्री रामचन्द्र 'राही' आदि बैठक में भाग लिये। इसके अलावा महाराष्ट्र की कई जिला स्तरीय समितियों के संयोजक भी बैठक में शामिल हुए। ●

इस अंक में

वार्षिक शुल्क : १० रु० (सफेद कागज : १२ रु०, एक प्रति २५ पैसे), विदेश में २२ रु० ; या २५ शिलिंग या ३ डालर।
एक अंक का मूल्य २० पैसे। श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिये प्रकाशित एवं मनोहर प्रेस, वाराणसी में मुद्रित